इस्वी सन्	सूर्य ग्रहण	चंद्र ग्रहण
३२७	६ जू	——
३२८	२५ मे	१० मे, ४ न
३२९	८ अक्टू	२८ अप्रे, २४ अक्ट
३३०	२८ से	१६ अप्रे १३ अक्टू
३३१	२५ मा	१० मा
३३२	१३ मा	२८ फ, २२ अग
३३३	२८ जुला	१६ फ, १२ अग
३३४	१७ जुला	१ अग
३३५	११ ज	२२ जू, १५ दि
३३६	२७ मे	१० जू, ५ दि
३३७	१६ मे	२१ मे, २४ न
३३८	६ मे	——
३३९	१९ अक्टू	१० अप्रे, ४अक्टू
३४०	१४ मा	३० मा, २२ से
३४१	४ मा	१६ मा, ११ से
३४२	१७ अग	३ अग
३४३	६ अग	२७ ज, २३ जुला
३४४	२ ज, २१ दि	१६ ज, १२ जुला
३४५	१६ जून	४ ज
३४६	६ जून	२१ मे, १५ न
३४७	१० अक्टू	११ मे, ४ न
३४८	८ अक्टू	२८ अप्रे. २३ अक्टू
३४९	४ अप्रे	२१ मा
३५०	२४ मा	१० मा, २ से
३५१	८ अग	२७ फ २३ अग
३५२	२ फ, २७ जुला	१२ अग
३५३	२२ ज, १७ जुला	३ जुला २६ दि
३५४	११ ज, ७ जून	२२ जू, १६ दि
३५५	१८ मई	११ जू, ६ दि
३५६	१६ मई, ८न	——
३५७	२६ अक्टू	२० अप्रे, १४ अक्टू
३५८	२६ मा	१० अप्रे, ३ अक्टू
३५९	१३ मा	३१ मा, २३ से
३६०	२८ अग	१३ अग
३६१	१७ अग	६ फ, ३ अग
३६२	——	२६ ज, २३ जुला

इस्वीसन	सूर्य ग्रहण	चंद्र ग्रहण
३६३	२ ज	१६ ज
३६४	१६ जू	१ जू, २६ न
३६५	६ जू	२१ मे, १५ न
३६६	२० अक्टू	११ मे, ४ न
३६७	१५ अप्रे, १० अक्टू	——
३६८	३ अप्रे	२१ मा, १३ से
३६९	——	१० मा, २ से
३७०	८ अग	——
३७१	२ फ, २८ जुला	१४ जुला
३७२	२२ ज	७ ज, २ जुला २६ दि
३७३	७ जुला	२१ जू, १६ दि
३७४	२७ मे, २० न	——
३७५	१० न	२ मे, २६ अक्टू
३७६	——	२० अप्रे, १४ अक्टू
३७७	२५ मा	१० अप्रे ३अक्टू
३७८	१५ मा, ८ से	——
३७९	२८ अग	१७ फ, १४ अग
३८०	३४ ज	७ फ, २ अग
३८१	१२ ज, ८ जुला	२६ ज
३८२	२७ जू	१२ जू, ७ दि
३८३	११ न	१ जू, २६ न
३८४	३१ अक्टू	२१ मे, १४ न
३८५	——	——
३८६	१५ अप्रे	१ अप्रे, २४ से
३८७	३० अग	२१ मा, १४ से
३८८	१८ अग	९ मा, २ से
३८९	१२ फ	——
३९०	——	१७ ज, १३ जुला
३९१	१८ जू	७ ज, २ जुला २७ दि
३९२	७ जू	——
३९३	२० न	१२ मे, ५ न
३९४	१६ अप्रे	२ मे, २५ अक्टू
३९५	६ अप्रे	२१ अप्रे, १४ अक्टू
३९६	——	——
३९७	——	२८ फ, २४ अग

हिन्दी

विश्वकोष

(षष्ठ भाग)

खाडिकि (सं॰ त्रि॰) खडिक चातुरर्थिक इञ्। खडिक सम्बन्धीय।

खाडी (हिं॰ स्त्री॰) १ आखात, खलीज, तीन ओरको जमीन्से घिरा हुआ समुद्रका हिस्सा। जैसे—बङ्गाल-की खाडी। २ अरहरका कोई पेड। यह सूखा होता है। ३ आखिरी रङ्ग।

खाड़ (हिं॰ पु॰) खपडे छानेका एक ठाट। इसमें पतली पतली लम्बी लकड़ियां लगती हैं।

खाडूरेय (सं॰ पु॰) खडूरस्यापत्यम्, खडूर ढक्। खडूर नामक ऋषिके अपत्य।

खाडोन्मत्तेय (सं॰ पु॰) खडोन्मत्ताया अपत्यम्, खडो-न्मत्ता-ढक्। खडोन्मत्ताके अपत्य।

खाड्गिक (सं॰ त्रि॰) खड्गानां समूहः खाड्गः खाड्ग अस्त्यर्थे ठन्। खड्गधारी, तलवारबन्द।

खाण्ड (सं॰ क्ली॰) खण्डस्य भावः, खण्ड अण्। 'वायद-वात् अण्।' (सिद्धान्तकौमुदी) १ खण्डका भाव, टुकडपन। खण्डस्य विकारः। २ खण्डविकार, चीनीकी चीज़।

खाण्डव (सं॰ वि॰) खाण्ड' खण्डविकारं वाति, वा क। १ खण्डविकारयुक्त, चीनीका बना हुआ। (पु॰) २ खाडव। खाडव देखो। (क्ली॰) खाण्डव्यास्तदाख्यया प्रसिद्धायाः नगर्या जातम्, खाण्डवी-अण्। ३ कोई प्रसिद्ध वन। कालिकापुराणमें लिखा है कि इस वनमें पूर्वकालको यक्ष आदि देवोंका वास रहा। चन्द्रवंशीय सुदर्शन नामक किसी राजाने इन्द्रके आदेशसे उस वनको आबाद करके खाण्डवी नामकी कोई पुरी बसायी थी। इसी खाण्डवीपुरीने गुणगरिमामें उस समयकी समग्र पुरियोंसे श्रेष्ठता पायी। खाण्डवी १०० योजन दीर्घ और ३० योजन विस्तृत थी। दिन दिन सुदर्शनकी बड़ाई भी बढने लगी। एक एक करके सब राजा हार कर उनके अधीन हो गये। सुदर्शनने देवताओं पर भी अपना अधिकार फैलाया और अधीन प्रजा पर कुछ कुछ अन्याय आचरण भी चलाया था। थोड़े दिनोंमें ही उनसे सब लोग बिगड़ पड़े। सुदर्शनने काशिराज विजयसे सन्धि स्थापन करके उनको अपना मन्त्री बनाया था। काशीराजने अवकाश मिलने पर सुदर्शनके अनिष्ट करनेकी चेष्टा की। सुदर्शन यह गुप्त संवाद पाकर उनसे लड़ने लगे। इस लड़ाईमें सुदर्शनकी हार हुई। काशीराजने खाण्डवीपुरी लूट करके तोड फोड़ डाली। फिर इन्द्रने जाकर काशीराजसे कहा था कि उस स्थानमें पौधेको एक वन रहा। उसमें देव और गन्धर्व सुखसे विचरण करते थे। सुदर्शनने उनके सुखमें बाधा डाल खाण्डवीपुरी बनायी। उनकी इच्छा थी कि फिर वह स्थान वन जाय तो अच्छा हो। काशी-राज विजयने देवोंके आदेशसे वहां एक फुलवाड़ी लगवा दी और प्रजाको अपने साथ राज्यमें ले गये। इसी वनका नाम खाण्डव है। (कालिकापु॰ ७८ अ॰)

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
४६९	२१ अक्टू	१२ अप्रे, ७ अक्टू
४७०	१० अक्टू	१ अप्रे, २६ से
४७१	७ मा	२२ मा, १५ से
४७२	२० अग	——
४७३	१९ अग	३० ज, २५ जुला
४७४	४ ज	१९ ज, १५ जुला
४७५	१९ जू	८ ज, ४ जुला
४७६	७ जू	२४ मे, १७ न
४७७	२८ मे	१३ मे, ६ न
४७८	१२ अक्टू	२ मे, २७ अक्टू
४७९	८ अप्रे, १ अक्टू	——
४८०	७ मा	१२ मा, ५ से
४८१	११ अग	२ मा, २५ अग
४८२	३१ जुला	१९ फ, १४ अग
४८३	२४ ज	६ जुला, ३० दि
४८४	१४ ज	२४ जू, १८ दि
४८५	२९ मे	१४ जू, ७ दि
४८६	१९ मे, १२ न	——
४८७	१ न	२३ अप्रे, १८ अक्टू
४८८	२९ मा	१२ अप्रे, ६ अक्टू
४८९	१८ मा	१ अप्रे, २५ से
४९०	७ मा	——
४९१	२१ अग	१० फ, ५ अग
४९२	१५ जू	३० ज, २५ जुला
४९३	४ ज	१८ ज, १५ जुला
४९४	१९ जू	५ जू, २८ न
४९५	८ जू, ३ न	२५ मे, १८ न
४९६	२२ अक्टू	१३ मे, ६ न
४९७	१८ अप्रे	——
४९८	७ अप्रे	२३ मा, १६ से
४९९	२२ अग	१३ मा, ५ से
५००	१० अग	१ मा, २५ अग
५०१	३१ जुला	——
५०२	——	९ ज, ६ जुला, २९ दि
५०३	१० ज	२५ ज, १९ दि

ई० सन	सूर्यग्रहण	चंद्रग्रहण
५०४	२९ मई	——
५०५	——	४ मई, २८ अक्टू
५०६	९ अप्रे	२८ अप्रे, १८ अक्टू
५०७	३१ मा	१३ अप्रे ७ अक्टू
५०८	१७ मा, ११ से	——
५०९	३१ अग	२० फ, १६ अग
५१०	——	९ फ, ५ अग
५११	१५ ज	२९ ज, २६ जुला
५१२	२९ जू	१५ जू, ९ दि
५१३	१९ जू	४ जू, २८ न
५१४	२ न	२४ मे, १८ न
५१५	२३ अक्टू	——
५१६	१८ अप्रे	३ अप्रे, २६ से
५१७	७ अप्रे	२७ मा, १५ से
५१८	२२ अग	१३ मा, ५ से
५१९	१६ फ, ११ अग	——
५२०	५ फ	२० ज, १६ जुला
५२१	२ जू	८ ज, ५ जुला, २९
५२२	१० जू, ४ दि	——
५२३	२३ न	१५ मे, ९ न
५२४	११ न	३ मे, २८ अक्टू
५२५	——	२३ अप्रे, १७ अक्टू
५२६	२२ से	——
५२७	११ से	४ मा, २९ अग
५२८	६ फ	२१ फ १६ अग
५२९	२५ ज	९ फ ५ अग
५३०	१५ ज, १० जुला	२० दि
५३१	३० जू	१५ जू १० दि
५३२	१३ न	३ जू, २८ न
५३३	१० मे	——
५३४	२९ अप्रे	१४ अप्रे, ८ अक्टू
५३५	१८ अप्रे, १३ से	४ अप्रे, २७ से
५३६	१ से	२३ मा, १५ से
५३७	२५ फ, २१ अग	——
५३८	१५ फ	३१ ज, २८ जुला

मालूम होता है कि अवस्ता पहले एक विराट् ग्रन्थ था।

उक्त ग्रन्थों में दिये हुए अवस्ताके विवरणके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, अवस्ता सिर्फ धर्मग्रन्थ ही नहीं था बल्कि उसमें पृथिवीके सभी विषयोंका कुछ कुछ समावेश था। सम्पूर्ण अवस्ता २१ नस्कोंमें विभक्त था और सात नस्कोंका एक एक विभाग था। संक्षेपतः २१ नस्कोंमें निम्नलिखित विषय थे—

१ धर्म, २ धर्मानुष्ठान, ३ तीन प्रधान प्रार्थनाओंकी व्याख्या, ४ सृष्टितत्त्व, ५ फलित और गणित ज्योतिष, ६ अनुष्ठान और उसका फल, ७ पुरोहितोंके गुण और कर्तव्य, ८ मानव-जीवनमें नीतिशास्त्रकी उपयोगिता, ९ धर्मानुष्ठान सम्पादनकी नियमावली, १० राजा गुस्तास्पकी दीक्षा शिक्षा और आर्यास्पके सहित उनका युद्ध ११ संसार और धर्मके नाना कर्तव्य, १२ जरथुस्त्रके आविर्भावके समय तक मानव-जातिका इतिहास, १३ जरथुस्त्रके आविर्भावके सम्बन्धमें भविष्यद्वाणी, १४ अहिंमन और देवदूतोंकी पूजा पद्धति १५ धर्माचरण और आत्मसंयम, १६ दीवानी, फौजदारी और युद्धसम्बन्धी कानून, १७ साधारण धर्मके नियम, १८ दायभाग, १९ प्रायश्चित्ततत्त्व, २० पुण्य और धर्म, २१ देवदूतोंकी स्तुति।

इतिहास—प्रवाद है कि, पारसियोंके प्रथम युगमें अखमनीय वंशके सम्राटोंने बड़े यत्नके साथ अवस्ताकी रक्षा की थी। तवारीका कहना है कि सम्राट् विस्तास्पने जरदुस्तके धर्मप्रचारके कार्यमें बहुत कुछ सहायता पहुंचाई थी और अवस्ताग्रन्थकी सुवर्णाक्षरमें लिखवा कर पोथियोंके किलेमें रक्खा था। इस प्रवादकी पुष्टि दीनकार्दग्रन्थके इस विवरणसे होती है कि शापीगानके रत्नागारमें एक बहुमूल्य अवस्ता रक्खा है। "शात्रीहायो ऐरान" नामक पह्लवी ग्रन्थमें लिखा है कि अवस्ताकी दूसरी एक प्रति समरकन्दके अग्नि-मन्दिरके धनागारमें सुवर्णाक्षरोंमें खोदी गयी थी; उसमें १२०० अध्याय हैं। ये दोनों ही ग्रन्थ ईसाकी ३३० पूर्व शताब्दीमें "अभिशप्त इस्कन्दार" (अलेकसन्दर) के द्वारा जब अखेमनीयोंके पारसी-पोलिसका प्रासादमें आग लगाई गई थी; उस समय तथा उनके समरकन्द विजयके समय नष्ट हो गये थे।

सिकन्दरशाहके विजय करने पर जरथुस्त्र-धर्मका प्रभाव बहुत कुछ घट गया था। परवर्ती ५०० वर्ष तक जब सेलुकिडवंशीय और पार्थियान् सम्राट् राज्य करते थे, उस समय अवस्ता-ग्रन्थके अन्यान्य खण्ड भी विलुप्त होने लगे। कई स्थानोंमें इसका कुछ कुछ अंश रक्खा गया और कुछ अंश धर्मके पुरोहितोंने भी कण्ठस्थ कर लिया। ईसाकी ३री शताब्दीके प्रारम्भमें अवस्ताके जो जो अंश रक्खे गये थे, उन्हें ही आर्सकिडवंशके शेष सम्राट्ने संगृहीत किया। खुसरू नौशिरवानकी (५३१-५७९ ई०) एक घोषणासे ज्ञात होता है कि सम्राट् बालखासने, जिनको साधारणतः १म भोलोगेसेस समझा जाता है, पवित्र ग्रन्थ ज़न्द अवस्ताके अनुसन्धान करनेमें जीजानसे कोशिश की और जितना अंश लोगोंको कण्ठस्थ था, उसको लिपिबद्ध कराया। शासानियवंशके प्रतिष्ठाता सम्राट् अर्दशीर पपकान (२२६-२४०ई०) और उनके पुत्र बालखासने इस कार्यको बड़ी खुशीके साथ चलाया और महापुरोहित तानसारको अवस्ताके विच्छिन्न अंशोंके संग्रह करनेके लिए आदेश दिया। २य शाहपुरके राजत्वकाल (३०९-३८० ई०)में उनके प्रधान मन्त्री अदरपाद-मारसपेन्दानने ज़न्दअवस्ताका संशोधन किया और यह घोषित हुआ कि उन्हींके द्वारा संगृहीत और संशोधित ग्रन्थ ही धर्मपुस्तक है।

सिकन्दरशाहके आक्रमण वा उनके परवर्ती युगकी लापरवाहीसे जन्दअवस्ताकी जो दुर्दशा हुई थी, उससे भी कहीं अधिक क्षति हुई थी-मुसलमानोंके आक्रमण और कुरानके धर्म-प्रचारसे। जरथुस्त्र-धर्मावलम्बियोंको मुसलमानोंने देश-निकाला दे दिया था और उनके धर्मग्रन्थोंको जला डाला था। फारस और भारतवर्षके कुछ पारसियोंको इसका जितना अंश प्राप्त हुआ, उतना उन्होंने यत्नपूर्वक रख लिया। वर्तमानमें उतना ही अंश देखनेमें आता है।

वर्तमान ग्रन्थका विषय—वर्तमान समयमें ज़न्दअवस्ता चार भागोंमें विभक्त है—(१) यस्न—इसमें गाथा, विश्परद और यष्त नामसे तीन भाग हैं, (२) न्यायिश, गाह आदि

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
१०९०	२४ न	—
१०९१	२१ मे	५ मे, ३० अक्टू
१०९२	८ मे	२४ अप्रे, १८ अक्टू
१०९३	२३ से	१४ अप्रे, ७ अक्टू
१०९४	१८ मा	—
१०९५	—	२२ मा, १८ अग
१०९६	२२ जुला	११ फ, ६ अग
१०९७	—	३० ज, २७ जुला
१०९८	५ ज, १ जुला, २५ दि	११ दि
१०९९	—	५ जू, ३० न
११००	११ मे	२५ मे, १८ न
११०१	३० अप्रे, २४ अक्टू	—
११०२	—	५ अप्रे, २८ से
११०३	१० मा	२५ मा, १७ से
११०४	—	१३ मा, ६ से
११०५	१६ फ	—
११०६	१ अग, २७ दि	२१ ज, १७ जुला
११०७	१६ दि	११ ज, ६ जुला, ३१ दि
११०८	११ जू	२५ जू
११०९	३१ मे	१६ मा, ६ न
१११०	२० मे, १५ अक्टू	५ मे, २९ अक्टू
११११	—	१५ अप्रे, १८ अक्टू
१११२	२९ मा, २२ से	—
१११३	१८ मा	४ मा, २८ अग
१११४	२ अग	२१ फ, १८ अग
१११५	२३ जुला	१० फ, ७ अग
१११६	—	२१ दि
१११७	—	१६ जू, ११ दि
१११८	२२ मे,	५ जू, ३० न
१११९	११ मे	—
११२०	२४ अक्टू	१५ अप्रे, ८ अक्टू
११२१	२० मा, १३ अक्टू	४ अप्रे, २८ से
११२२	१० मा	२४ मा, १७ से
११२३	२२ अग	—
११२४	११ अग	१ फ, २८ जुला
११२५	६ ज, २६ दि	२१ ज, १७ जुला
११२६	२२ जू	११ ज, ६ जुला
११२७	११ जू	२७ मे, २० न
११२८	३० मे, २५ अक्टू	१६ मे, ८ न
११२९	१५ अक्टू	५ मे २९ अक्टू

ईस्वी सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
११३०	४ अक्टू	—
११३१	३० मा	१५ मा, ८ से
११३२	१९ मा	३ मा, २८ अग
११३३	२ अग	२१ फ, १७ अग
११३४	२७ ज, २३ ज	—
११३५	१६ ज	१ ज, २७ जू, २२ दि
११३६	५ ज, १ ज	१५ ज, १० दि
११३७	२१ से, १५ न	५ जू
११३८	४ न	२६ अप्रे, २० अक्टू
११३९	—	१६ अप्रे, ९ अक्टू
११४०	२० मा	४ अप्रे, २८ से
११४१	१० मा, २ से	—
११४२	—	१२ फ, ८ अग
११४३	१२ अग	१ फ, २८ जुला
११४४	६ ज, २६ दि	२२ ज, १६ जुला
११४५	२२ जू	६ ज, १ दि
११४६	११ जू, ६ न	२७ मे, २० न
११४७	२६ अक्टू	१७ मे, ९ न
११४८	२० अप्रे, २४ अक्टू	—
११४९	९ अप्रे	२६ मा, १८ से
११५०	२४ अग	१५ मा, ८ से
११५१	१३ अग	४ मा, २८ अग
११५२	७ फ, २ अग	—
११५३	२६ ज	१२ ज, ७ जुला
११५४	१२ जू	१ ज, १७ ज, २१ दि
११५५	१ जू, २६ न	१६ जू
११५६	२१ मे	७ मे, ३० अक्टू
११५७	११ अप्रे, ४ न	२६ अप्रे, १९ अक्टू
११५८	—	१५ अप्रे, ९ अक्टू
११५९	२१ मा	—
११६०	२ से	१३ फ, १८ अग
११६१	२८ ज	१२ फ, ७ अग
११६२	१७ ज	१ फ, २७ जुला
११६३	६ ज, ३ जुला	१८ जू, १२ दि
११६४	२१ जू, १६ न	६ जू, ३० न
११६५	—	२८ मे, १९ न
११६६	१ से	—
११६७	२१ अप्रे	६ अप्रे, ३० से
११६८	९ अप्रे, ३ से	२५ मा १९ से
११६९	२४ अग	१४ मा, ८ से
११७०	—	

चौड़ाई पेंदेकी लम्बाई चौड़ाईसे मिलती, इसको जनता सम वा समखात कहलाती है। फिर जिसका मुख तलके बराबर लम्बा चौड़ा नहीं रहता, उसको सब कोई विषमखात कहता है। खातके गाम्भीर्यको वेध कहते हैं। जिस गड्ढे की सब जगहकी लम्बाई, चौड़ाई और गहराई बराबर नहीं आती, उसकी सममिति निकाल कर प्रक्रिया की जाती है। लीलावतीमें सममिति करनेका उपाय इस प्रकारसे लिखा है—

गड्ढेमें जो कई एक जगहें छोटी बड़ी लगें, उनको सूतसे नापके अलग अलग रखना चाहिये। फिर सबको मिलाकर स्थानसंख्या अर्थात् नापी जानेवाली जगहोंके जोड़से भाग लगाते हैं। इसमें जो लब्ध आता, गड्ढेकी लम्बाईकी सममिति माना जाता है। इसी प्रकारसे चौड़ाई और गहराईकी असमानता होने पर उनकी भी सममिति बनानी पड़ती है।

उदाहरण—जिस गड्ढे की लम्बाई तीन जगहोंमें १२, ११ और १० हाथ, चौड़ाई ३ स्थानों ७, ६ और ५ हाथ और वेध ३ मुकामों पर ४, ३ तथा २ हाथ हैं; उसकी सममिति बनाइये।
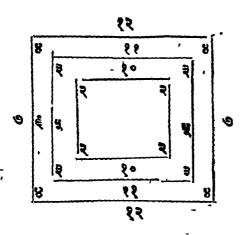
प्रक्रिया—तीनों जगहोंकी लम्बाई १२, ११ और १०का जोड़ ३३ है। इसको स्थानसंख्या ३से भाग करने पर ११ फल आता है। इसलिये इस खातके दैर्घ्यकी सममिति ११ हुई। इसी प्रकार स्थानत्रयके विस्तार ७, ६ और ५का योगफल १८ है। इसको स्थान संख्या ३से बांटने पर ६ लब्ध होगा। सुतरां गड्ढेके विस्तारकी सममिति ६ निकली। फिर तीनों स्थानोंके वेध ४, ३ और २का योगफल ९ होता है। इसको ३ से भाग देने पर ३ ही लब्ध आवेगा। इसलिये गहराई की सममिति ३ ठहरती है। सममिति करनेसे इस खातका आकार नीचे लिखा जैसा होगा—
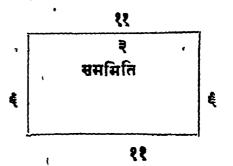
खातफल निर्णय करनेका उपाय—खातके क्षेत्रफलको वेधसे गुण करने पर जो फल आता, खातका घनफल कहलाता है।

उदाहरण—दिखलाये हुए खातका फल स्थिर करो।

प्रक्रिया—प्रदर्शित खातकी सममिति करने पर आयतक्षेत्रके नियमानुसार क्षेत्रफल ६६ ठहरता है। इसके वेधकी सममिति ३से गुण करने पर १९८ निकलेगा। इसलिये खातका फल १९८ घनहस्त है।

घनहस्त देखो।

विषमखातके फलनिर्णय करनेका नियम—मुखक्षेत्रफल, तलक्षेत्रफल और युतिज क्षेत्रफल (मुंहकी लम्बाई और पेंदेकी लम्बाईके जोड़की लम्बाई और मुंहकी चौड़ाई तथा पेंदकी चौड़ाईके जोड़का चौड़ाई मान करके हिसाब लगानेसे जो फल आता, युतिज क्षेत्रफल कहलाता है।) तीनों क्षेत्रफलोंको जोड़नेसे जो आवेगा, ६से वह बांट दिया जावेगा। इससे जो लब्ध निकलता, समक्षेत्रफल ठहरता है। फिर समक्षेत्रफलको वेधसे गुण करने पर मिलनेवाला फल ही खातका घनफल होता है।

उदाहरण—जिस विषम खातके मुखका विस्तार १०, तथा दैर्घ्य १२ और तलका विस्तार ५, दैर्घ्य ६ और वेध ७ है—उसका घनफल ठीक करो।

प्रक्रिया—मुखका क्षेत्रफल १२०, तलका क्षेत्रफल ३०; मुखका दैर्घ्य १२ और तलका दैर्घ्य ६ तथा दोनोंका योगफल १८; मुखका विस्तार १० और तलका विस्तार ५ तथा दोनोंका योगफल १५ है। इन्हीं दोनों योगफलोंको यथाक्रम दैर्घ्य और विस्तार कल्पना करने-

मानो वे विराट् समारोहसे अश्वारोहणपूर्वक सेनाके साथ प्रतिज्ञाभङ्ग करनेवालोंको दण्ड देने जा रहे हैं। ये कविताएं पौराणिक रीतिसे लिखी गई हैं। कुछ उपदेश शायद जरथुस्त्रके पूर्ववर्ती ऋषियोंसे लिखा गया है। फार्दुशिके "शाहनामा" के साथ मिला कर पढ़नेसे उसका वास्तविक अर्थ ज्ञात होता है, क्योंकि "शाहनामा"में उक्त विषयका बहुत कुछ वर्णन है।

(ङ) गौणांश—इनमें न्यायीशका नाम उल्लेखयोग्य है। इनमें सूर्य, चन्द्र, जल, अग्नि, खुरशीद, मित्र, मा, अईवि-सूर और अतसको स्तुतियां हैं। ये खोरदाद अवस्ताके अन्तर्भुक्त हैं।

(च) वन्दिदाद—अर्थात् असुरोंके विरुद्ध धर्मनीति। प्रथमतः ज़न्दअवस्ताके उन्नीसवें नस्कमें इनको स्थान मिला था। इनमें बहुतसी रचना परवर्ती कालकी हैं।

(छ) उपरोक्त ग्रन्थोंके सिवा कुछ विच्छिन्नांश भी हैं; पह्लवी भाषाके बहुतसे ग्रन्थोंमें इसकी कविताएं उद्धृत की गई हैं।

ज़न्दअवस्ताका जितना अंश प्राप्त हुआ है, उनमें धर्मानुष्ठानका ही उपदेश अधिक है। धर्मानुष्ठान पर लोगोंकी अधिक श्रद्धा होनेके कारण यह अंश बड़ी हिफाजतसे रक्खा गया था।

अवस्ताका समय—ऊपर जो इतिहास लिखा गया है, उसीसे मालूम हो जाता है कि अवस्ताके एक एक अंश भिन्न भिन्न समयमें रचे गये थे। ईसाके पूर्व २८०० से ३७५ वर्षके भीतर अर्थात् तीन हजार वर्ष तक अवस्ताके अंश आदि लिखे गये हैं, यही वर्त्तमान विद्वानोंका सिद्धान्त है।

भाषा—अवस्ता जिस भाषामें लिखा गया है, उसे "अवस्तीय" भाषा कहते हैं। इसके साथ संस्कृत भाषाका निकट सम्बन्ध है। संस्कृतके साथ इसके सौसादृश्य आविष्कृत होनेके बादसे तुलनात्मक भाषातत्त्वकी आलोचना करनेका मार्ग सुगम हो गया है। अवस्ताकी भाषामें दो प्रकारका भेद देखनेमें आता है। प्राचीन गाथाओंकी भाषा दूसरे ही ढंगकी है और परवर्ती भाषा दूसरे ढंगकी। पूर्वोक्त अंश पद्यमें और शेषोक्त गद्यमें लिखे गये हैं। अवस्ताकी लिखावट दहिनी ओरसे पढ़ी जाती है। यह पहले पहल किन अक्षरोंमें लिखा गया था, इसका कुछ भी पता नहीं चलता।

वेद और अवस्ता—पृथिवी पर वेद और अवस्ता इन दो महाग्रन्थोंने आर्य जातिकी दो शाखाओंके धर्म-निरूपण कर महागौरवमय स्थान पाया है। इन दोनों ग्रंथोंका एक साथ मनन करनेसे मालूम हो जाता है कि दोनोंमें बहुत कुछ सादृश्य है। इस सादृश्यसे यह भी अनुमान होता है कि किसी समय—जब पारसी लोग और हमारे पुरखा एक साथ रहते थे—इन दोनों ग्रंथोंका प्रारम्भ एक साथ ही हुआ होगा। अब हम उक्त दोनों ग्रंथोंके उस सादृश्यको दिखलाते हैं जिसने सबसे पहले इस ओर दृष्टि आकर्षित की है।

१। देवताओंके नाम—वेद और अवस्ता दोनों ग्रंथोंमें "देव" और "असुर" शब्द व्यवहृत हुआ है। यह तो सभी जानते हैं कि वेदमें देव शब्द द्वारा अमरलोकवासियोंका निर्देश किया गया है। किन्तु आश्चर्यका विषय है कि अवस्तामें प्रारम्भसे अन्त पर्यन्त दुष्ट प्राणियोंको देव कहा गया है और आधुनिक फारसी साहित्यमें भी देवका वही अर्थ समझा जाता है। यूरोपीय लोग जिसको Devil वा शैतान कहते हैं और हम जिसको असुर कहते हैं, अवस्तामें उसीको देव कहा गया है। अवस्ताके देव सम्पूर्ण अनिष्टोंके मूल कारण हैं, वे ही पृथिवी पर अपवित्रता और मृत्यु संघटन करा रहे हैं। वे सर्वदा इसी चिन्तामें मग्न रहते हैं शस्यक्षेत्र, फलवान् वृक्ष, धर्मात्माके निवासस्थान आदिका नाश किस तरह हो। हमारे यहां जिस प्रकार प्रेतोंका निवास दुर्गन्धपूरित स्थानोंमें कहा गया है, उसी प्रकार ज़न्दअवस्तामें देवोंका वासस्थान कदर्यस्थानमें बतलाया गया है।

हमारे वैदिक धर्मका नाम देव-धर्म है और पारसियोंके ज़न्दअवस्तीय धर्मका नाम अहुर-धर्म। अहुर शब्द उनके प्रधान देवता अहुर-मज़दा नामका प्रथमांश है। इस शब्दसे वे अपने भगवान् और उनके अंशादिका निर्देश करते हैं। हमारे पौराणिक साहित्यमें असुर शब्दका प्रयोग बुरेके लिए किया गया है, किन्तु ऋग्वेद-

परन्तु कोई कोई कर्णाटी या हिन्दी भी बोल सकता है। खातिक बकरी, भेंड़, भैंस आदि जन्तु पालते हैं। पत्थर और मट्टीसे घर बनाये जाते हैं। सबको साफ सुथरा रहना अच्छा लगता है। मैला कपड़ा कोई नहीं पहनता।

खेत जोतनेके लिये किसान खातिक बैल और घोड़े रखते हैं। रोटी, दाल, भात और तरकारी इनका प्रधान आहार है। सब लोग थोड़ा बहुत मांस मछली खा लेते हैं। इन्हें भेड़, हिरन, खरगोश, उल्लू, मुर्गी वगैरहका मांस खानेमें भी कोई आपत्ति नहीं। आश्विन मासकी 'काली नवमी' (महानवमी) तिथि इस जातिके महापर्वका दिन है। उस अवसर पर कितने ही लोग भवानीदेवीको पूजाके लिये भेड़ बलि चढाते और बड़े समादरसे प्रसादी मांस खाते हैं। आश्विन मासके नवरात्रको अर्थात् महालयासे महानवमी पर्यन्त बड़ी धूमधाम रहती है। शिवरात्र और प्रति एकादशीको यह अपनी दूकानें बन्द रखते हैं। भाद्र मासकी गणेश-चतुर्थीको गणेशदेवकी प्रतिमूर्ति बना कर पूजी जाती है। दुर्गा, श्यामा, मारुती, सिवराय आदि इनकी कुलदेवता हैं। हिन्दूशास्त्रोक्त पर्वोंके दिन यह भी उपवास आदि नियम पालन करते हैं। किसी देवताकी पूजा करनेसे पहले खातिक स्नान करके शुद्ध हो जाते और जल, चन्दन, पुष्प, नारिकेल, पूगफल, शर्करा, गुड़, छोहारा, कर्पूर और धूपदीप लेकर पूजा चढ़ाते है। उपर कहे हुए देवदेवियोंको छोड यह सूर्यनारायणकी भी उपासना करते हैं। इनमें प्रायः सभी मादकसेवी (नशाबाज) हैं। पूजा पार्वण आदिके समय हंसीखेलके लिये शराब, भाग, गांजा और अफीम न मिलनेसे मजा किरकिरा पड़ जाता है। पुरुष मस्तक पर चोटी रखते हैं। स्त्रियोंको लाल या काला कपड़ा और गहना पहनना अच्छा लगता है। सधवा स्त्रियां विवाहके पीछे बराबर 'मङ्गलसूत्र' पहने रहती हैं।

इनकी स्त्रियां प्रसवके पीछे १ पक्षसे १॥ मास तक सोवरसे नहीं निकलतीं। इस अवस्थामें प्रसूतिको गर्म रखनेके लिये चारपाईके नीचे पहले १५ दिन बरोसीमें आग रखाते और गुड़, गिरी, सोंठ, पीपल, गोंद तथा छोहारा बुकनी करके मक्खनके साथ खिलाते है। घरकी हवा खो छठें दिन षष्ठीमाताको पूज लेतीं और उसी रोज धात्रीको विदा कर देती हैं। बहुतोंके घरमें छठीको भाईबन्द और नातेदार रिश्तेदारोंका भोज होता है। १३वें दिनको पुत्रका नामकरण किया जाता है और अहवाती स्त्रियां मुंहमें पञ्चधान्य रखके लड़केको गोद खिलाने पहुंचती हैं। ३ मास या ६ मासकी उम्रमें बच्चेका चूड़ाकरण होता है। विवाहका कोई समय बंधा नहीं है। १ मासकी बालिकासे लेकर १८ वर्षकी युवती तक ब्याही जाती है। सब लोग बाल्यविवाहको अच्छे समझते हैं। कन्याको प्रथम ऋतुमती होने पर यह अशुचि नहीं मानते। पहले ५ दिनों अङ्गको धो कर कन्याके अच्छी तरह हलदी लगाते और छठें दिन नहलाते हैं। फिर शुभदिन देख कर उसे स्वामीका सहवास करनेकी आज्ञा दी जाती है। इनका विवाहकी बातचीत ठहरानेमें पहले कन्याकर्ताका मतामत लेना पड़ता है। उनके कन्याका विवाह करने पर स्वीकृत होनेसे वरकर्ता कन्याकर्ताकी कुलदेवताके सामने २ नारियल, तीन पाव गिरी और ५ सेर चीनी भेंट करके उपस्थित स्वजातीयोंको सम्बोधन करके इस प्रकार वाक्य दान करते हैं—मेरे पुत्रके साथ इनकी कन्याका विवाह होगा। फिर उपस्थित ज्ञाति कुटुम्ब आदिको शक्कर और पान देकर विदा करना पड़ता है। शुभदिनको लग्न ठहराते हैं। इसी बीच वरकन्या दोनों एक दूसरेके घर आते जाते रहते हैं। वरकर्ताको ४ सेर शक्कर, ४ सेर गिरी, ३ पाव पोस्तदाना, ३ पाव सुपारी, २०० पान, कन्याके लिये ४ अङ्गियाएं चांदीकी बालियां और हमेल और पहननेके कपड़े देने पड़ते हैं। कहीं कहीं कन्याकर्ता अपनी लड़कीको गृहदेवताके सामने बिठला उसकी गोदमें ५ सुपारी, ५ छोहरे, गिरीके ५ टुकड़े, ५ केले और ५ सेर चावल डालते और दामादको १ दुपट्टा और एक पगड़ी देते और आये हुए लोगोंको पान और शक्कर बांटते हैं। ज्योतिषी विवाहका शुभदिन ठहराता और कायजके

भी मनुष्योंको व्याधि दूर कर रहे हैं। (अथर्व० ६।१।३।१।)

ईरानके धर्ममें कव-उशने एक प्रधान स्थान अधिकार किया है। उनका विश्वास है कि ये पहले ईरानके राजा थे। हिन्दूधर्मके उशनस् वा शुक्रके साथ इनके नामका सादृश्य है। ऋग्वेदमें इन्द्रका काव्य उशनाके नामसे उल्लेख किया गया है। (ऋक् ४।२६।१) जन्दअवस्तामें लिखा है कि कव-उश अत्यन्त उपकारी होने पर भी बड़े अभिमानी थे। उन्होंने एकबार स्वर्गको उड़ना चाहा था और इसी लिए उन्हें कठोर दण्ड मिला था। वैदिक काव्य-उशना मानवजातिके महापुरोहित थे। ये स्वर्गकी गायोंको मैदानमें ले गये थे और इन्द्रको गदा बनाई थी

वेद और जन्दअवस्ता दोनों ही ग्रन्थोंमें, जिनके साथ युद्ध करना पड़ता था उनको दानव कहा गया है।

जन्दअवस्ताके तिष्त्रिका उपाख्यान वैदिक इन्द्र और बृहस्पति-सम्बन्धी कुछ उपाख्यानोंसे सादृश्य रखता है।

वेद और जन्दअवस्ताकी यज्ञविधि—वर्तमान समयमें पारसियोंकी यज्ञविधि अत्यन्त संक्षिप्त होने पर भी उसमें वैदिक यज्ञके साथ सादृश्य पाया जाता है। पहले ही दोनों ग्रन्थोंमें, तुलना करनेवाले पाठकोंकी दृष्टि पुरोहितके नामकी समानता पर पड़ती है। जन्दअवस्तामें पुरोहित शब्दके अभिप्रायमें 'आथ्रव' शब्दका प्रयोग किया गया है जो वैदिक नाम अथर्वन् शब्दका ही रूपान्तर है। वैदिक शब्द इष्टि (कुछ देवताओंका पुरोडस सहित आवाहन) और आहुति जन्दअवस्तामें इष्टि और आ-जुइतिके रूपमें व्यवहृत हैं। परन्तु जन्दअवस्तामें उक्त दोनों शब्दोंका अर्थ 'दान' वा 'स्तुति' बतलाया गया है। यज्ञके पुरोहितोंमें वैदिक होता और अध्वर्युके स्थान पर इसमें जाओता और रथ्वि शब्दका उल्लेख मिलता है।

वैदिक ज्योतिष्टोम यज्ञमें जिन कार्योंका अनुष्ठान होता, उनमेंसे अधिकांश पारसियोंके यजिश्न वा इजिश्न यज्ञमें सम्पन्न होते हैं। अग्निहोत्रमें आवश्यकीय अग्निष्टोम यज्ञके साथ जन्दअवस्ताके इजिश्न यज्ञका विशेष सादृश्य है। किन्तु पारसियोंमें प्रचलित यजिश्न यज्ञके सम्पादन करनेमें अग्निष्टोमकी अपेक्षा बहुत थोड़ा समय लगता है। अग्निष्टोम यज्ञमें चार छागोंकी बलि दी जाती है, मांसका कुछ अंश अग्निमें डाला जाता है, कुछ अंश यजमान और पुरोहित भक्षण करते हैं। किन्तु इजिश्न यज्ञमें सिर्फ एक सांढ़की देहसे कुछ रोम उखाड़ कर अग्निको दिखाते हैं। पूर्वकालमें पारसी लोग भी इस उपलक्षमे मांसका व्यवहार करते थे। वैदिक पुरोडास जन्दअवस्तामें दरुण हुआ है। इस प्रकार वेदके उपसद् समयकी दुग्धव्यवहारविधि जन्दअवस्तामें गाउश-जोध्य व्यवहारविधिमें परिणत हो गई है। हिन्दूगण जिस प्रकार द्रव्यादिको पवित्र करनेके लिए पञ्चगव्य व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार पारसी लोग भी गोमूत्र काममें लाते हैं, इसके सिवा वे हिन्दुओंकी भांति यज्ञोपवीत ग्रहण करना भी कर्तव्य कार्य समझते हैं। उपवीतके बिना दोनों ही समाजमें कोई भी व्यक्ति यथार्थ स्थान को नहीं पाता। हिन्दुओंमें उपवीत ग्रहणका समय आठ वर्षसे सोलह वर्ष निर्णीत हुआ है और पारसियोंमें उसका काल सातवें वर्षमें ही कहा गया है। दोनों जातिओंकी लौकिक क्रियाओंके विषयमें भी थोड़ा बहुत सादृश्य देख पड़ता है। पारसी लोग मृत्युके बाद तीसरे दिन मृत आत्माकी सद्गतिके लिए प्रार्थना करते हैं और ब्राह्मणोंकी भांति उनके यहां भी दशवें दिन अनुष्ठान आदि सम्पन्न होता है।

हिन्दुओंकी तरह पारसियोंने भी पृथिवीको सात भागोंमें विभक्त किया है और सबके बीचमें एक पर्वत (मेरु)-का अस्तित्व माना है।

वेद और जन्दअवस्ताका परस्पर विरोध—वेदमें देव पूज्य माने गये हैं और अवस्तामें असुर। इससे स्वतः इस बातका पता लग जाता है कि उपरोक्त सादृश्य रहने पर भी दोनोंमें यथेष्ट विरोध था। विद्वानोंका अनुमान है कि किसी समय हिन्दू और पारसी दोनों एक ही स्थानमें रहते थे और एक धर्मके आश्रयमें जीवन बिताते थे। हिन्दू पहले खेती-बारी न करते थे, पशुपालन द्वारा जीविका निर्वाह करते थे। जब एक जगह तृणादि घट जाते थे तो वे दूसरी जगह चले जाते थे। पण्डितप्रवर मि० हौगका अनुमान है कि पारसियोंके पुरखा बहुत जल्दी इस तरहकी जीवनयात्रासे विरक्त हो गये। वे

तरे १२०, मेवाड़े ५६, पूर्विये ५५, दिल्लीवाल ५६, बट ८५८ और जागड़े १४४४ शाखाओंमें विभक्त हुए हैं।

खाती, खाता देखो।

खात्र (सं० क्ली०) खन-ष्ट्रन् किच्च। "दधिखनिभ्यां किच्च।" उण् ४।१६१। १ खनित्र, खन्ता। २ खात, गड्ढा। ३ वन, जङ्गल। ४ सूत्र, धागा। ५ जलाधारविशेष, पानी रखने का कोई पात्र।

खाद (सं० पु०) खाद भावे घञ्। भक्षण, खवाई।

खाद (हिं० स्त्री०) पांस, खेतोंमें डाला जानेवाला गोबर इत्यादि। चूना, खड़िया आदि चीजें भी खादका काम देती है। खाद डालनेसे खेतकी उपज बढ़ जाती है। खेतकी हरेक चीजके लिये अलग अलग खाद पड़ती है। शहरोंकी म्युनिसपालिटियाँ अपना कूड़ा कर्कट इकट्ठा कर खाद जैसा बरतती हैं।

खादक (सं० त्रि०) खाद-ण्वुल्। १ भक्षक, खानेवाला (मनु ४।५१) २ ऋणग्रहीता, कर्ज लेनेवाला।

"खादको वित्तहीनः स्यात् लग्नको वित्तवान् यदि।
मूलन्तस्य भवेद्देयम्॥" (नारद)

यदि ऋण लेनेवाला निर्धन और देनेवाला धनवान् हो, तो उसे मूल ही देना पड़ता है।

खादतमोदता (सं० स्त्री०) खादत मोदत इत्युच्यते यस्यां क्रियायां मयूरव्यंसकादित्वात् समासः। एक क्रिया, खाना उड़ाना। इसमें भोजन और हर्षप्रकाश करनेकी अनुमति रहती है।

खादतवमता (सं० स्त्री०) खादत वमत इत्युच्यते यस्यां क्रियायां मयूरव्यंसकादिवत् समासः। एक क्रिया खाना उगलना। इसमें भोजन और वमनकी अनुमति होती है।

खादन (सं० पु०) खादत्यनेन, खाद करणे ल्युट्। १ दन्त, दांत। (क्ली०) भावे ल्युट्। २ आहार, खवाई।

खादनकोष्ठक (सं० क्ली०) अश्वका दिहस्तोन्नत भोजन-पात्र, घोड़ेको दाना, घास खिलानेका दो हाथ ऊंचा बर्तन।

खादनीय (सं० त्रि०) खाद-अनीयर्। भोजनीय, खाया जानेवाला।

खादर (हिं० पु०) १ तराई, कछार, नीचे जमीन। इसमें बरसातका पानी बहुत दिन ठहरता है। खादर प्रायः नदी, झील आदिके तीर पड़ता है। २ चरागाह, गोचर-भूमि।

खादि (वै० त्रि०) खाद कर्मणि इन्। १ भक्ष्य, खाया जानेवाला। (पु०) २ अलङ्कारविशेष, कोई गहना। (ऋक् १।१६६।९) ३ त्राणकर्ता, त्राता, बचानेवाला। (ऋक् १।१६८।३)

खादि (हिं० स्त्री०) दोष, बुराई।

खादित (सं० त्रि०) खाद कर्मणि क्त। भक्षित, खाया हुआ।

खादितव्य (सं० त्रि०) खाद-तव्य। खादनीय, भक्ष्य, खाने लायक।

खादिम (अ० पु०) सेवक, खिदमत करनेवाला। दर-गाह वगैरहका रखवाला भी खादिम कहलाता है।

खादिम हुसेन खाँ—नवाब सीराज-उद्-दौलाके समय पुरनियाके एक सूबेदार। इन्होंने मीरजाफरको विद्रोही होने पर पुरनियामें घुसने न दिया था। इसीसे मीरजा-फरके नवाब होने पर उनके पुत्र मीरन फौजके साथ खादिमको आक्रमण करने चले, यह डर कर भाग खड़े हुए। किन्तु अचानक डेरेमें बिजली गिरनेसे मीरन मर मिटे।

खादिर (सं० त्रि०) खदिरस्य विकारः, खदिर-अञ्। १ खदिर-निर्मित, खैरका बना हुआ। २ कत्थई। (पु०) खदिरस्य अवयवः। ३ खदिरसार, कत्था। ४ विट्-खदिर, पापरी कत्था।

खादिरक (सं० त्रि०) खदिर चातुरर्थिक वुञ्। खदिर निर्वृत्त, खैरसे पैदा होनेवाला।

खादिरसार (सं० पु०) खदिर विकारे अण्, ततः कर्मधा०। खदिरवृक्षनिर्यास, कत्था। इसका संस्कृत पर्याय—खादिर, बहुतसार, मतसार, रक्तद और रक्तच है। कत्था कड़वा, तीता, उष्ण, रुचिकर, दीपन और कफ, वात, व्रण तथा कण्ठका रोग दूर करनेवाला है। (राजनिघण्टु)

खादिरायण (सं० पु०) खदिरस्य गोत्रापत्यम्, खदिर-फञ्। खदिर नामक ऋषिके वंशमें जन्मग्रहण करने-वाले।

खादिरेय (सं० त्रि०) खादिरी-ढक्। "नद्यादिभ्यो ढक्।" पा ४।२।९७। खादिरीसे उत्पन्न।

संवृत जीव आ कर सम्पृक्त होता है। एकदिन बाद उसमें कलल जन्मता है। पाँच रात्रिमें वह कलल बुद्‌बुदाका आकार धारण कर लेता है। वह वीर्य शोणित मय बुद्‌बुदमें सात रातमें मांसपेशी और दो सप्ताह बाद रक्तमांससे व्याप्त हो कर दृढ़ हो जाता है। पचीस रातमें पेशोबीज अङ्कुरित और एक मास पीछे पाँच भागोंमें विभक्त हो जाता है। इसके बाद एक भागसे कण्ठ, ग्रीवा और मस्तक ; दूसरे भागसे पीठ, मेरुदण्ड और उदर, तीसरे भागसे दोनों पैर, चौथे भागसे दोनों हाथ तथा पाँचवें भागसे पार्श्व और कटिदेश बनता है। पीछे दो मास होने पर क्रमशः समस्त अङ्ग प्रत्यङ्ग बनते रहते हैं। तीन महीनेमें सर्वाङ्गके सन्धिस्थान बनते हैं। चार मासमें अङ्गुलि और अङ्गकी स्थिरता होती है। पाँच मासमें रक्त, मुख, नासिका और दोनों कान ; छठे महीनेमें वर्ण, बल, रोमावली, दन्तपंक्ति, गुह्य और नख ; छठा मास बीत जाने पर कानोंके छेद, पायु, उपस्थ, मेढ्र, नाभि और सन्धियाँ उत्पन्न होती हैं। इस समय मन अभिभूत होता है। जीव भी चैतन्ययुक्त हो जाता है। स्नायु और सिराएं भी इसी समय उत्पन्न होतीं हैं। सातवें या आठवें मासके भीतर मांस उत्पन्न हो कर वह चमड़ेसे ढक जाता है। इस समय जीवमें स्मरणशक्ति आ जाती है, अङ्ग प्रत्यङ्ग परिपूर्ण और सुव्यक्त हो जाते हैं। नौवें या दसवें महीनेमें प्राणी ज्वराक्रान्त हो कर प्रबल प्रसववायु द्वारा चालित होता है और योनिछिद्र द्वारा वाणवेगसे बाहर निकल आता है।

चञ्चलचित्तसे गर्भसञ्चार करनेसे प्राणीका आकार विकृत हो जाता है। माताका रज अधिक हो तो कन्या और पिताका वीर्य ज्यादा हो तो पुत्र उत्पन्न होता है, तथा दोनोंका रज-वीर्य समान होनेसे नपुंसक सन्तान होती है।

किसी किसी विद्वान्‌का कहना है कि, विषम तिथिमें गर्भोत्पादन होनेसे कन्या, और सम तिथिमें गर्भोत्पादन होनेसे पुत्र उत्पन्न होता है। गर्भ बाईं तरफ रहनेसे कन्या और दाहिनी तरफ होनेसे पुत्र होता है। गर्भके समय रजका अंश अधिक होनेसे गर्भस्थ शिशु माताकी आकृति और शुक्रका अंश अधिक होनेसे पिताकी आकृति धारण करता है। मिश्रित रजोवीर्यमय गर्भ वायु द्वारा यदि दो भागोंमें विभक्त न हो तो एक सन्तान उत्पन्न होती है। दो भागोंमें विभक्त होने पर दो बच्चे पैदा होते हैं। अनेक भागोंमें विभक्त होनेसे वामन, कुब्ज आदि नाना प्रकार विकृत अथवा सर्पखण्ड इत्यादि जन्मते हैं।

सारावलिमें लिखा है—योनियन्त्रका पीड़न दुःख गर्भयन्त्रणासे भी करोड़ गुना है। पेटसे निकलते समय बच्चेको मूर्छा आ जाती है। बच्चेका मुंह मल, मूत्र, शुक्र और रजसे आच्छादित रहता है। अस्थिबन्धन प्राजापत्य वातसे जकड़े रहते हैं। प्रबल सूतिका वायु बच्चेको उलटा कर देती है। बच्चेको जन्मकी यन्त्रणा बहुत ज्यादा होती है।। बच्चेके होनेके साथ ही पूर्व दुःख भूल कर वैष्णवीमायामें मोहित हो जाता है। कभी कभी भूख और प्याससे रोने भी लगता है। इस समय—"कहां था, कहां आया, क्या किया, क्या करता हूं, क्या धर्म है, क्या अधर्म है" इत्यादि कुछ भी नहीं समझता।

वर्त्तमानके वैज्ञानिकोंने निश्चय किया है कि, जीव-जगत्‌के अति निम्न श्रेणीके जीव सबल जीवों द्वारा भक्षित वा निहत न होनेसे, वे कभी भी मरते नहीं थे अर्थात् उनके भाग्यमें सिर्फ अपमृत्यु ही बदी रहती है, उसकी स्वाभाविक मृत्यु नहीं होने पाती। इसका कारण यह है कि, मोनर (Moner), एमिबस् (Amaebas) इत्यादि अति क्षुद्र कीटाणु समूह माताके गर्भमें नहीं जन्मते, किन्तु प्रत्येक अपना अपना शरीर विभक्त कर दो स्वतन्त्र जीवमूर्ति धारण करते हैं और ये ही फिर भिन्न भिन्न जीवरूपमें परिणत होते हैं। इस प्रकार असंख्य जीवोंका आविर्भाव होता है। इनमेंसे प्रत्येक ही, यदि दूसरोंसे मारे न जाते, तो वे चिरकाल तक जीवित रहते। अब प्रश्न यह है कि, यदि इतने छोटे छोटे कीटाणु स्वाभाविक मृत्युके अधीन नहीं होते, तो जीवजगत्‌के शीर्षवर्त्ती मानव आदि उच्चश्रेणीके जीवोंको ऐसी मृत्यु क्यों होती है? विवर्त्तनवादी वैज्ञानिकोंके मतसे मनुष्य आदि जीव, अति क्षुद्र कीटाणुका पूर्ण विकाशमात्र है। कीटाणुका अमरत्व यदि स्वाभाविक धर्म है, तो उच्चश्रेणीके जीवोंका नश्वरत्व स्वाभाविक धर्म कैसे हुआ?

फल १०४१ वर्गमील है। खानदेशके उत्तर सतपुरा पहाड़ और नर्मदा नदी, पूर्वको बरार और मध्यप्रदेशका नीमार जिला, दक्षिणको सातमाला, चांदोर या अजन्ता पहाड़, दक्षिण-पश्चिम नासिक जिला और पश्चिमको बड़ोदा राज्य तथा रेवाकांठा एजेन्सीकी छोटी रियासत मागवारा है। ताप्ती नदी इस जिलाके उत्तर-पूर्व कोणमें जाके पश्चिमकी ओरको बहती और इसके दो छोटे बड़े टुकड़े करती है। इनमें बड़ा टुकड़ा दक्षिणको पड़ता जो गिरना, बोरी और पांझर नदियोंके पानीसे सिंचता है। यहां खानदेशका १५० मील लम्बा मैदान है। यह नीमारके किनारेसे नन्दुरबार तक चला गया और उपजाऊ भूमिसे भरा है। इस प्रान्तमें बड़े बड़े शहर और गांव बसे जिनमें आमके चारों ओर बागबगीचे लगे हैं। ग्रीष्मऋतुको छोड़ कर सभी समयमें खेत विभिन्न फसलोंसे लहराया करते हैं। उत्तरको सातपुरा पहाड़की तरफ़ जमीन् ऊंची हो गयी है। बीचमें और पूर्वदिकको भूमि प्रायः समान है। उत्तर और पश्चिममें घना जङ्गल है। उसमें भील लोग रहते, जो जङ्गली कन्दमूल फल खाकर जीवन निर्वाह और लकड़ी काट कर धनोपार्जन करते हैं। ताप्ती खान्देशमें घूम घूम १८० मील तक बही और १३ सहायक नदियोंकी धारा उसमें मिली है। परन्तु किसी नदीमें जहाजया नाव नहीं चल सकती और ताप्ती इतनी गहरी बहती है कि खेत सिंचनेको पानी लेनेमें बड़ी अड़चन पड़ती है। भुसावलमें रेलवेपुलके नीचे ऊपर दो झरने हैं। वर्षा ऋतुमें ताप्तीको संभा नहीं सकते, भुसावलके रेलवे पुलसे चलते फिरते हैं। इस जिलेके उत्तर-पश्चिम कोणमें ४५ मील तक नर्मदा फैली है। समयानुकूल नर्मदाकी राहसे लकड़ी समुद्र किनारे पहुंचायी जाती है। इस जिलेके नालोंमें भी बारहो महीने पानी भरा रहता है। चार बड़े पहाड़ोंके नाम—सातपुरा हत्ती, सातमाल, चांदोर या अजन्ता और पश्चिमघाट। अर्जगालना पर्वत खान्देशको नासिकसे अलग करता है। खान्देशका जङ्गल बहुत अच्छा है। इसमें कई प्रकारकी कीमती लकड़ी होती है।

वन्य पशु भी बहुत हैं। किन्तु शिकारकी भरमार होनेसे अब वाते उतने नहीं देख पड़ते। १७वें शताब्द तक इस जिलेके उत्तर पहाड़ी भूमिमें जङ्गली हाथी बच्चे देते रहे।

ऊंचाई भेदसे खान्देश जिलेका जलवायु विभिन्न पड़ता है। पश्चिमी पहाड़ों और जङ्गलोंमें और सतपुरामें पानी बहुत बरसता है, परन्तु बीचमें और दक्षिणको उसको कमी रहती है। धुलिया नगरमें औसतको देखने २२ इञ्च दृष्टि होती है। लोगोंका स्वास्थ्य शीतकालको सबसे अच्छा और ग्रीष्मऋतुको बुरा रहता है। वर्षाके पीछे भूमि सूखनेसे मलेरिया बढ़ता है। पश्चिममें गर्मीको छोड़ कर दूसरे मौसम पर आबहवा बहुत बिगड़ जाती है।

खान्देशका पूर्वकालीन इतिहास ई०के १५० वर्ष पहलेसे १२९५ ई० तक लगा है। प्रथमोक्त समय बहुत पुराने शिलाफलकको पढ़के निकाला गया है। फिर १२९५ ई०को एकाएक मुसलमान बादशाह अला-उद्दीन् दिल्लीसे खान्देश पहुंचे थे। महाभारतमें तूर्णमाल और असीरगढ़ नामक पार्वत्य दुर्गोंकी बात लिखी है। तूर्णमालके राजा पाण्डवोंसे लड़े थे। असीरगढ़ अश्वत्थामाका पुण्यपीठ जैसा माना जाता है। लोगोंमें प्रवाद है कि ई०से बहुत पहले वहां अवधसे गये राजपूत राज्य करते थे। आभीरोंको उन्हीं राजपूतोंका वंशधर मानते हैं। थोड़े दिनके लिये पश्चिमके क्षत्रियोंने आभीरोंको दबादिया था। ई० ५वें शताब्दको चालुक्यवंश ने बल पकड़ा फिर स्थानीय राजाओंका राज्य चला। अला-उद्-दीनके खान्देश पहुंचते समय असीरगढ़के चौहान राजा राजत्व करते थे।

१७६० ई०को मराठोंके असीरगढ़ अधिकार करते समय यहां मुसलमानी अमलदारी रही। इसके बीचमें दिल्लीसे सूबेदार मुकरर होकर खान्देश शासन करते आते थे। मुहम्मद बीन-तुगलकके अधीन १३२५से १३४६ तक बरारके एलिचपुरसे इसका शासनकार्य चला। १३७०से १६०० ई० तक फरुकी वंशके अमीरोंने इस प्रान्तका प्रबन्ध किया। वह नाममात्र गुजरातके सुलतानोंकी वश्यता मानते थे, वस्तुतः वह स्वाधीन रहे। १५९८ ई०को मुगल खानदेश पहुंचे थे। इसी

जन्मकृत् (सं० पु०) जन्म-कृ-क्विप् पित्वात् तुगागमः। पिता, जन्मदाता।

जन्मक्रिया (जन्मसंस्कार)—जैनोंके षोड़श-संस्कारोंमेंसे एक संस्कार। इसका द्वितीय नाम प्रियोद्भवसंस्कार है। यह संस्कार बालकके जन्मग्रहणके दिन किया जाता है। इस दिन गृहस्थाचार्य वा कोई द्विज घरमें देवशास्त्र गुरुकी पूजा करते हैं। अनन्तर सात पीठिकाके मन्त्र पर्यन्त होम होनेके बाद इस मन्त्रको पढ़ कर आहुति दी जाती है।

"दिव्यनेमिजयाय स्वाहा। परमनेमिविजयाय स्वाहा। आर्हन्त्य नेमिविजयाय स्वाहा॥"

अनन्तर नवजात शिशुके शरीर पर अर्हन्तमूर्तिका गन्धोदक छिड़क देवें और बालकका पिता इस प्रकार कहता हुआ आशीर्वाद दे—

"कुलजातिवयोरूपगुणैः शीलप्रजान्वयैः।
भाग्याविधवतासौम्यमूर्तित्वैः समधिष्ठिता॥
सम्यग्दृष्टिस्तवाम्बेयमतस्त्वमपि पुत्रकः।
सम्प्रीतिमाप्नुहि त्रीणि प्राप्य चक्राण्यनुक्रमात्।"

इसके बाद दुग्ध और घृतसे बने हुए अमृतसे शिशुकी नाभिको सींचना चाहिये। नाल काटते समय यह मन्त्र बोला जाता है—"घातिजयो भव श्रीदेव्यः तेजातक्रियां कुर्वन्तु।" अनन्तर बालकको स्नान करावें, मन्त्र इस प्रकार है—"मन्दराभिषेकार्हो भव।" फिर पिताको उस पर तण्डुल निक्षेप करना चाहिये, मन्त्र—"चिरञ्जीव्यात्" इसके बाद पितामाता और कुटुम्बियोंको मिल बालकके मुंहमें औषधिविशिष्ट घृत लगाना चाहिये, मंत्र—"नश्यात् कर्ममलं कृत्स्नं।" फिर बालकका मुंह माताके स्तनसे लगाना चाहिये, मन्त्र—

"विश्वेश्वरास्तन्यभागीभूयात्।" उस दिन यथाशक्ति दान देना चाहिये और बालकके नालको किसी धान्यशाली पवित्र भूमिमें गाड़ देना चाहिये। भूमि खोदनेका मन्त्र—"सम्यग्दृष्टे सर्वमातः वसुन्धरे स्वाहा।" गड्ढेमें पांचों रंगके पांच रत्न निक्षेप कर एवं यह मंत्र पढ़ते हुए कि, "त्वत्पुत्रा इव मत्पुत्रा भूयासुश्चिरजीविनः।" नाल गाड़ देवें। इधर बालककी माताको उष्ण जलसे स्नान कराना चाहिये। मंत्र यह है—"सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्ये आसन्नभव्ये विश्वेश्वरे विश्वेश्वरे ऊर्जितपुण्ये ऊर्जितपुण्ये जिनमाता जिनमाता स्वाहा।" (जैन आदिपुराण)

जातकर्म देखो।

जन्मक्षेत्र (सं० क्ली०) जन्मनः क्षेत्रं। जन्मभूमि, जन्मस्थान।

जन्मग्रहण (सं० पु०) उत्पत्ति।

जन्मज्येष्ठ (सं० त्रि०) जन्मना ज्येष्ठः। प्रथमजात, जो सबसे पहले पैदा हुआ हो।

जन्मतिथि (सं० पु०-स्त्री०) जन्मन उत्पत्तेः स्थितिः कालविशेषः ६ तत्। १ वह तिथि जिसमें जन्म हुआ हो, जन्मदिन। २ उसकी सजातीय तिथि। स्त्रीलिङ्गमें-विकल्पसे ङीप् होता है। जन्मतिथी, वर्षगांठ।

प्रतिवर्ष जन्मतिथिके दिन जन्मतिथिकृत्य करना चाहिये। तिथितत्त्वमें जन्मतिथिकृत्य और उसकी व्यवस्थाके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—

जहां पहले दिन नक्षत्रयुक्त तिथिका लाभ हुआ हो, और दूसरे दिन सिर्फ तिथि ही रहती हो, वहां पहले दिन, तथा जहां दोनों ही दिन नक्षत्रवर्जित तिथि हो, वहां दूसरे दिन जन्मतिथि मानी जाती है।

जिस वर्ष जन्ममासमें जन्मतिथि जन्मनक्षत्रयुक्त हो, उस वर्ष सम्मान, सुख और सुस्थता लाभ होता है।

शनिवार या मङ्गलवारमें यदि जन्मतिथि पड़े, और उसमें यदि जन्मनक्षत्रका योग न हो; तो उस वर्ष पद पदमें विघ्न आया करते हैं। ऐसा होने पर सर्वौषधि मिश्रित जलमें स्नान, देवता, नवग्रह और ब्राह्मणोंकी अर्चना करनेसे शान्ति होती है। वार दोषकी शान्तिके लिए मोती तथा जन्मनक्षत्रका योग न होने पर उसकी शान्तिके लिए काञ्चन दान करना पड़ता है।

जन्मतिथिकृत्यमें गौण चान्द्रमासका उल्लेख हुआ करता है। यदि किसी वर्ष लौंदके महीनेमें जन्ममास पड़ जाय, तो उस मासको त्याग कर चान्द्रमासमें जन्मतिथिका अनुष्ठान करना चाहिये।

जन्मतिथिके दिन तिलका तेल या तिलको पीस कर शरीरमें लगाना चाहिये और तिलयुक्त जलसे स्नान कर तिलदान, तिलहोम, तिलवपन और तिल भक्षण करना चाहिये। इस प्रकारसे तिल व्यवहार करनेसे किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं आती।

पहले लोग उनसे बहुत डरते थे। बलवेके समय उन्होंने बड़े बड़े अत्याचार किये हैं। रेलवे और गाड़ियोंके चलनेसे बनजारोंकी बड़ी क्षति हुई है। खानदेशके अधिकांश मुसल्मान शेख कहलाते हैं। सैकड़े पीछे ७०से ज्यादा आदमी खेती किसानी करते हैं।

भूमि विभिन्न प्रकारकी मिलती, कहीं उपजाऊ और कहीं जलकी पड़ती है। स्थानीय कृषक इसे चार भागोंमें बांटते हैं—काली पांढरी (सफेद), खारन और बुरकी (सफेद तथा नोनिया)।

खानदेशमें ज्वार और बाजरा बहुत बोया जाता है। ताप्ती उपत्यका और पश्चिम अञ्चलमें गेहूं भी खूब होता है। दालोंमें अरहर, चना, उड़द और मूंगकी खेती की जाती है। तेलहनमें तिल और अलसी प्रधान है। रूई हींगनघाट और धारवाड़के बीजसे उत्पन्न होती है। जहां सींचनेको पानी मिलता, ऊख थोड़ी बहुत लगा दी जाती है। मिर्च, सौंफ और धनिया खास मसाले हैं। फुलवाड़ियोंमें पानके भीट खूब लगाये जाते हैं।

खानदेश जिलेमें नीमार और बरारसे मंगाये गये अच्छे अच्छे गाय बैल देख पड़ते हैं। घोड़े छोटे और बेकाम होते हैं।

खेतोंकी सिंचाई गिरना और पांझर नदीके बांधों और झीलों और तालावोंसे की जाती है। पश्चिम ऐसी कोई नदी नहीं है, जिसमें बांधके चिह्न न मिलें। इससे मालूम होता है कि पहले वहां कितने ही बांध थे। कई एक नहरें भी निकाली गयी हैं। जिलेके अधिकांश भागमें पानी ऊपर ही मिलता है। किन्तु सातपुरामें और ताप्तीसे ८।१० मीलके बीच १०० हाथ गहरे तक कूएं खोदने पड़ते है।

खानदेश कनाड़ाके पास बम्बई प्रान्तका सबसे बड़ा जङ्गली जिला है। कितना ही जङ्गल सरकारने लकड़ी और घासके लिये सुरक्षित रखा है। परन्तु यहां लकड़ीका खर्च पैदायशसे ज्यादा है। महुवा, साखू, बबूल और शीशम बहुत होता है।

यहां खनिज पदार्थ बहुत कम निकलते हैं। इमारती पत्थर हरेक जगह होता है। भुसावलके पास वाघर नदीगर्भमें सबसे बड़ी पत्थरकी खान है। काटी मट्टीमें चूनेका कङ्कड़ निकलता है। रूईको गांठे बांधने और कपास ओटनेके कई कारखाने खानदेशमें चलते हैं। जनका मोटा कम्बल इस जिलेमें लगभग सब जगह बुना जाता है। १८७४ ई०को जलगांवमें रूई कातने और कपड़ा बुननेका एक कारखाना खुला था। भुसावलमें रेलवेका कारखाना है।

रफतनीकी सबसे बड़ी चीज रूई है। बम्बईके भाटिये स्थानीय व्यापारियों और किसानोंसे उसे खरीद गांठे बांध बांध सीधी विलायत भेज देते हैं। बाहर भेजी जानेवाली दूसरी चीजोंमें अनाज, तेलहन, मक्खन नील, मोम और शहद प्रधान है। बाहरसे नमक, मसाले, धातुओं, कपड़े, सूत और शक्करकी आमदनी होती है। जलगांव और भुसावलमें व्यापार बढ़ रहा है।

पहले खानदेशमें बड़ी सड़के न थीं। पहले पहल बम्बई-आगरा-रोड बनाया गया, जो इस जिलेमें मालेगांव, धूलिया और शीरपुर होकर निकलता है। धूलियासे सूरत और म्हासवाड़को भी सड़क लगी है। यहां कुल ८५३ मील राह बनी; ३२५ मील पक्की है। ८५० मील तक उसकी दोनों तर्फ पेड़ोंकी कतारें लगायी गयी है। इस जिलेके दक्षिणभागमें नांदगांवसे भुसावल तक १२० मील ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला-रेलवे चलती है। भुसावलमें उसके बंट जानेसे एक शाखा जबलपुर और दूसरी नागपुरको जाती है। १९०० ई०को जलगांवसे आमलनेर और चालीसगांवसे सूरतमें रेलवे खुली थी। ताप्ती वेली-रेलवे सूरतसे आमलनेरको जाती है।

ताप्ती और छोटी छोटी नदियोंमें एकाएक भयानक बाढ़ आ सकती है। १९वें शताब्दकी ६ बार बाढ़ आयी, जिससे इस जिलेने बड़ी हानि उठायी। १८२२ ई०को ताप्तीने ६५ गांव बहाये और पचास डुबाये थे। इससे ढाई लाख रुपयेका धक्का लगा। १८७२ ई०को पांझरमें बाढ आनेसे धूलियाके ५०० घर बह गये। नदीके सामनेका एक गांव गुम हुआ था। कुल १५२ गांवोंको नुकसान उठाना पड़ा और १६ लाखका माल असबाब बिगड़ गया।

जन्मपादप (सं० पु०) जन्मनः पादप। वह वृक्ष जिस के नीचे किसीका जन्म हो।

जन्मप्रतिष्ठा (सं० स्त्री०) जन्मना प्रतिष्ठा। १ जन्मस्थान। २ माता।

जन्मभ (सं० क्ली०) १ जन्मनक्षत्र। २ जन्मलग्न। ३ जन्मराशि। ४ जन्मनक्षत्रादि, सजातीय नक्षत्रादि।

जन्मभाज् (सं० पु०) जीव, प्राणी, जानवर।

जन्मभाषा (सं० स्त्री०) मातृभाषा, स्वदेशकी बोली।

जन्मभू (सं० स्त्री०) जन्मभूमि।

जन्मभूमि (सं० स्त्री०) १ जन्मस्थान, वह स्थान जहां किसीका जन्म हुआ हो। २ स्वदेश, वह देश जहां किसीका जन्म हुआ हो।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।" अयोध्या माहात्म्यमें रामचन्द्रका जन्मस्थान भी जन्मभूमि नामसे वर्णित है। यहां आ कर स्नान दान करनेसे राजसूय और अश्वमेध यज्ञके फल होते हैं।

जन्मभृत् (सं० त्रि०) जन्म बिभर्ति जन्म-भृ-क्विप्। प्राणी, जीव।

जन्ममास (सं० पु०) १ वह मास जिसमें किसीका जन्म हुआ हो। २ जन्ममासके सजातीय मास। ज्योतिष के मतसे जन्ममासमें चौरकर्म, विवाह, कर्णवेध और यात्रा निषिद्ध है। वशिष्ठके मतानुसार जन्ममासमें जन्मदिन मात्र, गर्गके मतसे ८ दिन मात्र, यवनाचार्यके मतसे १० दिन मात्र तथा भागुरिके मतसे समस्त मास ही उक्त कार्य वर्जनीय हैं।

जन्मयोग (सं० पु०) कोष्ठी, जन्मपत्री।

जन्मराशि (सं० पु०) वह राशि (लग्न) जिसमें किसीका जन्म हो।

जन्मरोगी (सं० पु०) वह जो जन्मकालसे ही रोगका भोग करता आ रहा हो।

जन्मर्क्ष (सं० पु०) जन्म-ऋक्ष। १ वह नक्षत्र जिसमें किसीका जन्म हुआ हो। २ प्रथम नक्षत्रका नाम।

जन्मलग्न (सं० क्ली०) वह लग्न जिसमें किसीका जन्म हो। लग्न देखो।

जन्मवत् (सं० त्रि०) जन्मन्-मतुप्। प्राणी, जीव।

जन्मवर्त्म (सं० क्ली०) जन्मनः वर्त्म पन्थाः। योनि, भग।

जन्मवसुधा (सं० स्त्री०) जन्मस्थान, जन्मभूमि।

जन्मविधवा (सं० स्त्री०) अक्षतयोनि, वह स्त्री जिसका पति उसके बचपनमें ही मर गया हो, वह विधवा जिसका अपने पतिसे सम्पर्क न हुआ हो।

जन्मवैलक्षण्य (सं० क्ली०) पैतृक पद्धतिका विपरीत आचरण।

जन्मशय्या (सं० स्त्री०) जन्मनिमित्त शय्या, प्रसवार्थ शय्या, वह शय्या जिस पर किसीका जन्म होता हो।

जन्मशोध (सं० पु०) वह जो जन्म भरके लिए किया गया हो।

जन्मसाफल्य (सं० क्ली०) जन्मनः साफल्यं। जन्मोद्देश्यकी सफलता।

जन्मस्थान (सं० क्ली०) १ जन्मभूमि। २ मातृगर्भ, माताका गर्भ। ३ कुण्डलिमें वह स्थान जिसमें जन्म समयके ग्रह रहते हैं।

जन्य (सं० पु०) १ जन्मवाला, वह जिसका जन्म हो। (त्रि०) २ उत्पन्न।

जन्माधिप (सं० पु०) १ शिवका एक नाम। २ जन्म राशिका स्वामी। ३ जन्मलग्नका स्वामी। जन्मप देखो।

जन्मना (हिं० क्रि०) जन्मा देना, उत्पन्न कराना।

जन्मान्तर (सं० क्ली०) अन्यत् जन्म जन्मान्तरं। १ अन्यजन्म, दूसरा जन्म। जन्मनः अन्तरं। २ लोकान्तर।

जन्मान्तरकृत (सं० क्ली०) अन्य जन्मका अनुष्ठित कर्म, दूसरे जन्मका किया हुआ काम।

जन्मान्तरीण (सं० त्रि०) जो जन्मान्तरमें हो गया हो या होनेवाला हो।

जन्मान्तरीय (सं० त्रि०) १ जन्मान्तर सम्बन्धीय, दूसरे जन्मका। २ जो जन्मान्तरमें हो गया हो या होनेवाला हो।

जन्मान्ध (सं० त्रि०) आजन्म दृष्टिहीन, जन्मका अन्धा।

जन्मावच्छिन्न (सं० त्रि०) यावज्जीवन, जन्म भर।

जन्माशौच (सं० क्ली०) जन्मसम्बन्धी अशौच, सूतक।

जैनमतानुसार—जब कोई जन्म ग्रहण करता है तब उसके कुटुम्बीजन १० दिन तक देव शास्त्र गुरु पूजा वा मुनि आदिको आहार नहीं दे सकते।

भाल। खानातलाशी किसी छिपी चीजको ढूंढनेके लिये होती है।

खानादारी (फा० स्त्री०) गार्हस्थ्य, गृहस्थी।

खानापीना (हिं०) खानपान देखो।

खानापुरी (हिं० स्त्री०) खाली जगहका भराव।

खानापुर—१ बम्बई प्रान्तके बेलगांव जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १५° २२´ तथा १५° ३७´ उ० और देशा० ७४° ५´ एवं ७४° ४४´ के बीच पड़ता है। खानापुरका रकबा ६३३ वर्गमील और आबादी लगभग ८५५८६ है। इस देशमें दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिमको पहाड़ और जङ्गल है। खेतीका कहीं नाम नहीं। इसके उत्तर-पश्चिमस्थ पर्वत प्रधानतः उच्च लगते हैं। केन्द्रस्थल, उत्तरपूर्व और पूर्वमें जमीन बहुत अच्छी है।

२ बम्बईके सतारा जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १७° ८´ तथा १७° २७´ उ० और देशा० ७४° १४´ एवं ७४° ५१´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ५१० वर्गमील और लोकसंख्या ८५८३१ है। यहां बहुत कम जङ्गल है। यरला नदी खानापुरके उत्तरसे दक्षिणको कृष्णासे मिलनेके लिये निकल गयी है।

३ बम्बई प्रान्तीय सतारा जिलेके खानापुर तालुकका एक गांव। यह अक्षा० १७° १५´ उ० और देशा० ७४° ४३´ पू०में बीटासे लगभग १० पूर्वको अवस्थित है। इसकी जनसंख्या प्रायः ५२२८ है। भूपालगढ़के पास पड़नेसे यह पुराने समयमें अपने निकटस्थ प्रदेशका सदर रहा। नगरमें पत्थर और मट्टीकी दीवारों और बुर्जदार फाटकोंका भग्नावशेष विद्यमान है। इस गांवकी मसजिदमें अरबी और कनाडी भाषाके शिलाफलक लगे हैं।

खानाबदोश (फा० वि०) गृहहीन, उठल्लू, जहां तहां रह जानेवाला।

खानाशुमारी (फा० स्त्री०) गृहगणनाकार्य, मकानोंका शुमार लगानेकी हालत।

खानि (सं० स्त्री०) खनिरेव पृषोदरादिवत् वृद्धिः। खनि, खदान।

खानिक (सं० क्ली०) खानेन खननेन निर्वृत्तम्, खन-ठञ्। १ कुड्यच्छेद्य, दीवारका गड्ढा। २ रन्ध्र, अवाह-रात।

खानिल (सं० त्रि०) खानं खननं शिल्पत्वेनास्त्यस्य, खान बाहुल्कात् इलच्। सन्धिचोर, नकबजन, सेंध लगानेवाला।

खानिष्क (सं० क्ली०) अति शुष्क मांस, बहुत सूखा हुआ गोश्त।

खानी (सं० स्त्री०) खनि वा ङीष्। खनि, खदान।

खानुवा—राजपूतानाके भरतपुर राज्यकी रूपवास तहसीलका एक गांव। यह अक्षा० २७° २´ उ० और देशा० ७७° ३३´ पू०में बाणगङ्गाके नदीके वामतट निकट भरतपुर नगरसे प्रायः १३ मील दक्षिण अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १८५७ होगी। यहीं १५२७ ई०के मार्च मासको बाबर और मेवाड़-राणा संग्रामसिंहके अधीन राजपूत राजाओंके बीच घोर युद्ध हुआ। प्रथमतः बादशाहने हारने पर शराब न पीनेका शपथ लिया और सोने चांदीके आबखोरों और पियालोंका तोड़ करके गरीबोंमें बांट दिया था। परन्तु पीछेको राजपूतोंके हारने पर राणा जख्मी हो करके मुश्किलसे भाग पाये और डूंगरपुरके रावल उदयसिंह काम आये।

खानोदक (सं० क्ली०) खानाय पानाय उदकं यत्र, बहुव्री०। नारिकेलफल, नारियल, डाभ।

खान्य (वै० त्रि०) खन-ण्यत्। खनन क्रिया जानेवाला, जो खुदने लायक हो। (लाट्या० श्रौ० ८।३।४५)

खापगा (सं० स्त्री०) खस्य आकाशस्य आपगा, ६-तत्। गङ्गा, सुरसरि।

खापट (हिं० स्त्री०) भूमिविशेष, किसी किस्मकी जमीन। इसमें लोहेका भाग अधिक रहता है। खापटकी मट्टी कड़ी और भारी पड़ती और पानी पड़नेसे लसलसाने लगती है। इसको केवल वर्षा ऋतुमें ही आकर्षण कर सकते हैं। खापटमें सिवा धानके और कुछ नहीं उपजता। इसकी मट्टी कपसा या काबिस कहलाती है। काबिससे कुम्हार बर्तन बनाया करते हैं।

खापा—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेकी रामटेक तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २१° २५´ उ० और देशा० ७८°

रोहिणीव्रत कहा है। सो एकादशी व्रतकी अपेक्षा भी उसका फल अधिक है।

स्मार्तों और वैष्णवोंके मतभेदसे जन्माष्टमीके व्रतको व्यवस्था अलग अलग है। स्मार्तोंमें रघुनन्दन भट्टाचार्य और माधवाचार्यकी व्यवस्था एक जैसी नहीं होती। रघुनन्दनके मतसे वशिष्ठ प्रभृतिके वचनानुसार जिस दिन जयन्तीयोग आता, जन्माष्टमी व्रत किया जाता है। किन्तु दोनों दिन वह योग पड़नेसे दूसरे दिन व्रत होता है। जयन्तीयोग न मिलनेसे रोहिणीयुक्त अष्टमीमें व्रत करनेकी व्यवस्था है। यदि दोनों दिन रोहिणीयुक्त अष्टमी हो, तो दूसरे दिन व्रत करना चाहिये। रोहिणी योग न होनेसे जिस रोज निशीथ समयमें अष्टमी रहे, जन्माष्टमीका व्रत करना चाहिये। दोनों दिन निशीथ समयमें अष्टमी मिलने या किसी भी दिन न रहनेसे परदिन ही कर्तव्य है। वैष्णवोंके मतसे जिस रोज पलमात्र भी सप्तमी होती, जन्माष्टमी व्रत नहीं करते। नक्षत्रयोगके अभावमें नवमीयुक्त अष्टमी ग्राह्य है, किन्तु सप्तमीविद्धा अष्टमी नक्षत्रयुक्त होते भी छोड़ देना चाहिये। (हरिभक्तिविलास)

भविष्यपुराण और भविष्योत्तरमें लिखा है—उपवासके पूर्व दिन हविष्य बना कर खाना चाहिये। इस दिन प्रातःकृत्य आदिके समापनान्तमें उपवासका सङ्कल्प करते हैं। सप्तमी तिथि रहनेसे उसमें "सप्तम्यान्तियावारभ्य" जैसा तिथिका उल्लेख होगा। सङ्कल्पके बाद "धर्माय नमः धर्मेश्वराय नमः धर्मपतये नमः, धर्मसम्भवाय नमः गोविन्दाय नमः" आदि उच्चारणपूर्वक प्रणाम कर निम्न लिखित मन्त्र पढ़ना चाहिये—

वासुदेवं समुद्दिश्य सर्वपापप्रशान्तये।
उपवासं करिष्यामि कृष्ण तुभ्यं नमाम्यहम्॥
अद्य कृष्णाष्टमीदेवीं नमःश्चंद्र सरोहिणीम्।
अर्चयित्वोपवासेन भोक्ष्येऽहमपरेऽहनि॥
एनसो मोक्षकामोऽस्मि यद्गोविन्दत्रियोनिजम्।
तन्मे मुंच मां त्राहि पतितं शोकसागरे॥
आजन्ममरणं यावद् यन्मया दुष्कृतं कृतम्।
तत्प्रणाशाय गोविन्द प्रसीद पुरुषोत्तम॥"

फिर आधी रातको प्रणव आदि नमः शब्दान्त अपने अपने नामरूप मन्त्रसे वासुदेव, देवकी, वसुदेव, यशोदा, नन्द, रोहिणी, चण्डिका, वामदेव, दक्ष, गर्ग तथा ब्रह्माकी पूजा कर 'श्रीवत्सवक्षः पूर्णांगं नीलोत्पलदलच्छवि' इत्यादि भविष्योत्तरीय ध्यानपूर्वक "ओं श्रीकृष्णाय नमः" मन्त्रसे श्रीकृष्णकी पूजा करनी पड़ती है। अर्घ्य, स्नान, नैवेद्य घृत तिल होम और शयनके विशेष विशेष मन्त्र हैं। श्रीकृष्णकी पूजाके बाद श्रीपूजा और उसके पीछे देवकी पूजा कर्तव्य है। कृष्ण यशोदा प्रभृतिकी स्वर्ण आदि निर्मित प्रतिमूर्ति स्थापन करते हैं। पूजाके अन्तमें गुड़ और घीसे वसुधारा दी जाती है। उसके बाद नाड़ीछेदन, षष्ठीपूजा और नामकरण आदि संस्कार करना चाहिये। इन सब कार्योंके पीछे चन्द्रोदयके समय चन्द्रके उद्देश हरिस्मरणपूर्वक शङ्खपात्रमें जलपुष्प, चन्दन तथा कुश ले "क्षीरोदार्णवसम्भूत" इत्यादि मन्त्रसे अर्घ्य दे "ज्योत्स्नायाः पतये तुभ्यं" इत्यादि मन्त्रसे चन्द्रको प्रणाम करते हैं। चन्द्रप्रणामके बाद "अनघं वामनं" इत्यादि मन्त्रद्वारा नामकीर्तन एवं "प्रणमामि सदा देवं" इत्यादि मन्त्र द्वारा श्रीकृष्णको प्रणाम कर "त्राहि मां" इत्यादि मन्त्रसे प्रार्थना की जाती है। फिर स्तवपाठ और श्रीकृष्णका जन्मवृत्तान्त जो अष्टमीकी कथामें उल्लिखित है, श्रवण कर नाचते गाते रात्रि बिता देना चाहिये। (कृष्ण देखो।) दूसरे दिन सवेरे विधिपूर्वक श्रीकृष्णकी पूजा कर दुर्गामहोत्सव करते हैं। उसके बाद ब्राह्मणभोजन करा और उनको सुवर्ण आदि दक्षिणासे सन्तुष्ट कर "सार्वाय सर्वेश्वराय" इत्यादि मन्त्रसे पारण तथा 'भूताय' इत्यादि मन्त्रसे उत्सव समापन किया जाता है। स्त्रियों और शूद्रोंको पूजा आदिमें मन्त्र पढ़ना नहीं पड़ता। (तिथितत्त्व)

स्मार्त रघुनन्दनने ब्रह्मवैवर्त प्रभृति पुराणोंके वचनानुसार पारण सम्बन्धमें ऐसी व्यवस्था बतलायी है—उपवासके दूसरे दिन तिथि और नक्षत्र दोनोंका अवसान होनेसे पारण करना पड़ता है। जिस स्थल पर महानिशासे पहले तिथि और नक्षत्रमें किसी एकका अवसान आता और दूसरेका अवसान महानिशाको अथवा उसके बाद दिखलाता, एकके अवसानसे ही पारणका काम चल जाता है। जब महानिशाके समय तिथि और नक्षत्र दोनों रहते हैं तब उत्सवके पीछे प्रातःकालमें पारण करते हैं।

खारवार—द्राविड देशीय जातिभेद। युक्तप्रदेशके मिर्जा-पुर जिलेकी ओर भी यह लोग बहुत रहते हैं। किसी समय इनको एक ऊंची जाति समझा जाता था। कहते हैं कि विहार-प्रान्तीय हजारीबाग जिलेका खैरागढ नामक स्थान खारवार-राजवंशने भी अपने नाम पर बसाया है। कोई कोई इन्हें क्षत्रियवर्ण बतलाता है।

खारवाल—एक हिन्दू जाति। यह लोग अधिकतर राज-पूतानेमें रहते और मारवाडमें क्षार भूमिसे लवण प्रस्तुत करते हैं। नमकका कानून बन जानेसे खारवाल अब खेती आदि करके अपना काम चलाते हैं। कहते हैं बादशाह कुतुब-उद्दीन गोरीने जब इन्हें सताया, यह खारवाल बननेसे बच गये।

खारा (हिं० वि०) १ नमकीन्, क्षार। २ कटु, कड़ुवा, खानेमें बुरा मालूम पडनेवाला। (पु०) ३ वस्त्रभेद, धारीदार कोई कपड़ा। ४ घास भूसा वगैरह बांधनेका एक जालीदार बंधना। ५ आम तोडनेका जालीदार थैला। ६ झावा, खांचा। यह बांस, सरकण्डे और रहंटे वगैरहका बनता है। ७ कोई बड़ा पिंजडा। यह बांसका बनता है। ८ कोई आसन। यह सरकण्डे आदिसे उलटे टोकरे—जैसा बनाया जाता है। विवाह-के समय खत्री लोग प्रायः वरकन्याको खारा पर ही बिठलाते हैं।

खारां—बलूचिस्तानके किलात राज्यका एक प्रकारसे स्वाधीन भाग। यह अक्षा० २६° ५२' तथा २८° १३' उ० और देशा० ६२° ४८' एवं ६६° ४' पू०के बीच पडता है। इसका क्षेत्रफल १४२१० वर्गमील है। इसके उत्तर रासकोह पहाड, दक्षिण सियाहां पर्वतश्रेणी, पूर्व गार पर्वत और पश्चिमको ईरानकी सीमा है। यह देश जङ्गली समझा जाते भी पहाडोंके नीचे और वहो तथा माशखेल नदियोंके पास जोतने बोनेकी अच्छी जमीन है। बाकी सब जगह रेतीली है। उसमें पहाडोंसे आ करके नदियां गिरतीं, परन्तु बालूको पार करके समुद्र तक नहीं पहुंच सकतीं। गरूक और कोराकां नदी भी बडी है। माचिर-के बीजको दुर्भिक्षमें लोग खाते और कुलकुश्ताकी भी रोटी बनाते हैं। माशखेल नदीके पास जङ्गली गधोंके झुण्ड घूमा करते हैं। यहां सांप बहुत हैं। जूनसे सित-म्बर मास तक बडे जोरसे अन्धड़ चलता है। रातको खारांमें कभी गर्मी नहीं पड़ती।

खारांका प्राचीन इतिहास अविदित है। १७वीं शताब्दी-के अन्तको खारांके नौशेरवानी सरदार इब्राहीम खाँ कन्दाहारके गिलजाई घरानेकी नौकरी करते थे। यह लोग अपनेको कियानी मलिकोंका वंशधर बतलाते हैं। १७३४ ई०के लगभग नादिरशाहने स्थानीय पुरदिल खाँ-के विरुद्ध एक अभियान भेजा था। इस बातका प्रमाण मिलता कि नादिर शाहके समय खारा किरमानमें लगता था। परन्तु सम्भवतः १म नसीर खाँने उसको किलातके अधीन किया और जब तक मीरखुदादाद खाँ और आजाद खाँमें मेलजोल रहा, वह अफगानोंके हाथ नहीं लगा। इसके अंगरेजोंको मिलने पर सरदारको ६०००) रु० वार्षिक भत्ता बांधा गया। यहां मुसलमानोंके मक-बरोंमें ऊंटों, घोडों और दूसरे जानवरोंकी तसवीरें बनी हैं। देगवारके गवाचिगका मकबरा सबसे अच्छा है।

इसकी लोकसंख्या प्रायः ५५०० है। यहांके सभी लोग बंजरा हैं और चटाइयोंके झापडों और कम्बलोंके खीमोंमें रहते हैं। खारा किलातमें सदर है, आबादी कोई १५०० होगी। लोगोंकी साधारण भाषा बलूची है, परन्तु पूर्वप्रान्तमें बराहूई भी बोलते हैं। सिवा खेतीके लोग ऊंट पैदा करने और जानवर रखनेका काम भी करते हैं। मुसलमान सुन्नी धर्मके होते हैं।

माशक और माशखेलमें खोरारके बाग हैं। यहांके ऊंट, भेड़ और बकरे अफगानस्तान तथा बलूचिस्तान-को बिकने जाते हैं। बैलोंकी संख्या बहुत कम है। झामूं माशखेल और बादसुलतानमें अच्छा नमक होता है। यहांसे घी और ऊन बाहर भेजते और कपड़ा, तम्बाकू तथा अनाज मंगा लेते हैं।

खारांमें प्रायः पानी नहीं बरसता। खारांके सरदार कलातवाले पोलिटिकल एजेण्टके अधीन हैं। खाराको आमदनी कोई १०००००) रु०) है।

खारि (सं० स्त्री०) खं आकाशं आरति, आ-ऋ-क गौरादि-त्वात् ङीष् वा ह्रस्वः। धान्यादिका परिमाणविशेष, अनाजकी एक तौल। ४ आढ़कका द्रोण और ४ द्रोण-की खारी होती है। (वैद्यकनिघण्ट)

भी वैसा फल नहीं मिलता। चैतन्ययुक्त मन्त्र एक बार पीछे जप करते ही जपकर्ताको ग्रन्थिभेद सर्वाङ्ग वृद्धि, आनन्द, अश्रु, पुलक, देहावेश और सहसा गद्गद भाषा हो जाती है।

पद्म, स्वस्तिक वा वीरासन आदिमें बैठ जप करना चाहिये, अन्यथा वह निष्फल हुआ करता है।

पुण्यक्षेत्र, नदीतीर, गिरिगुहा, गिरिशृङ्ग, तीर्थस्थान, सिन्धुसङ्गम, वन, उपवन, विल्ववृक्षके मूल, गिरितट देवमन्दिर, समुद्रतीर अथवा जहां चित्त प्रसन्न हो सके, वहां जप करना उचित है। निर्जन गृहमें सौ गुना, गोष्ठमें लाख गुना, देवालयमें करोड़ गुना और शिवके सन्निधानमें अनन्त पुण्य लाभ होता है। गुरुके मुखसे प्राप्त मन्त्र ही सर्वसिद्धिदायक है। इच्छाक्रमसे सुन अथवा कौशलसे देख किंवा पत्र पर लिखित मन्त्र अभ्यास पूर्वक जप करनेसे कोई अनर्थ नहीं उठता। किन्तु पुस्तकमें लिखा है, मन्त्र देख जो जप करता, ब्रह्महत्या जैसा उसको पाप पड़ता है।

जपजी (हिं॰ पु॰) सिक्खोंका एक पवित्र धर्मग्रन्थ। इस ग्रंथका नित्य पाठ करना वे अपना कर्त्तव्य समझते हैं

जपतप (हिं॰ पु॰) पूजापाठ।

जपता (सं॰ स्त्री॰) जपस्य जपकारकस्य भावः तल्-टाप्। १ जप करनेका काम। २ जप करनेका भाव।

जपन (सं॰ क्ली॰) जप भावे ल्युट्। जप। जप देखो।

"संन्यास एव वेदान्ते वर्त्तते जपनं प्रति।"

(भारत शांति ११६ अ॰)

जपना (हिं॰ क्रि॰) १ किसी वाक्य वा वाक्यांशको धीरे धीरे देर तक कहना या दोहराना। २ खा जाना, जल्दी जल्दी निगल जाना। ३ किसी मन्त्रका सन्ध्या, यज्ञ वा पूजा आदिके समय संख्यानुसार धीरे धीरे बार बार उच्चारण करना।

जपनी (हिं॰ स्त्री॰) १ माला। २ गोमुखी, गुप्ती।

जपनीय (सं॰ लि॰) जप-अनीयर्। जप करने योग्य, जो जपने लायक हो।

जपपरायण (सं॰ त्रि॰) जप एव परमयनं आश्रयो यस्य बहुव्री॰। जपासक्त, जपनशील, जो जप करता हो।

जपमाला (सं॰ स्त्री॰) जपस्य जपार्था माला। जपके निमित्त व्यवहृत होनेवाली माला, जिस मालाको अवलम्बन कर जप क्रिया जावे काम्यभेदसे जपमाला नाना प्रकार बन सकती है।

प्रधानतः जपमाला तीन प्रकारकी है—करमाला, वर्णमाला और अक्षमाला। (मत्स्यसूक्त) तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठा इन चार अङ्गुलियों द्वारा मालाकी कल्पना करना पड़ती है। कनिष्ठाङ्गुलिके तीन पर्व, अनामिकाके तीन पर्व, मध्यमाका एक पर्व और तर्जनीके तीन पर्व सब मिला कर दश पर्वकी एक माला बनती है। इस मालाके मेरु जैसे मध्यमाङ्गुलीके ऊपर दो पर्व समझना चाहिये। (सनत्कुमारस॰) इसीका नाम करमाला है। उसमें जप करनेका क्रम इस प्रकार है—अनामिकाके मध्य पर्वसे आरम्भ कर कनिष्ठाके ३ पर्व ले क्रममें तर्जनीके मूलपर्व पर्यन्त १० पर्व पर जप करना पड़ता है। ऐसे ही नियमसे दश बार जप करने पर एक शत संख्या हो जाती है। अष्टादश, अष्टाविंशति, अष्टोत्तर शत प्रभृति अष्टाधिक जपके स्थल पर अनामिकाके मूलपर्वसे आरम्भ कर कनिष्ठाके ३ पर्व ले क्रमशः तर्जनीके मध्यपर्व पर्यन्त ८ पर्वमें आठ बार जप करते हैं। (सनत्कुमारी॰)

शक्तिमन्त्रके जपमें करमाला अन्य प्रकार है। उसमें अनामिकाके २ पर्व, मध्यमाके ३ पर्व, कनिष्ठाके ३ पर्व और तर्जनीका मूलपर्व १० पर्व ले कर एक माला बनती है। तर्जनीका मध्य पर्व और अग्र पर्व उस मालाका मेरु जैसा कल्पित होता है। मेरुके स्थानमें जप निषिद्ध है। इसमें अनामिकाके मध्य पर्वसे आरम्भ कर कनिष्ठाङ्गुलीके ३ पर्व ले क्रममें मध्यमाके ३ पर्वसे तर्जनीके मूल पर्यन्त १० पर्वमें जप करते हैं। उस प्रकारकी मालामें आठ बार जपनेके स्थल पर अनामिका अङ्गुलीकी जड़से आरम्भ करके कनिष्ठाके ३ पोर ले कर क्रमशः मध्यमाके मूल पर्व पर्यन्त ८ पर्वमें आठ बार जप करना पड़ता है।

त्रिपुरासुन्दरीके मंत्र-जपमें और ही करमाला होती है। उसमें मध्यमाका मूल एवं अग्र, अनामिकाका मूल तथा अग्र, कनिष्ठा और तर्जनीका मूल, मध्य तथा अग्र पर्व १० पर्वकी माला बनाते हैं। अनामिकाका

वशेष देखनेसे समझ पड़ता, कि वह एक बहुत बड़ी इमारत रही। वर्तमान नगरसे बाहर ईंटका एक बड़ा हौज है। इसके शिलाफलकमें लिखा है कि १६५८ ई०को किसी ब्राह्मणने उसे बनाया था। नगरके मध्यमें जो एक पत्थर गड़ा, हिन्दू और मुसलमानोंके महल्लोंकी सीमा समझा जाता है। नगरके मध्य कर्णाट जैनोंका निवास और एक जैन मन्दिर है।

खारुवाँ (हिं० पु०) १ किसी किस्मका रङ्ग। यह आलसे बनता और मोटे कपड़े रंगनेमें लगता है। २ मोटा लाल कपड़ा। यह कालपीमें बहुत बनता है।

खारेजा (हिं० पु०) कुसुमभेद। यह पञ्जाबमें बहुत उपजता और कंटीला रहता है। खारेजाका दाना छोटा पड़ता और किसी काममें नहीं लगता। इसके रङ्ग रङ्गके फूल आते जो देखनेमें बहुत सुहाते हैं। खारेजाका हिन्दी पर्याय—कंटियारी, बनबबरे और वनकुसुम है।

खारेपथार—पूना जिलेकी एक अधित्यका। यह पुरन्धर गिरिदुर्गसे १४ मील पूर्व जेजुरी नामक गांवके पास एक पर्वतमें पड़ती है। इस पर बहुत पुराने समयका खंडोबा देवका मन्दिर है। लोग भक्तिसे इन खंडोबा देवकी पूजा करते हैं। पूनाके रहनेवालोंको विश्वास है कि वह हाथमें तलवार ले सबकी रक्षा करते हैं। खंडोबाकी मूर्तिके पास ही उनकी स्त्री मलसाबाईकी प्रतिमूर्ति है।

खारोद—मध्यप्रदेशके रायपुर जिलेका एक गांव। यह श्रीहरिनारायणनगरसे ३ मील उत्तर पड़ता है। यहां लक्ष्मणेश्वर शिवलिङ्ग है। मन्दिर ऊंचे चबूतरे पर खड़ा है। इसमें ९३३ चेदि संवत्की एक शिलालिपि मिली है। कोई कोई कहता कि रत्नपुरके राजा ताम्रध्वजके भाई अखध्वजने वह मन्दिर बनाया था। यहां बहुतसे मन्दिरोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। एक मन्दिरमें आदित्यदेव ७ घोड़ों पर चढ़े विराज रहे हैं। मन्दिर ईंट और पत्थरका बना है। कहते हैं कि रावणके भ्राता खर और दूषण वहां रहते थे। उन्हींके नामानुसार 'खारोद' नाम भी निकला है।

खार्कार (सं० पु०) खरस्य इदं खर-अण् खार करोति प्रकाशयति, खार-कृ-अण् पृषोदरादिवत् अकार लोपे साधुः। गर्दभजातिका शब्द, गदहोंका रेंकना।

(भागवत ३।१७।११)

खार्जूर (सं० क्लो०) खर्जूरस्येदम्, खर्जूर-अण्। १ मद्यविशेष, किसी किस्मकी शराब। इसको बनानेकी प्रणाली यह है—कटहल, पकी खजूर, अदरक और सोमलताका रस मिला कर शराब पकानेके तरिकेसे पकाने पर जो शराब बनती खार्जूर ठहरती है। २ खजूरमद्य, खजूरका शराब। खार्जूर वातकोपन रूक्ष, कफघ्न, लघु, कषाय, मधुर, हृद्य, सुगन्धि और इन्द्रियशोधन होता है। (सुश्रुत)

खार्जूरकर्ण (सं० पु०) खर्जूरकर्णस्यापत्यम्, खर्जूरकर्ण-अण्। खर्जूरकर्ण ऋषिके अपत्य।

खार्जूरसुरा (सं० स्त्री०) खार्जूर देखो।

खार्जूरायण (सं० पु०) खर्जूरस्य गोत्रापत्यं, खर्जूर-फक्। खर्जूर नामक ऋषिके गोत्रापत्य।

खार्वुजेय (सं० त्रि०) खर्वुजस्येदम्, खर्वुज-ढक्। १ खर्वुज सम्बन्धीय। (क्लो०) २ रसालविशेष।

(भावप्रकाश)

खाल (हिं० स्त्री०) १ त्वक्, चमड़ा, मनुष्य पशु आदिके देहका बहिरावरण। २ अधौड़ी, आधा चरसा। ३ भाथी धौंकनी। ४ शव, मुर्दा। ५ निम्नभूमि, नीची जमीन्। ६ खाड़ी। ७ अवकाश, खाली जगह। ८ गाम्भीर्य, गहराई। (पु०) ९ नाला।

खालत्य (सं० क्लो०) खलतेर्भावः, खलति-ष्यञ्। कपालरोग, खोपड़ीकी एक बीमारी। यह बालोंको जला देता है। (चरक)

खालफूंका (हिं० पु०) धौंकनी चलानेवाला, जो भाथी लगाता हो।

खालसा (हिं० वि०) १ एकाधिकृत, जो एक हीके इख्तियारमें हो। २ सरकारी।

खालसा—पञ्जावका सिख सम्प्रदाय। सिख सम्प्रदाय नानकने चलाया था। गोविन्दने नानककी चलायी रीति नीतिमें फिर संस्कार किया। इस तरह सिखोंमें दो दल हो गये। कुछ लोग गोविन्दके मये संस्कृत

करना चाहिये। इसमें पुत्रजीव, पद्माक्ष, रुद्राक्ष और इन्द्राक्ष मालासे जप नहीं करते।

तन्त्रराज तथा कुमारीकल्पमें कहा है—त्रिपुराके जपमें रक्तचन्दन एवं रुद्राक्ष माला, गणेशके जपमें गज दन्तनिर्मित माला, वैष्णव जपमें तुलसी माला और कालिका, छिन्नमस्ता, त्रिपुरा एवं तारिणीके जपमें रुद्राक्षमालासे काम ले सकते हैं। (किन्तु पुरश्चरणके सिवा दिवसमें रुद्राक्षमाला व्यवहार नहीं करते।) नीलसरस्वती और ताराके जपमें महाशङ्खमयी मालाके व्यवहारका विधान है। उपर्युक्त शक्तियोंको छोड़ दूसरी शक्तिका मन्त्रजप करनेमें रुद्राक्ष नहीं चलता। कर्ण और नेत्रान्तरालके मध्यस्थ ललाटास्थि द्वारा जो माला बनायी जाती, महाशङ्खमयी कहलाती है।

मुण्डमालातन्त्रके मतानुसार महातान्त्रिकोंके लिये धूमावतीके जप विषयमें श्मशानजात धुस्तूरमाला प्रशस्त है। नाड़ी तथा रक्तवान द्वारा ग्रथित नराङ्गुलिकी अस्थिमाला भी सर्वकामप्रद होती है।

हरिभक्तिविलासमें लिखा है कि गोपालमन्त्रके जपमें पद्मवीजकी मालासे सिद्धि, आमलकीकी मालासे सकल अभीष्टपूर्ति और तुलसी मालासे अचिरात् मुक्ति होती है।

तंत्रमें इसकी भी व्यवस्था है कि, किस प्रकारके सूत्रमें जपमाला पिरोयी जाती है। गौतमीयतंत्रके मतानुसार ब्राह्मण-कन्याका हस्तनिर्मित कार्पाससूत्र ही धर्मार्थकाममोक्षप्रद होता है। शान्ति, वशीकरण, अभिचार, मोक्ष ऐश्वर्य तथा जयलाभके लिये शुक्ल, रक्त और कृष्णवर्ण पट्टसूत्र व्यवहार्य है। किन्तु दूसरे सब रंगोंसे लालसूत्र ही प्रशस्त है। सूतके तीन डोरे एकमें मिला एक एक बार प्रणव जप कर मणि ले सूतके बीच बीच गूंठना और ब्रह्मग्रन्थि देना चाहिये। माला बन जाने पर उसका संस्कार करना पड़ता है। नव अश्वत्थपत्र पद्माकारमें रख कर वीज उच्चारणपूर्वक उसमें माला स्थापन करते हैं। फिर परिष्कृत जल और पञ्चगव्य द्वारा शोधन किया जाता है। उस समय पढ़नेका मन्त्र यह है—

"ओं सद्योजात प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः।
भवेऽभवेऽनादिभवे भजस्व मा भवोद्भवाय नमः॥"

वामदेव मन्त्रपाठ पूर्वक जपमालाको चन्दन, अगुरु और कर्पूरसे लेपन करना चाहिये। फिर प्रत्येक मणि शतवार जप कर शुद्धकी जाती है। उसके बाद जपमालाकी प्राणप्रतिष्ठा कर स्व स्व इष्टदेवताकी पूजा करते हैं।

रुद्रयामलके मतसे विष्णुके लिये जपमाला बनानी हो तो, वाग्भव तथा लक्ष्मीवीज उच्चारणपूर्वक "अक्षादि मालिकायै नमः" रूपसे मालाकी पूजा करनी चाहिये।

योगिनीतन्त्रमें लिखा है—मालासंस्कार कर देवता भावके सिद्ध्यर्थ १०८ बार होम किया जाता है। होम करनेमें अपारक होने पर द्विगुण अर्थात् प्रत्येक मणिमें दो सौ बार जप करते हैं। जपके समय कम्पन होनेसे सिद्धि हानि, करभ्रष्ट होनेसे विनाश और सूत्र टूटनेसे मृत्यु होती है। जप करनेके बाद मालाको कर्णदेश वा उससे ऊंची जगह रखना चाहिये।

निम्नलिखित मंत्रसे मालाकी पूजा कर यत्नपूर्वक छिपा रखते हैं—

"त्वं माले सर्वभूतानां सर्वसिद्धिप्रदा मता।
तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नमोऽस्तु ते॥"

रुद्रयामलके मतानुसार जिस मालाकी मन्त्र द्वारा यथाविधि प्रतिष्ठा नहीं होती, वह कोई भी फल नहीं देती। उस प्रकारकी अप्रतिष्ठित मालासे जप करने पर देवताको भी क्रोध आता है।

आजकल बहुतसे पण्डित नीलतन्त्रका वचन उद्धृत कर कहते हैं—विषयी गृहस्थ भोजन, गमन, दान और गृहकर्ममें लगे रहते भी सर्वदा सर्वस्थान पर माला फेर सकते हैं। वैसे स्थल पर स्फाटिकी वा अस्थिमयी माला धारण करना न चाहिये—रुद्राक्ष, पुत्रजीव, रक्तचन्दनवीज, प्रवाल, शङ्ख और तुलसीकी माला ही प्रशस्त है। किन्तु यह प्रमाण नीलतन्त्र वा बृहन्नीलतन्त्र प्रभृति ग्रंथोंमें नहीं मिलता। वरं गायत्रीतंत्रमें लिखा है—राह चलते चलते माला द्वारा जप करना न चाहिये, उससे हानि होती और जपकारी सर्पयोनि पाता है। किन्तु राहमें करमालाका जप कर सकते हैं। इस प्रकारके विरोधसे मालूम पड़ता है कि जप करनेवाले गमन कालमें भी करमाला वा पर्वसन्धि द्वारा मंत्र जप

कानून हुमायूं नामक ग्रन्थ रचना किया। यह ग्रन्थ अबुल फजलके अकबीर नामेमें उद्धृत है। ये सम्राट् हुमायूंके साथ गुजरात भी गये थे। राहमें १५३५ ई०को इनका मृत्यु हुआ। शव दिल्ली ले जा करके अमीर खुसरूकी कब्रके पास इनका लडा गया।

खाविन्द (फा० पु०) १ पति, खसम। २ स्वामी, मालिक।

खावी (हिं० स्त्री०) वर्षके आरम्भमें नौकरोंको पहलेसे दिया जानेवाला धन वा अन्न।

खाश्मरी (सं० स्त्री०) गाम्भारी वृक्ष। काश्मरी देखो।

खास (अ० वि०) १ मुख्य, बडा। २ स्वीय, अपना। ३ स्वयं, खुद। ४ खालिस, विशुद्ध, ठेठ। (स्त्री०) ५ मोटे कपडेकी कोई थैली। इसमें चीनी डाल कर पीछे बोरेमें भरते हैं। ६ बनियोंके नमक चीनी वगैरह रखनेकी थैली।

खासकलम (अ० पु०) अपना लेखक, निराला मुंशी, प्रायवेट सेक्रेटरी।

खासगी (हिं० वि०) मालिकका, निजका, निराला।

खासतराश (फा० पु०) राजनापित, बादशाह या राजाके बाल बनानेवाला नाई।

खासतहसील (अ० स्त्री०) जिला तहसील, जिस तहसीलमें बडा हाकिम रहता हो।

खासदान (हिं० पु०) पानदान, पान रखनेका डब्बा।

खासनवीस (अ० पु०) खासकलम, अपनी ही लिखा-पढी करनेका रखा हुआ मुंशी।

खासपुर—आसाम प्रान्तीय कछार जिलेके सिलचर उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा० २४° ५५´ उ० और देशा० ९२° ५७´ पू०में बरायल पहाडके दक्षिण मुख पर अवस्थित है। १८वीं शताब्दीके आरम्भसे अन्तिम राजाके १८३०में मरने तक खासपुर कछारके राजाओंकी राजधानी रहा। १७९० ई० को कछारके राजा और उनके भाई ताम्रमयी गो प्रतिमामें प्रवेश करके हिन्दू क्षत्रिय बन गये। पहली राजधानीका निदर्शन ४ मन्दिरों, २ अन्य भवनों और ३ सरोवरोंके भग्नावशेषमें मिलता है।

खासबरदार (फा० पु०) राजाकी सवारीके आगे आगे चलनेवाला नौकर।

खासबाजार (फा० पु०) राजाके महलोंके पासका बाजार। राजा खास बाजारसे ही चीजें खरीदते हैं।

खासा (अ० पु०) १ राजभोग, बादशाहोंका खाना। २ राजाके चढनेका हाथी घोडा, बादशाहकी अपनी सवारीका जानवर। ३ वस्त्रविशेष, कोई सूती कपडा। यह पतला और सफेद होता है। ४ पिष्टकविशेष, किसी किस्मकी मोयनपडी पुरी।

खासा (हिं० वि०) १ उत्तम, अच्छा। २ नीरोग, तन्दुरुस्त। ३ मंझोला। ४ सुन्दर, सुडौला, देखनेमें भला। ५ सम्पूर्ण, पूरा। ६ उपयोगी, कामयद।

खासियत (अ० स्त्री०) १ स्वभाव, आदत। २ गुण, खूबी

खासिया—आसामका एक जिला, यह अक्षा० २४° ५८´ तथा २६° ७´ उ० और देशा० ९०° ४५´ एवं ९२° ५१´ पू०के बीच पडता है। इसका क्षेत्रफल ६०२७ वर्गमील है। खासियाका २१६० वर्गमील भूभाग अंगरेजोंके अधिकारमें है। लोकसंख्या प्रायः २ लाख निकलेगी। खासिया जिलेका बडा शहर शिलङ्ग है।

खासिया और जयन्ती दो पहाड ब्रह्मपुत्र तथा सुर्मा नदीकी अववाहिकाके बीच पडते हैं। आजकल दोनों एक जिले जैसे गिने जाते है। खासिया जिलाके उत्तर कामरूप तथा नवगांव, पूर्वको नवगांव और कछार, दक्षिणको श्रीहट्ट (सिलहट) और पश्चिमको गारो पहाड है। फिर यह जिला ३ बड़े भागोंमें बंटा है—स्वाधीन खासिया पहाड, ग्राम और बहदादार। सरदार और लिन्दो नामक कई एक अधिनायक खासिया अच्छल शासन करते है।

अंगरेजोंके अधिकृत खासिया पहाडमें चौबीस परगने हैं—शिमाङ्ग, लायत, लिङ्गोट, लायतकारो, बपारङ्ग वा वाहलङ्ग, बासकादिङ्ग, माव-बे-लरकार, मावसमाई, मिनतेङ्ग, मावमलुह, माव पुसकिर्तियङ्ग, नोङ्गजिरी, नोङ्गखिलकिन, नोङ्गवा, नोङ्गरियात, नोङ्गकरो, तुमिया, रामब्रायल, सायतसोपेन, तिङ्गरियाङ्ग, तिङ्गराङ्ग, तिरना, उमानिया, मरविसू और जतिमा।

जयन्तीमें नीचे लिखे २५ परगने लगते हैं—अमबी, चपटुक (कूकी), दरङ्ग, जोवाई लङ्गकलूट, लङ्गसी, लाकादोङ्ग, मीमरोरात, (मिकिर), मूलसोई (कूकी)

२ एक प्रकारका अनाज रखनेका बड़ा बरतन। ३ एक प्रकारका मटमैले रंगका जानवर। यह घोड़े और गदहेके जैसा होता है। इसके सारे शरीर पर लंबी लंबी सुन्दर और काली धारियां होती हैं। इसके कान बड़े गरदन छोटी और पूंछ गुच्छेदार होती है। यह एक चपल, जङ्गली और तेज दौड़नेवाला जन्तु है। दक्षिण अफ्रिकाके जंगलोंमें और पहाड़ोंमें इसके झुंडके झुंड पाये जाते हैं। यह बहुत कठिनतासे पकड़ा या पाला जाता है। यह प्रायः एकान्त स्थानमें ही रहना पसन्द करता है। मनुष्यों आदिको आहट पा कर यह शीघ्र भाग जाता है। जेबरा देखो।

जबरिया भील—मध्यभारतके अन्तर्गत भूपाल एजेन्सीके अधीन एक जागीर। जिस समय मालव प्रदेशका बन्दोबस्त हुआ था, उस समय पिण्डारी-सर्दार चीतूके भाई राजनखांको खिलियानगर, काजूरी और जबरियाभील इन तीन गांवोंकी जागीर मिली थी। राजनखांकी मृत्युके बाद, अंग्रेजोंने उनके पांच पुत्रोंको उक्त जागीर बांट दी थी। राजा बख्सको जबरियाभील और जबरी प्राप्त हुआ था। १८७४ ई०में राजा बख्सकी मृत्युके बाद उनके पुत्र जमाल बख्स इसके उत्तराधिकारी हुए थे।

जबरेस बन्दीजन—हिन्दीके एक कवि। ये रीवा नरेशकी सभामें रहते थे।

जबलपुर—१ मध्यप्रान्तका उत्तर डिविजन। यह अक्षा० २१° २६′ एवं २४° २७ उ० और देशा० ७८° ४′ तथा ८१° ४५′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १८६५० वर्ग मील है। इसमें ५ जिले लगते हैं। सागर, दमोह, जबलपुर, मण्डला और सिवनी। भूमि पार्वत्य और जलवायु अनुकूल है। लोकसंख्या कोई २०८१४८६ होगी। इस विभाग ११ नगर और ८५६१ गांव बसे हैं।

२ मध्यप्रान्तके जबलपुर डिविजनका जिला। यह अक्षा० २२° ४८′ एवं २४° ८′ उ० और देशा० ७८° २१′ तथा ८०° ५८′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३९१२ वर्ग मील है। इसके उत्तर तथा पूर्व मैहर, पन्ना एवं रीवां राज्य, पश्चिम दमोह जिला और दक्षिण नरसिंहपुर, सिवनी तथा मण्डला पड़ता है। दक्षिण-पूर्वमें नर्मदा नदी आ गई है। खुले मैदानके उत्तर-पश्चिम विन्ध्य पर्वत और दक्षिण-पश्चिम सातपूरा पर्वतश्रेणी है। कङ्कर बहुत मिलता है। पत्थर भी कई प्रकारका होता है। म्यांगानीज, तांबा और लोहाकी खानि है। नासपाती और अननास अच्छे लगते हैं। जलवायु सुखद है।

पहले यहां कलचुरि राजपुतोंका राज्य था। सम्भवतः १२वीं शताब्दीसे रीवां या बघेलखण्डका अभ्युदय होने पर उनका बल घटा। कोई १५वीं शताब्दीके समय गोंड़ (गढ़मण्डल) वंशका राजत्व हुआ। १७८१ ई०में गोंड़ वंशके पराभूत होने पर जबलपुर मराठोंके सागर प्रान्तमें लगता था। १७९८ ई०में यह नागपुरके भोंसला राजाओंको दिया गया और १८१८ ई०में ब्रिटिश गवर्मेण्टने पाया।

जबलपुर जिलेकी लोकसंख्या प्रायः ६८०५८५ है। इसमें ३ नगर और २२९८ ग्राम बसे हैं। ब्राह्मणोंकी जमींदारी ज्यादा है। पशु बहुत अच्छे नहीं होते। कच्चे लोहेकी कई जगह खान हैं। इसे भट्ठियोंमें गला गला कर २।) मन बेचते हैं। चूनेका पत्थर भी मिलता है। पत्थरके गहने बनाते हैं। पहले सूती कपड़ा हाथसे खूब बुना जाता था। औरतोंकी रङ्गीन साड़ियां आज भी हाथसे बुनते हैं। गेहूं और तेलहनकी बड़ी रफ्तनी है। सन, घी और जङ्गली चीजें भी बाहर भेजी जाती हैं। बम्बईसे कलकत्ताको जाने वाली बड़ी रेलवे लाइन जिलेके बीचसे निकलती और ८३ मील लम्बी पड़ती है। सिवा इसके ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे और बङ्गाल नागपुर रेलवे भी है। १०८ मील पक्की और ३०१ मील कच्ची सड़क लगी है। मालगुजारी कोई ८७७०००) रु० है।

३ मध्यप्रदेशके जबलपुर जिलेकी दक्षिण तहसील। यह अक्षा० २२°४८′ उ० तथा २३°३२′ और देशा० ७९°२१′ एवं ८०°२६′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १५१६ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ३३२४८८ है। इसमें एक नगर और १०७६ गांव बसे हैं। मालगुजारी ४५४०००) और सेस ५१०००) रु० हैं।

४ मध्यप्रदेशके जबलपुर डिविजन, जिले और तहसीलका सदर। यह अक्षा० २३° १०′ उ० और देशा० ७९°

उत्तर आसाम और सुर्मा उपत्यकाके बीच आने जानेकी राह बनानेको कई एक अंगरेजोंके साथ कोई प्रबन्ध किया था। उसी समय कुछ अङ्गरेज नोङ्खलाव नगरमें जाकर रहने लगे। उनके साथ थोड़े बङ्गाली भी थे, जिनके दुर्व्यवहारसे खासिया लोग बिगड़ पड़े। इसीसे १८२८ ई० की ४थी अप्रेलको खासियाओंने अङ्गरेजोंको आक्रमण किया था। इस युद्धमें अङ्गरेज कम्पनीके दो लेफटीनेण्ट और कई एक सिपाही मारे गये। फिर खासियोंका उत्पात धीरे धीरे बढ़ा था। ब्रुटिश गवर्नमेण्ट अधिक ठहर न सकी। खासियाओंको दबानेके लिये दलका दल ब्रुटिश सैन्य भेजा गया, परन्तु साहसी खासिया लोगोंने सहजमें वश्यता स्वीकार न की। धनुर्वाण मात्र उनका हथियार है। उसीके बल पर खासियाओंने सैकड़ों अङ्गरेजोंको मार डाला था। अनेक कष्टोंके पीछे १८३३ ई०का खासियाओंने वश्यता मानी।

१८३५ से १८५४ ई० तक नोङ्खलाव नगरमें एक राजनीतिक अङ्गरेजी कर्मचारी रहा, फिर वह चेरापूंजीको उठ गया।

जयन्ती पहाड़के लोग अपना परिचय 'पनार' जैसा देते और खासिया उन्हें 'सनतेङ्ग' जैसा पुकारते हैं। १८३५ ई० से वह भी ब्रुटिश प्रजा जैसे समझे जाते हैं। इसी वर्षको जयन्तीराज राजेन्द्रसिंहने नवगांवसे कई लोगोंको पकड़ मंगा कर कालीमन्दिरमें बलि किया था। इसी दोषपर अङ्गरेज सरकारने उन्हें राज्यसे हटा दिया।

खासिया—आसाम विभागके अन्तर्गत खासिया पर्वतकी रहनेवाली एक जाति। इनके मुंह और सारे अङ्गकी बनावट देख बहुतसे लोग मङ्गोलीय या तूरानी जाति-की शाखा-जैसा अनुमान करते हैं। इसके शरीरका रङ्ग गहरा कालामिला पीला लगता है। नाक चपटी, मुंह बैठा और ठीक बना, हुआ, आंखें, छोटी और काली, पुतलीके पास पीलापन और ओंठ मोटे होते हैं। इनमें स्त्रीपुरुष दोनों बड़े बड़े बाल रखते, केवल निर्धन लोग शिर मुंडा डालते हैं। खासिया तेजस्वी और बलिष्ठ हैं। यह स्वभावसे ही विनयी, वीर और हास्यमुख होते हैं। इन्हें सदा सर्वदा परिश्रम करना अच्छा लगता है। खासिया उतने चतुर और शिल्पी नहीं हैं, परन्तु सीखनेसे सभी प्रकारके काम कर सकते हैं। दरिद्र लोग सनी कपड़ेका घुटने तक कुर्ता पहनते हैं। जो अपेक्षाकृत धनी हैं, मत्थे पर सूती या रेशमी कपड़ा बांधते और चद्दर डालते हैं।

इनमें साधारणतः १५से १८ तक स्त्रियों और १८से २४ वर्ष तक पुरुषोंका विवाह हो जाता है। विवाहकी चाल बहुत सीधी है। किसी किसी स्थानमें वरकर्ता और कन्याकर्ता हो विवाह पक्का कर लेते हैं। सगाईके पीछे वर अपने भाईबन्दों और कुटुम्बियोंको साथ लेकर कन्याके घर जाता और वहीं भोजन करके रातको लेट लगाता है। दूसरे दिन वह कन्याको अपने घर ले आता है। कन्याके साथ भी उसके कुटुम्बी आदि वर-घर पहुंच वैसे ही खाते पीते हैं। दो दिन वरके घर रहकर नव दम्पती कन्याके घर पहुंचते हैं। विवाह हो जाने पर वरको जीते जी श्वशुरके घर पर ही रहना पड़ता है। कोई विशेष कारण न आनेसे इनका विवाह बन्धन कैसे टूट सकता है। स्त्री यदि बांझ हो, तो मावाप या दलके सरदारके सामने कारण दिखा करके विवाहका बन्धन तोड़ते हैं। इसी अवसर पर स्त्रीपुरुषका पांच कौड़ियां अदल बदल करनेको दी जाती हैं। फिर दोनोंसे पूंक कर उन्हें फेंक देते हैं। कौड़ियां फेंक देने पर विवाहका बन्धन सदाके लिये टूट जाता है। एक बार स्त्रीपुरुषका विवाह बन्धन टूट जानेसे फिर उनका एक दूसरेके साथ विवाह नहीं हो सकता। परन्तु भिन्न परिवारमें विवाह करनेकी क्षमता दोनोंको होती है। खासिया-ओंमें विधवा विवाह चलता है। किन्तु वह विवाहकी प्रथा एकबारगी ही निषिद्ध है। छिनारा इनमें महापाप माना जाता है। जो ऐसे बुरे काममें लगा रहता, विशेष ताड़ना सहता है।

विवाहके पीछे पति श्वशुरके घर जाकर रहता। स्त्रीको वंशमर्यादाको बढ़ाया करता है। उसके पुत्र भी मातुल-वंश सम्भूत-जैसा परिचय देते हैं। पिताके वंशका कोई मान नहीं रहता। विवाहमें

भाग उत्तराधिकारीके अभावसे अंगरेजी राज्यमें मिल गया। इसका वर्तमान क्षेत्रफल ५२४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १०५३५७ है। इसमें ८ नगर और ७८ ग्राम हैं। यहां एक मृदु प्रस्तर पाया जाता है। मोटा सूती कपड़ा और कम्बल बनाते हैं। राजा ब्राह्मण हैं और दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशमें प्रथम श्रेणीके सरदार समझे जाते है। उन्हें गोद लेनेकी सनद मिली है। आय प्रायः ५॥ लाख है। इसमें ६ म्यु,निसपालिटियां हैं।

२ बम्बई प्रान्तके जमखण्डी राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० १६° ३०´ उ० और देशा० ७५° २२ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १३०२६ है। यहां ५०० करघे चलते हैं। रेशमी कपड़ेकी भी बड़ी तिजारत है। प्रति वर्ष ६ दिन तक उमारामेश्वरका मेला लगा रहता है।

जमघट (हिं० पु०) मनुष्योंकी भीड़, ठट्ट, जमावड़ा।

जमज (सं० त्रि०) यमज-जुड़वां। यमज, यमजात।

जमजोहरा (हिं० पु०) जाड़ेके दिनोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका पक्षी। यह उत्तरपश्चिममें पाया जाता है। गरम ऋतु आने पर यह फारस और तुर्किस्तानको चला जाता है। इसकी लम्बाई लगभग एक बालिश्तकी होती है। जैसे जैसे ऋतु बदलती जाती है वैसे वैसे इसके शरीरका रंग भी बदला जाता है।

जमडाढ (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका अस्त्र। यह कटारीकी तरह होता है। इसकी नोक बहुत तेज और आगेकी ओर झुकी रहती है। समय आने पर इसे शत्रुके शरीरमें भोंकते हैं, जमधर।

जमदग्नि (सं० पु०) एक वैदिक ऋषि। ऋक्, यजुः, साम, अथर्व आदि सभी वेदोंमें इसका परिचय मिलता है। (ऋक् ८।१०१।८, शुक्लयजुः ३।६२, अथर्व ४।२९।३) सर्वानुक्रमणिकाके मतसे—इन्होंने बहुतसे ऋक् प्रकट किये थे। आश्वलायनश्रौतसूत्रमें भृगुवंशीय बतलाये गये हैं। (आश्व० श्रौ० १२।१०) ऋग्वेदके बहुतसे मन्त्रोंमें विश्वामित्रके साथ ये भी वशिष्ठके विपक्षरूपमें वर्णित हुए हैं। (ऋक् १०।१६७।४, ७।९६।३) और ऐतरेय ब्राह्मणमें (७।१६) यह लिखा है कि, नरमेध यज्ञके समय विश्वामित्र होता, जमदग्नि अध्वर्यु और वशिष्ठ ब्रह्म पद पर नियुक्त थे। महाभारत, हरिवंश, विष्णुपुराण आदिसे जमदग्निका इस प्रकार परिचय मिला है—

ये महर्षि ऋचीकके पुत्र थे। ऋचीक देखो। ये कान्यकुब्जराजकी कन्या सत्यवतीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। सत्यवती पतिव्रता थीं उनके प्रति सन्तुष्ट हो कर महर्षि ऋचीकने सत्यवती और उनकी माताके लिये दो चरु बना कर कहा—"तुम ऋतुस्नान करनेके उपरान्त उदुम्बर वृक्षको आलिङ्गन कर इस चरुको, तथा तुम्हारी माता अश्वत्थ वृक्षको आलिङ्गन कर दूसरे चरुको ग्रहण करें, तो निश्चयसे तुम दोनों पुत्रवती हो आओगी।" इस पर सत्यवती चरु ले कर माताके पास गईं और उनसे उन्होंने सब बात खोल कर कह दी। उनकी माताने उत्कृष्ट पुत्र पानेके लिए सत्यवतीको वृक्ष और चरु बदलनेके लिए अनुरोध किया, सत्यवती माके अनुरोधको टाल न सकीं और वे भी इस बातसे सहमत हो गईं। यथासमय दोनों गर्भवती हुईं। ऋचीकने पत्नीके गर्भलक्षण देख कर कहा—'मुझे मालूम होता है कि, तुम लोगोंने चरु और वृक्ष बदल लिए हैं। मैंने चरु बनाते समय इस बातका ध्यान रक्खा था कि, जिससे तुम्हारे गर्भसे विश्वविख्यात ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण और तुम्हारी माताके गर्भसे महाबल पराक्रान्त क्षत्रिय जन्मग्रहण करे। अब उसका विपर्यय होनेसे मालूम होता है कि, तुम्हारे गर्भसे उग्रकर्मा क्षत्रिय और तुम्हारी माताके गर्भसे श्रेष्ठतम ब्राह्मणका जन्म होगा।" यह सुन कर सत्यवती बहुतही लज्जित हुईं और पतिके पैरों पड़ कहने लगी—'मेरे प्रति प्रसन्न हों, मैं चाहती हूं कि मेरा पुत्र उग्र क्षत्रिय न हो, वरन् पौत्र क्षत्रिय हो तो कुछ क्षति नहीं।" ऋचीकने ऐसा ही मञ्जूर कर लिया। यथासमय सत्यवतीने जमदग्निको और उनकी माता (गाधिराजपत्नी)ने विश्वामित्रको प्रसव किया। पिताके प्रभावसे यद्यपि जमदग्नि क्षत्रिय न हुए, किन्तु तो भी वे सर्वदा क्षत्रियोचित शरक्रीड़ामें अनुरक्त रहते थे। छत्र देखो। इन्होंने प्रसेनजित्-राजकन्या रेणुकाके साथ विवाह किया था, रेणुकाके गर्भसे इनके रुमन्वान्, सुषेण, वसु, विश्वावसु और परशुराम ये पांच पुत्र जन्मे। ऋचीकके कथनानुसार परशुराम क्षत्रियधर्मा हुए थे।

खास्सा (अ० पु०) खासियत देखो।

खिंग (फा० पु०) श्वेतवर्ण अश्वभेद, नुकारा, सफेद रङ्गका एक घोड़ा। इसके मुंहले पट्ठे और चारों सुमोंका रङ्ग कुछ कुछ गुलाबी और सफेद होता है।

खिंगरी (हिं० स्त्री०) पिष्टकभेद, मठरी, किसी किस्मका मोयनदार पूरी। यह मैदेकी बनती और बहुत पतली तथा छोटी रहती है।

खिंचना (हिं० क्रि०) १ आकर्षित होना, खिंच जाना, घसिटना। २ निकलना, बाहर होना। ३ तनना, कड़ा पड़ना। ४ जाना, बढ़ना। ५ खपना, घुसना। ६ भबकेसे बनना, उतरना। ७ कलमसे निकलना। ८ रुकना, बन्द होना। ९ पहुंचना, चला जाना। १० बिगड़ना, अच्छा न लगना। ११ चढ़ना, महंगा पड़ना।

खिंचवाना (हिं० क्रि०) खिंचाना, खींचनेका काम कराना।

खिंचाई (हिं० स्त्री०) १ खींच, आकर्षण, कशिश। २ खींचनेकी उजरत या मजदूरी।

खिंचाना, खिंचवाना देखो।

खिंचाव (हिं०) खिंचाई देखो।

खिंचावट, खिंचाई देखो।

खिंचाहट, खिचाई देखो।

खिंडाना (हिं० क्रि०) इतस्ततः निक्षेप करना, फैलाना, बिखेरना।

खिखिंद (हिं० पु०) १ किष्किन्ध्या पर्वत। यह पहाड़ महिसुर राज्यके उत्तरभागमें पड़ता है। २ बीहड़ जमीन्।

खिखि (सं० पु०) खिरित्यव्यक्तशब्देन खेदति भीरूणां भयमुत्पादयति, खि-खिद्-ड। पृषोदरादिवत् साधुः। शृगालविशेष, लोमड़ी। 'खिखिं' के स्थल पर किसी पाठ देख पड़ता है।

खिखिर (सं० पु०) खिङ्किर पृषोदरादिवत् साधुः। लोमड़।

खिङ्किर (सं० पु०) खिमित्यव्यक्तशब्दं किरति, कृ-क पृषोदरादिवत् खत्व न साधुः। १ खिखि। २ वारिवालक, एक खुशबूदार चीज। ३ खट्वाङ्ग, महादेवका एक हथियार। इनका रूपान्तर 'खिङ्किर' भी होता है।

खिचड़वार (हिं० पु०) खिचराही, खिचड़ी दान करनेका दिन, मकर-संक्रान्ति।

खिचड़ी (हिं० स्त्री०) १ दाल और चावलका मेल। २ दाल और चावलको मिला कर पकाया हुआ भोजन। ३ विवाहकी एक प्रथा, भात। ४ मिश्रित पदार्थद्वय, दो मिली हुई चीजें। ५ खिचराही, मकरसंक्रान्ति। ६ बदरपुष्प, बेरीका फूल। ७ बयाना, साई। (वि०) ८ मिश्रित, मिला हुआ।

खिचिङ्ग—उड़ीसा-प्रान्तके करद राज्य मयूरभञ्जका एक गांव। यह अक्षा० २१° ५५' उ० और देशा० ८५° ५०' पू०में अवस्थित है। आबादी कोई २६८ होगी। इसमें मूर्तियों, स्तम्भों और इष्टक तथा प्रस्तर निर्मित कई मन्दिरोंका ध्वंसावशेष मिलता है। ग्राम-संलग्न एक मन्दिरावली देखने लायक चीज है। मालूम होता है कि अकबरके सेनापति मानसिंहने इनमें किसी शिवमन्दिरका संस्कार कराया था।

खिचड़ (हिं० पु०) खिचड़ी।

खिचा (सं० स्त्री०) खेचरिकान्न, खिचड़ी।

खिजना, खीजना देखो।

खिजलाना (हिं० क्रि०) १ खीजना, बिगड़ना। २ खिजाना, छेड़ना।

खिज़ां (फा० स्त्री०) १ पतझार, पत्ते गिर जानेका मौसम। २ अवनति, गिराव।

खिजादिया नगानियो—काठियावाड़के भलावा विभागका एक मध्यवर्ती राज्य। यहां एक गांव है। उसका एक अधिकारी रहता है। आमदनी २८०० रुपया है। इसमें ५२) रु० गायकवाड़को देने पड़ते हैं। लोकसंख्या १५६ है।

खिज़ाब (अ० पु०) केशकल्प, श्वेत केशोंकी कृष्णवर्ण बनानेका औषध।

खिजारिया—काठियावाड़के गोहलवाड़ विभागका एक छोटा राज्य। यह राज्य दो भागोंमें बंटा है। इसमें एक टुकड़ा २ वर्गमील और दूसरा एक वर्गमील पड़ता है। प्रत्येकका आयका आय प्रायः डेढ़ हजार रुपया है। इसमें बड़ोदाके गायकवाड़को ३६०) रु० और जुनागढ़के नवाबको ४७) रु० देना पड़ता है। खिजारिया होल-

कर उन्होंने कहा—"उस पापीने एक तो जीवहत्या को और दूसरे मेरी आज्ञा नहीं मानी, इसलिए उसको फाँसीका दण्ड दिया जाय।" बलकुमार तुरन्त ही पकड़ा गया। उस दिन चतुर्दशी थी, तो भी वह फांसीके स्थान पर पहुंचाया गया। उधर जमपालको बुलानेके लिए सिपाही दौड़ा गया।

जमपालने चण्डाल हो कर भी मुनिके समक्ष यह प्रतिज्ञा की थी कि, "चतुर्दशीके दिन मैं जीव हिंसा न करूंगा।" इसलिए वह दूसरे ही सिपाहीको आते देख घरमें छिप गया और स्त्रीसे उसने कह दिया कि "सिपाही अगर मुझे ढूंढ़े तो कह देना कि वे दूसरे गांव गये हैं।" स्त्रीने ऐसा ही किया। सिपाही कहने लगा—"यदि आज वह घर होता तो उसे राजपुत्रके सब गहने और कपड़े मिलते।" चाण्डालकी स्त्री ठहरी, उससे अपना लोभ न सम्हलाया गया। वह हाथसे तो पतिकी ओर इशारा करती रही और मुंहसे कहती गई की 'वे तो गांवको गये हैं।' सिपाही समझ गया। उसने घरमें घुस कर चण्डालको पकड़ लिया। जमपालने कहा, "आज चतुर्दशी है, मैं जीवहिंसा नहीं करूंगा।" आखिर सिपाही उसे राजके पास ले गया।

राजा तो बलकुमार पर क्रुद्ध थे ही, दूसरे चण्डालका उत्तर सुन कर और भी आगबबूला हो उठे। उन्होंने आदेश दिया कि, "इन दोनोंको समुद्रमें डाल दो, जिससे मगर मच्छोंका पेट भरे।" राजाज्ञा कार्यमें परिणत हुई। दोनोंको एकत्र बांध कर समुद्रमें डाल दिया गया। परन्तु जमपालके पुण्यके प्रभावसे जलदेवताने उसकी रक्षा की, साथ ही राजपुत्रकी जान बच गई। जलदेवताने मणिमण्डित नौकामें रत्नजड़ित सिंहासन पर जमपाल चाण्डालको बिठाया और राजपुत्रके द्वारा उस पर चमर ढराया। ऊपरसे अन्य देवगण "अहिंसाव्रतको धन्य है" कहते हुए पुष्पवृष्टि करने लगे। यह देख सब चकित हुए और राजा भी चाण्डालकी प्रशंसा करने लगे। चाण्डालका हृदय भी धर्मरसमें गोते लगाने लगा। उसने अपना पेशा छोड़ दिया। वह सम्यक्त्व सहित पञ्चअणुव्रत और सप्तशीलव्रत धारणके श्रावक हो गया। अहिंसाव्रतका प्रभाव देख कर नगरवासी स्त्री पुरुषोंने भी अहिंसा आदि पांच अणुव्रत धारण किये। जैन शास्त्रोंमें अहिंसाव्रतके प्रभाव दिखानेके लिए यत्र तत्र जमपाल चाण्डालकी कथाका उल्लेख मिलता है।

जमर—बम्बई प्रान्तमें काठियावाड़का एक क्षुद्र राज्य। लोकसंख्या प्रायः तीन सौ है और वार्षिक आमदनी ३८६०) रु० है। इसमेंसे वृटिश गवर्मेण्टको ४६४) रु० कर स्वरूप देना पड़ता है।

जमरूद (हिं० पु०) एक प्रकारका फल।

जमरूद—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशके पेशावर जिलेके उस ओर एक किला और छावनी। यह अक्षा० ३४° ६' उ० और देशा० ७१° २३' पू०में खैबर घाटीके मुहाने पर पेशावरसे १०½ मील पश्चिम पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १८४८ है। १८३६ ई०में पेशावरके सिख सरदार हरिसिंहने यहां किलाबन्दी की थी। आजकल यहां खैबर राइफल्स फौज रहती है और चुङ्गी वसूल होती है। जमरूदमें एक बड़ी सराय है। पेशावरको नार्थ वेष्टर्न रेलवेकी एक शाखा लगी है।

जमवट (हिं० स्त्री०) लकड़ीका गोल चक्कर। यह पहिएके आकारका होता है और कुआँ बनानेमें भगाड़में रखा जाता है। इसके ऊपर कोठीकी जोड़ाई होती है।

जमशेद—१ पारस्य देशके प्रसिद्ध पिशदादवंशीय ४र्थ नरपति। वेलि आदिके मतसे ये ईसाके जन्मसे तीन हजार वर्ष पहले जन्मे थे, किन्तु वर्त्तमान ऐतिहासिकोंका विश्वास है कि, ये ईसासे ८०० वर्ष पहले मौजूद थे। इन्होंने प्रसिद्ध पार्शिपोलिस नगरीकी स्थापना की थी, जो अब भी इस्तर और तख्त जमशेदके नामसे प्रसिद्ध है।

इन्हीं जमशेदसे पारस्यमें सौर वर्ष प्रारम्भ हुआ है। सूर्य मेषराशिमें जिस दिन प्रवेश करता है, उसी दिनसे यह वर्ष प्रारम्भ होता है। इस नव वर्षके उपलक्षमें महा उत्सव होता था।

फर्दौसिके शाहनामेमें लिखा है—इन्हीं जमशेदके समयसे ही मानव जातिमें सभ्यताका प्रचार हुआ है। सिरीयराज जुहाकने इनका राज्य आक्रमण किया था। दुर्भाग्यवश जमशेद रणमें पीठ दिखा कर सीसस्तान,

शहरको चारों तर्फ १४ हाथ ऊंची चहारदीवारी लगी है। बीचमें एक दुर्ग है। उसमें दो बढ़िया घर बने हैं। खिमलासाका 'शीश-महल' (आईनाघर) नामक हिन्दू राजभवन और गुम्बजदार समाधिमन्दिर देखने योग्य है। शीशमहलकी पहले जैसी तड़क भड़क अब नहीं रही सही, परन्तु आज भी दुतल्ले और तितल्लेके कमरे आईनेसे जड़े हैं।

पहले यह नगर दिल्लीके बादशाहके अधीन रहा। परन्तु १६९५ ई०को निःसन्तान पन्नाराजका मृत्यु होने पर पेशवाके प्रतिनिधि खिमलासाका किला अधिकार कर बैठे। १८१८ ई०को सागर जिलेके साथ यह स्थान ब्रुटिश गवर्नमेण्टका अधिकारभुक्त हो गया। १८५७ ई०के जुलाई महीनेमें जब सिपाहियोंका विद्रोह हुआ, भानपुरके राजाने इस स्थानको आक्रमण किया था। विद्रोहियोंके अत्याचारसे नगरकी विशेष क्षति हुई। उस समय बहुतसे अधिवासी शहर छोड़ भागे। आज भी बहुतसे टूटे फूटे और खाली मकान पड़े हैं।

खियाना (हिं० क्रि०) १ घिस जाना, रगड़ खाना, मिटना। २ खिलाना, भोजन कराना।

खिर (सं० स्त्री०) नार, जोलाहोंकी ढरकी। इसमें बानेका सूत रहता है। बुनते समय खिरको एक तर्फसे दूसरी ओर चलाना पड़ता है।

खिरड़री (हिं० स्त्री०) कत्थेकी एक गोली। इसमें खुशबूदार मसाला डाला जाता है।

खिरन—युक्तप्रदेशके रायबरेली जिलेकी डलमऊ तहसीलका एक परगना। इस परगनेके उत्तर मोरवां, पूर्वको डलमऊ तहसील और रायबरेली, दक्षिणको सरेनी और पश्चिमको पनहर्ा, भगवन्तनगर, बिहार और पाटन आदि कई एक विभाग हैं। खिरनका क्षेत्रफल १०२ वर्गमील है। इसमें १२३ गांव या मौजे लगते हैं। उससे ७९ मौजे तालुकदारी, बीस जमीन्दारी और चौवास पट्टीदारीके बन्दोबस्तमें है। सबसे पहले इस परगने पर भड़ लोगोंका अधिकार रहा, किन्तु कोई ७१० वर्ष हुए बैस वंशके राजा अभयचन्द्रने उनके हाथसे छीन अपने राज्यमें मिला लिया। उनके आठवें पुरुष राजा सातनने खिरन परगनेके बीच सातनपुर नामक एक नगर स्थापन किया था। फिर अवधके नवाब असफ-उद्-दौलाके राजत्व समय किसी तहसीलदारने यहां एक दुर्ग बनाया। किलेके पास ही खिरन शहर और तहसीलदारी है। खिरनमें एक पाठशाला और साप्ताहिक बाजार है। हिन्दू राजाओंके अधिकारकालको महीका जो किला बना था, उसका ध्वंसावशेष आज भी देख पड़ता है।

खिरनी (हिं० स्त्री०) क्षीरिणीवृक्ष, एक पेड़। यह दरख्त ऊंचा और सदाबहार होता है। खिरनीका काष्ठ रक्तवर्ण, चिक्कण, कठिन तथा सुदृढ़ निकलता और कोल्हू और घर बनानेमें लगता है। उसको बड़ी सुगमतासे खराद भी सकते हैं। २ क्षीरिणीफल। यह निमकौड़ी जैसा दूधिया और मीठा रहता और ग्रीष्म ऋतुको पकता है।

खिरपाई—बङ्गालके मेदिनीपुर जिलेका एक कसबा। यह अक्षा० २२° ४३′ उ० और देशा० ८७° ३७′ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या ५०४५ है। यहां बहुतसे जुलाहे रहते, जो एक तरहका बढ़िया और कीमती कपड़ा तैयार करते हैं।

खिरहिट्टी (सं० स्त्री०) महासमङ्गा नाम क्षुप, एक झाड़ी।

खिराज (अ० पु०) कर, मालगुजारी, राजा प्रजाको शत्रुसे बचाता है, इसीसे वह जमीनकी पैदावारका कुछ भाग कर स्वरूप राजाको अर्पण करती है। इसी राजभागका मुसलमानी नाम खिराज है।

खिरासर—काठियावाड़के हल्ला विभागका एक छोटा राज्य। इसका भूपरिमाण, १२ वर्गमील है। खिरासरके राजा अङ्गरेज सरकारको २२६६) और, जूनागढ़के नवाबको ३५०) रु० खिराज-जैसा देते हैं। इसमें १२ गांव लगते हैं। लोकसंख्या ३११७ है। सालाना आमदनी १५४३२ रु० है।

खिरिरना (हिं० क्रि०) १ अनाजको सींक सींकके छाजमें डालकर छानना। २ खुरचना।

खिरैंटी (हिं० स्त्री०) बरियारा, बीजबन्ध।

खिल (सं० त्रि०) खिल-क। १ अकृष्ट, जो जोता न गया हो। २ उत्सन्न, उजड़ा हुआ। (पु०) ३ विष्णु।

प्रकारका चूर्ण पदार्थ) दिया जाता है तथा तेरहवें दिन पङ्गत और अङ्ढाल नामकी क्रिया की जाती है। रोठ-भोग और पङ्गत दिनमें, तथा अङ्ढाल रातमें किया जाता है। अङ्ढालमें खर्च ज्यादा होता है, इसलिए अङ्ढाल-क्रिया सबके लिए नहीं होती। सिर्फ ज्योमार्गानुसारी संन्यासियोंके लिए ही अङ्ढाल-क्रिया की जाती है, दूसरोंके लिए नहीं। मृत व्यक्तिके कोई शिष्य या अनुशिष्य कुशपुत्तल बना कर अङ्ढाल क्रियाका अनुष्ठान करते हैं तथा क्रिया-भूमिस्थ अन्यान्य संन्यासी मंत्रोच्चारण पूर्वक उस पुत्तलके ऊपर जलसेचन करते हैं।

जमातखाना—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत पूना शहरमें भदीतवारी-पेंठमें इस्लाइली मतावलम्बी शिया मुसलमानोंका एक सुबृहत् उपासना-गृह। १७३० ई०में यह चन्दा उगा कर बनवाया गया।

जमादार—१ विहार प्रान्तकी नुनिया जातिके चौभान विभागकी एक श्रेणी। २ देशीय सेनाविभागका एक कर्मचारी, इसका पद सूबेदारसे नीचे होता है। ३ पुलिसका एक कर्मचारी, इसका पद दरोगासे नीचे और हेड कानष्टेबलके ऊपर होता है। ४ शुल्क और अन्यान्य विभागका कोई एक कर्मचारी। ५ किसी किसी धनी गृहस्थके घरका कोई एक कर्मचारी, जो निम्नश्रेणीके नौकरों पर कर्त्तृत्व चलाता और असबाबकी देख रेख करता है। ६ कुछ लोगोंका अधिनायक। ७ प्रेस या छापेखानेका वह कर्मचारी, जो फर्मा कसने और कागज छापने आदिका काम करता है।

जमादारी (अ० स्त्री०) १ जमादारका पद। १ जमादारका काम।

जमानत (अ० स्त्री०) जामिनी, वह उत्तरदायित्व जो किसी अपराधी मनुष्यके ठीक समय पर अदालतमें हाजिर होने, किसी कर्जदारके कर्ज अदा करने अथवा इसी तरहके किसी और कामके लिए अपने ऊपर ली जाती है, वह जिम्मेदारी जो जमानी किसी कागज़ पर लिख कर वा कुछ रुपये जमा करके ली जाती है।

जमानतनामा (हिं० पु०) वह कागज जो जमानत करनेवाला जमानतके प्रमाण-स्वरूप लिख देता है।

जमानती (हिं० पु०) वह जो जमानत करता हो, जमानत करनेवाला।

जमाना (हिं० क्रि०) १ किसी तरल पदार्थको गाढ़ा करना। २ एक पदार्थको दूसरे पदार्थमें मजबूतीसे बैठा देना। ३ प्रहार करना, चोट लगाना। ४ घोड़ेको ठुमक ठुमककी चालसे चलाना। ५ हाथसे होनेवाले कामका अभ्यास करना। ६ बहुतसे आदमियोंके सामने होनेवाला किसी कामका बहुत उत्तमतापूर्वक करना। ७ सर्वसाधारणसे सम्बन्ध रखनेवाले किसी कामको उत्तमता पूर्वक चलाने योग्य बनाना। ८ उत्पन्न करना, उपजाना।

ज़माना (फा० पु०) १ काल, समय, वक्त। २ बहुत अधिक समय, मुद्दत। ३ सौभाग्यका समय, एकबालके दिन। ४ संसार, दुनिया, जगत्।

ज़मानासाज़ (फा० वि०) जो अपना मतलब साधनेके लिये दूसरोंको प्रसन्न रखता हो।

ज़मानासाज़ी (फा० स्त्री०) अपना मतलब साधनेके लिये दूसरोंको प्रसन्न रखनेका काम।

जमाबन्दी—पटवारीके वह कागजात जिन पर आसामियोंके नाम और उनसे आई हुई लगानकी रकमें लिखी जाती हैं। मध्यप्रदेशमें—गवर्मेण्टके प्राप्य राजस्व अथवा प्रजाओंकी मालगुजारीकी तथा जुती हुई जमीनकी विवरण-तालिकाको जमाबन्दी कहते हैं। मन्द्राज और महिसुर प्रान्तमें प्रजाके साथ राजस्वके वार्षिक बन्दोबस्त करनेको जमाबन्दी कहते हैं।

कोड़ग प्रदेशमें जमीनका कर निर्द्धारित करके जो वार्षिक बन्दोबस्त किया जाता है, उसे जमाबन्दी कहते हैं। बम्बई प्रान्तमें—किसी जमींदारी, ग्राम वा जिलेका निर्द्धारित राजस्वका बन्दोबस्त, उसकी मालगुजारी और जुती हुई जमीनकी विवरण-तालिका अथवा प्रजाके साथ गवर्मेण्टके प्राप्य राजस्वके बन्दोबस्तको जमाबन्दी कहते हैं।

जमामस्जिद - जुम्मामस्जिद देखो।

जमामार (हिं० वि०) जो अनुचित रूपसे दूसरोंका धन दबा रखता है।

जमाल—हिन्दीके एक कवि।

जमाल उद्दीन्—हिन्दीके एक कवि। १५६८ ई०में इनका जन्म हुआ था।

६६° २८´ पू० में बसा और समुद्रपृष्ठसे ४५१२ हाथ ऊंचा उठा है। खिलात शहर शाहमर्दान नामक चूनाके पहाड़की चोटी पर बनाया गया है। इसमें ३ फाटक लगे हैं। नगरमें दो दुर्ग हैं। पुराने किलेका नाम मिरी है। यही आजकल खान्‌का महल बन गया है। शहरकी चहारदीवार मट्टीसे बनी, जिसके बीच बुर्जे लगे हैं। चहारदीवारी और मोरचोंमें गोली चलानेके लिये छेद बने हैं। शहरकी राहें बहुत खराब हैं। बाजार बड़ा और सब चीजोंसे भरा है। नगरमें एक स्वच्छसलिला नदी बहती है। मिरी दुर्गमें बहुतसी अट्टालिकायें हैं। इसे वर्तमान मुसलमान राजवंशके पूर्ववर्ती हिन्दू राजाओंने निर्माण किया था। खिलातकी राजसभा बहुत बढ़िया है। राजसभाके सामने ही बरामदा लगा है। यहांसे नगर और चारों ओरोंके पहाड़ोंका दृश्य बहुत अच्छा देख पड़ता है। नगरके पूर्व और पश्चिमको दो उपकण्ठ हैं। इनको मिलाकर शहरके बाशिन्दोंका शुमार कोई १४ हजार है। खान् बहरूई जातिके आदमी हैं। नगरको पूर्व ओर कितनी ही सुरम्य उद्यान-विशिष्ट उपत्यकाएं हैं। उनमें स्वाजकोह सबसे बड़ा है।

बलूच और बलूचस्तान देखो।

खिलात नगर—बलूचस्थानके खिलात राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २९° २´ उ० और देशा० ६६° ३५´ पू०में क्वेटासे ८८॥ मील दूर पड़ता है। लोकसंख्या दो हजारसे अधिक नहीं। अधिवासियोंमें कुछ हिन्दू व्यवसायी भी हैं। नगर प्राचीरवेष्टित है। मिरी नामक दुर्गमें खां साहब रहा करते हैं। ई० १५वीं शताब्दीको यह मीरवारियोंके हाथ लगा और अहमदजाई खानोंकी राजधानी बना। १५७८ ई०को इसने अहमद शाह दुरानीका आक्रमण रोका और १८३९ ई०को अंगरेजोंके हाथ लगा। एक वर्ष पीछे फिर सरवां विद्रोहियोंने इसको अधिकार लिया। किलेके नीचे कालीजीका एक मन्दिर है, जो मुसलमानी तारीखसे पहलेका बना हुवा मालूम पड़ता है। देवीकी मूर्ति समृद्धिका चिह्न धारण किये हुए दो दीपकोंके सामने जो निरन्तर जला करते हैं, खड़ी है।

खिलाना (हिं० क्रि०) १ खेलमें लगाना। २ भोजन कराना। ३ फुलाना।

खिलाफ (अ० वि०) विरुद्ध, उलटा।

खिलाफत (अ० स्त्री०) १ मुहम्मदके प्रतिनिधिका धार्मिक उत्तराधिकार, धर्मसम्बन्धीय प्रतिनिधित्व। २ खलीफाका रुतबा, खलीफाका बड़प्पन। प्रधानतः इस शब्दका अर्थ दामासकस और बगदादमें मुहम्मदसे हलाकूखानके समय तक राजत्व करनेवाले राजाओंका उत्तराधिकार है। ३ मुसलमान जगत्‌के धार्मिक प्रतिनिधिका पद।

पूर्वमें राज्य करनेवाले मुसलमान लोगोंका इतिहास, जो खलीफा कहलाते थे, प्रधानतः तीन बड़े भागोंमें बांटा है—(१) मुहम्मदके ठीक पीछेवाले उत्तराधिकारी पहले चार खलीफे। (२) उमैयद खलीफे और (३) अब्बासीद खलीफे।

१—पहले ४ खलीफे।

मुहम्मदके मरने पर प्रश्न उठा था—कौन उनका उत्तराधिकारी होगा। उमर नामक किसी परदेशीने बाहरी मुसलमान लाकर मदीनाके बाशिन्दोंको दबाया और मुहम्मदके मित्र तथा श्वशुर अबूबकरको खलीफा बनाया।

अबूबकरका शासन—अबूबकरने उस समय बड़ी खूबी दिखलायी थी। मुहम्मदने युनानियोंके विरुद्ध जो चढ़ाई करनेकी तैयारी की थी, इन्होंने उसको चुपकेसे भेज दिया और अपने आप मदीना नगरकी रक्षा किया। फौज वापस आने पर अबूबकर बलवाइयों पर आक्रमण करनेको आगे बढ़े। अरब मैदान छोड़ भागे थे। सिर्फ यमनमें ही कड़ी लड़ाई हुई। अपने सिद्धपुरुष मुसैलिमाके अधीन बानू हनीफ खूब लड़े थे। परन्तु जीत न सके।

पड़ोसी देशों पर धर्मयुद्धकी घोषणा जो मुहम्मद कर गये थे, नये इसलाम-धर्मको अरबोंमें सर्वप्रिय बनानेके लिये खास जरिया थी। क्योंकि उसमें लूट मारसे माल भी मिल जानेका मौका था।

मध्य और उत्तरपूर्व अरबस्तानको अधीनस्थ करके खलीफाकी फौज निम्न यूफ्रेटस पर चढ़ी थी, जहांसे वह बलवा होने पर सीरियाको बुलायी गयी। ६३५

क्योंकि, बहुतोंको नीम-हकीमों द्वारा ज्यादा जमालगोटा खा कर मरते देखा गया है।

वैद्यक मतसे इसके गुण—यह कटु, उष्ण, विरेचन, दीपन, क्रमि, कफ, आम और जठरामयनाशक है। (राजनि०) वर्त्तमानके किसी किसी चिकित्सकोंके मतसे ध्वजभङ्गरोगमें पुरुषाङ्ग पर जमालगोटेका प्रलेप लगानेसे बहुत समय उससे सुफल पाया जाता है। भयानक दमेकी बीमारीमें जमालगोटेका बीज दीपशिखामें सुलगा कर उसका धुआं नाकमें लेनेसे श्वास घटने लगता है। सिर दर्द या चक्षुरोगके प्रबल होने पर ललाट पर इसका प्रलेप देनेसे विशेष फायदा पड़ता है।

जमालगोपाल—हिन्दीके एक कवि। इनकी कविता साधारणतः अच्छी होती थी। नीचे एक कविता उद्धृत की जाती है—

'ऐंडत कहां नन्दके ढोटा खोल गांठ कछु दे रे दे।
बाट घटमें बोली ठोली रार न कीजे प्रात, कन्हैया
गरज पर तो दे रे दे॥

बिना बोहनी तोहे जान न देहों मोल तोल कछु हे रे हे।
बिने जमाल गोपालजीके प्रभुको तिहारे दर्श मोहे जे रे जे॥

जमालपुर—१ बङ्गालके मैमनसिंह जिलेका उत्तर-पश्चिम सबडिविजन। यह अक्षा० २४° ४३' एवं २५° २६' उ० और देशा० ८९° ३६' तथा ९०° १८' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १२८९ वर्गमील है। भूमि पुलिनमयी और बहुसंख्यक नदी नालाओंसे छिन्न विच्छिन्न है। लोकसंख्या कोई ६७२३६८ होगी। इसमें २ नगर और १७४७ गांव हैं।

२ बङ्गाल मैमनसिंह जिलेके जमालपुर सबडिविजनका सदर। यह अक्षा० २४° ५६' उ० और देशा० ८९° ५६' पू०में प्राचीन ब्रह्मपुत्रके पश्चिम तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १७९६५ है। १८६९ ई०में म्युनिसपालिटी हुई।

जमालपुर—विहार प्रान्तके मुङ्गेर जिलेका नगर। यह अक्षा० २५° १९' उ० और देशा० ८६° ३०' पू०में ईष्ट इण्डियन रेलवेकी लूप लाइन पर पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १६३०२ है। जमालपुर ईष्ट इण्डियन रेलवेके लोकोमोटिव विभागका प्रधान स्थान है। इसमें बहुत बड़े बड़ कारखाने चलते हैं। १८८३ ई०में म्युनिसपालिटी हुई।

जमालाबाद—मन्द्राजके दक्षिण कनाड़ा जिलेकी एक टालू चटाना। यह अक्षा० १३° २' उ० और देशा० ७५° १८' पू०में अवस्थित है। १७८४ ई०में टीपू सुलतानने मङ्गलोरसे लौटने पर अपनी माता जमालबाईके नाम पर यहां किला बनवाया था और उसमें फौज रखी थी। १७९९ ई०में अंगरेजोंने उक्त दुर्ग अधिकार किया, फिर निकल भी गया। परन्तु १८०० ई०के जून मास किलेकी फौज आत्मसमर्पण करनेको बाध्य हुई। पुराना शहर नरसिंहअङ्गदी था।

जमाली—सेख जमाली मौलाना। दिल्ली-निवासी एक सुप्रसिद्ध पारसी कवि। सायर-उल्-आरिफिन् अर्थात् धार्मिक जीवनी नामक ग्रन्थ इन्होंका रचा हुआ है। पहले इनकी उपाधि जलाली थी, पीछे इन्होंने जमाली उपाधि ग्रहण की थी। बादशाह हुमायुनके शासनसमय १५३५ ई०में इनकी मृत्यु हुई थी। प्राचीन दिल्लीमें इनका समाधिस्थान अब भी मौजद है। सेख गदाई काम्बो नामके इनके पुत्र वैरामखाँके अधीन बहुत दिनों तक युद्धकार्य किया था, आखिर ये भी १५६४ ई०में परलोक सिधारे।

जमाव (सं० स्त्री०) १ जमनेका भाव। २ जमानेका भाव।

जमावट (हिं० स्त्री०) जमनेका भाव।

जमावड़ा (हिं० पु०) भीड़, जत्था।

जमिकुन्त—हैदराबाद राज्यके करीमनगर जिलेका तालुक। इसका क्षेत्रफल ६२६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२१५१८ है। इसमें १५८ गांव हैं। जमिकुन्त सदर है। उसकी आबादी २६८७ है। मालगुजारी कोई ४ लाख होगी। पश्चिममें बहुत पहाड़ है। जङ्गल कहीं भी नहीं। चावलकी खेती बहुत होती है।

जमीकन्द (फा० पु०) सूरन, ओल।

जमींदार (अरबी जमीन्=भूमि, पारसी दार=अधिकारी) भूस्वधिकारी, भूमिका स्वामी, जमीनका मालिक।

भारतवर्षके भिन्न भिन्न स्थानोंमें जमींदार शब्दका भिन्न भिन्न अर्थ होता है। जमींदार शब्दसे कहीं

हो वह वापस चले गये, काम फिर पुराने ढंग पर ही होने लगा। इससे हालत बिगड़ती ही रही। ६५६ ई०को दोबारा बलवाइयोंके सरदार मिसर और ईराकसे बहुत ज्यादा हिमायती लेकर मदीना पहुंचे। खलीफाने फिर झूठे वादे करके उन्हें टालना चाहा था, परन्तु बलवाइयोंने इन्हें इनके घरमें ही घेरके पकड़ लिया और राज्य छोड़ देनेको कहा। इनके राज्य छोड़ने पर राजी न होनेसे उन्होंने ८० वर्षकी अवस्थामें इनको वध किया था।

४ अलीका शासन—अधिकांश विद्रोहियोंने अलीको खलीफा बनाया दिया। तालह और जुबैरको भी इनका सम्मान करना पड़ा था। परन्तु वह दोनों वफादारको मा ऐशाके साथ ईराकको भाग निकले और बसरामें आकर बलवेका झगड़ा खड़ा किया। परन्तु ६५६ ई०के नवम्बर मासको बसरामें जो लड़ाई हुई, तालह और जुबैर काम आये और ऐशा पकड़ ली गयीं। फिर भी अली शान्ति स्थापन न कर सके। मोआवियाने दामसकसकी मसजिदमें उसमानके लहूलुहान कपड़ोंको दिखाया और अपने सिरीयोंको बदला लेने पर उसकाया था। अन्तको अली मार डाले गये और इससे मुसलमान जगत्में उनका बड़ा नाम हुआ।

२—उमैयद वंश।

मदीना जीतनेसे मुहम्मदके दुश्मनोंको भी उन्हें 'ईश्वरदूत' मानना पड़ा था। मुहम्मदने देखा कि मदीनाके लोगोंकी बनिस्बत उनके दुश्मनोंमें ज्यादा काबिल आदमी थे। इसीसे मक्के और यमनकी सूबेदारी उमैयदों या मखजूमों और दूसरे कुरेशियोंको सौंपी गयी। अबूबक्रने भी मुहम्मदकी ही चाल रखी। मुहम्मदके मरने पर अरबोंने जो बलवा किया और मुसलमान जो ईराक और सीरीया पर चढ़े, सेनापति उमैयद आदि ही थे। उमर इस रस्मसे अलग न हुए। उन्होंने ही अबू सुफ़ियान्के लड़के यजीद और यजीदके मरने पर उनके भाई मुआवियाको सीरीयाका सूबेदार बनाया और मिसर प्रान्त अम्र-इब्न-अल-आसके नीचे लगाया था। उमैयदोंके राजशासनका वर्णन बहुत कठिन है।

१ मोआवियाका शासन—मुहम्मदके मक्का फतह करने पर मक्काके सरदार अबू सुफियान्के लड़के मोआवियाने अपने बाप और भाई यजीदके साथ इसलाम धर्म ग्रहण किया और वह मुहम्मदका एक मन्त्री चुना गया था। जब अबूबक्रने सीरीया जीतनेको फौज भेजी, अबू सुफियान्के बड़े लड़के यजीद एक सूबेदार और मोआविया उनके नायब थे। ६३८ ई०को उमरने उन्हें दामासकस और पैलेस्टाइनका गवर्नर बनाया और उसमानने इस अधिकारमें सीरियाका दक्षिण पश्चिम और मेसोपोटामिया भी मिलाया था। बीजनतीइन सम्राट्से इन्होंने स्थल और जल दोनों जगह युद्ध किया। ६५५ ई०को लसियाकी अम्भाघुम्भ लड़ाईमें यूनान-सम्राट् २य कोनष्टानका जहाजी बेड़ा पूरे तौर पर हारा था। किन्तु अलीसे झगड़ा होने पर उत्तरमें इनकी तरक्की रुक गयी।

मोआविया एक प्रकृत शासक थे और समग्र साम्राज्यमें सीरीयाका प्रबन्ध अच्छेसे अच्छा था। इनको सिरीय इतना चाहते और मानते थे, जब उसमानके खूनका बदला लेनेको कहा गया, वह एक स्वरसे बोल उठे हुक्म देना आपका और उसको मानना हमारा काम है। ६५७ ई०को यूफ्रेटिसके पास जो युद्ध हुआ, मोआविया कुरानकी दोहाई दे कर जीते थे। इस पर कई सरपञ्च मुकर्रर हुए। उन्होंने अलीसे राज्य छोड़ने और दूसरा उत्तराधिकारी निर्वाचन करनेको कहा था। अलीके इनकार करने पर मोआवियाने राज्यशासन अपने हाथमें ले लिया और मिसर पर आक्रमण किया। फिर अलीके उत्तराधिकारी अबूबक्र-पुत्र मुहम्मद पर जोम बिगड़ खड़े हुए जो उसमान वधके नेता थे। मुहम्मद खदेरे और भागते भागते पकड़े और किसी किसीके कथनानुसार एक गधेकी खालमें सीये जाकर जला दिये गये।

इसी बीच मोआवियाने यह देखा कि अली उन्हें कुचल डालनेकी चेष्टा करेंगे, यूनानियोंसे प्रति वर्ष बहुत रुपया देनेको कह सन्धि कर ली। इसमें यह शर्त थी कि यूनानी शान्तिभङ्ग न करेंगे और उसके शरीर बन्धक देंगे। पहले अली खरीजाइतटोंसे लड़नेमें

अधीनस्थ जमींदारगण रैयतोंसे लगान वसूल कर सूबेदारके पास और सूबेदार उसको राजाके पास भेज दिया करते थे। अपनी अपनी जमींदारीके प्रजाओंमें अगर कोई झगड़ा टंटा होता, तो जमींदार उसका निबटेरा कर देते थे। इस तरह प्रजाकी रक्षा, जमीदारीकी देखभाल और कर वसूल करनेका भार जमींदार पर ही रहता था। परन्तु भूमि पर उनका कोई भी अधिकार नहीं था।

अब प्रश्न यह है कि, किस पर इन सब कामोंका भार दिया जाता था, अर्थात् जमींदार पदका अधिकारी कौन होता था? विहार उड़िया और बङ्गालमें बहुत दिनों से मुसलमानोंका आधिपत्य विस्तृत था, इसलिए उक्त तीनों प्रान्तोंमें प्राचीन हिन्दू-प्रथाका सम्पूर्ण लोप हो गया है।

१७६५ ई॰में १२ अगस्तको बङ्गाल, विहार और उड़ीसाकी दीवानी अंग्रेजोंके हाथ पहुंचने पर उन्हें कर वसूल करनेमें प्रवृत्त होना पड़ा। उन्होंने निश्चय किया कि राज्यकी उन्नति करनेके लिए भूमि पर जिनका स्वत्व और स्वार्थ है, उन्हींके साथ राजस्वका बन्दोबस्त कर लेना उचित है; क्योंकि इससे वे अपनी सम्पत्तिकी उन्नति करनेकी कोशिश करेंगे। उस समय उक्त तीनों प्रदेशोंमें एक श्रेणीके व्यक्ति रहते थे जो 'जमींदार' नामसे मशहूर थे। उनकी उत्पत्ति और स्वार्थके विषयमें बड़ा वादानुवाद खड़ा हो गया। इस पर सर जर्ज कैम्बेलने उन लोगोंकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसी राय दी—

"मुसलमानोंके प्रबल आधिपत्यके समय राजा और प्रजामें कोई भी किसी तरहका मध्यस्वत्वाधिकारी नहीं था। परन्तु राज-शक्तिके क्रमिक ह्रासके साथ साथ बहुतसे क्षमताशाली हो गये। इस तरह प्राचीन हिन्दू-प्रथाकी भांति पुनः छोटे छोटे सामन्तराजोंका उदय हुआ। तभीसे आधुनिक 'जमींदार'-श्रेणीका अभ्युदय हुआ है। उनकी उत्पत्तिके निम्नलिखित कुछ कारण पेश किये जाते हैं—

(क) अति प्राचीन कुछ करद राजाओंकी मुसलमानी राज्यके समय क्रमशः रायतकी अवस्था प्राप्त हो गई, किन्तु वे अपने महालके शासन-कर्तृत्वसे सम्पूर्ण तया वञ्चित न हुए। इस प्रकार वे स्वत्वाधिकारसे वञ्चित होने पर भी महालका शासन करते थे। सीमान्त प्रदेश और अर्द्धसभ्य वन्यप्रदेशोंमें इसी तरहकी जमींदारी देखनेमें आती है।

(ख) कुछ देशीय दलपति और अधिनायकोंने लूट मचाते हुए कालान्तरमें राज-सरकारके साथ बन्दोबस्त करके किसीने किसी प्रदेशमें और किसीने किसी प्रदेशमें, इस तरह स्थितिलाभ किया था। उन उन प्रदेशोंके ये जमींदार पलीगार आदि नामोंसे पुकारे गये। पीछे क्रमशः राजशक्तिके ह्रास होते रहनेसे इन लोगोंने भी प्रजा पर पूरा प्रभुत्व प्राप्त किया।

(ग) कभी कभी तहसीलदार, आमिल आदि कर वसूल करनेवालोंको उच्च क्षमता प्राप्त होने पर, वे अपने कार्यका किसी प्रकारका हिसाब न समझते थे और कालान्तरमें क्षमता प्राप्त होने पर वे राजाके साथ करका बन्दोबस्त करके जमींदार पदवी प्राप्त कर लेते थे।

(घ) कभी कभी इजारदार पुरुषानुक्रमसे इजारा महलको भोगते थे और कालान्तरमें वे जमींदार हो जाया करते थे।

इस तरह कर वसूल करनेवाले कर्मचारी धीरे धीरे जमींदार हो गये और हिन्दुओंके प्रायः सभी पद वंशानुगत होनेके कारण यह जमींदारीका पद भी कालक्रमसे वंशानुगत हो गया। (Cobden Club Essay 141, 142)

मुसलमानोंके अधिकारके समय बङ्गालके जमींदारोंके विषयमें फिल्ड साहबने इस प्रकार लिखा है—

"जिस समय बङ्गाल आदिकी दिवानी अंग्रेजोंके हाथ लगी, उस समय यहांके जमींदार कर वसूल करते थे और उसके लिए उन्हें जिम्मेदार होना पड़ता था। जहां जहां प्रभुत्वशाली गण्यमान्य व्यक्ति रहते थे, मुसलमान राजा और सूबेदार वहांके कर वसूल करनेका भार उन्हीं पर छोड़ दिया करते थे तथा जहां जहां इस प्रकारके प्रभुत्वशाली व्यक्तियोंका वास नहीं था, वहांके कर वसूल करनेका भार उन्हें मिलता था जो सम्राट्को सबसे ज्यादा नज़र भेंट करते थे। किसी समय ऐसी

जाये थे। खलीफा उसमानके लड़केने जिन्हें मोआवियाने खुरासानका हाकिम नियुक्त किया था, ६७४ ई०को समरकन्दके ऊपर चढ़ाई की। दूसरे सेनापति सिन्ध तक घुस गये और काबुल, सीजस्तान, मकरान और कन्दाहारको उन्होंने जीत लिया। ६७२-६७३ ई० को जियादके मरने पर ऐसा अमन चैन बढ़ा, किसीको अपनी जान या मालका खौफ न रहा और अकेली औरत भी अपने घरमें खुले किवाड़ों महफूज थी।

मोआविया एक आदर्श अरब सैयद था। निम्न-लिखित प्रवादसे उनकी बुद्धिमत्ताका पूर्ण परिचय मिलता है—मोआवियाका एक प्रान्त अबदुल्ला बी० जुबेरके मुल्कसे मिला था। उन्होंने एक सख्त चिट्ठीमें मोआवियाके गुलामोंकी यह शिकायत की कि वह उनके राज्यमें अनधिकार प्रवेश करते थे। मोआवियाने इसके जवाबमें अपने बेटे यजीदकी यह बात न मान कि उस बेइज्जतीके लिये जुबेरको कड़ी सजा मिलनी चाहिये। एक खुशामदी चिट्ठी लिखी, जिसमें अनधिकार प्रवेश पर खेद प्रकट किया और गुलामों और राज्य दोनोंको जुबेरके लिये छोड़ दिया। इस पर जुबेरने राजभक्तिका आग्रह दिखाया था। इससे यजीदकी शिक्षाके लिये भी एक नीति निकल आया।

मोआविया पर अपने कई दुश्मनोंको जहर देनेका इलजाम लगाया जाता है। परन्तु उसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। ६८० ई०को इनका मृत्यु हुआ। उनके अन्तिम शब्द यह थे—तुम परमेश्वरसे डरो, जो बड़ा और शक्तिशाली है, क्योंकि परमेश्वर जिसकी प्रशंसा सबको करनी चाहिये, उससे डरनेवालेको बचाता है, जो परमेश्वरसे नहीं डरता, कैसे बच सकता है? ऐसी स्थितिमें यह बात नहीं मानी जा सकती कि वह शराबखोर, ऐयाश और मजहबसे लापरवाह थे। उनके समय मदीनाकी बहुधमकीके खिलाफ दामासकस और सीरीयामें पूरा अमन न रहा।

२ यजीदका शासन—मोआवियाके मरते ही, विरोधका सङ्गठन हुआ। यजीद गद्दी बैठे थे। इन्होंने सबको राजभक्तिकी शपथ लेनेको लिखा। अलीके वंशजोंने हुसेनको यह कह कर कूफा बुलाया कि उन्हें ईराकका सूबेदार बनाया जावेगा। अली इस पर तैयार हो गये। यजीदने मशहूर जियादके बेटे ओबेदल्लाको कूफामें शान्ति स्थापन करने भेजा था। हुसेन मक्कासे अपने खानदानके साथ कूफाको रवाना हुए, परन्तु जब वह यूफ्रेटिसके पश्चिम करबलामें पहुंचे, उमरकी फौज देख कर छक्के छूट गये। हुसेन इस उम्मेद पर लड़ने लगे कि कूफासे उन्हें मदद मिलेगी और ६८० ई० १० अक्तूबरको प्रायः अपने सभी साथियोंके साथ खेत रहे। परन्तु कूफामें हुसेनके तरफदारोंने इसे एक आफत समझा और उमर, ओबेदल्ला और यजीदको हत्यारा विघोषित किया। शीया आज भी उन्हें बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। मुहर्रमका १०वां शीयाओंमें दिन 'कत्लकी रात' कहलाता है। रातको जगह जगह जहां ताजिये रखे जाते, लोग मरसिये पढ़ते और रो रो देते हैं। करबला, जहां हुसेनकी कब्र है, शीयाओंका सबसे पवित्र तीर्थस्थान माना जाता है। उबैयदुल्लाने हुसेनका सर उनके बालबच्चोंके साथ दामासकस पहुंचाया था। यजीद इस पर बहुत रञ्जीदा हुए और कैदियोंको सही सलामत मदीना भेजा। लोग शीयाओंके बलवेको बुरा बतलाते थे। जुबेरने हुसेनके मरने पर अपनेको ईश्वरीय वंशका एक शरणागत व्यक्ति जैसा परिचित किया और चुपके चुपके खलीफा भी कह दिया। मदीनाकी मसजिदमें लोगोंने यजीदसे लड़नेकी प्रतिज्ञा की थी। यजीदने इसके खिलाफ अपनी फौज भेजी। ६८३ ई०के अगस्त महीने सिपाहियोंने जाकर मदीना नगरके पास डेरा डाला और बहुत कहने सुनने पर भी जब कुछ न हुआ सिरीयोंको छल बलसे नगर दखल किया और तीन दिन तक लूट मार होती रही, नागरिकोंको बाध्य हो यजीदकी वश्यता माननी पड़ी। सम्भवतः ६८३ ई० १२ नवम्बरको यजीद मरे थे। फिर जुबेयरने खुलकर अपनेको खलीफा बतलाया और लोगोंको राजभक्तिका शपथ उठानेको बुलाया। वह शीघ्र ही अरब, मिसर और ईराकमें खलीफा स्वीकृत हुए, और मदीनाको वापस हुए। उमैयद निकाल बाहर किये गये।

तक जो राजस्व निर्दिष्ट न था, वह भी इसमें ग्रामोंके लिए निर्द्धारित हो गया।" (5 th Report)

इस तरह नाना प्रकारके वादानुवादके बाद सुचारु रूपसे कुछ भी मीमांसा न होनेके कारण अंग्रेजी राजस्व कर्मचारियोंने यह निश्चय कर लिया है कि, मुसलमानोंके समयमें जमींदार शब्दका चाहे कुछ भी अर्थ क्यों न होता हो, जमींदारोंको इंग्लैण्डके भूम्यधिकारियोंकी तरह भूमिका स्वत्वाधिकारी बना देना चाहिये। इस निर्णयके अनुसार १७८० ई०में बङ्गालके तथा १७८१ ई०में विहार और उड़ीसाके जमींदारोंके साथ दश वर्षके लिए राजस्वका बन्दोवस्त हो गया। इसको 'दशसाला-बन्दोवस्त' कहते हैं। इस बन्दोवस्तके अनुसार जमींदारोंको भूम्यधिकारी बनाया गया।

१७८३ ई०में २२ मार्चको यह बन्दोवस्त जब चिरस्थायी हो गया, तब कोर्ट आफ् डिरेक्टरोंके आदेशानुसार भारतवर्षके गवर्नर जनरल मार्कुइस आफ् कर्नवालिसने एक घोषणापत्र प्रकट कर दिया।

चिरस्थायी बन्दोवस्तके अनुसार जमींदारोंका कैसा स्वत्व और स्वार्थ कायम रहा, इस विषयमें हारिङ्टन साहबने ऐसा लिखा है—

"जमींदार जमींदारी महालके स्वत्वाधिकारी हैं जमींदारीका स्वत्व पुरुषानुक्रमसे उत्तराधिकारियोंको मिलेगा। जमींदार दान, विक्रय, उईल आदिके द्वारा अपनी जमींदारीको हस्तान्तरित कर सकेंगे। जमींदार महाल पर निर्द्धारित राजस्व नियमानुसार सरकारको देनेके लिए बाध्य होंगे। जमींदारीके अन्तर्गत प्रजावर्गसे अथवा भूमिके उत्कर्षसाधनके लिए कानूनके अनुसार जो कुछ उन्हें मिलेगा, उसमेंसे राजस्वके सिवा बाकीका हिस्सा उन्हींका रहेगा। भविष्यमें सरकार रायत वा अन्य प्रजाके स्वत्व और स्वार्थकी रक्षा तथा अन्यान्य अत्याचार और उत्पीड़नसे उनकी रक्षाके लिए जो कानून बनेगा, वह जमींदारोंको मान्य होगा।

जमींदारी (फा० स्त्री०) जमींदारकी वह जमीन जिसका वह अधिकारी हो। २ जमींदार होनेकी अवस्था। ३ जमींदारका स्वत्व।

जमींदोज़ (फा० वि०) नष्ट भ्रष्ट, जो तहस नहस कर दिया गया हो।

ज़मीन (फा० स्त्री०) १ पृथिवी। २ पृथिवीके ऊपरका कठिन भाग, भूमि, धरती। ३ सतह, फर्श। ४ भूमिका, आयोजन, पेशबंदी।

जमीमा (अ० पु०) क्रोड़पत्र, अतिरिक्त पत्र, पूरक।

जमीरापात—मध्यप्रदेशके सरगुजा जिलेकी एक पहाड़। यह अक्षा० २३° २२´ एवं २३° २६´ उ० और देशा० ८३° ३३´ तथा ८३° ४१´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसकी ऊंचाई ३५०० फुट है। जमीरापात सरगुजा राज्यकी पूर्व सीमा है।

जमुई—१ विहार प्रान्तके मुङ्गेर जिलेका दक्षिण सबडिविजन। यह अक्षा० २४° २२´ एवं २५° ७´ उ० और देशा० ८५° ४६´ तथा ८६° ३७´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १२७६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३७४६८८ है। इसमें ४६८ गांव बसे हैं। जङ्गल बहुत है।

२ विहार प्रान्तके मुङ्गेर जिलेमें जमुई सबडिविजनका सदर। यह अक्षा० २४° ५५´ उ० और देशा० ८६° १३´ पू०में क्यूल नदीके वाम तट पर पड़ता है। ईष्ट इण्डियन रेलवेका जमुई ष्टेशन ४ मील दक्षिण पश्चिम है। लोकसंख्या कोई ४७४४ होगी। महुवा, तेल, घी, लाह, तेलहन, अनाज और गुड़की रफ्तनी होती है। गांवसे दक्षिणको इन्द्रपेगढ़ नामक एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष है।

जमुना (हिं० स्त्री०) यमुना देखो।

जमुना—१ पूर्व बङ्गाल और आसामकी एक नदी। (अक्षा० २५° ३८´ उ० और देशा० ८८° ५४´ पू०) यह दीनाजपुर जिलेसे (अक्षा० २५° ३८´ उ० और देशा० ८८° ५४´ पू०) से बगुड़ा जिलेकी दक्षिण सीमासे बहती हुई भवानीपुर ग्रामके निकट (अक्षा० २४° ३८´ उ० और देशा० ८८° ५७´ पू०) आतराईमें जा गिरती है। लंबाई ८८ मील है। नीचेको बारहो मास और ऊपरको वर्षा ऋतुमें ही नावें चलती हैं।

२ बङ्गालमें गङ्गाकी एक नदी। जसोर जिलेसे कालियानीमें यह चौबीस परगना पहुंचती और दक्षिण-पूर्वको बहती हुई रायमङ्गलमें अपने आपको खाली करती है। इसमें बारहों महीने नावें चलती हैं। चौड़ाई १५०से ३००।४०० गज तक है।

जिसको उसने अधिकार कर लिया। हज्जाजने कूफासे १८ मील पश्चिम देरकुरामें डेरा डाला, जहां खलीफाके भाई मुहम्मद और उसके लडके अबदुल्ला उसके लिये नई फौज ले पहुंचे। ७०२ ई०के जुलाई मास फैसलेकी एक लड़ाई हुई। हज्जाज जीते और इब्न अशअद बसराको भागे थे। वहां उन्होंने नयी फौज इकट्ठा की, परन्तु मासकिनकी खूंखार जङ्गमें फिर हार होनेसे वह अहवाजमें जा छिपे, जहांसे हज्जाजकी फौजने उन्हें जल्द निकाल बाहर किया। फिर बलवाई सीजीस्तानको हटा और फिर काबुल अमीरके पास जाकर रहा था। उसके साथी खुरासान भाग गये, जहां यजीद सूबेदारने उनके हथियार छीन लिये। काबुलके अमीरने धोकेबाजको कतसे मार डाला था। उसका सर पहले हज्जाजके पास और वहांसे दामसकस भेजा गया। यह ७०३ या ७०४ ई०की घटना है। फिर यजीदसे खुरासानका अधिकार छीन लिया गया। हज्जाजने उन पर बलवाइयोंकी तरफदारी करनेका इलजाम लगाया था। हज्जाजने पहले अपने भाई मुफद्दलको और फिर कुतैयबको खुरासानका सूबेदार बनाया और चीन तक इसलाम धर्म फैलानेको आदेश दिया। ७०२ ई०को हज्जाजने बसरा और कूफाके बीच नया वासस्थान निर्माण किया, जहां उनके सिरीय सैन्यको दोनों राजधानियोंके बिगड़े नागरिकोंसे लड़ने भिडनेका डर न था और हमेशा किसी भी बलवेको जो उठ खडा हो, दबानेका मौका था। अबदुल मलिकने अपने राज्यारम्भ कालको जेरूसलममें उमरकी बनायी मसजिदमें एक शानदार गुम्बज चढाया था, जो ६९१ ई०को पूरा हुआ। ६९२ ई०को सेबास्तके पास मेसोपोटामिया और अरमेनियाके सेरवाननने जो खलीफाका भाई था २य जुसतनीयकी यूनानी फौजको शिकस्त दी थी। ६९६ ई०को अबदुल मलिकने एक बहुत बडी फौज अफरीका भेजी। उसने कैरवान् अधिकार किया, कारथेज तक समुद्रतटको उजाड़ा और यूनानियोंका सारी किलेबन्दियोंसे निकाल भगाया था। फिर फौज बरबरों पर चढ़ी, जिन्होंने उसे ऐसा मारा कि बारकाको पीछे लौटना पड़ा। ५ वर्ष पीछे फिर इसी फौजने बरबरोंकी पराजय करके अपने अधीनस्थ किया। अबदुल मलिकके मरने पीछे तक हसन कैरवांके शासक बने रहे। अबदुल मलिकने मुसलमानी सिक्का चलाया था। ६९४ ई०को हज्जाजने कूफामें चांदीके दिरम ढाले। अरबी राजभाषा बनी थी। आखिरकार दामसकससे प्रान्तीय राजधानियां तक बाकायदे सरकारी डाक भेजनेका इन्तजाम किया गया। अबदुल मलिक अपनी कन्याका विवाह वलीदके साथ करके उन्हें और अन्य अशदकके लडकोंको राजी करनेमें कामयाब हुए। उन्होंने अपने आप यजीदकी लडकीसे शादी कर ली थी। अबदुल मलिकने अपने बेटोंकी तालीम पर बडी निगरानी रखी। उनके भाई अबदुल अजीज जो मिसरके शासक थे, ७०३ या ७०४ ई०का मर गये। उन्होंने पहले अपने लडके वलीद और उसके पीछे दूसरे लड़के सुलेमानको अपना उत्तराधिकारी चुना था। ७०५ ई० ८ अकतूबरको वह अपने आप ६० सालकी उम्रमें चल बसे। उनके दरबारमें शायरोंका हुजूम रहता था।

६ प्रथम वलीदका शासन—यह इसलामके इतिहासका एक बडा शानदार वक्त था। एशियामाइनर और अरमेनियामें खलीफाके भाई मसलम यूनानियोंसे कई जगह जीत गये, तियाना फतेह हुआ और कुसतुनतुनिया पर चढ़नेका बडी तैयारी रही। अफरीकामें भी फतहयाबी हुई थी। ७१० ई०को तनजियरके शासक तारीने स्पेन पर चढाई की और रोडेरिकको शिकस्त दी। कितने ही घोड़े लुट गये, परन्तु राजाका पता न लगा। फिर तारीक कई जगह विजय करते हुए आगे बढ़े, परन्तु अपनी हालत नाजुक देख मूसासे मदद मांगी थी। ७१२ ई० अपरैल महीनेको वह १८००० आदमियोंके साथ जहाज पर बैठ स्पेनमें जा उतरे और टैमसेससे थोड़ी दूर पर जो लडाई हुई, स्पेनके राजा हारे और मारे गये। मूसाने फिर तोलेदो जा जीता और धूमधामसे राजधानीमें प्रवेश किया। उन्होंने घोषणा की कि उस प्रायोद्वीपके एक मात्र राजा दामासकसके खलीफा थे। इसी वर्ष मूसाने मुसलमानी सिक्के भी ढाले, जिस पर लेटिन भाषाका

है। इस नीबूके रसका गुण बीजपूर या बिजौरा नीबूके समान है। बीजपूर या बिजौरा देखो। खसरा, चेचक और उत्तापजनक अन्यान्य ज्वरमें इसका रस शान्तिकर होता है। कण्ठनली, उदर, जरायु, वृक्क इत्यादि आभ्यन्तरिक यन्त्रसे रक्तस्राव होने पर इस नीबूका व्यवहार किया जा सकता है।

जम्बीरी नीबूके गुण—अम्ल, मधुररस, वातनाशक, पथ्य, पाचन, रुचिकर, पित्त, बल और अग्निवर्द्धक। (राजनि०) पका हुआ नीबू मधुर, कफरोग, रक्त और पित्तदोषनाशक, वर्णवीर्य, रुचिकर, पुष्टिकर और तृप्तिकर होता है। (राजवल्लभ)

जम्बीरक (सं० पु०) जम्बीर स्वार्थे कन्। जंबीरी नीबू।

जम्बीरिकी (सं० स्त्री०) जम्बीरभेद, एक प्रकारका जंबीरी नीबू।

जम्बु (सं० स्त्री०) जमु भक्षणे निपातनात् कु बाहुलकात् ह्रस्वः। १ वृक्षभेद, जामुन। जम्बू देखो। २ सुमेरु पर्वतसे निकली हुई एक नदीका नाम, जम्बु नदी। जम्बूनदी देखो। ३ जम्बुवृक्ष फल, जामुनका फल। ४ जम्बूद्वीप। जम्बूद्वीप देखो।

जम्बुक (सं० पु०) जमु भक्षणे कु निपातनात् वुक् स्वार्थे-कन्। १ जम्बुवृक्षभेद, बड़ा जामुन, फरेंदा। २ श्योनाकवृक्ष, सोनापाठा। ३ सुवर्णकेतकी, केवड़ा। ४ शृगाल, गीदड़। ५ वरुण। ६ वरुणवृक्ष, बहनका पेड़। ७ स्कन्दका अनुचरभेद, स्कंदका एक अनुचर। ८ नीच, अधम।

जम्बुकतृण (सं० क्ली०) भूतृण, एक प्रकारकी सुगन्धित घास।

जम्बुकेश्वर—एक प्रसिद्ध शैव तीर्थ। शिवपुराणके रेवा-माहात्म्य तथा श्रीरङ्गमाहात्म्यके मतानुसार वह १ शैव तीर्थोंमेंसे एक होता है। यहां महादेवकी जलमूर्ति विराजमान है। स्कन्दपुराणमें लिखा है कि वहां जा कर देवादिदेवको जलमूर्तिका दर्शन करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता।

श्रीरङ्ग-महामन्दिरसे आध मील दूर जम्बुकेश्वरका विख्यात मन्दिर अवस्थित है। इस देवालयके बहिर्भागमें एक छोटे कूपसे सर्वदा अल्प अल्प जल निकला करता है। मन्दिरका चत्वर कुंएके पानीसे एक फुट नीचा है। सुतरां उसके भीतर हमेशा एक फुट पानी भरा रहता है। अपने आप हमेशा पानी निकलता देख कर बहुतोंको विश्वास है कि वहां महादेव जलमूर्तिमें प्रवाहित हुए हैं। देवालयकी बगलमें एक पुरातन जम्बुवृक्ष है। श्रीरङ्गमाहात्म्यके मतानुसार महादेवने उसी जामुनके नीचे बहुकाल तपस्या की थी।

मि० फर्गुसन कहते हैं कि १६०० ई०के आरम्भमें जम्बुकेश्वरका वर्तमान मन्दिर निर्मित हुआ। किन्तु यहां उत्कीर्ण शिलालिपिमें लिखा है कि १४० शकको देवालयके व्ययनिर्वाहार्थ भूमि दी गयी। इससे अनुमान होता है कि वह मन्दिर उससे भी पहले बना होगा। परन्तु रामानुजकी जीवनी और सह्याद्रिखण्ड प्रभृति पढ़नेसे समझ पड़ता है कि यह उससे भी बहुत प्राचीन है।

इस मन्दिरमें चार उच्च प्राकार हैं। द्वितीय प्राकारसे ६५ फुट ऊंचा एक गोपुर और कई एक मण्डप हैं। तीसरे प्राकारमें दो प्रवेशद्वार लगे हैं। इनमें एक ७३ और दूसरा १०० फुट ऊंचा गोपुर है। फिर इसके प्राङ्गणमें एक पुष्करिणी और नारिकेलका एक बाग है। चतुर्थ प्राकार सर्वापेक्षा वृहत् है। यह दैर्घ्यमें २४३६ और प्रस्थमें १४९३ फुट पड़ता है। इसमें सहस्र स्तम्भ-मण्डप बना है। आजकल हजार खम्भे न रहते भी नौ सौ अड़तीस लगे हुए हैं। इन सब स्तम्भोंमें विस्तर अनुशासन-लिपि खोदित है। पहले मन्दिरके खर्चको बहुत भूसम्पत्ति थी। वृटिश गवर्नमेण्ट वह सब अधिकारकर देवसेवाके लिये हर साल ८०५०) रु० देती है। यहां बहुत तीर्थयात्री आते हैं। वह जो दक्षिणा देते, पूजक ही ले लेते हैं।

जम्बुकोल—सिंहलके नागद्वीपका एक प्राचीन नगर। यह महावंशमें वर्णित हुआ है। बहुतसे लोग वर्तमान जाफना प्रदेशके कालम्ब गांवको ही जम्बुकोल नामसे उल्लेख करते हैं।

जम्बुखण्ड (सं० पु०) जम्बुद्वीप।

जम्बुद्वीप—जम्बूद्वीप देखो।

जम्बुध्वज (सं० पु०) १ जम्बुद्वीप। २ एक नागका नाम।

खुरासानकी सूबेदारी मिली थी। परन्तु दामास्कस मालगुजारी न भेजनेके इलजाम पर उनकी जगह पर, उमर होबैरा मुकरर किये गये। उन्होंने कितने ही खुरासानियोंसे बहुतसा रुपया रिशवत लिया था। इसी नाराजगीसे उमैयदोंकी जड़ हिल गयी।

अफ्रीकामें भी इसी कारण बड़ा उपद्रव हुआ। बरबरोंने सूबेदारको मार भूतपूर्व सूबेदार मुहम्मद यजीदको उनके आसन पर बैठाया था। खलीफाने पहले इनसे मान लिया, परन्तु पीछेसे मुहम्मदको निकाल बिशरको सूबेदार बना दिया। उन्होंने सिसिलीके विरुद्ध एक अभियान भेजा था।

२य यजीदने कविता और गीतविद्याका बड़ा सम्मान किया। ७२४ ई०की २६ जनवरीको उनका मृत्यु हुआ। उन्होंने अपना उत्तराधिकारी पहले हिशम और उनके पीछे अपने बेटे वलीदको नियत किया था।

१० हिशमका शासन—हिशम एक बुद्धिमान् और योग्य राजा थे। ईराकके सूबेदार खलीफा बनाये गये और १५ वर्ष तक उन्होंने साम्राज्यके अर्धपूर्व प्रान्तको शासन किया। किन्तु यह बड़ी तड़क भड़कसे रहते थे। अन्तको शिकायत होने पर खलीद निकाले गये और यूसफ सूबेदार बने। फिर खलीद दामास्कसमें जाकर बसे और यूनानियोंसे खूब लड़े भिड़े। ७४० ई०की ६ जनवरीको ईराकमें बलवा फूटा। यूसफ मार डाले गये। उनका सर दामास्कस और वहांसे मदीना भेजा था। खुरासानमें भी बड़ा उपद्रव हुआ। परन्तु ७३६ ई०को खलीदके भाई असदने हारोतको हरा तुर्कों पर बड़ा विजय पाया था। हिशमके राज्यशासनकालको नसरने हारोत और तुर्कोंके विरुद्ध एक सफल अभिमान किया। भारतमें कितने ही प्रान्त फिर स्वाधीन हो गये। इससे भारतका पूर्वीय भाग खाली कर देना पड़ा। ७३० ई०को मुसलमान बुरी तरह हारे, परन्तु अरमेनिया अजरबैजानके सूबेदारोंने खजरोंको पराभूत करके शान्ति स्थापित की। हिशमके सम्पूर्ण शासनकाल बेजेण्टाइनोंसे खूब युद्ध होता रहा। ७२६ ई० तक हिशमके लड़के मोआविया सेनापति थे, जो एशियामाइनरमें अपने घोड़े परसे एकाएक गिर कर मर गये। उनके मरने पर खलीफाके दूसरे लड़के सुलेमान फौजके अफसर बने। परन्तु पूरे वीर अबदुल्ला थे, जिन्होंने ७३२ ई०को सम्राट् कानष्टेण्टेनीको गिरफ्तार किया। किन्तु यूनानियोंने मराश और मलाशियाको फिरसे जीत लिया।

हिशम राज्य शासनके दूसरे वर्ष स्पेनके सूबेदार अनबस पीरेनीज पर्वत पार करके लम्बी चढ़ाई की थी। ७२५ ई०को उनके मर जानेसे मामला ठण्डा पड़ गया। ७३२ ई०को चार्ल्स मारटेलने मुसलमानोंको रोका था। इब्राहीम मार डाले गये और मुसलमान पीछेको जल्द जल्द लौट पड़े। ७३८ ई०को स्पेनके नये सूबेदार उक्बा फिर गालमें दाखिल हुए और लियन्स तक बढ़े, परन्तु फ्रैंकों द्वारा दोबारा नारबोन तक खदेर दिये गये।

अफरीकामें बलवा फूटनेसे ७४० ई०को हिशमने कोलथूम और बलजके अधीन ३०००० फौज भेजी थी। परन्तु बलवाइयोंने उसे परास्त किया और कोलथूमको मार डाला। बलज बाकी सेना लेकर क्यूटा पहुंचे और वहांसे ७४१ ई०के अन्तको स्पेन गये जहां उन्होंने बरबरोंका भीषण विद्रोह दबाया था। ७४२ ई०को उनका मृत्यु हुआ। अफरीकाके बरबरोंने कैरवान लेनेकी कोशिश की थी, परन्तु हनजालाके सूबेदारने उनकी फौजको पूरी शिकस्त दी।

७४३ ई०के फरवरी मास २० वर्ष राजत्व करके हिशम चल बसे। वह लोकप्रिय न थे। इनके समय मुसलमान राज्यका अधःपतन आरम्भ हुआ।

११ द्वितीय वलीदका शासनकाल—द्वितीय वलीद खूबसूरत, ताकतवर और एक मशहूर शायर थे। परन्तु यजीदने साजिश करके दामास्कस अधिकार किया और २य वलीदके खिलाफ २००० आदमी भेज दिये जो किसी देहातमें रहते थे और जिनके पास दो सौसे ज्यादा लड़नेवाले सिपाही न थे। ७४४ ई०की १७ अपरेलको उनका वध हुआ। उनका सर दामास्कस पहुंचाया और भालेकी नोक पर सबके देखनेको बाजारमें निकाला गया।

है। जंबू बहुतसी औषधियोंमें भी काममें आता है। इसका वल्कल सङ्कोचक, अजीर्णनिवारक, आमाशयनाशक और मुखव्रणनिवारक है। अपक्व फलका रस वायुनाशक और जीर्णकारक होता है। आमाशय (पेचिश) रोग तथा बिच्छूके काटने पर इसके पत्तेका रस फायदा पहुंचाता है। इसके बीजोंका चूर्ण बहुमूत्रनिवारक है। पथरी, अजीर्ण, उदरामय आदि रोगोंमें इसका पका हुआ फल फायदेमन्द होता है।

जामुन कहीं कहीं कबूतरके अण्डेके बराबर बड़े और पकने पर बिल्कुल स्याह हो जाते हैं। यह खानेमें कसैले और खट्टापनको लिए मीठे होते हैं। नमक डाल कर खानेसे और भी स्वादिष्ट लगते हैं। गोया प्रान्तमें इससे एक प्रकारकी शराब बनती है, जो खानेमें पोर्ट जैसी लगती है। मद्य देखो। ज्यादा जामुन खानेसे ज्वर होनेकी सम्भावना रहती है।

जामुनकी लकड़ी कुछ ललाई लिए हुए धूसर-वर्णकी होती है। यह न बहुत कड़ी और न ज्यादा नरम ही होती है। इसके काष्ठमें एक प्रकारके कीड़े लग जाते हैं। जामुनकी लकड़ी किवाड़, चौखट, हल इत्यादि बनानेके काममें आती है। वैद्यकमतसे इसके फलके गुण—यह कषाय, मधुर तथा श्रम, पित्तदाह, कण्ठरोग, शोष, कृमिदोष, श्वास, कास और अतीसार रोगनाशक, विष्टम्भी, रुचिकर और परिपाकजनक होता है। (राजनि०) राजवल्लभके मतसे यह गुरु, स्वादु, शीतल, अग्निसन्दीपन, रुच और वातकर है।

वैद्यक मतानुसार यह तीन प्रकारका होता है—बृहत्, क्षुद्र और जङ्गली। बृहत् फलके पर्याय हैं—महाजम्बू, महापत्रा, राजजंबू, बृहत्फला, फलेन्द्र, नन्द, महाफला और सुरभिपत्रा। क्षुद्रजंबूके पर्याय ये हैं—सूक्ष्मा, कृष्णफला, दीर्घपत्रा और मध्यमा। इसको हिन्दीमें छोटी जमुनी कहते हैं। जङ्गली जामुनके पर्याय ये हैं—भूमिजंबू, काकजंबू, नादेयी, शीतपल्लवा, सूक्ष्मपत्रा और जलजंबुका। भूमिजंबूका वृक्ष छोटा और प्रायः नदियोंके किनारे उत्पन्न होता है। भावप्रकाशके मतसे इसके गुण ये हैं—विष्टम्भी, गुरु और रुचिकर। वनजंबूफलके गुण—यह ग्राही, रुक्ष; कफ, पित्त और दाहनाशक होता है। (भावप्र०) इसकी लकड़ी पानीमें रहनेसे अच्छी और टिकाऊ होती है। इसीलिए इसकी नावें बनाई जाती हैं।

क्षुद्रजम्बू—इसका वैज्ञानिक नाम (Eugenia caryophyllaea) है। इसे संथाल भाषामें बटजनिथा कहते हैं। यह भारतवर्षके प्रायः सर्वत्र ही पैदा होता है। फल बहुत ही छोटा होता है। इसकी पत्तियां नुकीली और औषध बनानेके काममें आती हैं। इसकी लकड़ी सफेद, मजबूत और टिकाऊ होती है।

गुलाब जामुन—इसका वैज्ञानिक नाम Eugenia jambos है। इसे अंग्रेजीमें रोज़ ऐप्ल (Rose Apple) और अरबीमें तोफाह कहते हैं।

गुलाबजामुनका पेड़ छोटा और फल फूलोंसे भूषित होने पर अति मनोहर लगता है। भारतवर्ष और अन्यान्य ग्रीष्मप्रधान देशोंके बगीचोंमें इसका पेड़ लगाया जाता है। गुलाबजामुनका पेड़ बेरके बराबर होता है। यह देखनेमें बहुत ही सुन्दर और कोई कोई सेवसा बड़ा होता है। गरमियोंमें यह पकता है पकने पर इसका रंग चम्पई, सुगन्ध गुलाबके फूलके समान और खानेमें सुस्वादु होता है, किन्तु रस इसमें ज्यादा नहीं होता। इसका फूल ललाईको लिए और खुशबूदार होता है। साल भरमें ३।४ बार फूल लगते हैं।

गुलाबजामुनके विशेष गुण—प्रत्येक बार फलोंके समयमें, जिस तरफ फल लगते हैं, उस तरफके पत्ते झर जाते हैं; किन्तु जिस ओर फल न लगें उस तरफके पत्ते भी नहीं झरते। इसकी लकड़ीका रंग लोहिताभ धूसर होता है। गुलाबजामुनकी पत्तियोंसे एक प्रकारकी चक्षुरोगकी औषध बनती है।

जमरूल या चमरूल—इसका वैज्ञानिक नाम है Eugenia Javanica। मलका, आन्दामन, निकोबर आदि द्वीप जमरूलके आदि-वासस्थान हैं। अब तो हिन्दुस्तानमें जगह जगह जमरूल पैदा होता है। ग्रीष्म ऋतुमें इसके फल पकते हैं। फल सफेद, चिकने और उजले होते हैं। स्निग्ध और रसदार होने पर भी इसमें कोई स्वाद नहीं पाया जाता। इसका काष्ठ धूसर वर्ण और मजबूत होता है; किन्तु किसी काममें नहीं

भी कूफावालोंका विश्वास न किया। उन्होंने अम्बरके पास हीरा और हाशीमिया नामक दो स्थान बनवाये थे। ७५४ ई० ५ जूनको अबुल अब्बासका मृत्यु हुआ। इनके दाहने हाथ अबू जहम और सलाहकार भाई अबू-जाफर थे।

२ मन्सूर—अबुल अब्बासके मरनेकी खबर सुन अबदुल्ला एक बड़ी फौजके साथ हरम पहुंचे और खलीफा बन बैठे। किन्तु ७५४ ई० २८ नवम्बरको अबू मुसलिमने उन्हें शिकस्त दी और वह बसराको भाग गये। फिर उन्होंने मन्सूर खलीफाकी राजभक्ति स्वीकार की थी, मन्सूरने अबू मुसलिमको मदाइनमें चुपकेसे बुला मरवा डाला। इसी प्रकार अब्बासी घराने प्रतिष्ठाता मारे गये। उनको लोग साहब-उद्-दौला कहा करते थे।

८०० ई० तकसे अफरीका कहने सुननेको अब्बासियोंके मातहत रही। इसी बीच स्पेनमें पाश्चात्य उमैयदोंकी अलग खिलाफत बन गयी। हिशाम खलीफाके पोते अबदुर रहमान खलीफा हुए। ७५७ ई०को ७०००० फौजके साथ मुसलमानोंने धावा करके कानष्टण्टनोंके हाथों गिराया हुआ मालाशिया जा बनाया था। ७५८ ई०को कूफासे थोड़ी दूर खलीफाके रहनेकी जगह ६०० रावेंदी फकीर सम्मानप्रदर्शन करने गये थे, परन्तु झगड़ा हो जानेसे सबके सब कत्ल हुए।

मन्सूरको बड़ा डर यह था कि उमैयदोंके समय उन्होंने मुहम्मदकी वश्यता मानी थी। ७६२ ई०को मुहम्मदने मदीना छीन अपनेको खलीफा बनाया था। परन्तु कूफाके सूबेदारने युद्ध करके उन्हें मार डाला। उनका सर काट करके मन्सूरके पास भेजा गया। मुहम्मदने मरते वक्त नबीकी भयङ्कर तलवार एक सौदागरको दी थी, जो पीछेको हारूं अल् रशीदको मिल गयी। इसी बीच इब्राहीम बसरा अहवाल, फारस और वसीतके मालिक बन बैठे। सलतनत चली जानेके खौफसे मन्सूरने ५० दिन तक कपड़े न बदले और न आराम ही किया। बाखमरामें कड़ी लड़ाई हुई। इब्राहीमका मस्तक काट करके मन्सूरको पहुंचाया गया। कूफामें अपना बचाव न देख मन्सूरने बगदादको अपनी राजधानी बनाया था। तीन वर्षमें ७६६ ई०को उसका निर्माणकार्य समाप्त हुआ।

मुहम्मदके एक लड़केने भारतको भाग किसी राजाका शरण लिया था। मन्सूरने पता लगा उन्हें मरवा डाला। ७७५ ई०को मक्केको हजको जाते राहमें मन्सूरका मृत्यु हुआ। उनका वयस ६५ वर्ष रहा और उन्होंने २५ वर्ष राजत्व किया था। मक्कामें मन्सूर दफनाये गये। वह बड़े उत्साही बलवान् हृदयके मनुष्य थे। उन्हें काबिल अफसर चुननेकी अच्छी सूझ थी। वह किफायती रहे और अपने लड़केको भरा खजाना छोड़नेकी उन्हें फिक्र थी।

३ मेहदीका शासन—मन्सूरके मरने पर मुहम्मद अल् मेहदी खलीफा बनाये गये। इसके दूसरे ही वर्ष कोरा और नखशबमें मोकन्ना नामक एक खारिजीने बलवा किया था। कितनी ही बार जीतने पीछे वह सनाम किलेमें घिरा और जहर खाकर मरा था। उसका सर काट कर मेहदीके पास भेजा गया। फिर मेहदी मक्काके हजको चले। उनके लिये ऊंटों पर लदकर बर्फ मक्का गया था। उन्होंने काबाको जाकर फिर बनवाया और उसमें खूब बेशकीमत सामान लगवाया। मक्कासे मदीना पहुंच मेहदीने मसजिदकी इमारत बढ़ायी थी। उन्होंने हजकी राहमें कूएं खुदवाये, सड़कें बनवायी, सराये सुधरायीं और हाजियोंके सुभीतेके कई काम करवाये।

मन्सूरके शासन समय बैजन्ताइनों पर बराबर हमले होते रहे और लाओडीसिया नगर अधिकार किया गया। परन्तु मास बदहान पहुंच मन्सूर ४३ सालकी उम्रमें एकाएक चल बसे। कोई उनकी मृत्युका कारण शिकारकी दुर्घटना और कोई जहर दिया जाना बतलाता है।

मेहदीके शासनमें खूब वहाली रही। बृहत् साम्राज्य सङ्गठनका बड़ा उद्योग हुआ, कृषिकार्य, व्यापार, वाणिज्य तथा राजस्व बढ़ा और लोगोंका हाल अच्छा था। सुदूर पूर्वतक साम्राज्य फैल पड़ा। चीनसम्राट्, तिब्बतके लामा और भारतीय नरेशोंने खलीफासे सुलहनामा किया था।

में उबाली हुई कँगनी (कङ्गु नामक अन्न) और चीनी रख दी जाती है, बादमें पाँच सुहागिन स्त्रियां आ कर उसे खाती हैं। नौवें दिन भी कँगनी, अरहर, मूंग, गेहूं और जौ इनको एक साथ उबाल कर तथा थोड़े तेलमें भूंज कर उसे चीनीके साथ पाँच सुहागिन स्त्रियोंको खिलाती हैं। उस दिन बच्चेको झूलनेमें बिठा कर झुलाते और नृत्य गीत करते हैं। २१वें दिन बच्चेको उड़चव देवीके मन्दिरमें ले जा कर उसे देवीके चरणों पर रख देते हैं। पुजारी एक पानको कँचीकी तरह बना कर उसे बच्चेके सिर पर छुआता है, फिर ध्यानस्थ हो कुछ देर तक बैठ कर बच्चेका नाम बता देता है। इसके उपरान्त सब मिल कर फूल, हल्दी और सिन्दूर चढ़ा कर घर लौट आते हैं। इसके बाद किसी दिन बच्चेके बाल कटा देते हैं।

विवाह स्थिर होने पर लड़कीवाला लड़केको २०) रुपये देता है। विवाहके दिन कन्यापक्षके लोग कन्याको ले कर लड़केके घर पहुंचते हैं। लड़को यदि समर्थ हो तो पैदल नहीं तो बैल पर चढ़ कर जाती है।

कन्यापक्षवाले जब लड़केके घरके पास पहुंचते है, तब वरपक्षके लोग एक पात्रमें धूप और दूसरेमें दीपक जला कर उनकी आरती उतारते हैं। पीछे लड़कीवाले भी वरपक्षवालोंकी आरती उतारते और फिर घरमें प्रवेश करते हैं।

इसके उपरान्त वर और कन्या दोनों माड़ेके नीचे कम्बल बिछा कर बैठते हैं। इस समय एक लिङ्गायत चेलवाड़ी मन्त्र पढ़ता रहता है। पीछे वह वर-कन्याको धान्य देते हुए आशीर्वाद कर कन्याके गलेमें मङ्गलसूत्र बाँध देता है। इसके उपरान्त भोजनादि कर चुकने पर विवाह-कार्य समाप्त हो जाता है।

इनमें स्त्रियोंके पहले पहल ऋतुमती होने पर उन्हें तीन दिन तक एक जगह बैठना पड़ता है। इस समय वे सिर्फ भात, गुड़ और नारियल खाती हैं। चौथे दिन बबूल के पेड़के तले जा कर दाहिने हाथसे आलिङ्गन करतीं और घरमें आ स्नान कर शुद्ध होती हैं।

पुत्र और कन्या ज्यादा होने पर ये कन्याका विवाह करते हैं, किन्तु यदि पुत्र न हो तो एक कन्याको घर ह रखते हैं। ऐसी लड़कीको बासवी कहते हैं, यह ब्याह नहीं कर सकती। शुभ दिनमें वह कन्या पान, सुपारी, फूल और नारियल ले कर उड़चव देवीके मन्दिरमें पहुंचती है। यहां पुजारी देवीको पूजा कर लड़कीके कण्ठमें स्वर्ण वा काँचकी माला और मस्तक पर कण्डेकी राख लगा कर कहते हैं—"आजसे तुम बासवी हुई।" बासवी हो कर वह इच्छानुसार वेश्यावृत्ति कर सकती है, इसमें किसीको कुछ उज्र नहीं; किन्तु उस दिनसे उसे रोज देवीके मन्दिरमें जा कर देवी पर पङ्खेको हवा करनी पड़ती है, जिससे देवीके शरीर पर एक भी मक्खी न बैठ सके। पिता-माताके मरे पीछे वही सम्पत्तिकी मालकिन होती है। उसकी लड़की हो तो वह अच्छे घरमें ब्याही जा सकती है।

इनमें भी एक समाज है। सामाजिक झगड़ा होने पर चेलवाड़ी उसका निबटेरा कर देते है। कोई अगर उनकी बातको न माने, तो वह उसी समय जातिसे छेक दिया जाता है। जन्म और मृत्युमें ये ११ दिन तक अशौच मानते हैं। विवाहित जम्बूकी मृत्यु होने पर उसे समाधिस्थानमें ले जा कर चेलवाड़ी द्वारा उसके सिर पर विभूति और मुंहमें सोनेका एक टुकड़ा रखवा दिया जाता है। इसके बाद उसे जमीनमें गाड़ देते है। बासवी औरतोंके लिए भी यही नियम है। परन्तु अविवाहितकी मृत्यु होने पर उसे ला कर सिर्फ गाड़ देते हैं, भस्म आदि कुछ नहीं लगाते।

जम्बू-उड़ीसाके अन्तर्गत कटक जिलेकी एक छोटी शाखा नदी। यह फल्स् अन्तरीपके पास वङ्गोपसागरमें जा मिली है। इसमें नावका चलाना बड़ी जोखमका काम है। सागरसङ्गमके पास एक चर पड़ गया है, वहां भाटाके वक्त १ फुट पानी रहता है। कभी कभी इसमें भाटाके समय १८ फुट पानी रहता है। समुद्रके किनारेसे १२ मील दूरी पर देलपाड़ा नामक स्थान तक इसमें बड़ी नाव जा सकती है। अब यह वर्द्धमान महाराजके अधिकारमें है।

जम्बूक (सं० पु०) १ शृगाल, गीदड़। २ वाराहीकन्द। ३ ब्राह्मी। ४ मत्स्याक्षी। ५ पीत लोध्र।

जम्बूका (सं० स्त्री०) काकलीद्राक्षा, किसमिस।

जम्बूकी (सं० स्त्री०) शृगाली, मादा गीदड़।

अखीरमें अमीन ताहिरके हाथ अपनेको सौंपने पर मजबूर हुए। ताहिरने उन्हें पकड़ कर क़त्ल किया था। ८१३ ई०के सितम्बर महीने उनका सर काट कर मामूनके पास भेज दिया गया।

७ मामूनकी सुलतनत—अमीनके मरने पर ताहिरने बगदादमें मामूनको खलीफा बनाया। इनके समय कलाकौशल, विज्ञान और साहित्यकी अच्छी उन्नति हुई, परन्तु शुरूआत खूब तूफानी थी। ताहिर मेसोपोटेमिया और सीरियाके सूबेदार बनाये गये और उन्हें बलवाई नसरको दबानेका काम मिला। अलीद भी बिगड़ उठे थे। कूफामें इब्न टवाटबाने खेतमें एक फौज उतार दी। हसनकी भेजी फौज उससे हारी थी। फिर इराकके बसरा, बसीत और मैदइन नगर भी दुश्मनके हाथ लगे। अलीदोंने मक्का, मदीना और यमनको दबा लिया। कूफामें शत्रुदलके सेनापतिने नया सिक्का ढाला और राजधानी पर आक्रमण करनेका भय दिखाया। हसनने अपनी मददके लिये हरथमको बुलाया था, जिन्होंने पहुँचते ही दुश्मनका आगे बढ़ना रोक दिया। ईराकके सब शहर फिर अब्बासियोंके हाथ आ गये। अफरीकाका बलवा भी दबा था। हरमथ मर्वको खलीफासे मिलने गये, परन्तु लोगोंके बहकाने से मामूनने उन्हें कैदखानेमें डाला था, जहां वह कुछ ही दिनमें मर गये। ८१७ ई०को मामूनके अपना उत्तराधिकारी अली अररिदाको बनाने सारे अब्बासी ताज्जुबमें आये थे। बगदादको लोगोंने इस पर बिगड़ मामूनको राज्यच्युत किया और उनके चचा इब्राहीमको खलीफा बना दिया। इस पर मामूनने मनही मन सोचा कि फदल उन्हें कठपुतली जैसा समझते थे। एक दिन फदल मरे मिले और अली एकाएक चल बसे। मामूनने इस पर अत्यन्त शोक प्रकाश करके फदलके भाई हसनको अपना वजीर बनाया और उनकी बेटीसे अपनी शादी भी कर ली। इसपर इब्राहीम खलीफाकी ताकत घट गयी और उन्हें छिप कर अपना जान बचानी पड़ी। ८१९ ई०के अगस्त महीनेसे मामूनकी असली हुकूमत शुरू हुई। ताहिरने अपने लिये अलग राज्य स्थापन करने का विचार किया था, परन्तु ८२२ ई०को उनके मर जानेसे मनकी बात मनमें ही रह गयी। ताहिरके लड़के अबदुल्लाने मेसोपोटेमिया और मिसरका बलवा दबाया था। फिर इब्राहीम खलिफा जो भागे थे पकड़े गये, परन्तु खलीफाने उनको माफ कर दिया। वह गाने बजानेकी तरकी दरबारमें आरामसे रह कर करने लगे।

मुल्कमें अमन चैन होने पर मामूनने अपना ध्यान विज्ञान और साहित्य पर लगाया था। उन्होंने गणित, ज्योतिष, वैद्यक और विज्ञानकी पुस्तकें यूनानी भाषासे अनुवाद करायीं और बगदादमें एक विद्यालय खोला जिसमें एक पुस्तकालय और एक वेधशाला भी थी। उन्हींके आदेशसे दो सुविज्ञ गणित शास्त्रियोंने पृथिवीके वृत्तका अंश निर्धारण करनेका काम अपने हाथमें लिया। धार्मिक सिद्धान्तोंमें भी मामूनको दिलचस्पी रही। ८३३ ई०को एक हुक्मनामा निकाल उन्होंने सब विद्वानोंको यह समझानेके लिये बुलाया था कि क़ुरान ईश्वर वाक्य नहीं। जिसने यह बात नहीं मानी, कैद खानेमें डाला गया। मामूनने इन अपराधियोंको बगदादसे अपने पास सजायाब होनेको तलब किया था, परन्तु वह मुश्किलसे अदम पहुंचे होंगे कि खलीफाके मरनेकी खबर लगी। ८३३ ई०के अगस्त मास ठण्ढेके दरयामें नहानेसे उन्हें बुखार चढ़ा और ४८ वर्ष उम्रमें उनका मृत्यु हुआ।

मामून निराले सिफतके आदमी थे और मन्सूरके बाद उनके जैसा खलीफा विरला ही हुआ।

८ मोतासिमका राजत्व—मामूनके मरने पर अबू इशाक अल-मोतासिम खिलाफतके मालिक हुए। और ८३३ ई० २० सितम्बरको बगदादमें जा पहुंचे। उनके शरीररक्षक तुर्की गुलाम रहे, जो ज्यादा जोर जुल्म करने पर बगदादियोंके हाथों, जहां तक हो सका, मारे गये। मोतासिमने बगदाद छोड़ सामरामें आने रहने को इमारत बनवायी थी।

गृहयुद्धके समय बसरा और वासितके बीच दलदलवाले मुकामको बहुतसे जाट नामक भारतवासियोंने अधिकार किया और टिगरिस नदीमें आने जाने वाले

जैनमतानुसार—मध्य लोकके अन्तर्गत असंख्यात द्वीप और समुद्रोंमेंसे एक द्वीप। यह जंबूद्वीप सबके बीचमें है। इसके चारों ओर लवणसमुद्र, उसके चारों तरफ धातुकीखण्ड द्वीप, उसके चारों ओर कालोदधि समुद्र, उसके चारों तरफ पुष्करवर द्वीप और उसके चारों ओर पुष्करवर समुद्र है, इसी प्रकार एक दूसरेको (क्रमशः एक द्वीप और एक समुद्र) वेष्टित किये हुए अन्तके स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त असंख्य द्वीप और समुद्र हैं।

जम्बूद्वीप एक लाख योजन (एक योजन २००० कोसका माना गया है) विस्तृत है. इसका आकार थालीके समान गोल है। इसकी परिधि ३१६२२७ योजन, ३ कोश, १२८ धनुष (३॥ हाथका एक नाप) १३ अङ्गुलसे कुछ अधिक है। इसके चारों तरफ जो लवणसमुद्र है, वह इससे दूना अर्थात् २ लाख योजन-का है, इसी तरह आगेके द्वीप और समुद्र दूने दूने विस्तारवाले समझना चाहिये।

इस जम्बूद्वीपमें भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत ये सात क्षेत्र या खण्ड हैं।

"भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि।"
(तत्त्वार्थसूत्र ३ अ०)

उक्त सातों वर्ष या खण्डोंको विभाग करनेवाले पूर्वसे पश्चिम तक लम्बे हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी ये छह पर्वत हैं, जिनको वर्षधर (क्षेत्रोंका विभाग करनेवाले) कहते हैं। इन सातों पर्वतोंके समूहको षट्कुलाचल कहते हैं। इन पर्वतोंका रंग क्रमशः पीला, सफेद, तापे हुए सोने जैसा, मयूरकण्ठी (नीला), चाँदी जैसा शुक्ल सोने और जैसा पीला है। इसके सिवा हिमवन्पर्वत पर पद्म, महाहिमवान् पर महापद्म, निषिध पर तिगिञ्छ, नील पर केशरी, रुक्मी पर महापुण्डरीक और शिखरीपर्वत पर पुण्डरीक नामके छह ह्रद हैं। इन छह ह्रदोंमेंसे पहले ह्रदकी (पूर्वसे पश्चिम तक) लम्बाई १००० योजन, चौडाई (उत्तरसे दक्षिण तक) ५०० योजन और गहराई दश योजनकी है। दूसरा महापद्म ह्रद इससे दूना और उससे दूना तीसरा तिगिञ्छ ह्रद है। शेष उत्तरके तीन पर्वतों पर भी इसी परिमाणके ह्रद हैं। इन छहों ह्रदोंमें कमलके आकारके रत्नमय छह उपद्वीप हैं, जिनमें श्री, ह्री, धृति, कीर्त्ति, बुद्धि और लक्ष्मी नामकी सात देवियां वास करती हैं। ये देवियां आजन्म ब्रह्मचारिणी रहती हैं। श्री, ह्री आदि शब्द देखो।

उक्त छह वर्षधर पर्वतोंके ह्रदमेंसे गङ्गा, सिन्धु, रोहित्, रोहितास्या, हरित्, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, नारी, नरकान्ता, सुवर्णकूला, रूप्यकूला, रक्ता और रक्तोदा ये चौदह नदियां निकली हैं, जो क्रमशः पूर्व और पश्चिमकी ओर बहती हुई लवणसमुद्रमें जा मिली हैं। गंगा, सिन्धु आदि शब्द देखो। प्रत्येक क्षेत्रमें दो दो नदियां हैं, जैसे—भरतक्षेत्रमें गङ्गा और सिन्धु, हैमवत्-क्षेत्रमें रोहित और रोहितास्या, इत्यादि।

भरतक्षेत्र, जिसमें कि हम रहते हैं, दक्षिण उत्तरमें ५२६ ६⁄१९ योजन विस्तृत है। हैमवत्क्षेत्र इससे दूना, उससे दूना हरि और उससे दूना विदेहक्षेत्र है। विदेहसे उत्तरके तीन क्षेत्र (पर्वत भी) दक्षिणके बराबर हैं। इनमेंसे भरत और ऐरावतक्षेत्रके अधिवासियोंकी आयु आदि उत्सर्पिणी (वृद्धि) और अवसर्पिणी (हानि) कालके प्रभावसे बढ़ती और घटती रहती है। विदेह क्षेत्रमें सदा ४र्थ काल (जिसमें जीव मुक्ति पा सकें) रहता है। बाकीके चार क्षेत्रोंमें किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं होता, वहां कल्पवृक्ष होते हैं, जिससे अधिवासियोंको अपने आप वाञ्छित वस्तुएं प्राप्त होती रहती हैं। अन्यान्य द्वीपोंका विस्तार आदि सब कुछ दूना दूना समझना चाहिये। परन्तु ३रे पुष्करद्वीपके बीचमें मानुषोत्तर पर्वत होनेके कारण उसके आगे मनुष्योंका गमन नहीं हो सकता। उसके आगे विद्याधर, ऋद्धिप्राप्त ऋषि भी नहीं जा सकते और न उसके आगे मनुष्य उत्पन्न ही होते हैं। (क्षेत्रसमास)

भरतक्षेत्र छह भागोंमें विभक्त है, जिसमें पाँच म्लेच्छ खण्डोंमें म्लेच्छ और एक आर्य क्षेत्रमें आर्य रहते हैं। भारतवर्षके सिवा चीन, जापान आदि सब आर्य क्षेत्रमें ही अवस्थित हैं।

भरतक्षेत्र देखो।

जम्बूनदप्रभ (सं० पु०) भावि बुद्धका नाम।

१२ मुस्तईनकी हुकूमत—मोन्तासिरके मरने पर उनके उनके चचेरे भाई अल मुस्तईन नामसे खिला-फतके तख्त पर बैठे थे। परन्तु ८६५ ई०को वह बगदाद भाग गये और मोताज खलीफा हुए।

१३ मोताजका राज—८८६ ई०के जनवरी मास बगदादमें यह तख्त नशीन हुए और अपनी खिला-फतकी मुखालिफत करनेवाले तुर्की सेनापति वसीद और वोधाके पंजेसे छूटनेकी कोशिश करने लगे। इन्होंने अपने एक भाई मुवय्यदको मार डाला और दूसरे मुवफ्फककी मुल्कसे बाहार बगदाद-को निकाला था। परन्तु उन्हें फौजको कोई २००००० अशरफियां तनखाह देनी थी। इतनी बडी तनखा चुका न सकनेसे वह पकड लिये गये और ८६८ ई०के जुलाई मास कैदखानेमें भूखों मरे। इसी बीच सीस्तान और मिसरके सूबेदार आजाद हुए।

१४ मुहतदीकी खिलाफत—मोताजके गिरफ्तार होते ही वातिकके लडके अल् मुहतदी खिताबके साथ खलीफा बने थे। वह शरीफतबा, सखी और जोरादर शख्स रहे। उन्होंने कलावतों और गवैयोंको निकाल बाहर किया और सब खेल कूद बन्द कर दिया। वह मुनसिफीकी तर्फ मुतवज्जह हुए और लोगोंको शिका-यतें दूर करनेको उनसे खुले तौर पर मिलने लगे। ८७० ई०के जून महीने तुर्की सिपाहियोंने मुहतदीको मार डाला।

१५ मोतमीदकी खिलाफत—मुहतदीके मारे जाने पर मुत-वक्किलके लडके मोतमीदको खिलाफत मिली थी। परन्तु याकूबने बलवा खड़ा करके नीशापुरको दखल कर लिया और इराक पर भी धावा कर दिया। खलीफा खुदबखुद नबीका जामा पहन उससे लड़ने गये। आखीरमें मुवफ्-फकने उसे मार भगाया। ८६९से ८८३ई० तक वसरामें हबशियोंका बलवा दबाना पड़ा था, जिसमें बहुतसा रुपया खर्च हुआ। ८८२ई०को खलीफाको सीरीया और मेसोपोटेमियाके राजा अहमदके वजीरने कैद करके सामरा भेजा था। ८८६ ई०को अहमदकी पोती मोतमिदसे ब्याही गयी। दशवर्ष पीछे खलीफाके सेनापति मुकत-फीने मिसर विजय किया।

इनके शासन-कालको सम्राट् १म बसील मुसल-मानोंसे कामयाबीके साथ लड़े, किन्तु ८८४ ई०को बुरे तौरसे हारने पर उनकी फौज, सेनापति और कितने दूसरे साथी मर मिटे।

१६ मोतदिदका शासन—८८१ ई०को मोतमिदके मरने पर उनके लड़के अबूल अब्बास अल् मोतदिद नामसे तख्त-नशीन हुए। यह बहुत लायक और ताकत वर थे। हमदानकी मददसे मेसोपोटामियाके खरीजीय कुचल डाले गये। दक्षिण-पश्चिम मदीया अबू दोलाफ घराना दबा दिया गया। अजरबैजन और अरमेनियाके तुर्की सूबेदारोंने बलवा खडा करना चाहा था, परन्तु उनकी एक न चल सकी और इस साजिशमें शरीक होनेवाले तारससके बाशिन्दे सजायाब हुए और उनके जहाज जला डाले गये।

१७ मोकतफ़ीकी खिलाफत—९०२ ई०को मोतदिदके मरने पर उनके बेटे मोकतफी खलीफा हुए। यह अपने आप फौज लेकर सीरीयाके कारमैथीयों पर चढे थे। खलीफाके सेनापति मुहम्मदने दुश्मनको पूरे तौर पर शिकस्त दी। परन्तु इस हारका बदला चुकानेको (९०६ ई०) मक्कासे लौटनेवाले कारवाके २०००० आद-मियोंको मार डाला और बहुतसा माल असबाब लूट लिया।

मोकताफीके राजत्व कालको बैजन्तीयोंसे बड़ा युद्ध हुआ। ९०५ ई०को यूनानी सेनापति अरोङ्रोनिकसने मरश अधिकार किया और हलबतक दबा लिया था, परन्तु ९०७ ई०को समुद्रमें मुसलमान फतेहयाब हुए और इकोनियमको दबा बैठे। अन्तको बैजन्तनीय सम्राट्को बगदाद दूत भेज सुलह करनी पड़ी।

१८ मोकतादिरका राजत्व—९०८ ई०के अगस्त मास मोक-ताफीके एकाएक मरने पर मोकातादिरके खिलाफत मिली थी। यह मोकताफीके भाई थे। तख्तनशीनीके वक्त इनकी उम्र १३ साल ही रही। बगदादके बहुतसे बड़े आदमियोंने बलवा करके पहले खलीफा मोताजके बेटे अबदुल्लाको खिलाफत सौंपी थी, परन्तु मोतादिदके घरवालोंने उन्हें मार डाला। मोकतादिरमें अच्छे गुणोंका अभाव न होते भी उन्होंने शासनकार्य अपनी

इनके पिता सागरदत्त, कुबेरदत्त आदि चार सेठोंसे यह कह चुके थे कि, वे अपने पुत्रके साथ उनकी चार कन्याओंका विवाह करेंगे। पिता माताने उक्त बातको पुत्रसे कहा। जंबूकुमारको इच्छा न होते हुए भी माता पिताकी बात माननी पड़ी। जंबूकुमारका पद्मश्री, कनकश्री, विनयश्री और रूपश्रीके साथ विवाह हो गया। विवाह करने पर भी ये उदासीन रहते थे।

एकदिन रातको इनकी माता जिनदासी अपने पुत्रके मनकी जांच करनेके लिए उनके शयनागारके पास कहीं छिप गईं। उन्होंने देखा कि, जंबूकुमार अपनी स्त्रियोंमें इस प्रकार बैठे हैं, मानो उन्हें जबरन किसीने कैद कर रक्खा हो। इसी समय पोदनपुरके राजा विद्युद्राजके पुत्र विद्युत्प्रभ जो बड़े भाईसे लड़ कर घरसे निकल चोरी, डकैती आदि दुर्व्यसनोंमें फंस गये थे—वे भी यहां डकैती करनेके अभिप्रायसे आ पहुंचे। यहां आ कर उन्होंने जिनदासीको जगती हुई देख उनसे जगनेका कारण पूछा। जिनदासीने कहा—"मेरे एक ही पुत्र है, वह भी सङ्कल्प कर बैठा है कि, मैं सुबह ही दीक्षा लेनेके लिए तपोवनमें जाऊंगा। यदि तुम मेरे पुत्रको समझा बुझा कर रोक सको, तो मैं तुम्हें मुंह मांगा धन दूंगी।" यह सुन कर विद्युत्प्रभ सोचने लगे कि "हाय! जिसका धन है, वह तो उसे छोड़ना चाहता है और मैं उसे चुरानेके लिए यहां आया हूं। धिक्कार है मुझे!" इसके बाद विद्युत्प्रभ जंबूकुमारके पास गये। जंबूकुमारसे उनका अनेक प्रश्नोत्तर हुआ। आखिर जंबूकुमारके मनोमुग्धकर पवित्र धर्मोपदेशसे विद्युत्प्रभके मनने पलटा खाया। उनके उपदेशका ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनकी माता और चारों स्त्रियोंको भी संसारसे वैराग्य हो गया।

जम्बूकुमार संसारसे विरक्त हो कर तपोवन (विपुलाचल)-को चले। वहां जा कर इन्होंने सुधर्माचार्यके समीप दीक्षा ग्रहण की। इनका दीक्षाका नाम जम्बूस्वामी हुआ। इनके साथ विद्युत्प्रभ (जो पहले चोर थे)-के सिवा और भी पांच सौ योद्धाओंने दीक्षा ग्रहण की थी।

सुधर्माचार्यकी मोक्ष प्राप्त होनेके उपरान्त इन्हें केवलज्ञान हुआ था। इनके भव नामके एक शिष्य थे; जिनके साथ चालीस वर्ष तक विहार (भ्रमण) करते हुए इन्होंने धर्मोपदेश दिया था। इनके बाद जैनोंमें फिर केवलज्ञानके धारक, सर्वज्ञ या अर्हन्त नहीं हुए हैं। इनका जीव (आत्मा) ब्रह्मस्वर्गके ब्रह्महृदय नामक विमानसे चय कर आया था। ये पूर्व जन्ममें उक्त स्वर्गमें विद्युन्माली नामके इन्द्र थे; इनकी प्रियदर्शना, सुदर्शना, विद्युत्प्रभा और विद्युद्वेगा ये चार देवियां थीं। (जैन उत्तरपुराण पर्व ७६)

श्वेताम्बर जैन-सम्प्रदायके ऋषिमण्डलप्रकरणवृत्ति नामक ग्रन्थमें इनके पिताका नाम ऋषभदत्त और माताका नाम धारिणी पाया जाता है। इसके सिवा उक्त सम्प्रदायके स्थविरावलीचरित नामक ग्रन्थमें इनकी आठ स्त्रियोंका उल्लेख मिलता है—पद्मश्री, कनकश्री, जयश्री, समुद्रश्री, पद्मसेना, नभःसेना, कनकसेना और कनकावती। और सब विषयमें दोनोंका प्रायः एक मत है।

जम्बौष्ठ (सं० क्लो०) वैद्योंके अस्त्रचिकित्सार्थ शलाकाविशेष। जाम्बवौष्ठ देखो।

जम्भ (सं० पु०) जम्भते जृम्भते इति जभ गात्रविनामे अच्। १ एक दैत्य, महिषासुरका पिता। किसी समय जम्भ इन्द्रसे पराजित हुआ था। बाद इसने शिवजीको तपस्या की। शिवने इसको घोर तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर वर दिया—"तुम। त्रिभुवनविजयी पुत्र लाभ करोगे।" दैत्य यह वर पा कर जब घरको लौटा आ रहा था तो इन्द्रने नारदसे यह सम्वाद पा कर रास्तेमें ही युद्ध करनेके लिये उसे ललकारा। जम्भ स्नान करनेका बहाना लगा कर किसी एक सरोवरके पास चला गया। वहां पर उसने अपनी स्त्रीको देखा। इसके बाद उसका गर्भोत्पादन कर वह इन्द्रके साथ लड़नेके लिये पहुंचा। इसी युद्धमें इन्द्रसे वह दैत्य मारा गया। (मार्कण्डेयपुराण)

२ प्रह्लादके तीन पुत्रोंमेंसे एक पुत्रका नाम। (हरिवंश २१८।३५) ३ हिरण्यकशिपुका एक पुत्र, प्रह्लादका भाई। (हरिवंश २२६।१८) ४ हिरण्यकशिपुके श्वशुर और कयाधूके पिता। (भागवत ६।१८।१२) जम्भते भक्ष्यते अनेनेति जम्भ करने घञ्। ५ दन्त, दांत। जभ-णिच्-ण्वुल्। ६ जंबीर, जंबीरी नीबू। जम्भ भावे घञ्। ७ भक्षण,

भागको जीता था। १०३१ ई०के नवम्बर महीने कादिर मर गये। वह कुछ आध्यात्मिक ग्रन्थोंके रचयिता थे।

२६ कायमकी खिलाफत—कादिरके मरने पर उनके बेटे कायम नामसे खलीफा बने। बगदादकी हालत बिगड़ जानेसे इन्होंने तुगरलको अपनी मददके लिये बुलाया था। उन्होंने बगदाद पहुंच बुईदीके खानदानको निकाल बाहर किया। परन्तु १०५८ ई०को तुगरलकी अदम-मौजूदगीमें शीयाओंने ,बगदाद राजधानी अधिकार करके मुसतनसीरको खलीफा बना दिया। तुगरलने जल्द नीचा देखा खलीफाको अपनी लडकीकी शादी कर देने पर मजबूर किया था। परन्तु शादी होनेसे पहले ही वह मर गये। १०७५ ई०के अप्रैल महीने कायमकी भी मौत हुई।

२७ मुकतादीकी हुकूमत—कायमके मरने पर उनके पोते मुकतादीको खिलाफत मिली थी। १०८७ ई०को इन्होंने मलिक शाहकी बेटीसे अपनी शादी की, परन्तु अच्छा बर्ताव न करनेकी शिकायत पर उसको पीछे लौटना पड़ा। मरनेसे कुछ ही दिन पहले सुलतानने इन्हें बगदादसे निकाल बसरामें रहने पर मजबूर किया था। १०९४ ई०के फरवरी मास बरकियारोकके बगदादमें फतेहयाबीके साथ दाखिल होने पर शायद खलीफा जहर खा कर चल बसे।

२८ मुसतजहीरकी खिलाफत—मोकतादीके मरने पर उनके लड़के मुसतजहीर खलीफा हुए। उस समय इनकी उम्र १६ साल ही थी। ११०४ ई०को बरकिया रोकके मरने-पर उनके भाई मुहम्मदने १११८ ई० तक सलतनत की। इनके पीछे १० महीने बाद मुसतजहीर भी मर गये।

२९ मुस्तरशीदका राजत्व—१११८ ई०के अगस्त मास मुस्तरशीद अपने बाप मुसतजहीरकी जगह खलीफा हुए। इन्होंने बेफायदा खलीफाके पुनरधिकार प्रतिष्ठाकी चेष्टा की थी। ११३४ ई०के अकतूबर महीने यह अपने महल-में रहने और कभी खेत न लडने पर मजबूर किये गये। फिर थोड़े दिन बाद इनका कत्ल हुआ।

३० राशिदका राजत्व—मोस्तरशीदके मरने पर उनके बेटे राशिदको खिलाफत मिली। इन्होंने मोसलके राजा जङ्गीके साथ अपने बापका अनुसरण करना चाहा था। परन्तु सुलतान मसऊदने उनकी फौजको मार भगाया और बगदाद दखल करके राशिदको ११३६ ई०में तख्तसे उतार दिया। राशिद बच कर निकल भगे, परन्तु २ वर्ष बाद कत्ल कर डाले गये।

३१ मुकतफीकी खिलाफत—राशिदके पीछे मुस्ताजिरके लड़के मुकतफीको खिलाफत मिली थी। इन्होंने असलमें बगदाद जिले और इराकमें भी हुकूमत की। ११६० ई०के मार्च मास इनका मृत्यु हुआ।

३२ मुस्तनजिदका राज्य—मुकतफीके मरने पर उनके बेटे मुस्तनजिदको खिलाफत हासिल हुई। इन्होंने हिलामें मजयदियोंका राज्य समाप्त करके खिलाफतकी हद बढायी। मोसलके नुरुद्दीनकी फौजने मिसर जीता, फातिमाका घराना उखडा और सलादीनका दबदबा बढ़ा था। ११७० ई०के दिसम्बर मास यह अपने सेनापति डोमीके हाथों मारे गये।

३३ मुसतजीका हुकूमत—मुसतनजिदको मौत होने पर उनके लडके और वारिश मुस्तदी खलीफा हुए, परन्तु कोई असली हुकूमत हासिल कर न सके। ११८० ई०के मार्च मास मुस्तदीकी मौत हुई।

३४ नासिरकी सलतनत—मुस्तदीके पीछे उनके बेटे नासिर खिलाफतके मालिक हुए। ११८७ ई० २ अकतूबरको सालादीनने फिर जेरूसलम दखल किया था। नासिर बड़े हौसलेमन्द थे। उन्होंने खोजस्तानको अपनी खिलाफतमें मिलाया और मीदियाके मालिक भी बन बैठना चाहते थे। परन्तु खिवाके खारिजमने अब्बासियोंको निकाल अलीके किसी वंशधरको खलीफा बना बगदादके तख्त पर बैठानेकी ठान ली। उधर जङ्गीज खानने चीनका उत्तर प्रान्त जीता और अपना राज्य ट्रैन्स-ओकसिनियन सीमा तक बढाया था। मुसलमानोंके इमामने उन्हें एक संदेशा दिया कि वह जाकर खिवाके राज पर जिसने उनके दूतोंका अपमान किया था, चढ जाते। १२२५ ई०को नासिरके मरने पर झुण्डके झुण्ड वहशी लोगोंने खिलाफतके पूर्व भागको कुचल डाला, शहरोंको जला दिया और लोगोंको बेरहमीसे मार डाला।

जम्बू—काश्मीर राज्यके जम्बू प्रान्तकी राजधानी। यह अक्षा० ३२° ४४´ उ० और देशा० ७४° ५५´ पू०में अवस्थित है। यहां शीत ऋतुमें महाराजका सदर रहता है। जनसंख्या प्रायः ३६१३० होगी। रावी नदीके दक्षिण तटमें जम्बू समुद्रपृष्ठसे १२०० फुट ऊंचा बसा है। मण्डीमें महाराजका राजप्रासाद है। दूरसे इसके धवलमन्दिर देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं। श्रीरघुनाथजीका मन्दिर सबसे बड़ा है। सियालकोट रेलवे गयी है। राजा रणजित्‌देवके समय इसकी आबादी १५०००० थी। स्वर्गीय महाराज रघुवीर सिंहके राजत्वकालमें यहां बड़ा व्यवसाय रहा। १८७१ ई०में अजायबघर बना। मुबारक महल और पास ही रामनगर पर्वत पर राजा अमरसिंहका प्रासाद देखने योग्य है। काश्मीर देखो।

जय (सं० पु०) जि जये अच्। १ युद्धादि स्थलमें शत्रु-पराजय, विरोधियोंको दमन कर स्वत्व या महत्त्व स्थापन, जीत। २ उत्कर्षलाभ, बड़ाई या प्रशंसा हासिल करना। ३ अयन। ४ वशीकरण। ५ वह जो विजयी हो। ६ युधिष्ठिर। इन्होंने विराट्‌राजके घरमें छद्मवेशीको अवस्थितिके समय यह कृत्रिम नाम धारण किया था। ७ इक्ष्वाकुवंशीय एकादश राजचक्रवर्ती। ८ नारायणके एक पार्श्वचर, विष्णुके एक पार्षदका नाम। जय और उसके भाई विजय वैकुण्ठमें विष्णुकी द्वार रक्षा करते थे। किसी समय उन दोनोंने शनकादि ऋषियोंको हरि दर्शन करनेसे रोका था। इस पर ऋषियोंने क्रुद्ध हो कर उन्हें शाप दिया। उस शापसे जयको संसारमें तीन बार हिरण्याक्ष, रावण और शिशुपालका अवतार तथा विजयको हिरण्यकशिपु, कुम्भकर्ण और कंसका जन्म ग्रहण करना पड़ा था। अन्तमें नारायणके हाथसे निहत हो कर उनको मुक्ति हुई थी। सर्वाणि भूतानि जयतीति जीयते संसारः अनेन वा। ९ विष्णु। १० नागविशेष। (भारत ५।१३।११) ११ दानवके राजा। १२ दशम मन्वन्तरीय एक ऋषि। १३ ध्रुववंशीय वत्सर राजाके पुत्र। १४ विश्वामित्र ऋषिके एक पुत्र। १५ एक राजर्षि। १६ उर्वशी गर्भजात पुरुवसुके एक पुत्र। १७ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। १८ सञ्जय राजाके पुत्र। १९ युयुधान राजाके पुत्र। २० भारतादि शास्त्रविशेष।

"अष्टादश पुराणानि रामस्य चरितं तथा।
विष्णुधर्मादिशास्त्राणि शिवधर्माश्च भारत॥
कार्ष्णंच पंचमो वेदो यन्महाभारतं स्मृतम्।
शौराश्च धर्मा राजेन्द्र! मानवोक्ता महीपते॥
जयेति नाम एतेषां प्रवदन्ति मनीषिणः।" (भविष्यपु०)

२१ दक्षिणद्वारिगृह, वह मकान जिसका दरवाजा दक्षिणकी तरफ हो। २२ वार्हस्पत्य सम्वत्सरके प्रौष्ठपद नामक षष्ठयुगका तृतीय वत्सर, ज्योतिषके अनुसार वृहस्पतिके प्रौष्ठपद नामक छठे युगका तीसरा वर्ष। इस वर्षमें अत्यन्त उद्वेग और दृष्टिपात होता है और क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और नटनर्त्तक सबको बहुत पीड़ा होती है। २३ अग्निमन्थवृक्ष, अरणी नामका पेड़। २४ पीतमुद्ग, हरी मूंग। २५ सूर्य। २६ इन्द्र। २७ इन्द्रके पुत्र जयन्त। २८ विदेहराजवंशीय सुश्रुतके पुत्र। २९ श्रुतके एक पुत्र। ३० संकृतिके एक पुत्र। ३१ मञ्जूके एक पुत्रका नाम। ३२ कङ्कके पुत्र अशोक। ३३ लाभ। ३४ जयन्तीवृक्ष, जैंतका पेड़।

जयक (सं० त्रि०) जय-कन्। जययुक्त।

जयकङ्कण (सं० पु०) एक प्रकारका कङ्कण जो प्राचीन कालमें वीर वा योद्धाओंको युद्धमें विजय प्राप्त करने पर सम्मानार्थ प्रदान किया जाता था।

जयकण्ठ—सूक्तिकर्णामृतधृत एक प्राचीन कवि।

जयकरण—पंचानन देखो।

जयकवि (बन्दीजन)—हिन्दीके एक कवि। ये लखनऊके रहनेवाले थे। १८४४ ई०में इनका जन्म हुआ था। उर्दूमें भी इनकी कविता अच्छी उतरती थी और सबको प्रिय होती थी। कुछ दिनों तक इनका मुसलमानोंसे झगड़ा चला था।

जयकरी (सं० स्त्री०) चौपाई नामका छन्दका एक नाम।

जयकुमार—जैनमतानुसार हस्तिनापुरके राजा। ये राजा सोमप्रभके पुत्र और मोक्षगामी महापुरुष थे। इनका दूसरा नाम मेघेश्वर भी था। आदिपुराण वा महापुराण आदि जैन-पुराणग्रन्थोंमें इनकी जीवनी बहुत विस्तृत और महत्त्वपूर्ण लिखी है। यहां उसका संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है—

श्रीऋषभनाथ भगवान्‌के पुत्र छह खण्डके अधिकारी

के भुने हुए बीज। इसको भोजनके पीछे मुखशुद्धिके लिये व्यवहार करते हैं।

खिल्य (सं० त्रि०) खिले भवः, खिल-यत्। १ खिलसे उत्पन्न। २ परिशिष्टपठित, परिशिष्टमें पढ़ा जानेवाला। ३ प्राणियोंके गमनयोग्य। (ऋक् १०।१४२।३)

खिल्ली (हिं० स्त्री०) १ हंसी, ठठोली २ गिलौरी, पानका बीड़ा। ३ कील कांटा।

खिल्लो (हिं० स्त्री०) हंसोड़ी, खुब खिला कर हंसनेवाली।

खिवाड़ी (हिं० स्त्री०) इसुमेद, किसी किसमकी ऊख।

खिसलाव (हिं० पु०) खिसकनेकी स्थिति, जिस हालतमें फिसल पड़े।

खिसलाहट (हिं० स्त्री०) खिसलाव देखो।

खिसारा (फा० पु०) क्षति, घटी, नुकसान।

खिसियाना (हिं० क्रि०) १ लज्जा आना, शर्म खाना। २ क्रोध करना, नाराज होना। (वि०) ३ लज्जित।

खिसियाहट (हिं० स्त्री०) १ लज्जा, शर्म। २ क्रोध, गुस्सा।

खिसोर-पञ्जाबके डेराइस्माइल-खां जिलाकी एक गिरिमाला, इसका दूसरा नाम 'रत्तारो' रक्तमयगिरि है। यह अक्षा० ३२° १२' से ३२° ३४' उ० और देशा० ७०° ५६' से ७१° २१' पू०के बीच अवस्थित है।

यह गिरिमाला १४०० हाथसे २३३४ तक ऊंची है। इसकी लम्बाई ५० मील और चौड़ाई ६ मील है। इसके गिरिशिखर पर कई एक प्राचीन हिन्दू दुर्गके खण्डहर हैं और बहुतसे भग्न देवमन्दिर हैं। वे सब आजकल "काफिरकोट" नामसे विख्यात हैं। इस गिरिमाला पर बिलोत नामके स्थानमें सैय्यद पीरकी मस्जिद है, यह निकटस्थ मनुष्यके निकट अति प्रसिद्ध है।

ऐसा कहा जाता है कि वह पीर लोहेकी नौका पर चढ़ कर सिन्धु पार होते थे। उनके वंशधर मखदूम बिलोतकी जागीर भोग करते हैं। यहांके चूना पहाड़ पर बहुतसे युगोंके प्राचीन प्रस्तरीभूत जीवदेह पाये जाते हैं। इसमें स्थान स्थान पर उष्णप्रस्रवण हैं, उनमेंसे खिसोरके निकट गरोवा नामका झरना प्रधान है। पहाड़के ऊपर कृषियोग्य बहुतसी उर्व्वरा जमीन है। यथेष्ट वर्षा होने पर गेहूं और बाजरा बहुत होता है। पहाड़के नीचेके देशमें तम्बाकू उत्पन्न होती है।

खिस्सी, खिसियाहट देखो।

खींच (हिं० स्त्री०) १ आकर्षण, खिंचाव। २ कनकैया लड़ानेका एक हाथ। इसमें अपना पतङ्ग दूसरे पतङ्गके नीचे ले जा कर उलटा घुमा कर खींचते हैं। खींचका हाथ ऐसा सच्चा होता है, कि दूसरेको कनकैया कटनेसे नहीं बचती। इसमें डोर खींचते खींचते पीछेको भी हटा जाता है।

खींचतान (हिं० स्त्री०) १ लेवदेव, लप्पा झप्पी। २ उलट पुलट, धींगा धींगी।

खींचना (हिं० क्रि०) १ आकर्षण करना, घसीट लेना। २ निकालना, खोलना। ३ भरना। ४ चलाना, हिलाना ५ वशीभूत करना, गुलाम बनाना। ६ लगाना। ७ पीना। ८ टपकाना, चुवाना। ९ निःसार करना, खा जाना। १० लिखना। ११ चित्र बनाना। १२ रोकना। १३ मंगाना।

खीखर (हिं० पु०) वन्य जन्तुविशेष, किसी किसमका वन बिलाव। इसको कटास भी कहा जाता है।

खीचीचोहान-चोहान राजपूतोंकी एक शाखा। कोई कोई कहते हैं कि इन्होंने किसी समय देवी भगवतीको एक थाल खीचड़ी भोग लगाया था। देवी संतुष्ट होकर इनको किसी स्थानमें जाने कहा' वहां इन्होंने बहुतसा सोना और चांदी पाया। तभीसे वे खीचड़ी नहीं खाते हैं। इसी खीचड़ीसे खीची नाम हुआ। किसी किसीका मत ऐसा है कि खिचरी वा खीच स्थानमें ये वास करते थे इसीसे ये खीच कहलाये और वह स्थान "खीचीवार" नामसे विख्यात हुवा।

खीची चोहान लोग कहलाते हैं। शाम्भरका राजा माणिकरावके २४ लड़के थे। उनमेंसे एकका नाम अजयराव था। यही अजयराव उन्हींके पूर्व्व पुरुष थे। उसके १६श पुरुषोंमें गयासिंहने जन्म ग्रहण किया था। उनको प्रसङ्गराव और पिपलज्जरराव नामके दो पुत्र थे। वे दोनों खीचीपुर पाटनमें रहते थे और दिल्लीपति पृथ्वीराजके समसामयिक थे। पृथ्वीराजने उन दोनोंको मालावारमें अठारह हजार ग्राम युक्त गागरोन् परगणा प्रदान

दिया। वहां उसे एक श्रावकके उपदेशसे ज्ञानकी प्राप्ति तो हो गई थी, पर मुनि-हत्याके पापसे पीछे उसे मर कर नरकके कष्ट सहने पड़े। नरकसे निकल कर ज्ञान की महिमासे वह भीम नामका वणिक्-पुत्र हुआ और संसारसे विरक्त हो उन्होंने मुनि दीक्षा ले ली। किसी समय उपरोक्त देव अपनी देवाङ्गनाके साथ मर्त्यलोकमें आये और उन्हें मुनि भीमदेवके दर्शन हुए। भीमदेवसे धर्मका स्वरूप पूछने पर उन्होंने धर्मकी व्याख्याके साथ साथ उनके पूर्व-जन्मका वर्णन भी सब कह सुनाया। भीमदेव और देव एवं देवाङ्गनाकी शत्रुता का यहीं अन्त हो गया और सब परस्पर प्रेम करने लगे। मुनि भीमदेवको तपस्याके प्रभावसे मोक्षकी प्राप्ति हो गई और हम दोनोंने स्वर्गसे चयन कर यहां जयकुमार और सुलोचनाके रूपमें जन्मग्रहण किया।"

(जैनहरिवंश १२।१०-२२)

पूर्व-जन्मका स्मरण होने पर जयकुमार और सुलोचनाको पहलेकी विद्याएं (ऋद्धियां भी) प्राप्त हो गईं। दोनों तीर्थदर्शनार्थ कैलास पर्वत पर पहुंचे, जहांसे श्री ऋषभनाथ भगवान्‌की मोक्षको प्राप्ति हुई है। इसी समय सौधर्म स्वर्गमें इन्द्र अपनी सभामें जयकुमारके परिग्रहपरिमाण-व्रतकी प्रशंसा कर रहे थे। रतिप्रभ नामक एक देवभी वहीं बैठे थे। इन्द्रके मुखसे जयकुमारकी प्रशंसा सुन कर रतिप्रभदेव उनकी परीक्षा करनेके अभिप्रायसे कैलास पर्वत पर पहुंचे और एक पीनोन्नत-पयोधरा सुन्दरी युवतीका रूप धारण कर चार सखियोंके साथ जयकुमारके पास गये। हाव-भाव दिखाते हुए उक्त छद्मवेशधारी रतिप्रभ जयकुमारके सामने जा कर कहने लगे—"हे जयकुमार! सुलोचनाके स्वयंवरके समय जिस नमि विद्याधरके साथ आपका युद्ध हुआ था, मैं उसी की स्त्री हूं। सुरूपा मेरा नाम है। आपके रूप और बलकी प्रशंसा सुन कर मुझसे रहा न गया, मैं नमिसे विरक्त हो कर आपको अपना सर्वस्व सौंपनेके लिए यहां आई हूं, मै सब तरहसे आप पर मोहित हूं। मुझ पर कृपा कीजिये, मुझे अङ्गीकार कर अपनी दासी बनाइये और मेरे तमाम राज्यको ग्रहण कर भोग कीजिये।" यह सुन कर जयकुमारने उत्तर दिया—"हे सुन्दरी! आप ऐसे वचन न कहें। आप स्त्री-रत्न हैं और मेरे लिए आप पर-स्त्री होनेके कारण माताके समान हैं। ऐसे राज्यको मुझे तनिक भी आवश्यकता नहीं, जिसके लिए मैं अपना और आपका धर्म नष्ट करूं। परस्त्री और पर-सम्पत्तिको मैं कदापि ग्रहण नहीं कर सकता, चाहे प्राण रहे वा जाय। बहन! आप जैसी रूपवती हैं वैसी ही यदि शीलवती होतीं तो, आप मानवी नहीं देवी थीं। मुझे अत्यन्त दुःख है कि, आप इतनी सुन्दरी हो कर भी पतिव्रता न हुईं। आपको उचित है कि, पतिकी पदसेवा कर इस शरीरका सदुपयोग करें।"

इसके बाद जयकुमारने सामायिक वा आत्मध्यानमें मन लगा कर ध्यानमें लीन हो गये। परन्तु इतने पर भी रतिप्रभने उनका पीछा न छोड़ा। उन्हें ध्यान-च्युत करनेके लिए नाना तरहके नृत्यगीतादि करने लगे। अन्तमें झख मार कर उन्होंने विकराल रूप धारण कर जयकुमारको डरानेका भी प्रयत्न किया, परन्तु धीर-वीर जयकुमारका हृदय जरा भी चञ्चल न हुआ। जब वे किसी तरह भी जयकुमारको ध्यान-च्युत न कर सके तब उन्हें इन्द्रकी प्रशंसा सत्य जान कर अत्यन्त हर्ष हुआ। अपना यथार्थ रूप धारण कर कहने लगे—"हे वीरश्रेष्ठ! आप धन्य हैं। आपके सन्तोष और हृदय की स्थिरताको देख कर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ है। मैं सुन्दरी युवती नहीं किन्तु स्वर्गका देव हूं, मेरा नाम है रतिप्रभ। स्वर्गमें इन्द्रके मुंहसे आपकी जैसी प्रशंसा सुनी थी, आप सर्वथा उसके योग्य हैं।" इस प्रकार जयकुमारकी प्रशंसा करते हुए रतिप्रभदेवने उन्हें वस्त्राभूषण आदि उपहारमें दिये और उनको नमस्कार कर वहांसे प्रस्थान किया।

इसके बाद ये कई दिन तक कैलास पर्वत पर भगवान्‌की पूजा करते रहे। फिर अपने राज्यमें आ कर कुछ दिन राज्य किया। अन्तमें संसारसे विरक्त हो राज्यसुखको त्याग कर ये मुनि हो गये और कठिन तपस्याके फलसे इन्हें मोक्ष प्राप्त हुई। रानी सुलोचनाने भी श्रावकके व्रत धारण किये और समाधिपूर्वक मरण होनेसे उनकी आत्मा स्वर्गमें गई। (महापुराणान्तर्गत आदिपुराण)

राजधानीकी रक्षा की। किन्तु उनका वैसा साहस और अध्यवसाय व्यर्थ हुआ। उनके घरहीके किसी शत्रुके षड़यन्त्रसे राघवगढ़ विपक्ष सैन्यके हाथ आ गया। जयसिंह सोपूर जङ्गलमें अपना प्राण बचानेके लिये भाग गया। १८१६ ई०को इसी चिन्तासे उनकी मृत्यु हुई। उनके लड़केका नाम टुकुलसिंह थे। इन्होंने अपन पितृराज्यको उद्धार करनेके लिये बहुत स्थानोंसे सैन्य संग्रह कर शत्रुओंके विरुद्ध आक्रमण किया। इस समय वृटिशगवरमेण्टने १८२० ई०में राजा टूकुल सिंहको राघवगढ़ और बालमट जिला दिला दिया। तभीसे वह स्थान उन्होंके वंशधरोंके अधीन आ रहा है। वहां की आमदनी ३७५००० रुपये है। उसी समयसे वह स्थान ग्वालियर राजका करदराज्य हुआ।

खीज (हिं० स्त्री०) १ चिढ़, झल्लाहट। २ चिढ़नेकी बात, झुंझलाहट पैदा करनेवाली चीज।

खीजना (हिं० क्रि०) १ चिढ़ना, उकताना, बिगड़ना।

खीप (हिं० पु०) १ वृक्षविशेष, कोई पेड़। यह, सघन तथा सरल रहता और पञ्जाब, राजपूताना तथा अफगानस्तानमें उपजता है। पत्र क्षुद्र एवं लम्बे लगते और शीतकालको छोटे छोटे फूल खिलते है। यह पशुओंके खिलाने और रस्सियां बनानेमें काम आता है। २ लाजवन्ती। ३ गंसधारा।

खीर (हिं० स्त्री०) दुग्धपक्क तण्डुल, जाउर, तसमई। पहले चावल चुन बिन करके सुखा लेते हैं। फिर उसे गर्म घीमें डाल अच्छी तरह भूना जाता है। चावल भुनते भुनते लाल हो जाने पर विशुद्ध दूध डालते हैं। जब दूधमें पकते पकते चावल फूल आता, चीनी देकर कड़ाही उतार ली जाती है। शीतल होने पर दूधमें बना हुआ यही भात 'खीर' 'जाउरि' 'तसमई' आदि नाम धारण करता है। खीर खानेसे फिर किसी चीज पर मन नहीं चलता।

खीरचटाई (हिं० स्त्री०) अन्नप्राशन, पसनी, जिस दिन शिशुको सर्वप्रथम अन्न खिलाया जावे।

खीरमोहन (हिं० पु०) एक बङ्गला मिठाई। यह छेनेका बनता है।

खीरा (हिं० पु०) फलविशेष। खीरा कर्कटीजातीय एक फल है। यह वर्षा ऋतुमें उपजता और मोटा मोटा एक एक बित्ते तक लम्बा लगता है। खीराका सिरा काट दोनों कटे टुकड़ोंको छुरीसे गोद करके एक दूसरे पर रगड़ते हैं। इससे उसके मुंह पर फेन उमड़ आता है। फिर पहली कटी जगहके एक अङ्गुल नीचेसे टोवारा काटते हैं। कहते हैं, ऐसा करने पर खीरेका कड़ुवापन निकल जाता है। अन्तको छुरीसे बकला छील करके खीरा नमक और काली मिर्चकी बुकनीके साथ खाते हैं। यह खानेमें बहुत अच्छा लगता और डकार आने पर अपना ही मजा रखता है। खीरेकी तरकारी भी बनती है इसके बीज ठण्डाईमें पीस कर पीये जाते हैं। खीरा शीतल होता और बहुत खानेसे शीतज्वर उत्पन्न कर देता है।

खीरी (हिं० स्त्री०) बाख, चौपायोंके थनके ऊपरका मांस। इसमें दुग्ध उत्पन्न होकर अवस्थान करता है।

खील (सं० पु०) कील पृषोदरादिवत् साधुः। कीलक, कांटा।

खील (हिं० स्त्री०) १ लाई, भुना और खिला हुआ धान। २ कील, कांटा। ३ अलङ्कारविशेष, कोई जेवर या गहना। स्त्रियां इसे नाकमें पहनती और लौंग भी कहती हैं। ४ मुंहांसेकी कील। ५ भूमिविशेष, कोई जमीन। बहुत दिन पीछे जोती जानेवाली भूमि 'खील' कहलाती है।

खीलना (हिं० क्रि०) खील लगाना, गांठना।

खीली (हिं० स्त्री०) पानका बीड़ा, लगा लगाया पान।

खीवन (हिं० स्त्री०) उन्मत्तता, मस्ती।

खीवर (हिं० पु०) वीरपुरुष, बहादुर आदमी।

खीस (हिं० वि०) १ नष्ट, बरबाद, उजाड़। (स्त्री०) २ खिसियाहट, चिढ़। ३ कोप, गुस्सा। ४ बिगाड़, नाराजगी। ५ लज्जा, शर्म। ६ दांत निकालनेका भाव, ७ खिसारा, घाटा। ८ दुग्धभेद। ब्यानेके पीछे ७ दिन तक होनेवाला गायका दूध 'खीस' कहलाता है। इसका अपर नाम पेउस है।

खीसा (हिं० पु०) १ थैला, जेब। २ किसी किस्मकी थैली। यह कपड़ेकी बनती है। इसकी हाथमें डाल

रहना पड़ा था। शक सं० १७६६ वा ई० १८४४में इनकी मृत्यु हुई।

जयगोपालदास—भक्तिभावप्रदीप नामक भक्तिग्रन्थके रचयिता।

जयघोषण (सं० क्लो०) जयशब्दोच्चार, जयकी घोषणा, जीतकी आवाज़।

जयचन्द—१ कन्नौजके राठौरवंशीय शेष राजा। १२२५ सम्वत्में उत्कीर्ण शिलालेखमें ये जयच्चन्द्र नामसे अभिहित हुए हैं। कन्नौज देखो। इनके पिताका नाम विजयचन्द्र था, उन्होंने दिल्लीश्वर अनङ्गपालकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था। जयचन्द इन्हींके गर्भसे पैदा हुए थे। किसी समय सार्वभौमपदके कारण राठौर-राजके साथ अनङ्गपालका तुमुल संग्राम हुआ था। इस युद्धमें चौहानवंशीय अजमेरके राजा सोमेश्वरने अनङ्गपालको यथेष्ट सहायता की थी। दिल्लीश्वर अनङ्ग-पालने इस उपकारके प्रतिदान स्वरूप उनके साथ अपनी कन्याका विवाह कर दिया था। इस कन्याके गर्भसे पृथ्वीराजका जन्म हुआ था। अनङ्गपाल दो दौहित्रोंमें पृथ्वीराज पर ही अधिक स्नेह करते थे। अनङ्गपालके कोई पुत्र न था। वे मरते समय अपने धेवते पृथ्वीराजको राजसिंहासन दे गये थे। नानाका ऐसा पक्षपात देख कर कुटिलमति जयचन्दके हृदयमें ईर्ष्यानल जल उठा। उन्होंने इसका बदला लेनेके लिए कमर कस ली। राठौरराज महा पराक्रमी थे, उनको चिरशत्रु चौहान जाति भी उनकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकती थी। इन्होंने सिन्धुके पश्चिम प्रान्त वर्ती राजाको पराजित कर अनहलवाड़ाके अधिपति सिद्धराजको दो बार युद्धमें पराभूत किया था। इनका राज्य नर्मदा नदी तक विस्तृत था। ये राजचक्रवर्तीको उपाधि पानेके लिए गर्वित चित्तसे राजसूययज्ञानुष्ठानमें प्रवृत्त हुए।

यह यज्ञ बड़ा कष्टसाध्य होता है। इसमें भोजन-पात्रोंका प्रक्षालन करना इत्यादि समस्त कार्य राजाओं-को ही करना पड़ता है। यज्ञके सम्वादसे समस्त भारतवर्षमें हलचल मच गई। यज्ञसमाप्तिके उपरान्त निमन्त्रणपत्रोंमें यह सम्वाद भी लिखा गया कि, जयचन्दकी कन्या संयुक्ता (संयोगिता)-का स्वयम्बर होगा। यज्ञ-स्थानमें समस्त नृपति ही उपस्थित हुए, किन्तु पृथ्वीराज और उनके बहनोई समरसिंह नहीं आये। जयचन्दने उनको नीचा दिखानेके लिए उनको दो सुवर्ण मूर्तियां बनवाई और उनको द्वारपालकी पोशाक पहना कर यज्ञशालाके द्वार पर रखवा दिया। यज्ञान्तमें जयचन्दकी कन्या संयोगिताने अन्यान्य राजा ओंकी उपेक्षा कर पृथ्वीराजकी सुवर्णमूर्तिके गलेमें वर-माल्य पहना दी इस सम्वादको सुन कर पृथ्वीराज सेना सहित यज्ञशालामें आये और अपने बाहुबलसे जयचन्द को पुत्रीको हरण कर ले गये। क्षोभ और लज्जासे जय-चन्दकी ईर्ष्यावह्नि और भी जल उठी। उन्होंने गजनी पति साहब उद्दीन् गोरीको सहायतार्थ बुलाया। मौका देख गोरीने भी इनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। दृषद्वती नदीके किनारे ११९३ ई०में मुसलमान सेनाके साथ पृथ्वीराजका शेष युद्ध हुआ। पृथ्वीराज कैद कर लिए गये। अन्तमें वे निहत हुए। अब मुसलमान लोग विजयोन्मत्त हो कर भीमदर्पसे भारतके वक्षस्थल पर विचरण करने लगे। इधर जयचन्दने भी अपने कियेका फल जल्द पाया। कुछ दिन बाद मुसलमानोंने कन्नौज पर चढ़ाई कर दी, कन्नौज भी शत्रुओंके हस्तगत हुआ। जयचन्दने जान बचानेके लिए भागना चाहा; किन्तु राहमें नाव डूब जानेसे उनकी भी मृत्यु हो गई। इन्हीं-की कुटिलता, स्वार्थपरता और विश्वासघातकताके कारण भारतका गौरवरवि हमेशाके लिए अस्त हो गया। राजपूतानाके भाटोंने जयचन्दके विषयमें ऐसा लिखा है।

परन्तु मुसलमान ऐतिहासिकोंके मतसे—जयचन्दने रणक्षेत्रमें ही वीरोंकी भांति शरीर छोड़ा था। मिन हाजकी तबकात-ए-नासिरीके मतसे—कुतुबउद्दीनने ५९० हिजिरामें सिपहसालार इज्‌उद्‌दीनके साथ बनारसके राजा जयचन्द पर आक्रमण किया था। चन्दवाल नामक स्थानमें जयचन्द परास्त हुए थे। कामिल्-उत् तवारीख पारसी इतिहासमें लिखा है कि साहब-उद्-दीन गोरीने जमुनाके किनारे जयचन्द पर आक्रमण किया था। उस समय जयचन्दका अधिकार मालवसे चीन तक

खुभार (हिं० पु०) वृक्षमूलभेद, पेड़की एक जड़। यह भूमिके भीतर न चल ऊपर हो ऊपर चारो ओर फैल जाती है।

खुज्जि—मध्यप्रदेशके रायपुर जिलामें दुर्ग तहसीलके अधीन एक जमींदारी। यह रायपुरसे ३५ कोस दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। अक्षा० २१° ५७' उ० और देशा० ८१° ५७' ३०" पू०में है। क्षेत्रफल (परिमाण) ७१ वर्ग-मील है। इसमें ३२ ग्राम और ३४५८ घर है।

खुखाक, खक्षाक देखो।

खुटक (हिं० स्त्री०) १ खुटकनेका काम, ऊपरी तोड़ फोड़। २ खटका, फिक्र।

खुटकना (हिं० स्त्री०) उपरिभाग तोड़ना, सिरा कपटना। २ खटका होना, खड़खड़ाना।

खुटना (हिं० क्रि०) १ उद्‌घाटित होना, खुलना। २ अलग रहना, साथ छोड़ना। ३ पुरना, बाकी न रहना।

खुटपना (हिं० पु०) सदोषता, ऐबीपन, बुराई।

खुटाई (हिं० स्त्री०) खोटापन, बुराई, ऐब।

खुटाना (हिं० क्रि०) पुरना, बाकी न रहना।

खुटिला (हिं० पु०) कर्णालङ्कारभेद, करनफूल।

खुटिला—युक्तप्रदेशीय फतेहपुर जिलेकी खजुहा तहसीलका एक गांव। यह ई० आई० रेलवेके बिंदकीरोड ष्टेशनसे ६-७ कोस दक्षिण पड़ता है। इसमें कई एक देवमन्दिर बने और हिन्दी उर्दूकी एक पाठशाला भी है।

खुटेरा (हिं० पु०) खदिरवृक्ष, खैरका दरख्त।

खुट्ट (हिं० वि०) पृथक्, अलग।

खुट्टी (हिं० स्त्री०) १ कोई मिठाई। यह तिल और चीना या गुड़ मिला कर बनायी जाती है। २ सम्बन्धविच्छेद, अलाहदगी।

खुड्डी (हिं० स्त्री०) खुरंड, जख्मकी पपड़ी। यह जख्मका मवाद है, जो उसी पर जम जाया करता है।

खुठमेरा (हिं० पु०) धान्यभेद, किसी किस्मका मोटा धान।

खुड (सं० पु०) वातरक्तरोग, बाईके खूनकी बीमारी।

खुडक (सं० पु०) खुलक लकारस्य डकारः। १ गुल्फ, टखना। खुलक देखो।

खुड़क (हिं० स्त्री०) खटक, खटका।

खुड़ला (हिं० पु०) चिड़ियाखाना, मुर्गियोंका दबा।

खुडवात (सं० पु०) वायुरोगभेद, बाईकी एक बीमारी।

खुड़वा (हिं० पु०) घोघी, सर पर तेहरा चौहरा करके डाला जानेवाला कम्बल या कोई दूसरा कपड़ा। पानी या सर्दीसे बचनेके लिये खुड़ुवा लगाया जाता है।

खुड्डाक (सं० त्रि०) १ क्षुद्र, नाचीज। २ क्षुल्ल, छोटा। ३ कनिष्ठ, पिछला।

खुड्डाकपद्मतैल (सं० क्ली०) वातरक्तका एक तैल, बाईके खूनकी बीमारी पर लगाया जानेवाला एक तेल।

खुड्डी (हिं० स्त्री०) सण्डास, पाखानेका गड्ढा।

खुण्टावाड़—बम्बई प्रान्तके भावनगर राज्यका एक नगर। यह महुवासे उत्तर-पश्चिम, १३ मील दूर पड़ता है। इस स्थानसे एक मीलकी दूरी पर चिताधार नामकी एक बौद्ध गुहा है। लोग उसको अघोरी बाबाकी गुफा कहते हैं। किसी सुन्दर दुर्गका ध्वंसावशेष भी यहां विद्यमान है। मालूम होता है कि मुसलमानोंकी अमलदारीमें यहां एक थाना भी रहा। दुर्गके कूपको 'पांच बीबीनो कुवो' कहते हैं। जैनों, वैष्णवों और स्वामी नारायणके अनुयायियोंके अच्छे अच्छे मन्दिर बने हैं। खुण्टावाड़में व्यापार भी बहुत होता है। यह मालन नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित है। इसकी पूर्व ओर आध मीलकी दूरी पर मालन, रोझकी और लिलियो तीन नदियोंका सङ्गम है। इसी सङ्गमका नाम त्रिवेणी है और वहां विल्वेश्वर महादेवका मन्दिर बना है। श्रावण कृष्णा अमावस्याको वहां एक बड़ा मेला लगता है। यहां आम और नारियलकी उपज अच्छी है।

कहते हैं कि चम्पाराजवालके भादरोडमें राज्य शासन करते समय यह भूभाग निर्जन था। उनके २ पुत्र रहे—हेमगल और मांगायत। उन्होंने अपने पितासे विवाद करके वहां एक झोपड़ा जा बनाया। उसी समय मांगरोलके भूतपूर्व गवर्नर फतेह खान् अपने बापसे बिगड़ लूटमारका कितना ही खजाना ले अपनी ५ बीबियोंके साथ वहां पहुंचे। उन्होंने इन

टीका, गीतातात्पर्यनिर्णयकी न्यायदीपिका नामक टीका, विष्णुतत्त्वनिर्णयकी टीका और ऋग्भाष्यकी टीका इसके सिवा जयतीर्थ षट्पञ्चाशिका, वेदान्तवादावलि, प्रमाणपद्धति आदि न्याय और वेदान्त सम्बन्धी कई-एक ग्रन्थोंका प्रणयन किया है। १२६८ ई०में जयतीर्थका तिरोभाव हुआ था। नृसिंहस्मृत्यर्थसागरमें इनका मत उद्धृत किया गया है।

जयतुङ्गनाड़—मन्द्राज प्रान्तके त्रिवाङ्कुड़ राज्यका एक पुराना उपविभाग। सुचीन्द्रम् मन्दिरमें राजा आदित्य-वर्माके समयकी जो शिलालिपि मिली, उसमें लिखा है कि त्रिवाङ्कुड़ राज्य १८ विभागोंमें बंटा हुआ था। जय-तुङ्गनाड़ उसकी राजधानी था। इसका अपर नाम जय-सिंहनाड़ है। किन्तु आजकल जयतुङ्गनाड़की सीमाका निर्धारण अनुमानसापेक्ष है। मालूम होता है कि वह घाट पर्वतकी पूर्व दिक्में अवस्थित था।

जयतोडा—बङ्गालके अन्तर्गत मानभूम जिलेका एक परगना। इसका रकवा करीब २२५०० मील होगा। यह पञ्चकोटके राजाकी जमींदारीके अन्तर्भुक्त है।

जयत्कल्याण (सं० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक सङ्कर राग। यह कल्याण और जयन्तिश्रीको मिलानेसे बनता है। यह रात्रिके प्रथम प्रहरमें गाया जाता है।

जयत्सेन—१ विराटगृहमें गुप्तावस्थानके समयका नकुलका एक नाम। २ मगधके एक राजा। ३ पुरुवंशीय सार्व-भौम राजाके पुत्र। सार्वभौमके औरस और केकयराज कन्याके गर्भसे इनकी उत्पत्ति है। ४ सोमवंशीय अहीन-राजके एक पुत्रका नाम।

जयद (सं० त्रि०) जयं ददाति जय दा क्विप्। जयदाता, जितानेवाला।

जयदत्त (सं० पु०) जयेन विजयेन दत्तएव। १ इन्द्रपुत्र। २ एक राजा। इनके पुत्रका नाम देवदत्त था।

३ एक प्रसिद्ध आयुर्वेदविद्, विजयदत्तके पुत्र। इन्होंने संस्कृत भाषामें अश्ववैद्यक नामक अश्वचिकित्सा सम्बन्धी एक ग्रन्थ प्रणयन किया था।

जयदुर्गा (सं० स्त्री०) दुर्गाकी एक मूर्ति। तन्त्रसारमें जयदुर्गाकी मूर्त्तिका इस प्रकार विवरण पाया जाता है—

'कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शंखं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढ़ां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धकामैः॥'

दुर्गा देखो।

जयदेव—संस्कृत साहित्यमें इस नामके बहुतसे कवियोंका उल्लेख मिलता है, जिनमें बङ्गालके गीतगोविन्द-प्रणेता जयदेवकी ही सर्वत्र प्रसिद्धि है।

१ गीतगोविन्द-प्रणेता जयदेवके पिताका नाम था भोजदेव और माताका नाम रामादेवी। वीरभूम जिलेके केन्दुविल्व (केन्दुली) ग्राममें इनका जन्म हुआ था। जय-देवचरितके लेखकका कहना है कि ये १५वीं शताब्दी-में विद्यमान थे। परन्तु हम इन्हें उससे भी प्राचीन समझते हैं; क्योंकि श्रीधरदासके सूक्तिकर्णामृतमें इनकी कविता उद्धृत है। गीतगोविन्दकी एक प्राचीन प्रतिमें "—लक्ष्मणसेन नाम नृपतिसमये श्रीजयदेवस्य कविराजप्रतिष्ठा" लिखा है। इससे भी प्रमाणित होता है कि महाकवि जयदेव गौड़ाधिप लक्ष्मणसेनकी सभामें थे। 'अलङ्कारशेखर'में लिखा है, जयदेव उत्कलराजके सभाकवि थे।

भक्तिमाहात्म्य आदि संस्कृत ग्रन्थोंमें जयदेवका परिचय इस प्रकार मिलता है—

थोड़ी उम्रमें ही जयदेवको वैराग्य हो गया और वे पुरुषोत्तमक्षेत्रमें चले गये। वहां ये सर्वदा पुरुषोत्तमकी सेवा करते रहते थे। जगन्नाथ भी इनके गुणों पर मुग्ध हो गये थे। इसी समय एक ब्राह्मण जगन्नाथकी कृपासे एक कन्या प्राप्त कर उसे उन्हींके श्रीचरणोंमें अर्पण करने-के लिए आया। पुरुषोत्तमने प्रत्यादेश दिया— 'जयदेव नामका एक मेरा सेवक है, तुम उसे ही यह कन्या अर्पण करो।" इस पर ब्राह्मण अपनी कन्या पद्मावतीको ले कर जयदेवके पास पहुंचा और उनसे सब हाल कहा। जयदेव किसी तरह भी राजी न हुए। आखिर वह पद्मावतीको इनके पास छोड़ कर चला गया। जय-देवने पद्मावतीसे घर पहुंचा आनेके लिए कहा, पर वे राजी न हुई और कहने लगीं—"पिताने जगन्नाथके आदेशानुसार मुझे तुम्हारे हाथ सौंपा है, तुम्हें ही मैं

खुदगरज़ (फा॰ वि॰) स्वार्थपर, मतलबी, अपना काम बनानेवाला।

खुदगरजी (फा॰ स्त्री॰) स्वार्थीपन; अपना मतलब देखनेकी बात।

खुदना (हिं॰ क्रि॰) विदीर्ण होना, खुद जाना।

खुदमुख्तार (फा॰ वि॰) स्वतन्त्र, जो किसीसे दबता न हो।

खुदमुख्तारी (फा॰ स्त्री॰) स्वातन्त्र्य, आजादी, दूसरेके दबावमें न रहनेकी बात।

खुदरा (हिं॰ पु॰) क्षुद्र वस्तु, फुटकर चीज। फुटकर चीजें बेचनेवालेको 'खुदरा फरोश' कहा जाता है।

खुदराय (फा॰ वि॰) मनचला, अपनी तबीयतके मुवाफिक काम करनेवाला।

खुदरायी (फा॰ स्त्री॰) स्वेच्छाचारिता, अपनी मर्जीके मुताबिक काम करनेकी बात।

खुदवाना (हिं॰ क्रि॰) खोदनेके काममें दूसरेको लगाना, खनन कराना।

खुदवायी (हिं॰ स्त्री॰) १ खुदवानेका काम। २ खोदनेकी मजदूरी।

खुदा (फा॰ पु॰) परमेश्वर, ईश्वर।

खुदाई (फा॰ स्त्री॰) १ ऐशभाव, खुदाकी सिफत। २ सृष्टि, दुनया।

खुदाई (हिं॰ स्त्री॰) १ खोदनेका काम। २ खोदनेकी बात। ३ खोदनेकी उजरत।

खुदागञ्ज—युक्तप्रान्तके शाहजहानपुर जिलेकी तिलहर तहसीलका एक नगर। यह अक्षा॰ २८° ८' उ॰ और देशा॰ ७९° ४४' पू॰में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ६२५६ है। कहते हैं कि १८वीं शताब्दीके मध्यभागको वहां एक बाजार बनाया गया, यहां १८५० ई॰ तक अंगरेजोंके अधीन अपनी तहसीलका सदर रहा।

खुदावन्द (फा॰ पु॰) १ परमेश्वर। २ अन्नदाता, मालिक। ३ महाशय, हुजूर।

खुदावन्द खान्—अमीर-उल्-उमरा शायस्ता खान्के लडके। यह अपने बापके जीतेजी एक हजारी मसनदवार और बहरायचके शासनकर्ता थे। १६९४ ई॰को अपने पिताके मरने पर इन्होंने दिल्ली आकर जमायत उल्-मुलुक असद खांकी लडकीसे शादी की। १७०० ई॰में औरङ्गजेबने इन्हें बिदर और बीजापुर-कर्णाट-का शासनकर्ता और अढाई हजारी मनसबदारका पद प्रदान किया। बादशाहके मृत्यु समय ये तीन हजारी मनसबदार हुवे थे। बादशाहके मरने पर उनके लडकोंके विवादमें यह आजिमशाहका पक्षावलम्बन कर लडे थे और १७०१ ई॰को लडाईमें आहत होकर पञ्चत्वको प्राप्त किया।

खुदाबाद—भारतका एक प्राचीन नगर। यह सिन्धुप्रदेश-के करांची विभागके अन्तर्गत दादू तालुकके बीचमें है। दादूसे ४ कोस दक्षिण-पश्चिम और सेहवानसे ८ कोस उत्तर-पूर्व है। अक्षा॰ २६° ४०' उ॰ और देशा॰ ६७° ४६' पू॰में अवस्थित है। आजकल यह नगर श्रीहीन हो गया है। सत्तर वर्ष पहले तल्पुरके मीर यहां वास करते थे। उस समय यह समृद्धिशाली था और बहुतसे मनुष्य रहा करते थे। तल्पुरके मीरोंका मकबरा आज भी इसकी पहली बढ़तीका परिचय देता है।

खुदियां—पञ्जाब-प्रान्तके लाहोर जिलेकी चुनियां तहसीलका एक नगर। यह अक्षा॰ ३०° ५९' उ॰ और देशा॰ ७४° १७' पू॰में मूलतान-फिरोजपुर-रोड पर पडता है। आबादी लगभग ३४०१ है। नगरके पास ही एक नहर बहती है। १८७५ ई॰को यहां म्युनिसपालिटी पडी। नगरमें एक अस्पताल है।

खुदी (फा॰ स्त्री॰) १ अहम्मन्यता, अपनी धुन। २ अभिमान, शेखी।

खुद्दी (हिं॰ स्त्री॰) १ कणा, किनकी। २ तलछट, जलके रसके नीचे बैठ जानेवाला मैल।

खुनकी (फा॰ स्त्री॰) शीतलता, सरदी।

खुनखुना (हिं॰ पु॰) बालकोंका एक खिलौना। इसे घुनघुना या झुनझुना भी कहते हैं। हाथमें पकड़ कर हिलानेसे यह खुनखुनाने लगता है। छोटेसे दस्तेमें लकड़ी, लोहे या किसी दूसरी धातुका छोटासा पोला लट्टू जोड़ दिया जाता है। उसीमें छोटे छोटे कंकड या दूसरे कड़े दाने भरे रहते, जो घुनघुनेके हिलते ही आवाज देने लगते हैं।

भारतीय नाना भाषाओंमें अनुवाद हो कर प्रकाशित हुआ है। गीतगोविन्द देखो।

२ प्रसन्नराघव और चन्द्रालोकके रचयिता। ये नैयायिक भी थे इन्होंने अपने "प्रसन्नराघव"की प्रस्तावनामें एक शङ्का उठाई है कि सुकवि कैसे नैयायिक हो सकता है? इसका समाधान अपने विलक्षण रीतिसे किया है। नीचे वे श्लोक उद्धृत किये जाते हैं—

"येषां कोमलकाव्यकौशलकलालीलावती भारती
तेषां कर्कशतर्कवक्रवचनोद्गारेपि किं हीयते।
यैः कान्ताकुचमंडले कररुहः सानन्दमारोपिता
स्तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भशिखरे नारोपणीयाः शराः॥

श्लोकका तात्पर्य यह है कि, जिन लोगोंको वाणी कोमल काव्यरचनाके चातुर्यकी कलासे भरो और चमत्कार उपजानेवाली है, क्या उनकी वही वाणी न्यायशास्त्रके कर्कश और कुटिल शब्दोंके उच्चारणसे होन हो सकती है? भला जिन विलासियोंने आनन्दमें आ कर अपनी प्रियतमाओंके गोल गोल स्तनों पर नखोंके चिह्न किये हैं। वे क्या मदोन्मत्त हस्तीके समुच्च गण्डस्थलों पर अपने वाणोंका घाव नहीं करते?

उन्होंने अपने पिताका नाम महादेव, माताका नाम सुमित्रा और अपने आपको कुण्डिनपुरवासी बतलाया है। इन्होंने अपने ग्रन्थमें चोर, मयूर, भास, कालिदास, हर्ष और वाण कविका नामोल्लेख किया है। इससे ज्ञात होता है कि ये सातवीं शताब्दीके पीछे हुए हैं। 'प्रसन्नराघवके सिवा' इन्होंने 'चन्द्रालोक' नामका एक आलङ्कारिक ग्रन्थ भी रचा है।

३ त्रिपुरासुन्दरीस्तोत्रके कर्ता। ४ न्यायमञ्जरीसारके कर्त्ता और नृसिंहके पुत्र। ये नैयायिक थे। ५ रसामृत नामक वैद्यकशास्त्रके रचयिता।

६ मिथिलावासी एक प्रसिद्ध नैयायिक, हरिमिश्रके शिष्य और भ्रातुष्पुत्र। इनको पक्षधर उपाधि थी। ये नवद्वीपके प्रसिद्ध नैयायिक रघुनाथशिरोमणिके समसामयिक थे। इन्होंने तत्त्वचिन्तामण्यालोक वा चिन्तामणिप्रकाश, न्यायपदार्थमाला और न्यायलीलावतीविवेक नामक प्रसिद्ध न्याय ग्रन्थ और द्रव्यपदार्थ नामक वैशेषिक ग्रन्थकी रचना की है। इन ग्रन्थोंमें तत्त्वचिन्तामण्यालोक ही बड़ा और आदरणीय है।

रघुनाथ शिरोमणि देखो।

७ एक छन्दःशास्त्रकार।

८ गङ्गाष्टपदी नामक संस्कृत काव्यके रचयिता।

९ ईशत्तन्त्र नामक व्याकरणके कर्त्ता।

१० एक मैथिल कवि। ये कवि विद्यापतिके समसामयिक थे और सुगौनाके राजा शिवसिंहकी सभामें रहते थे।

जयदेव—इस नामके नेपालके दो राजा हो गये हैं। एक तो अति प्राचीन है उनका यह भी पता नहीं कि उन्होंने किस समय राजत्व किया था। हां, २य जयदेवके समयका शिलालेख अवश्य मिलता है। उसमें लिखा है—महाराज शिवदेवने मोखरि-राज भोगवर्माकी कन्या और मगध राज आदित्यसेनकी दौहित्री वत्सदेवीका पाणिग्रहण किया था। इन्हीं वत्सदेवीके गर्भसे (२य) जयदेवका जन्म हुआ जिनका दूसरा नाम पर चक्रकाम था। इन्होंने गौड़, उड्, कलिङ्ग और कोशलाधिपति श्रीहर्षदेवको कन्या एवं भगदत्तवंशीय राजदौहित्री राज्यमतीके साथ विवाह किया था (१)। ये राजकुमार होने पर भी कवि थे। उक्त शिलालेखके पांच श्लोक इन्होंने स्वयं बनाये थे। इन २य जयदेवके समय और वंशनिर्णयके विषयमें यहांके प्रधान प्रधान पुराविदोंने नया मत प्रकट किया है। ये कौनसे हर्षदेवके जामाता हैं, इस बातका कोई भी निश्चय नहीं कर सके हैं। प्रधान प्रत्नतत्त्ववित् डा० वुह्लर (Buhler)-ने लिखा है—उक्त भगदत्त और श्रीहर्षदेव सम्भवतः प्राग्ज्योतिष-राजवंशीय हैं, जिस वंशमें हर्षवर्द्धनके समसामयिक कुमारराजने जन्मग्रहण किया था। (२)

प्रत्नतत्त्ववित् मि० फ्लीटने बहुत विचारनेके बाद कहा है कि, जयदेव (२य) ठाकुरीय वंशके राजा थे, ये १५३ हर्ष सम्वत् अर्थात् ७५८ ई०में राज्य करते

(१) पशुपति-मन्दिरके शिलालेखकी १३वीं और १४वीं पंक्तिमें ऐसा लिखा है।

(२) Note 57 by Dr. Buhler in Twenty three Inscriptions from Nepal, p. 53

गताब्दोंका लिखा गया। इसमें खुमान रावत और उनके वंशका इतिहास दिया हुआ है।

खुमार (अ० पुं०) १ नशा, मद। २ नशेका उतार।

खुमारी (हिं० स्त्री०) खुमार देखो।

खुमी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र उद्भिदोंकी एक जाति। इनमें पत्ते या फूल नहीं लगते। भूंफोड़, ढिंगरी, कुकुरमुत्ता और गगनधूल आदि खुमी कहलाते हैं। यह हरित कोषाणुसे शून्य रहते, दूसरे वृक्षोंकी भांति मृत्तिका प्रभृति पदार्थोंसे अपने शरीरकी पुष्टि नहीं कर सकते, देखनेमें सफेद या भदमैले लगते और अन्य वृक्षों वा जीवोंको आहार करते हैं। वर्षा ऋतुको सड़े आर्द्र काष्ठ पर गोल गोल छोटी खुमी जम आती है। इसे कठफूल कहा जाता है। इसमें जहर होता है। खुमीका शरीरकोष अन्य वृक्षोंसे विभिन्न रहता है। इसके कोषाणु सूत जैसे लम्बे निकलते हैं। खुमी दो प्रकारकी होती है—हरे भरे वृक्षोंके रससे पलनेवाली और सड़े गले मुर्दे खानेवाली। पहली तो गेरुईकी शक्लमें अनाजों पर लग जाती और दूसरी कठफूल, भूफोड़ आदिका रूप बनाती है। इसके वृक्ष डेढ़ इंचसे आठ दश इंच तक बढ़ते, छूनेमें कोमल लगते और छाते जैसे देख पड़ते हैं। इसीसे खुमीका चलता नाम छाता है। इसकी छतरीमें कई परत रहते हैं। भूफोड़, ढिंगरी आदिको खाया भी जाता है। शालजालु २ दांतोंमें जड़ी जानेवाली सोनेकी कील। ३ हाथीके दांतों पर चढ़ाया जानेवाला धातुका बना हुआ पोला।

खुरंड (हिं० स्त्री०) जख्मकी सूखी पपड़ी।

खुर (सं० पु०) खुर-क। १ शफ, सुम, टाप। यह पशुओंके पांवका निम्नस्थ भाग है और उनके उत्थित होने पर भूमिसे संलग्न रहता है। सींगवाले चौपायोंके खुर बीचसे फटे होते हैं। २ कोलदल, बेरकी पत्ती। ३ नखीनाम गन्धद्रव्य। ४ खट्वादि पादुक, पायाके नीचेका हिस्सा।

खुरक (सं० पु०) खुर इव कायति, कै-क। १ तिलवृक्ष। २ कोकिलाक्षक्षुप। (स्त्री०) ३ उत्तम वस्त्र।

खुरक रांगा (हिं० पु०) रङ्गधातुभेद, खिरनखुरी रांगा। यह मृदु, श्वेतवर्ण तथा शीघ्र गलनेवाला होता है।

खुरका (हिं० स्त्री०) १ तृणविशेष, किसी किस्मकी घास। यह अफीमको बिगाड़ देती है।

खुरखुर (हिं० पु०) १ कण्ठशब्दभेद, गलेकी एक आवाज। यह कफाधिक्यके कारण श्वास लेते समय कण्ठसे निकलता है। इसे 'घरघर' भी कहते हैं। २ धीरे धीरे खरोचनेकी आवाज। ३ दबे पांवों चलनेका शब्द।

खुरखुरा (हिं० वि०) खरदरा, नीचाऊंचा, गड़नेवाला।

खुरखुराना (हिं० क्रि०) १ खुरखुर करना। २ घरघराना। ३ गड़ना, नीचा ऊंचा पड़ना।

खुरखुराहट (हिं० क्रि०) १ श्वासप्रश्वासके समय कण्ठस्वरकी कफ आदिसे उत्पन्न होनेवाली एक विकृति। २ खरदरापन, नाहमवारी।

खुरचन (हिं० पु०) १ कोई मिठाई। दूधको कड़ाहीमें चढ़ा करके गर्म करते और मलाईको कड़ाहीकी चारों ओर एक सीखसे चढ़ाते चलते हैं। इसी प्रकार जब दूधका सब पानी जल जाता और कड़ाहीकी चारों ओर लगी मलाई जम जाती, कड़ाहीको नीचे उतार ठण्डी कर देते और मलाईको छुरीसे खुरच लेते हैं। इसमें चीनी डालनेसे खुरचन तैयार बनता है। यह खानेमें बहुत अच्छा लगता है। २ कड़ाहसे खुरचा हुआ गुड़। ३ खुरच कर निकाली जानेवाली कोई चीज।

खुरचना (हिं० क्रि०) करोचना, करोना, किसी जमी हुई सख्त चीजको छुरीसे निकालना।

खुरचनी (हिं० स्त्री०) १ कसेरोंका कोई औजार। यह छेनी-जैसा रहता और बरतन साफ करनेमें चलता है। २ चर्मकारोंका कोई यन्त्र। ३ खुरचनेका काम देनेवाली कोई चीज।

खुरचाल (हिं० स्त्री०) कुत्सिताचरण, बुरा काम, पाजीपन।

खुरचाली (हिं० वि०) असदाचारी, बदमाश, बखेड़िया।

खुरजी (हिं० स्त्री०) अधारी, बड़ा थैला। यह कपड़ेको

अङ्कको भी गुप्त-संवत्-ज्ञापक कहा जा सकता है। गुप्तराजवंश देखो। यदि यह ठीक है, तो प्रमाणित होता है कि लिच्छविराज २य जयदेव (२८८×३१८।२०=) ६१८।१८ ई०में नेपालके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए थे। इस समय सम्राट् हर्षवर्द्धन शिलादित्य कन्नौजके सिंहासन पर अधिष्ठित थे। बाणभट्ट और युएनचुआंगको वर्णनासे मालूम होता है कि, सम्राट् हर्षदेवने समस्त उत्तर भारत और गौड़, उड्र, कलिङ्ग आदि अनेक स्थानोंमें अपना आधिपत्य विस्तृत किया था। ऐसी अवस्थामें सन्देह नहीं कि २य जयदेवके ससुर गौड़-उड्र-कलिङ्ग-कोशलाधिप श्रीहर्षदेव और शिलादित्य हर्षवर्द्धन दोनों एक ही व्यक्ति थे।

यहां एक प्रश्न हो सकता है। प्रत्नतत्त्वविद् फ्लीटने लिखा है, 'हर्षवर्द्धनकी मृत्युके बाद कन्नौजराज्यके विशृङ्खल हो जाने पर मगधराज आदित्यसेनने महाराजाधिराज अर्थात् सम्राट् उपाधि प्राप्त की थी। शाहपुरके शिलालेखानुसार ये ६९२-७३ ई०में विद्यमान थे (७)।' इसलिए आदित्यसेनकी दौहित्रीके पुत्र २य जयदेवका ६१८ ई०में विद्यमान रहना असम्भव है।

परन्तु हम प्रमाणित कर चुके हैं कि, "शाहपुरकी सूर्यप्रतिमा पर उत्कीर्ण शिलालेखमें ६६६ संवत्में राजा आदित्यसेनका उल्लेख है।" गुप्तराजवंश देखो। ऐसी दशामें यही निर्णीत होता है कि ६०८ ई०में आदित्यसेन मगधके सिंहासन पर बैठे थे। उस समय भी श्रीहर्षदेवका आधिपत्य विद्यमान था। मगधराज आदित्यसेनके पिता माधवगुप्त हर्षदेवके सहचर थे तथा सम्बन्धमें भी आदित्यसेन सम्राट् हर्षवर्द्धनके किसी नातेसे भाई लगते थे। अतएव इसमें सन्देह नहीं कि, आदित्यसेन और हर्षदेव दोनों समसामयिक ही थे।

इसमें यह आपत्ति हो सकती है कि, जब माधवगुप्त हर्षके मित्र थे, तब उनके पुत्र आदित्यसेन हर्षदेवकी अपेक्षा उम्रमें छोटे होंगे। वर्तमानके प्रत्नतत्त्वविदोंने निर्णय किया है कि, सम्राट् हर्षवर्द्धन ६०६-७ ई०में सिंहासन पर बैठे थे। ऐसी हालतमें आदित्यसेनके ६०६ ई०में राज्याभिषिक्त होने पर भी ६१८ ई०में उनके दौहित्रीपुत्रका राज्य ग्रहण करना नितान्त असम्भव है। इसका उत्तर इस प्रकार है—चीन-परिव्राजक युएनचुआंगकी जीवनीमें लिखा है कि, ६४० ई०में (८) उन्होंने वलभीराज्यमें जा कर वहांके राजा ध्रुवभट्टको देखा था। सम्राट् हर्षवर्द्धनको पौत्रीके साथ इन ध्रुवभट्टका विवाह हुआ था। ये (६४७ ई०में) प्रयागकी धर्मसभामें श्रीहर्षदेवके पास मौजूद थे (९)।

बाणभट्टके हर्षचरितमें श्रीहर्षदेवके विवाहका प्रसङ्ग नहीं है, किन्तु उनके द्वारा दिग्विजयका प्रसङ्ग है। ऐसी दशामें यही अनुमान किया जा सकता है कि, उन्होंने सम्राट् होनेके बाद अपना विवाह किया था, पहले (अपनी इच्छासे) नहीं।

अतएव इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने ज्यादा उम्रमें विवाह किया था। ६०६ ई०के पहले राजपदके मिलने पर भी शायद उसी समय ये सम्राट् पद पर अभिषिक्त हुए थे। सम्भवतः विवाहके दूसरे वर्ष इनको कन्या राज्यमतीका जन्म हुआ था। राज्यमतीकी अवस्था जब १० वर्षकी थी, तब (सम्भवतः ६१६-१७ ई०में) लिच्छविराजकुमार २य जयदेवके साथ उनका विवाह हुआ था जो उनके समवयस्क थे।

श्रीहर्षचरितमें बाणभट्ट और हर्षका परिचय पढ़नेसे यह अनुमान नहीं होता कि श्रीहर्ष अल्प-वयस्क युवक थे। बाणभट्ट बहुत दिन तक हर्षकी सभामें थे। सम्भवतः बाणभट्टकी मृत्युके बाद प्रौढावस्थामें हर्षका विवाह हुआ होगा। यदि यह ठीक है, तो हर्षदेवने ४० या ४१ वर्षकी उम्रमें (ई० सन् ६०६-७में) विवाह किया था। ऐसा होनेसे प्रायः ५६६ ई०में हर्षदेवका जन्म हुआ था। पहले ही लिख चुके हैं कि, माधवगुप्त हर्षदेवके सहचर होने पर भी उनके पुत्र आदित्यसेनके किसी नातेसे हर्षदेवके भाई लगते थे। इस प्रकारसे आदित्यसेनको हर्षकी अपेक्षा ७-८ वर्ष छोटा समझना चाहिये। ऐसी दशामें प्रायः ५७०-७१ ई०में आदित्य-

(७) Fleet's Inscriptionum Indicarum, Vol. III. p. 14.

(८) Cunningham's Ancient Geography of India p. 566.

(९) La Vie de Hiouen Thsang par Stanislas Julien, p. 254.

दयालु राजा रहे। अपने बुद्धिबलसे इन्होंने त्रिवेणी तकके देश अधिकार कर त्रिवेणीमें घाट और मन्दिर स्थापन किया। इन्हींके समय बङ्गालका नवाब सुलेमानके सेनापति-कालापहाड़ने १५५८ ई०में राजाको परास्त और मार कर उड़ीसाको अपने अधिकारमें कर लिया।

मुकुन्ददेवके बाद दो मनुष्य नामही मात्रके राजा हुवे और वे दोनों मुसलमानोंके हाथसे मारे गये। तत्पश्चात् उड़ीसा-राज्य २१ वर्ष तक अराजक अवस्थामें मुसलमानोंके अधिकारमें रहा। नामको भी एक राजा नहीं था। उसके बाद बहुतसी गड़बड़ीके पीछे दनाई मन्त्रीके पुत्र रणाई रामचन्द्रदेवने १५८० ई० को सर्दारोंके अभिप्रायानुसार-उड़ीसा महाराज नामसे सिंहासन ग्रहण किया। दनाई विद्याधर गजपति वंशके थे, इसलिये इनकी वंशावली 'गजपतिवंश' नामसे विख्यात थी। उनके पूर्व्वगौरव नष्ट होने पर भी यह 'जमिंदार वंश' नामसे पुकारा जाता है। महाराज रामचन्द्रदेवहीने कालापहाड़के ध्वंसावशिष्ट देवमन्दिरादिका निर्म्माण, संस्कार और देवमूर्त्तियोंका उद्धार किया। जगन्नाथदेवकी मूर्ति भी इसी समय नूतन प्रस्तुत की गयी। १५९२ ई० को राजा मानसिंह यहांके शासनकर्ता होकर आये। इस समय तैलङ्ग मुकुन्ददेवके दो लड़के और राजा रामचन्द्रके बीच राज्य पानेकी तकरार उठी। राजा मानसिंहने मध्यस्थ होकर इस गड़बड़ीको इस शर्तपर शान्त कर दिया कि खुरदा प्रदेश और पुरुषोत्तमक्षेत्र विना करके महाराज रामचन्द्र भोग करेंगे और महाराजकी उपाधि इन्हींको रहेगी। किल्ला आल और उसके अधीन अन्यान्य स्थान तैलङ्ग मुकुन्द देवके ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्र रायके अधिकारमें और सारणगढ़ चकोरी मुकुन्दके द्वितीय पुत्रके अधिकारमें रहेगा। ये भी राजा कहलायेंगे, किन्तु महाराज रामचन्द्र ही १२९ किल्लाके ऊपर हुकूमत करेंगे और सभोंमें इन्हींको प्रधानता रहेगी।

खुरदामें निम्नलिखित राजा राज्य करते थे—

रामचन्द्रदेव	१५८० ई०
पुरुषोत्तमदेव	१६०९
नरसिंहदेव	१६३०
गङ्गाधरदेव	१६५५
वलभद्रदेव	१६५६
मुकुन्ददेव	१६६४
दिव्यसिंहदेव	१६९२
कृष्ण वा हरिकृष्णदेव	१७१५
गोपीनाथदेव	१७२०
रामचन्द्रदेव (२रा)	१७२७
वीरकिशोरदेव	१७४३
दिव्यसिंह देव (२रा)	१७९६
मुकुन्ददेव (२रा)	१७९८

इसी अन्तिम राजाने अङ्गरेजोंके विद्रोही हो कर अपना राज्य नष्ट किया। इस वंशके राजगण अन्तमें नामही मात्रके 'जगन्नाथका राजा' वा 'उड़ीयाराज' कहलाकर राजदरबारमें सम्मानित होते थे, किन्तु यथार्थमें ये सिर्फ साधारण जमींदार।

अन्यान्य विशेष विवरण उत्कल शब्द देखो।

खुरदायं (हिं० पु०) बैलोंसे अनाज मांडनेका काम।

खुरनस् (सं० त्रि०) विकल्पेन टच् णत्वञ्च। खुरणस देखो।

खुरपका (हिं० पु०) पशुरोगभेद, चौपायोंकी एक बीमारी। इससे उनके मुख तथा खुरोंमें दाने उभर आते, मुखसे लालास्राव होता, देह गर्म पड़ जाता, उष्ण श्वास चलता और पांव रखना कठिन पड़ता है।

खुरपा (हिं० पु०) १ बड़ी खुरपी। यह औज़ार लोहेका बनता और पकड़नेके लिये काठका दस्ता लगता है। इसको घास छीलने और जमीन गोड़नेमें व्यवहार करते हैं। २ चर्मकार यन्त्रभेद। इससे छील कर चमड़ा साफ किया जाता है।

खुरप्र (सं० पु०) खुर इव प्राति, खुर-प्रा-क। बाणविशेष, किसी किस्मका तीर।

खुरफ (.हिं० पु०) कुलफा, एक साग। यह लोनिया-जैसा होता है।

असहाय-प्रविष्ट अभिमन्यु निहत हुए थे। इसलिए अर्जुनने जयद्रथको अभिमन्युकी मृत्युका कारण समझ कर मार डाला। जयद्रथके पिताने पुत्र (जयद्रथ)-को वर दिया था कि, जो कोई उनका मस्तक भूमि पर गिरायेगा, उसका मस्तक उसी समय शतधा चूर्ण हो जायगा। अर्जुनने कृष्णके मुंहसे यह बात सुन रक्खी थी, इसलिए उन्होंने जयद्रथका मस्तक भूमि पर न गिरा कर कुरुक्षेत्र सन्निहित समन्तपञ्चकस्थ तपोपरायण वृद्धक्ष-की गोदमें रख दिया। तपस्या पूर्ण कर ज्यों वृद्धक्षत्र उठे त्यों ही मस्तक भूमि पर गिर पड़ा। फिर क्या था, उन्हीं-का मस्तक शतधा चूर्ण हो गया। (भारत वन और द्रोण) इनके पुत्रका नाम सुरथ था।

२ काश्मीरके एक प्रसिद्ध कवि। सुभटदत्त, शिव और सङ्खधर इनके गुरु थे। इनके पूर्वपुरुषगण प्रायः सभी सुपण्डित और काश्मीरराज यशस्कार, अनन्त, उच्छल आदिके सचिव थे। इनके पिताका नाम शृङ्गाररथ था ये भी राजराजके सचिव थे। इनके ज्येष्ठ सहोदर जय-रथकृत तन्त्रालोकविवेक नामक ग्रन्थमें इनके पूर्वपुरुषों का परिचय दिया गया है। जयद्रथकी महामाहेश्वर और राजानक ये दो उपाधियां थीं। इन्होंने हरशिव-चिन्तामणि, अलङ्कारविमर्शिनी, अलङ्कारोदाहरण आदि संस्कृत ग्रन्थोंकी रचना की थी।

३ वामकेश्वरतन्त्रविवरण नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता।

४ एक यामलका नाम।

जयधर्म (सं० पु०) एक कुरुसेनापतिका नाम।

जयध्वज (सं० पु०) १ कार्तवीर्यार्जुनके पुत्र, अवन्ती के राजा। इनके पुत्रका नाम तालजङ्घ था। (लिंगपुराण ६८।१२ अ०) २ जयंती, जयपताका।

जयन (सं० क्ली०) जीयते ऽनेन करणे ल्युट्। १ अश्वादि की रक्षा, घोड़ेकी साज। २ जय।

जयनगर- विहारमें दरभङ्गा राज्यके मधुवनी सबडिविजन-का गांव। यह अक्षा० २६° ३५´ उ० और देशा० ८६° ८´ पू०में कमला नदीसे कुछ पूर्वकी अवस्थित है। जन-संख्या ३५५१ है। मट्टीका एक किला बना है।

जयनगर—बङ्गालके चौबीसपरगना जिलेका नगर। यह अक्षा० २२° ११´ उ० और देशा० ८८°२५´ पू०में अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ८८१० होगी। १८३८ ई०में म्युनिसपालिटी हुई।

जयनन्दी—सूक्तिकर्णामृतधृत एक प्राचीन कवि।

जयनरेन्द्रसिंह—पातियालाके एक महाराज। ये एक सुकवि भी थे। १८४५ ई०में इनके पिता करमसिंहको मृत्यु होने पर ये राजसिंहासन पर बैठे थे। सिख-युद्धके समय इन्होंने वृटिश गवर्मेण्टको यथेष्ट सहायता की थी, जिसके लिए गवर्मेण्टने इन्हें १८४६ ई०में तीस हजार रुपये आयकी एक जागीर दी थी। इन्होंने अपने राज्यमें अन्य समस्त प्रकारकी पण्यद्रव्योंका महसूल उठा दिया था, इसलिए वृटिश गवर्मेण्टने दूसरे वर्ष लाहोर-राजकी अधीनस्थ कुछ सम्पत्ति छीन कर राजा नरेन्द्रसिंह-को प्रदान की थी। सिपाहीविद्रोहमें इन्होंने अंग्रेजोंकी यथेष्ट सहायता की थी, जिसके लिए इन्हें दो लाख रुपये आयकी झज्जररियासत और पुरुषानुक्रमसे दत्तक ग्रहण करनेका अधिकार प्राप्त हुआ था। १८६१ ई० १ली जनवरीको इन्हें G. C. S. I. की उपाधि मिली थी। १८६२ ई०में १४ नवम्बरको इनकी मृत्यु हुई, मरते समय ये अपने द्वादशवर्षीय पुत्र महेन्द्रसिंहको राज्य दे गये थे।

जयनाथ—तमसानदी-प्रवाहित प्रदेशके एक महाराज। उच्चकल्पमें इनकी राजधानी थी, इसलिए ये उच्चकल्पके राजा, इस नामसे प्रसिद्ध हैं। ये व्याघ्र महाराजके औरस और अज्झितदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। ये १७४-१७७ (गुप्त या कलचुरि) सम्वत्में राज्य करते थे। इनके पुत्रका नाम था महाराज सर्वनाथ।

जयनारायन—१ एक संस्कृत ग्रन्थकार। इनके पिताका नाम कृष्णचन्द्र था। इन्होंने शङ्खसङ्गीतकी रचना की थी।

२ सप्तशती चण्डीके एक टीकाकार।

जयनारायण तर्कपञ्चानन—एक बङ्गाली आलङ्कारिक और नैयायिक विद्वान्। १८६१ संवत्में कलकत्तेसे दक्षिण चौबीस परगनेके अन्तर्गत सुचादिपुर ग्राममें, पाश्चात्य वैदिक वंशमें इनका जन्म हुआ था। बचपनमें ही इनकी माता मर गई थी। इनके पिता हरिश्चन्द्र विद्या सागर एक प्रसिद्ध अध्यापक थे। इन्होंने न्याय व्याकरण

अपनी जीवनीमें लिखा है "भारतवासी सिन्धु नदीके पश्चिमी किनारेके समस्त मुल्कोंको खुरासन कहते हैं।" यहां प्रायः १२ या १३ लाख मनुष्य रहते हैं। यह विस्तीर्ण प्रदेश पहले पारस और अफगानोंके अधिकारमें था। आजकल इसका अधिकांश रूसाधिकृत या रूसियोंके अधिकारमें है। प्रजा भी पारसकी अपेक्षा रूसकी अधीनतामें सन्तुष्ट है। यहां अरब, बलूच, बैयत्, चूलई, कराय, खूरसाही, सेक, लेयर, मरदी, सुजदरणी, मेखा और तैमूर प्रभृति जातियां रहती हैं। यहां बहुतसी नदी और नाला है जिनमेंसे आट्रेक नदी प्रधान है। इसीके जलसे यहांकी जमीन उर्व्वरा और शस्यशाली हुई है। स्थान स्थान पर कुञ्जवन, उपवन, सुललित द्राक्षावन और चारणक्षेत्र है। यहांकी शोभा देखते ही मन मोहित हो जाता है। जिस समय पारस राज्यमें अन्तर्विद्रोह हुआ था, उसी समय तुर्कोंने ओक्सस नदी पार होकर खुरासनको अधिकारमें लाया था। इस समय महावीर रुस्तमने अपने भुजबलसे आफ्रासियावकको परास्त कर देशरक्षा की थी। जङ्गिस खां और तैमूरकी चढ़ाईसे खुरासनकी दशा शोचनीय हो गई। सुफावियोंके राजत्वकालमें उजबकने प्रति वर्ष शस्यक्षेत्र और नगरको लूटते यहां आते थे। उसके भयसे एक दिन भी प्रजा आनन्दसे चैन न करती थी।

खुरासानके कई एक भाग पारसके अधीन है जिनमेंसे मसेद नगर सुप्रसिद्ध है। इस नगरके बीचमें एक सुन्दर नेत्रशोतिकर समाधि-मन्दिर है। जिसमें इमाम और राजा हारुन अल-रसीदकी हड्डियां संरक्षित हैं। पारसके अन्तर्गत खुरासानके मनुष्य अतिबलिष्ठ और दुर्धर्ष हैं। सैकड़ों बार इन्होंने शत्रुओंके आक्रमणको सहन करके वंशपरम्परासे युद्धप्रिय प्रजा बन गयी है। इसी लिये नादिरशाहने एक दिन कहा था 'यही लोग पारसकी तलवार हैं'।

खुरासानी (फा॰ वि॰) खुरासानदेशीय, खुरासान मुल्कके मुताल्लिक।

खुरासानी यमानी (सं॰ स्त्री॰) यमनीभेद, खुरासानी अजवायन। यह कड़वी, रूखी, पाचक, ग्राही, उष्ण, मादक, भारी, वात-बढ़ाने और पित्तको मिटानेवाली होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

खुराही (हिं॰ स्त्री॰) नीची ऊंची राह, बच करके चलनेकी जगह।

खुरिकापत्र (सं॰ पु॰) केनी नामक पत्रशाक, एक सब्जी।

खुरिया (हिं॰ स्त्री॰) १ कटोरी, छोटा प्याला। २ फूटनेकी जोड़की गोलहड्डी।

खुरिया—मध्यप्रदेशके जशपुर राज्यकी अधित्यका। यह अक्षा॰ २३° तथा २३° १४' उ॰ और देशा॰ ८३° ३०' एवं ८३° ४४' पू॰के मध्य अवस्थित है। यह उत्कृष्ट गोचरभूमि प्रदान करती है। मिर्जापुर आदि अन्यान्य स्थानोंके अहीर या गड़रिये अपने मवेशी यहां चारनेको लाते हैं।

खुरी (हिं॰ स्त्री॰) १ खुरका चिह्न, सुमका निशान। २ द्रुतगामी नदीस्रोत, जोरसे बहनेवाला पानी। खुरीमें नाव चलाना कठिन पड़ जाता है। ३ मालद्वीपवासियोंकी कोई नाव। मालद्वीपी अच्छी हवामें इसी पर चढ़ करके भारत आये थे।

खुरचनी (हिं॰ स्त्री॰) १ खुरची जानेवाली चीज। २ खुरचनेका यन्त्र।

खुरू (हिं॰ पु॰) १ खुरसे भूमि खोदनेका काम। इसमें चौपाये प्रायः डकारा या रांभा करते हैं। क्रोध वा आह्लादके समय ही खुरू होता है। २ उपद्रव, झगड़ा, बखेड़ा। ३ ध्वंस, बरबादी।

खुरूरू (हिं॰ स्त्री॰) नारिकेलशस्य, खोपड़ेकी गरी।

खुर्जा—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहरमें एक तहसील। जिसके बीच खुर्जा, जेवर और पहासू नामके तीन परगना हैं। यह अक्षा॰ २८° ४' एवं २८° २०' उ॰ और देशा॰ ७७° २९' तथा ७८° १२' पू॰के मध्य अवस्थित है। यह यमुनासे काली नदी तक विस्तृत है। भूपरिमाण ४१२ वर्गमील। लोकसंख्या २६६८३८ है। यहां ३८४ गांव और ७ शहर बसते हैं। इसकी आमदनी ३३५११० रुपये हैं। इस तहसीलमें एक दिवानी, एक फौजदारी अदालत और पांच थाना हैं।

२ उक्त खुर्जा तहसीलका प्रधान नगर और बुलन्दशहर जिलाके प्रधान वाणिज्यस्थान। अक्षा॰ २८° १५

विजेताकी अधीनता स्वीकार न की। १८२४ ई०में बर्मा लोगोंने जब कछाड़ पर चढ़ाई की, तब जयन्तियाके राजाने ब्रटिश गवर्मेण्टसे सन्धि कर ली। १८३२ ई०में राजा सिलहटसे चार ब्रटिश प्रजाको चुरा कर ले गये जिनमेंसे तीनका उन्होंने फालजोरमें कालीके सामने बलिदान किया। इस तरह कई बार राजाका दुर्व्यवहार देख ब्रटिश गवर्मेण्टसे रहा न गया, अन्तमें उन्होंने १८३५ ई०में जयन्तियाको ब्रटिशराज्यमें मिला लिया। तभीसे यह ब्रटिश गवर्मेण्टके अधीन चला आ रहा है। यहाँ वर्षा अधिक होती हैं, इस कारण सभी चीजें यथेष्ट उपजती हैं। शस्यद्रव्योंमें धान ही प्रधान है। इस परगनेका अधिकांश जङ्गलमय है। जलवायु उतनी स्वास्थ्यकर नहीं है।

जयन्तिया पहाड़—आसाम प्रदेशका एक विभाग। सर्वसाधारण इसे जोवाई कहते हैं। इसका परिमाणफल २००० वर्गमील है। इसकी उत्तर-सीमामें नौगांव, पूर्वमें कछाड़, दक्षिणमें श्रीहट्ट और पश्चिम सीमामें खासी पहाड़ है।

इसके जोवाई नामक सदरमें सरकारी कमिश्नरकी कचहरी है। १८३५ ई०से यह स्थान ब्रटिश गवर्मेण्टके अधिकारमें है। पहले यहांके प्रत्येक ग्रामसे वर्षमें एक बकरी वसूल होती थी। १८६० ई०में यहां घर पीछे १) रु० महसूल जारी हुआ। पहले पहल महसूल उगानेमें बड़ी दिक्कत हुई थी। पहाड़ी लोग राजाके सिवा अन्य किसीको भी महसूल देनेके लिए राजी न हुए। इस पर उनके साथ एक छोटासा युद्ध हुआ और उनके अस्त्र छीन लिये गये। पीछे यहां मछली पकड़ने और लकड़ी काटने पर महसूल लगाया गया। परन्तु इससे पहाड़ी लोग असन्तुष्ट हो गये। १८६२ ई०की जनवरी महीनेमें पूजाके उपलक्षमें सबने मिल कर अंग्रेजोंके विरुद्ध अस्त्रधारण किया। पुलिसकी कोठी जला दी। पहाड़ पर ब्रटिशका कोई भी चिह्न न रहा। आखिर इनके दमनके लिए सिपाहियोंकी सेना भेजी गई। पहले तो सिपाही कुछ भी न कर सके थे, किन्तु पीछेसे गजारोही और दो दल सेना भेज कर इनको दमन किया गया।

वर्तमानमें जयन्तिया पहाड़ २३ परगनोंमें विभक्त है जिनमेंसे दोमें कुकी और दोमें मिकिर जातिका वास है। यहां करस्वरूप करीब पचीस हजार रुपये वसूल होते हैं। यहां 'झुम' नामक कृषिप्रथा प्रचलित है। यहां नदीके किनारेसे अच्छा पत्थरका चूना पाया जाता है जो बङ्गालमें श्रीहट्टका चूना'के नामसे प्रसिद्ध है।

जयन्तियापुर—आसामके सिलहट जिलेमें नार्थ सिलहट सबडिविजनका एक गांव। यह अक्षा० २५° ८' उ० और देशा० ९२° ८' पू०में अवस्थित है। पहले यह जयन्तिया राजकी प्रधान नगरी था। यहां कई हिन्दू-मन्दिर बने थे, परन्तु उनका ध्वंसावशेष १८९७ ई०के भूकम्पमें जाता रहा। सप्ताहमें एक बार बाजार लगता है।

जयन्ती (सं० स्त्री०) जयतीति जि-झच्। १ दुर्गा। २ इन्द्रकी कन्या। ३ पताका, ध्वजा। ४ अग्निमन्थवृक्ष, अरणी नामका पेड़। ५ वृक्षविशेष, एक पेड़का नाम इसके पर्याय—जया, तर्कारी, नादेयी, वैजयन्तिका, बला, मोटा, हरिता, विजया, सूक्ष्ममूला, विक्रान्ता और अपराजिता है। इसके गुण—मदगन्धयुक्त, तिक्त, कटु, उष्ण, क्रिमिनाशक और कण्ठविशोधन है। इसके पत्तेका गुण—विषदोषनाशक, चक्षुका हितकर, मधुर और शीतल है। यह नवपत्रिकामें व्यवहृत होता है।

"कदली दाड़िमी धान्यं हरिद्रामानकं कचु।
बिल्वोऽशोको जयन्ती च विज्ञेया नव पत्रिकाः।" (तिथितत्त्व)

वैद्यकके मतसे रविवारके दिन श्वेतजयन्तीका मूल दूधके साथ पीस कर खानेसे श्वित्ररोग आरोग्य होता है। ६ वैद्यकोक्त औषधविशेष। विष, पाठा, अश्वगन्धा, वच, तालीशपत्र, मिर्च, पीपर, नीम और जयन्ती, प्रत्येकका बराबर बराबर भाग ले कर बकरीके मूत्रमें पीस कर चणक प्रमाणका गोली प्रस्तुत करनी पड़ती हैं। ७ योगविशेष, ज्योतिषका एक योग। जब श्रावण मासकी कृष्णपक्षकी अष्टमीकी आधीरातके प्रथम और शेष दण्डमें रोहिणी नक्षत्र पड़े तब यह योग होता है। ८ द्वादशीविशेष। ९ जौके छोटे पौधे। विजया दशमीके दिन ब्राह्मण लोग इन्हें यजमानोंको मङ्गल द्रव्यके रूपमें भेंट करते हैं। यजमान यथाशक्ति ब्राह्मणोंको इस मङ्गलकामनाके लिये दक्षिणा देते हैं। १० जन्माष्टमी। ११

नदियोंके किनारेकी जमीन कुछ ऊंची है।

१८८२ ई० से पहिले खुलना स्वतन्त्र जिला नहीं था, किन्तु यशोर जिलाका उपविभाग था। तत्पश्चात् २४ परगनासे सातक्षीरा उपविभाग और यशोरसे बागेर हाट नामक दूसरा उपविभाग लेकर खुलनाके साथ एकत्र करने पर एक नवीन जिलाकी सृष्टि हुई। यशोर और नदीयाके शासनकार्यं सुविधा करने होके अभि प्रायसे ऐसी व्यवस्था की गई। यशोरसे दो उपविभाग स्वतन्त्र करके नदिया जिलाका भार कम करनेके लिये उससे वनगांव उपविभाग लेकर यशोर जिलामें मिला दिया गया। वस्तुतः वनगांव भौगोलिक अवस्थिति अनुसार यशोरके मध्य आ जानेसे सुविधा प्राप्त हुई। १८८२ ई०की पहली जूनको यह परिवर्तन हुवा।

खुलनामें भी अन्यान्य जिलाकी तरह मुन्सफी, सब जज, जज, मजिष्ट्रेट, ज्वाइण्ट मजिष्ट्रेट, कलेक्टर, तथा, सिविल सार्जेन् हैं।

इस जिलामें १३ तेरह थाने, ११ चौकी और एक निमक-पासका एक अड्डा है। इस जिलाका सदर खुलना शहर है। भैरव नदी जिस जगह सुन्दरवनमें प्रवेश करती है ठीक उसी स्थानपर खुलना अवस्थित है। इसलिये इसको सुन्दरवनकी राजधानी वा प्रधान शहर कहते हैं। पहिले यह शहर लवण प्रस्तुत करनेका प्रधान स्थान था। आजकल भी निमकका कारवार यहां यथेष्ट होता है। इसके सिवा सातक्षीरा, कालामोया, कालीगञ्ज, देवहाट, चन्दनीया, वागेरहाट, कपिलमुनि, दौलतपुर, मोरेलगंज प्रभृति स्थान ही प्रधान है। सातक्षीरामें अनेक हिन्दू मन्दिर हैं। वागेरहाटमें साठगुम्बज प्रभृति खाँ जहान् आलीका बनाया भग्नावशेष है। [खांजहान्आलीदेखो।] कपिलमुनिमें सागरयात्रियोंकी भीड़ होती है। (कपिलमुनि देखो।)

खुलना, सातक्षीरा और बागेरहाटमें गवर्नमेण्टका दातव्य औषधालय है। उनके साथ साथ छोटा अस्पताल भी है। मोरेलगंजमें साहब जमीन्दारसे स्थापित किया हुआ दौलतपुरमें महसीनकोषसे स्थापित और सातक्षीरामें नकीपुरके जमीन्दारसे स्थापित औषधालय है।

इस जिलामें आउस, आमन और बोरो तीन प्रकारके धान होते हैं। उसके अलावे मटर, पाट, ऊख, खजूर भी यथेष्ट होते हैं। सुन्दरवनमें बाहादुरी काठ, जलानेका काठ, मधू, कड़ी (-बीम) इत्यादि पाये जाते हैं। चीनी, गुड़, नील और चावलकी यहांसे रफ़तनी होती है और लोहेकी चीज विलायतसे आती है। सातक्षीरा सर्वापेक्षा स्वास्थ्यकर स्थान है। हैजा और ज्वर यहां बहुत होते हैं।

इस जिलामें हिन्दुओंकी अपेक्षा मुसलमानोंकी संख्या अधिक है।

खुलना शहर अक्षा० २२° ४८' उ० और देशा० ८८° १४' पू०में अवस्थित है। यहां होकर ढाका और बाखरगंजसे चावल, श्रीहट्टसे चूना, और कमला नीबू, पावना, राजशाही और फरिदपुरसे सरसों, नीली दाल कमाई, पावनासे घी और सुन्दरवनसे लकड़ी कलकत्ते जाते हैं।

खुलवा (हिं० पु) द्रवीभूत धातुको सांचेमें भरनेवाला।

खुलवाना (हिं० क्रि०) खोलनेका काम दूसरेसे कराना, खुलाना।

खुला (हिं० वि०) १ अबद्ध, जो बंधा न हो। २ अवरोधरहित, बेरोक। ३ स्पष्ट, जाहिर।

खुलापजा (हिं० पु०) मृदङ्ग वा तबला बजानेकी एक रीति। इसमें दोनों हाथों या केवल वामहस्त द्वारा तबले पर खुली थाप लगा बजाना आरम्भ करते हैं।

खुलासा (अ० पु०) निचोड़, मतलब।

खुलासा (हिं० वि०) १ खुला, जो बन्द न हो। २ साफ, बेरोक। ३ स्पष्ट, जाहिर। ४ संक्षिप्त, मुख़तसिर।

खल्ल (सं० क्ली०) नखी नामक गन्धद्रव्य, नख।

खुल्लक (सं० लि०) खुल्ल स्वार्थे कन्। १ स्वल्प, थोड़ा। २ नीच, कमीना। ३ कनिष्ठ, छोटा। ४ दरिद्र, गरीब। ५ निष्ठुर, बेरहम। ६ खल, पाजी।

खुल्लतात (सं० पु०) खुल्लः कनिष्ठः तातस्य पितुः, पूर्वनिपातः। पिताका कनिष्ठ भ्राता, चचा।

खुल्लना—लक्षपति वणिक्की कन्या और धनपति वणिक्की पत्नी। यह स्वर्गकी अप्सरा रत्नमाला रहीं। दुर्गाके शापसे इन्हें मानवी होना पड़ा। इनके स्वामी धनपति जब गौडराज्यमें वाणिज्य करने गये थे, सपत्नी इन्हें

स्वीकृत उपढौकनको ग्रहण कर तथा पेशावर और लमघन अधिकार कर अपने देशको लौट गये। इसी समयसे पेशावर हिन्दू और मुसलमान राज्यका सीमा स्थान हो गया। १००१ ई०में २७ नवम्बरको सवक्तगोनके पुत्र सुलतान महमूदने १२००० अश्वारोही और ३०००० पदातिके साथ जयपाल पर आक्रमण किया। जयपाल पराजित हुए और कैद कर लिए गये। परन्तु वास्तविक कर देना मञ्जूर करने पर महमूदने उन्हें छोड़ दिया। उस समयकी प्रथाके अनुसार कोई राजा युद्धमें यदि दो बार पराजित हो जाय; तो वह राज्य चलानेमें अक्षम समझा जाता था और राज्य नहीं कर सकता था। इसलिए जयपाल अपने पुत्र अनङ्गपालको राजसिंहासन पर बिठा कर खुद प्रज्वलित अग्निकुण्डमें कूद पड़े। इस प्रकारसे जयपालकी जीवन-लीला समाप्त हुई।

२ लाहोरके राजा अनङ्गपालके पुत्र और १म जयपालके पौत्र। १०१३ ई०में ये पितृसिंहासन पर बैठे थे। इरावती नदीके किनारे १०२२ ई०में गजनीपति सुलतान महमूदके साथ इनका युद्ध हुआ था। इस युद्धमें जयपालकी पराजय हुई। इसी युद्धके उपरान्त लाहोर मुसलमानोंके हाथ चला गया। भारतवर्षमें मुसलमान राज्यकी यही बुनियाद थी।

३ हमीर महाकाव्यके मतसे चौहानवंशीय पाँचवें और सत्ताईसवें राजा। पाँचवें राजा जयपाल चक्री महाराज चन्द्रराजके पुत्र तथा सत्ताईसवें राजा जयपाल महाराज विग्रहके पुत्र थे। चौहान देखो।

जयपुत्रक (सं० पु०) प्राचीन कालका जुआ खेलनेका एक प्रकारका पासा।

जयपुर—१ राजपूतानेकी एक रेसीडेन्सी। यह अक्षा० २५° ४१´ एवं २८° ३४´ उ० तथा देशा० ७४° ४०´ तथा ७७° १३´ पू०में अवस्थित है। इसमें जयपुर, कृष्णगढ़ और लाव राज्य लगता है। जयपुर रेसीडेन्सीके उत्तरमें बीकानेर और पञ्जाव, पश्चिममें जोधपुर एवं अजमेर, दक्षिणमें शाहपुर, उदयपुर, बूंदी, टोंक, कोटा और ग्वालियर तथा पूर्वमें करौली, भरतपुर और अलवर है। रेसीडेण्टका सदर जयपुर है। लोकसंख्या कोई २७५२३०७ और क्षेत्रफल १६४५६ वर्गमील है। इसमें ४१ नगर और ५९५९ ग्राम बसे हैं।

२ राजपूतानाका उत्तर-पूर्व और पूर्व राज्य। यह अक्षा० २५° ४१´ एवं २८° ३४´ उ० और देशा० ७४° ४१´ तथा ७७° १३´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १५५७९ वर्गमील है। जयपुरसे उत्तर बीकानेर, लोहारू एवं पातियाला, पश्चिम बीकानेर, जोधपुर, कृष्णगढ़ तथा अजमेर, दक्षिण उदयपुर, बूंदी, टोंक कोटा एवं ग्वालियर और पूर्वमें करौली, भरतपुर तथा अलवर है। इस देशमें बहुतसे पहाड़ होने पर भी यहांकी जमीन समतल है। किन्तु मध्यभागकी जमीन त्रिकोणाकार है जो समुद्रपृष्ठसे लगभग १४००से १६०० फुट ऊंची है। यह त्रिकोणाकार जयपुर शहरसे पश्चिमकी ओर विस्तृत है और इसके पूर्व भागमें बहुतसे पहाड़ हैं जो उत्तर दक्षिण अलवर तक फैले हुए हैं। रघुनाथगढ़ पर्वतशिखर समुद्रपृष्ठसे ३४५० फुट ऊंची है। राजमहलके पास बनास नदीका दृश्य निराला है। यह राज्यकी सीमाके साथ साथ ११० मील तक बहते चली जाती है। ग्रीष्मऋतुमें प्रायः सब छोटी छोटी नदियां सूखी देख पड़ती हैं। झीलोंमें सांभर ही बड़ी है। खेतड़ी और सह्वानमें तांबा और बबईमें निकल निकलता है। जयपुर राज्यमें लौहखनि भी है। जलवायु शुष्क तथा स्वास्थ्यकर है।

जयपुर महाराज श्रीरामचन्द्रके पुत्र कुशवंशीय कच्छवाह राजपूतोंके सर्दार हैं। कहते हैं प्रथमतः उनके पूर्वपुरुष रोहतासमें बसे थे, फिर खृष्टीय ३री शताब्दीके अन्तमें ग्वालियर और नरवर चले गये। वहां कच्छवाहोंने कोई ८०० वर्ष राजत्व किया, परन्तु उनका शासन स्वाधीन और अप्रतिहत न था। प्रथम कच्छवाह नृपति वज्रदाम ९७७ ई०में कन्नौजके राजाओंसे ग्वालियर छीन कर स्वाधीन हुए। उनके अष्टम वंशधर तेजकरण (दूल्हाराय)-ने ११२८ ई०में ग्वालियर छोड़ा। इन्होंने अपने श्वशुरसे देवासा दहेजमें पाया था। उसी समयसे पूर्व राजपूतानेमें कच्छवाह राज्य प्रतिष्ठित हुआ। यह दिल्लीवाले राजपूत राजाओंके अधीन था। कोई ११५० ई०में दूल्हारायके किसी उत्तराधिकारीने सुसावत मीनाओंसे अम्बर ले लिया और उसको अपनी राजधानी बना दिया। कुछ सौ वर्ष तक अम्बर इसी तरह राज-

ई०को बापके तख्त पर बैठ गये। बादशाही मिलने पीछे इन्होंने सबके सामने मरीसको धर्मपिता-जैसा कबूल किया। ६०२ ई०को मरीस कत्ल किये गये। यह उसी वक्त अपने धर्मपिताका बदला चुकानेको रोमक राज्य पर चढ़े थे। दारा, एडेशा वगैरह कई मुकाम जल्द हाथ आ गये। सिरीया और पालेष्टाइन लूट कर तहस नहस कर डाली। जेरूसलम जीतने पर सोनेका असली सलीब (Cross) मट्टीसे निकाल फतेहमन्दीकी नशानीके तौर पर अपने राज्यमें ले आये। कुछ दिन पीछे रोमके बादशाह हिराक्लियासने आकर ईरान पर हमला किया था। उन्होंने कासपीय ह्रदसे इस्फहान शहरके बीच सभी मुकाम तोड़ फोड़ डाले। सरकारी खजाना लूटा और अच्छे अच्छे महलोंका तहसनहस किया गया। मुल्कका ऐसा मटियामेट देख रैयत परवीज पर बिगड़ी और राजद्रोही बन गयी। इनके ज्येष्ठ पुत्रने इन्हें बांध लिया था। परवीजके १८ लड़के उनके सामने ही कत्ल किये गये। इसके बाद वे कैदमें रखे गये। ६२८ ई०को इनका मृत्यु हुआ। परवीजके साथ ही नौशेरवान्‌का घराना भी गुम हो गया।

खुसरूमलिक—कोई क्रीतदास या गुलाम। यह खुसरू शाह कहलाते थे। बादशाह मुबारककी मिहरबानीसे खुसरू उनके बड़े प्यारे और वजीर बन गये। उन्होंने जैसे ही अपने बाप मराठा देश जीतके लौटे, इन्हें उसका सूबेदार (शासनकर्ता) बनाके दिल्लीसे दक्षिणको भेज दिया। मालिकने लूट मार करके एक ही सालके बीच कितना ही दौलत इकट्ठी कर डाली। फिर इनका हौसला इतना बढ़ गया कि अपने अन्नदाता मुबारककी भी चुपकेसे मार डालनेमें जी न हिचका। १३२१ ई०को यह नसीर-उद्-दीन् नामसे दिल्लीके तख्त पर बैठे थे। इसी वर्ष राज्यके बड़े आदमियोंने सिपहसालार गाजीबेग तुगलकसे मिलके इनके मुकाबलेमें लड़ाई खड़ी कर दी। आखीरको यह दुश्मनोंके हाथमें पड़ मारे गये।

२ बादशाह मुहम्मद तुगलककी भानजे। सम्राट्‌ने अपनी राज्यलाभेच्छा बढ़ने पर एक लाख फौजके साथ खुसरूको नैपाल जीतने भेजा था। यह बड़ी मुशकिलसे पहाड़ोंको पारकर १३३७ ई०को चीनको सरहद पर जा पहुंचे। इसी जगह एक तर्फसे चीना फौज और दूसरी तर्फसे नेपालकी पहाड़ी फौजने आकर इन पर हमला किया और रसदका सारा सामान लूट लिया। सात दिन तक ऐसी ही तकलीफसे लड़ने भिड़ने पर इनके सिपाही घबरा उठे। इसी मौकेमें मर शिद्दतकी बारिश पड़ी थी। पहाड़की उसी खाली जगहमें चारों तर्फोंका पानी जाकर जमा हो गया। यह साथ अपने सिपाहियोंके मर मिटे और मुहम्मदकी ऊंची उम्मीद मारी पड़ी।

३ गजनवी शाही खानदानके आखिरी बादशाह। इनके बापका नाम खुसरू शाह था। पिताके मरने पर ११६० ई०को यह लाहोरके तख्त पर रौनक अफरोज़ हुए। ११८४ ई०को सुलतान मुहम्मद गोरीने जब लाहोर पर हमला किया, हारने पर खुसरू पकड़ लिये गये। मुहम्मद गोरीने इन्हें बालबच्चोंके साथ अपने भाई गयास्-उद्-दीन्‌के पास फीरोजकोह नगर भेजा था। वहीं खुसरू सपरिवार मार डाले गये।

४ दिल्ली—सम्राट् मुहम्मद-बीन तुगलकके बहनोई और खुदावन्द जादाके खाविन्द। इन्होंने एक वक्त मुहम्मदके उत्तराधिकारी सुलतान फीरोज शाहको मार डालनेके लिये छिप छिप कर साजिश की थी। किन्तु इनके बेटे दावर मालिकने सुलतानको जल्द आनेवाली मुसीबतकी बात बतला दी। सुलतानने भाग कर अपना प्राण बचाया था।

खुसरू शाह—गजनवी बादशाह बहराम शाहके लड़के। इनका असली नाम निजाम्-उद्-दीन् था। ११५२ ई०को अपने वालिदके मरने पर इन्होंने लाहोरका तख्त हासिल किया और सात वर्ष तक सलतनत करके ११६० ई०को शरीर छोड़ दिया।

खुसरू सुलतान—मुगल बादशाह जहांगीरके लड़के। यह राजा मानसिंहकी बहनके गर्भसे १५८७ ई०को लाहोरमें उत्पन्न हुए थे। फिर १६२२ ई०को दक्षिणमें इनका मृत्यु हुआ। दाक्षिणात्यसे लाश लाकर इलाहाबादके खुसरूबागमें गाड़ी गयी थी। फारसीकी एक किताबमें

सामन्तोंने पहले तो विश्वास न किया ; पीछे जब अपनी पत्नियोंको अन्तःपुरमें भेज कर खबर मंगाई, तो बात ठीक निकली। यथासमय रानी भट्टियानीके गर्भसे ३य जयसिंहका जन्म हुआ और मोहनसिंह गद्दीसे उतार दिये गये। सामन्तों और ब्रटिश गवर्मेण्टको सम्मतिके अनुसार ३य जयसिंह ही राजा हुए। इस समय भी २य पृथ्वीसिंहका पुत्र ग्वालियरमें सिन्धियाके आश्रमसे राज्य पानेकी कोशिश कर रहा था। पहले तो बहुतसे सामन्त उसे राजगद्दी देनेके लिए राजी हो गये थे, पर पीछेसे उसकी मूर्खता और असच्चरित्रताकी बात सुन कर किसीने भी उसे राजा न बनाया।

३य जयसिंहके राजा होने पर, उनकी माता रानी भट्टियानी ही राज्य-शासन करने लगीं। राजाके स्वार्थ-के लिए ब्रटिश गवर्मेण्टने रावल वैरिलालको जयपुरके मन्त्रिपद पर नियुक्त किया। जगत्सिंहकी शेषावस्थामें उनके अधीनस्थ सामन्तोंने जयपुरराज्यकी बहुतसी जमीन अपने अधिकारमें कर ली थी। परन्तु ब्रटिश-गवर्मेण्टके साथ सन्धि होने पर जगत्सिंहकी उक्त जमीन पुनः मिल गई। सामन्तगण फिर जमीन न ले लें, इसके लिए भट्टियानीने उनके हस्ताक्षर ले लिए। पहले रानी भट्टियानीने राज्यकी उन्नतिके लिए विशेष मनोयोग लगाया था ; किन्तु जटाराम नामक एक व्यक्तिसे गुप्तप्रेममें फंस जानेके कारण पुनः अनर्थका सूत्रपात हुआ। भट्टि-यानीने सदाशय वैरिलालको निकाल कर धूर्त जटाराम-को प्रधान मन्त्रित्वका पद दे दिया। यह जटाराम ही धीरे धीरे राज्यका हर्ताकर्ता हो गया। १८३३ ई०में भट्टियानी रानीकी मृत्यु हो गई। उनके सम्मानरक्षार्थ अब तक गवर्मेण्टने जयपुर पर दृष्टिपात नहीं किया था। किन्तु अब 'प्राप्य कर नहीं चुकाया' इस बहानेसे जयपुरराज्य पर हस्तक्षेप किया। इसी समय जयपुर राजधानीमें महा विभ्राट् उपस्थित हुआ। ३य जयसिंह-के बड़े होने पर शीघ्र ही वे शासन-भार ग्रहण करेंगे, यह धूर्त जटारामको सह्य न हुआ। उसे मालूम थी कि जयसिंहके शासन-भार ग्रहण करने पर, फिर उस-का अधिकार कुछ भी न रहेगा। यह विचार कर उस दुष्टने १७ वर्षके बालक जयसिंहको विष दे कर मार डाला। उस समय ३य जयसिंहके २य रामसिंह नामक एक पुत्र हुए थे। ये २ वर्षके बालक रामसिंह ही राजा हुए। इनके राज्यारोहणके समय जटारामके षड़यन्त्रसे राजधानीमें बड़ी गड़बड़ी मच गई।

१८२० ई०को बलवा होने पर राजाने अंगरेज अफसरको जयपुरमें रहनेके लिये बुलाया था। १८३५ ई०को राजधानीमें जो उपद्रव उठा, गवर्नर जनरलके राजपूतानास्थ एजेण्ट आहत हुए और उनके सहकारी मारे गये। इसके बाद ब्रटिश गवर्नमेण्टने शान्ति-रक्षा-का उपाय किया। पोलिटिकल एजेण्टकी देखभालमें ५ सरदारोंकी एक रिजेन्सी कौंसिल बनी, जो सब जरूरी काम करने लगी, सेना घटायी गयी और प्रबन्धके सब विभागोंका संस्कार हुआ। १८४२ ई०को ८ लाख वार्षिक कर घटा कर ४ लाख रखा गया। १८५१ ई०को अंगरेजोंने जयपुरके नरेश महाराज रामसिंहको पूर्ण अधिकार दिया। सिपाही विद्रोहके समय अंग-रेजोंको सहायता देनेसे उन्होंने कोट कासिम परगना पुरस्कारमें पाया। १८६२ ई०को उन्हें गोद लेनेका अधिकार भी मिला था। १८६४ ई० में राजपूतानेमें जो घोर दुर्भिच पड़ा था, उसमें इन्होंने ब्रटिश गवर्मेण्टको ओर अनेक प्रशंसनीय कार्य किए थे, इस कारण इन्हें G. C. S. I. की उपाधि मिली थी एवं २१ तोपोंके अतिरिक्त दो और सम्मानसूचक तोपें मिलने लगीं। १८७८ ई०में G. C. I. E बनाये गये। १८८० ई०को निःसन्तानावस्थामें इनकी मृत्यु हुई। महाराज रामसिंह एक विज्ञ शासक थे। विद्याकी उन्नति तथा अपने राज्य भरमें सड़क बनवानेकी ओर इनका विशेष लक्ष्य था। इन्होंने अपने जीतेजी महाराज जगत्सिंहके द्वितीय पुत्रके वंशज इसारदके ठाकुरके छोटे भाई कायमसिंहको अपना उत्तराधिकारी बना रखा था। १८८० ई०को कायम-सिंह २य सवाई माधवसिंह नाम धारण कर गद्दी पर बैठे। इनका जन्म १८६२ ई०में हुआ था। इनकी नाबा-लिगीमें एक सभा द्वारा राजकार्य चलाया जाता था। १८८२ ई०में इन्हें राज्यका पूरा अधिकार दे दिया गया। पहले इन्हें १७ तोपें दी जाती थीं, बाद १८८७ ई०में दो

साथ वाणिज्य-व्यवसाय चलता है। गल्ला, कपास, पशम, घृत और देशीय वस्तुको रफ्तनी तथा विलायती कपड़ा, धातु, शुष्क फल, चीनी और गुड़की आमदनी होती है। यहां सुन्दर मोटा कपड़ा तथा रेशमी कपड़ा प्रस्तुत होता है। छह सात सौ करघा बराबर चलते हैं।

खुशामद (फा० स्त्री०) अयथा स्तुतिवाद, झूठी तारीफ, चापलूसी, किसीको मतलबकी बातोंसे खुश करनेका काम।

खुशामदी (फा० स्त्री०) खुशामद करनेवाला, चापलूस। दूसरेकी खुशामद करके अपना काम चलानेवाला 'खुशामदी टट्टू' कहलाता है।

खुशाल—हिन्दी भाषाके एक कवि। इनकी कविता बड़ी मनोहारिणी रही—

"पिय प्यारो औरही और निहारै।
गलबहियां पकराने नैना शोभा सदन अपारै॥
रसिक खुशाल करत निमिवासर। कुंजनिकुंज विहारै॥"

खुशाल—(पण्डित) दि० जैन-सम्प्रदायके एक ग्रन्थकर्ता इन्होंने "मुक्तावल्युद्यापन" और "कांजीद्वादशयुद्यापन" नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं।

खुशाल खान्—खटकजातीय एक सर्दार, मालिक आकोरका पुत्र। अकबरके समयमें जबकी पार्वती जाति काबुलके कई स्थानोंमें लूट पाट करती थी, उस समय मालिक आकोरने अकबर बादशाहके निकट रक्षाभार प्राप्त किया। उनके मरने पर उनके लड़के खुशलखान्ने यह भार ग्रहण किया। जब औरङ्गजेबने पठानोंको दमन करनेके लिये अपनी सेना अफगान सीमा पर भेजी उस समय खुशालखान्ने जननी जन्मभूमिकी रक्षाके लिये ओजस्विनी भाषामें एक कवितावलीकी रचना की थी जिसके पाठ करनेसे खटक जाति उत्तेजित हो जाती थी। आजकल भी खटक अत्यन्त आदर और भक्तिके साथ खुशालकी कविता गाया करते हैं। खुशालको ५२ लड़के थे। जिनमेंसे ज्येष्ठपुत्र बैरामखान् था। इसने खटकके शेख रहमकर नामक एक साधुके लड़केको मार डाला था। इसी अपराधमें औरङ्गजेबने खुशालखान्को बारह वर्ष तक दिल्लीके कारागारमें बन्द किया था।

खुशालचंद—दिल्लीपति मुहम्मदशाहके दिवानी कार्यालयके एक कर्मचारी। इन्होंने 'तारीख इ-मुहम्मदशाही, या 'तारिख-इ-नादिर उज्जमाना' नामकी किताब फारसी भाषामें रचना की है। इस ग्रन्थमें इब्राहिम लोदीसे मुहम्मद शाहके राजत्वकाल तक हाल वर्णन किया है।

खुशालचंद्रकला—दिगम्बर जैनसम्प्रदायके ग्रन्थकर्ता। ये सांगानेरके रहनेवाले खण्डेलवाल थे। खास इनके रचित ग्रन्थ तो कोई महत्वपूर्ण मिला नहीं है। पर इनने बड़े बड़े ग्रन्थोंका पद्यानुवाद कर डाला है। इन्होंने 'हरिवंशपुराण' सं० १७८०में 'पद्मपुराण' सं० १७८३में और 'उत्तरपुराण' सं० १७९९में बनाया है। धन्यकुमारचरित्र, व्रतकथाकोष, जम्बूचरित्र, और चौबीसो पाठपूजा—ये भी इन्होंने बनाये हैं। बम्बईके जैन-मन्दिरमें एक यशोधरचरित्र है, जिसको इनने १७८१ वि० सं०में बनाया था। मालूम नहीं कि, इसके कर्ता 'हरिवंश' आदिके कर्तासे मिले हैं या एक ही हैं। इनने अपनेको सुन्दरका पुत्र और दिल्ली शहरके जयसिंहपुरामें रहनवाला बतलाया है।

खुशाल पाठक—युक्तप्रान्तीय रायबरेली नगरके एक हिन्दी कवि। इन्होंने शृङ्गाररसकी कविता लिखी।

खुशी (फा० स्त्री०) प्रसन्नता, आह्लाद, दिलकी कुशादगी।

खुश्क (फा० वि०), शुष्क, सूखा। २ रसिकतारहित, रूखा। (क्रि० वि०) ३ सिर्फ, सिर्फ।

खुश्कसाली (फा० स्त्री०) अनावृष्टि, वृष्टिका अभाव, जिस साल पानी न बरसे।

खुश्का (फा० पु०) भात, पानीका पका चावल।

खुश्की (फा० स्त्री०) १ शुष्कता सूखापन, रुखाई। २ भूमि, जमीन्। ३ पलेथन, लोई या पेड़े काटनेका सूखा आटा। ४ अनावृष्टि, पानी न बरसनेकी हालत।

खुसखुस (हिं० पु०) १ खुसुर-फुसुर, कानाफूसी, गुपचुपकी बातचीत। (क्रि० वि०) २ चुपके चुपके, धीमी आवाजमें।

लगते हैं। लोगोंका प्रधान खाद्य बाजरा और जुआर है। इस राज्यमें कई बड़े बड़े तालाव हैं। जङ्गलोंमें हकदार मुफ्त और दूसरे लोग महसूल दे कर मवेशी चराते हैं। सिवा नमकके दूसरा धातु बहुत कम निकलता है। लोहेका काम बन्द है। सङ्गमरमर बहुत मिलता है। अबरकको भी खान है। कङ्कर और चूनेकी कोई कमी नहीं। यहां ऊनी और सूती कपड़ा बनता है। सङ्गमरमर पर नक्काशी और मट्टी तथा पीतलके बर्तन तैयार करते हैं। जयपुरके रंगे और छपे कपड़े बहुत अच्छे होते हैं। सोने, चांदी और तांबेकी मीनाकारी मशहूर है। राज्यमें रूईकी कई कलें भी है। प्रधानतः नमक रूई, घी, तेलहन, छपे कपड़े, ऊनी पोशाक, सङ्गमरमरी मूर्तियां, पीतलके सामान और चूड़ियोंकी रफ्तनी होती है। राजपूताना मालवा रेलवेसे सब माल आता जाता है। ऊंट भी चीजें ले जानेमें व्यवहृत होता है।

जयपुर राज्यमें कोई २८३ मील पक्की और २३६ मील कच्ची सड़क है। महाराज १० सदस्योंकी कौंसिलसे राज्य प्रबन्ध करते हैं। इसमें अर्थ, न्याय और पर राष्ट्र आदि तीन विभाग सम्मिलित हैं। तहसीलदारी सबसे छोटी अदालत है। इसके ऊपर निजामत है। महाराज अपनी प्रजाको फांसी दे सकते हैं। राज्यका साधारण आय प्रायः ६५ लाख है। यहां झाड़शाही सिक्का चलता है। टकशालमें अशर्फी, रुपया और पैसा ढालते हैं। पढ़नेकी फीस नहीं लगती।

२ राजपूतानाके जयपुर राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २६° ५५' उ० और देशा० ७५° ५०' पू०में राजपूताना मालवा रेलवे पर अवस्थित है। यह राजपूतानेका सबसे बड़ा शहर है। लोकसंख्या कोई १६०१६७ होगी। सुप्रसिद्ध महाराज सवाई जयसिंहके नाम पर ही जयपुरका नामकरण हुआ है। दक्षिण दिक् भिन्न सब ओर पहाड़ों पर किले बने हैं। नाहरगढ़ दुर्ग अभेद्य है। नगरको चारों ओर प्राचीर है। सड़कें बहुत उम्दा हैं। प्रधान पथ १११ फुट चौड़ा है। बीचमें राजप्रासाद देखते ही बनता है। तालकटोरा तालाब चारों ओर दीवारसे घिरा है। राजामालके तालाबमें घड़ियाल बहुत हैं। पुरातत्त्व सम्बन्धीय गृहशाला देखनेकी चीज है। रातको गैसकी रोशनी होती है। १८७४ ई०से अमानशाह नदीका पानी नलीके सहारे आता है। १८६८ ई०को म्युनिसपालिटी हुई। सरकारी कोषसे उसका सब खर्च दिया जाता है। शहरका कूड़ा ढोनेको भैंसोंकी ट्राम चलती है। प्रधान व्यवसाय रंगाई, सङ्गमरमरकी नक्काशी, सोनेकी मीनाकारी, मट्टीके बर्तन और पीतलका सामान है। १८६८ ई०को यहां कलाविद्यालय खुला। उसमें चित्रविद्या, रंगसाजी, नक्काशी, आदि उपयोगी विषयोंको शिक्षा दी जाती है। महाजनी और हुण्डीवालोंका खूब काम होता है। १८८५ ई०को नगरके बाहर रूईके २ पुतलीघर खुले थे। यहां शिक्षण संस्थाएं बहुत हैं। महाराज कालेज उल्लेखयोग्य है। अस्पतालोंकी भी कोई कमी नहीं। शहरसे बाहर २ जेल है। रामनिवासबागमें अजायब घर है।

जयपुर—आसामके लखीमपुर जिलेमें डिबरूगढ़ सबडिविजनका गांव। यह अक्षा० २७° १६' उ० और देशा० ९४° २३' पू०में बूढ़ी दिहिङ्ग नदीके वाम तटपर अवस्थित है। इसके निकट ही कोयले और मट्टीके तेलकी खान हैं। यह स्थान स्थानीय व्यापारका केन्द्र है।

जयपुर—१मन्द्राज प्रान्तके विशाखपत्तन जिलेकी एक जमीन्दारी। यह उक्त जिलेके समग्र उत्तर भागमें विस्तृत है। बङ्गालके कालाहण्डी राज्यने उसको दो भागोंमें बांट दिया है। १८६१ में कानून बना करके नरबलि रोका गया। जयपुर घरानेके पूर्वपुरुष उत्कलस्थ गजपति राजाओंके सहगामी थे। १५वीं शताब्दीको चन्द्रवंशीय राजपूत विनायकदेवने गजपति राजाकी कन्यासे विवाह किया। उन्होंने ही इन्हें जयपुर जमीन्दारी दी थी। फिर यह विशाखपत्तनके अधीन हुआ। परन्तु १७६४ ई०में मन्द्राज सरकारने जयपुरके शासकको एक निराली सनद दी। कारण इन्होंने विजयनगरम्-युद्धके समय वफादारी की। १८०३ ई०को इसकी मालगुजारी (पेशकश) १६०००) रु० थी। १८४८ ई०में गवर्नमेण्टने राजपरिवारके गृह-कलहसे उसकी कुछ तहसीलें ले लीं। १८५५ ई०में फिर बखेड़ा हुआ और सरकारको दीवानी और फौजदारी

खूनखराबा (हिं० पु०) १ रक्तपात, मारकाट। २ किसी किस्मका रङ्ग या वार्निश। यह लकड़ी पर चढ़ता है।

खूनी (फा० वि०) १ हिंसाकारी, कातिल। २ निर्दय बेरहम। ३ क्रूर, बदमाश। ४ अत्याचारी, दस्तन्दाज। ५ रक्तवर्ण, लाल।

खूब (फा० वि०) १ अच्छा, बढ़िया। (क्रि० वि०) २ अच्छी तरह, भली भांति, सफाईसे।

खूबकलां (फा० स्त्री०) खाकसीर, किसी घासका दाना। यह किसी घासका, जो फारसमें जगती, पोस्त-जैसा गुलाबी बीज है।

खूबचन्द—मारवाड़के एक हिन्दी कवि। ईदरराज गम्भीरशाहीकी प्रशंसामें इन्होंने एक काव्य बनाया था।

खूबचंद्र सोधिया—हिन्दीके एक अच्छे लेखक। इन्होंने "सफलरहस्य" नामक एक पुस्तक लिखी है।

खूबड़खाबड़ (हिं० वि०) असमतल, नीचा ऊंचा, चढ़ा उतार।

खूबसूरत (फा० वि०) सुन्दर, सुहावना।

खूबसूरती (फा० स्त्री०) सौन्दर्य, रौनक, चमक दमक।

खूबानी (फा० स्त्री०) फलविशेष, किसी किस्मका मेवा। इसका दूसरा नाम जरदालू भी है। यह काबुलके पहाड़ोंमें उपजती है। खूबानी सूखी और ताजी भी खायी जाती है। इसका तेल 'कड़वे बादामका तेल' कहलाता है। खूबानीसे कंतीरे-जैसा गोंद भी निकलता है। खूबानी मईसे सितम्बर तक पक जाती है। लोग इसकी गुठलीका बादाम भी फोड़ कर खा डालते हैं।

खूबी (फा० स्त्री०) १ गुण, सिफत। २ भलाई, अच्छाई ३ उम्दगी, सफाई।

खूमड़ा—युक्तप्रदेशकी एक मुसलमान जाति। पहले यह हिन्दू रहे, पीछेको मुसलमान हो गये। बैलों पर पत्थरकी चक्कियां लाद करके बेंचते फिरना-इनका प्रधान व्यवसाय है। रामपुर रियासतमें यह चटाइयां और पङ्खे भी बनाते हैं। बिजनौर और मुरादाबाद जिलेमें इनकी संख्या अधिक है।

खूरन (हिं० स्त्री०) हस्तिपादगत रोगविशेष, हाथीके पैरकी एक बीमारी। इसमें हाथीके नख फट जाते हैं और उसमें कुछ कुछ पीड़ा होती है। खूरनसे हाथी लङ्ग करने लगता है।

खूसट (हिं० पु०) १ उलूक, घुग्घू। (वि०) २ गंवार, बेसमझ। ३ डोकरा, गया गुजरा बुड्ढा।

खृगल (वै० क्ली०) तनुत्राण, शरीररक्षक। (अथर्व ११।११)

खृष्टान, ईसाई देखो।

खृष्टीय (हिं० वि०) ईसवी, ईसाके मुताबिक।

खेउरा—इसका नाम मेउखान (Mayo mines) है। पञ्जाब झेलम् जिलाके पिण्डदादनखांमें एक विस्तृत लवणकी खान। यह अक्षा० ३२° ३९´ उ० और देशा० ७३° ३´ पू०में अवस्थित है।

यहां नमकका पहाड़ नामकी जो गिरिश्रेणी है, उसीके बीच लाल चिक्कण मृत्तिका और रेतीले पत्थरके ऊपर उठा हुआ कच्चा नमक देखा जाता है। यहां सारी जगहमें तह तह पर लवण आकर है। यह पर्व्वतके आकारकी नमककी खान कई सौ वर्षसे मनुष्यके व्यवहारमें आ रही है। तोभी इसका कोई अंश घटा नहीं। मालूम पड़ता है। अकबरके समयमें यहां पर गड्ढा बना करके नमक निकाला जाता था। सिख राजाके शासनकालमें यहांके मनुष्य जहां पर सुविधा देखते, गड्ढा करके नमक संग्रह करते थे। ब्रटिश गवर्मेण्टका अधिकार होने पर अब मामूली लोग नमक निकाल नहीं सकते।

यहांके लवणको भी उसने अपने एकाधिकारमें कर लिया है। लवण उठानेके लिये नानाप्रकारके यन्त्र और राजकर्मचारी नियुक्त हैं। आजकल खेउराकी सिर्फ वग्गी और सुजावलखान्में काम होता है। प्रति वर्ष एक लाख मनसे भी अधिक नमक संग्रह किया जाता है। इससे सरकारको प्रायः सताईस लाख रु०की आमदनी है।

१८७० ई०का बड़ लाट मेओ यहां आये थे, इसी लिये इसका नाम मेओ-खान पड़ा।

खेक (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक बड़ा पेड़। यह ब्रह्म आसाम और मणिपुरके जङ्गलोंमें उत्पन्न होता है। इसका काष्ठ उत्तम निकलता और रस बने बनाये रङ्ग जैसा लगता है।

खेकसा (हिं० पु०) एक फल। यह 'परवल-जैसा

उक्त राजाओंके ताम्रलेखमें लिखा है कि, पहले इस वंशके महासामन्त मात्र थे। १म जयभटने समुद्र-कूलवर्ती गुजरात और काठियावाड़में घोरतर युद्ध किया था। मालूम होता है कि, इन्होंने पहिले पहल यथार्थ राजपद पाया था, क्योंकि इनके पुत्र २य दद्दने अपनेको महाराजाधिराज उपाधि द्वारा विभूषित किया है। खेड़ासे प्राप्त अनुशासनपत्रके पढ़नेसे मालूम होता है कि, २य जयभटके पिता ३य दद्दने नागवंशीय राजाओं पर आक्रमण कर बहुतसे स्थान अधिकार किये थे। परन्तु वे भी सामंत मात्र थे। खेड़ा और नौसारीसे प्राप्त ताम्रलेखमें लिखा है कि, ३य जयभटके पिता ४र्थ दद्दने वलभी राजाको, सम्राट् श्रीहर्षदेवके हाथसे बचा कर महासुख्याति अर्जन की थी। इन्होंने चेदि-सम्वत् ३८०से ३८५ तक अर्थात् ६२८से ६३३ ई० तक राज्य किया था। इस समयसे कुछ पहले हर्षदेवने वलभीराज्य पर आक्रमण किया था, ऐसा मालूम होता है। कुछ भी हो, भरुकच्छाधिपतिके साथ वलभीराजकी मित्रता बहुत दिनों तक नहीं रहने पाई थी। क्योंकि, ६४८ ई०में भरुकच्छको वलभीराज ध्रुवसेनके अधिकृत होते और यहांके जय स्कन्धावारसे वलभीराजोंके शासनपत्र मिलते दिखाई देते हैं।

जयमङ्गल (सं० पु०) जय एव मङ्गलं यस्य, जयेन मङ्गलं यस्मादिति वा। १ राजवाहन योग्य हस्ती राजाके सवार होने योग्य हाथी। २ वह हाथी जिस पर राजा विजय करनेके उपरान्त सवार हो कर निकले। ३ ध्रुवक जातीय तालविशेष, तालके साठ भेदोंमेंसे एक।

जयमङ्गल—१ जयसिंहको सभाके एक पण्डित। इन्होंने जयसिंहके आदेशानुसार (१०६४से ११४३के भीतर) कविशिक्षा नामक एक संस्कृत अलङ्कार ग्रन्थ रचा था।

२ एक प्रसिद्ध टोकाकार। इनकी रचित भट्टिकाव्य और सूर्यशतकको टोका मिलती है। भट्टोजोदीक्षित, हेमाद्रि, पुरुषोत्तम आदिने इनका उल्लेख किया है।

जयमङ्गलरस (सं० पु०) जयेन रोगजयेन मङ्गलं यस्मात्, तादृशो रसः। ज्वरनाशक औषध। इसके बनानेकी विधि—हिंगुलका रस, गन्धक, सुहागेको भस्म, तांबा, रांगा, स्वर्णमाक्षिक, सैन्धव और मरिच, प्रत्येकका ४ मासा, स्वर्ण १ तोला, लौह ४ मासा, रौप्य ४ मासा, इनको एकत्र घोंट कर धतूरे और शेफालि (सिहरु के पत्तेके रसमें, दशमूल और चिरायतेके क्वाथमें क्रमसे तीन बार भावना दे कर दो रत्तोके बराबर गोलियां बनानी चाहिये। अनुपान—जोरेका बुकनी और मधु। इसका सेवन करनेसे नाना प्रकारका धातुस्थ ज्वर नष्ट हो जाता है। यह विषम और जोर्णज्वरको उत्कृष्ट औषध है।

(भैषज्यर०)

चिकित्सासारसंग्रहके मतानुसार इसकी प्रस्तुत-प्रणाली—हड़, बहेड़ा, आंवला, पीपल, प्रत्येक २ मासा, लौह ४ मासा, अभ्र २ मासा, ताम्र २ मासा, रौप्य ५ रत्ती, स्वर्ण ५ रत्ती। रस और गन्धकको कज्जलो कर इनका पर्पटी पाक कर लेना चाहिये। फिर उसमें ४ मासे पर्पटी डाल कर निम्नलिखित औषधोंमें भावना दे कर मूंगके बराबर गोलियां बनानी चाहिये। अनुपान—तुलसीके पत्तेका रस और मधु। भावनाके लिए—जयन्तीपत्रका रस, विजयाका रस, चीतेका रस, तुलसीका रस, अदरकका रस, केशराज (भेंगरिया) का रस, भृङ्गराजका रस, निर्गुण्डीका रस, प्रत्येकका परिमाण दो तोला है। यह औषध शोथज्वर और सर्वदा विषम ज्वरमें प्रयोज्य है। (चिकित्सासारसंग्रह)

जयमङ्गली—महिसुर राज्यमें बहनेवाली एक नदी। यह देवरायदुर्ग नामक पर्वतसे निकल कर उत्तरकी ओर तुमकुड़ जिलेके कोर्त्तगिरि तालुकके भीतरसे बेलारी जिलेके उत्तरमें पिनाकिनी नदीमें जा मिली है। इसके वालुकामय गर्भमें स्थित कपिली नामक कूपके पानीसे खेतोंमें पानी भेजा जाता है।

जयमल—१ एक प्रसिद्ध राजपूतवीर और बेदनोरके अधिपति। ये मेवारमें एक प्रधान सामन्त समझे जाते थे। जिस समय सङ्गराणाके पुत्र कायर उदयसिंह अकबरके भयसे चितोर छोड़ कर चले गये थे, उस समय बेदनोरके जयमल और कैलवाके पुत्तने चितोरकी रक्षाके लिए बादशाहके विरुद्ध असिधारण की थी।

उक्त दोनों महावीरोंको असाधारण वीर्य बत्ताको देख कर मुगलसेनापतियोंके भी छक्के छूट गये थे।

अन्तमें जयमल अपनी जन्मभूमिके लिए १५६८ ई०में

बालकके लिये कुणपास्त्रका खेट-१२ अङ्गुल उत्तम, १० अङ्गुल मध्यम और ८ अंगुल निकृष्ट होता है। किन्तु बलवान्‌के लिये वह २०, १८ और १६ अंगुल रहनेसे यथाक्रम उत्तम, मध्यम तथा निकृष्ट कहा है। ८ बलदेवकी गदा। ९ कफ, बलगम। १० घोटक, घोड़ा। (त्रि०) ११ सुनिन्दक, बुराई करनेवाला। १२ अधम, कमीना। १३ धनवृद्धिजीवी, सूदखोर। १४ भक्षक, खा डालनेवाला।

खेटक (सं०पु०) खेट स्वार्थे-कन्। १ ग्रामविशेष, किसानोंका गांव। २ फलक, ढाल। ३ अस्त्रविशेष, कोई हथियार। ४ धनवृद्धिजीवी, सूदखोर।

खेटकी (सं० पु०) १ ज्योतिषी, भड्डरी। २ शिकारी। ३ वधिक, वहेलिया।

खेटाङ्ग (सं०पु०) खेटमङ्गं यस्य, बहुव्री०। उपद्रावक जन्तुविशेष, अपदेवता। (काशीखण्ड ११५०)

खेटितान (सं० पु०) खेटिः तानोऽस्य, खिट्-इन्, बहुव्री०। वैतालिक।

खेटी (सं० पु०) खिट्-णिनि। १ नागर। २ कामुक।

खेट्ट (सं० क्ली०) तृण, खर, घास।

खेड़ (सं० क्ली०) गन्धतृण, एक खुशबूदार घास।

खेड—१ बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत रत्नगिरि जिलाका एक उपविभाग। यह अक्षा० १७° ३३′ एवं १७° ५४′ उ० और देशा० ७३° २०′ तथा ७३° ४२′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें कोलावा जिला पूर्वमें सातारा जिला, दक्षिणमें चिपलून और पश्चिममें दापोली है। क्षेत्रफल ३८२ वर्ग मील। लोकसंख्या ८५५८४ है। यहां १४६ गांव बसे हैं। यहां धान्यादि शस्य और नानाप्रकार मटर होता है। यहां तीन थाना और दो फौजदारी अदालत हैं। राजस्व ८२००० रु० देना पड़ता।

२ उक्त खेड़ उपविभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० १७° ४३′ उ०, और देशा० ७३° २४′ पू०में जगवदी नदी किनारे अवस्थित है। इसकी चारो तरफ पाहाड है। लोकसंख्या प्रायः ५०५३ है। यहां डाकघर, पाठशाला और सराय है। नगरके पूर्वमें तीन पत्थरके मन्दिर है, जिनमें कई एक कुष्ठरोगी रहते हैं।

३ पूना जिलाके अन्तर्गत एक नगर। भीमा नदीके वांये किनारे अक्षा० १८° ५१′ उ० और देशा० ७३° ५५′ पू०-पर अवस्थित है। लोकसंख्या ३८३२ है। यहां पर म्युनिसपालिटी, डाकघर, औषधालय, तहसीलदारी और पुलीस अदालत है। यहांकी आसपासकी जमीन लेकर खेड ग्रामका क्षेत्रफल लगभग २० वर्गमील होगा। इस ग्राममें बहुतसी प्राचीन कीर्तियां पड़ी हैं। जिनमेंसे भीमा नदी किनारे सिद्धेश्वरका मन्दिर, दिलावर-खांकी मसजिद और कब्र देखने लायक है।

४ बम्बई प्रदेशके पूना जिलेका एक तालुका। यह अक्षा० १८° ३७′ तथा १९° १३′ उ० और देशा० ७३° ३१′ एवं ७४° १०′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ८७६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५६२७५ है। उत्तर और दक्षिणको २ बड़ी गिरिश्रेणियां लगी है। अधिकांश भूमि लाल या भूरी है। जलवायु साधारणतः अच्छा रहता है।

खेड़ब्रह्म—गुजरातके माहीकांठा राज्यकी एक तहसील और थाना। यह ईदर नगरसे प्रायः ३० मील उत्तरको हरनाई नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित और प्राचीनकालको एक पुण्यक्षेत्र रहनेके लिये सुप्रसिद्ध है। यहां बहुतसे पुराने मन्दिरोंका ध्वंसावशेष देख पडता है। ब्रह्मपुराणके मतानुसार ब्रह्माने वहां अपने आपको पापोंसे मुक्त करना चाहा था। विष्णुने पूछने पर उन्हें इसके लिये जम्बूद्वीपके भरतखण्डमें किसी पवित्र स्थान पर जा यज्ञानुष्ठान करनेकी सम्मति दी। ब्रह्माके आदेशसे विश्वकर्माने आबू पहाडसे दक्षिण साबरमतीके दाहने तट पर ४ कोस घेरेका एक नगर बनाया था। वह स्वर्णप्राचीरवेष्ठित और २४ द्वारयुक्त रहा। हिरण्याक्ष (हरनाई) नदी उसमें प्रवाहित होती थी। फिर उन्होंने यज्ञके लिये ८००० ब्राह्मणोंकी सृष्टि की। यज्ञ पूर्ण और पाप दूर होने पर ब्रह्माने अपने ब्राह्मणोंकी रक्षाके लिये १८००० वैश्योंको उत्पादन किया और ब्राह्मणोंसे कहा तुम मेरे उद्देशमें एक मन्दिर बनावो और उसमें मेरी चतुर्भुज मूर्ति लगावो।

बहुतसे मन्दिर वर्तमान नगरकी सीमाके भीतर ही

जयराम—इस नामके बहुतसे ग्रन्थकारोंका पता चलता है। १ एक प्रसिद्ध संस्कृत ज्योतिर्विद्। इन्होंने कामधेनु पद्धति, खेचरकौमुदी, ग्रहगोचर, मुहूर्तालङ्कार, रमलामृत आदि कई एक ज्योतिर्ग्रन्थ रचे हैं।

२ कामन्दकीय नीतिसारसंग्रहके प्रणेता।

३ काशीखण्डके एक टीकाकार।

४ दानचन्द्रिका नामके स्मृतिके एक संग्रहकर्त्ता।

५ एक वेदान्तिक। जयरामाचार्य और विजय रामाचार्यके नामसे भी इसका परिचय मिलता है। इन्होंने माध्वसम्प्रदायके मतके विरुद्ध पाषण्डचपेटिका नामक एक युक्तिपूर्ण शास्त्रीय संस्कृत ग्रन्थ लिखा है।

६ राधामाधवविलास नामक काव्यके रचयिता।

७ शिवराजचरित नामक संस्कृत ग्रन्थके कर्त्ता।

८ देशोद्धार नामक सप्तशतीके एक टीकाकार।

९ एक वैदिक पण्डित, वलभद्रके पुत्र, दामोदरके पौत्र और केशवके शिष्य। आपने पारस्करगृह्यसूत्रको सज्जनवल्लभा नामक टीका लिखी है।

१० पद्यामृततरङ्गिणीकी सोपानार्चता नामक टीकाके रचयिता।

११ हिन्दीके एक कवि। इनकी एक कविता उद्धृत की जाती है।

"रघुबर जानकी रसमाते।
वन-प्रमोदमें विहरत दोउ हँस हँस करत रसीली बातें॥
कहुं कहुं ठाढ़े होत नवल प्रिय झुक झुक गहत सुमनकी पातें।
लै सुमनन सियकों सिंगारत बिच बिच श्याम श्वेत पितराते॥
श्रुति कीर्ति विमलादि नागरी सिखवत कोक कलाकी घातें।
जयराम हित मृदु मुसुक्याते गहि लीन्हो मिथुलाके नाते॥"

जयराम तर्कवागीश—बङ्गालके एक प्रसिद्ध पण्डित। आपने भगवद्गीतार्थसंग्रह और भागवतपुराण—प्रथम श्लोकव्याख्या नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं।

जयराम तर्कालङ्कार—पावना जिलेके एक बङ्गाली नैयायिक। आप वारेन्द्रश्रेणीके ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम जयदेव और गुरुका नाम गदाधर था। ये गदाधरकृत शक्तिवादकी विशद टीका लिख कर अपनी विद्वत्ताका यथेष्ट परिचय दे गये हैं।

जयराम न्यायपञ्चानन भट्टाचार्य—एक प्रसिद्ध बङ्गाली नैयायिक, रामभद्र भट्टाचार्यके छात्र और जनार्दन व्यासके गुरु। इन्होंने जयरामीय नामक न्यायग्रन्थ शिरोमणिकृत तत्त्वचिन्तामणिदीधितिकी टीका, न्यायकुसुमाञ्जलीकी टीका, अन्यथाख्यातितत्त्व, आकाङ्क्षावाद, उद्देश्यविधेयबोधस्थलीविचार, जातिपञ्चवाद, प्रतियोगितावाद, विशिष्टवैशिष्ट्यवाद, विषयतावाद, व्याप्तिवादटीका, समासवाद, सामग्रीवाद, पदार्थमणिमाला, गौतमसूत्रका न्यायसिद्धान्तमाला नामक भाष्य (सम्वत् १७५०में) इत्यादि संस्कृत ग्रन्थोंकी रचना की थी।

जयरामा—काकन्दीपुराधिपति इक्ष्वाकुवंशीय राजा सुग्रीव की प्रधान महिषी और नवम तीर्थङ्कर भगवान् पुष्पदन्त की माता। गर्भावस्थामें इनकी सेवाके लिए स्वर्गकी देवियां नियुक्त थीं। (जैन आदिपुराण)

जयलेख (सं० पु०) जयपत्र; वह पत्र जो पराजित पुरुष अपने पराजयके प्रमाणमें विजयीको लिख देता है।

जयवत् (सं० त्रि०) जयी, विजयी, जीतनेवाला।

जयवन-काश्मीर राज्यकी एक पुरानी जगह। यह तक्षककुण्डके लिये विख्यात था। (विक्रमाङ्कच०) आजकल इसे जेवन कहते हैं। वह श्रीनगरसे ३ कोस दूर है।

जयवन्त—तत्त्वार्थसूत्र नामक जैन-ग्रन्थके एक टीकाकार।

जयवल्लभनन्दन—एक कवि। ये दिगम्बर जैन और कर्नाटकके रहनेवाले थे।

जयवर्मदेव—१ धाराके एक महाराज। ये यशोवर्मदेवके पुत्र। भोपालसे प्राप्त ताम्रलेखमें इनका परिचय है। ये ११४३ ई०में राजगद्दी पर बैठे थे।

२ चन्द्रात्रेयवंशके एक राजा। चन्द्रात्रेय देखो।

जयवराहतीर्थ (सं० क्लो०) नर्मदातीरस्थ तीर्थविशेष, नर्मदा किनारेके एक तीर्थका नाम।

जयवाहिनी (सं० स्त्री०) जयस्य जयन्तस्य वाहिनी यद्वा स्वयंवरसभार्या संग्रामे वा जयं वहतीति वहणिनि, ततो ङीप्। १ शची, इन्द्राणी। २ जययुक्त सैन्य, विजयी सेना।

जयशब्द (सं० पु०) जयसूचकः शब्दः। जयध्वनि।

२ अवसाद, अफसुर्दगी; थकावट। ३ रोग, बीमारी। साहित्यदर्पणके मतमें रति अथवा पथगतिसे उत्पन्न होनेवाला भ्रम, भुलावा। यह लम्बी सांस आने और सो-जानेका कारण है। (साहित्यदर्पण १५०)

खेदन (सं० क्ली०) खिद-ल्युट्। खेद, रञ्ज, अफसोस।

खेदना (हिं० क्रि०) खदेरना, भगाना, पीछा करना।

खेदा (वै० स्त्री०) रश्मि, रज्जु। (ऋक् ८।७७।३)

खेदा (हिं० पु०) १ आखेटमें किसी वन्य पशुको वध करने या पकड़नेके लिये खदेर करके एक उपयुक्त स्थानमें ले जानेका ढङ्ग। इसमें लोग ढोल बजाते और हल्ला मचाते हैं। २ शिकार, अहेर।

खेदाई (हिं० स्त्री०) १ खदेर, पीछा। २ खदेरनेकी उजरत या मजदूरी।

खेदि (सं० पु०) खिद अपादाने इन्। किरण, झलक।

खेदितव्य (सं० क्ली०) खिद भावे तव्य। खेद, अफसोस।

खेदिनी (सं० स्त्री०) अश्मनपर्णीवृक्ष, एक बेल।

खेद्य (सं० त्रि०) खिद-णिच्-ण्यत्। कलाया जानेवाला, जिसे अफसोस करना पड़े।

खेना (हिं० क्रि०) १ नाव आदि जलयान चलाना, जहाजरानी करना। विशेषतः नौकादण्डका परिचालन 'खेना' कहलाता है। २ निर्वाह करना, पार लगाना।

खेनेवाला (हिं० वि०) खेवैया, नाव चलानेवाला।

खेप (हिं० स्त्री०) १ भरती, लदान, चालान। एक बारमें जितनी चीज ले जायी जाती, 'खेप' कहलाती है। २ दौड़, पहुंच, रवानगी।

खेपड़ी (हिं० स्त्री०) १ नावकी बल्ली। २ नौकादण्ड, डाड।

खेपना (हिं० क्रि०) काटना, पहुंचाना, गुजारना

खेपरिभ्रम (सं० क्ली०) १ आकाशमें विचरण, आसमानमें चलफिर। (त्रि०) २ आकाशमें विचरण करनेवाला, जो हवामें उड़ता हो।

खेमकर्ण—पञ्जाबके लाहोर जिलेकी कसूर तहसीलका एक नगर। यह कसूर नगरसे ३॥ कोस अक्षा० ३१° ९' उ० और देशा० ७४° ३४' पू०में विपाशा नदीके प्राचीन किनारे अवस्थित है। वहांकी लोकसंख्या ६०८३ है। नगर चारो ओर चहारदीवारीसे घिरा हुवा है। पहले समयमें यह एक समृद्धिशाली नगर था। आजकलभी कई एक खण्डहर पूर्व्वगौरवका परिचय देते हैं। यहां म्युनिसपालिटीभवन, विद्यालय, थाना और पान्थनिवास हैं।

खेमटा (हिं० पु०) छह मात्राओंका एक ताल। कोई कोई चार मात्रावोंके तालको भी 'खेमटा' कहता है। जैसे—

+	१	०	१
धाटे धें	नाते ने,	ताटे धें	नाधेने ::
+	१	०	१
धेंगेधि	नातिन	नागधि	नातिन ::

(सङ्गीतसार)

इस तालका नाच गाना भी 'खेमटा' ही कहा जाता है। बहुतसे दादरे इसी तालमें गाते हैं।

खेमा (अ० पु०) शिविर, डेरा, तम्बू, कनात।

खेय (सं० त्रि०) खन्यते खन् कर्मणि क्यप् इकारश्चादेशः। १ खननीय, खोदा जानेवाला। (क्ली०) २ परिखा, खाई। ३ घरनई।

खियोङ्गथा—चट्टग्राम और आराकानवासी जातिविशेष। साधारणतः मनुष्य इन्हें 'जुनिमघ' कहकर पुकारते हैं। इनमें बारह शाखायें हैं,—१ रियाइत्सा, २ पलेङ्गत्सा, ३ पलेङ्गुत्सा, ४ कोकदिनत्सा, ५ बैयनत्सा, ६ सकेङ्गत्सा, ७ फाङ्गेयत्सा, ८ कोकपियत्सा, ९ चेरेङ्गत्सा, १० मरोत्सा, ११ सावकोत्सा, १२ क्रोङ्खे उङ्गत्सा, १३ टेङ्गच्यात, १४ कोकमात्सा, १५ महलेङ्गत्सा। जिस नदी किनारे ग्राममें वे दलबांध कर रहते हैं, उसी नदीके नामसे अपनी अपनी शाखाका नाम रख लेते हैं। कर्णफूली नदीके दक्षिणभागमें जो रहते हैं, उन्हें सङ्गु नदी किनारे बन्दार बनवासी बोमोङ्गको कर देना पड़ता है। और जो कर्णफूली नदीके उत्तरभागमें रहनेवाले मोङ्ग राजाको कर देते हैं। ग्रामवासी द्वारा निर्वाचित किसी मण्डलको राजाका कर वसूल करनेके लिये नियुक्त करते हैं। वही मण्डल बस्तीके छोटे छोटे मुकदमोंका विचार करते हैं, जिसमें इनको दोनों पक्षसे कुछ कुछ मिल जाया करता है।

पितृव्य शिवदेवकी राजधानीमें छोड़ कर यवनोंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिए रवाने हुए। युद्धमें गज मारे गये। यवनराजके गजनी अधिकार करनेके समय भी ३० दिन तक शिवदेवने युद्ध किया और अन्तमें उन्होंने शाक-यज्ञका अनुष्ठान किया। इस युद्धमें नौ हजार यादवों ने प्राण विसर्जन किये थे। शालिवाहन इस दुर्घटनाके बाद पञ्जाब चले गये। यहाँके भूमियाओंने उन्हें राजा समझ कर रक्खा। उन्होंने वि० सं० ७२में शालिवाहन पुरकी स्थापना की। उनके बारह पुत्र थे-वलन्द, रसाल, धर्मांङ्गद, वत्स, रूप, सुन्दर, लेख, यशस्कर्ण, निमा, मत, गङ्गायु और यत्तायु। सभीने एक एक स्वाधीन राज्य स्थापन किया।

वलन्दके साथ तोमरवंशीय जयपालकी कन्याका विवाह हुआ। दिल्लीपति जयपालकी सहायतासे शालि-वाहनने गजनीका उद्धार किया और वहां ज्येष्ठपुत्र वलन्ददेवको रख छोड़ा।

शालिवाहनके बाद वलन्दको पितृ-अधिकार प्राप्त हुआ। उनके अन्य भ्राताओंने पहाड़के पार्श्वस्थप्रदेशमें आधिपत्य विस्तार किया। वलन्द स्वयं ही राजकार्य देखते थे। उनके समयमें यवनोंने पुनः गजनी पर अधि-कार जमा लिया वलन्दके सात पुत्र थे—भट्टि, भूपति, कल्लर, जिञ्ज, सरमोर, महिषरेख और मङ्गराव। भूपतिके पुत्र चकितसे ही चकताई जातिकी उत्पत्ति हुई। चकि-ताके आठ पुत्र थे। देवसिंह, भैरवसिंह, क्षेमकर्ण, नाहर, जयपाल,धरसिंह, विजलीखां और शाह समन्द। वलन्दने चकितको गजनीका आधिपत्य प्रदान किया। यवनोंने गजनी अधिकार कर चकितसे कहा—'यदि तुम हमारा धर्म ग्रहण करो, तो तुम्हें बलिच् बुखाराका राजा दे दें।' इस पर चकितने म्लेच्छधर्म ग्रहण कर बलिच् बुखा-राकी एक कन्याका पाणिग्रहण किया और उस विस्तीर्ण राज्यको ग्रहण किया। उन्हींके वंशधर अब चकितो-मोगल वा चगताई मुगलके नामसे प्रसिद्ध हैं। चकित-के सुतसे कल्लरने भी म्लेच्छधर्म अवलम्बन किया था।

भट्टिको पितृ-अधिकार प्राप्त हुआ। इन्हींसे इनके वंशधर अपनेको यदुभट्ट राजपूत कहने लगे।

भट्टिराजके दो पुत्र थे, मङ्गलराव और मसूरराव। मङ्गलरावके समयमें गजनीपतिने लाहोर पर आक्रमण किया। इसी समय शालिवाहनपुर (सियालकोट) यदुपतिके हाथसे निकल गया। मङ्गलरावके मध्यम-राव, कल्लरसिंह, मण्डराज, शिवराज, फूल और केवल ये छः पुत्र थे। गजनीपतिके आक्रमणके समय मङ्गलराव अपने ज्येष्ठ पुत्रको साथ ले कर जङ्गलकी तरफ भाग गये थे।

उनके अन्य पुत्र शालिवाहनपुरमें एक बणिक्के घर गुप्तरीतिसे रक्खे गये। षष्ठोदास नामक तक (तक्षक) जातीय एक भूमियाने जा कर विजयी यवनराजको यह खबर सुनाई। इस भूमियाके पूर्वपुरुषोंसे भट्टि-राजके पूर्वपुरुषोंने धन सम्पत्ति छीन ली थी; इस समय षष्ठोदासने उसीका बदला लिया।

गजनीपतिने बणिक्को आज्ञा दी कि, शीघ्र ही राज पुत्रोंको वे उनके पास भेज दें। सदाशय बणिक्ने उनको प्राणरक्षाके लिए कहला भेजा कि, 'मेरे घरमें कोई भी राजकुमार नहीं है, एक भूमिया देश छोड़ कर भाग गया है, उसीके लड़के मेरे घर रहते हैं।" परन्तु यवन राजने उन्हें उपस्थित होनेका आदेश दिया। वणिक् उन लड़कोंको दीन कृषकके भेषमें राजदरबारमें ले गये। धूर्त यवनराजने भी जाट जातीय कृषकोंकी लड़कियोंसे उनका विवाह कर दिया। इस तरह कल्लोरके पुत्र कल्लोरिया जाट, मण्डराज और शिवराजके वंशधर मण्ड-जाट और शिवराजाट कहलाये। फूलने नापित और केवलने अपनेको कुम्भकार कहा था, इसलिए उनके वंशधर नापित और कुम्भकार हुए।

मङ्गलरावने गड़ा जङ्गलमें जा कर नदी पार हो एक नवराज्य अधिकार किया। उस समय यहां नदीके किनारे वराह, भूतवनमें भूत, पूगलमें परमार, धातमें सोद और लदोर्वा नामक स्थानमें लोदरा राजपूतोंका वास था। यहा सोदा राजकुमारोंके साथ मिल कर मङ्गलरावने निर्विघ्न राज्य किया।

उनके पुत्र मध्यमराव (मञ्झमराव)-ने सोदा-राज कन्याका पाणिग्रहण किया। इनके तीन पुत्र थे—केयूर, मूलराज और गोगली। केयूरने बहुत जगह मचा लूट

देते हैं और पुरोहित आकर विवाहके मन्त्रादि पाठ करते हैं। उसके बाद सात बार लडका और लड़कीके हाथमें भात रखा जाता है और लडकेका दाहना हाथ उठा करके लडकीके हाथ पर रखते हैं और पुनर्वार मन्त्रादि पाठ किया जाता है। इसके बाद विवाह शेष हो जाता है और बरात बडी धूमधामके साथ भोजन करती है।

ये मुरदोंको जलाते हैं। अपनी जातिके किसी मनुष्यके मरने पर उनमेंसे एक व्यक्ति ढोल बजाता और स्त्रियां उच्चैस्वरसे रोती हैं। ढोलकी आवाज सुनने पर सब पडोसी एक जगह इकट्ठे होते हैं और मुर्दोंको जलानेके लिये ले जाते हैं। इस काममें इन्हें २४ घंटे लगते हैं। जब वे शव जलानेके लिये जाते हैं, तो आगे आगे पुरोहित, उसके बाद शिष्यगण, उनके पीछे कुटुम्बादि और सबके पीछे शवको लिये हुए मृत मनुष्यके जातिवर्ग रहते हैं। एक निकट आत्मीय मुर्दाके मुखमें अग्नि देता है। मुर्दाके जल जाने पर उसका भस्म मट्टीमें गाड़ा जाता है और इस कब्रके ऊपर बांसमें निसान् बांध कर खड़ा कर देते हैं। मरनेके सात दिन बाद पुरोहित आ मृतव्यक्तिके कल्याणार्थ स्वस्त्ययन करते हैं।

यह लोग आराकानी भाषामें बातचीत करते और ब्रह्मदेशीयोंके जैसे अक्षरोंमें लिखते पढते हैं।

एक समय यह जाति बहुत प्रबल हो गयी थी। इनका अत्याचार आज भी बङ्गवासियों खास कर पूर्व-बङ्गाल और चट्टग्रामके लोगोंको नहीं भूलता।

उस समयके मघ राजा वा राज राजादेशसे नहीं करते थे। वे दल बांध बाध कर लूटते और देश जलाया करते थे। इसी कारण सुन्दरबनके कुछ अंश और वाखरगञ्ज, चट्टग्राम प्रभृति स्थानोंसे बहुत मनुष्य प्राण लेकर भागे। मघोंके दौरात्म्यसे घबरा करके १६६४-६५ ई०में बङ्गालके शासनकर्ता शायस्ता-खाँ आराकान राजाके विरुद्ध युद्धके लिये अग्रसर हुए उस समय चट्टग्राम मघ राजाके अधीन था।

इस युद्धमें मघ पूर्णरूपसे पराजित होकर भाग गये और चट्टग्राम फिर बङ्गालके अधीन हो गया। इस समय बङ्गालके प्राय: सभी स्थानोंमें मघ वास करते हैं। मघ देखो।

खेरकेरिया—भूटानमें लक्ष्मी नदीका निकटस्थ एक ग्राम। यह दरङ्ग जिलाके उत्तर प्रान्तमें अवस्थित है। यहां प्रतिवर्ष एक बड़ा मेला लगता है, जिसमें दूर दूर देशके मनुष्य आते हैं। कितने ही रुपयोंका माल बिका करता है।

खेरडी—काठियावाड प्रान्तके राजकोट राज्यका एक ग्राम। यह राजकोट नगरसे ८ मील पूर्वको अवस्थित और सुप्रसिद्ध लोमा खुमानके निवासस्थान जैसा परिचित है। इन्होंने गुजरातके सुलतान मुजफ्फरको आश्रय दिया, जिन्होंने अकबर बादशाहके तत्प्रान्तीय सूबेदारसे अपने आपको छिपा लिया था 'मीरात सिकन्दरी' में उसको सरदार परगनेका गांव लिखा है। विश्वासघातकतासे लोमा खुमानके नवानगरमे मरने पर मालूम होता है कि उनके वंशधरोंने खेरड़ीका अधिकार गंवा दिया और जाम साहबने उन्हें निकाल बाहर किया। फिर वह थोड़े दिनों जसदानमें रहे। परन्तु १६६०-६५ ई०को वीका खाचरने लोमाखुमान भ्राता भोकाके पौत्र जस खुमानसे जसदान विजय किया और यह लोग लोलियानाको पीछे हट गये। खेरडी नगरकी लोकसंख्या प्राय: १३४८ है।

खेरवा (हिं० पु०) सामुद्रिक नाविक, समुद्रमें जहाजरानी करनेवाला मल्लाह।

खेरवाड़—१ मज विभागकी एक छावनी। यह अक्षा० २३° ५९' उ० और देशा० ७३° ३६' पू०में उदयपुर नगरसे ५० मील दक्षिण गोदावरी नाम्नी क्षुद्र नदीके तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: २२८८ होगी। १८४० और १८४४ ई०को खड़ी की हुई मेवाड़ भील सेनाका यह सदर मुकाम है।

खेरवाड़ी—छोटानागपुरकी एक भाषा। इसकी बहुतसी शाखाएं भ्रमवश स्वतन्त्र समझी जाती हैं। उनके नाम हैं—सन्ताली, मुण्डारी, भूमिज, बिरहार, कोड़ा, हो, तूरी आसुरी, अगरिया और कोरवा।

खेरवाल—(खेडवाल) गुजरातके ब्राह्मणोंकी एक शाखा। यह खेड़ा जिलेमें बहुत पाये जाते हैं। इनका बडा स्थान आनन्द उपविभागके उमरेठ ग्राममें है। यह अपनी

पहुंचे। यहां उनको दुःखिनी मातासे भेंट हुई। दोनों के आंसुओंसे दोनोंकी छाती भीग गई, इस पर उनकी माताने कहा—

"जिस तरह यह अश्रुनीर विगलित हुआ है, उसी तरह तुम्हारे शत्रुकुलका विलगित होगा।"

मामाके घर भी वीरवर देवराजको अधीनता अच्छी न लगी, उन्होंने एक ग्राम मांगा। परन्तु उन्हें मरुभूमिके बीच एक बहुत छोटा स्थान मिला। वहां ६०८ संवत्में भाटन-दुर्ग निर्माता केकय नामक शिल्पीकी सहायतासे उन्होंने अपने नामसे एक दुर्ग बनवाया, जिसका नाम रक्खा देवगढ वा देवरावल।

दुर्ग निर्माणका समाचार पाते ही भूतराजने भानजेके विरुद्ध सेना भेज दी। परन्तु देवराजने कौशलसे सेना नायकी को दुर्गमें ले जा कर मार डाला।

ऐसा प्रवाद है कि, जब देवराज वारहराजमें योगीके आश्रममें रहते थे तब एक दिन योगीको अनुपस्थितिमें उनके रसकुम्भसे एक बूंद रस तलवारमें पड जानेसे वह सोनेकी हो गई। यह देख कर देवराजने उस रसको ले लिया। उसीकी सहायतासे उन्होंने दुर्ग बनवाया था। एक दिन उस योगीने आ कर देवराजसे कहा—"तुमने मेरे योगसाधनका धन चुराया है। यदि तुम मेरे चेला हो जाओ, तो तुम बच जाओगे, नहीं तो जानसे भी हाथ धोना पड़ेगा। देवराज उसी समय योगीके शिष्य बन गये और गेरुआ वसन, कानमें मुद्रा, कटि पर कौपीन एवं हाथमें कुम्हडेका खोपड ले कर 'अलख' 'अलख' कहते हुए अपने ज्ञाति-कुटुम्बोंके द्वारों पर फिरने लगे। उनके हाथका खोपडा सोने और मोतियोंसे भर गया था।

देवराजने राव उपाधि छोड़ कर 'रावल' उपाधि ग्रहण की। योगीके आदेशानुसार अब भी जयशलमेरके अधिपति "रावल" उपाधि ग्रहण करते हैं और राज्याभिषेकके समय देवराजकी तरह भेष धारण करते हैं।

देवराजके अधस्तन षष्ठ पुरुषका नाम था जयशाल। इन्होंने अपने नामानुसार जयशलमेर दुर्ग और नगर स्थापित कर वहां राजधानी नियत की थी। तभीसे इस महाराज्यका नाम जयशलमेर पड़ा है। जयशालके बाद इस वंशमें और भी बहुतसे वीर पुरुषोंने जन्म लिया था जो सर्वदा युद्धविग्रह और लूट करनेमें मत्त रहते थे। इसी कारण १२९४ ई०में भट्टिगण दिल्लीके बादशाह अलाउद्दीनके विरागभाजन हो गये थे। बादशाहने बहुत सी सेना भेज कर जयशलमेर दुर्ग और नगर पर कब्जा कर लिया। इसके बाद कुछ दिन यह नगर मनुष्य-हीन हो गया था। यदुवंशीय राजाओंने बार बार पराजित होने पर भी मुसलमानोंकी अधीनता स्वीकार न की थी। रावल सबलसिंहने ही सबसे पहले शाहजहांकी अधीनता स्वीकार की और वे दिल्लीके एक सामन्तराज कहलाये। उस समय भी जयशलमेर राज्य शतद्रु नदी तक विस्तृत था। १७६२ ई०में जब मूलराजका राज्याभिषेक हुआ, तभीसे जयशलमेरका सुखसूर्य अस्ताचलगामी होगा। इसके बहुतसे स्थान जोधपुर और बीकानेर राज्यके अन्तर्भुक्त हो गये।

मरुमय होनेके कारण ही इस राज्य पर दुर्दान्त महाराष्ट्र-दस्युओंकी दृष्टि नहीं पड़ी थी।

१८१८ ई० १२ दिसम्बरको जो सन्धि हुई, वृटिश गवर्नमेण्टने राजाको वंशपरम्परानुगत राज्य करनेका अधिकार दिया। १८२० ई०में मूलराजकी मृत्युके पश्चात् आज तक जयशलमेरमें कोई गड़बड़ नहीं हुई। १८२९ ई०में बीकानेरकी फौजने जयशलमेर आक्रमण किया, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्ट और उदयपुर महाराणाके बीचमें पड़नेसे झगड़ा मिट गया। १८४४ ई०मे इसके कई किले अङ्गरेजोंने वापस दे दिये। मूलराजके बाद उनके पुत्र गजसिंह राजा हुए और १८४६ ई०में उनका देहान्त हो गया। उनकी विधवा महिषीने गजसिंहके भतीजे रणजित्‌सिंहको गोद रक्खा। १८६४ ई०में रणजित्‌सिंहकी मृत्यु होने पर उनके छोटे भाई बैरिशालको और उनके पीछे जवाहिरसिंहको महारावलका पद मिला (१)।

(१) रावल देवराजसे लगा कर जिन जिन व्यक्तियोंने जयशलमेरका राज्य किया है, उनके नाम नीचे लिखे जाते हैं,—

१ देवराज*।

२ मण्ड वा चामुण्ड।

यह जिला तीन तहसीलों और १७ परगनाओंमें विभक्त है। प्रथम, लखीमपुर तहसीलके अधीन खेरी, श्रीनगर, भूर, पाइला और कुकरामैलानी परगना हैं। दूसरी निघासन तहसीलके अधीन फीरोजाबाद, धौराहा, निघासन, खैरीगढ और पलिया परगना, तीसरी, मूहम्मदी तहसीलके अधीन मुहम्मदी, परगवान, औरङ्गाबाद, काष्ठा, हैदराबाद, वम्हापुर और अतवा पिपरिया परगना है। यह जिला डिपुटी कमिश्नरके शासनाधीन है,

यह अकबरके समयमें बहुत जमींन्दारोंके अधिकारमें था। मुहम्मदीके राजाने अकबर बादशाहसे पांच ग्राम और ३०० बीघा जमीन प्राप्त की थी। एक समय वे समस्त जिलाके अधिकारी थे। वर्तमान समयमें जाङ्गरी, रैकवार, सूर्य्यवंश, जन्वार्के, राजपूत सिख, और सैयद यहांके जमींदार है। यहां विद्यालय, थाना, अस्पताल और औषधालय है।

२ उक्त जिलाके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २७° ५४´ उ० और देशा० ८०° ४८´ पू० पर अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या ६२२३ है। यहां १४ हिन्दूमन्दिर, १२ मस्जिद और तीन इमामवाडा हैं। इस शहरमें एक विद्यालय भी है। १५६३ ई०को मरे सैयद खुर्दका मकबरा देखनेकी चीज है।

खेल (सं० त्रि०) खेलति, खेल-अच्। १ अति सुन्दर भावसे गमन करनेवाला, जो बहुत अच्छी तरह चलता हो। (पु०) २ वेदप्रसिद्ध कोई राजा। अगस्त्य इनके पुरोहित रहे। इनकी पत्नी 'विश्पला' कहलाती थीं। किसी समय खेल-राजासे शत्रुपक्षीय घोररूपोंमें लड़ पड़े। इसी युद्धमें राजपत्नी विश्पलाके दोनो पैर कटे थे। पुरोहित अगस्त्यने अश्विनीकुमारद्वयको उसके प्रतीकारका अनुरोध किया, उन्होंने रात्रिको जा, करके लोहेके दूसरे दो पैरोंको विश्पलाके टूटे पैरोंकी जगह लगा दिया। (ऋक् १।११६।१५)

खेल (हिं० पु०) १ केलि, क्रीडा, मन बहलाव, उछल कूद, चलफिर, दौड़ धूप। इसीसे आंखमिचौली, कुईकुञ्चीवर, लब्बोलोय, अंधेरियाउजेरिया, लुकी लुकीअर, कबड्डी, अटई डण्डा, गेंडी गेंद, गोली, गुठिया, ताश शतरञ्ज, गवड़ा, सुरवग्गू आदि बहुतसे मनबहलाओंका बोध होता है। २ काम, बात। ३ खिलवाड़, हलका काम। ४ अभिनय, स्वांग, तमाशा। ५ अलौकिकता, निरालापन, अद्भुत लीला। ६ कोई क्षुद्र सरोवर। इसमें पशु जल पीते है।

खेलन (सं० क्ली०) खेल-ल्युट्। १ क्रीडा, खेल, मन बहलावा। २ खेलनेकी चीज, जिससे खेला जावे। जैसे—गेंद, बल्ला, गोट, ताश आदि।

खेलना (हिं० क्रि०) १ मन बहलाना, खेल करना। २ देवी आना, भूत चढना। इसमें मनुष्य अपने हाथ पैर और सर हिलाने लगता है। ३ घूमना फिरना। ४ अभिनय दिखाना स्वांग बनाना, तमाशा करना। इसका प्रेरणार्थक रूप 'खिलवाना' है।

खेलनी (सं० स्त्री०) खेलत्यत्र, खेल आधारे ल्युट् ततो ङीप्। शारिफलक, मोहरा, गोट।

खेलवाड़ (हिं० पु०) १ हंसी दिल्लगी, खेलकूद, मन बहलाव। २ खेलकूद करनेवाला, दिल्लगीबाज।

खेला (सं० स्त्री०) खेल-अच्-टाप्। स्वनामख्यात क्षुप, एक भाड़ी। यह मधुर, ठण्डी, दूध बढानेवाली और रुचिकार होती है। (राजनिघण्टु)

खेलाई (हिं० स्त्री०) क्रीड़न, खेल।

खेलाड़ी (हिं० वि०) १ खेलैया, खेलनेवाला। २ दिल्लगीबाज, हंसैया। (पु०) ३ क्रीड़ा करनेवाला व्यक्ति। ४ पात्र, अभिनेता, तमाशा देखानेवाला। ५ परमेश्वर, दुनियाको बनाने-बिगाडनेवाला।

खेलात—बलूचस्तानका देशी राज्य। यह अक्षा० २५° १´ तथा ३०° ८´ उ० और देशा० ६१° ३७´ एवं ६९° २२´ पू०के बीच पड़ता है। इसका पूरा क्षेत्रफल ७१५९३ वर्गमील है। इसके उत्तर ईरान, पूर्व बोलान गिरिसङ्कट, मरी तथा बुगाती पर्वत एवं सिन्धु, उत्तर छागई और क्वेटा-पिशीन जिले और दक्षिणको लसबेल तथा अरब सागर है। यह देश बहुत पहाड़ी है। नदियां प्रायः दक्षिणको बहती हैं। समुद्रतट १६० मील विस्तृत और पसनी बन्दर प्रधान है। गुवादरकी चारों ओर मस्कटके सुलतानका अधिकार है।

उत्तरके उद्भिद् दक्षिणसे विभिन्न है। जलवायुकी

और ५ फुट मोटी प्रस्तर-प्राचीर है। पूर्व और पश्चिममें दो द्वार बने हैं। ध्वंसावशेष देखनेसे विदित होता है कि किसी समय वह नगर बहुत समृद्ध रहा। दक्षिणमें एक पहाड़ पर किला है। इस पहाड़में बहुतसे घर और बचाव बने हैं। नगरकी ओर एक दरवाजा लगाया गया है। दुर्गके भीतर महारावलका महल खड़ा है। किले-के जैन मन्दिर बहुत अच्छे और १४०० वर्षके पुराने हैं। नगरमें हिन्दी भाषाकी पाठशाला भी है।

जयशाल—जयशालमेर नगर और दुर्गके प्रतिष्ठाता, यदु-पति दुसाजके जेष्ठपुत्र। जेष्ठपुत्र होने पर भी इन्हें पिताकी मृत्युके बाद राजसिंहासन नहीं मिला था। दुसाजकी मृत्युके उपरान्त सामन्तोंने मेवाड़-राज-नन्दिनीके गर्भसे उत्पन्न, दुसाजके श्य पुत्र लञ्जविजय को सिंहासन पर बिठाया था। महावीर जयशाल अपने स्वत्वसे वञ्चित होनेके कारण जन्मभूमि छोड़ कर चले गये। वे पितृसिंहासन अधिकार करनेके लिए तरकीबें सोचने लगे। थोड़े दिन पीछे राजा लञ्जविजयको मृत्यु होने पर उनके पुत्र भोजदेव राजगद्दी पर बैठे। इन भोजदेवकी ५०० सोलङ्की राजपूतों द्वारा सर्वदा रक्षा की जाती थी, इसलिए जयशाल इनका कुछ भी न कर सके। इस समय गजनीपति साहबउद्-दीन ठट्टप्रदेश अधिकार कर पाटनकी तरफ जानेका उद्योग कर रहे थे। जयशालने दूसरा कोई उपाय न देख आखिरको दो सौ असमसाहसी अश्वारोहियोंके साथ पञ्चनदराज्यमें आ कर साहब उद्दीनगोरीसे साक्षात की। जयशाल जानते थे कि, अनहिलवाडपत्तन मुसलमानों द्वारा आक्रान्त होने पर भोजदेवका शरीररक्षक सोलङ्कोगण अवश्य ही उन्हें छोड़ कर अपनी जन्मभूमिकी रक्षार्थ गमन करेंगे और वे भी उसी मौके पर मरुस्थली अधिकार कर बैठेंगे। यहां आ कर जयशालने अपने मनका भाव गजनीपतिसे कहा। साहब-उद्-दीनने उन्हें आदरके साथ ग्रहण किया और सहायताके लिए कई हजार सेना प्रदान की। उस यवन सहायतासे जयशालने लदोर्वा आक्रमण किया। भीषण समरमें भोजदेव निहत हुए। आखिरको भट्टिसेनाओंको जयशालकी वश्यता स्वीकार करनी पड़ी। जयशालके सहगामी मुसलमान सेनापति करीमखां लदोर्वा लूट कर विखार प्रदेशको तरफ चल दिये।

वीरवर जयशाल महासमारोहसे यादवराजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उन्होंने राजा होनेके बाद देखा कि लदोर्वा नगर सुरक्षित नहीं है, सहजहीमें शत्रु उस पर आक्रमण कर सकते हैं। इसलिए १२१२ सम्वत्में लदोर्वा-से ५ कोस दूरी पर उन्होंने अपने नामका दुर्ग और नगर स्थापित किया और खुद भी वहीं रहने लगे। उनके समयमें भट्टिजातिके प्रधान शत्रु चन्नराजपूतोंने खादाल प्रदेश आक्रमण किया था। परन्तु महावीर जयशालने इनका यथेष्ट प्रतिफल दिया था। उक्त घटनाके पांच वर्ष बाद १२२४ सम्वत्में इनका देहान्त हुआ था। दो पुत्र थे—एक कल्याण और दूसरे शालिवाहन।

जयशाल प्रबल पराक्रमी पाडुजातिमेंसे मन्त्री चुनते थे। ज्येष्ठपुत्र कल्याण उन मन्त्रियोंके विरागभाजन होनेके कारण उन्हें भी राज्य न मिला, आखिर वे भी मन्त्रियों द्वारा निर्वासित किये गये थे। जयशालकी मृत्युके उपरान्त उनके कनिष्ठपुत्र शालिवाहन राजा हुए थे।

जयश्री (सं० स्त्री०) १ विजयलक्ष्मी, विजय। २ तालके मुख्य साठ भेदोंमेंसे एक। ३ देशकार रागसे मिलती जुलती सम्पूर्ण जातिकी एक रागिणी। यह सन्ध्याके समय गायी जाती है। बहुतसे इसे देशकारकी रागिणी मानते हैं।

जयसमन्द—राजपूतानाके उदयपुर राज्यका एक झील। इसका दूसरा नाम ढेबर है।

जयसिंह-१ मेवाड़के प्रसिद्ध राणा राजसिंहके पुत्र। इनके जन्मनेसे कई एक घण्टे पहले भीम नामका एक सहो-दर हुआ था। समय पर दोनों भाइयोंमें राजगद्दीको ले कर झगड़ा होगा, यह सोच कर एक दिन राणा राजसिंहने अपने जेष्ठपुत्र भीमको बुलाया और उसके हाथमें तलवार दे कर कहा—"यदि तुम्हें निष्कण्टक राज्य करना हो, तो इस तलवारसे तुम अपने भाई जय-सिंहका मस्तक धड़से अलग कर दो।" सदाशय भीमने उसी समय उत्तर दिया-"सामान्य राज्यके लिए मैं अपने प्राणाधिक सहोदरका अनुमात्र भी अनिष्ट नहीं कर

खेवनाव (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह पेड़ बड़ा होता और भारतके कई प्रान्तोंमें उपजता है। इनके भीतरी रेशेकी रस्सी बनती है। खेवनावमें लाह भी निकलती है। स्थानविशेषमें इसको 'टुंबरखेव' भी कहा जाता है।

खेवा (हिं० पु०) १ नावका किराया, किश्तीकी मजदूरी। २ नावकी खेप। ३ बार, मरतबा। ४ भरी नाव।

खेवाई (हिं० स्त्री०) १ नौकापरिचालनकार्य, जहाजरानी नाव चलाई। २ नाव पर चढ़नेका भाड़ा या किराया। ३ कोई रस्सी। इससे दण्ड नौकामें आबद्ध किया जाता है।

खेस (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह मोटे देशी सूतका बनता और चादर जैसा लम्बा रहता है। इसको बिछौनेमें व्यवहार करते हैं

खेसर (सं० पु०) खे आकाशे इव शीघ्रगामित्वात् सरति, सृ-ट अलुक् समा०। अश्वतर, खच्चर। यह घोड़ीके पेटमें गधेका उत्पन्न किया हुआ एक जन्तु है। पर्याय—अश्वखरज, सक्तद्‌गर्भ, अध्वग, क्षमी, सन्तुष्ट, मिश्रट, मिश्रशब्द, अतिभारग।

खेसारी (हिं० स्त्री०)-चटरी, किसी किस्मका मटर इसकी फलियां चपटी रहती हैं। खेसारीकी दाल बनाया करते हैं। यह सस्ती बिकती और भारतमें प्रायः सर्वत्र खेतोंमें उपजती है खेसारीको कार्तिक अग्रहायण मास बोया जाता है। यह प्रायः साढ़े तीन मासमें तैयार होती है, प्रवादानुसार अधिकतासे इसको व्यवहार करने पर मनुष्य पङ्गु बन जाता है। खेसारी बहुत दस्तावर होती है।

खेह (हिं० स्त्री०) धूलि, खाक, मट्टी।

खेंचनी (हिं० स्त्री०) काष्ठखण्डभेद, देवदार लकड़ीकी एक तख्ती इस पर तैल डाल करके औजारोंको साफ किया जाता है।

खैबर—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशसे अफगानस्थानको जानेवाला एक ऐतिहासिकगिरिसङ्कट (घाटी), इसका केन्द्र स्थान अक्षा०३४° ६' उ० और देशा० ७१° ५' पू०में अवस्थित है। इस घाटीके पहाड़ भी खैबर ही कहलाते हैं।

खैबर घाटी अफगानस्थानसे भारत आनेकी उत्तरकी बड़ा राह है। यह घाटी पेशावरसे १०॥ मील पश्चिमको आरम्भ होती और ३३ मील पहाड़ियोंमें घूमती हुई डक्कामें जाकर निकलती है। कादिममें बहुतसी गुहाएं हैं और उसकी पश्चिम सीमाके बाहर बौद्ध धर्म तथा प्राचीन सभ्यताके अनेक निदर्शन विद्यमान है। जुलाई, अगस्त, दिसम्बर और जनवरी महीने खैबरकी नदियोंमें एकाएक बाढ़ आ जाती है। यहां लदे हुए जानवरोंको आने जानेमें बड़ी तकलीफ पड़ती है।

यह घाटी सदा सर्वदा भारतवर्षका एक प्रधान मार्ग रही है। मकदूनियाके सिकन्दरने इसी राह अपनी सेना भारत भेजी थी। महमूद गजनवीने भी जयपाल चढ़ाई करते समय खैबर घाटीसे काम लिया। मुगल बादशाह बाबर और हुमायूं कई बार इस राह होकर गुजर गये। नादिर शाहने खैबर घाटीसे जा कर जमरूदके पास काबुलके सूबेदार नासरखानको हराया था। अहमदशाह दुरानी और उनके पौत्र शाह जमांने पंजाब पर आक्रमण करते समय कई बार खैबर-सङ्कट मार्गका अनुसरण किया। मुगल बादशाहोंने इस घाटीके अधिकार पर बड़ा जोर डाला, परन्तु वह इसे खुली रख न सके। इस पर अफरीदियोंका अधिकार है। बादशाह जलाल-उद्-दीन् अकबरने इसकी सड़कको ऐसा सुधारा था कि गाड़ियां मजेमें आती जाती रहीं। परन्तु उस समय भी खैबरमें रोशानिया लोगोंका दबदबा था। १५८६ ई०को अपने भाई मिर्जा मुहम्मद हकीमके मरने पर जब अकबरने काबुल अधिकार करना चाहा, राजपूत वीर मानसिंहको रोशानियोंसे लड़ करके आगे बढ़ना पड़ा। १६७२ ई०को औरङ्गजेबके अधीन सूबेदार मुहम्मद अमीन खांको लोगोंने खैबरकी राहमें भटका दिया और उनके ४०००० आदमी मार काट करके सब खजाने हाथियों, स्त्रियों और बच्चोंको लूट लिया।

१८३९ ई०को पहले पहल अङ्गरेज साहबजादा तमूरको खैबरकी राह काबुल ले गये थे। प्रथम अफगान युद्धके खैबरमें कई लड़ाईयां हुईं और अंगरेजी सेनाको कष्ट भी झेलने पड़े। १८४२ ई० ६ अप्रेलको जनरल पोलक अपनी सेनाके साथ खैबरकी राह आगे बढ़े थे। काबुलसे पीछे लौटने पर उनकी सेनाके दो भागों पर

पीछे इन्होंने सोमनाथ और गिरनार पर्वतके नेमिनाथ मन्दिरको दर्शन, ब्राह्मण और याचकोंको दान, सहस्र लिङ्गसरोवरका खनन, नानास्थानोंमें देवमन्दिर, सदान्न और शास्त्रचर्चाके लिए विद्यालय बनवाया था।

११४३ ई०में महावीर सिद्धराजने इष्टदेवके पाद पद्मोंमें मन लगा कर तथा अनशनव्रत (समाधिमरण) अवलम्बनपूर्वक इस नश्वर शरीरको छोड़ा। प्रसिद्ध वीर जगदेव परमार इनके सेनापति थे। जयमङ्गल आदि बहुतसे कवि उनको सभामें रहते थे। प्रसिद्ध जैनाचार्य हेमचन्द्र भी पहले इनकी सभामें रहते थे।

३ काश्मीरके एक प्रसिद्ध राजा, सुस्सदेवके पुत्र। आपने ११२६से ११५० ई० तक राज्य किया था। कविवर मङ्खने इन्हींके आश्रयमें रह कर ख्यातिलाभ की थी। काश्मीर देखो।

४ बाबेरीके एक राजा। आप सिद्धान्ततत्त्वसर्वस्व-रचयिता गोपीनाथ मौनीके प्रतिपालक थे।

५ सम्राट् महम्मदशाहके समयके आगरेके एक सूबेदार। इन्होंने आगरेके चारों तरफ सहरपना अर्थात् ऊँची भीत बनवाई थी, जिसमें बहुतसे तोरण थे, अब सिर्फ दो ही तोरण रह गये हैं।

जयसिंह ३य—जयपुरके एक कच्छवाह राजा। इनके पिता जगत्‌सिंहकी मृत्युके बाद ये पैदा हुए थे। १८८१ सम्वत् (१८३४ ई०)-में कामदार जटाराम द्वारा विष प्रयोगसे इनकी मृत्यु हुई थी। जयपुर देखो।

जयसिंह कवि—हिन्दी भाषाके एक कवि। इनकी शृङ्गारसकी कविता अच्छी होती थी।

जयसिंहदेव—जयमाधवमानसोल्लास नामक संस्कृतग्रन्थके रचयिता।

जयसिंहनगर—मध्यप्रदेशके सागर जिलेका एक ग्राम यह अक्षा० २३° २८' उ० और देशा० ७८° ३७' पू०में सागरसे २१ मील दक्षिणपश्चिममें अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या तीन हजार होगी।

करीब १६९० ई०में सागरके शासनकर्ता जयसिंहने यह ग्राम बसाया था। उन्होंने सामन्तोंके आक्रमणसे इस ग्रामको रक्षाके लिए यहां एक किला बनवाया था, जिसका खण्डहर अब भी मौजूद है। १८१८ ई०में सागरके साथ साथ यह ग्राम भी वृटिशके अधिकारमें आ गया। इसके बाद १८२६ ई०में अप्पा साहबकी विधवा महिषीने रुक्माबाईको रहनेके लिए यह गांव दे दिया। यहां थाना, डाकघर, मदरसा और हाट लगती है।

जयसिंह मिश्र—चण्डीस्तवकी एक टीकाकार।

जयसिंह मोर्जा—अम्बर (आमेर)के एक प्रसिद्ध राजा, राजा महासिंहके पुत्र। महासिंहकी मृत्युके उपरान्त आमेरराज्यके उत्तराधिकारीके विषयमें आन्दोलन चल रहा था। उस समय जगत्‌सिंहके पौत्र महावीर जय-सिंहने योधाबाईके पास राजा पानेकी आशा व्यक्त की। योधाबाईके अनुरोधसे सम्राट् जहांगीरने जयसिंहको ही आमेरका सिंहासन दिया। परन्तु इससे नूरजहां अत्यन्त असन्तुष्ट हो गईं।

वीरवर जयसिंह सिंहासन पर बैठ कर अपनी तीक्ष्ण बुद्धि और वीर्य बलसे राज्य विस्तार करनेको प्रवृत्त हुए। बादशाहने उनके प्रति सन्तुष्ट हो कर उन्हें 'मोर्जा' उपाधि दी।

जब दिल्लीके मयूरासन पानेके लिए दारा और औरङ्ग-जेबमें झगड़ा हुआ था, तब पहले इन्होंने दाराका पक्ष लिया था, किन्तु पीछे विश्वासघातकता कर औरङ्गजेबकी तरफ मिल जानेके कारण दाराकी साम्राज्यप्राप्तिकी आशा पर पानी फिर गया।

जयसिंहने औरङ्गजेबका वास्तविक उपकार किया था। बादशाहने उन्हें छह हजारी सेनाओंका अधिनायक बनाया था। जिस समय महावीर शिवाजीके अभ्युदयसे मुगल साम्राज्य एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त तक कांपने लगा था, जिनके प्रतापसे मुगल सेनापति पुनः पुनः परास्त हुए थे, जिनके भयसे सम्राट् औरङ्गजेब तक सर्वदा सशङ्कित रहते थे, उन वीरकुलतिलक शिवाजीको एकमात्र अम्बर-राज जयसिंहने ही परास्त करके बन्दी कर पाया था। परन्तु जयसिंहने महावीर शिवाजीका कभी भी अपमान नहीं किया था, शिवाजीको कैद कर दिल्ली लाते समय इन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि, बादशाह उनका केशाग्र भी स्पर्श नहीं कर सकेंगे। किन्तु जब देखा कि, औरङ्गजेब शिवाजीको मुट्ठीमें पा कर उन्हें मारनेकी चेष्टा कर रहे हैं, तब जयसिंहने उन्हें भागनेका सुभीता दे अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा की। शिवाजी देखो।

एक छोटी छावनी। यह अक्षा० ३३´ ५५´ उ० और देशा० ७३´ २० पू०में अबोटाबाद और मरीकी सड़क पर पड़ती है। जाड़ेमें रावलपिण्डीमें रहनेवाले अंगरेजी पहाड़ी तोपखानोंमेंसे एक ग्रीष्मऋतुमें यहां रखा जाता है।

खैरपुर—उत्तरसिन्धुप्रदेशके अन्तर्गत एक देशी राज्य। यह अक्षा० २६´ १० से २७´ ४६´ उ० और देशा० ६८´ २०´ से ७०´ १४ पू०के बीच अवस्थित है। इसके उत्तरमें शिकारपुर जिला, दक्षिणमें हैदराबाद जिला, पूर्वमें जेशलमीर और पश्चिममें सिन्धुनद है। इस राज्यकी लम्बाई ६० कोस और चौड़ाई ३१ कोस और क्षेत्रफल ६०१० वर्गमील है। यहांकी जनसंख्या १९९३१३ है।

खैरपुरका इतिहास सिन्धु राज्यके इतिहासके साथ लगा हुआ है। सिन्धु देखो। १७८३ ई०की बलूच वंशीय मीर फतेह अली खाँ तलपुर सिन्धुदेशके राजा हुए। उनके थोड़े दिन राज्य करनेके बाद उनके भानजे शोराब खाँ तलपुरने, अपने दो लडकों मीर रुस्तम और अलीमुरादके साथ खैरपुरमें राज्य स्थापन किया। उससे मीरशोराबके अंशमें खैरपूर पड़ा। उस समय राजकर अफगानिस्तानके अमीरको दिया जाता था। १८११ ई०को शोराब खाँने राज्यभार अपने बड़े पुत्र रुस्तमको अर्पण किया १८१३ ई०को काबुलमें बरकजाई वंशके राज्य लाभ करते समय नाना प्रकारका गड़बड़ हुआ था। उसी समय मीर रुस्तमने काबुलकी अधीनता छोड़ी थी थोड़े दिनके बाद मीर रुस्तम और अलीमुराद दोनों भाइयोंमें विवाद होने पर अंगरेजोंको मध्यस्थ बनाना पड़ा १८३२ ई०में अङ्गरेजोंके साथ एक संधि हो गई जिसमें यह निश्चित हुवा कि सिन्धुनदी और सिन्धुप्रदेशके रास्तेसे अङ्गरेज लोग ना विरोक टोकके जा सकते है और अङ्गरेजी सेना जब काबुल जायेगी तो उस समय वहांके मोरोंको सहायता देनो पड़ेगी। इस पर बहुतसे राजा सहमत न हुवे। उस समय अली मुरादने खैरपुरमें अपना प्रभुत्व स्थापन कर लिया था। उन्होंने अङ्गरेजको यथारीति सहायता दी थी। इसका फल यह हुवा कि मियानी और दबोरकी लड़ाईके बाद जब समस्त सिन्धुप्रदेश अङ्गरेजोंके हाथ आया, उस समय खैरपुरमें अङ्गरेजोंके अधीन वह एक स्वतन्त्र राजा रहे। १८६६ ई०को अङ्गरेज गवर्नमेण्टने राजाको एक सनद दी जिसमें कहा गया कि मुसलमानी आईन अनुसार तलपुर मीर राजत्व कर सकते हैं। गवर्नमेण्ट इस पर कोई आपत्ति न डालेगी। मीर अलीमुराद १८९४ ई०में मर गये और उनके लड़के मीर फैज महम्मद खाँको राजगद्दी मिली। १५ तोपोंकी सलामी है। Lt. Col. हिज हाईनेस मीर सर इमाम वकस खान् तलपुर जी० पी० आई० वर्तमान अधीश्वर है

इस राज्यमें एक शहर और १५३ ग्राम हैं जिनमें लगभग ३६००० हिन्दू और १६३००० मुसलमान बसे हैं। यहांके सैकड़े पीछे ६९ मनुष्य कृषि और शेष नौकरी तथा वाणिज्य व्यवसाय करते है। खैरपुरकी जमीन बहुत उपजाऊ है। यहां जोवार, बाजरा, गेहूं, चना तथा अनेक प्रकारकी दाल और कपासकी उपज प्रधान हैं। यहां फलवृक्ष भी यथेष्ट है। यथा—आम, सेव, अनार, खजूर तथा शहतूत। यहांके पाल पशु, ऊंट, घोड़ा, भैंस, बैल, भेड़, गदभ और खच्चर है। इस राज्यमें ३३१ वर्गमील जमीन जङ्गलोंसे भरी है उन्हांकी देख भाल करनेके लिये राज्यकी ओरसे थोड़े कर्मचारी नियत किये गये हैं जङ्गलोंसे प्रायः २६०००) रु०की आमदनी है। यहांसे कपास, रेशम, अनाज, नील, हाथका बुना कपड़ा, चमड़ा तथा तम्बाकूकी रफ्तनी होती है।

विचारके लिये यहां दो अदालत है, एक खैरपुरमें दूसरी मीरके साथ। जब मीर कहीं जाते तो अदालत भी उनके साथ ही रहती है खैरपूरकी स्थायी अदालतमें एक हिन्दू और मीरके साथ दो मौलवी न्यायकर्ता रहते हैं इस राज्यको यद्यपि मृत्यु-दण्ड-विधानका सम्पूर्ण अधिकार भी है तथापि मीर किसीको मृत्यु दण्डकी आज्ञा नहीं देते दीवानी अदालतमें वादीको अदालतके व्ययकी भांति प्रार्थित अर्थका चतुर्थांश राजकोषमें देना होता है। इस लिये मुकदमाकी संख्या अल्प ही रहा करती हैं। वे पञ्चायत होके द्वारा अपने अपने विवादकी मीमांसा कर लेते है। यहांकी सैन्यसंख्या प्रायः पांच सौ हैं जिनमेंसे थोड़े अश्वारोही और थोड़े पैदल है जिनके पास तलवार और बन्दूक

बादशाहने विजयसिंहके पक्षकी सनंद बनानेके लिए आज्ञा दे दी।

खाँ दौरान् नामक एक प्रधान अमीरके साथ जयसिंहने पगड़ी बदल कर उन्हें अपना मित्र बना लिया था। अब उन्हीं अमीरने गुपचुप उक्त वृत्तान्तको सुन कर जयसिंहके दरबारस्थ वकील क्षपारामसे कहा और क्षपाराम द्वारा शीघ्र ही वह सम्वाद जयसिंहके पास भेजा गया।

क्षपारामका पत्र पा कर जयसिंह भी चिन्तित हुए। उनके भाई भी मुगल सेनाके साथ उनके विरुद्ध आवेंगे, इसीलिए उन्हें चिन्तामें पड़ना पड़ा था। दूसरा कोई होता तो उन्हें कुछ भी पर्वाह नहीं होती। उन्होंने शीघ्र ही अम्बरके समस्त सामन्तोंको बुला कर शीघ्र ही आनेवाली विपत्तिकी बात कही। सामन्तोंने उनको अभयदान दिया और विजयसिंहके पास अपने अपने मन्त्रियोंको भेजा तथा यह कहला भेजा कि, "आपको बसवा प्रदेश ले कर ही सन्तुष्ट रहना चाहिये। ज्येष्ठ भ्राताके साथ आपका झगड़ा करना न्यायतः और धर्मतः उचित नहीं। आप जिससे सम्मानके साथ बसवा प्रदेशका भोग कर सकें, उसके लिए हम सभी प्रतिज्ञाबद्ध रहेंगे।"

बहुत अनुनय विनय करनेके उपरान्त विजयसिंहने इस बातको मंजूर किया। सामन्तगण यह भी कोशिश करने लगे कि, जिससे दोनों भाइयोंमें मेल-मुलाकात हो कर सौहार्द उत्पन्न हो जाय। निश्चय हुआ कि, प्रधान सामन्तकी राजधानीमें दोनों भाइयोंका मिलन होगा। इस पर दोनों पक्षके लोग चूमू नगरमें उपस्थित हुए। इसी समय खबर आई कि, "महाराज्ञी दोनों भाइयोंके नयनानन्ददायक मिलनको देखना चाहती हैं"। सामन्तगण भी महाराज्ञीकी इच्छाके विरुद्ध कुछ न कह सके। सबोंकी अनुमतिके अनुसार उसी समय महाराज्ञीका महादोला और पुरमहिलाओंके लिए तीन सौ रथ सजाये गये। परन्तु महादोलामें राजमाताके बदले सामन्तवीर उग्रसेन और वस्त्रावृत प्रत्येक रथमें स्त्रियोंके बदले दो दो सशस्त्र सैनिक बठाये गये। सामन्तगण पहले ही जयसिंहके साथ चल दिये थे, वे इस षड्यन्त्र का बिन्दु विसर्ग तक नहीं जानते थे।

जयसिंह और सामन्तगण पहलेहीसे सांगानेर आ कर राजमाताके आगमनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। एक दूतने आ कर उनके आनेका समाचार सुनाया तो सभी प्रासादकी तरफ दौड़े गये। प्रासादमें जयसिंह और विजयसिंह दोनों भाइयोंका मिलन हुआ। जयसिंहने विजयके हाथ पर बसवाकी सनंद रख कर स्नेहसे कहा—"यदि तुम्हारी इच्छा अम्बरराज्य लेनेके लिए हो, तो वह भी मैं दे सकता हूं।" जयसिंहके स्नेह भरे वाक्यसे दुष्टमति विजयसिंहका मन भी पघल गया, उन्होंने जवाब दिया—"भाई! मेरी सब आशाएं पूरी हो गईं।"

इसके कुछ देर बाद एक नौकरने आ कर कहा कि, "राजमाता आप दोनोंसे मिलना चाहती हैं।" इस पर सामन्तोंसे अनुमति ले कर दोनों भाई अन्तःपुरमें घुसे। प्रवेशद्वार पर एक खोजा खड़ा था, जयसिंहने उसके हाथमें तलवार दे कर कहा—'माताके पास सशस्त्र जानेकी क्या जरूरत?' विजयसिंहनेभी ज्येष्ठ भ्राताकी देखादेखी तलवार वहीं छोड़ दी और भीतर चले गये।

भीतर घुसते ही माताके स्नेहालिङ्गनके बदले विजयसिंह पर झट सामन्त उग्रसेनका कठोर आक्रमण हुआ और वे बन्दी हो गये। मुंह और हाथ पैर आदि बांध कर उन्हें महादोलामें डाल गुप्त रीतिसे अम्बर राज्यकी राजधानीमें लाया गया। सभीने समझा कि, राजमाता प्रासादको लौटी जा रही हैं। इधर जयसिंह करीब एक घण्टा बाद कई एक अस्त्रधारी सैनिकोंके साथ बाहर निकले। उन्हें अकेले आते देख सभी पूछने लगे—"विजयसिंह कहां हैं?" चतुर नीतिज्ञ जयसिंहने उत्तर दिया—"मेरे पेटमें। अगर आप लोगोंका यह अभिप्राय हो कि, विजयसिंह ही राजा हों; तो मुझे मार कर उसे निकाल लें। यह निश्चय समझिये कि, विजय मेरा और आप लोगोंका शत्रु है। कभी न कभी वह शत्रुओंको अम्बरमें ला कर हम सभीको मरवा डालता इसमें सन्देह नहीं।" सभी सामन्त आश्चर्यसे दंग रह गये। दूसरा कुछ उपाय न देख वे चुपचाप चल गये। जब विजयसिंह अम्बर आये थे, तब कमर उद्-दीनखाँने उनके साथ एकदल मुगल अश्वारोही

खरवाल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोलियार पेड़।
खेरसार (हिं० पु०) कत्था, खैरका जमा हुआ रस।
खेरा (हिं० वि०)-१ कत्थई, खैर-जैसा लाल। खैरके रङ्गका कबूतर, घोड़ा और बगला भी 'खैरा' ही कहलाता है (पु०) २ धान्यक्रमि, रोगभेद, धानकी एक बीमारी। इसमें उसकी मञ्जरी पीतवर्ण पड़ जाती है। ३ एक तालाकी टून। ४ मत्स्यविशेष, कोई मछली। यह बङ्गालकी नदियोंमें बहुत होती है।
खैरा—मेदिनीपुर जिलेकी एक प्राचीन जाति। इस जातिके अधीन एक समय बलरामपुर, खड़गपुर, और केदारकुण्ड परगना थे। बलरामपुरमें खैराराजके वासस्थान और उनके प्रतिष्ठित देवमन्दिरादिका भग्नावशेष विद्यमान है। बहुतोंका मत है कि बलरामपुर और कर्ण गढ़के राजाओंके पूर्वपुरुष खैराराज्यके दीवान और गढ़के सर्दार थे। उन्हींके षड्यन्त्रसे खैराके राजा मारे गये और उनकी सातों रानियां सती हुईं। रानियोंने चितारोहण कालमें उन्हें यह कहकर शाप दिया कि "जिन्होंने षड़यन्त्र रचकर हमलोगोंका नाश किया हम सतियोंके अभिशापसे उनकी भी सात पुरुषके बीचमें ही सन्तान नष्ट होगी।" सतीकी बात कदापि मिथ्या नहीं होती और ऐसा सुना जाता है कि बलरामपुरके राज्यवंशज में भीमसेन महापात्रसे सप्तम पुरुषमें राजा वीरप्रसाद और कर्णगढ़ राजवंशके प्रथम राजा लक्ष्मणसिंहसे सप्तम पुरुष अजितसिंह निर्वंश रहे।

कोई कोई कहते हैं कि मेदिनीपुर शहरसे पांच या ६ कोस दूर जगन्नाथ जानेके रास्तेके बगलमें अयोध्यागढमें खैराके राजा रहते थे। इस गढ़के ऊपर जाड़-वाङ्ला नामका एक मन्दिर है जिसमें खैराराजकी कुलदेवी भगवती सिंहवाहिनीकी मूर्ति है। इसके अतिरिक्त खैरा राजाकी और भी कई कीर्तियां हैं

आजकल भी मेदिनीपुर जिलामें बहुत जगह खैरि नाम जाति रहती है।

खैरागढ़—१ युक्तप्रान्तीय आगरा जिलेकी दक्षिण-पश्चिम तहसील। यह अक्षा० २६° ४५' तथा २७° ४' उ० और देशा० ७७° २६' एवं ७८° ७' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ३०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: १२७६८२ है। खैरागढ़ तहसीलका एक छोटा ही गांव है। उतङ्गन नदी इसको दो भागोंमें बांटती है। यहांके पहाड़का लाल पत्थर मकान बनानेके लिये बहुत अच्छा रहता और कीमती ठहरता है

२ इसी नगरकी तहसीलका एक नगर। यह आगरासे ८ कोस दक्षिण—पश्चिममें उतङ्गन नदी किनारे अवस्थित है। यहां थाना, डाकघर और विद्यालय हैं।

३ मध्यप्रदेशका एक जागीरदारी राज्य। यह अक्षा० २१° ४' तथा २१° ३४' उ० और देशा० ८०° २७' एवं ८१° १२' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ९३१ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: १३७५५४ है। खैरागढ़ द्रुग जिलेकी पश्चिम सीमा पर पड़ता है। इसमें ३ टुकड़े हैं पहले खैरागढ़के राजाओंका अधिकार केवल खलवा नामक छोटेसे परगनेमें रहा। ई० १८वीं शताब्दीके शेषकालकी एक ऋणके बदले खवर्धा राज्यसे खमरिया ले ली गयी और राज्यका प्रधान क्षेत्र खैरागढ़ मण्डलाके राजाओंसे मिला। फिर डोंगरगढ़ उस जमींदारकी आधी भूमिका भाग है, जिसने मराठोंके विरुद्ध विद्रोह किया था। खैरागढ़ और नांद गांवके राजाओंकी बलवैकी दबा करके उसका राज्य आपसमें बांट लिया। खैरागढ़ शहर कोई ४६५६ लोगोंकी एक बसती है। बङ्गाल नागपुर रेलवेके डोंगरगढ़ और नांदगांव दोनों ष्टेशनोंसे यह २३ मील दूर पड़ता है। राज्यके पश्चिम भागमें पहाड़ है। खैरागढ़के राजा नागवंश राजपूत समझे जाते हैं। १८९० ई०को २३ वर्ष वयसमें राजा कमलनारायण सिंह अभिषिक्त और १८९८ ई०को मौरूसी राजा उपाधि प्राप्त हुये। लोग पूर्वी हिन्दीकी एक शाखा भाषा व्यवहार करते हैं। खेत सींचनेके लिये २२४ तालाब हैं। खैरागढ़ नगरमें पीतलका बर्तन और लकड़ीका सामान बनता है। बोड़िया तैयार करनेमें बहुतसे लोग लगे रहते हैं। राज्यके दक्षिण भागमें हो करके बङ्गाल नागपुर रेल निकली है। इस राज्यकी वार्षिक आय प्राय: ३०३०००)

लगी जरातिर्विद् कृपाराम और कवि कृष्णराम इन्हींकी सभामें रहते थे।

सम्राट् महम्मदशाहने जब इन पर पञ्जिका संस्कार-का भार दिया था, उस समय ग्रहनक्षत्रादिकी गति विधि, चन्द्रसूर्यका उदयास्त, राशिस्फुट, ग्रहण आदिकी विशुद्ध गणना, परिदर्शन और अभिनव नक्षत्रके आवि-ष्कारके लिए उन्होंने अपनी बुद्धिसे जिन जिन यन्त्रोंका आविष्कार किया था, उन सबको उन्होंने दिल्ली, जयपुर, उज्जैन, आगरा और मथुरामें बड़े बड़े मान मन्दिर बनवा कर उनमें स्थापित किया था।

पाश्चात्य और आधुनिक ज्योतिर्विद्‌गण सृष्टितत्त्व परिदर्शन कर एक प्रकारसे नास्तिक हो गये थे। परन्तु पण्डितप्रवर जयसिंह सूक्ष्मानुसूक्ष्म गभीर वैज्ञा-निक तत्त्वालोचना करते हुए भी सर्वत्र भगवान्‌का ऐश्वर्य देखते थे। इन्होंने स्वरचित "जीज महम्मद-शाही" नामक पारसिक ग्रन्थके प्रारम्भमें लिखा है—

"भगवान्‌की सर्वमङ्गलमय अनन्तशक्तिका तत्त्व न जान कर हो हिपार्कसने निर्बोध कृषककी तरह केवल विरक्ति दिखाई है। विश्वस्रष्टाकी महान् शक्तिकल्पनामें टलेमो चमगादड़की तरह सत्यरूप सूर्यके पास तक नहीं पहुंच सके हैं। इउक्लिडके सू (उस विश्वरूपी पर्व की) अनन्त सृष्टिके असम्पूर्ण आलेख्यको कल्पित रेखामात्र है। जमशेद दसी अथवा नासिरतुसी इसी तरहके व्यर्थ पण्डश्रम कर गये हैं।"

पोर्तुगलाधिपतिने इनके पास जो यन्त्र भेजे थे, उनके विषयमें जयसिंहने इसप्रकार लिखा है—"वास्तविक परीक्षा और समालोचना करनेसे मालूम होता है कि, इस यन्त्रमें चन्द्रका जो अवस्थान स्थिर किया गया है वह आधा अंश कम है, इसलिए यह ठीक नहीं, अन्यान्य ग्रहोंके अवस्थानके विषयमें यद्यपि इसमें कोई गड़बड़ नहीं, परन्तु ग्रहणसम्बन्धी गणनामें ४ मिनटका अन्तर पाया जाता है।" ऐसे अवशुद्ध यन्त्रोंके कारण ही हिपार्कस, टलेमो, डिलाहायर आदिको गणनामें भूलें हुई हैं, यह भी जयसिंह स्पष्ट लिख गये हैं। इनके बनाये हुए अक्षय और अपूर्व कीर्त्तिस्वरूप मानमन्दिर अब भी भारतमें विद्यमान हैं। मानमन्दिर देखो

इन्होंने प्रसिद्ध 'जीज महम्मदशाही" ग्रन्थके बना लेने पहले अपने सभासद् जगन्नाथ पण्डित द्वारा सम्राट् सिद्धान्त तथा रेखागणित नामक इउक्लिड और नेपियार-कृत गणित पुस्तकका संस्कृत अनुवाद प्रकाशित कराया था।

जयपुरस्थापयिता जयसिंह पञ्जिका संस्कारके विषय-में जो कुछ अपना मत प्रसिद्ध कर गये हैं, राजपूत-समाजमें अब भी उसी मतके अनुसार पञ्जिका बनाई जाती है। किसी समय समस्त मुगल साम्राज्यमें इन्हीं-की पञ्जिका प्रचलित थी।

जयसिंह सिर्फ प्रधान ज्योतिर्विद् ही थे ऐसा नहीं, किन्तु वे एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक भी थे। इन्हींके प्रयत्न और नामानुसार 'जयसिंह कल्पद्रुम" नामक एक सुबृहत् स्मृतिसंग्रह सङ्कलित हुआ था।

जयसिंहमें सिर्फ इतना ही दोष था कि, उन्होंने बुढ़ापेमें अफीमकी खुराक बहुत ही बढ़ा दी थी। इस अफीमके दोषसे ही वे मारवाड़पति अभयसिंह और भक्तसिंहके साथ युद्ध कर पराजित हो गये थे। अन्तमें इन्होंने बीकानेरपतिको मारवाड़की अधीनतापाशसे मुक्त किया था। मारवाड़ और बीकानेर देखो।

१७३३ ई०में बादशाह महम्मदशाहने इनको मालव-राज्यका शासनभार दिया था। उस समय महाराष्ट्रोंका बल क्रमशः बढ़ ही रहा था। ये समझ गये थे कि, धीरे धीरे ये महाराष्ट्रदस्युगण समस्त हिन्दुस्तान ही अधि-कार कर बैठेंगे, इसलिए इन्होंने महाराष्ट्रवीर बाजो-रावके साथ मित्रता कर उन्हें मालवका शासनकर्तृत्व प्रदान किया। इससे जयसिंह पर अन्य राजपूतोंके विरक्त होने पर भी बादशाह उनसे सन्तुष्ट हुए थे।

बूंदीके राजा कविवर बुधराव जयसिंहके बहनोई थे; उन्होंने किसी विशेष कारणसे जयसिंहकी दिल्लगी उड़ाई थी, इस पर वीर जयसिंहको क्रोध आ गया और उन्होंने १७४० ई०में भगिनीपतिका राज्य अधिकार कर लिया।

वृद्धावस्थामें इन्होंने समाज-संस्कारके विषयमें विशेष मनोयोग दिया था। राजपूत-समाजमें कन्याके विवाह और श्राद्ध आदिमें सभीको साध्यातीत खर्च करना पड़ता

खड़, टाल, तोनल, पोरखिय', कन्धरा, गौरिया, नगला प्रभृति इसी श्रेणीके हैं। राजखोंड ही सभीके अधीश्वर माने जाते, जबतक उन्हें थोडी जमोन न रहे तब तक वे राजखोंड नहीं कहला सकते। जब कोई राजखोंड़ किस दूसरे श्रेणीमें विवाह करता तो वह भी उसी श्रेणीमें मिला लिया जाता है। 'दल' जो बलमुदिया भी कहलाता सैनिकमें भर्ती होते हैं। पोरखिया भैस खाते, कन्धरा हरिद्रा (हलदी) उपजाते। जोगारिया मवेशो चराते हैं। खोंड अपने श्रेणीमें विवाह नहीं करते परन्तु ये मामाकी लडकोसे सादी कर सकते हैं।

अधिक अवस्था आने पर ये विवाह करते। लडकीके लिये इन्हें पण देने पडते हैं दश या बारह मवेशीके शिर ही इन लोगोंका पण है। किन्तु आजकल दो या तीन मवेशीके मुण्ड अथवा एक रुपया पण कहकर लेते हैं। वारात लडकोके घरसे वरके घरको जाती है। विवाहकाल वर और कन्या बाहर निकल अपने किसी एक कुटुम्बके कन्धे पर बैठते हैं। वर कन्याको अपनी ओर खींचता और एक वस्त्र उन दोनोंके अङ्गको रहता है। एक मुर्गा भी इस समय बलिदान किया जाता। समस्त रात्रिको वरामदा में ही रह व्यतीत करते और प्रातःकालको वर तथा कन्या किसी एक पोखर पर जाते हैं। वरके शरीरमें तीर और धनुष बंधे रहते हैं। वर की रखी हुई सात गोवरकी रोटियों पर निशाना करना पडता है और प्रति निशानके बाद कन्या आ वरको पहिले दतवन और पीछे मिठाई देती है। यह प्रथा उनके भविष्य कार्यकी याद दिलाती है

पुत्र-जन्मके छठे दिन उसकी माता तीर और धनुष ले लडकेके सामने खडी रहती है। युवावस्थामें पुत्रकी आखेटमें चतुर होनेका यह संकेत है

ये मृतशरीरको पृथ्वीमें गाडते हैं। एक रुपया या एक पैसा उसके वस्त्रके एक कोनेमें बांध देते जिससे मृतदेह रिक्त हाथसे दूसरा लोक न जाय। मुर्दाके साथ कभी कभी उसके कपडे तीर और धनुष पृथ्वीमें गाड देते हैं।

खोंड चौर भी देवको मानते हैं जिनमेंसे 'धरणी देवता' या पृथ्वी प्रसिद्ध हैं। प्रतिवर्ष ये तीन त्योहार मानते हैं। चार या पांच वर्षोंमें एक वार पृथ्वी देवताको महिष बलिदान देते हैं। पूर्व समयमें महिषके बदले मनुष्य बलिदान देते रहे। काला हलदीमें भेंड़ धरणी माताको चढाया जाता है और इसका मांस अपने पड़ोसियोंके मध्य बाट देते हैं। आखिरमें जानेके पहले ये तीर और धनुषकी पूजा कर लेते हैं। उनको विश्वास है कि मनुष्योंके मर जाने पर उसकी आत्मा पुनः छोटे छोटे बच्चोंमें जन्म लेती है।

खोंड गृहस्ती, आखेट और लड़ाई वृत्तिके अतिरिक्त दूसरा कार्य्य नहीं करते।

खोंडर (हिं॰ पु॰) वृक्षका अभ्यन्तरस्थ शून्य भाग, पेड़के भीतरका पोला हिस्सा।

खोंडा (हिं॰ वि॰) १ भग्नअङ्ग, टूटे अङ्गवाला। बहुधा यह शब्द उस व्यक्तिके लिये व्यवहारमें लाते, जिसके सामनेवाले दो-तीन दांत टूटे दिखलाते हैं।

खोंत (हिं॰ पु॰) घोंसला, चिड़ियाका घर।

खोंप (हिं॰ स्त्री॰) १ पसूजन, सलङ्गा, सिलाईका लम्बा टांका। २ फटन।

खोंपना (हिं॰ क्रि॰) गाड़ना, चुभाना, धांस देना।

खोंपा (हिं॰ पु॰) १ हलकी कोई लकड़ी। इसमें फाल लगता है। २ छप्परका कोन। ३ भूसा रखनेकी जगह। इसको छप्परसे छा देते हैं।

खोंपी (हिं॰ स्त्री॰) हजामतके खतका कोना, बालोंका एक बनाव। २ खोंपा।

खोंसना (हिं॰ क्रि॰) अटकाना, लगाना, घुसेड़ना।

खो—१ मध्यप्रदेशमें एक प्राचीन ग्राम। यह उचहरा नगरसे डेढ़ क्रोश पश्चिममें अवस्थित है। एक समय यहां बहुत घर और देवमन्दिर थे। आजकल उनका भग्नावशेष मात्र है। इस ग्राममें गुप्तराज हस्तनीका शिलालेख पाया गया है। यहांके भग्नमन्दिरमें वृहदाकार दशावतारकी भग्न प्रस्तरमूर्ति पड़ी हुई है।

खो—पूर्व उपद्दीपके काम्बोजराज्य अधिवासी एक प्रबल जाति। इसकी संख्या प्रायः चार लाख है। इनका आचार व्यवहार चीन और ब्रह्मवासीके सदृश है।

खोड़डार (हिं॰ पु॰) कोल्हूमें कोई इकट्ठा करनेकी जगह

करते और उन्हें आदर पूर्वक आहार कराते हैं। यदि मेरा वश होता तो मैं ऐसे साधुओंको राज्यसे निकाल बाहर करती।" रानी क्रुद्ध गई थीं, उन्होंने मुनिराजको सुना सुना कर दो चार बातें कहीं किन्तु मुनिराजने उस पर कुछ भी ध्यान न दिया।

कुछ ही दिन बाद, मुनिनिन्दाके महापापसे रानीको कुष्ठव्याधि हो गई। उनका अनुपम सौन्दर्य घृणाका स्थान बन गया। शरीरसे दुर्गन्ध निकलने लगी; पीप, खून आदि बहने लगा। महारानीकी थोड़े ही दिनोंमें ऐसी दुर्दशा देख कर राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ, उन्होंने रानीसे पूछा—"सच तो कहो, एकाएक तुम्हारा शरीर ऐसा क्यों हो गया?" महारानी जयसेनाको सचमुच ही बड़ा पश्चात्ताप हुआ था। उन्होंने कहा—"नाथ! उस दिन जो मुनिराज आहारके लिए आये थे; उनकी मैंने खूब निन्दा की थी, उन्हें बुरे वचन भी कहे थे। शायद उसी महापापका यह फल है।" जयसेनको बड़ा दुःख हुआ; उन्होंने कहा—"पापिनी! यह तूने क्या किया? मुनिनिन्दाके महापापसे तुझे नरकोंके घोर दुःख सहने पड़ेंगे; यह तो कुछ भी नहीं है।" रानी नरकका नाम सुनते ही कांप उठीं। वे उसी समय पालकीमें बैठ कर मुनिराजके पास वनमें पहुंचीं और बड़ी भक्तिसे प्रणाम कर मुनिराजसे कहने लगीं—"कृपासिन्धो! मेरा अपराध क्षमा कीजिये; मैंने अज्ञानतासे मुनिनिन्दा की है। कृपा कर नरक दुःखसे मेरा उद्धार कीजिये।" मुनिराजको महारानीके परिवर्तनसे बड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने उन्हें धर्मका उपदेश दिया। रानीको मुनि महाराजके व्यवहारसे जैनधर्म पर और भी श्रद्धा हो गई। उन्होंने सम्यग्दर्शनपूर्वक गृहस्थधर्म (आठ मूलगुण पांच अनुव्रत आदि) अवलम्बन किया।

इसके बाद भक्तामरस्तोत्रके २८वें श्लोकके मन्त्रका जल छिड़कते रहनेसे कुछ दिनोंमें उनका कुष्ठरोग भी जाता रहा। इससे महारानी जयसेनाको जैनधर्म पर पूर्ण श्रद्धा हो गई। (भक्तामरकथा श्लो० २९)

जयसोम गणि—एक विख्यात जैनपण्डित। इन्होंने खण्डप्रशस्तिवृत्तिको रचना की है।

जयस्कन्धावार (सं० क्ली०) वह शिविर जिसे विजयी राजा जीते हुए स्थान पर स्थापित करते हैं।

जयस्तम्भ (सं० पु०) जयसूचकः स्तम्भः। जयसूचक स्तम्भ, वह स्तंभ जो विजयी राजासे किसी देशको विजय करनेके उपरान्त विजयके स्मारक स्वरूप बनाया जाता है।

जयस्वामी (सं० पु०) कात्यायन-कल्पसूत्रके भाष्यकार।

जयश्यामा (सं० स्त्री०) जैनोंके १२वें तीर्थङ्कर विमलनाथ भगवानको माता।

जयी (सं० स्त्री०) जीयतेऽनया जि करणे अच् ततष्टाप्। १ दुर्गा। २ जयन्तीवृक्ष, जैंतका पेड़। जयन्ती देखो। ३ तिथिविशेष, त्रयोदशी, अष्टमी और तृतीया तिथिका नाम जया है। ४ पुण्यदायिनी द्वादशी तिथिका नाम। ५ हरीतकी, हड़। ६ दुर्गाकी एक सहचरीका नाम। ७ दुर्गा। वराहशैलके पीठस्थान पर भगवती जयादेवीकी मूर्ति विराजमान हैं। (देवीभा० ७।७०।५२) ८ शान्ता शामी वृक्ष छोंकर। ९ नीलदूर्वा, हरी दूब। १० अग्निमन्थवृक्ष, अरणीका पेड़। ११ पताका, ध्वजा। १२ ज्वरघ्न औषधविशेष, बुखार हटानेवाली एक प्रकारकी दवा। १३ भङ्गा, भांग। १४ जवापुष्प, गुड़हलका फूल, अड़हुल। १५ सोलह मातृकाओंमेंसे एक। १६ एक प्रकारका पुराना बाजा। इसमें बजानेके लिए तार लगे होते थे। १७ पार्वतीका एक नाम। १८ माघमासकी शुक्ल एकादशी। १९ जवापुष्पवृक्ष, अड़हुलका पेड़। २० महादन्तीवृक्ष, केवांच वा कौंछका पेड़। २१ अपराजिता, विष्णुक्रान्तालता, कौवाठोंठी। २२ शाल्मलीवृक्ष, सेमका पेड़।

जयाञ्जन (सं० क्ली०) स्रोतोञ्जनभेद, सुरमा।

जयादित्य (सं० पु०) काश्मीरके एक विख्यात राजा और काशिकावृत्तिके प्रणेता। कायस्थ, काश्मीर और जयापीड़ देखो।

जयाद्वय (सं० स्त्री०) जयन्ती और हड़।

जयानन्द—१ एक मैथिल कवि। ये करण कायस्थ थे। २ चैतन्यमङ्गल प्रणेता।

जयानीक (सं० पु०) १ द्रुपदराजाके एक पुत्रका नाम। विराट् राजाके एक भाईका नाम। जयाप्रिय देखो।

जयापीड़ (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा। संग्रामा-

खोजी (हिं० वि०) अनुसन्धानकारक, ढूंढनेवाला ।
खोट (सं० पु०-क्ली०) रसजारण द्रव्यभेद, कुश्ता बनाने की एक चीज। इसको 'थमक' या 'फुट' भी कहते हैं।
खोट (हिं० स्त्री०) १ दूषण, ऐब। २ उत्तम द्रव्यमें अधम द्रव्यका मिश्रण, अच्छी चीजमें बुरीका मिलाव। ३ अच्छीमें मिलायी जानेवाली कोई खराब चीज। (वि०) ४ खोटा। 'खोट कुमार खोट अति भारो' (तुलसी)
खोटक (सं०) खोट देखो।
खोटन (सं० क्ली०) लंगड़ाई, लंगड़ी चाल।
खोटा (हिं० वि०) दूषित, खराब, जो खरा न हो ।
खोटाई (हिं० स्त्री०) खोटापन देखो।
खोटापन (हिं० पु०) १ दोष, नुक्स। २ फरेब, धोका, छल। ३ दुष्टता, बदमाशी। ४ क्षुद्रता, ओछापन।
खोटि (सं० स्त्री०) खोट-इन्। १ कान्दुरुखोटी। २ पालङ्कीवृक्ष। ३ चतुरा स्त्री, होशियार औरत।
खोटो, खोटि देखो।
खोट्टिग—तृतीय कृष्णके उत्तराधिकारी। यह कृष्णके छोटे भाई थे। इन्हें 'महाराजाधिराज' 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' की उपाधि मिली थी। ९७१ ई०के अकतूबर मासमें सीयक-हर्ष नामक मालवके परमार राजाने युद्ध कर इनका राज्य ले लिया धरवार जिलाके अदरगुञ्चीमें खोट्टिगके राजत्वकी एक शिलालिपि है।
खोड़ (सं० त्रि०) खोडति, खोड़-अच्। खञ्ज, लंगड़ा।
खोड़ (हिं० स्त्री०) देवकोप, भूतप्रेतका फेर।
खोडकशीर्षक (सं० क्ली०) खोड चेपे गल्ल्, खोड़क शीर्षमस्य, बहुव्री० कप्। १ कपिशीर्षवृक्ष। २ हिङ्गुल।
खोडरा (हिं० पु०) पुरातन वृक्षका शून्य स्थान, पुराने दरख्तका खोखला हिस्सा।
खोण्डमाल—उड़ीसामें अंगुल जिलाका एक उपविभाग। यह अक्षा० २०° १३' से २०° ४१' उ० और देशा० ८३° ५०' से ८४° ३६' पू० पर अवस्थित है। भूपरिमाण ८०० वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ६४२१४ है। इस उपविभागमें १७०० फीट ऊंची एक अधित्यका है। इसका बहुलांश जङ्गलसे भरा है। गिरिमाला खोंडमालसे गञ्जाम तक फैली है और ऊंचाई लगभग तीन हजार फीटकी होगी। फुलबाड़ी इस उपविभागका सदर है। यहां सिर्फ द्राविड़ वंशके खोंडजातिके मनुष्य वास करते हैं। ग्राम छोटे छोटे पहाड़ और घने जङ्गलोंसे विभक्त हैं। पूर्वकालमें चार पांच वर्षमें एक बार खोंड धरणी देवताको मनुष्य बलिदान देते रहे। इन्होंका ख्याल था कि हलदी जो उनको प्रधान गृहस्थी रही, परिपूर्ण रूपसे उपज नहीं सकती जबतक पृथ्वीके भीतर मनुष्यका रक्त न जाय। किन्तु यह प्रथा गवर्नमेण्टने सदाके लिये बन्द कर दी। आजकल वे सिर्फ महिष या मेष बलिदान देते हैं। खोंड किसी जमींदार या राजाके अधीन रहते नहीं आये हैं वे सिर्फ खास गवर्नमेण्टकी जमीन जोतते जिसके लिये उन्हें कर भी देना नहीं पड़ता है। किन्तु हरेक हलके पीछे तीन आने सड़क आदिकी उन्नतिके लिये देने पड़ते हैं। इनमें बाल्य तथा प्रौढ विवाह प्रचलित है। बाल्यविवाहमें कन्या वरसे बड़ी रहती है। खार देखा।
खोत—कोलवा जिलेमें रहनेवाली एक जाति। ये पेन, रोह और ाोतो ग्राममें रहते हैं। प्राचीनकालमें ये जिलेकी तहसीलके कर्मचारी रहे और मुसलमान बादशाहसे इन्हें कररहित ग्राम मिले थे। महाराष्ट्रके समयमें भी इन्हें जागीर मिली थी। किन्तु आजकल इन्हें ग्राम्यकर देने पड़ते जिसे ये चारकिस्तमें चुकाया करते हैं। खोटकी संख्या ४३० है। हिन्दुओंमें ब्राह्मणकी ही अधिक है सरकारकी ओरसे आजतक भी ग्रामोंका प्रबन्ध इन्हीं लोगोंके हाथमें है। ग्राम प्रबन्ध करनेके लिये प्रतिवर्ष ये अपनेमेंसे किसी एकको नियत करते हैं कभी कभी कलेक्टरसे भी कोई व्यक्ति नियुक्त किया जाता है। विवाहादिमें ये बहुत रुपये व्यय करते जिसके लिये इन्हें जमीन्दारी भी कभी कभी बेचनी पड़ी है।

खोत उत्तम पक्का मकानमें रहते और बहुतसे मवेशी पालते हैं।

खोदई (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक दरख्त। यह हिमालयकी तराईमें उपजता और रंगने आदि कई कामोंमें लगता है।
खोदना (हिं० क्रि०) १ खनन करना, गड्ढा करनेके लिये कुदाल आदिसे जमीनकी मट्टी निकालना। २ कोंचना, उसकाना। ३ उपहास करना, छेड़ना। ४ नक्काशी करना।

जय्य (सं० त्रि०) जि जेतुं शक्यः। जयकरणयोग्य, जो जीतने योग्य हो, फतह करने काबिल।

जर (सं० पु०) जृ भावे अप्। १ जरा, वृद्धावस्था। जरा देखो। २ नाश वा जीर्ण होनेकी क्रिया। ३ एक तरहका समुद्री सेवार, कचरा। ४ जैन मतानुसार वह कर्म जिससे पाप पुण्य, राग द्वेष आदि शुभाशुभ कर्मोंका क्षय होता है।

ज़र (फा० पु०) १ स्वर्ण, सोना। २ धन, दौलत, रुपया।

जरई (हिं० स्त्री०) १ अन्नविशेष, जई नामका अनाज। २ धान आदिके वे बीज जिनमें अङ्कुर निकले हों। धानको दो दिन तक दिनमें दो बार पानीमें भिगो कर तीसरे दिन उसे पयालसे ढक देते हैं और ऊपरसे पत्थर दबा देते हैं। इसको मारना कहते हैं। दो एक दिन ढके रहनेके बाद पयाल उठा देना चाहिए। फिर उसमें सफेद सफेद अङ्कुर निकल आते हैं। कभी कभी इन बीजोंको फैला कर सुखाते हैं। ऐसे बीजोंको जरई कहते हैं। यह जरई खेतमें बोनेके काम आती है और जल्दी जमती है। कभी कभी धानकी मुजारीको भी बन्द पानीमें डाल देते हैं और तीन चार दिन बाद उसे खोलते हैं। उस समय तक वे बीज जरई हो जाते हैं।

जरक (सं० क्लो०) हिङ्ग, हींग।

जरकटी (हिं० पु०) एक शिकारी पक्षी।

जरकस (फा० पु०) जिस पर सोनेके तार लगे हों।

जरखेज़ (फा० वि०) उर्वरा, उपजाऊ।

जरगह (फा० स्त्री०) राजपूतानेमें होनेवाली एक प्रकारकी घास। चौपाये इसे बड़े चावसे खाते हैं। यह खेतोंमें कियारियां बना कर बोई जाती है। छठें या सातवें दिन इसमें जलकी आवश्यकता पड़ती है। यह पन्द्रहवें दिनमें काटी जा सकती है। इसी तरह एक बार बोने पर यह कई महीनों तक चलती है। इसके खानेसे बैल बहुत जल्द बलवान् हो जाते हैं।

जरज (हिं० पु०) एक प्रकारका कन्द। यह तरकारीके काममें आता है। इसके दो भेद हैं। एकको जड़ गाजर या मूलीकी तरह और दूसरेकी जड़ शलगमकी तरह होती है।

जरजर (हिं० वि०) जर्जर देखो।

जरठ (सं० त्रि०) जीर्य्यतेनेनेति जृ-अठ। १ कर्कश, कठोर। २ पाण्डु, पीलापन लिये सफेद रंगका। ३ कठिन, कड़ा, सख्त। ४ वृद्ध, बुड्ढा। ५ जीर्ण, पुराना (पु०) ६ जरा, बुढ़ापा।

जरडी (सं० स्त्री०) जृ-बाहुलकात् अड़ ततो गौरादित्वात् ङीष्। तृणविशेष, जरडी नामकी घास। इसके संस्कृत पर्याय—गर्मोटिका, सुनाला और जयाश्वा। इसके गुण—मधुर, शीतल, सारक, दाहनाशक, रक्तदोषनाशक और रुचिकर। इसके खानेसे गाय भैंस अधिक दूध देती है।

जरण (सं० क्लो०) जरयतीति जृ-णिच्-ल्यु। १ हिङ्गु, हींग। २ कुष्ठौषध। ३ श्वेतजीरक, सफेद जीरा। ४ जीरक, जीरा। ५ कृष्णजीरक, काला जीरा। ६ सौवर्च्चल लवण, काला नमक। ७ कासमर्द, कसौंजा। ८ जरा, बुढ़ापा। ९ दश प्रकारके ग्रहणोंमेंसे एक। इसमें पश्चिम ओरसे मोक्ष होना प्रारंभ होता है। (त्रि०) १० जीर्ण, पुराना।

जरणद्रुम (सं० पु०) जरणो जीर्णः द्रुमः। अश्वकर्ण वृक्ष, साखूका पेड़। २ सागौनका पेड़।

जरणा (सं० स्त्री०) जरण-टाप्। १ कृष्णजीरक, काला जीरा। २ जीर्ण। ३ वृद्धत्व, बुढ़ापा। ४ जरा, वृद्धावस्था। ५ मोक्ष, मुक्ति। ६ स्तुति, प्रशंसा, तारीफ।

जरणि (सं० त्रि०) स्तुतिकारक, प्रशंसा करनेवाला।

जरणिपिया (सं० त्रि०) स्तुतिकारक, तारीफ करनेवाला।

जरण्ड (सं० त्रि०) जीर्ण, पुराना।

जरण्या (सं० स्त्री०) जरा, वृद्धावस्था, बुढ़ापा।

जरण्यु (सं० त्रि०) आत्मनः जरणं स्तुतिं इच्छति क्यच् उन्। जो अपना प्रशंसा चाहता हो।

जरत् (सं० त्रि०) जृ-अतृन्। १ वृद्ध, बुड्ढा। २ पुरातन, पुराना। (पु०) जरतीति जृ-शतृ। वृद्ध, बुड्ढा मनुष्य।

जरती (सं० स्त्री०) जरत् ङीप्। वृद्धा, बुड्ढी औरत।

जरत्कर्ण (सं० पु०) एक वैदिक ऋषिका नाम।

जरत्कारु (सं० पु०) १ एक ऋषिका नाम, यायावर।

"जरेति क्षयमाहुर्वै दारुणं कारुसंज्ञितम्।
शरीरं कारु तस्यासीत्तत् स धीमाञ्छनैः शनैः॥

जनसंख्या ५१५ है। यहां पेनिन्सुला रेलवेकी एक शाखा है। १८॥ एकर शिवफलका एक उत्तम जलाशय होनेके कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। पेशवाके मन्त्री नाना-फडनविस काष्ठ का निर्मित एक शिवजीका मन्दिर है।

खोवा (हि० पु०) थापी, गच या पलस्तर कूटनेका एक छोटी और चपटी मुगरी।

खोभार (हिं० पु०) गर्तविशेष, एक गड्ढा इसमें कूड़ा कर्कट और झाड़न झूड़न डाला जाता है।

खोय (हि० स्त्री०) खू, आदत, स्वभाव, बान टेव।

खोया (हि० पु०) मावा, खोवा, लोईकी शक्लमें औटा हुआ दूध पेड़ा, बरफी और लड्डू खोयेसे बनते हैं। यह खानेमें मधुर और पुष्टिकारक होता है।

खोर (सं० त्रि०) खोर-अच्। खञ्ज, लंगड़ा।

खोर (हि० स्त्री०) १ सङ्कीर्णपथ तङ्ग गली, कूचा। २ पात्रविशेष, कोई नांद। इसमें पशुओंको चारा डाल करके खिलाते हैं।

खोर (हि० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह सिन्धु-प्रदेशकी मरुभूमिमें उपजता और देखनेमें ऊंचा तथा सुन्दर रहता है। खोरका काष्ठ पीतश्वेतवर्ण, गुरु तथा कठिन होता और परिष्कार करने पर अति चिक्कण निकलता है। इसको कृषियन्त्र-निर्माणमें व्यवहार करते हैं। खोरका अपर नाम 'साहीकाटा' और 'वनरीठा' भी है।

खोरक (सं० पु०) खोर स्वार्थे कन्। गर्दभज्वर, गधेकी चढ़नेवाला बुखार।

खोरनी (हिं० स्त्री०) भड़भूंजेकी एक लकड़ी। इससे भाड़में झोंका जानेवाला बचा खुचा ईंधन, उसमें जलनेके लिये भीतरको सरका दिया जाता है।

खोरा (हि० पु०) १ पात्रविशेष, कटोरा। (वि०) २ विकृताङ्ग, लङ्गड़ा, लूला।

खोराक (फा० स्त्री०) १ खाद्यद्रव्य, खानेकी चीज। २ आहारकी मात्रा। ३ औषधमात्रा।

खोराकी (फा० वि०) १ अधिक मात्रामें भोजन करनेवाला, पेटू, जो ज्यादा खाता है।

खोराकी (हिं० स्त्री०) खोराकका दाम, खानेके लिये दिया जानेवाला पैसा।

खोरास—बम्बईके काठियावाड़ प्रान्तका एक गांव। यह ग्राम पाटन सोमनाथसे १२ मील उत्तर-पश्चिम पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १०६६ है। कहते हैं चोरवाड़के नागनाथ महादेव मन्दिरमें जो शिलाफलक रखा है, खोरासहीसे वहां गया था। उसमें संवत् १४४५ (१३८८ ई०) पड़ा और ऐतिहासिक वृत्तान्त लिखा है—खोरासके सूर्यमन्दिरका जीर्णोद्धार माल नामक किसी व्यक्तिने कराया था। माल मकवानाजातीय रुहेला क्षत्रिय रहे। युवराज शिवराजने उन्हें खोरासका स्थानीय शासक बनाया। इस ग्रामके दक्षिण कालीपात नदी बहती है। खोरासमें २ सरोवर हैं। उनमें एकको जाम्बवालु कहा जाता है।

खोरि (हिं० स्त्री०) १ सङ्कीर्ण पथ, तङ्ग राह। २ दूषण, नुक्स।

खोरिया (हिं० स्त्री०) १ बेलिया, कटोरिया। २ अबरक वगैरहके छोटे छोटे बुन्दे। यह चमकीली रहती और स्त्रियों और स्वांगके रूपोंके मुखपर शोभाके लिये लगती है। ३ कूएंकी पेंदीका मध्यभाग। यह तरसा खींचनेमें बैलोंके पहुंचनेसे कूपके मुखपर आ उपस्थित होता है।

खोल (सं० त्रि०) खोल-अच्। खञ्ज, लंगड़ा।

खोल (हिं० स्त्री०) १ गिलाफ, झूल। २ कीट आदिका उपरि चर्मावरण। यह समय समय पर बदल जाती है। ३ मोटी पिछौरी या चादर।

खोलक (सं० पु०) खोल-अच् संज्ञायां कन्। १ पात्रविशेष, डेगची। २ वल्मीक, दीमककी-पहाड़ी। ३ शिरस्त्राण, पगड़ी, टोपी। ४ पूगकोष, सुपारीका छिलका।

खोलना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन करना, अवरोध हटाना, उघाड़ना। २ छेदना, बिगाड़ देना। ३ तोड़ना, काटना। ४ मुक्त करना, छोड़ना। ५ लगाना, ठहराना। ६ जारी करना, चलाना ७ स्थापन करना। ८ आरम्भ करना। ९ प्रकाश करना, बतलाना। १० पूछना, प्रश्न करना।

खोलपेटुआ—बङ्गमें खुलना जिलामें प्रवाहित एक नदी। आशासूनीके निकट कपोताक्षसे यह नदी निकली है। पहिले यह नदी कुछ पश्चिम और जाकर तुढाढागाङ्गमें मिल गई है और उसके बाद दक्षिण मुंह होते हुवे सुन्दरबनमें फिर भी कपोताक्षनदीमें गिरी है।

जातिके प्राचीनतम ग्रन्थोंमें "जरथुस्त्र" नाम ही पाया जाता है।

इस समय जरथुस्त्र या जरदोस्त कहनेसे सिर्फ एक आवस्तिक-धर्मप्रचारकका ही बोध होता है। किन्तु पूर्वकालमें कई-एक जरथुस्त्र थे, अवस्ता ग्रन्थमें उनका उल्लेख है। उक्त ग्रन्थके देखनेसे ज्ञात होता है कि, उम्र और ज्ञानमें जो सबसे प्रधान और वृद्ध होते थे, उन्हींको जरथुस्त्र कहा जाता था। वैदिक जरदष्टि शब्दके साथ इस जरथुस्त्र शब्दका बहुत कुछ सादृश्य है।

इस समय जैसे "दस्तूर" कहनेसे अग्न्युपासक पारसिक पुरोहितोंका बोध होता है, पहले जरथुस्त्र कहनेसे भी ऐसा ही बोध होता था।

धर्मप्रचारक जरथुस्त्र भी पहले इसी तरहके एक "दस्तूर" थे। इनके पिताका नाम था पौरुषस्प।

स्पितमवंशमें इनका जन्म हुआ था, इसलिए प्राचीन ग्रन्थोंमें इनका स्पितमजरथुस्त्र नामसे उल्लेख है। स्पितम-वंश "हएचड्स्प"-नामसे भी प्रसिद्ध है। इसीलिए धर्मवीर स्पितम जरथुस्त्रकी कन्याका यस्न नामक ग्रन्थमें 'पौरुचिष्ट हएचड्स्पाना स्पितामी' नामसे वर्णन किया गया है।

किसी किसी ग्रन्थमें "जरथुस्त्रतेमो" अर्थात् श्रेष्ठतम और सर्वोच्च जरथुस्त्र, इस नामसे भी अभिहित है। इस-से जाना जाता है कि, ये वर्तमान 'दस्तुर-ए दस्तुरान्'की तरह सबसे प्रधान आचार्य थे।

अन्यान्य प्राचीन धर्मवीरोंकी तरह जरथुस्त्रका वास्तविक इतिहास नहीं मिलता है।

ग्रीकोंमें लिदियावासी जन्थोस् (४७० ई०से पहले)ने सबसे पहले लिखा था कि, जरदोस्त ट्रययुद्धके सात सौ वर्ष पहले जीवित थे। आरिष्टटल और इउडोक्सस् प्लेटोसे छह हजार वर्ष पहले इनका आविर्भाव हुआ था। प्लिनिके मतसे-ट्रय-युद्धसे ५ हजार वर्ष पहले जर-दोस्तका आविर्भाव हुआ था। इधर अग्न्युपासक पारसी-गण कहा करते हैं कि, "जन्दअवस्तामें जिनका कव-वीस्तास्प नामसे वर्णन है, वे ही पारस्यराज दरायुसके पिता हयस्तास्पेस् थे। उन्हींके समयमें जरदोस्त आवि-र्भूत हुए थे।" ऐसी दशामें जरथुस्त्र इसीसे ५५० वर्ष पहिलेके मालूम होते हैं। किन्तु प्रसिद्ध पारसिक धर्म-शास्त्रविद् मार्टिन हौग लिखते हैं कि,-"ईरानीके प्रवाद मूलक वीस्तास्प और ग्रीकवर्णित हयस्तास्पेस् दोनों एक व्यक्ति नहीं थे। वीस्तास्प किस समय हुए हैं, इसका अभी तक कुछ निर्णय नहीं हुआ। पारसिक धर्मशास्त्रों-की पर्यालोचना करनेसे जरथुस्त्रको ईसासे १००० वर्ष पहलेके सिवा बादका नहीं कहा जा सकता।"

पारसिकोंके धर्मग्रन्थोंमें जरथुस्त्रके विषयमें बहुत-सी अलौकिक घटनाओंका उल्लेख है, उनमें जरथुस्त्रको असाधारण देवातीत गुणसम्पन्न ईश्वरतुल्य व्यक्ति बत लाया गया है। किन्तु प्राचीनतम ग्रन्थोंमें इन्हें मन्त्र पाठक, वक्ता, अहुरमज्दका दूत और उन्होंके आदिष्ट उपदेशादिका प्रचारक कहा गया है। नवम यस्नमें इन्हें ऐर्येनवए जो अर्थात् आर्यनिवासमें प्रसिद्ध और बन्दिदाद-में इनको बाख्धी (वाह्लीक) वर्त्तमान बाल्ख नामक स्थानके रहनेवाला बतलाया गया है।

जरथुस्त्र एकेश्वरवादी थे। जिस समय देवधर्मा-वलम्बी भारतीय आर्यों और असुरमतावलम्बी पारसिकों-का परस्परमें विवाद हुआ था, तथा जिस समय अधिकांश पारसिक विविध देवियोंकी उपासना और कुसंस्कारोंके जालमें फँस गये थे, उस समय जरथुस्त्रने एकेश्वरवादका प्रचार किया था। पारसियोंके प्राचीनतम गाथा और यस्नग्रन्थसे इनके द्वारा प्रवर्तित ज्ञान और धर्मतत्त्वोंको जान सकते हैं। ये द्वैतवादी अर्थात् आध्यात्मिक और प्राकृत जगत्के दो मूलकारणोंको स्वीकार करते थे। वाक्, मन और कर्म इन तीनों योगों पर इनकी धर्मनीति स्थापित थी। जिस समय ग्रीकोंने वास्तविक ज्ञानमार्ग पर विचरण करना नहीं सीखा था, महात्मा प्लेटो भी जब गूढ़ आध्यात्मिक तत्त्वको नहीं समझ सके थे, उससे बहुत पहले जरथुस्त्रने ज्ञान और धर्मके विषयमें सु-युक्तिपूर्ण तत्त्वोंको प्रगट किया था। अहुनवैति गाथा-में जरथुस्त्रका मत उद्धृत है। उसके पढ़नेसे मालूम होता है कि, उस समयके तथा उससे भी बहुत शताब्दी बादके भावुक ज्ञानियोंकी अपेक्षा कहीं अधिक अनेक गभीर तत्त्व उनके हृदयमें उदित हुए थे। इन्हींके प्रभाव-से अब भी पारसिकगण उस प्राचीन आवस्तिक धर्मको

खोरी (हिं० स्त्री०) १ कपाल, खोपड़ी। २ भस्म, राख।

खोरु (हिं० पु०) वृषभशब्द, बैलकी बोली या डकार।

खौलना (हिं० क्रि०) उबलना, गर्म होकरके चुरने लगाना।

खौलाला (हिं० पु०) उबालना, पानी वगेरहको इतना गर्म करना कि वह बोलने लगे।

खौहा (हिं० वि०) १ खोराकी, पेटू, ज्यादा खानेवाला। २ खानेका लालची, मरभुखा। ३ अन्य व्यक्तिका उपार्जित धन व्यय करनेवाला, जो दूसरेका रुपया,पैसा,उड़ाता हो

ख्यात (ं० त्रि०) ख्या-क्त। १ कथित, कहा हुआ। २ विश्रुत, सुना हुआ। ३ ख्यातियुक्त, मशहूर। इसका संस्कृत पर्याय—प्रतीत, प्रथित, वित्त, विज्ञात और विश्रुत है।

ख्यातगर्हण (ं० त्रि०) ख्याता प्रसिद्धा गर्हणा निन्दा यस्य, बहुव्री०। अवगीत, बदनाम, जिसको बहुतसे आदमी बुरा कहते हों।

ख्यातव्य (सं० त्रि०) वक्तव्य, बतलाया जानेवाला।

ख्याति (सं० स्त्रि०) ख्या-क्तिन्। १ प्रशंसा, तारीफ। २ प्रसिद्धि, नामवरी। ३ कथन, बातचीत। ४ प्रकाश, रोशनी। ५ ज्ञान, समझ। ६ महत्तत्त्व।

"मनो महान् मति र्ब्रह्मा पूर्बुद्धिः ख्यातिरीश्वरः" । (सांख्यभाष्य)

ख्यातिकर (सं० त्रि०) प्रशंसा करनेवाला, जो तारीफ करता हो।

ख्यातिघ्न (सं० त्रि०) ख्यातिको नाश करनेवाला, जो नामवरीको मिटाता हो।

ख्यातिमत् (सं० त्रि०) ख्याति-मतुप्। ख्यातियुक्त, नामवर।

ख्यात्यापन्न (सं० त्रि०) ख्यात्या आपन्नो युक्तः, ३-तत्। ख्याति लाभ करनेवाला जो शोहरत हासिल कर चुका हो।

ख्यान—व्यवसायी और कृषिजीवी जातिविशेष। उत्तर बङ्गमें यह ख्येन और आसाममें कोलिता कहलाते हैं। ये अपनेको कायस्थ-सन्तान जैसा बतलाते हैं। इनके पूर्वपुरुष कोचविहारराज सरकारमें दैवज्ञका काम करते थे। ये देखनेमें सुश्री हैं। इनका मुख चौड़ा, माथा गोल, नाक कंदिया-जैसी और चक्षु आमकी फांक-जैसा होता है। इनमें कई एक गोत्र हैं। इनका विवाह सगोत्रमें नहीं होता। इन लोगोंमें बाल्यविवाहकी प्रथा प्रचलित है। पांचसे १२ वर्षकी अवस्था तक लड़कीका विवाह होता है। विवाहके कार्यकलापादि उच्च श्रेणीके हिन्दूकी तरह है। विवाहके पहले कन्या वरको उपहार भेजती है, वरके उपहार ग्रहण करने पर विवाह-बन्धन दृढ़ हो जाता है। इन लोगोंमें भी विधवा-विवाह और विवाह-बन्धनच्छेद निषिद्ध है। पूजा, विवाह प्रभृति मङ्गल-कार्यमें ये ब्राह्मणको नियुक्त करते हैं। ब्राह्मण, कायस्थ, और वैश्य इनके हाथका जल और मिष्टान्न खाया करते हैं।

ख्यापक (सं० त्रि०) ख्या-णिच्-ण्वुल। १ ज्ञापक, बतलानेवाला। २ प्रकाशक, जाहिर करनेवाला।

ख्यापन (सं० क्ली०) ख्या णिच्-ल्युट्। प्रकाशन, जहर।

ख्याल (अ० पु०) १ ध्यान, तवज्जोह। २ अनुमान, अटकल। ३ विचार, समझ। ४ आदर, सम्मान, लिहाज। ५ गीतभेद, किसी किस्मका गाना। इसमें एक मुखड़ा और एक अन्तरा लगता तथा विशेषतः शृङ्गार इसका वर्णन रहता है। ६ लावनीके गानेका कोई ढंग।

ख्याल खुशाल—एक विख्यात कवि तथा गायक। इनकी कवितायोंसे एक यों है :—

नन्दका निगर अतिही ढिटौना श्यामसलौना
रोम रिझोना वाकी चितवनमें है टौना।
रूप उजागर रसके सागर गुण आगर नटनागर
रसिक प्रीतम मन मोह लियो है मोहे न भावे
खाना पीना सोना रहना भौना॥

ख्याली (फा० वि०) १ फर्जी, कल्पित, अटकलपच्चू। २ खब्ती, पागल, सनकी।

ख्रिष्टान (हिं० पु०) ईसाई, किरष्टान।

ख्रिष्टीय (हिं० वि०) ईसवी, ईसाके मुताल्लिक।

खीष्ट (हिं० पु०) ईसा, मसीह। ईसा देखो।

ख़ाजा (फा० पु०) १ प्रभु, खाविन्द। २ प्रधान, सरदार। ३ सुप्रसिद्ध व्यक्ति, मशहूर शख्स। ४ प्रतिष्ठित वणिक्, बड़ा सौदागर। ५ मुसलमान साधुभेद, कोई मुसलमान फकीर। ६ अन्तःपुरका क्लीव दास, जनानखानेका नामर्द नौकर।

जरमान (सं० पु०) एक ऋषिका नाम।
जरमुआ (हिं० वि०) १ बहुत ईर्ष्या करनेवाला जल मरनेवाला। (पु०) २ एक गाली जिसे अकसर स्त्रियां कहती हैं।
जरमुई (हिं० वि०) जरमुआका स्त्रीलिङ्ग।

जरमुआ देखो।

जरयितृ (सं० वि०) जरणकारी, निगलने या खानेवाला।
जरयु (सं० त्रि०) जो वृद्ध होता जा रहा हो।
ज़रर (अ० पु०) १ हानि, नुकसान। २ आघात, चोट। ३ विपत्ति, आफत, मुसीबत।
जरल (हिं० स्त्री०) मध्यप्रदेश और बुंदेलखंडमें होनेवाली एक प्रकारकी घास, यह बारहों महीने होती है।
जरस (सं० क्ली०) १ जरा, वृद्धावस्था। (पु०) २ श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम।
जरसान (सं० पु०) जीर्य्यति जराग्रस्तो भवतीति जॄ वयो हानौ असानच्। पुरुष, मनुष्य।
जरांकुश (हिं० पु०) एक प्रकारकी सुगन्धित घास। यह मुञ्जकी तरह होती है। इसमें नीबूकीसी सुगन्ध आती है। इससे एक प्रकारका तेल निकलता है। साबुन या किसी दूसरी चीजमें इसका तेल देनेसे नीबूसी महक आती है।
जरा (सं० स्त्री०) जीर्य्यत्यनया जॄ-अङ्। षिद्भिदादिभ्यो ऽङ्। पा ३।३।१०४। ऋदृशोऽङि गुणः। पा ७।४।१६। इति गुणः। १ वृद्धावस्था, वार्द्धक्य, बुढ़ापा। २ कालकी कन्याका नाम। पर्याय विस्रसा। (भागवत)

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके मतसे—कालकी कन्या जरादेवी चतुःषष्ठी रोग इत्यादि भ्राताओंके साथ पृथिवी पर सर्वदा परिभ्रमण करती रहती हैं। यह मौका पाते ही लोगों पर आक्रमण करती रहती है। जो व्यक्ति प्रतिदिन आंखोंमें पानी देते, व्यायाम करते, पैरके अधोभाग, कान और मस्तक पर तेल लगाते, वसन्त ऋतुमें सुबह-शाम भ्रमण करते, यथासमय बाला स्त्रीसे सम्भोग करते, ठण्डे पानीसे नहाते, चन्दनका तेल लगाते, गन्दे पानीका व्यवहार नहीं करते, समय पर भोजन करते, शरत्‌ऋतुमें घामसे बचते, गरमियोंमें वायुसेवन करते, बरसातमें गरम पानीसे नहाते और वृष्टिके जलसे बचते हैं; तथा जो सद्यमांस, दुग्ध और घृत भोजन करते, भूखके समय आहार, प्यासके समय पानी और नित्य ताम्बूल भक्षण करते, हैयङ्गवीन (हालका बना हुआ घी) और नवनीत नियमित भोजन करते हैं तथा जो शुष्कमांस, वृद्धा स्त्री, नवोदित रौद्र, तरुण दधि और रात्रिमें दही, रजःस्वला, पुंश्चली, ऋतुहीना या अरजस्का नारीका सेवन नहीं करते, ऐसे लोगों पर जरा अपने भाइयों सहित आक्रमण नहीं कर सकती। जो लोग उक्त नियमोंसे विरुद्ध आचरण करते हैं, उनके शरीरमें जरा सर्वदा वास करती है। (ब्रह्मवैवर्तपुराण १६।३३ ५५)

३ एक कामरूपा राक्षसी, जो मगध देशके एक श्मशानमें रहती थी। इस राक्षसीने जरासन्धका आधे आधे शरीरको जोड़ कर उन्हें जिलाया था। जरासन्ध देखो। यह राक्षसी प्रत्येकके घरमें जाती थी, इसलिए ब्रह्माने इसका नाम गृहदेवी रख था। जो व्यक्ति इसकी नवयौवनसम्पन्न सपुत्र मूर्त्तिको अपने घरमें लिख रखेगा, उसका घर सदा धनधान्य और पुत्रपौत्रादिसे परिपूर्ण रहेगा। इसी राक्षसीका नाम षष्ठीदेवी है। (भारत आदि०)

(पु०) ४ एक व्याधका नाम। श्रीकृष्ण जब यदुवंश ध्वंसके उपरान्त वृक्षकी नीचे मौन भावसे तिष्ठते थे, उस समय इस व्याधने मृगके भ्रमसे उन्हें तीर मारा था, जिससे उनका वध हो गया। कहा जाता है कि, यह व्याध द्वापरमें अङ्गदके अवतार थे। (भाग०) जैन हरिवंशपुराणमें उक्त व्याधका जरत्कुमार नाम लिखा है। क्षीरिका वृक्ष खिरनीका पेड़। (शब्दर०) (स्त्री०) ६ स्तुति, प्रशंसा (ऋक् १।१८।१३७) ७ अप्रियवादिनी स्त्री, दुर्वचन कहनेवाली औरत (चाणक्य)
ज़रा (अ० वि०) १ कम, थोड़ा। (क्रि० वि०) २ थोड़ा, कम।
जराकुमार (सं० पु०) जरासन्ध।
जराग्रस्त (सं० त्रि०) जरया ग्रस्तः। जराभिभूत, वृद्ध बुड्ढा
जराती ((हिं० पु०) चार बार उड़ाया हुआ शोरा।
जरातुर (सं० त्रि०) जरया आतुरः। १ जीर्ण, पुराना, जो बहुत दिनोंका हो। २ जरारोगग्रस्त, जिसे वृद्धावस्थाका रोग हुआ हो।

है, किन्तु किसी दूसरे व्यञ्जनके साथ युक्त होने पर विपरीत फल होता है। (वृत्तरत्नाकरटीका)

ग (सं॰ क्ली॰) गै-क। १ गीत। २ गणेश। ३ गन्धर्व। ४ एक गुरुवर्ण।

गंगई (हिं॰ स्त्री॰) गलगलिया। मैना जातिकी एक चिड़िया जो ग्यारह इंच लम्बी भूरे रङ्गकी होती और भारतके प्रायः सभी प्रान्तोंमें मिलती है। यह खेतों, मैदानों और जङ्गलोंमें फिरती है। इसके अण्डा देनेका कोई ठिकाना नहीं है। यह झाड़में घोसला बना लेती और चार अण्डे देती है। गंगई बोलनेमें खूब तेज है।

गंगकुरिया (हि॰ स्त्री॰) हरिद्राभेद एक प्रकार लम्बी और बड़ी गांठवाली हलदी यह कटकमें होती है।

गंगतिरिया (हि॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, जलपीपर। यह सजल भूमिमें होती है। इसकी पत्तियां नुकीली निकलती है। इसमें पीपल जैसी बाल आती है। इसका दूसरा नाम पनिसिगा है। जलपिप्पली देखो।

गंगबरार (हिं॰ पु॰) गङ्गा या किसी दूसरी नदीकी धारा या बाढ़के हटनेसे निकली हुई भूमि। इस पर नदीकी मिट्टी जमी रहती है

गंगरी (हिं॰ स्त्री॰) बनी नामकी एक कपास। इसके पत्र दीर्घ तथा विस्तृत और तन्तु, सूक्ष्म एवं कोमल लगते है। पुष्पके नीचेकी कमरखी पत्तियां दीर्घ और बैंगनी होती है। इसे विहारमें जेठो बगलामें भोगला, बरारमें टिकडी जूड़ी आदि कहा जाता है।

गंगला (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका शलगम। यह गङ्गाके किनारे होता और आकारमें दीर्घ और अच्छा लगता है।

गंगवा (हि॰ पु॰) वृक्षविशेष। यह दक्षिणमें समुद्र किनारे तथा ब्रह्म, अन्दामान और सिंहलमें उपजता है। यह चिर हरित् रहता है। इससे श्वेतवर्ण दुग्ध निःसृत होता जो वायु लगनेसे जमता और काला लगता है। ताजा दूधका स्वाद खट्टा होता और बहुतोंका मत है कि जहरीला भी है। इसके काष्ठसे दियासलाई आदि बनायी जाती है।

गंगशिकस्त (हि॰ पु॰) नदीसे काटी हुई जमीन।

गंगेटो (सं॰ स्त्री॰) ओषधिविशेष, एक पत्ती। यह पिड़काको प्रवाहित करती और मलमूत्र रहती है।

गंगेरन (हिं॰ स्त्री॰) गोरचतखड़ुला, गुलशकरी। इसके पत्रोंमें दो नोकें रहतीं और पुष्प पाटलवर्ण लगते हैं। गंगेरनका फल परिपक्व होने पर फट कर पांच टुकड़े हो जाता है। गाङ्गेरुकी देखो।

गंगेरुआ (हिं॰ पु॰) काकाङ्गोलुप, एक झाड़ी। इसके पत्र श्वेतरूपसे सीकोंमें सुसज्जित रहते और क्षुद्र क्षुद्र फल लगते है। गाङ्गेरुक एक पार्वत्य वृक्ष है।

गंगोटी (हिं॰ स्त्री॰) गङ्गातीरस्थ मृत्तिका, गङ्गाकी मट्टी।

गंगोलिया (हिं॰ पु॰) निम्बुकभेद, किसी किस्मका नीबू। यह खट्टा और दानेदार होता है।

गंजिया (हिं॰ स्त्री॰) १ खारी, कोई जालीदार थैली। इसमें घसियारे घास डालते हैं। २ पात्रविशेष, कोई वर्तन। यह मट्टीका बनता, मुंह तङ्ग रहता और देखनेमें चपटा लगता है। ३ रुपया डालनेकी कोई थैली। यह सूतसे जालीदार बनायी जाती है

गंजेडी (हिं॰ वि॰) गांजाखोर, गांजा पीनेवाला।

गंठकटा (हि॰ पु॰) गांठ काट लेनेवाला, जो कमरमें बंधे रुपये पैसे चाकू या किसी दूसरी चीजसे कपड़ेको काट कर निकाल लेता हो।

गंठजोड़ा, गंठबन्धन देखो।

गंठबन्धन (हि॰ पु॰) १ ग्रन्थिबन्धन, खूंटजोड़ाई। यह पति तथा पत्नीका उत्तरीय वस्त्रका प्रान्तभाग परस्पर बांधनेसे होता है। विवाहमें ही इसका आरम्भ है। गंठबन्धन स्नानदान और पूजार्चनादिके समय किया जाता है। २ विवाह, शादी। ३ मैत्री, दोस्ती।

गंठिवन (हिं॰ स्त्री॰) ग्रन्थिपर्ण देखो।

गंठवा (हिं॰ पु॰) धागोंका एक जोड़. इसमें तानेवानेमें या नयी पायीका तागा पुराने कपड़ेके तागेसे मिलाया जाता है।

गडधिसनी (हिं॰ स्त्री॰) १ चाटुकारिता, खुशामद, चापलूसी। २ सख्त मिहनत, कड़ी मशक्कत। ३ बैठक, बैठाई।

गंड़तरा (हिं॰ पु॰) गंतरा, बच्चोंके नीचे बिछाया जाने वाला कपड़ा।

गंडनी (हि॰ स्त्री॰) गण्डाला, मरहटा।

सूय यज्ञ करते समय जरासन्धको पराजित न कर सकनेके कारण यज्ञको होते न देख श्रीकृष्णकी शरण ली थी। श्रीकृष्ण भीम और अर्जुनके साथ स्नातक ब्राह्मणके वेश धारण कर जरासन्धको वध करनेके लिए मगध देशमें आये। यहां आ कर नारायणने कहा कि—"देखो अर्जुन! यह गिरिव्रज अत्यन्त भयसङ्कुल है। वह देखो! वैहार, वराह, ऋषभ, ऋषिगिरि और चैत्यक, ये पांचों पर्वत नगरीके चारों ओर कैसे शोभा दे रहे हैं, ये पर्वत इस तरह हैं कि, जिससे अकस्मात् कोई शत्रु आ कर नगरी पर आक्रमण नहीं कर सकता। इसके सिवा न्याय-युद्धमें भी जरासन्धको परास्त करना अत्यन्त कठिन है। इसीलिए आज हम सब अपने अपने वेशको छोड़ कर ब्रह्मचारी वेश धारण कर यहां आये हैं। वह जो तीन भेरियाँ देख रहे हो, उनको राजा बृहद्रथने वृष-रूपधारी दैत्यको मार कर उसीके चमड़ेसे बनवाया था। उन तीनों भेरियों पर एक बार आघात करनेसे उनमेंसे एक मास तक गभीर ध्वनि निकलती रहती है। अब तुम लोग शीघ्र हो उन भेरियोंको तोड़ डालो।" भीम और अर्जुनने श्रीकृष्णकी बात सुन तुरन्त ही भेरियोंको तोड़ डाला। पीछे कृष्णके आदेशसे चैत्यप्राकारके पास आ कर उन्होंने सुप्रतिष्ठित पुरातन चैत्यशृङ्गको तोड़ दिया और हृष्टचित्तसे वे मगधपुरमें घुस गये। धीरे धीरे ये तीनों जरासन्धके पास पहुंच गये। स्नातक ब्राह्मणका वेश देख किसीने भी उन्हें न रोका।

जरासन्धने उन लोगोंको स्नातक ब्राह्मण समझ मधु-पर्कादि दे कर कुशल पूछा। इस पर श्रीकृष्णने कहा—"ये दोनों इस समय नियमस्थ हैं, पूर्वरात्रके व्यतीत होनेसे पहले ये लोग न बोलेंगे।" जरासन्ध कृष्णकी बात सुन उन लोगोंको यज्ञागारमें छोड़ कर खुद अपने घरको चले गये। पीछे इन्होंने आधी रातके समय आ कर स्नातक ब्राह्मणोचित उन लोगोंकी पूजा की। भीम और अर्जुनने पूजा ग्रहण कर ब्राह्मणोचित स्वस्तिवाक्योंका प्रयोग कर आशीर्वाद दिया। जरासन्धको उन लोगोंके वेश पर सन्देह हुआ, इन्होंने पूछा—"हे विप्रगण! मैं जानता हूं कि, स्नातकगण सभामें जाते समय ही माला वा चन्दन धारण करते है, अन्य समय नहीं; किन्तु आप लोगोंके वस्त्र रक्तवर्ण, सर्वाङ्ग चन्दनानुलिप्त और भुजाओं पर ज्याचिह्न देख रहा हूं। शरीरको आकृति भी क्षात्रतेजका प्रमाण दे रही है, तथापि आप लोग ब्राह्मण कह कर अपना परिचय दे रहे हैं। अब सत्य कहिये कि आप लोग कौन हैं?" इस पर कृष्ण जलद गम्भीर स्वरसे कहने लगे—"नराधिप! ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ये तीनोंहो जातियां स्नातक व्रत ग्रहण कर सकती हैं। इसके विशेष और अविशेष दोनों ही नियम हैं। क्षत्रिय जाति विशेष नियमी होने पर धनशाली होती है और पुष्पधारी तो अवश्य ही श्रीमान् होती है। इसीलिए हम लोगोंने पुष्प धारण किये हैं। क्षत्रिय बाहु-बलसे बलवान् अवश्य हैं, किन्तु वाग्वीर्यशाली नहीं हैं। क्षत्रियका बाहुबल ही प्रधान है, इसलिए हम लोग यहां युद्धार्थी हो कर उपस्थित हुए हैं, शीघ्रही हम लोगोंसे युद्ध कर आप क्षत्रियधर्मकी रक्षा कीजिये। राजन्! वेदाध्ययन, तपोनुष्ठान और युद्धमें मृत्यु होना स्वर्गप्राप्ति-में कारण अवश्य है; किन्तु नियमपूर्वक वेदाध्ययनादि नहीं करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति नहीं होती। परन्तु यह निश्चित है कि, युद्धमें प्राणत्याग करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होगी। इसलिए देरी न कर शीघ्र हो युद्धमें प्रवृत्त होओ। मैं वासुदेवतनय कृष्ण हूं और ये दोनों वीरपुरुष पाण्डुतनय भीम और अर्जुन है। तुम्हें वध करनेके अभिप्रायसे ही हम लोग इस वेशसे यहां आये हैं, अब समय नहीं है, शीघ्र ही तुम अपने दुष्कृतोंके फल भोगने-के लिए तयार हो जाओ।" जरासन्ध कृष्णकी इस बातको सुन कर बहुत ही कुपित हुए और उसी समय वे योद्धृ-वेश धारण कर भीमके साथ बाहु-युद्धमें प्रवृत्त हो गये। दोनोंमें घमसान युद्ध होने लगा। क्रमशः प्रकर्षण, आकर्षण, अनुकर्षण और विकर्षण द्वारा एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। युद्धमें जरासन्धको अत्यन्त क्लान्त देख श्री-कृष्णने जरासन्धको मारनेके अभिप्रायसे भीमको इशारा कर कहा—"हे भीम! अब तुम्हें जरासन्धको अपना दैवबल और बाहुबल दिखाना चाहिये।" कृष्णका इशारा पा कर भीमने जरासन्धको उठा लिया और उन्हें घुमाने लगे। सौ बार घुमानेके बाद उन्होंने जानुद्वारा आकुञ्चनपूर्वक जरासन्धको पीठ तोड़ दी तथा निष्पेषण-

२ अज्ञानता, नासमझी। ३ मूर्खता, बेवकूफी। ३ गंवार औरत। ४ गंवारपन लिये हुई, जो मूर्खतासे भरी हो। ५ भद्दी, बेढंगी।

गंवारू (हिं० वि०) ग्रामीण, देहाती, बेढंगा, भद्दा।

गंस (हिं० स्त्री०) १ द्वेष, दुश्मनी। २ लगनी बात। ३ वाणकी अनी, तीरकी नोक, गांसी।

गंसना (हिं० क्रि०) १ कसना, जड़ करके बांधना। २ बानेको खूब कड़ा करना। सूतको गंस देनेसे बुनावटमें छेद नहीं रहता। ३ गठना, कड़ा पड़ना। ४ भरना। ५ चुभना, छिदना, घुसना।

गंसीला (हिं० वि०) तीक्ष्णाग्र, नोकदार। २ चुभीला, धंस जानेवाला। ३ ठोस, ठस, जिसमें छेद न रहे।

'गइया, गऊ देखो।

गई करना (हिं० क्रि०) टालना, बराना, सुनी अनसुनी करना।

'गईबहोर (हिं० वि०) बिगड़ीको बनानेवाला।

गउंथ (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, एक घास। यह अफगानस्तान और बलूचस्तानमें अपने आप उपजा करती है, किन्तु भारतमें चौपायोंको खिलानेके लिये लगायी जाती है। इसका बीज आश्विन कार्तिक मास खेतकी मेड़ों पर डाला और जलसे अच्छी तरह सींचा जाता है। गउंथ ६ मासमें प्रस्तुत होता है।

गऊ (हिं० स्त्री०) गो, गाय।

गकार (सं० पु०) ग स्वरूपे कारः। ग स्वरूप वर्ण, 'ग' अक्षर।

गक्कर (हिं० पु०) जातिविशेष, एक कौम। इस जातिके लोग पञ्जाबके उत्तर-पश्चिममें निवास करते हैं।

गगन (सं० क्ली०) गच्छन्त्यस्मिन्, गम-युच् गमान्तादेशः। गमेर्गश्च। उण् २।७७। १ आकाश, आसमान, चलने फिरनेकी खाली जगह। इसका संस्कृत पर्याय—वर्हि, धन्व, आप, पृथिवी, भू, स्वयम्भू, अध्वा, सागर, समुद्र और अध्वर है। दूसरे पर्याय आकाश शब्दमें देखो। गगनका गुण—व्यापकत्व, छिद्रत्व, अनाश्रय, अनालम्ब, आश्रयान्तरशून्य, अव्यक्त और अधिकारिता है।

"छिति जलपावक गगन समीरा।" (तुलसी)

गगन शब्दके नकारका णत्व भी हुआ करता है। बहुतोंके मतमें मूढ़ व्यक्ति ही णकारको स्वीकार करते हैं, वास्तविक णकार नहीं बनता। किन्तु आचार्यमञ्जरीके निम्नलिखित श्लोकमें णत्वका प्रमाण पाते हैं—

"खगगणो गगणो परिरम्यते।"

२ शून्य, खाली जगह। ३ लग्नको अपेक्षा दशम राशि, कुण्डलीका १०वां घर। ४ अभ्रधातु, अबरक। ५ मेघ, बादल। ६ छन्दोविशेष। यह छप्पयका एक भेद है।

गगनगति (सं० त्रि०) गगने गतिर्यस्य, बहुव्री०। १ आकाशगामी, हवामें उड़नेवाला। (पु०) २ देवता। ३ सूर्यादि ग्रह। (स्त्री०) ४ आकाशगमन, आसमानी चाल, उड़ान।

गगनचर (सं० त्रि०) गगने चरति चर-टच्। आकाशगामी, आसमानमें चलने फिरनेवाला। २ विद्याधर। (पु०) ३ पक्षी।

गगनचरी—विजयार्द्ध पर्वतकी दक्षिण श्रेणीमें स्थित साठ नगरोंमेंसे एक नगर।

गगनधूल (हिं० स्त्री०) १ किसी किस्मका कुकुरमुत्ता। यह गोलाकार रहती और वर्षा ऋतुको पेड़ोंके नीचे या खुले मैदानमें उपजती है। इसका वर्ण श्वेत आता और नूतन पुष्पका शाक बनाया जाता है। शुष्क हो जाने पर इसके मध्यभागसे मलिन हरित्‌वर्ण रजः निकलता है। यह धूलि कान बहनेकी अति लाभदायक औषध है। २ केतकीपुष्परजः, केवड़ेके फूलकी धूल।

गगनध्वज (सं० पु०) गगने गगनस्थ वा ध्वज इव। १ मेघ, बादल। २ सूर्य।

गगनन्दन—विजयार्द्ध पर्वतकी उत्तर श्रेणीमें स्थित पचास नगरोंमेंसे एक नगर

गगनप्रिय (सं० पु०) एक दैत्य। (हरिवंश ४१ अ०)

गगनमेड़ (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह जलके निकट निवास करती है। पर्याय—कुंज, करांकुल है।

गगनमण्डल (सं० क्ली०) गगनस्य मण्डलम्, ६-तत्। आकाशमण्डल, आसमानका घेरा।

गगनमारकगण (सं० पु०) अभ्रमारकद्रव्य, अबरकको कुश्ता बनानेवाली चीजें।

जर्जरीक (सं॰ त्रि॰) जर्जति जीर्णी भवति जर्ज-ईकन्। १ बहुछिद्रविशिष्ट द्रव्य, जिसमें बहुतसे छेद हो गये हों। २ जरातुर, बहुत वृद्ध, बुड्ढा।

जर्जी—अंगरेज लोग जिनको George or St George कहते हैं, वे ही मुसलमानों द्वारा जर्जी कहाते हैं। मुसलमानोंके मतसे ये भी एक पैगम्बर हैं।

जर्डन—तुर्कस्थानकी एक नदी। हर्मान् पहाड़के नीचे जहां कई एक शिलालिपियां लगीं, यह निकली और ग्रोरोम झील, जूलिया शहर, टाईवेरिया झील, अलगोर उपत्यका आदि जगहों होती हुई बहरेलात या मृत समुद्रमें जा गिरी है। इसका पानी ईसाइयोंके लिये बहुत पवित्र है।

जर्णी (सं॰ पु॰) जीर्य्यति च्छीणो भवति जृ-नन्। १ चन्द्र, चन्द्रमा। २ वृक्ष, पेड़। (त्रि॰) ३ जीर्ण, पुराना।

जर्त्त (सं॰ पु॰) जायतेऽस्मात् जन बाहुलकात् त प्रत्ययेन साधुः। १ योनि, भग। २ हस्ती, हाथी।

जर्त्तिक (सं॰ पु॰) जृ-बाहुलकात् तिकन्। १ वाहीकदेश, प्राचीन वाहीक देशका एक नाम। २ उक्त देशका निवासी।

जर्त्तिल (सं॰ पु॰) वनजात तिल, जङ्गली तिल।

जर्त्तु (सं॰ पु॰) जायतेऽस्मात् जन तु। १ योनि, भग। २ हस्ती, हाथी।

जर्द (फा॰ वि॰) पीत, पीला।

जर्दा (फा॰ पु॰) जरदा देखो।

जर्दालु (फा॰ पु॰) खूबानी नामकी मेवा।

जर्दी (फा॰ स्त्री॰) पीलापन, पीलाई।

जर्दोज (हिं॰ पु॰) जरदोज देखो।

जर्दोजी (हिं॰ स्त्री॰) जरदोज़ी देखो।

जर्नल (हिं॰ पु॰) जरनल देखो।

जर्भरि (सं॰ त्रि॰) जृम्भ-गात्रविनाशे अरिः। १ गात्रविनाशकर्त्ता, जंभाई लेनेवाला। २ स्तुतिकारक, प्रशंसा करनेवाला।

जर्मनी—मध्य यूरोपका एक प्रसिद्ध देश। १८७१ ई॰में १८वीं जनवरीको उत्तर-जर्मन सङ्घ, दक्षिण जर्मनीके छोटे छोटे राज्य-समूह और फरासीसियोंसे जीते हुए आलसक एवं लोरेन इन सबको मिला कर जर्मन साम्राज्यका संगठन हुआ था। गत महासमरके कारण इसका विस्तार और पराक्रम सङ्कुचित हो गया है। १९१९ ई॰की भार्सेलिसकी सन्धिके फलसे वर्तमान जर्मनी राज्य संगठित हुआ है। परन्तु जर्मनोंको अब आलसक और लोरेन प्रदेश फरासीसियोंको लौटा देना पड़ा है। इसका पूर्वकी तरफका कुछ हिस्सा पोलोंके स्वाधीन राज्यके साथ जोड़ दिया गया है। उत्तरके स्लिज उइग हलष्टियानका बहुतसा अंश डेनमार्कको देना पड़ा है। दक्षिणका हलेटिशन् नामक छोटा जिला जेकोस्लोभाकिया नामक नवगठित राज्यके हाथमें चला गया है। पश्चिमके इउपाल और मलमेडी नामक दो स्थान बेलजियमको मिले हैं। इस प्रकार विभाग हो जानेके कारण अब पश्चिमकी राइन नदीने फरासीसी और जर्मनियोंको विभक्त कर रखा है। पूर्वमें पोलैण्ड राज्यके गठित होने और वहांके कुछ प्रान्तदेशीय स्वाधीन राज्योंके संस्थापित होनेसे जर्मनीके साथ रशियाका साक्षात् संश्रव कुछ भी नहीं रहा और न हो सकता है। वर्तमान समयमें जर्मनीके पश्चिममें हालैण्ड, बेलजियम, लक्सेमबर्ग, और फ्रान्स, दक्षिणमें सुइजरलैण्ड, अष्ट्रिया और जेकोस्लोभाकिया तथा पूर्वमें पोलैण्ड अवस्थित है।

नवगठित जर्मनराज्यका क्षेत्रफल ४७२०१४'६ वर्गमील है, परन्तु १८७१ ई॰में इसका रकबा ५४०८५७'५ वर्गमील था। भार्सेलिसकी सन्धिका परिणाम यह हुआ कि जर्मनीको बड़े बड़े दश शहरोंसे हाथ धोना पड़ा, जिनमें पचीस पचीस हजार लोगोंका वास था। सन्धि होनेके कारण उसकी जनसंख्या ५५,७६९८१२ घट गई है।

१८७१ ई॰से जर्मनीकी लोकसंख्या क्रमशः बढ़ रही थी। १९१४ ई॰में महासमरके प्रारम्भसे पहले जो गणना हुई थी, उससे मालूम हुआ है कि वहां ६,७,७९०,००० मनुष्योंका वास था। परन्तु महायुद्धमें १९१४ ई॰से १९१८ ई॰ तक करीब १८०,००० मनुष्य मारे जानेके कारण जर्मनीको बड़ी हानि हुई। १९१९ ई॰के नवगठित जर्मनीमें ६०,८,२७,५७९ मनुष्य गिने गये थे, जिनमें २८,९८२,१३७ पुरुष और ३१,८५५,४४२ स्त्रियां है। इस तरह जर्मनीमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियां हजार

विष्णुपदी, जह्नु—तनया, सुरनिम्नगा, भागीरथी, त्रिपथगा, त्रिस्रोताः, भ षसू, अर्ध्य तीर्थ, तीर्थराज, त्रिदशदीर्घिका, कुमारसू, सरिद्वरा, सिद्धापगा, स्वर्गापगा, स्वापगा, ऋषिकाल्य, हैमवती, स्वर्वापी, हरशेखरा, सुरापगा, धर्मद्रवी, सुधा, जह्नुकन्या, गान्दिनी, रुद्रशेखरा, नन्दिनी, अलकनन्दा, सितसिन्धु, अध्वगा, उग्रशेखरा, सिद्धसिन्धु, स्वगसरिद्वरा, मन्दाकिनी, जाह्नवी, पुन्या, समुद्रसुभगा स्वनदी, सुरदीर्घिका, सुरनदी, स्वर्धुनी, ज्येष्ठा, जह्नुसुता, भीष्मजननी, शुभ्रा, शैलेन्द्रजा, और भवायना। वैद्यक राजनिघण्ट के मतसे इसका जल शीतल, स्वादिष्ट, स्वच्छ, अत्यन्त रुचिकर, पथ्य, पवित्र, पापनाशक, तृष्णा और मोहनाशक, दीपन एवं प्रज्ञावृद्धिकारी है।

गङ्गा अत्यन्त प्राचीन पुण्यसलिला नदी है। हिन्दुओंका ऐसा दृढ़ विश्वास है कि पृथ्वीके सर्वतीर्थोंमें गङ्गा ही प्रधान है। गङ्गामें मृत्यु होनेसे मनुष्यजातिसे लेकर निकृष्टजाति कीट, पतङ्ग तक भी मोक्ष लाभ करते हैं। (ऋग्वेद १०।७५।५), कात्यायन, श्रौतसूत्र, शतपथ, ब्राह्मण-प्रभृति प्राचीन ग्रन्थोंमें गङ्गा नाम है। पुराण, उपपुराण, इतिहास, इन सब प्राचीन पुस्तकोंमें गङ्गाकी थोड़ी बहुत कथा लिखी हुई है। वाल्मीकि रामायणके गङ्गा हिमालयकी कन्या हैं। सुमेरुतनया मनोरमा वा मैनाके गर्भसे इनकी उत्पत्ति है। देवताओंने किसी कार्य वशसे हिमालय पहाड़के निकट गङ्गाको भिक्षाकर लिया है।* तभीसे यह ब्रह्माके कमण्डलुमें रहने लगीं। इधर सगर-राजाके दुष्कर्मी पुत्र कपिल मुनिके शापसे भस्म हो जानेके कारण, सगर वंशके राजा पवित्र गङ्गाको पृथ्वी पर लानेकी चेष्टा करने लगे। किन्तु उनकी कितनी ही चेष्टायें निष्फल हुईं। बहुत दिनके बाद सगरवंशज राजा भगीरथ अपने मन्त्रियोंके ऊपर राज्यका भार अर्पण कर पहले पहल ब्रह्माकी तपस्या करने लगे। उनकी कठोर तपस्याके हजार वर्षके बाद ब्रह्माजी सतुष्ट हुए। ब्रह्माजी सब देवताओंको साथ लेकर राजा भगीरथके निकट पहुंचे। भगीरथने अपनी इच्छा (अभिप्राय) प्रगट की। भगीरथका यह अभिप्राय था कि गङ्गाजीको पृथ्वी पर लानेसे उनके पूर्वपुरुष मोक्ष पा जायें। ब्रह्माके स्वीकृत होते भी वे अपनी कठोर तपस्यामें लगे रहे। राजा भगीरथने सोचा, जब गङ्गा स्वर्गसे पृथ्वी पर आवेंगी तो यह निश्चय है कि उनका भार पृथ्वी सह न सकेगी। इसलिये गङ्गाधारणको महादेवकी तपस्या करनी पड़ी।* शिवजीको सन्तुष्ट करनेमें उन्हें अधिक परिश्रम न पडा। एक वर्षके भीतरही शिवजी उनकी तपस्यासे संतुष्ट होकर वर देनेके लिये उपस्थित हुए। तब भगीरथने अपना अभिप्राय प्रगट किया और शिवजीने गङ्गाको अपने ऊपर धारण करनेका भार ले लिया। गङ्गाजीने सोचा कि यह अच्छा ही हुवा। इस समय महादेवजी मेरे हाथमें आ जायगे। क्यों कि मै इतने जोरसे स्वर्गसे गिरूंगी कि पृथ्वी छेदन करती हुई शिवजीके साथ पातालमें प्रवेश कर जाऊंगी। महादेवजी गङ्गाकी आन्तरिक इच्छाको जान कर पहलेहीसे सचेत हो गये। यथासमय गङ्गाजी स्वर्गसे शिवजीके मस्तक पर पतित हुईं। शिवजीके असाधारण कौशलसे उनकी धारा जटाके मध्यहीमें रुक गई, किसी प्रकार बाहर न जा सकी। भगीरथ गङ्गाजीको न देख कर पुनः तपस्या करने लगे। उनकी तपस्यासे संतुष्ट होकर गङ्गाको भूतपतिने छोड़ दिया और वह विन्दुसरोवरमें गिर गईं। विन्दुसरोवरमें गिरनेसे गङ्गाकी सात धारायें हो गईं यथा ह्लादिनी, पावनी और नलिनी ये तीनों पूर्व ओर, वंक्षु, सीता और सिन्धु दूसरी तीन पर्वत, ग्राम, वन, उपवनादिको बहती हुई पश्चिमकी ओर और एक धारा भगीरथको बतलाई हुई राहसे चली। इसी कारण इनका नाम भागीरथी पड़ा। भागीरथीके समुद्रमें जा करके गिरनेसे भस्मीभूत सगरके लड़के पवित्र होकर स्वर्गको सिधारे। भगीरथकी इच्छा पूरी हुई। (रामायण आदि० ४२,४३, ४४ सर्ग)

गङ्गाका दूसरा नाम विष्णुपदी है। इसी नाम अथवा दूसरेही किसी कारणसे हो, बहुतोंका विश्वास है कि गङ्गा वैकुण्ठवासी भगवान् विष्णुके पदसे उत्पन्न हुई है। किन्तु विष्णुपुराणके पाठ करनेसे ऐसा मालूम पड़ता है

* कत्तिवासी रामायणके मतमें देवगण शिवके साथ व्याहनेके लिये गङ्गाको ले गये। पार्वतीको सौतका डर गङ्गाको न देख कलमयी होनेका शाप दिया।

* देवीभागवतके मतमें गङ्गाको धारण करनेके लिये वसुंधराने महादेवकी आराधना की।

संगठनके लिए ६ फरवरी १६१६ ई०की सभा बुलाई गई। उसी साल ११ अगस्तको उइमार नामक स्थानमें जो शासनपद्धति संगठित हुई, उसे ही कार्यरूपमें परिणत करनेका निश्चय किया गया। 'जर्मन-साम्राज्य' यह नाम उठा कर अब उसे 'जर्मनरीक्' यह नवीन नाम दिया गया।

१८७१ ई०की शासनपद्धतिके प्रारम्भमें ही लिखा था कि, वह प्रूसियाके राजाके नेतृत्वाधीनमें राजन्यमन्डली के द्वारा गठित हुआ। और नव-पद्धतिमें, इस बातको समझानेके लिए कि यह राजाओंको नहीं बल्कि जनसाधारणकी है, यह घोषित किया गया—जर्मन जातिने एकत्र होकर अपने राष्ट्र वा रिकमें न्याय और स्वाधीनताके प्रवर्तनकी इच्छासे अन्तर्भाग और बहिर्भाग शान्ति-स्थापन एवं सामाजिक उन्नतिके लिए यह पद्धति संगठित की।

जर्मनोंने इस बार किसी भी राजाकी अधीनता स्वीकार न की : अपना शासन स्वयं करेंगे, ऐसा निश्चय किया। उन्हें आन्तर्जातिक सम्मिलनीमें अभी तक स्थान नहीं मिला, किन्तु उनकी शासन पद्धतिमें पहले ही लिखा है कि वे अन्तर्जातिक विधिको पूर्णतया मानते हैं।

गणतन्त्रनीति स्थापित करनेके लिए उन लोगोंने दो रीतियां ग्रहण की है ; प्रथमतः रिक्ष्टैग और रिक्स्प्रेसिडेण्ट नामक दो प्रतिष्ठान और द्वितीयतः समस्त विषयोंमें और सब समय जनसाधारणका मतामत जाननेके लिए Referendum Initiation (जो सुइजरलैण्डमें बहुत दिनोंसे प्रचलित था) का प्रवर्तन किया।

नव-पद्धतिके अनुसार बीस वर्षसे ज्यादा उम्रवाले पुरुष और स्त्री सभी भोट देनेके अधिकारी हो सकते हैं और पचीस वर्षसे ज्यादा उम्रवाला कोई भी व्यक्ति प्रतिनिधिपदका प्रार्थी हो सकता है। जर्मन-राष्ट्रके सभापतिका चुनाव भी सर्वसाधारणकी भोटके अनुसार होगा। यहां Proportional Representation रीतिका प्रवर्तन होनेसे जिन लोगोंकी शक्ति अल्प है, वे भी भोट-युद्धमें न्याय विचार पाते हैं।

जर्मनीकी प्रतिनिधि-सभा फिलहाल ४ वर्षके लिए चुनी जाती है। प्रतिनिधिकी संख्याकी कोई हद नहीं हैं, जनसंख्याके अनुसार उसकी संख्या हुआ करती है। प्रतिनिधिसभा अन्य किसी प्रतिष्ठान वा Political body के आह्वान पर निर्भर नहीं है। यह अपनी इच्छाके अनुसार एकत्र हो कर जातीय कार्य सम्पादन कर सकती है। जर्मन रिकके सभापति ७ वर्षके लिए चुने जाते हैं। ३५ वर्षसे ज्यादा उम्रके पुरुष वा स्त्री हर एक व्यक्ति इस पदका प्रार्थी हो सकता है। सभापति निर्वाचन जनसाधारणके द्वारा ही होता है, उसमें प्रतिनिधिसभा कुछ भी हस्तक्षेप नहीं करती, परन्तु उसका प्रत्येक कार्य प्रतिनिधि-सभाके अनुमोदनानुसार होना चाहिये। वे चाहे प्रतिनिधि-सभाके सभ्य हों वा न हों, हर एक व्यक्तिको मंत्रित्व दे सकते है। परन्तु वह मन्त्री प्रतिनिधि-सभाका विश्वासभाजन होना चाहिए। प्रतिनिधि-सभाका विश्वास उठ जाने पर प्रत्येक मन्त्रीको अपने कार्यसे अवसर ग्रहण करना पड़ता है। सभापति पर वे ही भार दिये जाते है, जो साधारणतः राष्ट्रपति पर न्यस्त किये जाते है।

नव्य जर्मनी एकमात्र महासभाके द्वारा परिचालित है। जैसे इंग्लैण्डमें हाउस् आफ लार्डस् है, फ्रान्स और इटलीमें सिनेट है, सुइजरलैन्ड और अमेरिकामें सिनेट वा Federal council है, उस प्रकार जर्मनीमें कुछ भी नहीं है। स्वतन्त्र प्रदेशके प्रतिनिधियोंने यहाँ कोई स्वतन्त्र प्रतिष्ठानका संगठन नहीं किया। हां, जनसंख्याके अनुसार कुछ प्रदेशोंमें उनके प्रतिनिधि अवश्य भेजे जाते हैं। इन प्रतिनिधियोंको सभा जनसाधारणकी प्रतिनिधि सभा वा Reichstag के अधीन है। इसको Reichsrat कहते हैं। फिलहाल इसमें ६५ भोट हैं, जिनमें २६ भोट प्रूसियाके है। हर एक कानूनका कच्चा चिट्ठा इसीमें पेश किया जाता है। परन्तु Reichsrat के बिना अनुमोदन किये ही वह चिट्ठा Reichstag में पेश किया जा सकता है। Reichstag द्वारा अनुमोदित कानूनको अगर Reichsrat पसन्द न करे, तो उस पर प्रथमोक्त सभा पुनः विचार करती है। उस पर यदि ⅔ अंश सभ्य सम्मति दें, तो वह आइन रूपसे ग्रहण किया जाता है। सभापति महाशय चाहें तो प्रतिनिधिसभाके आइनको अस्वीकार नहीं कर सकते।

महीनेकी अमावस्या, कृष्णपक्षीय अष्टमी तिथिको गङ्गा स्नान करनेसे प्रचुर फल होता है। चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण और व्यतीपातमें गङ्गास्नान करनेसे सहस्र गुण फल है। (ब्रह्मपुराण) गङ्गामृत्तिका सिर पर धारण करनेसे सूर्यसे भी अधिक तेजशाली हो सकते हैं। (वह्निपुराण) गङ्गामें किसी रूप पुण्यकार्य करनेसे सहस्र गुण फल होता है। अन्न, गो, सुवर्ण, रथ, घोड़ा और गजदान करनेसे जो फल मिलता है, गङ्गाजल दान करनेसे उससे सौ गुना अधिक फल है। गण्डूष मात्र गङ्गाजल पान करनेसे अश्वमेधयज्ञ करनेका फल होता है, स्वच्छन्दरूपसे पान करने पर मुक्तिलाभ है। जो मनुष्य सात रात अथवा तीन ही रात गङ्गा तीर पर वास करता है, उसको नरकका कष्ट भोगना नहीं पड़ता। तपस्या, यज्ञ, ब्रह्मचर्य और दान करनेसे जो सुख नहीं मिलता, केवल गङ्गातीरमें वास करने पर मनुष्य वही सुख अर्थात् मोक्ष पा सकता है (ब्रह्मपुराण) ६०००० विघ्न सब दा गङ्गाको घेरे रहते हैं। अभक्त अथवा कुकर्मी मनुष्य जब गङ्गाके तीरमें उपस्थित होते हैं तो उनके हृदयमें काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि रिपु आ करके भर जाते और गङ्गास्नान करने नहीं देते हैं। (भविष्य) मातृविक्रय तथा पितृविक्रयसे भी गङ्गाका दान ग्रहण करना निन्दनीय है। गङ्गाके भीतर कभी दान नहीं लेना चाहिये (मत्स्यपुराण) जिसको गङ्गासे अधिक दूसरे तीथमें भक्ति है और जो गङ्गाको उतनी भक्ति नहीं करता उसको कठिन नरकयातनाका अनुभव करना पड़ता है। (भविष्य) ज्ञान पूर्वक गङ्गाके किनारे मृत्यु होने पर मुक्ति होती है और अज्ञान मृत्यु स्वर्ग भला है। मनुष्यके विषयमें क्या कहना है—कृमि, कीट, पतङ्ग, आदि जिन जन्तुक मृत्यु गङ्गामें होती अथवा जो वृक्ष उखड़ कर गङ्गामें भी गिर जाता, वह परमगति पाता है। (भविष्यपुराण) जिसका आधा शरीर मृत्युकालको गङ्गाजलमें डूबा रहता, उसको भी पुनः जन्म नहीं, ब्रह्मसायुज्य मिलता है। (स्कन्द) मनुष्योंकी जितनी हड्डियां गङ्गाजलमें रहतीं, उतने ही हजार वर्ष पर्यन्त उसका ब्रह्मलोकमें वास होता है। इसी कारण भारतीवासी मृत व्यक्तिकी अस्थि गङ्गामें डाल देते हैं। (कौर्मपुराण)

जिसका केश, रोम और नखादि भी गङ्गाजलमें निक्षिप्त होता, उसको सद्गति मिलती है। काशीखण्डमें गङ्गामाहात्म्य अत्यन्त सुन्दर रूपसे वर्णित है। उसके मतसे स्वर्ग, मर्त्य और पातालमें जितने तीर्थ हैं, सबसे गङ्गा तीर्थ प्रधान माना जाता है। ऐसा कोई पदार्थ ही नहीं है जिसके साथ गङ्गाको उपमा वा उपमेय भाव हो सके। समस्त याग, यज्ञ करनेसे जो फल होता है, गङ्गाके अकेले दर्शनसे उसका शतगुण फल मिल जाता है। ऐसा कोई भी पाप नहीं, जो गङ्गाजल स्पर्शसे विनष्ट न हो। ऐसा कौन अभीष्ट है जो गङ्गा स्नानसे पूर्ण न हो। शौच, आचमन, सेक, निर्माल्य, मलघर्षण, गात्रमर्दन, क्रीड़ा, दानग्रहण, अभक्ति, अन्य तीर्थोंकी भक्ति वा प्रशंसा, विष्ठा, मूत्रपरित्याग और सन्तरण ये १३ कार्य गङ्गामें करना निषिद्ध है।

किसी पुराणके मतमें वैशाख मासकी तृतीया तिथिको ब्रह्मलोकसे हिमालय पहाड़ पर गङ्गा अवतरण हुई हैं। ब्रह्मपुराणके मतमें ज्येष्ठ मासके शुक्लपक्षकी दशमी तिथि मंगलवारको गङ्गा हिमालय पहाड़से पृथ्वी पर गिरीं। (भीष्म और स्नान प्रभृति शब्दविशेष देखो।)

पौराणिक मतमें विष्णु, गङ्गा और ग्राम्यदेवता आदिका एक स्थितिकाल निरूपित है। आस्तिक हिन्दुओंका विश्वास है कि वह निर्दिष्ट समय व्यतीत होनेसे, विष्णु, गङ्गा आदि धरातल छोड़ कर देवलोक चले जांयगे मनुष्योंकी दुर्दशाकी सीमा न रहेगी। देवीभागवतके मतमें कलियुगके पांच हजार वर्ष व्यतीत होने पर गङ्गा, सरस्वती और पद्मावतीका शाप मोचन होगा, ये तीनों अपनी २ मूर्तिको धारण कर विष्णुलोक चली जायगी। यह छोड़ कर विष्णुको एक और अनुमति है कि विष्णु, लोक जाते समय काशी और वृन्दावन भिन्न दूसरे तीर्थ अपने साथ लेती जांयगी। (देवीभागवत ८। ८।२१)

ब्रह्मवैवर्तपुराणका मत है कि जब सरस्वतीने गङ्गाको वैकुण्ठ परित्याग करने और भारत पर अवतीर्ण होनेका शाप दिया, तो गङ्गाने रोते हुए अत्यन्त आकुलतासे विष्णु भगवान्के निकट शापमोचनकालनिर्णय करनेका अनुरोध किया। विष्णुने उन्हें अत्यन्त कातर देख कर कहा:—

कर देनेसे ही जर्मनोकी वर्तमान परिस्थितिका पता लग जायगा—

"एक सम्भ्रान्त जर्मन महिला यह कहते हुए रोने लगी कि, युवा अवस्थामें मैं फरासोसी, इटालो, रूस और अंग्रेजी भाषा सीख रही थी, सङ्गीत सिखानेके लिए भी एक शिक्षक नियुक्त था, मेरी बहन चित्र बनानेमें निपुण है; सुकुमार शिल्पमें उसका खूब यश था, बार्लिनके उच्चपदस्थ समाजमें हमारे कुटुम्बस्वजन हैं, कहना फिजूल है कि दासदासियोंकी भी मेरे घर कमी न थी। पीछे वह फिर कहने लगी—'अब मेरी ऐसी अवस्था है कि, विदेशी लोगोंके लिए अपने रहनेका मकान तक खाली कर दिया है। उनकी सेवा करना यही मेरा एकमात्र कार्य है। उन लोगोंको मकानमें ठहरा कर मैं जो रोजगार करती हूं, उसके बिना मेरी गृहस्थीका खर्च नहीं चल सकता। इसलिए मुझे उनकी मरजीके मुताबिक काम करना पड़ता है। एक मुहूर्तके लिए भी मैं स्वाधीन नहीं हूं। मैं साहित्य, शिल्प, सङ्गीत, देश सेवा, सामाजिकता सब कुछ भूल गई हूं। युद्धके पहले जिन विदेशियोंको चोर, बदमाश, धोखेबाज समझ कर उनकी छायासे दूर रहती थी, आज उन्हींकी सेवा कर रही हूं।" वास्तवमें बार्लिनके प्रत्येक मध्यवित्त परिवारको ही आज विदेशी अतिथियोंकी चाकरी बजानी पड़ रही है।"

गत युद्धमें ब्रिटिश-साम्राज्य ही जर्मनीका सर्वप्रधान और एक ही शत्रु था। किन्तु जर्मनीकी वर्तमान अवस्थाको देख कर इस बातको बिल्कुल भूल जाना पड़ता है। आजकल अङ्गरेजोंको जर्मन परम मित्र समझते हैं। बहुतसे जर्मन राष्ट्र-नायक इस मतका पोषण करते हैं कि, ब्रिटिश-साम्राज्यकी क्षमताके ह्रास होनेसे जर्मनीकी हानि होगी। भारतीय स्वराज और महात्मा गान्धीकी अपूर्व कृतकार्यताका संवाद सुन कर बहुतसे उच्च पदस्थ जर्मन डर गये हैं। मिश्र, भारतवर्ष आदि देशोंकी स्वाधीनता मिलनेसे ब्रिटिश-जाति दुर्बल हो जायगी यह विचार कर बहुतसे जर्मन जननायक दुःखित हो रहे हैं। जर्मनी-प्रवासी उक्त बंगाली महाशयका कहना है—"यह सहजमें ही समझ सकते हैं कि एशियावासियोंमें विद्रोह उपस्थित होने पर उसके निवारणके लिए ब्रिटिश साम्राज्य अवश्य ही जर्मनीकी सहायता प्राप्त करेगा।"

जर्मनीमें फिलहाल विद्या, व्यवसाय, संवादपत्र-परिचालन आदि नाना विभागोंमें यहूदियोंने ही प्रधान स्थान अधिकार किया है। इसलिए जर्मन लोग उन पर बहुत नाराज रहते हैं। सुना जाता है कि इस समय जर्मन-राष्ट्रमें भी यहूदियोंका प्रभाव अधिक है। असली ईसाई जर्मनीमें बहुत कम लोग ही गणतान्त्रिक वा रिपब्लिक पन्थी हैं। जर्मनके लोग प्रायः सभी राजभक्त हैं। ये लोग कैसरको पुनः राजा बनानेके लिए उत्सुक हैं। कमसे कम रिपब्लिककी जगह राजतन्त्रको पुनः कायम करनेके लिए इन लोगोंका छिपी तौरसे आन्दोलन जारी है। कोलनके "जाइटुङ्ग" और बार्लिनके "जाइटुङ्ग" आदि संवादपत्रोंका सुर एकसा ही मालूम पड़ता है। इन पत्रोंकी खपत अच्छी है, प्रत्येककी पचास हजार प्रतियां बिक जाया करती हैं।

इतिहास हम लोग जहां तक अनुमान करते हैं कि, जर्मनीका ऐतिहासिक विवरण तभीसे आरम्भ है, जबसे जूलिअस सीजर ई० सन्के ५८ वर्ष पहले गोलके शासक नियुक्त हुए थे। इससे कुछ पहले जर्मनीका विशेष सम्बन्ध दक्षिण प्रदेशोंसे था और भूमध्यसागरसे अनेक यात्री समय समय पर यहां आते थे, किन्तु उनके भ्रमण-वृत्तान्तका पूरा पता नहीं चलता है। पहले पहल टिउटोनिक लोगोंने दूसरी शताब्दीके अन्तमें इलिरिया, गौल और इटली पर आक्रमण किया था। जब सीजर गौल पहुंचे, तब वह समग्र पश्चिमी भाग जो अब जर्मनी कहलाता है गौलिश वंशके अधिकारमें था। सीजरके आनेके पहले जर्मनीको एकदल सेनाने राइन पर जो जर्मन और गौल लोगोंकी उत्तरीसीमाके रूपमें अवस्थित था चढ़ाई कर दी और उसे अधिकृत कर वहां वे रहने लगे। इस समय गौल लोग जर्मनसे बहुत उत्पीड़ित किये जा रहे थे, तब सीजरने पहले पहल जर्मनीके राजा आरियोविसतसके विरुद्ध लड़ाई ठान दी। ई०सन्के ५५ वर्ष पहले उन्होंने उसीपेट और टेनकेटेरीको जो निम्न राइनसे आये हुए थे

उसे प्रकृत गङ्गा कहते हैं। जिस स्थानमें गंगा और पद्मा विभिन्न मुखको गई है, वहांसे गंगाका वद्दीप (डेल्टा) आरम्भ हुआ है। इस डेल्टामें गङ्गाने भिन्न भिन्न मुखसे समुद्रमें प्रवेश किया है। उसमें गङ्गा पश्चिम प्रान्तमें और मेघना पूर्व प्रान्तमें अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २८०८० वर्गमील है। गङ्गाका मुहाना सागरतीर्थसे पूर्व चट्टग्राम तक १२५ कोस होगा। इस स्थानके बीच ८ प्रधान शाखायें समुद्रमें पतित हुई हैं, यथा-गङ्गा मेघना, वा ब्रह्मपुत्र, हरिणहाट पुस्कर, मुर्जाटा वा कागना वड़पुंग, मलिञ्जु, रायमंगल वा यमुना, हुगली। सिवा इनके अनेक शाखाएं भूखण्डमें प्रविष्ट हो गयी हैं और नदीमुख न होनेसे अपेक्षाकृत गभीर हैं। गङ्गाकी प्रकृत लम्बाई सागरतीर्थसे ७५४॥ कोस तथा मेघनाके मुखसे ८४० कोस है। ग्रीष्मकालमें साधारणतः गंगाका विस्तार कहीं पर आध मील, कहीं पर एक मील और कहीं पर, दो मीलसे कुछ अधिक रहता है। समुदाय गङ्गा जिस स्थान पर अपना अधिकार जमाये हुए है, उसका क्षेत्रफल ३९११०० वर्गमील है। वर्षाकालमें नदीका जल कितना हो बढ़ा करता है। समुद्रके निकटवर्ती प्रदेशमें ज्वार और भाटा होता है। समय समय जिस स्थानमें जितना जल बढ़ता, उसका परिमाण निम्नलिखित है।

	वर्षाकाल		ग्रीष्मकाल	
	फु०	इं	फु०	इं
इलाहाबाद	४५	६	२९	
वाराणसी	४५	०	३४	
कहलगांव	२९	६	२८	३
जैलंघी	२६	०	२५	६
कुमारखाली	२२	६	२२	
अग्रद्वीप	२३	८	२३	
कलकत्ता (भाटाके समय)	७		६	७
ढाका	१४			

हरिद्वारमें गङ्गाकी चौड़ाई बहुत कम है। वहां ७००० वाराणसीमें १९००० राजमहल सब समय २०७००० पर ज्वारके समय १८००००० घनफुट जल प्रति सेकेण्ड निकलता है। परीक्षा करके देखा गया है कि इलाहाबादसे वाराणसी तक १५५ कोस पथ प्रति कोस १ फुटके हिसाबसे निम्न हुआ है। वाराणसीसे कहलगांव तक प्रति कोस १० इञ्च, कहलगांवसे हुगली नदीके आरम्भ तक प्रति कोस ८ इञ्च वहांसे कलकत्ता तक प्रति कोस ८ इञ्च और कलकत्तासे समुद्र पर्यन्त २से ४ इञ्च तक जल नीचा पड़ गया है।

अन्यान्य नदियोंकी भांति गङ्गा अपने उत्पत्ति-स्थानसे जितनी दूर गई है उनका वेग घटा है। प्रथम उनका वेग प्रस्तर खण्ड और मृतिकाको बहा कर ले जाता है। वेगकी न्यूनता और माध्याकर्षणके प्राबल्यसे प्रस्तरखण्ड और मृत्तिका तलदेश पर गिरती है। इसी कारण नदी जितना समुद्रके समीप पहुंचती है, गभीरता घटती है, बीचमें रेत पड़ जाती है। वर्षा समय उसके ऊपर रेत जम जाती है। इसी प्रकार रेत इतनी उठ आती कि नदी वहां तक नहीं पहुंच पाती, उसके पार्श्व होकर अपना राह बनाती और एक ओरकी राह तोड़ करके दूसरी ओर दिखाती है। इसी प्रकार नदीके मुखमें सागर वक्ष पर प्रकाण्ड भूखण्ड निर्मित होता है और डेल्टा कहलाता है। भूतत्त्ववित् अनुमान करते हैं, जिस स्थानमें गङ्गा पद्मासे स्वतन्त्र होकर प्रवाहित हुई है, उसी स्थानसे गङ्गाके डेल्टा आरम्भ है। उसी स्थानसे आजतक जहां समुद्र है, समस्त प्रदेश पहले समुद्र ही था। वही समुद्र आजकल मनुष्योंके वासोपयोगी भूमि बन गया है। इस समस्त जनपदकी सृष्टि गङ्गाकी ही कृपाका फल है। हिमालय अञ्चलकी मट्टीसे उनका निर्माणकार्य सम्पन्न हुआ है। कलकत्तेमें नदीकी मृत्तिकाके २५० हाथ नीचे जीवकङ्काल काठ, कोयला आदि निकलते हैं। प्रायः ८६ वर्ष पहले गाजीपुरमें एक समय परीक्षा करके देखा गया कि वहां पर प्रति वर्ष गङ्गा ६३६८०००० टन मृत्तिका लाकर जमा करती है। एक टन (२७ मन १८ सेर) के बराबर है। इसीसे समझ पड़ता, कितनी मृत्तिका गंगामें प्रतिवर्ष बहती है। गंगाकी उत्पत्तिकाल सेही यह काम चल आता है। इससे कितने स्थान पर कितनी नवीन भूमि निर्म्मित हुई, वह कौन वर्णन कर सकता है! गंगा जिस राहसे चली है, उसका पार्श्वस्थ प्रदेश समधिक उर्व्वरा है। गंगाका रेतीला जल दूरतलमें प्रवा-

गया। जर्मनीमें जितने राजा हो गये हैं, सभीसे ये ही शूरवीर थे। इनके समयमें सामरिक विभागकी खूब उन्नति हुई जिससे विदेशी राजा लोग इस देश पर आक्रमण करनेका साहस नहीं कर सकते थे। इनकी मृत्यु ८३६ ई०की जुलाईमहीनेमें हुई। बाद प्रथम ओटो जर्मनी के राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उस समय उनकी उमर केवल चोबीस वर्षकी थी। ठनकमर नामके इनके एक सौतेला भाई था जिसने राज्यके यथार्थ अधिकारीका दावा करते हुए उनसे लड़ाई ठान दी। ओटोको जीत हुई और वे निष्कण्टक राज्य करने लगे। थोड़े समयके बाद इन्हें फ्रांसके राजा ४र्थ लुइसे लड़ना पड़ा था। ये कट्टर ईसाई थे। इनके समयमें भी ईसाई-धर्मका खूब प्रचार हुआ। ८७३ ई०में २य ओटो जर्मनीके राजा और रोमके सम्राट्के पद पर सुशोभित हुए। ८७४ ई०में बहुतसी सेनाको साथ ले वे फ्रांसकी राजधानी पेरिसकी ओर अग्रसर हुए, किन्तु वाध्य हो कर इन्हें लौट आना पड़ा। ८८० ई०में दोनोंमें सन्धि हो गई। ८८० ई०में ये इटलीको गये और वहांसे फिर कभी लौट कर नहीं आये। ८८३ ई०में इनके लड़के ३य ओटो राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए। इनके समयमें राज्य भरमें बहुत गोलमाल मचा। इनके मरने पर १००८ ई०में २य हेनरी राजा हुए। सिंहासन पर बैठनेके साथही इनका ध्यान सबसे पहले राजशासनकी ओर आकर्षित हुआ। इन्हींके समयमें लोरीनमें दश बड़ी बड़ी लड़ाइयाँ लड़ी गईं जिनमें बहुतोंकी खूनखराबी हुई। इनकी मृत्युके पश्चात् कम्बमें एक सभा हुई जिसमें २य कोनराड राजा चुने गये। १०२४ ई०में ये राज्य-सिंहासन पर बैठे। इनके सौतेले लड़के २य अरनेस्टने इनके राज्यकार्यमें बहुत बाधा डाली और कई बार भावी उत्तराधिकारी होनेके लिये इनसे लड़ भी पड़े। किन्तु उसकी सब चेष्टाएं निष्फल हुईं। कनार्डने जीतेजी अपने लड़के ३य हेनरीको राज्यभार सौंपा। ये शान्त-प्रिय राजा थे। इनके समयमें समस्त जर्मनीमें शान्ति विराजती थी, लड़ाई दंगे बहुत कम होते थे। इनके राजत्वकालके प्रारम्भमें सम्पूर्ण यूरोपका गिरजोंकी दशा शोचनीय हो गई थी। लेकिन इनके यत्नसे उनका पुनरुद्धार किया गया। १०४६ ई०में एकदल सेनाके साथ ये इटली गये थे। १०५६ ई०में इनकी मृत्यु हुई थी। पीछे इनके लड़के ४र्थ हेनरीके नामसे राजसिंहासन पर बैठे। नाबालिग अवस्थामें इनकी माता महारानी आगनस राजकार्य चलाती थी। इन्होंने कईएक दुर्ग बनवाये थे। राज्य शासनकी ओर इनका अच्छा ध्यान था। १०८४ ई०में इन्होंने इटलीसे लड़ाई ठान दी और उसी साल ये वीबर्टसे रोमके सम्राट् बनाये गये। इनके मरने पर इनके लड़के ५म हेनरीके नामसे प्रसिद्ध हुए। इनका सारा समय लड़ाईमें ही व्यतीत हो गया, क्योंकि इन्हें कई बार फ्लैण्डर, बोहेमिया, हङ्गरी और पोलेण्डसे लड़ना पड़ा था।

५म हेनरीकी मृत्युके साथ साथ फ्रनकोनियन वंशका भी लोप हो गया। उसी साल ११२५ ई०में सैक्सनीके ड्यूक लोथेर जर्मनीके राजा निर्वाचित हुए। पहले पहल इन्हें बोहेमियासे युद्ध करना पड़ा था। ११३३ ई०में इटली जाकर इन्होंने २य इनोसेण्ट नामक पोपसे राज्यमुकुट प्राप्त किया था। ११३७ ई०में इटलीसे लौट आने पर इनका प्राणान्त हुआ। पीछे ११३८ ई०में फ्रैङ्कोनियाके ड्यूक कोनरद सिंहासन पर आरूढ़ हुए इनके समयमें कोई उल्लेखयोग्य घटना न हुई। ११५२ ई०में बम्बर्गमें ये पञ्चत्वको प्राप्त हुए। पीछे स्वावियाके भूतपूर्व ड्यूक फ्रेडरिकके पोते बरबरोस १म फ्रेडरिक नाम धारण कर जर्मनीके राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। तीनवर्ष राज्य करने बाद ये रोमका सम्राट् बननेके लिये आल्पस पर्वत पार कर गये। इनका अधिकांश समय इटलीमें ही व्यतीत होता था। राइनलैण्ड आदि स्थानोंमें शान्ति स्थापन करनेके बाद ये ११५७ ई०में पोलेण्ड गये थे। इनके समयमें शहरोंकी उन्नति दिन दूनी और रात चौगुनी होने लगी। हेनरी-दी-लायनके जानी दुश्मन थे। जो कुछ हो इनके समय प्रजा आनन्दसे समय बिताती थी। इनकी मृत्युके बाद ११६८ ई०में इनके लड़के ६ष्ठ हेनरी राजा हुए। इस समय सब जगह शान्ति विराजती थी, अतः किसीसे इन्हें लड़ाई न करनी पड़ी, तथा इनके समय और कोई विशेष घटना न हुई। अब ४र्थ ओटो

वङ्गवासी जिसको आजकल गङ्गा कहते हैं उसीका प्रकृत नाम भागीरथी है। भौगोलिकके मतमें यह मूल गङ्गा नहीं है वरन् गङ्गाकी एक शाखामात्र है। गौड़नगरके दक्षिणमें गङ्गासे यह शाखा निकली हुई है। वर्तमानके मानचित्रसे देखा जाता है कि गौड़के दक्षिण हो कर पूर्व मुख होती हुई जो नदी पहले पद्मा कहलाती और पीछे कीर्तिनाशा कहला कर समुद्रमें मिल गई है, वही नदी आजकल प्रकृत गङ्गा नदी कहकर पुकारी जाती है। ०० वर्ष पहले जिस स्थान हो कर गङ्गा बहती थी, आजकल वहां जल नहीं है। कुछ दिन पहले ठीक वही स्थान सागरसङ्गम था, आजकल वह स्थान भूभाग है।

२४ परगनामें इस तरहका परिवर्तन बहुत जगह देखा जाता है। आजकल जिस कालीघाट हो कर मुद्राकार आदिगङ्गा प्रवाहित होती है, किसी समय वह स्थान हो कर विस्तीर्ण भागीरथी बहती थी। आजकल कालीघाटके थोड़ा दक्षिण जानेसे बोध होता है कि वहां ग के गर्भके अतिरिक्त और कोई दूसरा चिह्न नहीं रह गया है। किन्तु दो सौ वर्ष पहले उस स्थान हो कर स्रोतस्वती गङ्गा बहती थी। समुद्रके साथ गङ्गाका संसर्ग था। बड़ी बड़ी नावें वहां होकर जाती आती थीं। कालीघाट कुछ दूर दक्षिण यद्यपि आदि गङ्गा अदृश्य हो गई है तथापि आजकल उस स्थानके रहनेवाले अपनेको गङ्गातीरवासी बतलाते हैं। गङ्गागर्भ कट जानेसे जो सब तालाब बन गये है, उन्हींके जलको गङ्गा जल समझ कर पूजादि सकल कार्य में व्यवहार करते हैं।

आजकल आदिगङ्गा अर्थात् वङ्गदेशकी प्रकृत गङ्गा समुद्रसे मिली नहीं है। इस आदिगङ्गाके इसतरह अपूर्व परिवर्तन देख कर प्रसिद्ध स्मार्त रघुनन्दनने लिखा है:—

"प्रवाहमध्ये विच्छेदे तु अन्तःसलिलवाहित्वान्न दोषः।
अन्यथा इदानीं गङ्गायाः सागरगामित्वानुपपत्तेः॥"

आजकल जहां गङ्गाका प्रवाह नहीं है वहां गङ्गाको अन्तःसलिला जैसा स्वीकार करनेमें कोई दोष नहीं है। नहीं तो वर्तमान समयमें गङ्गाका सागरमें जाना यह असिद्ध बोध होगा।

२ हिमवत् और मेनाकी बड़ी लड़की। ३ शान्तनुकी स्त्री और भीष्मकी माता या धर्मकी स्त्रियोंमें से एक। ४ आकाशगङ्गा। ५ पाताल गङ्गा। ६ नीलकण्ठकी स्त्री और शंकरको नानी। (हिं० पु०) ७ नारायणका पुत्र जो बृहदारण्यकोपनिषद्की टीकाके रचयिता थे।

गङ्गाका (सं० स्त्री०) गङ्गा एव गङ्गा-स्वार्थे कन्-टाप् आकारस्य विकल्पेन ह्रस्वत्वम् "भाषितपुंस्काच्च पा ७।३।४८। गङ्गा।

गङ्गाकूट—विजयार्द्ध पर्वतके कूटों (मंदिरों) मेंसे एक कूट।

गङ्गाक्षेत्र (सं० क्ली०) गङ्गायाः क्षेत्रं, ६-तत् पु०। गङ्गा तीरसे दोनों पार्श्वकी दो कोस तककी जमीन।

"तीराद् गव्यूतिमात्रन्तु परितः क्षेत्रमुच्यते।" (स्कन्दपु०)

गङ्गाखेर—हैदराबादराज्यके परभनी जिलाकी एक जागीरका सदर। यह अक्षा० १८° ५८' उ० और देशा० ७६° ४५' पू० में गोदावरीतीर पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५००७ होगी। यहां दो विद्यालय, एक स्थानीय डाकघर और एक सरकारी डाकघर तथा पुलिस इन्स्पेक्टर और सब-रजिष्ट्रारका आफिस हैं।

गङ्गागोविन्दसिंह—पाइकपाड़ा-राजवंशके प्रतिष्ठित और सुप्रसिद्ध वारेन हेष्टिंग्सके दीवान। उनके पिताका नाम गौराङ्ग था। गङ्गागोविन्द उत्तरराढ़ीय कायस्थ समाजके मान्यगण्य कुलीन लक्ष्मीधरके वंशीय थे। वे १७६९ ई० के पहले अपने बड़े भाई राधागोविन्दसिंहके स्थलाभिषिक्त होने पर वङ्गदेशके नायब सूबादार महम्मद रेजा खांके अधीन कानूनगोका काम करते थे। महम्मद रेज़ा खांके पदच्युत होने पर उनकी भी नौकरी छूट गई थी। उसके बाद वह कलकत्ता आकर कार्यलाभकी आशासे रहने लगे। क्रमशः लाट हेष्टिंगसकी कृपादृष्टि उनपर पड़ी। बहुत थोड़े ही दिनोंमें कार्यदक्षता और चतुरता गुणके कारण वे हेष्टिंग्सके दीवान हो गये कोई कोई कहते हैं कि कान्त बाबूके यत्नसे गङ्गागोविन्द हेष्टिंग्सके दीवान हुए थे

दीवान होनेके बाद राजस्व-विभागके समस्त कार्यों का भार उन्हींके ऊपर सौंपा गया। वे देशी मनुष्योंसे घूस लेने लगे। उन्हींके द्वारा बड़े लाट हेष्टिंगसको भी यथेष्ट घूस मिलने लगा। १७७५ ई०के पहले मई मासमें घूस लेनेके अपराधमें उनकी नौकरी छूट गई।

मुकुट धारण किया और उन्हीं लोगोंकी सहायतासे पोप जोनको पदच्युत कर उनके स्थान पर कौरवाराके पीटरको पोपके पद पर नियुक्त किया। १३४८ ई०में इनकी मृत्यु हुई। पीछे १३४६ ई०के जनवरी महीनेमें ४थं चार्ल्स जर्मनीके राजसिंहासन पर बैठे। इन्होंने अच्छी तरहसे राज्य चलाया। आपसका मतभेद जाता रहा। ये थोड़े ही समयमें जर्मनी, बोहेमिया, लोमबरडी और बरगण्डीके भी राजा थे। इन्होंने निम्न लुसतिया और साईलेसियाके कुछ भाग बोहेमियाके अन्तर्गत कर लिये थे। इनके मरने पर इनके लड़के वेनसेसलस १३७६ ई०में राजा बनाये गये। इनके समयमें स्वीसका घोरतर युद्ध हुआ था। इनकी मृत्युके पश्चात् रुपर्ट कुछ काल तक जर्मनीके राजा था। निःसन्तान अवस्थामें इनकी मृत्यु हो जाने पर इनके चचेरे भाई जीवस्ट और सिगिसमुण्डमें राज्य पानेके लिये विवाद आरम्भ हुआ। किन्तु १४११ ई०में जोवस्टके मर जाने पर सिगिसमुण्ड ही राजा बनाये गये। इन्होंने दूसरे दूसरे राज्योंसे चौथ वसूल कर अपने राज्यकी आय बढ़ानेकी खूब चेष्टा की थी, लेकिन वे इसमें कृतकार्य न हो सके। १४३७ ई०में इनका देहान्त हुआ। पीछे इनके जमाई अष्ट्रियाके एलवर्ट राजसिंहासन पर बैठे। ये केवल जर्मनीके ही राजा न थे वरन हंगरी और बोहेमिया भी इन्हींके अधिकारमें था। राज्यशासनकी ओर इनका अच्छा लक्ष्य था। १४३८ ई०में इनका देहान्त हो जाने पर इनके आत्मीय ष्टीरीयाके ड्यूक फ्रेडरिक ४र्थ फ्रेडरिक नामसे जर्मनीके राजसिंहासन पर बैठे। १४५२ ई०में जब इन्हें रोमकी गद्दी मिली तब ये ३य फ्रेडरिक नामसे प्रसिद्ध हुए। अष्ट्रियाके इतिहासमें इनका नाम बहुत मशहूर हो गया है सही किन्तु जर्मनी देशकी दशा इनके समयमें बहुत खराब हो गई। चारों ओर लड़ाई छिड़ी हुई थी, शत्रुओंको ये दमन नहीं कर सकते थे। इटलीमें इनका कुछ भी प्रभाव नहीं था। फ्रांसके राजाने इनके कई एक अधिकृत भूभाग दखल कर लिये।

अनन्तर १४८६ ई०में मक्सीमिलियन राजा बनाये गये। १४६० ई०में इन्होंने भीयन्नासे हंगेरीयनको मार भगाया और उनकी पैतृक सम्पत्ति ले ली। पीछे वे इटलीको गये। इनके समयमें सर्वोच्च विचारालय स्थापित हुआ जिसमें १६ सदस्य नियुक्त किये गये। १५१८ ई०में इनका देहान्त हुआ। बाद राजगद्दीके लिए इनके पौत्र स्पेनके राजा चार्ल्स और १म फ्रेंकिस आपसमें झगड़ने लगे। किन्तु उसी सालके जून मासमें चार्ल्स राजा बनाये गये। उस समय इनकी गिनती अच्छे राजाओंमें होती थी केवल जर्मनीमें ही इनका आधिपत्य नहीं था, वरन स्पेन, सिसली, नेपल्स और सरदीनियाके लोग भी इन्हें अपना राजा मानते थे। इन्होंने ईसाई धर्मका पुनरुद्धार किया। इस समय जर्मन कृषकगण कई एक कारणोंसे बहुत अप्रसन्न हो गये और उन्होंने मिल कर चार्ल्ससे लड़ाई ठान दी। यह लड़ाई बहुत दिनों तक चलती रही जो इतिहासमें कृषकोंकी लड़ाई कह कर मशहूर है। फ्रांस और टर्कोंसे भी इन्हें कई बार लड़ना पड़ा था। इनके बाद १म फरडीनन्द पोपकी सम्मतिके बिना राजा बनाये गये। तुर्कोंने इन्हें बहुत उत्पीड़न किया इसलिये १५६८ ई०में दोनोंमें एक सन्धि स्थापित की गई। १५६४ ई०में ये कराल कालके गालमें फँसे। इनके समयमें राजकार्यमें बहुत परिवर्तन किया गया। इनके पश्चात् इनके लड़के २य मक्सिमिलियन राजा हुए। ये शान्तप्रकृतिके थे। इस समय कोई विशेष घटना न हुई। पीछे इनके लड़के २य रुडोलफ राज्याधिकारी बनाये गये। १५७५ ई०के अक्तुबर मासमें रोममें भी इनका आधिपत्य स्वीकार किया गया। इनके राजशासनसे प्रजा खुश नहीं थी। इनकी मृत्युके बाद इनका लड़का ४र्थ फ्रेडरिक उत्तराधिकारी ठहराया गया। किन्तु ये नाबालिग थे इसलिये इनका चचा जौन कासीमोर ही राजकार्य देखते थे। ये बहुत दयालु तथा युद्धप्रिय राजा थे। इस समय भी तुर्क लोग पूर्व जर्मनीमें बहुत ऊधम मचा रहे थे। इसलिये १५८३ ई०में दोनोंमें लड़ाई छिड़ी और १६०६ ई०के नवम्बर मासमें समाप्त हुई। तुर्कोंने हार मान कर राजासे सन्धि कर ली जिससे उन्हें राजासे जा कर मिला करता था वह बन्द कर दिया गया। रुडोलफके बाद २य फरडीनन्द राजा हुए। ये कट्टर ईसाई थे तथा अपने धर्मके प्रचारके

गङ्गादास—१ छन्दोगोविन्द नामक संस्कृत ग्रन्थप्रणेता। २ उक्त छन्दोगोविन्द नामक ग्रन्थप्रणेताका शिष्य गोपाल दासका लड़का, अच्युतचरित काव्य और छन्दोमञ्जरी नामक ग्रन्थ बनानेवाला। ३ वेदान्तदीपिकाके प्रणेता। ४ वाक्यपदी नामक व्याकरण-रचयिता। ५ पोविरका पुत्र दूसरा नाम ज्ञानानन्द। इन्होंने संस्कृत भाषाको तिलकखण्डप्रशस्तिकी रचना की है। ६ हिन्दीके एक कवि। इनको भक्तिरसविषयक कविता मिलती है।

"भजन बनत नाहीं मन लोलानी।
खानेको तो चाहिये चोखा और ठण्डा पानी॥
पानको गिलौरी चहिये और पीकदानी।
हाथी घोड़ा रथ चहिये और तम्बू आसमानी॥
सेज तो चन्दनी चहिये रूपवती रानी।
किला तो चटूट चहिये और महलानी॥
पूत तो सपूत चहिये कुलकी निशानी।
कहै गङ्गादास दुनिया मायामें भुलानी॥"

७ दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्ता। इनको रची हुई पुस्तकोंमेंसे पञ्चक्षेत्रपाल-पूजा, सुगन्धिदशम्युद्यापन, सम्मेदशिखर-पूजा, सम्मेदविलास—ये पुस्तकें मिलती हैं।

गङ्गादित्य (सं॰ पु॰) काशीमें विश्वेश्वरके दक्षिणस्थित आदित्यविशेष। इनके दर्शन करनेसे समस्त पाप विनष्ट होते हैं।

"गङ्गादित्यस्तस्तत्रास्ते विश्वेशाद्दक्षिणे स्थितः" (काशीखण्ड ५१ अ॰)

गङ्गाद्वार (सं॰ क्ली॰) गङ्गाया भूम्यवतरणद्वार, ६-तत्। इसका दूसरा नाम मायापुरी और हरिद्वार नामसे प्रसिद्ध है। इसी स्थानसे गङ्गा भारतवर्षमें प्रविष्ट हुई है। किसीके मतसे इस स्थान पर दक्षयज्ञ होता था। ऋषिगण सर्वदा इस स्थान पर वास करते थे।

गङ्गाधर (सं॰ पु॰) गङ्गां धरति, धृ, अच्। १ शिव सूर्यवंशीय भगीरथके प्रार्थना करने पर शिवजीने गङ्गाको मस्तक पर धारण किया था, इस लिये इनका नाम गङ्गाधर पड़ा। २ एक प्राचीन कोषकार। ३ एक प्राचीन माध्यन्दिनीय शाखाध्यायी स्नात पण्डित, रामाग्निहोत्रका पुत्र। उन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थ प्रणयन किये हैं। ४ काठकाङ्कि नामक गृह्यसंग्रहकार। ५ इन्दुप्रकाश नामक शब्देन्दुशेखरका टीकाकार। ६ एक उणादिवृत्तिकार। ७ आचारतिलक नामक स्मृतिसंग्रहकार। ८ चन्द्रमानतन्त्र नामक ज्योतिःशास्त्रकार। ९ तर्कदीपिकाका एक टीकाकार। १० कायस्थोत्पत्ति और चातुर्वर्ण्य विवरण नामका संस्कृत ग्रन्थकार। ११ तिथिनिर्णय और सर्वलिङ्ग। सन्यासनिर्णयप्रणेता और दायभागका एक टीकाकार। १२ न्यायकुतूहल और न्यायचन्द्रिकाप्रणेता। १३ निर्णयमञ्जरी नामक ग्रन्थकार। १४ एक विख्यात वैयाकरण, इन्होंने संस्कृत भाषामें व्याकरण-परिभाषा, वृत्तदर्पण नामक छन्दोग्रन्थ और शब्दपाठको रचना की है। १५, प्रतिष्ठाचिन्तामणि और प्रतिष्ठानिर्णय नामक ग्रन्थकार। १६ बदरिकामाहात्म्य-संग्रहरचयिता। १७ योगरत्नावली प्रणेता। १८ भास्वतीका टीकाकार।

१९ रसपद्माकर नामक अलङ्कारशास्त्ररचयिता।

२० वसुमतीचित्रासन नामक संस्कृत काव्यकार।

२१ विधिरत्न नामक धर्मशास्त्रकार।

२२ विश्वेश्वरस्तुतिपारिजात नामक ग्रन्थकार।

२३ वेदान्तस्मृतिसारसंग्रह नामक दर्शनशास्त्र—रचयिता।

२४ चिद्रूपाश्रमरचित व्याकरणदीपका "व्याकरणप्रभा" नामको टीका बनानेवाला।

२५ 'शाकुनीप्रश्न' नामका एक शकुनशास्त्रप्रणेता।

२६ षोड़शकर्मपद्धति और संस्कारभास्कर नामका संग्रहकार।

२७ सङ्गीतरत्नाकरका 'सङ्गीतसेतु' नामका टीकाकार।

२८ किसी नैयायिक पण्डित, इन्होंने सामग्रीवाद नामसे न्यायग्रन्थ प्रणयन किया है।

२९ सूर्यशतकका एक टीकाकार।

३० स्मार्त्तपदार्थसंग्रह और स्मृतिचिन्तामणि-रचयिता।

३१ डाहलराज कर्णको सभाके एक कवि, विल्हणने इनको कवित्वमें पराजय किया था।

३२ भैरव दैवज्ञका पुत्र, इन्होंने प्रश्नभैरव और मुहूर्तभैरव नामका ज्योतिःशास्त्रकी रचना की है।

पक्षमें रोमन कैथलिक चार्च। बिसमार्कका मत यह था कि धर्म-सम्प्रदाय राजनैतिक स्रोतसे बाहर अवस्थान करे। इसीलिए जब रिकष्टैग सभाके निर्वाचनमें ६३ प्रतिनिधि रोमन कैथलिकोंमेंसे चुने गये, तब वे उनके विरुद्ध खड़े हुए। इस युद्धका आपात प्रतीयमान कारण यह है कि १८७० ई०में जब "पोप भूल नहीं कर सकते" यह नीति घोषित हुई, तब कुछ कैथलिक विग्रपोंने पुरातन कैथलिकका नाम ग्रहण कर उक्त नीतिको अस्वीकार किया। कैथलिक सम्प्रदाय पुरातन कैथलिकोंको विश्वविद्यालय और धर्ममन्दिरादिसे बहिष्कृत करने पर उतारू हो गया। परन्तु प्रूसियाके राष्ट्रने उन लोगोंको दूरीभूत करना नहीं चाहा। बस, इसीसे विवाद की उत्पत्ति हो गई। १८७२ ई०में साम्राज्यकी महासभाने जेस्युइट नामके कैथलिक धर्मसम्प्रदायको ही जर्मनीसे निकाल दिया। बिसमार्कने समझा कि जर्मनीकी एकताके विरोधियोंने इस धर्म-युद्धको अवतारणा की है; इसलिये उन्होंने सारी शक्तिको उसके निवारणके लिए लगा दी। उन्होंने कानून बना दिया कि कैथलिक लोग किसी तरह भी राष्ट्रके कार्यमें हस्तक्षेप न कर सकेंगे। विवाह-कार्य भी उन्होंने पुरोहित-सम्प्रदायके हाथसे ले कर राष्ट्रके अधीन कर दिया। इसके विरुद्ध कैथलिकोंने तीव्र प्रतिवाद किया। परिणाम यह हुआ कि भीषण विवादकी सृष्टि हो गई। १८७७ ई०में जब देखा कि कैथलिक लोग रिकष्टैग सभामें सिर्फ ९२ प्रतिनिधि ही भेज पाये हैं, तब बिसमार्कने उनके साथ वृथा युद्ध न कर अन्य कार्यमें मन लगाया। उन्होंने फिर धर्म-सम्बन्धीय नीतिमें परिवर्तन कर कैथलिकोंकी सहानुभूति प्राप्त की। जर्मनी मुख्यतः प्रोटेष्टाण्ट धर्मावलम्बियों द्वारा अध्युसित होने पर भी कैथलिकोंने ही वहांको महासभामें प्राधान्य प्राप्त किया था।

१८७८ ई०में बिसमार्कने जर्मनीके समाजतन्त्रवादियोंके विरुद्ध आन्दोलन उठाया। जर्मनीमें समाजतन्त्रवादियोंका एक दल १८४८ ई०से ही चला आ रहा था। उक्त दलके लोग स्वाधीनताके उपासक थे; सर्वतोभावसे स्त्री और पुरुषोंकी स्वाधीनता मिले, यही उनका उद्देश्य था। वे यह भी चाहते थे कि धनाढ्य व्यक्ति प्रचुर धनको सिर्फ अपने ही काममें खर्च न कर पावें। किन्तु इससे जर्मनीका शासक-सम्प्रदाय डर गया। बिसमार्कको समाजतन्त्रवादियों पर यथार्थमें बड़ी घृणा थी। वे एक ओर तो विविध कठिन दण्डमूलक आईन बना कर उनके आन्दोलनको दबानेकी चेष्टा करते थे और दूसरी ओर श्रमजीवी सम्प्रदायकी अवस्थाकी उन्नति कर उनकी सहानुभूति राष्ट्रके लिए आकर्षित करनेका प्रयास करते थे। परन्तु कुछ भी फल न हुआ। समाजतन्त्रवादियोंमें दिनों दिन नवीन शक्तिका आविर्भाव होने लगा। १८९० ई०में उन लोगोंने रिकष्टैग महासभामें ३५ प्रतिनिधि भेजे फिर क्या था, बिसमार्क स्वयं राष्ट्रके अधीन समाजतन्त्र नीतिके प्रवर्तनकी चेष्टा करने लगे। State Socialism को एक प्रकारको विधि हम अपने देशके कौटिल्य अर्थशास्त्रमें पाते हैं। परन्तु यूरोपमें ऐसी नीतिके प्रवर्तक पहले पहल बिसमार्क ही हुए हैं। इन्होंने नाना प्रकारकी बीमाकम्पनियोंका प्रचलन कर श्रमजीवियोंकी अवस्थाकी उन्नति की थी।

१८७९ ई०में बिसमार्कने वाणिज्यनीतिमें संरक्षणशीलता अवलम्बन कर यूरोपमें एक विराट् परिवर्तनकी सृष्टि की। उनके दो उद्देश्य थे, एक साम्राज्यकी आय बढ़ाना और दूसरा देशीय शिल्पियोंको उत्साहित करना। इस विषयमें, इंगलैण्डके विरुद्ध खड़े होने पर भी वे कृतकार्य हुए थे। बिसमार्कको नीतिके कारण ही जर्मनी धन एकत्र करनेमें समर्थ हुआ था।

बिसमार्कने अपने कर्ममय जीवनके शेषभागमें जर्मन सम्प्रदायकी बहुल विस्तृतिके लिए औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापन करनेका प्रयास किया। जब उन्होंने वाणिज्यमें संरक्षणनीतिका अवलम्बन किया था, तब उन्हें जर्मनीके बाहर प्रस्तुतद्रव्यके बेचनेके लिए बाध्यतासे उपनिवेश स्थापित करना पड़ा। क्योंकि यदि वे बाहरकी चीजें अपने देशमें न आने देते, तो औरोंको क्या पड़ी थी जो वे जर्मनी चीजोंको अपने देशमें आने देते? इस लिए १८८४ ई०में वे वणिकों और भ्रमणकारियोंको उपनिवेश-स्थापनके कार्यमें यथोचित उत्साह देने लगे। उसी वर्ष जर्मनीने अफ्रीकाके दक्षिण व पश्चिम भागमें

गङ्गाधर उसी अल्पवयसमें प्रधान प्रधान चिकित्सक और अध्यापकके साथ वादानुवाद द्वारा अपना मत स्थापन कराते गये और अनेक तरहके कठिन रोगग्रस्तको आरोग्य करते हुए नाना स्थानोंमें उनकी ख्याति फैल गई।

इन्होंने बाल्यकालकी पाठावस्थामें मुग्धबोधकी जो टीका रची थी उसे देख कर नाटोरके एक प्रसिद्ध अध्यापकने उनकी अमित प्रशंसा की। उस टीकाकी श्लोकसंख्या दशसहस्र थी। इसके बाद वोपदेव गोस्वामी मुग्धबोध-व्याकरणके जितने अंशको अपूर्ण छो गए थे, उसको इन्होंने पूर्ण किया और फिर सम्पूर्ण मुग्धबोधकी टीका की। व्याकरणमें इन दो टीकाओंसे इनकी बुद्धि, विद्या और अद्भुत कीर्त्ति और अधिक बढ़ गई।

उस समय उन्होंने दो महाकाव्य लिखे थे, एकका नाम "लोकालोकपुरुषीय" और दूसरेका नाम "दुर्गवधकाव्य" था।

बुद्धिमान् और मेधावी मनुष्य जिस ओर बुद्धि चलाया करते हैं उसी ओर वे पारदर्शिता और उन्नति प्रदर्शनमें समर्थ हो सकते हैं। गङ्गाधर चित्रविद्याकी भी सेवा कर उसमें कृतकार्य हुवे थे। देवदेवीकी मूर्त्ति बनानेमें भी इनकी सुपटुता थी। इनका पिता दुर्गोत्सव करते थे। प्रतिमा निर्माताकी मृत्यु होनेके बाद गङ्गाधरने अपनेसे ही एक मूर्त्ति बनाई थी।

गङ्गाधरक्काथ (सं० पु०) औषधविशेष। कच्छटकशाक, अनार, जामुन, सिंघाड़ा, वेलसूंठ, वाला, मोथा, और सोठका क्वाथ तैयार करनेको प्रणालीमें इनका क्वाथ करनेसे जलकी तरहके जो दस्त होते वे भी मिट जाते हैं।

गङ्गाधरचूर्ण (सं० क्ली०) जीर्णातिसाररोगनाशक औषधविशेष एक तरहकी दवा जिससे पुराना अतिसार रोग जाता रहता है। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—धायफूल, आमलकी, यकोधर, आकनादि, श्योनाक, यष्टिमधु, स्री विल्व, जम्बू, और आम्रवीज, सोंठ, विष, वाला, लोध, कूटज प्रत्येकका समभाग लेकर अच्छी तरह चूर्ण करनेके बाद मिला देना चाहिये। इसीको गङ्गाधरचूर्ण कहते हैं। चावलके धोये हुए जलके साथ इसका सेवन करनेसे जीर्णातिसाररोग नाश होता है। (वैद्यक)

गङ्गाधरचक्रवर्त्ती—वंगदेशका एक स्मार्त पण्डित। इन्होंने श्राद्धतत्त्वभावार्थदीपिकाकी रचना की है।

गङ्गाधरदेव—उड़ीसाके एक राजा। उत्कल देखो।

गङ्गाधरनाथ—रससारसंग्रह नामक वैद्यक ग्रन्थकार।

गङ्गाधरभट्ट—१ विकृतिकौमुदी नामक जटापटलका टीकाकार। २ भाट्टचिन्तामणि नामक मीमांसासूत्रका टीकाकार। ३ हालरचित सप्तशतीका सप्तशतकभावलेशप्रकाशिका नामक टीकाकार।

गङ्गाधर यति—एक प्रसिद्ध वैदान्तिक। रामचन्द्र सरस्वतीके शिष्य सर्वज्ञ सरस्वतीके प्रशिष्य और योगवाशिष्ठतात्पर्य प्रकाश-रचयिता आनन्दबोधेन्दु सरस्वतीके गुरु। ये गङ्गाधर भिक्षु, गङ्गाधर सरस्वती अथवा गङ्गाधरेन्द्र यति नामसे विख्यात हैं। इन्होंने कई एक संस्कृतकी कितावें रचना की है। जिनमेंसे कुछ ये हैं:—चन्द्रिकोद्धार नामक वेदान्तसिद्धान्तचन्द्रिकाकी टीका, प्रणवकल्पप्रकाश, वेदान्तसिद्धान्तमञ्जरी और प्रकाश नामक उसकी टीका साम्राज्यसिद्धि तथा मोक्ष नामकी उसकी टीका, सिद्धान्तसंग्रह और उसकी टीका, स्वाराज्यसिद्धि एवं कैवल्यकल्पद्रुम नामक उसकी टीका

गङ्गाधर वाजपेयी—अवैदिकदशनसंग्रह और रसिकरञ्जनी नामके अलङ्कारशास्त्र-रचयिता।

गङ्गाधर शर्म्मा—मुग्धबोधके एक प्रसिद्ध टीकाकार।

गङ्गाधर शास्त्री—कृष्णराज चम्पूके प्रणेता। इनकी कार्यदक्षता देख बरोदाके राज्य-परिचालक (Regent) और गायकवाड़के भाई फते सिंहने इनको अपना प्रधान कर्मचारी बनाया। इनकी प्रखरबुद्धि और दक्षतासे सन्तुष्ट हो रेसीडेण्ट लेफिटेण्ट कर्णल वाकरने इन्हें बरोदाके प्रधान मन्त्रीके पदसे आभूषित किया। १८१४ ई०में पेशवा बाजीराव पूनाके गायकवाड एजेण्टमें गडबड़ी होनेके कारण ये ठीक ठीक हिसाव किताव देनेके लिये पूना गये। गायकवाड़ने पेशवाके चरित्र और विश्वासघातकतासे सन्दिग्ध हो वृटिशगवर्मेंटको मध्यस्थ किया। गङ्गाधरके पूना पहुंचने पर पेशवाने आदर पूर्वक उनका सत्कार किया और कुछ दिन पूनामें रहनेके लिये अनु-

१८११ ई०में अलसक और लोरेन प्रदेशको कुछ स्वाधीनता दी गई थी।

युद्धके पहले लगातार ४० वर्ष तक जर्मनीमें जो उन्नतिका स्रोत बहा था, उससे जर्मन-जाति अर्थनीति और राजनीतिमें शक्तिशाली हो गई थी। उस शक्तिकी उन्मत्ततासे नवजाग्रत जाति फूली न समाई; वह पृथिवीको मिट्टोका सरवा समझने लगी। उन लोगोंका यह मूलमन्त्र था कि, जर्मनकी शिक्षा और सभ्यता ही जगत्‌में उत्कृष्ट वस्तु है, जैसे बने विश्वमें उसका प्रचार करना ही होगा। जिस प्रकार मुसलमानोंने अपने धर्मप्रचारके लिए तत्कालीन समग्र परिचित जगत् जय करनेकी चेष्टा की थी, जर्मनोंने भी मानो उसी प्रकार सभ्यताके प्रचारके लिए विश्व-विजय करनेका निश्चय कर लिया। यही गत महायुद्धका यथार्थ कारण था।

१८१४ ई०में जर्मनीने साराजेभोके हत्याकाण्डके बाद युद्धकी घोषणा की। उनमें जो दलबन्दी थी, उसे मिटानेके लिए सम्राट्‌ने कहा—"I no longer know any parties among my people, there are only Germans." अर्थात् 'मैं नहीं जानता कि मेरी प्रजामें किस प्रकारकी दलबन्दी है, मैं सिर्फ इतना जानता हूं कि सभी जर्मन हैं।' इसके बाद सब एक हो गये और युद्ध करनेके लिए रणक्षेत्रमें कूद पड़े।

बेलजियमको पददलित करनेके बाद जब महावीर हिन्डेनबार्गने ऐलेंष्टाइनके युद्धक्षेत्रमें रूसियाको पराजित कर दिया, तब जर्मन-जातिके आनन्दकी सीमा न रही। जर्मन-जाति इस महायुद्धमें विजयी होगी ही, ऐसी धारणा प्रत्येक जर्मनके हृदयमें बद्धमूल हो गई। जर्मनी मार्नके पास युद्धमें विजयी न हो सका, सिंटाउरका पतन हुआ और फकलैण्डके पास उसका जंगी जहाज डूब गया, पर किसी तरह भी जर्मनीको आशा और उत्साहका ह्रास नहीं हुआ। १८१४ ई०के अन्तमें इङ्गलैण्ड भी जर्मनीके विरुद्ध खड़ा हुआ, किन्तु जर्मनीने उसकी कुछ भी परवाह न की।

१८१५ ई०के प्रारम्भमें भी जर्मनीकी अवस्थामें कुछ परिवर्तन नहीं हुआ। १९१५ ई०के मई मासमें जब इटली राज्य भी जर्मनीके विरुद्ध खड़ा हुआ, तब कोई कोई कहने लगे कि शत्रुओंकी संख्या धीरे धीरे बढ़ती ही जाती है, अतः जर्मनीको विजयाभिलाष कुछ घट रही है। इस धारणाको बेजड़ सिद्ध करनेके लिए जर्मनीके अधिकारीवर्ग विशेष प्रयत्न करने लगे।

१९१६ ई०के प्रारम्भमें ही जर्मनीमें युद्धजनित क्लान्ति और अवसन्नताका भाव दिखलाई देने लगा। आहार आदिके विषयमें जर्मन-गवर्मेण्टने ऐसे कड़े कानून बनाये थे कि जिससे जर्मनजाति विलासिता तो भूल ही गई थी, प्रत्युत उपयुक्त आहारसे भी वञ्चित रहती थी।

इस युद्धके लिए जर्मनीने जब (१ अगस्त १९१४ई०) पहले पहल रणक्षेत्रमें पदार्पण किया था, तब उसने सिर्फ रूसियाके विरुद्ध ही अस्त्रधारण किया था। उसके बाद उसने ३ अगस्तको फ्रान्सके विरुद्ध युद्ध घोषणा की। इसके दूसरे ही दिन (४ अगस्तको) जर्मनीने बेलजियमसे युद्ध ठान दिया और उसी दिन ग्रेटब्रिटेन भी इसका शत्रु हो गया। तदनन्तर ६ अगस्तको सर्भिया और ८ अगस्तको मोण्टी-निग्रो जर्मनीसे युद्ध करनेके लिए तयार हो गया। २३ अगस्तको प्राच्य शक्ति जापानने मित्रशक्तिपुञ्जके साथ मिल कर जर्मनीसे शत्रुता करना प्रारम्भ कर दिया। इन शक्तियोंके अतिरिक्त इटली भी समराङ्गणमें अवतीर्ण हो जर्मनीको विजयाशाको क्षीण करने लगा। ९ मार्च १८१६ ई०को जर्मनीने पोर्तगालके विरुद्ध भी अस्त्रधारण किया। २८ अगस्तको रुमेनियाको भी उसने शत्रुओंकी श्रेणीमें समझा। १८१७ ई०को ६ठी अप्रेलको अमेरिकाके युक्तराज्यने भी नाना कारणोंसे जर्मनीसे असन्तुष्ट हो अपनी सनातन नीति छोड़ दी और जर्मनीसे युद्ध करनेके लिए उतारू हो गया। अब सचमुच ही जर्मनी कुछ हताश हो गया। युक्तराज्यके साथ साथ ७ अप्रीलको पानामा और क्यूबा राज्य भी जर्मनीका शत्रु हो गया। २६ अक्टोबरको ब्रेजिलने भी जर्मनीके विरुद्ध अस्त्रधारण किया। महासमरने सचमुच ही विश्वसमरका रूप धारण कर लिया। यही कारण है कि सुदूरवर्ती श्याम राज्यने भी २२

यह अक्षा० २५´ १०´ से २५´ २४´ उत्तर और देशा० ८२ ४२´ से ८३´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ११८ वर्गमील तथा जनसंख्या प्राय: ८६७०३ है। इसमें २८० ग्राम लगते हैं लेकिन शहर एक भी नहीं है। तहसीलकी आमदनी लगभग १२५०००) है। वरना नदी तीर पर अवस्थित होनेके कारण यहां उपज बहुत होती है।

गङ्गापूजा (सं० स्त्री०) विवाहके बादकी एक रीति। इसमें ग्रामकी स्त्रियां वर और वधूके साथ गीत गाती, किसी तालाव पर जाती हैं और ग्रामके देवताकी पूजा कर लौट आती हैं। इसी दिन दम्पतीके हाथोंसे विवाह-कंगन खोला जाता है।

गङ्गाप्रसाद - हिन्दी भाषाके एक सुप्रसिद्ध कवि। साधारणत: इनको गङ्गकवि कहते हैं। १५३८ ई०को इनका जन्म हुआ। यह युक्तप्रदेशस्थ इटावा जिलेके इकनौरवासी एक ब्राह्मण थे और अकबर बादशाहका सभामें उपस्थित रहते थे। वीरबल, खान् खानान् और दूसरोंसे इन्हें बहुतसा पुरस्कार मिला। परन्तु आईन-अकबरीमें इनका उल्लेख नहीं।

२ युक्तप्रदेशस्थ सीतापुर जिलेके एक हिन्दी कवि। इन्हें भी गङ्गकवि ही कहा जाता है। १८३३ ई०को ब्राह्मणवंशमें इनका जन्म हुआ। अपने उत्कृष्ट काव्यके कारण इन्हें सुपौली ग्राम निष्कर मिला था। इन्होंने दूतीविलास नामक शृङ्गार रसकी पुस्तक रचना की।

गङ्गाप्राप्ति (सं० स्त्री०) गंगाया: प्राप्ति ६-तत्। १ गंगा-लाभ वा गंगामें जाना। आजकल गंगाप्राप्तिसे मृत्युका ही बोध होता है।

गङ्गाबाई—एक विख्यात महाराष्ट्र-महिला। यह पेशवा नारायण रावकी पत्नी रहीं। १७७३ ई० ३० अगस्तको कई एक सिपाहियोंने वेतन न मिलनेसे क्रोधमें उन्मत्त हो अष्टादश वर्षीय नारायण रावको मार डाला। लोगोंको विश्वास है कि रघुनाथ राव और राघवाकी उत्तेजनासे ही उक्त काण्ड हुआ था। कोई कोई कहता कि रघुनाथकी पत्नी आनन्द बाईके कौशलसे वह निष्ठुर कार्य किया गया। नारायण राव देखो। नारायण रावके मरने पर रघुनाथ राव पेशवा हो बहि:शत्रुओंके साथ युद्धविग्रहमें व्याप्त हुए। उनके बहुतसे प्रधान व्यक्ति कई बहाने करके युद्धस्थलसे फिर लौट पड़े। सखाराम बापू, त्रम्बकराव मामा, नाना फड़नवीस, मरोबा फड़नवीस, बजाबा पुरन्धर, आनन्द राव जीवाजी, हरिपन्थ फड़के आदिको ले करके फिर एक मन्त्रिसभा बनी थी। उसमें नाना फड़नवीस और हरिपन्थ फड़के प्रधान रहे। वह रघुनाथके विपक्ष थे। थोड़े दिनमें प्रकाश हुआ कि नारायण रावके मरनेसे पहले उनकी पत्नी गंगाबाई गर्भवती हुई थीं। मन्त्रियोंने परामर्श करके उन्हें पुरन्धर भेजनेका प्रबन्ध किया, पीछेको जिसमें कोई उनका अनिष्ट न करे। १७७४ ई० ३० जनवरीको नाना फड़नवीस और हरिपन्थ फड़के इन्हें पुरन्धर ले गये। सदाशिव रावकी विधवा प्रभावती लोगोंमें श्रद्धास्पद रहीं। वह भी गंगाबाईके साथ भेजी गयीं। पुरन्धरका दुर्ग ११३२ हाथ ऊंचे एक पर्वत पर अवस्थित है। इसमें उन्हें पहुंचानेके नाना कारण थे। पूनाकी चारों ओर शत्रु-पक्षीय लोग थे। उसीसे विधवा गंगाबाई पर अनिष्ट-पातकी आशङ्का रही। इनके निकट कई एक सद्यप्रसूता रमणीको रख दिया गया। क्योंकि उनको यदि पुत्रसन्तान हो और स्तनसे यथेष्ट दुग्ध न निकले, तो इनके स्तन्य-दुग्धसे बालककी जीवनरक्षा होगी। फिर गंगाबाईके कन्या सन्तान होने पर चुपके चुपके अन्यका पुत्रसन्तान इनकी कन्याके साथ परिवर्तित कर दिया जावेगा। गंगाबाईके गर्भसे पुत्र सन्तान होने पर वही प्रकृत पेशवा ठहरेगा। ऐसा होने पर रघुनाथ रावकी क्षमता घट जावेगी। मन्त्री लोग इसी पुत्रकी आशा पर निर्भर करके गंगा बाईके नामसे पेशवाका काम चलाने लगे।

रघुनाथ राव उस समय कर्णाटमें थे। वही सब सवाद पा करके यह पूनाके अभिमुख चल पड़े। राह पर एक लड़ाईमें इनकी जीत हुई। किन्तु यह पूनाके सामने न आ करके उत्तराभिमुख चले गये। १७७४ ई० १८ अपरैलको इन्होंने सुना कि गंगाबाईको पुत्रसन्तान हुआ था। फिर यह मलवार चले गये। गंगाबाईका वही पुत्र ४० दिनका होने पर माधवराव नारायण वा मधुराव नारायण नामसे अभिहित हो पेशवाके पद पर अभि-

ments आदिमें) इस प्रकारकी रचनामें परिणत रसका परिचय मिलता है। परन्तु इस युगमें हाइ जर्मनकी अपेक्षा लो-जर्मन-साहित्यको ही हम जातीय प्रतिभाका सम्यक् विकाश देखते हैं।

इसी युगमें हिलडारब्रैण्डली गीतिका, ईश्रियण्ड आदि उच्चश्रेणीके ग्रन्थ रचे गये थे। इस युगमें नाटक वा गीतिकाव्यकी उत्पत्ति नहीं हुई थी। इसके सिवा इस युगमें जर्मनोंने प्रायः लाटिन भाषामें साहित्य रचना की थी, इस कारण जर्मन-साहित्यको उतनी उन्नति नहीं हुई जितनी कि होनी चाहिए थी।

२। मध्य हाई जर्मन युग (१०५०—१३५० ई०) ईसाकी १०वीं शताब्दीमें क्लूनिके विहार करनेमें जो तपश्चर्या और कृच्छ साधनाका भाव जागरित हुआ था, उसके द्वारा जर्मनी सबसे अधिक आक्रान्त हुआ था। परन्तु यह प्रभाव शीघ्र ही दूरीभूत हुआ था, इसके प्रमाण उस युगके जर्मन-गीतिकाव्योंमें पाये जाते हैं। ये गीतिकविताएं ईसाकी माताके विषयमें तथा अन्यान्य साधुपुरुषोंकी जीवनीके आधार पर लिखी गई थीं। किन्तु उनमें एक प्रकारको रहस्यानुभूतिका रस पाया जाता है। बादमें जब धर्म युद्धके उपलक्षमें जर्मन वीरोंने प्राच्यदेशमें पदार्पण किया, तब इस देशकी जीवन यंत्रो प्रणालीको देख कर वे मुग्ध हो गये। उनकी कल्पना नयी रागिनी गाने लगी। यही कारण है कि Alexanderlied और Herzog Ernst में हम उपन्यासका आस्वाद पाते हैं। राजसभामें काव्य और साहित्यका हमेशासे हो विकाश होता आ रहा है। जर्मनीमें भी इस नियमका व्यतिक्रम नहीं हुआ। इलहर्ट भन-वार्ग नामक एक कविने अपने Tristant नामक काव्यमें राजसभाके लिए उपयोगी विषयोंका वर्णन किया है।

इसके बाद फरासीसी कविताके भावसे जर्मन-साहित्य कुछ प्रभावान्वित हुआ। किन्तु कुछ समयके पश्चात् जर्मन-साहित्यने पुनः स्वाधीन मार्ग पर चलना शुरू कर दिया। इसके बाद जर्मनीमें मध्ययुगके गौरवमय साहित्यको सृष्टिका काल उपस्थित हुआ। होहेनष्टफेनवंशके प्रतापी राजाओंके अधीन जर्मनजातिकी जिस नवशक्तिकी प्राप्ति हुई थी, उसका विकाश साहित्यमें दिखलाई दिया। इस युगमें सुप्रसिद्ध Nibelungenlied नामक महाकाव्यकी रचना हुई। इसमें जर्मनोंकी जातीय गीतिकविता, गल्प, प्रवाद आदि सभीको स्थान दिया गया। मध्य युगके जर्मनोंका जीवन वृत्तान्त इसमें बड़ी खूबीके साथ दरसाया गया है। इसके नाटकीय भावका वर्णन और साहित्यिक सौन्दर्य को देख कर सभीको विस्मित होना पड़ता है।

इस महाकाव्यके बाद हार्टमन, ओलफ्रम और गटफ्राइड इन तीन कवियोंने जर्मन-साहित्य पर अपना प्रभाव फैलाया था। किन्तु इस युगमें जर्मन गद्य साहित्यका उद्भव नहीं हुआ था।

३। युग सन्धिका साहित्य (१३५०—१६००)—ईसकी १४वीं शताब्दीके मध्यभागसे ही यूरोपीय समाजमें Chivalry भावका ह्रास हो रहा था। इसलिए उस भावके उदित होनेसे जो साहित्य बन रहा था, वह धीरे धीरे विलुप्त होने लगा। अब भाववर्णनामूलक साहित्यका कुछ परिचय दिया जाता है। इस युगमें हुगोभन मण्ट फोर्ट (१३५७—१४२३ ई०) और ओसवाल्ड भन ओल्केनष्टाइन कवियोंने जर्मन-साहित्यकी प्रतिभाके गौरवकी रक्षाकी थी। किन्तु गीतिकविता इस समय बिलकुल होनप्रभ हो गई थी। पशुओंकी जीवन यात्रा सम्बन्धी नाना प्रकारकी कहानियोंको इस समयके लोग बड़ी दिलचस्पीसे पढ़ते थे।

इसी समय जर्मनीमें नाट्य साहित्यकी उत्पत्ति हुई थी। १५वीं शताब्दीके पहले धर्मविषयक किस्से कहानियोंके आधारसे छोटे छोटे नाटक रचे जाने लगे थे। परन्तु १५वीं शताब्दीमें साधारण जीवनयात्रा सम्बन्धी उत्कृष्ट नाटकादिकी भी उत्पत्ति होने लगी। Hans Rosenplut और Hans Folz ये दो साहित्यिक इसमें अग्रणी थे।

इसके बाद जर्मनीमें धर्मसंस्कारका आन्दोलन उठा, इसमें मार्टिन लूथर आदि महापुरुषोंने एक नवीन शक्ति और प्रेरणाकी सृष्टि की। प्रोटेष्टण्टोंकी दिल्लगी उड़ानेके लिए कैथलिकोंने जो हंसी मजाक की थी, उसने जर्मनीके हास्यरसके साहित्यमें स्थायी आसन ग्रहण कर लिया।

गङ्गाल (हिं० पु०) पानी रखनेका बड़ा बरतन, कण्डाला
गङ्गाला (हिं० पु०) गङ्गाका चढ़ाव पहुंचने तककी जमीन, कछार ।
गङ्गालाभ (सं० पु०) गङ्गाया लाभः प्राप्तिः, ६-तत् । गङ्गाकी प्राप्ति, मृत्यु, गङ्गागर्भ पर ज्ञानपूर्वक प्राणत्याग ।
गङ्गालहरी (सं० स्त्री०) १ गंगाया लहरी, ६-तत् । गंगाकी तरंग, गंगाकी लहर । २ प्रसिद्ध पण्डित जगन्नाथ तर्कपञ्चाननका बनाया गंगास्तव ।
गङ्गावंश—गाङ्गवंश देखो ।
गङ्गावतार (सं० पु०) गंगाया अवतारः ब्रह्मलोकाद् भूमौ पतनमत्र बहुव्री० । १ तीर्थविशेष, गंगाद्वार । गंगाया अवतारः, ६-तत् । २ ब्रह्मलोकसे पृथ्वी पर गंगाका आगमन ।

"भगीरथ इव दृष्ट गङ्गावतार." (कादम्बरी)

गङ्गावती—हैदराबादमें रायचुर जिलाके इसी नामके तालुकका एक शहर । यह अक्षा० १५° २६´ उ० और देशा० ७६° ३२´ पू० पर आनगुण्डिसे पांच मील उत्तरमें अवस्थित है । शहरसे दो मील पूर्व तुंगभद्रा नदी प्रवाहित है । लोकसंख्या प्रायः ६२४५ है । यहां एक विद्यालय, एक अस्पताल, एक डाकघर और प्राचीन मन्दिर है । प्रति रविवारको बाजार लगता है ।
गङ्गावाली—बम्बई प्रान्तीय उत्तर कनाड़ा जिलाकी गंगावाली नदीका मुहानाश्रित एक बन्दर । यह अक्षा० १४° २६´ उ० और देशा० ७४° २१´ पू० पर अवस्थित और अनकोलसे ५ मील उत्तरमें पड़ता है । यहांकी लोकसंख्या लगभग १००० है । प्रतिवर्ष इस बंदरसे २००००) रु०की चीजें दूर दूर देशमें भेजी जातीं और ४००० रुपयेकी चीजें यहां उतरती हैं । यहां एक सुन्दर मन्दिर है जिसमें शिवकी स्त्री गङ्गाजीकी मूर्ति स्थापित है प्रतिवर्ष आश्विन महीनेकी अष्टमी तिथिमें भिन्न भिन्न जगहके मनुष्य मंदिरके सामनेकी नदीमें स्नान करनेके लिये आते हैं । मंदिरके पासही कामेश्वर नामक एक लिङ्ग है जो विश्वकर्मासे स्थापित हुआ कहा जाता है ।
गङ्गासागर (सं० पु०) गङ्गया सम्मतः सागरः मध्यप० । वह स्थान जहां गङ्गा सागरसे मिलती है । पौष संक्रान्तिके दिन बहुत यात्री यहां इकट्ठे होते हैं । इस स्थान पर दान ध्यान करनेसे अनेक फल प्राप्त होते हैं । इसके निकट एक कपिलाश्रम है । (मत्स्यपु० २२।११, इत्यादि)

गंगा और सागर संगम देखो ।

गङ्गासुत (सं० पु०) गङ्गायाः सुतः, ६-तत् । १ भीष्म । २ कार्त्तिकेय ।
गङ्गास्नान (सं० क्ली०) गङ्गायाम् स्नानम् ७-तत् । गङ्गामें स्नान करनेकी क्रिया ।
गङ्गास्नायी (त्रि०) गङ्गायाम् स्नाति स्ना-णिनि । जो मनुष्य गंगास्नान करता है, गंगास्नान करनेवाला ।
गङ्गाह्रद (सं० पु०) गंगाया, ह्रद इव । १ भारतप्रसिद्ध स्वस्तिपुरका एक कूप । इस कूपमें सर्वदा तीन क्रोड़ तीर्थ अवस्थान करते हैं । इसमें स्नान करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है । २ कोटितीर्थके अन्तर्गत एक तीर्थ ब्रह्मचर्य अवलम्बन कर इस तीर्थमें स्नान करनेसे राजसूय और अश्वमेध यज्ञका फल होता है । (भारत वन०) गङ्गायाह्रदः, ६-तत् । गंगाका कूप ।
गङ्गिका (सं० स्त्री०) गङ्गा स्वार्थे कन्-टाप् इत्वञ्च । गङ्गा ।
गङ्गिरू—युक्तप्रदेशमें मुजफ्फरनगर जिलाका एक नगर । यह अक्षा० २९° १८´ ६´´ उ० और देशा० ७०° १५´ ३´´ पू० पर अवस्थित है । यह नगर अत्यन्त प्राचीन है । ईंटोंके बने हुए घरोंका भग्नावशेष अवतक भी पड़ा हुआ है । नगरके पूर्व हो कर एक नहर गई है । यहांकी जनसंख्या प्रायः ६ हजार है ।
गङ्गुक (सं० पु०) कंगूक पृषोदरादिवत् निपातने साधु । धान्यविशेष, कौनी धान । (सुश्रुत सूत्र ४६ अ०)
गङ्गेटी (हिं० स्त्री०) दवाके काममें लानेकी एक बूटी । इसके सेवन करनेसे फोड़ा गल जाती है और मल-मूत्र आसानीसे उतरता है ।
गङ्गेरन (हिं० स्त्री०) औषधविशेष । इस दवाईके पौधेका आकार सहदेई पौधेके जैसा होता है । सिर्फ दोनोंमें इतना ही विभिन्नता है कि गङ्गेरनके पत्ते बहुत मोटे और दो अनीवाले होते हैं । इसका फूल गुलाबी रंगका होता है और फल भी सहदेईके फलसे कुछ बड़ा होता है । इसके फल पकने पर पांच हिस्सोंमें बट जाते हैं । इसका पौधा मूत्रकृच्छ्र, क्षत और लोपारोग, खुजली, कुष्ठ

कहा करते थे। रोमन लोग इन्हें जर्मन कहते थे; इस का कारण यह था कि उनके प्रतिवादी गलोंने उनका उक्त नाम रक्खा था।

रोमनोंके भ्रमणकारी ऐतिहासिक टसिटस जर्मन नामका एक इतिहास लिख गये हैं। उनका कहना है कि, जर्मन लोग स्वयं कहा करते हैं कि उनका वह नाम नया है। टसिटस इस बातको ईसाके जन्मसे पहले ही लिख गये हैं। उनका और भी कहना है कि, टंग्रियन (Tungrians) नामक जिस जातिने गलोंको भगा दिया था, पहले उन्हीं लोगोंका नाम जर्मन था। पीछे उस शाखाविशेषके नामको समग्र जर्मन जातिने अपना लिया। जर्मन नाम भीति उत्पादक है, इसीलिए विजयियोंने पहले पहल उस नामको ग्रहण किया था।

यूरोपके प्रसिद्ध विद्वान् लाथाम केम्बलने अपने "Horae Ferales" नामक ग्रन्थकी भूमिकामें लिखा है—प्रथम अवस्थामें जर्मनोंको शाखाजातियोंके भिन्न भिन्न नाम थे; यदि कोई उस समय उन्हें जर्मन कहता था, तो वे उसे समझ न पाते थे। क्योंकि वह नाम सिर्फ लाटिन भाषामें और रोमनोंमें ही प्रचलित था। इसके सिवा उनका ऐसा सिद्धान्त है कि—"जर्मन जाति कभी भी प्राचीन कालमें अपनेको जर्मन कहती थी, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। हां यह असम्भव नहीं हो सकता कि कोई नगण्य शाखा उस नामसे परिचित थी। टलेमीके कथनानुसार यह नाम 'सक्सनोंका था और अन्यान्य जातिके सहयोगमें एलव और आइडर नदीके किनारे एक छोटेसे स्थानमें तथा उपकूलके पास तीन द्वीपोंमें इनका वास था।"

उपरोक्त मतोंसे प्रमाणित होता है कि बहुत समयसे विदेशियों द्वारा वारम्बार जर्मन नामसे पुकारे जानेके बाद, उन लोगोंने जर्मन नाम ग्रहण कर लिया।

जर्य्य (सं० त्रि०) जराक्रान्त, वृद्ध, बुड्ढा।

जर्जरा (अ० पु०) १ अणु। २ छोटे छोटे कण जो सूर्यके प्रकाशमें उड़ते हुए दीख पड़ते हैं। ३ जोके सौ भागोंमेंसे एक भाग। ४ बहुत छोटा टुकड़ा।

जर्रार (अ० वि०) १ बलिष्ठ, प्रबल। २ वीर, बहादुर, लड़का।

जर्रारी (हिं० स्त्री०) वीरता, बहादुरी, सूरमापन।

जर्राह (अ० पु०) शास्त्रचिकित्सक, वह जो चीर फाड़का काम करता हो।

जर्राही (अ० स्त्री०) शास्त्रचिकित्सा, चीर फाड़का काम।

जर्वर (सं० पु०) एक नागपुरोहित। इन्होंने यज्ञ करके सर्पोंको मरनेसे बचाया था।

जर्हिल (सं० पु०) अरण्यतिल, जङ्गली तिल।

जल (सं० क्ली०) जलति जीवयति लोकान्, जलति आच्छादयति, भूम्यादीन् वा जल पचाद्यच्। १ वह तरल पदार्थ जो प्यास लगने पर पीने और स्नान करने आदिके काममें आता है, पानीय, पानी, आब। जलके संस्कृत पर्याय ये—हैं अप्, वाः, वारि, सलिल, कमल, पय, कीलाल अमृत, जीवन, वन, भुवन, कवन्ध, उदक, पयः, पुष्कर, सर्वतोमुख, अम्भः, अर्णः, तोय, पानीय, क्षीर, नीर, अम्बु, सम्बर, मेघपुष्प, घनरस, आप, सरिल, सल, जड़, क, अन्ध, कपन्ध, उद, दक, नार, शम्बर, अभ्रपुष्प, घृत, पीप्पल, कुश, विष, काण्ड, सवर, सर, क्षपीट, चन्द्रोरस, सदन, कर्बुर, व्योम, सम्ब, सरस्, इरा, वाज, तामर कम्बल, स्यन्दन, सम्बल, जलपीथ, चर, ऋत, जर्ज, कोमल सोम। वेदोक्त पर्याय अप् शब्दमें देखो। दार्शनिक मतसे यह पञ्चभूतमेंसे एक है। जलमें रूप, द्रवत्व प्रत्यक्षयोगित्व और गुरु रस है। इसमें चौदह गुण हैं—स्पर्श, संख्या, परिमित, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, वेग, गुरुत्व, द्रवत्व, रूप, रस और स्नेह। जलका वर्ण शुक्ल, रस मधुर और स्पर्श शीतल है। स्नेह और द्रवत्व इसका स्वाभाविक गुण है। परमाणुरूप जल तो नित्य है और अवयवविशिष्ट अनित्य। अनित्य जल शरीर, इन्द्रिय और विषय इन तीन भेदोंमें विभक्त है। अयोनिजको शरीर, रसग्रहणकारी रसन की इन्द्रिय और सरित्‌समुद्रादिके जलको विषय कहते हैं। (भाषापरि०)

शब्दतन्मात्रसे शब्दगुण आकाश, शब्द तन्मात्र सहित स्पर्श तन्मात्रसे शब्द और स्पर्श गुण वायु, शब्द और स्पर्श तन्मात्र सहित रूप तन्मात्रसे शब्द, स्पर्श और रूपगुणविशिष्ट तेजः, शब्द, स्पर्श और रूप तन्मात्र सहित रस तन्मात्रसे शब्द स्पर्श रूप और रसगुणविशिष्ट जल उत्पन्न हुआ है। (सांख्यतत्त्वकौमुदी)

टीकाएं भी मिलती हैं। फिर इन टीकाओंको शत शत टीका टिप्पणियां हैं। न्याय देखो।

गङ्गेश उपाध्यायके पुत्रका नाम वर्धमान उपाध्याय है। वह भी एक अद्वितीय नैयायिक थे। वर्धमान उपाध्याय देखो।

२ रामार्याशतक नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

गङ्गेशदीक्षित—तर्कभाषाका एक टीकाकार।

गङ्गेशमिश्र—चतुवर्गचिन्तामणि नामक वेदान्तरचयिता।

गङ्गेशमिश्र उपाध्याय—सुमनोरमा नामक संस्कृत व्याकरण-रचयिता।

गङ्गेश्वर, गणेश देखो।

गङ्गैकोण्डपुरम्—मन्द्राज प्रेसिडेन्सिके त्रिचिनापली जिलाका उटैयारपालयम् तालुकका एक ग्राम। यह अक्षा० ११° १२' उ० और देशा० ७९° २८' पू० पर अवस्थित है। यह तालुकके प्रधान सदर जैयमकोंद सोलापुरसे ६ मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २७०२ है। पूर्व समय यह एक शहर था जो जिलामें एक प्रसिद्ध स्थान गिना जाता था। प्रवाद है कि जब वाणासुरको गङ्गाजल न मिला तब उसने शिवजीकी तपस्या की थी। महादेवने उसको तपस्यासे संतुष्ट हो कर उक्त स्थानके पास ही एक कूपसे गङ्गा बहा दी और इस तरह दैत्य वाणासुरने उसमें स्नान कर मोक्ष पाया था। गङ्गैकोण्डोल य प्रथम राजेन्द्र चोलने यह शहर स्थापित किया, इसी कारण उन्हीके नाम पर शहरका नामकरण हुआ।

प्राचीनकाल इस ग्राममें एक प्रसिद्ध मन्दिर था जिसका ध्वंसावशेष आज लों विद्यमान है। मन्दिर बहुत ऊंची दीवारसे आवेष्टित है। मन्दिरके प्रांगणमें एक विशाल विमान है जो बहुत दूरसे दीख पड़ता है, क्योंकि इसकी ऊंचाई लगभग १७४ फीट होगी। उक्त विमानके निम्नभागमें उत्कीर्ण बहुतसे शिलालेख हैं। मन्दिरमें सत्ताईस फुट गहराईका एक सुन्दर कूप है और जिसके ऊपर सपक्ष सर्पोंकी बहुतसी मूर्तियां लगी हैं। कूपमें प्रवेश करनेकी सीढ़ी टूटी हुई है। मन्दिरके बाहर १६ मील विस्तृत एक तड़ाग या झील है जो पोनेरी नामसे प्रसिद्ध है। बहुत वर्षोंसे यह तालाब नष्ट हो गया है और इसकी पूर्वश्री जाती रही है।

इस ग्रामके चारों ओर प्राचीन मन्दिरोंके ध्वंस वशेष आजलों विद्यमान हैं।

गङ्गोत्तम नरोत्तम—रासपञ्चाध्यायिका पटसरसो नामक टीकाकार।

गङ्गोत्तरी—युक्तप्रदेशमें टेहरी राज्यका एक पुण्यस्थान। यह अक्षा० ३१° उ० और देशा० ७८° ५७' पू० पर अवस्थित है। इस स्थानमें पहाड़के ऊपर गङ्गाके दक्षिण तट पर गङ्गादेवीका मन्दिर है। सैकड़ों तीर्थयात्री भागीरथीकी मूर्ति दर्शन करनेके लिये आते हैं। हिन्दूओंका विश्वास है कि इसीस्थानसे गङ्गा गोमुखी हो कर भारतवर्षमें प्रविष्ट हुई है। यह हिन्दूओंका महापुण्यप्रद स्थान है। सम्प्रतिकाल देवीमन्दिर समुद्रतलसे ९८७८ हाथ ऊंचा है। गोमुखी देखो।

गङ्गोज्झ (सं० क्ली०) गङ्गया-उज्झ्यते, उज्झ कर्मणि घञ्। गङ्गाप्रवाहशून्य जलादि।

गङ्गोदक (सं० पु०) गङ्गाजल, गङ्गाका पानी।

गङ्गोद्भेद (सं० पु०) गङ्गाया उद्भेदः प्रथम प्रकाशो यत्र बहुव्री०। तीर्थविशेष। इस स्थानमें पितृदेवताका तर्पण करनेसे वाजपेय यज्ञ करनेका फल होता है और मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है।

"गङ्गोद्भेदं समासाद्य तर्पयेत् पितृदेवता।
वाजपेयमवाप्नोति ब्रह्मभूतो भवेत् सदा" ॥ (भारत ३८१ अ०)

गङ्गोल (सं० पु०) गोमेदक नामक मणि।

गङ्गोह—युक्तप्रदेशमें सहारनपुर जिलाके नकुर तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २९° ४७' उ० और देशा० ७७° १७' पू०में अवस्थित है। गङ्गोह परगणामें यह एक मशहूर शहर है। लोकसंख्या प्रायः १२९७१ है जिनमेंसे ५७४१ हिन्दू और ७१७२ मुसलमान हैं। सिपाही विद्रोहके समय राजा फतुआके अधीन गुजरोंने इस शहर पर आक्रमण किया था, लेकिन मिष्टर रोबर्टसन (Mr. H. D. Robertson) और लेफटिनेण्ट बोसरागोन (Lieutenant Boisragen) ने उन पर धावा कर १८५७ ई०के जून मासमें पूर्णरूपसे हराया। यहां तीन प्राचीन मसजिद हैं जिनमेंसे दो अकबर और जहांगीरने निर्माण की थीं। मसजिदके अलावे एक विद्यालय और एक अस्पताल है। यहांकी वार्षिक आय प्रायः ३००० रुपये है।

कोमल नारियलका पानी पित्तघ्न और भेदक, पके नारियल का पानी गुरुपाक, पित्तकर और कोष्ठवर्द्धक होता है। भोजनके उपरान्त आधी रात बीतने पर नारियलका जल पीना उचित नहीं। ताड़का जल गुरुपाक, पित्तघ्न, शुक्र जनक और स्तन्यवृद्धिकर है। पानीको दिन भर सूर्यकी किरणसे गरम और रात भर चन्द्रमाको चाँदनी द्वारा शीतल करनेसे उसमें वृष्टिके जलके समान गुण आ जाते हैं। ओलोंका पानी अमृतके समान है। सुगन्धित जल तृष्णानाशक, लघु और मनोहर है। रात्रिके अन्तमें जल पीना कास, श्वास, अतीसार, ज्वर, वमन, कटिरोग, कुष्ठ, मूत्राघात, उदररोग, अर्श श्वयथु, गल, शिरः, कर्ण, नासा और चक्षुःरोगनाशक है। आकाशमें मेघ न रहने पर रात्रिके अन्तमें नासिका द्वारा जल पान करना बुद्धिकारक, चक्षुर्हितजनक और सर्व रोग नाशक है। तुषार, मेघ, समुद्र आदि शब्द देखो।

पाश्चात्य वैज्ञानिकोंके मतसे—पहले जल प्राकृत जगत्‌के चार महाभूतोंमें गिना जाता था। किन्तु अब हाइड्रोजन और अक्सिजनके संयोगसे जलकी उत्पत्ति स्थिर की गई है। इसलिए जल एक यौगिक पदार्थ हुआ, इसमें सन्देह नहीं। जल तरल, वाष्पीय और घन इन अवस्थाओंमें देखा जाता है। यह वर्णहीन, स्वच्छ, गन्धहीन और स्वादहीन है; तथा ताप और विद्युत्‌का असम्पूर्ण परिचालक है। वायुमण्डलके जबावसे इसका अति सामान्य ही सङ्कुचित होता है; किसीके मतसे ४६ लाख भागका एक भाग मात्र सङ्कुचित होता है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १ है। इसी १ संख्याके अनुसार ही अन्य समस्त तरल और घन द्रव्यों का आपेक्षिक गुरुत्व निर्णीत होता है। सम आयतन वायु की अपेक्षा जल ८१५ गुना भारी है। अन्यान्य तरल पदार्थोंकी भाँति यह भी वायु की अधिकतासे प्रसारित होता है। ४०° डिग्री फारेनहिटसे जल शीतलीभूत और ३२° डिग्रीसे अति घनीभूत हो जाता है। इस तरहके जलमें जितना उत्ताप दिया जाता है, उतना ही वह विस्फारित होता रहता है। इसके विपरीत अधिक शीतल होते रहनेसे, अन्तमें कठिन हो जाता है। जल इतनी तेजीसे कठिन आकार धारण करता है कि, उस समय लोहेकी चीज भी उसके वेगसे चकनाचूर हो जाता है। बर्फ जलकी अपेक्षा हलकी होती है। इसका घनत्व ०·९४ मात्र है, इसीलिए यह पानीमें तैरती है। यूरोपीय लोग जलको साधारणतः तीन भागोंमें विभक्त करते हैं जैसे—अन्तरीक्ष जल, भौमजल और खनिज जल। ओस आदिका जल जो कि आकाशसे गिरता है, उसे अन्तरीक्ष कहते हैं। समुद्र, नदी और जलाशय आदिका पानी भौम और खानसे निकला हुआ जल खनिज कहलाता है। जल सम्पूर्ण विशुद्धावस्थामें नहीं मिलता; उसमें लावणिक, वाष्पीय पचायमान जान्तव और उद्भिज्ज पदार्थ मिश्रित रहते हैं। इनके तारतम्यानुसार जलमें विभिन्न गुण उत्पन्न होते हैं तथा एक तरहका स्वाद और गन्ध भी होती है। मनुष्यकी घ्राणेन्द्रिय इतनी प्रबल नहीं कि जिससे वह जलकी गन्धका अनुभव कर सके; आस्वाद न पानेका भी यही कारण है। किन्तु ऊँट मरुभूमिमें बहुत दूरसे जलकी गन्धका अनुभव कर सकता है। समुद्र और खनिज जलमें लावणिक उपादान अधिक है, इसीलिए इन दोनोंका आपेक्षिक गुरुत्व अधिक है। किसी किसी महानदीमें भी कर्दम तथा और और पदार्थोंके अधिक जम जानेसे उसके जलका आपेक्षिक गुरुत्व बढ़ जाता है।

साधारण लोगोंका विश्वास है कि वर्षाका जल सबसे विशुद्ध होता है, किन्तु यह भी सम्पूर्ण अविमिश्र नहीं है। वायुमण्डलमें जो कुछ विभिन्न पदार्थ रहते हैं, वर्षा होते समय जलके साथ पहले ही वह गिर जाते हैं, इस तरहसे वृष्टिके जलमें भी यवक्षाराम्ल, अङ्गाराम्ल और क्लोरिन, इसके सिवा अणुके बराबर लौह, निकेल और मैङ्गानिस तथा एक प्रकारका अपूर्व जान्तव पदार्थ मिश्रित रहता है। उत्तरपश्चिमकी तरफ वायु चलनेसे वृष्टिके जलमें दीपकाम्ल (Phosphoric acid) भी दिखलाई देता है। प्रसिद्ध रासायनिक लिबिगके मतसे— सभी बरसाती पानीमें एमोनिया (नौसादर) रहता है, जो वृक्षस्थ नाइट्रोजनका मूल कारण है।

हाँ, अन्यान्य जलकी अपेक्षा वृष्टिका जल विशुद्ध अवश्य है, इसमें द्रावकशक्ति भी अधिक है, इसलिए रासायनिक परीक्षाओंसे यही जल विशेष उपयोगी

शतभिषा, अनुराधा तथा पुनर्वसु नक्षत्रमें और रवि, मङ्गल तथा शनिको छोड़ दूसरे किसी दिन हाथी मोल लेना, देखना और देना शुभकर है। इसको छोड़ करके दूसरे समय और शनिवारको क्रयादि करनेसे अमङ्गल होता है। पराशरसंहितामें हाथोको ४ जातियां लिखी हैं—भद्र, मद्र, मृग और मिश्र। इनका लक्षण वराहमिहिरने जैसे लगाया, पराशरसंहितामें भी आया है।

सब स्थानोंके हाथो एकरूप नहीं होते। वनके भेदसे हाथियोंमें भी अन्तर आता है। प्राचीन कालको प्राच्य, कारुष, दशार्ण, मार्गेयक कालिङ्गक, अपरान्तिक, सौराष्ट्र और पञ्चनद, यही आठ जङ्गल हाथियोंकी खदान गिने जाते थे। फिर वासस्थानके अनुसार गजोंके आकार और व्यवहारमें भी भेद पड़ता है। हिमालय, गङ्गा, प्रयाग और लौहित्यके बीच एक बड़ा जङ्गल प्राच्य-वन कहलाता है। इसके हाथी भूरे स्थिरस्वभाव होते और नख अतिशय विश्री, रीढ़ और पूंछकी जड़ लम्बी चौड़ी, सूंड कुछ मोटी, बहुत वेगसे न चल सकने वाले और मन चले जैसे समझ पड़ते हैं।

मेकल, मक्षर और गङ्गावतार—तीन स्थानोंके वन-का नाम कारुक् वा कारुष है। इस जङ्गलके हाथी काले, बहुत वेगशाली, न बहुत बड़े न छोटे हो और अति सुन्दर पदवाले होते हैं। महागिरि, दशार्ण, विन्ध्याटवी और इरावतीके बीच दशार्ण वन है। इस जङ्गलमें काले और लाल हाथी निकलते हैं। इनकी अङ्गुलि और सूंडको नोक बहुत लम्बी, जांघ गोल, शरीरमें छोटो छोटी सफेद छिटियां पड़ो हुईं, आंख मधु जैसी लाल और मुंह, मत्था तथा गला मोटा होता है। यह बहु बलशाली रहते हैं। इनके दांत भो बहुत बड़े होते है और पसीनेसे आमके फलका गन्ध निकलते हैं।

पारिपात्र, वैदिश और ब्रह्मावर्तके बीच मार्गेयक नामक कोई वन था। इसमें बलशाली और अभिमानी बड़े बड़े हाथी रहते थे। इनकी आखोंका रङ्ग शहद-जैसा सुर्ख, चमड़ा भो कुछ नर्म, सूंड खूबसूरत, शरीर-के रोएं चिकने, देहको बनावट बहुत अच्छी और पूंछकी जड़ उतनी बड़ी नहीं लगती।

विपुल, सह्याद्रि, दक्षिणारण्य और उड़ीसाके बीच कालिङ्गक जङ्गल पड़ता है। यहां सफेद हाथी पाये जाते हैं। यह शीघ्रगामी, स्थिरपद और बलशाली होते हैं। इनको दोनों आंख चिड़ेकी-जैसी, शरीरके रुएं मृदु तथा लाल और पूंछकी जड़ कुछ कुछ छोटी पड़ती है। यहां कभी कभी पद्मवर्ण गज देखनेमें आ जाते हैं। इनकी पीठ कमान जैसी, तालु, जीभ और होठ लाल, जांघ सुवर जैसी, नख नोचहत्त, दांतका रङ्ग शहद-जैसा, गला पीला और सूंड बड़े सांप-जैसी लम्बी लगती है। यह बड़ी सुगमतासे पकड़े जा सकते हैं।

नर्मदा उदधिसैव, और दशार्ण पर्वतके मध्य-वर्ती वनका नाम अपरान्तिक है। इस जङ्गलके हाथी मानो, धीर और काले होते हैं। इनका कूला और गला खूबसूरत, दांत मोटे और लम्बे तालु, जिह्वा, ओष्ठ और चौड़े, मुंह भी देखनेमें बुरा नहीं, चमड़ा मुलायम, ओठ लाल और लम्बा, पीठकी रीढ़ कमान जैसी और मदसे कंवलको खुशबू आती है। इस जङ्गलके हाथीको दूसरी जगह जाना अच्छा नहीं लगता।

द्वारका, अर्बुदावर्त और नर्मदाके मध्यवर्ती वनको सौराष्ट्र कहते हैं। इस जङ्गलमें मिलनेवाले हाथी बहुत अल्पायु, दुर्दान्त और वेगशाली होते हैं। इनको आंखें भूरी, शरीरका गंठाव सुन्दर और कान, नख और शरीर अपेक्षाकृत छोटा रहता है। यह प्राणान्तमें भी कुछ सीखना नहीं चाहता।

हिमालय, सिन्धु और कुरुजाङ्गलके बीच पञ्चनद वन है। इस जंगलके हाथीका दांत सफेद, रूखा और खिला हुआ रहता है। इसके शरीरसे एक प्रकारका सुगन्ध निकलता और सूंड पर छोटी छोटी फुटकियां पड़ जाती हैं। यह अल्पायासमें ही शिक्षाग्रहण करता और किसी स्थानमें जानेसे नहीं हिचकता। यह नहीं कि उस प्रकारके सभी हाथी निन्दनीय वा प्रशसनी होते हैं, उनकी अवस्था देख करके भला या बुरा ठहराना पड़ता है। (पराशर)

पराशरसंहितामें नाखूनसे सूंड तक प्रत्येक अवयवके शुभाशुभ लक्षण लिखे हैं, किन्तु उन्हें पहचानना बहुत

आधुनिक आग्नेयगिरिशिलामें दानेदार या अन्य आदिम शिलाखण्डमें हो कर बहनेवाले जलमें गन्धकित हाइड्रोजन, अङ्गारकाम्ल कार्बनेट् अफ् सोडा, कार्बनेट् अफ लाइम, शिकता, मुक्तसल्फुरिक एसिड और मिउरियटिक एसिड पाये जाते हैं, किन्तु इसमें सलफेट् अफ लाइम्, मैग्नेसियासे उत्पन्न लवण, और अक्साइड अफ् आयरन् नहीं रहते। और जलीय शिला (Sedimentary rocks) में हो कर निकलनेवाले बहुतसे प्रस्रवण पास पास रहने पर भी परस्परके जलमें तारतम्य और भिन्न द्रव्यादिका संयोग देखा जाता है।

इस प्रकारसे स्तरोंकी विभिन्नताके कारण प्रस्रवणके जलके गुणोंमें न्यूनाधिकता होती है, सभी जलसे समान फल नहीं होता। प्रस्रवणके जलकी गरमीको देख कर स्वतः ही ज्ञात होता है कि, उसे औषधके काममें लानेसे फल होगा ; किन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है। इस जलकी अपेक्षा कृत्रिम उपायोंसे जो जल गरम किया जाता है, वही अधिक उपयोगी है। उष्णप्रस्रवण में आग्नेयगिरिकी प्रक्रियाका सम्बन्ध है। उक्त प्रक्रियाका सम्बन्ध जहां जितना प्रबल है, वहांका जल उतना ही ज्यादा गरम होता है।

सभी प्रकारके जलमें जान्तव पदार्थ रहते हैं। अणुवीक्षण द्वारा जलमें जीवित कीट और वृक्षलता इत्यादि देखे जाते हैं। ये वृक्ष और कीटादि यथासमय प्राण त्यागते हैं, जो जान्तव पदार्थमें द्रव होनेसे पहले सड़े पचेके रूपमें दिखलाई देते हैं। इसलिए यह पानीके साथ जीव-शरीरमें प्रविष्ट हो कर रोग उत्पन्न कर सकते हैं। प्रस्रवणके जलकी अपेक्षा नदीके जलमें ऐसे पदार्थ अधिक पाये जाते हैं। इसलिए नदीके पानीसे प्रस्रवणका पानी विशुद्ध होता है। जो प्रस्रवण वृष्टिके जलसे वर्द्धित हो कर नदी रूपमें परिणत होता है, वह यदि बालू या दानेदार पत्थरके (granite) ऊपरसे प्रवाहित हो, तो उसका जल अति पवित्र होता है ; इसमें प्रायः अङ्गारकाम्ल नहीं मिल पाता। परन्तु यह जल अत्यन्त निर्मल होने पर भी प्रस्रवणके जलके समान स्वादु नहीं होता। इस जलमें अम्लजान शोषण और ग्रहण करनेकी शक्ति होती है। यही कारण है कि, नदी और सागरके जलके ऊपरी हिस्सेमें अन्तरीक्ष जलकी अपेक्षा अम्लजानका भाग अधिक रहता है। प्रसिद्ध रासायनिक डवेनिके मतसे—अन्तरीक्ष जलकी अपेक्षा समुद्र, नदी आदिके जलमें फी सदी २८०१ भाग अक्सिजन अधिक है। ज्यादा अक्सिजनके रहनेसे ही मछली आदि जानवर गहरे पानीमें आसानीसे निश्वास प्रश्वास ले सकते हैं तथा जलीय उद्भिद्समूह भी वर्द्धित होते रहते हैं।

हृदके जलके उपादान इससे भिन्न हो होते हैं। जिस हृदमें पानीके निकलनेका मार्ग है, उसका जल बहुत अंशोंमें नदीके जलके समान है, नदीकी अपेक्षा बहुत थोड़ा स्रोत बहता है, इसलिए इसमें जीव और उद्भिदोंकी वृद्धि होनेकी सम्भावना अधिक है। किन्तु जिस हृदमें पानी निकलनेका रास्ता नहीं, उसका जल अधिकांश नुनखरा और उसके उपादान भी समुद्र-जलके समान हैं। किसी किसी हृदमें तो सुहागाही भरा रहता है। आनूप (तर जमीनका जलाशय जो बहुधा खेतोंमें होता है) का जल स्थिर है, इसमें जान्तव और उद्भिज्ज पदार्थ परिपूर्ण रहते हैं। यही कारण है कि, इसका जल अधिकांश ही अस्वास्थ्यकर होता है। इसमेंसे एक प्रकारकी तीव्र गन्धयुक्त वाष्प निकलती है। इस जलके पीनेसे नाना तरहके रोग उत्पन्न हो सकते हैं। परन्तु इस जलमें कटु और कषाययुक्त शाक दाना आदि उत्पन्न होनेसे उसके दोष बहुत कुछ घट जाते हैं, तब वह गाय भैंस आदि जानवरोंके पीने लायक हो जाता है। ऐसा पानी यदि मनुष्यको पीना पड़े, तो वह उसमें कटु और तिक्त आस्वादयुक्त लता पत्ता आदि डाल कर पी सकता है। ऐसा करनेसे जल परिशुद्ध न होने पर भी उसके दोष बहुत कुछ दूर हो जाते हैं।

अपरिष्कृत जलको बालू और कोयलाके जरिये अथवा घाममें एक पात्रसे दूसरे पात्रमें बार बार उड़ेल कर शुद्ध किया जा सकता है।

समुद्रके जलमें बहुत ज्यादा लावणिक पदार्थ रहनेसे वह मनुष्यके निहायत अपेय है। समुद्रके जलको उबाल कर, फिल्टर द्वारा शोधन अथवा ताप द्वारा घनीभूत

छूनेवाले, साधारण अवस्थामें नम्र, शीघ्रजलपायी, बाल और पूंछ पतली, सफेद और लम्बी सूंड, लिङ्ग छोटा होते भी पुष्ट और शरीरसे प्रभूत तथा उग्र मदजल निकलता है। इन गजोंके मस्तकमें साफ और अच्छीसी गोल मुक्ता होती है। यह राजाओंके अल्प पुण्यसे पृथिवीको नहीं छूते। लड़ाईमें इनके दांत टट जाने पर भी फिर बढ आते हैं।

जिस कुञ्जरका सब अङ्ग कोमल, पूंछ डंडे जैसी न हो, गाल खुरखुरा, सर्वदा मद चुवे और क्रोध बना रहे, देवप्रिय, सर्वभक्ष तथा बलवान् और दांत और जीभ बहुत तीखी हो, पुण्डरीक दिग्गजका वंशसम्भूत है। इसके वीर्यसे कंवलका जैसा गन्ध आता और अधिक मदजल वा वमन देखा नहीं जाता। यह बहुत पानी पीना नहीं चाहता और अधिक श्रम करने पर भी कम थकता है। पुण्डरीक वंशजात हाथी जिस राजाके घरमें रहता, समस्त पृथिवीका शासन कर सकता है।

वामन दिग्गज वंशके हाथियोंका सारा देह बहुत कड़ा और छोटा, कभी कभी मतवाले होते, हमेशा मद टपका करता, आहार करके बलवान् और वीर्यवान् बन जाते, बहुत पानी पीना नहीं चाहते, कनपटीमें बहुत रूएं, दोनों दांत भद्दे और पुच्छ तथा कर्ण सूक्ष्म होते हैं।

देह दीर्घ, सूंड मोटी न होते भी लम्बी, दोनों दांत खोंडे, शरीर सर्वदा मलयुक्त, कनपटी मोटी और झगडालू हाथी कुमुद दिग्गजके वंशजात है। यह दूसरे हाथियोंको देखते ही मार डालते है। मनुष्य प्राय: इनके पास फटक नहीं सकते।

अञ्जन नामक दिग्गजके वंशमें उत्पन्न होनेवाले हाथीका देह चिकना, पानी पीनेका बड़ा अभिलाषी और ऊंचा पूरा, दांत और सूंड छोटी, दोनों दांत मोटे और श्रमका दु:ख उठानेवाले होते हैं।

जो हाथी सर्वदा मदजल और रेत: छोडता, अनूपदेशका उत्पन्न, पूंछ बहुत छोटी और बड़े वेगसे चलता—पुष्पदन्त दिग्गजका वंशसम्भूत ठहरता है।

रूएं बहुत, बड़ा, लम्बी राह चलने पर भी न थके, खाने पीनेमें खूब चालाक, मरुभूमिमें घूमना अच्छा लगे,—देह बड़ा और कड़ा दोनों दांत लम्बे, नर्म और सफेद होते भी निकम्मा, पेटू, मूल वा पुरीष अल्प आवे, कानकी जगह फैली हुई, रूएं और गाल हलके होना सार्वभौम दिग्गजके वंशजात कुञ्जरका लक्षण है। इन हाथियोंमें बढ़िया मुक्ता मिलती है।

जिनकी सूंड लम्बी, देह ढीला, दौड़ प्रचण्ड, क्रोधी, सर्वदा भक्षणाभिलाषी और हस्तिनीप्रिय, पूंछ और दांत पतले, गाल बड़ा, कान प्राय: न चलें और गालमें छोटे छोटे बहुत रूएं हों, सुप्रतीक दिग्गजके वंशसम्भूत है। इन हाथियोंके मस्तकमें बड़े बड़े मोती होते हैं।

प्राचीन ऋषियोंके मतानुसार मनुष्यकी भांति हाथी भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—४ जातियोंमें बंटे हैं। इनमें एक जातिसे उत्पन्न हुआ हाथी शुद्ध कहलाता है। शास्त्रमें अच्छे हाथीके जो लक्षण लिखते, विशुद्धमें सभी मिलते हैं। शूद्र तथा ब्राह्मण जातीय हस्तीसे उत्पन्न होते भी जिस हाथीमें ब्राह्मण जातीय हाथीके लक्षण देख पड़ते और बलवीर्यवान् होता, जारज कहा जाता है। दो विजातीय हाथियोंसे उत्पन्न होनेवालेका नाम शूर है। फिर ब्राह्मण जातीय और जारजसे जन्म लेनेवाला हाथी उद्दान्त कहलाता है। इसी प्रकार एक दूसरेके संयोगसे बहुत तरहके हाथियोंकी उत्पत्ति होती है। पराशर कहते है, जो हाथियोंकी जातिका भेद भली भांति समझता, वह राजाका अमात्य बन सकता है।

ब्राह्मणजातीय हाथी विशालदेह, पवित्र और अल्पभोजी होता। जो बलिष्ठ, विशालदेह तथा क्रुद्ध रहता, क्षत्रिय जातीय ठहरता है। दूसरी दोनों जातियोंके मिश्र लक्षण है।

बिक्री और कामकी दूसरी चीजोंकी तरह हाथीको भी देख भालके लेना चाहिये। सबसे पहले हाथीके बलकी परीक्षा की जाती है। देखने सुननेमें अच्छा होते भी बलहीन हाथी नहीं लेते हैं। जो हाथी १८००० पल सोना या तांबा लाद करके दौड़में ४० कोस चलने पर भी नहीं थकता, सबसे अधिक बलवान् ठहरता है। मध्यबल हाथी १४००० पल सोना या तांबा २८ कोस लाद करके ले जाने पर भी नहीं थकता। १०००० पल भार २० कोस ले जा सकनेवाले हाथीको

६-तत्। १ क्षुटम्बिनीवृक्ष, सूर्यमुखी। (त्रि०) २ जलाभिलाषी।

जलकाय (सं० पु०) जैनमतानुसार वह प्राणी जिसका जल ही शरीर हो। पृथिवी, अप, तेज, वायु और वनस्पति इन पांच स्थावर जीवोंमेंसे एक। अपकाय अर्थात् जलकायके जीवोंमें सिर्फ एक ही स्पर्श इन्द्रिय होती है। इसमें रूप, रस, गन्ध और वर्ण चारों ही पाये जाते हैं। 'पृथिव्यप्तेजवायुवनस्पतय: स्थावरा:।'' (तत्त्वार्थसूत्र २ अ०)

जलकिनार (हिं० पु०) एक प्रकारका रेशमी कपड़ा।

जलकिराट (सं० पु०) जले किर: शूकर: इव अटति गच्छति अट अच्। १ ग्राह, मगर, घड़ियाल। २ शिशुमार, सूंस नामक जलजन्तु।

जलकुंभी (हिं० पु०) कुंभी नामकी वनस्पति यह वनस्पति जलाशयोंमें पानीके ऊपर होती है।

जलकुक्कुट (सं० पु०) जले कुक्कुट इव। १ पक्षिभेद, मुरगावी। २ उल्लुक।

जलकुक्कुभ (सं० पु०) जले कुकुभ: पक्षिविशेष इव। जलचरपक्षिविशेष, कुक्कुही, वनमुर्गी। इसके पर्याय—कोयष्टि और शिखरी है।

जलकुण्डल (सं० पु०) शैवाल, सेवार।

जलकुन्तल (सं० पु०) जलस्य कुन्तल: केश इव। शैवाल, सेवार।

जलकुब्जक (सं० पु०) जले कुब्जइव कायति। १ जलजात वृक्षभेद, कोई। २ शैवाल, सेवार।

जलकूपी (सं० स्त्री०) जलस्य कूपीव। १ कूपगर्त्त, कूआँ। २ तड़ाग, तालाव।

जलकूर्म्म (सं० पु०) जले कूर्म इव। शिशुमार, सूंस नामक जलजन्तु।

जलकृत् (सं० त्रि०) जलकार, जल देनेवाला।

जलकेतु (सं० पु०) पताकाविशेष, एक प्रकारका पुच्छल तारा। यह पश्चिम दिशामें उदय होता है और इसकी शिखा पश्चिमकी ओर होती है। यह देखनेमें स्वच्छ होता है। ज्योतिषशास्त्रमें लिखा है कि इसके उदयसे नौ मास तक सुभिक्ष रहता है।

जलकेलि (सं० पु०) जलेन जले वा केलि:। जलक्रीड़ा, जलमें खेलने या उछलनेकी क्रिया।

जलकेश (सं० पु०) जलस्य केश इव। शैवाल, सेवार।

जलकौआ (हिं० पु०) यूरोप, एशिया, अफ्रिका और उत्तरीय अमेरिकामें मिलनेवाला एक प्रकारका जलपक्षी। इसकी गरदन सफेद, चोंच भूरी और शेष सारा शरीर काला होता है। नरके पैर मादेसे कुछ छोटे होते हैं। यह दोसे तीन हाथ तक लम्बा होता है। मादासे एक बारमें चारसे छह तक अंडे पैदा होते हैं। इसके मांसके गुण—स्निग्ध, भारी, वातनाशक, शीतल और बलवर्द्धक।

जलक्रिया (सं० स्त्री०) जलसुहृद्या क्रिया। पित्रादिका तर्पण।

जलक्रीड़ा (सं० स्त्री०) जलेन जले वा क्रीड़ा। जलमें सन्तरणादि रूप क्रीड़ा, जलविहार। इसके पर्याय—करपात्र, व्यत्युक्षी और करपत्रिका है।

जलखग (सं० पु०) जलस्य खग:, ६-तत्। जलचरपक्षिविशेष, पानीके किनारे रहनेवाला एक पक्षी।

जलखर (हिं० पु०) जलखरी।

जलखरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी थैली जो तागेकी बनी रहती है। मनुष्य इसमें फल आदि रख कर एक स्थानसे दूसरे स्थान तक ले जाते हैं।

जलखावा (हिं० पु०) जलपान, कलेवा।

जलग (सं० पु०) जलं गच्छति। जल-गम ड। जलगत, वह जो पानीमें डूब गया हो।

जलगन्धभ (सं० पु०) जलहस्ती।

जलगर्भ (सं० पु०) जलसूतको गर्भ:। बुद्धके प्रधान शिष्य आनन्दका पूर्व जन्मका नाम उन्होंने उस जन्ममें जलवाहनके पुत्ररूपमें जन्म ग्रहण किया था।

जलगाँव—१ बरार प्रान्तके बुलडाना जिलेका एक तालुका यह अक्षा० २०° ६५´ एवं २१° १३´ उ० और देशा० ७६° २३´ तथा ७६° ४८´ पू०के मध्य पड़ता है। क्षेत्रफल ४१० वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: ८७१६२ है। इसमें एक नगर और १५५ गाँव आबाद हैं। मालगुजारी लगभग ३५४०००) और सेस २८००० रु० है। १८०५ ई०के अगस्त मास तक जलगांव अकोलाजिलेमें लगता था। २ बरारके बुलडाना जिलेमें जल-गाँव तालुकाका सदर। यह अक्षा० २१° ३´ उ० और देशा० ७६° ३५´

कष्ट पडता, जो दूसरे हाथीको देखते ही रागसे फूल उठते और जो पानीसे भरे काले बादल-जैसे चिग्घाड़ा करते, राजाओंके लिये सुखकर होते हैं।

दुष्ट हाथी बीस भागोंमें विभक्त है—१ दीन, २ क्षीण, ३ विषम, ४ विरूप, ५ विकल, ६ खर, ७ विमद, ८ धनापक, ६ काक, १० धूम्र ११ जटिल, १२ अजिनो, १३ मण्डली, १४ श्वित्री, १५ हतावर्त, १६ महाभय, १७ राष्ट्रहा, १८ मुषली, १९ भाली और २० नि:सत्व।

जिस हाथीका देह बहुत क्षीण और प्रभाशून्य और दन्त क्षुद्र क्षुद्र तथा अत्यन्त क्षीण रहते, उसे दीन कहते हैं। इस हाथीके घरमें रहनेसे राजा दरिद्र हो जाता है।

क्षीण नामक कुञ्जरका शुण्ड खर्व, पुच्छ वृहत् और निश्वासवेग क्षीण होता है। यह घरमें रहनेसे धन-सम्पत्ति नष्ट होती है।

कुम्भ, दन्त, चक्षु, कर्ण वा दोनों पार्श्व परस्पर असमान होनेसे गजको विषय कहा जाता है। यह सर्प-जैसा क्षयकारक है।

विरूप हस्ती स्कन्धदेशसे मस्तक पर्यन्त क्षीण और पश्चाद्भागमें स्थूल होता है। इसके तवेलेमें रहनेसे राज्य छूटता और बल घटता है।

अनेक भागोंसे भी जिसका मद क्षरण देखा नहीं जाता और युद्धके समय जो बल नहीं लगाता, विकल कहलाता है। ऐसे हाथीको छोड़ देना चाहिये।

शरीरमें खरता स्वाभाविक जैसी लगने और दन्त तथा शुण्ड अपेक्षाकृत छोटी मालूम पडनेसे हाथीको खर कहते हैं। इसको घरमें रखनेसे कुलक्षय होता है।

जिस हाथीको एक बारगी ही मदस्राव नहीं होता या होता भी है तो अकालमें और जो देखनेमें नितान्त कुत्सित तथा अवश लगता, विमद ठहरता है। इसको परित्याग ही कर देना चाहिये।

धापक हाथी हलका. सारे अङ्ग क्षीण, शुण्ड शिरा तथा उदर अपेक्षाकृत छोटा, व्यग्रभावसे अविश्रान्त निश्वास छोडनेवाला, चक्षु अनवरत मलसे आच्छन्न, कटि और पुच्छके अग्रभागमें आवर्त वा मण्डलयुक्त और लिङ्ग निश्चेष्ट रहते भी सर्वदा वहिर्गत होता है। हस्ति-ओंके मध्य यह अतिशय निकृष्ट है। जो राजा अपनी श्रीवृद्धि और शरीरका आरोग्य अभिलाष करे, इस हाथी को देखनेसे भी दूर रहे।

जिस हस्तीका शङ्खदेश अर्थात् ललाटस्थ अस्थिफलकद्वय भग्न और स्कन्धदेश अतिशय उच्च पड़ता, काक ठहरता है। यह प्रभुका मृत्यु कारक है।

दन्तद्वय विषम ललाटास्थिगत शुण्डविरोधी, स्वयं भिन्न वा विदीर्ण एवं शून्यान्तर रहनेसे गजको धूम्र कहा जाता है। इसका फल काकहस्तीके ही समान है।

हाथीको मस्तकके केश कर्कश, रूक्ष और जटा जैसे आकारधारी होने पर जटिल नामसे अभिहित करते हैं। यह धनक्षय करता है।

अजिनी गजका स्कन्ध वा गात्रचर्म भूमिलग्न जैसा मालूम पड़ता है। इसके द्वारा राजाका भूमिक्षय और धनक्षय होता है। श्रीवृद्धिके अभिलाषीको इस जातीय हस्तीका स्पर्श वा दर्शन करना मना है।

जिस हस्तीके देहमें एक, दो या बहुतसे मण्डल रहते और वह मण्डल विरूप वा उन्नत लगते, मण्डली कहते हैं। यह कुलनाशक होता है।

उक्त मण्डल (भौंरी) श्वेतवर्ण लगनेसे हस्तीको श्वित्री कहा जाता है। यह गृहमें रहनेसे धननाश होता है।

हृदय, उदर, त्रिकदेश, पुच्छमूल, गुह्यदेश, लिङ्ग वा पदके आवर्त नष्ट हो जानेसे हस्तीको हतावर्त कहते हैं। यह राजाको लक्ष्मी विनाश करता और उसे योगी, प्रवासी वा उपद्रुत कर डालता है।

जिस हस्तीके गमनकालको गुल्फद्वयका मुहुर्मुहु परस्पर सङ्घर्षण हुआ करता, महाभय नाम पड़ता है। यह हस्ती लक्षणयुक्त और गुणशाली होते भी परित्याग कर देना चाहिये। महाभय हस्ती गृहमें रहने पर राज्य, धन, कुल, सैन्य, मित्र, पत्नी और प्रजा दृष्टि मात्रसे ही नष्ट हो जाती है। यह जहां टिकता, लोग भी दिन दिन मिटने लगते और उस स्थानमें वज्रभय व्याधिभय तथा अग्निभय आ उपस्थित होता है।

अत्यन्त ताडित होने पर भी गमन करनेकी इच्छा न रखनेवाला, पृष्ठसे उदर पर्यन्त गोलाकार रेखायुक्त

दिन ज्ञातिकुटुम्बका भोजन और तीसरे दिन वरकन्या-को घोड़े पर चढ़ा कर नगरको प्रदक्षिणा कराई जाती है। किसीकी मृत्यु होने पर ये चिता पर लकड़ो अथवा बँडे सजा कर उस पर मुर्देको रखते और दाग देते हैं। इनमें बाल्यविवाह और पुरुषोंमें बहुविवाह प्रचलित है, परन्तु विधवा-विवाह प्रचलित नहीं है। इस जातिके लोग परस्पर एकतासूत्रसे आवद्ध हैं।

जलगालन—जैन-गृहस्थोंका एक आवश्यक कर्त्तव्य-कर्म। सुप्रसिद्ध जैन पण्डित आशाधरका जलगालनके विषयमें ऐसा मत है कि, दुहरे कपड़ेसे छना हुआ जल ही गृहस्थके लिए प्रशस्त है। छना हुआ जल भी चार घड़ी वा दो मुहूर्तके बाद पोने योग्य नहीं रहता। इसके सिवा छोटे, मलिन और पुरातन वस्त्रसे छाना हुआ पानी भी असेव्य है। वस्त्र (छन्ना) ३६ अङ्गुल लम्बा और २४ अंगुल चौड़ा एवं दुहरा होना चाहिये; अर्थात् पात्रके मुंहसे वस्त्र त्रिगुण बड़ा हो। जैन आचार ग्रन्थोंमें लिखा है कि, साधारणतः जलमें कीट रहते हैं जो दोखते नहीं किन्तु दूरवीक्षण आदि यन्त्रोंकी सहायतासे दृष्टिगोचर होते हैं। जल छाननेसे वे कीट तो पृथक् हो जाते हैं, किन्तु जलकायिक एकेन्द्रिय जीव विद्यमान रहते हैं जिनका कि गृहस्थोंके त्याग नहीं होता। परन्तु मुनि वा साधु प्रासुक (निर्जीव) जल ही पीते हैं। जलको गरम करनेसे १२ घंटे तक, खूब ज्यादा उबालनेसे २४ घण्टे तक और सिर्फ लवङ्ग, मरिच, इलायची आदि डालनेसे वह जल ६ घण्टे तक प्रासुक रहता है। श्रावक वा जैन-गृहस्थ जल छान कर पान करते हैं, जो बिना छना पानी पीते हैं, उन्हें श्रावक नहीं कहा जा सकता। (जैन गृहस्थधर्म)

जलगुल्म (सं० पु०) जलस्य गुल्म इव। १ जलावर्त्त, पानीका भँवर। २ कच्छप, कछुआ। ३ जलचत्वर, वह देश जिसमें जल कम हो। ४ चतुष्कोण पुष्करिणी, चौखूंटा तालाब।

जलङ्ग (सं० पु०) जलं गच्छति जल-गम ड ततो मुम्। महाकाल लता।

जलङ्गम (सं० पु०) जलं ग्रामान्तजलभूमिं गच्छति जल-गम-खच्। चाण्डाल।

जलङ्गी (खड़िया) बङ्गालके नदीया जिलेकी एक नदी। यह अक्षा० २४° ११' उ० और ८८° ४३' पू०में गङ्गासे निकल नदीया जिलेमें पहुंची है और जिलेके उत्तर-पश्चिम ५० मील तक बहती हुई उसे मुर्शिदाबादसे पृथक् करती है। नदीया नगरके समीप जङ्गली भागीरथीसे मिलती है। इन्हीं दोनों मिलित नदियोंका नाम हुगली है। ग्रीष्मऋतुमें जलङ्गी सूख जाती है।

जलघड़ी (हिं० स्त्री०) समयका ज्ञान करनेका एक यन्त्र। इसमें एक कटोरा रहता है जिसके तलेमें छेद होता है। कटोरा पानीकी नांदमें रखा जाता है। पेंदीके छेदसे कटोरेमें पानी जाता है और वह एक घंटेमें डूब जाता है। जब कटोरा भर जाता है तो उससे जल निकाल कर जलमें फिर रख दिया जाता है और पूर्ववत् उसमें पानी भरने लगता है। इस तरह एक एक घंटे पर वह कटोरा पानीसे भर जाता और फिर उसे पानी निकाल कर पानीकी नांदमें छोड़ दिया जाता है।

जलचत्वर (सं० क्ली०) जलेन चत्वरं। अल्पजलयुक्त देश, वह देश जिसमें जल कम हो।

जलचर (सं० पु०) जले चरति जल चर-कॅक। जलचारी ग्राहादि जलजन्तु, पानीमें रहनेवाले मछली, कछुआ मगर आदि।

जलचरजीव (सं० पु०) चलेचरः जलचरः यो जीवः। मत्स्य जीवी, वह जो मछली खा कर जीविका निर्वाह करता हो।

जलचारी (सं० पु०) जले चरति चर-णिनि। १ मत्स्य, मछली। (त्रि०) २ जलचर, जो जलमें रहता हो।

जलडिम्ब (सं० पु०) जले डिम्ब इव। शम्बूक, घोंघा।

जलतण्डुलीय (सं० पु०) जलजातस्तण्डुलीयः। कच्चट शाक, चौराईकी साग।

जलतरङ्ग (सं० पु०) १ जलकी तरंग, लहर, हिलोर। २ वाद्ययन्त्रविशेष, एक प्रकारका बाजा। यह धातुकी बहुतसी छोटी बड़ी कटोरियोंको एक क्रमसे रख कर बनाया और बजाया जाता है। बजाते समय सब कटोरियोंमें पानी भर दिया जाता है और उन पर किसी

गोली बना करके खा जाते हैं। गृहपालित हस्तीकी सुचिकित्साकी व्यवस्था भी. प्राचीन चिकित्सकोंने निरूपण की है। पालकाप्य-रचित गजायुर्वेदमें विस्तृत विवरण लिखा गया है। मनुष्यको पीड़ा होने पर जैसे शान्ति स्वस्त्ययन करना पड़ता, हाथीको दुःख मिलने पर वैसा ही विधान रहता है।

प्राचीन ऋषियोंने हस्तियोंका जो लक्षण, शान्ति और औषध आदि निरूपण किया है, संक्षेपमें इस स्थान पर लिखा गया है। अधिक समझनेके लिये पराशर, बृहत्संहिता, युक्तिकल्पतरु, पालकाप्य, अग्निपुराण प्रभृति द्रष्टव्य हैं।

पहले ही लिख चुके हैं, प्राचीन कालको भारतमें कहीं हाथी मिलते थे। वर्तमान समयमें एशिया और अफ्रीका दोनों स्थानोंको हाथीका आकर कहा जा सकता है। इन दोनों स्थानोंमें हाथियोंका आकार और गठनगत विलक्षण भेद है। हाथियोंको देखते ही आकारगत भेद कितना ही समझा जाता है। इनको आभ्यन्तरिक गठनप्रणालीका तारतम्य रहता है।

एशियाका हाथी।

एशियाके बीच सिंहल, भारतवर्ष, ब्रह्मदेश, श्यामदेश, मलय उपद्वीप और पूर्वद्वीपके पहाड़ों तथा जङ्गली भूभागम हाथी देख पड़ता है। सिंहलमें समुद्रपृष्ठसे ७।८ हजार फुट ऊंचे और दाक्षिणात्यमें ४-५ हजार फुट ऊंचे पहाड़की चोटी पर हाथियोंका झुण्ड घूमा करता है। भारतके दाक्षिणात्यस्थित दक्षिण तथा पश्चिमभाग, पूर्वहिमालयके निकटवर्ती वनमय स्थान, नेपाल, त्रिपुरा और चट्टग्राम स्थानोंमें हाथी पाया जाता है। इन सभी स्थानोंके हाथियोंमें फिर आकारगठनका तारतम्य होता है। १८ वा २४ वर्षमें हाथी जितना बढ़ना होता—बढ़ जाता, फिर उससे अधिक और नहीं। हाथीके अगले पैर डोरीसे दोबार नापने पर जितना आता, उसका उच्चत्व बतलाता है। सिंहलका हाथी प्रायः ८ फुट ऊंचा होता, कोई कोई ८ फुटसे भी अधिक पहुंचता है। जापानमें एक बार १२ फुट १ इञ्च ऊंचा हाथी पकड़ा गया था। भारत और सिंहलको देखते दूसरे उपद्वीपोंमें हाथियोंको संख्या बहुत अधिक है। उन जगहोंमें मनुष्यको रहायश नहीं जैसी होनेसे इन्हें घूमनेमें फिरनेमें कोई अड़चन नहीं पड़ती। वहां हाथियोंकी संख्या इसलिये बढ़ जाती कि स्वच्छन्द-विचरण करनेमें सम्पूर्ण सुविधा आती है। रूसजार 'पीटर दी ग्रेट'के समय ईरानके शाहने सेण्टपीटर्सवर्गके १२ हाथ ऊंचा हस्तिकङ्काल भेजा था। आजतक कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता, क्या उससे भी अधिक ऊंचा हाथी हो सकता है। जन्मके समय हाथीकी ऊंचाई लगभग १॥ हाथ रहती है। किसी अंगरेजने हिन्दुस्तानी हाथीका एक बच्चा ७ वर्ष तक पाला था। उन्होंने उसकी बाढ़ इस तरह बतलायी है—एक वर्षमें ३ फुट १० इञ्च, २ वर्षमें ४ फुट ६ इञ्च, ३ वर्षमें ५ फुट, ४ वर्षमें ५ फुट ५ इञ्च, ५ वर्षमें ५ फुट १० इञ्च, ६ वर्षमें ६ फुट १॥ इञ्च और ७ वर्षमें ६ फुट ४ इञ्च

बहुत लोग विश्वास करते कि ७ फुट ऊंचे हाथी काममें लग सकते हैं। किन्तु ८।१० फुटका हाथी लड़ाईके लिये सिखाया जाता है। टीपू सुलतानके समय कप्तान सिडनीने जो हाथी चलाये, कोई ८॥ फुट ऊंचे थे। हाथकी लम्बाई पूंछसे मुंह तक १५ फुट १२ इञ्च तक देखी गयी है।

हाथीकी पीठमें एक कूबड़ रहता, जो बाल्यकालको बड़ा लगता परन्तु उसकी बाढ़के साथ साथ घटता है। बहुतसे लोग इस कूबड़को देख करके हाथीको जवानी या बुढ़ापा समझ लेते हैं। सिंहलके हाथीसे बङ्गालका हाथी कितना ही अच्छा, काममें होशियार और लड़ाका होता है। चटगांवके दक्षिण भाग, ब्रह्म

लिङ्गमें, मूर्त्ति और दीना जलपाईगुड़ीमें और मुजनाई, सतङ्गा, दुदया, दोलङ्ग और दलखोया कोचविहार में प्रवाहित हैं। यह नदी बहुत चौड़ी है किन्तु गहरी कम है।

जलधर (सं॰ पु॰) धरतीति धरः धृ-अच् जलस्य धरः १ मेघ, बादल। २ मुस्तक मोथा। ३ समुद्र। ४ तिनिश वृक्ष, तिनसका पेड़ (त्रि॰) ५ जलधारक, जल रखनेवाला।

जलधरकेदारा (सं॰ स्त्री॰) मेघ और केदाराके योगसे उत्पन्न एक रागिणीका नाम।

जलधरमाला (सं॰ स्त्री॰) जलधरस्य माला, ६-तत्। १ मेघश्रेणी, बादलोंकी पंक्ति। २ छन्दोविशेष, एक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें १२ अक्षर होते हैं। ४था और ८वां अक्षर यति होता है। ५, ६, ७ और ८वां वर्ण लघु होता है, बाकीके वर्ण दीर्घ होते हैं।

जलधरी (सं॰ स्त्री॰) पत्थर या धातु आदिका बना हुआ अर्घा। इसमें शिवलिङ्ग स्थापित किया जाता है, जलहरी।

जलधार (सं॰ पु॰) जलं धारयति धारि-अण्, उप॰। शाकद्वीप स्थित पर्वत। (त्रि॰) २ जलधारक। (स्त्री॰) ३ जलसन्तति।

जलधारा (सं॰ स्त्री॰) १ जलप्रवाह, पानीकी धारा। २ एक प्रकारकी तपस्या। इसमें कोई मनुष्य तपस्या करनेवाले पर बराबर धार बांध कर जल डालता रहता है।

जलधारा-तपस्वी—एक प्रकारके संन्यासी। ये बैठनेके योग्य किसी एक निर्दिष्ट स्थानमें गड़ा खोद कर उस पर मञ्च बनाते हैं, उस मञ्चके ऊपर एक बहु छिद्रयुक्त जलका पात्र रहता है। संन्यासी इस गड़हेके भीतर बैठ कर तपस्या करते हैं। और उनका कोई शिष्य उस पात्रमें बराबर जल भरता रहता है। इस प्रकारकी तपस्या ये रात्रिमें करते हैं। शीत ऋतुमें भी इनका यह नियम भङ्ग नहीं होता। परन्तु जब ये तपस्याभङ्ग कर उठते हैं, तब इनके शरीर पर कुछ भी नहीं रहता।

जलधारी (सं॰ वि॰) १ जलका धारण करनेवाला, जलधारक (पु॰) २ मेघ, बादल।

जलधि (सं॰ पु॰) जलानि धीयन्ते ऽस्मिन् जल-धा-कि। १ समुद्र। २ दश शङ्ख संख्या, दश संख या एक सौ लाख करोड़की एक जलधि होती है।

जलधिगा (सं॰ स्त्री॰) जलधिं समुद्रं गच्छति गम-ड स्त्रियां टाप्। १ नदी। २ लक्ष्मी।

जलधिज (सं॰ पु॰) जलधौ जायते जन-ड। १ चन्द्र, चांद। (त्रि॰) समुद्रजात द्रव्य, समुद्रमें मिलनेवाला पदार्थ

जलधेनु (सं॰ स्त्री॰) जलकल्पिता धेनुः। वह धेनु या गाय जो दानके लिए कल्पित की गई हो। वराहपुराणमें दानका विधान इस प्रकार लिखा है—पुण्यके दिन यथाविधिसंयतचित्त हो कर जो जलधेनु दान करता है, वह विष्णुलोकको जाता है और उसे अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति होती है। भूभागको गोमय द्वारा परिमाजन कर चर्म कल्पना करो। उसके बीचमें एक कुम्भ रख कर उसे जलसे परिपूर्ण करो और उसमें चन्दन, अगुरु आदि गन्धद्रव्य डाल कर उसमें धेनुकी कल्पना करो। अनन्तर और एक घृत-पूर्ण कुम्भमें धीकी दूर्वा पुष्पमाला आदिसे भूषित कर उसमें वत्सकी कल्पना करो। उस घड़े पर पञ्चरत्न निक्षेप कर मांसी, उशीर, कुष्ठ, शैलेय, बालुका, आंवल और सरसों निक्षेप करो। इसी तरह एकमें घृत, एकमें दधि, एकमें मधु और एकमें शर्करा भर कर रक्खे पीछे उनमें सुवर्ण द्वारा मुख और चक्षु, कृष्णागुरु द्वारा शृङ्ग, प्रशस्त पत्र द्वारा कर्ण, मुक्तादल द्वारा चक्षु, ताम्र द्वारा पृष्ठ, कांस्य द्वारा रोम, सूत्र द्वारा पुच्छ, शुक्ति द्वारा दन्त शर्करा द्वारा जिह्वा, नवनीत द्वारा स्तन और इक्षुद्वारा पैरोंकी कल्पना कर गन्धपुष्प द्वारा शोभित करो इसके बाद उन्हें कृष्णाजिनके ऊपर स्थापन कर वस्त्र द्वारा आच्छादित करो। पीछे गन्धपुष्पसे अर्चना कर उन्हें वेदपारग ब्राह्मणको दान कर देना चाहिये। इस प्रकारकी जलधेनु दान करनेवाला ब्रह्महत्या, पितृहत्या, सुरापान, गुरुपत्नीगमन इत्यादि महापातकोंसे विमुक्त हो जाता है और दान लेनेवाले ब्राह्मणका भी महापातक नष्ट होता है। (वराहपुराण)

जलन (हिं॰ स्त्री॰) १ बहुत अधिक ईर्षा। २ जलनेकी पीड़ा या दुःख।

जलनकुल (सं॰ पु॰) जलने कुल इव। जलजन्तुविशेष, ऊदबिलाव। इसके पर्याय—उद्र, जलमार्जार, जलाखु,

विलायतको वह ढेरका ढेर भेजा भी जाता है। शेफोल्ड शहरको कोई ४०। ५० हजार रुपयेका हाथी दांत पहुंचाते और वहां लगभग ५०० लोग उसके कामकाजमें लगे रहते हैं। हमारे बम्बई नगरमें भी बहुतसा हाथी-दांत अफरीकासे आता है। गजदन्त देखो।

हस्तिनीका स्तन और गर्भ मानवी जैसा और जिह्वा शुकपक्षीकी जीभ जैसी गोल गोल होती है। हाथीकी तरह हथनीकी भी जातियां बंटी हैं। फिर हाथियोंके जैसे शुभ अशुभ लक्षण लिखे हैं, हथनीके भी समझ लेना चाहिये। दूसरे पशुओंको देखते हथनीके प्यार और दया बहुत ज्यादा रहती, सन्तानवात्सल्यकी भी कोई कमी नहीं पड़ती। एक भी बच्चा मारा जाने, हिराने या प्राण गंवानेसे हथनीके शोकका ठिकाना नहीं लगता, वह शोक और जलनसे व्याकुल हो करके खाना पीना छोड़ देती है। किन्तु यही अनिर्वचनीय पशुलीला है, कि २।४ दिनके लिये उसको अलग हटा देने पर फिर अपने बच्चेको हथनी पहचान नहीं सकती, उसके देख देख करके चिल्लाते भी कोई परवा नहीं करती। हथनियां पूरी बाढ़ आ जाने पर ७ हाथ ऊंची होती हैं। हाथीसे हथनीमें बुद्धिकौशल भी अधिक मिलता है।

हथनियां लगभग १८ महीने गर्भधारण करती हैं। किसी किसीके कथनानुसार २० मासके पीछे भी कई दिन तक उनके हमल रहता है। ऋतुकालको १२ दिन लहू टपकता, फिर हस्तिसङ्गमसे गर्भधारण होता है। सङ्गमलिप्साके समय हथनी बार बार चौंक उठती और हमेशा पानी या धूलि अपने ऊपर उछाला करती है। उस समय इसके कान और पूंछ खड़ी हो जाती, एक पलके लिये भी हाथीका साथ नहीं छोड़ती। फिर वह हाथीके देहसे अपना देह रगड़ती, मत्था झुका करके दांतोंके नीचे रखती और मूत्र तथा मलका गन्ध सूंघनेमें प्रसन्न रहती है। हाथी वन्यपशु होते भी नियम प्रतिपालन करना जानता है। स्वेच्छाचारी लघुप्रवृत्ति मानवकी भांति यह जब तब सङ्गमका अभिलाष नहीं रखते, ऋतुकालको ही सङ्गत होते हैं। ऋतुकालको छोड़ करके जब हथनी सङ्गम करना नहीं चाहती, किसी दुष्ट हाथीके बलपूर्वक उसको आक्रमण करनेसे ऊंचे स्वरमें चिल्लाने लगती है। इस चीत्कारको सुन करके दूसरी दूसरी हथनियां उसके पास पहुंच जातीं और हाथीसे उसको छुड़ा लाती हैं। किसी प्रकारका अन्याय आचरण होने नहीं पाता और उस दुष्ट हाथीको कितना ही तर्जन गर्जन भी देखाया जाता है।

हाथीका वीर्य ३ महीने हथनीके गर्भमें पड़ा रहता, ५वें महीने जमा करता, ७वें मास कड़ा पड़ता और ९वें महीने पुष्ट होता है। फिर एकादश मासको जीवदेहका आभास, द्वादश मासको शिरा, अस्थि, नख तथा मुख और त्रयोदश मासको स्त्री वा पुंचिह्नका आविर्भाव लगता है। १५वें महीने गर्भस्थ जीव इधर उधर झुकता और १६वें महीने सब अङ्ग पूरा पड़ता है। १७वें महीने अकालप्रसवकी सम्भावना रहती है १८वें महीने हाथीका बच्चा निकलता है। किस किसी प्राणितत्त्वके मतमें पहले ही मास रेत: जमता और कड़ा पड़ता है दूसरे महीने आंख, कान, नाक, मुंह, और जीभ बनती है। तीसरे महीने हाथ पांव आदि अङ्गोंका आविर्भाव, चौथे महीने देहप्राप्ति और पांचवें महीने गर्भस्राव होनेकी सम्भावना है छठें और सातवें महीने ज्ञान आता है। आठवें महीने हमल गिर सकता और नवें, दशवें तथा ग्यारहवें महीने गर्भस्थ जीव पूर्णावयव हो करके बारहवें महीने निकल पड़ता है।

हस्तीका रेतोभाग अधिक होनेसे पुंशावक, हस्तिनीका रेतोभाग अधिक होने पर स्त्रीशावक और दोनोंका रेतोभाग बराबर रहनेसे क्लीव उपजता है। साधारणत: पुंशिशु, गर्भको दक्षिण ओर, स्त्री शिशु बायीं तर्फ और क्लीव रबीचमें रहता है। हथनी प्राय: एक ही बच्चा देती है। कभी कभी यमज भी प्रसूत हो जाता है।

हथनीका दूध मीठा, बलवीर्यवर्धक, भारी, कसैला, चिकना, स्थैर्यकारी, ठण्डा और दृष्टि बढ़ानेवाला है।

इसका दही कसैला, हलका, पकाने पर गर्म, शूलनाशक, रुचिकर, दीप्तिप्रद, कफरोगघ्न, वीर्यवर्धक और बलप्रद होता है।

हथनीका मक्खन—या नैनूं कसैली, ठण्डी, हलकी, तीती, विष्टम्भी और पित्त, कफ तथा कृमिनाशक है।

हाथी अपनी सर्वशक्तिशाली सूंडसे ही प्राय: सब काम चलाते हैं। वह खाना पीना भी सूंड हीसे किया

जलपाई—एक प्रकारका वृक्ष। भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही यह पेड़ उपजता है। इसे कनाड़ीमें पेरिकट और सिंहलमें वेरलू कहते हैं। इसके फलमें गूदा बहुत होता है और उसकी तरकारी बना कर खाई जाती है। यह रुद्राक्षके पेड़से छोड़ा, पर उससे मिलता जुलता होता है। आसामके लोग इसके फलको खूब पसन्द करते हैं।

जलपाईगुड़ी—१ बङ्गाल प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० २६´ तथा २७´ उ० और देशा० ८८° २०´ एवं ८८° ५३´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २८३२ वर्गमील है। इसके उत्तरमें दार्जिलिङ्ग एवं भूटान राज्य, दक्षिणमें दिनाजपुर, रङ्गपुर तथा कोचविहार, पश्चिममें दिनाजपुर, पुरनिया एवं दार्जिलिङ्ग और पूर्वमें सङ्कोस नदी है। भूटानकी ओर पर्वतके पाददेशमें प्राकृतिक दृश्य अतीव मनोहर है। कई नदियां पहाड़से निकल करके आयी हैं। यहां तांबा पाया जाता है। जङ्गली हाथी, भैंसे, गैंड़े, चीते, सूअर, भालू और हरिण बहुत हैं। सरकारकी तर्फसे कुछ हाथी पकड़े जाते हैं।

यहां मलेरिया, प्लीहा, यकृत् और उदारामय ये रोग प्रधान हैं। पार्वत्य प्रदेशमें गलगण्ड रोगकी प्रबलता है। वक्साके सेनानिवासके देशीय सैनिक सर्वदा शीतादि रोगसे आक्रान्त होते हैं। बहुतोंका अनुमान है कि, दीर्घव्यापी वर्षाकालमें ताजे फलमूलादि न मिलनेके कारण ही यह रोग होता है। फिलहाल यहां हैजाका भी प्रकोप होने लगा है।

जलपाईगुड़ी जिलेमें सब जगह अब भी लवणका व्यवहार नहीं होता। प्रायः सभी लोग एक प्रकारका क्षारजल काममें लाते हैं, जिसको वहांके लोग "छेका" कहते हैं।

इतिहास—जलपाईगुड़ीके प्राचीनतम इतिहासके विषयमें विशेष वर्णन नहीं मिलता। कालिकापुराणके पढ़नेसे ज्ञात होता है यह स्थान पूर्वकालमें कामरूप राज्यके अन्तर्गत था। यहांके जल्पीश नामक महादेवका विवरण भी कालिकापुराणमें वर्णित है।

(कालिकापु० ७७ अ०)

जलपाईगुड़ी नाम कैसे पड़ा, यह भी मालूम नहीं हो सकता। हां, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यहां जल्पीशके अधिष्ठाताके रूपमें प्राचीनतम शिवलिङ्ग जल्पीश नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। जल्पीश देखो।

सम्भवतः यह स्थान भगदत्त वंशीय प्राग्ज्योतिष राजाओंके अधिकारमें था। ईसाकी ७वीं सदीमें भी हम भगदत्तवंशीय कुमारराज भास्करवर्माको यहांके अधिपति पाते हैं। परन्तु उनके बाद इस प्रान्तका राज्य किसने किया, इसका कुछ पता नहीं चलता। सम्भव है परवर्ती कामरूप वा गौड़के राजाओंने जलपाईगुड़ीका शासन किया हो। किन्तु पहले यहां सिर्फ असभ्य लोग ही रहते थे और कभी कभी जल्पीश महादेवके दर्शनार्थ कुछ उच्च जातीय हिन्दुओंका आगमन होता था।

किसीका मत है कि, पहले यहां पृथ्वी राय नामक किसी राजाका राज्य था। कीचक जातिने आ कर उनकी राजधानी पर आक्रमण किया। राजाने असभ्यों के अधीन रहनेकी अपेक्षा मृत्युको श्रेय समझा और राजप्रासादके मध्यस्थित एक दीर्घिकामें कूद कर अपने प्राण गमा दिये। इस समय उक्त राजधानीका कुछ अंश बोदा और कुछ अंश बैकुण्ठपुर परगनेके अन्तर्गत है। अब चार परिखा और चार प्राचीरें निदर्शन मात्र है। प्रथम परिखाकी प्राचीर मिट्टी की है, उसकी लम्बाई करीब ७००० गज और चौड़ाई ४००० गज है। जगह जगह टूटी हुई ईंटें भी दीख पड़ती हैं। बहुतोंका अनुमान है कि ये ईंटें देव-मन्दिरादिका ही भग्नावशेष है।

इसके सिवा संन्यासीकटा नामक तालुकमें भी कुछ भग्न मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंके सम्बन्धमें प्रवाद है कि, वर्तमान रायकतवंशके आदिपुरुष शिशुदेव वा शिवकुमारने यहां दो किलोंका बनवाना शुरू किया। किलेकी नींव खोदनेके समय जमीनसे एक संन्यासी निकले। संन्यासी समाधिस्थ थे। खोदनेवालेने बिना जाने उनके शरीर पर अस्त्राघात किया था। परन्तु ध्यान भङ्ग होने संन्यासीने उनसे कुछ न कहा, कहने लगे कि "मुझे पुनः जमीनमें गड़ दो" सबने उनका आदेश पालन किया। शिशुदेवने वहां एक मन्दिर बनवा दिया। तबसे उस स्थानका नाम 'संन्यासी कटा' पड़ गया।

कोचविहारके यथार्थ इतिहासके साथ ही जलपाईगुड़ीके यथार्थ इतिहासका प्रारम्भ होता है।

रस्सी काट डालनेसे दरवाजा बन्द हो जाता है। फिर हाथियोंका झुण्ड जोर जोरसे चीखता और दरवाजा तोड़ करके भागनेकी चेष्टा करता है। शिकारी भी उस समय बाजा बजाते और आग जलाते हैं। हाथी किंकर्तव्य-विमूढ़ हो करके थोड़ी देर दौड़ धूप कर थक करके बैठ रहते हैं। फिर हथिनी छोड़ देते हैं। सोखी हुई हथिनीके मोहमें पड़ करके हाथी अपनी अवस्था भूल जाते हैं। इसी सुयोगमें शिकारी उन्हें पकड़ लेते हैं।

मुगल-सम्राट् अकबरके समय इन्हीं चार प्रथाओंसे हाथी पकड़े जाते थे। अकबरके समय और एक नया कौशल उद्भावित हुआ। जङ्गली हाथियोंको तीन ओरसे महावत घेर लेते, एक ओर खुली रख करके बहुतसी हथिनियां इकट्ठी कर देते थे। इन हथिनियां-की चारों ओरसे आ करके जङ्गली हाथी घेर करके खड़े हो जाते थे। हथिनियां फिर किसी निर्दिष्ट स्थानको चली जातीं, उनके प्रेममें फंस करके हाथी भी वहीं पहुंच रहते थे। फिर उन्हें पकड़ते थे। आजकल भी हाथी पकड़नेके नाना कौशल प्रचलित हैं। भारतके बहुतसे स्थानोंमें हाथी पकड़े जाते हैं। १८६८ ई०को मन्द्राज गवर्नमेण्टने हथिनी संग्रह करना आरम्भ किया था। इस कार्यमें नेपाल सरकारको बड़ा आय हुआ। आजकल सिंहल और आसाम देशमें भी हाथी पकड़े जाते हैं। सिंहलके हाथी बहुत ही दुर्धर्ष हैं। वह जब तब बोये हुए खेतमें पहुंच अनाज बिगाड़ डालते हैं। इसीसे सिंहल गवर्नमेंटने हाथी मारनेके लिये पुरस्कारकी व्यवस्था की है।

सिंहलमें हाथी पकड़नेका कौशल—हाथियोंका झुण्ड बड़े मैदानके बीचमें रहनेसे १०।१५ कोसके घेरेकी चारों ओर आग जलानी पड़ती है। यह आलोक दूरस्थ होना उचित नहीं। इसके बीचमें हजारों आदमी रखने पड़ते हैं। २॥ हाथ ऊंचे खूंटे पर यह रोशनी रहती है। खूंटे एक दूसरेसे १२ हाथ दूर रखे जाते हैं। धीरे धीरे यह खूंटे आगेको सरकाते चलते हैं। फिर इन्हीं खूंटों पर थोड़ी गोली मट्टी लगा करके पत्तियां जला करके रखते हैं। आलोक पर नारियलकी पत्तीका ढकन रहता है। पानी बरसने पर रोशनी सहजमें नहीं बुझती। रोशनी जितनी ही सङ्कीर्ण पड़ती जाती, हाथी भी उसीके साथ साथ तङ्ग जगहमें जा पहुंचते हैं। जब हाथी घेरेकी जगहमें जा करके पहुंचते, घेरेकी एक ओर मोटी लकड़ीके बेड़ेसे एक अप्रशस्त स्थान बनाते हैं। इस राहसे एक हाथी बड़े कष्टमें बाहर निकल सकता है। इसी प्रकार मण्डलाकार स्थानको चारों ओर मोटी लकड़ीके बेड़ेसे घास फूस लगा ढाक देते हैं। हाथी उसे जङ्गल-जैसा समझते और तोड़ने फोड़नेकी चेष्टा नहीं करते। वह जिस घेरेमें फांस जाते, उसीसे लगा हुआ प्रायः अर्धाकार एक दूसरा छोटासा घेरा बनाते हैं। उसकी लम्बाई ६० हाथ और चौड़ाई १२ हाथसे ज्यादा नहीं होती। उसके बीचमें लगभग ३ हाथ गहरा एक गड्ढा खोदते हैं। हाथी आगके डरसे घबरा करके बड़े घेरेसे उसी राह एक एक करके छोटे घेरेमें घुसते हैं। फिर उनमें हिलने डुलनेकी शक्ति नहीं रहती, इस घेरेका दरवाजा रुंधा होता है। रोशनी जलानेवाले भाग जाते हैं। हाथी जब डरसे निश्चल और निष्पन्द होते, घेरेके पास जा करके सङ्कीर्ण पथका द्वार खोल देते और हाथी धीरे धीरे उसके भीतरकी राह लेते हैं। किसीके भागने लगने पर शिकारी मुंह पर भाला मारते हैं। इस लिये कोई हाथी पलायन कर नहीं सकता। इसी समय शिकारी हाथीका पांव बांधते हैं। बेड़ेके पास दो पालू हाथी बंधे रहते हैं। शिकारी घिरे हाथीके गलेमें रस्सी डाल पालू हाथियोंके शरीरमें बांध बेड़ेका दरवाजा खोलते हैं। फिर फंसा हुआ हाथी पालू हाथियोंमें जा मिलता है। धीरे धीरे शिकारी पालू हाथी पर चढ़ जङ्गलीको जकड़ करके बांध लेते हैं। जङ्गली हाथी बंध जाने पर दो बड़े पेड़ोंके बीचमें ले जा करके कस करके बांधा जाता है। उसके खानेको पेड़ पत्ता और पीनेको पानी रख देते हैं। पालू हाथियोंके पाससे हट जाने पर जङ्गली हाथी मतवाला होता, चीख चीख करके साध्या-नुसार स्वाधीनता प्राप्त करनेकी चेष्टा करता, आहार करनेसे सर्वप्रकार अलग रहता; किन्तु दो तीन मास पीछे भूख प्याससे घबरा करके खाने पीने लगता है। शिकारी पालू हाथियोंके सहारे धीरे धीरे उसे वशीभूत कर लेते

१६८७ ई०में उनका शरीरान्त हो गया। उनके समयमें ही रायकत वंशकी चरम उन्नति हुई थी। किन्तु उनकी मृत्युके बाद ही मुगलोंके अत्याचारसे वैकुण्ठपुर राज्य करद हो गया।

भुजदेवके कोई पुत्र नहीं था। उनके बाद यज्ञदेवके दो पुत्र विश्वदेव और धर्मदेवने यथाक्रमसे रायकत पद प्राप्त किया।

१६८७ ई०में विश्वदेव रायकत हुए। इसके कुछ दिन बाद ही ढाकाके सूबेदार इब्राहिमखाँके पुत्र जबरदस्तखाँने वैकुण्ठपुरके दक्षिणांश पर धावा किया। विश्वदेव विलासी और डरपोक थे, युद्ध बिना किये ही वे कर देनेके लिए राजी हो गये। कुछ दिन बाद भूटानके राजाने भी मुगलोंके आक्रमणके डरसे पूर्व शत्रुता भूल कर वैकुण्ठपुर और कोचविहार राज्यसे मेल कर लिया। फिर तीनों शक्तियोंने मिल कर मुगलोंसे युद्ध किया। मुगलने विपक्षके सैनिकोंके सिर काट कर एक जगह बांस पर लटका दिये। तबसे उस स्थानका "मुण्डमाला" नाम पड़ गया। और जहां मुगल-सेना मारी गई थी, उन स्थानोंका नाम "तुर्ककटा" और "मुगलकटा" हो गया। इस युद्धमें रायकतोंकी बहुत सेना मारी गई जिससे वे दुर्बल हो गये। इसी समयमें मुगलोंने बोदा, पाटग्राम और पूर्वभाग पर दखल कर लिया।

१७०८ ई०में विश्वदेवकी मृत्यु हुई। उनके बाद ज्येष्ठपुत्र बालक मुकुन्ददेव राजाभिषिक्त हुए, किन्तु धर्मदेवने षड्यन्त्र रच कर भतीजेको मरवा डाला और स्वयं राज्य अधिकार कर रायकत हो गये।

धर्मदेवके राजत्वकालमें मुसलमान लोग और भी अत्याचार करने लगे। इसी समय वैकुण्ठपुरका दक्षिणांश सम्पूर्ण रूपसे मुसलमानोंके अधिकारमें चला गया। धर्मदेवने १७११ ई०में जबरदस्तखांके साथ एक सन्धि कर ली और मुगलोंके अधिकृत समस्त भूभागके लिए कर देनेको राजी हो गये। १७२४ ई०में धर्मदेवकी मृत्यु होने पर उनके ज्येष्ठपुत्र भूपदेव रायकत हुए। कुछ दिन बाद ही उनके साथ भूटानके देवराजका झगड़ा हो गया।

१७३६ ई०में भूपदेवकी मृत्यु हो गई। उनके पुत्रके ही रायकत होनेकी बात थी, किन्तु पिताकी मृत्युके अव्यवहित काल पश्चात् उनका जन्म हुआ था, इसलिए राजपरिवारने भूपदेवके मध्यम सहोदर विक्रमदेवको रायकत बनाया। इनके समयमें भी भूटानियोंने बहुतसा स्थान अधिकार कर लिया और अत्याचार करते रहे। १७५८ ई०में विक्रमदेवकी मृत्यु हो गई। मरते समय वे एक पुत्र छोड़ गये थे। इनके साथ रायकतोंकी स्वाधीनता लुप्त हो गई। पूर्ववर्ती रायकतोंने नाम मात्रके लिए मुसलमानोंकी अधीनता स्वीकार की थी राज्य सम्बन्धी सभी बातोंमें उनको सम्पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त थी; किन्तु ईष्ट इण्डिया कम्पनीके दिल्लीश्वरसे बङ्गालकी दीवानी प्राप्त करनेके बाद वैकुण्ठपुरके राजा भी वृटिश गवर्मेण्टके अधीन हो गये।

विक्रमदेवके बाद उनके छोटे भाई दर्पदेव रायकत हुए। इनके समयमें राज्यके उत्तरांश पर देवराज और दक्षिणांश पर महम्मद अलीने आक्रमण किया। राज्यकी रक्षाके लिए दर्पसे बहुत लड़े, पर अन्तमें वे मुसलमानोंसे पराप्त हो बन्दी हो गये। पीछे अधिक कर देनेकी स्वीकारता दे मुक्त हुए। इसके बाद ही वे सैन्य संस्कारमें प्रवृत्त हुए। देवराजने भी उनसे सन्धि कर ली और उन्हें पूर्वाधिकृत स्थान लौटा दिया। प्रवाद है कि, देवराजने दर्पराजकी सहायतासे कोचविहार पर आक्रमण किया था। १८०३ ई०में कोचविहारके नाजिरदेवने देवराज और ईष्टइन्डिया कम्पनीसे सन्धि कर ली। उसके अनुसार देवराजने कोचविहार छोड़ दिया; किन्तु दर्पदेव रायकत उस गड़बड़के मूलकारण थे, इसलिए तबसे सिर्फ जमींदार गिने जाने लगे। कोचविहारके राजकार्यमें हस्तक्षेप करनेका उनको अधिकार न रहा। सन्धिके बाद ही देवराजके साथ दर्पदेवका झगड़ा हो गया। देवराजको सन्तुष्ट करनेके लिए ईष्ट इन्डिया कम्पनीने वैकुण्ठपुरको बहुतसी जगह उन्हें दे दी। इससे दर्पदेव अत्यन्त असन्तुष्ट हो गये; उन्होंने युद्ध कर भूटानियोंसे बहुतसी भूमि छीन ली। देवराजने यह बात बड़े लाटसे कह दी। अंग्रेज अध्यक्षने देवराजको सन्तुष्ट करनेके लिए, उनके मांगे हुए स्थान उन्हें दे दिये। अनेक अभियोगोंके बाद

क्रमानुसार हस्तिनीके आहारकी भी व्यवस्था थी। सबसे बड़ी हथिनीको १ मन २२ सेर और सबसे छोटीको ६ सेर मात्र आहार मिलता था। गज पर चढ़ करके बहुत दूर घूमनेमें बहुतसे लोग उसको आटेकी रोटी खिलाते हैं।

गज खानेके लिये बड़े बड़े पेड़ोंकी डालियां तोड़ डालते हैं। फिर धीरे धीरे पत्तो और लकड़ीको छोड़ करके वह केवल छाल ही खाते हैं। कैथा खानेमें गज बहुत ही मजबूत होता है। वह समूचा कैथा मुहमें डाल करके निगल जाता है। मलत्याग करने पर देखा जाता कि कैथा जैसेका तैसा पड़ा है, परन्तु उसमें गूदेका कहीं नाम भी नहीं। सन्ध्या सवेरे हाथीको नहलाना पड़ता है। घूमनेको निकलनेसे पहले गजको मत्थे कान और पैरमें मक्खन लगाते, नहीं तो धूपसे यह सभी स्थान सहजमें ही फट जाते हैं। गज मालिक और महावतके वशमें रहता है। वह महावतके आंख उठाने और उंगली चलाने पर असाध्य साधन किया करता है। पशु होते भी गजमें दया होती और उपकार करने पर वह कृतज्ञता प्रकाश करता है।

जङ्गली गजको अनेक बार सिंह व्याघ्र प्रभृति वन्य जन्तुओंसे लड़ना पड़ता और कभी कभी गजोंमें भी परस्पर युद्ध होने लगता है। सम्राट् अकबरके समय बहुतसे हाथी लड़नेको प्रस्तुत और उनके सिखानेको वेतनभोगी लोग भी नियुक्त रहते थे। आजकल हाथियोंकी लड़ाई बहुत कम देखनेमें आती है। कुछ दिन पहले बड़ोदेमें प्रति वर्ष हाथी लड़ाये जाते थे। जो हाथी युद्ध करते, उन्हें एक प्रकारका मादक द्रव्य खिलाते हैं। इससे हाथी उत्तेजित हो जाते हैं। फिर ३ मास तक उन्हें मक्खन और चीनी खिलानी पड़ती है। इसी प्रकारके दो मतवाले हाथी लड़नेको लाये जाते और लोग उनकी हार जीत पर बाजी लगाते हैं। हस्तियुद्धकी रङ्गभूमि ६०० हाथ लम्बी और ४०० हाथ चौड़ी होती है। दोनों हाथी जञ्जीरसे बाध करके रखे जाते हैं। युद्धका एक सङ्केत है। उस सङ्केतके होते ही दर्शक लोग अपने अपने स्थान पर हट करके खड़े हो जाते हैं। फिर दोनों हाथियोंकी जञ्जीर खोल देते हैं। हाथी तर्जन गर्जन करके अखाड़ेके बीचमें पहुंचते, एक दूसरेके सामने जा करके मत्थेसे मत्था रगड़ते और सूंडसे सूंड लपेट करके लड़ने लगते हैं। इसी प्रकार बहुत देर तक लड़नेके पीछे जो हाथी हारता युद्धक्षेत्रसे हटा दिया जाता है। फिर जयी हाथी रङ्गस्थलमें खड़ा हो करके आस्फालन किया करता है। उस समय महावत उतर पड़ता और दूसरे दूसरे लोग जा करके होमियारीसे उसको बांध लेते हैं। खेलाड़ियोंको यथायोग्य पुरस्कार मिलता है। हाथीसे आदमीकी भी लड़ाई होती है।

हाथी शिकारका बड़ा सहारा है। प्राचीन कालको हाथी पर चढ़ करके राजा लोग शिकार खेलते थे। आजकल भी अंगरेज राजपुरुष प्रायः हाथी पर चढ़ करके शिकार करने जाया करते हैं। अशिक्षित हाथी ले करके शिकारमें जानेसे विपद् पड़नेकी सम्भावना है। शिक्षित हाथी पहाड़ पर चढ़ और आवश्यक होने पर उसकी घाटीमें भी उतर निकलता है।

भूतत्त्वविदोंने पृथ्वीके निम्नतरमें प्रस्तरीभूत हस्तिकङ्काल पाया है। उससे समझ पड़ता है कि बहुत पुराने समयकी द्विशुण्ड हस्ती विद्यमान थे। समुद्रमें भी एक जलचर हाथी देख पड़ता है। उसका नाम जलहस्ती है। जलहस्ती देखो।

२ स्वर्गके इन्द्रक विमानोंमेंसे २८वां विमान।

गजइलाही (फा० पु०) ४१ अंगुलका गज। इसे अकबरी गज कहते हैं।

गजक (फा० पु०) १ खाद्य पदार्थ, जो शराब पीनेके बाद मुखकी दुर्गन्धिको हटानेके लिये खाया जाता है। २ तिलपपड़ी। ३ जलपान।

गजकच्छप—गजकच्छपीय युद्ध देखो।

गजकच्छपीययुद्ध (सं० क्ली०) गजकच्छपीयं गजकच्छप सम्बन्धि युद्धम्, कर्मधा०। गज और कच्छपका युद्ध, हाथी और कछुवेकी लड़ाई। इसका उपाख्यान यों लिखा है— विभावसु नामक कोई महर्षि रहे। इनके छोटे भाईका नाम सुप्रतीक था। सुप्रतीककी विभावसुके साथ एकात्म रहना अच्छा न लगता था, इसीसे समय मिलते ही वह विभावसुसे पैतृक धन बांटनेकी बात उठाते थे। विभावसुका स्वभाव कुछ चिड़चिड़ा था। वह एकाएक बिगड़ पड़ते थे। एक दिन उन्होंने सुप्रतीकको पुकार

ई०में वे रायकत हुए। १८५५ ई०में इनकी मृत्यु होने पर उनके इच्छापत्रके अनुसार नाबालिग चन्द्रशेखर देव रायकत हुए।

१८५५ ई०में इनका शासनभार कोर्ट-आफ-वार्ड के अधीन हो गया और विद्याभासके लिए ये कलकत्ते लाये गये। १८६२ ई०में ये खदेश पहुंचे, किन्तु विलासिताके दोषसे कर्जदार हो गये। थोड़े दिन बाद १८६५ ई०में इनको मृत्यु हो गई। इनके कोई पुत्र न था, इसलिए भाई योगीन्द्रदेव रायकत हुए। इसी समय उनके काका भोलासाहब उर्फ फणीन्द्रदेवने राजा प्राप्तिके लिए मुकदमा किया, पर वे परास्त हो गये। इस मुकदमाके कारण राजा और भी कर्जदार हो गया। नाना चिन्ताओंके कारण १८७७ ई०में इनकी मृत्यु हो गई।

मृत्यु से तीन महीने पहले उन्होंने एक लड़का गोदमें रक्खा था। उनका नाम था जगदिन्द्रदेव। कुछ दिनके लिए वे ही रायकत हुए। किन्तु उनके भाग्यमें राज्य-सुख बदा न था। कुछ समय बाद फणीन्द्रदेव रायकत पद पर अभिषिक्त हुए। इनके समयमें राज्यकी बहुत उन्नति हुई थी। इनके पुत्रादि अब भी जीवित हैं।

जलपाईगुड़ीकी लोकसंख्या प्रायः ७८७३८० है। उत्तर पश्चिम चायके बाग हैं। बहुतसे कुली दूसरे स्थानोंसे आ कर के बस गये हैं। लोगोंकी भाषा रङ्गपुरी या राजवंशी है कुछ लोग हिन्दी बोलते हैं। दूसरी भी कई भाषाएं प्रचलित हैं। चावल प्रधान खाद्य है। यहां तम्बाकू खूब होती है। १८७४ ई०को युरोपियोंने चायके बाग लगाये थे। मवेशी छोटे और कमजोर है। उनकी बिक्री को कई मेले लगा करते हैं। सरकारी जङ्गल बहुत है। खानसे निकलनेवाले द्रव्योंमें चूनेका कङ्कर प्रधान है। कोयला भी कुछ निकलता है। जिलेके पश्चिम अञ्चलमें बोरोंका मोटा कपड़ा बुना जाता है। रेशमी आरमादी और फोटा भी तैयार करते हैं। भूटानकी बिलायती कपड़े और रेशमकी रफ्तनी होती है। चाय, तम्बाकू और पाट बाहर भेजनेके लिये जो उत्पन्न करते हैं। रेलोंकी कोई कमी नहीं। ईष्टर्न बङ्गाल ष्टेट रेलवे और बङ्गाल और दुआर्स रेलवे फैली पड़ी है। ८७७ मील सड़क है। मालगुजारी कोई ७ लाख ७३ हजार होगी।

राज्यकार्यकी सुविधाके लिये यह जिला जलपाईगुड़ी और अलीपुर नामके दो उपविभागोंमें विभक्त किया गया है। पहला विभाग डेपुटी-कमिश्नर और पांच डेपुटी-मजिष्ट्रेट कलेक्टरके और दूसरा युरोपियन डेपुटी मजिष्ट्रेट कलेक्टरके अधीन है। डिष्ट्रिक्ट और सेसन जज तथा दिनाजपुरके सब-जज विचरकार्य सम्पादन करते हैं। दीवानी अदालतका विचार जलपाईगुड़ीके दो मुन्सफ और अलीपुरके एक सब-डिभिजनल कर्मचारीके अधीन है।

२ बङ्गाल प्रान्तके जलपाईगुड़ी जिलेका सब डिविजन। यह अक्षा० २६° एवं २७° उ० और देशा० ८८° २०' तथा ८८° ७' पू०के मध्य पड़ता है। क्षेत्रफल १८२० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ६६८०२७ है। इसमें १ नगर और ५८८ ग्राम बसे हुए हैं।

३ बङ्गाल प्रान्तके जलपाईगुड़ी जिलेमें जलपाईगुड़ी सब डिविजनका सदर। यह अक्षा० २६° ३२' उ० और देशा० ८८° ४३' पू०में अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ८७०८ है। १८२५ ई०की मुनिसपालिटी हुई।

जलपाटल (हिं० पु०) कज्जल, काजल।

जलपादप (सं० पु०) हंस।

जलपान (हिं० पु०) सुबह और शामका हलका भोजन, कलेवा, नाश्ता।

जलपारावत (सं० पु०) जले पारावत इव। पक्षिविशेष, जलकपोत। इसके पर्याय कोपो और जलजपोत है।

जलपिण्ड (सं० क्लो०) जलस्य पिण्डमिव। अग्नि, आग।

जलपिप्पलिका (सं० स्त्री०) जलपिप्पली, जलपीपल।

जलपिप्पली (सं० स्त्री०) जलजाता पिप्पली। पिप्पली विशेष, जलपीपल नामकी दवा। इसके पर्याय—महाराष्ट्री, शारदी, तपवल्लरी, मत्स्यादिनी, मत्स्यगन्धा, लाङ्गली, शकुलादनी अग्निज्वाला, चित्रपत्री, प्राणदा, तृणशीता और बहुशिखा हैं। इसके गुणकटु, तीक्ष्ण, कषाय मलशोधक, दीपका, व्रणकीटादिके दोष और रसदोषनाशक है। (भावप्र०)

जलपिप्पिका (सं० स्त्री०) मत्स्य, मछली।

जलपीपल (हिं० स्त्री०) जलपिप्पली देखो।

जलपुर (सं० पु०) जलस्य पुरः, ६-तत्। जलसमूह।

टीड़ा अर्थात् गजकुमार जबरदस्ती अच्छे अच्छे घरोंकी सती स्त्रियोंका सतीत्व नष्ट करने लगे। एक दिन पांसुल सेठकी स्त्री पर इन्होंने दृष्टि डाली और उसे बिगाड भी दिया। सेठको मालूम पड़ते ही वह क्रोधाग्निसे जल कर उनके विरुद्ध खड़ा हुआ, परन्तु राजकुमारके सामने उस बेचारेकी कुछ भी न चली। इसी प्रकार जो उनके विरुद्ध खड़ा होता था, वह जड़ मूलसे नष्ट हो जाता था।

एक दिन पुण्योदयसे नेमिनाथ भगवान् द्वारकामें आये। बलभद्र, वासुदेव तथा और भी बहुतसे राजे-महाराजे उनकी पूजाके लिए पहुंचे। उनके साथ गजकुमार भी थे। भगवान्का उपदेश हुआ। उपदेशका असर गजकुमार पर खूब ही पड़ा। उन्हें संसारसे घृणा हो गई। अपने किये हुए पापों पर ये बहुत ही पश्चात्ताप करने लगे। उसी समय भगवान्के समक्ष उन्होंने दिगम्बरी दीक्षा धारण की और वनमें जा आत्म-ध्यानमें लीन हो तप करने लगे।

मुनि होनेका हाल जब पांसुल सेठको मालूम पड़ा तब वह क्रोधी अपना बदला लेनेके लिये वनमें पहुंचा और उन ध्यानस्थ गजकुमार मुनिके समस्त सन्धिस्थानोंमें लोहेके बडे बडे कीले ठोंक कर चला आया। गजकुमार मुनि पर उपद्रव तो बड़ा ही दुःसह हुआ, पर वे जैनतत्त्वके अच्छे अभ्यासी और विद्वान् थे, इस लिये उन्होंने इस घोर वेदनाको एक कांटे चुभनेके समान भी न समझ बड़ी शान्ति और धीरताके साथ शरीर छोड़ा। यहांसे ये स्वर्गमें गये। (आराधनाकथाकोष)

गजकुम्भ (हिं० पु०) हाथीका उभरा हुवा मस्तक, हाथीके माथे पर दोनों ओर उठे हुए भाग।

गजकुसुम (सं० पु०) नागकेशर।

गजकुसुमा (सं० स्त्री०) नागकेशर।

गजकूर्माशिन् (सं० पु०) गज कूर्मो अश्नाति, अश-णिनि। गरुड। (शब्दरत्ना०) पक्षिराज गरुड़ने युध्यमान गज-कच्छपको भक्षण किया था, इस लिये इसका नाम 'गजकूर्माशिन्' पड़ा। गजकच्छपीय युद्ध देखो।

गजकृष्णा (सं० स्त्री०) गज इव कृष्णा। गजपिप्पली, बड़ी पीपर। (भावप्रकाश)

गजकेशर (सं० पु०) नागकेशर, कबाबचीनी।

गजकेशरी—उड़िसाके केशरीवंशीय एक प्रतापी राजा, बटकेशरीके पुत्र। आपने १२ वर्ष राज्य किया था। उत्कल देखो।

गजकेसर (सं० पु०) एक प्रकारका धान जो अगहन महीनामें तैयार होता है। इसका चावल बहुत दिन तक रहता है।

गजक्रीड़ित (सं० पु०) नृत्यमें एक प्रकारका भाव।

गजगति (सं० स्त्री०) १ हाथीकी चाल। २ हाथीकी मन्द चाल (सुलक्षणा स्त्री हाथीकी मन्द चालकी तरह चलती है)। ३ रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रामें शुक्रकी स्थिति। ४ एक वर्णमाला वा वर्णवृत्त।

गजगमन (सं० पु०) हाथीकी तरह मन्द गति, वह जो हाथीकी मंदगति सरीखे चलता हो।

गजगामी (सं० पु०) हाथीकी चालकी तरह चलनेवाला, मन्द गामी।

गजगाह (हिं० पु०) हाथीकी झूल, पाखर।

गजगौहर (फा० पु०) गजमोती, गजमुक्ता।

गजघण्टा (सं० स्त्री०) गजस्य घण्टा-६-तत्। १ हाथीके गलेका घण्टा। २ रङ्गपुर जिलाका एक वाणिज्य-प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° ४८′ ४५″ उ० और देशा० ८९° २०′ पू०में अवस्थित है। यहांसे चूना और पाटकी रफतनी अधिक होती है।

गजचक्षुः (सं० त्रि०) गजस्येव चक्षुर्यस्य वा गजस्य चक्षुरिव चक्षुर्यस्य इति बहुव्री०। जिसकी आंखें हाथीकी आंखोंकी तरह हो, विकृतचक्षु।

गजचर्म (सं० पु०) १ गजका चमड़ा। २ एक प्रकारका रोग, जिसमें शरीरका चर्म गजके चमड़ेकी तरह मोटा और कड़ा हो जाता है। यह रोग सिर्फ मनुष्य होको नहीं होता किन्तु घोड़ेको भी होता है।

गजचिर्भिट (सं० पु०) गजप्रियश्चिर्भिटः। एक प्रकारका तरबूज।

गजचिर्भिटा (सं० स्त्री०) गजप्रिया चिर्भिटा, मध्यलो०। इन्द्रवारुणी, इन्द्रायन, बड़ी इन्द्रफला।

गजचिर्भिटी (सं० स्त्री०) गजप्रिया चिर्भिटी। इन्द्रवारुणी, इन्द्रायन।

कहा—"ग्राहादिसे मेरी रक्षा करो।" मनुने पहले उसे एक स्फटिकके पात्रमें रख दिया था; किन्तु पीछे वह मछली इतनी बड़ी हो गई कि, उसको रखनेके लिए समुद्रके सिवा कहीं जगह ही न मिली। समुद्रमें पहुंचनेके बाद उस मत्स्यने मनुसे कहा—"शीघ्र ही महाप्लावन होगा, एक नाव बना कर सप्तर्षि सहित तुम उसमें बैठ आओ।" मनुने भी वैसा ही किया; नावकी रस्सी मत्स्यके सींगोंसे बाँध दी। देखते देखते वह नाव महासमुद्रमें बह चली। चारों ओर पानी ही पानी दीखने लगा; इस तरह जब समस्त जगत् जलमें डूब गया, तब उस प्रबल तरङ्गमें मनु, सप्तर्षि और मत्स्यके सिवा और कुछ भी नजर नहीं आया। इस प्रकारसे वह मत्स्य नावको लिए हुए वर्षों घूमते घामते हिमालय पर्वतकी चोटी पर पहुंचा और हंसते हंसते मनुसे कहने लगा—"इस ऊंची शिखरसे शीघ्र ही नावको बाँध दो। मैं ही प्रजापति विधाता हूं, तुम लोगोंकी रक्षाके लिए ही मैंने यह मूर्ति धारण की है। इस मनुसे ही देवासुर नरकी उत्पत्ति होगी और उनसे ही स्थावर जङ्गम समुदायकी सृष्टि होगी।"

अग्नि और मत्स्यपुराणमें लिखा है—एक दिन वैवस्वत मनु कृतमाला नामक नदीमें जा कर तर्पण कर रहे थे; इसी समय उनकी अञ्जलीमें एक छोटी मछली आ पड़ी। मछलीके कथनानुसार मनुने पहले उसे कलसमें, फिर जलाशयमें और अन्तको शरीर बढ़ने पर समुद्रमें छोड़ दिया। मछलीने समुद्रमें गिरते ही क्षणमात्रके भीतर अपना शरीर लाख योजन विस्तृत कर लिया। यह देख मनु कहने लगे—"भगवान्! आप कौन हैं? आप देव देव नारायण हैं, इसमें सन्देह नहीं। हे जनार्दन! मुझे क्यों मायाजालमें मुग्ध कर रहे हो?" इस पर मत्स्यरूपी भगवान्ने उत्तर दिया—"मैं दुष्टोंका दमन और साधुओंकी रक्षा करनेके लिए मत्स्यरूपमें अवतीर्ण हुआ हूं। आजसे सात दिनके भीतर भीतर यह निखिल जगत् समुद्रके जलसे प्लावित हो जायगा। उस समय एक नाव तुम्हारे पास आवेगी। तुम उस पर समस्त जीवोंके एक एक दम्पतीको स्थापन कर सप्तर्षिसे परिवृत हो उसीमें एक ब्राह्मी निशा अतिवाहित करना। उस समय मैं भी उपस्थित होऊंगा। तुम उस समय नौकाको नागपाश द्वारा मेरे सींगसे बाँध देना।" यथा समय समुद्रने अपनी मर्यादा छोड़ी। नाव भी वहां आ पहुंची। मनुने उस पर बैठ कर एक ब्राह्मी निशा अतिवाहित की। आखिरकार एक शृङ्गधारी नियुत योजन विस्तृत काञ्चनमय एक मत्स्य भी उपस्थित हुआ। नावको उसके सींगसे बाँध मनु मत्स्यका स्तव करने लगे।"

ईसाइयोंके धर्मग्रन्थ बाईबलके मतसे—सृष्टिके १६५६ वर्ष बाद और ईसाके जन्मसे २२८३ वर्ष पहले भीषण जलप्लावन हुआ था। उस समय महागभीर प्रस्रवों का चकनाचूर हो गया था, स्वर्गके गवाक्ष खुल गये थे और ४० दिन ४० रात तक लगातार मूसलधारसे पानी बरसा। क्रमशः पानी इतना बढ़ गया कि, समस्त पर्वतों शिखरोंसे भी १५ हाथ ऊंचा हो गया। इससे इस जगत्के अस्थिचर्मधारी समस्त जीवोंका ही विनाश हो गया। प्रत्यादेशके अनुसार नोआ समस्त प्राणियोंके एक एक जोड़ेको ले कर एक बहुत बड़ी नाव पर चढ़ गये। अब सिर्फ नोआ और उसकी नावके प्राणी ही बच रहे। १५० दिन तक वह जल ज्योंका त्यों रहा, पीछे ईश्वरने पृथिवी पर हवा चलाई जिससे जल धीरे धीरे घटने लगा। समुद्र और प्रस्रवणका स्रोत तथा स्वर्गके गवाक्ष बन्द हो गये। वर्षा भी थम गई। नोआ २य मासके १७वें दिन नाव पर चढ़े थे। ७म मासके १७वें दिन नाव आराराट पर्वतकी चोटीसे जा लगी। दूसरे वर्षके पहले दिनसे जल सूखने लगा। दो मास बाद पृथिवी भी सूख गई। इस प्रकारसे महाजलप्लावनसे नोआने रक्षा पाई थी।

ग्रीक, पारसी, अमेरिकाके मेक्सिको और पेरुवासी भी जलप्लावनकी कथाका वर्णन किया करते हैं। पूर्वोक्त विवरणोंमें परस्पर थोड़ा बहुत विरोध रहने पर भी, नौकामें चढ़ कर रक्षा पानेकी कथाको सभी स्वीकार करते हैं। मनु देखो।

प्रसिद्ध चीन-ज्ञानी कनफ्युचिने अपने इतिहासमें लिखा है—"उस भीषण जलप्लावनके आकाशके समान ऊंचे पानीने समस्त भुवन और उच्च पर्वतोंको डूबो दिया था। चीन-सम्राट् ज्ञासकी आज्ञासे वह पानी हट गया था।"

यूरोपके अनेक भूतत्त्वविद्गण कहा करते हैं कि—बाईबलमें जिस जलप्लावनकी कथा लिखी है, भूतत्त्व द्वारा

भाग ठोस होता है। काट करके अलग करने पर उसको 'आकाशाश' कहते हैं। यह विलायतको भेजा जाता है। इससे बिलियार्ड खेलनेका गोला बनाते हैं। हाथीदांतका बिचला भाग पोला रहता है। इसका नाम 'चूड़ीदार' है। चूड़ियां बनानेका इसका अधिकांश भारतमें बिकता है। दांतका मूलभाग विदेशको प्रेरित होता है। पीले भागकी एक निकृष्ट जाति भी है। उसको 'चीना आइवरी' कहते हैं। वह चीन देशको भेजा जाता है।

हाथीदांतका व्यवसाय दिन दिन घट रहा है। ५० वर्ष पहले बम्बई नगरमें अफ्रीकासे कमसे कम २५००० जोड़ा हाथीदांत आता था। आजकल उसका आधा भी नहीं मंगाते। अधिकांश हाथीदांत पहले अफ्रीकाके मध्यवर्ती स्थानसे लाते हैं। फिर वह समुद्रके किनारे जहाजों पर लादा और नाना देशोंको भेजा जाता है।

बहुत पुराने समयसे भारतवर्षमें हाथीदांतका कारुकार्य प्रचलित है। बृहत्संहिताके मतमें खाट या पलंग बनानेके लिये हाथीदांत जैसी दूसरी चीज नहीं होती। वराहमिहिरने लिखा है कि पलंगके पावे हाथीदांतके बनाने चाहिये। फिर दूसरा भाग लकड़ीसे बना करके उसके ऊपर हाथीदांत जड़ देनेसे भी काम चल सकता है।

राजपूताना, पञ्जाब आदि देशोंमें हिन्दू मुसलमान सभी जातिकी स्त्रियां हाथीदांतकी चूड़ियां पहनती हैं। विवाहके समय कन्याका मामा उसको हाथीदांतकी चूड़ियां खरीद देता है। सीपकी तरह हाथीदांतकी चूड़ियों पर भी कई रङ्ग चढ़ाते हैं। फिर इस पर अभ्रक आदि चमकीली चीजें भी लगा देते हैं। बड़े घरानेकी स्त्रियां विवाहके पीछे एक वर्ष तक यह चूड़ियां पहने रहतीं, गरीब दुःखी स्त्रियां चिरकाल तक इन्हें नहीं छोड़तीं। राजपूतानेकी रेलवेसे जहां योधपुर जानेकी शाखा फूटी, उसीके पास पाली गांवमें प्रचुर परिमाणसे हाथीदांतकी चूड़ियां बनती हैं। हाथीदांतकी चूड़ियां नाना प्रकारकी होती हैं। परन्तु साधारणतः यह सीपकी जैसी चूड़ियां दीख पड़ती हैं।

बम्बईमें हाथीदांत नाना भागोंमें काट करके देश विदेश भेजा जाता है। बढ़ई ही आरीसे हाथीदांत काटते हैं, इसकी मजदूरी वह नहीं पाते। काटनेमें जो बुकनी निकलती, वही उनको मिलती है। यह बुरादा वह ग्वालोंके हाथ बेंच देते हैं। ग्वालोंको विश्वास है कि गाय भैंसको वह बुकनी खिलानेसे दूध अधिक होता है। मनुष्यके लिये भी गजदन्तका चूर्ण बलकारक औषधोंमें गिना जाता है।

इसके बाद हाथीदांत तीन आढ़तोंमें पहुंचता है। फिर वहांसे दूसरी जगहोंको प्रेरित होता है। इन तीनों आढ़तोंका नाम है—पाली, सूरत और अमृतसर। नहरिया सम्प्रदायके माड़वारी हाथीदांतका बड़ा व्यवसाय करते हैं। यह जैन धर्मावलम्बी हैं, हाथीदांत छूनेसे इन्हें महापातक लगता है इसीसे वह अपने आप हाथीदांत नहीं छूते। हाथीदांतको स्पर्श करना, रखना, ढकना, तौलना आदि जो कुछ आवश्यक आता, मुसलमान नौकरोंसे ही करा लिया जाता है। चूड़ियोंको छोड़ करके इस देशमें हाथीदांत कंघिया बनानेमें ही अधिक लगता है। कंघियोंकी बड़ी जगह दिल्ली और अमृतसर है। कंघिया बना करके जो हाथीदांत बचता, दूसरे लोग खरीद करके ले जाते हैं। वह उस हाथीदांतकी पत्तियां सन्दूक आदि लकड़ीकी चीजोंमें जड़ देते हैं। मुलतान, डेराइस्माइल खाँ, होशियारपुर, स्यालकोट, सूरत, बङ्गलोर, विशाखपत्तन प्रभृति स्थानोंमें हाथीदांतसे जड़ी लकड़ीकी ऐसी ही बहुत सुन्दर चीजें तैयार होती हैं।

मुर्शिदाबादमें केवल गजदन्तसे प्रस्तुत होनेवाले द्रव्य बहुत अच्छे होते हैं। ऐसा अच्छा कारीगरी और कहीं देख नहीं पड़ती। मुर्शिदाबादके कारीगर हाथीदांतसे दुर्गाकी मूर्ति, कालीकी प्रतिमा, हाथी, गाड़ी, मोरपङ्ख, नाव आदि बहुतसी चीजें बनाते हैं। गया, डुमरांव, दरभङ्गा, कटक, रङ्गपुर, वर्धमान, चट्टग्राम, ढाका, पटना आदि स्थानोंमें भी गजदन्तके द्रव्य मिलते हैं। हाथीदांतके बारीक रेशे उतार करके चामरी तैयार करते हैं। फिर उसे बुन करके चटाई भी बनायी जा सकती है। पहले समयमें श्रीहट्टमें हाथदांतकी बहुतसी चटाइयां बनती थीं। ऐसी चटायोंका

जलभीति (सं० स्त्री०) जलातङ्क रोग ।

जलभू (सं० पु०) जलस्य भूः भवत्यस्मात् अपादाने क्विप् । १ मेघ, बादल । जलं भूः उत्पत्तिर्यस्य । २ कच्चट शाक, जलचौराईका साग । २ कपूर, कपूर । (स्त्री०) ३ जलकी आधारभूमि ।

जलभूषण (सं० क्लो०) वायु, हवा ।

जलभृत् (सं० पु०) जलं बिभर्ति भृ-क्विप् । मेघ, बादल । २ एक प्रकारका कपूर । ३ जल रखनेका पात्र ।

जलमक्षिका (सं० स्त्री०) जलजाता मक्षिका । जलकृमि, पानीका कीड़ा ।

जलमण्डपिका (सं० स्त्री०) शैवाल, सेवार ।

जलमण्डल (सं० पु०) एक प्रकारकी बड़ी मकड़ी । इसके काटनेसे मनुष्य मर जा सकता है ।

जलमण्डूक (सं० क्लो०) जलं मण्डूकमिव । मण्डूकरव सदृश वाद्यकारक एक प्रकारका बाजा जो मेढ़ककी बोली जैसा बजता है ।

जलमद्गु (सं० पु०) जलं मद्गुरिव । मत्स्यरङ्ग पक्षी, मछरंग, कौड़िल्ला ।

जलमधुक (सं० पु०) जलजातो मधुकः । मधुकाद्वच, जलमहुआ । इसके पर्याय—मङ्गल्य, दीर्घपत्रक, मधुपुष्प, क्षौद्रप्रिय, पतङ्ग, कोरेष्ट गैरिकाख्य है । इसके गुण—मधुर, शीतल, गुरु, व्रण और वान्तिनाशक, शुक्र, बल कारक और रसायन है ।

जलमय (सं० त्रि०) जलात्मकः जल-मयट् । १ जलपूर्ण, पानीसे भरा हुआ । (पु०) २ जलमय चन्द्रादि । ३ शिवकी एक मूर्ति ।

जलमसि (सं० पु०) जलेन जलाकारेण मस्यति परिणमति मस-इन् । १ मेघ, बादल । २ कपूरभेद, एक प्रकारका कपूर ।

जलमहुआ (हिं० पु०) एक प्रकारका महुआ । इसके पत्ते उत्तरी भारतके महुएके पत्तोंसे बड़े होते हैं । इसमें बहुत छोटे फूल लगते हैं । जलमधुक देखो ।

जलमातृका (सं० स्त्री०) जलस्थिता मातृका । जलस्थिता मातृभेद, एक प्रकारकी देवियाँ जो जलमें रहती हैं । इनकी संख्या सात हैं—मत्स्यी, कूर्म्मी, वाराही, दर्दुरी, मकरी, जलुका और जन्तुका ।

"मत्स्यी कूर्म्मी वाराही च दर्दुरी मकरी तथा ।
जलूका जन्तुका चैव सप्तैते जलमातृकाः ।"

जलमानयन्त्र—जल मापनेका यन्त्र । (Hydrometer)

जलमानुष (सं० पु०) परीरनामक कल्पित जलजंतु । इसकी नाभिसे ऊपरका भाग मनुष्यकासा और नीचेका मछलीकासा होता है ।

जलमार्ग (सं० पु०) जलस्य मार्गः निर्गमपथः । १ प्रणाली, पानी बहनेकी नली । जलमेव मार्ग । जलपथ ।

जलमार्जार (सं० पु०) जलस्य मार्जारः । जलनकुल, ऊदबिलाव ।

जलमीन (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली ।

जलमुच् (सं० पु०) जलं मुञ्चति मुच्-क्विप् । १ मेघ, बादल । २ कपूरभेद, एक प्रकारका कपूर । (त्रि०) ३ जलमोचनकर्त्ता, जल बरसानेवाला ।

जलमुठी (हिं० स्त्री०) वह सुलैठी जो जलाशयके तट पर पैदा होती है ।

जलमूर्त्ति (सं० पु०) जलं मूर्त्तिरस्य । शिव, महादेव ।

जलमूर्त्तिका (सं० स्त्री०) जलस्य मूर्त्तिः घनीभूताकृतिः संज्ञायां कन् ततो टाप् । करका, ओला । करका देखो ।

जलमोद (सं० पु०) जलेन जलसंयोगेन मोदयति, सद्गन्धं अण् । उशीर, खस ।

जलम्बल (सं० क्लो) नदी, दरिया । २ अञ्जन, काजल ।

जलयन्त्र (सं० क्लो०) २ जलानां उत्क्षेपणार्थं यन्त्रं । १ धारायन्त्र, फौआरा । कूपसे जलनिकालनेका यन्त्र, वह यंत्र जिससे कूएं आदि नीचे स्थानोंसे पानी ऊपर निकाला या उठाया जाता है । ३ कालज्ञापक घटीयन्त्र-भेद, जलघड़ी । घटीयन्त्र देखो ।

जलयन्त्रगृह (सं० क्लो०) जलयन्त्रमिव कृतं गृहं । जलमध्यस्थित गृह, वह घर जिसके चारों ओर जल हो । इसके पर्याय—समुद्रगृह, जलयन्त्रनिकेतन और जलयन्त्रमन्दिर है ।

जलयन्त्रनिकेतन (सं० क्लो०) जलयन्त्रमिवकृतं निकेतनं । जलयन्त्रगृह ।

जलयन्त्रमन्दिर (सं० क्लो०) जलयन्त्रमिव कृतं मन्दिरं । जलयन्त्रगृह ।

यह नगर बहुत पुराना है। किसी समय यहां बहुतसे लोग रहते और मजेमें अपना गुजर करते थे। गजनीकी पश्चिम ओर तरनाक उपत्यकासे सोस्तानके नगरों और गावोंका जो ध्वंसावशेष मिलता, इसकी प्राचीन समृद्धिशालिताका निदर्शन ठहरता है।

जैसलमेरका इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ता कि विक्रमादित्यके आविर्भावसे बहुत पहले यादव लोग गजनोसे समरकन्द तक सारे भूभागमें राजत्व करते थे। कर्नल टाड साहबने विलायतकी रायल एशियाटिक सोसाइटीको हिन्दुओंका एक मानचित्र (नकशा) दिया था। उसमें 'गजलि-वन' अर्थात् हाथियोंके जङ्गल नामसे निर्दिष्ट है। बहुतोंके मतमें हिन्दू राजाओंने ही यह नगर बसाया था। फिर कोई कोई कहता कि गजनीमें ही संस्कृत शास्त्रोक्त यवनराज रहता था। टलेमिने 'ओजोला' (Ozola) और क्रिसोकोकमने सवल या जवल (Sabal or Zabal) नामसे इसका उल्लेख किया है।

८७६ ई०को अलपतगीनने बोखारेसे आ करके यहां राजधानी लगायो थी। उन्हींके उत्तराधिकारी सुबक्तगीन रहे। इन्हींके पिता सुलतान महमूदने हिन्दुस्थान जीता था। महमूदके शासनकालको गजनीका राज्य पूर्वको गङ्गा, पश्चिम टाइग्रीस नदी, उत्तर ओक्सस और दक्षिणको भारतमहासागरके उपकूल तक फैला था। ११५१ ई०को अलाउद्-दीन गोरीने गजनी नगर आक्रमण किया। उस समय हजारों बाशिन्दे उनके निष्ठुर अत्याचारसे मारे गये। फिर अरबोंका गजनीमें राज्यशासन हुआ। ई० १३वीं और १५वीं शताब्दीको तातार लोगोंके दारुण दौरात्म्यसे गजनी शहर धूलमें मिल गया था।

१८३९ ई० २२ जुलाई और १८४१ ई०को भी अंगरेजोंके अधीन भारत सेनाने गजनी नगर आक्रमण किया। फिर १८८० ई०को वृटिश सेना इस पर परिचालित हुई।

अफगानस्तान और भारत आने जानेके लिये यहा चार बड़ी राहें है। नगरकी चारों ओर जमीन खब उपजाऊ है। वहा अङ्गूर, तम्बाकू, कपास आदि खूब होती है।

शहरकी दोनों तर्फ सुलतान महमूदके दो मीनार है। यह ईंटसे बनाये गये है। इनकी कारीगरी बहुत अच्छी है। दोनोंमें एक मीनार कोई ८४ हाथ ऊंचा होगा।

गजपति (सं० पु०) गजस्य पतिः ६-तत्। १ श्रेष्ठ गज बढ़िया हाथी। २ अत्युच्च हस्ती, बहुत बडा हाथी। "गजपति इयसो रपि हैमनः।" (माघ) ३ उत्कल और कलिङ्ग देशके राजाओंकी उपाधि। अन्ध्र और बेङ्गी देशके बौद्ध राजगण समय समय पर इस उपाधिको धारण करते रहे। वर्तमान समयमें केवल उत्तर सरकारके एक राजा "राजा गजपति राव" की उपाधिसे विद्यमान हैं। ४ वह राजा जिसके पास बहुतसे हाथी हों।

गजपतिनगर, मन्द्राज प्रदेशके विशाखपत्तन जिलाके अन्तर्गत एक तहसील। यह अक्षा० १८° ११ तथा १८° ३०' उ० और देशा० ८३° ३' एवं ८३° ३२' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३३३ वर्गमील है। इसमें २२८ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १३४५५३ है। तहसीलकी समस्त पार्वतीय चीजें यहा लाकर बेची जाती है। इस तहसीलमें फौजदारी अदालत, रजिष्टरी आफिस, डाकघर और औषधालय है।

गजपति वीरनारायणदेव—एक संस्कृत ग्रन्थकार। यह पद्मनाभके पुत्र तथा कविरत्न पुरुषोत्तममिश्रके शिष्य थे। इन्होंने अलङ्कारचन्द्रिका और सङ्गीतनारायण ग्रन्थकी रचना की थी।

गजपन्था—जैनियोंका सिद्धक्षेत्र। यह नासिक शहरसे करीब चार माइल दूरी पर अवस्थित है। यहां आधा माइल ऊंचा एक पर्वत है। जिस पर कि दो गुफा, दो कुण्ड और पहाड़के पत्थरोंसे बनी हुई तीर्थंकरोंकी अनेक मूर्तियां विराजमान है। पर्वत पर चढ़नेके लिये सीढ़ी भी बनी हुई हैं। इस पर्वतसे वलभद्र आदि आठ करोड़ मुनीश्वर मोक्ष गये हैं। (तीर्थयात्रा। ३५)

गजपांव (हिं० पु०) जलपक्षीविशेष। इसके पैर लाल, सिर, गरदन, पीठ और डैने काले तथा शेष अंग सफेद होते है। जाड़ेके दिनोंमें यह हिन्दुस्तानके ठण्ढे मैदानमें चला जाता है। मादा एक बार तीन या चार अंडे देती है।

गजपादप (सं० पु०) गजप्रियः पादपः। स्थालीवृक्ष, वेलिया पीपल।

जलवादित (सं० क्लो०) जले वादितं। जलवाद्य, एक प्रकारका बाजा जो पानी दे कर बजाया जाता है।

जलवाद्य (सं० क्लो०) जलं वाद्यमिव। जलवाद्य, पानो का बाजा।

जलवाना (हिं० क्रि०) किसी दूसरेसे जलानेका काम कराना।

जलवानीर (सं० पु०) जलजातो वानोरः। जलवेतस, जलबेंत।

जलवायस (सं० पु०) जले वायसः काक इव। मद्गु पची, कौड़िल्ला पची।

जलवालक (सं० पु०) विन्ध्य पर्वत।

जलवास (सं० क्लो०) जलेन वासो गन्धः यस्य। १ उशोर खस। (पु०) जलं वासयति वस-णिच-अण्। २ विष्णु-कन्द। ३ सलिल-निवास, जलमें रहना।

जलवाह (सं० पु०) जलं वहति वह-अण्। १ मेघ, बादल। (त्रि०) २ जलवाहक, पानी ले जानेवाला।

जलवाहक (सं० पु०) जलवहनकारो, वह जो पानी ढोता हो।

जलवाहन (सं पु०) जलवाहक।

जलविड़ाल (सं० पु०) जले विड़ाल इव। जलनकुल, ऊदबिलाव।

जलविन्दुजा (सं स्त्री०) जलबिन्दुभ्यो जायते जन्-ड-स्त्रियां टाप्। १ यावनालो शर्करा, यावनाल शर्करा नामकी दस्तावर औषध। इसे फारसोमें शीरखिश्त कहते हैं। २ मैना। (त्रि०) ३ जलविन्दुजात, जो पानीकी बूंदसे पैदा होता हो। (स्त्री०) ४ तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम।

जलविल्व (सं० पु०) जलप्रधानो विल्व इव। कर्कट, केकड़ा। २ पद्मात, कछुवा। ३ जलचत्वर, चौखूंटा तालाब। ४ जलवल्कल।

जलविषुव (सं० क्लो०) जलप्रधानं विषुवं। तुलासङ्क्रान्ति, आश्विन चिह्नित। (शब्दर०) सूर्य जिस दिन कन्याराशिसे तुलाराशिमें जाता है, उस दिनका नाम जल-विषुव सङ्क्रान्ति है। सूर्यके सञ्चार होते समय, नचत्रों की अवस्थितिके विषयमें ज्योतिष-शास्त्रमें इस प्रकार लिखा है—मुखमें १८—६२, हृदयमें २३—२६, दचिण हस्तमें २७।१।२, दचिण पादमें ६—८, वाम पादमें १—११, वाम हस्तमें ३—५, मस्तकमें १२—१७। सञ्चार होते समय नचत्रोंके अवस्थानका फल—मुखसे मान, हृदयसे सुखसम्भोग, दचिण हस्त और दचिणपादसे भोग, वाम हस्त और वामपादसे त्रास तथा मस्तकसे सुख होता है। जलविषुव सङ्क्रान्तिके अशुभ होने पर उसकी शान्तिके लिए कनकधुस्तूर बीज और सर्वौषधि जलमेंसे स्नान तथा विष्णुका जप करना आवश्यक है, इससे समस्त शुभ होता है। सङ्क्रान्तिमें कोई भी पुण्य कर्म करनेसे अधिक फल होता है। सङ्क्रान्ति देखो। गृह पुष्करणी प्रतिष्ठादिके कार्य कालाशुद्धि होने पर भी जलविषुव-सङ्क्रान्तिमें किये जा सकते हैं। "अयने विषुवे चैव तथा विष्णुपदी मता" प्रतिष्ठातत्त्व।

जलवीर्य (सं० पु०) भरतके एक पुत्रका नाम।

जलवृश्चिक (सं पु०) जले वृश्चिक इव। चिङ्गटमत्स्य, झींगा मछली।

जलवेतस (सं० पु०) जलजातो वेतसः। वानीर वृक्ष, जलबेंत। इसका पर्याय--निकुञ्जक, परिव्याध और नादेयो है। इसका गुण—शीतल कुष्ठनाशक और वातवृद्धिकर है।

जलवैकृत (सं० क्लो०) विकृतस्य भावः वैकृतं जलस्य वैकृतं, ६-तत्। नदी आदिके जलमें अमङ्गलको सूचित करनेवाले विकारोंका उत्पन्न होना। वराहमिहिरके मतसे—नगरके पाससे नदियोंके सरक जाने वा नगरस्थ अन्य कोई अशोष्य ह्रदादिके सूख जानेसे शीघ्र ही नगर शून्य हो जाता है। नदियोंमें यदि तेल, रक्त वा मांस बहता दिखाई दे; पानी यदि मैला हो जाय, वा उलटा बहने लगे, तो उसे छह मासके भीतर परचक्रके आगमनकी सूचना समझनी चाहिये। कुएंमें ज्वाला, धुआं आदिका दिखाई देना, उसके पानीका गरम होना या उसमें रोदन, गर्जन और गानेकी आवाज होना, यह सभी लोक-नाशके कारण हैं। अघातसे जलकी उत्पत्ति होने, जलके रूप, रस, गन्ध आदिका अकस्मात् बदल जाने या जलाशयके बिगड़ जानेसे महत् भय उपस्थित होता है। इस प्रकारके जलवैकृतोंके उपस्थित होने पर वारुण-मन्त्र द्वारा वारुणकी पूजा,

गजमद (सं० क्ली०) हाथीका मद।

गजमदहरणी (सं० स्त्री०) श्रिबलिङ्गिनीलता, पञ्च-गुरिया।

गजमल्ल—कर्पूरमल्लका लड़का। इनके पुत्रका नाम कल्याणमल्ल था।

गजमाचल (सं० पु०-स्त्री०) गजस्य माचम् शाठ्यम् लूनाति लू बाहुलकात् डः। सिंह। स्त्रीलिङ्गमें ङीष् होनेसे गजमाचली होता है।

गजमात्र (सं० त्रि०) गजेन परिमाणमस्य गज-मात्रच्। गजपरिमित, हाथी आकारका।

गजमुक्ता (सं० स्त्री०) गजे गजकुम्भे जाता मुक्ता। एक प्रकारकी मुक्ता वा मोती जो हस्तीके मस्तकमें पायी जाती है। प्राचीन आर्यगण गज, मेघ, वराह, शङ्ख, मत्स्य, सर्प, शुक्ति और वेणु इन आठोंमें मुक्ताका उत्पत्ति-स्थान बतलाते हैं।

"करीन्द्रजीमूतवराहशङ्खमत्स्याहिशुक्त्युद्भववेणुजानि।
मुक्ताफलानि प्रथितानि लोके तेषान्तु शुक्त्युद्भवमेव भूरि॥"
(कुमारटीका—मल्लिनाथ)

आधुनिक वैज्ञानिक हस्तिकुम्भसे मुक्ताका निकलना स्वीकार नहीं करते क्योंकि आजतक इन्होंने गज-कुम्भमें मुक्ता देखी ही नहीं है।

गजमुख (सं० पु०-क्ली०) गजस्य मुखं मुखमस्य बहुव्री०। १ गणेश। गजानन देखो।

"प्रमथाधिपो गजमुखः।" (हइल्लं० ५८ प०)

(क्ली०) गजस्य मुखं, ६-तत्। २ हाथीका मुख।

गजमोचन (सं० पु०) विष्णु भगवान्‌का एक आकार, जिसे धारण कर उन्होंने गजको वराहसे बचाया था।

गजमोटन (सं० पु०-स्त्री०) गजम् मोटयति पीडयति गज-मुट्-णिच् ल्यु। सिंह। स्त्रीलिंगमें ङीप् होनेसे गजमोटनी शब्द होता है।

गजमौक्तिक (सं० क्ली०) मुक्ता एव मुक्ता स्वार्थे कन्। गजमुक्ता, गजमोती।

"गजमौक्तिका बलियतेन वचसः।" (किरात १२।४१)

गजर (फा० पु०) पहर पहर पर घण्टा बजनेका शब्द, पारा।

गजरथ (सं० पु०) हाथीके खींचनेका रथ। प्राचीन समयमें राजा इस पर चढ़ कर लड़ाईमें जाते थे।

गजरप्रबन्ध (सं० पु०) स्वर और बाजाका मिलान। यह गायन और नृत्यके आरम्भमें श्रोताओंके सामने सुनाया जाता है।

गजरबजर (हिं० पु०) अंडबंड, घाल मेल।

गजरा (हिं० पु०) १ गाजरके पत्ते, जो चौपायोंको खिलाये जाते हैं। २ फूलकी माला।

गजराज (सं० पु०) बड़ा हाथी।

गजराज उपाध्याय—बनारसके एक हिन्दी कवि। १८१७ ई०को इन्होंने जन्म लिया था इन्होंने वृत्तहार नामक एक काव्य और एक रामायणको लिखा है।

गजरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका आभूषण, जिसे स्त्रियां कलाईमें पहनती हैं।

गजरीट (हिं० स्त्री०) गाजरकी पत्ती।

गजल (फा० पु०) एक फारसी और उर्दूमें शृङ्गार रसकी कविता। इसमें प्रेमियों और प्रेमिकाका विरह वर्णित रहता है।

गजलण्ड (सं० क्ली०) गजस्य लण्डम्, ६-तत्। हाथीका नाद। (चक्रदत्त)

गजलोल (हिं० पु०) एक तालभेद। जिसमें चार लघुमात्रा और अन्तमें विराम होता है।

गजवत् (सं० त्रि०) गजोऽस्त्यस्य गज-मतुप् मस्य वः। गज विशिष्ट, जिसमें हाथी रखा जाता हो।

गजवदन (सं० पु०-क्ली०) गजस्य वदनम् यस्य, बहुव्री०। १ गणेश। गजस्य वदनम्, ६-तत्। २ हाथीका मुख।

गजवल्लभा (सं० स्त्री०) गजस्य वल्लभा, ६-तत्। १ गिरि-कदली, पहाड़ी केला। २ शल्लकी वृक्ष, सलईका पेड़। (राजनि०)

गजवान (हिं० पु०) महावत, हाथीवान।

गजवाजिप्रिया (सं० स्त्री०) कद्दू, लौकी लौवा।

गजवीथी (सं० स्त्री०) रोहिणी, आर्द्रा और मृगशिरा नक्षत्रोंको गजवीथी कहते हैं। खगोल देखो। गजस्य वीथी, ६-तत्। २ हाथीका पंक्ति, हाथीका कतार।

गजवीर—मानभूमस्थ एक गिरिशृङ्ग। इसका दूसरा नाम गङ्गावाड़ी है।

गजव्रज (सं० त्रि०) हस्तीवत् भ्रमणशील, हाथीकी तरह चलना।

है, इसलिए इसका नाम जलस्तम्भ पड़ गया है। यह अपूर्व घटना नाना कारणोंसे हुआ करती है। कभी कभी देखा जाता है कि, घोर घनघटाके नीचे समुद्रका जल अति वेगसे १०० से १२० गज व्यास तक आन्दोलित हो रहा है, तरङ्गमाला कम्पित जलराशिके बीचमें जा कर लग रही है और वहांकी विस्तीर्ण जलराशिसे एक जलीय वाष्पयुक्त स्तम्भ उठ कर घूमता हुआ रणशृङ्गाके आकारमें मेघकी तरफ जा रहा है। ऊपरको मेघकी विपरीत दिशामें भी ऊर्द्धगामी स्तम्भकी भाँतिका और एक स्तम्भ उठते दिखाई देता है। देखते-देखते थोड़ी देरमें दोनों स्तम्भ एकत्र हो कर मिल जाते हैं, इस स्थानका व्यास दो-तीन फुट मात्र हो जाता है; इस समय "गुड़ गुड़" शब्द भी सुनाई पड़ता है। दोनोंके मिलने पर देखनेमें बहुत अच्छा लगता है। इस जलीय स्तम्भका बीचका भाग भूरे रंगका पर किनारेके दोनों हिस्से घने काले रंगके होते हैं। यह वायुकी गतिके अनुसार चलता रहता है; किन्तु वायुके न रहने पर किधर जायगा, इसका कोई ठीक नहीं। जलस्तम्भके ऊर्द्ध और अधोभागकी गति प्रायः विभिन्न हुआ करती है; पीछे जब समूचा तिरछा हो जाता है, तब यह भीषण शब्द करता हुआ विच्छिन्न हो जाता है। तत्क्षणात् वह वाष्पराशि वायुमें मिल जाती है और प्रबल धारासे समुद्रमें गिरती है। कभी तो यह जलस्तम्भ थोड़ी देरमें उठ कर ही अदृश्य हो जाता है और कभी एक घण्टे तक रहता भी है। कभी कभी यह बार बार अदृश्य और बार बार दृष्टिगोचर होता रहता है।

स्थल पर भी कभी-कभी ऐसा जलस्तम्भ देखा गया है। ऐसी जगह नीचेसे कोई ऊर्ध्वगामी रणशृङ्गाकार जलराशि वा जलीयवाष्प ऊपरको चढ़ कर नहीं मिलती; प्रत्युत शून्यमें बादामके आकारकी वाष्पराशिसे जलस्तम्भ निकलता है, उस समय जल्दी जल्दी बिजलीका गिरना, मुसलधारसे पानी बरसना और गन्धककी तीव्र गन्धका आना इत्यादि होता है। कभी कभी यह जलस्तम्भ अतिवेगसे उच्च भूमि, उपत्यका और नदीका स्रोत अतिक्रम कर पर्वतके पास जा कर उसके चारों तरफ फैल जाता है। १७१८ ई०में इस तरहका एक जलस्तम्भ विलायतके लङ्काशायरमें देखा गया था, उसके फटनेसे वहांकी जमीन करीब आधी मील पर्यन्त फट गई थी और वहां ७ फुट गहरा गड्ढा होगया, था। सभी जलस्तम्भोंका आकार प्रायः रणशृङ्गके सामान नीचे चौड़ा और ऊपरको क्रमशः पतला होता है। परन्तु जो स्थलमें उत्पन्न होते हैं, उनमें नीचेका अंश नहीं होता। एक रणशृङ्गा (भेरी) को सीधी तरहसे रख कर उससे नीचेके हिस्सेको बाद देनेसे जैसा होता है, स्थलोत्पन्न जलस्तम्भका भी ठीक वैसा ही आकार होता है। सर-उइल् साहबने स्थलोत्पन्न अनेक जलस्तम्भोंका विवरण लिखा है। कलकत्तेसे आठ मील उत्तर पूर्वमें दमदमा नामक स्थानमें १८५७ ई०को एक जलस्तम्भ देखा गया था। जिस सप्ताहमें यह जलस्तम्भ दीखा था, उस सप्ताह दक्षिणपश्चिम और उत्तरपूर्व दोनों तरफसे मौसमकी हवा चल रही थी ऐसी वायु दोनों तरफसे रुकावट पानेके कारण हिमालयके आस पास, वर्षाके जो मेघ थे, उन्हें हटा न सकी थी। इसी प्रकारकी रुकावटसे ही दमदमामें क्रमशः मेघ जमने लगे। धीरे धीरे मेघराशि वृत्ताकारसे आकाशमें घूमने लगी और वायुकी गति दिनमें दो तीन बार बदलने लगी। ७ अक्टोबरको दिनके ३ बजेसे ४ बजेके भीतर वायुकी गतिका परिवर्त्तन हुआ और बादलोंका वृत्ताकारमें घूमना क्रमशः बढ़ने लगा; साथ ही खूब जोरकी वर्षा होने लगी। ४ बजेके बाद अकस्मात् सब शान्त हो गया। इस समय एक बड़ा भारी बादल पीछेकी तरफ धनुषकी तरह क्रमशः जमीनकी ओर झुकने लगा। उस बादलके ठीक बीचसे एक बहुत बड़ा जलस्तम्भ निकला और वह द्रुतवेगसे जमीनसे आ मिला। जमीनसे लगते ही उसका नीचेका भाग दो भागोंमें विभक्त हो गया। इसके बाद ही स्तम्भ फट गया और उसका पानी जमीन पर गिरने लगा। उस समय यह ठीक जलप्रपातकी तरह दीखने लगा इस तरह दूसरे वर्ष भी अक्टोबरको दिनके दिनने ५ बजे दमदमामें १० हजार फुट लम्बा एक जलस्तम्भ दिखाई दिया। जलस्तम्भके उत्पन्न होनेका कारण क्या है, इस विषयमें बहुतोंने बहुत तरहकी व्याख्याएं की हैं, किन्तु वास्तविक निगूढ़ कारण शायद

हाथीका मस्तक काट ले जा करके छिन्न मस्तक बालकके शरीरमें लगा दिया। इस आशङ्कासे कि शायद कोई हाथीका मुंह देख उनकी पूजा न करे, सकल देवताओं-ने मिल करके विधान किया था कि गजाननकी पूजा न करनेसे उनको पूजा भी बिगड जावेगी। इसीसे सब देवदेवियोंकी पूजाके आगे गणेशपूजा करनेका नियम हो गया है।

स्कन्दपुराणके गणेशखण्डमें इसका उपाख्यान अन्य प्रकार लिखित है—

सिन्दूर नामके किसी दैत्यने पार्वतीके गर्भमें अष्टम मासको प्रवेश करके गणेशका मत्था काट डाला था। परन्तु इससे बालकके जीवनका कोई अनिष्ट न हुआ। प्रसवके पीछे नारदने आ करके बालकसे ही उसका कारण पूछा था। उसने नारदको सब कथा खोल करके सुना दी नारदने उसको समस्तक होनेका अनुरोध किया था। बालकने अपने तेजसे ही गजा-सुरका मस्तक काट अपने स्कन्धमें जोड़ लिया। इसीसे उनका नाम गजानन पड़ा है। भाद्र मासकी चतुर्थी तिथिको गजाननका जन्मोत्सव होता है।

(स्कन्दपुराण, गणेशखण्ड ११ अ०) गणेश देखो।

गजारि (सं० पु०) गजस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्। १ सिंह। २ वृक्षविशेष, एक तरहका शालका पेड़। इसके पत्ते बड़े और मोटे होते हैं। इसका काष्ठ खूंटीके लिये व्यवहृत होता है। यह आसाम और मधुपुरके जङ्गलमें अधिकतासे पाया जाता है।

गजारोह (सं० पु०) गजमारोहति आ-रुह-अण्। हस्ति-पाल, माहुत, महावत।

गजाल (हिं० पु०) एक प्रकारकी मछली।

गजाशन (सं० पु०) गजैरश्यते भक्ष्यते अश, कर्मणि ल्युट्, यद्वा अश्नातीति अशनः गजोऽशनो भक्षको यस्य, बहुव्री०। गजभक्ष्य, पीपलका पेड़।

गजाशना (सं० स्त्री०) गजाशन-टाप्। १ भाङ्ग, सिद्धि। २ शल्लकीवृक्ष, सलईका पेड़। ३ पद्ममूल, कमल कन्द।

गजासुर (सं० पु०) गजाकारोऽसुरः। गजाकृति एक असुर। इसका उपाख्यान, इस तरह है—पूर्वकालमें महेश नामके एक अत्यन्त सच्चरित्र, विद्यावान् और न्याय-वान् राजा थे। एक दिन राजा महेश बन्धुबान्धवके साथ भ्रमणार्थ बाहर निकले और वहां उन्होंने नारद मुनिको देखा। ऋषिको देख कर राजाने किसी तरह-का सत्कार न किया। इस पर नारद मुनिने क्रोधित होकर शाप दिया—"नराधम! तुम्हारा जन्म गजयोनिमें होगा।" नारदकी बात मिथ्या न हुई। थोड़े दिनोंके पश्चात् वे गजयोनिमें प्राप्त हो गजासुर नामसे विख्यात हुए। इस असुरसे देवताओंको कभी कभी अधिक कष्ट भोगना पड़ा था। इसका चर्म शिवजीने धारण किया है। (स्कन्दपुराण गणेश० १०अ०)

गजासुरद्वेषी (सं० पु०) गजासुरम् द्वेष्टि द्विष्-णिनि। महादेव, शिव। कृत्तिवास देखो।

गजास्य (सं० पु०-क्ली०) गजस्य आस्यं मुखमेव आस्यमस्य बहुव्री०। १ गणेश। गजस्य आस्यं, ६-तत्। २ हाथीका मुख।

गजाह्व (सं० क्ली०) गजसहिता आह्वा यस्य, बहुव्री०। १ हस्तिनापुर। २ हस्तिनापुरके अन्तर्गत एक प्रदेश जिसका उल्लेख बृहत्संहितामें कूर्म विभागके मध्यस्थान-में है। "गजाह्वयशेषि मध्यमिदं।" (बृहत्सं० १४ अ०)

गजाह्वय (सं० क्ली०) गजेन सहित आह्वयो यस्य, बहुव्री०। हस्तिनापुर। "युधिष्ठिरस्यानुमते वनवासाद्गजाह्वयं।" (भारत १।६ अ०)

गजाह्वा (सं० स्त्री०) गजोपपदा आह्वा यस्याः बहुव्री०। १ गजपिप्पली, गजपीपर। २ हस्तिनापुरी।

गढ़िया (हिं० स्त्री०) बिटाई करनेवालोंका लकड़ीका बना हुआ एक यन्त्र। इस पर बिटा हुआ तार उतारा रहता है।

गजी (फा० पु०) एक तरहका मोटा देशी वस्त्र। यह छोटे अरजका होता और सस्तेमें मिलता है। गाढ़ा, सल्लम।

गजेक्षण (सं० पु०) १ गजचक्षु, हाथीकी आंख। २ दानव-विशेष, एक राक्षसका नाम।

गजेन्द्र (सं० पु०) गजइन्द्र इव उपमितस० यद्वा गजस्य इन्द्रः, ६-तत्। १ गजश्रेष्ठ, उत्कृष्ट हाथी। २ गजमुख्या-धिपति। ऐरावत। "न वशिनम् विकसतो विदधुर्गजेन्द्रा"(माघ)

३ अगस्त्य मुनिके शापसे गजयोनि-प्राप्त इन्द्रद्युम्न राजा। भागवतमें इनका उपाख्यान इस प्रकारसे लिखा

किसीके आक्रमण करने पर भी यह थप्-थप् कर चलता रहता है, और तेलके कुप्पेके समान पेट हिलाते डुलाते थोड़ी दूर जाकर थक जाता है। इसकी आंखें स्वभावतः नीलाई लिए सब्ज होती हैं, किन्तु किसीके आक्रमण करने पर लाल सुर्ख हो जाती हैं।

जलहस्तिनी और उसके बच्चोंकी आवाज पेचक (उल्लू) के समान है; किन्तु बड़े जलहस्तीकी आवाज़ अत्यन्त भयानक (बुलन्द) होती है इसकी सूंड़के भीतरसे जब आवाज़ निकलती है, तब वह बहुत दूरसे सुनाई पड़ती है।

यह नदी, ह्रद और जलाशयोंमें रहना पसन्द करता है। यह सूर्यका उत्ताप नहीं सह सकता; इसलिए जब यह जलाशयके किनारे बैठता है, तब देहसे भीगी बालू लपेट लेता है।

ज्यादा ठण्ड या ज्यादा गरमी इनको अच्छी नहीं लगती। इसलिए ये झुण्ड बांधबांध कर शीतके प्रारम्भमें उष्णप्रधान उत्तर प्रदेशमें और ग्रीष्मके प्रारम्भमें दक्षिणकी तरफ चले जाते हैं।

ग्रीष्म ऋतुके बाद ही जलहस्तिनी सन्तान प्रसव करती है। किसीके मतसे एक बारमें एक और किसीके मतसे एक बारमें दो बच्चे जनती है। इनके हालके जाये बच्चोंका वजन प्रायः एक मन होता है।

प्रसूत होनेके बाद जलहस्तिनी समुद्रके किनारे पर अपने अपने बच्चोंको बगलमें सुलाकर उन्हें दूध पिलाया करती हैं और जलहस्ती चारों तरफ रह कर इनकी रक्षा करते हैं। इनके बच्चे आठ दिनके अंदर दूने बढ़ जाते हैं। इसके उपरान्त नर-मादे दोनों मिल कर उन्हें तैरना सिखाते रहते हैं। दो तीन सप्ताहके बाद ये फिर बच्चोंको लेकर किनारे पर आ जाते हैं। जब तक बच्चे स्वयं अपनी रक्षा करनेको समर्थ न हो जांय, तब तक वे माके पास ही रहते है। २—३ वर्षमें ही वे पूर्णायतनको प्राप्त होते हैं इसी समय नर (जलहस्ती) के सूंड़ निकला करती है।

सूंड़ निकल आने पर फिर वे (बच्चे) जलहस्तीनीके पास नहीं रह पाते। सूंड़ निकल आने पर इनके यौवनका विकाश होता है। किन्तु निर्दिष्ट समयके सिवा ये दूसरे समयमें सङ्गम नहीं करते। सङ्गम-कालके उपस्थित होने पर नरोंमें खूब लड़ाई होती है। जो जलहस्ती अपने पराक्रमसे सबको पराजित कर देता है, वही स्त्री सहवास कर सकता है। इसीलिए बंदरियोंके समान इनमें भी १८।२० जलहस्तियोंमें एक एक वीर जलहस्ती देखा जाता है। लड़ते समय ये कभी भी अपनी जातिकी जानसे नहीं मारते, जो हार जाते हैं, वे किसी निर्जन स्थानमें जा कर मनका दुःख निकाला करते हैं।

यह जन्तु स्वभावतः शान्त प्रकृतिका होता है। अपनी और बच्चोंकी रक्षा करनेके सिवाये किसी दूसरे कारणसे किसी पर आक्रमण नहीं करता। पालनेसे यह हिलते हैं और पालकके बहुत दूरसे बुलाने पर भी ये उसी समय उसके पास पहुंच जाते हैं। नाविक लोग इस प्रकारके पालतू जलहस्ती पर चढ़ कर खेला करते हैं। ये ३०।३२ वर्षतक जीवित रहते हैं।

जलहस्तीका मांस काला चरबी मिला हुआ और अजीर्णकर होता है। नाविक (मल्लाह) लोग इनके दांतोंको नमकमें गला कर बड़ी रुचिके साथ खाते हैं। इसकी चमड़ी बहुत कड़ी, काले रंगकी और बिना बालोंकी होती है। इसके चमड़ेसे घोड़े और गाड़ीका साज बनता है। इसकी चरबीसे मोमबत्ती आदि अनेक चीजें बनती हैं, इसीलिए इसका शिकार किया जाता है।

जलभालू—जलहस्तीकी भाँति समुद्रमें जलभल्लूक, जलव्याघ्र और जलसिंह आदि भी पाये जाते हैं। ये सभी एक जातिके हैं। सिर्फ मुंहकी आकृति और शरीरके परिमाणके अनुसार भिन्नता पाई जाती है। अमेरिका, कामसकट्का और क्यूरायल आदि द्वीपोंमें जलभालू देखे जाते हैं। ये वसन्त ऋतुमें सिर्फ जलाशयके किनारे रहते हैं, यही इनके सङ्गम और गर्भधारणका समय है।

जलहस्तीकी तरह एक एक जलभालू ७०—८० स्त्रियोंका उपभोग करता है। मादा जलभालुओंमें वही नर एकमात्र कर्ता है, वह जो चाहे कर सकता है। किन्तु जब वह अपनी प्रणयिनियोंसे परिवृत होकर अन्य

गञ्ज (सं० पु०) गजि-घञ् । १ अवज्ञा, अपमान, अनादर । २ भाण्डागार, कोश, खजाना । ३ खान । ४ गोष्ठगृह, गोशाला, वह स्थान जहां मवेशी रहते हैं।

गञ्जजगदल—बङ्गालमें बार्बकाबाद सरकारके अधीन एक महल। (आइन-ई-अकबरी)

गञ्जभैरव—बम्बई प्रदेशके अह्मदनगर जिलाके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह 'गञ्जिभैरो' नामसे मशहूर है। यहां हेमाड़पन्थियोंका एक वृहत् शिवमन्दिर और इसके निकट बहुतसे प्राचीन ध्वंसावशेष पड़े हैं।

गञ्जन (सं० त्रि०) गजि-णिच्-ल्यु । १ तिरस्कार, निन्दा।

"नेत्रे खञ्जनगञ्जने सरसिज प्रत्यर्थि पाणिद्वयम्।" (साहित्यद०)

(क्लो०) २ गञ्ज भावे ल्युट्। तिरस्कार, अनादर, निन्दा।

गञ्जवर (सं० पु०) कोषाध्यक्ष, खजानची।

गञ्जा (सं० स्त्री०) गञ्ज-टाप्। १ हाट लगनेका स्थान, वह स्थान जहां बाजार लगता हो। २ मद्यभाण्ड, शराब रखनेका बरतन। ३ मदिरागृह, शराबको दुकान। ४ विजया, गाँजा। ५ वह स्थान जहाँ चावल, धान रखा जाता हो, ठेक।

गञ्जाम—मन्द्राज प्रदेशका उत्तर जिला। यह बङ्गालको खाड़ी किनारे अक्षा० १८° १२´ तथा २०° २६´ उ० और देशा० ८३° ३० एवं ८५° १२´ पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ८३७२ वर्गमील है। गञ्जाम शब्दका अर्थ 'सबका भण्डार' है। देखनेमें यह तिकोना लगता है। इसके उत्तर उड़ोसा और देशी राज्य, पूर्व समुद्र और पश्चिमको विजगापटम् जिला है। गञ्जामका अधिकांश पहाड़ी और पथरीला है। परन्तु बीच बीचमें उपत्यकाएं और उपजाऊ मैदान आ गये हैं। यह मन्द्राजका सबसे सुहावना जिला है। जङ्गली पहाड़ों और घने पेड़ोंकी शोभा देखते ही बनती है।

पूर्वघाट पहाड़ गञ्जाममें उत्तरसे दक्षिण तक चला गया है। शृङ्गराज और महेन्द्रगिरिकी चोटियां समुद्रपृष्ठसे प्राय: ५००० फुट ऊंची हैं। परलाकिमेदिके पीछे दक्षिणको देवगिरि ४५३५ फुट तक उठा है। यह पहाड़ गञ्जाम जिलेको पहाड़ी और मैदानी दो भागोंमें बांट देते हैं। पहाड़ी भागको गञ्जामकी एजेन्सी भी कहते हैं। यहांके अधिवासी जङ्गली हैं और कानूनके मुताबिक न चलनेसे उनका शासन एक विशेष कलेक्टर द्वारा किया जाता, जो गवर्नरका एजेण्ट कहलाता है। उनके मुकदमोंकी अपील हाईकोर्ट और सकौन्सिल गवर्नरको की जाती है।

गञ्जाम असली झीलें नहीं हैं। परन्तु समुद्र किनारे और कभी कभी भीतरी भागमें भी जो बड़े बड़े तालाब मीठे और खारी पानीसे भर जाते, सागरम् कहलाते हैं। इनमें सबसे बड़ा चिलका झील उत्तर सीमा पर अवस्थित है।

इस जिलेको ऋषिकुल्या, वंशधारा और लाङ्गुल्या तीनों प्रधान नदियोंसे सिंचाईका काम लिया जाता है। यह पूर्वको खाड़ीमें जा कर गिरती हैं। महानदी और गोदावरी ऋषिकुल्याकी सहायक नदियां हैं। लाङ्गुल्या पर चिकाकोलके पास एक बढ़िया पुल बंधा है।

गञ्जाम मन्द्राज प्रदेशका एक आर्द्र प्रदेश है। यहां भालू और लगड़भग्गे साधारणत: देख पड़ते और भेड़िये, तेंदुए और चीते भी मिलते हैं। पहाड़ियोंके उतारमें कई प्रकार हरिण और नीलगायें पायी जाती हैं। जङ्गली भैंसे और जङ्गली सूअर बहुत कम हैं। जङ्गली कुत्ते शिकारमें आफत डाल देते हैं। गञ्जामका जलवायु ज्वरप्रद है। यहां जाड़ा बहुत कम पड़ता और पानी खूब बरसता है

ऐतिहासिक दृष्टिसे गञ्जाम प्राचीन कलिङ्गका एक भाग रहा। परन्तु कभी कभी वेंगी राज्य इसका दक्षिण प्रान्त दबा लेता था। ई०से २६० वर्ष पूर्व मौर्य-सम्राट् अशोकने इसको विजय किया था। फिर सम्भवत: यह वेंगीवाले आन्ध्र नृपतियोंके हाथ लगा। यह दोनों राजवंश बौद्ध रहे। जौगड़में अशोक अपना एक राजशासनपत्र छोड़ गये हैं। ई० तीसरी शताब्दीको आन्ध्र इस प्रान्तसे दूरीभूत हुए और कलिङ्गके गाङ्गराज उनके स्थान पर आ बैठे। ई० १०वीं शताब्दीके अन्त और ११वीं शताब्दीके आरम्भको चोलोंने वेंगी और कलिङ्गके साथ गञ्जामका भी कुछ भाग जीता था। महाराज राजेन्द्र-चोल महेन्द्रगिरि पर अपने विजयके लेखप्रमाण छोड़ गये हैं। फिर गाङ्ग राजाओंने ४ शताब्दियों तक यहां

आकाशः। जलप्रतिबिम्बयुक्त जलविशिष्ट आकाश, पानी-का अक्स और पानीदार आसमान।

"जलावच्छिन्नके नीरं यत्तत्र प्रतिबिम्बितः।

साभ्रनक्षत्र आकाशो जलाकाश उदीर्यते।" (शब्दार्थचि०)

आकाशका रूप नहीं है जिस पदार्थका रूप नहीं उसका प्रतिबिम्ब भी नहीं हो सकता। इसलिए नक्षत्र और मेघयुक्त होनेके कारण इसका जलाकाश नाम पड़ा है। आकाश देखो। मेघ और नक्षत्रयुक्त आकाश, बादल और ताराओं सहित आकाश।

जलाची (सं० स्त्री०) जलं अञ्चति व्याप्नोति अञ्च-अच्। जलपिप्पली, जलपीपल।

जलाखु (सं० पु०) जले आखुरिव। जलनकुल, ऊद-बिलाव।

जलाजल (हिं० पु०) गोटे आदिकी झालर।

जलाञ्चल (सं० क्ली०) १ शैवाल, सेवार। २ पानीका नहर।

जलाञ्जल (सं० क्ली०) जलं अञ्चति व्याप्नोति अञ्च-बाहुल-कात् अलस्। १ शैवाल, सेवार। जले अञ्चलः वस्त्र-प्रान्त इव। २ स्वभावतः जलनिर्गम, आपसे आप जलका बाहर होना।

जलाञ्जलि (सं० पु०) जलपूर्णो अञ्जलिः। १ जलको अंजुली, पितरों वा प्रेतादिके उद्देश्यसे अंजुलीमें जल भर कर देना। २ तर्पण।

जलाटन (सं० पु०) जले अटति भ्रमति अट-ल्यु। कङ्क-पक्षी, बगला, बूटोमार। कंक देखो।

जलाटनी (सं० स्त्री०) जले अटति भवति अट-ल्यु, स्त्रियां ङीप्। जलौका, जोंक।

जलाण्डक (सं० क्ली०) जले अण्डरिव कायति कै-क छोटी छोटी मछलियोंका झुण्ड।

जलाण्टक (सं० पु०) जलं अण्टते इतस्ततो भ्रमति अण्ट-ण्वुल्। पृषोदरादित्वात् ढस्य-टः। नक्रराज, ग्राह।

जलाण्डक (सं० क्ली०) जले अण्ड मिव-कायति कै-क। छोटी छोटी मछलियोंका झुंड।

जलातङ्क (सं० पु०) रोगविशेष, एक तरहको बीमारी। (Hydrophopia) सुश्रुतमें इस रोगका जलत्रासके नामसे वर्णन किया गया है * किसी चिह्न (पागल) पशुकी लार शरीरमें प्रवेश करने पर यह रोग होता है। इस रोगकी प्रथम दशामें पानी पीते समय गलेमें इस तरहकी वेदना और कँपकंपी होती है कि, कभी कभी श्वास तक रुक जाता है। धीरे धीरे इस रोगका प्रकोप इतना बढ़ जाता है कि, पानीको याद आते ही इस रोग-के सारे लक्षण प्रगट होने लगते हैं। पानीको देखते या पानीका नाम सुनते ही मनमें बड़ा भयका सञ्चार होता है, इसलिए इस रोगको जलातङ्क कहते है। मनुष्यके शरीरमें, किसी चिह्न पशुको लारके बिना प्रवेश किये कभी भी यह रोग नहीं होता। प्रबल अपस्मार वायु-रोगसे भी कभी कभी जलातङ्कके लक्षण दिखाई देते हैं; किन्तु वास्तवमें वह जलातङ्क नहीं है। अन्यान्य पशु नैसर्गिक कारणोंसे इस रोगसे पीड़ित होते हैं या नहीं, इसको अभी तक निःसन्दिग्धरूपसे परीक्षा नहीं हुई है। किन्तु यह एक तरहसे निश्चित हो चुका है कि कुक्कुरको अन्य किसी चिह्न प्राणीके बिना काटे यह रोग नहीं होता। जहां तक परीक्षा की गई है; उससे जाना गया है कि, सभी प्राणी इस रोगसे आक्रान्त हो सकते है, पर व्याघ्र, शृगाल, कुत्ता और बिल्लीके सिवा अन्य कोई भी प्राणी इस रोगको सङ्क्रामित (फैला) नहीं कर सकता। मनुष्यको यह रोग होने पर वह अन्य प्राणियोंकी तरह दूसरेको काटनेके लिए उत्तेजित नहीं होता।

मनुष्य शरीरके किसी क्षत स्थानमे किसी चिह्न प्राणी-की लार लग जानेसे भी इस रोगकी उत्पत्ति हो सकती है। चिह्न पशुके काटने पर चाहे थोड़ा हो स्थान विषाक्त

* सुश्रुतने "दंष्ट्रिणा येन दृष्टश्च—" इत्यादि कई एक श्लोकों-में लिखा है कि,—जो उन्मत्त पशु (शृगाल, कुक्कुर, व्याघ्र आदि) किसीको काटता है, काटे हुए व्यक्तिको यदि उस तरहका पशु पानी या और किसी वस्तुमें दीखे तो वह अत्यन्त दुर्लक्षण है। पानीको देख कर या पानीका नाम सुनते ही जिस रोगीको डर लगता है. उस रोगको जलत्रास कहा जा सकता है। यह भी अति दुर्लक्षण है। पूर्वोक्त उन्मत्त पशुके न काटने पर भी जिसे जलत्रास रोग होता है, वह किसी तरह भी बच नहीं सकता। सुस्थ अवस्थामें सोते या जागतेके साथ ही सहसा जलत्रास उत्पन्न होने पर भी वह रोगी नहीं जीता।

बङ्गाल-नागपुर-रेलवे इस जिलेमें उत्तरसे दक्षिण तक बराबर चली गयी है। मैदानोंमें ७२८ मील पक्की सड़क है। एजेन्सीमें भी कहीं कहीं पक्की और अधिकांश कच्ची सड़क लगी है।

मालूम नहीं, हिन्दुओं और मुसलमानोंके समय गञ्जाम जिलेकी मालगुजारी क्या थी। हिन्दू राजा सम्भवतः खेतकी उपजका आधा भाग कर लेते थे। परन्तु मुसलमानोंने आ करके मालगुजारी लगायी और १८१७ ई०को अंगरेजोंने रैयतवारी बन्दोबस्त कर दिया।

तेलगु अंगरेजी और उड़िये देशी भाषा अच्छी पढ़ते हैं। यहांके प्रान्तमें शिक्षा बहुत कम है।

२ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिलेकी एक जमीन्दारी तहसील। यह अक्षा० १८° २३' तथा १८° ४८' उ० और देशा० ८४° ५६' एवं ८५° १२' पू०के बीच पड़ता है। इसमें कल्लिकोत, विरिदि, हुम्म, और पलूर राज्य लगते हैं। गञ्जाम तहसीलका क्षेत्रफल ३०८ वर्ग मील है। यह बड़ा मनोहर स्थान है। आबहवा ठण्डी और जमीन समुद्रकी ओर ढालू है। लोकसंख्या कोई ८८७१४ है।

३ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १८° १३' उ० और देशा० ८५° ५' पू०में ऋषिकुल्या नदीके मुहाने पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ४३८७ होगी। यहां १७६४ ई०को कटकके मराठोंसे बचनेके लिये जो किला बना, उसका ध्वंसावशेष पड़ा है।

गञ्जिका (सं० स्त्री०) गञ्जा स्वार्थे कन्। १ मदिरागृह, शराब रखनेका घर। २ गांजा।

गञ्जिफा (फा० पु०) एक गुच्छा तास।

गझिन (हिं० पु०) १ सघन, घना। २ मोटा।

गटई (हिं० पु०) ग्रीवा, गला।

गटकना (हिं० क्रि०) खाना, निगलना।

गटगट (हिं० पु०) एक तरहका शब्द, जो कई बारके निगलने या पानी पीनेके समय गलेसे उत्पन्न हो।

गटपट (हिं० स्त्री०) दो या दोसे अधिक व्यक्तियों या चीजोंका परस्पर मेल, मिलावट। २ संयोग, प्रसंग, सहवास।

गटापारचा (हिं० पु०) श्वेत दुग्धवाले वृक्षोंसे निकला हुआ एक तरहका गोंद। यह रबरके जैसा होता है। लेकिन उतना कोमल और लचीला नहीं होता। यदि बहुत दिन तक यह बाहरहीमें धूप और पानीमें छोड़ दिया जाय, तो भी इसमें किसी प्रकारकी खराबी नहीं होती है।

गटी (सं० स्त्री०) ग्रन्थि, गांठ।

गट्टा (हिं० पु०) हथेली और पहुंचेके मध्यका योग, कलाई।

गट्टी (हिं० स्त्री०) जहाज या नावमेंकी उस खम्भेके बीचोंकी चूल जिसमें पाल लगी रहती है।

गट्ठर (हिं० पु०) बड़ी गठरी, बोझा।

गट्ठा (हिं० पु०) १ भार, बोझा। २ बड़ी गठरी।

गठकटा (हिं० पु०) १ गांठ काट कर रुपये लेनेवाला। २ धोखा या अन्यायसे रुपया लेनेवाला।

गठदण्ड (हिं० पु०) एक प्रकारका दण्ड जो दोनों हाथोंके मध्यके स्थानमें गट्टा बनाकर किया जाता है। इस तरहकी सजामें अधिक कष्ट होता है।

गठन (हिं० स्त्री०) बनावट।

गठबन्धन (सं० पु०) विवाहमें दुलहा और दुलहिनके कपड़ोंके सिरेको परस्पर मिला कर गांठ बांधते हैं, इसीको गठबन्धन कहते हैं।

गठरी (हिं० स्त्री०) बड़ी पोटली, बकची।

गठरेवां (हिं० पु०) पशुओंमें एक प्रकारका रोग। इसके होनेसे पशुओंकी जांघ, पसली और जीभके नीचे सूजन हो जाती है। पशुओंमें यह भारी रोग है। इसमें बहुत कम पशु बचते हैं। चिकित्सकोंका मत है कि यह छूतकी बीमारी है। जिस पशुको यह रोग होवे उसे बन्द और साफ सुथरे स्थानमें रखना चाहिये।

गठानी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका कर जो जमींदार आसामियोंसे वसूल करते हैं।

गठाव (हिं० पु०) गठन, बनावट।

गठिबन्ध (सं० पु०) गठबन्धन, गठजोड़।

गठिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका बोरा जिसमें अन्नसे परिपूर्ण कर व्यापारी लोग बैल या घोड़े पर लादते हैं। २ पोटली, छोटी गठरी। ३ कोरे कपड़ेकी गांठ। ४ एक प्रकारकी बीमारी जिसके होनेसे घुटनोंमें सूजन

रोगीको पानीसे घृणा कुछ कम होती है।

जलातङ्कका यथार्थ तत्त्व अभी तक अभ्रान्त रूपसे निर्णीत नहीं हुआ है। इसलिए किस प्रकारकी औषधसे यह शान्त होता है, उसका भी कुछ निर्णय नहीं हो पाया है। साधारणतः इसके लिए जिन औषधोंका व्यवहार किया जाता है, उनमें इस व्याधिको दूर करनेकी शक्ति नहीं है। हां, उनसे कभी कभी उपसर्गोंका ह्रास अवश्य हो जाता है। अफीमका व्यवहार कर कुछ उपसर्गोंको दूर अवश्य किया जा सकता, है; किन्तु उससे जीवनकी रक्षा नहीं हो सकती। रक्तमोक्षण करानेसे कंप कंपी घट सकती है और हाइड्रोसाइएनिक एसिड (Hydrocyanic-acid) के व्यवहार करनेसे उपसर्ग कई दिनों तक निश्चेष्ट रहते हैं। यदि कुफल उत्पादन करनेसे पहले ही उस विषाक्त लाला (लार) को क्षतस्थानसे निकाल दिया जा सके, तभी इस रोगसे छुटकारा मिल सकता है, अन्यथा दैवाधीन है। क्षतस्थानका छेदन करना ही प्रशस्त उपाय है। विशेष सतर्कताके साथ क्षतस्थानके शेष अंश तककी काट देना चाहिये, क्योंकि, ज़रा भी अगर विषाक्त पदार्थ शरीरमें रह गया तो रोगीके जीवनकी अधिक आशा नहीं की जा सकती। यदि क्षतस्थान बहुत बड़ा हो अथवा ऐसा अङ्ग हो जिसके काटनेसे शरीरका आवश्यक अंग नष्ट होता हो, तो उसे काटना नहीं चाहिये, बल्कि उस पर नाइट्रिक एसिड (Nitric Acid) आदिकी भांतिकी किसी दाहक औषधका प्रयोग करना उचित है। अथवा जब तक किसी औषधका प्रयोग न किया जाय, तबतक उसे पूर्ण सावधानीके साथ बारबार धोते रहना चाहिये। ४ या ५ फुट ऊंचेसे ९० या १०० डिग्री गरम पानी २–३ घन्टे तक छोड़ कर क्षतस्थान धोया जाता है। किसी भी हिंस्र प्राणीके काटने पर जलातङ्क रोग उत्पन्न हो सकता है, किन्तु साधारणतः और अधिकांश ही कुत्तेके काटनेसे यह रोग होता है।

कुत्तेका काटा हुआ जलातङ्क-रोगी अत्यन्त उदास और कर्कशभाषी हो जाता है, घर छोड़ कर चारों तरफ दौड़ता रहता है और जिसे सामने पाता है, उसे ही काटनेकी चेष्टा करता है; परन्तु वह गन्तव्य पथको छोड़ दूसरी तरफ जाकर किसीको नहीं काटता। यह सर्वदा घास, तृण और लकड़ी चबाता रहता है। इस प्रकारका जलातङ्क-रोगी पहले जिसके साथ जैसा व्यवहार करता था, उस समय भी प्रायः वैसा ही व्यवहार करता है।

हिंस्र कुक्कुर पानीको देख कर डरता नहीं। यह पानी पीते और उसमें तैरते भी हैं। कुत्ता इस रोगसे आक्रान्त हो, जितना मृत्युके पास पहुंचता जाता है, दिनों दिन वह उतना ही भीषण होता जाता है। चारों तरफ जिसे पाता है, उसे ही काटने दौड़ता है। साथ ही मुंहसे लगातार फसकर निकलता रहता है। इस रोगसे आक्रान्त मनुष्य जितने दिन जीता है, कुत्ता भी उतने दिन जी सकता है।

कुत्तेके काटने पर कलकत्तेके आस पासके लोग गोन्दलवाड़ा और युक्तप्रान्त आदिके लोग बिनौली (सिमला) इलाज़ कराने जाते हैं।

सुश्रुतमें कल्पस्थानके ६ठे अध्यायमें जलातङ्ककी चिकित्सा लिखी है।

जलातन (हिं० वि०) १ क्रोधी, बदमिजाज। २ ईर्षालु, डाही।

जलात्मिका (सं० स्त्री०) जलमेव आत्मा यस्याः। १ जलौका, जोंक। २ कूप, कूआं।

जलात्यय (सं० पु०) जलस्यात्ययो यत्र, बहुव्री०। १ शरत्काल। जलानां अत्ययः, ६-तत्। जलका अपगम, जलका अलग अलग होना।

जलाधार (सं० पु०) जलानां आधारः, ६-तत्। जलाशय।

जलाधिदैवत (सं० पु० क्ली०) जलस्य अधिदैवतं अधिष्ठात्री देवता। १ वरुण। जलं आधिदैवतं यस्य। २ पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र।

जलाधिप (सं० पु०) जलस्य अधिपः ६-तत्। १ जलके अधिपति, वरुण।

"नाशकोदग्रतः स्थाणुविप्रचित्तिर्जलाधिपः।" (हरिवंश २४२ अ०)

२ फलित ज्योतिषके अनुसार रवि प्रभृति ग्रह संवत्सरमें जलके अधिपति होते हैं।

जलाना (हिं० क्रि०) १ प्रज्वलित करना, दहकाना।

तक कलचुरियों, १०४७से १२१० तक होयसल बल्लाल, और १३२६से १५६५ ई० तक विजय नगरके राजाओंका गडगमें अधिकार रहा। १६७३ ई०को नसरताबाद या धारवाड़ जिलेकी बङ्कापुर सरकारका प्रधान जिला था। १८१८ ई०को जनरल मुनरोने गड़गको घेर लिया। इसमें अदालत, अस्पताल और विद्यालय वर्तमान हैं।

गड़-गड़ाहट (हिं० स्त्री०) १ गड़गड़ानेका शब्द। २ हुक्का पीनेका शब्द, वह आवाज जो हुक्का पीनेसे निकलती हो।

गड़गडी (हिं० स्त्री०) नगाड़ा, डग्गी।

गड़गूदड़ (हिं० पु०) चिथड़ा लत्ता, फटे पुराने कपडेका टुकड़ा।

गडगाँ—आसाममें शिवसागर जिलाके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर और गड। यह शिवसागर नगरके दक्षिण-पूर्व और दीखु नदीके तीर पर अवस्थित है। एक समय यह अहोम् राजाओंकी राजधानी थी। इसका ध्वंसावशेष अबतक भी विद्यमान है। राजगृह एक कोस विस्तृत ईंटोंकी दीवारोंसे घिरा था। आजकल उसका कुछ चिह्न दिखाई पडता है।

गडचाँद—बङ्गदेशके अन्तर्गत त्रिहुत जिलाका एक परगना इस परगना होकर छोटी गण्डक, वाघमती और लखनदायी नदी प्रवाहित हैं। यहां बहुतसी पक्की सडक है। इस परगनाकी अदालत मुजफरपुर है। इसके अन्तर्गत सरोफ उद्दीनपुर, धनोर, अकबरपुर और कई एक ग्राम प्रसिद्ध हैं। अकबरपुर ग्राममें चामुण्डा देवीका मन्दिर है जहां प्रतिवर्ष आश्विन मासमें एक बड़ा भारी मेला लगता है।

गड़दार (हिं० पु०) मतवाले हाथीके साथ भाला लेकर चलनेवाला नौकर, वह नौकर जो बदमाश हाथीके साथ भाला लेकर चलता हो।

गड़पङ्क (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक बड़ी चिड़िया।

गड़प (फा० स्त्री०) पानी या कीचड़में किसी वस्तुके गिरनेका शब्द।

गडप्पा (हिं० पु०) धोखा खानेका स्थान।

गड़बड़ (हिं० स्त्री०) १ असमतल, ऊंचा नीचा। २ अनियमित, वह जो ठीक समय पर न किया जाता हो।

गड़बड़ा (हिं० पु०) गर्त्त, खत्ता, गड्ढा।

गड़बड़ी (हिं० स्त्री०) अव्यवस्था, गोलमाल।

गडमान्दारण—वर्द्धमान जिलाके जाहानाबाद महकुमाके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। इसका दूसरा नाम विठुरगड़ है। मुसलमानोंके समयमें यहां मृत्तिकानिर्मित्त एक बडा गड़ था। यहां इसमाईल गाजी धर्म्म लस्कर नामक मुसलमान साधुकी कब्र है। स्थानीय मुसलमान अधिवासी साधुको अत्यन्त भक्ति श्रद्धाके साथ देखते हैं।

गडमुक्तेश्वर—उत्तर पश्चिमाञ्चलके मेरठ जिलाका एक प्राचीन नगर यह अक्षा० २८° ४७´उ० और देशा° ७८° ६ पू०में गङ्गाके दक्षिण किनारे बूढ़ीगङ्गा-सङ्गमसे दो कोस नीचेमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ७६१६ है। बहुतोंका कहना है कि यह नगर एक समय प्राचीन हस्तिनापुरका एक महल्ला कह कर प्रसिद्ध था। यहां मुक्तेश्वर महादेवका मन्दिर है। इन्हींके नाम पर नगरका नाम रखा गया है। इसके अतिरिक्त और कई एक पुरातन मन्दिर तथा ८० सतीस्तम्भ हैं। प्रतिवर्ष कार्त्तिक मासमें एक भारी मेला लगता है। जिसमें एक लाखसे अधिक मनुष्य जुटते हैं।

गड़यन्त (सं० पु०) गड-णिच्-झच्। मेघ, बादल।

गडरातवा (हिं० पु०) लोहविशेष, एक तरहका लोहा जो प्राचीन काल मध्य भारतवर्षमें निकलता था।

गड़रिया—युक्त-प्रदेशकी एक जाति। यह भेड़ बकरी पालते और चराते तथा उनके कम्बल आदि बनाते हैं। गड़रिया अपना परिचय क्षत्रियवर्ण जैसा देते हैं। वे कहते हैं कि गडवासी राजवंशियोंका नाम विगड़ करके गड़रिया हो गया है। दूसरोंका मत है कि गदाधारी हनुमान्‌के उपासकों अथवा भेड़ (गदर) पालनेवालोंको गड़रिया कहा जाता है। इनके बहुतसे भेद मिले हैं।

गड़लवण (सं० क्ली०) गड़देशस्य लवणं। शाम्बरदेशोत्पन्न शुभ्र लवण, स भर नमक। इसका पर्याय—शुभ्र, पृथ्वीज, गडदेशज, गोड़ल, महारम्भ, साम्बर और सम्बरोद्भव है। इसका गुण—उष्ण, लवण, मलनाशक, दीपन, कफ, वात, और अशनाशक तथा कोष्ठपरिष्कारक है। भावप्रकाशके मतसे इसका गुण-लघु, वातनाशक, अतिशय उष्ण, भेदकारक पित्तवर्द्धक, तीक्ष्ण और कटुपाक है।

की तारीफमें इन्होंने कई एक कविताएं बनाई हैं।

जलालदीन मुहम्मद गाजी—एक हिन्दीके कवि।

जलालपुर—बम्बई प्रान्तके सूरत जिलेका मध्य तालुक। यह अक्षा० २०° ४५´ एवं २१° उ० और देशा० ७२° ४७´ तथा ७३° ८´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १८८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८११८२ है। इसके उत्तरमें पूर्णानदी, पूर्वमें बरोदा उपविभाग, दक्षिणमें अम्बिका नदी और पश्चिममें अरब समुद्र है। इसकी लम्बाई २० मील और चौड़ाई १६ मील है। इसमें कुल ८१ गांव लगते हैं। इसकी भूमि समतल पंकमय है और समुद्रकी ओर कुछ नीची हो कर लवणमय दल-दलमें परिणत हो गई है। समुद्रके किनारेको लवण-भूमि छोड़ कर सब जगहकी जमीन उर्वरा है और अच्छी तरह आबाद की जाती है। यहां तरह तरहके फलके बगीचे और जंगल हैं। समुद्रकूलके अतिरिक्त पूर्णा और अम्बिका नदीके किनारे बहुत लम्बी चौड़ी दलदल भूमि है। १८७५ ई०में जलाभूमिके प्रायः आधे भागमें खेती करनेकी चेष्टा की गई थी। तभीसे उसमें थोड़ा बहुत धान उपज जाता है। ज्वार, बाजरा और चावल ही यहाँका प्रधान शस्य है।। इसके सिवा उर्द, चना, सरसों, तिल, ईख, केला आदि उत्पन्न होता है। यहांकी जलवायु नातिशीतोष्ण और स्वास्थ्यकर है। प्रति वर्ष ५४ इञ्च पानी बर्षता है। यहां २ फौजदारी अदालत और १ थाना है। मालगुजारी और सेस कोई ३६००००) है।

जलालपुर—पञ्जाब प्रान्तके गुजरात जिलेका नगर। यह अक्षा० ३२° ३८´ उ० और देशा० ७४° १३´ पू०में गुज-रात नगरसे ८ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। लोक-संख्या कई १०६४० होगी। यहां स्यालकोट, झेलम, जम्मू और गुजरातकी सड़कें मिल जानेसे अच्छा बाजार लगता है। कश्मीरी लोग शाल बनाते हैं। १८६७ ई०में म्युनिसिपालिटी हुई।

जलालपुर—पञ्जाब प्रान्तके झेलम् जिलेकी पिण्डदादनखाँ तहसीलका एक प्राचीन स्थान। यह अक्षा० ३२° ३९´ उ० और देशा० ७३° २८´ पू०में झेलम् नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३१६१ है। प्रत्न-तत्त्वविद् कनिङ्हम् साहबके कथनानुसार अलेकसन्दर-ने उसे अपने प्रधान सेनापतिके स्मरणार्थ बनाया, जो पोरस राजाके साथ युद्ध करनेमें मारा गया। जलालपुरका प्राचीन नाम बूकफला है। पहाड़की चोटी पर आज भी प्राचीन भित्तियोंका ध्वंसावशेष विद्यमान है। प्राचीन आविष्कृत मुद्राओंमें ग्रीक तथा बाकाटि्याके राजाओंका संवत् पड़ा है। अकबरके समय भी यह नगर चौगुना बड़ा था।

जलालपुर (पीरवाल) पञ्जाब प्रान्तके मुलतान जिलेकी शुजाबाद तहसीलका नगर। यह अक्षा० २९° ३२´ उ० और देशा० ७१° १४´ पू०के भाटरी नदीके किनारे अव-स्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५१४९ है। पीरकत्ताल नामक मुसलमान साधुके नाम पर ही उसको पीरवाल कहा जाता है। १७४५ ई०की उनकी यहां कब्र बनी। चैत्र मासमें प्रति शुक्रवारको बड़ा मेला लगता है। उसमें दिनको मुसलमान और रातको हिन्दू स्त्रियोंको सतानेवाली चुडैलें भाड़ी जाती हैं। १८७३ ई०में म्युनिसिपालिटी हुई। रेलवे खुल जानेसे स्थानीय व्यापार घट गया है।

जलालपुर—युक्तप्रदेशके फैजाबाद जिलेकी अकबरपुर तहसीलका नगर। यह अक्षा० २६° १९´ उ० और देशा० ८२° ४५ पू०में अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ७२६५ है। नगर तोन नदीके उच्च तट पर होनेसे बहुत अच्छा लगता है। नगरसे बाहर १२वीं शताब्दीमें जुलाहोंने चन्दा करके एक बड़ा इमामबाड़ा बनाया था। १८५६ ई०के कानूनसे इसका प्रबन्ध किया जाता है। आज भी यहां सूती कपड़ा बहुत बुना जाता है।

जलालपुर देही—अयोध्याप्रदेशके अन्तर्गत रायबरेली जिलेकी दलमऊ तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २६° २´ उ० और देशा० ८१° ६२´ पू०में दलमऊसे ८ मील पूर्व और रायबरेलीसे १८ मील दक्षिण-पूर्वमें देही नामक एक प्राचीन ध्वंसावशिष्ट नगरके पास अव-स्थित है। यहां हर पखवाड़े शहरसे कुछ दूरमें हाट लगा करती है।

जलाल बुखारी सैयद—एक प्रसिद्ध मुसलमान पण्डित। सैयद महम्मदकबीरके वंशधर और सैयद महम्मद

गड़ुल (सं० त्रि०) गड़ु: कुब्जरोगोऽस्त्यस्य। कुब्ज, कुबड़ा।

गड़ुवा (हिं० पु०) एक तरहका लोटा। इसमें जल गिरानेके लिये बत्तखके गलेके जैसा एक नलो लगो रहती है, तमहा।

गडुशिरस् (सं० त्रि०) शिरसि गडुर्यस्य, बहुव्री०। सङ्कीर्ण गलेका मनुष्य, जिसका गला तंग हो।

गडेर (सं० पु०-स्त्री०) मेघ, बादल।

गडोत्थ (सं० क्ली०) गडात् गडाख्यदेशात् उत्तिष्ठति, उद्-स्था-क। शाभर नमक।

गडोल (सं० पु०) १ गुड़। २ ग्राम, गांव। ३ ग्रास, कौर।

गड्ड (सं० पु०) वस्तुओंका समूह, जो एक दूसरेके ऊपर रखा रहता है, गञ्ज।

गड्डर (सं० पु०) मेष, भेड़ा।

गड्डरिक (सं० पु०) गडेरिया।

गड्डरिका (सं० स्त्री०) मेषपंक्ति, भेड़ोंकी कतार।

गड्डल (सं० पु०) गड्ड-बाहुलकात् ड-ल्। मेष, भेड़ा।

गड्डलिका (सं० स्त्री०) गड्डलं अनुसरति, गड्डल-ठन्। १ मेषपंक्ति, भेड़ोंकी कतार। २ धारावाही, क्रमागत, लगातार।

गड्डलिकाप्रवाह (सं० पु०) गड्डलिकाया: प्रवाह इव, ६-तत्। भेड़ियाधसान।

गड्डाम—नीच, लुच्चा, बदमाश।

गड्डारिका (सं० स्त्री०) नदीविशेष, वह नदी जिसका प्रवाह अधिक प्रबल हो।

गड्डालिका (सं० स्त्री०) मेषपंक्ति, भेड़ोंकी कतार।

गड्डी (हिं० स्त्री०) ढेर, पुञ्ज।

गड्डुक (सं० पु०) जलपात्रविशेष, एक तरहका पानीका बरतन।

गढ़ (हिं० पु०) १ खाँई। २ किला।

गढ़कप्तान (हिं० पु०) किलेदार, किलेकी फौजका अफसर।

गढ़त (हिं० स्त्री०) आकृति, बनावट।

गढ़न (हिं० स्त्री०) गठन, बनावट।

गढनायक—उड़ीसा प्रान्तके खण्डायतोंका एक भेद। यह पूर्वकालमें गढ़ोंके अधिकारी थे।

गढ़पति (हिं० पु०) १ किलादार। २ राजा।

गढ़वाय, जैनियोंका जन्मकल्याणक-क्षेत्र। यहां जैनियोंके छठे तीर्थंकर श्रीपद्मप्रभुका जन्म हुआ था। पहिले यहां कौशाम्बी नगरी थी। (तीर्थमाला ११८

गढ़मण्डल—मध्यप्रदेशके गोण्डवानाके अन्तर्गत एक विस्तृत क्षेत्र। अति प्राचीन कालसे यह भूभाग स्वाधीन हिन्दू राजाओंके अधिकारमें था। उस समय गढा और मण्डल नामके स्थानमें हिन्दू राजाओंकी राजधानी थी। अब भी उक्त दोनों स्थानोंमें प्राचीन खण्डहर और हिन्दू राजाओंके समयके शिलालेख मिलते हैं; जिनसे वहांकी पहिलेकी समृद्धिका काफी प्रमाण मिलता है। पहले समयमें भट्ट, सुहागपुर, छत्तीसगढ़, सम्बलपुर, गाङ्गपुर, यशपुर इत्यादि जिले भी उक्त गढ़मण्डलके अन्तर्गत थे। अब वैसी समृद्धि नहीं रही, गढा और मण्डल नामके दो नगरोंसे ही सिर्फ पहलेके नामका परिचय मिलता है। पहिले गढ मण्डलमें जो राजा राज्य करते थे, नीचे उनके नाम उद्धृत किये जाते हैं—

राजाका नाम	राजाकाल
यादवराय	३८२ ई० (?)
माधवसिंह	३८७ „
जगन्नाथ	४२० „
रघुनाथ	४४५ „
रुद्रदेव	५०९ „
बिहारीसिंह	५३७ „
नरसिंहदेव	५६८ „
सूर्यभानु	६०१ „
वासुदेव	६३० „
गोपालशाही	६३८ „
भूपालशाही	६६९ „
गोपीनाथ	६७९ „
रामचन्द्र	७२६ „
सुरतानसिंह	७२९ „
हरिहरदेव	७५८ „
कृष्णदेव	७७५ „
जगतसिंह	७८९ „
महासिंह	७९८ „
दुर्जनमल्ल	८२१ „
यशःकर्ण	८३० „
प्रतापादित्य	८७६ „
यशश्चन्द्र	९०० „
मनोहरसिंह	९१४ „

भग्नावशेष विद्यमान है। मराठोंने इसे कई बार लूटा पीटा। बलवेके समय स्थानीय पठान शान्त रहे। यहां केवल १ स्कूल है।

जलाली—युक्त प्रदेशके अलीगढ़ जिलेका नगर। यह अक्षा० २७° ५२´ उ० और देशा० ७८° १६´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८८३० है। प्रधानतः यहां सैयद लोग रहते हैं। यह कमाल-उद्-दीनके वंशधर हैं जो १२८५ ई०को आ कर बसे थे। इन्होंने पठानोंको निकाल करके नगरका पूर्ण अधिकार पाया। जलालीमें कई इमामबाड़ा हैं। यहांकी सड़कें कच्ची और कम चौड़ी हैं और बाजार भी अच्छे नहीं हैं। व्यवसाय वाणिज्य भी प्रायः नहींके समान है। यहांके प्रायः सभी अधिवासी कृषिजीवी हैं। नगरसे आधमील दूर सेना ठहरनेकी एक मढ़ी है।

जलाली—मुसलमान फकीरोंकी एक श्रेणी। ये लोग बुखाराके रहनेवाले सैयद जलाल-उद्दीनको अपना गुरु मानते हैं। खुदा या ईश्वरकी ओर इन लोगोंका कम ध्यान रहता है। भङ्ग इस श्रेणीके फकीरोंका प्रधान आहार है। ये लोग डाढ़ी, मूंछ और भौं मुड़वा डालते हैं, तथा सिर पर दाहिनी ओर एक छोटी चोटी रखते हैं। मध्य एशियामें इस श्रेणीके फकीर अधिक पाये जाते हैं।

जलालु (सं० पु०) जलजाता आलुः। पानीयालुक, जिमींकंद, ओल।

जलालुक (सं० क्लो०) जलालुरिव कायति प्रकाशते कै-क। पद्मकन्द, कमलकी जड़, भसीड़।

जलालुका (सं० स्त्री०) जले अलति गच्छति अल-बाहुल-कात् उक-टाप्। जलौका, जोंक।

जलालुद्दीन कवि—हिन्दीके एक सुकवि। सं० १६१५में इनका जन्म हुआ था। हजारामें इनके बनाए हुए कवित्त मिलते हैं।

जलालोका (सं० स्त्री०) जले आलोक्यते दृश्यते आ-लोक कर्मणि घञ्। जलौका, जोंक।

जलाव (हिं० पु०) १ खमीर या आटे आदिका उठना। २ खमीर, गूंधे हुए आटेका सड़ाव। ३ शहदके समान गाढ़ा किया हुआ शरबत, किमाम।

जलावतन (अ० वि०) निर्वासित, जिसे देश निकालेकी सजा मिली हो।

जलावतनी (अ० स्त्री०) निर्वासन, देश निकाला।

जलावन (हिं० पु०) १ ईंधन, जलानेकी लकड़ी या कंडा। २ वह उत्सव जो कोल्हूके पहले पहल चलानेके दिन किया जाता है। इसमें गृहस्थ अपने अपने खेतोंसे ईख ला कर कोल्हूमें पेरते हैं, और सन्ध्या समय चूड़ा, दही और ईखका रस ब्राह्मणों, भिखारियों आदिको खिलाते पिलाते हैं, भंडरव। ३ किसी वस्तुका वह अंश जो उसके तपाये, गलाये वा जलाए जाने पर जल जाता है।

जलावर्त्त (सं० पु०) जलस्य आवर्त्तः सम्भ्रमः। जल-गुल्म, जलभ्रम, समुद्र नदी आदिके जलकी घूर्णी पानीके भंवर। समुद्रनदी आदिमें जो भंवर पड़ता है, उसे जला-वर्त्त कहते हैं।

समुद्र और नदीके स्थानविशेषमें प्रायः समान वेगके दो स्रोत विपरीत दिशासे प्रवाहित हो कर यदि किसी कम चौड़े स्थान पर परस्पर टकरावें अथवा यदि चारों ओरसे स्रोत प्रवाहित हो कर समुद्रमें डूबे हुए पर्वत, तट या वायुगति द्वारा उनकी गति प्रतिरुद्ध हो जाय, तो उन स्रोतोंके परस्पर घात प्रतिघातसे जलराशि घूर्णाय मान हो कर, जलावर्त्त उत्पन्न हो जाता है। जिस जगहका पानी हमेशा घुमता रहता है, उस स्थानको कोई कोई जलावर्त्त कहते हैं। समुद्रमें जगह जगह जलावर्त्तका प्रचण्ड वेग देखा जाता है। ग्रीसीय द्वीप-पुञ्जके निकटवर्त्ती यूरिपासका आवर्त, सिसिली और इटालीके मध्यवर्त्ती 'सेरिबडिस' और नोरवेके निकट-वर्त्ती मेलष्ट्रम नामके आवर्त्त ही ज्यादा प्रसिद्ध हैं। भागीरथीके मध्यवर्त्ती विशालाचीका भौंरा इस देशमें विख्यात है।

पहले जिस सेरिबडिस् जलावर्त्तका उल्लेख किया गया है, उसका जल सर्वदा ही घूमता रहता है और एक साथ अधिकांश जगह मण्डलाकार आवर्त्त देखा जाता है। यह जलावर्त्त इतना बड़ा होता है कि, स्थानकी कल्पना कर इसे नापा जाय तो इसका व्यास १०० फुट होगा। इसके सिवा वायुका वेग बढ़ने पर उसका व्यास और भी बढ़ जाता है। इस स्थानका स्रोत अति प्रबल होता है और बराबर वायुके आघातसे यह

भावरमें हाथी और निचला पहाड़ियोंमें चीते मिलते हैं। तेंदुवें गढ़वालमें सभो जगह है। भालू, गोदड़ और जङ्गली कुत्ते भी पाये जाते हैं। इस जिलेमें चिड़ियां बहुत हैं।

गढ़वालका प्राचीन इतिहास अन्धकाराच्छन्न है। सम्भवत: इसका कुछ भाग ब्रह्मपुर राज्यमें लगता था, जिसकी बात ७वीं शताब्दीको चीन-परिव्राजकने कही। पुराणानुसार ब्रह्मपुरका कत्यूरी राजवंश जोशीमठका था, जहांसे वह दक्षिणपूर्व और अलमोड़ाको फैल पड़ा। स्थानीय वर्णनानुसार ई० १४वीं शताब्दीके शेषभागको अजयपाल नामक नृपति छोटे छोटे राज्योंको तोड़ करके देवलगढ़में बसे थे। परन्तु १७वीं शताब्दीके आदि कालको उनके महीपति शाह नामक किसी उत्तराधिकारीने श्रीनगर पत्तन करके प्रकृत स्वाधीन राज्य स्थापित किया। प्राय: १५८१ ई०को गढ़वालके राजा अलमोड़ाके चांदोंसे लड़े, जब रुद्रचन्द्र गढ़वाल पर चढ़े थे। वह कई बार विफल हुए। १६५४ ई०को शाह जहान्ने राजा पृथ्वीशाहको दबानेके लिये अभियान भेजा, जिसके फलमें देहरादून गढ़वालसे अलग हुआ। फिर कुछ वर्ष पीछे पृथ्वीराजने दारा-शिकोहके लड़के सुलेमान शिकोहको जो भाग कर गढ़वालमें आ रहे थे लूट लिया और उन्हें औरङ्गजेबको सौंप दिया। अलमोड़ाके जगत-चन्दने (१७०८-२० ई०) राजाको श्रीनगरसे निकाल उसे किसी ब्राह्मणको प्रदान किया था, परन्तु प्रदीप शाहने (१७१७-७२ ई०) गढ़वाल फिर ले लिया। १७७९ ई०को गढ़वालके ललितशाहने कुमाऊंके राजाको हरा अपने पुत्र प्रद्युम्न शाहको उस राज्य पर अभिषिक्त किया। १७९० ई०को गुरखे अलमोड़ा विजय करके गढ़वालकी ओर बढ़े थे, परन्तु तिब्बतमें चीनाओंसे झगड़ा हो जानेके कारण लौट गये। १८०३ ई०को उन्होंने फिर चढ़ाई करके गढ़वालकी रौंदा और देहरादून भी अधिकार किया। प्रद्युम्न शाह भैदानोंको भगे और १८०४ ई०को देहराके पास अपने साथियों साथ मरे थे। १८१५ ई०को अंगरेजोंको कुमाऊं अधिकार किया। १८३७ ई०को गढ़वाल एक उपविभाग और १८९१ ई०को जिला बनाया गया।

इस जिलेमें कितने ही ऐसे मन्दिर हैं, जिनको सभी भारतवासी परम पवित्र समझते हैं। इनमें बदरीनाथ, जोशीमठ, केदारनाथ और पाण्डुकेश्वर प्रधान हैं। गोपेश्वरमें १० फुट ऊंचे एक त्रिशूल पर अनेक मल्लराजाके विजयकी वर्णना अङ्कित है, जो सम्भवत: एक नेपाली नृपति थे। यह लिपि ई० १२वीं शताब्दीको है। मन्दिरोंमें या लोगोंके पास कितने ही ताम्रफलक सुरक्षित हैं, जो अपनी ऐतिहासिक दिलचस्पीके लिये बहुमूल्य लगते हैं।

गढ़वालमें ३ नगर और ३६०० ग्राम हैं। आबादी कोई ४२९८०० होगी। इसका सदर पौरी एक ग्राम मात्र है। सैकड़े पीछे ९७ लोग गढ़वाली भाषा व्यवहार करते हैं। प्रत्येक खेत पत्थरकी बाहरी दीवारसे घेर दिया जाता है। यहां थोड़ी बहुत सब चीज उपजती है। ५७९ वर्ग मीलमें सरकारी जङ्गल है। साल और बांस बहुत होता और जलानेकी लकड़ी तथा घास भी मिलती है। पहले स्थानीय व्यवहारके लिये कुछ तांबा और लोहा निकाल लिया जाता था, परन्तु अब वह काम बन्द है। कुछ नदियोंमें अल्प परिमाण मिलता है। सनसे मोटा कपड़ा और रस्सी बनाते और कम्बल तैयार किये जाते हैं। दो एक जगह पत्थर पर नक्काशी भी होती है। तिब्बतके साथ गढ़वालका बड़ा व्यवसाय चलता है। वहांसे नमक, ऊन, भेड़, बकरे, टट्टू और सोहागा मंगाते और अनाज, कपड़ा और नकद रुपया पैसा पहुंचाते हैं। सब काम काज प्राय: भाटियोंके हाथमें है। श्रीनगर और कोटद्वारा इस जिलेके बड़े बाजार हैं। सड़क लगभग सभी कच्चो है।

गढ़वालसमस्थान (केशवनगर) १ हैदराबाद राज्यके रायचूर जिलेकी एक खिराज देनेवाली रियासत। इसका क्षेत्रफल ८६४ वर्ग मील और लोकसंख्या प्राय: ९६८४९१ है। यह राज्य हैदराबादसे भी पुराना है। पहले यहां सिक्का ढलता, जो आज भी रायचूर जिलेमें चलता है। कृष्णा और तुङ्गभद्रा इस राज्यके दक्षिण और पश्चिम अञ्चलमें प्रवाहित हैं।

२ हैदराबाद राज्य रायचूर जिलेके गढ़वाल समस्थान राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० १६° १४ उ०

किसी स्थान पर सर्वदा ही जलावर्त्तका कार्य होता रहता है और यह जलावर्त्त केवलमात्र उसही जगह आबद्ध न रह कर नदीके स्वाभाविक स्रोतसे और भी कुछ दूर जाकर उत्पन्न होता है।

क ग चिह्नित मध्यवर्ती भूभागकी आकृति सदृश होने पर नदीके दूसरे पार भी घूर्णावर्त्त हो सकता है और विह्नित स्थान यदि संकीर्णायतन हो, तो वहांसे कं गं प्रवाह—प्रतिच्छिन्न हो कर जलावर्त्त उत्पन्न कर सकता है। इसीलिए यदि नदीका फाट कम चौड़ा हो और वहां कोई पुल बना हो, तो उस पुलके स्तम्भके पास आवर्त्त उत्पन्न होते हैं। उक्त आवर्त्तोंके निम्न स्तर, उनके चारों ओरके स्तरोंकी अपेक्षा बहुत कम ही विरुद्ध बलको गतिको रोक सकते हैं। इन स्तरोंके नीचे जो पानी है, वह अपने साधारण धर्मके अनुसार समतल अवस्थामें रहनेके लिए उठते समय मट्टी आदि को ऊपर उठाता है और कभी कभी तो पुलके स्तम्भों तकको ऊपर फेंक देता है।

नदीके निम्नस्तर सर्वत्र समान नहीं होते; कोई स्तर नीचा और कोई ऊंचा होता है। स्तरको उच्चता और निम्नताको तारतम्यताके अनुसार ऊंचे स्थानसे पानीको गति प्रतिच्छिन्न हो कर जलावर्त्त उत्पन्न हो सकता है। यह प्रवाह पीछे वक्रभावसे ऊर्द्ध्वगामी होता है और तरङ्गके आकारसे ऊपरको आता रहता है। इसी तरह यदि कोई स्थान अचानक नीचा हो जाय तो उस स्थानमें भी जलावर्त्त उत्पन्न हो सकता है।

जलाशय (सं० पु०) जलस्य आशयः आधारः। १ जलाधार, वह स्थान जहां पानी जमा हो, समुद्र, नद, नदी, पुष्करिणी गड्हा इत्यादि। पुष्करिणी देखो। (क्लो०) जले जलबहुलप्रदेशे आशेते शी अच्। २ उशीर, खस। ३ लामज्जक तृण। ४ शृङ्गाटक, सिंघाड़ा। (त्रि०) ५ जलशायी, जो जलमें शयन करता हो। (पु०) ६ मत्स्य विशेष, एक मछली।

जलाशया (सं० स्त्री०) गुण्डला वृक्ष, गुंदला, नागरमोथा।

जलाश्रय (सं० पु०) जले जलप्रचुर प्रदेशे आश्रयो उत्पत्तिस्थानं यस्य। १ वृत्तगुण्ड तृण। दीर्घनाल नामको घास। २ शृङ्गाटक, सिंघाडा। ३ ईहामृग, भेड़िया। ईहमृग देखो। ४ गर्मोटिका तृण, जड़वी। ५ लामज्जक तृण।

जलाश्रया (सं० स्त्री०) स्त्रियां टाप्। १ शूलीतृण, शूली घास। २ बलाका, एक प्रकारका बगुला पक्षी।

जलाष (सं० क्लो०) जायते जल ड जः लाषोऽभिलाषो यत्र अर्शादित्वादच्। १ सुख, आराम, चैन। २ सबके लिए सुखकर। ३ जल, पानी।

जलाषाह (सं० त्रि०) जलं सहते सह णिव पूर्व्वपद दीर्घ,ः ग्रस्य यत्वं। जलसोढ़, पानीको बरदास्त करनेवाला।

जलाष्ठीला (सं० स्त्री०) जलेन अष्टीला संहिता। पुष्करिणी।

जलासुका (सं० स्त्री०) जलमेव असवो यस्याः कप् टाप्। जलौका। जोंक देखो।

जलाहल (हिं० वि०) जलामय, पानीसे भराहुआ।

जलाह्वय (सं० क्लो०) जले आह्वयः स्पर्द्धा यस्य। १ उत्पल, कमल। २ कुमुद, कुईं। ३ बालक, बाला।

जलिका (सं० स्त्री०) जलं उत्पत्तिस्थानत्वेनास्त्यस्याः जल ठन्। जलौका जोंक देखो

जलिकाट—जलीकाट देखो।

जलोकाट—मदूरा राज्यमें प्रचलित एक तरहका खेल। कुछ गाय भैंसोंके सींगसे कपड़ा या अंगोछा बाँध देते है, उस अंगोछेके छोरमें कुछ रुपये-पैसे भी बांधे रहते हैं। किसी लम्बे चौड़े मैदानमें उन सबको लेजाकर एक साथ छोड़ देते हैं। इस समय दर्शकवृन्द ताली बजाते हुए हल्ला मचाते हैं; जिससे वे जानवर उत्तेजित हो कर जी-जानसे दौड़ते हैं और साथ ही द्रुतगामी मनुष्य भी उनके साथ दौड़ते रहते हैं। जो अग्रगामी पशुको पहले पकड़ता है, उसीकी जय होती है और वही उक्त पशुके सींगसे बंधे हुए रुपये-पैसोंका अधिकारी होता है।

अंग्रेज लोग जिस तरह घुड़दौड़में मस्त हो जाते हैं, उसी तरह मदूर, त्रिचिरापल्ली, पदुकोटा और तञ्जोरके लोग भी इस खेलमें उन्मत्त हो जाते हैं। इस खेलको उनके जातीय उत्सवोंमें गिनते थे, इस लिए धनी दरिद्र सभी इस खेलमें शामिल होते थे। इसमें कभी कभी

इन नक्षत्रोंमें जन्म होनेसे नरगण, चित्रा, मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, शतभिषा, मूला, धनिष्ठा, अश्लेषा और कृत्तिकामें राक्षसगण तथा अश्विनी, रेवती, पुष्या, स्वाती, हस्ता, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा और श्रवणामें जन्म लेनेसे देवगण होते हैं।

वर और कन्याका एक गण होना अच्छा है। अगर एकने देवगणमें और दूसरेने नरगणमें जन्म लिया हो तो मध्यम फल है, देवगण और राक्षसगणमें जन्म होनेसे अधम सौहृद्य हो कर रहता है, किन्तु नरगण और राक्षसगणमें होनेसे नरगणवालेकी मृत्यु होती है। (ज्योतिष) ७ भ्रु वादि संज्ञक नक्षत्रसमूह।

"उग्र.पूर्व मघान्तका भ्र वगण:।" (ज्योतिष)

८ वाणिज्यकारी वणिक्समूह।

"गणद्रव्यं हरेद यस्तु सम्विदं यश्च लङ्घयेत्।" (याज्ञवल्क्य)

९ व्याकरणप्रसिद्ध भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रुधादि, तनादि, क्र्यादि और चुरादि इन दशोंको गण कहते हैं। १० गणपाठग्रन्थ। ११ पाणिनिरचित स्वरादि स्वरूप-प्रतिपादक पाठग्रन्थ। १२ दैत्यविशेष, एक असुरका नाम। स्कन्दपुराणके गणेशखण्डमें इसका उपाख्यान इस तरह है—

किसी समय अभिजित् नामका एक ब्राह्मण अपनी स्त्री गुणवतीके साथ स्नान करनेके लिये समुद्र गये। गुणवतीने तृष्णासे कातर हो समुद्र जल पान किया। इस जलके साथ ब्रह्माका वीर्य उसके उदरमें प्रवेश हो गया। क्रमानुसार उस अमोघ वीर्यसे ब्राह्मण पत्नी गुणवतीको गर्भ रहा। यथा समय गुणवतीने एक पुत्र प्रसव किया। यही पुत्र गण नामसे प्रसिद्ध दैत्य कहलाया। अवस्था आने पर गणने शिवजीको आराधना की। शिवजीने तपस्यासे सन्तुष्ट होकर उसे वर दिया—तुम स्वर्ग, मर्त्य और पातालके ऊपर अपना आधिपत्य जमा सकते हो। इसका परिणाम यह हुआ कि वह गण दैत्य भयानक अत्याचारी हो गया। किसी दिन उसने महामुनि कपिलको अपमानित कर उनकी बहुमूल्य चिन्तामणिको ले लिया। महात्मा कपिलने दुःखित हो कर गणेशकी आराधना की। इस पर गणेश सन्तुष्ट हो कर गणदैत्यको विनाश करनेके लिये राजी हुवे। थोड़े दिनके बाद पार्वतीनन्दन गणेशजीने उसी दैत्यके गृहमें अवतीर्ण होकर उसका नाश किया।

(स्कन्दपुराण गणेशखण्ड ६१० अ०)

"सगणाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इन्द्राय नमः।"

(विधान-पारिजात)

१४ दूत, सेवक-पारिषद। १५ एक संस्कृत चिकित्सा-शास्त्र-रचयिता। ये दुर्लभके पुत्र थे। इन्होंने अष्टायुर्वेद या सिद्धयोगसंग्रह नामक ग्रन्थकी रचना की है। १६ दि० जैन मतानुसार—आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु और मनोज्ञ इन दश प्रकारके मुनियोंमेंसे एक। जो बड़े मुनियोंको परिपाटीके हों, उनका नाम "गण" है।

"आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्षग्लानगणकुलसंघसाधुमनोज्ञानां।"

(तत्त्वार्थसूत्र, ९ अ० २४ सूत्र)

१७ महावीर स्वामीके एक शिष्य।

गणक (सं० त्रि०) गणयति संख्यां करोति. गण-णिच् ण्वुल्। १ संख्याकारक, जो राशि स्थिर करता हो।

(पु०) २ मातृकादेवीभक्त मुनिविशेष, एक मुनो जो मातृकादेवीके भक्त थे। ३ ज्योतिषी। इसका पर्याय—साम्वत्सर, ज्योतिषिक, दैवज्ञ, ज्योतिर्विद्, मौहूर्तिक, मौहूर्त, ज्ञानी और कार्त्तान्तिक है।

बहुतोंका मत है कि जो ग्रहनक्षत्रादि विषय गणना करते, या ज्योतिषशास्त्र अध्ययन या व्यवसाय करते हैं वे पतित, निन्दनीय और अस्पृश्य है। शास्त्रमें भी गणककी निन्दा पाई गई है।

"वरं चाण्डालसंस्पर्शः कुर्यात् तु गणकोत्तमः।
तथाप्यस्पृश्य गणकं सर्वदा तु परित्यजेत्।"

(गङ्गानन्द तरङ्गिणी १६ उल्लास)

धर्मशास्त्रकार सुमन्तका भी कथन है, "सांवत्सरिको ऽपाङ्क्तेयः।" सांवत्सरिक या दैवज्ञ अपाङ्क्तेय है अर्थात् इनके साथ एक पंक्तिमें बैठ कर आहारादि नहीं करना चाहिये। महाभारतमें लिखा है—

"कुशीलवो देवलको नक्षत्रैश्च जीवति।
एतानिह विजानीयाद् ब्राह्मणान् पंक्तिदूषकान्॥"

नाटक खेलनेवाला, तनखाह पानेवाला, देवपूजक और जो नक्षत्रग्रह-प्रभृति गणना कर जीविका निर्वाह करते हैं, उन समस्त ब्राह्मणोंको पंक्तिदूषक अर्थात्

समुद्र। ३ जलाधिपति। ४ वर्षभेद। जलाधिप देखो।

जलेशय (सं० पु०) जले शेते शी-अच्-सप्तम्याः अलुक्। १ मत्स्य, मछली। २ विष्णु। जिस समय सृष्टिका लय होता है, उस समय विष्णु जलमें शयन करते हैं इसीसे इनका नाम जलेशय पड़ा है।

'तुम्बरिणो महाक्रोध ऊर्द्धरेता जलेशयः।" (भारत १३।१७।९८)

(त्रि०) ३ जलमें अवस्थानकारी, पानीमें रहनेवाला।

जलेश्वर (सं० पु०) जलस्य ईश्वरः। १ वरुण। २ समुद्र। ३ हिमालयस्थ तीर्थविशेष, हिमालय पर्वत परका एक तीर्थ। ४ जलाधिपति।

जलेश्वर—जलेसर देखो।

जलेसर—युक्त प्रदेशके एटा जिलेकी दक्षिण-पश्चिम तहसील। यह अक्षा० २७° १८' तथा २७° ३५' उ० और देशा० ७८° ११' एवं ७८° ३१' पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २२७ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२३३९८ है। इसमें २ नगर और १५६ ग्राम आबाद हैं। मालगुजारी कोई २८८००० है। अपर गङ्गा नहरकी इटावा शाखासे खेत सींचे जाते हैं।

जलेसर—युक्तप्रदेशके एटा जिलेकी जलेसर तहसीलका सदर। यह अक्षा० २८° २७' उ० और देशा० ७८° १८' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १४३४८ है। यहां कई जैनमन्दिर हैं और बहुतसे जैन वास करते हैं। इसमें दुर्ग और निम्न नगर दो विभाग हैं। कहते हैं, खृष्टीय १५ वीं शताब्दीको मेवाड़के राणाने वह किला बनाया था। परन्तु अब उसके ध्वंसावशेषमें सिर्फ एक टीला ही रह गया है। १८६६ ई०को मुनिसपालिटी हुई। सूती कपड़ा, शीशेकी चूड़िया और कांसेके गहने बनाते हैं। यहां शोरे-का बहुत बड़ा कारखाना है। रूईकी कल भी चलती है।

जलेसर—उड़ीसाप्रान्तके बालेश्वर जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २१° ४८' उ० और देशा० ८७°१३' पू०में सुवर्णरेखा नदीके वाम तट पर अवस्थित है। यहां बङ्गाल-नागपुर-रेलवेका ष्टेशन और कलकत्ते जानेवाली बड़ी सड़क है। पहले जलेसरमें वर्तमान मेदिनीपुर जिलेकी मुसलमान सरकार और १८ वीं शताब्दीके समय ईष्ट इण्डिया कम्पनीका एक कारखाना था।

जलोक (सं० पु०) काश्मीरराज अशोकके पुत्र। महादेव की आराधना करने पर इनका जन्म हुआ था। इन्होंने म्लेच्छोंको परास्त किया था। धनुर्विद्यामें ये अद्वितीय थे और जलस्तम्भनविद्या भी इन्हें याद थी। ज्येष्ठेश, नन्दीश और विजयेश्वर नामकी तीन शिव मूर्त्तियां इन की आराध्य देवता थीं। म्लेच्छोंके साथ युद्ध करते समय ये उन्हें सागरतीर पर्यन्त भगा ले गये थे, वहां पर जिस स्थान पर इन्होंने विश्राम किया और पीछे अपने केश बांधे थे, यह स्थान उज्जत्-डिम्ब नामसे प्रसिद्ध है। ये कान्यकुब्ज प्रदेश जीत कर वहांसे चारों वर्णोंके कुछ अच्छे आदमियोंको काश्मीर ले गये थे। इन्होंने सामाजिक और राजनैतिक विषयमें काफी उन्नतिकी थी। इनकी पत्नी का नाम ईशानदेवी था, ये भी अत्यन्त बुद्धिमान् थीं। महाराज जलोकको नन्दपुराण सुनना बहुत अच्छा लगता था। इन्होंने श्रीनगरमें ज्येष्ठरुद्रका एक मन्दिर बनवाया था। ऐसा कहा जाता है कि, एक दिन ये विजयेश्वरके मन्दिरको जा रहे थे, उस समय एक स्त्रीने आ कर उनसे खानेको मांगा। जलोकने उस स्त्रीसे पूछा—"आपकी क्या खानेकी इच्छा है।" इस पर उस स्त्रीने विकृत आकार धारण कर उत्तर दिया—"महाराज! मुझे नरमांस खानेकी इच्छा है।" जलोक इच्छानुसार दान देनेकी प्रतिज्ञा तो कर ही चुके थे और दूसरे का विनाश करना भी अन्याय समझते थे, इसलिए उन्होंने विचार कर उत्तर दिया—"आप मेरे शरीरमेंसे किसी भी स्थानसे जितना आवश्यक हो, उतना मांस निकाल कर भक्षण कर सकती हैं।" राजाके उत्तरसे सन्तुष्ट हो कर राक्षसीने कहा—"महाराज! आप द्वितीय बुद्ध हैं।" राजने कहा—बुद्ध कौन?" राक्षसीने उत्तर दिया—"लोकालोक पर्वतके उस पार जहां सूर्य-की किरण कभी प्रवेश नहीं करतीं, उस स्थानमें कृतीय नामकी एक जाति है। वे बुद्धकी उपासना करते हैं। क्रोध किसे कहते हैं, वे नहीं जानते। यदि कोई उनका अनिष्ट करे, तो भी वे उसका उपकार ही करते हैं। ये लोग पृथिवी पर सत्य और ज्ञानका प्रचार करनेके लिए व्यग्र रहते हैं। परन्तु आपने उनका महाअनिष्ट किया है। आपने दुष्टलोगोंकी सलाहसे उनका एक देवमन्दिर तुड़वा दिया है। अब शीघ्र ही आप उसे बनवा दीजिये।"

समझा सकते हों, शास्त्रकारोंके मतानुसार वे ही गणक कहलाते हैं। (वृहत्स० संहिता २ अ०)

४ जातिविशेष। इनके आचार व्यवहार ब्राह्मणोंसे मिलते जुलते हैं। किसी किसी देशमें इन्हें ग्रहविप्र या आचार्य कहते हैं। ब्रह्मयामलके १४वां अध्यायमें लिखा है—

"शरद्वीपे च वेदाग्नि शाकद्वीपे च सिद्धान्ति।
भूमध्ये ब्रह्मचारी च दैवज्ञो द्वारकापुरे॥
द्राविडे मैथिले चैव ग्रहविप्र ति संज्ञक।
धर्माङ्गे धर्मवक्ता च पञ्चाले शास्त्रिसंज्ञकः॥
सारस्वते शुभमुखो गान्धारे चित्रपण्डित।
तीरहोत्रे च तिथिविल्लाटके ऋच्छ एव च॥
वङ्गाले ज्योतिषो विप्रो ब्रह्माले विधिकारकः।
वभ्राटे योगवेत्ता च लिटाने देवपूजकः॥
राढ़देशे उपाध्यायो गयायां तन्त्रधारकः।
कलिङ्गे ज्ञाननामा च आचार्यो गौडदेशके॥" (यामल १४श अध्याय)

गणक जातिके लोग शरद्वीप और शाकद्वीपमें वेदाग्नि, भूमध्यमें ब्रह्मचारी, द्वारकामें दैवज्ञ, द्राविड़ और मिथिलामें ग्रहविप्र, धर्माङ्गमें धर्मवेत्ता, पाञ्चालमें शास्त्री, सरस्वती नदीतीरमें शुभमुख, गान्धारमें चित्रपण्डित, तीरहोत्रमें तिथिवत्, लाटदेशमें ऋच्छ, वङ्गालमें ज्योतिष, ब्रह्ममें विधिकारक, वभ्राटमें योगवेत्ता, लिटानमें देवपूजक, राढ़देशमें उपाध्याय, गयामें तन्त्रधारक, कलिङ्गदेशमें ज्ञान और गौडदेशमें आचार्य कहलाते हैं।

ग्रहदोष शान्तिके लिये जो कुछ दान करना होता है, वह इन्हीं ब्राह्मणोंको मिलता है। इस देशके लोगोंका विश्वास है कि ग्रहविप्रको दान देनेसे ही ग्रह संतुष्ट होता है, गृहस्थोंका कोई अमङ्गल नहीं होता है। शब्दकी व्युत्पत्तिके अनुसार अर्थ लगानेसे वे ही गणक कहला सकते जो ज्योतिषशास्त्र अध्ययन करते तथा ग्रहोंके गतिनिर्णय और कोष्ठी गणना कर शुभाशुभ फल निर्णय किया करते हैं। यदि ब्राह्मण, कायस्थ, वैश्य प्रभृति दूसरी कोई जाति ज्योतिषशास्त्र अध्ययन कर उसका व्यवसाय करें तो उनको गणक नहीं कहते वरन वे ज्योतिषिक, ज्योतिर्विद् प्रभृति दूसरे किसी नामसे पुकारे जा सकते हैं। किन्तु पूर्वकथित जातियोंमें कोई कोई ग्रह गणनाकी वात तो दूर रहे नक्षत्रके नाम नहीं जानने पर भी गणक कहलाता है। दूसरे दूसरे ब्राह्मणोंके साथ इनकी कन्याका आदान प्रदान नहीं होता है। इन लोगोंमेंसे बहुतोंने ज्योतिषशास्त्र अध्ययन कर प्रतिष्ठा और उन्नति प्राप्त की है। इन लोगोंमें जो शिक्षित और धनी हैं, उन्हींका आचार व्यवहार उच्चश्रेणीके ब्राह्मण जैसा है। इनके साथ उच्चश्रेणीके ब्राह्मणोंका कोई भेद देखा नहीं जाता है, सिर्फ आदान प्रदान की प्रथा प्रचलित नहीं है। दूसरे बहुतसे अशिक्षित वर्णविप्र या गणक ब्राह्मण हैं, जो ग्रहदान लेकर ही अपनी जीविका निर्वाह करते हैं, नया वर्ष आने पर ये घर घर घूमते और नूतन पञ्जिकाका फल सुना कर गृहस्थोंसे दक्षिणा या पारिश्रमिक स्वरूप चावल, दाल, वस्त्र और फल प्रभृति पाते हैं। ऊपर जिन उच्चश्रेणीके गणकोंका उल्लेख हो चुका है, उनके साथ इन लोगोंका कोई सम्बन्ध जान नहीं पड़ता है। उच्चश्रेणीके ब्राह्मण भी इन्हें अपनी जातिके समान नहीं मानते हैं। इनका आचार व्यवहार ठीक चण्डाल जैसा है। ये चण्डालका कुआ हुआ जल पीते हैं। इन्हें गलेमें यदि यज्ञोपवीत लटकता न रहता तो ये ठीक चण्डालसे मालूम पड़ते। इनका स्पर्श किया हुआ जल अपवित्र समझा जाता है। ब्राह्मण, कायस्थ और वैश्य प्रभृति उच्चश्रेणीके हिन्दू इन्हें चाण्डालके समान मानते हैं। इनमेंसे बहुत पूर्ववङ्गाल, फरिदपुर प्रभृति स्थानोंमें रहते हैं। चण्डालके पुरोहितके साथ इनका आहार व्यवहार और आदान प्रदान चला आता है। कहीं कहीं उनमेंसे थोड़े चण्डालोंका पौरोहित्य भी करते हैं। ये अपनेको उच्चश्रेणीके गणकोंसा समझते हैं। किन्तु कोई विश्वास नहीं कर सकता है कि इनके साथ उच्चश्रेणीके गणकोंका कोई सम्बन्ध है।

मनुने जिन समस्त सङ्कर जातियोंका उल्लेख किया है उनमें इन लोगोंका नाम पाया नहीं जाता है। रुद्रयामलोक्त जातिमालामें लिखा है—

"देवलात् गणको जातो वैश्यागर्भसमुद्भव।
तस्य वृत्तिं ददौ विप्र तिथिवारविवेचनम्।"

देवल (पंडा)के औरस और वैश्याके गर्भसे गणक जातिकी उत्पत्ति है। तिथिवार प्रभृतिकी गणना करना ही इनकी वृत्ति है। इस प्रमाणके अनुसार जान

२ षोड़श पदार्थवादी गौतमने सोलह पदार्थोंमें जल्पको भी एक पदार्थ माना है। उनके मतसे जल्प, विजिगीषु व्यक्तिका परमत निराकरण पूर्वक स्वमत अवस्थापक एक वाक्य है। वह वाक्य जिसके द्वारा विजिगीषु व्यक्ति, विवाद आदिके समय परमतका खण्डन कर अपने मतकी पुष्टि करते हैं। (गौतमसूत्र १।४३) वाद देखो।

३ प्रलाप, व्यर्थकी बातचीत, बकवाद।

जल्पक (सं॰ त्रि॰) जल्प स्वार्थे कन्। बकवादी, वाचाल, बातूनी।

जल्पन (सं॰ क्लो॰) जल्प भावे ल्युट्। वाचालता, अनर्थक शब्द, बकवाद। २ डींग, बहुत बढ़ कर कही हुई बात।

जल्पना (हिं॰ क्रि॰) व्यर्थकी बात करना, फिजूल बकवाद करना, डींग मारना।

जल्पाईगोड़ी—जलपाईगुड़ी देखो।

जल्पाक (सं॰ त्रि॰) जल्पति जल्प-षाकन्। बहुकुत्सितभाषी, बहुतसी फिजूल बातें करनेवाला, बकवादी। इसके पर्याय—वाचाल, वाचाट़ और बहुगर्ह्य वाक्।

जल्पित (सं॰ त्रि॰) जल्प-क्त। १ उक्त, कहा हुआ। २ मिथ्या, झूठ।

जल्पीश—कालिकापुराणमें वर्णित एक विख्यात शिवलिङ्ग। जल्पेश देखो।

जल्पेश—वङ्गाल प्रान्तके जलपाईगुड़ी जिलेका एक गांव। यह अक्षा॰ २६° ३१´ उ॰ और देशा॰ ८८° ५३´ पू॰मे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २०८८ है। कोई ३ शताब्दी पूर्व कोच विहारके राजाओंने किसी प्राचीन मन्दिरकी जगह शिवमन्दिर निर्माण किया था। यह जरदा (जटोदा) नदीके किनारे है। ईंट लाल लगी है। बड़े गुम्बटका बाहरी व्यासार्ध ३४ फुट है। शिवरात्रिको बड़ा मेला होता है। जलपाईगुडी देखो।

जल्ला (हिं॰ पु॰) १ झील। २ हृद, हौज। ३ ताल, तालाव।

जल्लाद (अ॰ पु॰) घातक, वधुआ जिस दोषीको प्राणदण्डकी आज्ञा होती है, वह जल्लादके हाथ मारा जाता है।

जल्हु (सं॰ पु॰) दह वाहु पृषोदरादित्वात् साधुः। अग्नि।

जव (सं॰ पु॰) जु-अप्। १ वेग।

जव (हिं॰ पु॰) यव, जौ।

जवन (सं॰ क्लो॰) जु-भावे-ल्युट्। १ वेग। (त्रि॰) जु कर्त्तरि ल्युः। २ वेगवान्, वेगयुक्त, तेजो। (पु॰) ३ वेग युक्त-अश्व, तेज घोड़ा। ४ देशविशेष, अरब देश, पारस देश और यूनान देश। ५ उक्त देशोंका रहनेवाला। यवन देखो। ६ म्लेच्छ जातिविशेष, मुसलमानोंकी एक जाति। पहले ये यवनदेशोद्भव क्षत्रिय थे, बाद सगर राजाने इनके मस्तक मुण्डन कर इन्हें सब धर्मोंसे वहिष्कार कर दिया। (हरिवंश) ७ स्कन्दके सैनिकोंमेंसे एक सैनिकका नाम। (भा॰ ९।४५।६२) ८ शिकारी मृग। ९ घोटक, घोड़ा १० यवद्वीपके अधिवासी।

जवनाल—जुन्हरी देखो।

जवनिका (सं॰ स्त्री॰) यवनिका देखो।

जवनिमन (सं॰ पु॰) जव, वेग, तेजी।

जवनी (सं॰ स्त्री॰) जूयते आच्छाद्यतेऽनया। जु करणे ल्युट् स्त्रियां ङीप्। १ अपटी। अजवायन जवाइन। २ औषधिभेद, एक प्रकारको दवा। ३ यवन स्त्री, मुसलमान औरत। (त्रि॰) ३ वेगशीला, तेज।

जवर आमला—वङ्गालके अन्तर्गत वाखरगञ्ज जिलेका कचुआ नदीके किनारे पर अवस्थित एक ग्राम। यहांसे चावल और गुड़की रफ़नी होती है।

जवस् (सं॰ पु॰) जु-असुन्। वेग, तेजी।

जवस (सं॰ क्लो॰) जुयते भक्षार्थं प्राप्यते बाहुलकात् जु कर्म्मणि अ सु। तृण, घास।

जवहरवाई—राणा संग्रामसिंहकी मृत्युके उपरान्त उनके पुत्र रत्न मेवाडके सिंहासन पर बैठे। रत्नकी अकस्मात् मृत्यु हो गई। उनके भाई विक्रमजीतने १५८१ संवत्में चितोरके सिंहासन पर बैठ कर अपनी सेनाओंमें तोप चलानेकी प्रथा चलाई और वे पयादोंका खूब आदर करने लगे। इस नवीन घटनासे चित्तौरके सामन्त और सर्दारगण विक्रमजोतके प्रति अत्यन्त विरक्त हो गये। गुर्जरराज वहादुरके पूर्वपुरुष मजफ्फर चित्तौरके पृथ्वीराज द्वारा कैद किये गये थे; इसलिए बहादुरने

किन्तु उसमें भी किसी ग्रन्थका नाम नहीं है।

ग्रहाचार्य देखो।

५ केतुविशेष। ये आठ होते और तारापुञ्ज जैसे दीखते हैं। बृहत्संहिताके अनुसार ये ब्रह्माके पुत्र माने गये हैं।

"तारापुञ्जनिकाशा गणका नाम प्रजापतेरष्टौ।"

(बृहत्संहिता ११।२५)

गणकपति, गणधर देखो।

गणकर्णिका (सं० स्त्री०) गणस्य गणेशस्य कर्णं इव पत्रमस्याः बहुव्री०। इन्द्रवारुणी, इन्द्रायणलता।

गणकर्मन् (सं० क्ली०) गणयज्ञ। गणयज्ञ देखो।

गणकार (सं० पु०) गणं धात्वादिपाठं करोति, गण-कृ-अण् उपपदसं०। १ धातुसंग्रहकर्त्ता। २ भीमसेन। गणं गणनां करोति गण-कृ-अण्। ३ जो गणना करे, गणक।

गणकारि (सं० पु०) गणं धात्वादिपाठं करोति, गण-कृ बाहुलकात् इञ्। गणकार, वह जो गणना करता हो।

गणकी (सं० स्त्री०) गणकपत्नी, गणककी स्त्री।

गणकुण्ड—हिमालयस्थ एक पवित्र कुण्ड।

(हिमाद्रिखण्ड ८४।८)

गणकूट (सं० पु०) गणरूपं कूटं। वर और कन्याका देव, मनुष्य या राक्षस-गण रूप कूट। विवाह देखो।

गणगति (सं० स्त्री०) गणनागति, कोई निर्दिष्ट उच्च संख्या।

गणचक्रक (सं० क्ली०) गणानां धार्मिकाणां चक्रमत्र, बहुव्री०। धार्मिकोंका एकत्र भोजन।

गणच्छन्दः (सं० क्ली०) पादपरिमित छन्द।

गणजीवविजय—सन्देहसमुच्चय नामक संस्कृत धर्मशास्त्रके संग्रहकार।

गणता (सं० स्त्री०) गणस्य भावः गण-तल्-टाप्। १ समूहत्व, समूहका भाव। २ समूह, ढेर।

गणतिथ (सं० त्रि०) गणानां पूरकं गण-तिथुक्। गणपूरक।

गणदास (सं० पु०) नृत्यकार।

गणदीक्षी (सं० पु०) गणान् दीक्षयति दीक्ष-णिनि। बहुतोंको यज्ञ करानेवाला, बहुयाजक। (त्रि०) गणस्य गणेशस्य शिवस्य वा दीक्षा विद्यतेऽस्मिन् अस्य। २ गणेश या शिवमन्त्रमें दीक्षित, जो गणेश या शिवमन्त्रमें दीक्षित हो।

गणदेवता (सं० स्त्री०) समूहचारी देवता। आदित्य १२, विश्वदेवा १०, वसु ८, तुषित ३६, आभास्वर ६४, वायु ४९, महाराजिक २२०, साध्य १२, रुद्र ११ इन सबको गणदेवता कहते हैं।

गणद्रव्य (सं० क्ली०) गणानां द्रव्यं, ६-तत्। सर्व साधारणकी सम्पत्ति, वह धन जिस पर बहुतसे मनुष्योंके समान अधिकार हो।

गणद्वीप (सं० क्ली०) गणानां समानां राज्यत्वात् द्वीपः। द्वीपविशेष। इस द्वीपमें कृत राज्य थे। इस लिये इसका नाम गणद्वीप पड़ा।

गणधर (सं० पु०) आचार्य, अध्यापक, जैनाचार्य।

जैनमतानुसार गणधर वे कहलाते हैं, जो तीर्थङ्करोंकी दिव्यध्वनि (उपदेश) को धारण पूर्वक, आचाराङ्ग आदि ग्यारह अङ्गोंमें विभक्त कर मनुष्योंको भिन्न भिन्न भाषाओंमें उनके उपदेशको समझाते हैं। प्रत्येक तीर्थङ्करोंके गणधर हुआ करते हैं। ये भी नियमसे मुक्त हो जाते हैं। गौतम गणधर देखो।

गणन (सं० क्ली०) गण्यते गण-णिच्, भावे ल्युट्। १ गणना, गिनना। २ गिनती। ३ अवधारण, निश्चय।

गणना (सं० स्त्री०) १ गिनती। २ हिसाब। ३ संख्या।

"यदि त्रिलोकी गणनापरा स्यात्।

तस्याः समाप्तिर्यदि नायुषः स्यात्॥" (नैषध ३।४०)

गणनागति (सं० स्त्री०) कोई निर्दिष्ट उच्चसंख्या।

गणनाथ (सं० पु०) गणानां प्रमथादीनां नाथः, ६-तत्। १ प्रमथाधिपति शिव, महादेव। २ गणेश। ३ गणोंका मालिक।

गणनायक (सं० पु०) गणानां नायकः, ६-तत्। १ गणेश।

"लेखको भारतस्यास्य भवत्वं गणनायक।" (भारत १।१।७७)

२ शिव, महादेव।

गणनायिका (सं० स्त्री०) गणानां नायकः शिवः तस्य शक्तिः गणनायक-टाप्। दुर्गा, भगवती।

गणनापति (सं० पु०) १ गणेश। २ गणोंका मालिक। ३ शिव, महादेव। ४ अङ्कशास्त्रविद्।

गणनामहामात्र (सं० पु०) आय और व्ययका मन्त्री, वह जो खर्च और आमदका हिसाब रखता हो।

जवादि (सं० क्ली०)सुगन्धि द्रव्य भेद, एक तरहकी खुश-बूदार चीज।

"जवादि नीरसं स्निग्धमीषत् पिङ्गलसुगन्धिदं।
आयते बहुलामोदं राज्ञां योग्यञ्च तन्मतम्।"

यह एक प्रकारके मृगके पसीनेसे बनता है। इसके गुण-सुगन्ध, स्निग्ध, उष्ण, सुखावह, वातमें हितकर और राजाओंके लिए आल्हादजनक है। (राजनि०) इसके पर्याय ये हैं—गन्धराज, कृत्रिम, मृगधर्मज, गन्धाढ्य, स्निग्ध, साम्राणिकर्द्दम, सुगन्धतैलनिर्यास और कटुमोद।

जवाधिक (सं० त्रि०) १ अत्यन्त वेगयुक्त, बहुत तेज दौड़नेवाला। (पु०) १ अधिक वेगविशिष्ट घोटक, बहुत तेज दौड़नेवाला घोड़ा।

जवान (फा० वि०) १ युवा, तरुण। २ वीर बहादुर। (फा० पु०) ३ मनुष्य। ४ सिपाही। ५ वीर पुरुष।

जवानसिंह—उदयपुरके महाराणा भीमसिंहके पुत्र। १८२८ ई० में इनका राज्याभिषेक हुए था। ये बड़े विलासी और आलसी थे। इनके समयमें भी गवर्मेण्टसे सन्धि-पत्र लिखा गया था। राज्यशासनमें इन्होंने तनिक भी योग न दिया था। इनकी फिजूल-खर्चीने इन्हें कर्ज़-दार बना दिया था।

जवानिल (सं० पु०) प्रचण्डवायु, तेज हवा।

जवानी (सं० स्त्री) अजवाहन, जवाइन।

जवानी (फा० स्त्री०) युवावस्था, तरुणाई।

जवापुष्प (सं० पु०) जपा, अड़हुल। जवा देखो।

जवाब (अ० पु०) १ प्रत्युत्तर, उत्तर। २ वह उत्तर जो काय रूपमें दिया गया हो, बदला। ३ जोड़, मुकाबले की चीज। ४ नौकरी छूटने की आज्ञा, मौकूफी।

जवाब-तलब (फा० वि०) जिसके सम्बन्धमें समाधान कारक उत्तर मांगा गया है।

जवाबदावा (अ० पु०) वह उत्तर जो प्रतिवादी वादीके निवेदनपत्रके उत्तरमें लिखकर अदालतमें देता है।

जवाबदेह (फा० वि०) उत्तरदाता, जिससे किसी कार्य के बनने बिगड़ने पर पूछ ताछ की जाय, जिम्मेदार।

जवाबदेही (फा० स्त्री०) १ उत्तर देनेकी क्रिया। २ उत्तरदायित्व, जिम्मेदारी।

जवाब-सवाल (अ० पु०) १ प्रश्नोत्तर। २ वाद विवाद।

जवाबी (फा० वि०) उत्तर सम्बन्धी, जिसका जवाब देना हो, जवाबका। जैसे जवाबी कार्ड।

जवार (अ० पु०) १ पड़ोस। २ आस पासका प्रदेश। ३ अवनति, बुरे दिन। ४ झंझट।

जवार (हिं० स्त्री०) जुआर।

जवारा (हि० पु०) विजयादशमीके दिन यह पवित्र माना गया है। स्त्रियां इसे अपने भाईके कानों पर खोंसती हैं और श्रावणीमें ब्राह्मण अपने यजमानोंको देते हैं।

जवारी (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकार की माला। यह जौ, छुहारे, मोती आदि मिला कर गूंथी जाती है। २ तारवाले बाजोंमें षड़जका तार। ३ सारङ्गी, तम्बूरा आदि तारवाले बाजोंमें लकडी वा हड्डी आदिका वह छोटा टुकडा जो नीचेकी ओर बिना जुड़ा हुआ रहता है तथा जिसके ऊपरसे सब तार खूटियोंकी ओर जाते हैं।

जवाल (अ० पु०) १ अवनति, उतार, घटाव। २ आफ़त, झंझट, बखेड़ा।

जवाशीर (फा० पु०) एक प्रकारका गन्धविरोजा। यह कुछ पीला रंग लिए बहुत पतला होता है। इसमेंसे ताड़पीन की गंध आती है। यह सिर्फ औषधके काममें आता है।

जवास, जवासा (हिं० पु० एक कांटेदार क्षुप। पर्याय—यवासक, अनन्ता, कण्टकी। यवास देखो।

जवासिया—मध्यभारतके अन्तर्गत मालवा प्रान्तकी एक ठाकुरात।

जवाह (हिं० पु०) आँखका एक रोग, प्रवाल, परबल। इसमें पलकके भीतरकी ओर किनारे पर बाल जम जाते हैं। २ बैलोंको आंखका एक रोग। इसमें पलकके नीचे मांस जम जाता है।

जवाहड (हिं० स्त्री०) बहुत छोटी हड़।

जवाहर (अ० पु०) रत्न, मणि।

जवाहरखाना (अ० पु०) बहुतसे रत्न और आभूषण रहनेका स्थान, रत्नकोष, तोशाखाना।

जवाहरात—हीरा, पन्ना, मणि, मुक्तादि रत्न।

जवाहिर (अ० पु०) रत्न, मणि।

जवाहिरकवि—१ हिन्दीके एक कवि। ये हरदोई जिलेके

आदित्यका अर्चन और महागणपतिका तिलक किया जाता है। इससे सकल दोषोंको शान्ति होती है। विनायक भी सन्तुष्ट हो करके पीड़ित व्यक्तिको परित्याग करते हैं। (याज्ञवल्क्य)

गणपतिदेव—दक्षिणदेशमें वरङ्गल राज्यके एक राजा, प्रतापचन्द्रके पुत्र। शिलालेख पढ़नेसे जाना जाता है कि १२२८ई०में इन्होंने चोलोंको परास्त कर कलिङ्गदेश पर अधिकार किया था।

गणपतिनाग—समुद्रगुप्तके समसामयिक आर्यावर्त्तवासी एक राजा। ये समुद्रगुप्तसे परास्त हुए थे।

गणपतिरावल—एक विख्यात संस्कृत ग्रन्थकार। ये रावल हरिशङ्करके पुत्र और रामदासके पौत्र थे इन्होंने पूर्वनिर्णय, मुहूर्त गणपति, शान्तिगणपति, श्रौताधानपद्धति और सम्बन्धगणपति नामक धर्मशास्त्र प्रणयन किये हैं।

गणपतिव्यास—१ एक प्राचीन कवि। १२७२ ई०को इन्होंने धाराध्वंस नामक ऐतिहासिक काव्यकी रचना की है। २ योगसारसमुच्चय नामक वैद्यकग्रन्थरचयिता।

गणपर्वत (सं०-पु०) गणानां प्रमथादीनां आवासरूपः पर्वतः। कैलासपर्वत। इस पर्वत पर प्रमथ वा शिवके गण रहते थे, इस लिये इसका नाम गणपर्वत पड़ा।

गणपाठ (सं० पु०) गणानां स्वरादिगुणानां पाठोऽत्र, बहुव्री०। पाणिनि प्रणीत एक ग्रन्थ। इसमें स्वरादि गणोंके विषय लिखे हुए हैं

गणपाद (सं० पु०) गणस्येव पादोऽस्य, बहुव्री०। जिसके दोनों पैर प्रमथ या शिवगणके जैसे हों।

गणपीठक (सं० क्ली०) गणस्य शिवस्य पीठः आसनमिव कायति कै-कः। वक्षःस्थल, छाती।

गणपुङ्गव (सं० पु०) गणः पुङ्गव इव उपमितस०। १ गणश्रेष्ठ। २ देशविशेष, एक देशका नाम ३ उस देशके रहनेवाले। ४ उस देशके राजा।

"कौलिङ्गान् गणपुङ्गवानथशिवानयोध्यकान् पार्थिवान्।"

(बृहत्संहिता ४।२५)

गणपूर्व (सं० पु०) गणानां ग्राम्यादिस्थलीकानां पूर्वः प्रधानं, ६-तत्। ग्रामणी, ग्रामके अधिनायक, गांवके मुखिया।

गणप्रमुख (सं० पु०) जाति वा श्रेणीमें प्रधान, वह जो जाति या समाजमें श्रेष्ठ हो।

गणभर्त्तृ (सं० पु०) गणानां प्रथमादीनां भर्त्ता, ६-तत्। १ महादेव, शिव।

"अङ्गानामसुख भजते गणभर्त्तुः कृता।" (किरातार्जुनीय ५।४२)

२ गणेश। (त्रि०) ३ बहुजनस्वामी, जो बहुतोंके अधिपति हो।

गणभोजन (सं० क्ली०) साधारण भोज।

गणमुख (सं० पु०) गणानां मुखः, ६-तत्। ग्रामणी, ग्रामके अधिनायक, गाँवके मुखिया।

"रविजे शशिते विजिते गणमुख्याः शस्त्रजीविनः चपम्।"

(बृहत्सं० १७।२४)

गणयज्ञ (सं० पु०) गणस्य भ्रातॄणां सखीनां वा समूहस्य करणीयो यज्ञः। भ्रातृवर्ग अथवा बन्धुवर्गका अनुष्ठेय मरुत्स्तोम नामक यज्ञ, भाइयों या बन्धुओंके करने योग्य मरुत्स्तोम नामक यज्ञ।

"...यो गणयज्ञो भ्रातॄणां सखीनां वा।"

(कात्यायनश्रौत० २२।११।१२)

गणयाग (सं० पु०) गणोद्देशेन शान्त्यर्थं यागः। १ गणपति-कल्प, गणेशके उद्देशसे करने योग्य पूजादि।

गणरत्न (सं० क्ली०) गणाः स्वरादि गणाः रत्नानीव यत्र, बहुव्री०। एक ग्रन्थका नाम। पाणिनिने गणपाठमें जो सब गण निर्देश किये हैं, वे ही इस ग्रन्थमें पद्यरूपसे लिखे हैं। व्याकरणाध्यायीके लिये यह विशेष उपकारी है।

गणरात्र (सं० क्ली०) गणानां रात्रीणां समाहारः, समहार द्विगु, अच्। रात्रि समूह।

गणरूप (सं० पु०) गणा बहूनि रूपाणि यस्य, बहुव्री०। अर्कवृक्ष, अकवनका पेड़।

गणरूपी (सं० पु०) गणा बहूनि रूपाणि सन्त्यस्य गणरूप-इनि। श्वेताकवृक्ष, सफेद आकका पेड़।

गणवत् (सं० त्रि०) गणोऽस्त्यस्य गण-मतुप् मस्य वः। गणयुक्त, जिसमें गण हों।

गणवती (सं० स्त्री०) धन्वंतरि दिवोदासकी माताका नाम।

गणशस् (अव्य०) गण वीप्सायां कारकार्थे शस्। बहुशः, दलका दल, झुण्डका झुण्ड।

गणाग्नि (सं० पु०) देवताविशेष, कोई देवता जो किसी

नदीसे सोना निकलता है। डली जैसा जो लोहा मिलता है उसको गला करके बाहर भेज दिया जाता है। जङ्गली पैदावारमें लाह, टसर, और मोमको रफ़नी होती है।

१८१६ ई०को माधव रावजो भोंसलाने वह राज्य अंगरेजोंको दे डाला था। १२५०) रु० सरगुजाको कर देना पड़ता है। लोकसंख्या १३२११४ है। ५६६ गांव बसे हैं। कुल वर्ष हुए कोरवाओंने विद्रोह करके बड़ा उत्पात मचाया। छत्तीसगढ़ कमिश्नरके अधीन यह राज्य है। वार्षिक आय १२६०००) रु० होता है। ११६ मील सड़क है। मालगुजारी ६०००) रु० आती है।

जशपुर नगर (जगदीशपुर) मध्य प्रान्तके जशपुर राज्यको राजधानी। यह अक्षा० २२° ५३´ उ० और देशा० ८४° ८´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६५४ है। यहां औषधालय, जेल और राजप्रासाद बना है।

जसकरण संघी—मल्लिनाथपुराण-छन्दोबद्ध नामक जैन-ग्रन्थके रचयिता।

जसद (सं० पु०) जस्ता नामको धातु। जस्ता देखो।

जसदान—बम्बई प्रान्तको काठियावाड़ पोलिटिकल एजेन्सोका राज्य। यह अक्षा० २१° ५६´ एवं २२° १७´ उ० और देशा० ७१° ८´ तथा ७१° ३१´ पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २८३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २५७२७ है। क्षत्रिय वंशीय स्वामी चक्षनके नामानुसार इसका नाम रखा हुआ है। जूनागढ़के गोरी राजत्वकालको यहां एक सुदृढ़ दुर्ग बना। उस समय इसका नाम गोरोगढ़ था। फिर यह खिरडो खुमानोंके हाथ लगा और १६६५ ई० के समय भिका खाचरने जस खुमानसे जीत लिया। विजयकर खाचर-के समभाज नागरने उसे अधिकार किया था। अन्तका जसदान नवानगरके जामने जीता और जामजसजोके विवाहोपलक्षमें विजयसूर खाचरको सौंपा। १८०७-८ ई० को विजयसूरने अंगरेजों और ग्वालियरके मराठोंसे सन्धि की। उन्हींके वंशधर आजकल राजा हैं। वंश परम्परागत उत्तराधिकारसे राजा होते हैं।

जसदान—काठियावाड़ प्रान्तके जसदान राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२° ५´ उ० और देशा० ७१° २० पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ४६२८ होगी। यह नगर अतिप्राचीन है। एक सुदृढ़ दुर्ग खड़ा है। विनचियाको अच्छोसी सड़क लगी हुई है। कृषिके लाभार्थ एक कृषिसम्बन्धीय बङ्क खुला है।

जसपुर—युक्त प्रदेशके नैनीताल जिलेकी काशीपुर तह-सीलका नगर। यह अक्षा० २८° १७´ उ० और देशा० ७८° ५०´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ६४८० होगी। १८५६ ई०को २०वीं धारासे इसका प्रबन्ध किया जाता है। सूती कपड़ा बहुत तैयार होता है। शक्कर और लकड़ीका भी थोड़ा कारबार है।

जसवन्तनगर—युक्तप्रदेशके इटावा जिला और तहसीलका नगर। यह अक्षा० २६° ५३ उ० और देशा० ७८° ५३´ पू०में इष्टइण्डियन रेलवे पर अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ५४०५ होगी। मैनपुरीके कायस्थ जसवन्त रायके नाम पर ही उसकी यह आख्या दी गयी है। १८५७ ई० १८ मईको बागियोंने नगरका पश्चिमस्थ मन्दिर अधिकार किया था। घी और खारू वा कपड़ेको रफ़्तनी होती है। पीतलको नक्काशीका भी माल बुनता है। सूत, पशु, देश जात द्रव्य और विलाती कपड़ेका भी बड़ा कारबार है।

जसवन्तसागर—बम्बई प्रान्तको बीजापुर पोलिटिकल एजेन्सीका देशी राज्य।

जसानि काठी—मालवप्रदेशको एक जाति। कहा जाता है कि, रामकच्छके पञ्चम पुत्र जसके वंशधर होनेके कारण ये जसनिकाठी नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। प्रवाद है कि, कुन्तीके पुत्र कर्ण, और कौरवोंकी सहायतार्थ गोहरणपटु कच्छजातीय काठियोंको लाये थे। कौरवों-की पराजयके बाद वे मालव प्रदेशमें रहने लगे थे।

जसावर—मथुराके पास अरिङ्गकी रहनेवाली एक राज-पूत जाति। इनकी संख्या बहुत कम ही है।

जसुरि (सं० पु०) जस्यते मुच्यते हन्यते अनेन जस-उरिन् जसि सहोरुरिन्। उण् २।७३। १ वज्र। २ व्यथित। (त्रि०) ३ उपक्षययुक्त, नुकसान किया हुआ, बिगड़ा हुआ।

जसुस्वामी (सं० पु०) एक भक्त वैष्णव। ये अन्तर्वेदी (वर्त्तमान—दोआब) में रहते थे। ये अत्यन्त दरिद्र

८ अनुत्तरोपपादक दशाङ्ग:, १० प्रश्नव्याकरण, ११ विपाक-श्रुत, १२ दृष्टिप्रवाद इन बारहोंको गणिपिटक कहते हैं।

गणीभूत (सं० त्रि०) जो किसी गण या पक्षमें स्थित हों, गणाक्रान्त।

गणेय (सं० त्रि०) संख्येय, गिनने योग्य, गिनती लायक।

गणेरु (सं० पु०) १ कर्णिकारवृक्ष। २ वेश्या। ३ हस्तिनी, मादा हाथी।

गणेरुका (सं० स्त्री०) गणेरुषु वेश्यासु कायति कै-क:। कुटनी, दूती।

गणेश (सं० पु०) गणानामीश: ६-तत्। पार्वतीनन्दन, गिरिजाके पुत्र। शनैश्वरकी दृष्टि पड़नेसे इनका सिर कट गया था-इस पर विष्णुने एक हाथीका सिर काट कर धड़ पर संयोजित कर दिया, इसी कारण इनका नाम गजानन पड़ा। गजानन देखो। महाबल क्षत्रियान्तकारी परशुराम क्षत्रियोंको विनाश कर शिव और पार्वतीको नमस्कार करनेके लिये कैलास गये। उस समय शिव और पार्वती गाढ़ी निद्रामें पड़े थे और गजानन द्वार पर पहरा देते थे जिससे उन्होंकी निद्रामें किसी प्रकारका विघ्न न हो। परशुरामने आकर कहा कि मैं शिव और पार्वतीसे भेंट करना चाहता हूं। किन्तु गणेशने उन्हें बाधा देते हुए कहा, प्रभो! अभी वे दोनों निद्राके वशीभूत हैं। कृपया थोड़ी देर विलम्ब जाइये, जागने पर उनसे साक्षात् कर सकते हैं। इस पर परशुरामजी सन्तुष्ट न हुए। एक दूसरेको मीठी बातोंसे कुछ काल तक समझानेकी चेष्टा करते रहे किन्तु निष्फल हुआ। तब परशुरामजी क्रोधित हो पड़े और गणेशको अवहेलना करते हुए भीतर जाने लगे। इस पर वे उनको हाथोंसे पकड़ समस्त त्रिभुवनमें घुमा कर छोड़ दिया। परशुरामने लज्जित हो कर अपने परशुको बाहर निकाला और उन पर निक्षेप किया। परशुकी आघातसे तो गणेशका विनाश नहीं हुआ लेकिन एक दांत जड़से उखड़ गया। इसी कारण गणेश एकदन्त कहलाते हैं। (ब्रह्मवैवर्त पु० गणेशखण्ड)

गणेश एक प्रसिद्ध लेखक थे। महाभारतमें लिखा है कि सत्यवतीनन्दन व्यासदेव योगवलसे विपुलायतन महाभारत मनही मन रचे थे, किन्तु लेखकके अभावसे जनसमाजमें उसका प्रचार न कर सके। इसलिये वे अत्यन्त चिन्तित और विपन्न हो गये। एक दिन हिरण्यगर्भसे उन्होंने अपने मनकी व्यथा कह सुनाई। इस पर हिरण्यगर्भने गणेशको लेखक करनेके लिये परामर्श किया। व्यासदेवने गणेशको लिखनेके लिये अनुरोध किया। गणेशने यह कहते हुवे लिखना अङ्गीकार किया कि यदि व्यासदेवको बोलनेमें विलम्ब हो जाय जिस कारण उनके दोषसे मेरी लेखनी विश्रान्त हो पड़े तो मैं कदापि लिख नहीं सकता। गणेशने लिखना आरम्भ किया और व्यास कहने लगे। जब व्यास देखते थे कि अब अधिक कहा नहीं जाता तो उसी समय दो एक कूट श्लोक रचना कर बोलते जाते थे। गणेशको इस कूट श्लोकका अर्थ शीघ्र समझमें न आनेके कारण लेखनीकी कुछ कालके लिये रुक जानी पड़ती थी इसी अवसर पर व्यास मनही मन बहुत श्लोक रचना कर डालते थे। (भारत १।१, ७०)

जब कोई कार्य आरम्भ करना होता है तो उस समय गणेशकी मूर्तिको स्मरण करनेसे वह कार्य निर्विघ्न समाप्त हो जाता है। इसी कारण गणेशको सिद्धिदाता भी कहा करते हैं। आस्तिक हिन्दु-लेखक सबसे पहले गणेशका नाम लिखा करते हैं। उन्होंका विश्वास है कि गणेश एक प्रसिद्ध लेखक और सिद्धिदाता हैं। इसी लिये इनका नाम पहले लिखनेसे किसी प्रकारके विघ्नकी सम्भावना नहीं रहती है।

स्कन्दपुराणके गणेशखण्डमें वक्रतुण्ड, कपिल, चिन्तामणि तथा विनायक प्रभृति रूपोंमें गणेशके अवतारकी कथा लिखी है। गणपति-तत्त्व नामक ग्रन्थके मतसे गणेश ही परब्रह्म, श्रुति-स्मृति वर्णित परमब्रह्म, परमेश्वर हैं। गणपति-तत्त्वमें लिखा है कि गणेश सर्वेश्वर, भूत, भविष्य और वर्तमानको हालत जाननेवाले हैं। मूर्तिभेदसे ये ही मस्तकके प्रतिपालक हैं, फिर समस्त जन्यपदार्थ इन्हींमें लय हो जाते हैं तथा ये ही प्रधान अर्थात् प्रकृति एवं क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्माके अधिपति हैं। इनकी आराधना करनेसे मुक्तिलाभ होता है। जिस तरह शक्तिके उपासक शाक्त और विष्णुके उपासक वैष्णव कहलाते उसी तरह जो गणपतिके उपासक हैं वे गाणपत्य कहलाते हैं। हिन्दू सिद्धिदाता गणेशको पूजा सबसे

जस्ता (हिं० पु०) मूल अष्ट धातुओंमेंसे एक धातु। इसका रंग कालापन लिए सफेद होता है। खानिसे निखालिस जस्ता नहीं निकलता। इसके साथ गन्धक, अक्सिजन आदि मिश्रित रहते हैं। भिन्न भिन्न देशोंमें इसके भिन्न भिन्न नाम हैं, जैसे—

देश	नाम
इंग्लैण्ड और फ्रान्स	जिङ्क (Zinc)
जर्मनी	जिङ्क (Zinc)
हलण्ड	स्पेल्टर
इटली और स्पेन	चिङ्क, जिङ्कों
रूसिया	श्पाटेर (Schpater)
नेपाल	दस्त
फारस	कलखुवरो (Oxide of Zinc)
तामिल	मदल तुतम, तातानगम्, वुल्ले तुतम्
तेलगू	तुतम
मलय	तम्बग पुटी
ब्रह्म	थौट
दाक्षिणात्य	सङ्ग् बुसरी, सफेद तूंत (Sulphate Zinc)
पञ्जाब	जस्त, जसद, सफेदमिश्रो
बङ्गाल	दस्ता (Impure Calamina)

संस्कृतमें इसको यशद और हिन्दी जस्ता वा जस्त कहते हैं। खानसे गन्धकयुक्त जो जस्ता निकलता है, वह अंग्रेजोंमें Sulphide of Zinc अथवा Zinc blende नामसे परिचित है एवं जो अक्सिजन-मिश्रित निकलता है वह Zincite नामसे प्रसिद्ध है।

भारतवर्षके मद्राज, बङ्गाल, राजपूताना, हिमालय, पञ्जाब आदि प्रदेशों और अफगानिस्तान आदि देशोंमें जस्ता निकलता है।

हजारीबाग जिलेके महावांक और बड़गुण्डकी खानसे, तथा संथाल परगनेमें बेलकी नामक स्थानमें जो गन्धक मिश्रित जस्ता (blende) निकलता है, उसमें भी सीसा और तांबा मिला रहता है।

राजपुतानामें उदयपुर राज्यके जवार नामक स्थानसे पहले जस्ता निकालता था। टाड साहबके राजस्थानके पढ़नेसे मालूम होता है कि, किसी समय उक्त स्थानकी खानसे २२००० रुपये राजकी वसूल होती थी। परन्तु 'राजपुताना-गजटियर' में यह बात नहीं लिखी है।

कप्तान बुक साहबका कहना है कि, खानमें ३-४ इञ्च मोटी धातु-शिराएं होती हैं। देशीय लोग उन्हें इकट्ठी करते हैं और चूरा करके आग पर रख कर जस्ता बनाते हैं। ८-९ इञ्च ऊंची घड़िया (मुषा)में उक्त चूराको रख कर उसका मुंह बंद कर देते हैं। २-३ घण्टेमें वह गल जाता है। १८१२-१३ ई०में दुर्भिक्षके समय इन खानोंका काम बंद हो गया था।

हिमालय और पञ्जाबके शिगरी नामक स्थानमें काफी जस्ता निकलता है। ऐण्टिमनि (अञ्जन)-की खानके पास ही जस्ता रहता है। गढ़वालके अन्तर्गत बेलाकी ताम्र-खनि और सिमलाके अन्तर्गत सबाथूकी सीसाकी खानसे तथा काश्मीरमें भी जस्ता उत्पन्न होता है। जौनसार प्रदेशमें गन्धक मिश्रित जस्ताकी खान है।

अफगानिस्तानमें घोरबंद उपत्यकाके उत्तर प्रदेशमें इसकी काफी खानें हैं। स्थानीय लोग इसको जाक (Sulphate of zinc) कहते हैं। यह किसीमें व्यवहृत होता है या नहीं, इस बातका अभी तक पता नहीं लगा।

ब्रह्मदेशके अधीन टाभर और मारगुइ द्वीपमें जस्ता पाया जाता है, परन्तु यह नहीं मालूम हुआ कि उत्तर-ब्रह्ममें मिलता है या नहीं।

सुश्रुतमें औषधके लिए जस्ताका व्यवहार नहीं दीख पड़ता। भावप्रकाशमें रङ्ग-शोधन-प्रणालीकी भांति जस्ता वा खर्पर-शोधन प्रणालीका भी कथन है। मूत्र सम्बन्धी वा मूत्र यान्त्रिक पीड़ामें तथा श्वासपीड़ामें भावप्रकाशमें जस्ताका व्यवहार बतलाया है। युक्तप्रान्तमें हिन्दू हकीम लोग पुरातन ज्वर, गौण उपदंश, पुरातन मेह, प्रदर आदि रोगोंमें जस्ता काममें लाते हैं। मुसलमान हकीम घाव और चक्षुके क्षतमें तथा दर्द और सूजनमें यूरोपीय डाक्टरोंकी तरह जस्ताका व्यवहार करते हैं। तामिलके वैद्यगण मिट्टीकी घड़ियामें मनसावृक्षकी जातिके एक वृक्ष (Euphorbia nerrifolia) के पत्तेके साथ जस्ताको गलाते हैं। दोनोंके गल जानेसे उसमें आग लग जाती है। उसकी भस्मको दो तीन बार अग्निमें शोधन करके मेह, शुक्रक्षय और अर्श रोगमें

पश्चिम-उत्तर अञ्चलमें वक्रतुण्ड और ढुण्ढराज ये दोनों गणेश अति प्रसिद्ध हैं। ब्रह्मवैवर्तपुराणके मतसे—

ओं श्रीं ह्रीं ह्रीं गणेश्वराय ब्रह्मरूपाय सर्वसिद्धि प्रदेशाय विघ्नेशाय नमो नमः। इसी मन्त्रसे गणेशपूजा करनी उचित है। तुलसीपत्र द्वारा गणेशपूजा करना निषिद्ध मानी जाती है। गणेशके इस मन्त्रको पचास लाख बार जपनेसे मंत्रकी सिद्धि होती है। गणेशपूजा शेष होने पर स्तवपाठ करना चाहिये। गणेशका स्तव, यथा—

श्रीविष्णुरुवाच।

"ईश! त्वां स्तोतुमिच्छामि ब्रह्मज्योतिः सनातनम्।
निरूपितुमशक्तोऽहं अनुरूपमनूहकम्।
प्रवरं सर्वदेवानां सिद्धानां योगिनां गुरुम्।
ब्रह्मस्वरूपं सर्वेशं ज्ञानराशिस्वरूपिणम्॥
अव्यक्तमक्षरं नित्यं सत्यमात्मस्वरूपिणम्।
वायुतुल्यातिनिर्लिप्तं चाक्षतं सर्वसाक्षिणम्॥
संसारार्णवपारे च मायापोते सुदुर्लभम्।
कर्णधारस्वरूपञ्च भक्तानुग्रहकारकम्॥
वरं वरेण्यं वरदं वरदानामपीश्वरम्।
सिद्धं सिद्धिस्वरूपञ्च सिद्धिदं सिद्धिसाधनम्॥
ध्यानातिरिक्तं ध्येयञ्च ध्यानासाध्यञ्च धार्मिकम्।
धर्मस्वरूपं धर्मज्ञं धर्माधर्मफलप्रदम्॥
बीजं संसारवृक्षाणामङ्कुरञ्च तदाश्रयम्।
स्त्रीपुंनपुंसकानाञ्च रूपमेतदतीन्द्रियम्॥
सर्वाद्यमग्रपूज्यञ्च प्राकृतं प्रकृतेः परम्।
त्वां स्तोतुमक्षमोऽनन्तः सहस्रवदनेन च॥
न क्षमः पञ्चवक्त्रश्च न क्षमश्चतुराननः।
सरस्वती न शक्ता च न शक्तोऽहं तव स्तुतौ॥
इत्येवं स्तवनं कृत्वा सुरेशं सुरसंसदि।
सुरेशश्च सुरैः सार्द्धं विरराम रमापतिः॥
इदं विष्णुकृतं स्तोत्रं गणेशस्य च यः पठेत्॥
सायं प्रातश्च मध्याह्ने भक्तियुक्तः समाहितः॥
तद्विघ्ननिघ्नं कुरुते विघ्नेशः सततं सुने।
वर्द्धयेत् सर्वकल्याणं कल्याणजनकः सदा॥
यात्राकाले पठित्वा तु यो याति भक्तिपूर्वकम्।
तस्य सर्वाभीष्टसिद्धिर्भवत्येव न संशयः॥
तेन दृष्टञ्च दुःस्वप्नं सुस्वप्नमुपजायते।
कदापि न भवेत् तस्य ग्रहपीड़ा च दारुणा॥
भवेद् विनाशः शत्रूणां बन्धूनाञ्च विवर्द्धनम्।
शश्वद् विघ्नविनाशश्च शश्वत् सम्पद्विवर्द्धनम्॥
स्थिरा भवेद् गृहे लक्ष्मीः पुत्रपौत्रविवर्द्धिनी।
सर्वैश्वर्यमिह प्राप्य ह्यन्ते विष्णुपदं लभेत्॥
फलञ्चापि च तीर्थानां यज्ञानां यद्भवेत् ध्रुवम्।
महतां सर्वदानानां श्रीगणेशप्रसादतः॥
इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे गणेशखण्डे विष्णुकृतं गणेशस्तोत्रं॥"

गणेशपूजा सिर्फ भारतवर्षमें ही नहीं होती वरं और भी देशोंमें यथा नेपाल, चीन, जापान और मङ्गोलियामें होती है। नेपालके हिन्दू और बौद्धावलम्बियोंको पूरा विश्वास है कि गणेशकी पूजासे अभीष्ट सिद्ध होता है। नेपालमें पशुपतिनाथ मन्दिरके उत्तरमें एक प्राचीन तथा प्रसिद्ध गणेशमन्दिर है जिसे अशोककी लडकी चारुमतीने निर्माण कराया है। यवद्वीपमें भी गणेशके कई एक स्वरूपकी मूर्तियोंकी पूजा होती है। मन्त्रमहोदधिमें गणेशका ध्यान यों है—

"विषाणाङ्कुशाक्षसूत्रञ्च दधानं करैर्मोदकं पुष्करेण।
स्वपत्न्या युतं हेमभूषाभराढ्यं गणेशं समुद्यद्दिनेशाभमीडे।"

गणेशके हाथोंमें पाश, अंकुश, पद्म और परशु हैं और सूड़के अग्रभाग पर मिठाइयां हैं। ये अपने साथ सह-वासिनी लिये हुए हैं और अपने सुवर्ण अलङ्कारोंसे ये सूर्य-के जैसे दीखते हैं।

२ एक विख्यात ज्योतिर्विद्। इन्होंने आपप्रश्न-जातक-कल्पलता, तिथिचिन्तामणि-पञ्चाङ्गसाधन, तिथि-चिन्तामणि, सारणी, पाटीटीका, भावाध्याय, रत्नावली पद्धति, स्त्रीजातक प्रभृति संस्कृत ज्योतिषको रचना की है। ३ हिरण्यकेशिकारिकाके रचयिता। ४ पिष्टपशु-सरणी और महिषोत्सर्गविधि नामक धर्मशास्त्र-संग्रहकार। ५ भागवततात्पर्यतोषिणीके रचयिता। ६ रसतरङ्गिणीके रसोदधि नामका टीकाकार। ७ स्मृतिचन्द्रोदय-प्रणेता। ८ कृष्णभट्टके पुत्र, ऋग्वेद पाठानुक्रमणदीपिका-के रचयिता। ९ गोपालके पुत्र। इन्होंने १६१४ ई०को जातकालङ्कार नामक संस्कृत ग्रन्थको रचना की है। १० ढुण्ढिराजके पुत्र। इन्होंने गणितमञ्जरी, ताजिकचन्द्रिका-विनोद, ताजिकभूषण प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ प्रणयन किये हैं। ११ बल्लालसेनके पुत्र, शिवतोषिणी नामक लिङ्गपुराणके टीकाकार। १२ रामदेवके पुत्र, नालोदय टीका-रचयिता। १३ बनारसके एक हिन्दी कवि। यह

जो छत बनानेके काममें आती हैं। पानीके नल और टेलिग्राफके तार आदि पर भी इस हीको कलई चढ़ती है। इसको गला कर नाना प्रकारके बरतन, जरूरी चीजें, मूर्ति पुतली आदि भी बनाई जाती हैं। इससे एक तरहका तेलाक्त सफेद रंग भी बनता है जो लोहे आदिकी चीजों पर चढ़ाया जाता है। इस देशमें मुसलमानोंके व्यवहारार्थं कम कीमतके बरतन भी इसीसे बनते हैं, जैसे रकाबी, गिलास, हुक्का आदि। स्पेलटर वा जस्ता की बड़ी बड़ी चद्दरोंसे पनालेके नल आदि भी बनते हैं। टीन की जगह भी ज्यादा टिकाऊ बनानेके लिए जस्ता व्यवहृत होता है। जहाजोंके नीचे जस्ताकी चद्दर लगाई जाती है। सांचेमें ढाल कर भी इससे नाना प्रकार की चीजें बनाई जाती हैं। अमेरिकाके युक्तराज्यमें सबसे अधिक जस्ता उत्पन्न होता है।

यूरोपमें १८वीं शताब्दीसे पहले जस्ता उत्पन्न नहीं होता था। ष्ट्राबोके ग्रन्थमें False silver नामकी एक धातुका उल्लेख है। १८वीं शताब्दी तक पुर्त्तगीज लोग भारतवर्ष और चीनसे स्पेलटर और तुतेनाग नामक जस्ता ले जाकर यूरोपमें बेचते थे। उस समय पीतल बनानेके सिवा और किसी कार्यमें इसका व्यवहार न होता था। और न इस बातको कोई जानते ही थे कि जस्ता एक स्वतन्त्र धातु है। १८०५ ई०में सिलभिष्टर नामक एक व्यक्तिने पहले पहल जस्ताका पेटेण्ट प्राप्त किया। अमेरिकाके अन्तर्गत निउजारसी नामक स्थान की Red Zinc वा लाल-जस्तकी खान ही जगत्प्रसिद्ध थी।

जस्ताकी सहायतासे Zincograph नामक एक प्रकारकी चित्रप्रस्तत-प्रणाली उद्भावित हुई है, जिससे कागज पर फोटोग्राफकी तरह तसवीर बन जाती है। लिथोग्राफमें जैसे पत्थर पर तसवीर बनाई जाती है, वैसे ही इसमें जिङ्कप्लेट पर तसवीर खींची जाती है। Zinc Ethyl नामक एक प्रकार की तरल धातु भी इसीसे उत्पन्न होती है। यह हवाके लगते ही जलने लगती है। और उसमेंसे बहुत कड़ी गन्ध निकला करती है। फाङ्कलेण्ड नामके किसी व्यक्तिने इसे पहले पहल बनाया था।

डाक्टर लोग जस्तासे नाना प्रकार तरल, चूर्ण और घृतवत् पदार्थ बना कर तरह तरहके रोगोंमें उनका व्यवहार करते हैं। प्रायः सब ही देशोंके चिकित्साशास्त्रोंमें जस्ता की रोगोपशमता शक्तिका उल्लेख पाया जाता है।

जस्वन् (सं० त्रि०) जस-वनिप्। उपचयकर्त्ता, बिगाड़ने या नाश करने वाला।

जस्सो—मध्यभारत एजेन्सीके बघेलखण्ड पोलिटिकल चार्जकी एक सनदयाफ्ता रियासत। यह अक्षा० २४ २०´ एवं २४´ २८´ उ० और देशा० ८०´ २८´ तथा ८०´ ४०´ पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ७२ वर्गमील है। इसके उत्तर, पूर्व तथा दक्षिण नागोड़ राज्य और पश्चिम अजयगढ़ राज्य है। लोकसंख्या कोई ७२०८ है। जागीरदार बुंदेला राजपूत हैं। १९ वीं शताब्दीके आदि भागमें यह राज्य बांदाके अली बहादुरने अधिकार किया था। अंगरेजी अधिकार होने पर १८१६ ई० को मूर्तिसिंहको अलग सनद दी गयी। इसमें ६० गांव बसे हैं। कुल आमदनी २३००० रु० है।

राजधानी जस्सो अक्षा० २४´ ३०´ उ० और देशा० ८०´ ३०´ पू०में एक उम्दा झील किनारे विद्यमान है। कहते हैं, यह नाम यशोश्वरी नगर शब्दका संक्षिप्त रूप है। विभिन्न समयमें इसको महेन्द्री नगर, अधरपुरी और हरदीनगर कहा जाता रहा है। नगरमें एक छोटा मन्दिर, आश्चर्यमय लिङ्ग और कई एक सतीचौरा हैं। इसके चतुःपार्श्वमें जैन तथा हिन्दू कीर्तियोंका ध्वंसावशेष पड़ा है।

जह (हिं० क्रि० वि०) जहां देखो।

जहक (सं० पु०) जहाति-परित्यजति हा क हा-कन् द्वित्वं। १ काल, समय। (त्रि०) २ त्यागकारक, छोड़नेवाला। ३ निर्मोह, जिसके मनमें मोह या ममता न हो। (स्त्री०) टाप्। ४ गात्रसङ्कोचनी, वह जो शरीरको सिकुड़ाती है।

जहतिया (हिं पु०) वह जो भूमिका कर वसूल करता हो, जगात (चुंगी) उगानेवाला।

जहत्स्वार्था (सं० स्त्री०) जहत्स्वार्थीया। लक्षणाभेद एक

घरके बड़े बड़े और लड़के कहार, डोली और वाद्यकर साथ ले करके बाजार जाते और वहां मट्टीकी एक गणपति मूर्ति क्रय कर और डोलीमें रख करके वाद्य करते करते उसको गृह ले आते हैं। बड़े ग्रामदर्नियोंमें बहुतसे लोगोंके घर पर ही मूर्ति बना करती है। कहीं कहीं थालीमें चावलके आटेसे ही गणेशमूर्ति अङ्कित कर ली जाती है। भिन्न भिन्न घरोंका अलग अलग नियम है। मूर्ति प्रायः चतुर्भुज होती है। बाजारमें जो मूर्तियां बिकतीं, एक श्रेणीके ब्राह्मणके हाथकी बनी रहती है। देवमूर्तिनिर्माण ही उनका व्यवसाय है। बाजारसे गणेशमूर्ति घर पहुंचने पर गृहिणी प्रदीप ले करके आरति उतारती और लोपो पोती दालानमें ले जा करके सिंहासन पर उसको स्थापन करती है। फिर पुरोहित आ करके यथाविहित पूजादि करते हैं। गणेशका वाहन इन्दुर भी निकट ही रहता है। पुरोहितकी पूजाके पीछे गृहस्वामी घरके सब लोगोंमें मिल करके उच्चःस्वरसे गणपतिदेवकी महिमाको गान करते हैं। इसी प्रकार प्रातः और साय कालको गान होता है। सवेरे सब लोग चावलके आटेसे बने लड्डू आहार करते हैं। रातको उसका कुछ अंश इन्दुरोको खिलाया जाता है। प्रवाद है—एक दिन गणपति मूषिक पर चढ़ करके चलते चलते गिर पड़े थे आकाशसे चन्द्र यह देख करके हंस पड़े। गणपतिने उस पर क्रुद्ध हो करके चन्द्रको अभिसम्पात किया था—कोई अब तुम्हें न देखेगा। चन्द्रदेव अपराध स्वीकार करके शाप मोचनके लिये प्रार्थना करने लगे। गणपति तुष्ट हो गये, परन्तु उनका वाक्य व्यर्थ होनेवाला न था। इसीसे उन्होंने कहा कि वत्सरमें अन्ततः एक दिन लोग चन्द्रका मुख न देखेंगे। सुतरां गणपतिके जन्मदिवसको नष्टचन्द्र होता है। उस दिन कोई उसके प्रति दृष्टिपात नहीं करता। चतुर्थी व्रतके पीछे कोई १ दिन कोई २ दिन और कोई २१ दिन पर्यन्त गणपति की प्रतिमाकी पूजा करता है। प्रातः और सन्ध्याको यह पूजा होती है। विसर्जनके दिन फिर कहार पालकी ले आते हैं। वाद्य बराबर हुआ करता है। पुरोहित आ करके गणेशकी पूजा और गृहस्थके मङ्गल तथा बालककी विद्याप्राप्तिके लिये प्रार्थना करते हैं। उसके पीछे विसर्जन होता है। विसर्जनसे पूर्व गृहिणी आ करके प्रदीप जला आरति उतार यात्राके अर्थ हाथमें दधि डाल देवमूर्तिको पालकी पर बैठा देती है। पालकीको नाना पुष्पोंसे सुशोभित करके निकटस्थ नदी वा ह्रदके कूल पर ले जाते हैं। जलके निकट डोली रख करके देवमूर्तिको निकाल एक बार प्रदीप ले आरति की जाती है। फिर सब लोग रोते रोते देवमूर्तिको जलमें विसर्जन करते हैं। उसकी भावना करके दुःख शोकसे कातर हो सबके सब घर चले आते, फिर एक वत्सर पीछे वह देखनेको मिलेगा या नहीं।

भाद्रपदकी पञ्चमी अर्थात् गणेश-पूजाके परदिनको स्त्रियां 'ससम्भ्रात' वा सात भाइयोंके सम्मानार्थ व्रत पालन करती हैं। उस दिन वे तृणज वा मानवहस्तप्रस्तुत कोई द्रव्य वह भक्षण नहीं करतीं। सभी फलमूल आहार करके दिन यापन करती हैं। भाद्रपदीय अष्टमी और नवमीको गणेशजननी गौरीका व्रत होता है। उस दिन घरमें चन्दनका आलिम्पन लगाते और गृहद्वारको वन्दनवारसे सजाते हैं। तेड़दा वृक्षको वस्त्रमें लपेट जा नवपत्रिका बनती, वही गौरीकी प्रतिमा ठहरती है। इसको कोई बालिका गोदमें ले लेती है। बालिकाके हाथमें एक पात्र, एक प्रज्वलित दीप, कई एक शस्य और सिन्दूरका एक पत्ता रहता है। एक बालक घण्टा बजाते बजाते साथ चला जाता है। गृहस्थ रमणी उस बालिकाको घरमें ले जा करके बैठालती और प्रदीप जला करके गौरी देवीको आरति उतारती हैं। फिर उसको एक एक फल खिला करके कहती है—लक्ष्मी, लक्ष्मी। क्या तुम आयी हो। बालिकाके उत्तरमें कहनेसे कि वह आयी थीं, प्रश्न होता है—तुम क्या लायी हो बालिका इस पर बोल उठती है—घोड़ा, हाथी, सैन्य और राशि राशि धन जिससे तुम्हारा घर और यह नगर परिपूर्ण हो जावेगा। इसी प्रकार एक एक करके सब घरोंमें जा शेष पर गौरीको मध्यस्थ कमरेमें ले जा करके निर्दिष्ट स्थान पर दीवारमें ठांस करके रखा जाता है। सन्ध्याके पीछे नाना विध फल, दुग्ध और मिष्टान्न भोग लगता है। फिर रात चढ़ने पर नानाविध अलङ्कारोंसे गौरीको

नाम महम्मद नूरउद्दीन सलीम मिर्जा रखा। बादशाह अकबरने इनके जन्मके उपलक्षमें विविध उत्सव आदि किये थे। यह पुत्र भी सम्राट्के अत्यन्त प्रिय थे।

१५८५ ई०में सलीमके साथ आमेरके राजा भगवानदास की कन्या और प्रख्यात राजा मानसिंहकी भगिनी जोधाबाईका विवाह हुआ।

१५८७ ई० में रायसिंहने कुमार सलीमके साथ अपनी कन्याका विवाह कर दिया।

बादशाहने, बचपनसे सलीमको विविध शिक्षाएं दी थीं और उन्हें सच्चरित्र बनानेके लिए पूरी तौरसे कोशिश की थी। परन्तु बादशाह की कोशिश विशेष कार्यकारी नहीं हुई। सलीम तरह तरह की कुक्रियाओंमें आसक्त हो गये। इन्होंने युद्धविद्या सीख ली थी। बादशाहने इन्हें राजा मानसिंहके साथ वीरकेशरी महाराणा प्रताप सिंहके विरुद्ध प्रसिद्ध हल्दीघाटके युद्धमें भेजा था। इस युद्धसे ये बड़ी मुश्किलसे लौट पाये थे।

अकबर शेष अवस्थामें अपने प्रियपुत्र सलीमके लिए मानसिक कष्टमें पीड़ित हुए थे, पर अन्तमें सलीमने भी अपने अपराधको समझ कर पिताके पास जा मुआफी मांगी थी। १६०५ ई० में मृत्युशय्या पर पड़े हुए अकबरने पुत्रको बुलाया और राज्यके प्रधान प्रधान अमीर उमरावोंके सामने सलीमको सम्राट्-पद पर मनोनीत कर उन्हें राजकीय परिच्छद, मुकुट और तलवारसे सुसज्जित करनेके लिए अनुमति दी।

१०१४ हिजरी, ८ जुमादसानी (१६०५ ई०, १२ अक्टोबर) बृहस्पतिवारको ३८ वर्ष की उम्रमें सलीमने आगरेके किलेमें पितृसिंहासन पर बैठ कर 'जहांगीर' अर्थात् 'विश्वविजयी' उपाधि पाई। आगरेके किलेमें देहली-दरवाजेके एक पत्थर पर जहांगीरकी अभिषेक-घटना लिखी हुई है। इसकी अन्तिम पंक्तिमें इस प्रकार लिखा है—"हमारे बादशाह जहांगीर दुनियांके बादशाह हों, १०१४।" जहांगीरके अभिषेकके उपलक्षमें शाह हों, १०१४।" जहांगीरके अभिषेकके उपलक्षमें जिन्होंने आनन्दसूचक कविताएं बनाई थीं, उन कवियोंको तथा गरीबोंको बहुत धन दिया गया था।

जहांगीरने सिंहासन पर बैठ कर यह घोषणा की कि, वे निरपेक्ष भावसे और शान्तिमयी राजनीति पर राज्यशासन करेंगे। किन्तु उनके असत् चरित्रने इस विषयमें प्रधान अन्तरायका काम किया। आन्तरिक इच्छा रहने पर भी वे सुशृङ्खलतासे राज्य शासन न कर सके थे। परन्तु इतना होनेपर भी अकबर द्वारा प्रतिष्ठित राज्य की नींव उस समय तक खूब मजबूत थी। कुछ भी हो, जहांगीरने सम्राट् हो कर सुशासनका कुछ आभास दिया।

पहले हर एक की तकदीर इतनी जोरदार नहीं होती थी कि, जिससे वे बादशाहके दर्शन पासकें; कोई भी विचारका प्रार्थी सम्राट्के सामने नहीं पहुंच सकता था। कर्मचारियोंको डालियां या उत्कोच बिना दिये कोई भी अपनी फरियादको बादशाहके कानों तक न पहुंचा सकता था। इस दिक्कतको दूर करनेके लिए तथा जिससे सब कोई सहजमें सुविचारको पा सकें, इसलिए नवीन सम्राट् जहांगीरने एक सोने की जंजीर बनवाई। इसके एक छोरका सम्बन्ध राजप्रासादके प्राचीरके साथ और दूसरे छोरका जमुना किनारेके एक पत्थरसे था। यह जंजीर ३० गज लम्बी थी और इसमें सोनेके ६० घण्टे बंधे हुए थे। ये घण्टे बादशाहके घरके घण्टोंसे संयुक्त थे।

यदि कोई आदमी इस जंजीरको हिलाकर घण्टा बजाता, तो उसी समय बादशाहको मालूम हो जाता और वे सामने आ जाते थे। हर एक आदमी घण्टेको हिलाकर बादशाहके पास विचार प्रार्थना कर सकता था। इसलिए कर्मचारी गण उत्पीड़ित व्यक्तियोंके पाससे किसी तरहका उत्कोच न ले सकते थे और उत्पीड़ित प्रजा कर्मचारियों की इच्छाके विरुद्ध भी सम्राट्के सामने उपस्थित हो सकते थे।

बादशाह जहांगीरने कर वसूल करनेके अनेक दोषोंका संस्कार किया। उन्होंने समघा और मीरबाड़ी नामके दो कर बिल्कुल ही उठा दिये। इसके सिवा जायगीरदार लोग प्रजासे जो अन्याय कर लिया करते थे, वे भी उठा दिये। लोकालयसे दूरवर्ती मार्गमें जहां कि चोर और डकैतोंका डर रहता था, उन स्थानोंमें सराय बनवाने और कुएं खुदवानेके लिए जागीरदारोंको हुक्म दिया। और खालिसा जमीनके निकटवर्ती स्थानपर

गण्ड (सं॰ पु॰) गडि वदनैकदेशे, गड़ि-अच् । यद्वा गम ड । १ कपोल, गाल । २ हस्तिकपोल, हाथीकी कनपटी । इसका संस्कृत पर्याय—कट, करट, कटक और हस्तिगण्डक है । ३ गण्डक, गैंडा । ४ वीथ्यङ्ग । ५ पिटक । ६ चिह्न, निशान् । ७ वीर, बहादुर । ८ अश्वभूषण, घोड़े का जेवर ९ बुद्बुद, बुलबुला । १० स्फोटक, फोड़ा । ११ ग्रन्थि, गाठ । १२ विष्कुम्भ आदि योगोंके मध्य दशम योग ।

कोष्ठीप्रदीपके मतसे इस योगमें जन्म लेनेसे मनुष्य स्वार्थपर, दूसरेका अनिष्टकारी, अतिशय धूर्त, कुरूप और आत्मीयवर्गकी यन्त्रणाका कारण होता है । उसके दोनों गंड अपेक्षाकृत स्थूल और कभी कुछ बड़े बड़े होते हैं

१३ अश्विनी प्रभृति कई एक नक्षत्रोंका दुष्ट अंश । इस विषयमें ज्योतिविदोंका मतभेद लक्षित होता—किस नक्षत्रके कौन अंशको गंड कहते और उसका क्या फल समझते हैं ।

अश्विन, मघा और मूला नक्षत्रके प्रथम ३ दंड और रेवती, अश्लेषा तथा ज्येष्ठा नक्षत्रके शेष ५ दंड गंड कहलाते हैं । इसमें मूला तथा ज्येष्ठा नक्षत्रके गंडको दिवागंड, मघा एवं अश्लेषाके गंडको रात्रिगंड और रेवती और अश्विनीके गंडको सन्ध्यागंड कहते हैं । गंडयोगमें जात बालकका प्रायः मृत्यु होता है । उसके बच जानेसे पिता वा माताका मृत्यु निश्चित है । किन्तु दिवागंडमें बालिका और रात्रिगंडमें बालकका जन्म होनेसे किसी प्रकारका विघ्न नहीं पड़ता । मूलाके प्रथम पादमें अर्थात् गंडके मध्य बालक अथवा बालिकाका जन्म होनेसे पिताका विनाश होता है । इसी प्रकार मूलाके द्वितीय पादमें जननीको भयानक रोग, तृतीयपादमें धनहानि और चतुर्थ पादमें सम्पत्तिलाभ है । अश्लेषा नक्षत्रमें इसके विपरीत समझना चाहिये । गंडयोगमें जन्म होनेसे बालक वा बालिकाको परित्याग करना ही उचित है । यदि स्नेहवशतः उसको परित्याग न किया जा सके, पिताको चाहिये कि ६ मास तक उसका मुँह न देखे । कारण मुख देख लेनेसे विपद् पड़नेकी सम्भावना है । ऐसे स्थलमें कुङ्कुम, चन्दन, कुष्ठ और गोरोचनादृतके साथ मिला चार जलपूर्ण कलसियोंसे बालकको स्नान कराना चाहिये । सहस्राक्ष मन्त्रसे स्नान कराना पड़ता है । बालक दिवागंड-जात होनेसे अपने पिता, रात्रिगंड-जात होनेसे जननी और सन्ध्यागंड जात होनेसे पिता माता दोनोंके साथ नहलाया जाता है । घृतपूर्ण कांस्यपात्र, सुवर्ण और धेनु ग्रह विप्रको दान करते और ग्रहगणको पूजते हैं । इसी प्रकार शान्ति करनेसे गंडदोष मिटता है । (ज्योतिषतत्त्व)

मुहूर्तचिन्तामणि और पीयूषधारा ग्रन्थमें लिखा है कि नारदके मतानुसार ज्येष्ठा नक्षत्रके शेष चार और मूला नक्षत्रके प्रथम चार कुल आठ दण्ड ही गंड कहलाते हैं । इसी प्रकार अश्लेषाके शेष चार और मघाके प्रथम चार दंड भी गंड हैं । वशिष्ठके मतमें ज्येष्ठा नक्षत्रका शेष एक और मूलाके प्रथम दो—तीन दण्डोंका ही नाम गण्ड है । बृहस्पतिने ज्येष्ठाके शेष अर्ध और मूलाके प्रथम अर्धदण्डकी गंड-जैसा निर्देश किया है । किसी किसी ज्योतिर्विदके मतमें मूलाके प्रथम आठ और ज्येष्ठाके शेष पांच—१३ दण्डका ही नाम गंड है । पीयूषधाराको देखते नारदका ही मत ग्राह्य है । गंडमें बालक वा बालिकाको जन्म होनेसे परित्याग करते अथवा ८ वत्सर पर्यन्त पिता उसका मुख नहीं देखते ।

१४ कोई जाति । गोंड देखो ।

गण्डक (सं॰ पु॰) गंड स्वार्थे कन् । १ गैंडा । २ ज्योतिर्विद्याविशेष । ३ अवच्छेद, भेद । ४ भूषण, अलङ्कार, जेवर । ५ दुष्ट, मूर्ख । ६ संख्या प्रभेद । ७ देशभेद, वह देश जिस होकर गंडकी नदी बहती है । ८ छन्दोभेद, एक छन्दका नाम । ९ ग्रंथि, गांठ । १० स्फोटक रोगविशेष, एक रोग जिसमें बहुतसे फोड़े निकलते हैं ।

"अनेकवैशाखातमिति शनङ्गगात्रगण्डकम् ।" (कादम्बरी)

११ नदीविशेष । गण्डकी देखो । १२ अन्तराय, विघ्न, बाधा ।

गण्डकारी (सं॰ स्त्री॰) गण्डः भग्नास्थिग्रंथि करोति संयोजयति । गंड-कृ-अण् ङीप् । १ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़ । २ गड्डुकमत्स्य, एक मछली । ३ वराहक्रान्ता, वराहीकन्द । ४ श्वेतलज्जालुका, लज्जावती ।

गण्डकाली (सं॰ स्त्री॰) गंड-कृ-अण् ङीप् यद्वा गंडेषु ग्रंथिषु काली यस्या, बहुव्री॰ । १ काकजङ्घा । २ शल्लकी वृक्ष । ३ खदिरीवृक्ष, खैरका पेड़ ।

मीर्जा हुसेन दिलावर बेगखां, हुसेनबेग दीवान और नूरउद्दीन कुलिने नगरकी रक्षाके लिए सैन्यसमावेश किया था। इधर सैयद खांने चन्द्रभागा नदीके किनारे डेरे डाल दिये थे, किन्तु खुशरूके विद्रोही होनेका सम्वाद सुन कर वे भी तुरंत लाहोरकी तरफ चल दिये और शीघ्र ही बादशाहको सेनाके साथ जा मिले। उधर जहांगीरने आगरा कुलीके उद्यानमें डेरे डालनेके उपरान्त सुना कि उसी रातको खुसरू सम्राट्-सैन्य पर आक्रमण करेंगे। कुछ भी हो बादशाहने सेनो शेख फरीदखांको अधीनतामें लाहोरकी तरफ भेज दी।

इस सेनाके नगरके सामने पहुंचते ही खुशरूके साथ घमसान युद्ध होने लगा। आखिर खुशरू परास्त हो कर भाग गये। बादशाह फरीदको पहले भेज कर दूसरे दिन जब खुद अग्रसर हो रहे थे, उस समय रास्तेमें उन्हें विजयवार्त्ता प्राप्त हुई।

गोविन्दवाल-सेतुको पार कर किञ्चित् अग्रसर होने पर शमशेर नामक तोशाखानाके एक नौकरने आ कर बादशाहको विजयसम्वाद सुनाया, इस पर बादशाहने उसको खुशखबरखांकी उपाधि प्रदान की।

जहांगीरने खुशरूको वशमें लानेके लिए पहले मीर-जुमान् उद्-दीन को भेजा था; उन्होंने इस समय आ कर कहा कि, खुशरूका सैन्यबल इतना अधिक और सेना इतनी साहसी है कि, फरीदकी थोड़ी सेना उनको किसी तरह भी परास्त न कर सकी। बादशाहको पहले तो शमशेरकी बात पर अविश्वास हुआ; किन्तु पीछे खुशरूकी सवारीके आ जानेसे उन्होंने विशेष आनन्द प्रकट किया। इस युद्धमें फरीदने विशेष विक्रमके साथ युद्ध किया था। सैफखांके शरीर अठारह जगह घायल हुआ था।

खुशरू पराजित हो कर काबुलकी तरफ भाग गये। बादशाहने उनको पकड़ लानेके लिए महावतखां और अलीबेगको भेजा। खुशरू जब वितस्तानदीके किनारे उपस्थित हुए, तब उनके अनुचरोंमें दो मत हो गये। कोई कोई तो यह कहने लगे कि, हिन्दुस्तानमें ही रह कर राज्यमें अधम मचाना ठीक है और कोई काबुलको चलनेकी कहने लगे। खुशरूने हुसेनबेगके मतानुसार काबुल जाना ही पसन्द किया, जिससे हिन्दुस्तानी और अफगानिस्तानियोंने उनका साथ छोड़ दिया।

खुशरू शाहपुर नामक स्थानसे पार न हो सकनेके कारण शाहदराको चल दिये। इनके पराजित होनेसे पहले ही पञ्जाबके जागीरदारों और नौकाके रक्षकोंको खुशरूके विषयमें सावधान रहनेके लिए आदेश दे दिया गया था। रात्रिको जिस समय खुशरू पार हो रहे थे, उस समय शाहदराके एक चौधरीने उन्हें देख कर बादशाहके हुक्मकी उन्हें याद दिलाई और नाव रोक ली। इस सम्वादको पाते ही उस घाटके अध्यक्ष अबुल कासिमखां कुछ अनुचरों और अश्वारोहियोंके साथ वहां आ पहुंचे। हुमायुन् बेगने चार नावोंको ले कर पार होनेकी कोशिश की, परन्तु एक नाव बालूमें अड़ गई।

बादशाह—कुमार जंजीरोंसे बांध लिए गये। इस संवादको सुनते ही जहांगीरने खुसरूको ले आनेके लिए अमीर जल् उमरावको भेज दिया। ये मीर्जा कमरानके उद्यानमें ठहरे हुए थे, खुसरूको भी वहीं पहुंचाया गया। वह दृश्य बहुत ही शोचनीय और अत्यन्त भयानक था। युवराजके हाथमें जंजीरें पडी हुई थीं, उनके दाहने हुमायुन बेग और बायें अबदुल अजीज खड़े हुए थे। कुमार खुसरू उन दोनोंके बीचमें खड़े हुए कांप रहे थे। खुसरूको कारारुद्ध कर दिया तथा हुमायुन और अबदुल अजीजको गाय और गधेको खालों भर दिया गया। इसके बाद उन दोनोंको पोछेको तरफ मुंह करके गधे पर चढ़ा तमाम शहरमें घुमाया गया। गायका चमड़ा जल्दी सूखता है, इस लिए हुमायुनने शीघ्रही अपने शरीरसे विदा ली। अबदुलके भी एक दिन और एक रात्रि बाद प्राण-पखेरू उड़ गये। इस दृश्यका अभी तक अन्त नहीं हुआ। सम्राट्की प्रतिहिंसा इतने पर भी ठण्ढी न हुई। उन्होंने लाहोरमें प्रवेश किया। नगरके द्वारसे लगा कर कमारनके उद्यान तक दोनों ओर शूलियोंकी दो पंक्तियां लगा दी गईं। बादशाहने ७०० कैदियोंको शूलियों पर चढ़ा दिया। अभागे कैदी मृत्यु-यन्त्रणासे तड़फने लगे। इस मर्मभेदी दृश्यको दिखानेके लिए खुसरूको

भुंज शङ्ख चक्र-गदा-पद्मधारी विष्णुको देख करके भक्ति-सहकारसे नानाविध स्तव किया था। इससे विष्णु और भी प्रसन्न हुए और उससे वर मांगनेको कहने लगे। गंडकीने कहा—जगदीश्वर! यदि इस दासी पर आपकी करुणा हुई है, तो आप गर्भगत हो करके मेरे पुत्र बनें। इस पर विष्णु बोल उठे—'गंडकि! मैं शालग्रामशिला बन करके तुम्हारे गर्भमें वास करूंगा। तुम जगत्में बड़ी होगी। तुम्हारा दर्शन, स्पर्शन, अवगाहन वा स्नान तथा जलपान करनेसे कायिक, वाचिक और मानसिक तीनों प्रकारका पाप छूट जावेगा।' इसी प्रकार वर दे करके विष्णु चलते हुए। इसीसे गंडकी सब नदियोंमें बड़ी है। भारतमें जो शालग्राम-शिला भक्ति सहकारसे विष्णु समझके पूजी जाती, गंडकी नदीसे ही आती है। विष्णुके वरसे ही वह सबकी आदरणीय हुई है। (वराहपुराण)

गण्डकी (छोटी) कोई प्रसिद्ध नदी। बड़ी गण्डकीकी तरह यह भी नेपाल राज्यके पहाड़ोंसे निकल गोरखपुर जिलेमें हो करके बही है। छोटी गंडकी बड़ी गंडकीके ४ कोस दूर रह करके समान्तराल भावसे चलती हुई सारन जिलेके बीच सोनारिया नामक स्थान पर (अक्षा० २५° ४१´ उ० तथा देशा० ८५° १४´ ३०´´ पू०) घर्घरा नदीमें गिरी है। इसके उत्पत्तिस्थानका नाम सोमेश्वर पर्वत है। वह चम्पारनके दून पहाड़का टुकड़ा होता है। हरहा नामक गिरिशृङ्ग इसके बहुत निकट है। इसीसे छोटी गंडकीका प्रथम अंश हरहा ही कहलाता है। आगे चल करके इसको क्रमशः सिखरेना, बुड्ढी-गंडक और छोटी गंडक कहते हैं। रामनगर, बेतिया और सगौलीनगर इसीके तीर अवस्थित है। ग्रीष्मकालको इसमें जल नहीं रहता। उस समय इसका विस्तार ४० हस्तमात्र होता है। किन्तु वर्षाकालको इसमें प्रचुर जल आ जाता है। उड़िया, धोराम, जमुया, पण्डाई, हरबोरा, बलइया, रामरेखा और मसाई नामक उपनदी इसमें आ मिली है। किसी किसीके मतमें छोटी गंडकीका नाम हिरण्यवती है।

गण्डकी—गंडकी नदीसे निकली एक पयोप्रणाली। यह गंडकी नदीकी किसी शाखासे निकल करके सारन जिलेके बीच दक्षिणपूर्व भागमें शीतलपुरके पास मही नामसे गङ्गामें मिलित हुई है। गोपालगञ्ज, चोकी हसन, रामपुर, खोवाम, गुरखा और शीतलपुर इसके किनारे अवस्थित हैं। गङ्गामें बाढ़ आनेसे पानी गुरखा तक पहुंचता और दिववारा तक सब स्थान जलप्लावित होता है। ग्रीष्मकालको इसमें सामान्य ही जल रहता है उस समय किसान इसमें बांध लगा कृषिकार्य करते हैं। गण्डकी नदीमें बांध पड़नेसे इसका पानी कम पड़ गया है। बांध डालनेसे पहले गण्डकी नदी तक इसमें बड़ी बड़ी नावें चलती थीं। आजकल बरसातमें हजार मनकी नाव गुर्खा तक आ जा सकती है। यह ४५ कोस लम्बी है। इसके बीचमें नदीगर्भ ५२ हाथ उतर गया है।

गण्डकीपुत्र (सं० पु०) गण्डक्याः पुत्रः, ६-तत्। शालग्राम-शिला, वह शिला जिसे हिन्दू विष्णु समझ कर पूजा करते हैं।

गण्डकुसुम (सं० क्ली०) गण्डस्य हस्तिकपोलस्य कुसुम-मिव, ६-तत्। हस्तिमद, हाथीका मद।

गण्डकूप (सं० पु०) गण्डे गण्ड इव उच्चे पर्वतशृङ्गे कूपः, ७-तत्। पर्वतका उच्चस्थान, पहाड़की चोटी।

गण्डगड़—पञ्जाबके अन्तर्गत रावलपिण्डी और हजारा जिलाकी एक गिरि श्रेणी। यह अक्षा० ३३°-५७´ उ० और देशा० ७२° ४६´ पू०में अवस्थित है। चच नामक उपत्यकाकी ओर यह पर्वत ढालू होता गया है और सब जगह यह ऊंचा ओर दुरारोह है।

गण्डगात्र (सं० क्ली०) गण्ड इव उच्चावचं गात्रमस्य, बहुव्री०। फलविशेष, शरीफा। इसका गुण—शीतल, वृष्य, वातपित्तनाशक, श्लेष्मवृद्धिकर, तृष्णानाशक और वमनक्लेशनिवारक है। (भावप्रकाश)

गण्डग्राम (सं० पु०) गंडः भूषणस्वरूपः प्रशस्तः ग्रामः। प्रशस्त ग्राम, वह ग्राम जिसमें बहुत मनुष्य रहते हों।

गण्डदूर्वा (सं० स्त्री०) गंडा ग्रन्थियुक्ता दूर्वा, कर्मधा०। दूर्वाविशेष, गाँडर घास। इसका पर्याय—गंडाली, अति-तीव्रा, मत्स्याक्षी, वारुणी, भीमपर्णी, सूचीनेत्रा, श्याम-ग्रन्थि, ग्रन्थिला, ग्रंथिपर्णी, सूचीपत्रा, श्यामकांडा, जलस्था, शकुलाक्षी, कलाया और चित्रा है। इसका गुण—मधुर, वातपित्त, ज्वर, भ्रान्ति और तृष्णा-श्रमनाशक

पहुंच कर सरदारखांके उद्यानमें ठहरे। इस स्थान पर युसफजाई अफगानोंने आ कर जहांगीरको वश्यता स्वीकार की। शेरखाँ नामके एक अफगानको उक्त प्रदेशका शासनकर्त्ता बना दिया गया। ३रो सफर तारीखको राजा विक्रमजित्के पुत्र कल्याण गुजरातसे बादशाहके पास आये। इनके विरुद्ध बहुतसे अभियोग लगाये गये थे। इन्होंने एक मुसलमीन वेश्याको अपने घर रख लिया था तथा उसके पिता और माताको हत्या कर, उन्हें अपने घरमें गाड़ दिया था। इसलिए जहाँगीरने उनकी जीभ काट कर जन्म भर उन्हें कैद कर रखनेका हुक्म दिया। बादशाह खुसरूको शृङ्खलाबद्ध कर काबुलमें लेते आये थे। यहां आकर उन्होंने खुसरूकी जंजीरें खोल दी। खुसरूने फतेउल्ला, नूर उद्दीन्, आसफ खाँ और सरीफ खाँ आदि प्रायः ५०० आदमियोंकी सहायतासे बादशाहको मार डालनेकी कोशिश की। परन्तु उनमेंसे एकने कुमार खुर्रम (पोछे शाहजहां) के दीवान खोजा कुरा०मो०ो यह बात कह दो। खुर्रमने बादशाहसे कहा। उन्होंने फतेउल्लाको कैद कर दिया और प्रधान प्रधान ३—४ षड़यन्त्रकारियोंको मार डालनेके लिए हुक्म दिया।

१६०८ ई०में बादशाहने राजा मानसिंहके ज्येष्ठपुत्र जगत्सिंहको कन्याके साथ अपना विवाह करनेके अभिप्रायसे खर्चके लिए ८००००) रुपये भेज दिये। ४थी रविउल अव्वल तारीखको जगत्सिंहकी कन्या बादशाहके अन्तःपुरमें भेजी गई। इसी समय जहांगीरने चित्तौरके राना अमरसिंहके विरुद्ध महावतखांको भेज दिया।

दिल्लीश्वरने सोचा कि, भारतके हिन्दू और मुसलमान सब ही जब उनके वशीभूत हो गये हैं तब राना ही क्यों मस्तक उठाये रहें? का पुरुष अमरसिंहने जब युद्धके लिए अनिच्छा प्रकट की, तब सर्दार कुलतिलक चन्दावत् और शालुम्बा वीरोंने जबरन उनके द्वारा युद्ध घोषणा करवा दी। इस युद्धमें बादशाह जहांगीरका मनोरथ सफल न हुआ। कुछ भी हो, युवराज खुर्रमके कनिष्ठ मातुलने इस युद्धमें बादशाह की तरफसे विशेष साहसिकताका परिचय दिया था।

दाक्षिणात्यमें ज्यादा गड़बड़ी फैल जानेके कारण (१६०९ ई० में) सम्राट्-कुमार पारविज वहां भेजनेके लिए मनोनीत हुए। इसी समय इङ्गलैण्डके वणिक् सम्प्रदायने भारतमें वाणिज्य करनेका अधिकार प्राप्त करनेके लिए हकीनस्को जहांगीरकी दरबारमें दूतस्वरूप भेजा।

हकीनस् १६०८ ई० में १६ अप्रेलको सूरत आ पहुंचे। व्यवसायके सुभीताके लिए उन्होंने जैसी २ प्रार्थनाएँ की, बादशाहने उन सबमें अपनी स्वीकारता दी और हकिनस्की वार्षिक ३२०००) रुपये वेतन दे कर अंग्रेजोंका दूतस्वरूप उन्हें दरबारमें रखनेकी इच्छा प्रकट की। हकिनस्ने अर्थके लोभसे कार्य ग्रहण कर लिया। हकीनस् सम्राटके इतने प्रियपात्र हो गये कि, बादशाहने दिल्लीके अन्तःपुर की एक अर्मनी महिलाके साथ उनका विवाह कर दिया। कुछ भी हो, सम्राट्के साथ अंग्रेजोंकी जो सन्धि हुई, भारतमें पर्त्तुगीज लोग उसे तुड़वानेकी कोशिश करने लगे और कर्मचारियोंको घूस दे कर वे इस विषयमें कृतकार्य भी हुए। कर्मचारियोंने सम्राट्को समझा दिया कि, अंग्रेजोंके साथ सन्धि होने पर जितने सुफलकी सम्भावना है, उससे कहीं अधिक अनिष्ट होनेकी सम्भावना पोर्त्तुगीजोंसे मेल न होनेसे है। जहांगीरने इस बातको ठीक मान कर हकीनस्को शीघ्र ही भारत छोड़ कर चले जानेकी आज्ञा दी।

१६१० ई०में कुतुब नामका एक फकीर पटनाके पास उज्जयनीमें आकर रहने लगा। उसने वहांके बहुतसे असत् लोगोंके साथ मिल कर अपना खुशरू नामसे परिचय दिया। उसने कहा कि, "हम कैदखानेसे भाग आये हैं," और वहां रहते समय हमारी आंखों पर गरम कटोरी बांध दी जाती थीं, इसलिए आखों पर दाग पड़ गये हैं"।

इस प्रकार परिचय देनेसे कुछ लोगोंने आकर उसका साथ दिया। इन लोगोंके साथ कुतुबने पटनामें प्रवेश कर वहांके दुर्ग पर अधिकार किया। उस समय पटनाके शासनकर्त्ता अफजल खां, शेख बनारसी और गयास जेलखानी पर नगररक्षाका भार देकर गोरखपुरमें अपनी नयी जागीरमें गये हुए थे। विद्रोहियोंके दुर्गमें प्रवेश करने पर दुर्गरक्षकोंने भाग कर अफजलखांके पास

गण्डस्थली (सं० स्त्री०) गंडः स्थलमिव, उपमितस०। कपोलस्थल, गंडदेश, कनपटी।

गण्डा—युक्त प्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० २७° ७' ३०" उ० और देशा० ८२° पू०के मध्य फैजाबादसे १४ कोस दूरमें अवस्थित है। यह गंडा जिलेका प्रधान नगर है। इस जिलेमें अहीर जाति कृषिकार्य करती है। यह प्रदेश पहले उत्तरकोशल राज्यके अन्तर्गत गौड नामसे मशहूर था। श्रावस्ती देखो। श्रावस्ती नगरका ध्वंसावशेष इस जगहसे दीखता है।

गण्डाङ्ग (सं० पु०-स्त्री० गंड इव उच्चूनमङ्गं यस्य, बहुव्री०। गंडक, गैंडा।

गण्डान्त (सं० क्ली०) तिथि, नक्षत्र और लग्नका सन्धिकाल।

"नक्षत्रतिथिलग्नानां गण्डान्त त्रिविध स्मृतं।
नवपञ्चचतुर्थानां द्वे द्वे घटिकामितं॥" (ज्योतिष)

गण्डारि (सं० पु०) १ कोविदारवृक्ष, कचनारका पेड़। कोविदार देखो। २ मत्स्यविशेष।

गण्डारी (सं० स्त्री०) मञ्जिष्ठा, मंजीठ।

गण्डाली (सं० स्त्री०) १ श्वेत दूर्वा, सफेद दूब, गाडर घास। २ सर्पाचीवृक्ष, सरक्षी, गंडिनिका पेड़। ३ मत्स्याक्षी, मछलीकी आंख।

गण्डाव—बलुचिस्तानके काछो नामक विभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २८° ३२' उ० और देशा० ६०° ३२' पू०में बाघ नामक स्थानसे २० कोस दक्षिण-पश्चिममें मूला नामक गिरिसङ्कट जानेके रास्ते पर अवस्थित है। यह एक ऊंची भूमिके ऊपर चहार-दीवारीसे घिरे हुए गढ़ द्वारा सुरक्षित है। यहां खिलात खांका एक घर है। शीत कालमें खां साहब यहां आ कर रहते हैं।

गण्डि (सं० पु०) वृक्षकी जड़से शाखा तकके भागको गंडि कहते हैं।

गण्डिक (सं० त्रि०) बुद्बुदके जैसा क्षुद्र पाषाणादि, बुद्बुदके समान छोटे छोटे पत्थरके खंड। २ एक प्रकारका अमृत।

गण्डिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र गण्ड पाषाण, पत्थरके छोटे छोटे टुकड़े।

गण्डिकोट—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कड़ापा जिलामें येरमलय नामक पर्वतका एक दुर्ग। यह सुदृढ़ दुर्ग अक्षा० १४° ४८' उ० और देशा० ७८° २०' पू०में अवस्थित है। यहां विजयनगरके राजाओंका एक देव-मन्दिर है। प्रसिद्ध ऐतिहासिक लेखक फेरिस्ता लिखते हैं कि यह दुर्ग १५८८ ई०में निर्माण किया गया है। गोलकुण्डाके राजाने एक बार इसे अपने अधिकारमें लाया था। औरङ्गजेबके सेनापति मीरजुम्लाने इसे कई बार दखल किया था। बाद यह हैदराबादके बाला-घाटके पांच सरकारोंमें एक सरकारकी राजधानी हुई। अन्तमें कड़ापाके पाठान नवाबने इस स्थानको अपने अधिकारमें लाया। किन्तु १७९१ ई०को टिपूकी लड़ाईके समय अङ्गरेज सेनापति कप्तान लिटलने इसे जीत लिया। १८०० ई०में निजामने इसे अङ्गरेजोंको अर्पण कर दिया। यह दुर्ग रेतीला पत्थरके पहाड़के ऊपर बना हुआ है। इस होकर पेनार नामक नदी प्रवाहित होती हुई कड़ापा अञ्चल तक चली है।

गण्डी (सं० स्त्री०) खड़ीसे रेखा खींच कर सीमाको चिह्नित करनेका नाम गण्डा है।

गण्डीर (सं० पु०) १ समष्ठिला, खीरा। २ शाकविशेष, पोईका साग। ३ वीर, बहादुर, शूरवीर।

गण्डीरी (सं० स्त्री०) सेहुण्डवृक्ष, सेहुंडका पेड़।

गण्डु (सं० पु०) १ उपधान, तकिया। २ ग्रन्थि, गांठ, गिरहा। (त्रि०) ३ ग्रन्थियुक्त, जिसमें गांठ हो, गिरहदार।

गण्डुपद (सं० पु०) गण्डुः ग्रन्थियुतानि पदानि यस्य, बहुव्री०। किञ्चुलक, केंचुआ।

गण्डुपदभव (सं० क्ली०) गंडुपद इव भवति उत्पद्यते। सीसक, सीसा नामक धातु।

गण्डू, गण्डु देखो।

गण्डूपदी (सं० स्त्री०) १ एक क्षुद्र कीड़ा, छोटा केंचुआ। २ किञ्चुलक जातीय स्त्री, मादा केंचुआ।

गण्डूष (सं० पु०) १ मुखपूरण, कुल्ली। २ मुंहका पानी। ३ हाथीकी सूंडका अग्र भाग, हाथीकी सूंड़की नोक। ४ प्रसृति परिमित, सोलह तोलेके बराबरका एक मान, पसर।

गण्डूषविधि (सं० पु०) गण्डूषस्य विधिः विधानं, ६-तत्। मुखगण्डूष करनेके नियम। मुंहधोनेके नियम। भाव-

साथ विवाह करनेकी इच्छा होने पर भी उनका विवाह अलीकुलिके साथ हो गया। बादशाहने अलीकुलिको शासनकर्त्ता बना कर बङ्गाल भेज दिया।

जहाँगीर मेहेरउन्निसाको भूल न सके। वे बादशाह होकर उन्हें पानेके लिए सुभीता ढूंढ़ने लगे। अलीकुलि अत्यन्त साहसी और धनाढ्य अमीर थे, उनको हत्या करानेके लिए सम्राट्‌का साहस न हुआ; वे कौशल-जाल फैलाने लगे। अलीकुलिको मारनेके लिए जहाँगीरने इतने घृणित और भीषण उपायोंका अवलम्बन किया था कि, इतिहास न मिलनेसे कोई भी उस बात पर विश्वास न कर सकता था। सम्राट्‌के आदेशसे एक व्याघ्र लाया गया। अलीकुलिको आज्ञा दी गई कि, 'तुम्हें इस व्याघ्रके साथ युद्ध करना पड़ेगा। सम्राट् स्वयं उनकी मृत्यु देखनेके लिए दर्शक बन बैठे। प्रकाण्ड व्याघ्रके साथ युद्ध सम्भव नहीं; परन्तु अस्वीकार करनेसे उस बातको सुनता कौन है? ऐसी दशामें अपनी मृत्यु अनिवार्य समझ कर ही अलीकुलि नंगी तलवार हाथमें ले आगे बढ़े थे; किन्तु आश्चर्य है कि उन्होंने अपने अतुल साहस और अदम्य विक्रमके साथ व्याघ्र पर आक्रमण कर उसे प्राण-रहित कर दिया। सभी लोग उनकी प्रशंसा करने लगे। बादशाहने लोगोंको दिखानेके लिये उन्हें 'शेर अफगान'की उपाधि दी। कोई कोई कहते हैं कि, यह उपाधि उन्हें अकबर द्वारा प्राप्त हुई थी। कुछ भी हो, जहांगीरने मन ही मन अत्यन्त क्रुद्ध हो कर उनको मार डालनेके लिए एक मदोन्मत्त हाथी मंगाया। अकस्मात् उनके शरीरके ऊपरसे उस हाथीको चलाया गया। वीरवर अलीकुलिने एक आघातसे उस हाथीकी सूंड़ जमीन पर गिरा दी। नराधम नृशंस सम्राट्‌ने अन्य कोई उपाय न देख एक दिन रात्रिके समय अलीकुलिके शयनगृहमें चालीस गुप्त घातकोंको भेज दिया। किन्तु ये भी कार्यसिद्धि न कर सके। तमाम प्रयत्नोंको व्यर्थ होते देख जहांगीरने कुतुबउद्दीनको बङ्गदेशमें भेजा और उनसे यह कह दिया कि, "अलीकुलि अगर सीधी तरहसे मेहेरउन्निसाको न दे, तो तुम उसका मस्तक काट डालना।" कुतुबउद्दीनके बादशाहका अभिप्राय जाहिर करने पर अलीकुलिने घृणाके साथ उसका प्रत्याख्यान किया। आखिरको राज्य देनेके बहानेसे उन्हें बुलाया। शेर-अफगान इस मायाचारीको समझ कर एक तीक्ष्ण तलवार कपड़ोंमें छिपा ले गये। कुतुबके फिर मेहेरउन्निसा की बात छेड़ने पर वादानुवादमें शेरअफगानने उनके वक्षस्थल पर तलवार भोंक दी। कुतब चिल्ला उठे। पीर महम्मदने आगे बढ़ कर शेर अफगानके मस्तक पर एक वार किया; परन्तु अव्यर्थ सन्धानसे उसे रोक कर शेरने पीरका मस्तक चूर्ण कर दिया। प्रहरियोंके आगे बढ़ने पर शेरने देखते देखते चार आदमियोंको जमीन पर गिरा दिया। परन्तु वे अकेले क्या कर सकते थे? तब भी वीरका उत्साह नहीं घटा था। आखिर प्रहरियोंके दूरहीसे गोलियोंकी वर्षा करने पर उन्हें भूतलशायी होना पड़ा। इस तरह असमवीर कायरों और घृणित व्यक्तियोंके हाथ निहत हुए। इसके उपरान्त जहांगीरने राजद्रोह और षड़यन्त्रका अपराध लगा कर मेहेरउन्निसाको आगरामें बुला लिया। कुतुबकी सारी सम्पत्ति राजकोषमें मिला ली गई। मेहेरउन्निसाके आगरा आ जानेपर जहांगीरने उनसे विवाहकी इच्छा प्रकट की, किन्तु मेहेरने अपने पतिहन्तारकके विवाह-प्रस्तावको घृणाके साथ अग्राह्य किया। जहांगीर इस व्यवहारसे बहुत ही चिढ़ गये। उन्होंने मेहेरको राजमाताकी किङ्करी नियत की और खर्चके लिए उन्हें रोज एक रुपया देनेके लिए हुक्म दिया। जहांगीर कुछ दिनोंके लिए मेहेरउन्निसाको भूल गये। पीछे नौरोजके दिन हरममें प्रवेश कर जहांगीरने देखा कि, मेहेरने सफेद पोशाक पहन ली है; उनकी खूबसूरती उछल रही है। बस, फिर क्या था; जहांगीरकी पूर्वपिपासा दूनी बढ़ गई। बादशाह इस बातको सह न सके उन्होंने उसी वख्त अपने गलेका हार मेहेरके गलेमें डाल दिया।

बड़ी शान-शौकतके साथ विवाह-कार्य समाप्त हुआ। बादशाह मेहेरके हाथोंकी पुतली बन गये। उन्होंने मेहेरको पहले नूरमहल (महलकी रोशनी) और पीछे नूरजहान् (पृथिवी-सुन्दरी)की उपाधि दी। बादशाह जहांगीर इनकी सलाह बिना लिए कोई भी काम न करते थे। सम्राट्‌के तमाम सुख और सान्त्वनाका आधार

यस्याः, बहुव्री०। १ विधवा। २ जिसका स्वामी दूर-देश गया हो।

"किमु सुहृसुं दुर्गत भर्तृकाः।" (माघ)

गतरस (सं० त्रि०) जिसका रस नष्ट हो गया हो, विरस।

"यातयाम' गतरसः पूति पर्युषितञ्च यत्।" (गीता)

गतव्यथ (सं० त्रि०) गता नष्टा व्यथा पीड़ा यस्य, बहुव्री०। व्यथाशून्य, जिसको कोई कष्ट न हो।

गतमर्याद (सं० त्रि०) गतमर्य्यादा यस्य, बहुव्री०। अपमानित, जिसकी मर्यादा नष्ट हो गई हो।

गतरात्रि (सं० स्त्री०) अतीत रात्रि, बीती हुई रात।

गतलज्ज (सं० त्रि०) गता लज्जा यस्य, बहुव्री०। निर्लज्ज, वेशर्म, वेहया।

गतशोचन (सं० क्ली०) गतस्य शोचनं, ६-तत्। अतीत विषयका अनुशोचना, व्यतीत बातका ख्याल करना।

गतशोचना (सं० स्त्री०) गतस्य शोचना, ६-तत्। गतानुशोचन, बीते हुए विषयका स्मरण।

गतश्री (सं० त्रि०) गता श्रीः शोभा यस्य, बहुव्री०। जिसकी शोभा नष्ट हो गई हो। निष्प्रभ, जिसमें किसी तरहकी चमक न हो।

गतसङ्ग (सं० त्रि०) गतः नष्टः सङ्ग आसक्तिर्यस्य, बहुव्री०। निःसङ्ग, जिसने दूसरेको सङ्गत छोड़ दी हो।

गतसन्नक (सं० पु०) मदशून्य हस्ती, वह हाथी जिसके मद न हो।

गतस्पृह (सं० त्रि०) गता नष्टा स्पृहा यस्य, बहुव्री०। निस्पृह, किसी चीजकी इच्छा न हो।

"गतस्पृहोऽप्यागमनप्रयोजनं।" (माघ)

गतस्मय (सं० त्रि०) १ गर्वशून्य, जिसके अभिमान न हो। २ विस्मयशून्य।

गताक्ष (सं० त्रि०) गतमक्षि यस्य बहुव्री०। नेत्रहीन, अन्धा।

गतांक (सं० त्रि०) जिसमें सत्पुरुषके चिन्ह अब न रह गये हों।

गतागत (सं० क्ली०) गतं गमनं आगतं आगमनं द्वयोः समाहारः; समाहारद्वन्द। गमनागमन, आना जाना।

"एवं त्रयी धर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते।" (गीता)

गतं ऊर्ध्वगमनं आगतमधोगमनं यत्र, बहुव्री०। २ पक्षीकी गति, चिड़ियाकी चाल। (पु०) ३ गतं विनष्टं आगतं पुनः संसारगमनं यस्मात्, बहुव्री०। महादेव।

"नीतिश्च नीतिः शुद्धात्मा शुद्धो मान्यो गतागतः।"

(भारत १३।१७।९८)

गतागति (सं० स्त्री०) गमनागमन।

गतागतिक (सं० त्रि०) गमनागमनसे जो निष्पादित हुआ हो।

गताङ्क (सं० त्रि०) जिसमें सत्पुरुषके चिह्न अब रह न गये हों।

गताध्वन् (सं० त्रि०) तत्त्वज्ञ, ज्ञाततत्त्व, जाननेका भाव।

गताध्वा (सं० स्त्री०) चतुर्दशीयुक्त अमावस्या तिथि।

गतानुगत (सं० त्रि०) गतस्य अनुगतः, ६-तत्। जो किसी आदमीके पीछे पीछे जाता हो। (क्ली०) गतस्य अनुगतं अनुगमनं, ६-तत्। २ गमनका अनुगमन, एकके पीछे दूसरेका जाना।

गतानुगतिक (सं० त्रि०) गतानुगतिं अस्त्यस्य गतानुगत-ठन्। गमनानुगमनविशिष्ट।

"एकस्य कर्म संवीक्ष्य करोत्यन्योऽपि गर्हितं।
गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः॥" (पञ्चतन्त्र)

गतान्त (सं० त्रि०) गतः उपस्थितः अन्तः अन्तकालो यस्य, बहुव्री०। मुमुर्षु, जिसका अन्तकाल उपस्थित हो गया हो।

गतायात (सं० क्ली०) गतञ्च आयातञ्च तयोः समाहारः समाहारद्वन्द। गमनागमन।

गतायुः (सं० त्रि०) गतं गतप्रायं आयुर्जीवनकालो यस्य, बहुव्री०। जिसका आयुः शेष हो, चरमकाल उपस्थित, मरनेवाला।

वैद्यको चिकित्सा आरम्भ करनेसे पहले रोगीके आयुका विषय अच्छी तरह विवेचना करके देख लेना चाहिये। यह विषय वैद्यशास्त्रमें बहुत ही कठिन है। महात्मा सुश्रुतने आयु प्राय शेष होनेपर रोगीके जो लक्षण प्रकाशित होते, उनमें कई एक निर्णय किये हैं— मनुष्यका मृत्युकाल आ पहुंचनेसे उसका शरीर और स्वभाव बदल जाता है। जो व्यक्ति वास्तविक कोई शब्द न होते भी नाना प्रकारके शब्द सुना करता, जो समुद्र, पुर वा मेघका शब्द सुन करके अन्य प्रकार समझता

दृढ़ करनेकी कोशिश कर रहे थे। परन्तु मुगल लोग उस समय अहमदनगरमें थे। इस मौके पर मालिक अम्बर दौलताबादमें राजधानी स्थापित कर स्वाधीन भावसे राज्यकार्य चलाने लगे।

जहांगीरने मालिक अम्बरको दमन करनेके लिए खाँ जहान् लोदीके साहाय्यार्थ एक दल सेना अबदुल्लाखाँकी अधीनतामें भेज दी। परन्तु अबदुल्लाखांके बिना किसीकी सलाह लिए युद्ध करनेको अग्रसर होनेके कारण मालिक अम्बरने प्रचण्ड विक्रमसे सामना कर बादशाही फौजको परास्त कर दिया। अबदुल्ला मरहटों द्वारा विशेष क्षतिग्रस्त हो कर भाग गये। खांजहान्ने साहसी हो कर फिर उन पर आक्रमण नहीं किया।

१६१३ ई०में सूरत और अहमदनगरके शासनकर्त्ताओंके विशेष अनुरोध करने पर बादशाहने अंग्रेजोंको भारतमें रोजगार करनेका हक दे दिया। साथ ही उन लोगोंको सूरत, अहमदाबाद, काम्बे और गोया इन चार नगरोंमें कोठी बनानेकी भी इजाजत दे दी। इन्होंने अंग्रेजोंसे एक दूत मांगा, जिसके अनुसार १६१५ ई०में सर टमस-रो दूत बन कर जहांगीरके दरबारमें आये। ये जहांगीरके दरबार और चरित्रका वर्णन कर गये हैं। सर टमस-रो लिखते है कि, जहांगीरके दैनिक नियम इस प्रकार थे—पहले वे उपासना करते थे, फिर उनके पास ४ ५ तरहके सुस्वादु और सुपक्व मांस लाये जाते थे, जिनको वे अपनी इच्छाके अनुसार थोड़ा थोड़ा खा कर बीच बीचमें शराब पीते जाते थे। इसके बाद वे खास कमरेमें जाते थे, जहां बिना आज्ञाके दूसरा कोई भी नहीं जा सकता था। वहां बैठ कर ५ प्याले शराबके पीते और फिर अफीम खाते थे। सबके चले जाने पर २ घण्टे सोते थे। २ घण्टे बाद उन्हें जगा कर भोजन करा देना पड़ता था ; बाकीको रात सो कर बिताते थे।" सर टमस-रो और भी कहते हैं कि, जब वे पहले पहल आये थे, राजकार्यका प्रत्येक विभागमें ही यथेच्छा और विशृङ्खला थी। सूरतमें आ कर देखा कि, वहांके शासनकर्त्ता वणिकोंसे खाद्य सामग्री छीन रहे हैं और उन्हें नाममात्र मूल्य दे कर उनसे सब चीजें जबरन् ले रहे हैं। राज्यके भीतर सब ही जगह ध्वंसके चिह्न वर्त्तमान थे। परन्तु जहांगीरके दरबारको देख कर वे अत्यन्त विस्मित हुए थे। जहांगीर सर टमस-रोके साथ निष्कपटताका व्यवहार करते थे। प्रायः सब जगह बादशाह उन्हें साथ रखते थे। १६१३ ई०में ६ फरवरीको अंग्रेजोंके साथ जो सन्धि हुई थी, सर टमस-रो उसे ही दृढ़तर कर गये थे। यह सन्धि वेष्टके साथ हुई थी और इसीके नियमानुसार अंग्रेजोंको सैकड़ा पीछे ३॥) रुपयेसे अधिक आमदनीका महसूल नहीं देना पड़ेगा, यह स्थिर हुआ था।

बादशाहने चितोर जय करनेके अभिप्रायसे १६१० ई०में जो सेना भेजी थी, उसके अकृतकार्य होने पर क्रुद्ध हो कर वे सेना संग्रह करने लगे। १६१२ ई०के शेष भागमें उन्होंने अपने पुत्र खुर्रम (पीछे शाहजहां) की अधीनतामें एक दल बड़ती सेना भेजी।

जहांगीरने बार बार राणा अमरसिंह द्वारा पराजित हो कर १६१३ ई०में यह प्रतिज्ञा की कि, अजमेर पहुंचते ही वे अपने विजयी पुत्र खुर्रमको राणाके विरुद्ध युद्ध करनेके लिए भेजेंगे। यह प्रतिज्ञाकार्यमें भी परिणत हुई। राणा निस्सहाय थे, क्योंकि, हिन्दुस्थानके क्या हिन्दू और क्या मुसल्मान, सभी लोग बादशाहकी पदधूलिके प्रार्थी हो चुके थे। एक मात्र शिशोदीयकुल जातीय गौरवसे उन्नतमस्तक था। ऐसी दशामें और कितने दिनों तक वे महाबल पराक्रान्त दिल्लीश्वरके साथ युद्ध कर सकते थे। लगातार मुसलमानोंके साथ युद्ध कर ये क्रमशः हीनबल हो रहे थे, इनकी सैन्य संख्या क्रमशः घट रही थी। उधर दिल्लीके बादशाह जहांगीरने बार बार परास्त होनेके उपरान्त असंख्य सेनाके साथ कुमार खुर्रमको मेवारगौरव ध्वंस करनेके लिए भेज दिया। राणा अमरसिंह इतने कष्टसहिष्णु न थे। कुछ भी हो, अतुलवीर प्रतापसिंहके वंशधर होनेके कारण ही वे अब तक दिल्लीके बादशाहके साथ युद्ध करते रहे थे। अबकी बार उनसे युद्ध न हो सका। १६१४ ई०में राणा अमरसिंहने जहांगीरकी अधीनता स्वीकार कर खुर्रमके पास शूपकर्ण और हरिदासको भेजा। जहांगीरको खुर्रमसे जब राणाके अधीनता स्वीकारका समाचार मिला, तब उन्होंने राणाको अभय देनेके लिए पत्र लिखा। इसके बाद

आदि उपद्रव उठ खड़े होनेसे बलवान् रोगी भो मर जाता है। जिस रोगीके चक्षुजलसे मुख भर जाता, दोनों पैरोंसे अविरत पसीना चला आता, चक्षु आकुलित दिखाता, जिसका शरीर हठात् बहुत ही हलका या भारी हो जाता या जिसका वमन कीचड़, मछली, चरबी, तेल या घी जैसा गन्ध आता, वह रोगी अवश्य परलोक पहुंचता है। मस्तकमें कपाल तक जूं भर आने, मङ्गल कामनासे प्रदत्त वलि काकप्रभृतिके न खाने और रतिशक्ति एकबारगी ही बिगड़ जानेसे मृत्यु उपस्थित होनेमें कोई सन्देह नहीं। जिस रोगीको ज्वर, अतीसार और सूजन तीनों धर दबाते और जिसके मास तथा बलमें क्षीणता पाते, उसकी कभी भो चिकित्सा नहीं चलाते। शरीर अतिशय क्षीण होने पर रुचिकर, मिष्ट और हितकर अन्न-पान द्वारा क्षुधा वा तृष्णा न मिटनेसे मृत्यु को आसन्न समझना चाहिये। ग्रहणी, शिरःशूल, कोष्टशूल, अतिशय पिपासा और बलहानि जिसको एक ही साथ आतो, उसके बचनेकी कोई आशा नहीं देखाती।

(सुश्रुत सू० ३१ अ०)

शरीरका जो अङ्ग स्वभावतः जैसा होता, उससे उलटा पडने पर मृत्युका लक्षण ठहरता है। शरीर गोरेसे काला तथा कालेसे गोरा पड़ने, रक्त प्रभृति वर्णोंका अन्य प्रकार वर्ण लगने, स्थिरके अस्थिर, स्थूलके कृश, कृशके स्थूल दीर्घके खर्व, और खर्वके दीर्घ बनने अथवा कोई अङ्ग एकाएक ठण्डा, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, विवर्ण वा अवसन्न पडनेसे थोड़े दिनोंमें ही कालकवलित होते हैं। शरीरका कोई अङ्ग अपने स्थानसे स्खलित, उत्क्षिप्त, अवक्षिप्त, पतित, निर्गत, अन्तर्गत, गुरु वा लघु होना भो स्वभावके विपरीत है शरीरमें अकस्मात् मूंगे जैसे चकत्ते पडने, ललाटको सभी शिराएं झलकने, नाककी डण्डीमें फोडाफुन्सी उठने, सवेरे मत्थेसे पसीना निकलने, नेत्ररोग न रहते भी आंसू चलने, मस्तकमें गोबर जैसी धुलि उडने अथवा उस पर कबूतर, कङ्क आदि पक्षी गिरने, भोजन न करते भी मलमूत्र पड़ने वा भोजन करनेसे भी मलमूत्र न उतरने, स्तनमूल वक्षःस्थल वा हृदयमें अतिशय वेदना उठने, किसी अङ्गका मध्यस्थल स्फीत अथवा उभय पार्श्व कृश वा मध्यस्थल कृश तथा उभयपार्श्व स्फीत पड़ने, अर्धाङ्गमें शोथ बढ़ने, समस्त अङ्ग शुष्क पड़ने, स्वर नष्ट, हीन, विकृत वा विकल लगने, दन्त, मुख, वा नख प्रभृति स्थानोंमें विवर्ण पुष्प जैसे चिह्न पड़ने, कफ, पुरीष वा रेतः जलमें मग्न रहने, दृष्टिमण्डलमें भिन्न प्रकार विकृतरूप देख पडने, केश वा अङ्ग तैलाक्त जैसा लगने, अतीसार रोगमें अरुचि तथा दुर्बलता बढ़ने, फेणके साथ पूयरक्त वमन करने, कासरोगमें तृष्णाके अभिभूत रहने, क्षीणता, वमन तथा अरुचि लगने, भग्नस्वर तथा वेदनासे दबने, हाथ, पैर और मुंह सूज उठने, क्षीण पडने वा रुचि हीन रहने, नाभि, स्कन्ध एवं हस्तपद शिथिल पडने और ज्वर तथा काससे अभिभूत रहने पर रोगीका जीना कठिन है। पूर्वाह्णमें आहार करके अपराह्णमें वमन करने और पाकाशयमें अम्लरस उत्पन्न न होते भी अतीसार जैसा मल निकलने, भूमि पर पतित हो बकरीकी तरह बोलने, कोष शिथिल, उपस्थ सङ्कुचित तथा ग्रीवा टूट पड़ने, नीचेका ओष्ठ दंशन वा ऊपरका ओष्ठ लेहन करते रहने अथवा केश वा कर्ण नोच रखने, देवता, द्विज, गुरु, सुहृद् एवं वैद्यको बुरा समझने, पापग्रहोंके अधिकतर मन्द स्थानोंमें जा करके जन्मनक्षत्रको पीडित करने अथवा उल्का वा वज्र द्वारा अभिहित पड़नेसे मनुष्य गतायुः कहलाता है। स्त्री-पुत्र, गृह, शयन, आसन, यान, वाहन और मणि रत्न प्रभृति गृहके उपकरण द्रव्योंका दुर्लक्षण प्रादुर्भाव होते भी आयुःको शेष समझते हैं। बल और मासहीन रोगीकी चिकित्सा करते भी यदि रोग वृद्धि होती, तो वह मरनेका ही लक्षण देख पड़ती है। जिसकी उत्कट पीडा एककालको हठात् निवृत्त हो जाती अथवा जिसके शरीरमें आहारकी कोई बात नहीं दिखाती, उसकी मौत शीघ्र ही आती है। (सुश्रुत सू० ३२अ०)

गतार्त्तवा (स० स्त्री०) गत निवृत्तं आर्त्तवं रजो यस्याः, बहुव्री०। १ वृद्धा स्त्री, वह औरत जिसकी अवस्था पचास वर्षसे अधिक की हो। वैद्यकशास्त्रके मतानुसार बारह वर्षसे ५० वर्ष तककी स्त्रियोंका ऋतु या रजोदर्शन होता है। इसके बाद स्त्रीको गतार्त्तवा कहते हैं।

"द्वादशाद् वत्सरादूर्ध्वं आपञ्चाशत् समाः स्त्रियः।
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्त्तवं स्रवेत्॥" (भावप्रकाश)

लम्बन करें, कुछ निश्चय न कर सके। उधर विद्रोहियोंने बालाघाट और माण्डू तक बढ़ कर अधिवासियोंको तंग करना शुरू कर दिया था। सौभाग्यवश कांगड़ाकी विजयवार्त्ता शीघ्रही जहांगीरके कर्णगोचर हुई। बादशाहने युवराज खुर्रमको दाक्षिणात्यमें विजयके लिए भेजा। खुर्रम योग्य कर्मचारियोंको साथ ले दाक्षिणात्यको चल दिये। इनके आगमनसे विद्रोही डर गये। खुर्रमने अटल उत्साह और अदम्य साहसके साथ आगे बढ़ कर विद्रोहियोंको पूरी तरह परास्त कर दिया। मालिक अम्बरने भी इनकी अधीनता स्वीकार की। युद्धके व्यय स्वरूप उन्हें ५० लाख रुपये बादशाहके खजानेमें भेजने पड़े। इसी समय खुर्रमके अनुरोधसे खुशरूको कारामुक्त किया गया; किन्तु शीघ्र ही शूल वेदनासे उनकी मृत्यु हो गई। कोई कोई इतिहास-लेखक लिखते हैं कि, बादशाहने काश्मीरसे लौटते समय लाहोरमें तम्बू डाले थे और वहीं १६२२ ई०में खुसरूकी मृत्यु हुई थी।

नूरजहान्‌के पिता अत्यन्त दक्ष और राजनीतिज्ञ थे। नूरजहाँ पिताके परामर्शानुसार चल कर ही राजकार्यमें विशेष क्षमताशालिनी हुई थीं। १६२२ ई०में नूरजहान्‌के पिताकी मृत्यु हुई। नूरजहांने, पिताके उपदेशके न मिलनेसे अपनी इच्छाके अनुसार कार्य करके जहांगीरकी शासन विधिको अत्यन्त शिथिल कर दिया। उन्होंने बादशाहके कनिष्ठ पुत्र शाहरयारके साथ पहले पति शेर अफगानके औरससे उत्पन्न अपनी कन्याका विवाह कर दिया। अब उनकी इच्छा हुई कि, शाहरयार ही भारतका भावी सम्राट् हो। परन्तु पहले उन्होंने ही उद्योग करके खुर्रमको भावी सम्राट् बनानेके लिए जहांगीरको सहमत किया था। कुछ भी हो, अब शाहजहांको स्थानान्तरित करनेका मौका देखने लगीं, क्योंकि उनको स्थानान्तिरित किये विना उनके उद्देश्य सिद्धिका दूसरा कोई मार्ग नहीं था। मौका भी जल्द हाथ लगा।

१६२१ ई०के शेष भागमें पारसके शाह अब्बासने कान्दाहार पर आक्रमण किया था। नूरजहान्‌की ओरसे उत्तेजना पा कर बादशाहने उक्त प्रदेशको अधिकार करनेके लिए शाहजहांको शीघ्र हो जानेकी आज्ञा दी। शाहजहान् इस मायाचारको समझ गये। उन्होंने कहला भेजा कि, 'भविष्यतमें मुझे सिंहासनके मिलनेमें किसी तरहकी गड़बड़ी न होगी, इसका सन्तोषजनक निदर्शन मिले बिना मैं वहां नहीं जा सकता।" बादशाहने शाहजहान्‌की बातका कुछ भी उत्तर नहीं दिया, वरन् उनके अधीनस्थ प्रधान प्रधान कर्मचारियों और सेनाको भेज देनेका आदेश दिया। १६२२ ई०के प्रारम्भमें शाहजहान्‌ने शाहरयारकी कई एक जागीरें अधिकृत कर लीं और उनके कर्मचारी-असरफ उल-मुल्कके साथ एक खण्ड युद्ध कर डाला। इस पर जहांगीरने विद्रोही कह कर उनको तिरस्कृत किया और उनकी सारी सेना शाहरयारकी सेनामें मिला देनेका आदेश दिया। शाहजहां आगरा अवरोध करनेको अग्रसर हुए। खान्‌खानान्‌ने शाहजहांके साथ मिल कर लूटना प्रारम्भ कर दिया। जहांगीरने विद्रोहियोंके विरुद्ध महावतखाँ और असदुल्लाखांको भेजा। किन्तु अबदुल्लाने शत्रुओंसे सब रहस्य जान लिया।

पहले जब बादशाह अकबर जीवित थे और सलीम अजमेरके शासनकर्त्ता थे, उस समय उन्होंने एक बार दिल्लीके सिंहासनको प्राप्त करनेकी चेष्टा की थी। अकबर जब विद्रोह दमन करनेके लिए राजधानी छोड़ कर दक्षिण देशको गये थे, उस समय अकबरकी अनुपस्थितिमें जहांगीर दिल्लीकी तरफ अग्रसर हुए थे; किन्तु रास्ते ही में अकबरने उन्हें परास्त कर इसका बदला चुका दिया था। उसी तरह अब जहांगीरके जीते जी ही साम्राज्यको ले कर उनके पुत्रोंमें युद्ध होने लगा। पहले जहांगीरने जिस तरह अपने वृद्ध पिताको लांछित किया था, उसी तरह उनके प्रिय पुत्र शाहजहान् विद्रोही हो कर उन्हें सताने लगे। १६२३ ई०में बादशाह खुद उनके विरुद्ध लड़ने चले। राजपूतानाके पास दोनों सेनाओंमें घमसान युद्ध हुआ। शाहजहां पराजित हो कर माण्डूकी तरफ भाग गये। बादशाहने अजमेर तक उनकी पीछा किया और कुमार पारविज़को प्रधान सेनापति नियुक्त कर महावतखाँ, महाराज गजसिंह, फज़लखाँ, राजा रामदास आदि सुदक्ष कर्मचारियोंके साथ एक दल

२६ एवं ७५ ५७ पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ६९८ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः १३७५७३ निकलेगी। कप्पट पहाड़ बड़ा है। उसकी चिकनी मट्टीमें सोना होता है। जलवायु संयत और स्वास्थ्यकर है। दम्बल तालाब सींचके लिये ६४००० हजार रुपये लगा करके बनाया गया है।

२ धारवाड़ जिलेके गदक तालुकका हेड-क्वार्टर। यह अक्षा० १५ २५ उ० और देशा० ७५ ३८ पू०में दक्षिण मराठा रेलवे पर अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ३०६५२ है। १८५८ ई०को यहां म्युनिसपालिटी हुई। यहां कपास और सूती तथा रेशमी कपड़ोंका बड़ा काम है। सूत कातनेका एक पुतलीघर भी खुला है। गदगमें त्रिकूटेश्वर, सरस्वती, नारायण, सोमेश्वर और रामेश्वरके प्राचीन सुन्दर मन्दिरोंका ध्वंसावशेष विद्यमान है। इसके शिलाफलक पढ़नेसे विदित होता कि गदकका पुराना नाम क्रतुक था और वह (८७३-११७०) चालुक्यों, (११६१-८३) कलचुरियों, (१०४७-१३१०) होयसल वल्लालों, (११७०-१३१०) देवगिरियादवों और (१३३६-१५६५ ई०) विजयनगर राजाओंके अधीन रहा। १६७३ ई०के समय गदग धारवाड़में बाकापुर सरकारके एक बड़े जिलेकी तरह मिलाया गया। १८१८ ई०को जनरल मुनरोने इसको घेरा था। शहरमें छोटे जजकी अदालत, अस्पताल और कई स्कूल हैं।

गद्गद (सं० क्ली०) गद्गद भाषण, पुलकित वचन।

गदचाम (हिं० पु०) हाथीका एक रोग। इसके होनेसे पीठ पर घाव हो जाता है।

गदनकेरी—बीजापुर जिलेके अन्तर्गत कलादगीका एक छोटा ग्राम। यह कलादगीसे ८ मील पूर्व बागलकोट सड़क पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः चारसौ है। ग्रामके पास हो पहाड़ पर बहुतसी मसाजद् है। जो मलप्पा और उनके लड़के मोनप्पाकी कब्र कही जाती है। अनावृष्टिके समय मनुष्य इस मस्जिदमें आ वर्षाके लिये आराधन करते है।

गदम (फा० पु०) नाव बांधनेके लिये एक प्रकारकी लकड़ी, थाम, पुस्ता।

गदमुरारि (सं० पु०) ज्वर रोगका औषधविशेष। पारा, गन्धक, लौह, अभ्र, ताम्र, हिङ्गुल और सीसक, इन सब का सप्तभाग लेकर मिलाना चाहिये। दो रत्ती प्रतिदिन सेवन करनेसे सद्यज्वर नाश होता है। (रसेन्द्रसार०)

गदमुरारिइस्क्रामेटो—औषधविशेष। पारा, गन्धक, तांबा, हरिताल, विष, शुंठ, पीपल, मिर्च, हरीतकी, आमलकी, बहेड़ा, सोहाग, इनके समान-भागमें उतना ही जयपाल देकर भृङ्गराजके रसमें दो प्रहर तक पीसना चाहिये। इसके सेवन करनेसे सन्निपातादि समस्त रोग जाते रहते है।

गदयित्नु (सं० पु०) १ काम, इच्छा। २ शब्द, आवाज। (त्रि०) ३ कामुक इच्छुक। ४ वावदूक, गप्पी।

गदराना (हिं० वि०) १ परिपक्व होनेके निकट आना। २ जवानीमें अंगोंका भरना। ३ आंखमें कीचड़ आदि आना।

गदरिया—युक्तप्रदेशका मेषपालक जातिविशेष। ये कई एक श्रेणियोंमें बंटे हैं। एक श्रेणीके मनुष्य दूसरी श्रेणीके साथ विवाहमें दान ग्रहण नहीं करते है। इस जातिकी विधवा स्त्रियां अपने देवरसे विवाह करती है। किन्तु ज्येष्ठ मृत कनिष्टकी विधवासे विवाह नहीं कर सकती। आग्रा और फरुखाबादके अञ्चलमें इस जातिका वास अधिक है।

गदसिंह—एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने अनेकार्थध्वनिमञ्जरी नामक एक संस्कृत अभिधान, तत्त्वचन्द्रिका नामक किरातार्जुनीयटीका और उषाविवेककी रचना की है।

गदला (फा० वि०) मटमैला, गन्दा।

गदहपचीसी (हिं० पु०) प्रायः १६से २५ वर्ष तककी अवस्था। लोगोंका विश्वास है कि इतने दिन मनुष्य अनुभवी रहते तथा उनकी बुद्धि अपरिपक्व रहती है।

गदहपन (हिं० स्त्री०) मूर्खता, बेवकूफी।

गदहपूरना (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पौधा जो दवाके काममें आता है।

गदहलोट (हिं० स्त्री०) कुश्तीका एक पेंच।

गदहलोटन (हिं० पु०) १ क्लान्ति दूर करनेके लिये तथा प्रसन्नताके लिये गदहेका जमीन पर लोटना। २ गदहा लोटनेका स्थान। साधारणतः मनुष्योंका विश्वास है कि ऐसी जगह पर पांव रखनेसे मनुष्य थक जाते और पांवमें दर्द होने लगता है।

पर गजपतिसिंह सम्राट्का खास हाथी ले आये। बादशाहके उस पर सवार होने पर उनके पास गजपति भी बैठ गये। बादशाहने किसी प्रकारकी बाधा नहीं दी, वे महावतके साथ चल दिये। उधर नूरजहान्ने छद्मवेश धारण कर जवाहिर खाँके साथ नदीके उस पार राजकीय सैन्य शिविरमें प्रवेश किया। नूरजहान् अपने भाईके साथ मिल कर सम्राट्के उद्धारार्थ युद्धके लिए आयोजना करने लगीं। उन्होंने कहा सेनापतिके दोषसे ही ऐसा हुआ; क्योंकि उन्होंने बादशाहकी रक्षाके लिए सेनाको शिविरमें न रख करके नदीके उस पार भेज दिया था, और इसीलिए महावत बिना बाधाके बादशाहको काबू करनेमें समर्थ हुआ।" जिस रातमें बादशाह महावतके हाथ बन्दी हुए, उसके दूसरे दिन प्रातःकाल ही नूरजहान् राजकीय सेनाके आगे आगे चलीं; किन्तु वे नदी पार न हो सकीं; क्योंकि पुल तो शत्रुओंने पहले हीसे तोड़ दिया था। नूरजहान्ने पैदल पार होनेके लिए आदेश दिया और वे ही पहले पानीमें उतरीं; पर उस पारसे शत्रुओं द्वारा तीरोंकी वर्षा होने कारण वे नदी पार न हो सकीं। फिदाई खाँने महावतकी सेना पर फिर एक बार आक्रमण किया, पर वह भी निष्फल हुआ नूरजहान् बादशाहके उद्धारके लिए कोई भी उपाय न देख हताश हो गईं और अपनी इच्छासे वे बन्दी बादशाहके साथ मिल गईं।

जहांगीर।

महावत बन्दी सम्राट्को ले कर काबुल चल दिये। यहां आ कर जहांगीर महावतके साथ सद्व्यवहारसूचक व्यवहार करने लगे। नूरजहान् बादशाहके उद्धारके लिए उनको गुप्त भावसे जो कुछ कहती थीं, वे प्रायः उस बातको महावतसे कह दिया करते थे। जहांगीरने महावतसे यह बात भी कह दी थी कि, सायस्ता खाँकी स्त्री जब कभी मौका पावेंगी तभी वे उन्हें (महावतका) गोलीके आघातसे मार डालेंगी। इन सब कारणोंसे महावतने बादशाहका कारावास शिथिल कर दिया। इधर राजपूत विदेशमें उपस्थित थे और स्थानीय लोग बादशाहके प्रति सदय थे। इसी मौकेमें नूरजहान् अपने पक्षकी वृद्धि करने लगीं। होशियारखाँ नामक इनके एक अनुचर लाहोरसे २००० सेना लेकर काबुलकी तरफ अग्रसर हुए। काबुलमें बहुत सेना इकट्ठी की गई। बादशाहने एक दिन महावतके पास सम्वाद भेजा कि, वे नूरजहांकी सेना देखना चाहते हैं और उस दिन महावतकी सेना कूच-कवायद न करे; क्योंकि ऐसा होनेमें दोनों पक्षमें संघर्ष होनेकी सम्भावना है। नूरजहांकी सेना सम्राट्की तरफ इस तरह अग्रसर हुई कि, जिससे महावतके रजपूतरक्षक सम्राट्से अलग हट गये। नूरजहान्के भाई आसफ खाँ महावतके हाथ बन्दी हो गये थे, इसलिए उन पर आक्रमण न कर जहांगीरने उनके पास निम्न लिखित चार आदेश भेज दिये—

(१) महावत शाहजहान्के विरुद्ध यात्रा करें। (२) आसफखां और उनके पुत्रको बादशाहके पास पहुंचाया जाय। (३) युवराज दानियलके पुत्रोंको वापिस भेज दें। (४) अपनी ज़ामिनके लिए लश्करोंक राजदरबारमें भेज दें। इसके सिवा उन्हें यह भी जतला दिया कि, यदि वे आसफखांको भेजनेमें देर करेंगे, तो उनके विरुद्ध सेना भेजी जायगी। बादशाहने काबुलसे लौट कर आसफखांको पञ्जाबका शासनकर्त्ता नियुक्त किया।

शाहजहान्ने बादशाहकी अधीनता स्वीकार कर ली और कुछ अनुचरोंके साथ वे अजमेर चले गये। पारस्यराज शाह अब्बासके साथ शाहजहांकी मित्रता थी। उन्हें आशा थी कि, अब्बासके पास जानेसे उनकी कुछ दुर्दशा सुधर जायगी। इसी आशासे वे अजमेर गये थे। वहां पहुंचने पर शाहरयारके विश्वस्त अनुचर शरीफ उल्मुल्क उन पर आक्रमण करनेके लिए आगे बढ़े। परन्तु डर कर हो हो अथवा और किसी कारणसे वे

स्वीकार कर लिया। इस बरको पाकर वह दुर्द्धर्ष हेतिरव मतवाला हो गया और थोड़े दिनके बाद इन्द्रको भगा कर इन्द्रपुरी अपने अधिकारमें कर लिया। क्रमानुसार समस्त देवताओंको पदच्युत कर भगाने लगा। हेतिरवके इस असह्य अत्याचारको देख कर समस्त देवगण विष्णुके निकट उपस्थित हुए और उन्होंने हेतिके भयङ्कर अत्याचारको कह सुनाया। विष्णु भगवान्‌ने उन पर दया दिखा कर कहा "यदि तुम लोग मुझे एक महास्त्र दो तो मैं हेतिका नाश शीघ्र कर डालूं।" इस पर देवताओंने समयानुकूल देख गदासुरकी वज्रसी कठिन अस्थिसे बनी हुई गदा विष्णु भगवानको अर्पण कर दी। विष्णुने गदाके दृढ़ आघातसे हेतिरवका विनाश कर डाला। वह गदा उन्हें बहुत अच्छी लगी इस लिये उन्होंने इसे लौटा कर देवताओंको नहीं दिया वरं अपने हाथमें ही धारण कर लिया, तबहीसे इनका नाम गदाधर पड़ा। (गयामाहात्म्य ५ अ०) २ गया तीर्थस्थित देवमूर्ति विशेष। (त्रि०) ३ जो गदा धारण करता हो। कई एक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम—

१ क्रियाकल्पद्रुम-प्रणेता। २ ग्रहयोगायुतहोमादिसिद्धि नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ३ एक प्राचीन वैद्यक ग्रन्थकार। ४ एक धर्मशास्त्र-संग्रहकार। इन्होंने गदाधरपद्धति, सम्प्रदायप्रदीप और नवकण्डिकासूत्रभाष्य प्रणयन किये हैं। ५ वृहत्तारतम्यस्तोत्रके रचयिता। ६ भगवत्तत्त्वदीपिका नाम भक्तिशास्त्रके प्रणेता। ७ रसिकजीवन नामक संस्कृत अलङ्कारके रचयिता। ८ विवाहसिद्धान्तरहस्य नामक ज्योतिर्ग्रन्थ प्रणेता। ९ एक प्रसिद्ध तान्त्रिक। ये राघवेन्द्रके पुत्र और धोरसिंहके पौत्र थे। इन्होंने तत्त्वप्रदीप नामक शारदातिलककी टीका की है। १० एक प्राचीन कवि।

गदाधरचक्रवर्ती—काव्यप्रकाशके एक टीकाकार।

गदाधरतर्काचार्य—रामतर्कालङ्कारके पुत्र, देवीमाहात्म्य-टीकाके रचयिता। राढीय ब्राह्मणोंके निर्दोष कुलपञ्जिका नामक कुलग्रन्थमें एक नैयायिक गदाधर भट्टाचार्यका नाम पाया जाता है, वे भी रामतर्कालङ्कारके पुत्र होते हैं। ऐसी हालतमें दोनो एक ही व्यक्ति हो तो असम्भव नहीं।

गदाधरदास—एक हिन्दी कवि, व्रजवासी प्रसिद्ध हिन्दी कवि कृष्णदासके शिष्य और वल्लभाचार्यके प्रशिष्य।

गदाधर दीक्षित—एक प्राचीन वैदिक सूत्रभाष्यकार। इनके पिताका नाम वामन था। इनके बनाये हुए आश्वलायन-गृह्यसूत्रभाष्य और पारस्करगृह्यसूत्रभाष्य पाये जाते हैं।

गदाधरनदी—ब्रह्मपुत्रकी एक शाखा नदी। यह भूटानकी गिरिमालासे निकल कर जलपाईगोड़ी और ग्वालपाड़ाको पश्चिम और पूर्व द्वारमें विभक्त करती है। इसकी गति बड़ी ही परिवर्तनशील है। इसी लिये स्थान स्थान पर इसका नाम बदलता गया है। किसीके मतसे यह नदी उत्तरांशमें सङ्कोश, ग्वालपाड़ामें गङ्गाधर तथा इसके निम्नभागमें भी प्राचीन गर्भ गदाधर नामसे मशहूर है। रामनाई नामकी इसकी एक शाखा है।

गदाधरनाथ—एक प्राचीन कवि।

गदाधरपण्डित—चैतन्य देवके एक प्रधान अन्तरङ्ग। चैतन्यभक्तगण इन्हें भी श्रद्धादृष्टिसे देखते हैं।

गदाधरभट्ट—बान्दाप्रदेशके एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। इनके प्रपितामह मोहनभट्ट, पितामह पद्माकर और पिता मिहीलाल ये तीनों कवि थे। किन्तु गदाधरने कविता लिख कर अपने पितृगणसे उच्चासन लाभ किया था। ये राजा भवानीसिंहके यहां रहते थे। अलङ्कारचन्द्रोदय इन्हींका बनाया है।

गदाधर भट्टाचार्य—संस्कृत अध्यापक और विख्यात नैयायिक। ये वारेन्द्रश्रेणीके ब्राह्मणवंशीय पण्डित थे। इनके पिताका नाम जीवाचार्य रहा। ये पावना जिलाके अन्तर्गत लक्ष्मीचापड़ा नामक ग्राममें रहते थे। विद्याभ्यास करनेके लिये नवद्वीप आकर नैयायिक हरिरामतर्कवागीशके विद्यालयमें न्यायशास्त्र अध्ययन किया था। गदाधरकी शिक्षा समाप्त न होने पाई थी कि हरिरामकी मृत्यु हो गई। हरिरामके ऐसा कोई सुयोग्य पुत्र न था जो पाठशालामें विद्यार्थियोंको पढ़ा सकता। मृत्यु समय उन्होंने अपनी स्त्रीसे गदाधरको ही पाठशालामें नियुक्त करने कहा था। गदाधर पढ़ानेमें प्रवृत्त हो गये। किन्तु छात्रगण उनसे पढ़नेमें अपनी अनिच्छा प्रगट कर दूसरी दूसरी पाठशालाओंमें अध्ययन करनेके लिये चले गये।

मतका अवलम्बन किया था ; किन्तु सिंहासन पर बैठ कर ये इस्लाम-धर्ममें कट्टर हो गये थे। अन्तिम समय फिर उनका यह भाव दूर हो गया था। उनके भजनालयमें बौद्ध और ईसाई धर्मकी तसवीरें मिलती थीं।

जहांगीर स्थापत्यविद्या और भास्करकार्यके अनुरागी थे। इन्होंने बादशाह अकबरका एक समाधि-मन्दिर बनवाया था। इनकी ऐसी इच्छा थी कि, यह मन्दिर पृथिवी पर सबसे उत्कृष्ट हो ; किन्तु खुसरूके विद्रोहसे चञ्चलचित्त होने कारण यह मन्दिर उनके आशानुरूप नहीं बन सका। कुछ भी हो, उन्होंने कई एक स्थान तोड़ कर फिरसे बनानेके लिए आदेश दिया था। जो बढ़िया तसवीरें बना सकते थे, बादशाह उन्हें काफी इनाम देते थे। उनका काव्य और संस्कृत ग्रन्थोंके अनुवादमें विशेष अनुराग था। उनके बहुतसे सभासद् गजल बना कर इन्हें सुनाया करते थे। इनके राज्यमें फल-कर नहीं लिया जाता था। इन्होंने इस प्रकारको आज्ञा दी थी कि, 'अगर कोई आबादी ज़मीन पर फलोंके पेड़ लगावेगा तो उससे किसी तरहका महसूल न लिया जायगा।' जहांगीरने एक कहानीको सुन कर फलकर उठा दिया था। कहानी यह है—"एक दिन किसी राजाने सूर्यकिरणोंसे अत्यन्त उत्तप्त हो कर निकटवर्त्ती एक फलके उद्यानमें प्रवेश किया। वह उद्यानपालको देख कर राजाने कहा—यहां दाड़िम मिल सकता है या नहीं! उद्यानपालने उन्हें दाड़िमका पेड़ दिखा दिया। राजाने एक कटोरी दाड़िमका रस मांगा। उद्यानपालकी लड़की पास ही खड़ी थी। उससे कहने पर उसने शीघ्र ही एक कटोरीमें दाड़िमका रस ला कर राजाको दिया। पीछे उक्त राजाके पूछने पर उद्यानपालने उत्तर दिया कि, 'मुझे फल बेच कर सालाना ३०० दीनारका लाभ होता है और इसके लिए मुझे किसी तरहका कर नहीं देना पड़ता।' इस बात को सुन कर राजाने मन ही मन सोचा कि, मेरे राज्यमें बहुतसे बाग हैं ; यदि प्रत्येक बागके लाभका दशमांश राजकरस्वरूप लिया जाय, तो राज्यकी आमदनी बहुत कुछ बढ़ जाय।' इसके बाद ही उन्होंने एक और कटोरी रस मांगा ; परन्तु अबकी बार रस लानेमें विलम्ब हुआ और मिला भी बहुत थोड़ा। राजाने इसका कारण पूछा, तो लड़कीने यह जवाब दिया 'पहले एक ही दाड़िमके रससे कटोरी भर गई थी, परन्तु इस बार बहुतसे दाड़िमोंके निचोड़ने पर भी कटोरी न भरी।' इस पर राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ। उद्यानपालने कहा—'राजाकी इच्छा होने पर फसल अधिक होती है। महाशय शायद आप इस देशके राजा हैं। सम्भवतः इस उद्यानकी आमदनीकी बात सुन कर आपके मनकी गति पलट गई है। इसीलिए कटोरी भर रस नहीं निकला है।' राजाने लज्जित हो कर मन ही मन प्रतिज्ञा की कि—'यदि यह सत्य है, तो कभी भी फल-कर न लूंगा।' कुछ देर पीछे उन्होंने फिर कटोरी भर रस मंगाया। लड़कीने शीघ्र ही कटोरी भर कर रस ला कर राजाको दिया। सुलतानने उद्यानपालकी बुद्धि और ज्ञानकी प्रशंसा कर उसको अपना परिचय दिया। उन्होंने लोगोंको शिक्षा देने और इस घटनाको चिरस्मरणीय बनानेके लिए उस कन्याके साथ विवाह कर लिया।" बादशाह जहांगीरने इसी आख्यायिकाको सुन कर फल-कर नहीं लगाया था।

जहांगीरके राजत्वकालमें नूरजहान् और उनकी माताने अतरका आविष्कार किया था।

जहांगीर देखनेमें सुडौल, सुपुरुष, और लम्बे कदके थे। इनका वक्षस्थल अत्यन्त प्रशस्त, बाहें लम्बी और रंग ललाईको लिए हुए था। ये कानोंमें सोनेके कुण्डल पहनते थे। इन्होंने काबुल, कान्दाहार और हिन्दुस्तानमें नाना प्रकारके सिक्के चलाये थे। इनके समयमें राजदरबारमें फारसी भाषा व्यवहृत होती थी। जनसाधारण हिन्दी भाषा बोलते थे। बादशाह और उनके कई एक वजीर तुर्की भाषामें वार्तालाप करते थे। जहांगीरका इतिहास बहुतोंने लिखा है ; इसके सिवा राजत्वके १८ वर्ष तकका इतिहास जहांगीर खुद लिख गये हैं। शेषके कई वर्षोंका इतिहास महम्मद हादी द्वारा लिखा गया है। जहांगीर चगताई तुर्की भाषामें लिखते थे।

जहांगीर कुलिखाँ—बादशाह अकबर और जहांगीरके एक कर्मचारी, ये खाँ आजिम मिर्जा अजीज कोकाके पुत्र थे। १६३१ ई०में शाहजहान्के राजत्वके ५वें वर्ष इनकी मौत हुई।

त्रि०) २ गदाधारी, जो गदा रखता हो। ३ रोगी

गढ़िनगलज—कोल्हापुर जिलेके अन्तर्गत इसी नामके उपविभागका सदर। यह कोल्हापुरसे ४५ मील दक्षिण-पूर्व संकेश्वर यारपोली सड़कके निकट हिरण्यकेशी नदीतीर पर अवस्थित है। लगभग १६०० ई०में जब लगातार अनावृष्टि होने लगी थी तो अधिवासियोंने शहरको उक्त नदीतीर पर ला स्थापित किया था। तभीसे यह शहर नदीतट पर बसा आ रहा है। कोल्हापुरकी नाई लगभग १८वीं शताब्दीमें पटवर्द्धन कोण्डराव और निपानिकरने इस शहरको तहस नहस कर डाला था। इसके पास ही एक प्राचीन दुर्ग भग्न अवस्थामें पड़ा है। कहा जाता है कि वह दुर्ग कापसी वंशके पूर्वपुरुषोंका निर्माण किया हुआ है। इसमें लगभग ७०० घर लगते और ३००० मनुष्य वास करते हैं। यहां मामलतदार और मुन्सिफ आफिस है। इसके अलावे एक सरकारी अस्पताल, पुस्तकालय, डाकघर और विद्यालय हैं। इस शहरसे तीन मीलकी दूरी पर एक मन्दिर है जहां प्रतिवर्ष मार्च महीनेमें एक भारी मेला लगा करता है।

गदेला (हिं० पु०) रूई आदिसे परिपूर्ण एक बहुत मोटा बिछौना।

गदोरी (हिं० स्त्री०) हथेली

गद्खाली—बङ्गालके यशोर जिलाके अन्तर्गत एक नगर। यह कलकत्तेसे यशोर जानेके रास्ते पर अक्षा० २२° ५' ३०" उ० और देशा० ८८° ६' पू०के मध्य कपोताक्ष नदी किनारे अवस्थित है। वेदिया जातिके उत्पातके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

गद्गद (सं० पु०) गद्गद भावे वञ्। १ अव्यक्त अस्पष्ट शब्द, वह आवाज जो साफ साफ सुनाई न पड़े। २ अत्यधिक हर्ष, प्रेम। ३ प्रसन्न, आनन्दित, पुलकित। ४ एक प्रकारका रोग। इसमें मनुष्य स्पष्ट शब्द नहीं बोल सकते, एक ही शब्द बोलनेमें कई बार उच्चारण करने पड़ते हैं। यह रोग या तो जन्मसे होता है या लकवेकी बीमारीसे। हकलाना।

गद्गदक (सं० त्रि०) गद्गदे चाट-वाक्य कुशलः। गद्गद्-कन्। चाट-वाक्यनिपुण।

गद्गदध्वनि (सं० पु०) गद्गदः कफादिना अव्यक्तध्वनिः। १ अव्यक्तध्वनि, अस्पष्ट शब्द।

गद्गदध्वनि (सं० त्रि०) गद्गदो ध्वनिर्यस्य, बहुव्री०। १ जिसको बोली स्पष्ट न हो, अव्यक्तध्वनियुक्त। (पु०) अव्यक्त ध्वनि।

गद्गदस्वर (सं० पु०) गद्गदः कफादिना अव्यक्तः स्वरो ध्वनिः। अव्यक्तध्वनि, वह शब्द जो साफ साफ सुनाई न पड़े।

"स गद्गदस्वरं किञ्चित्प्रिय प्राशेव भाषते।" (साहित्यद०)

गद्द (हिं० पु०) १ कोमल स्थान पर किसी पदार्थके गिरनेका शब्द। २ अजीर्णके कारण पेटका भारीपन।

गद्दम (हिं० पु०) पक्षीविशेष। इसका सिर पीला, पैर सफेद और पेट लाल होता है।

गद्दर (हिं० वि०) अपक्व, जो अच्छी तरह पका न हो, अधपका २ मोटा गद्दा।

गद्दा (हिं० पु०) १ रूई आदिसे भरा हुआ मोटा बिछावन। तोशक, गदेला। २ टाटका बना हुआ फुट भर मोटा एक चौकोर बिछावन। जिसके मध्यमें लगभग गज परिमाणके एक लम्बा छेद होता है। यह हाथीकी पीठ पर हौदा कसनेसे पहले रख कर बांधा जाता है। ३ घास, पयाल रूई आदिके मुलायम पदार्थोंका बोझ। ४ किसी मुलायम चीजकी मार या ठोकर।

गद्दी (हिं० स्त्री०) १ छोटा गद्दा। २ वह कपड़ा जो घोड़े, ऊंट आदिकी पीठ पर जीन आदि रखनेके लिये रखा जाता है ३ व्यवसायी आदिके बैठनेकी जगह। ४ किसी बड़े अधिकारीका पद। ५ किसी राजवंशकी पीढ़ी वा आचार्य्यको शिष्यपरम्परा।

हिमालय गढ़मुक्तेश्वर, सरवा और रामपुर अञ्चलमें इनका वास अधिक है। आगे देखो।

गद्दी—युक्तप्रदेशस्थ जातिविशेष, गोपालन करना ही इनका प्रधान कार्य है। गद्दियोंको बलपूर्वक मुसलमान बना लिया गया था। घोसियों और अहीरोंसे इनका निकटस्थ सम्बन्ध है। गद्दी २२५ प्रकारके होते हैं।

गद्दीनशीन (फा० वि०) १ सिंहासनारूढ़। २ उत्तराधिकारी।

गद्य (सं० त्रि०) गद-यत्। १ कथनीय, कहने योग्य।

"सद्यः कथं वियोगस्य गद्यमेतत् तथा मम।" (भट्टि ६।४७)

(क्ली०) २ छन्दरहित वाक्य। साहित्यदर्पणके-

हुई अष्ट्रेलिया महादेशमें* पहुंची थी। (४) उसके बाद काष्ठ-निर्मित बहुत सी नावोंको पशुकी स्नायु वा लताओंकी रस्सीसे बांध कर बृहत् जलयान बनानेकी प्रचेष्टा की गई। (५) उसको भी कुछ उन्नति करके सोतरसे रस्सो आदिके द्वारा तख्तीको बांध कर बड़ी नाव बनाई गई। (६) उसके बाद, पहले जहाजके अवयवोंको बना कर फिर उसमें कीलोंसे तख्ता और दांड़ पतवार आदि बैठा कर जहाज बनानेकी रीति प्रचलित हुई।

उल्लिखित प्रत्येक प्रकार जलयान अब तक असभ्यों-के ही व्यवहारमें आया करता है। किन्तु उन्नतिशील देशोंने सभ्यताकी वृद्धिके साथ साथ जलयानकी भी यथेष्ट उन्नति कर वाणिज्य और भावविनिमयमें सुगमता कर ली है।

जहाजका इतिहास—पाश्चात्य विद्वानोंने जहाजको क्रमोन्नतिका वर्णन करते हुए वा मानव द्वारा उसके व्यवहारकी प्राचीनता दिखाते हुए, बतलाया है कि, मिसरदेशमें तीन हजार वर्ष पहले जहाज व्यवहृत होता था। किन्तु यदि उन्हें हमारे देशके वैदिक साहित्य और चित्रशिल्पादिके विषयमें कुछ परिज्ञान होता, तो सम्भव है उन्हें ऐसे भ्रममें न पड़ना पड़ता। हमारे देशमें ही सबसे पहले जहाज बनाये और काममें लाये जाते थे। इसलिए पहले हम अपने देशके अर्णवपोतका (अति प्राचीनकालसे वर्त्तमान समय तकका) इतिहास लिख कर, पीछे पाश्चात्य देशमें उसके क्रमविकाशके विषयका आलोचना करेंगे।

ऋग्वेदका प्रथमांश कितने समय पहले रचा गया था, इस विषयमें विद्वानोंका मतभेद है। लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलकके मतसे हिन्दुओंका परम पवित्र ऋग्वेद आजसे तीस हजार वर्ष पहले रचा गया था। यद्यपि यह मत सबके लिए मान्य नहीं है, तथापि यह निश्चित है कि ऋग्वेदकी रचना अति प्राचीनकालमें हुई थी। इस ऋग्वेदमें हमें जहाज और समुद्र यात्राके अनेक उल्लेख मिलते हैं।

"वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पतताम्।
वेदनावः समुद्रियः।" (ऋक् १।२५।७)

इस पदमें इस बातका उल्लेख है कि वरुणदेव समुद्रके उन मार्गोंसे परिचित थे जहांसे जहाज जाया आया करते थे। इस प्रथम मण्डलके सिवा हमें और भी एक सूक्तमें समुद्रयात्राकी उत्कृष्ट वर्णनामूलक एक प्रार्थना मिलती है—

"द्विषो नो विश्वतोमुखाति नावेव पारय।
सनः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये॥"

अर्थात्—'हे विश्वदेव! जिनका चारों ओर ही मुख है, वे हमारे शत्रुओंको उसी प्रकार भगा दें, जिस प्रकार जहाज उस पार भेज दिया जाता है। तुम हम लोगोंको समुद्रमें जहाज पर चढ़ा कर ले जाओ, जिससे सबका मङ्गल हो।' और एक जगह, वणिकोंने धनको लालसासे विदेशमें जहाज भेजे थे, इस बातका उल्लेख है—

"उवासोषा उच्छाच्चनु देवी जीरा रथानां।
ये अस्या आचरणेषु दध्रिरे समुद्रे न श्रवस्यवः॥"
(ऋक् १।४८।३)

इसके अलावा अन्यत्र एक जगह (ऋक् १।५६।२) ऐसे वणिकोंका उल्लेख आया है कि जिनका कर्मक्षेत्र किसी सीमाके द्वार आबद्ध नहीं है; लाभके लिए वे सर्वत्र जाया करते थे और प्रत्येक समुद्रमें उनके जहाज चलते थे। सातवें मण्डलके एक सूक्तमें लिखा है—वशिष्ठ और वरुणने बड़े कौशलसे एक जहाज बनवाया था और उस पर चढ़ कर भ्रमण किया था। (ऋक् ७।८८।३-४) समुद्रयात्राके विषयमें प्रथम मण्डलकी एक कहानीसे (१।११६।३) हम जान सकते हैं कि बहुत प्राचीन समय-में हमारे देशमें एकसौ डांड़ोंसे खेया जानेवाला जहाज भी मौजूद था। कहानी इस प्रकार है—ऋषिने तुग्र अपने पुत्र भुज्युको शत्रुके विनाशनार्थ किसी दूरदेशमें भेजा था; किन्तु मार्गमें जहाजके टूट जानेसे वे अनुचर सहित समुद्रमें गिर पड़े। इस विपत्तिमें अश्विनी-युगलने एकसौ डांड़ोंका जहाज ला कर उनकी रक्षा की।

रामायणके पढ़नेसे भी हमें इस बातका परिज्ञान हो जाता है कि प्राचीन भारतमें जहाज और समुद्रयात्रा-

* वर्तमान अष्ट्रेलियाके आदिम अधिवासी सम्भवतः उन्हीं द्राविड़ोंकी सन्तान है।

आय प्रायः १००००) रु० है, जिनमेंसे वृटिश गवर्नमेंट-को ४६०) रु० और जुनागढ़के नवाबको २००) रु० कर देना पड़ता है।

गण्य (सं० वि०) प्राप्य, जो पानेके योग्य हो।

गन (सं० पु०) गण देखो।

गनकेरुआ (हिं० पु०) एक प्रकारका घास जो गाय भैंस-के चारेके काममें आती है।

गनगौर (सं० स्त्री०) चैत्र शुक्ल तृतीया। इस दिन गणेश और गौरीकी पूजा होती है।

गनना (सं० क्रि०) गिनती करना।

गनतङ्ग—पञ्जाब प्रदेशके वसहर विभागमें स्थित कुनावार और चीन साम्राज्यके मध्यवर्त्ती गिरिसङ्कट। यह अक्षा० ३१° ३८' उ० और देशा० ७८° ४७' पू०में अवस्थित है। इसकी ऊंचाई २१२२९ फुट होगी। इसका सर्वोच्च स्थानसमूह बहुत दिन तक बर्फसे आच्छादित रहता है बर्फसे ढका रहनेके कारण यह पर्वत दुरारोह है। यहां एक भी वृक्ष उगने नहीं पाता है। गिरिसङ्कट-से पर्वतशिखरको ऊंचाई १८२८५ फुट है।

गनिग—महिसुर राज्यस्थ जातिविशेष। यह तेल निका-लते और बेचते हैं। इनमें कुछ लोग अपना परिचय साहु वैश्य जता देते हैं।

गनिसंदे—बम्बई प्रदेशके सम्पगाव उपविभागसे १० मील दक्षिण हिरेवन्दोहल्लो ग्रामके निकटस्थ एक पर्वत-श्रेणी। यह समतलक्षेत्रसे ६०० फुट ऊंची है।

गनियारी (हिं० स्त्री०) पौधाविशेष। यह सनोको तरह होता है। इसको पत्तियां बबूलकी पत्तियोंसे चौड़ी होती हैं। इस पौधेमें श्वेत पुष्प और करौंदेके बराबर छोटे छोटे फल होते हैं। इसकी लकड़ा रगड़नेसे आग उत्पन्न करती है। वैद्यकमें गनियारी कटु, उष्ण, अग्नि-दीपक और वातनाशक मानी जाती है।

गनी (अ० पु०) धनी, धनवान्।

गनी—एक मुसलमान कवि। इनका असली नाम मिर्जा मुहम्मद ताहिर था, ये काश्मीरमें पैदा हुये थे। यह शेख मुहसिन फानीके छात्र रहे और अपने विद्याप्रभावसे एक सुकवि हो गये। इन्होंने अपने गुरुसे अधिक प्रतिष्ठा पायी थी। इनका बनाया 'दोवान् गनी' नामक काव्य-ग्रन्थ बहुत अच्छा है। १०७९ हिजरीको यह इहलोक छोड़ गये। कहते हैं कि दिल्लीके बादशाह आलमगीरने काश्मीरके शासनकर्ता सैफ खांको उन्हें अपने पास भेज देनेके लिये लिखा था। सैफ खांने जब यह संवाद सुनाया, वह जानेको अस्वीकृत हुये और कहने लगे—सम्राट-को कह दीजिये कि गनो पागल हो गया है और उस अवस्थामें बादशाहके सामने जाने लायक नहीं। सैफ खां-ने कहा, वह कैसे उन जैसे ज्ञानी व्यक्तिको उन्मत्त कहते। इस पर उन्होंने बातकी बातमें उन्मादग्रस्त हो करके अपने कपड़े फाड़ डाले और तीन दिन बाद मर गये।

गनीगार—महिसुर राज्यस्थ जातिविशेष। यह स्थूलवस्त्र, टाट, बोरे आदि बुनते हैं। परन्तु बहुतसे गनीगार खेती करते और अपनेका ऊंचा समझते हैं।

गनीम (अ० पु०) १ लुटेरा, डाकू। २ वैरी, शत्रु।

गनुटिया—वीरभूम जिलाके अन्तर्गत रामपुरहाट परगना-का एक नगर। यह अक्षा० २३° ५२' उ० और देशा० ८७° ५० पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या ४०७ है। पहले यहां रेशम बहुत तैयार किया जाता था। रेशम-का व्यवसाय हो अधिवासियोंका जोवनाधार था। १७८६ ई०को फ्रास हाड साहबने रेशमके व्यवसायके लिये एक कोठी बनवाई थी और इष्ट इण्डिया कम्पनो-का एजेण्ट होकर यहांसे अपने मुल्कमें प्रस्तुत रेशम रफ-तनी करते थे। आजकल इस नगरमें रेशमका व्यापार नहीं होता है और फ्रास हाड साहबकी बनाई कोठो कलकत्ताके किसी अङ्गरेजने खरीद ली।

गनीमत (अ० पु०) लूटका माल, मुफ्तका माल।

गनेल (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका घास जो छप्पर छानेके काममें आती है।

गनोद—काठियावाड़ जिलाके अन्तर्गत एक छोटा करद-राज्य। यह उपलेटासे ८ मील दक्षिण—पश्चिम और ओशम पहाड़ोसे ६ मील उत्तर—पश्चिम भादर नदीके उत्तरीय तीर पर अवस्थित है। यह गोन्दल भायादके अधीन है। यह एक बड़ा और समृद्धिशाली शहर है। लोकसंख्या लगभग २२१० है।

गनोरिया (लैं० स्त्री०) सूजाक।

गनौरी (हिं० स्त्री०) नागरमोथा।

गन्तव्य (सं० स्त्री०) गमनीय, जाने योग्य, चलने लायक।

है। कोटिभट्ट राजा श्रीपाल वाणिज्यके लिए विदेश गये थे; मार्गमें धवल सेठने उनकी रानी रैनमंजूषाके सौन्दर्य पर मुग्ध हो कर श्रीपालको समुद्रमें डाल दिया था। जैन पुराणानुसार आजसे प्रायः बहुत हजार वर्ष पहले नेमिनाथकी समयमें चारुदत्त वाणिज्यके लिये समुद्रयान द्वारा विदेश गये थे। जीवन्धरस्वामीने, जो श्रीमहावीरस्वामीके समयमें हुए थे, समुद्रयात्रा की थी तथा जिनदत्त सेठ जहाज पर चढ़ कर सिंहलद्वीप गये थे। इसके सिवा जैन-पुराणोंमें और भी बहुत जगह समुद्रयात्रा और जहाजका उल्लेख पाया जाता है।

वेद, पुराण, स्मृति आदि धर्मग्रन्थोंके सिवा संस्कृत काव्य, नाटक आदिमें भी प्राचीन भारतके अर्णवपोतकी गौरव-वार्ताका अभाव नहीं है। कालिदासके रघुवंशमें लिखा है—राजा रघुने वङ्गाधिपतिकी सुदृढ़ रणतरीको पराजित कर गङ्गाके मध्यस्थित द्वीपमें विजयस्तम्भ स्थापित किया था।

"वङ्गान् उत्खाय तरसा नेता नौसाधनोद्यतान्।
निचखान जयस्तम्भं गंगास्रोतोऽन्तरेषु च॥"
(रघु० ४।३६)

श्रीहर्षराज लिखित रत्नावली नामक सुप्रसिद्ध नाटकमें भी, सिंहलकी राजकुमारीके वत्सराजकी राजधानीमें आते समय मार्गमें जहाज फट जानेके कारण उनकी दुरवस्थाका वर्णन मिलता है।

दशकुमारचरितके रत्नोद्भव वणिक् किस तरह कालयवनद्वीपमें गये थे और वहांसे सुन्दरी पत्नीको व्याह कर आते समय जहाजके फट जानेसे उन्हें कैसी विपत्तिमें पड़ना पड़ा था, यह किसीसे छिपा नहीं है। शिशुपालवधमें प्राचीन भारतके वाणिज्यके विषयमें एक जगह बड़ा अच्छा वर्णन आया है—'श्रीकृष्णने देखा, कि दूरदेशसे बहुतसे जहाज द्रव्यादि ले कर इस देशमें आये और उन्हें बेच बहुतसा अर्थ संग्रह कर इस देशकी चीजें ले पुनः अपने देशको चल दिये।"

संस्कृत कथासरित्सागरके ८वें लम्बककी १ली तरङ्गमें कहा गया है, कि पृथ्वीराज एक रूपदक्ष व्यक्तिके साथ अर्णवयानमें चढ़ कर मुक्तापोड़द्वीपमें उपस्थित हुए थे। उक्त ग्रंथमें और भी बहुत जगह समुद्रयात्राका विवरण लिखा है। हितोपदेशके कन्दर्पकेतु वणिक अर्णवतरी पर सवार हो समुद्रयात्रा की थी, यह कौन नहीं जानता। इस प्रकार हम प्राचीन संस्कृत साहित्यके प्रायः सभी विभागोंमें भारतवर्षके जहाजोंकी वर्णना पाते हैं।

जहाजका उल्लेख सिर्फ संस्कृतमें ही निबद्ध हो, ऐसा नहीं। पालि साहित्यके जातकों एवं प्राकृत-भाषामें लिखित प्राचीन जैन-पुराणोंमें भी जहाज और समुद्रयात्राका बहुत कुछ विवरण पाया जाता है। जनक जातक, वालहस्स जातक आदिमें अर्णवयान फट जानेका जिक्र है। "समुद्र-वाणिज-जातक"का जहाज इतना बड़ा था कि एक ग्रामके १००० सूत्रधार उसमें बैठ कर भाग गये थे। "वभेरु-जातक"के पढ़नेसे अनुमान होता है, प्राचीन भारतवर्षके वणिक् बबिलोनिया (Babylonia) के साथ व्यापार करते थे। उक्त देशके इतिहासके पढ़नेसे भी यह अनुमान दृढ़ होता है। "दीर्घनिकाय" (१।२२) के पढ़नेसे मालूम होता है कि जहाज पर चलते चलते भारतीय वणिकोंकी दृष्टि किनारे तक न पहुंचती थी।

पालि-साहित्यका भली भांति मनन करके Mrs. Rhys. Davids ने निम्नलिखित सिद्धान्त निश्चित किया है—

प्राचीनकालमें भारतवर्षके साथ बबिलोन और सम्भवतः अरब, फिनिसिया और मिसर देशका समुद्र पथसे वाणिज्य-सम्बन्ध प्रचलित था। पश्चिम देशीय वणिक् प्रायः बनारस वा चम्पासे जहाज खेते थे, इसका उल्लेख प्रायशः देखनेमें आता है।

भारतीय स्थापत्य, चित्रशिल्प और मुद्राकी सम्यक् आलोचना करनेसे भी हम प्राचीनकालके जहाजोंकी प्रतिकृतिका परिज्ञान हो सकता है।

ईसाके पूर्व द्वितीय शताब्दीके साञ्चीस्तूपसे प्राचीन भारतकी नौविद्याका कुछ परिचय मिलता है। पूर्व द्वारके १नं० स्तूप पर तथा पश्चिमद्वारके १नं० स्तूप पर जहाजकी प्रतिकृति है। शेषोक्त स्थापत्यमें सम्भवतः राजकीय प्रमोद अर्णव अङ्कित है।

बम्बई प्रदेशके कानड़ीकी गुफामें ईसाकी २य शताब्दीके खुदे हुए चित्रमें एक भग्न जलयानका विवरण लिखा है। उसमें यात्रिगण व्याकुलचित्त हो देव

निर्हारी संहतः स्निग्धो रूक्षो विशद एव च ॥
एवं दशविधो ज्ञेयः पार्थिवो गंध इत्युत।" (भारत १४।५० अ०

१ इष्ट, २ अनिष्ट, ३ मधुर, ४ अम्ल, ५ कटु, ६ निर्हारी, ७ संहत, ८ स्निग्ध, ९ रूक्ष, १० विशद। इनमेंसे कस्तूरी प्रभृतिका गन्ध इष्ट, विष्ठादिका गन्ध अनिष्ट, मधुयुक्त पुष्पादिका मधुर, मिर्चका कटु, हींगका निर्हारी, मिश्रितका चित्र, तप्त घृतका स्निग्ध, सरसी तेलका रूक्ष, शालोतण्डुलका विशद और इमली प्रभृतिका गन्ध अम्ल माना गया है।

कालिकापुराणके मतसे सुरभिगन्ध पांच भागोंमें विभक्त है—चूर्णीकृत, घृष्ट, दाहाकर्षित, सम्मर्दजरस और प्राणीके अङ्गसमुद्भवरस। गन्धद्रव्यके चूर्ण तथा गन्धपत्र वा पुष्पके चूर्णोंको चूर्णीकृत गन्ध कहते हैं। चन्दन, सरल और नमेरुके घर्षणके लिये गन्ध एवं अगुरु प्रभृति घर्षण द्वारा जिसका पङ्क निर्गत करके देवताओंको अर्पण किया जाता है उसीको घृष्ट गन्ध कहते हैं। देवदारु, अगुरु, पद्म, गन्धसार और चन्दनप्रियाको चुवानेसे जो सुगन्धिरस निकलता है उसीका नाम दाहाकर्षित है। सुगन्ध करवीर विल्व, गन्धिनी एवं तिलक प्रभृतिको कूट करके जो रस निकला जाता है वही सम्मर्दजगन्ध है। मृगनाभि या उसके कोषसे जो गन्ध उत्पन्न होता है उसको प्राण्यङ्गजगन्ध कहते हैं। यह स्वर्गवासियोंका अत्यन्त आमोदप्रद है। (कालिकापुराण ६९ अ०)

तन्त्रसारका मत है कि मध्यमा, अनामिका और अंगुष्ठके अग्रभाग द्वारा देवताओंको गन्ध देना उचित है। गन्धपत्र देखो।

२ लेश, छोटाई, कण। ३ सम्बन्ध। ४ गन्धक। ५ गव, अहङ्कार, घमंड। ६ शोभाञ्जन, सहिजन। (त्रि०) ७ गन्धयुक्त, जिसमें गन्ध हो। ८ प्रतिवेशी, पड़ोसी। (क्ली०) ९ कृष्णागुरु, काला अगर।

गन्धक (सं० पु०) गन्धोऽस्त्यस्य गन्ध-अच्, ततः स्वार्थे कन्। १ शिग्रु वृक्ष, शजनेका पेड़। २ उपधातुविशेष, पीले रंगकी धातु। पर्याय—गन्धाश्मा, सौगन्धिक, गन्धिक, सुगन्धिक, गन्धपाषाण, पामाघ्न, गन्धमोदन, पूतिगन्ध, अतिगन्ध, कीटघ्न, शरभूमिज, गन्धी, वर, सुगन्ध, दिव्यगन्ध, रसगन्धक, कुष्ठादि और क्रूरगन्ध है। वैद्यकके मतसे इसका गुण—कटु, उष्ण, तीव्र, अतिशय अग्नि वृद्धिकर है। यह कृमि, प्लीहा और नेत्ररोगनाशक माना गया है। (राजवल्लभ)

भावप्रकाशमें गन्धककी उत्पत्तिके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—किसी एक दिन देवी भगवती श्वेतद्वीपमें क्रीडा कर रही थीं। इसी समय उनका परिधेय वस्त्र आर्तव रक्तमें रंग गया। पर्वतनन्दिनी लज्जासे चञ्चल हो उस वस्त्रको परित्याग न कर क्षीरसमुद्रमें स्नान करने लगीं। उस वस्त्रसे रजः निःसृत हुआ और इसीसे गन्धककी उत्पत्ति हुई। गन्धक वर्णभेदसे चार प्रकारका है यथा—रक्त, पीत, श्वेत और कृष्णवर्ण। स्वर्णसंस्कार विषयमें रक्तवर्ण, रसायन-क्रियामें पीतवर्ण और व्रण आलेपन विषयमें श्वेतवर्ण गन्धक प्रशस्त है। कृष्णवर्ण गन्धक स्वर्णसंस्कारादिमें प्रशस्त है, किन्तु वह बहुत कम पाया जाता है। अशुद्ध गन्धक कुष्ठ, पित्तरोग और भ्रान्तिजनक एवं वीर्य, बल और रूपनाशक है। इस लिये गन्धक शोधन किये विना प्रयोगमें नहीं लाना चाहिये।

गन्धक-शोधन-प्रणाली—एक लौहनिर्मित पात्रमें घृत देकर अग्निमें उत्तप्त करना चाहिये। घृतके गरम होने पर उसके समान परिमाणका गन्धकचूर्ण उसमें डाल देना चाहिये। जब गंधक जल जाय तो उसे वस्त्रसे छांक कर दुग्धमें मिला देना चाहिये ऐसा करनेसे गंधक शोधित हो जाता है। शुद्ध या शोधित गन्धकके गुण—कटु, तिक्त, कषायरस, उष्णवीर्य, पित्तवृद्धिकर, सरगुणविशिष्ट, कटुपाक, रसायन एवं कण्डु (खुजली), विसर्प, क्रिमि, कुष्ठ, क्षय, प्लीहा, कफ और वायुनाशक है।

(भावप्रकाश पूर्व० २ भा०)

रसेन्द्रसारसंग्रहके मतसे गंधककी शोधन-प्रणाली—एक मट्टीके बरतनमें दूध और घृत रख कर कपड़ेसे बरतनका मुंह बांध दे और उसके ऊपरमें गंधक रख एक ढक्कनसे ढांक कर सन्धिस्थानमें लेप लगा दे। इसके बाद उसे मिट्टीमें गाड़ कर ऊपरसे अल्प उत्ताप देनेसे गंधक गल कर दूधमें टपकने लगेगा। इस विशुद्ध गंधकको औषधमें प्रयोग करना चाहिए। विशुद्ध गंधकका गुण—रसायन, सुमधुर, पाकमें कटु और उष्ण है, तथा इससे कण्डू

नौ-विभागके अध्यक्षको बन्दरमें शृङ्खलाको रक्षाके लिए नाना उपायोंका अवलम्बन करना पड़ता था। जब कभी कोई जहाज तूफानके कारण बहता हुआ बन्दरके पास उपस्थित होता था, तो उस समय उसे सबसे पहले आश्रय दिया जाता था। पानीसे यदि किसी जहाजका रफ्तनी किया हुआ माल बिगड़ जाता था, तो वे उस मालका महसूल माफ कर देते थे। यदि मल्लाह वा नाविकके अभावमें अथवा अच्छी तरह मरम्मत न होनेसे जहाज डूब या फट जाय, तो शासन-विभागसे वणिकोंकी क्षति-पूर्ति की जाती थी। जो उनके बनाये हुए नियमके प्रतिकूल चलते थे, उन्हें दण्ड भी दिया जाता था। उनको जलदस्युके जहाज, शत्रुदेशगामी जहाज तथा बन्दरके कानूनभङ्ग करनेवाले जहाजोंको नष्ट कर देने तकका अधिकार था। जहाज पर सवार हो, यदि निम्न प्रकारके व्यक्ति कहीं भागनेका प्रयत्न करते थे, तो वे उन्हें पकड़वा कर दण्ड दे सकते थे। जैसे—दूसरेकी स्त्री, कन्या वा धन चुरानेवाला एक व्यक्ति, दण्डित व्यक्ति, भारविहीन व्यक्ति, छद्मवेशी, अस्त्र वा विष ले जानेवाला व्यक्ति, इत्यादि। जो लोग बिना अनुमति (वा बिना टिकटके) भ्रमण करते थे, उनकी चीज-वस्तु वे जब्त कर सकते थे।

चन्द्रगुप्तके पौत्र प्रियदर्शी अशोकने भी पितामहके राजत्वका गौरव इस विषयमें अक्षुण्ण रक्खा था। सिंहल, मिसर, ग्रीक, सिरिया आदि देशोंमें उनका लेन-देन चलता था। समग्र भारतवर्षमें किस प्रकारका जहाजका व्यवसाय प्रचलित था, इसका परिचय मिल चुका। अब बङ्गदेशका विवरण लिखा जाता है, क्योंकि इस विषयमें इससे यथेष्ट ख्याति लाभ की थी।

बङ्गदेशके राजपुत्र विजयबाहु पिताके द्वारा निर्वासित होने पर किस तरह सिंहल गये थे, उसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। विजयबाहु अपने आदमियोंको तीन जहाजों पर चढ़ा कर सिंहलके लिए रवाना हुए थे। उन जहाजोंमें मस्तूल थे, पाल थे, अर्थात् ष्टीम और इंजन बननेके पहले जिन जिन चीजोंकी जरूरत थी, वे सब थीं। बहुतसे लोग विजयबाहुकी कथा पर अविश्वास करते हैं; किन्तु उनकी लङ्का यात्राका चित्र अजन्ता-गुहामें अब भी मौजूद है और वह आजसे १४०० वर्ष पहले अङ्कित हुआ था। उस समय भी लोग समझते थे, कि विजय इस तरह और इस प्रकारकी नौका पर चढ़ कर लङ्का पहुंचे थे।

ईसाके ४००० वर्ष बाद फाहियान ताम्रलिप्तसे एक जहाज पर चढ़ कर चीन गये थे। उस जहाज पर नाना देशके लोग थे। चीन-समुद्रमें भयङ्कर तूफान उपस्थित होने पर जब जहाजके डूबनेमें कुछ कसर न रही, तब फाहियानने बुद्धदेवका स्तव करना प्रारम्भ कर दिया। तूफान शान्त हो गया और जहाज बच गया।

उसके बाद ताम्रलिप्तसे चीन और जापानको जहाज गया था, ऐसा सुननेमें आता है। कुछ दिन बाद भारतवासी सुमात्रा, जावा, बाली आदि द्वीपोंमें जा कर बसने लगे और वहां शैव, वैष्णव और बौद्धधर्मका प्रचार करने लगे।

महाकवि कालिदासने कहा है, कि वङ्गदेशके राजा नौकाओं पर चढ़ कर युद्ध करते थे। पालराजागण युद्धके लिए बहुतसी नौकाएं रखते थे, इसमें सन्देह नहीं। खालिमपुरमें धर्मपालका जो ताम्रलेख मिला है, उसमें यह बात लिखी है कि युद्धके लिए धर्मपाल बहुत सी नावें रखते थे। रामपाल नौकाओंका पुल बना कर गङ्गा पार हुए थे, यह बात रामचरितमें स्पष्ट लिखी है। १२७६ ई०में ताम्रलिप्तसे कुछ बौद्ध भिक्षु जहाज पर सवार हो पेगन गये थे और वहांके बौद्धधर्मका संस्कार किया था, यह बात कल्याणी नगरके शिलालेखमें स्पष्टतया कही गई है।

इसके अतिरिक्त मनसा और मङ्गलचण्डीकी पोथीमें भी हमें बङ्गालकी नौकायात्राका यथेष्ट विवरण मिलता है—एक एक सौदागर एक साथ पन्द्रह सोलह जहाज एक नाविकके अधीन समुद्रमें ले जाया करते थे और यथा समय सिंहल पहुंचा, वहां १५-१६ दिन ठहर कर व्यापार करते थे। फिर वहांसे महासमुद्रमें जाते थे और नाना द्वीप उपद्वीपोंमें वाणिज्य करते थे। चांद

गन्धकारी (सं० स्त्री०) शल्लकीवृक्ष, शलईका पेड़।

गन्धकालिका (सं० स्त्री०) गंधकाली कन्-टाप्। व्यासदेवकी माता, सत्यवती।

गन्धकाली (सं० स्त्री०) गंध: प्रशस्तगंधस्तस्मै अलति पर्याप्नोति अल्-अच् गौरादित्वात् ङीष्। १ व्यासदेवकी माता, इनका दूसरा नाम सत्यवता था।

"भव त्व जननी मोघा। गंधकाली यशस्विनीम्।" (हरिव० १०१५०)

सत्यवती देखो।

२ कुन्तीसे मूर्तिधारिणी शापभ्रष्टा एक अप्सरा। इन्होंने हनुमान्‌के हाथसे निहत हो कर मुक्ति पाई थी। (रामायण)

गन्धकाष्ठ (सं० क्लो०) गंधयुक्तं काष्ठमस्य, बहुव्री०। १ अगुरुचन्दन, अगरकी लकड़ी। २ शम्बर चन्दन। (राजनि०)

गन्धकी (सं० स्त्री०) शल्लकी, शलई।

गन्धकी (हिं० वि०) गंधकके रंगका हलका पीला।

गन्धकुटी (सं० स्त्री०) गंधस्य कुटीव आधार:। १ मुरा नामक गंधद्रव्य। २ किसी मन्दिरके भीतरकी वह कोठरी जिसमें बहुतसी देवमूर्तियां रखी हों। ३ जैनियोंके केवलियोंकी कुटि। तीर्थङ्करोंके लिए इन्द्रादिदेव समवशरणकी रचना करते हैं। परन्तु साधारण केवली भगवान्‌के लिये गंधकुटीकी रचना होती है। जैसे—रामचन्द्रकेवली और गौतमकेवलीकी गंधकुटी।

गन्धकुसुमा (सं० स्त्री०) गंधयुक्त कुसुमं यस्या:, बहुव्री०। गणिकारी पुष्पवृक्ष, गनियारका पेड़।

गन्धकूटी (सं० स्त्री०) बौद्धविहारस्थ आराम स्थान।

"यावत् भगवता गंधकूट्यां शमिषंस्कार पादान्यस."।

(दिव्यावदानमें पूर्णवदान)

गन्धकेलिका (स० स्त्री०) गंधं केलति सञ्चारयति। कस्तूरी, एकसुगंधित द्रव्य, मृगनाभि।

गन्धकोकिला (सं० स्त्री०) गंधप्रधाना कोकिला इव। गंध द्रव्यविशेष, सुगंध कोकिल। इसका गुण—तीक्ष्ण, उष्ण, कफनाशक, तिक्त और सुगंधि है। (भावप्रकाश)

गन्धकोलिका (सं० स्त्री०) गंधमालतीके समान गंधद्रव्यविशेष।

गन्धखेड़ (सं० क्लो०) गंधस्य खेला यत्र बहुव्री०। सुगन्धित घास, गंधवेख। इसका पर्याय—भूतृण, रौहिष, गोमयप्रिय, गंधतृण, सुगंधभूततृण, सुरस, सुरभि, सुगन्धि और मुखवास है। यह तिक्त, रसायन, स्निग्ध, मधुर, शीतल, कफ, पित्त और श्रमनाशक एवं सुगंधि होता है। (राजनि०)

गन्धगज (सं० पु०) हाथियोंमें श्रेष्ठ।

गन्धगर्भ (सं० पु०) बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़।

गन्धघटा (सं० स्त्री०) गन्धद्रव्यविशेष।

गन्धग्राही (सं० स्त्री०) नासिका, नाक।

गन्धघ्राण (सं० क्लो०) गन्धकी बास।

गन्धचेलिका (सं० स्त्री०) गन्धं चेलति गच्छति चेल-ण्वुल-टाप्। कस्तूरी, मृगनाभि।

गन्धजटिला (सं० स्त्री०) गन्धेन जटिला, ३-तत्। वच, हैमवतीका पेड़।

गन्धजल (सं० क्लो०) गन्धाढ्यद्रव्यवासितं जलं मध्यपदलो०। सुगन्धि कुसुमादि वासित जल, सुगन्धित जल, गुलाबजल।

"धिष्ण्यं गंधजले कर्मा फलपुष्पाक्षताङ्कुरै:।" (भागवत ११।११।१५)

गन्धजात (सं० क्लो०) गन्धो व्यञ्जनादौ जातो यस्मात्, बहुव्री०। तेजपत्र, तेजपात। गन्धानां जातं समूह:, ६-तत्। २ गन्धसमूह।

गन्धज्ञा (सं० स्त्री०) गन्धं जानाति ज्ञा कर्तरि क-टाप्। नासिका, नाक।

गन्धतण्डुल (सं० क्लो०) गन्धं प्रधानं तण्डुलमस्य, बहुव्री०। सुगन्धि शालिविशेष, बासफुल चावल।

गन्धतन्मात्र (सं० क्लो०) गन्धस्य तन्मात्रं, ६-तत्। सांख्यमतसिद्ध सूक्ष्म द्रव्य। इसको हम लोग देख नहीं सकते, इसी लिये हमारा यह भोग्य नहीं है। योगी और देवतागण इसका भोग करते हैं। स्थूल पृथ्वीकी गन्ध जिसका हम लोग अनुभव करते हैं, वह शान्त, घोर या मूढ अर्थात् सुखकर, दुःखकर या मोहजनक है। किन्तु गन्धतन्मात्रमें जो गन्ध है वह शान्त और घोर या मूढ़ नहीं है। वेदान्तिकगण इस तन्मात्रको ही अपञ्चीकृतभूत नाम कहा करते हैं। नैयायिक और वैशेषिकगण तन्मात्र स्वीकार नहीं करते हैं, उनके मतसे परमाणु (पृथ्वीका अत्यन्त सूक्ष्मांश, जिसको और भाग कर नहीं सकते) वही चरम अवयव है। सांख्यभाष्यकार विज्ञानभिक्षुने इस

है। गठन और सुन्दरतामें भी तदनुरूप है। इसमें मोटर वा इंजन लगा देनेसे ही 'ष्टीम शिप' बन सकता है।'

ईसाको १२वीं शताब्दीके पहले चट्टग्रामकी वाणिज्य ख्याति यूरोपमें प्रचारित हुई थी। ईसाकी १४वीं शताब्दीमें वहां अरब और चीन देशके वणिकोंका समागम होता था। पाश्चात्य वणिकोंने "पोर्ट-ग्रैण्डो" नामसे इसका परिचय दिया है। भिनिस देशके वणिक सीजर फ्रेडरिक ईसाकी १६वीं शताब्दीमें यहां आये थे। उनका कहना है, कि पेगुसे बहुतसी चाँदी चट्टग्राममें जाया करती थी। उस समय चट्टग्राम ही बङ्गालमें चाँदीका प्रधान बन्दर था। शक सं० १५५३में हवर्ट साहब चट्टग्रामको बङ्गालका वाणिज्योन्नत और समृद्धिसम्पन्न अन्यतम नगर बतला गये हैं। शक सं १५६१में मण्डलेस् लुई राजमहल, ढाका, फिलिपाटम और चट्टग्राम इन स्थानोंको बङ्गालके प्रधान नगर बतला गये हैं।

प्राचीन भारतमें जहाजकी निर्माणप्रणाली—भारतवर्षमें किस तरह जहाज बनाये जाते थे, इसका परिचय ईं भोजके 'युक्तिकल्पतरु' नामक संस्कृत ग्रंथसे मिल सकता है। उनके मतसे क्षत्रियश्रेणीके काष्ठसे निर्मित जहाज द्वारा ही सुख और सम्पद प्राप्त होती है। इसी प्रकारके जहाज दुरवगम्य स्थानोंमें संवादादि भेजनेके लिए प्रशस्त हैं। विभिन्न श्रेणीके काष्ठसे बना हुआ जहाज मङ्गल वा सुखप्रद नहीं होता और न वह ज्यादा दिन ठहरता ही है। पानीमें सड़ जाता है और जरासा धक्का लगते ही टूट जाता है। काष्ठ संयोजनाके विषयमें भोजने बहुत मार्केका उपदेश दिया है—

"न सिन्धुगाद्योर्हति लौहबद्धं
तल्लौहकान्तैर्ह्रियते हि लौहम्।
विपद्यते तेन जलेषु नौका
गुणेन बन्धं निजगाद भोजः॥"

जहाजके नीचे काठके साथ लोहा काममें न लाना चाहिए; क्योंकि इससे समुद्रमें चुम्बकके द्वारा जहाज आकृष्ट हो कर डूब सकता है। इससे मालूम होता है कि हिन्दू लोग पहले खूब गहरे और अज्ञात समुद्रमें भी जहाज ले जाया करते थे। इसके सिवा भोजने आकार के अनुसार जहाजके भेद भी बतलाये हैं। प्रधानतः जहाजके दो भेद किये है—एक साधारण जो नदी आदिमें चलते हैं और दूसरे विशेष, जो सिर्फ समुद्र यात्राके लिए व्यवहृत होते हैं। यहां विशेषश्रेणीके जहाजोंका ही विवरण लिख रहे हैं। विशेषको उन्होंने दो भागोंमें विभक्त किया है—(१) दीर्घा और (२) उन्नता। दीर्घाके दश भेद हैं और उन्नताके पांच। नीचे उनके नाम, लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई लिखी जाती है—

नाम	लम्बाई	चौड़ाई	ऊँचाई
(१) दीर्घिका	३२ हाथ	४ हाथ	३⅕ हाथ
(२) तरणी	४८ ,,	६ ,,	४⅘ ,,
(३) लोला	६४ ,,	८ ,,	६⅖ ,,
(४) गत्वरा	८० ,,	१० ,,	८ ,,
(५) गामिनी	९६ ,,	१२ ,,	९⅗ ,,
(६) तरिः	११२ ,,	१४ ,,	११⅕ ,,
(७) जङ्घला	१२८,,	१६ ,,	१२⅘ ,,
(८) प्लावनी	१४४,,	१८ ,,	१४⅖ ,,
(९) धारिणी	१६०,,	२० ,,	१६ ,,
(१०) वेगिनी	१७६ ,,	२२ ,,	१७⅗ ,

इनमेंसे कुछके रखनेसे दुर्भाग्य होता है, जैसे—

"अत्र लोला गामिनी च प्लाविनी दुःखदा भवेत्।
लोलाया मारमारभ्य यावद्भवति गत्वरा।
लोलायाः फलमाधत्ते एवं सर्वासु निर्णयः॥"

उन्नता श्रेणीके भेद इस प्रकार हैं—

नाम	लम्बाई	चौड़ाई	ऊंचाई
(१) ऊर्ध्वा	३२ हाथ	१६ हाथ	१६ हाथ
(२) अनूर्ध्वा	४८ ,,	२४ ,,	२४० ,,
(३) स्वर्णमुखी	६४ ,,	३२ ,,	३२ ,,
(४) गर्भिनी	८० ,,	४० ,,	४० ,,
(५) मन्थरा	९६ ,,	४८ ,,	४८ ,,

इनमें भी अनूर्ध्वा, गर्भिनी और मन्थरा गर्हित हैं।

जहाजके यात्रियोंके सुभीतेके लिए भोजने कुछ नियम लिखे हैं। जहाजके सजानेके लिए स्वर्ण, रौप्य, ताम्र अथवा इन तीनोंकी मिश्रित धातु काममें लानी चाहिए। जिस जहाजमें चार मस्तूल हैं, उस पर सफेद रङ्ग, जिसमें तीन मस्तूल हैं उस पर लाल रंग, जिसमें दो मस्तूल हैं

गन्धधारी (सं० त्रि०) गन्धं गंधयुक्तं द्रव्यं धारयति धारि-णिनि। १ जो गंध द्रव्यको धारण करता हो। (पु०) २ महादेव।

"अकृत्य बहुरूपश्च गंधधारी कपर्दपि।" (भारत अनु० १७ अ०)

गन्धधूमज (सं० पु०) गंधस्य गंधाढ्यस्य धूमात् जायते गंधू-धूम-जन-ड। खादु नामक गंधद्रव्य।

गन्धधूलि (सं० स्त्री०) गंधयुक्ता धूलिश्चूर्णो यस्याः, बहुव्री०। कस्तूरी।

गन्धन (सं० क्ली०) गंध-ल्युट्। १ उत्साह, हिम्मत। २ प्रकाश, ज्योति, चमक। ३ हिंसा, बध। ४ सूचन। ५ ऋणभेद, गंधव्रण।

"वा गतिगंधनयो।" (कलाप, धातुपाठ)

गन्धनकुल (सं० पु०) गंधः गंधप्रधानो नकुल इव। कुछुन्दर।

गन्धनाकुली (सं० स्त्री०) गंधयुक्ता नाकुली। रास्ना-विशेष, एक प्रकारका नकुलीकंद। (Ophioxyton Serpentinum) इसका पर्याय—महासुगंधा, सुवहा, सर्पाक्षी, फणिहन्त्री, अहिभुक्, विषमर्दनिका, अहिमर्दनी, महाहिगंधा, नकुलाद्या और अहिलता है। यह तिक्त, कटु, उष्ण, त्रिदोषनाशक और विषघ्न माना गया है। (भावप्रकाश) २ चविका, चव्य नामकी दवा। ३ कन्द-विशेष।

गन्धनाम (सं० पु०) गंधेति पदयुक्तं नाम यस्य, बहुव्री०। रक्ततुलसी, लाल तुलसी।

गन्धनामकर्म—जैनमतानुसार वह कर्म जिसके उदयसे शरीरमें सुगंध और दुर्गन्ध उत्पन्न हो। शुभगंधनामकर्मसे सुगंधित और अशुभगंध नामकर्मसे दुर्गन्धित शरीर हो जाता है। (सर्वार्थसिद्धि)

गन्धनाम्नी (सं० स्त्री०) क्षुद्ररोगविशेष, एक साधारण रोग।

गन्धनालिका (सं० स्त्री०) गंधस्य गंधज्ञानस्य नालिका इव। नासिका, नाक।

गन्धनाली (सं० स्त्री०) गंधस्य नालीव। नासिका।

गन्धनिलया (सं० स्त्री०) गंधस्य निलयो वासो यत्र, बहुव्रो०। नवमल्लिका, चमेलीका फूल।

गन्धनिशा (सं० स्त्री०) गंधेन निशा हरिद्रा इव। गंध-पत्रा, शठीविशेष, कपूर कचूरी।

गन्धप (सं० त्रि०) गंधं पिबति, गंध-पा-क। देवता-विशेष, एक देवताका नाम।

"आभासुरा गंधपा दृष्टिपाश्च।
वाचा वहव्राश्च मनोविरुद्धाः॥" (भारत अनु० १८ अ०)

गन्धपत्र (सं० क्ली०) गन्धयुक्तं पत्रं। तेजपात। इसका गुण वातनाशक, शीतल और अग्निवृद्धिकर है।

"गंधाढ्या सोरसेयी च गंधपत्रं नपुंसकम्।
गंधपत्रं वातहरं शीतलं वह्निवर्द्धनम्॥" (वैद्यक)

(पु०) गन्धयुक्तं पत्रं यस्य, बहुव्री०। २ श्वेततुलसी। ३ मरुवकवृक्ष, मरुवा। ४ बर्बर, बबूल। ५ नागरङ्ग, नारङ्गी। ६ विल्व, बेल।

गन्धपत्रा (सं० स्त्री०) गन्धयुक्तं पत्रं यस्याः, बहुव्री० ततः टाप्। शठीविशेष, कपूर कचरी। इसका पर्याय—स्थूला, तिक्तकंदिका, वनजा, शठिका, वन्या, तवक्षीरो, एकपत्रिका, गंधपीता, पलाशान्ता, गन्धाढ्या, गंधपत्रिका, दीर्घपत्रा, गंधनिशा, वेदमुख्या और सुपाकिनी।

इसका गुण—कटु, खादु, तीक्ष्ण, उष्ण, वात, कास, ज्वरनाशक तथा पित्तकोपवृद्धिकर है। (राजनिघण्टु)

गन्धपत्रिका (सं० स्त्री०) गंधपत्रा संज्ञायां कन्-टाप्। १ गन्धपत्रा। २ अजमोदा। (राजनि०)

गन्धपत्री (सं० स्त्री०) १ अम्बष्ठा, एक लता, पाढ़। २ अश्व-गन्धा, एक झाड़ी, असगंध। ३ अजमोदा।

गन्धपर्ण (सं० क्ली०) गंधयुक्तं पर्णमस्य, बहुव्री०। गंध-पत्र, काकपुष्प।

गन्धपर्णी (सं० स्त्री०) सप्तपर्णी।

गन्धपलाशिका (सं० स्त्री०) गंधयुक्तं पलाशमस्याः, बहुव्री० कप्-टाप्। हरिद्रा, हल्दी।

गन्धपलाशी (सं० स्त्री०) गन्धयुक्तं पलाशं यस्याः, बहुव्री०। शठी, गन्धपत्रा, कपूरकचरी। शब्दार्थचिन्ता-मणिके मतसे इसका गुण—कषाय, ग्राही, लघु, तिक्त, तीक्ष्ण, कटु, मलनाशक, कास, व्रण, श्वास, शूल और हिचकीनाशक है।

गन्धपाषाण (सं० पु०) गन्धयुक्तं पाषाण इव। उप-धातुविशेष, गंधक।

"गंधपाषाणचूर्णेन यवक्षारेण लेपितम्।
छिपनाशं प्रकुर्व्यात् कटुतैलयुतेन च॥" (चक्रपाणिः क्षुद्ररोग)

ज्यादा न अमाते थे—ऐसे जहाजकी नौका कहनेसे अत्युक्ति न होगी। क्रुजेड नामक धर्मयुद्धके समय जहाजोंको काफी उन्नति हुई थी। इस समय भेनिस और जनोआके लोग जहाज पर चढ़ कर तत्कालीन पृथिवीके समग्र परिचित स्थानोंमें वाणिज्यके लिये जाते थे। इङ्गलैण्डके वीर राजा सिंहहृदय रिचार्ड (११८९—११९९ ई०में) बड़े भारी जहाज पर चढ़ कर युद्ध करने गये थे। उनकी अधीनतामें २३० जहाज युद्ध करते थे उस समय मुसलमानोंके भी बड़े बड़े जहाज थे। कहा जाता है, कि उनके एक जहाजमें १५०० आदमी समाते थे। उस समय वाणिज्यके काम आनेवाले जहाजों ही में युद्धके समय अस्त्र-शस्त्र द्वारा सुसज्जित कर लिये जाते थे—युद्धके लिए पृथक् जहाजोंकी उत्पत्ति उस समय तक न हुई थी।

परन्तु धर्मयुद्धके बाद ही यूरोपकी जातियोंमें पाश्चात्य-देश सम्बन्धी ज्ञानकी वृद्धि हुई। उसके कुछ समय बाद, यूरोपमें नवजागरणका आन्दोलन हुआ। वहांके एक श्रेणीके लोगोंके हृदयमें पृथिवीके अपरिज्ञात सुदूर देशोंमें जानेकी आकांक्षा उत्पन्न हुई। उन्हीं लोगोंकी कोशिशसे जहाजकी निर्माण-प्रणालीमें जमीन आसमानका फेर हो गया। उसी समय बारूदका भी आविष्कार हुआ और साथ ही जहाजोंमें तोप बैठानेके स्थान निर्दिष्ट किये गये।

इंगलैण्डमें राजा ५म हेनरीने बहुत बड़े बड़े जहाज बनवाये, जिनमें एक एक हजार टन माल अमाता था। कोलम्बसने जिस जहाज पर चढ़ कर अमेरिकाका आविष्कार किया था, उस श्रेणीका जहाज "Carvet" कहलाता है। यह देखनेमें छोटा होने पर भी बहुत तेजीसे जाता है और बड़ा मजबूत होता है।

पर्तुगीजोंने एक तरहका बडा जहाज आविष्कृत किया था, जिसका नाम था 'Barracks'। ईसाकी १६वीं शताब्दीमें जलयुद्ध अकसर हुआ करता था और इसीलिए इंगलैण्ड आदि देशोंमें एक प्रकारके युद्धके जहाजोंका बनना शुरू हो गया था।

ईसाकी १८वीं शताब्दीमें १० तोपोंवाले जहाजोंकी साधारण लम्बाई थी. १६४ फुट और उनमें १५७० टन माल अमाता था। इसी समयसे जहाजका आकार बदल कर उसमें उन्नति करनेकी कोशिश होने लगी। अब १९वीं शताब्दीके मध्यभागमें पालसे चलनेवाले जहाजोंको प्रथा उठा कर किस प्रकार ष्टीम या वाष्पसे चलनेवाले जहाजोंका प्रवर्तन हुआ, उसकी आलोचना की जाती है।

१७७७ ई०में सबसे पहले एक लोहेकी नौका बनाई गई। पीछे उसीके आदर्श पर एक दो चार जहाज भी लोहेसे बनाये गये। कहा जाता है जब मस्कलैण्ड नहरमें "भालकान" नामका जहाज बन कर तैयार हुआ, तभीसे लोहे- केजहाज बनानेकी रिवाज पड गई। पहले पहल लौह पोतके विषयमें बहुतोंने बहुत प्रकारसे आपत्ति की थी, किन्तु पीछे उसका व्यवहार होनेसे वह उनका मुंह बन्द हो गया। १८६०से १८७५ ई० तक जहाजके लिए इस्पात काममें आता रहा। काठके जहाजोंकी अपेक्षा लोहे और इस्पातसे बने हुए जहाजमें तीन विशेषताएं पाई जातीं है—(१) इसका भार वजन कम होता है, (२) यह ज्यादा दिनों तक टिकाऊ होता है, (३) मरम्मत करनेमें बहुत सुभीता है। इस उन्नतिसे जानेसे जहाजके द्वारा मानवसमाजका इतन उपकार हुआ है कि लेखनीसे उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

यद्यपि ई०को १८वीं शताब्दीके अन्तमें वाष्पद्वारा चालित जहाज दो एक हो चुके थे, तथापि उसका यथार्थरूपसे व्यवहार १९वीं शताब्दीके प्रारम्भसे हो हुआ है। पहले यह जहाज डाक ले जानेके लिए हो व्यवहृत होते थे, कारण पालके जहाजोंको अपेक्षा यह जल्दी पहुंचता था। १८३३ ई०में इङ्गलैण्डमे डाकका काम राजाके हाथसे ले कर साधारण कम्पनीके हाथमें सौंपा गया। "सभाना" नामक वाष्पीय जलयान सबसे पहले अटलाण्टिक महासागर पार हो गया। १८८५ ई०में "Enterprise" नामक एक वाष्पयान ४७० टन माल लाद कर लण्डनसे उत्तमाशा अन्तरोप होता हुआ १०दिनमें कलकत्ते आया था। भारतवर्षमें ष्टीम-जहाजका यही पहला आविर्भाव था।

एक चम्पावृक्ष पर बैठना पड़ता है और लड़कोंको एक चौकी या पीढ़ी पर बैठा कर सात बार वरका प्रदक्षिण कराते हैं। जहां चम्पावृक्ष नहीं रहता वहां उसकी डाली या उसकी तखता पर लड़केको बैठाते हैं। विवाहके समय वर कन्या दोनोंको लाल पाड़ जरद रंगका वस्त्र पहनाया जाता है। लड़कीको दशदिन पर्यन्त वह वस्त्र धारण करना पड़ता है। इन लोगोंमें दो या बहुविवाहको प्रथा प्रचलित नहीं है, किन्तु प्रथमा स्त्रीसे कोई सन्तान न होने पर द्वितीय बार विवाह करनेमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं है। विवाहबंधनच्छेद या विधवाविवाह पूर्णत: निषिद्ध है। किसी स्त्रीके असती वा परपुरुषगामी होने पर वह जाति और हिन्दु-समाजसे बहिष्कृत की जाती एवं उसका स्वामी उसकी मूर्ति बनाकर दाहकार्य करते हैं और इसके लिये एक मिथ्या श्राद्ध भी होता है। इनके क्रियाकलापादि उच्चश्रेणीके हिन्दुके जैसे हैं इन लोगोंमें अधिकांश वैष्णव, शाक्त और अल्प संख्यक शैव देखे जाते हैं वैशाखी पूर्णिमामें ये एक पात्रमें सिन्दूर लगा कर उसके सम्मुखमें दण्डी, वटखरा और हिसाबकी बही रख कर षोड़शोपचारसे अपने अपने इष्टदेवका पूजन करते हैं। गंधेश्वरी इन्होंकी इष्टदेवी है। ब्राह्मणको बुलाकर गंधेश्वरी मूर्तिकी पूजा कराते हैं। अनेक प्रकारके मसाले, चन्दनादि द्रव्य और भिन्न भिन्न प्रकारके पौधे और औषध विक्रय करना इनका प्रधान व्यवसाय है। अधीतविद्या नहीं होने पर भी ये कविराजी औषधकी व्यवस्था दे सकते हैं। अल्प स्वल्प रोग होने पर भी ये औषधका प्रयोग करते हैं। हिन्दुस्तानी भाषामें लोग इन्हें "पनसारी" कहा करते हैं। हरएक पनसारीकी दूकानमें प्राय: चारसौ तरहके औषध रखे जाते हैं। ये लोग अपने ही हाथोंसे बहुत तरहके पाचनादि प्रस्तुत कर विक्रय करते हैं।

गन्धबन्धा (सं० स्त्री०) गंधस्य बंधो ग्रहणं यया, बहुव्री०, टाप्। नासिका, नाक।

गन्धबन्धु (सं० पु०) गंधं बध्नाति बंध-उण्, यद्वा गंधस्य बन्धुरिव। आम्रवृक्ष, आमका पेड़। (शब्दरत्ना०)

गन्धबहल (सं० पु०) गंधो बहलो बहुलोऽस्य, बहुव्री०। सितार्जक, श्वेतपत्र क्षुद्रतुलसी, श्वेताजवला।

गन्धबहुल (सं० पु०) गंधो बहुलो यस्य, बहुव्री०। गंधशालि, गंधयुक्त चावल।

गन्धबहुला (सं० स्त्री०) गंधो बहुलो यस्याः, बहुव्री० ततः टाप्। गोरक्षीवृक्ष, एक प्रकारकी झाड़ी।

गन्धभद्रा (सं० स्त्री०) गंधो भद्रं रोगनाशको यस्याः, बहुव्री०। प्रसारणीलताविशेष, गंधाली लता।

गन्धभाण्ड (सं० पु०) गंधस्य भाण्ड इव। गर्दभाण्डवृक्ष, अमड़ाका पेड़। इसका पर्याय—नंदिवृक्ष, ताम्रपाकी, फलपाकी, पोतक, गंधमुण्ड और चिप्रपाकी है। (वैद्यकरत्नमाला)

गन्धमेदक (सं० पु०) १ कटक, एक प्रकार नमक। २ काचक, काला नमक। ३ लौह, लोहा। ४ तिलक, मिठातेल।

गन्धमांसी (सं० स्त्री०) गंधप्रधाना मांसी। जटामांसीविशेष। A kind of Indian spikenard. यह देखनेमें धूसरवर्ण और केशर जटाके सदृश है। इसका पर्याय—केशी, भूतजटा, पिशाची, पूतना, भूतकेशी, लोमशा, जटाला और लघुमांसी है। इसका गुण-तिक्त, शीतल, कफ, कण्ठरोग, रक्तपित्त, विष और ज्वरनाशक एवं कान्तिप्रद है। जटामांसी देखो।

गन्धमातृ (सं० स्त्री०) गंधस्य माता जननी, ६-तत्। पृथ्वी।

गन्धमातृका (सं० स्त्री०) गंधमातेति प्रसिद्ध वणिकद्रव्य, द्रव्यविशेष।

गन्धमाद (सं० पु०) १ श्रीरामचन्द्रजीकी सेनाका एक बन्दर। (भागवत ९।१०।१९) राम और रावणकी लड़ाईमें इन्होंने अपना युद्धकौशलका अच्छा परिचय दिया था। २ श्वफल्कके औरससे गांधिनीके गर्भमें उत्पन्न अक्रूरका भाई। (भागवत ९।२४।१५) ३ भ्रमर, भौंरा।

गन्धमादन (सं० पु०-क्ली०) गंधेन मादयति मद णिच् ल्यु। पर्वतविशेष। एक पहाड़का नाम। गंधमादन शब्दका प्रयोग प्राय: पुंलिङ्गमें ही देखा जाता है।

"तथैवावरेण पूर्वेण च माल्यवद् गन्धमादनौ नीलनिषधायतौ।" (भागवत ५।१६।१०) किसी किसी स्थानमें क्लीवलिङ्गमें भी प्रयोग किया गया है। "यत्र चैत्ररथ वाह्य गंधवद् गंधमादनं।" (कुमार)

गोलाध्यायके मतसे गंधमादन पर्वत, रोमकपत्तनके

प्रताप सिंहसे कुछ अनबन होने पर वे दिल्ली-दरबार गये थे। खृष्टोय १८वीं शताब्दोकी थोड़े समय तक यह नगर शाहपुर नरेशके अधिकारमें रहा और १८०८ ई०को कोटाके प्रसिद्ध दीवान जालिम सिंहने अधिकार किया। १८१८ ई०को वृटिश गवर्नमेण्टके मध्यस्थ होने पर उदयपुरने फिर जहाजपुर पाया। इस जिलेमें १ नगर और २०६ गांव हैं।

जहाजो (अ० वि०) जहाजसे संबन्ध रखनेवाला।

जहान (फा० पु०) जगत्, संसार, दुनियां।

जहानक (सं० पु०) जहाति शीलार्थं हा-शानच् संसार्यां कन्। प्रलय, ब्रह्माण्डका नाश।

जहानआरा बेगम—बादशाह शाहजहांकी औरत और उनके वजीर आसफ खांकी पुत्री। मुमताजमहलके गर्भसे १६१४ ई०में २३ मार्च बुधवारके दिन जहानआराका जन्म हुआ था। उस समयको स्त्रियोंमें यह राजकुमारी सच्चरित्रा, तीक्ष्णबुद्धिसम्पन्ना, लज्जाशीला, उदारहृदया, विदुषी और अत्यन्त रूपवती समझी जाती थीं। हिजरा १०५४ महरम २७ तारीखको रात्रिके समय, जब ये अपने पिताके पाससे अपने घर लौट रही थीं, उस समय एक जलते हुए प्रदीपसे लग कर उनकी पोशाक जल उठी। ये मसलिनको बनी हुई पोशाक पहने थीं। देखते देखते उनकी पोशाक तमाम जल गई, इनका जीवन सङ्कटमें पड़ गया। इतने पर भी इन्होंने किसी तरहको आवाज न दी; क्योंकि वे समझती थीं कि चिल्लानेसे पासके युवकगण आकर उन्हें अनावृत अवस्थामें देखेंगे और आग बुझानेके बहाने, सम्भव है शरीर पर भी हाथ लगावेंगे। जल्दीसे वे अन्तःपुरकी तरफ बढ़ीं और वहां पहुंचते ही बेहोश होकर गिर पड़ीं। बहुत दिनों तक उनके जीवनको कोई आशा नहीं थी। अनेक चिकित्सकोंको दिखा कर जब कुछ फल न हुआ तब शाहजहान्ने बाउटन नामक एक अंग्रेज चिकित्सकको बुलाया। इनसे राजकुमारीका स्वास्थ्य अच्छा हो गया। बादशाहने इस उपकारके पुरस्कारस्वरूप उन्नतहृदय डाक्टरको उनकी प्रार्थनाके अनुसार अंग्रेज बणिकोंको मुगल साम्राज्यमें बिना शुल्कके वाणिज्य करनेको सनद प्रदान की।

१६४८ ई०में १०५८ (हिजरा) जहानआरा बेगमने कमसे कम ५ लाख रुपये लगा कर आगरा-दुर्गके पास एक लाल पत्थरकी मसजिद बनवाई थी इन्होंने अपने भाई आलमगोरके राजत्वकालमें १०९२ हिजरा, ३रो रमजान तारीखको (१६८० ई० ता० ५ सेप्टेम्बर) इस संसारसे बिदा ले ली। जहाँनआराको पिता पर विशेष भक्ति थी और वे अतिशय कर्तव्यपरायणा थीं। इनको बहन रोशनआराका चरित्र इनसे बिल्कुल उलटा था। रोशनआरा अपने पिताको सिंहासनच्युत करानेके लिए औरङ्गजेबको उत्साहित करती थीं और इससे जहानआरा अपने वृद्ध पिताको कारावासमें भी सान्त्वना देती और उनकी सेवा शुश्रूषा करनेके लिए वह रहती थीं। जहानआरा कब्रके ऊपर सफेद संगमरमर पत्थरकी एक मसजिद बनी है और उसके ऊपर फारसीमें एक इबारत लिखी है, जिसका अभिप्राय इस प्रकार है—"कोई भी मेरी कब्र पर हरे रंगके पत्तों आदिके सिवा और कुछ न बखेरे; क्योंकि निरभिमान व्यक्तियोंकी कब्र पर इसीकी शोभा है।" इसके बगलमें लिखा है—चिसतीके पुण्यात्माओंकी चेलिन और शाहजहांको कन्या विलासिनी फकोर-जहानआरा बेगमने १०७२ हिजरामें मानव-लोला समाप्त की।

जहानखातून—एक प्रसिद्ध रमणी। प्रथम स्वामीके मर जाने पर इनका सिराजके शासनकर्त्ता शाह आबू इसहाकके सचिव अमीनउद्दीनके साथ द्वितीय परिणय हुआ था। यह बहुत खूबसूरत और कविता बना सकती थीं।

जहानदारशाह—दिल्लीके बादशाह बहादुरशाहके ज्येष्ठ पुत्र। बहादुरशाहकी मृत्युके उपरान्त १७१२ ई०में उनके जहानदार, आजिम उश्-शान, रफी उश्-शान और खोजास्ता, इन चार पुत्रोंमें परस्पर राज्यको ले कर झगड़ा होने लगा। आजिम् उश्-शान बहादुर शाहके २य पुत्र थे। इन्हीं पर बहादुर शाहका विशेष स्नेह था और उनके जीवित अवस्थामें ये बहुत समय राजकार्यमें व्यापृत रहते थे। बादशाहकी मृत्युके बाद आजिम उश्-शानने ही सिंहासन पर अधिकार कर लिया। इस पर तीनों भाइयोंने मिल कर उनके विरुद्ध

गन्धमूलक (सं० पु०) गंधमूलएव गंधमूलं स्वार्थे कन्। १ शठी, कपूरकचूरी। २ कच्छूर, कचूर।

गन्धमूला (सं० स्त्री०) गंधप्रधानं मूलं यस्याः, बहुव्री०। १ शल्लकी, शलई। २ शठी। (राजनि०)

गन्धमूलिका (सं० स्त्री०) गंधमूला-कन्-टाप्। १ माकन्दी, एक प्रकारका साग। २ शठी, कपूरकचूरी।

गन्धमूषिक (सं० पु०) गंधप्रधानो मूषिकः। छुछुन्दर।

गन्धमूषी (सं० स्त्री०) गंधप्रधाना मूषी। छुछुन्दर।

गन्धमृग (सं० पु०) गंधप्रधानो मृगः। १ कस्तूरीमृग, वह मृग जिसमें कस्तूरी पाई जाय। २ खट्टाश।

गन्धमृत्युघ्न (सं० पु०) कदम्बवृक्ष।

गन्धमैथुन (सं० पु०) गन्धेन योनिगन्धग्रहणेन मैथुनं मैथुनारम्भो यस्य, बहुव्री०। वृष, बैल।

गन्धमोजवाह (सं० पु०) श्वफल्कके पुत्रका नाम।

गन्धमोदन (सं० पु०) गंधेन मोदयति आह्लादयति। गंधक।

गन्धमोदिनी (सं० स्त्री०) १ चम्पककली। २ चम्पक-पुष्पकली, चम्पा फूलकी कली।

गन्धमोहिनी (सं० स्त्री०) गंधेन मोहयति मुह-णिच्-णिनि। चम्पककलिका, चम्पेकी कली।

गन्धयुक्ति (सं० स्त्री०) गंधानां गंधद्रव्याणां युक्तिः योगः, ६ तत्। गंधद्रव्यका योगविशेष। इसके सेवन करनेसे शुक्ल बाल कृष्ण वर्ण हो जाते हैं। वृहत्संहितामें इसकी प्रस्तुत प्रणाली और गुण इस प्रकार वर्णित हैं—जिसके बाल सफेद हो जाते हैं, कपड़े और अलङ्कारादि उसे कुछ भी शोभा नहीं देते हैं। बालोंकी शोभासे मनुष्य सुंदर देख पड़ते हैं। यहां तक कि बालही मनुष्यों-के मनोहर और शोभाकर अलङ्कार हैं। किन्तु मनुष्यके यह अनुपम अलङ्कार सर्वदाके लिये नहीं रहते, थोड़े-ही दिनोंमें कई एक कारणोंसे सफेद हो कर मनुष्योंको शोभाहीन बना देते हैं। इस लिये अञ्जन और भूषणादि की नाईं बालोंकी रक्षा करना एकान्त कर्तव्य है।

निर्मल लोहपात्रमें कोदों धानका चावल पाक करके लौहचूर्णके साथ पेषण करें। अच्छी तरह पीसने-के बाद अल्प परिमाणमें शुक्ल केशके ऊपर प्रलेप दें एवं भिंगे हुवे पत्तसे बांध रखें। दो प्रहरके पश्चात् उक्त प्रलेप को अलग करके मस्तकमें आंवलेका लेप देकर पहलेकी जैसा भिंगे हुए पत्तसे फिर भी ढांक दें। दो प्रहरके बाद लेपको सिरसे अच्छी तरह धो डालें। ऐसा करनेसे उजले बाल काले हो जाते हैं। इसके पश्चात् सुगंध तैलादि लगा कर स्नान करें और मनोहर गन्ध तथा धूप द्वारा मस्तकको भली भाँति सुगन्धित कर लें जिससे इसमें किसी प्रकारकी दुर्गन्ध न रहे।

चम्पकगंधि तैल—मञ्जिष्ठा, व्याघ्रनख, नखी, दाल-चीनी, कुट, चोलनामक गंधद्रव्य और चूर्ण इन सबको तैलके साथ मिला कर धूपमें गरम करना पड़ता है। इसीको चम्पकगंधतैल कहते हैं।

गंधद्रव्य प्रस्तुत करनेका नियम—शिलारस वा सिह्ला, वाला और तगरका समान भाग मिश्रित करने पर जो गंधद्रव्य प्रस्तुत होता है उसीको कामोद्दीपक गंध कहते हैं। इस गंधमें वराम, बकुल और हींगका धूप मिलाने-से कटुक नामक द्रव्य बन जाता है। काटकके साथ कुट मिलानेसे पद्म, पद्म गंधके साथ चंदन योग करनेसे चम्पक; चम्पक गंधके साथ धनियां, जायफल और दाल-चीनी मिलानेसे अतिमुक्त नामक गंधद्रव्य प्रस्तुत होता है।

सुगंधधूप प्रस्तुत करनेकी प्रणाली—शतपुष्पा, कुन्दुरुके चार भागोंका एक भाग, नखी और शिलारस अर्द्धभाग एवं चंदन और प्रियङ्गुके चौथाई भागको गुड़ और नखके साथ मिलाने पर एक प्रकारका सुगंधि धूप तैयार होता है। इसके सिवा गुग्गुल, वाला, लाक्षा, मोथा, नखी और शर्करा इन सबोंको बराबर मिलानेसे एक प्रकार-का धूप बन जाता है। जटामांसी, वाला, शिलारस, नखी और चंदन द्वारा पिण्ड करनेसे भी धूप तैयार होता है। हरीतकी, शङ्ख, घनद्रव और वालाके बराबर बरा-बर भागोंको मिलानेसे एक प्रकारका धूप बन जाता तथा उसमें गुड़ और उत्पल मिलानेसे दूसरे प्रकारका धूप तैयार होता है। दूसरे प्रकारके धूपोंके साथ शैलज और मोथा मिश्रित करनेसे एक तीसरे प्रकारका धूप बन जाता है। इन नौ प्रकारके द्रव्योंमें क्रमशः अन्तद्रव्य चौथाई भाग देनेसे एक उत्कृष्ट धूप तैयार होता है। शर्करा, शैलेय और मोथाके चार भाग, श्रीवासक और सर्ज दो भाग, नखी और गुग्गुलके दो भागोंको कपूर-

ये इतने निर्लज्ज और भ्रष्टचरित्र हो गये कि, गरीब घरकी बहू-बेटियोंको इनके हाथसे छुटकारा मिलना मुश्किल हो गया। लालकुमारीको बादशाहकी प्रणयिनी होनेका इतना गुमान था, कि एक दिन उसने औरङ्गजेबकी विदुषी कन्या जेब-उल्-निसाका भी अपमान कर दिया।

जहानदारशाहके राजत्वकालमें जुलफिकरखाँ ही सर्वेसर्वा थे उन्हींके इच्छानुसार शासनकार्य सम्पन्न होता था। साम्राज्यकी इस गड़बड़ीके समय आजिम-उश्-शानके पुत्र फर्रुखशियर, अबदुल्लाखां और हुसेन अली नामके सैयद भाइयोंकी सहायतासे पटनाके सम्राट्के विरुद्ध तयारियां करने लगे तथा उन्होंने अपने नामके सिक्के भी चला दिये। सम्राट्ने आज-उद्दीन, खोजा आसनखाँ और खाँदुरानके अधीन एक दल सेना भेजी। युद्धमें सम्राट्की सेना हार गई। इस पर जुलफिकर खांको सेनापति बना कर ७०००० अश्वारोही, बहुसंख्यक पदातिक और गोलन्दाज सैनिकोंको साथ ले कर बादशाह खुद अग्रसर हुए। १७१२ ई०में घोर युद्ध हुआ; किन्तु जयकी आशा न देख बादशाह लालकुमारीके साथ हाथी पर सवार हो कर आगरा भाग गये। वहां जा कर इन्होंने दाढ़ीमूंछ मुड़ा ली और वे छद्मवेशमें रहने लगे; छद्मवेशसे ये दिल्ली पहुंचे, वहां जाकर पहिले पहल ये पुराने वजीर आसद-उद्दौलाके घर गये। आसदने इन्हें कैद करके फर्रुख-शियरके हाथ सौंप दिया।

१७१३ ई०में फर्रुख-शियर सिंहासन पर बैठे। कुछ दिन बाद श्वासरोध कर जहानदारको हत्या की गई। इन्होंने कुल ११ मास ही राज्य कर पाया था।

जहानदारशाह (जवान वख्त)—बादशाह शाह आलमके ज्येष्ठ पुत्र। ये अपने पिताके कार्यों से तंग हो कर दिल्लीसे लखनऊ भाग आये। इसी समय आसफ उद्दौलाके साथ इष्ट-इण्डिया कम्पनीके कार्यनिर्वाहके लिये मि० हेष्टिंग्स भी लखनऊ ठहरे हुए थे। जहानदार मि० हेष्टिंग्सके साथ बनारस आये और वहीं रहने लगे। हेष्टिंग्सके अनुरोधसे लखनऊके नवाब-वजीरने इनके लिए वार्षिक ५ लाख रुपयेका इन्तजाम कर दिया। १७८८ ई०में १ली अप्रील को जहानदारने बनारसमें अपना शरीर छोड़ दिया। उनको बनारसमें ही एक अच्छी मसजिदमें गाड़ दिया गया। कब्रके समय उनके सम्मानार्थ सभी मान्यगण्य व्यक्ति और अंग्रेज रेसीडेण्ट वहां उपस्थित थे। ये मरते समय अपने तीन पुत्रोंको अंग्रेजोंकी देखरेखमें छोड़ गये थे। अंग्रेज लोग अब भी इनके वंशधरोंको सहायता पहुंचाते रहते हैं।

जहानदार एक सुपण्डित व्यक्ति थे। इन्होंने "बयाज़ इनायत मुर्शिदजादा" नामका एक अच्छा फारसी ग्रन्थ भी लिखा है। मि० हेष्टिंग्सने बङ्गालकी (अवस्थाकी) समालोचना कर जो ग्रन्थ प्रकाशित किया है, उसमें मि० स्काटका भी एक निबन्ध था, वह जहानदार कृत एक फारसी पुस्तकके कुछ अंशका अनुवाद है।

जहानी बानो बेगम—बादशाह अकबरके पुत्र मुरादकी कन्या। जहांगीरके पुत्र शाहजादा परवेजके साथ इनका विवाह हुआ था। परवेजके औरससे इनके नदीया बेगम नामकी एक कन्या हुई थी, जिसका विवाह शाहजहान्के ज्येष्ठ पुत्र दारा सिकोहके साथ हुआ था।

जहानशाह तुर्कमान—करा-युसफ तुर्कमानके पुत्र और सिकन्दर तुर्कमानके भाई। १४३७ ई० (८४१ हिजरा) में सिकन्दरकी मृत्यु होने पर जहानशाह अमीर तैमूरके पुत्र शाहरुके मिर्जा द्वारा अज़र बेजानके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। १४४७ ई०के बाद जहानशाहने पारस्यका बहुत अंश अपने राज्यमें मिला लिया था। ये दयारबिकर तक अग्रसर हुए, किन्तु १४६७ ई०के १० नवम्बरको सत्तर वर्षकी उम्रमें हासनबेगके साथ युद्धमें निहत हुए।

जहानसज—सुलतान अलाउद्दीन हासनगोरीको एक उपाधि।

जहानाबाद—कोड़ा और कोड़ा-जहानाबाद देखो।

जहानाबाद—१ विहारके अन्तर्गत गया जिलेका एक उपविभाग। इसका भूपरिमाण ६०६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३८३८१७ है। यह अक्षा० २४°५८´ से २५° १८´ उ० और देशा० ८४° २७´ से ८५° १३´ पू०में अवस्थित है। यहां अरवाल और जहानाबाद नामके दो थाना-

प्राणीकी मृत्यु होने पर जब तक दूसरा शरीर प्राप्त नहीं होताहै, तब तक वह एक सूक्ष्म शरीर धारण कर यातना अनुभव करते हैं, उनको इस अवस्थाको अन्तराभवसत्त्व कहते हैं।

टीकाकार रमानाथके मतसे अन्तराभवसत्त्वका अर्थ गुप्त प्राणी है। उन्होंने उदाहरण स्वरूप विराटपर्वका "गन्धर्वाः पतयो मम" यह वाक्य उद्धृत किया है।

४ ग्रहविशेष, एक प्रकारका ग्रह, जो समय पाकर मनुष्यके शरीरमें प्रवेश कर अनेक तरहकी अशान्ति उत्पादन करता है। आर्यचिकित्सक सुश्रुतका कथन है कि वैद्य क्षत और आतुर रोगीको निशाचरोंके हाथसे रक्षा करनेके लिये सर्वदा यत्नवान् होवें। चाहे रोगी क्षत हो अथवा न हो किसी तरह अशुचि होनेसे ही ग्रहगण हिंसाभिलाष पूर्ण करने अथवा पूजा पानेकी आशासे रोगीके शरीरमें प्रवेश कर उसे अनेक तरहके कष्ट देते हैं। यथानियमसे उनकी पूजा अथवा उपयुक्त औषध नहीं देनेसे वे रोगीको मार डालते हैं।

इस प्रकारके ग्रहोंकी संख्या बहुत है। किन्तु प्रधानतः ये आठ भागोंमें विभक्त किये जा सकते हैं। यथा—देव, असुर, गन्धर्व, यक्ष, पितृ, रक्ष, भुजङ्ग और पिशाच। इनके आवेश होने पर रोगी भूत भविष्यत्का हाल मालूम कर सकता है। उस समय यदि रोगीसे भूत और भविष्यत्की घटना पूछी जाय तो यह साफ साफ कह देता है। उस समय रोगीकी सहिष्णुता विलुप्त हो जाती है। जो सब कार्य मनुष्य बुद्धिसे अगम्य है, कभी भी उनसे वे कार्य सम्पन्न नहीं हो सकते उन्हें रोगी अनायास ही अनुष्ठान करके दर्शकोंको विस्मयापन्न और आत्मीय स्वजनोंको भयविह्वल तथा शोककातर बना देता है। आधुनिक वैज्ञानिक जो कुछ कहें लेकिन प्राचीन विद्वान् इस अवस्थाको भूत वा ग्रहावेश कहते एवं ग्रहपूजादि करके रोगीको प्रकृतिस्थ कर देते थे।

गन्धर्व ग्रहके आवेश होने पर रोगीका मन सदा हृष्ट रहता और नदीतीर वा निर्जन वनमें भ्रमण करनेकी यथेष्ट अभिलाष बनी रहती है। इस अवस्थामें रोगी गंध, माल्य और गीत बहुत पसन्द करता तथा कभी नाचता और कभी हंसता है।

दर्पणमें छाया वा प्रतिविम्ब, प्राणीके देहमें शीतोष्ण और सूर्यकिरण एवं देहमें जीव जिस प्रकार अलक्षित हो कर प्रवेश हो जाते हैं, उसी प्रकार गंधर्वग्रह भी अलक्षित होकर मनुष्यके शरीरमें प्रवेश करता है।

इसकी शान्तिके लिये नियमित जप और होम प्रभृति दैवक्रियायें करनी चाहिये। रक्तवर्ण गंधमाल्य, मधु, घृत अनेक प्रकारके खाद्य, वस्त्र, मद्य, मांस, रुधिर और दुग्ध प्रभृति प्रदान करना उचित है।

इतने करने पर भी यदि रोगीको शान्ति न मिले तो औषध प्रयोग करना चाहिये। छागल, भालु, शल्यक और उलू इनके चमड़े और रोमको हींग एवं छागमूत्रमें मिला कर धूम प्रयोग करनेसे वलवान् ग्रहसे रोगी छुटकारा पा सकता है।

गोसर्प, नकुल, विडाल और भालुकका पित्त एकत्र कर गजपिप्पलीके मूल, त्रिकटु, आमलका और सरसों देकर भावित करें। इसके नस्य लेने और सेवन करनेसे ग्रहकी शान्ति होती है।

नटकरञ्ज, त्रिकटु, सोणा, वेलमूल, हरिद्रा और दारुहरिद्राको एक साथ लेकर इसकी वत्ती बनावें। पित्तके सहयोगसे इसका अञ्जन सेवन करनेसे ग्रहकी शान्ति होती है।

ये सब औषध या अन्य कोई चिकित्सा देवग्रहमें अयुक्तरूपसे प्रयोग नहीं करनी चाहिये। पिशाचके अतिरिक्त किसी दूसरे ग्रहमें कोई प्रतिकूल आचरण करना निषिद्ध है, करनेसे ग्रह क्रुद्ध होकर वैद्य और रोगी दोनोंको ही नाश कर डालता है। (सुश्रुत उत्तर० ६० अ०)

गन्धर्वग्रहकी कथा वदिक उपन्यासमें भी वर्णित है। वृहदारण्यक उपनिषद्‌में लिखा है कि किसी समय बहुतसे मुनिकुमार अध्ययनके लिये मद्रदेशको गये थे। विद्याभ्यासके लिये वे कपिगोत्रसम्भव पतञ्जलके गृहमें जा पहुंचे। वहां उन्होंने उनकी नन्दिनीको गंधर्वग्रहके वशीभूत देखा।

"मद्रेषु चरकाः पर्यव्रजाम ते पतञ्जलस्य काप्यस्य गृहानैम, तस्यासीद् दुहिता गन्धर्वगृहीता।" (वृहदारण्यक, ७ ब्राह्मण)

५ ऐरण्ड, रेंडी।

"गन्धर्वतैलसिद्धां हरीतकीं गोऽम्बुना पिबेत्।" (भावप्रकाश)

६ देवयोनिविशेष, स्वर्गगायक। ये देवताओंको

पुत्र। (भारत अनु० ४ अ०) ३ कुरुक्षेत्रपति कुरुके पुत्र। ४ राजा सुहोत्रके पुत्र। ये अत्यन्त तपःपरायण राजर्षि थे। ये जिस समय यज्ञ कर रहे थे, उस समय भागीरथोने आ कर इनके समस्त यज्ञद्रव्यको वहा दिया। इस पर जह्नुने भागीरथीको एक गण्डूषमें पान कर लिया। राजा भगीरथने जह्नुकी बहुत कुछ स्तुति की। जह्नुने उनकी स्तुतिसे सन्तुष्ट हो कर उसको कानसे निकाल दिया। इसलिए गङ्गाका नाम जाह्नवी पड़ गया। (रामा० विष्णुपु०) मतान्तरमें—जह्नुने उरुस्थलसे गङ्गाको निकाला था।

जह्नुकन्या (सं० स्त्री०) जह्नोः कन्या, ६-तत्। गङ्गा।

जह्नुतनया (सं० स्त्री०) जह्नोः तनया, ६-तत्। गङ्गा।

जह्नुसप्तमी (सं० स्त्री०) जह्नोः सप्तमी, ६-तत्। गङ्गा-सप्तमी वैशाख मासकी शुक्ला सप्तमी। वैशाखकी शुक्लसप्तमी तिथिमें जह्नु मुनिने गङ्गाको पी लिया था। तभीसे यह तिथि जह्नुसप्तमीके नामसे प्रसिद्ध है। इस दिन जो गङ्गामें स्नान करता और यथाविधि पूजा करता है, वह समस्त पापोंसे विमुक्त हो कर अन्तमें अक्षय स्वर्गसुख भोगता है। (कामाख्यातन्त्र ११ प०)

जह्नुसुता (सं० स्त्री०) जह्नोः सुता, ६-तत्। जाह्नवी।

जह्मन् (सं० क्ली०) हा-मनिन् पृषोदरादित्वात् साधुः। उदक, जल, पानी। उदक देखो।

जा (सं० स्त्री०) जायते सम्बन्धिनी या, जन-ड टाप्। १ माता, मां। २ देवरपत्नी, देवरकी स्त्री देवरानी। (त्रि०) ३ जायमान, उत्पन्न, सम्भूत।

जा (फा० वि०) उचित, वाजिब, मुनासिब।

जाई—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत अहमदनगर जिलेमें रहनेवाले एक प्रकारके ब्राह्मण। महाठी माताके गर्भ और ब्राह्मण पिताके औरससे इस जातिको उत्पत्ति है, जारज दोषसे इनकी समाजसे पतित ब्राह्मणोंमें गिनती है। अन्यान्य ब्राह्मण इनसे घृणा करते हैं और इनका छुआ हुआ अन्न-जलग्रहण नहीं करते। इनकी पोशाक प्रायः मराठी ब्राह्मणों जैसी है। पौरोहित्यके सिवा ये ब्राह्मणोंके सभी काम करते हैं। कृषि, वाणिज्य, मुनोमी, नौकरी, भिक्षावृत्ति ये सब इन लोगोंकी उपजीविकाएं हैं। ब्राह्मणोंकी तरह इनमें भी १०-१२ वर्षकी उम्रमें बालकोंकी उपनयनक्रिया होती है, पर क्रियाकलापोंमें वेदोच्चारण नहीं होता, अन्यान्य मन्त्र पढ़े जाते हैं। इन लोगोंमें बाल्यविवाह, बहुविवाह और विधवाओंका विवाह प्रचलित है। इनमें स्वजातीय प्रेम बहुत ज्यादा पाया जाता है। किसी कठिन सामाजिक विषयकी मीमांसा करनी हो, तो विज्ञव्यक्तिगण एकत्र हो कर स्थानीय ब्राह्मण पण्डितोंकी सहायता ले कर उसकी मीमांसा कर लेते हैं।

जाइस—१ अयोध्याके रायबरेली जिलान्तर्गत सलोन तहसीलका एक परगना। इसका भूपरिमाण १५४३ वर्गमील है। इसके उत्तरमें मोहनगञ्ज परगना, पूर्वमें अमेठी परगना, दक्षिणमें प्रतापपुर और अतेहा परगना और पश्चिममें रायबरेली परगना है। यहांकी जमीन उर्वरा है, किन्तु कहीं कहीं विस्तीर्ण जसरक्षेत्र भी देखनेमें आता है। निम्नभूमि प्रतिवर्ष बाढ़से डूब जाया करती है। इस परगनेमें पोस्तेकी खेती अधिक होती है। इसमें कुल ११० ग्राम लगते हैं। पांच पक्की सड़कें परगनेके बीच होकर गई है।

२ सलोन तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २६° १५' ५५" उ० और देशा० ८१° २५' ५५" पू०में रायबरेलीसे सुलतानपुरके रास्ते पर नासिराबादसे ४ मील पश्चिम तथा सलोनसे १६ मील दक्षिणपश्चिम नैया नदीके किनारे अवस्थित है। पहले इस नगरका नाम उभय नगर था, पीछे सैयद सालर मसौदने इसे अधिकार कर वर्त्तमान नाम रखा। यह शहर एक उच्च भूमिखण्डके ऊपर अवस्थित है, जो चारों ओर सुदृश्य आम्रकाननसे परिवेष्टित है। लोकसंख्या प्रायः ११८२६ है, जिसमें हिन्दू ६३४५, मुसलमान ५५६१ और जैन २० हैं शहरमें एक भी हिन्दू-देवालय नहीं है। जैनियोंका बनाया हुआ पार्श्वनाथका मन्दिर, मुसलमानोंको दो मसजिदें और एक सुन्दर इमामबाड़ा है। इमामबाड़ेके खम्भे और दीवारमें कुरानके अच्छे अच्छे अंश खुदे हुए हैं। इस शहरसे मुसलमानोंके बुने हुए तांतकी तथा अन्यान्य कपड़ोंकी रफतनी होती है। यहां सामान्य शोरा तैयार होता है। शहरमें देशीय और अंग्रेजी भाषा सिखानेके विद्यालय है।

गन्धर्वखण्ड (सं० क्लो०) गंधर्वनामकं खण्डं, मध्यपदलो०। भारतवर्षके अन्तर्गत एक प्रदेश गन्धार।

गन्धर्वगढ़—बम्बई प्रदेशके वेलगाम् जिलेके अन्तर्गत एक उपविभाग। इस उपविभागमें वेलगामसे प्राय: २१ मील पश्चिम सह्याद्रि पर्वतके पार्श्व शाखाके समतल क्षेत्रसे ४०० फुट ऊंचे पर गंधर्वगढ़ गिरिदुर्ग है। यह दुर्ग १००० फुट चौरस भूमिके ऊपर निर्मित है। यह १७२४ ई०को सावन्तवाड़ीके राजा फोन्द सामन्तके द्वितीय पुत्र नागसामन्तसे बनाया गया है। १७७८ ई०में कोल्हापुरके राजाने गंधर्वगढको अपने अधिकारमें कर लिया, लेकिन १७८३ ई०में सिन्धियाराजकी सहायतासे गन्धर्वगढ़ फिर भी सामन्तवाडीके दखलमें आ गया। १७८७ ई०में नैसर्गी सर्दारने अपने स्वामी कोलहापुर राजाके विरुद्ध युद्ध कर गंधर्वगढ और दूसरे दूसरे स्थानों पर अपना दखल जमाया। किन्तु थोड़े समयके बाद ही राजाने सर्दारको भगा कर गंधर्वगढ़ अपने अधिकारमें लाया।

गन्धर्वगृहीत (स० त्रि०) गंधर्वेण गृहीतः, ६-तत्। जिसको गंधर्वने ग्रहण किया हो। गंधर्व देखो।

गन्धर्वग्रह (स० पु०) शरीरप्रवेशकारी उपदेवविशेष, एक प्रकारका ग्रह जो भूत प्रेतकी नाईं मनुष्यकेशरीरमें प्रवेश कर जाता है। गंधर्व देखो।

गन्धर्वतीर्थ (सं० पु०) तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम। (भारत शल्य ८ अ०)

गन्धर्वतैल (सं० क्लो०) एरण्डकतैल। रेंड़ीका तेल।

गन्धर्वदत्त—पटनाके एक प्राचीन राजा, ये जैनमतावलम्बी था।

गन्धर्वदत्ता—जैनमतानुसार रत्नद्वीपके मनुजोदय नगरके राजा गरुडवेगकी पुत्री। यह दि०जैनधर्ममें अचल श्रद्धा रखती थी। एक दिन वह जिनेन्द्रकी पूजा करके फूलोंका हार पिताके पास लाई। उसे यौवनवती देख कर गरुडवेगका बड़ो चिन्ता हुई। विपुलमति नामक चारणमुनिसे मालूम हुआ कि, भरतक्षेत्रमें हेमाङ्गद देशके राजाके पुत्रसे इसका वीणा स्वयम्बरमें विवाह होगा। इस पर जिनदत्त नामके एक सेठने भरतक्षेत्रमें इस स्वयम्बरका आयोजन किया। स्वयम्बरमें गन्धर्वदत्ताने वीणा बजानेमें सब राजकुमारोंको पराजित कर दिया। आखिर सत्यधरके पुत्र जीवन्धरकी बारी आई। इन्होंने उसे पराजित कर दिया। इस पर काष्ठाङ्गारके पुत्रोंने ईर्षासे गन्धर्वदत्ताको हरण करनेका उद्यम किया। जीवन्धर कुमारको खबर लगते ही उन्होंने गन्धगज (गन्धजातके हाथी) पर सवार हो कर उन दुष्टोंके उद्यमको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। कुमारकी वीरताको देख कर गन्धर्वदत्ता तो फूले न समाई। तुरत ही विवाह हो गया, और दोनों सुखसे रहने लगे। जीवन्धर देखो।

(उत्तरपुराण ६६१ पृष्ठ)

२ जैनोंके २२-वें तीर्थङ्कर नेमिनाथके भाई वासुदेवकी एक पत्नी।

गन्धर्वनगर (सं० क्लो०) गंधर्वाणां नगरं, ६-तत्। १ गगन मण्डलमें उदित अनिष्टसूचक पुरविशेष। खपुर देखो।

२ मानससरोवरका निकटवर्ती एक नगर। गंधर्वगण इसकी देखभाल करते हैं, इस लिये यह गंधर्वनगरसे अभिहित है। महाभारतमें लिखा है कि महापराक्रमशाली अर्जुनने गंधर्वरक्षित गंधर्वनगरको जय कर तित्तिर, कल्माष और मण्डुक नामके अश्वरत्न प्राप्त किये थे। (भारत २।२७ अध्याय)

३ विजयपर्वतकी उत्तर श्रेणीका एक नगर। ४ मिथ्या भ्रम, संसारकी उपमा गंधर्वनगरसे दी जाती है।

गन्धर्वभूषण (सं० क्लो०) सिन्दूर।

गन्धर्वराज—रागरत्नाकर नामक संस्कृत सङ्गीतग्रन्थप्रणेता।

गन्धर्वलोक (सं० पु०) गन्धर्वाणां लोक आवासस्थानं, ६-तत्। गुह्यक लोकके ऊपर और विद्याधर लोकके नीचे अवस्थित एक स्थान। इस स्थान पर देवगायक गन्धर्वगण वास करते हैं। काशीखण्डका मत है कि जो गीतशास्त्राभिज्ञ गान करके राजाओंको खुश कर सकते एवं धन लोभसे मोहित हो कर धनशाली मानवगणको गान द्वारा स्तुति करके जो वस्त्र प्रभृति उनसे दान पाते हैं उन्हें वे ब्राह्मणोंको देते हैं और गानमें जिनकी अतिशय प्रीति है एवं नाट्यशास्त्रमें भी विशेष पारदर्शिता है, वे ही गन्धर्वलोकको प्राप्त कर परम सुखसे कालयापन करते हैं। (काशीखण्ड)

२ जाग्रत अवस्थामें होना, निद्राशून्य होना। ३ सजग होना, सावधान होना। ४ समृद्ध होना, बढ़ चढ़ कर होना। ५ प्रज्वलित होना, जलना। ६ प्रादुर्भूत होना। ७ समुत्थित होना, जोर शोरसे उठना। ८ उदित होना, चमक उठना।

जागनौल (हिं॰ स्त्री॰) एक तरहका हथियार।

जागभाट—राजपूताना और युक्तप्रदेशमें रहनेवाले भाटोंकी एक शाखा। ये लोग वहांके प्रधान प्रधान राजपूत और अन्यान्य लोगोंकी वंशावली तथा चरित्र लिखते रहते हैं। भाट देखो।

जागर (सं॰ पु॰) जागृ जागरणे भावे-घञ् ततः गुणः। १ जागरण, जाग, जागनेकी क्रिया। २ अन्तःकरणकी समस्त वृत्तिप्रकाशक वृत्ति। जिस अवस्थामें अन्तःकरणकी समस्त वृत्तियां प्रकाशित होती हैं। उस अवस्थाका नाम जागर है। ३ कवच।

जागरक (सं॰ त्रि॰) जागृ-ण्वुल् गुणः। निद्रारहित, जागरणावस्थ।

जागरण (सं॰ क्ली॰) जागृ भावे ल्युट्। १ निद्राका अभाव, जागना। पर्याय जागर्य्या, जागरा, जागर, जाग्रिया और जागर्त्ति।

जागरलमूडी—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत कृष्णा जिलेका एक प्राचीन ग्राम। यह बागलूलासे २१ मील उत्तरपूर्वमें अवस्थित है। यहां एक प्राचीन देवमन्दिर है।

जागरित (सं॰ क्ली॰) जागृ भावे क्तः। १ जागरण, नींदका न होना। २ सांख्य और वेदान्तके मतसे वह अवस्था जिसमें मनुष्यके इन्द्रियों द्वारा सब प्रकारके व्यवहारों और कार्योंका अनुभव होता रहे।

जागरितस्थान (सं॰ पु॰) जागरितं स्थानमस्य। वेदान्तमत प्रसिद्ध वैश्वानर (आत्मा ऐसी आत्मा जो जागरित स्थितिमें हो।) मुण्डकोपनिषद्के भाष्यमें इसका स्वरूप इस तरह लिखा है—

जागरितस्थान, वहिःप्रज्ञ, सप्ताङ्ग, एकोनविंशतिमुख, स्थूलभुक् और वैश्वानर ये प्रथम पाद हैं। उपाधियुक्त आत्मा, जो आत्मा अपनी उपाधिमें अपने आप स्वप्नमें देखे हुए अलीक पदार्थोंकी तरह अथवा रज्जुमें सर्पकी तरह अन्तःकरणसे इन्द्रिय द्वारा व्यवहारिक अनुमेय स्थूलविषयोंका अनुभव करती है उस आत्माको जागरितस्थान कहते हैं। भावार्थ यह कि, जिस समय आत्मा अपनी मायामें आप ही मोहित हो कर शब्द, रूप, रस, स्पर्श और गन्धका अनुभव करती है, उस समय यह जागरितस्थान कहलाती है।

जागरिता (सं॰ त्रि॰) जागृ-तृच्-टाप्। जागरणशील, जिसे नींद न आती हो।

जागरितान्त (सं॰ पु॰) जागरितस्य अन्तः तत्र विज्ञेयः। जागरितमध्य, जागरितस्थान, वह आत्मा जो जागरित स्थितिमें हो।

जागरिन् (सं॰ त्रि॰) जागरो जागरणं अस्त्यस्य जागर-इनि। १ जागरूक, जो जाग्रत अवस्थामें हो। जागृ शीलार्थे णिनि। २ जागरणशील, जागनेवाला।

जागरिष्णु (सं॰ त्रि॰) जागर-इष्णुच्। जागरणशील, जागनेवाला।

जागरूक (सं॰ त्रि॰) जागर्त्ति जागृ-ऊक। १ जागरणकर्त्ता, जो जाग्रत अवस्थामें हो। पर्याय—जागरिता और जागरी। २ कर्त्तव्य पालनादिके लिये अर्थके प्रति अप्रमत्त, जो कर्त्तव्यपालन करनेमें उचित रूपसे रुपये खर्च करता हो।

जागरूप (हिं॰ वि॰) जो बहुत ही प्रत्यक्ष और स्पष्ट हो।

जागर्त्ति (सं॰ स्त्री॰) जागृ-भावे क्तिन। जागरण, नींदका न होना।

जागर्य्या (सं॰ स्त्री॰) जागृ-यक्। जागरण, जागना।

जागीत (फा॰ स्त्री॰) सेवाके पुरस्कारमें मिली हुई भूमि, वह जमीन जो किसी राज्य या शासक आदिकी ओरसे किसीको उसकी सेवाके उपलक्षमें मिले।

जागीर—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत चेङ्गलपट जिलेका ऐतिहासिक नाम। मुसलमान राजाओंसे जो जमींदारी मिलती थी उसे जागीर कहते थे। उसीके अनुसार इसका नाम जागीर हुआ है। इष्टइण्डिया कम्पनीने अर्काटके नवाबको कई बार सहायता की थी, इस कारण नवाबने उन्हें १७६० ई॰में सनद द्वारा यह जागीर दी थी। दक्षिण प्रदेशमें अंगरेजोंको जो स्थान मिले थे इनमेंसे जागीर एक प्रधान स्थान था। १७६३ ई॰में

दक्षिणावर्त्तं मानमा चैत्ररात्राद् परेतरात्।
भाती गन्धवती ख्याता याति गङ्गा हरिद्दरा॥" १७ अ०।

स्वयं भगवान् रुद्रने भूतगणोंके मङ्गल विधानके लिये सर्व पापहारिणी कीर्ति प्रदायिनी प्रच्छन्नरूपिणी गन्धवती नामकी गङ्गाको स्वर्णकूटमें उत्पादन किया था।

कपिलसंहिताका मत है कि रुद्रके जटाकलापमें भ्रम माणा गङ्गाको भगीरथ लाये थे। वही भ्रममाणा त्रिकोटि-कुलतारिणी गङ्गासे हिमालय आदिगङ्गाको निःसारित किया, मुनिगण उस आदि गङ्गाको ही 'गन्धवती' कहते हैं। वही गन्धवती स्वर्णकूटाचलमें प्रवाहित होती है।

"जटाकलापे रुद्रस्य भ्रममाणा महातपा।
नीता भगीरथेनैव गङ्गा वै लोकपावनी॥ ४८॥
तां चैवमध्ये हिमवान् ससर्ज शिवभक्तये।...
आद्या गङ्गा विदुस्तान्तु त्रिकोटिकुलतारिणीम्।
पुण्या गंधवतीनाम्ना मुनयो ब्रह्मवादिनः।" ५०
(कपिलसंहिता १७ अ०)

शिवपुराणके मतसे दक्षिणसमुद्रके निकट विन्ध्य-पादसे यह गंधवती नदी निकली है।

"श्रीमदुत्कलके चैव दक्षिणार्णवसन्निधौ।
विंध्यपादोद्भवाद्दिव्या मध्यान्ते पूर्वगामिनी॥
सरित्सद्भवा ह्येका नाम्ना गंधवती श्रुता॥" (उत्तरखण्ड २६ अ०)

गन्धवधू (सं० स्त्री०) गंधयुक्ता वधूरिव। १ शठी, कपूर कचूरी। २ चीडा नामक गंधद्रव्य।

गन्धवन्धु (सं० पु०) गंधस्य वन्धुरिव। आम्रवृक्ष, आमका पेड।

गन्धवल्कल (सं० क्ली०) गंधो वल्कलोऽस्य, बहुव्री०। त्वक्, दालचीनी।

गन्धवल्लरी (सं० स्त्री०) गंधयुक्ता वल्लरी। लताविशेष, सहदेवी।

गन्धवल्ली (सं० स्त्री०) गंधवल्लरी देखो।

गन्धवह (सं० पु०) गंधं गंधयुक्तं पार्थिवांशं वहति वह-अच्। १ वायु, हवा।

"दिग्दक्षिणा गंधवहं मुखेन।" (कुमार)

(त्रि०) २ गंधयुक्त नायकविशेष।

"नवा लताः गंधवहेन चुम्बिता।" (नैषधचरित)

३ गंधधारी, जिसमें गंध हो।

"आकाशात् विकुर्वाणात् सर्वगंधवहः शुचिः।" (मनु० १।७६)

४ कस्तूरीमृग, वह मृग जिसकी नाभिसे कस्तूरी निकलती हो।

गन्धवहल (सं० पु०) गंधं वहति वह बाहुलकात् अलच्, यद्वा गंधो वहलो यस्य, बहुव्री०। १ सितार्जक वृक्ष, श्वेतार्जवला। २ श्वेततुलसी, सफेद तुलसी।

गन्धवहा (सं० स्त्री०) गंधः गुणविशेषं वहति गृह्णाति वह अच्-टाप्। १ नासिका, नाक। २ भुवनेश्वरके निकट प्रवाहित गंधवती नदीका नामान्तर। गंधवती देखो।

गन्धवहुल (सं० क्ली०) गन्धो बहुलो यस्य, बहुव्री०। १ एक प्रकारका गंधद्रव्य, शीतल चीनीके वृक्षका एक भद, कक्कोल। २ गंधशालि सुगंधित धान।

गन्धवहुला (सं० स्त्री०) गंधो बहुलो यस्याः, बहुव्री०। गोरक्षीका पेड़। यह मालवदेशमें बहुत पाया जाता है।

गन्धवाकुची (सं० स्त्री०) लताकस्तूरी।

गन्धवारि (सं० क्ली०) गंधद्रव्यवासितं वारिः। सुगंधि द्रव्यवासित जल, गुलाब जल।

गन्धवाह (सं० पु०) वायु, हवा।

"प्रसरदसमवाणप्राण वद् गंधवाहः।" (गीतगोविन्द)

२ कस्तूरीमृग।

गन्धवाही (सं० स्त्री०) गन्धवाह-ङीष्। नासिका, नाक।

गन्धविह्वल (सं० पु०) गन्धेन विह्वलयति विह्वल-णिच्-अच्। गोधूम, गेहूं।

गन्धवीजा (सं० स्त्री०) गन्धो वीजे यस्याः, बहुव्री० ततो टाप्। १ कुलिञ्जनवृक्ष, अदरककी तरहका एक पौधा। २ मेथिका, मेथी।

गन्धवीरा (सं० स्त्री०) शल्लकीवृक्ष, शलईका पेड़।

गन्धवृक्षक (सं० पु०) गन्धप्रधानो वृक्षः संज्ञायां कन्। शालवृक्ष, शालका पेड़।

गन्धवेधिका (सं० स्त्री०) कस्तूरी, मृगनाभि।

गन्धवेष्ट (सं० पु०) गन्धं वेष्टयति स्वगन्धेन परगन्धमा-वृणोति। धूनक, सालका गोंद, धूना।

गन्धव्याकुल (सं० पु०-क्ली०) गन्धेन व्याकुलयति, वि-आ-कुल-णिच्-अच्। एक प्रकारका सुगन्धद्रव्य, कक्कोल।

गन्धशठी (सं० स्त्री०) गन्धप्रधाना शठी शाकपार्थिव-वत् मध्यपदलो०। शठी, कपूर कचूरी।

गन्धशाक (सं० क्ली०) गन्धप्रधानं शाकपार्थिववत्

जाङ्घनी (सं० स्त्री०) जङ्घा, जांघ।

जाङ्घाप्रहतक (सं० त्रि०) जङ्घा द्वारा आघातजनक, जाँघसे चोट पहुंचानेवाला।

जाङ्घलायन (सं० पु०) प्रवर ऋषिका नाम।

जाङ्घि (सं० त्रि०) जङ्घायां भवः जङ्घा-इञ्। जङ्घाभूत, जाँघसे निकला हुआ।

जाङ्घिक (सं० त्रि०) जङ्घाभिश्चरति इति ठन्। १ उष्ट्र, ऊंट। २ ओकारो वृक्ष। ३ ओकारो नामका मृग। ४ जङ्घाजीवी, वह जिसकी जीविका बहुत दौड़ने आदिसे चलती है, हरकारा। ५ प्रशस्त जङ्घाविशिष्ट, जिसकी जांघ अच्छी हो।

जाङ्घिकाह्वय (सं० पु०) ओकारो मृग, एक प्रकारका हिरन।

जाचक (हिं० पु०) १ भिक्षुक, भिखारो। २ भिखमंगा, भीख मांगनेवाला।

जाजगढ—अजमेर राज्यका एक नगर। कोटा नगरके जालिमसिंहने १८०३ ई०में इस नगरको उदयपुरसे अलग कर दिया। इसमें कुल ८४ ग्राम लगते हैं, जिनमें से २२ ग्रामोंमें केवल मीना जातिके लोग रहते हैं। ये लोग रूपवान, बलवान् तथा बड़े शूरवीर होते हैं। ये रुपये दे कर राजस्व नहीं चुकाते, बल्कि परिश्रम करके। इन लोगोंकी गिनती हिन्दूमें होती है। ये सबके सब शिवोपासक हैं।

जाजदेव—नयचन्द्रसूरि-प्रणीत "हम्मीर-महाकाव्य" नामक संस्कृत ग्रन्थमें वर्णित रणस्तम्भपुरराज हम्मीरके सेनापति।

जाजन (सं० त्रि०) योधशील, युद्ध करनेका जिसका स्वभाव हो।

जाजपुर—१ उड़ीसा प्रान्तके कटक जिलेका उत्तर-पश्चिम सब डिविजन। यह अक्षा० २०° ३८' तथा २१° १०' उ० और देशा० ८५° ४२' एवं ८६° ३७' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ११९५ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ५६०४०२ है। इसमें १ नगर और १५८० ग्राम आबाद है।

२ उड़ीसाके कटक जिलेमें जाजपुर सब-डिविजनका सदर। यह अक्षा० २०°५१' उ० और देशा० ८६° २०' पू०में वैतरणी नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित पुण्यतीर्थ माना गया है। लोकसंख्या प्रायः १२१११ है। प्राचीन केशरी राजाओंके अधीन यह उत्कलको राजधानी रहा। ईसाकी १६वीं शताब्दीमें यहां हिन्दू और मुसलमानोंमें बड़ा बखेड़ा हुआ था, जिससे यह बरबाद हो गया। यहां वरदादेवी तथा वराहावतार विष्णुका मन्दिर है और विशाल सूर्यस्तम्भ, जो नगरसे १ मील दूर है, देखने योग्य है। सिवा इसके हिन्दू देवदेवियोंको बहुतसी ऐसी मूर्तियां भी हैं जिनकी नाक काला पहाड़ने काट डाली थी। १७वीं शताब्दीमें नवाब आबू नसीरकी बनायी मसजिद भी अच्छी है। १८६९ ई०में जाजपुर म्युनिसपालिटी बन गई।

जाजपुर—जयाजपुर देखो।

जाजम (तु० स्त्री०) एक प्रकारकी चादर। इस पर बेल बूटे आदि छपे होते हैं और यह फर्श पर बिछानेके काम आती है। वैतरणी, वराहक्षेत्र देखो।

जाजमऊ—युक्त प्रदेशके कानपुर जिलेकी कानपुर तहसीलका पुराना नाम।

जाजमलार (हिं० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक राग। इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

जाजरूर (फा० पु०) पाखाना, टट्टी।

जाजल (सं० पु०) अथर्ववेदकी एक शाखाका नाम।

जाजलि (सं० पु०) १एक ऋषिका नाम। ये अथर्ववेदवेत्ता पथ्यके शिष्य थे। किसी समय इन्होंने समुद्रके किनारे घोरतर तपस्याका अनुष्ठान किया। क्रमशः तपके प्रभावसे त्रिभुवन भ्रमण कर इन्होंने मन ही मन सोचा कि, इस जगत्‌में मैं ही एक मात्र तपस्वी हूं। अन्तरीक्षस्थित राक्षसोंने उनके मनका भाव समझ कर कहा—'हे भद्र! तुम्हारा इस प्रकारका विचार करना सर्वथा अन्याय है। वाराणसीनिवासी वणिक् तुलाधार भी इस बातको कहनेके लिये साहस नहीं करता।' इस बातको सुन कर ये तुलाधारसे मिलनेके लिए काशी गये वहाँ तुलाधारके मुखसे सनातन धर्मविषयक विविध उपदेश सुन कर इन्हें शान्ति लाभ हुई। (भारत शान्ति०) ये जाजलि ऋषि प्रवरप्रवर्त्तक थे। (हेमाद्रि व्र०)

२ ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें कथित एक वैद्य।

३-तत्। आभ्युदयिक प्रभृति कर्मोंमें चन्दन और पुष्प-माल्य प्रभृति गंधद्रव्योंमें जो अधिवास किया जाता है उसीका नाम गंधाधिवास है।

गन्धानी (सं० पु०) सुगन्धशाल।

गन्धाढ्य (सं० पु०) गन्धशाल, वह धान जिसमें अच्छी गंध हो।

गन्धाम्ला (सं० स्त्री०) गंधयुक्तोऽम्लो रसो यस्याः बहुव्री०। वनबीजपूरक, एक प्रकारके नीबूका पेड़।

गन्धार (सं० पु०) १ देशविशेष। गांधार देखो।

"क स्त्रीगः सिंधुसौवीरा गंधारदर्शकास्तथा।"

(भारत भीष्म० ९ अ०)

२ गन्धारदेशके राजा।

गन्धारि (सं० पु०) गंधं ऋच्छति ऋ-इन्, ६-तत्। गंधार-देश।

गन्धारी (सं० स्त्री०) गन्धं लेशरूपं गन्धं ऋच्छति। गर्भ-धारिणी स्त्री. गर्भवती।

'तदा गंधारीणां गर्भधारिणीनां स्त्रीणां।'

(चरक ३।१२।७ सायन)

गन्धालु (सं० पु०) १ गन्धशाल। २ दण्डालुक, रतालूका पेड़।

गन्धाला (सं० स्त्री०) गन्धाय अलति पर्याप्नोति अल्-अच् ततः टाप्। वृक्षविशेष, एक पेड़का नाम।

गन्धाली (सं० स्त्री०) गंधस्य आली श्रेणी यस्यां, बहुव्री०। लताविशेष, गंधपसार। इसका पर्याय—प्रसारणी, भद्रपर्णी, गंधाढ्या, सरणा, कटम्भरा, राजबला, भद्रबला कटम्भर और सारणी है। इसका गुण—उष्णवीर्य, वात नाशक, तिक्त, गुरु, हृद्य, बलवृद्धिकर, वात, रक्त और कफनाशक है। (भावप्रकाश) प्रसारणी देखो।

गन्धालीगर्भ (सं० पु०) गन्धाली गन्धश्रेणी गर्भे यस्य, बहुव्री०। छोटी इलायची।

गन्धाश्मन् (सं० पु०) गन्धयुक्तोऽश्मा शाकपार्थिववत्। गन्धक।

गन्धाष्टक (सं० क्ली०) गन्धाना गन्धद्रव्याणां अष्टकं ६-तत्। आठ प्रकारके मिश्रित गन्धद्रव्योंको गन्धाष्टक कहते हैं। तन्त्रमें देवता भेदसे कई प्रकारके गन्धाष्टक निरूपित है।

शक्तिगन्धाष्टक—१ चन्दन, २ अगुरु, ३ कर्पूर, ४ चोर नामक गन्ध द्रव्य, ५ कुङ्कुम, ६ गोरोचन, ७ जटा-मांसी और ८ कपियुता।

विष्णुके गन्धाष्टक—१ चन्दन, २ अगुरु, ३ वाला, ४ कुड़, ५ कुङ्कुम, ६ वीरणमूल, ७ जटामांसी और ८ मुरा।

शिवगन्धाष्टक—१ चन्दन, २ अगुरु, ३ कर्पूर, ४ तमाल, ५ जल, ६ कुङ्कुम, ७ रक्तचन्दन और ८ कुड़।

गणेशगन्धाष्टक—१ स्वरूप, २ चन्दन, ३ चोर, ४ रोचना, ५ अगुरु, ६ मृगमद, ७ कस्तूरी और ८ कर्पूर। (शारदाति०

मेरुतन्त्रके मतसे चन्दन, अगुरु, कर्पूर, गोरोचना, कुङ्कम, मृगमद और वाला इन आठोंको गाणपत्य गन्धा-ष्टक कहते हैं। मांसादिके यूष प्रस्तुत करनेमें सुगंधिके लिये आठ गंधद्रव्य उसमें दिये जाते हैं। इनको भी गन्धाष्टक कहते हैं। लङ्कानाथके मतमें जातीफल (जाय-फल), तेजपत्र, लवङ्ग, इलायची, दालचीनी, नागकेशर, मिर्च और मृगनाभि इन सबको गंधाष्टक कहते हैं।

गन्धाह्वा (सं० स्त्री०) रक्ततुलसी, लाल तुलसी।

"मालती कट तुम्बी गन्ध ह्वा मूलकं तथा।" (सुश्रुत चि० ९)

गन्धि (सं० क्ली०) तृणकुङ्कुम, रोहित घास।

गन्धिक (सं० पु०) गन्धोऽस्त्यस्य गन्ध-ठन्। १ गन्धक। २ गन्धवणिक्।

गन्धिन् (सं० त्रि०) प्रशस्तो गन्धोऽस्त्यस्य गंध-इनि। प्रशस्त गंधयुक्त, जिसमें अच्छी गंध हो।

"अन्नैव गन्धिनो रमा नो इवि न च शब्दवत्।

सव्य ते सुगन्धी बुद्धया तत् प्रधान प्रचक्षते॥" (भारत आश्व० ५२ अ)

गन्धिनी (सं० स्त्री०) गंधिन-ङीप। सुरा नामक गंध-द्रव्य।

गन्धिपर्ण (सं० पु०) गन्धि गन्धयुक्तं पर्णं यस्य, बहुव्री०। सप्तच्छदवृक्ष, सप्तपर्ण वृक्ष। छतिवनका पेड़।

गन्धिरस (सं० पु०) गोपक, नौसादर।

गन्धिला—जैनमतानुसार विदेहक्षेत्रमें स्थित एक देश।

गन्धी (सं० पु०) कस्तूरीमृग।

गन्धेन्द्रिय (सं० क्ली०) गंधग्राहकं इन्द्रियं शाकपार्थि-वादिवत् समासः। घ्राणेन्द्रिय, वह इन्द्रिय जिसके द्वारा गंधका अनुभव हो। इन्द्रिय सम्बन्धके विषयमें दार्श-निकोंका मतभेद लक्षित होता है। न्यायदर्शनका मत है

शाखा पञ्जाबमें घुस पड़ी। कास्पियान ह्रदके निकटवर्त्ती स्थानसे आ कर जो लोग सिन्धुनदके उस पार रहते थे, वे अत्यन्त बलशाली और साहसी थे। सुलतान महमूद सोमनाथके मन्दिरसे बहुत धनरत्न लूट कर जिस समय गजनी लौट रहे थे, उस समय मार्गमें एक दल जाटोंने उन्हें घेर लिया था; जिससे उनकी विशेष क्षति हुई थी। ४१६ हिजरा (१०२६ ई०)में सुलतान महमूदके साथ जाटोंका एक घमसान युद्ध हुआ था। इस युद्धमें बहुतसे जाट मारे गये और कुछ लोगोंने भाग कर बीकानेर राज्यका सूत्रपात किया। सम्राट् बाबरको भी जाटोंके द्वारा बहुत कुछ नुकसान उठाना पड़ा था।

ईसाकी चौथी शताब्दीमें पञ्जाबमें जुटी या जाट-राज्य प्रतिष्ठित था; किन्तु इस बातका निर्णय करना दुःसाध्य है कि, इससे कितने समय पहले जाट जातिने इस प्रदेशमें प्रथम उपनिवेश स्थापन किया था। इस जातिने भारतवर्षमें मुसलमान शासनके विस्तारमें विशेष बाधाएं पहुंचाई थीं। पहिले पहल कुछ लोगोंके एकत्र रहनेसे क्रमशः इनमें जातीय भाव उत्पन्न होनेके उपरान्त लोगोंमें एक राज्य स्थापन करनेकी इच्छा हुई। पीछे चूड़ामणके नेतृत्वमें ये लोग कुछ कृतकार्य भी हुए थे और सूर्यमलके अधीन इन लोगोंने वास्तवमें भरतपुरमें, एक जाटराज्यकी स्थापना कर ली। भरतपुर देखो।

पाश्चात्य मतसे-स्किदीय जातिके जाटोंने बोलान गिरिसङ्कटको पार कर सिन्धुनदकी प्रान्तर भूमिके बीचसे सिन्धु और पञ्जाब प्रदेशमें उपनिवेश स्थापन किया है; ये लोग हिमालयके पार्वतीय प्रदेशके निम्नभागमें नहीं रहे हैं। सिन्धु प्रदेशके ऊर्द्ध भागमें अधिकांश अधिवासी जाट ही हैं और उन्हीं लोगोंकी भाषा उस प्रदेशकी चलती भाषा है पहले सिन्धुमें जाटोंका ही प्रभुत्व था; किन्तु अब नहीं है। पञ्जाबके अधिकांश अधिवासी जाट हैं, जिनकी संख्या ४॥ लाख है। दोआबसे ले कर मुलतान तक समस्त भूमि जाटोंके अधिकारमें है।

पञ्जाबके अधिकांश जाट खेतीबारी करते हैं। आधुनिक सिखोंमेंसे बहुतोंकी उत्पत्ति जाटवंशसे है। पञ्जाबके बहुतसे जाट मुसलमान धर्मको पालते हैं। ये लोग आरेन, बागरी, मलवार, रंज आदि भिन्न भिन्न शाखाओंमें विभक्त हैं। पञ्जाबके पूर्वांशमें और जैसलमेर, जोधपुर, बीकानेर आदि प्रदेशोंमें हिन्दूधर्मावलम्बी जाट रहते है। बरेली, फरुखाबाद, ग्वालियर आदि प्रदेशोंमें भी जाटोंका फैलाव हो गया है। भरतपुर, दिल्ली, दोआब, रोहिलखण्ड आदि स्थानोंमें भी जाटोंका वास पाया जाता है। संयुक्त प्रदेशकी जाट जाति पच्छाद और हेले इन श्रेणियोंमें विभक्त है। पञ्जाबके पुराने वासिन्दा पच्छाद जाटोंको घृणासूचक शब्दोंमें 'पच्छादा' कहा करते हैं, काले सांप और बूढ़े गधेके विषयमें जो कहावत प्रसिद्ध है वह पच्छादोंके ऊपर भी घटाई जाती है। कहावत यह है—

"बूढ़ी भैंस पुराना गाढ़ा।
काला साप और सग पच्छादा।
कुछ लाभ हुआ तो हुआ;
नहीं तो खाद ही खादा।"

पहले सभी जाट एक साधारण नामसे प्रसिद्ध थे। ये आवर कहलाते थे। उस समय ये लोग पड़ोसी या दूसरों घरसे पालतू घोड़े आदि चुराया करते थे। प्रायः सभी लोग अपनेको राजपूतवंशसे उत्पन्न बतलाते हैं। बलन और नोहल जाट चौहान वंशसे तथा सरवत और सलफलान जाट अपनेको तूयार वंशसे उत्पन्न कहते हैं। कोई कोई यूरोपीय विद्वान् कहते हैं—भरतपुरके और सिन्धुप्रदेशके जाट भिन्न भिन्न शाखाओंसे उत्पन्न हैं। और किसी किसीका यह कहना है कि, सभी जाट एक ही वंशसे उत्पन्न हैं, जाटोंने पहले सिन्धुप्रदेशमें उपनिवेशकी स्थापना की थी, पीछे वहींयासे बहुतसे जाट भारतमें आये और वे धीर धीरे बढ़ते हुए राजपूतानामें पहुंच गये। समयका आगे पीछेका बंधेज और आवासके परिवर्त्तन हो जानेसे वे लोग प्रधान शाखासे नहीं मिल सके हैं।

जाटोंमें कुछ लोग हिन्दू और कुछ मुसलमान हैं। मुसलमान जाटोंका कहना है कि, वे गजनीसे भारतमें आये हैं। युक्तप्रदेश और सिन्धुप्रदेशमें बहुतसे जाट ऐसे पाये जाते हैं, जिनका आचार-व्यवहार मुसलमान-धर्मावलम्बी न होने पर भी—सम्पूर्ण हिन्दू धर्मानुयायी नहीं है। इन लोगोंका विश्वास है कि—'विश्वजननी भवानी एक जाट-

गन्धोली (सं० स्त्री०) गन्धयति अर्दयति । १ हंस २ वरटा, बिरनी ।

गन्ना (हिं० पु०) ईख, ऊख।

गन्ना बेगम—नवाब अली कुली खाँकी कन्या। अलीकुली खाँ पाचहजारके मनसबदार थे। इनके छः अङ्गुली रहनेके कारण लोग इन्हें छङ्गा वा षड़ङ्गुल कहा करते थे। पहले नवाब सफदरजङ्गके पुत्र सुजाउद्-दौलाके साथ गन्ना बेगमका विवाह सम्बन्ध स्थिर हुआ था, किन्तु किसी कारणसे पिताकी इच्छासे इसने वजीर इमाद-उल्-मुल्क गाजी उद्-दीन् खाँके साथ विवाह किया। यह मुसलमान समाजमें सम्भ्रान्त वंशीको एक विदुषी रमणी थी। बेगमकी बुद्धि और कवित्वशक्ति बहुत दूर तक फैली हुई रही। हिन्दी भाषामें इसकी रचना की हुई बहुतसी कवितायें अद्यापि पश्चिमाञ्चलमें सभ्योंके निकट समादृत हैं। ढोलपुरके निकट नूराबाद ग्राममें सम्राट् आलमगीरके बनाये हुए उद्यानमें ये ११९८ हिजरीको कब्रमें गाडी गई थीं। इनकी कवितायें शोजसौदा और मिचत प्रभृति कवियोंसे संशोधित हुई थीं।

गप (हिं० स्त्री०) इधर उधरकी बाते जिसकी सत्यताका निश्चय न हो। वह बात जो सिर्फ मनको प्रसन्न करनेके लिये की जाय।

गपकना (हिं० क्रि०) चटपट निगलना, झटसे खा लेना।

गपड़चौथ (हिं० पु०) व्यर्थकी गोष्ठी, वह व्यर्थकी बात चीत जो चार आदमी मिल कर करते हों।

गपना (हिं० क्रि०) गप मारना, बकना।

गपिया (हिं० वि०) गप मारनेवाला, मिथ्या बात बोलनेवाला।

गपिहा (हिं० वि०) गपिया देखो।

गपोड़ (हिं०) गपोड़ा देखो।

गपोड़ा (हिं० पु०) अनृत बात, झूठी बात।

गपोड़ेबाजी (फा० स्त्री०) झूठ बकवाद।

गप्प (हिं०) गप देखो।

गप्पी (हिं० वि०) १ गप मारनेवाला, डींग हाकनेवाला। २ मिथ्याभाषी, झूठा।

गप्फा (हिं० पु०) बड़ा कौर, जो खानेके समय उठाया जाय।

गफ (हिं० वि०) घना, कठिन, गाढ़ा।

गफलत (अ० स्त्री०) १ असावधानी, बेपरवाही। २ चेतका अभाव। ३ प्रमाद, भूल, भ्रम।

गफिलाई (फा० स्त्री०) गफलत देखो।

गबड्डी (हिं०) कबड्डी देखो।

गबदी (हिं० पु०) एक प्रकारका छोटा गाछ। इसकी लकड़ी बहुत नरम होती है और शाखायें पत्तियोंसे ढकी रहनेके कारण छाताके सदृश दीख पड़ती है। माघ और फागुन मासमें यह सुनहले पीले रङ्गके फूल लिये रहता है। यह पेड़ सिवालिककी पहाड़ियों तथा उत्तरीय अवध, बुंदेलखण्डमें पाया जाता है। इसकी छालसे एक प्रकारका श्वेत गोंद निकलती है।

गबद् (हिं० वि०) जड, मूर्ख।

गबर (हिं० पु०) जहाजमें एक तरहका पाल जो सब पालोंसे ऊपर रहता है।

गबरगंड (हिं० पु०) मूर्ख, अज्ञानी, जड़।

गबरहा (हिं० वि०) गोबर मिला, गोबर लगा हुआ।

गबरू (फा० वि०) १ जवानीकी वह अवस्था जब रेख निकलीती हो। २ भोला भाला, सीधा (पु०) ३ दूल्हा, पति, स्वामी।

गबरून (फा० पु०) एक प्रकारका कपड़ा जो चरखानेसा होता है। इस तरहका वस्त्र लुधियानेमें बुना जाता है।

गबोना (देश०) कतोला, कतोरा।

गब्बर (फा० वि०) १ घमंडी, अहंकारी। २ आलसी। ३ बहुमूल्य। ४ धनी, मालदार।

गब्भा (फा० पु०) रूईसे परिपूर्ण एक बिछावन।

गब्र (फा० पु०) पारसका रहनेवाला, पारस देशका अग्निपूजक।

गभ (सं० क्ली०) भग पृषोदरादिवत् वर्णविपर्यये साधुः। भग, योनि।

"आहन्ति गभे पसो निगलगलीति धारका।" वाजसनेयसं० २३।२२

"गभे वर्णविपर्यय भाग: भगयोनी" (महीधर)

गभस्ति (सं० पु०) गम्यते ज्ञायते गम-ड गः विषयः तं बभस्ति भस-तिच्। १ किरण, प्रकाश। २ सूर्य। ३ शिव।

"गभस्ति कमलं क्षमा ब्रह्म इ माक्रमो गति।" (भारत १३।१७।२२)

४ स्वाहा, अग्निकी स्त्री। ५ अङ्गुली, उंगली।

जमीनोंका स्वत्व भिन्न भिन्न व्यक्तियों पर है। परन्तु पतित और गाय भैंसोंको चरानेकी जमीन साधारण सम्पत्ति समझी जाती है। इनमें किसी एक व्यक्तिके कहनेके अनुसार कोई काम नहीं होता ; बल्कि गाँवके प्रधान प्रधान व्यक्ति मिल कर समस्त कार्यों का निर्वाह करते हैं। आधुनिक मराजराजत्वकी तरह पहले राजपूतानेके जाटोंमें साधारण तन्त्र प्रचलित था। इन जाटोंमें विधवाओंकी विवाह प्रचलित है। जाटगण भिन्न भिन्न शाखाओंमें विभक्त है; ये अपनी श्रेणीके सिवा अन्यान्य शाखाओंसे विवाह-सम्बन्ध करते हैं। कृषि-व्यवसायी जाटोंकी संख्या पञ्जाबमें ही अधिक पाई जाती है। पञ्जाबी भाषामें जाट, जमींदारी और क्षषक ये तीनों शब्द एकार्थबोधक हैं। टाड आदि इतिहासवेत्ताओंके मतसे—महाराज रणजितसिंहने जाटवंशमें जन्म लिया था।

आर्योदीवंशके जाटगण पानीपत और सुनपत नामक स्थानोंमें रहते हैं, इनकी मालिक उपाधि है। इसीलिए ये लोग वंशगौरवसे अपनेको अन्य जाटोंसे श्रेष्ठ बतलाते हैं। पञ्जाब, काचगन्धव तथा गङ्गा और यमुनाके निकटवर्त्ती प्रान्तोंमें अनेक जाटोंका वास है, जिनकी भाषा अन्य जातियोंसे भिन्न है। जेल प्रदेशके जमींदार जाटवंशके हैं। ये कहीं जाते समय अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित हो कर बैल पर सवार होते हैं। बहुतसे जाटोंको आधी नंगी तलवार लिए बैल पर सवार हुए जाते देखा है। जाटगण काचगन्धव प्रदेशमें बहुत दिनोंसे रहते हैं, इसलिए बहुतोंने इन्हें यहांका आदिम अधिवासी बतलाया है। जाट गण कहीं भी रहें, वे भूमि कर्षणके लिए वहांकी सबसे ऊंची जमीन पर अधिकार जमाते हैं। अलीगढ़के जाटोंके साथ राजपूतानाके जाटोंका जातिगत विरोध देखनेमें आता है। इनमें विरोध इतना प्रबल है कि, ये दोनों जातियाँ कभी एक ग्राममें नहीं रहती। अमृतसरके सिख जाटगण बड़े साहसी और योद्धा कार्यक्षम होते हैं। इन लोगोंके समान साहसी और योद्धा दुनियामें बहुत कम हो पाये जाते हैं। जाटोंकी वीरताका दो-एक विवरण सुननेमें आता है। १७५७ ई०में जाटोंने रामगढ़ अधिकार किया था, जिसका नाम बदल कर इन लोगोंने कोल रक्खा था। अलीगढ़में शासनी नामक स्थानमें जाटोंने एक मृण्मय दुर्ग बनाया था। अफगानिस्तानमें भी जाटोंकी बस्ती है। वहाँ ये गुर्जर नामसे

जाट जाति।

परिचित हैं। जाटोंमें सभीका धर्म एक नहीं है,—कुछ हिन्दू कुछ मुसलमान और कुछ सिख धर्मको पालते हैं। पञ्जाबके जाटोंका धर्मसम्बन्धी नियमोंमें विशेष विश्वास नहीं था, इसीलिए महात्मा नानकने उन्हें सहजमें सिखधर्ममें दीक्षित कर लिया था।

२ एक तरहका गाना, जो रंगीन या चलता होता है। ३ जाठ देखो।

जाटलि (सं० पु०) १ पटोललता, परवलकी लता।

जाटालि (सं० स्त्री०) किंशुक वृक्षसदृश वृक्षभेद, पलासको जातिका एक पेड़ जिसे मोखा कहते हैं।

जाटालिका (सं० स्त्री०) कुमारानुचर मातृभेद, कार्त्तिकेयकी एक मातृकाका नाम।

जाटासुरि (सं० पु०) जटासुरस्य अपत्यं इञ्। जटासुरके पुत्रका नाम।

जाटिकायन (सं० पु०) अथर्ववेदके एक ऋषिका नाम।

गमक है। इसके सात भेद हैं। यथा कम्पित, स्फुरित, लीन, भिन्न, स्थविर, आहत और आन्दोलित है। गायकको पौष और माघ मासमें एक प्रहर रात्रिके रहने पर जलमें प्रवेश करना और गमककी साधना करनी चाहिये। (सङ्गीतदामोदर)

मतान्तरमें गमकके २२ भेद है। यथा—अपूर्वाहत, अस्थित, अयोघर्षण, अस्त्राहत, आन्दोलित, आहत, आघर्षित, उत्ताहत, कम्पित, करोरि, कर्णोमस्थान, घर्षित, जयत, ढाला, तुरित, निष्पत, पुरोहत, प्रत्याहत, वायमि, मुद्रित, शान्त,सुवाला और सोमस्थान। (संगीतशास्त्र)

४ तबलेका गम्भीर शब्द।

गमकारित्व (सं० क्लो०) रसभ।

गमकोला (हिं० वि०) महंकनेवाला। सुगंधित।

गमखोर (फा० वि०) सहिष्णु, सहनशील।

गमखोरी (फा० स्त्री०) सहिष्णुता, सहनशीलता।

गमगीन (फा० वि०) दुखी, खिन्न, उदास।

गमत (सं० पु०) १ रास्ता, मार्ग। २ व्यवसाय, पेशा, रोजगार

गमतखाना (फा० पु०) नावमें एक स्थान जहां पानी छेदों द्वारा जमा होता है।

गमतरी (फा० स्त्री०) गमतखाना।

गमता (गामित्त) भील जातिकी एक श्रेणी। ये गायकवाड़से लेकर खान्देश तथा सूरतके उत्तरपूर्वमें पाये जाते है। इनको संख्या लगभग ५२०१८ होगी। इनमेंसे थोड़े बाल मुड़वाया करते और कुछ लम्बे लम्बे बाल रखते हैं। स्त्रियां अपने अपने बड़े बड़े बालोंको सजाए रहती है। ये बहुत संकीर्ण झोंपड़ीमें रहते है। झोंपडीकी दिवालें बांसकी पट्टियोंको बनी रहती और उसमें मिट्टीका लेप दिया रहता है तथा घाससे छायी रहती है। इन लोगोंका प्रधान भोजन रोटो है। ये भेड़ा, बकड़ा, खरगोश, तथा चिड़ियां भो खाते हैं। लेकिन ये गोमांस अथवा किसो मृत जानवरका मांस छूते तक भो नहीं हैं। पुरुषके मस्तक पर एक पगड़ो कमरमें सिर्फ एक लंगोटो और हाथको कलाईमें चांदी या तांबेके आभूषण रहते है। स्त्रियां चोली और घंघरा पहनती और सिरसे एक दूसरा वस्त्र ढक लेती है। ये कानोंमें तांबेकी कनेठियां और गलेमें कांचकी माला पहनती है। छोटी छोटी बालिकायें पैरमें तांबेकी ठोस पैंजनो रखती है। ये खेती तथा लकड़ी काट कर अपनी जीविका निर्वाह करते है। ये बाघदेव, सामलदेव और देवलोमाताकी पूजा करते है। ये ब्राह्मणोंकी सेवा टहल नहीं करते यहां तककी ये ब्राह्मणोंको प्रणाम भी नहीं करते है। उन्हींमेंसे एक पुरोहितका काम चला लेता है। जब कोई सन्तान जन्म लेती तो उससे छठे दिन ये छठो देवताकी पूजा करते तथा अपने कुटुम्बोंको शराब इत्यादि पिलाते है।

बूढ़ा स्त्री नवजात शिशुका नाम रख देती है। बारह वर्षकी अवस्थामें अर्थात् जब लड़का ताड़ वृक्ष पर चढ़नेमें समर्थ हो जाता तब इसका विवाह करते हैं। विवाह सम्बन्ध निश्चित हो जाने पर ये चार या पांच रुपयेकी ताड़ी खरीद लाते और अपने जात भाइयोंको पिलाते है। सिर्फ २५) रु०में इन लोगोंका विवाह हो जाता है। इनमें बहुविवाह तथा विधवाविवाहकी प्रथा प्रचलित है। ये शवको जला देते है। धनीपुरुष चार दिनोंमें तथा गरीव एक या दो मासमें अन्त्येष्टिक्रिया करते है।

गमथ (सं० पु०) गम अधिकरणे अथ। १ पथ, रास्ता। गम कर्त्तरि अथ। २ पथिक, बटोही, मुसाफिर। ३ व्यापार, पेशा। ४ आमोद-प्रमोद।

गमन (सं० क्लो०) गम भावे ल्युट्। १ क्रियाविशेष।

"भ्रमणाच गमनं कर्माण्येतानि पञ्च च।" (भाषापरिच्छेद)

२ पराजयकी इच्छासे गमन, कूच। इसका पर्याय—यात्रा, व्रज्या, अभिनिर्याण, प्रस्थान, गम, प्रयाण, प्रस्थिति, यान और प्राणन है। ३ यात्रा।

"न च मे रोचते वीर गमनं दण्डक प्रति।" (रामायण ३।१३।१२)

४ उपभोग, मैथुन।

'अगम्यागमनाच्चैव अभक्ष्य च भक्षणात्।" (तिथितत्त्व)

गम करणे ल्युट्। ५ जिसके द्वारा गमन किया जाय, रथ, शकट प्रभृति।

गमनना (अ० वि०) जाना।

गमनपत्र (सं० पु०) वह पत्र जिसके द्वारा एक जगहसे दूसरी जगह जानेका अधिकार मिलता हो, चालान।

अशुभ इत्यादि विषय परिस्फुट रीतिसे लिखे हैं।

२ बौद्धोंके एक प्रकारके ग्रन्थ। जातक अर्थात् बुद्धदेवकी एक एक जन्मका विवरण। बौद्धोंका कहना है कि, सम्पूर्ण जातकोंकी संख्या ५५० है। बुद्धदेवने स्वयं श्रावस्तीमें रहते समय अपने शिष्योंको मोक्षधर्मकी शिक्षा देनेके लिए ५५० पूर्व जन्मोंमें जो जो अलौकिक कार्य किये थे, उन्हींके वे इन ५५० जातकोंमें आख्यानके रूपसे कह गये हैं। ये ग्रन्थ बुद्धके मुखसे निकले हैं, ऐसा समझ कर बौद्धगण इनको परम पवित्र मानते हैं। इस समय बहुतसे जातक विलुप्त हो गये है। जो मौजूद हैं, उनमेंसे फिलहाल निम्नलिखित कुछ जातक प्रचलित हैं-अगस्त्य, अपुत्रक, अधिसद्य, श्रेष्ठी, आर्यो, भद्रवर्णीय, ब्रह्म, ब्राह्मण, बुद्धबोधि, चन्द्रसूर्य, दशरथ, गङ्गापाल, हंस, हस्ती, काक, कपि, क्षान्ति, काल्मषपिण्डि, कुम्भ, कुश, किन्नर, महाबोधि, महाकपि, महिष, मैत्रिबल, मत्स्य, मृग, मघादेवीय, पद्मावती, रूरु, शत्रु, शरभ, शश, शतपत्र, शिवि, सुभास, सुपारग, सूतसोम, श्याम, उन्मादयन्ती, वानर, वर्त्त कपोत, विश्व, विश्वम्भर, वृषभ, व्याघ्री, यज्ञ, वृषहरणीय, लतुव, वितुर पुष्कर इत्यादि।

ये सब ग्रन्थ संस्कृत और पालि भाषामें रचित हैं। बहुतोंकी सिंहली भाषामें टीका भी है। बहुतोंका अनुमान है कि, ये जातक प्रायः २०३० वर्ष पहलेके रचे हुए हैं। इनमें कई एक आख्यायिकाएं एसी हैं, जिनकी शैली पञ्चतन्त्र या ईसपकी आख्यायिकाओंसे मिलती है। और बहुतसी ऐसी हैं जो हिन्दूपौराणिक गप्पोंको बिगाड़ कर बौद्धोंके मतानुसार लिखी गई हैं।

(पु०) ३ शिशु, बच्चा। ४ भिक्षु, भिखारी। ५ हींगका पेड़। ६ कारण्डी व्रत।

जातकर्म (सं० क्ली०) जातस्य जाते सति वा यत्कर्म। दश प्रकारके संस्कारोंमेंसे चतुर्थ संस्कार, सन्तानकी उत्पत्तिके समयका एक कर्त्तव्य कर्म। जातकर्मका विधान भवदेवमें इस प्रकार लिखा है—

पुत्रके जन्मते ही उसके पिताके पास सम्वाद भेजना चाहिये। पिताको पुत्रका जन्म-वृतान्त सुनते ही "नाभिमाकृन्तत स्तनंच मादत्त" अर्थात् 'नार नहीं काटना स्तनोंका दूध न पिलाना'—यह कह कर वस्त्र सहित स्नान करना चाहिये। स्नानसे निवृत्त हो कर यथाविधि षष्ठी, मार्कण्डेय और षोड़शमातृका पूजा, वसुधारा और नान्दीमुख श्राद्धका अनुष्ठान करना उचित है। तदनन्तर एक शिलाको ब्रह्मचारी कुमारी, गर्भवती या श्रुतस्वाध्यायशील ब्राह्मण द्वारा अच्छी तरह धुला कर, व्रीहि यव दाहिने हाथकी अनामिका और अङ्गुष्ठ द्वारा "कुमारस्य जिह्वांनिमीष्टि इयमाज्ञा" इस मन्त्रका उच्चारणपूर्वक स्पर्श कराना चाहिये। इसके उपरान्त सुवर्ण द्वारा घृत ले कर यथाविधि मन्त्रोच्चारण कर बालककी जिह्वामें छुआना चाहिये और "नाभि कृन्तत, स्तनंच दत्त' (नाभि छेद दो स्तन दुग्ध दो) इस प्रकारकी आज्ञा दे कर उस स्थानसे निकल जाना चाहिये। पुत्र जन्मते समय यदि अन्य अशौच रहे तो भी पुत्रका पिता जातकर्म कर सकते हैं।

"अशौचे तु समुत्पन्ने पुत्रजन्म यदा भवेत्।
कर्त्तव्या कौलिकी शुद्धिर शुद्धः पुनरेव सः॥" (संस्कारतत्त्व)

पुत्रके मुख देखनेसे पहिले पिताको चाहिये कि, वह ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दान देवे। जातकर्म नाभिच्छेदसे पहले करना पड़ता है।

"प्राङ्नाभिवर्द्धनात् पुंसो जातकर्म विधीयते।" (मनु)

ज्योतिष शास्त्र-विहित तिथि नक्षत्र न होने पर भी जातकर्म करना पड़ता है। आज कल इस बीसवीं शताब्दीके शिक्षास्रोतमें इस संस्कारका प्रायः लोप हो गया है। संस्कार देखो।

जातकर्ष्णि (सं० पु०) जलौका, जोंक।

जातकाम (सं० त्रि०) जातः कामः यस्य, बहुव्रो०। जातकामना, जिसकी इच्छा उत्पन्न हुई हो।

जातकोप (सं० त्रि०) जातः कोपः यस्य, बहुव्रो०। जातक्रोध, जो क्रोधित हो गया हो।

जातक्रिया (सं० स्त्री०) जातस्य क्रिया। जातकर्म देखो।

जातघातरोग (सं० पु०) वह रोग जो बच्चेको गर्भहीसे माताके कुपथ्य आदिके कारण हो।

जातना (हिं० स्त्री०) यातना देखो।

जातपांत (हिं० स्त्री०) जाति, बिरादरी।

जातपुत्र (सं० त्रि०) जातः पुत्रः यस्य, बहुव्रो०। जिसके पुत्र हुआ हो।

भद्रा, विदारिणी, महाभद्रा, मधुपर्णी, स्वरुभद्रा, कृष्णा, अश्वेता, रोहिणी, रटष्टि, मधुमती, सुफला, काश्मीरी, भद्रा, गोपभद्रिका, कुमुदा, सदाभद्रा, कटफला, सर्वतोभद्रिका, चीरिणी, स्थूलत्वचा और महाकुमुदा है। इसका गुण— कटु, तिक्त, गुरु, उष्ण, भ्रम, शोथ, त्रिदोष, विषदाह, ज्वर, तृष्णा और रक्तदोषनाशक है।

इसके फलके गुण-तिक्त, गुरु, ग्राही, मधुर, केशहित-कर, रसायन, मेध्य, शीतल, दाह और पित्तनाशक है। इसके मूलके गुण—अतिशय उष्ण, कषाय, तिक्त, उष्ण-वीर्य, मधुर, गुरु, दीपन, पाचन, भ्रम, तृष्णा, आमशूल, अर्श, विषदाह और ज्वरनाशक है। (भावप्रकाश)

गम्भिष्ठ (सं० त्रि०) गभन्-इष्ठन्। गभीरतम, बहुत गहरा।

"गम्भिष्ठं यवं च एतत् पतति।" (शतपथब्रा० ७।५।१।८)

गम्भीर (सं० त्रि०) गच्छति जलमत्र गम-ईरन् निपातनात् भूगागमः। १ निम्नस्थान, गभीर, गहरा।

"धृतगम्भीर खनीरुभौलिम।" (नैषध)

२ मन्द्र शब्द, मेघकी आवाज।

"स्निग्धगम्भीरनिर्घोषमेकस्यन्दनमास्थितौ।" (रघु० १ स०)

(पु०) ३ जम्बीर, जंबीरी नीबू। ४ पद्म, कमल। ५ ऋक् मन्त्रविशेष, ऋग्वेदमें एक प्रकारका मन्त्र।

"स्वरे सर्वे च नाभौ च विदु गम्भीरता ग्रमा।" (श्रुति)

गम्भीरक (सं० पु०) वृक्षविशेष, फणिज्झकवृक्ष, सुगन्ध तुलसीका पेड़।

गम्भीरज्वर (सं० पु०) एक प्रकारका ज्वर।

"गम्भीरस्तु ज्वरो ज्ञेयो ह्यन्तर्दाहेन तृष्णया।
आनद्धत्वेन दोषाणां श्वासकासोद्गमेन च॥" (निदान)

गम्भीरदृष्टि (सं० पु०) नेत्ररोगविशेष, आँखकी एक बीमारी।

गम्भीरनाथ—एक गुहा मन्दिर। बम्बई प्रदेशके पूना जिलान्तगत खण्डाल विभागमें वेरान पहाड़के ऊपर अव-स्थित है। खण्डाल नगरसे इस मन्दिर पर पहुंचनेमें प्रायः ६ घण्टे लगते हैं। पहाड़ काट कर यह मन्दिर प्रस्तुत किया गया है।

गम्भीरपाक (सं० पु०) अन्तःपाक।

गम्भीरमालिनी—जैनमतानुसार विदेह क्षेत्रकी विभङ्ग-नदियोंमेंसे एक वृहत् नदी।

गम्भीरराय—एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। इन्होंने नुरपुरके इतिहासको हिन्दी कवितामें रचना की है। १६२८से १६५८ई०तक मध्यप्रदेशके अन्तर्गत सुमेरुके राजा जगत्-सिंह और दिल्ली बादशाह शाहजहांके बीच लड़ाई छिड़ी थी। इन्होंने युद्धवृत्तान्त ज्वलन्त भाषाको कवितामें वर्णन किया है।

गम्भीरवेदिन् (सं० पु०) गम्भीरं गहनं बाहुलकात् यं वेत्ति गम्भीर-विद-णिनि। १ एक प्रकारका हाथी।

"चिरकालेन यो वेत्ति शिक्षां परिचितामपि।
गम्भीरवेदी विज्ञेयः स गजो गजवेदिभिः॥" (राजपुत्रीय हस्तिशिक्षा)

जो हाथी बहुत देरके बाद परिचय, शिक्षा या उप-देश समझ सकता है उसको गम्भीरवेदी कहते हैं। इस-का पर्याय—अङ्कुशदुर्धरचालक, व्यालक और अवमता-ङ्कुश है।

"स प्रतापं महेन्द्रस्य मूर्ध्नि तीक्ष्णं न्यवेशयत्।
अङ्कुशं द्विरदस्येव यन्ता गम्भीरवेदिनः॥" (रघु० ४।३९)

२ मोटी बुद्धि।

गम्भीरवेदित्व (सं० पु०) गम्भीर-विद्-त्वच्। अज्ञहस्ती, असावधान हाथी।

"त्वग्भेदाच्छोणितस्रावात् मांसस्य क्वथनादपि।
आत्मानं यो न जानाति स स्याद् गम्भीरवेदिता॥" (रघुटीका मल्लिनाथ)

अर्थात् जिस हाथीके चर्मसे रक्त निकलने अथवा मास काट डालने पर भी वह कुछ नहीं जानता हो इस-को गम्भीरवेदिता कहते हैं।

गम्भीरिका (सं० स्त्री०) १ नेत्ररोगविशेष। इसका लक्षण

"दृष्टिर्विरूपा श्वसनोपसृष्टा सङ्कुचतेऽभ्यन्तरतः प्रयाति।
रुजावगाढा च तमक्षिरोगं गम्भीरिकेति प्रवदन्ति धीराः॥" (भावप्रकाश)

२ वृहत् ढाल, बड़ी ढाल।

गम्य (सं० त्रि०) गम्-यत्। १ गमनीय, जाने योग्य, गमन योग्य। २ प्राप्य, लभ्य, पाने योग्य।

"ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्ठितम्"। (गीता १३।१७)

३ गमनयोग्य, गमन करने योग्य, सम्भोग करने लायक।

"गम्यान्यपि च तीर्थानि कीर्त्तितान्यगमानि च (भारत ८३।८५)

गम्यमान (सं० त्रि०) गम कर्मणि शानच्। १ ज्ञायमान, जानने योग्य। २ जिस ग्राममें जाना हो।

गम्या (सं० स्त्री०) गम-यत्-टाप्। सम्भोगार्हा स्त्री, वह

आकृति द्वारा जिस पदार्थका ज्ञान हो, उसका नाम है जाति। मनुष्यत्व आदि और मनुष्य आदि एक ही बात है, ऐसा समझ लेनेसे जातिका अर्थ सहजहीमें समझा जा सकता है जातिके उदाहरण मनुष्य वा मनुष्यत्व आदि और हस्त, पाद आदि विशेष विशेष आकृतिके विना जाने मनुष्य वा मनुष्यत्वका ज्ञान नहीं हो सकता। भिन्न भिन्न आकृति द्वारा भिन्न जातिका ज्ञान होना है। मनुष्यको देख कर वृक्षका ज्ञान नहीं होता। क्योंकि, मनुष्य और वृक्षकी आकृति एकसी नहीं है। मान लो, किसीने कभी भी वृक्ष नहीं देखा, और न उसे यही मालूम है कि, वृक्ष कैसा होता है; तो उसे वृक्षका ज्ञान यह कह कर करना होगा कि—"जिस पर डालियां, पत्तियां और वल्कलादि हों, उसे वृक्ष कहते हैं।" इस तरह वह डालियों और पत्तियोंकी आकृतिसे ही वृक्ष वा वृक्षत्व जान सकता है।

आकृति देख कर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व, वैश्यत्व, शूद्रत्व आदिका ज्ञान नहीं हो सकता इसलिए दूसरा लक्षण लिखा जाता है—*लिंगानाच्च सर्वभाक्।"*

जो सब लिङ्गोंको ग्रहण नहीं करते अर्थात् सभी लिङ्गोंमें जिनका शब्दरूप नहीं होता, वे भी जाति हैं। जैसे—ब्राह्मण वा ब्राह्मणजाति आदि। इन शब्दोंका रूप पुलिङ्ग या स्त्रीलिङ्गमें ही चल सकता है; क्लीव-लिङ्गमें नहीं। इस लक्षणके अनुसार देवदत्त कृष्णदास आदि एक लिङ्गभागी संज्ञाशब्द भी जातिवाचक हो सकते हैं, इसलिए ऊपर कहे हुए दोनों लक्षणोंके ही विशेषण रूपसे कहा जाता है। "*सकृदाख्यात निर्ग्राह्य।*"

एकबार उपदेश देने पर निश्चय रूपसे किसी एक श्रेणीका ज्ञान होना जरूरी है। देवदत्त कृष्णदास आदि एक लिङ्गभागी होने पर भी केवल एक एक व्यक्ति कोई भी निर्दिष्ट श्रेणी नहीं है।

वेदैकदेश क्रियावाचक कठादि शब्द और *गार्ग, गार्गी* आदि अपत्य प्रत्ययान्त त्रिलिङ्गभागी शब्दोंको जाति-वाचक करनेके लिए तीसरा लक्षण कहा जाता है—

"*गोत्रंच चरणैः सह।*"

वेदैकदेश कठादि शब्द और अपत्य प्रत्ययान्त शब्द भी जातिवाचक हो सकते हैं।

महाभाष्यमें जातिका लक्षणान्तर कहा है—

"*प्रादुर्भावविनाशाभ्यां सत्वस्य युगपद्गुणैः।*
असर्वलिंगां बह्वर्थां ताञ्जातिं कवयो विदुः।"

किसी पण्डितके मतसे समस्त जो एक अनुगत धर्म है वही जाति और ब्रह्म है।

गो आदि समस्त पदार्थोंके सम्बन्ध भेदसे जो 'सत्ता' रूप एक पदार्थ है, उसीका नाम जाति है। इसीमें सकल शब्द विद्यमान है। इसी जातिको धात्वर्थ और प्राति-पदिकार्थ समझना चाहिए। यह नित्य और आत्म-स्वरूप है। त्व तल् आदि भावार्थक प्रत्ययोंसे इसी जातिका बोध होता है। सिर्फ जाति ही एक और नित्य है; व्यक्तिको अनेक और अनित्य समझना चाहिये।

'*अनेकव्यक्त्यभिव्यंग्या जातिः स्फोट इति स्मृताः।*'

अनेक व्यक्तियोंमें अभिव्यक्त जातिको स्फोट कहते हैं। शब्द दो प्रकारके हैं—नित्य और अनित्य। नित्य शब्द एकमात्र स्फोट है, इसके सिवा वर्णात्मक शब्दसमूह अनित्य है। वर्णके सिवा स्फोटात्मक जो एक नित्य शब्द है, उसके विषयमें बहुतसे ग्रन्थोंमें बहुतसी युक्तियां दिखाई गई है। उनमेंसे प्रधान युक्ति यह है कि, स्फोट-के नहीं रहनेसे केवल वर्णात्मक शब्दोंसे अर्थका बोध नहीं हो सकता था। यह सभी स्वीकार करते है कि, अकार गकार, नकार, इकार, इन चार वर्णों द्वारा उत्पन्न जो अग्नि शब्द है, उससे वह्नि या आगका बोध होता है। परन्तु वह सिर्फ चारों अक्षरोंसे सम्पादित नहीं हो सकता। क्योंकि, यदि उक्त चारों वर्णोंमेंसे प्रत्येक वर्ण द्वारा वह्निका बोध होता, तो सिर्फ अकार वा गकार उच्चारण करनेसे भी अग्निका बोध हो सकता था। इस दोषके परिहारके लिए उक्त चारों वर्ण एक साथ मिल कर वह्निका बोध उत्पन्न कर देते हैं। यह कहना बड़ी भारी भूल है कि, समस्त-वर्ण आशुविनाशी हैं (आगे आगे वर्णोंकी उत्पत्तिके समय पहलेके वर्णों-का नाश हो जाता है), अतएव अर्थबोधकी बात तो दूर रही; उनकी एकत्र स्थिति भी नहीं होती। इन चारों वर्णोंसे पहले तो स्फोटकी अभिव्यक्ति अर्थात

एवं ८६° ३´ पू०के बीच विद्यमान है। गयाका क्षेत्रफल ४७१२ वर्गमील है। इसके उत्तर पटना जिला, पूर्व मुङ्गेर तथा हजारीबाग, दक्षिण हजारीबाग और पलामू और पश्चिमको शाहाबाद है। गया जिलेका दक्षिण भाग पहाड़ी है। दुर्वासा ऋषि और महावर प्रधान पर्वत है। पुनपुन, सोन आदि कई नदियां छोटानागपुरके पहाड़ोंसे निकल इस जिलेमें उत्तरको बहती है। फल्गु पुनपुनकी सहायक नदी है। यह दोनों धाराएं हिन्दू शास्त्रानुसार परम पावन हैं और गयाके प्रत्येक तीर्थ-यात्रीको इनमें स्नान करना पड़ता है। बारू और देहरीके बीच सोन नदी पर पत्थरका धरण लगा है। ठीक इसी धरण पर नहरोंका निकास और धरणके नीचे रेलवेका बहुत बड़ा पुल है।

पहले पटना और गया दोनों विहार सूबामें लगते थे। १७६५ ई०को अङ्गरेजोंको मिले। १८६५ ई०को गया पटनासे अलग किया गया। १८५७ ई०के जुलाई मास दानापुरके सिपाहियोंने बलवा करके शाहाबादकी राह ली थी। जब एक अङ्गरेजी फौज, जो उनसे लड़ने गयी थी, बुरी तौरसे हारी, पटनाके कमिश्नरने अपने सब निम्नस्थ पदाधिकारियोंको दानापुर छूट आनेकी अनुमति दी। उस समय गयामें कुछ अङ्गरेज और सिख सिपाही थे। पटना कमिश्नरकी आज्ञासे वह गयामें ७ लाखका खजाना छोड़ चल दिए, किन्तु कुछ सोच समझ करके लौट पड़े। दूसरी बार जब लोग खजाना ले करके फिर चलने लगे, उनके ऊपर आक्रमण हुआ। किन्तु वह आक्रमणकारियोंको परास्त करके सकुशल कलकत्ते पहुंच गये।

बोधगया गया नगरसे ७ मील दूर दक्षिणको अवस्थित है। यहां और पुनावानमें बहुतसी बौद्ध मूर्तियां मिलती हैं। दूसरे दूसरे स्थानोंमें भी बौद्धधर्मके निदर्शन विद्यमान है। सीतामढ़ीमें एक प्राचीन गुहा है। कहते है, सीताने वहीं वनवासावस्थामें लवको प्रसव किया था। रजौलीके सुन्दर पर्वतों और उपत्यकाओंकी भी अनेक वर्णनाएं मिलती है। अफसरमें एक वराह-मूर्ति विद्यमान है।

गयाकी लोकसंख्या प्रायः २०५९९३ है। भाषा विहारी मगही होती है। परन्तु अब हिन्दीका भी प्रचार होने लगा है। सपही, सिङ्गर, बसरौं, चतकरी और बेलममें अबरककी खानि है। पचम्बा आदि कई स्थानोंमें कितना ही लोहा मिलते भी निकाला नहीं जाता। मकान और सड़क बनानेके लिये पहाड़ोंसे पत्थर निकालते है। काले पत्थरके गहने, बर्तन और मूर्तियां बनती है। जहानाबादमें शोरा तैयार होता है।

इस जिलेमें लाख, चीनी, टसरी तथा सूती कपड़ा, पीतलके बर्तन, सोने-चांदीके गहने, कम्बल, नमदा और कालीन प्रस्तुत किये जाते है। पहले जमानेमें कागज भी बहुत बनता था। शिक्षामें गया जिला पीछे है।

२ विहार और उड़ीसा प्रदेशके गया जिलेका उप-विभाग। यह अक्षा० २४° १७´ तथा २५° ५´ उ० और देशा० ८४° १७´ एवं ८५° २४´ पू०के बीच अवस्थित है। इसका रकबा १८०५ वर्गमील और आबादी लग-भग ८३२४४२ है।

३ विहार और उड़ीसा प्रान्तके गया महकमाका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४° ४८´ उ० और देशा० ८५° १´ पू०में फल्गु नदीके वाम तट पर अवस्थित है। गया नगर दो भागोंमें विभक्त है। उनमें एकको पुराना शहर और दूसरेको साहबगञ्ज कहते है। पुराने नगरमें जहां विष्णुपदका सुप्रसिद्ध मन्दिर और दूसरे कई पवित्र स्थान हैं, केवल गयावाले पण्डा ही रहते है। गयाकी लोकसंख्या कोई ७१२८८ होगी।

भागवतमें लिखा है कि त्रेतायुगकी वहां गय नामक एक राजा रहता था। उसने अपने तपोबलसे यह वर पाया—जिसको उसने हाथ लगाया, परलोक पहुंचाया। यमको इस पर डाह लगा और उन्होंने देवताओंसे जा करके कहा कि उनका भविष्य सङ्कटापन्न था। वह आपसमें विचार करके गयके पास गये और उससे उसका शरीर यज्ञ करनेको मांग लिया। उसका जहां शिर पड़ा, गया नगर बना है। फिर विष्णुने प्रसन्न हो करके यह वर दिया था—तुम्हारे शिर पर रखी हुई शिला जगत्में परमपावन शिला होगी और देवता, इस पर विश्राम करेंगे, इस स्थानका नाम गयाक्षेत्र पड़ेगा और जो कोई यहां श्राद्ध तर्पण आदि करेगा, अपने पूर्वजों-

अपरजाति नहीं होती। घटत्व पटत्व आदि जो जाति हैं, वे अपर जाति कहलाती हैं; ये कभी भी परजाति नहीं होती। परन्तु द्रव्यत्व आदि जाति पर, अपर दोनों ही हो सकती हैं। द्रव्यत्व जाति सत्ता जातिकी अपेक्षा अव्यापक है अतएव वह अन्यान्य घटत्व जातिकी अपेक्षा व्यापक होनेके कारण परा है। (भाषापरि०)

वात्स्यायनके मतसे एक पदार्थ दूसरे पदार्थसे पृथक् है, इस भेदके उत्पादनके कारण सामान्यविशेषका नाम जाति है। जैसे—गोत्व, मनुष्यत्व इत्यादि। (वात्सा० २।२।७१) वैशेषिक दर्शनके मतसे—छह भावपदार्थोंका अन्यतम एक पदार्थ जाति है। (वैशेषिक)

अनुगत एकाकार बुद्धिजनक पदार्थका नाम जाति है। यह सामान्य और विशेषके भेदसे दो प्रकार है, जिसमें सामान्यके दो भेद हैं—एक पर और दूसरा अपर। जाति—जातिके कहनेसे इस देशमें ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णोंका बोध होता है। भारतवर्षके सिवा अन्य किसी भी देश पर दृष्टि डालनेसे यह मालूम होता है कि, उन देशोंके अधिवासी गण भिन्न भिन्न श्रेणी और भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंमें विभक्त होने पर भी सभी एक जातिमें गण्य हैं। किन्तु इस भारतवर्षमें ऐसा नहीं है। यहां प्रधानतः चार वर्णोंका वास है; इन चार वर्णोंमेंसे असंख्य श्रेणियों, असंख्य शाखाओं और अनेक सम्प्रदायोंकी उत्पत्ति हुई है।

धर्म और नीतिकी भित्तिसे हिन्दू-समाजमें जातीयता संगठित हुई है। ऐहिक और पारलौकिक सभी विषयोंमें हिन्दूगण जातिधर्मकी रक्षा किया करते हैं। जातित्वकी रक्षा न करने पर हिन्दूका, हिन्दुत्व नहीं रहता। इसप्रकारकी अनिवार्य जातिभेद-प्रथा किस तरह प्रवर्त्तित हुई; इस बातको कौन नहीं जानना चाहेगा?

उत्पत्ति—ऋग्वेदके पुरुषसूक्तमें चार जातिकी उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार पाई जाती है—

१। "यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरूपादा उच्येते।
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।"
(ऋक् १०।९०।११ १२)

जिस समय पुरुष विभक्त हुए थे, उस समय कितने भागोंमें उन्हें विभक्त किया गया था? उनके मुख, बाहु, ऊरु और दोनों पैरोंका क्या हुआ? इनके मुखसे ब्राह्मण, दोनों बाहुओंसे क्षत्रिय, ऊरुसे वैश्य और दोनों पैरोंसे शूद्र जनमे। वाजसनेयसंहिता (३१।१६) और अथर्ववेद (१९।६।६)में भी उक्त पुरुषसूक्तका जिक्र है और मन्त्रोंके पाठ भी प्रायः एकसे हैं, सिर्फ अथर्ववेदमें "ऊरु"के स्थानमें "मध्य तदस्य यद्वैश्यः" इतना पाठान्तर पाया जाता है।

२—तैत्तिरीयसंहिता (कृष्णयजुर्वेद)में कुछ विशेष लिखा है—

"प्रजापतिरकामयत प्रजायेयेति स मुखतस्त्रिवृतं निरमिमीत तमग्निर्देवतान्वसृजत गायत्रीच्छन्दो रथन्तरं साम ब्राह्मणो मनुष्याणामजः पशूनां तस्मात्ते मुख्या मुखतो ह्यसृज्यन्तोरसो बाहुभ्यां पंचदशं निरमिमीत तमिन्द्रो देवतान्वसृज्यत त्रिष्टुप्छन्दो बृहत्साम राजन्यो मनुष्याणामविः पशूनां तस्मात्ते वीर्यवन्तो वीर्याध्यसृज्यन्त मध्यतः सप्तदशं निरमिमीत तं विश्वेदेवा देवता अन्वसृज्यन्त जगतीच्छन्दो वैरूपं साम वैश्यो मनुष्याणां गावः पशूनां तस्मात्त आद्या अन्नधानाध्य सृज्यन्त तस्माद्भूयांसोऽन्येभ्यो भूयिष्ठाहि देवता अन्वसृज्यन्त पत्त एकविंशं निरमिमीत तमनुष्टुप्छन्दः अन्वसृज्यत वैराजं साम शूद्रो मनुष्याणामश्वः पशूनां तस्मात्तौ भूतसंक्रामिणावश्वश्च शूद्रश्च तस्माच्छूद्रो यज्ञेनवक्लृप्तो न हि देवता अन्वसृज्यत तस्मात्पादावुपजीवतः पत्तो ह्यसृज्येताम्।"
(७।१।१।४)

प्रजापतिको जन्मग्रहण करनेकी इच्छा हुई। उन्होंने मुखसे त्रिवृत् बनाया, फिर अग्निदेवता, गायत्री छन्द, रथन्तरसाम, मनुष्योंमें ब्राह्मण और पशुओंमें अज (मुखसे) उत्पन्न हुए। मुखसे सृष्टि होनेके कारण ये मुख्य हैं। वक्ष और बाहुयुगलसे पञ्चदश (स्तोम) का निर्माण किया। इसके उपरान्त इन्द्रदेवता, त्रिष्टुप्छन्द, बृहत्साम; मनुष्योंमें क्षत्रिय और पशुओंमें मेषकी सृष्टि हुई वीर्यसे उत्पन्न होनेका कारण ये सब वीर्यवान् हैं। मध्यसे सप्तदश (स्तोम) का निर्माण किया। फिर विश्वेदेव देवता जगती छन्द, वैरूप साम; मनुष्योंमें वैश्य और पशुओंमें गौओंकी सृष्टि हुई। अन्नाधारसे उत्पन्न होनेके कारण ये अन्नवान् हैं। इनकी संख्या बहुत है,

लोग अपने अपने अधिकारोंसे वञ्चित होंगे, अतः इसी समय पितामह! इसका जो हो, विधान कर दीजिये। विरिञ्चि देवगणको ले करके विष्णुके निकट उपस्थित हुए। वहीं एक सभा होने पर ठहरा था—इसी समय सब मिल गयको वर दे करके विरत करें। इसी परामर्शके अनुसार ब्रह्मा, विष्णु प्रभृति सभी कोलाहल पर्वत पर जा उपस्थित हुए और गयासुरको वर देने लगे। परोपकारी गयासुरने राज्य, ऐश्वर्य प्रभृति कुछ भी न मांग करके कहा था—यदि आप लोग मुझ पर सन्तुष्ट हुए हैं, तो ऐसा विधान करें—जिसमें मेरा शरीर ब्राह्मण, तीर्थ-शिला, देवता, मन्त्र, योगी, संन्यासी, कर्मी, धर्मी ज्ञाति आदि सभी पवित्र पदार्थोंसे भी पवित्र हो जावे। देवगण असुरकी चालाकी समझ न सके, उसने जो मांगा, स्वीकार करके यथास्थानको चल दिए। गयासुरका शरीर पवित्र हो गया। वह फिर नगर भ्रमणको निकले थे। उनका पवित्र शरीर देख करके सभी जीवजन्तु चतुर्भुज हो वैकुण्ठको चलने लगे। नगर जनशून्य हुआ था। फिर गयासुर जिसी नगर वा ग्रामको गये, प्राणिगण चतुर्भुज बनने लगे। उस समय देवताओंने असुरकी चालाकी समझी, परन्तु कोई युक्ति ठहरायी जा न सकी। यमको ही चिन्ता अधिक थी। कारण गयासुरका शरीर पवित्र होने पीछे कोई पशुपक्षी यमके घर नहीं पहुंचा। यम और दूसरे देवताओंने साथ साथ पितामहके निकट जा करके कहा था—'प्रभो। सर्वनाश उपस्थित है। गयासुरका पवित्र शरीर देख करके सभी वैकुण्ठ चले जाते हैं। यमपुरी एक प्रकारसे प्राणीशून्य है। आप जो हो, कोई उपाय बतला दीजिये।' ब्रह्मा देवगणको ले करके विष्णुके निकट पहुंचे। विष्णुके परामर्शसे गयासुरका शरीर यज्ञके लिये मांगा और कई ब्राह्मण कल्पना करके उनसे उसका अनुष्ठान कराया गया। समस्त देवगण उस यज्ञमें पहुंचे थे। गयासुरके शरीर पर ही यज्ञ किया गया। ब्रह्माके आदेशसे यमने धर्मशिला ले जा करके गयासुरके ऊपर रख दी और असुरको निश्चल बनानेके लिये सब देवता उसके ऊपर चढ़ करके खड़े हुए। किन्तु इससे गयासुर निश्चल न हुआ। पीछेको गदाधर विष्णुके जा करके खड़े होनेसे वह ठहरा था। गयासुर देवताओंका उद्देश समझ करके कहने लगा—यदि आप एक बार भी इस अधमसे कह देते, तो मैं कभी न हिलता डुलता। देवगणने इस पर अतिशय सन्तुष्ट हो करके वर मांगनेको कहा था। गयासुर तब बोल उठा—आप ऐसा वर दीजिये—जिसमें चन्द्र, सूर्य वा पृथिवीके रहने तक समस्त देवगण इस शिला पर अवस्थिति करें, मेरे नाम पर यह स्थान एक पुण्यक्षेत्र बने, पांच कोस गयाक्षेत्र तथा एक कोस गयाशिर: रहे और यह सकल तीर्थोंसे श्रेष्ठ ठहरे। देवगणने वही स्वीकार किया और गयासुर निश्चल हुआ। (गयामाहात्म्य)

देवगणके गयाशिरमें पदार्पण करनेसे गयाक्षेत्रमें देवताओंके पदचिह्न देख पड़ते हैं। गयामाहात्म्यमें लिखा है कि उक्त सभी पदचिह्नों पर पिण्डदान करना चाहिये। आज कल बहुतसे लोग शेषोक्त विवरण समझते और गयाके पण्डा भी इसी प्रकार गयातीर्थकी उत्पत्ति कीर्तन करते हैं। किन्तु यह उपाख्यान अधिक प्राचीन-जैसा नहीं मालूम पड़ता। महाभारतमें गयाक्षेत्रके मध्यस्थ अनेक तीर्थोंका उल्लेख है। किन्तु उसमें गयासुर अथवा उसके मस्तक पर गदाधर और अन्यान्य देवगणोंके पदस्थापनकी कोई बात नहीं। महाभारतमें विवृत हुआ है कि गयामें गयशिर, अक्षयवट, महानदी, धर्मारण्य, ब्रह्मसर, धेनुकतीर्थ, गृध्रवट, उद्यन्त पर्वत, योनिद्वार, फल्गुतीर्थ, धर्मप्रस्थ, मतङ्गाश्रम और धर्मतीर्थ विद्यमान है। फिर वायुपुराणीय गयामाहात्म्य तथा अग्निपुराणमें जिन स्थानों, तीर्थों वा देवपदों पर पिण्डदानकी कथा है, महाभारतमें उसका भी कोई उल्लेख नहीं। उसमें इतना ही लिखा है कि गयामें धर्मराज स्वयं वास करते और पिनाकपाणि भगवान् शङ्कर निरन्तर सन्निहित रहते हैं।

गयाके तीर्थ दर्शनादि सम्बन्धमें नियम बंधा है। त्रिस्थलीसेतु और गयायात्रा-पद्धतिमें लिखते हैं—जिस दिन गयायात्रा करना, पूर्व-पूर्व दिनको एकाहार तथा हविष्य भोजन करके और स्त्रीसंसर्ग छोड़ शुचि भावसे रहना चाहिये। उसके दूसरे दिन प्रातः स्नानादि करके देशकाल नियमानुसार गयायात्राके अङ्गरूप उपवास

निस्तेजसोऽल्पवीर्याश्च शूद्रास्तानब्रवीत् तु सः ।
तेषां कर्माणि धर्मांश्च ब्रह्मा तु व्यदधात् प्रभुः ॥
संस्थितौ प्राकृतायान्तु चातुर्वर्ण्यस्य सर्वशः ।"

(८।१५४–१६०)

भगवान् स्वयम्भू ब्रह्माने फलमूल मनुष्यादिके रूपमें सृष्टिकी रचना की। इसी तरह प्रजाओंकी वृत्ति स्थिर हो जानेके उपरान्त स्वयम्भूने उनमें मर्यादाकी व्यवस्था की। प्रजाओंमें जो परिग्रहीत और दूसरोंके रक्षक थे, उन्हें क्षत्रिय; जो क्षत्रियोंके आश्रयमें निर्भय हो कर केवलमात्र "सर्वभूतमें ब्रह्म विद्यमान है" इस प्रकारकी चिन्तामें मग्न रहते थे, उन्हें ब्राह्मण, जो इनकी अपेक्षा कुछ दुर्बल और कृषिकार्य द्वारा जीविका निर्वाह करते थे, उन्हें वैश्य तथा जो शोकदुःखपरायण, निस्तेज, अल्पवीर्य और अन्य तीनों जातियोंकी परिचर्यामें नियुक्त रहते थे, उन्हें शूद्र कह कर निर्दिष्ट किया।

९—विष्णु, मत्स्य और मार्कण्डेयपुराणमें भी इबहू ऐसा ही वर्णन लिखा है। हरिवंशमें लिखा है—

"व्यतिरिक्तेन्द्रियो विष्णु योगात्मा ब्रह्मसम्भवः ।
दक्षः प्रजापतिर्भूत्वा सृजते विपुलाः प्रजाः ॥
अक्षराद्ब्राह्मणः सौम्याः क्षराक्षत्रियबान्धवाः ।
वैश्या विकारतश्चैव शूद्राः धूमविकारतः ॥
श्वेतलोहितकैर्वर्णैः पीतैर्नीलैश्च ब्राह्मणाः ।
अभिनिर्वर्तिताः वर्णाश्चिन्तयानेन विष्णुना ॥
ततो वर्णत्वमापन्नः प्रजाः लोके चतुर्विधाः ।
ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव महीपते ॥
ततो निर्वाणसम्भूतः शूद्रात् कर्मविवर्जिताः ।
तस्मान्नार्हन्ति संस्कारं न ह्यत्र ब्रह्म विद्यते ॥"

१०—किन्तु महाभारतके शान्तिपर्वमें ऐसा लिखा है—

"ततः कृष्णो महाभा॰ः पुनरेव युधिष्ठिर ।
ब्राह्मणानां शतं श्रेष्ठं मुखादेवासृजत् प्रभुः ।
बाहुभ्यां क्षत्रियशतं वैश्यानां ऊरुतः शतम् ।
पद्भ्यां शूद्रशतं चैव केशवो भरतर्षभ ॥"

हे युधिष्ठिर! उस समय फिर कृष्णने मुखसे शत श्रेष्ठ ब्राह्मण, बाहुयुगलसे शत क्षत्रिय, ऊरुसे शत वैश्य और दोनों पैरोंसे शत शूद्रोंकी सृष्टि की।

महाभारतके आदिपर्वमें लिखा है कि, मनुसे ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों जातिकी उत्पत्ति हुई है।

ऊपर जितने भी मत उद्धृत किये गये हैं, उन सबमें प्रायः परस्पर विरोध पाया जाता है। ऐसी दशामें उपरोक्त प्रमाणों द्वारा निःसन्देह नहीं कहा जा सकता कि, किस प्रकारसे चातुवर्ण्यकी सृष्टि हुई। हां, केवल इतना ही माना जा सकता है कि, जब वेदके संहिता भागमें चारों जातियोंका प्रसङ्ग है, तब बहुत प्राचीन-कालसे ही भारतमें जातिभेद-प्रथा प्रचलित है—इसमें सन्देह नहीं। भगवान्ने गीतामें कहा है—

"चातुवर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।" गुण और कर्मके विभागानुसार ही मैंने चार वर्णोंकी सृष्टि की है।

वास्तवमें जब वैदिक आर्यगण सभ्यताके ऊंचे आसन पर विराजमान थे, उस समय—जिससे समाजमें किसी प्रकारकी विशृङ्खलता उपस्थित न हो—यह सोच कर ही मङ्गलाकांक्षी ऋषियोंने जातिभेदप्रथाका प्रवर्त्तन किया था। सभी पुराणोंमें, प्राचीनतम राजाओंकी वंशावलियोंके देखनेसे ही प्रतीत होता है कि, पूर्वकालमें व्यक्तिगत गुणकर्मानुसार ही जाति निर्णीत हुई थी।

इसी प्रकार अनेक पुराणोंमें ब्राह्मण आदि चतुर्वर्णसे फिर भिन्न भिन्न जातियोंकी उत्पत्तिका हाल मिलता है। ब्राह्मणसे जो अन्यान्य जातियोंका जन्म हुआ है, इसके अनेक प्रमाण हैं, इसलिए इस विषयमें और दूसरे प्रमाण देनेकी जरूरत नहीं है। परन्तु ब्राह्मणके सिवा क्षत्रिय, वैश्य आदिसे जिन विभिन्न जातियोंकी उत्पत्ति हुई है, उनके कुछ प्रमाण नीचे लिखे जाते हैं।

क्षत्रियसे चार जातियोंकी उत्पत्ति है। भगवान् मनुके दौहित्र पुरुरवा थे। विष्णुपुराणके मतसे—पुरुरवाके पुत्रका नाम आयु था। आयुके ५ पुत्रोंमेंसे क्षत्रवृद्ध भी एक थे। क्षत्रवृद्धके पुत्र शुनहोत्र और शुनहोत्रके तीन पुत्र काश, लेश और गृत्समद थे। गृत्समद*से चातुर्वर्ण्य प्रवर्त्तयिता शौनक उत्पन्न हुए थे।

* ये गृत्समद ऋग्वेदके द्वितीय मण्डलके ऋषि थे। सायणाचार्यने द्वितीय मण्डलकी भूमिकामें लिखा है—
"मन्त्रद्रष्टा गृत्समदः ऋषिः । स च पूर्वमंगिरसकुले शुनहोत्रा-

करना चाहिये। टानान्तमें यही मन्त्र पढ़ करके मौनार्क-को नमस्कार करते हैं।

उसके पीछे (दूसरे दिन) फल्गुतीर्थ गमन करना चाहिये। यह तीर्थ अति प्राचीन है। महाभारतमें भी लिखा है कि गयास्थ फल्गुतीर्थ जानेसे अश्वमेधका फल और महासिद्धि-लाभ होता है। (वनपर्व ८४ अ०) वायुपुराणीय गयामाहात्म्यके मतानुसार पूर्वकालको ब्रह्माकी प्रार्थनासे विष्णुने फल्गुरूपी हो करके दक्षिणाग्निमें जो होम किया, उसीको रजःकणासे फल्गुतीर्थ बना है। गङ्गा विष्णुकी पादजाता है। किन्तु फल्गुतीर्थ स्वयं आदिगदाधरके द्रवीभूत होनेसे बनने पर गङ्गासे श्रेष्ठ है। त्रिभुवनके सकल पवित्र तीर्थ स्नान-कालको फल्गुतीर्थमें सम्मिलित होते हैं।

(गयामाहात्म्य ७।१४।१७)

अग्निपुराणके मतमें गयाशिर ही फल्गुतीर्थ है। फल्गुतीर्थमें स्नान करके गदाधर दर्शन करनेसे जो सुकृत लाभ होता, और किसी प्रकार भी मिल नहीं सकता। (अग्निपुराण ११५।२६) गयामाहात्म्यमें अन्यत्र कहा है कि नागकूट, गृध्रकूट और उत्तरमानस सबके मध्यवर्ती स्थानका नाम गयाशिर वा फल्गुतीर्थ है। मुण्डपृष्ठ पर्वतके निम्नस्थानमें ही फल्गुतीर्थ पडता है। यहां—

"फल्गुतीर्थे विष्णुजले करोमि स्नानमादृतः।
पितॄणां विष्णुलोकाय मुक्तिभुक्तिप्रसिद्धये॥"

मन्त्रसे स्नान तथा तर्पण करके प्रेतशिलासंलग्न ब्रह्मकुण्डमें नहा स्वशाखाके अनुसार श्राद्ध और पिण्ड-दान करना चाहिये। पीछे—

"नमः शिवाय देवाय ईशान पुरुषाय च।
अघोर वामदेवाय सद्योजाताय शम्भवे॥"

मन्त्रसे पितामहको और फिर—

"ओं नमो वासुदेवाय नमः सङ्कर्षणाय च।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय श्रीधराय च विष्णवे॥"

मन्त्रसे गदाधरको प्रणाम तथा पूजा की जाती है।

तीसरे दिन धर्मारण्यको गमन करते हैं। इस स्थान पर धर्मराजने यज्ञ किया था। यहां मतङ्गवापीमें स्नानान्तको तर्पण तथा श्राद्ध करना चाहिये। पीछे निम्नलिखित मन्त्रसे मतङ्गेश्वरको प्रणाम करते हैं—

"प्रमाणं देवताः सन्तु लोकपालाश्च साक्षिणः।
मयागत्य मतङ्गेऽस्मिन् पितॄणां निष्कृतिः कृता॥"

धर्मारण्यके पूर्वको ब्रह्मतीर्थ है। महाभारतमें कहा है कि धर्मारण्योपशोभित ब्रह्मसरतीर्थमें गमन करनेसे ब्रह्मलोक लाभ होता है। ब्रह्माने उस सरोवरमें एक यूप-काष्ठ निखात किया था। उस यूपको प्रदक्षिण करनेसे अश्वमेधका फल मिलता है। गयामाहात्म्यके मतसे उक्त ब्रह्मकूप और ब्रह्मयूपमें श्राद्ध करनेसे पितृगणका उद्धार होता है। इसीके निकट (बोधगयास्थ) महाबोधि नामक अश्वत्थवृक्ष है। धर्म और धर्मेश्वरको नमस्कार करके महाबोधि तरुको निम्नलिखित तीन मन्त्रोंसे नमस्कार करना चाहिये—

"चलद्दलाय वृक्षाय सर्वदा स्थितिहेतवे।
बोधिसत्वाय यज्ञाय अश्वत्थाय नमो नमः॥
एकादशोऽसि रुद्राणां वसूनां पावकस्तथा।
नारायणोऽसि देवानां वृक्षराजोऽसि पिप्पल॥
अश्वत्थ यस्मात्त्वयि वृक्षराज नारायणस्तिष्ठति सर्वकालम्।
अतः श्रुतस्त्वं सततं तरूणां धन्योऽसि दुःस्वप्नविनाशनोऽसि॥"

अग्निपुराण (११६।३७) में भी लिखा है कि महाबोधि तरुको नमस्कार करनेसे धर्म और स्वर्गलोक मिलता है। किन्तु महाभारतमें इस महाबोधितरु अथवा धर्मेश्वरका कोई उल्लेख नहीं। बुद्धदेवके अश्वत्थवृक्ष मूलमें महाबोधि लाभ करनेसे बौद्ध समाजमें यह महाबोधितरु कहलाता है।

ब्रह्मसरके निकट गोप्रचारतीर्थ है। आजकल वहां एक आम्रवृक्ष रह गया है। गयामाहात्म्यके मतमें वह आम्रवृक्ष ब्रह्मप्रकल्पित है। इसके वृक्षमूलको—

"आम्र ब्रह्मसरोद्भूत सर्वदेवमय तरुम्।
विष्णुरूप प्रसिञ्चामि पितॄणां मुक्तिहेतवे॥"

मन्त्र पाठ करके सींचना चाहिये। फिर ब्रह्मयूपको प्रदक्षिण करके—

"ओं नमो ब्रह्मणेऽजाय जगज्जन्मादिकारिणे।
भक्तानाञ्च पितॄणाञ्च तारणाय नमोऽस्तु ते॥"

मन्त्र पढ कर ब्रह्माको प्रणाम करते हैं। इसके पीछे यथाक्रम यमबलि तथा कुक्कुरबलि दिया जाता है। यमबलि चढ़ानेका—

"यमराज धर्मराजौ निश्चलार्थं हि संस्थितौ।
ताभ्यां बलिं प्रदास्यामि पितॄणां मुक्तिसिद्धये॥"

और कुक्कुरबलिका मन्त्र—

अप्रतिरथके पुत्र कण्व और कण्वके पुत्र मेधातिथि थे। इन्हींसे काण्वायन ब्राह्मणोंको उत्पत्ति हुई है। इस विषयमें भागवतमें भी कुछ लिखा है—

"सुमतिर्ध्रुवोऽप्रतिरथः कण्वोऽप्रतिरथात्मजः।

तस्य मेधातिथिस्तस्मात् प्रस्कण्वाद्या द्विजातयः।

पुत्रोऽभूत्सुमतेरेभिर्दुष्मन्तस्तत्सुतोमतः॥" (९।२०।७)

भागवतके मतसे अजमीढ़के वंशमें प्रियमेधादि ब्राह्मणोंने जन्म लिया था।

"अजमीढस्य वंश्याः स्युः प्रियमेधादयो द्विजाः।" (९।२१।२१)

विष्णु, भागवत और मत्स्यपुराणके मतानुसार क्षत्रियराज अजमीढ़के सप्तम पुरुषमें मुद्गल जन्मे थे और उनसे मौद्गल्य नामक क्षत्रोपेत ब्राह्मणको उत्पत्ति हुई थी।

"मुद्गलास्यापि मौद्गल्य क्षत्रोपेता द्विजातयः।

एतेह्यंगिरसः पक्षे संस्थिताः कण्व मुद्गलाः॥"(मत्स्य)

मत्स्यपुराणमें और भी लिखा है—

"काव्यानान्तु वराह्येते त्रयः प्रोक्ताः महर्षयः।

गर्गाः संकृतयः काव्या क्षत्रोपेता द्विजातयः॥"

गर्ग, सङ्कृति और काव्य ये तीनों कविवंशीय महर्षि क्षत्रोपेत ब्राह्मणोंमें शामिल हैं। भागवत, विष्णु, मत्स्य और ब्रह्माण्ड पुराणके मतसे—

"गर्गाच्छिनिस्ततो गार्ग्यः क्षत्राद्ब्रह्मह्यवर्त्तत।"

(भाग० ९।२१ १९)

गर्गसे शिनि और शिनिसे गार्ग्यगण उत्पन्न हुए। ये गार्ग्यगण क्षत्रिय होने पर भी ब्राह्मण हुए थे।

सभी प्रधान प्रधान पुराणोंमें लिखा है कि, गर्गके भ्राता महावीर्य, उनके पुत्र उरुक्षय थे। इन उरुक्षयके तीन पुत्र जन्मे—त्रय्यरुण, पुष्करी और कपि। इन तीनोंने क्षत्रिय होते हुए भी ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था।

"उरुक्षयसुतः ह्येते सर्वे ब्राह्मणता गताः।" (मत्स्यपु०)

भागवत (८।२१। १८)के टोकाकार श्रीधरस्वामीने भी लिखा है—

"येऽत्र क्षत्रवंशे ब्राह्मणगतिं ब्राह्मणरूपतां गतास्ते।"

इस प्रकार बहुतसे क्षत्रिय पहले ब्राह्मण हुए थे, जिनका क्षत्रिय शब्दमें विवरण दिया गया है। वर्त्तमानमें भारतवासी ब्राह्मणोंमें जो विश्वामित्र, कौशिक, काण्व, आङ्गिरस, मौद्गल्य, वात्स्य, काण्वायन, शुनक, हारित आदि बहुतसे गोत्र देखनेमें आते हैं, वे क्षत्रोपेतगोत्र अर्थात् उक्त ब्राह्मणोंके सभी आदिपुरुष क्षत्रिय थे।

इसके अतिरिक्त क्षत्रियके वैश्यत्व और वैश्यके ब्राह्मणत्वके पानेकी कथा भी बहुतसे पुराणोंमें पाई जाती है। सभी प्रधान प्रधान पुराणोंके मतसे क्षत्रियराज नेदिष्ट वा दिष्टके पुत्र नाभाग थे। विष्णु और भागवतपुराणके मतसे नाभागको वैश्यत्व हुआ था।

"नाभागो दिष्टपुत्रोऽन्यः कर्मणा वैश्यता गतः।"

(भाग० ९।२।२३।)

मार्कण्डेयपुराणके मतसे नाभागने वैश्यकन्याका पाणिग्रहण कर वैश्यत्व प्राप्त किया था। हरिवंश (११अ०)में लिखा है—

"नाभागरिष्टपुत्रा द्वौ वैश्यौ ब्राह्मणतां गतौ।"

नाभारिष्टके दो पुत्र वैश्य थे, जिन्हें ब्राह्मणत्व प्राप्त हुआ था।

ब्राह्मणोंके सिवा बहुतसे क्षत्रिय और वैश्य भी वेदके ऋषि थे, ऐसा वर्णन मिलता है। मत्स्यपुराण (१३२ अ०) में लिखा है—भलन्द, वन्ध्य और संकृति इन तीन वैश्योंने वेदके मन्त्र बनाये थे। कुल ९१ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्योंसे अनेक वेद मन्त्र उत्पन्न हुए हैं।

"भलन्दश्चैव वन्ध्यश्च संकृतिश्चैव ते त्रयः।

ते मन्त्रकृतो ज्ञेयाः वैश्यानां प्रवराः सदा॥

इत्येकनवतिः प्रोक्ताः मन्त्राः यैश्च वहिष्कृताः॥"

उपरोक्त प्रमाणोंके मनन करनेसे मालूम होता है कि, यथार्थमें गुण और कर्मके अनुसार ही जातिभेदको प्रथा प्रवर्त्तित हुई है।

महाभारतके अनुशासनपर्वमें लिखा है—

"ब्राह्मण्यं देवि दुष्प्राप्यं निसर्गाद्ब्राह्मणः शुभे।

क्षत्रियो वैश्यशूद्रौ वा निसर्गादिति मे मतिः।

कर्मणा दुष्कृतेनेह स्थानाद्भ्रश्यति वै द्विजः।

ज्येष्ठं वर्णमनुप्राप्य तस्माद् रक्षेत वै द्विजः।

स्थितो ब्राह्मणधर्मेण ब्राह्मण्यमुपजीवति।

क्षत्रियो वाऽथ वैश्यो वा ब्रह्मभूयं स गच्छति॥

यस्तु ब्रह्मत्वमुत्सृज्य क्षात्रं धर्मं निषेवते।

ब्राह्मण्यात् स परिभ्रष्टः क्षत्रयोनौ प्रजायते॥

इसीके निकट आदिगया नामक स्थान है। उसके चारों ओर पत्थरके खम्भे लगे हैं। प्रवाद है कि पूर्वकालको वहीं सब लोग जा करके पिण्डदान करते थे। ब्रह्मयोनि* पर्वत पर एक अद्भुत गह्वर है। उसीको भीमगया कहा जाता है। लोगोंको विश्वास है कि यहां भीम घुटने टिका करके बैठे थे। पहाड़में आज भी उनके बायें घुटनेका चिह्न बना है। इसीसे यात्री भीमगयामें बायें घुटनेके बल बैठ करके पिण्डदान करते हैं। इसी ब्रह्मयोनि पर्वत पर पद्मानना आदिशक्तिका मन्दिर है। यह १६९० सम्वत्‌को बना था। यहां अनेक देवमूर्तियां पड़ी हैं। सम्राट् औरङ्गजेबके दौरात्मसे यहांकी बहुत-सी देवमूर्तियां भग्न और श्रीहीन हो गयी हैं।

गयावासियोंको विश्वास है—ब्रह्माने गयावालोंको जो गो प्रदान किया, यह उसीका पदचिह्न है। किन्तु महाभारतमें लिखा है—पूर्वको पर्वतोपरि सञ्चरण कालमें सवत्सा कपिलाका जो पद चिह्न पड़ा था आज भी नहीं मिटा है इन समस्त पदचिह्नोंमें स्नान करनेसे सकल प्रकार अशुभ विनष्ट होता है। (वनपर्व ८४ अ०)

सकल वेदियोंका दर्शन और पिण्डदानादि शेष होने पर यात्री गायत्रीघाटमें जा पहुंचते हैं। यहीं गयावाल आ करके सुफल बोलते हैं। लोगोंको विश्वास है, गयावालोंके जाकर सुफल प्रदान न करनेसे सभी कार्य बिगड़ जाते हैं। इसीसे उस समय गयावाल तीर्थयात्रियोंको दबा करके बैठ जाते और जहां तक हो सकता, उनसे शेष दक्षिणास्वरूप रुपया ले लेनेमें नहीं चूकते। वस्तुत: सुफल बोलनेके समय पर ही गयावाल यात्रियोंके पाससे जोरके साथ अधिक अर्थलाभ किया करते हैं। पहले यही सुफल देते समय यात्रियों पर विलक्षण उत्पीड़न होता था। आजकल अङ्गरेज गवर्नमेण्टके शासनगुणसे उतना उत्पीड़न हो नहीं सकता।

पूर्वकालको गयावाल ही तीर्थयात्रियोंके साथ भ्रमण करके श्राद्धकार्यादि कराते थे, परन्तु अब वह बात नहीं रही। आजकल गयावाल बहुत बड़े धनी हो गये हैं, अन्नके लिये किसीको कोई भावना नहीं। सुतरां आजकल वह अपने आप कोई न करके धामिन नामक अधीनस्थ ब्राह्मणों द्वारा ही सब काम कराया करते और केवल सुफल देनेके समय पर ही देख पड़ते हैं। गयावाल देखो।

गयाका दूसरा नाम पितृतीर्थ है। कारण यहां आ करके हिन्दूमात्र पितृपुरुषोंके उद्देश पिण्ड देनेका विधि है। गयामाहात्म्यमें लिखते हैं—

"आत्मजयान्यगो वापि गयाश्राद्धे यदा तदा।
यन्नाम्ना पातयेत् पिण्डं तन्नयेद् ब्रह्मशाश्वतम्॥" (१।१५)

निज पुत्र किंवा और कोई किसी भी समयको गया जा करके जिसका नाम ले कर पिण्डदान करता, वह शाश्वत ब्रह्मधाम पहुंचता है।

"गयायां सर्वकालेषु पिण्डं दद्याद् विचक्षण,।
अधिमासे जन्मदिने चास्ते च गुरुशुक्रयो॰॥
न त्यक्तव्यं गयाश्राद्धं सिंहस्थे च बृहस्पती।" (१।१२०)

मलमास, जन्मदिन, सिंहस्थ बृहस्पति और सर्वकाल पर पण्डितोंको गयामें पिण्डदान करना चाहिये।

"अष्टकासु च वृद्धौ च गयायां च मृतेऽहनि।
मातुः श्राद्धं पृथक् कुर्यादन्यत्र पतिना सह॥
वृद्धिश्राद्धे तु मात्रादि गयायां पितृपूर्वकम्।
सक्तुना मुष्टिमात्रेण दद्यादष्टकपिण्डकम्॥
तिलाज्यमधुदध्यादि पिण्डद्रव्येषु योजयेत्॥
पायसेनापि चरुणा सक्तुना पिष्टकेन वा।
गुडेन तण्डुलाद्यैर्वा पिण्डदानं विधीयते॥
मुष्टिमात्रप्रमाणेन चार्द्रामलकमात्रतः।
शमीपत्रप्रमाणेन पिण्डं दद्याद्गयाशिरे॥
उद्धरेत् सप्तगोत्राणि कुलान्येकोत्तरं शतम्।
माता पिता च भार्या च भगिनी दुहितुः पति.॥
पितृष्वसा मातृष्वसा सप्तगोत्रा. प्रकीर्तिता.॥
विंशतिर्विंशति. पित्रोरष्टौ श्वाः पौत्रगोत्रकात्,
एकादश द्वादशाच कुलान्येकोत्तरं शतम्॥" (६ अ०)

अष्टकादिवस, वृद्धिकाल, गयातीर्थ और मृतदिनमें माताका श्राद्ध पितासे पृथक् करना चाहिये। वृद्धि-कालको पहले मातृगण और पीछे पितृगणके श्राद्ध करनेका विधान है। परन्तु गयामें पहले पितृगण और पीछे मातृगणका श्राद्ध करना चाहिये। तिल, घृत, मधु, दधि प्रभृतिके साथ मुष्टि-प्रमाण शक्तु द्वारा पिण्ड दिया करते हैं। पायस, चरु, सक्तू, पिष्टक, गुड और तण्डुलादिसे भी पिंड दे सकते हैं। गयाशीर्षमें मुष्टि-

*चीनपरिव्राजक युएनचुआङ्गने इसी पहाड़की देवपर्वत जैसा लिखा है।

लक्षण हैं, वे वे लक्षण द्विजमें भी होते हैं। ऐसी अवस्थामें शूद्रवंश होनेसे ही वह शूद्र होगा और ब्राह्मणवंश होनेमें ही वह ब्राह्मण होगा ऐसा कोई नियम नहीं। जिस व्यक्तिमें वैदिक आचार आदि पाये जांय, वही ब्राह्मण हैं; जिसमें उक्त आचार नहीं, उसको शूद्र कह कर निर्देश किया जा सकता है। और आप जो कहते हैं कि, सुखदुःखहीन कुछ भी जाननेकी चीज नहीं, वह भी ठीक है। जैसे शीत और उष्णमें उष्ण और शीत नहीं हो सकता उसी तरह कोई भी पद सुख दुःख हीन नहीं हो सकता। मेरा भी ऐसा ही मत है। आप क्या उचित समझते हैं?

सर्पने कहा—राजन्! यदि वृत्तिके अनुसार ही ब्राह्मण हुए, तो उस वृत्तिके न होने पर उनकी जाति (जन्म) वृथा है।

युधिष्ठिरने उत्तर दिया—हे महासर्प! इस मनुष्य-जन्ममें सभी वर्णके सङ्करत्वके कारण जातिका निर्णय करना बहुत कठिन है। सभी वर्णोंके लोग सभी वर्णों की स्त्रियोंके द्वारा सन्तान उत्पादन करते हैं। सबका भक्ष, सबका मैथुन, सबका जन्म और सबकी मृत्यु एक ही प्रकार है। वास्तवमें, जब तक मनुष्यको वेदाधिकार नहीं होता अब तक वे शूद्र ही रहते हैं।*

फिर शान्तिपर्वमें (१८८ और १८९ अध्यायमें) लिखा है—

"असृजद्ब्राह्मणानेवं पूर्वं ब्रह्मा प्रजापतीन्।
आत्मतेजोऽभिनिवृत्तान् भास्कराग्निसमप्रभान्॥
ततः सत्यं च धर्मं च तपो ब्रह्म च शाश्वतम्।
आचारं चैव शौचं च स्वर्गाय विदधे प्रभुः॥
देवदानवगन्धर्वा दैत्यासुरमहोरगाः।
यक्षराक्षसनागाश्च पिशाचा मनुजास्तथा॥
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च द्विजसत्तम।
ये चान्ये भूतसत्त्वाना वर्णास्तांश्चापि निर्ममे॥
ब्राह्मणाना सितो वर्णः क्षत्रियाणांच लोहितम्।
वैश्याना पीतको वर्णः शूद्राणामसितस्तथा॥

भरद्वाज उवाच।

चातुर्वर्ण्यस्य वर्णेन यदि वर्णो विभिद्यते।
सर्वेषां खलु वर्णाना दृश्यते वर्णसंकरः॥
कामः क्रोधोभय लोभो शोकश्चिन्ता क्षुधा श्रमः।
सर्वेषां न प्रभवति कस्माद्वर्णो विभिद्यते॥
स्वेदमात्रपुरीषाणि श्लेष्मापित्तं सशोणितम्।
तनु क्षरति सर्वेषा कस्माद्वर्णो विभिद्यते॥
जंगमानामसंख्येयाः स्थावराणांच जातयः।
तेषा विविधवर्णाना कुतो वर्णविनिश्चयः॥

भृगुरुवाच।

न विशेषोऽस्ति वर्णाना सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
कामभोगप्रियास्तीक्ष्णाः क्रोधनाः प्रियसाहसाः।
त्यक्ता स्वधर्मा रक्ताङ्गास्ते द्विजाः क्षत्रतां गताः॥
गोभ्यो वृत्तिं समास्थाय पीता कृष्युपजीविनः।
स्वधर्मान्नानुतिष्ठन्ति ते द्विजा वैश्यतां गताः॥
हिंसानृतप्रिया लुब्धाः सर्वकर्मोपजीविनः।
कृष्णाः शौचपरिभ्रष्टास्ते द्विजाः शूद्रता गताः॥
इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तरं गताः।
धर्मो यज्ञक्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते॥
इत्येते चतुरो वर्णा येषां ब्राह्मी सरस्वती।
विहिता ब्रह्मणा पूर्वं लोभात्त्वज्ञानतां गताः॥
ब्राह्मणा ब्रह्मतन्त्रस्थास्तपस्तेषां न नश्यति।
ब्रह्म धारयता नित्यं व्रतानि नियमांस्तथा॥
ब्रह्म चैव परं सृष्टं ये न जानन्ति तेऽद्विजाः।
तेषां बहुविधास्त्वन्यास्तत्र तत्र हि जातयः॥
पिशाचा राक्षसा प्रेता विविधा म्लेच्छजातयः।
प्रनष्टज्ञानविज्ञानाः स्वच्छन्दाचारचेष्टिता॥

भरद्वाज उवाच।

ब्राह्मणः केन भवति क्षत्रियो वा द्विजोत्तम।
वैश्यः शूद्रश्च विप्रर्षे तद्ब्रूहि वदतां वर॥

भृगुरुवाच।

जातकर्मादिभिर्यस्तु संस्कारैः संस्कृतः शुचिः।
वेदाध्ययनसम्पन्नः षट्सु कर्मस्ववस्थितः॥

* टीकाकार नीलकंठने ऐसा मत प्रकट किया है—'इतरस्तु ब्राह्मणपदेन ब्रह्मविदं विवक्षित्वा शूद्रादेरपि ब्राह्मणत्वमभ्युपगमं परिहरति शूद्रेत्विति। शूद्रलक्षकामादिकं न ब्राह्मणेऽस्ति न ब्राह्मणलक्ष्यकामादिकं शूद्रेस्ति इत्यर्थः। शूद्रोपि कामाद्युपेतो ब्राह्मणः। ब्राह्मणोऽपि कामाद्युपेतः शूद्र एव इत्यर्थः।"

तिलक देती है और फूल चन्दनादिसे पूजा करनेके बाद ब्राह्मणोंको दक्षिणा देकर बिदा करती है।

विवाहके बाद कन्या श्वशुरकी गोद पर बैठाई जाती और उसके सीमन्तमें सिन्दूर दिया जाता है। तत्पश्चात् वरके आत्मीयगणको नवीन वस्त्रादि दिये जाते हैं। चार दिनके बाद "चौथारि" या 'चतुर्थी' होती है और नवदम्पती स्वजन सहित रुक्मिणीकुण्डके तीर पर उपस्थित होते हैं। यहां दिनके समय उन लोगोंके सामने एक छोटा नाटिकाभिनय खेला जाता है। इस समय कन्याके आत्मीय व्यक्ति कन्याके ऊपर थोड़ा चावल और कौडी रखते और कन्या इसको धीरे धीरे फेंकती जाती एवं कृत्रिम क्रोध देखाती है। इस पर वर उसको सान्त्वना देता है। इस प्रकारके अभिनयके समाप्त होने पर वे नृत्यगीत और भोजनादि शेष करके सन्ध्याके समय घर लौट आते हैं।

यात्रियोंसे प्रचुर धन उपार्जन करके ये सम्पत्तिशाली हो गये हैं। इनमेंसे सामान्य मनुष्यको भी पेटकी चिन्ता करनी नहीं पडती है। धनके गौरवसे ये अब स्वयं यात्रियोंका पौरोहित्य नहीं करते लेकिन अधीनस्थ दूसरे ब्राह्मणको इस काममें नियुक्त करते हैं। जब यात्रियोंकी तीर्थयात्रा समाप्त हो जाती तो ये उन्हींसे अपना लभ्य यथेष्ट रुपयो वसूल करते हैं। गया देखो।

गयाशिखर (सं० क्ली०) गयाशिरस् देखो।

गयाशीर्ष (सं० क्ली०) गयाके निकटस्थ पर्वतविशेष, गयाके समीपका एक पहाड।

गयाश्वत्थ (सं० पु०) अश्वत्थवृक्ष, पोपलका पेड।

गयास-उद्-दीन—बङ्गालके एक सुलतान। यह सुलतान सिकन्दर शाहके लडके थे। सिकन्दर शाहकी दो बीबियां रही। पहलीके पेटसे १७ लडके हुए। दूसरीके एक लौते बेटे गयास-उन्-दीन् रहे। ये अपने सादेपनसे और कई इल्म पढ करके दूसरे भाईयोंकी बनिस्वत बहुत बडे बन गये। उसीसे सिकन्दर शाह इनको बहुत चाहते थे। परन्तु इससे सौतेली मांकी जलन धीरे धीरे बढने लगी। वह तरह तरहकी तदबीरें लडाती थीं—सुलतान उनसे कैसे बिगडते और मुहब्बत न करते। किसी दिन सुलतानको अकेला देख इनकी सौतेली मांने बडी आरजू मिन्नतके साथ कहा—जहांपनाह! मैं आपसे कुछ कहना चाहती हूं, परन्तु हिम्मत नहीं पडती, कहनेसे आपका दिल दुखेगा और गुस्सा बढ़ेगा। सुलतान उत्सुक हो करके कहने लगे—कहो, मैं बुरा नहीं मानूंगा, तुम अपनी बात कह डालो। इस पर बेगम बोल उठीं—पहले आप कसम खायें, किसीसे वह बात न बतायेंगे। सुलतानने वही किया था फिर बेगम कहने लगीं—'इस वक्त मुझे बड़ी आफत है। आपने जब कहनेको हुक्म दिया है, मेरा जी न चाहते भी मुझे कहना हो पड़ेगा। बात यह है कि गयास उद्-दीन मेरे लडकोंका वर्बाद करनेके लिये साजिश कर रहे हैं। सिर्फ यही नहीं—आपको भी मार डालनेकी बात वह कहा करते हैं। मेरी तरह आपकी भलाई कोई नहीं चाहता। मेरा समझमें उन्हें या तो कैदखानेमें डाल दीजिये या उनकी दोनों आंखें निकलवा ऐसी साजिश करनेसे नाकाम बनाइये। सिकन्दर शाह इस बात पर एक बारगी हो बिगड कर बोले थे—'बदमाश। परमेश्वरने तुझे इतने लडके वाले दिये हैं, जो अब आदमी बन गये हैं। इसके लिये परमेश्वरका शुक्रया अदा न करके तूने क्यों अपनी सौतके एकलौते बेटेको वर्बाद करने पर कमर कसो है। दूर हो, मैं अब तेरी बात सुनना नहीं चाहता।' सुलतानने यह बातें गयास-उद्-दीनको नहीं बतलायीं। परन्तु यह रंग ढंग देख करके शिकारके बहाने सुवर्ण ग्राम भाग गये और वहां फौज इकट्ठी करके और बलवाई हो पांडुयाकी तर्फ चल पड़े। ग्वालपाडे पहुंचने पर सिकन्दर फौजके साथ बलवा दबानेको वहां गये थे। लड़ाई होने लगी। इन्होंने अपने सिपाहियोंको समझा दिया था कि उनके बापके जिस्ममें हथियारकी चोट लगने न पाती। परन्तु लडाईमें फरमां बरदारो नहीं चलती। सिकंदरके जखमी होनेको खबर पा करके यह रोते रोते उनके पास गये और उनका सर अपनी गोदमे रख कर माफी मांगने लगे। उस वक्त सिकन्दरने कहा था—मेरा काम तमाम हो गया है, तुम मजेमें सलतनत करो। यही बात कहते कहते वह मर गये। १३६७ ई०को यह तख्तनशीन हुए। फिर इन्होंने सौतेली मांके लड़कोंकी आंखें निकाल उसीके

भाँति नियमनिष्ठ हो, तो उसे ब्राह्मण कह कर निर्देश किया जा सकता है।

उपरोक्त महाभारतके प्रमाण और पौराणिक वंश विवरणोंसे तो स्पष्ट ही विदित होता है कि, पूर्व समय में इस समयकी भाँति जातिभेद न था; प्रत्युत किसी व्यक्तिके गुण और कर्म द्वारा उसकी जाति वा वर्णका निश्चय किया जाता था। पहलेके लोग पितृपुरुषोंके गुण और कर्मोंका सब तरहसे अनुकरण करते थे; इस प्रकारसे एक एक वंश बहुत पीढ़ियों तक एक ही प्रकार कर्म और गुणशाली हो कर एक एक जातिरूपमें परिणत हो गये हैं। इसी तरह चातुर्वर्ण्यकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु परवर्त्ति कालमें वैदेशिक आक्रमण और वास्तविक गुणकर्मके अभावसे नीच जातिका उच्चवंशीय कह कर परिचय देनेसे भी समाजमें विशृङ्खलता उपस्थित हुई, तभीसे भारतके जातिधर्ममें वैलक्षण्य दिखाई देने लगा। यही कारण है कि, अब चारों वर्णोंमें पूर्वकालके शास्त्र निर्दिष्ट आचार व्यवहारोंमें बहुत कुछ पार्थक्य दृष्टिगोचर होता है। कौण्डन्य और पुष्कर ब्राह्मण तथा पंचाल शब्द देखो।

"ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः।
चतुर्थः एकजातिस्तु शूद्राः नास्ति तु पंचमः॥" (१०।४)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये ही चार वर्ण वा जातियाँ हैं; इनके सिवा पाँचवीं कोई जाति नहीं है। मनुके टीकाकार कुल्लुकभट्टने लिखा है—

"पंचमः पुनर्वर्णो नास्ति संकीर्णजातीनां त्वश्वतरवत् मातृपितृजातिव्यतिरिक्तजात्यन्तर त्वान्न वर्णत्वम्।"

पाँचवां कोई वर्ण नहीं है। सङ्कीर्ण अर्थात् दो भिन्न वर्णके मिश्रणसे उत्पन्न जाति जो अश्वतरादिकी तरह माता पितासे हीन अन्य जातित्व प्रयुक्त है, उसको वर्णोंमें गिनती नहीं हो सकती।

मनुके मतसे—

"द्विजातयः सवर्णासु जनयन्त्यव्रतांस्तु यान्।
तान् सावित्री परिभ्रष्टान् व्रात्या इति विनिर्दिशेत्॥
(१०।२०)

सवर्णा स्त्रीसे उत्पन्न द्विजातिगण जब नियमादिहीन और सावित्रीपरिभ्रष्ट हो जाते हैं, तब उन्हें व्रात्य कहते हैं। शक, काम्बोज आदि पतित क्षत्रियको वृषल कहा जा सकता है। व्रात्य तथा वृषल शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मनु फिर कहते हैं—

"मुखबाहूरूपज्जानां या लोके जातयो वहिः।
म्लेच्छवाचश्चार्यवाचः सर्वे ते दस्यवः स्मृताः॥"
(१०।४५)

ब्राह्मण आदि चार वर्णोंमें क्रियाकलाप आदिके कारण जिनकी गिनती बाह्य जातिमें है, वे चाहे साधु भाषी या म्लेच्छभाषी हों; वे दस्यु ही कहलाते हैं।

मनु आदि स्मृतिकारोंके मतसे—उच्च वर्णके पिता और नीच वर्णकी मातासे जो सन्तान उत्पन्न होती है, उसको अनुलोम तथा नीच वर्णके पिता और उच्च वर्णकी मातासे उत्पन्न हुई सन्तानको प्रतिलोम वर्ण-सङ्कर कहते हैं। अनुलोमकी अपेक्षा प्रतिलोम सन्तान अत्यन्त हेय समझी जाती है। भगवान् मनुके मतसे—अनुलोम सन्तान माताके दोषसे दुष्ट होनेके कारण मातृ-जातिके संस्कारयोग्य होती है। शूद्रसे प्रतिलोमके क्रमसे उत्पन्न आयोगव, क्षत्ता, चण्डाल ये तीन जातियोंको जहाँ दैहिक आदि किसी प्रकार पितृकार्यमें अधिकार नहीं है। इसीलिए ये लोग नराधम हैं।

आश्वलायन स्मृति आदि ग्रन्थोंमें अनुलोमज और प्रतिलोमज अनेक प्रकारकी जातियोंका उल्लेख है। उन सब सङ्कर जातियोंसे भी भारतमें असंख्य जातियोंका आविर्भाव हुआ है।

संकर और भारतवर्ष शब्दमें उक्त जातियोंके नाम और उन्हीं शब्दोंमें उनकी उत्पत्ति और आचार व्यवहार आदि देखना चाहिये।

पाश्चात्य मानवतत्त्वविद्गण वर्त्तमान भारतवासियोंके आर्य, द्राविड़ और मोङ्गलीय, इन तीन प्रधान वर्णोंमें विभक्त करते हैं। उनके मतसे—वैदिककालमें भारतमें आर्य और अनार्य इन दो जातियोंका वास था। आर्यगण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीन वर्णोंमें विभक्त थे और अनार्य वा कृष्णवर्ण आदिम अधिवासिगण शूद्र कहलाते थे। परन्तु हमारी समझसे यह युक्ति समीचीन नहीं मालूम पड़ती। आर्योंके आर्यावर्त्त

कतल करके ६०८ हि०को इन्हें सूबेदार बनाया। इमाम उद्द-दीनने भी पीछेकी दिल्लीकी मातहती छोड़ अपना नाम गयास-उद्द-दीन रख लिया। इन्होंने ६१६ हि०को अपने नामसे रुपया चलाया और गौड़नगरमें बहुतसी अच्छी इमारतों, एक मदरसे और यतीमखानेको बनाया। बाढके वक्त मुल्कको पानीमें डुबनेसे बचाने और आने जानेमें लोगोंको तकलीफ छुड़ानेके लिये इनके हुक्मसे देवकोटसे वीरभूमको राजधानी 'नगर' तक दश दिनकी राहमें बांध लगा था। मुकदमा फैसल करते वक्त यह क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या अमीर, क्या गरीब-किसीकी तरफदारी न करते थे। इन्होंने आसाम, त्रिहुत, त्रिपुरा और उड़ीसाका कितना हो हिस्सा जीत वहांके राजाओंसे खिराज वसूल किया। इनके नजराना दिल्ली न भेजनेसे बादशाह अलतमास फौजके साथ चढ आये। परन्तु इन्होंने नावोंको हटा करके बादशाहकी फौज गङ्गा पार न होने दी। आखीरको सुलहका संदेशा भेजने पर बादशाह ठण्डे पड़े। सुलह हो गयी कि बादशाहके नामसे रुपया चलाया और उन्होंके नाम पर फरमान् सुनाया जावेगा, गयास-उद्द-दीन बहुतसी दौलत और ३८ हाथी बादशाहको देंगे और २ साल तक बराबर दिल्लीको खिराज भेजते रहेंगे। इनके उन सभी बातोंमें राजी होने पर बादशाह दिल्ली लौट और अला-उद्द-दीनको विहारका सूबेदार बनाये गये। बादशाहके चले जाने पर इन्होंने गङ्गा पार हो उन सूबेदार और बादशाही फौजको हटा विहारको अपने इख्तियारमें कर लिया।

बादशाह यह खबर पाने पर बहुत बिगड़े। उन्होंने अपने बेटे नसीर-उद्द-दीनको फौजके साथ बङ्गाल जीतने भेजा था। उस समय गयास-उद्द-दीन बङ्गालके पूर्वी राजाओंसे लड़नेमें लगे थे। इस लिये नसीर-उद्द-दीनने बेलड़े भिड़े अवध पहुंच करके लखनऊ राजधानी ले ली। इन्होंने यह खबर सुनते ही बङ्गाल जाकर के बादशाहके फौजसे घमासान लड़ाई की थी आखीरको हारने पर (६२४ हि०) यह मार डाले गये। गयास-उद्द-दीनकी तारीफ बादशाह अलतमास तक किया करते थे।

गयास-उद्द-दीन—बङ्गालके एक नवाब। ये नवाब जलाल-उद्द-दीनके पुत्रको विनाश कर १५६४ ई०में बङ्गालके सिंहासन पर बैठे थे। इन्होंने कुछ दिनों तक राज्य किये थे।

गयास-उद्द-दीन करत् १म—हिरात्, बालख और गजनीके राजा। इन्होंने १३०७से १३२८ ई० पर्यन्त राज्य किया था।

गयास-उद्द-दीन करत् २य—हिरात्, सरखस और नैसापुरके राजा। ये १३७० ई०को सिंहासन पर बैठे और बारह वर्ष तक राजा रहे। १३८१ ई०में तैमूरलङ्गने हिरट्-प्रदेशको जय करके सपुत्र गयास्-उद्द-दीनको बन्दीकर मार डाला।

गयास्-उद्द-दीन खिलजी—गुजरातके एक सुलतान। ये १४६९ ई०में सिंहासन पर आरूढ़ हुए। ३३ वर्ष राज्य करनेके बाद जब वे वृद्ध हो गये तो उनके दो लड़के उनकी मृत्यु कामना करने लगे। अन्तको दोनों भाइयोंमें विवाद आरम्भ हुवा। ज्येष्ठ नासिर-उद्द-दीनने कनिष्ठ सुजात खांको विनाश कर १५०० ई०के २२वीं अक्तूबरको राज्यभार ग्रहण किया। एक दिन इसने अपने वृद्ध पिताको विष खिला कर मार डाला।

गयास-उद्द-दीन तुगलक—दिल्लीके एक बादशाह। इनका असली नाम गाजीबेग तुगलक था, बाप करौनिया तुर्क और मा जाटन थी। इनके बाप सुलतान गयास-उद्द-दीन बलबनके गुलाम रहे। इन्होंने बड़ी गरीबोमें अला-उद्द-दीन खिलजीके भाई उलग खांकी मातहतोमें मामूली सिपाहीका काम इख्तियार किया था। परन्तु हिम्मत और होशियारको देख करके मालिकने इन्हें बड़ा फौजदार बना देवलपुर भेज दिया। बादशाह नसीर-उद्द-दीन या खुशरूके चालचलन पर बड़े बड़े लोगोंने बिगड़ उनके खिलाफ साजिश करके बलवा उठाया था। यह बलवाइयोंके फौजदार हो करके नसीर-उद्द-दीनसे लड़े। लड़ाईमें बादशाह हारे और मारे गये। मुल्कके अमीर उमराने इन्हें तख्त पर बिठला शाहजहा नामसे अदब बजाया था। यह बादशाह बनना नहीं चाहते थे, परन्तु सबके कहने सुननेसे इन्होंने सलतनतका बोझ उठा लिया। इन्होंने शाहजहा-जैसा ऊंचा खिताब न ले करके अपना नाम गयास-उद्द-दीन रखा और एक ही

मनुष्य प्रायः गृहस्थाचार्य होते थे और शेष जीवनमें अधिकांश मुनिधर्म अवलम्बनपूर्वक अपनी यथार्थ आत्मोन्नति किया करते थे।

इसके कुछ दिन बाद भारत चक्रवर्ती भगवान् ऋषभदेवके समवशरणमें गये और अपने स्वप्नों तथा ब्राह्मणवर्णको स्थापनाका वृत्तान्त कहा। भगवान्‌की दिव्यध्वनि द्वारा इस प्रकार उत्तर मिला—"यद्यपि इस समय ब्राह्मणोंकी आवश्यकता थी, किन्तु भविष्यमें १०वें तीर्थङ्कर श्रीशीतलनाथके समयसे ये जैनधर्मके द्रोही और हिंसक हो जायंगे तथा यज्ञादिमें पशुहिंसा करेंगे।" (जैन आदिपुराण)

पाश्चात्य मानवतत्त्वविद्‌गण इस तरह जगत्‌का वर्ण-निर्णय करते हैं—

इस पृथिवीस्थ मानवों पर दृष्टि डालनेसे उनकी मुखकी श्री, दैहिक उन्नति, मस्तक-गठन आदि वाह्य आकारमें बहुत कुछ विषमता पाई जाती है, किन्तु सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाय, तो स्थानके अनुसार (अनेक विषयोंमें) सभी सभी लोगोंमें सदृशता पाई जाती है। यह वैषम्य और सादृश्य उत्पत्ति-मूलक है। यही कारण है कि, जो मनुष्य जैसी आकृतिवालेसे जन्म लेता है, उसकी आकृति भी प्रायः वैसी ही होती है। वैषम्यप्रयुक्त मानवगण साधारणतः पांच प्रधान जातियोंमें विभक्त किये जाते हैं; जैसे— ककेशीय, मोङ्गलीय, इथियोपीय वा काफ्रि जाति, आमेरिक और मलय। कोई कोई शेषोक्त दो जातियोंको मोङ्गलीय जातिके अन्तर्गत बतलाये हैं। वे कहते हैं, ककेसीय जातिके लोग पहले कास्पीय सागर और कृष्णसागरके मध्यवर्ती पर्वतसङ्कुल स्थानमें रहते थे। मोङ्गलीयगण आलताई पर्वतके भूभागमें और इथिओपीय अर्थात् निग्रोजाति आतलास पर्वत-शृङ्खलाकीर्ण भूभागमें रहती थी। इन सब जातिओंकी आदिम वासभूमिका यथार्थ निर्णय करना बहुत ही कठिन या दुःसाध्य है। कुछ भी हो, पण्डितोंका तो यह कहना है कि, ककसीय जातिसे दो प्रधान (विभिन्न) शाखाओंकी उत्पत्ति हुई है। इनमेंसे एक शाखा आर्य नामसे और दूसरी समितिक (Semetic) नामसे प्रसिद्ध है। हिन्दू, पारसिक, अफगान, आर्मनी और प्रधान प्रधान यूरोपीय जातियां आर्य शाखासे उत्पन्न हुई है। इसी प्रकार सिरीय और अरबीय जाति समितिक शाखासे उत्पन्न है। आर्य और समितिक जातिके लोगोंमें शारीरिक उज्ज्वल वर्णका सादृश्य अवश्य है, किन्तु इनकी भाषाओंमें किसी तरहकी सदृशता नहीं पाई जाती। इस जातिके लोगोंका धर्मज्ञान बहुत ऊँचा है। इनके मस्तककी गठन यथासम्भव पूर्ण है। इनके शारीरिक आभ्यन्तरीन यन्त्र पूरी तरहसे कार्यकारी हैं। अरबी लोग अत्यन्त कार्यकुशल होते हैं। इनके शरीरका रंग भूरापन लिए पीला, ललाट ऊंचा, आंखें बड़ी, नासिकाका अग्रभाग सूक्ष्म और ओष्ठ पतले होते हैं। अरबी लोग साधारणतः अत्यन्त भ्रमणशील होते हैं। किसी किसीका कहना है कि, अरबीय कालदी-शाखासे यहूदियोंकी उत्पत्ति हुई है, तथा अफ्रिकाके मूर लोग और कैनानाइट (Cananite) नामक जाति भी अरबीय शाखासे उत्पन्न हुई हैं। आतलास पर्वतके दोनों तरफ तुयारिक नामको एक जाति वास करती है। ये लोग यद्यपि अरबियोंकी अपेक्षा दुर्दान्त है और इनका रंग भी मैला है, तथापि अन्यान्य विषयोंकी तरफ दृष्टि डालनेसे ये अरबीय शाखासे उत्पन्न हुए हैं; ऐसा ही मालूम होता है।

आर्य शाखासे उत्पन्न मनुष्य पहले अक्सस नदीके किनारे रहते थे। फिर वे वहाँसे भिन्न भिन्न प्रदेशोंमें चल गये। एक अंश पारस्य देशमें और दूसरा अंश यूरोपमें जा कर रहने लगा। जो काश्मीरके उत्तरमें मध्य-एशियाके भीतर रहते थे, उनमेंसे कुछ मनोमालिन्य हो जानेके कारण भारतवर्षमें चले आये। यूरोपीय विद्वानोंने शब्दविद्यानुशीलन द्वारा यह निश्चय किया है कि, हिन्दू, पारसी, ग्रीक आदि तथा प्रधान प्रधान यूरोपीयगण सभी एक आर्यवंशसे उत्पन्न हुए हैं। आर्य शाखाके जितने भी लोगोंने यूरोपखण्डमें प्रवेश किया है, उनमेंसे एक दल यूरोपके पश्चिम प्रान्तमें जा कर रहने लगा, जो केल्ट नामसे प्रसिद्ध हैं। आधुनिक आइरिस, स्कोट, वेल्स और अमेरिकाके लोग केल्ट जातिसे उत्पन्न हुए हैं। और एक दल उत्तरखण्डमें जा कर रहने लगा, जो अब जर्मनके नामसे प्रसिद्ध है। यह जर्मन जाति दो भागोंमें विभक्त है। एक भागसे नौरवे, सुइडेन और डेनमार्कके

इस्मानोर है। गयास-उद्-दीन्ने ४ साल २ महीने राजत्व किया।

गयास उद्-दीन तुगलक २य—दिल्लीके एक बादशाह। ये बादशाह फिरोज शाह तुगलकके नाती और फते खाँके पुत्र थे। फिरोजशाहकी मृत्यु होने पर १३८८ ई०में गयास-उद्-दीन गद्दी पर बैठे। भोगविलासमें लगे रहनेके कारण राजकार्यमें अवहेला करते थे। इस लिये राज्यके प्रधान प्रधान मनुष्य और सैन्य सामन्तने विद्रोही हो कर १३८९ ई०की १९वीं फरवरीको इन्हें मार डाला। इन्होंने सिर्फ छह मास राज्य किया था। इनके शासन कालके समय मामूद शाह नामक पार्वतीय राजाके साथ इन्हें युद्ध करना पड़ा था।

गयास-उद्-दीन् बलबन—किसी तुर्की सामन्तके पुत्र। मुगलोंने इन्हें लड़कापनमें चुरा करके बेच डाला था। फिर यह बगदाद पहुंचे और वहांसे दिल्ली लाये गये। दिल्लीके बादशाह अलतमासने इन्हें बड़ी कीमतमें खरीदा था। मिनहाज-उस्-सराज जूरजानी नामक किसी मुसलमानने उन्हींकी अमलदारीमें 'तबकात इ-नासरी' नामक इतिहासकी रचना किया। इस इतिहासमें बादशाहकी अमलदारीके पहले हिस्सेका ज्यादा हाल लिखा है। इन्होंने सम्राटको उलग खाँ नामसे अभिहित किया है। मिनहाजका मृत्यु हो जानेसे उनके ग्रन्थमें परवर्ती कालका वृत्तान्त लिपिबद्ध नहीं हुआ। पिछले वक्तकी बातें जिया-उद्-दीन बरनीकी बनायी हुई 'तारीख फीरोजशाही' में आ गयी है। इस किताबमें बादशाहको तारीफ ही ज्यादा है, बुराईका कोई जिक्र नहीं। दूसरी तारीखोंसे यह समझा जा सकता है। सुननेमें आता कि बादशाह अलतमासने पहले पहल उन्हें खरीद करके बाज चिड़ियेका मुहाफिज बनाया था। इनके एक भाई उस वक्त शाही दुनियाके एक ऊंचे ओहदे पर रौनक-अफरोज थे। उन्हींकी मददसे गयास-उद्-दीनने ऊंचा अमीर दरजा पाया था। अलतमासके लड़के रुक्न-उद्-दीनकी अमलदारीमें यह पञ्जाबके एक हाकिम मुकरर हुए और थोड़े दिन पीछे दिल्लीकी मातहती न मान करके अपने नामसे ही पञ्जाब पर हुकूमत करते रहे। सुलताना रजियाकी अमलदारीमें कुछ लोगोंने उनके खिलाफ साजिश की थी। गयास-उद्-दीन उनमें मिल करके फौजके साथ दिल्लीको रवाना हुए। वहां लड़ाईमें हारने पर यह पकड़ लिये गये। थोड़े दिनों बाद कैदखानेसे भाग करके इन्होंने बहरामकी मदद दी थी। बादशाह बहरामके वक्त यह हांसी और रेवाड़ीके हाकिम मुकरर हुए। इसी वक्त मेरठका बलवा दबानेसे इनकी खूब नामवरी बढ़ी। अला-उद्-दीन मुसऊदके जमानेमें यह अमीर हाजबके ओहदे पर बिठलाये गये। फिर नसीर-उद्-दीन् बादशाहकी अमलदारीमें गयास-उद्-दीन कहनेको तो वजीर रहे परन्तु बादशाहका सभी काम इन्हींको करना पड़ता था। नसीर-उद्-दीनके कोई लड़का न रहनेसे यह अपना बलबन नाम रख करके १२६६ ई०की फरवरी महीने दिल्लीके तख्त पर बैठ गये। उस वक्त बहुतसे तुर्की गुलामोंने उमराव बन करके सलतनतके बड़े बड़े ओहदे दबाये थे। गयास-उद्-दीन अपने आप गुलामीसे बादशाही पर पहुंचे थे। फिर यह इस कोशिशमें लगे, उन्हींकी तरह कोई दूसरा तुर्क तख्त पर न बैठ जाय और उन्हींके घरानेमें बादशाही बनी रहे। पहले इन्होंने तुर्की उमरावोंको बर्बाद करके फौजी मुहकमा मजबूत कर लिया था। उसके पीछे यह जासूसोंको रख करके चुपके चुपके अहलकारोंका हाल मङ्गाने लगे, जिससे राजधानीको छोड़ करके ज्यादा कहीं जा आ न सके। थोड़े दिनों ऐसे ही हुकूमत करके पीछेको बहुतसी बातोंमें इन्होंने सखावत दिखलायी थी। खानदानकी इज्जतका इन्हें बड़ा खयाल था, परन्तु हिन्दुओंका एतबार न करते थे। गयास-उद्-दीन हिन्दुओंको कोई बड़ा काम न सौंपते थे। यह आलिमोंकी बड़ी इज्जत करते और उसीसे इनके दरबारमें बहुतसे आलिम फाजिल मौजूद रहते थे। इतिहास-लेखक फरिश्ता कहते कि उनके वक्त दरबारमें बड़ी चहल पहल रही। बादशाहकी देखादेखी बहुतसे उनकी नकल करते थे। गयास-उद्-दीन पहले शराब पीते थे, परन्तु तख्त पर बैठते ही इन्होंने उसको छोड़ दिया। उस वक्त शराब पीनेवालेको कड़ी सजा मिलती थी। मुल्कमें कोई शराब बनाने न पाता था।

आदिम अधिवासीके नामसे भी प्रसिद्ध हैं। इनका रंग ललाईको लिए काला, बाल काले, सीधे और मजबूत तथा थोड़ी और छोटी दाढ़ी भी उपजती है। कपाल-देशकी अस्थि उन्नत, नासिका नुकीली, मस्तक छोटा, अग्रभाग उन्नत, पश्चाद् भाग चपटा, मुख बड़ा और ओष्ठ मोटे होते हैं। इन लोगोंमें शिक्षा-शक्ति बहुत थोड़ी है और न इन्हें समुद्र-यात्राकरनेका साहस ही है। ये लोग प्रतिहिंसापरायण, चञ्चल और युद्धप्रिय होते हैं। कोई कोई इस जातिको दो भागोंमें विभक्त करते हैं। मेक्सिको, पेरुवीय और वसोट-के आमेरिकगण (अपेक्षासे) उन्नत होते हैं। इनमें सब की आकृति एकसी नहीं होती, किन्तु गुण प्रायः एकसे होते हैं तथा भाषा भी एकसी है। इस जातिका क्रमशः क्षय ही होता जाता है।

आमेरिक जाति।

मलय जाति सुमात्रा, बर्णिओ, जावा, फिलिपाइन आदि द्वीपोंमें वास करती है। इनका शरीर ताम्रवर्ण, बाल काले, पर देखनेमें कदर्य, मुख बड़ा, नासिका स्थूल और छोटी, मुखदेश प्रशस्त और चपटा तथा दांत बड़े बड़े होते हैं। इनका मस्तक ऊंचा और गोल, ललाट नीचा और प्रशस्त है। इनका नैतिकज्ञान अत्यन्त निकृष्ट। ये लोग आमेरिकोंकी तरह आलसी अथवा समुद्रसे डरते नहीं हैं। ये लोग समय समय पर कार्यकालमें अपनी बुद्धिका परिचय दिया करते हैं।

मलय जाति।

पृथिवी पर प्रायः सर्वत्र ही देखा जाता है कि, प्रत्येक प्रदेश आदिम अधिवासियोंसे शून्य हो कर नये लोगों द्वारा आबाद हुआ है। यूरोपखण्ड पर दृष्टि डालनेसे इसका सम्यक् दृष्टान्त मिल सकता है। यूरोपके प्रत्येक प्रदेशमें केल्ट, जर्मन, लाटिन आदि जातिको शाखाओंके घातप्रतिघातसे एक एक नई जातिका सङ्गठन हुआ है। कोई कोई विद्वान् कहते हैं कि, केल्टजाति पृथिवी पर प्रायः सर्वत्र विस्तृत है। इस जातिने मध्य-एशियासे दो शाखाओंमें विभक्त हो कर यूरोपमें प्रवेश किया है। प्रत्यक्ष वा परोक्षभावसे यूरोपकी सभी जाति ककेसीय केल्ट शाखासे उत्पन्न हुई हैं। वास्तवमें—पृथिवी पर सर्वत्रही ककेसीय जातिका आधिपत्य देखनेमें आता है। अमेरिकामें वहांके आदिम निवासियोंके साथ ककेसीय जातिके लोगोंका संमिश्रणसे नई नई जातियां उत्पन्न हो रही हैं।

इसी प्रकार यूरोपीय और निग्रो जातिके संमिश्रणसे मूलाटो (Mulatto) निग्रो, और आमेरिक जातिके सम्बन्धसे जम्बो (Zamboe) आदि जातियोंकी उत्पत्ति होती है।

पहले ही लिख चुके हैं, कि पाश्चात्य मतसे मनुष्य पांच प्रधान जातियोंमें विभक्त हैं; उनमेंसे ककेसीयगण श्वेतवर्ण, मोङ्गलीय पीतवर्ण, इथिओपीय कृष्णवर्ण और आमेरिकगण ताम्रवर्ण होते हैं। परन्तु शारीरिक वर्णके के द्वारा सब समय जाति विशेषका निर्वाचन नहीं किया जा सकता। एक जातिके लोग भी भिन्न भिन्न वर्णके हो जा सकते हैं। हिन्दू लोग ककेसीय जातिके अन्तर्गत होने पर भी उनका वर्ण यूरोपियों जैसा सफेद नहीं होता। कृष्णवर्णवाले अधिक उत्ताप सह सकते हैं, इसीलिए निग्रो जातिका वास उष्णप्रधान देशोंमें पाया जाता है। इनका शरीर भी उत्तापको सह कर बना है। कृष्ण और श्वेतवर्णवाला लोगोंके शरीरसंस्थानके विषयमें इतना प्रभेद पाया जाता है कि, एक श्रेणीके लोगोंके चुपकने चमड़े पर ही रक्तके उपकरण मिश्रित रहते हैं और दूसरी श्रेणीवालोंके वह नहीं होते।

भिन्न भिन्न मनुष्यके भिन्न भिन्न प्रकारके केश देखनेमें आते हैं। कोई कोई कहते हैं—केशोंकी जड़में शारीरिक वर्णके उपादान विन्यस्त है। निग्रो लोगोंके केश पशमके समान और काले हैं तथा आमेरिकोंके खड़े और लाल रंगके बाल हैं; इससे मालूम होता है कि, शारीरिक वर्णके साथ भी केशोंका सम्बन्ध रहता है। इसी तरह आंखोंके साथ भी इनका सम्बन्ध है। साधारणतः सुन्दर वर्णवाले लोगोंकी आंखें उज्ज्वल और केश भी सुहावने होते हैं। भिन्न भिन्न जातीय लोगोंके मस्तककी गठन विभिन्न प्रकारकी होती है, और इसीलिए उनकी

रात्रिमें मुहम्मद अली शाहके नौकरोंने इन्हें मार डाला।

गयास-उद्-दीन महमूद घोरि—घोर और गजनीके अधिपति गयास-उद्-दीन मुहम्मदके पुत्र। पिताका मृत्यु होनेके बाद उसके पितृव्य शाहाब-उद्-दीन सिंहासन पर आरूढ़ हुये और उनकी मरने पर गयास-उद्-दीन महमूदने राजत्व लाभ किया। ये बहुत आलसी राजा रहे। १२१० ई०में इनका देहान्त हुआ।

गयास-उद्-दीन मुहम्मद—एक ग्रन्थकार। ये युक्तप्रदेशमें लखनऊके अन्तर्गत साहाबाद परगनाके मुस्तफाबाद या रामपुरमें रहते थे। यह जलाल-उद्-दीनके पुत्र और सरफ-उद्-दीनके पौत्र रहे। गयास-उद्-दीनने चौदह वर्ष अनवरत परिश्रम करके १८२६ ई०में "गयास-उल-लुघात्" नामक अभिधान पारसी भाषामें सम्पूर्ण किया था। इसके अतिरिक्त और बहुतसी किताबें उन्होंने रचना की है।

गयास-उद्-दीन मुहम्मद घोरि—घोर और गजनीके अधिपति। ११५७ ई०में राजत्व लाभ करके इसने अपने भाई शाहब-उद्दीन मुहम्मद पर गजनीका शासनभार अर्पण किया। १२०३ ई०के १२वीं मार्च बुधवारको इनकी मृत्यु हुई।

गयासावाद—बङ्गाल प्रान्तके मुर्शिदाबाद जिलेका एक प्राचीन नगर। यह अक्षा० २४° १७' २३" उ० और देशा० ८८° १६' ४१" पू०में आजमगञ्जसे ३ कोस उत्तर भागीरथीके दक्षिण उपकूल पर अवस्थित है। इसका प्राचीन नाम बटरीहाट है। गौडके किसी पठान नवाव गयास-उद्-दीनके नामसे गयासाबाद कहा जाता है। स्थानीय ध्वंसावशेष देखनेसे यह बहुत पुराना नगर-जैसा समझ पडता है। उसमें एक दुर्ग, राजप्रासाद, पालि भाषाकी लिपिमें खोदित प्रस्तरस्तम्भ, स्वर्णमुद्रा तथा मृत्पात्रादि मिलते हैं। इसका कोई इतिहास नहीं, पहले वहां किस वंशीय राजा राजत्व करते थे। पालि भाषालिखित शिलाफलक देखनेसे अनुमान होता है कि पहले वहा किसी बौद्ध राजाका राजत्व रहा। ध्वंसावशेषकी कुछ चीजें कलकत्तेके अजायब घरमें ला करके रखी गयी हैं।

गयेर (सं० क्ली०) श्लेष्मा (Saliva)।

गरंड (हिं० पु०) मट्टीका घेरा जो चक्कीके चारों तरफ आटा गिरनेके लिये बनाया जाता है।

गर (सं० क्ली०) ग्यारह करणोंमेंसे पांचवां करण। "बवबालवकौलवतैतिलाख्यगरवणिजविष्टिस आनाम।" (बृहत्संहिता ९९।४) २ विष, जहर। ३ वत्सनाभ नामक विष। ४ सम्मोहजनित विष। (पु०) गीर्यते इति कर्मादौ अच्। ५ विष, जहर। ६ उपविष। ७ रोग, बीमारी।

गरक (अ० वि०) १ निमग्न, डूबा हुवा। २ विलुप्त, नष्ट, बरबाद। ३ किसी कार्यमें लीन या मग्न।

गरकाव (फा० पु०) १ डूबनेका भाव, डुबाव। (वि०) २ निमग्न, डूबा हुआ। ३ बहुत अधिक लीन।

गरकी (अ० स्त्री०) १ अतिवृष्टि। २ डूबनेकी क्रिया वा भाव।

गरग—बम्बई प्रदेशके धारवार जिलेका एक गण्डग्राम। यह धारवारसे १० मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४५०० है। मोटे सूती वस्त्रका व्यवसाय यहां अधिक होता है।

गरगज (हिं० पु०) १ तोप रखनेका बुर्ज जो किलेकी दीवारों पर बना हुआ रहता है। २ युद्धकी सामग्री रखी जानेकी कृत्रिम टीला।

गरगरा (हिं० पु०) घिरनी, चरखी।

गरगवा (हिं० पु०) एक प्रकारकी घास जो धानकी फसल बढ़ने नहीं देती। इसे सिर्फ भैंसें खाती हैं।

गरगीर्ण (सं० त्रि०) जिसने विष पान किया हो।

गरगीर्णी (सं० पु०) १ वह जिसने विष पान किया हो। २ एक ऋषि।

गरघ्न (सं० पु०) कृष्णार्जक, कृष्णपत्र क्षुद्रतुलसी। २ विषनाशक। ३ बर्बर, बबूल।

गरघ्नी (सं० पु०) गरघ्न-ङीष्। मत्स्यविशेष, गरई मछली। इसका गुण—मधुर, कषाय, वातपित्त और कफनाशक, रुचि और बलवीर्यकर है। (भावप्रकाश)

गरज (हिं० स्त्री०) बहुत गम्भीर और तुमुल शब्द।

गरज (अ० स्त्री०) आशय, प्रयोजन, मतलब।

गरजउल—त्रिहुत जिलान्तर्गत एक विभाग। इसके और ७ उपविभाग हैं। गण्डक, छोटी गण्डक, बिया, नून और कदाना कई एक नदियां इस विभागमें हो कर प्रवाहित हैं। इस विभागके प्रधान नगर मुजफ्फरपुर और ताजपुर हैं। मुजफ्फरपुरसे हाजीपुर तक दो रास्ते गये

जातिकोषी (सं० स्त्री०) जातिकोषमस्या अस्तीति अच्। अर्श आदिभ्यो अच्। पा ५।२।१२७ ततः ङीप्। जातिपत्री।

जातिङ्गा—आसामको एक नदी। यह उत्तर काछार पर्वतसे (हाफलङ्गके पास) निकल कर पश्चिम तथा दक्षिणको बहती हुई बराकमें जा मिली है। दक्षिण तटके साथ साथ आसाम बङ्गाल रेलवे है। इसकी पूरी लम्बाई ३६ मील है।

जातिच्युत (सं० त्रि०) जो जातसे अलग कर दिया गया हो।

जातिज (सं० क्ली०) जातीफल, जायफल।

जातित्व (सं० पु०) जातीयता, जातिका भाव।

जातिधर्म (सं० पु०) जातीनां धर्मः, ६ तत्। ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंका धर्म। (गीता)

महाभारतके शान्तिपर्वमें जातिधर्मका विषय लिखा है। युधिष्ठिरके भीष्मसे जातिधर्मका विषय पूछने पर उन्होंने बतलाया था—क्रोध परित्याग, सत्य वाक्यप्रयोग, उचित रूपसे धनविभाग, क्षमा, अपनी पत्नीमें पुत्रोत्पादन, पवित्रता, अहिंसा, सरलता और भृत्यका भरणपोषण ये नव चारों वर्णोंके साधारण धर्म हैं। ब्राह्मणका धर्म इन्द्रियदमन और वेदाध्ययन है। शान्तस्वभाव ज्ञानवान् ब्राह्मण यदि असत् कार्यका अनुष्ठान छोड़ भले काममें रह कर धनलाभ करे, तो दारपरिग्रह कर उनको अवश्य सन्तान उत्पादन, दान और यज्ञानुष्ठान करना चाहिये। वह दूसरा कोई काम करे या न करे, वेदाध्ययननिरत और सदाचारसम्पन्न होनेसे ही ब्राह्मण समझा जावेगा।

धनदान, यज्ञानुष्ठान, अध्ययन और प्रजापालन ही क्षत्रियका प्रधान धर्म है। याच्ञा, याजन वा अध्यापन उसके लिये निषिद्ध है। नियत दस्युके वधको उद्यत होना और युद्धस्थलमें पराक्रम दिखलाना क्षत्रियका अवश्य कर्तव्य है। जो यज्ञशील, शास्त्रज्ञानसम्पन्न और समरविजयी रहते हैं। उन्होंको क्षत्रिय कहते हैं। जो क्षत्रिय युद्धसे अक्षत शरीर लौट आता है, वह अधम समझा जाता है। दान, अध्ययन और यज्ञ द्वारा ही वह मङ्गललाभ करते हैं। अतएव धर्मार्थी नरपतिको धनके लिये लड़ना अवश्य चाहिये। उनको ऐसी चेष्टा करना उचित है, जिसमें प्रजा अपने अपने धर्ममें रहती हुई शान्त भावसे इसका अनुष्ठान करे। क्षत्रिय दूसरा कोई कार्य करें या न करें, आचारनिष्ठ हो प्रजापालनसे उन्हें चूकना न चाहिये।

दान, अध्ययन, यज्ञानुष्ठान, सदुपाय अवलम्बनपूर्वक धनसञ्चय वाणिज्यादि और पुत्रकी तरह पशुपालन वैश्यका नित्य धर्म है। सिवा इसके दूसरा कोई काम करनेसे वह अधर्ममें लिप्त हो जाता है। भगवान् ब्रह्माने जगत्की सृष्टि करके ब्राह्मण तथा क्षत्रियको मनुष्य और वैश्यको पशुको रक्षाका भार सौंपा था। सुतरां पशुपालनसे ही उनको मङ्गललाभ होता है। वैश्य अन्न तथा एक धेनुका रक्षक होनेसे दुग्ध, सौ धेनुका रक्षक होनेसे संवत् भरमें एक गोमिथुन, दूसरेका धन ले कर कारबारमें लगानेसे लब्ध धनका सप्तम भाग और कृषिकार्य करनेसे सात हिस्सोंमें एक हिस्सा वेतन स्वरूप लेता है। पशुपालनमें अनास्था उसको कभी भी दिखलाना न चाहिये। वैश्यके पशुपालनकी इच्छामें कौन हस्तक्षेप कर सकता है।

भगवान् प्रजापतिने शूद्रको ब्राह्मण आदि वर्णत्रयका दास जैसा बनाया है। इसलिए तीनों वर्णोंकी सेवा ही उसका सबसे बड़ा धर्म है। इस धर्मको पालन करनेसे हो वह परम सुख पाता है। यदि शूद्र धन सञ्चय करे, ब्राह्मण आदि बड़े आदमी उसके वशीभूत हो सकते हैं। इसमें उसको पापग्रस्त होना पड़ता है। इसलिए शूद्रके लिए भोगाभिलाषासे रुपया जोड़ना बहुत बुरा है। किन्तु राजाके आदेशसे धर्मकार्यानुष्ठानके लिए वह दौलत इकट्ठी कर सकता है। वर्णत्रय उसका भरणपोषण तथा छत्र वेष्टन करेंगे और शयन, आसन, पादुका चामर वस्त्र आदि देंगे। शूद्रका यही धर्मलब्ध धन है। शूद्रका परिचारक पुत्रहीन होनेसे उसका पिण्डदान और वृद्ध तथा दुर्बल रहनेसे उसको खिलाना पिलाना प्रभुका जरूरी फर्ज है। मालिक पर विपद् आने या उसका धन उड़ जाने पर शूद्रको अन्यत्र न जाना चाहिए। ब्राह्मण आदि तीनों वर्णोंकी भांति शूद्रको यज्ञका अधिकार है, परन्तु स्वाहा, वषट् और वैदिक मन्त्रका व्यवहार नहीं कर सकता। सुतरां उसको स्वयं व्रती न हो ब्राह्मणसे यज्ञानुष्ठान कराना चाहिये। उस यज्ञकी दक्षिणा पूर्ण पात्र है।

इसका मुंह इतना चौड़ा रहता है कि इसमें आदमी सहजसे चला जा सके, घननाल, घननाद।
गरनाशिनी (सं० स्त्री०) पीतवर्ण देवटालीलता, देवदारु।
गरप्रिय (सं० पु०) वह जिसको विष प्रिय लगता हो, शिव, महादेव।
गरबई (हिं० स्त्री०) अभिमानका भाव।
गरबाना (अ० क्रि०) घमण्डमें आना, अभिमान करना, शेखी करना।
गरबा (हिं० पु०) एक प्रकारका गीत जो प्रायः गुजराती स्त्रियां गाती हैं।
गरबिला (हिं० वि०) जिसे गर्व हो, घमण्डी, अभिमानी।
गरभ (सं० पु०) गीर्यते इति गृ-अभच्। यद्वा गर्भस्य गरभो देशः। गर्भ, हमल।
गरभदान (हिं० पु०) ऋतुप्रदान, पेट रखाना।
गरभाना (अ० क्रि०) १ गर्भिणी होना। २ धान गेहूं आदिके पौधेमें बाललगना।
गरभी (अ० वि०) अभिमानी, घमंडी।
गरम (फा० वि०) १ जिसके छूनेसे जलन मालुम हो, तप्त, उष्ण। २ तीक्ष्ण, उग्र, खरा। ३ तेज, प्रबल, प्रचंड, जोर शोरका। ४ जिसका गुण उष्ण हो। ५ उत्साहपूर्ण, जोशसे भरा।
गरमा गरमी (हिं० स्त्री०) उत्साह, मुस्तैदी, जोश।
गरमाना (अ० क्रि०) १ उष्ण पड़ना, गरम पड़ना। २ उमग पर आना। ३ क्रोध भरना, आवेशमें आना।
गरमाहट (हिं० स्त्री०) उष्णता, गरमी।
गरमी (फा० स्त्री०) उष्णता, ताप, जलन।
गरमीदाना (हिं० पु०) अंधौरी, अंभौरी, छोटे छोटे लाल दाने जो गरमी ऋतुमें पसीनाके कारण शरीर पर निकलते हैं।
गरमूर—पूर्वीय बङ्गाल और आसामके शिवसागर जिलाका एक ग्राम यह अक्षा० २६° ५८´ उ० और देशा० ८४° ८ पू०के मध्य माजुली द्वीप पर अवस्थित है। यहां गोसाईं सम्प्रदायका वास है जिन्हें आसामके मनुष्य बहुत सम्मान किया करते हैं। इन्हें अहोम राजाओंसे ४०००० एकर शुल्करहित जमीन मिली थी, किन्तु बरमाके राजाओंने उनका यह अधिकार कायम न रखा तथा उक्त जमीन उनसे छीन् ली। उस समय गोसाईं वृन्दावनमें रहते थे और वे अपना अधिकार पुनः पलटानेकी कुछ भी चेष्टा न की। जब इसके विषयमें सरकारकी ओरसे तहकीकात् हो रही थी तोभी सरकारने २३१ एकर शुल्क रहित जमीन उन्हें प्रदान की है।
गरलि-नानि—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ प्रदेशका एक ग्राम। यहां स्वतन्त्र एक जमीन्दार हैं जो सिर्फ बरोदा गायकवाड़को कर देते हैं।
गरलि-मति—बम्बई प्रदेशके काठियावाड प्रदेशका एक ग्राम। यह ग्राम एक जमीन्दारके अधीन है। उन्हें बरोदा गायकवाड़को और जूनागढके नवाबको कर देना पडता।
गररा (हिं० पु०) एक प्रकारका घोडा, गर्रा।
गरराना (हिं० क्रि०) भीषण ध्वनि करना, गरजना।
गररी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया, गलगलिया।
गरल (सं० क्ली०) १ विष, जहर। "गरलमिव कलयति" (गीतगोविन्द ४।१) २ सर्पविष। ३ घासका मुट्ठा, घासकी अंटिया, पुला।
गरलधर (सं० पु०) १ विष धारण करनेवाला, महादेव। २ सर्प, सांप।
गरलारि (सं० पु०) गरलस्य अरिः, ६-तत्। मरकतमणि, पन्ना।
गरव्रत (सं० पु०) गरं विषवत् सर्पं भक्षणं व्रतं यस्य, बहुव्री०। मयूर, मोर।
गरवा (हिं० वि०) महान, गरूई, भारी।
गरस५र—मध्यभारतके ग्वालियर राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २३° ४´ उ० तथा देशा० ७४° ८´ पू०में अवस्थित है। यहां एक पक्का प्राचीन घर है जिसमें बहुत तरहके शिल्पकार्य खुदे हुए हैं।
गरह (हिं० पु०) १ ग्रह। २ अरिष्ट।
गरहन (सं० पु०) १ कृष्णार्जक, काली तुलसी। २ बर्व्वर, बबई, ममरी, (त्रि०) ३ विषनाशक।
गरहंन (हिं० पु०) एक प्रकारकी मछली।
गरहर (हिं० पु०) वह काठ जो नटखट चौपायोंके गलेमें लटकाया जाता है। कुंदा, ठेंगा, ठेकुर।
गरहाजिरी (फा० स्त्री०) अनुपस्थित।

वर हिस्सोंमें फट जाता है। छिलकेको उतारते ही भीतर कोमल पत्तियोंकी भांतिका स्तरवद्ध दल निकलता है: ताजा हो तो इसका रंग घोर लाल होता है इसीको जावित्री और जावित्रीके बाद जायफल कहते हैं। इनके ऊपर भी दो आवरण रहते है। ऊपरका आवरण चिकना और कठिन, तथा भीतरका पतला और धूमलवर्णका होता है। छिलका फलके भीतर तक भेद जाता है और इसीलिए फलको काटने पर उसमें मार्बल जैसे चिह्न दिखलाई पड़ते हैं। जावित्रीका परिमाण तमाम सूखे फलमें प्राय: एकपञ्चमांश है।

जावित्री और जायफल एक ही पेड़से उत्पन्न होते हैं। ये दोनों वस्तुएं बहुत समयसे एसिया और यूरोपमें आदरके साथ मसालेके काममें लाई जाती हैं; किन्तु आश्चर्यका विषय यह है कि, जहां ये पैदा होते हैं, वहांके लोग इसकी ज़रा भी कदर नहीं करते और न इसे मसालेके काममें ही लाते हैं।

वान्दाद्वीपमें जातिवृक्ष पर वर्षमें तीन बार फल लगते हैं। १म श्रावणके महीनेमें, २य कार्तिक और अगहनमें तथा अन्तिम वार चैत्र मासमें वे फल पक जाते हैं। फिर उसके छिलकेको उतारकर जावित्री निकालकर उसे अलग सुखा लेते हैं। जायफल छिलकेके भीतर दो मास तक लकड़ीके धुएंसे सुखा लेने पड़ते हैं: नहीं तो कोडे लग कर नष्ट कर देते है। वान्दाके लोग पहले कुछ दिनों तक घाममें सुखा कर पीछे धुएंसे सुखाते है। जब भीतरसे हलने लगता है, तब उसे तोड़ कर जावित्री निकाल ली जाती है। कभी कभी कोड़ोंसे बचानेके लिए जायफल चूनेके पानीमें डाल दिये जाते है। परन्तु धुएंसे सुखाये हुए जातिफलही बहुतोंको अच्छे लगते है।

जातिफलसे दो प्रकारका तैल बनता है। १म उद्दायी तैल- और २य स्थायी तैल। इनमेंसे पहला तैल शुभ्र और जायफलकी अत्यन्त तीव्र सुगन्धियुक्त होता है। दूसरा तेल कठिन, पीताभ और मनोहर गन्धविशिष्ट है। शेषोक्त तैल बेकाम जायफलके चूरेको भाफके तापसे गरम करके और फिर उसे पेर कर निकाला जाता है। शीतल होने पर यह तेल कठिन, दानेदार और पाटलवर्णमें परिणत होता है।

पानीके साथ चुआने कर जावित्री और जायफल दोनों हीसे सुगन्धित पदार्थ निकाल लिया जाता है। यह पदार्थ तैलवत् और अत्यन्त उद्दायी होता है। इस पदार्थको जावित्री या जायफलका अर्क कह सकते है। जावित्रीका अर्क कुछ पीलाईको लिए और जायफलका अर्क स्वच्छ होता है। दोनों तरहके अर्कसाबुन सुगन्धित करनेके काममें आते हैं। इसीलिए विलायती जावित्री और जायफलकी खपत ज्यादा है। पिस् (Piesse) साहबने अपने "आर्ट आफ् परफ्यूमरी" नामके ग्रन्थमे लिखा है कि, इङ्गलैण्ड और स्काटलैण्डमें प्रति वर्ष १,४०,००० पौण्ड (प्राय: १७५०) मन जायफल खर्च होता है। और सिमोण्ड्स (Simmonds) साहब लिखते हैं कि, १८७० ई०से पहलेके पाच वर्षोंमें प्रतिवर्ष लगभग प्राय: ५,९२,७३६ पौण्ड जायफल सिर्फ इङ्गलैण्ड और स्काटलैण्डमें खर्च हुआ था। यह पहलेकी तौलसे प्राय: चौगुनेसे भी ज्यादा है।

बहुत तरहके विलायती गन्धद्रव्योंमें जायफलका अर्क मिलाया जाता है। थोड़ा मिलानेसे इसके ज़रिये लमेण्डर वर्गामट आदिकी सुगन्धि और भी मनोरम हो जाती है।

पहले 'वान्दाका साबुन' इस नामका जायफलके स्थायी तैलसे एक तरहका साबुन बनाया जाता था। अब जायफलके अर्कसे साबुन सुगन्धित करनेकी प्रथा चल जानेके कारण उसकी चाल बन्द हो गई है।

बहुतसे प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें जातीफलका नामोल्लेख और उसके गुणोंका वर्णन मिलता है। अतएव इस बातका निर्णय करना बहुत ही मुश्किल है कि, भारतवर्षमें किस समयसे जातीफलका व्यवहार चला है। प्रमाण मिला है कि, ईसाकी १६वों शताब्दीमें अरब देशके वणिक् पूर्वसे जायफल मंगाकर यूरोपको भेजा करते थे। उस समय पारस्य और अरब देशके वैद्य इसके गुण अवगुण जानते थे। हिन्दू वैद्य और मुसलमान हकीम उदरामय आदिके लिए जायफलको अति उत्कृष्ट औषध बताते हैं। हकीमोंके मतसे—जायफल उत्तेजक मादक, पाचक, बलकारक और उपदंशरोगके लिए हितकर है।

गरी (सं० स्त्री०) गृ-अच्-ङीप । १ देवताडवृक्ष । २ खरा जिससे घर छाना जाता है ।

गरी (हिं० स्त्री०) नारियल फलके भीतरका गुदा । यह नरम और स्वादिष्ट होता है ।

गरीब (अ० वि०) १ नम्र, दीन, हीन । २ दरिद्र, निर्धन, अकिंचन कंगाल ।

गरीबनिवाज (फा० वि०) दीनों पर दया करनेवाला, दुःखियोंका दुःख दूर करनेवाला, दयालु ।

गरीबपरवर (फा० वि०) गरीबोंको पालनेवाला, दीन, प्रतिपालक ।

गरीबाना (फा० वि०) गरीबोंकी तरहका ।

गरीबामऊ (हिं० वि०) गरीबोंके योग्य, छोटा मोटा, भला बुरा ।

गरीबी (अ० स्त्री०) १ दीनता, अधीनता, नम्रता । २ दरिद्रता, निर्धनता, कंगाली ।

गरीयस् (सं० पु०) अतिशयेन गुरुः गुरु ईयसुन् गरादेशश्च । १ अतिशय गुरु, अत्यन्त भारी । २ अतिगौरवान्वित, वह जिसका बहुत मान हो । ३ मर्यादासम्पन्न, प्रतिष्ठित मनुष्य, इज्जतदार आदमी ।

गरीयसी (सं० स्त्री०) गरीयस् स्त्रियां ङीप् । १ अत्यन्त भारीपन । २ अतिमाननीया, वह जिसका सम्मान बहुत होता हो । ३ अतिगौरवान्वित ।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।" (रामायण)

गरुआई (हिं० स्त्री०) गुरुता, भारीपन ।

गरुड (सं० पु०) गरुद्भ्यां पक्षाभ्यां डयते इति, डी-ड, पृषोदरादित्वात् तलोपः । विनताके गर्भजात कश्यपात्मज पक्षिराज । (रामायण १।३।२०) इनका नामान्तर—गरुत्मान्, तार्क्ष्य, वनतेय, खगेश्वर, नागान्तक, विष्णुरथ, सुपर्ण, पन्नगाशन, महावीर, पक्षिसिंह, उरगाशन, शाल्मली, हरिवाहन, अमृताहरण, नागाशन, शाल्मलीस्थ, खगेन्द्र, भुजगान्तक, तरस्वी और तार्क्ष्यनायक है ।

कश्यपने पुत्रेच्छु हो करके यज्ञ आरम्भ किया । उन्होंने इन्द्र, वालखिल्य और अन्यान्य देवताओंको यज्ञीय काष्ठ लानेमें लगाया था । इन्द्र अपने बलवीर्यके अनुरूप पर्वतप्रमाण काष्ठराशि उत्तोलन करके अनायास पहुंचाने लगे । अङ्गुष्ठ-प्रमाण वालखिल्य ऋषि सब मिल करके किसी पलाशपत्रका वृन्त उठाये लिये जाते थे । इन्द्र पथिमध्य उनका उपहास और अवमानना करके शीघ्र ही चल दिए । इस पर वालखिल्य मुनि अन्तरमें अत्यन्त क्रुद्ध हो करके देवराजके भयप्रदर्शनार्थ अन्य व्यक्तिको इन्द्र बनानेके लिये एकान्त यत्न करने लगे । यह समझने पर इन्द्र अत्यन्त सन्तप्तचित्त हो करके कश्यपके शरणापन्न हुए । प्रजापति कश्यपने इन्द्रकी वह बात सुन वालखिल्योंके निकट जा करके कर्मसिद्धिका विषय पूछा था । सत्यवादी वालखिल्योंने महात्मा कश्यपको प्रत्युत्तर दे दिया । उस समय कश्यपने उनको सान्त्वना पूर्वक कहा था—'देखो, ब्रह्माके नियोगसे यह इन्द्र हुए हैं । आप लोग भी तपस्या करके अन्य इन्द्रके निमित्त यत्न कर रहे हैं । आप सज्जन हैं, इस लिये ब्रह्माके वाक्यमें अन्यथा करनेके योग्य नहीं । फिर आपका भी सङ्कल्प मिथ्या नहीं जा सकता । आप लोगोंमें यह पक्षियोंके इन्द्र बनें । देवराज आप लोगोंसे याच्ञा करते हैं । आप भी इनके प्रति प्रसन्न हों ।' इस पर वालखिल्य बोल उठे—'हमने आपके सन्तान निमित्त सङ्कल्प करके इस कार्यका अनुष्ठान आरम्भ किया है । आप वही कीजिये, जिसमें मङ्गल हो ।' इसी समय दक्षकन्या विनतादेवीने पुत्रके निमित्त अभिलाष करके अपने स्वामीके निकट आगमन किया था । कश्यप उनसे कहने लगे—हे देवि ! तुम्हारा यह अभिलाष सिद्ध होगा । तुम त्रिभुवनके प्रभुत्वसम्पन्न दो पुत्रोंको प्रसव करोगी । वालखिल्योंकी तपस्या और मेरे सङ्कल्प द्वारा तुम्हारे दोनों पुत्र पक्षियोंका इन्द्रत्व करेंगे ।' फिर विनता सफलकाम हो करके हृष्टचित्त हो गयीं और यथाकाल अरुण तथा गरुड़ नामक दो पुत्रोंको प्रसव किया । अरुण विकलाङ्ग हो करके जन्मग्रहण पूर्वक सूर्यदेवके सम्मुख अवस्थित रहे । गरुड पक्षियोंके इन्द्रत्व पद पर अभिषिक्त हुए ।

महातेजस्वी गरुडने स्वयं अण्ड विदीर्ण करके जन्मग्रहण किया था । जन्मकालको इनका रूप—अग्निराशिकी भांति प्रभासम्पन्न, अतिशय भयङ्कर, प्रलयकालके अग्नि-जैसा प्रदीप्त, विद्युत्की तरह पिङ्गलवर्ण चक्षुविशिष्ट, समुद्राग्नि सदृश घोरतर उग्र, घोर स्वरविशिष्ट और महाकाय था ।

॥ ६ ॥ ॐ रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये ॥ ७ ॥ ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते सरस्वति स्वाहा ॥ ८ ॥

जातिमह (सं० पु०) जन्मोत्सव,

जातिमात्र (सं० क्ली०) जातिरेव, एवार्थे जाति-मात्रच् स्वाध्यायादि हीन, जन्ममात्र।

जाति वचन (सं० पु०) जातिज्ञान।

जातिवैर (सं० क्ली०) ६-तत् जात्यास्वभावतो वैरं स्वाभाविक शत्रुता, सहज वैर। महाभारतमें जातिवैर पांच प्रकारका माना गया है—१ स्त्रीकृत, २ वास्तुज, ३ वारज ४ सापत्न और ५ अपराधज।

जातिव्यूहविधान (सं० क्ली०) जातिव्यूहस्य जातिसमूहस्य विधानं, ६ तत्। विभिन्न जातिके मनुष्योंके परस्पर व्यवहार विषयक नियम।

जातिशक्तिवाद (सं० पु०) शब्दका जातिशक्तिसमर्थक विषय। शक्तिवाद देखो।

जातिशब्द (सं० पु०) जातिवाचकः शब्द मध्यपदलो०। प्रकार विषयक, विशेषविषयक, जातिवाचक शब्द जैसे हंस, मृग आदि।

जातिशस्य (सं० क्ली०) जातिः शस्यं, ६-तत्। सुगन्धगन्ध द्रव्यविशेष, जायफल।

जातिसङ्कर (सं० पु०) जात्योः विरुद्धयो परस्पर विरुद्धयः परस्पराभाव समानाधिकरण योः सङ्करः, ६-तत्। वर्णसङ्कर, विभिन्न जातीय माता पितासे उत्पन्न, दोगला। सकर देखो।

जातिसम्पन्न (सं० त्रि०) सद्वंशजात, उच्चवंशका, अच्छे कुलका।

जातिसार (सं० क्ली०) जातिः सारं ६ तत् वा जात्या स्वभावतो सारोऽत्र। जातीफल, जायफल।

जातिसूत (सं०) जायफल।

जातिस्फोट (सं० पु०) वैयाकरणके मतसे प्रसिद्ध आठ प्रकारके स्फोटोंमेंसे एक। स्फोट देखो।

जातिस्मर (सं० पु०) जातिःस्मर्य्यतेऽत्र स्नानादिना स्मृ आधारे, बाहुलकात् अप्। १ तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। इसमें स्नान करनेसे मनुष्य पूर्व जन्मका वृत्तान्त स्मरण कर सकता है।

"ततो देवहृदेऽरण्येकृष्णवेण्वाजलोद्भवे।
जातिस्मरहृदे स्नात्वा भवेज्जातिस्मरोनरः॥" (भा० ३।८५अ०)

जातिं पूर्व्वजन्मवृत्तान्तं स्मरति, स्मृ-अच्। (त्रि०) २ पूर्वजन्मवृत्तान्तस्मारक, जो पूर्व जन्मकी बात याद करता हो। सर्वदा वेदाभ्यास, शौच, तपस्या और अहिंसा द्वारा पूर्वजन्मका वृत्तान्त स्मरण होता है।

"वेदाभ्यासेन सततं शौचेन तपसैव च।
अद्रोहेण च भूतानां जातिंस्मरति पौर्विकीम्॥" (मनु ४।१४८)

जातिस्मरण (सं० क्ली०) पूर्वजन्मका स्मरण होना।

जातिस्मरता (सं० स्त्री०) जातिस्मरस्य भावः तल्-स्त्रियां टाप्। पूर्वजन्मका स्मरण।

जातिस्मरत्व (सं० क्ली०) जातिस्मरस्य भावः भावे त्व। पूर्वजन्मके वृत्तान्तोंका स्मरण।

जातिस्मरह्रद (सं० पु०) जातिस्मरो नाम ह्रदः। तीर्थ विशेष, एक तीर्थका नाम। जातिस्मर देखो।

जातिस्वभाव (सं० पु०) एक प्रकारका अलङ्कार। इसमें आकृति और गुणोंका वर्णन किया जाता है।

जातिहीन (सं० त्रि०) जात्या हीनः ६ तत्। जाति-रहित, नीच जाति।

जाती (सं० स्त्री०) जन-क्तिच् ततो ङीप्। १ जातीपुष्प, चमेली। इसके संस्कृत पर्याय ये हैं—सुरभिगन्धा, सुमनस्, सुरप्रिया, चेतकी, सुकुमारा, सन्ध्यापुष्पी, मनोहरा, राजपुत्री, मनोज्ञा, मालती, तैलभाविनी और हृद्यगन्धा। यह पुष्प सब पुष्पोंसे श्रेष्ठ होता है। (उद्भट)

मल्लिका, मालती आदि बहुतसे फूलोंके पेड़ इसके समजातीय हैं। इनमे सबसे श्रेष्ठ जातीपुष्प ही है। इसका पेड़ गुल्मकी आकृतिका तथा भारतवर्षमें सर्वत्र ही देखनेमें आता है। हिमालयके उत्तरपश्चिमसीमामें दो हजारसे लेकर पांच हजार फुट तक ऊंचाई पर यह पौधा (जङ्गलकी अवस्थामें) उपजता है। ग्रीष्म और वर्षाऋतुमें इस पौधे पर सफेद रंगके बड़े बड़े, अति सुगन्धि युक्त मनोहर फूल लगते हैं। सूख जाने पर भी इनकी सुगन्धि नहीं जाती, इसलिए लोग उन फूलोंको गन्धद्रव्य बनानेके लिए रख लेते हैं। जाती पुष्पसे एक प्रकारका बहुत बढ़िया अतर बनता है।

ताजे फूलोंके साथ तिल बखेर देनेसे, फूलोंकी सुगन्धि उन तिलोंमें आ जाती है। प्रतिदिन नये नये फूलों द्वारा तिलोंको सुगन्धित करनेसे, उनमेंसे अच्छा चमेलीका तैल निकलता है।

भेदकथन, तीर्थकथन, प्रभवादि षष्टिवर्षकीर्तन, पवन विजयादि, रत्नोत्पत्तिकथन, रत्नपरीक्षा, मुक्ताफलपरीक्षा, पद्मरागपरीक्षा, मरकतपरीक्षा, इन्द्रनीलपरीक्षा, वैदूर्य-परीक्षा, पुष्परागपरीक्षा, कर्कोतनपरीक्षा, भीष्मरत्नपरीक्षा, पुलकपरीक्षा, रुधिररत्नपरीक्षा, स्फटिकपरीक्षा, विद्रुम-परीक्षा, संक्षेपमें बहुतीर्थ कथन, गयामाहात्म्य, गयातीर्थकी उत्पत्ति प्रभृतिका कथन, गयामें स्नानभेद और क्रिया-भेदसे फलभेदकथन, फल्गु नदीमें स्नान और रुद्रपदादि-में पिण्डदानमाहात्म्यादि कथन, विशाल नृपतिका इति-हास, प्रेतशिलादिमें पिण्डदानकथन, प्रेतशिलादिमें श्राद्धकर्ताका फल, चतुर्दश मनु और तत्पुत्र तथा उनके मन्वन्तरके सप्तर्षि और देवादि कीर्तन, मार्कण्डेय क्रोष्टुकिसंवादमें रुचिका उपाख्यान, रुचकृत पितृस्तव, पितृगणके निकटसे रुचिको वरप्राप्ति, रुचिका परिणय, रौच्य मनुकी उत्पत्ति, हरिध्यान, प्रकारान्तरमें हरिध्यान, याज्ञवल्क्योक्त धर्मकथनमें धर्मदेशादि कथन, उपनयन तथा स्वाध्यायकीर्तन, गृहस्थ-धर्मनिर्णय, सङ्कीर्णजाति, पञ्च महायज्ञ सन्ध्योपासनादि कथन, गृहीका धर्म और वर्णधर्मादि कथन, द्रव्यशुद्ध, दानधर्म, श्राद्धविधि, विना यकशान्ति, ग्रहशान्ति, वानप्रस्थाश्रमविवरण, यतिधर्म, पापचिह्नकथन, प्रायश्चित्तविधि, अशौचादि निर्णय, परा-शर-धर्मशास्त्र, नीतिसार, नीतिसारमें धनरक्षादिका उपदेश, नीतिसारमें ध्रुवपरित्याग निषेधादि, नीतिसारमें राजलक्षण, भृत्यलक्षण, गुणवन्नियोगादि, मित्रामित्र-विभाग, कुमार्यादि परित्यागादिका उपदेश, व्रतकथना-रम्भ, अनङ्गत्रयोदशीव्रत, अखण्डद्वादशीव्रत, अगस्त्यार्घ्यव्रत, भीष्मपञ्चकादि व्रतविधि, शिवरात्रिव्रत, एकादशी-माहात्म्य, विष्णुपूजन, भीमैकादश्यादि कीर्तन, व्रता-वलम्बीकी नियमावली, प्रतिपदादिव्रत, षष्ठीसप्तमीव्रत, रोहिण्यष्टमीव्रत, बुधाष्टमीव्रत, अशोकाष्टमीव्रत, महा-नवमीव्रत, महानवमीव्रतप्रसङ्गमें कौशिकमन्त्रकथन, वीरनवमीव्रत, दमननवमीव्रत, दिग्दशमीव्रत, एकादशी-व्रत, श्रवणद्वादशीव्रत, मदनत्रयोदशीव्रतादि, सूर्यवंश-कीर्तन, चन्द्रवंशवर्णन, पुरुवंशकीर्तन, जनमेजयका वंशकथन, विष्णुकी अवतारकथा, पतिव्रता-माहात्म्य, रामायणकथन, हरिवंशकथन, भारतकथन, आयुर्वेद-कथनमें सर्वरोगका निदान, ज्वरनिदान, रक्तपित्तनिदान, कासनिदान, हिक्कारोगनिदान, यक्ष्मनिदान, अरोचकनि-दान, हृद्रोगादि निदान, मदात्ययादिनिदान, अर्शोनिदान, अतिसारनिदान, मूत्राघातनिदान, प्रमेहनिदान, विद्रधि-निदान, उदर नदान, पाण्डुशोथनिदान, विसर्पादिनिदान, कुष्ठनिदान, क्रिमिनिदान, वातव्याधिनिदान, वातरक्त-निदान, सूत्रस्थान, अनुपानादि कथन, ज्वरादि रोगोंकी चिकित्सा, नाडीव्रणादिकी चिकित्सा, स्त्रीरोगादिकी चिकित्सा, द्रव्यनिर्णय, घृततैलादिकथन, नानायोगादि-कथन, नानारोगौषधकथन, वशीकरणादि, दन्तश्वेती करणादि, स्त्रीवशीकरण और मशकमारणादिकथन, नेत्रशूलादिका औषधकथन, रक्तशक्तिवृद्धिका उपाय, ग्रहणीरोगका औषध, कटिशूलका औषध, गणेशपूजा, प्रमेहका औषध, मेधावृद्धिका औषध, रक्तपात निवारणका औषध, पटलदन्तव्यथादिका औषध, गण्डमालादिका औषध, सर्पाघातादिका औषध, योनिव्यथाका औषध, पशुचिकित्सा, पाण्डुरोगादिका औषध, बुद्धिनिर्मलकर-णका औषध, विष्णुकवच, विष्णुविद्या, विष्णुधर्म नामक विद्या, गारुडविद्या, त्रिपुराकल्प, प्रश्नगणना, वायु-जय, अश्वचिकित्सा, औषधिका नामनिर्देश, व्याकरणके नियम, उदाहरण, छन्दःशास्त्रारम्भ, मात्रावृत्तकथन, सम-वृत्त, अर्धसमवृत्त, विषमवृत्त, प्रस्तारादि निर्देश, धर्मो-पदेश, स्नानविधि, तर्पण, वैश्वदेवविधि, सन्ध्याविधि, श्राद्धविधि, नित्यश्राद्ध, सपिण्डीकरण, धर्मसारकथन, शूद्रोच्छिष्ट भोजनादिका प्रायश्चित्त, युगधर्मकथन, नैमि-त्तिक प्रलय, संसारकथनमें पापपरिमाण, अष्टाङ्गयोग, विष्णुभक्ति, नारायणनमस्कार, नारायणकी आराधना, नारायणका ध्यान, विष्णुमाहात्म्य, नृसिंहस्तव, ज्ञाना-मृत, मार्कण्डेयप्रोक्त नारायणका स्तव: ब्रह्मप्रोक्त विष्णु-स्तव, ब्रह्मज्ञान, आत्मज्ञान, गीतासार, अष्टाङ्गयोगका प्रयो-जन, वैकुण्ठमें नारायणके प्रति गरुडका विविध प्रश्न, और्ध्वदैहिकविधि, नरकके स्वरूपका वर्णन, गर्भावस्था कीर्तन, देहदानादिकथन, पर्णनरदाहविधि, अशौच लक्षणका कालनिरूपण, वृषोत्सर्ग कथन, पञ्चप्रेतोपाख्यान, और्ध्वदै-हिककर्माधिकारी, बभ्रुवाहन प्रेतसंवाद, श्राद्धका नाना-रूप लक्षिकीर्तन, मनुष्यजन्मादि लाभका कारण, मनुष्यको

जातूकर्ण (सं० पु०) ऋषिभेद, उपस्मृति बनानेवालोंमेंसे एक ऋषिका नाम। हरिवंशके अनुसार इनका जन्म अट्ठाइसवें द्वापरमें हुआ था।

जातूकर्णी (सं० पु०) महाकवि भवभूतिके पिताका नाम।

जातूकर्ण्य (सं० पु०-स्त्री०) जातूकर्णस्य अपत्यं पुमान् अपत्ये यञ्। जातूकर्णके अपत्य, जातूकर्ण ऋषिके वंशज।

जातूभर्म्म (सं० त्रि०) जातूरूपं भर्म्म आयुधं यस्य बहुव्री०। १ अशनि रूप अस्त्र, वज्रका बना हुआ हथियार। २ जात प्रजाका भर्त्ता, सृष्टिके पालन करनेवाला।

जातूष्ठिर (सं० त्रि०) जातु कदाचित् स्थिरः सस्य यत्वं दीर्घश्च। सर्वदा अस्थिर, चंचल।

जातेष्टि (सं० स्त्री०) जाते पुत्रजनने इष्टिः, ६-तत्। वह तत्रग जो पुत्रके उत्पन्न होने पर किया जाता है, जातकर्म। जातकर्म देखो।

जातेष्टिन्याय (सं० पु०) जैमिनि प्रदर्शित पितृकृत यज्ञ द्वारा पुत्रगत फलसूचक नैमित्तिक रूप न्याय। न्याय देखो

जातोक्ष (सं० पु०) जातः प्राप्तदस्यावस्थः उक्षा टच् समा०। अचतुरेत्यादि पा। ५।४।७७। इति निपातनात् साधुः। युवा वृष, वह बैल जो छोटी अवस्थामें बधिया कर दिया गया हो।

जात्य (सं० त्रि०) जातौ भवः इति यत्। १ कुलीन, उत्तम कुलमें उत्पन्न। २ श्रेष्ठ। ३ सुन्दर, जो देखनेमें बहुत अच्छा हो। ४ कान्त। ५ त्रिकोण, जिसमें तीन कोने हों।

जात्यत्रिभुज (सं० पु०) वह त्रिभुज क्षेत्र जिसमें एक कोण समकोण हो। (Right-angled Triangle.)

जात्यन्ध (सं० त्रि०) जात्याजन्मन्येवान्धः। जन्मान्ध, जन्मका अन्धा।

जात्यासन (सं० क्लो०) जात्यं जातिस्मारकं आसनं। योगाङ्ग आसनविशेष, तान्त्रिकोंका एक आसन। जिसमें हाथ और पैर जमीन पर रख कर गमनागमन किया जाता है, उसीको जात्यासन कहते हैं। इस जात्यासनके सिद्ध हो जानेसे पूर्व जन्मकी सब बातें स्मरण हो आती हैं।

जात्युत्तर (सं० क्लो०) जात्या व्याप्तिविधुरसाधर्म्यवैधर्म्यादिना उत्तरं। न्यायकथित असदुत्तरविशेष, न्यायमें वह दूषित उत्तर जिसमें व्याप्ति स्थिर न हो। यह अठारह प्रकारका माना गया है। जाति देखो।

जात्युत्पल (सं० क्लो०) श्वेतरक्तकमल, सफेद रंग लिये लालकमल।

जादर—बम्बई प्रेसीडेन्सीके अन्तर्गत बेलगाँव जिलेकी एक जाति। ये लोग पाठशाली सोमेश्वार, कुरिनवार और हैलकर इन चार शाखाओंमें विभक्त हैं। इन शाखाओंमें परस्पर विवाह आदि सम्बन्ध नहीं होते और न ये गुरुके समक्ष वा मठके सिवा अन्यत्र कहीं एकत्र भोजन आदि ही करते हैं। ये लोग साफ-सुथरे, परिश्रमी, सरल, न्याय परायण, मितव्ययी, शान्तप्रकृतिके तथा आतिथेय होते हैं। कपड़ा बुनना ही इनका प्रधान कार्य वा उपजीविका है; इसके सिवा ये लोग कपड़ाका रोजगार और गाय, भैंस, घोड़ों आदिके चरानेका काम भी करते हैं। इन लोगोंकी स्त्रियां वयन-कार्यमें विशेष सहायता पहुंचाती हैं; इसलिए बहुतसे लोग गृहकार्यके सुभीताके लिए एकसे अधिक व्याह भी कर लेते हैं। लड़कियोंके विवाहके लिए इनमें कोई निर्दिष्ट समय नहीं है। बहुतोंका यौवन अवस्थामें भी विवाह होता है। वरको कभी कभी रुपये दे कर विवाह करना पड़ता है। इनमें विधवाओंका भी विवाह होता है। विधवाके विवाहके समय कन्याका पिता पहली बारमें दूने रुपये लेता है। विधवाके पहली बारके बाल-बच्चे अपने चचा-ताऊ आदिकी देख रेखमें रहते हैं। इनकी बोल चालकी भाषा कनाड़ी है।

ये हिन्दूधर्मको मानते हैं; जिनमें कुछ शैव हैं और बाकीके सब वैष्णव हैं। शैवगण मृतदेहको गाड़ देते हैं। किन्तु वैष्णव लोग उसे जलाते हैं। जादरोंके पुरोहित जङ्गम हैं। जंगम देखो। किसी जादरोंके मरने पर जङ्गम पुरोहित आ कर उसके मस्तक पर पैर रखता है। इसके बाद पुरोहितके पैरका धोवन उसके मुंहमें डाला जाता है। पीछे उस मुर्देको एक लकड़ीके सन्दूकमें रखते और बाजा बजाते हुए उसे गाड़ आते हैं। इनमें नई प्रथा है, जो भारतवर्षमें और कहीं भी नहीं पाई

के जैसा रखते हैं, तत्पश्चात् जङ्घा और पादके सन्धिस्थान पर जानुका अग्रभाग स्थिरभावसे स्थापित किया जाता है। इसीको गरुडासन कहते हैं।

गरुडाहृत (सं० पु०) सोमलताभेद।

गरुडोत्तीर्ण (सं० क्ली०) गरुडो वर्णेन उत्तीर्णो ऽतिक्रान्तो-ऽनेन। मरकतमणि।

गरुडोपनिषद् (सं० स्त्री०) अथर्ववेदान्तर्गत एक उपनिषद्।

गरुत् (सं० पु०) गृणाति शब्दायते वायुवेगेनेति। १ पक्ष, पंख, पर। २ निगरण, गला। ३ भक्षण, भोजन।

"सुपर्णोऽसि गरुत्मान् पृष्ठे।" (यजुर्वेद १७।७२)

गरुत्मत् (सं० पु०) गरुतः प्रशस्तपक्षाः सन्त्यस्य गरुत्-मतुप्। १ गरुड़।

"अगाह वोऽन्त्रा प्रभा गरुत्मानिव पन्नगेन्द्र।" (भाग० ६।१९।११)

२ पक्षिमात्र। ३ हविर्भक्षक अग्नि। (यजुर्वेद १०।२६)

गरुदास—गुजरातमें रहनेवाली एक जाति। ये नीच जातियोंका पौरोहित्य करते और अपनेको ब्राह्मण समझते हैं। लेकिन ब्राह्मण इन्हें कई एक कारणसे घृणा-दृष्टिसे देखते हैं। पहला कारण यह है कि किसी गरुदासने अपने गुरुकी लडकीसे विवाह किया था। २रा इन्होंने धेदासका पौरोहत्य स्वीकार किया था, ३रा—एक यज्ञमें इन्होंने यज्ञपशु खाया था और ४ था—ये ब्राह्मण पुरोहितके वंशज हैं। इन्होंकी उपाधि दवे, जोशी, नागर, ओमाली और शुकुल है। कोई कोई राजपूतकी उपाधि गोहेल और गन्धीय धारण किये हुए है। इनमेंसे थोडे खेतीबारी कर और थोडे कपडा बुन कर अपनी जीविकानिर्वाह करते हैं। ये बहुत थोडे पढे लिखे हैं। ये अपने लडकोंको स्कूल पढने नहीं भेजते वरं घर परही थोडी बहुत संस्कृतकी शिक्षा देते हैं। ये राम, तुलसीवृक्ष तथा देवीकी पूजा करते हैं। इनमेंसे बहुत रामानन्दी और परिनामी संप्रदायके अनुयायी हैं। भूत प्रेतोंमें इन्हें अधिक विश्वास है। चन्द्रमा और सूर्यकी भी ये अर्चना करते हैं। जन्म उपलक्षमें ये किसी तरह-का उत्सव नहीं मनाते हैं। ब्राह्मणोंकी नाईं ये भी अपने लडकेको आठ या नौ वर्षकी अवस्थामें यज्ञोपवीत देते हैं। इनमें बालविवाह तथा विधवाविवाहकी प्रथा प्रचलित है। ये शवको जलाते हैं। ब्राह्मणोंके जैसे ये भी श्राद्ध कर्म करते हैं। जब गरुदास किसी तरहका अपराध करता है तो उसे पञ्चायतसे दण्ड मिलता है।

गरुद्योधिन (सं० पु०) गरुद्भ्यां पक्षाभ्यां युध्यतीति, युध णिनि। भारती नामक पक्षी, लावपक्षी।

गरुयारि—आसामके अन्तर्गत दरङ्ग जिलाका एक वन। इस वनसे मूल्यवान् शालकाष्ठ लाये जाते हैं।

गरुल (सं० पु०) गरुड रस्य लो वा। गरुड।

गरुहर (हिं० पु०) भारी, बोझ।

गरूर (अ० पु०) घमंड, अभिमान।

गरूरत (अ० पु०) गरूर देखो।

गरूरी (अ० वि०) घमंडी, अभिमानी।

गरेबान (फा० पु०) १ अङ्गे, कुरते आदि कपडोंकी गले परकी काट। २ गले परकी पट्टी, कालर।

गरेरना (हिं० क्रि०) १ घेरना। २ छेकना, रोकना।

गरेरी (हिं० स्त्री०) गराडी, घिरनी।

गरेरी—बिहारमें रहनेवाली एक जाति। भेड बकरियों-का रखना और उनके रूएंसे कम्बल बुनना ही इनकी उपजीविका है। इस जातिकी उत्पत्तिका कोई प्रवाद या विशेष विवरण नहीं मिलता। सिर्फ इतना ही मालूम पडता है कि वह पश्चिम अञ्चलसे गये हैं। यह ग्वालोंके साथ व्यञ्जन आदि खानेमें कोई बुराई नहीं समझते। सम्भवतः यह ग्वाला जातिकी एक शाखा है। कहीं कहीं इन्हें 'गदारिया' और कहीं कहीं भेंडिहर कहते हैं। गदारिया देखो।

बिहारमें इनकी चार श्रेणियां हैं—धेनगढ़ फरु-खाबादी, गङ्गाजली और निकर। धेनगढ़ोंमें चंदेल, चौधरिया, काश्यप और नानकर ४ गोत्र होते हैं। यह अपने गोत्रमें विवाह नहीं करते। दूसरी श्रेणियोंके गरेरी 'ममेरा' 'चचेरा' आदि ६ पुरुषोंके बीच कन्यापुत्र-का विवाह करनेसे हिचकिचाते हैं। इनमें कम्बलिया, कम्मलो, मरार और रावत ४ पदवियां चलती है।

लडकपनमें ही इनका विवाह हो जाता है। स्त्री वन्ध्या होनेसे पुरुष फिर विवाह कर सकते हैं। गरेरियोंमें विधवाविवाह प्रचलित है। स्वामीके शपथ

जानकी-जानि (सं० पु०) वह जिसकी स्त्री जानकी हैं, रामचन्द्र ।

जानकी जीवन (सं० पु०) श्रीरामचन्द्र ।

जानकीतीर्थ—अयोध्या नगरके सन्निकट सरयू नदीका एक घाट। यह धर्महरिके ईशान कोणमें पड़ता है और भारतीयोंका एक तीर्थ है। श्रावण मासके शुक्ल पक्षमें वहां स्नान, दान, पूजा और ब्राह्मण भोजन आदि करानेसे अक्षय पुण्यसञ्चय होता है।

जानकीदास—अखण्डबोध नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जानकीदास कायस्थ—हिन्दीके एक कवि। ये लगभग १८१२ ई०में दतिया नरेश महाराज परीक्षितके यहां रहते थे। इन्होंने नामबत्तीसी नामक एक पुस्तक तथा फुटकर कविताएं लिखी थीं।

जानकीनन्दन कवीन्द्र—वृत्तदर्पण नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ये रामनन्दनके पुत्र और गोपालके पौत्र थे।

जानकीनाथ (सं० पु०) जानकीके स्वामी, श्रीराम।

जानकीनाथ भट्टाचार्य चूड़ामणि—न्यायसिद्धान्तमञ्जरी नामक न्याय ग्रन्थके रचयिता। ये बंगाली थे।

जानकीप्रसाद कवि—बनारसके एक हिन्दी कवि। इनका जन्म १८१४ ई०में हुआ था। आपने केशवदास-प्रणीत रामचन्द्रिका नामक ग्रन्थकी टीका और हिन्दी भाषामें सूक्ति-रामायण और रामभक्तिप्रकाशिका ये दो ग्रन्थ रचे हैं। इनकी बनाई हुई एक कविता नीचे उद्धृत की जाती है—

"कुंडलित सुण्ड गण्ड झुण्डत मलिन्द वृन्द
बन्दन बिराजै सुण्ड अदभुत गतिको ।
बाल ससि भाल तीनि लोचन बिसाल राजै
फनि गन माल सुभ सदन सुमतिको ॥
ध्यावत बिना ही श्रम लावत न बार नर
पावत अपार भार मोद धनपतिको ।
पापतरु कन्दनको बिघन निकन्दको
आठौ जाम बन्दन करत गनपतिनको ॥"

२ राय-बरेली जिलेके रहनेवाले एक हिन्दीके प्रसिद्ध कवि। ये पण्डित ठाकुरप्रसाद त्रिपाठीके पुत्र थे। १८८३ ई०में ये जीवित थे। फारसी और संस्कृत, दोनों भाषामें इनकी विलक्षण व्युत्पत्ति थी। इन्होंने उर्दूमें शाहनामा नामक हिन्दुस्तानका एक इतिहास लिखा है। इसके अलावा आपने हिन्दीभाषामें रघुवीरध्यानावली, रामनवरतन, भगवतीविनय, रामनिवास-रामायण, रामानन्दविहार और नीतिविलास, इन कई एक ग्रन्थोंकी रचना की है। इनकी रचना अति विशद और अच्छी है। उदाहरणार्थ एक छन्द उद्धृत करते हैं—

"बीर बली सरदार जहां तहं जीति बिजै नित नूतन छाजै ।
दुर्ग कठोर सुबौर जहां तहं भूपति संग सो नाहर गाजै ॥
पालै प्रजाहि महीपै जहां तहं सम्पति श्रीपति धामसी राजै ।
है चतुरंग चमू असवार पंवार तहा छिति छत्र बिराजै ॥"

३ नर्मदा-माहात्म्य और शृङ्गारतिलक नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जानकीमङ्गल (सं० पु०) गोस्वामी तुलसीदासकृत एक ग्रन्थ। इसमें श्रीरामजानकीके विवाहका वर्णन है।

जानकीरमण (सं० पु०) श्रीरामचन्द्र।

जानकी रसिकशरण—१ रसिकसुबोधिनी नामक भक्तमालकी एक टीकाके रचयिता। ये लगभग १६६२ ई०में विद्यमान थे।

२ हिन्दीके एक उत्कृष्ट कवि। आप लगभग १७०३ ई०में विद्यमान थे। आपने 'अवधसागर' नामक एक बड़ा ग्रन्थ रचा है, जिसमें श्रीरामचन्द्रका यश गाया गया है, उदाहरणार्थ एक कविता उद्धृत की जाती है—

"रथ पर राजत रघुवर राम ।
क्रीट मुकुट सिर धनुष बान कर शोभा कोटिन काम ।
श्याम गात केसरिया बानो, सिर पर मौर ललाम ।
बैजन्ती बनमाल लसै उर, पदिक मध्य अभिराम ॥
मुख मयंक सरसीरुहलोचन हैं सबके सुख धाम ।
कुटिल अलक अतरनमें भीनी, दुहुं दिसि छूटी श्याम ॥
कम्बु कंठ मोतिनकी माला, किंकिनि कटि दुति दाम ।
रस माला यह रूप रसिक बर करहु हिये अभिराम ॥"

जानगीर—मध्यप्रदेशके विलासपुर जिलेकी पूर्व तहसील। यह अक्षा० २१° २७´ तथा २२° ५०´ उ० और देशा० ८२° १९´ एवं ८३° ४०´ पूर्वके मध्य बसा है। क्षेत्रफल २०३९ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ४५१०२४ है। सदर जानगीर गांवमें कोई २२५७ आदमी रहते हैं।

"ततु पश्चाद्ब्रह्मददत् कला ज्ञानं समाहृतम्।
सरस्वत्यास्तटे तुष्टो मनोयज्ञेन पाण्डव॥" (भारत १३।१८।३८)
"बहूनां गर्गादीनां मत बच्ये॥" (छन्दस्त्वि ता २११५)

इन्होंने अश्वायुर्वेद, केरलप्रश्न, केरलपाशावली, गर्ग-संहिता नामक ज्योतिष और गर्ग-मनोरमा नामक उसकी टीका, प्रश्नमनोरमा, प्रश्नविद्या, षोडशप्रश्न, ज्योतिगर्ग, पल्लीसरट-विधान, कात्यायनश्रौतसूत्रभाष्य तथा गर्ग-पद्धति प्रभृति ग्रन्थ प्रणयन किये हैं। (पु० स्त्री०) गर्ग अपत्ये यञ्। २ गर्ग के गोत्रापत्य गर्गके वंशज। "गर्गा गत भोज्यन्ताम्। (महाभाष्य) ३ मुनिविशेष। ये कुणिगर्ग नामसे ख्यात हैं। (भारत) किसीके मतसे इन्होंने गर्ग-स्मृति रचना की है। माधवाचार्य, हेमाद्रि, कमलाकर प्रभृति स्मार्तोंने गर्गस्मृति उद्धृत की है। ४ ब्रह्माके एक मानसपुत्रका नाम। इनकी सृष्टि गयामें यज्ञके लिये हुई थी।

"गर्गं कौशिक वाशिष्ठौ।" (वायुपुराणमें ग माहात्म्य २ अ०)

५ संगीतमें एक ताल। इसमें चार द्रुत और अन्त में एक खाली या विराम होता है। (संगीतदामोदर) ६ बैल, साँड़। ७ एक कीड़ा जो पृथ्वीमें घुसा रहता है, गगोरो। ८ वृश्चिक, बिच्छू। ९ किञ्चुलक, केचुआ। १० एक जैन-ग्रन्थकार। इन्होंने मागधी भाषामें कर्म्मविपाक प्रणयन किया है। ११ एक पर्वतका नाम। १२ नन्दके एक पुरोहितका नाम। १३ एक प्राचीन कवि।

गर्ग-विरात्र (सं० पु०) कात्यायनश्रौतसूत्रके अनुसार एक प्रकारका योग जो तीन दिनोंमें होता है।

(कात्यायनश्रौतसूत्र २३।३।८)

गर्गभूमि (सं० पु०) एक राजकुमार।

गर्गर (सं० पु०) गर्ग इति शब्दं राति रा-क। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। इसका गुण—मधुर, स्निग्ध और पित्तनाशक है। (राजवल्लभ) इसके पृष्ठ पर बहुत रेखायें और शल्क रहती हैं। (राजनिघण्टु) यह पित्तकर, वात, कफनाशक तथा कोपकर है। (भावप्रकाश) २ भंवर। ३ एक प्रकारका प्राचीन बाजा। यह वैदिक कालमें बजाया जाता था। गागर।

गर्गरक (सं० पु०) गर्गर स्वार्थे कन्। समुद्रजात गर्गर-मत्स्य, समुद्रमें होनेवाली गर्गर मछली (Pimelodus gagoia).

"मकर-गर्गरक-चन्द्रक-महामीन-राजीव प्रभृतय' समुद्र.।"

(सुश्रुत, सूत्रस्थान ४६ अ०)

गर्गरी (सं० स्त्री०) गर्ग जातौ ङीष्। १ दधिमन्थनपात्र, वह बर्तन जिसमें दही मथा जाता है। माठ, दहेड़ी। २ मन्थनी। ३ गगरी, कलसी।

'मेषादौ शक्तौ देया वारिपूर्णा च गर्गरी।' (तिथितत्त्व)

गर्गवंशी— राजपूत जातिकी एक श्रेणी। ये आजमगढ़ और गोरखपुरमें रहते हैं।

गर्गशिरस् (सं० पु०) दैत्यविशेष, एक राक्षसका नाम।

"इत्वा गर्गशिरा यथ।" (हरिवंश ३ अ०)

गर्गसंहिता (सं० स्त्री०) गर्गेण कृता संहिता, मध्यपदलो०। कालज्ञानार्थं गर्गकृत संहिता, ज्योतिषग्रन्थविशेष, गर्गका बनाया हुआ एक ज्योतिष ग्रन्थ इससे कालका ज्ञान होता है।

गर्गस्रोतस् (सं० क्ली०) गर्गेण आश्रितमुषितं वा स्रोतः। १ तीर्थविशेष। गर्गमुनिके नामानुसार इसका नाम-करण हुआ है। यह तीर्थ सरस्वतीतीर्थमें अवस्थित है। (भारत ९।३८ अ०)

गर्गाट (सं० पु०) गर्ग इति शब्देन अटति अट्-अच् शक-न्ध्वादित्वात् अलोपः। मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली। इसका दूसरा नाम योगनाविक है।

गर्गादि (सं० पु०) पाणिनीय गणविशेष। गर्गादि गण यथा—वत्स, संस्कृति, अज, व्याघ्रपाद, विदभृत्, प्राचीन-योग, अगस्ति, पुलस्ति, चमस, रेभ, अग्निवेश, शङ्ख, शट, शक, एकट धूम, अवट, मनस, धनञ्जय, वृक्ष, विश्वावसु, जरमाण, लोहित, संशित, बभ्रु, मण्डु, गण्डु, शङ्कु, लिगु, गुहलु, मन्तु, मंक्षु, अलिगु, जिगीषु, मनु, तन्तु, मनायी, सूनु, कथक, कन्थक ऋक्ष, तनु, तरुक्ष, तलुक्ष, तण्ड, वतण्ड, कपि, कत, कुरुकत, अनडुह, कण्व, शकल, गोकक्ष, अगस्त्य, कुण्डिनी, यज्ञवल्क, पर्णवल्क, अभय-जात, विरोहित, वृषगण, रहूगण, शण्डिल, चणक, चुलुक, मुद्गल, मुसल, जमदग्नि, पराशर, जातूकर्ण, महित, मंत्रित, अश्मरथ, शर्कराक्ष, पूतिमाष, स्थूरा, अररक, एलाक, पिङ्गल, कृष्ण, गोलन्द, उलुक, तितिक्ष, भिषज, भिष्णज, भडित, भण्डित, दल्भ, चेकित, चिकित्सित, देवहू, इन्द्रहू, एकलू, पिप्पलू, बृहदग्नि, सुलोहिन्, सुलाभिन्, उक्थ और कुटीगु।

जानवादिक (सं० त्रि०) जनवादे भवः जनवादस्य इदं वा, जनवाद-ठक्। जनवाद सम्बन्धीय कथा इत्यादि।

जान विहारीलाल—विज्ञान-विभाकर नामक हिन्दी नाटकके प्रणेता।

जानशीन (फा० पु०) १ वह जो दूसरेकी स्थलाभिषिक्तिके अनुसार उसके स्थान, पद या अधिकार पर हो। २ उत्तराधिकारी।

जानश्रुति (सं० पु०) जनश्रुतेः ऋषेरपत्यं इति ढक्। जनश्रुति ऋषिके पुत्र।

जानश्रुतेय (सं० पु०) जनश्रुतेः ऋषेरपत्यं इति ढक्। जनश्रुतिके पुत्र औपवि नामक राजर्षि।

(शत० ब्रा० ५।१।१।५)

जानसथ—१ युक्तप्रदेशके मुजफ्फर नगर जिलेकी दक्षिण-पूर्व तहसील। यह अक्षा० २९° १०´ एवं २९° ३६´ उ० और देशा० ७७° ३६´ तथा ७८° ६´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४५१ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २१६४११ है। इस तहसीलमें ४ नगर और २४४ ग्राम प्रतिष्ठित हैं। मालगुजारी लगभग ३६००००) और सेस ४७०००) रु० है। पूर्व सीमा पर गङ्गा नदी प्रवाहित है।

२ युक्तप्रदेशके मुजफ्फर नगर जिलेमें जानसथ तहसीलका सदर। यह अक्षा० २९° १६´ उ० और देशा० ७७° ५१´ पू०में पड़ता है। जनसंख्या प्रायः ६५०७ है। १८वीं शताब्दीके प्रारम्भमें जानसथ सैयद यहां रहते थे। १७३७ ई०में बजीर कमर उद्दीनकी आज्ञासे रोहिलोंने जानसथ लूटमारा और सैयदोंको मार डाला या निकाल बाहर किया। इनके वंशधर अब भी इसी जिलेमें रहते हैं। १८५६ ई०की २० धाराके अनुसार इस नगरका प्रबन्ध होता है। हालमें सड़कें और मोरियां पक्की करके नगरको बड़ी उन्नति की गई है।

जानसाहब—इनका प्रकृत नाम मि० जन खृष्टियन (Mr. John Christian) है। इन्होंने हिन्दी भाषामें कई एक ईसाई गीत रचे हैं। तिहुत जिलेमें आजकल भी उनके गीत गाये जाते हैं। वे मुक्तिमुक्तावली नामक छन्दोबन्धमें ईसाको सुन्दर जीवनी लिख गये हैं।

जाना (हिं० क्रि०) १ प्रस्थान करना, गमन करना। २ अलग होना, दूर होना। ३ अधिकारसे जाना, हानि होना। ४ नष्ट करना, खोना। ५ व्यतीत होना, गुजरना। ६ सत्यानाश होना, बिगड़ना, बरबाद होना। ७ मृत्युको प्राप्त होना, मरना। ८ बहना, जारी होना।

जानायन (सं० पु० स्त्री०) जनस्य तन्नामकर्षेर्गोत्रापत्यं अश्वादित्वात् फञ्। जन नामक ऋषिके वंशज।

जानार्दन (सं०-पु०) जनार्दनके वंशज।

जानि (सं० स्त्री०) भार्य्या, स्त्री।

जानिब (अ० स्त्री०) ओर, तरफ, दिशा।

जानिबदार (फा० वि०) पक्षपाती, तरफदार।

जानिबदारी (फा० स्त्री०) पक्षपात, तरफदारी।

जानी (फा० वि०) जानसे सम्बन्ध रखनेवाला।

जानु (सं० क्ली०) जायते इति जन-ञुण्। ऊरुसन्धि, जाँघ और पिण्डलीके मध्यका भाग, घुटना। इसके पर्याय-ऊरुपर्व, अष्ठीवत्, अष्ठीवान् और चक्रिका।

जानु (फा० पु०) जाँघ, रान।

जानुकारक (सं० पु०) सूर्यके पार्श्वगामीका नाम।

जानुजङ्घ (सं० पु०) नृपभेद, एक राजाका नाम।

जानुपाणि (सं० क्रि०-वि०) घुटनों और हाथोंके बल, बैयां पैयां।

जानुप्रहृतिक (सं० क्ली०) जानुना प्रहृतं प्रहारस्तेन निर्वृतं अक्षद्युतादित्वात् ठक्। मल्लयुद्धविशेष, वह मल्लयुद्ध जिसमें घुटनोंसे विशेष काम लिया जाता हो।

जानुवां (हिं० पु०) हाथीके अगले और पोछले पैरोंमें होनेवाला एक प्रकारका रोग।

जानुविजानु (सं० क्ली०) खड्ग युद्धका प्रकारभेद, तलवारके ३२ हाथोंमेंसे एक। भ्रान्त, उद्भ्रान्त, आविद्ध, प्रविद्ध, प्लुत विप्लुत, आकर, विकर, भिन्न, निर्मर्य्याद, अमानुष, सङ्कुचित, कुलचित, सव्य, जानु, विजानु, आहित, चित्रक छिन्न, कुद्रव, लवण, घृत सर्वबाहु, विनिर्बाहु, सव्येतर, उत्तर, त्रिबाहु, उत्तुङ्गबाहु, सव्योन्नत, उदासि, योधिक, पृष्ठप्रथित और प्रथित ये ३२ प्रकारके खड्गयुद्ध हैं।

जानुहित (सं० त्रि०) जनैः हितं परिकल्पितं पृषोदरादित्वात् साधुः। जनपरिकल्पित।

जानू (फा० पु०) जङ्घा, जाँघ।

जान्य (सं० पु०) ऋषिविशेष एक ऋषिका नाम।

गर्त्य (सं० त्रि०) गर्तमर्हति यत्। गर्तविशिष्ट देश। वह देश जिसके चारों ओर खाई हो।

गर्द (फा० स्त्री०) धूल, राख, खाक।

गर्दखोर (फा० वि०) जिसका रंग मिट्टी आदिमें पड़नेसे खराब न हो, खाकी रंग।

गर्दतोय—जैनमतानुसार ब्रह्मस्वर्ग (पाचवें सर्ग)के आठो दिशाओंमें रहनेवाले आठ प्रकारके लौकान्तिक देवोंमेंसे पाँचवें देव।

"सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च।"

(तत्त्वार्थ सूत्र ४ अ० २५ सू०)

ये ब्रह्मचारी होनेके कारण देवर्षि कहलाते हैं। ये निरन्तर ज्ञान-चर्चामें ही लीन रहते है। तीर्थङ्करके तप-कल्याणके समय अर्थात् जब तीर्थङ्कर राज्यादि क्षणभङ्गुर पर-पदार्थोंको त्याग कर दिगम्बरी दीक्षा धारण करनेका विचार करते है तब ये देवर्षि आ कर उनके विचार-को दृढ करनेके लिए उन्हें संसारकी असारता दिखलाते हुए उनके विचारोंकी अनुमोदना करते हैं। ये देवर्षि मनुष्य दो जन्म धारण कर नियमसे मोक्ष पाते है। अर्थात् तीसरी वार इनको जन्म नहीं लेना पडता।

(तत्त्वार्थराजवार्तिक० ४ अध्याय)

गर्दन (हिं० पु०) गरदन देखो।

गर्दभंग (हिं० पु०) एक प्रकारका गाँजा जो काश्मीरके दक्षिण भागोंमें उत्पन्न होता है।

गर्दभ (सं० पु०) गर्दति कर्कशशब्दं करोति, गर्द-अभच्। कृश शलिकलिगर्दिभ्योऽभच्। उण् ३।१२२। पशुविशेष, गधा। इसका संस्कृत पर्याय—चक्रीवान्, वालेय, रासभ, खर, राशभ, शङ्कुकर्ण, भारग, भूरिगम, धूसराह्वय, वेशव, धूसर, स्मरस्तुर्य चिरमेही पशुचरि, चारपुङ्ग, चारट और ग्राम्याश्व है। तामिलमें गधेको 'कलद' और तेलगूमें 'गुर्धि' कहते है।

यह पशु दूधपीनेवालोंमें एकशफश्रेणीभुक्त है।

गधा देखनेमें कितना ही घोडे जैसा होता है। इस-की पूंछके ऊपरी भाग और पिछले भागके बाल कुछ कुछ कम पडते है। रङ्ग खाकी लगता है। फिर किसी किसीका रङ्ग रेत-जैसा भी होता है। गुद्दीकी जड़में रीढ़से काले रङ्गके रोएं एक सीधी धारी जैसी बन करके गलेके नीचे तक चले जाते है। फिर ऐसी ही दूसरी धारी सरसे पूंछ तक पडती है।

गधेका रङ्ग यदि ज्यादा सफेद रहता, तो यह धब्बा कुछ अधिक साफ उतारता है। नहीं तो बहुत अधिक लक्ष्य नहीं ठहरता। पांवके खुरमें भी घोडेसे थोडासा प्रभेद पड़ता है।

गधेका सुम शरीरको देखते ज्यादा बडा और बगल और भी ढालू होती है। बीचमें एक गड्ढा जैसा रहता है। पहाडी राहमें जहां घोडा जा नहीं सकता, वहां यह उसके सहारे बेखटके पहुंचता है। चिकनी जमीन पर चलनेमें भी उससे सुभीता पड़ता है। मैदानमें घोड़े, जङ्गलमें हाथी और रेतमें ऊंटकी तरह पहाड़ पर बोझ ढोनेके लिये गधा उपयोगी है। इसके कान लम्बे होते है। मत्था शरीरको देखते कुछ बडा लगता है। पांव छोटे पड़ते है। पैरके खुरों पर एक एक काला धब्बा रहता है। गधा शान्त और सहिष्णु होता, परन्तु निर्बोध नहीं। किसी राहसे एक बार ले जाने पर यह सुगमतासे उसको पहचान लेता है। भीड़ भाड़में यह अपने मालकिको भी नहीं भूलता। पीठका बोझ ज्यादा होनेसे यह नहीं झुकता और बराबर चला करता है। गधेकी बोली कड़ी है। इसी लिये किसी गानेवालेका स्वर कर्कश होनेसे उसको गधा कहा जाता है। साधारणतः लोग गर्दभ-जैसा निर्बोध दूसरा पशु नहीं समझते और इसीसे गंवार आदमीको भी गधा कहा करते हैं। गधेका दूध अपचके लिये बहुत मुफीद है। मांका दूध न मिलने पर गधेका दूध पी पी कर कितने ही बच्चे जी जाग गये है। भारतमें साधारणतः धोबियोंके कपडे ढोनेको गधा काम आता है। यह थोड़ेमें ही थक जाता है। घासपात आदि खा कर ही इसको तृप्ति हो जाती है।

११ मास गर्भ धारण करके गर्दभी सन्तान प्रसव करती है। बच्चा तीन चार सालमें बढ जाता है। गधा २०, २२ या २४ वर्ष तक जीता है। इसका चमडा टिकाऊ है। उससे पार्चमेण्ट, ढोल, जूता, किताबकी तख्ती आदि चीजें बनती हैं। पालू गधेसे जङ्गली गधा अधिक बलिष्ठ होता है। उसका चमड़ा भी कुछ

जापानके दक्षिण भागमें कभी कभी बर्फ गिरती है। परन्तु शीघ्र ही वह गल जाती है। थोड़ा जाड़ा पड़नेसे तापमानयन्त्रका पारा २५ डिग्री नीचे उतरता है और गीष्मकालमें ८८ डिग्री ऊपर चढ़ जाता है। यहां गर्मी की शिद्दत ज्यादा नहीं रहती, क्योंकि दिनमें दक्षिणी और रातमें पूर्वी हवा चला करती है। जापानकी ऋतु अत्यन्त परिवर्तनशील है। बारहो महीने पानी बरसा करता है। वर्षा ऋतुमें अत्यधिक वर्षा होती है और साथ ही खूब आंधी चलती है।

जापान-साम्राज्यके निकटस्थ समुद्रमें जैसा जलस्तम्भ होता है वैसा अन्यत्र कहीं भी नहीं होता। भूमिकम्प और वज्रपतन तो वहांकी दैनिक-घटना है जापानमें ऐसा कोई भी महीना नहीं जाता, जिसमें भूकम्प न होता हो। भूकम्प अपेक्षाकृत अधिक समय तक ठहरता है और बहुत अनिष्ट करता है। जमीन हिलनेसे आलोक-मञ्च तक गिर पड़ता है। इसलिए वैज्ञानिक उपायसे आलोकमञ्च इस प्रकार लगाया जाता है कि सब कुछ हिलने पर भी वह ज्योंका त्यों बना रहता है। जापानियोंको भूकम्पके जोरसे शरीरके सम्हालनेकी तरकीब बाध्य हो कर सीखनी पड़ती है कारण उसमें चोट लगनेका डर रहता है। पहली हिलोरमें ही घरसे बाहर निकल आते हैं। यदि उस समय किसो खास सबबसे ऐसा न कर सकें, तो छोटे छोटे बच्चोंके सिवा नौजवान और बुड्ढे लोग एक एक बालिदा मस्तक पर रख धीरे धीरे पासके शून्य स्थानमें पहुंचते हैं और उसे जमीन पर पटक कर उसके बीचमें बैठ जाते हैं। पहले जापानियोंका विश्वास था कि पृथिवीके नीचे कोई बड़ी तिमि है। उसके हिलते ही जमीन हिलने लगती है और जहां वैसा नहीं होता, वहां देवताओंका विशेष अनुग्रह है।

जापानमें आग्नेयगिरियोंकी संख्या अधिक होनेके कारण ही जल्दी जल्दी भूकम्प हुआ करता है। सिकुफिन शहरमें पहले कोयलेकी एक खान थी। कर्मचारियोंकी असावधानीसे एक दिन अचानक उसमें आग लग गई। उस दिनसे बराबर उसमें आग भभका करती है। 'फिसी' नामक पर्वतसे दुर्गन्धमय काला धुआँ निकलता है। 'उनसेन' पहाड़ भी सर्वदा धूआँ छोड़ता रहता है। यह इतनी बदबू फैलाता है कि चिड़िया तक उसके पास नहीं फटकती। वर्षा होनेके समय यह पहाड़ बहुत खतरनाक है। मालूम होता है, मानो सारा पहाड़ आगमें झुलस रहा है। इस पहाड़के पास एक स्नानकुण्ड है। इस उष्ण प्रस्रवणमें नहानेसे उपदंशकी प्राय: सब पीड़ा जाती रहती है।

उस झरनेमें नहानेसे पहले 'ओबामा' प्रस्रवणमें नहाना पड़ता है। स्नान करनेके बाद गरम चीज खा कर गरम कपड़ा ओढ़ सो जाना चाहिए, जिससे पसीना निकलने लगे।

जापानमे आलू, कद्दवा, मूली, तरबूज, तरह तरह-की खाने लायक सब्जी और घास वगैरह बहुत ज्यादा उपजती हैं। सन, ऊन, रूई, शहतूत, ओक, देवदारु आदिकी भी काफी उपज होती है। नीबू, नारङ्गी, अंगूर, दाड़िम, अखरोट, अमरूद, पिच, चेरी आदि सुस्वादु फल भी अधिक पाये जाते हैं। जापानी चायकी खेती अच्छी तरह करते हैं। प्राय: देखा जाता है कि परती जमीन तथा धानके खेतोंके चारों तरफ चायके खेत हैं। जापा-नियोंके घर पर किसी बन्धुके आते वा जाते समय वे उसे चाय पिलाते हैं।

जापानमें चायकी उपज होने पर भी चीनदेशसे ज्यादा नहीं होती। यहांकी चाय अन्य देशोंमें नहीं जाती। जापानमें शहतूत बहुत ज्यादा उपजता है और उससे तरह तरहके ऊनी कपड़े बनाये जाते हैं। यहां एक प्रकारका वारनिशका वृक्ष पाया जाता है जिससे दूधकी नाईं एक प्रकारका सफेद रस निकलता है। इस रससे वे अनेक तरहके पात्रोंमें पालिश करते हैं। जापान-का कोई भी व्यक्ति वारनिशके काम करनेमें लजाता नहीं। दरिद्र वा भिक्षुकसे ले कर अत्यन्त धनी सम्राट् तक वारनिशका काम करते हैं। सम्राट्के प्रासादमें सोने और चांदीके पात्रकी अपेक्षा जापानी वारनिशसे पालिश किये हुये पात्रोंका ही अधिक आदर है। कृषि-कार्यका भी यहां यथेष्ट समादर है। कृषि-कार्यमें उत्साह बढ़ानेके लिये सम्राट्की ओरसे ऐसा आदेश था कि 'जो मनुष्य परती जमीनमें खेती करेगा दो वर्ष तक उस जमीनकी समूची फसल उसी मनुष्यकी होगी और जो मनुष्य

यार भी रहता है। कायरो नगरकी बड़ी सड़क पर गधोंको किराये पर देनेके लिये जीन और लगाम लगा करके तैयार रखते हैं। किरायेदार गधे पर चढ़ता और गधेवाला उसको पीछेसे हांकते चलता और सामने लोगोंको हटानेके लिये चिल्लाया करता है। मुसलमान हाजी गधे पर चढ़के मक्का पहुंचते हैं। न्यूबिया देशके बड़े बड़े महाजन गधे पर चढ़ मिसर देशको जाते हैं। राहमें लगभग २ महीने लगते हैं। गधा इतने दिन चल करके भी नहीं थकता। अमेरिकामें पहले गधा न रहा, स्पेनके लोगोंने भेज दिया। आजकल वहां वंशवृद्धि होनेसे कितने ही गधे देख पड़ते हैं। वह जगह जगह झुण्ड बांध करके घूमते हैं। फन्दा डाल करके उन्हें पकड़ना पड़ता है।

पालू गधेका मांस कड़ा होता है। खानेमें अच्छा न लगते भी बहुतसे लोग उसे खा जाते हैं। गालेन साहब-के मतमें वह मांस खानेसे बीमारी हो सकती है। यूनानी पहले गधेके दूधसे बहुतसी दवाइयां बनाते थे। परन्तु अब उसकी कमी पड़ गयी है। मोटी छोटी अच्छी गधीका ही दूध, जो हालको ब्याई हो और उठी न रहे, सबसे अच्छा होता है। उसको बच्चेसे अलग दाना घास खिला करके रखना पड़ता है। ऐसी गधीका दूध बीमारके लिये बहुत अच्छा है। यह दूध ठण्डा पड़ने और हवा लगनेसे बिगड़ जाता है। गधेका दूध दवाईमें लगने-जैसा लोगों-को जो विश्वास रहा, आजकल उठ गया है।

युरोपके आल्पस पहाड़से उतरते समय गधा जो होशियारी दिखलाता, लोगोंको अचम्भा आ जाता है। पहाड़ पर चढ़नेको राह बहुत डरावनी है। एक ओर ऊंचा और दूसरी ओर खूब गहरा है। कहीं चढ़ाव और कहीं उतार है। सिवा गधेके वहां दूसरा कोई चौपाया उतर नहीं सकता। उतरते समय गधा थोड़ी देर ठहर करके खड़े खड़े देखा करता है—किस तरह कहांसे उतरूंगा। उस मौके पर सवारके हजार बार मारते भी गधा नहीं सरकता, सिर्फ उसी गहरे गड्ढेकी तरफ देखा करता है। डरसे कांप करके बीच बीच वह रेंकने भी लगता है। जब वह उतरना आरम्भ करता, सामनेके पैर इस तौरसे रखता—मालूम पड़ता—मानो खड़ा होने चाहता है। फिर पीछेके पैर साथ साथ ला करके वह सामनेके पैर सामने फैलाता है। इसी हालतमें रह करके गधा एक बार नीचेको देखता है। फिर वह जल्द जल्द नीचे उतरने लगता है। उस वक्त सवार लगाम ढील देता है। लगाम खींचनेसे एकाएक उसकी चाल रुक जाती है। उसमें गधा और सवार दोनो नीचे गिर करके मर सकते हैं। सवार लगामको निकाल जीनसे अपनी कमर बांध लेता है। ऐसी पहाड़ी राहमें गधेको उतरते देख चौकन्ना होना पड़ता है।

गधेके बारेमें कितनी ही अनोखी बातें सुन पड़ती हैं। १८१६ ई०को कप्तान उग्डास माल्टा उपद्वीपमें रहे। उनके लिये जिब्राल्टरसे एक गधा खरीद जहाज पर चढ़ा करके माल्टा लिये जाते थे। समुद्रकी ऊंची लहरोंमें जहाज किसी रेतसे जा करके भिड़ गया। वहां-से किनारा बहुत दूर न था। जहाजके लोगोंने गधेको यह देखनेके लिये पानीमें धकेल दिया, वह तैर करके किनारे पहुंच सकता है या नहीं। सबने सोचा कि गधा वहीं मरा था। परन्तु गधा मजेमें किनारे पहुंच उसीके पास जा करके खड़ा हुआ, जिससे वह खरीदा गया था। किनारेसे वह जगह एक कोस दूर होगी। उस राहसे गधा कभी चला न था।

कायरो नगरके भी एक गधेकी बात कही जाती है। वह नाचता और बहुतसे तमाशे करता था। जब उससे कहा जाता कि सुलतान उसे घर बनानेको सुर्खी और ईंट लेने भेजेंगे, वह पैर उठा आंख मूंद करके मुर्देकी तरह जमीन पर पड़ रहता था। परन्तु जब वह सुलतान-के अपने ऊपर चढ़के कोई जलसा देखनेकी ओर खूब खिलाये जानेकी बात सुनता, खुशीसे नाचने लगता था। यह कहने पर कि उसे उस बदमाश औरतको ले जाना पड़ेगा, वह लड़खड़ाने लगता था। बहुतसी स्त्रियां इकट्ठी

मूंगा, पत्थर आदि जापानके समुद्रमें पाये जाते हैं। एक प्रकारका बड़ा सीप भी पाया जाता है जिसमें डांडी लगाकर चमचा बनाते हैं।

जापानमें सोना, चांदी, तांबा, लोहा और टीन उत्पन्न होती है, किन्तु तांबा ही अधिक परिमाणमें पाया जाता है। सम्राट्की सम्मतिके बिना सोनेको खान नहीं खोदी जा सकती। जिस प्रदेशमें सोनेकी खान आविष्कृत होती है, उस प्रदेशके शासनकर्त्ता इसका कुछ अंश सम्राट्को देते हैं और शेष अपने दखलमें रखते हैं। बहुत वर्ष व्यतीत हुए, एक पर्वतके गिर जानेसे एक सोनेकी खान निकली है। पहले जापानी अत्यन्त असभ्य थे, कोई एक सोनेकी खान खोदते समय दृष्टि हो जानेके कारण उन्होंने इसे ईश्वरका अनभिप्रेत समझ कर खानका खोदना छोड़ दिया था। किसी प्रदेश की टीन, चांदीसी सफेद होती है। जापानके लोग लोहे को बहुमूल्य समझ कर अस्त्रशस्त्र और बरतन आदि तांबेके बनाते हैं। यहां एक प्रकारकी सुन्दर मट्टी पायी जाती जिसे 'चीना मट्टी' कहते हैं। इस मट्टीसे अच्छे अच्छे बरतन तैयार होते हैं।

जापानके नगर और ग्रामोंमें बहुत मनुष्योंका वास है। यहांके छोटे छोटे शहरोंमें भी ५०० घर बसते हैं और बड़े शहरमें २००० से अधिक घर हैं। यहांके प्राय: सभी मकान दुमंजले हैं और प्रत्येकमें बहुत मनुष्योंका वास है।

जापान-साम्राज्यका 'किउसिउ' द्वीप अत्यन्त उर्वरा है और वहां कई जगह खेती होती है।

'निफन'का थोड़ा ही भाग अनुर्वर है। यहांका शिल्पकार्य अत्यन्त उत्कृष्ट है। सिमनसेकि, ओसाका, मियाको, कीयानो और जेडो ये निफनके प्रधान शहर हैं। ओसाका वाणिज्यका प्रधान स्थान है। यहां बहुत-सी नदियां प्रवाहित हैं और प्रत्येक नदीके ऊपर अच्छे अच्छे पुल बंधे हैं। इस शहरकी सड़कें ज्यादा चौड़ी नहीं हैं, किन्तु हमेशा साफ रहती हैं। यहांके घर भी काठके हैं और उसमें चूने और मिट्टीका लेप है। यहांके लोग अधिक धनी हैं। जापानी ओसाका शहरको प्रमोद भवन मानते हैं। इस शहरके पास ही एक स्थानमें चावलसे एक प्रकारकी अच्छी शराब बनाई जाती है, जिसका नाम 'साकि' रखा गया है। मियाको शहरमें प्रधान धर्मयाजक रहते हैं, जो साधारणतः 'दैरि' नामसे ख्यात हैं। इस शहरके पश्चिम भागमें पत्थरका बना हुआ एक प्राचीन दुर्ग है। दैदसुसे जापानी एक प्रकारकी शराब तैयार करते जिसे "सय" कहते हैं।

जापानमें तरह तरहके उद्भिद् और फूल देखे जाते हैं; जो देखनेमें अत्यन्त मनोहर हैं। ओसाका शहरमें भिन्न भिन्न प्रकारके फल मिलते हैं। उद्यान और धर्ममन्दिरके चारों ओर बहुत यत्नसे फूलके पौधे रोपे जाते हैं।

जापानी चरित्रका वैशिष्ट्य—जापानियोंके जोड़की खुशदिल जाति दुनियांमें दूसरी नहीं है। पृथिवीमें सर्वत्र ही ये अपनी हंसीको मुंहमें लिए फिरते हैं। जीवनके छोटे छोटे आघात उनके धैर्यको नष्ट नहीं कर सकते। हां, इतना अवश्य है कि किशोर जब पहले पहल यौवनमें पदार्पण करता है तब उसके हृदयमें सामयिक दुःखका कुछ अधिकार हो जाता है; किन्तु वह अधिक समय तक ठहर नहीं सकता, शीघ्र ही अपना रास्ता पकड़ता है। वे यह समझ कर कि, जीवनकी समस्याओंकी कोई पूर्ति नहीं कर सकता, निश्चिन्तचित्तसे अपना जीवन बिताते हैं।

उच्च विद्याशिक्षा और अपने जीवन निर्वाहके लिए अधिकांश जापानी युवक कायिक परिश्रम द्वारा अर्थ उपार्जन करते हैं। इनका धैर्य असाधारण है—किसी भी कार्यसे ये विरक्त नहीं होते। परन्तु यदि इन्हें हदसे ज्यादा तंग किया जाय, तो ये बहुत खफा हो जाते हैं; फिर इनको शान्त करना कठिन हो जाता है। ये लोग अपने देशके लिए सर्वस्व लुटा सकते हैं—जीवन तक दे सकते हैं। यूरोपके स्टोइक नामक प्राचीन दार्शनिक जिस प्रकार अविचलितचित्तसे सब कष्टोंको सहते थे, जापानी भी उसी प्रकार कष्टोंको सह लेते हैं।

जापानी लोग इस तरह पेश आते हैं कि विदेशी लोग सहज ही उन पर मुग्ध हो जाते हैं। इन लोगोंकी सभ्यताका सर्वप्रधान आदर्श यह है, कि ये अपना दुखड़ा रो कर किसीके हृदय पर भार नहीं लादते।

गर्दभाण्डक (सं॰ पु॰) गर्दभाण्ड स्वार्थे कन्। गर्दभाण्ड-वृक्ष, पाकरका पेड़।

गर्दभाह्वय (सं॰ पु॰) गर्दभ आह्वय आख्या यस्य। कुमुद-विशेष, एक प्रकारकी कुईं।

गर्दभि (सं॰ पु॰) विश्वामित्रका एक पुत्र।

(महाभारत १३।४।५६)

गर्दभिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्ररोगविशेष। इस रोगमें वात-पित्तके विकारसे गोल ऊंची फुंसियाँ निकलती हैं। इन फुंसियोंका रंग लाल होता है और इनमें बहुत पीड़ा होती है। पैत्तिक विसर्प रोगकी नांई विवृता, इन्द्रवृद्धा, गर्दभी और जालगर्दभ इन सब रोगोंकी चिकित्सा करनी चाहिये। पाककालमें पाक किये हुए घृत और पञ्च मधुके औषधसे इसे शुष्क करनेका विधान है। (भावप्रकाश)

गर्दभिल्ल—गुजरातके अन्तर्गत वलभीपुरके एक राजा। जैनग्रन्थके मतसे ये ५२३ सम्वत्में राज्य करते थे।

गर्दभी (सं॰ स्त्री॰) १ कीटविशेष।

"पद्मालक' पाकमत्स्य' कृष्णतुण्डी च गर्दभी।" (सुश्रुत)

२ अपराजिता नामकी लता। ३ श्वेत कण्टकारी, सफेद भटकटैया। ४ कटभी, गर्दभिका नामक रोग।

"सा विद्या वातपित्ताभ्यां तासामेव च गर्दभी।

मण्डला विपुलोत्सन्ना सराग पिड़काचिता॥" (वाग्भट उत्तरस्थान ३१ अ॰)

६ गर्दभपत्नी, गदही। इसके दूधका गुण बलकारक, वातश्वासनाशक, मधुराम्लरसविशिष्ट, रूक्ष, दीपन और पथ्य है। दधिका गुण—रूक्ष, उष्ण, लघु, दीपन, पाचन, मधुराम्लविशिष्ट, रुचिकारक और वातदोषनाशक है। मक्खनका गुण—कषाय, कफवातनाशक, बलकर, दीपन, उष्ण और मूत्रदोषनाशक है। (राजनि॰)

गर्दाबाद (फा॰ वि॰) १ जो धूल या राखसे भरा हो। २ ध्वस्त, उजाड़। ३ बेसुध, बेहोश।

गर्दालू (फा॰ पु॰) आलू बुखारा।

गर्दिश (फा॰ स्त्री॰) १ घुमाव, चक्कर। २ विपत्ति, आपत्ति।

गर्दोख—भारतवर्षके उत्तरमें एक राज्य। यह अक्षा॰ ३१° ४०' उ॰ और देशा॰ ८०° २५' पू॰में सिन्धु और शतद्रु नदीके उत्पत्तिस्थान पर अवस्थित है। गर्दोखसे तिब्बतके ल्हासा पर्यन्त एक रास्ता गया है। १८२६ ई॰को चम्पा जातिने इसे जय किया था, किन्तु थोड़े वर्षोंके बाद यह महाराज गुलाबसिंहके अधिकारमें आ गया। यहां पर दुशाले बुननेको पशम बेची जाती है।

गर्द्ध (सं॰ पु॰) गर्द्धते इति गृध भावे घञ्। १ स्पृहा, लोभ। २ गर्दभाण्डवृक्ष, पाकरका पेड़।

गर्द्धन (सं॰ त्रि॰) गृध्यति गृध-युच्। लुब्ध, लोभी, लालची।

गर्द्धभि (सं॰ पु॰) विश्वामित्रके एक पुत्रका नाम।

(महाभारत १३।४।५८)

गर्द्धित (सं॰ त्रि॰) गर्द्धो जातोऽस्य, तारकादित्वात् इतच्। लुब्ध, लोभी।

गर्द्धिन् (सं॰ त्रि॰) गर्द्धोऽस्यास्तीति गर्द्ध-णिनि। अत्यन्त लोभी। "नवाह्नाभिषगर्द्धिनः।" (मनु ४।२८)

गर्नाल (हि॰ स्त्री॰) गरनाल देखो।

गर्भ (सं॰ पु॰) गीर्यते इति, गृ-भन्। "अर्त्तिगृभ्यां भन्। उण् ३।१५२।

१ भ्रूण, देहजन्मकारक शुक्रशोणितसंयोगजन्य मांस-पिण्ड, हमल। २ शिशु, बच्चा। ३ कुक्षि, कोख। ४ पनस, कण्टक, कांटाल। ५ नाटकका सन्धिभेद। ६ अभर्टह, सोअर। ७ उदर, पेट। ८ अभ्यन्तर, भीतरी हिस्सा। ९ नदीका कोई अन्तर्भाग, दरयाका कोई भीतरी हिस्सा। भाद्रकृष्णा चतुर्दशीको जितना पानी चढ़ आता, नदीगर्भ कह लाता है। १० अन्न। ११ अग्नि। १२ पुत्र।

गर्भाशयके शुक्रशोणितका नाम जीव है। विकार विशिष्ट प्रकृति प्रभृति समस्तको ही गर्भ कहा जाता है। कालवश जब अङ्गों और उपाङ्गोंके साथ गर्भ बढ़ता, मुनि-गण उसको शरीरी-जैसा निर्देश करता है। जब स्त्री और पुरुष परस्पर संयोगकामी हो शुक्र त्याग करते, अस्थि-शून्य गर्भ उत्पन्न होता है। जो स्त्री ऋतुस्नाता हो स्वप्नमें मैथुन करती, उसका ऋतुशोणित वायुयोगसे कुक्षिमें जा करके गर्भ बनता और महीने महीने बढ़ता है। क्रमशः वह इन्द्रिय आदि पैत्रिक गुणवर्जित हो करके निकलता है।

विगुण वायुसे गर्भ भग्न हो करके संख्या अतिक्रम पूर्वक बहुत प्रकारसे विभक्त हो योनिमें पहुंचता है। कोई गर्भ

सम्राट् जिम्मूके बाद ५६० वर्ष तकका इतिहास विशेष उल्लेखयोग्य नहीं है। इस वंशके दशम सम्राट् 'सुजिन तेन्नों'ने ९७से ३० खृष्ट पूर्वाब्द तक राज्य किया था। इन्हीं के समयमें जापानके साथ 'कोरिया' का सम्बन्ध स्थापित हुआ था। कोरियाके अधिवासियों द्वारा जब 'करक राज्यके लोग बहुत तंग होने लगे, तब उन्होंने सूजिनसे सहायता मांगो। इन्होंने ३३ खृष्टीय पूर्वाब्दमें 'करक' अधिकार कर लिया; तबसे यह राज्य जापानके अन्तर्भुक्त हो है। उस समय सम्राट्ने आदिम अधिवासियों को दमन किया था। पीछे ईसाकी २य शताब्दीमें कोरिया सम्राज्ञो 'जिङ्गो'के अधीन जापान द्वारा आक्रान्त हुआ था।

ग्यारहवें सम्राट् 'सुइनिन'ने (२९ खृष्ट पूर्वाब्दसे ७० खृष्टाब्द पर्यन्त) एक भीषण कुप्रथाको उठा कर इतिहासमें अच्छी प्रतिष्ठा पाई है। पहले, सम्राट्की मृत्यु होने पर उनके साथ कुछ जीवित भृतोंको गाड़ दिया जाता था। इसका उद्देश यह था कि 'परलोकमें भी सम्राट्की वे सेवा करते रहेंगे।' सुइनिनने इस कुसंस्कारके विरुद्ध घोषणा कर दी, कि "मेरे बाद और कोई भी सम्राट् इस प्रकारका नृशंस कार्य न कर सकेगा।"

कोरियाका वृत्तान्त पढ़नेसे मालूम होता है कि ईस.की ३री शताब्दीमें प्रायः जापानके साथ उसका विवाद हुआ करता था और उसमें जापानकी ही जय होती थी। जापानके विरुद्ध कोरियाके बहुत बार विद्रोह उपस्थित करने पर भी साधारणतः ६६८ ई० तक जापानने कोरिया पर अपना अधिकार अक्षुण्ण रक्खा था। कोरिया विजय जापानके इतिहासमें एक प्रयोजनीय घटना है, क्योंकि जापान और चीनके संसर्गमें यही कारण है।

जापानमें चीनकी लेखनप्रणाली और साहित्य कोरियाके भीतर हो कर हो आया था। चीनके प्रभावसे जापानकी अधिक उन्नति हुई थी। चीन देशसे जुलाहों और दरजियोंने आ कर जापानियोंको शिल्प-विद्याकी शिक्षा दी थी। कहा जाता है कि सम्राट् 'जुरियाकी'ने (४५७—४७९ ई०) चीनके दक्षिणभागमें दूत भेजा था और वहांसे शिल्पियोंको बुलाया था। जापानकी सम्राज्ञी शिल्पकार्यमें उत्साह बढ़ानेके लिए स्वयं रेशमके कीड़े पालती थीं।

४६६ ई०में 'मिकिडो-जुरयाकू' ने 'सिरागी' पर आक्रमण किया था, किन्तु इसमें वे विशेष कृतकार्य न हो सके। ६६० ई०में चीनके 'टाङ्'-वंशीय सम्राट् 'काओ साङ्'ने जापानके द्वारा रक्षित 'कुदारा' राज्य पर धावा करनेके लिए जलपथसे बहुतसी सेना भेजी थी। जापानियोंने 'कुदारा' राज्यकी सहायताके लिए वहां जा कर चीनकी सेनाको भगा दिया। परन्तु ६६२ ई०में चीनोंने जापानियोंको परास्त कर 'कुदारा' और 'कोमा' जीत लिया। इस समयसे ई०की १६वीं शताब्दी तक नाना कारणोंसे जापानियोंसे कोरिया पर हस्तक्षेप नहीं किया।

६५२ ई०में जापानकी शासन-प्रणालीका (चीनदेशके अनुकरणसे) संस्कार हुआ। ७०१ ई०में 'तैहो' नामक आईनकी किताब प्रचारित हुई और उसके सात वर्ष बाद 'नारा' नामक स्थानमें नवीन राजधानी स्थापित हुई। इसी समय जापानकी कला और साहित्यने विशेष उन्नति की थी। 'नारा' नगरमें बुद्धदेवकी मूर्ति इसी समय बनी था। जापानमें इतिहास लिखनेका सूत्रपात भी इसी समय हुआ था। ७९४ ई०में राजधानी नारासे पुनः 'कोयटा' लाई गई। राजधानीके इस परिवर्तनके बादसे ही जापान-साम्राज्यकी अवनति होने लगी।

प्रथम युगमें जापानकी सभ्यताने चीनसे बहुत कुछ ऋण लिया था। जापानमें बौद्धधर्म, चित्रविद्या, स्थापत्यविद्या आदिका प्रचार चीनसे ही हुआ था। चीनोंके दर्शनशास्त्रोंका अध्ययन करते रहनेसे जापानियोंके चरित्रमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया था। 'कनफुची' नामक चीनदेशीय धर्मप्रवर्तकके धर्ममें जो पाँच वैशिष्ट्य हैं, उनको जापानियोंने अपने चरित्रमें प्राप्त कर लिया था। वे वैशिष्ट्य ये हैं—(१) राजभक्ति, (२) पितृभक्ति, (३) संयम, (४) भ्रातृभाव और (५) विश्वमैत्री। इस विषयमें जापानके सुप्रसिद्ध अध्यापक Inouye Testsu Jiroका कहना है कि "चीनके महर्षिकी शिक्षा जापानमें इतनी अधिक विस्तृत और बद्धमूल है कि उसे जापानी सभ्यताका आदि कहा जा सकता है। इसके सिवा हमें यह भी न भूलना चाहिये कि

उसके नीचे दो प्रकोष्ठ, फिर पहुंचा, दो हथेलिया, दो हाथ, दोनो हाथोंकी १० उंगलियं और उसमें १० नख होते हैं। चोथा अङ्ग वक्षःस्थल है। उसका उपाङ्ग दो स्तन हैं। पुरुषोसे स्त्रियोंके दोनों स्तनोंमें प्रभेद पडता है। जवानीमें स्त्रियोंके दोनो स्तन उठ आते हैं। गर्भवती और प्रसूतिके दोनों स्तनोंमें दूध भर जाता है। हृदय कमलकी तरह और नीचेकी मुंह किये हुए अवस्थित है। जागते रहनेसे वह खिलता और सो जानेसे सिकूडता है। यही हृत्पद्म जीवात्मा और चेतनाका स्थान है। इसीसे उसके तमोगुणसे भर जाने पर प्राणी सोया करते हैं। उसके बाद दो कोखें, छातीके दो जोड और दो हंसलिया और उसके बाद वंक्षण (चढ़ा) है। पेट पाचवां और दोनों बगलें छठा अङ्ग हैं। रीढ़के साथ सभी पीठ सातवां अङ्ग है। उसका उपाङ्ग प्लीहा ठहरती, जो खूनसे उपजती और हृदयके अधोभागमें बाईं ओर रहती है। ऋषि लोग उसको रक्तवाही शिरासमूहकी जड कहा करते हैं। हृदयके अधोभागमें बाईं ओरको फिफडा है। वह खूनके भागसे पैदा होता है। उसके बाद हृदयकी दक्षिण ओरके लहूसे उत्पन्न यकृत् अवस्थित है। वह रक्त और पित्तकी जगह है। उसके नीचे हृदयकी दाहनी ओर क्लोम (तलखा) है। वह जलवाही शिराको ज॰ ठहरता और प्यासकी रोक रखता है। उसकी उत्पत्ति वातरक्तसे है। मेद और शोणितके सारसे दोनो वृक्क बनते हैं। आयुर्वेदवित् पण्डित पुरुषोकी आंत साढ़े ३ व्याम (चार हाथका एक माप) और स्त्रियोकी तीन व्याम परिमित बतलाते हैं। फिर, उण्डक अर्थात् फिफडोंको ढांकनेवाली झिल्ली है। उसके बाद यथाक्रम कमर, त्रिक् (रीढके नीचेको जगह), वस्ति और दो वंक्षण आते हैं। वस्तिदेश (पेडू) से बडी बड़ी नसें निकलीं हैं और वह वीर्य तथा मूत्रस्थान भी है। स्त्रियोंकी योनि शङ्खनाभिको तरह तीन आवर्तविशिष्ट होती है। इसी योनि द्वारा स्त्रियोंके पेटमें गर्भाधान लगता है। योनिकी तीसरी लपेटमें गर्भ रहता है। दोनो अण्डकोष कफ, रक्त तथा मेदके सारसे उत्पन्न हैं। यही दोनों अण्ड वीर्यवाही शिराका आधार हैं, इन्हींमें पुरुषत्व प्रतिष्ठित है। गुह्यका परिमाण साढ़े ४ अङ्गुल है। उसमें शङ्खावर्तकी तरह ३ वलय पड़े हुए हैं। इनमें पहलेका नाम प्रवाहिनी है। उसकी नाप डेढ अङ्गुल होती है। उसके नीचे डेढ़ हो अङ्गुलको उत्सर्जनी है। उसके निम्नभागमें एक अंगुलकी सम्वरणी रहती है। गुह्यदेशका मुंह आध अङ्गुल पड़ता और मलत्यागका पथ ठहरता है। पुरुषोंका प्रोथ ही स्त्रियोंका नितम्ब कहलाता है। उसके बाद दो ककुन्दर (कूले) हैं। उसके बाद दो सक्थि आते, जो आठवां अङ्ग कहलाते हैं। इसका उपाङ्ग—दो घुटने और पिंडलियां, दो जांघें, दो घण्टिकाएं, दो पार्ष्णि, दो तलवे और दो पदाग्र हैं।

यह शरीर अपरापर जिन जिन अवयवीभूत कारणोंसे बनता, यह है—वात, पित्त, कफ और धातुसमूह। गर्भ ग्रहणके पीछे ही योनिसे शुक्रशोणित बहता, श्रम मालूम पडता, जाघें सुन्न हो जातीं, प्यास बढ़ती, ग्लानी आती, योनि फड़कती, दोनो स्तनोंका मुंह काला होता, रोंगटे खडे हो जाते, आंखो तथा पलकोके बाल सिकुड़ते, अनिच्छामें वमन उठता, मनोहर गन्धसे जी बिगड़ता, कफ गिरता और अवसाद लगता है। उपर्युक्त सभी चिह्न गर्भिणीके हैं।

बाल, दाढी, मूंछ, रुएं, नख, दाँत, शिरा, धमनी, स्नायु, साद, शुक्र और रक्त पितासे उत्पन्न होता है। फिर मांस, मज्जा, मेद, यकृत्, प्लीहा, अन्त्र, नाभि, हृदय और गुह्यदेशको उत्पत्ति मातासे है। शरीरकी बाढ़, रङ्ग, बल और देहकी स्थिति रससे निकलती है। ज्ञान, विज्ञान, आयुः, सुखदुखः आदि और इन्द्रिय जीवात्माको ही हुआ करते हैं। स्त्रीकी रसवाहिनी नाडीसे गर्भकी नाभि मिल जाती है। इसीसे गर्भ नित्य नित्य बढ़ता है। यही गर्भ माताको निश्वास, उच्छ्वास, संक्षोभ और स्वप्नांश प्राप्त होता है।

गर्भस्थ सन्तानकी नाभिमें ज्योतिःस्थान प्रतिष्ठित है। वायु इसी ज्योतिः द्वारा चालित होता और उसीसे गर्भका देह बढा करता है। वायु उष्माके साथ मिल करके शरीरके जिस जिस स्थानमें पहुंचता, गर्भस्थ सन्तानका वही अङ्ग बढ़ता है। हवाकी कमी और पेटकी थैलीमें हवाके न पहुंचने—दोनो कारणोंसे पेटका बच्चा न तो सांस लेता और न मलमुत्र छोड़ता है।

भेजा। 'सिकेन'के परामर्शसे दूत भगा दिया गया। फिर क्या था, खुबलाईखाँ ३० हजार सेनाके साथ जहाजमें चढ़ कर जापान पहुंच गये। किन्तु 'होजोटोकिमुनि'ने अपने पराक्रमसे उस सेनाको जमीन पर उतरने नहीं दिया। आखिर उन्हें लौटना पड़ा। लौटते समय आँधी चली, जिससे एक जहाज डूब गया। इस घटनाके बाद ही जापानने शत्रुके आक्रमणसे बचनेके लिए 'फाकूता' बन्दर पर कड़ा पहरा लगा दिया। १२८१ ई०में खुबलाईखाँने पुनः जंगी जहाज भेजे, जिसमें एक लाख सेना थी। किन्तु 'होजोटोकिमुनि'ने कौशलसे उन्हें भगा दिया। इसके बाद फिर किसी भी विदेशीने जापान पर आक्रमण नहीं किया। इस युद्धके कारण, जापानका विवरण सबसे पहले पाश्चात्य-जगत्को मालूम हुआ था।

१३३३ ई०में सम्राट् 'गो-दैगोतेन्नो' होजोंके कवलसे अपनी रक्षा कर राष्ट्रीय क्षमताके यथार्थ अधिकारी हुए और 'सोगुन'का पद हमेशाके लिए उठा दिया। किन्तु इसके बाद सम्राट् सिर्फ छ वर्ष ही राज्य कर पाये थे।

ई०की १६वीं शताब्दीके अन्त और १७वीं शताब्दीके प्रारम्भमे जापानियोंने पोर्तुगाल, स्पेन, हलैण्ड और लण्डन आदिके वाणिज्य-जहाजोंको सादर अपने देशमें आने दिया था। इस समय विदेशियोंने जापानको शोषण करनेकी यथेष्ट चेष्टा की थी; तथा जेसुइट नामक रोमन कैथलिक-सम्प्रदायके ईसाई पादरियोंने पोर्तगाल और स्पेनके वणिकोंके साथ जापान पहुंच कर वहां ईसाई धर्मका प्रचार किया था। फलतः जापानमें प्रायः सभी श्रेणीके लोग, जिनकी संख्या १० लाखसे कम न होगी, ईसाई हो गये थे। परन्तु जापानके अधिकारियोंको सन्देह हुआ, कि सम्भव है वे धर्म-प्रचार करते करते राजनैतिक आन्दोलन उठावें और जापानकी स्वतन्त्रता छीन लें। इसलिए वे पादरियोंके विरुद्ध खड़े हुए। रोमनके सम्राट् नेरोकी तरह ये भी ईसाई धर्मके पादरियोंको तङ्ग करने लगे। आखिर पादरियों मार भगाया गया। यहां तक कि, विदेशी वणिकों तकको जापानमें स्थान न दिया गया; सिर्फ ओलन्दाजोंको एक क्षुद्र उपनिवेश स्थापन कर रहनेका अधिकार मिला। ओलन्दाजों पर नानाप्रकार कर लगाये जाने पर भी, जापानके साथ वाणिज्य करके अर्थोपार्जन किया था। जापानियोंने घोषणा कर दी थी कि "अन्य कोई यूरोपीय जाति यदि जापानमें पदार्पण करे, तो उसे मृत्युका दण्ड दिया जायगा।" साथ ही जापानियोंको भी विदेश जानेके लिए मुमानियत थी। मध्ययुगमें जापानियोंने एक वीर-हृदय—साहसी जातिके समान अज्ञात समुद्रोंमें जहाज चलाये थे। चीन, श्याम और तो क्या प्रशान्त महासागर-हो कर मैक्सिको तक पहुंच कर इन्होंने व्यवसाय किया था। किन्तु इस समय उन्हींके अधिकारियोंने उन्हें बाहर जानेके लिए रोक दिया। इतना ही नहीं, बल्कि ५० टनसे ज्यादा माल लादनेवाले जहाजोंका भी बनना बन्द कर दिया गया। विदेशियोंसे विशेष शत्रुता हो जानेके कारण ही, विपद्की आशङ्कासे जापानियोंने अपनेको इस तरह घरमें बन्द कर रक्खा था। यही कारण है, कि विदेशीय ऐतिहासिक जापानियोंकी विशेष निन्दा किया करते हैं। किन्तु हमसे-भारतवासियोंसे यह छिपा नहीं है कि विदेशियोंका आगमन कभी कभी कैसा भीषण रूप धारण करता है और अतिथिसत्कारके बदले जातिको कैसा कठोर प्रायश्चित्त करना पड़ता है। सुतरां हम तो यही कहेंगे कि जापानियोंने उस समय बड़ी बुद्धिमानीका कार्य किया था, नहीं तो आज उनकी भी भारतवासियोंकी भांति शोचनीय दुर्दशा होती।

२२० वर्ष तक जापानियोंने बहिर्जगत्से कुछ भी सम्बन्ध न रक्खा था। इस बीचमें जापानको निज उच्च सामाजिक सभ्यता, कला और साहित्यका विकाश हुआ था और उसीमें वह सन्तुष्ट भी था। उस समय यूरोपने शिल्प-वाणिज्य, राजनीति और युद्धविद्याकी असाधारण उन्नति की थी, किन्तु जापानने उसका अनुसन्धान करना आवश्यकीय समझा।

आठवें 'सोगुन' जोशी मुनि'के शासनकाल (१७१६—१७४५ ई०)-में जापानकी नाना प्रकारसे उन्नति हुई थी। इन्होंने फिजूल-खर्चीको हटा कर मितव्ययिताकी स्थापना की थी। इसके सिवा जमीनको उपजाऊ बनानेके लिए भी इन्होंने काफी कोशिश की थी।

असम्पूर्ण लगना और सूर्यका आग-जैसा पिङ्गल तथा ताम्रवर्ण लगना शुभदायक है। यदि वैशाख मासको बादल आये, हवा चले, पानी बरसे और बिजली चमके, तो वह गर्भ हितकर होता है। मोती, चांदी, तमाल, नीलोत्पल अथवा अञ्जन-जैसे द्युतिमान् वा जलचर प्राणियोंका आकार रखनेवाले सभी बादल बहुत पानी बरसाते हैं फिर गर्भ सूर्यके खूब तीखे किरणोंमें तपने और घामी छाया चलनेसे प्रसवके समय मानो क्रुद्ध हो करके बरसा करता है। वज्रपात, उल्का, पांशु वर्षण, दिग्दाह, भूमिकम्प, गन्धर्व नगर, कीलक, केतु, ग्रहयुद्ध, निर्घात, रुधिरादि वृष्टि, परिघ, इन्द्रधनु तथा राहुदर्शन और तीन प्रकारके अन्य उत्पातोंसे गर्भ नष्ट हो जाता है। ऋतुस्वभावजात सामान्य लक्षणमें गर्भ बढनेसे विपरीत लक्षणमें उसका विपर्यय पड़ता है। सभी ऋतुओंको पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और रोहिणी नक्षत्रमें गर्भ होनेसे बहुत पानी बरसता है। शतभिषा, अश्लेषा, आर्द्रा, स्वाति और मघाका गर्भ शुभदायक रहता और बहुत दिन तक जलवृष्टि किया करता है। परन्तु यह त्रिविध उत्पातसे आहत होने पर गर्भ बिगाड़ देते हैं। जब चन्द्र इन ५ नक्षत्रोंमें किसी पर रहता, अगहनसे वैशाख तक ६ महीने यथाक्रम ८, १६, २४, २० और २४ दिन अविराम वर्षण पड़ता है। चन्द्र वा सूर्य क्रूरग्रहयुक्त होनेसे गर्भ-सकल करका, अशनि और मत्स्य वर्षण करता, परन्तु शुभग्रहयुक्त अथवा शुभग्रह कर्तृक दृष्ट होने पर वही गर्भ बहुत बरसता है। गर्भकालको अकारण अतिवृष्टि होनेसे गर्भ बिगड़ जाता है। द्रोणांशके अधिक बरसनेसे भी गर्भ नष्ट होता है। गर्भ पुष्ट होते भी यदि ग्रहके उपघात आदिसे पानी नहीं पड़ता, तो प्रसवकालको वह अपना करकामिश्र जलप्रदान करता है। जिस प्रकार गायोंका बहुत देर तक रखा हुआ दूध गाढ़ा पड़ जाता, बहुत दिन बीतने पर पानी भी कड़ा दिखलाता है। पांच प्रकारके निमित्तोंसे परिपुष्ट होनेवाला गर्भ ही चार सौ कोस तक बरसता है। इन सब निमित्तोंमें एक एकके अभावसे शतयोजनको आधी हानि हो करके वृष्टि पड़ती है। जिस गर्भमें पवन, जल, विद्युत् गर्जन और मेघ पांचों निमित्त रहते, उनमें अधिक वृष्टि होती है (बृहत्संहिता २१ अ०)

गर्भक (सं० क्ली०) गर्भ संज्ञायां कन्। १ रजनीद्वय, दो रात। (पु०) गर्भे केशमध्ये तिष्ठतीति संज्ञायां कन्। २ केशमध्यस्थ माल्य, वह माला जिसे स्त्रियां अपनी चोटी या जूड़ेमें पहनती हैं।

गर्भकर (सं० पु०) गर्भं करोति सेवनेन दोषं निवार्येति। १ पुत्रजीववृक्ष, पतजिव। (त्रि०) गर्भं करोतीति कृ-ट। २ गर्भकारक।

गर्भकरण (सं० त्रि०) गर्भकारक द्रव्यमात्र।

"यदिन्द्रो रक्षत्रा वेद तद्गर्भं करणं पिब।" (अथर्व० ५।२५।३)

गर्भकार (सं० पु०) गर्भं करोतीति, कृ-खुल। १ गर्भ-कारक, पति। २ साम गानका एक भेद जिसमें वैराजके आदि और अंतमें रथन्तरका गान किया जाय।

गर्भकाल (सं० पु०) गर्भस्य गर्भग्रहणस्य कालः, ६-तत्। १ गर्भाधानका उपयुक्त काल, ऋतुकाल।

"विश्वपति यदि तोय गर्भकाले प्रति भूरि।" (बृहत्संहिता २१।३७)

गर्भकेसर (सं० पु०) बाल जैसे फूलोंके पतले सूत। ये गर्भनालके भीतर होते हैं। इनके साथ परागकेसरके परागका संयोग होनेसे फलों और बीजोंकी पुष्टि होती है।

गर्भकोष (सं० पु०) गर्भस्य कोष आधार इव। गर्भाशय।

"गर्भकोष-परासङ्गो मक्कलोयोमिस इति:।

इत्यात् स्त्रियं मूढगर्भां यथोक्तायाणु पद्रवा।" (सुश्रुत ११ अ०)

गर्भक्लेश (सं० पु०) गर्भजातः क्लेशः, मध्यपदलो०। गर्भ-जनित कष्ट, वह तकलीफ जो हमल रहनेसे होती हो।

"गर्भक्लेशः स्त्रियो मन्ये।" (मार्क० पु० २२।३५)

गर्भचय (सं० पु०) गर्भस्य चयः, ६-तत्। गर्भनाश। हमलकी बरबादी।

"गर्भ चये गर्भास्पन्दनमहामतकुचिता च।" (सुश्रुत १।१२)

गर्भगृह (सं० क्ली०) गर्भ इव गृहम्। १ मकानके बीचकी कोठरी। २ घरका मध्यभाग, आंगन।

"वातायनविमानेषु तथा गर्भगृहेषु च।" (भारत ५।११७ अ०)

३ मंदिरके मध्यको प्रधान कोठरी जिसमें मुख्य प्रतिमा रखी जाती है।

गर्भग्रहण (सं० क्ली०) गर्भस्य ग्रहणम्। गर्भ धारण। (भावप्रकाश)

उससे वहाँके परमाणु धूम्रमय हो जाते थे। यूरोपीयगण रोम, माद्रिद वा लिसवनके राज-ऐश्वर्यसे पराजित होने पर भी, 'सोगुन'की धन-सम्पत्तिको देख कर बड़ा आश्चर्य करते थे। सोगुन'की शासनप्रणालीसे असन्तुष्ट हो कर कुछ सामन्त भीतर भीतर विप्लववादी हो गये थे। किन्तु इनके शासनकालमें देशमें शान्ति रहनेके कारण विद्या-चर्चा और साहित्यकी आलोचना बढ़ गई थी। आठवें सोगुन 'कादा आजूमामारो'के समय (१७१६-१७४५ ई०)में लोग 'कोजिको'के काव्य आदरके साथ पढ़ते थे। 'कोजिको' जापानमें वाल्मीकि वा होमरके समान माने जाते हैं, उनके ग्रन्थमें सम्राट् पर अचला भक्ति रखनेको शिक्षा दी गई है। यूरोपमें मध्ययुगके सामन्त-तन्त्रके समय जैसे रोमके कानूनोंको पढ़ कर लोग राजा पर भक्ति करना सीख गये, वे उसी प्रकार जापानमें भी 'कोजिको'के ग्रन्थ पढ़ कर लोगोंमें राजभक्तिका स्रोत वहने लगा था। ऐतिहासिक आलोचना भी इस समय बढ़ गई थी, जिससे लोगोंने सिद्धान्त किया कि सम्राट्की क्षमता पुन:स्थापित होनी चाहिए।

१७८६ ई०के पहले ही रूसियाने साइविरियाका समग्र भाग अधिकार कर लिया था; अब उसने जापानको उत्तरांशमें अवस्थित ऐजोद्वीप तथा और एक स्थान जीत लिया। इसके सिवा रूसने और भी स्थान जय करनेके लिए दूत भेजे थे। १८०८ ई०में अंग्रेजोंने 'क्यूसिउ' नामक स्थानमें उतर कर 'नागसाको' नामक ग्राम जला दिया था। इस प्रकारके अत्याचारोंके कारण ही 'सोगुनो''ने विदेशियोंका जापानमें जाना बन्द कर दिया था। १८२५ ई०में जब एक दल यूरोपीय वणिक् 'नागसेको'के पास पहुंचे, तो जापानके अधिकारियोंने उन्हें भगा देनेकी घोषणा कर दी।

उस समय जिन जापानियोंने ओलन्दाजो भाषा पढ़ कर उसकी सभ्यता ग्रहण की थी, वे इसका प्रतिवाद करने लगे। वे कहने लगे—"यदि यूरोपियोंसे अपनी रक्षा ही करनी है, तो वह उनसे मिल कर ही हो सकती है।" इस पर जापान-सरकारने उनको दण्डनीति द्वारा दमन करनेकी कोशिश की, किन्तु उनके भावोंका वह दमन न कर सकी। कारण, विदेशियोंका देशमें जितना अधिक प्रवेश होने लगा, जापानियोंको यूरोपीय सभ्यता उतनी ही अधिक पसन्द आने लगी।

१८५३ ई०के जुलाई मासमें चार अमेरिकन जहाज जापानके 'सागामी' प्रदेशके 'उरागा' नामक स्थानमें आ लगे। जहाजोंके अध्यक्षने जापानके साथ वाणिज्य सम्बन्धीय सन्धि करनेके लिए 'सोगुन'के पास आवेदन-पत्र भेजा। 'सोगुन'ने इसके उत्तरमें कहला भेजा कि "एक वर्ष विचार कर उत्तर दिया जायगा।" इसके दो महीने बाद ही एक रूसियाका जहाज 'नागसेको'में आ लगा और उसके अध्यक्षने जारका नाम ले कर जापानसे वाणिज्य सम्बन्धी सन्धि करनेकी प्रार्थना की। किन्तु उनकी प्रार्थना नामंजूर हुई। अन्तमें अमेरिकनोंको जापानके दो निकृष्ट बन्दरोंमें आनेकी आज्ञा मिली। १८५४ ई० १ली मार्चको पैरीके साथ जापानकी सन्धि हुई। इसके कुछ दिन बाद रूसिया इंग्लैण्ड और हलैण्डके साथ भी सन्धि हो गई और उक्त दोनों बन्दरोंमें आनेके लिए उन्हें आज्ञा मिल गई।

उस समय जनसाधारणमें बहुतसे लोग ऐसे थे जो सम्राटके पक्षपाती और विदेशियोंको प्रवेशाधिकार देनेके कारण सोगुनोंके विरोधी थे। अन्तमें वे 'सोगुन'से लड़नेके लिए आमादा हो गये थे।

इसी बीचमें वे सामन्तोंके शासनसे भी असन्तुष्ट हो गये थे। उन लोगोंने 'कियोतो'में जा कर सम्राट्का पक्ष अवलम्बन किया। १८६२ ई०में उन लोगोंने सम्राट्की तरफसे 'सोगुनोंको आह्वान किया तथा विदेशियोंको भगा देने और कुछ नियमोंका संस्कार करनेके लिए उपदेश लिख भेजा। सोगुनोंने इस निमन्त्रणको रक्षा न की। इधर सम्राट्पक्षके लोगोंने अंग्रेज और अमेरिकनोंके दोत्यागार जला दिए। इसतरह विदेशियों पर प्राय: अत्याचार होने लगा। अंग्रेज जब युद्ध करनेके लिए तैयार हुए, तब 'सोगुन'ने बहुतसा धन दे कर उन्हें शान्त कर दिया। 'सोगुन'ने सम्राट्को यह बात समझाई कि विदेशियोंको तंग करनेसे बड़ी भारी आफत आ सकती है, जिससे सम्राट् भी उन्हींके पक्षमें हो गये। १८६५ ई०में उन्होंने १८५८ ई०की सन्धियोंको

गर्भधान (सं० क्ली०) गर्भस्य धानमाधानम्। गर्भाधान। (भारत १।१२७०।११)

गर्भधारण (सं क्ली०) गर्भस्य धारणम्, ६-तत्। गर्भमें सन्तान धारण, गर्भिणी होना। गर्भधारणके चिह्न मिताचरामें इस तरह लिखा है—अनादि लक्षण द्वारा गर्भधारण मालूम किया जा सकता है। जिसे गर्भ रह गया हो उसके श्रम, ग्लानि, पिपासा, अशक्ति, अवसन्नता, शुक्रशोणितका अनुबन्ध और योनिस्फुरण होते हैं। पारस्करका मत है कि यदि स्त्री गर्भधारण न करे तो उपाधान करके निदिग्धिका, सिंही और श्वेतपुष्पके मूल पुष्या नक्षत्रमें उखाड कर ऋतुस्नान करने पर चौथे दिनकी रातको जलसे बांट कर दाहिनो नासिकामें नस लिया जाय तो स्त्रीको गर्भ रह जाता है। आयुर्वेदीय ग्रन्थमें भी लिखा है कि शृङ्गवेर, मरिच, नागकेशर और पीपलको घृतके साथ खाने पर वन्ध्या भी गर्भधारण करती है।

गर्भधि (सं० स्त्री०) गर्भं दधातीति, गर्भ-धा-इन्। गर्भधारिणी, वह औरत जिसके हमल रह गया हो।

गर्भनाड़ी (सं० स्त्री०) गर्भस्य गर्भोत्पादनस्य योग्या नाडी। गर्भधारण करनेको उपयुक्त नाड़ी। (सुश्रुत, शारीर १० अ०)

गर्भनाल (सं० स्त्री०) फूलोंके भीतरकी वह पतली नाल जिसके सिरे पर गर्भकेसर होता है।

गर्भनाश (सं० पु०) गर्भपात।

गर्भनाशना (सं० स्त्री०) अरिष्टकवृक्ष, रीठेका पेड़।

गर्भनिःसृत (सं० त्रि०) गर्भात् निःसृतम्। गर्भसे निर्गत, गर्भसे गिरा हुआ।

गर्भनिस्रव (सं० पु०) वह झिल्ली आदि जो बच्चेके उत्पन्न होने पर पीछेसे निकलती है।

गर्भनुद् (सं० पु०) गर्भं नुदति पातयतीति नुद्-क्विप्। कलिकारीवृक्ष।

गर्भपत्र (सं० पु०) १ गाभा, कोमल पत्ता, कोंपल। २ फूलके अन्दरके पत्ते जिनमें गर्भकेसर रहता है।

गर्भपरिस्रव (सं० पु०) गर्भस्य परिस्रवः चरणयोग्याश:। सन्तान होने पर उसके साथ जो झिल्ली बाहर होती है उसीको गर्भपरिस्रव कहते हैं।

गर्भपाकी (सं० पु०) गर्भस्य पाकी परिणतिः साध्यत्वे नास्त्यस्याः इनि। षष्टिधान, साठी धान।

गर्भपात (सं० पु०) गर्भस्य पातः, ६-तत्। १ गर्भका पांचवें या छठें महीनेमें गिर जाना।

"ततः स्थिरशरीरस्य पात पञ्चमषष्ठयोः॥" (माधव) गर्भस्राव देखो।

२ गर्भका गिरना।

गर्भपातक (सं० पु०) गर्भं पातयतीति पत् णिच् ण्वुल्। रक्तशोभाञ्जनवृक्ष, लाल सोहिंजनका पेड़।

गर्भपातन (सं० पु०) गर्भं पातयतीति, पत-णिच-ल्यु। १ रीठा करञ्ज, बड़ारीठा २ गर्भका नष्ट होना।

गर्भपातिनी (सं० स्त्री०) गर्भं पातयति-पत-णिच् णिनि। १ विशल्यावृक्ष, गुरुच या गिलोयका पेड़। २ कलिकारीवृक्ष, कलिहारीका पेड़।

गर्भपोषण (सं० क्ली०) गर्भस्य पोषणम्, ६-तत्। १ यत्नपूर्वक गर्भ पालन। २ गर्भकी पुष्टिसम्पादक विधि।

गर्भवती स्त्रीको चाहिये कि वह प्रथम दिनसे हृष्ट, पवित्र और अलङ्कृत हो कर शुभ्रवस्त्र परिधानपूर्वक शान्तिकर्म और मङ्गलजनक कार्य करे एवं देवता, ब्राह्मण और गुरुके प्रति श्रद्धान्वित बने। मलिन, विकृत और हीनगात्र कदापि स्पर्श न करना चाहिये। दुर्गन्ध ग्रहण, दूषितद्रव्य दर्शन और उत्तेजक वाक्य परित्याग करे। शुष्क, वासा और क्लेदयुक्त अन्न भोजन करना निषिद्ध है। टहलनेके लिये बाहर जाना, शून्य घरमें रहना, श्मशानमें जाना, वृक्ष पर चढ़ना, क्रोध और भय करना एवं भारवहन तथा उच्चशब्द करना, इन सभीका परित्याग कर्तव्य है। ऐसा तैल कदापि सेवन नहीं करना जिससे गर्भ नष्ट हो। अथवा शरीरको किसी प्रकार कष्ट नहीं देना चाहिये। जो अधिक ऊंचा न हो अथवा जिससे किसी प्रकारकी बाधा न पहुंचे ऐसी शय्या और मृदु आस्तरण व्यवहारमें लाना उत्तम है। तृप्तिजनक, द्रव, मधुर, रसप्रचुर, स्निग्ध, दीपनीय और सुसंस्कृत अन्न भोजन करना चाहिये। ये सब कार्य प्रसवकाल तक कर्तव्य है। विशेषत: गर्भवती स्त्रीको प्रथम, द्वितीय, और तृतीय मासमें प्राय: मधुर और शीतल द्रव्य आहार करना चाहिये। तृतीय मासमें दुग्धके साथ साठी चावलका भात, चतुर्थ मासमें दधिके

आदि द्वारा भी उन्होंने इस नवजाग्रत जातिको काफी सहायता पहुंचाई थी।

नव्य जापानकी उन्नतिके लिए और एक दल खड़ा हुआ जो विदेशागत विशेषज्ञका दल था। ग्रेटब्रिटेनके विशेषज्ञोंने नौ-सेनाके गठनकार्यमें जापानियोंकी काफी सहायता दी थी। अमेरिकाके युक्तराज्यके प्रतिनिधियोंने जापानके डाक और शिक्षाविभागका पाश्चात्यदेशीय नव प्रणालीके अनुसार संगठन किया। भारतमें पहले पहल पादरियोंने जिस प्रकार देशीय भाषामें शिक्षा देनेके लिए उत्साह दिखाया था, उसी तरह जापानमें भी वे शिक्षा-प्रचारके लिए यथेष्ट चेष्टा करने लगे।

प्रथम ही गवर्नमेण्टके उन कानूनोंको रद्द किया गया, जो वर्वरोचित और अमानुषिक थे। जापानकी दण्डनीति और कारागार मनुष्योंके लिए हदसे ज्यादा कष्टदायक थे। समस्त सुसभ्य देशोंके कारागारोंके परिदर्शनार्थ चारों ओर विशेषज्ञ भेजे गये। उन लोगोंने लौट कर जापानके कारागारोंकी ऐसी उन्नति की कि जिसे देख कर लोग चकित हो गये। वर्तमानमें जापानके कारागारोंकी व्यवस्था अन्यान्य सभी सुसभ्य देशोंको अपेक्षा उन्नत है। एक फरासीसी आईनज्ञने जापानके कानूनोंका संस्कार कर दिया। इस संस्कारके फलसे विचार और शासनकार्यके भार पृथक् पृथक् व्यक्तियोंके अधीन हो गया। जगह जगह न्यायालय स्थापित हो गये, जिनमें विचारपति स्वाधीन भावसे, किसीका लिहाज न कर, विचारकार्य चलाने लगे। सुशिक्षित व्यक्तियोंको वकील बना दिया गया।'

१८७२ ई०में 'इयकोहामा'से 'तोकिओ' तक रेल खुल गई। बन्दरोंको आलोकमालासे सुशोभित कर उनमें डाक और तार विभागकी प्रतिष्ठा की गई। डाक्टरी और इञ्जिनियरीकी शिक्षा देनेके लिए बड़े बड़े कालेज खुल गये। इसी समय जापानमें संवादपत्र भी प्रकाशित होने लगे और व्यापारियोंके सुभीतेके लिए बैंक भी खुल गये। जापानमें पहले सिक्कोंमें लाख भरी जाती थी और भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके सिक्के बनते वा चलते थे, अब वे निखालिस धातुके ही बनाये जाने लगे और सर्वत्र एक प्रकारके सिक्कोंका प्रचार जारी किया गया।

१८७१ ई०में इन संस्कारोंका सूत्रपात हुआ था; उसके बाद कुछ ही वर्षोंमें जापानी सभ्यतामें उनकी जड़ मजबूत हो गई। जापानी जाति बड़ी बुद्धिमान् और परिश्रमी होती है यही कारण है कि वह बड़ी तेजीके साथ नवीन सभ्यताके प्रकाशमें आगे बढ़ने लगी। चीनके आचार-व्यवहारके पक्षपाती बीच बीच में कहीं कहीं विप्लव उठाने लगे, किन्तु उससे कुछ फल न हुआ।

जापानियोंके हृदयमें यह उच्चाकांक्षा उत्पन्न हुई कि, इङ्गलैण्डके पाश्चात्यभागकी तरह जापानके प्राच्य भागमें भी सर्वोत्कृष्ट नौ-शक्ति संगठित हो। इस विषयमें जापान सफल मनोरथ हुआ। १८७२ ई०में यहां बाध्यतामूलक सामरिक शिक्षाका प्रवर्तन हो गया, जिससे बहुत थोड़े समयमें ही प्रायः सभी जापानी योद्धा हो गये। योद्धा होनेके बाद इस जातिको आज तक रण क्षेत्रमें वीरता दिखानेके अवसर पांच बार प्राप्त हुए हैं।

१। १८११ ई०में अन्तर्विप्लवके दमनके लिए ४६००० योद्धा रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए थे। २। १८९४ ई०में चीनके साथ युद्ध करनेके लिए (जापानकी सम्पूर्ण सामरिक शक्तिके दिखानेके लिए) २२०,००० सेनाने समराङ्गणमें पदार्पण किया था। ३। १९०० ई०में बक्सर-के युद्धमें जापानियोंने सबसे पहले यूरोपीय सेनाके साथ अपने वीरत्वकी तुलना करनेका सुयोग पाया था। ४। रूसके साथ भीषण युद्ध करके जब जापानने विजय प्राप्त की तब वह संसारमें एक विजयी और वीर जाति समझी जाने लगी। क्षुद्र जापान-शक्तिने रूसियाके जार-की विपुलवाहिनीको किस प्रकार कठोरता और आत्म-त्यागके साथ परास्त किया था यह बात इतिहासमें हमेशाके लिए सुनहरी अक्षरोंमें लिखी रहेगी। रूसियाके साथ युद्धमें विजय प्राप्त करनेके बाद जापानने भीतर भीतर एक नवीन बल पाया और अपनी उन्नतिके लिए वह और भी अधिक प्रयत्न करने लगा। संसारको भी मालूम हो गया कि पृथिवीमें सिर्फ ग्रेटब्रिटेन, फ्रान्स, जर्मनी, इटली और युक्तराष्ट्र ये पांच ही महाशक्ति नहीं हैं, किन्तु जापान भी पृथिवीमें अन्यतम महाशक्ति है।

इसके बाद गत महायुद्धके समय भी जापानी सेनाने ग्रेटब्रिटेन आदि मित्रशक्तियोंका साथ दिया था। इस

पर ऊंचा नीचा होता है तथा दोनों भ्रूणोंकी विषम चलन-क्रियासे गर्भिणीको अधिक कष्ट पहुंचता है। पेट खूब भारी होकर अन्तमें गर्भिणीके दोनों पैर सूज जाते हैं। ये सब लक्षण रहने पर भी किसी समय यमज गर्भका स्थिरनिश्चय नहीं किया जा सकता है। युरोपीय चिकित्सक ष्टेथस्कोप यन्त्र या कर्ण द्वारा दोनों हृत्पिण्डकी सङ्कोचिका और प्रसारिका क्रियाका शब्द सुन कर यमज गर्भ स्थिर करते हैं।

गर्भवसति (सं० स्त्री०) गर्भः कुक्षिरिव वसतिः वासस्थानं। १ कुक्षिरूप वासस्थान। (हरिवंश ६० अ०) २ गर्भमें अवस्थिति, गर्भमें रहना।

गर्भवास (सं० पु०) वसति अस्मिन् वासः, गर्भ एव वासः वासस्थानं। १ गर्भाशय। २ गर्भके भीतरकी स्थिति।

गर्भविच्युति (सं० स्त्री०) गर्भात् विच्युतिः, ५-तत्। रोगादिके कारण गर्भका अकाल पतन। गर्भच्युति देखो।

गर्भविनोदरस—सूतिका रोगकी वैद्यकोक्त औषध। हिङ्गुल ८ तोला, सोंठ, पीपल, मरिच, जैत्री, लवङ्ग प्रत्येकका ५ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला, इन सभोंको जलसे पीसकर मटर परिमाणकी हर एक गोली बनाई जाती है। इसके सेवन करनेसे समस्त प्रकारके सूतिकारोग नाश होते हैं।

गर्भविपत्ति (सं० स्त्री०) गर्भस्य विपत्तिः, ६-तत्। रोग, स्राव और पातादिके लिये गर्भका आपद्।

गर्भविलासतैल (सं० क्ली०) गर्भस्थापन करनेका तेल।

गर्भविलासरस (सं० पु०) गर्भिणीज्वररस। पारा, गन्धक और तूतियाभस्मका समान भाग ले कर जंबीर रसके साथ तीन दिन तक गर्भिणी स्त्रीको सेवन करना चाहिये।

गर्भविस्राविणी (सं० स्त्री०) छोटी इलायची

गर्भवेदना (सं० स्त्री०) गर्भस्य वेदना। सन्तानोत्पत्तिके लिये व्यथा, बच्चा उत्पन्न करनेके समयका कष्ट।

गर्भवेश्मन् (सं० क्ली०) गर्भ एव वेश्मन्। गर्भरूप गृह, वह घर जो गर्भके जैसा बना हो।

गर्भव्याकरण (सं० पु०) चिकित्साशास्त्रका एक अंग जिसमें गर्भको उत्पत्ति तथा वृद्धि आदिका वर्णन होता है।

गर्भव्यापद् (सं० स्त्री०) गर्भस्य व्यापत्, ६-तत्। गर्भकी विपत्ति, गर्भका क्लेश।

गर्भव्यूह (सं० पु०) गर्भ इव गूढ़ो व्यूहः। लड़ाईमें पद्माकृति सैन्य रचनाविशेष। युद्धमें सेनाकी एक प्रकारकी रचना, जिसमें सेना कमलके पत्तोंकी तरह अपने सेनापतिको चारों ओरसे घेर कर खड़ी होती और लड़ती है।

गर्भशङ्कु (सं० पु०) गर्भस्य गर्भचिकित्सार्थः शङ्कुः। चिकित्साशास्त्रानुसार एक प्रकारका यन्त्र जिसके द्वारा मरा हुआ बच्चा पेटके भीतरसे निकाला जाता है। इसके मुंहका घेरा आठ अंगुलका होता है।

गर्भशङ्कुक (सं० पु०) गर्भशंकु स्वार्थे कन्। मृतगर्भाकर्षणार्थ यन्त्रविशेष, वह औजार जिससे मरे हुए बच्चेको पेटसे निकालते हैं।

गर्भशय्या (सं० स्त्री०) गर्भस्य गर्भस्थशिशोः शय्या इव स्थानम्। गर्भकी उत्पत्तिका स्थान।

'शङ्खनाभ्याकृतिर्योनिस्त्र्यावर्त्ता सा च कीर्तिता।
तस्यास्तृतीये त्वावर्त्ते गर्भशय्या प्रकीर्तिता॥
यथा रोहितमत्स्यस्य मुखं भवति रूपतः।
तत्‍सं स्थानं तथारूपां गर्भशय्यां विदुर्बुधाः॥" (भावप्रकाश)

गर्भशल्य (सं० क्ली०) गर्भवेदना, गर्भशूल।

गर्भशातन (सं० क्ली०) भेषज द्वारा गर्भपात, दवाईसे गर्भपात।

गर्भशोष: (सं० पु०) गर्भका शुष्कता रोग।

गर्भस्राव (सं० पु०) गर्भस्राव देखो।

गर्भसंक्रमण (सं० क्ली०) गर्भे संक्रमणं अन्यदेहपरित्यागेन देहान्तरापादानार्थं प्रवेशः। देहान्तरग्रहणार्थ कुक्षिप्रवेशरूप जन्म।

"गर्भसंक्रमणे चापि कर्मणामस्ति सम्भवः।
ताड़शोमेव लभते देहमां मानवः पुनः॥" (भारत अश्वमेध १७ अ०)

गर्भसम्भव (सं० पु०) गर्भस्य सम्भवः। गर्भोत्पत्ति, गर्भका उत्पन्न।

गर्भसंभूति (सं० स्त्री०) गर्भस्य संभूतिः। गर्भोत्पत्ति। (कथासरित् ५।६१)

गर्भसमय (सं० पु०) गर्भस्य समयः। १ गर्भकाल, ऋतुस्नानके बाद सहवास काल। २ वृष्टिका उत्पत्ति निमित्तक काल। (वृहत्संहिता २१।१९)

महामति 'ईतो'ने सम्भ्रान्त-पद पा कर साम्राज्यके प्रथम प्रधान मन्त्री एवं सभापतिका पद ग्रहण किया था।

१८६० ई०में साधारण महासभा आहूत हुई, जिसमें दो विभाग थे, एकमें ३०० सामन्त व्यक्ति प्रतिनिधि थे, जिनमें कुछ वंशानुक्रमिक सामन्त थे, कुछ साधारणद्वारा निर्वाचित और कुछ सम्राट् द्वारा मनोनीत हुए थे। दूसरे विभागमें पहले ३००, फिर ३७८ सभ्य निर्वाचित हुए। प्रथम विभागको इंगलैण्डके House of lords के समान क्षमता प्राप्त थी और कार्य करनेका अधिकार भी उसीके बराबर था। दूसरी सभामें गवर्नमेण्टकी क्षमताको और भी साधारणके हाथमें लानेके लिए घोरतर आन्दोलन चलने लगा। परिणाम स्वरूप साधारणने बहुत अंशोंमें क्षमता प्राप्त की और मन्त्रियोंको अपने हाथमें ले आये। किन्तु इंगलैण्डकी तरह ये इच्छानुसार मन्त्रियोंको पृथक् करनेमें समर्थ न हुए; प्रत्युत जर्मन साम्राज्यकी तरह मन्त्रियोंको सम्राट्के अधीन रहनेकी प्रथा प्रवर्तित हुई। जापानके सम्राट्ने आईन सम्बन्धी समस्त व्यवस्था करनेकी क्षमता अपने ही हाथमें रक्खी।

बीसवीं शताब्दीमें, जापानमें बहुतसे राजनैतिक दलोंकी सृष्टि हो गई, जिनमें 'सैयुकै' नामक दल ही प्रधान है। १९१२ ई०में सम्राट् 'मुत्सूहितो' ४५ वर्ष तक गौरवके साथ राज्य करनेके बाद परलोक सिधारे। ये ही जापानकी उन्नतिके प्रतिष्ठाता थे। १९१७ ई०में जापानके प्रधान मन्त्रीने लायड जार्जकी तरह 'तेरायूचि'-के समस्त दलोंका पारस्परिक मनोमालिन्य मिटा कर, युद्धके लिए सबसे सहायता ली थी।

१९१८ ई०के मार्च मासमें एक नवीन राजनैतिक संस्कार हुआ, जिसमें ऐसा नियम बनाया गया कि जो तीन 'इयन' मात्र कर देते हैं, वे भी भोटके अधिकारी होंगे। इससे १४,५०,०००की जगह ३०,००,००० व्यक्ति भोटके अधिकारी हुए। १९२० ई०में सबको भोट देनेका अधिकार होगा ऐसा बिल पेश हुआ, किन्तु वह नामंजूर हो गया।

यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि, जापानमें प्रायः भूमिकम्प हुआ करता है। जापानके जिस आग्नेय गिरिको वैज्ञानिकगण निर्वाणाग्नि समझते थे, उसके छिद्रोंसे प्रायः वाष्प निकला करती है। उसी 'फूजी यामा' पर्वतके पास १९२३ ई०में भीषण भूमिकम्प हो गया है।

१ सेप्टेम्बरको समाचार मिला कि भूमिकम्पके बाद 'इयोकोहामा' शहरमें आग लग जानेसे नष्ट हो गया है और 'टोकिओ' शहरका राजप्रासाद मुर्दोंसे भर गया है। २ तारीखके संवादसे मालूम हुआ कि 'इयोकोहामा' और 'टोकिओ'में प्रायः २ लाख आदमी मर गये, आग लग जानेसे बारूदखाना उड़ गया और रेलकी बड़ी सुरङ्ग टूट जानेसे ६ सौ आदमियोंकी जान गई। भूमिकम्पके समय आकाश मेघाच्छन्न था और आंधी भी खूब चल रही थी। भूकम्पके शुरू होते ही लोग डरके मारे भागने लगे; बहुतसे लोग उस भीड़में पिस कर मारे गये और शहर जल कर भस्म हो गया। इसके बादके समाचारसे ज्ञात हुआ कि इस दुर्घटनासे ५ लाखसे भी ज्यादा आदमी मारे गये हैं।

पृथिवीके इतिहासमें भूकम्पसे ऐसी भारी हानि होनेका विवरण कहीं भी नहीं मिलता। 'पम्पे' भी भूकम्पके कारण ध्वंस हुआ था, किन्तु सिर्फ एक ही नगर पर बीती थी। जापानके भूकम्पने एक विराट् साम्राज्यको ही ध्वंसोन्मुख बना डाला है। जापानके जिन प्रदेशोंमें जनसंख्या अधिक थी और जो व्यापारके बड़े केन्द्रस्थान थे, उन्हीं प्रदेशोंका अधिक सर्वनाश हुआ है। 'इयोकोहामा'के बड़े बन्दरमें पोताश्रय विलुप्त हो गये हैं, जहाज नष्ट हो गये हैं और टेलिग्राफ वा टेलीफोनके तार आदि ध्वंस प्राय हो गये हैं। किन्तु 'टोकिओ'के बृहत् बौद्ध-मन्दिरने सम्पूर्ण ध्वंस हो जाने पर भी अपना अस्तित्व ज्यों का त्यों रक्खा है।

जापानी परिश्रमी, वीरप्रकृति और कर्मपटु हैं, इसलिए आशा की जाती है कि अवश्य और शीघ्र ही 'इयोकोहामा' बन्दर वाणिज्यके कलरवसे पुनः मुखरित होने लगेगा और 'टोकिओ'के पुरपथ पार्श्वस्थित सौध-श्रेणीकी शोभासे फिरसे लोगोंको मुग्ध करेंगे। परन्तु वर्तमानमें जापानकी जो हानि हुई है, उसकी पूर्ति कितने दिनोंमें होगी, यह नहीं कहा जा सकता।

पराशरने स्पष्ट ही कह दिया है—जो व्यक्ति हृष्ट पुष्ट रहते भी ऋतुमती भार्याको अभिगमन नहीं करता, उसको बालकहत्याका पाप लगता है। इससे साफ समझ पड़ता है कि प्रतिबन्धक न रहनेसे प्रथम ऋतुको ही गर्भ-संस्कार करना चाहिये, नहीं करनेसे पाप चढ़ता है। आश्वलायन गृह्यपरिशिष्टमें प्रथम ऋतुको ही गर्भाधानकी बात है—

"अथतु मत्याः प्राजापत्यस्तौ प्रथमे ऽनुकूले ऽहनि सुस्नातयाम्बारब्धः प्राजापत्यस्य स्थालीपाकस्य हुत्वेना चाज्याहुती र्जुहुयात।"

विवाहके पीछे ऋतुमती स्त्रीके प्रथम ऋतुमें ही शुभ दिनको गर्भाधान कार्यके अनुष्ठानमें प्रवृत्त हो प्रजापति देवताके उद्देशसे चरु पाक करके घृताहुति देना चाहिये। गृह्यपरिशिष्टके इस विधानसे साफ मालूम पड़ता है कि विवाहके पीछे प्रथम ऋतुको ही गर्भाधान संस्कार कर्तव्य है। गर्भाधानकी यह प्रथा हिन्दुओंके समाजमें चिर दिनसे चली आती है। देशमें इसे इसीका नाम पुनर्विवाह, पुष्पोत्सव, फलशोभन फूलचौक आदि पड़ा है। सब देशोंमें सभी श्रेणियोंके हिन्दू विशेष प्रतिबन्धक न रहनेसे गर्भाधान संस्कार किया करते हैं। प्राचीन स्मृतिसंग्रहकारों और उनके परवर्ती रघुनन्दनने प्रथम रजश्रावको ही गर्भाधानका विधान किया है।

सुश्रुतके मतमें बालिकाका गर्भाधान निषिद्ध है। पचीस वर्षसे नीचेका पुरुष १६ वर्षसे छोटी स्त्रीका गर्भाधान करनेसे वह गर्भ पेटमें ही विनष्ट हो जाता अथवा जात बालक अधिक नहीं जी पाता, किसी प्रकारसे बचने पर भी दुबला दिखाता है। इसी कारणसे बहुत छोटी रमणीका गर्भाधान न करना चाहिये। कोई कोई बतलाता है कि भिषक्शास्त्र वा ज्योतिष शास्त्रका सिद्धान्त धर्मशास्त्र विरुद्ध होनेसे अग्राह्य है। अतएव सुश्रुतका यह मत धर्मशास्त्र विरुद्ध जैसा आदरणीय नहीं। फिर किसीके मतमें देशभेद तथा कालभेदसे सुश्रुतका मत चलता था, सब देशों और सब समयोंके लिये वह कब आदरणीय रहा। इसी प्रकार अपर अपर स्थानोंमें भी पूर्वप्रदर्शित धर्मशास्त्रके विरुद्ध जो दो एक मत देख पड़ते, किन्तु उनका अन्यरूप तात्पर्य रखते या उनकी दूसरी व्याख्या करते हैं। (विवाह देखो।)

धर्मशास्त्रके मतमें रजोदर्शनकी पहली तीन रातोंके बाद शुभ वार, तिथि और नक्षत्रमें गर्भाधान संस्कार करना चाहिये। किन्तु गोभिलने ऋतुमती स्त्रीका शोणित स्राव बन्द होने पर ही सङ्गमकाल बतलाया है, किसी रात या दिनकी गिनती नहीं। इससे स्पष्ट ही समझ पड़ता है—ऋतुके पीछे जितने दिन शोणित गिरता, सङ्गम वा गर्भाधान करना अनुचित ठहरता है—करनेसे सन्तानका अनिष्ट उठता है। दूसरे धर्मशास्त्रकारोंने प्रायशः तीन रातोंके पीछे रक्त पतन बन्द हो जानेसे तीन रातोंका उल्लेख किया है। रजोदर्शनके प्रथम दिनसे सोलह रात तक ऋतुकाल कहलाता, इसीके बीच गर्भाधान किया जाता है। युग्म रात्रिको गर्भाधान करनेसे कन्या और अयुग्मको उससे पुत्र उत्पन्न होता है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, पूर्णिमा, रविवार और संक्रान्ति दिवसको गर्भाधान करना निषिद्ध है। फिर ज्येष्ठा, मूला, मघा, अश्लेषा, रेवती, कृत्तिका, अश्विनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद और उत्तरफल्गुनी नक्षत्रमें भी गर्भाधान करना न चाहिये। हस्ता, श्रवणा, पुनर्वसु और मृगशिरा कई नक्षत्रोंको पुंनक्षत्र कहते हैं। यह गर्भाधान कार्यको शुभ है। इसके लिये रवि, मङ्गल और वृहस्पति वार तथा वृष, मिथुन, कर्कट, सिंह, कन्या, तुला, धनु और मीन लग्न प्रशस्त होते हैं।

भरद्वाजके मतमें रजस्वला स्त्री प्रथम दिन चण्डाली, द्वितीय दिन ब्रह्मघातिनी और तृतीय दिनको रजकीकी भांति अपवित्र और अस्पृश्य रहती है। वह चतुर्थ दिवसको शुद्धिलाभ करती है। चौथे दिनसे सोलह दिन तक गर्भाधानका योग्य काल है।

वृहज्जातकके निषेकाध्यायमें लिखा है, कि गर्भके प्रथम मासको शुक्र और शोणित मिलता है। उसीका नाम कललावस्था है। उक्त समयका अधिपति शुक्र होता है। द्वितीय मासको गर्भ अपेक्षाकृत कठिन पड़ जाता है। उसका अधिपति मङ्गल है। तृतीय मासको हस्तपदादि उत्पन्न हुआ करते हैं। उसका अधिपति वृहस्पति है। चतुर्थ मासको अस्थिका सञ्चार होता है। उसका अधिपति सूर्य है। पञ्चम मासको

देशमें प्रचार किया। परिणाम स्वरूप एक एक चिह्नात्मक अक्षरकी दो प्रकार ध्वनि होने लगी, एक चीनसे और दूसरी जापानमें।

जापानी भाषाका सीखना, विदेशियोंके लिए टेढ़ोखीर है; क्योंकि इसके लिए उन्हें तीन प्रकारकी भाषा सीखनी पड़ती है—प्रथमतः जापानकी साधारण बोल चालकी भाषा, द्वितीयतः भद्र-समाजकी भाषा और तृतीयतः लिखित भाषा। इन तीनोंमें यथेष्ट पार्थक्य है। इसके सिवा यह भी एक बड़ी भारी दिक्कत है कि प्रत्येक शब्दके पृथक् पृथक् अक्षर सीखने पड़ते हैं।

जापानी साहित्य—सबसे पहले जापानी साहित्य-ग्रन्थ ७११ ई०मे लिखा गया था। इसका विवरण (जापान शब्दके प्रारम्भ) में लिखा जा चुका है, कि सम्राट् तेम्मूने (६७३ ६८६ ई०) सिंहासन पर अधिरोहण कर देखा कि संभ्रान्त परिवारोंका इतिहास इतस्ततः विच्छिन्न पड़ा हुआ है, जिसका ग्रन्थाकारमें प्रगट होना आवश्यकीय है। 'हियेदानोआरे' नामक किसी सम्भ्रान्त महिलाकी स्मृतिशक्ति अत्यन्त प्रखर थी, उन्हीं पर इसके लिखनेका भार सौंपा गया। सम्राट्की मृत्युके बाद सम्राज्ञी 'नेमो'के समय भी यह ग्रन्थ लिखा गया था। इसका नाम है "कोजिकी"।

जर्मनीके 'सागाओं' की भाँति इसमें भी पृथिवीकी सृष्टिका विवरण, राजाओंका सिंहासनाधिरोहण और उनके राज्यका वैशिष्ट्य लिखा है। उस समय चीनकी सभ्यता और साहित्य जापानमें इतना अधिक व्याप्त हो गया था, कि इसके परवर्ती ग्रन्थमें ही चीनका प्रभाव दीख पड़ता है। इसका नाम "निहोंगी" वा जापानका इतिहास है।

ईसाकी १७वीं शताब्दीमें जब जापानी साहित्यका नव उद्बोधन हुआ, तब लोगोंका मन पुनः "कोजिकी" पढ़ने और प्राचीन तथ्यके संग्रह करनेमें दौड़ा। इस समय जापानमें बहुतसी प्राचीन पोथियोंका संग्रह हुआ था। जापानी साहित्यमें प्रधान वैशिष्ट्य है तो वह एक मात्र इतिहास आलोचना है। १८२७ ई०में 'निहोन गैसी' नामक जो ग्रन्थ रचा गया था, उसमें राजकीय सभाकी घटनाओंके सिवा जातिका यथार्थ इतिहास नहीं मिलता इसके अलावा ये सब इतिहास सूखे और नीरस भी हैं।

हां, जापानी कविता चिरकालसे अपने भावोंकी रक्षा करती आई है। इसके छन्द और ताल एक ऐसी स्वतन्त्र वस्तु है कि जो अन्य किसी भी देशकी कविता वा काव्यमें नहीं मिलती। ईसाकी १०वीं शताब्दीके प्रारम्भमें 'सुरायुकि' और उनके तीन सहचरोंने कुछ प्राचीन और तदानीन्तन कविताओंका संग्रह किया है, उस ग्रन्थका नाम है "कोकिनसु"। ईसाकी १३वीं शताब्दीमें 'तियेका कियोने' एक सौ कवियोंकी एक सौ कविताओंका संग्रह किया था।

जापानी कविताओंमें वाक्‌संयम और भाव-संयम यथेष्ट समावेश पाया जाता है इनके हृदयकी गभीरता भावके उच्छ्वासमें व्यथित नहीं होती और न वह झरनेके पानीकी तरह शब्द ही करती है। इनका हृदय सरोवरके जलकी तरह स्तब्ध है।[1]

जापानकी दो प्रसिद्ध और प्राचीन कविताओंका दृष्टान्त देना ही पर्याप्त होगा—

(१) "पुरानी पोखर
मेंढ़ककी कुदाई
पानीकी आहट।"

बस, अब जरूरत नहीं। जापानी पाठकोंका मन मानो आखोंमें भरा है। पुरानी पोखर मनुष्यके द्वारा परित्यक्त हुई है और वहां अब निस्तब्ध अन्धकार है। उसमें एक मेंढ़कके कूदते ही शब्द सुन पड़ा। यहां एक मेंढ़कके कूदने पर शब्दका सुनाई देना पुरानी पोखरकी गम्भीर निस्तब्धताको प्रकट करता है। इस कवितामें पुरानी पोखरका चित्र किस खूबीके साथ खींचा गया है, इसका अनुमान पाठक ही करें, कविने सिर्फ इशारा कर दिया है। दूसरी कविता यह है—

(२) "सूखी डाल
एक काक
शरत् काल।"

बस, इतनेहीसे समझ लिया गया कि शरदृतुमें

(१) (२) यहां जापानी भाषाकी कविता उद्धृत न करके उसका हिन्दी अभिप्राय वा छायानुवाद प्रगट किया गया है।

नासिका रन्ध्रमें आघ्राण द्वारा पहुंचा देते हैं। उसके पीछे— "गर्भ धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति" इत्यादि मन्त्र पाठ करके उपस्थेन्द्रिय मर्पण करना चाहिये। फिर 'विष्णुर्योनिं कल्पयतु" इत्यादि मन्त्रद्वय पढ़के आदिरसका आविर्भाव और "गर्भं धेहि सिनीवालि" मन्त्र बोलके सङ्गम किया जाता है।

धर्मकी अवनति और श्रद्धाका ह्रास होनेसे प्रायः सभी वैदिक कार्य विलुप्त हो गये हैं। आजकल-परिशिष्ट प्रदर्शित नियम बिलकुल नहीं चलते।

२ गर्भ निषेक मात्र।

"गर्भाधानक्षणपरिचयं नूनमाबद्धमालाः।
सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाकाः॥" (मेघदूत ९)

गर्भाधानक्रिया—जैनोंकी त्रेपन क्रियाओंमेंसे प्रथम क्रिया।
(विशेष विवरण जानना हो तो आदिपुराण देखना चाहिये)

गर्भाम्भ (सं० पु०) गर्भस्थ जल।

गर्भावक्रान्ति (सं० स्त्री०) गर्भस्य अवक्रान्तिः। गर्भोत्पत्ति, जीवका गर्भाशयमें प्रवेशरूपमें अवतरण।
(सुश्रुत शा३ अ०)

गर्भाशय (सं० पु०) आशेतेऽत्रेति, आ-शी-आधारे अच्। गर्भस्य आशयः, ६-तत्। गर्भका आधारस्थान, गर्भशय्या, स्त्रियोंके पेटका वह स्थान जिसमें बच्चा रहता है।

"यत्र शोणितसंसृष्टं स्त्रिया गर्भाशयं गतम्।
सेव कर्मसमाप्नोति शुभं वा यदि वाऽशुभम्॥" (भारत १४।१८।५)

जिस तरह पुरुषोंको अण्डकोष होता है उसी तरह स्त्रियोंको भी गर्भकोश या गर्भाशय है। यह गर्भाशय स्त्रियोंकी भीतरमें और पुरुषोंको बाहर रहता है। इसी गर्भकोशमें रजोण्ड वा गर्भाण्ड रहते हैं। जो जीव जितनेही अंडे देते हैं उतनेही उनके गर्भाशय बड़े होते हैं। स्त्रियोंका गर्भकोश १½ इंच लम्बा, ½ इंच चौड़ा और ½ इञ्च मोटा होता है। इस गर्भाशयमें एक सूत्र या नाड़ी लगी रहती है। जिसके द्वारा बच्चा बाहर निकलता है।

गर्भाष्टम (सं० पु०) गर्भात् गर्भकालात्, अष्टमः। गर्भकी अवधिसे अष्टम मास और वर्षादि।

गर्भास्पन्दन (सं० क्लो०) गर्भस्य आस्पन्दनम्, ६-तत्। गर्भ क्षयके चिह्नविशेष, गर्भकी विकृति।

गर्भास्राव (सं० पु०) गर्भस्य आस्रावः। गर्भस्राव देखो।

गर्भिणी (सं० स्त्री०) गर्भोऽस्त्यासाः, इनि-ङीप्। गर्भवती नारी, अन्तःसत्त्वा, हामिला, जिसके पेटमें बच्चा रहे

"सुवासिनीः कुमारीश्च रोगिणो गर्भिणीस्त्रियः।
अतिथिभ्योऽग्र एवैतान् भोजयेदविचारयन्॥" (मनु ३।११४)

काश्यपका कहना है—गर्भिणीको हस्ती, अश्वादि, पर्वत तथा अट्टालिकादि पर आरोहण, व्यायाम, वेगमें गमन, शकटका चढ़ना, शोक, रक्तमोक्षण, भय, कुक्कुट-भोजन, मैथुन, दिवानिद्रा और रात्रिजागरण परित्याग करना चाहिये। स्कन्दपुराणमें लिखा है कि गर्भिणी नारी स्वामीकी आयु वृद्धि करती है। इसीसे उसको हरिद्रा, कुङ्कुम, सिन्दूर, कज्जल, कञ्चुकी, ताम्बूल, मङ्गलजनक आभरण, केशसंस्कार, चोटी बंधाना और कर तथा कर्णभूषण छोड़ना उचित नहीं। वृहस्पतिने बतलाया है कि गर्भिणीको षष्ठ वा अष्टम मास विशेषतः आषाढ़में यात्रा न करना चाहिये। आश्वलायनके मतमें—गर्भवतीके स्वामीको केशादि कर्तन, मैथुन तथा तीर्थयात्रा परित्याग करना उचित है। मुहूर्तदीपिका और कालविधानमें लिखा हुआ है कि क्षौरकर्म, शवानुगमन, नखकर्तन, युद्धादिस्थलको गमन, बहुत दूर जाने उद्वाह, उपनयन और समुद्रमें अवगाहन करनेसे गर्भिणीके स्वामीका आयु क्षय होता है।

गर्भिणी जो जो भोग करना चाहती, न देनेसे गर्भकी पीड़ा उठती और अभिलाष पूर्ण हो जानेसे वह गुणवान् पुत्र प्रसव करती है। अभिलाषके अनुसार भोग न मिलनेसे गर्भिणी अपने आप चौंक पड़ा करती है। गर्भिणीके जिस इन्द्रियका अभिलाष पूर्ण नहीं होता सन्तानके भी उसी इन्द्रियमें पीड़ा उठती रहती है। राजदर्शनका अभिलाष लगनेसे सन्तान महाभाग्यवान् और धनवान् होता है। पट्ट वस्त्रादि अथवा अलङ्कारका अभिलाष उठनेसे लड़का मनोहर और अलङ्कारप्रिय निकलता है। आश्रम देखनेको जी चाहनेसे सन्तान धर्मशील और संयतचित्त होगा। देवप्रतिमादिमें अभिलाष होनेसे सभासद्, सर्पादि दर्शनको जी लगा रहनेसे हिंसक, गोमांसका अभिलाष उठनेसे बलिष्ठ तथा काष्टसहिष्णु, महिषमांसके अभिलाषसे शौर्यान्वित, रक्तलोचन और लोमश, वराहमांसकी चाहसे निद्रालु तथा वीर, जङ्गालमांसकी इच्छासे वनेचर, स्मर अर्थात् मृग-

१६०३से १८६७ ई० तक जापानी साहित्यकी खूब ही उन्नति हुई। 'फुजिवारा-सैकोया'ने (१५६०-१६१८ ई०) जापानमें चीनके 'चू-हि' नामक दार्शनिकके ग्रन्थोंका प्रचार किया था। 'हयासि रासान'ने (१५८७ १६५७ ई०) दर्शन सम्बन्धी प्राय: ७० ग्रन्थ रचे थे। 'कैवरा-एकेन'ने (१६३०—१७१४ ई०) नीतिशास्त्रका प्रचार किया था। 'आराई हाकूसेकि' (१६४७—१७२५ ई०) जापानके प्रसिद्ध ऐतिहासिक, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ और अर्थनीतिज्ञ विद्वान् थे। इन विद्वानोंकी कोशिशसे जापानी साहित्यकी यथेष्ट उन्नति हुई थी। इस समय कथा-साहित्य वा उपन्यास आदिका काफी प्रचार था। जापानमें ईसाकी १७वीं शताब्दीमें बच्चोंके लिए नाना प्रकारके साहित्य ग्रन्थ रचे गये थे।

वर्तमानयुगमें जापान पर पाश्चात्य सभ्यता, विज्ञान और साहित्यका प्रभाव खूब ही पड़ा है। बहुतसे अंग्रेजी ग्रन्थोंका जापानी भाषामें अनुवाद हो चुका है और हो रहा है। 'रूसो' के Contract Social-के जापानी भाषामें अनुवाद होने पर, जापानमें सामाजिक और राजनैतिक आन्दोलनका सूत्रपात हुआ था। कलडेरन, लिटन, डिसरेली, रायकन, सेक्सपियर, मिल्टन, दुर्गेनिभ, कार्लाइल, टोदत्, एमर्सन, ह्यगो, हाइन, डिक्कुइन्सि, डिकेन्स्, कोरनर, गेटे प्रभृति पाश्चात्य लेखकोंने जापान पर अपना यथेष्ट प्रभाव डाला है और उनके प्राय: सभी ग्रन्थ अनूदित हुए हैं। जापानमें मौलिक साहित्यका सूत्रपात भी फिलहाल हो चला है।

जापानमें चित्रकला—जापानियोंमें यह एक बड़ा भारी गुण है कि वे किसी भी चीजको छोटी समझ कर उसकी अवहेला नहीं करते, सभी चीजोंमें उन्हें एक प्रकार-का सौन्दर्य नजर आता है। स्त्री और पुरुषमें स्रष्टाकी जो महिमा प्रकाशित हुई है, वह पशु और पक्षी वा कीट और पतङ्गोंमें भी विद्यमान है। क्या छोटा और क्या बड़ा क्या सुन्दर और क्या असुन्दर, जापानी चित्र-कारके लिए सभी समान हैं। बङ्गालके शिल्पाचार्य अवनीन्द्रनाथ लिखते हैं—"जापानी शिल्पोके लिए सुन्दर और असुन्दर, स्वर्ग और मर्त्य सब बराबर हैं। वे गोचर और अगोचर समस्त पदार्थोंका मर्म ग्रहण कर लेते हैं और उस मर्मको सहजमें साफ तौरसे प्रकट कर सकते हैं।"

जापानी चित्रकारोंकी रेखाङ्कणकी एक पृथक् भाषा है। पहाड़, नदी, समुद्र, वृक्ष, पत्थर आदि विभिन्न पदार्थोंकी विशेषता प्रकट करनेके लिए वे विभिन्न प्रथाओंका अवलम्बन करते हैं। वे दो एक बार कूंची फेर कर नितान्त नगण्य वस्तुमें भी, जो हमारी दृष्टि आकर्षित नहीं करती, अपूर्व सौन्दर्य भर देते हैं। यह बात अन्य देशोंके चित्रकारमें नहीं पाई जाती।

जापानमें एक ऐसा मैत्रीभाव है, जिससे उन लोगोंने विश्वके समस्त पदार्थोंको सुन्दर बना डाला है। जापानी लोग यथार्थमें सौन्दर्यके उपासक हैं। जापान देशने जापानियोंको सौन्दर्यप्रिय बना दिया है। जापान देश मानो एक तसवीरोंकी किताब है—इसके एक छोरसे दूसरे छोर तक चले जाओ, मालूम होगा, मानो तसवीरके पन्ने उलट रहे हैं।

जापानके प्राचीन चित्रकारोंमें, अधिकांश कोरियन शिल्पियोंके नाम देखनेमें आते हैं। उस समय राजकुमार 'शोटाकू'ने उन लोगोंको यथेष्ट उत्साहित किया था। उन्होंने अपनी तसवीर भी खींची थी। नारा-युगमें (७०८ से ७८४ ई० तक) अनेक सुन्दर चित्र बनाये गये थे। होरिउजि-मन्दिरमें भी उस समय बहुतसे चित्र खींचे गये थे। ये चित्र हमारे अजान्ताके चित्रके समान हैं। अजान्ताकी १ नं० कोठरीमें प्रवेश करते समय दरवाजेके बाईं ओर बोधिसत्वकी जो मूर्ति है, उसके साथ 'होरिउजि' मन्दिरकी बोधिसत्वकी मूर्तिका सादृश्य है।

नारा-युग वा बौद्धयुगके बाद 'असन इय मातो' चित्रकारोंका युग है। इनमें सबसे प्रसिद्ध चित्रकार 'हलकानोका' थे, जो ८वीं शताब्दीमें हो गये हैं। इनकी श्रेष्ठ चित्रका नाम है "नाचिका जलप्रपात"। इसमें पर्वत-शिखरके ऊपर मेघाच्छन्न रात्रि है और झरनेका जल बहुत ऊंचेसे गिर रहा है, ऐसा दृश्य दिखलाया गया है।

इसके बाद 'टोसा'-चित्रकारोंका युग है। ये प्रधानत: दरबारका दृश्य और सम्राट्, उमरावोंका चित्र खींचते थे।

२ व्यभिचारि भावविशेष । साहित्यदर्पणके मतसे गर्वका दूसरा नाम 'मद' है, यह प्रभुत्व, धन, विद्या, सत्कुलजातत्व प्रभृति द्वारा उत्पन्न होता है ।
गर्वण (सं० पु०) एक पर्वतका नाम ।
गर्वप्रवारी (सं० वि०) गर्वका नाश करनेवाला, घमण्ड चूर्ण करनेवाला ।
गर्ववंत (हिं० वि०) घमंडी, अभिमानी ।
गर्वर (सं० पु०) गीर्यते इति गृ-निगरणे वरच् । १ अहङ्कार, घमंड । २ नायक । (त्रि०) ३ अहङ्कारी, घमंडी ।
गर्वाट (सं० पु०) गर्वेण अटति अट्-अच् । द्वारपाल, वह जो दरवाजे पर रक्षाके लिये नियुक्त हो, दरवान ।
गर्वाना (हिं० अ० क्रि०) गर्व करना, अभिमान करना, घमंड करना ।
गर्वालाव (सं० स्त्री०) पाताल गरुड़ी ।
गर्वित (सं० त्रि०) गव-कर्तरि क्त । गर्वयुक्त, अभिमानी । (स्त्री) वह नायिका जिसको अपने रूप और गुणका घमंड हो ।
गर्विन् (सं० त्रि०) गर्वोऽस्यास्तीति इनि । गर्वयुक्त, घमंडी ।
गर्विष्ठ (सं० त्रि०) गर्वयुक्त, घमंडी, अहंकार करनेवाला ।
गर्वी (हिं० वि०) घमंडी, अहंकारी ।
गर्वीला (हिं० वि०) अहङ्कृत, घमंडसे भरा हुवा ।
गर्सी—बम्बई प्रान्तकी एक जाति । इनका काम ढोल बजाना है ।
गढ़ (गढ़)—ग्वालियरके अधीन सेंट्रल इण्डिया एजेन्सीमें खीचीवंशका एक क्षुद्रराज्य । भूपरिमाण ४४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८४८१ है । पहले यह राघुगढ राज्यके अन्तर्गत था, किन्तु आपसी झगडाके कारण खीची परिवारके बहुतोंको अलग अलग जागीर दी गई, और १८४३ ई०में विजयसिंहने ५२ ग्रामोंकी एक सनद ली जिसकी आय लगभग १५००० रु० थी । यह राज्य छोटी छोटी पहाड़ियोंसे विभक्त है, इसलिये यहा उपज अच्छी होती है । पोस्ता भी यहां बहुत उपजाया जाता है । और इससे अफीम प्रस्तुत कर उजैन भेजी जाती है । रघु-गढ़वंशके प्रधान खीची चौहान राजपूत हैं जिन्हें राजाकी उपाधि मिली है । वर्तमान राजा १९०१ ई०में राज्य-सिंहासन पर बैठे थे । राज्यकी आमदनी लगभग २२००० रु० और कुल खर्च १३००० है । जामनेरमें राज्यका सदर है जहां एक अस्पताल और एक विद्यालय है ।
गढ़चिरोली (गढचिरोली)—मध्यप्रदेशमें चान्दा जिलाकी तहसील । यह ब्रह्मपूरीके जमीन्दारी स्टेट और चान्दा जिलाका कुछ अंश ले कर बनी है । भूपरिमाण ३७०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५५२१४ है । इस तहसीलमें १०९८ ग्राम लगते हैं । इसका सदर गढ़चिरोली ग्राममें है जो चान्दा शहरसे ५१ मीलकी दूरी पर बसा है और जहां २०७७ मनुष्य वास करते हैं । इसमें १९ जमीन्दारी पडती है जिसका भूपरिमाण २२५१ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ८२२२१ है । क्षेत्रका अधिकांश पहाडो और जंगलमय है । जमीन्दारीके बाहर ८४९ वर्गमील क्षेत्रका सरकारी जंगल है ।
गर्हण (सं० क्ली०) गर्ह कुत्सने भाव ल्युट् । निन्दा, शिकायत । (भारत १२।७५२ अ०)
गर्हणा (सं० स्त्री०) गर्ह भावे युच् टाप् । निन्दा, अपवाद, बदगोई
गर्हणीय (सं० त्रि०) निन्दनीय, निंदाकरने योग्य । (भारत, वनपर्व)
गढ़दिवाल (गढ़दिवाल)—पंजाबके होसियारपुर जिले और तहसीलका एक शहर । यह अक्षा० ३१° ४५' उ० और देशा० ७५° ४६' पू० होसियारपुरसे १७ मीलकी दूरी पर अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः २६५२ होगी । गुड़के व्यापारके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है । यहांकी आय २३०० रु० और कुल खर्च २२०० रु० है । यहां एक सरकारी अस्पताल भी है ।
गढ़शङ्कर—१ पञ्जाबमें होसियारपुर जिलाकी एक तहसील । यह अक्षा० ३०° ५९' से ३१° ३१' उ० और देशा० ७५° ५१ से ७६° ३१' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ५०९ वर्गमील है । लोकसंख्या लगभग २६१४६८ होगी । गढ़शङ्कर शहर इसका मुख्य सहर है इसमें सिर्फ ४७२ गांव लगते हैं । तहसीलकी आम-

किया। प्राचीनकालसे ही जापानका चीनसे घनिष्ट सम्बन्ध है, यह बात पहले कह चुके हैं। कहा जाता है कि जिस समय चीनमें बौद्धधर्मका घोरतर आन्दोलन हुआ था, उस समय जापान चीनसे सर्वशेष परिचित था और फिर ५५२ ई०में चीनदेशसे उसने बौद्धधर्म ग्रहण किया।

बौद्धधर्म चीनकी अपेक्षा जापानमें अधिकतर बद्धमूल हुआ है; इसके कई एक कारण हैं। चीनमें कनफुचिका धर्म जातीय धर्मके रूपमें परिगणित हुआ था। राजाओंने उसी धर्मको राष्ट्रीय धर्म बतलाया था। इसलिए चीनमें बौद्धधर्मका उतना प्रचार नहीं हुआ, जितना कि जापानमें हुआ है। जापानमें बौद्धधर्मके आविर्भावसे पहले कनफुचि-धर्मका अधिक प्रचार नहीं हुआ था, इसलिए छोटेसे लगा कर बड़े तक, सबने बौद्धधर्मको खूब अपनाया।

बौद्धधर्मके साथ जापानकी सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्थाके सिवा सैन्यव्यवस्थाका भी घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। यही कारण है कि जापानमें बौद्धधर्मकी अनेक शाखाएं हो गई हैं। भारतवर्ष अथवा चीनकी तरह यहांकी शाखाओंने सामान्य पार्थक्योंका अवलम्बन नहीं किया है। वहां एक शाखाका दूसरी शाखासे विभिन्न प्रकारका मतभेद पाया जाता है और उस पर प्रतिद्वन्द्विता होती है।

जापानमें बौद्धधर्मकी बारह शाखाएं हैं। परन्तु इनका नाम सर्वदा एकसा नहीं रहता। साधारणतः उनके नाम इस प्रकार हैं—१ कुशा, २ जो-जित्सू, ३ रिट्सु वा रिसु, ४ सनरन, ५ होसो, ६ केगोन, ७ टेण्डे, ८ सिङ्गन, ९ जोदो, १० जेन, ११ शिन और १२ निचेरेन।

ऐतिहासिक दृष्टिसे ये शाखायें सत्य प्रतीत होती हैं। परन्तु १ली, २री, ३री, और ४थी शाखा प्रायः निर्मूल हो गई है। सुतरां वर्तमानमें कोई कोई इस प्रकार भी बारह शाखा गिनाते हैं—१ होसो, २ केगोन, ३ टेण्डे, ४ सिङ्गन, ५ युजु वा नेम्बुत्सू, ६ जोदो, ७ रिञ्जे, ८ सोदो, ९ ओवाकू, १० शिन, ११ निचिरेन और १२ जी।

इनमें ७वीं, ८वीं और ९वीं शाखा जेनकी उपशाखाएं हैं तथा ५वीं और १२वीं शाखा अत्यन्त क्षुद्रकाय है। पहली तालिकामेंसे प्रारम्भकी ८ शाखाओंको जापानी लोग 'हासू' कहते हैं और वे चीनसे लाई गई हैं। उनमें चीनके 'नारा' और 'हे-यान' युगके बौद्धधर्मका वैशिष्ट्य अब भी विद्यमान है। शेष चार शाखाओंका आविर्भाव ११७० ई०के बाद हुआ है। जापानमें उनकी सृष्टि नहीं हुई, किन्तु नवीनतासे संगठन अवश्य हुआ है। समयानुसार श्रेणीभेद करनेसे प्रत्येक शाखाकी प्रतिष्ठाका समय इस प्रकार निरूपित होता है—

१। सप्तम शताब्दी—सानरन ६२५ ई०
जोजित्सू ६२५ ई०
होसो ६५८ ई०
कुशा ६६० ई०
२। अष्टम शताब्दी—केगोन ७३५ ई०
रित्सू ७४५ ई०
३। नवम शताब्दी—टेण्डाई ८०५ ई०
सिङ्गन ८०६ ई०
४। द्वादश और त्रयोदश शताब्दी—
युजु नेम्बुत्सू ११२३ ई०
जेरो १२०२ ई०
शिन १२२४ ई०
निचिरेन १२५३ ई०
जी १२७५ ई०

जापानी बौद्धधर्मकी प्रत्येक शाखा जो उल्लेखयोग्य है, महायान-सम्प्रदायके अन्तर्गत है। हीनयान सम्प्रदायके मतका सिर्फ कुसू, जोजित्सू और रिसू शाखा ही अनुवर्तन करती थी। परन्तु इनमेंसे पहलेकी दो शाखाएं तो विलुप्त हो गई हैं, तीसरीके कुछ अनुयायी मौजूद हैं और चौथी शाखा महायान सम्प्रदायकी विरोधी नहीं है—सिर्फ आचार-व्यवहारमें थोड़ासा भेद मानती आ रही है।

होसो और केगोन ये दो शाखाएं इस समय मौजूद तो हैं, पर उनका अस्तित्व धर्मभावकी रक्षाके लिए नहीं, बल्कि कुछ सम्प्रदायी जमींदारोंकी रक्षाके लिए है।

२य 'उगलि" वा पुरुष, ३य "अतेलि" अर्थात् स्त्री वा शक्ति। शनि और रविवारको ये लोग किसी तरहका कार्य नहीं करते हैं।

२ सिंहलके दक्षिण-पश्चिममें समुद्र उपकूलस्थ एक नगर। यह एक पहाड़के ऊपर अवस्थित है। पर्वतकी लम्बाई समुद्र तक चली गई है। इस पर्वतके ऊपर एक दुर्ग भी विद्यमान है। कालम्बोसे यह ३५ कोस दक्षिण-पश्चिम है। अतिप्राचीन कालसे ही यह वाणिज्य स्थान होनेके कारण बहुत प्रसिद्ध हो गया है। फिणिकके वणिक् यहां आकर वाणिज्य करते हैं।

गलंश (हिं० स्त्री०) वह सम्पत्ति जिसका मालिक मर गया हो और उसका कोई उत्तराधिकारी न हो।

गलकंबल (हिं० पु०) झालर, जो गायके गलेके नीचे लटका रहता है।

गलक (सं० पु०) गलतीति गल-अच् संज्ञायां कन्। गडाकू नामकी मछली।

गलका (हिं० पु०) एक प्रकारका फोड़ा। यह हाथकी अंगुलियोंके अग्र भागमें होता और बहुत कष्ट देता है।

गलकोण्डा वा गलि पर्वत—मन्द्राज प्रदेशके विशाखपत्तन जिलेकी एक पर्वतश्रेणी। यह अक्षा० १८° ३०' उ० और देशा० १८° ५०' पू० पर अवस्थित है। इस पर्वतकी दो चोटियां हैं जिनकी लम्बाई क्रमशः ३५६२ और ३५१४ हाथकी है। ऊपर चढ़नेका एक रास्ता भी चला गया है। १८६० ई०को इस स्थानकी जलवायु उत्तम समझ कर यहां अंगरेजी सेना रखी गई थी, किन्तु बार बार ज्वरसे पीड़ित रहनेके कारण उन्होंने यह स्थान छोड़ दिया। विजयनगरके राजाका यहां एक विस्तृत खेत है।

गलकोड़ा (हिं० पु०) १ कुश्तीका एक पेंच। २ एक प्रकारका कोड़ा वा चाबुक।

गलगण्डिन् (सं० त्रि०) गलगण्डोऽस्यास्तीति इनि। गलगण्डरोगी, गलेमें जिसको गलगंड रोग हुवा हो। (सुश्रुतनिदान ११ अ०)

गलगण्ड (सं० पु०) गले गण्डः स्फोटक इव गलरोग-विशेषः, गलेकी एक बीमारी। चलती बोलीमें इसको गण्डमाला कहते हैं। गलगण्डके लक्षण और निदान आदि भावप्रकाशमें इस प्रकारसे लिखे हैं—गलेमें बड़ी या छोटी अण्डकोष जैसी लम्बी और कड़ी सूजन उठनेसे गलगण्ड कही जाती है। भोजराजके मतमें गाल, कंधेकी नस और गलेको आश्रय करके उठनेवाला अण्डकोष जैसा बढ़ा हुआ शोथ ही गलगण्ड है। वायु, कफ, वा मेद बिगड़ करके गलदेश और मन्यादय (कंधेकी दोनों नसें) आश्रय करनेसे क्रमशः गलगण्डरोग लगा करता है।

गलगण्ड चार प्रकारका है—वातज, श्लेष्मज, कफज और मेदोज। वातज गलगण्ड श्याम वा अरुणवर्ण वेदना युक्त और कड़ा होता है। वह कृष्णवर्ण शिरासमूहमें व्याप्त रहता और कालविलम्बसे बढ़ता है। वातज गलगण्ड प्रायः न पकते भी कभी कभी विना कारण ही पक जाता है। रोगीका मुंह फीका और तालू तथा गला सूखने लगता है। कफज गलगण्ड स्थिर, गुरु, शीतल, अत्यन्त कण्ड, तथा अल्प वेदनायुक्त और शरीरके वर्ण-जैसा होता है। यह काल पा करके बढ़ता और पकता है। रोगीके मुंह भीतर मधुर रसयुक्त और बाहर चिकना-जैसा रहता, गलेकी नालीमें सर्वदा शब्द हुआ करता और तालू तथा गला कफसे भरा-जैसा लगता है।

मेदोज गलगण्ड चिकना, कोमल, पाण्डुवर्ण, दुर्गन्ध-युक्त और कण्ड तथा वेदनाविशिष्ट होता है। यह कद्दूजैसा लम्बा पड़ता और शरीर दुबला रहनेसे छोटा और मोटा रहनेसे बड़ा लगता है। रोगीका मुख चिकना उठता और गलेमें हमेशा शब्द हुआ करता है। गलगण्डके रोगीको यदि सांस लेनेमें बड़ा कष्ट पड़े और अरुचि, स्वरभङ्ग वा क्षीणता लगे, तो चिकित्सक उसको परित्याग करदे। वह असाध्य होता है। रोगीका शरीर मृदु किंवा संवत्सर अतीत होनेसे भी गलगण्ड असाध्य समझा जाता है। (भावप्रकाश)

गलगण्ड रोगकी चिकित्सा इस प्रकार चलती है। सरसों, सहिंजना तथा सनका बीज, अलसी, जौ और मूलीका बीज खट्टे मट्ठेके साथ पीस करके चुपड़ देनेसे बहुत पुरानी गण्डमाला नष्ट हो जाती है। श्वेत अपराजिताकी जड़को पीस करके सवेरे घीके साथ लगातार खानेसे भी गलगण्ड मिटता है। पकी कड़वी लौकी-

इस धर्मका प्रधान गुण साम्यवाद है। इसमें किसी प्रकारका जाति-विचार नहीं है, तन्त्र मन्त्र भी नहीं है। यह न तो स्वर्ग पहुंचानेको तत्पर होता और न नरकमें पटकनेका भय। इसमें मूर्ति पूजा नहीं है, पुरोहितोंका अत्याचार नहीं है, यहां तक कि धार्मिक वादविवाद और उससे मनोमालिन्य होनेका भी डर नहीं है। ऐसी दशामें यह कहना बाहुल्य न होगा कि इस देशके इतिहासमें धार्मिक वाग्वितण्डा, कलह वा युद्धादिका उल्लेख ही नहीं है। यहाँ सभी धर्मोंको स्थान मिल सकता है। जिन्तो धर्मका आदर्श महत् है, इसमें सन्देह नहीं।

जापानके अधिकारियोंने विदेशियोंको तभी दण्डित किया है, जब उन्होंने धर्म-प्रचारकी ओटमें राजनैतिक चाल चल कर साम्राज्यके अनिष्ट करनेकी चेष्टा की है। जापानी इतिहासके ज्ञाता इस बातको अवश्य जानते हैं, कि साम्राज्यकी विपदाशङ्कासे जापानकी तलवार अवश्य चमक उठी है, पर केवल धर्म-विश्वासके लिए उसने कभी किसी पर अत्याचार नहीं किया है। कोई कोई पाश्चात्य विद्वान् इस बात पर हंस देते हैं, परन्तु यह उनकी भूल है।

इस धर्मका प्रधान अङ्ग है प्रकृतिकी पूजा करना और मृत व्यक्तिके लिए सम्मान दिखाना। जापान जैसी सौन्दर्यप्रिय जातिको स्वदेश प्रति और देशभक्तिमें दीक्षित करनेके लिए इससे उत्कृष्ट धर्म दूसरा नहीं हो सकता।

जापान पाश्चात्यका मोह अब भी नहीं छोड़ सका है। यही कारण है कि अब वह पार्थिव उन्नतिके लिए जी-जानसे कोशिश कर रहा है। पारमार्थिक विषयमें जापानका बिलकुल ही नहीं है। जापानके शिक्षित व्यक्ति इस समय धर्मसे सम्पूर्ण उदासीन हैं।

जापानकी सामाजिक-प्रथा—पुरुषोंकी तरह जापानकी स्त्रियां भी अत्यन्त परिश्रमशील और कर्तव्यपरायण होती है। छोटे छोटे बच्चोंको पीठसे बांध कर आसानी से सब काम किया करती हैं।

जापानी ऊपरसे जितने साफ सुथरे रहते हैं, भीतरसे उतने नहीं। शौचके लिए ये पानी काममें न ला कर कागजसे ही काम चलाते हैं। ये किसी बड़े पात्रमें पानी रख कर दोनों हाथोंसे मुंह धोते हैं और उस मैले पानी-को ज्योंका त्यों पड़ा रहने देते हैं। इनकी स्नान करने-की रीति बहुत ही भद्दी है। पहले स्त्री और पुरुष दोनों नंगे हो कर एक हौजमें नहाया करते थे, किन्तु अब नव-सभ्यताके प्रकाशमें उसका कुछ परिवर्तन हो गया है—स्त्री और पुरुष भिन्न भिन्न हौजोंमें नहाने लगे हैं। किन्तु एक साथ २०।२५ स्त्री वा पुरुषोंका नग्नावस्थामें नहाना अब भी नहीं जारी है। नहाते वक्त भद्र अभद्र-का वा बड़े छोटेका भेद नहीं रहता, सब एक ही हौजमें नहाते और मुंह आदि धोया करते हैं। एक ही हौजमें लगातार सौ दो सौ आदमी नहा जाते हैं, पर तो भी उसका पानी नहीं बदला जाता। इनके स्नानका कोई निर्दिष्ट समय नहीं है। 'फूरो' नामके स्नाना-गार रातको १२ बजे तक खुले रहते हैं, उनमें जिसको जब तबीयत हो नहा आते हैं। साधारणतः ये दिन भर परिश्रम करनेके बाद सोनेसे पहले रातको नहाते हैं।

जापानके लोग सामको ६।७ बजेके भीतर ही सन्ध्या भोजन कर लेते हैं। सुबह रसोई बनानेके लिए ज्यादा समय न मिलनेसे तथा दोपहरको काममें लगे रहनेसे भोजनकी व्यवस्था ठीक नहीं होती; इसलिए सामको ही उनका असली 'गोसो' वा आहार बनता है। साम-को ये चार पांच तरहकी तरकारियां और कई तरहके तेमन बनाते हैं। किन्तु दोपहरको साधारण भोजन से ही काम चला लेते हैं।

कोई भी परिचित वा अपरिचित जापानी जब किसी घरमें प्रवेश करना चाहता है, तब वह असभ्योंकी तरह बाहरसे चिल्लाता वा दरवाजेमें धक्का नहीं लगाता, बल्कि "माफ कीजिये" कह कर उंगलीसे दरवाजा खटकाता है। पलक मारनेके साथही घरकी मालकिन द्वार पर आ जाती है और "पधारिये" कह कर आगन्तुक व्यक्तिको घरमें बुलाती है। आगन्तुक भी बार बार "धन्यवाद" देता हुआ घरमें प्रवेश करता है। इस 'धन्य-वाद'के लेन देनमें करिब २-३ मिनट समय चला जाता है। फिर घरमें जा कर वह एक प्याला चाय और कुछ 'बिस्कुट' खाता है।

रिक यन्त्र सकल (फेफड़ा, श्वासनाली, यकृत्, प्लीहा और वृक्क) आक्रान्त होता है। अतिसामान्य कारणसे पहले गलेमें या मत्थे पर क्षत हो करके फिर गर्दनकी गांठें फूल उठती हैं।

पूर्वकालको युरोपमें गण्डमाला रोगकी चिकित्सा निराले उपायसे होती थी। बाइबिल पढ़नेसे समझ पड़ता है कि याजक लोग सिर्फ छू करके ही उस रोगको आरोग्य करते थे। प्लिनि, टासीटास, सिउटोनिया आदिके ग्रन्थोंमें भी स्पर्श द्वारा गण्डमाला आरोग्यकी बात लिखी है। २०० वर्ष पहलेके स्कन्दनाम तथा जर्मन भाषाके दूसरे बहुतसे ग्रन्थोंमें राजस्पर्शसे इस रोगके अच्छे हो जानेकी कथा दृष्ट होती है। उसीसे चलती अंगरेजीमें इसको राजरोग (King's evil) कहते हैं।

शिशुको गण्डमाला होने पर यदि माता वा पिताका रोग हो तो धात्री रख करके उसका स्तन्यपान कराना चाहिये। बच्चेके लिये १५।२० बूंद काडलिवर आयल महोपकारी है। एलोपैथीके मतमें गण्डमाला रोग पर थोड़ासा आयोडाइन लगाया जा सकता है और उससे विशेष फल भी मिलता है। किन्तु उसके लगाने बाद यदि मूत्रमें माण्डशुक्र देख पड़े, तो फिर व्यवहार करना न चाहिये। औषध खानेमें—आयोडाइड अव पोटासियम, १ ग्रेन सिरप फेरी आयोडाइड, १० बूंद सिरप जिञ्जवेरिस २० बूंद और अनन्तमूल या सालसा का काढ़ा २ ड्राम मिला करके ४से ६ ड्राम तककी मात्रामें दिनमें २।३ बार ग्रहण करना चाहिये। इस रोगके रोगीको सर्वदा साफ सुथरा रहना, विशुद्ध वायु सेवन करना और हलका तथा बलकर पथ्य खाना एकांत कर्तव्य है।

गलग्रन्थिका एक वा उभय सूक्ष्मभाग (Lobes) फूल करके स्थायी हो जानेसे गलगण्डरोग कहलाता है। उनके मतमें पहाड़ी और सर्द जगहमें यह रोग अधिक उठता है। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंमें यह रोग कुछ अधिक देख पड़ता है। रीतिके अनुसार ऋतु न होनेसे अनेक समय स्त्रियोंको यह रोग लग जाया करता है। डाक्टर पहले उस पर आयोडाइन लगानेको कहते हैं। उससे कोई फल न मिलने पर अस्त्रचिकित्सा करनेका परामर्श दिया जाता है। होमिओपाथिके मतमें दिनमें और रातको पहले ३ दिन तक एक एक बूंद स्पनजिया और सात दिन पीछे फिर एक एक बूंद वही सेवन कराना चाहिये। इससे फायदा न पहुंचने पर सवेरे प्रति दिन १ बूंद आयोडाइन सात दिन व्यवहार करके फिर सात दिन तक खाली जाने देते हैं। इससे भी लाभ न होने पर रातको एक बूंद काला हाइड्रिड देना चाहिये। गलगण्डमें चूर्णखण्ड निकलनेसे इस रोगको असाध्य समझना चाहिये।

गलगनाथ—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत धारवार जिलेका एक ग्राम। यह करजगिसे १० कोस उत्तरपूर्व तुङ्गभद्रा नदीके वामपार्श्व पर अवस्थित है। यहां गर्गेश्वर और हनुमानके मन्दिर हैं। ग्रामके उत्तर वर्दा और तुङ्गभद्रा नदीके संगमस्थान पर गर्गेश्वरदेवका मन्दिर अवस्थित है मन्दिर कृष्णवर्ण ग्रेनाइट पत्थरसे निर्मित है। इसकी लम्बाई ५३ हाथ और चौडाई प्राय: २७ हाथकी है और इसकी छत चार बड़े बड़े खंभोंके ऊपर रचित है। दीवारमें नाना प्रकारकी मूर्तियां खुदी हुई हैं।

गलगल (हिं० पु०) एक प्रकारका पक्षी। यह मैना जातिका है। यह सुर्खी लिये काले रंगका होता है। इसके गर्दन पर दोनों ओर लालधारियां होती है और पूंछ श्वेत वर्णको होती है, गलगलिया। २ एक प्रकारका बहुत बड़ा नीबू। पकने पर इसका रङ्ग बसन्ती रंगसा हो जाता है। इसका स्वाद बहुत अम्ल होता है। ३ चर्वीकी बत्तीका एक खंड। यह जहाजमें समुद्रकी गहराई नापनेवाले औजारमें सीसेकी एक नलीसे लगा रहता है। ४ एक प्रकारका मसाला जो अलसी और चूनेके तेलको मिलाकर बनाया जाता है। यह किसी पदार्थको जोड़ने वा छेद बन्द करनेके काममें आता है।

गलगला (हिं० वि०) आर्द्र, भींगा हुआ।

गलगलाना (हिं० क्रि०) गीला होना। तर होना, भीगना।

गलगलि—बम्बई प्रदेशके बीजापुर जिलान्तर्गत एक गण्ड ग्राम। यह कलाद्गिसे ६ कोस उत्तर कृष्णानदीके तीर पर अवस्थित है। पहले यह प्राचीन दण्डकारण्यके अन्तर्गत था। गालव ऋषि इस स्थान पर रहते थे। इसलिये यह गालवक्षेत्रसे मशहूर है। गलगलि ग्रामसे डेढ़कोस दक्षिण

नामक एक मार्किन महिला जापानमें जन्म-संरोध-प्रणालीके विषय वक्तृता देने गई थीं, किन्तु कलकत्ता विश्वविद्यालयके अध्यापक श्रीयुक्त आर० किमूराका कहना है कि उनकी बात पर किसीने भी ध्यान नहीं दिया था। इससे मिसेस मार्गरेट असन्तुष्ट हो कर प्रचारार्थ कोरिया और चीन चली गईं।

जापानियोंकी विवाह-प्रणाली भारतसे बहुत कुछ मिलती-जुलती है। वहां भी पहले पुत्रकन्याओंका विवाह-सम्बन्ध मातापिता ही करते हैं और उनकी असम्मति न होने पर "नाग्राद" भेज घटक द्वारा सम्बन्ध स्थिर करते हैं। यहां जैसे विवाह कार्यको धर्मानुष्ठान समझ कर पुरोहितों द्वारा उसका कार्य सम्पादन होता है, वैसा जापानमें नहीं होता। जापानियोंके लिए विवाह कार्य एक सामाजिक अनुष्ठानके सिवा और कुछ भी नहीं है। इसीलिए वहां विवाहके सब कार्य घटक द्वारा ही सम्पादित होते हैं।

जापानमें ऐसा कानून है कि पुरुषकी उमर १७ और स्त्रीकी उमर १५ वर्ष होने पर, उन्हें विवाह करनेका अधिकार हो जाता है। परन्तु इस कानूनको कोई मानता नहीं। सामाजिक व्यवहार-क्षेत्रमें स्त्रियां १८ से २५ और पुरुष २२ से ३५ वर्षके भीतर ब्याह कर लेते हैं। कहीं कहीं इससे भी ज्यादा उम्रमें ब्याह होता है। शिक्षालाभ और आर्थिक असामर्थ्य ही प्रधानतः इस विलम्बमें कारण है।

घटक और पितामाताके साथ मुलाकात होने पर लड़के और लड़कियां भी परस्पर मिल कर भावी स्त्री वा स्वामीको चुन लेती हैं। लड़कीकी गोद भरते समय लड़केका बाप लड़कीवालेको रुपया देता है। धनी व्यक्ति पांच छ सौ रुपया तक दे डालता है। रुपयेके साथ एक लाल वृहत् सामुद्रिक 'मेटकी' मछली उपहारमें देता है, जो वहां शुभ समझी जाती है। इस दिन लड़कीवाला लड़केवालेको बड़े आदरके साथ जिमाता है। जिमानेमें पहले सामाजिक नियमानुसार शराब पिलाता है और साथ ही विवाहमङ्गलके गीत गाये जाते हैं। इसी दिन विवाहका मुहूर्त शोधा जाता है।

इसके प्रायः तीन चार मास बाद विवाह हो जाता है। जापानमें रुपये पैसेके लेन-देन नहीं होता, किन्तु लड़कीवाला लड़कीको पोशाक और गहना बहुत बनवा देता है।

जापानी लोग जमीन पर थाली रख कर नहीं खाते और न अङ्गरेजोंकी तरह टेबिल पर ही खाते हैं। उनके भोजनके कमरेमें १ फुट ऊंचा तख्त बिछा रहता है, जिस पर १ इञ्च मोटी चटाई रहती है।

उस पर स्त्रीपुरुष सब एकसाथ वीरासनसे बैठते हैं और अपने अपने सामने चौकी पर थाली रख कर भोजन करते हैं। किन्तु आजकल पाश्चात्यके अनुकरणसे कुछ लोग टेबिल पर भी खाने लगे हैं। ये ज्यादातर चीना-मिट्टीके बरतन ही काममें लाते हैं।

विशेष भोज उपस्थित होने पर भात ही खिलाया जाता है, किन्तु उसके साथ नाना प्रकारके व्यञ्जन और मिठाई भी परोसी जाती है और बड़े बड़े भोजोंमें 'गेसा' बालिकाएं परोसनेके लिए नियत की जाती हैं, जो नाट्य-गीतकलामें सुदक्ष होती हैं। हर एक 'गेसा' बालिकाको इस कामके लिए १०) रु० घण्टेके हिसाबसे मेहनताना दिया जाता है। इनमेंसे कुछ परोसती हैं, कुछ गाती हैं कुछ बजाती हैं और कुछ हावभाव दिखा कर नाचती वा अभिनय करती हैं, सारांश यह है कि ये भोजन करनेवालोंको सब तरहसे खुशदिल रखती हैं। कभी कभी, यदि बन्दोबस्त ठीक हो तो, रात भर इसी तरह आनन्दभोज होता रहता है।

जापानमें एक प्रकारकी देशीय पोशाक प्रचलित है, जो 'किमोनो' कहलाती है। १८६८ ई०में जब पहले पहल जापानी पाश्चात्य सभ्यतासे परिचित हुए थे, तभीसे जापानके पुरुष काम काजके सुभीतेके लिए यूरोपीय पोशाकका व्यवहार करने लगे हैं। यही कारण है कि इस समय जापानमें क्या कार्मस्थल और क्या विद्यालय, सर्वत्र ही कोट पतलून नजर आने लगे हैं। इस लिए आजकल जापानके उच्च और मध्यम श्रेणीके लोगोंको बाध्य हो कर देशीय और पाश्चात्य दोनों प्रकारकी पोशाक रखनी पड़ती है।

'किमोनो' पोशाकके नीचे जापानी स्त्री और पुरुष भिन्न भिन्न पोशाक पहनते हैं। पुरुष गलेसे कमर तक

शिलाजतु, कुचिला, और वच प्रत्येकके चार चार भागको घृत और मधुके साथ मर्द्दन कर दो तोला परिमाण प्रति दिन सेवन करनेसे गलत्कुष्ठ, 'कलास, वातरक्त, जलोदर और मलवद्धादि रोग नष्ट होते हैं।

गलतां (फा० वि०) गलतान देखो।

गलता (अ० पु०) १ एक प्रकारका बहुत चमकीला वस्त्र। इसका ताना और बाना क्रमशः रेशम और सूतके होते हैं। यह सादा धारीदार और भिन्न भिन्न तरहके होते हैं। २ मकानकी कारनिस।

गलताड (हिं० पु०) जूएकी खूंटी जो भीतरकी ओर होती है।

गलतान (फा० वि०) लुढकता हुआ, चक्कर मारता हुआ।

गलती (फा० स्त्री०) १ भूल, चूक। २ धोखा।

गलथना (फा० पु०) बकरियोंकी गरदनमें दोनों ओर लटकी हुई थैलियां।

गलथैली (सं० स्त्री०) बंदरीके गालके नीचेकी थैली। इसमें वे खानेकी वस्तु भर लेते हैं।

गलदश्रु (सं० त्रि०) जिसका अश्रु गल रहा हो, जिसका आंसू बह रहा हो।

गलद्वार (सं० क्ली०) गलेका रास्ता, जहां हो कर अन्न भीतर जाता है।

गलदेश (सं० पु०) गल एव देशः। गला, ग्रीवा, गरदन।

गलन (सं० क्ली०) गल भावे ल्युट्। क्षरण, गल कर गिरना।

गलनहां हिं० पु०) हाथियोंका एक रोग। इसमें उनके नाखून गल गल कर निकला करते हैं। (वि०) वह हाथो जिसे गलनहां रोग हो।

गलना (अ० क्रिया) १ किसी पदार्थके घनत्वका नष्ट होना। यह विश्लेषण किसी द्रव्यके बहुत दिनों तक जल तेजाब आदिमें पडे रहने, गरमी लगने अथवा किसी और प्रकारके संयोगके कारण हो जाता है। २ बहुत जीर्ण होना, किसी कामके योग्य न रहना। ३ शरीरका दुर्बल होना। ४ बहुत ज्यादे ठण्डके कारण हाथ पैरका ठिठुरना। ५ वृथा या निष्फल होना।

गलनीय (सं० वि०) गल् अनीयर्। गलनेके योग्य, सडने लायक।

गलन्तीका (सं० स्त्री०) गलतीति गल-शत्-ङीप्, मूम्. अल्पार्थे कन्। स्वल्प वारिधानिका, वह बरतन जिससे कम पानी निकलता हो, गडुवा। (कार्मखण्ड ५ अ०)

गलफडा (हिं० पु०) १ जल जंतुओंके पानीमें सांस लेनेका अवयव। यह मस्तकके उभय ओर होता है। भिन्न भिन्न जल जन्तुओंका गलफडा भिन्न भिन्न आकारका होता है। मछलीके गलेमें सिरके दोनों ओर दो अर्द्ध-चन्द्राकार छिद्र होते हैं, जिनके मध्यमें चार चार अर्द्ध-चन्द्राकार कमानिया होतीं हैं जिन्हें गलकट कहते हैं। २ गालोंके दोनों जवड़ेके बोचका मास।

गलफरा (हिं० पु०) गलफडा देखो।

गलफांस हिं० स्त्री०) मालखंभकी एक कसरत। इस कसरतमें बेंतको गलेसे लपेट कर उसके एक सिरेको छाती परसे ले जा कर अंगूठेके नीचे दबाते हैं और सिर्फ गलेके जोरसे अपने मस्तकको पेट तक झुकाते है।

गलफांसी (हिं० स्त्री०) १ गलेकी फांसी। २ कष्टदायक वस्तु वा कार्य, जंजाल।

गलफूट (हिं० स्त्री०) बड़बड़ानेकी आदत।

गलफूला (हिं० वि०) जिसका गाल फूल गया हो। (पु०) एक रोग जिसमें गलेसे सूजन होती है।

गलफड़े (हिं० पु०) गलेकी गिलटी।

गलबंदनी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पहिरावा जो गलेमें पहना जाता है, गुलबन्द।

गलबदरी (हिं० स्त्री०) ऐसा बादल जिसके साथ हाथ पांव गलानेवाला जाड़ा पड़े। यह अवस्था प्रायः जाड़ेके मौसिममें होती है।

गलबल (हिं० पु०) कोलाहल, गड़बड़ी, खलबली।

गलबांही (हिं० स्त्री०) कण्ठालिङ्गन, प्रेमसे गलेमें बांह डालना।

गलभङ्ग (सं० पु०) गलस्य कण्ठ स्वरस्य भङ्गः, ६ तत्। स्वरभङ्ग, जिसका स्वर ठीक नहीं हो।

गलमंदरी (हिं० स्त्री०) गलमुद्रा जो शिवजीके पूजन और शयनके समय उन्हें खुश करनेके लिये की जाती है। २ गाल बजाना, व्यर्थ बकवाद या गप्प करना।

गलमुच्छा (हिं० पु०) दोनों गालों परके बढ़ाये हुए बाल। लोग इसे शौकसे रख लेते हैं।

दो वर्ष शिक्षा पाई है वे हो माध्यमिक विद्यालयमें प्रविष्ट होनेके योग्य समझे जाते हैं। प्रतिवर्ष माध्यमिक विद्यालयमें प्रवेशेच्छुओंकी संख्या अधिक होनेके कारण, उनमेंसे परीक्षा द्वारा निर्दिष्ट संख्यक छात्र चुन लिये जाते हैं। माध्यमिक विद्यालयमें नीति, जापानी और चीना भाषा, अंग्रेजी-इतिहास, भूगोल, गणित, प्राकृत-विज्ञान, पदार्थ-विज्ञान, रसायन, देश-शासन-प्रणाली और राष्ट्रनीति, चित्रकला, सङ्गीत, व्यायाम और फौजी कवायद सिखाई जाती है। जापानी और चीना भाषाके लिए जितना समय दिया जाता है, उतना ही समय अंग्रेजीशिक्षाके लिए भी व्ययित होता है।

माध्यमिक विद्यालयकी शिक्षा समाप्त कर वे छात्र फिर उच्च विद्यालयमें प्रविष्ट होते हैं। इसमें भी परीक्षा ले कर विद्यार्थियोंकी भरती किया जाता है। उच्च विद्यालय छात्रोंको विश्वविद्यालयमें प्रविष्टके उपयुक्त बना देते हैं। इसकी शिक्षा तीन भागोंमें विभक्त है। जो विश्वविद्यालयमें कानून वा साहित्य अध्ययन करेंगे, उनके लिए प्रथम विभाग, जो औषध-प्रस्तुतप्रणाली इञ्जिनियरिङ्विज्ञान वा कृषिविद्या अध्ययन करेंगे, उनके लिए द्वितीय विभाग और जो चिकित्साशास्त्र अध्ययन करेंगे, उनके लिए तृतीय विभाग है। प्रथम विभागमें नीति, उच्चाङ्गका जापानी और चीना साहित्य, अंग्रेजी, जर्मनी और फरासीसी इनमेंसे कोई भी एक साहित्य, न्याय और मनोविज्ञान, कानूनका मूलतत्त्व, मिताचार और व्यायामकी शिक्षा दी जाती है।

बालिका-विद्यालयोंमें विद्याभ्यासका समय ४ वर्ष निर्दिष्ट है। बालिकाओंको जापानी और अंग्रेजी भाषा, इतिहास, भूगोल, गणित, धातु, उद्भिद् और प्राणियोंका वृत्तान्त, चित्रकला, गृहस्थीका काम, सीना-पिरोना, सङ्गीत और व्यायाम सिखाया जाता है।

जापानमें दो राजकीय विश्वविद्यालय हैं—एक 'टोकिओ'में और दूसरा 'कियोटो' में। 'टोकिओ'-विश्वविद्यालयके २० वर्ष बाद 'कियोटो'-विश्वविद्यालयकी प्रतिष्ठा हुई थी।

'टोकिओ' विश्वविद्यालयके अधीन छः कालेज हैं—आईन, चिकित्सा, इञ्जिनियरिङ्, साहित्य, विज्ञान और कृषि-कालेज। इसके सिवा जापानके उत्तरमें 'साप्पोरो'में एक कृषि विद्यालय है। राजकीय विश्व विद्यालयके सिवा 'टोकिओ'में और भी दो उल्लेखयोग्य विश्वविद्यालय हैं। एकका नाम है 'केयो' और दूसरेका 'ओयासेदा'। 'केयो' विश्वविद्यालय १८६५ ई०में स्थापित हुआ था। इसके प्रतिष्ठाता 'फुकूजावा' स्वनामधन्य पुरुष थे। इन्होंने सबसे पहले जापानमें पाश्चात्य शिक्षा और संवादपत्रोंका प्रवर्तन किया था। जिस समय जापानमें अन्तर्विप्लव चल रहा था, उस समय इनके विद्यालयकी प्रतिष्ठा हुई थी। जिस समय जापानमें भीषण अन्तर्विप्लवके कारण अन्यान्य सभी विद्यालय बन्द हो गये थे, उस समय भी इनका विद्यालय अपना कार्य करता रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इनका उत्साह प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

समग्र जापानमें मूक और अन्धोंके २६ विद्यालय हैं। जिनमें सिर्फ एक सरकारी है।

लड़कोंको सिर्फ भाषा सिखानेके लिए एक सरकारी विद्यालयकी स्थापना हुई है। साधारणतः इसके विद्यार्थी व्यवसायी हो कर विदेश जाया करते हैं। इसमें निम्न लिखित देशोंकी भाषा सिखाई जाती है, जैसे—१ इङ्गलैण्ड, २ जर्मनी, ३ फ्रान्स, ४ इटली, ५ रूसिया, ६ स्पेन, ७ चीन और ८ कोरिया। फिलहाल इसमें तामिल और हिन्दी-भाषाकी भी शिक्षा दी जाने लगी है।

जापानमें प्रायः साढ़े तीन हजार शिल्प-विद्यालय हैं। जापानियोंकी जाति शिल्पीकी जाति है, प्रायः समग्र जगत्‌में उनकी शिल्प-वस्तुएं व्यवहृत होती हैं। इसलिए उनके देशमें शिल्प-विद्यालयोंकी संख्या ३५०० होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। इन विद्यालयोंमें चीना मिट्टीसे बरतन बनाना, काँच बनाना, कपड़ा बुनना, फलित रसायन और इञ्जिनियरिङ् आदि नाना प्रकारकी शिल्पविद्या सिखाई जाती है।

जापानके छात्रोंमें एक विलक्षणता यह पाई जाती है, कि चाहे वे प्राथमिक विद्यालयके छात्र हों और चाहे विश्वविद्यालयके, विद्यालय जाते समय वे हाथमें दावात जरूर लटका ले जाते हैं।

गलहस्तित (सं० त्रि०) जिसके गले पर हाथ दिया गया हो। (नैषध ३।२५.)

गलही (हिं० स्त्री०) नावका वह अगला और उपरका भाग, जहां उसके दोनों पार्श्व आकर समाप्त होते हैं।

गला (सं० स्त्री०) गलतीति गल-अच्-टाप्। १ अलम्बुषा, लज्जालुलता। २ शरीरका वह अवयव जो सिरको धड़से जोड़ता है, गलदेश।

गलाऊ (हिं० वि०) जो गलता हो, गलनेवाला।

गलाङ्कुर (सं० पु०) गलजात: अङ्कुर:। गलदेशजात मांसाङ्कुर विशेष। एक प्रकारका गलेका रोग, जिसमें गाल फूल जाता है।

गलाध:करण (सं० क्ली०) निगलनेकी क्रिया।

गलाना (हिं० क्रि०) किसी वस्तुके संयोजक अणुओंको पृथक् पृथक् करके उसे नरम गोला करना।

गलानि (हिं० स्त्री०) दुःख वा पश्चात्तापके कारण खिन्नता। २ खेद, दुःख।

गलानिक (सं० पु०) गले अनिकी प्राणो यस्य। झींगा, एक प्रकारकी मछली।

गलानिल (सं० पु०) गले अनिलः। प्राणवायु, प्राण। २ मत्स्यभेद, एक प्रकारकी मछली।

गलायुक (सं० पु०) गलरोगभेद। एक प्रकारकी गलेकी बीमारी।

गलार (हिं० पु०) एक पेड़का नाम।

गलारी (हिं० स्त्री०) गिलगिलिया नामकी चिड़िया।

गलावट (हिं० स्त्री०) १ गलनेका भाव या क्रिया। २ वह वस्तु जो दूसरी वस्तुको गलावे, सोहागा नौसादर आदि।

गलाविल (सं० पु०) गलानिक मछली।

गलार्बुद (सं० क्ली०) एक प्रकारकी बीमारी जो मदा गलेमें हुआ करती है।

गलि (सं० पु०) गिरति अममक्षत्वेव भक्षयतीति गल-इन्। वह बैल जो सामर्थ्य होने पर भी बोझ खींच न सके, दुष्ट या मट्टर बल। २ स्वल्प परिसर पथ, वह रास्ता जिससे शीघ्र पहुंचा जाय।

गलित (सं० त्रि०) गल-क्त। १ पतित, नीतिभ्रष्ट, महापापी। इसका पर्याय—स्रस्त, ध्वस्त, भ्रष्ट, स्कन्न और च्युत है। २ द्रवीभूत, गला हुआ।

गलितकुष्ठ (सं० क्ली०) गलितं कुष्ठम्, कर्मधा०। गलित कुष्ठ रोग, इसमें शरीरके सब अंग सड़ने और कटकट कर गिरने लगते हैं तथा उसमें कीड़े पड़ जाते हैं। गलत्कुष्ठ देखो।

गलितदन्त (सं० त्रि०) जिसे दाँत न हो।

गलितयौवना (सं० स्त्री०) वह स्त्री जिसका यौवन ढल गया हो, ढलती जवानीकी स्त्री

गलिया (हिं० स्त्री०) चक्कीके छेद जिसमें पीसनेके लिये दाना डाला जाता है। (हिं० वि०) मट्टर, सुस्त। यह सिर्फ बैल आदि चौपायोंके लिये आता है।

गलियारा (हिं० पु०) संकीर्ण राह, तंग छोटी गली।

गलियारा—रंगरेजोंकी एक जाति। ये अहमदाबाद और सूरतमें पाये जाते हैं। ये बहुत छोटे छोटे घरमें रहते हैं, और कपड़ेको रंगाकर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। स्त्रियां भी मर्दको वस्त्र रंगनेमें सहायता पहुंचाती हैं। इनमेंसे बहुत थोड़े अपने लड़केको पढ़ाते हैं

गलियारी (हिं० स्त्री०) मार्ग, गली।

गली (सं० स्त्री०) दो घरोंको पंक्तियोंके बीचसे हो कर गया हुवा तंग रास्ता, खोरी।

गलीचा (फा० पु०) एक प्रकारका बिछौना। यह बहुत मोटा और भिन्न भिन्न रङ्गोंका बना रहता है। इसमें घने बालोंकी तरह सूत निकले रहते हैं।

गलीज़ (अ० वि०) १ गंदला, मैला। २ अशुद्ध, अपवित्र, नापाक।

गलीत (अ० वि०) मंदा, मैला, कुचैला।

गलु (सं० पु०) गल-उन्। मणिविशेष, एक प्रकारका रत्न।

गलू (सं० पु०) एक प्रकारका पत्थर, जिससे प्राचीन कालमें मदीरेके बरतन बनाये जाते थे।

गलन (सं० पु०) काश्मीरके एक राजमन्त्री। (राजतरङ्गिणी ३।१७६-१७७)

गलेगण्ड (सं० पु०) गलेगण्ड इवास्य। पक्षिविशेष, हड़गिल्ल।

गलेचोपक (सं० त्रि०) गले चुप्यतेऽसौ चुप कर्मणि ण्वुल्। अलुक् समास। कण्ठ-कर्तनीय, काटनेके योग्य गला।

विद्रोह उपस्थित हुआ और ये शत्रुओंके हाथ फंस गये। कुछ भी हो, जाफर अपनी चतुराईसे शत्रुओंके पञ्जेसे छुटकारा पा कर भाग गये। फतेपुर पहुंच कर इन्होंने दो हजार सेनाके अधिनायकका पद और आसफखान्‌की उपाधि पाई।

जलाल रोसानी, बराकजाई और आफ्रिदीके अफगानोंको उत्तेजित कर विद्रोह करने पर, आसफखान् उनके दमनके लिए भेजे गये। जैनखाँ कोकाकी सहायतासे इन्होंने जलालको परास्त कर दिया।

जहांगीरके बादशाह होने पर आसफखान् राजपुत्र पार्विजके आतालिक अर्थात् वजीर बनाये गये। इसके बाद इन्होंने वकील उपाधि और पांच हजार सेनाका अधिनायकत्व प्राप्त किया।

इसके उपरान्त ये राजपुत्र पारविजके साथ दाक्षिणात्य जय करनेको गये थे, किन्तु पराजित हो कर लौट आये। बुर्हानपुरमें इनकी मृत्यु हो गई।

आसफखाँ जाफरवेग अत्यन्त बुद्धिमान थे। इनके समान सुदक्ष राजस्व-सचिव और हिसाब-रक्षक बहुत कम ही देखनेमें आते हैं। प्रवाद है, ये जिस हिसाबके चिट्ठे पर एक बार निगाह फेर लेते थे, उसका सब हिसाब इन्हें याद रहता था। बगीचेका इन्हें खूब शौक था। इनकी बहुतसी स्त्रियां थीं।

धर्मके विषयमें ये अकबरके शिष्य थे। कविता बनानेमें इनकी विलक्षण क्षमता थी। अकबरके समयमें इनकी श्रेष्ठ कवियोंमें गिनती थी।

जाफरवाल—१ पंजाबके सियालकोट जिलेके उत्तर पूर्वांशकी एक तहसील। यहांकी भूमि उर्वरा और पर्वतनिःसृत असंख्य निर्झरिणी-विशिष्ट है। इसका रकबा ३०२ वर्गमील है। यहां एक फौजदारी और दो दीवानी अदालत तथा दो थाने हैं।

२ उक्त तहसीलका सदर। यह अक्षा० ३२° २२´ उ० और देशा० ७४° ५४´ पू०में देग नदीके पूर्व किनारे पर, सियालकोटसे २५ मील अग्निकोणमें अवस्थित है। प्रवाद है, कि वजवा जाट-वंशीय जाफरखाँ नामक एक व्यक्तिने प्रायः ४ शताब्दी पहले इस नगरकी स्थापना की थी। यहां चीनी और अनाजका रोजगार अच्छा है तथा तहसील, थाना, डाकघर, विद्यालय और राहगीरोंके ठहरनेके लिए डाक-बंगला है।

जाफ़र श्रादिक—मुसलमानोंके १२ इमामोंमेंसे छठे इमाम। मदिनानगरमें इनका जन्म हुआ था। ये महम्मद बेकारके पुत्र, अली जैनउल आवेदीनके पौत्र और इमाम हुसेनके प्रपौत्र थे। ये सभी इमाम थे। जाफ़र श्रादिक (अर्थात् साधु जाफर) मुसलमानोंमें एक तत्त्वज्ञानी मनीषी गिने जाते थे। कहा जाता है, एकदिन खलिफा अल्‌मनसूरने सदुपदेश सुननेके लिए इन्हें राजसभामें उपस्थित होनेके लिए आह्वान किया। इस पर जाफरने उत्तर दिया कि, "सांसारिक विषयोंकी उन्नति चाहनेवाला व्यक्ति को कभी असली उपदेश नहीं दे सकता और जिस व्यक्तिमें सांसारिक विषयोकी स्पृहा नहीं और उस जन्मके लिए सुख चाहता है, वह बादशाहके पास जायगा ही क्यों?" १७६५ ई०में ६५ वर्षकी उम्रमें मदिनानगरमें इनकी मृत्यु हुई। मदिनाके अल्‌बकिया नामक कब्रस्तानमें इनकी तथा इनके पिता और पितामहकी कब्र अभी तक मौजूद है।

कोई कोई कहते हैं, जाफर श्रादिकने पांचसौसे अधिक मुसलमानी धर्मग्रन्थ रचे हैं। "फालनाम" नामक अदृष्टव्यापक ग्रन्थ इन्हीका रचा हुआ है।

जाफ़रान (अ० पु०) कुङ्कुम, केसर। इसका पौधा प्याज लहसुन आदिकी भांति और छोटा होता है। पत्तियां घासकी तरह लम्बी और पतली होती है। इसका पौधा स्पेन, फारस, चीन और काश्मीरमें होता है। काश्मीरी केसर सबसे अच्छी समझी जाती है। इसका फूल बैंगनी रंगकी आभा लिए कई रंगका होता है। प्रत्येक फूलमें सिर्फ तीन जाफ़रान निकलते हैं। इस हिसाबसे एक छटांक असली केसरके लिए करीब आठ हजार फलोंकी जरूरत होती है। केसर निकाल लेनेके बाद उन फूलोंको घाममें सुखा कर कूटते हैं और फिर उन्हें पानीमें डाल देते हैं। उसमेंसे जो अंश नीचे बैठ जाता है उसे "मोंगला" कहते हैं, यह मध्यमश्रेणीका जाफ़रान है। जो अंश ऊपर तैरता रहता है, उसे फिर सुखा कर कूटते और पानीमें डालते हैं। अबकी बार जो अंश

गल्लिका (सं० स्त्री०) गल्लक-टाप्, अत इत्वम्। गाल, कपोल।

गल्लिर (सं० पु०) एक प्रकारका रोग।

गल्वर्क (सं० पु०) गलुर्मणिभेदस्तस्येवार्को दीप्तिर्यस्य। १ चषक, मदिरा पीनेका प्याला। २ सारविशिष्ट मणि। ३ पद्मराग मणि, लाल नामका रत्न।

गव (हिं० पु०) एक बन्दरका नाम जो रामचन्द्रजीकी सेनामें था।

गवची (सं० स्त्री०) गां भूमिमञ्चति, गो-अनच्-क्विप्। इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण।

गवत्र (सं० क्ली०) गा त्राति इति त्रै-ड। गोभक्ष्य पयाल खड।

गवन्दी—दाक्षिणात्यवासी एक जाति। साधारणतः छप्पर छाना और राजगरी करना ही इन लोगोंका पेशा है। बीजापुर जिले और उसके इलाकेके बागवाडी उपविभागमें इनकी रहायस ज्यादा है। यह कनाड़ीकी टूटी फूटी गंवारू बोलीमें बात चीत करते, परन्तु काम पड़ने पर हिन्दी और मराठी भी बोल लेते हैं। गवन्दी देखनेमें बिलकुल कुनबियों जैसे समझ पड़ते, केवल देखनेमें कुछ ज्यादा काले और लम्बे लगते हैं। इनमें किसी प्रकारका श्रेणीविभाग वा गोत्र अथवा कुलकी विभिन्नता नहीं। परन्तु परस्पर एक उपाधिधारी होनेसे वर और कन्याका विवाह रुक जाता है।

यह पत्थर और मट्टीसे रहनेके लायक घर बना लेते हैं। खड पतवार या वैसी ही किसी चीजसे घरकी छत छायी जाती है। अपने कामके लिये गाय बकरी आदि जन्तु और कुत्ते पालते और अपने आप उनका प्रतिपालन किया करते हैं। कोई काम काज करानेके लिये यह नौकर नहीं रखते। दाल, रोटी और भाजी इनका साधारण खाद्य है। पार्वणादिको अन्नपाक करके खाया जाता है। भेड, हिरन, खरगोश, हंस, मुर्गा आदि पालतू चिड़िया और मछली इनकी प्यारी चीज है, दूसरे मांसको यह अपवित्र और अखाद्य समझ करके नहीं छूते। नशा पीनेका इन्हें कुछ ज्यादा शौक है। त्यौहारके दिन शराब बहुत पी जाती है। मद्यके कारण प्रायः सभी ऋणग्रस्त रहते हैं। गवन्दियोंका पहनावा सीधासादा और साफ सुथरा होता है। स्त्रीपुरुष दोनों कानों और हाथोंमें गहने पहनते हैं। स्त्रियोंको लाल और काला कपड़ा कुछ ज्यादा अच्छा लगता है।

सभी गवन्दी आज्ञाकारी, आतिथेय, कर्मठ, मितव्ययी और नम्र हैं। परन्तु वह मैले कुचैले रहते हैं। पहले यह नमक बना करके बेचते थे, परन्तु उक्त व्यवसाय आजकल बन्द हो जानेसे मजदूरी और खेती करके जीविका निर्वाह करते हैं। इनमें स्त्री, पुरुष, बालक—कोई अवस्थाके अनुसार यथासाध्य जीविकाके लिये चेष्टा करनेसे नहीं चूकता।

गवन्दी बहुत धर्मभीरु होते हैं। देवद्विजमें इनकी बड़ी भक्ति रहता है यह ब्राह्मणोंसे मुहूर्त पूछ करके गृह्य कर्तन, गर्भाधान, विवाह आदि शुभकर्म करते और ब्राह्मणको उसमें नियुक्त रखते हैं। 'ओष्टम्' नामक निम्नश्रेणीके तैलङ्गी ब्राह्मण ही इनके पुरोहित हैं। हनुमन्तदेव, तुलजा भवानी, व्यङ्कटरमण और यल्लमा देवीको कुलदेवता जैसा पूजते हैं। आर्कट नगरके उत्तर वेङ्कटगिरि और निजाम राज्यके अन्तर्गत तुलजापुरकी इनकी तीर्थयात्रा होती है। आश्विन मासमें दशहरेको तुलजाभवानी देवीके प्रीत्यर्थ भेड बलि दिया करते हैं। यल्लमा देवीके पूजा समय निमन्त्रित ज्ञातिको खिलाया जाता है। देवमूर्तियां प्रायः मनुष्य, वृष और वानरके आकारकी बनती हैं।

गवन्दी लोग सवेरे नहा धो करके गृहदेवताकी पूजा करते हैं। जिनके गृहदेवता नहीं, वे मारुतिके मन्दिरमें आह्निक समापन किये विना जल ग्रहण करनेसे विरत रहते हैं। पर्व आदिको यथारीति उपवास प्रभृति किया जाता है। ओष्टम् ब्राह्मण परम्परानुसार दीक्षा देते हैं। इनके गुरुको ताताचार्य कहते, जो एक मात्र धर्मोपदेष्टा रहते हैं। उनके भरणपोषणको सबसे चन्दा लिया जाता है। गवन्दी ग्राम्य देवता या किसी उपदेवताको नहीं पूजते।

भूतप्रेत, डाइन, चुडैल और भविष्यत् वाक्यमें इन्हें बड़ा विश्वास है। औषधसे रोग शान्ति न होने पर ओझा आ करके झाड़ फूक करते हैं। इससे भूतको खाना कपड़ा देने पर वह उतर जाता है। किसी रोगीको देवता

पूजा और विवाह आदिके समय एक बौद्ध याजक और एक ब्राह्मण पुरोहित, दोनों मिल कर कार्य समाप्त करते हैं। नेपालमें जाफ़ुओंकी छह सम्प्रदायोंकी तरह और भी प्रायः २४ सम्प्रदाय ऐसे हैं, बुद्धदेव और हिन्दू देवदेवीकी एकत्र उपासना करते हैं। धार्मिक विषयोंमें समान होने पर भी समाजमें ये लोग जाफ़ुओंसे हीन समझे जाते हैं। जाफ़ुओंके उक्त छह सम्प्रदायोंमें परस्पर विवाह और खान पान चलता है।

जावजा (फा० क्रि०-वि०) जगह जगह, इधर उधर।

जाबता (अ० पु०) कायदा, नियम, जब्ता।

जावप्रेस (अं० पु०) वह छोटी कल जिसमें कोई विज्ञापन आदि छापे जाते हैं।

जावर (हिं० पु०) वह चावल जो घीएके महीन टुकड़ोंके साथ पकाया जाता है।

जावाल (सं० पु०) जबालाया: अपत्यं पुमान् इति अण्। १ मुनिविशेष, सत्यकाम, जबालाके पुत्र। जबालाने बहुतसे पुरुषोंके साथ सहवास किया था। इनके पुत्र सत्यकाम जब वेदकी शिक्षा लेनेको गये, तब ऋषियोंने इनसे अपना परिचय देनेके लिए कहा। परन्तु इन्हें अपना गोत्र मालूम नहीं था। इससे माताके पास जा कर इन्होंने अपना गोत्र पूछा। माताने उत्तर दिया—"मैंने बहुतोंके साथ सहवास किया है, इसलिए मैं नहीं जानती कि, तुम किसके औरससे पैदा हुए हो। तुम गुरुके पास सत्यकाम जावालके नामसे अपना परिचय देना।" इसके अनुसार ये सत्यकाम जावालके नामसे प्रसिद्ध हुए। (शतपथब्रा०, ऐतब्रा० और छान्दोग्यउ०) ये एक स्मृतिकार थे। २ महाशालकी उपाधि। ३ एक वैद्यकग्रन्थ। ४ अजाजीव। (अमर २।१०।११) ५ एक उपनिषद्का नाम। (मौक्तिकोपनि०) ६ एक दर्शन-शास्त्रका नाम। (रामदत्तशाप०)

जावालयन (सं० पु०) एक वैदिक आचार्य।

जावालि (सं० पु०) जबालाया: अपत्य पुमान इनि इञ्। कश्यप वंशके एक मुनि। ये दशरथके गुरु थे। इन्होंने चित्रकूटमें रामचन्द्रको राज्य ग्रहण करनेके लिए अनेक युक्तियां बतलाई थीं। (रामा०) ये व्यासकथित ब्रह्मधर्मपुराणके श्रोता थे। (ब्रह्मवै०)

जावाली (सं० पु०) वेदकी एक शाखा।

जाबिर (फा० वि०) १ अत्याचार करनेवाला, जबरदस्ती करनेवाला। २ प्रचण्ड, जबरदस्त।

जाब्ता (अ० पु०) व्यवस्था, नियम कायदा, कानून।

जाम (हिं० पु०) १ जम्बू, जामुन। २ प्रहर, पहर, एक जाम ७॥ घड़ी या तीन घण्टेके बराबर होता है। ३ जहाजकी दौड़। (लश०) ४ जहाजके दो चट्टानोंके बीचमें अटकाव, फंसाव। (लश०)

जाम (फा० पु०) १ प्याला। २ प्यालेके आकारका कटोरा।

जामकी—पञ्जाब प्रान्तके सियालकोट जिलेकी डस्का तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० ३२° २३' उ० और देशा० ७४° २५' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ४२१६ है। इसका असली नाम पिण्डीजाम है, क्योंकि पिण्डी नामक खत्री और चीभ नामक जाटने इसे बसाया था। १८६७ ई०में यहां म्युनिसपालिटी स्थापित हुई थी।

जामखेड़—१ बम्बई प्रान्तके अहमदनगर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १८° ३३' एवं १८° ५२' उ० और देशा० ७५° ११' तथा ७५° ३५' पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४६० वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: ६४२५८ है। इसमें एक नगर और ७५ गांव हैं। मालगुजारी करीब एक लाख और सेस ७०००) रु० है। यहांकी जलवायु स्वास्थ्यकर है।

इस उपविभागके ग्राम कहीं तो एक दूसरेसे सटे हुए हैं और कहीं अलग अलग, किन्तु उनके चारो तरफ निजामका अधिकार है। इसका अधिकांश स्थान उच्च मालभूमि है। नागौर और बालाघाटकी पर्वतश्रेणी इसके बीचमें फैली हुई है। यहांका मट्टी कोमल और उपजाऊ है। निकटमें उच्च पर्वत होनेसे यहां वर्षा खूब होती है। यहां धान, गेहूं, बाजरा, ज्वार, मूंग, मसूड़, मटर, तिल, सरसों आदिकी पैदावार अच्छी है। इसके सिवा यहां तम्बाकू और सन भी पैदा होता है।

जामखेड़से अहमदनगर (४६ मील) तक पक्की सड़क गई है, जिसका कुछ अंश अङ्गरेजी राज्यमें और कुछ निजाम-राज्यमें है। इस सड़कके होनेसे यहांका

नियुक्त किया हुआ सबसे बड़ा हाकिम। इनके अधीन कई एक गवर्नर और लफटेंट गवर्नर रहते हैं। इङ्गलैण्ड के बादशाह गवर्नरोंको नियुक्ति स्वयं करते हैं। पर लफटेंट गवर्नर,गवर्नर-जनरलसे नियुक्त होते हैं। गवर्नर-जनरल एक कौंसिल वा मंत्रिमंडल द्वारा शासन करते हैं, वाइसराय, बड़े लाट।

गवर्नरी (अं० स्त्री०) १ वह प्रान्त जहाँ पर गवर्नर शासन करता हो, प्रेसिडेन्सी। २ शासन, अधिकार।

गवराज (सं० पु०) गविन शब्देन राजते राज-अच। वृष, बैल, साँढ।

गवल (सं० पु०) गवं शब्दं लाति ला-क। वनमहिष, जङ्गली भैंसा, अरना। (रघुवंश० ३१।१८)

गवल (सं० क्ली०) गव-ला-क। महिषशृङ्ग, भैंसेका सींग।

गवलगण (सं०पु०) सञ्जयके पिता।

"सञ्जयो मुनिकल्पस्तु जज्ञे स्तोगवल्गणात्।" (भारत १।६३।९०)

गवली (सं० पु०) महिष, भैंसा।

गवहियाँ (हिं० पु०) अतिथि, मेहमान।

गवाक्ष (सं० पु०) गवामक्षोव। यद्वा गावः सूर्यकरा जलानि वा अक्ष्णुवन्ति व्याप्नुवन्तीति अनेनेति। अक्ष-घञ्। १ वातायन, झरोखा, छोटी खिड़की। इसका पर्याय वधूदृगयन, जाल और जालक है। (कुमार)

२ वानरविशेष, वैवस्वतमनुका पुत्र, राम रावण युद्धमें यह रामचन्द्रजीके सेनापतिके पद पर नियुक्त किया गया था।

गवाक्षिका (सं० स्त्री०) अपराजिता।

गवाक्षित (सं० त्रि०) प्रणयन किया हुवा, रचना किया हुवा।

गवाक्षी (सं० पु०) गां भूमिं अक्ष्णोति अक्ष-अण् गौरादित्वात् ङीष्। १ गोडुम्बा, एक प्रकारकी ककड़ी या तरबूज। २ इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण। इसका पर्याय—ऐन्द्री, इन्द्रवारुणी, चित्रा, गवाक्षी, गजचिर्भटा, मृगेर्वारु, पिटङ्कोटी, विशाला और मृगादनी है। ३ शाखोटवृक्ष, सहोराका पेड़। ४ अपराजिता। (रत्नमाला)

गवाची (सं० स्त्री०) गवि भूमौ अञ्चतीति। अनुच्-क्विप्-ङीप्। (अवङ् स्फोटायनस्य। पा ६।१।१२३) इति अवङ्।

मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली। यह अजीर्णकारक, गुरु, श्लेष्माका प्रकोपकर है।

गवादन (सं० क्ली०) गोभिरद्यते अद् कर्मणि ल्युट् अवङ्। तृण, घास।

गवादनी (सं० स्त्री०) गवादन गौरादित्वात् ङीष्। १ इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण। २ नील अपराजिता। ३ एक तरहका बरतन।

गवादि (सं० पु०) पाणिनीका एक गण। गो, हविस्, अक्षर, विष, वर्हिस्, अष्टका, सखदा, युग, मेधा, स्रुच, कूप, खद, दर, खर, असुर, अध्वन्, वेद, वीज और दीप्त, इन सभोंको गँवादि कहते हैं।

गवाधिका (सं० स्त्री०) गवा कारणेन अधिकायति कै-क-टाप्। लाक्षा, लाह, लाख।

गवानृत (सं० क्ली०) गवि गोविषये अनृतम्। गोविषयमें मिथ्याकथन, गौके बारेमें झूठ बोलना। (स्मृति)

गवान महमूद—दक्षिणापथके बहमानी राजाओंके एक मन्त्री। १४६१ ई० ३ सितम्बरको नवाब हुमायूंके मरने पर उनके अष्टमवर्षीय पुत्र निजामशाह राजपद पर अभिषिक्त हुए। उनकी माने इनको विश्वस्त और विचक्षण देख करके मन्त्री बना लिया। १४६२ ई०को निजामशाहके मर जाने पर उनके भाई मुहम्मद राजा हुए। उन्होंने भी गवानको ही मन्त्री बनाया था। १४८१ ई०को निजाम-उल मुल्क भैरो नामक किसी व्यक्तिने चक्रान्त करके राजासे उनको विश्वासघातक-जैसा बतलाया और राजाने भी विश्वास करके उनके प्राणवधका आदेश दिया इन्हींके मृत्युसे बहमानी राज्यका अधःपतन होने लगा।

गवामयन (सं० क्ली०) दशमास वा द्वादश-मासमें साध्य एक यज्ञ। ताण्ड्यब्राह्मणमें इसका विषय ऐसा लिखा हुआ है—पूर्वकालको कई एक वन्य पशुओंने मिल करके संवत्सर पर्यन्त किसी यज्ञका अनुष्ठान किया था। फिर दूसरोंके भी अनुष्ठान करनेसे इस यज्ञका नाम गव मयन पड़ गया। वन्य पशुका साधारण नाम गो है। जो यज्ञ करने लगे, दशमास पर्यन्त अनुष्ठान होने पर उनमें कुछ चौपायोंके सींग निकल पड़े। उन्होंने परस्पर कहना आरम्भ किया कि यज्ञके फलसे वह समृद्धिशाली बने और

प्रकारका गोंद तथा विषयुक्त तेल निकलता है जो दवाके काममें बहुत उपयोगी है। मनुष्य इसके फल खाते हैं और पत्तियां चौपायोंके चारेके काममें आती हैं। इसका दूसरा नाम पारस है।

जामनगर—बम्बई प्रान्तके काठियावाड़ जिलेका देशी राज्य और नगर। नवा-नगर देखो।

जामनिया (दवीर)—मध्य भारतकी मानपुर एजेन्सीकी एक ठाकुरात। यहांके सरदारोंकी उपाधि भूमिया है। ठाकुरोंमें प्रायः सभी भूलाल जातीय हैं। प्रवाद है कि भूलाल जाति राजपूतोंके संमिश्रणसे उत्पन्न हुई है। जामनियामें प्रसिद्ध भूमिया नादिरसिंहने प्रादुर्भूत हो कर चारों ओर अपनी क्षमताका विस्तार किया था। सिन्धियाके पाँच गांवोंको मिला कर इस ठाकुरातका संगठन हुआ है। इसके सिवा खेरी, दाभर और ४७ भीलोंके मुहल्ले इसके अन्तर्गत हैं। इसका रकबा करीब ४६५७५ बीघा है। मानपुरसे धार नगरकी सड़क करीब ७ मील तक इसी जमींदारीके भीतरसे गई है। फिलहाल इसका सदर कुञ्जरोड है।

जामनी—मध्यभारतके बुन्देलखण्ड प्रदेशकी एक नदी। यह नदी मध्यभारतसे उत्पन्न हो कर बुन्देलखण्ड और चन्देरी होती हुई प्रायः ७० मील चल कर बेतवामें आ मिली है।

जामनेर—१ बम्बईके पूर्व खानदेशका एक तालुक। यह अक्षा० २०° ३३' एवं २०° ५५' उ० और देशा० ७५° ३२ तथा ७६° १' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ५२७ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८१७३८ है। इसमें २ नगर और १५५ गांव बसे है। मालगुजारी कोई २ लाख ४० हजार और सेस १७०००) रु० पड़ती है। भूमि नीची ऊंची है और नदियोंके तट पर बबूल खड़े हैं। उत्तर-दक्षिणके पर्वतों पर साखूके पेड़ हैं। पानी बहुत है। जलवायु साधारणतः अच्छी है। वर्षा ऋतुमें जूड़ी बुखार बढ़ जाता है। यहां करीब १८५० कूएं हैं। २ उक्त तालुकका सदर। यह अक्षा० २०° ४८' उ० और देशा० ४५°४७' पू०में अवस्थित है। जनसंख्या ६४५७ है। पेशवाके समय एक बड़ा स्थान था। रुईका कारबार बढ़ रहा है।

जामपुर—१ पञ्जाबके डेरागाजीखाँ जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २८° १६' एवं २८° ४६' उ० और देशा० ७०° ४' तथा ७०° ४३' पू०के मध्य पड़ता है। क्षेत्रफल ८४८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८७२४७ है। इसके पूर्वमें सिन्धु नदी और पश्चिममें स्वाधीन प्रदेश है। इसमें एक नगर और १४८ गांव हैं। मालगुजारी लगभग १ लाख ५० हजार है। नीची भूमिमें बाढ़ आनेका डर रहता है।

२ उक्त तहसीलका सदर। यह अक्षा० २८° ३८' उ० और देशा० ७०° ३८' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ५८२८ है। यहांसे नीलकी रफ्तनी बहुत होती है और लाहका भी कारखाना है। १८७३ ई०में यहां म्युनिसपालिटी हुई।

जाम वेतुआ (हिं० पु०) बरमा, आसाम और पूर्व बंगालमें होनेवाला एक प्रकारका बाँस। यह टट्टर बनाने, छत पाटने आदिके काममें आता है।

जामराव—सिन्धु प्रदेशको एक बड़ी नहर। यह साँभर तालुकके दक्षिण पश्चिम कोणमें जमेसाबाद तालुक होती हुई नार नदीमें जा गिरी है। सींच १३० मील है। जामराव नहर और उसकी नालियाँ सब मिल करके ५८८ मील लम्बी हैं। पश्चिम शाखा बहुत बड़ी है। यह १८६८ ई०में खोली गयी थी।

जामरी—मध्यप्रदेशके अन्तर्गत भण्डारा जिलेकी एक छोटी जमींदारी। यह अक्षा० २१° ११' ३०" उ० और देशा० ८०° ५' ३" पू०, ग्रेट इष्टर्न रोडके उत्तरमें साकोलीके निकट अवस्थित है। इसका रकबा १५ वर्गमील है, जिसमेंसे सिर्फ १ मील जमीनमें खेती होती है। यहांके जमींदार जङ्गलकी लकड़ी बेच कर बहुत लाभ उठाते हैं।

जामर्थ्य (सं० त्रि०) प्राणियोंको अमर करनेवाला।

जामल (सं० क्ली०) आगमशास्त्रविशेष, एक प्रकारका तन्त्र। जैसे—रुद्रजामल इत्यादि।

जामली—मध्यभारतकी भोपावर एजेन्सीके अन्तर्गत झाबुआ राज्यका एक शहर। यह सर्दारपुरसे २४ मील उत्तरमें तथा झाबुआ नगरसे २० मील ईशानकोणमें अवस्थित है। यहां ठाकुर उपाधिधारी एक उमराव रहते हैं।

गवाशिरा (सं० त्रि०) गोभिः क्षीरैः उदकैर्वा आशिर मिश्रितः। क्षीरमिश्रित वा उदक मिश्रित, दूध या पानी मिला हुआ। (ऋग्वे ८।११३७।१)

गवाश्व (सं० क्ली०) गौश्च अश्वश्च तयोः समाहारः अवडादेशः। गो अश्वका समाहार, गाय और घोडेका समूह।

गवाश्वादि (सं० क्ली०) पाणिनीय गणपाठोक्त समाहारद्वन्द्वनिमित्तक शब्दसमूह। यथा—गवाश्व, गवाविक, गवैडक, अजाविक, अजैडक, कुब्जवामन, कुब्जकिरात, पुत्रपौत्र, श्वचण्डाल, स्त्रीकुमार, दासीमाणवक, शाटीपटीर, शाटीप्रच्छद, शाटीपट्टि, उष्ट्रखर, उष्ट्रशश, मूत्रपुरीष, यकृन्मेदः, मांसशोणित, दर्भशर, दर्भपूतीक, अर्जुनशिरीष तृणोपल, दासीदास, कुटीकुट, भागवतीभागवत।

(गवाश्वादीनि यथोच्चारितानि साधूनि। सिद्धान्तकौमुदी)

गवाषिका (सं० स्त्री०) लाक्षा, लाह।

गवास (सं० पु०) गोनाशक, कसाई, हत्यारा।

गवाह (फा० पु०) वह मनुष्य जिसने किसी घटनाको साक्षात् देखा हो, साक्षी, साखी।

गवाह्निक (सं० क्ली०) अह्निभवं दिनभोजनाय पर्याप्तं अहन् ठक् आह्निकम्, गोः आह्निकम् ६-तत्। गौके एक दिनके भोजन निमित्त पर्याप्त घासादि, मवेशीका एक दिनका चारा।

जो मनुष्य पापासक्ति परिहारपूर्वक एक मास गवाह्निक प्रदान तथा एकभक्तव्रत करता है, उसका धर्म दिनोदिन बढ़ता जाता है। (भारत १३।१३२ अ०)

गवाही (फा० स्त्री०) किसी ऐसे मनुष्यका कथन जिसने साक्षात् घटना देखी हो, साक्ष्य, साक्षीका प्रमाण।

गविजात (सं० पु०) गवि गोनामिकायां पुलस्त्यभार्यायां वा जातः अलुक्समासः। १ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

"तत्र लब्धो वनचरः कश्चिन्मूलफलाशनः।
नहुषस्य समीपस्थो गविजातोऽभवन् मुनि॥"

(भारत १३।५१ अ०)

२ वैश्रवण, ये भी पुलस्त्यकी गौनाम्नी भार्यासे उत्पन्न हैं।

"पुलस्त्यो नाम तस्यासीद् मानसोदयितः सुतः।
गवि गौस्त्र जाता भार्यायां॥" (भारत नीलकण्ठ ३।१७ अ०)

गविन (सं० पु०) कोकड़ नामक मृगविशेष, एक प्रकारका हिरन।

गविनी (सं० स्त्री०) गवां समूहः खलादि इनि ङीप्। गोसमूह, गायका झुण्ड।

गविपुत्र (पु०) वैश्रवण, ये पुलस्त्यकी गोनाम्नी भार्याके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं।

गविष् (सं० त्रि०) गां स्तुतिवाचमिच्छति इष्-क्विप्। स्तोत्रादि वाक्य इच्छा।

'गविष' स्तुतिवाचमिच्छन्तः सन्तः।' (सायण)

गविष (सं० त्रि०) गामिच्छति इष-क। गौके प्रति इच्छाविशिष्ट, जो गाय पालनेकी इच्छा करता हो। (सायण)

गविष्टि (सं० त्रि०) इष-क्तिन्। गवामिष्टिरन्वेषोऽस्ति अस्य। गौका अन्वेषण करनेवाला, मवेशीका खोजनेवाला। (ऋक् ८।६१।१५)

गविष्ठ (सं० त्रि०) गवि स्वर्गे भूमौ वा तिष्ठति स्था-क अलुक् स०। १ स्वर्गस्थित। २ भूमिस्थित।

"शाय मेनि दिशं पयाद गविष्ठो गां गतस्पृहः।" (भागवत १।१३।२६)

(पु०) ३ दैत्यविशेष, एक असुरका नाम।

"गविष्ठश्च वनायुश्च दीर्घजिह्वश्च दानवः।" (भारत १।६५ अ०)

गविष्ठिर (सं० पु०) गवि वाचि च स्थिरः षत्वं अलुक् समासः। १ गोत्र प्रवर्त्तक एक ऋषिका नाम।

(ऋक् ५।१।१२)

गवी (सं० स्त्री) गो-ङीप्। गाभि, गौ, गाय।

गवीधुका (सं० स्त्री०) गवेधुका पृषोदरादित्वात्, साधुः। धान्यविशेष, एक प्रकारका धान। (तैत्तिरीयसं० ५।४।३।२)

गवीश (सं० पु०) गवामीशः। १ गोस्वामी। २ विष्णु। ३ वृष, सांढ।

गवीश्वर (सं० पु०) गवामीश्वरः, ६-तत्। गोस्वामी। इसका पर्याय—गोमान् और गोमी है।

गवेङ्गित (सं० क्ली०) गवामिङ्गितम्, अवडादेशः वा गोगणकी शुभाशुभसूचक एक चेष्टा। बृहत्संहितामें कहा है—गायोंके दीन भावापन्न होनेसे राजाओंका अमङ्गल, पाट द्वारा भूमि कुट्टन करनेसे रोग, चक्षु अश्रुपूर्ण होनेसे स्वामीका मृत्यु और भीत हो करके शब्द करनेसे तस्करोंका मृत्यु होता है। यदि गोगण अकारण वैसा ही शब्द करता, तो अनर्थ पडता और रात्रिको वैसी ही दशा रहनेसे अमङ्गल बढता है। फिर गोगणके मक्षिकाओं द्वारा व्याप्त अथवा कुक्कुरों द्वारा वेष्टित होनेसे शीघ्र ही

जामित्रवेध (सं० पु०) विध्-घञ्, जामित्रस्य वेधः, ६-तत्। शुभकर्म विषयक ज्योतिषका एक योग। यदि कर्म-कालीन नक्षत्र-घटित राशिसे सातवीं राशिमें सूर्य वा शनि अथवा मङ्गल रहे, तो जामित्रवेध होता है। किसी किसीके मतसे सातवें स्थानमें पापग्रह रहने पर ही जामित्रवेध होता है। इसमें विशेषता यह है कि, चंद्रमा यदि अपने मूल त्रिकोण या क्षेत्रमें हो, अथवा पूर्णचन्द्र हो वा पूर्णचन्द्रमें शुभग्रह या निजग्रहके क्षेत्रमें हो, तो जामित्रवेधका जो दोष होता है, वह नष्ट हो जाता है। इससे अत्यन्त मङ्गल होता है।

जामित्र (सं० क्ली०) सम्बन्ध, रिश्ता।

जामिन (अ० पु०) १ प्रतिभू, जिम्मेदार, जमानत करनेवाला। २ दो अङ्गुल लम्बी एक लकड़ी जो नीचेकी दोनों नालियोंको अलग रखनेके लिए चिलमग है और चूलके बीचमें बाँधी जाती है।

जामिनदार (फा० पु०) जमानत करनेवाला।

जामिनी (हिं० स्त्री०) १ यामिनी देखो। २ जमानत, जिम्मेदारी।

जामी—एक फारसी कवि। इनका असली नाम मौलाना नूर-उद्दीन अबदुल-रहमन था। १४०१ ई०में हीरातके निकटवर्त्ती जाम नामके एक ग्राममें इनका जन्म हुआ था। इसीलिए लोग इन्हें जामी कहते थे। इनके समयमें इनके समान वैयाकरण, दार्शनिक और कवि दूसरा कोई भी न था। बचपनसे ही इन्होंने सूफीका दर्शनशास्त्र पढ़ा था। आपने जीवनके शेष भागमें समस्त गृहकार्योंसे अवसर ले लिया था।

जामुखा (जुमखा)—गुजरातके रेवाकांठाको एक छोटी जमींदारी। इसका रकबा १ वर्गमील है।

जामुन (हिं० पु०) जम्बू देखो।

जामुनी (हिं० वि०) जामुनके रङ्गका, जो जामुनकी तरह बैंगनी या काला हो।

जामेय (सं० पु०) भागिनेय, भानजा, बहिनका लड़का।

जामेवार (हिं० पु०) १ बेल बूटोंसे जड़ा हुआ एक प्रकारका दुशाला। २ एक प्रकारकी छींट जिसके बेल बूटे दुशालेकी भांतिके होते हैं।

जाम्पुई—बङ्गालके अन्तर्गत पार्वत्य त्रिपुराका एक पर्वत यह पहाड़ देव और लुङ्गाई इन नदियोंके बीच उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत है। इसकी सर्वोच्च शिखरका नाम बेतलिङ्ग शिखर है, जो समुद्रपृष्ठसे ३२०० फुट तथा जाम्पुई शृङ्गसे १८६० फुट ऊंची है।

जाम्बव (सं० क्ली०) जम्ब्वाः फलं अण्। जम्ब्वा वा। पा ४।३।१६५। इति अण् तस्यावधानात् न लुक्। १ जम्बूफल, जामुन। जम्बू देखो। २ सुवर्ण, सोना। ३ आसव, जामुनका अर्क।

जाम्बवक (सं० त्रि०) जाम्बवेन निर्वृत्तः अरीहणादित्वात् वुञ्। जम्बूफल, जामुन।

जाम्बवती (सं० स्त्री०) श्रीकृष्णकी पत्नी और जाम्बवान्की कन्या। श्रीकृष्ण स्यमन्तक मणिके अन्वेषणके लिए वनमें प्रविष्ट हो कर जाम्बवान्के भवनमें पहुंच गये थे। वहाँ मणिका पता लगने पर जाम्बवान्को युद्धमें परास्त कर मणिके साथ जाम्बवतीको ले आये थे। स्यमन्तक देखो। इनके गर्भसे साम्ब, सुमित्र, पुरुजित्, शतजित्, सहस्रजित्, विजय, चित्रकेतु, वसुमान्, द्रविण और केतुका जन्म हुआ था। (भागवत)

जैन-हरिवंशपुराणमें लिखा है कि, नारदने कृष्णको जाम्बवतीका समाचार सुनाया। नारदके मुखसे जाम्बवतीकी प्रशंसा सुन कृष्णसे न रहा गया। वे उसी समय कुमार अनावृष्णि और सेनाको साथ ले कर जम्बूपुरको चल दिये। वहाँ सखियोंके सहित जाम्बवतीको नहाते देख, श्रीकृष्णने चटसे उन्हें हरण कर लिया। किन्तु इस समाचारको सुन कर जाम्बवतीके पिता जाम्बव बहुत ही क्रुद्ध हुए और वे श्रीकृष्णसे युद्ध करनेके लिये उनके सामने जा अड़े। कृष्णने युद्धमें उन्हें परास्त कर बाँध लिया। इस अपमानसे जाम्बवको वैराग्य हो गया और वे अपने पुत्र विश्वक्सेनको कृष्णके सुपुर्द कर मुनि हो गये। (जैन-हरिवंश ४४ सर्ग)

जाम्बवन्त—जाम्बवान् देखो।

जाम्बवान् (सं० पु०) १ जाम्ब-मतुप् मस्य वः। एक ऋक्षराज, सुग्रीवके मन्त्री। इन्होंने लङ्काके युद्धमें रामचन्द्रकी सहायता की थी। ये पितामह ब्रह्माके पुत्र थे। द्वापर युगमें सिंहको मार कर ये उसके पाससे स्यमन्तक मणि लाये थे। इसी कारण इनकी कन्या

गव्ययु (सं॰ त्रि॰) गामिच्छति गो-क्यच्-उण् यादो वेदे-दीर्घयलोपाभावो। जो गाय लेनेकी इच्छा करता हो।

गव्या (सं॰ स्त्री॰) गवां समूहः। गो समूह, गायका झुंड। २ धनुषका गुण, धनुषकी डोरी। ३ गव्यूति, दो कोस। ४ गोरचना।

गव्यू (सं॰ त्रि॰) गामिच्छति, इष-क्यच्-उण्। जो गौ ग्रहण करनेकी इच्छा करता हो।

गव्यूत (सं॰ क्ली॰) गव्यूतिः पृषोदरादित्वात् अवङादेशः। १ एक कोस। २ दो कोस।

गव्यूति (सं॰ स्त्री॰) गोयुतिः। १ दो हजार धनुषको दूरी। २ दो कोस। इसका पर्याय—क्रोशयुग, गव्यूत, गोरुत, गोमत, वाचस्पति और गव्या है।

गश (अ॰ पु॰) मूर्च्छा, बेहोशी।

गशी (अ॰ स्त्री॰) बेहोशी।

गश्त (फा॰ पु॰) १ टहलना, घूमना, दौरा, चक्कर। २ पुलीसका चक्कर, रौंद, दौरा। ३ एक प्रकारका नृत्य जिसमें नाचनेवाली वेश्यायें बरातके आगे नाचती हुई चलती है।

गश्त-सलामी (फा॰ स्त्री॰) भेंट या उपहार जो हाकिम-को दौरा समय मिला करता है।

गश्ती (फा॰ वि॰) भ्रमण करनेवाला, घूमनेवाला।

गसना (हिं॰ क्रि॰) १ जकड़ना, गाँठना। २ कपड़ा बुनावटमें बानेको कसना।

गसीला (हिं॰ वि॰) जकड़ा हुआ, गुथा हुआ, गफ।

गस्सा (हिं॰ पु॰) ग्रास, कौर।

गहंडिल (हिं॰ वि॰) गदला, मटमैला।

गहकना (अ॰ क्रि॰) १ चाहसे भरना, लालसासे पूर्ण होना, ललकना। २ उमंगसे भरना।

गहकोड़ा (हिं॰ पु॰) गाहक, खरीदार।

गहगड्ड (सं॰ वि॰) गहरा, भारी, घोर।

गहगह (हिं॰ वि॰) प्रफुल्लित, प्रसन्नतापूर्ण, आनन्दसे भरा हुआ।

गहगहा (हिं॰ वि॰) गहगह देखो।

गहगहाना (अ॰ क्रि॰) १ आनन्दमें मग्न होना, बहुत प्रसन्न होना। २ फसल आदिका बहुत अच्छी तरह तैयार होना, लहलहाना।

गहडवार—युक्तप्रदेशवासी राजपूतोंकी एक शाखा। डेरा-मङ्गलपुर, बिठूर, जाजमऊ, कन्नौज, बिलहौर, इसलाम-गञ्ज, बुंदेलखण्ड, गोरखपुर, कटिहर, बनारस तहसील, गाजीपुरके पछोतर तथा महागच, खैरागढ़, कान्तित आदि स्थानोंमें इनका वास अधिक है।

इस जातिके सम्बन्धमें कोई वंशगत इतिहास नहीं मिलता, फिर भी आजकलके गहडवार अपनेको कन्नौजका पूर्वतन राजवंशी जैसा बतलाते हैं। राजपूत इतिहासमें भी यह ३६ राजवंशोंके अन्तभुक्त हैं। किसीके मतमें गहड़-वारोंसे ही राठौर वंशकी सृष्टि है। केवल बिसनौर और गोरखपुरके गहड़वारोंको छोड़ करके और कोई राठौरवंशमें दान ग्रहण नहीं करता। राठौर और राष्ट्रकूट देखो।

हादी कतुल अकालीम नामक फारसीकी एक 'कताब-में लिखा है कि वह वाराणसीसे (१११५ ई॰) कान्तिमें जा करके बसे थे। किसी दूसरे ऐतिहासिकके कथनानु-सार राठौरवंशीय जयचन्दके भतीजे गडनदेवने १२वीं शताब्दीके शेष भागको काश्मीरसे जा भरपत्तोंको गङ्गाके उपकूलसे निकाल दिया और अपने वंशको गहडवार नामसे आख्यात करके कान्तिमें राज्यस्थापन किया। साधारणतः काशीधाम ही गहड़वारोंका आदिवासस्थान-जैसा निरूपित हुआ है। उपर्युक्त दोनों लेखकोंके मत-में गहडवारोंने एक ही साथ स्वदेश परित्याग और कान्ति-में जा करके निवास किया था। सुतरां काश्मीर शब्द सम्भवतः भ्रमसे 'काशी' के बदले लग गया होगा। गोरख-पुरमें इस जातिकी उत्पत्तिके और भी दो प्रवाद प्रचलित हैं। पहला यह कि वह नलराजके वंशसम्भूत हैं और ग्वालियरके निकटवर्ती नरवर नामक स्थानसे काशीमें जा करके बसे हैं। दूसरा यह कि काशीराज बलदेवने मगधराज कर्तृक ताड़ित होने पर स्वराज परित्याग पूर्वक काश्मीरराज त्रिपुरके अधीन कर्म ग्रहण किया, पीछे स्वीय प्रभुके विरुद्ध लोगोंको उभाड करके काश्मीर राज्यके अधीश्वर बन बैठे। उनके वंशधरोंके १२१ पीढ़ी राज्य करने पर ईरान, तुर्कस्थान और रूम देशाधिपतिने काश्मीर पर आक्रमण किया था। वहांसे यवनकर्तृक ताड़ित होने पर बलदेवके वंशधर कन्नौज भाग आये और यहां जयचन्द पर्यन्त ५० पुरुष राजत्व रखा। राजा

जायज़रूर (फा० पु०) टट्टी, पाखाना।

जायज़ा (अ० पु०) १ पड़ताल, जाँच। २ हाज़िरी, गिनती।

ज़ायद (फा० वि०) अधिक, ज्यादा।

जायदाद (फा० स्त्री०) सम्पत्ति, किसीकी भूमि, धन या सामान आदि। कानूनके अनुसार जायदादके दो भेद हैं, मनकूला और गैर मनकूला। जो एक स्थानसे दूसरे स्थान पर हटाई जा सके उसे मनकूला जायदाद कहते है और जो स्थानान्तरित न की जा सके उसे गैर मन कूला जायदाद कहते हैं।

जायदाद गैरमनकूला (फा० स्त्री०) जायदाद देखो।

जायदाद जौजियत (फा० स्त्री०) स्त्रीधन, वह संपत्ति जिस पर स्त्रीका अधिकार हो।

जायदाद मनकूला (सं० स्त्री०) जायदाद देखो।

जायदाद मुतनाज़िआ (फा० स्त्री०) विवादग्रस्त सम्पत्ति, वह सम्पत्ति जिसके अधिकार आदिके विषयमें कोई तकरार हो।

जायदाद शौहरी (फा० स्त्री०) स्त्रीको उसके पतिसे मिली हुई सम्पत्ति।

जायनमाज़ (फा० स्त्री०) मुसलमानोंके नमाज़ पढनेका एक बिछौना, मुसल्ला।

जायपत्री (हिं० स्त्री०) जावित्री देखो

जायफर (हिं० पु०) जायफल देखो।

जायफल (हिं० पु०) जातिफल देखो।

जायल (फा० वि०) विनष्ट, जो नष्ट हो गया हो।

जायस—युक्तप्रदेशके रायबरेली जिलेका एक विख्यात और ऐतिहासिक नगर। यहां बहुत दिनोंसे सूफी फकीरोंकी गद्दी है तथा मुसलमान विद्वान् होते आये हैं। बहुतसी जातियां अपना आदि स्थान इसी नगरको बताती हैं। पद्मावतीके रचयिता प्रसिद्ध कवि मालिक मुहम्मद यहींके निवासी थे।

जाया (सं० स्त्री०) जायते पुत्ररूपेणात्मा ऽस्या जन-यक् अतश्च। १ पत्नी, यथाविधि-परिणीता भार्या, विवाहिता स्त्री। पति शुक्ररूपसे भार्याके गर्भमें प्रविष्ट हो कर, फिरसे नवीन हो कर जन्म लेता है, इसलिए पत्नीका नामजाया है। (मनुस्मृति, बह्वृच पुराण और कूल्लूक।) अथवा भार्याकी रक्षा करनेसे पुत्रकी रक्षा होती है, और पुत्रकी रक्षा करनेसे आत्माकी भी रक्षा होती है, क्योंकि आत्मा ही भार्याके गर्भमें जन्म लेती है। इसीलिए पण्डितोंने पत्नीका नाम जाया बतलाया है। अवि-वाहिता स्त्रीको जाया नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उसके गर्भसे जो पुत्र होता है, उसमें पिण्डदान देनेकी योग्यता नहीं होती और वह जारज कहलाता है। एक पुरुषकी बहुतसी जाया हो सकती हैं।

"एकस्य पुंसो बह्वयो जाया भवन्ति" (शतपथब्रा०९।४।१।६)

उनमेंसे महिषी, वावाता, परिवृक्ता और पालागली ये चार अभिमत हैं। (शतपथब्रा० १३।४।१।८)

२ ज्योतिषोक्त लग्नसे सातवां स्थान। इस सप्तम स्थानसे पत्नीके सम्बन्धको समस्त शुभाशुभकी गणना की जाती है। ३ उपजाति वृत्तका सातवां भेद। इसमें पहिलेके तीन चरणोंमें ।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ और चतुर्थ चरणमें ऽऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ होता है।

जाया (फा० वि०) नष्ट, खराब, खोया हुआ।

जायाघ्न (सं० पु०) जायां हन्ति, जाया हन्-टक्। १ पत्नी नाशक योगयुक्त पुरुष, वह पुरुष जिसमें पत्नीनाशक योग रहे। २ तिलकालक, शरीरका तिल। ३ ज्योति-षोक्त योगविशेष, ज्योतिषमें ग्रहोंका एक योग। यह योग उस समय होता है जब जन्म-कुण्डलीमें लग्नसे सातवें स्थान पर मंगल या राहु ग्रह रहता है। जिसमें यह योग पड़ता है उस मनुष्यकी स्त्री अवश्य ही नाश होती है।

जायाजीव (सं० पु०) जायया तत्कर्त्तनृत्यया जीवति, वा जाया आजीवः जीवनोपायः यस्य, जीव-अच्। १ नट, अपनी स्त्रीके द्वारा जीविका उपार्जित करनेवाला, वेश्या-पति। २ बकपक्षी, बगला पक्षी।

जायात्व (सं० क्ली०) जायायाः भावः जाया-त्व। पत्नीत्व, स्त्रीका धर्म। जाया देखो।

जायानुजीवी (सं० पु०) जायया सङ्गीतनर्त्तनादिना अनुजीवति, अनु-जीव-णिनि। १ जायाजीव देखो। २ दरिद्र। ३ बक पक्षी, बगला।

जायापती (सं० पु०) जाया च पतिश्च तौ द्वन्द्व०। स्वामी और स्त्री। द्वन्द्व समासमें जाया और पतिका समास

नहीं हुई है। भोलो परगने, खांपुर, निजामाबाद, विल्हौर, विठूर, रसूलाबाद, सैयदाबाद, तिरुआ, रामिया, हाथरस, शाहपुर, जलेश्वर और बुलन्दशहरमें यह अधिक रहते हैं।

बुलन्दशहरवासी गहलोतोंमें ऐसा प्रवाद है कि सम्राट् अकबरने चित्तौर आक्रमण करनेके पीछे राजा खोमानके राजत्वकालको वह दसनाके निकटवर्ती टेहड़ा और धालना नामक स्थानोंमें जा करके बसे। किन्तु वास्तविक यह बात ठीक नहीं है। कारण, आईन-अकबरी पढ़नेसे समझ पड़ता है कि सम्राट् अकबरके समय गहलोतवंशीय दसनाके जमींदार थे। युक्तिसिद्ध और सम्भवपर जैसा यही विदित होता है कि सम्राट् अलाउद्-दीन खिलजीके चित्तौर आक्रमण अथवा खोमानके राजत्वकालकी मामूंके आक्रमण पीछे वह दसनामें जा करके रहे। खोमान देखो।

कोई कोई कहता है कि वर्तमान गहलोतोंके किसी पूर्वपुरुष गोविरावने दिल्लीपति पृथ्वीराजकी बहनको व्याहा और वह उनके अन्तरङ्ग मित्र तथा युद्धविग्रहमें सहकारी थे। कवि चन्द्र बरदाईने अपने पृथ्वीराज रासोकाव्यमें लिखा है कि गोहिलवंशीय सामन्त गोविन्दराव चौहान राजपूत पृथुके सहकारी रहे। उन्होंने इस जातिको सच्चा और वीर जैसा कहा है। सम्भवतः संस्कृत गोभिल-गोत्र शब्दका अपभ्रंश होते होते हिन्दोमें 'गहलोत' बन गया है। किन्तु मेवाड़में सर्वत्र इस जातिके उत्पत्ति सम्बन्धका निम्नलिखित प्रवाद यथार्थ जैसा माना जाता है—मेवाड़ राणाके जब पूर्वपुरुष गुजरातसे ताडित हुए, पुष्पवती नामक किसी राजमहिषोने मलय पर्वतके ब्राह्मणोंके निकट जा करके आश्रय लिया और अनतिकाल पीछे ही एक पुत्ररत्न प्रसव किया और पर्वतको गुहामें जन्म होनेसे उसका नाम गहलोत अर्थात् गह्वरोत्पन्न रख दिया। उदयपुरके वर्तमान राणा इन्हीं गहलोतोंके वंशधर हैं।

गहवा (हिं० पु०) संड़सी।

गहवारा (हिं० पु०) झूला, हिंडोला।

गहाई (हिं० स्त्री०) ग्रहण करनेका भाव, पकड़।

गहागड्ड (हिं० वि०) गहगड्ड देखो।

गहागह (क्रि० वि०) गहगह देखो।

गहादि (सं० क्लो०) छ प्रत्यय निमित्तक पाणिनीय गणविशेष। (गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८।) गह, अन्तस्थ, सम, विषम, उत्तम, अङ्ग, वङ्ग, मगध, पूर्वपक्ष, अपरपक्ष, अधमशाख, उत्तमशाख, एकशाख, समानशाख, समानग्राम, एकग्राम, एकवृक्ष, एकपलाश, इष्वग्र, इष्वनीक, अवस्यन्दन, कामप्रस्थ, खाडायन, काठेरणि, लावेरणि, सौमित्रि, शैशिरि, आसुत, दैवशर्मि, श्रौति, आहिंसि, आमित्रि, व्याडि, वैजि, आध्यश्वि आनृशंसि, शौङ्गि, आग्निशर्मि, भौजि, वाराटकि, वाल्मीकि, क्षैमवृद्धि, आश्वत्थि, औद्गाहमानि, ऐकविन्दवि, दन्ताग्र, हंस, तन्त्वग्र, उत्तर और अनन्तर, इन्हींको गहादि कहते हैं। ये आकृतिगणके हैं।

गहिरदेव (सं० पु०) काशीके एक राजाका पुत्र। इन्हें गहरवार अपना पूर्वपुरुष मानते हैं।

गहिराव (हिं० पु०) गहराव देखो।

गहिरो (हिं० वि०) गहरा देखो।

गहिला (हिं० वि०) पागल, उन्मत्त।

गहीला (हिं० वि०) १ गर्वयुक्त, अभिमानी। २ मदोन्मत्त, पागल।

गहु (हिं० स्त्री०) छोटा रास्ता, गली।

गहुआ (हिं० पु०) छोटा मुंहवाला, एक प्रकारकी संड़सी। इसके द्वारा लोहार अग्निसे तप्त लोह बाहर निकालता है।

गहरी (हिं० स्त्री०) किसी दूसरेकी चीजको हिफाजतसे रखनेकी मजदूरी।

गहेजुआ (हिं० पु०) छुछुंदर।

गहेलरा (हिं० वि०) १ पागल। २ मूर्ख, अज्ञानी, गवांर।

गहेला (हिं० वि०) १ हठी, जिद्दी। २ अहंकारी, घमण्डी, मानो। ३ पागल। ४ मूर्ख, अनजान।

गहैया (हिं० वि०) १ पकड़नेवाला। २ अङ्गीकार करनेवाला, स्वीकार करनेवाला।

गहोई—वैश्य जातिभेद। यह बुंदेलखण्डके बड़े बड़े नगरोंमें व्यापारादि करते हैं। पिण्डारियोंके आक्रमणसे उत्पन्न ही गहोई युक्तप्रदेशमें भी आ बसे हैं। यह शब्द 'गुह्य'का अपभ्रंश है। इनमें १२ गोत्र होते हैं।

(Calcination) वा 'ओक्सिडेशन' (Oxidation) कहा जा सकता है। धातुद्रव्यको वायु द्वारा उत्तप्त करनेसे वह धातु वायुमें स्थित अक्सिजनको खींच कर उसी धातुके मोरचे (जंग)-की रूपमें परिणत हो जाती है। फिर अम्ल आदिके साथ मिलाये जाने और ऋतु आदिके परिवर्त्तन होने पर उससे एक नवीन पदार्थ उत्पन्न होता है। फिर उसे देखनेसे यह नहीं मालूम होता कि, वह धातु हैं। यह ही धातु-जारणका मूल सूत्र है। प्रवाल आदि किसी किसी वस्तुको उत्तप्त करने पर उसमेंसे द्रवल अङ्गारक वाष्प निकल जाती है और कठिन प्रवाल आदि भस्म रूपमें परिणत होते हैं। वैद्य गण जिस प्रणालीसे जारण करते हैं, उसमें भी निःसन्देह ये सब मूल प्रक्रियाएँ होती हैं। हाँ, उसमें आनुषङ्गिक और अन्यान्य कुछ परिवर्तन अवश्य होता है। विलायत-में धातुका जारण आदि रासायनिक उपायसे सहजहीमें हो जाता है। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि, वह वैद्यक जारणके समान गुणसम्पन्न होता है या नहीं।

जारणवीज (सं० क्लीं०) १ रसजारणार्थ वीजद्रव्य-भेद।

जारणी (सं० स्त्री०) जारणं स्त्रियां ङीष्। स्थूल जीरक, बड़ा जीरा, सफेद जीरा।

जारता (सं० स्त्री०) जारस्य भावः तल् टाप्। उपपतित्व, यार वा आशनाका नाम।

जारतिनेय (सं० पु०-स्त्री०) जरत्या अपत्यं ढक्। कल्याण्या-दीनामिनङ् च। पा ४।१।१२६। इति इनङ्। जरतीका पुत्र।

जारत्कारव (सं० पु०) जरत्कारोरपत्यं शिवादि-त्वादण्। जरत्कारुका पुत्र।

जारद—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत वरोदाका एक उपविभाग। इसके उत्तरमें रेवाकाण्ठा एजेन्सी, पश्चिममें वरोदा उपवि-भाग, दक्षिणमें दाभई उपविभाग और पूर्वमें हलोल जिला है। क्षेत्रफल २५० वर्गमील है। यहांकी जमीन समतल और चारों ओर जंगलसे घिरी है। विश्वामित्री, सूर्य और जाम्बु नदी यहां प्रवाहित हैं। यहाँकी मिट्टी काली अथवा पीली होती है। कपास, बाजरा और ज्वार ही प्रधान उपज है। सारली नगर इस उपविभागका सदर है।

जारद्गवी (सं० स्त्री०) एक वीथि, ज्योतिषमें मध्यमार्ग-की एक वीथिका नाम। इसमें विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा नक्षत्र हैं। (विष्णुपु० टी० २।८।८०) लेकिन वराह-मिहिरके मतसे इसमें श्रवणा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र रहते हैं। (वृहत्सं० ९।३)

जारभर (सं० पु०) जारं विभर्त्ति पोषयति, भृ-पचा दित्वादच्। जारपोषक।

जारा (हिं० पु०) १ सोनार आदिकी भट्ठीका एक भाग। कोई चीज गलाने या तपानेके लिये इसमें आग रहती है। भाथीकी हवा आनेके लिये इसके नीचे एक छोटा छेद होता है। २ जाला देखो।

जाराशङ्का (सं० स्त्री०) जारस्य आशङ्का, ६-तत्। उप-पतिको आशंका।

जारिणी (सं० स्त्री०) कामुकी, दुश्चरित्रा स्त्री, खराब चाल चलनकी औरत।

जारित (सं० त्रि०) जॄ णिच्-क्त। १ शोधित, शुद्ध किया हुआ। २ मारित, मारा हुआ, कतल किया हुआ।

जारी (सं० स्त्री०) जारयति जॄ णिच्-अच् गौरादित्वाद् ङीष्। औषधभेद, एक प्रकारकी दवा।

जारी (अ० वि०) १ प्रवाहित, बहता हुआ। २ प्रच लित, चलता हुआ।

जारी (हिं० पु०) १ झरबेरीका पौधा। २ एक प्रकारका गीत। मुसलमानों की स्त्रियाँ इसे मुहर्रमके अवसर पर ताजियोंके सामने गाती हैं। ३ परस्त्री गमन, जारकी क्रिया वा भाव।

जारु (सं० पु०) जॄ-उण्। १ जरायु, वह झिल्ली जिसमें बच्चा बंधा हुआ उत्पन्न होता है, आँवल, खेड़ी। (त्रि०) २ जारक।

जारुज (सं० त्रि०) जारौ जरायौ जातः जारु-जन-ड। जरायुजात, झिल्लीसे उत्पन्न, मनुष्य इत्यादि।

जारुधि (सं० पु०) जारुर्जारको द्रव्यभेदो धीयते ऽस्मिन् धा-आधारे कि, उपस०। सुमेरु कर्णिकाकेशर-भूत पर्वतविशेष, भागवतके अनुसार एक पर्वतका नाम जो सुमेरु पर्वतके छत्तेका केसर माना जाता है। (भागवत ५।१६।२७)

जारुथी (सं० स्त्री०) जरुथेन असुर हिंसनेन निर्वृत्ता,

भागके पेडका फूल गांजा, पत्ती भाग ही और उसका दूध चरस कहलाता है। इसमें सभी चीजें नशोली है।

क—पुंपुष्प। ख—स्त्रीपुष्प। ग—गांजेकी बौ।

फिर भी गांजेका नशा भाग और चरसके नशेसे निराला है। असली गोंद ही गांजेको मादकताका मूल कारण है। गाजा डाक्टरी चिकित्सामें औषधकी तरह व्यवहृत होता है। अङ्गरेजी भैषज्यतत्त्वमें वह उत्तेजक, वेदनानिवारक, निद्राकारक, अवसादक, आक्षेपक वा धनुष्टङ्काररोगनाशक, म.दक, मूत्रकारक, और प्रसवका सहकारी जैसा बतलाया गया है। उसका धनुष्टङ्कार, जलातङ्क वा अलर्करोग, कम्प, प्रलाप, धड़कन, स्नायवीय वेदना प्रभृतिमें प्रयोग करनेसे सुफल मिलता है। सिवा इसके हैजे, अधिक रजः, जरायुके रक्तस्राव, वातरोग, दमे, हृत्पिण्डके वैलक्षण्य, क्षोभकर चर्मरोग और खुजली आदि बीमारियोंमें भी वह व्यवहृत होता है। प्रसवकालकी जरायुके अवसादमें अधिक क्षण व्यथा होने पर इसके प्रयोगसे वह संकुचित पड जाता और प्रसव साहाय्य पाता है। इसका सत (Extractum Canab's 'ndicae) निम्नलिखित रूपसे प्रस्तुत होता है—४ पिण्ट विशुद्ध स्पिरिटमें आध सेर गांजेकी बुकनी मिला ७ दिन तक भिगोकरके रख छोडना चाहिये। फिर उसको दबा या निचोड़ करके अरक निकालते हैं। इसको टपका और स्पिरिट उडा करके उक्त औषध बनता है। अवस्था विशेषमें आधे ग्रेनसे २ ग्रेन तक वह रोगोको दिया जा सकता है। यह सत एक पिण्ट खालिस स्पिरिटमें मिला देनेसे चरसका टिञ्चर (Tinctura Cannabis Indicae) तैयार होता है। हालतको देख करके ५से २० बूंद तक उसका प्रयोग कर सकते है। डाक्टर ओसफनेसीने सबसे पहले गांजेकी भलाई बुराई समझ करके उसको विलायती दवाइयोंमें डाला था। Johnwarings Pharmacopaeia of India, p. 464)

अङ्गरेजी हेम्प (Hemp) शब्दसे शण (सन) और गांजे दोनोंका अर्थ निकलता है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रैटेनिका प्रभृति ग्रन्थोंमें भी वही गडबडी है। दोनों वृक्ष एक जातीय होते भी गांजेके आकारमें कुछ विशेषत्व है। इस पेडमें लकड़ीका भाग अधिक रहता है। फिर यह सनके पेडसे मोटा भी होता है। इसके डण्ठल सीधे निम्नदेश फैला हुआ और ऊपरी भाग ढालू लगता है। यह साधारणतः चार और कभी कभी ६ हाथ तक बढ़ जाता है। ऊपरी पत्तियां खूब हरी और फूल हरापन लिये हुए सफेद होते है। इसकी फुलगी बीचमें मोटी और दोनों ओर ढालू पड़ती है। उसमें बहुतसा रेशा रहता है। पेड़ी तथा सीधी ऊर्ध्वग होती और उसका परिधि ६से ८ इञ्च तक बैठता है। तलदेशसे डालियां कभी मिले हुए तौर पर कभी अलग अलग फूटती हैं। सभी जगह रूयां होता है। डालियोंके भीतर एक प्रकार की कोमल श्वेत मज्जा या गूदा भरा रहता है। इस मज्जा पर बुद्बुदविशिष्ट सूक्ष्म भङ्गप्रवण कोई आवरण है। इसी आवरण पर छाल लगी है। यह त्वक् लम्बे लम्बे रेशोंसे बनती है। रेशे समान्तराल भावसे अवस्थित है। पत्तियां किसी सीधी डालकी दोनों ओर निकलती है। पत्तिया जड़से मोटी होती हुई सूईकी नोक जैसी ढालू पड जाती है। उनका पार्श्व देश आरे जैसा कटा कटा रहता है। ५।७ पत्तिया एकही साथ निकलती है। गांजेका कोई फूल पुरुष जातीय और कोई कोई स्त्री जातीय होता है। पुरुष जातीय पुष्प निराले पेडमें लगता है। वह एक एक बौढ़में एकत्र उपजता और प्रायः अधिक झुक पड़ता है। उसकी जड़में नई नई टेहनियां निकला करती है। उनका नशा न होनेसे भारतके किसान लोग फेंक देते है। फल

पहले इंगलैण्डमें यदि कोई जाल दस्तावेज़ बनाता और व्यवहार करता वा जाल दानपत्र वा किसी अदालतमें जाल-दस्तावेज़ प्रमाण देनेके लिए हाजिर करता, तो उसको ५ एलिजाबेथ, सो१४ धाराके अनुसार प्रतिवादीकी चतिपूर्त्ति करनी पड़ती थी और उसके खर्चसे दूने रुपये देने पड़ते थे। जालके अपराधीके दोनों कान काट कर नासारन्ध्र जला दिये जाते थे। इस प्रदेशमें व्यवसाय वाणिज्यकी वृद्धिके साथ साथ जब लिखित कागजातों पर ज्यादह काम होने लगा, तब जाल रोकनेके लिए कानूनोंमें नाना प्रकारका परिवर्त्तन होने लगा। २ आइन ४र्थ जर्ज और १ विलियम (४र्थ) सो६६ धाराके अनुसार, यदि कोई राजकीय मुहरका जाल करता था, तो उसे राजद्रोहके अपराधसे मृत्युदण्ड दिया जाता था। बादमें सिर्फ इच्छापत्र और विनिमयपत्र (Bill of exchange)के जाल करने पर मृत्युदण्ड मिलता था। इस समय ७, ४र्थ विलियम और १ विक्टोरिया ८४ धाराके अनुसार जालसाज़ोंको मृत्युदण्डसे छुटकारा दिया गया। क्योंकि दोषको सुधारनेके लिए आइनका विधान है, न कि लोगोंकी फांसी देनेके लिए।

अब जालसाज़ोंको कैदमें रक्खा जाता है। जिसका अपराध जितना अधिक होता है, विचारकके विवेचनानुसार उसको उतने ही अधिक दिनोंके लिए कारादण्डसे दण्डित किया जाता है। किसी किसीको यावज्जीवन द्वीपान्तर या कालेपानीका दण्ड दिया जाता है और किसी किसीको एक वर्षकी कैदकी सजा दी जाती है।

बहुत पहले जिसका नाम जाल किया जाता था, वे हस्ताक्षर उसके हैं या नहीं, यह प्रमाणित करनेके लिए उसको गवाहियोंमें शामिल किया जाता था। परन्तु सब समय हस्ताक्षर देख कर जालका पता नहीं लगाया जा सकता। एक ही व्यक्तिके हाथकी लिखावट किसी समय दूसरी तरहकी हो सकती है। यदि कलम और कागज खराब हो, यदि उसे जल्दी जल्दी कुछ लिखना हो तथा यदि किसी कारणसे उसके हाथ कांपते हों; तो उसकी लिखावट दूसरी तरहकी हो जा सकती है। इसलिये हस्ताक्षरोंके सादृश्यकी परीक्षा विशेष मनोयोगके साथ करनी पड़ती है।

जो लोग जालमें सहायता पहुंचाते हैं, उनको दो वर्ष तक कारारुद्ध किया जा सकता है।

जाल बहुत तरहके होते हैं—दस्तावेज, तमस्सुक आदि जाल, रुपया जाल, आदमी जाल, ष्टेम्प जाल इत्यादि।

भिन्न भिन्न देशमें भिन्न भिन्न प्रकारके सिक्के चलते हैं तथा राजाके आदेशानुसार सिक्के बनते और व्यवहृत होते हैं। जिस देशमें जैसे सिक्के चलते हैं, उस देशमें यदि कोई राजासे छिपा कर वैसे ही सिक्के बना कर चलावे, तो वह रुपया जाल होता है। नोट जाल करना भी ऐसा ही है। जो जाली रुपया बनाता है और जो जान बूझ कर उसको काममें लेता है, वर्त्तमान कानूनके अनुसार उसे ७ वर्षकी कैद भोगनी पड़ती है। यदि कोई किसीको जाली रुपये बनाने या चलानेके लिये प्रवर्त्तित करे, तो उसको भी जालसाज़ीके अपराधमें दण्डित किया जाता है।

राजस्वके लिए राजाकी आज्ञासे जैसे ष्टाम्प आदि व्यवहृत होते हैं, यदि कोई गवर्मेण्टको धोखा देनेके अभिप्रायसे हूबहू वैसा ही ष्टाम्प खुद बनावे वा काममें लावे, तो उसे भी कैदकी सज़ा भोगनी पड़ती है।

किसी व्यवसायीको क्षति पहुंचा कर अपने लाभके लिए यदि उसका व्यवसायचिह्न (Trade mark) व्यवहृत किया जाय, तो जालके अपराधसे अपराधी होना पड़ता है। यदि कोई व्यक्ति, दूसरे किसी व्यक्तिके उस चिह्नका—जिसे किंवह अपनी सम्पत्तिको ठीक रखनेके लिए व्यवहृत करता है (अर्थात् Property Mark)—अपव्यवहार करे, तो वह उसका जाल करना हुआ। यदि कोई व्यक्ति अपने परिचयको छिपा कर दूसरे किसी व्यक्तिके नामसे अपना परिचय दे कर किसीको धोखा दे, अथवा जान बूझ कर अपनेको वा अन्य किसी व्यक्तिको दूसरे किसीके नामसे परिचय करावे, तो उसका यह आदमी जाल बनाना हुआ। जिसके नामसे परिचय दिया जाय, यदि वास्तवमें वह आदमी न भी हो, तो भी वह जाल ही कहलाता है। यदि कोई व्यक्ति दीवानी या

नमें कोई ४।६ सेर बीज तैयार होता है। उसको एक सीधे जमीनमें मजेसे लगा सकते हैं। खेतमें रोपित होनेके ४ दिन पीछे ही बीजसे अङ्कुर फूटता है। ६।७ दिन पीछे वही हरी पत्ती जैसा लगने लगता है।

जिस जमीनमें मोथा होता, अच्छा बीज निकलता है। फूटनेके समय वृष्टि पड़नेसे बीज बिगड जाता है। क्षेत्र खुले स्थानमें रहना आवश्यक है। उसमें घास जगनेसे उपकार ही है, अपकार कभी नहीं। प्रत्येक क्षेत्रमें ४।५ वत्सर बीज प्रस्तुत हो सकता है।

रोपणक्षेत्रमें जहां जहां मट्टी ऊंची उठाते, अङ्कुर लगाते हैं। रोपणके ३।४ सप्ताह पीछे आश्विनके अन्त वा कार्तिकके आदिमें पौदेकी जडको छोड करके ऊंची मट्टीका दूसरा अंश निकाल डाला जाता है। फिर पौदेकी जडमें खली या खलीमें गोबर मिला करके दिया करते हैं। इसके बाद मट्टी उच्च की जाती है। अग्रहायण मासके आरम्भमें पौदेके नीचेकी दो एक डालियां काट या तोड डालते हैं। ऐसा करनेसे वृक्षका तेज ऊपरको चढ़ता है। फिर क्यारीकी मध्यस्थित निम्नभूमि हलसे जोतनी पड़ती है।

अग्रहायण मासको १०।१२ दिन पीछे या उससे पहले ही गांजेका परीक्षक आता, जो पोतदार कहलाता है। उसको दो तीन बार परीक्षा लेनी पडती है। वह सूर्योदयसे पहले फूलोंकी जांच करता है। जो फूल स्त्रीजातीय समझ पड़ते, उनके वृन्त वह तोड देता है। पीछे क्रमक आ करके उनको उखाड डालता है। इसी प्रकारसे अगहनमें तीन और पूषमें एक मरतबा परीक्षा हुआ करती है। इसका नाम 'बछाई' है। फिर भी मादा पेंदा बिलकुल नष्ट नहीं होता, कितने ही पेड बच जाते हैं। बछाई हो जाने पर किसान अपने आप एकःबादर पौदे देखने आते और जहां जहा पीले पत्ते पाते, तोड जाते हैं। फिर घने वृक्षोंमेंसे कुछ उखाड करके खाली जगह पर लगा देते हैं। रोपण कार्य समाप्त होने पर भूमिकी अवस्था देख एक बार मार्गशीर्ष और एक बार पौषमें दो बार सिञ्चन करना पड़ता है। फिर पौषमासके शेष वा माघमासके प्रारम्भको पेड़में फूल आने लगते हैं। माघमासके बीचो बीच वह भरपूर हो जाते हैं। फूल जितना ही पकता, उतना ही अरुणवर्ण निकलता है। उस समय वह खाली या खोखला कहलाता है। पुंजातीय गांजेके फूलको 'काली' कहते हैं। माह बीतते या फागुन लगते लगते गांजेका पेड़ कटता है।

गांजा दो प्रकारका होता है—चपटा और गोल। चपटा गांजा तैयार करनेको एक घासदार जगह साफ की जाती है। सवेरे ८ बजेके समय गांजेको जटा काट लाते अर्थात् प्रातःकालकी ओससे उसको बचाते हैं। जो वृक्ष खूब पूर्णता पाते, पहले ला करके घास पर १ दो बजे तक सुखाये जाते हैं। फिर फूलको ओर एक हाथसे कुछ ज्यादा छोड करके उसका बाकी हिस्सा काट डालते हैं। उसीके साथ जिन डालियोंमें फूल नहीं आते, काटते चले जाते हैं। फिर उसको सारी रात ओसमें रखते हैं। कहीं कहीं जाडेको ज्यादत हो जाने पर कटाई होती है। दूसरे दिनको २।३ बजे उनको पुड़ियां बांधी जाती हैं। मोटाईके अनुसार एक एक पुड़ियामें कभी तीन चार, कभी ८।१० कलियां रहती हैं। इस प्रकार बंध जाने पर एक चटाई डाल करके उस पर वही पुड़िया घेरेकी सूरतमें अर्थात् कलियोंका सिरा एक दूसरेके सामने रख करके जमा देते हैं। एकके ऊपर दूसरी रख दी जाती है। फिर ४।५ आदमी एक दूसरेका कन्धा पकड करके पैरोंसे उनको कुचला करते हैं। बायें पैरसे डांठेको दबाते और दाहनेसे चोट चलाते हैं। थोड़ी देर ऐसा करने पर गांजा चपटा पड़ जाता है। फिर एक दूसरी पुड़िया-ला उस पर और रख देते और वैसे ही कुचल लेते हैं। उस पर चटाई ढाक करके २।३ आदमी बैठते हैं। इससे कलो अपने लगे हुए दूध जैसे निर्यासमें लिपट जाती और पत्र तथा-बीजकी विच्छिन्नता देखाती है। फिर कोई दूसरी चटाई बिछा दोनों हाथमें एक एक पुड़िया ले परस्पर आघात किया करते हैं। इससे बीजों और पत्तियोंके झड जाने पर जटाओंको अलग किसी चटाईमें गोल गोल जमा करके रख छोडते हैं। इससे जो जटाएं पहले ऊपर रहीं, नीचे आ पडती हैं। इस तरतोबके बाद मडाई और कुटाई होती है। दो तीन वैसा करके जटाओंकी अलग रख देते हैं। फिर बीजों और पत्तियोंको अञ्जलिमें ले कृषक

निर्वासित हो कर कुछ समयके लिए इसी नगरमें वास किया था। तब जालना एक मुगल सेनापतिका जागीर था। १८०३ ई०में महाराष्ट्र युद्धके समय कर्नल स्टिभेन्सनकी सेना इसी नगरमें टिकी थी। यहां पत्थरकी बनी हुई सराय एक मसजिद, तीन हिन्दू देवमन्दिर और कई एक नगरकी प्रधान अट्टालिकायें हैं। यहांका वाणिज्य व्यवसाय दिनों दिन ह्रास होता जा रहा है। अभी सोने और चाँदीका गोटा और कुछ कपड़े भी तैयार होते हैं। जालना दुर्ग १७२५ ई०में निर्माण किया गया था। यह अब बहुत तहस नहस दशामें है। इसके उत्तरमें एक विस्तृत उद्यान है। यहाँका फल बम्बई, हैदराबाद आदि देशोंमें भेजा जाता है। शहरसे आध मील पश्चिममें मतितलाव नामका एक बड़ा सरोवर है। इसीका जल नगरके काममें आता है। यहां डाकघर, डाकबङ्गला और दो गिरजा है।

जालना पहाड़—हैदराबाद राज्यकी पर्वतश्रेणी। यह दौलताबादसे औरङ्गाबाद जिलेको चला गया है। बरार की सीमाके निकट जालनाका पर्वत आ मिलनेसे ही इसका यह नाम पड़ा है। फिर यह सह्याद्रि पर्वतमें मिल जाता है। जालना पर्वत २४०० फुट ऊँचा है। दौलताबाद चोटी समुद्रपृष्ठसे ३०२२ फुट ऊँची पड़ती है। इसकी पूरी लम्बाई १२० मील है।

जालन्धर—शतद्रु और चन्द्रभागा नदीके मध्यवर्ती दुआब का अर्धांश। पहले इस प्रदेशका नाम त्रिगर्त था। इस प्रदेशका प्रधान शहर जालन्धर है। कोटकाङ्गड़ा (अथवा नागरकोट) नामक स्थानमें एक सुदृढ़ दुर्ग था, विपद कालमें जालन्धरवासी उस स्थानमें आ कर रहते थे।

पद्मपुराणमें जालन्धरके उत्पत्ति सम्बन्धमें एक सुन्दर गल्प है—किसी समय समुद्रके औरस और गङ्गाके गर्भसे जालन्धर नामका एक दानव उत्पन्न हुआ। उसके जनमते ही पृथिवी देवी कांप उठी। स्वर्ग, मर्त्य और रसातल उसके गर्जनसे प्रकम्पित हो गया। जब ब्रह्माका ध्यान टूटा तो वे तीनों लोकको व्याकुल देख भयभीत हो गये। बाद वे हंस पर चढ़ कर समुद्रके सामने उपस्थित हुए और समुद्रसे पूछा, 'हे सागर! तुम क्यों इस तरहका गम्भीर और भयङ्कर शब्द कर रहे हो!' समुद्रने उत्तर दिया, 'हे देवादिदेव! यह मेरा गर्जन नहीं है, मेरे पुत्रके गरजनेसे ऐसा शब्द उत्पन्न होता है।" ब्रह्मा समुद्रके पुत्रको देख कर अत्यन्त विस्मित हो गये। जब ब्रह्माने उसे अपनी गोदमें बिठा लिया तब उसने उनको दाढ़ी इतने जोरसे खींची कि उनकी आंखोंसे आंसू निकल पड़े और वे किसी तरह दाढ़ी न छुड़ा सके। तब समुद्रने हंसते हंसते आगे बढ़ अपने पुत्रका हाथ छुड़ा दिया। ब्रह्मा सागर-पुत्रके पराक्रमसे अत्यन्त सन्तुष्ट हो कर बोले कि इस लड़केने मुझे अत्यन्त जोरसे आकर्षण किया है, इसीलिये यह संसारमें जालन्धर नामसे प्रसिद्ध होगा। ब्रह्माने उसे एक और भी वर दिया, कि यह बालक देवताओंसे भी अजेय होगा और मेरे अनुग्रहसे त्रिलोकका अधिपति कहलायेगा।

बड़े होने पर एकदिन दैत्यगुरु शुक्र समुद्रके समीप आ कर बोले, "हे सागर! तुम्हारा पुत्र अपने भुजबलसे त्रिलोकका राजा होगा, इसलिये तुम पुण्यात्माओंके वासस्थान जम्बूद्वीपसे कुछ दूर रह कर वास करो और अपने पुत्रके रहने योग्य कुछ स्थान दे कर वहां उसे एक छोटा राज्य प्रदान करो।" दैत्यगुरु शुक्रके कहने पर समुद्र ३०० योजन दूर हट गया। वही जल-निर्मुक्त स्थान पीछे जालन्धर नामसे मशहूर हो गया है। (पद्मपुराण उत्तर०)

उक्त कथा काल्पनिक कह कर उड़ाई नहीं जा सकती। इसके साथ एक प्राकृतिक परिवर्तनका सम्बन्ध भी है। जालन्धर प्रदेश गङ्गा और सिन्धु नदके उपत्यका प्रदेशके अन्तर्गत पड़ता है। पहले उक्त प्रदेश सम्पूर्ण रूपसे समुद्रके मध्य था, बाद समुद्रके हट जानेसे वह मनुष्यकी आवासभूमि हो गया है।

जालन्धर दानवका मृत्यु वृत्तान्त अत्यन्त शोचनीय है। उसे वर मिला था, कि जब तक उसकी स्त्री वृन्दाका चरित्र निष्कलङ्क रहेगा, तब तक उसे कोई जीत नहीं सकता। किन्तु विष्णुने जालन्धरका रूप धारण कर वृन्दाको ठगा था, इसीसे थोड़े समयके बाद शिवजीने जालन्धरको पराजित किया। आश्चर्यका विषय यह था कि परस्पर युद्धकालमें शिवजी जितनी बार जालन्धरके मस्तकको काटते जाते थे, उतनी बार फिर उसका मस्तक

का अक तम्बाकू डाल करके निगालीसे पीया जाता है। उसमें बडा नशा होता है। अपने देशमें भांग पी करके लोग वैसे ही मतवाले बन जाते हैं। गांजा पीनेसे मानसिक अवस्था कैसी हो जाती, धूर्तसमागम नामक संस्कृत प्रहसनमें निरूपित हुई दिखलाई है—

''दलति हृदयशैलम्योदमग्रो ति चेत'
स्फुटति सकलदेहे कौकसग्रन्थिसन्धि'।
विरम विरम शिवाम्भ्रुग्मगकामयात
शिव शिव शिव सद्यो जोवनं कुटातीव ॥"

किसी किसी डाक्टरके कथनानुसार गांजा पीनेसे लोग पागल पड जाते हैं। इससे जो अनिष्ट आता, उसको निवारण करनेके लिये शिक्षित समुदाय सचेष्ट दिखलाता है। परन्तु खेद है—सरकार इसका व्यवहार नहीं रोकती। लोग गांजा पी पी करके उत्सन्न हो रहे है। किसी कविने कहा है--

"गंजवा न पीयो सैयां गरमी लगतु है।
जरिये हैं सकल करेज रे।"

गाँठ (हिं० स्त्री०) गिरह।

गाँठकट (हिं० पु०) वह चोर जो पासके कपडेमें बंधे ए रुपये उठा लेता है, गिरहकट। २ उचितसे अधिक मूल्य पर सौदा बेचनेवाला, ठग।

गाँठगोभी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी गोभी। इसमें गूदेदार गाँठ होती है। इसकी तरकारी बनाई जाती है।

गाँठदार (हिं० वि०) जिसमें बहुत गिरहें हो।

गाँठना (हिं० क्रि०) १ गांठ देना। २ जीर्ण वस्तुओंमें चीप देना। ३ मिलाना, योगकरना।

गाँठी (हिं० स्त्री०) १ स्त्रियोंके हाथोंकी कुहनीका एक प्रकारका गहना। २ भूसे वा डंठलका गाँठदार छोटा छोटा भाग।

गाँड (हिं० स्त्री०) १ गुदा। २ किसी पदार्थके नीचेका भाग जिसके आधार पर वह खडा रह सके. पेंदी, तला।

गाँडर (हि० स्त्री०) हाथ वा सवा हाथ लम्बी एक तरह की घास। जहा जल बहुतायतसे मिलता है, उसी स्थान पर यह घास उपजती है। विशेष कर यह नेपालकी तराईमें पायी जाती है। इसकी पत्ती मरजाने पर भी जेठ और आषाढ मासमें इसकी सूखी जड़में अङ्कुर होते और धीरे धीरे बढ़ने लगते है। इसकी सींकेमें फूल रहता है। मनुष्य सींकेसे झाड तथा छोटीर टोकरी बनाते और पौधेको काटकर छप्पर छाते हैं। इस का मूल सुगन्धित होता। फारसी भाषामें इसे खस और संस्कृतमें उशीर कहते है। २ गिरहदार एक प्रकार की दूर्वा। यह बहुत फैलती तथा स्थान स्थान पर जा पकडती है। मवेशी इसे बहुत पसन्द करते। यह कडुई, कसैली तथा मीठी होती है। यह दाह, तृष्णा, कफपित्तको दूर करता और लोहके विकारको नष्ट करता है। गण्डदूर्वा।

गाँडा (हि० पु०) १ किसी वृक्ष वा पौधेका कटा हुआ भाग। २ ऊखका वह भाग जो कोल्हूमें देकर रस निकालते है। ३ ऊख, ईख, केतारी।

गाँडी (हिं० स्त्री०) चौपायोंके खानेकी एक तरहकी घास। इसकी जड़ सुगन्धित होती है। इस घासमें विशेषता इस बातकी है कि सुखा कर दश या बारह मास रख देने पर भी इसका स्वाद नहीं बदलता।

गाँडू (हिं० वि०) १ जिसे गांड़ मरानेकी आदत पड गई हो। २ निकम्मा। ३ जिसे साहस नहीं हो, कायर, डरपोक।

गाँती (हिं० स्त्री०) गाती देखो।

गाँथना (हिं० क्रि०) १ ग्रन्थन करना, गूथना। २ योग करना।

गाँधिल—पञ्जाब प्रान्तकी एक जाति। यह लोग व्यापार करते और युक्तप्रदेशमें भी अल्पसंख्यक मिलते है।

गाँव (हिं० पु०) वह जगह जहां बहुतसे गृहस्थ रहते हों। छोटी बस्ती।

गाँस (हिं० स्त्री०) १ ग्रन्थन, बंधन। २ प्रतिरोध, रोक टोक। ३ वैर, द्वेष, ईर्षा। ४ हृदयकी गुप्त बातें। ५ तीर वा बरछीका फल, अस्त्रका अग्रभाग। ५ अधिकार, शासन।

गाँसना (हिं०-क्रि०) १ ग्रन्थन करना। २ गठना, कसना, ठस करना।

गाँसी (हिं० स्त्री०) तीर वा बरछीका फल, किसी अस्त्र का अग्रभाग।

गाँहक—गाहक देखो।

गाइड (अं० पु०) १ पथदर्शक, रास्ता दिखानेवाला।

कार कई एक स्थान अधिकार कर लिये थे, तब त्रिगर्त्त-राजगण अपने समस्त अधिकारसे विच्युत न हुए थे। वे शकके अधीन करद राजा थे और जब कभी उन्होंने सुविधा पाई तभी अपने प्राचीन दुर्ग कोटकाङ्गड़ाको अधिकारमें लानेकी चेष्टा की। एक समय महम्मद तुगलकने इस दुर्ग पर अधिकार किया था, किन्तु वह फिर राजा रूपचन्द्रके हाथ आ गया। इसके बाद फिरोजशाहने इसे अपने अधिकारमें लाया। पीछे तैमुरके आक्रमणके समय त्रिगर्त्तराजाने इस दुर्गको पुनः अपने हाथमें कर लिया और सम्राट् अकबरके समय तक यह दुर्ग उन्हींके अधीन था। अकबरके समयमें राजा धर्मचन्द्रने दिल्लीकी अधीनता स्वीकार की। राजा त्रैलोक्यचन्द्र जहांगीरके समयमें विद्रोही हो गये थे, किन्तु उन्होंने पराजित हो कर अधीनता स्वीकार की। काल क्रमसे राजा संसारचन्द्रने कोटकाङ्गड़ा दुर्ग अपने हाथमें कर लिया और समस्त जालन्धर प्रदेशको अधिकारमें लानेकी चेष्टा की। किन्तु अन्तमें उन्होंने गोरखा-सैन्यसे प्रतिरुद्ध हो कर रणजित्‌सिंहसे सहायता मांगी थी। उन्हें सहायता दी गई सही, किन्तु कोटकाङ्गड़ा दुर्ग उसी समय जालन्धर राजाओंके हाथसे सदाके लिये जाता रहा।

चीन-भ्रमणकारी युएनचुयाङ्गने भारतसे लौटते समय जालन्धर राज भवनमें आतिथ्य स्वीकार किया था। वे जालन्धरराजको उतितो नामसे अभिहित कर गये हैं। शायद राजा आदित्यका उन्होंने उतितो (उदित) नामसे उल्लेख किया है। ८०४ ई०में जयचन्द्र त्रिगर्त्तके राजा थे। जयचन्द्रके बाद क्रमशः १८ राजाओंने राज्य किया बाद १०२८ ई०में इन्द्रचन्द्र जालन्धरके सिंहासन पर बैठे। उनके बादसे ले कर राजा रूपचन्द्रके समय तक ३४ राजा हुए। राजा रूपचन्द्रके बाद ४७ राजाओंने जालन्धर पर राज्य किया। १८४७ ई०में रणवीरचन्द्र राजा थे, थोड़े समयके बाद वे सिंहासनसे हटा दिये गये। रूपचन्द्रके वंशमें हरि और कर्म नामके दो भाइयोंने जन्मग्रहण किया। हरि बड़े होनेके कारण सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। एक समय वे हरसर नामक स्थान पर एक कूपमें अकस्मात् गिर पड़े, बहुत तलाश करने पर भी उनका पता न चला; इसलिये उनके भाई कर्म राजसिंहासन पर बैठे। २ या ३ दिन बाद किसी व्यापारीने उन्हें कुएंसे बाहर निकाला। किन्तु इसके पहले ही उनकी प्रेतक्रिया हो चुकी थी, अतः वे पुनः राज्यके अधिकारी न हो सके, उन्हें गुलार नामका एक छोटा राज्य दे दिया गया। उसी समयसे गुलारमें भी जालन्धर-राजका एक वंश राज्य करता आ रहा है।

प्राचीन त्रिगर्त्त राज्यमें जालन्धर, पाठानकोट, धर्मेरि, कोटकाङ्गड़ा, वैद्यनाथ और ज्वालामुखीका देवमन्दिर ही प्रसिद्ध हैं।

१ अभी जालन्धर कहनेसे पञ्जाबका एक राजस्व विभाग समझा जाता है। इसके अधीन जालन्धर, होसियारपुर और काङ्गड़ा ये तीन जिला पड़ते हैं। यह अक्षा० २८° ५५´ ३०से ३२° ४८´ उ० और देशा० ७३° ५२´से ७८° ४२´ पू०में अवस्थित है। जालन्धरकी निम्न प्रान्तर भूमि मुसलमानोंके हाथ आ जाने पर यहांके प्राचीन राजवंश पार्वतीय प्रदेशमें आ कर रहते हैं और प्रसिद्ध दुर्ग काङ्गड़ाके नामानुसार यह स्थान भी काङ्गड़ा नामसे मशहूर हो गया है। इस स्थानको कोई कोई कतोच कहते हैं।

वृटिश अधिकारभुक्त जालन्धर प्रदेशमें हिन्दू, जैन, सिख धर्मावलम्बी जाट, राजपूत, ब्राह्मण, गुर्जर, पाठान, सैयद आदिका वास है। जालन्धरके उच्च प्रदेशमें बहुतसे कुएं हैं जिनके जलमें खनिज पदार्थ मिश्रित है। इस स्थान पर मणिकर्ण नामक एक गरम झरना निकला है जिसका जल ५३८१ फुट ऊपर उछलता है। मणिकर्णके समीप पार्वतीय तुषार-स्रोत बहते हैं। यहां विसत् नामक गन्धकगर्भ उष्णप्रस्रवण है।

जालन्धरके कोहिस्थान, सुखेत और मन्दि उपत्यकामें तथा मन्दि-नगरके निकटवर्ती छोटे छोटे ग्रामोंमें यदि कोई विदेशी मनुष्य पहुंच जाय, तो उन ग्रामोंकी स्त्रियां उसके सत्कारके लिये भिन्न भिन्न दलमें उसके समीप आ जाती हैं और अच्छे अच्छे कपड़े पहन कर अभ्यर्थनासूचक गीत गाती हैं। इस उपलक्षमें उस आगन्तुकको प्रतिदलमें एक एक रुपया देना पड़ता है।

उनके राज्यका कुछ अंश अपने आप ले लिया। १००८ ई०को जब महमूद गजनवीने भारत आक्रमण किया, कोई ३०००० गाकरोंने पेशावरके पास हिन्दू राजाओंको साहाय्य दिया। उस युद्धमें महमूदकी प्रायः ५००० सेना विनष्ट हुई। १०७९ ई०को इब्राहीम गजनवीने युध पर्वतका दारपुर दुर्ग अधिकार किया। यह दारपुर जलालपुरसे कुछ उत्तरको वितस्ताके तीर पर अवस्थित है। नगरके लोग खुरासानियोंके वंशधर हैं। अफ्रासिया कर्तक स्वदेशसे ताड़ित होने पर वह उक्त स्थानमें जा बसे हैं। वह भी इनको ही तरह अपने अपने घरमें विवाह करते और किसी अपर जाति वा श्रेणीसे सम्बन्ध नहीं रखते। कितने ही लोगोंके अनुमानमें गाकर और दारपुरके खुरासानी एक जाति है। चन्द बरदाई कविके पृथ्वीराजरासो नामक ग्रन्थमें लिखा है कि ११८० ई०को मुहम्मद गोरीके भारत आक्रमण करने पर उनके सरदार मलिक हयातने पृथ्वीराजको सहायता दी।

कहते हैं कि मुहम्मदगोरीके शेष राजत्वमें गाकर सरदार सर्वप्रथम इसलाम धर्ममें दीक्षित हुए। परन्तु इससे पहले ही उन्होंने विजातीय उपाधि 'मलिक' ले रखा था।

१२०५ ई०को इन्होंने पञ्जावके लाहोर राज्य पर्यन्त आक्रमण किया। १२०६ ई०को यह मुसलमान सुलतानके खेमेमें घुस पड़े और छातीमें छुरी भोंक उनको मार डाला। परन्तु १२२५ ई०को इन्हें मुगल सम्राट् बाबरकी अधीनता माननी पडी। १७६५ ई०को रावलपिण्डीके समतल क्षेत्रसे सिखों द्वारा खदेरे जाने पर यह मूरी पर्वत पर पहुंच करके स्वाधीन भावसे राज्य करते रहे। वहीं १८३० ई०क, सिखोंसे इनकी लड़ाई हुई। बहुत रक्तपातके पीछे इन्होंने पराभव माना था। १८४९ ई०को रावलपिण्डी सिखोंके हाथसे अंगरेजोंके अधिकारमें आने पर यह परवर्ती ४ वर्ष तक उनसे लड़ते रहे और १८५७ ई०को पञ्जावकी राजधानी मूरी नगर पर चढ चले।

आजकल यह पञ्जाव प्रदेशके रावलपिण्डो, वितस्ता तीरवर्ती प्रदेश, गुजरात और हजारा नामक स्थानमें रहते हैं।

फरिश्तामें लिखा है—कन्यासन्तान होनेसे कोई भी गाकर उसको बाजार ले जाता और वहां एक हाथमें कन्या और दूसरे हाथमें पैनो छुरी ले करके चिल्लाता है, यदि उस कन्याका कोई प्रार्थी हो, शीघ्र आ जावे। किसीके आकर न पहुंचनेसे तत्क्षणात् नवजात कन्याको दो टुकड़े कर डालते हैं। उसी कारणसे इनमें एक स्त्रीके बहुतसे स्वामी देख पड़ते हैं। ई०से ३२७ वर्ष पहले यूनानियोंके भारत आक्रमणके समय रावलपिण्डी प्रदेशमें शक जातीय 'तक्क' शाखाका वास था। सम्भवतः यह 'तक्क' संस्कृत तक्षक शब्दका अपभ्रंश है। कारण शकोंमें सर्पोपासक कोई दूसरा नागवंश भी होता है। बहुत लोग अनुमान करते कि तक्कवंशीय शक लोगोंको मुसलमानोंने गाकर या गाकर जैसा कहा है।

गागर (हिं० स्त्री०) गगरी, घड़ा।

गागरा (हिं० पु०) १ गगरा देखो। २ भंगियोंकी एक जाति।

गागरो (हिं० स्त्री०) घड़ा, गगरो।

गागरौन—राजपूताना कोटा राज्यके कनवास जिलेका एक ग्राम और दुर्ग। यह अक्षा० २३° ३८´ उ० और देशा० ७६° १२´ पू०में आहू और कालीसिन्धु नदोके सङ्गम स्थल पर झालरापाटन छावनीसे ढाई मील उत्तर-पूर्व अवस्थित है। गागरौनका किला राजपूतानामें एक बहुत मजबूत किला है। कहते हैं—उसे डोड राजपूतोंने बनाया था। ई० १२ वीं शताब्दीके अन्त तक उनका इस पर अधिकार रहा, फिर खीची चौहानोंने आकर दखल किया १३०० ई०को खीचियोंने सफलतापूर्वक अपने राजा जीतसिंहके अधीन अला-उद्-दीनका अवरोध रोका था। किन्तु प्रायः १४२८ ई०को राजा अचलदासने मालवके शाहसे गागरौन अधिकार किया। १५१९ ई०को मुसलमान ऐतिहासिकोंके वर्णनानुसार भो इसके अधिकारी थे, परन्तु महमूद खिलजीने उनको आक्रमण करके पकड़ लिया और मार डाला। इसके थोड़े हो दिनके पीछे मेवाड़के राणा संग्राम-सिंहने मुहम्मदको हराया और १५३२ ई० तक गागरौनको अपने अधिकारमें रखा। फिर गुजरातके बहादुर शाहने इसे अधिकार किया था। तीस वर्ष पीछे मालव जाते हुए अकबर बादशाह यह

इस प्रदेशके शासनकर्त्तारूपमें नियुक्त हुए। १८४८ ई०में यह प्रदेश पहले लाहोरके ब्रटिश रेसिडेण्टके शासनाधीन किया गया, बाद समस्त पञ्जाब प्रदेश अङ्गरेजोंके हाथ आ जाने पर इस प्रदेशका शासनकार्य साधारण नियमके अनुसार हो चलता था। जालन्धर कमिश्नरके वासस्थानके रूपमें परिणत हुआ और यह जालन्धर, होसियारपुर और काङ्गड़ा इन तीनों जिलोंमें विभक्त किया गया। जब यह प्रदेश लाहोर दरबारके अधोन था, तब गुलाम मोहिउद्दीनने अधिक राजस्व वसूल करके अधिवासियोंको जिस तरह तकलोफ दी थो, अङ्गरेजोंने उस तरहकी नीति अवलम्बन न की। पहले फैजउल्लाहपुरिया मिश्लिके अधीन अत्यन्त दयालु और न्यायवान् सिख शासनकर्त्ता रूपलाल जिस तरह कर वसूल करते थे, अङ्गरेज भी उसी तरह काम करते आ रहे हैं।

जालन्धर प्रदेशमें १४ प्रधान शहर हैं—जालन्धर, कर्त्तारपुर, अलवालपुर, आदमपुर, बङ्गा, नवशहर, राहण, फिल्लौर, नूरमहल, महतपुर, नाकोदर, बिलगा, जानदिवाला, रुरका और कलन। साधारणतः इस प्रदेशमें पञ्जाबी भाषा प्रचलित है। निम्न श्रेणीके लोग हिन्दी भाषामें बोलते हैं।

प्रदेशको १२६६३२८३ एकड़ आबादी जमीनसे २२५७२२ एकड़ जमीनमें पानी सींचना पड़ती है। पानी सींचनेके लिये जगह जगह कुएँ हैं। इस प्रदेशमें ईख बहुत उपजती है और इसीको बेच कर गृहस्थ लोग मालगुजारी देते हैं। यहां गाय, बैल, घोड़े, खच्चर, गदहे, भेड़े और बकरे बहुत पाये जाते हैं। खेती करनेके लिये जो नौकर नियुक्त किये जाते हैं उन्हें वेतन स्वरूप कुछ फसल दी जाती है।

व्यवसाय वाणिज्य—लुधियाना, फिरोजपुर और आस पासके स्थानोंसे जालन्धरमें अनाज आदि भेजा जाता है, किन्तु कभी कभी जालन्धरसे भी चावल आदिकी रफ्तनी आगरा और बङ्गदेशमें होती है। यहांकी ईख ही प्रधान पण्यद्रव्य है। यहांकी चीनी और गुड़ बीकानेर, लाहोर, पञ्जाब और सिन्धुप्रदेशमे भेजा जाता है। अगहनसे माघ महीने तक यहां ईख पेरी जाती है। किसी किसी गाँवमें ५०से भी अधिक ईख पेरनेके कोल्हू हैं। जालन्धरवासी ईखका रस निकाल लेते हैं और जो भाग फेंक दिया जाता है उससे वे रस्सी तैयार करते हैं। जालन्धर, राहण, कर्त्तारपुर और नूरमहलमें एक प्रकारका कपड़ा प्रस्तुत होता है। जालन्धरका घाटि नामक वस्त्र अत्यन्त सुन्दर और चमकीला होता है। यहांका सूसी नामक वस्त्र भी खराब नहीं होता है। यहां एकसौसे अधिक करघे चलते हैं जिनमें तरह तरहके रेशमी कपड़े तैयार होते। यहां प्रायः पगड़ीके लिये लुङ्गी व्यवहृत होती है। राहणमें एक प्रकारको चादर और मोटा कपड़ा बनता जो जालन्धरके कपड़ोंमें बहुत प्रसिद्ध है।

जालन्धरका बढ़ईका काम अत्यन्त मनोहर लगता है। काठके ऊपर अच्छे अच्छे चित्र खोदे रहते है। ये इतने सुन्दर बने रहते हैं कि हर एक २०) रु०से कममें नहीं बिकता है। यहां एक तरहकी कुर्सी तैयार होती है। उसके हत्थे शीशम और तूणकाठके बने रहते हैं। खानखानेके काठका काम विशेष प्रसिद्ध है।

जालन्धरमें चाँदीको पत्ती और एक प्रकारका सोनेका बढ़िया गोटा बनता है। यहाँका मृण्मय कार्य भी खराब नहीं है। तमाकू पीनेके लिये एक प्रकारकी चिलम और मत्तेवान तैयार होता जिसका मूल्य भी अधिक होता है।

जालन्धर जिलेमे ४८ मील रेलपथ गया है। फिल्लौर, फगवारा, जालन्धरसैन्यनिवासके समीप और जालन्धर शहरमें सिन्धु-पञ्जाब और दिल्ली रेलवेके ष्टेशन हैं। होसियारपुरसे काङ्गड़ा तक ८६ मीलकी एक पक्की सड़क चली गई है। रेलपथ तथा ग्राण्डट्रङ्क पथ पर तार बैठाया गया है।

जालन्धर जिलेमें एक डिपुटीकमिश्नर, एक या दो सहकारी तथा दो या उससे अधिक अतिरिक्त सहकारी कमिश्नर रहते हैं। अतिरिक्त कमिश्नरोंमें एक युरोपियन रहनेका नियम है। इसके सिवा राजस्व और चिकित्साविभागके कर्मचारी भी वहां रहते हैं। पुलिसमें ३६४ स्थायी कर्मचारी रहते हैं। म्युनिसीपल पुलिसमें १०० और सेनानिवासकी पुलिसमें ५६ कानष्टेबुल है। इस प्रदेशमें प्रायः ११७८ ग्राम्य चौकीदार रहते हैं। गवर्मेण्ट

ब्रटिश सरकारको १२५० रु० कर देना पड़ता है। यहांके प्रधान सनदके अनुसार अपना राज्यकार्य चलाते हैं। प्रति बीसवर्षमें सरकारसे कर घटाया या बढ़ाया जाता है। उड़ीसाके कमिश्नरके अधीन राजाको चलना पड़ता है। करका घटाना या बढ़ाना, अच्छी तरहसे राज्य कार्य चलाना, उचितरूपसे न्याय करना तथा अफीम, नमक और शराब पर टैक्स लगाना, ये सब कार्य कमिश्नरकी देख भालमें है। राजा कैदियोंको दो वर्ष कारागार और २०० रु०का दण्ड दे सकते हैं। उक्त दण्डसे यदि कुछ अधिक दण्ड देनेकी इच्छा हो तो राजा बिना कमिश्नरको अनुमतिसे नहीं कर सकते हैं।

इस राज्यमें ८०६ गाँव लगते हैं। लोकसंख्यामेंसे १४६५४८ हिन्दू, ८८८४८ आदीम जाति, १६३० मुसलमान और १७५८ ईसाई हैं। नदियोंसे परिवेष्टित रहनेके कारण यह राज्य बहुत उपजाऊ है।

यहांकी प्रधान उपज धान, ईख और रेडी है। यहाके जंगलमें लाख, धूना (धूप) और कत्था यथेष्ट पाये जाते हैं। हिंगोरराज्यमें कोयलेकी खान है। यहां चूर्ण कड्कड़ और लोहे भी अधिक परिमाणमें मिलते हैं। इस राज्यमें १३ पुलिस ष्टेसन है जिनमें कुल २४ पुलिस इन्सपेक्टर और १३४ कोन्सटेबुल रहते हैं, पुलिस विभागमें २०००० रुपये खर्च होते हैं। इसके अलावा चौकीदार हैं जिन्हें जागीर दी जाती है। सुश्राडोमें एक कारागार है जिसमें सिर्फ ५० कैदी रह सकते हैं। इस राज्यमें एक अस्पताल, १ मिडिल स्कूल, ७ प्राइमरी स्कूल और ८ लोअर प्राइमरी स्कूल हैं।

गाङ्गवंश, गांगेयवंश देखो।

गाङ्गायनि (सं० पु०) गंगाया अपत्यम्। १ भीष्म। २ कार्त्तिकेय। ३ एक प्रवर ऋषि।

गाङ्गिनी (सं० स्त्री०) गंगाकी एक धारा। यह बंगमें गौड़ नगरके निकट गंगामें आ मिली है।

गाङ्गेय (सं० पु०) गंगाया अपत्यं ढक्। १ भीष्म।

"गाङ्गेयोऽयं महाभाग भविष्यति बलाधिकः।" (देवीभागवत २।३।३०)

२ कार्त्तिकेय। (भारत १।११८ अ०) ३ हिलसा मछली। ४ भद्रमुस्ता, भद्रमोथा। (क्ली०) गंगाया अपत्यं ढक्। ५ स्वर्ण, सोना। (भारत वन) ६ धस्तूर, धतूरा। ७ कशेरु, भद्रमोथा। ८ मुस्त, मोथा। इसका पर्याय—मेघाख्य, मुस्ता, गांगेय और भद्रमुस्तक है। (त्रि०) ९ गंगाजलादि।

गाङ्गेयवंश—दक्षिणापथका पराक्रान्त राजवंश। दाक्षिणात्यके दक्षिणांशमें इनको कोङ्गु या कोङ्गनो और उत्तरांशमें गङ्ग या गाङ्गेय कहते हैं। यह ठहरानेका कोई उपाय नहीं है, किस पूर्वकालको उनका प्रथम अभ्युदय हुआ। महाराज वीरचोड़के ताम्रशासन पाठसे समझ पड़ता है कि चालुक्यराज प्रथम विजयादित्यके पुत्र विष्णुवर्धनने गङ्गों और कदम्बोंको पराजय करके दक्षिणापथमें राज्यविस्तार किया। इन्हीं विष्णुवर्धनके प्रपौत्र कीर्तिवर्मदेव ४८९ शकको राजत्व करते थे। ऐसे स्थल पर कीर्तिवर्मदेवसे अन्ततः एक शत वर्ष पूर्व विष्णुवर्धनका आविर्भाव मान लेते भी प्राय ३८९ शक (४६७ ई०) को गङ्गवंशका अस्तित्व ठहरता है। किसी किसी ऐतिहासिकके मतमें पराक्रान्त आन्ध्रभृत्य राजाओंके अवसान पर ई० द्वितीय शताब्दीको गङ्ग और पल्लव राजा दाक्षिणात्यके कोल्हापुर, धारवाड़, वनवासी आदि स्थानोंका राजत्व करते थे।

गांगेयराज अनन्तवर्मा (चोड़गङ्ग)के १०४१ शकको प्रदत्त ताम्रशासनमें लिखित हुआ है—

"ततो ययातिर्विजितारिर्भूतिकं स तत्सुत सुतर्वसुदेशः।
सपूर्व गीर्वाणगुरोर्गिरा सातामइयोरपि हि प्रहृष्टः॥
अपुत्रत्वं शासत् सुचिरमतिखिन्नो नृपवृष।
स गङ्गामाराध्यां नियतमतिराराध्य वरदाम्।
अजेयं गांगेयं सुतमलभतारमा च तदा
क्रमवद् वंश्यानां भुवि जयति गङ्गान्वय इति॥"

चन्द्रसे बुध, बुधके पुत्र पुरुरवा, तत्पुत्र आयु, आयुके पुत्र नहुष, नहुषके लड़के ययाति, ययातिके बेटे तुर्वसु और तत्पुत्र गांगेय थे। तुर्वसुने गङ्गादेवीकी आराधना करके गांगेय नामक पुत्र लाभ किया था। उन्हींके वंशधर 'गंगान्वय' वा गांगेय कहलाते हैं। उक्त ताम्रशासन और कटक जिलेसे नवाविष्कृत उत्कलराज वीर श्रीनरसिंहदेवके ताम्रशासनमें भी गांगेयकी पर पुत्रादिक्रमसे वंशावली इस प्रकार दी गयी है—विरोचन, सम्वेद्य वा साम्वेद्य, भास्वान्, दत्तसेन, सोम वा सौम्य, अश्वदत्त, सारांग चित्रांगद, शौरध्वज, धर्मप्रौ, परौचित, जयसेन,

जालभुज (सं० त्रि०) जिसकी उँगलियोंके ऊपरका चमड़ा जालके समान हो।

जालमानि (सं० पु०) १ अस्त्र-व्यवसायिविशेष, अस्त्रोंसे अपनी जीविकानिर्वाह करनेवाला मनुष्य। २ त्रिगर्त्तके अधिवासी। जालकि देखो।

जालव (सं० पु०) एक दैत्य। यह बल्वलका पुत्र था। बलदेवके हाथसे इसकी मृत्यु हुई थी।

जालवत् (सं० त्रि०) १ तन्तुवत्, सूत या तागाके समान। २ कवचसे ढका हुआ। (क्ली०) ३ कपट, छल।

जालवर्बुरक (सं० पु०) जालाकारो वर्बुरकः। दृढ स्थूल कण्टकयुक्त शाखाविशिष्ट वर्बुर जातीय वृक्ष, बबूलकी जातिका एक प्रकारका पेड़ जिसमें बहुत कांटा और छोटी छोटी डालियां होती हैं। इसके पर्याय—छत्राक, स्थूलकण्टक, सूक्ष्मशाख, तनुच्छाय और वज्रकण्ट है। इसके गुण—वातामय और कफनाशक पित्तदाहकारक, कषाय और उष्ण है।

जालवाल (सं० पु०) मत्स्यभेद, एक प्रकारकी मछली।

जालविन्दुजा (सं० स्त्री०) यावनाली शर्करा।

जालसंज्ञक (सं० पु०) शुक्लगत नेत्ररोगविशेष, मोतियाबिन्द।

जालसाज़ (अ० पु०) वह जो दूसरोंको धोखा देनेके लिये किसी प्रकारकी झूठी कारवाई करे।

जालसाजी (फा० स्त्री०) फरेब या जाल करनेका काम, ठगाबाजी।

जालह्रद (सं० त्रि०) जलप्रचुरो ह्रदः तस्येदं वा, शिवादित्वादण्। जलप्रचूरह्रद सम्बन्धीय।

जाला (हिं० पु०) १ जाल देखो। २ नेत्ररोगविशेष, आँखका एक रोग। इसमें पुतलीके ऊपर एक सफेद झिल्लीसी पड़ जाती है और इसी कारण दिखाई कम पड़ता है। जब झिल्ली अधिक मोटी हो जाती है तो दृष्टि नष्ट होने लगती है। इसे माड़ा कहते हैं। ३ घास, भूसा आदि पदार्थ बांधनेका जाल। ४ चीनी परिष्कार करनेका एक प्रकारका सरपत। ५ पानी रखनेका एक मट्टीका बना हुआ बरतन।

जालाक्ष (सं० पु०) जालमिवाक्षि-अच्। गवाक्ष, झरोखा।

जालापहाड़—दार्जिलिंग सब डिवीजनका एक पहाड़। यह अक्षा० २७° १' उ० और देशा० ८८° १६' पू० पर अवस्थित है। १८४८ ई० में यहां छावनी बनी थी और अब वह बढ़ा कर ४०० फौजी रहनेलायक कर दी गई है। यह समुद्रपृष्ठसे ७५२० फीट ऊंचे पर है।

जालाव (सं० क्ली०) शान्तिकर औषधविशेष, एक प्रकारकी हितकर दवा।

जालि—धान्यविशेष, जारी नामका धान। यह नदिया जिलेमें वैशाख मासमें रोपा जाता और कार्त्तिक मासमें काट लिया जाता है।

जालिआ—जालिया देखो।

जालिक (सं० पु०) जालेन जीवति। वेतनादिभ्यो-जीवति। पा ४।४।१२। इति ठन्। १ जालजीवी, धीवर, मछुआ। जालिया देखो। २ मर्कट, मकड़ा। ३ कर्कटक, वह जो जालसे मृगादि जन्तुओंको फँसाता हो। (त्रि०) ४ कूटलेखक, इन्द्रजालिक, मदारी, बाजीगर।

जालिका (सं० स्त्री०) जालं जालवदाकृतिरस्ति अस्याः। जाल-ठन् ततष्टाप्। १ स्त्रियोंके मुखावरक वस्त्रविशेष, स्त्रियोंके मुख ढाकनेका एक प्रकारका कपड़ा। २ गिरिसार, लोहा। ३ जलौका, जोंक। ४ विधवा स्त्री। ५ अङ्गरक्षिणी, कवच, जिरहबकतर, सँजोया। ६ चारक, पक्षीका जाल, चिड़ियोंका फन्दा। ७ मर्कट, मकड़ी। ८ कोषातकी।

जालिनी (सं० स्त्री०) जालं चित्रकर्मवस्तुसमूहो विद्यतेऽस्यां जाल इनिस्ततो ङीप्। १ चित्रशाला, वह स्थान जहाँ चित्र बनते हों। २ कोषातकी, तरोई, घिया। ३ घोषातकी, लटजीरा। ४ पटोललता, परवलकी लता। ५ प्रमेहरोगीका पीडकभेद, पिड़िका रोगका एक भेद, जिसमें रोगीके शरीरके मांसल स्थानोंमें दाह युक्त फुन्सियां हो जाती है। प्रमेह देखो। ६ देवदाली। ७ दारुहरिद्रा, दारुहलदी।

जालिनीफल (सं० क्ली०) घोषाफल, तरोई, घिया।

जालिम (अ० वि०) अत्याचारी जुल्म, करनेवाला।

जालिमसिंह—झाला जातिके एक राजपूत। इनके पिताका नाम पृथ्वीसिंह था। इनके पूर्वपुरुष सौराष्ट्र देशके अन्तर्गत झाला प्रदेशके हलवड़ नामक स्थानमें रहते थे। इनके पूर्वपुरुष कोटा आये थे और वहांके राजाने उन्हें सेना

और ५९७ ई०में प्रथम कीर्त्तिवर्मासे परास्त हुये थे। लेकिन ऐहोल शिलालिपिसे ज्ञात होता है कि ६०८ ई० में ये द्वितीय पुलिकेशीसे पराजित हुए थे। विनयादित्यके हरिहरस्तम्भसे मालूम पड़ता है ये पश्चिमीय चालुक्य राजाओंके परम्परागत भृत्य थे। इसी चालुक्य-वंशमें प्रथम कीर्त्तिवर्मा पुलिकेशी तथा विनयादित्य राजा हुए थे। परन्तु यह निश्चय है कि प्राचीन समय भारतके पश्चिम भागमें गङ्गवंशके राजा राजत्व करते थे। उनमेंसे प्रधान प्रधान राजाके नाम और राजत्वकाल इस तरह हैं—हरिवर्मा २४८ ई०में, विष्णुगोप ३५१ ई० में, अविनीत कोंगनी ४५४से ४६६ ई०तक, दुर्विनीत कोंगनी ७६२से ७७६ तक।

महिसुरके तलकाड, सिवार और शिवरपत्न शिलालिपियोंसे जान पड़ता है कि गंगवंशके प्रथम राजा श्रीपुरुष पृथ्वीकोनगणी रहे। लेकिन ये किस कालमें राजा हुए थे, इसका पूरा पूरा हाल पता नहीं लगता है। श्रीपुरुषके बाद इस वंशमें सिवमार नामके एक और राजा हो गये हैं। इन्हीं दोनों राजाओंके समयसे गंगवंशका विवरण आरम्भ हुआ है। इन दोनोंमेंसे एक राष्ट्रकूटके राजा ध्रुवसे पराजित हो कर ७८३ ई०में बन्दी हुए थे। ध्रुवके मर जाने पर भी उनके लड़के तृतीय गोविन्दने उन्हें बहुत दिनों तक कारागारहीमें रखा था। जब ये छोड़ दिये गये तब पूर्वी चालुक्य राजा नरेन्द्रमृगराजने गंगवंशके राजाओंके साथ बारह वर्ष घनघोर लड़ाई की, अन्तमें चालुक्य राजाकी जीत हुई। महिसुरकी हगली शिलालिपिसे जाना जाता है कि सत्यवाक्य कोंगनीवर्म गंगवंशमें एक और राजा हो गया था। इरिया नामके एक कोई प्रसिद्ध राजा उस समयमें राजत्व करते थे। सत्यवाक्यसे इरियाको बहुत काल तक लड़ना पड़ा था। इरियाके बाद उनका लड़का राचमल्ल उत्तराधिकारी हुआ। महिसुरके आतकुर शिलालेखसे पता लगता है कि ८४० ई०में सत्यवाक्य कोंगुनीवर्माने राचमल्ल पर चढ़ाई की और उसे मार डाला था।

धारवार जिलेको हेवाल शिलालिपिसे ज्ञात होता है। बूतग नामके एक और राजा गङ्गवंशमें हो गये थे। इन्होंने राष्ट्रकूटके राजा अमोघवर्षकी लड़कीसे विवाह किया था। दहेजमें उन्हें पुलीगड जिला मिला था। कुछ कालके बाद राष्ट्रकूटके राजा तृतीय कृष्णकी अनुमतिसे बूतगने चोलवंशके राजा राजादित्यका प्राणनाश किया, क्योंकि राजादित्य उस समय तृतीय कृष्णका कट्टर शत्रु हो गया था। इस पुरस्कारमें कृष्णने बूतगको चार और जिले प्रदान किये। इस समय बूतगने अपनी उपाधि 'महाराजाधिराज' की रक्खी। बूतगको अमोघवर्षकी लड़कीसे एक पुत्र हुआ जिसका नाम रक्कगङ्ग रखा गया। बूतगको 'कल्लकसी' दूसरी स्त्रीमें भी सत्यवाक्य कोंगुनीवर्म नामक एक पुत्र था। गङ्गवंशमें ये बहुत प्रभावशाली राजा हो गये थे। ये ९६४ ई०में राजगद्दी पर आरूढ़ हुए थे। इन्हें परमेश्वर और महाराजाधिराजकी उपाधि मिली थी।

इनके समयमें गङ्गराज्य बहुत दूर तक फैल गया था। इस समय चालुक्यराजाका भी प्रताप बहुत चढ़ बढ़ गया था। इन्होंने राष्ट्रकूट और गंगवंशके राजा पर आक्रमण किया। इस बार इन्होंने सफलता प्राप्त नहीं की, फिर दूसरी बार ९७३ ई०में चतुर्थ इन्द्र कृष्णके पोतेने उन पर धावा किया और राष्ट्रकूटके राजा द्वितीय कक्कको पराजय किया। गंगवंशके राजा सत्यवाक्यवर्मने चालुक्य राजाके साथ घमसान युद्ध कर उन्हें हरा दिया और राष्ट्रकूटके राजाके बहुतसे राज्य भाग अधिकार कर स्वतन्त्र हो गये। सत्यवाक्यवर्मको चामुण्डराय नामक एक प्रधान मंत्री थे जिन्होंने 'चामुण्डरायपुराण' लिखा है और जिनकी प्रार्थनासे जैनसिद्धांतका प्रसिद्ध ग्रन्थ गोम्मटसार श्रीमदाचार्य नेमीचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्तीने लिखा।

महिसुरके बेलूर शिलालेखसे पता लगता है कि गंगवंशके अन्तिम राजा गंगापरमर्दी थे। ये १०२२ ई०में राजत्व करते रहे। इनके समयमें चोल राजाने पुन: आक्रमण कर गंगराजाको इस बार पूर्णरूपसे पराजित किया और उनके बहुतसे देश अपने राज्यमें मिला लिये। क्रमश: इस वंशको आशा तथा स्वाधीनता सदाके लिये जाती रही।

बेलगांवके अन्तर्गत कलभावि ग्रामकी खोदित लिपि देख करके प्रत्नतत्वविद् फ्लिटसाहब अनुमान करते कि वह खृष्टीय ११वीं शताब्दीकी लिखी हुई है। सुतरां

बघोनी राज्य, दक्षिणमें बेतवा नदी एवं समथर राज्य, और पश्चिममें पहुज नदी है। जालौन बुंदेलखण्डके मैदानमें पड़ता है। यहां कङ्कर बहुत निकलता है। कांसको भी कोई कमी नहीं जलवायु उष्ण तथा शुष्क है, परन्तु अस्वास्थ्यकर नहीं। ओरछाके वीरसिंहदेवने जालौनका अधिकांश दबाया और जहांगोरने उन्हें इसका राजा बनाया था। शाहजहान्‌के समय बलवा करने पर उनका प्रभाव यहां घट गया। फिर छत्रसालने जालौन अपने राजमें मिलाया। १७३४ ई०में उन्होंने यह जिला अपने मराठा मित्रोंको दे दिया। फिर यहां अत्याचार और उत्पात हुआ। १८३८ ई०में अंगरेजोंने जालोन अधिकार किया था। कानपुरमें बलवा होने पर १५ जूनको झांसीके विद्रोहियोंने यहां आ करके सभो यूरोपीय अफसरोंको जो उनके हाथ लगे, मार डाला। १८५८ ई०में फिर इसके पश्चिम भागमें अराजकता बढ़ी। १८९१ ई० तक यह विश्रृङ्खल जिला समझा जाता था।

जालौन जिलेमें ६ नगर और ८३७ गांव आबाद हैं। लोकसंख्या ३९९७२६ है। इसमें ४ तहसीलें लगती हैं। बेतवाकी नहरसे खेत सींचे जाते हैं। पहले खूब सूती कपड़ा बनता था। थोड़ा बहुत सूती कपड़ा रंगते और छापते हैं। चना, तेलहन, रूई और घोकी रफ़्तनी होती है। ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे यहां चलती है। ६६८ मील सड़क है। कलेक्टर, डिपटी कलेक्टर और तहसीलदार प्रबन्धकर्त्ता हैं। डाके प्रायः पड़ जाते हैं। इसमें तीन बड़ी जमीन्दारियां हैं। मालगुजारी कोई ९ लाख ८० हजार है। इसमें ३ म्युनिसपालिटियां हैं। शिक्षाकी अवस्था अच्छी है।

२ युक्तप्रदेशके जालौन जिलेकी उत्तर तहसील। यह अक्षा० २६° एवं २६° २७' उ० और देशा० ७९° ३' तथा ७९° ३१' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४२४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १६०३८१ है। इसमें २ नगर और ३८१ गाँव बसे हैं। मालगुजारी प्रायः ३१६०००) रु० है। पश्चिममें पहुज और उत्तरमें यमुना नदी प्रवाहित है।

३ युक्तप्रदेशके जालौन जिलेकी जालौन तहसील का सदर। यह अक्षा० २६° ८' उ० और देशा० ७९° २१' पू०में अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ८५७३ है। खृष्टीय १८वीं शताब्दीमें यह मराठा राजधानी थी। प्रायः सभी सम्भ्रान्त अधिवासी मराठा ब्राह्मण हैं। उनमें बहुतसे पेनशन पाते और निष्कर भूमि खाते हैं। व्यवसाय छोटा किन्तु बढ़ता हुआ है। १८८१ ई०में एक बढ़िया बाजार बना। कुछ मारवाड़ी महाजन यहाँ बस गये हैं।

जाल्म (सं० त्रि०) जालयति दूरीकरोति हिताहितज्ञानं जल-णिच् बाहुलकात् मः। १ नीच व्यक्ति, पामर, नीच। २ जो गुरुके सामने खाट पर बैठता हो, मूर्ख, बेवकूफ।

"नत्वेव जाल्मी कापाली वृत्तिमेषितुमर्हसि"

(भारत १२।१३२ अ०)

जाल्मक (सं० त्रि० जाल्म स्वार्थे कन्। मित्र, ब्राह्मण और गुरुद्वेषी, जो अपने मित्र, गुरु या ब्राह्मणके साथ द्वेष करे।

जाल्य (सं० पु०) जल ण्यत्। १ शिव, महादेव।

"मत्स्यो जलचरो जाल्योऽकलः केलिकलः कलिः"

(भारत १०।२८६ अ०)

(त्रि०) २ जलमें पकड़ने योग्य।

जावक (सं० पु०) अलक्तक, महावर।

जावजी—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत अहमदनगर जिलेके एक कोलि सर्दार। इनके पिताका नाम था हीराजी। हीराजीको मृत्युके उपरान्त जूनारस्थ पेशवाके कर्मचारीने जावजीको पिताके पद पर अधिष्ठित नहीं किया, इस पर जावजीने पेशवाके शासनको कुछ भी परवाह न कर बहुतसे आदमी संग्रह किये और लूटना शुरू कर दिया। तब जावजीको पर्वत छोड़ कर पेशवाके सैन्यदलमें मिल जानेका आदेश मिला। परन्तु जावजीने इसको धोखा समझा और वे खानदेशको भाग गये। रामजी सामन्त नामका जूनारका एक कर्मचारी जावजीका शत्रु था। उसने जावजीको पकड़वा देनेके अभिप्रायसे कुछ सेनाको चारों ओर भेज दिया और खुद कुछ सेनाको साथ ले उनको तलाशमें निकला। जावजीने अकस्मात् एक दिन रामजी और उनके पुत्रको मार डाला। इस पर पेशवाने घोषणा को कि "जो जावजीका मस्तक ला देगा, उसे उपयुक्त पुरस्कार दिया जायगा।" जावजीने रघुनाथरावके आश्रयमें रह कर युद्धमें उनकी भरपूर सहा-

राजराजके श्वसुर महाराजाधिराज राजेन्द्र चोल (अपर नाम कुलोत्तुङ्ग) प्रदत्त शिलाफलक और ताम्रशासनमें लिखा है कि उनसे तदीय पितृव्य (षष्ठ) विजयादित्यने वेङ्गी राज्य पाया था। इन विजयादित्यने ८८५से १००० शक पर्यन्त वेङ्गीमें राजत्व किया।* सुतरां सम्भवतः ८८५ शकके पूर्व गङ्गवंशीय राजराज और उनके पितृपुरुष वेङ्गी राज्यमें राजा रहे होंगे। गोदावरी जिलामें इल्लार तालुकके अन्तर्गत 'वेंगी' नामक स्थानमें जो ध्वंसावशेष पड़ा है, उसमें "सुरपुरी सदृश" राजराजकी परित्यक्त वेंगीका कुछ परिचय मिलता है। उसीसे ३ कोस दूर प्राचीन कीर्तिशाली तडिकाल पूति ग्राममें अति पुरातन खोदित शिलालिपि-शोभित गांगेय स्वामी वा "गंगेश्वर" स्वामीका मन्दिर † है। वह देवालय आज भी गंगवंशीयोंका परिचायक स्वरूप वर्तमान है।

प्राचीन ताम्रशासन और पुरातन खोदित शिलाफलक पढ़नेसे समझ पड़ता, किसी समय कलिंगनगरमें गंगवंशी राजाओंकी राजधानी रही। गञ्जाम प्रदेशमें वंशधरा नदी जहां जा करके समुद्रसे मिली है, ठीक उसी स्थान पर कलिंगपत्तन‡ नामक नगर और बन्दर है। प्राचीन कीर्ति और ध्वंसावशेष देखनेसे वही कलिंग राजाओंकी राजधानी प्राचीन कलिंगनगर जैसा स्थिरीकृत हुआ है। ताम्रशासनसे कलिंगनगराधिष्ठित निम्नलिखित कई एक गांगेय राजाओंका नाम और परिचय मिला है—

५१ संवत्सरमें अनन्तवर्माके पुत्र देवेन्द्रवर्मा, ८७ से १४३ संवत्सर तक राजसिंह इन्द्रवर्मा, १८३ संवत्सरमें गुणार्णवके पुत्र देवेन्द्रवर्मा, २५४ संवत्सरमें अनन्तवर्माके पुत्र देवेन्द्रवर्मा, ३०४ संवत्सरमें राजेन्द्रवर्माके पुत्र अनन्तवर्मा, २५१ संवत्सरमें देवेन्द्रवर्माके पुत्र सत्यवर्मा।

उक्त संवत्सर मानो कोई विशेष अब्दवाचक है और उक्त राजाओंका "वृषभलाञ्छन" चिह्नित ताम्रशासन पाठ करनेसे यह कलिंगविजेता १म कामार्णवके वंशधर जैसे समझ पड़ते हैं। पहले बतला चुके हैं कि दानार्णवके वंशधर कलिङ्गके दक्षिणांश वेंगी राज्यमें राजत्व करते थे। अब मालूम होता है कि २य कामार्णवके वंशधर कलिंगके उत्तरांशमें अधिष्ठित रहे। किन्तु इसका कोई भी प्रामाणिक निदर्शन नहीं, वह संवत्सर किस समयसे आरम्भ हुआ। केवल इतना ही अनुमान लगता है कि १म कामार्णव कर्तृक बालादित्यके पराजय और उन्हींके राज्यारम्भसे "गांगेय शक" चला होगा।*

चोड़गंगके १०४० शकाङ्कित ताम्रशासनमें गंगवंशीय राजाओंका शासनकाल मिलाने पर साधारणतः ३६० शक अथवा ७३८ ई० निकलता है। उस समय १म कामार्णवका राज्याभिषेक हुआ और सम्भवतः गांगेय 'सवत्सर' चला होगा। ऐसा होने पर कह सकते कि १म कामार्णव ७३८से ७६४, देवेन्द्रवर्माके पिता ७७८, देवेन्द्रवर्मा ७७८, तत् पुत्र सत्यवर्मा ७७८, राजसिंह इन्द्रवर्मा ८१८, इन्द्रवर्मा§ ८५२से ८७४ और दूसरे अनन्तवर्माके पुत्र देवेन्द्रवर्मा ८८२ ई०को विद्यमान थे। देवेन्द्रवर्माके बाद सवत्सराङ्कित दूसरे किसी भी गांगेयराजका ताम्रशासन आज तक आविष्कृत नहीं हुआ। किन्तु इतना अनुमान किया जाता है कि देवेन्द्रवर्माके वंशधर बहुत दिनो फिर कलिंग नगरके सिंहासन पर टिक न सके। उत्कलराज २य नरसिंहदेवके बृहत्ताम्रफलक (१४ श्लोक) मे लिखा है—चोड़गंगके पितामह भिन्न राज्य जय करके त्रिकलिंगनाथ हुए। चोड़गंगके १०४० शकाङ्कित ताम्रशासनानुसार ९६१ शक या १०३९ ई०को वज्रहस्तने राज्यारोहण किया। सम्भवत: उसी समय अथवा उससे अनतिकाल पीछे इन्होंने कलिंग

* Hultzsch, South Indian Inscriptions, Vol I. p 32.

† Sewell's Lists of the Antiquarian Remains in the Presidency of Madras, Vol. I, p 36.

‡ यह कलिंगपत्तन अक्षा० १८° २०' उ० और देशा० ८४° ९' ५० पू०में चिकाकोलसे ८ कोस उत्तर अवस्थित है। आजकल वह नगर एक बन्दर जैसा प्रसिद्ध है। यहां एक आलोकस्तम्भ भी है।

*मालूम होता है कि दानार्णवके वंशधरोंने उस संवत्सरको ग्रहण नहीं किया।

§ इन्द्रवर्माके १२८ संवत्सराङ्कित ताम्रशासनमें लिखा है कि मार्गशीर्ष पूर्णिमाको चन्द्रग्रहणोपलक्षमें भूमिदान हुआ। ज्योतिष साहाय्यसे गणना द्वारा मालूम पड़ता है कि ८५१ ई० २५ दिसम्बरको मार्गशीर्ष पूर्णिमाके दिन यह चन्द्रग्रहण लगा था।

धारण कर ऐतिहासिकोंको चमत्कृत कर रहा है। यहां हिन्दूराज्यकी गौरवसमाधि और बौद्धाविर्भावके पदचिह्न अब भी उज्ज्वल वर्णोंमें चित्रित है। भारतमहासागरीय अन्यान्य समस्त द्वीपोंकी अपेक्षा यहांकी जनसंख्या सबसे अधिक है। यहांकी शस्यसमृद्धिने हलैण्डको ऐश्वर्यशाली बनाया है। इसके १½ मील पूर्वांशमें अवस्थित बालिद्वीपको पाश्चात्य भौगोलिकगण जावाका ही अंश बतलाते हैं, और इसीलिए उसका नाम छोटा जावा (Little Javo पड़ा है। बालिद्वीप देखो।

जावा हलैण्डसे चौगुना बड़ा है; इसका रकबा ५०३८० वर्गमील है। जनसंख्या कुछ अधिक ३ करोड़ है।

वर्तमान समयमें भार्विक आदि ओलन्दाज भूतत्त्वविदोंने भूतत्त्वकी पर्यालोचना कर स्थिर किया है कि दक्षिणपूर्व एसियासे इस द्वीपका सर्वांशमें सौसादृश्य है। इस ओर लक्ष्य देनेसे अनुमान होता है कि अति प्राचीनकालमें जावा और बालिद्वीप एसियामें ही संयुक्त था। यहां टर्टिआरी (Tertiary) युगके शैलखण्ड बहुत देखनेमें आते हैं। जावामें आग्नेयगिरिकी अधिकता देख कर भूतत्त्वज्ञ विद्वानोंने स्थिर किया है कि यहांके भू-पञ्जरमें बहुत कुछ परिवर्तन हुआ है और कई बार खण्ड प्रलय भी हुई हैं। अब भी प्रायः बीस सजीव आग्नेयगिरि समय समय पर भीषण उपद्रवके साथ अग्न्युद्गीरण किया करते हैं और कभी कभी भूकम्प भी हुआ करता है।

जावाकी भूगर्भस्थ अग्निशक्ति अब भी क्रियाशील अवस्थामें है। पर्वतमालाका अधिकांश भाग अग्निगिरि निश्चिप्त भूगर्भस्थ पदार्थसे उत्पन्न हुआ है। भूतत्त्वज्ञ विद्वानोंका कहना है कि जिस समय जावा मनुष्य वासके योग्य हुआ था, उस समय वह सुमात्रा, बोर्निओ आदि आठ द्वीपोंमें विभक्त था। रामायणमें भी जावाके विवरणमें 'सप्तराज्योपशोभित' ऐसा विशेषण पाया जाता है। यवद्वीप वा जावाके आग्नेयपर्वतोंमें सर्वोच्च और सर्वप्रधान सुमेरुपर्वत है। इसके सिवा और भी रावण, अर्जुन, लव, शम्भू, इत्यादि नामके अग्निशैल विद्यमान हैं। साधारणतः पर्वतोंकी ऊंचाई २०००से १९६०० फुट तक है।

जावा साधारणतः पूर्व और पश्चिम इन दो प्राकृतिक भागोंमें विभक्त है। पश्चिमांशकी नदियां प्रधानतः उत्तरवाहिनी है, जिनमेंसे 'जि-तारुङ्' और 'जि-मानुक' ये दो नदी ही सबसे बड़ी और विस्तृत हैं। नदियोंके नामके पहले प्रायः 'काली' शब्द जोड़ दिया जाता है। पूर्व जावाकी नदियां वाणिज्यके लिए विशेष उपयोगी हैं और दक्षिण जावाकी नदियोंसे खेतोंमें बहुत सहायता मिलती है। जावाके उत्तर-उपकूलमें वाणिज्यप्रधान बन्दर आदि हैं। यहांकी उपत्यका भूमि अत्यन्त उर्वरा और नाना प्रकार शस्यसमृद्धिपूर्ण है। यहां कई तरहके मिट्टी देखनेमें आती है, जिससे पण्यद्रव्य प्रस्तुत होती हैं। एक तरहकी मिट्टीसे 'पोसिलेन' बनती है। यहां 'अम्पे' नामक एक प्रकारकी स्वादिष्ट मिट्टी होती है, जिसे वहांके लोग खाया करते हैं। किसी किसी जगहकी मिट्टी और पीली भी होती है। इसके अलावा यहां संगमरमर, चूना खड़ियामिट्टी, गन्धक आदि नाना प्रकारके शैलखण्ड पाये जाते हैं।

समतल प्रदेशकी जमीन दरियाबरार (Alluvium) और गंग शिकस्त (Diluvium) है। कोई कोई स्थान प्रवाल कीटके ध्वंसावशेषसे परिपूर्ण है। नदीके किनारे तथा दलदल जमीनमें बहुत धान्य उत्पन्न होता है। इसी लिए भारतके लोग जावाको भारतसागरीय द्वीपोंका शस्यभाण्डार कहते हैं।

चारों ओरसे समुद्रवेष्टित और विषुवरेखाके सन्निहित होनेके कारण यहांकी जलवायु उष्ण और मधुर है। यह द्वीप वाणिज्यवायुके प्रवाहपथ पर अवस्थित है। बातावीयाके वेधालयमें आवहविद्याविषयक (Meteorological) परीक्षा द्वारा निर्णीत हुआ है कि वर्षमें औसत ७८८० इञ्च वर्षा होती है। यहां वैशाखसे आश्विन तक दक्षिणपूर्वीय और कार्तिकसे चैत तक उत्तरपश्चिमीय वायु चलती होती है। पश्चिम और मध्य-जावाकी जलवायु पूर्व जावासे सम्पूर्ण भिन्न है। कारण यह है कि पूर्व-जावामें वर्षा अधिक नहीं होती। स्थानकी उच्चता और समुद्रके सान्निध्यके कारण उत्तापमें भी तारतम्य हुआ करता है। बातावीयामें प्रायः बारहो महीने वर्षा होती है। वायुकी गरमी कभी कभी ९६° (फा°)

मादलापञ्जी और वंशावलीके साहाय्यसे जो बातें कही है, किसी ग्रंथमें सामयिक लिपिसे नहीं मिलतीं। ऐसी अवस्थामें उन्हें आधुनिक अथवा अप्रामाणिक जैसा अवश्य मानना पड़ेगा।

२य नरसिंहदेवके ताम्रशासन (३७ श्लोक) मतानुसार महाराज चोडगंगके स्वर्गारोहण करने पर १०६४ शक (११४२ ई०)को तत्पुत्र महावीर कामार्णव* सिंहासन पर अभिषिक्त हुए थे इन्होंने १० वर्ष राजत्व किया। फिर गंगराज राघवने राज्य पाया। महाराज चोडगङ्गने सूर्यवंशकी राजकन्या इन्दिराका पाणिग्रहण किया था।† उन्हींके गर्भसे राघवका जन्म हुआ। महाराज राघव १५ वर्ष राजा रहे। फिर २य राजराजका राजत्व हुआ। इन्होंने चोडगंगकी अपर महिषी चन्द्रलेखाके गर्भसे जन्म लिया था। उनका शरीर अतिशय प्रकाण्ड रहा। इनके सम्बन्धमें जो कुछ घटित हुआ, मानव प्रकृतिके पक्षमें नितान्त असम्भव है। राजराजने २५ वर्ष प्रबल प्रतापसे राजत्व किया।

उक्त राजराजके पीछे कनिष्ठ सहोदर अनियङ्क वा अनंगभीम सिंहासन पर बैठे। उनका राजत्वकाल १० वर्ष मात्र था।‡ फिर ३य राजराज राजा हुए। अनियंक वा अनंगभीमके औरस और वाभलदेवीके गर्भसे उनका जन्म था। यह यौवनकालको ही राज्यके अधीश्वर हुए। उन्होंने ११ वर्ष मात्र राज्यलक्ष्मीका उपभोग किया। §

३य राजराजके मरने पर मङ्कुण देवी-गर्भजात तत्पुत्र अनङ्गभीम राजपद पर अभिषिक्त हुए।* ऐतिहासिक ष्टार्लिङ्ग, हण्टर और राजा राजेन्द्रलालके मतमें इन्हीं अनङ्गभीमने ११९६ ई०को पुरीमें प्रसिद्ध जगन्नाथ देवका मन्दिर निर्माण कराया। किन्तु वह बात ठीक नहीं। क्योंकि उस समय अनंगभीम उत्कलके राजा नहीं हुए, इनके प्रितामह अनियङ्क वा अनङ्गभीम उत्कलमें राजत्व करते थे। उन्होंने भी प्रसिद्ध जगन्नाथ देवका मन्दिर नहीं बनाया, उनसे बहु पूर्व चोड़गंगने यह मन्दिर निर्माण कराया था।

कटक जिलाके अन्तर्गत महासिंहपुरमें चाटेश्वर-मन्दिरसे बृहत् शिलाफलक निकला है। इसमें लिखा है कि चोड़गंगके एक पुत्र अनंगभीमने उक्त शिव-मन्दिर प्रतिष्ठित किया। शिला फलकके २३वें छत्रमें लिखा है—

"चकार तत्र प्रतिपत्तिसम्पदास्पदं पुराणानि पुनर्नवानि वः।"

इससे अनुमित होता है कि चोड़गंगके पुत्रने, जो उस शिलाफलकमें अनंगभीम लिखे गये हैं, पुरातन मन्दिर संस्कार कराके नया करा दिया था। सम्भवतः इन्हीं अनंगभीमके समय पुरुषोत्तमका मन्दिर संस्कृत अथवा सम्पूर्ण हुआ होगा। राजराजपुत्र २य अनंगभीमके समय वह नहीं बना।

राजराजके पुत्र २य अनंगभीम विद्वान्, शास्त्रदर्शी, महावीर, पण्डितप्रिय और परम वैष्णव थे। समस्त कलिंग राज्य उनका अधिकारभुक्त रहा। इनके राज्यमें कलिका दबदबा न था (मानो सत्ययुगका आविर्भाव हो गया था)। उन्होंने प्रबल पराक्रमसे ३४ वर्ष राजत्व किया। २य नरसिंहदेवके ताम्रशासनको छोड़ करके गञ्जामके अन्तर्गत कलिंगपत्तनसे ३ कोस पश्चिम अवस्थित "श्रीकूर्मम्" नामक ग्राममें श्रीकूर्मस्वामीके प्रसिद्ध मन्दिरके १०म स्तम्भ पर ११७४ शकको खोदित अनंगभीमकी अनुशासन लिपि है।† उसमें भी महाराज

*ऐतिहासिक ष्टार्लिङ्ग और हण्टर-साहबके मतानुसार चोड़गंगके पीछे तत्पुत्र गंगेश्वर ११५१ ई०को राजा हुए। पुरुषोत्तमचन्द्रिका, उत्कलप्रभा में रचित 'उड़ीसाका इतिहास' देखते उन गंगेश्वरने १५ वर्ष मात्र राजत्व किया। किन्तु गंगवंशमें गंगेश्वर नामसे किसी भी राजाका उल्लेख नहीं कलिंगराज नरसिंहदेवके ताम्रशासनमें चोड़गंगको ही गंगेश्वर आख्या दी गयी है।

†उत्कलके किसी इतिहासमें उक्त कलिंगराज कामार्णव और राघवका नाम नहीं मिलता। उनके स्थानपर किसी कामदेव और मदनमहादेवका उल्लेख है। यह भी कुछ नहीं लिखते, दोनों किसके सन्तान थे।

‡उत्कल इतिहासमें इन अनियङ्क वा अनङ्ग भीमका नामोल्लेख नहीं है।

§ उत्कल इतिहासमें यह राजराजेश्वर नामसे वर्णित हुए हैं। उक्त ऐतिहासिकोंने इनका १६ वर्ष राजत्वकाल लिखा है।

* ष्टार्लिंग साहबके मतमें इन्हीं अनंगभीमने ११७४ ई०को राज्यारोहण किया।

† दुःखका विषय है वह अनुशासन लिपि भी अब तक किसी ग्रन्थमें प्रकाशित नहीं हुई।

जितनी कि साधारणके प्रजाके लिए धान्य की।

फलोंमें यहां केला ही ज्यादा प्रसिद्ध है। यहां उत्कृष्ट केले और नारियलके पेड़ लगाये जाते हैं। वहां इनकी पैदावार भी खूब है।

पहले जावामें कहवा नहीं होता था। १६९६ ई०में मलवार उपकूलसे पहले पहल यहां कहवा लाया गया था, पर भूकम्प और बाढ आ जानेसे वह नष्ट हो गया। पीछे १६९८ ई०मे हेण्डिक जाविकुल नामक एक व्यक्तिने यहां कहवाकी खेती की। तभीसे उसकी खेती लाभजनक समझी जाने लगी और प्रतिवर्ष यहांसे लाखों मन कहवा विदेश जाने लगा। यह शस्य-संग्रहके लिए ४००से भी अधिक कोठियां हैं। दूसरा नम्बर ईखका है; ईखकी भी यहां काफी उपज है। तीसरा नम्बर चायका है। 'हुवस' नामक एक व्यक्तिने पहले पहल यहां चायकी खेती की थी। यहां 'सिङ्कोना'की खेती भी खूब होती है। तम्बाकूकी खेती प्रायः सर्वत्र ही होती है। खदिर (केदिरि) और वासुकि नामक स्थान तम्बाकूके लिए प्रसिद्ध है।

इतना होने पर भी जावाके किसान उस सम्पदके अधिकारी वा हिस्सेदार नहीं होते, क्योंकि यूरोपीय प्रभुओंकी कृपासे वहां कुछ भी रहने नहीं पाता—वे सर्वस्व ही अपने देशको रवाना कर देते हैं। इसलिए किसान बेचारे भारतीय किसानोंकी तरह ही दुर्दशाग्रस्त रहते हैं। पहले यहां नीलकी खेती भी खूब होती थी, किन्तु वैज्ञानिकोंके अनुग्रहसे उत्पीड़ित कृषककुलको धीरे धीरे सर्वत्र ही नीलवालोंके कराल कवलसे छुटकारा मिल रहा है।

जावा द्वीप फल-मूलके लिए प्रसिद्ध है। नानाप्रकारके पुष्टिकर मूल यहां मिलते हैं। खीरा और ककड़ी यहां बेहद पैदा होती है। यहांके मसालेकी प्रसिद्धि सबसे बढ़ कर है। लौंग, जावित्री, जायफल, इलायची, दारचीनी, मिर्च आदि हदसे ज़ादा पैदा होती है और रफ़्ती भी खूब होती है। तेलबीज और चावलकी भी फसल होती है। गेहूं और जौकी पैदावर थोड़ी है। पाश्चात्य विद्वानोंका अनुमान है, कि जौ वा यवकी खेती यहां अधिक होती थी, सम्भवतः इसीलिए इसका नाम यवद्वीप वा जावा पड़ा है। पूर्वोक्त शस्यादिके सिवा यहांसे साबूदाना, सुपारी, कत्था, अदरक, हलदी, चन्दन और आबलूसकी लकड़ी, चमड़ा, सींग, मोम, चिड़ियोंके पङ्ख, (Birds of Paradise) वा होमा पक्षी, मछली औरमांसकी रफ़्तनी भी बेहद होती है।

जावामें भारतवर्षके वृक्षोंकी जातिके वृक्षादि भी बहुत हैं। तुलसीका पेड़ यहां बड़े यत्नके साथ बढ़ाया जाता है। यहांके लोग शामको तुलसीवृक्षके चबूतरे पर चिराग जलाते हैं। पहले विष्णुपूजाके लिए यहां तुलसीका व्यवहार होता था। यहां पुष्पोद्यानोंमें चंपा और मालतीका प्राचुर्य दीख पड़ता है। जावा भाषामें पुष्पको सौन्दर्यकी प्रतिमा कहा गया है। मुसलमानोंके प्रादुर्भावसे देवता तो कूच कर गये, किन्तु तो भी पूजाके पुष्पोंने समुद्रशीकरवाही समीरणमें अपनी सुगन्धि फैलाना नहीं छोड़ा। जिन फल वा फूलोंको पुराकालमें ब्राह्मण औपनिवेशिकगण भारतवर्षसे ले गये थे, वे अब भी वहां संस्कृत नामसे परिचित हैं। दाड़िम वहांके अधिवासियोंके लिए उपादेय फल है और वहां इसी नामसे प्रसिद्ध है। इमलीका पेड़ भी सर्वत्र पाया जाता है। यहांके लोग अनन्नासको "मङ्गल" कहते हैं और बङ्गालका सन्तरा कह कर उसकी व्याख्या करते हैं। किन्तु वास्तवमें वह बङ्गालका फल नहीं है। जावामें आम बहुत कम पैदा होते हैं। अच्छे आम सिर्फ सुलतानके उद्यानमें पाये जाते हैं। अन्यान्य स्थानोंमें सिर्फ जङ्गली आम होते हैं। बङ्गालकी भांतिके यहां दो तरहके कटहर बेहद होते हैं। वहांके लोग इसे 'चम्पादक' कहते हैं। यहां बारहो महीने कटहर मिलते हैं और दाम भी बहुत कम है। यह भारतवर्षसे यहां लाया गया है, किन्तु इसका आकार बहुत बड़ा है। यहां तरह तरहके नीबू पाये जाते हैं। जावा-भाषामें नीबूको 'जारक' कहते हैं। बटावियाका नीबू पृथिवी भरमें प्रसिद्ध है, इसका स्वाद सन्तरासे भी बढ़ कर होता है। ओलन्दाज लोग इसे 'बातावि' (Batavia) कहते हैं। यूरोपके लोग इसे बड़े आनन्दसे खाते हैं।

जावामें अनेक प्रकारके जम्बू वा जामुन पाये जाते हैं और वे 'जम्बू' नामसे ही प्रसिद्ध हैं। साधारणतः

यत: १म नरसिंहदेवने फिर राढ़ और वरेन्द्राधिपतिका पराजय करके १२७४ ई०में नूतन संवत् चलाया था और अपनी कीर्ति अक्षय करनेको कोणार्कका * प्रसिद्ध सूर्य-मन्दिर बनाया था। मुसलमान ऐतिहासिक फरिश्ताने उक्त घटना न बतला करके लिखा है कि ६७८ हिजरी (१२८८ ई०) को तुगरीन खाँ जाजनगर आक्रमण करके विस्तर अर्थ और एक शत हस्ती जीत ले गये। बोध होता है कि उन्होंने पहली घटना दबा डालनेके लिये शेषोक्त विवरण कल्पना किया होगा। इन्होंने १६०८ ई०को अपना ग्रन्थ बनाया। किन्तु उनसे बहुत पहले २य नरसिंहदेवके ताम्रशासनमें १म नरसिंहकर्तृक राढ़ और वरेन्द्र आक्रान्त होनेकी बात लिखी जा चुकी थी। प्रतापवीर श्रीनरसिंहदेवके बाद उनके औरस और माल्यचन्द्रात्मजा सीतादेवीके गर्भजात भानुदेव राजगद्दीमें अभिषिक्त हुए। इन्होंने १० वर्षमात्र राजत्व किया।† इन्हीं भानुदेवकी सभामें साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ पञ्चाननके पिता चन्द्रशेखर कवि रहते थे।

उनके पीछे २य नरसिंहदेव राजा हुए। इन्होंने भानुदेवके औरस और चालुक्य कुलसम्भूता जाकल्ल-देवीके गर्भसे जन्म लिया था। २य नरसिंहदेवके ही प्रदत्त २१ ताम्रफलकयुक्त ३ प्रस्थ सुहहत् ताम्रशासन मिले हैं—

इनमें पहला—

"सप्तदशोत्तरद्वादशशतशकवत्सरे" "स्वराज्यस्य कथितस्य नवराज्याकार-विजयसमये" "सिंह शुक्लपक्षे सोमवारे।"

दूसरा—

"सप्त दशोत्तर द्वादशशतमिते गतवति शकवत्सरे" "मेष कृष्णचतुर्दश्यां रविवारे" "स्वराजस्य द्वाविंशत्यङ्के"

और तीसरा—

"अष्टादशोत्तरद्वादश शतशकवर्षे"

प्रदत्त हुआ है।

प्रथम और दूसरे ताम्रफलकमें स्वराजत्वका २१वां और २२वां अङ्क पढ़नेसे पहले उनका अधिकार काल जैसा समझ पड़ता है किन्तु पहले पहल चोड़गंग और तत्पुत्र कामार्णवका अभिषेकशक तथा प्रत्येक राजाका अधिकारवर्ष स्पष्ट लिखा रहनेसे मालूम पड़ता है कि १२१७ शकको २य नरसिंहका राज्यारोहण हुआ। सम्भवत: "स्वराज" निर्देशक अङ्क १म नरसिंह देवके समय ११८६ शकको चला होगा। पूर्वोक्त गांगेय शकके साथ इसका कोई भी सौसादृश्य नहीं आता।

२य नरसिंहके प्रथम ताम्रशासनमें नवराज्य विजय-की कथा मिलती है। श्रीकूर्मस्वामी मन्दिरके बहुतसे खोदित शिलाफलकोंमें वह वोरादि-वीरवर श्रीनृसिंह देव नामसे लिखे गये हैं। इन शिलाफलकोंमें शेष समयकी लिपि १२३१ शककी अङ्कित हुई। साहित्य-दर्पणकार सुप्रसिद्ध विश्वनाथने इन्हीं नृसिंहदेवकी सभाको उज्ज्वल किया था।

२य नरसिंहदेवके मरने पर तत्पुत्र चोड़देवीके गर्भ-जात २य भानुदेव सिंहासन पर बैठे। उनका उपाधि श्रीवोरादिवीरश्री था। पुरीके ताम्रशासनमें लिखा है कि भानुदेवके साथ गयास-उद्-दीनका घोर युद्ध हुआ। गयास-उद्-दीनने स्वीय मुसलमान इतिहासमें लिखा है कि गयास-उद्-दीन तुगलकके पुत्र अलिफ खाँने ओरंग जय करके जाजनगर घेरा था।

२य भानुदेवके पीछे लक्ष्मीदेवीके गर्भजात तत्पुत्र ३य नृसिंहदेवने राज्य पाया। इनका उपाधि प्रताप-वीर श्रीनरनारसिंह था। ३य नरसिंहके औरस गंगा-म्बिकाके गर्भसे ३य भानुदेवने जन्म लिया। यह प्रताप वीर श्रीभानुदेव उपाधि ग्रहण करके पितृसिंहासन पर बैठे। उनके राजत्वकालको वंगाधिप हाजि इलियसने हाथी पकड़नेके लिये जाजनगर अधिकार किया था। विजय-नगर राधिपने वीर भानुदेव पर धावा मारा। उनके मरने पर चालुक्यकुलसम्भूत वीरादेवीगर्भजात प्रिय-पुत्र ४र्थ नरसिंहदेवने राज्य लाभ किया। उनका

* २य नरसिंहदेवके सुहहत् ताम्रफलकमें वह स्थान कोणार्कके नामसे वर्णित है। सम्भवत: यह मन्दिर १२७४ को आरम्भ और १२७८ को पूर्ण हुआ।

† पूर्वोक्त श्रीकूर्मस्वामी मन्दिरके ११श स्तम्भमें खोदित तथा ११५२ शक-को प्रदत्त भानुदेवके मन्त्रीका दानपत्र दृष्ट होता है। इससे अनुमान लगाते हैं कि ११५३ शक अर्थात् १२३१ ई०को राजा अनङ्गभीमके राज्यारोहणसे पहले दक्षिणांशमें भानुदेव नामक अपर कोई राजा राजत्व करते थे। निश्चय ही यह नरसिंहदेवके पुत्र पूर्ववर्णित भानुदेवसे स्वतन्त्र थे। ष्टार्लिंग और हण्टरसाहबने उक्त नरसिंहके पीछे कबीर नरसिंह वा केशरी नरसिंहका नाम लिखा है। परन्तु वह नाम गांगेय राजाओंके प्रदत्त किसी भी ताम्रशासनमें देख नहीं पड़ता है।

इस प्रकारके पक्षी पृथिवीमें और कहींभी दृष्टिगोचर नहीं होते। यहां छ सात प्रकारके सुनहरी पूंछवाले मयूर देखे जाते हैं। इस देशकी तितली (Calliper butterfly) भी सौन्दर्यचित्रकी चरम निदर्शन है।

जावामें 'कलङ्' नामक एक प्रकारका चमगादड़ पाया जाता है। इनके उपद्रवसे नारियल तथा अन्यान्य फलोंको रक्षा करना कठिन हो जाता है। ये खेतमें घुस कर मक्का और ईख खूब खाते हैं। किसान लोग इन्हें जाल बिछा कर पकड़ते हैं। इसके अलावा हिन्दुस्तानी चमगादड़ भी बहुत है। ये बड़े बड़े पेड़ों और पहाड़ों पर लाखोंको संख्यामें इकट्ठे हो कर लटके रहते हैं। पेड़ोंके नीचे जो चमगादड़ोंकी बीट पड़ी रहती है, उससे प्रतिवर्ष हजार मनसे भी ज्यादा सोरा बनता है। 'सुरकर्त्ता'के अधिवासियोंके लिए यह ही प्रधान पण्य है।

यहां बन्दर भी बहुत प्रकारके पाये जाते हैं। जावा-भाषामें बन्दरको 'कवि' (कपि) कहते हैं। इनमें घोर काले रङ्गका बन्दर अधिक प्रसिद्ध है। ये ७००० फुट ऊँचे पहाड़ों पर विचरण करते हैं। चूहा, खरगोश, सेही और गिलहरी यहां बहुत हैं। सर्पको यहांके लोग पूज्य मानते हैं। यहांके जुगनू रातको चिराग जैसे चमकते हैं। अर्जनपक्षीके पङ्खोंमें उज्ज्वल स्वर्णरेणुकी भाँतिका पदार्थ लगा रहता है। इसके सिवा यहां Babirussa, Peri crocotus, Miniatus, Yellow Torgon, Anaclipus, Sanguinolentus, Stenopus, Javanicus, आदि नाना प्रकारके प्राणी दृष्टिगोचर होते हैं।

यहांकी नदियां और ह्रद विविध मत्स्यपूर्ण हैं। अधिवासिगण नाना प्रकारके जालोंसे नदी और समुद्रमें मछली पकड़ा करते हैं तथा नाना प्रकारके सुनहरी जलचर पक्षियोंको भक्षण करते हैं। यहांके समुद्रमें एक प्रकारके अद्भुत कीट देखनेमें आते हैं; जिनकी पूंछ तैरते समय पेंचदार पीले और हरे रङ्गके फीतेकी तरह चमकती है। ऐसे उज्ज्वलवर्णके कीट पृथिवीमें अन्यत्र कहीं भी नहीं हैं—ये समुद्र मध्यस्थ प्रवालद्वीपमें वास करते हैं।

आधुनिक भूतत्त्वविद् विद्वानोंने स्थिर किया है कि पहले सिंहलसे जावा तक विस्तीर्ण महादेश था। यह भी प्रमाणित हुआ है कि भूगर्भस्थ अग्निशक्ति और आग्नेयगिरिके अग्न्युत्पातसे उस भूभागके समुद्रमें डूब जाने पर भी, अनति प्राचीनकालमें सुमात्रा, बोर्नियो, जावा आदि द्वीप एकतासम्बद्ध थे। सुमात्राके गम्भीर कूपके खोदे जानेके समय उसमेंसे हिन्दूदेवीकी मूर्ति निकली थी। अफरीकाके सोमाली तथा अमेरिकाके मेक्सिको प्रदेशसे मिली हुई हिन्दू-देवमूर्तिके साथ जावाके मूर्तिशिल्पका सम्पूर्ण सादृश्य है। सुतरां यह प्रमाणित होता है कि अति प्राचीनकालमें ही जावामें ब्राह्मणोप निवेश स्थापित हुआ था। अमेरिकामें हिन्दुओंका सजीव निदर्शन कुछ भी नहीं है, किन्तु बालि और यवद्वीप (जावा)-में अब भी हिन्दुत्वका जीवित निदर्शन विद्यमान है।

इतिहास—जावा नाम जहां तक सम्भव है, यवद्वीप शब्दका अपभ्रंश है। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि 'जावा' कहनेसे वर्तमान समयमें जिस द्वीपका बोध होता है, प्राचीनकालमें भी ठीक उसी द्वीपका बोध होता हो। यह निश्चित है कि किसी समय भारत महासागरके द्वीपपुञ्ज विशेषतः सुमात्रा 'जावा' नामसे अभिहित होता था। इसका प्रमाण यह है कि 'इबन बाटूटा' नामक मुसलमान परिव्राजकने ईसाकी १०वीं शताब्दीमें सुमात्राको 'जावा' और वर्तमान जावाको 'मूल जावा' लिखा है। जावाको राजसभाकी भाषामें इसे 'जायि' कहते है और साधारण भाषामें जावा। कुछ भी हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि यवद्वीप शब्द ही जावा-के रूपमें परिणत हुआ है। ग्रीक ऐतिहासिक टलेमिने इसे 'जाव-दिउ' एवं चीन-परिव्राजक फाहियानने 'जे-पो-थी' लिखा है। अरबी भाषामें इसका प्राचीनतम नाम 'जावेज' है। सबसे पहले जावा शब्दका उल्लेख १३४३ ई०के एक शिलालेखमें दृष्टिगोचर हुआ। अफ-रीकाके परिव्राजक मार्को पोलोंने 'जावा' शब्दसे समस्त सुन्दर द्वीपका बोध किया था।

रामायण पढनेसे यह सहज ही प्रतीत हो जाता है कि यवद्वीप नामसे हिन्दूगण अतिप्राचीनकालसे ही

वीरसिंह
१ कामार्णव (१म) (३६ वर्ष)
२ दानार्णव (४० वर्ष)
गुणार्णव (१म)
मारसिंह
वज्रहस्त
३ कामार्णव (२य) (५० वर्ष)
४ रणार्णव (५ वर्ष)
५ वज्रहस्त (२य) (१५ वर्ष)
६ कामार्णव (३य) (१९ वर्ष)
७ गुणार्णव (गुणमहार्णव)
८ वज्रहस्त (३य) (४४ वर्ष)
९ जिताङ्कुश (१० वर्ष)
(१)
१० गुण्डम १म (७ वर्ष)
११ कामार्णव ४र्थ (२५ वर्ष)
१२ विनयादित्य (३ वर्ष)
१३ कलिगलाङ्कुश (१२ वर्ष)
१४ वज्रहस्त (४र्थ) नामान्तर अनियंकभीम (३५ वर्ष)
१५ कामार्णव = महिषी वैलुम्बराजकन्या विनयमहादेवी (½ वर्ष)
१६ गुण्डम (२य)
१७ मधुकामार्णव (११ वर्ष)
१८ वज्रहस्त (३य) = रानी अंगमा (शक सं० ९६० में अभिषेक, राज्य ३३ वर्ष)
१९ राजराज = महिषी राजेन्द्रचोलकी पुत्री तथा चोलराज कुलोत्तुंगकी भगिनी राजसुन्दरी
२० चोड़गङ्ग नामान्तर गंगेश्वर (शक स० ९९८-१०६९)
= १म कस्तूरिकामोदिनी
= इन्दिरा
= चन्द्रलेखा
= लक्ष्मी
= पृथ्वी
२१ कामार्णव ७म वा मधुकामार्णव (शक स० १०६९-१०७८)
२२ राघव (शक १०७८-१०९२)
२३ राजराज २य (शक १०९२-१११२) = महिषी अहिरमदुहिता स्वप्नेश्वरकी भगिनी सुरमा
२४ अनियंकभीम वा अनंगभीम २य
उमावल्लभ = वाल्वल्लदेवी (शक १११२-११२०)
२५ राजराज (३य) (शक ११२०-११३३) = सद्गुण वा मद्गुणदेवी
२६ अनंगभीमदेव = कस्तूरीदेवी (शक ११३३-११६०)
२७ नृसिंहदेव = मालचन्द्रकी कन्या सीतादेवी (शक ११६०-११८६)
२८ वीरभानुदेव (१म) = चालुक्यवंशकी जाकल्लदेवी (शक ११८६-१२०१)
२९ नृसिंह वा वीरनृसिंहदेव (२य) = चोडदेवी (शक १२०१-१२२८)
३० वीरभानुदेव (२य) = लक्ष्मीदेवी (शक १२२८-१२५०)
३१ नृसिंह वा नरनारसिंह (३य) = कमलादेवी (शक १२५०-१२७५)
३२ वीरभानुदेव (३य) = हीरादेवी (शक १२७५-१३०१)
सीतादेवी
३३ नृसिंहदेव (४र्थ) (शक १३०१-१३४१)

वन-पर्वत-परिशोभित है, जिसमें विविध म्लेच्छ जातिका वास है।

ग्रीक-ऐतिहासिक 'आरियन' से लगा कर आधुनिक पुरावृत्तविद् पर्यन्त सभी कहते हैं, कि हिन्दुओंने कभी भी भारतके बाहर उपनिवेश स्थापन करनेको कोशिश नहीं की। किन्तु यह उनका कितना बड़ा भ्रम है, यह बात जावाके हिन्दु उपनिवेश स्थापनका इतिहाससे मालूम होती है। ७५ ई०में कलिङ्गसे वीरपुरुषोंके एक समूहने जहाज पर चढ़ कर भारत-महासागरसे यात्रा की थी और रास्तेमें जावा उतर कर उन्होंने उपनिवेश स्थापित किया था। थोड़े ही दिनोंमें उनके प्रयत्नसे जावामें बड़े बड़े नगर और अट्टालिकाओंकी प्रतिष्ठा हो गई। उन्होंने भारतके साथ जो वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापित किया था, वह बहुत दिनों तक चलता रहा। इस विषयमें सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक मि० एलफिनष्टोनने ऐसा लिखा है—"जावाके इतिहासमें स्पष्टरूपसे वर्णित है कि कलिङ्गसे चल कर बहुतसे लोग जावा उतरे थे और वहांके लोगोंको सुसभ्य बनाया था। वे जिस दिन यहां आये थे; उसे चिरस्मरणीय बनानेके लिए एक युगका प्रवर्तन कर गये हैं। वह युग ७५ ई०से प्रारम्भ हुआ है।" फाहियान द्वारा लिखित विवरणके पढ़नेसे ही इसकी सत्यता मालूम हो सकती है।

१८२० ई०में क्राफोर्डने जावाका इतिहास सङ्कलित किया था, उसमें भी हिन्दुओंका कलिङ्गसे आना लिखा है। फर्गूसन साहबने लिखा है—'अमरावतीमें जो विराट् ध्वंसावशेष पड़ा है, उसीसे ज्ञात होता है कि कृष्णा और गोदावरीके मुहानेसे उत्तर और उत्तरपश्चिम भारतके बौद्धोंने पेगु और कम्बोडिया होते हुए जावामें जा कर उपनिवेश स्थापन किया था। १६६६ ई०में टाभारनियरने लिखा है कि "बङ्गोपसागरमें मछलिपत्तम ही एकमात्र ऐसा स्थान है जहांसे जहाज बङ्गाल, आराकान, पेगु, श्याम, सुमात्रा, कोचीन, चीन, पश्चिम होरमुज, मक्का और मदागस्कार पहुंचते हैं।" शिलालेखोंके पढ़नेसे भी हमें जावाके साथ कलिङ्गका सम्बन्ध मालूम हो सकता है *। डा० रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर लिखते हैं—"कुछ लिपियोंके पढ़नेसे मालूम होता है कि सुमात्रामें मागधी प्रभाव बङ्ग और उड़ियासे आया था और सुमात्रासे वह जावामें फैला था।" और भी कहा है कि "सुमात्रामें हिन्दू उपनिवेश भारतवर्षके पूर्व उपकूलसे हुआ था। बङ्गदेश, उड़िया और मछलिपत्तनने जावा और कम्बोडियामें उपनिवेश-स्थापनकार्यमें प्रधान अंश ग्रहण किया था।" †

हिन्दुओंने कलिङ्गसे चल कर जावामें उपनिवेश स्थापन करनेके प्रायः ५०० वर्ष बाद पुनः उक्त द्वीप पर लक्ष्य किया था। ईसाकी ६ठी और ७वीं शताब्दीमें गुजरातके हिन्दुओंका झुण्डका झुण्ड जावा पहुंचा और उसे हिन्दु राजत्वके रूपमें परिणत कर दिया।

जावाके इतिहासमें लिखा है कि ६०३ ई०में गुजरातके राजा कुसुमचित्र वा वाव्यअचाके पुत्र भ्रुविजय सेवलचक्षने जावामें वासस्थान स्थापित किया था। ‡ इस इतिहासमें यह भी लिखा है कि गुजरातके राजा कुसुमचित्र अर्जुनके अधस्तन दशम पुरुष थे। उन्हें एक दिन मालूम हुआ कि उनका राज्य ध्वंस हो सकता है। इसलिए उन्होंने अपने पुत्र भ्रुविजयको उपनिवेश स्थापनके लिए जावा भेजा। उनके साथ पांच हजार अनुचर गये थे, जिनमें कृषक, शिल्पी, योद्धा, चिकित्सक, लेखक आदि भी शामिल थे। इनके साथ छ बड़े और एक सौ छोटे जहाज थे। चार मास जलपथमें भ्रमण करनेके बाद वे एक द्वीपमें पहुंचे। पहले उसे ही उन्होंने जावा समझा, किन्तु पीछे नाविकोंको अपनी भूल मालूम पड़ गई और वहांसे चल दिये। थोड़े ही समयमें वे जावाके 'मातारेम' नामक स्थानमें पहुंचे। राजपुत्रने वहां 'मेताङाङ् कुसुलान नामक नगर स्थापित किया। उसके बाद उन्होंने पिताको और भी आदमी भेजनेके लिए लिख भेजा। इस बार दो हजार आदमी जावा पहुंचे, जिनमें बहुतसे अच्छे अच्छे कसेरे और संगतराश थे। इसके बाद गुजरात और अन्यान्य देशोंसे जावाका वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापित हुआ। 'मातारेम'का बंदर वैदेशिक जहाजोंसे भर गया और राजधानीमें नाना प्रकारके मन्दिर बन गये। भ्रुविजयके पौत्र अद्रि-

* Indian Antiquary, Vol. V, p. 314 & VI. p. 356.

† Bombay Gazetteer, Vol. I pt. I. p 493.

‡ Sir Stamford Raffles, Java, Vol. II, p. 83.

चाया, पहलेमें राजा और दूसरेमें बादशाह-जैसा, इनका सम्बोधन आया है। इन खरीतोंके पढ़नेसे समझ पड़ता है कि ब्रह्मदेशके युद्धके लिये लखनऊके नवाबने अंगरेज गवर्नमेण्टको एक करोड़ पचास लाख रुपया ऋण दिया था। रेसीडेण्ट रिकेटस साहब और नवाब मातम-उद्दौला मुख्तियार-उल्मुल्क दोनोंके ही उद्योगसे वह कार्य सम्पन्न हुआ। इनके आगामीर नामक मन्त्री पर राजकुमार नसीर-उद्-दीनकी बड़ी नाराजगी रही। इन्होंने सोचा कि मेरे मरने पर लड़का नवाब हो करके जरूर ही आगामीरको मार डालेगा। इन्होंने अंगरेजोंको अनुरोध किया कि वैसा हो न सके। गवर्नमेण्ट ५) रु० सैकड़े सूद पर १ करोड़ रुपया कर्ज ले करके आगामीरको बचाने पर मुस्तैद हुई। इन्होंने व्यवस्था की मेरे मरने पर उस रुपयेका आधा सूद आगामीरको मिलेगा और बाकी दूसरे कर्मचारियोंको बंटेगा। मशहूर बिशप हेबर साहबने १८२४-२५ ई०को अवध प्रदेश भ्रमण करके एक ग्रन्थ प्रकाश किया है। इसमें उस समयके अनेक वृत्तान्त लिखित हुए हैं। साहबने नवाबकी खूब तारीफ की है। १८२७ ई० १९ अक्तूबरको गाजी-उद्-दीन हैदरका मृत्यु हुआ। उस समय इनका वयस ५८ चान्द्र वत्सर था। इन्होंने लखनऊमें मोतीमहल, मुबारक मञ्जिल, शाह मञ्जिल, चीनीबाजार, छत्र मञ्जिल, सांजक और कदम रसूल प्रभृतिको निर्माण किया।

गाजीखाँ—दिल्लीसम्राट बाबरके समयके एक सामन्त। यह लाहोर अञ्चल शासन करते थे। फिर इन्होंने सैन्य संग्रह करके बाबरके विरुद्ध अस्त्र ग्रहण किया। बाबरनेससैन्य जा जब इनको परास्त करके मिलवतका दुर्ग अधिकार किया, इन्होंने वहांसे पलायन करके पर्वतका मार्ग लिया। इनके पुस्तकागारमें बहु मूल्य पुस्तक संग्रहीत रहे।

गाजी खाँ चक—काश्मीरके एक राजा। इन्होंने अकबर बादशाहके सेनापति कारा बहादुरको युद्धमें हराया था। मयासरी रहीमी नामक फारसी ग्रन्थमें इनका विस्तृत विवरण दिया हुआ है।

गाजी खाँ तन्नूरी—अकबर बादशाहके एक अफगान कर्मचारी। इन्होंने भाटगढ़के जमीन्दारोंको अकबरके विरुद्ध उभारा था। भाटके राजा रामचन्द्रको कर देने और विद्रोहियोंके आत्मसमर्पण करनेको कहला भेजा था, परन्तु राजाके उस पर राजी न हो युद्धका उद्योग करने पर अकबर फौजके साथ उन पर चढ़ चले। उन्होंने राजाको परास्त करके इनको मार डाला।

गाजी खाँ बदख्शी—एक मुसलमान सेनापति और कवि। इनका प्रकृत नाम गाजी निजाम था। यह मुल्ला इसाम-उद्-दीन इब्राहीमके पास कानून पढ़ने पर शेख-ी बड़े विद्वान् जैसे गण्य हुए। बदख्शांके सुलतान् सुलेमान्ने खुश हो करके इनको 'गाजीखां' उपाधि दिया था। हुमायुंके मरने पर सुलेमानने फौजके साथ काबुल जा करके उनके नौकर मुनीबको घेर लिया। फिर उन्होंने इनको मुनीब खांके पास भेज उनको आत्मसमर्पण करनेको कहलाया था। मुनीब खाँने इन्हें कई रोज अपने पास रख करके खूब मजेसे खिलाया-पिलाया। इन्होंने तुष्ट हो सुलेमानको प्रतिनिवृत्त होने पर अनुरोध किया था। वह तदनुसार बदख्शां चले गये। फिर यह सुलेमानका काम छोड़ भारत आ खाँपुरमें सम्राट् अकबरसे मिले। उन्होंने इन्हें नाना उपहार दे करके पहले किसी लेखकके काम पर रखा था। पीछेको बुद्धिमत्ताका परिचय मिलने पर यह एकहजारी फौजदार बनाये गये और कई एक लड़ाइयोंमें वीरत्व देखाने पर "गाजी खां" उपाधि प्राप्त हुए। इन्होंने मानसिंहके अधीन वामदिक्की सेनाके नायक बन करके राणा कीकरसे युद्ध किया और उसके बाद विहारके विद्रोहको दबा दिया। अकबरशाहके बाद २९ वत्सर राजत्वको (९९९ हजरी) ७० वर्षके वयस पर अयोध्या नगरमें इनका मृत्यु हुआ। इन्होंने बहुतसी किताबें बनायी थीं।

गाजीपुर—युक्त प्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० २५° १९' तथा २५° ५४' उ० और देशा० ८३° ४' एवं ८३° ५८' पू० के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर आजमगढ़ और बलिया, पश्चिम जौनपुर जिला, दक्षिण शाहाबाद एवं बनारस और पूर्वको बलिया तथा शाहाबाद जिला है। क्षेत्रफल १३८९ वर्गमील लगता है। लोकसंख्या प्रायः ९१३८१८ है।

गाजीपुर-शहरमें इस जिलेकी सदर अदालत है। इस-

होता है कि चोलवंशीयोंकी जावासे सम्बन्ध था। श्रोल न्दाज प्रततात्त्विकोंके प्रयत्नसे जावाके साथ भारतके सम्बन्धके विषयमें बहुतसे शिलालेख प्रकाशित हुए है। इस विषयमें महामति फूशेने १८२२ ई०में लिखा है कि "अब लिपियोंके द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि वङ्गोपसागरके उस पारसे भारतका सम्बन्ध था। आशा है, इस विषयमें और भी प्रमाण मिलेंगे।"

जावाके इतिहासके विषयमें ईसाकी ८वीं शताब्दीसे पहलेकी घटनाएं हम बहुत कम ही जान सकते हैं। ऐतिहासिकगण परवर्ती कालमें लिखे गये जावाके स्थानोय इतिहासमें वर्णित प्राचीन घटनाओं पर विश्वास नहीं करते। जावाके शिलालेखों और ताम्रलिपियोंसे वहांके प्राचीन इतिहासका कुछ विवरण प्राप्त हुआ है।

किदोईसे प्राप्त ७३२ ई०के शिलालेखमें राजा सन्नके पुत्र सञ्जयकी विजयवार्ता वर्णित है। इससे मालूम होता है कि ८वीं शताब्दीके प्रारम्भमें जावाके मध्यभागमें हिन्दू राजत्व स्थापित था। उनकी राजनैतिक क्षमता भी कम न थी। पम्बनमके आस पास इसके बादकी कुछ बौद्ध लिपियां प्राप्त हुई हैं, जो नाना प्रकार धर्म प्रतिष्ठानके उपलक्षमें नागरो अक्षरोंमें लिखी गई थीं। 'दाइङ्ग' नामक स्थानमें ईसाकी ८वीं शताब्दीके प्रारम्भमें कुछ शिलालेख और हिन्दू मन्दिर आविष्कृत हुए हैं। पम्बानमके मन्दिर सम्भवतः १०वीं शताब्दीमें निर्मित हुए थे। इन मन्दिरोंसे यही प्रमाणित होता है कि ईसाकी ८वींसे १०वीं शताब्दीके भीतर जावा एक समृद्ध राज्य था। तथा मातारम्, कदोइ और डियेयङ् भी उसीमें शामिल था। अरबियोंके भूगोल सम्बन्धी ग्रन्थोंसे मालूम होता है कि जावा ८वीं शताब्दीमें अत्यन्त क्षमताशाली था और उसने कोश्रामर (सम्भवतः कम्बोज) जय किया था। अरबके भौगोलिकोंका कहना है कि उस समय जावाकी राजधानी एक नदीके मुहाने पर थी और वह नदी सम्भवतः 'सोलो' वा 'ब्रेण्टास' होगी।

जिस समय भारतीयगण जावा-वासियोंकी अपनी सभ्यतामें दीक्षित कर रहे थे, उस समय भी संस्कृतभाषा आदिम जावा-भाषाका अस्तित्व नहीं मिटा सकी थी। वर्तमानमें भी जावाके लोग खेती बारीके सम्बन्धमें जिन शब्दोंका व्यवहार करते हैं, वे आदिम जावा-भाषासे ही लिये हुए हैं। हिन्दू सभ्यताके प्रभावके युगमें भी जावा की आदिम भाषामें कविता और धर्मग्रन्थ रचे गये थे। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दू-सभ्यताको उन्होंने खूब ही अपनाया था। जावाकी भाषा, साहित्य, धर्म और शासन-प्रणालीमें हिन्दू सभ्यताका प्रभाव स्पष्टरूपसे लक्षित होता है। सर चार्लस इलियटने अपने १८२१ ई०में प्रकाशित Hinduism and Buddhism नामक ग्रन्थमें प्रकट किया है कि जावामें जितने भी हिन्दू राजाओंने राज्य किया था, वे सब स्थानोय सम्भ्रान्त व्यक्ति थे तथा उन्होंने जावाकी ही हिन्दू सभ्यताको अपनाया था।

ईसाकी १०वीं शताब्दीसे जावाके इतिहासने सुस्पष्ट आकार धारण किया है। ताम्रलिपियां ६०० ई०से मातारमका उल्लेख करती हैं। ६१८ ई०में मोइ-सिण्डोक नामक एक वजीर जावाका शासन करते थे; किन्तु उसके १० वर्ष बाद पूर्व-जावामें एक स्वाधीन राजाको राज्य करते हुए पाया जाता है। इन्होंने और भी २५ वर्ष राज्य किया था तथा पाशोरियन, सेरामाजा और केदिरी उनके राज्यान्तर्गत था। इनके प्रपौत्र एर-लङ्ग जावाके इतिहासमें एक प्रसिद्ध व्यक्ति हैं; इनका बाल्यजीवन युद्धकार्यमें व्यतीत हुआ था। परन्तु १०३२ ई०में इन्होंने अपनेको समग्र जावाका अधीश्वर घोषित किया था।

जावाके जातीय वीरोंमें जजवाजा वा जयवाय एक प्रसिद्ध व्यक्ति सम्भवतः १२वीं शताब्दीमें हो गये हैं। कहा जाता है कि इन्होंने केदिरीमें 'डाहा' राज्य स्थापित किया था। परन्तु इनकी लिपिमें सिर्फ इतना ही परिचय मिलता है कि ये विष्णुपूजक थे। इस समय पूर्व जावामें कला और साहित्य सम्बन्धी यथेष्ट उन्नति थी।

पश्चिम-जावाकी 'जिजिनी' नदीके किनारे १०३० ई०के एक शिलालेख मिला है। इसमें एक राजाका उल्लेख है। जिन्होंने पृथिवी जय की थी।

१२२२ ई०से हमें पुनः जावाका इतिहास मिलता है; क्योंकि उस वर्षसे पारारतन नामक जावाके राजा-

पास हो उनकी कब्र है। जलालाबाद और कासिमाबाद-में उनकी खडी की हुई मसजिदका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। अब्दुल्लाके मरने पर उनके पुत्र फजल अली राजा शासन करते रहे। वाराणसीके राजा बलवन्तसिंहने उनको निकाल करके गाजीपुर प्रदेश अपने राज्यमें मिलाया था। १७७० ई०को बलवन्त सिंहके मरने पर चेतसिंह राजा हुए। लखनऊ नवाबकी सम्मति क्रमसे गाजीपुर चेतसिंहकी ही अधिकारमें रहा। १७७५ ई०को नवाब आसफ-उद् दौलाने बनारस राज्य अंगरेजोंको भेंट किया था। शेषमें १७८१ ई०को वारन हेष्टिंगसने चेतसिंहको सिंहासनसे उतार दिया। उसी समयसे यह अंगरेजोंके अधीन हो गया। १८०५ ई०को यहां भारतके गवर्नर जनरल लार्ड कर्नवालिसका मृत्यु हुआ। उसी घटनाके स्मरणार्थ 'कर्नवालिस मानुमेण्ट' नामकी इमारत बनायी गयी। इसमें ३२ खम्भे और ऊपर एक गुम्बज है इसकी कुरसी जमीनसे प्रायः ८ हाथ ऊंची और सङ्गमरमर पत्थरसे जड़ी हुई है। मध्यस्थलमें प्रस्तरखोदित लार्ड-कर्नवालिसकी अर्ध-मूर्ति है। उसकी एक ओर हिन्दू और दूसरी ओर मुसल-मान प्रतिकृति है। उत्तरको एक गोरा और एक सपाही ऐसा बना, मानो शोकाकुल खड़ा हुआ है। सिपाहियोंके बलवेकी लहर यहां भी आयी थी, परन्तु शीघ्र हो उतर गयी।

अंगरेजोंके अधिकारमें जाने पीछे १७८८ ई०को गाजीपुरमें जमीनका जो बन्दोबस्त किया गया था, आज भी चिरस्थायी रूपसे चला आता है। १८४० ई०को भूमिके स्वत्वास्वत्व और अंशादिके नूतन व्यवस्था की गयी। वाकी मालगुजारीके लिये कितनी ही जायदाद बिकी थी। १८५८ ई०को जमीनके बारेमें नया बन्दो-बस्त होने पर उसके पुराने हकदारोंके साथ नये हक-दारोंका कितना हो झगड़ा और मुकदमा लगा।

गाजीपुर हो अपने जिला और तहसीलका प्रधान नगर है। यह २५° ३५' उ० और देशा० ८३° ३८' ७" पू०में बनारससे ३२ कोस उत्तर-पूर्व पड़ता है। लोक-संख्या प्रायः ३८४२८ है। यहां चीनी, तम्बाकू, मोटा कपड़ा और गुलाबजल तैयार होता है। उक्त प्रदेशको सब अफीम यहां लायी जाती है। वहांकी गवर्नमेण्टका अहिफेन विभाग यहां अवस्थित है। गाजीपुरमें एक म्युनिसपालिटी भी है। यहांको सज्जीमट्टीसे 'कारबो-नेट अव सोडा' बनता है। गाजीपुरमें शोरा भी प्रस्तुत होता है। चोचाकपुरमें कार्तिकी पूर्णिमाका गङ्गा स्नानो-पलक्ष पर प्रायः १०००० मनुष्य समवेत होते हैं।

युक्तप्रदेशके गाजीपुर जिलेकी सदर तहसील। यह अक्षा० २५° २३' एवं २५° ५३' उ० और देशा० ८३° १६' तथा ८३° ४३' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ३८१ वर्ग-मील और लोकसंख्या प्रायः २६६८७१ है। इसमें एक नगर और ८२४ गांव हैं। मालगुजारी कोई २६६००० और सेस ४८००० होगी। गङ्गा आदि कई नदियां उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण पूर्वको बहती हैं।

युक्त प्रदेशके फतेहपुर जिलेकी एक तहसील, यह अक्षा० २५° ४१' तथा २५° ५५' उ० और देशा० ८०° ३१' एवं ८१° ४' पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल २७७ वर्गमोल है। असोथर राजाके पूर्व पुरुष अरक-सिंहने इस नगरको स्थापन किया था। यहां एक किला भी बना है। लोकसंख्या प्रायः ८१२२२ है।

गाजीबेग तरखाँ मिर्जा-सिन्धुदेशके एक मुसलमान शासन-कर्त्ता। यह मजफ्फर चङ्गोज खांके वंशसम्भूत थे। मुह-म्मद जानबेग इनके पिता रहे। पिताके मरते समय इन-का वयस १७ वत्सरमात्र था। इन पर बादशाह अक-बरको बड़ी मिहरबानी रही। उन्होंने छोटी उम्रमें ही इन पर सिन्धुदेशका शासनभार डाला। परन्तु मिर्जा ईसातर खाँ नामक आत्मीयके इनके विरुद्ध खड़े हो जाने पर यह शासन कार्य न कर सके, उसके लिये चेष्टा करने लगे। पितृबन्धु खुशरू खाँ चिगरोसके साहाय्यसे इन्हो-ने प्रतिवादी ईसातर खाँको परास्त करके सिन्धुदेशसे निकाल दिया। इन्होंने उसी सूत्रमें अनेक सैन्य संग्रह किया और फिर सम्राटके विपक्षमें अस्त्र धारण करनेका उद्योग लगाया। १०११ फसलीको अकबरने इनका विद्रोह दबानेके लिये बिहारके शासनकर्ता सैयद खाँ और शाहजादे शाद-उल्लाको भेजा था।

यह जब सम्राट्की अधीनता स्वीकार करके दिल्ली पहुंचे, अकबरने इनको क्षमा करके फिर सिन्धुदेशका

शालने राजप्रासाद त्याग कर दिया था। इसीसे मालूम होता है कि जावामें उस समय घोरतर विप्लव उपस्थित हुआ था।

जावामें हिन्दूराजत्वका ध्वंस किस तरह हुआ, इस विषयमें वहांके लोगोंमें जो प्रवाद प्रचलित हैं, उनका सङ्कलन सर चार्लस् राफलस् साहब एक सौ वर्ष पहले अपने जावाके इतिहासमें कह चुके हैं *। परन्तु आधुनिक ऐतिहासिकगण उक्त प्रवादों पर विश्वास नहीं करते, उनका कहना है कि हिन्दू-राजत्व मुसलमानोंके लगातार आक्रमण होते रहनेसे विलुप्त हो गया था।

हिन्दू राजत्वके शेष समयमें मुसलमान धर्मका प्रभाव क्रमशः बढ़ता हो गया था। अन्तमें अवस्था ऐसी हो गई कि हिन्दू नाममात्रके लिए राजा होते थे, किन्तु कार्यतः मुसलमान हो राज्यशासन करते थे। चीनदेशीय इतिहासमें उल्लेख है कि ईसाकी ७वीं शताब्दीमें हो जावामें अरबके लोग पहुंच गये थे। १४१६ ई०में चीनदेशमें यिन गाय शेङलौ नामक जो भौगोलिक ग्रन्थ रचा गया था उसमें जावाके ग्रोसे, सोइरावजा और मदजाफित नामक तीन प्रधान नगरोंका उल्लेख है तथा जावाके अधिवासियोंको तीन श्रेणीमें विभक्त किया गया है। जैसे—१ मुसलमान—ये पश्चिमसे आये थे और इनका खाना पीना तथा पोशाक साफ सुथरी होती थी। २ चीनदेशीय—ये भी साफ-सुथरे रहते थे और अधिकांश मुसलमान थे। ३ देशीय वा जावाके अधिवासिगण—ये देखनेमें कुत्सित और अत्याचार व्यवहारमें गन्दे होते थे तथा प्रेतोंकी उपासना और जघन्य खाद्य भक्षण करते थे। चीन देशीय ऐतिहासिकगण साधारणतः जावाके हिन्दुओंको श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते आये हैं। किन्तु अब इस प्रकारके वर्णनसे मालूम होता है कि ईसाकी १५वीं शताब्दीके मध्यभागमें वहांके उच्चश्रेणीके लोगोंने सम्भवतः मुसलमान धर्म अवलम्बन किया था; हिन्दूधर्म सम्भवतः अत्यन्त नीचश्रेणीके लोगोंमें ही प्रचलित था, इसीलिए उन्होंने उक्त प्रकारका विवरण लिखा है। जिस तरह अरबके लोग अन्य देशोंमें सिर्फ राज्य विस्तार करके ही शान्त नहीं हुए, बल्कि धर्म-विस्तारके लिए भी काफी प्रयत्न करते रहे हैं, उसी प्रकार जावामें भी उन्होंने अपने धर्मप्रचारके लिए यथेष्ट चेष्टा न की हो, यह सम्भव नहीं, सम्भव है इसके लिए उन्होंने छल, बल और कौशल से भी काम लिया हो। जावामें हिन्दूधर्मके प्रभावका स्पष्ट प्रमाण इसीसे मिल सकता है कि इतना होने पर भी वहांकी उच्चश्रेणीकी जनताने हिन्दूधर्मको नहीं छोड़ा था

जावामें हिन्दुओंके राज्य और शासनप्रणालीका विवरण पढ़ते पढ़ते हमारे हृदयमें यही भाव उत्पन्न होता है कि, उस सुदूर अतीतकालमें हिन्दूगण गृह-कोणमें आवद्ध रह सिर्फ धर्मकामके अनुष्ठानादिमें ही व्यापृत न रहते थे; किन्तु वे वीरोंको भांति अज्ञात समुद्रोंमें जहाज चला कर नये नये देशोंका आविष्कार एवं अधिकार करते थे और वहां हिन्दूधर्मका प्रभाव फैलाते थे। जिस समयसे हिन्दूजातिमें वैसे साहस और वीरत्वको हीनताका प्रारम्भ हुआ है, तभीसे हिन्दूजातिकी अवनतिका सूत्रपात हुआ है।

जावामें मुसलमान धर्म प्रचारके लिए अरबियोंने पहले अपनी स्थानीय पत्नी और क्रीतदासको मुसलमान बनाया था। पीछे 'अम्पेल' नामक नगरमें मुसलमानोंने अपना प्रधान केन्द्र स्थापित किया। वहांके शासनकर्त्ताओंमें मालिक, इब्राहिम और राद्दन रहमत् इन दोनोंका नाम पाया जाता है। मदजाफितके चतुष्पार्श्ववर्ती स्थानोंमें जो हिन्दू राजा थे, उन्होंने क्रमशः मुसलमानधर्म ग्रहण कर लिया और अन्तमें हिन्दू राजत्वका ध्वंस हो गया।

जावामें मुसलमानोंका अधिकार वा शासन ईसाकी १२वीं शताब्दीसे ही प्रारम्भ हो गया था। पहले उन्होंने कुछ छोटे छोटे स्थानोंमें उपनिवेश स्थापन किया। जिस समय हिन्दू राजा आपसमें विवाद खड़ा करके दुर्बल हो रहे थे, उस समय मुसलमानगण जावामें अपना अधिकार जमानेके लिए कोशिश कर रहे थे। आखिर १४७८ ई०में बहुसंख्यक मुसलमानोंके इकट्ठे हो जानेके कारण जावाका तत्कालीन प्रधान नगर 'मजपहित'का पतन हो गया। जो नगर शताब्दियोंसे हिन्दुओंकी समृद्धि और सभ्यताका केन्द्र होता था

* Raffles, Chapter X.

उन सभी राज्योंको शस्यके बदले गुड़, नमक और शक्कर-की रफ़तनी होती है। महाराष्ट्र अभ्युदयके समय किसी गोण्ड राजपूतने गादवाडेमें एक छोटा किला बनाया था। उक्त दुर्गका भग्नावशेष अभी विद्यमान है। १८७४ ई०तक उसमें सरकारी दफ़तर लगता रहा, उसके बाद किसी दूसरी जगहको उठ गया। मराठोंके समय यह नगर अपने जिलेको राजधानी थो। इसकी आबादी लगभग ८१९८ है। १८६७ ई०को यहां म्युनिसपालिटो बनायी गयी। यहांसे घी और अनाज बाहर बहुत जाता है।

गाडा—युक्त प्रदेशस्थ क्षषक जातिविशेष। इनमें कुछ मुसलमान भी हैं। कहते हैं कि वास्तविक गाड़े चन्द्रवंशीय क्षत्रिय हैं। इनका आदिनिवास दिल्लीके आस पास था।

गाड़ी (हि॰ स्त्री॰) एक जगहसे दूसरी जगह पर माल असबाब या मनुष्योंको पहुंचानेका यन्त्र। यान, शकट, गाड़ी कई प्रकारकी होती है। यथा—रथ, बहली इक्का, ताँगा, बगघी, जोडो, फिटन, टमटम आदि।

गाड़ीखाना (हिं॰ पु॰) गाड़ियोंके रखनेका स्थान।

गाड़ीवान (सं॰ पु॰) जो गाडी चलाता है, कोचवान।

गाढ़ (सं॰ क्ली॰) गाह-क्त। १ अतिशय, दृढ़रूप।

'आतुयरवी गाढ लिपीथा।" (रामा॰ २।३१।२१)

(त्रि॰) २ घना, गाढ़ा। ३ गभीर, गहरा, अथाह ४ विकट, कठिन, दुरूह, दुर्गम। ५ सेवित।

"तपस्विगाढां तमसां प्राप।" (रघु॰ ८।७२)

गाढलवण (सं॰ क्ली॰) सम्बर नमक।

गाढमुष्टि (सं॰ पु॰) गाढ़ा दृढ़ा मुष्टिरत्र। १ खड्ग। (त्रि॰ २ क्षपण, कंजूस।

गाढा (सं॰ त्रि॰) जो जलके सदृश पतला न हो।

गाढ़ापुरी—बम्बई बन्दरके पासका एक क्षुद्र द्वीप। अंगरेज इसको Elephanta Island अर्थात् हस्तिद्वीप कहते हैं। प्राचीन दर्शकोंमें कोई कोई गाढ़ापुरीको 'गाडीपुरी', 'गालीपोरी' और 'घारापुरी' भी लिख गया है। डा॰ विलसनने 'घारापुरीका' अर्थ पुरुषदायक पर्वत लगाया था। किन्तु डा॰ ष्टिवेन्स बतलाते कि उसका नाम 'गाढापुरी' अर्थात् गुहामन्दिरपूर्ण नगरी ठहराते है। यह शेष नाम ही युक्तिसंगत जैसा समझ पड़ता है।

गाढापुरी द्वीप अक्षा॰ १८° ५७' उ॰ और देशा॰ ७३° पू॰में बम्बई शहरसे ६ मील दूर भारतोपकूलके बाहर अवस्थित है। यह थाना जिलेके पनवेल उप-विभागमें लगता है। इसका परिधि चारसे साढ़े ४ मीलके बीच है। दो लम्बी पर्वत श्रेणियां यहां विद्यमान हैं। उनके मध्यमें सङ्कीर्ण उपत्यका है। इस द्वीपका परिमाण भाटेके समय छह और ज्वारके चढ़ते ४ वर्गमील रहता है।

पोर्तगीज जब इस द्वीपके दक्षिण भागमें उपस्थित हुये, अपने प्रथम अवतरणके स्थान पर ही पत्थरके हाथी की एक बडो मूर्ति देखी उसीसे इस द्वीपका नाम उन्होंने हस्तिद्वीप (Elephanta) रख दिया है। हस्ती मूर्ति १३ फुट २ इञ्च लम्बी और ७ फुट ४ इञ्च ऊंची थो। १८१४ ई॰को मत्था और फिर चारो पैर टूट जानेसे १८६४ ई॰को उसको उठा करके बम्बई नगरके विक्टोरिया उद्यानमें रखा गया। सिवा इसके उक्त दोनों पर्वतमालायें जहां मिल-जैसी गयी है, घोडेकी एक मूर्ति रही। मि॰ ओविङ्गटन १६८८ ई॰में इसको देख लिख गये है कि वह बहुत ही स्वाभाविक सादृश्यविशिष्ट थी, थोडी दूरसे सब लोग उसको जीवित प्राणी-जैसा समझते थे। अब इसका कोई चिह्न भी नहीं मिलता। १७१२ ई॰को कपतान पायकने यह घोटकमूर्ति देखी थी, परन्तु तत्परवर्ती दर्शकोंके लिखित विवरणमें इसका कोई उल्लेख नहीं।

द्वीपके उत्तर पूर्व और पूर्व भागको छोड करके दूसरे सब पहाड लताओं और झाड़ियोंसे भरे हैं। पहाड़के बीचकी जमीनमें आम, इमली और करोंदा खूब होता है। पर्वतोंके ऊपर तालवृक्ष और नीचे धान्यक्षेत्र है। समुद्रका किनारा बालू और कीचड़से भरा हुआ है। उस पर कोई पेड़ पत्ता नहीं। जमीनका रंग काला है। इसमें आमके बाग लगे हुए है।

ई॰ ३य शताब्दीसे दशवीं तक सम्भवतः इस द्वीपमें एक समृद्धिसम्पन्न नगर रहा, जो देवालयादिके लिये प्रसिद्ध था। कई एक पुरातत्त्ववित् बतलाते कि उसी स्थान पर मौर्य राजाओंकी 'पौरी' नगरी रही। १५७९

पथप्रदर्शक होने पर भी, वह प्रवादोंकी निर्भरता पर लिखा गया है। राफल्स् साहबने जावाकी स्वाधीन वाणिज्य-नीति अवलम्बन कर समस्त जातिओंको वहां व्यवसायके लिए आह्वान किया था, जिससे जावाको बहुत श्रीवृद्धि हुई थी। जावाके अधिवासी उनको स्मृतियों-की सादर वा सभक्ति पूजा करते हैं। आखिर १८१६ ई०में यूरोपमें सन्धिस्थापन होनेके उपरान्त अङ्गरेजोंने १८ अगस्तको जावा ओलन्दाजोंको सौंप दिया; तबसे वह उन्हींके हाथमें है। किन्तु १८२५से १८३० ई० तक देशीय स्वाधीनताके उद्धारके लिए दीपनागर (सुलतान वंशीय)-का ओलन्दाजोंसे जो युद्ध हुआ था, वह बहुत विस्मयकर था। दीपनागर जावाके अन्तिम सुलतान थे। उन्होंने स्वदेश प्रेमके महामन्त्रसे प्रणोदित हो जो भयानक काम किया था, वह स्वदेश-प्रेमिकके लिए अनुशीलन करने योग्य है। इस युद्धमें ओलन्दाजोंकी १५००० सेना निहत हुई तथा करोड़ों रुपये खर्च हुए थे। दीपनागरने १८५५ ई० तक स्वाधीनता संस्थापनके लिए जो-जानसे कोशिश की थी। वे १८वीं शताब्दीके सभ्यसमाज-में स्वदेशवत्सल वीरपुरुष जैसे यशस्वी हुए हैं।* १८५५ ई०में निर्वासित अवस्थामें दीपनागर माकासरद्वीपमें परलोक सिधारे; किन्तु अब भी जावावासी उनकी मृत्यु नहीं स्वीकार करते। वे मुक्तकण्ठसे निर्भीकतापूर्वक कहते हैं कि दीपनागर अब भी मरे नहीं हैं, वे हमारी दृष्टिके अन्तरालमें रहते हैं और अचानक आविर्भूत हो वैदेशिक शासनके दासत्वरूप बेड़ीको तोड़ कर भारत महासागरके पानीमें डाल देंगे और फिर सुलतान लोग जावाके सिंहासन पर बैठेंगे। मध्य-जावामें दीपनागरके नाम पर बहुत दफे बलवा हुआ था। १८६५, १८७० और १८८८ ई०में दीपनागरके नाम पर वहां विद्रोह उपस्थित हुआ था।

इस समय ओलन्दाज-शासनकर्ता पाश्चात्य शिक्षा-सभ्यताका प्रचार कर जावावासियोंकी जातीयता लूटने-के लिए कोशिश कर रहे हैं; किन्तु जावावासी सभ्य हिन्दूके समान देशीय भावको नहीं छोड़ते। १८६६ ई०में ओलन्दाज गवर्नर जनरल Dr. Sloet van le Beele-ने जावाके शासनका बहुत कुछ संस्कार किया था। प्राथमिक शिक्षाके लिए सब स्थानोंमें विद्यालय खुल गये हैं; रेलवे, टेलिग्राफ, ट्रामगाड़ी, ष्टीमर आदि सब प्रकार सभ्यताकी यन्त्रावलियोंका भी प्रचलन हो गया है। परन्तु अभी तक वे पाश्चात्यभावमें नहीं डूबे हैं, बल्कि अवतारको तरह वे सर्वदा यही सोचते रहते हैं कि दीपनागर आ कर श्वेतकाय मनुष्योंको खण्ड खण्ड करें।

इस समय ओलन्दाजगण शस्यश्यामल स्वर्णप्रसू यव-द्वीपको लक्ष्मीके अनन्तभाण्डारसे धनरत्न आहरण कर हलैण्डको वाणिज्य-गौरवसे भूषित कर रहे हैं। खनिज पदार्थोंके लिये जमीन खोद रहे हैं। जङ्गलोंसे लाखों रुपयेकी लकड़ी देश ले जा रहे हैं—विविध पण्य परिपूर्ण वाणिज्य तरियां लक्ष्मीका भाण्डार ले कर हजारोंकी संख्यामें यूरोपकी ओर दौड़ी जा रही हैं, ओलन्दाज धनी वणिक्गण एलालतालिङ्गितचन्दनकुञ्जमें—द्वीपान्तरानिल लवङ्गपुष्पमें चित्तविनोद कर रहे हैं।

पहले ओलन्दाजगण यहां बन्दर नहीं बना सके थे; किन्तु १८८५ ई०में इञ्जिनियरोंके ८ वर्ष तक अटूट परिश्रम करनेके बाद बाताबियाके निकट एक बड़ा भारी बन्दर बन गया। इसके सिवा मिट्टीके तेलकी बड़ी भारी खनि आविष्कृत हुई तथा १८९० ई०के भीतर ११०६ मील तक रेलवे और ४१४ मील तक ट्रामकी लाइन बन गई। फिलहाल ष्टेट-रेलवेके सिवा अन्यान्य कम्पनियां भी रेल चलाती है; सर्वत्र जाने आनेका सुभीता हो गया है और ओलन्दाज ष्टीमर कम्पनीके असंख्य ष्टीमर वा जहाज प्रति दिन सागरद्वीपोंके चारों ओर चला करते हैं।

राज्य-शासनके लिए यहां एक ओलन्दाज गवर्नर जनरल रहते हैं, जो हलैण्ड राज्यके द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। इसके अलावा समस्त यवद्वीप और मदूरा २२ भागोंमें विभक्त हैं, यथा—बण्टाम, बाताविया, क्रवङ्ग, प्रेङ्गार, चेरिवन, टेगल, पेकालङ्गान, बन्यूमस, बजीलेन, यशकर्त्ता, सुरकर्त्ता, केदू, समरङ्ग, जापरा, रम्बङ्ग, मदिवान, केदिरी, सुराभय, पशुरुआ, प्रसुलिङ्ग, मदूरा और

* Encyclopædia Britannica, 10th Ed.

है। तीनों मुख हरिहर ब्रह्माके मुखों जैसे ही प्रतीयमान होते हैं। उसीसे इसका नाम त्रिमूर्ति है। यह एक दीवारके पीछे अंधेरे छोटे गृहमें स्थापित है। यह गृह १०॥ फुट प्रशस्त है। इसके सामने २॥ फुट व्यासके २ खंभे लगे हैं। मूर्तिके मुखत्रय सम्बन्धमें कोई तो कहता कि वह शिव, शक्ति और रुद्रकी प्रतिकृति है। इसका कारुकार्य अतीव सुन्दर है। मध्यस्थलका शिव मुख देखनेसे ब्रह्माका मुख-जैसा मालूम पड़ता है। कारण इसके वाम हस्तमें ब्रह्माण्डबीजस्वरूप दाड़िम्बफलका भग्नांश वा योगियोंके पानपात्र-जैसा कमण्डलु दृष्ट होता है। दक्षिण हस्तमें एक सर्पमूर्ति रहा, जो टूट गयी है। दोनो कान काच्छ देशके कनफटे योगियों-जैसे लम्बे हैं। मस्तकका मुकुट अर्धचन्द्राकृति-जैसा बना हुआ है। दक्षिणस्थ मुख रुद्रदेवका है। इसके दाहने हाथमें एक सांप लटक रहा है। वाम ओरका मुख महादेवका-जैसा देख पड़ते भी विष्णुका ही मुख ठहरता है। कारण इसके दाहने हाथमें कमल है। इसी विष्णु भावापन्न मुखको कोई कोई शक्तिमूर्तिका मुख-जैसा बतलाता है। इस त्रिमूर्ति-रक्षित स्थानके बाहर खम्भेके दोनों ओर द्वारपालोंकी २ मूर्तियां है। उनमें प्रत्येक १२ फुट ८ इञ्च लम्बी है। इनकी बगलमें एक एक पिशाचमूर्ति है।

त्रिमूर्ति दर्शन करनेको जानेसे लिङ्गमन्दिरका गर्भगृह लांघना पड़ता है। इस गर्भगृहमें प्रवेश करनेको चारों ओर ४ दरवाजे लगे है। दरवाजों पर चढ़नेको ६ सिढ़ियां हैं। इसी कारण मन्दिरसे पीठस्थानको कुरसी ३ फुट ८ इञ्च ऊंचो है। दरवाजोंकी दोनों ओर दो दोके हिसाबसे ८ द्वारपाल है। उनमें कोई १४ फुट १० इञ्च और कोई १५ फुट २-इञ्च पड़ता है।

त्रिमूर्तिके पूर्वदिकस्थ गृहमें अर्धनारीश्वर मूर्ति है। इसमें महादेव और पार्वतीका अर्धाङ्गमिलन दिखलाया है। इस गृहमें अपरापर और भी अनेक देवमूर्तियां खोदित हैं। अर्धनारीश्वरको पुंमूर्तिके दाहने पीछेकी गरुड़ासीन विष्णु मूर्ति, साथ ही ऐरावत पृष्ठपर इन्द्रमूर्ति और उसके पश्चात् पद्महंसपृष्ठ पर पद्मासन ब्रह्ममूर्ति प्रतिष्ठित है।

त्रिमूर्तिके पश्चिम दिकस्थ गृहमें १६ फुट ऊंची शिवमूर्ति है। इसके मस्तक पर गङ्गाकी ३ मुखवाली एक मूर्ति बनी है। इस नारीदेहके दोनों हाथ टूटे और शिवमूर्तिके भी वामदिकस्थ दोनों हस्त भग्न हो गये हैं। वामदिककी १२ फुट ४ इञ्च ऊंची पार्वतीमूर्ति है। शिवके दाहने चतुर्हस्त ब्रह्मा और ऐरावतासीन इन्द्रकी मूर्ति विराजती है। पार्वतीके बायें गरुड़ासीन विष्णु मूर्ति है। गरुडके गलेमें मालाकार सर्प लिपटे हुए है। सिवा इसके ब्रह्माकी मूर्तिके उपरि भागमें जो मेघराशि खोदित हुई, उसके बीचमें ६ मूर्तियां बनी है। शिवमूर्तिके मत्थे पर एक मुनि और दूसरी किसी पुरुषकी मूर्ति है। पार्वतीके मत्थे पर भी मेघमें छिपी हुई ६ स्त्रियों और पुरुषोंकी खोदित मूर्तियां देख पड़ती है।

इस गुहामन्दिरके दक्षिण ओरसे जाने पर पश्चिम दिकके प्रवेशद्वारको चादनीके पास एक घरमें शिवदुर्गाका विवाह खोदित हुआ है। शिवकी मूर्ति १० फुट १० इञ्च और पार्वतीकी ८ फुट ७ इञ्च ऊंची है। शिवका यज्ञोपवीत वामस्कन्धसे दक्षिण हस्त पर होता हुआ दक्षिण जानु पर्यन्त फैल गया है। शिवके वाम भागमें एक त्रिमुख मूर्ति है। यह सम्भवतः ब्रह्माकी मूर्ति होगी। कारण स्वयं पद्मयोनि ही इस विवाहके पुरोहित है। उसके पश्चात् भागमें ४ हाथकी विष्णुमूर्ति है। इसके एक हाथमें पद्म, एकमें चक्र और अन्य दो हाथ भग्न है। उमाके दक्षिण उनकी माता मेनकाकी मूर्ति है। उमाके मस्तक पर हाथमें चामर लिये वेद माता सरस्वती विराजित है। पार्वतीके दाहने ओर भी स्त्रीमूर्ति हाथमें एक चामर लिये हुए खड़ी है। इसके पीछे घूंघरवाले बाल और मस्तक पर शिरस्त्राणविशिष्ट चन्द्रदेवकी मूर्ति है। इसकी गर्दन पर भी एक चन्द्रार्ध बना हुआ है। शिवके मस्तक पर भृङ्गीकी मूर्ति है। फिर दूसरी दीवारोंमें मुनि ऋषियोंकी मूर्तियां खुदी है।

इसके बाद शिव और पार्वतीका कैलासविहार है। इसमें उनके पुत्र कार्तिकेय तथा गणेश और शिवके दक्षिण भृङ्गीकी मूर्ति विद्यमान है। हरपार्वतीके नीचे वृषभ तथा सिंह और चारों पार्श्वों पर पिशाचगण है।

पूर्वदिकके मण्डपमें उत्तर ओरकी शेषोक्त गृहके

जावा और कम्बोजमें जो महायानवाद प्रचलित था उसके साथ हिन्दूधर्मका यथेष्ट संमिश्रण था। बहुत जगह तो यह भी घोषित हो गया था कि बुद्धदेव हो शिव हैं अथवा यों कहिये कि बुद्ध और शिव एक ही मूल कारणके विभिन्न प्रकार विकाशमात्र है। धर्मशास्त्रोंमें उभय धर्मके उक्त प्रकारसे मिश्रणका परिचय मिलने पर भी बरबदरके मन्दिरादिमें उसका कोई प्रभाव देखनेमें नहीं आता। सम्भव है, उस समय एक ही स्थानमें हिन्दू और बौद्धधर्म प्रचलित रहने पर भी दोनोंमें संमिश्रण न हुआ हो। उस समयके इलोराके चित्र-शिल्पके देखनेसे यही प्रतीत होता है कि इसीको ८वीं शताब्दीमें पश्चिम भारतके धर्मको दशा भी प्रायः वैसी हो थी।

जावाके यथार्थ इतिहासके विषयमें हमें इतना कम तथ्य मालूम हुआ है कि, उससे इस बातका निर्णय नहीं किया जा सकता कि हिन्दू और बौद्ध इन दो धर्मोंमें किसकी शक्ति कितनी वा कैसी थी।

जावामें जैनधर्म भी प्रवर्तित हुआ था। पुरातत्त्वविदोंका अनुमान है कि जावामें ईसाकी १०वीं और ११वीं शताब्दीमें जैनधर्म प्रचारित हुआ था। इसका प्रमाण यह है कि खजुराहोमें बहुतसे मन्दिरोंमें जैनधर्मके उपासकगण पूजादिके लिए जाते थे। उक्त स्थानमें शिव और विष्णुमन्दिर भी पाये जाते हैं।

जावाके हिन्दूधर्मका प्रथम परिचय हमें पूर्णवर्माके शिलालेखसे मिलता है। उसके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि जावामें ५वीं शताब्दीके प्रारम्भमें विष्णु-उपासकोंका ही प्राबल्य था। पीछे ८वीं और ९वीं शताब्दीमें वहां शैव-धर्मका प्रचार हुआ था। पमबानम् और दियेङ् इन दोनों ही स्थानोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी मूर्तियां पूजी जाती हैं। किन्तु गणेश, दुर्गा, नन्दी सह शिव ही प्रधान समझे जाते हैं। पमबानमके एक मन्दिरमें महागुरु शिवरूपमें पूजे जा रहे हैं। उनको प्रौढवयस्क श्मश्रुयुक्त व्यक्तिके रूपमें अङ्कित किया गया है, शरीर पर बहुमूल्य वस्त्रालङ्कार भी दिये गये हैं। बहुतसे समझते हैं कि उक्त मूर्तिके निर्माण-चातुर्य और वेशमें चीनदेशका प्रभाव लक्षित होता है। चीनका इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है कि उस देशके सम्राट् गण प्रायः जावाके राजाओंको देवमूर्ति उपहारमें दिया करते थे। ईसाकी १०वीं शताब्दीके मध्यभाग पर्यन्त शिवका प्रभाव अक्षुण्ण था। पीछे ११५० ई०में जब पनतारनका मन्दिर बना था, तब शैवधर्मके साथ वैष्णवधर्मका कुछ संमिश्रण हुआ था। हेतु यह है कि वहांके मन्दिरोंमें यत्र तत्र रामायण और वैष्णवपुराणके आख्यानोंके आधार पर चित्र निर्मित किये गये हैं*। इसके बाद १३वीं शताब्दीमें जावाका बौद्धधर्म पुनः श्रीसम्पन्न हुआ था। इस समय कम्बोज और चम्पामें बौद्धधर्मका स्रोत प्रबलवेगसे चल रहा था। मदजाफितके एक राजाने चम्पाकी राजकन्याके साथ विवाह किया था। इससे अनुमान किया जाता है कि इस युगमें चम्पासे बौद्धधर्म आया था। तारानाथका कहना है कि मुसलमानोंके आक्रमण और अत्याचारके भयसे बहुतसे बौद्ध भारतसे भाग गये थे; सम्भव है उन्हींमेंसे कुछ जावा पहुंच गये हों। ईसाकी १३वीं शताब्दीमें जावामें बौद्धधर्मका प्रभाव बढ़ अवश्य गया था किन्तु ब्राह्मणधर्मके साथ उसका संघर्ष उपस्थित नहीं हुआ था। बुद्ध और शिव एक ही तत्त्व हैं, यही घोषित किया गया था। साधारण लोग हिन्दू देवदेवियोंकी ही उपासना करते थे। इतना होने पर भी वे अपनेको बौद्ध बतलाते थे। अब भी वहांके अधिवासियोंको इस बातका गर्व है कि वे बुद्धागमके धर्मका अनुसरण कर रहे हैं। जावाके साहित्यमें भी बौद्ध ग्रन्थोंकी संख्या अधिक पाई जाती है। जावामें रामायण, भारतयुद्ध आदि हिन्दू ग्रन्थोंका भी अस्तित्व था, किन्तु यहांके लोग उन्हें काव्यकी दृष्टिसे देखते थे। इसके विपरीत बौद्धोंके "कमहायानिकान" और "कुञ्जरकर्ण" आदि ग्रन्थोंको वे यथार्थ धर्मशास्त्र मानते थे। सुतरां मदझापितमें जिस बौद्धधर्मका अनुसरण होता था, उसे उदार प्रकृतिका कहा जा सकता है।

फिलहाल जावाके प्रायः सभी लोग मुसलमान लिखे वा समझे जाते हैं। परन्तु इन मुसलमानोंके धर्ममतको यदि धीर भावसे पर्यालोचना की जाय, तो उनमें

* Recherches preparatoires Concernant Krishna et les bas reliefs des temples de Java by Knebel in Tijdschrift LI p 97-174.

मन्दिरको सीताबाईका देवालय कहते हैं। मण्डपके चारों ओर ४ खम्भे हैं। फिर ८ फुट ५ इञ्च ऊंचे रोकों के भी दो खंभे लगे हैं। मण्डप ७२ फुट ६ इञ्च लम्बा और उत्तरको २७ फुट ४ इञ्च तथा दक्षिणको २५ फुट ७ इञ्च चौड़ा है। इसके दोनों पार्श्वों पर २ अन्तराल-गृह हैं। मध्यस्थलका गृह गर्भगृह होता है। इसके प्रवेशद्वारकी ऊंचाई ७ फुट ११ इञ्च और चौड़ाई ४ फुट ११॥ इञ्च है। भीतरको ५ फुट ४ इञ्च लम्बी और ३ फुट ५ इञ्च चौड़ी वेदी बनी है। इसके उत्तरको प्रणालिका है।

वृहत् गुहामन्दिरसे पश्चिमको पर्वतशिखर पर एक भग्न व्याघ्रमूर्ति है। द्वीपवासी इसको उमाव्याघ्रेश्वरी वा देवीको व्याघ्रमूर्ति-जैसी भक्ति और पूजा करते हैं। यह ३ फुट ऊंची है।

ठीक निरूपण किया जा नहीं सकता--कितने दिन पीछे किस राजाके राजत्वकालको और किसके द्वारा उसके गुहामन्दिर खोदे गये। स्थानीय अधिवासियोंमें तीन विभिन्न प्रवाद प्रचलित हैं। कोई कोई कहता कि पाण्डवोंने ही वह मन्दिर बनवाया था। फिर किसीके मतमें कनाड़ाके राजा बाणासुर और किसीके कथनानुसार सिकन्दर बादशाह उसके निर्माता रहे। किन्तु उपर्युक्त प्रवादोंका सत्यासत्य समझ नहीं पड़ता।

बरगेस (James Burgess) साहबने विशेष पर्यालोचना करके इन गुहामन्दिरोंका निर्माण काल ई० ८म शताब्दीका शेषभाग अथवा ८म शताब्दीका प्रारम्भ ही ठहराया है।

आजकल इस मन्दिरमें अपर कोई खोदित शिलालिपि दृष्ट नहीं होती। १५४० ई०को पोर्तगीज गवर्नर डमजोयाव-दि-क्राष्ट्रो इस पहाड़ी गुफासे १ शिलालिपि अपने देश ले गये थे। सम्भवतः उसीमें उसके निर्माण काल और निर्माताका नाम होगा। वह प्रस्तरलिपि खो गयी है। भविष्यत्में उसके पुनः प्राप्त होनेसे इसके काल निर्णयकी आशा की जा सकती है।

किसी शैवपर्वको हिन्दूबणिक् इस बड़े गुहामन्दिरमें आ करके पूजा और उत्सवादि किया करते हैं। शिवरात्रिको यहां बड़े धूमधड़ाकेसे मेला लगता है।

गाढ़ावटी (सं० स्त्री०) गाढा वटी वटिका यत्र बहुव्री०। चतुरङ्ग क्रीड़ाओंमें एक प्रकारकी क्रीड़ा।

"नौकैका वटिका यस्य विद्यते खेलने यदि।
गाढावटीति विख्याता पदं तस्य न दुष्यति॥" (तिथितत्व)

गाणकार्य (सं० त्रि०) गणकारीभवः गणकारि-ष्य। कुर्वादिभ्यो ण्यः। (पा ४।१।१५१) गणकारिका अपत्यादि, गणगारि ऋषिके वंशज।

गाणगारि (सं० पु०) गणगारस्यापत्यं इञ्। मुनिविशेष।

"पुनर्होमश्च गाणगारि।" (आश्वलायनश्रौत० ३।१७।१८)

गाणपत (सं० त्रि०) गणपतिर्देवता अस्य, गणपति-अण्। १ गणपति सम्बन्धीय। २ गणपति उपासक।

गाणपत पञ्चप्रकार उपासकोंमें एक होते हैं। शैव, शाक्त वा वैष्णवोंकी भांति यह भी अपने इष्टदेवता केवल गणपतिको सब देवताओंका प्रधान समझ करके उपासना करते हैं। आजकल गाणपत सम्प्रदाय बहुत घट गया है। और आचार व्यवहारमें भी अन्यान्य उपासकोंके साथ इनका कोई भेद लक्षित नहीं होता। परन्तु किसी समयको इस सम्प्रदायने विशेष उन्नतिलाभ किया और वैष्णव सम्प्रदायकी तरह एक पृथक् मत चला दिया था। ऋक्वेदसंहिता (२।२३।१) के मन्त्र और वाजसनेय-संहिता (१६।२२-२३) के अध्यायमें गणपतिकी स्तुति मिलती है। इससे मालूम पड़ता कि प्राचीन कालसे ही गणपतिकी उपासना चल रही है।

तन्त्रशास्त्रमें शिव आदिकी उपासनाकी तरह गणपतिकी उपासना भी प्रधान जैसी निर्णीत हुयी है। सिवा इसके तन्त्रशास्त्रमें और एक विधान देख पड़ता कि किसी भी देवताकी उपासना क्यों न की जावे सर्व प्रथम गणपतिकी पूजना पड़ेगा। जो गणपतिकी पूजा न करके अन्य देवताकी पूजता, वह पूजाफलसे वञ्चित रहता है। हिन्दू लेखक किसी ग्रन्थकी लिखना आरंभ करने पर सर्व प्रथम "नमो गणेशाय" वा "श्रीगणेशाय नमः" लिपिबद्ध करते हैं। इन्हीं समस्त कारणोंसे बहुतसे लोग अनुमान करते किसी समय गाणपत सम्प्रदाय अतिशय प्रबल रहा। उनकी युक्ति और उपदेश शास्त्रसङ्गत तथा सबको आदरणीय था। गाणपत्य धर्मने सम्पूर्णरूपसे न सही, आंशिक रूपसे प्रायः सभी सम्प्रदा-

बरबदरका सप्ततल मन्दिर।
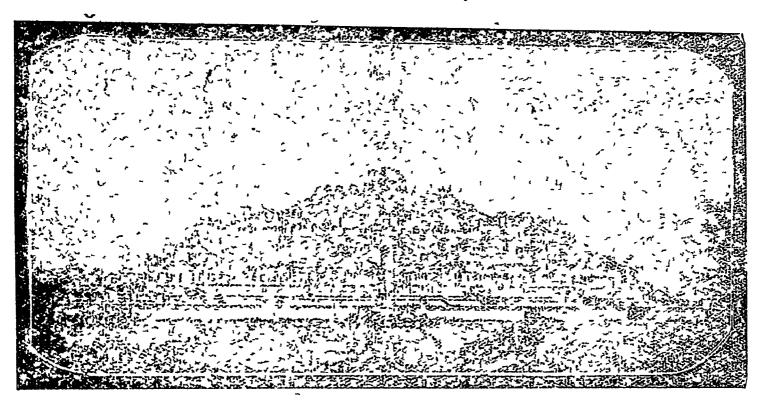
और सात खण्डोंमें विभक्त है। १८८३ ई०की अग्न्युत्पातमें इसका कुछ अंश टूट गया है और मन्दिरके भीतर बहुतसे भस्मादिके ढेर लगे हुए हैं। भूमितलकी भित्तिशिलाकी लम्बाई-चौड़ाई ६२० फुट है। पहले खण्डका प्रत्येक पार्श्व ४८७ फुट लम्बा है और दूसरे खण्डका ३६५ फुट। इसी तरह क्रमशः घटता गया है। सातवें खण्डके ऊपर एक विराट् गुम्बज वा शिखर है, जिसका व्यास ५२ फुट है। इसके चारो तरफ अपेक्षाकृत छोटी गुमटियां हैं, जो शिल्पसौन्दर्यकी वृद्धि कर रही है। मन्दिरमें प्रवेश करनेके लिए चारो तरफ चार विराट् सिंहद्वार हैं और अपूर्व कारुकार्य-खचित ४ सोपानमालाएं हैं। प्रत्येक सिंहद्वारके दोनों ओर विराट्काय दो सिंह मानो प्रहरीका कार्य कर रहे हैं। भूमितलमें एक द्वारके पास बड़ी भारी ब्रह्माकी मूर्ति थी; अब वह भग्नावस्थामें कुछ दूरी पर पड़ी है।

इस सप्ततल विराट् मन्दिरमें बाहर और भीतर हजारों देवमूर्तियां हैं। बाहर प्रथम और द्वितीय सोपान मञ्च (Gallery) पर प्रायः ५०० बुद्धमूर्तियां भित्तिसे ईषदुन्नत (Bas relief) है, जिनमेंसे ४३२ मूर्तियां उपविष्ट (प्रत्येककी ऊंचाई ३ फुट) हैं और ईषदुन्नत कोणके ऊपर कुछ बुद्धमूर्तियां महावल्लीपुरके सदृश निर्मित हैं। मि० फर्गूसनका कहना है कि पहले यह मन्दिर ८ खण्डोंमें विभक्त था। अब भी उक्त मन्दिरमें ७२ देहगोप विद्यमान हैं, जिनकी ऊंचाई तीन खण्डके बराबर है। सप्ततलके समस्त प्राचीरोंमें जितनी मूर्तियां हैं, उनको यदि श्रेणीबद्ध रक्खा जाय तो वे ३ मीलसे भी अधिक स्थान घेरेंगी। इसीसे अनुमान किया जा सकता है कि मन्दिरमें कितनी मूर्तियां हैं। ये मूर्तियां अपूर्व शिल्पनैपुण्य-मण्डित है। सौभाग्यकी बात है कि यहां मुसलमान वा काला-पहाड़का अभ्युदय नहीं हुआ। मनुष्योंका उपद्रव न होने पर भी यहां बहुत बार विषम भूविप्लव और अग्निशैलका अभ्युद्गम हो गया है। परन्तु इतना होने पर भी यह मन्दिर अपना मस्तक ऊँचा किये हिन्दू-सभ्यताके अपूर्व गौरवकी घोषणा कर रहा है।

मन्दिरका बहिर्भाग स्थापत्यालङ्कारसे विभूषित है; किन्तु यहां कोई विशेष ज्ञातव्य ऐतिहासिक रहस्य नहीं है। पांच प्रसिद्ध सोपानमञ्चोंमें २य सोपानमञ्च ही ऐतिहासिक रहस्यका अक्षय भण्डार है। इसका भीतरी भाग बुद्धदेवका लीलाचित्र है। गान्धारसे अमरावती पर्यन्त समस्त भूभागमें जितनी बौद्ध-मूर्तियां हैं, २य सोपानमञ्चमें उससे सौगुनी अधिक हैं, जिनमें १२० मूर्तियां तो विशेषतः उल्लेखयोग्य हैं। इनमेंसे २० इन्हींमें बुद्धदेवके जन्मसे पहले तुषितस्वर्गका विवरण है

"तत् प्रथच्छोमयं श्रीत्रं रथञ्च कपिलक्षणम्।
कार्यं च सुमहत् पार्थो गाण्डीवेन करिष्यति॥" (भारत १।११९।४)

इस धनुषको ब्रह्माने एक हजार वर्ष, प्रजापतिने पांचसौ तीन वर्ष, इन्द्रने पचासी वर्ष, सोमने पांचसौ वर्ष, वरुणने सौ वर्ष और अर्जुनने पैंसठ वर्ष धारण किया था। गाण्डिव देखो। २ धनुष।

गाण्डीवधन्वा (सं० पु०) गाण्डीव धनुर्यस्य समासे अनङ्। अर्जुन।

गाण्डीवी (सं० पु०) गाण्डीवमस्त्यस्य इनि। अर्जुन। (भारत १।१४८ अ०) २ अर्जुनवृक्ष, आकका पेड़।

गात (हिं० पु०) १ शरीर, अंग। २ गुह्य, लज्जाका अंग। ३ स्तन, कुच। ४ गर्भ।

गातलीन (अं० स्त्री०) जहाजमें एक डोरी जो मस्तूलके चरखेमें लगी रहती है।

गातव्य (सं० त्रि०) गै गाने गा गतौ वा तव्य। १ गन्तव्य, जाने योग्य। २ गेय, गाने योग्य।

गाता (हिं० पु०) गानेवाला, गवैया।

गातागतिक (सं० त्रि०) गतागतेन निर्वृत्तम् अक्षद्यूतादित्वात् ठक्। गमनागमन द्वारा निष्पन्न।

गातानुगतिक (सं० त्रि०) गतानुगतेन निर्वृत्तम्। गतानुगत निष्पन्न।

गाती (हिं० स्त्री०) गलेमें लपेटनेका एक प्रकारकी चादर। छोटे बच्चेको जो गलेमें कपड़ा पहनाया जाता है इसे भी गाती कहते हैं।

गातु (सं० पु०) गायति गै गाने तुन्। १ कोकिल। कोयल। २ भ्रमर, भौंरा। ३ गन्धर्व। ४ पथिक मुसाफिर। गै गाने भावे तुक्। ५ गमन, जाना। ६ जानेका रास्ता। ७ उपाय। ८ पृथ्वी। ९ स्तव। (त्रि०) १० क्रोधी। गुस्सावर। ११ गायन, गानेवाला। (क्लो०) १२ धन, दौलत।

गातुविद् (सं० त्रि०) गातुं मार्गं वेत्ति क्विप्। पथज्ञ, रास्ता जाननेवाला।

गातृ (सं० त्रि०) गै गाने तृच्। गायक, गानेवाला।

गात्र (सं० क्लो०) गच्छति गम् त्रन् आकारादेशः। १ अंग, देह, शरीर। इसका पर्याय—कलेवर, वपुः, संहनन, शरीर, वर्म, विग्रह, काय, देह, मूर्ति, तनु, इन्द्रियो, तन, अङ्ग, क्षेत्र, भूषण, मलाकर, वेर, सञ्चर, घन, बन्ध, पुर, पिण्ड, पुद्गल, भूतात्मा, स्वर्गलोकेश, स्कन्ध, पञ्जर, कुल और वल है। (जटाधर) २ हाथीके अगले पैरोंका ऊपरी भाग। (त्रि०) गाथक सम्बन्धीय।

गात्रक (सं० क्लो०) गात्र स्वार्थे कन्। गात्र देखो।

गात्रकण्डू (सं० स्त्री०) गात्रजाता कण्डूः। गात्रविचर्ची, खुजली।

गात्रगुप्त (सं० पु०) श्रीकृष्णके एक पुत्र जो लक्ष्मणाके गर्भसे उत्पन्न हुवे थे।

गात्रघर्षण (सं० क्लो०) शरीर मार्जन, देहका मलना।

गात्रभङ्गा (सं० स्त्री०) गात्रस्य भङ्गोऽवसादो यस्याः बहुव्रो०। १ एक प्रकारका पेड, केवांच, कौंच। १ गन्धशठी।

गात्रमार्जनी (सं० स्त्री०) गात्रं मृज्यतेऽनया मृज करणे ल्युट् ङीप्। शरीर मार्जनार्थ क्षुद्र वस्त्र, गमछा तौलिया।

गात्ररुह (सं० क्लो०) गात्रे रोहति रुह-क, ७-तत्। लोम, वाल। (भारत ३।३।२४)

गात्रवत् (सं० पु०) १ लक्ष्मणाके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णका एक पुत्र। (त्रि०) २ प्रशस्त गात्रविशिष्ट। सुन्दर शरीरवाला।

गात्रवती (स्त्री०) लक्ष्मणागर्भज श्रीकृष्णकी कन्या।

गात्रवर्ण (सं० पु०) स्वर साधनकी वह प्रणाली जिसमें सात स्वरोंमेंसे प्रत्येकका उच्चारण तीन तीन दफा किया जाता है।

गात्रविक्षेप (सं० पु०) अङ्गचालन, शरीर संचालन।

गात्रविन्द (सं० पु०) लक्ष्मणाके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णका एक पुत्र।

गात्रशोष (सं० पु०) पूतना, वालरोगविशेष।

गात्रसङ्कोची (सं० पु०) गात्रं सङ्कोचयति सं-कुच-णिच् णिनि। १ जाहक नामक जन्तुविशेष, जोंक। २ कृष्णककलास, काला गिरगिट। ३ गोनससर्प।

गात्रसंप्लव (सं० पु०) गात्रेण संप्लवन्ते सम्-प्लु-अच् ३-तत्०। प्लवजातिके पक्षी, हंसप्रभृति।

गात्रसम्मित (सं० त्रि०) गात्रं सम्मितं सम्पूर्णं यस्य बहुव्री०। तीन मासके ऊपरका गर्भ, जिसका शरीर बन गया हो।

विराट्‌काय द्वारपालकी मूर्तियां हैं। इस मन्दिरके पास एक स्थान है, जो 'बन्दारग' (वृन्दारण्य ?) कहलाता है। नरसिंह अवतार सदृश मूर्तियां भी यहां हैं और उनके गलेमें पद्मकी माला शोभित है। कुछ दूरी पर हनूमान् आदि ७ वानरोंकी मूर्तियां है। इसके सिवा जङ्गलमें सैकड़ों समाधिस्थ तपस्वियोंकी प्रतिमूर्तियां विद्यमान हैं। निम्नभागके सामने अपूर्व कारुकार्य मण्डित गणेश मूर्ति विराजमान है।

२। लोरोजङ्गम् वा दुर्गा-मन्दिर—इस जगह प्रधानतः छ मन्दिर देखनेमें आते हैं; और सब टूट गये हैं। देवकुसुमके समयमें भारतीय भास्करोंने इन मन्दिरोंको बनाया था। पहले यहां २० बड़े बड़े मन्दिर थे; प्रत्येकको उच्चता १०० फुट थी। राफल साहबका कहना है कि उनके ब्राह्मण भृत्यने दुर्गाकी मूर्तिके दर्शन करके 'देवी भवानी जगदम्बा महामाया" आदि पढ़कर उनका स्तव किया था और भक्तिवश साष्टाङ्ग प्रणाम किया था।

दुर्गादेवीकी मूर्ति प्रायः बङ्गदेशीय महिषमर्दिनीकी भांति है। यहां देवीके दोनों पैर महिषके ऊपर हैं; बायें हाथमें महिषासुरके केशोंका गुच्छा और दहिने हाथमें महिषका लाङ्गूल है। इसके सिवा पौराणिक ध्यानके साथ यहांकी महिषमर्दिनीका सादृश्य पाया जाता है।

सामने गणेश-मूर्ति है—इसका निर्माणनैपुण्य देखनेसे विस्मित होना पड़ता है। गणेश-मूर्तिके आठ नरमुण्ड तथा उनके अलङ्कारोंमें १२।१४ नरमुण्ड ग्रथित है। एक भीषण सर्प उनके शरीरको वेष्टित किये हुए है।

जावामें अब भी दुर्गा और गणेशकी कुछ कुछ फूल और चन्दन मिल जाया करता है। यहां गणेशको राजदेमाङ्ग, सिंहजय वा गणसिंह कहते हैं। इस स्थानके निकट एक २० हाथका शिवलिङ्ग भग्नावस्थामें पड़ा है। मन्दिरोंके सभी सिंहद्वार पूर्वमुखी हैं। मन्दिरके छज्जों पर असंख्य देव-मूर्तियां हैं, जिनमें ब्रह्माकी मूर्ति बड़ी रहस्यपूर्ण है। वे चतुर्मुख, अष्टभुज, हाथमें कमण्डलु लिए, और पैरों तले विपरीत दिशामें मस्तक रक्खे हुए सङ्गमबद्ध दम्पतीके वक्षःस्थल पर पैर रक्खे खड़े हैं—दहिने पैरके नीचे स्त्री हैं और बाएं पैरके नीचे पुरुष। प्रजापतिकी ऐसी मूर्ति सचमुच ही रहस्यजनक है; अन्यान्य बहुत स्थानोंमें ब्रह्ममूर्तिके नीचे ऐसा नरमिथुन नहीं है। किसी किसी स्थानमें ब्रह्मा चतुर्मुख, द्विभुज और अक्षसूत्रकमण्डलु हाथमें लिए हुए हैं। बहुत जगह शिवलिङ्गके सिवा शिवकी मूर्ति है। किसी जगह वे वृषभवाहन पर हैं, किसी जगह योगिवेशमें हैं और किसी जगह सर्पाभरणभूषित, नागयज्ञोपवीती एवं नूपुराङ्गदमण्डित हैं। उनके दक्षिण करमें रुद्राक्षमाला है और वाम करमें कमण्डलु, पार्श्वमें त्रिशूल गड़ा हुआ है। इसी प्रकार कहीं वे कैलास शिखरके अतुल कारुकार्य-मण्डित सिंहासन पर बैठे हुए है, हाथमें फुल्लकोकनद है और पास ही शायित पुङ्गव है। यहांका दृश्य देखनेसे काशीकी याद आ जाती है।

३। चण्डीशिव वा सहस्र-मन्दिर—अतीत मूर्तिशिल्पका यह विराट् निदर्शन है। धर्मप्राण भारतवासियोंके लिए देखनेकी वस्तु है। स्थापत्यकीर्तिमें बरबदरमन्दिरके बाद ही सहस्र मन्दिरको स्थान दिया जा सकता है। राफ्ल साहब भारतवर्ष और मिसरके पिरामिड आदि देख कर, फिर जावा गये थे; किन्तु तो भी उन्हें सहस्र-मन्दिर देख कर यह लिखना ही पड़ा कि—'मैंने पृथिवीके किसी भी अंशमें ऐसे मनुष्यका शिल्प-सौन्दर्य-मण्डित भुवनमोहन विराट् कीर्तिस्तम्भ नहीं देखा। जावाको यदि हिन्दुओंकी राजधानी कहा जाय, तो भी अत्युक्ति नहीं।"

दुर्गा-मन्दिरसे १३४५ गजकी दूरी पर वृन्दारण्यके पाससे सहस्रमन्दिर प्रारम्भ हुआ है; अधिकांश स्थान निविड़ जङ्गलाकीर्ण है, २८६ मन्दिर अब भी अविक्षत रूपमें पड़े पड़े हिन्दूधर्मकी भूतकीर्तिको प्रगट कर रहे हैं। प्रायः सभी मन्दिर एक ही आदर्श पर निर्मित और विचित्र शिल्पसुषमासे शोभित हैं। इन मन्दिरोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी मूर्तियां विराजमान हैं। प्रत्येक मन्दिर २० हाथ ऊंचा है। इसके अतिरिक्त सर्वत्र असंख्य समाधिमग्न योगी, ऋषि और बुद्धोंकी मूर्तियां खोदित हैं। मन्दिरका प्राङ्गण ५४० फुट लम्बा और

श्रो	श्रिरि
पद्मानि	पदुमानि इत्यादि

लिङ्ग, वचन, कारक और क्रियाकी बहुतसो अशुद्धियां हैं—

तावपि	तानपि
आसनात्	आर्सानना
त्रिलोकी	तिलोक
मम	मम, मत्त:
तव, त्वा	तुभ्य
कुत, केन	कहिं
ददामि	देमि वा ददमि
भव स	भोसि
भविष्यसि	भोष्य इत्यादि

वाक्यादि रचना पर संस्कृत भाषामें जिस स्थानको जो रखनेका नियम है, गाथाकी भाषामें अनुसरण करते हैं। परन्तु समास और सन्धिमें वह नियम नहीं लगता। फरासीसो विद्वान् मोशिये वरनूफ साहबका कहना है, पुस्तक पढ़नेसे उसका कोई कारण अनुभूत नहीं होता। शाक्यमुनिके पोछे और पालि भाषा बननेसे पहले क्या उसी भाषाको सृष्टि हुई? लोग संस्कृत न जानते थे, परन्तु उसमें लिखनेको इच्छा होनेसे उन्होंने ऐसा कर लिया, सम्भवत: वह अंश भारतके बाहर अर्थात् पश्चिम प्रान्त वा काश्मीरमें लिखा जाता होगा। भारतके मध्य जैसी वहां संस्कृतको चर्चा न थो। परन्तु साहबकी बातसे समझ पड़ता है कि उन्होंने गाथाकी भाषा पढ़नेमें त्रुटि की। इसमें बड़ा गुणीपन और पण्डिताई है। न्यायशास्त्र और मनोविज्ञानके जटिल विषय अतिपरिष्कृत और सुललित भाषाके आर्या और त्रोटक छन्दोंमें लिपिबद्ध हुए हैं। कैसे कहेंगे—संस्कृत भाषा पर जिनका उतना अधिकार रहा, उसे ही लिखनेमें भूल गये। पञ्जाब आदि देशोंमें रचित हुआ होनेसे संस्कृत व्याकरणके अनुसार गद्यांश विशुद्ध और पद्यांश अशुद्ध कैसे निकाला। राजा राजेन्द्रलाल मित्रने बतलाया है कि शाक्यमुनिके समय या अव्यवहित पोछे भाट लोग उसको गाते घूमते थे। ललितविस्तर प्रभृति ग्रन्थोंके रचयिताओंने गद्यांश लिख करके उसकी पोषकता करनेके पीछे गाथाकी कविता यथायथ उद्धृत कर दी। वैसा करनेका कारण यह था कि उस समयको लोगोंमें वह बहुत आदरणीय रही। गद्यरचनाके पीछे "तदेदमुच्यते" लिख करके पद्यको उद्धृत किया है। मोक्षमूलर और वेबर साहबने उक्त मित्र महोदयका मत समर्थन किया है। लासेन बरनूफ फेर भी उसकी पोषकता करते हैं। डाक्टर म्योर कहते कि पीछेको गाथाको भाषा कोई लिखित भाषा थी। वेनफी साहबने राजेन्द्रलालकी पोषकता करके लिखा है कि पेशेदार गानेवालोंका निम्नश्रेणोके लोग जैसा मान लेने पर उनका मत ठोक समझा जा सकता है। राजेन्द्रलालने उसका खण्डन करके कहा है—यद्यपि बौद्ध धर्ममें जातिभेद कम रहा तथापि यह कैसे सम्भव हो सकता कि ब्राह्मण क्षत्रिय जातीय रचयिता अपने आपको उच्च श्रेणीस्थ जैसा न समझते थे। वह कविताको नोचजातिरचित होने पर उद्धृत करनेसे सदा विरत हो रहते। गाथाएं जबानी बननेसे उनकी शुद्धि अशुद्धिकी ओर उतना मनोयोग नहीं किया गया। अनेक समयको शुद्ध हो वा अशुद्ध कोई सरल कथा चित्तको जितना आकर्षण करतो अच्छे शुद्ध संस्कृत उच्च अङ्गको भाषा नहीं कर सकती। भारतवर्षके भाट तथा कुलज्ञ मूर्ख नहीं होते, परन्तु उनकी संस्कृत भाषा ग्राम्य अशुद्धता आदि नाना दोषोंसे लिप्त है। फिर भी सभास्थलमें उनकी वक्तृताका विशेष आदर है। गाथाके बारेमें भो यहो कहा जा सकता है। लेखकोंके विद्वान् होते हुए भी यह सम्भव नहीं कि सब श्रोता संस्कृतके सुपण्डित रहे। श्रोताओंके मनोरञ्जनको पण्डितोंकी अपेक्षा भाट लोगोंकी ही इज्जत ज्यादा थी। बौद्धोंके महासङ्घ समयको गाथाका बड़ा आदर होता रहा। गद्यके मध्य उसके प्रवेश लाभका यहो कारण था। अच्छो तरह अनुमित होता कि बौद्धोंके प्रथम महासङ्घमें शुद्ध गाथा ही कही गयी। फिर पण्डित लोगोंने बुद्धदेवका विवरण विशुद्ध संस्कृत भाषामें लिखना अपना कर्तव्य समझ करके उसको पोषकताके लिये गाथाको उद्धृत किया।

गाथाके पद २ भागोंमें विभक्त जैसे ठहराये जा सकते हैं। इसके कई पदोंका प्रकृति अंश संस्कृत है; केवल

चित्रादि भी अपूर्व निपुणताके साथ खोदे गये हैं। किसी जगह भयङ्कर युद्धका चित्र है, तो किसी जगह आनंदका उच्छ्वास दिखलाया गया है; कहीं सैकड़ों प्रकारके युद्धास्त्र (महाभारतमें वर्णित) हैं, तो कहीं रङ्गभूमि पर मानो दृश्यकाव्यका अभिनय हो रहा है। इसके सिवा सैकड़ों वाद्ययन्त्र भी अङ्कित हैं, जिनमें मुरज, मुरली, रवाव और वीणा इनके नाम तो समझमें आते हैं औरोंके नाम अद्भुत हैं। ऐसे वाद्ययन्त्र सौसे भी अधिक होंगे कम नहीं। इस स्थानमें एक माणिक्यको शिव-मूर्ति है।

८। सुकूकी मन्दिरमाला—यहां भी बड़े बड़े मन्दिर विद्यमान है। किसी जगह मिसरके पिरामिड और ओवेलिस्क वा स्मृतिस्तम्भकी भांतिके सैकड़ों प्रस्तरनिर्मित प्रासाद हैं। एक अट्टालिकाकी छत १५७ फुट लम्बी, १२० फुट चौड़ी और ८० फुट ऊंची है। द्वारोंके ऊपर सिंहोंके आकृति चित्रित है। कहीं स्फिंक्स् (Sphynx) वा विराट् नरमुण्ड है। किसी जगह एक राक्षस मुंह फाड़ कर मनुष्यको लील रहा है। किसी जगह एक भीषणकाय गरुड़पक्षी सर्प भक्षण कर रहा है। ये प्रति मूर्त्तियां मिसरीय पुराणोंके आधार पर खोदित हैं। राक्षसके बगलमें एक कुत्ता है, जिसे देख कर टाइफन, यानुबिस् और साइबिलके उज्ज्वल चित्रकी याद आती है। मिसर देखो। इसके सिवा श्येनपक्षी, कबूतर, वृक्षपत्र इत्यादिके चित्रिताक्षर आदि अनेक गूढ़तत्त्वोंका निर्देश कर रहे हैं। इस चित्रावलोके पास एक जगह व्याघ्र और गाय खुदी हुई है, उसके बाद एक दल अश्वारोही है, फिर कुछ हाथियोंकी प्रतिमूर्त्तियां हैं।

ये पिरामिड सोपानमालाओंमें शोभित हैं। उस प्रदेशमें एक आश्चर्यजनक जलोत्तोलनयन्त्र है, जिसके दो नल भीषण सर्पकी आकृतिके हैं। पिरामिडके भीतर प्रकोष्ठ हैं या नहीं, इसका निर्णय अभी तक नहीं हुआ। पिरामिडके नीचे दो देव-मन्दिर हैं। उसके पास एक जलधारा है और वह ऐसे ढंगसे बनाई गई है कि उसका पानी कभी सूखता नहीं—उसमेंसे सर्वदा पानी गिरता रहता है। एक जगह अर्जुन गाण्डीव लिए हुए कपिध्वज रथ पर चढ़ कर कुरुक्षेत्रमें भीषण युद्ध कर रहे हैं और देवदत्त शङ्ख बजा रहे हैं। कपिध्वजके पास एक मूर्त्ति है, जिसका उत्तमाङ्ग मनुष्य-सदृश और निम्नाङ्ग पक्षीकी भांतिका है। सबके शरीर पर संस्कृत शिला लिपि खुदी हुई है। कहीं मीतावतार और कूर्मावतारकी दृश्यावली है, तो कहीं सुंदर राशिचक्र है, जिसमें चन्द्र और सूर्य अतीव निपुणताके साथ अङ्कित हैं। एक जगह विश्वकर्माकी कर्मशाला बनी है, जिसमें नाना प्रकारके यन्त्र और अस्त्रशस्त्र बन रहे है।

यहांसे कुछ दूरी पर एक ४० हाथ ऊंचा इष्टकालय है। वे परवर्त्ती कालमें बने थे, एकमें शकसं० १२६१ खुदा हुआ है।

इसके अतिरिक्त चेरवन और अङ्गरङ्ग पर्वत पर इतना प्रत्नतत्त्व है कि उसका यदि सिर्फ नामोल्लेख भी किया जाय तो एक ग्रन्थ बन जाय। एक मन्दिरमें १२ सूर्यरथों पर द्वादश आदित्य विद्यमान हैं।

बान्युबङ्गी नामक स्थानमें हिन्दू-कीर्त्तिका विराट् निदर्शन देखनेमें आता है। अभ्रभेदी मन्दिरमाला और विराटकाय देवमूर्त्तियोंको देख कर आश्चर्यान्वित होना पड़ता है।

मजपहित राज्यके ध्वंसचिह्नमें भी प्रत्नकीर्त्तिकी अपूर्वता दिखलाई देती है। एक ध्वंसप्राय पुष्करिणीके चिह्नसे हम हिन्दू-साम्राज्यके अतीत गौरवका अनुमान कर सकते है। एक ईंटकी बनी हुई पक्की दीर्घिका अब भी विद्यमान है। दुर्भेद्य इष्टक-प्राचीर अब भी उसे वेष्टन किए हुए हैं। इसकी लम्बाई १२०० फुट, चौड़ाई २०० फुट और ऊंचाई १२ फुट है। इस समय उसका अभ्यन्तर शस्यश्यामल धान्यक्षेत्र बन गया है। अब भी मजपहितका ध्वंसावशेष गौड़नगरसे १६ गुना स्थान अधिकार किये हुए पूर्व-गौरवको साक्षी दे रहा है। यहांकी अधिकांश देव-मूर्त्तियां मुसलमानों द्वारा विध्वस्त हो गई हैं। मि० एञ्जेल हार्ड (Mr. Engel Hard) उस समय समरङ्गके शासनकर्त्ता थे; उन्होंने कुछ मूर्त्तिय मजपहितके ध्वंसावशेषसे संग्रह की थी, जिनमें शिव, दुर्गा और गणेश-मूर्त्ति ही उल्लेखयोग्य है।

इसके अलावा बहुत जगहसे धातुमयी प्रतिमूर्त्तियां संग्रहीत हुई है। राफ्ल् साहब एकसौ धातुमयी

देवने उसको ४र्थ शास्त्र-जैसा उल्लेख किया है। यथा—१म सूत्रान्त, २य गेय, ३य व्याकरण, ४र्थ गाथा, ५म उदान, ६ष्ठ निदान, ७म अवदान, ८म इतिवृत्तक, ९म जातक, १०म वैपुल्य, ११श अद्भुतधर्म, १२ उपदेश। इससे समझा जाता कि उस समयको गाथा शिक्षणीय वस्तु थी।

पारसिक जाति (पारसियो) के धर्म ग्रन्थमें 'गाथा' शब्दका उल्लेख मिलता है। उसमें ५ गाथाएं हैं—१ अह्नवैती, २ उष्टवैती, ३ स्पेन्ता मैन्यू, ४ वहुखषथ् और वहिष्ठोइस्टो। यह गाथाएं छोटे छोटे पदोंका रचनामात्र हैं। उसमें प्रार्थना, गान, स्तोत्र और मनोविज्ञान सम्बन्धीय नानाविध कथा लिखित हुयो है। हमारी संस्कृत वा पालि भाषाकी गाथाएं भी वैसी हैं। वह पारसियोंमें गीत हुआ करती हैं। उनके धार्मिक ग्रन्थ जन्दअवस्तामें भी बहुतसी गाथाएं हैं। फिर भी पारसी जन्द अवस्ताके सभी शब्द गानकी तरह स्वर लगा करके पढ़ते हैं। उनको गाथा रचना हमारो वैदिक रचनाके ही अनुरूप है। छन्दोबद्ध ग्रथित होते भी उसके शेष अक्षरोंका अनुप्रास नहीं मिलता। उपर्युक्त ५ गाथावोंमें प्रत्येक स्वतन्त्र प्रकार छन्दमें रचित हुई है। अह्नवैती गाथाको प्रत्येक श्लोकमें ४८ वर्ण है। वह ३ पंक्तियोंमें विभक्त है। प्रत्येक पंक्तिमें १६ वर्ण लगे हैं।

पारसिकोंको विश्वास है कि गाथामें ७ अध्याय होते हैं। देवता उस गाथाको गाते थे। स्पीतम जरथुस्त्रकी ध्यानयोगमें वह देवताओंके पाससे मिल गयो। उस्तवैती गाथा उन्होंने अपने आप बनायी थी। उस प्रत्येक पंक्तिमें ५ अक्षर है। वह छन्दोबद्ध वैदिक त्रिष्टुभ् छन्दसे बहुत मिलतो है। सपेन्ता मैन्यू गाथाका छन्द प्रायः त्रिष्टुभ्के अनुरूप हो है। प्रथम दोनों गाथाओंकी अपेक्षा इसमें श्लोकोंकी संख्या बहुत कम है फिर ४थी बहुखषथ् और ५वीं वहिष्टो इष्टो नामक गाथामें श्लोकोंकी संख्या और भी अल्प देख पड़ती है।

म्यूनिकके संस्कृताध्यापक मार्टिन हौग अनुमान करते कितनी हो गाथाएं रहीं, जो पीछेको लुप्त हो गयीं। उन सभी रचनाओंमें स्पीतम जरथुस्त्रके मतामत, और उपदेशादि विद्यमान थे। पीछेको अपने पूजाकारियों (ब्राह्मणों)को अनिष्टसे निष्कृति और जबरदस्त धर्मावलम्बियोंका मङ्गल करनेवाला हो रचित हुई। हौग साहब और भी बतलाते कि वह गाथाएं सामवेद-जैसी हो वह ऋग्वेदका अंश होती है। ब्राह्मणोंने उन्हें यत्न करके रखा और पारसियोंने बिगाड़ दिया है। वेष्ट साहबके 'अनुमानमें ई०से १२०० वत्सर पूर्वको महापुरुष स्पीतम जीवित रहे। गाथा उसी समयकी रचना है।

वैदिक कालके हिन्दू धर्मसे पारसिक धर्मका विशेष सम्पर्क रहना-जैसा समझ पड़ता है। दोनोंके आदि ग्रन्थोंमें देव और असुर लोगोंको कथा है। फिर भी यह देवताओं और वह असुरोंके उपासक हैं। यजुर्वेदमें आसुरी नामक कोई छन्द दृष्ट होता है। यथा—गायत्री आसुरी, उष्णिक् आसुरी, पंक्ति आसुरी। जन्द अवस्ताको गाथामें उसका प्रचुर प्रयोग देखते है। जन्द अवस्ता अहुरों वा असुरोंका धर्म है। गायत्री आसुरी अह्नावैती, उष्णिक् आसुरी बहुखषथ्, और पंक्ति आसुरोछन्द उस्तवैती और स्पेन्ता मैन्यु गाथामें मिलता है। समझ नहीं पड़ता कि घटनाक्रमसे वैसा सादृश्य लगा होगा। वरं अनुमित होता कि यजुर्वेदको गाथा ऋषियोंको समझो बूझो थी। जन्दअवस्ताग्रन्थमें हिन्दू देवदेवियोंके बहुतसे नाम और वैदिक शब्द पाये जाते हैं।

पाश्चात्य विद्वान् यह सभी देख करके अनुमान लगाते कि भारत जानेसे पहले हिन्दू और पारसी एक समाजभुक्त ही थे।

पारसिक गाथामें एकेश्वर धर्म मतका उल्लेख है।

गाथाकार (सं० पु०) गाथां करोति कृ-अण्। १ गाथाकारक, गाथारचयिता, श्लोक रचनेवाला। गायक गानेवाला।

गाथानो (सं० त्रि०) गातव्य, गानेके योग्य। (सायण)

गाथान्तर (सं० पु०) एक कल्पका नाम। ब्रह्माके महिनेका चतुर्थ दिन।

गाथिका (सं० स्त्री०) गाथा स्वार्थे कन्। टाप् तत इत्वञ्च। स्तुतिके निमित्त श्लोक।

गाथिन (सं० पु०) गाथिनो ऽपत्यम् गाथि-अण्। १ सामवेद। २ गायकका अपत्य। ३ तच्छात्र।

"कवि रामायण" रचा गया था। परन्तु इसके रचयिता संस्कृत नहीं जानते थे, उन्होंने रामायणका उपाख्यान लोगोंके मुंहसे सुना था। वे शिवके उपासक थे। साहित्यका विशेष विवरण बालिद्वीप और कविभाषा शब्दमें देखो।

जावाके स्थानीय साहित्यमें "मणिकमय" नामक प्रकाण्ड गद्यग्रन्थ विशेष प्रसिद्ध है। इसमें सृष्टितत्त्वका विषय बड़ी विदग्धताके साथ वर्णित है। वर्तमान यवद्वीपवासियोंके लिए यही प्रधान लौकिक साहित्य है। इस पुस्तकका साधारण ज्ञान न होनेसे, यवद्वीपमें कोई भी शिक्षित नहीं कहला सकता। यही ग्रन्थ यवद्वीपका आदिपुराण है, साधारण भाषामें इसे "पेपाकम्" कहते हैं।

"सूर्यकेतु" नामक ग्रन्थमें कुरुवंशीय एक राजाको कहानी है। "नोतिशास्त्र कवि" नामक ग्रन्थमें नोतिगर्भित १२३ स्लोक है। इस तरहकी सुललित नोति-कविता सभो भाषाओंके लिए अलङ्कार स्वरूप है।

आगम, आदिगम, पूर्वादिगम, सूर्य-कान्तार वा मानवशास्त्र (मनुसंहिता), देवागम, माहेश्वरी, तत्त्वविद्या, सात्मागम आदि अनेक प्राचीन ग्रन्थोंका आविष्कार हुआ है। इनमें मानवशास्त्रका कुछ अंश अङ्गरेजीमें अनुवादित हुआ है। यह मानवशास्त्र वा मनुसंहिता १६० भागोंमें विभक्त है।

प्राचीन साहित्यमें उपरोक्त ग्रन्थ ही उल्लेखयोग्य हैं ; इनके अलावा अन्यान्य ग्रन्थोंके नाम बालिद्वीप शब्दमें देखना चाहिए।

वर्तमान लौकिक साहित्यमें उपन्यास और नाटक आदिका अस्तित्व हो अधिक है।

"अङ्ग्लाण वा अङ्गराणी"—इतिहासमूलक जयालङ्कारके राजत्वकालसे इसका प्रारम्भ है।

"पञ्जोमर्दनिङ्ग कुञ्ज"—यह पञ्जोके जोवनका, अद्भुत घटनावलीपूर्ण इतिहास है। पञ्जोमगदकुञ्ज, पञ्जो अङ्गरकुञ्ज, पञ्जोप्रियम्बदा, पञ्जो जयकुसुम, पञ्जो चेकेलवणिपति, पञ्जो नरवंश इत्यादि ग्रन्थोंमें पञ्जोका जोवनवृत्तान्त लिखा है। कहा जाता है ये ग्रन्थ १५वीं शताब्दीसे पहले रचे गये थे।

उत्तरकी रचनाएं 'पेपाकम्' वा 'बबद' नामसे प्रसिद्ध हैं।

"श्रुति" ग्रन्थ नोतिशास्त्रके अनुरूप है ; इसमें बहुत-सी उपदेशपूर्ण कविताएं हैं। "नीतिप्रश्न" ग्रन्थमें राजधर्म और "अष्टप्रश्न" ग्रन्थमें राजनीतिका वर्णन है। "शिवक" ग्रन्थमें उच्च कोटिके व्यक्तियोंके साथ व्यवहारको नीति लिखो है। "नागरक्राम"में नागरिक शासन-व्यवस्थाका उपदेश है। "युद्धनागर"में देशीय लोगोंके आचार व्यवहारका वर्णन है। "कामन्दक" नीतिशास्त्रविषयक ग्रन्थ है। "चन्द्रसङ्काल" ग्रन्थ शक सं० १२४० का रचा हुआ है। "जयालङ्कार" ग्रन्थमें विचारकार्य सम्बन्धी सर्वोत्तम विधि-व्यवस्थादिका वर्णन है। "युगलमुद"में मन्त्रियोंके कर्तव्याकर्तव्यका विचार किया गया है। इसके रचयिता काण्डिथाचलके राजमन्त्री युगलमुद है।

"गजमर्द" (—मन्त्री गजमर्द विरचित) मन्त्रिचर्या विषयक ग्रन्थ। "कापकाप"—विचारव्यवहार विषयक ग्रन्थ। "सूर्य आलम"—(राजनपात वा आदिजिल्लुन रचित, ये मुसलमानोंमें सबसे पहले राजा हुए थे) राजनोति-मूलक ग्रन्थ। "जयालङ्कार" उपन्यास—(ससहानन आम्मेलके समयमें रचित) उच्चनीतिमूलक रूपक ग्रन्थ। "जवर मालिकम्"—वर्तमान समयका सर्वोत्कृष्ट उपन्यास। इस ग्रन्थको प्रथम पंक्ति इस प्रकार है—"यथार्थ प्रेम चित्तको सर्वदा उद्विग्न रखता है" जैसाकि सेक्सपीयरने कहा है—"Where love is great the slighest doubts are fear" "जवरमालिकम्" (नायिकाका नाम)का चरित्र हर एक भाषा वा साहित्यके लिए उपादेय है।

४०० वर्ष तक राजत्व करते रहने पर भी मुसलमान जावामें अपने साहित्यका प्रचार नहीं कर सके। सिर्फ धर्म-विषयक कुछ ग्रन्थोंके सिवा साहित्यके अन्य विभागोंमें अरबी भाषाका प्रभाव बिलकुल भी दृष्टिगोचर नहीं होता। हां, वर्तमान समयमें इसकी संख्या अवश्य बढ़ रही है। प्रायः पौने दो सौ वर्ष पहले प्राणराम नामक एक अरबी विद्वानने जावा भाषामें कुरानका अनुवाद किया था। निम्नलिखित अरबी किताबें उल्लेखयोग्य हैं,—

इनमें 'सज्जन' और 'कारीकुल' दो श्रेणिया हैं। विधवाविवाह करनेवाले कारोकुल और उससे अलग रहनेवाले सज्जन कहलाते हैं। कारोकुल गानिगोंको काला होनेसे ही सम्भवत: उस नामसे पुकारा जाता है। परन्तु इनके वृद्ध लोग बतलाते कि खरहुल शब्दके परिवर्तमें करिकुल नाम लगाते हैं। कोलहार और बाघलकोट जिलोंमें इनको रहायश ज्यादा है। वंशवाचक कोई नाम नहीं होता, स्थानीय या बोलनेके नामसे ही एकमात्र परिचय मिलता है। यह बलिष्ठ, कृष्णवर्ण, लम्बे चौड़े और सुन्दर मुखाकृतिविशिष्ट हैं। घरमें कनाड़ी भाषा बोलते, परन्तु कुछ न कुछ सभी मराठो और हिन्दी समझते हैं। यह सब निरामिषाशी हैं, मद्यमांस नहीं छूते। आसन पर बैठ करके खानेसे पहले लिङ्ग उपासना करते हैं। यह आतिथेय, सत्यवादी, शान्त स्वभाव, धीर, कर्मठ और चतुर हैं। इनमें बहुतसे धनी अपनेको लिङ्गायतोंका समकक्ष जैसा समझते हैं। बालविवाह और विधवाविवाह प्रचलित है। परन्तु सज्जन गानिग विधवाविवाह नहीं करते।

धारवाड़में गानिगोंकी ५ श्रेणियां हैं। वहा इनको 'गानिगाड' कहा जाता है। विभिन्न श्रेणियोंके गानिग एकत्र बैठ करके आहारादि करते, परन्तु परस्परमें वैवाहिक दानग्रहणसे विरत रहते हैं। ब्राह्मणोंके प्रति इनकी विशेष भक्ति है। सोमवार पवित्र दिन माना जाता, कोई काम काज नहीं चलाता। यदि कोई स्त्री केशोंको आलुलायित रखके तेल लेने आती, सूखा उत्तर पाती है। इनमें बाल्यविवाह, बहुविवाह और विधवाविवाह चलता है। सभी कनाडी बोलते हैं।

गानिन् (सं० त्रि०) गान-इनि। १ गतियुक्त। २ गीतियुक्त। ३ स्तुतियुक्त।

गानिनी (सं० स्त्री०) गानिन् स्त्रियां ङीप्। वाक्, बोली।

गान्तु (सं० त्रि०) गच्छति गम-तुन्, वृद्धिश्च। १ गन्ता, जानेवाला। २ पथिक, मुसाफिर। ३ गायक, स्तोका गान करनेवाला।

गान्त्र (सं० क्ली०) गम-ष्ट्रन्। शकट, गाड़ी।

गान्त्री (सं० स्त्री०) गन्त्री एव स्वार्थे अण् ङीप्। वृषवाह्य शकट, बैलकी गाड़ी।

गान्दिक (सं० त्रि०) गन्दिकायां भवः सिन्धादित्वात् अण्। गन्दिका नदीजात, गन्दिका नदीसे उत्पन्न।

गान्दिनी (सं० स्त्री०) गां धेनुं ददाति प्रतिदिनं गो-दा णिनि पृषोदरात् साधुः। १ अक्रूरकी माता। ये काशीराजकी कन्या और श्वफल्कको भार्या थीं। हरिवंशके मतसे—इनका नाम निरुक्ति था। ये प्रति दिन विप्रोंको धेनुदान करती थीं, इस लिये इनका नाम गान्दिनी पड़ गया। ये माताके गर्भमें बहुत वर्ष तक रही थीं, इससे इनके पिताने कहा—"पुत्री! तुम शीघ्रही जन्म लो, तुम्हारा मङ्गल हो, इतने दिनों तक तुम क्यों उदरमें रह रही हो?" उत्तरमें कन्याने कहा—"यदि प्रतिदिन गोदान कर सकूं, तो जन्म लेती हूं।" पिताने इस बातको स्वीकार कर उनका मनोरथ पूर्ण किया। इन्हीं गान्दिनीके गर्भ और श्वफल्कके औरससे अक्रूर नामक एक पुत्र पैदा हुआ। पीछे इनके गर्भसे उपमद्गु, मद्गु, मुदर, अरिमेजय, अविक्षिप, उपेक्ष, शत्रुघ्न, अरिमर्द्दन, धर्मदृग, यतिधर्मा, गृध्रभोजान्तक, आवाह और प्रतिवाह ये तेरह पुत्र और सुन्दरी नामक एक रूपवती कन्या हुई थी। कोई कोई गान्धिनी भी पढते हैं। किन्तु निरुक्ति नाम पर विवेचना करनेसे गान्दिनी पाठही उपयुक्त जान पड़ता है। गा भूमिं दायति शोधयति दै णिनि पृषोदरात् साधुः। २ गङ्गा। (त्रिकाण्ड०)

गान्दिनीसुत (सं० पु०) गान्दिन्याः सुतः, ६-तत्। १ भीष्म। २ कार्तिकेय। ३ अक्रूरादि। गान्दिनी देखो।

गान्दी (सं० स्त्री०) गां ददाति, दा-क-ङीप्। अक्रूरकी माता गान्दिनी।

"स्यमन्तकहृती प्राप्तो गान्दिपुत्रो महायशाः।" (हरिवंश ४० अ०)

गान्धपिङ्गलेय (सं० पु० स्त्री०) गन्धपिङ्गलायां अपत्यम् ढक्। शुभ्रादिभ्यश्च। पा ४।१।१२३। गन्धपिङ्गलका अपत्य, गन्धपिङ्गलकी सन्तान।

गान्धली—खानदेशके अन्तर्गत एक छोटा ग्राम। यह अमलनरसे ६ मील उत्तरपूर्वमें बसा है। लोकसंख्या प्राय: १०५३ है। पिण्डारियोंके नायक चीदजी भोंसलाने यह ग्राम कई वार लूटा था।

गान्धवी—कभालिया महालके अन्तर्गत कल्याणपुर उपविभागका एक ग्राम। यह वरतू नदीके उत्तरी तीर पर

और निष्क्रामणके समान क्रियाएं होती हैं तथा सातवें महीने अतीव समारोहके साथ अन्नप्राशन उत्सव होता है।

यवद्वीपकी मनुसंहितामें लिखा है कि यदि पति वाणिज्यके लिए समुद्रयात्रा करे, तो स्त्री १० वर्ष तक बाट देख कर द्वितीय पति ग्रहण कर सकती है। यदि अन्य किसी राज्यमें कार्यके लिए देशान्तर गया हो तो ४ वर्ष बाद, यदि धर्मोपदेश सुननेके लिए विदेश गया हो तो ६ वर्ष बाद तथा निरुद्दिष्ट हो तो चार वर्ष बाद दूसरा पति ग्रहण कर सकती है।

यवद्वीपके व्यवहारशास्त्रोंके पढ़नेसे स्वतः ही अनुमान होता है कि अब भी वहां हिन्दू-सभ्यताका सजीव निदर्शन विद्यमान है।

वर्तमानमें जावाके लोग गाने बजानेमें बड़े मशगुल रहते हैं। ये नाचने और गाने बजानेके लिए मशहूर हैं। नर्तकियोंकी संख्या अधिक नहीं हैं, पुरुष भी नाना प्रकारके नृत्य करते हैं। ये शेर, गैंडा सांड़, बुलबुल, मुरगा आदिके लड़ाईमें बड़ा आनंद मानते हैं। कभी कभी इटलीके कलिसियमचित्रकी तरह अस्त्रको डाका अभिनय होता है। इस उत्सवमें मृत्युदण्डके अपराधी तलवार हाथमें ले कर भीषण व्याघ्रके साथ युद्ध करते हैं; जो युद्धमें जीत जाता है, वह निरपराधी समझ कर छोड़ दिया जाता है।

यहां चौपड़ (चतुरङ्ग), ताश आदि खेल प्रचलित हैं। यहांके सम्भ्रान्त स्त्री पुरुष भी कपड़के साथ सर्वदा किरीच रखते हैं। आनंदोत्सवके समय ये शरीर पर हलदी पोता करते हैं।

वर्तमान सुलतान वंशीयगण हिंदू राजाओंसे ही अपनी उत्पत्ति मानते हैं। इसीलिए वे भारत युद्ध, रामायण और महाभारतका अभिनय कर अपनेको गौरवान्वित समझते हैं।

जावित्री (हिं० स्त्री०) जायफलके ऊपरका छिलका। यह बहुत सुगन्धित होती और औषधके काममें आती है। यह हलका, चरपरा, स्वादिष्ट, गरम, रुचिकारक और कफ खाँसी, वमन, श्वास, तृषा, क्रमि तथा विषनाशक है।

जाषक (सं० क्ली०) जस्यति मुच्यति सहस्थादिकं जस-ण्वुल, पृषोदरादित्वात् सस्य षत्वं। कालीयक, पीला चन्दन।

जाष्कमद (सं० पु०-स्त्री०) पक्षिविशेष, एक प्रकारकी चिड़िया।

जास (हिं० पु०) अफीममें मिलानेके लिये काटा हुआ पान जिससे मदक बनता है।

जासूस (अ० पु०) वह जो गुप्त रूपसे किसी बातका विशेषतः अपराध आदिका पता लगाता हो, भेदिया, मुखबिर।

जासूसी (हिं० स्त्री०) जासूसका काम।

जास्पति (सं० पु०) जायते जन-ड जाया: दुहितुः पतिः वेदे निपा०। जामाता, जंवाई, दामाद।

जास्पत्य (सं० क्ली०) जायाच पतिश्च जायापती तयोर्भावः कर्म वा पृषोदरादित्वात् ष्यञ्। जायापतीका कार्य, स्वामी स्त्रीका काम।

जाह—तद्धित प्रत्यय। अक्षि, ओष्ठ, कर्ण, केश, गुल्फ, दन्त, नख, पाद, पृष्ठ, भ्रू, मुख, शृङ्ग, इन शब्दोंके उत्तरमें जाह प्रत्यय लगता है। यथा—केशजाह प्रभृति।

जाहक (सं० पु०) दह ण्वुल, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ घोङ्घ, घोंघा। इसके पर्याय—गात्रसङ्कोची, मण्डली, बहुरूपक, कामरूपी, विरूपी और बिलावास है। घोंग देखो। २ जलौका, जोंक। ३ बिस्तर, बिछौना। ४ गिरगिट। ५ गोनाससर्प। ६ बिडाल।

ज़ाहिर (अ० वि०) प्रकट, प्रकाशित, जो छिपा न हो।

ज़ाहिरदारी (अ० स्त्री०) वह काम जिसमें सिर्फ ऊपरी बनावट हो।

ज़ाहिरा (अ० क्रि०-वि०) प्रत्यक्षमें, देखनेमें।

जाहिल (अ० वि०) अज्ञान, मूर्ख, अनाड़ी।

जाही (हिं० स्त्री०) १ चमेलीकी जातिका एक प्रकारका सुगन्धित फूल। २ एक प्रकारकी आतिशबाजी।

जाहुष (सं० पु०) राजभेद, एक राजाका नाम।

जाह्नव—जनपदविशेष, एक देशका नाम।

जाह्नवी (सं० स्त्री०) जह्नोरपत्यं स्त्री जह्नु-अण्-ङीप्। जह्नुतनया, गङ्गा। पहले जह्नु मुनिने कुपित हो कर गङ्गाको पी गये थे, बाद भगीरथके स्तवसे संतुष्ट हो आने पर उन्होंने अपने जानु (घुटने) से गङ्गाको बाहर निकाल

जलालाबाद, पूर्वमें सिन्धुनदी, उत्तरमें खांत और बुनिका पहाड़ एवं दक्षिणमें कालबाघ है।

गान्धार राज्य सर्वदा हिन्दु राजाओंके अधीन रहा। राजा अशोकके समय यहां बौद्धधर्म प्रचार हुआ था। चीन-परिव्राजकोंके भ्रमण-वृत्तान्तमें लिखा है कि यहां बुद्धदेवने बोधिसत्वरूपमें एक व्यक्ति पर दया कर अपना नेत्र उसे प्रदान किया था। उनके स्मरणार्थ अशोक राजाने गान्धारके नाना स्थानोंमें बौद्धस्तूप निर्माण किये थे। संगयुनने अपने भ्रमण-वृत्तान्तमें लिखा है कि अशोकके पुत्र धर्मवर्द्धन यहांके राजा रहे और यहांके मनुष्य हीनयान-बौद्धमतावलम्बी कहलाते थे।

खृष्टीय प्रथम शताब्दीमें प्रबल पराक्रान्त महाराज कनिष्क गान्धारमें राज्य करते थे, वे यहांके नाना स्थानोंमें बौद्धकीर्त्ति स्थापन कर गये हैं।

संगयुन ५२० ई०को गान्धारराज्यमें आकर अपने भ्रमण वृत्तान्तमें लिखा है कि 'येथा' (हूण) जातिने गान्धारके बहुतसे स्थानोंको विध्वंस कर डाला था और इसे अपने अधिकारमें लाकर लयलिकी (मालवराजको) प्रदान किया। सुंगयुनके समयमें यहां मालवराज राजत्व करते थे और पेशावर राजधानी रही। मालवराज बौद्धधर्मको नहीं मानते थे।

युएनचुयाङ्गने लिखा है कि गान्धार राज्यकी प्राचीन राजधानी पुष्कलावती थी। रामायणके मतसे भरतके पुत्र पुष्कलने अपने नाम पर यह नगर स्थापित किया। युएनचुयङ्गके समयमें कपिश राजाके अधीनमें एक शासन-कर्त्ता आकर गान्धार देश पर राज्य करते थे। चीन-परिव्राजकके वर्णनसे मालूम पड़ता है कि इस राज्यमें नारायणदेव, असङ्गबोधिसत्व, वसुबन्धु बोधिसत्व, धर्मत्रात, मनोर्हित और पार्श्व प्रभृति बौद्धशास्त्रकारोंका जन्म हुआ था।

मुसलमान जातिके अभ्युदयके समय यहांके बहुतसे हिन्दुओंने इस्लामधर्म ग्रहण किया था और बहुतसे अपने धर्मकी रक्षाके लिये भारतवर्षको भाग आये।

कन्दहार, काबुल, पेशावर, पुष्कलावती प्रभृति शब्द देखो।

गान्धारोऽभिजनोऽस्य। ३ पित्रादिक्रमसे गान्धार-देशवासी व्यक्तिमात्र। ४ गान्धारदेशके राजा। ५ सम-स्वरान्तर्गत तृतीय स्वर। सङ्गीतशास्त्रके मतमें मयूरका शब्द षड्ज, गौका शब्द ऋषभ, छागका शब्द गान्धार और क्रौञ्चका शब्द मध्यम माना गया है। भरतके मतानुसार नाभिसे वायु उठ कर कण्ठ और मस्तक तक चली गई है, इन समस्त स्थानोंसे नानाप्रकारकी पवित्र गन्ध वहन करती है, इसलिए इसका नाम गान्धार पड़ा है। सङ्गीतदर्पणमें लिखा है कि यह स्वर देवकुलसे उत्पन्न वैश्यजाति है। इसका वर्ण सुवर्णके सदृश पीत और उज्ज्वल है। करुणरसमें इसका प्रयोग उत्तम है। ६ स्वर ग्रामविशेष। इसका लक्षण यथा,—यदि गान्धार स्वर, रि और मकी एक एक श्रुति, ध, प की एक श्रुति और निषाद ध और स की एक श्रुति आश्रय करे तो उसे गान्धार ग्राम कहते हैं। यह ग्राम स्वर्गलोकमें प्रयुक्त होता है, पृथिवीमें इसका प्रयोग नहीं होता। ७ रागविशेष। सङ्गीतदामोदरके मतसे इसके मस्तकमें जटा, अङ्गमें भस्म भूषण, पहिरावेमें गेरुआ वस्त्र, देह क्षीण और नयन मुद्रित है। यह योगपट्टधारी और तपस्वी भैरवरागके पुत्र हैं। प्रातःकाल इसके गानेका समय है। (क्ली०) ८ गन्धरस, गन्धबोल। (पु०-स्त्री०) गान्धारेरपत्यं अञ्। ९ गान्धारिकी सन्तान। (त्रि०) गान्धारे भवः, तस्य राजा वा कच्छादिभ्योऽण्। १० गान्धारदेशजात, गांधारदेशमें उत्पन्न होनेवाला। (भारत १३।८४ अ०)

गान्धारक (सं० त्रि०) १ गन्धारदेशके मनुष्य। गन्धारदेशस्थित। "गांधारकैः समेतैः" (भारत ७।८६ अ०)

गान्धारपञ्चम (सं० पु०) रागविशेष, षाडव नामका एक राग। करुणरस और अद्भुत हास्यमें इसका प्रयोग किया जाता है। यह मङ्गलजनक समझा जाता है। इसका स्वरग्राम इस प्रकार है,—म प ध नि स ग म। इसमें ऋषभ नहीं होता; किन्तु प्रसन्न, मध्यम, अलङ्कार और काकलीका होना जरूरी है। इसका अपर नाम केवल-गान्धार भी है।

गान्धारभैरव (सं० पु०) रागविशेष, एक रागका नाम। यह देवगान्धारके मिलने पर होता है। यह प्रातःकालमें गानेसे अच्छा लगता है, तथा इसमें सातों स्वर लगते हैं। इसका स्वरग्राम यों है—ध नि स रि ग म प ध।

गान्धारराज (सं० पु०) गंधारस्य राजा समासान्त-टच्। गांधारके राजा सुबल। (भारत १।११०।१४)

जिगिन (हिं० स्त्री०) एक बहुत बड़ा जंगली पेड़। जिंगिनी देखो।

जिगीषा (सं० स्त्री०) जेतुमिच्छा जि-सन् भावे अ। १ जयेच्छा, विजय प्राप्त करनेकी कामना। २ प्रकर्ष, उत्तमता। ३ उद्यम, उद्योग।

जिगीषु (सं० त्रि०) जि-सन् तत उ। १ जयेच्छु, जो जीतनेकी इच्छा करता हो। २ उत्कर्ष लाभेच्छु, जो श्रेष्ठता या उत्तमता चाहता हो। ३ उद्यमशील, परिश्रमी, मिहनती।

जिगुरन (हिं० पु०) हिमालयमें गढ़वालसे हजारा तक मिलनेवाला एक प्रकारका चोटीदार चकोर। यह जधो, सिंगमोनाल और जेवर नामसे भी पुकारा जाता है। इसकी मादा बोदल कहलाती है।

जिग्यु (सं० त्रि०) जयशील, जीतनेवाला, फतहयाब।

जिघत्नु (सं० पु०) हन् पृषोदरादित्वात् साधुः। जिघांसा, मारनेकी इच्छा।

जिघत्सा (सं० स्त्री०) अत्तुमिच्छा अद्-सन घसादेशः भावे अ। भक्षणेच्छा, क्षुधा, भूख।

जिघांसक (सं० त्रि०) प्रतिहिंसक, मारनेवाला, कतल करनेवाला।

जिघांसा (सं० स्त्री०) १ हनन करनेकी इच्छा, कतल करनेका मन। २ प्रतिहिंसा, वध, कतल।

जिघांसी (सं० त्रि०) जिघांसाकारी, वध करनेवाला।

जिघांसु (सं० त्रि०) हन्तुमिच्छुः हन-सन्-तत उ। हननेच्छु, मारनेवाला।

जिघृक्षा (सं० स्त्री०) ग्रहीतुमिच्छा, ग्रह-सन्-भावे अ। ग्रहणेच्छा, पानेकी इच्छा।

जिघृक्षु (सं० त्रि०) ग्रह-सन् तत उ। ग्रहणेच्छु, पानेवाला।

जिघ्र (सं० त्रि०) जिघ्रति घ्रा कर्त्तरि श। १ घ्राणकर्त्ता, सूँघनेवाला। २ प्रत्ययविशेष, लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ्में घ्रा धातुके स्थानमें जिघ्र आदेश होता है।

"स्वामी निश्वसितेऽप्यसूयति; मनोजिघ्रः सपत्नीजनः।"

(साहित्यद० ७।४५)

जिङ्गि (सं० स्त्री०) मञ्जिष्ठा, मजीठ।

जिङ्गिनी (सं० स्त्री०) जिगि गतौ णिनि। शाल्मली जातिके एक वृक्षका नाम। जिगिनका पेड़। इसके पत्ते महुएके पत्तोंसे मिलते जुलते हैं। यह पहाड़ों और तराईके जंगलोंमें पाया जाता है। इसमें सफेद फूल लगते हैं। इसके फल बेरके बराबर होते हैं। इसके पर्याय—झिङ्गिनी, झिङ्गी, सुनिर्य्यासा और प्रमोदिनी है। इसके गुण—मधुर, उष्ण, कषाय, योनिविशोधन, कटु, व्रण, हृद्रोग, वात और अतीसारनाशक है।

(भावप्रकाश)

जिङ्गी (सं० स्त्री०) जिगि गतौ अच् गौरा० ङीष्। मञ्जिष्ठा, मजीठ।

जिजहोती (जझोति)—बुंदेलखण्डका एक प्राचीन नाम। इसका प्रकृत नाम जैजाकभुक्ति है। आबु रिहन और युएनचुयाङ्के ग्रन्थोंमें जझोति प्रदेश और उसकी राजधानी खजुराहुका उल्लेख है।

जिजिया (फा० पु०) १ कर, महसूल। २ मुसलमान अधिकारियों द्वारा प्रवर्तित अधीनस्थ मुसलमानोंके सिवा अन्य धर्मावलम्बी व्यक्तिमात्र पर लगनेवाला एक कर, मुण्ड कर।

आइन-ए-अकबरीमें लिखा है कि, खलिफ ओमरने मुसलमानोंके सिवा अन्य समस्त जातियों पर एक कर लगाया था। यह कर उच्चश्रेणीके व्यक्तियों पर ४८ दर्हाम, मध्यवित्त व्यक्तियों पर २४ दर्हाम और उनसे हीन व्यक्तियों पर १२ दर्हाम था।

भारतवर्षमें यह कर कबसे प्रवर्तित हुआ है, इसका कोई यथार्थ प्रमाण नहीं मिला। टाड साहबका अनुमान है कि, भारतवर्षमें पहले पहल बादशाह बाबरशाहने तमघाकरके बदले इसे लगाया था। किन्तु इससे भी बहुत पहले अलाउद्-दीनके समयसे इसका नामोल्लेख मिलता है। जीया-उद्-दीन बरनी और फिरिस्ता द्वारा लिखित पुस्तकोंमें अला-उद्-दीन और उनके काजी मूगिस उद्-दीनके कथोपकथनमें इस प्रकार लिखा है—अलाउद्दीनने कहा, "किस तरह हिन्दुओंसे वश्यता और कर वसूल करना धर्मसङ्गत है?" तुच्छहृदय काजीने उत्तर दिया "इमाम हानिफने कहा है कि, काफिरोंको मृत्युके बदले, मृत्युके सदृश भारी जिजिया करके भारसे प्रपीड़ित करना ही धर्मसङ्गत है। यह जिजिया

गाम्भिनी (सं० स्त्री०) गाम्भिनो देखो।

गाम्भो (सं० स्त्री०) गंध एव स्वार्थे प्रज्ञादित्वात् अण्। गंधोऽस्या अस्तीति अच् गोरादित्वात् ङीष्। १ कीट-विशेष। एक कीड़ा। २ तृणविशेष, एक घास।

गाफ—भारतवर्षके प्रसिद्ध अङ्गरेज सेनापति। ये आयरलेंड-वासी लार्ड गाफके पुत्र थे। १७७९ ई०को इनका जन्म हुआ था, और १७९१ ई०में ये अङ्गरेज सैनिक विभागमें प्रविष्ट हुए। थोड़े वर्षोंके पश्चात् ये अंगरेजी सेनाके साथ रह कर अफ्रीका तथा अमेरिकाके नाना-स्थानोंमें लड़े। १८०८ ई०को यूरोपके पेनिनसुला-युद्धमें ये भयानक रूपसे आहत हुए और १८३७ ई०में भारतके अंगरेजी सेनाविभागमें नियुक्त हो कर मन्द्राज पधारे, जहां वे महिसुरके सैनिक-विभागमें नियुक्त किये गये। १८४०-४१ ई०में जब अंगरेजी सेना चीनदेश भेजी गयी, गाफ साहब भी उस दलके सेनापति हो कर गये। उस युद्धमें अपनी दक्षता दिखला कर उन्होंने जी० सी० बी० और Baronet को उपाधि प्राप्त की और १८४३ ई०के ११ अगस्तको ये भारतवर्षके प्रधान सेनापतिके पद पर नियुक्त हुए। १८४३ ई०के २९ दिसम्बरको महाराजपुरमें महाराष्ट्रोंको १८४५ एवं १८४८ ई०में मुदकी, फिरोजसा और सोब्राउन नामक स्थानमें सिख लोगोंको इन्होंने पूर्ण रूपसे पराजित किया। विलायतके पार्लियामेंट महासभाने इनके वीरत्वसे तुष्ट हो कर इन्हें लार्डकी उपाधि दी। इष्ट इण्डिया कम्पनी और पार्लियामेंटने दो दो हजार पौण्ड इन्हें पेन्सन रूपमें दिया। १८४९ ई०को जब चिलियनवाला लड़ाईमें गाफके अधीन बहुतसी सेना नष्ट हो गई तो इंगलैंडसे सर चार्लस नेपियर भारतवर्षकी उन्हें सहायता देनेके लिये भेजे गये, किन्तु उनके पहले ही गाफ साहबने सम्पूर्ण सिखोंको १८४९ ई०को २२वीं फरवरीको पंजावके अन्तर्गत गुजरात नामक नगरमें पराजित कर दिया था। इस लड़ाईमें नेपियर साहबसे तनिक भी सहायता न लेनी पड़ी थी। थोड़े दिनोंके बाद वे देश लौट गये।

गाफ साहब अति साहसी पुरुष रहे। जेनेरल हैवलाकका कहना है कि विपद् आने पर उन्हें एक तरहका आनन्द मिलता था।

गाफ़िल (अ० वि०) १ बेसुध, बेखबर। २ असावधान, बेपरवाह।

गाब—एक पेड़का फल। (Diospyro sembryopteris) यह देखनेमें ठीक नारङ्गीके जैसा होता और ऊपरमें काला काला दाग रहता है। इसके भीतर आठ आठियां रहती है। इसकी गिरी आटायुक्त और स्वाद कषाय है। इस फलसे जो निर्यास बाहर होता है, वह उदरामय और अजीर्ण रोगमें विशेष उपकारी है। एक पाइण्ट जलमें दो ड्राम परिमाणका निर्यास मिलाकर पिचकारी द्वारा इस जलको प्रक्षेप करनेसे श्वेतप्रदररोग आरोग्य हो जाता है। एकसे पांच ग्रेन मात्राका निर्यास दिनमें तीन बार खानेके लिये दिया जा सकता है। इसकी छालके क्वाथसे बहुत दिनके अजीर्ण, उदरामय और स्वाभाविक दुर्बलतासे उत्पन्न रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके फलसे एक प्रकारका रस निःसृत होता जो नावके पेंदे तथा जालमें माँझा देनेके काममें आता है।

गावलीन (फा० स्त्री०) एक प्रकारका यन्त्र जिसके द्वारा जहाज पर पाल चढ़ाया जाता है।

गाविलगढ़—१ दाक्षिणात्यके बरार प्रान्तका एक पहाड़ी ज़िला। यह अक्षा० २१° १०´ तथा २१° ०´ ४६´´ उ० और देशा० ७६° ४०´ एवं ७७° ५३´ पू०के बीच एलिचपुरसे कोई १५ मील उत्तर-पश्चिम पड़ता है। मेलघाटके निकट 'वैराटशृङ्ग' ३९८७ फुट ऊंचा है। इस जिलेके पूर्व मल्हार और पश्चिम दुलघाट तथा बिङ्गाका गिरिसङ्कट है। एतद्भिन्न और भी कई नयी राहें हैं। पर्वतके निम्नदेशमें वन्यजात द्रव्य तथा काष्ठ विक्रयके लिये तङ्ग दुर्गम पार्वतीय पथ निकाला है। एलिचपुर जिलेके मेलघाट उपविभागमें ताप्ती और पूर्णा नदीके मध्यवर्ती पर्वतको उच्च भूमि पर गाविलगढ़ दुर्ग स्थापित हुआ है।

पहले यहां 'गौली' या 'गावली' लोग रहते थे। मालूम होता है, उन्होंने वह किला बनाया था। सम्भवतः गावली जातिके नाम पर ही यह स्थान तथा दुर्ग गाविलगढ़ कहलाया है। इस समय भी यहां उक्त जातीय बहुसंख्यक लोगोंका निवास है। कोई कोई कहता कि १४२० ई०को अहमद शाह बहमानीने वह दुर्ग निर्माण किया। काल पा करके यह किला निजाम राज्यमें मिल

३ सागर जिलामें कृषिकार्य हीन नागरिकोंके घर पर लगनेवाला एक कर।

जिजिबाई—जीजीबाई देखो।

जिजिबेगम—जीजीबेगम देखो।

जिजोविषा (सं० स्त्री०) जीवितुमिच्छा जीव सन ततः भावे अ। जीवनेच्छा, जीनेकी इच्छा।

जिजीविषु (सं० त्रि०) जीवितुमिच्छुः जीव-सन् तत उ। जीवनेच्छु, जो जीनेका इच्छा करता हो।

जिजूरि—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत पूना जिलेके पुरन्दरपुर उपविभागका एक नगर। यह अक्षा० १८° १६' उ० और देशा० ७४° १२' पू०में अवस्थित है। यह हिन्दुओंका एक तीर्थस्थान है। प्रत्येक तीर्थयात्रीको ᠀ आने कर स्वरूप देने पड़ते हैं।

जिझौतिया—१ कनौजिया ब्राह्मणोंकी एक शाखा। किसीके मतसे, यह शब्द यजुर्होता शब्दका अपभ्रंश है। ये बुन्देलखण्डके नाना स्थानोंमें वास करते हैं। काशीमें भी कुछ दिखलाई देते हैं। जजहोति देखो।

किसीके मतसे, बनारसके जिझौतिया ब्राह्मण अपनी उत्पत्तिका विवरण इस प्रकार कहते हैं—बुन्देलखण्डमें जझून नामके बघेलवंशीय एक राजा थे। उन्होंने बहुत जगहसे ब्राह्मणोंको बुला बुला कर उन्हें सम्मानपूर्वक अपने राज्यमें रक्खा और खर्चके लिए उनको बहुत धन-सम्पत्ति दान दी। कालान्तरमें वे ही ब्राह्मण एक पृथक् श्रेणीके हो गये और आश्रयदाताके नामानुसार जिझौतिया नामसे अपना परिचय देने लगे। यह उपाख्यान समीचीन नहीं मालूम होता।

चन्देरीमें एक प्रकारके वणिक् रहते हैं, जो अपनेको जिझौतिया वणिक् कहते हैं। इनका यह नाम यजुर्होता शब्दका अपभ्रंश नहीं हो सकता। इसीलिए अनुमान किया जा सकता है कि, जब जझौती या जिझौती नामका एक प्रदेश था और कन्नौजके नामानुसार कनौजिया मिथिलाके नामानुसार मैथिली, गौड़के नामानुसार गौड़ीय इत्यादि नाम पड़े थे, उस समय इस जझौती प्रदेशके नामानुसार वहांके ब्राह्मण और वणिकोंको जिझौतिया उपाधि हुई होगी। और भी देखनेमें आता है कि, ये जिझौतिया ब्राह्मण गङ्गा और यमुनाके दक्षिणप्रदेशमें, पश्चिमको वेत्रवती नदीसे पूर्वमें, मिर्जापुरके पास विन्ध्यवासिनी देवीके मन्दिर तक, नाना स्थानोंमें रहते थे। ये यमुनाके उत्तरमें या वेत्रवती नदीके पश्चिममें नहीं रहते। यूएनचुयाङ्ग आदिके विवरणोंके पढ़नेसे मालूम होता है कि, वह प्रदेश अर्थात् वर्तमानका सारा बुन्देलखण्ड पहले जिझौती नामसे प्रसिद्ध था। यदि जिझौतिया उपाधि प्रादेशिक विभाग न हो कर आचारानुष्ठानगत कोई विभाग या श्रेणी होती, तो जिझौतिया लोग जिझौती प्रदेशके सिवा अन्यत्र भी पाये जाते। परन्तु ये लोग जब जिझौतीमें ही आबद्ध हैं, तब उक्त अनुमान और भी दृढ़तर होता है।

जिझौतियाओंके आचार-व्यवहार आदि कनौजिया ब्राह्मणोंके समान हैं। नीचे इन लोगोंके कुछ प्रधान प्रधान गाँव, गोत्र और उपाधियाँ लिखो जाती हैं।

गांव	गोत्र	उपाधि।
रोरा	उपमन्यु	पाठक।
विनवेर	उपमन्यु	वाजपेयी।
शायपुर	काश्यप	पतैरीय।
बक्कव	काश्यप	पस्तोड़।
रुपनौवल	गौतम	चौबे।
मरई	गौतम	गङ्गेल।
हमीरपुर	शाण्डिल्य	मिश्र।
कौको	शाण्डिल्य	अजिरोय।
कौरिया	मौनस	मिश्र।
ऐंजोक	भरद्वाज	तिवारी।
उदासेन	भरद्वाज	दुबे।
पाट्रली	वात्स्य	तिवारी।
पिपरी	वशिष्ठ	नायक।

२ बुन्देलखण्डवासी वणिकोंकी एक शाखाका नाम।

जिज्ञापयिषु (सं० त्रि०) ज्ञापयितुमिच्छुः ज्ञा णिच् सन् तत उ। जनानेमें इच्छुक, जनानेवाला।

जिज्ञासन (सं० क्ली०) ज्ञा-सन् ततो ल्युट्। कथन, जाननेके लिये इच्छुक हो कर पूछना, पूछ ताँछ।

जिज्ञासमान (सं० त्रि०) जिज्ञास-शानच्। जिज्ञासु, जो पूछ ताँछ करता हो।

गाम्भीर (सं० त्रि०) गम्भीर-अञ्। गम्भीरद्वारा निर्वृत्त।

गाम्भीर्य (सं० क्लो०) गंभीरस्य भावः, गंभीर-यञ्। १ अगाधत्व, गंभीरता, गहरा।

"समुद्र इव गाम्भीर्ये" (रामायण १।१।१८)

२ अविकारित्व, विकारका अभावपन।

"निरस्तगाम्भीर्यमपास्तपुष्पकम्।" (माघ)

सात्त्विकगुणविशेष। भय, शोक, क्रोध और हर्षादि द्वारा कोई 'वकार नहीं होनेको गांभीर्य कहते हैं।

"विकारासहनाऽस्य इयं क्रोधभयादिषु।

भावेषु श्रीपलभार्ल्यं तद्गाम्भीर्य मिति स्मृतम्॥" (साहित्यदर्पण)

४ अचापल्य, दृढ़ता, धैर्य।

"गाम्भीर्य मनोहरं वपु" (रघु० ३।३२)

गाम्मन्य (सं० त्रि०) गामिव मन्यते खश् ततः अम्। जो अपनेको गोतुल्य समझे।

गाय (सं० पु०) गै भावे घञ्। १ गान।

"यथाविधानेन पठन् साम गायमविच्युतम्।" (याज्ञवल्क्य)

गाय (हिं० स्त्री०) १ गो, इसके नरको साँड वा बैल कहते हैं। २ बहुत सीधा सादा मनुष्य।

गायक (सं० त्रि०) गानकर्त्ता गानेवाला।

"तथा गायन्ति गायका।" (भारत १३।५३ अ०)

गायकसव—कसाइयोंकी एक जाति। ये सतारा और महाबलेश्वरमें पाये जाते हैं। कहा जाता है कि ये हाबसो गुलाम तथा काबुल पठानोंके वंशज हैं जिन्हें हैदर अलीने महिसुरमें गाय और भैंस कतल करनेके लिये नियुक्त किया था। ये १८०३ ई०में जेनेरल वेलेस्ली और १८१८ ई०में सर थोमस मनरोके साथ दाक्षिणात्यमें आये थे। ये आपसमें हिन्दुस्थानी भाषा और दूसरेके साथ मराठी बोलते हैं। ये बहुत कुछ यहांके मुसलमानोंसे मिलते जुलते हैं। ये परिश्रमी, क्रोधी और झगडालू होते हैं। इन्हें शराब पीनेकी आदत अधिक है।

गायकवाड—बड़ोदाके राजवंशका उपाधि या नाम। जो राजा रहता, इसी नामसे अभिहित हुआ करता है। 'सेन खास खेल शमशेर बहादुर' इनका दूसरा उपाधि है। फिर १८७७ ई० १ जनवरीको दिल्लीके दरबारमें इन्हें 'फरजन्द खास दौलत इङ्गलिशिया' उपाधि भी मिला था। अंगरेज सरकार गायकवाड़को २१ तोपोंकी सलामी देती है।

दामाजी गायकवाड़से इस वंशकी उत्पत्ति है। वह महाराष्ट्रराज साहूके अधीन कर्म करते थे। उनके सेनापति खण्डेराव धावाड़े बालापुरके युद्धमें इनका वीरत्व देख करके सन्तुष्ट हुए और इनको पदोन्नति करनेके लिये राजाको अनुरोध किया। उसीके अनुसार इन्होंने द्वितीय सेनापतिका पद और 'शमशेर बहादुर' उपाधि पाया था। दामाजीके मरने पर उनके भ्रातुष्पुत्र पिलाजी राव गायकवाड पद पर अभिषिक्त हुए। खण्डेरावके पुत्र त्र्यम्बकराव धावाड़े और पिलाजी दोनोंने मिल करके अन्यान्य महाराष्ट्र सामन्तोंके साथ पेशवाके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। १७३१ ई०को बड़ोदा नगरके निकट एक लड़ाई हुई। उसमें त्र्यम्बकराव पराजित और निहत हुए। पेशवाने उनके शिशु सन्तान यशोवन्त रावको सेनापतिके पद पर नियुक्त करके पिलाजी गायकवाड़को पहले हो जैसा सहकारी सेनापति बना 'सेन खास खेल' उपाधि दिया और यशोवन्त रावके प्रति गुजरातका समस्त कार्यभार अर्पण किया। शर्त यह थी कि राजस्वका प्राय: अर्धांश पेशवाको देना पड़ेगा। उस समय दिल्लीके बादशाह इस प्रदेशके कई एक राज्योंका कर पेशवाको देते थे। उन्होंने पिलाजीको कर्मच्युत करके योधपुरराज अभयसिंहको उस पद पर बैठा दिया। इसी झगड़ेमें पिलाजी गायकवाड़ने सम्राट्के विरुद्ध अस्त्र धारण किया और उनकी सेनाओंको युद्धमें परास्त करके अनेक स्थानों पर अधिकार कर लिया। अभयसिंहने देखा कि पिलाजी लोगोंके प्रियपात्र रहे, उनका लड़ाईमें जीतना सहज न था। यह विवेचना करके १७३२ ई०को गोपनमें दस्यु द्वारा उन्होंने पिलाजीको मरवा डाला। फिर उनके पुत्र दामाजी गायकवाड बनाये गये। इधर सेनापति यशोवन्त राव वयःप्राप्त होते भी कार्यभारवहनको असमर्थ थे। उसीसे गायकवाड-घराने पर भी वह भार डाला गया। १७३२ ई०को पिलाजीके भाई महाजीने बड़ोदा नगर अधिकार किया। उसी समयसे उक्त नगर गायकवाड वंशकी राजधानी बना हुआ है। ताराबाईने जब अपने पौत्र सताराके राजाको बालाजी बाजीराव पेशवाकी अधीनतासे छुड़ाया, दामाजी गायकवाड़ने उन्हें

जितात्मा (सं० त्रि०) जितः वशीकृत आत्मा इन्द्रियं मनो वा येन । १ जितेन्द्रिय । (पु०) २ श्राद्धभागार्ह देवभेद, एक देवता जिसे श्राद्धमें भाग दिया जाता है।

जिताना (हिं० क्रि०) जीतनेमें उद्यत करना।

जितामित्र (सं० त्रि०) जिता अमित्रो रागद्वेषादयो वाह्यावरणादयश्च येन, बहुव्री० । १ शत्रुपराजयकर्त्ता, दुश्मनको जीतनेवाला । २ कामादि रिपुजेता, कामादि शत्रुओंको जीतनेवाला । (पु०) ३ विष्णु ।
(भारत १३।१४९।६९)

जितामित्रमल्ल—नेपालके ठाकुरोवंशोय एक राजा । ये जगत्प्रकाशमल्लके पुत्र थे । इन्होंने १६८२ ई०में हरि-शङ्करदेवका एक मन्दिर और १६८३ ई०में एक धर्म-शाला बनवायी थी । इसके अतिरिक्त और भी इन्होंने बहुतसे मन्दिर आदि बनवाये थे।

जितारि (सं० पु०) जिता अरयो आभ्यन्तरा रागादयो वाह्याश्च रिपवो येन, बहुव्री० । १ बुद्धदेवका नाम। २ हस्ताहत्पिता । ३ अविचत राजाके पुत्रका नाम। (त्रि०) ४ शत्रुजित्, दुश्मनको जीतनेवाला । ५ कामादि रिपुजेता, कामादि शत्रुओंको जीतनेवाला।

जिताष्टमी (सं० स्त्री०) जिता पुत्रसौभाग्यदानेन सर्वो त्कर्षेण स्थिता या अष्टमो, कर्मधा० । गौणाश्विन कृष्णा ष्टमी, इसका दूसरा नाम जीमूताष्टमी है। इस व्रतमें स्त्रियां पुत्र-सौभाग्यकी कामना कर आंगनमें पुष्करिणी बना कर प्रदोषके समय शालिवाहनराजपुत्र जीमूत-वाहनकी पूजा करती हैं। अष्टमी जिस दिन प्रदोष-व्यापिनी होती है, उस दिन हो यह व्रत किया जाता है। यदि दो दिन प्रदोषव्यापिनी रहे, तो दूसरे दिन करना विधेय है। यदि कोई दिन प्रदोष न हो, तो जिस दिन उदय हो अर्थात् जिस दिनकी तिथिमें सूर्य उदित हो, उस दिन करना चाहिये। जो स्त्री इस जिताष्टमी तिथिमें अन्न खाती है, वह निश्चयसे मृतवत्सा होती है और उसे वैधव्य भोगना पड़ता है। (भविष्योत्तर) और जो इस अष्टमीके दिन ग्रामकी जीमूतवाहनकी पूजा करती हैं, उन्हें हर तरहका सौभाग्य लाभ होता है। कभी भी मृतवत्सा दोष नहीं होता और न वे वैधव्यदुःख हो भोगती हैं।

जिताहव (सं० पु०) जितः शत्रुराहवे येन, बहुव्री० । विजयी, वह जिसने लड़ाई जीती हो।

जिताहार (सं० पु०) जितः आहारः येन, बहुव्री० । आहारजेता, वह जिसने आहार जीत लिया हो, समाधि-से जिसे भूख न लगती हो।

जिति (सं० स्त्री०) जि-क्तिन् । १ जय जीत । २ लाभ।

जितुम (सं० पु०) मिथुनराशि ।

जितेन्द्रिय (सं० त्रि०) जितान् वशीकृतानीन्द्रियानि श्रोत्रादीनि येन, बहुव्री० । १ इन्द्रियजयकारी, जिसने इन्द्रियोंको जीत लिया है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये विषय जिनको विमोहित न कर सकें, वे हो जितेन्द्रिय हैं। (मनु १० अ०)

पातञ्जलमें इन्द्रियजयका विषय इस प्रकार लिखा है—आत्मामें विशुद्धता होने पर सत्त्वगुण प्रकाशित होता है, उस समय आत्मा विशुद्ध है अर्थात् सत्त्वगुणाक्रान्त होनेसे उसमें फिर रजः और तमोगुण नहीं आ सकते। कारणके सिवाय कार्य असम्भव है, इस न्यायसे चित्तशुद्धिके कारण रजः और तमः सत्त्वगुणाक्रान्त होने पर तमः और रजः चित्तचाञ्चल्य आदि अपने धर्मोंका प्रकट नहीं कर सकते, वास्तवमें सत्त्वगुणको हो सहायता करते हैं। उस समय सर्वदा मनमें प्रीतिका अनुभव होता है। कभी भी किसी तरहका खेद नहीं होता। नियत विषयमें चित्तको एकाग्रता होती है अर्थात् अन्तःकरण (बुद्धि, अहङ्कार और मन) सर्वदा विषयोंमें अनुरक्त रहता है। कभी भी विषयान्तरमें चित्तका अनुराग नहीं होता। उस समय इन्द्रियें पराजित हो जाती हैं, इस जितेन्द्रिय अवस्थाके होने पर आत्मदर्शनकी शक्ति आ जाती है। इस प्रकारकी अवस्था हो यथार्थमें जितेन्द्रिय पदवाच्य है। (पात० सू० ४१) २ शान्त, समवृत्तिवाला। (पु०) ३ कामवृद्धिवृक्ष । (हेम०)

जितेन्द्रियता (सं० स्त्री०) जितेन्द्रियस्य भावः जितेन्द्रिय-तल्-टाप् । इन्द्रियजयका कार्य ।

जितेन्द्रियाह्व (सं० पु०) जितेन्द्रियं आह्वयते स्पर्द्धते आ-ह्वे-क । कामवृद्धिवृक्ष, एक बड़ा झाड़। कर्णाटक देशमें इसे 'कामज' कहते हैं।

प्रस्तुत थे। फतेहसिंहने पेशवाकी अभिसन्धि भली भांति समझ ली थी। वह जानते थे—पेशवा किसी समय उन्हींको आक्रमण करके विपर्यस्त कर डालेंगे। १७७२ ई०को उन्होंने बम्बईमें अंगरेज सरकारके पास सन्धिका प्रस्ताव करके भेजा। किन्तु विलायतके 'कोर्ट अव डिरेक्टर्स'ने उक्त प्रस्ताव पर अपनी असम्मति प्रकाश की थी। परन्तु १७७३ ई० १२ जनवरीको भडोंचके राजस्व सम्बन्धमें एक सन्धि हो हो गयी।

उधर नारायण रावके प्राणविनाशके बाद राघव पेशवा हुए और गोविन्द रावको 'सेन खास खेल' उपाधि मिला था। इस बार गोविन्द रावका साहस बढ़ गया। वह फतेहसिंहके हाथसे बडोदा राज्य निकाल लेने गुजरातका चले थे। वहां पहुंचते ही गोविन्द रावने बडोदा अवरोध किया। राघवने नरोत्तमदास नामक किसी व्यक्तिको गोविन्दरावकी ओरसे सूरतके दक्षिण प्रदेशोंका राजस्व चुकानेको रख लिया था। फतेहसिंह जा करके उसको पकड़ लाये। राघव उनीसे गोविन्द रावके साथ घेरा डालनेमें मिल गये। इधर फतेहसिंहने होलकर और सेंधियाकी फौज ले करके राघवकी फौज पर हमला किया था। राघव पराजित हो करके भाग खड़े हुए। गोविन्द राव खण्डेराव प्रभृतिने प्रथमतः कप्पडवञ्ज और फिर पहलानपुरको पलायन करके आत्मरक्षा की। अखीरको राघवने अंगरेजोंका सहारा पकडा। फतेहसिंह गायकवाड़ देखो। १७८० ई० २० जनवरीको फतेहसिंहके साथ एक सन्धि हुई। पीछे उसके बातिल ठहरने पर १७८२ ई०को दूसरी सन्धि की गयी। १७८९ ई० ११ दिसम्बरको फतेहसिंहके मरने पर दामाजीके अपर पुत्र मानाजी राज्यभार ग्रहण करके पहलेकी तरह सभाजीके नाम पर राज्य चलाने लगे। १७९३ ई० अगस्त मासको उनके मरने पर पूर्वोक्त गोविन्दराव गायकवाड बडोदाके सिंहासन पर बैठे थे। १८०० ई०के सितम्बर महीने गोविन्द राव भी मर गये। गोविन्द रावके ११ पुत्र रहे। उनमें जेष्ठपुत्र आनन्द राव सिंहासनारूढ हुए। किन्तु उनमें वैसी बुद्धि न थी। सहजमें ही गोविन्द रावके दूसरे पुत्र कानोजी राव राज्यकी सभी क्षमता अपने हाथमें लेने लगे। बड़ोदा राज्यके पूर्वतन मन्त्री रावजी अप्पाजीने आनन्द रावकी सहायता करके कानोजी रावके हाथसे सरकारी खजाना निकाल लिया था। उभय पक्षोंमें संग्राम होने लगा। रावजीकी ओर उनके भाई बाबाजी, उनके अधीन गुजराती अश्वारोही दल और सात हजार अरबी सेना थी। उस समय मङ्गल पारिख और सामुएल विचर नामक दो कारिन्दे ज्यादा सूद पर रुपया दे उक्त सेनादलको पालन करते थे। सिपाही तनख्वाह पाने पर अपना देना चुकाते थे। सुतरां वह कारिन्दोंके विशेष वशीभूत रहे। यह दोनों कारिन्दे बाबाजीकी ओर रहनेसे आनन्द रावका ही पक्ष बलवान् हुआ। उधर कानोजीका पक्ष भी नितान्त सहायशून्य न था। उनके पितृव्य मल्हार राव करी नामक स्थानके जागीरदार रहे। उन्होंने यह प्रतिश्रुत होने पर कानोजीका पक्ष लिया कि कानोजी राजा होने पर उनकी बाकी मालगुजारी छोड़ देंगे और आगे कोई कर न लेंगे उन्होंने अविलम्ब हो सैन्य सङ्गठन करके बडोदा राज्य आक्रमण किया। आनन्दरावकी ओरसे रावजीने अनन्योपाय हो करके बम्बईको अंगरेज गवर्नमेण्टको लिख भेजा—मल्हार रावके विपक्षमें यदि अंगरेज साहाय्य करें तो हम ५ दल अंगरेजी फौजका खर्च देनेको तैयार हैं। बम्बईके शासनकर्ता डनकन साहबने इस पर भारत-गवर्नमेण्टकी अनुमति मांगी थी। परन्तु बहुत दिनों अपेक्षा करने पर भी जब कोई मतामत न मिला, तो अखीरमें उन्होंने मेजर अलगजेण्डर वाकरको सेनापति बना १६०० सिपाहियोंके साथ रवाना किया और उनको कह दिया, पहले वह निबटारेकी चेष्टा करेंगे, निबटारेका सुभीता न पड़नेसे रावजीके साथ मल्हार रावसे लड़ेंगे। मल्हार रावने भी गतिकको समझ बूझ करके प्रथमतः बहुत भयभीत जैसे बन गये और अधिकृत स्थानोंको छोड़ देने पर तैयार हुए। शान्तिकी बात चल रही थी कि मल्हार रावने एकाएक १७ मार्चको अंगरेजी फौज पर आक्रमण किया। परन्तु अन्तमें उन्होंको पराजित हो करके भागना पडा। इस लड़ाईमें अंगरेजोंके ५० आदमी मारे गये। फिर मल्हार राव चुपके चुपके बाबाजीका कितना ही सेना-

२ उक्त सम्प्रदायके अन्य एक ग्रन्थकर्त्ता। विक्रम सम्वत् १४१में ये विद्यमान थे।

३ श्वेताम्बर, जैन खरतरगच्छ सम्प्रदायभुक्त जिनेश्वर के शिष्य, कोई इन्हें बुद्धिसागरका शिष्य बताते हैं। इन्हों-ने सम्वेगरङ्गशाला नामके एक ग्रन्थकी रचना की है।

४ खरतरगच्छ, जिनदत्तके शिष्य, इनका जन्म सम्वत् ११९७ और मृत्यु सम्वत् १२२३ है। इन्होंने सं० १२०३ में दीक्षा और सं० १२११में आचार्यपद पाया था।

५ नेमिचन्द्रके शिष्य, आम्रदेवके गुरु।

६ खरतरगच्छ, जिनप्रबोधके शिष्य। जन्म सं० १३२६ मृत्यु सं० १३६७, दीक्षा सं० १३३२ और पदमहोत्सव सं० १३४१ है। इन्होंने चारराजाओंको जैन धर्मकी दीक्षा दी थी। इनका विरुद कलिकाल-केवलिन् है। इन्होंने तरुणप्रभको भी दीक्षित किया था।

जिनचन्द्रगणि—उकेशगच्छभुक्त ककसूरिके शिष्य और नवपदप्रकरण नामक श्वेताम्बर-जैन-ग्रन्थके प्रणेता। ये पीछे देवगुप्त सूरिके नामसे परिचित हुए हैं, इस नामसे १०१३ सम्वत्में इन्होंने अपने नवपदकी श्रावकानन्द नामकी एक टीका रची है। बादमें इन्होंने अपना नाम कुलचन्द्र भी रक्खा था।

जिनचन्द्र सूरि (४र्थ)—खरतरगच्छसम्प्रदायके एक प्रसिद्ध श्वेताम्बर जैनाचार्य। इन्होंने शास्त्रविचारमें सबको परास्त कर दिया था। इनकी ख्याति सुन कर एकदिन बादशाह अकबरने इनसे भेंट की और इनके सद्गुणों से मोहित हो कर इन्हें ७ 'सत्तमश्रीयुगप्रधान' यह उपाधि दी। इनकी प्रार्थनाके अनुसार अकबरने आषाढ़ मासमें ८ दिन तक प्राणिहत्या और काम्बे उपसागरमें (स्तम्भतीर्थ-समुद्रमें) मछली पकड़ना बन्द करवा दिया। अकबरके आदेशसे ये १६५२ सम्वत्में माघकी शुक्ला द्वादशीको योगबलसे पञ्चनद पार हुए थे तथा इन्होंने ५ पीरोंको आविर्भूत किया था। जिनसिंह सूरि नामके इनके एक शिष्य थे। उन्हींके परामर्शसे अणहिलवाड़-पत्तनमें वाड़ीपुर पार्श्वनाथका मन्दिर बनाया गया था।

ज़िनत्-उन्-निसा बेगम-१ बादशाह आलमगीरकी कन्या। १७१० ई०में इनकी मृत्यु हुई। इन्होंने दिल्लीके अन्त-र्गत शाहजहानाबादके दरीबागञ्ज नामक स्थानमें ज़िनत्-उल्-मसजिद निर्माण कराई थी। इसी जगह इनकी कब्र है।

२ बङ्गालके नवाब मुर्शिदकुलिखाँकी एकमात्र कन्या। मुर्शिदकुलिखाँ जब हैद्राबादके दीवान थे, तब शुजाखाँके साथ जिनत्-उन् निसाका ब्याह हुआ था। शुजा दाक्षिणात्यके अन्तर्गत बुरहानपुरके रहनेवाले थे। मुर्शिद-कुलिने उन्हें उड़ीसाका सहकारी सूबेदार बना दिया, किन्तु थोड़े दिन बाद ससुर जमाईमें झगड़ा उठ खड़ा हुआ।

शुजाने जब विलासिताके नशेमें तर हो कर दुर्नीति-का आश्रय लिया, तब जिनत उन-निसाने स्वामीके उद्धार के लिए काफी कोशिश की, किन्तु वे सफलता न पा सकीं। आखिर वे स्वामीसे सम्बन्ध तोड़ कर अपने पुत्र सरफराजके साथ मुर्शिदाबाद चली आईं।

मुर्शिदकुलिखाँकी मृत्युके बाद शुजाने दिल्लीसे सनद ले कर ससैन्य मुर्शिदाबादमें प्रवेश करनेकी कोशिश की। यह संवाद पा कर सरफराज उन्हें बाधा देनेके लिए तैयार हुए, किन्तु माताके कहनेसे रुक गये और पिताकी अभ्य-र्थना पूर्वक घर ले आये। शुजाने जिनत-उन निसासे क्षमा माँगी। स्वामी स्त्रीमें पुनः मेल हो गया।

शुजाखाँकी मृत्युके बाद सरफराज नवाब हुए, किन्तु शीघ्र ही अलीवर्दीखाँने मुर्शिदाबाद अधिकार कर लिया। अलीवर्दीखाँ बड़े शिष्ट थे, वे स्वयं ज़िनत्-उन् निसाके पास गये और सिर झुका कर कहने लगे—"जब तक आप जीवित हैं तब तक मेरा सिर आपके सामने झुका ही रहेगा।" अलीवर्दीखाँके जमाई नवाजिस मह-म्मदने नवाब हो कर ज़िनत-उन-निसाको धर्म-माता कहा और अपने प्रासादमें रक्खा। घसीटी बेगम सर्वदा उन्हें सुखी रखनेकी कोशिशमें रहती थीं। ये और कितने दिनों तक जीवित रहीं थी, इसका कहीं उल्लेख नहीं है।

जिनतूर—हैदराबाद राज्यके परभानी जिलेका उत्तर तालुक। इसका क्षेत्रफल ८५२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८७७८७ है। इसमें २८७ गांव बसते हैं। जिनतूर सदरकी आबादी कोई ३६८८ है। मालगुजारी लग-भग ३ लाख २० हजार रुपया देनी पड़ती है। उत्तरमें पूरन और दक्षिणमें दूदन नदी है।

हियोंने उन्हें पकड़ करके अंगरेजोंके हाथ सौंप दिया। अंगरेजोंने उन्हें बम्बईके दुर्गमें कैद करके रखा था। वहीं मल्हारराव मर गये।

अंगरेजोंके साहाय्यसे आनन्दराव गायकवाड़ बड़ोदा राज्य शासन करने लगे। रावजी अप्पाजी मल्लो, बाबाजी सेनापति और लेफटिनेण्ट कर्नल वाकर अंगरेजो रेसीडेण्ट वा पोलिटिकल एजेण्ट थे। उस समय राज्यका आय ५५ लाख, परन्तु व्यय ८२ लाख रुपया रहा। सुतरां ऋणपरिशोधका कोई उपाय देख न पड़ता था।

१८०५ ई०को अंगरेज गवर्नमेण्टने गायकवाड़के साथ एक नयी सन्धि की। पहले वह २००० फौज रख सकते थे, इस सन्धिके अनुसार ३००० पैदल और गोलन्दाजोंकी एक फौज रखने लगे। और उनके व्ययनिर्वाहको ११७०००० रु० आयकी सम्पत्ति* अलग की गयी। चौरासी, चकली और कैरा प्रदेश तथा सूरतकी चौथ और सिवा इसके १२ लाख ८५ हजार रुपयेकी जायदाद कर्ज अदा करनेके लिये अंगरेज गवर्नमेण्टको दी गयी। सन्धिके २ वर्ष पीछे अंगरेज गवर्नमेण्टने देखा कि फौज रखनेके लिये जो सम्पत्ति निर्दिष्ट थी, उससे व्यय न निकलता रहा। उसीसे गायकवाड़को और जायदाद छोड़नी पड़ी। १८०८ ई०को मालूम हुआ कि ऋण जैसाका तैसा रहा और सूद चढ़ता था। सन्धिमें किसीको सुभीता न पड़ा। अंगरेज गवर्नमेण्ट सम्पत्ति ले करके फौजका खर्च चला न सकी, गायकवाड़का भी कर्ज बना रहा। १८११ ई०को रेसीडेण्ट मेजर वाकरके कामसे छुट्टी लेने पर कप्तान रिवेट कार्नाक रेसीडेण्ट हुए। १८१२ ई०को बम्बई सरकारने प्रस्ताव किया था गायकवाड़के एक करोड़ रुपया देने पर उनकी समस्त अन्य सम्पत्ति लौटा देनी चाहिये। परन्तु इस प्रस्तावमें गवर्नर जनरल सम्मत न हुए। १८१३ ई०को बड़ोदेमें भयानक दुर्भिक्ष पड़नेसे राजस्वकी तहसीलमें बड़ी अड़चन लगी। उससे ऋण और भी बढ़ा था। दूसरा वर्ष पेशवाके बारेमें दूसरा झगड़ा उठ खड़ा हुआ। इससे पहले अहमदाबाद और काठियावाड़ प्रदेश ४॥ लाख रुपया सालाना आमदनीकी जायदाद मान करके कई वर्षके लिये पेशवाको दी गयी थी। निर्दिष्ट काल शेष होने पर पेशवाने फिर उसको लिखा पढ़ी करा लेनी चाही। गायकवाड़के पक्षसे कहा गया कि उन्होंने गायकवाड़के अधिकृत भड़ोचकी मालगुजारी नहीं दी और गायकवाड़से बिना पूछे ही अंगरेज गवर्नमेण्टको पहुंचा दी। दोनों ओरका हिसाब साफ करनेके लिये गायकवाड़की ओरसे गङ्गाधर शास्त्री पूनेको भेजे गये। गङ्गाधर शास्त्री देखो। अंगरेज गवर्नमेण्ट उनकी रक्षाके लिये दायी हुई थी। गङ्गाधरके निहत होने पर अंगरेजोंने पेशवाको लिखा कि वह हत्याकारी त्र्यम्बकजी अङ्गियाको उनके हाथ सौंप देते। अनिच्छा रहते भी पेशवाने उन्हें पकड़ करके उपस्थित किया। किन्तु त्र्यम्बकजी रक्षियोंके हाथसे निकल सैनासंग्रहपूर्वक पेशवाके साहाय्यसे युद्धका उद्योग करने लगे। १८१७ ई०को अङ्गरेजोंके पूना घेरने पर पेशवाने सन्धिका प्रस्ताव किया। अङ्गरेजी पक्षपर एलफिनष्टोन साहबके प्रस्तावसे सन्धि हुई।

इतने दिनों तक पेशवा महाराष्ट्रोंके अग्रणी जैसे समझे जाते थे, अब उस सम्मानसे वञ्चित हुए। स्थिर हो गया कि उनको सब मांगें चुकानेके लिये उन्हें प्रति वर्ष ४ लाख रुपया दिया जावेगा। वह फिर गायकवाड़ राजमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप न कर सकेंगे। अहमदाबाद पिछली सन्धिके अनुसार उन्हींके पास रहेगा। काठियावाड़ प्रदेशका राजस्व अंगरेज गवर्नमेण्टको देना पड़ेगा।

पेशवाके साथ सन्धि हो जाने पर गायकवाड़से इस शर्त पर अंगरेजी गवर्नमेण्टकी दूसरी सन्धि हुई कि कोई बड़ा युद्ध उपस्थित होने पर उभयपक्षको सैन्य दे करके एक दूसरेका साहाय्य करना पड़ेगा। गायकवाड़के ३००० सवार अंगरेजोंके अधीन रहेंगे। दोनो ओरके कैदी परस्पर छोड़ देने पड़ेंगे। अंगरेज गवर्नमेण्ट गायकवाड़के साहाय्यकी ओर भी सैन्यसंख्या बढ़ावेंगी। उसके व्ययनिर्वाहार्थ गायकवाड़ने अंगरेज गवर्नमेण्टको गुजरातका अंश छोड़ दिया। फिर अंगरेजो

* इस सम्पत्तिमें ढोलकका ४५००००, नड़ियाद १७५०००, बीजापुर १३००००, मातर १३००००, मुधा ११००००, करीतलपा २५०००, विमकठोड़ २००००, और काठियावाड़ी बराट ११००००, था।

सूरिपद १७८० में और मृत्यु १८०४ सम्वत्में हुई थी। इनका दीक्षाका नाम भक्तिक्षेम था। ये जिनसौख्य सूरिके शिष्य और खरतरगच्छीय जिनलाभ सूरिके गुरु थे।

जिनभद्र—१ खरतरगच्छीय जिनेश्वरके शिष्य, सुरसुन्दरी काव्यके रचयिता। इनका मूल नाम ध्यानेश्वर मुनि था।
२ जिनदत्त खरतरगच्छके शिष्य, इनका जन्म जिनचन्द्रके वंशमें हुआ था।

जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण—इन्होंने महाभाष्यतमें संक्षिप्त जिनकल्प तथा वृहत्संग्रहिणी नामका एक ग्रन्थ लिखा है। ६४५ सम्वत्में इनको मृत्यु हुई।

जिनभद्र मुनीन्द्र—१ शालिभद्रके शिष्य। इन्होंने सं० १२०४ में अर्द्धमागधी भाषामें 'मालापरगणकहा' नामक एक श्वेताम्बर जैन ग्रन्थ लिखा है। इनकी मुनीन्द्र उपाधि थी।

जिनभद्रसूरि—जिनराज सूरिके शिष्य, इनका सूर पद था।

जिनमुनि—एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकार। इन्होंने प्राकृत भाषामें त्रिभङ्गी नामका एक ग्रन्थ रचा है। संस्कृतको नागकुमारषट्पदी, जिसकी कान्यकुब्ज भाषामें टीका है—वह भी इन्हींकी बनाई हुई है।

जिनयोनि (सं० पु०) मृग, हरिण।

जिनरङ्ग सूरि—सौभाग्यपञ्चीसी नामक जैन ग्रन्थके रचयिता।

जिनरत्न सूरि—एक श्वेताम्बर जैन आचार्य। जिनराज सूरिके शिष्य और जैनचन्द्र सूरि खरतरगच्छके गुरु। १६९९ सम्वत्में इन्होंने सूरिपद पाया था। १७१२ सम्वत्में इनका देहान्त हुआ। इनका पहलेका नाम रूपचन्द्र था, इनकी माताने भी इनके साथ दीक्षाली थी।

जिनराज सूरि—१ श्वेताम्बर जैनोंके एक आचार्य। १६४७ सम्वत्में जन्म और १६९९ सम्वत्में पटना नगरमें इनकी मृत्यु हुई। दीक्षाके समय राजसमुद्र नाम हुआ। ये जिनसिंहके शिष्य और जिनरत्नके गुरु थे। १६७५ सम्वत्में इन्होंने शत्रुञ्जयचैत्यमें ५०१ ऋषभ और अन्यान्य जिनोंकी मूर्तियां स्थापित की थीं। इन्होंने जैनराजी नामकी नैषधकाव्यकी एक वृत्ति तथा और भी कई ग्रन्थ लिखे हैं।

२ जिनवर्द्धनके गुरु, सप्तपदार्थी टीकाके प्रणेता। १४७५ सम्वत्में इनकी मृत्यु हुई।

जिनरूपताक्रिया—जैनोंकी त्रेपन क्रियाओंमेंसे चौबीसवीं क्रिया। यह क्रिया दीक्षाद्यक्रियाके बाद और मौनाध्ययनक्रियासे पहले होती है। इसमें नग्न होकर मुनिका रूप धारण किया जाता है।

"त्यक्तचेलादि संगस्य जैनीं दीक्षामुपेयुषः।
धारणं जातरूपस्य यत्तत्स्याज्जिनरूपता॥"

अर्थात्—वस्त्र आदि सम्पूर्ण परिग्रहको त्याग कर मुनि-दीक्षा धारणपूर्वक यथाजात (जिस रूपमें जन्म लिया था, नग्न) रूपको धारण करना ही जिनरूपताक्रिया है।

जिनलाभ—एक श्वेताम्बरजैनाचार्य। १७८४ सम्वत्में जन्म, १७९६में दीक्षा, १८०४में पदस्थापन और १८३५ सम्वत्में इनकी मृत्यु हुई थी। इनका पहलेका नाम लालचन्द्र था और दीक्षासमयका लक्ष्मीलाभ। इनका जन्म बीकानेरमें हुआ था।

१८३३ सम्वत्में इन्होंने श्रीमनिराख्यविन्दिरमें आत्मबोध नामक ग्रन्थ लिखा है। ये १८१९ सम्वत्में ७५ यतियोंके साथ गौड़ी पार्श्वप्रभुके मन्दिरमें तथा १८२१ में ८५ साधुओंके साथ अर्व्वुद तीर्थमें उपस्थित हुए थे।

जिनवर्द्धन सूरि—जिनराज सूरिके शिष्य। इन्होंने भागवतालङ्कार टीका और सप्तपदावली टीकाकी रचना की है।

जिनवल्लभ—अभयदेव सूरिके शिष्य और जिनदत्त सूरि (खरतरगच्छ)-के गुरु। इनके बनाये हुए बहुतसे ग्रन्थ हैं, जिनमेंसे पिण्डविशुद्धिप्रकरण, षड़शीति, कर्मग्रन्थ, कर्मादिविचारसार और वर्द्धमानस्तव—ये प्रधान हैं। ११६७ सम्वत्में देवभद्राचार्य द्वारा इन्हें सूरिपद प्राप्त हुआ था। परन्तु इसके ६ माह बादही इनका प्राणान्त हो गया। इनके शिष्य रामदेव अपने (११७३ सम्वत्में) बनाये हुए षड़शीतिकचूर्णिमें लिखा है कि, जिनवल्लभने चित्रकूटके वीरचैत्यके प्रस्तर पर अपने चित्र-काव्य अङ्कित किये हैं तथा उस चैत्यके दरवाजों पर दोनों ओर धर्मशिक्षा और सङ्घपट्टक लिखे हैं। इनमें जिनवल्लभप्रशस्ति अथवा अष्टसप्ततिका भी खुदी हुई है।

देनेका भय दिखलाया गया, परन्तु किसी बात पर उनकी आंख न उठी। अन्तमें जब १८३८ ई०को गवर्नमेण्टने सताराके राजा प्रतापसिंहको सिंहासनसे उतारा, शिवाजी न जाने क्या समझ वश्यता स्वीकार करके दो एकको छोड़ सब बातोंमें गवर्नमेण्टकी आज्ञाके अनुसार कार्य करने पर अङ्गीकृत हुए। अंगरेज गवर्नमेण्टने उस पर राजी हो करके पिपलावदका अंश छोड़ दिया और जमानतके तौर पर रखा हुआ १० लाख रुपया भी प्रत्यर्पण किया। १८४७ ई० दिसम्बर मासको शिवाजीका मृत्यु हो गया। उनके ज्येष्ठपुत्र गणपति राव गायकवाड़ पद पर प्रतिष्ठित हुए। इनके राजत्वकालमें कोई बड़ी बात नहीं पड़ी। प्रजाकी सुखस्वच्छन्दता पर उनकी दृष्टि कम थी। वह अपने विलासमें ही काल यापन किया करते थे। १८५६ ई०को बम्बई बड़ोदा रेलवेके लिये उन्होंने अंगरेज गवर्नमेण्टको जमीन दी। शर्त यह थी—वह रेलवे खुलने पर गायकवाड़की आमदनी रफ़तनीका जो महसूल घटेगा, पूरा कर दिया जावेगा। प्रतिवर्ष उसका हिसाब लगता और घाटा पूरा करना पड़ता है। १८५६ ई० १८ नवम्बरको गणपति रावका मृत्यु हुआ। सन्तान न रहनेसे उनके कनिष्ठ खण्डेरावने सिंहासन पर आरोहण किया था। खण्डेराव गायकवाड़ देखो। अंगरेज गवर्नमेण्टने उन्हें जी० सी० एस० आई० (G.C.S.I.) उपाधि दिया। १८७२ ई० २८ नवम्बरको खण्डेरावके मरने पर उनके भ्राता मलहार राव गायकवाड़ बड़ोदामें सिंहासनारूढ़ हुए। खण्डेरावकी विधवा-पत्नी। यमुना बाई उस समय गर्भवती थीं। अंगरेज गवर्नमेण्टने मलहार रावको कह रखा—यदि यमुना बाईके गर्भसे पुत्र सन्तान उत्पन्न होगा, तो उसीको राजत्व मिलेगा। कई महीने बाद यमुना बाईने एक कन्यासन्तान प्रसव किया था। सुतरां मलहार राव निष्कण्टक राजा करने लगे। वह पहले खण्डेरावके प्राणविनाशकी चेष्टा करने पर कारागारमें निक्षिप्त हुए थे, परन्तु वहांसे निकल एक बारगी हो सिंहासन पर बैठ गये। यह कोई आशा नहीं करता कि वैसे लोग अच्छी तरह राजकार्य चला सकेंगे। १८७० ई०को प्रजाके विरक्त हो अंगरेज सरकारसे आवेदन करने पर तहकीकात करनेके लिये एक कमीशन बैठाया गया। उसने आवेदनकी बात छोड़ करके राजस्व, राजनीति और विचार प्रभृति नाना विषयोंका तदन्त ले करके अपना मन्तव्य लिख भेजा। इस मन्तव्यको पढ़ करके अङ्गरेजी गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने उन्हें १८७५ ई० तक शासनसंस्कार करनेका समय दिया था। उसके बीच यदि वह अच्छा इन्तजाम न कर सके तो उन्हें सिंहासनच्युत करनेकी बात थी। किन्तु १८७५ ई०को यह खबर फैल पड़ी कि अंगरेज रेसीडेण्ट कर्नल फेयरको विष देनेकी चेष्टा की गयी। अनुसन्धानमें मलहार राव पर ही सन्देह उठा। गवर्नर जनरल लार्ड नार्थब्रुकने एक घोषणा निकाली—जब गायकवाड़के विपक्षमें सन्देह है, तो जांचके लिये एक अदालत बैठेगी और जितने दिन वह अदालतके विचारमें बेगुनाह-जैसे साबित न होंगे, रियासतका काम करनेसे अलग रहेंगे। फिर तब तक अंगरेज गवर्नमेण्ट अपने आप वह भार ग्रहण करेगी। मलहार राव भी उसी बीच अपने दोषक्षालनके प्रमाणादि देंगे। मलहारराव देखो।

कलकत्ता हाईकोर्टके बड़े जज, ग्वालियरके महाराज, जयपुर महाराज, महिसुरके चीफ कमिशनर, सर दिनकर राव (ग्वालियरके मन्त्री) और पञ्जाबके कमिश्नर कई लोगोंने बैठ कर अदालतमें गायकवाड़का विचार किया। १८७५ ई० २३ फरवरीको यह अदालत लगी थी। विचारक मलहार रावके दोष सम्बन्धमें एक मत न हो सके। उनको तीन आदमियोंने दोषी और तीनने निर्दोष बतलाया था। किन्तु गवर्नमेण्टने उनको पिछला अपराध स्मरण करके १८७५ ई० २२ अपरैलको पदच्युत किया और मन्द्राज भेज दिया। खण्डे रावने सिपाही विद्रोहके समय गवर्नमेण्टकी सहायता दी थी। इसीसे सम्मानके लिये उनकी पत्नी यमुनाबाईको एक दत्तक लेनेका अनुमतिपत्र मिला। तदनुसार पिलाजीरावके पुत्र दामाजीके कनिष्ठ प्रतापरावके वंशीय सयाजी (सर्भाजी) राव मनोनीत हुए। १८७५ ई० २७ मईको सयाजी गायकवाड़ १२ वर्षकी अवस्थामें बड़ोदेके सिंहासन पर बैठे थे। होलकरके मन्त्री सुविख्यात सर टी० माधवराव

इससे प्रमाणित होता है कि वीरसेनके शिष्य स्वामी जिनसेन हरिवंशकार जिनसेनसे पूर्व प्रसिद्ध हो चुके थे। इस सम्बन्ध नाथूराम प्रेमीने विद्वद्रत्नमाला ग्रन्थमें सविस्तर आलोचना की है, इसलिये हम यहां अधिक नहीं लिखते। श्रीयुक्त पं० लालाराम जैनने भी अपने द्वारा प्रकाशित आदिपुराणकी प्रस्तावनामें हरिवंशकार और पार्श्वाभ्युदयके रचयिता जिनसेनको भिन्न भिन्न व्यक्ति स्वीकार किया है। उनके मतमें पार्श्वाभ्युदयकर्त्ता जिनसेनने ही ७५८ शकाब्दमें सिद्धान्तशास्त्रको जयधवला नामक टीका रची है और उसके बाद उन्होंने आदिपुराण रचना प्रारम्भ किया था, परन्तु वे उसे अधूरा ही छोड़ कर स्वर्गवासी हो गये; इसलिये उसे उनके शिष्य गुणभद्राचार्यने पूर्ण किया। गुणभद्राचार्य देखो। अतः उनका यह भी मत है कि "उसके रचयिता जिनसेन शकसं० ७७० तक जीवित थे; क्योंकि कीर्त्तिषेणके शिष्य जिनसेनने शकसं० ७०५में हरिवंशको रच कर पूरा किया था और अपने ग्रन्थके प्रारम्भमें आदिपुराणकार स्वामी जिनसेनका उल्लेख विशेष सम्मानके साथ किया है, तथा शकसं० ७५८में उन्होंने जयधवल नामक टीका रची है। इस तरह आदिपुराण-कार स्वामी जिनसेन, हरिवंशकार जिनसेनको अपेक्षा अवश्य ही वयोवृद्ध थे। इसलिये यदि कमसे कम ३० वर्ष भी वयोवृद्ध हों तो अनुमानसे आदिपुराणकार जिनसेनका जन्म ६७५ शकमें हुआ होगा। इस तरह उन्होंने ८५ वर्षकी अवस्थामें आदिपुराणकी रचना की होगी, ऐसा मालूम होता है।" परन्तु आदिपुराणको पढ़नेसे मालूम होता है कि इस तरहकी रचना इतनी बड़ी उम्रमें की होगी, यह बात सम्भव नहीं। तो भी पूर्वोक्त पुराणविद्गण और जैन पण्डितद्वय वीरसेनके शिष्य जिनसेनके इतनी बड़ी उमरके बतलानेमें प्रधान कारण हैं। उन्होंने जो जयधवला टीकाका समाप्तिज्ञापक ७५८ शकाङ्क अपने प्रमाणमें दिया है उसे हम नीचे उद्धृत कर कुछ विचार करते हैं।

"एकान्नषष्टिसमधिकसप्तशताब्देषु शकनरेन्द्रस्य।
समतीतेषु समाप्ता जयधवला प्राभृतव्याख्या॥
गाथासूत्राणि सूत्राणि चूर्णिसूत्रं तु वार्तिकम्।
टीका श्रीवीरसेनीयाऽशेषापद्धतिपंचिका॥
श्रीवीरप्रभुभाषितार्थघटना निर्लोडितान्यागमम्
याया श्रीजिनसेनसन्मुनिवरैरादेशितार्थस्थितिः।
टीका श्रीजयचिन्हितोरुधवला सूत्रार्थसम्बोधिनी
स्थेयादारविचन्द्रमुज्ज्वलतमा श्रीपालसम्पादिता॥"

इन श्लोकोंसे जाना जाता है कि श्रीपाल नामक किसी जैनाचार्यने शकसं० ७५८में कषायप्राभृत ग्रन्थकी व्याख्यास्वरूप यह जयधवला नामकी टीका समाप्त की है। यह गाथासूत्र, सूत्र, चूर्णिसूत्र, वार्तिक और वीरसेनीया टीका इस तरह पञ्चाङ्गीय टीका है। इसमें वीर भगवान् द्वारा उपदिष्ट आगमका विषय, मुनिवर जिनसेनका उपदेश और अन्यान्य मुनियोंकी रचना प्रभृति हैं तथा सूत्रार्थ ज्ञानके लिये इस जयधवला नामक टीकाकी रचना की गई है अर्थात् इससे किसी तरह भी सिद्ध नहीं होता कि शक सं० ७५८में जिनसेन विद्यमान थे; क्योंकि उद्धृत श्लोकोंमें जो संवत् बतलाया है, वह श्रीपाल मुनिके ग्रंथ सम्पादनका समय है। वास्तवमें जिनसेनके गुरु वीरसेनने किस समय वीरसेनीय टीका रची और जिनसेनने वह विस्तृत टीका कब समाप्त की, इसका कोई भी उपयुक्त साधन अब तक देखनेमें नहीं आया है। ऐसी दशामें हम उनके विषयमें उपरोक्त श्लोकोंके आधारसे इतना ही कह सकते हैं कि वे पुन्नाटगणीय जिनसेनसे पहिले इस संसारमें विद्यमान थे एवं शकसं० ७०५से पहले उन्होंने अपनी रचना की थी।

आदिपुराणकार स्वामी जिनसेनाचार्य-विरचित पार्श्वाभ्युदयकी अन्तिम प्रशस्तिसे और गुणभद्राचार्य विरचित आदिपुराण तथा उत्तरपुराणकी प्रस्तावनासे यह बात भली भाँति सिद्ध होती है कि राष्ट्रकूट वंशीय अमोघवर्षने आदिपुराणकार जिनसेनाचार्यका शिष्य होना स्वीकार किया था।* बहुतसे इतिहासज्ञ अमोघवर्षको शकसं० ७३६में सिंहासनारूढ़ हुआ बतलाते हैं। परन्तु हमारी समझसे ये अमोघवर्ष वे नहीं

* "इति विरचितमेतत्काव्यमावेष्ट्य मेघं बहुगुणमपदोषं कालिदासस्य काव्यं। मलिनितपरकाव्यं तिष्ठतादाशशांकं, भुवनमवतु देवः सर्वदाऽमोघवर्षः॥" ४।७० ॥

जैसा नाम पड़ता है। यह त्रिसन्ध्याकी पवित्र भावमें गायत्री जपरूप उपासना करने पर बाध्य है। यह नियम वर्णत्रयमें चिरदिनसे चलता है। इसका कोई ठिकाना नहीं, कौन समयको किस महात्माने प्रथमतः वह नियम चलाया। प्रत्येक वैदिक मन्त्रका कोई न कोई ऋषि होता है। किसी किसी पद्धतिकारके मतमें वेदमन्त्र अनादि होते भी जो ऋषि सर्वप्रथम जिस मन्त्र द्वारा कोई कार्य करके चरितार्थ हुआ, अपने मन्त्रका ऋषि कहलाया। गायत्रीमन्त्रके ऋषि विश्वामित्र हैं। इस स्थल पर उनके मतानुसार कहना पड़ेगा कि विश्वामित्रने ही सबसे पहले उसको जप करके सिद्धि पायी। वेदके टीकाकार सायणाचार्यने ऋग्वेदभाष्य की भूमिकामें लिखा है कि युगान्तको इतिहासादिके साथ समस्त वेद अन्तर्हित हो जाता। ऋषियोंके उसको प्राप्तिके लिये तपस्या करने पर ईश्वर अनुग्रहसे फिर निकल आता है। इस प्रकार वेद पूनर्वार प्रकाशित होता है। युगान्तको वेद अन्तर्हित होने पर जो ऋषि सर्व प्रथम उसको पाता, उसका ही ऋषि कहलाता है। (ऋक् १।१।१ भाष्य) अतएव सायणके मतानुसार भी सबसे पहले न सही, इसी युगमें पहल पहल विश्वामित्रने ही गायत्री मन्त्र पाया था उसके जप करनेकी प्रणालीको चलाया था।

गायत्री मन्त्रके प्रतिपाद्य अर्थात् गायत्री मन्त्र द्वारा वर्णित होनेवाले ही इसकी देवता है और इससे उन्हींकी उपासना की जाती है। उपनिषद्‌के मतसे गायत्रीरूप उपाधिधारी ब्रह्म ही उसके प्रतिपाद्य है। गायत्रीसे उन्हींकी उपासना होती है। सभी वैदिक उपासनाओंसे गायत्रीकी उपासना श्रेष्ठ है। (छान्दोग्य उप० ३।१२।१)

गायत्रीका अर्थ—

१ जो सवितृदेव हमारा कर्म (कर्मेन्द्रिय अथवा धर्मादि विषय बुद्धि) प्रेरण करते हैं—हम उन्हीं सर्वान्तर्यामी, जगत्स्रष्टा, परमेश्वर, सबके सेवनीय, अविद्या तथा तत् कार्यनाशक और परब्रह्मस्वरूप ज्योतिकी चिन्ता करते हैं।

२ हम सवितृदेवताकी अविद्या और तत् कार्यनाशक उन ज्योतिकी चिन्ता करते, जो हमारी कर्म वा धर्मादि-विषय बुद्धिको चलाते रहते हैं।

३ जो सविता सूर्यदेव हम लोगोंको समस्त कर्ममें प्रेरण किया करते, हम उन्हीं जगत्प्रसविता द्योतमान् सूर्यदेवके सबको प्रत्यक्ष, उपास्य तथा पापनाशक तेजोमण्डलकी ध्यानमें रहते हैं।

४ अथवा भर्ग शब्दका अर्थ अन्न है। जो सविता हमारी धीशक्तिको प्रेरण करते, हमें उन्हीं सवितादेवके प्रसादसे प्रशंसनीय अन्नादिरूप फल मिलते हैं।

(ऋक् ३।६२।१० भाष्य, साम उत्तर ६।१०।१ भाष्य)

५ द्योतमान प्रेरक, अन्तर्यामी, विज्ञानानन्दस्वभाव हिरण्यगर्भ वा आदित्यरूप उपाधिधारी ब्रह्मके प्रार्थनीय, पाप तथा संसारबन्धननाशक तेजकी चिन्ता करते हैं। वह सविता हमारी बुद्धि सत्कर्मानुष्ठानको प्रेरण करते हैं। (वाजसनेयस् हिता ३।३५ महीधर)

इसको छोड़ करके गायत्रीकी और भी अनेक प्रकार व्याख्या सुन पड़ती है। कोई कालीपक्ष, कोई विष्णु और कोई शिवपक्षमें भी उसकी व्याख्या करता है।

गायत्री-उपासनाप्रणाली—मनुके मतानुसार गायत्री मन्त्रमें दीक्षित होनेसे उपासक पुनर्जन्म पाता है। इस जन्ममें आचार्य पिता और सावित्री ही माता है। गायत्री और तत्प्रतिपाद्य ब्रह्मकी अभेदचिन्तासे उपासना करनी पड़ती है। याज्ञवल्क्यके मतमें प्रणव ॐ और व्याहृति (भूर्भुवःस्वः) योग करके गायत्री उपासना करनी चाहिये। विष्णुधर्मोत्तरमें लिखा है कि पञ्चकर्मेन्द्रिय, पञ्चज्ञानेन्द्रिय, पञ्चविषय, पञ्चभूत, मन, बुद्धि, आत्मा और प्रकृति २४ पदार्थोंको गायत्रीके चतुर्विंशति अक्षरोंमें यथाक्रम चिन्ता करते हैं। अग्नि, वायु, सूर्य, विद्युत्, यम, वरुण, बृहस्पति, पर्जन्य, इन्द्र, गन्धर्व, पूषा, मैत्रावरुण, त्वष्टा, वासव, मारुत, सोम, अङ्गिरा, विश्वदेव, अश्विनीकुमार, प्रजापति, सर्वदेव, रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु यथाक्रम गायत्रीस्थ २४ अक्षरोंके अधिपति हैं। जपकालको इनकी चिन्ता करनी पड़ती है। प्रणवको ईश्वर भावना करते हैं।

काशीखण्डमें गायत्रीका विषय इस प्रकार लिखा है—अष्टादश विद्याओंमें मीमांसा प्रधान है। मीमांसासे तर्कशास्त्र, तर्कशास्त्रसे पुराण, पुराणसे धर्मशास्त्र और धर्मशास्त्रसे वेद बड़ा होता है। वेदोंमें फिर उपनिषद्

वंशने ४० वर्ष, पुष्पमित्रने ३० वर्ष, वसुमित्र, अग्निमित्रने ६० वर्ष, रासभ (गर्दभिल्ल)-वंशने १०० वर्ष, नरवाहनने ४० वर्ष, भट्टवाणने २४२ वर्ष, गुप्तवंशने २२१ वर्ष और कल्किराजने ४२ वर्ष तक राज्य किया था।

उसके बाद जिनसेनाचार्य फिर लिखते हैं—

"वर्षाणां षट्शतीं त्यक्त्वा पंचाग्रां मासपंचकं।
मुक्तिं गते महावीरे शकराजस्ततोऽभवत्॥"

इस श्लोकसे जाना जाता है कि शक-संवत्से ६०५ पहिले (५२७ ई०से पूर्व) महावीरस्वामीने मोक्ष लाभ किया था, तथा भिन्न भिन्न राजवंशकी कालगणनासे मालूम होता है कि वीरनिर्वाणके (६०×१५५×४०) =२५५ वर्ष बाद और (६०५—२५५=)—३५० वर्ष शकके पहिले पुष्पमित्रका अभ्युदय हुआ था। इधर श्वेताम्बर सम्प्रदायके "तित्थुगुलिय पयन्न" और "तीर्थोद्धारप्रकीर्ण" ग्रन्थोंके* देखनेसे मालूम होता है कि जिस रात्रिको महावीर स्वामी मोक्ष पधारे थे, उसी रात्रिको पालक राजा अवन्तिके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए थे। पालकवंशने ६० वर्ष, नन्दवंशने १५५ वर्ष, मौर्यवंशने १०८ वर्ष, पुष्पमित्रने ३० वर्ष, बलमित्र और भानुमित्रने ६० वर्ष, नरसेन वा नरवाहनने ४० वर्ष, गर्दभिल्लवंशने १३ वर्ष और शकराजने ४ वर्ष राज्य किया था, अर्थात् महावीर स्वामीके निर्वाणकालसे शकराजके अभ्युदय पर्यन्त ४७० वर्ष होते हैं। इधर सरस्वतीगच्छकी प्राचीन पट्टावलीमें लिखा है कि विक्रमने उक्त शकराजको पराजित तो किया, परन्तु वे १८ वर्ष पर्यन्त राज्याभिषिक्त नहीं हुये। उस सरस्वती गच्छकी गाथामें स्पष्ट लिखा है कि "वीरात् ४८२ विक्रम जन्मान्तवर्ष २२ राज्यान्तवर्ष ४"† अर्थात् विक्रमाभिषेकाब्दसे (विक्रमसंवत्से) ४८८ वर्ष पहिले (४८८—५७=४३१ या खृष्टाब्दसे ४३१ वर्ष पहिले) महावीर स्वामीको मोक्ष हुई थी।

जिनसेनने जो शकाब्दसे ६०५ वर्ष पहिले वीर मोक्ष लिखा है, उसके अनुसार दिगम्बर संप्रदायी आजतक भी वीर मोक्षाब्दकी गणना करते आते हैं। परन्तु भविष्य राजवंशप्रसंगमें जिनसेनने जो गणना बतलाई है वह दूसरे किसी भी जैनग्रंथ, वा भारतीय अन्य साम्प्रदायिक ग्रन्थके साथ नहीं मिलती। 'तित्थुगुलियपयन्न' और 'तीर्थोद्धारप्रकीर्ण'के मतके साथ आधुनिक ऐतिहासिक सिद्धान्तका अधिक मतभेद नहीं है। ऐसी अवस्थामें जिनसेन जो भविष्यराजवंशका कालनिर्णय लिख गये हैं, वह उनका समसामयिक प्रवादमात्र है। उसे ऐतिहासिक रूपसे ग्रहण नहीं कर सकते।

२ जैन महापुराण वा आदिपुराणकर्त्ता प्रसिद्ध दिगम्बर जैनाचार्य और गुणभद्राचार्यके गुरु। जिनसेन स्वामी देखो।

जिनसेन स्वामी—जैन आदिपुराण कर्त्ता प्रसिद्ध दिगम्बर जैनाचार्य। ये भगवज्जिनसेनाचार्यके नामसे प्रसिद्ध हैं। 'जिनसेन आचार्य' शब्दमें हम सिद्ध कर चुके हैं कि आदिपुराण-कार जिनसेन हरिवंशपुराणके कर्त्ता जिनसेनसे सम्पूर्ण पृथक् हैं। ये वीरसेन स्वामीके शिष्य और गुणभद्राचार्यके गुरु थे। गुणभद्र आचार्य देखो।

जैनाचार्य प्रायः अपने वंशका परिचय न दे कर गुरु-परम्परासे परिचय दिया करते हैं। अतः यह नहीं जाना जा सकता कि ये किस वंशमें आविर्भूत हुए थे वा इनके पिता आदिका नाम क्या था। अनुमानसे इतना कहा जा सकता है कि या तो ये भट्ट अकलङ्कदेवके समान राजाश्रित किसी उच्च ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न हुए होंगे अथवा जैन-ब्राह्मण (उपाध्याय) आदि जातियोंमेंसे किसी एकमें जन्म लिया होगा, कारण जिस प्रान्तमें इनका वास रहा है, वहां इन्हीं जातियोंमें जैन धर्म पाया जाता है।

स्वामी जिनसेनके गृहस्थावस्थाके वंशका परिचय भले ही न मिले, किन्तु उनके मुनिवंशका परिचय उनके ग्रन्थों एवं दूसरे उल्लेखोंसे मिल जाता है। महावीरस्वामीके निर्वाणके उपरान्त जब कि श्वेताम्बर सम्प्रदायकी उत्पत्ति नहीं हुई थी और जब आर्हत, जैन, अनेकान्त, स्याद्वाद आदि नामोंसे जैनधर्मकी प्रसिद्धि थी, तब जैनधर्म सङ्घभेदसे रहित था। पीछे वि० सं० १३६में जब श्वेताम्बरसम्प्रदायकी उत्पत्ति हुई, तब मूल सम्प्रदाय (जो कि 'दिगम्बर' नामसे प्रसिद्ध है) मूलसङ्घके नामसे प्रसिद्ध

* इस विषयका मूल प्रमाण 'हिंदीविश्वकोष' द्वितीय भाग २४० पृष्ठमें लिखा है।

† Indian Antiquary, Vol. XX. p 347.

और वि वर्णके कपिलवर्ण चिन्ता करते हैं। इसी प्रकारसे तु इन्द्रनीलमणि जैसा, वं अग्नि तुल्य, ण निर्मल, यं विद्युत्—जैसा, भ कृष्णवर्ण, र्गो रक्तवर्ण, दे श्यामलवर्ण, व शुक्लवर्ण, स्य श्यामलवर्ण, धी कुन्दपुष्पसदृश, म शुक्लवर्ण, हि चन्द्रसदृश, धि पीतवर्ण, यो विद्युताभ, यो धूम्रवर्ण, न तप्तकाञ्चन जैसा, नकारके दोनो विन्दुओंमें ऊपरवाला रक्तवर्ण तथा नीचेवाला कृष्णवर्ण, प्र नीलवर्ण, च गोरोचना जैसा पीतवर्ण, द शुक्लवर्ण और यात् वर्णद्वयको ब्रह्ममन्दिर चिन्ता किया जाता है। इसी प्रकारसे गायत्रीके प्रत्येक वर्णकी चिन्ता कर लेनेपर गायत्रीको चिन्ता करनी चाहिये। परमदेवता गायत्री मृणालके सूत्र-जैसी अतिशय सूक्ष्म, विद्युत् पुञ्जकी भांति प्रभायुक्त मूलाधार पद्ममें सुप्त भुजगीकी तरह अवस्थिति करती है ब्राह्मणोंको वैदिक गायत्री तीन और क्षत्रिय वैश्योंको २ प्रणव मिला करके जपनी चाहिये। गायत्रीतन्त्रके मतमें तान्त्रिक लोग इष्टमन्त्रको गायत्री पुटित करके जपते हैं। जो गायत्री भिन्न जपकी पूजा करता, शतकोटि जपसे भी फललाभ कर नहीं सकता। प्राणायाम करके गायत्री जपनी पड़ती है। तन्त्रके मतानुसार सभी समयों और अवस्थाओंमें गायत्री जप किया जा सकता है उसमें अशुच या शुचि जैसी कोई व्यवस्था नहीं। गायत्रीको त्रिसन्ध्यामें जपना चाहिये। जनन और मरणाशौचको भी गायत्री मन ही मन स्मरण कर सकते हैं, अन्य वैदिक कार्यकी तरह अशौचमें उसका निषेध नहीं है। ब्राह्मण गायत्रीको छोड़नेसे चण्डाल, व्याघ्र वा शूकर योनि पाता है।

गायत्रीतन्त्रको देखते कलिकालके ब्राह्मण शूद्र-जैसे आचार व्यवहार-सम्पन्न हो करके अशुद्ध बन गये हैं। अत एव गायत्री मन्त्रको दीक्षा मिलने पर गायत्रीका प्रत्येक अक्षर १०८ वार जपना चाहिये, फिर प्रणवत्रय योग करके गायत्री जपनेसे फलप्राप्ति हुआ करती है। नहीं तो अरण्यरोदनकी भांति गायत्रीजपसे क्या फल मिल सकता है। (गायत्रीतन्त्र १म और २य पटल) तन्त्रशास्त्रमें गायत्रीकी पूजा करनेका विधान विद्यमान है। (तन्त्र देखो।) अपरापर जपप्रणालिया सन्ध्याविधि और ब्राह्मणसर्वस्व प्रभृति ग्रन्थोंमें विस्तृत भावसे लिखी हैं। तन्त्रके मतमें प्रायः समस्त देवताओंको एक एक गायत्री और उसके जपकी विस्तर फलश्रुति है।

जिस देवताके उद्देशसे वलि दिया जाता, पूजक उसी देवताकी गायत्री वध्य पशुके कर्णमें सुनाता है। यह एक प्रकार पशुदीक्षा है।

२ छन्दोविशेष। इसके प्रत्येक चरणमें ६ अक्षर रहते हैं। चरणमें लघुगुरुभेदसे यह ६४ प्रकारका होता है। उसमें तीन प्रकारका प्रधान है—तनुमध्या, शशिवदना और वसुमती। यह सब लौकिक हैं। लौकिक गायत्रीके ४ चरण होते हैं। परन्तु वेदमें ३ चरण ही लगते हैं। वेदमें ३ चरण होनेसे ही गायत्रीका नाम त्रिपदा है। लौकिक छन्दके ६ अक्षरवाले ४ चरणोंमें और वैदिक गायत्रीछन्दके ८ अक्षरवाले ३ चरणोंमें २४ होते हैं। लौकिक और वैदिक गायत्रीमें इतना ही प्रभेद है।

"अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम॥" (ऋक् १।१।१)

उपर्युक्त मन्त्र वैदिक गायत्रीछन्दका उदाहरण है। ताण्ड्यब्राह्मणके मतमें गायत्रीके अष्टाक्षर चरण होनेका कारण यह है कि साध्यनामक देवगण उपकरणसम्पन्न यज्ञके साथ स्वर्ग-लोक पहुंचे थे। वसु प्रभृति देवोंने प्रथम स्वर्गसाधन यज्ञके निमित्त चतुरक्षरविशिष्ट गायत्री आदि सभी छन्दोंको कहा था कि वह स्वर्गलोकसे सोम आहरण करने जाते। छन्दोंने भी उसको अङ्गीकार किया। सबसे पहले जगती छन्द भेजा गया। वह सोम रक्षकोंसे युद्ध करके अपने ३ अक्षर खो एकाक्षर हो लौट आया। फिर त्रिष्टुभ् चली, परन्तु वह भी अपना एक अक्षर खो करके ३ अक्षरविशिष्टा हो वापस हुई। अनन्तरको गायत्रीकी वारी आयी, वे जा करके कृष्ण प्रभृति सोमरक्षकोंके पाससे जगती तथा त्रिष्टुभके चार अक्षर ले स्वयं अष्टाक्षरा बन लौट पड़ी। ३ खदिर। ४ दुर्गा। ५ गङ्गा।

गायत्रीसार (स० पु०) गायत्र्याः सारः। खदिर वृक्षका सार, खैरके पेड़का गूदा

गायत्र (सं० पु०) सोमलताविशेष।

गायन (सं० त्रि०) गायति गै शिल्पिनि ल्युट्। १ सङ्गीतव्यवसायी, गानेका व्यवसाय करनेवाला, जो गीत गा कर अपनी जीविका निर्वाह करता हो।

रणको सम्मतिसे भारतीय कवियोंमें कालिदासको पहला स्थान दिया गया है, तथापि जिनसेन मेघदूतके कर्त्ताको अपेक्षा अधिकतर योग्य समझे जानेके अधिकारी हैं।"

जिनसौख्य सूरि—एक प्रधान श्वेताम्बर जैनाचार्य। ये जिनचन्द्रके शिष्य और जिनभक्तिके गुरु थे। जन्म सं० १७३९में, दीक्षा १७५१में, सूरिपद १७६३में और १७८० सम्वत्‌में इनकी मृत्यु हुई। चौपड गोत्रके पारिखमामोदासने इनके पद-महोत्सवमें ११०००) रुपये व्यय किये थे।

जिनस्तपन—अरहन्त-मूर्त्तिके अभिषेकको विधिविशेष। जैन सागारधर्मामृतकारका मत है कि मध्याह्न क्रियाके लिए श्रावकको पहले जिनस्तपन वा अभिषेक करनेकी प्रतिज्ञा करनी चाहिये। तदनन्तर रत्न, जल, कुश और अग्निके द्वारा तर्पण आदिको विधि करके, अभिषेक करनेकी भूमिको शुद्ध करें। फिर वहां स्तपनपीठ (अभिषेक करनेका सिंहासन) स्थापन करें। स्तपन पीठके चार कोनोंमें चार जलपूर्ण कलश एवं कुश स्थापन करें और घिसे हुए चन्दनसे उस पर 'श्री' 'ह्रीं' ये दो वर्ण लिख दें। अनन्तर श्रीजिनेन्द्रदेवकी मूर्त्ति स्थापन कर उनका स्तपन वा अभिषेक करना उचित है। (सागारधर्मामृत ६।२२)

मतान्तरमें चन्दनके बदले रञ्जित तण्डुलसे भी 'श्री' 'ह्रीं' लिखा जा सकता है।

जिनहर्ष—१ एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकार। ये पाटनके रहनेवाले थे। इन्होंने सं० १७२४में श्रेणिकचरित्र छन्दोबद्ध नामका एक हिन्दी पद्यग्रन्थ रचा है। २ एक श्वेताम्बर जैन ग्रन्थकर्त्ता। इन्होंने स्नात्रपंचाशिकाको बालावबोध नामको एक टीका लिखी है।

ज़िना (अ० पु०) व्यभिचार, छिनाला।

जिनाधार (सं० पु०) एक बोधिसत्व।

जिनिस (अ० स्त्री०) जिंस देखो।

जिनिसवार (अ० पु०) जिंसवार देखो।

जिनेन्द्र (सं० पु०) जिनानामिन्द्रः जिन इन्द्र वा। १ बुद्ध। २ तीर्थङ्कर।

जिनेन्द्रबुद्धि—काशिकावृत्तिविवरणपञ्जिका वा काशिकावृत्तिन्यास नामक ग्रन्थके रचयिता। ये काश्मीरके वराहमूल (वर्त्तमान बारमूल) नामक स्थानके रहनेवाले थे।

जिनेन्द्रभक्त—जैन-पुराण ग्रन्थोंमें इनको अचल भक्तिको खूब प्रशंसा की है। ये ताम्रलिप्त नगरमें रहते थे और बहुत धनाढ्य सेठ थे। आराधना कथाकोष नामक जैन ग्रन्थमें लिखा है

पाटलीपुत्र नगरमें यशोध्वज नामक राजा राज्य करते थे जो बड़े धर्मात्मा और उदारचेता थे। किन्तु उनका पुत्र सुवीर बड़ा दुराचारी और चोरोंका सरदार था। एकदिन सुवीरको मालूम हुआ कि, ताम्रलिप्त नगरमें एक जिनेन्द्रभक्त नामक सेठ हैं और उनके मकानके सातवें मंजल पर जिन-चैत्यालयमें एक रत्नमयो जिनप्रतिमा हैं। सुवीर अपने लोभको न सम्हाल सका, उसने अपनी मण्डलीके लोगोंको बुला कर सब हाल कहा। उनमेंसे सूर्य नामक एक चोर बोल उठा—"मैं उस रत्न मूर्त्तिको ला सकता हूं।" सुवीरने उसे ताम्रलिप्त जानेको आज्ञा दे दी। सूर्यने ब्रह्मचारीका भेष धारण किया और ताम्रलिप्त जा कर ढोंग फैलाना शुरू कर दिया। सबके मुखसे इनकी प्रशंसा सुन कर जिनेन्द्रभक्त भी अपनी मित्रमण्डलीके साथ ब्रह्मचारीके दर्शनार्थ गये और छद्मवेशधारी सूर्यको मन्दिरकी वन्दनाके लिए अपने घर ले गये।

कुछ दिन बाद जिनेन्द्रभक्त विदेश जानेकी तैयारियां करने लगे। उन्होंने उक्त छद्मवेशी ब्रह्मचारी पर चैत्यालयके पूजापाठ और रखवालीका भार अर्पण किया। सूर्यने अपने उद्देश्यकी पूर्त्ति होते देख उक्त प्रस्तावको मंजूर कर लिया।

एक दिन वह मौका पा कर आधी रातको रत्नमूर्त्ति ले कर वहांसे निकल पड़ा। मार्गमें थानेदारने चमचमाती हुई चीज ले जाते देख उसका पीछा किया। सूर्य चोर बहुत भागा, भागते भागते थक गया, पर थानेदारने उसके पीछा न छोड़ा। अन्तमें वह उन्हीं सेठके पास पहुंच कर "बचाओ! बचाओ!!" कह चिल्लाने लगा। जिनेन्द्रभक्तको उसकी दशा देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। वे विचारने लगे, 'यदि मैं सत्य बात कह देता हूं, तो धर्मकी बड़ी निन्दा होगी और मेरा सम्यग्‌दर्शन भी दूषित होगा।' उन्होंने थानेदारसे कहा—'भाई! ये चोर नहीं हैं, मैंने ही इनसे प्रतिमाजी मंगवाई

गारो (हिं० स्त्री०) १ दुर्वचन, गाली। २ कलंकजनक आरोप।

गारुड (सं० क्ली०) गरुडाय उक्तं विष्णुना यद्वा तस्य इदम् अण्। १ गरुड़पुराण। २ विषहर मन्त्रविशेष, वह मन्त्र जिससे विष उतरता है। ३ गरुडाकृति व्यूहभेद, गरुडके आकारको व्यूहरचना।

'गारुडश्च महाव्यूहं' चक्रे शान्तनवस्तदा।" (भारत ६।५६ अ०)

४ मरकतमणि, पन्ना।

"रश्मिं सोनामिव गारुडानाम्।" (रघु १।३१३)

५ स्वर्ण, सोना। गरुडो देवतास्य अण्। ६ अस्त्रविशेष, एक हथियार। (रामा० ६।४८।३३) (स्त्री०) ७ पातालगरुडलता। ८ मन्त्रसे सर्पका विष झाड़नेवाला।

गारुडि (सं० पु०) आठ प्रकारके तालमेंसे एक।

गारुडिक (सं० पु०) गारुडेन विषमन्त्रेण जीवति ठक्। १ विषवैद्य, सर्पका विष झाड़नेवाला।

"सर्पान् गारुडिको यथा।" (इति मलपुराणम्)

२ मन्त्रसे सर्प पकड़नेवाला, सँपेरा।

गारुत्मत (सं० क्ली०) गरुत्मान गरुडो देवतास्य अण्। १ गरुडजीका अस्त्र। २ मरकतमणि, पन्ना। ३ नवरत्नराज मृगाङ्क।

गारुत्मतपत्रिका सं० स्त्री०) गारुत्मतमिव वर्णेन पत्रमस्य कप् अत इत्वम्। लताविशेष, एक प्रकारकी लता, गङ्गापत्री।

गारुलिया—बङ्गालमें २४ परगनेके अन्तर्गत बारोकपुर जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २२° ४९´ और देशा० ८८° २२´ पू० हुगली नदीके पूर्व तीरपर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७३७५ है। यहां पाट और रूईका व्यवसाय अधिक होता है। शहरकी आय ६००० रुपया और कुल व्यय ८००० रु० है।

गारो (हिं० पु०) १ गर्व, अहङ्कार, अभिमान, घमंड। २ प्रतिष्ठा, सम्मान।

गारो—आसामकी एक दक्षिणपश्चिमस्थ गिरिश्रेणी। यह अक्षा० २५° ९´ तथा २६° १ उ० और देशा० ८९° ४९ एवं ९१° २ पू०के बीच पड़ती है। इसके उत्तर ग्वालपाड़ा जिला, पूर्व खासी और जयन्ती पहाड़, पश्चिम तथा दक्षिण बङ्गालका रङ्गपुर तथा मैमनसिंह जिला अवस्थित है। क्षेत्रफल ३१४० वर्गमील है। इसमें तुरा और अरबेला पहाड़ बड़ा है। यह दोनों गिरि समान्तराल भावसे पूर्वपश्चिमको विस्तृत है। तुरा पर्वतमें २ उच्च चूड़ाएं है। उनको उच्चता ४६५० फुट निकलेगी। इन दोनोंके बीच बीच उपत्यकाएं भी हैं। गारो पहाड़ जङ्गलसे प्रायः परिपूर्ण है। जङ्गलमें अच्छी अच्छी लकड़ी मिलती है। तुरा नामक चोटी पर चढ़नेसे ग्वालपाड़ा, मैमनसिंह तथा रङ्गपुर जिला और ब्रह्मपुत्रनदीकी गति ५० कोस तक देख पड़ती और हिमालय तक भी दृष्टि पहुंचती है। स्थान स्थान पर उपत्यकाके भीतरसे नदीको बहता देख नयन मन चरितार्थ होता है। तुरा पर्वतको ऊपर चढ़ाको हिन्दू कैलास कहते है। परन्तु गारो और खासिया लोगो द्वारा, वही चिकमङ्ग, भीमतुरा वा मानराई कही जाती है। अन्यान्य स्थानोंके पर्वत क्रमशः ढालू है, कहीं कहीं ऊंचे भी पड़ गये हैं। किन्तु कैलास नामक चूड़ाके पास पहाड़ एक बारगी ही ऊंचा उठ गया है। आकृति कुछ कुछ शूकरके पृष्ठजैसी है। यह पार्श्ववर्ती सभी पहाड़ोंकी अपेक्षा ऊंचा है।

इस पर्वतके सभी स्थानोंमें पश्वादि चरते हुए घूम सकते हैं। इसमें दो प्रकाण्ड गह्वर देख पड़ते हैं। सोमेश्वरी और गणेश्वरी नदीके बीच जहां चनेका झाड़ मिलता, एक गुहा है। रायक नामक स्थानके निकट जो गह्वर पड़ता, सबसे बड़ा लगता है; उसका प्रवेशस्थान प्रायः १२ हस्त उच्च और १० हस्त विस्तृत है। भीतरको प्रायः ६० हाथ जानेसे देख पड़ता किसी छोटी कुलझड़ जैसी जगहसे एक नदी बहती है। वह इतनी छोटी है कि मनुष्य उसमें प्रवेश कर नहीं सकता। पहाड़के भीतर सम्भवतः कहीं न कहीं जलाशय वा ह्रद विद्यमान है। इस गुहामें चिमगीदड़ रहा करते है।

गारो पर्वत पर उष्णप्रस्रवण नहीं। परन्तु लोनी मट्टी रहनेसे बोध होता, कभी वहां लवणाक्त प्रस्रवण विद्यमान रहे। उसीसे लवणाक्त मट्टी हो गयी है। यहां हस्ती और हरिणका दल आ करके विचरण करता है। गारो लोग उस जगहसे नमक नहीं निकालते। गारो पहाड़के बीच सोमेश्वरी, गणेश्वरी, नेताई और महादेव

हुई है। तारीकने ७११ ई०में ऐन्दुलिसिया पर आक्रमण किया था। जुलाई मासके अन्तमें इन्होंने गोथिक शक्ति नष्ट कर दी और उस स्थान पर अधिकार कर अफ्रीका-के साथ सम्बन्ध स्थापित करनेके लिए एक दुर्ग निर्माण किया। यह दुर्ग ७४२ ई०में बन कर तैयार हुआ था। अब भी वह मूर-दुर्गके नामसे प्रसिद्ध है।

जिब्राल्टरका पर्वत २½ मील लम्बा है; इसने स्पेनके प्रधान भूखण्डके साथ जिब्राल्टरको जोड़ा है।

यहांकी आब-हवा बहुत अच्छी है—न तो जाड़ोंमें जाड़ा ही ज्यादा पड़ता है और न गरमियोंमें गरमी। जून, जुलाई और अगस्त इन तीन महीनोंमें बिलकुल वर्षा नहीं होती। सितम्बर मासमें (शरत् ऋतुके प्रारम्भमें) खूब वर्षा होती है। यहां वर्षाके पानीको जमीनके नीचे हौज़में इकट्ठा करते और उसीको वर्ष भर पीते हैं। साधारणतः वर्षमें यहां ३४·४ इञ्च पानी बरसता है।

फिलहाल जिब्राल्टरमें जो शहर है, वह अपेक्षाकृत आधुनिक है। १७७९से १७८३ ई० तक जिब्राल्टरमें जो भीषण अवरोध हुआ था, उस समय सभी पुरानी इमारतें तोड़ दी गई थीं। यहांकी सड़कें बहुत कम चौड़ी हैं, प्रायः सर्वत्र कंकड़ निकल पड़े हैं और अंधेरा रहता है।

यहां 'फ्रानसिस्का सम्प्रदायके एक सङ्घारामका ध्वंसाव-शेष पड़ा है, उसीके ऊपर एक छोटा प्रासाद बनाया गया है, जिसमें यहांके शासनकर्ता रहते हैं। यहां अङ्गरेजोंका एक उपासनागार है, किन्तु उसमें शिल्प-नैपुण्य नहीं हैं। हां, यहांका ग्रन्थागार खूब बड़ा है और उसमें अच्छे अच्छे ग्रन्थ मिलते हैं। 'ट्रैफलगर'के प्रसिद्ध युद्धमें जिन्होंने प्राण विसर्जन किये थे, उनमेंसे बहुतोंकी यहां समाधि विद्यमान है।

जिब्राल्टरके अधिवासिगण सङ्कर जातीय हैं। अङ्गरेजोंके अधिकार करनेके बाद स्पेनके प्रायः सभी औपनिवेशिक 'सैन-रो-की' नामक स्थानमें चले गये थे। स्थानीय अधिवासियोंमें अधिकांश लोगोंकी उत्पत्ति इतली-वंशसे हुई है। तीन चार हजार यहूदी और कुछ माल्टाके लोग भी यहां रहते हैं। यहूदी लोग अन्यान्य जातिसे विवाह सम्बन्ध नहीं करते—स्वतन्त्र भावसे रहते हैं। यहांके लोग स्पेनको अपभ्रंश भाषा व्यवहार करते हैं तथा काम-काजके लिए अङ्गरेजी भाषा-से भी काम लेते हैं।

जिब्राल्टरका दूसरा नाम 'क्राउनकलोनि' भी है। ब्रिटिश सम्राट् एक शासनकर्त्ताके द्वारा यहांका शासन कार्य चलाते हैं। स्वायत्तशासनका यहां जिक्र भी नहीं है। यहांके अधिकांश लोग रोमन कैथलिक धर्मको मानते हैं।

इतिहास।—ग्रीक और रोमन भौगोलिकगण जिब्राल्टरको 'काल्पे' वा 'आलिबि' लिखते हैं। ७११ ई०में तारीकने यहांका पर्वत अधिकार कर एक किला बनवा दिया था। १३०९ ई०में ४र्थ फार्डिनण्डके एक कर्मचारीने इस पर कब्जा कर लिया। फार्डिनण्डने इसे आबाद करनेके लिए यहां चोर और घातक बसा दिये। साथ ही यह घोषित कर दिया कि यहांसे अधिवासियोंको वाणिज्य सम्बन्धी आम दनी और रफ़्नीका महसूल माफ कर दिया गया। १३१५ ई०में इस्माइल बेन फिरोज़ने इस पर आक्रमण किया, किन्तु वे क्षतकार्य न हो सके। इसके बाद १३३३ ई०में भास्को पैरेज डो मेराको बाध्य हो कर इसे ४र्थ महम्मद-को देना पड़ा। १४६२ ई०में फिर यह ईसाई राजाओंके हाथमें गया। मदीना सिदोनियाके डिउकको ४र्थ हेनरी द्वारा जिब्राल्टरका दखल मिला था, जो उनके पीढ़ी दर पीढ़ी तक चला था। १४७९ ई०में स्पेनके फार्डिनण्ड और ईसाबेलाने डिउकको 'मर्कुइस'-की उपाधि दी। १४८२ ई०में उन्होंने उन जमान नामक ३य डिउकको इच्छा न होने पर भी रहने दिया। १५४० ई०में अल जियर्सके अधिवासी जिब्राल्टरको पुनः मुसलमानोंके अधिकारमें लानेकी कोशिश करने लगे। किन्तु जिब्राल-टरके अधिवासियोंने उन्हें यथेष्ट बाधा दी थी। इसके बाद स्पेनके राजाओंने दुर्ग आदिसे जिब्राल्टरकी रक्षा की।

१७०४ ई०में जब स्पेनके उत्तराधिकारीके विषयमें विवाद हुआ, तब ब्रिटिश और ओलन्दाज शक्तिने मिल कर जिब्राल्टरको अपने कब्जेमें कर लिया। अनन्तर १७२१ ई०में स्पेनने सहसा इस पर आक्रमण किया,

गारो लोग साधारणतः साहसी और सत्यवादी हैं। यह स्वभावतः शान्त हैं, परन्तु अल्प चेष्टामें ही चिढ़ जाते हैं।
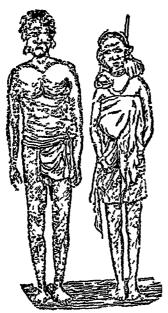
गारो पुरुष १॥ गजी धोती पहनते हैं। इस धोतीको वह अपने आप बुना करते हैं। धोती छोटी होते भी यह उसको ऐसे कौशलसे परिधान करते कि उससे बहुत अच्छी तरह भलमंसी बचती है। स्त्रियोंकी धोती पुरुषोंकी धोतीसे बड़ी होता है। वह कोई वस्त्राच्छादन व्यवहार नहीं करतीं। अपेक्षाकृति धनशाली स्त्रीपुरुष एक प्रकार कन्था बरतते हैं। गरीब आदमी किसी प्रकारके वृक्षकी छाल जलमें भिगो कूट पीट बढ़ा करके धूपमें सुखा लेते और उसीको गात्र पर वस्त्रकी भांति लपेट देते हैं।

गारोजातीय स्त्रीपुरुष बहुत ही अलङ्कारप्रिय हैं। पोतकी माला पहनके लोग फूले नहीं समाते। दामरा गांवके गारोओंका खासियोंके साथ विवाह आदि होते हैं। इनको स्त्रियोंके कानका बाला इतना भारी रहता कि लौर ठड्डीतक लटक पड़ती है। पुरुष अपनी पोशाक कौड़िया लगा करके बनाते हैं। खासो पहाड़के गारो कौड़ियोंके कई प्रकारके गहने तयार करते हैं। इनमें गणमान्य लोग कुहनो पर लोहे या पीतलका कड़ा पहनते हैं। कोई क्रीतदास उसे व्यवहार नहीं कर सकता, फिर भी किसीके वैसा चाहने पर रुपये दे कर गांवके मुखियेसे पूछना पड़ता है। पुरुषोंमें पीतलके पत्तरोंका मुकुट वह बांधता, जो युद्धमें अपने हाथसे शत्रुको मार डालता है। परन्तु अंगरेजोंके अधिकारमें एकबारगी ही वशीभूत हो जानेवाले लोगोंमें वह विलासिता प्रकाशक साधारण भूषण बन गया है। यह गोदना कभी नहीं गुदाते।

इनके अस्त्रशस्त्रोंमें बर्छा, तलवार और 'पांजी' (तूणीर-जैसी क्षुद्राकार तीक्ष्णमुख वंशशलाकाधार) प्रधान है। बांसका भाला साधारण हथियार है। इनकी तलवार दोधारी होती है। ढाल कई तरहकी बनाते हैं। यह छिप करके झाड़ोंसे शत्रु पर आक्रमण करनेमें बहुत पटु होते और तोप बन्दूक न रहते भी पत्थर आदि लुढ़का करके शत्रु को मारा करते हैं।

गारोजाति कलहप्रिय है। इनमें सदा परस्पर दङ्गा फसाद हुवा करता है। युद्धमें प्रवीण होते भी यह शिकार नहीं कर सकते और जाल बिछा करके पशु पक्षी पकड़नेमें कम होशियार देख पड़ते हैं। इनका प्रधान और साधारण खाद्य अन्न है। यह प्रातः, मध्याह्न और सन्ध्याको तीन बार आहार करते हैं। अफीम, गांजा, चरस आदि नशा इनमें नहीं चलता। यह घरमें पशु कम पालते और खासियोंको तरह गोदुग्धको गोमूत्र जैसा अखाद्य मानते हैं।

गारो लोग खेतीबारीसे ही जीविका निर्वाह करते हैं। फसल कट जाने पर बिना एक उत्सव भोज हुए नया अन्न कोई नहीं खाता। इनमें हल और कुदालका चलन कम है। यह जहां खेती करते, झोपड़ा डालके रहते हैं। खेत कट जाने पर उक्त कुटीरकी तोड़फोड़ करके गांव जा अपने घरमें रहने लगते हैं।

केलेके पेड़को जला करके एक प्रकारका क्षार बनाते जिसको नमकके बदले काममें लाते हैं। धनी लोगोंके पास पीतलके बर्तन हैं। लोहार, कुमार या बढ़ईका काम कोई नहीं जानता। विवाहमें दहेज लेने देनेकी चाल कम है। विवाह हो जाने पर वर कन्याके साथ रह करके श्वशुर वंशमें मिल जाता है। इनका अपने वंशमें विवाह नहीं होता। बहुविवाह प्रचलित होते भी दोसे अधिक विवाह निषिद्ध है। व्यभिचार दोषमें अपराधीको अर्थदण्ड लगता है। पूर्वकालको इस अपराधके दोषी स्त्री पुरुष फांसी पाते थे। इनमें किसी

जिरो—आसामको एक नदो। यह बरैलकी दक्षिण ढालसे निकल ७५ मील दक्षिणको बहती हुई बाराक या सुरमामें जा गिरती है। जिरो कछाड जिले और मणिपुर राज्यके मध्य सीमा जैसी लगी है। अधिकांश भाग पहाडो है। जङ्गली पैदावार और चाय इसकी राह आती है।

जिरेमिया—बाइबिल वा इञ्जीलके धर्मवक्ता प्रसिद्ध पुरुष। इनके पिताका नाम था हिलकियरा अनुमानतः ये ईसासे ६२६ से ५८६ वर्ष पहले आविर्भूत हुए थे। इन्होंने एक छोटेसे गांवमें पुरोहितवंशमें जन्म लिया था। योशिया नामक यहूदी राजाके त्रयोदशाङ्क राज्यकालमें ये साधारणके सामने धर्मवक्ताके रूपमें प्रगट हुए थे। जिस समय योशिया अपने राज्यको समस्त आपत्तियोंसे मुक्त समझते थे, उस समय जिरेमियाको विपत्तिकी सूचना मालूम हो गई थी।

पहले जिरेमिया दुःखवादी न थे। उन्होंने विचारा था कि यहूदी जातिके चिन्ताशील व्यक्तियोंको वे जातीय मुक्तिका उपाय समझा सकेंगे। पीछे उन्हें यह आशा एक तरहसे छोड देनी पडी थी। इन्होंने Yahweh (V. 4.) नामक बाइबिलके एक अंशमें कहा है, "क्या ऊंच और क्या नीच, क्या धनी और क्या निर्धन किसीमें भी हमें धर्मप्राणता नहीं दीखती।" उक्त अंशोंके लोगोंमें अधिकांश ही इनके धर्म-संस्कारके विषयमें सहानुभूति रखते थे। जिरेमियाका यह मत था कि "धर्म भावोंको जाग्रत रखनेके लिए धर्मग्रन्थोंका पढ़ना अत्यन्त आवश्यक है।"

योशियाकी मृत्युके बाद लोगोंने पुनः 'बल' नामक विदेशी देवताकी पूजा करना शुरू कर दी। जिरेमियाने इसके विरुद्ध आन्दोलन उठाया। आखिर वे प्रत्येक वाणीके अन्तमें कहने लगे—"बेबिलनका राजा इस देशको मिट्टीमें मिला देगा।" कुछ दिन बाद इनकी भविष्यद्वाणी सचमुच हो चरितार्थ हो गई।

परवर्ती राजाओंने जिरेमियाको बहुत तकलीफें दो थीं, किन्तु ये अपने कर्तव्यपथसे विचलित नहीं हुए थे।

बाइबिलमें कई जगह इनका उपदेश लिखा मिलता है; किन्तु आधुनिक ऐतिहासिकगण कुछ भविष्यद्वाणियोंको हो खास इनके द्वारा लिखित मानते हैं।

जिरोमो—ईसाके धर्मके अन्यतम प्रचारक और महापुरुष दलमाशिया और पैनोनियाके निकटवर्ती 'स्त्रीदो' नामक स्थानमें (३३१से ३५० ई०के भीतर किसी समयमें) इनका जन्म हुआ था। इनके माता-पिता ईसाई धर्मके माननेवाले और सम्पत्तिशाली थे। पहले पहल इन्होंने अपने ही ग्राममें विद्याभ्यास किया था, पीछे कुछ लिख पढ कर, ये अपने मित्र बोनोसासके साथ रोम चले गये और वहां सुप्रसिद्ध वैयाकरण दोनातासके पास व्याकरण और दर्शनशास्त्रका अध्ययन किया। 'सिसेरो' और 'भार्जिल'के ग्रन्थोंमें इन्होंने अशेष पाण्डित्य अर्जन किया था।

३६६ ई०में बिशप लिबेरियसने इन्हें ईसाई धर्ममें दीक्षित किया। किन्तु कुछ दिन बाद इनके नैतिकचरित्रकी अवनति हो गई। पीछे बहुत साधना करके इन्होंने अपने पापोंका प्रायश्चित्त किया। अनन्तर ये विद्वान् व्यक्तिको तरह सिर्फ ज्ञानकी साधनामें ही जीवन बिताने लगे। उत्तरोत्तर इनको ज्ञान-तृष्णा प्रबल होने लगी। स्त्रीदोसे ये ऐकुलिया गये और फिर वहांसे 'गौल' देशको चले गये। बहुत दिनों तक देश भ्रमण करनेके बाद ये ऐकुलियामें वास करने लगे। इसी समय (३७०-३७२ ई०) इन्होंने अपना पहला ग्रन्थ रचा था। इस ग्रन्थ पर इतना विवाद चला कि इन्हें देश छोड़ कर पूर्वकी तरफ चला जाना पड़ा।

अन्तियक नगरमें ये बीमार पड़ गये। इस रुग्न अवस्थामें उनका मन श्रीभगवान्‌के समीप जानेके लिए और भी व्याकुल हो गया था। इन्हें रोमके साहित्यसे बड़ा प्रेम था। बीमारीमें इन्होंने स्वप्न देखा, जिसमें स्वयं ईसाने आ कर इन्हें भर्त्सना की। इन्होंने उसी समय प्रतिज्ञा की कि "धर्मशास्त्रके सिवा मैं और कुछ भी न पढ़ूंगा।" फिर वे कालकिसको मरुभूमिमें साधनाके लिए चल दिये। यहां ये पोथियोंका संग्रह कर उनकी प्रतिलिपि करते थे और हिब्रू भाषा पढ़ते थे। यहीं उन्होंने महापुरुष पलकी जोवनी लिखी थी। इसमें बहुतसी ऐसी घटनाओंका उल्लेख है, जो ऐतिहासिक दृष्टिसे असङ्गत मालूम पड़ती हैं।

भाग खड़ हुए। अंगरेजोंने कुछ लोगोंको वन्दी बनाया और दोनों गांवों पर अपना अधिकार जमाया।

१८६६ ई०को पहले पहल गारो पहाड़ अंगरेजोंके अधीन आया था। कप्तान विलियमसन डिपटी कमिश्नरकी भांति तुरामें रहे। १८७२ ई०तक गारो शान्त थे। अमीनोंके साथ उक्त विवाद हो जानेसे बङ्गालके छोटे लाटने स्थिर किया कि गारो पर्वतमें और कोई ग्राम स्वाधीन रखना उचित नहीं। फौज भेजी गयी। कोचविहारके कमिश्नर और गारो पहाड़के डिपटी कमिश्नरको सैन्य परिचालनका भार मिला था। कपतान विलियमसन पुलिसके सिपाही ले तङ्गवलगिरि, दिलमागिरि प्रभृति बड़े बड़े स्वाधीन ग्राम अधिकार करते हुए खासी पर्वतके मावोदुदान नगरसे पश्चिममुखको चल पड़े। आसाम विभागका एक दल सैन्य उसी शहरमें रह गया। कपतान विलियमसनके रङ्गरणगिरि ग्राम पहुंचने पर सुसङ्ग दुर्गापुरसे कप्तान डाली भी जा करके उनसे मिले थे। दोनो दल मिलकरके सोमेश्वरी नदीके तीर और अश्मानगिरि ग्राममें लड़नेको तैयार होने लगे। इससे पहले कप्तान डालीके साथ रङ्गरणगिरिमें गारोओंकी एक छोटी लड़ाई हुई थी, जिससे यह हार गये। उधर कप्तान डेविस निकरिहार ग्रासकी ओरसे आ रहे थे। बड़ी देरके बाद वह आ करके रङ्गरणगिरिमें मिलित हुये। क्रमशः एक ग्रामके बाद दूसरा मानने लगा, प्रायः युद्ध करना ही न पड़ा। बहुतसे ग्रामोंके सरदारोंने क्षति पूरणार्थ दण्ड दिया था। कप्तान डाली पश्चिम पहाड़ और कप्तान डेविस उत्तर पहाड़ देखने गये और ग्रामादि अधिकार करके शासनके लिये लश्कर उपाधि दे सरदार नियुक्त करने लगे। प्रति घरके हिसाबसे सब लोग कर देने पर बाध्य हुए। तदवधि गारो शान्त बने हुए हैं।

इनकी भाषा एक नहीं है। दिक्‌भेद और भाषा भेदसे चिकमङ्ग पर्वतके लोग तुरावालोंकी बोली समझनेमें असमर्थ हैं। यह स्वदेश छोड़ करके प्रायः कहीं नहीं जाते।

गारोटी—दाक्षिणात्यकी एक पर्वतगुहा। यह तेलगांव-दाभाड़ेसे १० मील दक्षिण और समतलक्षेत्रसे ४५०।५०० फुट ऊंची है। इस पर्वतमें ई० प्रथम शताब्दीके खोदित कई एक बौद्ध गुहामन्दिर देख पड़ते हैं। पहले गुहामन्दिर पर्वतके सर्वोच्च स्थानमें एक ऋजुशिखर बना हुआ है। इसका द्वार दक्षिण-पश्चिम मुखी है और सामनेका कुछ अंश टूट गया है। यहां चढ़नेका कोई सहज उपाय नहीं। द्वितीय गुहा इसकी अपेक्षा कुछ नीची है। उसके मण्डपका परिमाण २८ फुट×८ फुट ८ इञ्च×८ फुट×८ इञ्च है। पश्चाद्‌ भागमें ४ अन्तरालगृह दृष्ट होते हैं। प्रत्येक द्वारद्वयके मध्यमें ईंटोंके अठपहल दो खम्भे जलपात्र पर स्थापित हैं। स्तम्भके मस्तक पर सिंह, व्याघ्र किंवा हस्तीकी मूर्ति खुदी हुई है। एतद्भिन्न स्तम्भमस्तकके मध्य स्थानका कारुकार्य भी अति सुन्दर है। उसके पश्चाद्‌ भागमें निम्नदेश पर २ फुट चौड़ी और १ फुट सात इञ्च ऊंची एक एक प्रस्तरवेदी है। इससे ज्ञात होता कि काल पाकरके बौद्ध कीर्ति लुप्त और ब्राह्मणधर्मकी प्रवलता प्रसारित हुई। मन्दिर-वामभागके तृतीय कक्षमें एक लिङ्गमूर्ति विराजमान है। मन्दिरके मध्यमें शिव-वाहन वृषभमूर्ति और गुहाके वहिर्देशमें देवाईशसे प्रदत्त आलोकस्तम्भ तथा तुलसीमञ्च है। इसी कक्षद्वारके पार्श्वस्थ स्तम्भ पर एक अस्पष्ट शिलाफलक उत्कीर्ण है। वह १४३८ ई०के श्रावण मास शुक्लपक्षको लिखित हुई।

द्वितीय गुहासे उत्तर पश्चिम दिक्‌को कुछ दूर जाने पर एक शुष्क दीर्घिका मिलती है। उसको लांघ करके थोड़ा चलने पर और एक छोटी गुहा देख पड़ती है। इसके सामने वरामदेमें लकड़ीके ४ खम्भे पत्थरमें घर बना करके लगाये गये हैं। उसकी वामदिक्‌के शेष भागमें एक अन्तरालगृह और पीछेको किसी घरमें प्रवेशके लिये एक द्वार है। तत्पश्चात्‌ पर्वत पर एक वृहत्‌ कूप और उसीके निकट चतुर्थ गुहामन्दिर अवस्थित है। इस गुफाके सामनेकी दीवार अपरापर गुहाओंकी अपेक्षा ४।५ फुट चौड़ी है। घुसनेके लिये दो गोल दरवाजे लगे हुये हैं। भीतरी दालानके दाहने और वायें ४।४ घर हैं। उसमें वामदिक्‌का एक घर टूट पड़ा है। मन्दिरके पश्चाद्‌ भागमें २ अन्तरालगृह और उसके सामने गर्भगृह है। इस घरके वीचमें किसी मृतव्यक्तिके नाभि अस्थिका समाधि है। इसी समाधिस्थान पर छत तक ऊंचा खम्भा लगा था। अब उस स्तम्भको गिरा करके एक छोटी शैव-

जिलादार (फा० पु०) १ सजावल, सरबराहकार । २ जमींदारसे नियुक्त किये जानेवाला लगान वसूल करनेका अफसर । ३ नहर, अफीम आदि सम्बन्धी किसी हलकेमें काम करनेवाला छोटा अफसर ।

जिलादारी (फा० स्त्री०) जिलेदारका काम ।

जिलाना (हिं० क्रि०) १ जीवित करना, जीवन देना । २ प्राण रक्षा करना, मरने न देना । ३ मूर्छित धातुको पुनः जीवित करना ।

जिलासाज (फा० पु०) वह जो हथियारों पर ओप चढाता हो, सिकलीगर ।

जिलिङ्ग सिरिङ्—छोटा नागपुरका एक शहर । यह लोहारडागा नगरसे ७१ मील दक्षिण-पूर्वमें अक्षा० २३´ ११´ उ० और देशा० ८५´ ६१´ पू०के मध्य अवस्थित है ।

जिलिङ्गा—छोटा नागपुरके अन्तर्गत हजारीबाग जिलेका एक पहाड़ । इसकी ऊंचाई समुद्रपृष्ठसे ३०५७ फुट और आस-पासकी भूमिसे १०५० फुट है । इसके दाहनी तरफ उपत्यका है, जिसमें चायकी खेती होती है ।

जिलेबी (हिं० स्त्री०) जलेबी देखो ।

जिलोपत्तन—राजपूतानाके अन्तर्गत जयपुर राज्यके तोरवती जिलेका एक शहर ।

जिल्का—अहमदाबाद जिलेकी एक छोटी नदी । इसके किनारे प्राचीन भीमनाथ महादेव तथा बहुतसे प्राचीन मन्दिरादि हैं ।

जिल्द (अ० स्त्री०) १ चमड़ा, खाल, खलड़ी । २ त्वचा, ऊपरका चमड़ा । ३ पुस्तककी एक प्रति । ४ भाग किसी पुस्तकका पृथक् सिला हुआ खण्ड । ५ वह पट्ठा या दफ़्ती जो किसी किताबकी सिलाई जुजबंदी आदि करके उसके ऊपर उसकी रक्षाके लिए लगाई जाती है ।

जिल्दगर (फा० पु०) जिल्दबंद ।

जिल्दबंद (फा० पु०) जिल्द बांधनेवाला ।

जिल्दबंदी (फा० स्त्री०) पुस्तकोंको जिल्द बांधनेका काम, जिल्दबंधाई ।

जिल्दसाज़ (फा० पु०) जिल्दबंद ।

जिल्दसाज़ी (फा० स्त्री०) किताबों पर जिल्द बांधनेका काम, जिल्दबंदी ।

जिल्दी (अ० वि०) त्वक् सम्बन्धी, चमड़ेसे सम्बन्ध रखनेवाला ।

जिल्पी अमनेर—बरार प्रदेशके अन्तर्गत अमरावती जिलेके मोरसी तालुकका एक ग्राम । यह गाँव आम और वर्धा नदीके सङ्गमस्थान पर जलालखेड़ शहरके दूसरे पारमें अवस्थित है । इसको अमनेर भी कहते हैं ।

जिल्लत (अ० स्त्री०) १ अनादर, तिरस्कार, बेइज्जती । २ दुर्दशा, दुर्गति, हीन दशा ।

जिल्लिक (सं० पु०) दक्षिणस्थित देशभेद, दक्षिणमें एक देशका नाम । (भारत ६।९ अ०)

जिल्ली (हिं० पु०) आसाममें होनेवाला एक प्रकारका बाँस । यह घरकी छाजन आदिके काममें आता है ।

जिल्लेल—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कडापा जिलेके प्रोद्दातुर तालुकका एक ग्राम । यहां खाड़ीके किनारे एक प्राचीन अस्पष्ट शिलालेख है ।

जिल्लस—दक्षिणदेशके एक प्राचीन राजा । मन्द्राज प्रदेशके राबुतुपल्ली, पामुलपाड़ु आदि स्थानोंमें इनके खोदित दानपत्र मिलते हैं ।

जिल्लसमुद्री (जिलासुद्री)—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत नेल्लूर जिलेके कान्दुकुड़ तालुकका एक ग्राम । गाँवके उत्तर एक जनार्दनदेव और दूसरा आञ्जनेयदेवके प्राचीन मन्दिर है ।

जिल्हौर (हिं० पु०) अगहनमें काटा जानेवाला एक प्रकारका धान ।

जिवाजिव (सं० पु०) चकोरपक्षी ।

जिष्णु (सं० पु०) जयति जि-ग्स्नु । ग्लाजिस्थश्चग्स्नुः । पा ३।२।१३९ । १ विष्णु । २ इन्द्र । (भारत ५।७०।१३) ३ अर्जुन, युद्धस्थलमें साहस पूर्वक कोई अर्जुनके सामने नहीं आ सकते तथा वे अत्यन्त दुर्धर्ष शत्रु को जय करते थे इसीलिये अर्जुनका नाम जिष्णु हुआ हो । ४ सूर्य । ५ वसु । ६ भौत्य मनुके एक पुत्रका नाम । (हरिवंश ७।८८) (त्रि०) ७ जयशील, जीतनेवाला, फतेहमंद ।

जिष्णुगुप्त—नेपालके एक राजा । ये सम्भवतः अंशुवर्माके वंशधर और उनके बादके राजा हैं । इनके समयमें खोदित शिलालेख भी मिलते हैं । उनके पढ़नेसे मालूम होता है कि, जिष्णुगुप्त नेपालके स्वाधीन राजा नहीं थे । इन्होंने लिच्छविवंशीय मानगृहाधिपति ध्रुवदेव-

"गार्ध्रवाजा शिलाशिता ।" (भारत ४।४२ श)

गार्ध्रवाजित (सं० पुं०) गार्ध्रवाजः कृतः गार्ध्रवाज करोत्यर्थे णिच् कर्मणि क्त । कृतगृध्रपक्षबाण, जिस वाणमें गृध्रका पंख दिया गया हो ।

गार्ध्रवासस (सं० त्रि०) गार्ध्र : पक्षो वास इवास्य । गृध्रपक्षयुक्तवाण ।

"शराणां गार्ध्रवाससाम ।" (भारत ३।३० थ०)

गार्भ (सं० त्रि०) गर्भे गर्भशुद्धौ साधु अण् । १ गर्भशुद्धिके निमित्त जिसका अनुष्ठान किया जाय । २ गर्भसम्बन्धीय ।

गार्भि—बंबई प्रदेशस्थके दांगसका एक क्षुद्र राज्य । भूपरिमाण ३०५ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ४६८८ है। इसमें सिर्फ ५३ ग्राम लगते हैं। राज्यकी आमदनी ६५००) रुपयेकी है ।

गार्भिक (सं० स्त्री०) गर्भ-ठक् । गर्भसम्बन्धीय ।

गार्भिण (सं० क्ली०) गर्भिणीनां समूहः अण् । गर्भिणीसमूह, गर्भवती स्त्रीका झुंड ।

गार्मुत (सं० त्रि०) गर्मुत इदम् अण् । १ गर्मुत् धान्य सम्बन्धीय ।

"प्राजापत्यं गार्मुतं चरुं निर्वपेत् ।" (तैत्ति० सं० २।३।४।७)

२ मधु, शहद ।

गार्वा—बङ्गालमें पलामु जिलेके अन्तर्गत एक शहर । यह अक्षा० २४° १०´ उ० और देशा० ८३° ५०´ पू०के बीच दानरो नदी पर अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ३६९० है। लाख, धूप, काथ, रेशमके कोए, चमड़े, तेलहन, घी, रुई और लोहे प्रभृति चीजोंकी रफतनी यहांसे होती है, और अनाज, तांबेके बरतन, कम्बल, रेशम, नमक, तम्बाकू, मसाले तथा बहुत तरहके औषध पदार्थ दूसरे दूसरे देशसे यहां आते हैं ।

गार्ष्टेय (सं० पु० स्त्री०) गृष्टेरपत्यं पुमान् ठञ् । गृष्टि अर्थात् एक बार प्रसूत धेनुका अपत्य, वृषभ ।

गार्हपत (सं० त्रि०) गृहपतेरिदं गृहपतेर्भावो वा अश्वपत्यादित्वात् अण् । १ गृहपतिसम्बन्धीय । (क्ली०) गृहपतिका भाव, घरके स्वामीकी इज्जत और प्रतिष्ठा ।

गार्हपत्य (सं० पु०) गृहपतिना यजमानेन नित्यं संयुक्तं संज्ञाया । १ यजमानरूप गृहपतिके सहित संयुक्त अग्निविशेष ।

२ वह स्थान जहां यह पवित्र अग्नि रखी जाती है।

गार्हपत्यागार (सं० पु०) गार्हपत्यस्यागारं, ६-तत् । गार्हपत्य अग्निका घर ।

गार्हपत्याग्नि (सं० स्त्री) छः प्रकारकी अग्नियोंमें पहली और प्रधान अग्नि । पूर्व समय यज्ञोंमें पात्रतपन आदि काम इसी अग्निमें किये जाते थे । प्रत्येक गृहस्थको शास्त्रानुसार इस अग्निकी रक्षा करनी चाहिये ।

गार्हमेध (सं० पु०) गृहस्थायं अण् गार्हः मेधः कर्मधातु । गृहसम्बन्धीय यज्ञ । पंचयज्ञ आदि गृहस्थोंका मुख्यकर्म ।

गार्हस्थ्य (सं० क्ली०) गृहस्थस्य कर्म गृहस्थ-यत् १ गृहस्थ कर्त्तव्य पञ्च यज्ञादिकर्म, गृहस्थोंके मुख्य पांच काम (पु०) २ गृहस्थाश्रम ।

"चतुर्णामाश्रमाणां हि गार्हस्थ्यं श्रेष्ठमाश्रमम् ।" (रामायण, २।१०६।२२)

गाह्य (सं० त्रि०) ग्राम्य, घराऊ ।

गाल (सं० पु०) मदनवृक्ष ।

गाल (हिं० पु०) गंड, कपोल ।

गालगूल (हिं० पु०) व्यर्थबात, गपशप ।

गालन (सं० क्ली०) गल चालने भावे ल्युट् । १ चारण, निःस्रावण । २ वस्त्रपूतकरण, कपड़ेसे छानना ।

गालफल (सं० क्ली०) मदनफल ।

गालमसूरी (सं० स्त्री०) एक तरहकी पकवान वा मिठाई ।

गालव (सं० पु०) गल-घञ् । १ लोध्रवृक्ष, लोधका पेड़ । २ केन्दुकवृक्ष, तेंन्दूका पेड़ । ३ श्वेतलोध्र, सफेदलोद । ४ एक ऋषिका नाम । ये विश्वामित्रजीके पुत्र थे । ५ विश्वामित्रके एक शिष्य। इन्होंने भक्ति और सेवा सुश्रुषासे अपने गुरु विश्वामित्रको अत्यन्त संतुष्ट किया । विद्या समाप्त होने पर गालवने विश्वामित्रको गुरुदक्षिणा देनेके लिये बहुत अनुरोध किया , किन्तु विश्वामित्रने दक्षिणा मांगनेसे अस्वीकार किया। विश्वामित्रने इनके हठसे क्रोधित होकर आठ सौ ऐसे घोड़े मांगे जिनका वर्ण श्याम और एक कान हो। गुरुजीसे ऐसी आज्ञा पाकर वे शीघ्र ही गरुड़को प्रसन्न कर अपने साथ ले राजा ययातिके निकट पहुंचे ययातिके पास घोड़े, तो नहीं थे किन्तु उन्होंने गालवको अपनी कन्या माधवी देकर कहा "गालवजी ! जो दो सौ श्यामकर्ण घोड़े, देवें उन्हें इस कन्याको देकर एक

रहना) इन दो शब्दोंके संयोगसे उत्पन्न हुआ है। इसका अर्थ सर्वदा जो मौजूद हैं अर्थात् सनातन हैं। इसीलिए इसके वर्णनालमें (Rev. 1; 4; 11; 17) कहा गया है कि 'He who is, and who was and who is to come" अर्थात् जो हैं, जो थे और जो भविष्यत्में आ कर विद्यमान रहेंगे।

कहा जाता है, कि १५१८ ई०में पेट्रस गलाटिनसने पहले पहल इस शब्दका व्यवहार किया था। परन्तु यह बात विश्वासयोग्य नहीं क्योंकि १४वीं शताब्दीके पहले भागकी पोथियोंमें इस नामका उल्लेख दृष्टिगत होता है। टिन्डेलने जो १५३० ई०में Pentateuch का अङ्गरेजी अनुवाद प्रकाशित किया था, उसमें जिहोवा शब्द स्पष्टत: व्यवहृत हुआ है। आधुनिक विद्वानोंका कहना है कि जिहोवाका प्रकृत उच्चारण 'इयाह' है।

'ओल्ड टेष्टामेण्ट' में भगवान्‌का एकमात्र नाम 'जिहोवा' लिखा गया है विद्वानोंने गिन कर देखा है कि यह नाम 'बाइबिल'में छह हजार बार व्यवहृत हुआ है।

जिहोवा शब्दसे भगवान्‌की सत्ता मालूम होती है, किन्तु दार्शनिक प्रणालीसे सिर्फ वर्तमान सत्ताका और ऐतिहासिक प्रणालीसे सामयिक विकाशमात्रका बोध होता है। विद्वानोंमें इस विषयका मतभेद पाया जाता है। 'प्रोटेष्टण्ट'-मतावलम्बी लेखकोंका कहना है कि जिहोवा नामको ऐतिहासिक रीतिसे ग्रहण करना चाहिए। इस विषयमें वे निम्नलिखित युक्तियोंसे काम लेते हैं। (क) प्राचीनकालके लोगोंमें दार्शनिक सत्ताकी गूढ़ रहस्यको समझनेकी शक्ति नहीं थी। किन्तु हमें मिसरके इतिहासके पढ़नेसे मालूम हो सकता है कि अतिप्राचीनकालमें भी भगवान्‌के विषयमें मिसरके लोगोंकी उच्च धारणा थी। सम्भवतः मुसाके समयमें यह नाम दार्शनिक रूपमें व्यवहृत नहीं हुआ, बादमें खृष्टीय-धर्म तत्त्वविदोंने उसकी सूक्ष्म व्याख्या होगी। (ख) हिब्रूका क्रियापद Havah वा Hayah गतिवाचक है, स्थिरत्व वा सनातनत्ववाचक नहीं है। किन्तु इस युक्तिके उत्तरमें हिब्रू भाषाके विशेषज्ञ कहते हैं कि उससे स्थायिभावत्व भी समझा जा सकता है। सुतरां मध्ययुगके यूरोपीय नैयायिकगण जिहोवाके विषयमें जो युक्ति तर्ककी अवतारणा करते हैं, वह समीचीन नहीं मालूम होती। उन लोगोंका कहना है कि ससीम जीव ही गुणोंके द्वारा सीमावद्ध है; किन्तु भगवान् सिर्फ उसकी सत्तासे ही प्रकट हो सकते हैं। वे पवित्र और सरल हैं—वे ही आदि और अन्त हैं। 'Alpha and omega, the beginning and the end......Who is, and who was, and who is to come, the Almighty" (Apoc. 1, 8)

नामकी उत्पत्ति—Von Bohlen, von der, Alm आदि विद्वानोंका कहना है कि यहूदियोंने जिहोवा नाम कनानाइट जातिसे ग्रहण किया था। किन्तु Kuenen और Baudissin आदि मनीषियोंने इसका प्रतिवाद किया है। 'ओल्ड टेष्टामेण्ट'के देखनेसे तो यही मालूम होता है कि जिहोवा सर्वदासे कनानाइट जातिके विरुद्ध आचरण करते आये हैं—उक्त जातिके शत्रु होते हुए भी वे उनके देवता थे यह बात कयासमें नहीं आती। एक श्रेणीके विद्वानोंका अभिमत है कि मिसर देशमें ही जिहोवा नामकी उत्पत्ति हुई है। मुसाने मिसरमें ही शिक्षा पाई थी; इसलिए यह मत यथार्थ भी हो सकता है। किन्तु इस विषयमें अधिक प्रमाण नहीं मिलते। पण्डितप्रवर 'रोथ'का कहना है कि जिहोवा नाम प्राचीन चन्द्रके देवता 'इओ'से उत्पन्न हुआ है। अन्य श्रेणीके विद्वानोंका सिद्धान्त है कि 'जाह्' नामक वविलनके देवतासे 'जिहोवा'की उत्पत्ति हुई है। किन्तु यह मत समीचीन नहीं समझा जाता।

आधुनिक प्रामाण्य मत यह है कि उक्त पवित्र नाम किसी प्रकार रूपान्तरित आकारमें मुसाके पहले यहूदियोंमें प्रचलित था। होरेब पर्वतके ऊपर भगवान्‌ने भक्तों के समक्ष उपस्थित हो कर अपना यथार्थ नाम 'जाहेव' वा 'जिहोवा' प्रकट किया था। बाइबिलके सबसे पुराना अंशमें जिहोवाका १५६ बार उल्लेख है। मुसाकी माताका नाम जोखावेद था; इसके प्रथम अंशमें जिहोवाका सादृश्य है। भगवान्‌ने पहले पहल मुसाको ही अपना नाम बतलाया था, इसमें सन्देह हो सकता

ब्राह्मणोंके प्रति इनकी विशेष भक्ति है। इनका जन्म, मृत्यु, विवाह और अपरापर व्रतकर्म ब्राह्मण द्वारा हो सम्पन्न होता है। यह सभी देवदेवियोंका उपासना करते हैं। परन्तु उसमें वेतालकी पूजा सबसे बड़ी है। सब हिन्दू पर्वोंको पालन करते भी यह कोई उपवास नहीं मनाते और भूत, प्रेतात्माका आगमन शुभाशुभ चिह्नदर्शन प्रभृति इष्टानिष्टदायक घटनाओं पर विश्वास लाते हैं। किसीके भी मरने पर शवदाह नहीं करते।

इनमें विधवाविवाह प्रचलित है। जातीय एकता सूत्रमें सभी आबद्ध होते हैं।

गाव (फा० पु०) गाय, बैल।

गावकुशी (फा० स्त्री०) गोघात, गोवध।

गावकुस (फा० पु०) लगाम।

गावकोहान (फा० पु०) एक तरहका घोड़ा, जिसको पीठ पर बैलको तरह कूबड़ निकला हो। इस तरहके घोड़े पर चढ़ना दोष माना गया है।

गावखाना (फा० पु०) गोशाला।

गावखुर्द (फा० वि०) १ अन्तर्धान, गायब। २ नष्टभ्रष्ट, बरबाद।

गावजबान (फा० स्त्री०) फारस देशके गोलान प्रदेशमें उत्पन्न एक प्रकारको बूटो। इसके पत्र हरे रंग लिये मोटे होते हैं और इनके ऊपर छोटे छोटे दाने निकले रहते हैं। इसके फूल लाल रंगके छोटे छोटे होते हैं। इस बूटीके सेवन करनेसे ज्वर तथा खांसी जाती रहती है।

गावजोरो (फा० स्त्री०) १ बलप्रदर्शन। २ हाथापाई, भिड़ंत।

गावट—बम्बई प्रदेशस्थ महीकाण्ठा विभागके अन्तर्गत एक क्षुद्र राज्य। इसका क्षेत्रफल १० वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः २४५४ है। कोलिवंशीय ठाकुर यहांके राजा हैं। राजाको वार्षिक आमदनी प्रायः तीन हजार रु० है जिनमेंसे ४३) रु० ईडरके राजाको कर देना पड़ता है।

गावड़ (फा० स्त्री०) गला, गर्दन।

गावतकिया (फा० पु०) कमर लगाकर बैठनेका एक बड़ा तकिया।

गावदी (हिं० वि०) अबोध, जड़, नासमझ, बेवकूफ।

गावदुम (फा० वि०) १ जो बैलको पूंछकी तरह पतला हो। २ चढ़ाव, उतार ढालू।

गावपछाड़ (हिं० स्त्री०) कुश्तीका एक पेंच।

गावल (हिं० पु०) दलाल।

गावल्गणि (सं० पु०) धृतराष्ट्रके मन्त्री और साथी, सञ्जय।

गावली—दाक्षिणात्यके ग्वाला जाति। वीजापुर, मुद्दमदपुर, बाघलकोट, कलकल, कालादगी, तालीकोट और मिन्दगी प्रभृति स्थानोंमें यह रहते हैं। शोलापुरके निकटवर्ती पण्ढरपुरमें इनका आदिवास रहा। सम्भवतः गाय दूहनेसे हो इनको गावली कहा जाता है।

इनमें २ श्रेणियां होती हैं--नन्दगावली और खिल्लारी। वर कन्या दोनो एक पदवीके होनेसे विवाह नहीं होता।

यह बहुत गरीब होते और देखनेमें मराठो कुनबियों-जैसे लगते हैं। मराठी पगडीके बदले इनमें कनाड़ियों जैसा रूमाल व्यवहृत होता है। यह गांवमें रहना नहीं चाहते और उसीसे मैदानमें झोपड़े बना अपने अपने गोमेषादिके साथ निवास किया करते हैं। इनमें सभी लोग प्रायः निरामिषभोजी हैं। सप्ताह वा पक्षान्तरको एकबार मात्र स्नान किया जाता है। कोई कोई प्रति रविवारको स्नानान्तमें गृहस्थित खंडोबाको प्रतिमूर्ति पूजते और उसको दुग्ध आदि निवेदन करते हैं।

यह लोग स्वभावतः धीर, परिश्रमी, सच्चे और मितव्ययी होते हैं। गाय, भेड़ आदि पालन और दुग्ध, दधि, मक्खन प्रभृति विक्रय हो इनको उपजीविका है। लिङ्गायत या नन्दगावली स्वजातिस्पृष्ट अन्न व्यतीत किसी दूसरे व्यक्तिका अन्न भोजन नहीं करते। परन्तु खिल्लारी सभीके हाथका खा लेते हैं। तुलजापुरकी खण्डोबा और अम्बाबाई इनकी प्रधान देवता है। यह पण्ढरपुर, जेजुरी, तुलजापुर और सिङ्गनापुरको तीर्थयात्रा करते हैं।

ब्राह्मणों पर इनकी अचला भक्ति है। पण्ढरपुरके निकटवर्ती मादलगांवमें इनके गुरु रहते और सब लोग उनको चन्द्रशेखराप्पा कहते हैं। वह अविवाहित होते और मृत्युके पूर्व एक शिष्य रख लेते हैं। गुरुके मरने पर शिष्यको चन्द्रशेखराप्पा पद मिलता और चिरजीवन अविवाहित रहना पड़ता है।

जिह्वल (सं॰ त्रि॰) जिह्वेन जिह्वाया लाति गृह्णाति परद्रव्यानीति जिह्व-ला-क। भोजनलोलुप, चट्टू, चटोरा।

जिह्वा (सं॰ स्त्री॰) जयति वसमनया जि-वन्। शेवयह्वजिह्वाग्रीवाप्वामीराः। उण् ११५४। वन् प्रत्ययेन हुगागमे निपातनात् साधुः। रसज्ञानेन्द्रिय अर्थात् वह इन्द्रिय जिसके द्वारा कटु, अम्ल, तिक्त, कषाय, मधुर आदि रसोंका आस्वादन हो। साधारण भाषामें इसको जीभ या ज़बान कहते हैं। इसके संस्कृत पर्याय—रसज्ञा, रसना, रसाल, मधुस्रवा, रसिका, रसाङ्का, रसन, जिह्व, रसालोला, रसाला, रसला और ललना। इसका अधिष्ठाता देवता प्रचेता है। अग्निकी जिह्वा सात प्रकारकी होती है, जैसे—काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, स्फुलिङ्गिनी और विश्वरूपी। (मुण्डकोपनि॰)

अधिकांश प्राणियोंको पांच प्रधान इन्द्रियां हैं; भिन्न भिन्न इन्द्रियों द्वारा भिन्न भिन्न कार्य होता है। इन पांच इन्द्रियोंमें जिह्वा भी एक है; इसके द्वारा रसका स्वाद ग्रहण किया जाता है। मनुष्यकी जिह्वा मांसमय और मुख-विवरके बीचमें होती है, जिसको मनुष्य इच्छानुसार इधर उधर हिला डुला सकता है। किसी पदार्थके खाते समय अथवा मुंहमें किसी खाद्य पदार्थके रहने पर तथा बात कहते समय जिह्वा नाना दिशाओंमें चलती रहती है।

जिह्वाका काम अन्यान्य इन्द्रियोंसे कुछ जटिल है; इससे दो कार्य सम्पन्न होते हैं। इसके द्वारा हम आस्वाद ग्रहण, शब्दोंका उच्चारण और द्रव्य स्पर्श कर सकते हैं। जिह्वाका ऊपरी हिस्सा एक सूक्ष्म त्वक्से ढका है। इस स्थानसे किसी द्रव्यके आस्वाद ग्रहण अथवा स्पर्शन द्वारा उसके गुण अवगुण समझनेकी शक्ति उत्पन्न होती है तथा जिह्वाके मांसपिण्डके अभ्यन्तर प्रदेशसे इसकी चालना-शक्तिकी उत्पत्ति होती है।

चक्षु द्वारा देख कर जिह्वाकी वाह्य आकृति प्रकृतिकी परीक्षा की जा सकती है। जिह्वाके प्रायः समस्त अंश अत्यन्त सूक्ष्म मांस पेशी द्वारा बने हैं। ये मांसपेशियां विभिन्न दिशाओंमें संस्थापित और सब ओर समान मापसे तरतीबवार सजी हुई है। जिह्वा अधिकांश मांसपेशीके द्वारा शरीरके अन्यान्य अंशोंसे जा मिली है। इसका ऊपरी हिस्सा पृथक् चमड़ेसे और नीचेका हिस्सा मुख और गालोंके चमड़ेसे ढका है। यह एक बहुत ही सूक्ष्म झिल्लीसे ढकी है, यह झिल्ली रसनासे निकली हुई लारसे सर्वदा भीगी रहती है। नीचेकी झिल्ली बहुत ही पतली, चिकनी और स्वच्छ है। मध्यस्थानसे जिह्वाके अग्रभाग तक एक ऊंची तह है। जिह्वाके ऊपरकी और आसपासकी चमड़ी मोटी तथा नीचेकी अपेक्षा अधिक छिद्रयुक्त या कोषमय है। इसी चमड़ी पर जीभके उभार या कांटे रहते हैं और इसी अंशसे हमको समस्त द्रव्योंका स्वाद मालूम पड़ता है। जिह्वाका निम्नभाग कुछ मांसपेशियों द्वारा अन्यान्य अंशके साथ संयुक्त होनेके कारण यह नियमित रूपसे हिल डोल सकती है और इच्छानुसार विभिन्न आकृतियोंमें परिणत की जा सकती है। मांसपेशियोंके विभिन्न स्तरोंमें यथेष्ट परिमाणमें चर्बीयुक्त अंश और श्वेत पीतवर्णकी पेशियां हैं, जो कुछ शिरा, स्नायु और धमनीके साथ संयुक्त हैं।

जिह्वाके शेषभागकी ओर जितने अग्रसर होते हैं, उतने ही कांटे कम दिखलाई देते हैं तथा अग्रभाग और आसपासमें कांटे बिल्कुल नहीं दीखते। यह कांटे तीन प्रकारके हैं। एक तरहके कांटे ऐसे हैं, जो साधारणतः ७ या ८ दिखलाई देते और २०से ज्यादा वा ३से कम नहीं होते। ये कोणाकोणी दो श्रेणियोंमें सिलसिलेवार होते हैं। झिल्लीपर ये जहां जहां होते हैं, वहां वहां झिल्ली कुछ नीची होती है। इस प्रकारके कांटोंको अंग्रेज विद्वान् मगनी (Magnee) कहते हैं।

द्वितीय प्रकारके कांटोंकी संख्या पहलेसे अधिक है, जो उनसे छोटे हैं। इन कांटोंकी आकृति एक प्रकारकी नहीं होती—कोई अर्द्धचन्द्राकार, कोई नलके आकारके और कोई बहुत बारीक नुकीले होते हैं। यह कुछ चिपटे होते हैं, अंग्रेजीमें इनको लेण्टिकुलर (Lenticular) कहते हैं। जिह्वाके और सब कांटोंको कोनिकल (Conical) अर्थात् शिखाकार कहते हैं।

जिह्वाके कुछ भिन्न भिन्न पेशियों और सूक्ष्म पेशी सूत्रोंके सिवा कुछ पेशीगुच्छ हैं। इस पर मांसपेशीकी क्रिया होनेसे जिह्वाके मूलदेशकी अस्थियां चलती है। जिह्वा भिन्न भिन्न तीन जोड़ी स्नायुओंके साथ जुड़ी हुई है।

गिंदौरिया—युक्त प्रदेशकी वनियोंकी एक शाखा। गिंदौरा वेचनेसे ही उनका यह नाम रखा गया है। मेरठमें गिंदौरिया बहुत हैं।

गिंदौरा (हिं० पु०) चीनीप्रभेद, चीनीका एक भेद। यह मोटी रोटीके आकारमें गलाकर ढाला जाता है। इस तरहकी चीनीकी रोटीका प्रायः विवाहादिमें व्यवहार होता है।

गिउ (हिं० पु०) गला गरदन

गिचपिच (हिं० वि०) अस्पष्ट, एकमें मिला जुला।

गिचमिचिया (हिं० स्त्री०) कचपचिया देखो।

गिचिरपिचिर (हिं० वि०) गिचपिच देखो।

गिजगिजा (हिं० वि०) अस्पष्ट, गोला।

गिजा (अ० स्त्री०) खाद्यवस्तु, भोजन, खानेकी चीज।

गिजाली (मौलाना) एक राजकवि। इन्होंने अपने एक कसीदेमें लिखा है कि मेरा जन्म १५२४ ई०को हुवा। पहले यह अपनी जन्मभूमि मशहदसे दाक्षिणात्य आये, परन्तु वहां आशा पूरी न होने पर जौनपुर चले गये और जौनपुरके सूबेदार खाँ जमां अलीकुली खांके नीचे कई वर्ष कार्य करते रहे। उसी समय इन्होंने 'नक्शवदीअ' कविता लिखी थी। उसीके लिये पृष्ठपोषक नवाबने इन्हें प्रति शेर (दोहा) एक अशरफी इनाम दी। १५६८ ई०को अकबर बादशाहके साथ लड़ाईमें खाँ जमांके मारे जाने पर यह सम्राट्के हाथी पड गये। बादशाह अकबरने इन्हें नौकर रखा और 'मालिक-उश शुअारा' (कविराज) उपाधि प्रदान किया। भारतमें इन्हें ही पहले पहल वह उपाधि मिला था। यह अकबरके साथ गुजरात जीतने गये और वहीं १५७२ ई० ५ दिसम्बरको रोगग्रस्त हो चल बसे। अहमदाबादके सरकीज नामक स्थानमें इन्हें गाड़ा गया। इन्होंने एक दीवान् और किताब असरार', 'रशहात्-उल्-हयात' और 'मिरत-उल-कायनात' नामकी ३ मसनविया लिखी हैं।

गिजियानी—अफगानस्थानके रहनेवाले 'कथाई' पठानोंकी एक शाखा। ई० ५वीं शताब्दीके शेष भागमें तैमूरके समयको भी इनका कोई निर्दिष्ट वासस्थान न था। उलग वेगके राजत्वकालमें इन्होंने उनको बड़ा साहाय्य दिया, परन्तु उन्होंने कृत-उपकार भूल विश्वासघातकता पूर्वक काबुलसे इनको निकाल बाहर किया। पोछेको यह पेशावर उपत्यकामें आ करके बस गये। आजकल काबुल और स्वात नदीकी मध्यवर्ती उर्वरा भूमिमें इनका निवास है।

गिञ्जिहल्ली—दाक्षिणात्यके धारवाड़ जिलाका एक गण्ड-ग्राम। यह हानगल नगरसे २ मील दक्षिण अवस्थित है। यहां वासवेश्वरका एक मन्दिर है। इसी मन्दिरके मध्यमें वासवमूर्तिके दोनों पार्श्व पर ११०३ ई०को उत्कीर्ण २ शिलालिपियां लगी हैं।

गिञ्जी—मन्द्राज प्रान्तीय दक्षिण अर्काट जिलेके तिण्डिवनम् तालुकाका एक पर्वतमय भूभाग और गिरिदुर्ग। यह अक्षा० १२° १५´ उ० और देशा० ७९° २५´ पू०में मन्द्राज नगरसे दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५२४ है। पहाड़ी किला बहुत पुराना है। उसी पर बहुकालसे यह स्थान इतिहासप्रसिद्ध है। कुछ दिन पहले पर्वतके निम्नदेशमें अल्पसंख्यक गृह व्यतीत कोई भी समृद्धिशाली ग्राम न रहा। गवर्नमेण्टने यह नाम स्थिर रखनेको निकटवर्ती बगाया ग्रामको भी गिञ्जी नामसे अभिहित किया है। दुर्गकी तीन ओर राजगिरि, कृष्णगिरि और चन्द्रायण दुर्ग नामक—३ पर्वत हैं। यह तीनों पहाड़ परस्पर सुदृढ़ प्राचीर द्वारा संलग्न हैं। सुतरां कोई शत्रु इस किलेको सहजमें ही दखल कर नहीं सकता। पर्वत और प्राचीरको ले करके दुर्गका परिधि ७ मीलसे अधिक पड़ता है। इसका कोई प्रकृत प्रमाण नहीं मिलता, कब किसने उसे बनाया था। कोई कहता कि चोल राजाओंके समयको वह सब प्रथम स्थापित हुवा। फिर किसीके मतमें १४४२ ई० पर तञ्जोर-शासनकर्ता विजयरङ्गनायकवे पुत्र उसे बनवाने लगे थे। किन्तु विजयनगरराजकर्तृक १३८३ ई०को प्रदत्त एक प्रशस्तिमें लिखा है कि दुर्गसे ही उस प्रदेशका नाम गिञ्जी पड़ा। अतएव कोई सन्देह नहीं कि इनके पहलेसे ही उसका निर्माणकार्य सम्पूर्ण हो गया था। इस किलेमें कल्याणमहल, जिमखाना, शस्त्रागार, ईदगाह, बारिक, मण्डप और एक ८ मञ्जिला गुम्बज है। इस गुम्बजके पहले ६ खण्डोंमें ८ फुट चौकोर घरके चारो किनारे बरामदा और प्रत्येक तलसे ऊपर चढ़नेको

इसके द्वारा उक्त जातीय पशु शरीरके लोमोंको साफ और हड्डियोंको तोड सकते हैं। स्तन्यपायी जीवोंके सिवा अन्य प्राणियोंकी जिह्वा स्वादेन्द्रिय नहीं है।

शम्बूक-जातीय प्राणियोंमें एक प्रकारका क्षुद्र स्थूल शम्बूक है, जिसकी जिह्वा एक पतले, लम्बे और अप्रशस्त चमडेसे बनी है, इसका पूर्ववर्त्ती अग्रभाग नलकी भाँतिका है। इस चमडेके ऊपर छोटे छोटे दाँतोंकी तरह उभार देखनेमें आते हैं, जो भिन्न भिन्न श्रेणीके जीवोंके भिन्न भिन्न प्रकारके होते हैं।

जिह्वाके द्वारा स्वादग्रहण, चर्वण, भक्ष्यद्रव्यके साथ लाला-मिश्रण, गलाधःकरण और वाक्यकथन आदि कार्य होते हैं। मनुष्य और वानरोंके सिवा अन्यान्य प्राणी जीभसे द्रव्यादि धारण करते, थूकते और श्वास ग्रहण करते हैं। स्थलके शम्बूक जीभसे भक्ष्यद्रव्यको चूर्ण करते हैं।

जीभमें प्रदाह नामका एक रोग उत्पन्न हो सकता है; इस रोगके होने पर जीभ फूल जाती है। जीभसे किसी द्रव्यका छू जाना अत्यन्त असह्य मालूम होता है तथा बात कहते और कुछ खाते समय बड़ा कष्ट होता है। पहले किसी रोगके बिना हुए यह रोग हठात् नहीं होता। जिह्वा-प्रदाह रोग होने पर लार बहुत निकलती है। थोडे खानेसे, तथा अत्यन्त विरेचक और कुल्ली करनेकी औषध सेवन करनेसे यह रोग दब जाता है; जीभको चिरवा कर रक्त-मोचण करानेसे भी कभी कभी फायदा होता है। कभी कभी प्रदाहका कोई उपसर्ग न रहने पर भी जीभ बहुत ज्यादा फूल जाती है। इतनी फूलती है कि जिससे श्वासरोध होनेकी भी सम्भावना रहती है। कभी कभी जिह्वा-प्रदाह रोग पूरी तरह आरोग्य न होने पर उससे जिह्वा-विवृद्धि रोगकी उत्पत्ति होती है, परन्तु ज्यादातर यह रोग बच्चोंको जन्मकालमें होता है। किसी किसीको प्रथम २।१ वर्षके भीतर इस रोगको किसी प्रकारकी सूचना नहीं मालूम पडती। एक प्रसिद्ध विद्वान्ने एक शिशुके विषयमें कहा है कि, जन्मकालसे ही एक बच्चे की जीभ मुंहसे कुछ बाहर निकली हुई थी, उस बच्चे की उम्र ज्यों ज्यों बढ़ने लगी जीभ भी उतनी ही बाहर लटकने लगी। आखिर वह जीभ गोवत्सके हृत्पिण्डके समान बडी हो गई। साधारणतः निम्नलिखित कारणोंसे जिह्वामें छाले हुआ करते हैं। १ एक पुराने दाँतके साथ किसी असमान स्थानको उत्तेजना होने पर; २ उपदंश होने पर, ३ पाकयन्त्रको विशृङ्खला होने पर। पहली दशामें दाँत उखाड़ देनेसे, दूसरी दशामें सारसापारिलाके साथ पोटोसियाम् आइयोडाइड (Iodide of Potassium) मिला कर सेवन करनेसे तथा तीसरी अवस्थामें नियमित परिमाण और नियमित समयमें आहार करनेसे तथा सोते समय सुस्थिर रहनेसे उक्त रोगकी यन्त्रणासे छुटकारा मिल सकता है। सारसापारिलाके क्वाथके साथ सुमन्त्रका क्वाथ मिला कर दिनमें ३ बार सेवन करनेसे तथा रातको ४ रत्ती हायसयामस (Hyoscyamus)-के सेवनसे फायदा पहुंचता है। जीभके कड़ी अथवा बाहरकी झिल्ली पर छाले पडते हैं। लोगोंको यह विश्वास था कि, टूटे हुए दाँतकी उत्तेजनासे और सतत धूम्रपान किये जानेसे इस रोगकी वृद्धि होती है; परन्तु यह बिल्कुल झूठी बात है। उक्त प्रकारकी प्रक्रिया द्वारा जिह्वाके जिस स्थान पर घाव हुआ हो, उस स्थानका निर्णय किया जा सकता है। १८४७ ई०में ३९ वर्षको उम्रमें अध्यापक रीड साहब (Prof. Reid of St. Andrews) क्षत रोगसे आक्रान्त हुए थे। १८८१में जुलाई मासमें उनकी जीभ फूल कर ५ शिलिंगके एक सिक्केके समान हो गई। क्षत अंशके काट देनेसे अध्यापकको आराम हो गया, परन्तु एक महीनेके भीतर फिर उस रोगसे आक्रान्त हो कर वे कालकवलमें कवलित हुए। इस रोगके प्रारम्भमें ही यदि क्षतस्थानको पूरी तरह काट दिया जाय, तो उपशमकी आशा की जा सकती है।

जिह्वारोग देखो।

शारीरस्थानमें जिह्वाको तीन भागोंमें विभक्त किया गया है—(१) मूलप्रदेश, (२) मध्यप्रदेश, (३) अन्त्यप्रदेश। मुखविवरके अन्दर अग्रभागको अन्त्यप्रदेश कहते हैं। यह मुखमध्यस्थ किसी भी स्थानसे जुड़ी हुई नहीं है। मूलप्रदेश और अन्त्यप्रदेशके मध्यवर्ती अंशको मध्यप्रदेश कहते हैं। यह अंश मोटा और चौडा है। मुखविवरके भीतर पीछेके अंशको मूलप्रदेश कहते

गिरो है। उत्पत्ति स्थान पर जल अत्यन्त स्वच्छ रहनेसे इसको 'शीशापानी' कहते हैं। पहले यह एक स्रोतमात्र रही, किन्तु अब प्रकृत नदीका आकार धारण किया है। इसके गर्भमें खण्ड खण्ड पत्थर पड़े हैं। इसकी गम्भीरता ३।४ फुटसे अधिक नहीं, और प्रस्थमें प्रायः ४०० गज होगी। परन्तु स्रोतको गति इतनी वेगवती है कि दो एक स्थानोंको छोड़ करके हाथी भी पार हो नहीं सकता। इसकी तीरभूमि शालवृक्षसे परिपूर्ण है, बीच बीच पहाड़ की घाटीसे छोटे छोटे स्रोते निकल पड़े हैं। इनके मध्य द्वीप-जैसी वनमय चरभूमि है। इसी नदीमें सरयू और सारदाका जल मिलनेसे घर्घरा बनी है। कौड़ि-याला हिमालयके शीशापानी स्थानसे फूटती और थोड़ी दूर आगे चल करके दो भागोंमें बंट जाती है। पश्चिम शाखाका कौड़ियाला और पूर्व शाखाका नाम गिड़वा है। ऊपरको यह जोरसे बहती है। भनीरामें भावें चलती हैं। इस नदीकी राह नेपालसे अनाज, लकड़ी, अदरक, मिर्च और घी आता है। बहरायचमें भर्थापुरके नीचे गिड़वा कौड़ियालासे मिल जाती है।

गिड्डा (हिं० वि०) नाटा, ठेंगना।

गिद (सं० पु०) रथपालकके एक देवताका नाम।

"गिदेष ते रथ एव वामयिता" (ताण्ड्यब्रा० १।७।७)

"गिदोनामरथपालक कश्चिद देवविशेष" (भाष्य)

गिद्दा (हिं० पु०) स्त्रियोंके गानेका एक तरहका गीत, नकटा।

गिद्ध (हिं० पु०) १ मांस खानेवाला एक तरहका पक्षी जो प्रायः दो हाथ लम्बा होता है। यह बकरियों तथा मुरगियोंको उठा कर आकाशकी ओर ले भागता और किसी वृक्ष पर बैठ कर खाने लगता है। यह मृत जीवका भी मांस खाता है। इसका रंग मटमैला और पङ्ख बड़े बड़े होते हैं। किसी मनुष्यके शरीर पर मडराना अथवा मकान पर बैठना इसका अशुभ समझा जाता है। २ एक तरहका दीर्घ कनकौवा या पतंग। ३ छप्पय छंदका ५२वां भेद।

गिद्धराज (हिं० पु०) जटायु।

गिद्धौर—विहार प्रान्तीय मुङ्गेर जिलेके गिद्धौर राजस्व विभागका एक नगर। यह अक्षा० २४° ५१´ उ० और देशा० ८६° १२´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १७८० है। पूर्वकालकी यह नगर खूब समृद्धिशाली और बहुजनाकीर्ण था, परन्तु अब क्रमशः हीन हो रहा है। नगरके निकट किसी बड़े पुराने किलेका भग्नावशेष है। दुर्गका प्राचीर और घर पत्थरके बड़े बड़े टुकड़ोंसे निर्मित हुवा है। इसमें किसी किस्मका दूसरा माल असबाब देख नहीं पड़ता। गढ़के मध्य प्रवेशके ४ पथ हैं। यथाक्रममें दक्षिण, पश्चिम और उत्तरका द्वार हस्ती, अश्व तथा उष्ट्र नामसे पुकारा जाता, केवल-मात्र पूर्वद्वार महादेव-दरवाजा कहालाता है कोई कोई कहता कि शेरशाहने वह किला बनाया था। परन्तु यह बात विशेष प्रामाणिक नहीं, दुर्ग बहुत ही प्राचीन है। सम्भवतः सम्राट् हुमायूं के साथ युद्ध कालको उन्होंने इसका केवल जीर्ण संस्कार कराया था।

वर्तमान गिद्धौर राजवंशके प्रतिष्ठाता वीरविक्रम-सिंह चन्द्रवंशीय क्षत्रिय रहे। उनके पूर्व पुरुष बुंदेल-खण्डके अन्तर्गत महोवा नामक विषयके अधिकारी थे। ई० ११वीं शताब्दीको वहांसे ताड़ित होने पर यह रीवां राज्यके अन्तर्गत वहीं नगरमें जा करके रहे। ११६८ ई०को वहींराजके कनिष्ठ भ्राता वीरविक्रमसिंह वैद्यनाथ दर्शनकी कामनासे सपरिवार पहुंचे थे। कहते हैं, वैद्यनाथने उन्हें चारों पार्श्वका समुदाय भूभाग अधिकार करनेको स्वप्नमें आदेश दिया। वह इस राज्यके अधिकार पीछे प्रथम गिद्धौरके राजा कहलाये थे। इसी वंशके दशम राजा पूरणमल्लने वैद्यनाथ देवका मन्दिर बनवा दिया। मन्दिरमें भीतरी दरवाजेके ऊपरी भाग पर संस्कृत भाषासे आज भी उनकी प्रशस्ति खोदित है। वीरविक्रमसे चतुर्दश पुरुष अधस्तन दलनसिंहको बङ्गाल-के उद्धृत सूबेदारको दबाने और दिल्ली सम्राट्के पौत्र सुलेमानको साहाय्य पहुंचानेसे ११६८ ई०में बादशाह शाहजहांने फर्मानके द्वारा राजा उपाधि प्रदान किया। इस फर्मानमें शाहजहां और दाराशिकोहकी सही मौजूद है। जब बङ्गाल और विहारका शासनभार अंगरेज गवर्नमेण्टने अपने हाथमें लिया, गिद्धौरराज गोपाल-सिंह (१८श पुरुष) की विषय सम्पत्तिको भी अधिकार किया। १८५५ ई०की सन्ताल विद्रोहके समय राजा

जिस जीभसे धर्मविषयक चर्चा न हो कर परनिन्दा और धर्मविगर्हित बात निकलती है, वह जबान मांसका पिण्ड मात्र है।

गोह आदिकी जीभ दूसरी ही भांतिकी होती है, जो दो भागोंमें विभक्त है। इसकी जीभ लम्बी है जिसे यह बार बार निकालता रहता है। जीभसे इसको स्पर्शज्ञान होता है। इसकी जीभ बहुत ही पतली है और उसका अग्रभाग दो नलियोंमें विभक्त है।

कफादि दोषोंसे दूषित जिह्वाका लक्षण इस प्रकार है—जिह्वा वायुदूषित होने पर शाकपत्रकी तरह प्रभा विशिष्ट और रूक्ष हो जाती है, पित्तदूषित होने पर लाल और काली हो जाती है, कफदूषित होने पर सफेद, भीगी और चिकनी (पिच्छिल) होती है तथा त्रिदोषान्वित होने पर खरखरी, काली और परिदग्ध हो जाती है। (भावप्रकाश)

जिह्वाकी उत्पत्तिका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—उदरमें पच्यमान कफ-शोणित-मांसके आधानके लिए रुक्मसारवत् सारभाग ही जिह्वा रूपमें परिणत हुआ है। (सुश्रुत शा० ४ अ०)

जैनमतानुसार—जीवको पाँच इन्द्रियोंमेंसे दूसरी इन्द्रिय। इसके दो भेद हैं, एक भाव-जिह्वा-इन्द्रिय और दूसरी द्रव्य-जिह्वाइन्द्रिय। हम लोगोंको जो दीखती है, वह द्रव्य-इन्द्रिय है और उसमें व्याप्त आत्मप्रदेशोंसे बनी हुई इन्द्रिय जो देखनेमें नहीं आती है, वह भाव-इन्द्रिय है। स्वाद स्पर्श आदिका ज्ञान द्रव्य-इन्द्रियकी सहायतासे उस भाव इन्द्रियको ही होता है। इसी लिए आत्माके निकल जाने पर फिर उसके द्वारा स्वाद आदिका ज्ञान नहीं होता। यह जिह्वा-इन्द्रिय पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति (उद्भिद्) इन पांचके सिवा अन्य संसारके समस्त प्राणियों वा जीवोंके होती है। (तत्त्वार्थसूत्र २ अ०)

जिह्वाग्र (सं० क्लो०) जिह्वायाः अग्रं, ६-तत्। जिह्वाका अग्रभाग, जीभकी नोक, टूँड़।

जिह्वाजप (सं० पु०) जिह्वया जपः, ३-तत्। तन्त्रसारोक्त जपभेद, तन्त्रसारमें कहा हुआ एक प्रकारका जप। इसमें केवल जिह्वा ही हिलनेका विधान है।

"जिह्वाजपः सविज्ञेयः केवलं जिह्वया बुधैः।" (तन्त्रसा०)

जप देखो।

जिह्वातल (सं० क्लो०) जिह्वाया तलं, ६-तत्। जिह्वाका पृष्ठभाग।

जिह्वानिर्लेखन (सं० क्लो०) जिह्वा निर्लिख्यऽनेन जिह्वाया निर्लेखनं संस्कारं निर-लिख-ल्युट्। जिह्वामार्जन, जीभी। सुवर्ण, रजत, ताम्र अथवा लौह निर्मित दशाङ्गुल परिमित सूक्ष्म तथा कोमल मार्जनीसे जीभ साफ करनी चाहिए। जीभ साफ करनेसे मुखकी विरसता तथा जिह्वा और दन्ताश्रित क्लेद दूर हो कर आरोग्य, रुचि, और मुखकी विशुद्धता सम्पादित होती है।

जिह्वाप (सं० पु०) जिह्वया पिवति पा क। १ कुक्कुर, कुत्ता। २ व्याघ्र, बाघ। ३ विड़ाल, बिल्ली। ४ भल्लूक, भालू। ५ चित्रकव्याघ्र, चिता बाघ।

जिह्वापरीक्षा (सं० स्त्री०) जिह्वायाः परीक्षा, ६-तत्। जिह्वा यदि पतली, रेतीकी तरह पैनी और स्फोटकयुक्त हो, तो वायुज रोग, जीभसे रक्तस्राव हो, तो पित्तज तथा उसका रङ्ग सफेद, आस्वाद खट्टा और पानी निकलता हो, तो उसे श्लेष्मज रोग समझना चाहिये। कुछ काली हो कर उपजिह्वा (हलकका कौवा)-की ओर झुकनेसे सान्निपातिक समझना चाहिये। उस अवस्थामें जीभ यदि मुखसे बाहर निकल कर उलट जाय तो रोगीकी मृत्यु निकट समझनी चाहिये।

(सार० कौ०)

जिह्वाप्रबन्ध (सं० पु०) जिह्वामूल, जीभकी जड़।

जिह्वामल (सं० क्लो०) जिह्वायाः मलं, ६-तत्। जिह्वास्थित मल, जीभ परका मैल।

जिह्वामूल (सं० पु०) जीभकी जड़।

जिह्वामूलीय (सं० पु०) जिह्वामूले भवः जिह्वामूल-छ। जिह्वमूलाङ्गुलेश्छः। पा ४।३।६२। १ वह वर्ण जिसका उच्चारण जिह्वाके मूलसे होता हो, वज्राकृतिवर्ण, अयोगवाहान्तर्गत वर्णभेद। क, ख, परे रहने पर विसर्गके स्थानमें जिह्वामूलीय हो जाता है। जिह्वामूलीयका चिह्न इस प्रकार है, जैसे—हरिः काम्यः हरि+काम्यः। इसका उच्चारण विसर्गके समान है। (पाणिनि०)

गियाह (हिं० पु०) एक प्रकारका घोडा।

गिरंट (अं० पु०) १ तरहका रेशमी कपड़ा जो गोट लगानेके काममें आता है। २ एक प्रकारकी सूती मलमल जो बस्ती जिलेमें प्रस्तुत होती है।

गिर (सं० स्त्री०) गृ-क्विप्। वाक्य।

"गीर्भिष्ट्वा वयं बर्द्धयामो वचोविदः।" (ऋक् १।९१।११)

गिर (हिं० पु०) १ पर्वत, पहाड़। २ संन्यासियोंके १० भेदोंमेंसे एक भेद। ३ एक तरहका भैंसा जो काठियावाड़ देशमें पाया जाता है।

गिर—बम्बई प्रदेशस्थ काठियावाड विभागके अन्तर्गत एक गिरिश्रेणी। यह दिउ द्वीपसे २० मील उत्तरपूर्वसे आरम्भ हो कर प्रायः ४० मील तक फैली हुई है। इस वनमय पर्वतमें दस्युपति हवावालने भारतीय नौ सेनाध्यक्ष कप्तान ग्राण्टको १८१३ ई०मे अढ़ाई मास तक बन्द किया था।

गिरई (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी मछली जो सौरीसे छोटी होती है।

गिरगिट (हिं० पु०) छिपकलीकी जातिका एक प्रकारका जन्तु। यह एक बिलस्त लम्बा होता है और अपने शरीरका रङ्ग सूर्यकी ज्योतिसे अनेक प्रकारसे बदल लेता है। इसका चमडा स्पर्श करने पर बहुत ठंढा मालूम पडता है। यह कीट पतंगको खा कर अपनी जीविका निर्वाह करता है। संस्कृतमें इसे कृकलास या गलगति कहते है।

गिरगिटान (हिं० पु०) गिरगिट देखो।

गिरगिटी (हिं० स्त्री०) एक तरहका छोटा पेड जो उत्तरभारत, चीन और आष्ट्रेलियामें पाया जाता है। इसके पत्र गहरे रंग लिये छोटे तथा पतले होते है और ऊपरका अंश अत्यन्त चमकीला होता है। ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतुमें इसमें श्वेत रंगके पुष्प लगते है। इस वृक्षकी लकडी बहुत नर्म होती है। बागानमें शोभाके लिये यह लगाया जाता है। ब्रह्मदेशके रहनेवाले चन्दनके बदले इसीकी छाल काममें लाते है।

गिरगिरी (हिं० स्त्री०) सारंगीके आकारका एक तरहका लडकोंका खिलोना।

गिरजा (हिं० पु०) एक किस्मका पक्षी जो कीड़े मकोड़े खाकर रहता है। यह पंजाब तथा राजपूतानेके अतिरिक्त समस्त भारतवर्षमें होता है। यह सिंघाड़ेके सरोवरके निकट रहता और जैसे जैसे ऋतु बदलता जाता वह भी अपना स्थान परिवर्तन करता रहता है। यह उड़नेमें बहुत तेज है और हसी पर घोसला बनाकर रहता है। इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होता है इसलिये मनुष्य इसका शिकार करते है।

गिरदा (फा० पु०) १ घेरा, चक्कर। २ तकिया, बालिश। ३ मिठाई बनानेकी हलवाईकी थाली। ४ दरबारके समय राजाओंके हुक्केके नीचे बिछाये जानेका एक तरहका गोलाकार कपडा। ५ ढाल, परी। ६ ढोल वा खंजडीका मेंड़रा।

गिरदान (हिं० पु०) गिरगिट।

गिरदानक (फा० पु०)करघेकी लकड़ी जो उसे घुमानेके लिये लगी रहती है।

गिरदाना (फा० पु०) तूरके छिद्रमें एक हाथकी लंबी चौपहल लकड़ी।

गिरदाली (फा० स्त्री०) कच्चा लोहा एक करनेकी एक लम्बी अंकुसी।

गिरदावर (फा० पु०) गिर्दावर देखो।

गिरदावरी (फा० स्त्री०) १ गिरदावरका काम। २ गिरदावरका पद।

गिरधर (सं० पु०) १ पर्वत उठानेवाला मनुष्य। २ कृष्ण, वासुदेव।

गिरधरीत व्यास—राजपूतानाके मारवाड़ प्रदेशमें पुष्करणा ब्राह्मणोंकी एक शाखा। यह बाईं ओर झुका करके पगडी बांधते और प्रतिष्ठित समझे जाते हैं। कहते हैं, इनके पूर्व पुरुष गिरिधर राव अमरसिंहके पास नौकर थे। आगरेकी लड़ाईमें वह मारे गये। अग्निदाह न करके भ्रान्तिके कारण इनको वहा समाधिस्थ किया था। इसीसे उनका नाम गिरिधर मोर पड़ा। श्रावण शुक्ल तृतीया उनकी स्मृतिका दिवस है। उस दिन कोई भी व्यास नवीन वस्त्र नहीं पहनते। १६३८ ई०को उनका स्वर्गवास हुआ। गिरिधर राव कवि थे। इनका समाधिस्थान 'चौनोका रोना' कहलाता है।

गिरधारी (सं० पु०) गिरधर देखो।

(अव्यय) (सं० जित्, प्रा० जिव=विजयी अथवा सं० (श्री) युत, प्रा० जुक, हिं० जू) ४ एक सम्मानसूचक शब्द, यह किसी व्यक्तिके नामके पीछे लगाया जाता है। जैसे—धनपतरायजी, पण्डितजी इत्यादि। इसके सिवा यह शब्द किसी बड़ेके प्रश्न, कथन वा सम्बोधन करने पर उसके उत्तर रूपमें व्यवहृत होता है। यह संक्षिप्त प्रतिसम्बोधन कहलाता है। उदाहरण (१) प्रश्न—तुम आज बाजार गये थे या नहीं? उत्तर—जी नहीं। (२) कथन-अङ्गूर तो मीठे निकले। उत्तर-जी हां, निकले तो मीठे हैं। (३) सम्बोधन—भगवान्दास। उत्तर—जी हां कहिये, अथवा जी।

हामी भरने या स्वीकारता देनेमें भी इस शब्दका प्रयोग किया जाता है। जैसे—तुम आज जाओगे? उत्तर-जी! (अर्थात् हां जाऊंगा)

जीउ (हिं० पु०) जीव देखो।

जीग़ा (तु० पु०) सिरपेच, कलगी, तुर्रा।

जीजा (हिं० पु०) बड़ो बहिनका पति, बड़ा बहनोई।

जीजी (हिं० स्त्री०) बड़ी बहिन।

जीजीबाई—प्रसिद्ध महाराष्ट्रवीर शिवजीकी माता। इनके स्वामी शाहजीके मुगलोंके साथ युद्धमें प्रवृत्त होने पर इन्हें एक दुर्गसे दूसरे दुर्गमें आश्रय लेना पड़ा था। इसी समय १६२७ ई०में जूनाके पास शिवनके दुर्गमें शिवजीका जन्म हुआ था। एक बार ये मुगलों द्वारा पकड़ ली गई थीं, किन्तु पीछे मुक्त हो कर ये सिंहगढ़ आ गई थीं। शिवजी देखो।

शाहजीके दाक्षिणात्य चले जाने पर जीजीबाई पुत्रको ले कर पूनामें रहने लगीं। दादाजी कोण्डदेव नामक एक ब्राह्मण कर्मचारीने उनके रहनेके लिए वहां रङ्गमहल नामका एक उत्तम प्रासाद बनवा दिया था।

जीजोबेगम—अकबरकी धात्री और मिर्जा-अजीज कोकाकी गर्भधारिणी। अकबरने कोकाको खाँआजिमकी उपाधि दे कर उन्हें उच्च पद पर नियुक्त किया था। १५९९ ई०में जीजोबेगमकी मृत्यु हुई। अकबरने इन्हें अपने कन्धे पर रख कर कबरिस्तानको ले गये थे। और पुत्रकी तरह उन्होंने अपना मस्तक और दाढ़ी-मूछें मुड़ाई थीं।

जीजुराना (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़ियाका नाम।

जिझ्नी—ग्वालियर राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २६° २२' उ० और देशा० ७८° १०' पू०के मध्य कुमारी नदीके किनारे ग्वालियरसे २४ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है।

जीत (हिं० स्त्री०) १ जय, विजय, फ़तह। २ लाभ, फायदा। ३ जिसमें दो या उससे अधिक विरुद्ध पक्ष हों ऐसे किसी कार्यमें सफलता। ४ जहाजमें पालका तुनाम। (लश०) ५ जीति देखो।

जीतना (हिं० क्रि०) १ विजय प्राप्त करना, शत्रुको हराना। २ ऐसे किसी कार्यमें सफलता पाना जिसमें दो वा उससे अधिक विरुद्ध पक्ष हों।

जीतल—एक प्रकारकी प्राचीन ताम्रमुद्रा। जितल देखो।

जीतसिंह—विनयरसामृत नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता

जीता (हिं० वि०) १ जीवित, जिंदा। २ तौल या नापमें कुछ अधिक।

जीतालू (हिं० पु०) अरारोट।

जीतालोहा (हिं० पु०) चुम्बक, मेकनातीस।

जीति (सं० स्त्री०) जि-क्तिन् वेदे दीर्घः। १ जय, जीत, फ़तह। २ हानि, नुकसान।

जीति (हिं० स्त्री०) जमुनाके किनारेसे नेपाल तक तथा अवध, बिहार और छोटा-नागपुरमें होनेवाली एक प्रकारकी लता। इसके मजबूत रेशेसे रस्सी इत्यादि बनाई जाती हैं। रेशोंको टोगुस कहते हैं। रेशोंसे धनुषकी डोरी भी बनती है।

जीन (सं० त्रि०) ज्या-क्त सम्प्रसारणस्य दीर्घः। १ जीर्ण, पुराना। २ वृद्ध, बुड्ढा।

जीन (फा० पु०) १ वह गद्दी जो घोड़ेकी पीठ पर रखी जाती है, चारजामा, काठी। २ पलान, कजावा। ३ एक प्रकारका मोटी सूती कपड़ा।

जीनगर—जीन बनानेवाले। बंबई प्रदेशके अन्तर्गत पूना, बेलगाँव, बीजापुर आदि जिलोंमें रहनेवाली एक जाति। ये जीन अर्थात् घोड़ेकी पीठ पर कसनेकी काठी या पलान बनाते हैं, इसलिए फारसीमें इनका नाम जीनगर पड़ गया है। ये लोग अपनेकोंशा

और शेष १८००० है। पश्चिममें कैन नदी प्रवाहित है, भूमि उर्वरा है।

गिरवान (हिं० पु०) देवता, गीर्वाण, देव, सुर।

गिरवाना (हिं० क्रि०) दूसरे द्वारा गिरानेका काम कराना।

गिरवी (फा० वि०) बंधक, रहन।

गिरवीदार (फा० पु०) बंधक लेनेवाला मनुष्य, महाजन।

गिरवीनामा (फा० पु०) बन्धकका नियम लिखा हुआ पत्र, रेहननामा।

गिरवीपत्र (फा०) गिरवीनामा देखो।

गिरह (फा० स्त्री०) १ ग्रन्थि, गाँठ। २ वह गाँठ जहाँ दो चीजें आकर जुटी हों। ३ एक गजका सोलहवां भाग जो सवा दो इञ्चके समान होता है। ४ जयव, कीसा, खरीता। ५ कुश्तीका एक पेंच। ६ कलैया, उलटी।

गिरहकट (फा० वि०) जेब या गांठका रुपया चुरानेवाला।

गिरहदार (फा० वि०) जिसमें ग्रन्थि हों, गांठवाला, गंठीला।

गिरहबाज (फा० पु०) एक तरहका कबूतर, जो सरको नीचे पृथ्वी पर रखकर चारों ओर घूमता है।

गिरहर (हिं० वि०) पतनोन्मुख, जो गिरनेवाला हो।

गिरही (हिं० पु०) गृहिन्, गृहस्थ।

गिरां (फा० वि०) १ अधिक मूल्यवाला, महंगा। २ भारी। ३ अप्रिय।

गिरा (सं० स्त्री०) १ गिर् वा टाप्। वाक्य।

"तां गिरो करुणां श्रुत्वा।" (दशरथविलाप)

२ जिह्वा, जवान। ३ बोल, वचन। ४ सरस्वती देवी।

गिराना (हिं० क्रि०) १ पतन करना। २ पृथ्वी पर डाल देना। ३ घटाना, ह्रास करना। ४ जलका ढाल और बहना। ५ शक्ति वा प्रतिष्ठाकी कमी कर देना। ६ किसी पदार्थको नियत स्थानसे हटा देना। ७ सहसा उपस्थित होना।

गिरानी (फा० स्त्री०) मंहगापन, महंगी। २ अकाल। ३ अभाव, कमी। ४ किसी पदार्थसे पेटका भारीपन।

गिरापति (सं० पु०) ब्रह्मा।

गिरापितृ (सं० पु०) सरस्वतीके पिता, ब्रह्मा।

गिराव (फा० पु०) तोपका गोला, जिसमें छोटी छोटी गोलियां और छर्रे भी होते हैं।

गिरास (फा० पु०) ग्रास देखो।

गिरासना—ग्रसना देखो।

गिरासी (हिं० स्त्री०) एक प्राचीन जाति। इस जातिके मनुष्य बड़े डकैत होते थे, इनका वासस्थान गुजरातमें रहा।

गिराह (अनु० पु०) जलजन्तु ग्राह।

गिरि (सं० पु०) गॄ-ई-किच्। १ पर्वत, पहाड़।

"गिरेर्भृष्टिर्न आजतिमुत्रा शवः।" (ऋक् १।५६।३)

"गिरिः पर्वतस्य।" (सायण)

२ तान्त्रिक सन्यासी विशेष।

"सदोर्द्ध्वबाहुर्यो वीरः मुक्तकेशो दिगम्बरः।

सर्वत्र समभावेन भावयेद यो नरोत्तम॥

इष्टदेवी धिया नारीं स गिरिः परिकीर्त्तितः॥" (तन्त्र)

अर्थात् जो सर्वदा ऊर्ध्व बाहु, वीराचारी, मुक्तकेश और नग्न रहते तथा सर्वत्र समभावसे अवलोकन करते हैं एवं अपनी इष्टदेवी समझ कर समस्त स्त्रियोंके ऊपर अनुराग प्रकाश करते वे ही गिरि कहलाते हैं। ३ परिव्राजकोंकी एक उपाधि। शङ्कराचार्यके प्रधान शिष्य आनन्द इस उपाधिके अधिकारी रहे। ४ नेत्ररोगविशेष, आँखकी एक बीमारी। ५ गेन्दुक, छोटे छोटे लड़कोंके खेलनेका लकड़ीका गेन्द। ६ मेघ।

"गिरयोनाव तथा असमर्थन्।" (ऋक ६।६६।११)

"गिरयो मेघाः" (सायण)

७ पारेका एक दोष जिसका शोधन यदि न किया जाय तो खानेवालेका शरीर जड़ हो जाता है।

"मलं विषं वह्निगिरी च चापलं नैसर्गिकं दोषमुशन्ति पारदे।" (भावप्रकाश)

८ दशनामी संप्रदायके अन्तर्गत एक प्रकारके संन्यासी। दशनामी देखो। मण्डनमिश्रके शिष्य 'गिरि' से इस सम्प्रदायका नामकरण हुआ है। उनमें कुछ लोग मठधारी महंत हैं जो उस सम्प्रदायके प्रधान गिने जाते हैं। वर्तमान समय इस सम्प्रदायके बहुत मनुष्य वैष्णव धर्मावलम्बी हो गये हैं जो गिरिवैष्णवसे ख्यात हैं। उत्कलमें इस तरहके गिरि वैष्णव देखे जाते हैं।

ये मुर्देको जलाते हैं। अग्निसत्कारके समय इनको तण्डुलका भोज्य उत्सर्ग करना पड़ता है। सामाजिक किसी विषयको मीमांसा करनी हो, तो प्रधान प्रधान व्यक्ति एकत्र सभा करके उस कार्यको करते हैं। ये लोग अपनेको सोमवंशीय क्षत्रिय कहते हैं और उच्चश्रेणीके हिन्दुओंके समान आचारादि अनुष्ठान करते हैं। सब साफ-सुथरे रहते हैं, किन्तु हिन्दू समाजमें ये निम्नस्थानीय हैं। उच्चश्रेणीके इनसे हिन्दू घृणा करते हैं। एक बार पूनाके नाइयोंने अपवित्र जाति कह कर इनकी हजामत बनानेके लिए मनाई कर दी। इस पर इन लोगोंने नाइयोंके नाम इस अपवादके लिए अभियोग किया। यह कहना फिजूल है कि इनका आवेदन अग्राह्य हुआ था। पूना वासियोंका कहना है कि, जीनगर लोग चमड़ेसे घोड़े का साज बनाते हैं, इसलिए वे अपवित्र हैं। और बहुतसे ऐसा भी कहते हैं कि, किसी लाभजनक वृत्तिके मिलने पर ये अपनी वृत्तिको छोड़नेमें नहीं हिचकते, इसीलिए इन लोगोंसे सब घृणा करते हैं।

ये लोग अपने लड़कोंको पढ़ानेके लिए पाठशालाओंमें भेजते जरूर हैं, पर शिक्षाकी तरफ इनका लक्ष्य कम है। साधारणतः ये लोग ११।१२ वर्षकी उम्र होते ही लड़कों को अपने अपने काममें लगा लेते हैं। इनका वासस्थान साफ-सुथरा और नाना प्रकारकी गृह-सामग्रियोंसे परिपूर्ण रहता है।

जिनगरोंका और एक नाम पाँचचाल भी है। बहुतोंका यह कहना है कि, ये पाँच प्रकारकी चाल अर्थात् कार्यद्वारा जीविका निर्वाह करते हैं, इसलिए इनका नाम पाँचचाल पड़ा है। बहुतसे यह भी कहते हैं कि, पाँचचाल लोग पहले बौद्ध थे और अब भी छिप कर बौद्धकी उपासना करते हैं। यदि ऐसा ही है, तो यह अनुमान किया जा सकता है कि, पाँचचाल शब्द बौद्धोंकी प्राचीन उपाधि पञ्चशील अर्थात् पञ्च धर्मनीतिज्ञ से उत्पन्न हुआ है।

जीनत (फा० स्त्री०) १ शोभा, छवि, खूबसूरती। २ शृङ्गार, सजावट।

जीनपोश (फा० पु०) वह कपड़ा जो जीनके ऊपर ढका रहता है।

जीनसवारी (हिं० स्त्री०) घोड़े पर जीन रख कर चढ़नेका कार्य।

जीना (हिं० क्रि०) १ जीवित रहना, जिन्दा रहना। २ जीवनके दिन बिताना, जिन्दगी काटना। ३ प्रसन्न होना, प्रफुल्लित होना।

जीभ (हिं० स्त्री०) जिह्वा देखो।

जीभा (हिं० पु०) १ जीभके आकारकी कोई वस्तु। २ मवेशियोंकी जीभकी एक बीमारी, अवार। ३ बैलोंकी आँखकी एक बीमारी। इसमें उसकी आँखका मांस ऐंठ कर लटक जाता है।

जीभी (हिं० पु०) १ वह वस्तु जिससे जीभ छील कर साफ की जाती है। यह किसी एक धातुकी पतली लचीली और धनुषाकारमें बनी रहती है। २ मैल साफ करनेके लिये जीभ छीलनेकी क्रिया। ३ निब, लोहेकी चद्दरकी बनी हुई चोंच। ४ गलशुण्डी, छोटी जीभ। ५ मवेशियोंका एक रोग। ६ लगामका एक भाग।

जीभीआभा (हिं० पु०) चौपायोंका एक रोग।

जीमट (हिं० पु०) पेड़ों और पौधोंके धड़, शाखा और टहनी आदिके भीतरका गूदा।

जीमना (हिं० क्रि०) आहार करना, भोजन करना, खाना।

जीमूत (सं० पु०) जयति आकाशमिति जि-क्त। १ पर्वत, पहाड़। २ मेघ, बादल। ३ मुस्ता, मोथा। ४ देवताड़ वृक्ष। ५ इन्द्र। ६ भृतिकर, पोषण करनेवाला, रोजी देनेवाला। ७ घोषालता, कड़ए तोरई। ८ सूर्य। ९ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम जिनका उल्लेख महाभारतमें है। १० मल्लविशेष, एक मल्लका नाम। ये विराट्की सभामें रहते थे। ये वल्लभवेशी भीमके हाथसे लड़ाईमें मारे गये थे। ११ हरिवंशके अनुसार स्वनामख्यात दशार्हके पौत्रका नाम। १२ वपुष्मत्के पुत्रका नाम। ये शाल्मली द्वीपके राजा थे। इनके सात पुत्र थे।

"शाल्मलस्येश्वराः सप्त सुतास्ते तु वपुष्मतः।"

(ब्रह्माण्डपु० ३६)

१३ शाल्मलीद्वीपका एक वर्ष। १४ छन्दोविशेष,

गिरिकूट (सं० पु०) पहाड़की शिखर, चोटी।

गिरिकीटजफल (सं० क्ली०) इन्द्रयव।

गिरिचित् (सं० त्रि०) गिरिणा चियति अवतिष्ठते चि-क्विप्, तुगागमश्च, अलुक्समासः यद्वा गिरौ गिरिवदुन्नतप्रदेशे चियति आतिष्ठते गिरि-चि-क्विप्। १ जो वाक्यमें अवस्थित है विष्णु। २ जो पर्वतके जैसे ऊंचे स्थान पर वास करते हों।

"प्र विष्णवे शूषमेतु मन्म गिरिचित उरुगायाय वृष्णे।" (ऋक् १। १५४। ३)

"गिरिचिते गिरिवाचि गिरिवदुन्नतप्रदेशे वा स्थिताय।" (सायण)

गिरिक्षिप (सं० त्रि०) गिरिं क्षिपति गिरि-क्षिप-क। १ जिसको पर्वत उठानेकी शक्ति हो। २ श्वफल्क राजाके पुत्र और अक्रूरके भाई। (हरिवंश)

गिरिगङ्गा (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक नदी जो पहाड़से निकलती है।

गिरिगुड़ (सं० पु०) गिरौ गुड इव। कन्दुक, गेन्दुक, गेन्द।

गिरिगैरिकधातु (सं० पु०) गिरिस्थितः गैरिकधातुः, मध्यपदलो०। पर्वतस्थित गैरिक धातु। एक तरहकी लाल खड़ी।

"अथाससाद मेरुप्रवराद्वरं गिरिं गैरिकधातुमत्।" (भारत)

गिरिगोचर (सं० क्ली०) श्वेतमर्कट, उजला बन्दर।

गिरिचर (सं० त्रि०) गिरौ चरति चर-ट। १ पर्वतचारी, जो पहाड़ पर विचरण करता है।

"गिरिचर इव नागः प्राणसारं बिभर्ति।" (शकुन्तला)

(पु०) २ चोर। ३ चोरगणोंके अधिपति रुद्रदेव।

"नम उष्णीषिणे गिरिचराय।" (वाजसनेय० १६।२२)

गिरिचारिन् (सं० त्रि०) गिरौ चरति अविदितं भ्रमति गिरि-चर-णिनि। पर्वतचारी, पर्वत पर भ्रमण करनेवाला।

गिरिज (सं० क्ली०) गिरौ जायते गिरि-जन-ड। १ शिलाजतु, शिलाजीत। २ लौह, लोहा। ३ अभ्र, अबरक। ४ गैरिक, गेरू। (पु०) ५ पार्वतीय मधुकवृक्ष, एक प्रकारका पहाड़ी महुआ। इसका पर्याय गोरशाक, और स्वल्पपत्रक है। ६ काञ्चनारवृक्ष। (त्रि०) गिरि वाचि जायते गिरि-जन ड अलुक्समा०। ७ जो वाक्यसे उत्पन्न हो, वाक्यजात। ८ पर्वतजात, पहाड़से उत्पन्न होनेवाला।

गिरिजधातु (सं० पु०) गैरिक, गेरू।

गिरिजा (सं० स्त्री०) गिरौ जायते गिरि-जन-ड टाप्। १ पार्वती, हिमालय पर्वतकी कन्या, दुर्गा।

"यदा यदा स गिरिजा सह नामाचगागतम्।" (काशीखण्ड ६६।५०)

२ गङ्गा। ३ चकोतरा। ४ मातुलुङ्गवृक्ष, बिजौरा। ५ श्वेतवुह्ना। ६ त्रायमाण लता। ७ मल्लिका, चमेली। ८ गिरिकदली, पहाड़ी केला।

गिरिजाकुमार (सं० पु०) १ कार्त्तिकेय। २ शङ्कराचार्यके एक शिष्य।

गिरिजातनय (सं० पु०) गिरिजायाः, पार्वत्याः तनयः, ६-तत्। पार्वतीनन्दन, कार्त्तिकेय।

गिरिजातेज (सं० क्ली०) अभ्रधातु, अबरक।

गिरिजापति (सं० पु०) गिरिजायाः पतिः, ६-तत्। पार्वतीपति, शिव।

गिरिजामल (सं० क्ली०) गिरिजेषु अमलं, ७-तत्, यद्वा गिरिजाया मलं वीजरूपं, ६-तत्। अभ्रक, अबरक।

अभ्रक देखो।

गिरिजावीज (सं० क्ली०) १ गन्धक। २ अभ्रक, अबरक।

गिरिजाल (सं० क्ली०) गिरिजालं, ६-तत्। गिरिसमूह, पर्वतकी पंक्ति।

"गिरिजालावृतां दिशं" (रामा० ४।४३।११)

गिरिजाश्म (सं० क्ली०) शिलाजतु, शिलाजीत।

गिरिज्वर (सं० पु०) गिरिं ज्वरयति गिरिज्वर-णिच्-अच्। वज्र।

गिरिणख (सं० पु०) गिरेर्णखः खण्डं, ६-तत्०। पर्वतका एक अंश।

गिरिणदी (सं० स्त्री०) गिरिसम्भूता नदी, मध्यपदलो०। पार्वतीय नदी, पहाड़से निकली हुई नदी।

गिरिणद्ध (सं० त्रि०) गिरौनद्ध आवद्धः, ७-तत्०। पर्वतसे आवद्ध हो, जो पहाड़से छिपा हो।

गिरिणितम्ब (सं० पु०) गिरेर्णितम्बः ६-तत्। पर्वतके पार्श्व देश।

गिरित (सं० त्रि०) गिल क्त। भक्षित, खाया हुआ।

गिरित्र (सं० पु०) गिरौ कैलासे स्थित त्रायते गिरि-त्रै-क। १ रुद्र, शिव।

"शिवा गिरित्र तां कुरु मा हिंसी पुरुषं जगत्।" (वाजसनेयसं० १६।३)

"गिरौ कैलासे स्थितो भूतानि त्रायते इति गिरित्रः।" (महीधर)

२ समुद्र, जब इन्द्रसे पर्वतोंके पर काटे गये थे तब

जीमूतमूल (सं॰ क्लो॰) जीमूतस्य मुस्ताया मूलमिव मूलमस्य। शठी, कपूर कचूरी।

जीमूतवाहन (सं॰ पु॰) जीमूतो मेघो वाहनमस्य। १ मेघवाहन, इन्द्र। २ शालिवाहनके पुत्र। गौण आश्विन कृष्णा अष्टमीको स्त्रियां जीमूतवाहनकी पूजा करती है। जिताष्टमी देखो। ३ विद्याधरराज जीमूतकेतुके पुत्र, प्रसिद्ध नागानन्दके नायक। जीमूतवाहनने यौवराज्य पद पर अभिषिक्त हो कर पिताकी अनुमतिसे राज्यकी सारी प्रजा और याचकोंको दारिद्र्यशून्य कर दिया तथा इनके आत्मीयोंके राज्यलोलुपी होने पर इन्होंने बिना युद्धके उनको राज्य दे दिया। पीछे ये पितामाताके साथ मलय पर्वतके पास सिद्धाश्रममें जा कर रहने लगे।

कुछ दिन बाद मलयपर्वतवासी सिद्धराज विश्वावसुके पुत्र मित्रावसुके साथ इनकी मित्रता हो गई। एकदिन इन्होंने मित्रावसुकी बहन मलयवतीको देख कर उन्हें अपनी पहले जन्मकी स्त्री जान पहिचान लिया और वे उनके प्रति प्रणयसे आसक्त हो गये। इसके उपरान्त एक दिन मित्रावसुने प्रस्ताव किया कि—"सखे! मैं अपनी बहन मलयवतीको तुम्हें अर्पण करना चाहता हूं।" जीमूतवाहनने कहा—"सखे! मैं पहले जन्ममें व्योमचारी विद्याधर था। एकदिन भ्रमण करते करते मैं हिमालयकी चोटी पर पहुंचा, वहां क्रीड़ारत हरगौरीने मुझे देख कर शाप दिया, उसी शापसे मैं मनुष्यजन्म धारण कर वल्लभी नगरवासी एक धनी वणिक्‌का पुत्र हो वसुदत्त नामसे प्रसिद्ध हुआ। एकदिन मेरे वाणिज्यार्थ बाहर जाने पर डकैतोंके एक झुण्डने मुझ पर आक्रमण कर मुझे बाँध लिया और वे मुझे चण्डीके मन्दिरमें बलि देनेके लिए ले गये। चण्डाल-राज पूजा कर रहे थे, उन्होंने मुझे देख कर मेरे बन्धन खोल दिये और मेरे बदले वे अपना शरीर बलि देनेको उतारू हो गये। इसी समय देववाणी हुई—'तुम शान्त होओ, मैं प्रसन्न हुई हूं, वर मांगो।' शबरराजने यह वर मांगा—'मैं जन्मान्तरमें इस वणिक्‌पुत्रका मित्र होऊं।' कुछ दिन बाद डकैतीके अपराधसे राजाने चण्डालराजको प्राणदण्डकी आज्ञा दी। मैंने राजासे मेरे प्रति उनके उपकारको सब बातें कहीं और उनके प्राणोंकी भिक्षा मांगी। वे बहुत दिनों तक मेरे घर थे, पीछे अपनी स्त्रीको मेरे घर छोड़ कर वे अपने देश चले गये।

एकदिन उन्होंने मृगकी खोजमें घूमते हुए सिंह पर सवार एक लड़की देखी, कन्याको मेरे अनुरूप समझ कर मेरे साथ उनके विवाहका प्रस्ताव किया। कुमारीने मुझे देखना चाहा, तदनुसार वे मुझे ले गये। कुमारीने मुझे देख कर विवाह करना स्वीकार किया। फिर हम लोग सिंह पर सवार हो घर आये, मेरी भावी पत्नी मित्रको भाई कहने लगीं। शुभदिनमें मेरा विवाह हो गया। उस सभामें सिंहने अपना शरीर छोड कर मनुष्य-शरीर धारण कर लिया और कहा - मैं चित्राङ्गद नामका विद्याधर हूं, यह मेरी कन्या है, मनोवती इसका नाम है। मैं इसको गोदमें ले कर जंगलमें घूमता था। एकदिन मैं इसे ले कर भागीरथी के ऊपरसे जा रहा था कि, इतनेमें मेरे मस्तककी माला पानीमें गिर गई। दैववश उस पानीमें देवर्षि नारद स्नान कर रहे थे। माला उनके मस्तक पर लगते ही उन्होंने शाप दिया। मुझे सिंहके रूपमें परिवर्तित कर दिया। मैं तभीसे इस कन्याको ले कर इस रूपमें था। मेरे शापकी सीमा यहीं तक थी। अब तुम लोग सुखसे रहो।" इतना कह कर वे अन्तर्हित हो गये। कालान्तरमें मेरे एक पुत्र हुआ जिसका नाम हिरण्यदत्त रक्खा गया। उस पुत्र पर सब भार दे कर मित्र और पत्नीके साथ मैं कालञ्जर पर्वतको चल दिया। वहां विद्याधरत्व प्राप्त होने पर मनुष्यदेह त्यागनेके समय मैंने महादेवसे प्रार्थना की कि, पाछे जिससे इनको बन्धुरूप में और मनोवतीको पत्नीरूपमें प्राप्त कर सकूं। फिर ऊंचे स्थानसे गिर कर उस शरीरको त्याग दिया। सखे! तुम वही मित्र हो और तुम्हारी यह बहन मेरी पूर्वजन्मकी सहचरी है, इसलिए इनके साथ विवाह करनेमें मुझे क्या आपत्ति है?" इसके उपरान्त दोनोंका विवाह हो गया।

एकदिन ये मित्रके साथ भ्रमण कर रहे थे कि, इतनेमें कोई व्यक्ति एक युवकको बहुत ऊंची शिला पर रख कर चला गया। युवक भयसे रोने लगा। यह देख ये उसके पास गये और दयासे इन्होंने उनका परि-

उसके अन्तवर्त्ती पचम्बा, गवान, करन्दी, कोदम और दुमुही स्थानोंमें एक एक थाना है। यहांकी जलवायु उत्तम होनेके कारण बहुत मनुष्य स्वास्थ्यकी उन्नतिके लिये यहां आकर रहते हैं। यह उपविभाग गिरिडी नामसे भी मशहूर है।

गिरिध्वज (सं० पु०) गिरिनाशकं ध्वजं वज्ररूपं यस्य बहुव्री०। इन्द्र।

गिरिनख (सं०पु०) गिरिणख देखो।

गिरिनगर (सं० क्ली०) गिरनार पर्वत पर वसा हुआ एक नगर। यह स्थान जैनियोंका पवित्र तीर्थ माना गया है।

"गिरिनगरमलयरदु'रमहेन्द्रमालिन्यमहतच्छा ॥" (बृहत्सं० १४ अ०)

गिरिनदी (सं०स्त्री०) गिरिनदी देखो।

गिरिनद्यादि (सं० पु०) गिरिनदी आदिर्यस्य गणस्य बहुव्री०। गिरिनदी, गिरिनख, गिरिनद्ध, गिरिनितम्ब, चक्रनदी, चक्रनितम्ब, तूर्यमान प्रभृति शब्द ही गिरिनद्यादिगण कहते हैं।

गिरिनन्दिनी (सं० स्त्री०) गिरेर्हिमालयस्य नन्दिनी। १ पार्वती, दुर्गा। २ गङ्गा। ३ नदी।

"कलिन्दगिरिनन्दिनीतटसुरद्रुमालम्बिनी।" (रसगङ्गाधर)

गिरिनाथ (सं० पु०) महादेव, शिव।

गिरिनितम्ब (सं० पु०) गिरिणितम्ब देखो।

गिरिनिम्नगा (सं० स्त्री०) गिरिसम्भवा निम्नगा। पार्वतीय नदी, पहाड़से निकली हुई नदी।

गिरिनिम्ब (सं० पु०) गिरिसम्भूतः निंबः। १ महानिम्ब वृक्ष, बकायनका गाछ। २ कैटर्यनिंब।

गिरिपत्रः (सं० पु०) महानिंब, बकायन।

गिरिपादिका (सं० स्त्री०) कपिकच्छु।

गिरिपीलु (सं० पु०) गिरिसम्भूतः पीलुः। पुरूषकवृक्ष, फालसा।

गिरिपुर (सं० क्ली०) आनर्त्त देशान्तर्गत एक नगर। आनर्त्त देखो।

गिरिपुष्पक (सं० क्ली०) गिरिजातं पुष्पकं। शैलज, पथरफोड नामका एक पौधा।

गिरिपृष्ठ (सं० क्ली०) गिरेः पृष्ठं, ६-तत्। पर्वतके ऊपरका भाग।

गिरिप्रस्थ (सं० पु०) गिरेः प्रस्थः, ६-तत्। पर्वतके उपरिस्थ समतल स्थान।

गिरिप्रपात (सं० पु०) गिरेः प्रपातः ६-तत्। पर्वतके भृगु, उच्चस्थान।

गिरिप्रिया (सं० स्त्री०) गिरिः प्रियोऽस्याः, बहुव्री०। चमरीगव्या, सुरागाय।

गिरिबान्धव (सं० पु०) गिरिर्बान्धवः बन्धुर्यस्य, बहुव्री०। शिव, महादेव।

गिरिवृध (सं० त्रि०) पहाड़के ऊपर रहनेवाला, पहाड़ पर जन्मा हुवा।

गिरिवृधा (सं० स्त्री०) गिरिवृध्र इव यस्याः बहुव्री०। ततः टाप्। जल, पानी।

"गिरिवृधा उवा च यः।" (शतपथब्राह्मण ७।४।१।१८)

गिरिभट्ट—संस्कारकौमुदी नामक संस्कृत ग्रन्थकार।

गिरिभिद् (सं० पु०) गिरिं भिनत्ति भिद्-क्विप्। १ वृक्षविशेष, पाषाणभेदक। २ इन्द्र। (त्रि०) ३ पर्वतको विदीर्ण करनेवाला। (कात्या० श्रौ० २१।१।४।२०)

गिरिभू (सं० स्त्री०) गिरौ भवति भू-क्विप्। १ पर्वतसे उत्पन्न क्षुद्र पाषाणभेदक। २ पार्वती। ३ गङ्गा। गिरेर्भूः, ६-तत्। ४ पर्वतभूमि, पहाड़ी जमीन।

(आर्यासप्तशती ६१५)

(त्रि०) ५ पर्वतोत्पन्न, जो पर्वतसे उत्पन्न हो।

गिरिभेद (सं० पु०) गिरिं भिनत्ति गिरि-भिद्-अण्। पाषाणभेदकवृक्ष, हिमसागर।

गिरिमनोहर (सं० पु०) आरग्वधवृक्ष, अमलतास।

गिरिमल्लिका (सं० स्त्री०) गिरिजाता मल्लिकेव मध्यपदलो०। कूटजवृक्ष, कौरैया।

गिरिमान (सं० त्रि०) गिरेरिव मानं परिमाणं यस्य, बहुव्री०। १ जिसका परिमाण पर्वतके सदृश हो। (पु०) २ हस्ती, गज।

गिरिमाल (सं० पु०) गिरौ माल सम्बन्धो ऽस्य बहुव्री०। बाधकवृक्ष।

गिरिमालपञ्चक (सं० क्ली०) आरग्वधादि पाचन।

गिरिमृत् (सं० स्त्री०) गिरेर्मृत्, ६-तत्। १ गैरिक, गेरूमट्टि। २ पार्वतीय मृत्तिका, पहाड़ पर की मट्टी।

गिरिमृद्भव (सं० क्ली०) गेरूमट्टी।

गिरिमेद (सं० क्ली०) गिरेर्मेद इव सारोऽस्य बहुव्री०। विटखदिर, बबूलवृक्ष।

की उपकूल प्रदेशसे यह द्रव्य आया है। इस जीरेका रंग धूसर और स्वाद उत्तम, पर सौंफ जैसा नहीं वल्कि कुछ तीव्र है। यूरोपमें तथा सिसिली और माल्टा द्वीपमें इसकी फसल हुआ करती है। शतद्रु नदीके निकटवर्त्ती प्रदेशमें जीरा बहुत उत्पन्न होता है। जीरासे एक प्रकारका तेल (अर्क) बनता है जो रोग उपशमकारी होता है। यह तेल कुछ पीला और साफ होता है; पर इसका स्वाद कड़ुआ, कषाय-गुणयुक्त और वह प्राणके लिए विरक्तिजनक होता है।

जीरा साधारणतः वातघ्न, वायुनाशक, सुगन्धयुक्त और उत्तेजक है। उदरामय और अजीर्णरोगमें इसका व्यवहार किया जा सकता है; यह सङ्कोचक भी है। भारतवर्षमें प्रत्येक स्थानके बाजारमें जीरा मिलता है, यह मसालेकी तरह खाया जाता है। इसका तेल वायु नाशक है। जीरा और उसके तेलमें धनियाँको भाँति वायुनाशक गुण है, पर औषधके लिए भारतवर्षीय वैद्य इसको जितना काममें लाते हैं, यूरोपीय उतना नहीं लाते। इसमें शैत्यगुण अधिक है, इसलिए मेहरोगमें इसका प्रयोग होता है। इसको बाँट कर पुल्टिस लगानेसे उपदाह और यन्त्रणा दूर हो जाती है। यहूदी लोग त्वक्छेदनके समय जीरेको पुल्टिस लगाते हैं। मुसलमान लोग जीरेकी खूब तारीफ करते हैं और उसको पिष्टकमें डाल कर खाते हैं। अरब और पारस्यदेशीय ग्रन्थोंमें ४ प्रकारके जीरेका उल्लेख है, जैसे—फरसी, नवती, किरमानी (स्याह जीरा) और शान् अर्थात् सिरीय जीरा।

वैद्यकके अनुसार बिच्छूके काटने पर मधु, नमक, और घीके साथ जीरा मिला कर प्रलेप लगानेसे यन्त्रणा दूर हो जाती है। डाक्टर रैटनका कहना है कि, गर्भवतीको पित्ताधिक्यके कारण वमन होने पर निम्बूके रसमें जीरा मिला कर उसका सेवन करनेसे के बन्द हो जाती है। बच्चा पैदा होनेके उपरान्त प्रसूतिको दूध बढ़ानेके लिए स्याहजीरा खिलाया जाता है। थोड़ा घी मिला कर नलीमें सजा कर जीरेका धुआँ पीनेसे हिचकी बन्द होती है। जीराके द्वारा बहुतसी रासायनिक प्रक्रियाएँ हुआ करती हैं। मि० डाइमक द्वारा रचित चिकित्सातत्त्वमें इसका विशेष विवरण है।

इसका आकार सोंयासे मिलता जुलता है। पर यह सोंयासे कुछ बड़ा और फीका होता है। पहले अंग्रेज लोग जीरा मसालेकी तरह खाते थे, पर अब वे सोंया खाते हैं। भारतमें यह दाल, तरकारी आदिमें मसालेकी तरह खानेके काममें आता है, इससे अचार भी बनता है।

जीरा बहुत पूर्वकालसे प्रचलित है। बहुत प्राचीन पुस्तकोंमें इसका उल्लेख मिलता है। मध्ययुगमें यूरोपके लोग इस मसालाको बहुत पसन्द करते थे। १३वीं शताब्दीमें इंग्लैण्डमें इसका मामूली तौरसे व्यवहार होता था। अब यूरोपमें सोंया ज्यादा काममें आने लगा है। माल्टा, सिसिली और मरक्कोसे जीरा इंग्लैण्डको जाता है और कुछ कुछ भारतसे भी जाता रहता है। १८७१ ई०में भारतसे जीरेको रफ्तनी उठा दी गई। इस समय पारस्य, तुर्किस्तान आदि देशोंसे जीरा भारतमें आता है और भारतसे भी जीरेको इङ्गलैण्ड, फ्रान्स आदि देशोंको रफ्तनी होती रहती है।

भारतमें जीरेका प्रादेशिक वाणिज्य वैदेशिक वाणिज्यसे कहीं ४ गुना अधिक है, पर किस प्रदेशमें कितना जीरा खर्च होता है, इसका अभी तक निर्णय नहीं हुआ। जीरा युक्तप्रदेश और पञ्जाबमें ज्यादा उत्पन्न होता है। बम्बई प्रदेशमें जीरा जबलपुर, गुजरात, रतलाम और मस्कटसे आता है। पहले लोगोंका विश्वास था कि, जीरेका धुआँ पीनेसे मुख विवर्ण हो जाता है। कृष्णजीरक देखो।

इस देशके वैद्यक मतसे—तीनों प्रकारका जीरा रुक्ष, कटु, उष्णवीर्य, अग्निप्रदीपक, हलका, धारक, पित्तवर्द्धक, मेधाजनक, गर्भाशयशोधक, ज्वरनाशक, पाचक, बलकारक, शुक्रवर्द्धक, रुचिजनक, कफनाशक, चक्षुके लिए हितकारक तथा वायु, उदराध्मान, गुल्म, वमन और अतीसार नाशक है। (भावप्र०) इससे जो तेल बनता है, वह बहुत सुगन्धित, वायुनाशक और उष्णकारक है।

जीरकद्वय (सं० क्ली०) शुक्लपीत जीरक, सफेद रङ्ग लिये पीला जीरा।

जीरका (सं० स्त्री०) शालिधान्य, कार्त्तिक और अगहनमें होनेवाला एक प्रकारका धान।

रहे। अपने 'सब जज' भाई व्रजविहारी सोमके कहनेसे वह किताबके कीड़े बन गये, विश्वविद्यालय पगेचाको छोड़ अपने मनके पुस्तक पढ़ने और बराबर ज्ञानसञ्चय करने लगे। अंगरेजी कविताका मातृभाषामें अनुवाद चकरनेकी क्षमता इनमें बहुत थी। अन्यान्य विषयोंकी अपेक्षा साहित्य, इतिहास और दर्शन इन्हें अधिक प्यारा था। मरते समय तक इनकी ज्ञानार्जनप्रवृत्ति प्रबल रही। यह अच्छे नाटककार तथाअभिनेता भी थे। किन्तु नाट्यालयके असंख्य कार्योंमें वह जब कभी भी समय पाते, कोई न कोई पुस्तक वा सामयिक पत्रिकादि पढ़नेमें लग जाते थे। गिरिशचन्द्र बहुत वर्ष तक एशियाटिक सोसाइटीके सदस्य रहे। शहरमें यह कई पुस्तकालयोंको चन्दा देते थे। बाल्यकालसे ही मातृभाषा पर इन्हें बड़ा अनुराग था। पितामहीसे किस्सा सुनना और रामायण तथा महाभारत पढ़ना इनको बहुत अच्छा लगता था। वैष्णव भिक्षुकोंका धर्मसङ्गीत उनके मनमें अमृतधारा बहाता था। कवि होनेकी वासना उनके मनमें अल्प वयसको ही उठी थी।

२० वर्षकी उम्रमें गिरिशचन्द्रने एटकिनसन टिलटन कम्पनीकी लम्बोटवारीको ओर थोड़े दिन बाद हो हिसाब किताबमें होशियार हो गये। फिर उन्होंने कितने हो सौदागरी दफतरोंमें खजाञ्चीका काम किया। वहां भी मौका मिलने पर यह पढ़ने लिखनेसे चूकते न थे। १८६७ ई०को २४ वर्षकी उम्रमें पहले इन्होंने शौकीनोंकी एक नाटकमण्डली बनायी। उसमें माइकेल मधुसूदन दत्तका 'शर्मिष्ठा' नाटक अभिनयके लिये मनोनीत हुआ। इन्होंने उसके जो गाने बनाये, पहले छपाये थे। उसके बाद नाटक लिखनेकी ओर यह झुके। १८६८ ई०को इन्होंने अवैतनिक नाट्यसम्प्रदाय (Baghbazar Amateur Theatre) बागबाजारमें प्रतिष्ठित किया। इन्हीं की तालीमसे 'सधवाको एकादशी' खेल हुआ। कलकत्ते के कितने हो गण्यमान्य सज्जनोंने उसकी बड़ी प्रशंसा की थी। फिर 'लीलावती' आदि दूसरे अभिनय होने पर इनकी सुख्याति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। इन्होंने 'मृणालिनी', 'मेघनादवध' 'विषवृक्ष' आदि कई अच्छे अच्छे पुस्तक वा नाटक लिखे हैं। इस समय तक वह आफिसमें बुककीपरी (बही खातेका काम) करते रहे। फिर भागलपुर गये, वहां भी वह कविता बनाते थे। फिर कलकत्ता आ करके पार्कार कम्पनीमें १५० रु० मासिक पर नौकरी की। किन्तु इस बार उनकी मति पलटी और उन्होंने नामके लिये डेढ़ सौ की नौकरी छोड़ सौ रुपये माहवारकी थियेटरकीम नेजरी कर ली। इस समयसे वह एक बारगी ही नाट्यालयके काम काजमें पड़ गये और नयी नयी चालके नाटक बनाने लगे। 'रावणवध' प्रमुख इनकी बनाये नाटक सुप्रसिद्ध हैं।

गिरिशचन्द्र घोष।

१८८३ ई०की उन्होंने कलकत्तेकी बीडन ष्ट्रीट पर विख्यात 'ष्टार थियेटर' खड़ा किया। इन्हींके सदुद्योगसे नाट्यशाला धर्मप्रचारका स्थान जैसी परिगणित हुई और जन साधारणकी श्रद्धा उस पर आकर्षित होने लगी। 'बिल्वमङ्गल' आदि ग्रन्थोंने उन्हें अमर जैसा बना रखा है। यह कोई ५० वर्ष नाट्य जगत्में पड़े रहे। इन्होंने कलकत्तेकी प्रायः सब नाट्यशालाओंमें काम किया था नाट्यकलाकी उन्नति करना उनके जीवनका व्रत और एकमात्र लक्ष्य रहा।

४ पञ्जाबके अन्तर्गत फिरोजपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३०° ५२ से ३१° ८' उ० और देशा० ७४° ४७' से ७५° २६' पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ४८५ वर्ग मील है। इसकी उत्तरमें शतद्रु नदी है, जिसने लाहोर और अमृतसर जिलेसे इसे अलग कर रक्खा है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः १७६४६२ है। इस तहसीलकी भूमि सर्वत्र समान है। यह एक विस्तीर्ण प्रान्तर है, कहीं भी पर्वत आदि नहीं हैं। बाढ़का पानी खाडीमें आ कर गिरता है इसीसे यहां उपज अच्छी होती है। यहांकी उत्पन्न द्रव्य धान, कपास, गेहूँ चना, जुन्हरी, तमाकू, माग और फलमूलादि हैं। इस तहसीलमें जीरा, मखु और धरमकोट नामके शहर तथा ३४२ गाँव लगते हैं। एक तहसीलदार और एक मुन्सिफ, एक दीवानी और दो फौजदारी अदालतमें विचारकार्य करते हैं। यहां पांच थाना हैं।

५ पञ्जाबके फिरोजपुर जिलेकी जीरा तहसीलका प्रधान नगर और सदर। यह अक्षा० ३०° ५८' उ० और देशा० ७४° ५८' पू०में फिरोजपुर शहरसे २६ मील दूर फिरोजपुरसे लुधियाना जानेके रास्ते पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४००१ है। यह शहर छोटा होने पर भी इसके चारों ओर अच्छे अच्छे बगीचे लगे हैं। इसके पास हो कर एक खाड़ी गई है। यहां तहसीलदारकी कचहरी, थाना, विद्यालय, अस्पताल, मिउनिसिपल सराय, डाकबङ्गला आदि हैं।

जीरागुड़ (सं० क्ली०) जीरायुक्तं गुडं, मध्यपदलो०। वैद्यकोक्त एक औषध। प्रस्तुत प्रणाली क्षेत्रपर्पटी, गुड़ची और वासक (अडूसा)-का क्वाथ या त्रिफलाका रस, जीरा, गुड़, मधु इनको सेफाली-पत्रके रसके साथ मिलानेसे जीरागुड़ बनता है। इस औषधिके खानेसे श्लेष्मायुक्त विषमज्वर और साधारण विषमज्वर वा सब तरहका बुखार जाता रहता है। यह अग्निवृद्धिकर और सर्वप्रकार वातरोगनाशक है। (चिकित्सासारसं०, ज्वरा०)

और एक प्रकारका जीरागुड़ है जो जीरा, गुड़ और मरिचके मिलानेसे बनता है। यह जीरागुड़ ऐकाहिक ज्वर (इकतरा)में जल्दी फायदा पहुंचाता है।
(चिकित्सासारसं)

जीराध्वर (वै० त्रि०) विघ्न या विपद्-रहित, जिसे किसी प्रकारका विपद न हो।

जीराश्व (वै० त्रि०) क्षिप्रगति अश्वयुक्त, जिसके तेज घोड़ा हो।

जीरि (सं० पु०) जीर्य्यति जॄ-बाहुलकात् रिन्। १ मनुष्य। (त्रि०) २ जारक। ३ अभिभावक, रक्षक, सरपरस्त।

जीरिका (सं० स्त्री०) जीर्य्यति जॄ रिक् ईश्चान्तादेश' ततः स्वार्थे कन्। वंशपत्रीतृण, वंशपत्री नामको घास।

जीरी (हिं० पु०) अगहनमें तैयार होनेवाला एक प्रकारका धान। यह पञ्जाबके करनाल जिलेमें अधिक उपजता है। इसका चावल बहुत दिनों तक रखने पर भी किसी तरहका नुकसान नहीं होता है। इसके दो भेद हैं—एक रमाली और दूसरा रामजमानी।

जीरीपटन (हिं० पु०) पुष्पविशेष, एक प्रकारका फूल।

जीर्ण (सं० त्रि०) जॄ-क्त तस्य निष्ठा नत्वं। गत्यर्थाकर्मकश्लिषेति पा।३।४।७२। १ वयःप्रकारभेद, जिसको बुढ़ापा आ गया हो, वृद्ध, जरायुक्त, बूढ़ा। २ पुरातन, पुराना। (गीता) (पु०) ३ जीरक, जीरा। ४ शैलज, छरीला।
(राजनि०)

(त्रि०) ५ उदराग्निके द्वारा जिसका परिपाक हुआ हो, परिपक्व, पका हुआ। (चाणक्य)

किस किस द्रव्यके साथ किस किस द्रव्यके मिलने पर जीर्ण होता है, इसका वर्णन जीर्णमञ्जरीमें इस प्रकार लिखा है—नारियलके साथ चावल, खीरके साथ आम्र, जम्बीरोत्थ रस और मोचकफलके साथ घी, गेंहूके साथ ककड़ी, मांसके साथ कांजिक, नारङ्गके साथ गुड़, पिण्डारकसे कोदो, पिष्टान्नसे सलिल, चिरौंजीसे हर्रे, क्षीरभवसे खाँड़ और मठा, कोलम्बजसे ईषदुष्ण जल, तथा मत्स्यसे आम्रफल शीघ्र जीर्ण होता है। जल पीनेके बाद मधु, पौष्करजसे तैल, कटहरसे केला, केलासे घी, घीसे जम्बूरस, नारियलके फल और ताड़के बीजसे चावल, दाड़िम, आंवला, ताड़, तेंदू, बिजौरा नीबू और हरफरी बकुलफलके साथ, मधुक, मालूर, नृपादन, परूष, खजूर और कपित्थ (कैथ) नीमके बीजके साथ, घीके साथ मठा, मातुलपत्रकके साथ गेंहू, माष (उड़द),

गिरिशाल (सं० पु०) गिरौ शालते शोभते शाल। अच्। एक प्रकारका बाज पक्षी। (सुश्रुत)

गिरिशालाह्व (सं० पु०) प्रतुदपक्षी।

गिरिशालिनी (सं० स्त्री०) गिरिं शालयति शोभयति गिरि-शाल-णिच-णिनि, ततो-ङीप्। अपराजिता लता। (वामनपुराण)

गिरिशिखर (सं० पु०) महाबकुल।

गिरिशृङ्ग (सं० पु०) गिरेः शृङ्गमाकारेण अस्त्यस्य गिरि-शृङ्ग अच्। १ गणेश। गणेशके शूंड उत्तोलन करने पर पर्वतशृङ्गके आकारके जैसे मालूम पड़ता है। इस लिये गणेशका नाम गिरिशृङ्ग पड़ा। (क्ली०) गिरेः शृङ्ग, ६ तत्। २ पर्वतशिखर।

गिरिषद् (सं० पु०) गिरौ सीदति सद-क्विप्-षत्वं। महादेव, शिव।

गिरिष्ठा (सं० त्रि०) गिरौ तिष्ठति गिरि-स्था क्विप् षत्वञ्च। १ पर्वतस्थायी। (ऋक् १।१५४।२) (पु०) २ महादेव, शिव।

गिरिसर्प (सं० पु०) नितम्बस०। दर्वीकर जातीय सर्प-विशेष।

गिरिसार (सं० पु०) गिरेः सारः, ६-तत्। १ लौह, लोहा। २ शिलाजतु, शिलाजीत। ३ वङ्ग, रांगा। ४ मलयपर्वत।

गिरिसारमय (सं० त्रि०) गिरिसारस्य विकारः गिरिसार-मयट्। गिरिसारसे बनाया हुआ।

गिरिसिन्दुक (सं० पु०) कृष्णनिर्गुण्डी।

गिरिसुत (सं० पु०) गिरेः सुतः, ६-तत्। मैनाकपर्वत।

गिरिसुता (सं० स्त्री०) गिरेः सुताः, ६-तत्। १ पार्वती। २ गदा।

गिरिस्रवा (सं० स्त्री०) गिरेः स्रवति स्रु-अच् टाप्। पार्वतीय नदी, पहाड़से निकली हुई नदी।

गिरिस्वेदः (सं० पु०) शिलाजतु, शिलाजीत।

गिरिह्वा (सं० स्त्री०) गिरिं वालमूषिकाकर्णं, ह्वयति स्पर्द्धते तदाकारेण ह्वे-क-टाप्। १ अपराजिता लता २ वालमूषिका, चुहिया।

गिरी (हिं० स्त्री०) १ किसी बीजके भीतरका गूदा। २ "गिरि" देखो। ३ "गरी" देखो।

गिरीन्द्र (सं० पु०) गिरिरिन्द्र इव। १ हिमालय पर्वत। गिरेरिन्द्रः, ६-तत्। २ महादेव, शिव।

गिरियक (सं० पु०) गिरियक निपातनात् दीर्घत्वं। गिरियक देखो।

गिरीश (सं० पु०) गिरेः कैलासस्य ईशः, ६ तत्। १ कैलास-पति, शिव। गिरीणामीशः श्रेष्ठं, ६ तत्। २ हिमालय पर्वत। गिरा वाचा ईशः अधिपति, ६-तत्। ३ बृहस्पति।

गिरेबान (हिं० पु०) गलेमें पहननेका कपड़ेका वह भाग जो गरदनके चारो तर्फ रहता है।

गिरेवा (हिं० पु०) १ छोटी पहाड़ी। २ चढ़ाईकी रास्ता।

गिरेश (सं पु०) १ ब्रह्मा। २ विष्णु।

गिरो (फा० वि०) रेहन, बंधक।

गिरोड—बरार प्रान्तके वर्धा जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २०° ४०′ उ० और देशा० ७८° ८′ ३०″ पू०में वर्धा शहरसे ३७ मील दक्षिणपूर्वको अवस्थित है। इसके निकटवर्ती पर्वतमें शेख खाजा फरीद पीरका मकरबा है। स्थानीय हिन्दू और मुसलमान भक्त सर्वदा वहां जाया आया करते हैं। धार्मिक फरीद ३० वत्सरकाल फकीरके वेशमें भारतके नाना स्थान परिभ्रमण करके १२४४ ई०को वहां जा बसे थे इनके सम्बन्धमें अनेक आश्चर्य-घटनाएं सुन पड़ती है। पांच गांवोंको आम-दनीसे इस मकरबेका खर्च चलता है। यहां प्रति सप्ताह बाजार लगता है।

गिर्गिट (हिं० पु०) गिरगिट देखो।

गिर्जा (फा० पु०) गिरजा देखो।

गिर्द (फा० अव्य०) आसपास, चारों ओर।

गिर्दावर (फा० पु०) १ घूमनेवाला, दौरा करनेवाला। २ कामकी देख भाल करनेवाला।

गिर्याह्वा (सं० स्त्री०) गिरिं वालमूषिकाकर्णं आह्वयति स्पर्द्धते तदाकारेण गिरि-आ-ह्वे-क-टाप्। अपराजिता।

गिर्वणस् (सं० पु०) गिरा वाचा वन्यते गिर-वन कर्मणि असुन् णत्वं दीर्घाभावश्च छन्दसः। १ देवविशेष। (त्रि०) गिरा वनन्ति स्तुवन्ति गिर वन कर्त्तरि असुन्। २ स्तव-कर्त्ता, स्तव करनेवाला।

गिर्वणस्यु (सं० त्रि०) १ जो स्तव करता है।

गिर्वन् (सं० स्त्री०) गिरां वनति स्तौति। स्तव करने-वाली स्त्री।

जीर्णवज्र (सं० क्ली०) जीर्णं पुरातनं वज्रं हीरकमिव। वैक्रान्तमणि।

जीर्णवस्त्र (स० क्ली०) जीर्णं वस्त्रं, कर्म्मधा०। पुरातन वस्त्र, पुराना कपड़ा। इसके पर्याय—पटच्चर।

जीर्णसंस्कार (सं० पु०) जीर्णस्य संस्कारः, ६ तत्। पुरानी वस्तुको सुधारना, मरम्मत।

जीर्णसंस्कृत (सं० त्रि०) जीर्णस्य संस्कृतः, ६-तत्। जो मरम्मत की गई हो।

जीर्णसीतापुर—मन्द्राज प्रदेशका एक प्राचीन नगर। किसी एक जैन राजाने यह नगर स्थापन किया है। वर्त्तमान बेलगाँव और शाहपुर जिस स्थान पर अवस्थित है उसी स्थान पर यह नगर भी अवस्थित था। आज भी इसके दुर्ग प्राचीर और सरोवर आदिका भग्नावशेष विद्यमान है।

जीर्णा (सं० स्त्री०) जृ-क्त-टाप्। स्थूल जीरा, काली जीरी। (त्रि०) २ प्राचीना, हृद्धा, बुढ़िया।

जीर्णास्थिमृत्तिका (सं० स्त्री०) एक तरहकी बनावटी मिट्टी, जो हड्डियोंकी सड़ा गला कर बनायी जाती है। कृत्रिम मृत्तिकाका विषय शब्दार्थचिन्तामणिमें इस प्रकार लिखा है। जहाँसे शिलाजीत निकलता हो, ऐसे स्थान पर एक गहरा गड्ढा खोदना चाहिये। उस गड्ढेको द्विपद और चतुष्पद जन्तुओंकी हड्डियोंसे भर देना चाहिये। इसके बाद सर्जिक्षार, महाक्षार, मृत्क्षार, नमक, गन्धक, और गरम पानी छोड़ना चाहिये। इस प्रकार छह महीने तक जारी रख कर उसके बाद पाषाणमृत्तिका डालनी चाहिये। इस तरह तीन वर्षके भीतर सब पदार्थ एकत्र हो कर प्रस्तर सदृश हो जाते हैं। पीछे उसको गड्ढेसे निकाल कर चूर्ण करना चाहिये। इस चूर्णका पात्र बनता है, जो बहुत अच्छा होता है। इस पात्रमें दूषित भोजनकी परीक्षा हो जाती है। भोजनमें यदि महाविष मिला हो, तो यह पात्र टूट जाता है। भोजनमें यदि दूषित विषादिका संयोग हो, तो उक्त पात्रमें दाग पड़ जाते हैं और क्षुद्र विष हो तो पात्र काला पड़ जाता है।

जीर्णि (सं० त्रि०) जृ-क्तिन्। जीर्णता, पुरानापन।

जीर्णोद्धार (सं० पु०) जीर्णस्य पूर्वप्रतिष्ठापितलिङ्गा-देरुद्धारः, ६-तत्। १ पूर्व प्रतिष्ठापित देवमूर्ति लिङ्गादि-का उद्धार, टूटे फूटे मन्दिर आदिका पुनःसंस्कार, जो वस्तु, जीर्ण हो कर अकर्मण्य हो गई है, मरम्मत करा कर उसको पूर्ववत् बनाना। पूर्वप्रतिष्ठापित लिङ्गादिके जीर्णोद्धारके विषयमें अग्निपुराणमें इस प्रकार लिखा है—मूर्ति अचल होने पर उसको घरमें रक्खें, अति जीर्ण होने पर परित्याग करें और भग्न वा विकलाङ्ग होने पर संहारविधिसे परित्याग करें। नारसिंहमन्त्रसे सहस्र होम कर गुरु उसकी रक्षा कर सकते हैं। लिङ्गादि काष्ठनिर्मित हों, तो उन्हें अग्निमें जला देना चाहिये। प्रस्तरनिर्मित होने पर पानीमें निक्षेप करना चाहिये और धातु वा रत्नज हो, तो समुद्रमें निक्षेप करना उचित है। जितनी बड़ी मूर्तिका परित्याग किया जाता है, उतनी ही बड़ी मूर्ति शुभ दिनमें स्थापित की जाती है। कूप, वापी और तड़ागादिका जीर्णोद्धार महाफलजनक है। कूप, वापी और तड़ागादिका जीर्णोद्धार महाफल जनक है।

अनादि सिद्धप्रतिष्ठित लिङ्गादिके (अर्थात् जिस लिङ्गको किसीने प्रतिष्ठा नहीं की हो) टूट जाने पर प्रतिष्ठादि जीर्णोद्धार करनेकी आवश्यकता नहीं; किन्तु उस मूर्तिका महाभिषेक करें। "जीर्णोद्धार करिष्ये" ऐसा संकल्प करें। "ॐ व्यापकेश्वरशिरसे स्वाहा" इस मन्त्रसे षड़ङ्गन्यास कर शत अघोर मन्त्र जप करना पड़ता है। पीछे अग्नि स्थापित कर घृत, सर्षप द्वारा सहस्र होम करें। फिर इन्द्रादि देवोंको बलि प्रदान करें। जीर्ण-देवको प्रणव द्वारा पूजा करके ब्रह्मादि देवताओंका होम करें। इसके बाद कृताञ्जलि हो कर यह मन्त्र पढ़ कर प्रार्थना करनी पड़ती है—

"जीर्णभग्नमिदं चैव सर्वदोषावहं नृणाम्।
अस्योद्धारे कृते शान्तिः शास्त्रेऽस्मिन् कथिता त्वया॥
जीर्णोद्धारविधानंच नृपराष्ट्रहितावहम्।
तदधितिष्ठतां देव प्रहरामि तवाज्ञया॥"

होम आदि सम्पूर्ण कार्योंको समाप्त कर फिर इस मन्त्रसे प्रार्थना करें—

"लिंगरूपं समागत्य येनेदं समधिष्ठितम्।
यायास्त्वं वमितं स्थानं सम्प्रत्यैव शिवाज्ञया॥"

और गिलगिट उपत्यकावासी जिस वंशसे उत्पन्न हुए, हुनजा और नागरके लोग भी उसी वंशसे सम्बन्ध रखते हैं। यह शीया सम्प्रदायभुक्त मुसलमान हैं। इनकी जातिका सरदार 'थुम' कहलाता है। थुमसरदार मगलोत और गरकश नामक २ यमज भ्राताओंके वंशधर हैं। ई० १५वीं शताब्दीके शेष भागको यह दोनों भाई विद्यमान थे। नागरका किला और थुमका घर मतसोल नामक नदीके कूलमें अवस्थित है। गिलगिटके राजवंशीय राजाओंके अधिकार कालको थुम सरदारने उनकी अधीनता मानी थी। १८६८ ई०को वह काश्मीरराजके अधीन हो गये। नागर सरदार प्रति वत्सर काश्मीरराजको करस्वरूप २१ तोला सोना देते हैं। इसी पार्वत्य प्रदेशको उत्तर दिक्को 'छोटा गुजल' नामक बड़ी बड़ी घाससे घिरी हुई एक जगह है। यहां गोमेषादिके साथ एक भ्रमणकारी जाति रहती है। इसी राज्यके उत्तर पूर्वकी पकपू और शचपू नामक दो जातियां रहती हैं। इनकी संख्या १० हजारसे अधिक होगी। यह हुनजा सरदारको वार्षिक कर देते हैं। यह देखनेमें अतिसुन्दर हैं। गात्रका वर्ण तांबे जैसा लाल होता है। हुनजाके उत्तरको सिरीकोल नामक पार्वतीय राज्य है। हुनजा सरदारवंश 'अएसे' अर्थात् स्वर्गीय कहलाता है। पूर्वका यह भी साह' राजाओंके अधीन थे। हुनजा ८ जिलोंमें विभक्त है और प्रत्येक जिलेमें एक एक किला बना है।

गिलगिटके शीन लोग हुनजा और नागरके अधिवासियोंको ऐशकुन जातीय बतलाते हैं। परन्तु शेषोक्त देशवासी अपनेको बरीस जातीय जैसा मानते हैं। शीन लोग इसलाम धर्ममें दीक्षित होते भी खूब गोभक्ति दिखलाते हैं। कट्टर शीन तो यहां तक कि जिस पात्रमें गोदुग्ध भी रखा जाता, नहीं छूते। बछड़ा जितने दिन दुध पीता, वह साधारणके लिये अस्पृश्य ठहरता है। इसीसे प्रसूत होते ही सवत्सा गाय ऐशकुनोंके पास भेज देते और वत्सके मातृस्तन त्याग करते ही फिर उसको उनके पाससे वापस मंगा लेते हैं। यही सब जातिगत आचारव्यवहार आलोचना करनेसे ध्यानमें आता शायद पूर्वकालको दक्षिण देशके किसी हिन्दू राजाने सिन्धुनद पार हो उसी सुन्दर देशमें जा करके हिन्दूकुश प्रान्तमें अपना राज्यस्थापन किया था।

१७६० ई०को अहमद शाह अब्दालीने जब भारत आक्रमण किया, काश्मीरियोंका एक दल जा करके गिलगिटमें बस गया। आज उन्हें 'काशोरू' कहते हैं। स्थान परिवर्तनके साथ साथ इनका आचार भी बहुत बदला है। यह चिवालके अधिवासियोंमें बिलकुल मिल जुल गये हैं।

गिलगिट नगरसे १८ मील उत्तरको पोनियाल जिला है। यह प्रायः २२ मील बढ़ करके चसीन राज्यकी सीमा तक चला गया है। गिलगिटके प्राचीन राजाओंके समयमें इसी जिलेके आयसे राजपुत्रों और कन्याओंका भरण पोषण होता था। १८६० ई०को यह भी काश्मीरराज्यके अधीन हो गया।

पहले हुनजा और गिलगिटके सरदारोंमें हमेशा लड़ाई लगी रहती थी। परन्तु १८६८ ई०को वह विवाद मिट गया। तदवधि थुम सरदार श्रीनराजको प्रति वर्ष टा घोड़े, २ कुत्ते और ५२॥ तोला सोना कर स्वरूप दिया करते हैं। बलटीत नामक स्थानमें थुमका भवन है।

कोई ३० वर्ष हुए हुनजा नागरोंके साथ ब्रटिश गवर्नमेण्टका युद्ध छिड़ा था। अब गिलगिट निकटवर्ती अधिवासी ब्रटिश गवर्नमेण्टको अधीनता स्वीकार करने पर बाध्य हुए हैं। सरकार गिलगिटकी फौज बढ़ाने और उसके चारों ओर पोख्ता किले बनानेमें लगी है।

गिलगिट वजारतमें २६४ गांव हैं। लोकसंख्या प्रायः ६०८८५ है। खेती खूब होती है। गोचरभूमि और पशु कम हैं। ऊनी पट्टू खूब बुना जाता है। नमकका कारवार बड़ा है। भारतको कई सड़कें आयी हैं। डाक और तारका भी भारतके साथ लगाव है। वजीर वजारत गिलगिट वजारतका प्रबन्ध करते हैं। यहां सरकारी फौज रहती है। अंगरेजी पोलिटिकल एजेण्टका भी निवास है। वह वजीरके कामोंकी देख भाल रखते हैं।

गिलगिल (सं० त्रि०) गिलं कुम्भीरं गिलति गिल-गिलक। १ जो कुम्भीरको भी निगल सकता हो। (पु०) २ गिलग्राह, नक्र, नाक नामक जन्तु।

गिलगिलिया (हिं० स्त्री०) एक तरहकी चिड़िया, जो आपसमें बहुत लड़ती है, सिरोही।

१० जैन वा अनेकान्तवादियोंका पारिभाषिक जीवास्तिकाय पदार्थभेद। यह दो प्रकारका है—एक मुक्त और दूसरा बद्ध अर्थात् संसारी। जो कर्म-आवरणोंसे विमुक्त हैं, जिनको जन्म जरा मृत्युका दुःख नहीं और जिनके आस्रव बन्धके कारणरूप मन वचन-कायकी क्रिया नष्ट हो गई है, ऐसे त्रैकालिक वा केवलज्ञानके धारक परम सिद्धोंको मुक्त जीव कहते हैं। और जो सर्वदा मोह आदि आचरणोंसे दूषित हो कर निरन्तर जन्म-जरा मृत्युके दुःखसे दुःखित हैं तथा जिनके सर्वदा कर्मोंका आस्रव, बन्ध आदि होता रहता है, उनको बद्ध अर्थात् संसारी जीव कहते हैं। जीवात्मा देखो।

११ उपाधिप्रविष्ट ब्रह्म अर्थात् वाक्-मन-अन्तःकरण समूहके मध्य अनुप्रविष्ट ब्रह्मके वाकमन अन्तःकरणआदिके भीतर सूक्ष्मभावसे प्रविष्ट होने पर वह जीवपदवाच्य होता है।

१२ घटावच्छिन्न आकाशकी भाँतिका शरीरत्रयावच्छिन्न चैतन्य। भूत मातृपितृज और लिङ्ग इन तीनोंका नाम जीव है। आकाशशरीर बहुत बड़ा है, पर घटावच्छिन्न घटप्रविष्ट होने पर वह घटके बराबर हो जाता है, इसी तरह ब्रह्म शरीरत्रयमें रहते समय जीव कहलाते हैं। जिस प्रकार घटके टूट जानेसे घटाकाश महाकाशमें विलीन हो जाता है, उसी तरह इस शरीरत्रयके नष्ट होने पर जीव भी ब्रह्ममें लीन हो जाता है।

१३ दर्पणस्थित मुखके प्रतिविम्बकी भाँति बुद्धिस्थित चैतन्य-प्रतिविम्ब बुद्धि और चैतन्य जब प्रतिविम्बित होता है, तभी वह जीवके नामसे पुकारा जाता है।

१४ प्राणादि कालका धारयिता। जितने दिन प्राण रहे, उतने दिन उसको जीव कहा जा सकता है। (भागवत)

१५ लिङ्गदेह। (भागवत) पञ्चतन्मात्र—शब्द, स्पर्श रूप, रस, गन्ध, गुण—सत्त्व, रज, तम, षोड़श विकृति—एकादश इन्द्रिय और पञ्चभूत इन चौबीस तत्त्वोंके साथ युक्त होने पर जीवपदवाच्य होता है। इस जीवका परिमाण केशाग्रके सहस्र भागका एक भाग है।

१६ विष्णु। (भारत १३।१५९।६८) १७ अश्लेषा नक्षत्र। (ज्योति०) १८ महानिम्बवृक्ष, बकायनका पेड़। (भावप्र० पूर्व०)

जीव—हिन्दीके एक कवि। ये लगभग १७५० सम्वत्में विद्यमान थे।

जीवक (सं० पु०) जीवयति आरोग्यं करोति जीव-णिच्-ण्वुल्। १ जीववृक्ष, अष्टवर्गान्तर्गत औषधविशेष, एक जड़ी या पौधा। इसके संस्कृत पर्याय—कूर्चशीर्ष, मधुरक, शृङ्ग, ह्रस्वाङ्ग, जीवन, दीर्घायु, प्राणद, जीव्य, भृङ्गाह्व, प्रिय, चिरञ्जीवी, मधुर, मङ्गल्य, कूर्चशीर्षक, वृद्धिद, आयुष्मान्, जीवद और बलद। इसके गुण—यह मधुर, शीतल तथा रक्तपित्त, वायुरोग, क्षय, दाह और ज्वरनाशक (राजनि०) बलकारक, क्षयता और वात नाशक है। इसके सेवनसे जीवनकी वृद्धि होती है, इसलिए इसको जीवक कहते हैं। जीवक कन्द या कूर्चशीर्षकी जातिका ऋषभकसे छोटा है और इसके मस्तकसे कूर्चाकार शीर्ष (जैसा कि नारियल आदिके पेड़की चोटी पर निकला हुआ रहता है) निकलता है। जीवक और ऋषभ दोनों ही एक जातिके तथा दोनोंका ही कन्द आम्रकी भाँतिका होता है। इनके पत्ते बहुत शरीक होते हैं पर जीवकका शीर्ष कूर्चाकार (कूँचीके आकारका) और ऋषभका शीर्ष बैलके सींगके समान होता है। इससे मालूम होता है कि, Caplatus नामक एक प्रकारका कँटीला सींगकी आकृतिका वृक्ष है, जो देखनेमें गोल उंगली जैसा लगता है, इसमें पत्तियां नहीं होतीं। इसके चारों तरफ लम्बी लम्बी धारियां होती हैं।

२ पीत सालवृक्ष। (भावप्र०) ३ क्षपणक, दिगम्बर (जैन) मुनि। ४ अहितुण्डिक, संपेरा। ५ वृद्धिजीवी, व्याज ले कर जीविका निर्वाह करनेवाला, सूदखोर। ६ सेवक। ७ प्राणधारक, प्राणोंको धारण करनेवाला जैन-राजा सत्यन्धरके पुत्र। जीवन्धरस्वामी देखो।

जीवग्रभ (वै० पु०) जीवन्त अवस्थामें ग्रहण, जीतेजीमें पकड़ना।

जीवगोस्वामी—गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायके छह गोस्वामियोंमेंसे एक। वैष्णवदिग्दर्शनीमें इनके जन्म आदिका समय इस प्रकार लिखा है—

गिलौरीदान (हिं० पु०) पान रखनेका डिब्बा, पानदान।

गिल्टी (फा० स्त्री०) गिल्टी देखो।

गिल्ला (फा० पु०) गिला देखो।

गिल्लो (फा० स्त्री०) गुल्ली।

गिष्ण (सं० त्रि०) १ गायक, गवैया। (पु०) २ सामवेद-का गानेवाला, सामवेदवेत्ता।

गींजना (हिं० क्रि०) किसी कोमल पदार्थको हाथसे मींडना जिसमें वह खराब हो जाय।

गींव (फा० स्त्री०) ग्रीवा, गर्दन, गला।

गी: (सं० स्त्री) १ वाणी, बोलनेकी शक्ति। २ सरस्वती देवी।

गी:पति (सं० पु०) गिरां पतिः, ६-तत्। अहरादित्वात् विकल्पे विसर्गस्य न रेफः। गीर्पति देखो।

गीगासारन—बम्बई प्रान्तमें काठियावाड़का एक क्षुद्र राज्य। इसकी आबादी कोई ५८२ और आमदनी ६६००) है। मानिकवाडसे यह १६ मील दक्षिण-पूर्व पड़ता है। लोकसंख्या कोई ६२२ होगी।

गीठम (हिं० पु०) न्यून मूल्यका सादा गलीचा।

गीडर—काठियावाड प्रान्तके बाटवा तालुकका एक नगर। जूनागढ़से प्रायः १८ मील उत्तर यह नगर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६५१ है। बांटवा बाविस राज्यकी एक पृथक् शाखा उस पर अधिकार करती है।

गीड (फा० पु०) चक्षुका मैल।

गीत (सं० क्लो०) गान, गाना, ध्रुपद तराना आदि। यह नियमित स्वरनिष्पन्न शब्दविशेष है। सङ्गीतशास्त्र-के मतमें धातु तथा मात्रायुक्तको ही गीत कहा जाता है धातु नादात्मक और मात्रा अक्षरात्मक है। गीत सभी-के प्रीतिकर होते हैं। संसारी, वनवासी वा उदासीन प्रभृति सब लोग इसके पक्षपाती हैं। हरिण आदि वन्य पशुओं और पक्षियोंको भी गाना सुनना अच्छा लगता है यहां तक कि अच्छा गीत सुन पड़नेसे अहिकुल भी स्थिर चित्तसे अवस्थान करता है। बच्चे रोदन परित्याग करके दिल लगा गाना सुननेमें लग जाते हैं। वास्तविक प्राणि-योंके लिये ऐसे विनोदका हेतु दूसरा नहीं है। गीत दुःख की यातना मिटानेका उपाय, सुखीकी प्रीतिका कारण और योगीकी उपासनाका प्रधान अङ्ग है। इसीसे प्राचीन सङ्गीतवेत्ता बतलाते कि प्रभु शङ्करने संसारको दुःखा-क्रान्त देख करके सांसारिकोंके दुःख निवारणका प्रधान उपाय गीत और वाद्य प्रकाश किया है। (सङ्गीतशास्त्र) धर्म शास्त्रमें भी लिखा है कि गीतज्ञ गीत द्वारा ही मुक्ति पा सकता है और किसी दूसरे कारणसे मुक्ति न मिलने पर वह रुद्रका अनुचर बन करके रुद्रलोकमें तो वास करता ही है।

गीत दो प्रकारका होता है वैदिक और लौकिक। मीमांसादर्शनके भाष्यमें शबरस्वामीने लिखा है—जिसमें आभ्यन्तरीण प्रयत्नसे स्वरग्रामकी अभिव्यक्ति होती, गीत कहलाता और साम शब्दमें भी उसीका उल्लेख किया जाता है। (सामसंहिताभाष्य) सामवेदमें सहस्र प्रकार गीत-का उपाय है। गायक इच्छानुसार उसमें किसी एकके अवलम्बनसे साम गान कर सकता है। (मीमांसा ९।२।२९ भाष्य) लौकिककी तरह वैदिक गानमें भी क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम और षष्ठ सात स्वर होते हैं। सामविधानब्राह्मणमें लिखित हुआ है कि उन्हीं ७ स्वरोंमें देवता क्रुष्ट, मनुष्य प्रथम, गन्धर्व तथा अप्सरा द्वितीय, पशु तृतीय, पितृलोक चतुर्थ, असुर एवं राक्षस पञ्चम और वनस्पति प्रभृति अपर जगत् षष्ठ स्वरसे परि-तृप्ति लाभ करता है। (सामविधानब्राह्मण १।१।८)

यही सात मौलिक स्वर अवान्तर भेदसे बहुविध हो जाते हैं।

लौकिक गान प्रथमतः दो भागोंमें विभक्त हुआ है—मार्ग और देशी। जो गीत सर्वप्रथम विरिञ्चिने प्रकाश किये थे और जिसको भरत प्रभृति गायक महादेवकी प्रीतिके लिये गाया करते थे, मार्ग कहलाता है। सङ्गीत-शास्त्रके मतमें मार्ग नामक गीत सर्वदा ही मङ्गल प्रदान करता है। विभिन्न लोगोंकी रुचि और रीतिके भेदसे विभिन्न रूपोंमें परिणत वा उत्पन्न गीतोंको ही देशी कहते हैं।

सङ्गीतरत्नाकर (१।२५) में लिखा है कि सभी गीतोंका मूल सामवेद है। ब्रह्माने सर्वप्रथम साम-वेदसे ही गीत सङ्ग्रह किया था।

यह गीत मन्त्र और गात्रभेदसे फिर दो प्रकार होता है। वेणु, वीणाप्रभृति यन्त्रोंमें जो गीत निकलते,

उन्होंने भक्तिरसामृतके समाप्त होनेके विषयमें पूछा। श्रीरूपने उत्तर दिया—"जीवके चले जानेसे देर हो रही है, वह रहता तो अब तक समाप्त हो जाता, उससे बड़ी सहायता मिलती थी।" सनातनने जीवका सब हाल पूछा। श्रीरूपने सब हाल कह सुनाया। इस पर सनातनने कहा—"आते समय मुझे वनसे एक बालक दिखाई दिया था, शायद वही जीव होगा। जाओ, उसे क्षमा कर दो, बहुत शिक्षा मिल चुकी, अब उसे ले आओ।"

सनातन श्रीरूपके गुरु थे; गुरुके आदेशानुसार उन्होंने जीवको क्षमा प्रदान की। गुरु-शिष्यका पुनर्मिलन हुआ।

जीवगोस्वामीकी वंशावली।

जगद्गुरु (कर्णाटके राजा १२०३ शक)
|
अनिरुद्ध (१२३८ शकमें राजा हुए)
|
रूपेश्वर — हरिहर
|
पद्मनाभ (१३०८ शकमें जन्म)
|
पुरुषोत्तम — जगन्नाथ — नारायण — मुरारि — मुकुन्द
मुकुन्द
|
कुमार
|
दोनोंका नाम मालूम नहीं — सनातन — रूप — वल्लभ
वल्लभ
|
जीवगोस्वामी

जीवग्रह (वै० पु०) नवीन सोमपूर्ण।

जीवग्राह (सं० पु०) बन्दी, कैदी।

जीवघन (सं० पु०) जीव एव घनो मूर्त्तिरस्य, बहुव्री०। हिरण्यगर्भ, ब्रह्मा।

"स एतस्माज्जीवघनात् परात्परम्।" (प्रश्नोपनि०)

जीवघोषस्वामी—एक संस्कृत वैयाकरणका नाम।

जीवज (सं० त्रि०) जीवजात, जिसने जीवन ग्रहण किया हो।

जीवजीव (सं० पु०) जीवेन भक्ष्य क्षुद्रकीटादिना जीवयति जीव अच यद्वा जीवञ्जीव पृषोदरादित्वात् साधुः। जीवञ्जीव पक्षी, चकोर पक्षी।

जीवजीवक (सं० पु०) जीवजीवः स्वार्थे कन्। चकोर पक्षी। "हत्वा रक्तानि मांसानि जायते जीवजीवकः।" (मनु १२।६६)

जीवञ्जीव (सं० पु०-स्त्री०) जीवं जीवयति विषशेषं नाशयति, बाहुलकात् खच्। १ चकोर पक्षी। २ एक दूसरे प्रकारका पक्षी। ३ वृक्षविशेष एक पेड़का नाम।

जीवट (हिं० स्त्री०) साहस, हिम्मत, मरदानगी।

जीवतत्त्व (सं० क्ली०) जीवस्य तत्त्वं यत्र, बहुव्री०। वह शास्त्र जिसमें प्राणियोंकी जाति, स्वभाव, क्रिया तथा चरित्र आदि वर्णित हैं।

जीवत्तोका (सं० स्त्री०) जीवत् तोकं अपत्यं यस्याः, बहुव्री०। जीवत्पुत्रिका, वह स्त्री जिसकी सन्तति जीती हो।

जीवत्पति (सं० स्त्री०) जीवन् पतिर्यस्याः, बहुव्री०। सौभाग्यवती स्त्री, सधवा स्त्री, वह स्त्री जिसका पति जीवित हो।

जीवत्पिता (सं० त्रि०) जिसका पिता जीवित हो।

जीवत्पितृक (सं० पु०) जीवन् पिता यस्य बहुव्री०। वह जिसका पिता जीवित हो। पिताके जीवित रहने पर अमास्नान, गयाश्राद्ध और दक्षिणकी ओर मुंह कर भोजन नहीं करना चाहिये, जो अमास्नानादि करता है वह पितृहन्ता होता है। (तिथितत्व)

जीवत्पितृक यदि साग्निक ब्राह्मण हो, तो उसको श्राद्धविशेषमें अधिकार है; न कि निरग्नि होने पर। (निर्णयसिन्धु) पितामहके जीवित होने पर भी श्राद्ध आदि कर सकता है, किन्तु प्रपितामह यदि जीवत हों, तो नहीं कर सकता।

प्रयोगपारिजात आदि स्मृतिनिबन्धकारोंके मतसे—साग्निक जीवत्पितृक ही श्राद्ध आदि पितृकार्य कर सकता है, निरग्निक नहीं। परन्तु यह मत विशुद्ध नहीं है। निरग्नि जीवत्पितृक होने पर भी वृद्धिश्राद्ध कर सकता है, पर अन्य श्राद्ध नहीं कर सकता। (हारीत)

और भी बहुतसे प्रमाण हैं जिनसे सिद्ध होता है कि जीवत्पितृक निरग्निक होने पर भी वृद्धिश्राद्ध कर सकता है और साग्निक जीवत्पितृक सब श्राद्ध कर सकता है,

कथित श्रुतिसमूहकी ५ जातियां हैं—दीप्ता, आयता, करुणा, मृदु और मध्या। षड्ज स्वरकी ४ श्रुतियां यथा क्रम दीप्त, आयत, मृदु और मध्य जातीय होती है। इसी प्रकारसे ऋषभकी तीन करुणा, मध्या और मृदु, गन्धारको दो दीप्ता तथा आयता, मध्यमकी चार दीप्ता, आयता-मृदु एवं मध्या, पञ्चमकी चार मृदु, मध्या, आयता, करुणा, धैवतकी तीन करुणा, आयता और मध्या और निषादको २ श्रुतियां दीप्त और मध्या है। दीप्तमें भी तीव्रा, रौद्री, वज्रिका और उग्रा—४ भेद पड़ते हैं। आयता ५ प्रकार है—कुमुद्वती, क्रोधा, प्रसारिणी, सन्दीपनी और रोहिणी। करुणा—दयावती, आलापिनी और मदन्तिका भेदसे तीन प्रकारकी होती है। मृदुके चार भेद है—मन्दा, रतिका, प्रीति और क्षिति। मध्य छह प्रकारकी कही है—छन्दोवती, रञ्जनी, मार्जनी, रक्तिका, रम्या और क्षोभिणी।

यही ७ मौलिक स्वर विकृत हो करके १२ प्रकारके बन जाते हैं। इनमें षड् स्वर विकृत होने पर च्युत और अच्युत दो प्रकारका ठहरता है। इसकी ४ स्वाभाविक श्रुतियोंमें अन्तिम हीन होनेसे च्युत और और पूर्व श्रुति हीन होनेसे अच्युत कहते हैं। ऋषभकी ३ स्वाभाविक श्रुतिया है। परन्तु षड्जकी अन्तिम श्रुति मिल जानेसे चतुः श्रुति विकृत ऋषभ कहलाता है। गान्धार—मध्यमकी प्रथम श्रुति ग्रहण करनेसे त्रिश्रुति विकृत और प्रथम और द्वितीय २ श्रुतियां लेनेसे चतुःश्रुति विकृत होता है। मध्यम भी षड्जकी तरह च्युत और अच्युत भेदसे दो प्रकार है। पञ्चम तृतीय श्रुतिमें संस्थित होनेसे त्रिश्रुति विकृत और यही विकृत मध्यमकी अन्तिम श्रुति ग्रहण करनेसे चतुःश्रुति विकृत ठहरता है। पञ्चमकी अन्तिम श्रुति धैवतमें प्रवेश करनेसे चतुःश्रुति विकृत धैवत होता है। निषाद षड्जकी प्रथम श्रुति लेनेसे त्रिश्रुति विकृत और षड्जकी श्रुतियां ग्रहण करनेसे चतुःश्रुति विकृत कहलाता है। मौलिक सात और विकृत १२ स्वर मिल करके इक्कीस हो जाते हैं। (सङ्गीतरत्नाकर १।३०-४२) सङ्गीत शास्त्रमें लिखा है कि मयूरका षड्ज, चातकका ऋषभ, छागका गान्धार, क्रौञ्चका मध्यम, कोकिलका पञ्चम, भेकका धैवत और गजका स्वाभाविक स्वर निषाद है। (संगीतरत्नाकर १।४४)

इन्हीं सकल स्वरोंसे सकल प्रकारका राग उत्पन्न होते हैं। पूर्वकथित स्वर फिर वादी, संवादी, विवादी और अनुवादी भी होते हैं। जिस रागमें जो स्वर बार बार लगता, उसका वादी ठहरता है। रागमें वादी ही सर्वप्रधान है। दूसरे स्वर इसके अनुगत रहते हैं। २ स्वर जिस जिस श्रुति पर विश्रान्ति पाते, उसके बीच बारह अथवा ८ श्रुतियां रहनेसे एक दूसरेके संवादी कहलाते हैं। जैसे—षड्जस्वर छन्दोवती नामक चतुर्थ श्रुतिमें समाप्त और मध्यम मार्जनी नामक त्रयोदश श्रुतिमें विरत होने और छन्दोवती तथा मार्जनीके मध्य दयावती, रञ्जनी, रतिका, रौद्री, क्रोधा, वोर्जका, प्रसारिणी और प्रीति ८ श्रुतियां रहनेसे मध्यम षड्जका संवादी है। इसी प्रकार १२ श्रुतियोंका व्यवधान रहनेसे पञ्चम भी षड्जका संवादी हो होता है। ऋषभका धैवत, गान्धारका निषाद, मध्यमका षड्ज, पञ्चमका षड्ज, धैवतका ऋषभ और निषादका संवादी गान्धार है। (सङ्गीतरत्नाकर २।४६)

गीतके अंशरूपसे जो स्वर कल्पित होता, उसका संवादी स्वर लगानेसे राग बिगड़ता है। पूर्व संवादी स्थलमें उत्तर संवादीके प्रयोगसे रागका अभाव और उत्तर संवादीकी जगह पूर्व संवादी लगानेसे जाति हानि होती है।

निषाद और गान्धार अपर स्वरके विवादी हैं। परन्तु किसी सङ्गीतविद्के मतमें वह दोनों स्वर ऋषभ और धैवत स्वरोंके ही विवादी है, दूसरे किसीके भी नहीं। फिर कोई कोई सङ्गीतवेत्ता ऋषभ और धैवतको गान्धार तथा निषादका विवादी स्वर बतलाता है। गीतमें निर्दिष्ट स्वरके स्थान पर उसका विवादी लगानेसे रागका वादित्व, अनुवादित्व और संवादित्व नष्ट होता है। परस्पर संवादी वा विवादी न होनेवाले एक दूसरेके अनुवादी ठहरते है। गीतमें निर्दिष्ट वादी स्वरके स्थानमें अनुवादीको लगा सकते है, इससे जातिरागका कोई अनिष्ट नहीं है। (संगीतरत्नाकर १।४७)

शार्ङ्गदेवके मतानुसार षड्ज, मध्यम और गान्धार तीन देवकुल, पञ्चम पितृकुल, ऋषभ तथा धैवत ऋषि-

जीवनदास—'ककहरा' नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता।

जीवननाथ—१ एक हिन्दी कवि। अयोध्याके अन्तर्गत नवलगंजमें १८१५ ई०को अयोध्याके दीवान बालकृष्णके वंशमें इनका जन्म हुआ था। इन्होंने 'वसन्तपचीसी' नामक हिन्दीकी एक बहुत अच्छी पुस्तक लिखी है।

२ अलङ्कारशेखरके रचयिता। ३ कई एक चिकित्सा ग्रन्थके प्रणेता। ४ तत्त्वोदयप्रणेता।

जीवन बाजार—दिनाजपुर जिलेका एक बन्दर। इसका दूसरा नाम गोराघाट है। यह करतोया नदीके ऊपर अवस्थित है। इस बन्दरसे दिनाजपुरका चावल दूसरे दूसरे स्थानोंमें भेजा जाता है।

जीवनबूटी (हिं० स्त्री०) सञ्जीवनी नामका पौधा।

जीवन मस्तानि—हिन्दीके एक कवि। ये प्राणनाथके शिष्य थे। इन्होंने १७०० ई०में पंचकदहाई नामक हिन्दी ग्रन्थ लिखा था।

जीवनमुल्ला—इनका असली नाम शेख अहमद था। ये बादशाह औरङ्गजेबके शिक्षक थे। इन्होंने तफसीरअहमदी नामको कुरानकी एक टीका बनाई है। ११३० हिजिरा (१७१८ ई०) में इनकी मृत्यु हुई। इनको मुल्लाजीवन जौनपुरी भी कहते थे।

जीवनमूरि (हिं० स्त्री०) १ सञ्जीवनी नामकी जड़ी। २ अत्यन्त प्रिय वस्तु, प्राणप्रिया, प्यारी।

जीवनयोनि (सं० स्त्री०) जीवनस्य योनिः कारणं, ६ तत्। न्यायोक्त देहमें प्राणसञ्चारकारण यत्न। यही यत्न अतीन्द्रिय है।

"यत्नो जीवनयोनिस्तु सर्वदातीन्द्रियो भवेत्।
शरीरे प्राणसञ्चारकारणं परिकीर्तितम्॥" (भाषाप०)

जीवनराम भाट—खजुरहरा (जिला हरदोई) निवासी एक हिन्दीके कवि। इन्होंने जगन्नाथ पण्डितराज कृत गङ्गालहरीका भाषा पद्यानुवाद किया था। करीब १४ वर्ष हुए इनका देहान्त हो गया है। इनकी कविताका एक उदाहरण दिया जाता है—

"देखी मैं बरात रामलीलाकी इटौंजा
मध्य शोभा रूपधाम राजा रामको विवाह है।
बोलैं चोपदार भूम धौंसाकी धुकार सुनि
चित्तं नर नारिनके चौगुनो उछाह है।
भारी भीर भूधर गयन्दनकी सीम घटा
साजे गजराज पै विराजै सीता-नाह है।
जीवन सुकवि प्रेम अन्तर विचारि कहै
आपु महाराज सीस कीन्हे छत्र छांह है॥"

जीवनलाल नागर—हिन्दीके एक कवि। ये बूंदीके रहने वाले और संस्कृत, फारसी और हिन्दीके अच्छे ज्ञाता थे। १८१३ ई०में इनका जन्म हुआ था। १८४१ ई०में ये बुंदी राज्यके प्रधान नियुक्त हुए थे। १८५७ ई०की गदरमें इन्होंने बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था। १८६२ ई०में आगरेके दरबारमें इनको G C S I की उपाधि मिली थी। दस्तकारीमें भी इनकी अच्छी योग्यता थी। इनकी कविता सरस और प्रशंसनीय होती थी। उदाहरण—

"बदन मयंक पै चकोर ह्वै रहत नित,
पंकज नयन देखि भौंर लौं गयो फिरै।
अधर सुधारसके चखिवेको सुमनस,
पूतरी ह्वै नैननके तारन फयो फिरै॥
अंग अंग गहन अंगनको सुभट होत,
बानि गान सुनि ठगे मृग लौं ठयो फिरै।
तेरे रूप भूप आगे पियको अनूप मन,
धरि बहु रूप बहुरूप सो भयो फिरै॥"

जीवनवृत्त (सं० पु०) जीवनचरित, जीवनी।

जीवनवृत्तान्त (सं० पु०) जीवनचरित, जिंदगी भरका हाल, जीवनी।

जीवनवृत्ति (सं० स्त्री०) जीविका, रोजी।

जीवनशर्मा—गोकुलोत्सवके पुत्र और बालकृष्ण चम्पूके प्रणेता।

जीवनसाधन (सं० क्ली०) जीवनस्य साधनं, ६-तत्। जीवनका साधन, जीविका, रोजी।

जीवनसिंह—हिन्दीके एक कवि। लगभग १८१८ ई०में ये करौली राज्यके दरबारमें रहते थे।

जीवनस्पृहा (वै० स्त्री०) जीवनकी इच्छा, जीनेकी अभिलाषा।

जीवनहेतु (सं० पु०) जीवनस्य हेतु उपायः, ६-तत्। जीवन-साधन, जीविका, रोजी। गरुड़पुराणमें विद्या, शिल्प, भृति, सेवा, गोरक्षा, विपणि, कृषि, वृत्ति, भिक्षा

समाप्त होती, वह स्वरके संक्षिप्त नाम द्वारा नीचे लिखा गया है। सङ्गीतशास्त्रके नियमानुसार मन्द्रस्थानीय पर विन्दु और तारस्थानीय पर ऊर्ध्व रेखा लगाते और इसको छोड़ दूसरीको मध्यस्थानीय ठहराते हैं। वामदिकके प्रथमसे आरम्भ करके दक्षिण दिकके शेष स्वर पर्यन्त पहुंचनेका आरोहण और दक्षिण दिकका स्वर आदि बना करके वामक्रमसे ग्रामके शेष स्वर तक आनेका नाम अवरोह है। (संगीतरत्नाकर १।१२)

षड्ज ग्रामकी मूर्छना।

१ उत्तरमद्रा—स रि ग म प ध नि।
२ रजनी—नि स रि ग म प ध।
३ उत्तरायता—ध नि स रि ग म प।
४ शुद्ध षड्जा—प ध नि स रि ग म।
५ मत्सरीकृता—म प ध नि स रि ग।
६ अश्वक्रान्ता—ग म प ध नि स रि।
७ अभिरुद्गता—रि ग म प ध नि स।

मध्यम ग्रामको मूर्छना।

१ सौवीरी—म प ध नि स रि ग।
२ हारिणाश्वा—ग म प ध नि स रि।
३ कलोपनता—रि ग म प ध नि स।
४ शुद्ध मध्या—स रि ग म प ध नि।
५ मार्गी—नि स रि ग म प ध।
६ पौरवी—ध नि स रि ग म प।
७ हृष्यका—प ध नि स रि ग म।

मध्यम ग्रामकी ४थ, ५म, ६ठ, और ७ मूर्छनाके साथ षड्ज ग्रामको १म, २य, ३य और ४र्थ मूर्छनाका आपाततः कोई भेद नहीं जैसा समझ पड़ता है। परन्तु वास्तविक पक्ष पर षड्ज ग्रामकी पांचवीं चतुःश्रुति और मध्यम ग्रामकी पांचवीं त्रिश्रुति होनेसे इनका परस्पर विलक्षण भेद होता है। मतङ्ग और नन्दिकेश्वरके मतानुसार प्रत्येक मूर्छनामें १२ स्वर रहते हैं। (मतंगो नन्दिकेश्वर) ६ सिद्ध मूर्छनाका आकार नीचे लिखा जैसा बतलाते हैं—

षड्ज ग्रामकी मूर्छना।

१मा—ध नि स रि ग म प ध नि स रि ग।
२या—नि स रि ग म प ध नि स रि ग म।
३या—स रि ग म प ध नि स रि ग म प।
४र्थी—रि ग म प ध नि स रि ग म प ध।
५मी—ग म प ध नि स रि ग म प ध नि।
६ष्ठी—म प ध नि स रि ग म प ध नि स।
७मी—प ध नि स रि ग म प ध नि स रि।

मध्यम ग्रामकी मूर्छना।

१ली—नि स रि ग म प ध नि स रि ग म।
२री—स रि ग म प ध नि स रि ग म प।
३री—रि ग म प ध नि स रि ग म प ध।
४थी—ग म प ध नि स रि ग म प ध नि।
५वीं—म प ध नि स रि ग म प ध नि स।
६ठीं—प ध नि स रि ग म प ध नि स रि।
७वीं—ध नि स रि ग म प ध नि स रि ग।

आदि सङ्गीतशास्त्रप्रणेता भरतमुनिके मतमें गान वा वाद्यके समय जिस स्थल पर कण्ठ वा हस्त कम्पित होता मूर्छना कहा जाता है। हनुमान् उसीको मूर्छना बतलाते, जहां षड्जादि स्वरसे ऋषभादिके उत्थान पर विराम दिखलाते हैं।

यह सब मूर्छनाएं फिर चार प्रकारकी होती हैं—शुद्धा, सकाकली, सान्तरा और काकल्यन्तरयुक्ता। मूर्छनाका जो जो स्वर विकृत वा अविकृत उक्त हुवा है, ठीक वैसा ही रहनेसे शुद्ध मूर्छना कहते हैं। निषादस्वर षड्जको २ श्रुतियां ले करके चतुःश्रुति होने पर काकली कहलाता और जिस मूर्छनामें वह आता, उसको सकाकली कहा जाता है। गान्धारस्वर मध्यमकी २ श्रुतियां ग्रहण करके चतुःश्रुति होनेसे अन्तर बनता और उसके लगाये जानेसे मूर्छनाका नाम सान्तरा पड़ता है। कोई मूर्छना अन्तर और काकली लगनेसे काकल्यन्तरयुक्ता हो जाती है। यह ५६ प्रकारकी मूर्छना प्रथमादि स्वरके आरम्भ वेदसे फिर सात प्रकारकी बनती है। अतएव सब मिला करके ३९२ प्रकारकी (७×२=१४, १४×४=५६, ५६×७=३९२) मूर्छना है। (संगीतरत्नाकर १।१९)

यक्ष, राक्षस, नारद, ब्रह्मा, सर्प, अश्विनीकुमार और

शृङ्गाटी, जीवहृष्टा, काञ्जिका, शशशिम्बिका, सुपिङ्गला, मधुश्वासा, जीवतृषा, सुखङ्करी, मृगराटिका, जीवपत्री और जीवपुष्पा है। इसके गुण—मधुर, शीतल, रक्तपित्त, वायु, क्षय, दाह, ज्वरनाशक, कफ और वीर्यवर्द्धक है। भावप्रकाशके मतसे इसके गुण- स्वादु, स्निग्ध, त्रिदोषनाशक, रसायन, बलकारक, चक्षुर्हितजनक, ग्राहक और लघु है। २ सुराष्ट्रदेशज स्वर्णवर्ण हरीतकी, गुजरात काठियावाड़में होनेवाली एक प्रकारकी पीली हड़। इसके गुण बहुत उत्तम माना जाता है। ३ शमी। ४ गुड़ूची, गुरुच। ५ वन्दा, बाँदा। ६ डोड़ी, तिक्त जीवन्ती। शाकविशेष, एक प्रकारका शाग। ८ शर्कराकी तरह मधुर पुष्पलता, एक लता जिसके फूलोंमें मीठा मधु या मकरन्द होता है। ९ मेद। १० काकोली। ११ हरिणी। १२ मधूकवृक्ष।

जीवन्त्याद्यघृत (सं० क्ली०) जीवन्त्याद्यं यत् घृतं। चक्रदत्तोक्त पक्व घृतभेद, एक प्रकारका पका हुआ घी। भैषज्यरत्नावलीमें घृतपाकप्रणाली इस प्रकार लिखी है। घी ४ सेर, जल १३ सेर, कल्कार्थ जीवन्ती, यष्टिमधु, द्राक्षा, त्रिफला, इन्द्रयव, शठी, कुड़, कण्टकारी, गोक्षुरू-बला (गुलशकरी), नीलोत्पल, भूम्यामलकी, त्रायमाणा, दुरालभा (जवासा), पिप्पली सब मिला कर १ सेर। यह घी यक्ष्मारोगके लिए एक उत्कृष्ट औषध है। इसको सेवन करनेसे ११ प्रकारका यक्ष्मारोग आराम होता है। (भैषज्यर०)

जीवन्धर स्वामी—हरिवंशके एक प्रसिद्ध जैन राजा और जीवन्धरचम्पू, गद्यचिन्तामणि, क्षत्रचूडामणि आदि पौराणिक ग्रन्थोंके नायक। इन्होंने श्रीमहावीर भगवान्के समवसरणमें जा कर दीक्षा ग्रहण की थी, इसलिए ज्ञात होता है कि, ये आजसे लगभग २४५० वर्ष पहले विद्यमान थे। इनका चरित्र महाकवि वादीभसिंह सूरिविरचित क्षत्रचूड़ामणि और गद्यचिन्तामणि आदि ग्रन्थोंमें विस्तृत रूपसे लिखा है। ये राजपुरीके राजा सत्यन्धरके पुत्र थे। सत्यन्धरका काष्ठाङ्गार नामक बहुत ही कूट नीतिज्ञ मन्त्री था। जिस समय जीवन्धर माताके गर्भमें थे, उस समय उनके पिता सत्यन्धरने काष्ठाङ्गार पर समस्त राज-कार्यका भार सौंप दिया था। परन्तु क्रूरमति काष्ठाङ्गारने धीरे धीरे समस्त राज्यको हस्तगत कर लिया और वे सत्यन्धरको मारनेके लिए एक दल सेना भेज दी। सत्यन्धरको यह बात मालूम होते ही उन्होंने रात्रिके समय अपने पुत्रको रक्षाके लिए रानी विजया (जीवन्धरकी माता)-को केकियन्त्र (आज कलके हवाई जहाजकी भांतिका एक यन्त्र)में बिठा कर उड़ा दिया। युद्ध हुआ, पर निःसहाय सत्यन्धर इस युद्धमें मारे गये।

वह केकियन्त्र उड़ता हुआ उसी राजधानीके किसी एक श्मशानभूमिके पास जा गिरा और गिरनेके साथ ही रानीने पुत्र प्रसव किया। इसी समय एक देवीने धात्रीके रूप धारण कर रानीको समझाया—"देवि! इस पुत्रको यहीं रख कर आप कहीं छिप जावें। इसको कोई भाग्यवान् आ कर ले जायगा और वही इसका लालन पालन करेगा। इससे काष्ठाङ्गारको इसका कुछ पता न चलेगा, नहीं तो वह दुष्ट इसको जीवित न छोड़ेगा।" विजयाने ऐसा ही किया। उस समय गन्धोत्कट नामक एक प्रसिद्ध श्रेष्ठी (सेठ) अपने सद्यजात पुत्रको अन्तिम क्रिया कर वहांसे लौट रहे थे, उन्हें यह बालक रोता हुआ मिला। उसे वे घर ले गये और जीवन्धर नाम रख कर उसका लालन पालन करने लगे।

रानी विजया जिनेन्द्रदेवका स्मरण करती हुई एक आश्रममें दिन बिताने लगीं।

जीवन्धरने प्रथम तो गन्धोत्कटके घर और फिर लोकपाल मुनिके पास रह कर विद्याभ्यास किया। इसी समय इन्हें अपने गुरु लोकपाल मुनिसे अपना यथार्थ परिचय ज्ञात हुआ। फिर क्या था, इनके हृदयमें राज्य पाने और क्रूरमति काष्ठाङ्गारसे बदला लेनेकी प्रबल इच्छा जग उठी।

अनन्तर जीवन्धर अपने मामा गोविन्दराजसे परामर्श करनेके लिए धरणीतिलक नगरी पहुंचे। इस समय गोविन्दराजका काष्ठाङ्गारके साथ सन्धि करनेकी लिखा पढ़ी चल रही थी। सन्धिके बहाने गोविन्दराज सेना सहित काष्ठाङ्गारके पास पहुंचे। साथमें जीवन्धर भी थे। राजसभामें काष्ठाङ्गारको जीवन्धर पर सन्देह हुआ। परिचय पूछने पर निर्भीक जीवन्धरने साफ साफ अपना

आरोही तथा अवरोही कहलाता है। इन तीनों लक्षण-युक्त उच्चारणको संचारी कहते हैं। कलावंतोंने इन्हीं गीतों और उच्चारणोंके कई एक दूसरे अलङ्कार भी दिखलाये हैं, उससे गानका सौष्ठव बढ़ता है।

गीतके आरम्भमें लगनेवालेको ग्रहस्वर, गीतसमापकको न्यासस्वर और गीतमें अधिक प्रयुक्त होनेवाले स्वरको अंशस्वर कहा जाता है।

सङ्गीतशास्त्रमें जातिके १३ लक्षण कहे हैं—ग्रह, अंश, तार, मन्द्र, न्यास, अपन्यास, संन्यास, विन्यास, बहुत्व, अल्पता, अन्तरमार्ग, षाडव और औडव। यही त्रयोदश लक्षण जिसमें देख पड़ते, जाति कहते हैं।

पूर्वको जिस ग्रामकी बात लिखी, उसी ग्रामसे राग निकलता है। मनुष्य प्रभृतिका चित्तरञ्जन करनेसे आदि सङ्गीतवेत्ताओंने इसका नाम राग रखा है। सङ्गीतदर्पण (रागाध्याय ८।११) में लिखा है कि शिव तथा शक्तिके योग पर शिवके मुखसे श्रीराग, वसन्त भैरव पञ्चम एवं मेघ और गिरिराजके मुखसे नटराग उत्पन्न हुआ। इससे मालूम पड़ता कि सर्वप्रथम केवल छही राग थे, गानेवालोंने फिर उससे अपर राग, रागिणी, उपराग प्रभृति बना लिये। सङ्गीतशास्त्रमें सब मिला करके विंशति प्रकार राग और छत्तीस प्रकार रागिणी निरूपित हुई है और रागिणी रागकी भार्या जैसी कही गयी है। राग-रागिणी देखो। विभिन्न कालको इन्हीं राग रागिणियोंसे शुद्ध तथा मिश्रित भावमें बहुतसे गीत आविष्कृत हुए है। प्राचीन तत्त्व पर्यालोचना करनेसे समझ पड़ता है कि भारतवासियोंसे ही सर्वप्रथम सङ्गीतविद्या निकली फिर दूसरे जातीयोंने उसमें उन्नति की। मुसलमानोंके आधिपत्य समयको सङ्गीतविद्याकी विशेष उन्नति हुई। २ बड़ाई, नाम बड़ी।

(त्रि०) गै कर्मणि क्त। ३ शब्दित, गाया हुआ। ४ स्तुत, जिसकी तारीफ को गयी हो।

गीतक (सं० क्ली०) गीतमेव गीत स्वार्थे-कन्। गीत।

गीतकण्डिका (सं० स्त्री०) गीतस्य कण्डिका, ६-तत्। सामवेदके परिशिष्ट।

गीतक्रम (सं० पु०) गीतस्य क्रमः, ६-तत्। संगीतमें एक प्रकारकी तान। गीत देखो।

गीतगोविन्द (सं० पु०) गीतो गोविन्दो यत्र, बहुव्री०। महाकवि जयदेव कृत एक ग्रन्थ। इसको गीतकाव्य भी कह सकते है। जयदेवने इसमें कवित्वकी पराकाष्ठा दिखलायी है। कविता अतिशय मधुर, प्रसादगुणविशिष्ट और शृङ्गाररससंश्लिष्ट है। यह ग्रन्थ द्वादश सर्गोंमें विभक्त और उसमें प्रायः समस्त कृष्णचरित वर्णित हुआ है। संस्कृतमें ऐसे ठाटका काव्य प्रायः देख नहीं पड़ता।

गीतगोविन्दमें शृङ्गाररसका आधिक्य देख करके कोई कहता है—निर्गुण ब्रह्मकी उपासना दुःसाध्य होनेसे जब सगुण रूपमें कृष्ण ध्येय हुए, जयदेवको उचित न था कि वह शृङ्गार भावको वर्णना करते। किन्तु क्या स्वदेशीय और क्या विदेशीय सुबुद्धिमान् तथा सद्भावग्राही पण्डितोंने गीतगोविन्दको सूक्ष्मतत्त्व तथा भक्त्युद्दीपक प्रणालीसे मोहित हो उक्त कारण पर दोष व्यक्त न करके इसका अशेष गुणकीर्तन किया है। उन्होंने इसकी रूपकरचना भी बहुत अच्छी तरह समझा दी है। इस देशके सुग्राह्य भक्तोंको बात छोड़ दीजिये। बहुतसे विदेशीय नाना विद्याविशारद भाषातत्त्वज्ञ प्रत्नतत्त्ववित् यह स्थिर कर न सके, मधुर भाव मधुरच्छन्द निर्मल भक्ति पीयूषसिक्त प्रबन्ध आलोचना करके किस वाक्यविन्यासमें उसका गुण कीर्तन करे। सबसे पहले सर विलियम जोन्सने अंगरेजी भाषा, लासनने लाटिन, रूकर्टने जर्मन और सुकवि एडविन आर्नल्डने अंगरेजी काव्यमें इसको अनुवाद किया और ग्रन्थसम्बन्धीय महाप्रयोजनीय विषय का अत्याधिक सुन्दर मन्तव्य लिखा। इन सब विद्वानोंने गीतगोविन्दका भागवताध्यात्मभावानुयायिक अर्थ समझने और समझानेकी चेष्टा की है। इसकी अनेक टीकाएं और अनेक देशीय भाषानुवाद दृष्ट होते हैं। गीतगोविन्दके पद मात्रावृत्तिमें बने हैं। इसकी रूपक-वर्णनामें गुह्य भाव पर नायक-नायिकाकी कथाके छलसे दिखलाया गया है—जीवात्मा परमात्माका एक रूप होते भी मायाबलसे अंशभावमें उसको विस्मृत हुवा करता है। यही फिर आराधनासे जाग करके स्मृतिपथारूढ़ होता है। उस समय जीवात्मा परमात्माके विरहमें व्याकुल हो उसको पानेके लिये घूमते घूमते तन्निकट उपस्थित हो स्फूर्त चित्तसे पवित्र प्रेमरसमें मुग्ध हो जाता

यथेच्छाचरणकी अनुवृत्ति होती है, वह जीवन्मुक्त नहीं; उसको आत्मघ्न कह सकते हैं। जीवन्मुक्तिके समय अनभिमानित्व आदि ज्ञानसाधक गुण और अद्वेष्टृत्वादि शोभन गुण अलङ्कारकी भाँति उस जीवन्मुक्त पुरुषमें अनुवर्त्तित होते हैं। अद्वैत-तत्त्वज्ञानी पुरुषके असाधनरूप अद्वेष्टृत्वादि सद्गुण अयत्नसुलभसे अनुवर्त्तित होते हैं। यह जीवन्मुक्त पुरुष देहयात्रा निर्वाहके लिए इच्छा, अनिच्छा, परेच्छा इन तीन प्रकारसे आरब्ध कर्मजनित सुख और दुःखोंको भोगता हुआ साक्षिचैतन्यस्वरूप विद्याबुद्धिका अवभासक हो कर प्रारब्धकर्मके अवसानके उपरान्त आनन्दस्वरूप परब्रह्ममें लीन हो जाता है; पीछे अज्ञान और तत्कार्यरूप संस्कारोंका नाश होता है। इसके पश्चात् परमकैवल्यरूप परमानन्द, अद्वैत अखण्ड ब्रह्म स्वरूपमें अवस्थित हो कर कैवल्यानन्द भोगता है। देहावसान होने पर जीवन्मुक्त पुरुषके प्राण लोकान्तरको न जा कर परब्रह्ममें लीन होता और संसारबन्धनसे मुक्त हो कर परमब्रह्ममें कैवल्यसुखमें लीन हो जाया करता है। (वेदान्तदर्शन)

सांख्यपातञ्जलके मतसे—प्रकृतिपुरुषकी विवेकज्ञान होने पर जीवन्मुक्ति होती है। "इयं प्रकृतिः जडा परिणामिनी त्रिगुणमयी" यह प्रकृति जड़ और परिणमनशील है, सत्त्व रजस्तमोगुणमयी, अर्थात् सुख दुःख मोहमयी है, मैं निर्जर और चैतन्यस्वरूप हूं—यह ज्ञान जब होता है, तब पुरुष जीवन्मुक्त होता है। निरन्तर दुःख भोगते भोगते पुरुषके लिए ऐसा समय आ उपस्थित होता है, जब वह उस दुःखको निवृत्तिके लिए कुछ उपाय सोचने लगता है; पीछे उसको शास्त्रज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा होती है। फिर वह विवेकशास्त्रोंके अनुसार योग आदिका अवलम्बन कर संसारबन्धनसे मुक्त होता है, उस समय प्रकृति इसको छोड़ देती है। प्रकृति पुरुषके अपवर्गोंको साधित करके ही निवृत्त हो जाती है, फिर उसके साथ नहीं मिलती।

प्रकृतिसे बढ़कर सुकुमारतर और कुछ भी नहीं है, पुरुषके द्वारा एक बार देखी जाने पर फिर वह दिखलाई नहीं देती। जब पुरुष अपने स्वरूपको समझ लेता है और उसका अज्ञान नष्ट हो जाता है, तब वह सुख दुःख-मोहको पार कर जीवन्मुक्त हो जाता है। जीवात्मा देखो।

जीवन्मुक्ति (सं० स्त्री०) जीवतो मुक्तिः, ६-तत्। तत्त्वज्ञान होने पर जीवदशामें ही संसारबन्धनसे परित्राण। कर्तृत्व, भोक्तृत्व आदि अखिलाभिमानका त्याग होने पर त्रिविध दुःखोंसे छुटकारा मिलता है और न पुनः जन्म-मृत्यु आदिका क्लेश भी नहीं सहना पड़ता। जीवन्मुक्तिका उपाय, श्रवण, मनन, निदिध्यासन, योग आदि। (तन्त्रसार) जीवनमुक्ति देखो।

जीवन्मृत (सं० त्रि०) जीवन्नेव मृतः मृततुल्यः। जीवित अवस्थामें मृतकल्प, जो जीवित दशामें हो मरेके समान हो, जिसका जीना और मरना दोनों बराबर हो। जो कर्त्तव्य कार्यसे पराङ्मुख हो कर सर्वदा दुःखोंका अनुभव करते रहते हैं, वे भी जीवन्मृत हैं। जो आत्माभिमानी है और बड़ी कठिनतासे आत्माका पोषण करते हैं तथा जो वैश्वदेव अतिथि आदिका यथोचित सत्कार नहीं कर सकते हैं, हिन्दूधर्मशास्त्रानुसार वे भी जीवन्मृतके समान वास करते हैं। (दक्ष)

जीवन्यास (सं० पु०) जीवस्य न्यास, ६-तत्। मूर्तियोंकी प्राणप्रतिष्ठाका मन्त्र।

जीवपति (सं० स्त्री०) जीवः जीवन्पतिरस्याः, बहुव्री०। १ सधवा स्त्री, वह स्त्री जिसका पति जीवित हो। (पु०) २ धर्मराज।

जीवपत्नी (सं० स्त्री०) जीवः जीवन् पतिर्यस्याः बहुव्री०। जीवत् पतिका, सुहागिनी स्त्री, वह स्त्री जिसका पति जीवित हो।

जीवपत्र प्रचायिका (सं० स्त्री०) जीवस्य जीवपुत्रकस्य पत्राणि प्रचीयन्तेऽस्यां। जीव-प्रचि भावे ण्वुल्। क्रीड़ाविशेष, एक प्रकारका खेल।

जीवपत्नी (सं० स्त्री०) जीवन्ती। जीवन्ती देखो।

जीवपुत्र (सं० पु०) जीवः जीवकः पुत्र इव हर्षहेतुत्वात्। इङ्गुदी वृक्ष, हिंगोटाका पेड़।

जीवपुत्रक (सं० पु०) जीवपुत्रः इवार्थे कन्। १ इङ्गुदी वृक्ष, हिंगोटाका पेड़। २ पुत्रजीव वृक्ष।

जीवपुत्रा (सं० स्त्री०) जीवः जीवन् पुत्रो यस्याः, बहुव्री०। वह स्त्री जिसका पुत्र जीवित हो।

जीवपुष्प (सं० क्ली०) जीवः जन्तुः पुष्पमिव रूपक-

है। साधारणतः अधिकांश ग्रन्थोंमें ७०० और किसी किसीमें ७०१, ७०२ वा ७४५ गणनाका उल्लेख है। १३ वें अध्यायका प्रथम श्लोक * अधिकांश गीताओंमें नहीं है। इसको जोड़ लेनेसे श्लोकसंख्या ७०१ हो जाती है। एशियाटिक सोसाइटीने देवनागराक्षरोंमें जो महाभारत छपाया, ७०० श्लोक रहते भी श्लोकोंके विच्छेदानुसार ७०२ अङ्क आया है। युक्तप्रदेशके लिखित महाभारतमें गीताके अन्तमें एक श्लोक है। उसमें बतलाया है कि गीतामें कृष्णोक्त ६२०, अर्जुनोक्त ५७, सञ्जयोक्त ६७ और धृतराष्ट्रोक्त १ श्लोक है। इन सभी अङ्कोंको जोड़नेसे ७४५ संख्या आती है। तैलङ्ग काशीनाथ त्र्यम्बकने अपनी गीताके अंगरेजी गद्यानुवादके मुखबन्धमें उक्त श्लोककी बात उठा करके कहा है—हम ७४५ संख्याका कोई कारण निर्देश कर नहीं सकते हा! यह अनुमान लगाते हैं कि वह श्लोक किसी प्राचीन समयको महाभारतमें प्रक्षिप्त हुए होंगे। फैजीने फारसी भाषामें गीताका जो अनुवाद किया है, उसके अन्तमें लिखा है—वैशम्पायनने संक्षेपमें गीताकी प्रशंसा करके कृष्ण, अर्जुन, सञ्जय और धृतराष्ट्रको उक्त संख्याको क्रमानुसार ६२०, ५७, ६७ और १ बतलाया है। उस को जोड़नेसे ७४५ आता है। इस ग्रन्थकी प्रतिलिपि १२२२ हिजरीको लखनऊ नगरमें प्रस्तुत हुई थी। यह पुस्तक राजा सर राधाकान्त देवके पुस्तकालयमें रखी है। परन्तु शङ्करभाष्यमें गीताके ७०० श्लोकोंका ही उल्लेख है।

गीता अपनी महोत्कृष्टताके कारण बहुकालावधि महाभारतसे उद्धृत हो पृथक् रूपमें निकलती आयी है और इसका महोज्ज्वल गम्भीर भाव और बहुतसा जटिलत्व मिताक्षरोंमें सन्निवेशित रहनेसे प्राचीन एवं नव्य विविध साम्प्रदायिक बुद्धिविशारद भक्त परिव्राजक प्रभृति महात्मा गीताके भाष्य, वृत्ति, टीका, टिप्पणी तथा विविध प्रकार व्याख्या स्व स्व भावोदयके अनुसार करते रहे हैं। इन सभी व्यक्तियोंके कृत भाष्यादि नाना देशोंमें विद्यमान है और प्रकाशित होते हैं। अनेकव्याख्या विवृतियां जो पूर्वकालको निकली थीं, लुप्त हुईं, भविष्यत्में वह आविष्कृत भी हो सकती है।

महाभारतके प्रायः सभी टीकाकारोंने नाना प्रणालियोंमें गीताका अर्थ सुबोधगम्य और तत्सम्बन्धीय तत्त्व तथा रस साधारणके हृदयग्राही बनानेका विशेष यत्न किया है। फिर भी उसमें अनेक कूट लक्षित होते हैं और कोई कोई कथा अभी भी अमीमांस्य हो रह गयी है। महाभारतकी माहात्म्यसूचक रूपकवर्णनामें लिखा है कि व्यासजीके मस्तिष्कमें महाभारत-ग्रथित होने पर ब्रह्मा अपने आप उनके उत्साहवर्धनार्थ पहुंचे और गणेशजीने लेखकपद ग्रहण किया था। किन्तु जब गणेशजीने प्रस्ताव किया कि हम चारों हाथोंसे लिखेंगे और व्यासजीके कविता कण्ठोदित करने या रचनानुरोधसे क्षणकाल ठहरनेमें लेखनीका वेग रुकने पर लिखना छोड़ देंगे। व्यासजी मन ही मन कहने लगे—गणेशजी कविताके सकल स्थल विना समझे बूझे लिपिबद्ध कर न सकेंगे। व्यासजीको कण्ठनिःसृत कवितामें ८८०० कूटश्लोक उच्चारित हुए। उसका प्रकृत अर्थ बोधगम्य करनेके लिये गणेशजीको समय समय पर सोचना और लेखनीका वेग रोकना पड़ा था। उन्हीं श्लोकोंका नाम व्यास कूट है। अतएव कौन कह सकता है कि गीताके मध्यमें भी व्यासकूट नहीं।

अनुपम अनन्यप्राप्य हृदयाकर्षणीय गुण रहनेसे भारतवर्षके प्रायः सभी सभ्य स्थानोंमें तत्तद्देशीय विविध सम्प्रदायी हिन्दुओंने स्वदेशप्रचलित अक्षरोंसे गीताका मूल लिख या छाप और अपनी २ देशभाषामें अनुवाद करके रखा है और करते जा रहे हैं। देशी और विदेशी नाना विरोधी धर्मावलम्बी लोग भी (जो हिन्दू नहीं हैं) गीताकी महिमाध्वनि सुन करके अपनी अपनी भाषाके गद्यपद्यमें उसका अनुवाद, रहस्य, व्याख्या, समालोचना, अनुमोदित धर्मालोचना और प्रशंसावाद प्रकाश करते हैं।

किसी निरभिमानी फारसी इतिहासवेत्ताने ११२६ ई०को स्वीय रचित इतिहासमें लिखा है कि अबू सुलह कर्तृक किसी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थका अरबी भाषामें एक अनुवाद रहा। १०२६ ई०को यही अरबी अनुवाद अबुलहुसेन नामक एक व्यक्ति द्वारा फारसी भाषामें अनु-

* "प्रकृतिं पुरुषञ्चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च।
एतद् वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव॥"

१ पशुपालनेका व्यवसाय। २ जीवका गुण या व्यापार।

जीवशङ्ख (सं० पु०) कृमिशंख।

जीवशंस (सं० पु०) जीवैः प्राणिभिः शंसनीयः शन्सस्तुतौ कर्मणि घञ्। जीव वक्तृक कामना।

जीवशर्मा—एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्।

जीवशाक (सं० पु०) जीवो हितकरः शाकः, कर्मधा०। मालवदेशीय प्रसिद्ध शाकविशेष, मालवदेशमें होनेवाला एक प्रकारका शाक, सुसना। इसके संस्कृत पर्याय—जीवन्त, रक्तनाल, ताम्रपर्ण, प्रवाल, शाकवीर, सुमधुर और भेषक है। इसके गुण—सुमधुर, बृंहण, वस्तिशोधन, दीपन, पाचन, बल्य, वृष्य और पित्तापहारक है।

जीवशुक्ला (सं० स्त्री०) जीवा हितकारी शुक्ला शुभ्रवर्णा लता। जीवयति जीव-णिच्-अच्। चीरकाकोली, एक प्रकारकी जड़ी।

जीवशून्य (सं० क्ली०) जीवैः शून्यं, ३-तत्। जीवरहित, वह जिसके प्राण न हो।

जीवशेष (सं० पु०-स्त्री०) मुमुर्षु, वह जिसकी मृत्यु निकट आ गई हो, वह जो मरने पर हो।

जीवशोणित (सं० क्ली०) जीवोत्पादकं शोणितं, शाकत०। स्त्रियोंका आर्त्तव शोणित। यह गर्भधारणका उपयुक्त होनेके कारण जीवशोणित नामसे अभिहित हुआ है।

जीवश्रेष्ठा (सं० स्त्री०) जीवाय जीवनाय श्रेष्ठा, ४ तत्। ऋद्धि नामकी औषध।

जीवसंक्रमण (सं० क्ली०) जीवानां संक्रमणं, ६ तत्। देहान्तरप्राप्ति, जीवका एक शरीरसे दूसरे शरीरमें गमन।

जीवसंज्ञ (सं० पु०) जीव इति संज्ञा यस्य, बहुव्री०। कामवृद्धि वृक्ष।

जीवसाधन (सं० क्ली०) जीवस्य जीवनस्य साधनं, ६-तत्। धान्य, धान।

जीवसुखराय—ज्ञानसूर्योदय नाटक और वैराग्यशतक नामक जैन पद्यग्रन्थके रचयिता।

जीवसुता (सं० स्त्री०) जीवः सुतः यस्याः, बहुव्री०। जीवपुत्रा, वह स्त्री जिसका पुत्र जीवित हो।

जीवसू (सं० स्त्री०) जीवं प्राणिनं सूते सू-क्विप्। जीवतोका, वह स्त्री जिसकी सन्तति जीती हो।

जीवस्थान (सं० क्ली०) जीवस्य जीवनस्य स्थानं, ६-तत्। मर्म, शरीरका वह स्थान जहां जीव रहता है, हृदय। जीवात्मा देखो।

जीवहत्या (सं० स्त्री०) १ प्राणियोंका वध। २ प्राणियोंके वधका दोष।

जीवहिंसा (सं० स्त्री०) १ जीवोंका वध, प्राणियोंकी हत्या। २ जैनमतानुसार पांच पापोंमेंसे पहला पाप।

जीवा (सं० स्त्री०) जीवयति जीव-णिच् अच् वा टाप् ज्या-क्विप्, संप्रसारणे दीर्घः सा अस्त्यस्य व। १ ज्या, धनुषकी डोरी। २ जीवन्तिका नामकी औषध। ३ वचा, बाल वच। ४ शिञ्जित। ५ भूमि। ६ जीवनोपाय, जीविका। ७ जीव-भावे अ-टाप्। ८ जीवन, प्राण। ९ ऋद्धि। १० जीवक। ११ हरीतकी।

जीवागार (सं० क्ली०) मर्मस्थान।

जीवातु (सं० पु० क्ली०) जीवत्यनेन जीव-आतु। जीवेरातु। उण् १।८०। १ भक्त, अन्न, अनाज। २ जीवनौषध।

"रे हस्त दक्षिण! मृतस्य शिशोर्द्विजस्य
जीवातवे विसृज शूद्रमनौ कृपाणम्।" (उत्तर चरित ३ अंक)

जीवातुमत् (सं० पु०) जीवातु मतुप्। आयुष्कामयज्ञके देवताविशेष, आयुष्कामयज्ञके एक देवता। इनसे आयुकी प्रार्थना की जाती है।

जीवात्मा (सं० पु०) जीवस्य जीवनस्य आत्मा अधिष्ठाता, ६-तत् वा जीवश्चासौ आत्मा चेति, कर्मधा०। देही, आत्मा, चैतन्यस्वरूप एक पदार्थ। इसके संस्कृत पर्याय ये हैं—पुनर्भवी, जीव, असुमान्, सत्त्व, देहभृत्, जन्तु, जन्यु, प्राणी और चेतन। जिसके चैतन्य है, वही आत्मापदवाच्य है। आत्मा समस्त इन्द्रियों और शरीरका अधिष्ठाता है। आत्माके बिना किसी भी इन्द्रियसे कोई भी कार्य नहीं होता। जिस प्रकार रथके चलने पर सारथिका अनुमान किया जाता है, उसी प्रकार जड़ात्मक देहकी चेष्टा आदिके देखनेसे आत्माका भी अनुमान किया जा सकता है। शरीर आदिमें चैतन्यशक्तिका होना सम्भव नहीं; क्योंकि यदि वह शक्ति शरीर और इन्द्रिय आदिमें होती, तो मृत व्यक्तिके शरीरमें भी वह निःसन्देह पायी जाती। हमारा शरीर क्षीण हुआ है, आंखें विक्षत हुई हैं, हम सुखी और दुःखी हुए हैं जब

निकट वलिद्दीपमें 'कवि' नामकी किसी प्राचीन भाषामें महाभारतके अनेक भागोंका अनुवाद मिला है। सम्भव है, उसमें गीताका भी उलथा हो। काशीके एक विद्याविशारद धर्मपरायण संन्यासीने बतलाया है कि उसने चीन देशीय किसी परिव्राजकके हाथमें गीताका चीना अनुवाद देखा था। अमेरिकाके सर्वप्रधान कवि इमर्सन गीताके अद्वैत भावमें उन्मत्त रहे।

गरुड़पुराण, पद्मपुराण, वराहपुराण प्रभृति पुराणों और वैष्णवीय तन्त्र आदिमें गीतामाहात्म्य विविध भावसे प्रकाशित हुआ है। दूसरे यह भी सुस्पष्ट समझ पड़ता है कि श्रीमद्भागवतके किसी किसी अध्यायमें गीताके अनेक मनोहर भावोंकी विवृति की गयी है। श्वेताश्वतर उपनिषद्के भाष्यमें गीताके बहुतसे श्लोक उसके भाव परिचयार्थ उद्धृत हुए हैं।

गोस्वामी, वैष्णव आदि ज्ञान तथा भक्तिमार्गके बहुतसे ग्रन्थ गीतावलम्बनसे ही प्रकाश किये हैं। अब जिज्ञास्य है—क्या कारण है जो गीता इस प्रकार सर्वदेशका महादरणीय धन बनी हुई है। इसका प्रधान हेतु जो विशालतत्त्व गूढ़ानुगूढ़तत्त्व, सूक्ष्मानुसूक्ष्म विषय सकलजातीय ज्ञानियोंका आलोच्य एवं चिन्तनीय और जो लोकमात्रका आकाङ्क्ष तथा परित्याज्य है, उसीका साधन और वर्जनीय उपाय तथा फलाफल और जीवनयात्रानिर्वाहका सन्मार्ग विकाश श्रीमद्भगवद्गीतामें अतिमनोहर छन्दमें रचना-चातुर्यसे संक्षेपतया सदृश उच्च प्रबन्ध सम्भवपर प्राञ्जलताके साथ वर्णित हुआ है। अनन्त जगत्का निदान स्थिति तथा परिणाम जन्म, जीवन एवं मरण, सुख, दुःख, देह, मनः, ज्ञान और मूढ़ता, धर्माधर्म, पाप, पुण्य, कर्तव्याकर्तव्य, सद्गति एवं अधोगति, आत्मोन्नति, आत्मविवाद, स्वर्ग, नरक प्रभृति विषयोंका सदर्थ तथा उसके सम्बन्धमें विविधप्रकार संस्कारापन्न लोगोंके लिये आचरणीय सहज सद् उपदेश, कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड और भक्तिमार्ग, ब्रह्मानन्द, ब्रह्मार्चना और जगत्हितैषिता-व्रत इत्यादि विषयक परिचय हृदयग्राही रूपसे गीतामें पाया जाता है।

गीताकी शिक्षा—एक ही ईश्वर है। वह अनादि अनन्त और पूर्ण होता है। उसकी दुर्ज्ञेय आभावत् शक्तिमेंसे प्रकृति वा त्रिगुणात्मिका मायामेंसे यह अनन्त जगत् निकलता और उसीमें मिलता है। इसी प्रकार पुनर्जन्म और पुनर्लय अनन्तकालव्याप्त है। ईश्वर अपने आप निष्क्रिय होते भी मायावृत हो जीवलोकमें देहधारण करता है। वह देही (जीवात्मा) वा पुरुषपदवाच्य है और वही स्वयं पुरुषोत्तम है। प्रकृतिके नियमसे देहका जन्म, वृद्धि, ध्वंस अर्थात् विकार होता है। किन्तु देहनाशसे देही नहीं मिटता, देहान्तर मात्र धारण करता है। देही (आत्मा) अविनश्वर, अजात और अविकारी है। वही विशेष रूपमें परमात्मा वही सत् (एकमात्र विद्यमान) है। सुतरां समस्त जगत् उसीका मूर्तिस्वरूप है। उसका अंश ही अस्फूर्त भावमें जड़ और क्रमशः उत्तरोत्तर स्फूर्तिमें उद्भिद्, कीटपतङ्ग, पशुपक्षी, सिद्ध, ऋषि, भूमण्डलातीत ब्रह्माण्ड-(द्युलोक)वासी दिव्यपुरुष (देवता) और महास्फूर्त भावापन्न अवतार होता है इसीलिये वह सत् तथा असत् (सूक्ष्म और असूक्ष्म) और इन दोनोंसे अतीत है। संसार प्राकृतिक नियमसे बनता और बिगड़ता है। विप्लव उठने पर अवतार आविर्भूत और उसकी क्रियासे यह शोधित होता है। संसारमें प्राकृतिक नियमसे सुखदुःख उद्भावित है। जीवमात्र सुखान्वेषी और दुःखदूरकरणेच्छु होता है। इन्द्रिय और तद्ग्राही विषयके संयोगसे जो सुख दुःख मिलता, उसका अस्तित्व नहीं देख पड़ता। ऐसा अनित्य विषय ईश्वरको आत्मा सौंपने और अभ्यास बलसे मनोविकार ला नहीं सकता। बुद्धिग्राह्य आन्तरिक सुख ही गीताके मतानुसार सेवनीय है।

ईश्वरके ध्यान, ईश्वरके महिमानुभव, तत्कीर्तन और तत्सम्बन्धीय उच्च भाव आत्मसात् करने और उसके बल पर स्वतः सर्वभूतका शत्रु मित्र भाव परित्याग करके हितसाधनमें रत होनेसे उक्त प्रकार अखण्डनीय चिरवर्धनधर्मी सुख उद्भूत, सर्वदुःख लुप्त और सर्वप्रकार अपर विषयक क्षुद्र सुख इसी महानन्दमें मज्जित होता है। फलाफल ईश्वरको अर्पण करके प्राकृतिक नियमसे जो कार्य अवश्य ही करना पड़ता, उसकी क्रियाके अनुष्ठानमें कभी भी दुःख नहीं लगता। परन्तु निज इन्द्रिय

नास्तिक चार्वाक शरीरके अतिरिक्त आत्माको स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है कि, पुरुष जितने दिनों तक जीवित रहे, उतने दिनों तक सुखके लिए ही कोशिश करे। जब सब ही व्यक्ति कालग्रासमें पतित हो रहे हैं और मृत्युके बाद जब बान्धवगण शवदेहको जला कर भस्म हो कर देते हैं, फिर उसमें कुछ बच नहीं रहता, तो जिससे सुखसे जीवन व्यतीत हो, उसकी कोशिश करना ही विधेय है। पारलौकिक सुखकी आशामें धर्मो पार्जन कर आत्माको कष्ट देना नितान्त मूढ़ताका कार्य है; क्यों कि भस्म हुई देहका पुनर्जन्म होना किसी हालतमें सम्भव नहीं। ये पञ्चभूतको नहीं मानते। इनके मतसे—चिति अप् तेज: और वायु इन चार भूतोंसे ही देहकी उत्पत्ति होती है। अचेतनसे चेतनका उत्पन्न होना किस तरह सम्भव हो सकता है? इसके उत्तरमें वे यह कहते हैं कि, यद्यपि भूत अचेतन हैं तथापि वे मिल कर जब शरीररूपमें परिणत होते हैं, तब उसमें चैतन्य उत्पन्न हो जाता है। जिस प्रकार हल्दी और चूनाके मिलने पर लाल रंगकी उत्पत्ति हो जाती है तथा गुड़ और चावल आदि प्रत्येक द्रव्य मादक न होने पर भी, मिल जानेसे उसमें मादकताशक्ति आ जाती है, उसी प्रकार अचेतन पदार्थोंसे उत्पन्न होने पर भी इस देहमें चैतन्य स्वरूप व्यवहारिक आत्माकी उत्पत्ति होना सम्भव नहीं। मैं मोटा हूं, दुबला हूं, गोरा हूं, काला हूं इत्यादि लौकिक व्यवहारमें भी आत्माको ही स्थूल कृश आदि समझा जाता है, परन्तु स्थूलत्वादि धर्म सचेतन भौतिक देहमें ही पाया जाता है। इसलिए यह विलक्षणतासे प्रमाणित होता है कि, सचेतन देह ही आत्मा है, उसके सिवा दूसरा कोई पृथक् आत्मा नहीं है। ये और भी एक प्रमाण देते हैं कि, जिस तरह लोहा और चुम्बक इन दोनोंके अचेतन पदार्थ होने पर भी पारस्परिक आकर्षणसे दोनोंमें क्रियाशक्ति उत्पन्न होती है; उसी तरह परस्पर भूतसमूह एकत्र होने पर उसमें चैतन्यस्वरूप एक शक्ति उत्पन्न हो जाती है। चार्वाक देखो।

बौद्धमतमें प्रथम क्षणमें उत्पत्ति दूसरे क्षणमें विनाश इस तरह सभी वस्तुओंको क्षणिक माना है, इसलिए आत्मा भी क्षणिक है, ज्ञानस्वरूप क्षणिक है, ज्ञानके सिवा स्थिरतर आत्मा नहीं है। बौद्ध देखो।

बौद्धोंके माध्यमिक मतावलम्बी क्षणिक विज्ञानरूप आत्मा भी नहीं मानते; वे कहते हैं—कुछ भी नहीं है, सब कुछ शून्य है, क्योंकि जो वस्तुएं स्वप्नमें दीखती हैं, वे जाग्रत अवस्थामें नहीं दीखतीं और जो जाग्रत दशामें दीखती हैं, वे स्वप्नावस्थामें नहीं दीखतीं। इससे विलक्षण प्रतिपन्न होता है कि, यथार्थमें कोई भी वस्तु सत्य नहीं है, सत्य होनेसे अवश्य ही वह समस्त अवस्थाओंमें दिखलाई देती। योगाचार मतावलम्बी क्षणिक विज्ञानरूप आत्माको स्वीकार करते हैं। यह विज्ञान दो प्रकारका है—एक प्रवृत्तिविज्ञान और दूसरा आलयविज्ञान। जाग्रत और सुप्त अवस्थामें जो ज्ञान होता है, उसको प्रवृत्तिविज्ञान और सुषुप्ति अवस्थामें जो ज्ञान होता है, उसको आलयविज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान केवल आत्माके ही अवलम्बनसे हुआ करता है।

प्रत्यभिज्ञादर्शनके मतसे—जीवात्मा और परमात्मा एक ही हैं अर्थात् जीवात्मा ही परमात्मा और परमात्मा ही जीवात्मा है। जीवात्मा और परमात्मामें जो भेदज्ञान हुआ करता है, वह भ्रममात्र है। यह अनुमान सिद्ध है कि जीवात्मा और परमात्मामें कोई भेद नहीं है। अनुमान प्रणाली इस प्रकार है—जिसमें ज्ञान और क्रियाशक्ति है, वही परमेश्वर है तथा जिसमें उक्त दो शक्तियां नहीं हैं, वह परमेश्वर नहीं है; जैसे—गृह आदि। जब जीवात्मामें वह शक्ति पायी जाती है, तब जीवात्मा परमेश्वर और परमात्मासे अभिन्न है, इसमें सन्देह ही क्या? इस स्थान पर कोई कोई आपत्ति करते हैं कि, यदि जीवात्मामें ही ईश्वरता हो, तो ईश्वरतास्वरूप आत्मप्रत्यभिज्ञताकी क्या आवश्यकता है? जैसे जलका संयोग होने पर मिट्टीमें पड़ा हुआ बीज—ज्ञात हो वा अज्ञात—अङ्कुर उत्पन्न करता है और जैसे विषको—जान कर या बिना जाने—खानेसे ही मृत्यु होती है, उसी तरह जीवात्मा भी ईश्वरकी भांति जगन्निर्माणादि कार्य क्यों नहीं कर सकता? इस तरहकी आपत्तियां की जा सकती हैं, किन्तु वे कुछ कामकी नहीं। किसी किसी स्थान पर कारण होनेसे ही कार्य होता है और कहीं कहीं कारण

सद्दर्मका उपदेश यही ठहरता है कि ईश्वर आत्मरूपसे हृदयमें रहता और सर्वजीव यन्त्रारूढ़ पुत्तलिकावत् लगता अर्थात् मायासे चलता है। इससे दायित्व और अपने अपने कर्मके सुफल दुष्फलका अधिकारित्व सांसारिक व्यक्तिके मनमें न रहनेसे संसार ध्वंस होता है। जो लोग समझते कि हम स्वतन्त्रताके बलसे कार्य करते और सुकृति दुष्कृतिके अनुसार पुण्यपापके भागी बनते, उनके मनका यह भाव अज्ञानावस्थामें रहना ही अच्छा समझते हैं। जिस तत्त्वज्ञानीने योगबलसे सोऽहं भाव परिष्काररूपमें अनुभव किया और जो भगवत्प्रेममें लीन हुआ है। उसके निकट पाप पुण्य—हेय उपादेय ज्ञान बिलकुल नहीं रहता। उसके द्वारा कल्याणकर कार्यको छोड करके और कुछ भी उद्भावित नहीं होता। फिर अपने आपके लिये किसी कार्यका प्रयोजन न पड़ते भी लोक हितार्थ कामनायुक्त लोगोंकी तरह उसे निष्काम ही करके पुण्य कर्मादि करना चाहिये। उसको देख करके दूसरे लोग वैसा ही करेंगे और इससे जगत्का उपकार होगा ज्ञानसोपानारोहेच्छु व्यक्ति यथासाध्य इन्द्रियदमन करके। ईश्वरकी चिन्तामें निमग्न होता है। साधनावस्थामें प्रकृतिके गुणबलसे (उसके अपनी चेष्टाभिन्न उपस्थित) वीतानुराग पर जो सुख अनुभव करता उसके पक्षमें मोक्षके प्रतिकूल नहीं पडता और इसी अवस्थामें प्रमाद क्रमसे एक दो बार यदि पाप भी करता, तो ज्ञानबलसे उसको समझ अनुतापग्रस्त हो ईश्वरके निकट बलप्रार्थना करके पुनः पुनः प्रतिज्ञाशील बनता और साधनपक्षका अनुसरण करते ही वह पाप मिटता है। सभी कर्मोंके प्रारम्भमें दोषका योग है। क्रमशः कौशल और अभ्यास बलसे दोषविमुक्त होते हैं। मन कामनादि रिपुओंसे मुक्त होने पर आत्माका बन्धु और इन सबके वशीभूत होने पर उसका शत्रु है।

रिपुञ्जय व्यक्ति वाह्य और मानसिक पीडामें अन्य की भांति व्याकुल न हो करके ज्ञानबलसे इसको अवश्य भाविनी समझ अभ्याससे अटल पड जाता है। वह प्रशान्तात्मभावापन्न परमात्मसमाहित ज्ञान और विज्ञान से पूर्णचित्त हो संसारमें सकल आदरणीय और अनादरणीय विषयोंमें समदृष्टि रखता और इस सब प्रकार सांसारिक क्रियाके फलाफलमें ईश्वरका कोई दोष नहीं समझता। क्रमसे वह सर्वोच्च भावमें उपस्थित होता है। अविचलित आत्मतत्त्वज्ञ भक्तिरसमें मग्न हो करके सदा ऊर्ध्वमुखी मतिसे उक्त अवस्था लाभ करने पर उपलब्धि नहीं करता, तत्पेक्षा आधक लाभ किसी दूसरेमें है या हो हो सकता है और कितनी हो बड़ीसे बडी सासारिक वा अन्य प्रकार दुःख घटना क्यों न हो इसक उससे किञ्चित् मात्र भी विचलित नहीं कर सकती सदा ईश्वरचिन्ता, सदा सर्वभूतके हितकी चेष्टा और अपनी प्रकृतिके अनुसार जैसे जैसे जोविकानिर्वाह तथा हितकर कार्य कर सकता, वह स्वधर्म ज्ञानसे अवश्य साधनीय जान करके साधन करता और परपीडनका भाव विसर्जन करके जीवनयात्रा भरता है। वह इस-लोकमें अति उन्नत मनसे पवित्र आनन्द अनुभव करता और कलेवर छोडने पीछे पुनर्जन्म नहीं रखता

इसी प्रकार उद्देश साधनार्थ नाना शास्त्रमें नाना उपाय और उपदेश विद्यमान हैं। किन्तु गीतामें ईश्वर अव्यक्त होते भी कैसे चिन्तनीय हैं, जगत्का उद्भव क्योंकर होता है, जगत्का उपादान क्या है, जीवन क्या है, मृत्यु क्या है, कर्म क्या है, कर्तव्याकर्तव्य तथानिष्क्रिय होना किसे कहते हैं, मनोवृत्तिका मूल कहा है, शीतोष्ण सुख दुःखादिका द्वन्द्वभाव कैसे आता है, सृष्टिक्रियाके मूल मायाके सत्व रजः तमः तीनों गुणोंका लक्षण तथा कार्य और तदनुसार मनुष्यका स्वभावभेदसे चातुर्वर्ण्य और तत् तत् वर्णका कर्मभेद त्रिगुणका परस्पर सम्बन्ध तथा प्रादुर्भावका इतर विशेष और तत् तत् फल क्या है, इन गुणों और दूसरे किस किसके बलसे कर्मकी उत्पत्ति होती और गुणभेदसे ज्ञानबुद्धि-धैर्य-श्रद्धा-उपास्य पदार्थ-आहार यज्ञ-तपस्या दान-सुख-कर्म-कर्ता-कर्मत्याग सबकी उत्कृष्टता-मध्यम भाव तथा निकृष्टता भेद की जाती इत्यादि न्याय्यान्याय्य कार्यका हेतु क्या है इत्यादि अनेक मनोहर ज्ञानगर्भ भक्ति-उद्दीपक और मोक्षसाधक विषयोंकी कथा विवृत हुई है।

इन सब तत्त्वोंका संक्षेपमें प्रकाश कर पीछे सगुण तथा निर्गुण उपासना भेदसे जो उपदेश दिया गया है, वह कृष्णतत्त्व है और इसीमें विविध शास्त्रोंके मतामतकी

भोक्तृत्व आदि जीवात्माके धर्म हैं अर्थात् जीवात्मा ही सुख दुःखादिको भोगता है। सांख्य, पातञ्जल और वेदान्त दर्शनके साथ इस विषयमें मतभेद है। वेदान्त, सांख्य और पातञ्जलके मतसे—ये बुद्धिके धर्म हैं, बुद्धि ही सुख दुःखादिको भोगती है, आत्मा बुद्धिप्रतिबिम्बित होने पर जो 'मैं सुखी हूं' 'मैं दुःखी हूं' इत्यादि अनुभव करती है, वह भ्रममात्र अर्थात् स्वप्नमें देखे हुए पदार्थको भाँति बेबुनियाद है।

आत्मा माया नामक प्रकृतिको उपाधिसे बन्ध, मोक्ष, सुख, दुःख आदि प्रतिबिम्बरूपसे अपना अनुभव करती है। (सांख्यभाष्य)

वास्तवमें यह आत्माका स्वरूप नहीं है। इस प्रकारकी अनेक युक्तियां प्रदर्शित की गई हैं। आत्मा अहङ्कारसे विमूढ़ हो कर अपनेको प्रकृतिसम्भूत गुणोंके द्वारा होते हुए कार्योंका कर्त्ता मान लेती है। वास्तवमें आत्माका ऐसा स्वरूप नहीं है। (सांख्यभाष्य)

आत्मा निर्वाणमय ज्ञानमय और अमल है। प्रकृतिके धर्म दुःखमय और अज्ञानमय हैं, जो आत्माके नहीं हैं। परन्तु न्याय और वैशेषिक मतसे जीवात्माको यदि प्रकृतिस्थानीय किया जाय, तो दोनों मतोंमें अच्छी तरह सामञ्जस्य हो सकता है। सांख्यमतमें प्रकृतिको संसारका आदि कारण कहा गया है।

प्रकृतिका परिमाण दो प्रकारका है—एक स्वरूप-परिणाम और दूसरा विरूप-परिणाम। स्वरूप-परिणाममें प्रकृतिकी विकृति नहीं होती। जब विरूप-परिणाम होता है, तब पहले प्रकृतिकी ७ विकृति होती है। १६ विकार पदार्थ हैं, इनसे किसी प्रकारका विकार नहीं होता। पुरुष इनसे अतीत है। पुरुष वा आत्मा न तो प्रकृति है और न विकृति प्रकृति हो आत्माको नाना प्रकारसे विमोहित करती है। आत्मा प्रकृतिको मायामें अपना स्वरूप नहीं जान सकती, प्रकृति ही समस्त सुख-दुःखादिका अनुभव करती है। इससे मालूम होता है कि, प्रकृतिका धर्म और जीवात्माका धर्म एक हो है। प्रकृति देखो। न्याय और वैशेषिक मतसे जीवात्मा तथा सांख्यादि मतसे प्रकृति दोनों एक ही वस्तु हैं।

आत्मा शरीरभेदसे नाना हैं, अर्थात् एक शरीरके अधिष्ठाता आत्मस्वरूप एक पुरुष हैं। यदि सब शरीरोंका एक ही अधिष्ठाता होता, तो एकके जन्म वा मरणसे सबका जन्म वा मरण होता और एकके सुख वा दुःखसे जगन्मण्डल सुखी वा दुःखी होता। जब सुख-दुःखका ऐसा नियम है, तब अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा कि, पुरुष वा आत्मा नाना हैं और जो जिस प्रकारके कार्य करता है, उसे उसी प्रकारके फल भोगने पड़ते हैं। यद्यपि आत्मामें सुख दुःखादि कुछ भी नहीं हैं। यह पहले ही कहा जा चुका है, 'आत्मा अनेक है, यह साबित होने पर एकके सुखसे जगत् सुखी क्यों नहीं होता?' इस प्रकारको आपत्ति हो ही नहीं सकती, परन्तु तो भी जिस तरह जवाकुसुमके पास अति शुभ्र स्फटिक भी लाल मालूम होने लगता है, उस तरह आत्मा अपनी बुद्धिमें स्थित सुख-दुःखादिको आत्मगत मान कर मैं, सुखी हूं-मैं दुःखी हूं इस प्रकार समझती है। समस्त व्यक्तियोंके ऐकात्मपक्षसे एक व्यक्तिको वैसा होने पर सबहीको क्यों नहीं होता, इस प्रकारकी आपत्तिका खण्डन नहीं होता। मैं भोजन और शयन कर रहा हूं, इत्यादि जो व्यवहार होते हैं, उनका शरीरकी क्रियाके आधारसे ही समर्थन करना होगा, क्योंकि आत्मामें क्रिया वा कर्तृत्व कुछ भी नहीं है। आत्मामें जब कुछ भी नहीं है, तब बन्ध, मोक्षका होना भी असम्भव है, किन्तु ऐसा होनेसे प्रत्यक्षके साथ विरोध होता है। प्रत्येक शरीरका अधिष्ठाता जब एक एक आत्मा है, तब उसके बन्ध मोक्ष क्यों नहीं होंगे? किन्तु इसमें जरा विचार कर देखनेसे मालूम हो जायगा कि, यह आत्माके नहीं हैं।

आत्मा न तो बद्ध ही होती है और न मुक्त, प्रकृति ही नानारूप धारण कर बद्ध और मुक्त हुआ करती है। जितने दिनों तक प्रकृति-पुरुषका साक्षात्कार (अर्थात् प्रकृति और पुरुषका विवेकज्ञान) नहीं होता, तब तक पुरुष विरत नहीं होता। (सांख्यतत्त्वकौ० ६२ सू०)

नर्त्तकी जिस तरह नृत्य दिखा कर दर्शकोंको सन्तुष्ट कर नृत्यसे निवर्त्तित होती है, उसी तरह प्रकृति भी आत्माको प्रकाशित कर निवर्त्तित होती है अर्थात् फिर आत्मा मुक्त हो जाती है। आत्मा जिस शरीरका अव

खण्डन पर कृष्णोक्ति भी आयी है। इसी उक्तिमें अर्जुनको सीधी रीति पर समझाने लिये अल्प प्रश्न पर एक एक अध्याय है। गीताके रचना समय पर अनेक मतामत मिलते हैं। महाभारत देखो।

३ सङ्कीर्ण रागका एक भेद। ४ २६ मात्राका एक छन्द जिसमें १४ और १२ मात्राओं पर विराम होता है। ५ वृत्तान्त, कथा, हाल।

गीतायन (सं० क्ली०) गीतस्य अयनं आश्रयः, ६-तत्। गीतयुक्त।

गीतासार (सं० पु०) गीताया सारो यत्र, बहुव्री०। यद्वा गीतासु सारः, ७-तत्। गरुडपुराण पूर्वखण्डके २३३ अध्यायसे २३६ अध्याय पर्यन्त अंशविशेष। जिसमें गीताका सारांश संक्षेपसे कहा अथवा जो गीताकी अपेक्षा उत्कृष्ट हुवा, गीतासार कहलाता है। गीता वेदव्यासकी अमृतमयी लेखनीसे निःसृत पीयूषधारा है। इस गीतासारमें उसीका सारांश कहा हुवा है। इसके वक्ता स्वयं भगवान् हैं। गरुडपुराणमें उसके श्रोताका कोई उल्लेख नहीं है। फिर भी इतना लिख दिया गया है-'भगवान्ने कहा कि उन्होंने पूर्वकालको अर्जुनके निकट जिस गीतासारका प्रकाश किया था, उसे कीर्तन करेंगे।' इससे मालूम पडता कि भारतयुद्धके आरम्भमें अर्जुनको मोह उपस्थित होने पर भगवान् श्रीकृष्णने उन्हें जो विस्तृत उपदेश दिया, मोहग्रस्त अर्जुनने उसको धारण न किया था। पीछेको भगवान् कर्तृक उसका सारांश पुनर्वार उपदिष्ट हुआ। इसीको गीतासार कहते है। भारतमें उसका कोई प्रसङ्ग नहीं है। गीताका प्रधान उद्देश्य हो प्रतिपादन करना है कि फलका अभिलाषी न हो केवल कर्तव्यता बोधसे लौकिक और वैदिक कार्यका अनुष्ठान करनेसे ही मनुष्य सुखी हो सकता है। किन्तु इस गीतासारमें उसकी कोई कथा उल्लिखित नहीं हुई। इसमें तत्त्वज्ञान मुक्तिका साक्षात् कारण और अष्टाङ्ग योग चित्तशुद्धिका कारण जैसा ठहराया है।

गीति (सं० स्त्री०) गै भावे क्तिन्। १ गान। २ मात्रा वृत्तविशेष। इसके सम चरणोंमें १८ और विषम चरणोंमें १२ मात्राएं होती हैं। इसके अन्य नाम—उद्गाथा और उद्गाहा।

गीतिका (सं० स्त्री०। गीतिरिव कायति कै-क-टाप्। १ एकमात्रिक छन्द जिसके हरएक चरणमें २६ मात्राएं होती हैं। १४ तथा १२ पर यति होती है और अंतमें लघु गुरु होते हैं। २ एकवर्णिक छन्द जिनके हरएक चरणमें सगण, जगण, भगण, रगण और लघु गुरु होते है। ३ गीत, गाना।

गीतिकाव्य (सं० क्ली०) गान-मिश्रितकाव्य।

गीतिन् (सं० वि०) गीतं गानमस्त्यस्य गीति-इनि। गान करनेवाला।

गीतिर्या (सं० स्त्री०) छन्दविशेष, जिसमें चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरणमें १६ लघुपद रहते हैं।

गीतिरूपक (सं० पु०) कम गद्य तथा अधिक पद्यका एक तरहका रूपक।

गीथा (सं० स्त्री०) गै थक् टाप्। १ वाक्य। २ गीत, गान।

गीदड (हिं० पु०) शृगाल। सियार कुत्तेकी जातिका एक जन्तु जो लोमड़ीके सदृश होता है। यह झुंडके झुंड एशिया तथा आफ्रीकामें हरएक जगह पाया जाता है। दिनके समय पृथ्वीके भीतर मांदमें रहता और रात्रिकाल समूहमें बाहर निकलता और छोटे छोटे जानवरको पकड कर खाता है। यह मृत जन्तुके लाश भी खाता है। गीदड़ बहुत डरपोक जन्तु समझा जाता है।

गीदडरूख (हिं० पु०) मध्यम आकारका एक तरहका पेड़। यह समस्त उत्तर, मध्य और पूर्व भारतवर्षमें होता है। इसके पत्ते छोटे, बड़े तथा कई आकारके होते हैं और पशु बहुत चावसे इसे खाते हैं। ग्रीष्मऋतुके आरम्भमें इसके समस्त पत्ते गिर जाते हैं। चैतसे ज्येष्ठ मास तक इसमें बहुत छोटे छोटे लालरंगके पुष्प निकलते है और इसमें बेरसे कुछ छोटे फल भी होते हैं जो खानेके काममें आते हैं।

गीदर (हिं०) गीदड देखो।

गीदी (फा० वि०) जिसको हिम्मत नहीं, डरपोक, कायर।

गीध (हिं० पु०) गृद्ध देखो।

गीधना (हिं० क्रि०) लुब्ध होना, परचना।

गीबत (अ० स्त्री०) १ अनुपस्थिति, गैर-हाजिरी। २ निन्दा, चुगलखोरी, चुगुली।

पड़ेगा कि, प्रकृतिका भी एक सचेतन अधिष्ठाता होगा। किन्तु जीवात्माको प्रकृतिका अधिष्ठाता नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जीव स्थूलदर्शी और असर्वज्ञत्व आदि दोषोंसे दूषित हैं, जीवोंमें ऐसी शक्ति ही कौनसी है, जिससे वे जगत्कारणमें प्रवृत्त प्रकृतिके अधिष्ठाता बन जाय। इसलिए तादृश शक्तिसम्पन्न सर्वाराध्य परमात्माकी सत्ता माननी पड़ेगी और वे ही प्रकृतिके अधिष्ठाता हैं, इस युक्ति द्वारा परमात्मा वा ईश्वरसिद्धि हो सकती है।

जिस प्रकार 'तुम्हारे कान कौआ ले गया' इस वाक्यको सुन कर अपने कानों पर बिना हाथ रक्खे ही काकके पीछे दौड़ना उपहसनीय है, उसी प्रकार कारण चेतनाके अधिष्ठानके बिना भी बहुतसी जड़ वस्तुओंमें कार्यकारणको प्रवृत्ति पाई जाती है। जैसे—नवजात कुमारके जीवनधारणके लिए जड़ात्मक दुग्ध प्रवृत्ति होती है और मनुष्योंके उपकारार्थ समय समयमें अति जड़ मेघसे वृष्टिकी उत्पत्ति होती है। अतएव जीवोंके कल्याणार्थ जड़ात्मक प्रकृति भी जगन्निर्माणमें प्रवृत्त होगी, उसके लिए ईश्वर वा परमात्मा माननेकी क्या जरूरत? यदि परमात्म-संस्थापनकी आशासे यह कहा जाय कि, परमात्मा जीवों पर करुणा करके प्रकृतिको जगन्निर्माणमें प्रवृत्त कराते हैं वा स्वयं ही प्रवृत्त होते हैं, तो विचार करके देखनेसे यह बात ईश्वरसाधक न हो कर परमात्माकी बाधक हो जाती है। देखिये, करुणा शब्दसे दूसरेकी दुःखनिवारणेच्छाका बोध होता है, सुतरां परमात्माने जीवों पर करुणा कर उनकी सृष्टि की है। इसका अर्थ यह हुआ कि, परमात्माने दुःखनिवारणकी इच्छासे जीवोंकी सृष्टि की है, किन्तु सृष्टिसे पहले किसीको भी दुःख नहीं था दुःखकी भी परमात्माने सृष्टि की है इस बातको प्रतिवादी भी मानते हैं। अब बताइये कि परमात्मा पहले पहल किसके निवारणार्थ सृष्टिकार्यमें प्रवृत्त हुए और किस कारणसे उन सर्वज्ञ परमात्माको ऐसे असत् दुःखके निवारणकी इच्छा हुई? यदि रोग हो, तब ही उसके निवारणार्थ औषधका सेवन किया जाता है, अन्यथा कौन बुद्धिमान ऐसा है जो नीरोग अवस्थामें औषध सेवन करेगा? बल्कि उसके प्रति सब तरहसे द्वेष ही प्रगट करता है। और जिस तरह सुस्थ व्यक्तिके औषध सेवनसे रोग होनेको सम्पूर्ण सम्भावना है, यह जान कर भी यदि कोई सुस्थ व्यक्ति औषध सेवन करने लग जाय, तो सभी उसको अज्ञ, अविवेचक कहेंगे; उसी तरह यदि परमात्मा जीवोंको दुःख न होते हुए भी उसके निवारणार्थ सृष्टि करनेमें प्रवृत्त हों, तो कौन व्यक्ति ऐसा है, जो उन्हें अज्ञ वा अविवेचक न बतलावेगा? और कौन यह नहीं कहेगा कि, परमात्माको सर्वज्ञता और विवेचकता आदि ईश्वर-शक्तियां कहा गई, बल्कि वे तो हम लोगोंसे भी अज्ञ हो गये। इस दोषके परिहारके लिए जीवके दुःखसञ्चारके बाद परमात्मासे करुणा करके सृष्टि की है, यह बात कहना भी नितान्त असङ्गत है। कारण ऐसा होनेसे जीवोंमें दुःखका आविर्भाव होने पर परमात्माने उसके निवारणार्थ सृष्टि की है, सृष्टि दुःखकी अपेक्षा करती है और सृष्टि होने पर दुःखका आविर्भाव होता है, इसलिए दुःख भी सृष्टि सापेक्ष है, इस तरह परस्पर सापेक्षतारूप अन्योन्याश्रय दोष होता है। और भी देखिये, यदि परमात्मा करुणा करके ही सृष्टि करते, तो कभी भी कोई सुखी वा दुःखी नहीं होता, क्योंकि सब ही परमात्माके क्रिया-पात्र हैं और परमात्मा पक्षपात आदि दोषोंसे रहित है। अतएव इन सब प्रमाणोंसे यही सिद्ध हुआ कि, परमात्मा वा परमेश्वर नहीं है, केवल अचेतन प्रकृति ही जगन्निर्माणमें प्रवृत्त है।

जिस प्रकार निर्व्यापार अयस्कान्तमणिके पास जड़ात्मक लौहकी भी क्रिया होती है, उसी प्रकार जीवात्मक पुरुषके पास जड़स्वरूप प्रकृतिमें भी जगन्निर्माणार्थ क्रिया का होना असम्भव नहीं। जैसे अन्धा आदमी पङ्गुको अपने कन्धे पर चढ़ा कर गन्तव्य मार्गसे जा सकता है, वैसे ही अचेतना प्रकृति जीवात्माका अवलम्बन कर जगन्निर्माण करती है और जीवात्मा प्रकृतिकी मायामें मुग्ध हो कर जो अपना धर्म नहीं बल्कि प्रकृतिका धर्म है उसे ही अपना धर्म समझता है। इसलिए प्रकृति और पुरुष (जीवात्मा) परस्पर सापेक्ष है। इस जीवात्माके अदृष्ट (धर्म-अधर्म), ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य, अवैराग्य, ऐश्वर्य और अनैश्वर्य आदि कई एक धर्म हैं, जो वे जातर

गुआर (हिं॰ स्त्री॰) गोराणी, ग्वार।

गुआरपाठा (हिं॰ पु॰) ग्वारपाठा देखो।

गुआरी (हिं॰ स्त्री॰) ग्वार देखो।

गुआलिन (हिं॰) ग्वालिन देखो।

गुइयाँ (हिं॰ पु॰ स्त्री॰) साथी, सखा, सहचरी।

गुइयांवावला— स्वनाम प्रसिद्ध वृक्षविशेष।

गुएला—द्राक्षा लताके सदृश एक तरहका वृक्ष (Vitis lstiflera)। इसका फल देखनेमें ठीक द्राक्षाके जैसा होता लेकिन भीतर पोल रहता है।

गुखरू (हिं॰) गोखरू देखो।

गुगरल (हिं॰ पु॰) एक तरहकी वतख।

गुगानी (हिं॰ स्त्री॰) जलके ऊपरकी हलकी हिलोर। खलबली।

गुगुलिया (हिं॰ पु॰) बन्दर नचानेवाला, मदारी।

गुगेर—पञ्जाबके मोण्टगोमरी जिलेकी तहसील। यह अक्षा॰ ३०° ३८′ एवं ३१° ३३′ उ॰ और देशा॰ ७२° ५८′ तथा ७३° ४५′ पू॰ मध्य रावीकी दोनों ओर अवस्थित है। क्षेत्रफल ८२४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११८६२२ है। इसमें ३४१ गांव बसे हैं। गुगेर ग्राम ही सदर है। मालगुजारी तथा सेस १३३००० रु॰ है।

गुग्गुर (हिं॰ पु॰) गुग्गुल देखो।

गुग्गुल (सं॰ पु॰) गोजीत गुज-क्विप्, गुक् रोगः ततो गुड़ति रक्षति गुक् गुड-कस्य लकारः। १ स्वनामख्यात वृक्षविशेष। गुग्गुल देखो। २ रक्तशोभाञ्जनवृक्ष।

गुग्गुलु (सं॰ पु॰) गुक् रोगस्तस्माद् गुड़ति रक्षति, गुड़-कु डस्य लकारः १ वृक्षविशेष, कोई पेड़। २ उक्त-वृक्षका निर्यास तथा सुगन्धि द्रव्यविशेष, गुग्गुलु पेड़का दूध और कोई खुशबूदार चीज। इसका संस्कृत पर्याय—कुम्भ, उलूखलक, कौशिक, पुर, कुम्भोल, खलक जटायु, कालनिर्यास, देवधूप, सर्वसह महिषाक्ष, पलङ्कषा, यवनद्विष्ट, भवाभीष्ट, निशाटक, जटाल, पुट, भूतहर, शिव, शाम्भव, दुर्ग, यातुघ्न, महिषाक्षक, देवेष्ट, मरु-दिष्ट रक्षोहा, रक्षगन्धक और दिव्य है। यह कटु, तिक्त, उष्ण, रसायनविशेष और कफ, वात, कास, क्रिमि, वातरोग, क्लेद, शोथ और अर्शोनाशक है। (राजनि॰)

भावप्रकाशके मतमें गुग्गुलु विशद, तिक्त, कटु तथा कषायरस, उष्णवीर्य, पित्तवर्धक, सारक, कटुविपाक, रूक्ष, अत्यन्त लघु, भग्नसन्धानकारक, शुक्रवर्धक, स्वर-प्रसादक, अग्निवृद्धिकारी, पिच्छिल, बलकारक, और कफ, वायु, व्रण, अपची, मेदोदोष, प्रमेह, अश्मरी, आमवात, क्लेद, कुष्ठ, आमवात, पीडका, गण्डमाला तथा क्रिमि-नाशक है।

इसके मधुर रससे वायु, कषायसे पित्त और तिक्तरस-से कफ नष्ट होता है। नूतन गुग्गुलु मांसवर्धक तथा शुक्रजनक है। परन्तु पुरातन होने पर यह अत्यन्त लेखनगुणयुक्त अर्थात् अतिशय क्षयकारक होता है। जो गुग्गुलु पक्के जम्बुफलकी भांति सुगन्धि, पिच्छिल और सुवर्णवर्ण आता, नया और शुष्क दुर्गन्धयुक्त विकृतवर्ण तथा वीर्यहीन होनेसे पुराना समझा जाता है। गुग्गुलु सेवनकारीके पक्षमें अम्लरस, तीक्ष्णद्रव्य, अजीर्णजनक अर्थात् गुरुपाकद्रव्य, मैथुन, परिश्रम, रौद्र, मद्य और क्रोध अतिशय अहितकर है।

गुग्गुलु जातिभेदसे पांच प्रकारका होता है—महि-षाक्ष, महानील, कुमुद, पद्म और हिरण्य। देखनेमें अञ्जन जैसा महिषाक्ष कहलाता है। अतिशय नीलवर्ण-को महानील, कुमुदकुसुम जैसी आभाविशिष्टको कुमुद, पद्मवर्णको पद्म और सुवर्णवर्ण गुग्गुलुको हिरण्य कहते है। इसमें महिषाक्ष तथा महानील हाथीके लिये और कुमुद एवं पद्म घोड़ेके लिये आरोग्यजनक है। केवल-मात्र हिरण्य जातीय गुग्गुलुसे ही मनुष्यका उपकार होता है। अवस्थाविशेषमें महिषाक्ष भी आदमीके काम आता है। (भावप्रकाश पू॰ १ भाग)

बहुत खुशबूदार होनेसे गुग्गुलको भारतवासी धूप जैसा व्यवहार करते हैं। इसको अग्निमें डालने पर खुश-बूसे घर भर जाता और बड़ा आनन्द आता है। प्रयोगा-मृतके मतानुसार ग्रीष्मकालको मरुभूमिमें वह वृक्ष उत्पन्न होता है। पीछे शीत ऋतुको शिशिरके जलमें भीगने पर उससे एक प्रकार रस वा निर्यास निकलता है। इसीका नाम गुग्गुलु है। इसको विशेष परीक्षा करके लेना चाहिये। विशुद्ध गुग्गुलु आगमें डालनेसे जल उठता, धूपमें सड़ता और जलमें निक्षेप करनेसे चिपचिपाने लगता है। पुरातन, अङ्गारवर्ण, गन्धहीन वा विवर्णको

"परिणामिनो हि भावा: ऋते चिति शक्ते।" (सा०त०कौ०)
चित्शक्ति अर्थात् आत्माके सिवा सब ही परिणामी हैं। (पातञ्जलद०)

वेदान्तके मतसे—एकमात्र ब्रह्म वा आत्मा ही सत्य है और समस्त जगत् मिथ्या है। आत्मा वा ब्रह्मका ज्ञान होनेसे मुक्ति होती है। जीव (जीवात्मा, प्रत्यगात्मा वा उपाधियुक्त आत्मा)को ब्रह्मका साक्षात्कार होते ही वह ब्रह्म ही जाता है, आत्मज्ञ व्यक्ति संसार-दुःखको अतिक्रम करते हैं, इन सब श्रुति-प्रमाण के अनुसार ब्रह्मात्मज्ञानके बिना दुःखसे छुटकारा पानेका दूसरा कोई उपाय नहीं है। ब्रह्म ही मैं हूं इत्याकार असंन्दिग्ध अनुभवको ब्रह्मात्मज्ञान कहते हैं, इस ज्ञान-को प्राप्त करनेके प्रधान उपाय श्रवण, मनन और निदिध्यासन है। शास्त्रकथा सुन लेनेसे ही श्रवण नहीं होता, गुरुके मुखसे शास्त्रीय उपदेश सुन कर मनमें उस-के विचारित अर्थको धारण करना और साक्षात् अथवा परम्परासे ब्रह्ममें ही समुदाय शास्त्रका तात्पर्य है ऐसा विश्वास करना चाहिये, इन सबके एकत्रित होने पर तब कहीं वह श्रवण गिना जाता है। अपने ब्रह्मज्ञानका अपरोक्ष ज्ञान पर आरूढ़ होना ही तत्त्वज्ञान है। जिस प्रकार मरु-मरीचिकामें जलकीभ्रान्ति होती है, उसी प्रकार ब्रह्ममें दृश्यकी भ्रान्ति है, अर्थात् यह जो जगत् दीख रहा है, वह रज्जुमें सर्प-दर्शनकी भाँति मिथ्या है। जो कुछ देख रहे हैं, वह ब्रह्म वा आत्मा है, हम अविद्या-में मोहित होनेसे आत्माका स्वरूप न देख कर परिदृश्य-मान जगत् देख रहे हैं। इसलिए दृश्यप्रपञ्च मिथ्या है, ब्रह्म ही सत्य है पहले ऐसा ज्ञान अर्जन कर उसे दृढ़ करना चाहिये, पीछे मैं ही ज्ञान हूं और उसके आलम्बन शरीर, इन्द्रिय, मन, सब भ्रान्तिविशेषका विलास है, अतः 'मैं (आत्मा) ही ज्ञान और ज्ञानका आलम्बन हूं', सब कुछ ब्रह्ममें रज्जुसर्पकी तरह मिथ्या है, यह ज्ञान जब विचलित होता है, तब अपने आप 'अहम्' अर्थात् 'मैं' यह ज्ञान इन्द्रिय, मन आदिको त्याग करके ब्रह्ममें जा कर अवगाहन करता रहता है, अहं-ज्ञान ब्रह्मावगाही होने पर तत्त्वज्ञान ब्रह्मज्ञान वा आत्म-ज्ञान हुआ है, ऐसा अवधारण करना चाहिये। इस प्रकारका तत्त्वज्ञान होने पर मोक्ष अनिवार्य है। इसको मोक्ष, जीवत्वनाश, जीवन्मुक्ति, तुरीयप्राप्ति और ब्रह्म प्राप्ति, इनमेंसे जो चाहे जो कह सकते हैं, वह अवस्था सात्त्विक, राजसिक और तामसिक मनोवृत्तिके अतीत है। अब जिसे सुख-दुःख मानते हैं, वह अवस्था सुख-दुःखके अतीत है, वह निर्भय, अक्षय, घन, आनन्द, एकरस और कूटस्थ नित्य है।

एक ही चैतन्य हममें, आपमें और अन्यान्य जीवोंमें विराजमान है। वह एक अखण्ड आत्मा (चैतन्य) ही ब्रह्म है और वही अनादि अनन्त ब्रह्म चैतन्य उपाधि-भेदसे अर्थात् देह आदि आधारके भेदसे विभिन्न भावगत की तरह विद्यमान है। वस्तुतः वह अभिन्नके सिवा विभिन्न नहीं है। आत्मा उपाधिके अन्तर्हित होने पर एक हैं, अन्यथा बहुत हैं। स्वर्ग, मर्त्य, पाताल इन तीनों लोकमें वही ब्रह्मचैतन्य प्रतिभासित वा साक्षिकरूपसे दिखलाई देता है। सर्वविषयक समस्त व्यक्तियोंका ज्ञान एक है, विभिन्न नहीं। इस ज्ञानका नामान्तर चैतन्य है। चैतन्य ज्ञानसे पृथक्भूत नहीं और ज्ञान-स्वरूप चैतन्य ही आत्मा है, आत्मा चैतन्यसे भिन्न नहीं है। अतएव जब ज्ञानका ऐक्य सिद्ध होता है, तब आत्माओं का परस्पर ऐक्य और पूर्ण चैतन्यस्वरूप ब्रह्मके साथ जीवा-त्माका भी ऐक्य सिद्ध होगा, इसमें कहना ही क्या? यही जीव ब्रह्मका ऐक्य "तत्त्वमसि श्वेतकेतो" इत्यादि श्रुतिमें प्रतिपादित हुआ है। आत्मामें जन्म, स्थिति, परिणाम, वृद्धि, अपचय और विनाशरूप छह प्रकारके विकारोंमेंसे कोई भी विकार नहीं है।

आत्माके जन्म मृत्यु कुछ भी नहीं है, यह पुनः पुनः उत्पन्न वा वर्द्धित नहीं होता, यह अज, नित्य और पुरातन है, शरीर विनष्ट होने पर भी इसका नाश नहीं होता। आत्मा सर्वत्र सर्वदा ही देदीप्यमान और परम आनन्दस्वरूप है। क्योंकि, आत्मा ही सबकी निरतिशय स्नेहकी पात्री है। देखिये, आत्माकी प्रीतिके कारण ही पुत्रकलत्रादिमें मोह होता है। अन्यकी प्रीतिके लिये कोई भी कभी आत्मामें स्नेह नहीं करता। यदि आत्मामें आनन्दरूपताकी प्रतीति नहीं हुई और वह आनन्दरूपतासे अज्ञात रही, तो उसमें स्नेह होनेकी

इसकी शाखा दन्तधावनके काममें आती है।

गुच्छगुल्मिका (सं० स्त्री०) स्नुहीवृक्षविशेष।

गुच्छदन्तिका (सं० स्त्री०) गुच्छा गुच्छीभूता दन्ताः फलरूपा यस्याः, बहुव्री०। गुच्छदन्त-कप्-टाप। कादली वृक्ष, केलाका पेड़। इसका फल गुच्छाकारमें होनेके कारण यह गुच्छदन्तिका कहा जाता है।

गुच्छपत्र (सं० पु०) गुच्छाकृतीनि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

गुच्छपुष्प (सं० पु०) गुच्छाकृतानि पुष्पाणि यस्य, बहुव्री०। १ सप्तच्छदवृक्ष, सतिवन या छतिवनका पेड़। २ अशोकवृक्ष।

गुच्छपुष्पक (सं० पु०) गुच्छपुष्प संज्ञायां कन्। १ रीठा। २ गुच्छकरञ्ज।

गुच्छपुष्पी (सं० स्त्री०) गुच्छपुष्प जातौ ङीष। १ धातकी वृक्ष, धाईका पेड़। २ शिगूडी नामक क्षुप।

गुच्छफल (सं० पु०) गुच्छाकृतानि फलान्यस्य, बहुव्री०। १ रीठा। २ निर्मली। ३ दौना। ४ गुच्छकरञ्ज वृक्ष। ५ जलवेतस।

गुच्छफला (सं० स्त्री०) गुच्छफल-टाप्। १ अग्निदमनी वृक्ष। २ काकमाची मकोय। ३ द्राक्षा। ४ कदली वृक्ष, केलेका पेड़। ५ निष्पावी, लोबिया।

गुच्छबुध्ना (सं० स्त्री०) गुच्छेन वध्यते बन्ध बाहुलकात् रक् टाप्। गुण्डालिनी तृण, एक प्रकारकी घास, गोंदला।

गुच्छमूलिका (सं० स्त्री०) गुच्छाकृतिः मूलमस्याः, बहुव्री०। कप् टाप्। गोंदला घास।

गुच्छसह्वा (सं० स्त्री०) धातकी।

गुच्छा (हिं० पु०) १ एक डालमें लगे पत्ते फूलों वा फलोंके समूह। २ फूलका झब्बा।

गुच्छातारा (हिं० पु०) कचपचिया नामका तारा।

गुच्छार्द्ध (सं० पु०) गुच्छ इव ऋच्छति १ चौबीस लड़ीका हार। (पु० क्ली०) गुच्छस्य अर्द्धं अर्द्धो वा ६ तत्। २ गुच्छका आधा।

गुच्छाल (सं० पु०) गुच्छमालाति, गुच्छ-आ-ला-क। १ भूतृण, एक तरहकी सुगन्धित घास। २ भूकदम्ब।

गुच्छाह्वकन्द (सं० पु०) गुच्छमाह्वयति, गुच्छ-आ-ह्वे-क। गुच्छाह्वः कन्दोऽस्य, बहुव्री०। गुलञ्चकन्द।

गुच्छी (सं० स्त्री०) गुच्छ जातौ ङीप्। १ करंज, कंजा। २ रीठा। ३ पंजाबके ठंढे स्थानोंमें उपजनेवाला एक तरहका पौधा। इसके फूलोंकी तरकारी बनती है और वे सूखा कर बाहर दूसरे देशमें भेजे जाते हैं।

गुजर (फा० पु०) १ गीत, निकास। २ प्रवेश, पैठ, पहुंच। ३ निर्वाह, कालक्षेप।

गुज़रगाह (फा० स्त्री०) १ रास्ता। २ नदीके पार होनेकी घाट।

गुजरत् (फा० पु०) हस्त हारा।

गुजरना (फा० क्रि०) १ समय व्यतीत करना। २ किसी स्थानसे होकर आना वा जाना। ३ नदी पार करना। ४ निर्वाह होना, निपटना।

गुजरबसर (फा० पु०) निर्वाह, कालक्षेप।

गुजरबान (फा० पु०) १ मल्लाह, पार करनेवाला। २ घाटकी उतराई वसूल करनेवाला मनुष्य, घटवार।

गुजरात—पञ्जाब प्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० ३२° १०' तथा ३३° १' उ० और देशा० ७३° १७' एवं ७४° २८' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरपूर्व काश्मीरराज्य, उत्तर-पश्चिम झिलम जिला तथा वितस्ता नदी, दक्षिण-पश्चिममें शाहपुर जिला और दक्षिण-पूर्वको गुजरानवाला तथा शियालकोट एवं तापी तथा चन्द्रभागा नदी पड़ती है। भूपरिमाण २०५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः ७५०५४८ है चन्द्रभागाके उपकूलसे जमीन क्रमशः जलकी भीतरी ओरको ऊंची हुई और जल तथा वृक्षादिविहीन मरु जैसी बन गयी है। पब्बी नामक गिरिश्रेणी ही यहां प्रधान है। छोटे छोटे गुल्मादिपूर्ण स्थानोंमें ही गोमहिष प्रभृतिके खाद्यका संस्थान है। चन्द्रभागा नदीकी निम्नतर तीरभूमि खूब उर्वरा है। पार्वतीय जलस्रोतसे एक नहर निकली जिससे खेती सिंचती है और भी कई नदियां हिमालयसे निकल कर इस जिलेमें बही हैं। इस जिलेके बनोंमें बहादुरी लकड़ी होती है।

इस जिलेके प्रत्नतत्त्वका बहुल निदर्शन मिलता है। प्राचीन स्तूपादि, मुद्रा और इष्टकादि देखते ही अनुमित होता कि बहुत पहले यहां हिन्दुओंका वास रहा। आज भी उन्हीं पुराने हिन्दुओंके गृहमन्दिरादि शिल्प-

मिला, तब उन्होंने अपनेको शामिल कर गिना तो १० निकले, जिससे वे अलब्ध वस्तुके लाभसे परम आनन्दित हुए। ऐसा प्रायः हुआ करता है, लोग अपने कन्धे पर अंगोछा रख कर इधर उधर खोजा करते हैं। अतएव जीव परमात्माका स्वरूप होने पर भी यदि अज्ञान निवृत्तिके लिए उपाय अवलम्बन करता है, तो उसमें हानि क्या? वरन् उपर्युक्त युक्तिके अनुसार आवश्यक कर्त्तव्य ही प्रतीत होता है।

बुद्धि ज्ञानेन्द्रिय-पञ्चक सहित विज्ञानमयकोष, मन कर्मेन्द्रिय सहित मनोमयकोष और कर्मेन्द्रिय सहित प्राण प्राणमयकोष गिना जाता है। इन तीनों कोषोंमें विज्ञानमयकोष ज्ञानशक्तिमान् और कर्त्तृत्व शक्तिसम्पन्न है, मनोमयकोष इच्छाशक्तिशील और करणस्वरूप है तथा प्राणमयकोष क्रियाशक्तिशाली और कार्यस्वरूप है। पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय, पांच प्राण, बुद्धि और मन, इन सबहके मिलने पर सूक्ष्म शरीर होता है, जिस को कि लिङ्गशरीर कहते हैं। यह लिङ्गशरीर इहलोक और परलोकगामी तथा मुक्ति पर्यन्त स्थायी है। इस लिङ्ग शरीरका जब स्थूलशरीर परित्याग करनेका समय उपस्थित होता है, उस समय जैसे जलौका एक तृण अवलम्बन किये बिना पूर्वाश्रित तृणादि नहीं त्याग सकती, वैसे ही आत्मा (अर्थात् लिङ्गशरीर) की मृत्युके अव्यवहित पहले एक भावनामय शरीर होता है। उस शरीरके होने पर यावज्जीवनव्यापी कर्मराशि आ कर उपस्थित होती है, फिर कर्मके अनुसार कोई भी मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट आदिके एक आश्रय लेने पर आत्मा लिङ्गशरीरके साथ उस देहका आश्रय ले कर पूर्व देह परित्याग करती है। ब्रह्म देखो। प्राण निकलते समय नव द्वारोंसे निकलते हैं।

जैनदर्शनके मतसे—प्रति शरीरमें एक एक आत्मा है। यदि सबकी आत्मा पृथक् पृथक् न हो कर एक ही होती, तो प्रत्येक प्राणीको एक समान सुख दुःख होता और परस्पर द्वेषादिकी प्रवृत्ति नहीं होती। आत्मा अनादिसे है और अनन्त काल तक विद्यमान रहेगी तथा इसकी संख्या भी अनन्त है। जब तक यह ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय आदि अष्टकर्मोंके वशीभूत है, तब तक संसारी (अर्थात् जीवात्मा) है और जिस समय इसके उक्त आठों कर्म पृथक् हो जायंगे उसी समय यह शुद्ध-चिद्रूप वा परमात्मा रूपमें परिणत हो जायगी। आत्मा चैतन्यस्वरूप है और कर्म जड़ हैं। इन दोनोंका सम्बन्ध अनादिकालसे चला आ रहा है। जीवात्माको मुक्ति वा मोक्षके बाद फिर संसारमें परिभ्रमण नहीं करना पड़ता। ईश्वर वा परमात्मा अरूपी हैं। वे अरूपी हो कर रूपी पदार्थकी सृष्टि नहीं कर सकते। परमात्मा संसारके झंझटोंसे बिलकुल अलग हैं और वे अपने अस्तित्व चैतन्य, अनन्तसुख, सम्यक्दर्शन, सर्वज्ञता, आत्मनिष्ठा आदि गुणोंमें ही तल्लीन हैं। जगत्का कोई भी कर्त्ता नहीं; जगत् अनादिकालसे ऐसा ही है और अनन्तकाल तक रहेगा। मन, वचन और कायकी चञ्चलतासे ही पाप वा पुण्य-कर्मोंका बन्ध होता है। ईश्वर वा परमात्मा मन-वचन काय इन तीनोंसे शून्य हैं, वे अपने त्रैकालिक ज्ञानमें तन्मय हैं। इसलिए उनका सृष्टि-कर्त्ता होना असम्भव है। जीवात्मा या संसारी आत्मा कर्मयुक्त रूपी है। इसके तैजस और कार्मण दो शरीर सर्वदा रहते हैं। आयुकर्मको अवधिके अनुसार जन्ममृत्यु होती रहती है। किसी व्यक्ति वा पशु पक्षी आदिकी मृत्यु होते ही उसकी आत्मा तैजस और कार्मण शरीर सहित तीन समय (एक समय बहुत छोटा होता है, एक सेकेण्डके अन्दर असंख्य समय बीत जाते हैं) भीतर अन्य शरीर धारण कर लेती है। आत्मा अमर है। जब तक यह कर्मयुक्त है, तब तक सुख-दुःखादि भोगती है, कर्ममुक्त होते ही परमात्म पद पा कर अनन्त-सुखका अनुभव करती है। आत्मन् देखो।

जीवादान (सं० क्ली०) जीवानां आदानं, ६-तत्। वैद्य और रोगीकी अज्ञतासे वमन और विरेचनमें पन्द्रह प्रकार के व्यापद होते हैं, उनमेंसे एकका नाम जीवादान है। सुश्रुतमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है विरेचनके अतियोगसे पहले श्लेष्मयुक्त जल, पीछे मांसधौतके समान जल फिर जीवशोणित, पीछे गुदस्थान तक निकल आता है तथा कँपकँपी और कै होती है। ऐसी दशामें अधो-भागमें गुदके निकल आने पर घी चुपड़ें और स्वेदप्रयोग कर उसे भीतर प्रविष्ट करा दें अथवा क्षुद्ररोगकी प्रणाली

-है। प्रत्नतत्त्ववित् कनिङ्गहम साहब अनुमान करते कि वहां जो प्राचीन नगर रहा, १३०३ ई०को विध्वस्त हुआ उसके प्रायः २०० वर्ष पीछे शेरशाहने इस अञ्चलकी दिक्‌को दृष्टिपात किया। उन्होंने या अकबरने इस नगरको बसाया होगा। शाहजहान्‌के समयको वहां पीर शाहदौला नामक कोई मुसलमान साधु रहते थे। वह इस नगरमें बहुतसे घर बनाये गये हैं। नगरके मध्यस्थलमें अकबरका निर्मित और गूजरसिंह कार्त्तृक संस्कृत दुर्ग आज भी खड़ा है। इसी जिलेमें तहसीली और मुनसिफी कचहरी है। सिवा इसके गुजरात नगरमें ९८ मसजिदें, ५२ हिन्दू मन्दिर और ११ सिख धर्मशालाएं भी बनी हैं। यहां बढ़िया शाल दोशाला और सूती तथा ऊनी वस्त्र प्रस्तुत होता है। सोने, लोहे और पीतलकी गढ़ाईके लिये गुजरात शहर बहुत दिनोंसे मशहूर है। यहां म्युनिसपालिटी विद्यमान है।

४ बम्बई प्रेसिडेन्सीका उत्तर समुद्रकूलवर्ती विस्तीर्ण भूभाग। गुर्जरदेश।

गुजराती (हिं० वि०) गुजरात देशका, गुजरातका निवासी।

गुजराती—बम्बईके गुजरात प्रान्तकी भाषा। इसकी लिपि देवनागरीके आदर्श पर गठित है। कोई ९०० वर्ष पहले यह चली थी। साहित्य उन्नतिशील है। भील और खान देशके अधिवासी भी टूटी फूटी गुजराती बोलते हैं। गुजराती भाषा प्राचीन सौराष्ट्री प्राकृत पर आश्रित है। शौरसेनी इसीसे निकली है। यह कोई ९४३९९२५ लोगोंकी भाषा है।

गुजराती जैन—बम्बई प्रान्तके अहमदनगर जिलेमें रहनेवाले जैन। इन्हें श्रावक भी कहते हैं। इनकी संख्या प्रायः ३०० है। वह अकोला, जामखेड़, कोपरगांव, सङ्गमनेर, शिवगांव और श्रिगोदेमें रहते हैं। अपनी ही वर्णनाके अनुसार वह अवधके रहनेवाले थे। सूर्यवंशीय किसी राजाके साथ उन्होंने जैन धर्म ग्रहण किया। गुजरातमें बस जानेसे वह गूजर कहलाये। मातृभाषा गुजराती और कुलदेवता जिनेन्द्र हैं। यह निरामिषभोजी, परिश्रमी, संयमी, मितव्ययी और आज्ञाकारी हैं। दूकानदारी, महाजनी और जमीन्दारीका काम करते हैं। यह दिगम्बरसंप्रदाय भुक्त हैं। शवदाह किया जाता है। बाल ववाह और बहुविवाह साधारणतः नहीं होता। इनमें विधवाविवाह नहीं होता।

गुजराती-पेटा—गञ्जाम प्रदेशके अन्तर्गत चिकाकोलके निकट लाङ्गुलिया नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित एक नगर। यहां लक्ष्मी तथा नरसिंहस्वामीके मन्दिर हैं। मन्दिर बहुत प्राचीन कालके हैं। ऐसा प्रवाद है कि बलरामने इस मन्दिरको निर्माण किया था। प्रायः दो तीन शत वर्ष हुए होंगे यहां गुजराती व्यापारियोंने आकर उपनिवेश स्थापन किया है।

गुजराती बनिया—दाक्षिणात्यवासी वणिक् जाति की एक शाखा। बम्बई प्रेसिडेन्सीके नाना स्थानोंमें इनका वास है। परन्तु अहमदाबादमें यह अधिक देख पड़ते है। इनमें वडनगरी और विशनगरी २ श्रेणियां हैं। सब लोग अपनेको वैश्य जैसा बतलाते हैं। २१३ सौ वर्ष हुए यह गुर्जर देश छोड़कर के दक्षिणापथके नाना स्थानोंमें जा बसे हैं। गुर्जरके उत्तरस्थित वडनगर तथा विशनगरमें इनका आदिवास है। मालूम होता है कि इन दोनों नगरोंसे ही उनका जातिगत विभाग हुआ होगा।

उभय दल एकत्र भोजनादि करते, परन्तु परस्परके मध्य दानग्रहण अप्रचलित है। यह बहुत सुश्री और सुन्दर होते हैं। स्त्रियां मर्दोंकी अपेक्षा अधिक सुन्दर होती हैं। ये लोग मद्य मांस कुछ भी नहीं खाते। स्वास्थ्य भी इनका अच्छा रहता है। सिर्फ पानके साथ भाँग और तम्बाकू खाते हैं। इनकी स्थिति अच्छी है।

ये लोग आचार व्यवहार और वेशविन्यासमें दक्षिणके ब्राह्मणोंका अनुकरण करते हैं। सबहीके सिर पर चोटी रहती है और दाढ़ी मुड़ी हुई रहती है। इनका स्वभाव भोलेपनको लिये हुए अच्छा है, पर दोष इतना ही है कि, ये लोग प्रायः कृपण होते है। वाणिज्य करना उनकी जातिगत उपजीविका है। जिसके पास पैसा नहीं वे भी दूसरेका दासत्व स्वीकार नहीं करते, परन्तु किसी व्यापारीकी दूकानका काम करना मंजूर कर लेते हैं।

ये लोग अपनेको ब्राह्मणोंसे नीचे और मराठी जातिसे

जीवेन्धन (सं० क्लो०) जीवरूपं इन्धनं रूपक कर्मधा० जीवरूप काष्ठ।

जीवेश (सं० पु०) परमात्मा, ईश्वर।

जीवेष्टि (सं० स्त्रो०) जीवोद्देशिका इष्टिः। बृहस्पतिमत, वह यज्ञ जो बृहस्पतिके लिए किया जाता है।

जीवोत्पत्तिवाद (सं० पु०) जीवस्य सङ्कर्षणाभिधस्य उत्पत्तौ उत्पत्तिविषये वादः प्रतिवादः ६-तत्। जीवको उत्पत्तिके विषयका प्रतिवाद। पञ्चरात्र आदि वैष्णव ग्रन्थोंमें जीवकी उत्पत्तिका विषय इस प्रकार लिखा है। भगवद्भक्तोंका कहना है कि, भगवान् वासुदेव एक ही हैं, वे निरञ्जन और ज्ञानवपुः हैं तथा वे ही परमार्थ-तत्त्व हैं। वे अपनेको चार प्रकारोंमें विभक्त कर विराजमान हैं और इन चार प्रकारोंमें विभक्त करके ही जीवोंकी उत्पत्ति की है।

वासुदेवव्यूह, सङ्कर्षणव्यूह, प्रद्युम्नव्यूह और अनिरुद्धव्यूह ये चार प्रकारके व्युह उन्हींके स्वरूप हैं।

वासुदेवका दूसरा नाम परमात्मा, सङ्कर्षणका दूसरा नाम जीव, प्रद्युम्नका दूसरा नाम मन और अनिरुद्धका अन्य नाम अहङ्कार है। इन चार प्रकारके व्यूहोंमें वासुदेवव्यूह ही पराप्रकृति अर्थात् मूलकारण है, वासुदेवव्यूहसे समस्त जीवोंकी उत्पत्ति हुई है; उनसे सङ्कर्षण आदि उत्पन्न हुए हैं। इसलिए वह उस पराप्रकृतिका कार्य है। जीव दीर्घकाल पर्यन्त अभिगमन, उपादान, इज्या, स्वाध्याय और योगसाधनमें* रत रहे तो निष्पाप होता है, पीछे पापरहित हो कर पराप्रकृति भगवान् वासुदेवको प्राप्त होता है। "वासुदेव नामक परमात्मासे सङ्कर्षण संज्ञक जीवकी उत्पत्ति है"—भागवतोंका यह मत शारीरिक-सूत्रभाष्यसे खण्डित हुआ है। भगवद्भक्तोंका यह कहना है कि नारायण प्रकृतिके बाद, परमात्मा नामसे प्रसिद्ध हैं और सर्वात्मा हैं, श्रुतिविरुद्ध नहीं और यह भी श्रुतिविरुद्ध नहीं कि, वे स्वयं अनेक प्रकारसे वा व्यूह (समूह) रूपसे विराजित हैं। अतएव भागवतमतावलम्बियोंका यह मत निराकरणीय नहीं है। क्योंकि परमात्मा एक प्रकार और बहु प्रकार होते हैं। "स एकधा वा त्रिधा भवति" (श्रुति) इत्यादि श्रुतिमें परमात्माकी बहुभावसे अवस्थित कहा गया है। निरन्तर अनन्यचित्त हो कर अभिगमनादिरूप आराधनामें तत्पर होना चाहिये। इसके मतसे यह अंश भी निषिद्ध नहीं है। क्योंकि, श्रुति और स्मृति दोनों शास्त्रोंमें ईश्वरप्रणिधानका विधान है। इसलिए पञ्चरात्रमत अविरुद्ध है, न कि श्रुतिविरुद्ध।

उन लोगोंका कहना है कि, वासुदेवसे सङ्कर्षणकी, सङ्कर्षणसे प्रद्युम्नकी और प्रद्युम्नसे अनिरुद्धकी उत्पत्ति होती है। इस अंशके निराकरणके लिये शारीरकभाष्यकारने वक्ष्यमाण प्रमाणको अवतारणा की है। जीव यदि उत्पत्तिमान हो तो, तो उसमें अनित्यत्व आदि दोष भी रहेंगे, क्योंकि संसारमें जितने भी पदार्थ उत्पन्न होते हैं वे सब ही अनित्य हैं। उत्पत्तिशील पदार्थ अनित्यके सिवा नित्य नहीं हो सकते। जीव अनित्य अर्थात् नश्वरस्वभावी होने पर उसको भगवत्-प्राप्तिरूप मोक्ष होना सम्भव नहीं; क्योंकि कारणके विनाशसे कार्यका विनाश अवश्यम्भावी है।

आत्मा आकाश आदिकी तरह उत्पन्न पदार्थ नहीं है। क्योंकि श्रुतिके उत्पत्ति-प्रकरणमें आत्माकी उत्पत्ति निर्णीत नहीं हुई है। वरन् अज जन्मरहित इत्यादि वाक्योंसे उसकी नित्यता ही वर्णित हुई है। इन्द्रिय-युक्त शरीरमें अध्यक्ष और कर्मफलभोक्ता जीव नामक आत्मा है। वह आकाशादिकी तरह ब्रह्मसे उत्पन्न है या ब्रह्मकी भांति नित्य है, ऐसा संशय हो सकता है। किसी किसी श्रुतिने अग्निस्फुलिङ्गका दृष्टान्त दे कर कहा है कि, जीवात्मा परब्रह्मसे उत्पन्न होता है और किसी किसी श्रुतिमें यह लिखा है कि, अविकृत परब्रह्म ही स्वसृष्ट शरीरमें प्रविष्ट हो कर जीवको भांति विराजित हैं। संशय होने पर उसमें पूर्वपक्ष मिलता है, जीव भी उत्पन्न होता है; इस पक्षका पोषक प्रमाण श्रुत्युक्त प्रमाणका बाधक नहीं है*।

* अभिगमन अर्थात् तद्गतभाव और मनवचन कायसे भगवद्गृहमें जाना आदि उपादान अर्थात् पूजाकी सामग्रीका आहरण वा आयोजन। इज्या अर्थात् पूजा यज्ञ आदि। स्वाध्याय अर्थात् अष्टाक्षरादि मन्त्रोंका जप। योग अर्थात् ध्यान आदि।

* अर्थात् श्रुतिने एक विज्ञानसे सर्वविज्ञानकी प्रतिज्ञा की है, एकके जाननेसे सबको जाना जा सकता है। जीव यदि ब्रह्म-

नाडी चीर देती और फूलको किसी पात्रमें रख करके सूतिकागारमें नाबदानके पास गाड़ रखती है। तलवार, तीर, कागज, कलम और पट्टीसे षष्ठी माताकी पूजा करते हैं। अशौच १० दिनमात्र रहता है। १२वें दिनको आत्मीय कुटुम्बका भोजन होता और सन्ध्याके समय स्त्रियां सन्तानका नामकरण करती हैं। ४० दिन तक प्रसूति घरसे बाहर नहीं निकल सकती, फिर किसी दिनको सुन्दर वेशभूषा करके आत्मीय स्त्रियोंसे मिलती है। ५ माससे ५ वत्सरके मध्य पुत्रका चूडाकरण होता है। यदि कोई ठाकुरजीके नाम पर बाल रखता तो, वह थोड़ेसे बाल विवाह पर्यन्त कभी भी काटा नहीं सकता। विवाहके दिन यह बाल बनाते हैं। १२से २५ तक पुत्र और ८से १५ वर्ष तक कन्याका विवाह होता है। विवाहसे पूर्व आत्मीय कुटुंबको पान सुपारी भेज करके सूचना दी जाती है। इसीका नाम मङ्गनी है। इनका गर्भाधानसंस्कार नहीं होता। यह शवदाह किया करते हैं। शवदाहके ३ दिन पीछे भस्म पर दुग्ध, दधि, घृत, गोमय और गोमूत्र छोड आते हैं। अहमदनगरवासी गुजराती ब्राह्मणोंके बीच पित्र तथा मातुलगोत्रमें विवाह नहीं होता। इनकी 'त्रिवड़ि मेवदास' शाखामें भरद्वाज, शाण्डिल्य और वशिष्ठ तीन गोत्र चलते हैं। यह यजुर्वेदी होते और सब लोग शङ्कराचार्यकी हिन्दू धर्मके प्रधान प्रदर्शक-जैसी भक्ति करते हैं। गणपति, महादेव और विष्णु इनके उपास्य देव हैं।

शोलापुर जिलेमें औदीच्य, नागर तथा श्रीमाली ३ श्रेणिया हैं। इन विभिन्न श्रेणियोंके लोग एकत्र आहारादि वा परस्पर दान ग्रहण नहीं करते। इनके मध्य आचारमें भट्ट, पाण्ड्या, रावल, ठाकुर और व्यास कई पदवियां प्रचलित हैं। एक पदवीधारी किन्तु विभिन्न गोत्र होनेसे विवाह किया करते हैं। अम्बाबाई और बालाजी इनके कुलदेवता हैं। औदीच्य कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंका पौरोहित्य करते और युक्त प्रदेशके गाव गाव देख पडते हैं। बीजापुर जिलेमें इनको नागर, श्रीमाली और पोकर्ण ३ श्रेणियां हैं।

गुजराती राजपूत-बम्बईके काच्छ जिलामें रहनेवाले क्षत्रिय वा राजपूत। इनकी सख्या प्रायः १६५१७ है। प्रधान विभाग दो हैं।

गुजरान (फा० पु०) गुजर देखो।

गुजरान्वाला—पञ्जाबके लाहोर डिविजनका एक जिला। यह अक्षा० ३१° ३१' एवं ३२° ३१' उ० और देशा० ७३° १० तथा ७४° २४' पू० मध्य रेचना-दोआबमें पड़ता है। क्षेत्रफल ३१९८ वर्गमील है। इसके उत्तर-पश्चिम चिनाब नदी, पूर्व स्यालकोट, और पश्चिम झङ्ग है। बागों और फुलवारियोंमें वेर बहुत होता है। जलवायु स्वास्थ्यकर है। बौद्ध कालके मन्दिरोंका ध्वंसावशेष बहुत मिलता है। तत्कालीन मुद्राएं और बड़े बड़े इष्टक आविष्कृत हुए हैं।

मुसलमानोंकी अमलदारीमें यह जिला बढ़ा। अकबरसे ले करके औरङ्गजेबके समय तक यहा कितने ही कूप बने। दक्षिण उच्च भूमि पर जहां पहले गांव थे, अब घास और भारी है। ६ जरखेज परगने लगते थे। मुसलमान साम्राज्यकी अन्तिम शताब्दीमें वार वार युद्ध होनेसे गुजरान्वाला उजड गया। सिखोंके अभ्युदय कालको यह उनका सदर बना।

लाहोरके अधिकार कालतक गुजरान्वालामें राजा रणजित्सिंहको राजधानी रही। यहां रणजित्सिंह और उनके पिताका स्मारक बना है। सिखोंने कृषिकी उन्नति की थी। १८४७ ई०को यह अंगरेजोंके हाथ लगा। और १८४९ ई०को अंगरेजी राज्यमें मिला।

गुजरावालाकी लोकसंख्या प्राय ८९०५७७ है। इसमें ८ नगर और १३३१ गांव बसे हैं। तहसीलें चार हैं। अधिवासियोंमें जाटोंकी संख्या अधिक है। गेहूंकी फसल बड़ी होती है। कहुरकी कोई कमी नही। काट छाटके औजरा, चाटोकी मूंठवाली छड़ियां और गहने मशहूर हैं। सूती कपड़ा बहुत बुना जाता है। दरजनों पुतलीघर और कारखाने हैं। गेहूं, दूसरे अनाज, रूई, तेलहन, पीतलका सामान और घीकी रफ्तनी होती है। नार्थवेष्टर्न रेलवे चला करती है। ७५ मील पक्की और १३०९ मील कच्ची सडक है। डिपटी कमिश्नर बड़े हाकिम हैं। मालगुजारी और सेस कोई १२ लाख ९० हजार लगती है। मुनिसपालिटियां हैं।

गुजरान्वाला—पञ्जाब प्रान्तके गुजरान्वाला जिलेकी तहसील। यह अक्षा० ३१° ४९' एवं ३०° २०' और देशा०

औपाधिक अर्थात् शरीरादि उपाधि-निबन्धन है। उपाधिकी उत्पत्तिसे उपहितकी (उपाधियुक्त देहादि उपहित आत्माकी) उत्पत्ति और उपाधिके विनाशसे उपहितका विनाश कहा जाता है। उपाधिके विनाशसे विशेष-विज्ञान विनष्ट होता है, यह श्रुति प्रमाणसे प्रमाणित हुआ है। विज्ञानघन केवल विज्ञान इन समस्त भूतोंसे उत्थित हो कर फिर उन्हीं भूतोंके विनाशसे विनष्ट होता है और उपाधिके विनाश होनेसे संज्ञा अर्थात् विशेष विज्ञानका विनाश होता है। यह विनाश उपाधिका विनाश है, आत्माका विनाश नहीं। इसका भी इस श्रुति प्रमाणसे निराकरण हुआ है। "भगवन्! आत्मा विज्ञानघन केवल विज्ञान है, फिर भी संज्ञा नहीं रहती, आपकी यह बात मैं स्पष्ट रूपसे नहीं समझ सका हूं।' इसके उत्तरमें ऋषिने कहा—"मैंने भ्रमकी बात नहीं कही है। आत्मा अविनाशी है, आत्माका उच्छेद और परिणाम नहीं होता। हां, उसके साथ माया अर्थात् विषयका सम्बन्ध होता है। विषयसे सम्बन्ध होनेके समय विषयरूपी और विषयसे विच्छेद होते ही वह केवल हो जाती है।" अविकृत ब्रह्म ही शरीर सम्बन्धसे जीव है, यह स्वीकार करने पर भी एक विज्ञानसे सर्वविज्ञान की प्रतिज्ञा नष्ट नहीं होती। उपाधिके कारण लक्षणमें प्रभेद हुआ है अर्थात् ब्रह्मलक्षण एक प्रकारका है और जीवलक्षण अन्य प्रकारका है। अब सहजहीमें अनुमान किया जा सकता है कि, आत्माकी उत्पत्ति नहीं होती। पूर्वोक्त भागवतोंकी जो कल्पना थी, उनके प्रति और भी बहुत हेतु दिये गये हैं।

"न च कर्त्तुः करणं" (सां०सू०)

लोकमें देवदत्तादि कर्त्ता होते हुए दात्रादि करणकी (क्रिया निष्पादक पदार्थकी) उत्पत्ति दृष्टिगोचर नहीं होती। फिर भी भागवतगण वर्णन करते हैं कि सङ्कर्षण नामक कर्त्ता जीव प्रद्युम्न नामक करण मनको उत्पन्न करता है और उस कर्तृजन्य प्रद्युम्न (मन) से अनिरुद्ध (अहङ्कार) की उत्पत्ति होती है। भागवतोंकी इस बातको बिना दृष्टान्तके मान लेना किसीके लिए भी सङ्गत नहीं। भागवतोंका ऐसा अभिप्राय भी हो सकता है कि, उक्त सङ्कर्षण आदि जीवभावान्वित नहीं हैं। वे सभी ईश्वर हैं, सभी ज्ञानशक्ति और ऐश्वर्यशक्ति युक्त बल, वीर्य और तेजःसम्पन्न हैं, सभी वासुदेव निरधिष्ठित और निरवद्य हैं*। इसलिए उनके विषयमें उत्पत्तिसम्भव दोष नहीं है। इस अभिप्रायके प्रति कहा जाता है कि, उनका उक्त अभिप्रायके होने पर भी उत्पत्ति-सम्भव दोष निर्द्धारित नहीं होता, अर्थात् वह दोष अन्य प्रकारसे आता है। उसका प्रकार ऐसा है—सङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये परस्पर भिन्न हैं, एकात्मक नहीं; फिर भी सब समधर्मी और ईश्वर हैं यह अर्थ अभिप्रेत होने पर अनेक ईश्वर स्वीकार करना हुआ। किन्तु अनेक ईश्वर स्वीकार करना निष्प्रयोजन है। क्योंकि एक ईश्वरके माननेसे ही इष्ट सिद्धि हो सकती है। भगवान् वासुदेव एक है अर्थात् अद्वितीय और परमार्थ तत्त्व हैं, ऐसी प्रतिज्ञा होनेसे सिद्धान्तहानिदोष भी लगता है।

ये चार व्यूह भगवान् ही हैं और वे सभी समधर्मी हैं, ऐसा होने पर भी उत्पत्ति-सम्भव दोष ज्योंका त्यों रहता है। क्योंकि अतिशय (छोटा बड़ा, तरतम) न रहनेसे वासुदेवसे सङ्कर्षणकी, सङ्कर्षणसे प्रद्युम्नकी और प्रद्युम्नसे अनिरुद्धकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। कार्यकारणके मध्य अतिशयका रहना नियमित है।' जैसे - मिट्टी और घड़ा। अतिशय बिना रहे कौनसा कार्य है और कौनसा कारण है, इसका निर्णय नहीं हो सकता। और भी देखिये, पञ्चरात्र-सिद्धान्ती वासुदेवादिमें ज्ञानादि तारतम्यकृत भेदको नहीं मानते। वास्तवमें वे व्यूहचतुष्टयको अविशेषतया वासुदेव समझते हैं। भगवान्‌के व्यूह (भिन्न संस्थान) क्या चतुःसंख्यामें ही पर्याप्त हुए हैं? ऐसा नहीं है। ब्रह्मादि स्तम्ब पर्यन्त (स्तम्ब=तृणगुच्छ) सम्पूर्ण जगत् ही भगवद्व्यूह है। यह श्रुति, स्मृति आदि सब धर्मशास्त्रोंका मत है। भागवतोंके शास्त्रमें गुणगुणिभाव आदि अनेक प्रकारकी विरुद्ध कल्पनाएं हैं। खुद ही गुण है और खुद ही गुणी, यह अवश्य ही विरुद्ध है। भागवतगण कहते हैं कि, ज्ञानशक्ति, ऐश्वर्यशक्ति, बल, वीर्य,

* निरधिष्ठित या अप्राकृतिक, अर्थात् प्रकृतिसे उत्पन्न नहीं। निरवद्य अर्थात् नाशादिरहित। निर्दोष रागादि रहित।

गुञ्ज (सं० पु०) गुञ्जति भ्रमरोऽत्र गुञ्ज अधिकरणे घञ्। १ ध्वनि, शब्द। २ पुष्पस्तवक।

गुञ्ज—बंबई प्रान्तके थाना जिलेका एक गांव। यह वाड़ासे कोई १० मील दक्षिण-पश्चिम है। गांवके पास एक तालावके किनारे अंबा मन्दिरका ध्वंसावशेष है। भार्गवराम पर्वतकी राह पर लगभग आध मील दूर ४०० वर्ष का पुराना भार्गवरामका मन्दिर खड़ा है। सम्भवतः जोहारके, जहांसे ५०॥ एकड़ जमीन माफी है, कोलि राजाने इसे बनाया था। इमारत बहुत अच्छी है। पत्थर पत्थर काट काट करके लगाया गया है। द्वार चार हैं। उनमें दो पर गणपतिकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। दालान २२ फुट लंबा और १२ फुट चौड़ा है। देवमूर्ति नराकार है।

गुञ्जकृत् (सं० पु०) गुञ्जं ध्वनिभेदं करोति कृ-क्विप्, भ्रमर, भौंरा।

गुञ्जन (सं० क्ली०) गुञ्जभावे ल्युट्। भौंरेका शब्द।

गुञ्जा (सं० स्त्री०) गुञ्जति, गुञ्ज-अच्-टाप्। १ लताविशेष, कोई बेल। (Abrus precatorious) हिन्दीमें इसका नाम घुंघची है। पत्ती इमलीकी तरह पतली होती है। फल शिंबी-जैसा आता और बीज रक्त तथा कृष्ण दिखलाता है। फलमें एक चूड़ा रहती है। वैद्यकशास्त्रके मतमें उसका मूल विषाक्त है। गुञ्जाका पर्याय-काकचिञ्चो, कृष्णला, सङ्कुष्ठा, रक्तिका, काकाणन्तिका, काकादनी, काकतिक्ता, काकजङ्घा, शिखण्डिनी, चूड़ामणि, सौम्या, शिखण्डी, अरुणा, ताम्रिका, शीतपाकी, उच्चटा, कृष्णचूड़िका, रक्ता, कांबोजी, भिल्लभूषण, वन्या, श्यामलचूड़ा और काकचिञ्चिका है।

गुञ्जाका बीज तीक्ष्ण और उष्ण होता है। (राजनि०) राजवल्लभने उसको कुष्ठव्रणनाशक कहा है। मूल वान्तिकारक और शूल तथा विषनाशक है। वशीकरण कर्ममें श्वेतवर्ण ही प्रशस्त रहता है। (राजनि०) भावप्रकाशके मतानुसार सफेद और सुर्ख दो तरहकी घुंघची है। श्वेतवर्ण गुञ्जा उच्चटा तथा कृष्णला और लालरंगवाली काकचिञ्चो, काकानन्ती, रक्तिका, काकादनी, काकपीलु एवं अङ्गारवल्ली कहलाती है। यह दोनो गुञ्जाएं केशवर्धक, शुक्रवृद्धिकर एवं बलकारक और वायु, पित्त, ज्वर, मुखशोष, भ्रम, श्वास, तृष्णा, मत्तता, चक्षुरोग, कण्डू, व्रण, कृमि, इन्द्रलुप्त, कुष्ठ, रक्तदोष तथा धवलरोगनाशक है। (भावप्रकाश)

इसको लकड़ीका बाहरी रंग कुछ पिङ्गल, किन्तु भीतरी ईषत् पीला होता है। यह गन्धहीन है। आस्वाद सुमिष्ट लगता और खानेसे मुंह चिनचिनाने लगता है। गुञ्जा मुलहटीके बदले काम आती है।

२ परिमाणविशेष, रत्ती। दो यवमें एक गुञ्जा होती है। (लीलावती)

वैद्यक परिभाषाके मत और कालिङ्गमानमें चार यव की एक गुञ्जा है। (शार्ङ्गधर)

गुञ्जति शब्दायते, गुञ्ज कर्तरि अच्-टाप्। ३ पटह, ढाक। गुञ्ज भावे अ। ४ कलध्वनि, मीठी बोली। ५ चर्चा, तजकिरा। आधारे अ। ६ मदिरागृह, शराबखाना। ७ मुस्ता।

गुञ्जाकिनी (सं० स्त्री०) १ गुञ्जा, घुंघची। २ पानीय मल्लवटी।

गुञ्जागर्भरस (सं० पु०) वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। १॥ तोला पारा, गन्धक, जयन्तीबीज या हरीतकी तथा निम्बुबीज प्रत्येक ६ तोला, गुञ्जाबीज ३ तोला और जयपाल १॥ तोला सबको काकमाची, धतूरे और जयन्तीके रसमें सान करके गोली बना लेना चाहिये। अनुपान घृत है। हिङ्गु एवं सैन्धव संयुक्त मण्ड पथ्य होता है। इसके सेवनसे हृद्रोग नहीं रहता। (रसेन्द्रचिन्तामणि)

गुञ्जातैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, घुंघचीका तेल। कटु तैल ४ शरावक, गुञ्जा मूल तथा फल प्रत्येक ४ पल और ८ शरावक जल एक साथ यथाविधि पाक करनेसे यह तेल बनता है। इसको लगानेसे कुष्ठ तथा गण्डमाला रोग नहीं रहता। (भावप्रकाश) दूसरा गुञ्जातैल ४ शरावक कटुतैल ८ पल गुञ्जाफल और ८ शरावक भीमराज रस साथ साथ पकानेसे तैयार होता है। (शारङ्गधर)

गुञ्जाद्यतैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, एक तेल। गुञ्जामूल, करवीरमूल, बीजताड़कमूल, अर्कमूल वा निर्यास तथा सर्षप प्रत्येक ४ तोला, तैल १ शरावक और आठ शरावक गोमूत्र एक साथ यथाविधि पाक कर पिप्पली, पञ्चलवण एवं मरिचका २० तोला चूर्ण डालनेसे यह

मायासे होती है। जीवात्मा देखो।

जीवोर्णा (सं० स्त्री०) जोवस्य ऊर्णा, ६-तत्। जोवित मेषादिके रोम, जीते मेढ़ोंके बाल।

जीव्या (सं० स्त्री०) जीवाय जीवनाय हिताय, जोव-यत्। १ हरीतकी, हड़। २ जीवन्ती। ३ गोरचदुग्ध, गोखरू चुपका दूध। (त्रि०) ४ जीवनोपाय, जोविका।

जीह (हिं० स्त्री०) जीभ देखो।

जुँई (हिं० स्त्री०) जुई देखो।

जुंदर (पु०) बन्दरका बच्चा।

जुंबली (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी पहाड़ी भेड़।

जुंबिश (फा० स्त्री०) चाल, गति, हिलना डोलना।

जुआ (हिं० पु०) १ द्यूत, हार जीतका खेल। यह खेल कौड़ी पैसे ताश आदि कई वस्तुओंसे खेला जाता है; किन्तु आजकल यह खेल कौड़ीसे भी खेला जाता है। इसमें चित्ती कौड़ियां फेंकी जाती हैं और चित्त पड़ी हुई कौड़ियोंकी संख्याके अनुसार दावोंकी हार जीत होती है। सोलह चित्ती कौड़ियोंके खेलको सोलही कहते हैं। २ वह लकड़ी जो गाडी, छकड़ा, हल आदिमें बैलोंके कंधों पर रहती है। ३ जाँते या चक्कीकी मूँठ।

जुआचोर (हिं० पु०) १ अपना दांव जीत कर खिसक जानेवाला जुआरी। २ वञ्चक, ठग, धोखेबाज।

जुआचोरी (हिं० स्त्री०) वञ्चकता, ठगी, धोखेबाजी।

जुआठा (हिं० पु०) हलमें बैलोंके कंधों परकी लकड़ीका ढांचा।

जुआर (हिं० स्त्री०) ज्वार देखो।

जुआरदासी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पौधा जिसमें सुगन्धित फूल लगते हैं।

जुआरा (हिं० पु०) एक जोड़ी बैलसे एक दिनमें जोती जानेवाली धरती।

जुआरी (हिं० पु०) जुआ खेलनेवाला।

जुई (हिं० स्त्री०) १ छोटी जुआं। २ मटर, सेम इत्यादि फलियोंमें होनेवाला एक प्रकारका छोटा कीड़ा।

जुई (हिं० पु०) एक प्रकारका पात्र जिससे हवनमें घी छोड़ा जाता है। यह काठका बना हुआ बरछीके आकारका होता है।

जुकाम (हिं० पु०) सरदी लगनेसे होनेवाली बीमारी। इसमें शरीरके अन्दर कफ उत्पन्न हो कर नाक और मुंहसे निकलने लगता है।

जुग (हिं० पु०) १ युग देखो। २ जोड़ा, दल, गोल। ३ चौसर खेलकी दो गोटियोंका एक ही कोठेमें इकट्ठा होना। ४ कपड़े बुननेके अवयवोंमेंसे एक प्रकारका डोरा। ५ पीढ़ी, पुश्त।

जुगजुगाना (हिं० क्रि०) १ मन्द ज्योतिसे चमकना, टिमटिमाना। २ उन्नति दशामें प्राप्त होना।

जुगजुगी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया, इसका दूसरा नाम शकरखोरा भी है।

जुगत (हिं० स्त्री०) १ युक्ति, उपाय, तदबीर। २ व्यवहारकुशलता, चतुराई। ३ चमत्कारपूर्ण उक्ति, चुटकुला।

जुगनी (हिं० स्त्री०) १ जुगनू देखो। २ पंजाबमें गाये जानेका एक प्रकारका गाना।

जुगनू (हिं० पु०) १ ज्योतिरिङ्गण, खद्योत, ज्योतिःशाली क्षुद्र कीटविशेष, एक उड़नेवाला छोटा कीड़ा जिसका पीछेका भाग आगकी चिनगारीकी तरह चमकता है (Lampyris noctiluca)। यह लम्बाईमें करीब आधे इञ्चका होता है। इसका मस्तक और गला छोटा और रंग कालेपनको लिए भूरा होता है। पंखों पर लोहित और कृष्णमिश्रित चिह्न होते हैं। स्त्री-जुगनूकी अपेक्षा पुं जुगनूकी आँखें बड़ी होती हैं। यह वृक्ष, लता, गुल्म, पुष्करिणी और नदीके किनारे रहता है। अंधेरी रातमें इनके झुण्डके झुण्ड छोटी छोटी दीपमालाओंकी तरह दीखते हैं। इनका यह प्रकाश वस्तिदेशके छोरसे निकलता है। वैज्ञानिकोंका अनुमान है कि वह प्रकाश दीपकसम्भूत है। जुगनूकी पूंछमें दीपक (Phosphorus) विद्यमान है, यह इच्छानुसार प्रकाशको घटा बढ़ा सकता है। हमेशा देखनेमें आता है कि, यह एक बारगी खूब चमकने लगता है और फिर उसी समय प्रायः बुझ-सा जाता है। उस चमकनेवाले हिस्सेको अलग कर लेने पर भी वह बहुत देर तक प्रकाश देता है। बुझ जाने पर यदि उसको पानी दे कर कोमल किया जाय, तो फिर उसमेंसे प्रकाश निकलते हैं। गरम पानीमें छोड़ देने पर भी इस कीड़ेसे

दो बार उत्पन्न हुआ करता है। यहां Actias Selene नामकी दूसरी भी गुटि है। वह पर्वत पर ५००० से ७००० फुट ऊंचे तक उपजती है।

Bombyx Horsfieldi यवद्वीपीय है।

मन्द्राज प्रान्तमें Bombyx lugubris होता है।

जापानमें Bombyx Yama mai उपजता है। अब इङ्गलैण्डमे भी उसकी खेती है। जापान यह रेशम ज्यादा कीमती समझा जाता है। राजपरिवारमें उसके व्यवसायका एकाधिपत्य है।

Bombyx Pernyi, Actias sinensis, A igne scens और A lolo चार जातियां उत्तर चीनमें मिलती हैं।

Bombyx Mylitta भारतीय है। इसका कोवा अन्यान्य भारतीय गुटियोंसे बड़ा होता है। भारतमें B. Arracanensis, fortunatus, sinensis textor प्रभृति कई भिन्न श्रेणीके रेशमी कीड़े हैं।

Cricula trifenestratra उत्तर पूर्व तथा दक्षिण भारत, श्रीहट्ट, आसाम, ब्रह्म और यवद्वीपमें उत्पन्न होता है। सिवा इसके C. drepanoides भी मिलता है।

Salassa lola और Actias Moenas श्रीहट्टदेश जात है।

Antheroea paphia वीरभूममें होता है। उसका नाम 'बुबो' है। सिंहल; दक्षिण, उत्तर-पूर्व एवं उत्तर पश्चिम भारत, वङ्ग, विहार, आसाम, श्रीहट्ट और यवद्वीपमें भी उसकी उत्पत्ति है। बहुत समयसे इस देशमें उस कीड़ेको रेशम टसरका कपड़ा बनानेको काम है।

Antheroea Pernyi चीन देशीय है।

Antheroea Roylii, Antheroea Aelferi और Attacus Edwardsi दारजिलिङ्गमें उत्पन्न होते हैं।

A. larissa और Antheroea Java यवद्वीपज है।

Antheroea Perottetti पूदिचेरीमें होता है।

A Simla शिमला और दारजिलिङ्ग पर्वतजात है।

A. Assama आसाममें होता है। आसामी भाषामें उसका नाम मूंगा है।

Antheroea मल्वरियाकी गुटि है। फ्रान्सदेशमें उसकी खेती होने लगी है।

Loepa Katinka आसाम, श्रीहट्ट, भोट और यवद्वीपमें उत्पन्न होता है। सिवा इसके L. miranda, L. Sikkima और L. Sivalika कई जातीय श्रेणीकी गुटि भी देख पड़ती है।

Attacus Attas का कोवा सबसे बड़ा होता है। सिंहल, चोन, ब्रह्म, यवद्वीप और भारतमें सर्वत्र उसकी उत्पत्ति है।

Attacus Cynthia और Attacus ricini को वङ्गालमें एंड़ी एंड़िया या एरण्डगुटी कहते हैं।

Attacus Guerini एरण्ड गुटीसे आकृतिमें क्षुद्र बैठता है। वङ्गदेशमें ही वह अधिक परिमाणसे उत्पन्न होता है। एतद्व्यतीत A. Canningii, A. lunula A obscurus, A Silhetica, Caligula, Cachara, C Simla, C. Thebeta, Neoris, Huttoni, N. Shadulla, N Stolickzkana, Orcinara lactea O Moorei, O diaphama, Rhodia newara, Rinaca, Zullika, Theophila, Bengalensis, Th. Huttoni, Mandarina, religiosa, Sherwilli प्रभृति कई दूसरी किस्में है।

गुटिक (सं० पु०) मत्स्याण्डी।

गुटिका (सं० स्त्री०) गुटिरेव गुटि स्वार्थे, कन्-टाप्। १ वटिका, वटो, गोली। २ वर्तुलाकार पदार्थ, गोल चीज।

गुटिकाञ्जनम् (सं० क्ली०) अञ्जन देखो।

गुटिका पात (सं० पु०) गुटिकायाः पातः, ६-तत्। किसी विषयके निरूपणार्थ गोली निक्षेप, किसी चीज पर निशान कर गोली फेंकना।

गुटिकाह्वय (सं० पु० क्ली०) लवणविशेष, एक प्रकारका नमक।

गुट (हिं० पु०) समूह, झुण्ड, दल।

गुट्टा (हिं० पु०) लाखाकी बनी चौकोर लड़कियोंके खेलनेकी गोटी।

गुट्टिकोण्डा—कृष्णा जिलेके अन्तर्गत दाचिपल्लीसे ६ कोस दक्षिणमें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक अति प्राचीन शिवालय है। ग्रामके निकट ही एक गुहा है। ऐसा प्रवाद है कि इस कन्दरामें मुचुकुन्द सोया करते थे।

जुगुप्सा (सं० स्त्री०) गुप सन् भावे अ टाप् १ निन्दा, गर्हणा, बुराई ।

जुगुप्सा (सं० स्त्री०) गुप-सन् भावे अ-टाप् । १ निन्दा। (अमर) वीभत्सरसका स्थायिभाव, शान्तरसका व्यभिचार भाव । (साहित्यद० ३।२३६) वीभत्सरस देखो।

देह जुगुप्साका विषय पातञ्जलदर्शनमें इस प्रकार लिखा है—

"शौचात् स्वाके जुगुप्सा परैरसंसर्गः।" (पात० २।४०)

जिसने शौचको साध लिया है, कारणस्वरूप उसको अपने अङ्गप्रत्यङ्गोंसे भी घृणा हो जाती है। आत्माको शुचि होने पर शरीरको अशुचि समझ उसमें आग्रह वा ममत्व नहीं रहता और अपने शरीरके प्रति जुगुप्सा (घृणा) हो जाती है; इसलिए अन्यान्य शरीरियोंसे मिलनेकी भी इच्छा नहीं होती। जिसको अपनी देहसे घृणा हो गई हो, उसे अन्य शरीरसे द्वेष हो, ऐसा संभव नहीं; आत्मशौचवान् व्यक्ति दूसरोंके साथ पार्थक्य नहीं रखता। इसीलिए प्रायः साधुयोगियोंके लोकालयमें दर्शन नहीं मिलते। देहसे सर्वदा जुगुप्सा रखनी चाहिये। शरीरसे जुगुप्सा होने पर वैराग्य आता है। वास्तवमें यह शरीर अनित्य है, यह रसान्त, भस्मान्त वा विष्ठान्त हो जायगा। यह मातापितृज षाट्कौशिक शरीर भुक्त द्रव्यका परिणाम मात्र है, इसलिए इसमें विश्वास करना सङ्गत नहीं। इसके निमित्तसे सर्वदा जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि और दुःखके दोषोंका अनुसन्धान करना चाहिये।

२ जैनमतानुसार चारित्रमोहिनीय कर्मोंके भेदोंमेंसे एक। इसके उदयसे आत्मामें ग्लानि उत्पन्न होती है।

जुगुप्सित (सं० त्रि०) १ निन्दित घृणित। (क्ली०) २ श्वेत लहशुन, सफेद लहसुन।

जुगुप्सु (सं० त्रि०) निन्दक, बुराई करनेवाला।

जुगुर्वणि (सं० त्रि०) गृ-स्तुतौ गृणाति यङ् लुगन्तात् क्विप छान्दसो रूपसिद्धिः। स्तोत्रका संविभक्त, जो स्तवकारियोंकी विभाग करता है।

जुगुल—एक कविका नाम। १६९८ ई० में इनका जन्म हुआ था। इनकी कविता साधारण श्रेणीकी होती थी।

जुगुलपरसाद चौबे—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने 'दोहावली' नामक एक पुस्तक रची है।

जुगुलानन्यशरण महन्त—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। ये जातिके ब्राह्मण थे। इन्होंने सीतारामसनेहवाटिका, रामनाममाहात्म्य, विनोद-विलास, प्रेमप्रकाश, हृदयहुलासिनी, मधुरमञ्जुमला, रूपरहस्य पदावली, प्रेम परत्वप्रभा (दोहावली) आदि प्राय ३०—४० ग्रन्थोंकी रचना की है। १८७६ ई०में इनकी मृत्यु हुई। इनकी कविता उत्कृष्ट होती थी—उनसे कविकी विद्वत्ता प्रगट होती है। नीचे एक उदाहरण दिया जाता है—

"ललित कंठ कमनीय लाल, मन मोल लेत बिन दामैं।
अरुन पीत सित असित माल, मनि नूतन लसत ललामैं॥
क्या तारीफ सरीफ कीजिए रहिए हेरि हरामैं।
जुगुलानन्य नवीन बीन, पिक कायल सुनत कलामैं॥"

जुङ्ग (सं० पु० क्ली०) यवनाल।

जुङ्ग (सं० पु०) जुग-अच्। वृद्धदारक, विधाराका पेड़।

जुङ्गा (सं० स्त्री०) जुंग देखो।

जुङ्गित (सं० त्रि०) जुङ्ग-क्त। १ परित्यक्त, छोड़ा हुआ। २ क्षतिग्रस्त, नुकसान किया हुआ।

जुङ्गी—निकृष्ट जातिविशेष, एक नीच जाति।

जुज़ (फा० पु०) एक फारम, कागजके ८ वा १६ पृष्ठोंका समूह।

जुजबन्दी (फा० स्त्री०) किताबकी सिलाई। इसमें आठ आठ पन्ने एक साथ सिए जाते हैं।

जुजवी (फा० वि०) १ बहुतोंमें कोई एक। २ बहुत छोटे अंशका।

जुझाऊ (हिं० वि०) १ युद्धका, लड़ाईमें काम आनेवाला। २ युद्धके लिये उत्साहित करनेवाला।

जुट (हिं० स्त्री०) १ दो वस्तुओंका समूह, जोड़ी, जुग। २ एकके साथ लगी हुई वस्तुओंका समूह, थोक। ३ दल, जत्था, मण्डली। ४ एक जोड़का आदमी या वस्तु।

जुटक (सं० क्ली०) जुट संहतौ जुट-क। इगुपधेति। पा ३।१।१३५। ततः संज्ञायां कन्। जटा, सिरके उलझे हुए बाल।

जुटना (हिं० क्रि०) १ संश्लिष्ट होना, जुड़ना। २ सटना, लगा रहना। ३ लिपटना, चिमटना। ४ सम्भोग करना,

गुड़गुडी (हिं० स्त्री०) फारसी, एक तरहका हुक्का।

गुडगुडी—बम्बई प्रान्तके धारवाड़ जिलेका कसावा। यहां कल्लापका मन्दिर है। इसी मन्दिरमें १०३८ और १०७२ ई०के प्रदत्त दो प्रशस्ति खोदित हैं।

गुडग्राम—राजगढ़के अन्तर्गत एक गण्डग्राम। यह बहुआ नदीसे ६ कोश पश्चिममें अवस्थित है।

गुड़ची (सं० स्त्री०) गुडं मिष्टरसं चिनोति गुडेन चीयते वा गुड़-चि-ड-ङीप्। गुड्ची देखो।

गुडतृण (सं० क्ली०) गुडसाधनं तत् प्रधानं वा तृणं मध्यपदलो०। इक्षु, ऊख, केतारी।

गुड़त्रिण (सं० क्ली०) गुडप्रधानं तृणं निपातने साधु। गुडतृण देखो।

गुड़त्वच् (सं० क्ली०) गुडतुल्यं त्वक् मध्यपदलो०। स्वनामख्यात गन्ध द्रव्य। यह मधुर रस तथा पीतवर्णका होता है। इसका पर्याय—उत्कट, भृङ्ग, त्वक्पत्र, वराङ्गक, त्वच, चोल, त्वचा, पत्र, हृदय, सुरभिवल्कल और त्वक् है। राजवल्लभके मतसे इसका गुण-कफ, शुक्र और आमवातनाशक, मधुर एवं कटु है। किन्तु भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—लघु, उष्ण, कटु, मधुर और तिक्तरस, रूक्ष पित्तवर्द्धक एवं कफ, वायु, कण्डु, आमदोष, अरुचि हृद्रोग, वस्तिगत रोग, वातजनित अर्श, क्रिमि, पीनस और शुक्रनाशक है।

यह पीतवर्ण सुगन्धि स्थूलत्वक् 'केशिया' नामक वृक्षकी छाल है। यह चीन तथा तातार देशमें उत्पन्न होती है। इसमें कुछ मिठास होनेके कारण इसे गुडत्वक् कहते हैं। यह केशादिको सुगन्धित करनेके लिये व्यवहृत होता है। इस तरहको एक और पतली छाल होती है। जिसे दालचीनी कहते हैं। किन्तु इसका स्वाद कटुमिश्रित मीठा है। किसी किसी वैद्यक ग्रन्थके मतसे गुड़त्वक् शब्दका अर्थ दालचीनी कहा गया है।

गुडत्वच (सं० क्ली०) गुडत्वक्, राजभोग्य, जायत्री।

गुड़दारु (सं० क्ली०) गुडप्रधानं दारु मध्यपदलो० इक्षु, ऊख, केतारी।

गुडधनियाँ (हिं० स्त्री०) गेहूं और गुड़ मिश्रित एक तरहका लड्डू।

गुडधेनु (सं० स्त्री०) गुड़निर्मिता धेनुः, मध्यपदलो०। दानके लिये गुड़ द्वारा निर्मित धेनु, गुड़की गाय। हेमाद्रि दानखण्डमें उसका विधान इसप्रकार लिखा है-जहां गुडधेनु दी जावेगी, गोमय द्वारा अच्छी तरह लीपना पड़ेगा। उस पर कुश वा दर्भपत्र विस्तीर्ण करके चार हाथका कोई कृष्णाजिन पूर्वमुख करके रखना और उसके निकट दूसरा छोटा कृष्णाजिन वत्सके लिये स्थापन करना चाहिये। पहले पर गुड़की एक गाय और दूसरे पर बछडा बनाते हैं। चार भार अर्थात् २५ मन गुड़से गो और एक भार पानी ६। मनसे वत्स प्रस्तुत करना उत्तम है। दो भार (१२॥ मन) गुड़की धेनु और आध भार (३ मन ५ सेर)का बछडा मध्यम होता है। दाता अपनी अवस्थाके अनुसार जितने चाहे गुडसे यह काम कर सकता है। धेनु और वत्स दोनोंका मुंह घृत द्वारा निर्मित होता और शुभ्रवर्ण सुन्दर वस्त्रसे आच्छादित करके रखना पडता है। कान सीपके, नयन मोतीके, शिराएं सफेद सूतकी, गलकम्बल श्वेत कम्बलके, ककुत् तथा पृष्ठदेश तांबेके और उजले चामरके रोम लगाते हैं। इसी प्रकार मूंगेसे भौंहें, नवनीतमय क्षौम वस्त्रसे स्तन एवं पुच्छ, कांस्य द्वारा दोह, इन्द्रनीलमणिसे चक्षुकी तारकाएं, सोनेसे सींग, चांदीसे खुर और विविध फलोंसे दांत बनाये जाते हैं।

इसी प्रकार गुड़धेनु निर्माण करके धूप, दीप आदिसे उसकी पूजा करना चाहिये। प्रत्येक पार्वणश्राद्ध करनेको तरह इसका भी विधान दृष्ट होता है। गुडधेनु दानसे समस्त यज्ञका फल मिलता और सब पाप जाता रहता है। विषुवसंक्रांति, पुण्याह तिथि, व्यतीपात और ग्रहण समयको गुड़धेनु दान करना उचित है।

गुड़नई—वासुदेवपुरसे दो योजन उत्तरमें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। (देशावली)

गुड़ना (हिं० क्रि०)एक तरहका लड़कोंका खेल। इसमें लड़के डण्डे या लाठीको इसतरह फेंकते हैं कि लाठी सिरोंके बल पलटा खाती हुई बहुत दूर तक चली जाती है।

गुड़पर्वत (सं० पु०) गुड़ेन निर्मितः पर्वतः, मध्यपदलो०। दानके लिये गुड़का बनाया हुआ पहाड। मत्स्यपुराणमें उसका विधान इस प्रकार लिखा है—तीर्थ, गोष्ठ वा गृहके प्राङ्गणमें एक चतुद्वारी चतुरस्र मण्डप निर्माण

अवस्थित है। यहां हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि भिन्न भिन्न जातियां वास करती हैं। हिन्दुको संख्या ही सबसे अधिक है। इस उपविभागमें एक दीवानी और दो फौजदारी अदालत तथा एक थाना है।

यहां बहुतसी नदियां पर्वतसे निकल कर 'घोड़में' गिरी हैं। यह घोड़ देखनेमें कांटेके सदृश है। इसका अग्रभाग सूक्ष्म और तीनों ओर विस्तृत है। सबसे दक्षिणमें जो नदी प्रवाहित है, उसका नाम है मीना। प्रतिवर्ष इस नदीका जल बढ़ कर १० मीलके मध्यवर्ती खेतोंका बहुत अनिष्ट करता है। इस स्थानकी मट्टी बहुत नरम है। जलका प्रवाह रोकनेका कोई उपाय नहीं है। अधिवासिगण नदी तथा मट्टीकी प्रकृति अच्छी तरह जानते हैं, किन्तु वे स्थान परिवर्त करनेकी जरा भी इच्छा नहीं रखते। माधोजी सिन्धियाके एक कर्मचारी हिन्दुस्तान लूटनेके समय सङ्कटापन्न हो गये थे। उन्होंने (कुलकर्णी वंशीय) निर्गुड़ी ग्राममें एक सुन्दर मन्दिर बनवाया था। कई वर्ष हुये, मीना नदी उस ओर बढ़ती कर मन्दिरको नष्ट करने लगी है।

१६५७ ई॰में शिवाजीने जिस जगह नदी पार हो जुनार दुर्ग पर आक्रमण किया था, वह प्रदेश मन्दिरके समीप ही है। निर्गुड़ीसे दो मील नीचेकी ओर एक प्रसिद्ध मुगलबांध है। पहले इस स्थानसे शिवनेरी दुर्गके 'बागलहोर' उद्यान तक एक खाड़ी प्रवाहित थी। अब वहां जलका चिह्न भी नहीं है। पूना और नासिककी सड़कके निकट नारायणग्राम अवस्थित है। यहाँ एक प्राचीनकालका बांध है। फिलहाल गवर्मेण्टने इसका जीर्णसंस्कार किया है। इस बाँधके रहनेसे ८००० एकड़ भूमि बहुत आसानीसे सींची जाती हैं। नारायण ग्रामके समीप मीना नदीके ऊपर एक पुल बना हुआ है और यह नदी पिम्पलेखाके निकट घोड़में गिरी है। इसके बाईं ओर नारायणगढ़ है।

कुकरी नदी कालीपल्लिके निकटसे निकल नाना घाटोंकी उपत्यका तक प्रवाहित हुई है। यह स्थान कोङ्कण और दक्षिण प्रदेशकी प्राकृतिक सीमा स्वरूप है। कहा जाता है कि पहले घाटगढ़ और कोङ्कणके अधिवासियोंमें इस स्थानके लिये बहुत विवाद हुआ था। किसी समय दोनों पक्ष मिल कर सीमा स्थिर करनेके लिये बहुत वादानुवाद करने लगे। अन्तमें घाटगढ़के सीमान्त रक्षक महारने कहा कि नीचे कूदनेसे वे जहां निश्चल अवस्थामें रहेंगे वही स्थान दोनों ग्रामोंकी सीमा मानी जायगी। दोनों पक्षोंने इसे स्वीकार कर लिया और जिस पहाड़के ऊपर दोनों पक्ष सम्मिलित हुये थे, वहींसे वे नीचे कूद पड़े! जिस स्थान पर उनकी देह चकना चूर हुई, वही स्थान घाटगढ़ और कोङ्कणकी सीमा ठहराई गई। पहले जुनारमें सात दुर्ग थे। वे इस तरह बने थे कि वे आकाशके सप्त नक्षत्र पुञ्जकी आकृतिके सदृश मालूम पड़ते थे।

उक्त सात दुर्गोंके नाम ये हैं—चावन्द, शिवनेरी, नारायणगढ़, हरिचन्द्रगढ़, जीवधन, नीमगढ़, और हर्षगढ़।

जुनारमें बौद्धोंकी बनाई हुई बहुतसी गुहाएं देखी जाती हैं, किन्तु अन्यान्य स्थानकी बौद्ध-गुहाकी भांति जुनारकी गुहाएं खोदी हुई मूर्त्तियोंसे सुशोभित नहीं हैं। गुहानिर्माण होनेके बहुत समय बाद यहां बुद्धदेवकी प्रतिमूर्त्ति तथा और दूसरी दूसरी बौद्धमूर्त्तियां स्थापित हुई हैं। जुनारकी गुहाओंका निर्माण-कौशल अत्यन्त विस्मयजनक है। इन गुहाओंमें जगह जगह शिलालेख पाये जाते हैं। ये लेख एक समयके नहीं हैं। इनमें बहुतसे महाराज अशोकके समयसे भी पहलेके हैं।

किसी किसी विद्वान्‌ने स्थिर किया है, कि प्राचीन तगर अब जुनारके नामसे मशहूर हो गया है। प्राचीन तगरके शिल्पकार तीन भागोंमें विभक्त हो भिन्न भिन्न स्थानोंमें फैल गये थे। पहले तगरपुरवराधीश्वर उपाधि विशेष प्रचलित थी।

इस प्रदेशमें मुसलमानोंके प्रथम आधिपत्यके समय उनकी राजधानी जुनारमें थी और कोङ्कणका कुछ भाग जुनार राज्यके अन्तर्गत था। जुनारसे नारायणग्राम तक जो रास्ता गया है, उसके कुछ दक्षिणमें मुसलमानों-का बनाया हुआ एक दुर्ग विद्यमान है।

२ बम्बई प्रदेशके पूना जिलेके अन्तर्गत इसी नामके तालुकका एक प्रधान शहर। यह अक्षा॰ १८° १२´ उ॰ और देशा॰ ७३° ५३´ पू॰के मध्य पूना शहरसे ५६ मील

वहां कादसोध और पादसीध नामक दो लिङ्गायत देव प्रेत बाधा दूर करनेके लिये मशहूर हैं। तीन अमावस्याओंको बराबर भूतसे सताया हुआ आदमी वहां ले जानेसे अच्छा हो जाता है।

गुड़लिह (सं॰ त्रि॰) गुड़ं लेढि गुड़-लिह-क्विप्। गुड़ चाटनेवाला।

गुड़वीज (सं॰ पु॰) गुड़ इव मधुरं बीजं यस्य बहुव्री॰। मसूर।

गुड़शर्करा (सं॰ स्त्री॰) गुड़जाता शर्करा। उत्तम चीनी।

गुड़शिग्रु (सं॰ पु॰) गुड़ इव मधुरः शिग्रुः। रक्तशोभाजन।

गुडशुक्त (सं॰ क्ली॰) अम्ल रसविशेष, किसी किस्मका सिरका। यह तेल, गुड़, पानी, कण्डशाक आदि एकत्र मिला करके बनाया जाता है। (शब्दार्थ)

गुड़हर (हिं॰ पु॰) अड़हुलका पेड़ या फूल।

गुड़हल (हिं॰ पु॰) गुड़हर देखो।

गुड़ा (सं॰ स्त्री॰) गुड-टाप्। १ स्नुहीवृक्ष। २ वटिका गुटिका, गोली। ३ उशीरी तृण, एक तरहकी सुगन्धि घास। ४ गुड़ूची।

गुड़ाका (सं॰ स्त्री॰) गुडयति सङ्कोचयति देहेन्द्रियादीनि स गुड़ः तं आकाति प्रकाशयति गुड़-आ-कै-क-टाप्। १ निद्रा, निन्द। २ आलस्य।

गुड़ाकू (हिं॰ पु॰) गुड़मिश्रित पीनेका तम्बाकू।

गुड़ाकेश (सं॰ पु॰) गुड़ स्नुहीव केशा यस्य, बहुव्री॰। गुड़ाकायाः निद्रायाः आलस्यस्य वा ईशः, ६-तत्। अर्जुन। "गुड़ाकेशः धनुर्धरः" (उज्ज्वल) (त्रि॰) जितनिद्र, जिसने निद्राको वशीभूत कर लिया हो। ३ जितालस्य, आलस्यशून्य। (पु॰) ४ शिव, महादेव।

गुड़ाख्य (सं॰ पु॰) स्नुहीवृक्ष।

गुड़ाचल (सं॰ पु॰) गुड़ेन निर्मितोऽचलः मध्यपदलो॰। दानके लिये गुड़ द्वारा निर्मित पर्वत। गुड़पर्वत देखो।

गुड़ादि (सं॰ पु॰) पाणिनीका एक गण। गुड़, कुल्माष, सक्तु, अपूप, मांसौदन, इक्षु, वेणु, संग्राम, संघात, संक्राम, सम्बाह, प्रवाह, निवास और उपवास इन सभीको गुड़ादि गण कहते हैं।

गुड़ादिवटिका (सं॰ स्त्री॰) शोथरस।

गुड़ापूप (सं॰ पु॰) गुड़ेन मिश्रितोऽपूपः, मध्यपदलो॰। गुड़मिश्रित पिष्टक, गुड़पीठा।

गुड़ापूपिका (सं॰ स्त्री॰) गुड़ा पूपाः प्रायेण अन्नमस्यां गुड़ापूप-कन् टाप् अत इत्वञ्च। पूर्णिमा तिथिविशेष।

गुड़ाम्बु (सं॰ क्ली॰) गुड़कृत जल। गुड़ मिला हुवा जल।

गुड़ारिष्ट (सं॰ क्ली॰) गुड़निर्मितं अरिष्टं, मध्यपदलो॰। मदिरा, दारू।

गुड़ाला (सं॰ स्त्री॰) गुड़ं मधुरसं आलाति बाहुलकात् कः ततः टाप्। गुण्डासिनीवृक्ष। इसका रस गुड़के सदृश मीठा लगता है।

गुड़ाशय (सं॰ पु॰) गुड़ इव मधुर रस आशेतेऽस्मिन् आ-शी आधारे-अच्, ६-तत्। अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़।

गुड़ाश्मक—पुराणोक्त एक जनपद।

"धर्मारण्या ज्योतिषिका गौरग्रीवा गुड़ाश्मकाः।"

(मार्कण्डेयपुराण ५७।७)

गुडाष्टक (सं॰ क्ली॰) औषधविशेष, एक दवा। त्रिकटु, पिपरामूल, त्रिवृत्की जड़, दन्तीमूल और चीतकी जड़ बराबर बराबर चूर्ण करके गुड़के साथ सवेरे खाना चाहिये मात्रा अग्निबलके अनुसार दी जाती है। यह अजीर्ण और उदावर्त दूर करता है।

गुड़सव (सं॰ पु॰) गुड़कृत आसव, गुड़की शराब। यह वातनाशक, तर्पण और दीपन है। (चरक)

गुड़िका (सं॰ स्त्री॰) गुटिका, गोली।

गुड़िमेटला—मन्द्राज प्रान्तके कृष्णा जिलेका एक गांव। यह नन्दीग्रामसे ८ मील दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। यहां पहाड़ पर एक भग्न दुर्ग, टूटे फूटे मन्दिर आदिके प्राचीर और मण्डप प्रभृतिका ध्वंसावशेष देख पड़ता है। कहते हैं कि १३२८ से १४२७ ई॰की बीच रेड्डी नायकोंने वह सब मन्दिर आदि बनाये थे। कोई कोई इसे तुरङ्गरायडु कहा करता है। ११९० शकको दिया हुआ राजेन्द्र चोडके पुत्र काकतीय रुद्रमहाराज, १०८६ शकमें प्रदत्त वासुन्टय और रुद्राम्बा देवीके राजत्वकाल पर दिया हुआ भिन्न भिन्न शिलाफलक मिलता है।

करते हैं सभी मुसलमान उस मतको सादरसे ग्रहण करते हैं।

जुनारमें प्राचीन सिंहवंशके राजाओंको अनेक मुद्रा पाई गई है।

यहां १४० पर्वतगुहा हैं जो ६ विभागमें बटी है।

शहरसे दो मील पूर्व आफिजाबाग नामक उद्यान है। यूरोपीय पण्डितोंका कथन है, कि इवसीसे आफिज नामकी उत्पत्ति हुई है। जुनार थोड़े समय तक अहमदनगर राज्यकी राजधानी था, किन्तु असुविधा होनेके कारण अन्तमें अहमदनगरमें ही राजधानी स्थापित की गई।

जुनिद खाँ—बादशाह अकबरके राजत्वकालमें बङ्गदेश दायुदखाँ नामक एक पठान-वंशीय नरपतिके शासनाधीन था। इनके विद्रोही होने पर बादशाहने इनको दमन करनेके लिए मुनीमखाँके अधीन एकदल सेना भेजी। दायुद खाँ कई एक बार युद्ध करनेके बाद विनकेसरी नामक स्थानको भाग गये। सम्राट्‌के सेनापति राजा टोडरमलने उनका पीछा किया। कुछ दूर अग्रसर हो कर सुना कि, दायुदखाँ युद्धके लिए तैयार हुए हैं और जुनिदखाँ* बहुतसे अनुचरोंको ले कर दायुदको सहायताके लिए अग्रसर हो रहे हैं।

मुनीमखाँके पास इस सम्वादके पहुंचते ही उन्होंने टोडरमलके सहायतार्थ एकदल सेना भेजी। राजा टोडरमलने आबुलकाशिमके अधीन एक छोटी सेना जुनिदखाँकी गति रोकनेके लिए भेज दी। जुनिदखाँ बड़े साहसी और वीरपुरुष थे। सामान्य युद्धके बाद ही सम्राट्‌की सेना तितर बितर हो कर भाग गई। राजा टोडरमल अपने अधीनस्थ सारी सेनाको ले कर जुनिद खाँके विरुद्ध अग्रसर हुए। जुनिदके अधीनस्थ पठानोंने टोडरमलकी बहुतसी सेनाको देख भयभीत हो जङ्गलमें प्रवेश किया और दूसरे दिन जुनिदके साथ दायुदखाँके पास पहुंच गये। परन्तु दायुदखाँ कई एक युद्धोंमें परा जित हो जानेसे डर गये और अन्तमें उन्होंने सम्राट्‌की वश्यता स्वीकार कर ली।

मुनीमखाँकी मृत्युके बाद बादशाहने हुसैनकुलिखाँको बङ्गालका शासनकर्त्ता नियुक्त किया। इधर दायुदखाँ फिर विद्रोही हो गये।

राजमहलके पास जो युद्ध हुआ, उसमें दायुदखाँ कररानी बन्दी हुए। इस युद्धमें जुनिदखाँने विशेष साहसिकताका परिचय दिया था। किन्तु मुगल-सैन्यके द्वारा निक्षिप्त एक गोलेके आघातसे इन्हें बड़ी भारी चोट लगी और उसीसे उनका १५७६ ई०में प्राणवियोग हुआ।

जुनून (फा० पु०) १ पागलपन।

जुन्हरी (हिं० स्त्री०) शस्यविशेष, ज्वार नामका एक अन्न। इसका वैज्ञानिक नाम Zea Mays है, अंग्रेजोमें इसको मेज़ वा इण्डियन कर्न (Maze, Indian Corn) तथा बङ्गालमें जनार, भुट्टा और जोनार (छोटानागपुर) कहते हैं। हिन्दीमें भी इसके कई नाम हैं, जैसे—मका, मकई, ज्वार, भुट्टा, बड़ी जुआर और कुकरी। इसके संस्कृत पर्याय ये हैं—यवनाल, योनाल, जूर्णाह्वय, देवधान्य, जोन्ताला और बीजपुष्पिका। (हेम०)

जुन्हरीका पेड़ करीब ६।७ हाथ लम्बा होता है। इसकी पत्तियां लम्बी और करीब १½ इञ्च चौड़ी होती है। वृक्षदण्ड ईखकी तरह ग्रन्थियुक्त होता है। वृक्षके मध्यस्थलसे लगा कर अग्रभाग तक कुछ ग्रन्थियों पर फल लगा करते हैं। फल प्रायः आध हाथ लम्बे और सफेद होते हैं जिन पर सब्ज रंगका बारीक आवरण रहता है। फलका मूलदेश प्रायः १½ इञ्च मोटा और अग्रभाग पतला रहता है। आवरणको उठानेसे श्वेत वा पीताभ दाने दीख पड़ते हैं, जिन्हें लोग खाते हैं।

पृथिवी पर प्रायः सर्वत्र जुन्हरीकी खेती होती है। डि-कण्डोल नामक एक उद्भिदतत्त्वविद्‌ने स्थिर किया है कि, जुन्हरी सबसे पहले अमेरिका महादेशके निउ ग्रानेडा नामक देशमें उत्पन्न हुई थी। किस समय वह भारतमें लाई गई, इसका निर्णय करना बहुत कठिन है। किसी किसी यूरोपीयके मतसे, १६वीं शताब्दीमें पोर्त्तगीज लाल मिर्च, गोल मिर्च, अनन्नास आदिके साथ जुन्हरी भी लाये थे। परन्तु सुश्रुतमें यवनाल शब्दका उल्लेख रहनेके कारण इस तरहका अनुमान

---

* टेलर-प्रमुख इतिहास-लेखकोंका कहना है कि, जुनिदखां दायुदखांके पुत्र थे, और ष्टुयर्ट साहबने अपने बंगालके इतिहासमें जुनिदखांको दायुदखांका भाई लिखा है।

आमके वृक्षमें हो वह ज्यादा बढती है। गुर्च दो प्रकार-की है,—एकको काटनेसे उसके बीचमें चक्राकार चिह्न झलकता है। दूसरीमें वैसा नहीं होता। चक्राकार चिह्नयुक्त लता पद्मगुडूची भी कहलाती है। यह अपेक्षाकृत कुछ मोटो रहती और चालीस पचास हाथ बढती है। इसकी गांठसे लम्बे लंबे रेशे निकलते हैं। नीमकी गुर्च सबसे अच्छी समझी जाती है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें वह बलकर, मूत्रकर और अल्प ज्वरघ्न है। ष्टुयार्ट, कावेल आदि डाक्टरोंका कहना है कि सविराम ज्वरमें गुडूची बडा उपकार करती है। परन्तु डा० ओसफर्नसी वह बात नहीं मानते। उनके मतानुसार गुर्चके काढेका विशेष गुण यही है कि वह शैत्यनिवारक होते भी उष्ण नहीं। पुराने उपदंश रोगमें यह सालसेकी तरह काम आती है। ज्वर आदिके पीछे शरीर दुर्बल पड जाने पर इसको खानेसे क्षुधा, जीर्ण और बलवृद्धि होती है।

गुडूचीघृत (सं० क्ली०) घृतविशेष, गुर्चका घी। १२॥ शरावक गुर्च ४ श० गायके घी और ६४ श० पानीमें डाल खूब उबालते हैं। जब १६ श० जल घट आता, १ श० गुर्चका चूर्ण उसमें डाल दिया जाता है। इसीका नाम गुडूचीघृत है। यह वात-रक्तके लिये बहुत उपकारी होता है।

आमवातका गुडूचीघृत इस प्रकार बनता है—४ शरावक गव्यघृत और ६४ श० जलमें ६४ पल गुडूची डाल करके खूब उबालते और १६ श० पानी बचने पर उतार करके उसमें १ श० शुण्ठीचूर्ण मिलाते हैं।

गुडूचीतैल (सं० क्ली०) तैलविशेष, गुर्चका तेल। स्वल्प गुडूची तैल इस तरह बनता है—४ शरावक तिल तेल और ६४ श० जलमें १०० पल गुर्च उबाल करके १६ शरावक पानी बचने पर उतारते फिर उसमें १०० पल गुडूची चूर्ण मिलाते हैं।

मध्यम यथा—४ श० तिलतैल, १६ श० गुडूचीक्काथ और ४ श० दुग्ध यथाविधि पाक करनेसे मध्यम गुडूची-तैल प्रस्तुत होता है।

वृहत् यथा—८ श० तिलतैल और ६४ श० जलमें १०० पल गुडूची डाल करके १६ श० पानी बचनेसे क्काथ उतार लेना चाहिये। इसमें शुलफा, हर, त्रिकटु, गुर्च, मोथा, वन अजवायन, हलदी, दारहलदी, कुट, धनियां, पद्मकाष्ठ, विडङ्ग, तेजपत्र, वच तथा जटामांसी चार चार तोले और ८ तोला लालचन्दन डालनेसे वृहत् गुडूचीतैल तयार होता है।

दूसरा गुडूचीतैल बनानेकी प्रणाली यह है—१६ श० तिलतैल, ६४ श० दुग्ध और ६४ श० जलमें १२॥ श० गुर्च उबाल करके १६ श० पानी रहनेसे उतारा जाता है। इसमें मुलहटी, मञ्जिष्ठा, ऋद्धि (अभावमें बला), वृद्धि (न मिलनेसे गोरक्ष-चाकुल्य), मेदा (न रहनेसे अश्वगन्धा), महामेदा (अभावमें अनन्ता), गुर्च, ऋषभक (न मिलने पर वंशरोचना), काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, कुठ, इलायची, अगुरु, द्राक्षा, जटामांसी, पद्मनखी, शटी, रेणुक, विकङ्कत, जटा, सोंठ, पीपल मिर्च शुलफा, श्यामालता, अनन्तमूल, गुडत्वक्, तेजपत्र, चव्य, वराहक्रान्ता, भूम्यामलकी, शालपर्णी, तगरपादुका, नागेश्वर, पद्मकाष्ठ, सौगन्धिक और रक्तचन्दन दो दो तोला पडता है। (शारदकौमुदी)

यह तेल लगानेसे वातरक्त रोग मिटता है।

गुडूचीपत्र (सं० क्ली०) गुडूचीका पत्र, गुर्चकी पत्ती। इसका शाक बनता है। गुण—आग्नेय, सर्वज्वरहर, लघु, कटु, कषाय, तिक्त, स्वादुपाक, रसायन, बल्य, उष्ण, संग्राही और तृष्णा, प्रमेह, दाह, कामला, कुष्ठ तथा पाण्डुघ्न है। (भावप्रकाश)

गुडूचीसत्व (सं० क्ली०) गुडूचीसार, गुर्चका सत।

गुडूच्यादि (सं० पु०) गुडूची आदिर्यस्य, बहुव्री०। वैद्यकशास्त्रोक्त एक गण। गुडूची, निम, धनियां, पद्मकाष्ठ और चन्दन इन सभोंको गुडूच्यादि कहते हैं। इसका गुण—हिक्का, अरुचि, छर्दि, पिपासा और दाहनाशक है।

गुडूच्यादिकषाय (सं० पु०) पाचनविशेष। गुडूची, आतइच, धनियां, शूंठ, बिल्वमुस्ता और वाला इन समस्त द्वारा प्रस्तुत पाचनको गुडूच्यादिकषाय कहते हैं। इस पाचनके सेवनसे ज्वरातिसार, हिक्का, अरुचि, छर्दि, पिपासा और गात्रदाह नष्ट होते हैं।

गुडूच्यादिक्काथ (सं० पु०) पाचनविशेष। भावप्रकाश-

जुमा (फा० पु०) शुक्रवार।

जुमामसजिद (अ० स्त्री०) १ मुसलमानोंको वह मसजिद जिसमें शुक्रवारके दिन दोपहरको नमाज पढ़ते हैं। २ दिल्ली शहरमें स्थित मुसलमानोंका एक प्रसिद्ध उपासनागृह। भारतवर्षमें मुसलमानोंकी जितनी मसजिदें हैं, उन सबसे यह देखनेमें सुन्दर और बड़ी है। बादशाह शाहजहान्ने यह मसजिद दश लाख रुपये खर्च करके ६ वर्षमें बनवाई थी। इस मसजिदके सामने और दोनों तरफ ऊंची प्रशस्त और सुदृश्य पत्थरसे बनी हुई तीन सोपानश्रेणियां हैं। इन तीनों सोपानश्रेणियों द्वारा मसजिदके सुवृहत् प्राङ्गणमें पहुंच सकते हैं। प्राङ्गणके ठीक बीचमें एक पानीका हौज़ भी है। इसके पानीसे सब हाथ पैर धो कर मसजिदमें जाते हैं। प्राङ्गणसे पश्चिमकी तरफ उपासनागृह (मसजिद) है और बाकी की तीनों दिशाएं सुदृश्य प्रकोष्ठमालासे अलंकृत हैं। उपासनागृह तीन प्रकाण्ड गुम्बजों और बहुतसे सुन्दर प्राकारोंसे सुशोभित है। इनमेंसे दो प्राकार तो बहुत बड़े और मनोहर हैं। इस स्थानसे उपासनाके लिए सबको बुलाया जाता है। मसजिदका भीतरी भाग बहुत बड़ा है, पर्वके दिन वा किसी उत्सवके दिन यहां असंख्य मुसलमान इकट्ठे होते हैं।

३ विजयपुर नगरकी एक मसजिद। दाक्षिणात्य भरमें यह मसजिद सबसे बड़ी है। कहा जाता है कि, १५३७ ई०में पहले अली आदिलशाहने इसे बनवाना शुरू किया था। परन्तु इनके परवर्त्ती राजा भी इसको शिखर और अन्यान्य अंश नहीं बनवा सके। यह मसजिद चारों ओर ३० फुट ऊंची प्राचीर द्वारा वेष्टित और नगरसे पूर्वकी तरफ अवस्थित है। इसका प्रधान तोरणद्वार पूर्व दिशामें है, किन्तु उत्तरका द्वार ही अधिक व्यवहृत होता है। १६८६ ई०में सम्राट् औरङ्गजेबने विजय नगरको जीत कर इसका कुछ अंश बनवाया था। इस मसजिदमें एक शिलालेख भी है, जिसके पढ़नेसे मालूम होता है कि, १६३६ ई०में सुलतान महम्मद आदिलशाहने इसके कुछ अंशमें नकासीका काम कराया था। इसके भीतर चार हजार आदमी बैठ सकते हैं।

४ पूना नगरकी एक प्रसिद्ध मसजिद, यह शाहितवारी पेंठमें (१८३८ ई०में) प्रायः १५०००रु०का चन्दा इकट्ठा कर बनाई गई है। पीछे इसके अनेक अंश बढ़ाये भी गये हैं। इस मसजिदका उपासनागृह ६० फुट लंबा और तीस फुट चौड़ा है। पूनाके मुसलमानोंकी धार्मिक वा सामाजिक सभायें इसी मसजिदमें होती हैं।

जुमिया मग—बङ्गालके अन्तर्गत चट्टग्रामके पर्वतों पर रहनेवाली मग जाति। इनको थिंग्रा वा थंग्रा कहते हैं। इनका और भी एक नाम थियोङ्गथा (अर्थात् नदीतनय) है। यह जाति पन्द्रह सम्प्रदायोंमें विभक्त है, उन विभागोंके अधिकांश नाम इनके वासस्थानके पासकी नदियोंके नामानुसार हुए हैं।

ये सभी छोटे छोटे गाँवेमें रोजा अर्थात् ग्राममण्डलके अधीन रहते हैं। वह रोजा राजस्व आदि वसूल करता है। कर्णफूली नदीके दक्षिणस्थ जुमिया सङ्घ, तीरवर्ती बन्दारवन निवासी बोह-संग नामक एक सर्दारके अधीन हैं। उस नदीके उत्तरकी तरफ रहनेवाले मंगराजाको अपना अधिपति मानते हैं। नियमित राजस्वके अलावा बड़ी उम्रके जुमिया सर्दारके आदेशानुसार वर्षमें तीन दिन विना वेतन लिए उनका काम कर देते हैं। इसके सिवा सर्दारको खेतमें उत्पन्न सबसे पहले फल वा अनाज आदिकी भेंट दी जाती है। रोजागण सिर्फ कर वसूल करते हों, ऐसा नहीं, जुमिया समाजमें उनकी विशेष प्रतिष्ठा भी है।

इनकी शारीरिक आकृति रखैया (रसाङ्ग) मगोंके सदृश है। दोनोंमें ही मोङ्गलीय आकृतिका आभास पाया जाता है। इनकी गठन खर्व, मुखमण्डल प्रशस्त और चपटा, गण्डास्थि ऊँची, नासिका चपटी और आँखें कुछ टेढ़ी हैं। इनकी दाढ़ी या मूँछें कुछ भी नहीं हैं।

इनकी पोशाक आडम्बररहित है। पुरुष अपने अपने घरकी बुनी हुई धोती और एक कुर्त्ता पहनते हैं। धनी लोग रेशमी या बढ़िया सूती कपड़े पहनते हैं। ये सिर पर पगड़ी बांधते और जूता कम पहनते हैं। स्त्रियां छाती पर एक विलस्त चौड़ा कपड़ा बांधती और ऊपरसे एक अंगरखा पहनती हैं। स्त्री-पुरुष दोनों ही सोने-चांदीकी बालियां, खड़ुएं और चूड़ियां पहनते हैं। इसके सिवा स्त्रियां धतूरेके फूलकी आकृतिका कर्णफूल

णत होते हैं। नैयायिक वा वैशेषिकगण भौतिक परमाणुओंको निरवयव नित्य मानते हैं। उनके मतसे परमाणु ही चरमद्रव्य है, उन्हींसे समस्त जन्य द्रव्योंकी उत्पत्ति होती है, किन्तु परमाणु किसी पदार्थसे उत्पन्न नहीं है। सांख्यप्रणेताने इस मतका युक्ति और प्रमाणों द्वारा खण्डन कर, परमाणुका उपादानकारण वा अवयव तन्मात्र, तन्मात्रके उपादानकारण अहङ्कार अहङ्कारके उपादानकारण महत्तत्त्व और उसके उपादानकारण सत्त्व रजः और तमोगुण है, ऐसा स्थिर किया है। इनके अवयव वा उपादानकारण नहीं हैं ये नित्य हैं। ये गुण परस्पर परस्परके सहचारी और परिणामशील हैं और एक जातीय गुण अन्य जातीय गुणका अभिभव किया करते हैं।

भगवद्गीताके मतसे—सत्त्वगुण निर्मल कलुषादिसे रहित है, ज्ञान (वृत्ति) सुख और प्रकाशकत्व इसका धर्म है। तृष्णा, आसक्ति और रज्जूकल रजोगुणके धर्म है। मोह, प्रमाद, आलस्य और निद्रा तमोगुणके धर्म है। एक गुण दूसरे गुण पर आवरण डाल कर अपना कार्य करता है। (गीता १४ अ०)

ये गुण जब अपरिणत वा अकार्य अवस्थामें रहते हैं, तब इनका कोई भी धर्म उपलब्ध नहीं होता। किन्तु महत्तत्त्व आदि कार्य द्रव्य रूपमें परिणत होने पर इनके पृथक् पृथक् धर्मोंका अनुभव किया जा सकता है। परिणामके तारतम्यके अनुसार जिसमें जिस गुणकी अधिकता होती है, उसमें उसी गुणका धर्म प्रकट होता है।

गुणका सर्वप्रथम परिणाम महत्तत्त्व वा बुद्धि है, इसीमें गुणकी पृथक् पृथक् धर्मोंका विशेष परिचय मिलता है गीताके मतसे महत्तत्त्व वा बुद्धिमें सत्वगुणका आधिक्य होने पर ज्ञानमें निरतिशय वृद्धि हो जाती है। बुद्धिमें सत्त्वगुणका आधिक्य होने पर आयुष्कर, बलकर, सुखकर, प्रीतिवर्द्धक रसयुक्त और स्निग्ध आहार करनेको प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार रजोगुणके आधिक्यसे लोभ प्रवृत्ति, कार्यका उद्योग, सर्वदा कार्य करनेका निरतिशय आग्रह और स्पृहा होती है तथा कटु, अम्लरस, लवण, अतिशय उष्ण, तीक्ष्ण, रुक्ष और दुःख शोक वा रोगजनक द्रव्य खानेकी इच्छा होती है। तमोगुणकी वृद्धि होने पर ज्ञानकी अल्पता वा अभाव, कार्यमें अप्रवृत्ति, अनवधानता और मोह हुआ करता है तथा रसहीन, दुर्गन्धयुक्त, पर्यु षित और उच्छिष्ट द्रव्य भक्षण करनेकी इच्छा होती है।

भावप्रकाशमें लिखा है—धर्म, मुक्ति और परलोक आदिमें विश्वास, सत् असत्को विवेचन करके भोजन (करना), क्रोधहीनता, सत्यवाक्यप्रयोग, मेधा, बुद्धि, भूतमैत्र, काम क्रोध और लोभ आदिके आवेशका अभाव, क्षमा, दया, विवेकज्ञान, पटुता, अनिन्दित कर्मका अनुष्ठान, स्पृहाका अभाव, नियम और रुचिके साथ धर्मकर्मका अनुष्ठान ये सब वर्द्धित मानसिक सत्त्वगुणके धर्म हैं। क्रोध, ताड़नशीलता, निरतिशय दुःख, अत्यन्त सुखकी इच्छा, कपटता, कामुकता, मिथ्यावाक्यप्रयोग, अधीरता, गर्व, ऐश्वर्य, मत्तता, अधिक आनन्द और भ्रमण, ये सब मानसिक वर्द्धित रजोगुणके धर्म हैं। नास्तिकता, अतिशय विषण्णभाव, अधिक आलस्य, दुष्टबुद्धि, निन्दित कर्मानुष्ठानसे उत्पन्न सुखमें प्रीति, सबसमय निद्रा, सब विषयोंमें ज्ञानकी अल्पता, सर्वदा क्रोधान्धता और मूर्खता; ये सब मानसिक वर्द्धित तमोगुणके धर्म हैं। सत्व, रज: और तम शब्दमें विशेष विवरण देखना चाहिये।

७ अप्रधान, गौण। (अर्थवं०)

१० नैयायिक और वैशेषिक मतसिद्ध द्रव्याश्रित पदार्थ विशेष, नैयायिक और वैशेषिक मतमें माना हुआ एक द्रव्याश्रित पदार्थ। वैशेषिक-उपस्कारके कर्त्ताने गुणका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

"सामान्यवत्वे सति कर्मान्यत्वे च सति अगुणत्वं।"

कर्मसे भिन्न जातिविशिष्ट पदार्थका नाम गुण है।

सूत्रकारने इस तरहसे लक्षण किया है—संयोग और विभागके प्रति अन्यकी अपेक्षा न कर जो पदार्थ कारण नहीं होता और जो गुण शून्य है, तथा द्रव्य ही जिसका आश्रय है, उसका नाम गुण है। (वैशेषिकसू० १।८)

संयोग और विभागमें दूसरेकी अपेक्षा छोड़ करके जो पदार्थ कारण नहीं रहता, गुणशून्य पड़ता और द्रव्य हीको अपना आश्रय रखता, वही गुण कहलाता है। मुक्तावलीके मतसे समवायि-कारणमें अपनी वृत्ति न रखते हुए भी नित्य पदार्थ वृत्ति रखनेवाले और सत्ताके

किया। उन कुमारियोंके गर्भ और देवोंके औरससे जुयाङ्गोंकी उत्पत्ति हुई। गोनासिका ग्राम इनका प्रधान वासस्थान है, वहां बहुत जुयाङ्ग रहते हैं।

ये छोटी छोटी झोंपड़ियोंमें रहते हैं। यह झोंपड़ी साधारणतः ८ फुट लम्बी और ६ फुट चौड़ी होती है, इसमें भी रसोई घर और शयनगृह इस तरह दो विभाग होते हैं। गृहस्वामी स्त्री और कन्याओंके साथ शयनगृहमें सोता है और ग्रामके समस्त बालक इकट्ठे हो कर एक दूसरे ही घरमें सोते हैं जो ग्रामके एक तरफ होता है। इसी घरका एक अंश अभ्यागतादिके लिए निर्दिष्ट है।

बहुतोंका कहना है कि, जुयाङ्गोंके समान जङ्गली और असभ्य जाति भारतवर्षमें दूसरी नहीं है। थोड़े दिन पहले ये लौहादि किसी भी धातुका व्यवहार करना नहीं जानते थे और खेतीवारीमें विश्वास न करके शिकारसे प्राप्त मांस और अनायासलब्ध वन्य फलमूल खा कर जीवन धारण करते थे। ये पत्थरके हथियार काममें लाते थे। अब भी उनकी वासभूमिमें उन अस्त्रोंके नमूने मिलते हैं। कुछ भी हो, फिलहाल अङ्गरेजी राज्यमें इन लोगोंने लोहे आदिका व्यवहार करना सीख लिया है और खेतीबारीमें भी मन लगाया है।

इनमें कोई भी लोहा बनाना वा किसी तरहका मिट्टीका वर्त्तन बनाना नहीं जानते और न कपड़ा बुनना ही जानते हैं।

ये हमेशा एक ग्राममें नहीं रहते, प्रायः खेतीवारीके समय अपनी अपनी जमीनके पास जा कर रहते हैं। इनकी कृषि-पद्धति खरियाओंके समान है। वर्षका अधिक समय वन्य फलमूलादि पर निर्भर है। कृषिलब्ध शस्य (अनाज) बहुत थोड़े दिन चलता है। कप्तान डलटन कहते हैं कि, वास्तवमें इनकी अवस्था विशेष बुरी नहीं हैं। हदसे ज्यादा शराब पीनेके कारण ही इनकी ऐसी दुर्गति होती है। ये जमीनका महसूल नहीं देते, उसके बदले राजाके मकानातकी मरम्मत कर देते हैं। बोझ ढोते हैं और राजाके शिकारके लिये निकलने पर उनके साथ जङ्गलमें जा कर शिकारोंको निकालते हैं। ढेंकानल राजाके आदेशानुसार ये गोहत्या नहीं करते। इसके सिवा और सब जानवरोंका मांस खाते हैं। और तो क्या चूहे, वन्दर, शेर, भालू, भेक और सर्प आदि भी इनके खाद्य हैं। जङ्गलमें तरह तरहकी सब्जियां पैदा होती हैं, उनमेंसे ये बड़ी आसानीके साथ स्वास्थ्यकर और पुष्टिकर खाद्य निकाल लेते हैं; विषाक्त अनिष्टकर गुल्म आदि भ्रमसे भी नहीं खाते। इनमें शिकारको निपुणता आश्चर्यजनक है, किसी शिकारके भाग जाने पर, कई घण्टे पीछे भी सूखे पत्तों पर पड़े हुए चिह्नको देख कर वहां जा सकते हैं। इनके तीरका सन्धान अव्यर्थ है। ८० गज दूरके एक छोटे लक्ष्यको भी ये भेद सकते हैं। दौड़ते हुए खरगोस और उड़ते हुए पक्षीको मारना इनके लिए मामूली वात है। इनके बनाए हुए बांसके धनुष इतने तेज होते हैं कि, प्रक्षिप्त तीर जङ्गली हिरण वा शूकरको भेद कर पार निकल जाता है। शिकारमें इतने पटु होने पर भी ये बड़े श्वापदोंके पास नहीं जाते तथा व्याघ्रसे बहुत डरते हैं। इनका खाद्य देखनेमें अत्यन्त निकृष्ट मालूम होता है, पर ये बड़े हृष्टपुष्ट होते हैं। हां, इनकी स्त्रियां क्षीण और दुर्बल अवश्य है। ये तीव्र शराब पीना खूब पसंद करते हैं, ये आमदनीका अधिकांश शराबखोरीमें खो देते हैं। ये कोलोंकी तरह चावल या महुआसे शराब बनाना नहीं जानते, इसलिए इन्हें शराब खरीदनी पड़ती है।

जुयाङ्गजातिके पुरुष पार्श्ववर्त्ती अन्यान्य वन्यजातियोंकी भाँति लंगोटी पहनते हैं। १८७१ ई०के पहले तक इनकी स्त्रियां कमरके सामने और पीछे सिर्फ पत्तोंके गुच्छे लटका कर लज्जा निवारण करती थीं। वल्कल-रज्जुसे गूंथी हुई मिट्टीकी गुटियोंकी मालाको २०।३० फेर लपेट कर उन पत्तोंको बाँध लिया करती थीं। इसीके अनुसार इनका नाम पतुआ (अर्थात् पत्ते पहननेवाली जाति) पड़ गया है। यह पत्र-वसन हलका होनेके कारण नाचते समय सहजहीमें वह स्थानभ्रष्ट हो जाता है, जिससे दर्शकोंको नग्न जुयाङ्ग युवती मूर्तिके दर्शन होते थे। यह विजातियोंकी दृष्टिमें कुरुचिपूर्ण होने पर भी जुयाङ्ग लोग इसे बुरा नहीं समझते। नाचके समय पुरुष तो नगाड़ा आदि बजाते हैं और स्त्रियां श्रेणीबद्ध हो कर सामने झुकती

है। सामान्य गुणके प्रधानत ६ भेद हैं—अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशवत्त्व। (तत्त्वार्थसूत्र)

गुणक (सं० पु०) गुणयति आवर्त्तयति गुण-ण्वुल्। १ पूरकाङ्कविशेष, वह अंक जिससे किसी अंकको गुणा करें। २ गुण। ३ इन्द्रिय। ४ लब्ध्यादि धर्म।

गुणकर्णिका (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणी लता।

गुणकथन (सं० क्ली०) गुणस्य कथनं, ६-तत्। १ गुण-वर्णन। २ विरहमें कामकृत दश अवस्थाओंमेंसे चतुर्थ अवस्था।

गुणकर (सं० त्रि०) लाभदायक।

गुणकरी (सं० स्त्री०) गोण्डगिरी देखो।

गुणकर्णिका (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणीलता।

गुणकर्मन् (सं० क्ली०) गुणः गुणीभूतं कर्म, कर्मधा०। १ अप्रधान गौण कर्म। द्विकर्मक धातुके अर्थमें जिस कर्मका साक्षात् सम्बन्ध नहीं है, किन्तु वह अप्रधानीभूत क्रियाके साथ सम्बन्ध रखता है उसीको गुणकर्म कहते हैं। गुणानां कर्म, ६ तत्। २ सत्व, रज और तम गुणको कर्म।

गुणकली (सं० स्त्री०) एक रागिणी। गुणकरी देखो।

गुणकामदेव—नेपालके कोई राजा। बौद्ध पार्वतीय वंशावलीके मतमें वह मानवदेववर्माके पुत्र थे, ३५ वर्षमात्र राजा रहे। नेपालके स्वयम्भूपुराणमें कहा है—एक बार नेपालमें सात वर्ष बराबर अनावृष्टि रही। उससे राज्यमें दारुण दुर्भिक्ष पडा था। अनाहार बहुतसे लोग मरने लगे। उसी समय गुणकाम नेपालके राजा थे। इनके अनुरोधसे शान्तिकर एक अष्टदल पद्म उठा करके अष्टनागका मन्त्र पढ़ने लगे। अष्टनागने प्रसन्न हो करके मधुर दृष्टि की थी। शान्तिकरने अष्टनागका रक्त ले करके किसी जगह रख दिया। जहां वह लड्ड स्थापित हुआ, नागपुर नाम पड गया।

पार्वतीय वंशावलीमें उनके पुत्रका शिवदेव और पौत्रका नाम नरेन्द्रदेव लिखा है। परन्तु स्वयम्भूपुराणको देखते गुणकामने बुढापेमें अपने लड़के नरेन्द्रको राज्य दे करके संसार परित्याग किया था। स्वयम्भू और शान्तिकरके अनुग्रहसे उन्होंने देहान्त होनेपर सुखावती धाम पाया। (स्वयम्भूपु० ८म अ०)

गुणकार (सं० त्रि०) गुणं व्यञ्जनं पाकजनितरसविशेषरूपं गुणं वा करोति गुण-कृ-अण्। १ सूपकार, रसोई करनेवाला, रसोईया। (पु०) २ भीमसेन। पाण्डवगणोंके अज्ञातवासके समय भीमने विराट राजाके दरबारमें सूपकारका कार्य सम्पादन किया था। इस लिये इनका नाम गुणकार पडा। ३ सङ्गीतविद्याका पूर्णज्ञाता। ४ पाकशास्त्रका ज्ञाता।

गुणकारक (सं० त्रि०) लाभदायक।

गुणकारी (सं० त्रि०) गुणकारक देखो।

गुणकिरी (सं० स्त्री०) एक रागिणी। यह औड़व रागिणी है। ऋषभ और धैवत उसमें नहीं लगता। ग्रहांशादि निषाद स्वर है, मतान्तरसे षड्ज भी हो सकता है। यह रागिणी भैरव रागाश्रित है। यथा—

नि स० ग म प० नि।

सा ० ग म प ० नि स॥

किसीके मतमें इसका नाम गुणकेली है।

गुणकीर्त्ति—एक जैन ग्रन्थकर्त्ता। इनकी जाति गोलालारे थी। संवत् १०३७ में आश्विन शुक्ल १ को इनकी मृत्यु हुई।

गुणकेली (सं० स्त्री०) रागिणीविशेष। यह गुज्जरी तथा मालवके योगसे बनी हुई भैरवरागकी पत्नी है। मतान्तरमें वह आसावरी, देशकार, गुज्जरी, देश० टोड़ी और ललितके मेलसे निकली हुई मालकोषकी पत्नी भी बतलायी गयी है। कोई इसे औड़व और कोई षाड़व कहता है।

"नि सा ऋ ग म प ध ०। सा ऋ ग म ० ० नि" (रा-वि)

"नि सा ग म प ०।" (भ र्ता ना० सङ्गीतरत्नाकर)

गुणकेशी (सं० स्त्री०) इन्द्रको सारथी मातलीकी कन्या तथा सुधर्माकी माता। भोगवती नगरीके अधिपति आर्यक नागके पौत्र और चिकुरनागके पुत्र सुमुखसे इनका विवाह हुआ था। (भारत उद्योग १०४ अ०)

गुणगर्त—नेपालस्थ शान्तिपुरके पूर्वमें अवस्थित एक गुहा। यह राजा शान्तिकरसे निर्माण की गयी थी और एक योजन विस्तृत है। नेपाली बौद्धगणोंका यह एक पुण्यस्थान माना गया है।

गुणगान (सं० क्ली०) गुणस्य गानं, ६-तत्। गुणकीर्त्तन।

इत्यादिका नैवेद्य प्रदान करते हैं।

ये मरे हुएका अग्नि सत्कार करते हैं। शवको दक्षिण सिरहानेसे चिता पर सुलाते हैं। चिताको भस्म नदीमें डाल आते हैं। कार्तिक मासमें पितृपुरुषोंको पिण्ड देते हैं।

इनके नाचमें कुछ जातीय विशेषता पायी जाती है। यह नाच कुछ कुछ संथाल और कोल जातिसे मिलता जुलता है। इनकी औरतें कबूतर, कुत्ते, बिल्ली, शकुनि, भालू आदि जानवरोंका अनुकरण कर अनेक प्रकारकी अङ्ग-भङ्गिसहित नाचती हैं। इस तरहका नाच अत्यन्त कौतुकजनक होता है, किन्तु कई एक दृश्य अश्लील भी होते हैं।

भुँइया लोग जुयाङ्गोंसे घृणा करते हैं। ये भुँइ-याओंके घरकी कच्ची वा पक्की रसोई खाते हैं, पर भुँइया इनका कुआ पानी तक नहीं पीते। फिलहाल ये हिन्दू देव-देवियोंकी पूजा करने लगे हैं, सम्भव है कुछ ही दिनोंमें ये जनसमाजमें अपेक्षाकृत ऊँचा स्थान पाने लगेंगे।

जुरअत (फा० स्त्री०) साहस, हिम्मत, जबरा।

जुरमाना (फा० पु०) अर्थदण्ड, धनदण्ड, वह दण्ड जिसके अनुसार अपराधीको कुछ धन देना पड़े।

जुराफा (अरबी)—रोमन्थक (पागुर वा जुगाली करनेवाले) पशुओंमें साधारणतः २ श्रेणियाँ पाई जाती हैं। एक श्रेणी शृङ्गयुक्त और दूसरी श्रेणी शृङ्गहीन। जुराफा प्रथम श्रेणीका है। इस पशुके सींग केशाच्छादित चर्मसे आवृत और उनके अग्रभाग केशगुच्छमण्डित है। अफरीकामें यह बहुतायतसे देखनेमें आता है। इसको अरबी भाषामें जुराफा, जुराफ, जिराफ या जिरा-फत कहते हैं। इसके अवयव ऊँटके समान और रंग व्याघ्रके सदृश है। इसलिए कोई कोई यूरोपीय विद्वान् इसको कमेलोपार्ड (Camelopard) अर्थात् उष्ट्र-व्याघ्र कहा करते हैं।

भूमण्डल पर जितने प्रकारके पशु हैं, उनमें जुराफा ही सबसे ऊँचा है। इसका ऊपरका ओष्ठ नीचा नहीं होता, किन्तु केशोंसे आवृत और नासारन्ध्रके सामने कुछ उभरा हुआ रहता है। इसकी जीभ बड़ी विलक्षण होती है, यह जब चाहे उसे फैला और सकुचा सकता है। इसकी गर्दन ऊँटकी-सी लम्बी, शरीर छोटा पीछे-की टाँगे छोटी, पूँछ लम्बी तथा उसके छोर पर गायकी पूँछकी तरह बालोंका गुच्छा रहता है।

इस पशुके अवयव-संस्थान अन्यान्य पशुओंके समान नहीं होते। इसकी गर्दन बहुत ही लम्बी है। गर्दनके ऊपर शरीरसे बहुत ऊँचाई पर इसका मस्तक है। इसके ग्रीवादेशका सन्धिस्थल गलदेशसे बहुत ऊँचा है। अन्य अङ्गप्रत्यङ्ग पतले और लम्बे हैं। इसके मस्तकको खोपड़ी बहुत पतली है। इसके सींगोंकी बनावट बड़ी आश्चर्यजनक है। कुछ भिन्न भिन्न अस्थियोंसे गठित है। एक करोटी (खोपड़ीकी हड्डी) द्वारा ये हड्डियां कपालके बगलकी हड्डियोंसे संयुक्त हैं। क्या नर और क्या मादा दोनों प्रकारके जुराफाओंमें ललाटकी हड्डी-के साथ उपर्युक्त प्रकारका एक अतिरिक्त अस्थि सम्बन्ध है। इस हड्डीको जड़में एक नया सींगको तरह दीखता है। इसके मस्तक पर बहुतसी परते हैं, इसीलिए इनके मस्तकका पिछला हिस्सा कुछ ऊँचा होता है। यह मस्तकको पीछेकी ओर घुमा सकता है और ग्रीवाके साथ एक रेखामें भी रख सकता है। इसके मेरुदण्डको त्रिकोण अस्थिके पास एक हड्डी है, जो पीछेके मेरुदण्ड के साथ मिल कर ग्रीवादेशके मेरुदण्डसे जा मिली है। यह मस्तकके पिछले हिस्से तक विस्तृत है।

जीभके द्वारा यह दो काम करता है एक तो उससे आस्वाद लेता है और दूसरे हाथी सूंडसे जो काम करता है, उस कामको यह जीभसे करता है। इसकी जीभ काँटे उभरनेसे पहले खूब चिकनी रहती है। यह एक प्रकारके चमड़ेकी तहसे ढकी रहती है। इसलिए धूपमें इसकी जीभ पर किसी तरहके फफोले या छाले नहीं पड़ते। फैलानेसे इनकी जीभ १७ इञ्च तक बढ़ती है। कोई कोई कहते हैं कि, इसकी जीभके पास एक आधार या थैली है, जिसमें इसकी इच्छानुसार रक्त सञ्चित होता रहता है और इसीलिए यह बलप्रयोग करने पर जीभको सुकुञ्चित या प्रसारित कर सकता है। किसी किसीका यह कहना है कि, इसकी जिह्वा एक रेखाके द्वारा लम्बाईकी ओर दो भागोंमें विभक्त है। बीचमें कुछ

काम्पिल्य नगरमें यज्ञदत्त नामक एक दीक्षित रहते थे। उनके पुत्रका नाम गुणनिधि था। लड़कपनमें पिताके शासन और उपदेशसे यह सबके प्रशंसापात्र हो गये और उपनयनके बाद गुरुगृहमें रह करके लिखने पढ़ने लगे। यौवनके प्रारम्भमें ही गुणनिधिसे नागरिक युवकोंका मेल बढ़ा। उनका हाव भाव देख करके फिर यह रुक न सके, उन्हींका अनुकरण करते रहे। मांके पाससे छुपके छुपके रुपया ले जा करके उन्होंने जूआ खेला था। थोड़े दिनमें ही द्यूतक्रीड़ामें वह अत्यन्त आसक्त हुए। ब्राह्मणका आचार व्यवहार छोड़ करके उन्हें हमेश शास्त्रोंकी असारता प्रमाणित करना अच्छा लगता था। गीत, वाद्य आदि कुछ भी गुणनिधिसे जाननेको बाकी न बचा। उनकी जननी उन्हें नाना प्रकार उपदेश यह समझ करके देने लगीं कि लड़केका भाग्य फूटा था। किन्तु गुणनिधिने कोई बात न सुनी। वह सिर्फ रुपया लेनेके समय मातासे मिलते और हमेशा फड़ पर बैठे खेला कूदा करते थे। गुणनिधिके बाप एक सम्भ्रान्त व्यक्ति थे। सब लोग उन्हें बुलावा भेजा करते थे। वह प्रायः घरमें बैठ न सकते थे। जब वह घर जा करके लड़केकी बात पूछते, उनकी सहधर्मिणी कह देती थी—गुणनिधि अभी घरसे बाहर निकल गया है। माताने देखा, कितना ही उपदेश देनेसे भी कोई फल नहीं हुआ। इस पर उन्होंने पैसा देना बन्द कर दिया। फिर गुणनिधि मासे पैसा न मिलने पर भी जूआके लिये छटपटाने लगे। इसीसे उन्होंने अपने घरमें चोरी करना सीखा था। थाली, लोटा, कटोरी आदिके पीछे मांकी धोती तक चुरायी गयी। जननी जान बूझ करके भी इकलौते बेटेके वात्सल्यसे कोई बात जाहिर न करती थीं। किसी दिन वह सोती थीं। लड़केने अवसर देख करके उनके हाथकी एक अंगूठी चुरा ली। जूआरियोंका कर्ज अदा करनेमें वह अंगूठी चली गयी। द्यूतकारोंके पास अपनी जानी मानी अंगूठी देख करके जब यज्ञदत्तने पूछा, उन्होंने गुणनिधिकी सब कच्ची बात बतला दी। यज्ञदत्तने यह खयाल करके कि मांके लाड प्यारसे ही लड़का बिगड़ गया है, गुणनिधि और उसकी जननी दोनोंको परित्याग किया।

उस समय गुणनिधि निरुपाय हुए। विद्या बुद्धि भी वैसी न थी। वह यह सोच करके घबरा उठे—कहां जायें, क्या करें, कैसे बचेंगे। एक दिन गुणनिधि भूखे थे। उन्हें दारुण चिन्ता हुई कि सन्ध्या पड़ती थी। उस पर क्षुधा तृष्णाका जोर था। गुणनिधिका जी घबराने लगा। उसी समय शिवरात्रिव्रतका उपवासी एक शिवभक्त नानाविध उपहार ले करके नगरके बाहर निकला था। उन्होंने इसके हाथमें खाने पीनेकी चीजें देख ठहरा लिया—जब यह व्यक्ति शिवकी पूजा कर मन्दिर सब रखके चला आवेगा, मैं चुरा करके खा डालूंगा। इसी प्रकार विचार करके गुणनिधि उसके पीछे पीछे चल दिए। शिवभक्त मन्दिरमे प्रवेश करके आंसुओंसे छाती भिगो भक्ति गद्गद स्वरसे शिवकी आराधना करने लगे। इन्होंने उसके बाहर आनेकी अपेक्षामें दरवाजे पर बैठ समस्त पूजा देखी थी। पूजाके अन्तमें वह मन्दिरसे बाहर न निकल वहीं सो गया। गुणनिधिने उसी सुयोग पर मन्दिरमें जा करके देखा चिराग ठण्ढा पड़ा है। यह ख्याल करके कि दीप न जलनेसे हमारे काममें अड़चन पड़ेगी, अपने वस्त्रके अञ्चलको उन्होंने बत्ती बनायी और रोशनी जलायी। ब्राह्मणकुमार जब उपहार उठा करके बाहर निकलने लगे, इनके पैरकी आहटसे पूजककी आंख खुल गयी। वह चोर चोर कहके चिल्लाने लगा, चारों ओरसे चौकीदार जा पहुंचे। गुणनिधि नैवेद्य फेंक करके भागे थे। रक्षी गड़ बड़ देख करके उनको मारने पर उद्यत हुए। इनके दारुण प्रहारसे गुणनिधिकी जान निकल गयी।

यमराजने ब्राह्मणकुमारको ले जानेके लिये किङ्करोंसे अनुमतिकी थी। वह गुणनिधिको बांध करके ले चले। इधर शिवने भी अपने अनुचरोंको हुक्म दिया था—'तुम यहां बैठे क्या करते हो। नहीं देखते कि यमदूत गुणनिधिको लिये चले जाते है। जल्द जावो और रथ पर चढ़ा करके बड़े आदरके साथ उसको यहां ले आवो।' शिवदूत एक रथके साथ वहां जा पहुंचे और यमकिङ्करोंको रोक करके कहने लगे शिवने इसको शिवपुरी ले जानेकी अनुमति दी है। यमदूतोंने भी आसानीसे छोड़ना न चाहा। वह शिवके अनुचरोंसे

छोटे छोटे पेड़ोंको डालियोंसे पत्तियाँ खाते समय सामनेके पैरको प्राय: २½ फुट पीछेको टाँगोंकी ओर ले जाता है। अफ्रीकाके हटेनटट लोग इसके चमड़ेको खूब पसन्द करते हैं और इसीलिए वे ज़हरीले तीरोंसे इसका शिकार करते हैं। वे जुराफाके चमड़ेसे पानी वगैरह तरल पदार्थ रखनेका पात्र बनाते हैं।

प्रसिद्ध प्रत्नतत्त्ववित् ले भैलेन्ट (Le Vaillant) कहते हैं—जुराफाके वास्तविक सींग नहीं होते, इनके दोनों कानोंके बीच मस्तकके ऊर्द्ध भागमें दो मांसपेशियाँ क्रमशः बढ़ती हुई ७।८ इञ्च लम्बी हो जाती हैं। ये दोनों पेशियाँ परस्पर मिलती नहीं, उनका अग्रभाग कुछ गोल और बालोंसे आवृत होता है। लोग इन्हींको साधारणतः सींग कहते हैं। मादा जुराफा नरकी बरा बर ऊंची नहीं होती। उक्त प्राणितत्त्वविद्का कहना है कि, नर जुराफा साधारणतः १५।१६ फुट और मादा जुराफा १३।१४ फुट ऊंचे होते हैं। कोई कोई भ्रमण-कारी कहते हैं कि, नर और मादा जुराफा देखनेसे ही पहिचाने जा सकते हैं। नरका शरीर धूसरवर्ण और उस पर पिङ्गलवर्णको धारियां होती हैं तथा मादा-का शरीर धूसरवर्ण और ऊपर ताम्रवर्णकी धारियाँ रहती है। जुराफाके बछड़ोंका रंग पहले पहल माताके समान और पीछे अवस्थाके अनुसार पिङ्गलवर्ण होता जाता है। पूर्वोक्त फरासीसी भ्रमणकारीका कहना है कि, जुराफा साधारणत: पेड़की पत्तियाँ खा कर जीवन धारण करते हैं; ये तुलसी जातीय वृक्षोंके पत्ते खूब पसन्दके साथ खाते हैं और जिस जगह उक्त प्रकारके पेड़ ज्यादा उपजते हैं, उसी प्रदेशमें रहते हैं। यह जानवर घास भी खाता है। यह रोमन्थन करते और सोते समय लेट जाता है, इसलिए इसकी छातीकी हड्डियाँ मजबूत तथा घुटनोंका चमड़ा कड़ा है। यह बहुत ही शान्त और भीत होता है। यह बहुत तेजीसे दौड़ता और लातकी चोटसे सिंहको भी परास्त कर सकता है। मि० पेनण्टा (M. Pennanta) कहते हैं—दूरसे देख कर इसको पहिचाना नहीं जा सकता। यह इस तरह खड़ा होता है कि, दूरसे एक पुराना वृक्ष जैसा दीखता है। शिकारी लोग दूरसे इसे पहिचान नहीं पाते, इसीलिए यह बहुत समय मनुष्योंके कवलसे बच जाते हैं।

मि० ओगिलवि (Mr. Ogilby)-ने रोमन्थक पशुओं को पांच भागोंमें विभक्त किया है। जैसे १-कामेलिडि (Camelidoe), २—करभिडि (Cervidoe), ३—मोशिडि (Moshidoe), ४—कप्रिडि (Capridæ) और ५—बोभिडि (Bovidae) उनका कहना है कि, ऊपर कहे हुए २य विभागसे कामिलोपार्ड (जुराफा) की उत्पत्ति है। इस जातिके पशुओंमें नर और मादा दोनोंके सींग होते हैं जो सीधे तथा चमड़ेसे ढके हुए, और दो भागोंमें विभक्त हैं।

सबसे पहले जूलियस सीजरके समय रोम देशमें जुराफा लाया गया था। इसके बहुत शताब्दी बाद इम· सकसके राजाने सम्राट् (२य) फ्रेडारिकको एक जुराफा भेजा था। १५वीं शताब्दीके अन्तमें यह पशु इंग्लैण्ड और फ्रांसमें पहिले पहल पहुंचा।

१८२६ ई०में लण्डनकी प्राणितत्त्व-समितिने ४ जुराफा खरीदे थे। इन जुराफाओंको मि० एम० थिबो (M. Thibaut) पकड़ कर लाये थे।

एम० थिबो अगस्त मासमें डंगोलामें जा कर अरबियोंके साथ जुराफाकी शिकार करनेको निकले। पहले दिन कर्डफनमें जा कर बहुत खोज करनेके बाद उन्होंने दो जुराफा देखे, पर उन्हें पकड़ न सके। अरबियोंने तेजीके साथ पीछा किया और वे मादा जुराफाको मार कर ले आये। दूसरे दिन सबेरे वे फिर शिकार-को गये और उन्होंने एक जुराफाको बांध लिया। वे उसको पोस मनानेके लिए वहां ३।४ दिन तक ठहरे। इस समय एक अरबी आदमी जुराफाकी गर्दनमें रस्सी बाँध कर उसे ले कर घूमा करता था। धीरे धीरे उसने पोस मान लिया और वह अपने आप आदमीके पास आने लगा। कभी कभी थिबो इसके मुंहमें उंगली डालते थे, इन लोगोंने और भी ४ जुराफा पकड़े थे, किन्तु १८३४ ई० के डिसेम्बर मासमें जाड़ेके मारे ५ मेंसे ४ जुराफा मर गये। सिर्फ एक ही बचा। इससे सन्तोष न होनेके कारण थिबोने बहुत परिश्रम और कष्ट सह कर और भी

जुराफा।

ग्रन्थोंके देखनेसे भी यही अनुमान होता है कि ये कर्णाटक देशवासी होंगे।

ये ई० नवम शताब्दमें विद्यमान थे। इनके गृहस्थ अवस्थाके वंशका कुछ परिचय नहीं मिलता। परन्तु मुनिवंशका परिचय उनके ग्रन्थों और दूसरे उल्लेखोंसे भलीभांति मिलता है। महावीर भगवान्‌के निर्वाणके उपरान्त जब तक श्वेताम्बर सम्प्रदायकी उत्पत्ति नहीं हुई थी, तब तक जैनधर्म संघभेदसे रहित था। पीछे जब विक्रमकी मृत्युके १३६ वर्ष बाद श्वेताम्बर सम्प्रदाय पृथक् हुआ, तब दिगम्बर सम्प्रदाय मूलसंघके नामसे प्रसिद्ध हुआ। फिर इसके चार भेद हुए—१ नन्दिसंघ, २ देवसंघ, ३ सेनसंघ, और ४ सिंहसंघ। इनमेंसे सेनसंघकी परिपाटीमें गुणभद्र अवतीर्ण हुए।

गुणभद्रस्वामीके यों तो बहुतसे शिष्य थे, किन्तु दो का विशेष परिचय मिलता है—एक लोकसेन, जिनके लिये आत्मानुशासन ग्रन्थकी रचना हुई और दूसरे मण्डलपुरुष, जिन्होंने चुड़ामणिनिघण्टु नामक द्राविड़ भाषाका कोश बनाया।

गुणभद्रस्वामीके १ गुरुपरम्पराका इस प्रकार पता चला है—
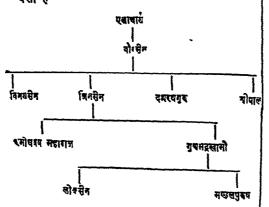
गुणभद्रस्वामीके समयमें अर्थात् विक्रमकी ७वीं शताब्दीमें दिगम्बर मुनि प्रायः भारतवर्षके सर्वत्र विहार किया करते थे और साथ ही धर्मोपदेश देते और ग्रन्थोंका प्रणयन किया करते थे। यही कारण है कि उत्तरपुराणकी समाप्ति धारवाड़ प्रान्तके अन्तर्गत बंकापुरमें हुई थी। उस समय वहांका राज्य अकालवर्षके सामन्त लोकादित्यके अधिकारमें था।

जैनोंका सबसे बड़ा प्रथमानुयोग (पौराणिक) ग्रन्थ आदिपुराण है, जिसमें कुल ४७ पर्व या अध्याय हैं। इस ग्रन्थके ४२ पर्व और ४३ पर्वके ३ श्लोक इनके गुरु जिनसेनाचार्यके रचे हुए हैं तथा शेषके ५ पर्व (१६२० श्लोक) गुणभद्रस्वामीने रचे हैं। इनकी रचना गुरुकी रचनासे मिल गई है, यही इनकी रचनाशक्तिका काफी परिचय है।

उत्तरपुराण—इनके उत्तरपुराणकी रचना ऐसी मनोहारिणी है कि, एक जैनेतर विद्वान (श्रीयुक्त पं० कुप्पूस्वामी शास्त्री) ने इससे जीवन्धरचरित्र निकाल कर छपा डाला है।

आत्मानुशासन—इस ग्रन्थकी रचना शैली भर्तृहरिके वैराग्यशतकके ढङ्गकी और वैसी ही प्रभावशालिनी है। यथा—

"इह सदाव यदि जन्मनि बंधुकृत्य-मात्रं त्वया किमपि बन्धुजनाहितार्थम्।
एतावदेव परमस्ति मृतस्य पश्चात् संभूय कायमहितं तव भस्मयन्ति॥ ८६॥"

हे भाई (आत्मा)! यदि तूने अपने इस जन्ममें अपने बन्धुजनोंसे कुछ बन्धुताका लाभ पाया हो, तो सच सच बता तो सही। हमें तो उनका इतना ही उपकार अनुभव होता है कि, मरनेके उपरान्त ये सब इकट्ठे हो कर तेरे अपकार करनेवाले इस शरीरको जला देते हैं।

"ज्ञानमेव फलं ज्ञाने ननु श्लाघ्यमनश्वरम्।
अहो मोहस्य माहात्म्यमन्यदप्यत्र मृग्यते॥१७५॥"

ज्ञानका फल ज्ञान ही है, जो सर्वथा प्रशंसा योग्य और अविनाशी है। इसको छोड़ कर, अन्य जो सांसारिक फलोंकी इच्छा की जाती है, वह अवश्य ही मोह वा मूर्खताका माहात्म्य है। अभिप्राय यह कि, ज्ञानके रहनेसे जो निराकुलता रूप सुखका अनुभव होता है, उसको छोड कर लोग विषयसुखोंको टटोलते फिरते हैं, वह नितान्त मूर्खता है।

गुणभद्राचार्य शक-सम्वत् ८२० तक जीवित थे। इनके स्वर्गवासका ठीक समय मालूम नहीं होता।

गुणभर—चोलदेशके एक शैव राजा। कोई कोई इन्हें पल्लववंशीय अनुमान करते हैं। त्रिशिरापल्ली पहाड़के ऊपर खोदी हुई शिलाफलक पर इनकी अनुशासनलिपि देख पड़ती है।

रमके समय ये बाल नहीं बन बाते और न आमिष भोजन ही करते हैं। उस मासमें ५वें, ६ठे और ७वें दिनके सिवा अन्य समस्त दिन इमामोंके स्मृति चिह्नको स्मरण किया करते हैं। पहले जुलाहे अन्य मुसलमानोंकी तरह काविन अर्थात् काजोके सामने विवाहकी रेजिष्टरी न करते थे; किन्तु अब कर निकले हैं। इनको उपाधियाँ कारीगर, मण्डल और शिकदार हैं। प्रधान व्यक्तिको मातब्बर कहते हैं।

बिहार प्रान्तमें मुहर्रमके समय जुलाहोंकी स्त्रियाँ पान नहीं खातीं, बाल नहीं सम्हालतीं और न ललाट पर सिन्दूर वा बेंदी ही लगाती हैं। और तो क्या, वे इस समय पतिसहवास छोड़ कर विधवाओंकी तरह रहती हैं और मुहर्रमके ८वें दिन नीली साड़ी पहन बाल बखेर कर हुसेनके लिये विलाप करती हैं।

साधारण लोगोंका विश्वास है कि, जुलाहे बड़े मूढ़ वा निर्बोध होते हैं। बिहार आदि प्रदेशोंमें इनकी अक्ल बकरेकी अक्लके साथ तौली जाती है। वहांके रहनेवाले इनकी निर्बुद्धिताके विषयमें सैकड़ों किस्से कहा करते हैं। वे कहते हैं कि, ये चन्द्रालोकमें विभासित नीलपुष्पशोभित मसिना-खेतमें जलके भ्रमसे तैरा करते हैं। एक दिन एक जुलाहा मुल्लाके पास कुरान सुनते सुनते रो उठा। इस पर मुल्लाने खुश हो कर पूछा कि, "कौनसी बात तेरे हृदयमें लगी है?" जुलाहेने उत्तर दिया—"कोई भी नहीं, आपकी हिलती हुई दाढ़ीको देख कर मुझे अपनी मरी हुई प्यारी बकरीकी याद आ गई. इससे आँखोंमें आँसू भर आये।"* बारह आदमियोंके साथ एक जुलाहा रहने पर, वह प्रत्येक बार गिननेमें अपनेको भूल कर अपनी मृत्यु हो गई, ऐसा समझता है। हलकी एक कील पाने पर जुलाहा सोचता है कि, खेती करनेका सामान तो करीब करीब इकट्ठा हो गया, अब खेती करनी चाहिये। एकदिन रातको एक जुलाहेने लंगर बिना उठाये ही नाव खेना शुरू कर दिया। सुबह उसने देखा तो नावको उसी स्थान पर पाया। इस पर उसने मीमांसा कर ली कि, जन्मभूमि उसको छोड़ न सकनेके कारण ही ब्रवश उसके साथ चली आई है। आठ जुलाहे हों और नौ हुक्के हों, तो वे उस बचे हुए एक हुक्केके लिये मार-पीट मचा देंगे। "आठ जुलाहे नौ हुक्का, उसी पर धुक्कमधुक्का।" किसी समय एक कौआ जुलाहेके लड़केके हाथसे रोटी छीन कर उसके छप्पर पर जा बैठा। जुलाहेने लड़केके हाथमें फिरसे रोटी देते समय पहले छप्परसे नसैनी हटा दी, जिससे कौआ छप्परसे उतरने न पावे! ये अपनी बेवकूफीके कारण बहुत समय वृथा मार खाया करते हैं। किसी समय एक जुलाहा भेड़ोंकी लड़ाई देखनेको गया तो वहां उसीने एक चोट खाई।

"करघा छोड़ तमाशा जाय
नाहक चोट जुलाहा खाय" *

और भी एक किस्सा है—एक दैवज्ञने एक जुलाहेसे कह दिया—तेरे अदृष्टमें लिखा है कि, कुल्हाड़ीसे तेरी नाक कट जायगी। जुलाहा इस बातको सहजमें क्यों मानने चला? वह कुल्हाड़ीको हाथमें ले कर कहने लगा—"यों करूंगा तो पैर कटेगा, यों करूंगा तो हाथ कटेगा और (नाक पर कुल्हाड़ी रख कर) यों करूंगा तो नहीं तब ना……" बात पूरी कहने भी न पाया कि, उसकी नाक कट गई।

एक प्रवचन है कि 'जुलाहा क्या जाने जौ काटना?' इसका एक किस्सा भी है एक जुलाहा अपना कर्ज न चुका सका, इसलिये उसने महाजनकी जमीन जोत कर कर्ज चुकानेकी ठानी। महाजनने उसे जौ काटनेको खेतमें भेजा, पर वह मूर्ख जौ न काट कर उसको नुकाने लगा। और भी इनकी बेवकूफीको जाहिर करनेवाले बहुतसी कहावतें हैं। जैसे—१ "कौआ जाय बासको, जुलाहा जाय घासको।" २ "जुलाहेकी जूती सिपाहीकी जोय (स्त्री), धरी धरी पुरानी होय।" ३ "जुलाहा चुरावे नली नली, खुदा चुरावे एक बेरी।"

कहीं कहीं हिन्दू जुलाहे भी देखनेमें आते हैं, जिनको कोरी या कोली कहते हैं। परन्तु इनकी संख्या बहुत ही कम है। जुलाहा कहनेसे मुसलमान तांतीका ही बोध होता है।

२ निर्बोध, मूर्ख। ३ एक कोड़ा जो पानी पर तैरता है। ४ एक बरसाती कीड़ा।

* Behar Peasants' Life.

गुणवती (सं० स्त्री०) १ एक अप्सरा। २ यदुवंशीय सुनाभकी एक दौहित्री। ३ गायत्रीस्वरूपा एक महादेवी। ४ गुणवाली, जिसमें कुछ गुण हो।

गुणवतीवर्ति (सं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा। धूनक, लोध्र, सिन्दूर, अतिविषा, हलदी, बहेड़ा, कम्पिल्लक, श्रीवास तथा गुग्गुलु बराबर बराबर घी और तेलसे अच्छी तरह रगड़ लेते हैं। फिर इस पिण्डको तुल्य मोम डाल करके धीमी आंचमें पकाया जाता है। सब चीजें एकमें मिल जाने पर गुणवतीवर्ति प्रस्तुत होती है। यह व्रणरोगमें बहुत फायदामन्द है। (रसरत्नाकर)

गुणवत्तरा (सं० स्त्री०) जीवन्तीशाक।

गुणवत्ता (सं० स्त्री०) गुणवतो भावः गुणवत्-तल्। गुण धारण करनेवाली स्त्री।

गुणवन्तगढ—एक पहाड और पहाडी किला। यह मलयसे सह्याद्रि पर्वतके दक्षिणपूर्व तक फैला और सतारा जिलेके पाटन नगरसे ६ मील दक्षिणपश्चिम बसा है। लोग उसे मोडगिरि भी कहते हैं। किला कोई १००० फुट ऊंचे पर्वत पर है। वह बहुत टूट फूट गया है। इसीसे दक्षिण-पूर्वको पर्वतके नीचे गांव है। यह निरूपण किया जा नहीं सकता, किस समय वह दुर्ग निर्मित हुआ। ई० १८वीं शताब्दीको पन्थके प्रतिनिधिका पक्ष ले करके गुणवन्तगढके लोग गवर्नमेण्टसे बिगडे थे। उसी समय पेशवाने लोगोंको रक्षाके लिये किलेमें फौज रखी। १८१८ ई०को जब महाराष्ट्र युद्ध होता था, यह दुर्ग विना लडे भिड़े अङ्गरेजोंको मिल गया।

गुणवर्त्तन (सं० क्ली०) गुणे वर्त्तनं, ७-तत्। गुणवृत्ति, गुणका व्यवसाय।

गुणवर्त्तिन् (सं० त्रि०) गुणे वर्त्तते वृत्-णिनि। गुणवृत्ति अवलम्बन करनेवाला।

गुणवर्मन् (सं० पु०) १ तेजस्वतीके पिता। तेजस्वती देखो। २ एक कर्णाटक देशवासी जैन ग्रंथकार। इन्होंने पुष्पदन्तपुराण नामक एक जिनचरित्रकी रचना की है। ३ इस नामके और एक ग्रंथकारका पता चलता है, जो जैन कवि थे।

गुणवाचक (सं० त्रि०) गुणस्य वाचकः, ६-तत्। जो गुणको प्रगट करे।

गुणवाद (सं० पु०) गुणस्य वादः, ६ तत्। मीमांसामें अर्थवादविशेष। मीमांसावार्त्तिक-प्रणेता कुमारिलके मतसे अर्थवाद तीन तरहका है, गुणवाद, अनुवाद और भूतार्थवाद। जहां विशेषण और विशेष्यके समानाधिकरण पर अन्वय करनेसे ठीक अर्थ सिद्ध नहीं होता है, वहां विशेषणका कुछ दूसरा अर्थ मान लेते हैं उसे अङ्गकथन वा गुणवाद कहते हैं। यथा जयमानः प्रस्तरः। इस स्थान पर जयमान विशेष्य और प्रस्तर विशेषण है। प्रस्तर शब्दका अर्थ कुशमुष्टि है, यहां विशेषण और विशेष्यका अभेद अन्वय किया नहीं जा सकता, इसी लिये यहां प्रस्तर शब्दका अर्थ प्रस्तरविशिष्ट अर्थात् कुशमुष्टधारी कर लिया गया है। अर्थवाद देखो।

गुणवान्—ब्राह्मणोदेवीभक्त माण्डव्य मुनि वंशीय एक राजा, वैतालकके पुत्र। (सं० त्रि०) २ गुणवाला, गुणी।

गुणविजयगणि—एक जैन ग्रंथकार, प्रमोदमाणिक्यके प्रशिष्य और जयसोमसूरिके शिष्य। इन्होंने खण्डप्रशस्तिटीका, विशेषार्थबोधिका नामक रघुवंशकी टीका एवं दमयन्तीकथाटीका प्रणयन की हैं।

गुणविध (सं० त्रि०) गुणस्य विधा इव विधा यस्य, बहुव्री०। गुणतुल्य।

गुणविधि (सं० पु०) गुणस्य अङ्गस्य विधिः, ६-तत्। मीमांसामें वह विधि जिसमें गुण कर्मका विधान हो। जैसे 'दध्ना जुहोति' दधिसे अग्निहोत्र यज्ञ करना चाहिये। अग्निहोत्र करनेका विधिवाक्य दूसरा है। अतः उसी अग्निहोत्रके अन्तर्गत जो आहुतिका विधान है उसको विधि इस वाक्यमें है।

गुणविशेष (सं० पु०) गुणस्य विशेषः ६-तत्। एक प्रकारका गुण।

गुणविष्णु (सं० पु०) एक वैदिक पण्डित, दामुकके पुत्र। इन्होंने छान्दोग्यमन्त्रभाष्य नामक सामवेदीय सन्ध्या और दशकर्म-पद्धतिको टीका प्रणयन की हैं। टीका अतिसरल भाषामें लिखी गई है। वर्त्तमान समयके सभी विद्वान् पुरुष उक्त टीकाका आदर करते हैं। रघुनन्दन प्रभृति नव्यस्मार्त्तगणोंने इनका मत उद्धृत किया है।

गुणवृत्त (सं० पु०) गुणानां नौकाकर्षकरज्जूनां

उनके पुत्रोंमें परस्पर राज्य सम्बन्धी विवाद उपस्थित हुआ। जुल्फ़िकर कुमार आजिमको सहायता करने लगे।

मुयाजिम और आजिमकी सेना रणक्षेत्रमें उपस्थित हुई। युद्धके प्रारम्भमें ही दूसरी ओरसे बड़ी भारी आँधी आई, जिससे कुमार आजिमको सेना घबड़ा गई, बहुदर्शी जुल्फ़िकारने आजिमको युद्धसे निवृत्त होनेको सलाह दी। किन्तु आजिमने इनकी बात पर ध्यान न दिया, इससे जुलफिकारने उनका पक्ष छोड़ दिया। मुयाजिम 'बहादुरशाह' उपाधि धारण कर राजसिंहासन पर बैठ गये और उन्होंने जुल्फ़िकारखाँके अपराधोंको माफ़ कर उन्हें 'अमीर-उल्-उमरा'की उपाधि प्रदान की (१११८ हिजरा, १७०७ ई०में)।

कुछ दिन पीछे बाहादुरशाहने इन्हें दक्षिण देशका शासनकर्त्ता नियुक्त किया। परन्तु इनकी सलाहके बिना राजकार्य सुचारु रूपसे न चलेगा, यह सोच कर शीघ्र ही इन्हें राजधानीमें बुला लिया। दायुदखाँ पनोकी इनका प्रतिनिधि बना कर दाक्षिणात्य भेज दिया गया। बहादुरशाहकी मृत्युके बाद उन्हींके २य पुत्र आजिम उश्-शानके बादशाह होने पर जुल्फ़िकारने उनके विरुद्ध अन्य तीन भाइयोंको उत्तेजित किया।

युद्धमें दो भाइयोंको मृत्यु होने पर मोजउद्दीन और रफ़ी-उश्-शान इन दोनोंमें झगड़ा उपस्थित हुआ।

रफ़ी-उश्-शानके साथ इनकी विशेष मित्रता थी। रफ़ी-उश्-शान इनको मामा कहा करते थे तथा जुल्फ़िकारने भी कुमारकी सहायता देनेके लिए प्रतिज्ञा की थी। इनकी बात पर विश्वास करके ही रफ़ी-उश्-शान मोजउद्दीनसे युद्ध करनेको साहसी हुए थे, किन्तु युद्धके प्रारम्भमें ही उन्होंने देखा कि, उनके मित्र और हितैषी अमीर उल-उमरा मोजउद्दीनके साथ मिल गये हैं और मोजउद्दीन् सेनाको युद्धका उपदेश दे रहे हैं। जुल्फ़िकारखाँने रफ़ी-उश्-शानके एक विश्वस्त अनुचरके साथ षड़यन्त्र कर लिया था। युद्धके समय उस पापाशयने भी कुमारका साथ छोड़ कर उनके विरुद्ध अस्त्रधारण किया। युद्धमें मोज-उद्-दीनकी विजय हुई; और जहान्दारशाह उपाधि धारण कर वे सिंहासन पर बैठ गये।

जहान्दारने जुल्फ़िकारको प्रधान वजीर बनाया। उनके राजत्वकालमें जुल्फ़िकारखाँ असीम क्षमताकी परिचालना करते थे। वे अपनी इच्छाके अनुसार हर एक काम कर सकते थे। जुल्फ़िकारखाँ धीरे धीरे इतने गर्वित हो गये थे कि, कोई भी उनसे मिल न सकता था। राजकीय समस्त कार्य इनके अधीन थे। सबके वेतन आदिका भी वे ही निश्चय करते थे। कुछ समय पीछे लालकुमारीके भाईका वृत्ति निश्चित करनेके विषयमें जहान्दारके साथ इनका मनोमालिन्य हो गया।

एक दिन जुल्फ़िकरने लालकुमारीके भाईसे ५००० वीणा और ७००० मृदङ्ग मांगे। बादशाहने अमीर-उल् उमराको बुला कर इस अवमाननाका कारण पूछा। वजीरने उत्तर दिया—नर्त्तकों और गायकों द्वारा भद्र-पुरुषोंके अधिकार हड़प किये जानेसे उनकी आजीविकाके निर्वाहके लिए कोई उपाय करना उचित है। वे बाजे बादशाहके कर्मचारियोंको बाँटे जायँगे। जुल्फ़िकारखाँ बादशाह अथवा उनके प्रियपात्रोंसे किसी प्रकार डरते न थे।

१७१२ ई०के अन्तमें सम्वाद आया कि, फ़रुखशियार दिल्लीका सिंहासन अधिकार करनेके लिए अग्रसर हो रहे हैं। जहान्दार यह सम्वाद पा कर उनकी गतिको रोकनेके लिए जुल्फ़िकारके साथ आगराकी तरफ़ अग्रसर हुए। आगराके पास दोनोंमें युद्ध हुआ। जहान्दारशाह प्रथम युद्धके बाद डर कर भाग गये। जुल्फ़िकारने बहुत देर तक विशेष वीरताके साथ युद्ध किया। अन्तमें उन्होंने विजयकी कुछ आशा न देख कर सेनाके साथ सुशृङ्खलभावसे युद्धक्षेत्र छोड़ दिया और दिल्ली जा कर अपने पिता आसदखाँके घर आश्रय लिया।

जुल्फ़िकरने देखा कि, जहान्दारशाह उनसे पहले ही वहाँ आ गये हैं। उन्होंने बादशाहको ले कर दाक्षिणात्यकी ओर भाग जानेकी इच्छा प्रकट की; किन्तु आसदखाँने इस परामर्शमें बाधा दे कर फ़रुखशियारकी अधीनता स्वीकार करनेकी सलाह दी।

जुल्फ़िकारखाँ अपने पिताके परामर्शानुसार दोनों हाथोंको वस्त्र द्वारा बाँध कर फ़रुखशियारके पास पहुँचे।

होते हैं। इसके बादके ५वेंसे लगाकर १२वें तक आठ गुणस्थान चारित्रमोहनीय कर्मके निमित्तसे तथा १३वां और १४वां ये दो गुणस्थान योगोंके निमित्तसे होते हैं।

१ मिथ्यात्व गुणस्थान—मिथ्यात्वप्रकृतिके उदयसे अतत्त्वार्थश्रद्धानरूप आत्माके परिणामविशेषको मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं। इस गुणस्थानमें रहनेवाला जीव विपरीत श्रद्धान करता है और सच्चे धर्मकी तरफ उसकी रुचि नहीं होती। जैसे पित्तज्वरवाले रोगीको दूध, मलाई, लड्डू आदि मिष्ट पदार्थ भी कड़ुवे लगते हैं। उसी प्रकार इस श्रेणीके जीवको भी समीचीन धर्म अच्छा नहीं लगता।

२ सासादन गुणस्थान—प्रथमोपशम्यक्तके समय अधिकसे अधिक ६ आवली और कमसे कम १ समय बाकी रहे उस समय किसी एक अनन्तानुबन्धी कषायके उदयसे सम्यक्तके नाश हो जानेसे जीवके भावोंकी जो अवस्था होती है, उसको सासादन गुणस्थान कहते हैं।

३ मिश्र गुणस्थान—सम्यक्त्व और मिथ्यात्व इन दोनों प्रकृतियोंके उदयसे जीवके जो डमाडोल परिणाम होते हैं। उस अवस्थाका नाम मिश्रगुणस्थान है।

४ अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान—दर्शमोहनीयको तीन और अनन्तानुबन्धीकी चार इन सात प्रकृतियोंके उपशम वा क्षय अथवा क्षयोपशमसे और अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया और लोभके उदयसे व्रतरहित सम्यक्तधारी जीवके अविरत सम्यग्दृष्टि नामक ४र्थ गुणस्थान होता है।

५ देशविरत गुणस्थान—जीवके प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया और लोभके उदयसे यद्यपि संयम भाव नहीं होता, तथापि अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया और लोभके उपशमसे श्रावकव्रतरूप देशचारित्र होता है। इसीको देशविरत गुणस्थान कहते हैं। पाँचवें छठे आदि ऊपरके गुणस्थानोंमें सम्यग्दर्शन तथा उसका अविनाभावी सम्यग्ज्ञान अवश्य होता है, इनके विना पाँचवें छठे आदि गुणस्थान नहीं होते। परिग्रह सहित गृहस्थों वा श्रावकोंके इससे ऊँचे परिमाण नहीं होते।

६ प्रमत्तविरत गुणस्थान—संज्वलन और नोकषायके तीव्र उदयसे संयम भावके हो जानेसे मनुष्यको वैराग्य आता है और वह उस वैराग्यके कारण समस्त परिग्रहको छोड़ कर खुद दिगम्बर (नग्न) मुनि हो जाता है। मुनिके होनेके उपरान्त उस जीवके सम्यक्तरूप जो परिणामोंकी अवस्था है, उसको प्रमत्तविरत गुणस्थान कहते हैं। छठे गुणस्थानसे लगाकर १४वे गुणस्थान तकके परिणाम दिगम्बर मुनिके ही होते हैं, अन्यके नहीं।

७ अप्रमत्तविरत गुणस्थान—संज्वलन और नोकषायके मन्द उदयसे प्रमाद (आलस) रहित सयमभावका नाम अप्रमत्तविरत गुणस्थान है।

८ अपूर्वकरण गुणस्थान—जिस करण (परिणाम)में उत्तरोत्तर अपूर्व ही अपूर्व परिणाम होते जायं अर्थात् भिन्नसमयवर्त्ती जीवोंके परिणाम सदा विसदृश ही हों और एक समयवर्त्ती जीवोंके परिणाम सदृश भी हों और विसदृश भी हों उसको अपूर्वकरण कहते हैं। और यही आठवां गुणस्थान है।

९ अनिवृत्तिकरण गुणस्थान—जिस करण (परिणाम) में भिन्नसमयवर्त्ती जीवोंके परिणाम विसदृश ही हों और एक समयवर्त्ती जीवोंके परिणाम सदृश ही हों उसको अनिवृत्तिकरण कहते हैं। यही नवमां गुणस्थान है। इन तीनों करणोंके परिणाम प्रतिसमय अनन्तगुणी विशुद्धता लिये होते हैं।

१० सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान—अत्यन्त सूक्ष्म अवस्थाको प्राप्त लोभ कषायके उदयको अनुभव करनेवाले जीव (मुनि) के परिणामोंकी अवस्थाका नाम सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान है।

११ उपशान्तमोह गुणस्थान—चारित्रमोहनीयकी २१ प्रकृतियोंके उपशम होने पर यथाख्यात चारित्रको धारण करनेवाले मुनिके परिणामोंकी स्थितिको उपशान्तमोह गुणस्थान कहते हैं। इस गुणस्थानका काल समाप्त होने पर जीव मोहनीयके उदयसे नीचेके छठे गुणस्थान तक उतर आता है, फिर क्षपक श्रेणीका अवलम्बन कर बड़ी कठिनतासे १२वें गुणस्थानमें पहुंचता है।

१२ क्षीणमोह गुणस्थान—मोहनीय कर्मके अत्यन्त क्षय होनेसे स्फटिक पात्रमें स्थित जलकी तरह अत्यन्त निर्मल अविनाशी यथाख्यात चारित्रके धारक मुनिके परिणामों-

जुहार (सं० पु०) जैनोंमें प्रचलित एक प्रकारका अभिवन्दन। भद्रबाहुसंहितामें लिखा है—"श्राद्धाः परस्परं कुर्युर्जुहारिति संश्रयम्" तात्पर्य यह है कि जैनधर्ममें श्रद्धा रखनेवाले सहधर्मिगण परस्पर 'जुहार' कह कर विनय करें। इस पर एक गाथा प्रचलित है—

"जज्जा जिणवर होई हाहा हणंति अट्ठकम्माणि।
रुद्धो आसवद्वारा जुहारो जिणवरो भणिया॥"

आजकल बहुतसे लोग जुहार न कह कर जय जिनेन्द्र वा जियजिनेन्द्र कहने लगे हैं। किन्तु प्राचीन जुहार ही है।

जुही (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका घना और छोटा झाड़। इसके पत्ते छोटे और ऊपर नीचे नुकीले होते हैं। इसके फूल बहुत सुगन्धित और सफेद होते हैं, लोग इसे फुलवाड़ीमें लगाते हैं। वर्षा ऋतुमें इसमें फूल लगते हैं। जही देखो।

जुहु (सं० स्त्री०) १ जूहू देखो। २ प्राची दिशा, पूर्वदिशा।

जुहुराण (सं० पु०) हुर्च्छ-सन् शानच् सनोलुक छलोपश्च। अर्त्तेर्गुणः शुट्च। उण् २।८८ १ चन्द्र। (त्रि०) १ कौटिल्यकारी, कपटका व्यवहार करनेवाला। (बृह० ३०)

जुहुवान (सं० पु०) हूयते हु-कर्म्मणि कानच्। १ अग्नि-आग। २ वृक्ष, पेड़। ३ कठिन हृदय। (संक्षिप्तसार वर्गादिवृत्ति) 'जुहवान' यह पाठ प्रामादिक मालूम पड़ता है। 'जुहुवान'को जगह 'जुहुवान' ही संगत है।

जुहू (सं० स्त्री०) जुहोत्यनया हु-क्विप्। हुवः श्लुवच्च। उण् २।६० । १ निपातनात् द्विलत्व। पलाश-काष्ठ निर्मित अर्द्धचन्द्राकृति यज्ञपात्र, पलाशकी लकड़ीका बना हुआ अर्द्धचन्द्राकार यज्ञपात्र। (कात्यायन श्रौ० १।३।३४) २ पूर्व दिशा।

जुहूराण (सं० पु०) जुहूं रणति इत्यण्। कर्म्मण्यण्। पा ३।२।१। १ अग्नि। २ अध्वर्य्यु, चार यज्ञ करानेवालोंमेंसे एक, यज्ञमें यजुर्वेदका मन्त्र पढ़नेवाला ब्राह्मण। ३ चन्द्रमा।

जुहूवत् (सं० पु०) जुहूः पात्रं होमक्रियोद्देश्यतयास्त्यस्मिन् जुहूः मतुप् निपातनात् मस्य वः। अग्नि। (शब्द०)

जुहोता (हिं० पु०) यज्ञमें आहुति देनेवाला।

जुहोति (सं० स्त्री०) जु-धात्वर्थ-निर्द्देशे श्तिप्। होमभेद, एक प्रकारका होम।

"यजति जुहोतीनां कोविशेषः" । कात्या० श्रौ० १।२।५)

जिन यज्ञोंमें (मध्यमें) स्वाहाकारका प्राधान्य है उसको जुहोति कहते हैं, इसमें स्वाहाकार द्वारा केवल होम किया जाता है।

"उपविष्टहोमाःस्वाहाकारप्रदानाः जुहोतयः।"

(कात्या० श्रौ० १।२।७)

जुह्वास्य (सं० पु०) जुहूरास्यमिवास्य। जुहूरूप मुखयुक्त होमीय वह्नि, जुहू आकारको मुखयुक्त होमकी अग्नि।

जू (सं० स्त्री०) जू-गतौ यथायथं कर्त्तृभवादौ क्विप्। क्विब्वचि प्रच्छिश्रीति। उण् २।५७। १ आकाश। २ सरस्वती। ३ पिशाची। ४ जवन, वेग। ५ गमन, जाना। (त्रि०) ६ जवयुक्त, जिसमें गति हो। (स्त्री०) वायुमण्डल। ८ बैल या घोड़ेके मस्तक परका टीका।

जू (हिं० अव्य०) १ व्रज, बुंदेलखण्ड, राजपूताना आदिमें अमीरोंके नामके साथ लगाये जानेका एक आदरसूचक शब्द। २ सम्बोधनका शब्द। ३ एक निरर्थक शब्द। यह बैलों या भैंसोंको खड़ा करनेके लिये कहा जाता है।

जूँ (हिं० स्त्री०) बालोंमें पड़नेवाला एक छोटा स्वेदज कीड़ा। यह काले रंगकी और दूसरे प्राणियोंके शरीरके आश्रयसे रहती है। इसके आगेको तरफ छह पैर होते हैं और पिछला हिस्सा कई गण्डोंमें विभक्त होता है। इसके मुंहमें एक प्रकारकी झुकी हुई सूंड़ी होती है। जिसे अन्य प्राणियोंके शरीरमें चुभा कर उनका रक्त चूसती है। जूं अण्डे खूब देती है। अण्डे बालोंमें चुपके रहते हैं और दो तीन दिनमें उसमेंसे कोई निकल पड़ते हैं। कपड़ोंमें पड़नेवाला चीलर नामका कीड़ा भी इसी जातिका है; फर्क इतना ही है कि वह सफेद होता है। भिन्न भिन्न जीवोंके शरीरमें भिन्न भिन्न आकृतिकी जूं पड़ती है और उनका रंग भी विभिन्न प्रकारका होता है। यूका देखो।

जूँठ (हिं० वि०, पु०) जूठा देखो।

जूँठन (हिं० स्त्री०) जूठन देखो।

जूँढ़िहा (हिं० पु०) बैलोंके झुण्डके आगे आगे चलनेवाला बैल।

दक्षिणापथको चले और थोड़े ही दिनमें विख्यात पण्डित हो गये। सब देशोंमें उनका पाण्डित्य फैल पड़ा।

उस समय महाराज शालिवाहन (सातवाहन) प्रतिष्ठान राज्यके अधिपति थे। यह उनकी सभामें पहुंचे। महाराज गुणाढ्यका पाण्डित्य देख परम आह्लादित हुए थे, यह बड़े आदरके साथ मन्त्रिपद पर रखे गये। गुणाढ्य वहीं किसी रमणीरत्नका पाणिग्रहण करके शिष्योंके साथ बड़े सुखसे समय बिताने लगे।

राजा शालिवाहन पहले मूर्ख थे, परन्तु उनकी रानी अतिशय विद्यावती थी। एक दिन राजा और रानी जलक्रीडामें प्रवृत्त हुये। विदुषी रानीने उनको संस्कृत वाक्यसे किसी विषयके लिये अनुरोध किया था। राजा इसका अर्थ समझ न सके और विपरीत आचरण करने लगे। उस पर रानीने इन्हें डांटा था। राजाको ज्ञानोदय हुआ। उन्होंने सोचा था—इस संसारमें विद्या ही मानवका प्रधान धन है, विद्याके अभावमें कोई सुख नहीं। रानीके तिरस्कारसे आज मेरे लिये संसार असार जैसा हो गया। यदि विद्याभ्यास कर न सकूं, तो जीनेसे क्या फल है? राजाका संकल्प मालूम होने पर गुणाढ्यने छह वर्षमें उन्हें व्याकरण पढा देना स्वीकार किया था। उसी समय शर्ववर्मा नामक कोई पण्डित बोल उठे—मैं छह मासमें ही महाराजको व्याकरण सिखला सकता हूं। वह बात सुन करके यह चिढ गये और आपेसे बाहर हो कहने लगे-गर्व कारिन्! यदि ६ महीने में आप वह काम कर सके, स्मरण रखें कि मैं संस्कृत, प्राकृत और देशी भाषा परित्याग करनेको दृढ़प्रतिज्ञ हूं। पण्डितप्रवर शर्ववर्माने असाधारण प्रतिभाबलसे संक्षिप्त कलाप-व्याकरण रचना करके ६ मासके मध्यमें ही महाराजको विद्वान् बना दिया। इन्होंने परास्त हो तीनों भाषाएं छोड़ी थीं। बात न करके जनसमाजमें रहना असम्भव समझ अपने प्रिय शिष्य गुणदेव और नन्दिदेवके साथ गुणाढ्यने निविड अरण्यमें प्रवेश किया। मनुष्य सम्बन्ध परित्याग करके वह पिशाचोंके साथ रहने लगे। दिन दिन प्रतिवेशी पिशाचोंको कथावार्ता सुन करके उन्होंने पिशाचभाषा सीखी थी। कुछ दिन बाद वह काणभूतिसे मिले। इन्होंने मधुमय स्तुतिवाक्यसे उनको सन्तुष्ट करके पुष्पदंतकथित सप्तकथामय उपाख्यान सुना था। फिर गुणाढ्यने उसी उपाख्यानको अवलम्बन करके पिशाच भाषामें सात लाख श्लोकोंकी बृहत्कथा बनायी। इस बड़े ग्रन्थकी रचनामें सात ही वर्षका समय लगा था। इन्होंने अपने रक्तसे उक्त पुस्तक लिख करके काणभूतिको दिखलाया, वह शापमुक्त हो गये। काणभूति देखो।

गुणाढ्यने यह बृहत्कथा मानव समाजमें प्रचार करनेके विचारसे दोनों शिष्योंके साथ प्रतिष्ठाननगर पहुंच राजाके पास भेजी थी। किन्तु विद्यामदगर्वित सातवाहनने उस ग्रन्थका विशेष आदर नहीं किया। राजाके व्यवहारसे यह अतिशय क्रुद्ध हो ग्रन्थको आगमें जलाने लगे। वह एक एक पृष्ठ पढ़के जलाते जाते थे। पशुपक्षी अनाहार वह अमृतमयी कथा सुनने लगे। यह संवाद सुन करके महाराज सातवाहनने वह पुस्तक मांगा। उस समय सप्तकथाके ६ खण्ड जल चुके थे। महाराजको बहुत कहने सुनने पर इन्होंने वह दे डाली।

यह शिवके माल्यवान् नामक एक अनुचर थे, शापसे गुणाढ्य नाममें भूतल पर अवतीर्ण हुए और थोड़े दिन मर्त्यलोकमें रह करके शापसे छूट गये।

क्षेमेन्द्रकी बृहत्कथामञ्जरी और सोमदेवका कथासरित्सागर दोनों ग्रंथ इनकी उसी बृहत्कथाके आधार पर रचित हुए हैं। दण्डी, सुबन्धु, त्रिविक्रम, गोवर्धन प्रभृति पण्डितोंने पैशाची भाषामें बनी हुई बृहत्कथाका उल्लेख किया है।

गुणाढ्यक (सं॰ पु॰) गुणाढ्य संज्ञायां कन्। अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़।

गुणातीत (सं॰ पु॰) गुणान् सत्वादिगुणान् तत्कार्यं सुखादीन् अतीत, २-तत्। १ सुख दुःखादि शून्य परमेश्वर। आत्मज्ञ, स्थितप्रज्ञ, जीवन्मुक्त। भगवद्गीतामें भगवान्ने प्रिय शिष्य अर्जुनको उपदेशके छलसे बतलाया है, जो त्रिगुण अतिक्रम कर सकते, कभी नहीं जीते मरते और प्रारब्ध शेष होने पर निर्वाण लाभ करते हैं। भक्तिबलसे एकान्त चित्त हो करके ईश्वरकी सेवा करनेवाले ही गुणोंको अतिक्रम कर सकते हैं। ईश्वरकी सेवा छोड़ करके उसका कोई उपाय नहीं। जो गुणातीत हो सके

जूताखोर (हिं॰ वि॰) १ जो जूता खाया करे। २ निर्लज्ज, बेहया।

जूति (सं॰ स्त्री॰) जू-वेगे-क्तिन्। ऊति यूति जूतीति। पा ३।३।९७। इति निपातनात् दीर्घत्वं। १ वेग, तेजी। २ चित्तके दुःखिताभाव।

जूतिका (सं॰ स्त्री॰) जूत्या कायति कै-क, ततष्टाप्। कर्पूरभेद, एक प्रकारका कपूर।

जूती (हिं॰ स्त्री॰) १ स्त्रियोंका जूता। २ जूता।

जूतीकारी (हिं॰ स्त्री॰) जूतोंकी मार।

जूतीखोर (हिं॰ वि॰) १ जूतोंकी मार खानेवाला। २ निर्लज्ज, मार और गालीकी परवाह न करनेवाला।

जूतीछुपाई (हिं॰ स्त्री॰) विवाहमें एक रसम। इसमें जब वर कोहबरसे चलता है तो स्त्रियां वरका जूता छिपा देती हैं और जब तक जूतेके लिये वर कुछ नेग नहीं देता तब तक वे उसे नहीं देती हैं। जो नातेमें वधूकी बहिन होती हैं वे ही इस कार्यको करती हैं। २ जूतेकी छिपाईमें दिये जानेका नेग।

जूती-पैजार (हिं॰ स्त्री॰) १ जूतोंकी मार पीट, धौल धप्पड़। २ कलह, झगड़ा, लड़ाई दंगा।

जून (June)—यूरोपीय एक मासका नाम, अङ्गरेजी वर्षका ६ठां महीना जो ज्येष्ठ मासके लगभग पड़ता है। यह प्राचीन रोमका चौथा मास है। कोई कोई कहते हैं कि, लाटिन जुनियरिस् (Junioris) अर्थात् युवक शब्दसे इस नामकी उत्पत्ति है। और किसी किसीका यह कहना है कि, स्वर्गकी ईश्वरी जूनोदेवी हैं, उनके नामका रूपान्तर लाटिनमें जुनियास है और इस शब्दसे इस नामकी उत्पत्ति हुई है। यह मास ३० दिनमें खतम होता है। इस महीनेमें सूर्य कर्कट-राशिमें संक्रमित होते हैं। ज्यैष्ठ मासके अन्त और आषाढ़ मासके प्रारम्भको ले कर जून मास चलता है।

जून—सिन्धु और शतद्रु नदीके मध्यवर्ती कच्छक्षेत्रमें रहनेवाली एक जाति। उक्त प्रदेशमें भट्टी, शियाल, करल और काठि जातिका भी वास हैं। काठियावाड़के काठि और ये जून दोनों ही देखनेमें दीर्घाकृति और सुन्दर तथा लम्बी चोटी रखते हैं। ये ऊँट और गाय भैंस आदि बहुत पालते हैं।

जूनखेड़ा—राजपूतानेके अन्तर्गत माड़वार राज्यका एक प्राचीन नगर। यह नदोलासे कुछ पूर्व एक ऊंचे स्थानमें अवस्थित है। बहुत दूर तक फैले हुए भग्न ईंटेके स्तूप देखनेसे मालूम पड़ता है कि यह प्राचीनकालमें एक समृद्धिशाली नगर था। अभी भी बहुतसे मन्दिरोंका भग्नावशेष पड़ा है जिनमेंसे ४ प्रधान है। जूनखेड़ाका अर्थ जीर्णनगर है। कहा जाता है कि नदोला नगरके पहले यह नगर स्थापित हुआ था और वहांके अधिवासियोंने फिर नदोला स्थापन किया। वहांके साधारण लोगोंका विश्वास है कि इसके पहले यहांके अधिवासी किसी एक योगीके कोपसे नष्ट हो गये और उन्हींके शापसे यह नगर भग्न अवस्थामें परिणत हो गया है।

जूना (हिं॰ पु॰) १ बोझ आदि बाँधनेकी रस्सी। २ उबटन।

जूनाखाँ तुगलक—तुगलकवंशीय एक बादशाह। महम्मदशाह तुगलक प्रथम देखो।

जूनागढ़—१ बम्बई विभागमें गुजरातके अन्तर्गत काठियावाड़ पोलिटिकल एजेन्सीका एक देशीय करद राज्य। यह अक्षा॰ २०° ४४´ से २१° ५३´ उ॰ और देशा॰ ७०° से ७२´ पू॰में अवस्थित है। यहां वृटिश गवर्मेण्टका एक उच्च कर्मचारी (Political agent) रहते हैं। इसका क्षेत्रफल ३२८४ वर्गमील है। इसके उत्तरमें बर्द और हालार, पूर्वमें गोहिलवाड़ और पश्चिम तथा दक्षिणमें अरब समुद्र है। भादर और सरस्वती नामका दो नदियां प्रधान हैं। यहां हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैन, पारसी, यहूदी आदि जातियां वास करती हैं। जूनागढ़में गिरनर नामकी एक ऊँची पर्वतश्रेणी है। जिसकी ऊंची चोटीका नाम गोरखनाथ है। यह चोटी समुद्रपृष्ठसे ३६६६ फुट ऊँची है। इस राज्यमें 'गिर' नामका एक विस्तीर्ण भूभाग है जिसका अधिकांश घने जङ्गलसे परिपूर्ण है। किसी किसी जगह छोटे छोटे पहाड़ हैं। फिर कोई कोई जगह इतनी नीची है कि वर्षाकालमें वह जलमग्न हो जाती है। इस राज्यकी मट्टी काली होती है; किन्तु कहीं कहीं दूसरे रङ्गकी भी पाई जाती है। यहां गृहस्थ लोग खेतके निकट तक खाड़ी काट कर जल जमा रखते हैं और समय आने पर आवश्यकतानुसार उसी जलसे

गुणीभूतव्यङ्ग्य (सं० क्ली०) गुणीभूतं अप्रधानीभूतं व्यङ्ग्यं यत्र, बहुव्री०। काव्यविशेष, किसी किस्मकी शायरी।

आलङ्कारिकोंके मतमें रसात्मक वाक्यको काव्य कहते हैं। यह काव्य प्रधानतः दो भागोंमें बटा हुआ है—ध्वनि और गुणीभूतव्यङ्ग्य। काव्य देखो।

आलङ्कारिक शब्दकी तीन शक्तियां मानते हैं। यथा- अभिधा, लक्षण और व्यञ्जना। शब्दकी अभिधा शक्तिसे निकलनेवाला वाच्य और व्यञ्जनाका अर्थ व्यङ्ग्य कहलाता है। व्यञ्जना देखो।

गुणीभूतव्यङ्ग्य काव्य वही है, जिसमें व्यङ्ग्यार्थ वाच्यार्थसे न्यून वा समान लगे। यह गुणीभूतव्यङ्ग्य आठ प्रकारका है—१ इतराङ्ग, २ काक्वाक्षिप्त, ३ वाच्यसिद्ध्यङ्ग, ४ सन्दिग्धप्राधान्य, ५ तुल्यप्राधान्य, ६ अस्फुट, ७ अगूढ और ८ व्यङ्ग्यासुन्दर।

व्यङ्ग्य किसी एक रसका वाच्य और अङ्ग होनेसे इतराङ्ग गुणीभूतव्यङ्ग्य कहलाता है। (साहित्यदर्पण ४ परि०) काव्यप्रकाशकारने उसका नाम अपराङ्ग लिखा है। (काव्यप्र० ५१ कारि०)

जिस स्थल पर वाक्यार्थ काकु द्वारा आक्षिप्त होता, काक्वाक्षिप्त-गुणीभूतव्यंग्य पड़ता है।

व्यङ्ग्यार्थको वाच्यार्थसिद्धिका हेतु होनेसे वाच्यसिद्ध्यङ्ग कहेंगे।

जो प्रस्तावमें उपयोगी और वर्णनीय दिखलाता, प्रधान-जैसा माना जाता है। किन्तु व्यंग्यार्थ और वाच्यार्थ दोनों प्रधान लगने अर्थात् उनमें कोई प्रधान जैसा ठहर न सकनेसे सन्दिग्धप्राधान्य कहते हैं।

वाच्यार्थ और व्यंग्यार्थ दोनों ही प्रधान या प्रकृत रहनेसे तुल्यप्राधान्य होता है।

अस्फुट व्यंग्यार्थका नाम अस्फुटगुणीभूतव्यंग्य है। जहां वाच्यार्थकी भांति व्यंग्यार्थ सहजमें ही बोधगम्य हो जाता, अगूढगुणीभूतव्यंग्य आता है।

व्यंग्यार्थसे वाच्यार्थका चमत्कार अधिक रहने पर व्यंग्यासुन्दर होता है।

दीपक और तुल्ययोगिता प्रभृति स्थलों पर जो उपमा आदि अलङ्कार व्यंग्य लगते, ध्वनिकारादिके मतमें उनको भी गुणीभूतव्यंग्य कहते हैं। आलङ्कारिकोंने इसको छोड़ करके गुणीभूतव्यंग्यके और भी कई भेद निरूपण किये हैं। (साहित्यदर्पण ४ प०)

गुणेश्वर (सं० पु०) गुणेश्वरः गुणानामीश्वरो वा। १ चित्रकूट पर्वत। २ तीनों गुण पर प्रभुत्व रखनेवाला, परमेश्वर, ईश्वर। (त्रि०) ३ गुणके अधिपति।

गुणोच्चला (सं० स्त्री०) क्षुद्रश्वेतयूथिका, छोटी सफेद जूही।

गुणोत्कर्ष (सं० पु०) गुणस्य उत्कर्षः ६-तत्। गुणातिशय, बहुत गुण।

गुणोत्कीर्त्तन (सं० क्ली०) गुणानामुत्कीर्तनं कथनं। नायक या नायिकाका प्रशंसादि कथन।

गुणोपेत (सं० त्रि०) १ गुण, गुणयुक्त, जिसमें गुण हो। २ किसी कलामें निपुण।

गुण्टूनाल—मन्द्राज प्रान्तके करनूल जिलेका एक गांव। यह नंन्यालसे १५ मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है। इस स्थानमें विजयनगरराज सदाशिवके राजत्व समयकी रामराजविट्ठलाद्रि देवके आदेशसे १४६८ शकको उत्कीर्ण एक शिलालिपि है।

गुण्टूपल्ली—मन्द्राज प्रान्तके कृष्णा जिलेमें इल्लूर तालुकका एक गांव यह अक्षा० १७° उ० और देशा० ८१° ८' पू०में इल्लूर शहरसे २४ मील उत्तर पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १०८२ है। कहते हैं, पहले वहां जैनपुरम् नामक कोई नगर था। इस गांवकी पूर्व दिक्को पर्वतमें एक सुन्दर गुहामन्दिर है। मन्दिरका मध्य-भाग गोल, छज्जे महरावदार और भीतरको ८ हाथ चौकोर तथा २ हाथ ऊंचो एक प्रस्तरमय वेदी है। उस पर २ हाथ ८ अंगुल ऊंचा गुम्बज और इसके ऊपर लिङ्गमूर्ति देखते हैं। मन्दिरके उभय पार्श्वको कोई २०० हाथ दूर तक पहाड़ तोड़ करके दोवार और घर वगैरह बनाये गये हैं। दालान ८० हाथ लम्बे और १२ हाथ चौड़े हैं। एक दालानमें छोटो गुहा देख पड़ती है। कहते हैं कि पूर्वकालको महादेवके स्नानार्थ उसी गुहासे जल आया करता था। यहां प्रति वत्सर शिवरात्रिके समय बड़ा उत्सव होता है।

आजकल मन्दिरमें ब्राह्मण धर्मका प्रभाव रहते भी कोई सन्देह नहीं कि पूर्वकालको वहां बौद्ध सङ्घाराम

वासियोंको बहुत डर हो गया। तब उन्होंने आत्मसमर्पण किया। उसी समयसे जूनागढ़ मुगलोंके अधिकारमें है।

१७३५ ई०के प्रारम्भमें गुजरातके मुगल-सम्राट्के प्रतिनिधि अपना अधिकार खोने लगे। इस समय उनके अधीनस्थ कई एक विश्वासघातक सैन्योंने चमताशाली हो कर गुजरातसे इन्हें भगा दिया और वहां अपना अधिकार जमाया। उन्हींके उत्तराधिकारी "नवाब"की उपाधि धारण कर जूनागढ़में राज्य कर रहे हैं।

प्रवाद है कि पहले जब जूनागढ़में हिन्दूराज्य था उस समय गिरनारके उग्रसेनकी कन्या और अरिष्टनेमिकी स्त्री राजीमतीका वासगृह दुर्गके निकट था। नेमिनाथने एक दिन अपने ज्ञातिभ्राता कृष्णका अत्यन्त प्रकाण्ड शंख बजाया था। कृष्णने उसके सामर्थ्यसे डर कर उसका शारीरिक बल हरण करनेके लिए नेमिनाथको १०० गोपियोंके साथ विवाह करने कहा और राजमतीके साथ नेमिनाथका विवाह सम्बन्ध स्थिर कर दिया। कहा जाता है कि 'बाल' वंशीयगण पहले जूनागढ़में राज्य करते थे। इस वंशके रामराज निःसन्तान थे। नगरठठारके राजाके साथ उनकी बहिनका विवाह हुआ था, वह राजा सम्मा-वंशके थे। रामराजाने अपने भानजे रागारियाको अपना राज्य प्रदान किया। रागारियो जूनागढ़के चूड़ासमा वंशके राजाओंके आदिपुरुष थे।

रागारियोकी मृत्युके बाद दो राजाओंने जूनागढ़में राजत्व किया। बाद रायदयास सिंहासन पर अभिषिक्त हुये। इस समय पट्टनके राजाने एक बार जूनागढ़ पर अधिकार किया। पट्टनकी राजकुमारी जब एक दिन सोमनाथके दर्शनके लिये आ रही थी। रायदयासने उसकी सुन्दरता पर मुग्ध हो कर बलपूर्वक उससे विवाह करनेकी चेष्टा की। पट्टन राजने यह समाचार पा कर जूनागढ़के राजाको दमन करनेके लिये सेनाका एक दल भेजा।

रायदयासने गिरनार दुर्गमें आश्रय लिया। पट्टनराजने बहुत दिन तक इस दुर्गको घेर रखा था सही किन्तु इसे अधिकारमें ला न सका। बाद भग्नमनोरथ हो कर वह अपनी राजधानीको लौट आनेका प्रयत्न करने लगा। इतनेमें विजल नामक एक चारण आ कर उसके साथ षड़यन्त्रमें शामिल हो गया। विजल पारितोषिकके लोभसे रायदयासका मस्तक काट कर पट्टन राजको ला देनेके लिये राजी हुआ। वह चारण जानता था कि रायदयास कर्णके समान दाता हैं। वास्तवमें प्रार्थना करते ही वे अपना सिर उसे अर्पण कर सकते थे। जिस दिन चारणने राजाके पास प्रस्थान किया उसके एक रात पहले सोरठकी रानीने स्वप्नमें देखा कि एक मस्तकहीन मनुष्य उसके सामने खड़ा है। इसका शुभाशुभ पूछने पर ज्योतिषियोंने कहा कि शीघ्र ही उसका स्वामी अपना मस्तक काट कर किसीको उपहार देगा। रानीने भयभीत हो कर राजाको छिपा रखा। परन्तु उस विश्वासघातक विजलने राजाके गुप्त वासस्थानका पता लगा कर उनके निकट आया और कुछ गान करने लगा। राजाने रस्से और लाठीके सहारे उसे अपने पास बुलाया। उस पापाशयने राजासे मस्तकके लिये प्रार्थना की और वे भी उसी समय उसे देनेके लिये राजी हो गये। सोरठ-रानीने उस पापी चारणका मत बदलनेके लिये बहुत अनुरोध किया किन्तु निष्फल हुआ। राजा भी अपनी प्रतिज्ञासे विचलित न हुए। उन्होंने अपना सिर काट कर उस चारणको देनेका आदेश किया। राजाकी मृत्युके बाद पट्टनराजने सहजहीमें जूनागढ़ राज्य अपने अधिकारमें कर लिया और थानदारको वहांका प्रतिनिधि बना कर स्वराज्यको प्रस्थान किया।

राजा दयासकी पहली स्त्री अपने स्वामीके साथ सती हो गईं। उनकी दूसरी स्त्री राजबाई अपने पुत्र नोघाणके साथ बान्थली नामक स्थानमें रहती थीं। उन्होंने अपने पुत्रको देवेतबोदर नामक अलिदर-बोड़ीधरके किसी अहीरके घरमें छिपा रखा। देवैतके भाईसे यह रहस्य जान लेने पर थानदारने देवैतको बुला भेजा और नोघाणको दे देनेके लिये कहा। इस पर देवैतने जबाब दिया, "मैं इस विषयमें कुछ भी नहीं जानता, अगर वह मेरे घरमें होगा तो मैं उसे (नोघण) आपके पास भेज देनेको लिख सकता हूँ।" देवैतका पत्र पा कर चारों ओरसे अहीरगण जूट कर युद्ध करनेके लिये प्रस्तुत हो गये। इधर नोघाणको आनेमें विलम्ब देख थानदार

(पु०) २ धूलि, धूर। ३ कलध्वनि, कलकलका शब्द। ४ स्नेहपात्र।

गुण्डकान्द (सं० पु०) गुण्डस्य कान्दः ६ तत्०। कशेरु, केशर।

गुण्डता (सं० स्त्री०) यावनाल शर्करा।

गुण्डत्रोलु—मन्द्राज प्रांतके नेल्लूर जिलेका एक गांव। इसकी दक्षिण दिक्‌को आने जानेकी राह पर तालाब है उसमें एक पत्थरके खम्भे पर तैलङ्ग अक्षरोंकी लिपि है। जलाशयके दक्षिण भी तामिल अक्षरोंमें खुदी हुई लिपि लगी है यह गांव आजकल उजाड हो गया है। गांववालोंका कहना है, किसी समय वहां राजप्रासाद था

गुण्डल—मन्द्राज प्रांतके करनूल जिलेका कसवा। यहां गोपाल स्वामीका मन्दिर बहुत पुराना है। इसी मन्दिर-के पास एक पत्थर पर अनुशासनलिपि उत्कीर्ण है।

गुण्डलकम्म दाक्षिणात्यकी एक नदी। यह मन्द्राज प्रांतीय करनूल जिलेके नल्लमलय पर्वतसे अक्षा० १५° ४८' उ० और देशा० ७८° ५१' पू०में निकलती है। फिर जमपलेरु और एनूमलेरु नामक दो पहाड़ी नदियोंका सङ्गम है। उसके बाद यह कमबलघाटकी राह मैदान पहुंचती है। सींचनेके लिये कमबल तालाब बनाया गया है। यह करनूल, गण्टूर और नेल्लूर जिला होती हुई पेटदेवरमके पास अक्षा० १५° २४' उ० और देशा० ८०° १०' पू० पर समुद्रमें प्रवेश करती है।

गुण्डलपाडु—मन्द्राज प्रांतके कृष्णा जिलेका एक गांव। यह मार्चर्लसे १० मील और त्रिम्बिकोटरसे १८ मील दक्षिण पश्चिम पडता है। यहां दो प्राचीन मन्दिरोंका ध्वंसावशेष दृष्ट होता है। ग्रामके पश्चिम भाग पर शिवकेशवके मन्दिरमें एक भग्न शिलालिपि है। शिव तथा विष्णु मन्दिरके पास दुर्मति संवत्सर १२४२ शककी उत्कीर्ण दूसरी भी शिलाप्रशस्ति मिलती है।

गुण्डलपाड़ेङ्ग—मन्द्राज प्रान्तके नेल्लूर जिलेका एक गांव। कुन्दुकूरसे यह ७ मील दक्षिण-पश्चिम पडता है। पर्वत पर तीन और नीचे एक पुराना मन्दिर है। पहाड़ पर भ्रमरेश्वर स्वामीका भी मन्दिर विद्यमान है। इस मन्दिरमें ध्वजस्तम्भके निकट १४६३ शककी उत्कीर्ण एक प्रशस्ति है। फिर मन्दिरसे दक्षिणकी एक टुकड़े पत्थर पर कोई शिलालिपि भी मिली है। नदीकी रेतमें अर्धप्रोथित दो शिवमन्दिर हैं। कहते कि एक चोलराजने यह दोनों मन्दिर बनाये थे।

गुण्डलपेट—महिसुर राज्यके महिसुर जिलेका दक्षिण तालुक। यह अक्षा० ११° ३६' तथा १२° १' उ० और देशा० ७६° २४' एवं ७६° ५२' पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ५३५ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ७४८८७ है। इसमें एक नगर और १५५ गांव बसे हैं। मालगुजारी कोई १०००) रु० है। पश्चिम तथा दक्षिणको बडा जङ्गल है। पास ही पहाडों पर घनी बसती है। गौंडल नदी दक्षिणसे उत्तरको प्रवाहित है। सींचनेके लिये बांध है। यहां चावल और पान बहुत अच्छा होता है। नदियोंपर जङ्गली खजूरके बाग है।

गुण्डलमऊ—युक्तप्रदेशके सीतापुर जिलेका एक परगना। इसके उत्तर मछरेता तथा करौन परगना, पूर्व सरायन नदी और दक्षिण एव पश्चिम गोमती नदी है। पहले यहां कंछेरा लोग रहते थे। वाछल क्षत्रियोंके तीन संतानों-ने उन्हें भगा दिया। उनमें एकका नाम गौंडसिंह था। उन्होंने ही अपने नाम पर यह परगना स्थापन किया। इसमें कोई ६७ गांव हैं। उनमें आज भी ५२ गांवों पर वाछल अधिकार रखते है। जगह पहाड़ी और ऊंची है। अनाज वगैरह अच्छा नहीं होता। क्षेत्रफल ६५ वर्गमील है।

गुण्डलमाड—मन्द्राज प्रान्तके कड़ापा जिलेका एक गांव। यह सिद्धवटसे १४ मील दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। यहां मुक्तिकोटीश्वर स्वामीका एक प्राचीन मन्दिर दृष्ट होता है। प्रवादानुसार महर्षि नारदने वह मूर्ति स्थापन की थी। मन्दिरके पास ही एक अस्पष्ट शिलाफलक भी है।

गुण्डलूरु—मन्द्राज प्रान्तके कडापा जिलेमें तुम्बमपेट तालुकका गांव। यह तुम्बमपेटकी सदर अदालतसे ५ मील उत्तर-पश्चिम पडता है। स्थानीय प्राचीन विष्णुमन्दिरके पास दो पत्थरों पर ग्रन्थ और तेलगु अक्षरोंमें खोदित शिलालिपि है। इसके दक्षिण अगस्त्येश्वरके मन्दिरमें और भी कई एक ग्रन्थशिलालिपियां है। सन्निकटस्थ वीरभद्रस्वामीके मन्दिरमें कितने ही ग्रन्थ और तेलगु,

अनेक गण्यमान्य प्रधान व्यक्तिके अच्छे अच्छे घर नगरकी शोभाको बढ़ा रहे हैं।

नवाबके वास-भवनके सामने बहुतसी दूकाने है जिन्हें लोग महावत्वक्र कहते हैं। यहां एक बड़ा मन्दिर है जिसके ऊपर एक घड़ी लगी हुई है।

प्राचीन जूनागढ़ अभी उपरकोट नामसे मशहूर है। इस नगरको गुजरातके सुलतान महमूदने स्थापन किया था। वर्तमान शहरका प्रकृत नाम मुस्तफाबाद है।

जूनागढ़से प्रायः एक मीलकी पूर्वकी ओर दामोदर कुण्ड नामक एक पवित्र तीर्थ है। एक छोटी निर्झरिणी के जलसे यह कुण्ड सदा भरा रहता है। इस कुण्डके उत्तर और दक्षिणकी ओर बहुतसी घाटें हैं। उत्तर घाटके समीप सम्भ्रान्त नागर ब्राह्मणोंका श्मशान-मन्दिर और दक्षिण घाटके समीप दामोदरजीका मन्दिर विद्यमान है। यह मन्दिर बहुत पुराना होने पर भी नयासा दीख पड़ता है। कहा जाता है कि वज्रनाभने इस मन्दिरको बनाया था। उन्होंने कृष्णके तीन पुरुषके बाद जन्मग्रहण किया था। इस मन्दिरको ओर जो प्रान्तर है उसकी लम्बाई १०८ फुट और चौड़ाई १२५ फुट है। यहां धर्मशाला और बलदेवजीका एक मन्दिर है। उस मन्दिरके ऊपरमें बहुतसी मूर्तियां खोदी हुई हैं। दामोदरजीके मन्दिरका प्राङ्गण रेवतीकुण्ड तक विस्तृत है। यहां दो प्राचीन शिलालेख और बहुतसी मूर्तियाँ देखी जाती हैं। इस स्थानमें प्याराबावा मठके समीप ८ कृत्रिम पर्वतगुहा हैं। ये कन्दरायें अभी घाससे ढकी है। इसके सिवा इस पर्वतके दक्षिणकी ओर सात कन्दरायें हैं। यहांकी जुमामसजिद, आदि चडी-बाव और नोघाणकूप विशेष प्रसिद्ध है। इस गुहाके ऊपरका मंजला ३७ फुट लम्बा और ३ फुट चौड़ा है। इसमें ६ खम्भे लगी हैं। और खम्भेके ऊपरमें बहुतसी मूर्तियां खोदी हुई हैं। इसके नीचेके मंजलेकी लम्बाई चौड़ाई ४४ फुट है। यह गुहा २८ फुट गहरी हैं। इसके ऊपरमें एक छेद है, उस छेदसे प्रकाश भीतर प्रविष्ट होता है। अहमद खाँजीको मुकर्बा मुसलमान रीतिके अनुसार तरह तरहके भास्करकार्योंसे सुशोभित है। किन्तु इसका भास्करकार्य बहादुरखाँजी और लाडली बीबीकी मुकर्बाको गठनसे भिन्न है।

मृगीकुण्ड या भवनाश सरोवर तथा उसीके किनारे भवनाथका पुराना मन्दिर विद्यमान है। इस मन्दिरके चौकठमें एक प्राचीन लेख है। गिरनार पहाड़के नीचे बीरदेवीका मन्दिर भी विख्यात है।

जूनागढ़से ६ मील पश्चिममें खेङ्गारबाव हैं। इसके नीचेका भाग तुरङ्गका-सा है। अभी यह बाव नष्ट हो गया है।

जूनागढ़ और दामोदरकुण्डके मध्यवर्ती पहाड़ पर अशोक, स्कन्दगुप्त और रुद्रदामाके तीन प्राचीन शिला-लेख उत्कीर्ण हैं। जूनागढ़के उत्तर माइयधेची नामक स्थानमें दातार नामकी एक छोटी गुहा है, जिसके समीप २८ फुट लम्बी एक मसजिद है। इसके द्वारके भास्कर-कार्य तथा खम्भेको आकृतिको ओर दृष्टि डालनेसे मालूम पड़ता है कि पहले यहां महादेवका एक मन्दिर था। माइयधेची स्थानके निकट खाँप्रा कोड़ियाकी पांच गुहाएं है जो दूसरी दूसरी गुहासे मिली हुई हैं। खाँप्रा कोडिया गुहाके विषयमें पहले हो लिखा जा चुका है। इस गुहामें ५८ स्तम्भ लगी हैं और स्तम्भोंके सामने सिंह प्रभृति पशुओंकी मूर्तियाँ खोदी हुई हैं। तीसरी गुहाकी दीवार पर फारसीका शिलालेख है।

बामनस्थली या बानथलीमें सूर्यकुण्ड है। जूनागढ़ तथा इसके आसपासके अधिवासी हर एक पर्वको इस सूर्यकुण्डमें स्नान करने आते है। कुण्डको लम्बाई और चौड़ाई ३२ फुट है।

ऊपरमें जिस जुमामसजिदके विषयमें लिखा गया है, वह पहले हिन्दुओंका एक मन्दिर था और कहा जाता है कि यह राजा बलिका सभाभवन था। इसका अधिकांश मुसलमानोंने छिन्न भिन्न कर इसे मसजिदमें परिणत कर लिया है। इस मसजिदके दक्षिण भागमें एक अन्धकारमय कक्ष है। उस कक्षके एक स्तम्भमें १४०८ सम्वत्‌का खुदा हुआ एक संस्कृत शिलालेख है।

जूनागढ़के मान्दोल नामक नगरमें भी एक जुमा मसजिद है। यह मकान पहले पहल १२०८ सम्वत्‌में जेठवाके राजाओंने बनवाया था। बाद १२६४ ई०में समसखाँने उसे मसजिदमें परिणत किया। यहांके एक

गुण्डित (सं० त्रि०) गुडि वेष्टने कर्मणि क्त। १ धूलि धूसरित, धूलसे भरा हुआ। २ चूर्णीकृत, चूर्ण किया हुआ।

गुण्डियाली—बम्बई प्रान्तकी काठियावाड़ एजेन्सीका एक छोटा राज्य। इसकी आबादी कोई १४६५ और मालगुजारी १७८३५) रु० है। यह राज्य अङ्गरेजोंको १४०८) रु० वार्षिक कर देता है।

गुण्डियाली—बम्बई प्रान्तके कच्छ जिलेका एक गांव। यह माण्डवीके निकट सागर तट पर बसा हुआ है। जनसंख्या कोई ४०४६ होगी। एक ऊंची भूमि पर वट वृक्षोंसे घिरा हुआ रावलपीरका मन्दिर है। १८१७ ई०को वह सेठ सुन्दरजी तथा जेठा शिवजी कर्तृक पुनर्वार निर्मित हुआ। कहते हैं, कि ई० १४ वीं शताब्दीको रावलने अपनी माताका हथेलीके फोड़ेसे जन्म लिया था, फिर जखाऊमें उन्होंने धर्मनायके भक्तोंको सतानेवाले मुसलमान संहार करके सुकीर्ति अर्जन की। वर्षमें एक बार हिन्दू और मुसलमान वहां जाते और पत्थरके घोड़ोंको, जो मन्दिरको चारों ओर बने हुए हैं, फूलोंकी मालाएं चढ़ा आते हैं।

गुण्डीकोलियाक—बम्बई प्रान्तकी काठियावाड़ एजेन्सीका ग्रामद्वय, यह दोनो गांव आमने सामने मालेश्वरी नदीके उत्तर तथा दक्षिण तट पर भावनगरसे १३ मोल दक्षिणपूर्व अवस्थित है। इनमें गुण्डो समधिक प्राचीन है। पहले वहा नागर ब्राह्मणोंका उपनिवेश था। आईन-इ-अकबरीमें इसको बन्दर और मीरत अहमदीमें बारा लिखा है। जनसंख्या प्राय १७३७ है। गुण्डो-खाड़ीके मुंहाने पर एक प्रस्तरमय नीलकण्ठकी शिवमूर्ति है। कहते है कि उसको पाण्डवने स्थापन किया था।

गुण्ड भट्ट—तर्कभाषाके एक टीकाकार।

गुण्य (सं० त्रि०) गुण-कर्मणि यत्। १ गुणनीय, वह अंक जिसको गुणा करना हो। २ प्रशस्त गुणयुक्त, जिसमें अच्छे अच्छे गुण हों।

"गुण्य आख्यया।" (सि० कौ०)

गुण्याङ्क (सं० पु०) वह अंक जो गुणा किया जाय।

गुतला (हिं० पु०) एक प्रकारकी मछली, जो बंगु भी कहलाती है।

गुत्तल (गुट्ठल)—बम्बईके धारवाड़ जिलेका एक कसबा। यह कड़जगीसे ६ कोस पूर्वको पड़ता है। १८६२ ई० तक वहां सदर अदालत रही। सप्ताहमें प्रति सोमवारको बाजार लगता है। गांवमें सङ्गमूसासे बना हुआ चूड़ेश्वरका मन्दिर है। उसमें २४ और ८६ पंक्तियोंके दो लिखे हुए शिलाफलक लगे हैं। तालावमें नहर खोदकरके पानी लाया गया है। बांधके मुंहाने पर पत्थरकी मेहराब बनी है।

११०३ शककी ध्रुव संवत्सरको उत्कोर्ण जो कलचुरि शिलालिपि है, उसमें गुट्टभोलल नगरका नाम मिलता है। इस फलकमें लिखा है कि यह कलचुरिराज यादवमल्लके अधीन (११७६-११८३ ई०) गुट्ट सरदार उस नगरमें राजत्व करते थे। यह गुट्ट भोलल नगर वर्तमान गुट्ठल जैसा समझ पड़ता है। फिर १२३७ ई०को देवगिरि यादववंशीय २य सिंहन प्रदत्त प्रशस्ति पढ़नेसे मालूम करते कि गुट्टनायक जगदेवकी अनुमतिसे गुट्ठल नगरके निकट उक्त शिलालिपि उत्कीर्ण हुई।

गुत्ता (हिं० पु०) १ लगान पर जमीन देनेका व्यवहार। २ लगान।

गुत्य (सं० पु०) गुत्स पृषोदरादिवत् साधु। १ ज्वार नामका धानविशेष। २ गुडूची, गुरुच।

गुत्थ (हिं० पु०) १ हुक्केके नैचोंकी बुनावट। २ चटाई सी बुनावटका नैचा।

गुत्थक (सं० क्लो०) गुच्छेन कायति गुच्छ कै-क, पृषोदरादित्वात् साधु। ग्रंथिपर्ण, गठिवन।

गुत्थमगुत्था (हिं० पु०) १ उलझाव, फसाव। २ भिड़ंत, लड़ाई।

गुत्थी (हिं० स्त्री०) कई वस्तुओंके एकमें गुथनेसे उत्पन्न गांठ, गिरह।

गुत्स (सं० पु०) गुध्यते तृणादिभिः परिवेष्टते गुध-स। १ ग्रंथिपर्ण वृक्ष, गठिवन। २ स्तवक, घासका गुच्छा। ३ द्वात्रिंशद् यष्टिकहार। गुच्छ देखो।

गुत्सक (सं० पु०) गुत्स स्वार्थे कन्। गुत्स देखो।

गुत्सपुष्प (सं० पु०) गुत्सकं स्तवकीभूतं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। सप्तच्छदवृक्ष, एक तरहका पेड़।

गुत्सपुष्प (सं० पु०) गुच्छपुष्प देखो।

में 'पोड़ा' और 'दाहन' वगैरह कहते हैं। पार्वत्य प्रदेशोंमें प्रायः सभी जाति इसी प्रणालीसे खेती करते हैं।

ग्रीष्मके प्रारम्भमें पर्वतके पासका कोई एक जङ्गल चुन लिया जाता है। फिर उसे काट कर कुछ दिन सुखाया जाता है। सूख जाने पर उसमें आग लगा दी जाती है, जिससे बड़े बड़े पेड़ोंके सिवा सब कुछ जल कर भस्म हो जाता है और तो क्या, जमीन भी ३।४ अङ्गुल नीचे तक जल जाती है। भस्मादि वहीं पड़ी रहती है। ऐसा करनेसे उस दग्ध भूमिकी उर्वरता बहुत बढ़ जाती है, तिस पर भी यदि बाँसका जङ्गल हो तो कहना ही क्या है। कभी कभी इस आगासे ग्राम आदि भी जल जाते हैं।

जङ्गल जल चुकने पर अवशिष्ट अर्द्धदग्ध काष्ठादिको हटाकर उससे घिराव लगाया जाता है। इसके बाद किसान(वा जुमिया) लोग गाँवमें जाकर वर्षाको बाट देखते रहते हैं और जब आकाशमें घने बादल दिखलाई देते हैं, तब स्त्री पुत्रोंके साथ खेतमें हाजिर होते हैं। हर एकके हाथमें एक एक खुरपी या दाँती तथा कमरसे धान, बाजरा, कपास, लौकिया, कुम्हड़ा, तरबूज आदिके बीज बंधे रहते हैं, जमीनमें हल जोतनेकी जरूरत नहीं और न कुदाली चलानेकी। खुरपीसे ६।७ अंगुल गहरे गड्ढे करके उसमें बीज डाल कर मट्टी ढक देनेसे ही काम चल जाता है। इसके बाद ही यदि एक बार वर्षा हो जाय, तो बहुत ही जल्द पेड़ उपज आते हैं। यह कहना फिजूल है कि यदि अच्छी तरह फसल हो तो औरोंसे ये दूना तिगुना लाभ उठाते हैं।

बीजोंके अङ्कुरित होते ही जुमिया लोग घर छोड़ खेतोंके पास झोंपड़ी बना कर रहते हैं और जंगली जानवरोंके उपद्रवोंसे खेतकी रक्षा करते हैं। सबसे पहले श्रावणमासमें बाजरा काटा जाता है। इसके बाद तरह तरहकी शब्जी पैदा होती है और अन्तमें धान तथा और और अनाज पकते हैं। कार्तिक मासमें कपास होती है। इस खेतीमें १२ बीघा जमीनमें ४५ मन धान, १२ मन कपास, तथा बाजरा, तरकारी आदिकी पैदावार होती है। जूम खेत साधारणतः बहुतसे मिले हुए रहते हैं। फिलहाल गवर्णमेण्टका ध्यान जङ्गलोंकी उन्नतिकी तरफ गया है, इसलिए यह प्रथा अब प्रायः उठ गई है।

जूरगढ़—बरारप्रदेशके अन्तर्गत बुलडाना जिलेका एक प्राचीन ग्राम। यह चिकनीके निकट अवस्थित है। यहां एक हेमाड़पन्थी मन्दिर विद्यमान है।

जूरा (हिं॰ पु॰) जूड़ा देखो।

जूरी (हिं॰ स्त्री॰) १ घास, पत्तों या टहनियोंका एकमें बंधा हुआ छोटा पूला, जुट्टी। २ एक प्रकारका पकवान। यह पौधोंके नये बंधे हुए कल्लोंको गीले बेसनमें लपेट घीमें तल कर बनाया जाता है। ३ गुजरात कराची आदिके खारे दलदलमें होनेवाला एक तरहका झाड़ वा पौधा। इससे खार बनता है। ४ सूरन बगैरहके नये कल्ले जो बंधे होते हैं।

जूरी—(अंग्रेजी Jury, लाटिन 'जुरेटा' Jurata, अर्थात् शपथ शब्दसे जूरीको शब्दकी उत्पत्ति हुई है।) वह पंच जो अदालतमें जजके साथ बैठ कर मुकदमोंके फैसलेमें सहायता करते हैं। जूरी कहनेसे, अभियोग सम्बन्धी किसी विषयकी सत्यताकी खोज करने अथवा किसी विषयकी मीमांसा करनेकी जिनकी सामर्थ्य है और जिन्होंने अपने कर्तव्यको न्यायपूर्वक पालनेकी प्रतिज्ञा (शपथ) की है, ऐसे निर्दिष्ट संख्यक कुछ व्यक्तियोंका बोध होता है।

विचारकार्यमें जूरी (सभ्य) विचारकके सहायक स्वरूप हैं। विचारक सम्पूर्ण विषयकी खोज न कर सकनेके कारण सम्भव है अन्यान्य फैसला कर दे। वादी प्रतिवादीकी पूरी बात पर लक्ष्य न रख सकनेके कारण मुमकिन है कि मुकदमाके सम्पूर्ण विषयकी आलोचना न कर सकें; सम्भव है कभी कभी विशेष कारणवशतः इच्छापूर्वक अन्याय विचार कर दें। इसलिए जिससे ये सब दोष न होने पावें और विचारक बारीकीसे विचार कर सकें, जूरी उनकी सहायता करते हैं।

इंगलैण्डमें पहिले पहल किस समय जूरी-प्रथा प्रवर्त्तित हुई, इसका पता लगाना दुःसाध्य है। कोई कोई कहते हैं—आंग्लो-सार्कसनोंके (Anglo-saxon) समयसे यह प्रथा प्रारम्भ हुई है। और किसी

गुदड़िया (हिं० पु०) गुदड़ी पहनने वा ओढ़नेवाला।

गुदड़ी (हिं० पु०) फटे हुए वस्त्रका बनाहुआ ओढ़ना या बिछावन।

गुदड़ीबाजार (हिं० पु०) जीर्ण पदार्थोंके बिकनेका बाजार।

गुदनहारी (हिं०) गोदनहारी देखो।

गुदना (हिं०) गोदना देखो।

गुदनी (हिं०) गोदनी देखो।

गुदपरिणह (स० पु०) ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

गुदपाक (स० पु०) गदस्य पाकः, ६-तत्। गुदस्थानका पाकविशेष, पाखानेकी जगहका पकाव। अतिशय अतीसार होनेसे वह रोग उठता है। इससे पीव बहा करता है।

सुश्रुतके मतमें बालकको गुदपाक रोग उपस्थित होनेसे पित्तघ्न क्रिया और पान तथा आलेपनमें रसाञ्जन व्यवहार करना चाहिये। (शारीर १० अध्याय) कुपथ्य सेवन कारी व्यक्तिको पित्तसे गुदपाक रोग निकलने पर पित्त नाशक द्रव्य सेवन और उसके क्वाथसे अनुवासन विधेय है। इस रोगमें वायुका योग रहनेसे दधिमण्ड, मद्य तथा विल्वके साथ तैल पाक करके पिचकारी लगाते हैं। चीरणी मूलके साथ दुग्ध पाक करके पीनेसे भी उपकार होता है। गुदपाकमें बहुत खून गिरने या वायु न खुलनेसे पिच्छिल वस्तिप्रयोग करना चाहिये। (सुश्रुत, उत्तर० ४० अ०)

गुदभ्रंश (सं० पु०) गुदस्य गुदमांसस्य भ्रंशः, ६-तत्। रोगविशेष, एक बीमारी। रूक्ष तथा दुर्बल व्यक्तिके प्रवाहन एवं अतीसार द्वारा मलद्वारका जो मांस बाहर निकल आता, गुदभ्रंश कहलाता है। (सुश्रुत निदान १३ अ)

इस रोगकी चिकित्सा करनेसे पहले वहिर्गत नाड़ी तथा मांस घृताक्त तथा खिन्न अथवा स्वेद प्रयोग करके गुदमध्य पहुंचा देना चाहिये। फिर मलद्वार चर्म द्वारा बांधा जाता है। चमड़ेका जो अंश मलद्वारके छिद्रको अवरण करता, उसमें एक छेद रहता है। वायु निःसरणके लिये बार बार स्वेद प्रयोग करना उचित है।

दुग्ध, महापञ्चमूल, अम्लशूल्य मूषिकका देह और वातघ्न औषध सबके साथ तैल पका करके पीने और लगानेमें व्यवहृत होता है। इससे कष्टसाध्य गुदभ्रंश रोग भी आरोग्य हो जाता है। (सुश्रुत चिकित्सित २१ अ०)

अतीसार रोगमें गुदभ्रंश उभरनेसे मधुर एवं अम्ल योगसे तैल वा घृत पाक करके लगाते हैं।

(सुश्रुत उत्तर ४० अ०)

गुदमा (हिं० पु०) एक तरहका नर्म और मोटा कम्बल। यह ठण्डे पहाड़ी देशोंमें प्रस्तुत किया जाता है।

गुदरना (फा० क्रि०) १ त्याग करना, अलग रहना। २ निवेदन करना।

गुदरिया (हिं०) गुदड़ी देखो।

गुदरी (हिं०) गुदड़ी देखो।

गुदरैन (हिं० स्त्री०) १ पढ़ा हुआ पाठ भली भांति सुनाना। २ परीक्षा, इम्तहान।

गुदरोग (सं० पु०) गुदस्य रोगः, ६-तत्। गुदस्थानमें उत्पन्न एक प्रकार रोग, पाखानेकी जगह होनेवाली कोई बीमारी। शातातपके मतानुसार देवालय अथवा जलमें पेशाब करनेके पापसे जन्मान्तरको गुदरोग उठता है। यह उसी पापका चिह्नस्वरूप है। एक मास पर्यन्त देवार्चन तथा गोदान करके एक प्राजापत्य यज्ञ करनेसे उस रोगका प्रतीकार होता है।

भगन्दर और अर्श आदि गुदजात रोगोंका अन्यरूप कारण तथा प्रायश्चित्त है। इससे मालूम पड़ता है शातातपने जो गुदरोग लिखा, वह भगन्दर आदि रोगोंसे अलग है। परन्तु प्रचलित भिषग्शास्त्रमें गुदरोग नामका कोई पृथक् रोग लक्षित नहीं होता।

गुदवर्त्म (सं० क्ली०) गुदरूपं वर्त्म। मलद्वार, जिस रास्तेसे मल निकलता है।

गुदस्तम्भ (सं० पु०) गुदस्य तद्व्यापारस्य मलनिःसारणस्य स्तम्भः, ६ तत्। मलनिःसारका प्रतिरोधक रोगविशेष। वह रोग जिसमें मल कठिनतासे निकले।

शातातपका मत है, कि अश्वयोनिमें गमन करनेसे गुदस्तम्भ रोग उत्पन्न होता है। एक मास पर्यन्त सहस्र कमल द्वारा शिवजीको स्नान करानेसे इसका प्रतिकार होता है।

गुदा (सं० स्त्री०) गुद विकल्पे टाप्। १ नाड़ीविशेष, शरीरकी समस्त नाड़ियां जो समान वायु द्वारा अन्नरस धातु स्थानमें ले जाती हैं उन्हींको गुदा कहते हैं।

दूसरे नाम चुने जा सकते हैं। जब मुकदमेका विचार प्रारम्भ होता है, उस समय शरीफ जूरियोंकी सूची विचारकके पास भेज देते हैं। प्रायः साधारण जूरियोंकी सूची ही बना करती है, परन्तु वादी या प्रतिवादी खास जूरीके लिए प्रार्थना कर सकते हैं। विचारक यदि उस मुकदमेमें खास-जूरीकी आवश्यकता है, ऐसा कोई मन्तव्य प्रकट न करें, तो जो खास जूरीके लिए प्रार्थना करते हैं, उन्हें ही उसका अतिरिक्त व्यय झेलना पड़ता है।

खास जूरीको आह्वान करते समय खास-जूरीकी तालिकासे ४८ नाम चुने जाते हैं। इनमेंसे किसीके भी १२ नाम वादी प्रतिवादीकी इच्छाके अनुसार काटे जाते हैं। बाकीके २४ नाम एक एक टिकटों पर लिख कर एक बक्स अथवा काँचके पात्रविशेषमें रक्खे जाते हैं। पीछे उनमेंसे १२ टिकटें निकाली जाती हैं, उन टिकटोंमें जिनके नाम होते हैं, उन्हींको चुन कर आह्वान किया जाता है। इनमेंसे किसीके अनुपस्थित होने पर अथवा किसी कारणसे जूरी होनेके अनुपयुक्त होने पर उनकी जगह दूसरे व्यक्तिको चुन लिया जाता है।

मनोनीत जूरीकी तालिकामें दो प्रकारकी आपत्ति हो सकती हैं। एक तो यह कि मनोनीत समस्त जूरियों के प्रति आपत्ति करना और दूसरी यह कि उपस्थित जूरियोंमेंसे एक वा कई जनोंके लिए उज्र करना। अंग्रेजी भाषामें पहलीको Challenge to the array और दूसरीको Challenge to the polls कहते हैं।

शरीफ अथवा उनके नीचेके कर्मचारीके दोषसे पहली आपत्ति हो सकती है। दूसरी आपत्ति ४ प्रकारसे हो सकती है—१म, किसीका उपयुक्त सम्मान करनेके लिए पार्लियामेण्टके किसी लार्डकी सभ्य चुननेसे; २य, जूरी होनेके उपयुक्त न होनेसे; ३य, पक्षपात होनेकी आशङ्का होनेसे और ४र्थ, चरित्र-सम्बन्धी दोषके कारण चुने हुए जूरीकी बदनामी और उनकी न्यायपरता पर विश्वास न होनेसे। जूरी श्रेणीसे नाम निकल जानेसे या अन्य किसी कारणसे यदि विचारके समय उपयुक्त संख्यक जूरी उपस्थित न हों, तो संख्या पूर्तिके लिए दोनों पक्षकी सम्मतिके अनुसार पहलेकी बनी हुई सूचीसे किसी भी व्यक्तिको आह्वान किया जा सकता है। नियमित संख्याकी पूर्तिके लिए न्यायालयमें उपस्थित किसी भी व्यक्तिको आह्वान किया जा सकता है, यदि वे जूरीके आसन पर बैठें अथवा बुलाये जाने पर वे न्यायालयसे बिना अनुमतिके चले जांय, तो न्यायकर्ता इच्छानुसार उन्हें अर्थदण्डसे दण्डित कर सकते हैं। जूरी होनेके लिए किसीको आह्वानलिपि (Summons) भेजी जाने पर यदि वे उस पर ध्यान न दे कर उपस्थित न हों, तो उन पर अर्थदण्ड हो सकता है।

जूरियोंके उपस्थित होने पर उनको मुकदमेका तथ्य प्रकट करने और साक्ष्यके अनुसार उचित सम्मति देनेके लिए पृथक् रीत्या शपथ उठानी पड़ती है। इसके बाद वादीकी तरफका वकील जूरियोंके पास मुकदमा पेश करता है: आवश्यकता होने पर पहले जिसकी विस्तृत भावसे आलोचना हो चुकी है, जूरियोंके पास फिर उसका संक्षेपसे वर्णन करता है। इसके बाद प्रतिवादीका वकील अपने पक्षका समर्थन करता है। प्रतिवादीके वकीलकी वक्तृता समाप्त होने पर वादीका वकील उसका उत्तर देता है। पीछे न्यायाध्यक्ष मुकदमेका मर्म जूरियोंसे कहते हैं और साक्ष्यके प्रति लक्ष्य रख कर अपना मन्तव्य प्रकट करते हैं। फिर सब जूरी मिल कर एक निर्दिष्ट मन्त्र भवनमें जाते हैं और परस्पर तर्क-वितर्क करके उपस्थित विषयका एक सिद्धान्त निश्चित करते हैं। पीछे वे अपनी सम्मतिको प्रकट करनेके लिए फिर न्यायालयमें आ कर अपना अपना आसन ग्रहण करते हैं। जिससे वे शीघ्र ही सिद्धान्त स्थिर कर लें, इसलिए मन्त्रभवनमें वे कुछ खा-पी नहीं सकते। जिस समय जूरीगण अपना मन्तव्य प्रकट करेंगे, उस समय वादीकी उपस्थिति होनी आवश्यक है। जूरियोंमें एक प्रधान (Grand) रहते हैं, जो उनके मन्तव्यको प्रकट करते हैं। उनका मत विचारालयकी पुस्तकमें लिखे जाने पर ये अपने अपने आसनोंको छोड़ देते हैं।

दीवानी मुकदमेके फैसलेके लिए जूरी-प्रथाके जैसे नियम हैं, फौजदारी मुकदमेके लिए भी वैसे ही नियम

गुनतकल—मन्द्राज प्रान्तके अनन्तपुर जिलेमें गूतो तालुकका गांव। यह अक्षा० ७५॰ ८´ उ० और देशा० ७२॰ २३ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६०५८ है। यहां रेलवेका बडा जङ्क्शन है। दक्षिण पश्चिमको उच्च भूमिपर प्राचीन कालके यन्त्रादि आविष्कृत हुए हैं।

गुनवन्त (सं० त्रि०) गुणो। जिसमें कोई गुण हो।

गुनहगार (फा० वि०) १ पापो। २ दोषो, अपराधी।

गुनहगारी (फा० स्त्री०) १ पाप। २ दोष, अपराध।

गुनह्नी (फा० पु०) अपराधी गुनहगार।

गुना (हिं० पु०) एक प्रत्यय, जो सिर्फ संख्यावाचक शब्दोंके आखीरमें आता है। यथा दुगुना, चौगुना, दस-गुना और बसोगुना। २ गुणा या गुणन्।

गुना—मध्य भारतके ग्वालियर राज्यमें ईसागढ जिलेका शहर और अंगरेजी छावनी। यह अक्षा० २४॰ ३८´ उ० और देशा० ७७॰ १८´ पू०में आगरा बंबई सड़क और ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवेकी बीना-बारां शाखापर अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ११४५२ है। पहले वह एक क्षुद्रग्राम था, परन्तु १८४४ई०को छावनी पडनेसे बढ़ गया। शहरमें खैराती शफा खाना, रियासती डाकघर, सराय और स्कूल है। छावनी नगरसे कोई एक मील पूर्व पडती है।

गुनाह (फा० पु०) दोष, पाप।

गुनाहगार (फा० वि०) १ अनिष्टकारी, बुराई करनेवाला। (पु०) २ दुष्ट।

गुनाही (फा० पु०) १ पापकरनेवाला। २ दोषी, अपराध करनेवाला।

गुनिया (हिं० पु०) गुणवान्, वह मनुष्य जिसमें गुण हो। (स्त्री०) २ राजों, बढइयों प्रभृति कारिगरोंके कोनेकी सीध मापनेका यन्त्र। (पु०) ३ नौकाकी गुण खींचनेवाला मल्लाह।

गुनी (हिं० वि०) गुणो दखो।

गुनी—सिन्धु प्रान्तके हैदराबाद जिलेका तालुक। यह अक्षा० २४॰ ३०´ तथा २५॰ १०´ उ० और देशा० ६८॰ २०´ एवं ६८॰ ५०´ पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ८८६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८१५०६ है। इसमें एक शहर और १५८ गांव आबाद हैं। मालगुजारी और सेस २। लाखसे ज्यादा पडती है। हमवार मैदानमें सिर्फ दो छोटे छोटे पहाड़ हैं।

गुनुपुर—मन्द्राज प्रान्तके विजगपटम जिलेकी एजेन्सी तहसील। यह गञ्जाम सीमा पर पडती है। क्षेत्रफल ६०० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११२६८२ है। इसमें ११४८ गांव आबाद हैं।

गुनोबर (फा० पु०) एक तरहका देवदार या सनोबर। इसका पेड उत्तर-पश्चिम हिमालय पर्वत पर ६००० से १०००० फुटकी ऊंचाई पर होता है। इसके काठ बहुत मजबूत और कडे होते हैं। चिलगोजा नामक मेवा इसी वृक्षका फल है।

गुन्यफल (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष।

गुन्दगड़—हिमालयकी पश्चिम सीमा पर अवस्थित एक पर्वत। अङ्गरेजोंके आनेके पहले इस पर्वत पर लुटेरेका दल रहता था। इस पर्वतके उत्तर हरिपुरके सम्मुख-भागमें मुरिग्राम है। विद्रोहके-समय मेजर एवट इसी पर्वत पर आ छिपे थे।

गुन्दगुच्छक (सं० पु०) गुच्छकरञ्ज।

गुन्दल (सं० पु०) गुन् इति शब्देन दल्यतेऽसौ दल-णिच् कर्मणि अच। मर्द्दलध्वनि, मृदङ्गका शब्द।

गुन्दाल (सं० पु०) एक तरहका पक्षी, तीतर, दुराज।

गुन्दिकोटा—दाक्षिणात्यमें एक नगर और दुर्ग। यह दुर्ग कड़ापाके मध्यस्थलमें अक्षा० १४॰ ५१´ उ० और देशा० ७८॰ २२´ पू०के मध्य पर्वतशृङ्गके ऊपर अवस्थित है। इसके दक्षिणको ओर पर्वत फोड़ कर पेन्ना नदी कड़ापा जिला हो कर प्रवाहित है। १८०० ई०को निजामने यह जिला अङ्गरेजोंको दिया था।

गुन्द्र (सं० पु०) गुद्रि कर्मणि अच्। १ एक तरहकी घास। २ मूलयुक्त वृहत् तृण, जडवाली बडी बड़ी घास। इसका गुण कषाय मधुररस, शीतवीर्य, पित्तघ्न, रक्तनाशक, मूत्रकृच्छ्र, स्तन्य, मूत्र और रजशोधक है।
(भावप्रकाश पू० १म भाग)

गुन्द्रमूला (सं० स्त्री०) गुन्द्रस्य मूल मिव मूलं यस्याः बहुव्री०। १ एरका तृण, एक तरहकी घास। (भावप्रकाश पूर्व० १ भाग) २ मुस्तकतृण।

गुन्द्रा (सं० स्त्री०) गुन्द्रः तत्सादृश्यमस्त्यस्य मूले गुन्द्र

१। कौनसी सत्य घटना है, इस पर खयाल कर विचारकके आभासके अनुसार यथार्थ मतको प्रकट करना।

२। दस्तावेज और अन्यान्य विषयमें कानूनके विषयको छोड़ कर अन्य विषयोंमें जो जो पारिभाषिक और प्रादेशिक शब्द व्यवहृत होते हैं, उनके अर्थका निर्णय करना।

३। घटनासम्बन्धी समस्त प्रश्नोंको मीमांसा करना।

४। घटनाके विषयमें जो साधारण बातें प्रकट हुई हैं, वे विशेष घटनामें मिलाई जा सकती हैं या नहीं?

विचारक उचित समझें तो जूरियोंसे घटना, अथवा घटना और कानूनसे मिले हुए किसी विषयमें अपना अभिमत कह सकते हैं।

पहले लिखा जा चुका है कि, जजके पाससे अभियोगका मर्म अवगत हो कर जूरीगण आपसमें मीमांसा करनेके लिए एक निर्दिष्ट मन्त्र-भवनमें जाते हैं। यदि उनमें सबका मत एकसा न हो, तो विचारक उन्हें पुनः परामर्श करनेके लिये भेज सकते हैं। फिर भी यदि उनका एक मत न हो, तो वे भिन्न भिन्न मत प्रकट करते हैं।

विशेष कोई कारण न होने पर जूरी समस्त अभियोगोंमें एक मत प्रकट करते हैं। विचारक जूरियोंको उनके मतके विषयमें प्रश्न कर सकते हैं। विचारकको उन प्रश्नों और उनके उत्तरोंको लिख रखना पड़ता है।

भ्रम अथवा अकस्मात् किसी कारणसे जूरियोंका मत अन्यायपूर्ण हो, तो लिखे जानेसे कुछ देर बाद वे अपने मतका संशोधन करा सकते हैं।

हाईकोर्टमें विचारके समय यदि जूरियोंमेंसे कुछ जूरियोंका एक मत हो और विचारक यदि अधिकांशके साथ एक मत न हो कर भिन्न मतावलम्बी हों, तो वे उसी समय उस जूरीको छोड़ सकते हैं। एक जूरीको छोड़ कर यदि विचारककी इच्छा हो तो दूसरी जूरी कायम कर उसकी सहायतासे विचार कर सकते हैं। जूरियोंका मत यदि इतना अन्यायपूर्ण हो कि, जिसका सामान्य अनुधावन न करनेसे पता लग सकता है, तो सेसन जज भी उनके मतके विरुद्ध कार्य कर सकते हैं। हाईकोर्ट जूरियोंके किसी भी विचारमें हस्तक्षेप नहीं करता। सेसन-जज यदि हाईकोर्टमें उनके मतसे विरुद्ध कार्य करनेमें अपना मत प्रकट कर लिखें तो हाईकोर्टके जज विचार कर कभी तो जूरियोंके साथ और कभी सेसन-जजके साथ एकमत प्रकट करते हैं।

जूरियोंकी सहायतासे विचार्य अभियोग यदि एसेसरकी सहायतासे विचारित हो और आदेश लिखे जानेसे पहले यदि उस विषयमें किसी तरहकी आपत्ति उपस्थित न हो, तो वह विचार (न्याय) अग्राह्य न होगा।

पहले भारतवर्षमें इस समयकी भाँति जूरीकी प्रथा नहीं थी। हाँ न्यायाधीशकी सहायता देनेके लिए सभ्य वा एसेसर नियुक्त रहते थे। सभ्यगण प्रायः श्रेष्ठी वा व्यवसायी होते थे। सभ्य देखो।

इस समय भारतवर्षमें सब तरहके मुकदमोंके फैसलाके लिये जूरी प्रथा प्रचलित नहीं है। साधारणतः सेसन (Session) मुकदमोंके विचारके लिए जूरीको बुलाया जाता है।

जूर्ण (सं० पु०) जूर क्त। तृणभेद, एक प्रकारकी घास। इसके पर्याय—उलूक और उलप है।

जूर्णाख्य (सं० पु०) जूर्ण इति आख्या यस्य, बहुव्री०। तृणविशेष, एक घास। इसके पर्याय—सूच्यग्र, स्थूलक, दर्भ और स्वरच्छद है।

जूर्णाह्वय (सं० पु०) जूर्ण इति आह्वयः आख्या यस्य, बहुव्री०। देवधान्य।

जूर्णि (सं० स्त्री०) ज्वर-नि। वीज्याज्वरिभ्यो निः। उण् ४।४८। ज्वरत्वरेति। पा ३।४।२०। इत्यूट् च। १ वेग, तेजी। २ स्त्रीरोग, औरतोंका एक रोग। ३ आदित्य, सूर्य। ४ देह, शरीर। ५ ब्रह्मा। जूर कोपे नि। ६ क्रोध, गुस्सा। (त्रि०) ७ वेगयुक्त, वेगवान्, तेज़। ८ द्रवयुत, गला हुआ। ९ तापक, ताप देनेवाला। १० स्तुतिकुशल, जो स्तुति करनेमें निपुण हो।

जूर्णिन् (सं० त्रि०) वेगयुक्त, तेज़।

जूर्त्ति (सं० स्त्री०) ज्वर-भावे क्तिन्। ज्वरत्वरेति। पा ६।४।२०। ज्वर, बुखार।

जूर्य्य (सं० त्रि०) जूर कर्त्तरि-ण्यत्। १ जीर्ण, पुराना। २ वृद्ध, बुड्ढा।

दित्य, शक, वल्लभी और गुप्तके नामसे सम्वत्का व्यवहार करते है। शक-सम्वत्से २४१ वर्ष पीछे वल्लभी सम्वत् चला है। गुप्तकालके विषयमें ऐसा है—गुप्त नामके निष्ठुर और दुर्दान्त कुछ लोग थे, उनके उच्छेदके बादसे ही यह सम्वत् चला है। गुप्तोंके बाद वल्लभी सम्वत् चला। इसी तरह जिस समय यजदृजिर्दका सम्वत् ४०० था, उस समय श्रीहर्ष सम्वत् १४८८, विक्रमसम्वत् १०८८, शक ९५३, वल्लभी और गुप्तकाल ७१२ था।

फरासोसी विद्वान् रेनोकी उक्त पुस्तकको पढ कर पहिले पहल प्रत्नतत्त्वविदोंने यह निर्णय किया कि, जब गुप्तवंशके ध्वंसके बाद शकसंवत् (२४१ ३१८-१९ ई०) से गुप्तकाल प्रारम्भ हुआ है, तब यह बात निश्चित है, कि गुप्तराजगण उससे बहुत पहले विद्यमान थे। गुप्त-सम्राटोंके जितने भो अनुशासन-पत्र आविष्कृत हुए है, उनमेंसे अधिकांशमें किसी निर्दिष्ट सम्वत्के अङ्क लिखे हुए हैं। अब उन अङ्कोंकी प्रथम किस समयसे गणना प्रारम्भ होती है, इसका निर्णय करनेके लिये सभीको बडी भारी समस्यामें पड़ना पड़ा है। सबसे पहले जेम्स् प्रिन्सेप साहवने कहाउम स्तम्भ पर खुदे हुए स्कन्दगुप्तके शिलालेखमें इस तरहके १३३ अङ्क देखे थे, उन्होंने भ्रमसे उस लिपिको स्कन्दगुप्तकी समसामयिक न लिख कर उनकी मृत्युके १३३ वर्ष पीछेकी लिखा है। (२)

इसके बाद टमस साहवने फरोसी विद्वान्के मर्मानुसार और ९४५ वलभो सम्वत्के वेरावलके शिलालेखके अनुसार ऐसा स्थिर किया—वलभी सम्वत् ई० स० ३१९ से प्रारम्भ हुआ है। यह सम्वत् सम्भवतः गुहसेन द्वारा चलाया गया है। इलाहावाद, जूनागढ और भितरोके शिलालेखमें वर्णित गुप्तराजाओंने उक्त समयसे पहले राज्य किया था। शकराजाओंके बाद ही सौराष्ट्रमें गुप्तराजाओंका एकाधिपत्य हुआ था। (३)

इसके उपरान्त उक्त टमस साहबने १८५५ ई०में गुप्तकालके विषयका एक निवन्ध प्रकाशित किया; जिसमें अपने लासेनके मत (४)का अवलंवन कर १५० से १६० ई०के भीतर भीतर (५) गुप्तराजाओंका अभ्युदयकाल स्थिर किया। परन्तु कुछ दिन वाद अपने इस मतको बदल दिया और लिखा कि, गुप्तराजोंके शिलालेखमें उत्कोर्ण संवत और शककाल दोनों एक ही हैं। (६)

१८४४ ई०में प्रधान प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहामने भेलसाके बौद्धस्तूपके विषयमें एक बड़ी पुस्तक प्रकाशित की थी, जिसमें लिखा था—"३१९ ई०से गुप्तकाल प्रारम्भ हुआ है। मालूम होता है रेनो साहबका अनुवाद ठीक नहीं, अथवा अबूरैहान (अलवोरूनी) ही भ्रममें पड़ गये होंगे। गुप्तवंशके ध्वंससे गुप्तकाल चला है, यह बिल्कुल असम्भव है। क्योंकि इस वातको हम निश्चयसे जानते है कि, इसकी ५वीं या ६ठीं शताब्दीमें गुप्तराजगण राजत्व करते थे (७) किन्तु इन्होंने थोडे दिन वाद ही इस सिद्धान्तको वदल दिया और पीछे गहरी गवेषणाके वाद स्थिर किया कि, १६६-६७ ई०में गुप्तसम्वत् प्रारम्भ हुआ है। (८)। इसी तरह फिज एडवर्ड हालने (बापुदेवशास्त्रीकी सहायतासे) १९०-९१ ई०से और भारतके सुपण्डित डाक्टर भाऊदाजोने ३१९ ई०से गुप्तकालका प्रारम्भ स्थिर किया है। भाऊदाजोके मतसे वलभीराजवंशका अन्त होने पर कुमारगुप्त और स्कन्दगुप्त राजा हुए थे (९)। इसके अतिरिक्त और भी बहुतसे ऐतिहासिकोंने विपरीत मार्गका अवलम्बन कर गुप्तसम्वत्के प्रारम्भकालके निर्णयका प्रयत्न किया है।

फार्गुसन साहबने १८६९ और १८८० ई०में गुप्तकालके विषयमें दो निवन्ध प्रकट किये थे (१०)। उन लेखोंमें आपने रेनो साहब द्वारा वर्णित अलवेरुनीके मतको

(१) M Reinaud's Fragments Arabes et Persans, p 139 B

(२) Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. VII p 36-37

(३) Journal of the Royal Asiatic Society, Vol. XII (O S) p 1ff

(४) Indische Alterthumskunde, Vol 11

(५) Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. XXIV, p 371 ff.

(६) Fleet's Inscriptionum Indicarum, Vol. III, p. 32.

(७) Gen Cunningham's Bhilsa Topes, p 138 ff

(८) Indian Eras, p 53-59

(९) Journal Bombay branch R A S, Vol VIII p. 36 ff

समय इन्द्रके वृत्र द्वारा आक्रान्त होने पर देवोंने अत्यन्त चिन्तित हो कर जृम्भिकाकी सृष्टि की, इस जृम्भिकासे वृत्रको अत्यन्त आलस्य आ गया, जिससे इन्द्रने उसका वध कर दिया। तबहीसे यह जृम्भिका देवदत्त नामक जीवोंकी प्राणवायुका आश्रय ले कर अवस्थिति कर रही है। (भारत ५।१ अ०)

जृम्भण (सं० क्ली०) जृभि-भावे ल्युट्। १ मुखविकाश, जँभाई लेना। २ जृम्भणकारक, वह जो जँभाई लेता हो। ३ जृम्भकास्त्र। जृम्भक देखो।

जृम्भमान (सं० त्रि०) जृम्भ-शानच्। १ जँभाई लेता हुआ। २ प्रकाशमान।

जृम्भा (सं० स्त्री०) जृम्भ भावे घञ् ततष्टाप्। १ जृम्भ, जँभाई। जृम्भ देखो।

२ शक्तिविशेष, एक शक्तिका नाम।

'तुष्टिः पुष्टिः क्षमा लज्जा जृम्भा तन्द्रा च शक्तयः।"

(देवीभा० ३।१४।६१)

३ आलस्य वा प्रमादसे उत्पन्न जड़ता।

जृम्भिका (सं० स्त्री०) जृम्भा स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वं। १ जृम्भ जँभाई। २ निद्रावेगधारणजनित रोगविशेष, निद्राके अवरोध करनेसे उत्पन्न एक रोग। निद्राके आ जाने पर यदि उसे रोक लिया जाय तो यह रोग पैदा होता है। इसमें मनुष्य शिथिल पड़ जाता है और बार बार जँभाई लिया करता है। ३ आलस्य।

जृम्भिणी (सं० स्त्री०) जृभ-णिनि-ङीप्। एलापर्णी, एलापर्ण लता।

जृम्भित (सं० त्रि०) जृभि-क्त। १ चेष्टित, चेष्टा किया हुआ। २ प्रवृद्ध, खूब फैला हुआ। ३ स्फुटित, विकसित, खिला हुआ। (क्ली०) भावे-क्त। ४ जृम्भा, जँभाई। ५ स्फुटन, खिलना। ६ स्त्रियोंका करणभेद, स्त्रियोंकी ईहा या इच्छा।

जेंवना (हिं० क्रि०) भक्षण करना, खाना।

जेंवनार (हिं० स्त्री०) जेवनार देखो।

जेउर—अहमदनगर जिलेका एक शहर। यह अक्षा० १९° १८´ उ० और देशा० ७४° ४८´ पू०के मध्य अवस्थित है। अहमदनगरसे प्रायः १२ मील उत्तर-पूर्वमें पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ५००५ है। निकटके एक ऊँचे पहाड़के ऊपर तीन मन्दिर हैं, जिनमें १७८१ सम्वत्का ताम्रफलक है।

जेड्लाइ—वृन्दावनके अन्तर्गत अघवनके समीप एक ग्राम। कृष्णसे अघासुर मारे जानेके बाद गोपबालकोंने इस स्थान पर कृष्णका प्रशंसा गान किया था।

(वृ० ली० २८ अध्याय)

जेजुरी—बम्बई प्रदेशमें पूना जिलेके पुरन्धर तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १८° १६´ उ० और देशा० ७४° ९´ पू०में पूना नगरसे ३० मील और सासवड़से १० मील दक्षिण-पूर्व पूनासे सतारा जानेके पुराने रास्ते पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २८७१ है। दूरसे इस नगरका दृश्य अत्यन्त मनोहर लगता है। गण्डशैलके चूड़ास्थित खण्डोवा देवका मन्दिर और उसके चारों ओरका प्रस्तरनिर्मित प्राचीर तथा सोपानश्रेणी दर्शकों के प्रीतिकर है। यह हिन्दुओंका एक तीर्थस्थान है।

खण्डोवा या खण्डेराय देवताके मन्दिरके लिये यह शहर मशहूर है। देवताका पूरा नाम खण्डोवा मल्लारी मार्त्तण्ड-भैरव महालसाकान्त है। इन्होंने अपने हाथमें खण्ड अर्थात् खड्ग धारण किया है, इसीसे इनका नाम खण्डोवा पड़ा है। ये महाराष्ट्रोंके उपास्य हैं। वे खण्डोवाको विशेष भक्ति श्रद्धासे पूजते हैं। इनके दो मन्दिर हैं, जिनमेंसे पहला बहुत बड़ा है और ग्रामसे २५० फुट ऊँचे पहाड़ पर बना हुआ है। पुराना मन्दिर प्रायः २ मील दूरमें ४०० फुट ऊँचो मालभूमि पर अवस्थित है। कड़ेपाथर नामक पहाड़को चोटी पर यह मन्दिर निर्मित है। इसके सिवा चोटी पर बहुतसे देवमन्दिर और १२।१३ घर पुरोहितके वास हैं। यहां भी अनेक यात्री आते हैं।

अभी जिस स्थान पर नूतन मन्दिर है पहले प्राचीन जेजुरी ग्राम उसी स्थान पर था। वर्त्तमान शहर मन्दिरके उत्तरमें अवस्थित है। पुराने ग्रामके निकट पेशवा बाजीरावका बनाया हुआ एक बड़ा सरोवर है। उसके जलसे बहुत शस्यक्षेत्र सींचे जाते हैं। सरोवरमें स्नान करनेके वास्ते बहुतसे पत्थरके बने हुए कुण्ड या हौज हैं और गणपतिदेवकी एक मूर्त्ति है। इससे कुछ नीचे सरोवरसे निकली हुई एक झरना है जिसे लोग मलहर-

ताम्रशासन सूर्यग्रहणके उपलक्षमें प्रदत्त हुआ था। फ्लिट साहबके मतसे ८०५ ई०में ७ मईको यह ग्रहण हुआ था। उक्त ग्रहणके ८ मास ४ दिन बाद वह ताम्रफलक खोदा गया था। परन्तु ८२६ शक गताब्दमें भी कार्त्तिक या मार्गशीर्षमें, अर्थात् ८०४ ई०में १६ जूनको भी ग्रहण हुआ था। यह ग्रहण उक्त ताम्रशासनके खोदे जानेसे ३ मास ४ दिन पहले हुआ था। ग्रहणके थोड़े समय बाद ही ताम्रशासन लिखे जानेकी बात है। विशेषतः पूर्ववर्त्ती सूर्यग्रहणका उल्लेख न हो कर उस ग्रहणके पूर्ववर्ती ग्रहणका उल्लेख होगा, यह सम्भव नहीं हो सकता। सुतरां जब शक ८२६ गताब्द और गुप्त ५८५ गताब्द मिल रहा है। तब २४१ शक गताब्द=१ गुप्तकाल गत स्वीकार करना पड़ेगा।

गुप्त राजाओंके समस्त शिलालेखोंका मनन करनेसे ३१८ ई०से ही गुप्तकालका प्रारम्भ मानना पड़ता है। डाक्टर पिटर्सन, भाण्डारकर और ओलडेनवर्गका भी ऐसा ही मत (१५) है। और भी नाना कारणोंसे मि० फिलटका सिद्धान्त समीचीन नहीं जंचता है।

गुप्तकाशी—हिमालय प्रदेशके गढ़वाल जिलेके अन्तर्गत नागपुर विभागमें स्थित एक ग्राम। यहां गैर नदी आकर मन्दाकिनीके साथ मिली है। पुण्यधाम काशीक्षेत्रमें जिस प्रकार बहुत शिवलिङ्ग देखे जाते हैं, यह भी वैसा ही है। इस प्रकारसे शिवलिङ्गकी बहुलता और स्थानका माहात्म्य कहते हुए यहांके लोग कहते हैं—"जितने कङ्कर उतने शङ्कर"—अर्थात् यह स्थान शिवमय है। काशीधाममें जिस तरह विश्वेश्वर और भागीरथीकी दो धाराओंसे पूजा होती है, उसी प्रकार यहां भी विश्वनाथ तथा यमुना और भागीरथीकी पूजा होती है। इन दोनों नदियोंका जल विश्वनाथके मन्दिरके सामनेकी पुष्करिणीमें आकर गिरा है। इस मन्दिरको प्रात्यहिक सेवाके लिये गोरखालियोंने रुपये दिये हैं।

गुप्तगति (सं० पु०) गुप्ता गतिर्यस्य, बहुव्री०। १ गुप्तचर। (स्त्री०) गुप्ताचासौ गतिश्चेति कर्मधारय समास। २ गूढ़ गमन।

गुप्तगन्धि (सं० स्त्री०) एलबालुक, एक प्रकारका गन्ध द्रव्य।

गुप्तगोदावरी—एक क्षुद्र नदी। यह बुन्देलखण्ड जिलेमें चित्रकूट पर्वतसे ८ मील दक्षिण पूर्व पहाड़की कन्दरासे निकलकर गोदाईनालामें गिरती है। इसके पवित्र जलमें स्नान करनेके लिये दूर दूर देशके मनुष्य यहां आते हैं। इस गुहामें नागरी अक्षरसे लिखा हुआ एक शिलाफलक है।

गुप्तघाट—सरयूतीरस्थ एक तीर्थस्थान। इसी स्थानसे रामचन्द्रने स्वर्गारोहण किया। इसका वर्त्तमान नाम गोप्तारघाट जो फैयजाबादमें अवस्थित है।

गुप्तचर (सं० त्रि०) गुप्तश्चरो यस्य, बहुव्री०। १ जिसकी गुप्तचर हो। (पु०) गुप्तश्चासौ चरश्चेति। २ दूतविशेष, जो किसी बातका चुपचाप भेद ले, भेदिया, जासूस।

गुप्तदान (सं० पु०) वह दान जिसे दाताके अतिरिक्त और दूसरा कोई जानने न पावे।

गुप्तपत्र (सं० पु०) मध्वालु, एक प्रकारका कन्द।

गुप्तपुष्प (सं० पु०) सप्तपर्णवृक्ष, छतिवनका पेड़।

गुप्तबीज (सं० क्ली०) तृण, घास।

गुप्तमणि (सं० पु०) कुमारियोंके क्रीड़ाविशेष।

गुप्तमार (हिं० स्त्री०) १ इस तरहकी चोट देना जिससे शरीर पर कोई चिह्न दीख न पड़े, भीतरीमार। २ छिपकर किया हुआ अनिष्ट।

गुप्तराजवंश—भारतवर्षका एक महाबली और प्रबल पराक्रमी राजवंश। विष्णु, वायु, ब्रह्माण्ड और मत्स्यपुराणमें इस राजवंशका उल्लेख है। यथा—

> "नव नागाः पुरीं चम्पां नागा भोक्ष्यन्ति सप्त वै।
> अनुगङ्गं प्रयागं च साकेतं मगधं तथा।
> एतान् जनपदान् सर्वान् भोक्ष्यन्ते गुप्तवंशजाः।"
>
> ब्रह्माण्ड उपसंहारपाद।

नागवंशीय सात राजा मथुरापुरीका भोग करेंगे, किन्तु गुप्तवंशीय गण मथुरा, अनुगङ्ग, प्रयाग, अयोध्या और मगध इन सभी जनपदोंका उपभोग करेंगे।

वास्तवमें किसी समय गुप्तराजोंने सम्पूर्ण उत्तरभारतमें अपना आधिपत्य विस्तार किया था और प्रबल पराक्रमी राजचक्रवर्ती रूपसे प्रसिद्ध थे, यह बात गुप्तराजाओंके समयके शिलालेखोंसे भली भांति मालूम हो जाती है।

आदि दूर देशोंसे भी यात्री आते हैं। चैत मासके मेले-में कभी कभी लाखसे अधिक यात्री जुटते है।

इसके सिवा सोमवती अमावस्या तथा विजयादशमी-के दिन उससे छोटा मेला लगता है। इस समय केवल आस-पासके ग्रामोंसे ही यात्री आते हैं। सोमवती अमा-वस्याके दिन जेजुरीके पुजारी मूर्त्तिको पालकीमें बैठा कर दो मील उत्तर-काड़ा तीरवर्ती ग्रामके धालेवाड़ीके देवमन्दिरमें ले जाते हैं और वहां नदीमें स्नानादि करा कर फिर लौट आते हैं। विजया दशमीके दिन वे दल बांध कर ठाकुरको पालकीमें बाहर ले जाते हैं; ठीक उसी समय कड़े-पाथर मन्दिरसे और दूसरा ठाकुर सज-धजके साथ बाहर निकलते हैं। दोनों दल दो तरफसे आ कर रास्तेमें मिल जाते और वहां कुछ काल परस्पर अभिवादनके बाद अपने अपने मन्दिरको प्रत्यावर्तन करते हैं।

पहले अगहन महीनेके उत्सवमें एक भक्त वाघिया अपने जंघेको तलवारसे छेद कर नगरमें घूमता था। उस समय इसके सिवा और भी दूसरा दूसरा कठिन व्रत प्रचलित था। अभी देवताके उद्देश्यसे मन्दिरका सोपान-निर्माण, ब्राह्मण-भोजन, अर्थदान, मेषवलि और कोई कोई अपनी सन्तानको आजीवन खण्डोवाकी सेवामें नियुक्त करते हैं। उसीका पुत्र वाघिया और कन्या मुरली नामसे पुकारी जाती है। भेड़ोंका वलिदान यहां इतना अधिक होता है, कि किसी किसी वर्ष २०।३० हजार तक भी हो जाया करता है।

खण्डोवाके पण्डा गुरव हैं। यात्रिगण आ कर शहरमें पण्डाके घरमें टिकते हैं। यहां प्रायः दो दिन ठहर कर वे यथारीति समस्त पूजादि सम्पन्न करते हैं। दूसरे दिन मानत अर्थदान किया जाता है। ब्राह्मण भोजनका मानत रहनेसे वे पुरोहितके घरमें उन्हें खिला देते हैं। भेड़की बलि देनेसे उसका आधा मुण्ड काटने-वालेको और आधा म्युनिसपालिटीको मिलता है। बलिका मांस यात्री लोग अपने डेरे पर ला कर खाते हैं। इस समय उनके साथ २।४ वाघिया और मुरली रहती हैं। दूसरे दिन रातको वे मसाल बाल कर मन्दिर प्रदक्षिण करते हैं।

इसके बाद वे प्राङ्गणस्थ पीतलके प्रकाण्ड कूर्मपृष्ठ पर खड़ा हो कर नारियल, धान और हल्दी वितरण करते हैं और कुछ प्रसाद अपने पास भी रख लेते हैं। सब काम समाप्त होने पर जिसका गान मनत रहता है, वह कई एक वाघिया और मुरली कुमारीको अपने डेरे पर ले जा कर गान कराता है। इन्हें सवा रुपया एक दलको देना पड़ता है।

मन्दिरमें प्रवेश करते समय प्रत्येक यात्रीको दो पैसेके हिसाबसे म्युनिसपालिटीको कर देना पड़ता है। यह कर अगहनसे चैत तक लिया जाता है। दूसरे समय यात्री बिना कर दिये मन्दिरमें प्रवेश कर सकते हैं। म्युनिसपालिटी यह अर्थ यात्रियोंकी सुविधाके लिये नगर और अन्यान्य स्थानोंके परिष्कार और स्वास्थ्यकर रखनेमें खर्च करती है।

मन्दिरको और सारी आमदनी पुरोहित गुरवगण और मन्दिरके तत्त्वावधारकगण पाते हैं। उसमें कुछ कुछ गायक तथा मन्दिरके दूसरे दूसरे सेवकको मिलता है।

जो यात्री धनी होते हैं वे अपनी इच्छासे दो एक दिन और ठहर कर काड़ा-पाथरके पुराने मन्दिर तथा मलहर या मल्लार तीर्थ देखने जाते हैं। यात्रियोंका खाद्य और देवसेवाका उपकरण छोड़ कर मेलेमें जितनी चीजें बिकनेको आती है, उनमें कम्बल प्रधान है। दूसरे दूसरे द्रव्योंमें पीतलका बरतन और तरह तरहके रंगीन वस्त्र, छोटे छोटे लड़कोंका पोशाक, अनेक प्रकारके खिलौने, तसवीर आदि बिकनेको आती हैं। यात्रिगण स्त्री पुत्र-कन्यादिके लिए साध्य और स्वेच्छामत दो चार अच्छी अच्छी चीजें और राहका खाद्यपदार्थ खरीद कर अपने अपने घर लौट आते हैं।

मेलेके समय नगरकी सुव्यवस्थाके लिये १८६८ ई०को जेजुरीमें एक म्युनिसपालिटी स्थापित हुई है। मेला समाप्त होने पर उसके कर्मचारी यात्रियोंकी संख्या और दूकानोंकी बिक्रीके अनुसार शहरके प्रत्येक घरसे टैक्स वसूल करते हैं। यह टैक्स ।),॥),।) और ≶) आने तक होता है।

जेट (हिं० स्त्री०) १ समूह, यथ, ढेर। २ रोटियोंको

पर आधिपत्य जमा लिया था। बहुत दिन राजत्र करनेके बाद ४१३ ई०में इनका प्राणान्त हुआ।

चोनके बौद्धयात्री फाहियनने चन्द्रगुप्तके राज्यका सम्पूर्ण विवरण अपने ग्रन्थमें लिखा है। ये ४०६ ई०में भारतवर्ष आये थे और छह वर्ष तक यहां रहे। इतने दिनोंमें इन्होंने चन्द्रगुप्तका सारा राज्य परिभ्रमण कर जो कुछ देखा या सुना उसे अपनी किताबोंमें लिख लिया था। वे लिखते हैं—प्राचीन राजधानी पाटलीपुत्र अब भी एक उन्नति दशामें है और यहां बहुत मनुष्य वास करते हैं। इसके चारों ओर बड़े बड़े शहर हैं। प्रायः सभी मनुष्य सच्चे और धर्मात्मा दीख पड़ते हैं। राजधानीमें दो बौद्धमठ हैं जिनमें कमसे कम छह या सात सौ विज्ञ सन्यासी रहते हैं। कोई भी बौद्ध उत्सव बहुत धूम धामसे किया जाता और उसमें बहुतसा खर्च होता है। राज्यकार्य शान्त और सुचारु रूपसे चलाया जाता है। प्रजा पर किसी तरहका कर निरूपित नहीं। यात्री भी इच्छानुसार जहां तहां यात्रा कर सकते हैं। केवल जमीनकी मालगुजारी ही राज्यकी आमदनी है। अपराधीको साधारण दण्ड दिया जाता और राजकर्मचारियोंका वेतन नियत है। अच्छे कुलके आदमी शिकार नहीं कर सकते अथवा मछली भी नहीं बेचने पाते। यह सब काम नीच जातियोंके नियत है। अच्छे आदमी किसी प्रकारका मादक द्रव्य तथा मांस, मछली और लहसुन नहीं खाते। शहरमें एक भी कसाई तथा शराबकी दूकान नहीं दीख पड़ती। उस समय नेपालके पहाड़ी स्थानोंकी दशा शोचनीय थी। प्रसिद्ध श्रावस्ती शहर तथा कपिलवस्तु और कुसी नगरका भग्नावशेष दृष्टिगत होता था।

समस्त राज्यमें शान्ति फैली हुई थी। चोर या डकैतका नामोनिशान भी न था। यात्री भयरहित यात्रा कर सकते थे और विद्याकी यथेष्ट उन्नति थी।

ई०के ५७ वर्ष पहले उज्जैनके विक्रमादित्यके समयमें संस्कृतका जैसा आदर था चौथी शताब्दीकी समुद्रगुप्त और उनके लड़के द्वितीय चन्द्रगुप्तके समयमें भी संस्कृतको वैसा ही स्थान मिला था।

द्वितीय चन्द्रगुप्तकी मृत्युके बाद उनके लड़के प्रथम कुमारगुप्त सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इनके समयमें कोई विशेष घटना न हुई थी। ये भी पिताकी नाईं बड़े शूर वीर थे। राज्यके अंतिम समयमें विदेशी आक्रमणकारियोंसे इन्हें बहुत कष्ट झेलना पड़ा था।

४२० ई०में ख्वारिज्मके श्वेतहूण मध्य एशियासे रोमन राज्यके पूर्वीय प्रदेशों पर धावा करनेके लिये चले, उस समय वहांके राजा थेओडोस थे। इस बार वे लौट जानेके लिये बाध्य हुए। थोड़े समयके बाद पुष्यमित्रवंशकी सहायता पाकर उन्होंने दूसरे रास्तेसे चलकर भारतवर्ष पर चढ़ाई की।

इस आक्रमणसे कुमारगुप्त बहुत क्षति ग्रस्त हुआ, और राज्यका प्रायः समस्त भाग नष्ट भ्रष्ट हो गया। गुप्तवंशकी अवनति इसी समयसे आरम्भ हुई। इसी चिन्तासे कुमारकी मृत्यु हुई। बाद इनके पुत्र स्कन्दगुप्तने ४५५ ई०के अप्रेल मास राजसिंहासन पर आरोहण किया। इन्होंने अपने राज्यका खोया हुआ बहुतसा भाग पलटाया और पश्चिमीय तथा पूर्वीय प्रदेश पर पुनः अपना अधिकार जमाया था। इनके राज्यशासनके अन्त समय अर्थात् ४८० में इन्हें शत्रुओंसे बहुत तकलीफ झेलनी पड़ी। इनकी मृत्युके साथ साथ गुप्तवंशकी श्री भी जाती रही। इनके मरनेके बाद इनके भाई पुरगुप्त तथा दो और उत्तराधिकारी राज्यके केवल पूर्वीय प्रदेशों पर शासन करते रहे।

पुरगुप्तके बाद इनके पुत्र नरसिंहगुप्त राजा हुए। इन्होंने और दूसरे दूसरे राजाओंकी सहायतासे हूनके प्रधान मिहिरकुलको ५२४ ई०में काश्मीरको मार भगाया। इस तरह राज्यके बहुतसे भागों पर इन्होंने पुनः अधिकार जमाया। इनकी मृत्युके बाद उनके पुत्र द्वितीय कुमारगुप्त ४७३ ई०में राज्याभिषिक्त हुए। इन्होंने सिर्फ तीन चार वर्ष तक राज्य किया। इनके बाद इनके उत्तराधिकारी बुधगुप्त हुए। इनके समयके बहुतसे शिलालेखोंसे पता चलता है कि इन्होंने २७वर्ष (४७७-४९६) तक राजत्र किया था। युएन चुअंगसे मालूम होता है कि ये शक्रादित्यके पुत्र थे। दिनाजपुर जिलेके दामोदरपुर ग्रामके दो ताम्रलेखोंसे पता चलता है कि बुधगुप्तका राजत्र पुण्ड्रवर्द्धनभुक्ति या उत्तरीय और पूर्वीय

जन खाचर द्वारा दोनों विताड़ित किये गये। अब भी अनियालि आदि स्थानोंमें इनके वंशज रहते हैं।

मुलूनागा जन खाचर बीच बीचमें आनन्दपुर आ कर २०।२५ दिन रहा करते थे। नगरके तोरणद्वारका एक पत्थर जरा खसक गया था, इसलिए उसके गिरनेके भयसे जेठशूर और मियाजन द्वार पार होते समय घोड़ेको तेजीसे ले जाते थे। मुलूनागा जनने इनको प्राणभयसे भीत देख कर इनको कायर समझ लिया। एक दिन उन्होंने पांच सौ अश्वारोहियोंके साथ नगर पर आक्रमण किया। जेठशूर और मियाजन दोनों जब अपनी अपनी सम्पत्ति ले कर रातको भाग गये, तब खाचरसूलू और उनके भाई लाखोने (१६८१ सम्वत्‌की पौष शुक्ला २या रविवारको) आनन्दपुर अधिकार कर लिया।

जेठा (हिं० वि०) १ अग्रज, बड़ा। २ सबसे उत्तम, सबसे बढ़ियां।

जेठामल—नारदचरित्र नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता। ये संवत् १८४२के लगभग विद्यमान थे।

जेठाई (हिं० स्त्री०) जेठापन, बड़ाई।

जेठानी (हिं० स्त्री०) पतिके बड़े भाईकी पत्नी, जेठकी स्त्री।

जेठियान—विहार प्रदेशमें गया जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। इसका प्रकृत नाम यष्टिवन है। निकटस्थ पहाड़के ऊपर बांसका जंगल है। उसे अभी भी जखटी वन कहते हैं। वहांके मनुष्य बांसको काट कर गयामें जा बेचते हैं।

ग्रामसे १४ मील दूर तपोवन नामक स्थानमें दो गरम सोते निकले हैं। चीनपर्यटक युएनचुयाङ्ग इस ग्रामको तथा इसके निकटस्थ पहाड़के ऊपर बांसके वनको देख गये हैं। उन्होंने यहांके गरम सोतेका हाल भी लिखा है। उन्होंने इसे बुद्ध-वनसे ५ मील पूर्वमें अवस्थित बतलाया है।

जेठी (हिं० वि०) जो जेठ महीनेमें होता हो, जेठ सम्बन्धी। (पु०) २ नदियोंके किनारे पर होनेवाला एक प्रकारका धान। यह चैत्रमें बोया और ज्यैष्ठमें काटा जाता है। इसे बोरोधान भी कहते हैं।

(स्त्री०) ३ जेठमें पकने और फूटनेवाली एक प्रकारकी कपास। काठियावाड़में इसे मंगरो कहते हैं और बरारमें जूड़ी या टिकड़ी।

जेठीमधु (हिं० स्त्री०) यष्टिमधु, मुलेठी।

जेठीमल म्होड—म्होड ब्राह्मणोंकी एक शाखा। म्होड ब्राह्मणोंमें इनका पद गिरा हुआ है। कहा जाता है कि चतुर्वेदी म्होड़ोंमेंसे २० ब्राह्मण हनूमानकी खोजमें गये थे, जो मार्गमें रह जानेके कारण आचारभ्रष्ट हो गये और कालान्तरमें वे जेठीमलम्होड़ कहलाने लगे। जेठीमलम्होड नीच जातियोंको दक्षिणा ग्रहण करते हैं।

जेठौत (हिं० पु०) पतिके बड़े भाईका पुत्र, जेठका लड़का।

जेतपुर (देवली)—बम्बई प्रान्तकी काठियावाड़ पोलिटिकल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० २२° २६′ तथा २२° ४८′ उ० और देशा० ७०° ३५′ एवं ७०° ५१′ पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ८४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११५६८ है। २१ गांव बसे हैं। आय कोई १२५०००) रु० है। यह राज्य २० तालुकदारोंके अधीन है।

जेतपुर (वदिया)—बम्बई प्रान्तकी काठियावाड पोलिटिकल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० २१° ४०′ उ० और देशा० ७१° ५३′ पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल ७२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १०३३० है। आय कोई १३००००) रु० होती है। इसमें १७ गांव हैं।

जेतपुर (मुलू सुराग)-बम्बई प्रान्तमें काठियावाड पोलिटिकल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० २१° २६′ तथा २१° ४८′ उ० और देशा० ७०° २६′ एवं ७०° ५०′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २५ वर्गमील और लोक संख्या प्रायः ६७२८ है। १७ गांवोंमें लोग रहते हैं। आय प्रायः ६००००) रु० है।

जेतपुर (नाजकाल या विलख)—बम्बई प्रान्तके काठियावाड़ पोलिटिकल एजेन्सीका एक राज्य। यह अक्षा० २१ एवं २१° २३′ उ० और देशा० ७०° ३५′ तथा ७०° ५७′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ७२ वर्गमील और लोकसंख्या १०२६६ है। २४ गांव बसे हुए हैं। आय कोई १५०५०००) रु० है।

जेतपुर—बम्बईकी काठियावाड़ पोलिटिकल एजेन्सीमें

राजा होते गये। हर्षने कामरूपके राजा भास्करवर्मा-से मिलकर गौड पर चढ़ाई कर दी और उनकी स्वतन्त्रता छीन ली। हर्षकी मृत्युके बाद आदित्यसेनने राजसिंहासन पर आरोहण किया। ये बड़े शूरवीर राजा निकले और इस समय यह वंश कुछ उन्नतिशिखर पर पहुंच गया था। इनके समयके बहुतसे शिलालेख पाये जाते हैं जिनसे पता चलता है कि इनका राज्य समुद्र किनारे तक विस्तृत था और उस समय ये एक चक्रवर्त्ती राजामें गिने जाते थे। कहा जाता है कि इन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया था। इन्हें महाराजाधिराज और परम भट्टारक उपाधि मिली थीं। शाहपुर-शिलालिपि-से मालूम पड़ता है कि ये ६७२-८३ ई०में विद्यमान थे।

देववरणारक लेखसे पता चलता है कि आदित्यसेनके बाद उनके लड़के देवगुप्त हुए और देवगुप्तके बाद उनके लड़के विष्णुगुप्त गुप्तवंशके राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इस वंशके अंतिम राजाका नाम जीवितगुप्त (२य) था। इनके समयमें गौड वंशने पुनः धावा किया और इस बार गुप्त राजाको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। एक समय जो गुप्तवंश एक उच्च शिखर पर चढ़ गया था अब उसकी श्री सदाके लिये जाती रही।

पृष्ठ ४१२ में गुप्तराजवंशको तालिका देखो।

गुप्तवंश (सं० त्रि०) गुप्तः लुकायितः वंशोऽस्य, बहुव्री०। १ जो मनुष्य अपना उपयुक्त वंश छिपा कर दूसरा वंश धारण करे। (पु०) गुप्तश्चासौ वंशश्चेति। २ गूढ़वंश, जो दूसरे वंशमें होनेके कारण किसी दूसरेसे पहचाना न जा सके।

गुप्तस्नेह (सं० पु०) गुप्तःस्नेहो यत्र,बहुव्री०। १ अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़ २ गूढस्नेह।

गुप्ता (सं० स्त्री०) गुप्त-टाप्। १ कपिकच्छु, कौंचका वृक्ष। २ परकीया नायिका, वह नायिका जो सुरति छिपानेका उद्योग करती है। कालके अनुसार इसके तीन भेद हैं—भूतसुरतिगुप्ता, वर्त्तमान सुरतिगुप्ता, और भविष्य सुरतिगुप्ता। ३ रक्षिता स्त्री। ४ चन्दनविशेष।

गुप्तापत्र (सं० क्ली०) श्वेत शोमका वोज, सफेदसेमका बीया।

गुप्ति (सं० स्त्री०) गुप-क्तिन्। १ छिपानेकी क्रिया। २ आच्छादन। ३ रक्षण, रक्षा करनेकी क्रिया। ४ तंत्रके अनुसार ग्रहण किए जानेवाले मंत्रका एक संस्कार। ५ गुफा, कन्दरा। ६ कारागार, कैदखाना। ७ गड्ढा, खन्ता। ८ अहिंसा आदि योगके अङ्ग, यम। ९ गड्ढा बनानेके लिये जमीन खोदना। १० नावका छेद। ११ मन वचन कायका वह धर्म, जिससे संसार पर्ि भ्रमणके कारणसे आत्माकी रक्षा की जाती है। सुप्रसिद्ध जैनाचार्य उमास्वामी गुप्तिका स्वरूप ऐसा लिखते हैं—

"सम्यग्योगनिग्रह गुप्तिः। (तत्त्वार्थसूत्र ९, अ० ९)

योग अर्थात् मन वचन और शरीरकी क्रिया, इनके यथेच्छ आचरण (स्वेच्छाप्रवृत्ति) को रोकनेका नाम योगनिग्रह है और योगका निग्रह ही गुप्ति है। इससे योगों द्वारा जो कर्मोंका आस्रव होता वह संवृत अर्थात् रुक जाता है। साधारणतः गुप्तिके तीन भेद हैं-मनोगुप्ति वचनगुप्ति और कायगुप्ति।

गुप्तिपाड़ा—इसका असली नाम गुप्तपल्ली अर्थात् गुप्त उपाधिधारी वैद्यजातिका वासस्थान है। बङ्गालमें हुगली जिलेकी उत्तर सीमामें अवस्थित एक प्राचीन गण्डग्राम वा नगरविशेष। कविकङ्कण मुकुन्दराम चक्रवर्ती प्रणीत चण्डीग्रन्थमें धनपति और श्रीमन्त सौदागरकी समुद्रयात्राके प्रसङ्गमें, कविवर कृष्णराम कृत शीतलामङ्गलमें कृषिकेश सौदागरकी दक्षिणपाटनकी यात्राके प्रस्तावमें तथा गङ्गाभक्तितरङ्गिणी ग्रन्थमें भी इस गुप्तिपाड़ाका उल्लेख मिलता है। इन ग्रन्थकारोंने जिस समयमें गुप्तिपाड़ाका उल्लेख किया है, उस समय सुरतरङ्गिणी भागीरथी गुप्तिपाड़ाको उत्तर दिशासे (अर्थात् उसे दक्षिणमें छोड़ कर) सागरकी ओर बहती थीं।

इस ग्राममें ब्राह्मण, वैद्य और कायस्थ आदि उच्च वर्णके बहुसंख्यक हिन्दू जातियोंका वास था। यहां बहुतसे बङ्गाली पण्डितों और गुणियोंका आविर्भाव हुआ है। प्रसिद्ध कवि पण्डित वाणेश्वर विद्यालङ्कार और उनके पूर्व पुरुषोंमेंसे बहुतोंका जन्म इसी गुप्तिपाड़ामें हुआ था।

इस गुप्तिपाड़ामें निदानके टीकाकार विजयरक्षित और अमरकोषके टीकाकार भरतमल्लिकका जन्म हुआ था। सङ्गीतविद्याविशारद सुकवि कालीमिर्जा भी यहीं आविर्भूत हुए थे।

जेतालपुर—अहमदाबादसे १० मील दक्षिणमें अवस्थित एक ग्राम। यहां रानीका घर नामका एक प्रासाद है।

जेतृ (सं० त्रि०) जि-तृच्। १ जयशील, जीतनेवाला। २ विष्णु। "अनघो विजयो जेता" (विष्णु स०)

जेत्व (सं० त्रि०) जि-वनिप् वेदे नि० दीर्घस्यापि तुक्। जेतव्य, जीतने योग्य, फ़तह लायक।

जेदचेरल—हैदराबाद राज्यके महबूबनगर जिलेका पहला तालुक। इसकी लोकसंख्या प्राय: ८६८८६ और क्षेत्र-फल ८४६ वर्गमील था। १९०५ ई०को यह दूसरे तालुकोंमें जोड़ दिया गया।

जेनेभा—सुइजरलैण्डका एक नगर और काण्टन वा राज-नैतिक विभाग। यह जेनेभा ह्रदके दक्षिण-पश्चिम कोणमें अवस्थित है। इसका रकबा १०८.९ वर्गमील है, जिसमें ८८.५ वर्गमीलके भीतर नाना प्रकार द्रव्य उत्पन्न होते हैं। इसके चारों ओर फरासीसी राज्य है। इसके बीचमें पूर्वसे पश्चिमको 'रोन' नदी बहती है। यहां अनेक प्रकारके पशु पक्षी देखनेमें आते हैं।

जेनेभा-काण्टनमें तीन राजनैतिक शासनविभाग हैं। १८१५से १८४२ ई० तक नगर और काण्टन एक ही प्रथासे शासित होता था। किन्तु १८४२ ई०में नगर स्वाधीन हो गया और तबसे शासन परिषद्के ४१ सभ्योंके मतानुसार उसका शासन होने लगा। यहांके शासन कार्यमें Referendum और Initiative नामक दो गणतन्त्रों द्वारा अनुमोदित प्रथा व्यवहृत होती है, जिससे यहांके लोकमतके विरुद्ध कोई भी कार्य नहीं हो सकता।

यहां प्रोटेष्टाण्ट और काथलिक दोनों सम्प्रदायोंके धर्ममन्दिरादि हैं। फिलहाल बहुतोंने काथलिक धर्म ग्रहण किया है और कर रहे हैं। जेनेभा प्राचीनकालसे ही नाना प्रकार व्यवसायका केन्द्रस्थान है। ईसाकी १५वीं शताब्दीके मध्य भागमें इसके उत्कर्षकी सीमा न थी। वर्तमानमें जेनेभा घड़ीके लिए प्रसिद्ध है—यहां-की घड़ीका सर्वत्र आदर होता है।

जेनेभा आकारमें छोटा होने पर भी वहां बहुतसे प्रसिद्ध व्यक्तियोंने जन्मग्रहण और वास किया है। १६वीं शताब्दीमें कालभिन और बनिभार्डने धर्म जगत्में महा विप्लव उपस्थित किया था। उस समय आइजक कासा-उवनको विद्याकी ख्याति यूरोपमें सुप्रतिष्ठित थी। १८वीं शताब्दीमें जे० जे० रूसो इस स्थानमें वास करके इसका गौरव बढ़ा गये हैं। इन्हीं रूसोकी लेखनीसे निकले हुए ज्वालामयी सन्दर्भको पढ़ कर फरासीसियोंने विप्लव में साथ दिया था। इसके सिवा साउसूर, काण्डोल, कैसि यर, फैब्रे और नेकर आदि बहुतसे विद्वानोंने यहां जन्म लिया था। टपफार नामक एक विद्वान्ने सुइजरलैण्ड-के युवकोंमें पुंमैथुनका माहात्म्य प्रगट किया था।

जेनेभामें मध्ययुगके बहुतसे प्राचीन गिर्जा हैं, जिनकी खूबसूरती तारीफके लायक है।

इतिहास—ईसाकी ७वीं शताब्दीमें इस स्थानका नाम था जेनुया वा जेनाभा। खृ० पू० प्रथम शताब्दीमें जूलियस सीजरने पहले पहल इसका उल्लेख किया था। पांचवीं शताब्दीमें यह बर्गण्डियनोंके हाथ लगा। उन लोगोंने यहां राजधानी स्थापित की थी। १०३२ ई०में अन्यान्य देशोंके साथ यह भी जर्मन-सम्राट् २य कनरड-के हाथ लगा। कनरडने जेनेभाके विशपको उक्त स्थान-का शासनभार अर्पण किया था। ३०० वर्षसे भी अधिक समय तक जेनेभा विशपोंके शासनाधीन था। उस समय इसके भीतर और बाहरके शत्रुओंसे आत्मरक्षा करनेके लिए विशपोंको बड़ी परेशानी उठानी पड़ी थी।

१५३५ ई०में जेनेभामें प्रोटेष्टाण्ट-धर्मका प्रचार हुआ, तभीसे इसके नवयुगकी सूचना हुई। इसी समय कालभिनने जेनेभा आ कर एकछत्र शासन किया था। धर्ममतके लिए उन्होंने स्वाधीनताकी घोषणा कर दी थी, किन्तु वे स्वयं वहां स्वेच्छाचारीकी तरह व्यवहार करते थे। १६३० ई०में जेनेभा सामयके हाथसे सम्पूर्ण मुक्त हो गया।

खृष्टीय १७वीं और १८वीं शताब्दीमें अन्यान्य सुइस-काण्टनोंने जेनेभाको अपने दलमें शामिल करना स्वीकार नहीं किया। जेनेभामें भी नाना प्रकारका अन्तर्विप्लव हुआ था। १७९८ ई०में फरासी-विप्लवके समय जेनेभा फरासीसियोंके हाथमें गया। १८१३ ई०में नेपोलियनका पतन होने पर जेनेभाने स्वाधीनता प्राप्त की। १५३५ से १७९८ ई० तक रोमनिष्ट प्रथाकी उपासना बन्द कर दी गई थी, किन्तु १८०३ ई०में सेण्ट जर्मनके

यहांके स्त्री पुरुष दोनों ही हमशायें सुरसिक और सुवक्ता कह कर प्रसिद्ध हैं।

गुप्ती (हिं० स्त्री०) एकतरहकी किरच या पतली तलवार जो छड़ीके अन्दर इस तरह रखी हुई रहती है कि आवश्यता हो आने पर बाहर निकाली जा सके।

गुप्तोत्प्रेक्षा (सं० स्त्री०) वह उत्प्रेक्षा जिसमें मानो', 'जानो' आदि सादृश्यवाचक शब्द न हो।

गुप्फा (हिं० पु०) १ फूंदना, झब्बा। २ फूलोंका गुच्छा।

गुफा (हिं० स्त्री०) कन्दरा, गुहा।

गुफ्तगू (फा० स्त्री०) वार्त्तालाप, बात चीत।

गुबरैला (हिं० पु०) एक तरहका छोटा कीड़ा जो सदा गोबर या मलमें रहता और उसे खाता है।

गुबार (अ० पु०) १ गर्द, धूल। २ मनमें दबाया हुआ क्रोध, दुःख या द्वेष।

गुबारा (हिं०) गुब्बारा देखो।

गुबिंद (हिं०) गोविन्द देखो।

गुब्बा (सं० पु०) रस्सीके मध्यमें डाला हुआ फन्दा।

गुब्बाड़ा (हिं०) गुब्बारा देखो।

गुब्बारा (हिं० पु०) लंबे आकारकी कोई चीज जिसमें गर्म वायु या किसी प्रकारकी वाष्प आदि देकर आकाशमें उड़ाते हैं। यह रेशम अथवा और दूसरे तरहके वस्त्रके थैलेमें रबरकी वार्निश चढ़ा कर बनाया जाता है और उसके वायु निकलनेका मार्ग बन्द कर दिया जाता है। उस थैलेके नीचे एक बड़ा सन्दूक या खटोला आदमीके बैठनेके लिये बाँध दिया जाता है। २ गुब्बारेके आकारका एक बड़ा गोला जो कागजका बना हुआ रहता है। इसके नीचे तेलसे भींगा हुआ कपड़ा जला कर रख दिया जाता है। इस कपड़ेके धूएंसे गोला भर जाता और आकाशमें उड़ने लगता है। विवाहादिके उपलक्षमें इसका व्यवहार किया जाता है। ३ एक प्रकारका बड़ा गोला जो आकाशकी ओर फेंकने पर फट जाता है और जिसमेंसे आतशबाजी छूटती है।

गुब्बी—महिसुर राज्यके तुमकूर जिलेका दरमियानी तालुक। यह अक्षा० १३° २´ तथा १३° ३६´ उ० और देशा० ७६° ४२´ एवं ७७° ०´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ५५२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८७४६८ है। इसमें २ नगर और ४२१ गांव बसे हैं। मालगुजारी प्राय: १८२००० है। शिमसा नदीका कदब तालाब मशहूर है। उत्तर-पश्चिम सूने पर्वत हैं।

गुब्बी—महिसुरके तुमकूर जिलेमें गुब्बी तालुकका सदर। यह अक्षा० १३° १८´ उ० और देशा० ७६° ५७´ पू०में साउदर्न मरहट्टा रेलवे पर अवस्थित है। जनसंख्या प्राय: ५५८२ होगी। कहते हैं, प्राय: ई० १५वीं शताब्दीके समय नोनब वोक्कलीगको राजाने उसे बसाया था। यहां व्यापार खूब होता है। बाजारमें सब चीज बिकती है। यहां सुपारी और नारियलकी गिरी बहुत होती है। १८७१ ई०को मुनिसपालिटी लगी।

गुभ (हिं० पु०) समुद्रकी खाड़ी।

गुभीला (हिं० पु०) गोटा, जो मल रुकनेके कारण पेटमें पड़ जाता है।

गुम (फा० वि०) १ गुप्त, छिपा हुआ, अप्रकट। २ अप्रसिद्ध। ३ खोया हुआ।

गुमक (हिं० स्त्री०) गमक देखो।

गुमका (हिं० पु०) भूसीसे दाना पृथक् करनेका काम।

गुमगां—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेके अन्तर्गत एक नगर यह नागपुर नगरसे १२ मील दक्षिणमें वना नदीके किनारे अक्षा० २१° १´ उ० और देशा० ७९° २´ ३०´´ पूर्वमें अवस्थित है। यहांके अधिवासी प्राय: सभी कृषिजीवी हैं, सिर्फ कोष्टि जातिके लोग रुईका रोजगार करते हैं। यहां थानेके पास नदीके किनारे एक महाराष्ट्रीय दुर्गका खण्डहर देखनेमें आता है। इसके पास ही एक गणपतिका मन्दिर है। उक्त दुर्ग और मन्दिर दोनों ही राजा रघु रघुजीकी पत्नी चीमावाईने बनवाये थे और इन्हींके समयसे यह प्रदेश भोंसले-वंशके अधिकारमें रहता है।

गुमची (फा० स्त्री०) गुंजा, घुमची।

गुमटा (हिं० पु०) १ कपासके फूलमें रहनेवाला एक कीट। यह फूलका भारी शत्रु है। (पु०) २ वह गोल सूजन जो मस्तक पर चोट लगनेसे होती है।

गुमटी (फा० स्त्री०) मकानके उपरी भागकी छत।

गुमनायकन पल्ली—महिसुरके कोला जिलेके अन्तर्गत बागपल्ली तालुकका एक ग्राम। यह अक्षा० १३° १४´ उ०

भूमिकी परीक्षा करना उचित है। पूर्व वा उत्तरदिशामें विशुद्ध कृष्णवर्ण मृत्तिकाविशिष्ट प्रशस्त भूमिभाग ग्रहण करना जरूरी है और वह भूभाग नदी, दीर्घिका वा पुष्करिणी आदि जलाशयोंके दक्षिण वा पश्चिम उपकूल पर स्थित तथा समान भागसे विभक्त होना चाहिये। यह स्थान नदी आदिसे ७।८ हाथ दूर हो, उसके उत्तरमें पूर्वद्वारी अथवा उत्तर द्वारी एक घर बनवावें। उस घरकी उच्चता और विस्तार १६ हाथ हो तथा उसके भीतर चारों ओर एक हाथ विस्तृत उत्सेधसम्पन्न और एक हाथ उच्च वेदी बनावें। बीचमें ४ हाथ प्रशस्त और ७ हाथ ऊँचा कन्दू (पावरोटी बनानेकी भट्टी जैसे चुल्ही) बनावें, उसमें कुछ छेद कर दें और उसकी एक ढकनी भी बना लें। पीछे उस चुल्हीमें खदिर वा पीपरकी लकड़ी जलावें। जब उस गृहका मध्यभाग स्वेदयोग्य उष्णतासे परिपूर्ण हो जाय, तब रोगीके शरीरसे वातघ्न तैल वा घृत लगा कर तथा उसको देहको वस्त्रसे ढक कर उसे उस घरमें ले जांय। घरमें घुसते समय रोगीको सावधान करके कह देना चाहिये कि—"आरोग्यताके लिए इस घरमें घुस रहे हो, बहुत सावधानीसे उस (पूर्वोक्त) पिण्डिका पर चढ़ कर एक तरफ वा तुम्हें जैसे अच्छा लगे उस तरह सो जाओ। सावधान रहना। कहीं अत्यन्त पसेव वा मूर्च्छासे घबड़ा कर इस स्थानको छोड़ न देना। यदि छोड़ दोगे तो उसी समय स्वेदमूर्छा-ग्रस्त हो कर उसी समय प्राण गमा दोगे। अतएव किसी भी तरह इसको त्यागना नहीं।" इस प्रकारसे खब सावधान कर देना चाहिये। इस तरह रोगी स्वेदगृहमें प्रवेश कर जब समुदय स्रोतविमुक्त हो कर घर्माक्रान्त हो जाय और उसके क्लेदकारी समस्त दोष निकल जाय तथा शरीर जब हलका, शून्य और वेदनारहित मालम हो, उस समय पिण्डिकासे निकाल कर उसे द्वार पर लाना चाहिये। इसके बाद आंखोंमें—स्निग्ध हवाके लिए—शीतल जल डालना चाहिये। इस तरह रोगीको क्लान्ति मिट जाने पर उसको गरम जलसे स्नान करा कर यथोचित आहार देना चाहिये। इस तरह पसीना निकालनेका नाम जेन्ताक है। (चरक-सूत्रस्थान) स्वेद देखो।

जैन्य (सं० त्रि०) जि-जन-णिच् बाहु० डेन्य। १ जयशील, जीतनेवाला। २ उत्पाद्य, पैदा किये जानेके काबिल। ३ जेतव्य, जीतने योग्य, फतह किये जानेके काबिल।

जैन्यावसु (सं० त्रि०) १ जिसके पास यथार्थमें धन हो। (पु०) २ इन्द्र, अग्नि और अश्विनयुगलका नामान्तर।

जैप्लिन (अ० पु०) जर्मनीके काउंट जैप्लिन नामक साहबका आविष्कृत एक बहुत बड़ा हवाई जहाज। इसके ऊपरका भाग सिगारके आकारका लम्बोतरा होता है और इसके खानोंमें गैससे भरी हुई बहुत बड़ी बड़ी थैलियां होती हैं। आदमीके बैठने और तोप रखनेके लिये लम्बोतरे चौखटेमें नीचेकी ओर एक या दो सन्दूक लटकते हुए लगे रहते हैं। जितने प्रकारके आकाशयान हैं उनमेंसे जैप्लिनका आकार सबसे बड़ा होता है। विमान देखो।

जैब (फा० पु०) १ छोटी थैली या चकती जो पहननेके कपड़ोंमें बगल या सामने ी ओर लगी रहती है, खोसा, खलीता, पाकेट। २ सौन्दर्य, शोभा, फबन।

जैब-उन्-निशा बेगम—बादशाह आलमगीरकी कन्या। १०४८ हिजरामें, तारीख १० सवालको (५ फरवरी, १६३८ ई०को) इनका जन्म हुआ था। ये अरबी और फारसी भाषामें विज्ञ थीं। तमाम कुरान इनको कण्ठस्थ था। इन्होंने जैब-उल तफशीर नामक कुरानकी एक टीका लिखी थी। इनके हस्ताक्षर बहुत ही उमदा और साफ थे। ये अच्छी कविताएं बनाती थीं, फारसीमें इन्होंने एक दीवान (काव्य) बनाया है। ये चिरकुमारी थीं; १११३ हिजरा (१७०२ ई०)-में इनकी मृत्यु हुई। दिल्लीके काबुल दरवाजेके पास इनकी कब्र बनी थी। राजपूतानामें लोहेका दरवाजा बनते समय इनकी कब्र तुड़वा दी गई। जैब-उन् निशा बेगम मखफी नामसे ही प्रसिद्ध थीं।

जैबकट (फा० पु०) गिरहकट, जैबकतरा।

जैबकतरा (हिं० पु०) जेबकट देखो

जैबखर्च (फा० पु०) वह धन जो किसीको निजके खर्चके लिये मिलता हो और जिसका हिसाब लेनेका किसीको अधिकार न हो।

जैबघड़ी (हिं० स्त्री०) जेबमें रखी जानेकी छोटी घड़ी, वाच।

जैबदार (फा० वि०) शोभायुक्त, सुन्दर।

पटनमें बतलाते हैं। इनके बनाये हुए श्लोक चार चरण-विशिष्ट हैं, प्रथम तीन संस्कृत भाषामें और शेष एक हिन्दी भाषामें रचित है। गुमानी देखो।

गुमानी (हिं॰ वि॰) अहंकारी, घमंडी।

गुमानी—विहार प्रान्तीय पटनाके एक कवि। उनकी बनायी कविता विहारके लोगोंको कण्ठस्थ है। इसके प्रथम तीन पाद संस्कृत और चौथा हिन्दीकी लोकोक्ति है। जैसे—

"यावद्राम' शस्त्रधारो नायातीह लतस' द्वारे।
तावत्सो देया नारी क्यों भीजे त्यों कम्बल भारी॥"

मन्दोदरी रावणसे कहती है—जब तक राम यहाँ हथियार बाध करके आपसे लडने न आवें, उनको जानकी प्रत्यर्पण कर दो, क्यों कि जितना ही कम्बल भीगता, भारी पड़ता है।

गुमानजी मिश्र—युक्तप्रान्तके हरदोई जिलेमें साड़ीके रहने-वाले एक हिन्दी कवि। १७४० ई॰को उनकी खूब चहल पहल थी। संस्कृत और वाक्य रचनामें वह बहुत कुशल थे। युगलकिशोर भट्टके साथ गुमानजी दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाहके दरबारमें जाते थे। फिर उनका प्रवेश अली अकबर खां मुहम्मदीकी सभामें हुआ। उन्होंने नैषधकी टीका कालनिधि, पञ्चनलीय टोका सलिल और कृष्णचन्द्रिका ग्रन्थ लिखे।

गुमश्ता (फा॰ पु॰) कर्मकारक, प्रतिनिधि।

गुमाश्तागिरी (फा॰ स्त्री॰) १ गुमाश्तेका पद। २ गुमाश्तेका काम।

गुमिटना (हिं॰ क्रि॰) लिपटना, लपेटा जाना।

गुमृटी (सं॰ स्त्री॰) तृण धान्यविशेष।

गुम्फ (सं॰ पु॰) गुम्फ-नञ्। १ ग्रन्थन, गाँठ। २ बाहुमें पहननेका आभूषण। ३ श्मश्रु, मूंछ।

गुम्फना (सं॰ स्त्री॰) गुम्फ-युच्-टाप्। १ वाक्यकी सुन्दर रचना, उत्कृष्ट रचना। २ ग्रन्थन, गिरह।

गुम्फित (सं॰ त्रि॰) ग्रथित, गूथा हुआ।

गुम्बज (फा॰ पु॰) मस्जिदका गोलाकार बृहत् छत, घरका गोल छत।

गुम्मट (फा॰ पु॰) गुंबद, गुंबज।

गुम्मा (हिं॰ पु॰) अंगरेजी ढङ्गकी इमारतोंमें देने लायक मोटी ईंट।

गुयासुवा—बङ्गालमें २४ परगनेके अन्तर्गत एक नदी। यह गङ्गाकी एक शाखा है जो अक्षा॰ २१° ३८' उ॰ और देशा॰ ८८° ५४' पूर्व पर समुद्रमें आ मिली है। यह नदी विस्तार होने पर भी मुहानाके निकट इतनी बक्र हो गई है कि इसमें प्रवेश करना दुःसाध्य है।

गुयिन्दी—चिङ्गलपेट जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा॰ १३° उ॰ और देशा॰ ८०° १६' पू॰में मन्द्राजसे ४ मील दक्षिण-पश्चिम पर अवस्थित है। यहां मन्द्राजके गवर्नरके रहनेका एक सुन्दर घर है, और इसके निकट ही रोमनबागमें गवर्नमेण्टकी एक आढ़त एवं गार्हस्थ्य शिक्षाको एक विद्यालय भी है।

गुरंबा (हिं॰ पु॰) गुड़ंबा देखो।

गुर (हिं॰ पु॰) १ किसी कार्यकी सिद्धिके मूलसूत्र। २ तीनकी संख्या।

गुरखई (हिं॰ स्त्री॰) एक तरहकी रेहन वा बंधक।

गुरखाई (हिं॰ स्त्री॰) एक तरहकी रेहन जिसमें रेहन रखनेवाला जमोनकी हत्यांश मालगुजारी देता है।

गुरगा (हिं॰ पु॰) १ शिष्य, गुरुका अनुगामी, चेला। २ अनुचर, टहलुआ, नौकर। ३ चर, दूत, गुप्तचर, भेदिया।

गुरगाबी (फा॰ पु॰) मुंडा जूता।

गुरच (हिं॰) गुरुच देखो।

गुरची (हिं॰ स्त्री॰) सिकुड़न, बल, बट।

गुरचीं (हिं॰ स्त्री॰) आपसमें धीरे धीरे बात करना, कानाफूसी।

गुरज (हिं॰) गुर्ज देखो।

गुरजा (हिं॰ पु॰) लोवा नामक एक तरहका पक्षी।

गुरडा—ब्राह्मण जातिविशेष। यह राजपूतानेमें रहते हैं। इनका प्रधान कार्य अछूत लोगोंकी वृत्ति है। उनका दानपुण्य लेते और विवाह आदि कार्य करा देते हैं। किसी विद्वान्के मतानुसार वह ब्रह्माके पुत्र मेघ ऋषिसे उत्पन्न हुए हैं। दूसरोंका कहना है कि उन्होंने एक मरी हुई गायको उठा करके फेंक दिया था। उसी समय-से यह पतित हुए और ब्राह्मणोंमें न रह सके। और प्रवाद है—गर्ग ऋषिके सन्तान पहले अछूत लोगोंका विवाह कराते थे। ब्रह्माने उन्हें केवल विवाह करानेे-

घोड़ेकी पूंछसे और जेब्राकी पूंछमें कुछ अन्तर है—घोड़ेकी पूंछ पर सर्वत्र बड़े बड़े बाल होते हैं, किन्तु जेब्राकी पूंछका शेषभाग ही दीर्घ रोमावृत होता है। इसके सिवा घोड़ेके अयाल लम्बे और दोदुल्यमान होते हैं, किन्तु जेब्राके अयाल छोटे और सीधे होते हैं। इनके वर्णमें भी पार्थक्य दिखलाई देता है। घोड़ेके शरीर पर चमड़ेके साधारण रंगसे भिन्न वर्णके गोलाकार चिह्नोंका क्रम है, किन्तु जेब्राके शरीर पर सर्वदा ही धारियोंका आभास पाया जाता है।

जेब्रा समतल भूमि पर विचरण करते और घास खा कर जीते हैं।

दक्षिण अफ्रिकाकी प्रान्तरभूमि पर एक प्रकारका जेब्रा मिलता है। केण्ठाउन प्रदेशके लोग उस पर सवार हो कर बाजारमें बेचने लाते हैं। यहांके जेब्रा अत्यन्त दुष्ट और चञ्चल होते हैं।

प्रसिद्ध यूरोपीय प्राणितत्त्वविद् मि० बाफनका कहना है कि, चौपाये जानवरोंमें जेब्रा सबसे अधिक सुन्दर होता है। इसका आकार घोड़ेकी तरह सुहावना, गति मृगकी तरह चिप्र और चमड़ी साटिनकी भाँति चिकनी होती है। नर जेब्राओंके शरीरकी धारियां काली और पीली किन्तु अत्यन्त उज्ज्वल होती हैं और मादा जेब्राकी रेखाएं काली और सफेद। जेब्रा तीन श्रेणियोंमें विभक्त हैं। पार्वत्य प्रदेशके जेब्रा सबसे सुन्दर होते हैं और उनके तमाम शरीर पर धारियां होती हैं। ये दक्षिण अफ्रिकाके पर्वतों पर रहते हैं और अकसर करके समतल भूमि पर नहीं आते। ये जेब्रा बिलकुल जंगली और दुरारोह पर्वत पर विचरण करते हैं। ये जब दल बाँध कर फिरते हैं, तब इनमेंसे एक जेब्रा किसी ऊँचे स्थान पर जा कर पहरा देता रहता है और शत्रुके आगमनका ज़रा भी सन्देह होते ही तुरंत एक आवाज करता है जिससे सबके सब खूब जोरसे भागने लगते हैं। फिर उन्हें कोई भी नहीं पकड़ सकता। अन्य श्रेणीके जेब्राको 'बर्चेल-जिब्रा (Burchell's Zebra) कहते हैं। ये केप टाउनके निकटवर्ती मालभूमि पर रहते हैं। इनके शरीरकी धारियां श्वेत और पिङ्गल वर्ण होती हैं। पिङ्गल वर्णको धारियोंको देखनेसे ऐसा मालूम होने लगता है, मानो दोके बीचमें एक एक धूसर वर्णकी धारियां हैं। इनके पैर सफेद होते हैं। अन्यान्य अंशोंमें यह जेब्राके समान ही होता है।

जेब्रा सूर्यास्त और सूर्योदयके मध्यवर्ती समयमें झरनेका पानी पीने जाते हैं। इसी समय सिंह झरनेके आस पास छिपे रह कर इन पर आक्रमण करता है। कहा जाता है कि, ज्योत्स्ना रात्रिको सिंह जेब्राके शिकारके लिए नहीं निकलता, क्योंकि प्रकाशमें जेब्रा सिंहको देख कर दूरसे ही भाग जाते हैं।

जेमन् (सं० त्रि०) जि-मनिन। १ जयशील, विजयी, जीतनेवाला। (पु०) २ जेतुर्भावः। जय, जीत। ३ जय सामर्थ्य। "जेमा च महिमा च" (शुक्लयजुः १८।४)

जेमन (सं० क्ली०) जिम-भावे ल्युट्। भक्षण, जीमना, भोजन करना।

जेय (सं० त्रि०) जीयते इति। अचो यत्। पा ३।१।९७। जि कर्मणि यत्। जेतव्य, जीतनेयोग्य, जो जीता जा सके।

जेर (हिं० पु०) १ वह झिल्ली जिसमें गर्भगत बालक रहता और पुष्ट होता है। २ सुन्दरवनमें मिलनेवाला एक पेड़। इसकी लकड़ीसे मेज़, कुरसी, आलमारी इत्यादि बनती हैं।

जेर (फा० वि०) १ परास्त, पराजित। २ जो बहुत तङ्ग किया जाय।

जेरदखाना—सुन्दरवनका एक अंश। शाह सूजाकी संशोधित राजस्वतालिकामें सुरादखाना वा जेरदखानाके नामसे इसका उल्लेख हुआ है। यह अंश वर्तमान बाखरगंज जिलेके अन्तर्गत था। शाह सूजाके समयमें इसकी मालगुजारी ८४५४) रुपये थी।

जेरपाई (फा० स्त्री०) १ स्त्रियोंके पहननेकी जूती, स्लीपर। २ साधारण जूता।

जेरबन्द (फा० पु०) कपड़े या चमड़ेका तस्मा जो घोड़ेकी मोहरीमें लगा रहता है।

जेरबार (फा० वि०) १ जो आपत्ति या दुःखसे घिरा हो, जो आपत्तिके कारण बहुत तङ्ग और दुःखी हो गया हो। २ क्षतिग्रस्त, जिसको बहुत हानि हुई हो।

ये स्वगोत्रमें विवाह नहीं करते। देखनेमें ये कनाडियों जैसे लगते हैं। ये मद्य, मांस आदि कुछ भी नहीं खाते फसलके समय ये लोग खेतसे अनाज माग लाते हैं। इनमेंसे कोई शैव और कोई हनुमान्‌के मन्दिरमें पौरोहित्य करते हैं। कोई तो दैवज्ञ हैं और कोई ब्राह्मण आदिके विवाहमें बाजा बजाने का काम करते हैं। कोई खेती-बारी कर अपनी जीविका चलाते हैं।

मारुती, सरस्वती, रामेश्वर, शिव, विष्णु और रावलनाथ इनके उपास्य देवता है। विवाह वा अन्यान्य सामाजिक संस्कार सुनार जातिके समान हैं। ये लोग अपनी जातिके सिवा अन्य किसी भी जातिका छुआ हुआ अन्न नहीं खाते।

बेलगांवमें विधवाविवाह प्रचलित है। ये दशवें दिन मरे हुए व्यक्तिको पिण्ड देते तथा ग्यारहवें दिन श्राद्ध और बारहवें दिन जातिभोज करते हैं। इनमें प्रायः सभी लोग कनाड़ी भाषा बोलते हैं।

गुरवक्र (सं० पु०) गरुडशालि।

गुरवपिम्प्री—गुजरातके अहमदनगर जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह करजात नामक स्थानसे ७ मील दूरी पर अवस्थित है। यहां हेमड़पन्थियोंका पिम्प्रेश्वर महादेवका एक प्राचीन मन्दिर और रामेश्वर मन्दिरका खण्डहर देखनेमें आता है। पिम्प्रेश्वर-मन्दिरके आसपासके दलानों पर नौ गुम्बजें हैं। मन्दिरकी लिङ्गमूर्त्ति एक-गड्ढेमें स्थापित है। इस मन्दिरके प्रवेशद्वारमें और भीतरके एक पृथक् स्तम्भ पर शिलालेख खुदा हुआ है।

गुरवार (हिं०) गुरुवार देखो।

गुरवी (हिं० वि०) अहंकारी, घमण्डी।

गुरसराय—युक्तप्रदेशके झांसी जिलेका राज्य। इसका क्षेत्रफल १५५ वर्गमील है। गवर्नमेण्टको २००००) मालगुजारी और ५५००) रु० शेष देना पड़ता है। राजा जमीन्दारोंसे ५४०००) रु० वसूल करते हैं। वह महाराष्ट्र ब्राह्मण हैं, १७२७ ई०के लगभग आ करके बसे थे। इसी वंशके एक व्यक्ति पेशवाके अधीन जालौन और दूसरे प्रान्तके सूबेदार थे। बलवेमें सरकारको साहाय्य करने पर "राजा बहादुर" उपाधि और दूसरा पुरस्कार मिला। किन्तु १८८५ ई०को पूरी मालगुजारी देनेका जो झगड़ा लगा, राजा उपाधि छिन गया और अङ्गरेजी इन्तजाम बन्धा। फिर १८९८ और १९०२ ई०को प्रिवी कौंसिलके फैसले पर उसको माफी बहाल हुई। गुरसराय नगरकी आबादी कोई ४३०४ है।

गुरसल (हिं० पु०) गिलगिलिया, सिरोही, किलहंटी।

गुरसी (हिं०) गोरसी देखो।

गुरसुन (हिं० पु०) सोनारोंकी एक तरहकी छेनी।

गुरहा (हिं० पु०) १ नौकाके नीचे दोनों सिरों पर जड़ा हुवा तखता। २ एक विलक्षण लम्बे आकारकी एक तरहकी मछली। यह युक्तप्रान्त, बङ्गाल और आसामको नदियोंमें पाई जाती है।

गुराई (हिं०) गोराई देख।

गुराव (हिं० पु०) १ एक तरहकी गाड़ी जिस पर तोप लादी जाती है। २ एक मस्तूलवाली बड़ी नाव।

गुराव (हिं० पु०) १ चौपायोंको खिलानेका चारा। २ चारा काटनेका हथियार, गड़ासा।

गुरिद (फा० पु०) गदा।

गुरिदल (हिं० पु०) १ जलाशयोंके निकट रहनेवाला किलकिलाकी जातिका एक पक्षी, यह मछली ही खाकर रहती है। २ कचनारका पेड़।

गुरिया (हिं० स्त्री०) १ किसी माला या लड़ीके एक अंशका दाना, मनका या गांठ। २ कटा हुआ गोल छोटा टुकड़ा। ३ दरी बुननेके करघेकी बड़ी लकड़ी। ४ हेंगेमें लगी हुई रस्सी। इसका एक सिरा हेंगेमें और दूसरे जूएके बीचमें बंधा रहता है।

गुरिल्ला (हिं०) गोरिल्ला देखो।

गुरु—(सं० पु०) गृणाति उपदिशति धर्मं गिरत्यज्ञानं वा गॄ-कु उच्च। (कुगॄरुच। उण् १।२४) यद्वा गीर्यते स्तूयते देवगन्धर्वादिभिः गॄ कु उच्च। १ बृहस्पति, देवोंके गुरु या आचार्य। (माघ २ स०)

२ प्रभाकर नामक एक सुप्रसिद्ध मीमांसकका दूसरा नाम। प्रभाकर बचपनमें ही शब्दशास्त्रका अध्ययन कर विशेष व्युत्पन्न हो गये थे। पीछे उन्होंने किसी एक प्रधान मीमांसकके पास मीमांसादर्शन पढ़ना शुरू किया। एक दिन इनके गुरु किसी एक छात्रको उस समयमें प्रचलित मीमांसा ग्रन्थ पढ़ा रहे थे। उस ग्रन्थमें "अत्र तनु-

हिवाने विपद्की आशङ्कासे मिसरके सम्राट् एमोनोफिस-को सहायताके लिए तर-ऊपर छ पत्र भेजे। किन्तु मिसर उस समय अन्तर्विप्लवमें व्यस्त था—वह कुछ भो सहायता न दे सका। अतएव जेरुसलेमका भी पतन हुआ। सम्भवत: इसी समय जेरुसलेम पर जेबूसाइतों-का अधिकार हुआ था; उन्होंने इसे जेबू नामसे प्रसिद्ध किया था।

हिब्रू लोग जिस समय इस देशके निकटवर्ती हुए, उस समय जेबूके राजा एडोनिसेडिक थे। इजराइलके विरुद्ध कानन्के पाँच राजाओंके एक साथ अभियान करने पर ये मारे गये। किन्तु जेरुसलेमका किला इतना मजबूत था कि राजाकी मृत्युके बाद भी उसने अपनी स्वाधीनताकी रचा कर ली। पीछे जब इजराइलके लोगोंने इस देशका बटवारा कर लिया, तब जेरुसलेम बेञ्जामिनके वंशधरोंके हस्तगत हुआ। परन्तु वे वहां यथार्थ अधिकार न फैला सके। उन लोगोंने उक्त नग-रोके निम्नभागमें बड़ा अत्याचार किया था—आग लगा कर प्रजाको जलानेकी कोशिश की थी, परन्तु किसी तरह भी वे नगर पर कब्जा न कर सके।

डेभिडने इजराइलकी बारह शाखाओं पर आधिपत्य विस्तार कर जेरुसलेम अधिकार करनेका संकल्प किया। उनकी इच्छा थी, कि जेरुसलेमको ही अपनी जातिका राष्ट्रनैतिक और धर्मसम्बन्धीय केन्द्र बनावें। हेब्रनके पास उन्होंने अपनी शक्ति एकत्र की और जेबूकी तरफ चल दिये। वहांके लोगोंने सोच रक्खा था कि 'हमारा दुर्ग अभेद्य है, इसलिए बाधा देनेकी कोई आवश्यकता नहीं।' किन्तु डेभिडने अपने अदम्य उत्साहके फलसे जेरुसलेम पर कब्जा कर लिया।* डेभिडने सियनका पर्वत अधिकार कर लिया और वहीं रहने लगे। उसका नाम रक्खा गया 'डेभिडका नगर'। (II kings v. 7. 1.) यह घटना ईसासे प्रायः १०५८ वर्ष पहले हुई थी। इसके बाद डेभिडने मोरिया पर्वत पर उपासना-मन्दिर बनवानेके लिए द्रव्यादिका संग्रह किया; किन्तु इस कार्यको वे अपने सामने पूरा न कर सके थे।

उनके पुत्र सुलेमानने अपने राज्यके चौथे वर्षमें यह काम शुरू कराया। टायरके राजा हीरमने इसके लिए कुछ सुदक्ष शिल्पियोंको भेजा था, उनकी सहायतासे यह काम पूरा हुआ। इस मन्दिरके लिए ७० हजार लकड़ी ढोनेवाले और ८० हजार पत्थर ढोनेवाले मजदूर नियुक्त हुए थे। साढ़े सात वर्षके कठोर परिश्रमके बाद यह मन्दिर बन कर तयार हुआ था। इसके बाद जेरु-सलेममें इन्होंने तेरह वर्ष तक "लेबननकी वनवाटिका" और प्रासाद आदिका काम जारी रक्खा। सुलेमान मन्दिर आदि बनानेके लिए इतना अधिक कर लेते थे, कि प्रजा उसे अपने ऊपर अत्याचार समझती थी।

सुलेमानके पुत्र रोबोयम जब राजगद्दी पर बैठे, (९८१—९६५ खृष्टपूर्वाब्द) तब उनके गर्वित व्यवहारसे प्रजा विरक्त हो गई और विद्रोह फैल गया। बारह शाखाओंको एकत्र कर डेभिडने राज्य स्थापन किया था, जिनमेंसे १० शाखाओंने जेरुसलेमसे अपना सम्बन्ध तोड़ दिया। रोबोयम सिर्फ बेन्जामिन और जूदा शाखाके अधिपति बन कर जेरुसलेममें रहने लगे। नव-गठित विद्रोही राज्यके राजा जेरोबोयमने अपने प्रति-द्वन्द्वीकी क्षमताका ह्रास करनेके लिए मिसरके फेरोआ (राजा) शिशङ्कको निमन्त्रण दिया। शिशङ्कने जूदा जीत कर जेरुसलेम पर अधिकार कर लिया और वहांके असंख्य मन्दिरोंको लूट कर मिसर लौट गये। उसके बाद जेरुसलेमके राजा आसा (९६१—९२१ पू० खृ०) और जोसफतने (९२०—८९४ पू० खृ०) निकटवर्ती स्थानोंको जीत कर जो अर्थ संग्रह किया था, उससे मन्दिरोंकी पुन: श्रीवृद्धि की। किन्तु इसके बाद फिलि-ष्टाइनोंने दक्षिण प्रदेशके अरबियोंसे मिल कर पुन: मन्दिरोंका धनरत्न लूट लिया। इसके बाद रानी एटा-लियाने अपने पौत्रको मार कर जेरुसलेमका सिंहासन अधिकार किया। किन्तु वहांके लोगोंने छ वर्ष बाद पत्थर फेंक कर उन्हें मार डाला और जोयसको राजा बनाया। जोयसने (८८६—४१ पू० खृ०) पुन: मन्दिर बनवाये और 'बाल' नामक विदेशीय देवताकी पूजा

* Maspero—The Struggle of The Nations, P. 725-727.

(लघु होने पर भी) गुरु कहते हैं। पाद वा श्लोकके चरणका अन्तिम वर्ण विकल्पसे गुरु हुआ करता है। पिङ्गलमें गुरु वर्णका संकेत ऽ इस प्रकार है।

१० शिव (भारत १३।१७।१३०) ११ परमेश्वर। (मार्कण्डेयपु० सप्तमाधि०) १२ ब्रह्मा। १३ विष्णु। (भारत १३।१४९।९१) १४ द्रोणाचार्य। १५ पुष्य नक्षत्र। गुरु अर्थात् बृहस्पति इसके अधिष्ठाता होनेके कारण इनका नाम गुरु हुआ है। (ज्योतिस्तत्त्व) १६ बृहस्पति नामका ग्रह। १७ वह व्यक्ति जो अपनेसे विद्या, बुद्धि, बल, पद और उम्रमें बड़ा हो, गुरु जन। १८ किसी कला या विद्याका सिखानेवाला, शिक्षक, उस्ताद। १९ संगीतका एक ताल। जिसमें सिर्फ एक ही गुरु वा दीर्घ मात्रा हो, उसका नाम गुरु ताल है। (सङ्गीतदामोदर)

(त्रि०) २० अधिक ज्यादा। (मात्यशिक्षा०) २१ दुर्जर, जो मुश्किलसे पचता हो। २२ दुष्पाक, जिसका पाक करना कठिन हो। (भावप्रकाश०) २३ गुरुत्वविशिष्ट, भारी, वजनी। २४ पूजनीय, माननीय। (शाथ स्म ९९।.) २५ गम्भीर। २६ बलवान्।

(पु०) २७ तान्त्रिक मन्त्रोपदेष्टा, जो तंत्रकी दीक्षा दे। सारदातिलकके मतसे तान्त्रिक गुरुका लक्षण इस प्रकार है जो पवित्र कुलमें उत्पन्न हुए हों, जो शुद्धस्वभाव, जितेन्द्रिय, आगमपारदर्शी, तत्त्वज्ञ, परोपकारनिरत, जप और पूजामें तत्पर, सत्यवादी और शान्तिप्रिय हैं, वेद और योगशास्त्रमें जिनका अधिकार है, तथा जो सर्वदा हृदयमें देवताका चिन्तन किया करते हैं। उन्हींको गुरु बनाना चाहिये। इन गुणोंका होना ही गुरुका लक्षण है। अत्यन्त बालक, वृद्ध, पङ्गु, कृश, विकृताङ्ग और हीनाङ्ग, ये सब गुरु होनेके लायक नहीं है। (राघभट्ट)

चिन्तामणिके मतसे—क्षयरोगग्रस्त, दुश्चर्मा, कुनखी, श्यावदन्तक, बधिर, अन्धा, कुसुम जैसी आँखोंवाला, खल्वाट (गंजा) और दन्तुर (जिसके दांत आगे निकले हों) इनको गुरु बनाना उचित नहीं है।

संस्कारहीन, मूर्ख, वेदशास्त्रविवर्जित, वैदिक और स्मार्त-क्रियाकलापशून्य, शुष्कभाषी, कुत्सित, याजनकर्मोपजीवीकामी, क्रूर, दम्भी, मत्सरी, व्यसनयुक्त, कृपण, खल, नास्तिक, असत्सङ्गकारी, भीरु, महापातकके किसी एक चिह्नसे युक्त, देवता, अग्नि और गुरुपूजा आदिमें श्रद्धाहीन, सन्ध्या, तर्पण, पूजा और मन्त्र आदिके ज्ञानसे रहित, अलस, विलासी और धर्महीन, इनमें गुरु होनेकी योग्यता नहीं है। मत्स्यसूक्तके मतसे अपुत्रक, गृहिणीशून्य, शक्तिविहीन और वृषलीपति, ये भी वर्ज्जनीय हैं। (राघ भट्ट)

ज्ञानार्णवके मतसे—जो गृहस्थ हैं, जनके पुत्र और कलत्र हैं, उन्हें ही गुरु बनाना चाहिये। मुण्डमालामें लिखा है कि, वैष्णव और शैव मध्यम गुरु है। जो शक्तिमन्त्रसे दीक्षित है, वे ही उत्तम गुरु है।

तान्त्रिकगण गुरु शब्दके प्रत्येक वर्णका अर्थ कर उनका लक्षण करते हैं। उनके मतसे गकारका अर्थ सिद्धिदाता, रेफका अर्थ पापनाशक और उकारका अर्थ शम्भु है अर्थात् जो सिद्धि दे सकते हैं, पापोंके विनाश करनेको जिनमें क्षमता है और जो मङ्गलकार हैं, उन्हींको गुरु समझना चाहिये। अथवा गकारका अर्थ ज्ञान, रेफका अर्थ तत्त्वप्रकाशक और उकारका अर्थ शिव तादात्म्यप्रद है। अर्थात् जो तत्त्वज्ञानको प्रकट कर शिवके साथ अभिन्न करा देते है, उन्हें ही गुरु समझना चाहिये। (आगमसार।

योगिनीतन्त्रमें लिखा है—पिता, मातामह, सहोदर कनिष्ठ और रिपुपक्षीय इनसे मन्त्र लेना उचित नहीं, अर्थात् इनको गुरु नहीं बनाना चाहिये। गणेशविमर्षिणीतन्त्रके मतसे - यति, वनवासी वा आश्रम परित्यागी इनके पास दीक्षित होनेसे अमङ्गल होता है। परन्तु शक्तियामलके मतसे अर्थाचारपरायण, मन्त्री, ज्ञानी, समाधियुक्त और श्रद्धाविशिष्ट यतिसे मन्त्र ग्रहण करनेसे किसी प्रकारका अमङ्गल नहीं होता। रुद्रयामलमें लिखा है—भर्त्ता पत्नीको, पिता पुत्र वा कन्याको और भ्राता भाईको दीक्षित नहीं कर सकता। हां। स्वामी सिद्धमन्त्र होने पर स्त्रीको दीक्षा दे सकता है।

तन्त्रसंग्रहकारोंके मतसे—तन्त्रमें जो निन्दनीय गुरुओं और उनसे दीक्षा लेनेका निषेध किया गया है, वह केवल उन गुरुओंके लिए है जिनको मन्त्र सिद्ध नहीं हुआ हो। सिद्धमन्त्र होनेके उपरान्त फिर कुछ लक्षण देखनेकी आवश्यकता नहीं, जिसके पास जो चाहे उसीके पास दीक्षित हो सकते हैं। (तन्त्रसार)

डेढ़ वर्ष तक यह घिराव जारी रहा। अन्तमें बाध्य हो कर जेरुसलेमको आत्म-समर्पण करना पड़ा। मन्दिर, प्रासाद और प्रधान प्रधान स्थानोंमें आग लगा दी गई— नगरको हर तरहसे बरबाद करनेकी कोशिश की गई। पूजाके पवित्र उपकरण और सर्व प्रकार बहुमूल्य पदार्थ बाबिलन भेज दिये गये। यहूदीगण सिर्फ अपने परम पवित्र Aik of the Covenantको छिपा सके। इस पराजयसे यहूदियोंकी बड़ी दुर्दशा हुई। जेरुसलेमके प्रायः सभी लोग मारे गये; सिर्फ कुछ कृषक और दरिद्र व्यक्ति एक यहूदी शासनकर्त्ताके अधीन अपना निर्वाह करने लगे। बाइबिलमें इसी घटनाके समयका 'बाबिलनका बन्दी युग' के नामसे उल्लेख किया गया है।

ईसासे ५३६ वर्ष पहले पारस्यके राजा काइरसने यहूदी बन्दियोंको पालेष्टाइन लौट जानेका आदेश दिया था। उन लोगोंने लौटतेके साथ ही पहले भगवान्‌का मन्दिर बनवाया था। पहली बार ४२००० यहूदी जेरुसलेम लौटे थे। पीछे आर्टाजरक्सेसके समयमें (४५८ खृ० पू०) और भी १५०० यहूदियोंने आ कर इजराइलके धर्म और राष्ट्रके स्वातन्त्र्यकी रक्षाके लिए तन मन अर्पण किया।

इसके बाद, दो सौ वर्षसे भी अधिक समय तक जेरुसलेमने पारस्यकी अधीनतामें शान्तिपूर्वक अवस्थान किया। पीछे ३३२ ई०में महावीर सिकन्दर शाह पारस्य साम्राज्य अधिकार करनेके बाद जेरुसलेम पर कब्जा करने पहुंचे। जेरुसलेमके पुरोहितोंने यह समझ कर कि बाधा देनेसे कोई लाभ नहीं, आत्मसमर्पण किया। सिकन्दरशाहने यहूदियोंको किसी तरहकी तकलीफ न दी थी। किन्तु इसके बाद जब उत्तराधिकारके विषयमें विवाद उपस्थित हुआ, तब फिर जेरुसलेमकी बुरी हालत हो गई। ३०५ ई०में टलेमी सोतारने कौशलसे नगरमें प्रवेश किया और कुछ यहूदियोंको कैद करके मिसर ले गये।* इसके एक सौ वर्ष बाद महावीर अन्तिओकसने इसे अपने अधिकारमें कर लिया। सलुकीद वंशके राजाओंने जेरुसलेममें ग्रीक सभ्यताका प्रचार करना चाहा था। किन्तु इसी समय वहांके पुरोहितोंमें परस्पर रक्तपात प्रारम्भ हो गया। उपद्रव दमन करनेके बहाने अन्तिओकस इपिफानिसने (१७० खृ० पू०में) नगरमें प्रवेश कर दुर्ग और प्राकार तोड़ डाला; मन्दिरके पवित्रतम उपकरणोंको हड़प कर गये; ४० हजार मनुष्योंको निहत किया और करीब ४ हजार लोगोंको कैद करके साथ लेते गये। दो वर्ष बाद उन्होंने फिर अपने सेनापतिको जेरुसलेम भेजा और आदेश दिया कि बल पूर्वक यहूदी धर्मका दमन करके किसी भी तरह ग्रीकोंके देव-धर्मका प्रचार होना चाहिये। फिर क्या था, यहूदी लोग अपने धर्मके लिए सर्वत्र निर्यातित होने लगे। भगवान्‌के पवित्र मन्दिरमें जूपितारकी मूर्त्ति स्थापित हुई।

मन्दिरके पुरोहित माथाथियस और उनके पांच पुत्रोंने इस अत्याचारके विरुद्ध खड़े होनेका संकल्प किया। जूडाने अपने पिताकी मृत्युके बाद सिरियाकी सेनाको चार बार पराजित किया और जेरुसलेममें अपना आधिपत्य विस्तार कर मन्दिरका पुनः निर्माण कराया। इन्होंने दीवार बनवाई तो सही, पर दुर्गका मध्यस्थल ये सिरियोंसे न ले सके। सिरियोंके साथ बदस्तूर लड़नेके लिए इन्होंने रोमके साथ मित्रता कर ली। इनके भाई जोनाथम भी अपूर्व वीरताके साथ युद्ध करने लगे; किन्तु अन्तमें वे विश्वासघातकके हाथसे मारे गये। इनके भाई सिमनने तीन वर्ष बाद आक्रासे सिरियोंको भगा दिया। उस दुर्गको भी जो पहाड़के ऊपर था, मिट्टीमें मिला दिया। इस विराट् कार्यके लिए जेरुसलेमके समस्त स्त्रीपुरुषोंको तीन वर्ष तक कठोर परिश्रम करना पड़ा था। द्वितीय डिमेत्रियस और उनके बाद अन्तिओकास् सिदेतिसने यहूदियोंकी स्वाधीनता स्वीकार किया था।

इसके बाद कुछ समय तक यहूदी लोग जेरुसलेममें शान्तिसे रहे थे। उनके राजा अरिष्टोबुलूसने सबसे पहले राजा और पुरोहित इन दोनों पदोंको एक साथ ग्रहण किया था। ईसासे ६५ वर्ष पहले रोमन वीर पम्पेने जेरुसलेम जा कर सब तरहका गृहविवाद मिटा दिया। इसी समय मौका देख कर उन्होंने जेरुसलेमको रोमका करद राज्य बना लिया।

* Antiq. Ind. XII, 11.

ज्योतिषमें एक प्रकारका चक्र। इससे जन्मनक्षत्रके अनुसार एक एक वर्षके अधिपति ग्रहका निर्णय किया जाता है। इस चक्रके बीचमें वृहस्पति और उसके आठों तरफ आठ ग्रह स्थापन करने पड़ते हैं। इसमें गुरु प्रधान होनेके कारण इसका नाम गुरुकुण्डली पड़ा है।

गुरुकुण्डली बनानेका तरीका—ऊपरसे नीचेकी तरफ पांच रेखाएं खींच कर उसके बीच एक आड़ी रेखा खींचना चाहिये। फिर उक्त चक्रके प्रथमस्थान अर्थात् ऊर्ध्वमुखी जो रेखाएं खींची गई हैं उनमेंसे बाईं ओरकी रेखाके ऊपरके हिस्सेमें रवि, द्वितीय स्थान अर्थात आड़ी लकीरें जिस स्थानको भेदती है, वहां मङ्गल, तृतीयस्थान अर्थात् उक्त खड़ी रेखाके निम्न भागमें केतु रखना चाहिये। इसी तरह द्वितीय रेखाके मध्य स्थानमें चन्द्र, २य स्थानमें वुध, और ३य स्थानमें सुन्ना, तृतीय रेखाके १म स्थानमें सुन्ना, २य स्थानमें वृहस्पति, और ३य स्थानमें सुन्ना, चतुर्थ रेखाके १म स्थानमें सुन्ना, २य स्थानमें शुक्र और ३य स्थानमें सुन्ना तथा पञ्चम रेखाके १म स्थानमें शनि, २य स्थानमें शून्य और ३य स्थानमें राहु ग्रह रखे जाते हैं। जिस जिस स्थानमें ग्रह बैठाये गये है उस उस स्थानमें पुष्य आदि नक्षत्रोंको यथाक्रमसे बैठाना चाहिये। जिस जिस स्थानमें सुन्ना है, उस स्थानमें कोई भी नक्षत्र नहीं बैठाया जाता। पहले रविके स्थानमें पुष्य नक्षत्र स्थापन कर यथाक्रमसे राहुके स्थान पर्यन्त विशाखा नक्षत्र रखना चाहिये। और फिरसे रविके स्थानमें अनुराधा स्थापन कर क्रमसे राहुके स्थानमें पूर्वभाद्र बैठाना चाहिये। इसके बाद रविके स्थानमें उत्तरभाद्र और राहुके स्थानमें पुनर्वसु स्थापित किया जाता है। इसीका नाम गुरुकुण्डली है। जिसका जन्म नक्षत्र जिस स्थानमें पड़ेगा, वही ग्रह उसके प्रथम वर्षका अधिपति है।

केतुकुण्डलीमें जिस तरह वर्षाधिपतिके फलका वर्णन किया गया है, गुरुकुण्डलीमें भी वैसा ही फल जानना चाहिये। किसी किसी ज्योतिषीके मतसे प्रथम स्थानमे रवि, द्वितीयमें मङ्गल, तृतीयमें केतु, चतुर्थमें चन्द्र, पंचममें वुध, षष्ठमे वृहस्पति, सप्तममें शुक्र, अष्टममें शनि और नवममें राहुग्रहके स्थानमें क्रमसे पुष्य आदि नक्षत्रोंको स्थापन करनेसे उसको गुरुकुण्डली कहते हैं। (१)

पञ्चस्वराके मतसे—प्रथम स्थानमें रवि, २यमें चन्द्र, ३यमें मङ्गल, ४र्थमें वुध, ५वेंमें वृहस्पति, ६ठेमें शुक्र, ७वेंमें शनि, ८वेंमें राहु और ९वेंमें स्थानमें केतु ग्रहको रख कर रविसे लगा कर प्रत्येक ग्रहके स्थानमें कृत्तिका आदि नक्षत्र यथा क्रमसे स्थापन करने पड़ते हैं। (पञ्चस्वरा) इन तीन प्रकारकी गुरुकुण्डलियोंमेंसे पहली ही सर्वत्र आदरणीय है, इसलिये उसीका चित्र दिया गया है।

गुरुकुण्डली।

८।१७।२६	११।२०।२		०	०	१५।२४।६
रवि	चन्द्र				शनि
९।१८।१७	वुध	वृहस्पति	शुक्र		
मङ्गल	१२।२१।	१ १८।	२२।४।१४।	२३।५	०
केतु					राहु
१०।१९।१	०	०	०		१६।२५।७

गुरुकुल (सं० क्ली०) गुरोः कुलं, ६-तत्। १ गुरुका वंश। २ गुरुका वह स्थान जहां वे विद्यार्थियोंको अपने साथ रख कर शिक्षा देते हैं। प्राचीन समयमें हिन्दुस्थानमें यह प्रथा थी कि गुरु वा आचार्यका निवासस्थान बहुत दूर एकान्तमें रहता और मनुष्य अपने लड़केको पढ़नेके लिये वहीं भेजते थे; जब तक शिक्षा समाप्त नहीं होती थी तब तक बालक लौट कर घर नहीं आते थे। ऐसे ही स्थानको गुरुकुल कहते थे।

गुरुकृत (सं० त्रि०) गुरुणा कृतं अनुष्ठितं, ६-तत्। गुरुसे जिसका अनुष्ठान किया गया हो।

गुरुकोप (सं० पु०) अतिशय क्रोध, अत्यन्त गुस्सा।

गुरुक्रम (सं० पु०) गुरुरेव क्रमो यत्र, बहुव्री०। परम्परागत उपदेश, एक दूसरेको उपदेश देना।

गुरुगल (सं० त्रि०) गुरु सम्बन्धीय।

गुरुगन्धर्व (सं० पु०) इन्द्रतालके छह भेदोंमेंसे एक भेद।

गुरुगन्धिक (सं० क्ली०) १ गुलमेहदीका पेड़। २ सुसव्वरका वृक्ष।

गुरुगीता (सं० स्त्री०) गुरुस्तवनभूता गीता। गीता-

(१) "अर्को भौमश्च केतुश्च चन्द्र' सौम्यो वृहस्पतिः।
शुक्रः शनैश्वरो राहुः कुण्डली स्याद् वृहस्पतेः॥"

किया। सम्राट् हाड्रियनने इस विद्रोहका दमन किया। किन्तु विद्रोहके कारण जेरुसलेम और उसके पार्श्ववर्ती स्थान मरुभूमिमें परिणत हो गये। जेरुसलेमके ध्वंस स्तूपके ऊपर ईलिया कापिटोलिना नामक नवीन नगरी बनाई गई। साथ ही ईसाई धर्मसम्प्रदायमें भी एक तरहका परिवर्तन देखनेमें आया। इसके बादसे जेण्टाइल लोग जेरुसलेमके धर्ममन्दिरोंके रक्षक नियुक्त हुए।

ईसाकी चौदहवीं शताब्दीके प्रारम्भमें रोमन सम्राट् कनष्टान्टाइनने ईसाई धर्मको रोमन साम्राज्यका राजकीय धर्म बना डाला। यही कारण है कि ईसाई धर्मका बहुत प्रचार हो गया। धर्मके नव उत्साहके दिनोंमें लोगोंका मन जेरुसलेमकी पुण्यस्मृतिकी ओर गया और वहां पुनः मन्दिर आदि बनने लगे। जेरुसलेममें जो बिशप रहते थे, वे ही खृष्टीय जगत्‌में सबसे अधिक सम्मानित होने लगे। बहुतसे तो जेरुसलेममें तीर्थयात्राके लिए उपस्थित हुए; जिससे पुरातन पवित्र स्थानोंका आविष्कार और पूजा होने लगी। ऐतिहासिक यूसिबियसका कहना है, कि ३२६ ई०में कालवारि नामक स्थान धूल और आवर्जनासे परिपूर्ण था और उसके ऊपरभी नासका मन्दिर था।* इस स्थानको देख कर सेण्ट हेलेनाने उसका संस्कार करना चाहा। किन्तु सम्राट् कनष्टानटाइनके आदेशसे उनकी सेनाने उसे खोद डाला। खोदते समय ईसाकी पवित्र समाधि आविष्कृत हुई। कनष्टानटाइनने विशप माकाराइसको लिखा—"उस पवित्र स्थानका अच्छी तरह आविष्कार किया जाना चाहिए;उससे बढ़ कर मेरे हृदयकी कामनाकी सामग्री और दूसरी नहीं है।" उस जगह दो बड़े बड़े मन्दिर बन गये। ईसाकी ५वीं शताब्दीके मध्यभागमें जेरुसलेम ईसाइयोंके पांच प्रधान विभागोंमें अन्यतम हो गया।

सम्राट् २य थियोडिसियसकी महिषी यूडोसिया ४४४ ई०से जेरुसलेममें रहने लगीं। इन्होंने जीवनका शेषभाग धर्मकार्यमें बिताया था और जेरुसलेमकी एक दीवार तथा बहुतसे मन्दिर बनवाये थे।

६१४ ई०में जेरुसलेम पर बड़ी भारी विपत्ति आई, इस समय पारसियोंने इस पर अधिकार कर लिया। सम्राट् खुशरूकी जामाताने नगर घेर लिया। कहा जाता है कि जेरुसलेमके पतनके समय ९० हजार ईसाई मारे गये थे। पाद्रिआर्क जाकरिया बन्दीरूपमें पारस्य पहुँचाये गये थे। सेन्टहेलेना पवित्र क्रसका जो स्मृतिचिह्न छोड़ गई थीं, उसे भी पारसी लोग ले गये। इस ध्वंसकार्यमें यहूदियोंने, ईसाइयोंके विरुद्ध हो कर पारसियोंका साथ दिया था। ६२२ ई०में रोमनवीर हीराक्लीयसने पारसियोंको परास्त किया था और ६२९ ई०में वे स्वयं तीर्थयात्राके लिए जेरुसलेम आये थे। इन्होंने कानून बना दिया था कि 'यहूदी जेरुसलेममें प्रवेश न कर सकेंगे'। इनसे पहले सम्राट् हाड्रियनने भी इस तरहका कानून बनाया था।

इसी बीचमें मुसलमान धर्मकी भी उत्पत्ति हुई। नव धर्मके नवीन उत्साहसे अरबियोंने एकके बाद दूसरा देश जीतना शुरू कर दिया। अलीके उपदेशानुसार उन्हें ओमरसे जेरुसलेम जय करनेका आदेश मिल गया। मुसलमान लोग चार महीने तक इस नगरको घेरे रहे। आखिर पाद्रिआर्क सोफोनियसको जब कहींसे कुछ सहायता न मिली, तब वे हताश हो कर मुसलमान सेनापतिसे मुलाकात करनेको राजी हो गये। उन्होंने शर्त रक्खी कि मुसलमान यदि ईसाई मन्दिरोंको न तोड़ें और ईसाइयोंको मुसलमान न बनावें, तो वे नगरमें प्रवेश कर सकते हैं। खलीफा ओमर इस शर्त पर राजी हो गये और सेनापतिको पत्र लिखा। ओमर स्वयं पाद्रिआर्कके साथ धर्मालोचना करते हुए नगरमें घुसे। मुसलमानोंने पहले पहल यहांके ईसाइयों पर कम अत्याचार किया था, क्योंकि ईसाई लोग एकेश्वरवादी थे, पौत्तलिक नहीं। मुसलमानोंके मतसे मक्का और मदीनाके बाद ही जेरुसलेम उनका पूजनीय स्थान है। क्योंकि यहां किसी दिन रातको मुहम्मद स्वयं पधारे थे।*

खालिफ आबदाल-मालिकके समयमें (६८४-७०५ ई०) जेरुसलेम मुसलमानोंके तीर्थरूपमें परिणत हुआ था। उन लोगोंने यहां बहुतसे मन्दिर बनवाये थे। क्रूजेड नामक धर्मयुद्धके समय ईसाइयोंकी दो

* Vita Constantini III, xxvI.

* कुरान, सूरा १७।

ककारलोपे साधुः। एक तरहका मयूर जो तिलमयूर कहलाता है।

गुरुतण्डुला (सं॰ स्त्री॰) उपसधाली, किसी किस्मका धान।

गुरुतम (सं॰ त्रि॰) अतिशयेन गुरुः गुरु-तमप्। १ अति गुरु। माता पिता और आचार्य इन तीनोंको गुरुतम कहते हैं। २ माता पिता प्रभृति गुरुजन। ३ अतिशय गुरुत्वविशिष्ट, बहुत भारी। (पु॰) ४ परमेश्वर, ईश्वर। (भारत १३।१४९।५०)

गुरुतल्प (सं॰ पु॰) गुरोः पितुस्तल्पं भार्या यस्य, बहुव्री॰। विमातृगामी, विमातासे गमन करनेवाला पुरुष। मनुने ऐसे मनुष्यको महापातकी बतलाया है। उसको या तो जलते हुए तप्त लौहपात्रमें सोकर अथवा ज्वलन लौहमयी स्त्रीमूर्तिको आलिङ्गन कर मरजाना भला है। इस प्रकारसे प्राणत्यागसे भिन्न उसका और दूसरा कोई प्रायश्चित्त भी नहीं है। (मनु॰ ११।५८) गुरुस्तल्पः, ६-तत्। २ गुरुकी भार्या, गुरुकी स्त्री।

गुरुतल्पग (सं॰) गुरुतल्प देखो।

गुरुतल्पिन् (सं॰ पु॰) गुरोस्तल्पं गम्यत्वेनास्त्यस्य गुरु-इनि। विमातृगामी।

गुरुता (सं॰ स्त्री॰) गुरोर्भावः गुरु-तल्-टाप्। १ गुरुत्व, भारीपन। २ महत्त्व, बड़प्पन। ३ गुरुपन, गुरुका कर्तव्य, गुरुआई। ४ जाड़ा, अङ्गकी जड़ता।

गुरुताप (सं॰ पु॰) अधिक गर्मी, कड़ी धूप।

गुरुताल (सं॰ पु॰) गुरुरेव तालो यत्र, बहुव्री॰। तालविशेष, जिसमें सिर्फ एक गुरु रहे।

गुरुताई (सं॰ स्त्री॰) गुरुता देखो।

गुरुतोमर (सं॰ पु॰) एक तरहका छन्द, जो तोमरछन्दके अन्तमें दो मात्राएं और अधिक रख देनेसे बन जाता है।

गुरुत्व (सं॰ क्ली॰) गुरोर्भावः गुरु-त्व। १ वैशेषिक मतसिद्ध चौबीस गुणोंके अन्तर्गत एक गुण। भाषापरिच्छेदके मतसे—पतनक्रियाका असमवायिकारण अर्थात् जिस गुणके रहनेसे द्रव्यका पतन होता है, उसको गुरुत्व कहते हैं। यह गुण अप्रत्यक्ष है, किसी भी इन्द्रिय द्वारा इसका प्रत्यक्ष नहीं हो सकता। इस गुणवाले किसी द्रव्यको तराजूके एक तरफ रखनेसे उस पल्लाके झुक जानेके कारण इस गुणका अनुमान कर लिया जाता है। लौकिक व्यवहारमें इस गुणका रत्ती, मासा, तोला सेर, मन इत्यादि भिन्न नामोंसे उल्लेख किया जाता है। (दिनकरी और कणादसूत्र) वल्लभाचार्यके मतमें स्पर्शविशेषको ही गुरुत्व माना गया है। उनके मतसे इसका प्रत्यक्ष होता है।

नैयायिक और वैशेषिकोंने सिर्फ जल मट्टीमें ही गुरुत्व गुण माना है। उनके मतसे—तेजः, वायु आदि अन्य किसी भी पदार्थमें गुरुत्व गुण नहीं है। यह गुरुत्व दो प्रकारका है—एक नित्य और दूसरा अनित्य। जल और मृत्तिकाके परमाणुओंमें जो गुरुत्व है, वह नित्य है, कभी भी उसका विनाश नहीं होता। इनके सिवा अन्य द्व्यणुक आदिका गुरुत्व अनित्य है। इनकी उत्पत्ति और नाश हुआ करता है। (भाषापरिच्छेद)

साङ्ख्यमतमें अतिरिक्त गुणका उल्लेख न होने पर भी साङ्ख्याचार्य द्रव्यस्वरूपमें वैशेषिक मतसिद्ध बहुतसे गुणोंको मानते हैं। परन्तु द्रव्यके आश्रयके विना गुणका अस्तित्व नहीं इसलिये वैशेषिक मतसिद्ध गुणोंको द्रव्यका स्वरूप ही मानते हैं, उसे द्रव्यके अतिरिक्त नहीं मानते। इनके मतसे मूल कारणके अन्यतम तमः गुणका धर्म गुरुत्व है, सत्व वा रजोगुणमें गुरुत्व नहीं है*।

(साङ्ख्यकारिका)

साङ्ख्यमतसे समस्त जन्य पदार्थ त्रिगुणमय अर्थात् सत्व, रजः और तमः गुणसे उत्पन्न है। महत्तत्त्व आदि सभी द्रव्योंमें कारणरूपसे तमोगुण है। साङ्ख्यमतकी पर्यालोचना करनेसे यह स्वीकार करना पड़ेगा कि, अन्य द्रव्य मात्रमें ही गुरुत्व है, तमोगुणके तारतम्यानुसार किसी द्रव्यमें इसकी अधिकता और किसीमें न्यूनता पाई जाती है। मिट्टी और पानीमें तमोगुणके अंश अधिक होनेके कारण, इन दोनोंका गुरुत्व सहज ही अनुभव होता है। परन्तु तेजः आदि पदार्थोंमें तमोगुणके अंश बहुत थोड़े होते हैं, इसलिये उनके गुरुत्वका सहजमें अनुभव नहीं होता। आधुनिक वैज्ञानिकोंने बहुतसे प्रमाणों द्वारा वायुमें गुरुत्व सिद्ध किया है।

* वायु और वायुमानयन्त्र देखो।

जैनदर्शनमें रूपी पदार्थ मात्रमें गुरुत्व माना है।

करने पर तुरुष्क-शक्तिको पुनः जेरुसलेम प्राप्त हो गया। उन्नीसवीं सदीमें तुरुष्क शक्ति द्वारा जेरुसलेममें अनेक प्रकारका संस्कार हुआ और ईसाइयोंके साथ अच्छा व्यवहार होने लगा। गत महायुद्धके फलसे जेरुसलेम अङ्गरेजोंके अधिकारमें आ गया है।

फिलहाल यहूदियोंने जेरुसलेम अधिकार कर वहां जातीय स्वाधीनता स्थापन करनेके लिए आन्दोलन शुरू कर दिया है। उसका नाम है Zionism. १८६२ ई०में मोसेस हेसने अपने Romund Jerusalem नामक ग्रन्थमें इस आन्दोलनका सूत्रपात किया था। यहूदियोंका मत यह है, कि "जातीय जीवनकी रक्षाके लिए जेरुसलेम जा कर अपने स्वतन्त्र वैशिष्ट्यको प्रस्फुटित करना पड़ेगा"। सेमेटिक जातिका विरुद्धभाव भी इस आन्दोलनमें प्रस्फुटित हुआ है। १८१८ ई०के सेप्टेम्बर महीनेमें तुर्की लोग पालेष्टाइनसे वहिष्कृत हुए थे। ब्रिटिश-शक्तिने उस समय यहूदियोंकी नालिश और अधिकार पर विचार किया था। १८२० ई०की पार्लामेण्टके कच्चे चिट्ठे Mandate-में लिखा है—"यहूदियोंका जो पालेष्टाइनके साथ ऐतिहासिक सम्बन्ध है, उसे स्वीकार कर उस देशमें उन्हें जातीय आवास प्रतिष्ठित करनेका आदेश दिया जाता है।"

१८२१ ई०के अप्रील मासमें औपनिवेशिक मन्त्री मिष्टर उइन्ष्टन चार्चिलने सिरिया देश भ्रमण करते समय कहा था, कि ब्रिटिश-शक्ति यहूदियोंके जेरुसलेम आदि देशोंमें पुनः प्रतिष्ठा-कार्यमें सहायता पहुँचायेगी।

जेल (अं० पु०) कैदखाना, कारागार, बन्दीगृह। अति प्राचीन समयमें भारतमें इस समयकी भांति जेलकी प्रथा नहीं थी। रणजित्सिंहका राज्य अङ्गरेजोंके हस्तगत होते ही वहां जेल बनवानेकी जिक्र चली। भारतमें मुसलमानोंके राजत्वकालमें एक प्रकारके जेलखाने थे जरूर, किन्तु वे भी आधुनिक जेलखानोंके समान नहीं थे। एक समयमें कुछ अपराधियोंको कारागारमें रखनेकी प्रथा उस समय भी इस समयकी तरह प्रचलित न थी। महाभारतमें महाराज जरासन्धके जिस कारागारका उल्लेख है, वह साधारण अपराधियोंके लिए व्यवहृत नहीं होता था। वर्तमान जेल-प्रथा यूरोपीय है।

अपराधियोंके दोषोंको सुधारनेके लिए ही उनको दण्ड दिया जाता है और इसीलिए उनको जेलखानेमें रक्खा जाता है। पहले यूरोपमें बहुतसे अपराधियोंको निर्वासन-दण्ड दिया जाता था; परन्तु अब निर्वासित और स्थानान्तरित करनेके बदले कारादण्डसे दण्डित किया जाता है। प्राचीन समयमें अपराधीके दोष संशोधित हों वा नहीं हों उसके प्रति किसी तरहकी दृष्टि नहीं रख कर उसे भारीसे भारी दण्ड दिया जाता था; दण्ड देनेके लिए किसी तरहके नियम नहीं थे। कारागारप्रथा प्रचलित होनेके बाद भी यूरोपमें कैदियों पर विशेष अत्याचार किया जाता था। यूरोपके जेलखाने मानो एक एक नरक ही थे। कैदियोंकी पीड़ाका वर्णन करना लेखनीकी शक्तिसे बाहर है। विश्वप्रेमिक जन हाउयार्डके अदम्य उत्साह और असीम क्लेशसहिष्णुतासे ही वीभत्स नरकोंका संस्कार हुआ है। उक्त महात्माके अटल प्रयत्नसे १७७३ ई०में कारागारके सुधारके विषयका एक कानून बना। इसी समयसे कारागारमें अतिरिक्त दण्ड देनेकी प्रथा रद्द हो गई। पहले सब तरहके कैदी एक साथ रक्खे जाते थे और जेलके अध्यक्ष (जेलर) अर्थलोभसे जेलखानेमें हर एक तरहके वीभत्स कार्य करनेका प्रश्रय (सहारा) देते थे, जिससे अपराधियोंके दोष दूर न हो कर बल्कि बद्धमूल होते थे।

जेलखानोंमें वायुसञ्चालनके लिये प्रशस्त मार्गोंके न होनेसे तथा हर एक तरहकी अपरिच्छन्नता रहनेके कारण एक प्रकारके ज्वरकी उत्पत्ति होती थी, उस ज्वरसे बहुत समय कैदियोंकी अपमृत्यु भी होती रहती थी। धीरे धीरे ये सब कारण दूर होने लगे। अनेक महात्माओंने कैदखानोंके इन दोषोंको दूर करनेके लिये जी-जानसे कोशिशें की हैं, किन्तु अब तक भी सम्पूर्ण रूपसे दोष दूर नहीं हुए हैं।

स्त्री और पुरुष कैदियोंको अलग अलग रक्खा जाता है। वे परस्पर मिल-जुल नहीं सकते और न बात चीत ही कर सकते हैं।

प्रत्येक कैदीका जिससे स्वास्थ्य ठीक रहे और उसे शक्तिसे ज्यादा परिश्रम न करना पड़े, इस पर जेलर

किया। बाद उनके वंशधरोंने काङ्गड़ाके निकटवर्त्ती नूरपुर नगरमें अपना राजभवन निर्माण किया। कलानो नगरमें सम्राट् अकबरने उनके पिताकी मृत्युका सम्वाद पाया और उसी जगह उन्होंने स्वयं सम्राट्की उपाधि ग्रहण की थी। इरावतीकूलस्थ डेरा नामक नगर सिख-गुरु नानकका परिचायक था। उक्त नगरके निकटवर्त्ती एक ग्राममें १५३८ ई०में नानककी मृत्यु हुई थी। मोगल राजत्वके समयमें इस जिलेका कुछ विशेष इति-हास नहीं पाया जाता है। परन्तु सिख जातिके अभ्युदय होने पर एक पक्षमें राजकीय शासनकर्त्ता और दूसरे पक्षमें अहमद शाह दुरानीके विरुद्ध युद्ध करके सिख सर्दार क्रमशः अपने अपने आवश्यकतानुसार पञ्जाब और शतद्रुके दोनों पार्श्ववर्ती स्थानों पर अधिकार कर रहने लगे थे। कान्हिया दलके अधिपति मान जाटवंशीय अमरसिंहने वारी दोआवका पश्चिमांश हस्तगत किया तथा रामघरिया दलके सर्दार जगरासिंहने दोना नगर कलानौर श्रीगोविन्दपुर बटाला प्रभृति नगर अधिकारमें कर लिये। कान्हिया सर्दारसे जगरासिंह परास्त हो कर भाग चले, फिर भी १७८३ ई०में उन्होंने अपना राज्य पलटा लिया। १८०३ ई०में जगरासिंहकी मृत्यु हुई। बाद उनके पुत्र योधसिंह राजा हुए। ये राजा रणजित-सिंहके मित्र थे। १८१६ ई०में इनकी मृत्युके बाद रण-जितने वह स्थान अपने राज्यमें मिला लिया। १८०८ ई०में अमरसिंहका अधिकृत राज्य सिख शासनके अधीन आ गया। प्रथम सिखयुद्धकी समाप्तिके बाद १८४६ ई०में सिखोंसे पठानकोट और उसके निकटवर्त्ती पार्वतीय विभाग इष्ट इण्डिया कम्पनीको अर्पण किये गये। इस समय यह प्रदेश काङ्गडा जिलान्तर्गत था। बाद १८४६ ई०में वारी दोआबका उत्तरांश स्वतन्त्र जिलेमें परिणत हुआ। इस समय बटाला नगरमें इसकी सदर अदालत थी।

१८५५ ई०को रावी नदीको दूसरो पारमें शकारगढ़की तहसील इसके अन्तर्भुक्त हो कर गुरुदासपुर नगरमें सदर अदालत स्थापित हुई। १८६१-६२ ई०में डलहौसी-शैलावास और उसके निकटस्थ समतल क्षेत्र समूह पर अङ्गरेज गवर्मेण्टने अपना अधिकार जमाया। कुछ काल तक बटालावासी सर्दार भगवानसिंह गुरुदासपुरके एक प्रधान भूम्यधिकारी थे। ये सिख सैन्याध्यक्ष तेजसिंह-के भागिनेय होते थे। १८६१ ई०में फिरोज शाह और सोब्रावनके युद्धमें तेजसिंहने अङ्गरेजोंसे बटालेका अधि-कार पाया था।

इस जिलेमें बटाला, देरानानक, दीना नगर, सुजन-पुर, कलानौर, श्रीगोविन्दपुर और गुरुदासपुर प्रभृति कई एक नगर हैं, जिनमेंसे देरानानक और श्रीगोविन्दपुर नगर सिखोंके परम पवित्र स्थान है। डलहौसीका शैला-वास समुद्रपृष्ठसे ७६८७ फुट ऊंचे पर है। ग्रीष्मऋतु-में यहां बहुतसे मनुष्योंका समागम होता है।

यहांके जङ्गलमें चीता, भेड़िया, बिलाव, सूअर, नील-गाय और हिरण पाये जाते हैं। इस जिलेकी जलवायु अत्युत्तम है। वर्षा भी यहां अधिक होती है। यहां लगभग १५ सेकेन्ड्री, १४२ प्राइमरी स्कूल, ५८ एलिमेन्ट्री स्कूल और ३ ऐङ्गलोवर्नाक्युलर हाई-स्कूल है। विद्या विभागमें प्रायः८२००० रुपये खर्च होते हैं, जिनमेंसे गव-र्मेण्ट ७००० रुपये देती है।

जिलेकी प्रधान उपज गेहूं, जौ, चना, ज्वार, बाजरा, रुई और ईख है। १८६९-७० ई०में जो दुर्भिक्ष पड़ा था उससे अमृतसरके मनुष्योंको भी असीम कष्ट भोगना पड़ा था। देशके उत्पन्न द्रव्योंकी रफतनी करनी ही जिलेका प्रधान व्यवसाय है। आसपासके ग्रामोंमें रुईसे एक प्रकारके मोटे वस्त्र प्रस्तुत होते हैं।

२ पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत गुरुदासपुर जिलेकी तह-सील। यह अक्षा० ३१° ४८´ से ३२° १३´ उ० और देशा० ७५° ६´ से ७५° ३६´ पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल प्रायः ४८६ वर्गमील है। इसके पूर्वमें बियास और उत्तर-पश्चिममें रावी है। इन दोनो नदियोंकी अधित्यका जङ्गलसे घिरी और उर्वरा है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः २५८३७८ है। इसमें गुरुदासपुर, दीनापुर और कला-नौर शहर तथा ६६८ ग्राम लगते हैं।

३ इसी नामके जिले और तहसीलका सदर। यह अक्षा० ३२° ३´ उ० और ७५° २५´ पू० उत्तर-पश्चिमीय रेलवेकी अमृतसर-पठानकोट शाखा पर अवस्थित है। यह रेल द्वारा कलकत्तेसे १२५२ मील, बम्बईसे १२८३

जेवर—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेको खुर्जा तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २८° ७' उ० और देशा० ७७° ३४' पू०में बसा है। लोकसंख्या प्राय: ७७१८ है। ई० ११वीं शताब्दीमें ब्राह्मणोंके बुलाने पर भरतपुरके यादव राजपूत यहां आ कर रहे और मेवोंको उन्होंने निकाल बाहर किया। १८२६ ई०में जेवर गवर्नमेण्टके हाथ लगा। १८८१ ई०को बाजार फिर बनाया गया। १८५६ ई०को २०वीं धाराके अनुसार इसका प्रबन्ध होता है। कालोन और सूतो नमदा कुछ कुछ बनता है। सप्ताहमें एक बार बाजार लगता है।

जेवर—मिथिलाके तिरहुत ब्राह्मणोंकी एक शाखा वा ५वां भेद।

जेवरा (हिं० पु०) ज्योरा देखो।

जेशलपोर—कच्छ प्रदेशका एक प्रसिद्ध दस्यु। इस व्यक्तिने शेष अवस्थामें तुरी नामक एक काठि रमणी द्वारा उपदेश पाने पर दस्युवृत्ति छोड़ दी थी। भुज नगरके २२ मील दक्षिणपूर्ववर्त्ती अञ्जार नगरमें जेशलपीरके स्मरणार्थ एक मन्दिर स्थापित है।

जेष्ठ (हिं० पु०) १ जेठ मास। २ पतिका बड़ा भाई, जेठ। (वि० ३ अग्रज, जेठा, बड़ा।

जेष्ठा (हिं० स्त्री०) ज्येष्ठा देखो।

जेसर—कच्छ प्रदेशकी धङ्गजाति। इनका प्रधानत: नाविनाल और वैराजके चारों तरफ वास है।

जेहाई—बङ्गालके दिनाजपुर जिलेके अन्तर्गत देवरा परगनेका एक ग्राम। यहां एक हाट लगती है।

जेह (फा० स्त्री०) १ कमानकी डोरीका मध्यका स्थान। यह स्थान आँखके पास लगाया जाता और इसीको सीधमें निशान रहता है।

२ दीवार पर नोचेकी तरफ दो तीन हाथकी ऊँचाई तक पलस्तर वा मट्टी वगैरहका लेप। यह दीवारके शेष भागके पलस्तर वा लेपसे कुछ ज्यादा मोटा होता है और कुछ उभरा हुआ रहता है।

जेहड़ (हिं० स्त्री०) पानीसे भरे हुए बहुतसे घड़े जो एक पर एक रखे रहते हैं।

ज़ेहन (अ० पु०) धारणाशक्ति, बुद्धि।

जेहलो—विहारप्रदेशके चम्पारन जिलेका एक शहर।

जैगोषव्य (सं० पु०) जिगोषोरपत्यं गर्गादित्वात् यञ्। योगविद्‌मुनिविशेष, योगशास्त्रके वेत्ता एक मुनि।

"असितो देवलोव्यास: जैगीषव्यश्च तत्त्ववित्।"

(भारत शा० ११ अ०)

महाभारतके शल्यपर्वमें लिखा है—पूर्वकालमें असित देवल नामक एक तपोधन गार्हस्थ्यधर्मका अवलम्बन कर आदित्यतोर्थमें रहते थे। कुछ दिन पीछे जैगीषव्य नामक एक महर्षि उस तोर्थमें आ कर देवलके आश्रममें रहने लगे और थोड़े ही दिनोंमें इन्हें सिद्धि प्राप्त हुई। महात्मा देवलने महर्षि जैगीषव्यको सिद्धि होते देखो, किन्तु स्वयं सिद्धिप्राप्त करनेमें समर्थ नहीं हुए। इस तरह कुछ दिन बीतने पर एक दिन महामति देवलने होम आदिके समयमें जैगीषव्यको नहीं देखा।

कुछ देर पीछे भिक्षाके समय जैगीषव्य भिक्षुकके रूपमें देवलके पास उपस्थित हुए। देवल उनको सामने उपस्थित देख परम आदरसे उनकी पूजा करने लगे। इसी तरह बहुत समय बीतने पर एक दिन देवल महर्षि जैगीषव्यको देख कर मन ही मन सोचने लगे—"मैं इतने दिनोंसे इनकी सेवा कर रहा हूं, पर ये इतने आलसी हैं कि इतने दिन हो गये एक दिन भो ये मुझसे बोले नहीं।" देवल इस तरहकी चिन्ता करते हुए स्नान करनेकी इच्छासे कलस ले कर सूनी सड़कसे समुद्रकी तरफ चल दिये। वहां जा कर देखा तो जैगीषव्य स्नान कर रहे हैं। यह देख कर देवल विस्मित हुए और स्नानाह्निक समाप्त कर चुकने पर इन्हें स्नान करते हुए देख आकाशमार्गसे आश्रमकी तरफ चल दिये। आश्रममें पहुंचे तो वहां भी इन्हें स्थाणुवत् तिष्ठते हुए देखा, इससे देवलका आश्चर्य और भी बढ़ गया। इसके बाद इसका वृत्तान्त जाननेके लिए वे अन्तरोक्षमें उपस्थित हुए, वहां देखा तो अन्तरोक्षचारी सभी सिद्ध एकत्र हो कर जैगीषव्यकी पूजा कर रहे हैं। यह देख कर वे अत्यन्त क्रुद्ध हुए। कुछ देर बाद उन्होंने जैगीषव्यको पितृलोकमें जाते देखा। इसके अनन्तर इन्हें यमलोकसे सोमलोक, सोमलोकसे अग्निहोत्र, दर्शपौर्णमास (अमावस्या, पूर्णिमा), पशुयज्ञ, चातुर्मास्य, अग्निष्टोम, अग्निष्टुभ, वाजपेय, राजसूय, बहुसुवर्णक, पुण्डरीक, अश्व

मनुका मत है कि गुरुपुत्रको भी गुरुकी नाईं व्यवहार करना चाहिये। टीकाकार कल्लूकभट्टने लिखा है कि यदि गुरुपुत्र अल्प वयस्क वा अपना शिष्य न हो तो उसके प्रति गुरुसा भाव दिखलावे, किन्तु गुरुपुत्र बालक समानवयस्क या अपना शिष्य हो तो उसके प्रति वैसा व्यवहार करना नहीं चाहिए। जो पिताके शिष्यके पास अध्ययन करता है उसे चाहिए कि वह उनको गुरुकी नाईं मान्य करें।

शिष्यको न्यूनवयस्क वा समानवयस्क गुरुपुत्रका गात्रमार्जन, उच्छिष्टभोजन या पादमर्द्दन करना नहीं चाहिए एवं वैसे गुरुपुत्रको स्नान भी कराना मना है। (शिष्य देखो।)

तान्त्रिकोंका कथन है कि मनुका यह विधान सिर्फ आचार्य गुरुपुत्रके प्रति उपयुक्त है, किन्तु मन्त्रदाता गुरुपुत्र चाहे कैसाही क्यों न हो तो भी उन्हें गुरुसा व्यवहार करना चाहिये।

"गुरुवत् गुरुपुत्रं च।" (तन्त्रसार)

वर्त्तमान सामाजिक नियमसे बहुतसे तान्त्रिक उपासकोंने गुरुके सदृश गुरुपुत्रको पादपूजा और उच्छिष्टादिका भोजन किया करते हैं।

गुरुपुष्प (सं॰ पु॰) क्रमुकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

गुरुपुष्य (सं॰ पु॰) वृहस्पतिके दिन पुष्य नक्षत्रके पड़नेका योग। ज्योतिषी इसे शुभ योग मानते हैं।

गुरुपूजा (सं॰ स्त्री॰) गुरोः पूजा, ६-तत्। गुरु वा मन्त्रदाताकी पूजा। दीक्षित हो कर जिस तरह प्रतिदिन इष्टदेवताकी पूजा करनी पड़ती है उसी तरह गुरुपूजा करनेका भी विधान है। (पूजा देखो।)

गुरुप्रमोद (सं॰ पु॰) गुरोः प्रमोदः, ६-तत्। गुरुके प्रति प्रेम वा प्रीति। (त्रि॰) गुरुं प्रमोदयति गुरु-प्र-मुद-णिच् अण। २ गुरुको सन्तोषकारक, जिससे गुरु सन्तुष्ट हो।

गुरुप्रसाद (सं॰ पु॰) गुरोः प्रसादः, ६-तत्॰। गुरुकी प्रसन्नता।

गुरुप्रिय (सं॰ त्रि॰) गुरोः प्रियः, ६-तत्॰। जिसको गुरु चाहते हों, जो गुरुका प्यारा हो। गुरुरेव प्रियो यस्य, बहुव्री॰। गुरुपरायण, गुरुमें जिसकी अचला भक्ति हो।

गुरुव्—जातिविशेष। यह लोग शिवकी उपासना और भस्म धारण करते हैं। रुद्राक्षकी माला पहननेका भी उन्हें अधिकार है शिवकी पूजामें जो चढ़ाया जाता, उनके घर आता है। ष्टेल साहबने उन्हें शूद्र-जैसा लिखा है। यह दाक्षिणात्यके अधिवासी और शिव, मारुती, हनुमान् आदि मन्दिरोंके पुजारी हैं।

गुरुभ (सं॰ क्लो॰) गुरोर्भं, ६ तत्। १ पुष्यनक्षत्र। वृहस्पति इस नक्षत्रका अधिपति होनेके कारण इसे गुरुभ कहते हैं। २ धनुराशि। ३ मीनराशि।

गुरुभाई (हिं॰ पु॰) वैसे मनुष्य जिनमेंसे प्रत्येकका गुरु एक ही व्यक्ति हो।

गुरुभार (सं॰ पु॰) १ गरुड़के पुत्र। २ बहुत भारी।

गुरुभाव (सं॰ पु॰) गुरोर्भावः, ६-तत्॰। गुरुता, भारीपन, गुरुश्चासौ भावश्चेति कर्मधा॰। १ अतिशय गौरवान्वित अभिप्राय। (त्रि॰) गुरुगौरवयुक्तः भावोऽभिप्रायो यस्य, बहुव्री॰। २ जिसका अभिप्राय वा तात्पर्य गौरव युक्त हो।

गुरुभृत् (सं॰ पु॰) गुरुं गुरुत्वं बिभर्ति गुरु-भृ क्विप् तुगागमश्च। गुरुत्वयुक्त, जिसको गौरव हो।

गुरुमत् (सं॰ त्रि॰) गुरुः गुरुवर्णोऽस्य अस्ति गुरु मतुप्। १ जिसमें गुरुवर्ण हो। २ गुरुयुक्त।

गुरुमर्द्दल (सं॰ पु॰) नित्यकर्मधा॰। वाद्यविशेष, एक तरहका बाजा।

गुरुमुख (हिं॰ पु॰) दीक्षित, जिसने गुरुसे मन्त्र लिया हो।

गुरुमुखी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी लिपि, इसे गुरु नानकने चलाया था। आज भी यह लिपि पञ्जाबमें प्रचलित है।

गुरुरत्न (सं॰ क्ली॰) गुरु गौरवान्वितं रत्नं। १ पुष्परागमणि। पुखराज नामका रत्न। २ गोमेद नामक रत्न।

गुरुराज—१ एक वैदान्तिक। इन्होंने चन्द्रिका टीका प्रणयन की है। २ वृन्दावनाख्यानस्तोत्र-रचयिता।

गुरुरामकवि—सुभद्राधनञ्जय नामक संस्कृत नाटक प्रणेता।

गुरुराहु (सं॰ पु॰) गुरुणा सह राहुर्यत्र, बहुव्री॰। योगविशेष। वृहस्पति राहुके साथ एक नक्षत्रमें आनेसे 'गुरुराहु' योग होता है। इस योगमें विवाह, व्रत और यज्ञ प्रभृति कार्य निषिद्ध हैं। भविष्यपुराणमें लिखा

मान थे। ये कुछ काल तक अकबर बादशाहके दरबारमें रहे थे। इन्होंने शान्तिरसकी अनेक कविताएं बनाई हैं।

जैतपुर—बुन्देलखण्डके अन्तर्गत कुलपहाड़के निकटवर्ती एक प्राचीन नगर। यहां बहुतसे आधुनिक मन्दिर और एक प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष है, जिसे देखनेसे अनुमान किया जाता है कि यह स्थान बहुत प्राचीन कालका है। नगरके निकटस्थ बड़े सरोवरके पश्चिम किनारे हो कर एक छोटी पर्वतश्रेणी गई है। इसके ऊपर एक चहार-दीवारी बनी है। मालूम पड़ता है कि यह स्थान पहले चन्देल राजाओंका दुर्ग था। प्रासादकी गठन-प्रणाली देखनेसे यह महाराष्ट्रोंका पूर्वस्थान प्रमाणित होता है। अंगरेज और महाराष्ट्रके युद्धमें यह दुर्ग शायद टूट फूट गया होगा।

जैतराम—एक हिन्दी-कवि। इन्होंने १७३८ ई०में सदाचारप्रकाश नामक एक हिन्दीग्रन्थ रचा था।

जैतश्री (हिं० स्त्री०) एक रागिणी।

जैतसखी—एक हिन्दी कवि। इनकी कविता साधारणतः अच्छी होती थी। एक उदाहरण दिया जाता है—

'दाऊ कृष्ण यशोदा मैया हरषित गोद खिलावैं।
नाना भांति खिलौना ले ले गोविन्द लाड लड़ावैं॥
ब्रह्म जाको पार न पावैं शिव सनकादिक ध्यावैं।
वाकों यशमति मेरो मेरो पलना माहि झुलावैं॥
* * *
जैतसखी रंग मोही मोहन बार बार बलजाई॥"

जैतसिंह—बीकानेरके प्रतिष्ठाता राजा बीकाके पौत्र और लूनकरणके पुत्र। १५१२ ई०में लूनकरणकी मृत्यु हुई। उनके बाद जैतसिंह राजगद्दी पर बैठे। जैतसिंहके बड़े भाईने जो कि सिंहासनके प्रकृत अधिकारी थे, स्वेच्छापूर्वक सिंहासन त्याग दिया था—वे कुछ जागीर ले कर ही सन्तुष्ट थे। जैतसिंह बड़े वीर थे; इन्होंने तारनोड़ प्रदेशके राजाको युद्धमें परास्त किया था। १५४६ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

जैतापुर—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत अहमदाबाद जिलेका समुद्रकूलस्थित एक बन्दर और दुर्ग। यह राजपुर खाड़ीके किनारे मुहानेसे २ मील दूरमें अवस्थित है। राजपुर जानेमें यह राजपुर खाड़ीका प्रवेश-पथ है।

जैती (हिं० स्त्री०) खेतोंके खेतोंमें आपसे आप होनेवाली एक घास।

जैतुगि—प्राचीन देवगिरिके यादववंशीय एक राजा। शकसं० ११७१में खुदे हुये कन्हार राजाके ताम्रलेखमें इनका नाम पहले पहल आया है।

जैतून (अ० पु०) अरब, श्याम आदिसे ले कर युरोपके दक्षिणी भागों तकमें होनेवाला एक प्रकारका सदा बहार पेड़। यह ४० फुट तक ऊंचा होता है। इसके पत्ते नरकटके पत्तोंसे मिलते जुलते हैं, लेकिन आकारमें उनसे कुछ छोटे होते हैं। इसके फूल गुच्छोंमें लगते हैं। पश्चिमकी प्राचीन जातियां इसे पवित्र मानती हैं। पूर्व समय रोमन और यूनानी विजेता इसकी पत्तियोंकी माला सिरमें पहनते थे। मुसलमान लोग आजकल भी इसकी लकड़ीकी माला बनाते हैं। पकने पर फल का रंग नीला और कुछ काला होता है। मुरब्बा और अचार इसके कच्चे फलोंसे बनाया जाता है। बीजोंसे एक प्रकारका तेल निकलता है।

जैतो—पञ्जाब प्रान्तके नाभा राज्यकी फूल निजामतका नगर। यह अक्षा० ३०° २६' उ० और देशा० ७४° ५६' पू०में नर्थ वेष्टर्न रेलवेकी फीरोजपुर भटिण्डा शाखा पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६८१५ है। यहां अनाजकी बड़ी मण्डी है। प्रति वर्ष फरवरी मासमें मवेशियोंका एक मेला लगता है।

जैत्र (सं० त्रि०) जेतैव जेतृ-प्रज्ञादित्वादण्। १ जेता, जीतनेवाला। (पु०) २ औषधविशेष, एक दवा। ३ पारद, पारा।

जैत्ररथ (सं० त्रि०) जैत्रो जयशीलो रथो यस्य, बहुव्री०। जयशील, जीतनेवाला, फतहमन्द।

जैत्री (सं० स्त्री०) जयति रोगादिनाशकतया सर्वोत्कर्षेण वर्त्तते जेतृ-स्वार्थे-अण् स्त्रियां ङीप्। १ जयन्ती वृक्ष, जैतका पेड़। २ जातीकोष, जावित्री।

जैन (सं० पु०) जिन-अण्। १ जिनोपासक, जैनमतावलम्बी, जैनधर्मका अनुयायी, भारतवर्षका एक विख्यात धर्म-सम्प्रदाय। यह दिगम्बर और श्वेताम्बर इन दो प्रधान

करते हैं। इस वर्ष सिर्फ लताजातीय शस्यकी वृद्धि होती है, और कोई अनाज बिल्कुल ही नहीं होता। कहीं कहीं भयङ्कर दुर्भिक्ष पड जाता है।

रेवती, अश्विनी और भरणी इनमेंसे किसी एक नक्षत्रमें वृहस्पतिका उदय हो, तो वह वर्ष आश्विन कहलाता है। इस वर्षमें अत्यन्त वर्षा, प्रजाको हर्ष और सम्पूर्ण प्राणियोंकी सुख होता है। कहीं भी अन्न कष्ट नहीं रहता। (वृहत्स० ८ अ०) वृहस्पतिचार देखो।

गुरुवला (सं० स्त्री०) संकीर्ण रागका एक भेद।

गुरुवायङ्करी—दक्षिण कनाडा जिलेके उप्पिनङ्गडी तालुकके अन्तर्गत एक ग्राम। यह वेल्लतङ्गरीके पास तालुकको कचहरीसे १२ मील उत्तरपूर्वमें अवस्थित है। यहां एक जैन मन्दिर है। फर्गुसनने उक्त मन्दिरको 'गुरयङ्करो' बतलाया है। उक्त मन्दिरके मण्डपकी छत पांच स्तम्भों पर डटो हुई है, और भित्तिके पास चारों तरफ पत्थरकी सर्प मूर्त्तियां खुदो हुई हैं। लोगोंका विश्वास है कि, यह मन्दिर बहुत प्राचीन कालका है।

गुरुवायूर—मन्द्राजके मलवार जिलेके अन्तर्गत पोनानी तालुकका एक ग्राम। यह अक्षा० १०° ३५' उ० और ७६° ३' पू० देशान्तर पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३३८३ है। यहां नंबुरि ब्राह्मण, नायर और उच्च श्रेणीके हिन्दुओंका वास अधिक है। यह पोनानोसे १६ मीलको दूरी पर बसा है, यहांके प्राचीन कृष्णमन्दिर तथा नगरके प्रवेशद्वारके गोपुरका शिल्पकार्य अत्यन्त सुन्दर है। १७८४ ई०में टीपू सुलतानने यहांके बहुतसे मन्दिरोंको नष्ट भ्रष्टकर दिया था। १७९४ ई०में कालिकटके सामुरिराजने कई एक जीर्ण मन्दिरोंका संस्कार किया था।

गुरुवार (सं० पु०) वृहस्पतिका दिन, वृहस्पतिजी देवताओंके गुरु थे इसीसे गुरु शब्दसे वृहस्पतिका ग्रहण हुआ।

गुरुवासो वैष्णव—उत्कलदेशके एक सम्प्रदायका नाम। ये गृहस्थ होते हैं। इनमें चार चार मठ और महन्त हैं। ये महन्त वहांके कामरी, किसान, मालाकार इत्यादिको मन्त्र दे कर अपना शिष्य बनाते और उनसे खेती-बारी करा कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। इनकी पद्धति भी दूसरी तरहकी है। ये अन्यान्य वैष्णवोंके साथ एक पंक्तिमें बैठ कर भोजन नहीं करते।

गुरुवीज (सं० पु०) मसूर।

गुरुवृत्ति (सं० स्त्री०) गुरुषु वृत्तिर्व्यवहारः, ७-तत्। गुरुके प्रति शिष्यका कर्त्तव्य व्यवहार। शिष्य देखो।

गुरुशिंशपा (सं० स्त्री०) नित्यकर्मधा०। शिंशपावृक्ष, शीसमका पेड़।

गुरुशुश्रूषा (सं० स्त्री०) गुरोः शुश्रूषा, ६-तत्। गुरुसेवा।

गुरुश्रेष्ठ (सं० क्ली०) धातुविशेष, रांगा।

गुरुस (सं० पु०) गरुड़शाली, किसी किसका धान।

गुरुसारा (सं० स्त्री०) गुरुः गुरुत्ववान् सारो यस्य, बहुव्री०। शिंशपा, शीसमका वृक्ष। (त्रि०) २ महाभारयुक्त वस्तु, बहुत भारी चीज।

गुरुसिंह (सं० पु०) एक पर्व, त्यौहार। जब वृहस्पति सिंह राशि पर आता है तो यह पर्व लगता है। इस त्यौहारमें नासिक क्षेत्रकी यात्रा और गोदावरी नदीका स्नान पुण्य माना गया है।

गुरुसेवा (सं० स्त्री०) गुरोः सेवा, ६-तत्। गुरुकी शुश्रूषा।

गुरुस्कन्ध (सं० पु०) गुरुस्कन्धोऽस्य, बहुव्री०। १ एक पर्वत। २ क्षीरिबीवृक्ष, खिरनीका पेड़।

गुरुस्वेद (सं० पु०) अश्वका स्वेदविशेष, घोड़ेका पसीना।

गुरुह (सं० त्रि०) गुरुहन् देखो।

गुरुहन् (सं० पु०) गुरुं गुरुपाकं हन्ति गुरु-हन्-क्विप्। १ उजला सरसों। (त्रि०) गुरुं आचार्यादिकं हन्ति क्विप्। २ गुरुहन्ता।

गुरू (हिं० पु०) गुरु देखो।

गुरूघंटाल (हिं० वि०) १ अत्यन्त चतुर, चुस्तचालाक। २ चालबाज, धूर्त्त।

गुरूत्तम (सं० त्रि०) गुरुषु गुरूणां वा उत्तमः। १ पूज्यतम, सबसे अधिक पूज्य। (पु०) २ परमेश्वर।

(व्याक० वि०)

पुरुषोत्तम और गुरूत्तम आदि पदोंके समासके विषयमें वैयाकरणोंका मतभेद है। किसी किसी वैयाकरणके मतसे गुरूत्तम आदिके स्थान पर 'गुरुषु उत्तमः' इस प्रकारका सप्तमी तत्पुरुष समास ही होता है, षष्ठी समास

अन्तिम तीर्थङ्कर श्रीमहावीरस्वामी वा वर्द्धमानको निर्वाणकी प्राप्ति हुई थी (७)।

हमारे विवेचनमें यही आता है कि, जिस समय शाक्य बुद्धने जन्म भी नहीं लिया था, उससे भी बहुत पहले जैनधर्म प्रचलित था। प्राचीनतम जैनश्रुतमें बौद्ध वा बुद्धदेवका प्रसङ्ग नहीं है, किन्तु ललितविस्तर आदि प्राचीनतम बौद्धग्रन्थोंमें 'निर्ग्रन्थ' नामसे जैनोंका उल्लेख मिलता है।

बौद्ध और जैनधर्मके किसी किसी विषयमें सौसादृश्य होनेके कारण जैनधर्मको परवर्ती नहीं कहा जा सकता। सादृश्य रहनेसे ही यदि परवर्ती हो, तो इस युक्तिसे बौद्धधर्म भी परवर्ती सिद्ध होता है। अत एव उपर्युक्त प्रमाणोंसे यही प्रमाणित होता है कि जैनधर्म बौद्धधर्मसे पहलेका है।

जैनमतानुसार जैनधर्मका इतिहास—जैन ग्रन्थोंमें प्रायः इस बातका वर्णन देखनेमें आता है कि, जैनधर्म अनादि है और उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालके चतुर्थ-कालोंमें २४ तीर्थङ्करोंका आविर्भाव हो कर धर्मका प्रकाश हुआ करता है। जैनधर्मका मत है कि, सृष्टि अनादि है, इसका कोई हर्त्ता-कर्त्ता नहीं है। सृष्टिमें जो परिवर्तन हुआ करते हैं, वह स्वतः कालद्रव्यके प्रभावसे हुआ करते हैं। जैनमतानुसार जम्बूद्वीपके मध्य भरतक्षेत्र और ऐरावतक्षेत्रमें उन्नति और अवनतिरूप कालपरिवर्तन हुआ करता है। ऐरावतक्षेत्रकी बात जाने दीजिये क्योंकि उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐरावतक्षेत्रमें भरतक्षेत्रके समान ही तीर्थङ्कर आदिका आविर्भाव हुआ करता है, अन्यान्य सभी विषय भरतक्षेत्रके समान हैं। उन्नतिरूप कालको उत्सर्पिणी और अवनतिरूप कालको अवसर्पिणी कहते हैं। इन दोनों कालोंकी स्थिति १०।१० कोड़ाकोड़ी सागर* परिमित है। २० कोड़ाकोड़ी सागर परिमितकालको कल्प कहते हैं। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल ६।६ भागोंमें विभक्त हैं, यथा—(१) सुःषमासुःषमा, (२) सुःषमा, (३) सुःषमादुःषमा, (४) दुःषमासुःषमा, (५) दुःषमा और (६) दुःषमादुःषमा। वर्तमानमें अवसर्पिणी कालका ५वाँ विभाग दुःषमा चल रहा है। इसी तरह यह कालचक्र अनादि कालसे चलता आ रहा है और अनन्तकाल तक चलता रहेगा अर्थात् सृष्टिका कभी भी नाश न होगा। जैनमतानुसार सिर्फ अवनतिकी सीमा शेष होने पर अर्थात् ६ठे काल (दुःषमादुःषमा) के बाद खण्डप्रलयमात्र होती है। १म सुःषमासुःषमा कालका समय ४ कोड़ाकोड़ी सागरका थी। इस समय मनुष्योंकी उत्कृष्ट आयु ३ पल्यकी और शरीरकी ऊँचाई २४००० हाथकी होती थी। २य सुःषमाकालकी स्थिति ३ कोड़ाकोड़ी सागरकी थी। इसमें मनुष्योंकी आयु २ पल्यकी और शरीरकी ऊँचाई १६००० हाथकी थी। ३य सुःषमादुःषमाकालकी स्थिति २ कोड़ाकोड़ी सागर, आयु १ पल्य और शरीरकी ऊँचाई एक कोश (४००० गज)-की होती थी। इन तीन विभागोंका विशेष कुछ इतिहास नहीं है, क्योंकि उस समय यहां भोगभूमि थी, अर्थात् उस समय सब सुखसे रहते थे, कोई किसीका स्वामी वा सेवक न था, राजा आदि भी न थे, किसीका शासन न था और न जीविका निर्वाहके लिए असि मसि कृषि आदि किसी प्रकारका कार्य ही करना पड़ता था—कल्पवृक्षोंसे सबकी आवश्यकताएं पूर्ण हो जाती थीं। उस समय विवाह आदिका कोई भी नियम प्रचलित नहीं था। माताके गर्भसे स्त्री पुरुष युगल हो उत्पन्न हुआ करते थे और उनके युगल सन्तान होते ही दोनोंकी मृत्यु हो जाया करती थी। तात्पर्य यह है कि, उस समयके लोग स्वर्गके देवोंके समान बड़े आनन्दसे जीवन बिताते थे और मर कर स्वर्गमें ही जन्म लिया करते थे। उसके बाद चतुर्थ कालसे पहले और

(७) जैनग्रन्थ त्रिलोकसारमें लिखा है—

"पणछ० सयवस पणमासजुदं गमिय वीरनि० बुइदो सगराजो।"

इस विषयमें अन्यान्य ग्रन्थोंका मत जानना हो तो Indian Antiquary, Vol. XII p 21ff देखना चाहिये।

* ४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५१२१९२०००००००००००००००००० वर्षका एक पल्य होता है; पल्यकी संख्याको एक पद्म (१०००००००००००००००)-से गुणा करनेसे एक सागरकी संख्या होती है और एक करोड़का वर्ग एक कोड़ाकोड़ी कहलाता है।

अधिकारमें आ गया। १८५७ ई०के मईमासमें सिपाही विद्रोहके समय फरुखनगरके नवाब विद्रोही हो उठे, मेव जाति तथा राजपूत उनके अनुगामी हुए। १८५८ ई० में नवाबको विद्रोहीका सहकारी समझ कर उनकी समस्त सम्पत्ति सरकारने जब्त कर ली।

इस जिलेमें रेवाडी, फिरोजपुर, पलवल, फरुखनगर, गुर्गांव, सोहाना, होदल और मो ये कई एक नगर लगते हैं। यहां मेव, जाट, गूजर, अहीर, राजपूत, बेणिया, रङ्गर और मीना जातिका वास बहुत है। समस्त गुर्गांव जिलेमें शीतला देवीकी पूजा ही अधिक प्रचलित है।

जलकी विशेष सुविधा नहीं रहनेसे १७८३ ई० १८०३ १८१२, १८१७, १८३३, १८३७, १८६० और १८६८ में सात बार दुर्भिक्ष पड़ा था।

परन्तु १७८३ ई०का महामारी दुर्भिक्ष आज भी हिन्दुस्थानियोंके हृदयमें जाग्रत् है। यहां चार दातव्य चिकित्सालय है।

२ पञ्जाबके गुर्गांव जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २८° १२´ से २८° ३३´ उ० और देशा० ७६° ४२´ से ७७° १५´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४१३ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: १२५८६० है। इसमें गुर्गांव, सोहन और फरुखानगर नामक तीन शहर तथा २०७ ग्राम लगते हैं। तहसीलके उत्तरकी जमीन उर्वरा तथा पश्चिम की बालुकामय है।

३ उक्त जिले और तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० २८° २८ उ० और देशा० ७७° २´ पू० राजपूताना मालवा-रेलवेके गुर्गांव ष्टेसनसे ३ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। इस नगरसे प्राय: १ मील उत्तर पूर्व बहादुरगढ़ जानेके रास्ते पर एक स्तम्भ है। जिसकी ऊंचाई ३ फुट, चौडाई १२½ इञ्च और मोटाई ५ इंचकी है। यहां शीतला देवीका एक मन्दिर, एक मिडिल स्कूल तथा १ चिकित्सालय है।

गुर्चनी (हिं० स्त्री०) १ गेहूं और चना मिला हुआ अनाज।

२ भारतके युक्तप्रान्तमें रहनेवाली एक अफगानजाति। इनमें कोई कोई समतल भूमि पर खेती बारी करते हैं और सभी लोग पर्वतों पर घूमा करते हैं। उक्त पर्वतों के दक्षिणमें हुन्दर नामक एक स्थानमें एक दुर्ग है इस जातिको दमन करनेके लिये सबूनसलने यह दुर्ग बनवाया है। हुन्दरके पास कन्दाहार जानेके लिए एक गिरिसङ्कट है। १८५०, १८५२ और १८५३ ई०में अफगान सेना यहां दिखाई दी। इस पर ब्रिटिश गवर्मेण्टने घोषणा निकाली कि किसी भी अफगानको अङ्गरेजी राज्यमें पानेसे, उसे कैद कर लिया जायगा। १८५५ ई० में गुर्चनी-सर्दारके गिरिसङ्कटकी रक्षाके लिये नियुक्त होने पर, अङ्गरेजने उन्हें (खर्चके लिए) वार्षिक हजार रुपये देते थे। इस जातिकी लिशरी शाखा बहुत ही बलवान् है, ये लोग हर वख्त मुरीजातिके साथ युद्ध करनेमें लगे रहते हैं। गुर्चनी और लिशरी जाति पर्वतके सामने, तथा ड्रेशक जाति हन्दर और मिथुनकोटकी बीचकी समतल भूमि पर वास करती है।

गुर्ज (फा० पु०) गदा, सोंटा।

गुर्जमार (फा० पु०) एक तरहके मुसलमान फकीर। यह सदा लौहगुर्ज हाथमें लिये इधर उधर घूमता है।

गुर्जर (सं० पु०) गुरु जरयति जृ-णिच्-अण्। १ गुजरात देश। (उणादिवृत्ति ३।१।८)

गुजरात कहनेसे इस समय बम्बई प्रेसीडेन्सीके समुद्रकूलवर्ती सम्पूर्ण उत्तरांश अर्थात् उत्तरसीमामें राजपूताना, दक्षिणमें कोङ्कण, पूर्व विन्ध्य और पश्चिममें सागर तकका बोध होता है। इसके भीतर सूरत, भड़ौंच, खेडा, पञ्चमहल, अहमदाबाद, बडोदा, महीकांटा, रेवा, पालनपुर, राधनपुर, बालासिनोर, काम्बे, दङ्ग, चौरार, वांसदा, पेट, धरमपुर थरड, सचीन, बसरवो आदि नगर आते है। इसके सिवा इसमें १८० क्षुद्र राज्यविशिष्ट काठियावाड प्रदेश भी आता है। इन सबको लेकर गुजरातका भूपरिमाण प्राय: ४१५३६ वर्गमील होता है। यहां गुजराती, मराठी और कनाडी भाषा चलती है।

ऊपर जिस प्रकार गुजरातका आकार लिखा गया है, असली गुजरात राज्य पहले उतना बड़ा नहीं था। उक्त स्थानोंमें गुर्जरवासी गुजरातियोंके धीरे धीरे फैल जानेके कारण अन्तमें उक्त सभी जनपद गुजरातमें गिने जाने लगे। प्राचीन गुर्जर सुराष्ट्र, आनर्त, भरुकच्छ

सर्वथा नाश हो कर कर्मभूमिका प्रारम्भ हुआ।

चौदहवें कुलकर नाभिराजके समयमें समस्त कल्पवृक्ष नष्ट हो गये थे। क्योंकि इन्हीं के समयसे कर्मभूमिका प्रारम्भ था। भोगभूमिमें तो बिना किसी व्यापारके भोगोपभोगकी सामग्रियां स्वतः (कल्पतरुओं द्वारा) प्राप्त हो जाया करती थीं, किन्तु अब जीविकाके लिए व्यापारादि कार्य करनेकी आवश्यकता हुई। यह समय युगके परिवर्तनका था। कल्पवृक्षोंके नष्ट होनेके साथ ही जल, अग्नि, वायु, आकाश, पृथिवी आदिके संयोगसे धान्योंके वृक्षोंके अङ्कुर स्वयं उत्पन्न हुए और बढ़ कर फलयुक्त हो गये। किन्तु उस समयके मनुष्य इन वृक्षोंका उपयोग करना नहीं जानते थे। प्रजा बड़ी व्याकुल हो गई और महाराज नाभिके पास पहुंची। महाराज नाभिने उपयोगमें आनेवाले धान्य वृक्ष और फल-वृक्षोंके धान्य और फलोंसे अपना निर्वाह करना सिखलाया। और हानिकर वृक्षोंसे दूर रहनेके लिए भी आज्ञा दी। बरतन आदि बनानेकी तरकीब भी सिखाई। इनके समयमें बालककी नाभिमें नाल दिखाई दी। इन्होंने नाल काटनेकी विधि प्रचलित की।

इन कुलकरोंमेंसे किसीको अवधिज्ञान * और किसीको जातिस्मरण † होता था। इनमेंसे प्रतिश्रुति, सन्मति, क्षेमङ्कर, क्षेमन्धर और सीमन्धर इन पांच कुलकरोंने अपराधी मनुष्योंको पश्चात्तापरूप "हा" शब्द कह देने मात्रका दण्ड दिया था। सीमन्धर, विमलवाहन, चक्षुष्मान्, यशस्वान्, और अभिचन्द्र इन पांच कुलकरोंने "हा, मा" इन दो शब्दोंका प्रयोग कर अपराधियोंको दण्डित किया था तथा अन्तके चार कुलकरोंने "हा, मा, धिक्" इन तीन शब्दों द्वारा दण्डका विधान किया था। (महापुराणान्तर्गत आदिपुराण) नाभिराजकी पत्नीका नाम था महारानी मरुदेवी। इनके गर्भसे युगादि पुरुष १म तीर्थङ्कर आदिनाथका जन्म हुआ। इन्होंने लोगोंको गणितशास्त्र, छन्दःशास्त्र, अलङ्कारशास्त्र व्याकरणशास्त्र, चित्रकला तथा लेखन प्रणालीका अभ्यास कराया। मनोरञ्जनके लिए गायनविद्या, नाटक और नृत्यकला आदिका भी कुछ कुछ प्रचलन हुआ। कच्छ और महाकच्छ नामक राजाओंकी कन्या यशस्वती और सुनन्दासे इनका विवाह हुआ था। यशस्वतीके गर्भसे भरत चक्रवर्ती, वृषभसेन, अनन्तविजय, महासेन, अनन्तवीर्य, अच्युत, वीर, वरवीर, श्रीषेण, गुणसेन, जयसेन आदि १०० पुत्र और ब्राह्मीसुन्दरी नामकी एक कन्या हुई। दूसरी रानी सुनन्दादेवीके गर्भसे बाहुबली नामक एक पुत्र और सुन्दरीदेवी नामकी एक कन्या उत्पन्न हुई।

शिक्षाका प्रारम्भ—एक दिन भगवान् ऋषभदेवने अपनी दोनों कन्याओंको गोदमें बिठाया और अ आ इ ई आदि पढ़ाने लगे। इसके बाद उन्हें व्याकरण, छन्द, न्याय, काव्य गणित आदिकी भी शिक्षा दी। बस, यहींसे शिक्षाका प्रचलन हुआ। इस समय भगवान्ने "स्वयंभुव" नामक व्याकरणकी रचना की थी तथा और भी छन्द, अलङ्कार आदि शास्त्र बनाये थे। पुत्रियोंके बाद पुत्रोंको पढ़ाया। यद्यपि शिक्षा सबको समान मिली थी, तथापि भरतने नीतिशास्त्रमें, वृषभसेनने सङ्गीत और वादनशास्त्रमें अनन्तविजयने चित्रकारी, नाट्यकला और वास्तुशास्त्रमें तथा बाहुबलीने कामशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, धनुर्वेदविद्या, पशुओंके लक्षणोंको जाननेकी विद्या और रत्नपरीक्षाकी विद्यामें समधिक व्युत्पत्ति लाभ की थी। नाभिराजके समयमें जो धान्य और फलादि स्वयं उत्पन्न हुए थे, उनमें भी रस आदि कम होने लगा। प्रजाके हितके लिए श्रीऋषभदेवने कुछ आज्ञाएं दीं; तदनुसार इन्द्रने जिनमन्दिरोंकी तथा देश * उपप्रदेश, नगर

---

* परिमित देश, क्षेत्र, काल और भाव सम्बन्धी तीनों कालका जिससे ज्ञान होता है, उसे अवधिज्ञान कहते हैं।

† जातिस्मरण भी एक प्रकारका ज्ञान होता है जिससे पूर्वजन्म वा भूतकालका स्मरण हो आता है।

* निम्नलिखित ५२ देशोंकी रचना की थी, यथा—सुकोशल, अवन्ती, पुंड्र, उड्, अश्मक, रम्यक्, कुरु, काशी, कलिंग, अंग (विहार), वंग (बंगाल), सुह्म, (सुह्म), समुद्रक, काश्मीर, उशीनर, आनर्त, वत्स, पंचाल, मालव, दशार्ण, कच्छ, मगध, विदर्भ, कुरुजांगल, करहाट, महाराष्ट्र, सुराष्ट्र, आभीर, कोंकण, वनवास,

है। यहां चार मन्दिरोंके खण्डहर पड़े हैं। मन्दिर बहुत ही प्राचीन मालूम होते हैं। यहां तीन शिलालेख मिलते हैं, जिनमेंसे १लेमें वीरेश्वर स्वामीके मन्दिरकी प्रतिष्ठाता राजा राजनरेन्द्रको प्रशस्ति है। २य शिला लेख ध्वजस्तम्भके पूर्वकी तरफ एक पत्थर पर है, इसमें शक १४३०के नन्दराज रामय्यदेवकी प्रशस्ति है। ३य शिलालेख वीरभद्रस्वामीके मन्दिरमें है, इसमें सत्याश्रय-वंशीय चालुक्यकुलतिलक तिरुमलदेवको प्रशस्ति है। मि॰ डिसवेलका कहना है कि, इस मन्दिरका मण्डप मुसलमानी ढङ्गका है। परन्तु यह मुसलमानोंके आनेसे पहले बना था। मन्दिर आदिमें बौद्धोंके शिल्पनैपुण्यका बहुत निदर्शन मिलते हैं। यहां एक प्राचीन दुर्ग भी है।

गुर्ण (सं॰ त्रि॰) चेष्टित।

गुर्द (फा॰ पु॰) गुर्दिस्तानका निवासी।

गुर्दिस्तान (फा॰ पु॰) फारसके उत्तरका एक प्रदेश इस प्रदेशका कुछ अंश आजकल रूसराज्यके अधीन है। इसे कुर्दिस्तान भी कहते हैं।

गुरों (हिं॰ स्त्री॰) भुनेह ए जौ।

गुर्वङ्गना (सं॰ स्त्री॰) गुरो रङ्गना, ६-तत्। गुरुपत्नी, गुरुकी स्त्री॰।

गुर्वादित्य (सं॰ पु॰) गुरुणा सह आदित्यो यत्र, बहुव्री॰ योगविशेष। वृहस्पति और सूर्यके एक नक्षत्र और एक राशि पर मिलनेको 'गुर्वादियोग' कहते है। इस योगमें, यज्ञ, विवाह प्रभृति कार्य करना निषिद्ध है। ज्योतिषमें एक और दूसरा ही वचन है। "गुर्वादित्ये दशाहिक" अर्थात् गुर्वादि योगमें दशदिन मात्र अकाल (कुसमय) रहता है, किन्तु संग्रहकारोंने विचार करके यह निश्चय किया है कि विभिन्न नक्षत्रमें अवस्थित वृहस्पति और रवि एक राशि गत होने पर दशदिन मात्र अशुद्ध समय है, किन्तु एक नक्षत्रमें रहनेसे जब तक यह योग रहेगा तब तक अकाल माना जाता है। कालाशुद्धि देखो।

गुर्वर्थ (सं॰ त्रि॰) गुरुः गोरवान्वितोऽर्थो यस्य, बहुव्री॰। १ जिसका प्रधान अर्थ हो, दुरवगाह व्याख्यायुक्त। २ समधिक प्रयोजन।

गुर्विणी (सं॰ स्त्री॰) गुरुगर्भोऽस्त्यस्याः गुरु-इनि निपातनात् सिद्धं ततो ङीप्। सगर्भा, गर्भिणी, गर्भवती। गर्भिणी देखो।

गुर्वी (सं॰ स्त्री॰) १ गर्भिणी, गर्भवती। २ गौरवयुक्त स्त्रीबोधक पदार्थ। ३ बड़ी या श्रेष्ठ स्त्री। ४ गुवाक वृक्ष। ५ गुरुपत्नी। ६ गायत्री।

गुल (सं॰ पु॰ स्त्री॰) गुड़ डस्य लः। इक्षुका विकार, अस्वच्छ गुड़। २ जलाया हुआ तम्बाकू। ३ कोयलेकी गोटी। ४ विस्फोटक, शीतला। ५ एक तरहका वृक्ष।

गुल (फा॰ पु॰) १ गुलाबका फूल। २ फूल पुष्प। ३ शोर, हल्ला।

गुल—पञ्जाब प्रान्तके करनाल जिलेमें कैथल तहसीलकी छोटी तहसील। इसका क्षेत्रफल ४५५ वर्गमील है। यहां २०४ गांव बसते हैं। गुल गांवमें ही सदर है। मालगुजारी और सेस लगभग १ लाख २० हजार रुपया पड़ती है।

गुल-अजायब (फा॰ पु॰) १ एक प्रकारका पुष्प। २ एक पुष्पका पौधा।

गुल-अनार (फा॰ पु॰) एक तरहका दाड़िमका वृक्ष।

गुल-अब्बास (फा॰ पु॰) अब्बास नामक पौधा। इसमें वर्षाकालके समय श्वेत या पीत रंगके पुष्प लगते हैं।

गुल-अब्बासी (फा॰ पु॰) कुछ काले रंग लिये एक प्रकारका लाल रंग। इस तरहका रंग चार छटांक शहाबके फूल १ छटांक आमको खटाई और आठ माशे नीलको संयोग करनेसे बनता है। इसमें यदि नीलका रंग बढ़ा दिया जाय तो एक तरहका किरमिजी रंग बन जाता है।

गुल-अशर्फी (फा॰ पु॰) एक प्रकारका पीले रंगका पुष्प।

गुलउर (फा॰) गुलौर देखो।

गुल-औरंग (फा॰ पु॰) एक प्रकारका गेन्दा।

गुलक (सं॰ पु॰) गुण्ठण, एक तरहकी घास।

गुलकंद (फा॰ पु॰) १ गुलाबी मिठाई। २ क्षीरका मिष्टान्न, दूधको बनी हुई मिठाई।

गुलगुटक (फा॰ पु॰) कपड़े पर बेल बूटे छापनेका शीशमका बना हुआ एक तरहका ठप्पा।

गुलकार (फा॰ पु॰) कपड़े पर बेल बूटे बनानेवाला कारीगर।

गुलकारी (फा॰ स्त्री॰) १ बेल बूटे का काम। २ बेल बूटेदार काम।

केवलज्ञान होते ही इन्द्रादि देवों द्वारा समवशरणकी रचना की गई। विशेष विवरणके लिए 'तीर्थंकर' शब्द देखो।

भगवान्‌के समवशरणमें भरतचक्रवर्त्तीने अनेक प्रश्न किये थे। इसी सभा (समवशरण) में भगवान्‌ने आत्माके स्वाभाविक धर्म वा सार्वधर्मका प्रकाश किया। यहींसे जैनधर्मका—इस अवसर्पिणीकालमें—प्रथम विकाश हुआ. इसके बाद, परवर्ती २३ तीर्थङ्करोंने इस धर्मका प्रकाश किया, जिसका आज तक भी इस भारतवर्षके सर्वत्र प्रचार है। अनन्तर ऋषभदेवके पुत्र वृषभसेन, सोमप्रभ आदिने दीक्षा ले कर मुनिधर्मका तथा भगवान्‌की पुत्री ब्राह्मीदेवी और सुन्दरीदेवीने दीक्षा ग्रहण कर आर्यिका-धर्मका प्रसार किया। १म तीर्थङ्कर ऋषभदेवके समयसे लगा कर अन्तिम तीर्थङ्कर श्रीमहावीरस्वामीके समय तक जैनधर्मका प्रकाश इसी तरह फैला रहा, जिसका संक्षिप्त विवरण आगे चल कर "जैनशास्त्र वा श्रुत" नामक शीर्षकमें लिखेंगे।

ब्राह्मणवर्णकी उत्पत्ति—इस अवसर्पिणीकालके प्रथम चक्रवर्ती भरत महाराजने, जिनके नामसे यह देश भारतवर्ष कहलाया, दिग्विजय-यात्रा करके अनेक सेना सहित दिग्विजयकी प्रथा प्रचलित की। ये भरतक्षेत्रके छहों खण्डोंके* अधिपति थे। इन्होंने अपनी लक्ष्मीका दान करनेके छलसे एक दिन समस्त प्रजाको निमन्त्रण दिया और राजप्रासादके मार्गमें घास आदि बो दी। इनका अभिप्राय यह था कि, जो व्यक्ति दयालु और उच्चाशय होंगे, वे जीवहिंसासे बचनेके लिए इस मार्गसे न आ कर अवश्य ही अन्य मार्गका अवलम्बन करेंगे और वे ही वर्णश्रेष्ठ ब्राह्मण होनेके योग्य होंगे। अनन्तर जो लोग उस मार्गसे न आये, उन्हें यज्ञोपवीत दिया गया और दान, स्वाध्यायादि ब्राह्मण्य कर्मका उपदेश दिया गया। साथ ही यह भी कहा कि "यद्यपि जातिनाम-कर्मके उदयसे मनुष्य जाति एक ही है, तथापि जीविकाके पार्थक्यसे वह भिन्न भिन्न चार वर्णोंमें विभक्त हुई है। अतएव द्विज जातिका संस्कार तप और शास्त्रज्ञानसे ही कहा गया है। तप और ज्ञानसे जिसका संस्कार नहीं हुआ, वह सिर्फ जातिसे ही द्विज है। एक बार गर्भसे और दूसरी बार क्रियाओंसे, इस प्रकार दो जन्मोंसे जिसकी उत्पत्ति हुई हो, वह द्विज है एवं जो क्रिया और मन्त्ररहित है, वह केवल नामधारण करनेवाला द्विज है, वास्तविक नहीं।" चक्रवर्ती द्वारा संस्कार किये जाने पर प्रजा भी इस वर्णका खूब आदर करने लगी। इस वर्णके मनुष्य प्रायः गृहस्थाचार्य होते थे और शेष जीवनमें अधिकांश मुनिधर्म अवलम्बनपूर्वक अपनी यथार्थ आत्मोन्नति किया करते थे। (आदिपुराण)

इसके कुछ दिन बाद भरतचक्रवर्ती भगवान् ऋषभदेवके समवशरणमें गये और अपने स्वप्नों तथा ब्राह्मण-वर्णकी स्थापनाका वृत्तान्त कहा। भगवान्‌की दिव्यध्वनि द्वारा इस प्रकार उत्तर मिला—"यद्यपि इस समय ब्राह्मणोंकी आवश्यकता थी, किन्तु भविष्यमें १०वें तीर्थङ्कर श्रीशीतलनाथके समयसे ये धर्मद्रोही और हिंसक हो जायगे तथा यज्ञादिमें पशुहिंसा करेंगे।" स्वप्नोंका फल भरतचक्रवर्ती शब्दमें देखो। इस पर भरतचक्रवर्तीको बड़ा पश्चात्ताप हुआ, किन्तु क्या करते? जो होना था सो हो गया, यह सोच कर सन्तोष धारण किया और संसारसे उदासीन हो कर राज्य करने लगे। भरतका वैराग्य गृहस्थावस्थामें ही इतना बढ़ गया था कि, दीक्षा ग्रहण करते ही उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हो गया था और हजारों वर्ष तक सर्वज्ञावस्थामें संसारके जीवोंको धर्मोपदेश दे कर अन्तमें निर्वाण-प्राप्त हुए थे। भरत चक्रवर्ती देखो।

इनके बाद महावीरस्वामीके समय तक अनन्त केवलज्ञानके धारक हुए और उनके द्वारा जैनधर्मका प्रसार होता रहा। (आदिपुराण)

जैनशास्त्र वा श्रुत—तीर्थङ्कर जब सर्वज्ञ हो जाते हैं, तब उनके मुखसे जो वाणी वा उपदेश निःसृत होता है, उसको श्रुत वा शास्त्र कहते हैं। चतुर्थकालके प्रारम्भिक समयमें श्रीऋषभदेवके मोक्ष गये बाद पचास लाख कोटि सागर* वर्ष तक सम्पूर्ण श्रुतज्ञान अविच्छिन्न रूपसे

* जैनमतानुसार वर्तमानके जितने भी महाद्वीप हैं, वे सब एक ही आर्यखण्डमें शामिल हैं। ५ म्लेच्छखण्ड इनसे भिन्न हैं।

* जैन-ग्रन्थोक्त समय वा कालका एक प्रमाण।

दो हजार कोश गहरे और दो हजार कोश चौड़े गोल गड्ढेमें, कैंचीसे जिसका दूसरा भाग न हो सके ऐसे मेढेके बालोंको भरना; जितने बाल उसमें समावें, उनमेंसे एक-एक बालको

गुलदुपहरिया (फा० पु०) १ दो हाथ ऊंचाईका एक प्रकारका पौधा। इस पौधेकी पत्तियां लम्बी और कटावदार होती हैं। २ इसी पौधेका कटोरेके आकारका पुष्प जो गहरे लाल रंगका होता है। यह पुष्प सूर्यके ऊपर आने पर खिलता है।

गुलदुम (फा० स्त्री०) बुलबुल।

गुलनरगिस (फा० स्त्री०) एक तरहकी लता।

गुलनार (फा० पु०) १ अनारका पुष्प। २ अनारके पुष्पके जैसा लाल रंग। ३ एकतरहका फलहीन अनार वृक्ष। इसमें सिर्फ बड़े बड़े सुन्दर पुष्प ही लगते हैं।

गुलपपड़ी (फा० स्त्री०) एक तरहकी मिठाई जो पपड़ी भी कही जाती है।

गुलप्यादा (फा० पु०) सदा गुलाब, जिसमें सुगन्ध कम होता है।

गुलफानूस (फा० पु०) एक प्रकारका बड़ावृक्ष। यह सिर्फ शोभाके लिये लगाया जाता है।

गुलफिरकी (फा० स्त्री०) गुलाबी रंगके पुष्प लगनेवाला पौधा।

गुलफिरिंगि (फा० स्त्री०) एक तरहका फूलका पौधा। (Venca rosea)

गुलफुंदना (हिं० पु०) खेतोंमें उगनेवाली एक तरहकी घास।

गुलबकावली (फा० स्त्री०) १ हलदी पेड़, एक प्रकारका पेड़। यह नर्मदा नदीके उद्गमके निकट अमरकंटकके वनमें होता है। २ इसी पौधेका श्वेत और सुगन्धित फूल। आंख आने पर यह फूल पीस कर लगाया जाता है।

गुलबक्कर (फा० पु०) नकसके खेलमें जीतकी बाजी।

गुलबदन (फा० पु०) एक प्रकारका धारीदार बहुमूल्य रेशमी वस्त्र। प्राचीन कालमें यह सिर्फ काशीमें बनता था, किन्तु आज कल पंजाबके कई नगरोंमें भी प्रस्तुत होने लगा है।

गुलबर्ग—हैदराबाद राज्यके दक्षिण पश्चिम कोणका डिविजन। इसको दक्षिण विभाग भी कहते हैं। यह अक्षा० १५° ११' तथा १८° ४०' उ० और देशा० ७५° १६' एवं ७७° ५१' पू० मध्य अवस्थित है। इसके पश्चिम तथा दक्षिण क्रमशः बम्बई और मन्द्राज प्रेसीडेन्सी पड़ती है। क्षेत्रफल १६५८५ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ·४६२८२४ है। इसमें ४ जिले लगते हैं। ३२ शहर और ५६५२ गांव हैं।

गुलबर्ग—हैदराबाद राज्यके गुलबर्ग डिविजनका जिला। इसके उत्तर उसमानाबाद तथा बदर, पूर्व अतराफ बल्दा एवं महबूब नगर, दक्षिण महबूब नगर, रायचुर तथा लिङ्गसुगूर और पश्चिम उसमानाबाद बीजापुर तथा बम्बई प्रान्तका अकालकोट राज्य लगा है। गुलबर्ग जिला अक्षा० १६° ४०' एवं १७° ४४' उ० और देशा० ७६° २२' तथा ७८° २०' पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४०८२ वर्गमील है। उत्तरसे दक्षिणपूर्वको पहाड़ चला गया है। जमीन उत्तरसे दक्षिण और दक्षिणपूर्वको ढालू है। नदियां कई एक हैं। सिवा पहाड़के दूसरी जगह जङ्गल नहीं। आबहवा कहीं ठण्डी कहीं गर्म है।

मुसलमानोंके अधिकारसे पहले गुलबर्ग जिला वरङ्गलके काकातीयोंका शासनाधीन था। ई० १४वीं शताब्दीके आदि भागको मुसलमानोंने उसे दिल्लीको बादशाहतमें मिलाया। फिर यह बहमानी और बीजापुरका राज्य भुक्त हुआ। इसके बाद वह फिर दिल्लीकी बादशाहतमें लगा और हैदराबाद राज्य प्रतिष्ठित होने पर अलग हुआ। इसमें कई एक मशहर किले और ११०८ शहर और गांव हैं। लोकसंख्या प्रायः ७४२७४५ है। लोग कनाडी, तैलगु, उर्दू और मराठी भाषा बोलते हैं। प्रधान खाद्य जुवार है। पशु बलिष्ठ हैं। १२६ वर्गमील जङ्गल है। खानसे पत्थर निकलता है। सूती और रेशमी साड़ियां, जरदोजी कपड़ा, मामूली सूती कपड़ा और सूत तैयार किया जाता है। गड़रिये कम्बल बहुत अच्छे बनाते हैं। दो एक कपास ओटने और कपड़े बनानेके पुतलीघर भी हैं। जुवार, बाजरा आदि अनाज, दाल, चमड़ा, रूई, गुड़ तेलहन, तम्बाकू और तरवरकी बकलको रफतनी होती है। ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे और निजामकी गारण्टीड ष्टेट रेलवे चलती है। ७८ मील सड़क है। यह जिला ३ सब डिविजनोंमें बंटा है। बुरे समयमें मवेशियोंकी चोरियां और डकैतियां बढ़ जाती हैं। १८७३

जिनमाला ।

१ नाम-तीर्थंकर	२ तीर्थंकरोंका अन्तरकाल	३ पितृनाम	४ मातृनाम	५ वंश	६ चवण-स्वर्ग	७ चवणतिथि	८ जन्म तिथि	९ जन्म नगरी	१० शरीरका वर्ण	११ चिह्न
१ । ऋषभदेव(१)	५० लाख कोड़िसागर	नाभिराय	मरुदेवी	इक्ष्वाकु	सर्वार्थसिद्धि	आषा कृ २	चै कृ ९	साकेत(२)	सुवर्णसम	वृषभ
२ । अजितनाथ	३० ,, ,,	जितशत्रु	विजयसेना	,,	विजयविमान	ज्यै कृ ३०	मा शु १०	,,	,,	गज
३ । सम्भवनाथ	१० ,, ,,	दृढरथराय	सुसेनादेवी	,,	ग्रैवेयकविमान	फा शु ८	का शु १५	श्रावस्ती(२)	,,	अश्व
४ । अभिनन्दननाथ	९ ,, ,,	संवरराय	सिद्धार्थादेवी	,,	विजयविमान	वै शु ९	मा शु १२	विनीता(२)	,,	कपि
५ । सुमतिनाथ	९० हजार कोड़िसा.	मेघरथ	सुमङ्गलादेवी	,,	वैजयन्तविमान	श्रा शु २	चै शु ११	साकेत(२)	,,	चातक
६ । पद्मप्रभ	,, ,,	धरणराय	सुसीमादेवी	,,	ग्रैवेयकविमान	मा कृ ६	का कृ १३	कौशाम्बी(३)	अरुणवर्ण	पद्म
७ । सुपार्श्वनाथ	,, ,,	सुप्रतिष्ठ	पृथ्वीदेवी	,,	,,	भा शु ६	ज्यै शु १२	वाराणसी	हरितवर्ण	स्वस्तिक
८ । चन्द्रप्रभ	,, ,,	महासेन	सुलक्षणादेवी	,,	वैजयन्तविमान	चै कृ ५	पौ कृ ११	चन्द्रपुरी(४)	शुक्लवर्ण	चन्द्र
९ । पुष्पदन्त(५)	९ कोड़िसागर	सुग्रीवराय	रामादेवी	,,	आरणस्वर्ग	फा कृ ९	अग्र शु १	काकन्दी	,,	मकर
१० । शीतलनाथ	१००सा.६६ला.२०६ह.व.कम१को.पा.	दृढरथ	सुनन्दादेवी	,,	अच्युतस्वर्ग	चै कृ ८	मा कृ १२	भद्रिकापुरी	सुवर्णसम	श्रीवृक्ष
११ । श्रेयांसनाथ	५४ सागर	विष्णुराय	विष्णुश्री	,,	,,	ज्यै कृ ८	फा कृ ११	सिंहपुरी(४)	,,	गैंडा
१२ । वासुपूज्य	३० ,,	वसुपूज्य	विजयावती	,,	महाशुक्रस्वर्ग	आषा कृ ६	फा कृ १४	चम्पापुर	अरुणवर्ण	महिष
१३ । विमलनाथ	९ ,,	कृतवर्मा	श्यामादेवी	,,	सहस्रारस्वर्ग	ज्यै कृ १०	मा शु ४	कम्पिला	स्वर्णसम	वराह
१४ । अनन्तनाथ	४ ,,	सिंहसेन	सर्वयशा	,,	अच्युतस्वर्ग	का कृ १	ज्यै कृ १२	अयोध्या	,,	सेही
१५ । धर्मनाथ	३¾ पल्य कम ३ सागर	भानुराय	सुव्रतादेवी	चन्द्रवंश	सर्वार्थसिद्धि	वै शु ८	मा शु ३	रत्नपुरी(२)	,,	वज्र
१६ । शान्तिनाथ	½ पल्य	विश्वसेन	ऐरादेवी	,,	,,	भा कृ ७	ज्यै कृ १४	हस्तिनापुर	,,	मृग
१७ । कुन्थुनाथ	१ह.कोटवर्ष कम ¼पल्य	सूर्यप्रभ	श्रीमतीदेवी	,,	,,	श्रा कृ १०	वै शु १	,,	,,	छाग
१८ । अरनाथ	१ करोड वर्ष	सुदर्शन	सुमित्रादेवी	,,	अपराजितवि०	फा शु ३	अग्र शु १४	,,	,,	मत्स्य
१९ । मल्लिनाथ	५४ लाख वर्ष	कुम्भराय	रक्षितादेवी	इक्ष्वाकु	,,	चै शु १	अग्र शु ११	मिथिलापुरी	,,	कलश
२० । मुनिसुव्रतनाथ	६ ,,	सुमित्रनाथ	पद्मावती	हरिवंश	प्राणतस्वर्ग	श्रा कृ २	वै कृ १०	राजगृह	श्यामवर्ण	कच्छप
२१ । नमिनाथ	५ ,,	विजयरथ	वप्रादेवी	इक्ष्वाकु	अपराजितवि०	आश्वि कृ २	आषा कृ १०	मिथिलापुरी	सुवर्णसम	नीलकमल
२२ । नेमिनाथ	८३७५० वर्ष	समुद्रविजय	शिवदेवी	हरिवंश	,,	का शु ६	श्रा शु ६	द्वारिकापुरी	श्यामवर्ण	शङ्ख
२३ । पार्श्वनाथ	२५० वर्ष	अश्वसेन	वामादेवी	इक्ष्वाकु	प्राणतस्वर्ग	वै कृ २	पौ कृ ११	वाराणसी	हरितवर्ण	सर्प
२४ । महावीरस्वामी(६)	... ..	सिद्धार्थ	त्रिशलादेवी	,,	अच्युतस्वर्ग	आषा शु ६	चै शु १३	कुण्डलपुर	सुवर्णसम	सिंह

(१) द्वितीय नाम ऋषभनाथ वा आदिनाथ । (२) अयोध्याके अन्तर्गत । (३) प्रयागके अन्तर्गत । (४) वाराणसी वा काशीके अन्तर्गत । (५) द्वितीयनाम सुविधिनाथ । (६) नामा

गुलाब, या गुलाबफूल—स्वनाम प्रसिद्ध एक पुष्पविशेष।

गुलाबके संस्कृत नाम—शतपत्री और पाटलि, आरब-बर्द्द, पारसी—गुल, चीन-धिं सि, सियांबै, सुदकाई-हा, कोचीन चीन होयाहुड-तो, ग्रीक रोड्डोन, रुष—रोजा, ओलन्दाज-रुस् अङ्गरेजी—रोज (Rose), मलय—मवर तामिल—गुलाप्पु, तेलङ्ग-रोजायुवो, गुलपुवो। Rose Centifolia वा मिरिया देशका गुलाब-वृक्ष। संस्कृत भाषामें इसे शतपत्री, हिन्दीमें करम कल्ल या काठ गुलाब और अङ्गरेजीमें कैब्बेज-रोज (Cabbage Rose) कहते हैं। यूरोपमें, भारतमें सर्वत्र, पारस्य और चीन देशमें इसकी पैदायश होती है। इसी फूलसे गुलाब-का अतर और एसेन्स बनता है। भारतमें इसी फूलसे 'गुलकन्द' बनता है। गुलकन्द खानेमें अत्यन्त सुस्वादु और पित्त शान्त करता है।

इसके पानीको गुलाब-जल कहते हैं। इस फूलकी मधुर सुगन्धिसे सब ही का मन मोहित होता है, इसीलिये इसका विशेष आदर है। गुलाबके पेडकी डाली अत्यन्त कांटेदार होती है। पत्ते चिकने होने पर भी उनके किनारे नोकदार खरखरे होते हैं। भारतमें यह फूल घरमें, बगीचोंमें और जङ्गलोंमें सर्वत्र पैदा किया जा सकता है और देखनेमें आता है। काश्मीर, लाहुल और भूटान जङ्गलोंमें पीले रङ्गके गुलाब अपने आप पैदा होते हैं। लाधमें समुद्रपृष्ठसे ११००० फीट ऊंचेमें पीले रंगके बडे बडे गुलाब देखनेमें आते हैं। चीनमुल्कमें भी ऐसे पीले गुलाब देखे जाते हैं। यह पेड दूसरे गुलाबके वृक्षोंसे बडे और लता-जैसे होते हैं इसी लिये हमारे देशमें इस वृक्षको बोते समय चारो ओर खपचें लगा देते हैं। अङ्गरेज लोग इस फूलको "मार्सेलनील" कहते हैं। इसका गुच्छा बडा आदरनीय और भेट देनेके काबिल होता है।

साधारणतः १८° अक्षांशसे ७०° अक्षांशके भीतर यह वृक्ष उपज सकता है। सूखी जमीन या मिट्टीमें अगर यह वृक्ष बोया जाय, तो जल्दी पैदा होते हैं। यूरोपके उत्तरांशमें सिर्फ इकहरी पापडीवाला फूल पैदा होता है। परन्तु इटाली, ग्रीस और स्पेन आदि देशोंमें बहुत पापडीवाले फूल काफी पैदा होते हैं।

Rose Glandulifera—पञ्जाबमें इसे गुल-शेउती या शेवती कहते हैं।

हिमालय प्रदेशमें समुद्रपृष्ठसे ४५०० से १०५०० फीट ऊंची जगहमें एक तरहका गुलाब (Rose Macrophylla) पैदा होता है। इसका फल जब पक कर काला हो जाता है, तब लोग उसे खाया करते हैं। यह खानेमें बडा मधुर और मीठा होता है।

पञ्जाबमें और हिमालयसे ५०००से ८५०० फीट ऊंची जमोनमें Rose webbiana नामका गुलाब होता है। इसका भी फल खानेमें मीठा और आदरनीय होता है।

फूल और बीज बेचनेवालोंके सूचीपत्रमें अब सैकड़ों तरहके गुलाबोंके नाम देखनेमें आते हैं। उनमेंसे (१) बसोरा वा पारस्य देशका उत्पन्न एक तरहका गुलाब, (२) स्थायीगन्ध दामास्क जातीय, (३) स्थायीगन्ध, मिश्रजातीय (इङ्गलैण्डमें इस फूलका विशेष आदर है), (४) बुर्बुर्देशका गुलाब, (५) चोनिया गुलाब, और (६) चायकी गन्धयुक्त,—ये छो गुलाब प्रसिद्ध हैं। इसके सिवा जितने नामधारी गुलाब हैं, वे सब इन्हीं ६ श्रेणि-योंमें शामिल किये जा सकते हैं।

गुलाब फूल जैसा मनोहर है, उसका अतर और जल भी उतना ही प्रिय और उम्दा होता है। गुलाबका फूल मनुष्यका प्रिय है, इसलिए उसकी पैदायश भी खब की जाती है और इससे लाभ ज्यादा होनेके कारण गुलाबके पैदायशके लायक जमीनकी कीमत भी ज्यादा है। इटालीमें केनि नामक तरहटीमें गुलाबके कुछ खेत हैं। उनमें प्रत्येक बीघाका मासिक लाभ तीन सौ रुपये हैं वहां प्रति वर्षमें अढाई लाख रुपयेके सिर्फ गुलाब फूल ही पैदा होते हैं। गाजीपुरमें भी ऐसे गुलाबके खेत हैं। गाजीपुरमें गुलाबकी खेतीके लिए साढ़े चार सौ बीघा जमीन मौजूद है। वह भी छोटे छोटे खेतोंमें विभक्त है। प्रत्येक खेतके चारों तरफ कांटोंकी झाड़ी और मिट्टीकी दीवार लगी हुई है। प्रत्येक बीघा पर ५) रु०के हिसाबसे कर और इसके अलावा १ हजार पेड़ पर २५) रु० और भी लिया जाता है—इस प्रकार कुल ३०) रुपये जमींदारोंको मिलते हैं। प्रति बीघामें ५) और भी खर्च पडता है। जलवायु और उत्तापके अनुकूल होनेसे उन एक हजार वृक्षोंमें लाखसे भी अधिक फूल

२४ पारण-स्थान	२५ तपश्चरण	२६ केवलज्ञान	२७ गणधरसं०	२८ मुख्यगणधर	२९ केवली	३० १४श पूर्वी	३१ मुनि	३२ आर्यिका	३३ व्रतीश्रावक	३४ व्रती श्राविका	३५ समवशरण-काल	३६ मोक्षतिथि	३७ मोक्षस्थान
१ श्रेयांस-गृह	१००० वर्ष	फा.कृ११	८४	वृषभसेन	२००००	४७५०	८४०००	३५००००	३लाख	५ लाख	१ह.व.कम १लापूर्व	मा कृ १४	कैलाश
२ ब्रह्मदत्त गृह	१२ ,,	पौ.शु.४	९०	सिंहसेन	२००००	३७५०	१ लाख	,,	,,	,,	१पूर्वा १२व. कम ,,	चै.शु.५	सम्मेदाचल
३ सुरेन्द्रदत्त-गृह	१४ ,,	का कृ४	१०५	चारुषेण	१५०००	२१५०	२ लाख	३३००००	,,	,,	४पूर्वा १४व कम ,,	चै शु६	,,
४ इन्द्रदत्त-गृह	१८ ,,	पौ शु१४	१०३	वज्रनाभि	१६०००	२५००	३ला.१४सौ	३३०६००	,,	,,	१२पूर्वा २०व कम ,,	वै शु६	,,
५ पद्मराय-गृह	२० ,,	चै शु११	११६	चमर	१३०००	२४००	३ला. २ह.	३३००००	,,	,,	१६पूर्वा६मा कम ,,	चै शु११	,,
६ सोमदत्त-गृह	६१ ,,	चै.पूर्णि०	१११	वज्रवली	१२०००	२३००	,,	४२००००	,,	,,	२०पूर्वा ८व कम ,,	फा कृ४	,,
७ महादत्त-गृह	९ ,,	फा कृ६	९५	चमरवली	११०००	२०३०	३ लाख	३३००००	,,	,,	२४पूर्वा ३मा कम ,,	फा कृ७	,,
८ सोमदेव-गृह	३ ,,	फा कृ७	९३	दण्डक	१००००	२०००	२½लाख	३८००००	,,	,,	२८पूर्वा ४मा कम ,,	फा शु७	,,
९ पुष्पक-गृह	४ ,,	का शु२	८८	विदर्भ	७५००	१५००	२ ,,	३८००००	२लाख	४लाख	३मा कम ५०ह पूर्व	भा शु८	,,
१० पुनर्वसु गृह	२ ,,	पौ शु१४	८१	अनागार	७०००	१४००	१ ,,	३८००००	,,	,,	३व कम २५ ,,	आश्वि शु८	,,
११ सुनन्दराय-गृह	२ ,,	मा कृ३०	७७	कुन्थु	६५००	१३००	८४ ह.	१२००००	,,	,,	२व कम २१ लाख वर्ष	श्रा.पूर्णिमा	,,
१२ नन्दभूप-गृह	१ ,,	मा शु२	६६	सुधर्म	६०००	१२००	७२ ,,	१०६०००	,,	,,	१ ,, १८ ,,	भा शु१४	चम्पापुरी
१३ विशाखदत्त-गृह	३ ,,	मा शु६	५५	नन्दिराय	५५००	११००	६८ ,,	१०३०००	,,	,,	३ ,, १५ ,,	आषा कृ६	सम्मेदाचल
१४ धर्मसिंह-गृह	२ ,,	चै कृ३०	५०	जयमुनि	५०००	१०००	६६ ,,	१०८०००	,,	,,	२ ,, ७½ ,,	चै कृ४	,,
१५ धन्यसेन-गृह	१ ,,	पौ पूर्णिमा	४३	अरिष्ट	४५००	९००	६४ ,,	६२४००	,,	,,	१ ,, २½ ,,	ज्ये शु४	,,
१६ धर्ममित्र गृह	१ ,,	पौ शु११	३६	चक्रायुध	४०००	८००	६२ ,,	६०३००	,,	,,	१ व कम २५ह वर्ष	ज्ये कृ१४	,,
१७ अपराजित-गृह	१६ ,,	चै शु३	३५	स्वयम्भू	३२००	७००	६० ,,	६०३५०	१ला	३ला	२३७३४ वर्ष	वै शु१	,,
१८ नन्दसेन-गृह	११ ,,	का शु१२	३०	कुम्भार्य	२८००	६१०	५० ,,	६० हजा	,,	,,	२०९८९ ,,	चै शु११	,,
१९ ऋषभदत्त-गृह	१६ ,,	पौ कृ२	२८	विशाखदत्त	२२००	५५०	४० ,,	५५ ,,	,,	,,	१९९८४ ,,	फा शु५	,,
२० राजदत्त गृह	११ ,,	वै कृ ९	१८	मल्लि	१८००	५००	३० ,,	५० ,,	,,	,,	२४९८९ ,,	फा कृ१२	,,
२१ सुनयदत्त-गृह	९ मास	मा शु ११	१७	सोमनाथ	१६००	४५०	२० ,,	४५ ,,	,,	,,	९मा कम २५०० ,,	वै कृ१४	,,
२२ वरदत्त गृह	५६दिन	आश्विशु१	११	वरदत्त	१५००	४००	१८ ,,	४० ,,	,,	,,	५६ दि कम ७०० ,,	आषा० शु७	गिरनार
२३ धनदत्त-गृह	४ मास	चै कृ ४	१०	स्वयम्भू	१०००	३५०	१६ ,,	३८ ,,	,,	,,	४मा कम ७० वर्ष	श्रा० शु७	सम्मेदाचल
२४ नकुलराय-गृह	१२ वर्ष	वै शु१०	११	इन्द्रभूति	७००	३००	१४ ,,	३५ ,,	,,	,,	३० वर्ष	का० अमा	पावापुर

पू=पूर्व। पूर्वा=पूर्वांग। ला=लाख। ह=हजार। व=वर्ष। मा=मास। दि=दिन।

बोतलमें पानी भरकर उसमें गुलावकी कलम लगाई जा सकती है। इसकी प्रणाली बहुत ही कठिन है। जिस नरम डालीसे पुष्प गिरा हो, इस प्रकारकी नरम एक या दो डालीको काटकर शीत ऋतुमें बोतलमें लगाना चाहिये। बोतलके पानीको साफ रखना चाहिये। रोज पानी बदलते रहना ही उचित है, नहीं तो डाली सड़ जानेकी सम्भावना रहती है। उन बोतलोंको घरके उत्तर-की तरफ या पर्दाकी ओटमें ऐसी जगह रखना चाहिये जिससे उसमें सूर्यका प्रकाश और हवा जरा भी न लगने पावे। अथवा बिना ढक्कनके एक बक्स उस बोतल पर रख कर सूर्यके उत्तापमें रख देना चाहिये। इसके लिए कमसे कम १० आउन्सकी बोतलकी जरूरत होगी।

एक गुलावके प्रेमी उद्भिद्वेत्ताका कहना है कि एक सालकी पुरानी डालीके एक फुटके नापसे काटनी चाहिये। प्रत्येक डालीको गाड़नेकी तरफ समभावसे कलीकी गाठके पास काटना चाहिये, और ऊपरका भाग कलमकी तरह बनाना चाहिये और उसकी दो एक कलियोंके सिवा और सबको काट देना। चाहिये बाद को मार्चके महीनेमें ८ इञ्च ऊंची जगह पर वह कलम गाड़ देनी चाहिये, और उसकी जड़ मिट्टीसे ढक देनी चाहिये। जुलाई और अगस्त मासमें यह कलमी पौधा फूल देने लगता है। इसके बाद ऊंची जगहको समतल करके पौदेकी जड़ जो मिट्टीके भीतर थी, उसे निकाल देना चाहिये। ऐसा करनेसे वह पौधा जड़से दो तीन इञ्च ऊंचाईमें ही फूल देने लगता है।

साधारणत: लोग जिस रीतिसे गुलावकी कलम बनाते है, उसके नियम यह है—जहां पानी न जम सके, ऐसी जगहमें एक फुट अन्तर पर कुछ गड्ढे खोद करके उसमें सारयुक्त मिट्टी दे कर झुका झुका कर पौधे गाड़ते हैं। फिर उन गड्ढोंको सिर्फ मिट्टीसे ढक देते है। दिनमें उन पर सूर्यकी रोशनी न पड़ने पावे, इस लिये उसके ऊपर फूंस आदिका छप्पर डाल देते है, और रातको उसे उठा लेते हैं।

कहीं कहीं ऐसा भी देखनेमें आया है कि फूलमें केशर और पखड़ियोंका भी कुछ कुछ परिवर्त्तन हुआ है। गुलावका पेड़ खूब नरम मिट्टीमें गाड़नेसे

गुलावके फूलके भीतरसे डालीका निकलना।

कभी कभी उसके फूलमें केशर न पैदा हो कर डाली उत्पन्न हो जाती है।

ग्रीक लोगोंके प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है कि गुलावका फूल डिउनिसास् देव और अफ्रोडाइट् (Aphrodite) नामक देवीको अतिप्रिय वस्तु है। पुराने रोमक भी गुलाब-उत्सव करते थे, उसका नाम रोसालिया (Rosalia) था। माकिदनमें मिदासका गुलावका बगीचा पहिले बहुत प्रसिद्ध था, वह स्थान अब भी वर्त्तमानके बुलगेरिया नगरमें है। अभी तक बुलगेरियाका गुलावका अतर जगत् प्रसिद्ध है। पहिले भारतमें भी गुलावका खूब आदर था, संस्कृत ग्रन्थोंमें शतपत्रीके नामसे गुलाब-का उल्लेख पाया जाता है। आत्रेय संहितामें लिखा है—

"शतपत्री तु गन्धाढ्या सौम्यगन्धा शिवप्रिया।
सुशीता च सुवृत्ता च सुमना: शतपत्रिका॥
शतपत्री हिमा तिक्ता सरा रुच्यानिलप्रणुत्।
दाहज्वरास्रपित्तघ्नी कुष्ठविस्फोटकनाशिनी॥"

शतपत्रीकी दूसरी संस्कृत पर्यायें ये है—गन्धाढ्या, सौम्यगन्धा, शिवप्रिया, सुशीता, सुवृत्ता, सुमनाः और शतपत्रिका। गुलावका फूल शीतल, तिक्त, सारक, रोचक, वायुनाशक, दाहनाशक, रक्त, पित्त, कुष्ठ, और विस्फोट-नाशक होता है। इस देशके वैद्योंका विश्वास है कि शतपत्री नाम शेवती होता है। गुलाव और शेवती दोनों भिन्न भिन्न पुष्प है। शतपत्रीका अपभ्रंश शेवती हो सकता

और वर्गणा। इस प्रकार श्रीभूतबलि आचार्यने षट्खण्डागमकी रचना की।

इसी समय एक गुणधर नामके आचार्य हुए जिनको ५वें ज्ञानप्रवादपूर्वकी दशम वस्तुके तृतीय कषायप्राभृत के ज्ञाता थे। इन्होंने कषायप्राभृत (अथवा दोषप्राभृत) आगमकी १८३ मूल गाथा और ५३ विवरणरूप गाथाओंमें विन्यस्त किया। तदनन्तर उन्होंने श्रीनागहस्ति और आर्यभिक्षु मुनिद्वयके लिए १५ महा अधिकारोंमें उसका व्याख्यान किया। पश्चात् इन दोनों मुनियोंसे श्रीयतिवृषभमुनिने दोषप्राभृतके उक्त सूत्रोंका अध्ययन करके उनकी चूर्णिवृत्ति (६००० श्लोकों प्रमाण) बनाई। इनके बाद श्रीउच्चारणाचार्यने उसकी १२००० श्लोक प्रमाण उच्चारणवृत्ति नामक टीकाकी रचना की।

इस प्रकार उक्त दोनों कषायप्राभृत और कर्मप्राभृत सिद्धान्तोंका ज्ञान गुरुपरम्परासे ग्रन्थपरिकर्म (चूलिका सूत्र) के कर्ता श्रीपद्ममुनिको प्राप्त हुआ, जो कुण्डकुन्दपुरमें रहते थे। श्रीपद्ममुनिने भी छ खण्डोंमेंसे प्रथम तीन खण्डोंको १२००० श्लोक-प्रमाण टीकाकी रचना की। इसके कुछ समय पीछे श्रीश्यामकुण्ड आचार्यने दोनों आगमोंको सम्पूर्णतया पढ़ा और सिर्फ एक छठे महा बन्ध खण्डको छोड़ कर शेष दोनों प्राभृतोंकी १२००० श्लोक परिमित टीका रची। इनके पश्चात् कर्णाटक देश के तुम्बुलूर ग्राममें तुम्बुलूर आचार्यका आविर्भाव हुआ। इन्होंने भी छठे खण्डको छोड़ कर शेष दोनों प्राभृतोंको कर्णाटकी भाषामें ८४००० श्लोक परिमित 'चूड़ामणि' नामक व्याख्यानकी रचना की। अनन्तर उन्होंने छठे खण्ड (महाबन्ध)-की भी ७००० श्लोक परिमित पञ्चिका नामक टीका रची। इनके पश्चात् कालान्तरमें तार्किकसूर्य श्रीसमन्तभद्रस्वामीका उदय हुआ और उन्होंने भी प्राभृतद्वयका अध्ययन करके पाँच खण्डोंकी ४८००० श्लोक-प्रमाण टीका संस्कृत भाषामें रची। द्वितीयसिद्धान्त की भी व्याख्या लिखने लगे, किन्तु किसी कारणवश वे उसे समाप्त न कर सके।

अनन्तर श्रीशुभनन्दि और रविनन्दिने उक्त सिद्धान्तोंका पूर्णतया ज्ञान प्राप्त किया। ये दोनों मुनि भीमरथि और कृष्णवेणा नदियोंके मध्यस्थित रमणीय उत्कलिका ग्रामके निकटवर्ती अगणवल्ली नामक स्थानमें रहते थे। इनके निकट रह कर श्रीवप्पदेव गुरुने उक्त दोनों सिद्धान्तोंका अध्ययनपूर्वक महाबन्ध नामक छठे खण्डके सिवा शेष ५ खण्डोंपर व्याख्याप्रज्ञप्ति नामक टीका रची, जिसमें महाबन्धका भी संक्षिप्त विवरण दे दिया। तत्पश्चात् इन्होंने कषायप्राभृतको प्राकृतभाषामें ६०००० श्लोक प्रमाण और महाबन्ध खण्डको ८००५ श्लोक परिमित टीकाओंकी रचना की। इनके कुछ समय बाद चित्रकूटपुर-निवासी एलाचार्य सिद्धान्त-तत्त्वोंके ज्ञाता हुए और उन्होंने वीरसेनाचार्यको उक्त सिद्धान्तोंका अध्ययन कराया। वीरसेनाचार्यने गुरुकी आज्ञासे चित्रकूट छोड़ कर वाट ग्रामको प्रस्थान किया वाट ग्रामस्थ आनतेन्द्र द्वारा निर्मित जिनमन्दिरमें अवस्थानपूर्वक वीरसेनाचार्यने व्याख्याप्रज्ञप्तिको देख कर प्रथमके बन्धनादि अठारह अधिकारोंमें सत्कर्म नामक ग्रन्थ और फिर उक्त छहों खण्डको ७२००० श्लोक परिमित संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओंमें 'धवल' नामकी टीकाकी रचना की। अनन्तर वे कषायप्राभृतकी चार विभागोंपर 'जयधवल' नामक २०००० श्लोक प्रमाण टीका लिख कर स्वर्गवासी हो गये। फिर उनके शिष्य श्रीजयसेन गुरुने ४०००० श्लोकोंकी रचना कर उक्त टीकाको पूर्ण किया। इस तरह जयधवलकी टीका ६०००० श्लोकोंमें पूर्ण हुई।"

(इन्द्रनन्दियतिकृतश्रुतावतार कथा)

यह तो हुआ श्रुतका इतिहास, अब श्रुतके भेद प्रभेद और लक्षणादिका वर्णन किया जाता है।

श्रुतके प्रधान भेद दो हैं, अङ्गप्रविष्ट और अङ्गबाह्य। अङ्गप्रविष्ट श्रुतके बारह अङ्ग हैं जिनको द्वादशाङ्ग कहते हैं। यथा—आचाराङ्ग, सूत्रकृताङ्ग, स्थानाङ्ग, समवायाङ्ग,

* जैनहरिवंशपुराणमें अंगज्ञानकी प्रवृत्ति विलुप्त होनेके (अर्थात् वीरनिर्वाण-संवत् ६८३ के) बाद निम्नलिखित आचार्योंका उल्लेख है—नयन्धरऋषि, गुप्तऋषि, शिवगुप्त, अर्हद्बलि, मदराचार्य, मित्रवीर, मित्रक सिंहबल, वीरवित्, पद्मसेन, व्याघ्रहस्ति, नागहस्ती, जितदंड, नन्दिषेण, दीपसेन, श्रीधरसेन, सुधर्मसेन, सिंहसेन, सुनन्दिषेण, ईश्वरसेन (२य), सुनन्दिषेण, अभयसेन सिद्धसेन (२य), भीमसेन, जिनसेन, शांतिसेन। ये आचार्य छ प्रकारकी भाषाओंके जानकार थे।

गुलाबके खुशबूका अंश अर्थात् अतर पानीमें अच्छी तरह मिल जाता है, नहीं तो ऊपर ही अतर तैरता रहता है और इसीसे उसको खुशबू भी स्थायी नहीं रहती। आज कल बाजारोंमें जो गुलाब-जल बिकता है, वह एक हजार फूलोंसे दो सेर बनता है। बहुतसे दूकानदार तो अतरके बचे हुए पानीमें जरासा चन्दनका अतर मिला कर उसे ही बढ़िया गुलाब-जल कह कर बेचा करते हैं। गाजीपुरमें करीब चालीस जगह गुलाब बनता है, वहाँ गुलाबजलमें खर्च बाद देकर करीब ४० हजार रुपये लाभ होते हैं। इस देशमें गुलाब-जल बनाते समय फूलके डण्ठल नहीं तोड़ते, इस लिये उसको खुशबू भी ज्यादा दिन नहीं रहती, शीघ्र ही खट्टापन आ जाता है। अतएव गुलाब-जलको सुगन्धि बहुत दिनो तक स्थायी रखनेवालोंको चाहिये कि, फूलोंके डण्ठल तोड़ कर गुलाब जल बनावें।

अतर [illegible] नियम—गुलाब-जलकी तरह इसमें भी तांबेकी डेगचीमें फूल और पानी रखकर उबालना पड़ता है, और उसमेंसे भाफ चूकर भबका पात्रमें आती है। इस प्रकारसे जब तमाम पानी जल जाय, तब उस भाफको एक चपटी डेगचीमें ढाल कर उसका मुंह मोटे कपड़ेसे बांध देना चाहिये। बादमें २ हाथ नीची जमीन खोद कर उसे ठण्ढकमें गाड़ देना चाहिये। सारी रात गड़ी रहनेसे, उस पानीके ऊपर तेल सरीखा अतर तैर निकलेगा। रातमें जितनी ठण्ढ पड़ेगी, उतना ही ज्यादा अतर निकलेगा। इसलिये हेमन्त और शीतऋतुमें अतर बनाना चाहिये। सुबह उस तैरते हुए अतरको निकाल कर ओसमें रखना चाहिये, और फिर घाममें सुखा लेना चाहिये। पहले पहल वह अतर देखनेमें कुछ कुछ हरा-सा दीखता है। फिर कुछ दिन बाद असली अतरका वैसा रङ्ग नहीं रहता असली अतर एक सप्ताहके भीतर भीतर कुछ पीला हो जाता है। यही सबसे श्रेष्ठ है। ऐसा अतर एक लाख गुलाबोंसे एकही तोला बनता है और समय समय पर ८०) से १००) तोले तक बिकता है। ऐसा बहुमूल्य अतर सहजमें नहीं मिलता। बाजारोंमें जो अतर सबसे उत्कृष्ट कह कर बिकता है, वह भी इससे बहुत निकृष्ट है।

बजारू अतर ऐसे बनता है,—जिस पात्रमें भाफ आकर जमती है, उसमें पहिले होसे चन्दनका तेल रखा रहता है। सुगन्धयुक्त भाफ पाकपात्रसे भबका पात्रमें आते हो उसका गन्धांश चन्दनके तेलके साथ मिल जाता है, और भाफ अलग हो जाती है। इस प्रकार थोड़ेसे गुलाबसे बहुतसा चन्दनका तेल सुवासित हो जाता है, और वही गुलाबका अतर कह कर बाजारोंमें बेचा जाता है। बेला, चमेली, जूही, केवड़ा आदिके अतर भी ऐसे ही बनते हैं। इस प्रकार चन्दनके तेलमें दूसरोंकी सुगन्धि घुसेड़ कर मिश्र अतर बनता है। विलायतमें अतर अग्निके उत्तापसे नहीं चुआया जाता। वहाँ गुलाबके ऊपर साफ चर्बी बिछाकर, उसके ऊपर ताजे फूल रखदेते हैं, इससे फूलोंकी खुशबू चर्बीमें मिल जाती है। इसी प्रकार १५—२० बार फूल रखकर बादमें चर्बीको सुरासार (शराब या तेजाब) में घोल कर रख देते हैं, इससे चर्बीकी सुगन्धि सुरासारमें आ जाती है, और चर्बी अलग हो जाती है। इससे बहुत बढ़िया असली अतर बनता है।

ऐसा प्रवाद है कि—सुप्रसिद्ध नूरजहान बेगमने १६१२ ई०में सबसे पहले अतरका आविष्कार किया था। सम्राट् जहांगीरके साथ उनके विवाहके समय गुलाब जलका स्रोत बहा था, बगीचेके नालेमें गुलाब जलके ऊपर तेल सरीखा कुछ तैरते देख नूरजहांनने उसे संग्रह करनेका हुक्म दिया। उन ही से फिर अतर बना था।

बम्बईमें गुलाबकी सूखी पखुड़ियां ३) रु० सेर बिकती हैं।

गुलाब—हिन्दीके एक कवि। कविताका नमूना यह है—

> "गानहद डान लागे सुखद समीन लागे
> पीन लागे [illegible] बियोगिनके हियरों।
> सुन्दर सबाद लै सुभोजन [illegible] लागे
> [illegible] मनोज लागे योगिनके जियरों॥
> कहत गुलाब बन फूलन पलास लागे
> सकल बिलासनके समय सुथिरों।
> दिन अधिकान लागे ऋतुपति आन लागे
> तरन सुनाम लागे पान लागे पियरों॥"

गुलाबचश्म (फा० पु०) एक तरहका पक्षी। यह खैर रङ्गका

पट्ट नाम आचार्य	पट्ट पर बैठनेका संवत और तिथि	गृहस्थावस्थामें	दीक्षावस्थामें	कितने वर्ष पट्ट पर रहे ? व	मा	दि	विरह दिन	सर्वायु: वर्ष व	मा	दि	मन्तव्य
३३ अनन्तकीर्ति	७६५।आ शु१०	११ व	१३ व	१९	९	२५	५	४३	१०	०	
३४ धर्मनन्दी	७८५।आ पूर्णि	१३ १८०	१८ व	२२	९	२५	५	५३	१०	०	(पाठान्तर धर्मादिनन्दी)
३५ वीरचन्द्र	८०८।ज्ये पूर्णि	१४ व	२५ व	३२	०	४	८	७०	०	१२	(पाठान्तर विद्यानन्दी)
३६ रामचन्द्र	८४०।आषा कृ१२	८ व	११ व	१६	१०	०	६	३५	१०	६	(पाठान्तर वीरचन्द्र)
३७ रामकीर्ति	८५७।वै शु३	१४ व	१६ व	२१	४	२६	११	५१	५	७	
३८ अभयचन्द्र	८७८।आ शु१०	१८ व	१० व	१७	०	२७	४	४५	१	१	(पाठान्तर अभयेन्द्र)
३९ नरनन्दी	८९७।का शु७	१५ वर्ष	२१ वर्ष	१८	९	०	९	५४	९	९	(मतान्तरमें शुक्ला ११ को, नाम नरचन्द्र
४० नागचन्द्र	९१६।भा कृ५	२१ ,,	१३ ,,	२३	०	३	१०	५७	०	१३	
४१ नयननन्दी	९३९।भा शु३	८ ,,	१० ,,	८	९	११	९	२६	९	२०	पाठान्तर-नयनन्दी, हरिनन्दी
४२ हरिचन्द्र	९४८।आषा कृ८	८व ४मा	१४व८मा	२६	१	८	८	४८	१	१६	
४३ महीचन्द्र १म	९७४।आ शु९	१४ वर्ष	१०-११	१६	६	०	५	४१	५	५	(मतान्तरमें सं० ९७२)
४४ माघचन्द्र १म	९९०।मा शु१४	१३ "	२०व	३२	२	२४	८	६५	३	३	(पाठान्तर माघवेन्दु) यहा तक उज्जयिनीमें
४५ लक्ष्मीचन्द्र	१०२३।ज्ये कृ२	११ "	२५व	१४	४	३	११	५०	४	१४	चन्देरीमें पट्ट
४६ गुणनन्दी २य	१०३७।आश्वि शु१	१० "	२२व	१०	१०	२८	१४	४२	११	१२	(पाठान्तर गुणकीर्ति)
४७ गुणचन्द्र	१०४८।भा शु१४	१० "	२२व	१७	८	७	१०	४९	८	१७	(४६ और ४७वेंके बीच-में वासवेन्द्र)
४८ लोकचन्द्र २य	१०६६।ज्ये शु१	१५ "	३०व	१३	३	३	४	५८	३	७	यहाँ तक चन्देरीमें पट्ट
४९ श्रुतकीर्ति	१०७९।भा शु८	१३ "	३२व	१५	६	६	६	६०	६	१२	भेलसामें पट्ट।
५० भावचन्द्र	१०९४।चै कृ५	१२ "	२५व	२०	११	२५	५	५८	०	०	"
५१ महीचन्द्र २य	१११५।चै कृ५	१० "	२६व	२५	५	१९	५	६१	५	१५	"
५२ माघचन्द्र २य	११४०।भा शु५	१४ "	१३व	४	३	१७	७	३१	३	२४	वारानगरमें पट्ट।
५३ वृषभनन्दी	११४४।पौ कृ१४	७ "	३७व	३	४	१	४	४७	४	५	(पाठान्तर ब्रह्मनन्दी)
५४ शिवनन्दी	११४८।वै शु४	८ "	३८व	७	६	१७	१४	५५	७	१	
५५ वसुचन्द्र	११५५।अग्र शु५	११ "	४०व	०	७	२८	३	५१	८	१	(पाठान्तर विश्वचन्द्र)
५६ सिंहनन्दी	११५६।आ शु६	७ "	३२व	४	०	२४	५	४३	०	२९	(पाठान्तर हरिनन्दी)
५७ भावनन्दी	११६०।भा शु५	११ "	३०व	७	२	०	३	४८	२	३	
५८ देवनन्दी २य	११६७।का शु८	११ "	३०व	३	३	२	१०	४४	३	१२	(पाठान्तर शूरकीर्ति)
५९ विद्याचन्द्र	११७०।फा कृ५	१४ "	३८व	५	५	५	१४	५७	५	१९	
६० शूरचन्द्र	११७६।आ शु९	१० "	३५व	८	१	२९	२	५३	२	१	
६१ माघनन्दी २य	११८४।आश्वि शु१०	१४व ३मा	३३व१मा	४	१	१६	५	५०	६	२१	
६२ ज्ञानकीर्ति	११८८।अग्र शु१	१० वर्ष	३४व	११	०	३	७	५५	०	१०	(पाठान्तर ज्ञाननन्दी)
६३ गङ्गाकीर्ति	११९९।अग्र शु११	१३ "	३३व	७	२	८	१०	५३	२	१८	यहाँ तक वारानगरमें पट्ट
६४ सिंहकीर्ति	१२०६।फा कृ१४	८ "	३७व	२	२	१५	१६	४७	३	१	ग्वालियरमें पट्ट।
६५ हेमकीर्ति	१२०९।ज्ये कृ१२	१३ "	२४व	७	३	२७	६	४४	४	३	चित्तौर (मेवाड़)में—

के दूसरे दूसरे सैनिक उनसे ईर्षा करने लगे थे। गुलाब थोड़े दिनके बाद ही मुल्ला दुर्ग छोड़ भीमवर सुलतान खाँके अधीन काम करने लगे। कुछ काल वे कोटाली दुर्गमें रहते थे। यहांके सरदारसे भी उन्हें अच्छा बनाव न था। इस लिये उक्त कार्य छोड़नेके लिये बाध्य हुए।

इस समय वोर गुलाबको चारो ओर निराशाकी विषादमय छवि दीख पड़ती थी 'किसकी सहायता लूं? किस तरह भविष्य-उन्नत करूं?" इसी तरहकी भावना इनके हृदयमें उत्पन्न होने लगीं। हृदयकी व्यथा दूर करनेके लिये इस्माइलपुरमें पिताके निकट उपस्थित हुए। किन्तु यहां आकर भी वे संसारकी विषम वेड़ोसे निवद्ध हो अत्यन्त ही कष्ट पाने लगे। यहां उनके पिताने अपने दोनों पुत्रोंको उपयुक्त देख दुर्लभ नामके किसी मनुष्यसे वहुतसे रुपये कर्ज ले उन दोनोंका विवाह करा दिया। इस विवाहसे भी गुलाब कुछ भी प्रसन्न न हुए। उन्होंने देखा कि जिस तरह पिता ऋणजालमें जकड़े हुए हैं, सांसारिक कष्ट भी उसी परिमाणसे वढ़ता है। १८११ ई०के प्रारम्भमें गुलाब एक दिन पितासे बोले—"मुझे यहां रहना अच्छा नहीं लगता है। यदि आप घुड़—सवारका उपयुक्त पोशाक खरीद दें तो मैं एकवार और लाहौर दरवारमें जा अपने भाग्यकी परीक्षा करूं" । किन्तु उस समय उनके पिता किशोर सिंहके पास एक कौड़ी भी न थी। जो कुछ हो, रुपये लौटकर पानेकी कोई सम्भावना नहीं रहने पर भी दयालु दुर्लभने फिर भी कर्ज दे गुलाबकी अभिलाषा पूरी की। गुलाब और उनके भाई ध्यानसिंह मियांमोतीसे एक सिपारिसी चिठ्ठी ले दीवानचन्द मिश्रके निकट लाहौर जा पहुंचे। दीवानचंदने चिठ्ठी पढ़ दोनों भाइयोंको बहुत ही खातिर की और उनको यथासाध्य मदद देनेके लिये कटिबद्ध हुए। उस समय गुलाबसिंहने सुना कि उनके परम उपकारी मियां मोती विद्रोही दामोदरसिंह और ग्वालसिंहसे मारे गये हैं। यह सुन उन्हें जैसा दुःख हुआ था वह अकथनीय है। उनके हृदयमें प्रतिहिंसाकी आग जल उठी थी, किन्तु इस समय उनने मनकी आग मनमें ही शान्त की। इस अवस्थामें प्रतिहिंसावृत्ति दिखलाना उनके लिये अच्छा नहीं होता।

सुयोग पाकर मिश्र दीवानचंद दोनों राजपूत युवकोंको महाराज रणजित्सिंहके पास ले गये। पंजाबकेशरी पहलेसे ही गुलाबके वीरत्वकी कथा सुन रहे थे। आज दोनों भाईयोंकी सुश्री सुगठित वीरकान्ति देख बहुत ही संतुष्ट हुए, और दोनोंको प्रतिदिन ३) रु० वेतन पर अपना अनुचर बनाकर रखलिया। इसतरह दोनों भाइयोंने कुछ समय राजदरबारमें रह राजकीय अदब कायदा सीख लिया। १८१२ ई०में दोनों अश्वारोही सैन्यमें भर्त्ती किये गये। महाराज रणजित्सिंह ध्यानसिंहको बहुत ही चाहते थे। इस समय ध्यानसिंह प्रतिदिन ५) रु० और उनके ज्येष्ठ भ्राता गुलाबसिंह सिर्फ ४) रु० पाने लगे। थोड़े ही दिनोंमें दोनोंका वेतन दो गुनासे तीन गुना तक बढ़ गया। इस वर्षमें अन्तमें राजपूत वीरने अपने पिताके पास लगभग तीन हजार रुपये भेजे थे। गुलाब और ध्यानसिंहके ऐसे उन्नत समयमें उनके पिता किशोरसिंहकी मृत्यु हुई।

१८१३ ई०में महाराज रणजित्के अनुरोधसे गुलाबसिंह अपने वारह वर्षके कनिष्ट भ्राता सुचेतसिंहको दरवारमें लाया। सुचेतसिंहने अपने रमणीय सुकुमार कान्ति-गुणसे रणजित्को विमुग्ध कर उनका यथेष्ट अनुग्रह लाभ किया। तीन सामान्य राजपूत युवकोंने लाहौरके दरबारमें शीर्षस्थान पाया। थोड़े ही दिनोंमें तीनों भाई सभोंसे श्रेष्ठ गिने जाने लगे।

उक्त वर्षमें दामोदरसिंह और ग्वालसिंह लाहौरमें आये हुए थे। उनका आगमन सुन गुलाबसिंह और ध्यानसिंहके हृदयमें प्रतिहिंसा फिर भी जाग उठी। दोनों भाई आनरकुली नामक रास्ते पर घोड़े पर चढ़ कर उपस्थित हुए। इस स्थान पर मियाँमोतीके मारनेवालोंसे उनकी भेंट हो गई। गुलाबसिंहने दामोदरको अपना परिचय देते हुए बन्दूकका निशाना मारा। दामोदरने आर्त्तनाद करते हुए पृथ्वी पर गिर अपना प्राणत्याग किया। तब ग्वालसिंहने दोनों भाइयों पर आक्रमण किया। किन्तु गुलाबके दारुण अस्त्राघातसे वे भी परलोकको सिधारे। राजपथ पर इस तरहकी दुर्घटना

व्याख्याप्रज्ञप्त्यङ्ग, ज्ञातृधर्मकथाङ्ग, उपासकाध्ययनाङ्ग, अन्तःकृद्दशाङ्ग, अनुत्तरौपपादिकदशाङ्ग, प्रश्नव्याकरणाङ्ग, विपाकसूत्राङ्ग और दृष्टिप्रवादाङ्ग। इनमें प्रथम आचाराङ्गमें साधु वा मुनिओंके सम्पूर्ण आचरणका निरूपण है; इसके अठारह पद* हैं। २य सूत्रकृताङ्गमें ज्ञानकी विनय आदि और धर्मक्रियामें स्वपरमतकी क्रियाका विशेष निरूपण है; इसमें छत्तीस हजार पद हैं। ३य स्थानाङ्गमें जीव (आत्मा), पुद्गल (अजीव) आदि द्रव्योंका एक आदि स्थानोंका निरूपण है। जैसे—जीव द्रव्य चैतन्यसामान्यकी अपेक्षा एक प्रकार है, सिद्ध और संसारीके भेदसे दो प्रकार है तथा संसारी जीव स्थावर विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रियके भेदसे तीन प्रकार है इत्यादि। इस प्रकार इसमें स्थान आदिका वर्णन है और इसके बियालीस हजार पद हैं। ४र्थ समवायाङ्गमें द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी अपेक्षा समानताका वर्णन है; इसके एक लाख चौंसठ हजार पद हैं। ५म व्याख्याप्रज्ञप्ति-अङ्गमें जीवके अस्तिनास्ति इत्यादि साठ हजार प्रश्न जो गणधर देवने तीर्थङ्करके निकट किये थे, उनका वर्णन है; इसके दो लाख अट्ठाईस हजार पद हैं। ६ष्ठ ज्ञातृधर्मकथाङ्गमें तीर्थङ्करोंके धर्मोंकी कथा, जीवादि पदार्थोंका स्वभाव और गणधर द्वारा किये गये प्रश्नोंके उत्तरोंका वर्णन है। इसको धर्मकथाङ्ग भी कहते हैं, इसके पाँच लाख छप्पन हजार पद हैं। ७म उपासकाध्ययनाङ्गमें ग्यारह प्रतिमा आदि श्रावकों (जैन गृहस्थों) के व्रत, शील, आचार, क्रिया, मन्त्र, उपदेश आदिका वर्णन है; इसमें ग्यारह लाख सत्तर हजार पद हैं। ८म अन्तःकृद्दशाङ्गमें एक एक तीर्थङ्करके बाद दश दश महामुनियोंके उपसर्ग जीत कर संसार परिभ्रमणके अन्त करनेका वर्णन है। इसके तेईस लाख अट्ठाईस हजार पद हैं। ९म अनुत्तरोपपादिकदशाङ्गमें एक एक तीर्थङ्करके बाद दश दश महामुनि जो घोर उपसर्ग सह कर विजय आदि पाँच अनुत्तर विमानमें उत्पन्न हुए हैं, उनका वर्णन है। इसके बानवे लाख चवालीस हजार पद हैं। १०म प्रश्नव्याकरण अङ्गमें भूत और भविष्यकाल सम्बन्धी लाभ, अलाभ, सुख, दुःख, जीवन, मरण, आदि शुभाशुभके प्रश्नोंका यथार्थ उत्तर देनेके उपायों तथा आक्षेपिणी (चार अनुयोग, लोकका आकार, यति और श्रावकके धर्मका जिसमें वर्णन हो), विक्षेपिणी (प्रमाणका स्वरूप, परमतनिराकरण जिसमें हो), संवेदिनी (सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप धर्म तीर्थङ्करोंके प्रभाव, तेज, वीर्य, ज्ञान, सुखादिका जिसमें कथन हो) निर्वेदिनी (जिसमें वैराग्य बढ़ानेवाली कथाओंका वर्णन हो) इन चार प्रकारकी कथाओंका वर्णन है। इसके तिरानवे लाख सोलह हजार पद हैं। ११श अङ्ग विपाकसूत्रमें कर्मों (पाप-पुण्य आदि)के बन्ध, उदय, सत्ता और तीव्र, मन्द, अनुभागका द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावकी अपेक्षा वर्णन है। इसके एक करोड़ चौरासी लाख पद है।

१२ दृष्टिवादाङ्गके एक सौ आठ करोड़ अरसठ लाख छप्पन हजार पाँच पद हैं। इसके पांच भेद हैं, यथा—(१) पञ्चप्रकार परिकर्म, (२) सूत्र नाम, (३) प्रथमानुयोग, (४) चतुर्दशपूर्वगत और (५) पञ्चप्रकार चूलिका। इनमें परिकर्मका पहला भेद चन्द्रप्रज्ञप्ति है, जिसमें चन्द्रका गमन आदि तथा उसके परिवार, आयु और कालकी हानिवृद्धि एवं देवी, विभव आदि ग्रहणादिका वर्णन है। इसके छत्तीस लाख पचास हजार पद हैं। दूसरा भेद सूर्यप्रज्ञप्ति है, जिसमें सूर्यकी ऋद्धि, विभव, देवी, परिवार आदिका वर्णन है। इसके पांच लाख तीन हजार पद हैं। ३रा भेद जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति है, जिसमें जम्बूद्वीप सम्बन्धी मेरु, गिरि, नदी, ह्रद, क्षेत्र, कुलाचल आदिका वर्णन है। इसके तीन लाख पचीस हजार पद हैं। ४था भेद द्वीपसागर-

* सोलहसौ चौंतीस कोटि तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी (१६३४८३०७८८८) अक्षरका १ एक पद होता है। उस पदके तीन भेद हैं, १ अर्थपद, २ प्रमाणपद, ३ मध्यमपद। इनमेंसे 'सफेद गौको रस्सीसे बांधो' 'अलको लाओ' इत्यादि अनियत अक्षरोंके समूहरूप किसी अर्थ विशेषके बोधक वाक्यको अर्थपद कहते हैं। आठ आदिक अक्षरोंके समूहको प्रमाणपद कहते हैं, जैसे श्लोकके एक पादमें आठ अक्षर होते हैं। इसी प्रकार दूसरे छन्दोंके पदोंमें भी अक्षरोंका न्यूनाधिक प्रमाण होता है, परन्तु कहे हुए पदके अक्षरोंका प्रमाण सर्वदाके लिये निश्चित है, इसीको मध्यम कहते हैं। (गोम्मटसार जी० का०)

गुलावसिंहने उपकारी सिखनरपतिसे बिदा ले बहुत ही समारोहके साथ जम्बु राज्यमें प्रवेश किया जो मनुष्य एक समय सिर्फ ३) रु० मासिक वेतनकी नौकरीके लिये लालायित हुआ था, आज वही मनुष्य जम्बु के एक स्वाधीन राजा है। अदृष्टचक्र किस तरह परिवर्त्तनशील है गुलाबसिंह ही इसका दृष्टान्त बन गये। बहुत धूम धामसे गुलाबसिंह जंबुराज्यमें अभिषिक्त हुए थे। सिख-राजके कर्मचारी और उनके अधीनस्थ सभी सैन्य जंबु छोड पञ्जाब चले आये। गुलाबके साथ रणजित्सिंहका अब कोई लगाव न रहा। सिर्फ इतना निश्चित था कि राजा गुलाब प्रतिवर्ष दुर्गापूजाके समय ससैन्य लाहोर आ पञ्जाबकेशरीके आनन्दको बढावें।

गुलाब जम्बुका एकाधिपत्य लाभकर निकटवर्त्ती सर्दारोंको वशीभूत करने लगे। राज्यलिप्साके साथ उच्चाभिलाष, परस्त्रीकातरता, परपीडन और अर्थलाभ ये सब महादोष उनके हृदयमें आगये थे। यहां तक कि जम्बु के बालसे वृद्ध तक सबके सब गुलाबका नाम सुननेसे ही डरते थे।

बाहरसे गुलाब इतने सुखमधुर थे, उनके मुखमण्डलमें ऐसा स्वच्छ सुन्दरआवरण था कि एक बार जो उन्हें देखता और उनके साथ आलाप करता वह उनकी मोहिनी शक्तिमें आकृष्ट हो जाता था।

१८२० ई०में गुलाबसिंहने राजोयारिके राजा अगरखाँ पर आक्रमण कर उन्हें वन्दी किया था।

१८३९ ई०में पंजाबकेशरी रणजित्सिंहकी मृत्यु हुई और इनके पुत्र वीरवर खड्गसिंह सिंहासन पर बैठे। गुलाबसिंह तथा उनके भाइयोंने समझा था कि रणजित्सिंहको मृत्यु के बाद उनके भाई ध्यानसिंहके पुत्र हीरासिंह पंजावके सिंहासन पर अभिषिक्त होंगे, परन्तु उनका अभीष्ट सिद्ध नहीं होनेसे राजा ध्यानसिंह महाराज खड्गसिंहको नाश करनेके लिये षडयन्त्र रचने लगे। राजा गुलाबसिंह भी इस निदारुण षड्यन्त्रमें शामिल हुए थे। जब कुमार नवनिहालसिंह खैवरसे पिताके प्रतिरूपमें लाहोरकी ओर आ रहे थे, उस समय राजा गुलाबसिंह रास्तेमें उनसे मिल गये। गहरी रात्रिमें जिन लोगोंने मिल असहाय खड्गसिंहको वन्दी किया था, उनमेंसे गुलाबसिंह भी एक थे।

खड्गसिंह देखो।

जब खड्गसिंह कारागारमें और उनके पुत्र नवनिहालसिंह पंजाबके सिंहासन पर बैठे थे, उस समय गुलाबसिंह प्रभृति तीन भाइयोंका एक तरह पंजाबमें आधिपत्य था। रणजित्के पौत्र नवनिहालको यह अत्यन्त असह्य मालूम पडने लगा। खड्गसिंहकी अन्त्येष्टिक्रियाके दिन नवनिहालके माथे पर ढाल गिरा था जिससे उन्हें बहुत चोट आई थी। लोग कहते हैं कि उसीसे उनकी मृत्यु हुई। किन्तु किसी किसी ऐतिहासिकने लिखा है—"इस सामान्य आघातसे उनके मृत्यु होनेकी कोई सम्भावना नही थी।" सुप्रसिद्ध सिख-इतिहास-लेखक कनिंहमने लिखा है "जम्बु के राजा नवनिहालके हत्याके काण्डमें शामिल थे इसका यद्यपि कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता है तो भी इस घोरतर अपराधसे उन्हें छोड़ देना भी बिलकुल असम्भव है।" सचमुच ध्यानसिंह प्रभृतिके षडयन्त्रसे ही प्रवल पराक्रान्त सिखराज्यके अधःपतनका आरम्भ हुआ।

नवनिहालको मृत्यु के बाद उनकी माता चांदकुमारी राजगद्दी पर बैठीं। वह ध्यानसिंहको अच्छी तरह पहचानती थीं। उस समय भी ध्यानसिंह राज्यके शासन-सचिव थे। महारानी चाँदकुमारीने ध्यानसिंहको उपेक्षा कर सिन्धुवाल उत्तरसिंहको प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त किया। रानी प्रवलप्रतापसे राज्य करने लगीं। क्रूरप्रकृति ध्यानसिंह बुद्धिमती विचक्षणा रमणीको सिंहासनसे अलग करनेकी चेष्टा करने लगे। रणजित्सिंहका शेरसिंह नामक व्यसनासक्त और मद्यपायी एक जारज पुत्र था। ध्यानसिंहने सोचा कि इसीको सिंहासन पर बैठाकर स्वयं राज्यके हर्त्ता कर्त्ता हो जावेंगे। चतुर गुलाबसिंहने भी भ्राताके साथ इस षड्यंत्रमें योग दिया था। ध्यानसिंहने शेरसिंहको अपना अभिप्राय प्रगट करते हुए उन्हें ससैन्य लाहोर आनेको लिखा। १८३१ ई०की १२वीं जनवरीको सेरसिंह ससैन्य फतेगढ़ आ पहुंचे। रानी चाँदकुमारीने शीघ्र ही सिंहद्वार वन्द करनेका आदेश किया। द्वार वन्द किया

अवस्थाओंका तथा चित्त आदि अवस्था, ईर्यापथ आदि क्रिया, तपस्या, अधःकर्म आदिका वर्णन है। ६वें प्रत्याख्यानपूर्वमें ३० वस्तु और ८४,००,००० पद हैं। इसमें नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको आश्रय कर पुरुषको संहनन, बल आदिके अनुसार प्रमाणोक काल पर्यन्त वा अप्रमाणोक काल पर्यन्त त्याग करना तथा सावद्य वस्तुका त्याग, उपवास-विधि, उसकी भावना, पांच समिति और तीन गुप्तिका वर्णन है। यह पूर्व मुनि-धर्मका बढ़ानेवाला है। १०वें विद्यानुवादपूर्वमें १५ वस्तु और १,१०,०००३० पद हैं। इसमें अङ्ग छ, प्रसेन आदि ७०० लघुविद्या और रोहिणी, ५०० महाविद्याओंके स्वरूप-सामर्थ्य साधनभूत मन्त्र यन्त्र आदिका, सिद्ध हुई विद्याओंके फलका तथा अष्टाङ्गनिमित्तज्ञानका वर्णन है। ११वें कल्याणवादपूर्वकी वस्तुसंख्या १० और पदसंख्या २६,००,००,००० है। इसमें तीर्थङ्कर, चक्रधर, बलदेव, वासुदेव आदिके गर्भावतारणादि कल्याणकोंके महोत्सव और उनके कारण तीर्थङ्करत्व आदि पुण्यविशेषके हेतु षोड़शकारणभावना आदि तपश्चरण प्रभृतिका तथा सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह नक्षत्रादिके गमन, ग्रहण, शकुन आदिके फलका वर्णन है। १२वें प्राणवादपूर्वकी वस्तुसंख्या १० और पदसंख्या १३,००,००,००० है। इसमें काय-चिकित्सा आदि आठ प्रकारके आयुर्वेदका, भूत आदिकी व्याधि दूर करनेके कारण मन्त्र तन्त्रादि वा विष दूर करनेवाली गारुड़ आदि विद्याओंका तथा दश प्राणोंके उपकारक अपकारक द्रव्योंका गतियोंके अनुसारसे वर्णन है। १३वें क्रियाविशालपूर्वकी वस्तुसंख्या १० और पदसंख्या ९,००,००,००० है। इसमें सङ्गीतशास्त्र, छन्द, अलङ्कार, पुरुषोंको ७२ कला, स्त्रियोंके ६४ गुण, शिल्पादि विज्ञान, गर्भाधान आदि ८४ क्रिया, सम्यग्दर्शनादि १०८ क्रिया वा देवनन्दना आदि २५ क्रिया और नित्यनैमित्तिक क्रिया आदिका वर्णन है। १४वें त्रिलोकविन्दुसारपूर्वकी वस्तुसंख्या १० और पदसंख्या १२,५०,००,००० है। इसमें तीन लोकका स्वरूप, २६ परिकर्म, आठ व्यवहार, चार बीज आदि गणित तथा मोक्षका स्वरूप, उसके गमनका कारण, क्रिया और मोक्षके सुखका स्वरूप वर्णित है। (गोम्मटसार सटीक जीवकाड)

बारहवें अङ्गका ५वां भेद चूलिका है जिसके ५ भेद हैं, यथा—१ जलगता, २ स्थलगता, ३ मायागता, ४ रूपगता और ५ आकाशगता। १म जलगता चूलिकामें जलका स्तम्भन, जलके ऊपरसे गमन, अग्निका स्तम्भन, अग्निमें प्रवेश करना, अग्निका भक्षण करना इत्यादिके कारणरूप मन्त्र, तन्त्र, तपश्चर्या आदिका निरूपण है। इसके २,०९,८९,२०० पद हैं। २य स्थलगता चूलिकामें मेरु, कुलाचल, भूमि आदिमें प्रवेश, शीघ्र गमन इत्यादि क्रियाके कारणभूत मन्त्रतन्त्रादिका वर्णन है; इसके भी २,०९,८९,२०० पद है। ३य माया-गताचूलिकामें इन्द्रजाल सम्बन्धी मन्त्र, तन्त्र, आचरणादिका निरूपण है। इसकी भी पदसंख्या २०९८९२०० है। ४र्थ रूपगताचूलिकामें सिंह, हस्ति, घोड़ा, बैल, हरिण आदि रूपके पलटनेके कारणभूत मन्त्र, तन्त्र, तपश्चरणादिका प्ररूपण तथा चित्राम, काष्ठलेपन और धातु, रस, रसायनका वर्णन है। पदसंख्या पूर्ववत् है। ५म आकाशगता चूलिकामें आकाश-गमनके कारणभूत मन्त्र तन्त्रादिका वर्णन है; इसकी पदसंख्या २०९८९२०० है। यह तो हुआ अङ्गप्रविष्ट श्रुतका विषय; अब अङ्गबाह्य श्रुतका विवरण लिखते हैं।

अङ्गबाह्यश्रुतके चौदह भेद हैं,—१ सामायिक, २ चतुर्विंशस्तव, ३ वन्दना, ४ प्रतिक्रमण, ५ वैनयिक, ६ कृतिकर्म, ७ दशवैकालिक, ८ उत्तराध्ययन ९, कल्पव्यवहार, १० कल्पाकल्प, ११ महाकल्प, १२ पुण्डरीक, १३ महापुण्डरीक और १४ निषिद्धिका। इनको चतुर्दश प्रकीर्णक भी कहते है। इनके पदोंका प्रमाण मध्यमपदसे न ले कर प्रमाणपदसे लेना चाहिये। समस्त अङ्गबाह्य श्रुतको अक्षरसंख्या ८,०१,०८,१७५, पदसंख्या १,००,१३-५२१ और श्लोकसंख्या २५,०३,३८० और १५ अक्षर है। सामायिक नामक १म प्रकीर्णकमें शत्रु, मित्र, सुख, दुःख आदिमें राग द्वेषको निवृत्तिपूर्वक समभावका वर्णन है। २य चतुर्विंशस्तव वा जिनस्तवमें तीर्थङ्करोंके चौंतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य, परम औदारिक दिव्यदेह, समवसरण, धर्मोपदेश आदि माहात्म्य प्रकट करनेवाले स्तवनका वर्णन है। ३य वन्दना प्रकीर्णकमें पञ्चपरमेष्ठी, भगवानकी प्रतिमा, मन्दिर, तीर्थ और शास्त्रोंका

इधर कावुलमें बहुतसे अंगरेजो सैनिक मारे गए। सेनापति पोलक ससैन्य कावुल पहुंचे और गुलावसिंह को इस लडाईमें योग देनेके लिये संवाद भेजा। गुलावसिंह पहले दुविधामें पड़ गये, क्या करना चाहिए उनकी कुछ समझमें न आया। अन्तमें सेनाके साथ हजारासे पेशावर चेत्रको आये। किसी किसी अंगरेज ऐतिहासिकने लिखा है जिससे वृटिश सैन्य सहजमें ही खैवर पथ पर न पहुंच सके, एवं देशीय सैन्य जिससे भयभीत और विचलित हो जाय, गुलावसिंह गुप्तभावसे वैसाही कार्य करनेकी चेष्टा करते थे। किन्तु जब उन्होंने देखा कि वृटिश सैनिक नानाप्रकारके दुःखोंको दूर करते हुए अपने कार्यमें सफलता दिखला रहे है, तब उन्होंने निराश हो वृटिश सेनापतिको कहला भेजा कि "वह यथासाध्य वृटिशकी सहायता कर रहे है, किन्तु अभी साहाय्यका कोई प्रयोजन न जान वह स्वराज्यको लौटे जा रहे हैं।"

उक्त विदेशी ऐतिहासिकका कथन विश्वासयोग्य नहीं हैं। गुलावसिंहने जिस तरह वृटिश गवर्मेंटको सैन्य द्वारा साहाय्य किया था, उसमें तनिक भी संदेह नहीं किया जा सकता। क्योंकि वृटिश राजपुरुषने गुलावसिंहके कार्यसे संतुष्ट हो उन्हें जलालावादका स्वाधीन अधिकार प्रदान किया था।

इस समय लाहोरमें एक भयङ्कर दुर्घटना हुई। महारानी चान्दकुमारी नवनिहालके घरमें रहती थीं। शेरसिंहने उन्हें पानेकी इच्छासे अनेक तरहके उपाय रचे थे, किन्तु उनका अभीष्ट सिद्ध नहीं हुवा। वरं चांदकुमारीने अत्यन्त घृणासे शेरसिंहको इस तरह खबर दी थी "प्रसिद्ध कुणियावंशमें मेरा जन्म है, मैं सुविख्यात जयमालकी कन्या हूं, शेरसिंह जैसे—रजकपुत्रके हाथ आत्मसमर्पण करनेमें अत्यन्त लज्जा होती है।" महाराज शेरसिंहने सोचा कि ध्यानसिंह और गुलावसिंह चांदकुमारीके पृष्ठपोषक हैं, इस लिये अवस्थाहीन होने पर भी चांदकुमारीने उनकी अवज्ञा की। वे जानते थे कि चांदकुमारी ही उनके सिंहासनका एक मात्र कंटक है। इसलिये उन्होंने चांदकुमारीकी चार सहचरियोंको जागीरका लोभ दिखाकर वशीभूत किया और उनके द्वारा अत्यन्त कठोरतासे चांदकुमारीका प्राणसंहार भी कराया। शेरसिंहने सोचा कि अब सिंहासनका दावा करनेवाला कोई न रह गया। किन्तु दुष्ट ध्यानसिंह भी जिससे उसके ऊपर किसी तरहका आधिपत्य कर न सके, उसकी भी कोई तरकीव सोचने लगे। सिन्धुवालाके सरदार लेनासिंह और अजीतसिंह राजाका पक्ष अवलम्बन कर ध्यानसिंहके नाशकी चेष्टामें थे।

ध्यानसिंहने जम्बुमें भाईको सब खबर जतला कर उन्हें शीघ्र ही आने लिखा। गुलावसिंह चांदकुमारी के मृत्युसंवाद पाकर निश्चिन्त हो गये। चांदकुमारीका रखा हुवा लाख रुपयेका मणिरत्न आज उन्हींके हाथ लगा। सर्वदा उन्हें एक यही चिन्ता लगी रहती थी कि यदि चांदकुमारी शेरसिंहके साथ मिल गई तथा उनके पास जो सब धन रत्न रखा हुआ है वह शेरसिंह जान जावें तो उन्हें एक भारी आपत्तिमें गिरनेकी सम्भावना है। जो हो, आज प्रसन्नचित्तसे गुलावसिंह लाहौर पहुंचे। यहां अधिक दिन रहने पर शायद किसीके मनमें कोई संदेह हो जाय, इसी लिये वे ध्यानसिंहको उपयुक्त सलाह देकर शीघ्र ही जम्बुराज्यको लौट आये। गुलावसिंहके आदेशानुसार ध्यानसिंहने रणजित्‌के एक पांच वर्षके उत्तराधिकारीको राज्यसिंहासन पर बैठाना स्थिर किया। उन्हींका नाम सुविख्यात दलीपसिंह था।

दलीपसिंह देखो।

शेरसिंह ध्यानसिंहके व्यवहारसे भयभीत हुए, इसलिये उन्हें ध्यानसिंहके विरुद्ध कोई कार्य करनेका साहस न हुआ। किन्तु यह उपयुक्त काल समझ दुष्ट सिन्धुवाला सर्दारोंने मदमत्त शेरसिंहसे ध्यानसिंहका शिरश्छेद करनेके लिये आदेशपत्र ले लिया। इधर उन्होंने राजाका दण्डादेश-पत्र देखा कर ध्यानसिंहको चिन्तामें डाला। उस समय दुष्ट सिन्धुवाला सर्दारने ध्यानसिंहसे कहा "यदि आप आज्ञा करें तो हमलोग अभी उस दुष्ट शेरसिंहका मस्तक दो खण्ड कर सकते हैं।" ध्यानसिंह इससे सहमत हुए। दूसरे दिन दुर्वृत्त सिन्धुवालाने महाराज शेरसिंह और ध्यानसिंह दोनोंको मार डाला।

शेरसिंह और ध्यानसिंह देखो।

हीरासिंहके यत्नसे वालक दलीपसिंह पञ्चनदके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। हीरासिंहने वजीरका

लोकके बिले आदिका विस्तृत विवरण रहता है। इस विषयको वर्णन करनेवाले त्रिलोकसार सूर्यप्रज्ञप्ति चंद्रप्रज्ञप्ति आदि जितने भी ग्रंथ हैं, वे सब करणानुयोगमें गर्भित हैं। ३य चरणानुयोगमें मुनि और गृहस्थोंके आचारका वर्णन रहता है। जितने भी आचार ग्रंथ हैं, वे सब चरणानुयोगमें गर्भित हैं, जैसे—रत्नकरण्डश्रावकाचार, मूलाचार, अमितगतिश्रावकाचार, क्रियाकोष, आचारसार, वसुनन्दिश्रावकाचार, सागारधर्मामृत, अनगारधर्मामृत इत्यादि। ४र्थ द्रव्यानुयोगमें जीव (आत्मा), अजीव (जड़), आस्रव (कर्मोंका आगमन), बन्ध (कर्मोंका आत्माके साथ मिश्रण), संवर (कर्मोंका निरोध होना), निर्जरा (कर्मोंका क्षय) और मोक्ष (मुक्ति वा कर्मोंका सर्वथा नाश) इन सात तत्त्वोंका तथा अन्य आकाश आदि द्रव्योंका वर्णन रहता है। इस विषयको वर्णन करनेवाले सम्पूर्ण शास्त्र द्रव्यानुयोगमें गर्भित हैं। द्रव्यानुयोगके शास्त्र सबसे अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। कुछ प्रधान शास्त्रोंके नाम ये हैं—गन्धहस्तिमहाभाष्य, जयधवल, महाधवल, गोम्मटसार, तत्त्वार्थ श्लोकवार्त्तिक*, तत्त्वार्थराजवार्त्तिक†, द्रव्यसंग्रह, सर्वार्थसिद्धि‡, तत्त्वार्थसूत्र§, प्रवचनसार, समयसार पञ्चास्तिकाय इत्यादि इत्यादि।

उपरोक्त आगमोंके सिवा जैनोंमें और भी हजारों मूल प्राकृत और संस्कृतग्रंथ तथा उनके भाष्य और टीकायें आदि हैं।

तीर्थङ्करोंको केवलज्ञान (सर्वज्ञता) प्राप्त होने पर ही वे उपदेश दिया करते हैं और वह उपदेश मेघकी गर्जनवत् अनक्षरात्मक अर्थात् कण्ठ, तालु आदि अंगोंकी सहायताके बिना ही प्रकट होती है। उस ध्वनिको अर्धमागध नामक देवगण अर्धमागधी भाषा रूपमें परिणत कर देते हैं। जिससे उसका अर्थ देव, मनुष्य और तिर्यञ्च (पशु आदि) समस्त प्राणी अपनी अपनी भाषामें समझ लेते हैं। किन्तु समझ कर वे उसको धारण नहीं कर सकते, क्योंकि वह ध्वनि अनर्गल होती रहती है*। अतएव मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ज्ञानके धारक गणधर उसकी विशेष व्याख्या करते हैं। समवसरणमें आये हुए यदि किसी भव्यको किसी विषयमें प्रश्न हो वा और कोई नई बात पूछनी हो, तो वे गणधरसे प्रश्न करते हैं। गणधर भी उनके प्रश्नोंका विस्तार पूर्वक उत्तर दे कर उनके चित्तको निर्मल करते हैं।

तीर्थङ्कर भगवान् अपनी इच्छासे दिव्यध्वनि नहीं करते, वल्कि वह ध्वनि उन जीवोंके पुण्यप्रतापसे स्वयं उद्भूत होती है। गणधर दिव्यध्वनिकी व्याख्या करते हैं और उसीके अनुसार आचार्यगण शास्त्रोंकी रचना करते हैं।

जैनसिद्धान्त इसके बहुत समय पश्चात् लिपिबद्ध होने पर भी, इसमें सन्देह नहीं कि उनके मूल अङ्ग बहुत ही प्राचीन हैं। पाश्चात्य पुराविदोंका कहना है कि, ईसाकी १ली शताब्दीसे ले कर ३री शताब्दी तक ग्रीकोंके फलित और गणित ज्योतिष भारतमें प्रचारित हुआ था, किन्तु जैनोंके मूल अङ्गमें ग्रीक ज्योतिषका कुछ भी आभास नहीं पाया जाता (१)। ऐसी दशामें उक्त अङ्गोंकी प्राचीनतामें सन्देह नहीं रह जाता। बौद्धोंके प्राचीनतम ग्रंथरचनासे भी पहले उक्त अङ्गोंकी सृष्टि हुई थी, इसमें सन्देह नहीं। बौद्ध देखो।

तीर्थंकर वा परमात्मा—ब्राह्मणोंके भागवतमें जैसे २४ अवतारोंका उल्लेख है, उसी तरह जैन ग्रंथोंमें २४ तीर्थङ्करोंका वर्णन मिलता है। किन्तु जिस प्रकार ब्राह्मणोंके ईश्वर बार बार अवतार लेते हैं, वैसे तीर्थङ्कर बार बार जन्मग्रहण नहीं करते। तीर्थङ्कर अन्तिम बार जन्म ले कर मुक्त (अर्थात् जन्म-मरणसे मुक्त) हो जाते हैं, फिर वे जन्मग्रहण नहीं करते। जो आत्मा वा जीव दर्शन विशुद्धि आदि षोड़श भावनाओंकी आराधना कर उसमें

* इसमें कुछ करणानुयोगका भी वर्णन है।

† इसके ३य और ४र्थ अध्यायमें करणानुयोगका भी वर्णन है।

‡ इसमें थोडासा करणानुयोगका भी वर्णन है।

§ करणानुयोगका वर्णन इसमें भी किंचित् है। इसके १० अध्याय हैं, यह सूत्रग्रन्थ है। इसकी बहुतसी छोटी और बड़ी टीकाएं और भाष्य हैं।

* अनर्गलका अर्थ यह नहीं कि, रात दिन वह ध्वनि होती रहती है। दिव्यध्वनि तीन समय होती है और उन तीन समयोंमें अनर्गल होती रहती है।

(१) Weber's Indische Studien, Vol. XVI, p. 236.

जम्बुको एक पत्र यों लिख भेजा—"हम दोनों संपूर्ण रूपसे निर्दोष हैं, हमारे किसी शत्रुने मिथ्या दोषो रोपण कर हम लोगोंको कलङ्कित किया है।" किन्तु दुर्वृत्त गुलावसिंहने उनके कथन पर कुछ ध्यान न दिया अन्तमें उन दोनों राजपुत्रोंको वशीभूत करनेके अभिप्राय से उन्हें जम्बु नगर आनेको लिखा, और धूर्त गुलावने यहा उन्हें नजरबन्दी कर कहा "आप लोग यदि मुझे ७५ लाख रुपये दण्ड स्वरूपमें द, तो भविषमें आप लोगोंके ऊपर किसी तरहका अत्याचार न होगा।" किन्तु वे इतने रुपये कहा पाते? महावीर रणजित्सिंहके पुत्रोंके प्रति इस तरहका अत्याचार होता देख खालसा सैन्य सबके सब विरक्त हो उठे। उन्होंने गुलावको खबर दी 'रणजित्सिंहके पुत्रोंके प्रति इसतरहका अत्याचार मानो खालसाका अपमान करना है। यदि आप शीघ्र ही उन-दोनोंको सम्मानपूर्वक छोड न देवेंगे तो खालसा सैन्य अस्त्रधारण करेगा। इस पर गुलावसिंहने भयभोत हो सिर्फ २५ हजार रुपये ले काश्मोरा और पेशोरासिंहको छोड़ दिया।

कुछ दिनके बाद काश्मीरासिंहने उस दुष्ट किलेदार को एक सख्त सजा दी, जिससे उस अभागेको मृत्यु हो गई। इस संवादको पाकर गुलावसिंहने लाहोरको एक पत्र लिखा। फिर भी उन दोनो राजपुत्रोंको कैद करनेका आदेश आया। गुलावसिंहने गडियावाला आक्रमण कर सात सौ सैन्य सियालकोट भेजे। इस समय काश्मीरासिंह पहलेसे ही सतर्क थे। उनने अपने दो सौ सैन्यको दुर्गरचाके लिये नियुक्त किया। उनके युद्ध कौशलसे गुलावका सैन्यदल पराजित और विशेष क्षतिग्रस्त हो रणक्षेत्रसे भाग गया।

गुलावसिंहने अपनी सेनाको वेइज्जती पर क्रोधान्ध हो कई सौ अश्वारोहो और पदाति सैन्य तथा तोपें दुर्ग जीतनेके लिये भेजीं। किन्तु इस बार भी उनकी सेनायें पूर्ववत् क्षतिग्रस्त हो लौटनेको वाध्य हुईं। जब गुलाव सिंहने देखा कि दो हजार अश्वारोही और सात हजार पदातिके जाने पर काश्मीरासिंहका साहस ज्योंका त्यों बना है, तब उन्होंने लाहोरसे सिख सैन्य भेजनेका पत्र दिया। लाहोरसे मेजेतिया डोगरा और बहुसंख्यक मुसल मानसैन्य आये किन्तु वे भी काश्मीरासिंहका बालबांका न कर सके। गुलावसिंहने देखा कि अब अपना मान-संभ्रम रक्षा हीं करना उचित है, जब उनके बहुतसे सैन्य सामान्य सैन्यको पराजय कर न सके, तब उनके इतने गौरव और इतने दम्भ पर धिक्कार है। इसलिये उन्होंने इसका बदला लेनेके लिये हीरासिंहको एक पत्र लिखा-खालसा सैन्य रणजित् सिंहके पुत्रके विरुद्ध युद्ध नहीं करेगा यह जान हीरासिंहने ध्यानसिंहके पराक्रान्त पांच हजार अश्वारोही और घोड़े परसे चलाये जानेवाले छह वृहत् कामान सियाल कोटके दुर्ग ध्वंस करनेके लिये भेज दिये। इन योद्धाओंके गोला वर्षणसे सियालकोटका दुर्ग कांपने लगा था। काश्मीरासिंहके परिवारको चारों-ओर दावानल—जैसा दीखने लगा। वे सबके सब भयभीत हो गये और काश्मीरासिंहको लड़ाई बन्द कर देनेका अनुरोध किया। काश्मीरासिंहने भी देखा कि बचनेका अब कोई उपाय नहीं है, शीघ्र ही गुलावका सैन्य दुर्ग अधिकार कर उनके सामनेमें ही उनके परिवारोंका अप-मान करेगा, इसलिये वे गुप्तद्वार हो कर मध्य प्रदेशको भाग गये। गुलावकी सेनाने दुर्ग अधिकार कर लिया

इधर जब लाहोरसे ध्यानसिंहका सैन्यदल भेजा गया था तब खालसा सैन्य महाराज रणजित्के दोनों पुत्रोंपर भावी विपत्ति समझ उत्तेजित हो उठा। उन्होंने तीन दिन तक हीरासिंहको नजरबंद कर रखा और सुचेतसिंहको मंत्रीका पद दिलानेके लिये बुलाया। हीरासिंहने भयभीत हो उन्हें खबर दी कि वे रणजित् सिंहके पुत्रोंका कोई अनिष्ट न करेंगे, उनका पूर्व अधिकार लौटादेंगे और खालसा सैन्यके इच्छानुसार वे सब कार्य करेंगे। इस तरह हीरासिंहके साथ खालसा सैन्यका फिर भी मेल हो गया।

थोडे ही समयके बाद सुचेतसिंहने लाहोर आ खालसा सैनाको अपने आनेको सूचना दी। किन्तु उस समय खालसा और हीरासिंहमें मेल था। अत एव सुचेतसिंहको आशा पर पानी पड गया। उस समय सुचेतसिंहके पास सिर्फ ४५ मनुष्य थे। हीरासिंह अपने चचा सुचेतसिंहका आगमन संवाद पाकर लगभग

पुण्य)-के नष्ट हो जानेसे व्यक्त हो चुके हैं और संसारी आत्माके वे गुण आच्छादित हैं। मुक्त आत्माने तो परम शुद्धता और पूर्ण ज्ञानको प्राप्त कर लिया है, इसलिए उसके विषयमें ज्यादा कुछ कहना नहीं है। अब संसारी आत्मा (जिसको कि जीवात्मा कहते हैं)-का वर्णन करते हैं।

संसारी आत्माओंमें जो भेद दृष्टिगोचर होता है वह भी उन्हीं पुण्यपाप वा कर्मोंका परिपाक मात्र है। कर्म जड़ है और आत्मा चैतन्य स्वरूप है। अब इस विषयका विवेचन करना है कि जड़ पदार्थका चैतन्य पर इतना प्रभाव कैसे पड़ा? जड़ पदार्थोंका प्रभाव आत्मा पर पड़ता है, यह बात युक्ति द्वारा सिद्ध है। सङ्गीत, गायन आदि जड़ पदार्थोंका हम लोगों पर खासा असर पड़ता है, इसमें सन्देह नहीं। रणभेरी बजते ही सेनाको युद्ध करनेका उत्साह हो जाता है, इसका कारण क्या है? एक औषध खानेसे भीषणसे भीषण कष्ट भी जाता रहता है और उसी प्रकार एक विषके टुकड़ेको खानेसे आत्माको शरीरसे निकल जाना पड़ता है। यदि आत्मा पर जड़ पदार्थोंका प्रभाव न पड़ता तो शरीरमें नाना प्रकारकी पीड़ाओंके होते रहने पर भी हम सुखसे रह सकते थे। अतएव यह निर्विवाद सिद्ध है कि आत्मा पर जड़ पदार्थोंका प्रभाव पड़ता है। इसी शब्दमें कर्म-सिद्धान्त शीर्षक विवरण देखो।

यह प्रभाव स्थूल एवं बाह्य सम्बन्धी पदार्थोंका है। इसके सिवा अत्यन्त सूक्ष्म ऐसी भी पुद्गल वर्गणाएँ हैं, जिनसे आत्माके ज्ञानादि गुणोंका साक्षात् सम्बन्ध है। उन्हींका नाम कर्म है। जिस समय आत्मा या जीव मनसे बुरा या भला कोई विचार करता है, वचनसे कटु या मीठा बोलता है अथवा शरीरसे किसीको मारता या बचाता है, उस समय वह परमाणुओंको आकर्षण करता है। ये परमाणु ही कर्म हैं। मन, वचन और काय इन तीनोंके द्वारा जो क्रिया होती है, उसे त्रियोग कहते हैं। इन तीनोंकी जैसी (शुभ वा अशुभ) क्रिया होती है, उसीके अनुसार कर्मोंका आकर्षण होता है। साथही पहलेके उपार्जित कर्मोंके उदयसे उत्पन्न हुये क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषाय वा आत्माके विकार भी काम करते हैं। आत्मा जिस समय जैसा भाव धारण करती है, उस समय उन आकर्षित कर्मों पर वैसा ही प्रभाव पड़ता है। यदि कोई किसी प्राणीको मारना चाहता है तो उस समय उसकी आत्मा क्रोधसे संतप्त हो जाती है और बुरा फल देनेवाले कर्मोंका आकर्षण होता है। जिस प्रकार अग्निसे तपे हुये लोहेको पानीमें डालनेसे वह चारों तरफके पानीको खींचता है, उसी प्रकार क्रोध लोभ आदि कषायोंसे संतप्त आत्मा संसारमें भरे हुये जल रूप पुद्गल परमाणुओंको आकर्षित कर लेती है। इस प्रकार पहलेके कर्मोंके उदयसे (अर्थात् फल देनेसे) नवीन भावोंकी उत्पत्ति होती है और उन विकार वा कषाय-भावोंसे कर्मोंका नवीन बन्धन होता है। आत्माके साथ इन कर्मोंका सम्बन्ध अनादिकाल-से चला आ रहा है और जब तक मोक्ष न प्राप्त होगी, तब तक बना ही रहेगा। हां, इतना जरूर होता है कि जिन कर्मोंका फल आत्मा भोग चुकी है, उन्हें वह छोड़ती जाती है और वे कर्म उस पर्यायको छोड़ कर पुद्गल-वर्गणा रूपसे अवस्थान करते हैं।

यहां ऐसी शंका हो सकती है कि कर्म जब जड़ है, तो उसमें क्रिया कैसे होती है? इसके उत्तरमें इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि, जैसे मेघ अपने आप बरसते हैं, जलके स्रोतसे पत्थर अपने आप गोल हो जाते हैं, बिजली अपने आप चमकती और नाना प्रकारकी क्रियायें करती है, उसी प्रकार कर्मोंमें भी अपने आप क्रिया उत्पन्न होती है। जिन कर्मोंका आत्मासे सम्बन्ध होता है, वे पांच प्रकार है। यथा—(१) आहारवर्गणा, (२) तैजसवर्गणा, (३) मनोवर्गणा, (४) भाषावर्गणा (५) कार्माण वर्गणा। १म आहारवर्गणासे मनुष्य, पशु, देव और नारकियोंके शरीरोंकी रचना होती है। यह शरीरभी कर्मका कार्य है और वह कर्म बाहरी सम्बन्ध रखनेवाला है। आत्मा जिस समय एक शरीरको छोड़ कर अन्य शरीर धारण करती है, उसी समय वह माता-के गर्भमें या जिस प्रकार उसे जन्म लेना होता है, वहां-के आहारवर्गणारूप पुद्गल परमाणुओंको ग्रहण कर लेती है जिससे उसका शरीर बनता है। इसके बाद जल वायु और भोजनादि पदार्थोंके मिलनेसे शरीरको

सिंहने देखा कि अब विपद नजदीक आ गयी। दुर्दान्त सिखसैन्य सहजमें ही उन्हें छोड़ लौट नहीं जावेगा। उनने कहला भेजा कि यदि श्यामसिंह मेजेतिया, फतेसिंह मान, वीर सुलतान मुहम्मद आ उन्हें अभयदान दें तो वे लाहौर दरबारका आदेश पालन कर सकते हैं। परन्तु कोई सर्दार पहले पहल उस महाबली जंबु राजाके निकट जा अपने जीवनको सङ्कटमें डालनेके लिये सम्मत न हुआ। अनेक तर्क वितर्कके बाद रणजित्सिंहके समयका वृद्ध सेनापति फतेसिंह मान गुलावके पास जानेको राजी हुआ। जंबुपति गुलावसिंहने उस वृद्धवीरका यथेष्ट सम्मान किया और कहा, कि हम तीन करोड़ रुपये कहां पावेंगे? हां! हीरासिंह और सुचेतसिंहको जो सम्पत्ति है व: समस्त वे लाहौर दरबारमें अर्पण करनेको प्रस्तुत हैं। गुलावसिंहने इस तरह फतेहसिंहको लालच देकर विदा किया। किंतु वृद्ध सेनापति नगर छोड़ एक कोस भी ०ाने न पाया था कि कहींसे पाँच सौ डोगरा सैन्यने आ कर अत्यन्त निष्ठुर भावसे उस वृद्ध सेनापति तथा उनके साथियोंको मार डाला। सिर्फ एक मनुष्य प्राण बचा कर भागा और उसने इस दारुण हत्याकाण्डको खबर उन सबको कह सुनाई। वृद्धवीरकी अचानक मृत्युसे समस्त खालसा सैन्यने धूर्त गुलावको ही इस हत्याकाँड का नायक जान प्रबलवेगसे जंबु नगरपर आक्रमण किया।

चतुर गुलावने फतेहसिंहकी मृत्यु होने पर बहुतही शोक प्रगट किया और अपनेको निर्दोष सावित करनेके लिए बहुतसे मनुष्योंको कैद किया। अन्तमें जब देखा कि अब रक्षाका कोई उपाय नहीं है तो उन्होंने सिख सेनाओंमें जा घोषणा की कि वे सजाके लिए खालसाके क्रतदास हैं और जो कुछ उनके पासमें है वह खालसाके लिये रख देने तयार हैं। यदि इच्छा हो तो समस्त खालसा सैन्य उनकी धन सम्पत्ति बांट कर ले सकते हैं। पीछे उनके जीवनमें किसी तरहका अनिष्ट हो जाय इसी भयसे वे लाहौर दरबारको नहीं जाते हैं। अभी यदि खालसा सैन्य उनकी रक्षा करें तो वे अपनी इच्छानुसार सब कुछ कर सकते हैं। यह कह कर उनने लगभग एक लाखसे अधिक द्रव्य खालसा सेनाओंमें बांटने को आज्ञा दी। गुलावके ऐसे मीठे वचन और अर्थ मोहिनी शक्तिसे अधिकांश खालसा सैनी उनकी जीवन रक्षा करनेके लिये कटिबद्ध हुए। तब चतुर गुलाब बन्दीरूपसे लाहौर आये और दरबारमें उपस्थित हो अपनी जागीरके सिवा समस्त अधिकृत प्रदेश और दण्ड-स्वरूप ६८०००००) रुपये देना स्वीकार किया। यहां थोड़े दिन ठहर कर विपदकी आशंकासे स्वराज्यको लौट गये।

थोड़े दिनके बाद दुर्दान्त खालसा सैन्यने मंत्री जवाहिरसिंहको मार डाला। तब प्रधान प्रधान सर्दारोंने गुलावसिंहको लाहौर आने और मन्त्रीका पद ग्रहण करनेका अनुरोध किया। किन्तु धूर्त गुलावसिंह स्वाधीनताप्रिय सिख सैन्यों पर शासन करनेमें सहमत हुए।

१८४५ ई०में पहले पहल सिखयुद्धका आरम्भ हुआ। (सिखयुद्ध देखो।) दुर्द्धर्ष वृटिश सैन्यको धीरे धीरे शतद्रु नदी पार होते देख, समस्त प्रधान सर्दार विपन्न और चिन्तित हुए। इस समय सिखसैन्यका प्रधान सेनापतित्व ग्रहण करनेवाला पञ्जाबमें कोई नहीं था। महारानी दलीपसिंहकी माताने सर्दारोंकी सलाह लेकर गुलावसिंहको बुलाया। १८४६ ई०की २५ वीं जनवरीको जम्बुराज गुलावसिंह लाहौरके दरबारमें आ मन्त्री तथा प्रधान सेनापतिके पद पर नियुक्त हुए। उस समय शतद्रुनदीके तीर पर वृटिश और सिखसैन्यमें लड़ाई चल रही थी, किन्तु गुलावसिंहने पंजाबके उस दारुण विपत्कालमें सर्वोच्च पद पर रह कर भी किसी तरहका साहाय्य न किया। वरन् युद्धकालमें जो समस्त अंगरेजी सैन्यबन्दी हुए थे, गुलाव उन्हें लाहौरमें डाक्टर साहब हनिग्वर्जके घरमें रख यथेष्ट अभ्यर्थना करने लगे थे। शीघ्र ही गुलावने सुना कि आलिवाल क्षेत्रमें सिखसैन्य पराजित हुए हैं। सेनाओंको उत्साह देना तो दूर रहे, उन्हें निरुत्साह करनेके लिये बहुत गालियां दीं। दुष्ट सर्दारोंके षड्यन्त्र, स्वार्थपरता और अन्याय आचरणसे अजेय सिखसैन्य वृटिशके हाथसे हारने लगी। सोवराउन्में विजय लाभ कर स्वयं बड़े लाट हार्डिञ्ज लाहौरकी ओर अग्रसर हुए। इस बार ससैन्य बड़े लाटका आगमन संवाद पाकर गुलावसिंह चिन्तित हो गये। जिससे गवर्नर जन-

सिवा संसारमें ऐसे भी जीव मौजूद हैं जिन पर कर्म-भार बहुत ज्यादा और तीव्र है। ऐसे जीवोंकी ज्ञान-मात्रा अत्यन्त मन्द है। उन जीवोंने ज्ञानकी अभिव्यक्ति भी नहीं पाई है और न उनका द्रव्य शरीर वा इन्द्रिया ही पूर्णताको प्राप्त हुई हैं। इन जीवोंको 'निगोदिया कहते हैं। वनस्पतिकाय, पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्नि-काय और वायुकायके जीव केवल स्पर्श का बोध करते है और वह भी अव्यक्त रूपसे। वनस्पतिकायका जीव जल-वायुका आकर्षणमात्र करता है; इसके सिवा वह न तो बोल सकता है, न सूंघ सकता है, न देख सकता है, न सुन सकता है और न विचार हो सकता है। इसी प्रकार जलकाय, अग्निकाय आदि जीवोंके विषयमें समझना चाहिये। इनकी अपेक्षा जिन आत्माओं पर कुछ कम कर्मभार है, उन जीवोने ज्ञानविकाश अथवा आत्मिक गुणविकाशकी कुछ अधिक योग्यता पाई है। जैसे—शङ्ख अथवा चावलमें उत्पन्न होनेवाले लट आदि द्वीन्द्रिय जीव स्पर्श कर सकते हैं और बोल सकते हैं; पिपीलिका आदि त्रीन्द्रिय जीव स्पर्श कर सकते हैं बोल सकते हैं और सूंघ सकते है; भ्रमर, मक्षिका आदि चतुरिन्द्रिय जीव स्पर्श कर सकते हैं, बोल सकते है, सूंघ सकते है और देख सकते हैं। इसी प्रकार क्रमशः जितनी जितनी कर्मोंकी न्यूनता होती गई है, उतनी ही आत्माके ज्ञानादि गुणोंमें वृद्धि हुई है। कुछ ऐसे भी जीव है जिनका कर्मभार कुछ हलका है और इसी लिए वे पांचों इन्द्रियोंका विकाश पा चुके है; किन्तु मनकी योग्यता न होनेसे विचार करनेमें असमर्थ हैं। वे जीव 'असैनी' वा असंज्ञी (मन-रहित)के नामसे प्रसिद्ध है। इन जीवोंके पञ्चेन्द्रियोंसे उत्पन्न ज्ञान भी मन्द रहता है। जिनका कर्मभार इनसे भी कुछ हलका है, उन्हें पांच इन्द्रियोंके सिवा मन भी प्राप्त है, जैसे हाथी, घोड़ा, बैल आदि। इनकी अपेक्षा मनुष्यों-को मनका विषय अर्थात् श्रुतज्ञान बहुत कुछ अधिक प्राप्त होता है। मनुष्योंमें भी किसीका ज्ञान मन्द और किसीकी बुद्धि तीक्ष्ण होती है। इन सबमें कारण कर्म ही है, इन्हींकी न्यूनाधिकतासे ज्ञानमें पार्थक्य होता है। इसी तरह आत्मा क्रमशः उन्नति करती हुई अपने ध्येय मोक्षसुखको प्राप्त करती है। गुणस्थान देखो।

यह आत्मा विभिन्न कर्मोदयसे चार गतियोंमें परि-भ्रमण करती है। १म मनुष्यगति है जिसमें हम लोग है। २य देवगति है जिसमें संसार-सुखकी पराकाष्ठा है, किन्तु आत्म सुखकी नहीं। ३य नारकगति है जिसमें दुःखकी पराकाष्ठा है और ४र्थ तिर्यञ्चगति है जहां अज्ञा-नता और कष्ट ही कष्ट है।

आत्मा यद्यपि अमूर्तिक पदार्थ है, तथापि उसे कर्मोंकी परतन्त्रता वश मूर्तिक शरीरमें रहना पड़ता है। आत्मा असंख्य प्रदेशी है अर्थात् यदि यह फैलना चाहे तो असंख्य प्रदेशयुक्त आकाशमें (अर्थात् लोका-काशमें) व्याप्त हो सकती है। परन्तु कर्मोंकी परतन्त्रताके कारण उसे जैसा शरीर मिलता है, उसीमें रहना पड़ता है। जैसे—दीपकके प्रकाशके प्रदेश एक बड़े मकानमें भी फैल सकते है और यदि एक घड़ेमें दीपक रखा जाय तो उस घड़ेमें भी समा सकते हैं, किन्तु घड़ेमें न तो उसके प्रदेश घटते और न मकानमें बढ़ते हो है। यह दृष्टान्त मूर्तिक पदार्थके हैं, इसलिए इस सङ्कोच-विस्तारको अंशमात्रमें घटित करना चाहिये न कि हीना-धिकतामें। इसी प्रकार चींटीकी आत्मा यदि हाथीके शरीर धारण करनेका कर्मबन्ध करे, तो उसके प्रदेश उतने बड़े शरीरमें फैल जायगे और हाथीकी आत्मा यदि चींटीके शरीर धारण करनेका कर्मबन्ध करे, तो उसके प्रदेश उतने छोटे शरीरमें समा जांयगे। यह सङ्कोच विस्तारमात्र है, इसमें प्रदेश घटते वा बढ़ते नहीं।

ऊपर जो इन्द्रिय और मनकी प्राप्ति और उसके अव-लम्बनसे सोपयुक्त क्रमभावी ज्ञानका विकाश बतलाया है वह संसारी जीवोंके ही होता है। संसारी आत्मा ज्यादासे ज्यादा तीन समय* तक शरीर और इन्द्रियोंसे शून्य रह सकती है, इससे अधिक नहीं। जिस समय आत्मा एक शरीरको त्याग कर दूसरे शरीरको धारण करती है, उसी समय उसे दूसरे शरीरमें ले जानेवाले उन कर्मोंका उदय प्रारम्भ हो जाता है जिनको उसने

* कालके सबसे छोटे हिस्सेको १ समय कहते हैं, समयसे छोटा काल नहीं होता अर्थात् समयका टुकड़ा नहीं किया जा सकता।

है। इसमें सभी मनुष्य गुलाबी रंगके कपड़े पहनते हैं।

गुलाबा (फा॰ पु॰) एक तरहका पात्र।

गुलाबी (फा॰ वि॰) १ गुलाबके रंगका। २ गुलाब सम्बन्धी। ३ गुलाब जलसे सुगन्धित किया हुवा। ४ थोड़ा हलका। स्त्री॰) ५ मदरा पीनेका पात्र। ६ एक तरहकी मिठाई जो गुलाबको पखड़ियोंसे बनाई जाती है। ७ एक तरहकी मैना। यह मध्य एसिया और युरोपमें पाई जाती है, यह समूहके समूह एक साथ रहती है। ग्रीष्म कालमें यह पर्वतों पर चली जाती है। यह चार पांच अण्डे एक समय देती है।

गुलाम (अ॰ पु॰) १ खरीदा हुआ भृत्य। २ साधारण सेवक। ३ गंजीफेका एक रंग। ४ ताशके पत्तोंमेंसे एक। यह दहलेसे बड़ा और बेगमसे छोटा होता है।

गुलामअली—एक मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने 'शाह आलमनामा" नामका दिल्लीश्वर शाहआलम् और उसके राजत्व कालका इतिहास बनाया है।

गुलामकादर खाँ—एक रोहिला सर्दार। ये जाविता खाँके पुत्र और रोहिला सर्दार नाजिब उद्दौलाके पौत्र थे। यह सम्राट् शाह आलमके दरबारमें रहते थे। अन्तमें विश्वासघातकतासे इसने रोहिलाओंको सम्राट्की आंखें निकाल लेनेका आदेश किया था। १७८८ ई॰के १० वीं अगस्तको वह जघन्य आदेश प्रतिपालन किया गया। दिल्लीश्वरके प्रति ऐसा अत्याचार करनेके बाद गुलामकादरने मुहम्मद शाहके पौत्र और अहम्मद शाहके पुत्र 'बेदर बकत' को दिल्लीके तखत पर बैठाया।

बाद एक दिन वे अपने राज्य घोषगढ़की ओर जा रहे थे, रास्तेमें महाराष्ट्रसैन्य उन पर टूट पड़े। उन्होंने गुलामकादरके नाक, कान, हाथ, पांव खण्ड खण्ड कर दिल्ली भेज दिये। थोड़े समयके बाद गुलामका देहान्त हो गया। आगरा जिलाके अन्तर्गत आउल नामक स्थान में गुलामकी कब्र है।

गुलाम कुतवुद्दीन शाह—इलाहाबादवासी एक प्रसिद्ध कवि। यह शाह मुहम्मद फकीरके पुत्र थे। कवितामें इन्होंने 'मुसीबत्' नामसे आत्मपरिचय दिया है। १७२५ ई॰के २८ वीं अगस्तको ये पैदा हुए थे और मक्का जाकर १७७३ ई॰में मरे। इनके बनाये हुए "नान्‌कालेता" और 'नानहक्युयो" ग्रन्थमें प्रश्नुत्तर रूपसे लिखा गया है।

गुलाम-गर्दिश (फा॰ स्त्री॰) १ एक तरहकी छोटी दीवार जो परदेका काम देती है। यह इस तरह बनी रहती है कि स्त्रियां आँगनमें घूम फिर सकती है और बाहरके मनुष्यकी दृष्टि उनपर नहीं पड़ सकती है। २ नौकरोंके रहनेके लिये महलके चारो ओरका बरामद।

गुलाम नबो—युक्तप्रान्तके हरदोई जिलेमें बिलग्रामके,रहनेवाले एक हिन्दी कवि। वह मुसलमान थे। उपनाम रसलीन रहा। सिवा अरबी और फारसीमें विद्वान् होनेके सैयद गुलाम नबी हिन्दी उर्दू भी खूब जानते थे। उन्होंने (१६१७ ई॰) अङ्गदर्पण नख सिख और (१७४१ ई॰) रसप्रबोध नामक हिन्दी भाषाका अलङ्कार ग्रन्थ लिखा।

गुलाम महम्मद—टीपू सुलतानके नाती। लगभग १८०१ ई॰में ये अङ्गरेजके हाथसे बन्दी हुए थे। इसके बाद १८७१ ई॰में इन्हें ब्रटिश गवर्मेण्टसे नाइट कमाण्डर ओफ दी ष्टार अफ इण्डिया (K. C. S. I)की उपाधि मिलो थी। ११वीं अगस्त १८७१ ई॰को ७८ वर्षकी अवस्थामें इनका देहान्त हुआ।

गुलाम हुसैन खाँ—१ एक मुसलमान ऐतिहासिक और विख्यात पण्डित। इन्होंने १७८० ई॰में जोनस उदनी साहबके अनुरोधसे "रियज उस सलातीन" नामक बङ्ग देशका इतिहास पारसी भाषामें रचना की थी। इनकी बुद्धिमता देख मुग्ध हो नवाब इब्राहिम खाँने इन्हें निजामत अदालतके एक सभ्यपद पर नियुक्त किया था।

२ नवाब सैयद गुलामहुसेन नामसे प्रसिद्ध। इनका दूसरा नाम तिवा तिवाई था। ये हिदायत अली खाँ बहादुर आसदजङ्गके पुत्र थे। पहिले ये मुर्शिदाबादके नवाबके समय अमीर रूपसे गण्य रहे, इसके बाद इष्ट इण्डिया कम्पनीके समयमें भी बड़े लाटसे सम्मानित हुए। १७८० ई॰में इन्होंने "सियार उल मुताखिरीन्" नामक पारसी भाषामें मुसलमान नवाबोंका इतिहास प्रणयन किया था। इस ग्रन्थमें उस समयके बङ्गकी अवस्था अति सुन्दर रूपसे वर्णित हुई है। बङ्गके ऐतिहासिक मात्र ही इस ग्रन्थका आदर किया करते हैं, इसमें अङ्गरेज

नयसे मूर्तिक भी माना गया है। संसारी-जीव द्रव्य कर्म आदिका और चैतन्यरूप राग आदि भाव-कर्मोंका कर्त्ता है तथा सुखदुःखरूप पौद्गलिक कर्मोंके फलोंका भोक्ता है। हम जितने भी जीवों वा प्राणियोंको देखते हैं, वे समस्त संसारी जीव हैं। संसारी जीवोंके साधारणतः दो भेद हैं—१ संज्ञी और २ असंज्ञी अथवा १ त्रसजीव और २ स्थावर जीव। संज्ञी—मन-सहित जीवको संज्ञी कहते हैं। संज्ञी जीव पञ्चेन्द्रिय ही होता है। असंज्ञी—मन-रहित जीवको असंज्ञी कहते हैं।

त्रसजीव—जो त्रस नामकर्मके उदयसे द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, और पञ्चेन्द्रियोंमें जन्म लेते हैं, उन्हें त्रसजीव कहते हैं। हम जितने भी प्राणियोंको देखते हैं, उनमेंसे पृथ्वी, अप, तेज, वायु और वनस्पति (वृक्षादि) इन पांच प्रकारके स्थावर जीवोंके सिवा बाकीके समस्त जीव त्रस हैं। त्रस जीवोंके कमसे कम स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियां तो होती ही हैं।

स्थावरजीव—स्थावर नामकर्मके उदयसे पृथिवी, अप, तेज, वायु और वनस्पतियोंमें जन्म लेनेवाले जीवोंको स्थावर जीव कहते हैं। स्थावर जीव पांच ही प्रकारके होते हैं।

मुक्तजीव—मुक्त-जीव उन्हें कहते हैं जो संसारमें जन्म-मरण नहीं करते अर्थात् जिनको संसारसे मुक्ति हो गई है। मुक्त-जीव कर्म-रहित हैं और सर्वदा अपने शुद्ध चिद्रूपमें लीन रहते हैं, उनके ज्ञानका पूर्ण विकाश हो चुका है अर्थात् वे केवलज्ञान द्वारा विश्वके त्रिकालवर्त्ती समस्त पदार्थोंको युगपत् जानते हैं। मुक्त-जीव कभी भी संसारमें लौटते नहीं; वे परमात्मा हैं और सिद्ध कहलाते हैं। ये मुक्त-जीव संसार-पूर्वक ही होते हैं, इसलिए संसारी जीवका उल्लेख पहले किया गया और मुक्त-जीवका पीछे।

(२) अजीवतत्त्व—जिसमें जीवके लक्षण न पाये जांय अर्थात् जो अचेतन अर्थात् प्राणरहित जड़ हो, उसे अजीव कहते हैं। अजीवद्रव्यके प्रधानतः पांच भेद हैं—१ पुद्गलद्रव्य, २ धर्मद्रव्य, ३ अधर्मद्रव्य, ४ आकाशद्रव्य और ५ कालद्रव्य। इन पांच द्रव्योंमें जीवको शामिल करनेसे द्रव्यके छः भेद होते हैं। इनमें जीव और पुद्गलद्रव्य क्रिया सहित हैं और शेष चार द्रव्य क्रिया-रहित हैं। जीव और पुद्गलके स्वभावपर्याय और विभावपर्याय दोनों होती हैं; किन्तु शेष चार द्रव्योंके केवल स्वभावपर्याय ही होती है। जीव-द्रव्यका विवरण पहले कहा जा चुका है; अब पुद्गल आदिका वर्णन करेंगे।

पुद्गलद्रव्य—जैन शास्त्रोंमें पुद्गलद्रव्यका लक्षण इस प्रकार लिखा है, "स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः" अर्थात् जिसमें स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण ये चार गुण विद्यमान हों, वही पुद्गल है। यों तो पुद्गलद्रव्य अनन्त गुणोंका समुदाय है, किन्तु ऊपर कहे हुए चार गुण ऐसे हैं जो समस्त पुद्गलोंमें सर्वदा पाये जाते हैं एवं पुद्गलके सिवा और किसी भी द्रव्यमें नहीं पाये जाते। इसीलिये ये चारों गुण पुद्गलद्रव्यके आत्मभूतलक्षणमें गर्भित हैं। यद्यपि समस्त पुद्गलोंमें उक्त चार गुण नित्य पाये जाते हैं, तथापि वे सदा एक समान नहीं रहते। स्पर्शगुणका कदाचित् कोमल, कदाचित् कठिन, शीत, उष्ण, लघु, गुरु, स्निग्ध और रूक्षमें परिणमन होता है। ये स्पर्श-गुणकी अर्थ-पर्यायें हैं। इसी प्रकार तिक्त, कटु, अम्ल, मधुर और कषाय ये रसके मूल भेद हैं। सुगन्ध और दुर्गन्ध ये दो गन्धके भेद हैं तथा नील, पीत, श्वेत, श्याम और लाल ये पांच वर्णगुणके भेद हैं। इस प्रकार उक्त चार गुणोंके मूल-भेद बीस और उत्तर-भेद यथा सम्भव संख्यात, असंख्यात और अनन्त हैं। पुद्गलद्रव्यकी अनन्त पर्यायें हैं, जिनमें दश पर्यायें मुख्य हैं। यथा—१ शब्द, २ बन्ध, ३ सौक्ष्म्य, ४ स्थौल्य, ५ संस्थान, ६ भेद, ७ तम, ८ छाया, ९ आतप और १० उद्योत। शब्द-शब्दके दो भेद हैं, एक भाषात्मक और दूसरा अभाषात्मक। भाषात्मक शब्द भी दो प्रकारका है, एक अक्षरात्मक और दूसरा अनक्षरात्मक। अक्षरात्मकके संस्कृत, प्राकृत, देशभाषा आदि अनेक भेद हैं। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय आदिकी भाषा तथा केवलज्ञानके धारक अरहन्तदेवकी दिव्यध्वनि अनक्षरात्मक होती है। दिव्यध्वनि पहले अरहन्तके सर्वाङ्गसे निकलती है और पीछे अक्षररूप होती है, इसलिए वह अनक्षरात्मक है। अभाषात्मक शब्दके दो भेद हैं,

होती है। कोई कोई इसके बीजोंको माला बना कर पह-नते हैं।

गुलेटन (हिं॰ पु॰) मसाला रगड़नेका कुरंड प्रस्तरका छोटा खण्ड।

गुलेड़गढ़—बम्बई प्रान्तके बीजापुर जिलेमें बादामी तालुकका नगर। यह अक्षा॰ १६° ३′ उ॰ और देशा॰ ७५° ४७′ पू॰में बादामीसे ८ मील उत्तर पूर्व पड़ता है। लोक संख्या प्रायः १६७८६ है। सूती और रेशमी कपड़े का यहां काम होता है। इसके पड़ोसमें पत्थरकी कीमती खानें हैं। १८६७ ई॰को मुनिसपालिटी हुई। १५८० ई॰को २य इब्राहीम आदिलके समय किला बना था। वर्तमान नगर १७०६ ई॰को एक सूखे फ़्रदकी जगह निर्मित हुआ। १७५० ई॰को राश्तिआलोंके एक अफसरने उसे लूटा था। १७८७ ई॰को टीपू सुलतानने उसे अधिकृत किया। मराठोंके एक बार फिर लूटने पर कुछ दिन तक नगर खाली पड़ा रहा। परन्तु देसाईने गुलेड़गढ़ दोबारा आबाद किया था। नरसिंहने जब बलवा किया, यह फिर लूटा और खाली हुआ। १८१८ ई॰को जनरल मुनरोने देसाई द्वारा अधिवासियोंका लौटनेका प्रलोभन दिया था। १८२६ ई॰को गुलेड़गढ़ अंगरेजोंके हाथ लगा।

गुलेराना (अं॰ पु॰) १ सुन्दर फूल। २ एक तरहका पुष्प जिसका मध्यका भाग लाल और ऊपरका भाग पीला होता है।

गुलेल (फा॰ स्त्री॰) पक्षी मारनेका कमान या धनुष, जिसमें मट्टीकी गोलियां चलाई जाती हैं।

गुलेलची (हिं॰ पु॰) जो गुलेल चलानेमें निपुण हो।

गुलेला (फा॰ पु॰) १ कमान या धनुषमें चलाए जानेको मिट्टीकी गोली जिससे चिड़िया प्रभृति मारी जाती है। २ गुलेल।

गुलेंदा (हिं॰) गुलेंदा देखो।

गुलोह (फा॰ स्त्री॰) गुड़ूच।

गुलौठी—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिले और तहसीलका नगर। यह अक्षा॰ २८° ३५′ उ॰ और देशा॰ ७७° ४८′ पू॰ मेरठकी सड़क पर पड़ता है। आबादी कोई ७२०८ है। कहते हैं कि वह नगर मेवाती या गहलोत राजपूतोंका बसाया हुआ है। यहां प्रधानतः सैयद और बनिये रहते हैं। कुछ दिन हुए मिहरवां अली नामक सैयदने कई मकान, एक पुल, एक बड़ी मस्जिद, अरबी और फारसीकी पाठशाला तथा काली नदी तक पक्की सड़क बना गुलौठीकी बड़ी उन्नति की। १८५६ ई॰की २०वीं धाराके अनुसार शहरका इन्तजाम होता है। व्यापारकी चलफिर रहनेसे लोग मजेमें हैं।

गुलौर (हिं॰ पु॰) वह स्थान जहां रस पकानेका भट्ठा हो।

गुल्ला (हिं॰ पु॰) लताकी तरह फैलनेवाला एक तरहका ताड़ यह सुन्दरवनके पानीके किनारे, चटगांव, बरमा आदि देशोंमें पाया जाता है। गोलफल नामके इसके पुरातन फल बहुत बड़े बड़े होते हैं, ये इतने हलके कि समुद्रमें बहुत दूर तक बहते बहते चले जाते हैं। इसके पत्ते छप्पर बनानेके काममें आते हैं।

गुल्ला—बामियानके निकटवर्ती एक प्राचीन नगर। जङ्गीश खांने इस नगरको नष्ट कर दिया। यहां बहुतसे गुहामन्दिर और पहाड़ काट कर घर बना हुआ है।

गुलुलिया—भारतकी एक जाति। कोई इन्हें बेदिया लोगोंकी एक शाखा बतलाते हैं। यह पशु पक्षियोंको मार, नाना प्रकार औषधियां बेच, भीख मांग और बन्दरका नाच दिखला जीविका निर्वाह करते हैं। गयाके गुलुलियोंमें कोई कोई कहता कि रुक्मिणी नामकी उनमें एक आदि रमणी रहीं। उन्होंने मोहबाव नामक एक पुत्र प्रसव किया। मोहबावको फिर सात लड़के हुए। इन्होंमें एक गुलुलिया भी थे। उन्होंने तालके पेड़से कूद अपने अपने बलकी परीक्षा ली। एक तो फांद करके निकल गया, परन्तु दूसरा गिर पड़ा। मोहबावाने यह देख उनको कूद फांदसे विरत किया था। गुलुलियाको यह देख सुन करके आत्माभिमान हुआ कि उनके भाई ताड़ी बेचते फिरते थे। वह आत्मीय स्वजनोंको छोड़ बाहर निकल पड़े उसी रोजसे इनके वंशधर नाना स्थानोंमें घूमा फिरा करते, अपना कोई निर्दिष्ट वासस्थान नहीं रखते।

गुलगुलिया लोग अपनेको हिन्दू कहते हैं। परन्तु उनके देव देवी स्वतन्त्र हैं। पटनेके गुलगुलिया बख्तावर, राम ठाकुर, जगद् माई, बरन, सेटी, गोरैया, बन्दी,

में स्पर्शादि गुणोंसे निरन्तर परिणमन होने वालेको अणु कहते हैं और अणुका ही अपर नाम परमाणु है। प्रत्येक परमाणु षट्कोण आकारयुक्त, एक प्रदेशावगाही, स्पर्शादि गुण-युक्त और अखण्ड (जिसका खण्ड न हो सके) द्रव्य है। यह अत्यन्त सूक्ष्म होनेसे आत्मा, आत्ममध्य और आत्मान्त है, तथा इन्द्रियोंसे अगोचर और अविभागी है। स्कन्ध—जो स्थूलताके कारण ग्रहण निक्षेपण आदि व्यापारको प्राप्त हो, उसे स्कन्ध कहते हैं। यद्यपि द्वयणुक आदि स्कन्धोंमें ग्रहण निक्षेपण आदि व्यापार नहीं हो सकता, तथापि रूढिवशात् जैसे गमनक्रियारहित (बैठी हुई) गायको "गौ" कहते हैं, उसी प्रकार द्वयणुक आदि स्कन्ध ग्रहण निक्षेपणादि व्यापारवान् न होने पर भी स्कन्ध कहलाते हैं। शब्द, बन्ध, सौक्ष्म्य आदि पर्यायें स्कन्धोंको ही होती हैं न कि अणुको। पुद्गल शब्दकी निरुक्ति जैनाचार्योंने इस प्रकार की है—"पूरयन्ति गलयन्तीति पुद्गलाः" अर्थात् जो पूरे और गले, उसको पुद्गल कहते हैं। यह अर्थ पुद्गलके अणु और स्कन्ध इन दोनों भेदोंमें व्यापक है। अर्थात् परमाणु स्कन्धोंसे मिलते और जुदे होते हैं, इसलिए उनमें पूरण और गलन दोनों धर्म मौजूद हैं। स्कन्ध अनेक पुद्गलोंका एक समूह हैं, अतः पुद्गलोंसे अभिन्न होनेसे उसमें भी पुद्गल शब्दका व्यवहार होता है।

धर्म और अधर्मद्रव्य—धर्म और अधर्म शब्दसे यहां पाप और पुण्य नहीं समझना चाहिये। परन्तु यहां धर्म और अधर्म शब्द द्रव्यवाचक हैं न कि गुणवाचक। पुण्य और पाप आत्माके परिणाम विशेष है, अथवा 'जो जीवोंको संसार दुःखसे मुक्त करे वह धर्म और जो इसके विपरीत कार्य करे, वह अधर्म" है ऐसा अर्थ भी यहां न लगाना चाहिये। यहां पर धर्म और अधर्म शब्द दो अचेतन द्रव्योंके वाचक है। ये दोनों ही द्रव्य 'तिलमें तेल'की भांति सम्पूर्ण लोक (विश्व)में व्यापक है। जैन ग्रन्थोंमें धर्मद्रव्यका स्वरूप इस प्रकार लिखा है—

धर्मास्तिकाय वा धर्मद्रव्यमें स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण और शब्द नहीं हैं इसलिए वह अमूर्त्तिक है, समस्त लोकाकाशमें व्याप्त है, अखण्ड, विस्तृत और असंख्य प्रदेशयुक्त है। यह धर्मद्रव्य अपने स्वरूपसे च्युत न न होनेके कारण नित्य है; गतिक्रियामें परिणत जीव एवं पुद्गलको उदासीन सहायक होनेसे कारणभूत है और किसीसे उत्पन्न नहीं हुआ, इसलिए अकार्य है। जिस प्रकार जल स्वयं गमन न करता हुआ तथा दूसरोंको चलानेमें प्रेरक न होता हुआ भी अपनी इच्छासे गमन करनेवाले मत्स्य आदि जलचर जीवोंके गमनमें उदासीन सहकारी कारणमात्र है, उसी प्रकार धर्मद्रव्य भी स्वयं गमन न करता हुआ और परके गमनमें प्रेरक न होता हुआ स्वयं गमन करते हुये जीव और पुद्गलोंको उदासीन अविनाभूत सहकारी मात्र है। तात्पर्य यह है कि, जीव और पुद्गलद्रव्यको क्रियामें जो सहायक हो वह धर्मद्रव्य है।

जिस प्रकार धर्मद्रव्य जीव और पुद्गलोंको क्रियामें सहायक है, उसी प्रकार अधर्मद्रव्य उनके अवस्थानमें सहकारी है। जैसे पृथिवी स्वयं पहलेसे ही स्थितिरूप है और परकी स्थितिमें प्रेरकरूप नहीं है किन्तु स्वयं स्थितिरूपमें परिणत हुए अश्व आदिको उदासीन अविनाभूत सहकारी कारण मात्र है, उसी प्रकार अधर्म द्रव्य भी स्वयं पहले हीसे स्थितिरूप परके स्थितिपरिणाममें प्रेरक न होता हुआ भी स्वयमेव स्थितिरूपमें अवस्थित जीव और पुद्गलोंको सहकारी कारणमात्र है।

यहां यह कहना आवश्यक है कि, जिस प्रकार गतिपरिणामयुक्त पवन ध्वजाके गतिपरिणामका हेतुकर्त्ता है, उस प्रकार धर्मद्रव्यमें गति-हेतुत्व न समझना चाहिये। कारण धर्मद्रव्य निष्क्रिय होनेसे गतिरूपमें परिणमन नहीं करता, और जो स्वयं गति-रहित है, वह दूसरेके गतिपरिणामका हेतुकर्त्ता नहीं हो सकता। धर्मद्रव्य सिर्फ 'मत्स्यको जलकी भांति' जीव और पुद्गलके गमनमें उदासीन सहकारी मात्र है। इसी प्रकार अधर्मद्रव्यको भी निष्क्रिय और जीव और पुद्गलोंकी स्थितिमें उदासीन कारणमात्र समझना चाहिये।

आकाशद्रव्य—जो जीव और पुद्गल आदि सम्पूर्ण पदार्थोंको युगपत् अवकाश वा स्थान देता है, उसे आकाशद्रव्य कहते हैं। यह आकाशद्रव्य सर्वव्यापी अखण्ड और एक द्रव्य है। यद्यपि समस्त ही सूक्ष्मद्रव्य

कटु, अम्लरसयुक्त, तीक्ष्ण, उष्ण, विदाही तथा रूक्ष द्रव्य सेवन, क्रोध, अतिरिक्त मद्यपान, रौद्र एवं अग्निके उत्ताप, लगुड आदिके अभिघात, आम अर्थात् विदग्ध अजीर्ण और किसी भी दूसरे कारणसे रक्त बिगड़ने पर पित्तज गुल्म उठता है। पित्तजन्य गुल्मरोगमें ज्वर, पिपासा, शरीरकी अवसन्नता एवं रक्तवर्णता, घर्म उद्गम और भुक्त द्रव्यकी परिपाक अवस्थामें अतिशय वेदना होती है। यह व्रण जैसा दाहयुक्त और स्पर्शासह भी रहता है।

शीतल, गुरु एवं स्निग्ध द्रव्य सेवन, तृप्ति पूर्वक परिपूर्ण भोजन और दिवा निद्रासे श्लैष्मिक गुल्म निकलता है। वातज, पित्तज तथा श्लैष्मिक गुल्मके जो कारण कहे गये हैं, उनके समुदायसे सान्निपातिक गुल्मकी उत्पत्ति है।

श्लैष्मिक गुल्ममें रोगीको समझ पड़ता, मानो उसके सारे शरीरमें कोई तर कपड़ा लिपटा है। शीतज्वर, देहका भारीपन तथा अवसन्नता, वमन उद्वेग, खांसी, अरुचि अग्निमान्द्य और थोड़ा दर्द प्रभृति अपरापर समस्त श्लेष्मज लक्षण देख पड़ते हैं।

सान्निपातिक गुल्म पत्थरके टुकड़े जैसा कड़ा और उठा हुआ रहता है। उसमें बहुत पीड़ा और जलन होती है। शीघ्र विदाह, मनकी व्याकुलता, शरीरका दुबलापन, अग्निवैषम्य और कमजोरी आ जाती है। वह असाध्य है।

नवप्रसूता (प्रसवके बाद जिसकी अग्नि, बल, वर्ण, मांस आदि स्वाभाविक नहीं होता), आमगर्भ प्रसवा (नौ महीने पूरे होनेसे पहले ही जो प्रसव करती है) और ऋतुमती स्त्री यदि किसी प्रकार अहितजनक द्रव्य भोजन कर लेती उसका वायु रक्तद्वारा गर्भाशयमें गुटिकाकार गुल्मरोग उत्पन्न करता है। उसमें जलन और दर्द होता है। लक्षण लगभग पित्तके गुल्म जैसा है। सिवा इसके रक्तज गुल्ममें गर्भके समस्त लक्षण अर्थात् ऋतु न होना, मुंह पीला पड़ना, स्तनके अग्र भागका कालापन और दोहद प्रभृति देख पड़ते हैं। परन्तु गर्भजैसे हस्तादि अङ्ग प्रत्यङ्ग सञ्चालनपूर्वक निःशूल स्पन्दित होता है, रक्तज गुल्म वैसा नहीं करता। यह गुल्म वा रक्त पित्त बहुत दिन बाद वेदनाके साथ गर्भाशयमें स्पंदित होता है। दश मास बीत जाने पर वैद्योंको उसकी चिकित्सा छोड़ देना चाहिये।

जो गुल्म पत्थरके टुकड़े जैसा कड़ा, ऊंचा, वेदना तथा दाहयुक्त और मलकी व्याकुलता, शरीरकी क्षयता, अग्निवैषम्य एवं बल ह्रास करनेवाला हो, असाध्य समझा जाता है। वह गुल्म भी असाध्य है, जो क्रमान्वयसे सञ्चित हो सारे पेटमें व्याप्त होता, धात्वन्तरके साथ मिल करके शिराजालमें लिपटता एवं कछुएकी तरह उठता और रोगीको दुर्बलता, अरुचि, हृल्लास, खांसी, कै, ग्लानि, बुखार, प्यास, तन्द्रा तथा प्रतिश्याय उत्पन्न करता है।

गुल्मरोगीको बुखार, दमा, कै और दस्त तथा दिल, तोंद, हाथ एवं पांवमें शोथ होनेसे फिर जीनेकी आशा नहीं रहती। जिस गुल्मरोगीको दमा, शूल, अन्नका विद्वेष और दौर्बल्य उपस्थित होता तथा ग्रन्थि जैसा गुल्म एकाएक विलुप्त हो जाता उसके भी जीनेकी उम्मेद कम होती है।

वातजन्य गुल्म रोगमें जुलाबके लिये रेंड़ीका तेल या दूधके साथ हरें पीना और चिकना भपारा लेना चाहिए। मञ्जीठ २ माशा, कुट २ माशा और केवड़ेकी नौका क्षार ४ माशा रेंड़ीके तेलमें मिला करके पीनेसे वातज गुल्म विनष्ट होता है। वात गुल्मके रोगीको तीतर, मोर, मुर्गा, बगला और वर्तक पक्षीके मासका रसा; घी, शालि चावलका भात और शराब देते हैं।

पित्तज गुल्ममें विरेचनके लिये त्रिफलाके क्वाथमें त्रिवृत् चूर्ण अथवा शक्कर और शहदके साथ कमला गुड़ीका चूर्ण सेवन करना चाहिये। दाख या गुड़के साथ हर खानेसे पित्तज गुल्म दब जाता है। वातज गुल्मको जो औषध बतलायी गयी है, श्लैष्मिक गुल्ममें भी प्रयोज्य हैं। कफघ्न क्रियासे भी उसका उपशम होता है।

हींग, पीपल, धनिया, जीरा, वच, चीत, आकनादि, शटी, अम्ल वेतस, सामुद्रलवण, विटलवण, सैन्धव, त्रिकटु, यवक्षार, सर्जिक्षार, अनार, हर, पुष्करमूल, खैखड, हवुषा और काला जीरा सबका बराबर बराबर

युक्त हो कर रमणीय रूपका अवलोकन करना), १२ स्पर्शनक्रिया (प्रमादवश वस्तुके स्पर्शनके लिए प्रवर्तन करना), १३ प्रात्ययिकी क्रिया (विषयभोगके नये नये कारण एकत्र करना), १४ समन्तानुपातक्रिया (स्त्रीपुरुषों वा पशुओंके बैठने सोनेके स्थानमें मलमूत्रादि क्षेपण करना), १५ अनाभोगक्रिया (बिना देखी वा शोधी भूमि पर बैठना वा सोना), १६ स्वहस्तक्रिया (दूसरेके द्वारा होनेवाली क्रियाको स्वयं करना), १७ निसर्गक्रिया (पापोत्पादक प्रवृत्तियोंको उत्तम समझना वा उसके लिए आज्ञा देना), १८ विदारणक्रिया आलस्यसे उत्कृष्ट क्रिया न करना वा दूसरेके किये हुए पापाचरणको प्रकाश करना), १९ आज्ञाव्यापादिकी क्रिया (चारित्रमोहके उदयसे परमागम वा सर्वज्ञकथित शास्त्रोंकी आज्ञाके अनुसार चलनेमें असमर्थ हो कर अन्यथा प्रवर्तन करना), २० अनाकांक्षाक्रिया (प्रमादसे वा अज्ञानतासे परमागम वा सर्वज्ञ-कथित विधिका अनादर करना), २१ प्रारम्भक्रिया (छेदन, भेदन, ताड़न आदि क्रियामें तत्पर होना और अन्यके द्वारा उक्त क्रियाओंके किए जाने पर हर्षित होना), २२ पारिग्राहिकी क्रिया (परिग्रहकी रक्षाके लिए प्रवृत्ति रखना), २३ मायाक्रिया (ज्ञान, दर्शन आदिमें कपटता-युक्त उपाय करना), २४ मिथ्यादर्शनक्रिया (कोई मिथ्यात्व वा सर्वज्ञ-कथित विधानके विरुद्ध कार्य करना वा करनेवालेको उस कार्यमें दृढ़ कर देना) और २५ अप्रत्याख्यानक्रिया (संयमका घात करनेवाले कर्मोंके उदयसे संयमरूप प्रवर्तन नहीं करना)। ये पचीसों क्रियाएं साम्परायिक-आस्रव होनेमें कारण हैं। इस आस्रवमें तीव्रभाव, मन्दभाव, ज्ञातभाव, अज्ञातभाव, अधिकरण और वीर्यकी विशेषतासे न्यूनाधिक्य भी होता है।

बाह्य और आभ्यन्तर कारणोंसे बढ़े हुये क्रोधादिसे जो तीव्ररूप परिणाम होते हैं, उनको तीव्रभाव कहते हैं। इसी प्रकार मन्दरूप भावोंको मन्दभाव, जीवोंके घातमें ज्ञानपूर्वक प्रवृत्तिको ज्ञातभाव और मद्यपानादिसे वा इन्द्रियोंको मोहित करनेवाले मदसे असावधानतापूर्वक प्रवृत्तिको अज्ञातभाव कहते हैं। जिसके आधार पुरुषोंका प्रयोजन हो, उसे अधिकरण और द्रव्यकी शक्तिके विशेषत्वको वीर्य कहते हैं। इनकी न्यूनाधिकता होनेसे आस्रवमें भी न्यूनाधिक्य होता है।

आस्रवके अधिकरण जीव और अजीव दोनों हैं। जीवाधिकरणके मुख्यत: १०८ भेद हैं, यथा—संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ इन तीनोंका मन वचन-कायरूप तीनों योगोंसे गुणा करनेसे ९, इनको कृत, कारित और अनुमोदना इन तीनोंसे गुणा करनेसे २७, इनको क्रोध, मान, माया और लोभ इन चार कषायोंसे गुणा करनेसे १०८*। हिंसा आदि करनेके लिए उद्यमरूप भावोंका होना संरम्भ कहलाता है। हिंसादि साधनोंका अभ्यास करना और उनकी सामग्री मिलाना, समारम्भ है तथा हिंसादिमें प्रवृत्त हो जाना, आरम्भ कहलाता है। स्वयं करनेको कृत दूसरेसे करानेको कारित और दूसरेके किये हुए कार्यकी प्रशंसा करनेको अनुमोदना कहते हैं। इनको भी प्रत्येक कषायके अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और संज्वलन इन चार भेदोंसे गुणा किया जाय तो ४३२ भेद होते हैं। इस प्रकार जीवोंके परिणामों वा हृदयगत भावोंके भेदसे आस्रवोंके भी भेद हुआ करते हैं। अजीवाधिकरण—इसके भी चार भेद हैं, १ निर्वर्त्तनाधिकरण, २ निक्षेपाधिकरण, ३ संयोगाधिकरण और ४ निसर्गाधिकरण। रचना करने वा उत्पन्न करनेको निर्वर्तनाधिकरण कहते हैं। यह दो प्रकारका है—१ देहदुःप्रयुक्तनिर्वर्तनाधिकरण (शरीरसे कुचेष्टा करना) और २ उपकरणनिर्वर्तनाधिकरण (हिंसाके उपकरण शस्त्रादिकी रचना करना)। अथवा इस प्रकार भी दो भेद हैं—१ मूलगुणनिर्वर्त्तना (शरीर, मन, वचन और श्वासोच्छ्वासोंका उत्पन्न करना, और २ उत्तरगुणनिवर्तना। काठ, मृत्तिका पाषाणादिसे मूर्ति आदिकी रचना करना वा चित्रपटादि बनाना)। निक्षेप रखनेको कहते हैं, इसके चार भेद हैं—१ सहसानिक्षेपाधिकरण (भय आदिसे अथवा दूसरा कार्य करनेके लिए शीघ्रतासे किसी भी चीजको सहसा पटक देना), २ अनाभोगनिक्षेपाधिकरण (शीघ्रता न होने पर भी वहां 'कीटादि जीव हैं या

* जप मालमें जो १०८ मणिया होती हैं, वे इन्हीं १०८ आरम्भ जनित पापास्रवोंको दूर करनेके लिए जपी जाती हैं।

अष्ठीला, यकृत्, आनाह, कामला, पाण्डु, ज्वर और शूल नाश होते हैं।

गुल्मवल्ली (सं॰ स्त्री॰) गुल्मप्रधाना वल्ली। सोमलता।

गुल्मशार्दूलरस (सं॰ पु॰) गुल्मस्य शार्दूल इव नाशको रस। एक तरहकी औषध। पारा, गन्धक, लौह, गुग्गुल, पोप्पल, त्रिवृत्, वाला, सोंठ, जीरा, धनियां और शठी प्रत्येकके आठतोले और जयपालके बारह तोले सभोंको एकत्र करके घृतके साथ मर्दन कर ६ रत्ती परिमाणकी गोली बनाते हैं। इसीको गुल्मशार्दूलरस कहते हैं। अदरकके रस और उष्ण जलके साथ यदि उक्त औषध सेवन की जाय तो प्लीहा, यकृत्, गुल्म, कामला, उदरी, शोथ, वातिक, पैत्तिक, तथा श्लैष्मिक गुल्म नाश होते हैं। रक्तज गुल्मरोग भी इससे दूर हो जाता है। गहनानन्दनाथ नामक किसी योगीने इस औषधका आविष्कार किया था। (रसेंद्रसार॰)

गुल्मशूल (सं॰ पु॰) गुल्ममूलकं शूलमत्र। शूलरोगविशेष। शूल देखो।

गुल्मिक (सं॰ पु॰) रक्तकरवीर, एक तरहका लालकनेर।

गुल्मिन् (सं॰ त्रि॰) गुल्मोऽस्त्यस्याः गुल्म-इनि। गुल्मरोगयुक्त, जिसको गुल्मरोग हुआ हो।

गुल्मिनी (सं॰ स्त्री॰) गुल्मोऽस्त्यस्याः गुल्म-इनि ततः ङीप्। विस्तृता लता, लम्बी लता। इसका नामान्तर—वीरुत्, उलुप, विरुधा, अवरुत् है।

गुल्मी (सं॰ स्त्री॰) गुल्मोऽस्त्यस्य गुल्म-अर्श आदित्वात् अच् ततो गौरादित्वात् ङीप्। १ आमलकी, आँवला। २ इलायची। ३ वस्त्रनिर्मित गृह, तम्बू, खेमा। ४ फलवृक्षविशेष, हरफरी। ५ गृहनखी वृक्ष। ६ कण्टकपालीवृक्ष, हिजन गरनाका पेड़।

गुल्मुहम्मद खाँ—दिल्लीके एक राजकवि। इनके बनाये हुए ग्रन्थोंमेंसे जह्वर उल सुयाजिन नामक काव्य ग्रन्थ ही सर्वापेक्षा उत्कृष्ट है। कविताके प्रभावसे इन्हें "नातिक" की उपाधि मिली थी। १८४८ ई॰को इनका देहान्त हुआ।

गुल्य (सं॰ त्रि॰) गुडं तद्वत् रसं अर्हति गुड-यत् डस्य लत्वं। मधुर, मीठा।

गुल्रिह—अयोध्याके उनाव जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा॰ २६° २४ उ॰ और देशा॰ ८१° १' पू॰में अवस्थित है। प्रायः पाँच सौ वर्ष पहले गुलारसिंह ठाकुरसे यह नगर स्थापित किया गया था। यहां एक विद्यालय है। जिसमें गवर्मेंटसे भी कुछ सहायता मिलती है।

गुल्लर (हिं॰ पु॰) दैनिक आय रखनेका सन्दूक या थैली।

गुल्लर (हिं॰ पु॰) गूलर देखो।

गुल्लर—रिचौड़में रहनेवाली एक जाति। इनमेंसे अड़वी गुल्लर और गधा गुल्लर ये ही दोनों विभाग स्वतन्त्र हैं। इसके सिवा कई एक विभाग और भी देखे जाते हैं। ये हैदराबाद और पूना जिलेके ग्रामसमूहमें तथा कुछ वर्गके निकटवर्ती सेलर ग्राममें रहते हैं। ये अपनेको 'गोल' या 'हनमगोल' कहते हैं।

अड़वी गुल्लर जातिके पुरुष ग्राम तथा वनके नाना स्थानोंमें जा कर देशीय कविराजोंके लिये फल फूल एवं औषधकी लता लाया करते हैं, और उनकी स्त्रियां घर घर भिक्षा मांगती फिरती हैं। इनकी शारीरिक गठनप्रणाली राजपूतानावासियोंके सदृश है, शरीरका वर्ण भी तदनुरूप है, किन्तु ये उनसे पतले तथा छोटे होते हैं। ये हिन्दी, कनाड़ी और तेलगु भाषा समझ तथा बोल सकते हैं। ये अपने वस्त्रको गेरू मट्टीसे रंगा कर पहनते हैं, और भेड़, छाग, खरगोश तथा गोमांसके भिन्न अन्यान्य जन्तुओंका मांस भक्षण करते हैं। वैद्य जातिकी नाईं ये भी कछुएका मांस खाते हैं। गधागुल्लर जातिके साथ ये अपने पुत्र वा कन्याका विवाह नहीं करते।

गधा गुल्लर जातिके मनुष्य कुत्ते तथा गदहे पालते और शिकारके लिये वन वन घूमते हैं। ये शृगाल, कछुए, शल्य या खरपुस्तका मांस खाते हैं। पुरुषगण चौर्य एवं दस्युवृत्तिमें पटु हैं।

गुल्ला (हिं॰ पु॰) १ गुलेलमें फेंकनेकी मट्टीकी बनी गोली। २ एक तरहकी मिठाई, रसगुल्ला।
(अ॰ पु॰) ३ ऊंचा शब्द। शोर, हल्ला। ४ ईखका कटा हुआ छोटा टुकड़ा, गंडेरी, गाँड़ा। ५ पानी खींचनेके लोटेकी रस्सीमें बंधी हुई छोटी लकड़ी। ६ नैनीतालमें मिलनेवाला एक पहाड़ी पेड़। इसकी लकड़ी सुगंधित, हलकी और भूरे रंगकी होती है। ७ गोटा पट्टा बुननेवालोंका एक डोरा। इसके दोनों सिरों पर सर-

तिर्यग्योनिकी आयुका आस्रव होता है : अर्थात् ज्यादा कपट करनेवाले जीव मर कर पशु आदि (तिर्यञ्च) होते हैं। अल्प (थोड़ा) आरम्भ और कम परिग्रह (तृष्णा) रखनेसे मनुष्यायुका आस्रव होता है। स्वाभाविक कोमलता भी मनुष्यायुके आस्रवका कारण है। दिग्व्रत, देशव्रत आदि सप्त शील और अहिंसा सत्य आदि पञ्च व्रतोंको धारण नहीं करनेसे चारों गतियों अर्थात् चारों प्रकारकी आयुकर्मका आस्रव हो सकता है। सरागसंयम, संयमासंयम, अकामनिर्जरा और बालतप* करनेसे देवायुकर्मका आस्रव होता है। सर्वज्ञ कथित धर्ममें श्रद्धा करनेसे भी देवायुकर्मका आस्रव होता है।

मन, वचन और कायके योगोंकी वक्रता वा कुटिलता तथा अन्यथा प्रवृत्ति. ये सब अशुभ नामकर्मके आस्रवके कारण हैं। इनसे विपरीत तीनों योगोंकी सरलता और यथोचित (विसंवाद रहित) प्रवृत्तिसे शुभनामकर्मका आस्रव होता है। पच्चीस† दोष रहित निर्मल सम्यक्त्व (यथार्थज्ञान), दर्शन ज्ञानचारित्रमें और उनके धारकोंमें तथा देव, शास्त्र, गुरु और धर्ममें प्रत्यक्ष परोक्ष विनय, अहिंसादि व्रतोंमें और उनके प्रतिपालन करनेवाले क्रोध वर्जन आदि शीलोंमें निरतिचार प्रवृत्ति, निरन्तर तत्त्वाभ्यास, कायक्लेशादि तप, मुनियोंके कष्टोंका निवारण, रोगी साधु वा मुनियोंकी सेवा. अरहन्त भगवान्‌की भक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुत वा उपाध्यायोंकी भक्ति, प्रवचन वा शास्त्रोंकी भक्ति, सामायिकादि षट आवश्यकीय क्रियाओंमें तत्परता, स्याद्वाद विद्याध्ययनपूर्वक परमतके अज्ञान अन्धकारको दूर करके जैनधर्मका प्रभाव बढ़ाने और सहधर्मी जीवोंके साथ प्रीति रखनेसे तीर्थङ्कर-प्रकृतिका आस्रव होता है। अर्थात् उपर्युक्त षोडश भावनाओंका भली भांति पालन करनेसे जीव जन्मान्तरमें तीर्थङ्कर-रूपमें जन्मग्रहण करनेका पुण्य (कर्म) उपार्जन कर सकता है।

दूसरेकी निन्दा, अपनी प्रशंसा और दूसरेके विद्यमान गुणोंको दबाने (प्रगट न करने)-से तथा अपने अविद्यमान गुणोंको प्रगट करनेसे नीचगोत्रकर्मका आस्रव होता है। किन्तु इसके विपरीत आचरण (अर्थात् अपनी निन्दा अन्यकी प्रशंसा आदि) करनेसे उच्चगोत्र-कर्मका आस्रव होता है। दूसरेके दानादि शुभ कार्यमें विघ्न डालनेसे अन्तरायकर्मका आस्रव होता है। ये सब आस्रवोंके प्रधान प्रधान कारण कहे गये हैं, इनके सिवा गौण वा साधारण कारण असंख्य हैं।

(४) बन्धतत्त्व—ऊपर कहे हुए आस्रवके बाद उन कर्मोंका आत्माके साथ संबद्ध होना अर्थात् आत्माके प्रदेशोंमें कर्मोंका प्रवेश हो जाना (सम्बन्ध होना) ही बन्ध है। बन्धन अथवा बाधनेको बन्ध कहते हैं। कर्म-बन्ध भी आत्माको बाँधे हुए है अर्थात् वह इसको मुक्त नहीं होने देता इसलिए उसके बन्धनको बन्ध कहा गया है। इसके भेद-प्रभेद आदिका वर्णन कर्म-सिद्धान्त शीर्षकमें आगे किया गया है।

(५) संवरतत्त्व—कर्मोंके आस्रव (आगमन)-का रुक जाना संवर है। अर्थात् कर्मोंके आनेके निमित्त-रूप मानसिक, वाचनिक और कायिक योगों तथा मिथ्यात्व और कषाय आदिके निरोध होने (वा रुक जाने) से जो अनेक सुख दुःखोंके कारण रूप कर्मोंकी प्राप्तिका अभाव हो जाता है, उसे संवर कहते हैं। संवरके दो भेद हैं—एक द्रव्यसंवर और दूसरा भावसंवर। पुद्गल-मय कर्मोंके आस्रवका रुकना द्रव्यसंवर कहलाता है और द्रव्यमय आस्रवोंके रोकनेमें कारणरूप आत्माके भावोंका होना भावसंवर है। यह संवर तीन गुप्ति और पाँच समितियोंके पालनेसे, बारह अनुप्रेक्षाओंके चिन्तवनसे, बाईस परीषहोंको जीतनेसे एवं पांच प्रकारके चारित्रका पालन करनेसे होता है। गुप्ति, समिति, अनुप्रेक्षा आदिका वर्णन मुनियोंके आचारका वर्णन करते समय कहेंगे ; यहां सिर्फ संवरका लक्षण कहा गया है।

---

* संयमासंयम त्रस हिंसाका त्यागरूप संयम और स्थावर-हिंसाका अत्यागरूप असंयम। अकामनिर्जरा = पराधीनतासे क्षुधा, तृषादिकी पीड़ा एवं मारन, ताड़न आदि सहना तथा परितापादि दुःख भोगनेमें मन्द-कषायरूप भाव होना। बालतप-आत्मज्ञानरहित तप।

† शंका, कांक्षा आदि ८ दोष, ८ मद, ६ अनायतन और ३ मूढ़ता ये २५ दोष हैं।

गुवारपाठा (हिं० पु०) ग्वारपाठा देखो।

गुवारिच—अयोध्यामें गोण्ड जिलेके अन्तर्गत एक परगना। इसके उत्तरमें तोढ़ि नदी और गोण्डपरगना, पूर्वमें दिगसार परगना, दक्षिणमें घर्घरा नदी एवं पश्चिममें कुरासर परगना है। यहां राजपूत राजाओंके सेनानायक सुहलदेवने १०३२ ई०को मुसलमान-विजेता सैयद सालर मुसाउदको पराजित कर देशसे बहिष्कृत कर दिया था। थोड़े समयके बाद यह परगना गौड़राज्यके रामगढ़ गौड़िया परगनेमें मिलाया गया। वर्तमान गोण्ड, वस्ती और गोरखपुर प्राचीन गौड़राज्यके अन्तर्गत थे। गोण्डा देखो।

इस परगनेमें बहुतसी नदियां और छोटे छोटे स्रोत उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्व मुख हो कर प्रवाहित है। इस लिये भूमिका निम्नतर प्रदेश उर्वरा है। भूपरिमाण २६७ वर्गमील या १७०८६२ एकड़ है। जिनमेंसे ८८१ ४२ एकड़ जमीनमें फसल होती है।

गुसल (हिं० पु०) गुसल देखो।

गुसांई—वैष्णव सम्प्रदाय विशेष। यह संस्कृत गोस्वामी शब्दका अपभ्रंश है। इन्द्रिय जय करनेवालेका ही नाम गोस्वामी वा गुसांईं है। भारतके सब प्रधान पुण्यक्षेत्रों, तीर्थस्थानों और बड़े नगरोंमें गुसाइयोंके मठ या अखाड़े देख पड़ते हैं। इनके चिरदिन अविवाहित वा संसार निर्लिप्त रहनेकी बात है। परन्तु आजकल उस नियमका कम ख्याल रखते हैं। अखाड़ोंके महन्त विवाह नहीं करते। दाक्षिणात्यके गुसाईं पृथक्‌जाति बन गये हैं। वह सब वर्णोंके लोगोंको कुछ रुपया पाने पर अपने दलमें मिला सकते हैं। महाराष्ट्रवीर माधोजी सेंधियाके अभ्युदय कालको उन्होंने अस्त्रधारण किया था। पेशवाके पास गुसाइयोंकी बहुत फ़ौज रही। मालापरिवर्तन द्वारा ही उनका विवाहकार्य सम्पन्न होता है। बङ्गालके गोसाईं कण्ठी और दाक्षिणात्यवाले रुद्राक्ष पहनते हैं। शिष्यको "ओं सोऽहम्" मन्त्रको दीक्षा दी जाती है। इनमें जाति भेदकी खटपट नहीं है।

गुसांईं आनन्दकृष्ण ब्राह्मण,—एक प्रसिद्ध कवि और पण्डित। इन्होंने फारसी भाषामें ४०००० श्लोकोंमें समकाण्ड रामायण, १२००० श्लोकोंमें मत्स्यपुराण और मिताक्षराका फ़ारसी अनुवाद किया है। इन्होंने अपने गुलुवादमें इस प्रकारसे अपना परिचय दिया है—शाहजहानाबादमें उनका जन्म हुआ था। १८२५ सम्वतमें ये काशी गये थे। १८४७ सालमें इन्होंने जोनाथन डङ्कन साहबके अनुरोधसे रामायणका अनुवाद किया था।

गुसांईकवि,—राजपूतानेके एक प्रसिद्ध कवि। इनके दोहोंका राजपूतोंमें बड़ा आदर है।

गुसाँईगञ्ज—लखनऊ जिलेका एक नगर। यह अमेठी-टौनगुरनगरसे ३ माइल दक्षिणपश्चिममें है और लखनऊसे सुलतानपुर जानेके रास्तेमें पड़ता है। हिम्मतगिरि गुसांईने १७५४ई०में यह नगर बसाया था। यहां मिट्टीसे बने हुए एक बड़े किलेका ध्वंसावशेष अब भी मौजूद है। यहांके लोग एक प्राचीन मूर्त्तिको चतुर्भुज देवी मान कर उसकी पूजा करते हैं।

उक्त राजा १००० अश्वारोही राजपूत सेनाके नायक थे और सैन्यके वेतन स्वरूपमें अमेठी परगनाके जागीरदार हो गए थे। एक समयमें उनका खूब बल था। वक्सर युद्धके बाद नवाब सूजा उद्दौलाने अङ्गरेजोंके डरके मारे इनसे आश्रय चाहा था। इन्होंने आश्रय नहीं दिया। बादमें नवाब और अङ्गरेजोंमें जब सन्धि हो गई; तब इनको भाग कर अपनी जन्मभूमि हरिद्वारमें जाना ही पड़ा। वहां उन्होंने अङ्गरेजोंसे एक छोटीसी जागीर पाई थी।

यह नगर बड़ा साफ़ सुथरा है। रास्ता आदिके साफ करनेमें जो खर्च होता है, वह प्रत्येक घरसे कर स्वरूप कुछ कुछ ले लिया जाता है। कानपुर और लखनऊ तक समान रास्ता होनेसे, यहांका रुजगार अच्छा चलता है। यहांकी अधिष्ठात्री देवीके उत्सवके उपलक्षमें सालमें दो बार मेला लगता है। इस मेलेमें क़रीब पांच सात हजार आदमियोंकी भीड़ होती है।

गुसा (अ० पु०) गुस्सा देखो।

गुस्ताख (फा० वि०) धृष्ट, ढीठ, बड़ोंका सङ्कोच न रखनेवाला।

गुस्ताखी (फा० स्त्री०) धृष्टता, ढिठाई, अशिष्टता, बदबी।

गुस्ल (अ० पु०) स्नान।

कार्माणवर्गणाओंका आत्माके साथ विभाग रहित एकत्वको प्राप्त होना ही कर्म बन्ध है। यह बन्ध चार प्रकारके है—प्रकृतिबन्ध स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्ध। (१)

प्रकृति स्वभावको कहते हैं। जैसे—नीमका स्वभाव कड़ुआ और चीनीका स्वभाव मीठा। कर्मोंमें आठ प्रकारके स्वभावोंका वा रसोंका पड़ना प्रकृतिबन्ध है। कर्म आठ हैं—(१) ज्ञानावरण, (२) दर्शनावरण, (३) वेदनीय, (४) मोहनीय, (५) आयु, (६) नाम, (७) गोत्र और (८) अन्तराय। इनमेंसे ज्ञानावरणकी प्रकृति (स्वभाव) आत्माके ज्ञानको आच्छादित करती है। दर्शनावरणकी प्रकृति आत्माके दर्शन अर्थात् ज्ञानके सामान्य अवलोकनरूप अंशको आच्छादित करती है। वेदनीयकी प्रकृति आत्मामें सुखदुःख उत्पन्न करती है। मोहनीय कर्मकी प्रकृति मद्य आदिकी भांति मोह उत्पन्न करती है। आयुकर्मकी प्रकृति आत्माको किसी भी शरीरमें नियत समय तक रोक रखती है। नामकर्मकी प्रकृति आत्माके लिए नाना प्रकारके शरीर और अङ्गोपाङ्गादिकी रचना करती है। गोत्रकर्मकी प्रकृति आत्माको उच्च नीच कुलमें उत्पन्न करती है। और अन्तराय कर्म आत्माके वीर्य, दान, लाभ, भोग और उपभोगोंमें विघ्न डालनेवाली प्रकृति रखता है। कर्मोंमें इस प्रकारके स्वभाव होनेको प्रकृतिबन्ध कहते हैं।

स्थितिबन्ध—उक्त आठ प्रकारकी कर्म-प्रकृतियां जितने काल तक आत्माके प्रदेशोंके साथ संश्लिष्ट रहेंगी अर्थात् जितने समय तक अपने स्वभावको नहीं छोड़ेंगी, उतने कालकी मर्यादा जिससे पड़ती है, उसे स्थितिबन्ध कहते हैं। अनुभागबन्ध—जिस प्रकार बकरी, गाय, भैंस आदिके दूधमें थोड़ा और बहुत रस होता है, उसी प्रकार कर्मोंमें भी तीव्र, मध्य और मन्दरूप रस (फल) देनेकी शक्ति होती है और उस शक्तिका नाम अनुभागबन्ध वा अनुभवबन्ध है। प्रदेशबंध—उक्त आठ प्रकारके कर्मोंका आत्माके प्रदेशोंमें एक क्षेत्रावगाहरूप सम्बन्ध होना प्रदेशबन्ध कहलाता है। अर्थात् कर्मरूपमें परिणत पुद्गल-स्कन्धके परमाणुओंकी परिमाणके निश्चयको प्रदेश कहते हैं और उन प्रदेशोंका जीवके साथ मिल जाना ही प्रदेशबन्ध है।

इनमेंसे प्रकृतिबन्ध और प्रदेशबन्ध योगोंके निमित्तसे तथा स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध कषायों (क्रोध, मान, माया, लोभ)के निमित्तसे होता है। इन योग और कषायोंकी हीनाधिकताके अनुसार बन्धमें भी तारतम्य होता है। यहां यह प्रश्न उठ सकता है कि, कर्म जड़-पदार्थ है और आत्मा चेतन, फिर जड़ पदार्थ आत्मा पर अपना प्रभाव कैसे डालता है? किन्तु इसका समाधान हम पहले कर चुके हैं कि, औषधादिकी तरह कर्मोंमें भी अपूर्व शक्ति भरी हुई है और उस शक्तिके द्वारा वे आत्माको सुख दुःख दिया करते हैं।

उपर्युक्त आठ प्रकृतियां मूल प्रकृति कहलाती हैं। उनमेंसे प्रथम ज्ञानावरण प्रकृतिके पांच भेद हैं—(१) मतिज्ञानावरण, (२) श्रुतज्ञानावरण, (३) अवधिज्ञानावरण, (४) मनःपर्ययज्ञानावरण और (५) केवलज्ञानावरण। आवरण परदे वा आड़को कहते हैं। जिस प्रकार किसी मूर्ति पर कपड़ेका परदा डाल देनेसे उसका आकार नहीं दीखता, उसी प्रकार आत्मामें जो शक्ति है वह ज्ञानावरणकर्मके परदेसे ढकी रहनेके कारण प्रकट नहीं हो सकती है। यद्यपि मतिज्ञानावरण और श्रुतज्ञानावरणकर्मके किञ्चित् क्षयोपशमसे सभी जीवोंमें थोड़ा बहुत ज्ञान रहता है, किन्तु बाकीके सब ज्ञानोंको उक्त पांचों प्रकारके कर्म न्यूनाधिकरूपसे ढांके रहते हैं। जो कर्म मतिज्ञानको आच्छादित रखता है, उसे मतिज्ञानावरणकर्म कहते हैं। जिस कर्मके द्वारा श्रुतज्ञान आच्छादित रहता है, उसका नाम श्रुतज्ञानावरण है। अवधिज्ञानको आच्छादित रखनेवाले कर्मको अवधिज्ञानावरण कहते हैं। जो कर्म मनःपर्ययज्ञानको आच्छादन करे उसका नाम मनःपर्ययज्ञानावरण और जिस कर्मके द्वारा केवलज्ञान प्रगट नहीं होता, उसे केवलज्ञानावरण कर्म कहते हैं। (मति, श्रुत, अवधि आदि पांच ज्ञानोंका वर्णन हम आगे "प्रमाण और नय" शीर्षकमें करेंगे।

इसी प्रकार दर्शनावरण प्रकृतिके ९ भेद हैं—

(१) प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः॥ ३॥

(तत्त्वार्थसू० अ० ८)

जान गई कि कोई उसके स्वामीके हस्तस्थित कमलका रहस्य जानकर उसका सर्वनाश करनेमें उद्यत हुआ है। इस लिये उस पापाशयको उपयुक्त दण्ड देनेका विचार कर उसने अपनी दासीको बुलाया और उसे धतुरा मिला हुआ शराब तथा कुत्ते के पद चिह्नयुक्त एक मोहर संग्रह करनेकी आज्ञा दी। बाद उसने योगकरण्डिकाको उसके पास एक वणिक्कुमार भेज देनेके लिये कहा। परिव्राजिकाके कथनानुसार एक वणिक्कुमार देवस्मिताके प्रेममें आसक्त हो सङ्केतस्थान पर उपस्थित हुआ। उस स्थान पर देवस्मिताका वेश धारण कर उसकी दासी वणिक्कुमारकी अपेक्षा कर रही थी। उसके मायाबलसे वह वणिक्कुमार धतुरा मिश्रित शराब पीकर अचेत हो पड़ा। अन्तमें दासीने उस कुत्ते के पद चिह्न युक्त मोहरको तपाकर उसके कपालमें छाप दे दी और पासके किसी पानीके गड्ढेमें फेंक दी। इसी तरहसे एक एक कर चारों कुमार अपने कर्मका उपयुक्त दण्ड पाकर स्वदेशको लौट आये, परन्तु किसीने यह गुप्त रहस्य दूसरेके सामने प्रकट न किया।

इसके थोड़े समयके बाद ही देवस्मिताने परिव्राजिका और उसको शिष्याको भी उसी तरह अचेत कर उनकी नाक और कान काट करके उसी जगह फेंक दी। बाद देवस्मिताने सोचा कि सायद वणिक्कुमार उसके पतिका कोई अनिष्ट भी न कर डाले इसी भयसे वह वणिक्वेशमें कटाहद्वीपको रवाना हुई। वहां पहुंच कर उसने राजासे कहा, "धर्मावतार! मेरे चार भृत्य यहां भाग आये हैं, अतः उन्हें मुझे प्रत्यर्पण करनेकी कृपा करें।" राजाने कर्मचारियोंसे उन भृत्योंका अनुसन्धान करनेकी आज्ञा दी। देवस्मिताने उन चार वणिककुमारोंको बतला कर कहा कि ये ही उसके भृत्य हैं। इस पर नगरवासी विशेषकर वणिक्पुत्र क्रुद्ध हो उठे। देवस्मिता राजसभामें उपस्थित होकर बोली—"राजन्! इसके कपालमें कुक्कुरपद चिह्नयुक्त मुहरकी छाप है, परीक्षा कर देखी जाय।" यह सुनकर सबके सब स्तम्भित हो उठे। सभीको ही उन चारों वणिककुमारोंको देवस्मिताके क्रीतदास स्वीकारना पड़ा। अन्तमें देवस्मिताने राजसभामें आदिसे अन्त तक इस रहस्यकी सभी बातें कह सुनाईं। यह सुनकर सब कोई उसकी यथेष्ट प्रशंसा करने लगे। महाराजने सन्तुष्ट होकर देवस्मिताके पातिव्रत्यका उपहार स्वरूप उसे अनेक धनरत्न दिये। बाद गुहसेन पत्नीके साथ ताम्रलिप्तिमें आकर परम सुखसे कालयापन करने लगे। (कथासरित्सागर)

गुहाँजनी (हिं॰ स्त्री॰) एक तरहकी फुड़िया जो कभी कभी चक्षुके पलक पर हुआ करती है।

गुहा (सं॰ स्त्री॰) गुह-क-टाप् च। १ सिंहपुच्छीलता। २ गर्त्त, गड्ढा। ३ गुफा, कन्दरा। ४ शालपर्णी, सरिवन। ५ पृश्निपर्णी, पिठवन लता। ६ हृदय। ७ माया। ८ गुहाधिष्ठात्री देवता। "गुहाभ्यः किरातं।" (वाजसनेय॰ ३०।१६) ९ बुद्धि। गुह भावे भिदादित्वात् अङ्। १० संवरण, आच्छादन, ढकना। ११ मेढ़ा।

गुहागर—बम्बई प्रान्तके रत्नगिरि जिलेका एक बड़ा गांव। यह समुद्र तट पर अञ्जनवेलसे ६ मील दक्षिण पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ३४४५ है। पोर्तगीज इसे ब्राह्मणोंकी खाड़ी जैसा समझते थे। १८१२ ई॰को पेशवा बाजीरावने ग्रामसे दक्षिण पर्वत पर एक मन्दिर निर्माण किया। १८२३ ई॰को इसका बहुतसा सामान रत्नगिरिके सरकारी मकानोंमें उठा करके लगा दिया गया, परन्तु ध्वंसावशेष अब भी पड़ा है। ब्राह्मण अधिक रहते हैं। देवालय कई एक हैं।

गुहागृह (सं॰ क्ली॰) गुहा गृहमिव। गुहावास, गुफाके जैसा घर।

गुहाचर (सं॰ क्ली॰) गुह्यन्ते प्राटत्त्वे यज्ञानपदार्थाः अस्यां गुह् बञ्‌ गुहा बुद्धिः तस्यां विषयतया चरति गुहा-चर ट। ब्रह्म, परमात्मा।

गुहादित्य (सं॰ पु॰) सुप्रसिद्ध बाप्पाके पुत्र। इनका दूसरा नाम गुहिल था।

गुहामुख (सं॰ क्ली॰) गुहाया मुखं, ६ तत्। गह्वरद्वार, कन्दराका द्वार।

गुहार (हिं॰ स्त्री॰) रक्षाके लिये पुकार, दोहाई।

गुहाल (हिं॰ पु॰) गोशाला। गायोंके रहनेका स्थान।

गुहावटरी (सं॰ स्त्री॰) गुहा गुह्या वदरीव। शालपर्णी, सरिवन।

है, उसको सम्यक्त्व कहते हैं। (३) सम्यग्मिथ्यात्व—जिसके उदयसे तत्त्वोंके श्रद्धान रूप और अश्रद्धान-रूप दोनों प्रकारके भाव—दही गुड़के मिले हुये स्वादके समान-मिले हुए होते है, उसे सम्यग्मिथ्यात्व कहते है। ये तीनों प्रकृतियां आत्माके सम्यक्त्व भावकी घातक हैं।

चारित्रमोहनीय (अकषायवेदनीय)—(१) हास्य—जिसके उदयसे हंसी आवे, उसको हास्य कहते हैं। (२) रति—जिसके उदयसे विषयोंके सेवन करनेमें उत्सुकता वा आसक्तता हो, वह रति कहलाती है। (३) अरति—रतिसे विपरीत वा उलटी प्रकृतिका नाम अरति है। (४) शोक—जिसके उदयसे चिन्ता और शोकादि हो, उसे शोक कहते हैं। (५) भय—जिसके उदयसे उद्वेग हो, वह भय * है। (६) जुगुप्सा—जिसके उदयसे अपने दोषोंका आच्छादन और अन्यके कुल शीलादिमें दोष प्रकट करनेका भाव हो अथवा अवज्ञा, तिरस्कार वा ग्लानिरूप भाव उत्पन्न हों, उसे जुगुप्सा कहते हैं। (७) स्त्रीवेद—जिसके उदयसे पुरुषके साथ रमण करनेकी इच्छा हो, वह स्त्रीवेद है। (८) पुरुषवेद—जिसके उदयसे स्त्रीसे रमनेकी इच्छा हो, वह पुरुषवेद है। (९) नपुंसकवेद—जिसके उदयसे स्त्री और पुरुष दोनोंसे रमनेकी भाव हो, वह नपुंसकवेद है।

चारित्रमोहनीय (कषायवेदनीय)—कषायवेदनीयके १६ भेद है, जिनमें क्रोध, मान, माया और लोभ ये चार मुख्य हैं। (१) क्रोधकषाय—जिसके उदयसे अपने और परके घात करनेके भाव (परिणाम) हों तथा परके उपकार करनेके अभावरूप भाव वा क्रूरभाव हों, उसे क्रोध कषाय कहते हैं। (२) मानकषाय—जाति, कुल, बल ऐश्वर्य, विद्या, रूप, तप और ज्ञान आदिके गर्वसे उद्धत रूप तथा अन्यसे नम्रीभूत न होने-रूप परिणाम वा भावको मानकषाय कहते हैं। (३) मायाकषाय—अन्यको ठगनेकी इच्छासे जो कुटिलता की जाती है, वह मायाकषाय है। (४) लोभकषाय—अपने उपकारक द्रव्योंमें जो अभिलाषा होती है, उसे लोभकषाय कहते हैं। इन चारोंमेंसे प्रत्येकके शक्तिकी अपेक्षासे तीव्रतर, तीव्र, मन्द और मन्दतर—ऐसे चार चार भेद है। तीव्रतर भावोंको अनन्तानुबन्धी कहते हैं और तीव्रको अप्रत्याख्यान, मन्दको प्रत्याख्यान तथा मन्दतरको संज्वलन कहते हैं†। अनन्त संसार (जन्म मरण)-का कारण जो मिथ्यात्व है उसके साथ ही रहनेवाले परिणामों (भावों) को अनन्तानुबन्धी क्रोध-मान-माया-लोभ कहते है। अनन्तानुबन्धी कषाय इतना तीव्र होता है कि, इसका दृष्टान्त पत्थरकी लकीरसे दिया जाता है अर्थात् जिस प्रकार पत्थर पर लकीर खींचनेसे वह सहजमें नहीं मिटती, उसी प्रकार अनन्तानुबन्धी कषायके द्वारा बंधे हुए कर्म भी सहजमें (बिना अपना फल दिये) नष्ट नहीं होते। अप्रत्याख्यानका दरजा इससे कुछ नीचा है। अप्रत्याख्यान अर्थात् थोड़े त्यागको जो आवरण करें वा रोकें, उन परिणामों (भावों)-को अप्रत्याख्यान क्रोध-मान-माया-लोभ कहते है। इसी प्रकार प्रत्याख्यान अर्थात् सर्व त्यागको जो आवरण करें वा महाव्रत नहीं होने देवें, उन परिणामोंका नाम है प्रत्याख्यान क्रोध-मान-माया-लोभ। और जो संयमके साथ हो प्रकाशमान रहें अर्थात् जिनके होने पर संयम प्रकाशमान् हुआ करे, ऐसे क्रोध मान, माया, लोभरूप परिणामोंको संज्वलन क्रोध-मान माया-लोभ कहते है। इस तरह ४।४ भेद होनेसे कषायवेदनीयकी १६ प्रकृतियां हुईं।

दर्शन मोहको तीन प्रकृतियां तथा अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, और लोभ, ये ७ प्रकृतियां सम्यक्त्वका घात करती हैं; अर्थात् इनका उदय रहते हुए सम्यक्त्व नहीं होता है। और इसी प्रकार अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभके उदयसे श्रावकके व्रत नहीं होते, प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभके उदयसे महाव्रत नहीं होते और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभके

* जैन मतानुसार भय सात प्रकारका है—

१ लोकभय, २ परलोकभय, ३ वेदनभय, ४ अरक्षाभय, ५ अगुप्तिभय, ६ मरणभय, ७ आकस्मिकभय, इन्हींमें समस्त प्रकारके भय गर्भित हैं।

† इन चार कषायोंके ४।४ दृष्टात हैं। जैसे—(क्रोधके) १ पत्थरकी रेखा, २ पृथ्वीकी रेखा, ३ धूलिकी रेखा, ४ जलकी रेखा। इसी प्रकार मान, माया और लोभके भी पृथक् पृथक् ४।४ दृष्टांत हैं।

एक तंत्र। इसमें तांत्रिक धर्मको बहुतसी गोपनीय कथायें अच्छी तरहसे लिखी है। तांत्रिक गणोंके पक्षमें यह विशेष आदरणीय है।

गुह्यदीपक (सं० पु०) स्वयं गुह्यं सन् दीपयति प्रकाशयति दीप-णिच्-ण्वुल्। खद्योत, जुगनू।

गुह्यदेश (सं० पु०) पायु, मलद्वार।

गुह्यनिष्यंदन (सं० पु०) गुह्यात् उपस्थात् निष्यन्दते नि-ष्यन्द-अच्। मूत्र, प्रस्राव, पेशाव।

गुह्यपति (सं० पु०) गुह्यानां पतिः, ६-तत्। गुह्योंके अधिपति, वज्रधर, कुवेर। वज्रधर देखो।

गुह्यपिधान (सं० क्ली०) गुह्यस्य पिधानं, ६-तत्। गुह्य देशका आवरण, गुह्य देश ढांकनेका वस्त्र।

गुह्यपुष्प (सं० पु०) गुह्यं गोपनीयं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। अश्वत्थवृक्ष।

गुह्यभाषित (सं० क्ली०) गुह्यं गोपनीयं भाषितं। १ मंत्र। २ गुप्तकथा।

गुह्यमण्डल—पुराणोक्त एक पवित्र स्थान।

(वराहपु० १४७ अ०)

गुह्यमय (सं० पु०) गुह्य प्राचुर्य्यार्थे मयट्। कार्त्तिकेय।

गुह्यबीज (सं० पु०) गुह्यं बीजमस्य, बहुव्री०। भूतृण, गन्धखड़।

गुह्य स्थान—नेपालस्थ एक पवित्र स्थान।

गुह्याष्टक (सं० क्ली०) गुह्यानां तीर्थविशेषाणामष्टकं, ६-तत्। आठ तीर्थविशेष। भारभूति, आषाढ़ी डिंडिल, आकुली, अमरकण्टक, पुष्कर, प्रभास और नैमिष इन आठों तीर्थोंको गुह्याष्टक कहते हैं।

गुह्येश्वरी (सं० स्त्री०) गुह्यानां ईश्वरी, ६-तत्। १ गुह्यकगणोंकी अधिष्ठात्री देवी। गुह्या गोपनीया अप्रकाश्या ईश्वरी कर्मधा०। २ गोपनीय देवी, इष्ट-देवी। ३ काली, आद्या, विद्या।

गूंगा (फा० वि०) जो बोलनेमें असमर्थ हो। मूक, जिसके मुखसे साफ साफ शब्द न निकले।

गूंगा (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी बिछियां जिसे स्त्रियां अपनी अंगुलीमें पहनती है।

गूंच (हिं० स्त्री०) एक तरहकी मछली।

गूंछ (हिं० पु०) एक तरहका मत्स्य जो लगभग चार हाथ लम्बा होता है इस तरहकी मछली भारतके प्रायः सभी नदियोंमें मिलती है। यह अपना मुख सदा नीचेको ओर रखती हुई गहरे पानीमें चलती है।

गूंज (हिं० स्त्री०) १ कलध्वनि, भौरोंके गूंजनेका शब्द, २ प्रतिध्वनि, व्याप्तध्वनि। ३ लट्टूकी कील, जिस पर लट्टू घूमता है। ४ कानमें पहननेकी बालियोंका छोटा पतला तार।

गूंजना (हिं० क्रि०) १ गूंजन करना, भौरोंका भिनभिनाना। २ प्रतिध्वनित होना।

गूंठ (हिं० पु०) पहाड़ी टट्टू, टांगन।

गूंदा (हिं०) गोंदा देखो।

गूंदी (हिं० स्त्री०) गिरगिट्टी जातिका गंधेला नामक पेड़।

गू (सं० स्त्री०) गच्छति अपानवायुना देहात् गम-कू-टिलोपश्च। १ विष्ठा। २ मल।

गूगल (हिं०) गुग्गुल देखो।

गूजर—पेशवा राघोजी भोंसलाकी लड़कीकी लड़कीके पुत्र वा पौत्र १८१८ ई०को अप्पासाहब जब सिंहासन च्युत हुए, यह मध्यप्रदेशके नागपुर राज्यमें अभिषिक्त हुए।

गूजर—युक्तप्रदेशवासी जातिविशेष। यह लोग शान्तभावसे कायिक परिश्रम करके जीविका चलाते हैं। इनकी उत्पत्ति सम्बन्धमें बहुतसे आदमी बहुतसी बातें कहते है। कोई कोई कहता है कि गुर्जरदेश अथवा पञ्जाब प्रदेशके गुजरांवाला या गुजरात नामक स्थानसे ही-उनकी नाम गूजर नाम पड़ा है। नागपुरके गूजर अपनेको राजपूत और श्रीरामचन्द्रजीके पुत्र राजा लवका वंशधर बतलाते हैं, परन्तु युक्तप्रदेशवाले अपनेको उतना ऊंचा नहीं समझते। पानीपथके रावल गूजर अपनेको खोखर राजपूतोंका वंशधर जैसा अनुमान करते है।

आजकल दिल्लीके निकटवर्ती स्थानसमूह, उत्तर दोआब और उत्तर रुहेलखण्डमें इन लोगोंकी संख्या अधिक है। गूजरोंमें ८४ भिन्न श्रेणिया होती हैं। पितृगोत्र, मातुलगोत्र और पितामही तथा मातामहीके गोत्रमें इनका विवाह नहीं होता। पानीपथके मुसलमान गूजरों-

हैं। मस्तक, हृदय, उदर, पीठ, बाहु, जङ्घा और पैर, ये अङ्ग कहलाते हैं तथा ललाट, नासिका, कर्ण आदि शरीरके अन्य भागोंको उपाङ्ग कहते हैं। अङ्गोपाङ्ग-नामकर्म तीन प्रकारका है—१ औदारिकशरीराङ्गोपाङ्ग नामकर्म, २ वैक्रियिकशरीराङ्गोपाङ्ग-नामकर्म और ३ आहारकशरीराङ्गोपाङ्ग-नामकर्म।

(५) निर्माण-नामकर्म—जिसके उदयसे अङ्ग और उपाङ्गोंकी उत्पत्ति हो, उसे निर्माण नामकर्म कहते हैं। इसके दो भेद हैं—१ स्थान-निर्माण और २ प्रमाण-निर्माण। जाति-नामकर्मके उदयसे जो नासिका, कर्ण आदिको यथास्थानमें निर्माण करता, उसे स्थाननिर्माण और जो उन्हें उपयुक्त लम्बाई चौडाई आदिका परिमाण लिए रचता है उसे प्रमाणनिर्माण कहते हैं। (६) बन्धन नामकर्म—जिसके उदयसे शरीर-नामकर्मके वशसे ग्रहण किए हुए आहारवर्गणाके पुद्गलस्कन्धोंके प्रदेशोंका मिलना हो, उसे बन्धन नामकर्म कहते हैं। यह पाँच प्रकारका है—१ औदारिक-बन्धननामकर्म, २ वैक्रियिक बन्धननामकर्म, ३ आहारकबन्धननामकर्म, ४ तैजस-बन्धननामकर्म और ५ कार्मणबन्धननामकर्म। जिसके उदयसे औदारिकबन्ध हो, उसे औदारिकबन्धननामकर्म, जिसके उदयसे वैक्रियिकबन्ध हो, उसे वैक्रियिकबन्धन-नामकर्म; जिसके उदयसे आहारकबन्ध हो, उसे आहारकबन्धननामकर्म; जिसके उदयसे तैजसबन्ध हो उसे तैजसबन्धननामकर्म और जिसके उदयसे कार्मणबन्ध हो, उसे कार्मणबन्धननामकर्म कहते हैं।

(७) सङ्घातनामकर्म—जिसके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंका छिद्ररहित अन्योऽन्यप्रदेशानुप्रदेश-रूप एकता वा सङ्घटन हो, उसे सङ्घात-नामकर्म कहते हैं। इसके भी औदारिक आदि पांच भेद है। जिसके उदयसे औदारिक शरीरमें छिद्र रहित सन्धियां (जोड़) हों, उसे औदारिक सङ्घात नामकर्म कहते हैं। जिसके उदयसे वैक्रियिक शरीरमें सङ्घात हो, वह वैक्रियिकसङ्घात-नामकर्म कहलाता है। जिसके उदयसे आहारकशरीरमें सङ्घात हो, उसका नाम आहारक सङ्घात-नामकर्म है। जिसके उदयसे तैजस शरीरमें सङ्घात हो, वह तैजस-संघात नामकर्म है; और जिसके उदयसे कार्माण शरीरमें सङ्घात हो, उसे कार्मणसङ्घात नामकर्म कहते हैं।

(८) संस्थान-नामकर्म—जिसके उदयसे शरीरकी आकृति वा आकार उत्पन्न हो, उसे संस्थान-नामकर्म कहते हैं। इसके छः भेद हैं—१ समचतुरस्रसंस्थान-नामकर्म, २ न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थान नामकर्म, ३ स्वातिसंस्थान-नामकर्म, ४ कुब्जकसंस्थान नामकर्म, ५ वामनसंस्थान-नामकर्म और ६ हुण्डकसंस्थान नामकर्म। जिसके उदयसे ऊपर, नीचे और मध्यमें समान विभागसे शरीरकी आकृति उत्पन्न हो, उसे समचतुरस्र संस्थान-नामकर्म कहते हैं। जिसके उदयसे शरीरका नाभिके नीचेका भाग वटवृक्ष सदृश पतला हो और ऊपरका भाग मोटा है, उसे न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थान-नामकर्म कहते हैं। स्वातिसंस्थान नामकर्म उसे कहते हैं, जिसके उदयसे शरीरके नीचेका भाग स्थूल हो और ऊपरका भाग पतला। कुब्जकसंस्थान-नामकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे पीठ पर बहुतसा मांस हो वा कुबडा शरीर हो। वामन नामकर्म उसे कहते हैं, जिसके उदयसे शरीर बहुत छोटा हो। और जिसके उदयसे शरीरके अङ्ग उपाङ्ग कहींके कहीं, छोटे बड़े, वा संख्यामें कम बढ़ हों, उसे हुण्डकसंस्थान नामकर्म कहते हैं।

(९) संहनन-नामकर्म—जिसके उदयसे शरीरके हाड़, पिञ्जर आदिके बंधनोंमें विशेषता हो, उसको संहनन नामकर्म कहते हैं। इसके छः भेद हैं—१ वज्रवृषभ नाराचसंहनन नामकर्म, २ वज्रनाराचसंहनन नामकर्म, ३ नाराचसंहनन नामकर्म, ४ अर्द्धनाराचसंहनन-नामकर्म, ५ कीलकसंहनन-नामकर्म और ६ असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन-नामकर्म*। वज्रवृषभनाराचसंहनन नामकर्म उसे कहते हैं, जिसके उदयसे शरीरस्थ वृषभ (वेष्टन), नाराच (कील) और संहनन (अस्थिपञ्जर) ये तीनों ही वज्रके समान अभेद्य हों। जिस कर्मके उदयसे नाराच और संहनन वज्रमय हों और वृषभ सामान्य हो, उसे वज्रनाराचसंहनन नामकर्म कहते हैं। जिसके उदयसे हड्डियों और सन्धियोंमें कीलें तो

---

* नसोंसे हड्डियोंके बंधनेका नाम ऋषभ वा वृषभ है। नाराच कीलनेको कहते हैं और संहनन हाड़ोंके समूहको कहते हैं।

को मिलो, वारीकीमें ग्रो पैदल फाज रही। अब किले और इमारतोंका देख भाल सरकार करती है।

शहर बहुत घना है। ग्रीष्म ऋतुमें गर्मी बहुत पड़ती है। इसीसे सब सरकारी दफ्तर मैदानमें उठ गये हैं। किलेका पूरा इतिहास अज्ञात है। वह विजयनगरके राजाओंका एक अति सुदृढ़ दुर्ग था। मुसलमान कितने ही समय तक उसे अधिकृत कर न सके। १७४६ ई०को मुरारिराव नामक महाराष्ट्र वीरने उसको मरम्मत की। १७७५ ई०को बहुत दिन तक घेरा डालनेके बाद हैदर अलीने उसे अधिकार किया था। १७९९ ई०को टीपूके मरने पर वह निजामके हाथ लगा। १८०० ई०से यह अंगरेजोंके अधिकारमें है। १८६० ई० तक वहां दो अङ्गरेजी फौजें रहीं।

गूड़ी (हिं० स्त्री०) बाजरेकी बालकी प्याली, जिसमें दाना लगा रहता है।

गूड़ूर—१ कृष्णा जिलामें मसुलीपत्तन तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह मसुलीपत्तन नगरसे ४ मील पश्चिममें अवस्थित है।

२ मन्द्राजमें कर्णुल जिलाके अन्तर्गत एक नगर। यह कर्णुल नगरसे १८ मील उत्तर-पश्चिममें अक्षा० १५° ४३´ उ० और देशा० ७८° ३४´ ४०´´ पू०के मध्य अवस्थित है। यहां कार्पास और रेशमी वस्त्र प्रस्तुत होते हैं।

३ विजापुर जिलाके अन्तर्गत एक पुरातन ग्राम। रामेश्वरके प्राचीन मन्दिरके लिये यह प्रसिद्ध है। यहां प्रतिमा और ताम्रके बरतन या पात्र प्रस्तुत होते हैं।

गूढ़ (सं० त्रि०) गुह-क्त। १ गुप्त, छिपा हुआ। २ अभिप्राय-गर्भित, जिसमें बहुतसा अभिप्राय गुप्त हो। कठिन, जटिल अबोधगम्य। ३ संवृत। (पु०) ४ स्मृतिमें पांच प्रकारके गवाहोंमेंसे एक गवाह। ५ एक अलंकार।

गूढ़कामी (सं० पु०) काक, कौवा।

गूढ़गर्भक (सं० पु०) गर्भजरोगविशेष।

गूढ़चारिन् (सं० त्रि०) गूढ़ः सन् चरति चर-णिनि। जो गुप्त रीतिके विचरण करता है। गुप्तचारी।

गूढ़ज (सं० त्रि०) गूढ़े गुप्तस्थाने जायते गूढ़-जन-ड। गूढ़ोत्पन्न पुत्र। बारह प्रकारके पुत्रोंमेंसे एक पुत्र अपने ही गृहमें किसी गुप्त जारसे पैदा किया हुआ पुत्र।

गूढ़ता (सं० स्त्री०) गूढ़स्य भावः गूढ़-तल्-टाप्। १ गुप्तता, छिपाव। २ अबोधगम्यता, गम्भीरता, कठिनता।

गूढ़त्व (सं० क्ली०) गूढ़स्य भावः गूढ़-त्व। १ गूढ़ता, गुप्तता। २ गंभीरता, कठिनता।

गूढ़नाभि—वशिष्ठ गोत्रीय चण्डिकाभक्त पृथुवंशीय एक राजा, कूर्मके पुत्र।

गूढ़नीड (सं० पु०) गूढं गुप्तं नीडं यस्य, बहुव्री०। खञ्जनपक्षी।

गूढ़पत्र (सं० पु०) गूढं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ अक्षोठीवृक्ष, अखरोटका पेड़। २ करीलवृक्ष।

गूढ़पथ (सं० पु०) गूढः पन्था यस्य बहुव्री०, समासान्त टच्। १ अन्तःकरण, अन्तात्मा। २ गुप्तपथ।

गूढ़पद (सं० पु०) गूढं पादयति पद णिच क्विप्। यद्वा गुप्ताः पादा यस्य, बहुव्री०। निपातने साधु। सर्प, सांप।

गूढ़पाद् (सं० त्रि०) गूढ़ आवृतः पादो यस्य, बहुव्री०। आवृत चरण, जिसका चरण आच्छादित हो।

गूढ़पुरुष (सं० पु०) गूढ़श्चासौ पुरुषश्चेति, कर्मधा०। राजप्रेरित छद्मवेशी पुरुष, गुप्तचर, भेदिया।

गूढ़पुष्पक (सं० पु०) गूढ़ानि संवृतानि पुष्पाण्यस्य, बहुव्री०। १ पीपल, बड़, गूलर, पाकर इत्यादि वृक्ष। २ बकुलवृक्ष, मौलसिरी।

गूढ़फल (सं० पु०) गूढं फलं यस्य, बहुव्री०। बेरका पेड़।

गूढ़फला (सं० स्त्री०) गृध्रनखी।

गूढ़मण्डप (सं० पु०) देवमन्दिरके भीतरका बरामदा या दालान।

गूढ़मल्लिका (सं० स्त्री०) अक्षोलिवृक्ष, अखरोटका पेड़।

गूढ़माय (सं० त्रि०) गूढ़ा गुप्ता अन्यैरलक्षिता माया यस्य, बहुव्री०। जिसकी माया दूसरोंसे अलक्षित है।

गूढ़मार्ग (सं० पु०) नित्यकर्म०। गुप्तपथ, सुरङ्ग, पृथ्वीके नीचे खोदा हुआ रास्ता।

गूढ़मैथुन (सं० पु० स्त्री०) गूढं गुप्तं केनाप्यलक्षितं मैथुनं यस्य, बहुव्री०। काक, कौवा।

गूढ़लूट—मदुरा जिलाके पेरियकुडम् तालुकके अन्तर्गत एक ग्राम। इस ग्राममें एक पुरातन शिवमन्दिरमें बहुतसी शिलालिपि देखी जाती हैं।

लिए गमन करता हो, उस समय मार्गमें जिसके उदयसे आत्माके प्रदेश पहले शरीरके आकारके रहते हैं, उसे नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य नामकर्म कहते हैं। इस कर्मका उदय विग्रह गतिमें ही होता है। इसी प्रकार अन्य तीनोंका अर्थ समझना चाहिये। इसका उदय एक समय, दो समय और ज्यादासे ज्यादा तीन समय तक रहता है।

(१५) अगुरुलघु नामकर्म—जिसके उदयसे जीवोंका शरीर लोहपिण्डके समान (भारीपनके कारण) नीचे नहीं पड जाता और आककी रुईके समान (हलकेपनसे) उड़ भी नहीं जाता, उसे अगुरुलघुनामकर्म कहते हैं। यहां पर शरीरसहित आत्माके सम्बन्धमें अगुरुलघुकर्म प्रकृति मानी है, तथा द्रव्यमें जो अगुरुलघुत्व है, वह स्वाभाविक गुण है। (१६) उपघात-नामकर्म—जिसके उदयसे अपने शरीरके अवयव ऐसे (बड़े सींग, बड़े स्तन, बड़ा उदर आदि) हों जिनके कारण अपना ही घात हो, वह उपघात नामकर्म कहलाता है। (१७) परघात-नामकर्म—जिसके उदयसे तीक्ष्ण शृङ्ग, तीक्ष्ण नख वा डङ्क आदि परके घात करनेवाले अङ्ग हों उसको परघात-नामकर्म कहते हैं (१८) आताप-नामकर्म—जिसके उदयसे आतापकारी शरीर प्राप्त हो, उसे आताप-नामकर्म कहते हैं। इस कर्मका उदय सूर्यके विमानमें जो बादर-पर्याप्त* जीव पृथ्वीकायिक मणि-मय शरीरधारी होते हैं, सिर्फ उनके ही होता है। (१९) उद्योत-नामकर्म—जिसके उदयसे उद्योत रूप शरीर होता है, उसे उद्योतनामकर्म कहते हैं। इसका उदय चन्द्रमाके विमानमें रहनेवाले पृथ्वीकायिक जीवोंके तथा जुगनू आदि जीवोंके ही होता है। (२०) उच्छ्वास-नामकर्म—जिसके उदयसे शरीरमें श्वासो च्छ्वास उत्पन्न हो, उसका नाम है उच्छ्वासनामकर्म।

(२१) विहायोगति-नामकर्म—जिसके उदयसे आकाशमें गमन हो, वह विहायोगतिनामकर्म है। इसके दो भेद है-१ प्रशस्तविहायोगति-नामकर्म और २ अप्रशस्तविहायोगति-नामकर्म। जो हस्ती आदिकी गतिके समान सुन्दर गमनका कारण है, उसे प्रशस्तविहायोगति नामकर्म और जो ऊंट गदैभादिके समान असुन्दर गमनका कारण है, उसे अप्रशस्तविहायोगतिनामकर्म कहते हैं। मुक्त होने पर जीवको तथा चेतनारहित पुद्गलको जो गति होती है, वह स्वाभाविक गति है अर्थात् उसमें कर्मजनित कोई कारण नहीं है। (२२) प्रत्येकशरीर-नामकर्म—जिसके उदयसे एक शरीर एक आत्माके भोगनेका कारण हो, उसे प्रत्येकशरीरनामकर्म कहते है (२३) साधारणशरीर-नामकर्म-जिसके उदयसे एक शरीर बहुतसे जीवोंके उपभोग करनेका कारण हो, उसे साधारणशरीरनामकर्म कहते है। जिन अनन्त जीवोंके आहारादि चार पर्याप्ति, जन्म, मरण, श्वासोच्छ्वास, उपकार और अपकार एक ही समयमें होते है, उन्हें साधारण जीव कहते है। (२४) त्रस-नामकर्म—जिसके उदयसे आत्मा द्वीन्द्रिय आदि शरीर धारण करती है, उसे त्रसनामकर्म कहते है। (२५) स्थावरनामकर्म—जिसके उदयसे जीव पृथिवी, अप, तेज, वायु और वनस्पति कायमें उत्पन्न होता है, उसे स्थावरनामकर्म कहते हैं। (२६) सुभगनामकर्म-जिसके उदयसे अन्यको प्रीति हो (अर्थात् देखते ही दूसरोंके भाव प्रीतरूप हो जावें), उसे सुभगनामकर्म कहते है। (२७) दुर्भगनामकर्म-जिसके उदयसे रूपादि गुणोंसे युक्त होते हुए भी दूसरेको अप्रीति उत्पन्न हो, उसे दुर्भगनामकर्म कहते हैं। (२८) सुस्वर-नामकर्म—जिस कर्मके उदयसे मनोज्ञ स्वर प्राप्त हो, वह सुस्वरनामकर्म है। (२९) दुःस्वरनामकर्म-जिसके उदयसे अमनोज्ञ स्वरकी प्राप्ति हो, उसे दुःस्वरनामकर्म कहते हैं। (३०) शुभनामकर्म-जिसके उदयसे मस्तक आदि अवयव सुन्दर और देखनेमें रमणीय हों, उसे शुभनामकर्म कहते है। (३१) अशुभ-नामकर्म-जिस कर्मके उदयसे मस्तक आदि अवयव असुन्दर और देखनेमें रमणीय न हों, वह अशुभनामकर्म है।

(३२) सूक्ष्मशरीर-नामकर्म-जिस कर्मके उदयसे ऐसा सूक्ष्म शरीर प्राप्त हो जो अन्य जीवोंके उपकार वा घात करनेमें कारण न हो और पृथिवी, जल, अग्नि, पवन आदिसे जिसका घात न हो तथा पहाड़ आदिमें प्रवेश करनेकी भी जिसमें शक्ति मौजूद हो, उसको सूक्ष्मशरीर-नामकर्म कहते हैं। जिसके उदयसे स्थूलशरीर प्राप्त हो, उसे बादरशरीरनामकर्म कहते

* जिस एकेंद्रिय जीवका शरीर दूसरोंसे प्रतिहत हो सके उसे बादरपर्याप्त कहते हैं।

गूदलूर—मन्द्राजके नीलगिरि जिलेमें गूदलूर तालुकका सदर गांव। यह अक्षा० ११° २०´ उ० और देशा० ७६° ३०´ पू०में गूदलूर घाट पर्वतके नीचे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २५५८ है। साप्ताहिक बाजार अच्छा लगता है।

गूदा (हिं० पु०) १ किसी फलको छिलकेके नीचेका सार भाग, गरी। २ भेजा, मग्ज, खोपडीका सारभाग।

गून (सं० त्रि०) गू क्त तस्य नकारः। कृतविष्ठोत्सर्ग, जिस व्यक्तिने विष्ठा त्याग किया हो।

गून (हि० स्त्री०) २ नाव खींचनेकी रस्सी। २ रोहारुण।

गूना (फा० पु०) पीतल या सोनेका बना हुआ एक तरहका सुनहला रङ्ग।

गूमडा (हिं०) गुम्म देखो।

गूमा (हिं० पु०) एक छोटा पौधा। इसके ग्रन्थन पर गुच्छासा रहता है, और इसमें श्वेत पुष्प लगते हैं। यह औषधके काममें आता है।

गूरण (सं० क्ली०) गूर उद्यमें भावे ल्युट्। उद्यम, उद्योग।

गूरा (हिं० पु०) गुल्ला, ढेला।

गूर्ण (सं० त्रि०) गूर-क्त तकारस्य नकारः। १ उद्यमविशिष्ट। २ प्रशस्त।

गूर्त (सं० त्रि०) गूरी उद्यमे क्त निपातनात् नत्वाभावः। १ उद्यमविशिष्ट। २ प्रशंसनीय।

गूर्तमनस् (सं० त्रि०) गूर्तं उद्युक्तं मनो यस्य, बहुव्री०। जिसका मन उद्योगविशिष्ट है।

गूर्तवचस् (सं० त्रि०) गूर्तं उद्यतं वचो यस्य, बहुव्री०। जिसका वाक्य उद्यमविशिष्ट है।

गूर्तश्रवस् (सं० त्रि०) गूर्तं प्रशंसनीयं श्रवो यस्य, बहुव्री०। प्रशस्तान्न, जिसका भोजनीय द्रव्य प्रशंसनीय है।

गूर्त्तावसु (सं० त्रि०) गूर्तं वसु यस्याः, बहुव्री०, सांहितिको दीर्घश्च। दान करनेके हेतु जिसने अपने धन धारण किया हो।

गूर्ति (सं० त्रि०) गृणन्ति स्तुवन्ति गृ कर्त्तरि क्तिच्। १ स्तोता, स्तव करनेवाला। (स्त्री०) गूर भावे क्तिन्। २ स्तुति।

गूलर (हिं० पु०) वटवर्ग, पीपल और वरगदकी जातिका एक वृहत् पेड़। उदुम्बर देखो।

गूलर-कबाब (फा० पु०) एक प्रकारका कबाब। यह सिद्ध मांसको चूर्ण कर उसके मध्य अदरक, पोदीना आदि भरकर भूननेसे बनता है।

गूलू (हिं० स्त्री०) पुंड्रक नामका एक तरहका पेड़। कतोरा नामक श्वेत गोंद इसे निःसृत होता है। इसको छिलकासे रस्सियां बनाई जाती हैं। इसकी पत्तियां और शाखायें चारो ओर औषधका काम आती हैं। कोई कोई इसको जड़को तरकारीके काममें लाते हैं और थोड़ा गुड मिलाकर खाते है। यह उत्तर भारत, मध्य भारत, दक्षिण तथा वर्माके सूखे वनमें तथा पश्चिमी घाटके पर्वतों पर मिलता है।

गूवाक (सं० पु०) गुवाक पृषोदरादित्वात् साधुः। गुवाक देखो।

गूषणा (सं० स्त्री०) मयूरचन्द्रक, मोरकी पूंछ पर बना हुआ अर्धचन्द्र चिह्न।

गूह (हिं० पु०) गलीज, विष्ठा, मल। गुह देखो।

गूहन (सं० क्ली०) गूह-ल्युट्। गोपन, गुप्त।

गूहा छीछी (हिं० पु०) बुरे रूपका झगड़ा, बदनामी, कलङ्क।

गूहितव्य (सं० त्रि०) गूह-तव्य। गोपनीय, जो स्थान छिपाने योग्य हो। यथा—लिङ्ग, कुच (स्तन), भग और गुह्यदेश।

गृञ्ज (सं० क्ली०) गृञ्जन।

गृञ्जन (सं० क्ली०) गृञ्जति अभक्ष्यत्वेन कथ्यते गृजि ल्युट्। १ मृत पशुका मांस। २ मूलविशेष शलगम, गाजर। इसका पर्याय—शिखिमूल, यवनेष्ट, वर्तुल, ग्रन्थिमूल, शिखाकन्द और कन्द है। यूरोप तथा एसियाके नानास्थानोंमें यह पाया जाता है। वैद्यक मतसे इसका गुण—कटु, उष्ण, कफ, वातरोग और गुल्मरोगनाशक, रुचिकर, दीपन, हृद्य और दुर्गन्ध है।

मनुका वचन है कि—जान बूझकर गृञ्जन भक्षण करनेसे ब्राह्मण पतित हो जाता है; और यदि अज्ञानसे गृञ्जन खाय तो कृच्छ्रसान्तपन अथवा यति चान्द्रायण व्रत करके पापसे मुक्त हो सकता है। (मनु ५।१९-२०) (पु०) ३ मूलविशेष, लहसुन, रसुन। ४ लाल लहसुन।

गृञ्जनक (सं० पु०) गृञ्जन स्वार्थे-कन्। गृञ्जन।

गृञ्जर (सं० पु०) गर्जर, गाजर।

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तरायकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है। इनमें भी ज्ञानावरणकी पांच, दर्शनावरणकी नव, अन्तरायको पांच और असातावेदनीयकी एक इन बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागरकी है। और सातावेदनीयकी एक प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थिति पंद्रह कोड़ाकोड़ी सागरकी है।

मोहनीयकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर परिमित है। इस उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध मिथ्यादृष्टि संज्ञी पञ्चेंद्रिय पर्याप्तक जीवोंके होता है। जीवोंके भेदसे इसमें तारतम्य होता है। यथा—एकेन्द्रिय पर्याप्तक के उत्कृष्ट स्थिति एक सागर, द्वीन्द्रियके २५ सागर त्रीन्द्रियके ५० सागर और चतुरिन्द्रियके मोहनोयकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति १०० सागर परिमित होती है। असंज्ञी पर्याप्तक असंज्ञि-पञ्चेन्द्रियके मोहनीयकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति एक हजार सागरकी होती है।

नामकर्म और गोत्रकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागर परिमित है। यह स्थिति संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकके लिए है। एकेंद्रिय पर्याप्तक जीवोंकी उत्कृष्ट स्थिति एक सागरके ३/७ भाग है। द्वींद्रिय आदिमें भी इसी प्रकारका पार्थक्य है। मोहनीयकर्मकी स्थिति सबसे अधिक और इसीसे अन्य कर्मोंकी उत्पत्ति होनेके कारण इस कर्मको राजा कहते हैं।

आयुःकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागर परिमित है। संज्ञी पञ्चेंद्रिय पर्याप्तके आयुकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरकी है। असंज्ञी पञ्चेंद्रियके लिए उत्कृष्ट स्थिति पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार एकेंद्रिय आदिमें तारतम्य है।

इसी प्रकार ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय अंतराय और आयुः इन पाँच कर्मोंकी जघन्यस्थिति अन्तर्मुहूर्त* है। वेदनीयकर्मकी जघन्यस्थिति बारह मुहूर्तकी† है। नामकर्म और गोत्रकर्मकी जघन्यस्थिति आठ मुहूर्त परिमित है।

* एक मुहूर्त अर्थात् ४८ मिनटके भीतर भीतरके समयको अन्तर्मुहूर्त कहते हैं।

† दो घड़ी अर्थात् ४८ मिनटका एक मुहूर्त होता है।

अनुभागबन्ध—तीव्र और मन्द कषायरूप जिस प्रकारके भावोंसे कर्मोंका आस्रव हुआ है, उनके अनुसार कर्मोंकी फल-दायक शक्तिकी तीव्रता और मन्दता होनेको अनुभागबन्ध कहते हैं। कर्मप्रकृतियोंके नामानुसार ही उनका अनुभव होता है अर्थात् उनकी फलदायक शक्ति कर्म-प्रकृतियोंके नामानुसार होती है। अब इस बातका निर्णय करते हैं कि, जो कर्म उदयमें आ कर तीव्र वा मन्द रस देते हैं, उन कर्मोंका आवरण जीवके साथ लगा रहता है या सार रहित हो कर आत्मासे पृथक् हो जाता है?

अनुभागबन्धके पश्चात् निर्जरा ही होती है; अर्थात् जो कर्मबन्ध हुआ, वह उदयके समय आत्माको सुख-दुःख दे कर आत्मासे पृथक् हो जाता है। यह निर्जरा दो प्रकार की है—१ सविपाक निर्जरा और २ अविपाक निर्जरा।

प्रदेशबन्ध—ज्ञानावरणादि कर्मोंकी प्रकृतियोंके कारणभूत और समस्त भावोंमें (वा समयोंमें) मन वचन कायके क्रियारूप योगोंसे आत्माके समस्त प्रदेशोंमें सूक्ष्म तथा एक क्षेत्रावगाहरूप स्थित जो अनन्तानन्त कर्मपुद्गलोंके प्रदेश हैं, उनको प्रदेशबन्ध कहते है। एक आत्माके असंख्य प्रदेश है। उनमेंसे प्रत्येक प्रदेशमें अनन्तानन्त पुद्गल-स्कन्धोंका (एक एक समयमें) बन्ध होता रहता है, उस बन्धको प्रदेशबन्ध कहते हैं। वे पुद्गलस्कन्ध ज्ञानावरणादि मूलप्रकृति, उत्तरप्रकृति एवं उत्तरोत्तरप्रकृतिरूप होनेमें कारण हैं और मन-वचन-कायके हलनचलन (वा योग) से उनका आगमन होता है।

उपर्युक्त कर्म-प्रकृतियाँ पुण्य और पापके भेदसे दो प्रकारकी हैं। सातावेदनीयकर्म, शुभआयुकर्म, शुभनामकर्म और शुभगोत्रकर्म ये चार प्रकृतिया पुण्यरूप हैं। आठ कर्मप्रकृतियोंमेंसे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय ये चार प्रकृतियां तो आत्माके अनुजीवी गुणोंकी घातक हैं, इसलिए पापरूप हो समझी जाती हैं। बाकीकी चार प्रकृतियोंमें दो भेद है, जैसा कि कह चुके हैं।

मोक्षमार्ग—संसारमें हर एक प्राणी सुखकी इच्छा रखता है। किन्तु उसे अनेक प्रयत्न करने पर भी दुःखके

गृध्रभोजान्तक (सं॰ पु॰) श्वफल्कके एक पुत्रका नाम।

गृध्रयातु (सं॰ पु॰) गृध्ररूपेण याति या-तुन्। अथवा गृध्रैः परिकरभूतैः सह यातयति यात-उण्। राक्षस विशेष, जो गृध्र रूपधारण कर आकाशमें परिभ्रमण करता है।

गृध्रराज (सं॰ पु॰) गृध्राणां पक्षिणां राजा, ६ तत्। गरुडके पुत्र जटायु।

गृध्रवट (सं॰ पु॰) गृध्रोपलक्षितो वटोऽत्र बहुव्री॰। तीर्थविशेष, देवस्थान। इस तीर्थमें वृषवाहन शिवजीकी मूर्ति है। इस स्थान पर उपस्थित हो स्नान करके शरीरमें भस्म लगानेसे ब्राह्मणोंको द्वादशवार्षिक व्रतानुष्ठानके समान फल होता है, और दूसरे वर्णके समस्त पाप विनष्ट होते हैं।

गृध्रव्यूह (सं॰ पु॰) गिद्धके (भारत ३।८४ अ॰) आकारकी सेनाकी रचना।

गृध्रसद् (सं॰ त्रि॰) गृध्रे सीदति गृध्रेण सीदति गच्छति वा सद्-क्विप्। जो गृध्र पर उपवेशन करता है अथवा जो गिद्ध पर चढ कर भ्रमण करता है।

गृध्रसी (सं॰ स्त्री॰) गृध्रमपि स्यति सो-क गौरादित्वात् ङीप्। वातरोगविशेष। (Lumbago) भावप्रकाशमें इसका लक्षणादि यों लिखे है—कुपित वायु नितंबदेशमें आश्रय कर स्तब्धता और वेदना उत्पन्न करता, इससे नितम्बस्थान बार बार स्पन्दित हुआ करता है। इसीको गृध्रसी कहते हैं। क्रमसे रोग बढ कर गाढ़मूलसे ऊरु, कटि, पृष्ठ, जानु, जङ्घा और पदद्वयमें पहुंच जाता और स्थान स्थानमें स्तब्धता, वेदना तथा स्पन्दन उत्पादन करने लगता है।

यह गृध्रसी रोग दो तरहका है—असंसृष्ट वायुजनित तथा कफसंसृष्टवायुजनित। असंसृष्ट वायुज गृध्रसी रोगमें शरीरमें वेदना, तथा जानु, जङ्घा और ऊरुसन्धिमें स्तब्धता और स्फुरण होती है। कफ संसृष्टवायुजनित गृध्रसी रोगमें शरीरकी गुरुता, अग्निमान्द्य, तन्द्रा (उङ्घाई), मुखसे लालस्राव तथा अरुचि होती है।

गृध्रसी रोगाक्रान्त मनुष्यको सबसे पहले वमन द्वारा शोधन करना चाहिये। यदि रोगीमें आमदोष न रहे अथवा अग्निकी वृद्धि मालूम पड़े तो वस्तिक्रिया द्वारा चिकित्सा करना उचित है। विरेचन या वमनसे शोधन किये बिना वस्तिक्रिया करना निषिद्ध है।

प्रातःकाल गोमूत्रके साथ थोड़े परिमाणमें रेंडीका तेल एक मास तक सेवन करनेसे गृध्रसी रोग दूर हो जाता है अथवा आर्द्रकका रस, जम्बीर नीबूका रस, अम्लवेतस (खट्टा साग)का रस और गुड बराबर भाग लेकर तेल या घृत प्रक्षेप कर पान करनेसे गृध्रसी रोगका प्रतिकार होता है। रेंड़ीकामूल, बेलमूल, वृहती और कण्टकारी सर्व समेत २ तोलाको आधसेर पानीमें सिद्ध करें। आधा पाव या दो छटांक पानी रहने पर उतार ल। इसमें थोड़ा सौवर्चल लवण (सोरानमक) डाल कर पान करनेसे गृध्रसीजनित शूल नष्ट होता है। गोमूत्र और एरण्ड तेल ४ तोलाके साथ ४ माषा पिप्पली चूर्ण मिश्रित कर पान करनेसे पुराना वात और कफसे उत्पन्न गृध्रसी रोग दूर हो जाता है। वासक, दन्ती और सोंदाल २ तोला आधा सेर पानीमें सिद्ध कर आधपाव पानी रहने पर उतार लें और उसे अच्छी तरह छान कर थोड़ा एरण्डका तैल मिला कर पान करनेसे अचल गृध्रसी रोगीकी स्तब्धता दूर होकर गमनशक्तिका सञ्चार होता है। वात देखो।

गृध्राकार (सं॰ पु॰) भासपक्षी।

गृध्राण (सं॰ पु॰) १ गृध्रके जैसा स्वभाव। २ गृध्रपत्रा वृक्ष, तम्बाकूका पेड़।

गृध्राणी (सं॰ स्त्री॰) गृध्र इवानिति अन्-अच् गौरादित्वात् ङीष् संज्ञायां णत्वं। धूम्रपत्रावृक्ष; तम्बाकूका पेड़।

गृध्री (सं॰ स्त्री॰) कश्यपकी स्त्री ताम्राकी एक कन्या। (विष्णुपु॰ १।२१।१५)

गृभ (सं॰ पु॰) गृह हकारस्य भकारः छान्दसत्वात्। गृह, घर।

गृभि (सं॰ पु॰) ग्रह-कि संप्रसारणं छान्दसत्वात् हकारस्य भकारः। पकड़नेकी क्रिया, ग्रहण करनेका भाव।

गृभीत (सं॰ त्रि॰) ग्रह क्त-छान्दसत्वात् हकारस्य भकारः। १ गृहीत, पकड़ा हुआ, ग्रहणयुक्त। २ गृहीतयज्ञ, जिसने यज्ञ ग्रहण किया हो। (भागवत १०।८३।१४)

धर्म सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र-रूप है। देव—रागद्वेषरहित वीतराग, सर्वज्ञ (भूत, भविष्य और वर्तमानका ज्ञाता) और आगमका ईश्वर (सबको हितका उपदेश देनेवाला) ही यथार्थ देव है वही आप्त है, वही ईश्वर है, वही परमात्मा है। देव वही है जिसके क्षुधा, तृषा, बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह, चिन्ता मद, अरति, खेद, स्वेद, निद्रा और आश्चर्य न हो। देव वही है जो उत्कृष्ट ज्योतियुक्त (केवलज्ञानयुक्त) हो, रागरहित हो, कर्म-मल (चार घातिया-कर्म) रहित हो, कृतकृत्य हो, सर्वज्ञ हो, आदि-मध्य-अनन्त रहित हो और समस्त जीवोंका हितकारी हो। आगम वा शास्त्र—शास्त्र वही है जो सर्वज्ञ, वीतराग और हितोपदेशी आप्तद्वारा कहा गया हो, प्रत्यक्ष अनुमानादि प्रमाणोंसे विरोध रहित हो, वस्तु स्वरूपका उपदेश करनेवाला हो सब जीवोंका हितकारक हो, मिथ्यामार्गका खण्डन करनेवाला हो और वादी प्रतिवादी द्वारा जिसका कभी भी खण्डन न हो सके। गुरु—गुरु वही है जो विषयोंकी आशाके वशीभूत न हो, आरम्भ (हिंसाजनित कार्य)-रहित हो, चौबीस प्रकारके परिग्रहोंका त्यागी हो और ज्ञान, ध्यान एवं तपमें लीन हो।

इस सम्यग्दर्शनके आठ अङ्ग हैं—(१) निःशङ्कित्व, (२) निःकांक्षित्व, (३) निर्विचिकित्सित्व, (४) अमूढ-दृष्टित्व, (५) उपबृंहण, (६) स्थितिकरण, (७) वात्सल्य और (८) प्रभावना। जिस प्रकार मनुष्यशरीरके हस्त पादादि अङ्ग हैं, उसी प्रकार ये सम्यग्दर्शनके अङ्ग हैं। जिस प्रकार मनुष्यके शरीरमें किसी अङ्गका अभाव हो, तो भी वह मनुष्यशरीर ही कहलाता है, उसी प्रकार यदि किसी सम्यग्दर्शन-युक्त आत्माके सम्यक्त्वके किसी अङ्गकी कमी हो, तो भी वह सम्यग्दृष्टि कहलाता है। किन्तु उस अङ्गके बिना वह शरीर असुन्दर और अप्रशंसनीय अवश्य होता है। इसी प्रकार सम्यक्त्वमें भी समझना चाहिये। इसलिए अष्टाङ्गविशिष्ट सम्यग्दर्शन ही प्रशस्त है और पूर्ण सम्यक्त्व कहलाता है अर्थात् आठ अङ्गोंके बिना सम्यग्दर्शन अपूर्ण होता है।

१म निःशङ्कित-अङ्ग—वस्तुका स्वरूप यही है, इस प्रकार ही है, अन्य प्रकार नहीं है, इस प्रकार जैन मार्गमें खड्गके पानी (तलवारकी आब)के समान निश्चल श्रद्धाको निःशङ्किताङ्ग कहते हैं। इस अङ्गके होनेसे सर्वज्ञकथित श्रुतमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं रहता। जैनशास्त्रोंमें इस अङ्गको पूर्ण रीतिसे पालनेवाले अञ्जनचोरका नाम प्रसिद्ध है।

२य निःकांक्षित-अङ्ग—जो कर्मोंके वश है, अन्त सहित है, जिसका उदय दुःखोंसे युक्त है और जो पापका बीजभूत है, ऐसे सांसारिक सुखमें अनित्यरूप श्रद्धा रखना अर्थात् सांसारिक सुखकी वाञ्छा नहीं करना ही निःकांक्षित नामक अङ्ग है। जैनशास्त्रोंमें इस अङ्गको पूर्णतया पालनेवाली अनन्तमतीका उल्लेख मिलता है। ३य निर्विचिकित्सित-अङ्ग—धर्मात्माओंके स्वभावसे अपवित्र किन्तु रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र)-से पवित्र शरीरमें ग्लानि न कर उनके गुणोंमें प्रीति करनेको निर्विचिकित्सितअङ्ग कहते हैं। इस अङ्गका पालक उद्दायन राजा प्रसिद्ध हुआ है। ४र्थ अमूढ़-दृष्टिअङ्ग—दुःखोंके मार्गरूप कुमार्ग वा मिथ्यामतमें एवं उसके अनुयायी मिथ्यादृष्टियोंमें मनसे सहमत नहीं होना, वचनसे उनकी प्रशंसा नहीं करना और शरीरसे उनकी सहायता नहीं करना, यह अमूढ-दृष्टिअङ्गका कार्य है। इस अङ्गके पालनेमें रेवती रानीने प्रसिद्धि पाई है। ५म उपगूहन अङ्ग—जो अपने आप ही पवित्र है, ऐसे जैनधर्मकी अज्ञानी एवं असमर्थ व्यक्तियोंके आश्रयसे उत्पन्न हुई निन्दाको दूर करनेका नाम है उपगूहनाङ्ग। इस अङ्गके पालनेमें जिनेन्द्रभक्त सेठने प्रसिद्ध पाई है। ६ठ स्थितिकरण अङ्ग—सम्यग्दर्शनसे वा सम्यक्चारित्रसे डिगते हुए व्यक्तिको धर्ममें स्थिर कर देना, स्थितिकरणअङ्ग कहलाता है। इसके पालनेमें श्रेणिकराजाके पुत्र वारिषेणने ख्याति लाभ की है। ७म वात्सल्य अङ्ग—अपने सहधर्मी व्यक्तियोंसे सद्भाव रखना, निष्कपटताका व्यवहार करना और यथायोग्य उनका आदरसत्कार करना, वात्सल्याङ्ग कहलाता है। इस अङ्गके पालक विष्णुकुमार मुनि प्रसिद्ध हुए हैं। ८म प्रभावना अङ्ग—संसारमें चारों ओर अज्ञान अन्धकार फैला हुआ है; लोग नहीं जानते कि सुमार्ग

की परीक्षा करानी चाहिये। दृढ़ और नीची भूमि ब्राह्मणोंके लिये अच्छी होती है। क्षत्रियोंके लिए गहरी जमीन, वैश्योंके लिए ऊंची और शूद्रोंके लिए समान भूमि ही उत्तम है।

जिस स्थान पर कुश, काश, ब्राह्मी दुर्वा न पैदा होती हो, वह स्थान क्षत्रियोंके लिए, फल और पुष्पयुक्त स्थान वैश्योंके लिए; तथा साधारण तृणयुक्त स्थान शूद्रोंके लिये उत्तम है। जिस स्थानमें बड़े बड़े पत्थर हों, जो देखनेमें मूसल सरीखा हो, अतिशय वायुके वेगसे पीड़ित हो, विकटाकार हो, वल्लतृण वा भल्लकयुक्त हो जिस स्थानके आस-पास चैत्य, श्मशान, वल्मीक या धूर्तोंका वास हो, जो स्थान चतुष्पथ हो, देवालय या मन्त्रिभवनके निकटवर्ती हो और जिस स्थानमें बहुतसे गड्ढे हों, वह स्थान मनोरम होने पर भी त्याज्य है।

जिस वर्णके लिए जिस रंगकी और जो गन्धयुक्त मृत्तिका प्रशस्त है, उस वर्णवालेको उसीमें धन, धान्य और सुखकी वृद्धि हो सकती है। परन्तु इसके विपरीत होनेसे विपरीत फल होता है। चतुरस्र भूमि पर घर बनवानेसे धनकी वृद्धि, सिंहाकार जमीन पर घर बनवानेसे गुणशाली पुत्रका लाभ, वृष सदृश स्थान पर बनवानेसे पशुवृद्धि, वृत्ताकारमें वित्तलाभ, तथा भद्रपीठ और त्रिशूलाकार भूमिमें वीरका जन्म और नाना प्रकारके सुखोंकी प्राप्ति होती है। लिङ्गाभ भूमि लिङ्गीके लिए प्रशस्त है। प्रासादध्वज सदृश स्थानमें पदोन्नति होती है, और कुम्भाकार, त्रिकोण, शकटाकार, तथा सर्प वा व्यञ्जन सदृश भूमि घर बनानेसे यथाक्रमसे धनवृद्धि, सुख सौख्य, अर्थ और धनहानि होती है। मृदङ्गाकार भूमि वंशनाशिनी है, सर्प वा मण्डूकाकार भूमि पर घर बनानेसे भय, गर्दभ सदृश स्थानमें धननाश, अजगर सदृश भूमिमें मृत्यु और चिपिटाभूमिमें पौरुषकी हानि होती है। चैत्यके पास घर बनवानेसे गृहस्वामीके लिए भय, धूर्तोंके वासस्थानके पास बनवानेसे पुत्रकी मृत्यु, चतुष्पथमें अकीर्ति और मन्त्रिभवनके पास गृह बनवानेसे धनकी हानि होती है। इस प्रकार निन्दनीय स्थानोंके बुरे फल और उत्तम स्थानोंके अच्छे फल शास्त्रकारोंने लिखे है। उन विवरणोंको मूलग्रन्थमें देखना चाहिये।

स्थान मनोनीत होने पर उस जगह एक हाथका एक गड्ढा खोदना चाहिये। उस गड्ढेकी मिट्टी बाहर निकाल कर फिर उसीमें डाल देना चाहिये। मिट्टी अगर ज्यादा हो तो उत्तम, समान हो तो मध्यम और कमती हो तो उस स्थानको धन्य समझना चाहिये। जघन्य स्थानमें गृह निर्माण करनेसे गृहस्वामीका अमंगल होता है। अथवा उस गड्ढेको पानीसे भर कर एक सौ पैर चलना चाहिये, फिर लौट कर अगर गड्ढेका पानी जरा भी न घटे तो उस जमीनका सबसे उत्तम समझना चाहिये या उस गड्ढेमें चार सेर पानी डाल कर सौ पैर चलना चाहिये, और लौटकर यदि उसे ६४ पल पानी मिले तो उस भूमिको भी उत्तम समझना चाहिये। कच्चे मिट्टीके वर्तनमें चार वती जला कर उस गड्ढेमें रख देना चाहिये, जिस दिशाकी वत्ती जोरसे जले; उस दिशाका प्रशस्त समझना चाहिये। उस गड्ढेमें श्वेत, रक्त, पीत और कृष्णवर्णके चार फूल रखदेना चाहिये। दूसरे दिन सुबह तक जिस वर्णका फूल म्लान न हुआ हो उसी जातिके लिए वह स्थान मंगलकर होता है। वराहमिहिरका कहना है कि शास्त्रकारोंने भूमिको बहुत तरहकी परीक्षाएं लिखी हैं, उसमेंसे गृहस्वामी जिस परीक्षाको पसंद करे, उस परीक्षा द्वारा जमीनकी जाँच करानेसे ही काम चल सकता है। इससे एक स्थानको बार बार परीक्षा नहीं करनी पड़ती।

जो स्थान घरके लिये मनोनीत किया गया है, उस स्थानमें पहिले हल चला कर सर्वबीज बोना चाहिये। उक्त बीज तीन रात्रिमें अङ्कुरित हो, तो उसे उत्तम और पांच रात्रिमें अङ्कुरित हो, तो उसे अधम समझना चाहिये। व्रीहि, शालि, मुद्ग, गोधूम, सर्षप, तिल, और यव ये सात सर्व बीज हैं।

इस प्रकारसे वास्तु भूमिकी परीक्षा करके, फिर शुभदिन, शुभलग्न और शुभ शकुनमें गृहस्वामीको राज-मजूरोंको साथ लेकर उस स्थानमें जाना चाहिये।

वृहत्संहितामें लिखा है कि, घर बनानेसे पहिले उस जमीनमें हल चलाकर वहां बीजरोपण करना पड़ता है। बादमें उस जगह एक दिवारात्रि ब्राह्मण और गायको

है। वस्तुका निर्णय करनेवाला ज्ञान है, बिना ज्ञानके जगत्‌में किसी पदार्थका कभी किसी शक्ति द्वारा निर्णय नहीं किया जा सक्ता. कारण कि जड़ पदार्थोंमें तो स्वयं निर्णायक शक्ति नहीं है, वे सभी जानने योग्य हैं, वे दूसरोंका परिज्ञान करानेकी योग्यता नहीं रखते, इसी लिये वे ज्ञेय अथवा प्रकाश्य मात्र कहे जाते हैं, इसके विपरीत ज्ञानमें ज्ञायकता है अर्थात् वह पदार्थोंका बोध कराता है, ज्ञानका कार्य ही यही है कि वह ज्ञेय-पदार्थोंको जाने। एक बात यह भी है कि बिना वस्तुका स्वरूप समझे उससे कोई हानि लाभका बोध नहीं कर सक्ता। बिना हानि लाभका बोध किये छोड़ने योग्य पदार्थोंको छोड़ा भी नहीं जा सक्ता एवं ग्राह्य पदार्थोंको ग्रहण भी नहीं किया जा सक्ता, पदार्थगत गुण दोषोंका परिज्ञान होने पर ही उसे ग्रहण किया जा सक्ता है एवं छोड़ा जा सक्ता है इसलिये पदार्थ एवं तद्गत गुणदोषोंका बोध करा कर उसमें हेय उपादेय रूप बुद्धि करानेवाला ज्ञान ही प्रमाण हो सक्ता है। अन्य दर्शनकारोंने इंद्रिय एवं सन्निकर्ष आदिको ही प्रमाण माना है। जैन उन्हें प्रमाण माननेमें यह आपत्ति देते हैं कि सन्निकर्ष — इन्द्रिय पदार्थका सम्बन्ध ही यदि प्रमाण माना जायगा तो घट पटादि पदार्थ भी प्रमाणकोटिमें लाने चाहिये, जिस प्रकार घट पटादि जड़ होनेसे प्रमाण नहीं कहे जा सक्ते, उसी प्रकार इन्द्रिय पदार्थ सम्बन्ध रूप सन्निकर्ष भी जड़ होनेसे प्रमाण नहीं कहा जा सक्ता। क्योंकि सम्बन्ध स्वयं बोध रूप नहीं है किन्तु बोध संबंधका उत्तर काय है, इसलिए वही प्रमाण है। दूसरे इन्द्रिय पदाथ सम्बन्ध होने पर भी सीपमें चांदीका भान तथा पीतलमें सोनेका भान आदि होता है, सन्निकर्ष तो वहां उपस्थित नहीं है इसलिये इन मिथ्या ज्ञानोंको भी प्रमाण मानना पड़ेगा। तीसरे ईश्वरके इन्द्रियोंका तो अभाव है इसलिये उसके सन्निकर्ष कैसे बनेगा. बिना उसके हुए उसका ज्ञान प्रमाण रूप नहीं कहा जा सक्ता, यदि वहां भी सन्निकर्ष माना जायगा तो ईश्वरीय बोध सर्वज्ञ न हो कर छद्मस्थ ठहरेगा। इत्यादि अनेक कारणोंसे जैन मतानुसार ज्ञानको ही प्रमाण माना गया है।

ज्ञानको प्रमाण मानता हुआ भी जैन दर्शन सामान्य ज्ञानको प्रमाण नहीं मानता, किन्तु, सम्यग्ज्ञान सत्य ज्ञानको ही प्रमाण मानता है, यदि ज्ञानमात्रको प्रमाण माना जाय तो संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय इन मिथ्या ज्ञानोंमें भी प्रमाणता आ सक्ती है। उपर्युक्त तीनों ही ज्ञान पदार्थोंका ठीक ठीक बोध नहीं कराते इसलिये इन्हें मिथ्याज्ञान कहा जाता है। संशयज्ञान वहां होता है जहां दो कोटियोंमें समान ज्ञान उत्पन्न होता है, जैसे रात्रिमें न तो पुरुषके हाथ पैर नाक मुंह आदिका ही स्पष्ट ज्ञान होता है और न वृक्षको शाखा गुच्छे आदिका ही होता है. वैसी अवस्थामें एक लम्बायमान स्थाणु - वृक्षके ठूंठको देख कर किसी पथिकको यह बोध होना कि यह वृक्ष है या पुरुष है, संशय ज्ञान कहा जाता है। इस संशयज्ञानमें न तो पुरुषका ही निश्चय हो सका और न वृक्षका ही हुआ, दोनों ज्ञान समान रूपसे हुए हैं, इसलिये पदार्थोंका निर्णय न होनेसे यह संशयज्ञान मिथ्या है। विपर्यज्ञानमें एक विपरीत कोटिका निश्चय हो जाता है। जैसे सीपमें किसी पुरुषको चांदीका निश्चय हो जाना, सीपमें चांदीका निश्चय एक कोटि ज्ञान है परन्तु वह विपरीत है इसलिये वह भी मिथ्याज्ञान है। अनध्यवसायमें भी पदार्थका निर्णय नहीं होता, किन्तु अव्यक्त सदृश अनिश्चयात्मक बोध होता है। जैसे मार्गमें गमन करते हुए किसी पुरुषके किसी वस्तुका स्पर्श होने पर उसे उसका निर्णय नहीं होता किन्तु कुछ लगा है ऐसा मलिन बोध होता है, ये ही अनध्यवसाय ज्ञान कहा जाता है। यह भी पदार्थ निश्चायक न होनेसे मिथ्याज्ञान है। इन तीनों ज्ञानोंका समावेश प्रमाणज्ञानमें नहीं होता। इसीलिये प्रमाणज्ञान सम्यग्ज्ञान कहा गया है। ज्ञानमें बिना सम्यक् विशेषण दिये मिथ्याज्ञानोंका परिहार नहीं हो सक्ता। कुछ लोग ज्ञानको पर निश्चायक मानते हैं उसे स्वनिश्चायक नहीं मानते हैं। परन्तु यह बात प्रसिद्ध है कि जो स्वनिश्चायक नहीं होता है वह पर-निश्चायक भी नहीं होता है। जैसे घट पटादिक अपना प्रकाश नहीं करते हैं इसलिये वे परका भी प्रकाश करनेमें सर्वथा असमर्थ हैं। सूर्य एवं दीपक अपना

है,—२८।०, २३।१६ और २८।८। शूद्रोंके दो प्रकारके घरकी लम्बाई २५ और २० हाथ हैं। अन्त्यजोंके घरकी लम्बाई १६ हाथसे ज्यादा न होनी चाहिये। सब ही जातियोंके लिये अपने अपने परिमाणसे ज्यादा वा कम मापके मकान अमङ्गलकर हैं। परन्तु पश्वालय, प्रव्राजिकालय, धान्यागार, अस्त्रागार, अग्निशाला और रतिगृह वा बैठकका परिमाण अपनी इच्छानुसार कर सकते है। कोई भी घर हो एक सौ हाथसे ज्यादा ऊंचा अच्छा नहीं और न करना ही चाहिये।

मकानके भीतरी हिस्सेको शाला कहते है। कौन-से मकानकी शाला किस मापकी होनी चाहिये, उसका परिमाण वृहत्संहितामें इस प्रकार लिखा है—राजा और सेनापतिके मकानके व्यासके साथ ७० को जोड कर २ से भाग देकर जो भागफल हो, उस १४ से भाग देने पर जो उपलब्ध होगा, वही नृप गृहकी शालाका माप शाला भित्तिके वाहिरके हिस्सेके सोपानयुक्त आंगनको प्राचीन वास्तुशास्त्रोपदेष्टाओंने अलिन्द नामसे उल्लेख किया है। पूर्वप्रदर्शित द्विविभक्त अंकको ३५से भाग करनेसे जो फल उपलब्ध होगा, वही राजाके गृहके आंगनका परिमाण है। दूसरी जातिके मकानकी शाला और आंगनका परिमाण निकालना हो तो राजा और सेनापतिके घरके व्यासके योगफलके साथ ७० को जोड़कर, उसमेंसे अपनी जातिके व्यासाक घटा देना चाहिये। पीछे उसमेंसे आधे अंक घटा कर, उसको यथाक्रमसे १४ और ३५ द्वारा भाग करके जो दो अंक उपलब्ध होंगे, उसे अपनी जातिकी शाला और आंगनका माप समझना चाहिये।

पहिले ब्राह्मण आदिके पाँचप्रकार वास्तुपरिमाण जो कहे गये है, उसमें यथाक्रमसे ४।१७, ४।३, ३।१५ ३।१२ और ३ हाथ ४ अङ्गुलकी शलाऐं तथा ३ १८, ३।८, ३।२०, ३।१८ और २ हाथ ३ अंगुलके आँगन होने चाहिये। शालाका ⅓ अंश स्थान भवनके वाहर रखना चाहिये। प्राचीनकालमें वीथिका कहा जाता था। यह वीथिका मकानके पूर्वकी तरफ रहनेसे, उस मकानको सोष्णीष, पश्चिममें रहनेसे सायाश्रय और उत्तर या दक्षिणमें रहनेसे उस मकानका सावष्टम्भ नामसे उल्लेख कर सकते है। यदि किसी मकानके चारों ओर वैसी वीथिका रहे, तो उसको सुस्थित कहते है। वास्तुशास्त्रमें इस प्रकारके मकानोंकी विशेष प्रशंसा की गई है। ये सब मकानही गृहस्थके लिए मंगलजनक है।

मकानकी ऊंचाई या उच्छ्राय—उत्तम मकानके विस्तारके —अंशके साथ ४ हाथ और जोडदेनेसे जितना होगा, उस घरकी ऊंचाई उतनी ही होनी चाहिये। वाकीके चार प्रकारके घरोंकी ऊंचाई क्रमशः उससे वारहवें भाग घटती जायगी।

भीतका माप—जो भीतें पकी हुई ईंटोंसे वनाई जाती हैं, उनका परिमाण व्यासके १६ भागमेंका १ भाग करना चाहिये। परन्तु काठसे जो भीत वनाई जाती है, उसका परिमाण अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं।

दरवाजेका परिमाण—राजा और सेनापतिके घरके व्यासके साथ ७० जोड़ कर ११से भाग देनेसे जो फल उपलब्ध होगा उतने हाथका विस्तार उसके दरवाजेका होगा। उस दरवाजेका विस्तार जितने अङ्गुलका होगा उतने ही हाथकी उसकी ऊंचाई होनी चाहिए तथा विस्तारसे आधा दरवाजेका फैलाव करना उचित है। ब्राह्मण आदि दूसरी जातिके लोगोंके गृहव्यासके पञ्चाशके साथ १८ अंगुल जोडनेसे जितना हो, उतना ही उनके घरके दरवाजेका माप है। द्वारके मापका अष्टांश, दरवाजेका फैलाव और फैलावसे दूनी ऊंचाई होनी चाहिये। दरवाजेकी ऊंचाई जितने हाथकी होगी, उतने अङ्गुल प्रमाण उसकी दोनों शाखा होनी चाहिये, और शाखासे छोटी चौखट होनी चाहिये। ऊंचाई जितने हाथकी होगी उतनी संख्याको १७से गुणा करके ८० सेभाग देनेसे जो फल उपलब्ध होगा उतना ही उसके पृथुत्व (मुटाई) का नाप समझना चाहिये। (वृ० सं० ५६।१-२०)

ऊंचाईको ५से गुणा करके ८०से भाग देने पर जितना लब्ध वचा हो उसमेंसे अपना १०वां अंश घटानेसे जो वचे उतने मापकी स्तम्भकी अगाड़ी करना चाहिये। स्तम्भ यदि समचतुरस्र या चौखूंटा हो तो उसे रुचक, अष्टास्रि या अठकोन हो तो वज्र, सोलह कोणवाला हो तो द्विवज्र, वत्तीस कोनवाला हो तो पुलीनक और वृत्ताकार वा गोल हो तो उसे वृत कहते

परोक्ष कोटिमें शास्त्रकारोंने गिनाया है। क्योंकि इन्द्रियां भी आत्माकी अपेक्षा पर वस्तु हैं। जिस प्रकार चश्मेकी सहायतासे होनेवाला ज्ञान तथा दीपक, सूर्य, और पुस्तकका प्रकाश आदिकी सहायतासे होनेवाला ज्ञान परोक्ष कहलाता है, वह साक्षात् सीधा न हो कर परकी सहायतासे होता है उसी प्रकार वह ज्ञान भी आत्मासे साक्षात् न हो कर इन्द्रियोंकी सहायतासे होता है, दूसरे इन्द्रियजनित ज्ञान उतना निर्मल नहीं हो सक्ता जितना कि साक्षात्ज्ञान होता है। इसलिये भी उसे परोक्ष कहते हैं।

परोक्षज्ञानके पाँच भेद हैं, स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, अनुमान और आगम। इन्हीं पांच भेदोंमें जगत्में भिन्न भिन्न रूपसे कहे जानेवाले नाना ज्ञान अंतर्भूत हो जाते हैं।

किसी पहले देखी हुई परोक्ष बातका निमित्त पाकर स्मरण करनेको स्मृतिज्ञान कहा जाता है, जैसे पहले जैनकोष देखा हो, पीछे विश्वकोषको देख कर जैनकोषका स्मरण करना कि वह भी इतना ही विस्तृत है. प्रत्यभिज्ञानमें इससे एक कोटि और भी बढ जाती है, जो पदार्थ पहले देखा हो, कुछ दिन पश्चात् फिर उसी वस्तुके देखने पर यह ज्ञान होना, कि यह वही वस्तु जिसे पहले देखा था, इस प्रकारका ज्ञान न तो प्रत्यक्षज्ञानमें सम्हाला जा सकता है क्योंकि वह वर्तमानमात्रको विषय करता है, यहां पर वर्तमानके साथ भूतका स्मरण भी जुड़ा हुआ है और न वह स्मरणमें ही सम्हाला जा सक्ता है, उसमें केवल परोक्ष पदार्थका ही ग्रहण है, यहां पर वर्तमानका प्रत्यक्ष भी है, इसलिये जो ज्ञान भूतका स्मरण और वर्तमानका दर्शन, इन दोनों अंशोंको एक साथ ग्रहण करें वह प्रत्यभिज्ञान कहा जाता है। "यह वही है जिसे पहले देखा था" यहां पर "यह वही है, इतना वर्तमान अंश है, जिसे पहले देखा था" यह भूतका स्मरणांश है, दोनोंका मिश्रित ज्ञान होनेसे तीसरा ही प्रमाण सिद्ध होता है।

तीसरा तर्कज्ञान है। व्याप्तिज्ञानको तर्क कहते हैं, अर्थात् अविनाभाव संबन्धका ज्ञान हो जाने को ही तर्क कहते हैं; जहां धूम होता है वहा अग्नि अवश्य होती है; इसलिये अग्निके साथ धूमका अविनाभाव संबंध है, इस अविनाभाव सम्बन्धको व्याप्ति कहते हैं, इस व्याप्तिका, अविनाभाव सम्बन्धका निश्चयात्मकबोध होनेको तर्क कहते हैं। यह तर्क प्रमाण स्वतंत्र प्रमाण है किसी अन्य प्रमाणमें गर्भित नहीं किया जा सक्ता।

कुछ लोग तर्कका अर्थ तर्क वितर्क अथवा वाद विवाद करना बतलाते हैं, जैसे कहा जाता है कि उसने अनेक तर्क वितर्क किये, यहां पर तर्क शब्दका अर्थ शंका या वितंडावाद होता है, ऐसा तर्क शब्दार्थ प्रमाण कोटिमें नहीं लिया जा सक्ता, वह अप्रमाण है। प्रमाण रूप जो तर्कज्ञान है वह यथार्थ वस्तुका निश्चयात्मक बोध है अनुमान प्रमाणमें कारण भूत है; यदि कारणमें विपर्यास हो तो अनुमान रूप कार्य भी मिथ्या ठहरेगा इसलिये तर्क प्रमाण एक स्वतन्त्र प्रमाण है। वह इस तर्क वितर्क रूप लौकिक अर्थसे सर्वथा जुदा होता है।

चौथा परोक्षज्ञान अनुमान प्रमाण है। जगत्में अनेक बहुभाग पदार्थोंका निर्णय इस अनुमान प्रमाणसे ही किया जाता है, हमारे इन्द्रियज्ञानसे बहुत थोडे पदार्थ जाने जा सक्ते हैं, बाकी सब परोक्ष हैं, कोई तो कालसे परोक्ष है. जैसे रामरावणादिक, कोई क्षेत्रसे परोक्ष हैं जैसे विदेहक्षेत्र, सुमेरु पर्वत, नन्दीश्वर द्वीप आदि, कोई सूक्ष्म होनेके कारण परोक्ष हैं, जैसे परमाणु काल, धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश, जीव आदि। इन सब परोक्ष पदार्थोंका ज्ञान दो प्रकार होता है। एक आगम प्रमाणसे दूसरे अनुमान प्रमाणसे। दोनों ही प्रमाण वस्तुनिश्चायक सत्यरूप हैं, आगम प्रमाणकी व्याख्या आगे कही जायगी। पहले अनुमान प्रमाणका विवेचन किया जाता है इसके विना समझे परोक्ष वस्तुओंका निर्णय करना असम्भव ही है।

पहले यह प्रगट कर देना आवश्यक है कि लोकमें जो लोगोंकी कहावतोंमें अनुमान लिया जाता है, जैसे मेरा अनुमान है कि वह वहां होना चाहिये, मैं अनुमान करता हूं कि अमुक पुरुषने उसकी चोरी की आदि, यह अनुमान यहां प्रमाण कोटीमें नहीं लिया जाता, ऐसे लौकिक अनुमानको अंदाजा या निर्जीबुद्धिका

मृत्यु होती है। परन्तु वशिष्ठने ऐसा लिखा है कि, ग्टह और ग्टहस्वामीकी एकसी राशि तथा एकसे नक्षत्र होनेसे ऐसा होता है। भिन्न भिन्न राशिमें एकसे नक्षत्र होने पर भी मकान बनाया जा सकता है। इसमें कोई तरहका विघ्न नहीं आता। व्यवहारसमुच्चयमें ऐसा लिखा है—कृत्तिका आदि तीन तीन नक्षत्रोंके यथाक्रमसे नौ फल होते हैं जैसे,—१ रोगनाश, २ पुत्रलाभ, ३ धनकी प्राप्ति, ४ शोक, ५ शत्रुका भय, ६ राजाका भय, ७ मृत्यु, ८ सुख, ९ प्रवास।

वास्तुशास्त्रके अनुसार मकानके नक्षत्र अश्विनी, भरणी और कृत्तिका होनेसे मेषराशि, रोहिणी और मृगशिरा होनेसे वृषराशि आर्द्रा और पुनर्वसु होनेसे मिथुनराशि, पुष्य और अश्लेषा होनेसे कर्कट राशि, मघा, पूर्वफाल्गुनी और उत्तरफाल्गुनी होनेसे सिंह राशि, हस्ता और चित्रा होनेसे कन्या, स्वाती और विशाखा होनेसे तुला, अनुराधा और ज्येष्ठा होनेसे वृश्चिक, मूला, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा होनेसे धनु, श्रवणा और धनिष्ठा होने पर मकर, शतभिषा और पूर्वभाद्र होनेसे कुम्भ तथा उत्तरभाद्र और रेवती नक्षत्र होनेसे मकानकी मीनराशि होती है।

तिथिका फल—पूर्व प्रक्रियाके अनुसार घरकी तिथि रिक्ता वा अमावस्या होनेसे घर न बनाना चाहिये। इसके अलावा दूसरी तिथियोंमें घर बनानेसे मङ्गल होता है।

योगका फल—जो योग शुभ कहे गए हैं, घरके लिए वेही योग शुभ है। अशुभ योग होनेसे अमङ्गल होता है।

आयुका फल—प्रक्रियाके अनुसार जितने वर्षकी आयु निकलेगी उतने वर्ष तक मकानकी स्थित समझना चाहिये।

अंशका फल—द्वितीय अंशमें ग्टह बनानेसे मृत्युका भय, रोग और शोक उत्पन्न होते हैं। शुभग्रहके अंशको अच्छा और अशुभग्रहके अंशको अनिष्टकर समझना चाहिये।

इसी नियमके अनुसार घरका आय-व्यय आदि जाननेका तरीका—कोई एक घर लम्बाईमें २९ हाथ और विस्तार-में ७ हाथ है, तो उसकी लम्बाई २९ हाथको विस्तार ७ हाथसे गुणा करनेसे २०३ होगा। यह घरका पिण्ड हुआ। पिण्ड २०३को ९से गुणा करनेसे १८२७ होगा, इसको ८से भाग करनेसे बाकी बचेगा ३। इसलिये उस घरको सिंह नामक ३री आय हुई।

वार—पिण्ड २०३को ९से गुणा करनेसे १८२७ होगा, उसकी ७से भाग देनेसे बाकी ७ या शून्य बचेगा। इस प्रकार उस घरका शनिवार हुआ। (नवांशक) पिण्ड २०३को ६से गुणा करनेसे १२१८ होता है, इसको ९ से भाग करना चाहिये, बाकी बचेगा ३। इस प्रकार उस घरका अंशक ३ हुआ।

धन—पिण्ड २०३×८=१६२४÷१२ अवशिष्ट बचा ४। मकानका धन हुआ ४।

ऋण—पिण्ड २०३×३=६०९−८=७६ बाकी ४ चा। इस प्रकार घरका ऋण १ हुआ।

नक्षत्र—पिण्ड २०३×८=१६२४−२७=६० बाकी बचा ४। ग्टहका नक्षत्र रोहिणी।

तिथि—पिण्ड २०३×८=१६२४−१५=१०८ अवशिष्ट रहा ४। ग्टहकी तिथि चतुर्थी हुई।

योग—पिण्ड २०३×४=८१२−२७=३० बाकी बचा २। घरका योग प्रीति है।

आयु—पिण्ड २०३×८=१६२४−१२०=१३ बाकी बचा ६४। मकानकी आयु ६४ वर्षकी हुई।

विश्वकर्म प्रकाशके मतानुसार ११ हाथसे लेकर ३२ हाथ तक ही आयादिकी चिन्ता करनी चाहिये। इससे ज्यादा होने पर आयादिकी चिन्ता करना व्यर्थ है। घर-की मरम्मत करते समय आय, व्यय वा मास शुद्धि आदि देखनेकी जरूरत नहीं। वास्तुके ईशान कोणमें देवग्टह, पूर्वमें स्नानागार, अग्निकोणमें रसोई घर, दक्षिणमें शय-नागार, नैऋत कोणमें अस्त्रशाला, पश्चिमकी ओर भोजन-ग्टह, वायुकोणमें धान्यालय, उत्तरमें भाण्डागार, अग्नि-कोण और पूर्व दिशाके बीचमें दधिमन्थघर, अग्निकोण और दक्षिण दिशाके बीचमें घृतशाला तथा दक्षिण और नैऋत दिशाके मध्य भागमें पायुघर वा पैखाना करना चाहिये। नैऋत और पश्चिमके बीचमें विद्यालय, पश्चिम और वायु कोणके मध्यमें रोदनघर, वायु और उत्तर दिशाके बीचमें रतिघर वा बैठक, उत्तर और ईशान कोणके मध्यमें औष-धालय, ईशाण और पूर्व दिशाके मध्य भागमें अन्यान्य घर बनवाने चाहिये। सूतिकाघर नैऋत कोणमें बनाना उचित है।

आँगन और दरवाजेके भेदसे घर १६ प्रकारका होता है।

बैठा हुआ बालक श्यामवर्ण होना चाहिये क्योंकि वह मैत्रका पुत्र है, जो जो मैत्रपुत्र होते हैं वे सब श्यामवर्ण होते हैं जैसे कि उपस्थित ४ पुत्र जो मैत्रपुत्र नहीं होते वे श्यामवर्ण भी नहीं होते जैसे रैवतकपुत्र। रैवतकपुत्र सभी गौरवर्ण देख कर और मैत्रपुत्र सभी श्यामवर्ण देख कर चैत्रने अन्वय व्यतिरेक व्याप्ति द्वारा गर्भस्थ मैत्रपुत्रको श्यामवर्ण सिद्ध करनेके लिये मैत्रपुत्रत्व हेतुका प्रयोग किया है, यह मैत्रपुत्रत्वहेतु गर्भस्थ बालक रूप पक्षमें रहता ही है, सपक्ष जो परिदृष्ट मैत्रके बालक हैं उनमें भी मैत्रपुत्रत्व हेतु रहता है, विपक्ष रैवतिकके पुत्रोंमें मैत्रपुत्रत्व हेतु नहीं रहता है इसलिये यह हेतु पक्षवृत्ति सपक्षवृत्ति और विपक्षव्यावृत्ति स्वरूप होने पर भी सद्धेतु नहीं है, कारण कि गर्भस्थ बालक "श्यामवर्ण ही होगा" यह बात निश्चयपूर्वक सिद्ध नहीं की जा सकी, सम्भव है वह बालक गौर वर्ण होय, इसलिए सन्देहास्पद होनेसे अनैकान्तिक हेत्वाभास है। फिर भी इसे नैयायिक आदि सिद्धान्तकारोंने किस प्रकार सद्धेतु मान लिया है सो कुछ समझमें नहीं आता है।

एक बात यह भी स्मरण रखने योग्य है कि जैन दर्शनकार अनुमान हेतु द्वारा साध्यके निश्चयरूप ज्ञान हो जानेको कहते हैं इसके विपरीत अन्य दर्शनकार 'यह पर्वत अग्नि वाला होना चाहिए क्योंकि यहां धूम है' यह प्रतिज्ञारूप वाक्यप्रयोगको ही अनुमान बतलाते हैं, परन्तु वास्तवमें इस वाक्यप्रयोगको अनुमान प्रमाण मानना युक्तियुक्त नहीं सिद्ध होता, कारण कि प्रमाण ज्ञानरूप ही हो सक्ता है तभी उसके द्वारा वस्तु सिद्ध हो सकती है। वाक्यप्रयोग जड़ स्वरूप है उससे वस्तु सिद्धि नहीं हो सकी, हां! वाक्यप्रयोग ज्ञानरूप अनुमान प्रयोगमें साधक-अवश्य है।

यह साध्यविज्ञानस्वरूपअनुमान दो कोटियोंमें विभक्त है- एक स्वार्थानुमान दूसरा परार्थानुमान। जहां स्वयं निश्चित अविनाभावी साधनसे साध्यका ज्ञान कर लिया जाता है वहां स्वार्थानुमान कहलाता है, और जहां दूसरे पुरुषको प्रतिज्ञा और हेतुका प्रयोग कर साधनसे साध्यका बोध कराया जाता है वहां परार्थानुमान कहलाता है। कारणहेतु, कार्यहेतु, पूर्वचरहेतु, उत्तरचरहेतु, सहचरहेतु आदि अविनाभावी हेतुओंके भेदसे अनुमानके अनेक भेद हैं। जो न्यायदीपिका, प्रमेयरत्नमाला, प्रमेयकमलमार्तण्ड, अष्टसहस्री आदि जैनग्रन्थोंसे विदित होते हैं।

जैनियोंके यहां पांचवां परोक्ष प्रमाण आगमप्रमाण है। आगमका लक्षण वे लोग इस प्रकार कहते हैं— "आप्तवचनादि निबन्धनमर्थज्ञानमागमः" ९९ (परीक्षामुखः) अर्थात् जिसमें आप्त वचन कारण हों ऐसा पदार्थ ज्ञान आगम कहा जाता है। जैनियोंने ज्ञानको आगम माना है- वचन और शास्त्रोंकी जो आगमता है वह उनके यहां उपचरित है, वचन और शास्त्र उस समीचीनज्ञानमें कारण पड़ते हैं इसलिए उपचारसे उन्हें भी आगम कहा जाता है। वास्तवमें तो वचनजनित बोध होता है उसीका नाम आगम है। आगम प्रत्येक व्यक्तिके वचनसे होनेवाले ज्ञानको नहीं कहते हैं किन्तु सत्यवक्ताके वचनोंसे होनेवाले ज्ञानको ही आगम कहते हैं। क्योंकि आगमके लक्षणमें आप्त वचनको कारण माना गया है, आप्त सत्यवक्ताका नाम है। इसलिए सत्यवक्ताके वचनोंको सुन कर जो बोध होता है वही आगम है। सर्वश्रेष्ठ सत्यवक्ता जैनियोंके यहां अर्हन्त हैं, अर्हन्त उन्हें कहा जाता है जो आत्मासे—आत्मगुणोंको घात करनेवाले कर्मोंको सर्वथा नष्ट कर चुके हों, सर्वथा रागद्वेषका नाश कर वीतराग बन चुके हों, एवं जगत्के समस्त चर-अचर पदार्थोंको साक्षात् एक समयमें प्रत्यक्ष रूपसे देखते और जानते हों, ये अर्हन्त जैनियोंके यहां जीवन्मुक्त एवं सकल परमात्माके नामसे कहे जाते हैं, उनकी जो दिव्यवाणी खिरती है वह बिना इच्छाके जीवोंके पुण्योदयसे सुतरां खिरती है, अर्हन्त सर्वथा शुद्ध हो चुके हैं, इसलिये उनके इच्छा भी नष्ट हो चुकी है, वह दिव्यवाणी सत्य इसलिये कही जाती है कि एक तो समस्त पदार्थोंके ज्ञानसे उत्पन्न होती है, दूसरे—उसमें रागद्वेष कारण नहीं है। रागद्वेष अल्पज्ञता ये दो ही कारण झूठ बोलनेमें हो सक्ते हैं, अर्हन्तके दोनों बातोंका अभाव है इसलिये उनका वचन सत्य रूप है उससे जो बोध होता है वही आगम है। पश्चात्

क्षत्रियको ति-मजला, वैश्यको दु-मजला और शूद्रको एकमजला मकान बनवाना चाहिये। एकमजला मकान सबहीके लिए अच्छा है। इसमें किसीका भी अमङ्गल नहीं होता।

बृहत्संहितामें जिस प्रकार प्रत्येकके लिए गृहका परिमाण लिखा है, वैसा विश्वकर्म प्रकाश और मयशिल्प आदिमें नहीं है। इसके मतसे प्रक्रियाके अनुसार आय, व्यय, वार और नक्षत्र आदि शुद्ध होने पर मकान बनाया जा सकता है। इसके सिवाय किसके लिए कैसा मकान अच्छा होता है, इसका संक्षिप्त वर्णन भी लिखा है। बृहत्संहितामें लिखा है कि—जिस वास्तुका आंगन प्रदक्षिण क्रमसे दरवाजेके नीचे तक विस्तृत है, उसका नाम वर्द्धमान है। उसका दरवाजा दक्षिण दिशामें नहीं होना चाहिये। वर्द्धमान नामका मकान सबके लिए अच्छा है।

जिस मकानके पश्चिमका एक और पूर्वका दो आँगन आखीरतक विस्तीर्ण होते हैं, और बाकीके दो दिशाओंसे आँगन उत्थित तथा शेष पर्यन्त विस्तृत होते हैं, उसे स्वस्तिक कहते हैं।

जिस मकानके पूर्व और पश्चिमके आँगन शेष सीमा तक विस्तृत है तथा उत्तर और दक्षिण आँगन उनको सीमाको अवधिमें मिल गये हैं, उस वास्तुका नाम रुचक है। इसका द्वार उत्तर दिशामें करनेसे अमङ्गल होता है।

जिस वास्तुके आँगन प्रदक्षिणक्रमसे नीचे तक विस्तृत हैं उसका नाम नन्द्यावर्त्त है। इस मकानमें पश्चिमके सिवाय और तीन दिशाओंसे दरवाजे बनवाने चाहिये। नन्द्यावर्त्त और वर्द्धमान नामके वास्तु सबहीके लिए प्रशस्त वा उत्तम है, स्वस्तिक और रुचिक मध्यम तथा इसके अलावा दूसरे वास्तु राजाओंके वास्ते शुभ होते हैं।

जिस मकानमें उत्तरको तरफ शाला नहीं रहती, उसे हिरण्यनाभ, पूर्वमें शाला न होनेसे सुक्षेत्र, दक्षिणको तरफ शाला न रहनेसे चुल्लीत्रिशालक और पश्चिममें शाला न होनेसे पक्षघ्न कहते हैं। इनमें पहलेके दो शुभ हैं। चुल्लीत्रिशालकमें धननाश और पक्षघ्नमें पुत्रनाश तथा शत्रुता बढ़ती है। जिस मकानमें पश्चिम और दक्षिणमें दो ही शालाएं रहती है, उसको सिद्धार्थ, सिर्फ पश्चिम और उत्तरमें शाला रहनेसे यमसूर्य, उत्तर और पूर्वमें शाला रहनेसे दण्ड, पूर्व और दक्षिणमें शाला रहनेसे वात, पूर्व और पश्चिमकी ओर शाला रहनेसे घरचुल्ली, तथा सिर्फ दक्षिण और उत्तरको ओर शाला विशिष्ट दु-मजले मकानको काच कहते हैं। सिद्धार्थ वास्तुमें धन-की प्राप्ति, यमसूर्यमें मालिकको मृत्यु, दण्डमें दण्ड या वध, वातमें कलह और उद्वेग, चुल्लीमें द्रव्यका नाश, और काच वास्तुमें जातिविरोध उपस्थित होता है।

(बृहत्सं० ५३।३२-३९)

विश्वकर्मप्रकाशके मतसे—दक्षिणमें दुर्मुख और पूर्व-में खर नामक वास्तु बनवानेसे, उस दुमजले मकानको 'वात' कहते हैं। ऐसे घरमें वास करनेसे वातरोगको वृद्धि होती है। दक्षिणमें दुर्मुख और पश्चिममें धान्य नामक मकान बनवानेसे उसका नाम होगा यमसूर्य। इसमें मृत्युका भय है। पूर्वमें खर और उत्तरमें धान्य नामके घर बनवानेसे उसकी दण्ड संज्ञा होगी। इसमें दण्डका भय रहेगा। दक्षिणमें दुर्मुख और उत्तरमें जय नामके घर बनवानेसे उसको नाम वीची होगा। इसमें वन्धुका विनाश और धनका क्षय है। जिसके पूर्वमें खर नामक घर और पश्चिममें धान्य संज्ञक घर है, उसका नाम चुल्ली है। फल—धन धान्यका नाश है। दक्षिणमें आक्रंद और पश्चिममें धनद-घर बनवानेसे, उस दुमजले मकान-का इन्दु नाम होगा। इसमें पशु और धनकी वृद्धि होती है। जिसके दक्षिणमें विपक्ष और पश्चिममें क्रूर नामक घर रहे, तो उसका नाम शोभन समझना चाहिये। इस-का फल—धन और धान्यकी वृद्धि है। जिस मकानमें दक्षिणकी ओर विजय और पश्चिमकी तरफ भी विजय नामक घर रहेगा उसका नाम कुम्भ होगा। इसमें रहने-वालेके पुत्र और कलत्रोंकी वृद्धि होगी। जिसके पूर्वमें धान्य और पश्चिममें भी धान्य संज्ञक घर रहेगा, उसका नाम नन्द है, फल—धन और शोभावृद्धि। किसी भी दो दिशा-में विजय नामके दो घर बनवानेसे उसका नाम अट्टाद्य होगा। इसका शुभ फल है। वास्तुको नौ भागोंमें विभक्त करके, उसके शुभाशुभको चिन्ता करनी चाहिये।

अपर विवरण वास्तु आदि ग्रन्थोंमें देखो।

जिन वृक्षोंमें दूध या गोंद पैदा होता है, उसकी

होने पर सामान्य प्रतिभासरूप दर्शनके पीछे जो अवांतर सत्ता रहित विशेष वस्तुका ज्ञान होता है, उसे अवग्रह कहते हैं। अर्थात् किसी वस्तुकी सत्तामात्रको देखने वा जाननेको दर्शन वा दर्शनोपयोग कहते हैं और दर्शनके पश्चात् जो श्वेतकृष्णादि रूप विशेष जाननेको अवग्रह-मतिज्ञान कहते हैं। इसके बाद अर्थात् अवग्रहमति-ज्ञानके पश्चात् 'यह श्वेत वा कृष्ण क्या पदार्थ है?' इसके विशेष जाननेकी इच्छा होनेको ईहामतिज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान इतना कमजोर है कि किसी पदार्थमें ईहा हो कर छूट जाय, तो उसके विषयमें कालांतरमें भी संशय और विस्मरण हो जाता है। ईहासे जाने हुए पदार्थमें 'यह वही है, अन्य नहीं' ऐसे दृढ़ ज्ञानको अवायमतिज्ञान कहते हैं। अवायसे जाने हुए पदार्थमें संशय नहीं होता, किन्तु विस्मरण हो जाता है। और जिस ज्ञानसे जाने हुए पदार्थको कालान्तरमें नहीं भूले अर्थात् कालांतरमें भी उस पदार्थमें संशय और विस्मरण न हो, उसे धारणामतिज्ञान कहते हैं।

मतिज्ञानके विषयभूत पदार्थोंके दो भेद हैं व्यक्त और अव्यक्त। व्यक्त पदार्थको अवग्रहादि चारों ही ज्ञानसे जाना जा सकता है; किन्तु अव्यक्त पदार्थका सिर्फ अवग्रहसे ही बोध होता है। व्यक्त पदार्थोंके अवग्रहको अर्थावग्रह और अव्यक्त पदार्थोंके अवग्रहको व्यञ्जनावग्रह कहते हैं। अर्थावग्रह तो पांचों इन्द्रिय और मनसे होता है; किन्तु व्यञ्जनावग्रह चक्षु और मनके सिवा अवशिष्ट चार इन्द्रियोंसे ही होता है। व्यक्त और अव्यक्त प्रत्येकके बारह बारह भेद हैं; यथा—बहु, एक, बहुविध, एकविध, क्षिप्र, अक्षिप्र, निःसृत, अनिःसृत, उक्त, अनुक्त, ध्रुव और अध्रुव। इन बारह प्रकारके पदार्थोंका अवग्रह ईहादिरूप ग्रहण वा ज्ञान होता है। जैसे—एक साथ बहुत अवग्रहादिरूप ग्रहण होना, बहुग्रहण है इत्यादि।

२य श्रुतज्ञान—मतिज्ञानसे जाने हुए पदार्थसे सम्बन्ध रखनेवाले पदार्थके ज्ञानको श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे—'घट' शब्द सुननेके बाद उत्पन्न हुआ कम्बुग्रीवादि रूप घटका ज्ञान। यह श्रुतज्ञान मतिज्ञान पूर्वक अर्थात् मतिज्ञान होनेके बाद ही होता है; बिना मतिज्ञान हुए श्रुतज्ञान नहीं होता। इसके मुख्यतः दो भेद हैं, एक अङ्गबाह्य और दूसरा अङ्गप्रविष्ट। श्रुतका विशेष विवरण पहले "जैन शास्त्र वा श्रुत" शीर्षकमें लिखा जा चुका है, अतः यहां नहीं लिखा गया।

उपरोक्त मति और श्रुतज्ञान दोनों परोक्ष प्रमाण कहलाते हैं।

३य अवधिज्ञान—जो ज्ञान द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी मर्यादाको लिए हुये रूपी पदार्थको बिना किसी इन्द्रियकी सहायताके स्पष्ट जानता है, उसे अवधिज्ञान कहते हैं। इसके प्रधानतः दो भेद हैं—१ भवप्रत्यय अवधिज्ञान और २ क्षयोपशमनिमित्तक अवधिज्ञान। भव (जन्म) ही है प्रत्यय अर्थात् कारण जिसमें, ऐसे अवधिज्ञानको भवप्रत्यय कहते हैं; भवप्रत्यय नामक अवधिज्ञान देव और नारकियोंके होता है। कारण उस भव (जन्म)-में यही प्रभाव है कि, वहां कोई भी जीव जनमे, उसे अवधिज्ञान नियमसे होगा। किन्तु दूसरा क्षयोपशमनिमित्तक अवधिज्ञान अवधिज्ञानावरण और वीर्यान्तरायकर्मके क्षयोपशमसे होता है और वह क्षयोपशम व्रत, नियम, तपश्चरण आदिसे होता है। मुनिगण जब बहुत तपस्या आदि करते हैं, तब उन्हें अवधिज्ञान प्राप्त होता है इसमें भी इतना भेद है कि सम्यग्दृष्टिके जो अवधिज्ञान होता है, उसे ही अवधिज्ञान कहते हैं और जो मिथ्यादृष्टियोंके होता है, उसे विभङ्गावधि कहते हैं। क्षयोपशमनिमित्तक अवधिज्ञान मनुष्य और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके सिवा अन्य किसीको भी नहीं होता। इसमें भी सम्यग्दर्शनादिके निमित्तसे जो क्षयोपशमनिमित्तक अवधिज्ञान होता है, उसे गुणप्रत्यय कहते हैं। इस क्षयोपशमनिमित्तक-गुणप्रत्यय-अवधिज्ञानके छः भेद हैं। यथा—१ अनुगामी, २ अननुगामी, ३ वर्द्धमान, ४ हीयमान, ५ अवस्थित, और ६ अनवस्थित। अनुगामी—जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीवके साथ गमन करे, उसे अनुगामी कहते हैं। इसके तीन भेद हैं, १ क्षेत्रानुगामी, २ भवानुगामी और ३ उभयानुगामी। जिस जीवको जिस क्षेत्रमें अवधिज्ञान प्राप्त हुआ, उस जीवके अन्य क्षेत्रमें गमन करने पर भी जो अवधि-

उचित है। कटा हुआ वृक्ष यदि उत्तर या पूर्व दिशामें गिरे, तो उसे शुभ समझना चाहिये। इसके अलावा दूसरी दिशाओंमें गिरनेवाले वृक्षकी लकडीको अशुभ जानना, ऐसी लकड़ी मकानमें लगाने लायक नहीं। पेड़को काटने पर यदि उस काटी हुई जगहका वर्ण विवर्ण न हुआ, तो उस लकडीको मकानके लिये उपयोगी समझना चाहिये। काटने बाद यदि वृक्षका सार भाग वर्णान्तरको प्राप्त हो जाय, तो उस लकड़ीसे मकान नहीं बनवाना चाहिये। घरमें प्रवेश करके अनाज, गौ, गुरु, अग्नि वा देवतासे ऊंचे स्थान पर न सोना चाहिये। जहां बांस या सोटे पड़ीं हो, उससे नीचे सोना निसिद्ध है।

प्राचीन ऋषिगण प्रासाद, एकमञ्जल, दुमंजल, तिमञ्जल आदि मकान किस प्रकारसे बनाना चाहिये और किस प्रकारसे घरके खंभ, सन्धियां और भींतें आदि बनानी चाहिये, इसके अच्छे अच्छे नियम बना कर लिपिवद्ध कर गये हैं। उन्हीं नियमोंके अनुसार पहिले मकान बना करते थे। प्रासाद और वास्तुविद्या आदि शब्द देखो।

२ कलत्र, भार्या वा स्त्री। ३ नाम। ४ मेषादि राशि।

गृह-कच्छप (सं० पु०) गृहे कच्छप इव। पेषण शिला, पीसनेका पत्थर।

गृहकन्या (सं० स्त्री०) एक तरहका पौधा, घृतकुमारी, घीकुवार, ग्वारपाठा।

गृहकपोत (सं० पु० स्त्री०) गृहे स्थितः कपोतः। पक्षीविशेष, घरालू या पोसाज कबूतर।

गृहकरण (सं० क्ली०) घरका काम।

गृहकर्तृ (सं० त्रि०) गृहं करोति कृ-तृच्। १ घरकारक, घरबनानेवाला। २ एक तरहका पक्षी, चटक, गौरैया। (Sparrow) इसका पर्याय—धान्यभक्षण, चम, भीरु, कृषिद्विष्ट, कणप्रिय है।

गृहकर्मन् (सं० क्ली०) गृहस्य कर्म, ६-तत्। १ घरनिर्माण। २ गृहकार्य।

गृहकर्मदास (सं० पु०) गृहकर्मणो दासः, ६-तत्। गृहकर्मका भृत्य, जिस नौकरके ऊपर घरका कार्यभार अर्पित है।

गृहकलह (सं० पु०) गृहे कलहः, ७-तत्। गृहविरोध, घरका झगड़ा।

गृहकारक (सं० पु०) गृहं करोति कृ-ण्वुल्, ६-तत्। १ वर्णसङ्कर जातिविशेष। पराशर-पद्धतिमें लिखा है कि कुम्भकारकके औरससे नापितकन्याके गर्भमें इस जातिकी उत्पत्ति हुई है। (त्रि०) २ गृहनिर्माणकर्त्ता, घरका बनानेवाला।

गृहकारिन् (सं० त्रि०) गृहं करोति कृ णिनि। १ गृहकारक, घरका बनानेवाला। (पु०) २ एक तरहका कीट।

गृहकार्य (सं० क्ली०) गृहस्य कार्यं ६-तत्। गृहकर्म, घरका कामकाज।

गृहकुक्कुट (सं० पु० स्त्री०) गृहे रुद्धः कुक्कुटः। गृहपालित कुक्कुट, घरमुर्गा।

गृहकुमारी (सं० स्त्री०) घृतकुमारी, ग्वारपाठा, घीकुवार।

गृहकुलिङ्ग (सं० पु०) गृहे पुष्टः कुलिङ्गः। पक्षीविशेष, गृहचटक, एक तरहकी चिडीया, घरालू गौरैया। इसके मांसका गुण—रक्तपित्तनाशक और शुक्रवृद्धिकर है।

गृहकूलक (सं० पु०) गृहस्य कूले समीपे भवः गृहकूलकन्। काशाक। चिचिण्डा, चचींडा।

गृहकृत्य (सं० क्ली०) गृहस्य कृत्यं, ६-तत्। गृहकार्य, घरका काम।

गृहगोधा (सं० स्त्री०) गृहस्थगोधेव। ज्येष्ठी, छिपकली, टिकटिकिया। इसका पर्याय—पल्ली, मुसली, विश्वम्भरा, ज्येष्ठा, कुड्यमत्स्य, पल्लिका, गृहगोधिका, गृहगोलिका, माणिक्या, भित्तिका, गृहालिका।

गृहगोधिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रा गोधा अल्पार्थे कन् टाप् अत इत्वं गृहस्य गोधिकेव। ज्येष्ठी, छिपकली।

गृहगोलक (सं० पु०) गृहस्थितः गोलोक इव। पुंजातीय टिकटिकी, छिपकली।

गृहगोलिका (सं० स्त्री०) गृहे गोधिका इव पृषोदरादित्वात् धकारस्य लकारः। ज्येष्ठी, घरालू छिपकली।

गृहघ्नी (सं० स्त्री०) गृह-हन्-ङीप्। गृहनाशिका स्त्री, घरको नष्ट करनेवाली स्त्री।

गृहचटक (सं० पु०) गृहस्थितः चटकः। पक्षीविशेष, घरालू गौरैया पक्षी।

गृहचुल्ली (सं० स्त्री०) गृहाणां चुल्लीव। दो घरवाला मकान, दो ऐसी कोठरी जिनमें एकका मुख पश्चिमको और और दूसरेका पूर्वकी ओर हो।

प्रकारका है। इस ज्ञानसे दूसरेके हृदयगत वक्र वा सरल सम्पूर्ण प्रकारके विचारोंका ज्ञान हो जाता है तथा अपने और परके जीवन, मरण, सुख, दुःख, लाभ, अलाभ आदिका भी ज्ञान होता है। इसके सिवा जिस पदार्थको व्यक्त मन द्वारा वा अव्यक्त मन द्वारा चिन्ता की गई है अथवा भविष्यमें चिन्ता की जायगी इत्यादि समस्त विषय इस ज्ञानसे मालूम हो जाते हैं। यह द्रव्य और भावकी अपेक्षासे विपुलमतिमनःपर्ययज्ञानके विषयका निरूपण किया गया है। कालकी अपेक्षा विपुलमति-मनःपर्ययज्ञानी जघन्यरूपसे ७।८ भवों (जन्मों) के गमनागमनको जानता है और उत्कृष्ट रूपसे असंख्य भवोंके गमनागमनको जानता है तथा क्षेत्रको अपेक्षा जघन्य रूपसे तीन योजनसे आठ योजन तकके पदार्थोंको जानता है और उत्कृष्ट रूपसे मनुषोत्तर पर्वत (जम्बू-द्वीप, धातकीखण्ड और पुष्करार्द्ध द्वीप तक) के भीतरके पदार्थोंको जानता है।

परिणामोंकी विशुद्धता एवं अप्रतिपात (केवलज्ञान उत्पन्न होने तक न छुटना -के कारण इन दोनोंमें विपुल-मतिमनःपर्ययज्ञान श्रेष्ठ और पूज्य है। सर्वावधिज्ञान-के सूक्ष्म विषय (एक परमाणु तकका प्रत्यक्षज्ञान)से भी अनन्तवें भाग सूक्ष्म द्रव्यको मनःपर्ययज्ञान जान सकता है।

(५) केवलज्ञान—जिस ज्ञानके द्वारा त्रिकालवर्त्ती सम्पूर्ण पदार्थों एवं उनकी अनन्त पर्यायोंका स्पष्ट ज्ञान हो, उसे केवलज्ञान कहते हैं। अथवा यों समझिये कि सर्वज्ञ वा ईश्वरके ज्ञानको केवलज्ञान कहते हैं। आत्मा-के ज्ञानका पूर्ण विकाश होना हो केवलज्ञान है; इससे बड़ा ज्ञान संसारमें और दूसरा नहीं है। यह ज्ञान विशुद्ध आत्मा वा परमात्माको ही प्राप्त होता है। इस ज्ञानके प्राप्त होने पर आत्मा सर्वज्ञ वा ईश्वर कहलाने लगता है। एक एक द्रव्यकी त्रिकालवर्त्ती अनन्त अव-स्थाएं हैं, उन्हीं द्रव्योंकी समस्त अवस्थाओंको केवलज्ञानी युगपत् (एकसाथ) जानता है। इसके भेद प्रभेद कुछ भी नहीं है। इस ज्ञानके होने पर मति श्रुतादि ज्ञान नष्ट हो जाते हैं, अर्थात् यह ज्ञान आत्मामें एकाकी ही रहता है।

एक आत्मामें एकसे ले कर चार ज्ञान तक हो सकते हैं, पांच नहीं। एक होने पर केवलज्ञान होगा। दो होने पर मति और श्रुत, तीन होने पर मति श्रुत और अवधि तथा चार होने पर मति, श्रुत, अवधि और मनः पर्यय ज्ञान होंगे।

उपर्युक्त पांच ज्ञानोंमेंसे मति, श्रुत और अवधिज्ञान ये तीन विपरीत भी होते हैं। ऊपर कहे हुए ज्ञान सम्यग्दर्शनपूर्वक हो होते हैं, इसलिए शुभ हैं। इनसे विपरीत जो तीन ज्ञान हैं वे मिथ्यादर्शनपूर्वक होते हैं; उन्हें १ कुमति, २ कुश्रुत और ३ कुअवधिज्ञान कहते हैं। सत् और असत्‌रूप पदार्थोंके भेदका ज्ञान नहीं होनेसे स्वेच्छारूप यद्वा तद्वा जाननेके कारण उन्मत्तके ज्ञानके समान ये (कुमति, कुश्रुत और कुअवधि) तीनों ज्ञान मिथ्या हैं। मद्यसेवनसे उन्मत्त पुरुषका, भार्याको माता और माताको स्त्री कहना वा समझना, यह ज्ञान मिथ्या है। किसी समय यदि वह माताको माता और स्त्रीको स्त्री भी कहे, तो भी उसका ज्ञान सम्यक् नहीं हो सकता; क्योंकि उसे माता और भार्याके भेदाभेदका यथार्थ ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार मिथ्यादर्शनके उदय से सत् और असत्‌का भेद नहीं समझनेके कारण कुमति, कुश्रुत और कुअवधि ज्ञानयुक्त व्यक्तिका यथार्थ जानना भी मिथ्याज्ञान है। इस प्रकारसे ज्ञानके आठ भेद भी हैं।

नय—वस्तुके एकदेश (एकांश)को जाननेवाले ज्ञानका नाम 'नय' है। अर्थात् वस्तुमें अनेक धर्म (स्वभाव) होते हैं, उनमेंसे किसी एक धर्मकी मुख्यता ले कर अविरोधरूप साध्य पदार्थको जाननेवाले ज्ञान-को नय कहते हैं। प्रधानतः नयके दो भेद हैं, एक निश्चयनय और दूसरा व्यवहारनय। वस्तुके किसी यथार्थ अंशको ग्रहण करनेवाले ज्ञानको निश्चयनय कहते हैं। जैसे, मिट्टीके घड़ेको मिट्टीका घड़ा कहना। और किसी निमित्तवशात् एक पदार्थको दूसरे पदार्थ-रूप जाननेवाले ज्ञानका नाम व्यवहारनय है। जैसे मिट्टीके घड़ेको घी रहनेके कारण, घीका घड़ा कहना। इनमेंसे निश्चयनयके भी दो भेद हैं, एक द्रव्यार्थिकनय और दूसरा पर्यायार्थिकनय। जो द्रव्य अर्थात् सामान्यको

गृहवलि (सं० पु०) गृहे देयो वलिः। गृहका अनुष्ठेय-वलिकम, वैश्वदेव कर्म।

गृहवलिप्रिय (सं० पु०) गृहवलिप्रियोऽस्य, बहुव्री०। १ वक पक्षी, वगुला। २ चटक, गौरैया। ३ काक, कौवा।

गृहवलिभुज् (सं० पु०-स्त्री०) गृहे दत्तं वलिं अन्नादि भक्ष्यद्रव्यं भुङ्क्ते, भुज्-क्विप्। १ काक, कौवा। २ चटक गौरैया।

गृहभङ्ग (सं० पु०) गृहस्य भङ्गः, ६-तत्। १ वह मनुष्य जो घरसे वहिष्कृत किया गया हो २ गृहको जीर्णता, घरका तहस नहस होना। ३ किसी मनुष्यकी अवनति।

गृहभञ्जन (सं० क्लो०) गृहस्य भञ्जनं, ६-तत्। गृहभङ्ग, वर्षादिसे घरकी वरवादी।

गृहभर्तृ (सं० त्रि०) गृहस्य भर्त्ता, ६ तत्। गृहस्वामी, घरका मालिक।

गृहभूमि (सं० स्त्री०) गृहस्य योग्या भूमिः। वास्तुभूमि, वासकरने योग्य जमीन। गृहदर्शी।

गृहभेदिन् (सं० त्रि०) गृहं भिनत्ति गृह भिद्-णिनि। गृह भेदकारक, घरमें लड़ाई करनेवाला।

गृहभोजिन् (सं० त्रि०) गृहे भोक्तुं शोलमस्य भुज णिनि। घरके मनुष्य, एक परिवारके आदमी।

गृहमणि (सं० पु०) गृहस्य मणिरिव। प्रदीप, दीपक, चिराग।

गृहमाचिका (सं० स्त्री०) गृह मचते गुप्तभावेन तिष्ठति मच-ण्वुल्-टाप् अत इत्वञ्च। चर्मचटी, चमगीदड़।

गृहमुध्वी (सं० त्रि०) गृहचिन्तासे पीड़ित।

गृहमृग (सं० पु०-स्त्री०) गृहे मृग इव। कुक्कुर, कुत्ता।

गृहमेघ (सं० पु०) गृहसमूह, घरकी पंक्ति।

गृहमेध (सं० पु०) गृहेण दारैः मेधते संगच्छते मेध-अच् ३-तत्। १ वह जिसने स्त्रीको ग्रहण किया है, गृहस्थ। मेध हिंसायां भावे घञ्। २ पञ्चसूना रूपसे हिंसा, पशुके जोवनको नष्ट करनेके लिये प्रत्येक मनुष्यके घरमें पांच अस्त्र सदा मौजूद रहते हैं। यथा—अग्निकी जगह, झाड़ मूषल, उखली और पानीका बरतन। उसीको पञ्चसूना कहते हैं। गृहे मेधा हिंसाहेतुको यज्ञो यस्य, बहुव्री०। ३ जिसने घरमें पञ्चयज्ञका अनुष्ठान किया है। गृहे कर्तव्यो यज्ञो यस्य, बहुव्री०। ४ देवताविशेष। (ऋक् ७।५९।१०)

गृहमेधिन् (सं० पु०) गृहेण दारैः मेधते संगच्छते मेध-णिनि। १ गृहस्थ। २ मरुत्विशेष, वायु, हवा।

गृहमेध्य (सं० त्रि०) गृहमेधी देवतास्य गृहमेध-यत्। गृहमेधि देवताओंको देने योग्य हविः प्रभृति, घरके देवताओंको दी अनाज इत्यादिका नैवेद्य।

गृहयन्त्र (सं० क्लो०) गृहे यन्त्रं ७-तत। गृहस्थित काष्ठादि निर्मित वस्त्र रखनेका आधारविशेष, कपड़ादि रखनेके लिये लकड़ीकी बनी खूंटी।

गृहयाय्य (सं० त्रि०) गृहयति गृह णिच् आय्य। गृहस्थ।

गृहयालु (सं० त्रि०) गृहयते गृह्णाति। गृह-णिच्-आलु। ग्रहीता, ग्राहक, ग्रहण करनेवाला।

गृहराज (सं० पु०) गृहाणां राजा, ६-तत्। श्रेष्ठ गृह, बड़ा घर।

गृहलक्ष्मी (सं० स्त्री०) गृहस्य लक्ष्मीरिव। सुशीला, सच्चरित्रा स्त्री, सुलक्षणा औरत।

गृहवाटिका (सं० स्त्री०) गृहसमीपे वाटिका इव आरामः। गृहके निकटवर्ती उपवन, घरके नजदीकका उद्यान।

गृहवास (सं० पु०) गृहस्य वास ६-तत्। १ घरका वास। २ गार्हस्थ धर्म।

गृहवासिन् (सं० त्रि०) गृहे वसति वस णिनि। घरमें वास करनेवाला।

गृहविच्छेद (सं० पु०) गृहकलह, घर-झगड़ा।

गृहवित्त (सं० त्रि०) गृहं वित्तं यस्य, बहुव्री०। गृहस्वामी, घरका मालिक।

गृहशायी (सं० पु०) पारावत, कबूतर।

गृहसंवेशक (सं० पु०) गृहं गृहनिर्माणं संविशति उपजीवति सम्-विश् ण्वुल्। जो घर बना बना कर अपनी जीविका निर्वाह करता है, स्थपति।

गृहस्थ (सं० पु०) गृहे दारेषु तिष्ठति अभिरमते गृह स्था-क। गृही, द्वितीयाश्रमस्थ, जो विवाहादि कर घरमें वास करे। इसका पर्याय—ज्येष्ठाश्रमी, गृहमेधी, स्नातक, गृही, गृहपति, सत्री, गृहयाय्य, गृहाधिप, कुटुम्बी, गृहायनिक। २ घरबारवाला, बालबच्चोंवाला आदमी। (त्रि०) गृहे तिष्ठति गृह-स्था-क। ३ गृहस्थित।

गृहस्थधर्म (सं० पु०) गृहस्थस्य धर्म, ६ तत्। गृही वा द्वितीय आश्रमीके अवश्य करने योग्य धर्म, गार्हस्थधर्म।

लोकव्यवहारके लिए किसी पदार्थको संज्ञा रखनेको नामनिक्षेप कहते हैं। जैसे किसीने अपने पुत्रका नाम हाथी, सिंह रक्खा, किन्तु उसमें हाथी और सिंह दोनोंके ही गुण नहीं हैं। इसी प्रकार संसारमें चतुर्भुज, धनपाल, कुबेरदत्त आदि नाम रक्खे जाते हैं, किन्तु ये नाम गुण, जाति, द्रव्य और क्रियाकी अपेक्षासे नहीं, वरन् नामनिक्षेपकी अपेक्षासे रक्खे जाते हैं। स्थापना-निक्षेप—धातु, काष्ठ, पाषाण मिट्टी आदिकी मूर्ति वा चित्रादिमें तथा सतरंजकी गोटी आदिमें हाथी, घोड़ा, बादशाह प्रभृतिकी जो कल्पना की जाती है, उसे स्थापनानिक्षेप कहते हैं। तदाकार और अतदाकारके भेदसे स्थापनानिक्षेप दो प्रकारका है। जो पदार्थ जिस आकारका हो, उसकी वैसे ही आकारके पाषाण, काष्ठ वा मृत्तिका आदिमें स्थापना करनेको तदाकारस्थापना कहते हैं और प्रकृत पदार्थका आकार जिसमें न हो, ऐसे किसी भी पदार्थमें किसीकी कल्पना करना अतदाकार स्थापना है। जैसे, पार्श्वनाथ भगवान्‌की वीतराग रूप जैसीकी तैसी शान्तमुद्रायुक्त धातु वा पाषाणमय मूर्तिकी प्रतिष्ठा करना; यह तदाकार स्थापना है और सतरंजकी गोटीको बादशाह मानना, यह अतदाकार स्थापना है। नामनिक्षेपमें पूज्यापूज्यबुद्धि नहीं होती, किन्तु स्थापनानिक्षेपमें होती है। द्रव्यनिक्षेप—जो पदार्थोंमें भूत वा भविष्यत् अवस्थाकी स्थापना करता है, उसे द्रव्यनिक्षेप कहते हैं। जैसे, युवराजको राजा कहना वा भूतपूर्व सचिवको वर्तमानमें सचिव कहना। भाव-निक्षेप—जिस पदार्थकी वर्तमानमें जैसी अवस्था हो, उसे उसीरूप कहना, भावनिक्षेप है। जैसे, काष्ठको काष्ठ अवस्थामें काष्ठ कहना और जल कर कोयला होने पर कोयला कहना। ये निक्षेप ज्ञेय वा पदार्थके होते हैं। और इनसे सात तत्त्वों एवं सम्यग्दर्शनादिके न्यास अर्थात् लोकव्यवहार होता है।

लोक-रचना वा जगत्‌का स्वरूप—जिसमें जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल ये पांच द्रव्य हों अर्थात् त्रिभुवन-को लोक कहते है। लोकका आकार इस प्रकार है—
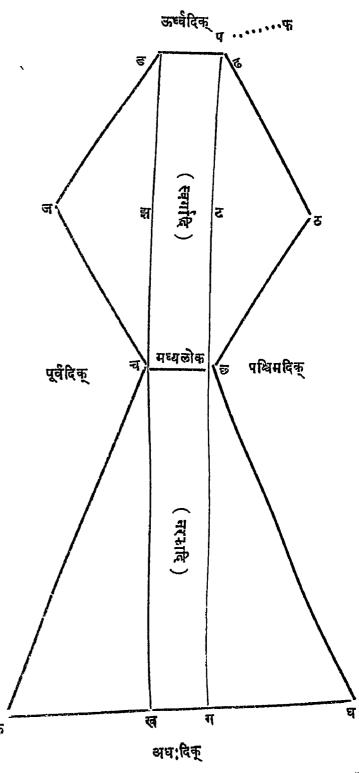
पूर्व-पश्चिमका परिमाण। यथा, क—ख=१ राजू, ख—ग =१ रा०, ग—घ=३ राजू, क—घ=७ राजू, च—छ=१ रा०, ज—झ=२ रा०, झ—ट=१ रा०, ट—ठ=२ रा०, ज—ठ=५ रा०, ड—ढ=१ रा०। उच्चताका परिमाण। यथा, ख—च वा ग—छ=७ राजू, च—झ वा छ—ढ=३॥ रा०, झ—ड वा ट—ढ=३॥ रा०, ख—ड अथवा ग—ढ= १४ राजू। दक्षिण-उत्तरका परिमाण (अथवा मोटाई)। यथा, प—फ=७ रा०। विशेष,—इसे ख और ग से ढ तक जो एक राजू चौडा और १४ राजू ऊंचा स्थान है, उसे 'त्रसनाडी' कहते हैं; इसीमें स्वर्ग, नरकादि हैं।

रहता है। अर्थात् जिस घरमें स्त्रियां सर्वदा प्रफुल्लचित्त रहती हैं, उस घरमें स्वर्गीय सुख विराजता है। विना कारण अवलाओंको यातना देनेसे, उनके शोकनिःश्वास-से गृहस्थकी दिन दिन अवनति होती है।

गृहस्थको पञ्चसूना पापके विनाशके लिए पञ्चमहायज्ञ-का अनुष्ठान करना पड़ता है। ब्राह्मणके लिए अध्यापन, पितृयज्ञ, होम, वलि और अतिथिसत्कार ये महायज्ञ करना आवश्यक है। इसको छोड़ देनेसे गृहस्थ मिट्टीमें मिल जाता है। अहुत, हुत, प्रहुत, ब्राह्मय हुत और प्राशित ये पांच यज्ञ भी गृहस्थके करने योग्य हैं। इष्ट मन्त्रका जप करना सो अहुत है, होमका नाम हुत, भौतिक वलिको प्रहुत, ब्राह्मणोंको अर्चना करनेको ब्राह्म्याहुत और पितृश्राद्धको प्राशित कहते है। गृहस्थो-के लिए अथितिसत्कार एक प्रधान कार्य है, प्राण जाने पर भी गृहस्थको इससे विचलित न होना चाहिये। जब जैसी अवस्था हो, तब तैसी ही चीजोंसे अतिथिका सत्कार करना चाहिये। सबसे पहिले अतिथिको भोजन कराना चाहिये, पीछे गृहस्थको भोजन करना चाहिये।

अतिथि और श्राद्ध देखो।

मनुके मतसे—मानवजीवनका चार भागोंमें विभक्त करना चाहिये। प्रथमभाग—ब्रह्मचारी हो कर गुरुके घरमें रहना और यथाविधिसे शास्त्रोंका अध्ययन करना है। फिर गृहस्थ बन कर गृहस्थधर्म पालन करना यह दूसराभाग है। गृहस्थोंको ऐसा काम करना चाहिये जिससे किसी भी प्राणीको हिंसा न हो और रुजगार भी वही करना चाहिये, जिससे किसी भी प्राणीका जी न दुखे। विपत्तिमें भी इस बातको ध्यानमें रख कर जीविका निर्वाह करना चाहिये कि, जिससे थोड़ी हिंसा हो। सब जातिके गृहस्थोंको अपना-अपना कार्य करना चाहिए। कभी भी निन्दनीय कामोंमें हाथ न डालना चाहिए। जिन कार्योंके करनेसे शरीरको विशेष क्लेश न पहुंचे, ऐसा व्यापार करना चाहिए। शरीरको दुर्बल करके जो धनका सञ्चय किया जाता है उससे पाप होता है। गृहस्थोंके लिए ऋत, अमृत, मृत, प्रमृत और सत्यानृत ये पांच वृत्तियां प्रशंसनीय है और नौकरी निन्दनीय है। उञ्छवृत्तिको ऋत कहते है। याञ्चा नहीं करना, सो अमृत है। भिक्षालब्ध वृत्तिको मृत कहते हैं। कृषिकार्य-का नाम प्रमृत और वाणिज्यका नाम सत्यानृत है। इनमेंसे पहिले पहिलेकी वृत्तियां उत्तम और पिछली वृत्तियां मध्यम और जघन्य है। सेवा करना नौकरी है गृहस्थको विपत्तियां झेलते हुए भी नौकरी नहीं करनी चाहिए। इसकी वरावर दुःखकर, लाघवकारिणी और निकृष्टवृत्ति दूसरी नहीं है। जो गृहस्थ तीन वर्ष तक गृहस्थी चलानेके लिये धन सञ्चय कर रखता है, उसे कुशूलधान्यक कहते हैं। जो एक वर्षके लायक रख कर काम करता है, उसे कुम्भीधानाक कहते है। जो तीन दिनके लायक धन रख कर बाकीमेंसे खर्च करता है, उसे "त्र्यहैहिक" और जो दूसरे दिनको परवाह नहीं रखता उसे अश्वस्तनिक कहते है। प्राचीन आर्योंने इनमें पीछे पीछेके गृहस्थोंकी प्रशंसा की है इन चार प्रकारके गृहस्थोंमेंसे प्रथम गृहस्थ अर्थात् कुशूलधान्यकको उञ्छ-शीलता, अयाचित, याचित, कृषि वाणिज्य और अध्यापन ये छह वृत्तियाँ धारण करनी चाहिए। कुम्भीध्यानक कृषि और वाणिज्यको छोड़ कर बाकीकी चार वृत्तियोंमेंसे (जो हो) तीन वृत्तियोंको धारण करेगा। त्र्यहैहिक गृहस्थ कृषि, वाणिज्य और याचित इन तीन वृत्तियोंको छोड़कर बाकीकी तीन वृत्तियोंमेंसे दो वृत्ति ग्रहण करेगा। और अश्वस्तनिक सिर्फ ब्रह्मसत्र शिलोञ्छकी अन्यतमवृत्ति धारण करेगा।

अकुटिल, शठताशून्य और शुद्ध जीविका ही ब्राह्मणको योग्य है। ब्राह्मणको सुखार्थी, संयत और सन्तोषी बनना चाहिए। सन्तोष ही सुखका मूल है विना संतोष छह खंड का अधिपति चक्रवर्ती भी सुखी नहीं हो सकता वेदमें जिन जिनके लिए जो जो कर्म बतलाये है यदि वैसा सब करें तो मनुष्य हो कर भी स्वर्गीय सुखको प्राप्त कर देवोंके समान भोग भोग सकते है। तथा इन्द्रादि देवोंके साथ एकत्र वास कर सकते हैं। प्रसंग अर्थात् गीत वाद्य और अवि-हित वा अकुलोचित कार्य करके अर्थोपार्जन भी नहीं करना चाहिए। जीविका निर्वाहके लिए यदि यथेष्ट पैतृक धन मौजूद हो तो अर्थोपार्जन नहीं करना चाहिए। इन्द्रियोंको संयत रखनेके लिए गृहस्थको सदा प्रयत्न करते रहना चाहिये। इन्द्रियोंकी लालसाकी पूर्तिके लिये उसमें

अरिष्टा नामक पांचवां नरक है। छठी पृथिवी पर मघवी नामक ६ठा नरक है और सातवीं पृथिवी पर माघवी नामक ७ वां (अन्तिम) नरक है। ये सब नरक त्रसनाड़ीके भीतर ही हैं; अर्थात् नारकी जीवोंकी उत्पत्ति और निवासस्थान त्रसनाड़ीके भीतर ही है। अब नरकोंका वर्णन किया जाता है।

रत्नप्रभा पृथिवीके तीन भाग हैं, १ खरभाग २ पङ्क-भाग और ३ अब्बहुलभाग। खरभागकी मोटाई १६००० योजन, पङ्कभागकी ८४००० योजन और अब्बहुलभागकी मोटाई ८०००० योजन है। इनमेंसे खरभागमें असुर-कुमारके अतिरिक्त शेष नव प्रकारके भवनवासीदेव * तथा राक्षसभेदके सिवा शेष सात प्रकारके व्यन्तरदेव † निवास करते हैं। २ य पङ्कभागमें असुरकुमार और राक्षसोंका वास है। ३य अब्बहुलभागमें प्रथम नरक है।

उक्त सातों पृथिवियों पर त्रसनाड़ीके मध्य सात नरक हैं और उन सातों नरकोंमें नारकियोंके रहनेके स्थानस्वरूप तलघरोंकी भांति ४९ पटल हैं। प्रथम नरकमें १३ पटल है, दूसरेमें ११, तीसरेमें ९, चौथेमें ७, पाचवेंमें ५, छठेमें ३ और सातवेंमें १ पटल है। ये पटल उक्त भूमियोंके ऊपर-नीचेके एक एक हजार योजन छोड़ कर समान अन्तर पर स्थित हैं। प्रथम नरकके १ले पटलका नाम है सीमन्तक। इस सीमन्तक पटलमें १ लाख योजन व्यासयुक्त गोल इन्द्रक बिल (नरक) है। इस प्रकार प्रथम नरकमें ३० लाख बिल है; दूसरे नरकमें २५ लाख, तीसरे नरकमें १५ लाख, चौथे नरकमें १० लाख, पांचवें नरकमें ३ लाख, छठे नरकमें ५ कम १ लाख और सातवें नरकमें कुल पांच ही बिल (नरक) हैं। ये बिल गोल, त्रिकोण, चतुष्कोण आदि आकारके हैं। इनमें कई संख्यात और कई असंख्यात योजन विस्तृत हैं। सातों नरकोंके इन्द्रक, श्रेणिबद्ध और प्रकीर्णक नरकोंकी संख्या ८४ लाख है। नारकी जीव इन्हींमें रहते हैं।

नारकी जीव सर्वदा अशुभतर लेश्या*-युक्त, अशुभतर परिणामयुक्त, अशुभतर शरीरके धारक, अशुभतर वेदनायुक्त और अशुभतर विक्रिया † करनेवाले होते हैं। निरन्तर अशुभ कर्मोंका उदय होते रहनेसे इनके हृदयगत भाव, विचार आदि सर्वदा अशुभ ही रहते हैं। ये परस्पर एक दूसरेको पीड़ा देते रहते हैं, अर्थात् कुत्ता बिल्लीकी तरह हमेशा लड़ते-भिड़ते रहते हैं। तीसरे नरक तक असुरकुमारदेव जा कर वहांके नारकियोंको मेढ़ोंकी तरह लड़ाते और तमाशा देखते हैं। इसके बाद चौथेसे सातवें नरक पर्यन्त कोई भी भिड़ाता नहीं स्वयं ही लड़ा करते हैं। नारकियोंको कुअवधिज्ञानसे पहले जन्म-जन्मान्तरोंकी शत्रुता याद आती है और उसका बदला लेनेके लिए सर्वदा व्यस्त रहते हैं। इन-मेंसे पहले नरकके पहले पटलमें उत्पन्न होनेवाले नारकियोंके शरीरकी ऊंचाई ३ हाथकी है। द्वितीय आदि पटलोंमें क्रमशः वृद्धि हो कर पहले नरकके १३वें पटलमें सात धनुष और सवा तीन हाथकी ऊंचाई है। पहले नरकमें जो उत्कृष्ट ऊंचाई है, उससे कुछ अधिक दूसरे नरकके नारकियोंकी जघन्य (कमसे कम) ऊंचाई है। द्वितीय तृतीय आदि नरकोंमें ऊंचाई क्रमशः दूनी दूनी होती गई है और अन्तिम (७म) नरकमें उत्कृष्ट ऊंचाई ५०० धनुषकी हो गई है।

पहले नरकमें नारकियोंकी उत्कृष्ट (अधिकसे अधिक) आयु १ सागरकी है, दूसरेमें ३ सागरकी, तीसरेमें ७ सागरकी, चौथेमें १० सागरकी, पांचवेंमें १७ सागरकी, छठेमें २२ सागरकी और सातवें नरकमें उत्कृष्ट आयु ३३ सागरकी है।

ऊपर कहे हुये पहले चार नरकों तथा पाँचवें नरकके तृतीयांशमें उष्णताकी तीव्र वेदना है। इसके नीचे अर्थात् पांचवेंके कुछ अंशमें तथा ६ठे और ७वें नरकमें शीतकी तीव्र वेदना है। उष्णता इतनी अधिक होती है कि वहांके नारकी यदि लवणसमुद्रका जल पी लें तो भी उनकी प्यास नहीं बुझती और शीत भी इतनी ज्यादा होती है कि, सुमेरुके समान लौह भी गल जाय तो आश्चर्य नहीं। किन्तु नारकियोंका वैक्रियिक शरीर

* भवनवासियोंके दश भेद हैं, यथा—असुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, स्तनितकुमार, उदधिकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमार।

† व्यन्तरोंके आठ भेद हैं, यथा—किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, और पिशाच।

* कषायोंसे अनुरंजित योग प्रवृत्तिको लेश्या कहते हैं।

†जिसकी वजहसे शरीरके नाना तरहके रंग, रूप, आकार बन सकें।

तृतीय भागमें करने लायक काम ये हैं,—परिवारवर्गके प्रतिपालन करनेके लिए अर्थोपार्जन और अन्नदान। चतुर्थ भागमें स्नान और मृत्तिका आहरण, पञ्चम भागमें पितृलोक और देवलोक आदिकी पूजा, तथा यथानियम से पोष्यवर्गको बाँट कर स्वयं बचे हुए भोजनको खाना चाहिये। भोजन करके जब तक न वह परिपाक हो, तब तक सुखचित्तसे अवस्थान करना चाहिये। इसके बाद इतिहास और पुराण आदिके प्रसङ्गमें छठा और सातवाँ भाग बिताना उचित है। अष्टमभागमें प्रयोजनीय लौकिक व्यवहारका अनुष्ठान, सन्ध्या, उपासना, होम, भोजन और सांसारिक कार्य यथाक्रमसे करना और फिर वेदका अध्ययन करना उचित है। फिर समय पर सो जाना चाहिये, तथा एक प्रहर रात्रि रहते हुए उठना चाहिये। (दक्षस्मृति)

जैनमतानुसार—धर्म दो प्रकारका है, एक सागार या गृहस्थधर्म और दूसरा अनागार या मुनिधर्म। मुनि धर्मका वर्णन मुनिधर्ममें किया जायगा, यहां गृहस्थधर्म वर्णन किया जाता है। गृहस्थ वह कहलाता है जो विवाह करके घरहीमें रह कर अणुव्रत पालता हुआ मुनिधर्मकी अभिलाषा रखता हो और धर्म अर्थ काम इन तीनों पुरुषार्थोंको समान भावसे पालता हो। ऐसे मनुष्य जिस धर्मका सेवन करते हैं, उस धर्मका नाम गृहस्थ धर्म है। गृहस्थियोंके बारहव्रत होते हैं—पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। अहिंसा,—किसी जीव वा प्राणीको मन-वचन कायसे हिंसा न करना, सत्य दूसरेके लिए लाभदायक मिष्ट वचन बोलना, अस्तेय,—बिना दी हुई वस्तुको ग्रहण न करना, ब्रह्मचर्य—अपनी विवाहिता स्त्रीके सिवाय दूसरी स्त्रीकी मन-वचन-कायसे इच्छा न करना, परिग्रह परिमाण—जरूरतसे ज्यादा वस्तुओंका संग्रह न करना, तथा आत्मासे भिन्न पर द्रव्योंसे ममत्व भाव न रखना,—ये पाँच अणुव्रत हैं। तीन गुणव्रत ये हैं, दिग्व्रत, देशव्रत, और अनर्थदंडव्रत। दिशाओंका प्रमाण करना अर्थात् मैं अमुक दिशामें इतनी दूर तक जाऊंगा-ऐसे प्रमाण करना, सो दिग्व्रत है। अमुक देश तक जाऊंगा, ऐसे नियम वा यम करनेको देशव्रत कहते हैं। पापके बढानेवाले पाँच प्रकारके अनर्थ दण्डके आचरण करनेका त्याग करना है, वह अनर्थदण्ड-त्याग-व्रत नामक तीसरा गुणव्रत है। सामयिक, प्रोषधोपवास, भोगोपभोग परिमाण और वैयावृत्य—ये चार शिक्षाव्रत हैं। व्रतोंकी वृद्धिके लिए प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल इन तीनों सन्ध्याओंमें एकाग्रचित्त हो कर उत्तम, मङ्गल स्वरूप, शरण देनेमें अद्वितीय श्रीअर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु (१) इन पञ्चपरमेष्ठियोंकी नुति, स्तुति एवं प्रतिक्रमण आदि आवश्यकोंको करना और द्रव्य क्षेत्र काल भावकी शुद्धि देख कर समस्त आरम्भोंकी निवृत्तिपूर्वक दो आसन (पद्मासन या खड्गासन), बारह आवर्त, चार नतिका मन-वचन-कायसे आचरण करना सामयिक शिक्षाव्रत है। प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीको उपवास (सप्तमीके दिनमें बारह बजे खा कर नवमीके दिनके बारहबजे खाना, बीचमें कुछ न खाना, सो उपवास है) करनेको प्रोषधोपवासव्रत कहते हैं। उपवास कालमें निरन्तर शास्त्र स्वाध्याय करते रहना चाहिए और किसी प्रकारकी मनमें कलुषता न लानी चाहिये। अपनी आत्माके कल्याणके लिए भोग और उपभोगकी सामग्रियोंका जो प्रमाण करना है, वह भोगोपभोग परिमाणव्रत है। संयमी शुद्ध-पवित्रात्मा (जो सर्व परिग्रहके त्यागी हों; तथा रागद्वेषसे रहित हों ऐसे दिगम्बर मुनि) अतिथि पुरुषोंके लिए जो श्रेष्ठ प्रासुक चार प्रकारके आहारोंका दान देना है, वह वैयावृत्य नामक गृहस्थोंका उपासनीय चौथा शिक्षाव्रत है। इन बारह व्रतोंको शक्तिके अनुसार गृहस्थोंको अवश्य पालन करना चाहिये। इन बारह व्रतोंमें प्रत्येक व्रतके पांच पांच अतीचार होते हैं। अतीचाररहित जो व्रत पाले जाते हैं, वे निर्दोष हैं और जिन व्रतोंके पालन करनेमें अतीचार लग जाते हैं, वे सदोष हैं।

"यो रक्षति नरो पूत श्रावकव्रतमचित।
मर्त्यामरश्रियं प्राप्य यात्यसौ मोक्षमव्ययं॥"

(सुभाषितरत्नसन्दोह श्लोक ८६४)

अर्थात् जो पुरुष इन पवित्र व्रतोंको निर्दोष रीतिसे

(१) जपनेका मन्त्र इस प्रकार है—ओं णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं' अथवा "ओं नमः सिद्धेभ्यः" आदि।

चारों कोनोंको भूमिमें सदा पञ्चमकालके आदिकी रचना रहती है। इसके अतिरिक्त मनुषोत्तर पर्वतके बाहर समस्त द्वीपोंमें तथा कुभोगभूमियोंमें तीसरे कालके आदि जैसी जघन्य भोगभूमिकी रचना होती है। लवणसमुद्र और कालोदधिसमुद्रमें ९६ अन्तर्द्वीप हैं, जिनमें कुभोग भूमिकी रचना है। भोगभूमियोंके विषयमें तो पहले कुछ कह चुके हैं, अब कुभोगभूमियोंका वर्णन किया जाता है। इन कुभोगभूमियोंमें एक पल्य आयुके धारक कुमनुष्य निवास करते हैं, जिनकी आकृति नाना प्रकार है। किसीके केवल एक जङ्घा है, किसीके पूँछ है, किसीके सींग हैं, कोई गूंगे हैं, किसीके कान बहुत लम्बे हैं जो ओढ़नेके काममें आते हैं, किसीका मुंह सिंह जैसा, किसीका घोड़ा, कुत्ता, भैंसा, वा बन्दर आदिके समान है। ये कुमनुष्य वृक्षोंके नीचे तथा पर्वतोंकी गुफाओंमें रहते हैं और वहांकी मीठी मिट्टी खाते हैं। ये भोगभूमियोंके मनुष्योंकी तरह मर कर नियमसे देव होते हैं।

इसी मध्यलोकमें ज्योतिष्क देवोंका भी निवास है; अतएव अब ज्योतिषचक्रका वर्णन करते हैं। ज्योतिष्क देवोंके पांच भेद हैं—(१) सूर्य, (२) चन्द्र, (३) ग्रह, (४) नक्षत्र और (५) तारका। इस चित्रा पृथिवीसे ७९० योजन* ऊपर तारे हैं, तारोंसे १० योजन ऊपर सूर्य है, सूर्यसे ८० योजन ऊपर चन्द्र है और चन्द्रसे ४ योजन ऊपर नक्षत्र हैं। नक्षत्रोंसे ४ योजन ऊपर बुधग्रह है, बुधोंसे ३ योजन ऊपर शुक्र हैं, शुक्रोंसे ३ योजन ऊपर गुरु हैं, गुरुओंसे ३ योजन ऊपर मङ्गल हैं और मङ्गलोंसे ३ योजन ऊर्द्धमें शनैश्चर हैं। बुधादि पाँच ग्रहोंके सिवा और भी तिरासी ग्रह हैं, जिनमेंसे राहुके विमानका ध्वजादण्ड चन्द्रके विमानसे और केतुके विमानका ध्वजादण्ड सूर्यके विमानसे चार प्रमाणाङ्गुल (परिमाणविशेष) नीचे है। अवशिष्ट ८१ ग्रहोंके रहनेकी नगरी बुध और शनिके बीचमें है। देवगतिके चार भेदोंमेंसे ज्योतिष्क जातिके देव इन विमानोंमें निवास करते हैं। इस ज्योतिष्क-पटलकी मोटाई ऊर्द्ध और अधः दिशामें ११० योजन है तथा विस्तार पूर्व-पश्चिममें लोकके अन्त (घनोदधि वातवलय) पर्यन्त और उत्तर दक्षिणमें १ राजू है। किन्तु सुमेरु पर्वतके चारों तरफ ११२१ योजन तक ज्योतिष्क विमानोंका सद्भाव नहीं है। मनुष्यलोक अर्थात् ढाई द्वीप तक ज्योतिष्क विमान सर्वदा सुमेरु की प्रदक्षिणा करते हैं। परन्तु जम्बूद्वीपमें ३६, लवणसमुद्रमें १३९, धातुकीखण्डमें १०१०, कालोदधिमें ४११२० और पुष्करार्द्धद्वीपमें ५३२३० ध्रुव-तारे हैं जो कभी चलते नहीं। मनुष्यलोकके बाहर समस्त ज्योतिष्क-विमान गतिशून्य हैं। किन्तु समस्त ज्योतिष्क-विमानोंका उपरिभाग आकाशको एक ही सतहमें है। तारोंमें परस्परका अन्तर कमसे कम ⅐ कोश है और ज्यादासे ज्यादा १००० योजन। इस समस्त ज्योतिष्कविमानोंका आकार आधे गोलेके समान अर्थात् ऐसा ◡ है। इन विमानोंके ऊपर ज्योतिष्कदेवोंके नगर अवस्थित हैं जो अत्यन्त रमणीय और जिन-मन्दिरोंसे शोभित हैं।

जैन शास्त्रोंमें चन्द्रको इन्द्र और सूर्यको प्रतीन्द्र माना है। प्रत्येक चन्द्रके साथ एक सूर्य अवश्य रहता है। जम्बूद्वीपमें दो चन्द्र और दो सूर्य हैं। इसी प्रकार लवणसमुद्रमें ४, धातुकीखण्डमें १२, कालोदधिमें ४२ और पुष्करार्द्धद्वीपमें ७२ चन्द्र हैं, साथ ही उतने सूर्य भी हैं। मनुष्यलोकमें चन्द्र और सूर्यके गमनका अनुक्रम इस प्रकार है—प्रत्येक द्वीप वा समुद्रके समान दो दो खण्डोंमें आधे आधे ज्योतिष्क विमान गमन करते हैं अर्थात् जम्बूद्वीपके प्रत्येक भागमें एक एक, लवणसमुद्रके प्रत्येक भागमें दो दो, धातुकी खण्डद्वीपके प्रत्येक खण्डमें छ छ, कालोदधिके प्रत्येक खण्डमें इक्कीस इक्कीस और पुष्करार्द्धद्वीपके प्रत्येक खण्डमें छत्तीस छत्तीस चन्द्र हैं तथा इतने ही सूर्य हैं। अब इसका खुलासा किया जाता है। जंबूद्वीपमें एक वलय (परिधि) है, लवणसमुद्रमें दो, धातुकीखण्डमें छ, कालोदधिमें इक्कीस और पुष्करार्द्धद्वीपमें छत्तीस वलय हैं। प्रत्येक वलयमें दो दो चन्द्रमा और दो दो सूर्य हैं। पुष्करार्द्धका उत्तरार्द्ध आठ लाख योजनका है, इसलिए उसमें आठ वलय हैं। पुष्करसमुद्र ३२ योजनका है, अतः उसमें ३२ वलय हैं।

* यहां भी योजन २००० कोशका समझना चाहिये, क्योंकि जैनशास्त्रोंमें अकृत्रिम वस्तुओंके परिमाणमें योजन २००० कोशका ही माना है।

गृहाश्रमिन् (सं॰ पु॰) गृहाश्रममस्त्यास्ति गृहाश्रम-इनि। गृहस्थ।

गृहासक्त (सं॰ त्रि॰) गृहे भार्यायां आसक्तः। १ भार्या-सक्त, घरकेसांसारिक कर्ममें लवलीन। २ विषय वासना-में लगा हुआ। ३ गृहस्थित पक्षी, घराल चिड़िया।

गृहिन् (सं॰ पु॰) गृहं भार्या अस्त्यस्य गृह इनि। गृहा-श्रमी, गृहस्थ।

गृहिणी (सं॰ स्त्री॰) गृहं गृहकार्तृत्वं गृहकृत्यं वा अस्त्यस्य गृह-इनि-ङीप्। १ भार्या, पत्नी, जिस स्त्रीके ऊपर घरका समस्त कार्यभार अर्पित हो। प्राचीन समय-में आर्यगण जिन नियमोंसे गृहिणी द्वारा गृहकार्य सम्पादन करते थे इतिहास और प्राचीन नीतिशास्त्रमें वे सब नियम लिपिवद्ध हैं। शुक्रनीतिके अनुसार ब्राह्मण-गृहिणीका कर्त्तव्य स्वामिसेवा है। इसके अतिरिक्त स्त्रियोंको और कोई दूसरा धर्मानुष्ठान करना निषिद्ध है, किन्तु पति यदि कोई याग यज्ञका अनुष्ठान करे तो उस समय स्त्रीको सहायता देना उचित है। इसके अलावा स्वतन्त्र रूपसे दूसरा धर्मानुष्ठान उनके लिये नहीं है। गृहिणीको उचित है कि स्वामीके शय्या परित्यागके पहले उठ जावें। तत्पश्चात् शरीरको शुद्ध कर बिछावन उठा रखना तथा झाड़ूसे घर भली भांति परिष्कार कर लेप देना चाहिये। इसके बाद यज्ञकाष्ठ और जलपात्र नियम पूर्वक शोधन कर उपयुक्त स्थान पर रख दें। इस तरह आह्निक कार्यके समाप्त होने पर पाककार्यमें नियुक्त हो जाय। इस कार्यमें सबसे पहले पाकगृहके बरतनोंको बाहर कर घरको लेपना और तब उन्हें मार्जन करना चाहिये। इसके बाद स्नान कर रसोईका समस्त आयोजन करें। ये समस्त गृहिणीके पूर्वाह्न कार्य हैं। श्वशुर तथा श्वश्रूकी सेवा करना गृहिणीका मुख्य कर्त्तव्य है, सर्वदा स्वामीकी आज्ञानुवर्तिनी हो छायाकी नाईं उनका अनु-गमन और दासीकी नाईं उनका आदेश प्रतिपालन करना चाहिये इसके अनन्तर उपयुक्त समयमें पाक कर सबसे पहले गुरुजनोंको और तब घरके दूसरे २ मनुष्योंको भोजन करावें। अन्तमें स्वामीके अनुमतिक्रमसे आप भोजन करें। भोजनके बाद सायकाल पर्यन्त गृहके आय व्यय और कर्त्तव्याकर्त्तव्य पर ध्यान दें। सन्ध्या उपस्थित होने पर पूर्वाह्नके जैसे समस्त गृहकार्य अनुष्ठान कर पाकमें लग जांय। पूर्ववत् घरके सभीको खिलाकर अन्तको आप भोजन करें, और इसके बाद शय्या प्रस्तुत करें। पतिके शयन करने पर उनकी चरणसेवामें नियुक्त हो जावें। पतिके सो जानेके बाद आप सोवें, एवं रात्रिके शेषको पति उठनेके पहले ही स्वयं गात्रोत्थान करें। अनवधानता, मत्तता, रोष, ईर्षा वचन, परकी निन्दा, पिशुनता हिंसा, विद्वेष, मोह, अहङ्कार, धूर्तता, नास्तिकता, साहस और दम्भ इन सबका परित्याग करना साध्वीगृहिणीका एकान्त कर्तव्य है। (शुक्रनीति ४ अ॰)

एक समय कृष्णपत्नी सत्यभामा स्त्रीधर्म जाननेके हेतु द्रौपदीके निकट गई थीं। द्रौपदीने उन्हें भली भांति गृहिणीका कर्तव्याकर्तव्यका उपदेश दिया, जिसका विवरण महाभारतमें विस्तृतरूपसे वर्णित है। उपरोक्त नियमानुसार चलने पर स्त्रियां आनन्दपूर्वक समय व्यतीत कर सकतीं और अन्तको मोक्ष पाती हैं। स्त्रीधर्म देखो।

२ काञ्जिक, कांजी। ३ घरकी मालिकिन।

गृहीत (सं॰ त्रि॰) ग्रह कर्मणि क्त। १ स्वीकृत, मंजूर किया हुवा। २ अवगत, ज्ञात, मालुम। ३ प्राप्त, हासिल किया गया। ४ धृत, पकड़ा गया। (क्ली॰) ग्रह भावे क्त। ५ स्वीकार, मंजूर। ६ ज्ञान, बोध, समझ। ७ प्राप्ति, हासिल, धारण, पकड़।

गृहीतगर्भा (सं॰ स्त्री॰) गृहीतो गर्भो यया, बहुव्री॰। गर्भवती, गर्भिणी। गर्भिणी देखो।

गृहीतदिश् (सं॰ त्रि॰) गृहीता दिक् येन, बहुव्री॰। १ पलायित, भगा हुवा। २ अदृश्य, गायब।

गृहीतनामन् (सं॰ त्रि॰) गृहीतं प्रशस्तं पुण्य जनकं नाम यस्य, बहुव्री॰। जिसका नाम प्रशस्त है, मशहूर, प्रशंसनीय।

गृहीतविद्य (सं॰ त्रि॰) गृहीता अधीता विद्या येन बहुव्री॰। जिसने विद्या ग्रहण किया हो, शिक्षित, पण्डित, अक्लमन्द।

गृहीतव्य (सं॰ त्रि॰) ग्रह कर्मणि तव्य। १ ग्रहणयोग्य, जो प्राप्त करनेके लायक है। (क्ली॰) ग्रह भावे तव्य। २ ग्रहण, प्राप्त, हासिल।

इनमेंसे आदिके दो युगलों (चार स्वर्गों)-में चार इन्द्र, मध्यके चार युगलोंमें (५वेंसे १२वें स्वर्ग पर्यन्त) चार इन्द्र और अन्तके दो युगलोंमें (१३वेंसे १६वें स्वर्ग पर्यन्त) चार इन्द्र हैं। अर्थात् १६ स्वर्गोंमें कुल १२ इन्द्र हैं। इसलिए इन्द्रोंकी अपेक्षासे स्वर्गोंके बारह भेद भी हैं। इन सोलह स्वर्गोंके ऊपर कल्पातीतमें ९ ग्रैवेयक हैं—३ अधोग्रैवेयक, ३ मध्यग्रैवेयक और ३ ऊर्द्ध्व ग्रैवेयक। इनके ऊपर ९ अनुदिश विमान हैं, यथा—१ आदित्य, २ अर्चि, ३ अर्चिमालिन्, ४ वैर, ५ वैरोचन, ६ सोम, ७ सोमरूप, ८ अन्धक और ९ स्फटिक। इनमेंसे पहलेको इन्द्रक अनुदिश, २रे, ३रे, ४थे और ५वेंको श्रेणीवद्ध तथा अन्तके चार विमानोंको प्रकीर्णक अनुदिश कहते हैं। इनके ऊपर पांच अनुत्तर विमान हैं, यथा—१ विजय, २ वैजयन्त, ३ जयन्त ४ अपराजित और ५ सर्वार्थसिद्धि। इनमेंसे पहलेके चार विमान श्रेणीवद्ध और अन्तका सर्वार्थसिद्धि इन्द्रक विमान है।

उपर्युक्त सोलह स्वर्गोंमें वास करनेवाले कल्पवासी वा कल्पोपपन्नदेव कहलाते हैं। इनमें इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, पारिषद, आत्मरक्ष, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक ये दश भेद होते हैं। (१) इन्द्र—अन्य देवोंमें नहीं पाई जाय, ऐसी अणिमा महिमा आदि अनेक ऋद्धिप्राप्त और परम ऐश्वर्यशाली देवको इन्द्र कहते हैं। इन्द्रको देवोंका राजा समझना चाहिये। (२) सामानिक—जिनके स्थान, आयु, वीर्य, परिवार, भोगादि तो इन्द्रके समान हों, परन्तु आज्ञा और ऐश्वर्य इन्द्रके समान न हो तथा जिनको इन्द्र अपने पिता वा उपाध्यायके समान बड़ा माने, उन्हें सामानिक कहते हैं। (३) त्रायस्त्रिंश—मन्त्री और पुरोहितके समान शिक्षा देनेवाले, पुत्रके समान प्रियपात्र और जिनसे वार्तालाप करके इन्द्र आनन्दित होते हैं, उनको त्रायस्त्रिंश कहते हैं। (४) पारिषद—इन्द्रकी वाह्य, आभ्यन्तर और मध्यम इन तीनों प्रकारकी सभामें बैठने योग्य सभासद पारिषद कहलाते हैं। (५) आत्मरक्ष—इन्द्रके अङ्गरक्षक। (६) लोकपाल—कोटपालके समान जिनका कार्य हो, उन्हें लोकपाल कहते हैं। (७) अनीक—जो पियादा, हाथी, घोड़े, गन्धर्व, नर्तकी आदि रूप धारण करते हैं, वे अनीक कहलाते हैं। (८) प्रकीर्णक—जनसाधारण वा प्रजा। (९) आभियोग्य—जो सेवकोंके समान हाथी, घोड़ा, वाहन आदि बन कर इन्द्र की सेवा करते हैं, उन्हें आभियोग्य कहते हैं। (१०) किल्विषिक—इन्द्रादि देवोंके सम्मानादिके अनधिकारी और उनसे दूर रहनेवाले देव, किल्विषिक कहलाते हैं। ये अन्यान्य सम्पूर्ण देवोंसे पृथक् रहते हैं अर्थात् उनमें मिलने-जुलने नहीं पाते।

सोलह स्वर्गोंके ऊपर जो ग्रैवेयक आदि विमान हैं, उनमें रहनेवाले देव कल्पातीत कहलाते हैं। इनमें इन्द्र, सामानिक आदिका भेदाभेद नहीं है। सभी इन्द्र हैं और इसीलिये वे 'अहमिन्द्र' कहलाते हैं।

मेरुकी चूलिका (शिखर)से एक केश-प्रमाण अन्तर पर ऋजुविमान है। यहींसे सौधर्म स्वर्गका प्रारम्भ है। मेरु-तलसे डेढ़ राजूकी ऊंचाई पर सौधर्म-ईशान युगलका अन्त हुआ है। उसके ऊपर डेढ़ राजूमें सनत्कुमार माहेन्द्र युगल है। इससे ऊपर ½—½ राजूमें छः युगल हैं। इस प्रकारसे छः राजूमें आठ युगल अवस्थित हैं। अवशिष्ट एक राजूमें ९ ग्रैवेयक, ९ अनुदिश, ५ अनुत्तर-विमान और सिद्धशिला है।

सौधर्मस्वर्गमें ३२ लाख विमान हैं। ईशानस्वर्गमें २८ लाख, सनत्कुमारमें १२ लाख, माहेन्द्रमें ८ लाख, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर युगलमें ४ लाख, लान्तव-कापिष्ट युगलमें ५० हजार, शुक्र-महाशुक्र युगलमें ४० हजार, सतार-सहस्रार युगलमें ६ हजार और आनत-प्राणत एवं आरण-अच्युत इन दो युगलमें ७०० विमान हैं। इसी प्रकार तीन अधोग्रैवेयकोंमें १११, तीन मध्यग्रैवेयकोंमें १०७ और तीन ऊर्द्ध्वग्रैवेयकोंमें ९१ विमान हैं। किन्तु ९ अनुदिश और ५ अनुत्तरोंमें विमानोंकी संख्या एक ही एक है अर्थात् अनुदिशोंमें ९ और अनुत्तरोंमें ५ ही विमान हैं।

ये समस्त विमान ६३ पटलोंमें अवस्थित हैं। जिन विमानोंका उपरिभाग समतलमें पाया जाता है अर्थात् एकसा होता है, वे सब एक पटलके विमान कहलाते हैं। प्रत्येक पटलके मध्यस्थित विमानको "इन्द्रक विमान" कहते हैं। चारों दिशाओंमें जो पंक्तिरूप विमान हैं,

गेंडुली (हिं० स्त्री०) गेंड़ुरी देखो।
गेंती (हिं० स्त्री०) अवधमें छोटी २ नदियोंके किनारे और नैपालकी तराईमें होनेवाला एक तरहका पेड़ इसके पत्ते चार पांच अंगुलके चौड़े और लम्बे होते हैं। ग्रीष्म कालमें पीले रङ्गके फूलके गुच्छे भी इसमें निकलते हैं।
गेंद (हिं० पु०) गेण्डुक देखो।
गेंदई (हिं० वि०) पीत रङ्गका गेन्दा पुष्पके रङ्गका। (पु० गेन्दा पुष्प वाला पीत रंग।
गेंदघर (हिं० पु०) १ गेंद, क्रिकेट, टेनिस खेल खेलने का स्थान, क्लब घर। २ अङ्गरेजके विलियर्ड नामक खेल खेलनेका मकान, विलियर्ड रूम।
गेंदतड़ी (हिं० स्त्री०) एक दूसरेको गेंदसे मारनेका एक प्रकारका खेल। इस खेलमें लड़के आपसमें उसीको चोर बनाते हैं जिसको गेंद लगता है।
गेंदबल्ला (हिं० पु०) लकड़ीकी एक पटरीसे गेंद मारनेका एक तरहका खेल।
गेंदवा (हिं० पु०) गेण्डुक, तकिया, वालिश, सिरहाना।
गेंदा (हिं० पु०) एक तरहका पौधा जो दो ढाई हाथ ऊंचा रहता है और जिसमें पीले रङ्गके पुष्प लगते हैं। गेंदा फूल दो तरहके होते हैं, एक 'जङ्गली' जिसमें सिर्फ चार पांच दल होते हैं, दूसरा 'हजारा' जिसमें बहुत दल रहते हैं। फूलके रंग भी कई तरहके होते हैं, कोई हलके पीत रंगके, कोई नारंगी रंगके और कोई लाल रंगके होते हैं। गेंदेके पत्तोंको शुष्क कर यदि फिटकिरीके साथ पानीमें उबाला जाय तो गंधकी रंग प्रस्तुत हो जाता है। २ एक प्रकारकी आतिशबाजी (Fire works) जिसके गुल गेंदेके फूलसे निकलते हैं। ३ सुवर्ण या रौप्यका बना एक गोल घुघुरूदार आभूषण, जो जोशन या बाजूमें घुंडीकी जगह पर रहता और नीचे की ओर लटकता है।
गेंदुवा (हिं० पु०) गेंदवा देखो।
गेंदोड़िया (हिं० स्त्री०) वैश्योंकी एक जाति।
गेंदौरा (हिं० पु०) एक तरहकी मिठाई, चीनीकी रोटी।
गेगम (देश०) एक धारीदार वस्त्र।
गेगला (देश०) १ एक तरहका पौधा जो मसूरकी जातिका होता और प्रायः ६००० फीटकी ऊंचाई पर उत्पन्न होता है। यह विना बोये उपजता है, किन्तु कभी कभी पशुके चारेके लिये बोया भी जाता है। इसमें काले रङ्गके दाने भी निकलते जो देखनेमें गेहूंके सदृश होते हैं।
(वि०) २ मूर्ख, जड़, बेवकूफ।
गेगलापन (हिं० पु०) मूर्खता, जड़ता, भोंदूपन।
गेजुनिया (देश०) गुल दुपहरिया।
गेटिस (अनु० पु०) घुटनेसे लेकर एड़ी तक पैर ढाकनेका एक आवरण जो कपड़े या चमड़ेका बना रहता है, मोजा। २ मोजा आदि बांधनेका रबर, कपड़े या चमड़ेका फीता।
गेड़ना (हिं० क्रिया०) १ लकीरसे घेरना। २ परिक्रमा करना, चारों ओर घूमना।
गेड़ी (हिं० स्त्री०) १ लड़कोंका एक खेल। २ इस खेलमें रखनेकी लकड़ी।
गेडो—बम्बई प्रान्तकी काठियावाड़ एजेन्सीका क्षुद्र राज्य। राजा झाला राजपूतवंशीय हैं। लोकसंख्या ५७४ और आय ४५००) रु० है। १३३८) रु० वार्षिक कर वृटिश गवर्नमेण्ट और जूनागढ़के नवाबको दिया जाता है।
गेण्डु (सं० पु०) गच्छति गम ड, गो गन्ता इन्दुरिव पृषोदरादिवत् उकारस्य तत्वे साधु। गेण्डुक, गेंद।
गेण्डुक (सं० पु०) गेण्डु स्वार्थे कन्। कन्दुक, कपड़ेका बना हुआ गोलाकार खेलनेका पदार्थ, गेंद।
गेदा (हिं० पु०) चिड़ियका छोटा बच्चा जिसे पर न निकले हों।
गेनुर (देश०) पशुओंके चारेके काममें आनेवाली एक तरहकी बारामासी घास।
गेप (सं० क्रि०) कांपना, थरथराना।
गेंबा (देश०) तानेकी कंघीकी तीलियां जो लकड़ीकी चिरी हुई पतली फट्टियोंकी होती हैं। यह तानेके सूतको एक दूसरेमें मिलजाने या उलझनेसे बचाती है।
गेय (सं० क्ली०) गा-यत्। (भवो यत। पा ३।१।९७) १ गीत, गान। (त्रि०) २ गायक, गानेके योग्य, गानेके लायक।
गेयप्रिय (सं० पु०) सुन्दरपुष्पवृक्ष, गन्धराजका पेड़।
गेर (फा० पु०) ग्रन्थि, गांठ, गिरह।

दिशाके छठे विमानोंमें आनतेन्द्र और आरणेन्द्र एवं उत्तर दिशाके छठे अवशेषद्ध विमानोंमें प्राणत और अच्युत इन्द्र निवास करते हैं। (त्रैलोक्यसार)

देवोंके मुख्यत: चार भेद हैं—१ भवनवासी, २व्यन्तर, ३ ज्योतिष्क और ४ वैमानिक। इनमेंसे वैमानिकके सिवा भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्कदेव स्वर्गोंसे नीचे निवास करते हैं और उनमें ऊपर कहे हुए कल्पवासियों (१६ स्वर्गोंके देवों) की तरह इन्द्र, सामानिक आदि भेद हैं। किन्तु व्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंमें त्रायस्त्रिंश और लोकपाल नहीं होते तथा भवनवासी और व्यन्तरदेवोंके प्रत्येक भेद (असुरकुमार, नागकुमार आदि और किन्नर, किम्पुरुष आदि)-में दो दो इन्द्र होते हैं। वैमानिक स्वर्गोंमें। वैमानिकके भी स्वर्गभेदसे दो भेद हैं—१ कल्पवासी और २ कल्पातीत।

भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्कदेवोंमें तथा सौधर्म और ईशान* इन दो स्वर्गोंमें शरीरसे मनुष्यवत् कामसेवन होता है। किन्तु शेष १४ स्वर्गोंमें ऐसा नहीं होता है। सनत्कुमार और महेन्द्र इन दो स्वर्गोंके देव और देवियोंकी कामेच्छा परस्पर स्पर्श करनेसे ही शान्त हो जाती है। ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव और कापिष्ट इन चार स्वर्गोंके देवदेवियोंकी कामवासना स्वाभाविक सुन्दर और शृङ्गारयुक्त रूपको देखने मात्रसे ही दूर हो जाती है। शुक्र, महाशुक्र, सतार और सहस्रार इन चार स्वर्गोंके देवदेवियोंकी कामपीड़ा परस्पर गीत एवं प्रेमपूर्ण मधुर वचनोंके सुननेसे तथा आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन चार स्वर्गोंके देवदेवियोंकी वासना एक दूसरेका मनमें स्मरण करनेसे ही तृप्त हो जाती है। इसके बाद (अर्थात् १६ स्वर्गोंके ऊपर) कल्पातीत देवोंके कामेच्छा होती ही नहीं; वहांके देव सदा धर्म चर्चामें लीन रहते है और बड़े पुण्यात्मा होते हैं।

ऊपरके देवोंके प्रभाव, सुख, आयु, द्युति, लेश्याकी विशुद्धता, इन्द्रिय-विषय और अवधिज्ञानका विषय क्रमशः बढ़ता ही गया है। किन्तु शरीरकी ऊंचाई, परिग्रह, गमनेच्छा और अभिमान क्रमश: घटता गया है।

५वें ब्रह्मस्वर्गके अन्तमें रहनेवाले लौकान्तिकदेव कहलाते है। ये ब्रह्मचारी होते है और तीर्थङ्करोंके वैराग्य होने पर उसकी अनुमोदना करनेके लिये मध्यलोकमें अवतरण करते हैं। लौकान्तिकदेव द्वादशाङ्गके ज्ञाता और एक ही भव धारण करके मोक्ष प्राप्त करते हैं। इनके आठ भेद हैं, यथा—१सारस्वत, २ आदित्य, ३वह्नि ४ अरुण, ५ गर्दतोय, ६ तुषित, ७ अव्याबाध और ८ अरिष्ट। विजय, वैजयन्त और अपराजित इन चार विमानोंके देव २ भव (जन्म) धारणपूर्वक नियमसे मोक्ष प्राप्त होते हैं तथा सर्वार्थसिद्धि नामक विमानके देव चयन कर मनुष्य होते हैं और उसी शरीर द्वारा निर्वाणलाभ करते है।

अब इनकी आयुकी अवधि कही जाती है। भवनवासीदेवोंकी उत्कृष्ट आयु इस प्रकार है,—असुरकुमार १ सागर, नागकुमार ३ पल्य, सुपर्णकुमार २॥ पल्य, द्वीपकुमार २ पल्य और शेष छ कुमारोंकी १॥—१॥ पल्य। कल्पवासी सौधर्म और ईशानस्वर्गके देवोंकी २ सागरसे कुछ अधिक, सनत्कुमार और माहेन्द्रकी, ७ सागरसे कुछ अधिक, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तरमें १० सागरसे कुछ अधिक, लान्तव कापिष्टमें १४ सागरसे कुछ अधिक, शुक्र महाशुक्रमें १६ सागरसे कुछ अधिक, सतार-सहस्रारमें १८ सागरसे कुछ अधिक, आनत-प्राणतमें २० सागर और आरण-अच्युतमें २२ सागरकी उत्कृष्ट आयु है। कल्पातीत—पहले ग्रैवेयकमें २३ सागर, दूसरेमें २४ सागर, तीसरेमें २५ सागर, चौथेमें २६ सागर, पांचवेंमें २७ सागर, छठेमें २८ सागर, सातवेंमें २९ सागर, आठवेंमें ३० सागर, नौवेंमें ३१ सागर, नौ अनुदिशोंमें ३२ सागर, और पांच अनुत्तरोंमें ३३ सागरकी उत्कृष्ट आयु हैं। पूर्वके युगलोंमें जो उत्कृष्ट आयु है, वही अगले युगलोंकी जघन्य आयु समझनी चाहिए। किन्तु सर्वार्थसिद्धि विमानकी स्थिति ३३ सागरकी ही है, उसमें जघन्य स्थिति होती नहीं। प्रथम युगलकी जघन्य आयु १ पल्यकी है। किन्तु लौकान्तिकदेवोंकी उत्कृष्ट और जघन्य आयु ८ सागरकी है।

आचार

जैनशास्त्रोंमें आचार दो प्रकारका माना है, एक श्रावकाचार और दूसरा मुनि-आचार। स्त्री-

* देवाङ्गनाओंकी उत्पत्ति भी इन्हीं दो स्वर्गोंमें होती है। ऊपरके स्वर्गोंके देव इन दोनों स्वर्गोंसे देवांगनाएं ले आते हैं या वे स्वयं चली जाती हैं।

को गोदावरी औरङ्गाबाद जिलेसे उसे अलग करती है। १३५ गांव है। गेवराई गावमें कोई ३८६५ आदमी रहते हैं।

गेवोंखाली—बङ्गालके मिदनापुर जिलेमें तमलुक सब डिविजनका एक गांव। यह अक्षा० २२° १०' उ० और देशा० ८७° ५७' पू०में हुगली नदीके दक्षिण तटपर पड़ता है। जनसंख्या ५२४ है। यहां व्यापार बहुत होता है। ईष्टर्न बङ्गाल ष्टेट रेलवेके लिए एक जहाज डायमण्ड हारबर आता जाता है। स्थानीय आलोकगृह को 'कोकोली' कहते हैं।

गेष्ण (सं० पु०) गा-इष्ण। १ रङ्गोपजीवी, जो नाचगा कर अपनी जीविका निर्वाह करता है, रण्डी, भाँड। २ सामगानकर्त्ता, सामवेदका गान करनेवाला। ३ पर्व ग्रन्थि, अवयवभेद।

गेष्णु (सं० पु०) गा-इष्णुच्। १ गायन, गानेवाला, गवैया, गायक। २ नट, भाँड। ३ सामगानकर्त्ता, सामवेदका गायक, सामवेदका गान गानेवाला।

गेह (सं० क्ली०) गो गणेशो गन्धर्वो वा ईह ईप्सितो यत्र बहुव्री०। गृह, घर, मकान, निवासस्थान।

गेहदाह (सं० पु०) गेहस्य दाहः, ६-तत्। गृहदाह, घरका जलना। घरमें आग लगना।

गेहधूम (सं० पु०) गृहधूम, झूल।

गेहनी (हिं० स्त्री०) घरवाली, गृहिणी, भार्या, पत्नी।

गेहपति (सं० पु०) गेहस्य पतिः, ६-तत्। गृहपति, घरका मालिक।

गेहभू (सं० स्त्री०) गेहस्य भूः, ६-तत्पु०। गृहस्थान, वह जगह जहां घर निर्माण किया गया हो।

गेहिन (सं० पु०) गेहमस्यास्ति गेह-इनि। गृही, घरका मालिक।

गेहिनी (सं० स्त्री०) गेहिन् ङीप्। गृहिणी, घरवाली, भार्या।

गेहेक्ष्वेड़िन् (सं० त्रि०) गेहे क्ष्वेडते क्ष्वेड-इनि पात्रे समितादित्वात् अलुक्समा०। डरपोक, कायर, वह मनुष्य जो लड़ाईमें अक्षम या भीरु रहता किन्तु घरमें बैठ कर अपने पराक्रमकी डींग हांकता है।

गेहेदाहिन् (सं० वि०) गेहे दहति दह-इनि अलुक्समा०। १ कापुरुष, कायर, डरपोक, भीरु। २ घरमें आगका लग जाना। घरका जलना।

गेहेदृप्त (सं० त्रि०) गेहेदृप्तः अलुक्समास०। कापुरुष, कायर, जो सिर्फ घरमें बैठ कर आत्मश्लाघा किया करता है।

गेहेधृष्ट (सं० त्रि०) गेहेधृष्टः अलुक्समा०। जो अपने घरमें धृष्टता प्रकाश करता है, गर्व्वयुक्त।

गेहेनर्द्दिन् (सं० त्रि०) गेहे नर्द्दति गर्जति नर्द्द-णिनि अलुक्समा०। कापुरुष, जो घरमें बैठकर गर्जता है, किन्तु बाहर जानेसे एक बात भी मुखसे नहीं निकलती।

गेहेमेहिन् (सं० त्रि०) गेहे मुह्यते मुह्य-णिनि। सुस्त, भद्दा, आलसी।

गेहेविजितम् (सं० त्रि०) गेहेविजितं अस्यास्ति गेहेविजित-इनि। कापुरुष। गेहेक्ष्वेड़िन देखो।

गेहेश्वाड (सं० पु०) दाम्भिक, धूर्त्त, छली, कपटी।

गेहेशूर (सं० पु०) अलुक्समा०। कापुरुष, जो सिर्फ घरहीमें शूरवीर हों। गेहेदृप्त देखो।

गेहोपवन (सं० क्ली०) गेहे समीपवर्त्ती उपवनः। गृहके निकटस्थ उद्यान, घरके नजदीककी फुलवाडी।

गेह्य (सं० त्रि०) गेहे भवः गेहाय हितं वा। १ गृहोत्पन्न, जो घरमें उत्पन्न हुआ हो। २ घरके हितकर। (पु०) ३ धन, दौलत, जायदाद।

गेहुंअन (हिं० पु०) मटमैले रंगका विषधर सर्प।

गेहुंआ (हिं० वि०) बादामी, गेहूंके रंगका।

गेहूं (हिं० पु०) गोधूम देखो।

गैंटा (देश०) कुल्हाड़ी।

गैंडा—एक चतुष्पद जन्तु, कोई चौपाया जानवर। यह स्थूलचर्म और विभक्त खुरविशिष्ट पशुवोंमें गण्य, अतिशय दृढकाय और हस्तीकी अपेक्षा भी अधिक बलशाली रहता और भुक्त वस्तुको उद्गीरण करके फिर रोमन्थ नहीं करता। इसकी नासिकाके अग्रभागमें एक या दो खड्ग (सींग) निकल आते और चारों पावोंके खुर ३ खण्डोंमें विभक्त हो जाते हैं। यह पालनेसे हिल जाता, परन्तु हठात् किसी कारणसे कुपित होने पर वह सहजमें प्रसन्न नहीं आता। वनमें शावक आदिके साथ विचरण कालको यदि शत्रु आ करके इसको घेर लेता, तो प्राण

विस्तारपूर्वक श्रीअरहन्त और सिद्ध भगवान्‌की पूजा करें। इसके अतिरिक्त पञ्चपरमेष्ठीका पाठ तथा समयानुकूल अन्य पाठ भी कर सकते हैं। पूजाके उपरान्त गृहस्थाचार्यको उचित है कि पञ्चमुष्टि विधान अथवा पञ्चगुरु मुद्रा विधान करें और शिष्यके मस्तक पर हाथ रख कर 'पूतोसि दीक्षया' यह मन्त्र कहें। अनन्तर उसके मस्तक पर अक्षत निक्षेप कर णमोकारमन्त्रका उपदेश करें और कहें "मन्त्रोऽयमखिलात् पापात् त्वां पुनीतात्।" पश्चात् शिष्यको पारणा करनेके लिए अपने घर भेज देना चाहिए। अनन्तर ४ थी क्रिया करें।

४ गणग्रहक्रिया—इस क्रियाका तात्पर्य यह है कि वह भव्य पहले जो मिथ्यात्व-अवस्थामें श्रीअरहन्तके सिवा अन्य देवताओंकी मूर्तियोंको पूजता था, उन्हें अपने घरसे ऐसे शुभ स्थानको विदा कर दें जहां उनको बाधा न हो और न कोई उनकी पूजा कर सके। जिस समय उन मूर्तियोंको अपने घरसे उठावे, उस समय यह मन्त्र कहे—

'इयन्त कालमज्ञानात् पूजिताः स्वकृतादरम्।
पूज्यास्त्विदानीमस्माभिरस्मत् समयदेवताः॥
ततोऽपमृषितेनालमन्यत्र स्वैरमास्यताम्॥"

अनन्तर यह कह कर शान्तस्वरूप जिनेन्द्रकी पूजा करें—"विसृज्यार्चयतः शान्ता देवताः समयोचिताः।" पश्चात् अन्य क्रियाएं करनी चाहिये।

५ पूजाराध्यक्रिया—अर्थात् भव्य भगवान्‌की पूजाकरके द्वादशाङ्गका संक्षिप्त अर्थ सुने वा जिनवाणीकोधारण करे।

६ पुण्ययज्ञक्रिया—अर्थात् भव्य साधर्मियोंके साथ १४ पूर्वका अर्थ सुने।

७ दृढ़चर्याक्रिया—अर्थात् भव्य अपने शास्त्रोंको जान कर अन्य शास्त्रोंको सुने वा पढ़े। ये सब क्रियाएं किसी शुभ दिन और शुभ मुहूर्तमें की जाती हैं।

८ उपयोगिताक्रिया—अर्थात् अष्टमी और चतुर्दशीके दिन उपवास करे और रात्रिको कायोत्सर्ग कर धर्मध्यानमें समय बितावे। ६ उपनीतिक्रिया—जब वह भव्य जिन-भक्ति क्रियाओंमें दृढ़ हो जाय और जैनागमके ज्ञानको प्राप्त कर ले, तब गृहस्थाचार्य उसे चिह्न धारण करावे। इस क्रियामें भव्यको वेष, वृत्त और समय इन तीनों बातोंको यथाविधि पालन करनेके लिए देवगुरुके समक्ष प्रतिज्ञा लेनी पड़ती है। सफेद वस्त्र और यज्ञोपवीतका धारण करना वेष कहलाता है। यज्ञोपवीतकी विधि आगे चल कर श्रावकोंके षोडशसंस्कारोंमें लिखी जायगी। आर्योंके योग्य जो षट्कर्म (असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प और विद्या) करके जीविका निर्वाह करनेका नाम वृत्त है। जैनोपासककी दीक्षाका होना ही समय है। इस समयमें उसके गोत्र, नाम जाति आदिका निर्णय किया जाता है। इसके बाद कुछ दिनों तक उसे ब्रह्मचर्यसे रहना चाहिये। अनन्तर १०वीं क्रिया करे।

१० व्रतचर्याक्रिया—अर्थात् उपासकाध्ययन पढ़नेके लिए गुरु, मुनि अथवा गृहस्थाचार्यके निकट ब्रह्मचारी हो कर रहे। ११ व्रतावतरणक्रिया—अर्थात् उपासकाध्ययन पढ़ चुकनेके बाद ब्रह्मचारीका वेष छोड़ कर अपने गृहमें आगमन करे। १२ विवाहक्रिया—अर्थात् जैनधर्म अङ्गीकार करनेके पहले जिस स्त्रीके साथ विवाह किया था, उसको गृहस्थाचार्यके निकट ले जा कर श्राविकाके व्रत दिलावे; फिर किसी शुभ दिनमें सिद्धयन्त्रकी पूजा करके उस स्त्रीको ग्रहण करे। इस प्रकारसे जैनेतर व्यक्तिमें भी श्रावकको पात्रता आ सकती है।

श्रावक-श्रेणीमें प्रवेशार्थ प्रारम्भिक श्रेणी—यज्ञोपवीत आदि* संस्कारोंसे संस्कृत गृहस्थ गृहमें रहता हुआ परम्परा मोक्षरूप सर्वोत्तम पुरुषार्थकी सिद्धिके लिए धर्म, अर्थ और काम इन तीन पुरुषार्थोंका यथासंभव पालन करता है। मोक्षकी सिद्धि साक्षात् मुनिलिङ्गके धारण करनेसे ही हो सकती है, अन्यथा नहीं। इसलिये उस अवस्थाकी प्राप्तिकी इच्छासे गृहस्थ पहले उसकी नीचेकी श्रेणियां अर्थात् श्रावकाचारका पालन करता है। श्रावककी श्रेणियाँ क्रमसे ग्यारह हैं; जो इन ग्यारह श्रेणियोंमें सफलता प्राप्त कर लेता है, वह मुनिधर्म सुगमतासे पाल सकता है।

पहली श्रेणीका नाम है—"दर्शनप्रतिमा।" इस प्रतिमा वा श्रेणीमें प्रविष्ट होनेके लिये तैयारी करनेवाले गृहस्थको पाक्षिक श्रावक कहते हैं। वर्तमान समयमें

*षोडशसंस्कारोंका वर्णन आगे चल कर किया जायगा।

दित रहता है। स्कन्ध और नितम्ब पर थोड़ा परत देख पड़ता, अपर सकल ही स्थान सरल लगता है। मस्तक

१ सुमात्रा होयके, ३ अफ्रीकाके बोरिलो।
२ किटलोया, और ४ श्वेत हिरणोनिहुव॥

अपेक्षाकृत लम्बा, चक्षु छोटा तथा धुंधला, ऊपरी होंठ नुकीला और सामनेको लटकता हुवा, कान छोटा, पतला और चारों ओर भालर जैसे काले बालोंसे सजा हुआ सामनेका सींग पोछेका टेढ़ा और दोनों आखोंके नीचे चूड़ाकृति और एक छोटा खड्ग होता है।

अफ्रीका देशीय गेंड़ेका (R Adricanns) वर्ण पीताभ कपिश, मस्तक तथा मुखविवरके पार्श्वमें वैंगन जैसा नीला कोखें लाल, आंखें धुधली और दोनो कचकड़े काले लगते हैं। सामनेका सींग पोछेवालेसे कुछ बड़ा और टेढ़ा पड़ता है। गले और मस्तकके सन्धिस्थलमें गोलगोल कटाव रहता और पूंछ तथा कानके अग्रभागमें कृष्णवर्ण लोम निकलता है। अपरापर देशीय गेंडाओंकी तुलनामें यह अलस रहता और अल्पमात्र खाया करता है। इसको केवलमात्र २८ चर्वण दन्त आते, छेदनदन्त बिलकुल देखे नहीं जाते। यह १० फुट ११ इञ्च लम्बा होता है।

अफ्रीकामें और भी तीन प्रकार गेंडे हैं। इसमें प्रत्येक जातिको ही दो दो खड्ग निकलते हैं। यह कचकडे भारतवर्षीय गेंड़ाओंके सींगसे बड़े होते हैं। इन का चमड़ा सोधा रहता और उसमें परत नहीं लगता। यह देखनेमें किसी बड़े सूवर-जैसे समझ पड़ते हैं।

दक्षिण अफ्रीकाका 'बोरिलो' गैंड़ा। (R Bicornis) खूब काला होता है। यह अति चतुर और दुर्धर्ष है। शिकारी उसको सिंहकी अपेक्षा स्वभावतः बलशाली और भयङ्कर जैसा समझते हैं। 'कोटलोया' (R Ketloa) जातीय गण्डक सर्वापेक्षा भयानक और बलिष्ठ है। इसके दोनो कर्ण बराबर रहते हैं। सम्मुखका पश्चात्को लटकता और पश्चात्का सम्मुखको झुकता है। ऊपरी होंठका अग्रभाग नोकदार और कुछ लटका हुआ होता है। होंठ नुकीला-जैसा होनेसे यह छोटो लता, गुल्म और वृक्ष आदिको ताजी ताजो पत्तियां छांट करके खा सकता है। अन्यान्य गेंड़ाओंकी अपेक्षा इसको गुद्दी ज्यादा लम्बी लगती है। जांघमें भीतरीके काले काले धब्बे और नाक पर तथा आँखके चारो पार्श्वों पर छोटे छोटे गड्ढे पड जाते हैं। इसका घ्राणेन्द्रिय अतिशय सूक्ष्म है। यह क्रोशाधिक दूरसे भी सूंघ करके शत्रुका आगमन मालूम कर सकता है। इसीसे गेंडेके आक्रमण कालको शिकारी वायुगतिको विपरीत दिक्‌को गमन करने पर वाध्य हैं। शत्रुको निकटवर्ती देख करके यह पलायन नहीं करता वरन् उसको विनाश करके हो शान्त पडता है। इसके चक्षु अति क्षुद्र और स्थूलकायप्रयुक्त है द्रुत गमनकालको यह हठात् पार्श्वमें दृष्टि डाल नहीं सकता। इस गेंडेके द्वारा आक्रान्त होने पर एकाएक किसी ओरको घूम करके ही बच जाना चाहिये। यह ११ फुट आध इञ्च लम्बा और ५ फुट ऊंचा होता है।

श्वेत खड्गी (R Simus) देखनेमें कुछ कुछ पीत मिश्रित धूसर तथा पिङ्गलवर्ण है। कान और पूंछकी जड़में काले काले कड़े बाल होते हैं। मुख कुछ कुछ गोका-जैसा लगता है। नाक पर २ खड्ग उठते हैं। अगले भागका कचकड़ा पिछलेको बनिस्वत चौगुना बड़ा होता है। चक्षु पीताभ पिङ्गल लगता है। शरीर १२ फुट १ इञ्च लंबा और स्कन्ध पर्यन्त ५ फुट ७ इञ्च ऊंचा होता है। अफ्रीकाके गेंड़ाओंमें यही जाति सर्वापेक्षा वृहत् है। यह अतिशय निरोह और केवलमात्र घास खा करके जोवन धारण करनेवाला है। जहाँ घास प्रचुर परिमाणमें उपजती इसको रहना अच्छा लगता है। मध्य अफ्रीकाके वेचुयाना लोग इसको 'मोहुड्' कहते हैं। इनमें प्रवाद है कि वही अफ्रीकाका आदि जीव है जो उनको परपुरुषोंके साथ एक ही गुहासे निकला था। सिवा इसके उसकी उत्पत्तिके संबन्धमें कोटलोयासे प्रभेद भी देख पड़ता है।

गोंको इस प्रकार भी कहा है—मद्यका त्याग, मांसका त्याग, मधुका त्याग, रात्रिभोजनका त्याग, पांचों उदुम्बर फलोंका त्याग, त्रिसन्ध्यामें देवपूजा या देववन्दना, प्राणियों पर दया करना और पानी छान कर काममें लाना, श्रावकोंके लिए ये आठ मूलगुण भी पालनीय हैं।

इसके सिवा अन्य कई ग्रन्थकारोंने पाक्षिक-श्रावकके लिए आठ मूलगुणोंके धारण करनेके साथ साथ सप्त व्यसनोंके त्याग करनेका भी उपदेश दिया है। व्यसन शौक अथवा आदतको कहते हैं। जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, शिकार करना, चोरी करना, वेश्या-सेवन और परस्त्रीसेवन करना इन सात बातोंके शौक अथवा आदतका त्याग कर देना ही सप्त-व्यसन त्याग कहलाता है।

पाक्षिक-श्रावक उपर्युक्त विषयोंका त्याग तो करता है, पर वह अभ्यासरूपमें। वह उनके अतीचारोंको नहीं बचा सकता। हां, उसके लिए प्रयत्न अवश्य करता है। जीवदया पालन करनेके अभिप्रायसे पाक्षिक-श्रावक षट्कर्मका भी अभ्यास करता है। यथा—१ देवपूजा—श्रावकको प्रतिदिन मन्दिरमें जाकर अष्ट द्रव्यसे पूजा करनी चाहिये। वर्तमानमें श्रावकगण प्रति दिन मन्दिरमें जा कर भगवान्‌के दर्शन करते और स्तुति आदि पढ़ कर: अक्षत वा फल चढ़ाते हैं, यह भी देवपूजामें शामिल है। २ गुरूपास्ति—निर्ग्रन्थ ग्रन्थ वा साधुओं-की सेवा करना और उनसे उपदेश सुनना चाहिये, किन्तु इस पञ्चमकालमें दिगम्बर गुरुकी प्राप्ति होना कठिन है, इसलिए उनके गुणोंका स्मरण करना चाहिये और उनके अभावोंमें सम्यग्दृष्टि ज्ञानवान् विद्वान् ऐलक, क्षुल्लक वा ब्रह्मचारी त्यागीको विनय करना और उनके पास बैठ कर उपदेश सुनना चाहिये।

३ स्वाध्याय—भ्रान्तिनाश और अज्ञान दूर करने-के लिए जैनधर्म-सम्बन्धी शास्त्रोंका पढ़ना स्वाध्याय कहलाता है। (४) संयम—मन तथा स्पर्शन, रसना, घ्राण चक्षु और कर्ण इन पांच इन्द्रियोंको वशीभूत कर-नेके लिए प्रतिदिन प्रातःकालमें नियम वा प्रतिज्ञा कर-नेको संयम कहते हैं। जैसे—आज मैं दो बार भोजन करूंगा, अमुकके घर या अमुककी गली तक जाऊंगा। आज पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन करूंगा इत्यादि। ५ तप—क्रोध, मान, माया और लोभको दमन करनेके लिए भोग, लालसासे निवृत्त होनेके लिए, धर्ममें प्रवृत्ति बढ़ानेके लिए जो क्रिया की जाय, उसे तप कहते हैं। इस क्रियाका नाम है जप वा सामायिक। अर्थात् श्रावकों को प्रति दिन 'ॐ नमः सिद्धेभ्यः' 'श्रीवीतरागाय नमः' 'अरहन्तसिद्ध' 'णमो अरहंताणं' 'णमो सिद्धाणं' वा 'णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं' इत्यादि मन्त्रोंका जप करना चाहिये। साथ ही अपने किये हुए पापोंकी आलोचना करनी चाहिए और अपने दोषोंके लिए संसार-के जीवोंसे क्षमा मांगनी चाहिए। इससे आत्मा शुद्ध होती है अर्थात् आत्मा पर क्रोध, मान, माया आदिका प्रभाव कम पड़ता है। ६ दान—अभयदान, आहार-दान, विद्यादान और औषधदान, ये चार प्रकारके दान हैं। मुनि, ऐलक, क्षुल्लक, ब्रह्मचारी आदि पात्रोंको भक्तिपूर्वक दान देना चाहिये। यदि इनकी प्राप्ति न हो सके, तो किसी धर्मनिष्ठ श्रावकको आदरपूर्वक (प्रत्युपकारकी आशा न रख कर) भोजन कराना चाहिये। गरीबोंको करुणा करके खानेको अन्न वा ओढ़नेको वस्त्र देना चाहिये। पशु-पक्षियोंको खिलाना चाहिये। इसी प्रकार रोगियोंको औषध देना और भयभीत व्यक्तियोंका भय दूर करना चाहिये। विद्यार्थियोंको शास्त्र देना वा पढ़ाना चाहिये। इन चार प्रकारके दानोंमेंसे कुछ न कुछ प्रति दिन दान करना श्रावकोंका दानकर्म है।

जैनग्रन्थोंमें पाक्षिक-श्रावकोंको दिनचर्याके विषयमें इस प्रकार लिखा है:—

प्रातःकाल सूर्योदयसे पहले उठे और शय्या पर ही बैठ कर नौ वार "णमोकार मन्त्र"का जाप करे। इसके बाद शौचादिसे निवृत्त हो पवित्र वस्त्र पहन कर जिनेन्द्र भगवान्‌के दर्शनके लिए मन्दिरमें जावे। मन्दिरमें प्रवेश करते समय "जय जय जय निःसहि निःसहि निःसहि" यह मन्त्र उच्चारण करना चाहिए। इस मन्त्रके उच्चारण करनेसे, यदि कोई देव आदि दर्शन करते हों तो वे सामनेसे हट जाते हैं। अनन्तर वीतराग-श्रीजिनेन्द्र-

बयेड डंकिनने अपने बनाये प्राणितत्त्वमें कहा है कि टेम्स नदीके कंकरीले उपकूलमें किसी समय तीन भिन्न जातीय गैंडाओंका वास रहा। (Boyd Dawkins' Nat. Hist. Rev. 1865 p. 403.)

१६६८ ई०को लन्दन नगरकी मुद्रित 'वार्यानन्युज' नामक पत्रिकामें प्रकाशित हुआ कि उस शहरका कोई गिरा हुआ कूवां खोदते समय एक जातीय (R. ticho-rinus) गैंडेकी हड्डी निकली थी। प्राणितत्त्वविद्ने उक्त जातीय गण्डका अस्थि फ्रान्स, जर्मनी और इटलीमें जगह जगह देखा है।

१७७१ ई० दिसम्बर मासको उत्तर साइबेरियाकी जिमोवे-दि-वोलीहमको नदीके वालुकामय उपकूलमें अर्ध प्रोथित किसी गण्डका देह मिला था। बहुत दिनों तक उसका गात्रचर्म नहीं गला। ओयेन साहबने उसी जातोय (tichorine) गैंडेका मस्तक और पदको इरकुटस्क नगरमें देखा था और भी मालूम हुआ है कि उस जातिके गैंडे शीतप्रधान लीन नदी किनारे तक पहुँचते हैं। (इसका विस्तृत विवरण Memoirs of the Academy of St Petersburg नामक ग्रन्थमें द्रष्टव्य है।) इसेक्स प्रदेशको ओयालटन नगर और नारफोकके क्रोमार बन्दरमें भी किसी स्वतन्त्र जातीय गण्डकका अस्थि मिला। एक समय इङ्गलैण्ड और तन्निकटवर्ती द्वीप समूहमें उसी जातिके बहुतसे विचित्री गैंडे रहते थे।

गैंती (देश०) जमीन खोदनेका एक हथियार, कुदाल।

गै (सं० क्रि०) गीतगाना, गानमें प्रशंसा करना।

गैंती (देश०) हिमालयके किनारे पर होनेवाला एक पेड़ इसकी लकड़ी बहुत कठिन और अंदरसे सुर्ख होती है। इससे नानाप्रकारके सामान बनते हैं।

गैन (हिं० पु०) १ गैल, मार्ग रास्ता।

गैना (हिं० पु०) छोटा वृषभ, नाटा बैल।

गैफल (फा० पु०) जहाजका एक छोटा पाल।

गैफज कश्चा (फा० पु०) पालको नीचे और ऊपर करनेकी रस्सी।

गैब (अ० पु०) परोक्ष, वह जो सामने न हो।

गैबदाँ (अ० वि०) परोक्षका जाननेवाला, सर्व देश और सर्वकालज्ञ, वह जो समस्त देश और कालका हाल जानता हो।

गैबर (देश०) एक तरहका पक्षी जिसके डैने, छाती और पीठ उजले, दुम काली और चोंच तथा पैर लाल होते हैं।

गैबी (अ० वि०) १ गुप्त, छिपा हुआ। २ अज्ञात, अबोधगम्य, अजनबी।

गैयर (अ० पु०) गजवर, हाथी।

गैया (हिं स्त्री०) गो, गाय, गऊ।

गैर (अ० वि०) १ अन्य, दूसरा। २ अपने कुटम्ब या समाजसे बाहरका मनुष्य।

गैर (अ० स्त्री०) अत्याचार, अनुचित कर्म, अंधेर।

गैर (सं० त्रि०) गिरौ भवः गिरि-अण्। १ पर्वतोत्पन्न, जो पर्वतसे उत्पन्न हो। २ एक वृक्षका नाम लाड़ूलीका पेड़।

गैरकंबूल (सं० क्ली०) नीलकण्ठताजकोक्त वर्ष और लग्न कालिक ग्रह योग विशेष, नवम् ग्रह योग।

गैरखी (हिं० स्त्री०) गलेमें पहननेका एक तरहं आभूषण, हंसुली।

गैरत (अ० स्त्री०) लज्जा, शर्म, ग्लानि।

गैरमनकूला (अ० वि०) स्थिर, अचल, वह पदार्थ जो एक स्थानसे दूसरे स्थान तक उठाकर न ले जा सके। यह शब्द सिर्फ 'जायदाद' शब्दमें व्यवहृत किया जाता है।

गैरमामूली (अ० वि०) १ असाधारण। २ नित्य नियमके विरुद्ध।

गैरमुनासिब (अ० वि०) अनुचित, अयोग्य।

गैरमुमकिन (अ० वि०) असंभव, न होने योग्य।

गैरवसली (अ० स्त्री०) घरकी छत बनानेकी क्रिया जिसमें बाँसकी पतली कमाचियोंको मजबूतीसे केवल-बुन देते हैं।

गैर-वाजिब (अ० वि०) अयोग्य, अनुचित, बेजा।

गैर हाजिर (अ० वि०) अनुपस्थित, जो मौजूद न हो।

गैरहाजिरी (अ० स्त्री०) अनुपस्थिती, नामौजदगी।

गैरायण (सं० पु० स्त्री०) गिरेर्गोत्रापत्यं, गिरि-फक्। गिरिका गोत्रापत्य, गिरिगोत्रकी सन्तान।

गैरिक (सं० क्ली०) गिरौ भवः गिरि-ठञ्। १ उपधातुविशेष, गेरूमिट्टी। इसकाँपर्याय—रक्तधातु, गिरिधातु, गवेधुक, धातु, सुरङ्गधातु, गिरिजद्रव, वनालक्त, गवेरुक

खाना, शराब पीनेवालेके साथ खाना, बसी हुई चीज खाना। (३) मधुत्यागके अतीचार—जिन फूलोंसे त्रस-जीव पृथक् न हो सके (जैसे गोभी) उनको खाना, सुरमा आदिमें मधु डालना। (४) उदुम्बरत्यागके अतीचार—बिना जाने हुए किसी फलको खाना, बिना फोड़े हुए (भीतर कोई जीव है या नहीं, इस बातको बिना जांच किये) फलादिका खाना, ऐसे फलोंको खाना जिनमें जीव होनेकी सम्भावना हो। (५) द्यूतत्यागके अतीचार—जूआका खेल देखना,-मनोविनोदके लिए ताश आदिके खेलमें हार-जीत मनाना। (६) वेश्यात्यागके अतीचार—वेश्याओंके गीत, नाच आदि सुनना वा देखना, उनके स्थानोंमें घूमना, वेश्यासक्तोंकी सङ्गति करना। (७) अचौर्यके अतीचार—किसीके न्यायसिद्ध भाग वा हिस्सेको छिपाना। (८) शिकारत्यागके अतीचार—शिकारियोंके साथ जाना वा उनकी सङ्गति करना। (९) परस्त्रीत्यागके अतीचार—अपनी इच्छासे किसी स्त्रीके साथ गन्धर्व-विवाह करना, कुमारी कन्याओंके साथ विषयसेवनकी इच्छा रखना। (१०) रात्रिभोजनत्यागके अतीचार—रात्रिका बना हुआ भोजन दिनमें खाना, इत्यादि।

दर्शनिक श्रावकको पाक्षिक-श्रावकके सम्पूर्ण आचरणोंका पालन तो करना ही पड़ता है; उसके सिवा निम्नलिखित आचरण भी उसके लिए पालनीय हैं। दर्शनिक श्रावकको मद्य, मांस, मधु और अचारका व्यवसाय न करना चाहिए। मद्य, मांस खानेवाले स्त्री-पुरुषोंके साथ शयन और भोजन न करना चाहिए। किसी तरहका नशा न करना चाहिए। अपने अधीन स्त्रीपुत्रोंको धर्म-मार्गमें दृढ़ करनेका पूर्ण उद्यम करना चाहिए।

ज्ञानानन्द श्रावकाचारमें लिखा है कि, दर्शनप्रतिमावालेको बाईस अभक्ष्य न खाना चाहिए।

२य व्रतप्रतिमा—जो माया, मिथ्या और निदान इन तीनों शल्योंको छोड़ कर पांच अणुव्रतोंका अतीचार-रहित पालन करता है तथा सात प्रकारके शीलव्रतोंको भी धारण करता है, वह 'व्रतप्रतिमा'का धारक 'व्रती' श्रावक कहलाता है। मनके कांटेको शल्य कहते हैं। शल्य तीन प्रकारकी है-१ मायाशल्य, २ मिथ्याशल्य और ३ निदानशल्य' मायाशल्य—अपने भावोंकी विशुद्धताके लिए व्रत धारण करके किसी अन्तरङ्ग लज्जा भावसे वा किसी सांसारिक प्रयोजनसे अथवा अपनी कीर्ति फैलानेके अभिप्रायसे व्रत धारण करनेको मायाशल्य कहते हैं। मिथ्याशल्य—व्रतोंका पालन करते हुए भी चित्तमें पूरा श्रद्धान न होना अर्थात् उन व्रतोंसे आत्माका कल्याण होगा या नहीं, ऐसी शङ्का रखना मिथ्याशल्य कहलाती है। निदानशल्य—इस प्रकारकी इच्छासे व्रतोंका पालन करना कि, 'परलोकमें नरक, निगोद और पशुगतिसे बच कर मेरा स्वर्ग आदिमें जन्म हो।' इन शल्योंको हृदयसे निकाल कर निम्नलिखित पांच अणुव्रतोंका पालन करना चाहिए।

(१) अहिंसाणुव्रत—अभिप्राय पूर्वक नियम करनेको व्रत कहते हैं। गृहस्थोंके समस्त पापोंका त्याग होना असम्भव है, इसलिए वे अणुव्रत अर्थात् स्थूलरूपसे व्रतोंका पालन करते हैं। समन्तभद्राचार्यने अहिंसाणुव्रतका लक्षण इस प्रकार किया है—

"सङ्कल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान्।
न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः॥"

अर्थात् सङ्कल्प (इरादा) करके मन वचन-काय एवं कृत-कारित अनुमोदनासे त्रसजीवोंकी हिंसा (वध) नहीं करना, अहिंसाणुव्रत कहलाता है। इस व्रतमें भोजन वा औषधके उपचार एवं पूजाके लिए किसी भी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय जीवका घात करनेका इरादा नहीं करना चाहिए और न हिंसक कार्योंकी प्रशंसा ही करनी चाहिए। स्थूल शब्दसे मतलब यहां निरपराधियोंकी सङ्कल्प करके हिंसा करनेसे है; क्योंकि पुराणोंमें लिखा है कि अपराध करनेवालोंको चक्रवर्ती आदि यथायोग्य दण्ड दिया करते थे जो अणुव्रतके धारक थे। इससे ज्ञात होता है कि दण्डादि देनेमें न्यायपूर्वक जो प्रवृत्ति होती है, उसका विरोध अणुव्रत धारकके लिए नहीं है। श्रीअमितगति-आचार्य अपने "सुभाषितरत्नसन्दोह"में लिखते हैं—

"भेषजातिथिमंत्रादिनिमित्तेनापि नाङ्गिनः।
प्रथमाणुव्रताधारैर्हिंसनीयाः कदाचन॥" ७६७॥

पतित पदार्थकी आकर्षण शक्तिका इसी नियमसे (क ई फिट २) आविष्कार किया था। इस गति-नियमको लेकर ऐरिष्टटल् मतावलम्बियोंसे बहुतसा झगड़ा हुआ, इसलिए उन्हें पाईसाको परित्याग कर पादुआ नामके नगरमें चला आना पड़ा था। यहाँ वे भिनिसियान् विश्वविद्यालयमें अठारह वर्षके लिए अङ्कशास्त्रकी वक्तृता देनेके लिए नियुक्त किये गये। कुछ दिन बाद उनकी इच्छा हुई कि, जन्मभूमिमें ही रहें। उन्होंने पाईसामें पहिलेके कामके लिए पुन: प्रार्थना पत्र भेजा। उनकी इच्छा पूर्ण हो गई, पर शर्त्त इतनी रही कि, जब तक वे अध्यापकका काय करेंगे तब तक अपना निज अभिमत जनतामें न फैला सकेंगे। वे पाईसा पहुंच गये। पादुआमें वे जब तक रहे थे, तब तक उनकी वक्तृता सुननेके लिए यूरोपके नाना स्थानोंसे बहुतसी छात्रमण्डली आया करती थीं। उन्होंने पहिले पहिल दर्शनशास्त्रके उपदेशोंको सरल इटालीको छन्दमें अनुवाद किया था। उनके आविष्कारोंमें एक प्रकारका ताप यन्त्र, दिग्दर्शनयन्त्र और सर्वज्योतिर्विद्याओंका आदरणीय दूरवीक्षणयन्त्र (Refracting telescope) ये तीन ही प्रधान हैं। १६०८ ई०में उन्होंने अपना आविष्कृत प्रथम दूरवीक्षण भिनिसके प्रधान विचारपतिको भेंटमें दिया था। इसी सालमें उन्होंने दूसरा एक अणुवीक्षणयन्त्र बनाया था।

इन दिनों वे अपने दूरवीक्षणोंसे ज्योतिष्कमण्डली-का परिदर्शन किया करते थे। १६१० ई०में ७ जनवरीकी रातको उन्होंने वृहस्पतिग्रहके ४ पारिपार्श्विक उपग्रह देखे थे। १६११ ई०में वे रोम नगरीमें गये थे। वहाँ पर उन्होंने खूब सम्मान पाया और 'लिन्सियाई एकेडिमी' नामके विश्वविद्यालयके सभासद बनाये गये। इसके कुछ ही दिनों बाद वे कोपर्णिकसके मतके समर्थक बन गये। इससे जनताने उन्हें नास्तिक मतका प्रचारक समझ कर निरादर किया था। उन्होंने किसीकी बात पर ध्यान न देकर 'सूर्यमें कलङ्क' नामक एक पुस्तक लिखी, उसमें उक्त मतका खूब ही समर्थन किया गया था। अपने मतके प्रसारके लिये वे दूसरी वार भी रोममें गये थे। परन्तु वहां पर उनकी आसन्न विपद् जान कर ग्रैण्ड डिउकने उन्हें टासकानिमें लौट जानेके लिए अनुरोध किया था। इसी समय पोपने उन्हें अपना मत छोड़ देनेके लिये आदेश दिया था। इस घटनाके थोड़े दिन पीछे गैलीलिओका एक प्रधान ग्रन्थ प्रकाशित हुआ, इसमें भी उन्होंने कोपार्णिकस, टलेमि और आरिष्टलके पक्षका समर्थन किया था। इस पर पोपने ऐसा आदेश दिया कि, जिससे वे फिर कोई भी पुस्तक न प्रकाशित कर सकें। परन्तु गैलीलिओने नाना प्रकारके कौशलोंसे पोपसे पुन: अनुमति ले ली और १६३२ ई०में फ्लोरेन्स नगरमें "Un Dilogo intornoi due massimi Sistemi dal Mondo" नामकी एक पुस्तक प्रकाशित कराई थी। पुस्तकके प्रकाशित होते ही विचारार्थ दण्डनायकोंके हाथमें पड़ी। पोपने पुस्तक पढ़ कर ऐसा समझ लिया कि, "गैलीलिओने मेरी ही दिल्लगी उड़ानेके लिये यह पुस्तक प्रकाशित की है।"

उस समय गैलीलिओकी उम्र ७० वर्षकी थी। इस बुढ़ापेमें भी उन्हें विचाराधीन होना पड़ा था। उनके ऊपर काफी अत्याचार किया गया; जिससे वे उन्हें तङ्ग हो कर अपना मत परित्याग करना ही पड़ा था। इतने पर भी उन्हें छुटकारा न मिला, जेलकी सजा भुगतनी पड़ी थी। फिर टासकानिके ग्रैण्ड डिउकके बार बार प्रार्थना करने पर पोपने गैलीलिओको मुक्ति प्रदान की थी।

अन्तिम जीवन उन्होंने आर्सेट्री नामक स्थानमें बिताया था। उस समय वे आखोंसे अच्छा देख न सकते थे। परन्तु तब भी उन्होंने जीवनके आखिरी दिनोंमें वैज्ञानिक चर्चा करते हुए ७८ वर्षकी उम्रमें १६४२ ई०की ८वीं जनवरीमें इह जीवन छोड़ा था। सान्टाक्रूशके मन्दिरमें उनका स्मृतिचिह्न अब भी मौजूद है।

गैस—१ एक प्रकारकी वाष्प विशेष। पहिले रासायनिकोंने दो प्रकारके गैसोंका निश्चय किया था,—एक स्थायी गैस (Permanent Gas) और दूसरी अस्थायी गैस (Nonpermanent Gas)। उनके मतसे, यथेष्ट उत्ताप और दबानेसे जो गैस नष्ट नहीं होती, उसे स्थायी गैस कहते हैं, जैसे अक्सिजन, हाइड्रोजन इत्यादि और जो गैस तरल की जा सके, वह अस्थायी गैस है।

करण—दूसरोंका विवाह कराना, (२) इत्वरिका-अपरिगृहीतागमन—जिसका कोई स्वामी नहीं है ऐसी वेश्या आदिके पास जाना, (३) इत्वरिका-परिगृहीता-गमन—जिसका कोई एक पुरुष पति हो, ऐसी व्यभिचारिणी स्त्रीसे रति करना, (४) अनङ्गक्रीड़ा—काम सेवनके अङ्गके सिवा अन्य स्थानमें कामक्रीड़ा करना और (५) कामतीव्राभिनिवेश—काम सेवनसे तृप्त न होना, सर्वदा उसीमें लगे रहना। स्वदारसन्तोष-व्रतीको इन पांच अतीचारोंका स्मरण रखना चाहिये।

(५) परिग्रह-परिमाण अणुव्रत—भूमि, यान, वाहन, धन, धान्य, गृह, भाजन, कुप्य, (वस्त्र कार्पास, चन्दन आदि) शयनासन, चौपद, दुपद, इन दश प्रकारके परिग्रहोंके परिमाण करनेको परिग्रह-परिमाण अणुव्रत कहते हैं। बिना आवश्यकताके बहुतसी चीजें संग्रह करना, दूसरेका ऐश्वर्य देख कर आश्चर्य करना, अतिलोभ करना और पशुओं पर हदसे ज्यादा बोझ लादना ये पांच इस व्रतके अतीचार हैं।

व्रतप्रतिमा-धारक उपर्युक्त व्रतोंको अतीचाररहित पालता है। यदि कोई अतीचार लगे तो प्रतिक्रमण और प्रायश्चित्त करना चाहिए। उपर्युक्त पांच अणुव्रतोंके सिवा व्रती श्रावकको तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत, इन सप्त शीलव्रतोंका भी पालन करना चाहिए। सप्त शीलव्रत, यथा—(१) दिग्विरति, (२) देशविरति, (३) अनर्थदण्डविरति, (४) सामायिकव्रत, (५) प्रोषधोपवास-व्रत (६) उपभोगपरिभोग-परिमाणव्रत और (७) अतिथि-संविभागव्रत।

(१) दिग्व्रत—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊर्द्ध, अध, ईशान, आग्नेय नैऋत्य और वायव्य इन दशों दिशाओंमें जानेका परिमाण करके उसके बाहर गमन न करनेको दिग्व्रत कहते हैं। यह व्रत मरण पर्यन्त त्यक्त क्षेत्रोंके बाहरके पापोंके छोड़नेके लिए अर्थात् सांसारिक, व्यापारिक और व्यवहारिक कार्य-जनित पापोंसे बचनेके लिए ग्रहण किया जाता है। किन्तु तीर्थयात्रा और धर्मसम्बन्धी कार्यके लिए मर्यादा नहीं होती; जैसा कि ज्ञानानन्द-श्रावकाचारमें लिखा है—'क्षेत्रका परिमाण सावद्य योग (पापकार्यों)के लिए किया जाता है, धर्मकार्यके लिए नहीं। धर्म-कार्यके लिए किसी प्रकारका त्याग नहीं है।'

इस व्रतके पांच अतीचार हैं, यथा—(१) ऊर्द्धातिक्रम (परिमाणसे अधिक ऊंचाइके वृक्ष पर्वतादि पर चढ़ना), (२) अधोऽतिक्रम (परिमाणसे अधिक कूप, बावड़ी, खनि आदिमें नीचे उतरना), (३) तिर्यग्व्यतिक्रम (पर्वतादिकी गुफाओंमें तथा सुरङ्ग आदिमें टेढ़ा जाना), (४) क्षेत्रवृद्धि (परिमाण की हुई दिशाओंके क्षेत्रसे अधिक क्षेत्र बढ़ा लेना) और (५) स्मृत्यन्तराधान (दिशाओंकी की हुई मर्यादाको भूल जाना)। इन अतीचारों (दोषों)से बचना चाहिए।

(२) देशव्रत—यावज्जीवके लिये किये हुए दिग्व्रतोंमेंसे और भी सङ्कोच कर किसी ग्राम, नगर, गृह, मुहल्ला आदि पर्यन्त गमनागमनकी मर्यादा करके उससे आगे मास, पक्ष, दिन, दो दिन, चार दिन आदि कालकी मर्यादासे गमनागमन त्याग करनेका नाम देशव्रत है। इसे देशावकाशिक व्रत कहते हैं। किसी किसी ग्रन्थ-कारने इसे शिक्षाव्रतमें शामिल किया है और भोगोप भोग परिमाण शिक्षाव्रतको गुणव्रतमें मिला दिया है। इसके पांच अतीचार है, यथा १ आनयन (मर्यादासे बाहरकी वस्तुओंका मंगाना वा किसीको बुलाना), २ प्रेष्यप्रयोग (मर्यादासे बाहरके क्षेत्रमें स्वयं तो न जाना किन्तु सेवक आदिके द्वारा अपना काम निकाल लेना), ३ शब्दानुपात (मर्यादासे बाहरके क्षेत्रमें स्थित मनुष्यको खांसी आदिके शब्दसे अपना अभिप्राय समझा देना), ४ रूपानुपात (मर्यादासे बाहरके क्षेत्रमें स्थित मनुष्यको अपना रूप दिखा कर वा हाथके इशारोंसे समझा कर अपना काम करा लेना) और ५ पुद्गलक्षेप (मर्यादासे बाहर कङ्कड, पत्थर आदि फेंक कर इशारा करना)। इन अतीचारों (दोषों)से व्रतकी रक्षा करनी चाहिए।

(३) अनर्थदण्डत्यागव्रत—बिना प्रयोजन ही जिन कार्योंके करनेसे पापारम्भ हो, उन कार्योंको त्याग देनेका नाम अनर्थदण्डत्यागव्रत है। जिनसे व्यर्थ ही पापबन्ध होता है, ऐसे अनर्थदण्डके पांच भेद हैं, यथा—१ पापोप-देश, २ हिंसादान, ३ अपध्यान, ४ दुःश्रुति और ५ प्रमादचर्या। (१) पापोपदेश अनर्थदण्ड—दूसरेको वनके दाह करनेका, पशुओंके वाणिज्यका, शस्त्रादिके व्यापार-

आसानीसे निकल आते हैं, और पात्र साफ करनेमें भी आसानी होती है। इसीलिए दोनों तरफ ढक्कन बनाये जाते हैं। कोई पात्र बिल्कुल गोल और कोई गोलाई लिए हुए लम्बे होते हैं। गैसके कारखानोंके ये पात्र जमीनसे ऊंचे और सिलसिलेवार लगाये जाते हैं। एक पंक्तिमें बारह पात्र तक लगाये जा सकते हैं। गैस बनाते समय नीचेका ढक्कन बन्द कर देना पड़ता है, और फिर कोयला भर कर ऊपरका ढक्कन भी बन्द करना पड़ता है। सिर्फ ऊपरमें दोनों तरफ दो छेद रह जाते हैं। इसमें गैस निकलते रहनेके लिए दो नल लगे रहते हैं। इस प्रकारसे जब पात्र कोयलेसे भर जाते हैं, तब उनके नीचे आग जला दी जाती है। पात्रके आस पास भी आग जलाई जा सकती है। एक पंक्तिके सब पात्रोंमें जिससे समान भावसे आँच लगे, उसका भी विशेष ध्यान रखना चाहिये। कमती बढ़ती होनेसे किसी पात्रके कोयले तो कच्चे ही रह जाते हैं, और किसी किसीके बिल्कुल जल भी जाते हैं। इसके सिवा और भी बहुतसे दोष उत्पन्न हो जाते हैं। पत्थरके कोयलेमें कुछ गन्धकका भी भाग रहता है। यह गन्धक भाफ रूपमें परिणत हो कर जिस गैसके साथ मिल जाती है, वह गैस बहुत ही अनिष्टजनक होती है।

पात्रोंमें गैस निकलनेके लिए दो नल रहते हैं। गैस बननेके साथ साथ उन नलों द्वारा वह निकलती रहनी चाहिये। देरी होनेसे पात्रके अन्दरसे कणसे झरने लगते हैं, जिससे पात्र शीघ्र ही खराब हो जाता है, और गैसकी आलोकदायिका शक्ति घट जाती है। पात्र या रिटर्टके भीतरके कोयले जब पूर्ण पक जाते हैं, तब उन्हें कोक-कोयला कहते हैं। कोक-कोयलासे वाष्पीय भाग निकल जाता है। इसलिए वह देखनेमें जला हुआसा मालूम पड़ता है। कच्चे कोयलोंसे यह हलके होते हैं। इसमें अङ्गारका भाग (Carbon) भी ज्यादा रहता है। जलाते वखत इनसे धुआँ कम निकलता है और दुर्गंध भी कम होती है। इसलिए यह रसोई करनेके काममें लाया जाता है।

समुदय गैसके निकल जाने पर पात्रके दोनों ढक्कनोंको खोल कर पके हुए कोयले निकाल लेने चाहिये। इस समयमें उन दोनों नलोंके मुंहको बन्द कर देना चाहिये जिससे कि, गैस निकलती है। ऐसा नहीं करनेसे बाहरकी हवा उस नलमें घुस जायगी या उसकी गैस बाहर निकल जायगी। बाहरकी हवा नलमें घुस कर गैसमें मिल जानेसे बत्तीका उजाला कम हो जाता है। इसलिए कलकत्तेमें जिस प्रकार इंजन जोड़नेमें S अक्षरके माफिक नलको टेढ़ा कर देते हैं, गैसके नलको भी बहुतसे लोग वैसा ही टेढ़ा कर देते हैं। नलकी ऊपरकी ओर चढ़ा कर फिर नीचे झुका देनेसे ऐसा टेढ़ा हो जाता है। इस स्थानका तल भाग नलसे मोटा है इसे एक गड्ढा भी कहा जा सकता है। इसको 'हाइड्रौलिक मेन' (Hydraulic main) कहते हैं। इस गड्ढेके भीतर हमेशा पानी या अलकतरा भरा हुआ रहता है। पात्रसे गैस बन कर पहिले नल द्वारा ऊपर चढ़ती है। फिर वह गैस गड्ढेके पास आजाती है। वहां पर जाकर सामने पानी या अलकतरा देखती है। पात्रमें यदि जल्दी जल्दी गैस न बने और नीचेसे अगर जोरसे धक्का न आवे तो गैस उस अलकतरेको पार कर आगे नहीं बढ़ सकती। परन्तु ऐसा नहीं होता। पात्रमें बराबर कोयले सिकते रहते हैं गैस भी बराबर बनती रहती है और धक्का भी बराबर जारी रहता है। इसलिए पीछेकी गैस आगे गैसको धक्का देती हुई अलकतरेमें प्रविष्ट करती है। अलकतरासे गैस हलकी होती है। इसलिए अलकतरेमें घुस कर बुद्बुदाकारमें ऊपर आजाती है। ऊपरमें आनेसे फिर कोई चिन्ता नहीं। फिर वह नलकी रास्तासे बराबर चली जाती है। कोक-कोयला निकालते समय भी वह फिर निकल नहीं सकती; क्योंकि, उसके पीछेसे कोई धक्का नहीं लगता। न लौटे तो सामने अलकतरा है, उसे पार करनेकी ताकत नहीं, इसलिए पुनः वह लौट जाती है। इसी प्रकार बाहरकी वायु भी अलकतराको पार कर भीतर नहीं जा सकती।

कोयला सिकने पर पहिले पहिले जो गैस निकलती है, वह विशुद्ध नहीं होती। कोयलेमें जो तैलादि पदार्थ रहते हैं, वे ही उत्ताप लगनेसे वाष्पाकार धारण करते हैं और गैसके साथ मिल जाते हैं। इसके बाद ठण्डे होने पर जम जाते हैं। जम कर जो पदार्थ बनता है, उसे अलकतरा कहते हैं। अलकतरा जम कर गैससे अलग

चाहिये। (४) मनःशुद्धि—मनमें आर्तध्यान वा रौद्रध्यान न कर मुक्तिकी रुचिसे धर्मध्यानमें आसक्त रहना चाहिए। (५) वचनशुद्धि—सामायिक करते समय परम आवश्यकीय कार्य होने पर भी किसीसे वार्तालाप नहीं करना चाहिए ; केवल पाठ पढ़ने और शुद्ध मन्त्रोच्चारण करनेमें ही वचनका उपयोग करना चाहिये। (६) कायशुद्धि—शरीरमें मलमूत्रकी बाधा न रखनी चाहिए और न स्त्री-संसर्ग किये हुए शरीरसे सामायिक ही करना चाहिए। (७) विनयशुद्धि—सामायिक करते समय देव, गुरु, धर्म और शास्त्रको विनय रख कर उनके गुणोंमें भक्ति करनी चाहिए ; अपनेमें ध्यान और तप आदिका अहङ्कार न आने देना चाहिए।

जैनशास्त्रोंमें सामायिक करनेकी विधि इस प्रकार लिखी है—सामायिक करनेवाले श्रावकोंको उचित है कि, उपर्युक्त सातों शुद्धियोंका विचार रखते हुए सामायिक प्रारम्भ करनेके पहले कालका परिमाण और समयका नियम कर लें। अन्तर्मुहूर्त काल तक धर्मध्यान करनेकी प्रतिज्ञा करनी चाहिये। सामायिकके कालकी मर्यादा करनेके बाद इस बातका भी प्रमाण कर लेना उचित है कि "इतने समय तक मैं इस स्थानके चारों ओर १ गज वा २ गज क्षेत्र तक जाऊंगा, अधिक नहीं अथवा मेरे साथ जो परिग्रह है, उसके सिवा मैंने इतने काल पर्यन्त सर्व परिग्रहका त्याग किया" इत्यादि, अनन्तर खड़े हो कर नौ नौ बार णमोकार-मन्त्र पढ़ते हुए चारों दिशाओंमें तीन आवर्त पूर्वक साष्टांग नमस्कार करें फिर सामायिक करनेके लिए बैठ जावें। सामायिक प्रातः, मध्याह्न सायाह्न तीनों संध्याओंमें करना चाहिए।

इस सामायिक-शिक्षाव्रतको शुद्धताके लिए निम्नलिखित पांच अतीचारोंको दूर करना चाहिए। (१) मनःदुःप्रणिधान—मनको विषय कषाय आदि पापबन्धके कार्योंमें चञ्चल करना। (२) वाग्दुःप्रणिधान—वचनको चञ्चल करना अर्थात् सामायिक करते समय किसीसे वार्तालाप करना आदि। (३) कायदुःप्रणिधान—शरीरको हिलाना। (४) अनादर - उत्साहरहित अनादरसे सामायिक करना। (५) स्मृत्यनुपस्थान—सामायिकमें एकाग्रता धारण न कर चित्तकी व्यग्रताके कारण पाठ, क्रिया वा मन्त्रादि भूल जाना। इन अतीचारोंको न होने देना चाहिए।

(५) प्रोषधोपवासव्रत—प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीके दिन समस्त आरम्भ (सांसारिक कार्य) एवं विषय कषाय और चार प्रकारके आहारोंका त्याग कर धर्मकथा श्रवण करते हुए सोलह प्रहर व्यतीत करनेको प्रोषधोपवासव्रत कहते हैं। पांचों इन्द्रियोंके विषयोंको त्याग कर सर्व इन्द्रियोंको उपवासमें स्थिर रखना चाहिए। उपवासके दिन चारों प्रकारका आहार (खाद्य, स्वाद्य, लेह्य, पेय) तथा उबटन करना, सिर मल कर नहाना, गन्ध सूंघना, माला पहनना आदि त्याग देना चाहिए। केवल पूजाके लिए धारा स्नानमात्र किया जा सकता है। व्रती श्रावक इसे अभ्यासरूपसे पालते हैं ; किन्तु ४र्थ प्रोषधोपवासप्रतिमाके धारक इसका नियमरूपसे पालन करते हैं। अतएव इसके अतीचार आदि प्रोषधोपवासप्रतिमाके विवरणमें लिखेंगे।

(६) भोगोपभोगपरिमाणव्रत—कुछ भोग उपभोगकी सामग्रीको रख कर बाकीका *यमनियमरूप* * त्याग कर देना भोगोपभोगपरिमाण कहलाता है। बहुतसे पदार्थ ऐसे हैं, जिनसे लाभ तो थोड़ा होता है और पाप अधिक, उनको जन्म भरके लिए छोड़ देना चाहिए। इस व्रतके पालनेवालेको प्रतिदिन निम्नलिखित विषयोंका नियम करना उचित है। यथा—आज मैं इतनी बार भोजन करूंगा, आज मैं दूध, दही, घी, तेल, नमक और मीठा इन छ रसोंमेंसे अमुक रस छोड़ता हूं, आज भोजनके सिवा इतनी बार पानी पीऊंगा, आज ब्रह्मचर्य पालूंगा, आज नाटक न देखूंगा इत्यादि। इस व्रतके पांच अतीचार हैं, यथा—१ सचित्ताहार (जीवसहित पुष्पफलादिका आहार करना), २ सचित्तसम्बन्धाहार (सचित्त अर्थात् जीवसहित वस्तुसे स्पर्श किये हुए पदार्थोंको भक्षण करना), ३ सचित्तसंमिश्राहार (सचित्त पदार्थसे मिले हुए पदार्थोंका भोजन करना), ४ अभिषव (पुष्टिकर पदार्थोंका आहार

* *यावज्जीव त्याग करनेको यम और किसी नियत समय तकके लिए त्याग करनेको नियम कहते हैं।*

गैससे अलकतरा जल्दी अलग हो जाता है। इस प्रकार नाना स्थानोंमें अलकतरा जम कर हौदमें इकट्ठा होता है। बादमें फिर वह वहांसे उठाकर बेंच दिया जाता है। विलायतमें अलकतरा पहिले बहुत कम कीमतमें बिकता था। अब उससे मैंजिष्ठा, नील, पीत, लोहित आदि तरह तरहके रंग बनने लगे हैं। इससे इसका मूल्य बढ़ गया है। इसके अलावा इससे सैकेरिण नामको एक प्रकारको चीनी भी बनने लगी है। इससे मीठी दूसरी चीज दुनियामें नहीं है। यह बड़े आश्चर्यकी बात है, इसमें सन्देह नहीं।

अलकतराके हाथसे बचने पर गैससे आमोनियाको पृथक् करना पड़ता है। गैसके साथ नौसादर नामका पदार्थ वाष्परूपमें मिला हुआ रहता है। घरोंमें अगर गैस और नौसादरवाष्प एक साथ जलें, तो पीतल, कांसे आदिमें दाग पड़ जाते हैं। आमोनिया गैस एक यौगिक पदार्थ है। मूल पदार्थ नहीं। यह एक भाग नाइट्रोजन और तीन भाग अक्सिजनसे बनता है। आमोनिया गैस जिस समय जलती है, अर्थात् जब वह वायुकी अक्सिजनके साथ मिलती है, तब दोनों तरफ नये दो यौगिक पदार्थोंकी सृष्टि होती रहती है। यवक्षारजन (Nitrogen) के साथ पहिले कुछ अक्सिजेन मिल कर नाइट्रस् एसिड, फिर उसमें और भी अक्सिजेन मिलनेसे नाइट्रिक् एसिड् या सोराका द्रावक बनता है। दूसरी ओर उदजनके साथ अम्लजन मिल कर पानी हो जाता है। पानी हो जाय, तो कुछ हर्ज नहीं पर घरके भीतर नाइट्रिक्एसिड उत्पन्न होते रहनेसे विशेष क्षति होती है। घरकी हवा खराब होनेके सिवा पीतल, कांसे आदिके बरतन भी बिगड़ जाते हैं। इसलिए आमोनियाका अलग करना बहुत ही जरूरी है।

उक्त आमोनियासे ही नौसादर बनता है। नौसादर कुछ फेंक देनेकी चीज नहीं है, इसकी भी कीमत है। पहिले विलायतमें नौसादरका ज्यादा प्रचार न था। पहिले मिस्र देशमें ऊंटकी विष्ठासे नौसादर बनता था। वही विलायतमें थोडा बहुत पहुंचा करता था। गैस बनाते बनाते विलायतके सुचतुर व्यक्तियोंने देखा कि, गैससे ही बहुत आमोनिया निकलती है। निकालनेसे ही रुपये आवेंगे। तब उन्होंने उसे पृथक करनेका प्रयत्न किया। उन्होंने यह भी देखा कि, जलके साथ आमोनियाका खूब ही सद्भाव है। मानो आमोनिया गैसके साथ इतना मिलता है कि, एक भाग जल ७७० गुणी आमोनियागैसके साथ बिना मिले वह तृप्त नहीं होता।

पहिले पहल लोग बड़े बड़े पानीके हौदोंमें एक तरफ गैस डुबो देते थे, और दूसरी ओर बड़े बड़े बुदबुदोंके साथ गैस तैरने लगती थी। इस प्रकार गैसकी आमोनिया धोई जाती थी, अर्थात् आमोनिया पानीके साथ मिल जाती थी। परन्तु इसमें देर बहुत लगती है। हौदमें जाकर गैसको बहुत देर तक ठहराना पड़ता है। पीछेकी तरफ गैसकी द्रुतगति मन्द हो जाती है। इस प्रकारसे गैसके धोनेमें और भी एक यह दोष है कि, गैसके चारों तरफ पानी नहीं लगने पाता। बड़े बड़े बुदबुदोंके समान जो गैस है, उसमें बाहर तो पानी लग जाता है, पर भीतर नहीं लगने पाता। भीतरमें जो आमोनिया रहती है, वह पानीके साथ नहीं मिलती, इसलिए गैसमें आमोनिया रह जाती है।

फिर इसके लिए एक व्यक्तिने कृत्रिम वर्षाकी सृष्टि की। जलकलके द्वारा मूसलधारसे पानी वर्षाया जाता था, और उस वर्षाको भेद कर गैस ऊपर चढ़ती रहती थी। इससे गैस चारों तरफसे धुल जाती थी। और आमोनिया गैस भी पानीके साथ मिल जाती थी। इस तरकीबसे कुछ लाभ तो अवश्य हुआ, पर पीछे इसमें भी दोष दीखने लगे। वास्तवमें कोयलेकी गैस एक प्रकारको हाइड्रोकारबोन है, अर्थात् हाइड्रोजेन और कारबोन (अङ्गार) मिश्रित एक यौगिक पदार्थ है। इस हाइड्रोकारबोनको जलानेसे उत्ताप और प्रकाशकी उत्पत्ति होती है। उस कृत्रिम वर्षासे केवल आमोनिया ही निकल जाती हो, ऐसा नहीं, बल्कि उसकी हाइड्रोकारबोन भी बहुत नष्ट हो जाया करता था। जिससे गैसकी आलोक और उत्ताप-प्रदायिका शक्ति भी घट जाती थी इसके लिए और एक महाशयने एक नया उपाय निकाला। बहुतसे खड़े किये हुए बड़े बड़े नलोंमें कोक-कोयला रख कर उससे गैस चला दी। गैसके

(४) भावशुद्धि—दाताको खास मुनिके लिए रसोई न बनानी चाहिए ; बल्कि अपनी ही रसोईमेंसे दान करना उचित है। कारण मुनि उद्दिष्ट भोजनके त्यागी हैं, उन्हें यदि यह बात मालूम हो जाय तो वे भोजन नहीं करते।

(२) द्रव्यविशेष—भोजन ऐसा होना चाहिए जो मुनिके राग, द्वेष, असंयम, मद, दुःख, भय, रोग आदि उत्पन्न न करे और शीघ्र पचनेवाला हो। मुनिको प्रसन्न करके अभिप्रायसे व्यञ्जन, मिष्टान्न वा गरिष्ट भोजन दान करनेसे मुनिकी तपश्चर्यामें बाधा होती है। अतएव ऐसा भोजन उन्हें कदापि न देना चाहिए। इसमें पुण्य नहीं होता, बल्कि पापबन्ध होता है।

(३) दातृविशेष—दान देनेवाला बहुत विचारवान् होना चाहिए। छोटे बालक वा नादान स्त्री अथवा निर्बल रोगी मनुष्यको दानके लिए नहीं उठना चाहिए। ऐसे व्यक्तियोंको केवल दानको देख कर उसकी अनुमोदना करनी चाहिए, इसीसे उनको दानका फल मिलता है। दातामें मुख्यतः ७ गुण होने चाहिए। जैनाचार्य श्रीअमृतचन्द्रस्वामी कहते हैं—

"ऐहिकफलानपेक्षा क्षान्तिर्निष्कपटतानसूयत्वम्।
अविषादित्वमुदित्वे निरहंकारित्वमिति हि दातृगुणाः ॥१६९॥"
(पुरुषार्थसिद्ध्युपायः)

१ ऐहिकफलानपेक्षा—दाता ऐहिक इसलोक सम्बन्धी फलकी इच्छा न करे। २ क्षान्तिः—क्षमाभाव धारण करे। ३ निष्कपटता-कपट वा छलभाव न करे और न छलसे अशुद्ध वस्तुका दान करे। ४ अनसूयत्व—दान करते हुए अन्य दाताओंसे ईर्षा न करे कि, 'मेरा दान अमुकसे उत्तम हो'। ५ अविषादित्व—दानके समय किसी प्रकारका दुःख वा शोक न करे। ६ मुदित्व—दानके समय हर्षचित्त रहे। ७ दाताको यह अभिमान न करना चाहिए कि, मैं दानी हूं, पात्रदान देता हूं अतः पुण्यात्मा हूं।' दाताको शास्त्रका ज्ञाता भी होना चाहिए।

४। पात्रविशेष—जो दान लेनेके उपयुक्त हों अर्थात् जो मोक्षप्राप्तिके साधन सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि गुणोंसे विशिष्ट हों, उन्हें पात्र कहते हैं। पात्र तीन प्रकारके हैं, उत्तम, मध्यम और जघन्य। सर्वपरिग्रहके त्यागी महाव्रतधारक मुनि उत्तम-पात्र है, अणुव्रत-धारक सम्यग्दृष्टि श्रावक मध्यम-पात्र और व्रतरहित पर श्रद्धासहित जैन जघन्य-पात्र हैं।

इस वैयावृत्य शिक्षाव्रतमें श्रीअरहन्तदेवकी पूजा भी गर्भित है। व्रती श्रावकको उचित है कि अष्टद्रव्यसे शुद्धमनसे नित्य भगवान्‌की पूजा करे। इसप्रकार इन द्वादश व्रतोंका व्रतप्रतिमा नामक नैष्ठिक श्रावकको २य श्रेणीमें पालन करना चाहिए। व्रती श्रावक १२ व्रतोंमेंसे ५ अणुव्रतोंके अतीचारोंको नहीं होने देता, किन्तु ७ शीलव्रतोंके दोषोंको शक्तिके अनुसार ही बचाता है। यदि पांच अणुव्रतोंमें कोई दोष वा अतीचार लग जाय, तो उसका दण्ड वा प्रायश्चित्त लेना पड़ता है, किन्तु शीलव्रतोंके लिए ऐसा नियम नहीं।

सागरधर्मामृतकार पण्डित आशाधरजी लिखते हैं—अहिंसाव्रतकी रक्षा और मूलव्रतकी उज्ज्वलताके लिए धीरपुरुष रात्रिको चारों ही प्रकारका भोजन त्याग दे। व्रती श्रावकको उचित है कि, भोजन करते समय मुखसे कुछ न कहे और न किसी अङ्गसे कुछ इशारा ही करे क्योंकि इष्ट भोज्य वस्तुके मांगनेसे भोजनमें गृद्धता बढ़ती है। किन्तु यदि कोई थालीमें कुछ देता हो और उसकी आवश्यकता न हो, तो इशारेसे उसे मना कर सकते है। भोजन करते समय यदि गीला चमड़ा, गीली हड्डी, शराब, मांस, लोहू, पीव आदि दिखाई दे वा छू जाय, रजस्वला स्त्री, कुत्ता, बिल्ली, चाण्डाल आदिका स्पर्श हो जाय, कठोर (जैसे, अमुकको काट डालो, अमुकके घर आग लगा गई इत्यादि) शब्द सुनाई पड़े तथा त्यक्त पदार्थ खानेमें आ जाय, थालीमें कोई कीट पतङ्गादि पड़ कर वह मर जाय, तो भोजन छोड़ देना चाहिए।

३य सामायिक प्रतिमा—व्रतप्रतिमाके नियमोंका अभ्यास करके अधिक ध्यान करनेके अभिप्रायसे तीसरी श्रेणी (सामायिक प्रतिमा) में आ कर पूर्वोक्त * विधिके अनुसार दिनमे तीन बार सामायिककी क्रियाका पालन करना चाहिए। इस अभ्यासमें सामायिकका काल अन्तर्मुहूर्त (४८ मिनट) हैं, अर्थात् १ समयसे ले कर ४८

* विधि हम सामायिक व्रतके प्रकरणमें कह चुके हैं।

इनमेंसे बहुतसे मध्यभारतके खानदेशमें और उड़िषाके अधित्यकामें तथा नर्मदा, तापी, वर्द्धा, वैणगङ्गा आदि नदीप्रवाहित स्थानोंमें तथा वैतूल, छिन्दवाड़ा, सिवनी और मण्डला इत्यादि जिलोंमें भी वास करते हैं।

इस जातिका किसीने गोण्ड और किसी किसीने गण्ड नामसे उल्लेख किया है। हिस्लोप साहबका अनुमान है कि, सम्भवतः तेलगू कोण्ड (पहाड़) शब्दसे मुसलमान ऐतिहासिकोंने "पहाड़ी जाति" ऐसे अर्थके अपभ्रंशमें गोण्ड लिखा है। भू-वेत्ता टलेमी भी इन लोगोंको "गोण्डलोइ" (Gondaloi) नामसे उल्लेख कर गये हैं। मुसलमान इतिहासमें इनकी वासभूमि "गोंडवन" लिखी है। गोण्डवन देखो। पहिले उक्त स्थानमें समृद्धिशाली गोंड़राज्य था। ७८० ई०से लेकर ८०८ ई० तक राष्ट्रकूटराज गौड़ने मरुदेश पर आक्रमण किया था। मरुदेशाधिपति वत्सराज गौड़राजके धनसे ही धनी थे। ८१२ ई०में लाटेश्वरराज कर्क राष्ट्रकूटने गौड़राजके हाथसे मालवराजको बचाया था। १०४२ ई०में गौड़राज्य चेदिराज कर्णदेवके राज्यमें मिला हुआ था। उक्त प्रमाणोंसे मालूम होता है कि, पहिले एक गौड़देश ही चेदि, मालव, राष्ट्रकूट और बरार राज्यका सीमान्तवर्ती था। सम्भव है कि, वह गौड़देश पञ्च गौड़ोंमेंसे एक हो। गौड़ देखो। गौड़देशवासी होनेके कारण इस जातिका नाम गोंड़ पड़ा हो, ऐसा भी संभव हो सकता है।

गोंड लोगोंमें राजगोंड़, रघुवल, दादावे, कतुल्या, पाडाल, ढोली, ओझियाल, ठोटियाल, कैलाभूताल, कैकोपाल, कोलाम, मादियाल और नीचपाड़ाल इतनी श्रेणीयाँ भी पाई जाती हैं। राजगोंड़, रघुवल और दादावे श्रेणीके गोंड खेती करते हैं, इन लोगोंमें रोटीका व्यवहार तो है, पर बेटीका व्यवहार चालू नहीं है। इन लोगोंने हिन्दुओंकी क्रियाओंका बहुतसा अनुकरण किया है और धीरे धीरे हिन्दुओंमें मिलनेका प्रयास भी करते हैं। खाजरादादके गोंडराज अपनेको हिन्दू कह कर परिचय देते हैं। ये लोग दरिद्र राजपूत कन्याओंका पाणिग्रहण करते हैं। पाडाल श्रेणीके लोग धर्मोपदेशकका काम करते हैं। कहीं कहीं इनको पाथाडी या राजवर्द्धन वा देशाट भी कहते हैं। ढोली लोग ढोलक बजाते हैं। नागारची या छेरक्या नामसे इनमें एक नीची श्रेणी भी है। इस श्रेणीके मर्द लोग बकरियोंको चराते हैं और इनकी स्त्रियां दाईका काम करती हैं। ओझियाल लोग मंजीरा बजाते हुए गाते फिरते हैं। ढोलियाल लोग शीतला देवीके उपासक होते हैं। चेचक फैलनेके समय ये लोग उसको उपशम करनेके लिए घर घर जा कर शीतला देवीके गीत गाया करते हैं। इसीलिए कहीं कहीं इनको मातिपाल, ठाकुर और पेण्डा बड़िया भी कहते हैं।

कैलाभूताल लोग भी सड़कों पर गाते फिरते हैं। इनकी लड़कियां भी नर्त्तकीका काम करती हैं। कैकोपाल वा गोड़गोपाल लोग ग्वालोंका काम करते हैं। मादियाल गोंड सबसे ज्यादा असभ्य और जङ्गली होते हैं। वैलादिला पर्वत पर ये लोग कुल्हाड़ी हाथमें लेकर सर्वथा नङ्गे घूमा करते हैं। इनकी स्त्रियाँ भी कपड़ा पहरना नहीं जानतीं। सिर्फ कुछ पत्तोंको लेकर कमरके आगे पीछे बांध लेती हैं। बस्तारके लोग इनको जोधिया कहते हैं। ये लोग अपरिचित व्यक्तिको देखते ही डरसे भाग जाते हैं। बास्तारके राजाको ये लोग कई तरहसे कर देते हैं। कर वसूल करते समय तहसीलदार गांवके बाहर आकर ढोल बजवा कर कहीं छिप जाता है, पीछे ये लोग उस स्थान पर जाकर अपनी इच्छानुसार कर रख कर भाग जाते हैं। वर्द्धा नदीके दक्षिणमें पिण्डो पहाड़ पर कोलास श्रेणीका वास है। ये लोग अपनी जातिके साथ बैठ कर खाते पीते हैं, पर व्याह शादी नहीं करते। ये लोग भीमसेनकी पूजा करते हैं।

इसके अलावा छिन्दवाड़ा और महादेव पर्वतके बीचमें रहनेवाले मादि या गोंड़ हिन्दुओंकी भाषा और धार्मिक क्रियाकलापोंका बहुतसा अनुकरण करते हैं। बस्तार, भण्डारा, और रायपुर जिलेके हलवा गोंड़ बस्तार-राज-प्रदत्त यज्ञोपवीत धारण कर अपनेको उच्च श्रेणीका मानते हैं। बस्तारके गैति वा कैतोर और माड़िया लोगोंकी उपजीविका प्रधानतः खेती पर ही निर्भर है। वेणगङ्गाके किनारेके नैकूड़ोंने हिन्दुओं जैसा अपना वेष बना लिया है। ये लोग शिकार करके अपना

नहीं था, किन्तु इस श्रेणीके श्रावकको स्वस्त्री भी त्याज्य है। रत्नकरण्डश्रावकाचारमें लिखा है—

"मलबीजं मलयोनिं गलन्मलं पूतगन्धि बीभत्सं।
पश्यन्नङ्गमनंगाद्विरमति यो ब्रह्मचारी सः॥१४३॥"

मलके बीजभूत, मलको उत्पन्न करनेवाले मलप्रवाही दुर्गन्धयुक्त और लज्जास्पद वा ग्लानियुक्त अङ्गको समझ कर जो कामसेवनसे सर्वथा विरक्त होता है, वह ब्रह्मचर्य नामक ७म प्रतिमाका धारक ब्रह्मचारीश्रावक है। श्रीकार्तिकेयस्वामी कहते हैं—जो ज्ञानी मन, वचन और कायसे समस्त स्त्रियोंकी अभिलाषाका त्याग कर देता है तथा जो कृत, कारित, अनुमोदना और मन, वचन, कायसे नव प्रकार मैथुनको छोड़ देता है एवं ब्रह्मचर्यकी दीक्षामें आरूढ़ होता है, वह ही ब्रह्मव्रती वा ब्रह्मचारी श्रावक है।

स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा नामक जैनग्रन्थकी संस्कृत टोकामें लिखा है—"अष्टादशसहस्रप्रकारेण शीलं पालयति।" अर्थात् ब्रह्मचारी श्रावक १८ हजार भेदों सहित शीलव्रतका पालन करता है। यहां शीलव्रतसे तात्पर्य ब्रह्मचर्यव्रतका है।

जैन-ग्रन्थोंमें शील वा ब्रह्मचर्यके अठारह हजार भेदोंका वर्णन इस प्रकार किया गया है—४ प्रकारको स्त्रियां होती हैं जैसे देवी, मानुषी, तिरश्ची (पशु) और अचेतन (काष्ठचित्रादि निर्मित), इन चारों प्रकारकी स्त्रियोंका मन, वचन, कायसे गुणा करनेसे १२ भेद हुए। इनको कृत, कारित और अनुमोदना इन तीनोंसे गुणा करने पर ३६ भेद हुये। ३६को पांचों इन्द्रियोंसे गुणा करने पर १८० भेद हुए। इनको १० प्रकारके संस्कारोंसे गुणा करने पर १८०० भेद हुए। और १८००को १० प्रकारकी काम-चेष्टाओंसे गुणा करने पर १८००० भेद हुए। मैथुनके कारण पांचों इन्द्रियोंमें चञ्चलता होती है, इसलिए पाँच इन्द्रिएं शामिल की गईं। शरीरसंस्कार, शृङ्गारसंस्कार, हास्यक्रीडा, संसर्गवाञ्छा, विषयसंकल्प, शरीर निरीक्षण, शरीरमण्डन (देहको आभूषणादिसे सुसज्जित करना) दान (स्नेहकी वृद्धिके लिये स्त्रीको प्रिय वस्तु देना), पूर्वरतानुस्मरण (पहलेके किये हुए कामसेवनको याद करना) और मनश्चिन्ता (मनमें मैथुनकी चिन्ता करना) ये दश संस्कार कामोत्पादक हैं; इसलिये इन्हें भी शामिल किया। इन सबके वशीभूत होनेके कारण कामीकी १० तरहकी चेष्टाएं हो जाती हैं। यथा—चिन्ता (स्त्रीकी फिकर), दर्शनेच्छा (स्त्रीके देखनेकी चाह), दीर्घोच्छ्वास (आह करना), शरीरपीड़ा, शरीरदाह, मन्दाग्नि, मूर्च्छा, मदोन्मत्तता, प्राणसंदेह और शुक्रमोचन।

ब्रह्मचर्यव्रतकी रक्षाके लिये निम्नलिखित ९ विषयोंको छोड़ देना चाहिये। यथा—१ स्त्रियोंके स्थानमें रहना, २ रुचि और प्रेमसे स्त्रियोंको देखना, ३ मीठे वचनोंसे परस्पर भाषण करना, ४ पूर्वभोगोंका चिंतवन करना, ५ गरिष्टभोजन जी भरके खाना, ६ शरीरको साफ-सुथरा रख कर शृङ्गार करना, ७ स्त्रीके पलङ्ग वा आसन पर सोना, ८ कामवासनाकी कथाएं कहना वा सुनना और ९ भर पेट भोजन करना। इन नौ बातोंको सर्वथा छोड़ देना ही उचित है।

इसके अतिरिक्त ब्रह्मचारी श्रावकका यह भी कर्त्तव्यकर्म है कि, वह उदासीनता-सूचक वस्त्र पहने। स्त्री सहित अवस्थामें जिन कपड़ोंको पहनता था, उन्हें न पहने। जिन वस्त्रोंके पहननेसे अपनेको तथा दूसरोंको वैराग्य उत्पन्न हो, ऐसे सफेद वा गैरिक सूती वस्त्र पहने। सिर पर कनटोप वा छोटा दुपट्टा बांधे जिसको देखते ही अन्य लोग समझ जांय कि वह स्त्रीका त्यागी वा ब्रह्मचारी है। इसी प्रकार आभूषण आदि भी न पहने। यदि घरमें ही रहे तो किसी एकान्त कमरेमें अथवा मन्दिरके निकट धर्मशाला आदिमें शयन करे जहां स्त्रियोंकी पहुंच न हो। घरमें सिर्फ भोजन करने जावे और व्यापार करता हो तो व्यापार कर चुकनेके बाद अवशिष्ट समय धर्मस्थानमें बितावे। अपना कार्य पुत्रादिको सौंपता जावे और स्वयं निराकुल हो ब्रह्मचर्यका पालन करे।

ब्रह्मचारी श्रावक अपने निर्वाहके लिए प्रयोजनके अनुसार कुछ रुपये भी रख सकता है। स्वयं वा अन्यसे रसोई बनवा सकता है एवं किसीके आदरपूर्वक निमन्त्रण करने पर शुद्ध आहारको ग्रहण कर सकता है।

कहीं विवाहबन्धनके समय नाई आकर वर और कन्याके ऊपर एक एक गागर पानी ढाल जाता है। विधवाएं अपने देवरसे विवाह कर सकती हैं। परन्तु ऐसे विवाहमें कोई क्रिया नहीं होती, और तो क्या ब्राह्मण और नाई तकको भी जरूरत नहीं पड़ती। सिर्फ अपनी जातिके भाइयोंके सामने वर उस विधवाको एक नई साड़ी और चूड़ी देता है, तथा "इस विधवाका भरणपोषणका भार मेरे ऊपर रहा" ऐसा अङ्गीकार करने पर उपस्थित जातिभाइयोंकी अनुमति लेकर विवाह कर दिया जाता है।

बिहारके गोंड़ क्रमशः अपनेको कट्टर हिन्दू कह कर अपना परिचय देने लगे हैं। ये लोग हिन्दुओंके बहुतसे देव-देवियोंकी पूजा करते हैं। इसके अतिरिक्त बूढ़ादेव और दुल्हादेवकी भी पूजा किया करते हैं। देवपूजा और विवाह आदिके कामोंमें निम्न श्रेणीके ब्राह्मण ही पौरोहित्यका काम करते हैं। ये लोग मृतदेहको दाग देते हैं। पातक तीन दिनका मानते हैं। ये लोग दाढ़ी-मूंछ और सिर मुड़ा कर स्नान करके शुद्ध होते हैं, और मृत आत्माके लिए दूध रोटी चढ़ाते हैं।

पहले लिखा जा चुका है कि, गोण्डवानाके अन्तर्गत भूमि पर प्राचीन गोंडराज्य था और उन राजाओंके समयमें उक्त प्रदेशमें गड़ा और मण्डला नामकी दो राजधानियाँ थीं। इन दो स्थानोंके प्राचीन ध्वंसावशेषों और हिन्दूराजाओंके समयके शिलालेखोंसे पहिलेकी समृद्धिको काफी प्रमाण मिलते हैं। अब वैसी समृद्धि नहीं रही, गड़ा और मण्डला ये दोनों नगर अपना पूर्व परिचय मात्र दे रहे हैं। पहले जो गोंड वा गोंड़ राजगण गड़मण्डलमें राज्य करते थे, वे अपनेको हिन्दू और क्षत्रिय बताते हैं। गड़मण्डल शब्द देखो।

प्राचीन समयमें मालवके राजपूत राजाओंके साथ इन गोंड राजाओंका समय समयपर युद्ध होता था, इस लिए सम्भव है कि, उस समयसे ही दोनों जातियोंमें विवाह सम्बन्ध प्रचलित हुआ हो। उनके वंशके लोग अब भी राजपूत या राजपूतगोंड़के नामसे अपना परिचय देते हैं। गड़ाके राजा नागदेवके मर जाने पर उनके दामाद यादवराय उस राज्यके उत्तराधिकारी हुए थे और उन्होंने गढ़ानगरको ही अपनी राजधानी बनाया था। ६८८ ई०में यादवरायके वंशधर गोपालशाहोने मण्डला पर दखल जमाया था। संग्रामशाहोने जब १४८० ई०में राज्यारोहण किया था, तब वे सिर्फ एक ही जिलेके राजा थे। पीछे उन्होंने ५२ जिलों पर दखल जमा लिया था। १५३० ई०में ये मर गये।

फिरिस्ताके पढ़नेसे मालूम हो सकता है कि, १५६३ ई०में आसफ् खाँने जब गढ़ा पर आक्रमण किया था, तब वहाके राजा वीरनारायण थे। इस युद्धमें इनकी मृत्यु हुई थी। फिर १६१० ई०में हृदयेश्वर वहांके राजा हुए थे। इन्होंने रामनगरमें मोतीमहल नामका एक प्रासाद बनाया था। उस मोतीमहलके १०० फीट दक्षिण-पश्चिममें उनकी पत्नी रानीसुन्दरीका बनाया हुआ एक विष्णुमन्दिर है। उस मन्दिरमें विष्णु, शिव, गणेश, दुर्गा और सूर्यदेवकी मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। मन्दिरकी लम्बाई चौड़ाई कुल ५६ फुट है। इसके भीतरमें २८ फीट चतुरस्र एक घर है, उसको छत पर गुम्बज है। यह मन्दिरको बनावट मुसलमानोंको मसजिद जैसो है। बङ्गालके लोग इसे पञ्चरत्न मन्दिर कहते हैं। १७४२ ई०में शिवराजशाहोने राज्यभार ग्रहण किया था। महाराष्ट्रीय सर्दार बालाजी बाजोरावके साथ इनका युद्ध हुआ था।

सातपुरा पर्वतके दक्षिणको तरफ छिन्दवाड़ाके अन्तर्गत देवगढ़में और बैतूलके अन्तर्गत खेरला ग्राममें दूसरे गोंड़ राजा राज्य करते थे। १४३३ ई०में खेरलाके राजा नरसिंहराय मालवराज हुसङ्ग घोरीके युद्धमें पराजित हो कर मारे गये। औरङ्गजेबके राजत्वकालमें शिवलीगढ़में एक पार्वतीय राजा स्वाधीनभावसे राज्य करता था। महाराष्ट्रोंने ई० सं० १७६०से ७५के भीतर भीतर इसकी स्वाधीनता नष्ट कर दी थी। वहाँ नदीके पास चन्दानगर है, इसमें भी गोंड़वंशके लोग रहते हैं।

गोंडकिरी (हिं० स्त्री०) एक रागिणी जो गोंड रागका एक भेद समझी जाती है।

गोंडरा (हिं० पु०) १ मोटके मुख पर बाँधे जानेकी एक गोल लकड़ी वा लोहेकी छड़। २ कुण्डलके आकारकी कोई चीज। ३ परिधि, लकीरका गोल घेरा।

परिग्रहत्यागी श्रावक शेष परिग्रहको विभाजित करके अपने पास सिर्फ पहनने ओढ़नेके कुछ कपड़े और खाने पीनेका पात्र रख कर और सर्व परिग्रहको त्याग देता है।

१०म अनुमतित्यागप्रतिमा—जो आरम्भ परिग्रह और इस लोक सम्बन्धी कार्योंमें अनुमति वा सम्मति न दे वह समबुद्धिका धारक 'अनुमतित्यागी श्रावक' है। १०वीं प्रतिमाका धारक सर्वथा ही पापकार्योंमें अपनी सम्मति नहीं देता। इस श्रेणीके श्रावकको उचित है कि, वह धन पैदा करने, घर वा बाजार आदि बनाने तथा अन्यान्य गृहस्थोंके कार्योंमें मन और वचनसे भी रुचि न करे एवं आहारादिके विषयमें भी कुछ सम्मति वा आज्ञा न दे। पहले तो निमंत्रण मिलने पर जाता था, किन्तु अब खास भोजनके समय जो ले जावे, उसीके घर भोजन करता है; पहलेसे निमन्त्रण स्वीकार नहीं करता।

११श उद्दिष्टत्यागप्रतिमा—जो घरको हमेशाके लिए छोड़ कर वनमें मुनिमहाराजके पास जा व्रतोंको धारण करता है और भिक्षावृत्तिसे भोजन करता हुआ तप करता है, वह खण्ड वस्त्रका धारक उत्कृष्ट श्रावक कहलाता है। जो अपने निमित्त किया हुआ, कराया हुआ वा अपनी अनुमतिसे बनाया हुआ, ऐसे तीन प्रकारके भोजनको ग्रहण नहीं करता, वह उद्दिष्टत्यागी श्रावक है। किसी पात्रके लिए जो भोजन बनाया जाता है, उसे उद्दिष्टआहार कहते हैं। उद्दिष्टत्यागी श्रावक किसी खास जगह भोजन नहीं करते। वे भोजनके समय गृहस्थके घर जाते हैं; उस समय जो उन्हें पड़गाह लेता है, उसीके घर वे आहार ग्रहण करते हैं। उत्कृष्ट श्रावक खास अपने लिए बनाए हुए भोजन शय्या, आसन, वस्त्रों आदिसे विरक्त रहता है। अन्न, पान, खाद्य और स्वाद्य चारों ही प्रकारका भोजन भिक्षारूपसे ग्रहण करता है। मन, वचन और काय द्वारा भोजन बनाता नहीं, बनवाता नहीं और न बने हुएका अनुमोदन ही करता है। यह श्रावक भोजनके लिए याचना नहीं करता, गृहस्थके बन्द द्वारको खोलता नहीं और न शब्द करके पुकारता ही है। तात्पर्य यह है कि उद्दिष्टत्यागी श्रावक मुनियोंके उपयुक्त आहार ग्रहण करता है।

उत्कृष्ट श्रावकके दो भेद हैं—एक क्षुल्लक और दूसरा ऐलक। क्षुल्लकसे ऐलकका दर्जा ऊंचा है। (१) क्षुल्लक—एक लंगोटी और एक खण्डवस्त्र (जिससे सर्व शरीर ढका न जा सके) धारण करते हैं। जलके लिए कमण्डलु और भोजनके लिए एक पात्र रखते हैं। जीवदयाके लिए एक पिच्छिका, जो मयूरपुच्छकी होती है, रखते हैं। इस पिच्छिकासे वे भूमिके प्राणियोंकी रक्षा करते हैं। पार्श्वपुराणमें क्षुल्लकके लिए इस प्रकार लिखा है—भोजनके समय क्षुल्लक उदासीन भावसे निकले और उस समय ऐसी प्रतिज्ञा कर ले कि 'अमुक मुहल्लेमें भोजनार्थ जाऊंगा वा इतने घरमें प्रवेश करूंगा उसमें जितना भोजन मिल जायगा, उतनेसे ही सन्तुष्ट होऊंगा।' ऐसा निश्चय कर गृहस्थके घर वहीं तक जावे, जहां तक सर्वसाधारणकी गति हो। यदि श्रावक देखते ही 'पड़गाहन' करे और आहार जलादि शुद्ध बतलावे तो क्षुल्लकको उचित है कि वह गृहस्थके साथ घरके भीतर चला जावे। यदि गृहस्थ सामने न मिले तो कायोत्सर्ग पूर्वक खड़ा हो कर "धर्मलाभ" शब्द उच्चारण करे। इतने पर भी यदि कोई 'पड़गाहन' न करे तो लौट जावे वा दूसरेके घर जावे। दूसरे घर जा कर भी उक्त विधिके अनुसार आचरण करे। यदि वह 'पड़गाहन' करे और पादप्रक्षालनपूर्वक भक्ति सहित चौकेमें ले जाय, तो क्षुल्लकको सन्तुष्टचित्तसे आहार कर लेना चाहिए और यदि एकही जगह भोजन करनेका निश्चय न किया हो तो श्रावक पात्रमें जो डाल दे उसे ले कर दूसरेके घर जावे। जब भोजनके योग्य आहार्यद्रव्य प्राप्त हो जावे, तब किसी श्रावकके यहां (केवल प्रासुक जल ले) बैठ कर भोजन कर ले और भोजनके उपरान्त पात्रको अपने हाथसे मांज कर धो डाले।

वर्तमानमें यह प्रथा प्रायः उठसी गई है। लोग एक ही घरमें जीमना वा जिमाना पसन्द करते हैं। क्षुल्लकको त्रिकाल सामायिक और प्रोषधोपवास अवश्य करना चाहिए तथा अधिक वैराग्य एवं आत्मज्ञानकी उत्कण्ठासे स्वाध्याय करनेमें त्रुटि न रखनी चाहिए।

(२) ऐलक—क्षुल्लकके समान ऐलक भी सामायिक और प्रोषधोपवास करे। रात्रिको मौन धारण पूर्वक

गांदला (हिं० पु०) गुन्द्रा, जलाशयोंके किनारे होनेवाला बड़ा नागरमोथा। इसकी ऊंचाई लगभग एक गज होती है।

गोंदा (हिं० पु०) १ भुने चनेका बेसन। यह पानीमें गूंध कर बुलबुलोंको खिलाया जाता है। २ गारा मिट्टीका कपसा।

गोंदी (हिं० स्त्री०) एक तरहका पेड़ जो मौलसिरीके सदृश होता है। फागुन चैत मासमें इसमें लाल रंगके छोटे छोटे पुष्प लगते हैं। इसके फल पुष्प छाल आदि औषधके काममें आते हैं। यह जङ्गलों तथा मैदानोंमें उपजता है।

गोंदोला (हिं० पु०) वह जिसमेंसे गोंद निकलता हो। यथा—बबूल, ढाक प्रभृति।

गो (सं० पु० स्त्री०) गच्छति गम कर्त्तरि डो। यद्वा गच्छत्यनेन वृषस्य यानसाधनत्वात् स्त्रीगवाश्च दानेन स्वर्गसाधनत्वात् तथात्वं। गो शब्द योगरूढ़ है। 'रूढा यथा गौः योगरूढा यौगिकाः पाचकादयः।' (वैयाकरण) वाचस्पत्य गोशब्दकी व्युत्पत्ति प्रदर्शन स्थल पर आलङ्कारिक प्रधान दर्पणकार विश्वनाथकी भूल पकड़ कर कहते हैं कि, 'गम धातुके उत्तर करणवाच्यमें डो प्रत्यय होनेसे गोशब्द निष्पन्न होता है। उणादि प्रत्यय कर्तृवाच्यमें हो ऐसा कोई नियम नहीं है"। किन्तु दर्पणकारका कथन है कि, "यदि व्युत्पत्तिलभ्य अर्थको ही केवल मुख्यार्थ कहकर स्वीकार किया जाय तो "गो शेते" इत्यादि स्थलमें भी यह लक्षण हो सकता है। गम धातुके उत्तर डो प्रत्यय होनेसे निष्पन्न गो शब्दके शयनकालमें प्रयोग लक्षण व्यतीत असम्भव है।' वाचस्पत्यके मतसे दर्पणकारका ऐसा कहना भूल है, यह अनवधानतासे अथवा विना समझे बूझे लिखा गया है, क्योंकि करणवाच्यमें डो प्रत्यय होनेसे निष्पन्न गोशब्दका शयनकालमें प्रयोग होनेसे किसी तरहकी बाधा नहीं है। कर्तृवाच्यमें उणादि प्रत्यय हो ही नहीं सकता ऐसा कहीं वचन नहीं है। 'ताभ्यामन्यत्रोणादयः।' पा ३।४।७५। इस सूत्रके अनुसार केवल संप्रदान और अपादानवाच्यमें उणादि प्रत्यय नहीं होता, किन्तु इसके अतिरिक्त कर्त्तृकर्म प्रभृति समस्त वाच्यमें उणादि प्रत्यय लगा ही करता है। दर्पणकारने कर्तृवाच्यमें निष्पन्न गोशब्दकी व्युत्पत्ति लभ्यार्थ "गमनकर्त्ता" धर कर ऐसा लिखा है। वाचस्पत्यमें गो शब्द देखो।

१ स्वनामख्यात चतुष्पद पशुविशेष, वृष तथा गौ, चौपाया पशु, बैल और गाय, मवेशी। (Bovina) स्त्रीगोका पर्याय—माहेयी, सौरभेयी, उस्रा, माता, शृङ्गिणी, अर्जुनी, अघ्न्या, रोहिणी, माहेन्द्री, इज्या, धेनु, अघ्ना, दोग्ध्री, भद्रा, भूरिमही, अनडुही, कल्याणी, पावनी, गौरी, सुरभि मही, बिलिनाचि, सुरभी, अनड्वाही, इडा, अवमा, बहुला, मही, अदिति, इला, जगती और शर्करी है।

पुंगोका पर्याय अनड्वाह् शब्दमें देखो। गृहस्थोंके लिए गोके जैसा उपकारी पशु दूसरा कोई नहीं है। बृहत्संहितामें इसका शुभाशुभ लक्षण इस प्रकार लिखा है—जिस गौके दोनों नेत्र रूक्ष और मूषिक सदृश हों तथा उनके कोणमें सर्वदा मल देखा जाता हो, तो वह गौ अशुभ समझी जाती है। जिन गौओंकी नासिका विस्तृत, शृङ्ग प्रचलशील वर्ण गधेके सदृश तथा देहकरटा तुल्य हो एवं जिनकी दन्तसंख्या १०, ७ या ४ हो, मुण्ड तथा मुख लम्बमान, पृष्ठ विनत, ग्रीवा ह्रस्व और स्थूल रहे, गति मध्यम तथा खुर विदारित हो, वे गौ गृहस्थको अमङ्गल उत्पादन करती हैं। जिस गौका जिह्वा कृष्णवर्ण और पीतमिश्र, गुल्फ (एड़ी) अतिशय सूक्ष्म वा स्थूल ककुद (धीला) अपेक्षाकृत वृहत्, देह कृश तथा कोई एक अङ्गसे हीन हो, तो वह गाय गृहस्थके लिए मङ्गलकर नहीं है। गायके विषयमें जो लक्षण कहे गये हैं, उन लक्षणोंके वृष भी अशुभप्रद हैं।

जिस बैलका मुख स्थूल और अतिशय दीर्घ हो, क्रोडदेश शिराजालसे परिव्याप्त हो और गण्डदेशका स्थूल शिरासमूह देखा जाय तथा जो बैल स्थानत्रयमें मूत्रत्याग करता हो, उस बैलको अशुभकर जानना चाहिए। जिसके नेत्र मार्जारके जैसे तथा शरीर कपिल वर्णका हो इसे ही करट कहते हैं। ऐसा बैल अशुभ समझा जाता है। केवल ब्राह्मणोंके लिये उक्त लक्षणका बैल प्रशस्त है। वृषके ओष्ठ, तालु और जिह्वा कृष्ण वर्णके रहें तथा सर्वदा निदारुण श्वास चलता हो तो वह बैल अपने साथके सब मवेशीको नाश करता है। जिस बैलका विष्ठा, मणि और शृङ्ग स्थूल, उदर श्वेतवर्ण तथा दूसरे अङ्गका वर्ण

धरकुण्डकी अग्निकी संज्ञा आह्वनीय और शेषकेवली-कुण्डकी अग्निकी संज्ञा दक्षिणाग्नि है।

बड़ी वेदीके चारों कोनों पर चार खम्भ खड़े करके ऊपर चंदोवा बाधें तथा खम्भोंको इक्षु और कदली वृक्षोंसे सुशोभित कर दें। इसके सिवा चमर, दर्पण धूप, घट, पंखा, ध्वजा, कलश आदि द्रव्य भी यथास्थान रक्खें।

यदि संक्षेपमें होम करना हो, तो तीन कुण्ड न बना कर सिर्फ एक चतुष्कोण (तीर्थङ्कर) कुण्ड बना लेनेसे ही काम चल सकता है। उसीमें सब आहुतियां दी जा सकती है।

जिस पात्रसे अग्निमें होम द्रव्य डालते हैं, उसे स्रुवा कहते हैं और जिससे घी डालते हैं उसे स्रुक्। स्रुवा चन्दनका बनाना चाहिए और स्रुक् क्षीरवृक्ष (वरगद) का। यदि चन्दन और क्षीरवृक्षकी लकड़ी न मिले, तो पीपलकी लकड़ी काममें लाई जा सकती है। स्रुवा नासिकाके समान चौड़े मुखका और स्रुक् गायकी पूंछकी भाँति लम्बी मुंहका बनाना चाहिए। दोनोंकी लम्बाई एक एक अरत्नि होनी चाहिए। होमकुण्डमें जलनेवाली लकड़ीका नाम समिधा है। शमी, पीपल, पलाश और वरगदकी लकड़ी समिधा बनानेके उपयुक्त है। समिधाकी प्रत्येक लकड़ी सीधी एवं १० वा १२ अङ्गुल लंबी होनी चाहिए।

होताको उचित है कि कुण्डोंके पूर्व, कुशासन पर पद्मासन लगा कर, प्रतिमाकी ओर (पश्चिमकी तरफ) मुख कर बैठे और होमकी समाप्ति पर्यन्त मौन धारण पूर्वक परमात्माका ध्यान करते हुए श्रीजिनेन्द्रदेवको अर्घ्य एवं तर्पण* प्रदान कर बीचके तीर्थङ्करकुण्डमें सुगन्धिद्रव्यसे अग्निमण्डल अङ्कुरित करे। अग्निमण्डलका आकार इस प्रकार है—
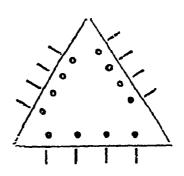
इसके बाद मन्त्र पढते हुए एक दर्भ-पूलकमें जरासा लाल कपड़ा लपेट कर अग्नि जलावें और साथ ही घी डालता रहे। पश्चात् आचमन, प्राणायाम और स्तुति करके अग्निका आह्वान करें एवं अर्घ्य प्रदान करें। फिर तीर्थङ्करकुण्डमेंसे थोड़ीसी अग्नि ले कर गोल-कुण्डमें तथा गोलकुण्डमेंसे थोड़ीसी अग्नि ले कर गण धरकुण्डमें अग्नि जलावें।

जैन गृहस्थगण जिन मन्दिर-प्रतिष्ठा, वेदी-प्रतिष्ठा, बिम्ब प्रतिष्ठा, नूतनगृहनिर्माण, ग्रहपीडा और महा-रोगादिके लिए तथा षोडश संस्कारोंमें होम करते हैं।

होमके तीन भेद हैं—(१) जलहोम, (२) वायुका होम और (३) कुण्डहोम। जलहोम—इसके लिए मिट्टी या तांबेके गोल कुण्डको—जो चन्दन, अक्षत, माला आदिसे शोभित उत्तम जलसे परिपूर्ण एवं धोये हुए तण्डुलोंके पुञ्ज पर स्थापित हो—आवश्यकता है। इस कुण्डमें तिल, धान्य और यव इन तीन धान्योंसे नवग्रहोंको तथा गेहूं, मूंग, चना, उड़द, तिल, धान्य और यव इन सप्त धान्योंसे दिक्पालोंको आहुति देनी चाहिए। अन्तमें नारिकेल द्वारा पूर्णाहुति देनी चाहिए।

होमके मन्त्रादि—होताको उचित है कि होमशालामें पहुंचते ही पहले "ओं ह्रीं क्ष्वीं भूः स्वाहा" यह मन्त्र पढ़ कर भूमि पर पुष्प निक्षेप करे। अनन्तर "ओं ह्रीं अत्रस्थ क्षेत्रपालाय स्वाहा" यह मन्त्र पढ़ कर क्षेत्रपालको नैवेद्य प्रदान करें। इसके बाद "ओं ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्न-विनाशाय महीं पूतां कुरु कुरु हूं फट स्वाहा" यह कहते हुए दर्भपूल (कुशकी गड्डी) से भूमिको साफ करें। फिर दर्भपूलसे भूमि पर जल सेचन करें। मन्त्र इस प्रकार

* पुष्प, अक्षत (तंडुल), चन्दन और शुद्ध वा प्राशुक जलसे तर्पण किया जाता है।

बड़ा होता, ओष्ठद्वय कृष्णवर्ण एवं मस्तक पर दो छोटी छोटी आँखें है। इसके वक्षके दोनो पार्श्वमें १३१३ पञ्जरास्थि रहती हैं। गर्दन मोटी तथा छोटी होती है। बहुतसे गौके पृष्ठ और स्कन्धके मध्यस्थल पर एक मांसपिण्ड रहता जिसे ककुद् कहते है। तातार और भोट देशीय गौको ककुद् नहीं होता। भारतीय गौको अपेक्षा इसका आकार छोटा और लाङ्गूलके लोम दीर्घ और चिक्कण होते हैं। लमसे उस देशके मनुष्य चामर प्रस्तुत करते तथा चीनदेशके धनाढ्य भक्ति उक्त लोमको भिन्न भिन्न रंगोंसे रञ्जित कर टोपीके ऊपर धारण करते हैं। इस जातिके गौको हमारे देशमें चमरी गो कहा करते।

चमरी देखो।

गाय मनुष्यके सदृश कमसे कम दो सौ अस्सी दिनों तक गर्भधारण कर एक समयमें एक ही सन्तान प्रसव करती है। कभी कभी गायको यमज वा एक समयमें तीन सन्तान प्रसव करती भी देखा गया है। किसीके नवप्रसूता गायके निकट जाने पर वह उसे शृङ्ग सञ्चालन द्वारा भगा देती है। दुग्धदोहन समयमें गाय अपने स्तनके मांसपेशी आकुञ्चित कर अपने बच्चेके लिये दुग्ध चुरा रखती है तथा बच्चके गात्रलेहन कर मातृस्नेह प्रकाश किया करती है।

गायका अपत्यस्नेह अतिशय प्रबल है। स्तन्यपायी बच्चाके मरजाने पर यह तीन चार दिन तक कुछ भी नहीं खाती तथा समय समय पर शोकका कातरताव्यञ्जक चीत्कार किया करती है। इसी कारण कभी कभी इसको आँखोंसे अश्रुपात होता देखा गया है। एतद्भिन्न प्रतिपालकके कोई आकस्मिक विपद पर भी इसके चक्षुमें आँसू आजाता।

पुंगोको सचराचर साँढ या बैल कहते हैं। कृषकगण इसके स्कन्ध पर हलयोजन कर भूमिकर्षण करते है। हम लोगोंके देशमें सामान्य पण्य-व्यवसायी इसके पृष्ठ पर धान्य प्रभृति रख कर एक स्थानसे दूसरे स्थान ले जाते हैं। ये पृष्ठ पर पांच मन तक बोझा वहन कर सकते तथा बीस या बाईस मन बोझा समेत गाडी खींच लेते है।

गोमें विलक्षण ज्ञानशक्ति भी है। कोई कोई इसे भालूके सदृश खेल सिखाकर ग्राम ग्राम और नगर नगरमें कौतुक देखाया करते है मवेशी जिस स्थान पर एक बार पालित होते, वहांसे किसी दूसरी जगह ले जाने पर वे अपने पूर्व स्थानको फिर भी भाग कर चले आते हैं। ये प्रतिपालकके भक्त हैं। प्रतिपालकके वास-परिवर्तन करने पर भी ये उनके अनुगामी होते है। कलकत्तेमें मवेशी को बाहर छोड़नेका नियम नहीं है। किन्तु ऐसा देखा गया है कि कलकत्तेसे गृहस्थके मवेशी प्रतिदिन रात्रिकाल बाहर होते और समस्त रात्रि सड़क पर पड़ी हुई चीजोंको खाते हुए; प्रातःकाल फिर भी अपने स्वामीके घर पहुंच जाते है। इसलिए उन्हें कोई पकड़ नहीं सकते।

गो जाति भारतवासियोंका सर्वस्व धन है। क्या धनी क्या निर्धन सबके सब इन्हें सेवा-शुश्रूषा किया करते है। अति प्राचीनकालमें भी भारतवर्षके राजगण गौ पालते थे। महाभारतमें लिखा है कि विराट राजाके छह हजार गायें थी। आइन अकबरीके पढ़नेसे जाना जाता है कि अकबर बादशाहको कई सौ गौ और बैल थे। बादशाह गो जातिको बहुत सेवा शुश्रूषा किया करते। मुसलमान होने पर भी उन्होंने भारतवर्षसे गो-हत्याकी प्रथा सदाके लिए उठा दी थी। पूर्वकालसे वर्त्तमान समय तक भी गोदान एक महापुण्यके जैसा उक्त है। आजकल भी हम लोगोंके देशकी बालिकायें गोकालव्रत नामसे गौको पूजा करती है। इस देशके मवेशी कमसे कम बाइस वर्ष जीवित रहते हैं।

गो जातिके शरीरके समस्त द्रव्य व्यवहारमें आते। दुग्ध हम लोगोंका प्राणाधार है। चमड़ेसे जूते और मशक प्रभृति प्रस्तुत होते है। अस्थिसे छाता और छूरीके बेंट (मूठ) तथा बटन (बुताम) निर्मित होते है। लोमको जमा कर एक तरहका वस्त्र बनाया जाता है। शृङ्ग और खुरको गला कर सरेश होता तथा नाड़ीसे वाद्ययन्त्रके तात तैयार होते है। मूत्र धोबीके वस्त्र धोने और विष्ठा सुखा कर जलानेके काम आते है।

मुसलमान तथा चमार इसका मांस खाते है। लोहूसे सुरापरिष्कार किया जाता है। प्रुसिया देशमें गोरक्तसे एक तरहका रंग बनता है।

न्ताम्। तिथिकरणमुहूर्तलग्नदेवता इह चान्यग्रामादिष्वपि वास्तुदेवताः सर्वे गुरुभक्ता अक्षीण कोशकाष्ठागारा भवेयुः। ध्यानतपोवीर्यधर्मानुष्ठानादिमेवास्तु मातृपितृभ्रातृसुतपुहृत्स्वजनसम्बन्धिबन्धुवर्ग सहिताना धनधान्यैश्वर्यद्युतिबलयशो वृद्धिरस्तु सामोदप्रमोदोस्तु शान्तिर्भवतु कान्तिर्भवतु तुष्टिर्भवतु पुष्टि र्भवतु सिद्धिर्भवतु काममांगल्योत्सवाः सन्तु शाम्यन्तु घोराणि पुण्यं वर्द्धतां कुलं गोत्रं चाभिवर्द्धतां स्वस्तिभद्रं चास्तु वः हतास्ते परिपन्थिनः शत्रुर्निधनं यातु निः प्रतीपमस्तु शिवमतुलमस्तु सिद्धा सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः स्वाहा।'

अनन्तर "ओं ह्रीं स्वस्तये मंगल कुम्भं स्थापयामि स्वाहा" इस मन्त्रका उच्चारण कर मङ्गल-कलश स्थापन करें और उसके निकट स्थालीपात्र*, प्रेक्षणपात्र† एवं पूजा और होमकी सामग्री रक्खें। फिर "ओं ह्रीं परमेष्ठिभ्यो: नमो नमः" कह कर परमात्माका ध्यान करें और "ओं ह्रीं णमो अरहन्ताणं ध्यातृभिरभीप्सितफलदेभ्यः स्वाहा" कह कर परमात्माको अर्घ्य प्रदान करें। पश्चात् "ओं ह्रीं नीरजसे नमः, ओं दर्पमथनाय नमः" इस मन्त्रको कुण्डमें लिखें और जल, दर्भ, गन्ध, अक्षत आदिसे कुण्डकी पूजा करें।

इसके बाद पूर्वकथित नियमानुसार कार्य करना चाहिये। यहां सिर्फ उनके मन्त्र लिखे जाते हैं। अग्नि स्थापन करनेका मन्त्र—"ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं अग्निं स्थापयामि स्वाहा।" अग्नि जलानेका मन्त्र—"ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं दर्भ निक्षिप्य अग्नि सन्धुक्षणं करोमि स्वाहा।" आचमन करनेका मन्त्र—"ओं ह्रीं क्ष्वीं क्ष्वीं वं मं हं सं तं पं द्रां द्रां हं सः स्वाहा।" प्राणायाम करनेका मन्त्र—"ओं भूर्भुवः स्वः अ सि आ उ सा अर्हं प्राणायामं करोमि स्वाहा।" होमकुण्डके परिधिबन्धन‡ करनेका मन्त्र—"ओं नमोऽर्हते भगवते सत्यवचनसन्दर्भाय केवलज्ञानदर्शन प्रज्वलनाय पूर्वोत्तराग्रं दर्भपरिस्तरणमुदग्वरमभितःपरिस्तरणं च करोमि स्वाहा।" अग्निकुमार देवको आह्वान करनेका मन्त्र—"ओं ओं ओं ओं र रं रं र अग्निकुमार देव आगच्छागच्छ।"

अनन्तर कुण्डकी प्रथम मेखला पर १५ तिथि देवताओंको आह्वान कर उनको अर्घ्य प्रदान करें। मन्त्र—'ओं ह्रीं क्रों प्रशस्तवर्णसर्वलक्षण-सम्पूर्णस्वायुधवाहनवधूचिह्न-सपरिवाराः पंचदशतिथिदेवताः आगच्छत आगच्छत इदं अर्घ्यं गृह्णीत गृह्णीत स्वाहा।" इसके बाद २य मेखला पर ग्रह देवताओंका आह्वान करें और अर्घ्य चढ़ावें। मन्त्र पूर्ववत् हो है, सिर्फ "पंचदशतिथिदेवताः"के स्थान पर "नव ग्रहदेवता" पढ़ें। पश्चात् ऊपरको मेखला पर बत्तीस इन्द्रोंका आह्वान और पूजन करें। मन्त्र पूर्ववत् हो है, सिर्फ "नवग्रहदेवता"के स्थान पर "चतुर्णिकायेन्द्रदेवता" पढ़ें। तत्पश्चात् छोटी वेदी पर दश दिक्पालोंका आह्वान करें।

अनन्तर "ओं ह्रीं स्थालीपाकमुपहरामि स्वाहा" कह कर स्थालीपाकको फूल और तण्डुलसे भर कर अपने पास रक्खें। फिर 'ओं ह्रीं होमद्रव्यमादधामि स्वाहा" कह कर होम द्रव्य और "ओं ह्रीं आज्यपात्रमुपस्थापयामि स्वाहा" कह कर घृतपात्र अपने पास रक्खें। पश्चात् "ओं ह्रीं स्रुचमुपस्करोमि स्वाहा, स्रुचस्तापनं मार्जनं जलसेचनं पुनस्तापनमग्रे निधापनं च" यह मन्त्र पढ़ कर स्रुचाका संस्कार करें अर्थात् पहले उसे अग्निमें तपा कर धोवें और जलसिञ्चन कर फिर तपावें और अपने पास रक्खें। "ओं ह्रीं स्रुवमुपस्करोमि स्वाहा" कह कर स्रुचाकी तरह स्रुवाका संस्कार करें। इसी प्रकार "ओं ह्रीं आज्यमुद्वासयामि स्वाहा" कह कर दर्भ-मूलकसे घीका उद्वासन करें, 'ओं ह्रीं पवित्रतरजलेन द्रव्यशुद्धिं करोमि स्वाहा" कह कर होम द्रव्यको पवित्र जलसे छींट कर शुद्ध करें, 'ओं ह्रीं कुशमाददामि स्वाहा" कह कर दर्भमूलकसे होम-द्रव्यका स्पर्श करें, 'ओं ह्रीं परमपवित्राय स्वाहा" कह कर दहिने हाथकी अनामिकामें पवित्री (दाभकी अंगूठी) पहनें 'ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्राय स्वाहा" कह कर यज्ञोपवीत पहनें वा बदलें, "ओं ह्रीं अग्निकुमाराय परिषेचन करोमि स्वाहा" कह कर अग्निकुण्डके चारो ओर थोड़ा थोड़ा जल छिड़कें। तदनन्तर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ कर १८ बार घृतकी आहुति देवें। मन्त्र—

---

* पंचपात्र अर्थात् गन्ध, अक्षत, पुष्प, फल आदिसे सुशोभित तांबेके छोटे छोटे पांच गिलास।

† प्रेक्षण करनेके उपयुक्त रकाबी।

‡ पांच पांच दर्भ मिला कर तथा उनमें थोड़ी, ऐंठ दे कर कुंडके चारों तरफ रखना चाहिये।

का विनाश करनेके लिए दौड़ते है। उक्त देशके असभ्य मनुष्य अग्नि जला कर इन्हें किसी अपरिसर स्थानमें ले जाते और सबके एकत्र होने पर मार डालते हैं।

लिथुयेनियाके विस्तृत अरण्यमें इउरस नामको एक जाति देखी जाती है। चार्लस् मेकेञ्जि साहबने लिखा है कि इनका शरीर हाथोके सदृश वृहत्, चक्षु उज्ज्वल और रक्तवर्ण ग्रीवा छोटो होती है और सींग मोटे तथा छोटे इनका सम्पूर्ण शरीर क्षष्णवर्ण लोमसे ढका रहता और गात्रसे साधारणतः एक तरहका दुर्गन्ध निर्गत होता है।

अमेरिकाके जंगलोंमें पहले एक भी मवेशी नहीं था। स्पेनवासी दूसरी जगहसे गो लाकर उसे जंगलमे छोड़ दिया करते। आजकल उनसे इतनी वंशवृद्धि हो गई है कि एक पम्पाके वनमें ही लाख लाख गो देखे जाते हैं। शिकारीगण जंगल जा इस गोको शिकार कर घर ले आते है।

वैद्यक मतके अनुसार गोमांसका गुण—सुस्निग्ध, पित्त और श्लेष्मवृद्धिकर, वृंहण, वलकर, पीनस और प्रदरनाशक है। (भावप्रकाश) गोदुग्धका गुण—पथ्य, अत्यन्त रुचिकर, स्वादु, स्निग्ध, पित्त और वातरोगनाशक, पवित्र कान्ति, प्रज्ञा, अङ्गपुष्टि और वीर्य वृद्धिकर है। दधिका गुण—अति पवित्र, शीत, स्निग्ध, दीपन, वलकर, मधुर, अरुचि और वातरोगनाशक एवं ग्राही। नवनीत (मक्खन) का गुण - शीतवर्ण, वल, शुक्र, कफ, रुचि, सुख, कान्ति और पुष्टिकर, अतिमधुर, संग्राही, चक्षुको हितकर, व त, सर्वाङ्गशूल, कास, श्रम और त्रिदोषनाशक हैं। इसका घृतका गुण—सुखप्रिय, वृद्धि, कान्ति, स्मृति, वल, मेधा पुष्टि, अग्नि, शुक्र और शरीरको स्थूलता वृद्धिकर, वात, श्लेष्मा, श्रम और पित्तनाशक है। द्रव्यमें गौका घी श्रेष्ठ बहुगुणविशिष्ट है। राजनिघण्टुके मतसें प्रत्यूषकालमे गोदुग्ध गुरु, विष्टम्भी और दुर्जर है। इसो कारण सूर्योदयके एक प्रहर पीछे दुग्ध ग्रहण करना अच्छा है। यह पथ्य दीपन और लघु है। दुग्धका विवरण दुग्ध शब्दमें देखो। मट्ठा वा पक्के आमके साथ गोदुग्धफेन खानेसे ग्रहणी रोग दूर हो जाता है।

गोमूत्रका गुण—क्षार, कटु, तिक्त और कषायरस, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, लघु, अग्निदीप्तिकारक, मेधाजनक, पित्तवृद्धिकर, कफ, वायु, शूल, गुल्म उदर, आनाह, कण्डु, नेत्ररोग, किलास रोग, आमवात, वस्ति, वेदना, कुष्ठ, कास, श्वास, शोथ, कामला और पाण्डुरोगनाशक है। सब तरहके मूत्रसे गोमूत्र ही अधिक गुणविशिष्ट है। (भावप्रकाश पूर्व २ भा०)

गम्यते ज्ञायते अनेन गम करणे डो यद्वा शीघ्रं गच्छति गम् कर्तरि डो। (पु०) २ रश्मि, किरण, प्रकाश। ३ यन्त्र। ४ हीरक, हीरा। गम्यते वहुदानादिभिः गम् कर्मणि डो। ५ स्वर्ग। गम्यते इष्टापूर्त्तादि कर्मणा डो। ६ चन्द्र, चांद। गच्छति प्राप्नोति भुवनं-स्वतेजसा गम कर्तरि डो। ७ सूर्य। ८ गोमेधयज्ञ। ९ ऋषभ नामकी एक तरहकी औषध। (स्त्री०) गम्यते विषयो यया गम करणे डो। १० चक्षु, आँख। ११ वाण, तीर। गम कर्मणि डो। १२ दिक्, दिशा। १३ वाक्य। गम्यतेऽस्यां गम् अधिकरणे डो। १४ पृथिवी जमीन। १५ जल, पानी। १६ पशु, यथा बकरी, भैंस, भेड़ी प्रभृति दुग्ध देनेवाला पशु। १७ माता। १८ पुलस्त्यको भार्याका नाम। इसका दूसरा नाम गविजाता था। गविजाता देखो।

१९ नवसंख्या, नौका अङ्क। २० इन्द्रिय। (पु० क्ली०) गम्यते ज्ञायते स्पर्शसुखमनेन गम करणे डो। २१ लोम, रोम। (पु०) २२ वृषराशि। २३ घोटक घोड़ा। २४ गायक, गवैया, गानेवाला। २५ प्रशंसक। २६ आकाश। २७ नंदी नामक शिवगण। (स्त्री०) २९ विजली। ३० सरस्वती। ३१ जिह्वा, जीभ।

गोअग्र (सं० त्रि०) गावो ऽग्रे यस्य, बहुव्री, सन्धिनिषेधः। १ जिसके अग्रभागमें गो रहे जिसके आगेमें गाय हो। (पु०) २ गोसमूह, गायका झुण्ड।

गोअजन (सं० त्रि०) अजति चालयति अज ल्यु, गवां अजनः ६-तत्। गोचालक।

गोअर्घ (सं० त्रि०) एक गौका मूल्य, एक गायका दाम।

गोअर्णस् (सं० त्रि०) गावो ऽर्ण उदकमिव प्रवृद्धा यस्मिन् बहुव्री०। जिससे जलकी नाईं गायकी वृद्धि हो।

गोअश्व (सं० क्ली०) गोश्च अश्वश्च, द्वन्द्वः। गो और अश्व, गाय और घोड़ा।

गोअश्वाय (सं० पु०) सत्रभेद।

गोआ—मलवार उपकूलमें पोर्तगीज अधिकृत एक भूभाग। यह अक्षा० १४° ५३′ तथा १५° ४८′ उ० और देशा० ७३° ४५′ एवं ७४° ४३′ पू०के मध्य अवस्थित है। उत्तरसीमामें

सौम्यु ह्मवाय्वग्निदेवताः प्रसन्ना भवन्तु। शेषाः सर्वेपि देवा एते राजानं विराजयन्तु। दातारं तर्पयन्तु। सङ्घं स्नापयन्तु। वृष्टिं वर्षयन्तु। विघ्नं विघातयन्तु। मारीं निवारयन्तु। ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते पूर्णज्वलितज्ञानाय सम्पूर्णफलार्घ्यां पूर्णाहुतिं विदधाहे।"

पूर्णाहुतिके बाद "ओं दर्पणोद्योत ज्ञानप्रज्वलितसर्वलोकप्रकाशक भगवन्नर्हन श्रद्धां मेधां प्रज्ञां बुद्धिं श्रियं बलं आयुष्यं तेजः आरोग्यं सर्वशान्तिं विधेहि स्वाहा।" यह मंत्र पढ़ कर भगवान्‌का स्तोत्र (प्रार्थना) पढ़ें। फिर शान्तिधारा* दे कर भगवान्‌के चरणारविन्दमें पुष्पाञ्जलि प्रदान करें एवं होमकुण्डकी भस्म अपने तथा उपस्थित व्यक्तियोंके मस्तकसे लगावें।

इस प्रकार होम समाप्त करके होमकी वेदी पर विराजमान जिन-प्रतिमा और सिद्ध-यंत्रको यथास्थान पहुंचा दें और देवोंको विसर्जन करें।

अनन्तर घरमें स्त्रियोंको सन्ध्यदेवता (अर्हत् आदि पञ्च परमेष्ठी), क्रियादेवता (छत्र, चक्र, अग्नि), कुलदेवता (चक्रेश्वरी, पद्मावती आदि) और गृहदेवता (विश्वेश्वरी, धरणेन्द्र, श्रीदेवी, कुवेर)-की पूजा करनी चाहिए।

१म गर्भाधान संस्कार—विवाहके उपरान्त स्त्रीके ऋतुमती होने पर, चतुर्थ दिवसमें गर्भाधान-संस्कार सम्पन्न होता है। इसमें गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि इन तीनों अग्नियोंको पूजा करनेके लिए होम किया जाता है। वेदी कुण्डादिके बन चुकने पर सौभाग्यवती वृद्ध स्त्रियां मिल कर स्नान किये हुए पति एवं स्त्रीको वस्त्राभूषणोंसे अलङ्कृत कर घरसे वेदीके समीप लावें। आते समय माता स्त्रीके दोनों हाथोंमें अथवा मस्तक पर माला, वस्त्र, सूत्र, नारिकेल और पांच पल्लवोंसे सुशोभित एक मङ्गल-कलश रख देना चाहिए। वेदीके समीप आने पर गृहस्थाचार्यको उचित है कि बैठनेको दोनों वेदियों और कुण्डोंके बीचकी भूमि पर हल्दी और चावलोंसे स्वस्तिक बना कर, उस पर कलश रख दें। फिर बैठनेकी वेदी पर स्त्रीको दाहिनी ओर और पुरुषको बाईं ओर बिठा देवें।

इसके बाद पूर्वविधिके अनुसार होम करना प्रारम्भ कर दें। होम समाप्त हो जाने पर गृहस्थाचार्य कलशको हाथमें उठा लें और पूर्व-कथित पुण्याहवचन पढ़ते हुए उस कलशमेंसे जल ले कर दम्पती पर सेचन करें। अनन्तर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हुए दम्पती पर पुष्प (केशर-रञ्जित तण्डुल) निक्षेप करें। मन्त्र—"सज्जातिभागी भव। सद्‌गृहभागी भव। मुनीन्द्रभागी भव। सुरेन्द्रभागी भव। परमराज्यभागी भव। आर्हन्त्यभागी भव। परमनिर्वाणभागी भव।"

तदनन्तर स्त्री और पुरुष दोनों अग्निकी तीन प्रदक्षिणा दे कर अपने अपने स्थान पर बैठ जांय और सौभाग्यवती स्त्रीयां कुंकुम निक्षेप कर दोनोंकी आरती करें और आशीर्वाद देवें। अनन्तर अपने जातीय स्त्रीपुरुषोंको भोजन, ताम्बूल आदि द्वारा सम्मान करें।

(महापुराणान्तर्गत जैन आदिपुराण, ३८।७०-७६)

२य प्रीति-संस्कार—यह संस्कार गर्भाधानके दिनसे तीसरे महीनेमें किया जाता है। प्रथम ही गर्भिणी स्त्रीको तैल आदि सुगन्धित द्रव्योंसे नहला कर वस्त्राभूषणोंसे अलङ्कृत करें और शरीर पर चन्दनादि लगावें। फिर गर्भाधान क्रियाके नियमानुसार दम्पतिको होमकुण्डके पास बिठावें और होम करना प्रारम्भ कर दें। होमके मन्त्रादि "होमविधि"में लिख चुके हैं। होम समाप्त होने पर निम्नलिखित मन्त्र पढ कर आहुति देवें। अनन्तर पतिको पत्नी पर एवं पत्नीको पति पर पुष्प क्षेपण करना चाहिए। मन्त्र—"त्रैलोक्यनाथो भव। त्रैकाल्यज्ञानी भव। त्रिरत्नस्वामी भव।" इसके बाद शान्तिपाठ पढ़ कर देवोंको विसर्जन करें। इसी समय "ओं कं ठं ह्रं पः अ सि आ उ सा गर्भार्भकं प्रमोदेन परिरक्षत स्वाहा" यह मन्त्र पढ कर पति अपनी गर्भिणी स्त्रीका उदर सेचन कर स्पर्श करे। पश्चात् स्त्री अपने पेट पर गन्धोदक लगावे और उदरस्थ शिशुकी रक्षाके लिए "कलिकुण्ड-यन्त्र" गलेमें धारण करे। अनन्तर सौभाग्यवती स्त्रियोंको भोजनादिसे सन्तुष्ट करना चाहिए।

इस उत्सवमें द्वार पर तोरण अवश्य लगाना चाहिए-

* शान्तिधाराका मन्त्र प्रसिद्ध है, इसलिए यहां नहीं लिखा गया। "नित्यनियमपूजा"से जान लेना चाहिए।

राम यहां कादम्ब मद्य पान कर आनन्दसे उत्फुल्ल हुए थे। कृष्णको विनाश करनेके लिये मद्र, चेकितान, वाह्लिक, काश्मीरराज गोनर्द, करुषाधिपति द्रुम, किम्पुरुष, पुरुवंशीय वेगदारि, विदर्भाधिपति सोमक, रुक्मी, भोजराज, सूर्याक्ष, मालव, पञ्चालाधिपति द्रुपद, विंद अनुविन्द, दंतवक्र, छागली, पुरुमित्र, विराट्, कौशाम्ब्य, शतधन्वा, विदूरथ, भूरिश्रवा, त्रिगर्त, वाण, पञ्चनद, उलूक, कैतवेश, एकलव्य, दृढाक्ष, जयद्रथ, उत्तमौजा, शाल्व, केरल देशीय कौशिक, वैदिश वामदेव, सुकेतु, दरद और चेदिराजको सङ्ग ले जरासन्ध उपस्थित हुए। कृष्ण पर आक्रमण करनेके लिये सबने मिल कर गोमन्तको अवरोध किया। किन्तु बहुत दिन गोमन्त घेरे रहने पर भी जब जरासन्ध कुछ न कर सका तब गोमन्तको चारों ओर इन्होंने आग लगा दी। इस भयानक अग्निप्रभावसे गोमन्तके पादपराजिसे पशु पक्षिगण मर्मभेदी आर्तनाद करने लगे। यह देख रामकृष्णके मनमें अत्यन्त कष्ट हुआ। गोमन्तकी रक्षा करनेके लिए दोनों भाई विपक्ष सैन्य समुद्रमें कूद पड़े। दीर्घकाल युद्धके बाद जरासन्ध परास्त और निरस्त हो गए। उस समय महारथगण धीरे धीरे भागने लगे। जरासन्ध भी रणक्षेत्रको परित्याग कर नौ दो ग्यारह हो गए। रामकृष्णने पितृस्वसृपति चेदिराजके अनुरोधसे उनके रथ पर चढ़ कर वीरपुरको प्रस्थान किया। (हरिवंश ९५-९९ अ०)

प्राचीन शिलालिपिके पढ़नेसे मालूम होता है कि यहां पहले पहल कदम्ब-राजगण राजत्व करते थे। १२४७ ई०को षष्ठदेवक गोपकपुरमें राज्य करते देखे गये हैं। इससे अनुमान किया जाता है कि उस समयके बाद भी कदम्बराजगण थोड़े काल गोपकपुर (गोआ) में राजत्व करते थे। १३१२ ई०को मालिक तुग्लिग नामक एक मुसलमानने गोआको अपने अधिकारमें कर लिया। इसके बाद १३७० ई०को विजयनगरराज हरिहरके प्रधान मन्त्री सुप्रसिद्ध वेदभाष्यकार माधवाचार्यने मुसलमानके हाथसे यह नगर उद्धार किया गया। तत्पश्चात् इनके वंशधरोंने प्रायः सौ वर्ष यहां राज्य शासन किया। १४४९ ई०को वाह्मणीके राजा २य मुहम्मदके सेनापति गवानने गोआ जीत वाहमनी राज्यमें मिला लिया था। वाह्मणीराजाओंके अधःपतन और भास्को-डि-गामाके भारत अवतरण कालमें यह भूभाग विजापुरके आदिलशाही वंशके अधीन हुआ। १५१० ई०को १७वीं फरवरीको आलफान्सो डि आल्बुकार्कने २० जहाज और १२०० सेना साथ ले गोआ पर आक्रमण किया। इसके पहले किसी एक योगीने कहा था कि बहुतसे विदेशी मनुष्य आ गोआमें राजत्व करेगा। पोर्तगीजके आक्रमण काल गोआके रहनेवाले योगीको बात पर विश्वास कर देश छोड भागने लगे थे, सुतरां गोआ अधिकार करनेमें आल्बुकार्कको यथेष्ट परिश्रम न करना पड़ा। राज्यके प्रधान प्रधान मनुष्योंने अवनतशिरसे आ आल्बुकार्कको प्रवेशद्वारसमूहकी चाभी दे दी। पोर्तगीजने बहुत धूम धामसे गोआ नगरीमें प्रवेश कर पोर्तगीज जयपताका उड़ाई। नगरके रहनेवालोंने स्वर्ण तथा रौप्यका पुष्प वर्षण कर विजेताको सम्वर्धना की थी। उक्त वर्षके १२ अगस्तको वीजापुरके राजा युसफ् आदिलशाहने बहुतसी सैन्य ले गोआको अपने दखलमें लिया। घटनाक्रममें पोर्तुगलसे एक सुशिक्षित सैन्य दल आ पहुंचा। आल्बुकार्कने उनकी सहायतासे २५ नवम्बरको फिर भी गोआ नगर पर आक्रमण किया था। इस लड़ाईमें प्रायः दो सहस्र मुसलमान शत्रुके हाथसे मारे गये थे। उस समय अधिवासियोंको जैसा कष्ट झेलना पड़ा वह अकथनीय है। पोर्तगीजराजने लूटका पञ्चमांश प्रायः दो लाख रुपये पाये रहे। आल्बुकार्कने दुर्ग संस्कार और नगर सुदृढ़ करनेकी व्यवस्था की। इस समयसे एसियास्थ पोर्तगीजके अधीन दूसरे स्थानोंकी अपेक्षा गोआ ही प्रधान हो उठा। मार्टिन आल्फन्सो पहले पहल गोआके शासनकर्ता हो कर आये थे, उनके साथ सेण्ट जेवियर भी थे। उनके शासनकालमें १५४३ ई०को इब्राहिम आदिलशाहके अधीनस्थ सालसिट और वारदेश नामक महाल पोर्तगीजोंके अधिकारभुक्त हुए। भविष्यत्में सहसा मुसलमानके आक्रमण निवारणके लिये गोआके पश्चिमांशमें एक दृढ प्राचीर निर्माण किया गया। १५७० ई०को आलि आदिलशाहने लगभग लक्षाधिक सैन्य ले गोआ नगर अवरोध किया था, किन्तु इस समय पोर्तगीजके राजप्रतिनिधि डन लुई-दि-आथेडिने अल्पसंख्यकसैन्य ले अति विचक्षणरूपसे नगर रक्षा की थी। दश मास घेरे रहनेके बाद मुसलमान

कण्ठ, वक्षस्थल और भुजाओंसे लगावे। इसके बाद एक हजार आठ नामोंसे युक्त श्रीजिनेन्द्रभगवान्से नाम-याचना करे और निम्नलिखित मंत्रोच्चारणपूर्वक उच्च-स्वरसे पुत्रका नाम प्रकट कर दे। मंत्र—"ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं बालकस्य नामकरणं करोमि नाम्ना आयुरारोग्यै-श्वर्यवान् भव भव अष्टोत्तरसहस्राभिधानार्हो भव भव झौं झौं अ सि आ उ सा स्वाहा।" अनन्तर आचार्य बालकको आशीर्वाद कर कार्य समाप्त करें; मंत्र—"दिव्याष्ट सहस्रनामभागी भव। विजयनामाष्टसहस्रभागी भव। परम-नामाष्टसहस्रभागी भव।"

इसी दिन संध्याके समय कर्णवेध करना चाहिए; मंत्र—"ओं ह्रीं श्रीं अर्हं बालकस्य ह्रः कर्णवेधनं (बालिका हो तो 'कर्णनासावेधनं') करोमि अ सि आ उ सा स्वाहा।"

८म बहिर्यान संस्कार—यह संस्कार २य, ३य अथवा ४र्थ मासमें किया जाता है। यह संस्कार शुक्लपक्ष एवं शुभमुहूर्तमें ही किया जाता है। प्रथम ही बालकको स्नान करावें और पुण्याहवचन पढ़ कर सिंचन करें। फिर वस्त्राभूषणसे सुसज्जित कर, पिता वा माता उसे गोदमें ले कर गाजे बाजेके साथ जिन-मन्दिर जावें। वह वेदीको तीन प्रदक्षिणा दे कर साष्टाङ्ग नमस्कार और पूजा आदि करें। अनन्तर "ओं नमोऽर्हते भगवते जिन-भास्कराय तव मुखं बालकं दर्शयामि दीर्घायुष्यं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्रको पढ़ कर बालकको श्रीजिनेन्द्रदेवके दर्शन करावें। इसके बाद आगत सज्जनोंका पूर्वोक्त प्रकारसे सत्कार कर कार्य समाप्त करें। (जैन आदिपु० ३८।९०-९२)

९म निषद्य संस्कार—यह संस्कार पांचवें महीनेमें होता है। इसमें बालकको उपवेशन (बैठना) कराया जाता है। होम पूजनादिके बाद वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और वर्द्धमान इन पांचकुमार तीर्थङ्करों की पूजा करें। फिर चावल, तिल, गेहूं, मूंग, उड़द और जवसे रङ्गावली बनावें और उस पर एक वस्त्र बिछा कर बालकको (पूर्वमुख) पद्मासनसे बिठा दें। बिठानेका मंत्र—"ओं ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा बालकमुपवे-शयामि स्वाहा।" उपरान्त बालककी आरती उतारें और आशीर्वाद दे कर कार्य समाप्त करें।

(जैन-आदिपुराण ३८।९३—९४)

१०म अन्नप्राशनसंस्कार—यह संस्कार ७वें महीनेमें, अथवा ८वें वा ९वें महीनेमें भी हो सकता है। जिनेन्द्रकी पूजा और होम समाप्त होने पर बालककी पिता पुत्रको बाईं गोदमें ले कर पूर्वको ओर मुंह करके बैठे। बच्चे-का मुंह दक्षिणकी तरफ होना चाहिये। पश्चात् एक कटोरीमें दूध भात-घी-मिश्री और दूसरीमें दही-भात ले कर, पहले दूध-भात बालकके मुंहमें देवे और फिर दही भात खिलावे। मन्त्र इस प्रकार है—"ओं नमोऽर्हते भगवते भुक्तिशक्तिप्रदायकाय बालकं भोजयामि पुष्टिस्तुष्टिश्चारोग्यं भवतु भवतु झ्वी क्ष्वीं स्वाहा।" अनन्तर आचार्य "दिव्या-मृतभागी भव। विजयामृतभागी भव।" कह कर बालकको आशीर्वाद देवें। इस दिन समागत बन्धुवर्गको भोजन कराना चाहिए। (जैन-आदिपु० प०३८)

११श व्युष्टि-संस्कार—जिस दिन बालक पूरा एक वर्षका होता है, उस दिन यह संस्कार किया जाता है। इसमें कोई विशेष क्रिया नहीं होती। केवल पूर्ववत् होम किया जाता है और मन्त्र पढ़ कर आशी-र्वाद दिया जाता है। मन्त्र-"उपनयनजन्मवर्षवर्द्धन भागी भव। वैवाहनिष्टवर्षवर्द्धनभागी भव। मुनीन्द्रवर्षवर्द्धनभागी भव। सुरेन्द्रवर्षवर्द्धनभागी भव। मन्दराभिषेकवर्द्धनभागी भव। यौवराज्यवर्द्धनभागी भव। महाराज्यवर्षवर्द्धनभागी भव। परमराज्यवर्षवर्द्धनभागी भव। आर्हन्त्यराज्यवर्षव-र्द्धनभागी भव।" (जैन-आदि पुराण ३८।९६—९७)

१२श चौलकर्म वा केशवाय संस्कार—यह संस्कार १म, ३य, ५म अथवा ६ष्ठ वर्षमें सम्पन्न होता है।

चौलक्रिया देखो।

१३श लिपिसंख्यान संस्कार—यह संस्कार ५वें वा ७वें वर्ष किया जाता है। इसमें शुभमुहूर्तका होना अत्यन्त आवश्यक है। मुहूर्तके दिन, पहले तो जिनेन्द्रकी पूजा करें, फिर गुरु और शास्त्रका पूजा करके पूर्व-नियमानुसार होम करें। पश्चात् बालकको स्नानादि करा कर और वस्त्राभूषण पहना कर विद्यालय ले जावें। वहां बालकके द्वारा जयादि पञ्चदेवताओंको नमस्कार-पूर्वक अर्घ्य प्रदान करावें। अनन्तर बालक शिक्षक वा गुरु महाशयको वस्त्रालङ्कार आदि भेंट दे कर प्रणाम करे। उपाध्याय वा गुरु महाशयको चाहिए कि एक

में प्रासादमाला सुन्दर सुसज्जित, अत्युच्च गिर्जा और अच्छे अच्छे मठ हैं। भारतमें पोर्तगोजकी नाईं धनवान् संसारमें बहुत थोड़े हैं, किन्तु यह धनगौरव ही इन्होंके ध्वंसका मूल है।" १६७५ ई०को एक दूसरे मनुष्यने गोआ प्रदर्शन कर लिखा है,-"भारतमें यह रोम नगरके जैसा समशैलके ऊपर अवस्थित है। चारो ओर विश्वविद्यालय, उच्च भजनालय और बड़ी बड़ी अट्टालिका हैं, किन्तु अधिकांश ध्वंस हो जाने पर यह नगरी लज्जासे अधोवदन की हुई मालूम पड़ती है।"

१६८३ ई०को सम्भाजीने अकस्मात् गोआमें प्रवेश कर नगर लूटा था,उस समय किसीसे सहायता पानेकी आशा न थी ऐसे समयमें सह्याद्रिसे बहुतसे मोगलसैन्यने आ महाराष्ट्रोंको पराजय और वशीभूत किया। थोड़े दिनोंके बाद फिर सावन्तवाडीसे भोनसलेने आकर गोआ राज्य पर आक्रमण किया, परन्तु वे भी पोर्तगोजोंसे परास्त हो गये।

इस समय पोर्तगोजोंने महाराष्ट्रोंके अधिकृत विचोलिम् दुर्ग ध्वंस तथा कोर्जुवम् और पनलिम् नामक द्वीप अधिकार कर लिया। १७१७ ई०को वारदेश और चपोराकी सीमामें दो दुर्ग निर्मित हुए। १७३२ ई०से १७४१ ई० तक पोर्तगीजों के साथ महाराष्ट्रका युद्ध होता रहा। इस समय भोनसलेसे गोआ राज्यके नानास्थानोंमें लूटमार करते थे। अन्तमें नये राजप्रतिनिधि मारक्विस ओफ लरिआलने १२०० यूरोपीय सैन्यके साथ ले वारदेशमें महाराष्ट्रोंको पराजित किया और गोआ राज्यसे उन्हें भगा कर पोराडा तथा दूसरे कई एक छोटे छोटे दुर्गों पर अधिकार कर लिया। इस समय भोनसलेके सर्दार क्षेमसामन्त पोर्तगोजके करदरूपमें गण्य हुए थे। इस घोर युद्धके बादभी महाराष्ट्र शान्त न हुए, उन्होंने भोनसलेके साथ मिल पोर्तगीजके साथ फिर भी लड़ाई ठान दी। बाद मारक्विस ओफ काष्टेलो (Marquis of Castello Novo) ने आलोर्ना, तीरकुल, निउतिम्, ररिम् और सङ्गुलिम्को दखल किया। १७६० ई०को पोर्तगीजके प्रतिनिधि मारक्विस ओफ तवीराने सुन्दाके राजाको पराजय कर पीरो दखल किया इसके बाद राजप्रतिनिधि आल्वारके समयमें महाराष्ट्रोंके साथ घमसान युद्ध हुआ था। इस समय ररिम और दिउतिम् पोर्तगीजके हाथसे निकल गये। पोर्तगीजराज्यके प्रतिनिधि भी दुर्गके अवरोधकालमें मारे गये। पीरो और जिल्पम् दुर्ग सुन्दाराजाको तथा विचोलिम्, संकुलिम् और अलोर्ना क्षेमसामन्तको लौटा देनेके लिए पोर्तगीजने आदेश दिया, उस समय हैदरअलीके हाथसे बचनेके लिए सुन्दाराजाने पोर्तगीजको जांबुली, रामेश्वर और कोणाकोण नामक भूभाग अर्पण किये। एक वर्षके बाद क्षेमसामन्तने पोर्तगीजके साथ फिर भी विरोध ठाना, अन्तमें पोर्तगोजोंने परास्त हो, उन्हें आलोर्णा, पर्णम्, सङ्गुलिम् और विरोलिम् छोड़ देने पड़े। सैकड़ों आक्रमणों और मरी रोगसे गोआ नगरी धीरे धीरे उजाड होने लगी।

पोर्तगीज गवर्नमेण्टने राजधानीका पुनः संस्कारकी चेष्टा की। अधिक रुपये व्यय होने पर भी कुछ सफलता हाथ न आई। पहलेसे ही अधिवासीगण धीरे धीरे नदीके मुहाने पर अवस्थित पञ्जीम् या नये गोआमें बस रहे थे, तब यहां नयी राजधानी स्थापित हुई। १८वीं शताब्दीमें गोआकी अवस्था बहुत शोचनीय हो गई थी, यहां तक कि आयसे भो वहांका खर्च अधिक था, और सेनाध्यक्ष (Captain) ६) रु०से अधिक वेतन नहीं पाते थे। महाराष्ट्रोंसे रक्षाके लिये जो दो हजार यूरोपीय सेना नियुक्त हुई थी, उनका खर्च पोर्तगलके राजाको ही देना पड़ता था। कप्तान हमिल्टन लिख गये हैं कि उस समय भी गोआके निकट पर्वतके ऊपर बहुत गिर्जे और कुमारीमठ तथा प्रायः तीस हजार रोमन कैथोलिक याजक थे।

१७३९ ई०को महाराष्ट्रोंने गोआ राज्य पर बहुत उपद्रव मचाया था। ईसाई यति और संन्यासियोंने भीति हो मार्गाव नामक स्थानमें आश्रय लिया था। जो कुछ हो गोआकी दरिद्रता घटी नहीं। पदस्थ राजपुरुष और सेनाओंको अमितव्ययिता भी दूर नहीं हुई।

१८०१ ई०को फरासीसीयोंके युद्धकालमें अंगरेज पोर्तगोजोंके साथ मिले थे। १८१७ ई०को पोर्तगीजके प्रतिनिधि काउण्ट ओफ लिओपर्दोने उस्पा और ररिमके दुर्ग पर आक्रमण किया था १८३५ ई०को राणी (२रो) डोनामेरियाने बार्नार्डो पेरेस-डा-सिलभा नामक एक

मौञ्जीका त्याग कर दे और गुरुकी साची पूर्वक वस्त्र पहन कर ताम्बूल खावे और शय्या पर शयन करे। अनन्तर वैश्य होवे तो वाणिज्यकार्यमें लग जाय और क्षत्रिय होवे तो शस्त्र धारण करे।

१६श विवाह-संस्कार—यह संस्कार १६वें वर्षसे २५ वर्षकी उम्र तक किया जा सकता है; किन्तु कन्याके लिए १२वें वा १३वें वर्षका ही नियम है। साधारणत: विवाहके पांच अङ्ग हैं—वाग्दान, प्रदान, वरण, पाणिपीड़न और सप्तपदी। जैनविवाहविधि देखो।

जैन-आदिपुराण, क्रियाकोष, षोड़शसंस्कार, त्रिवर्णाचार आदि जैनग्रन्थोंमें उपर्युक्त सोलह संस्कारोंका वर्णन विशदरूपसे पाया जाता है। किन्तु वर्तमान जैनजातिमें उक्त संस्कारोंका अभाव नहीं तो शिथिलता अवश्य आ गई है। हां, दाक्षिणात्यके जैनोंमें अब भी प्राय: सब संस्कार प्रचलित हैं। यज्ञोपवीत संस्कार दाक्षिणात्यके सिवा अन्यान्य प्रदेशोंके जैनोंमें कम देखनेमें आता है। किन्तु फिलहाल जातीय सभा और सुशिक्षितोंके उद्योगसे संस्कार विषयकी उन्नति हो रही है।

शौचाशौच—जन्म वा मृत्यु होने पर वंश वा कुटुम्बके सभी लोगोंको अशौच होता है। जन्म-सम्बन्धी सूतक वा अशौच तीन प्रकारका है; यथा—स्राव-सम्बन्धी, पात-सम्बन्धी और जन्म-सम्बन्धी। गर्भस्रावका अशौच माताको—३रे मासमें हो तो तीन दिनका * और चौथे मासमें हो तो ४ दिनका होता है। पिता और कुनबाके लोग सिर्फ स्नानमात्रसे शुद्ध हो जाते हैं। इसी तरह गर्भपातका अशौच भी माताको ५ वा ६ दिनका होता है। पुत्र उत्पन्न होने पर कुटुम्बके लोगोंको १० दिनका अशौच होता है। इन दश दिनमें कोई प्रसूतिका मुख नहीं देखते। इसके बाद प्रसूतिको और भी २० दिनका अनधिकार-अशौच होता है, किन्तु कन्या होने पर यह अशौच ३० दिन तक रहता है। अनिरीक्षण अशौचमें यदि बालकका पिता प्रसूतिके निकट बैठे-उठे वा स्पर्श करे तो उसे १० दिनका अनिरीक्षण अशौच पालन करना पड़ता है।

मृत्यु सम्बन्धी अशौच साधारणतः १० दिनका होता है। किन्तु छोटे बच्चोंके लिए यह नियम लागू नहीं है। नाल काटनेके बाद बालककी मृत्यु होने पर केवल १० दिनका जन्माशौच ही माना जाता है। बालकके दशवें दिन मरने पर मातापिताको दो दिनका अशौच होता है और ग्यारहवें दिन मरने पर तीन दिनका। दांत निकलनेके बाद बालककी मृत्यु होने पर मातापिता और भाइयोंको १० दिनका, प्रत्यासन्न (४ पीढ़ी तक) कुटुम्बियोंको एक दिनका अशौच होता है। एक अशौच होने पर दूसरा अशौच (एकही श्रेणीका होनेसे) उसीमें गर्भित हो जाता है; किन्तु जन्मसम्बन्धी अशौच और मरण सम्बन्धी अशौचका भिन्न भिन्न पालन किया जाता है।

शवदाह—किसी व्यक्तिके मरने पर उसे विमानमें सुला कर ऊपरसे नया वस्त्र ढक दिया जाता है। अनन्तर शवका ग्रामकी तरफ मुंह करके स्वजातीय चार आदमी उसे श्मशानमें ले जाते हैं, शवदाहके लिए साथमें अग्नि भी ले ली जाती है। किन्तु ब्रह्मचारी वा व्रती पुरुषकी मृत्यु होने पर, उसके लिए होमकी अग्निकी आवश्यकता होती है। आधा मार्ग अतिक्रम करनेके बाद विमानको उतार कर शवका मस्तक पलट लिया जाता है। यहांसे जातिके लोग शवके आगे और अन्यान्य मनुष्य पीछे पीछे चलते हैं। अनन्तर श्मशानमें पहुंचनेके बाद "ओं ह्रीं ह्रः काष्ठसंचयं करोमि स्वाहा" यह मन्त्र उच्चारण पूर्वक चिता सजाई जाती है। पश्चात् "ओं ह्रीं ह्रीं अ सि आ उ सा काष्ठे शवं स्थापयामि स्वाहा" कह कर शवको चिता पर रखते हैं। इसके बाद तीन प्रदक्षिणा दे कर अग्नि-संस्कार करते हैं। मंत्र "ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं अग्नि सधुक्षण करोमि स्वाहा।" शवदाह हो चुकने पर जातिके लोग चिताकी प्रदक्षिणा दे कर गङ्गा अथवा किसी जलाशयके किनारे उपस्थित होते हैं और यथायोग्य सब क्षौरकर्म कराते हैं। जैनोंमें

* जहां ब्राह्मणोंके लिए ३ दिनके अशौचका विधान हो, वहां क्षत्रियोंके लिए ४ दिनका, वैश्योंके लिए ५ दिनका और शूद्रोंके लिए ८ दिनका समझना चाहिए, ऐसा भगवज्जिनसेनाचार्यका मत है। इसी तरह अन्य अशौचोंमें भी दिनोंका हिसाब लगा लेना उचित है।

कुशवती रखा। किसी समय अगस्त्य ऋषि, हाटकेश्वरको देखने जा रहे थे, रास्तेमें कुशवतीके साथ इन्हें भेंट हुई। ऋषिके आदेशसे कुशवती प्रवाहित हो हाटकेश्वर तक चली गई। स्थानविशेषसे इसका नाम पंचनदी पडा। इसमें स्नान करनेसे समस्त पाप विनष्ट होते हैं।"

(चन्द्रचूडमा० १२ अ०)

'कुशवतीके निकट अम्बष्ठ नामक एक पापी व्याध रहता था। चौर्यवृत्ति हो उसकी जीविका थी। दुराशय व्याध बाल्यकालसे ही निर्दयतासे पशुओंका शिकार करता था। धीरे धीरे व्याधको बुढापा आया। किसी श्रावणी पूर्णिमा तिथिके सोमवारको देश विदेशसे तीर्थयात्रिगण झुण्डके झुण्ड चन्द्रचड तीर्थको जा रहे थे, पहले उन्हें कुशवती नदीको देख कर ही वहां जाना पडता। इन तीर्थयात्रियोंको देख अम्बष्ठके मनमें एक दूसरा ही भाव उत्पन्न हो आया, और वह यात्रियोंके साथ ही चन्द्रचूडको पहुंचा। यात्रियोंका भक्तिभाव, पूजा और आचार व्यवहार देख व्याधको भक्तिका सचार हो गया। उस दिन इसने कुछ भी न खाया। सन्ध्याके बाद शिवजीके उद्देशसे एक दीप जला कर क्षुधा और पिपासासे कातर हो ज्योंही वह खाने लगा त्योंहीं प्रथम ग्रास गलेमें अटक उस व्याधकी मृत्यु हो गई। मृत्युके बाद यमकी आज्ञासे यमदूत उसे लेजा रहा था, रास्तेमें शिवानुचर रुद्रगणने उन्हें रोक दिया। अनेक वादानुवादके बाद स्थिर हुआ कि बाल्यकालसे पापाचारी होने पर भी तीर्थ और दिनमाहात्म्यमें यह रुद्रलोकमेंही वास करेगा। यमदूतने उनके वचनसे पराजित हो अपना राह ली। अम्बष्ठ रुद्रानुचरके साथ रुद्रलोकको चला गया। इसीलिए वह स्थान अम्बष्ठतीर्थ नामसे विख्यात है। श्रावणमासके सोमवारको पूर्णिमा तिथि होने पर योग होता है इस दिन वहां जा स्नान दान करनेसे शिवलोकको प्राप्ति होती है।

'कपिल नामक एक राजा शत्रुसे पराजित हो इस तीर्थमें रहते थे। यथाविधि स्नान दान और शिवजीकी आराधना कर पुनर्वार अपना राज्य प्राप्त किया था। वे जिस स्थान पर रह शिवजीकी आराधना करते थे, वह कपिलतीर्थ नामसे प्रसिद्ध है।

'चन्द्रचूडशिखरके दक्षिणको ओर गौतमतीर्थ है। पूर्वकालमें गौतम नामक ब्राह्मणने कठिन तपस्या, शतरुद्रीय सूक्त एवं सद्योजात मन्त्रसे शिवजीकी आराधना की थी। उनकी आराधनासे शिवजी सन्तुष्ट हो गुहाद्वारसे उनके निकट उपस्थित हुए तथा गौतमकी प्रार्थनासे उसी स्थान पर लिङ्गरूपसे अवस्थान करना अङ्गीकार किया। वही स्थान गौतमतीर्थ नामसे प्रसिद्ध है। उसमें स्नान, दान और भक्तिपूर्वक गौतमलिङ्ग दर्शन करनेसे समस्त पाप जाते रहते और सब अभिलाष पूर्ण होते हैं।

'दानवोंके उपद्रवसे भीत हो जगत्पति हरि इसके एक गुहामें जा शिवजीकी आराधना करने लगे। उपवासी रह तीन बार स्नान और मृत्युञ्जय मन्त्र जप कर अभीष्ट वर और एक उत्कृष्ट रथ पाये थे। इसी कारण वह कन्दरा सोमतीर्थ नामसे विख्यात है। इसके प्रस्रवणमें स्नान करनेसे सर्व यज्ञके फल तथा छह बार वेदपाठ करनेका फल होता है।

'क्षयरोगग्रस्त कोई नरपति इस पर्वतके अग्निकोणमें मनोहर सोमोदकमें स्नान कर शिवजीकी आराधना करके क्षयरोगसे मुक्त हुए थे। इसीसे वह चन्द्रोदयतीर्थ कहा जाता है। इसमें स्नान करनेसे क्षयरोगका प्रतीकार होता है।

'पर्वतके उत्तरको ओर कामप्रपूरण नामक एक तीर्थ है। कोई मुनिकन्या वहां रह तपस्या करती थी। तपस्याके फलसे मुनिकुमारी पार्वतीकी सखी हो कैलासवासिनी हो गई।

'शर्मिष्ठा नामकी एक अप्सरा थी। उसने यज्ञनिरत किसी ब्राह्मणके साथ विवाह करनेकी इच्छा की। समस्त ब्राह्मण उसके रूप देख मोहित हो गये थे शर्मिष्ठाने किसीको भी पसन्द न किया। एक दिन वह महर्षि और्वके आश्रमको पहुंची और मुनिके शापसे कुत्सित हो उसने जन्मग्रहण किया। शर्मिष्ठा चिररोगग्रस्त हो दारुण यातनासे काल बिताने लगीं। अन्तको कामप्रपूरणतीर्थमें रह दश वर्ष पर्यन्त प्रतिदिन नियमित रूपसे स्नान करने लगीं। तीर्थप्रभावसे पूर्वको

प्रथम मदिरा मांस, मधु, पांच उदुम्बर फल, रात्रिभोजन, बिना छना जल, आदि जीवघातक वस्तुओंका सेवन छोड़ देती है। इन सबके छोड़नेसे आत्मा अष्ट मूलगुण युक्त बन जाती है और आगे चल कर सप्तव्यसन महा पापोंको छोड़ देती है; फिर स्थूल हिंसा, झूठ, चोरी, कुशीलसेवन और तृष्णाधिक्य वा परिग्रहाधिक्य इन सबको छोड़ती है; यहीं पर वह दिशाओंमें एवं देशोंमें गमनागमन करनेका नियम करती है। उसका उद्देश यही है कि जितनी मर्यादा की हो, उसीके भीतर आरंभ करना, बाहर नहीं। बाहर आरम्भ न होनेसे, वहां होनेवाली बहुत कुछ हिंसा एवं हिंसोत्पादक परिणाम रुक जाते हैं। इसी अवस्थामें बिना प्रयोजन (व्यर्थ) होनेवाली हिंसासे भी (जैसे रागद्वेषोत्पादक कथाओंका सुनना, बिना कारण पृथ्वीको खोदना, जलमें पत्थर फेंकना, वृक्षोंका तोड़ना, दूसरोंका बुरा विचारना आदि) छुटकारा मिल सकता है। इस अवस्थामें पहुंचनेवाला श्रावक कुछ काल, तीनों समय सामायिक भी करता है, अर्थात् पर पदार्थसे चित्तवृत्ति हटा कर स्वयं आत्मस्थ स्वरूपमें तल्लीन हो जाता है, पर्वोंमें उपवास भी करता है, अतिथियोंको आहार दान भी देता है तथा व्रती संयमियोंकी सेवा भी करता है।

परस्त्री-त्यागी तो पहले ही हो जाता है, सातवीं श्रेणीमें पहुंच कर स्वस्त्रीका भी त्यागी बन कर मन-वचन-कायसे कामवासनाका सर्वथा त्याग कर पक्का ब्रह्मचारी बन जाता है। उससे ऊपर यदि और भी चित्तवृत्ति वैराग्यकोटिमें झुकती है, तब वह आत्माको भी छोड़ देता है। पश्चात् शरीर-सम्बन्धी, वस्त्रके सिवा, बाकी सब धन, धान्य मकान, आभूषण आदि सर्व प्रकारका बाह्य परिग्रह छोड़ देता है, इससे भी आगे बढ़ने पर किसीको संसारवर्धक व्यापार, गृह-प्रबन्ध आदि सांसारिक कार्योंमें सम्मति भी नहीं देता है, केवल पारमार्थिक विचार ही करता है। यहां तक श्रावकोंका ही पद है। इससे ऊपर त्याग करनेवालेके लिए एक कोटि अभी और है, वह यह कि घरसे निकल कर जङ्गलमें, किसी मठ वा मन्दिरमें जा कर किसी विशेष ज्ञानी एवं तपस्वी गुरुके निकट क्षुल्लक अथवा ऐलकके व्रत धारण कर लेते हैं। क्षुल्लक अवस्थामें लंगोटीके सिवा एक खंडवस्त्र भी रक्खा जाता है; वह वस्त्र यदि शिरसे ओढ़ा जाय तो पैर खुल जाते हैं और पैरोंको ढका जाय तो शिर खुल जाता है, इसीलिए उसका नाम खण्डवस्त्र है। इस वस्त्रसे वह पूर्णतया शीतवारण आदि नहीं कर सकते और न पूर्णतया शीतवारण करने आदिकी उनके अभिलाषाएँ ही जाग्रत हैं। यदि ऐसा होता तो खण्डवस्त्र ही वह क्यों धारण करते, पूर्ण वस्त्र ले कर उससे पहले पदोंमें रह जाते। क्षुल्लक किसीके घर निमन्त्रण पूर्वक नहीं जीमते, किन्तु भिक्षावृत्तिसे किसीके घर शुद्ध एवं निरन्तराय भोजन मिलने पर जीम लेते हैं। जिस अवस्थामें खण्डवस्त्रका भी त्याग कर दिया जाता है—केवल एक लंगोटी मात्र रक्खी जाती है, वह ऐलकका पद है, इस पदमें रहनेवाले श्रावक खड़े हो कर आहार लेते हैं, मुनियोंके समान गमनागमन क्रियाएं करते हैं, परन्तु मुनिधर्मका बाधक प्रत्याख्यानावरण कषायके रहनेसे मुनिपद धारण करनेमें असमर्थ रहते हैं। अर्थात् वे अभी तक इतने प्रबल कषाय-विजयी नहीं बन पाये हैं कि नग्न रह कर बिना किसी प्रकारकी लज्जाके, नाना परीषहोंको सहते हुए बालकके समान निर्विकार बन सकें। बस, यहीं तक श्रावकोंका आचार है। श्रावकोंका अन्तिम दरजा मुनिके समान है, परन्तु लंगोटी मात्र परिग्रह विशेष है, बाकी पीच्छिका और कमण्डलु भी ऐलकके होता है। श्रावक-धर्ममें रह कर यहां तक उन्नति की जा सकती है। इसके आगे मुनिधर्म है। मुनिधर्मका श्रावकधर्मसे घनिष्ट संबन्ध है, श्रावकधर्म मुनिपदके लिये कारण है। बिना श्रावक पदकी चरम सीमाकी उन्नतिका अभ्यास किये, मुनिपदका धारण करना अशक्य है। क्योंकि जैसे यह बात निश्चित है कि जो पहले प्रवेशिका, पंडित एवं शास्त्रिपरीक्षा दे कर उत्तीर्ण हो जायगा अथवा उस जातिकी योग्यता अपनेमें बना लेगा, वही आचार्य परीक्षामें बैठ सकता है, अन्यथा जो प्रवेशिका तककी योग्यता रखता है, वह आचार्य तो दूर रहो, शास्त्रि परीक्षामें भी नहीं बैठ सकता, उसी प्रकार यह भी निश्चित है कि श्रावकधर्मको पूर्ण

क्रीडा कर रहे थे। दैवक्रमसे खेलनेमें पार्वतीकी जीत हुई। रुद्राणीने द्यूतक्रीडामें पराजित पतिको दो एक उपहास या चाटुवाक्यसे तिरस्कार किया। शिवजीके मनमें बहुत दुःख हुवा। वे घर छोड़ वनवासी हो गए थे। वह भोला सांसारिक सुखको आशा पर जलाञ्जलि दे वन वनमें घूमने लगे। इन्होंने पहले कृष्णा और वेणीके सङ्गम पर तपस्या की थी। वह स्थान सङ्गमेश्वर नामसे प्रसिद्ध हुवा। परशुरामसे वह स्थान ब्राह्मणोंको दान दिए जाने पर शिवजी वह स्थान छोड सागरके निकट जा रहने लगे इसके बाद चम्पावतीमें आए अनेक दिन तपस्या की थी। इस स्थानमें रामेश्वर नामके एक लिङ्गकी दक्षिण ओर स्वयं सदाशिव विराजमान हैं। इसके बाद शिवजी गोमन्तक पर्वत पर गए थे। इस स्थान पर शिवजी गोमन्तकेश नामसे सर्वजनप्रसिद्ध लिङ्गरूपमें आविर्भूत हुए। इस लिङ्गको पूर्व और ब्रह्मा विष्णु प्रभृति समस्त देवता विराज करते हैं। लिङ्गके पश्चिममें यमेश, उत्तरमें ब्रह्मवादी ऋषिगण एवं दक्षिणमें भैरवादि शिवगण अवस्थित हैं, ऋषियोंने शिवके दर्शन पानेके लिए सातकरोड़ वर्ष तक अघाशो नदीके तीर पर तपस्या की थी। शिवजीके साक्षात् होने पर ऋषियोंने इन्हें लिङ्गरूपमें उस स्थान पर रहनेको प्रार्थना की। उनकी प्रार्थनासे उस स्थान पर सप्तकोटीश्वर नामक एक लिङ्ग स्थापित हुआ। पञ्चनदीमें स्नान कर सप्तकोटीश्वरका अवलोकन करनेसे मनोभीष्ट पूर्ण होता है।

'गोमन्तके दक्षिण भागमें सागरके निकट अघाशी नामकी एक नदी है। यह नदी सह्याद्रिके पाददेशसे उत्पन्न हुई है। अघाशीके तीर पर प्रसिद्ध कुशस्थलीपुरी है। इस पुरीमें लोमश नामक एक पुण्यात्मा ब्राह्मण रहते थे, लोमश किसी समय चन्द्रग्रहण उपलक्षको सङ्गमस्थलमें स्नान करनेके लिए पहुंचे। ज्योंही उस ब्राह्मणने नदीमें प्रवेश किया त्योंही एक भीषण मगरने उन्हें पकड लिया। दारुण विपदसे लोमश शिवजीका स्तव करने लगे। शिवने दर्शन दे उनकी रक्षा की थी। उस स्थान पर लोमश नामका एक लिङ्ग स्थापित हुआ। शिवजीने लोमशको कहा था कि "इस गोमन्तक पर्वत पर शतसहस्र लिङ्ग हैं, किन्तु उनमें मैं पूर्णांशसे अवस्थित नहीं हूं। कलिकालमें अघाशी नदीके तीर पर इसी लोमश लिङ्गमें हो पूर्ण भावसे वास करूंगा। कलिकालमें यही क्षेत्र मेरा एकमात्र वसतिस्थान होगा।" इसके दर्शन करनेसे समस्त दुःख विनाश होते।

'इधर पतिके वनवासी होनेके बाद पार्वती भी उन्हें ढूंढनेके लिए बाहर निकली थीं। किन्तु कहीं भी पतिको न पाया। अन्तमें अघाशी नदीके तीर पर पहुंच शिवकी तपस्या करने लगीं। शिवजी पार्वतीको जांचनेके लिए एक भयङ्कर व्याघ्रमूर्ति धारण कर उपस्थित हुए। व्याघ्रको देख पार्वती भयभीत हो गईं। भयसे "मां गिरीश रक्ष" ऐसा कहनेमें 'मांगोश' बोल उठी। इसके बाद शिवजीके साक्षात् होने पर पार्वती बोली, "नाथ! आप इस स्थान पर माङ्गीश नामसे प्रतिष्ठित हो वास करें।" शिवजी भी इस पर सहमत हुए। उस स्थान पर माङ्गीश नामसे शिवलिङ्ग और देवी मूर्ति स्थापित हुए। पहले ये दोनों जलके मध्य स्थापित थे। "मांगीश" यह नाम उच्चारण करनेसे समस्त यज्ञका फल होता और इनका दर्शन करनेसे सर्व दुःख दूर होते हैं।

'थोडे दिनके बाद कान्यकुब्जनिवासी वात्स्य गोत्रीय देवशर्मा नामक एक ब्राह्मण अपनी स्त्रीके साथ तीर्थयात्रा करते हुए अघाशी-सङ्गममें पहुंचे। वहां ब्राह्मणने देखा कि एक गाय जलमें गोता लगा कुछ काल ठहरनेके बाद बाहर निकली। ब्राह्मणने इसका रहस्य न समझ अधिवासियोंसे इसका कारण पूछा, किन्तु कोई भी कुछ कह न सका। इसके बाद दूसरे दिन ब्राह्मणने गौकी पूंछ पकड जलके नीचे जा तेजोमय लिङ्ग और देवीमूर्ति देखे। देवशर्माने भक्तिपूर्वक लिङ्गकी पूजा और आराधना की। शिवजीने दर्शन दे अपना माहात्म्य और माङ्गीश नामका कारण कह सुनाया, उन्होंने यह भी कहा कि प्रतिदिन कपिलाधेनु यहां आ मुझे दुग्ध दे स्नान करके लौट जाती है, अतएव इसका नाम कपिलतीर्थ होगा। इस तरहसे जलमग्न तीर्थ और लिङ्गमूर्तिका प्रकाश हुआ। इसके दर्शनसे मनोवाञ्छा पूर्ण होती है।

'गोमन्तके दक्षिणमें समुद्रके निकट शङ्खावली नगरी है। इस नगरमें एक सिद्ध ब्राह्मण रहते थे। सिद्ध सर्वदा शिवजीकी उपासना किया करते। राक्षसीरूप-

मुनियोंका स्थूल स्वरूप अट्ठाईस मूलगुणोंका धारण करना है। अट्ठाईस मूलगुण ही मुनियोंका स्थूल आचार है; यथा — पांच समिति, पांच महाव्रत, पांच इन्द्रियनिरोध, छह आवश्यक, भूमिशयन, खड़े हो कर ही भोजन करना, एक बार भोजन करना, दन्तधावन नहीं करना, स्नान नहीं करना, केशलुञ्चन करना, नग्न ही रहना। ये मुनियोंके अट्ठाईस मूलगुण हैं। मूलगुण उसे कहते हैं, जिसके विना वह पद ही न समझा जाय। अब उक्त अट्ठाईस मूलगुणोंका स्वरूप कहा जाता है।

१म ईर्यासमिति—चैत्यवन्दना, साधु आचार्य उपाध्यायके पास पठन पाठन, स्वाध्याय आदि तथा बाधा वारण एवं भिक्षावृत्तिके लिये गमन करते समय आगेकी चार चार हाथ प्रमाण पृथ्वीको भले प्रकार देख कर ही चलना, जिससे पृथ्वी पर रहनेवाले छोटे-बड़े जन्तुओंका किसी प्रकार व्याघात न हो। मुनिका गमन रात्रिमें सर्वथा वर्जित है। दिनमें भी किसी पृथ्वीस्थलको जन्तुबाधारहित देख कर वे बैठ जाते हैं। इस प्रकार निरीक्षणपूर्वक गमन करनेको ईर्यासमिति कहते हैं।

२य भाषासमिति—मुनि ऐसे वचन नहीं बोलते जिससे सुननेवालेकी आत्मामें आघात पहुंचे, और न असत्य ही बोलते हैं। सन्तापकारी वचन (जैसे तू मूर्ख है, बैल है आदि) मर्मभेदनेवाले वचन (जैसे तू अनेक दोषोंसे भरा हुआ है, दुष्ट है आदि), उद्वेग उत्पन्न करनेवाले वचन (जैसे तू अधर्मी है, जातिहीन है आदि), निष्ठुर वचन (जैसे तुझे मार डालूंगा आदि), परकोपकारक वचन (जैसे तू निर्लज्ज है, तेरा तप हास्यजनक है आदि), छेद करनेवाले वचन (जैसे तू कायर है, पापी है आदि), अत्यन्त कठोर वचन (जो शरीरको सुखा डाले), अतिशय अहङ्कार प्रगट करनेवाले वचन (जिसमें दूसरेकी निन्दा वा अपनी प्रशंसा हो), परस्पर कलह पैदा करानेवाले वचन, प्राणियोंकी हिंसा करनेवाले वचन इन दश प्रकारके मिथ्या-भाषणोंको मुनि कदापि नहीं बोलते। वे हितरूप, मितरूप, एवं सत्यरूप ही वचन बोलते हैं और ऐसे वचनोंको ही भाषा-समिति कहते हैं।

३य एषणा-समिति—इस समितिमें मुनियोंकी समस्त आहारशुद्धि आ जाती है। मुनियोंको आहारकी लालसा नहीं होती, किन्तु यथाशक्ति अनेक उपवास करके जब देखते हैं कि विना भोजनके अब शरीरमें तप एवं ध्यान साधनकी सामर्थ्य नहीं रही, तब वे प्रातःकालीन सामायिक, ध्यान, स्वाध्यायादिसे निवृत्त हो कर दिनके करीब १० बजे भोजनके लिये निकलते हैं। भिक्षावृत्तिके लिये गमन करनेसे पूर्व ही वे स्वगत प्रतिज्ञा कर लेते हैं कि, आज पांच घर वा चार घर वा दो घरोंमेंसे किसी एक घरमें शुद्ध निरन्तराय भोजन मिलेगा तो ग्रहण करेंगे अन्यथा वनको लौट जायेंगे। यदि उनकी प्रतिज्ञानुसार किसी घरमें शुद्धभोजनकी निरन्तराय योग्यता मिल जाती है, तो वे भोजन कर आते हैं, अन्यथा विना किसी प्रकारका खेद माने फिर जङ्गलमें आकर ध्यान लगाते हैं—अनेक उपवास करने पर भी, भोजनकी अप्राप्तिसे फिर उन्हें रञ्चमात्र भी खेद नहीं होता; किन्तु वे अपने विपक्ष कर्मोदयको बलवान् समझ कर उसे निर्जरित करनेके लिए विशेष ध्यान लगाते हैं। भोजनके लिए श्रावकोंके दरवाजे तक जाते हैं; वहां यदि भोजन देनेके लिये मुनियोंकी प्रतीक्षा करनेवाला दाता पड़गाहन* (प्रतिग्रहण) करने लगे, तब तो उसके पीछे पीछे वे घरके भीतर चले जाते हैं, वहां श्रावक उन्हें नवधा भक्तिपूर्वक आहार दान देता है। नवधा भक्ति ये हैं—(१) प्रतिग्रहण वा पड़गाहन, (२) उच्चस्थान देना, (३) उनके चरणोंको धोना, (४) उनका अष्टद्रव्यसे पूजन करना, (५) उन्हें नमस्कार करना, (६) वचनशुद्धि, (७) कायशुद्धि, (८) मनशुद्धि, और (९) आहारशुद्धि रखना। इस प्रकार

* प्रतिग्रहण शब्दका अपभ्रंश पड़गाहन है; यही वर्तमान में प्रचलित है। मुनियोंके भोजनार्थ आगमनका समय १० से ११ बजे तक है—उस समयमें शुद्धभोजन अपने लिये तयार करा कर उसीमेंसे कुछ अंश तपस्वियोंके तपःपोषणार्थ आहार दान करनेके लिये भक्तिपरायण दाता दरवाजे पर खड़ा हो कर मुनियोंकी प्रतीक्षा करता है। उनके आते ही वह कहता है "अन्न जल शुद्ध है, पधारिये महाराज"। ऐसा कहने पर, कोई अंतराय-विशेष दृष्टिगोचर न हो तो मुनि उस श्रावकके पीछे पीछे उसके घरके भीतर चले जाते हैं। इस क्रियाको प्रतिग्रहण अथवा पड़गाहन कहते हैं।

प्रधान अधिकारी तो हैं, परन्तु वह विना पोर्तगाल सरकारकी आज्ञाके नया कर नहीं लगा सकते, वर्तमान कर नहीं उठा सकते, ऋण नहीं ले सकते, नई नियुक्तिया नहीं कर सकते, पुरानी जगहको तोड़ नहीं सकते। नौकरोंको तनखाहें नहीं घटा सकते, कानूनके खिलाफ कोई खर्च नहीं कर सकते और न किसी प्रकार अपना प्रान्त छोड़ सकते हैं।

प्रबन्धमें गवर्नर जनरलको एक कौंसिल, जिसमें चीफ सेक्रेटरी, गोआके बड़े पादरी, हाइकोर्टके जज, गोआके दो बड़े फौजी अफसर, सरकारी वकील, इन्सपेक्टर, स्वास्थ्य विभागके अफसर और म्युनिसपालिटीके सभापति रहते हैं, साहाय्य करती है। दूसरी भी पांच कौंसिलें होती हैं। किन्तु गवर्नर-जनरल इनके प्रस्तावोंको तब तक स्थगित रख सकते हैं, जब तक पोर्तगाल सरकारसे उसके बारेमें पूछ न लिया जावे। गोआ प्रान्त पुराने और नये अधिकार दो भागोंमें विभक्त है। पुराने अधिकार या वेलहासमें ३ जिले और ८५ परगने हैं। पुराना अधिकार ७ भागोंमें बंटा हुआ है। प्रत्येक जिलेमें म्युनिसपालटी है। उसकी सालाना आमदनी लगभग १॥ लाख रुपया होती है। जजका इजलाश हफ्तेमें दो बार लगता है। उनकी अपील हाइकोर्टमें होती है।

वार्षिक आय प्रायः २० लाख और व्यय भी लगभग उतना ही है। गोआमें टकसाल नहीं है। १८७१ ई०के पहले यहां देशी सेना बहुत थी। किन्तु इसी वर्ष विद्रोह उठ खड़ा होनेसे वह तोड़ दी गयी और पोर्तगालसे केवल युरोपीय फौज भर्ती हो करके आयी। सब मिला कर कोई २७३० फौज और ९८० पुलिस हैं। उसमें कुल १ लाख वार्षिक व्यय होता है।

कुछ सालसे गोआमें शिक्षा प्रचार बढ़ गया है। पोर्तगीज भाषाके कितने ही अखबार निकलते जिन्हें देशी लोग लिखते हैं।

२ पोर्तगीजके अधिकृत उक्त गोआ राज्यका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० १५° ३०' उ० और देशा० ७३° ५७' पू०के मध्य अवस्थित है। इस नामको तीन नगरी हैं, पहली कदम्बराजाओं द्वारा प्रतिष्ठित प्राचीन गोपकपुरी, जो नदीके किनारे अवस्थित है। मुसलमान आक्रमणके पहले यहीं पर राजधानी थी। अभी पूर्व अट्टालिकाओंका चिह्न मात्र भी नहीं है। २रा पोर्तगीजोंकी प्रथम अधिकृत गोआ नगरी, जो अभी पुरातन गोआ नामसे विख्यात है। १४७९ ई०को मुसलमानोंने इस गोआको स्थापन किया था। यह कदम्बराजधानी गोपकपुरीसे प्रायः ५ मील उत्तरमें अवस्थित है। १५१० ई०को आल्बुकार्कने इस नगरको अपने अधिकारमें लाया था और एसियास्थ पोर्तगीजोंकी राजधानी रूपमें परिणत हुआ। १६वीं शताब्दीमें यह उन्नतिको चरम सीमा तक पहुंच गया, और यह भारतका एक प्रसिद्ध वाणिज्यस्थान समझा जाता था। इसके बाद पोर्तगीजोंके प्रबल प्रताप खर्व होने पर यह स्थान ईसाई धर्मम`डलीका एक प्रधान अड्डा बन गया। बार बार प्लेग होनेसे यहांके अधिवासियोंने इस नगरको परित्याग कर दिया था। इसके बाद पंजीम् या नये गोआमें राजधानी आने पर पूर्वतन समृद्धिशाली गोआ नगरी एक बारगी श्रीहीन हो गई थी। इस समय प्रधान गिर्जा और ईसाई मठसमूहमें अति सामान्य मनुष्य रहते हैं। परिव्राजक यहांके प्राचीन अस्त्रागार, बोम जिसकी वृहत् गिर्जा, सेण्ट फ्रान्सिसका मठ, सेण्टजेभियरकी समाधि, सेण्ट कईटानोंका कैथिड्रल, सेण्टमणिकामठ प्रभृति देखने आते हैं। मणिका मठमें कई एक देशीय और पोर्तगीज कुमारी आकौमार ब्रह्मचारिणी हो ईसाईकी सेवामें दीक्षित हैं, जिधर वे रहतीं हैं उधर पुरुष जा नहीं सकते। १६०६ ई०को यह मठ बनाया गया था। सेण्टकइटानो कैथिड्रलमें पोर्तगीज शासनकर्त्ताओंका अभिषेक होता और मृत्यु होने पर पोतगाल पठानेकी पूर्वावधि तक मृतदेह रक्षित रहता है। यहांके गिर्जासमूहमें ईसाई याजकोंका जैसा मूल्यवान् पोषाक है, भारतके किसी दूसरे गिर्जामें वैसा देखा नहीं जाता है। एक एक वस्त्रका मूल्य ४१५ लाख रुपये होगा। उपरोक्त गिर्जाके अलावा सेण्टअगष्टिन, सेण्ट जन डि-तिउस, और सेण्ट रोजारी भी बड़े बड़े मठ और गिर्जा रहे थे जो अभी भग्न अवस्थामें पड़े हैं। पूर्वोक्त गिर्जाओंको छोड़ प्राचीन गोआमें अब वासगृह नहीं हैं। अभी चारों ओर नारियलका बागान शोभा दे रहा है।

तृष्णा, मोह एवं बाह्यपरिग्रहसे उनका किञ्चिन्मात्र भी संसर्ग नहीं है, इसलिये वे परिग्रहत्याग-महाव्रती हैं। इन पांच महाव्रतोंको मुनि मन-वचन-कायसे निरतिचार पालते हैं।

पञ्च इन्द्रियनिरोध—स्पर्शन इन्द्रिय, रसना इन्द्रिय, घ्राण इन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय और श्रोत्र इन्द्रिय इन पांचों इन्द्रियोंके जो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और शब्द ये पांच विषय हैं, उनमें थोड़ा भी राग नहीं करना, पांचों इन्द्रियोंके विषयोंको सर्वथा छोड देना इसीका नाम पञ्च इन्द्रियनिरोध है। कानसे शास्त्रका सुनना, चक्षुसे श्री-जिनेन्द्र-प्रतिमा या शास्त्रका देखना आदि शब्द एवं रूप आदिमें शामिल न होनेसे उन्हें इन्द्रियोंके विषयमें नहीं समझना चाहिये। विषय उसीका नाम है, जिससे सांसारिकवासना पुष्ट होती हो अथवा रति अरतिरूप परिणाम होता हो। जहां निष्कषाय विरक्त बुद्धिसे पदार्थ ग्रहण है, वहां विषय सेवन नहीं कहा जा सकता। मुनि पांचों इन्द्रियोंके सेवनसे सर्वथा विरक्त हो चुके हैं।

छह आवश्यक—(१) मुनि साम्यभाव धारण करते हैं अर्थात् किसी पदार्थमें रागद्वेष नहीं करते—तृण और कांचन, शत्रु और मित्रको समान समझते हैं, (२) शुद्धात्माको त्रिकाल वंदना करते हैं—निर्विकार निष्कषाय रागद्वेष-रहित वीतराग सर्वज्ञात्मा (परमात्मा)का त्रिकाल स्तवन करते हैं. (३) उनके गुणोंको (आत्मीय गुणोंको) समता मान कर कर्मोंकी व्याधिको हटानेका प्रयत्न करते हैं; (४) प्रमादवश होनेवाले अपने दोषोंका पश्चात्ताप करते हैं—एवं उन्हें उच्चारण कर तज्जनित पापोंकी निवृत्ति चाहते हैं, (५) स्वाध्यायमें उपयोग लगाते हैं और (६) चित्तको सब पदार्थोंसे हटा कर ध्यानमें निमग्न होते हैं - ये छ आवश्यक कर्म हैं, जो प्रतिदिन मुनियों द्वारा पाले जाते हैं।

५ समिति, ५ महाव्रत, ५ इन्द्रियनिरोध और ६ आवश्यक इस प्रकार इक्कीस मूलगुण तो ये हैं। इनके सिवा मुनि पृथ्वीमें ही सोते हैं। भोजन भिक्षावृत्ति द्वारा खडे हो कर ही करते हैं, दिनमें एकबार ही भोजन करते हैं। वे दांतौन नहीं करते; क्योंकि सात्विक पदार्थोंका स्वल्पाहार एवं उपवासादि करनेसे तथा तपोबलकी विशेष सामर्थ्य होनेसे उनके दांतोंमें किसी प्रकार मल संचय नहीं हो पाता। स्नान भी नहीं करते, स्नान करनेके लिये जलकी आवश्यकता होगी. उसके लिये श्रावकोंसे याचना करनी पडेगी। इसके सिवा स्नान करनेका आरम्भ करनेसे नाना जीवोंकी हिंसा होना निश्चित है। मुनियोंके हिंसाका सर्वथा परित्याग है, इसलिये वे स्नान नहीं करते। स्नान श्रावकोंके लिये ही आवश्यक है। उन्हींके शरीरमें गार्हस्थ्य जीवनमें अशुद्धताओंका समावेश होता रहता है, मलिन पदार्थोंका संसर्ग होता रहता है, मुनियोंके न कोई अशुद्ध संसर्ग है और न मलिनता ही है, प्रत्युत उनका शरीर तपोबलसे काञ्चनवत् सुतरां तेजोमय एव दिव्य बन जाता है। इसीलिये उनका स्नान न करना, मूलगुणमें शामिल है। केशलोच भी एक आवश्यक गुण है। चार मासमें एकबार वे अपने हाथोंसे शिरके तथा दाढी-मूछके बाल झट झट उपाड डालते हैं, शरीरसे ममत्व छोड देनेके कारण वे उन केशोंके उपाडनेसे किञ्चिन्मात्र भी पीड़ा नहीं मानते। वास्तवमें यह बात अनुभवसिद्ध है कि शारीरिक पीडाका अनुभव तभी होता है. जब शरीरसे ममत्व होता है। यदि मुनिगण केशलोचमें स्वातन्त्र्य नहीं रक्खें और छुरिका आदिके लिये श्रावकोंसे याचना करें, तो उनका जीवन पराश्रित हो, जाय। समस्त विभूतिको छोड़ कर जंगलमें ध्यान लगानेवाले महापुरुष किसी वस्तुके लिये भी परतन्त्र जीवन नहीं बनाना चाहते। इसके सिवा उस छुरिकाकी सम्हाल, रखवाली आदि करनेमें ममत्व परिणामका प्रादुर्भाव अवश्य होगा। अतएव स्वावलम्बन-पूर्वक केशलुञ्चन गुण ही मुनिवृत्तिके सर्वथा उचित है। यदि छुरिकासे भी केशोंको नहीं काटें और हाथसे भी नहीं लोंचें, तो केशोंकी वृद्धि होगी, उनकी अधिक वृद्धिमें जीवोंका सञ्चार एवं मलका समावेश होगा; इसलिए केश-लुञ्चन गुण भी ग्राह्य है।

नग्नत्व भी मुनियोंका मुख्य गुण है। इस गुणके विना तो उनकी स्वरूप-प्राप्ति ही अशक्य है। इसी नग्नत्व गुणसे उनकी बाह्य पहचान होती है जिसप्रकार छोटा बालक विना किसी विकारभावके नंगा रहता

गोइंड (हिं०) गोंड़ देखो।

गोइंदा (फा० पु०) गुप्तचर, गुप्त भेदिया, जो गुप्तरूपसे गोपनीय संवाद संग्रह करता है।

गोइनका (देश०) मारवाड़ी वैश्योंकी एक उपाधि।

गोइयां (हिं० स्त्री०) साथी, सहचर, साथमें रहनेवाला।

गोइयार (देश०) एक छोटा पक्षी जिसका वर्ण खाकी रंगका होता है।

गोइलवाला (हिं० पु०) वैश्योंकी एक उपाधि।

गोऊ (हि० वि०) चुरानेवाला, हरण करनेवाला, छिपानेवाला।

गोओपदेश (सं० त्रि०) गाव ओपशाः समीपवर्तिन्य. यस्य, बहुव्री०। जिसके निकट गाय सोई पड़ी हो।

गोकण्ट (सं० पु०) गो पृथिव्याः कण्ट इव। गोक्षुरवृक्ष, गोखरूका पेड़।

गोकण्टक (सं० पु०) गोः पृथिव्याः कण्टक इव। १ गोक्षुर वृक्ष, गोखरूका पेड़। इसका पर्याय—गोक्षुर, गोक्षुरक, त्रिकण्ट स्वादुकण्ट, गोकण्ट, श्वदंष्ट्रा और इक्षुगन्धिका है। २ गो पादके क्षुर, गाय पैरका खूर। ३ गाय या बैल जानेका रास्ता। ४ गो खूरका चिह्नित स्थान। ५ विकण्टक वृक्ष, एक तरहका पेड़। ६ माष तैल।

गोकण्टी (सं० स्त्री०) गोपघण्टा।

गोकन्या (सं० स्त्री०) कामधेनु।

गोकर (सं० पु०) सूर्य, भानु, रवि।

गोकर्ण (सं० पु०) गौर्नेत्रं कर्णं यस्य, बहुव्री०। १ सर्प, साँप। गोरिव कर्णं यस्य, बहुव्री०। २ अश्वतर, खच्चर। ३ कुलचर, मृगविशेष, गोहरिण।

इसके मासका गुण—मधुर, स्निग्ध, मृदु, कफनाशक और रक्तपित्तनाशक है। ४ शिवजीके एक गणका नाम। ५ परिमाणविशेष, वालिश्त, बित्ता। ६ काशीस्थ एक शिवलिङ्ग। ७ काश्मीर देशके एक प्राचीन राजा, गोपादित्यके पुत्र।

८ बम्बई प्रान्तके उत्तर कनाड़ा जिलेमें कुमता तालुकाका नगर। यह अक्षा० १४ ३२ उ० और देशा० ७४° १९´ पू०में कुमता नगरसे १०मील उत्तर पड़ता है। जनसंख्या प्रायः ४८३४ है। यह हिन्दुओंका एक पवित्र तीर्थस्थान है। समस्त भारतवर्षके साधु देवदर्शनको आते हैं। प्रति वर्ष फरवरी मास मेला लगता है। रामायण और महाभारत दोनों ग्रन्थोंमें गोकर्णका उल्लेख है। इस पुण्यक्षेत्रका उल्लेख कूर्म, गरुड़, नारदखण्ड प्रभृति पुराण तथा वृहन्नीलतन्त्रमें किया गया है। स्कन्दपुराणीय तापीखण्डमें और नारदपुराणमें (उप० ७४ अ०) इसका माहात्म्य सविस्तर वर्णित है। भागवतके मतसे इस तीर्थमें सर्वदासे शिव अवस्थान करते हैं। हिन्दू तीर्थयात्रीगण यहांके गोकर्णेश्वर और महाबलेश्वर शिव लिङ्गके दर्शनके लिए आया करते हैं। रावण तथा कुंभकर्णने इसी स्थान पर तप किया था। १८७० ई०को म्युनिसपालिटी हुई। यहां महाबलेश्वरका मन्दिर, २० क्षुद्र मठ, ३० लिङ्ग और ३० नहानेका घाट है। स्मार्त और लिङ्गायत उनकी श्रद्धा भक्ति किया करते हैं।

९ धुंधकारीके एक भ्राताका नाम जिससे भागवत सुन कर धुंधकारी उद्धार हो गया था। १० एक मुनिका नाम। ११ गायका कान। १२ नृत्यमें एक प्रकारका हस्तक। १३ नीलग्राम। १४ अश्वगन्धा (त्रि०) १५ जिसके गौके समान लम्बे कान हों।

गोकर्णा (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा।

गोकर्णी (सं० स्त्री०) गोः कर्ण इव पत्रमस्याः बहुव्री०। ङीप्। १ मुरहरी, मुरनहार। २ मूर्वालता। मुर्वा देखो। ३ वाजिवल्लभभेद। ४ तृणविशेष।

गोकर्णेश्वर—१ गोकर्ण तीर्थस्थ एक शिवलिङ्ग। तापीखण्ड और नारदपुराणमें इसका माहात्म्य लिखा है। २ नेपालस्थ एक पवित्र लिङ्ग। स्वयम्भुपुराणमें इसका प्रसङ्ग है।

गोका (सं० स्त्री०) गौरेव गो स्वार्थे कन् टाप्। गोक, गो, गाय।

गोकाक—बम्बई प्रान्तके बेलगांव जिलेका पूर्व तालुक। यह अक्षा० १५° ५७´ एवं १६° ३०´ उ० और देशा० ७४° ३८´ तथा ७५° १८´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ६७१ वर्गमील है। इसमें एक नगर और ११३ ग्राम बसे हैं। लोकसंख्या प्रायः ११६१२७ है। मालगुजारी १॥ लाख और सेस १३०००) रु० पड़ती है। आबहवा बहुत खराब है। जाड़ेमें मलेरिया बुखार बढ़ता और गर्मीमें जो घबराने लगता है। बलुवे पत्थरके पहाड़ोंसे शीत-

वृत्तिपरिसंख्यान—भोजनमें मर्यादा करना, घरोंकी संख्याका नियम करना, जैसे—चार घर घूमने पर भी यदि निरन्तराय भोजन मिलनेकी योग्यता नहीं मिली तो फिर उस दिन भोजन नहीं करेंगे, अथवा मार्गमें यदि 'अमुक' सूचक चिह्न होंगे तो भोजन लेंगे अन्यथा नहीं, इस प्रकार जो मुनिगण कठिन प्रतिज्ञा करते हैं वह वृत्तिपरिसंख्यान तप कहलाता है।

अन्तरङ्ग तपके छ भेद ये हैं—प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान।

प्रायश्चित्त तप—किसी व्रतमें दूषण आने पर शास्त्रानुसार एवं आचार्य द्वारा दिये गये दण्ड विधानसे पुनः व्रतको शुद्ध कर लेनेका नाम प्रायश्चित्त है। जिस समय आत्मा कषायकी तीव्र परतन्त्रतावश किसी अनुपादेय मार्ग का अनुसरण कर लेती है, उस समय फिर उसी पूर्व आर्षमार्ग पर नियोजित एवं दृढ करनेके लिये प्रायश्चित्त मूलसाधक है, बिना प्रायश्चित्तके आत्मामें होनेवाली भूलका मार्जन किसी प्रकार हो नहीं सकता। प्रायश्चित्तशास्त्रोंके ज्ञाता आचार्य शुद्ध एवं सरल परिणामोंसे—केवल धर्मरक्षाकी बुद्धिसे—प्रमादवश वा अज्ञानवश होनेवाले दोषोंके लिए मुनियोंको उनके दोषानुसार दण्ड देते हैं। दण्ड लेनेवाले मुनि भी अपनी भूल समझ लेते हैं और उस दण्डको सुधार मार्ग समझ कर सरल परिणामोंसे ग्रहण करते हैं। फिर पूर्ववत् विशुद्धता एवं समुन्नति प्राप्त कर लेते हैं।

किसी लघुदोषको आचार्यके समीप निवेदन करनेको आलोचन-प्रायश्चित्त करते हैं। गुरुकी आज्ञानुसार अपने दोषोंकी आलोचना करना अर्थात् मेरे सभी अपराध मिथ्या हो जांय, इस प्रकार अपने दोषोंका जो पश्चात्ताप किया जाता है वह प्रतिक्रमण-प्रायश्चित्त है। कोई दोष आलोचनसे दूर होता है, कोई प्रतिक्रमणसे दूर होता है और कोई दोनोंके करनेसे दूर होता है। जो दोनोंसे दूर होता है, उसे तदुभय-प्रायश्चित्त कहते हैं।

संसक्त अन्न पान एवं उपकरणोंके विभाग कर देनेको विवेक-प्रायश्चित्त करते हैं।

शरीरसे ममत्व छोड़ कर ध्यान करनेको कायोत्सर्ग और प्रायश्चित्तरूपसे ध्यान करनेको व्युत्सर्ग-प्रायश्चित्त कहते हैं। अनशनादि तपोंको धारण करना तप-प्रायश्चित्त है। कुछ नियत दिनोंके लिये दीक्षाका छेद करना छेद-प्रायश्चित्त है। दोष करनेवालेको कुछ कालके लिये संघसे बाहर कर देना परिहार-प्रायश्चित्त है। किसी बड़े दोष पर दीक्षाका सर्वथा छेद कर पुनः नवीनरूपसे दीक्षा देना उपस्थापना-प्रायश्चित्त है। जैसे जैसे दोष होते जाते हैं, उन्हींके अनुसार आचार्य मुनियोंको प्रायश्चित्त देते हैं। कषायोंकी तीव्रता एवं कभी कभी निमित्तकी प्रबलतासे मुनियों द्वारा भी उनकी आचरित आचार एवं गमनक्रिया आदिमें, भावोंकी मलिनता आदिसे कभी कभी कुछ दोष होनेके कारण भावशुद्धिमें अंतर आ जाता है, उसीके परिहारार्थ यह प्रायश्चित्त-विधान है।

विनय तप—सम्यग्ज्ञानमें बड़े ऐसे गुरुओं, उपाध्यायों और विशेष तपस्वियोंकी विनय करना एवं सम्यग्दर्शनकी दृढ़ता रखते हुए सम्यग्ज्ञान और चारित्रकी विशेष प्राप्तिके लिये उद्योगशील रहना विनयतप है।

वैयावृत्यतप—आचार्य, उपाध्याय एवं विशेष तपस्वी तथा वृद्ध मुनियोंकी सेवा-सुश्रूषा वा परिचर्या करना वैयावृत्यतप है।

जहां पर कषाय पूर्वक शरीरको पीड़ा पहुंचायी जाती है अथवा जहां शारीरिक पीडासे आत्मा पीडित एवं क्षुब्ध होती है, वहीं कर्मबंध होता है। वैसा शारीरिक क्लेश यहां सर्वथा वर्जित है। कारण शास्त्रकारोंने बतलाया है कि बिना शरीरसे ममत्व छोडे एवं बिना कषायोंका दमन किये कर्मोंकी निर्जरा अशक्य है। पर्वत, नदीतट, वृक्षतल आदि स्थानोंमें जो तप किया जाता है वह आत्मशुद्धिके लिये ही किया जाता है। आत्मशुद्धि बिना तप किये होती नहीं, तपकी सिद्धि बिना शरीरसे ममत्व छोडे वा कायक्लेश बिना किये नहीं होती, और जहां शरीरसे ममत्वका त्याग है एवं वीतराग निष्प्रमाद परिणाम हैं, वहां कषायभाव कभी जाग्रत नहीं होते, ऐसी स्थितिमें वह कायक्लेश विशुद्धिका ही कारण होता है। यदि मुनियोंका कायक्लेश दुःखकारण हो, तो बिना किसीकी प्रेरणाके एकांत जंगलमें रहनेवाले मुनि उसे करते ही क्यों? परंतु उनकी प्रवृत्ति केवल संसारमोचन वा शुद्धिप्राप्तिके लिये ही है। इस महान् उच्च उद्देश्यको रखनेवाले मुनि, उस क्लेशसे कभी खिन्न नहीं होते। इतना अवश्य है, कि जहां तक सामर्थ्य है, वहीं तक तप करते हैं।

संन्यासी आये थे, तब आपने उनके मुखसे वेदान्तका विमल उपदेश सुनकर उनका शिष्यत्व स्वीकार किया। तत्पश्चात् आपने परमहंस सच्चिदानन्द स्वामीके निकट वेदान्तका गूढ़ तात्पर्य मालूम किया। इसके थोड़े समयके बाद आपने उच्च पदगौरव और विषयसम्पत्ति परित्याग कर वानप्रस्थ अवलम्बन किया। उन्नीसवीं शताब्दीके शेष भागमें आपने ईश्वरके ध्यानमें ही अपना जीवन उत्सर्ग किया।

गोकुलदेव—तीर्थकल्पलता नामक संस्कृत ज्योतिःशास्त्रकार।

गोकुलनाथ—एक विख्यात पण्डित। इन्होंने सुललित संस्कृत भाषामें करणप्रबोध, प्रमाणप्रबोध, भक्तिरसामृतसिन्धु, शाण्डिल्यसूत्रकी भक्तिसिद्धान्तविवृति नामक टीका प्रणयन की है

२ जयविलास नामका संस्कृत ज्योतिःशास्त्रकार। ३ मिथिलाके एक प्रधान पण्डित। यह मैथिल महामहोपाध्याय नामसे प्रसिद्ध हैं यों तो इन्होंने बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ रचे हैं। परन्तु उनमें निम्नलिखित ग्रन्थ ही प्रधान हैं—द्वैतनिर्णयकी कादम्बरी नाम्नी टीका, मासमीमांसा, रसमहार्णव, शिवशतकस्तोत्र, रश्मिचक्रतत्त्व, चिन्तामणिटीका, तत्त्वचिन्तामणिदीधितिद्योत, तर्कतत्त्वनिरूपण, न्यायसिद्धान्ततत्त्व और पदवाक्यरत्नाकर।

४ काशीके रहनेवाले एक विख्यात हिन्दी कवि। ये कवि रघुनाथके पुत्र थे। पञ्चक्रोशीके अन्तर्गत चौरागाँवमें इनका जन्म हुआ था। काशीराज चेतसिंह कविके प्रतिपालक थे। प्रतिपालकके इतिहास अवलम्बन कर इन्होंने चेतचन्द्रिका नामक ग्रन्थ, गोविन्दसुखदविहार और हिन्दी भाषामें महाभारत तथा हरिवंशका अनुवाद रचना किया।

गोकुलप्रसाद—एक हिन्दी कवि। ये कायस्थ जातिके थे। गोंडा जिलेके अन्तर्गत बलरामपुरमें ये रहते थे। इन्होंने राजा दिग्विजयसिंहसे सम्मानार्थ १८६८ ई०में दिग्विजयभूषणकी रचना की थी, जिसमें प्रायः १९२ हिन्दी कवियोंको कविताओंका संग्रह है।

गोकुलविहारी—हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि। इनका जन्म १६०३ ई०में हुआ था।

गोकुलभट्ट—हरिरायके वेदान्तकारिका ग्रन्थका एक टीकाकार।

गोकुलस्थ (सं० त्रि०) गोकुले तिष्ठति गोकुल-स्था-क। १ गोकुलवासी जो गोकुल ग्राममें रहता हो। कृष्ण उपासक सम्प्रदायविशेष। ३ तैलङ्ग ब्राह्मणोंका एक भेद।

गोकुलाष्टमी (सं० स्त्री०) गवां कुलं पूजनीयं यस्यां, बहुव्री०। तादृशी अष्टमी, कर्मधा० पुंवद्भावश्च। दाक्षिणात्यमें श्रीकृष्णकी जन्माष्टमी इसी नामसे प्रसिद्ध है।

जन्माष्टमी देखो।

गोकुलिक (सं० त्रि०) गोभिरस्य कुलमव गोकुल ठन्। १ केकर, ऐंचा, भेंगा। गविपङ्कस्थगव्यां कुलिकः जड़ इव पङ्कस्थ गव्युपेक्षक, पङ्कमें गिरी हुई गायकी उपेक्षा करनेवाला।

गोकुलेश—हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि। इनकी बनाई हुई बहुतसी अच्छी अच्छी कवितायें हैं जिनमेंसे कुछ नीचे दिये जाते हैं—

आली तू जो जात मधुवनकी गलियन उत ब्रजराज कुंवर खेलै होरी।
गुलाल अबीर रङ्ग कुङ्कुमा माजन भरे भरी है झोरी॥
सङ्ग ब्रजलाल ग्वाल अरु बालक करत कोलाहल अतिशय शोरो।
यह छबि ज्यों सखीसबकी जिय गोकुलेश प्रिय रसिक किशोरी॥
रङ्ग न रङ्ग रङ्गे हैं बिहारीलाल गोवर्द्धनधारी।
ग्वालबाल सब संग सखा लिए और सकल ब्रजनारी॥
बाजत वीणा मृदङ्ग चङ्ग डफ झांझनकी झनकारी।
गोकुलेश प्रभु होरी खेलै गावत दै दै तारी॥

गोकुलोद्भवा (सं० स्त्री०) गोकुलं उद्भवं यस्याः, बहुव्री०। दुर्गा, महामाया।

गोकृत (सं० क्ली०) गोभिः कृतं, ३-तत्। १ गोमय, गोबर। (त्रि०) २ गोकर्तृक अनुष्ठित।

गोकोस (हिं० पु०) १ उतनी दूरी जहाँ तक गौके बोलनेका शब्द सुन पड़े। २ छोटा कोस, हलका कोस।

गोक्ष (सं० पु० जोंक नामक कीड़ा।

गोक्षीर (सं० क्ली०) गवां क्षीरं, ६-तत्। गोदुग्ध, गायका दुध।

गोक्षीरज (सं० क्ली०) गोक्षीरात् जायते जन्-ड। १ घृत, घी। २ तक्रक्षीर, तसमै, खीर।

गोक्षुर (सं० पु०) गोः पृथिव्याः क्षुर-इव। १ गोखरू नामक क्षुप या उसका फल (Tribulus launginosus)

मुनि-अवस्थामें नंगेपैर ज्येष्ठकी गरमीसे उत्तप्त बालूमें चलते हैं। कंकड़ोंके चुभने पर जिनके पैरोंसे रक्त निकलता जाता है, फिर भी कोई प्रतीकारका उपाय न स्वयं करते हैं, न कराते हैं और न उस अरतिसे पीड़ा ही मानते हैं। इसीका नाम चर्या-परीषह है।

नग्न—वस्त्रोंमें हिंसा, रक्षण, याचन आदि दोष होनेसे उन्हें छोड़नेमें किसी प्रकार ग्लानि न माननेवाले, किसी प्रकार इन्द्रिय-विकार न लानेवाले मुनि नाग्न्य-परीषहमें विजयी होते हैं।

अरति—जो इन्द्रियोंको वश कर चुके हैं, स्त्रियोंके गायन आदि शब्दसे शून्य एकांत गुहा, खंडहर, मठ, जङ्गल, श्मशान आदिमें ध्यान लगाते हैं, पहले भोगे हुए भोगोंका कभी चित्तमें स्मरण भी नहीं करते और न कभी परिणामोंमें दुःख ही करते हैं; वे मुनि अरति-विजयी होते हैं।

निषद्या—प्रतिज्ञा करके जो एक दिन, दो दिन, चार दिन यथाशक्ति बैठ कर ध्यान लगाते हैं, जो नियत किये हुए आसनसे ही बैठे रहते हैं, कितनी ही पीड़ा या उद्वेग होने पर भी जो रंचमात्र भी शरीरसे सकम्प एवं चलायमान नहीं होते, वे मुनिराज निषद्या परीषह-विजयी कहलाते हैं।

शय्या—मुनि दिनमें सोते नहीं, रात्रिको आत्म-चिन्तन और ध्यानमें अर्धरात्रि बिताते हैं। जिस समय जगत् भोग-विलास एवं निद्रामें आसक्त रहता है, उस समय मुनि ध्यानद्वारा आत्मस्वरूपका साक्षात् अवलोकन करते हैं, वह उनके जागरणका समय है। रात्रिके तीसरे पहर केवल दो घंटेके लिये, एक ही करवट और एक ही आसनसे पथरीली एवं कँटीली जगहमें ही लेट जाते हैं, दो ही घंटेमें शरीरजनित प्रमादको वशङ्गत करके चौथे पहर पुनः सामायिकमें बैठ जाते हैं। ऐसे साधु शय्याविजयी कहलाते हैं।

आक्रोश—मार्गमें गमन करते देख अज्ञानीपुरुष उन्हें गालियां भी देते हैं, 'निर्लज्ज, तू नंगा क्यों फिरता है' आदि दुष्ट-वचन बोलते हैं, उनकी भर्त्सना करते हैं; कभी कभी महाक्रूर पापी लोग उन्हें मारते भी हैं, परन्तु शांतरसका स्वाद लेनेवाले वे यतीश्वर प्राण-घातक निमित्त मिलने पर भी कभी क्रोध नहीं करते। उस समय वे यही सोचते हैं कि कटु शब्द मेरी क्या हानि करेगा, यदि मुझे कोई मारता है तो मेरे क्षणिक शरीर पर ही उसका कुछ प्रभाव भले ही पड़े, परन्तु मेरी नित्य आत्मा पर उसका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। इस प्रकारके तत्त्वविचारसे मुनिगण आक्रोश-परीषह विजय करते हैं।

वध—इसी प्रकारके विचारोंसे वे वधपरीषह भी जीतते हैं।

याचना—कितने ही उपवास क्यों न कर चुके हों, शरीर कितना ही शिथिल क्यों न हो गया हो, फिर भी यदि भोजनकी प्राप्ति निरन्तराय विधिमार्गसे नहीं हो सकी तो मुनि श्रावकके द्वार पर याचनावृत्ति अथवा भावोंद्वारा या शरीरद्वारा ऐसी क्रिया नहीं करते जिससे उनकी इच्छाएँ भोजनके लिये लालायित हों, वे सदैव याचना-विजयी रहते हैं।

अलाभ—इसी प्रकार बहुत दिन भिक्षाके लिए घूमने पर भी यदि भोजनकी सुविधा (निरन्तराय शुद्ध आहार-की योग्यता) नहीं हुई, तो वे उसे भोजनका अलाभ नहीं मानते और उसीमें कर्मोंका संवर समझते हैं।

रोग—यदि उन्हें पूर्वकर्मके उदयसे कोई रोग हो जाय, फोड़ा हो जाय या अन्य बाधा हो जाय तो उसके आराम करनेके लिये न तो भावना ही करते हैं, न किसीसे उसके प्रतीकारार्थ कुछ कराते हैं, और न स्वयं ही उसका कोई प्रतीकार करते हैं। किन्तु यही विचारते हैं कि 'पूर्व-सञ्चित कर्मका ही यह फल है; अच्छा है, कर्म-भार हलका हो रहा है।' यही रोग-परीषहका विजय है।

तृणस्पर्श—मार्गमें चलते हुए काँटे या काँच आदिसे चरण बिद्ध एवं क्षत विक्षत क्यों न हो जाँय पर मुनि उसे भी वीतराग भावसे सहन करते हैं—उसको दूर करनेका कोई भी प्रतीकार नहीं करते।

मल—शरीर पर धूल उड़ कर पड़ जाती है, पानी बरस जाता है, फिर धूल पड़ जाती है, शरीर मल-सहित हो जाता है, परन्तु ब्रह्मचर्यमें परम तपस्वी मुनि उससे जरा भी ग्लानि नहीं करते किन्तु मलको शरीरका

दिन तक उनके कोई सन्तान न हुई। संयोगवश गुरु गोरक्षनाथ बागडदेशको आ राजोद्यानमें अवस्थान करने लगे। बहुत दिनों तक वाचल रानीने गोरक्षनाथकी सेवा शुश्रुषा की। एक दिन काचल अपनी बहिनका पोशाक पहन गोरक्षनाथके निकट आकर आशीर्वाद प्रार्थना करने लगी। महापुरुषने उसे दो जौ खानेके लिए देकर कहा कि इसीसे दो पुत्र उत्पन्न होंगे। अन्तको वाचल गुरुके सामने उपस्थित हुई। अपनी बहनकी चातुरी तथा अपना दुःख जना कर रोने लगी। अनेक अनुनय-विनयके अनन्तर गोरक्षनाथने उसे एक गुगुल दे कर कहा—तुम्हारी बहनके पुत्रके दास होंगे। यथा समय शीलवती रानीको गर्भ रहा। काचलने उसके गर्भको नष्ट करनेकी बहुत चेष्टायें कीं परन्तु सब निष्फल गईं। ८ मास गर्भधारण कर वाचलने भाद्रमासकी नवमी तिथिमें एक पुत्र रत्न प्रसव किया। गुगुलसे जन्म होनेके कारण पुत्र का नाम गुगा या गोगा पड़ा। यथाकाल गोगा बागडदेशके राजा हुए। काचलके दो पुत्र अर्जुन और सुर्जनने दिल्लीके राजाकी सहायता या बागड देश पर अधिकार करनेकी चेष्टा की। किन्तु गोगाने दोनोंको परास्त तथा निहत कर उनके छिन्न मुण्डको अपनी माताके पास भिजवा दिया। रानीवाचल अपने पुत्रके दुर्व्यवहार पर अत्यन्त सन्तप्त और क्रुद्ध हो उठी और शोक प्रगट कर बोली—जिस स्थान मेरी बहिनके लड़के गये उसी स्थान पर मेरे पुत्र भी जाँय। माताको इस वचनसे गोगाके हृदयमें एक भारी आघात पहुंचा और तब प्रार्थना कर पृथ्वीसे बोले—"माता वसुन्धरे! आप विदीर्ण हो जावें, और मैं आपकी गोदमें शयन करूं, इस पाप मुखको अब किसीसे दिखानेकी इच्छा नहीं करता।" उनकी प्रार्थना पर पृथ्वी विदीर्ण हो गई और वे जवादिया नामक घोड़े पर चढ भूगर्भमें सदाके लिये छिप रहे।

अवशेषको वे एक दिन जवादिया घोड़े पर चढ पर्वत-को छेदते हुए बाहर निकल उठे। उनकी वह अश्वा-रोही प्रस्तरमय भीममूर्त्ति राजस्थानके सन्दर राजधानी-में आज तक भी रक्षित है।

मुसलमानोंका ख्याल है कि गोगापीरकी प्रार्थनासे पहले पृथ्वी नहीं फटी, किन्तु जब वे मक्का जा रतन हाजीका शिष्यत्व ग्रहण कर लौटे तब वसुन्धराने उन्हें ग्रहण किया था। गोगाकी स्त्रीका नाम शिरियाल था। प्रति रात्रिको जाहिरपीर अपनी स्त्रीसे मुलाकात करते तथा उसे भांति भांतिके अलङ्कारसे भूषित करते थे।

पश्चिमाञ्चलकी रमणियां गोगाके जन्म-तिथि उत्सवमें उनका स्तुतिगान किया करती हैं। किसी किसीके मत-से गोगा दिल्लीपति पृथ्विराजके सम सामयिक थे। राज-स्थानके मरुवासी गोगावत् नामक राजपूत उनके वंश-धर हैं। इसके अतिरिक्त इसलामधर्मावलम्बी बहुतसे चौहान अपनेको गोगा वंशीय बतलाते हैं। चाहिल देखो।

२ मारवाडके एक राजा, आसलदेवके पुत्र। फिरोज शाहके राजत्व कालमें १३०४ ई०का उत्कीर्ण इनका एक शिलालेख पाया जाता है। (Cunnigham's Ach. Sur. Report, Uol VI Plat IIIX.)

गोगापीर (हिं० पु०) एक पीर वा साधु। राजपुताना तथा पञ्जाब देशोंकी नीच जातिके हिन्दु और मुसलमान इनकी पूजा करते हैं। गोगा चौहान देखो।

गोगृष्टि (सं० स्त्री०) गोश्वासौ गृष्टिश्चेति कर्मधा०। एक बार प्रसूता गाभी, वह गाय जिसने सिर्फ एक बार बच्चा दिया हो।

गोगोयुग (सं० क्ली०) गोर्द्वित्वं गो द्वित्वार्थे गो-युगच् प्रत्ययः। गोका द्वित्व संख्या। गाय या बैलकी जोड़ी। (मुग्धबोध)

गोगूंड—राजपूतानास्थ उदयपुरके गोगूंड राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४° ४६´ उ० और देशा० ७३° ३२´ पू०में अरावली पर्वत पर समुद्रपृष्ठसे ३७५७ फुट ऊंचे अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः २४६३ है। इस राज्यमें ७५ गांव आबाद हैं। राजा झाला राजपूत वंशीय सर-दार हैं। राज्यका आय प्रायः २४०००) रु० है। २०४०) रु० कर उदयपुर दरबारको दिया जाता है।

गोगोष्ठ (सं० क्ली०) गोः स्थानं गोस्थानार्थे गोष्ठच् प्रत्ययः। गोस्थान, गाय रहनेका स्थान।

गोग्रन्थि (सं० पु०) गोभ्यो जातो ग्रन्थिरिव। १ करीष शुष्क गोमय, सूखा गोबर। गोर्ग्रन्थिर्यत्र, बहुव्री०। २ गोष्ठ, गो रहनेकी जगह, गोशाला। ३ गोजिह्विका, एक तरहकी औषध।

कहते हैं, परन्तु कुशील शब्दका उक्त अर्थ यहां पर नहीं लिया जाता, और न वैसा अर्थ परम तपस्वी, परम वीतरागी आत्मनिष्ठ मुनियोंके प्रकरणमें लिया ही जा सकता है। यहां पर कुशील शब्द रूढ़ि सिद्ध है, रूढ़ि सिद्ध शब्दोंका अर्थ नियत वा पारिभाषिक ही लिया जाता है। प्रकृतमें कुशील शब्द मुनियोंके भेदोंमें नियत है इस लिये उसका अर्थ मुनिपद-निर्दिष्ट चारित्र विशेष रूप लिया जाता है।

जो मुनि पूर्ण एवं अखण्ड महाव्रत धारण करते हों, समस्त मूलगुण धारण करते हों, अट्ठाईस मूल गुणोंमें कभी विराधना नहीं आने देते हों, ऐसे परम तपस्वी साधुओंकी कुशील संज्ञा है।

कुशील मुनियोंके दो भेद हैं, एक प्रतिसेवना कुशील दूसरा कषायकुशील, जिन्होंने ममत्वभाव सर्वथा नहीं छोड़ा है, गुरु आदिसे ममत्व रखते है, संघ नहीं छोड़ना चाहते, जो मूलगुण और उत्तरगुण दोनोंको पालते हैं, परन्तु कभी कभी उत्तरगुणोंमें त्रुटि करने जाते हैं। वे प्रतिसेवना-कुशील-साधु कहलाते हैं। गर्मियोंमें अधिक गर्मीके संतापसे जो कभी कभी दिनमें पादप्रक्षालन कर डालते हैं, बस इतने मात्र ही उनके उत्तरगुणोंकी विराधना वा त्रुटि है।

कषायकुशील उन्हें कहते हैं, जो समस्त कषायोंको जीत चुके हों, केवल संज्वलन कषायको जीतनेमें असमर्थ हों।

जिस प्रकार पानीमें लकड़ीकी रेखा खींचते खींचते ही नष्ट हो जाती है; उसी प्रकार जिनके कर्मोंका उदय नहीं हुआ हो और एक मुहूर्त बाद जिनके केवलदर्शन और केवलज्ञान प्रगट होनेवाला हो, उन मुनियोंको निर्ग्रन्थ कहते हैं। यद्यपि निर्ग्रन्थ मुनि सभी परिग्रह रहित मुनियोंकी कहते है, ग्रन्थ नाम परिग्रहका है उससे रहित निर्ग्रन्थ कहे जाते है, इसीलिये मुनिमात्र ही निर्ग्रन्थ कहे जाते है, तथापि यहां पर पांच मुनियोंके भेदोंमें जो निर्ग्रन्थ भेद है वह सामान्य मुनियोंमें गृहीत नही होता उपशान्त कषाय एवं क्षीण कषाय गुणस्थानवर्ती ही निर्ग्रन्थ मुनि कहलाते हैं। उन्हींके अन्तर्मुहूर्त पीछे केवलज्ञान होनेकी योग्यता है।

जिन साधुओंके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय और मोहनीय, ये चारों ही घाति-कर्म नष्ट हो चुके हों, जो अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख एवं अनन्तवीर्य इन शक्तियोंके पूर्ण विकाशको प्राप्त कर चुके हों, वे ही तेरहवें गुणस्थानवर्ती श्रीअर्हन्त केवली स्नातक कहलाते हैं। मुनियोंकी चरम-अवस्थामें प्राप्त होनेवाली चरम आत्मोन्नति को 'स्नातक' संज्ञा है।

यद्यपि पांचों मुनियोंके चारित्रमें कषायोंकी होनाधिकता एवं अभावसे विचित्रता है, उनके चारित्र जघन्य मध्यम, उत्तमभेदोंमें परिगणित किये जाते हैं, तथापि पांचों ही मुनि मुनिपदकी श्रेणीमें है। इतना चारित्र किसी पदमें नहीं गिरता अथवा इतनी कषायोंकी प्रबलता किसी पदमें नहीं है, जिससे वे मुनिपदकी श्रेणीसे पतित समझे जांय। इसलिये पांचों ही मुनि निर्ग्रन्थ-लिंगके धारक, अट्ठाईस मूलगुणोंके पालक, परम तपस्वी होते हैं। जिस प्रकार कोई सौ टंचका सोना होता है। कोई कुछ कम दर्जेका होता है परन्तु स्वर्णत्व सबमें रहनेसे सभी सोनेके भेदोंमें आ जाते है, उसी प्रकार यहां भी समझ लेना चाहिये। निर्ग्रन्थ लिङ्ग, सम्यग्दर्शन, और वीतरागता सामान्य रूपसे सभी मुनियोंमें पायी जाती है।

उपर्युक्त पांचों प्रकारके मुनि सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात इन पांचों प्रकारके चारित्रका पालन करते है।

जिस चारित्रमें हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील एवं परिग्रह इन पञ्चपापोंका त्याग क्रमसे नहीं किया जाता, किन्तु मुनियोंकी एकाग्र ध्यानावस्थामें समस्त पापोंका स्वयमेव सर्वथा त्याग हो जाता है, तथा अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रहत्याग इन पांचों महाव्रतोंका पूर्णत: पालन भी स्वत: हो जाता है उस चारित्रको 'सामायिक चारित्र' कहते है।

जिस चारित्रमें, मुनियोंसे किसी प्रमादजनित अपराधके होने पर उन्हें प्रायश्चित्त प्रदान किया जाता है, वह 'छेदोपस्थापना-चारित्र' कहलाता है।

जिस चारित्रमें जीवोंकी रक्षाका पूर्ण प्रयत्न एवं शुद्धि-विशेष धारण की जाती है, वह 'परिहारविशुद्धि चारित्र' कहलाता है।

"उपारताः पश्चिमरात्रिगोचरादपारयन्तः पतितुं जवेन गाम् ॥"
(किरात० ४।१०)

५ गन्तव्य देश।

'इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।" (कठोपनिषत्)

६ देश।

"अब्रवीत् प्राञ्जलिर्भूत्वा गुहो गहनगोचरः ॥' (रामायण २।८५।५)
'गहन वन गोचरो देशो यस्य सः ॥'

गावो व्योमगतयो ग्रहाश्चरन्त्यस्मिन् पूर्ववत् साधु।

७ जन्मराशि तक ग्रहाक्रान्त राशिका नाम। फलित ज्योतिषके मतसे ग्रह अपनी गतिके अनुसार जिस राशिमें उपस्थित हो, वह राशि जन्मराशिकी अपेक्षा जिस संख्याकी राशि होती है, उस संख्यावाली राशिके शुद्ध होने पर ग्रह शुभफल देता है और अशुभ होनेसे अशुभफल देता है। ग्रहके लिए कोई भी राशि अशुद्ध या बुरी नहीं है। परन्तु ज्योतिषशास्त्रोंमें जन्मराशिकी अपेक्षा किसी किसी राशिमें ग्रहका ठहरना शुभ माना गया है और किसी किसी राशिमें अशुभ ऐसा निश्चित हुआ है। जिस स्थान पर जिस ग्रहकी अवस्थिति अशुभप्रद है, वही ग्रह उस राशिमें रहनेसे उसे गोचर अशुद्धि और जिस राशिमें रहनेसे शुभ फल हो, उस स्थानमें ग्रहके ठहरनेसे गोचर शुद्धि कही जाती है।

वैज्ञानिक मतानुसार—मनुष्य अपने अपने कर्मोंके अनुसार समय समय पर सुखी और दुखी हुआ करते हैं। खगोलके ग्रह उसमें कारण नहीं। परंतु ग्रहोंके अवस्थानके अनुसार मानव और जन्तुओंका भावी मङ्गल या विपत्तियोंका अनुमान किया जा सकता है। ग्रहोंके अनुसार भविष्यमें विपत्तिकी सम्भावना होने पर, उसको रोकनेके लिए शान्तिका अनुष्ठान करनेसे फिर विपद्ग्रस्त नहीं होना पड़ता। किसी किसी ज्योतिषिकका मत है कि दूसरे कारणोंकी भाँति ग्रहोंका अवस्थान भी मनुष्यके सुख दुःखमें अन्यतम कारण है। कुछ भी हो, ग्रहोंके अवस्थानसे भी मनुष्योंको शुभाशुभ फलोंकी प्राप्ति होती है, इसे सब ही स्वीकार करेंगे, और प्रत्यक्षमें भी देखनेमें आता है। प्राचीन फलित ज्योतिषमें इस विषयमें बहुतसे मतभेद है। परंतु प्राचीन आर्यगण ग्रहोंके अवस्थानके अनुसार किस तरहसे वैसे फलाफलका निरूपण करते थे, उसका कोई भी उपाय उन्होंने प्रकाश नहीं किया। सिर्फ फल होता है—इतना ही निरूपण कर गये हैं।

केतु, राहु, रवि, चन्द्र, मङ्गल और शनि ये सब ग्रह जन्मराशिसे तृतीय या षष्ठ स्थान पर रहें तो शुभ फल समझना चाहिये और जन्मराशिसे दशम स्थानमें हों तब भी शुभ फल समझना चाहिये। यदि ये ग्रह जन्मराशिसे सप्तम, नवम वा पञ्चम स्थानमें रहें तो भी शुभ फल देते हैं। बुधके जन्मराशिमें अवस्थित रहनेसे और शुक्रके षष्ठ, सप्तम और दशममें सिवा अन्य राशिमें रहनेसे शुभ फल होता है। एकादश राशिमें कोई भी ग्रह हो वह मनुष्यके लिये शुभ ही है। ग्रहगण वक्र अथवा अतिचार आदि कोई भी अवस्थामें क्यों न हो, सब ही दशामें शुभाशुभ फल देनेवाले होते हैं। सब ही ग्रह वक्री वा अतिचारी हो कर जिस राशिमें ठहरेंगे, उसी राशिको शुभाशुभ फल प्राप्त होंगे। परन्तु बुध और वृहस्पति जिस राशिसे वक्री वा अतिचारी होंगे, उसी राशिका निरूपित फल देते हैं। चन्द्रको राशिमें जाते समय यदि नक्षत्र शुभ हो, तो सब ही राशिमें चन्द्र शुभ फल देता है और रविके चलते समय चन्द्रके शुद्ध रहने पर भी शुभ फल होता है। मङ्गल आदि ग्रहोंके सञ्चारकालमें यदि रवि शुद्ध रहे, तो भी शुभ फल होता है। रवि, मङ्गल और शनिके चलते समय यदि नाडीनक्षत्र हो, तो गोचर अत्यन्त अशुभ फल और क्लेश देता है।

चन्द्रशुद्धि और रविशुद्धि देखो।

जन्मराशिमें चन्द्रके रहनेसे मिष्टान्न भोजन, शुक्रके रहने पर आमोद प्रमोद, रवि या मङ्गलके रहनेसे शत्रुवृद्धि, शनिके रहनेसे प्राणहानि, बुधके रहनेसे बन्धन और वृहस्पतिके रहनेसे शत्रुके यत्नकी वृद्धि और क्लेश उत्पन्न होता है।

द्वितीय स्थानमें यदि रवि रहे तो मित्रोंमें हर्ष, चन्द्र रहे तो क्लेश, शनि रहे तो वित्तनाश, बुध हो तो लाभ, मङ्गल हो तो हानि, शुक्र हो तो भोग और वृहस्पति रहे तो ज्ञानकी वृद्धि होती है।

तृतीय स्थानमें रवि, मङ्गल, शनि और शुक्रके रहनेसे हमेशाके लिए कोई एक स्थानकी प्राप्ति, चन्द्र और बुधके

उसका प्रयोग करता फिरता है। इस प्रकारके परिणामों को द्वितीय सासादन गुणस्थानके नामसे कहते हैं। यह भाव जीवके अनन्तानुबन्धी कषाय-चतुष्टयके उदयसे होता है।

जीवका एक भाव ऐसा भी होता है, जिसमें न तो उसके समीचीन परिणाम ही रहते हैं, और न मिथ्यात्व रूप विपरीत ही; किन्तु मिश्र होते हैं। ऐसे परिणामों को धारणकरनेवाला जीव भी वस्तुके यथार्थ विचार एवं समीचीन क्रियाकाण्डसे विरुद्ध ही रहता है। जिस प्रकार दधि और गुड़के मिलनेसे न केवल दही का ही स्वाद आता है, और न केवल गुडका ही; किन्तु खट्टा मीठा. मिल कर एक तीसरा ही 'खट्टा-मीठा' स्वाद आता है (जो शिखरिणीके नामसे प्रसिद्ध है.) उसी प्रकार सम्यक्-परिणाम तथा मिथ्या-परिणाम, दोनोंके संमिश्रणसे एक विचित्र (जीवका) परिणाम होता है। यह परिणाम मोहनीयकर्मके भेदस्वरूप सम्यक्‌मिथ्यात्वकर्मके उदयसे होता है। यह ३य गुणस्थानका भाव है। यहां तकके जीव-भाव संसारके ही कारण हैं; क्योंकि कषायोंकी तीव्रता उनके विचारों-को समीचीन नहीं होने देती, इसलिये उन्हें उलटा ही मार्ग अच्छा प्रतीत होता है।

जिस समय किसी तीव्र पुण्यका उदय एवं काल-लब्धिका निमित्त इस जीवको मिलता है, उस समय मोह-कर्मका भार कुछ हलका होता है। उस अवस्थामें जीवकी छिपी हुई सम्यग्दर्शन नामा शक्ति प्रगट हो जाती है। यह शक्ति आत्माका प्रधानगुण है। जब तक मोहनीय कर्मको प्रबलतासे यह शक्ति आच्छन्न रहती है, तब तक जीव मिथ्या-भावोंमें उलझा हुआ स्वयं अपना अहित करता रहता है, दूसरोंको भी उसी मार्गमें ढकेलता है, परन्तु जब वह शक्ति प्रगट हो जाती है, तब जीवकी प्रतीति, उसका बोध समीचीन, यथार्थ एवं सन्मार्ग-प्रदर्शक बन जाता है—वहींसे यह जीव मोक्षमार्गके एक अंशको प्राप्त कर लेता है। जिस समय जीवके यह सम्यक्त्व गुण प्रगट होता है, उस समय आत्मा इन्द्रिय-विषयोंकी सेवन करता हुआ भी, उन्हें हेय समझता है—सदा सांसारिक वासनाओंसे अरुचि रखता है,—शरीर एवं जगत्‌से ममत्व नहीं करता। सिवा इसके जो आत्मीय निज-सुख गुण है, उसका अंश भी उसके उस सम्यक्त्व गुणके साथ प्रकट हो जाता है। यह सुख अलौकिक है, दिव्य है, अविनश्वर है, दुःखसे सर्वथा रहित है, एवं कर्मबन्ध-विहीन है। इसके विपरीत इन्द्रियजनित सुख दुःखपूर्ण है, नश्वर है, संसारवर्द्धक एवं कर्मबन्ध-कृत है; अतएव त्याज्य है। यह सम्यक्त्वगुणका विकाश ही चतुर्थ गुणस्थानके नामसे प्रख्यात है। जिस प्रकार ज्ञानका 'जानना' कार्य है उसी प्रकार इस गुणका कार्य आत्मामें तथा इतर पदार्थोंमें यथार्थ प्रतीति करना है। जिस जीवको एक बार भी सम्यक्त्व हो जाता है, वह जीव उसी भव (जन्म में अथवा २।४।६ वा संख्यात आदि अर्धपुद्गल-परावर्तन कालमें* (नियमित कालमें) नियमसे मोक्ष चला जाता है, अर्थात् सम्यक्त्व-गुणके प्रगट होने पर अनन्त संसारकी अवधि अतिनिकट हो जाती है। जिस गुणसे आत्माकी साक्षात् प्रतीति होने लगे एवं बाह्य जीव अजीव पदार्थोंका यथार्थ श्रद्धान हो जाय, उसीको सम्यक्त्व-गुण कहते हैं। इस गुणस्थानसे ही सम्यक्‌चारित्र प्रारम्भ होता है। इससे पहले जितना भी आचरण है वह सब मिथ्या-चारित्र है। चौथे गुणस्थानमें सम्यक्‌चारित्रका प्रारम्भ तो हो जाता है पर कषायोंकी तीव्रतासे उसमें प्रवृत्ति नहीं हो पाती। इसका भी कारण यह है कि वहां अप्रत्याख्यानावरण कषाय जो चारित्रकी बाधक है, उदय में आ रही है। परन्तु प्रतीति-श्रद्धा इस गुणस्थानमें सम्यक् है। जिस समय उक्त कषाय उपशमित हो जाती है, उस समय जीव सम्यक्‌चारित्रके पालनेमें तत्पर हो जाता है।

५वें गुणस्थानमें कषायें कुछ तो शान्त हो जाती हैं जिससे जीव चारित्र पालनेमें प्रवृत्त हो जाता है, कुछ प्रबल भी रहती हैं जिससे वह मुनिधर्म धारण करनेमें असमर्थ बना रहता है। इस गुणस्थानमें रहने वाला जीव स्थूल हिंसा अर्थात् त्रसजीवोंकी संकल्पी हिंसा, स्थूल झूठ, स्थूल चोरी, स्थूल कुशील, और परिग्रह इनका परित्याग करता है। वह बिना किसी विरोध

* औदारिक वैक्रियक आहारक शरीर और छह पर्य्याप्तियोंके योग्य अनंतवार गृहीत अगृहीत तथा मिश्र पुद्गल परमाणु ग्रहण और निर्जीर्ण कर पहिले जैसे स्निग्ध रूक्षादि भावोंसे युक्त पुद्गल परमाणु ग्रहण किये थे वैसे ही ग्रहण करना अर्द्ध पुद्गलपरिवर्तन है।

सातवेंमें राजपूजा, आठवेंमें धननाश, नौवेंमें धनवृद्धि, दशवेंमें प्रीतिनाश, ग्यारहवेंमें धनलाभ और बारहवें स्थानमें रहनेसे शारीरिक और मानसिक पीडा होती है।

शुक्र यदि जन्मराशिमें रहे तो शत्रुनाश, द्वितीय स्थानमें रहनेसे अर्थलाभ, तृतीयमें शुभफल, चौथेमें धनलाभ, पांचवेंमें पुत्रलाभ, छठेमें शत्रुवृद्धि सातवेंमें शोक, आठवेंमें अर्थलाभ, नौवेंमें वस्त्रोंकी प्राप्ति, दशवेंमें शुभफल, ग्यारहवेंमें बहुतर धनका लाभ और बारहवें स्थानमें रहनेसे धनका आगमन होता है।

शनि जन्मराशिमें रहनेसे वित्तनाश और सन्ताप, द्वितीय स्थानमें चित्तमें क्लेश, तीसरेमें शत्रुनाश और वित्त लाभ, चौथेमें शत्रुओंकी वृद्धि, पांचवेंमें पुत्र और भृत्यादिका नाश छठेमें अर्थलाभ, सातवेंमें अनिष्ट, आठवेंमें शारीरिक पीडा, नौवेंमें धनक्षय, दशवेंमें मानसिक उद्वेग, ग्यारहवेंमें वित्तलाभ और बारहवेंमें स्थानमें शनि रहनेसे निश्चयत अमङ्गल होता है।

जन्मराशिमें द्वितीय, पञ्चम, सप्तम, अष्टम, नवम, और दशम राशिमें राहु रहनेसे अर्थका क्षय, शत्रु का भय, कार्यकी हानि, रोग, अग्निभय और मृत्यु हुआ करती है। इनके अलावा दूसरे स्थानोंमें राहुके रहनेसे कोई अनिष्ट नहीं होता, बल्कि शुभफल ही होता है।

जन्मराशिसे ग्यारहवीं, तीसरी, दसवीं वा छठी राशिमें केतु रहे तो सम्मान, भोग, राजपूजा, सुख और अर्थलाभ होता है और आज्ञाकारी पुरुष वा स्त्रीसे सुखभोग और पुण्य सञ्चय होता है।

गोचरके ग्रहोंका फलाफलनिर्णय—रवि और मङ्गल ये दो ग्रह प्रवेश करते समय फल देते हैं। बृहस्पति और शुक्र ये दोनों मध्य समयमें, शनि और चन्द्र आखिरमें तथा बुध ग्रह हरवक्त अपना फल देता रहता है।

रवि चन्द्र आदि शब्दोंमें विशेष विवरण देखो।

मूहूर्तचिन्तामणिके मतानुसार—सूर्य गन्तव्य राशिसे पहले पांचदिन फल देता है। मङ्गल गन्तव्य राशिसे पहिले आठ दिन, बुध गन्तव्यराशिसे पहले सातदिन, चन्द्र गन्तव्य राशिसे पहले तीन दण्ड, राहु गन्तव्यराशिके पहिले तीन मास, शनि छह मास और बृहसपति दो मास पहले अपना फल देता है।

रवि और मङ्गल प्रथम दशाओंमें रह कर ही अपना सम्पूर्ण फल दे देता है। इसके सिवा दूसरे अंशोंमें रहते हुए कुछ कुछ फल होता रहता है। इसी प्रकार शुक्र और बृहस्पति बीचके दशांशोंमें, बुध तीस अंशोंमें, चन्द्र और शनि चरम दशांशोंमें रहते हुए फल देते हैं। इसके सिवा दूसरे अंशमें रहते हुए थोडा फल देते हैं। ग्रह यदि गोचरमें विरुद्ध हों, तो शान्तिके लिए दान और ग्रहपुरश्चरणादि करना पडता है। इससे फिर किसी तरहके अमङ्गलकी सम्भावना नहीं रहती।

गोचरी (हिं० स्त्री०) भिक्षावृत्ति, भीख मांगनेका पेशा।

गोचर्म (सं० क्ली०) गवां चर्म ६-तत्। १ गौका चमडा। तन्त्रमें लिखा है कि स्तम्भनकार्यमें गो चर्म पर बैठना उचित है। २ परिमाणविशेष, एक नाप। बृहस्पतिके मतसे सात हाथका एक दण्ड, तीस दण्डका एक निवर्तन एवं दश निवर्तनका एक गो चर्म अर्थात् २१०० हाथ लम्बी और इतनी ही चौडी होती है। महाभारतमें लिखा है कि जो एक गोचर्मपरिमित भूमि दान करता है उसका ज्ञान और अज्ञानकृत समस्त पाप विनष्ट हो जाते हैं। (अनुशासन० ६२ अ०)

गोचर्मकण्टक (सं० पु०) पर्पटक, औषध उपयोगी एक तरहका पौधा।

गोचर्मवसन (सं० पु०) गोचर्म वसनं यस्य, बहुव्री०। महादेव, शिव। (भारत १३।१७ अ०)

गोचारक (सं० त्रि०) गां चारयति घासादि गो-चर-णिच् ण्वुल्। गोरक्षक, गौकी रक्षा या पालन पोषण करनेवाला।

गोचारण (सं० क्ली०) गवां चारणं, ६-तत्। गौका चराना, गौको खिलानेकी क्रिया।

गोचारिन् (सं० त्रि०) गौरिव चरति चर-णिनि। गौके पीछे पीछे चलनेवाला, एक तरहका तपस्वी।

(भारत अनु० १४)

गोची (सं० स्त्री०) गामञ्चति अन्च् क्विप् ङीप् नलोपे अलोपः। १ मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली। गाः शिवस्तुतिरूपाः वाचः अञ्चति अन्च क्विप् ङीप्। २ हिमालयपत्नी, हिमालयकी स्त्रीका नाम।

गोच्छगल (सं० पु०-क्ली०) गोमय, गोबर।

वह मलिन नहीं होता उसी प्रकार जिन कर्मोंका आत्मासे सम्बन्ध है उनके सर्वथा छूट जानेसे फिर आत्मा कभी अशुद्ध नहीं होती, यही क्षपकश्रेणीको भाव कहा है। उपशम और क्षपक दोनों श्रेणियोंका प्रारम्भ ७वें गुणस्थानसे होता है। आठवें, नवमें, दशवें और ग्यारहवें गुणस्थानमें उपशमश्रेणीके परिणाम होते हैं, और आठवें, नववें, दशवें तथा बारहवें गुणस्थानमें क्षपकश्रेणीके परिणाम होते हैं।

आत्मा जितना कर्मबन्ध सातवें गुणस्थानमें करती है उससे बहुत कम आठवेंमें, उससे बहुत कम (क्रमसे) नौवेंमें, दशवेंमें करती है। इसका भी यही कारण है कि संज्वलन क्रोध-मान माया-लोभ कषाय उत्तरोत्तर अत्यन्त मन्द होते गये हैं। दशवें गुणस्थानमें केवल लोभ-कषाय है, वह भी इतना सूक्ष्म है कि जिसका मुनिगण अनुभव भी नहीं कर सकते, केवल कर्मोदय मात्र है आठवें नववें और दशवें गुणस्थानोंमें उपशमश्रेणीवालोंके औपशमिक भाव और क्षपकश्रेणीवालोंके क्षायिक भाव समझे जाते हैं, परन्तु यह स्थूल दृष्टिसे कहा जा सकता है। वास्तवमें वहां क्षायोपशमिक भाव हैं। कारण वहां कुछ कर्मोंका उपशम अथवा क्षय होनेके साथ उदय भी रहता है। केवल औपशमिक भाव ग्यारहवें उपशान्त-कषाय गुणस्थानमें ही रहता है।

उपशमश्रेणी पर आरूढ़ मुनि जब दशवें गुणस्थानसे ऊपर जाते हैं, तब ग्यारहवेंमें पहुंचते हैं। ग्यारहवें गुणस्थानमें पहुंचनेवाले मुनिके परिणाम उच्च कोटिके एक अन्तर्मुहूर्त ही रह सकते हैं, पश्चात् नियमसे उन्हें दशवेंमें आना पड़ता है। किन्तु यह बात क्षायिक श्रेणी चढ़नेवालोंके नहीं होती। क्षपकश्रेणीके मुनिके भाव दशवेंसे ग्यारहवेंमें न जा कर सीधे बारहवेंमें पहुंचते हैं। वे दशवेंके अन्तमें सूक्ष्म लोभका सर्वथा नाश करते हैं बाकी समस्त कषायोंका नाश आठवें नौवेंमें कर चुकते हैं; इसलिये बारहवें क्षीणकषाय गुणस्थानमें पहुंचनेवाले मुनियोंके कषायोंका सर्वथा नाश हो जाता है। अतएव वे वीतरागी बन जाते हैं।

वैसे तो मुनियोंके वीतरागता छठे गुणस्थानसे ही प्रारम्भ हो जाती है, परन्तु वहां कुछ कुछ कषायोदय रहनेसे पूर्ण वीतरागता नहीं कही जाती। पूर्ण वीतरागता बारहवें गुणस्थानमें होती है, फिर वह वीतरागी आत्मा कभी किसी कर्मका बन्ध नहीं कर सकती, क्योंकि बन्ध करनेवाला कषाय है, वह जब सर्वथा नष्ट हो चुकता है, तब बन्धका कारण न रहनेसे बन्धका भी अभाव हो जाता है। हां, अभी योगके अवशिष्ट रहनेसे केवल वेदनीय कर्मका आस्रव होता है, किन्तु बिना कषायके वे आत्मामें ठहर नहीं सकते और बिना ठहरे कुछ फल भी नहीं दे सकते। इसलिये वीतराग आत्माओंमें योग-जनित जो कर्म आते हैं, वे बिना आत्मामें ठहरे एक समयमें ही निर्जरित हो जाते हैं।

यहां एकत्ववितर्क ध्यान होता है। इस ध्यानमें आरूढ़ होनेवाली आत्मा शुद्ध स्फटिक-तुल्य निर्मल-परिणामी बन जाता है और उस ध्यानरूपी अग्निके द्वारा ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय इन घातिकर्मत्रय रूपी काष्ठको तुरन्त भस्म कर देता है एवं जिस प्रकार बादलोंके छट जानेसे संसारको अपने अप्रतिभ प्रकाशसे प्रकाशित करनेवाला सूर्य उदित होता है, उसी प्रकार ज्ञानको रोकनेवाले ज्ञानावरण, दर्शनको रोकनेवाले, दर्शनावरण और आत्मीय वीर्यशक्तिको रोकनेवाले अंतराय कर्मको नष्ट कर आत्मा केवलज्ञान (सर्वज्ञता), अनंतदर्शन एवं अनंतवीर्य इन गुणोंके पूर्ण विकाश-से समस्त जगत्को एक ही क्षणमें साक्षात् प्रत्यक्ष जानने लगती है। इस अवस्थामें आत्मा-त्रयोदश गुणस्थानवर्ती श्रीअर्हत्-परमात्मा जीवन्मुक्त कहलाने लगते हैं और जगत्के जीवोंको बिना इच्छा ही धर्मोपदेश देते हैं।

इस गुणस्थानमें परमात्माकी स्थिति तब तक रहती है जब तक उनकी आयु: अवशिष्ट रहती है।

जब आयुमें केवल उच्चारण समान काल लघु अन्तर्मुहूर्त प्रमाण काल अ इ उ ऋ लृ इन पञ्चाक्षरोंके अवशिष्ट रहता है, तब श्री अर्हन्त भगवान्के चौदहवां गुणस्थान हो जाता है। योगोंके कारण जो कर्म उनकी आत्मामें आते थे, वे योगके निरोध होनेके कारण रुक जाते हैं। उसी समय अयोग केवली श्री अर्हन्त भगवान् (अनन्तज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्यविशिष्ट शुद्धात्मा वा परमात्मा) व्युपरतक्रिया-निवृत्ति नामक परमशुक्लध्यान

भावप्रकाशके मतसे इसका गुण वातवृद्धिकर, शीतल, ग्राही, कफ और पित्तनाशक, प्रमेह, कास, रक्त, व्रण और ज्वरनिवारक, लघु, कषाय, तिक्तरस और स्वादुपाक है। २ गुन्द्रा, गंटपटेर। ३ देवधान्य।

गोजिह्विका (सं० स्त्री०) गोजिह्वा स्वार्थे कन्-टाप् अतः इत्वञ्च। न जिह्वा इति खो।

गोजी (सं० स्त्री० १ गोजिह्वालता। (सुश्रुत)

गोजी (हिं० स्त्री०) १ गौ हाँकनेकी छड़ी या लाठी। २ लठ, बड़ी लाठी।

गोजीत (सं० त्रि०) जितेन्द्रिय, जिसने इन्द्रियोंको जीत लिया हो।

गोजीर (सं० त्रि०) पशुप्रेरक, जो स्तोतृगणके उद्देशसे पशुप्रेरणा करता है। (ऋक् ८।१२।१०।२)

गोझनवट (हिं० पु०) अंचल, पल्ला। स्त्रियोंकी साड़ीका वह अंश जो पीठ और सिर पर रहता है।

गोझा (हिं० पु०) १ गुह्यक, एक तरहका पकान्न जो मैदे तथा मेवेके संयोगसे बनाया जाता है। २ एक प्रकारका कंटीला तृण। ३ जेब, खीसा, खलीता।

गोञ्जालिस्—एक विख्यात पोर्तगीज दस्यु (डकैत)। इसका यथार्थ नाम—सिवाष्टियाँ गोञ्जालिए था। १६०८ ई०को आराकानसे जब पोर्तगीज दस्युका अड्डा (डेरा) उठाया गया और जब वे शनद्वीपमें आ बसे थे, उस समय गोञ्जालिस् एक सामान्य सैन्य और लवण-व्यवसायी था। इससे कुछ पीछे एक आराकान राजाने स्वराज्यसे भगाये जाने पर शनद्वीपमें आ आश्रय ग्रहण किया था। वहां राजाको गुञ्जालिस्ने सहायता दी एवं मग सैन्योंको पराजय कर उसने अपनेको स्वाधीन राजा-के जैसा घोषणा कर दी। उस दुष्टने आश्रित राजाकी बहनसे बल पूर्वक विवाह कर लिया और गुप्त रीतिसे राजाको मार डाला। इसके अनन्तर गोआके पोर्तगीज-राजप्रतिनिधिको आराकान पर आक्रमणके लिए बुलाया।

१६१५ ई०को गोञ्जालिस् ५० हजार सैन्य लेकर आराकान पहुंचा। उसके अत्याचारसे मग जातिने नितान्त उत्पीड़ित हो ओलन्दाजका साहाय्य ग्रहण किया। ओलन्दाज तथा आराकान राज्यको सेनाओंने एकत्र हो दस्युपति गोञ्जालिस् पर आक्रमण किया। इस युद्धमें पोर्तगीजके नौ-सेनापति निहत हुए, बादको गोंजा-लिस् अपनी सहाय सम्पत्ति खोकर बहुत कष्टसे मरा।

गोट (हिं० स्त्री०) गोठ, कपड़ेके किनारे शोभाके लिए लगाये जानेवाली फीता, मगजी। २ किसी तरहका किनारा। (पु०) ३ गोठ, गाँव, खेड़ा, टोली। (स्त्री०) ४ मंडली, गोष्ठी। ५ नगरके बाहर किसी बाग या उपवनकी सैर या परिभ्रमण।

गोटबस्ती (हिं० स्त्री०) वह जमीन जिस पर ग्राम बसा हो।

गोटा (हिं० पु०) १ सुनहले रंगका पतला फीता, जो वस्त्रके किनारे शोभा बढ़ानेके लिये लगाया जाता है। २ भूनी या सादी धनियाकी गिरी। ३ इलायची सुपारी और खरबूजे तथा बादामके एकत्र छोटे छोटे खण्डोंको गिरी। ४ सूखा हुवा मल, कंडो, सुद्दा।

गोटी (हिं० स्त्री०) १ लड़कोंके खेल खेलनेके कंकड़, गेरू तथा पत्थरका छोटा गोल टुकड़ा। २ चौपड़ खेलने-का मोहरा जो हाथीदाँत, हड्डी, लकड़ो इत्यादिका बना रहता है, नरद। इस खेलमें १६ गोलियां होती हैं जिनमेंसे ४ लाल, ४ हरे ४ पीले और ४ काले रंगकी रहती हैं। ३ एक प्रकारका खेल जो आड़ी और सीधी रेखाएं बना कर खेला जाता है। इसमें ८,१५,१८ या इससे ज्यादे गोटियां रख कर खेला जाता है। ४ उपाय, युक्ति, तदबीर।

गोठ (हिं० स्त्री०) १ गोष्ठ, गोशाला, गोस्थान। २ गोष्ठी श्राद्ध। ३ सैर सपाटा।

गोठिल (हिं० वि०) कुण्ठित, जिसकी धार तेज नहीं हो, कुन्द।

गोड़ (सं० पु०) १ उन्नतनाभि, बढ़ी हुई नाभी।

गोड़ (हिं० पु०) पैर, पाँव।

गोड़इत (हिं० पु०) १ ग्राममें चौकसी देनेवाला, चौको-दार। २ प्राचीन कालका हरकारा या कर्मचारी। इस-का काम एक ग्रामसे दूसरे ग्राममें पत्र पहुंचाना था।

गोड़गाव (हिं० पु०) घोड़ेके पिछले पैरमें बांधनेकी रस्सी।

गोड़न (हिं० पु०) मिट्टीसे नमक बनानेकी क्रिया।

गोड़ना (हिं० क्रि०) कोड़ना।

गोड़म्बी (सं० स्त्री०) भल्लात नामक लताका बीज।

ही वस्तुएं अनादि हैं इनको किसीने भी सृष्टि नहीं की। वस्तुओंके जितने भी स्वभाव हैं, वे सभी अनादि-से हैं। जिन वस्तुओंमें स्व-स्व स्वभाव नहीं है, उनकी सत्ता नहीं रह सकती। पृथिवी, आकाश, सूर्य, चन्द्र आदि पदार्थ जो प्रत्यक्ष दीख पड़ते हैं, तद्द्वारा ही अनादिरूप सिद्ध होता है। पृथिवी पर जो कुछ भी रचना दीख रही है, वह सब पहलेसे ही (अनादिसे) प्रवाह-क्रमसे इसी प्रकार चली आई है। जगत्‌के जो कुछ भी नियम हैं, वे उक्त पांच निमित्तोंके बिना सिद्ध नहीं हो सकते। इसी लिए कहा जाता है, कि सभी पदार्थ स्व-स्व नियमानुसार होते हैं, यदि द्रव्यकी शक्तिको ईश्वर कहते हो तो कोई आपत्ति नहीं। द्रव्यको अनादि शक्तिको भी ईश्वर कहा जा सकता है। यदि कहो, कि जड़में कुछ भी शक्ति नहीं है, तो इस बातको हम स्वीकार नहीं कर सकते। क्योंकि जगत्‌में बहुतसे जड़पदार्थ पूर्वोक्त पांच निमित्तोंसे अपने आप मिला करते हैं। जैसे सूर्यकी किरण वर्षाके मेघ पर पड़ कर इन्द्रधनु उत्पन्न करती है, आकाशमें पवनको सहायतासे जल और अग्नि उत्पन्न होती है, इसी तरह पूर्वोक्त पांच निमित्तोंसे तृण, गुल्म, कीट, पतङ्गादि बहुतर प्राणी उत्पन्न हुआ करते हैं। द्रव्यार्थिक नयके अनुसार पृथिवी, आकाश, चन्द्र, सूर्य इत्यादि अनादि हैं और जो अनादि हैं, वे किसीके द्वारा सृष्ट नहीं हो सकते। वास्तवमें ईश्वर जगत्स्रष्टा नहीं हैं और न वे जीवोंके शुभाशुभ का विधान ही करते हैं*। जीवोंका जो शुभाशुभ होता है, वह कर्मफल मात्र है। कर्मफल भोगनेमें जीव परवश है।

यदि ईश्वर सृष्टिकर्त्ता नहीं, यदि ईश्वर जीवके शुभाशुभ कर्मविधायक नहीं, तो फिर उनका स्वरूप क्या है? प्रधान प्रधान जैनाचार्योंने निम्न-श्लोक प्रकट कर ईश्वर-का स्वरूप व्यक्त किया है —

"तामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम्।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः॥"

अर्थात्—हे भगवन्! तुम अव्यय (तुम्हारा कभी अपव्यय नहीं है) अर्थात् तीन कालमें एकस्वरूप हो, विभु अर्थात् समस्त पदार्थोंके ज्ञाता होनेसे ज्ञान द्वारा सर्वव्यापी हो, अचिन्त्य अर्थात् अध्यात्म-ज्ञानिगण भी तुम्हारी चिन्ता करनेमें समर्थ नहीं हैं, असंख्य अर्थात् तुम्हारे गुणोंको कोई संख्या नहीं कर सकता; आद्य अर्थात् (यह आदिनाथ भगवान्‌की स्तुति है और वे प्रथम तीर्थङ्कर है) स्वतीर्थके आदिकारक हो, ब्रह्म अर्थात् अनन्त आनन्दस्वरूप हो, सर्वापेक्षा अधिक ऐश्वर्यशाली हो, अनन्तज्ञान दर्शनयोगमें भी तुम्हारा अन्त नहीं मिलता, अनङ्गकेतु अर्थात् औदारिक वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण इन पञ्चशरीररूपी चिह्न भी तुममें नहीं हैं। योगीश्वर अर्थात् चार ज्ञानके धारक योगियों-के भी ईश्वर हो, विदितयोग अर्थात् कर्मसंयोगको तुमने आत्मासे सम्पूर्ण पृथक् कर दिया है, अनेक अर्थात् गुणपर्यायको अपेक्षा अनेक हो, एक अर्थात् अद्वितीय वा सर्वोत्कृष्ट हो, ज्ञानस्वरूप अर्थात् केवल-ज्ञान तुम्हारा स्वरूप है। अमल अर्थात् अष्टादश दोष रूप मल तुममें नहीं है।

जिनप्रतिष्ठाविधि — पहले वास्तुशास्त्रके अनुसार जिन-मन्दिरका उत्तम स्थान निर्णीत करें, और फिर शुभदिनमें खोदी हुई नींवको पूजा करके उसकी शुद्धि करें। जिन-मन्दिरके निश्चित चारों द्वारोंके सामने पांच रंगके चूर्णसे चतुष्कोण मण्डल बनावें और अष्टदल कमलके आकार ताँबेके पात्रमें लोकोत्तम शरणरूप जिन आदिकी (अनादि-सिद्ध मन्त्र द्वारा) पूजा करें। अनन्तर चार दिशाओंके चार पत्रों पर जया आदि देवियोंको, चार विदिशाओंके चार पत्रों पर जम्भा आदि देवियोंको, तथा उसके बाहर चार लोकपालों और नवग्रहोंको उन्हींके मन्त्रोंसे पूजा करनी चाहिए। फिर उत्कृष्ट सिंहासन पर जिन-प्रतिमाको विराजमान कर उनकी पूजा करे। पीछे जल चन्दन अक्षतादि अष्टद्रव्य ले कर सब विघ्नोंकी शान्तिके

* सृष्टिकर्तृत्वका खण्डन और जैनमतानुसार ईश्वरतत्त्वका विस्तृत स्वरूप जानना हो तो निम्नलिखित ग्रन्थ देखें—आप्त परीक्षा, प्रमाण-परीक्षा, आप्तमीमांसा, प्रमेयकमलमार्त्तण्ड, प्रमाणमीमांसा, प्रमाणसमुच्चय, सर्वार्थसिद्धि, तत्त्वार्थराजवार्त्तिकालंकार, गंधहस्तिमहाभाष्य आदि।

ब्राह्मण कहलाते थे, पीछे धीरे धीरे गोर या गौड़ (गौड़ ब्राह्मण कहलाने लगे हैं। इनकी माध्यन्दिनी और काण्व शाखा है तथा आपस्तम्बसूत्र है। इनमेंसे थोड़े ऋग्वेदी आश्वलायनशाखाके अन्तर्गत हैं। ये शास्त्रधारानुसार सदाचारी ब्राह्मण सम्प्रदाय हैं। ये मछली मांस नहीं खाते हैं। इनकी विद्यास्थिति भी अच्छी है।

गोगड़वा—सिंहभूमके अन्तर्गत एक ग्राम। बड़ा बाजारसे १६ मील दक्षिण पश्चिम चाइवासा जानेके रास्ते पर अवस्थित है। गोगड़ग्राम तथा घेमनालालाके निकटवर्ती विजक पहाड़के पाददेशमें बहुतसी शिलालिपियां खोदित हैं। इनमेंसे दो शम्बूकाकृति अक्षरमें और दो उड़िया अक्षरमें खोदी हुई हैं। शेषोक्त दो शिलाफलक देखनेसे मालूम होता है कि उड़िशाके राजा मुकुन्ददेवके शासनकालमें ये लिपि खोदी गई थीं। मुकुन्ददेव हुगली पर्यन्त राजत्व करते थे तथा उन्हींके राज्यकालमें इस ग्राममें दोनों प्रदेशोंका प्रधान व्यवसाय स्थान था।

उक्त शम्बूकाकृति अक्षर बहुत दिनके हैं कनिंहम् साहबका अनुमान है कि राजा मुकुन्ददेवके बहुत पहले ई० ७म शताब्दमें राजा शशाङ्क राज्य करते थे, उन्हींके समयमें इस तरहका अक्षर प्रचलित था। उस समयसे आजकल ग्रामकी अवस्था समृद्धिशाली है।

गोगड़वाना—मध्यप्रदेश और मध्यभारतका एक पुराना मुसलमानी प्रान्त। अबुल फजलने निम्नलिखित रूपसे उसकी सीमाका निर्देश किया है—पूर्व रत्नपुर, पश्चिम मालव, उत्तर पन्ना और दक्षिणमें दाक्षिणात्य। यह वर्णन वर्तमान सातपुरा अधित्यकाका बोधक है। मुसलमान गोड़ोंके देशको गोडवन समझते थे, परन्तु आजकल वह नाम द्राविड़ोंका है। इस विषयमें कि द्राविड़ोंको गोड कैसे कहा गया पुरातन तत्त्वविद् कनिङ्गहाम साहबने लिखा है—गोड शब्द "गौड़" का अपभ्रंश है। वाराणसीके एक शिलाफलकसे विदित होता है कि तेवार (जबलपुरके निकट)-के एक चेदिराज मालव प्रान्तके पश्चिम गौड़ जिलेमें रहते थे और भी चार पांच शिलाफलकोंमें वही गौड होनेको कहा गया है।

गोगडा—अयोध्याके फैजाबाद विभागका एक जिला। यह अक्षा० २६° ४६ तथा २७° ५०' उ० और देशा० ८१° ३३' एवं ८२° ४६ पू०में अवस्थित है। इसकी उत्तरकी सीमामें हिमालयके नीचेकी पर्वतश्रेणी है, पूर्वमें बस्ती जिला, दक्षिणमें फैजाबाद, बराबङ्की और घर्घरा नदी तथा पश्चिममें बराइच है। भूमिका परिमाण २८१३ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः १४०३९८५ है।

तमाम जिला समतल जान पड़ता है। कहीं कहीं थोड़ा बहुत ऊंचा नीचा भी है। यहां कहीं आमकी और कहीं महुआके पेड़ोंकी पंक्ति नजर आती है। इस जिलेकी जमीन तराई, ऊपरहार और तरहार इन तीन भागोंमें विभक्त है। तराई या पानीकी जगह जिलेकी उत्तर सीमासे दक्षिणकी तरफ राप्ती नदीके दो मील दक्षिण तक विस्तृत है, इसी बीचमें बलरामपुर और उतरौला ये दो नगर भी हैं। यहांकी भूमि कीचड़वाली है, सिर्फ जिन जिन स्थानोंमें पाव तोय जलस्रोत जिलेमें हो कर राप्ती और बूढ़ी राप्ती नदीमें जा पड़ा है। उन उन स्थानोंमें बाढ़ आनेके समयमें पहाड़की धुली हुई बालू जम गई है, जिससे वहां कीचड़ नहीं है। तराई भूमिके बाद गोण्डा नगरसे दो मील दक्षिण तक ऊंची भूमि है। यहांकी जमीनमें कीचड़ और बालू दोनों हैं। इसके बाद घर्घरा नदीके किनारे तक तरहार जमीन है। यहांकी तीनों तरहकी जमीन ही ज्यादा उपजाऊ हैं। इस जिलेमें उत्तर पश्चिमसे दक्षिण पूर्वकी तरफ बहनेवाली कुछ नदियां हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—बुढ़ी राप्ती, राप्ती, सुवावन, कुवाना, बिशूही, चमनाई, मनवर, तिरही सरयू और घर्घरा। इन नदियोंमेंसे सिर्फ घर्घरा और राप्ती नदीमें ही नाव चला करती हैं। राप्ती नदीमें सिवाय वर्षातके दूसरे महीनोंमें नाव नहीं चलती। जिलेके भीतर भी बहुतसे जल मौजूद हैं। गरमियोंमें ये सूख जाते हैं, और वहां छोटे छोटे महुआ, जामुन, आदिके पेड़ पैदा हो जाते हैं। नदीके किनारेके बालू बड़े भयावने होते हैं। जगह जगह छोटे छोटे ह्रद या तालाब भी देखनेमें आते हैं। इन तालाबोंसे खेतवालोंको खूब सुविधा होती है। जिलेके उत्तरांशमें पर्वतके सीमान्तवर्ती वनविभागमें, जोकि गवर्मेण्टके अधीन है, शाल, आबलूश और बबूल आदिके पेड़ ही अधिक हैं। इस जङ्गलमें शेर, चीता, भालू, भेड़िया,

अभिषेक विना किये किसी एक द्रव्यसे। द्रव्यके अभावमें अपने आत्म-परिणामोंमें उक्त द्रव्योंकी कल्पना कर भी पूजन हो सक्ता है और इसे भावपूजन कहते हैं। इसको मुनिगण प्रायः करते हैं। चार वर्णोंमेंसे शूद्रके सिवा अन्य सभी अभिषेकपूर्वक पूजन कर सकते हैं। शूद्रोंमें स्पृश्य शूद्र तो वेदिग्टहके सिवा अन्यत्र मन्दिरमें प्रवेश कर किसी एक वा अनेक द्रव्यको भेंटमें रख दर्शन कर सक्ते हैं और अस्पृश्य शूद्र मन्दिरमें भीतर जा नहीं सकते इसलिए मंदिरकी शिखरमें चार दिशाओंमें जो चार जिनबिंब रहते हैं उनका दर्शन करते हैं। इसके सिवा सूतक पातक और पतित अवस्थामें ब्राह्मणादि तीन वर्ण भी जिनबिंबस्पर्शनके अधिकारी नहीं है और न उनको द्रव्य चढ़ा कर पूजन करनेका ही विधान है।

जैन लोग स्नानादिसे पवित्र हो प्रति दिन जिनदर्शन करना अपना कर्तव्य समझते हैं इसलिये समस्त स्त्री पुरुष और बालक जिनमन्दिर जा अपनी भक्ति प्रदर्शित करते हैं। मन्दिरमें प्रवेश करते समय वे 'निःसहि' तीन बार उच्चारण कर गद्यपद्यमय स्तुति बोलते हैं, जिसमें जिनेन्द्र भगवानके गुण और अपनी हीन अवस्थाका उल्लेख रहता है। नमस्कार, प्रदक्षिणा और स्तोत्र पाठ कर चुकनेके बाद शास्त्र पाठ करते हैं। जिनबिंबाभिषेकका जल अपने उत्तमांगसे लगाते हैं और फिर अपने घर वापिस आते हैं। जैन लोग अपने ईश्वरसे कोई धन धान्यादि संपत्तिकी याचना नहीं करते और न ईश्वरको उन वस्तुओंका दाता ही मानते हैं। जिनेन्द्रदेवने अपने उच्चगुणसे कर्मबंधनको छोड़ कर शुद्ध परमोत्कृष्ट अवस्था पायी है इसलिये उनका आदर्श स्थापित कर उनके तुल्य हो जानेको ही भावना भाते हैं। जलचंदन आदि आठ द्रव्योंको चढ़ाते समय जो मन्त्र बोले जाते हैं उनका अभिप्राय भी यही है कि भक्त पुरुष मुक्ति प्राप्त करनेको योग्यता प्राप्त करले। ऐहिक सुखकी लालसासे जिनपूजन करनेका जैन शास्त्र खुले तौरसे विरोध करते हैं। उनकी मूर्ति वीतराग सब प्रकारके परिग्रहसे रहित होती है उसका अभिप्राय यही है कि परिणामोंमें किसी भी तरहका रागभाव पैदा न हो और अपना आदर्श वीतरागता ही समझें। विशेष जाननेके लिये जैनपूजा ग्रंथ देखने चाहिये। जैनसंप्रदाय देखो।

जैनबद्री (जैनकाशी)—जैनोंका एक प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र। यह मन्द्राजके अन्तर्गत हासन जिलेके श्रवणबेलगोला ग्रामके सन्निकट है। यहां एक बड़ा तालाब है और उसके दोनों ओर दो छोटे छोटे पहाड़ हैं। इन पहाड़ोंको यहांके लोग विन्ध्यगिरि कहते हैं। पहाड़के नीचे रास्ताके किनारे एक जैन मन्दिर है। एक पहाड़के ऊपर कोट बना हुआ है, जिसके भीतर एक बहुत बड़ा और दो छोटे छोटे जैन मन्दिर हैं तथा एक मानस्तम्भ (जिसको देख कर अभिमानियोंका मान दूर हो जाता है, उसे मानस्तम्भ कहते हैं)। एक कुण्ड है, जिसमें पानी भरा रहता है। पहाड़ पर चढ़नेके लिए सीढ़ियां बनी हुई हैं। यहांसे कुछ ऊपर चढ़ने पर और एक कोट मिलता है। इसके पास दो देहली और मनोज्ञ जैन-मूर्ति विराजित है। इसके बाद और एक कोट है। यहां एक प्राचीन जैन-धर्मशाला, तीन जैनमन्दिर एक मानस्तम्भ और परिक्रमा बनी हुई है।

सबसे ऊपर चौथा कोट है। यहां ७२ फुट ऊंची श्रीबाहुबलि स्वामीकी एक खड्गासन प्राचीन जैनप्रतिमा है। इसके आस-पास और भी अनेक जैन-मूर्तियां अवस्थित हैं। यहां बाहुबलिस्वामीके दर्शनार्थ भारतवर्षके नाना प्रदेशोंसे यात्रिगण आया करते हैं।

श्रवणबेलगोला देखो।

जैनविवाहविधि—जैनशास्त्रोक्त विवाहकी पद्धति। विवाहसे, कमसे कम तीन दिन पहले कन्याका पिता अपने बन्धु बान्धव और ज्ञातिय लोगोंको निमन्त्रण दे कर बुला लेता है। फिर कन्याको वस्त्राभूषण और पुष्पमाला आदिसे सुशोभित कर सौभाग्यवती स्त्रियोंको साथ ले गाजे बाजेके साथ सब जिनमन्दिर पहुंचते हैं। मन्दिरमें आचार्य वा श्रुतधर (पण्डित) के मुखसे 'सहस्रनाम'का पाठ सुने और अष्टद्रव्यसे जिनेन्द्रकी पूजा करावें। पश्चात् अर्हन्त और सिद्धोंकी पूजा करके अनादि निधन "विनायकयन्त्र" वा "सिद्धयन्त्र"का अभिषेक* और पूजन § करें तथा णमोकार मन्त्रका (सुवर्णमय

* मन्त्र—"ओं भूर्भुवः स्वरिह एतत् विघ्नैकवारक यन्त्रं अहं परिषिञ्चयामि।"

† पूजाविधि और उसके मंत्रादि "जैनविवाहविधि" नामक पुस्तकसे जानना चाहिए।

अपनी स्वाधीनताकी रक्षा की थी और पंत्रिक राज्य गोण्डा, पहाड़पुर, दिगमार, महादेव और नवाबगञ्ज इन पांच परगनाओंका स्वतन्त्रतापूर्वक शासन किया था। अन्तमें राजा इन्दुपत्‌सिंहकी मृत्यु होने पर पाँडे ब्राह्मणों की सहायतासे गुमान्‌सिंहने गोण्डागाज्य पर आधिपत्य जमाया था, बलरामपुर और तुलसीपुरके सर्दारोंने बहुत युद्ध करके अपनी स्वाधीनताकी रक्षा की थी। परन्तु माणिकपुर और भदनिपाईके सर्दार नाजिमको कर दिया करते थे। गोण्डा और उतरौला राज्यके अधःपतनके समयमें नाजिमने सहजमें कर वसूल होनेके लिए कुछ ग्रामोंमें जमोदार नियुक्त किये थे। उतरौला और गोण्डा पदच्युत राजाओंने उक्त जमीदारीके पानेके लिए प्रयास किया था। उतरौलाके राजाने कई वर्ष बाद जमीदारी पाई थी और गोण्डाके विशेनराज विश्वम्भपुरकी जमीदारी पाकर उसका उपभोग करने लगे थे। नाजिमके कर्मचारी बलपूर्वक कर वसूल करते थे। इसलिए वहांकी प्रजा बहुत ही नाराज थी। पीछे अयोध्या जब अंग्रेजोंके हाथ-में आई तब ये सब अत्याचार दूर हो गये। सिपाही-विद्रोहके समय गोण्डाके राजा पहले अंग्रेजोंके पक्षमें थे। पीछे फिर विद्रोही हो कर लखनऊमें जाकर अयोध्या-की बेगमके साथ मिल गये थे। बलरामपुरके राजा बरा-बर राजभक्त थे। इन्होंने गोण्डा और बराइचके कमिश्नर विङ्गफिल्ड तथा अन्यान्य अंग्रेज कर्मचारियोंको अपने किलेमें आश्रय दिया था। गोण्डाराजने सेना सहित जाकर घमनाईके तीरवर्ती लम्पती नगरोमें तम्बू गाड़े थे। थोडासा युद्ध करके ये अपनी सेना सहित नेपालकी तरफ भाग गये थे। जमोदारोंने इस राजद्रोहके लिए क्षमा मांगी थी। परन्तु गोण्डाराज और तुलसीपुरकी रानीके क्षमा नहीं मांगनेसे, उनका राज्य छीन लिया गया था। फिर गवर्मेण्टने वह राज्य बलरामपुरके महाराज दिग्विजयसिंहको और शाहगञ्जके महाराज सर मानसिंहको बाँट दिया था।

इस जिलेमें गोण्डा, बलरामपुर, कर्णलगञ्ज, नवाब-गंज, उतरौला, कातरा, और खड्गपुर आदि नगर है। देवीपाटन ग्राममें पाटेश्वरीदेवीका मन्दिर, छापियाका ठाकुरद्वार महादेव परगणाके विलेश्वरनाथ, मछलीगांध-के केदारनाथ, बलरामपुरको विलेश्वरी देवी और खड्ग पुरके पचरानाथ व पृथ्वीनाथका मन्दिर ये ही यहांके हिन्दुओंके महापुरुषके स्थान है।

१ तराईमें धान बहुत होता है, परन्तु आब हवा अच्छी नहीं और बाढ़ आनेका भी डर रहता है। ऊपरी जमोन चिकनी है। गेहूं और चावलको खेती चना और अरहर मिला करके ज्यादाकी जाती है। गांवोंके पास ईख तथा पोस्त और तालावोंके करीब जड़ हन बोते हैं।

स्थानिक पशु अच्छे नहीं होते। भेड और बकरे बहुत है। तालाबों और झीलोंसे आब पाशी होती है।

२ उक्त प्रान्तके गोंडा जिलेकी सदर तहसील। यह अक्षा० २७° १′ तथा २७° २६′ उ० और देशा० ८१° ३८′ एवं ८२° १९′ पू० मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ६१९ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३८४०२१ है। यहा ७८४ गाव और ३ शहर बसे हुए है। मालगुजारी कोई ४९१०००) और सेस प्रायः ५००००) रु० है। ऐसा सुभीता बहुत कम गावोंमें देख पड़ेगा। १६२ वर्गमील सुरक्षित जङ्गल है। इससे सालाना कोई ५००००) रु० की आमदनी होती है। खानसे केवल कङ्कर निकलता जो सडक पर बिछाने और चूना बनानेमें लगता है।

सिवा खेतीके इस जिलेमें दूसरा काम काज थोडा है। कई जगह स्थानिक व्यवहारके लिए मोटा सूती कपडा बुना जाता है परन्तु बारीक सूत तयार नहीं होता। मट्टीके खुशनुमा वर्तन भी बनाते है। चावल, मटर, ज्वरा, अफीम और लकडीकी खास करके रफ्तनी होती है। नेपालके साथ भी थोड़ा कारबार किया जाता है। रेल और सड़ककी कोई कमी नहीं। यहां बङ्गाल और नार्थ वेष्टर्न रेलवेकी प्रधान लाइन दौडती है। ६०६ मील सडकमें ११० मील तक पक्की है। अपराध सामान्य प्रकारका होता है।

१८१० ई०में इस जिलेके उत्तरपूर्व बहुतसी जमीन अङ्गरेजोंको सुपुर्दकी गयी थी, परन्तु १८१३ ई०में उन्होंने यह अवधके नवाबको वापस दी। १८५६ ई०को जब गोंडा अंगरेजी राज्य भुक्त हुआ, मालगुजारी ६ लाख ७० हजार रही। १८७६ ई०को दूसरा बन्दोबस्त

जैनसम्प्रदाय-भारतका एक विख्यात और प्राचीन धर्मसम्प्रदाय। यह सम्प्रदाय मुख्यत: दो विभागोंमें विभक्त है, एक दिगंबर और दूसरा श्वेताम्बर। श्वेताम्बरोंका विवरण ईसाकी ५वीं शताब्दीसे मिलता है। दिगम्बर ईसासे ६०० वर्ष पहले भी विद्यमान थे। क्योंकि बौद्ध 'पालिपिटक'में निर्ग्रंथके नामसे इसका उल्लेख है। ये निर्ग्रंथ बुद्धदेवके समसामयिक थे। निर्ग्रन्थों (दिगम्बरों)का विवरण अशोकको शिलालिपिमें भी मिलता है (१)। अन्तिम तीर्थंकर महावीरस्वामीके समयमें यह सम्प्रदायभेद न था, पीछे हुआ है। श्वेताम्बर सम्प्रदायके 'प्रवचनपरीक्षा' नामक ग्रन्थमें लिखा है—

"छव्वाससहस्सेहिं नवुत्तरेहिं सिद्धिं गयस्स वीरस्स।
तो बोडियाण दिट्ठी रहवीरे समुप्पण्णा॥"

अर्थात्—वीर भगवान्‌के मुक्त होनेके ६०८ वर्ष बाद बोधिकों (दिगम्बरों)के प्रवर्तक रथवीपुरमें उत्पन्न हुए। इसके अनुसार वि० सं० १३८में दिगम्बरसम्प्रदायको उत्पत्ति हुई। किन्तु श्वेताम्बराचार्य * जिनेश्वर सूरिने अपने "प्रमाणलक्षण" नामक तर्कग्रन्थमें श्वेताम्बरोंको आधुनिक बतलानेवाले दिम्बराचार्यको ओरसे उपस्थित की जानेवाली एक गाथाका उल्लेख किया है, जो उपर्युक्त गाथासे बिलकुल मिलती जुलती है। यथा—

"छव्वास सएहिं नउत्तरेहि तइया सिद्धिंगयस्स वीरस्स।
कंबलिणं दिट्ठी वलहीपुरिए समुप्पण्णा॥"

अर्थात्—महावीरस्वामीके निर्वाणके ६०८ वर्ष बाद (विक्रम-सं० १३६ में) काम्बलिकों (श्वेताम्बरों)का मत उत्पन्न हुआ। दिगम्बरोंकी उत्पत्तिके विषयमें श्वेताम्बरोंके 'प्रवचनपरीक्षा'में एक कथा लिखी है—"रथवीपुरमें शिवभूति (वा सहस्रमल्ल) नामक एक राजभृत्य रहते थे, जिनकी स्त्री सासुके साथ लड़ा करती थी। एक दिन शिवभूति किसी कारणवश माता पर क्रुद्ध हो कर रातको घरसे निकल पड़े और एक साधुओंके उपाश्रयमें जा कर उनमें शामिल हो गये। कुछ समय बाद उन साधुओंका उसी नगरमें आना हुआ, जिसमें शिवभूति रहते थे। उस समय राजाने शिवभूतिको एक रत्न-कम्बल उपहारमें दिया। किन्तु अन्य साधुओंने उसे यह कह कर कि साधुओंको कम्बल लेना उचित नहीं, छीन कर फेंक दिया। इससे शिवभूतिको बड़ा दुःख हुआ। किसी समय उस सङ्घके आचार्य जिनकल्प साधुओंके स्वरूपका व्याख्यान कर रहे थे, कि शिवभूतिने यह जाननेकी इच्छा प्रकट की कि 'जब जिनकल्प निष्परिग्रह होता है, तो आप लोगोंने यह आडम्बर क्यों स्वीकार किया है, वास्तविक मार्ग क्यों नहीं अङ्गीकार करते हैं?' उत्तरमें गुरु महाराजने कहा—'इस विषम कलिकालमें जिनकल्प कठिन होनेसे धारण नहीं किया जा सकता।' इस पर शिवभूतिने यह कह कर कि 'देखिये तो मैं इसे ही धारण करके बताता हूं' जिनकल्प धारण कर लिया।"

श्वेताम्बरोंके उपर्युक्त कथनसे यही प्रमाणित होता है कि पहले जिनकल्पी (दिगम्बरी) दीक्षाका ही विधान था, पीछे कलिकालमें वह कठिन होनेके कारण, लोग श्वेत-अम्बर धारण करने लगे।

सुप्रसिद्ध ज्योतिर्विद् वराहमिहिरने (जो कि महाराज विक्रमकी सभाके नवरत्नोंमेंसे एक थे,) बृहत्-संहिता में एक जगह लिखा है—

"विष्णोर्भागवता मगाश्च सवितुर्विप्रा विदुर्ब्राह्मणाः।
मातृणामिति मातृमंडलविदः शम्भोः सभस्मा द्विजाः।
शाक्याः सर्वहिताय शान्तमनसो नग्ना जिनाना विदुः।
ये यं देवमुपाश्रिताः स्वविधिना ते तस्य कुर्युः क्रियाम्॥"

वराहमिहिर राजा विक्रमादित्यके सामने ही मौजूद थे और उन्होंने नग्न वा दिगम्बरोंका उल्लेख किया है। ऐसी दशामें दिगम्बर मतकी उत्पत्ति विक्रम-संवत् १३६में हुई है यह बात ऐतिहासिक दृष्टिसे विश्वासयोग्य नहीं।

श्वेताम्बरसम्प्रदायकी उत्पत्तिका विवरण देवसेन-

---

(१) Encyclopeadia Britannica; 11th Ed. Vol. XV. p 127

* जिनेश्वरसूरि ग्यारहवीं शताब्दीमें हुए हैं।

† इस बातको दिगम्बराचार्य भी स्वीकार करते हैं, कि दिगम्बरी दीक्षा न पाल सकनेके कारण श्वेताम्बरी दीक्षाका प्रचलन हुआ। यथा—

"संयमो जिनकल्पस्य दुःसाध्योऽयं ततोऽधुना।
व्रतंस्थविरकल्पस्य तस्मादस्माभिराश्रितम्।"
दुर्द्धरो मूलमार्गोऽयं न धर्तुं शक्यते ततः।"

रु० कर देते हैं। पांच मुनिसपालिटियां हैं।

२ बम्बईकी काठियावाड पोलिटिकल एजेन्सीके गोण्डाल राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २१° ५७' उ० और देशा० ७०° ५३ पू०में गोण्डाली नदीके पश्चिम तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १८५८२ है। गोण्डालसे राजकोट आदि कई स्थानोंको अच्छी सडक लगी है। यहां रेलवे ष्टेशन भी है।

गोण्डिया—मध्य प्रदेशके भण्डारा जिलेको तिरोरा तहसील का एक गांव। यह अक्षा० २१° २८' उ० और देशा० ८०° १३' पू०में बङ्गाल नागपुर रेलवे पर पड़ता है। यहां सातपुरा-रेलवेका जङ्कशन है। जन संख्या कोई ४४५७ होगी। गोंडियमें दूसरे जिलोंसे कितना ही माल चालान-के लिये आ आ करके इकट्ठा होता है। सप्ताहमें अनाज-का बडा बाजार लगता है। हिन्दी पाठशाला स्थापित है।

गोत (हिं० पु०) १ गोत्र, कुल, वंश, खानदान। २ समूह, जत्था।

गोतम (सं० पु०) गोभिर्ध्वस्तं तमो यस्य, बहुव्री०। पृषोदरादिवत् साधु। १ एक मुनि, गोत्रप्रवर्त्तक ऋषि महाभारतमें इस नामकी व्युत्पत्तिके विषयमें लिखा है कि इनके शरीरके तेजसे समस्त अन्धकार नष्ट हुवा जान कर इनका नाम गोतम पडा। वायुपुराणमें लिखा है कि इन्होंने श्वेतवराहकल्पमें ब्रह्माके मानसपुत्ररूपसे जन्म ग्रहण किया था। (वायु अध्या० ९ अ०) । इन्होंने न्यायदर्शन प्रणयन किया है। न्याय देखो। (पु स्त्री०) १ अतिशयेन गौः गो-तम। अतिशय जड, भारी जड़। २ बुद्ध भेद।

गोतमस्तोम, १ सूक्तविशेष। २ एक प्रकारका यज्ञ।

गोतमस्वामिन् (सं० पु०) जैन-धर्मावलम्बी एक ब्राह्मण। ये तीर्थङ्कर महावीरस्वामीके एक प्रधान गणधर थे, इनका दूसरा नाम इन्द्रभूति भी था। भारतके नाना स्थानोंमें तथा सम्मेदशिखर पर्वत पर इनकी सुवृहत् पाषाण-मूर्तियां देखनेमें आती है। इनकी मूर्त्ति कर्णाट और मलवार उपकूलमें ही अधिक है। महिसुरस्थ श्रावण वेलगोलामें ५६ फीट, जेनूरमें ३५½ फीट और कर्काला नामक स्थानमें ४१⅓ फीट ऊंची गोतम स्वामीकी पाषाण मूर्तियां है। गौतम गणधर देखो।

गोतमान्वय (सं० पु०) गोतमोऽन्वयो वंशप्रवर्त्तको यस्य बहुव्री०। मायादेवीके पुत्र शाक्यमुनि।

गोतमी (सं० स्त्री०) गोतमस्य भार्या गोतम-ङीष्। गोतम-ऋषिकी स्त्री अहल्या। कृत्तिवासी रामायणमें लिखा है कि अहल्या गौतम ऋषिके शापसे एक शिला हो गई थी, किन्तु वाल्मीक रामायणका मत है कि अहल्या गोतमके शापसे नितान्त कुरूप होकर तपस्या करने लगी थी। तपस्याके बलसे उनका शरीर ज्योतिर्मय हो गया, उस रूपको रामचन्द्रजीने देखा था। (उत्तरकाण्ड)

गोतमीपुत्र (सं० पु०) गोतम्याः पुत्रः, ६-तत्०। अहल्या-का पुत्र, शतानन्द।

गोतमेश्वर (सं० पु०) गोतम ईश्वरो यस्य, बहुव्री०। तीर्थ-विशेष। (पद्मपुराण)

गोतार्द्द—बम्बईमें रेवाकान्ताविभागके मध्यवर्त्ती एक क्षुद्र राज्य यह चार सामन्तकोंके अधीन है। लोकसंख्या प्रायः २२८ है। सालाना आमदनी ४७८) रु० उनमेंसे २२७) रु० वरौदा गायकवाडको कर दिया करते हैं।

गोतल्लज (सं० पु०) प्रशस्तो गौः नित्यसमास। उत्तम गौ, सुन्दर गाय।

गोता (सं० पु०) जल आदिमें डुबनेकी क्रिया, डुब्बी।

गोताखोर (अ० पु०) गोता लगानेवाला, डुबकी मारने-वाला।

गोतामार (हिं० पु०) गोताखोर देखो।

गोतिया (हिं० वि०) अपने गोत्रका, गोती।

गोती (हिं० वि०) गोत्रीय, अपने गोत्रका, जिसके साथ शौचाशौचका संबन्ध हो, भाई बन्धु।

गोतीत (सं० त्रि०) अगोचर, जो ज्ञानेन्द्रियों द्वारा न जाना जा सके।

गोतीर्थ (सं० क्ली०) गवां कृतं तीर्थं मध्यपदलो०। १ गोष्ठ, गौ रहनेका स्थान। २ कन्नौजके अन्तर्गत तीर्थविशेष। (भागवत ३।१।२१)

गोतीर्थक (सं० पु०) वैद्यशास्त्रोक्त एक प्रकारकी छेदन प्रणाली। (सुश्रुत) फोडे आदि चीरनेकी एक तरकीब जिसके अनुसार कई छेदों वाले फोडे चीरे जाते है।

गोतैल (सं० क्ली०) गोवशा, बांझ गाय।

गोत्र (सं० पु०) गां पृथिवीं त्रायते रक्षति गो-त्रै-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा० ३।२।३। १ पर्वत, पहाड।

सकती। जिनके ज्ञानमें त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थ युगपत् दीख पड़ते है, उन्हें भूख लगी और वे भक्ष्य अभक्ष्य पदार्थोंको अपने ज्ञानगोचर होते हुये भी अन्तराय न मान खा डालें।

इसके सिवा कथाग्रन्थोंमें भी बहुत कुछ अन्तर है। जैसे—श्वेतांबर लोग कहते हैं, कि महावीरस्वामी पहिले एक ब्राह्मणीके गर्भमें आये और फिर इन्द्रने उन्हें राजा सिद्धार्थको पत्नीके गर्भमें रख दिया इत्यादि। परन्तु दिगंबर इसका विरोध करते हैं और उनका अवतरण राजा सिद्धार्थको महिषीके उदरमें ही मानते हैं।

प्राचीन दिगंबर और श्वेतांबर मूर्तियोंके देखनेसे मालूम होता है कि पहिले परस्पर बहुत कम अन्तर था। श्वेतांबर मूर्तियोंके सिर्फ लंगोटेका चिन्ह ही रहता था, परन्तु आजकल कुण्डल, केयूर, अङ्गद, मुकुट आदि सभी शृङ्गारकी सामग्रियां पहना दी जाती हैं। पहिले परस्पर इन दोनों शाखाओंमें अनैक्य भी अधिक न था। दोनों ही हिल-मिल कर अपना धर्म साधन करते थे।

दिगंबर साधु आजकल अतिविरल हैं,—परन्तु श्वेतांबर साधु बहुत दीख पड़ते हैं। इसका कारण दोनों सम्प्रदायोंके दुर्गम सुगम नियम हैं।

मूर्तिपूजामें भी परस्पर भेद है। दिगंबर पूजनेसे पहिले जलसे अभिषेक करते हैं और फिर जल चन्दन अक्षत आदि अष्ट द्रव्योंसे पूजन करते हैं। परन्तु श्वेतांबर पञ्चामृतसे अभिषेक कर पूजन करते हैं।

श्वेतांबर सम्प्रदायमें स्थानकवासी तेरहपंथी आदि अनेक भेद हैं, जिसमें स्थानकवासी मूर्तिको नहीं पूजते और इनके कुछ शास्त्र भी पृथक्-पृथक् रचे हुए हैं। श्वेताम्बरमतानुसार श्रीमहावीरस्वामीके पीछे,जो आचार्य पट्ट पर बैठे, उनका विवरण निम्नलिखित तालिकासे जानना चाहिये। (तालिका आगेके पृष्ठमें देखो)

दिगंबर-सम्प्रदाय।

दिगम्बर और श्वेताम्बर ये दो मुख्य संप्रदाय हैं इन दोनों ही संप्रदायमें सङ्घ वा गच्छभेद पाया जाता है। दिगम्बराचार्य अमितगतिने स्वरचित 'धर्मपरीक्षा' नामक ग्रन्थमें चार सङ्घोंका उल्लेख किया है; यथा—१ मूल सङ्घ, २ काष्ठासङ्घ, ३ माथुर सङ्घ और ४ गोप्यसङ्घ इनमेंसे मूलसङ्घ पहलेसे ही था और द्राविड़सङ्घ, काष्ठा सङ्घ और माथुरसङ्घ आदि पीछेसे हुए। दर्शनसार नामक ग्रंथमें संग्रहकर्ता देवसेनसूरिने इनको उत्पत्तिका जो समय और कारण लिखा है उसे यहां उद्धृत करना उचित समझते हैं।

द्राविड़संघ—श्रीपूज्यपाद अपर नाम देवनन्दि आचार्यके शिष्य वज्रनन्दि अप्रासुक अथवा सचित्त चनोंको खाना उचित समझते थे। अन्य आचार्योंने इस बातसे उन्हें रोका तो उन्होंने विपरीत प्रायश्चित्त शास्त्रोंको रचनाकर अपनी बातकी पुष्टि की। उन्होंने लिखा है कि—बीजोंमें जीव नहीं है, मुनियोंको खड़े होकर भोजन न करना चाहिये, कोई वस्तु प्रासुक नहीं है आदि उस वज्रनन्दिने कछार खेत वसतिका और वाणिज्य आदि कराके जीवननिर्वाह और शीतल जलमें स्नान करने आदिमें मुनियोंको दोष नहीं बतलाया। विक्रम-संवत् ५२६ में दक्षिण मथुरा (मदुरा) नगरमें इस मतकी उत्पत्ति हुई और द्राविड़सङ्घ नाम पड़ा।*

काष्ठासङ्घ—नन्दीतट नगरमें विनयसेन मुनिसे दीक्षित कुमारसेन मुनि सन्यास मरणसे भ्रष्ट हो फिर दीक्षित नही हुये। उन्होंने मयूरपिच्छको त्यागकर चमरी गायके बालोंको पिच्छी ग्रहणकर द्राविड़ देशमें उन्मार्गका प्रचार किया। उनके मतानुसार, क्षुल्लकोंको वीरचर्या करना, मुनियोंको कड़े बालोंकी पिच्छी रखना उचित है। इसी प्रकार अन्य शास्त्र पुराण और प्रायश्चित्त ग्रन्थोंमें भी कुछ मिलावट कर दी। विक्रम संवत् ७५३ में इस सङ्घकी उत्पत्ति हुई§।

---

* सिरि पुज्जपादसीसो दाविडसंघस्स कारगो दुट्ठो।
णामेण वज्जणंदी पाहुडवेदी महासत्तो ॥ ५४ ॥
पंचसऐ छव्वीसे विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स।
दक्खिणमहुराजादो दाविडसंघो महामोहो ॥ २८ ॥

§ सत्तसए तेवण्णे विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स।
णंदियडे वरगामे कट्ठो-संघो मुणेयव्वो ॥ ३८ ॥

परिभाषाके अनुसार जाना जाता है कि, पौत्र आदि सन्तानोंका नाम गोत्र है। पाणिनीसम्मत अर्थको स्वीकार करने परभी पहिला दोष नहीं छूटता। इसीलिए बौधायन आदि सब ही ग्रन्थकारोंने गोत्र शब्दका दूसरा एक पारिभाषिक अर्थ किया है कि,—

"विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतम,।
अत्रिर्वशिष्ठ कश्यप इत्यते सप्त ऋषय॥
सप्तानां ऋषिणामगस्त्याष्टमानां यदपत्य तद् गोत्रम्॥" (१) (बौधायन)

विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गोतम, अत्रि, वशिष्ठ, काश्यप और अगस्त्य इन आठ मुनियोंके पुत्र और पौत्र आदि सन्तानोंमेंसे जो मुनि हो सके हैं, वे ही उससे पूर्ववर्ती और परवर्ती सब होके गोत्र हैं, अर्थात् उन्हींके नामसे उस वंशका गोत्र चलता है।

अतएव विश्वामित्रकी सन्तान देवरात आदि विश्वामित्रके गोत्रके हैं और जमदग्निकी सन्तान मार्कंडेय आदि जमदग्निके गोत्रके है (२)। आश्वलायन-श्रौतसूत्रकी नारायणकृत वृत्तिमें लिखा है कि विश्वामित्र आदि आठ ऋषियोंकी सन्तानोंको उनके गोत्र समझना चाहिये। जैसे—जमदग्नि ऋषिके गोत्र वत्स आदि, गौतमके गोत्र आयस्यादि, भरद्वाजके दत्त, गर्ग आदि, (३)। अब बात इतनी ही है कि, बौधायनके "विश्वामित्र" इत्यादि वाक्यमें काश्यप और गौतमका उल्लेख है। इसलिए नारायणकृत वृत्तिको स्वीकार करें तो काश्यप गोत्र और गोतमवंशियोंको गौतम गोत्रीय मानना पड़ेगा। परन्तु प्राचीन समयसे काश्यप गोत्र और गौतमगोत्रका व्यवहार चला आ रहा है। इसके सिवा वशिष्ठ, भरद्वाज आदि वंशमें उत्पन्न लोगोंको यथाक्रमसे वशिष्ठ और भरद्वाज गोत्र कहते हैं।

और फिर कोई कोई कहते हैं कि गोत्र शब्द स्वभावसे ही नपुंसक लिङ्ग है, पूर्वोक्त व्याख्याके स्वीकार करनेसे कहना पड़ेगा कि, विश्वामित्रगोत्र, वशिष्ठगोत्र और भरद्वाजगोत्र इत्यादिमें षष्ठीतत्पुरुष समास हीको स्वीकार करना पड़ेगा। व्याकरणके नियमानुसार तत्पुरुष समासका उत्तरपद जो लिङ्ग होगा, समास होने पर भी वह शब्द वही लिङ्ग होता है। तो गोत्रशब्दके नपुंसकलिङ्ग होने पर विश्वामित्रगोत्र आदि शब्द भी नपुंसकलिङ्ग हुए जाते हैं, और "विश्वामित्रगोत्रमहं", "वशिष्ठगोत्रमहं", "भरद्वाजगोत्रमहं" तथा "विश्वामित्रगोत्राणि वयं" इत्यादि का भी व्यवहार किया जा सकता है। परन्तु लौकिक और वैदिक ग्रन्थोंमें ऐसा नहीं पाया जाता। बल्कि विश्वामित्रगोत्रोऽहं, भरद्वाजगोत्रोऽहं और विश्वामित्रगोत्रावयं ऐसा ही देखनेमें आता है। आश्वलायन (१२।१०।१) श्रौतसूत्रकी नारायणकृत वृत्तिमें भी "मित्रयुवगोत्रोऽहं, मुद्गलगोत्रोऽहं" ऐसा प्रयोग मिलता है। अतएव बौधायन आदि-द्वारा कहे हुए गोत्र लक्षणके "यदपत्यं तद्गोत्रं" इस अंशकी व्याख्या दूसरी तरह माननी पड़ेगी। विश्वामित्र आदि आठ ऋषियोंकी सन्तानोंके गोत्र, विश्वामित्र आदि इस प्रकार होनेसे विश्वामित्रगोत्र, वशिष्ठगोत्र, भरद्वाजगोत्र इत्यादि स्थलमें विश्वामित्रो गोत्रं यस्य-ऐसा बहुव्रीहि समास हो सकता है (४)। बहुव्रीहि समास होनेसे वह शब्द वाच्यलिङ्ग होगा, इस लिये "विश्वामित्रगोत्रोऽहं" इत्यादि लिखनेमें कोई भी बाधा नहीं आती। अगर ऐसा न मानें, तो "भारद्वाजगोत्रस्य अमुकी देव्याः" ऐसा अभूतपूर्व वाक्य भी स्वीकार करना पड़ेगा। परन्तु इस व्याख्याके अनुसार भी गौतमगोत्र और काश्यपगोत्रका व्यवहार किया जा सकता है। यदि उस जगह गौतम

---

(१) ग्रन्थोंमें बहुत जगह पाठभेद देखनेमें आता है। उनमें जो पाठ संगत और बहुतसे ग्रन्थोंमें मिला है। वही पाठ लिखा गया है। "विश्वकोष कार्यालय" में संगृहीत हस्तलिखित गोत्रप्रवरमंजरी और वाचस्पत्यमें "गौतम" और छपी हुई आश्वलायन श्रौतसूत्रकी वृत्ति और "विश्वकोष कार्यालय" में संगृहीत हस्तलिखित गोत्रप्रवरदर्पणमें "गौतम" पाठ मिलता है। इनमेंसे यहां पर "गोतम" पाठ ही संगत मालूम पड़ता है।

(२) "एतदुक्तं भवति अगस्त्याष्टम सप्तर्षीणां मध्ये यस्यापत्य ऋषित्व प्राप्तं तत्तस्य गोत्रमुच्यते" (गोत्रप्रवरमंजरी)

"येषां अनुपुत्रपौत्रादापत्य-ऋषिभूत तत्पूर्वभाविना कनन्दनाविनाश्च गोत्रमित्यभिधीयते।" (गोत्रप्रवरदर्पण)

(३) "एतेषामपत्यमिति ये मन्त्रकृते तद्गोत्रमित्युच्यते यथा जमदग्नेर्गोत्र वत्सादय, तथा गौतमस्यायस्यादयः।" (आश्वलायन १२।१०।वृत्ति)

४ "अपरे तु विपरीत गोत्रलक्षणमाहुः। [illegible]गस्त्याष्टमानां यदपत्यं तद्गोत्रमुच्यते। यथा—देवरातादीनां गोत्र विश्वामित्रं इति मार्कण्डेयादीनां जमदग्न्यादीनि गोत्राणीति॥" (गोत्रप्रवरमञ्जरी)

इस पक्षमें "यदपत्य तद्गोत्र" इस अंशकी संगत व्याख्या ऐसी बनानी पड़ेगी—अगस्त्याष्टमानां सप्तर्षीणां मध्ये यस्य ऋषेः अपत्यं पुत्रपौत्रादिः स्यात् (तत्) तद्गोत्र स ऋषिः गोत्रं यस्य तत् तद्गोत्रं भवतीति शेषः।

पद	नाम	जन्मकाल	गोत्र	पिताका नाम	दीक्षाकाल	सूरिपदप्राप्ति	स्वर्गप्राप्ति	विशेष विवरण
४२	जिनवल्लभ					११७६संवत्	११६८संवत्	पिण्डविशुद्धि
४३	जिनदत्त	११३२ सं०	हुम्बड़	वाछिगमन्त्री	११४१संवत्	११६९ ,,	१२११ ,,	सन्देहदोहावली कर्त्ता
४४	जिनचन्द्र*	११९७ ,,		साहरासल	१२०३ ,,	१२११ ,,	१२२३ ,,	दिल्लीसे स्वर्गप्राप्ति
४५	जिनपति	१२१० ,, चै० ८		यशोवर्द्धन	१२१८ ,,	फा०१२२३ ,,	१२७७ ,,	
४६	जिनेश्वर	१२४५ ,, अग्र० ११		नेमिचन्द्र	१२५५सं०	१२७८ ,,	१३३१ ,,	
४७	जिनप्रबोध	१२८५ ,, म०		साहश्रीचन्द्र	१२९६ ,,	१३३१ ,,	१३४१ ,,	थिरापद्र नगरमें जन्म
४८	जिनचन्द्र	१३२६ ,	छाजहड़,	देवराज	१३३२ ,,	१३४१ ,,	१३७६ ,,	कुसुमाणसे स्वर्गप्राप्ति
४९	जिनकुशल	१३३७ ,,	,,	जीहागर	१३४७ ,,	१३७७ ,,	१३८९ ,,	देराउरसे ,,
५०	जिनपद्म		,,				१४०० ,,	पाटन नगरसे ,,
५१	जिनलब्धि						१४०६ ,,	नागपुरसे ,,
५२	जिनचन्द्र						१४१५ ,,	स्तम्भतीर्थसे ,,
५३	जिनोदय	१३७५सं०		कुन्दपाल		१४१५सं०	१४३२ ,,	पाटनसे ,,
५४	जिनराज					१४३२ ,,	१४६१ ,,	देवलवाड़से ,,
५५	जिनभद्र (१)		भासणालिक				१५१४ ,,	कुम्भलमेरुसे ,,
५६	जिनचन्द्र	१४८७सं०	चम्म	बच्छराज	१४९२सं०	१५१४सं०	१५३० ,,	जयशलमेरसे ,,
५७	जिनसमुद्र	१५०६ ,,	पारख	देकीसाह	१५२१ ,,	१५३० ,,	१५५५ ,,	अहमदाबादसे ,,
५८	जिनहंस(२)	१५२४ ,,	चोपड़ा	मेघराज	१५२४ ,	१५५५ ,,	१५८२ ,,	पाटनसे ,,
५९	जिनमाणिक्य	१५४९ ,,	कुकड़चोपड़ा	जीवराज	१५६० ,,	१५८२ ,,	१६१२ ,,	
६०	जिनचन्द्र(३)	१५९५ ,,	रोहड़	श्रीवन्त	१५९५ ,,	१६१२ ,,	१६७० ,,	बेनातटसे ,,
६१	जिनसिंह	१६१५ ,,	गणधरचो०	चाम्पसी	१६२३ ,,	१६७० ,,	१६७४ ,,	मेड़तासे ,,
६२	जिनराज(४)	१६४७ ,,	बोहिथरा	धर्मसी	१६५६ ,,	१६९९ ,,	१६७४ ,,	पाटनसे ,,
६३	जिनरत्न(५)		लूणीया	तिलोकसी		१६९९ ,,	१७११ ,,	अकबराबादसे ,,
६४	जिनचन्द्र		गणधरचो०	आसकरण		१७११ ,,	१७६३ ,,	सूरतसे ,,
६५	जिनसौख्य	१७३९ ,,	लेचाबुहरा	रूपसी	१७५१ ,,	१७६३ ,,	१७८० ,,	ऋणीसे ,,
६६	जिनभक्ति	१७७० ,,	सेठ	हरिचन्द्र	१७७९ ,,	१७८० ,,	१८०४ ,,	कच्छमाण्डवीसे ,,
६७	जिनलाभ	१७८४ ,,	बोहिथर	पचायणदास	१७९६ ,,	१८०४ ,,	१८३४ ,,	गूढ़ासे ,,
६८	जिनचन्द्र	१८०९ ,,	बछावजसंहता	रूपचन्द्र	१८२२ ,,	१८३४ ,,	१८५६ ,,	सूरतसे ,,
†६९	जिनहर्ष		मिवातियाबहुरा	तिलोकचन्द्र	१८४१ ,,	१८५६ ,,		

* आञ्चलिकगच्छकी उत्पत्ति।

(१) जिनभद्रसे पहले सं० १४६१में जिनवर्द्धनको सूरिपद प्राप्त हुआ था, किन्तु ४थें व्रतके भंग हो जानेके कारण वे पदच्युत किये गये ; फिर इन्होंने सं०१४७४में पिप्पलक-खरतरगच्छशाखाकी स्थापना की थी।

(२) इनके समय (सं० १५६४)-मे आचार्यीय खरतरशाखा प्रतिष्ठित हुई थी। (३) इन्होंने अकबर बादशाहको दीक्षित किया था। और १६२१संवत्में भावरहस्यीक खरतरगच्छशाखा प्रतिष्ठित हुई थी। (४) सं० १६८६मे लघ्वाचार्यीय खरतर-गच्छ-शाखा स्थापित हुई थी और शत्रुंजयमें ५० ऋषभ-मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा तथा बहुतसे ग्रन्थ रचे गये थे। (५) १७०० संवत्में रंग-विजय द्वारा रंगविजय-खरतरगच्छकी स्थापना हुई थी।

† जिनहर्षके बाद ७१वें जिनसौख्य (१८९२—१९१७ सं०) ७२वें जिनहंस (१९१७—१९३५ सं०) ७३वें जिनचन्द्र (१९३५—१९५५ सं०) और ७४वे जिन कीर्ति (१९५५—१९६७ सं०) हुए हैं। फिलहाल ७५वें पट्टधर जिनचन्द्र विद्यमान हैं।

शब्द पुत्रादिकी भांति उभय लिङ्ग है, विशेष्यके अनुसार अपने लिङ्गको छोड कर स्त्रीलिङ्ग वा पुंलिङ्गमें व्यवहृत होता है। (९) कर्मकाण्डमें जिस वाक्यादिको रचना करनी पडती है, उसमें द्वितीय गोत्र शब्दका ही प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त दूसरी जगह अपनी इच्छानुसार कोई भी शब्दका प्रयोग किया जा सकता है। इस अवस्थामें किसी प्राचीन शास्त्रमें विरोध नहीं पडता।

गोत्र कितने हैं? प्राचीन मुनि वा ऋषियोंमेंसे किन किनके नामसे गोत्र चले हैं? इन विषयोंका निरूपण प्राचीन शास्त्रों और संग्रह ग्रन्थोंको ही आराधनासे करना पडेगा। परन्तु सम्यक् अनुशीलनके अभावसे अथवा लेखकोंके प्रमादसे उन मूल ग्रन्थोंका तथा संग्रह-ग्रन्थोंका पाठ इतना विगड गया है कि उसके वास्तविक पाठका पता लगाना असाध्य है। इसी लिए संग्रहकार पुरुषोत्तमने अपने मञ्जरी ग्रन्थमें आपस्तम्ब आदिके मत को ले कर उनके परस्परके विरोध मिटानेका बहुत प्रयत्न किया है। उनके बादके संग्रहकार कमलाकरने अपने गोत्रप्रवरदर्पणमें ऐसा लिखा है, "कात्यायनापस्तम्बादि सूत्रभाष्यालोचनेन न्यूनाधिक्यभावात् गोत्राणां प्रवराणाञ्च गणसंख्यास्वरूपसंख्याप्रवरविकल्पवादिभिर्विसम्वादाच्च सर्वसूत्रपुराणोपसंहारेण निर्णयः कार्य इत्युक्तं भवति मञ्जर्याम्।" अर्थात् पुराणादि सब ग्रन्थोंका सामञ्जस्य रखते हुए ही गोत्र निर्णय करना चाहिये।

मत्स्यपुराणमें १९५ से २०२ अध्याय तक गोत्र और प्रवरका निरूपण किया गया है। उसमें "गोत्रकारान् ऋषीन् वक्ष्ये" इत्यादि लिख कर पीछेसे जिन ऋषिओंका नाम लिखा है, शायद वे ही (मत्स्यपुराण अभिप्रेत) गोत्रोंके नाम हैं। यद्यपि यह कल्पना की जा सकती है कि किसी समय उन नामोंके गोत्र प्रचलित थे, तथापि यह मानना पडेगा कि, बहुत दिन पहिले ही उन गोत्रोंका लोप हो चुका है, अब उनका चिह्न तक नहीं मिलता।

(९) "लोकव्यवहारस्तु त्रिलिंगत्वोभयमपि गोत्रशब्दस्य उभयलिङ्गत्वादविरुद्धं पुत्रशब्दवत् यथा वशिष्ठस्य पुत्र कुण्डिन इति तथा वशिष्ठगोत्र कुण्डिन इति।" (गोत्रप्रवरमंजरी) पुरुषोत्तमकी इस लिपिके सिवा और कहीं उभयलिङ्ग गोत्र शब्दका प्रमाण नहीं मिलता।

बौधायन आदि सूत्रकारोंने कुछ गोत्रगण और प्रवरगणका निरूपण किया है। स्मृत्यर्थसार आदि ग्रन्थोंके मतानुसार ऐसा मालूम होता है कि, गोत्रगणमें जिन जिन ऋषियोंके नाम हैं, उन उन नामके एक एक गोत्र भी हैं। जैसे—वत्स, विद, आर्ष्टिषेण, यस्क, शुनक, मित्रयुव और वैन्यभृगुके ये सात गोत्रगण हैं। इस नामसे ये सात गोत्र और इनके गणमें अन्यान्य दूसरे नामके भी गोत्र प्रचलित हैं। इसी प्रकार अत्रिगोत्रगण और विश्वामित्रगोत्रगण आदि भी निरूपित हैं। परन्तु वे सब गोत्र अब प्रचलित नहीं।

धनञ्जयकृत धर्मप्रदीपमें गोत्रप्रवर्त्तक ऋषियोंके कुछ नाम लिखे हैं। वे इस प्रकार हैं—१ जमदग्नि, २ भरद्वाज, ३ विश्वामित्र, ४ अत्रि, ५ गोतम, ६ वशिष्ठ, ७ काश्यप, ८ अगस्त्य, ९ सौकालीन, १० मौद्गल्य, ११ पराशर, १२ वृहस्पति, १३ काञ्चन, १४ विष्णु, १५ कौशिक, १६ कात्यायन, १७ आत्रेय, १८ कण्व, १९ कृष्णात्रेय, २० साङ्कृति, २१ कौण्डिन्य, २२ गर्ग, २३ आङ्गिरस, २४ अनावृकाक्ष, २५ अव्य, २६ जैमिनि, २७ वृद्धि, २८ शाण्डिल्य, २९ वात्स्य, ३० आलम्बायन, ३१ वैयाघ्रपद्य, ३२ घृतकौशिक, ३३ शक्ति, ३४ काण्वायन, ३५ वासुकि, ३६ गोतम, ३७ शुनक और ३८ सौपायन। बौधायन, आपस्तम्ब और आश्वलायन आदि सूत्रकारों और पौराणिकोंने, पहिले कुछ गोत्रकाण्डोंका उल्लेख करके फिर उनके कुछ गोत्रगणोंका भी उल्लेख किया है। एक गोत्रगणमें जितने गोत्रोंका उल्लेख किया गया है, उनके प्रवर समान है। जैसे-भृगुगोत्रकाण्डके आर्ष्टिषेण गोत्रगणके अन्तर्गत जितने गोत्र हैं, उन सबहीके भार्गव, च्यवन, आप्नवान्, आर्ष्टिषेण और आनूप ये पाँच प्रवर हैं। (आर्ष्टिषेणानां भार्गवच्यवनाप्नवानार्ष्टिषेणानूपेति। आश्व० श्रौ० १२।१०।८) प्रवरका लक्षण जाननेके लिए प्रवर शब्द देखो। जिसप्रकार समान गोत्रमें विवाह निषिद्ध है, उसीप्रकार समान प्रवर होने पर भी विवाह निषिद्ध है।

बौधायन आदिने जिन जिन गोत्रगणोंका उल्लेख किया है, उनके नाम आदि नीचे लिखे जाते हैं—

भृगुगोत्रकाण्डमें वत्स, आर्ष्टिषेण, विद, यस्क, मित्रयुव, वैन्य और शुनक—इन सात गोत्रगणोंका उल्लेख है। बौधा-

धर्मसागरने यह भी कहा है, कि दुर्लभराजकी सभामें सं० १०२४को चैत्यवासीके पराजित होने पर जिनेश्वरने खरतर विरुद प्राप्त किया, जो यह कथा प्रचलित है, वह असूलक है कारण, दुर्लभराज उसके बहुत समय पीछे, अर्थात् सं० १०६६को सिंहासन पर बैठे थे। विशेषतः १५८२ संवत्में लिखित स्रोकानुवन्धी खरतर गच्छकी पट्टावलीमें लिखा है, कि सं० १०२४ में जिनहंस सूरि पट्टधर थे; दर्शन सप्ततिकावृत्ति, अभयदेवकृत ऋषभचरित, और उनके शिष्य वर्द्धमानकृत प्राकृत गाथा एवं प्रभाविक चरित्रमें खरतरके विषयमें कुछ भी उल्लेख नहीं है। सुमतिगणिके ग्रन्थके पढ़नेसे मालूम होता है, कि जिनवल्लभने जिनदत्तको देखा ही नहीं था। धर्मसागरने अपने ग्रन्थमें जो पट्टावली उद्धृत की है, उससे भी यह मालूम नहीं होता कि जिनवल्लभ अभयदेवके शिष्य थे। धर्मसागरने लिखा है कि प्राचीन गाथाके अनुसार १२०४ संवत्में ही जिनदत्त सूरि द्वारा खरतर शाखा प्रवर्त्तित हुई थी। जिनदत्त अत्यन्त खरप्रकृतिके थे, इसीलिए साधारण लोग उन्हें खरतर कहा करते थे; जिनदत्तने भी आदरके साथ उस नामको ग्रहण किया था। इन्हीं जिनदत्तकी शिष्यपरम्परा खरतरगच्छ नामसे प्रसिद्ध हुई।

धर्मसागरके मतसे जिनशेखरसे रुद्रपल्लीका गच्छ प्रसिद्ध नहीं हुआ; उनके बाद ४र्थ पट्टधर अभयदेवसे ही रुद्रपल्लीय गच्छका सूत्रपात है।

आञ्चलिकोत्पत्ति—१२३ संवत्में आञ्चलिक शाखाकी उत्पत्ति हुई। पौर्णमीयक पक्षमें नरसिंह नामक एक व्यक्ति वास करते थे, जो एकाक्ष और बहुभाषी थे। पौर्णमीयकोंने उन्हें जातिच्युत कर दिया। विद्रना नामक एक ग्राममें वास करते समय एक नाधि नामकी अन्ध रमणी उनको वन्दनाके लिए आई, पर वह अपनी मुखाच्छादनी लाना भूल गई। जैनशास्त्रमें किसी प्रकारका विधान न होने पर भी नरसिंहने उसे आंचलसे मुंह ढकनेके लिए कहा, जिससे यतियोंमें बड़ी अशान्ति फैल गई। नाधिके अर्थकी कमी नहीं थी, उस अर्थकी सहायतासे नरसिंहने आञ्चलिक पन्थका प्रचार किया। नाधिके अनुरोधसे नाटप्रदीप चैत्यवासीने नरसिंहको सूरिपद प्रदान किया। तबसे नरसिंहका नाम आर्यरक्षित पड़ गया। इन्होंने मुखाच्छादन और रजोहरण परित्याग कर साधारण जैनों द्वारा अनुष्ठित प्रतिक्रमण भी उठा दिया। इस शाखाके अनुयायीगण आञ्चलिक नामसे प्रसिद्ध हुए। आञ्चलिकगण आत्मागम, अनन्तरागम और परम्परागम इन तीन प्रकारके आगमोंको स्वीकार करते हैं।

सार्द्धपौर्णमीकोत्पत्ति—सं १२३६ ई०में इस शाखाकी उत्पत्ति हुई। इसकी उत्पत्तिके विषयमें धर्मसागर गणि लिखते हैं,—

एक दिन राजा कुमारपालने प्रसिद्ध जैनाचार्य हेमचन्द्रसे पौर्णमीयक मतके विषयमें पूछा। हेमचन्द्रके मुखसे विस्तृत विवरण सुन कर कुमारपालने अपने राज्यसे पौर्णमीयकोंको निकाल देनेका निश्चय किया। एक दिन उन्होंने पौर्णमीयके आचार्यसे पूछा—"आप लोगोंके मतका परिपोषक कोई आगम वा पूर्ववाद है या नहीं?" पौर्णमीयकने इसका अवज्ञासूचक उत्तर दिया; जिससे समस्त पौर्णमीयकोंको कुमारपालके अधिकार १८ जनपदोंसे निकल जाना पड़ा। कुमारपाल और हेमचन्द्रकी मृत्युके बाद आचार्य सुमतिसिंह नामक एक पौर्णमीयक छद्मवेशसे पत्तननगरमें आये। परिचय पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया "मैं सार्द्धपौर्णमीयक हूं।" सुमतिसिंहके कोई कोई शिष्य इस सम्प्रदायको 'सार्द्धपौर्णमीयक' भी कहते हैं।

आगमिकोत्पत्ति—शीलगण और देवभद्र पौर्णमीयकके पक्षको छोड़ कर पहले तो आञ्चलिक हुए; पीछे शत्रुञ्जय तीर्थमें सात साधुओंके साथ मिल कर उन्होंने शास्त्रोक्त क्षेत्रदेवता की पूजाके परिहाररूप नवीन मतका प्रचार किया। यही मत आगमिक और त्रिस्तुतिक नामसे विख्यात हुआ। १२५० सं०में यह मत प्रचलित हुआ।

लुम्पकोत्पत्ति—गुजरातके अन्तर्गत अहमदाबाद नगरमें दशा-श्रीमाल जातिके एक लङ्का वा लुम्पक नामके एक लेखक (प्रतिलिपिकर) रहते थे। ये ज्ञानयतिके उपाश्रयमें पोथी लिखनेका काम करते थे। पोथी

माधुलार और अजगन्धि—इनको कारिणपालिगण कहते हैं। इनके प्रवर तीन हैं,— आङ्गिरस, गौतम और कारिणपालि। (बौधायन गौतम काण्ड ६ अ०)

भरद्वाज-गोत्रकाण्ड—

१। भरद्वाज, चास्यायण, मङ्गडा, देवश्वानुदुवह्व्या, प्रगयोसि, सीमायन, तैदेह, अत्ताशा, योचाभूरि, पारिगड्डेय, केशरवेय, इपुवत्, वीदयेधि प्रवाहणीय, कम्योण, स्तम्बि, सयोय, प्रक्षतपर, हेरि, सैद्वयद्रुग, चारि, ग्रीवि, औपमि, वायाचि, भेद, अग्निरेह्याघट, गौरि, वायवि, कर्ण, धाच, मानविय, कड़्वमैका, खोञ्वलि, खारुडादि, तरुङ्गेय, भद्रामय, सौरभ, सैद्यकेय, कौण्डायन, कौण्डल्य प्रवाहणीय, वलभीकि, रुडाङ्गपथ, शालाहनि, वैद्वेलायण, नृत्यायन, शालालय, शार्ट्टलि, ब्रह्मस्तम्ब, अग्निस्तम्ब, वायुस्तम्ब, सूर्य्यस्तम्ब, सोमस्तम्ब, विष्णुस्तम्ब, यमस्तम्ब, इन्द्रस्तम्ब, आपस्तम्ब तथा अन्यान्य स्तम्बान्त शब्द, आरखाकि, सिन्धुसौगन्धि, शिखायन, आत्रेयायण, कुचा, कौकाचि, पतैनैतूति, दार्भिस्यामेय, मश्वक्राथ, कारुणायन, कारुपथि, कारिषायण और कारस्त इन सबको भरद्वाजगण कहते हैं। इनके प्रवर तीन प्रकार हैं—आङ्गिरस, वार्हस्पत्य और भरद्वाज।

(बौधायन भरद्वाज गोत्र काण्ड)

केवलाङ्गिरस गोत्र काण्ड—

१। हरित, शङ्खोदन, सोभग, लोमरव, मलायु, नावोटर, नैमिश्र, आमिश्रोदन, कौतप, कारिषि, कौलि, यौलि, पौण्डल, माधूय, माधातु और माण्डकारि इनका गण हरित है। इनके प्रवर तीन हैं-आङ्गिरस, आम्बरीष और यौवनाश्व।

२। कद्रु, योपमकरायण, वास्कन, पौलहानि, लोमाञ्जि माञ्जि, मौधिगान्ध, विजिवाजि और वाजश्रवस, ये सब कद्रुगण हैं। इनके तीन प्रवर हैं—आङ्गिरस, आजमीढ और काद्रव।

३। रथीतर, हस्तिदासि, काचायण, नौतिरक्षु, शैलालि, भिलिभि, लिङायन, मावहव, मैत्रावाह और हेमनावाट—इनको रतिगण कहते हैं।—इनके भी प्रवर तीन हैं,—आङ्गिरस, वैरूप और रथीतर।

४। विष्णुवृद्ध, शटामरण, भद्राण, मद्राण, वादायन, गल्व प्रायण, धात्यकि, सात्यकायन, नैतुण्ड, सुतर, भाहन्य और देवस्थानो—इनको विष्णुवृद्धगण कहते हैं। ३ प्रवर ये हैं—आङ्गिरस, पौरकुत्स और त्रासदस्य।

५। सङ्कृति, मलक, पौलस्तम्भि, शम्ब, शैभव, तारक, आधारि, ग्रीवाशिषय, श्रौतायन, रायग्नायन, आग्रापि और पूतिमाष—ये सब सङ्कृतिगण हैं। इनके ३ प्रवर—आङ्गिरस, गौरवीत और साङ्कृत्य हैं।

६। कपि, वैतल, अनाश्व सायन, पतञ्जल, अन्तरक्षिन, ताक्षिन, आम्भोज, सिनाङ्काश, स्वनाङ्कर, शिखंडायन, आमोषितकि, सागसह और वौथि—इनको कपिगण कहते हैं। इनके आङ्गिरस, आमहीय और उरुक्षयस ये तीन प्रवर हैं। (बौधायन)

अत्रिगोत्रकाण्ड—

१। अत्रि, छान्दादि, पौष्टिका, माहुलय, नैपाच्छरा, लाच्छनाकि, प्रोणभावा, गौरिग्रीव, योग, विशिष्ठिरा, शिशुपाल, कृष्णात्रेय, गौरात्रेय, अरुणात्रेय, निनात्रेय श्वेतात्रेय, महात्रेय, पालेयेतर, गेयरामरथि, वैतभाव, सौद्रेय, कौद्रेय, गोपवत्य, कालायचय, अनिलायन, आनङ्गि, मानङ्गि, सौरङ्गि, गौरङ्गि, पुष्पय, सैव्य, साकेतायन भारद्वाजायन और इन्द्रातिम्मि—इनको अत्रिगण कहते हैं। इनके प्रवर तीन प्रकारके हैं,—आत्रेय, आर्चनान और आनसश्याव।

२। वाभ्रुतकगणके तीन प्रवर ये हैं,—आत्रेय, आनसश्याव और वाभ्रुतक।

३। गविष्ठिरगणके तीन प्रवर—आत्रेय, आर्चनान और गविष्ठिर।

४। मुद्गल, व्याशि, संयि, आरणच, बौधाच, गविष्ठिर, वैतवाह, शिविषय शालिमन, गौरिति, गौरकि और वायवन इनको मुद्गलगण कहते हैं। इनके भी तीन प्रवर हैं-आत्रेय, आर्चनान और मौद्गल्य।

(बौधायन, अत्रिगोत्रकांड)

विश्वामित्रगोत्रकाण्ड—

१। कुशिक, पर्णजघ, वारकय, औदलि, माणि, बृहदग्नि वानविरा, यहिरापहरधा, कामन्तका, वर्द्ध कथा, चिकि, ताल, मकरायण, शालङ्कायन, शाङ्कायन, लौक, गौर, सौगस्ति, यमदूत, अत्रभिन्न, शनवकायन,

पट्ट	नाम	विशेष विवरण
४७	सोमप्रभ (२य)	(सं० १३१०—१३७३)
४८	सोमतिलक	(सं० १३५५—१४२४)
४९	देवसुन्दर	(जन्म सं० १३९३)
५०	सोमसुन्दर	(सं० १४३०—१४९९)
५१	मुनिसुन्दर	(सं० १४३६—१५०३)
५२	रत्नशेखर	(सं० १४५७-१५१७)
५३	लक्ष्मीसागर	(जन्मसं० १४५४)
५४	सुमतिसाधु	...
५२	रत्नशेखर	(सं० १४५७—१५१७)
५३	लक्ष्मीसागर	(जन्मसं० १४५४)
५४	सुमतिसाधु	..
५५	हेमविमल	(इनके समयमें कडुआ पन्थ चला)
५६	आनन्दविमल	(सं० १५४३—१५९३)
५७	विजयदान	(सं० १५५३-१६२२)
५८	हीरविजय	(सं० १५८३-१६५२)
५९	विजयसेन	(सं० १६०४-१६७१)
६०	विजयदेव	(सं० १६३४-१६८१)
६१	विजयसिंह	(सं० १६४४-१७०८)
६२	विजयप्रभ	(सं० १६९५-१७४९)
		(इनके समयमें ढूंढियापन्थ चला)
६३	विजयरत्नसूरि	
६४	विजयक्षेमसूरि	
६५	विजयदयासूरि	
६६	विजयधर्मसूरि	
६७	विजयजिनेन्द्र सूरि	
६८	विजयदेवेन्द्र सूरि	
६९	विजयधर्मसूरि (२य)	

तपागच्छ—विजयशाखा ।

(१ से ५९ तक तपागच्छके समान ।)

६० विजयदेव सूरि
६१ विजयेसिंह सूरि
६२ सत्यविजय सूरि
६३ कपूरविजय गणि
६४ क्षमाविजय
६५ जिन विजय
६६ उत्तम विजय
६७ पद्मविजय
६८ रूपविजय गणि
६९ कीर्ति विजय
७० कस्तूरविजय
७१ मणिविजय
७२ बुद्धिविजय
७३ आनन्दविजय सूरि
७५ कमल विजय आचार्य (वर्तमान)

अञ्चलगच्छ ।

१ आर्यरक्षित (संवत् १२०२—१२३६)
२ जयसिंह (सं० १२३६—१२५८)
३ धर्मघोष (सं० १२४८—१२६८)
४ महेन्द्रसिंह (सं० १२६९—१३०९)
५ सिंहप्रभु (सं० १३०९—१३१३)
६ अजितसिंह (सं० १३१४—१३३९)
७ देवेन्द्रसिंह (सं० १३३९—१३७१)
८ धर्मप्रभ (सं० १३९१—१३९३)
९ सिंहतिलक (सं० १३९३—१३९५)
१० महेन्द्र (सं० १३९५—१४४४)
११ मेरुतुङ्ग (सं० १४४६—१४७१)
१२ जयकीर्ति (सं० १४७३—१५००)
१३ जयकेशरी (सं० १५०१—१५४२)
१४ सिद्धान्तसागर (सं० १५४२—१५६०)
१५ भावसागर (सं० १५६०—१५८३)
१६ गुणनिधान (सं० १५८४—१६०२)
१७ धर्ममूर्ति (सं० १६०२—१६७३)
१८ कल्याणसागर (सं० १६७०—१७१८)
१९ अमरसागर (सं० १७१८—१७६२)
२० विद्यासागर (सं० १७६२—१७०५)
२१ उदयसागर (सं० १७९७—१८२६)
२२ कीर्तिसागर (सं० १८२६—१८४३)
२३ पुण्यसागर (सं० १८४३—१८६०)
२४ मुक्तिसागर (सं० १८६०—१८९३)
२५ राजेन्द्रसागर (सं० १८९२—१९१४)
२६ रत्नसागर (सं० १९१४—१९२८)
२७ विवेकसागर (सं० १९२८)

पार्श्वचन्द्रगच्छ ।

१ पार्श्वचन्द्र सूरि (सं० १५६५, मृत्यु १६१२)
२ समरचन्द्र (सं० १६२६)
३ रायचन्द्र (सं० १६६९)
४ विमलचन्द्र (सं० १६७४)
५ जयचन्द्र (सं० १६९८)

पाथोद्गत, हारिग्रोवा रौहिण्य और नोग्रनहि, इनका नाम अगस्तिगोत्रगण है। इनके अगस्ति, दार्ढ्यच्युत और इध्मवाह—ये तीन प्रवर है। (बोधायन अगस्तिगोत्रकाण्ड)

बौधायनके अनुसार गोत्र और प्रवरका विषय लिखा जा चुका है।* कात्यायन-प्रणीत श्रौतग्रन्थमें और मत्स्य-पुराणमें भी ये सब गोत्रकाण्ड लिखे हैं। परन्तु तीनों ग्रन्थोंमें एकसा नहीं लिखा, कहीं पर किसी ग्रन्थमें दो एक गोत्र ज्यादा भी है और कम भी। (गोत्रप्रवरमञ्जरी)

गोत्रप्रवरदर्पणके कर्त्ता कमलाकरने अपने ग्रन्थमें बौधायनोक्त भृगुगोत्रकाण्डका उल्लेख करते हुए कहा है कि, "एते बौधायनोक्ताः यद्यपि प्रवरमञ्जरीधृतबौधायन सूत्र आकरसूत्रे च भूयान् न्यूनाधिकभावः तदप्युभयानुसारेण वदामः। अर्थात्—यद्यपि ये बौधायनके कहे हुए गोत्र हैं, परन्तु तो भी प्रवरमञ्जरीमें बौधायनके जो जो सूत्र उद्धृत किये गये हैं, उनमें और (जो प्राप्त है) बौधायनके मूल ग्रन्थमें बहुतसे पातोंमें व्यतिक्रम या न्यूनाधिकता पायो जाती है। ऐसी दशामें हम यहां दोनोंके मतानुसार ही लिखेंगे। इसीसे साफ ही जाहिर होता है कि, बौधायनके मूलग्रन्थके साथ पुरुषोत्तमकृत प्रवरमञ्जरीका पाठ बहुत जगह मिलता नहीं। कमलाकर भी यह निश्चित नहीं कर सके कि, किसका पाठ यथार्थ है और किसका भ्रमात्मक। इसी लिए उन्होंने दोनोंके अनुसार लिखा है। अतिप्राचीन हस्तलिखित प्रवरमञ्जरीमें जैसा पाठ लिखा है वहां वैसा ही पाठ सन्निवेशित किया गया है।† बौधायनने जिन जिन गोत्रों और प्रवरोंका उल्लेख किया है, वर्तमानमें उनका प्रचार बहुत ही कम देखनेमें आता है। जितने भी गोत्र देखे जाते हैं, उनके प्रवर बौधायनोक्त प्रवरसे भिन्न हैं। अत एव धनञ्जयकृत धर्मप्रदीपमें जितने गोत्र और प्रवर लिखे हैं, यहां भी उनका उल्लेख करना जरूरी था।

* मत्स्यपुराण, कात्यायन-श्रौतसूत्र, आश्वलायन-श्रौतसूत्र, आपस्तम्ब श्रौतसूत्र आदि ग्रन्थोंको देखना चाहिये।

† हस्तलिखित पोथी देख कर बौधायनोंके गोत्र और प्रवरके नाम लिखे गये हैं। इसलिए नामोंमें बहुत जगह सन्देह भी है।

वर्तमानमें प्रचलित गोत्र और प्रवरोंके नाम (१) इस प्रकार है—

	गोत्रोंके नाम।	प्रवरके नाम।
१	जमदग्नि	जमदग्नि, और्व और वशिष्ठ।
२	विश्वामित्र	विश्वामित्र, मरीचि और कौशिक।
३	अत्रि	अत्रि, आत्रेय और शातातप।
४	गोतम	गोतम, वशिष्ठ और वार्हस्पत्य।
५	वशिष्ठ	वशिष्ठ। मतान्तरमें वशिष्ठ, अत्रि और साङ्कृति।
६	काश्यप	काश्यप, अप्सार और नैध्रुव।
७	अगस्त्य	अगस्ति, दधीचि और जैमिनि।
८	सौकालीन	सौकालीन, आङ्गिरस, वार्हस्पत्य, अप्सार और नैध्रुव।
९	मौद्गल्य	और्व, च्यवन, भार्गव, जामदग्न्य और आप्नुवत्।
१०	पराशर	पराशर, शक्ति और वशिष्ठ।
११	वृहस्पति	वृहस्पति, कपिल और पार्वण।
१२	काश्वन	अश्वत्थ, देवल और देवराज।
१३	विष्णु	विष्णु, वृद्धि और कौरव।
१४	कौशिक	कौशिक, अत्रि और जमदग्नि।
१५	कात्यायन	अत्रि, भृगु और वशिष्ठ।
१६	आत्रेय	आत्रेय शातातप और सांख्य।
१७	काण्व	काण्व, अश्वत्थ और देवल।

(१) "जमदग्निर्भरद्वाजो विश्वामित्रात्रिगोतमाः।
वशिष्ठः काश्यपोऽगस्त्यो मुनयो गोत्रकारिणः॥
एतेषां यान्यपत्यानि तानि गोत्राणि मन्वते।
उपदुर्लभसञ्ज्ञेषा शाण्डिल्याख्यं तथा च।
सौकालीनकम् इत्याद्या पराशरवृहस्पती॥
काश्वनो विष्णुः कौशिकी कात्यायनस्तु सकाण्वका।
कृष्णात्रेय साङ्कृतिश्च कौण्डिन्यो गर्ग स शुक्रः॥
आङ्गिरस इति व्यासः धनञ्जयनाम द्विजः।
अश्वत्थो मितो वशिष्ठो शाण्डिल्यो वात्स्य एव च॥
सावर्णिस्यानवै भारद्वाज एव गौतमः।
शक्तिः कात्यायनश्चैव वासुकौ गौतमस्तथा॥
मुनक मौद्गल्यश्चैव मुनयो गोत्रकारिणः।
एतेषां यान्यपत्यानि तानि गोत्राणि मन्वते॥" (धर्मप्रदीप)

नन्दि और पूज्यपाद स्वामी दोनों एक ही व्यक्ति और दिगम्बर जैनाचार्य हैं तथा इन्होंने जैनेन्द्र व्याकरणकी रचना की है। विशेष प्रमाण यह है कि, इनके बनाये हुए सर्वार्थसिद्धि इष्टोपदेश, समाधिशतक आदि ग्रन्थ और भी प्राप्त हैं जो दिगम्बर सम्प्रदायके हैं।

१२०५ ई०में सोमदेवाचार्यने शब्दार्णवचन्द्रिका नामक एक भाष्य बनाया है। उन्होंने पहले ही तीर्थंकर और पूज्यपाद गुणनन्दिदेवको नमस्कार कर ग्रन्थसूचना लिखी है। जैनेन्द्र व्याकरणकी, प्रक्रियाके कर्त्ता देवनन्दिके प्रशिष्य गुणनन्दि हैं इन्होंने अपनी प्रक्रियाका नाम जैनेन्द्रप्रक्रिया रक्खा है। यह ग्रन्थ वर्तमानके समस्त जैनविद्यालयोंमें पढ़ाया जाता है, तथा कलकत्ताके संस्कृत विश्वविद्यालयके परीक्षालयमें भी प्रविष्ट है।

जैनेन्द्रभूषण—चंद्रप्रभपुराण—छन्दोबद्धके रचयिता जैन कवि। २ एक जैन भट्टारक। वि० सं० १७३३में ये विद्यमान थे। इन्होंने जिनेन्द्रमाहात्म्य, सम्मेदशिखर-माहात्म्य, करकण्डुचरित्र आदि (संस्कृत और प्राकृत भाषामें) ग्रन्थ लिखे हैं।

जैन्य (सं० त्रि०) जैन स्वार्थे यत्। जैनसम्बन्धीय।

जैपाल (सं० पु०) जयपाल पृषोदरादित्वात् साधुः। जयपालवृक्ष, जमालगोटाका पेड़। जयपालका बीज, जमालगोटाका बीज। जमालगोटा देखो।

जैपत्र (हिं० पु०) जयपत्र देखो।

जैमङ्गल (मि० पु०) १ एक प्रकारका वृक्ष। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है और मेज कुरसी इत्यादि बनानेके काममें आती है। २ वह हाथी जो सिर्फ राजाकी सवारीका हो।

जैमाल (हिं० स्त्री०) जयमाल देखो।

जैमिनि (सं० पु०) मुनिभेद। ये कृष्णद्वैपायनके शिष्य थे। इन्होंने व्यासदेवके पास सामवेद और महाभारत की शिक्षा पाई थी। इनकी बनाई हुई भारतसंहिता नामक पुस्तक जैमिनिभारतके नामसे प्रसिद्ध है। जैमिनिने एक दर्शनकी रचना की है जिसका नाम जैमिनिदर्शन वा पूर्वमीमांसा है। यह पूर्वमीमांसा षड्दर्शनमेंसे एक है। जैमिनिकी वज्रवारकोंमें गिनती है।

इन्होंने द्रोणपुत्रोंसे मार्कण्डेयपुराण सुना था, इनके पुत्रका नाम सुमन्तु और पौत्रका नाम सुत्वान् है। इन तीनोंने वेदकी एक एक संहिता बनाई है। हिरण्यनाभ, पैष्यञ्जि और अवन्त्य नामके तीन शिष्योंने उन संहिताओंका अध्ययन किया था।

जैमिनिदर्शन (सं० क्ली०) जैमिनिकृतं दर्शनं, कर्मधा०। मीमांसा वा पूर्वमीमांसा। यह बारह अध्यायों में विभक्त है, उसमें वेदकी मीमांसा और श्रुतिस्मृतिका विरोधभञ्जन है। यह शास्त्रज्ञानका द्वारस्वरूप है। इसमें न्यायशास्त्रका पथ अवलम्बन कर वेदके विषय और प्राधान्यकी मीमांसा की गई है। मीमांसा देखो।

जैमिनिभारत—महर्षि जैमिनिप्रसिद्ध भारतसंहिता। इसका सिर्फ अश्वमेध पर्व ही मिलता है। बहुतोंका कहना है कि, इसके अन्यान्य पर्व इस समय हैं नहीं। परन्तु थे या नहीं इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। अश्वमेध पर्व जो मिलता है, वह महाभारतीय अश्वमेध-पर्वकी अपेक्षा विस्तृत है और उसमें अनेक नवीन घटनाओंका वर्णन मिलता है।

जैमिनीय (सं० त्रि०) १ जैमिनि सम्बन्धीय। (पु०) २ सामवेदकी एक शाखा।

जैमूत (सं० त्रि०) जीमूत सम्बन्धीय।

जैयट (सं० पु०) प्रसिद्ध महाभाष्यटीकाकार कैयटके पिता।

जैयद (अ० त्रि०) १ बहुत बड़ा, घोर, बड़ा भारी। २ बहुत धनी।

जैल (अ० पु०) १ दामन, अंगे, कोट, कुर्ते, इत्यादिका नीचेका भाग। २ निम्न भाग, नीचेका स्थान। ३ पंक्ति, समूह, सफ। ४ इलाका, हलका।

जैलदार (अ० पु०) सरकारी कर्मचारी जिसके अधिकारमें कई गावोंका प्रबन्ध हो।

जैव (सं० त्रि०) जीवस्येदं जीव-अण्। १ जीवन सम्बन्धीय। २ बृहस्पति सम्बन्धीय। (पु०) ३ बृहस्पतिके क्षेत्रमें धनु और मीन राशि। ४ पुष्यानक्षत्र। ५ पुष्यानक्षत्रपात।

"कृताद्रिचन्द्राः जैवस्य त्रिखांकाश्च भृगोस्तथा।" (सूर्यसि०)

जैवन्तायन (सं० पु० स्त्री०) जीवन्तस्य गोत्रापत्यं वा

गोत्ररिक्थ (सं० क्लो०) गोत्रस्य रिक्थं, ६ तत्। गोत्रधन।

गोत्रवत् (सं० त्रि०) गोत्रं अस्त्यस्य गोत्र-मतुप् मकारस्य वकारः। गोत्रयुक्त, जिसको गोत्र है।

गोत्रवृक्ष (सं० पु०) गोत्रजातः वृक्षः। धन्वनवृक्ष। (भावप्रकाश)

गोत्रसुता (सं० स्त्री०) पर्वतकी पुत्री, पार्वती।

गोत्रस्खलन (सं० क्ली०) गोत्रे नामनि स्खलनं ७ तत्। एक नाम बोलनेके अभिप्रायसे किसी दूसरे नामका उच्चारण, मनुष्य अतिशय गाढ चिंतामें मग्न रहता है तो इस तरहकी घटना घटती है किन्तु आलङ्कारिक गणोंका मत है कि नायक और नायिकाका अनुराग वर्द्धित होने पर गोत्रस्खलन हुआ करता है।

गोत्रा (सं० स्त्री०) गाः पशून्, सर्वान् जीवान्, त्रायते त्रै क-टाप्। १ पृथ्वी। गवां समूहः गो-त्र टाप्। २ गोसमूह, गायका झुण्ड। ३ गायत्रीस्वरूपा महादेवी (देवीभा० १२।६।४१)

गोत्रादि (सं० पु०) पाणिनीय एक गण। गोत्र, ध्रुव, प्रवचन, प्रहसन, प्रकथन, प्रत्यायन, प्रपञ्च, प्राय, न्याय, प्रचक्षण, विचक्षण, अवचक्षण, स्वाध्य, भूमिष्ठ और वानाम इन सबोंको गोत्रादि गण कहते हैं। गोत्रगण तिङन्तके बाद होने पर अनुदात्त हो जाता है।

गोत्रान्त (सं० पु०) गोत्रस्यान्तः ६-तत्। गोत्रका विनाश, वंशका नाश।

गोत्रान्तर (सं० क्ली०) नित्यस०। अन्य गोत्र, दूसरा गोत्र।

गोत्रिक (सं० त्रि०) गोत्रे भवः गोत्र ठकन्। गोत्रोत्पन्न, गोत्रिय।

गोत्री (सं० त्रि०) समान गोत्रवाले, गोत्रज, गोतिया।

गोत्व (सं० क्ली०) गोर्भावः गोत्व। १ जातिविशेष, जिस जातिको सिर्फ गौ ही है, दूसरा कोई पदार्थ नहीं, उसीको गोत्व जाति बोलते हैं। २ गोका धर्म।

गोद (सं० पु०) गा नेत्रं दायति शोधयति दै-क। १ मस्तिष्क, मगज। (त्रि०) गां ददाति दा-क। २ गोदाता, गोदान करनेवाला। (पु०) ३ गोदावरीके निकटस्थ एक देश।

गोद (हिं० स्त्री०) १ उत्सङ्ग, कोरा, ओली। २ वक्षस्थलके पासका स्त्रियोंकी साड़ीका एक भाग।

गोदगुदली (हिं० पु०) गूलू नामका पेड़।

गोदत्र (सं० क्ली०) गोदं त्रायते त्रै-क। १ मस्तिष्क-रक्षक, मुकुटादि। (पु०) २ इन्द्र। (त्रि०) ३ गोदान करनेवाला।

गोदधि (सं० क्ली०) गायका दही।

गोदनहर (हिं०) गोदनहारी देखो।

गोदनहरा (हिं० पु०) टीका लगानेवाला, माता छापनेवाला।

गोदनहारी (हिं० स्त्री०) नटजातिकी स्त्री जो गोदना गोदनेका काम करती है।

गोदना (हिं० क्रि०) १ गड़ाना। २ किसी कामके लिए बार बार यत्न करना। ३ छेड़ छाड़ करना। ४ हाथीको अंकुश देना। (पु०) ५ एक विशेष प्रकारका काला चिन्ह जो तिलके आकार होता है। नट जातिकी स्त्रियां अपनी सूईको नील या कोयलेके पानीमें डुबा कर मनुष्यके शरीरमें छेद देती हैं। इसमें दो तीन रोज तक शरीरमें बहुत वेदना मालूम पड़ती है। किन्तु उसके बाद वह चिन्ह सदाके लिए रह जाता है।

गोदना—सारण जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २५° ४७' उ० और देशा० ८४° ३९' पू०में गङ्गा और घेघरा नदीके सङ्गम पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६७६५ है। सारण जिलेमें यही नगर प्रधान वाणिज्य स्थान है। चम्पारण, नेपाल, बङ्गाल और उत्तर पश्चिम भारतके द्रव्यजातकी रफतनी और आमदनी इसी स्थानसे हुआ करती हैं। निम्नबङ्गसे जो समस्त नावें चावल और लवण बोझ कर युक्तप्रदेश जाती हैं, उनका माल गोरखपुर और फैजाबादकी नावोंमें रख कर पश्चिमाञ्चल भेजा जाता है। प्रतिवर्ष दो बार कार्तिक और चैत्र मासमें यहां मेला लगता है। ऐसा प्रवाद है कि न्यायदर्शनकार गौतम ऋषि अहल्याके साथ यहां वास करते थे। एक भग्न कुटीरमें काष्ठपादुका भी देखी जाती है। अधिवासी यात्रियोंको वही स्थान गौतमका आश्रम बतलाया करते हैं।

१७८८ ई०को रेवल साहब गवर्मेण्टके शुल्क संग्रहकर्त्ता होकर यहां आये थे। जिन्होंने एक बाजार तथा शुल्क संग्रहके लिये एक घर निर्माण किया था। आजभी

अलगर्दा—अत्यन्त रोमयुक्त, वृहत् पार्श्वयुक्त और काले मुंहवाली होती है। इन्द्रायुधा-इन्द्रधनुषकी भांति ऊर्ध्व रोमराजि द्वारा विचित्र होती है। गोचन्दना—गोवृषके सींगोंको तरह दो भागोंमें विभक्त और छोटे मस्तक वाली होती है। कबूंरा—बाइन (१) मछलीको तरह लम्बी, कुचिदेश छिन्न और उन्नत होता है। सामुद्रिक—कृष्ण और कुछ पीतवर्ण और विचित्र पुष्पाकृति होती है। मनुष्यके शरीर पर इन विषाक्त जोंकोंके काटनेसे दष्ट स्थान फूल जाता है, खुजली मचती है, मूर्च्छा, ज्वर, दाह, वमन, मनमें विकृति भाव और शरीरमें अवसन्नता आ जाती है।

छ प्रकार निर्विष जोंकोंमें कपिलाके दोनों पार्श्वका वर्ण मनःशिलारञ्जित जैसा है, पीठ मूंग जैसे रंगकी और चिकनी होती है। पिङ्गलाका शरीर गोलाकार रंग कुछ ललाईको लिए पिङ्गल और गति शीघ्र होती है। शङ्कुमुखीका रंग यकृत जैसा और आकार दीर्घ है तथा मुंह तीक्ष्ण होनेके कारण बहुत जल्दी शरीरमें प्रविष्ट हो जाता है और थोड़े समयमें बहुत ज्यादा खून पीता है। मूषिकाका आकार और रङ्ग चूहे जैसा तथा इसका शरीर दुर्गन्धिविशिष्ट होता है। पुण्डरीकमुखीका रंग मूंग जैसा और मुंह पद्मके समान है। सावरिकाका शरीर चिकना, रंग पद्मपत्रकी भांति और लम्बाई १८ अङ्गुल है।

सुश्रुतका कहना है कि, विषाक्त मत्स्य, कीट, भेक, मूत्र और पुरोषके सड़ने पर उस गन्दे पानीमें जोंक पैदा होती है, वह सविष है तथा जो पद्म, उत्पल, नलिन कुमुद, श्वेतपद्म, कुवलय, पुण्डरीक और शैवालके सड़ने पर उस निर्मल जलमें पैदा होती है, वह निर्विष है। इनमें जो बलवान् है, शीघ्र रक्त पान करती और अधिक भोजन करती है तथा शरीर भी जिनका बड़ा है, उन्हें निर्विष समझना चाहिये। यवन, पाण्ड्य, सह्य, पौण्ड्र, आदि देश इनके वासस्थान हैं। ये देशों और सुगन्धित जलमें विचरण किया करती हैं। सङ्कीर्ण स्थानमें चरती नहीं और न पङ्कमें सोती हैं। (सुश्रुत सूत्रस्थान)

इस भूमण्डल पर सभी देशोंमें जोंक देखनेमें आती है। भिन्न भिन्न देशोंमें इसके नाम भी भिन्न भिन्न हैं। अरब देशमें इसको साधारणतः आबुक कहते हैं और पारस्य देशमें जेलू। इङ्गलैण्डमें इसे लिच (Leech) कहते हैं। जोंके नानाप्रकारकी हैं और इनमें आकृतिसम्बन्धी वैषम्य इतना अधिक है कि इनके सहसा देख लेनेसे यही निश्चय होता है कि ये भिन्न जातीय हैं, किन्तु प्रकृतिगत सादृश्यके कारण इनको एक जातिके अन्तर्भुक्त किया जा सकता है। यूरोपीय प्राणितत्त्वविदोंने साधारणतः आनेलिडा (Annelida) नामसे इनका उल्लेख किया है। परन्तु बैरन कुवियर नामक किसी विद्वान्‌ने आनेलिडा और साधारण जोंकको विभिन्न श्रेणीका बतलाया है। आनेलिडा जातिको पैदाइश अण्डेसे है, परन्तु साधारण जोंक किसी दूसरी जोंकके निकाले हुए त्वक्‌गत बीजकोषसे पैदा होती है। कुछ भी हो, 'आनेलिडा' नाना श्रेणियोंमें विभक्त है और उस जातिके अन्तर्भुक्त हिरुडिनाइडि (Hirudinidae) श्रेणीसे डेला (Bdella), हिमाडिप्सा (Haemadipsa), सांगुइसिउगा (Sanguisuga) आदि जोंकें उत्पन्न होती हैं, जो भिन्न भिन्न स्थानोंमें—कुछ साफ पानीमें, कुछ नुनखरे पानीमें और कुछ जल स्थल दोनों जगह वास करती हैं। वैद्य लोग विशेष विशेष व्याधियोंको शान्त करनेके लिए समय समय पर जिन जोंकोंका प्रयोग करते हैं, वे सब इसी हिरुडिनाइडि श्रेणीके अन्तर्गत हैं। इस जातिकी जोंक भारतवर्षके नाना स्थानोंमें रुद्ध प्रवाह पङ्कपूर्ण जलाशयोंमें पायी जाती है।

चीनदेशमें सेभिगनि नामक एक प्रकारकी जोंक है जिसकी चमड़ी कई रंगोंसे रञ्जित है। चीनदेशके अन्तःपाती सान्टङ्ग प्रदेशमें एक प्रकारकी जोंक देखनेमें आती है, जिसकी लम्बाई १ फुट है। मलबार उपकूलमें समुद्रसे करीब ५००० फुट ऊंचे स्थान तक जोंकें दृष्टिगोचर होती हैं। वर्षाऋतुमें जोंकें ज्यादा दीख पड़ती है। इस समय किसी वन्यप्रदेशमें भ्रमण करनेसे जोंकोंके मारे नाकोदम आ जाती है। बहुत पहलेसे ही हिन्दूगण जोंक और उसके गुणोंसे परिचित थे। अरबी ग्रन्थोंमें भी जोंकका वर्णन देखनेमें आता है। कुछ जोंकें तो अत्यन्त जहरीली और कुछ मनुष्योंका उपकार पहुंचानेवाली हैं।

भावसे अनवरत गोदान करते वे सूर्यवर्ण विमानमें आरोहणकर स्वर्गको गमन करते हैं। स्वर्गीय रमणियां क्रीड़ा कौतुक कर सर्वदा उनको आनन्दित किया करतीं हैं। (महाभारत)

विष्णुधर्ममें लिखा है कि पुण्य दिनको स्नान कर प्रथम पितृतर्पण करे। इसके पूर्व दिन केवल पञ्चगव्य खाकर रहे। तदनन्तर घृत और चीरद्वारा विष्णु या शिवजीका अभिषेक कर पुष्पादि उपहारसे भक्तिपूर्वक उनकी अर्चना करे। इसके बाद एक दुग्धवती सृष्टि धेनुको उत्तरमुखी कर स्थापन करे, गोके शृङ्ग सुवर्णमय और खुर रौप्यमय हो। अन्तको मन्त्र पाठपूर्वक ब्राह्मणको अर्पण करे उसमें यथाशक्ति दक्षिणा दी जाती है।

दानका मन्त्र—

"गावो ममाग्रत सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठत।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥
इमां न प्रतिगृह्णीष्व भक्त्या मया तव।
स मे प्रीत्या गोदानाय गोविन्द प्रीयतामिति॥" (अग्नि०)

भारत अनुशासन ६६ अध्याय प्रभृतिमें भी गोदानकी प्रशंसा और नियम लिखे हैं। भविष्यपुराणमें लिखा है कि धेनु सूर्यकी कन्या है सर्व लोकके मङ्गल और यज्ञसिद्धिके लिए इसकी उत्पत्ति हुई है। ब्राह्मण तथा गो एक कुलमें ही उत्पन्न है। गोसे यज्ञकी सिद्धि होती है। देव और षडङ्ग चतुर्वेद इससे उत्पन्न हुए हैं। गोके शृङ्गके अग्रभागमें समस्त तीर्थ तथा चराचर शीर्ष पर सर्वभूतमय शिव, ललाटाग्रमें देवी, नासिकाके अग्रभाग पर कार्त्तिकेय, दोनों नासापुटोंमें कम्बल और अश्वतर नाग, कर्णद्वयमें अश्विनीकुमारयुगल, दोनों आँखोंमें चन्द्र तथा सूर्य, दन्तमें वायु, जिह्वामें वरुण, कण्ठदेशमें राक्षसगण, हुङ्कारमें सरस्वती मुण्डमें यम और यक्ष ओष्ठ पर सन्ध्या, ग्रीवामें इन्द्र, वक्षस्थल पर साध्यगण, जङ्घादेश पर धर्म, खुरके अग्रभाग पर पन्नगगण खुरके पश्चाद्भाग पर अप्सरागण, पृष्ठ पर वसुगण, श्रोणितटमें पितृलोक, लाङ्गूलमें चन्द्र, केशमें सूर्यरश्मि, मूत्रमें गङ्गा, गोमयमें यमुना, दुग्धमें सरस्वती, दधिमें नर्मदा, घृतमें हुताशन, रोमकूपमें २८ करोड़ देवता, उदरमें पृथिवी तथा अङ्गमें चतुःसागर और पयोधर अवस्थान करते हैं। इस तरह समस्त ब्रह्माण्ड ही गोमें अवस्थित है।

गोदानिक—गौदानिक देखो।

गोदाम (हिं० पु०) माल असबाब रखे जानेका सुरक्षित स्थान।

गोदाय (सं० त्रि०) गां ददाति गो-दा-अण उपपदस०। गोदाता, गो दान करनेवाला।

गोदारण (सं० क्ली०) गां भूमिं दारयति दृ णिच-ल्यु। १ हल। २ जमीन खोदनेकी कुदाल।

गोदावरी (सं० स्त्री०) गां स्वर्गं ददाति दा-वनिप् ङीप् रश्चान्तादेशः। यद्वा गोदाना वरी श्रेष्ठा, ६-तत्। नदीविशेष। यह नदी बहुत दिनोंसे हिन्दुओंकी आदरणीय है, हिन्दू इसे एक पुण्यतीर्थके जैसा समझते हैं समस्त कार्योंके पहले ही जलशुद्धि करनेके लिये मन्त्र द्वारा इस नदीका भी आवाहन करना पड़ता है। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लिखा है कि कोई ब्राह्मणी अकेली तीर्थयात्रा कर रही थी। जाते जाते रास्तेमें एक निविड़ निर्जन पुष्पोद्यानके मध्य किसी एक कामुकने उसे देखा। युवतीका सुन्दर रूप देख वह कामुक कुछ देर भी स्थिर न रह सका। ब्राह्मणीने उसे बहुत वारण किया, किन्तु अन्तमें उस कामुकने बलपूर्वक अपनी पाशवहृत्ति चरितार्थ की। ब्राह्मणीका गर्भसञ्चार हुआ। ब्राह्मण यह देख कर क्या कहेंगे इस भयसे ब्राह्मणीने उसी समय गर्भ परित्याग किया और उससे उसी समय तप्तकाञ्चनवर्ण एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रका सुन्दर मुख देख ब्राह्मणी उसे फेंक न सकी, इस सद्योजात बालकको गोदमें ले रोती रोती ब्राह्मणके निकट पहुंची और समस्त घटना साफ साफ कह सुनाई। ब्राह्मणने पुत्रके साथ इसे परित्याग किया। लज्जा और अभिमानसे ब्राह्मणीने योग करना आरम्भ किया। योगबलसे वह नदी हो गई। उसीका नाम गोदावरी है। (ब्रह्मवै०)

गोदावरीका दूसरा नाम—गौतमी है। ब्रह्माण्ड उपपुराणके अन्तर्गत गौतमीमाहात्म्यमें गोदावरीकी उत्पत्ति-कथा अन्य रूपसे वर्णित है—जब महर्षि गौतम ब्रह्मगिरिके आश्रममें रहते थे, उस समय एक बार बारह वर्ष अनावृष्टि रही, जिससे चारो ओर दारुण दुर्भिक्ष उपस्थित हुआ। वशिष्ठादि ऋषिगण गौतमके आश्रमको पहुंचे। गौतमने ऋषियोंकी अन्न दे रक्षा की। वे

सामुद्रिक जोंक रक्तवर्ण और शोणितप्रिय हैं, इसलिए शम्बूक अथवा अन्य किसी प्राणी पर आक्रमण न कर सर्वदा मछलीका खून पीनेके लिए कोशिश करती रहती हैं। इन्हें जितना खून मिले, उतना ही पी सकती है। आश्चर्यको बात है कि जोंकके काफी खून पीने पर भी मछलियां दुर्बल नहीं होतीं, सिर्फ भूख बढ़ जाती है और कभी कभी उससे मछलियां परिपुष्ट होती हैं। ये जोंकें मछलियोंके शारीरिक यन्त्रोंको छिन्न नहीं करतीं, इसलिए उनके जीवनमें कुछ क्षति नहीं पहुंचती।

अलबिओन् जोंकको पैदाइश अण्डेके वीजकोषसे है। एक एक जोंक एकसे लगातार पचास तक अण्डे देती है। इन अण्डोंके वीजकोष वर्तुलाकार होते हैं, जिनका व्यास एक इञ्चका पञ्चमांश होता है। इन वर्तुलोंका बहिरावरण अत्यन्त सूक्ष्म और अण्डेका रङ्ग सफेद होता है। अण्डेके फटनेका समय जितना ही नजदीक आता जाता है, उतना ही इसका वर्ण पिङ्गल होता जाता है। अन्य जलाशयोंकी जोंकोंके अण्डे पर किसी तरहका आवरण नहीं होता। सामुद्रिक जोंक अण्डेके ऊपरी हिस्सेको फाड़कर वाहर निकलती है, किन्तु अन्य प्रकारकी जोंकके निकलते समय अण्डेके दोनों अंश अपने आप फट जाते हैं।

मुसलमान लोग व्याधिनिवारणार्थ ज्यादातर जोंकका प्रयोग करते हैं, उन लोगोंने इसका व्यवहार हिन्दुओंसे सीखा था।

किसी किसी जगह जलौकाको मधुके साथ उत्तम करके जिह्वामूलीय ग्रन्थोंमें प्रयुक्त किया जाता है तथा जलौकाको सुखाकर सुसब्बरके साथ उसका चूर्ण बनाकर व्यवहार करनेसे रक्तार्श (Hamosrhoids) शान्त होता है। जलौकाको उबालकर उसका चूर्ण मस्तक पर लगानेसे केश उत्पन्न हो सकते हैं।

आर्यचिकित्सकगण वातपित्त वा कफसे रक्त दूषित होने पर जोंक द्वारा रक्तमोक्षण ही हितकर बतलाते थे। इसलिए जलौकाकी जाति और रक्षणप्रणाली आदिका वृत्तान्त इस देशके लोगोंको बहुत पहलेसे ही मालूम था। यही कारण है कि सुश्रुत आदि वैद्यक ग्रन्थोंमें, कैसे जोंक पैदा की जाती है, कैसे उन्हें पाला जाता है आदि विषय वर्णित है।

सुश्रुतके मतसे—भीगे चमड़े वा अन्य किसी चीजसे जोंक पकड़ी जाती है। फिर सरोवर अथवा बहुत पुष्करणीके पानी और पङ्कसे एक नये घटको भरकर उसमें जोंक छोड़ दी जाती है। शैवाल, शुष्कमांस और जलज मूलको चूर्ण करके उन्हें खिलाना चाहिये। सोनेके लिए तृण वा जलजात पत्ते देने चाहिये। दो तीन दिन बाद जल और भक्ष्य द्रव्योंको बदल देना चाहिये। सप्ताह सप्ताह घटपरिवर्तन करना चाहिये।

जिन जोंकोंका मध्यभाग स्थूल हो, जो अति क्षीण अथवा स्थूलताके कारण धीरगामी, अल्पपायी, विषाक्त और शीघ्र पीड़ित स्थानको पकड़ती नहीं, ऐसी जोंकें रक्तमोक्षणके लिये प्रशस्त नहीं हैं। विषाक्त जोंकके काटने पर महागद नामकी औषध पीनी चाहिये।

सावरिका नामकी जोंक हाथी, घोड़ों आदिके रक्तमोक्षणके लिये प्रशस्त है। जो निर्विष जोंक शीघ्र रक्त शोषण कर सकती है, उसी जोंकके द्वारा मनुष्यादिका रक्तमोक्षण करना चाहिये।

रक्त मोक्षण करानेसे पहिले पीड़ित व्यक्तिको लेटना वा बैठ जाना चाहिये। पीड़ित स्थान यदि वेदनारहित हो, तो उस स्थानपर सूखा गोबर और मिट्टीका चूरा रगड़ देना चाहिये। बादमें जोंक लाकर सरसों और हलदीका शिलापिष्ट कल्क पानीमें मिलाकर उसके शरीर पर पोत देना चाहिये। अनन्तर क्षण भरके लिये उसे एक जलपात्रमें रखकर पीड़ित स्थान पर लगाना चाहिये। लगाते समय बारीक सफेद और भीगे हुए उमदा कपड़े वा रूईसे उस जोंकको ढक रखना चाहिये और सिर्फ मुंहको खोल देना चाहिये। यदि जोंक चिपटे नहीं, तो उसे एक विन्दु दुग्ध वा रक्त पिलाना चाहिये अथवा अस्त्रद्वारा छोड़ना चाहिये, इस पर भी यदि न चिपटे तो दूसरी जोंक लगानी चाहिये। घोड़ेके खुरके समान मुख और स्कन्ध ऊंचा करके भीतर मुख प्रविष्ट होनेपर समझना चाहिये कि उसने पकड़ लिया। जिस समय पकड़े रहे, उस समय भीगे कपड़ेसे उसको ढककर बीच बीचमें उसपर पानी छोड़ते रहना चाहिये। रक्त पीते समय दष्ट स्थानमें पीड़ा वा खुजली होनेपर समझें कि अब विशुद्ध रक्त पी

स्वभावत: नदीको गति दक्षिण पूर्ववाहिनी है। पहले नासिक जिला अतिक्रम कर अहमदनगर और निजाम राज्यके सोमारूपमें प्रवाहित हो, सिरोञ्चा नामक स्थानमें आ प्राणहिता नदीके साथ मिली है। तदन्तर वहां, पेन गङ्गा और वेणगङ्गा ये सब नदियां आ इसके जलमें मिल गई है। सिरोञ्चासे जिस स्थान पर यह पूर्वघाट पर्वत अतिक्रम करती है वहां इसकी मध्यवर्ती नदीके दक्षिण कूल पर निजाम राज्यभुक्त तथा उत्तर तीर पर उत्तर गोदावरी जिला सीमारूपमें परिणत है। गोदावरीके दक्षिण कूल पर प्राचीन तैलङ्गराज्यके ध्वंसावशेष आज भी देखे जाते है। ध्वंसलेश्वर ग्रामके निकट नदीमें एक डेल्टा है। यहां समीपवर्त्ती बांध द्वारा जल खेतीमें पहु-चाया जाता है। गोदावरीके सप्तमुखोंमेंसे गौतमी गोदावरी ही सबसे बड़ी है, इसके कूल पर फरासीसी अधिकार-भुक्त यूनान नगर अवस्थित है। समुद्र कूल पर इस शाखाके ऊपर कोरिङ्ग बन्दर है। नसरपुरके निकट वशिष्ठ गोदा वरीकी वैनतैम् गोदावरी नामकी शाखा निर्गत हो समुद्रमें गिरो है।

इस नदीके वाम भाग पर भद्राचलम् नगर और इससे १०० मील उत्तरमें राजमहेन्द्री नगर है। राजमहेन्द्री नगर तथा कोटिफली ग्राम गौतमी शाखाके ऊपर अव स्थित है।

भिषकशास्त्रके मतसे इसके जलका गुण—पथ्य तथा पित्तार्त्ति, रक्तार्त्ति, वायु, पाप, कुष्ठादि दुष्टरोग और तृष्णानाशक है। (राजनि०)

गोदावरी सात भागोंमें विभक्त हो बङ्गोपसागरमें मिली है, इन सात भागोंके नाम तुल्या, आत्रेयो, भारद्वाजी गौतमी, वृद्धगौतमी, कौशिकी और वशिष्ठा है। काक-नाडासे २ मीलकी दूरो पर चोल्लङ्गी ग्रामके निकट तुल्या वर्तमान है। यहां चोलङ्गेश्वर महादेवको मूर्त्ति स्थापित है। कोरिङ्ग बन्दरके निकट गोदावरीके उत्तर तीर पर आत्रेयोसङ्गम है। धवलेश्वरके दूसरे बगल विजयेश्वर ग्राममें विजयेश्वर शिवलिङ्ग है। धवलेश्वर और विजये-श्वरसे गोदावरी दो भागोंमें विभक्त हो सागराभिमुखको गई है। उसके उत्तर भागके स्रोतका नाम गौतमी और दक्षिणका वशिष्ठा है। गौतमीके उत्तर भागमें यथाक्रमसे तुल्या, आत्रेयी और भारद्वाजी नामकी तीन शाखायें, दक्षिण भागसे वृद्धगौतमी एवं वशिष्ठाके वाम तीरसे कौशिकी नामकी शाखा प्रवाहित हो सागरमें मिली है। ये सप्तशाखायें सप्तगोदावरी नामसे ख्यात हैं। जहाँ ये सप्तशाखायें मिली है वहां उनका नाम सप्तगोदावरी सागरसङ्गम पड़ा है। भागीरथीका सागर-सङ्गम जैसा महापुण्य तीर्थ माना गया है वैसा ही दाक्षिणात्यमें सप्तगोदावरी सागरसङ्गम महापुण्यप्रदके जैसा विख्यात है।

गौतमीमाहात्म्यमें प्रत्येक भागका माहात्म्य इस तरह लिखा है -

तुल्यभागा—चन्द्रमा रोहिणीको ही अधिक चाहते थे इसलिए दूसरी स्त्रियोंकी उत्तेजनासे दक्ष कर्तृक अभि-शप्त हो वे क्षयरोगको प्राप्त हुए। पापमुक्तिके लिए उन्होंने विष्णुको तपस्या की। विष्णुने सन्तुष्ट हो उन्हें तुल्या सङ्गममें स्नान करनेका आदेश किया। चन्द्र भी यथाविधि तुल्यासङ्गममें स्नान कर शापमुक्त हुए। माघ मासकी सोमवार अमावस्याको तुल्यासङ्गममें स्नान कर सोमेश्वर-की पूजा करनेसे कोटिगुण फल होती है। इस स्थान पर तर्पण और पिण्डदान करनेसे अश्वमेधका फल और सहस्र जन्मके पाप दूर होते है। (गौतमी मा०)

आत्रेयी—आत्रेय ऋषि गोतमीसे जिस नदीको लाये थे वही आत्रेयी नामसे ख्यात है। इसके तीर पर ऋषिने इन्द्रत्व लाभके लिए महायज्ञ किया था। इस स्थान पर मारीच कुरंगरूपसे महादेवकी तपस्या किया करता था।

भारद्वाजी—पूर्वकालमें भरद्वाज ऋषिने गौतमीके पूर्वतीरसे ऋषिकुल्याको लाकर उसके तीर पर तपस्या की थी, इसीसे इसका नाम भारद्वाजी हुआ है। इसका दूसरा नाम रेवतीसङ्गम भी है। भारद्वाजके रेवती नामकी एक अतिकुत्सिता भगिनी (बहिन) थी वयस्या होने पर भी कोई उसे विवाह करना नहीं चाहता था। एक दिन भरद्वाज ऋषि अपने आश्रममें बैठ रेवतीके विवाह-के विषयमें सोच रहे थे, इसी समय कठ नामक एक खुबसूरत ब्राह्मण कुमारने आश्रममें आ उनका शिष्य होनेके लिये प्रार्थना की। ऋषिने उसे शिष्य रूपमें ग्रहण कर समस्त विद्या सिखा दीं। इसके अनन्तर कठने गुरु

जोगो (हिं० पु०) १ योगो, वह जो योग करता हो। २ एक प्रकारके भिक्षुक। ये सारंगो ले कर भर्तृहरिके गीत गाते और भोख मांगते हैं। ये गेरुआ वस्त्र पहने रहते हैं।

जोगोगोफा—आसाम प्रान्तके ग्वालपाड़ा जिलाका एक गांव। यह अक्षा० २६° १४´ उ० और देशा० ९०° ३४´ पू०में ब्रह्मपुत्रके उत्तर तटस्थ मानसके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ७३४ है। ग्वालपाड़ेसे जहाज आता जाता है। आसाम अंगरेजो राज्यभुक्त होनेसे पहले बङ्गाल सीमाको यहां एक चौको थो। बहुतसे युरोपियन भो रहते थे। जोगोगोफामें विजनी राज्यको एक तहसील है।

जोगोड़ा (हिं० पु०) १ वसन्त ऋतुमें गाये जानेका एक प्रकारका चलता गाना। २ गायकोंका एक समाज। इसमें एक गानेवाला और दो सारंगो बजानेवाले रहते हैं। गानेवाला लड़का योगीसा आकार बनाये रहता है। ३ इस समाजका कोई मनुष्य।

जोगोश्वर (हिं० पु०) योगीश्वर देखो।

जोगू (सं० त्रि०) स्तोता, स्तुति करनेवाला।

जोगेरू—दाक्षिणात्यवासो एक प्रकारके भिक्षुक। ये अपनेको योगो कहते हैं। इस श्रेणोके भिक्षुक धारावार जिलेमें प्राय: सर्वत्र देखनेमें आते हैं। बागलकोट, वलबुत्ति, बुड़बुगो आदि स्थानोंमें हो इनको अधिकता है। ये बहुत प्राचीन अधिवासो हैं। बागलकोट आदि स्थानोंके जोगेरुओंमें साधारणत: पुरुषोंको उपाधि नाथ है।

यह जोगेरू जाति दश कुलोंमें विभक्त है—बाचनो, भण्डारो, चुनाड़ी, ढिङ्गमरो, करफटरो, कांसार, मदरकर, पर्वलकर, सालो और वतकर। इनके विवाह आदि उत्सवोंमें उक्त दश श्रेणोयोंमेंसे प्रत्येक श्रेणीके एक एक प्रतिनिधि उपस्थित होते हैं। इन दश श्रेणियोंके प्रत्येक व्यक्ति गोरखनाथके बारह शिष्य जिन्होंने बारह भागोंकी स्थापना की थो, उनमेंसे किसो एकके अन्तर्भुक्त हैं।

जोगेरूगण भैरव और सिद्धेश्वर इन दो गृहदेवताओंकी पूजा करते हैं; रत्नगिरिके पास भैरवमन्दिर विद्यमान है। ये अशुद्ध कनाड़ो और मराठो दोनों भाषाओंमें बात-चीत करते हैं। ये चार विभागोंमें विभक्त हैं—भैरवो योगो, किन्द्रो-योगो, गमन-योगो, और तबर-योगो। भैरवो वा भैर और कीन्द्रो-योगियोंमें परस्पर विवाह आदि सम्बन्ध होते हैं। इन योगियोंको आकृति बुडबुडकियोंके सदृश है। ये अपरिष्कृत और अपरिच्छन्न कुटोरोंमें रहते हैं तथा कुत्ते, भेड़, मुरगो, सांड़ आदि पालते है। ये खानेमें बड़े उस्ताद हैं, पर रांधना अच्छी तरह नहीं जानते। ज्वारको रोटो और शाक भाजी वगैरह इनका साधारण खाद्य है। ये विशेष विशेष उत्सवोंमें गेंहुको पिष्टक मोटो चोनो और शाक खाते हैं। शाक, मेष, कुक्कुट, मत्स्य, हरिण, कर्कट आदि भक्षण करते हैं, परन्तु गो अथवा शूकरका मांस नहीं खाते। कभो कभो ये शराब भो पीते है; पहननेके कपड़े किसीसे मांग लेते है। पुरुष एक जाकिट और धोतो पहना करते हैं तथा सिर पर एक छोटा कपडा लपेट लेते हैं। स्त्रियां अंगिया पहनती है

जोगेरू लोग शरोरके भिन्न भिन्न अंगोंमें कुण्डल, अंगूठो, हार, कांचको चूड़ो और पीतलको माला पहनते है। भोख हो इनको प्रधान उपजोविका है। ये जगह जगह घूमा-फिरा करते हैं और मौका पाते हो जो कुछ हाथ पड़ता है, चुरा कर भाग जाते हैं। बागलकोट आदि स्थानोंके योगो सुई और कंगी बेचनेके लिए नाना स्थानोंमें घूमते हैं और जोतिवाके साधकोंसे कपड़े आदि माग लेते हैं। रत्नगिरिके जोतिवा इनके प्रधान देवता हैं। जब ये भोख मांगनेके लिए निकलते है, उस समय कानमें मुद्रा नामके चांदोके कुण्डल पहनते तथा जोतिवका त्रिशूल और अलावुनिर्मित पात्र साथ रखते हैं।

ये छोटा ढोल और तुरई बजाते है। जहां जहां जोतिब हैं, वहां पहुंचने पर ये "बालसन्तोष" ये शब्द उच्चारण करते हैं। ये बिलकुल अशिक्षित हैं, पर बडे शान्त हैं।

जोगेरू कहते हैं कि, वे जड़ो-बूटी आदि बहुत पहिचानते हैं, उनसे अनेक प्रकारके रोगोंको आराम कर सकते हैं। ये कभो कभो गड़गके पहाडसे पत्थर ले आते है और उससे पथरो आदि बना कर बेचा करते है।

वशिष्ठके गौतमीसे कुल्या लाने तथा उसके तीर पर तपस्या करनेके कारण इसका नाम वशिष्ठासंगम पड़ा। सागर और वशिष्ठाके मध्य त्रिकोणाकृति भूमाग अन्तर्वेदी नामसे विख्यात है। यहां नरसिंह देव विद्यमान हैं, यह वैकुण्ठ सदृश पुण्यभूमि है। माघ मासकी रविवार शुक्ल एकादशीको वशिष्ठासङ्गममें स्नान कर नरसिंह देवकी पूजा करनेसे समस्त पाप दूर हो जाते हैं।

गोदावरी—मन्द्राज प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० १६° १८´ एवं १८° ३´ उ० और देशा० ८०° ५२´ तथा ८२° ३६´ पू०के बीच उत्तरपूर्व सागरतट पर पड़ता है। क्षेत्रफल ७८७२ वर्गमील है। इनके उत्तरपूर्व विजगापटम् जिला, उत्तर विजगापटम् जिला तथा मध्यप्रदेश, पश्चिम निजाम राज्य और दक्षिण-पश्चिम कृष्णा जिला है गोदावरीके तीन विषम विभाग है—एजेन्सी प्रान्त, गोदावरी नदीका सिंघाड़ा और ऊंचा तालुक। उत्तर पूर्व कोणमें छिन्न भिन्न पर्वत श्रेणियां हैं। गोदावरी नदी मध्य भागसे प्रवाहित हुई है। धवलेश्वरम् बांधसे समुद्रतट तक धानके खेत हैं। वर्षाकालको वहां कितना ही पानी भर जाता और सिवा गावों, नहरके किनारों, सड़कों तथा खेतको मेंडोंके कुछ भो देखनेमें नहीं आता। धान बढ़ने पर सारा प्रान्त खेत जैसा देख पड़ता है। नदीके वाम तटको पूर्व सिंघाड़ा, दक्षिण तटको पश्चिम सिंघाड़ और पानीसे घिरी हुई बड़ी तिखूटी जमीनको मध्य सिंघाड़ा कहते हैं।

इस जिलेमें १७२ मील तक समुद्रका किनारा है। सिवा गोदावरी सावरीके दूसरी कोई भी बड़ी नदी नहीं। चिड़ियां बहुत अच्छी होती हैं। जिलेका स्वास्थ्य अच्छा है, परन्तु शीतकालको ज्वरका प्राबल्य रहता है। रोगसे बचनेके लिये लोग अफीम खूब खाते हैं। वर्षा कालको बाढ़ आनेका बड़ा भय है।

पूर्वकालको गोदावरी जिला कलिङ्ग और वेंगी राज्यमें लगता था। प्राचीन राज्य जहां तक मालूम है, आन्ध्र थे। ई०से २६० वर्ष पहले अशोकने उन्हें जीता। किन्तु पीछेको वह ४०० वर्ष तक राज्य करते रहे। उनका साम्राज्य बम्बई और मैसूर तक विस्तृत था। ई० ३य शताब्दीके पूर्वकाल पल्लव राजाओंने उनका स्थान अधिकृत किया। ई० ७वीं शताब्दीको यह प्रान्त पूर्व चालुक्योंका अधिकारभुक्त हुआ। ९९९ ई०को वह चोल साम्राज्यके इस शर्त पर जागीरदार बने कि लड़ाईके समय मदद देंगे। १२वीं शताब्दीके मध्य वरङ्गलके राजत्व हुआ। परन्तु यह क्षुद्र क्षुद्र राज्योंमें विभक्त थे। १३२४ ई०को कुछ समयके लिये मुसलमानोंने गोदावरी पर अधिकार किया। परन्तु कोंडवीड और राजमहेन्द्रीके राजाओंने उन्हें निकाल बाहर किया था। १५वीं शताब्दीके बीच उड़ीसाके गजपति राजा हुए। इसके बाद फिर मुसलमान पहुंच गये। १४७० ई०को गुलबर्गेके सुलतानको यह प्रान्त उनकी साहाय्यके बदले मिला था। कुछ वर्ष बाद उन्होंने सब गजपति राज्य अपने अधिकारमें कर लिया। परन्तु गुलबर्ग राज्य छिन्न भिन्न होनेसे शताब्दी समाप्तिके पहले ही गजपतियोंका राज्य पुनः प्रतिष्ठित हुआ। १५१५ ई०को विजयनगरके सबसे बड़े राजा कृष्णदेवने कुछ समयके लिए इस प्रान्तको अपना अधीनस्थ बनाया था। परन्तु १५४३ ई०को गोलकुण्डाके पहले सुलतान और गजपति राजाओंसे झगड़ा हुआ। उन्होंने इनसे कृष्णा और गोदावरीके बीचका सब देश मांगा था। इससे उन प्रान्तोंमें बलवा हो गया। राजमहेन्द्रके गजपति राजाने जब विद्रोहियोंको साहाय्य किया, मुसलमान बिगड़ उठे। उन्होंने गोदावरी पार करके सुदूर उत्तर पूर्व तक अपना अधिकार बढ़ाया था। १५७२ ई०को राजमहेन्द्र हस्तगत हुआ और कुछ वर्ष बाद गोदावरीके उत्तर समग्र देशों पर उनका आधिपत्य हो गया। १६८७ ई०को औरंगजेबने गोलकुण्डाके सुलतानको परास्त किया था। उस समय सब बड़े बड़े जमीन्दार स्वाधीन हो गये। १७६५ ई०को अंगरेजोंसे यह जिला पाया था। पहले गोदावरी जिलेका पट्टा फौजदार हुसेन अली खांके नाम लिखा गया, किन्तु १७६९ ई०को प्रकृत अंगरेजी अधिकार हुआ। जमीन्दारोंकी सरकशीसे फिर कलेक्टोरेट बनाये गये। १८५९ ई०को गोदावरी जिला कायम हुआ। १८४० ई०को गोदावरीका बांध बना था। १८७९ ई०को पार्वत्य प्रदेशमें रम्पा विद्रोह फूट पड़ा, जो १८८१ ई०को शान्त हुआ। इस जिलेमें कितने ही बौद्ध मठोंका ध्वंसावशेष और हिन्दूकीर्त्ति निदर्शन मिला है।

७२° ५८´ पू०में बम्बे-बड़ोदा-सेण्ट्रल-इण्डिया रेलवेके गोरे गांव ष्टेशनसे २॥ मोल दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यह भारतकी ब्राह्मण-गुहाओंमें तृतीय स्थानीय है। लम्बाई २४० फुट और चौड़ाई २०० फुट पड़ती है। गुहामन्दिर ई० ७वीं शताब्दीमें निर्मित हुआ। इसमें पत्थर काट करके राहें निकाली गयी हैं। बीचमें एक बड़ा दालान है।

जोङ्ग (सं० क्ली०) जुङ्गयाते वर्ज्यते, जुगि वर्जने कम णि-अप् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कालीयक गन्धद्रव्य भेद, किसी किस्मका खुशबूदार पीला मुसब्बर। २ अगुरु, अगर। ३ काकमाची।

जोङ्गक (सं० क्ली०) जुङ्गति त्यजति मदन्धं जुगि-ण्वुल्, पृषोदरादित्वात् साधुः। अगुरुचन्दन, अगर।

जोङ्गट (सं० पु०) जुङ्गति शरीचकत्वं परित्यजत्यनेन वाहुलकात् जुङ्ग-अटन्। गर्भिणीकी अभिलाष।

जोटिङ्ग (सं० पु०) जुटेन इङ्गति प्रकाशते इति अच्, पृषो-दरादित्वात् साधुः वा जुट-इन् जोटिं गच्छति गम-ड खिच्च। १ महादेव। २ महाव्रती।

जोड़ (सं० पु०) जुड बन्धने घञ्। १ बन्धन। २ लौह-विशेष, एक प्रकारका लोहा। ३ युग्म। ४ मिथुन। ५ तुल्य, समधर्मी।

जोड़ (हिं० पु०) १ गणितमें कई संख्याओंका योग, जोड़नेकी क्रिया। २ योगफल, वह संख्या जो कई संख्याओंको जोड़नेसे निकले, मीजान, टोटल। ३ किसी चीजमें जोड़ देनेका टुकड़ा। ४ वह सन्धिस्थान जहां शरीरके दो अवयव आ कर मिले हों। ५ मेल, मिलन। ६ समानता, बराबरी। ७ एक ही तरहकी दो चीजें, जोड़ा। ८ समान धर्म या गुण आदिवाला। ९ पहन-नेके कुल कपड़े, पूरी पोशाक। १० जोड़नेकी क्रिया या भाव। ११ छल, दांव। १२ वह स्थान जहां दो या उनसे अधिक टुकड़े जुड़े वा मिले हों। १३ दो वस्तुओंके एकमें मिलनेके कारण सन्धिस्थान पर पड़ा हुआ चिह्न। १४ किसी चीज या काममें प्रयुक्त होनेवाली सब आवश्यकीय सामग्री।

जोड़ती (हिं० स्त्री०) कई संख्याओंका योग, जोड़।

जोड़न (हिं० पु०) जामन, वह पदार्थ जो दही जमाने-के लिए दूधमें डाला जाता है।

जोड़ना (हिं० क्रि०) १ दो चीजोंका दृढ़तासे एक करना। २ किसी टूटे हुए पदार्थके टुकड़ोंको मिला कर एक करना। ३ संबन्ध करना। ४ प्रज्वलित करना, जलाना। ५ वर्णन प्रस्तुत करना, वाक्यों या पदों आदिकी योजना करना। ६ कई संख्याओंका योगफल निकालना। ७ किसी सामग्री वा चीजको सिलसिलेवार रखना वा लगाना। ८ एकत्र करना, संग्रह करना, इकट्ठा करना। ९ सम्बन्ध स्थापित करना। जैसे नाता जोड़ना, दोस्ती जोड़ना।

जोड़वाई (हिं० पु०) १ जोड़वानेकी क्रिया। २ जोड़ने-का भाव। ३ जोड़वानेकी मजदूरी।

जोड़वाना (हिं० क्रि०) दूसरेसे जोड़नेका काम कराना।

जोड़ा (हिं० पु०) १ एक ही तरहके दो पदार्थ। २ दोनों पैरोंके जूते। ३ पहननेकी कुल पोशाक। ४ स्त्री और पुरुष। ५ नर और मादा। ६ वह जो एक आकार-का हो। ७ एक साथ पहने जानेवाले दो कपड़े। जैसे—धोती दुपट्टा वा कोट पतलूनका जोड़ा।

८ जोड़ देखो।

जोड़ाई (हिं० स्त्री०) १ दो वा दोसे अधिक वस्तुओंको जोड़नेकी क्रिया। २ जोड़नेकी मजदूरी। ३ दीवार आदिके बनानेमें ईंटों या पत्थरोंके टुकड़ोंके जोड़नेकी क्रिया

जोड़ासन्देस (हिं० पु०) छेनेसे बनाई जानेवाली एक प्रकारकी मिठाई।

जोड़ी (हिं० स्त्री०) १ एक ही तरहके दो पदार्थ। २ एक साथ पहननेकी समस्त पोशाक। ३ दम्पती, स्त्री और पुरुष। ४ नर और मादा। ५ वह गाड़ी जो दो घोड़े या दो बैलोंसे खींची जाती है। ६ मंजीरा, ताल। ७ वह जो समान धर्मका वा समान गुणका हो, वह जो बराबरीका हो, जोड़। ८ दोनों मुगदर जिनसे कस-रत करते हैं।

जोड़ीकी बैठक (हिं० स्त्री०) मुगदरोंकी जोड़ी पर हाथ टेक कर किये जानेकी कसरत।

जोड़ू (हिं० स्त्री०) जोरू देखो।

जोत (हिं० स्त्री०) १ घोड़े बैल आदि जोते जानेवाले जानवरोंके गलेकी रस्सी। इसका एक सिरा जानवरके

दूधका गुण त्रिदोषनाशक है। बहुत दिनोंकी प्रसूता गायके दूधका गुण—त्रिदोषनाशक, तृप्तिकारक और अत्यन्त बलकारी है। जो गाय जङ्गलमें तथा पहाड़ पर विचरती है उसके दूधका गुण गुरु और स्निग्ध है। जो घास बहुत कम खाती है उसके दूधका गुण गुरुपाक, बलकारी, अत्यन्त शुक्रवृद्धिकर तथा सुस्त मनुष्योंके लिए बहुत उपकारी है। जो गाय पयाल, घास या कपासका बीज खाती है उसका दूध रोगीके लिये हितकर है।

(भावप्रकाश)

गोदुग्धदा (सं० स्त्री०) गोदुग्धं ददाति सम्पादयति दा-क। एक प्रकारकी घास, चणिका तृण।

गोदुग्धा (सं० स्त्री०) १ चणिका तृण, एक प्रकारकी घास। २ इन्द्रवारुणी लता। ३ गोडुम्बा। ४ चिर्भटिका। ५ ककड़ी।

गोदुह् (सं० त्रि०) गां दोग्धि दुह क्विप्, ६-तत्०। १ गाय दूहनेवाला। (पु०) २ गोप, ग्वाला।

गोदूनिका (हिं० स्त्री०) पूर्वीय बंगाल और आसाम आदि प्रदेशोंमें होनेवाला बेतकी जातका एक वृक्ष। इसकी चिकनी और चमकीली टहनियां छड़ी बनानेके काममें आती हैं।

गोडो—बङ्गाल प्रान्तमें रहनेवाली एक जाति। यह शब्द गढका अपभ्रंश है। जो गढ (Fort) के स्वामी थे वे गोढ़ी कहाते कहाते धीरे धीरे गोडो कहलाने लगे। किसी दूसरे विद्वान्का मत है कि गदाको धारनेवाले महावीर जाति गोडो कहलाई। अनेक प्रमाणोंसे ज्ञान पड़ता है। कि पूर्व बंगालमें हिन्दू या मुसलमान राजा या बादशाहोंके समय यह जाति बड़ी वीर गिनी जाती थी और फौजोंमें भरती की जाती थी। आजकल यह जाति पलासीके आस पास जुल्मी पेशा करनेवाली मानी जाती है। वृटिश गवर्नमेण्टके राज्यसे पहले यह जाति लूट मार करनेमें प्रसिद्ध थी। परन्तु ऐसी दशा इस जातिकी सर्वत्र नहीं है। आजकल बहुतसे खेती और व्यापार करते हैं और मान प्रतिष्ठा भी इन्होंने कुछ बढ़ा ली है। ये बड़ी बड़ी वीरताके चिह्न प्रकट करते हैं। ये कठिनसे कठिन जमनास्टिक (कसरत) कर सकते हैं।

गोदोह (सं० पु०) गवां दोहः ६-तत्०। १ गोदोहन, गायका दुहना। २ गोदुग्ध, गायका दूध। ३ कालविशेष, गाय दुहनेमें जितना समय लगे।

गोदोहन (सं० क्ली०) गोर्दोहनं, ६-तत्। १ गौका दोहन, गायका दुहना। २ गोदोहनकाल, गाय दुहनेका समय।

(भागवत १।१८।३९)

गोदोहनी (सं० स्त्री०) गावो दुह्यन्तेऽस्यां गो-दुह आधारे ल्युट ङीप्। गोदोहनपात्र, वह पात्र जिसमें गाय दुही जाती है।

गोद्दा—छोटानागपुर प्रान्तके सन्ताल परगनेका सब डिविजन। यह अक्षा० २४° ३०′ तथा २५° १४′ उ० और देशा० ८७° ३′ एवं ८७° ३६′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ८६७ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २८०३२३ है। यहां पश्चिम तथा दक्षिण जङ्गल एवं पहाड़ और पूर्वकी उपजाऊ जमीन है। इसमें १२७४ गांव बसते हैं।

गोद्दा—छोटा नागपुर प्रांतके सन्ताल परगने जिलेमें गोद्दा उपविभागका सदर। यह गांव अक्षा० २४° ५०′ उ० और देशा० ८७° १७′ पू०में पड़ता है। आबादी कोई २२०८ है।

गोद्रव (सं० पु०) द्रवति द्रु-अच्-गोर्द्रवः, ६-तत्। गोमूत्र, गायका मूत।

गोध (हिं० स्त्री०) गोह नामक जंगली जानवर।

गोध—ये हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि थे। इनका जन्म १६८४ ई०में हुआ था।

गोधज (सं० पु०) गोधा।

गोधन (सं० क्ली०) गवां धनं समूहः, ६-तत्। १ गोसमूह, गौओंका झुण्ड। (त्रि०) गौरेव धनमस्य, बहुव्री०। २ जिसकी गोरूपी सम्पत्ति है। (क्ली०) गौरेव धनं। ३ गोरूप धन, गौ रूपी सम्पत्ति। (पु०) धनं रवे भावे अच गोर्धनं रव इव धनं रवो यस्य, बहुव्री०। ४ स्थूलाग्र वाण, एक तरहका तीर जिसका फल चौड़ा होता है।

गोधन (हिं० पु०) एशिया, युरोप तथा अफ्रिकामें पाये जानेवाला एक तरहका पक्षी। इसकी चोंच लाल, मस्तक भूरा और पैर हरे रंगके होते हैं। एक बार यह ५ से ८ अण्डे देता है।

गोधना (सं० स्त्री०) एक प्रकारका औषध।

गोधन्य—चीनपरिव्राजक वर्णित एक विस्तृत महाद्वीप।

जोतिलिङ्ग (हिं० पु०) ज्योतिर्लिङ्ग देखो।

जोती (हिं० स्त्री०) १ ज्योति, जोति। ज्योति देखो। २ घोड़ेकी लगाम, घोड़ेकी रास। ३ तराजूको जोत, तराजूके पल्लोंको रस्सी जो डोड़ीसे बंधी रहती है।

जोदिया (जोधिया)—काठियावाड़के नवानगर राज्यका शहर और बड़ा बन्दर। यह अक्षा० ५२° ४०´ उ० और देशा० ७०° २६´ पू०में कच्छोपसागरके दक्षिणपूर्व उपकूलमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७३५१ है। नगर प्राचीर-वेष्टित है। भीतर एक छोटा किला बना हुआ है।

जोवन (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी रस्सी जिससे बैलके जुएको ऊपर नीचेको लकड़ियां बंधी रहती हैं।

जोधपुर—मारवाड़के राजपूतानेका सबसे बड़ा राज्य। यह अक्षा० २४° ३७´ और २७° ४२´ उ० तथा देशा० ७०° ६´ और ७५° २२´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ३४९६३ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें बीकानेर, उत्तर-पश्चिममें जैसलमेर, पश्चिममें सिन्धु दक्षिण पश्चिममें रान, दक्षिणमें पालनपुर तथा सिरोही, दक्षिण-पूर्वमें उदयपुर, पूर्वमें अजमेर तथा किसनगढ़ और उत्तर-पूर्वमें जयपुर अवस्थित है। यहांकी जमीन अनुर्वरा है, किन्तु आरवल्ली पहाड़के पूर्व तथा उत्तर-पूर्वकी जमीन कुछ कुछ उर्वरा है। इसके उत्तरमें थल नामक मरुभूमि बहुत दूर तक विस्तृत है। आरवल्ली पहाड़ राज्यके पूर्वमें पड़ता है। नदियोंमें लूनी बड़ी है। इसकी प्रधान शाखाएँ लिलरी रायपुर, लूनी, गुहिया, बांदी, सुकरी, जवाई और जोजरी है। यहां साम्भर नामकी एक खारी झील है। पूर्वीय और दक्षिणीय भागका जङ्गल ३४५३ वर्गमील तक विस्तृत है। यहांके जङ्गलमें तरह तरहके पेड़ पाये जाते हैं जिनमें देवदारु, बबूल, महुआ तथा खैर प्रधान हैं। जङ्गली जानवरोंमें सिंह, काला भालू, चीता और काला हिरण अधिक मिलता है, बाघकी संख्या बहुत कम है। जलवायु शुष्क और स्वास्थ्यकर है और गर्मी बहुत पड़ती है।

इतिहास—जोधपुरके महाराज राठोर राजपूतोंके सरदार हैं। ये अपने वंशका उद्भव अयोध्याके राजा श्रीरामचन्द्रजीसे बतलाते हैं। इस वंशका प्राचीन नाम राष्ट्र वा राष्ट्रिक है। अशोकके कुछ अनुशासनोंमें लिखा है कि राठोर दाक्षिणात्यमें राजत्व करते थे। पांचवीं या छठीं शताब्दीमें इस वंशके सबसे प्राचीन राजा अभिमन्यु सिंहासन पर बैठे थे। ९७३ ई० तक दाक्षिणात्यमें कोई १९ राष्ट्रकूट राजाओंने राज्य किया, किन्तु पीछे चालुक्योंने इन्हें वहांसे निकाल भगाया। बाद इन्होंने कन्नौज जा कर आश्रय लिया और ९वीं शताब्दीके प्रारम्भमें वहां अपना उपनिवेश स्थापित किया। इस अवस्थामें पचीस वर्ष रहनेके बाद इन्होंने अपने ज्ञातिवर्गको निकाल बाहर किया और गहड़वाल नामक एक नया वंश स्थापित किया। इस वंशके सात राजाओंने राज्य किया जिनमेंसे प्रथम राजा यशोविग्रह थे और अन्तिम जयचंद। जयचन्द ११९४ ई०में इटावाकी लड़ाईमें मुहम्मद गोरीसे मार डाले गये। जयचन्दके भतीजे सिवाजीने अपनी जन्मभूमि परित्याग कर मलानीके अन्तर्गत खेर तथा गोहिल राजपूतोंके अधिकृत देशोंको जीतते हुए १२१० ई०में मारवाड़में भावी राठोर राज्य स्थापित किया इनके मरनेके बाद रावअश्वनजी राजसिंहासनके अधिकारी हुए। इन्होंने ईडर भील लोगोंसे जीत कर अपने भाई सोनिङ्गको अर्पण किया। सोनिङ्गके बाद राव चन्दजीने राठोर-शक्ति दृढ़ करनेके लिये १२८१ ई०में पड़िहारोंसे मन्दिर छीन लिया और उसे अपनी राजधानी बनाया। बाद राव रिरमलजी राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए। मारवाड़में जो तौल आजकल चल रही है, वह इन्हींको चलाई हुई है। इन्होंने अपने जीवनका अधिकांश मारवाड़ राज्योन्नतिमें बिताया। नाबालिग राना कुम्भको सिंहासन च्युत करनेके षड़यन्त्रमें ये मार डाले गये थे। बाद इनके बड़े लड़के राव जोधजी जोधपुरके सिंहासन पर बैठे। ये बड़े ओजस्वी और योग्य राजा निकले। प्राचीन राजधानीसे सन्तुष्ट न हो कर इन्होंने जोधपुरमें अपने नामानुसार एक नई राजधानी स्थापित की। १४८९ ई०में इनका देहान्त हुआ। इनके चौदह लड़के थे, जिनमेंसे छठेंबीक बिकानेर राज्यके स्थापयिता हुए। जयमल नामक इनके एक परपोतेने १५६७ ई०में अकबरके विरुद्ध चित्तौरकी रक्षा की थी। बाद थोड़े समयके लिये राव गङ्गाजी जोधपुरके तख्त

गोधावती (सं० स्त्री०) गोधा तत्पदसादृश्यं विद्यतेऽस्याः गोधा मतुप् मस्य वः ङीप् च। १ गोधापदी। २ वटपत्री, वट वृक्षकी पत्ती।

गोधावल्ली (सं० स्त्री०) गोधासदृशी लता। १ गोधावती २ हंसपदी नामकी लता

गोधावीणाका (सं० स्त्री०) गोधायाश्चर्मणा नद्धा वीणा, ह्रस्वा गोधावीणा, ह्रस्वार्थे कन् गोधाके चर्म द्वारा आवद्ध क्षुद्रवीणा, गोहके चमड़े से बंधा हुआ वीणा।

गोधास्कन्द (°) गोधास्कन्द देखो।

गोधास्कन्ध (सं० पु०) गोधेव स्कन्धोऽस्य, बहुव्री०। अरिमेद नामका एक तरहका वृक्ष।

गोधि (सं० पु०) गौर्नेत्रं धीयतेऽस्मिन् धा अधिकरणे कि। १ ललाट। गुध्नाति सहसा कुप्यति गुध-इन्। २ गोधिका, गोह जंतु। (शब्दरत्नावली)

गोधिका (सं० स्त्री०) गुध्नाति गुध-ण्वुल्-टाप्। १ गोधा गोह। २ एक तरहकी छिपकिली।

गोधिकात्मज (सं० पु०) गोधिकाया आत्मजः, ६ तत्। १ एक तरहका जानवर जो नर सर्प और मादा गोहके संयोगसे उत्पन्न होता है। २ गोहकी आकृतिका एक प्रकारका छोटा जंतु। यह वृक्षके कोटर (खोंढ़र) में रहता है। कभी कभी यह बहुत भयानक शब्द भी किया करता है। बहुतोंका विश्वास है कि उसको अवस्था जितनी अधिक होती जाती है उतनी ही बार यह शब्द किया करता है। इसका पर्याय—गोधेय, गोधेर और गोधार है।

गोधिकासुद्दन (सं० पु०) गोधेरक, जलगोह, वह गोह जो जलमें रहता है।

गोधिनी (सं० स्त्री०) गोधः क्रीडाविशेषोऽस्त्यस्याः गोध इनि। चविका, कटाई, वरहंटा।

गोधी (हिं० स्त्री०) गोध न देखो।

गोधीश (सं० पु०) द्रोण पुष्पी।

गोधूम (सं० पु०) गुध बाहुलकात् ऊम्। गोधूम, गेहूं।

गोधूम (सं० पु०) गुध्यते वेष्टयते त्वगादिभिः गुध ऊम्। १ नागरंग, नारंगी। २ व्रीहिविशेष। इसका संस्कृत पर्याय—बहुदुग्ध, अपूप, म्लेच्छभोजन, यवन, निस्तुषक्षीर रसाल और सुमनसा। बङ्गला भाषामें इसे गम, गोम, और हिन्दीमें गेहूं कहते हैं, फारसीमें गुन्दुम्, अरबीमें हिन्ते, तामिलमें गोदुम्बी, तेलगुमें गोदुमलु, मलयमें गन्दुम, पञ्जाबमें खानक, ग्रीकमें पार्मि, हिब्रूमें खित्ता, इटालीमें ग्रेनो, (Grano) जर्मनमें Weetzen. रूसमें Pschemz, सुइसमें Hvete; पोर्तगीजमें Trigo, ओलन्दाजमें Tarw, डेनमारमें Hvede; फरासीसीमें Froment, Bled और अंगरेजीमें इसे Wheat कहते हैं। इसका पौधा डेढ़ या पौने दो हाथ ऊंचा होता है और इसमें कुशको तरह लम्बी पतली पत्तियां पेंडोसे लगी हुई निकलती हैं। पेंडोके बोचसे सीधे ऊपरको ओर एक सींक निकलती है। इसोमें बाल लगती है। गेहूंको खेती अत्यन्त प्राचीन कालसे होती आई है। गेहूंसे समस्त देशोंमें मैदा और आटा प्रस्तुत होता है। पृथ्वीके नानास्थानोंमें यह शस्य उत्पन्न होता है। यूरोपके अटलाण्टिक महासागरके उपकूल पर ३०से ५० अक्षान्तरवर्ती स्थानमें, रोकी पर्वतके पश्चिम और उत्तरमें, दक्षिण अमेरिकाके पश्चिम कूलमें एवं उष्णकटिबन्धके मध्यवर्ती समतल और उच्च भूमिमें गेहूं अधिकतासे उत्पन्न होता है।

वरार, कोयम्बतुर और ब्रह्मदेशमें भी गेंहूं अधिक हुआ करता है। भारतवर्षमें जिस तरहके गेंहूं उपजाये जाते हैं उनका नाम यह है,—

१ Triticum vulgare var. hybernum शीतकालिक।

२ T. Vulgare, var, aestinum. वासन्तिक।

३ T. Compositum, मिसरदेशजात।

४ T. Spelta फरासीय।

५ T. Monococcum. (इस गेंहूंका दाना अन्य गेहूंकी नाई दो भागमें बंटे नहीं है।)

इङ्गलैण्डमें शरत् और वसन्त कालमें पूर्वोक्त प्रथम दो जातिके गेहूं उपजाये जाते हैं, किन्तु भारतवर्षमें समस्त प्रकारके गेहूं पैदा होते हैं। कार्त्तिक मासमें अथवा माघ मासके आरम्भमें ही गेहूं बोया जाता एवं वैशाख मासमें काट लिया जाता है। पर्वतके ऊपर १३०००से १५००० फीट ऊंची भूमि पर भी गेंहू जमता है।

वर्ष १०८०००) रु० करस्वरूप दिया करेंगे और जब कभी प्रयोजन पड़ेगा, तब इन्हें १५०० सवार देने पड़ेंगे। १८४३ ई०में मानसिंहका देहान्त हुआ। बाद उनके पोष्यपुत्र तख्तसिंह जो अहमदनगरके प्रधान थे, जोधपुरके महाराज कायम किये गये। इन्होंने सिपाही विद्रोहके समय वृटिश गवर्नमेण्टको खूब सहायता की थी, बहुतसे यूरोपियोंको जोधपुरके किलेमें आश्रय देकर उनका प्राण बचाया था। १८७३ ई०में तख्तसिंह पञ्चत्वको प्राप्त हुए। बाद उनके बड़े लड़के द्वितीय यशोवन्तसिंह राज्याधिकारी हुए। ये बड़े ओजस्वी राजा थे। डकैती आदि दुष्कर्मोंको इन्होंने निर्मूल कर डाला; चारों ओर शान्ति विराजने लगी। खालसा जमीनका प्रबन्ध उन्हींके समयमें हुआ। रेलवे खोली गई, स्कूल और कालेज निर्माण किये गये, अस्पताल खोला गया तथा और भी कई एक हितकर कार्य किये गये। १८७५ ई०में उन्हें जी० सी० एस० आई० को उपाधि दी गई तथा १९ सम्मान-सूचक तोपोंको बढ़ाकर २१ कर दी गई। १८९५ ई०में अपने सुयोग्य पुत्र सरदारसिंहके हाथ राज्यभार सौंप आप इस लोकसे चल बसे।

सरदारसिंहका जन्म १८२० ई० में हुआ था। जब तक ये नाबालिग रहे, तबतक इनके चाचा महाराज प्रतापसिंहने सुचारु रूपसे राजकार्य चलाया। राठोर वंशमें सबसे पहले ये ही विलायत जाकर सम्राट्‌को भेंट दे आये हैं। इनके समयमें रेलवे सिन्धसे हैदराबाद तक निकाली गई। भीषण दुर्भिक्ष भी १९०० ई०में इन्हींके समयमें पड़ा था। मृत्युके बाद इनके लड़के सुमेरसिंह जोधपुरके राज-सिंहासनपर सुशोभित हुए। फ्रांसकी लड़ाईमें इन्होंने अङ्गरेजोंकी ओरसे अपनी खूब वीरता दिखलाई थी। इसी कारण इन्हें के० बी० ई० की उपाधि मिली थी। इनके उत्तराधिकारी सर उमेदसिंहजी हुए और यही वर्त्तमान महाराज हैं। इनका जन्म १९०३ ई०में हुआ था। अपने भाई सुमेर सिंहके मरनेपर ये १९१८ ई०में राजगद्दी पर बैठे। अजमेरके मेयो कालेजमें इन्होंने विद्याध्ययन किया है। ये K. C. V. O. (Knight Commandar of the Royal Victorian order) उपाधिसे भूषित हैं।

जोधपुर-राजाओंकी तालिका।

१	राव शिवाजी १२१२ ई०
२	राव अस्थनजी
३	रा० दुहरजी
४	राव रायपालजी १२६६ ई०
५	राव कनपालजी
६	राव जलनसोजी
७	राव चन्दजी
८	राव थीड़जी १२९५ ई०
९	राव सलखाजी १३०७ ई०
१०	राव बिरामदेवजी १३७४ ई०
११	राव चोंदजी १३९५ ई०
१२	राव कन्हाजी १४०८ ई०
१३	सत्तजी १४१३ ई०
१४	राव रिरमलजी १४२० ई०
१५	राव जोधजी १४४९ ई०
१६	राव सतलजी १४८८ ई०
१७	राव सुजाजी १४९१ ई०
१८	राव गङ्गाजी १५६१ ई०
१९	राव मालदेवजी १५३२ ई०
२०	राव चन्द्रसेनजी १५६२ ई०
२१	राव उदयसिंहजी १५८१ ई०
२२	सवाई राजा सूरसिंहजी १५९५ ई०
२३	सवाई राजा गजसिंहजी १६२० ई०
२४	महाराज यशोवन्त सिंहजी १६३८ ई०
२५	महाराज अजितसिंहजी १६७७ ई०

में गोधूम १०० पल, जल ३२ श० डाल कर काढा प्रस्तुत करे जब अन्तमें केवल ८ शराव बच जाय तो उसे नीचे उतार ले और गोधूम, मुञ्जाफल (अभावमे तालमुस्तक), माषकलाय (उरद), द्राचा (दाख), परुषफल (नोली कटसरैया) काकोन्नो, चीरकाकोन्नी, जीवन्ती, शतमूली, अश्वगन्धा, पिण्डी खर्जुर, मधुक फल, त्रिकटु, शर्करा, भल्लातक (अभावमें रक्तचन्दन) और आत्मगुप्तफल या मूल । त्येकके ३॥ तो ४॥ र को चर्ण कर उसमें मिलाते हैं। इसके बाद गुडत्वक् (दारचीनी), एला (इलायची) पिप्पली, धन्याक (धनियां), कपूर, नागकेशर प्रत्येकके १०॥ तोले और शर्करा ८ प०, मधु ८ प०को उस में डाल कर इक्षुकाण्डसे उसे अच्छी तरह घोटना चाहिए। बाद १ २ प० सेवन करनेका विधान है।

(चक्रपाणिदत्त कृत संग्रह)

गोधूमी (सं० स्त्री०) गां धूमयति धूम-णिच्-अण्-गौरादित्वात् ङीप्। गोलोमिका, श्वेतदूर्वा, एक तरहकी घास जिसमें पुष्प भी लगते हैं।

गोधूलि (सं० स्त्री०) गवां खुरोत्थिता धूलिः। कालविशेष, संध्या समय। ज्योतिषशास्त्रमें लिखा है कि गोधूलि लग्न सब कार्यों में ही प्रशस्त है। इससे नक्षत्र, तिथि, करण, लग्न, वार, योग और जामित्रादि दोषोंका भय नहीं रहता, गोधूलि समस्त दोषोंको नाश करती है। लल्लादि ज्योतिर्वेत्ताओंके मतसे शुभ दिन या शुभलग्नके अभावमें अगत्या गोधूलिमें अपरिहार्य कार्य किया जा सकता है, किन्तु शुभलग्न पाने पर गोधूलिमें कार्य करना निषिद्ध है, करने पर अमङ्गल होता है।

नारदके मतानुसार पूर्वदेश और कलिङ्गदेशवासियोंके लिए गोधूलि शुभप्रद है। गोधूलिमें गन्धर्वादि विवाह और वैश्योंका विवाह हो सकता है। दैवज्ञ मङ्गलके मतसे शूद्रके पक्षमें गोधूलि प्रशस्त है, किन्तु द्विजोंके लिये प्रशस्त नहीं है।

गोधूलि समयका निरूपण लेकर ज्योतिषशास्त्रमें मतामत लक्षित होता है। किसी किसी ज्योतिर्विद्के मतसे सूर्यविम्वके कुछ अस्त होनेके बाद दो दण्ड समयको गोधूलि कहते हैं। थोड़े ज्योतिषिक कहते हैं कि सूर्यबिम्बके तीन भागोंमें दो भागोंके अदृश्य होनेके बाद दो दण्ड समयको गोधूलि कहते हैं। मुहूर्तचिन्तामणिके टीकाकारका कथन है कि उपरोक्त दो मत देशभेद और आचारभेदसे आदरणीय है। मुहूर्त्तचिन्तामणिके मतसे हेमन्त और शीत ऋतुमें सूर्य पिण्डाकृति होने पर गोधूलि होती है। इस प्रकार चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ मासमें सूर्य अर्द्धास्त, तथा श्रावण, भाद्र, आश्विनी और कार्तिक मासमें सूर्य मण्डलके संपूर्ण अस्त होने पर गोधूलि हुआ करती है।

मुहूर्त-चिन्तामणिके मतसे वृहस्पतिवारमें सूर्यके अस्त होने तथा शनिवारमें स्थित रहने पर गोधूलि शुभप्रद है। गोधूलि समयके लग्नसे अष्टम या षष्ठमें चन्द्र रहे ऐसे गोधूलि समयमें विवाह देनेसे कन्याकी मृत्यु होती है। लग्नमें या अष्टममें मङ्गल रहे तो वरकी मृत्यु होती तथा चन्द्र एकादश वा द्वितीय राशिमें रहे तो वर और कन्या अनेक तरहके सुख पाते हैं।

ज्योतिस्तत्त्वके मतसे अग्रहायण और माघ मासके गोधूलि योगमें विवाह करने पर कन्या विधवा होती, फाल्गुनके गोधूलि लग्नमें विवाह करनेसे पुत्र, आयु और धनकी वृद्धि होती है। इसी तरह वैशाखमें शुभ और प्रजावृद्धि, ज्येष्ठमें वरकी सम्मानवृद्धि एवं आषाढ मासके गोधूलि लग्नमें विवाह करनेसे धन, धान्य और पुत्र वृद्धि हुआ करती है।

गोधेनु (सं० स्त्री०) गौरेव धेनुः। दुग्धवती गाभी, दुधारी गाय।

गोधेर (सं० त्रि०) गुध वाहुलकात् एरक्। रक्षक, रक्षा करनेवाला।

गोधेरक (सं० त्रि०) गोधेर स्वार्थ कन्। १ रक्षक। (पु०) गोधेर संज्ञायां कन्। २ चतुष्पद सर्पविशेष।

गोध्र (सं० पु०) गा भूमिं धरति गो धृ-मूलविभुजादित्वात् क। भूधर, पर्वत, पहाड।

गोध्रा—गुजरातके पांचमहल जिलेके गोध्रा उपविभागके अन्तर्गत एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २२° ४६′ ३०″ उ० और देशा० ७३° ४०′ पू० पर अवस्थित है। यहां जिलेकी सदर अदालत, दिवानी अदालत, डाकघर, कारागार और औषधालय है।

गोन (हिं० स्त्री०) १ अनाज भरनेका चमडा, या कंबलकी

महाराज अजितसिंहने फतेह-महल निर्माण किया। यह जोधपुर नगरसे मुगलफौजके लौटनेका स्मारक है। इन इमारतोंमें उमदा कटावके किवाडें लगे हैं और सुर्ख पत्थरके भाझरी दार पर्दे खिचे हुए है। शहरमें भी बहुत से अच्छे अच्छे घर है। इनमें १० राजप्रासाद ठाकुरोंके कुछ नगर, भवन और ११ देवमन्दिर देखने योग्य हैं। बालकिशनजीका मन्दिर यशोवन्त अस्पतालके समीप है। उसमें श्रीकृष्णको मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। घनश्यामजीके मन्दिरमें भी श्रीकृष्णको मूर्त्ति विद्यमान है। रामगङ्गा-जीने इस मन्दिरको बनवाया था। कुछ कालतक मुसलमानोंने इसे मसजिदमें परिणत रखा, किन्तु जब महाराज अजितसिंहजी राजसिंहासन पर बैठे, तब उन्होंने मन्दिरका पुनरुद्धार किया। कुञ्जविहारीका मन्दिर सबसे अधिक कारुकार्यविशिष्ट है और ठीक बाजारमें पड़ता है। पासवन गुलावरायने इसे अठारहवीं शताब्दीमें बनवाया था। महामन्दिर शहरके पूर्वमें अवस्थित है। महाराज मानसिंहजीने अपने गुरु देवनाथजीके रहनेके लिये १८१२ ई०में इस मन्दिरका निर्माण किया था। यह और सब मन्दिरोंसे कहीं सुन्दर है।

शहरमें चार तालाब है,—पहला राव गङ्गाकी रानी पद्मावतीका बनाया हुआ पद्मसागर; दूसरा, बैजीका तालाब जिसे महाराज श्रीमानसिंहको लड़कीने बनाया, तीसरा गुलाबसागर जिसे गुलाबराय पासवनने १८४२ सम्वत्‌में बनाया और चौथा भीमसिंहजीका बनाया हुआ फतेहसागर। शहरके उत्तर महाराज सूरसिंहका बनाया हुआ सूरसागर है। इसके सिवा बालसमन्द नामक एक कृत्रिम हृद है जो शहर और मन्दोरके बीचमें पड़ता है।

जोधपुर नगर व्यवसायका केन्द्र है। यहां मोटा सूती और ऊनी कपड़ा बुना जाता है। सूती कपड़े की रङ्गाई और छपाई मशहूर है। पगड़ियां बहुत उम्दा तैयार होती है। लोहे पीतलके बरतन, हाथी दांतकी चीजें, सङ्गमरमरके खिलौने और घोड़े तथा ऊंटकी सवारीका साज सामान भी अच्छे बनते हैं। बड़ी सड़कों पर फर्शबन्दी है। ष्टेशनसे शहरतक बैलों-की छोटी ट्राम चलती जो १८९६ ई०में तैयार हुई है। बैलों और भैंसोंकी ट्राम-गाड़ीमें कूडा ढोया जाता है ट्रामवेकी कुल लम्बाई १३ मील है। शहरमें एक आर्ट स्कूल, एक हाई स्कूल तथा और भी बहुतसे छोटे छोटे स्कूल है। संस्कृत शिक्षाका भी प्रबन्ध है। रायका बागमें महाराजका राजप्रासाद विद्यमान है। रतनाद महलमें बिजलीकी रोशनी होती है। बुन्दीके महाराव राजाकी लड़की रानी हदोजीके बनाये हुए रानीसागर और चिड़ियानाथजीके भरनेसे शहरमें जलका इन्तजाम है।

जोधराज—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इन्होंने नोवा-गढ़के राजा चन्द्रभानुके आदेशानुसार हम्मीरकाव्य नामक एक उत्कृष्ट ग्रन्थ रचा था। उक्त ग्रन्थके रचना-कालके विषयमें कुछ सन्देह पड़ गया है। कवि लिखते हैं—

"चन्द्र नागवसु पञ्चगिनि, सवत माधव मास
शुक्ल सु त्रितिया जीव जुन तादिन ग्रन्थ प्रकाश॥"

इससे १८८५ संवत् निश्चित होता है किन्तु ऐतिहासिकोंका कहना है कि उक्त ग्रन्थ १७८५ संवत्‌में रचा गया है। हां, यदि नग शब्दमें सातका अर्थ लिया जाय तो १७८५ संवत् हो ठहरता है।

जोधराजने ग्रन्थके प्रारम्भमें अपनेको गौड़ ब्राह्मण और बालकृष्णका पुत्र बतलाया है। आपको रचना कुछ कुछ चन्द बरदाईके ढंगकी है। इनके हम्मीर-काव्यमें कहीं कहीं गद्य भी है, जिसकी व्रजभाषा है। नीचे एक कविता उद्धृत की जाती है—

"पुण्डरीक सुत सुता तासु पदकमल मनाऊं।
विसद वरन वर वसन विसद भूषण हिय ध्याऊं॥
विसद जंत्र सुर सुद्ध तंत्र तुम्बर जुत सोहै।
विसद ताल इक भुजा दुतिय पुस्तक मन मोहै।
गतिराज हंस हंसह चढ़ी रटी सुरन कीरति विमल।
जैमातु सदा बरदायिनी देहु सदा वरदान बल॥"

जोधराज गोदीका—सांगानेर निवासी एक दिगम्बर जैन कवि। इन्होंने वि० सं० १७२१में प्रीतङ्करचरित्र, १७२२में कथाकोश, १७२४ में सम्यक्त्वकौमुदी और १७२६में प्रवचनसार नामक जैन-ग्रन्थोंको हिन्दी-पद्य-

वास फूंसके घरमें रहती तथा कंगनीके दाने नित्य आहार करती हैं। सिर्फ पर्व दिनमें ही मिष्टान्न और मांस खाती है। मादक सेवनमें ये बड़े पटु है। पुरुष जाति भी कानमें पीतलके कुण्डल धारण करते हैं। इनके गुरु नहीं होते हैं, तब कभी कभी कोई निकृष्ट ब्राह्मण इनका पुरोहित हो जाता है।

सन्तानके भूमिष्ट होने पर उसकी नाड़ी काट कर फेंक दी जाती और गृहस्थ जातिभोज देते हैं। ७वें दिनको शिशुका नामकरण और दोल रोहण होता है। इसके बाद विवाह पर्यन्त और कोई उत्सव ये नहीं मनाते। इनके विवाहके पूर्व दिन वर और कन्याके शरीरमें हल्दी लगाई जाती है। विवाहकालमें गाँवका ग्रहविप्र आ वरको पूर्वमुख और कन्याको पश्चिममुख खड़ा कर मन्त्र पाठ करते और शरीर पर धान फेंक कर आशीर्वाद देते हैं। तदन्तर दोनों पक्षका ज्ञातिभोज हो विवाह उत्सव हो जाता है। इन लोगोंमें बाल्यविवाह, विधवा-विवाह और पुरुषके लिए बहुविवाह प्रचलित है। जातिमें किसी तरहकी घटना हो जाने पर पञ्चायतसे उसकी मीमांसा होती है। ये मुर्देको जलाते हैं। समस्त हिन्दू पर्वमें और मुसलमानके मोहर्रममें योग देते हैं।

प्रतिदिन चार पांच गोन्धलगार मिल कर वाद्यादि साथ ले द्वार द्वार घूमा करते हैं। किसीकी इच्छा हो जाने पर ये उसके प्राङ्गणमें समस्त रात्रि गोन्धल नाच करते हैं। प्रभात होनेके कुछ पहले इनमेंसे एक व्यक्ति अम्बा देवीको लेकर उन्मत्तकी नाँई कूदता और नाचता तथा भविष्यत् वाक्य कहना आरम्भ करता है। इस समय प्रत्येक दर्शक उसके चरण पर दो दो पैसे रख उसे प्रणाम करता है और फिर वह गोन्धलगार जलती हुई मसाल ले अपने शरीरमें लगा कर खड़ा रहता है। इसके बाद देवीके शरीरकी हल्दी ले आगन्तुकोंके कपालमें स्पर्श करता और अपुत्रक स्त्रियोंको पुत्रोत्पन्न तिथि कह दिया करता है। प्रातःकाल होने पर वे विदाई ले अपने अपने घरको चले आते हैं।

गोन्धीधस् (-सं० पु०) गमनशील, जो दुग्धमें प्रवाहित हो।

गोप (सं० पु०-स्त्री०) गां पाति रक्षति गो पा-क। १ जाति विशेष, ग्वाला, आहीर। इसका संस्कृत पर्याय-गोसङ्ख्य, गोदुह, आभीर, वल्लव और गोपाल है। साधारणतः ग्वाल नामसे मशहूर है। पश्चिमाञ्चलमें सब जगह आहीर और दाक्षिणात्यमें गावली नामसे अभिहित है।

आहीर और गावली देखो।

पूर्व कालसे यह जाति गोप और आभीर नामसे प्रसिद्ध है। मनुके मतानुसार ब्राह्मणके औरस और अम्बष्ठ कन्याके गर्भसे आभीरका जन्म हुआ है (१)। परशुराम-पद्धतिके मतसे कसेरो और मणिकार (जहौरी) के कन्यासे गोप जातिकी उत्पत्ति है। (२) किन्तु रुद्रजामलोक्त जातिमालामें लिखा है कि जुलाहा और मणिवन्ध-कन्याके संभोगसे गोपजीवका जन्म ग्रहण हुआ है (३)। ब्रह्मवैवर्तके मतानुसार श्रीकृष्णके लोमकूपसे गोपगण उत्पन्न हुए हैं (४)। ये सत्शूद्रमें गण्य हैं।

यह जाति पूर्वकालसे ही गोपालन करती आ रही है, इसीलिए ये गोप कहलाये। मनुसंहितामें लिखा है कि गोप वेतनप्रार्थी नहीं है, वह गोस्वामीकी अनुमति ले दश गौओंमेंसे एक श्रेष्ठ गौका दुग्ध दोहन कर ले जा सकता है। व्याससंहिताके विकृत वचनमें ये अन्त्यज जातिके मध्य गण्य हैं। किन्तु यम, पराशर, मनु प्रभृति संहितामें ये शूद्र और भोज्यान्नके जैसे गृहीत हैं (५)।

वर्तमान समयमें इस जातिके मध्य अनेक श्रेणी और शाखाभेद देखे जाते हैं। बङ्गदेशमें ग्वालाकी कई एक श्रेणियाँ है—राढ़ी, वागड़ी, वारेन्द्र, पल्लव या वल्लव, गौड या घोषग्वाला, मधुग्वाला, शुमिया, करञ्जी, काजाल

(१) "आभीरोऽम्बष्ठकन्यायां।" (मनु० १०।१५)

(२) "मणिपुत्र्यां कांस्यकारात् गोपालस्य च सम्भवः।" (भार्गवरामकृत जातिमाला)

(३) "मणिवन्ध्यां तन्तुवायात् गोपजीवस्य सम्भवः।" रुद्रयामलोक्त जातिमाला।

(४) "कृष्णस्य लोमकूपेभ्यः सद्यो गोपगणो मुने।
आविर्बभूव रूपेण वेशेनैव च तत्समः॥
त्रिंशत्कोटीपरिमितं कमनीयो मनोहरं।
संख्याविशिष्ट संख्याता बल्लवानां गणाः श्रुतौ॥" (ब्रह्म० ५।४५-४६)
"गोपनापितभिल्लाश्च तथा मोदककूवरौ॥
इत्येवमाद्या विप्रेन्द्र सत्शूद्राः परिकीर्तिताः॥" (ब्रह्मख० १०।१८)

(५) "दासनापितगोपालकुलमित्रार्धसीरिणः।
एते शूद्रेषु भोज्यान्ना यश्चात्मानं निवेदयेत्॥" (यम २०, पराशर ११।२०)

शिक्षित थे और शीघ्र ही वे उक्त स्कूलके प्रधान शिक्षक डा० थ्याकरके अत्यन्त प्रियपात्र हुए थे। डा० थ्याकर प्रायः कहा करते थे कि, जोन्सको नग्न और निराश्रय अवस्थामें सलिसबेरीके छोरमें छोड़ देने पर भी वह अर्थ और यशके मार्गको पकड़ सकता है अर्थात् भविष्यमें वह अवश्य ही एक प्रधान यशस्वी और सङ्गतिशाली व्यक्ति होगा। जोन्सने धीरे धीरे शिक्षामें इतनी उन्नति की कि, परवर्तीकालमें थ्याकरके स्थानापन्न डा० समनार कहा करते थे कि, जोन्स ग्रीक भाषामें उनसे भी अधिक व्युत्पन्न हैं।

हारोमें रहते समय अन्तिम दो वर्षोंमें उन्होंने अरबी और हिब्रु भाषा सीखी थी। उस समय वे समय समय पर लाटिन, ग्रीक और अंग्रेजी भाषामें निबन्ध लिखा करते थे। लिमन नामक पुस्तकमें उनके कई एक निबन्ध उद्धृत किये गये थे। विद्यालयकी लम्बी छुट्टियोंमें वे फ्रान्सीसी और इटली भाषा सीखते थे।

१७६४ ई०में जोन्स अक्सफोर्ड-विश्वविद्यालयमें प्रविष्ट हो विशेष उत्साह और परिश्रमके साथ विद्याचर्चा करने लगे। इन्होंने अरबी और फारसी भाषा सीखनेमें खूब मन लगाया। छुट्टीके समय ये इटली, स्पेन और पोर्तगलके प्रधान प्रधान ग्रन्थकारोंकी ग्रन्थावली पढ़ने लगे। १७६५ ई०में इन्होंने अक्सफोर्ड छोड़ दिया और आर्ल स्पेन्सर परिवारके साथ ये एकत्र रहने लगे। यहां रह कर ये लार्ड अलथर्पके शिक्षाका पर्यवेक्षण करते थे। वकालतका काम करनेके लिए १७६० ई०में इन्होंने इस पदको छोड़ दिया। उक्त आर्ल-परिवारके साथ एकत्र रहते समय जोन्स अत्यन्त परिश्रमके साथ प्राच्य भाषाका अभ्यास करते थे, इस अदम्य उत्साहके फलसे शीघ्र ही वे प्राच्य भाषाके एक प्रधान विद्वान् समझे जाने लगे।

१७६८ ई०में डेनमार्कके राजाके अनुरोधसे इन्होंने "नादिरशाह"की जीवनीका फारसीसे फ्रान्सीसी भाषामें अनुवाद किया था। १७७० ई०में इस पुस्तकके साथ हाफिजकी कुछ कविताओंका फ्रान्सीसी अनुवाद छपा था। दूसरे वर्ष इन्होंने एक फारसी भाषाका व्याकरण प्रकाशित किया। २१ वर्षकी उम्रमें जोन्सने Commentaries on Asiatic Poetry नामक एक पुस्तक लिखना प्रारम्भ किया। यह पुस्तक लाटिन भाषामें लिखी गई और १७७४ ई०में मुद्रित हुई। इस पुस्तकका नाम Poeseos Asiaticæ Commentariorum Libri Sex है, इस पुस्तकमें प्राच्यकविताके विषयमें साधारण मन्तव्य और हिब्रु, अरबी, फारसी तथा तुरकी भाषामें लिखित बहुतसी उत्तम उत्तम कविताओंका अनुवाद है। स्पेन्सरके साथ रहते समय इन्होंने फारसी भाषाका एक कोष लिखना प्रारम्भ किया था। प्रसिद्ध प्रसिद्ध फारसी ग्रन्थकारोंकी पुस्तकोंसे उद्धृत कर इस कोषकी आवश्यकीय बातोंका प्रयोग प्रदर्शित हुआ है। इस समय आँकातइ दुपेरों (Anquetil du Perron) नामके किसी व्यक्तिने अक्सफार्ड-विश्वविद्यालय और उसके कुछ अध्यापकोंमें दोष दिखलाते हुए एक विस्तृत समालोचना प्रकाशित की थी। १७७१ ई०में जोन्सने अपना नाम छिपा कर फरासीसी भाषामें उक्त समालोचनाका प्रतिवाद किया। प्रतिवादकी भाषा इतनी ओजस्विनी और मधुर हुई थी कि लोगोंने उस प्रतिवादको पारिसके किसी विद्वान् द्वारा लिखा गया है, ऐसा समझा था। १७७२ ई०में जोन्सने एशियाके भिन्न भिन्न देशोंकी भाषासे अनुवाद कर एक कविता-पुस्तक प्रकाशित की।

१७७४ ई०में जोन्स वकालत करने लगे। प्राच्य भाषा पर अत्यन्त अनुराग होते हुए भी ये आइनके सिवा और कुछ न पढ़ते थे। ये नियमितरूपसे अदालतको जाते थे। इस समय जोन्सने जिस प्रकारसे अध्ययन किया था, ब्लाकष्टोनके विषयकी उनकी स्तुति ही उसका यथेष्ट और स्पष्ट निदर्शन है।

१७८० ई०में जोन्सने अक्सफोर्ड-विश्वविद्यालयकी तरफसे पार्लियामेण्टमें प्रवेश करनेके लिए कोशिशें कीं, किन्तु अमेरिकाके युद्धके विषयमें प्रतिकूल सम्मति देनेके कारण वे इतने अप्रिय हो गये कि, उनका पार्लियामेण्टमें प्रवेश करना असम्भव हो गया। इससे उन्होंने पार्लियामेण्टकी आशा छोड़ अन्य कार्योंमें मन लगाया। इनकी बनाई हुई कुछ पुस्तकोंसे * इनके

* पुस्तकोंके नाम ये हैं—

(१) Enquiry into the Legal mode of Suppressing Riots

परित्याग कर दे। तदन्तर वह स्त्री विधवाकी नाईं किसी दूसरेसे विवाह कर सकती है। इनके रमणियां पूर्णगर्भा होने पर एक स्वतन्त्र उच्चा घरमें रखी जाती हैं। प्रसवके २१ दिन पर्यन्त उन्हें गर्म घरमें रहना पड़ता है। इक्कीस दिनों तक पति और पत्नी दोनों अशुचि रहते और कोई कार्य कर नहीं सकते हैं।

छोटा नागपुरके ग्वालोंमें बाल्यविवाह और ज्यादे उमरमें विवाह दोनों प्रचलित हैं। विवाहके चार मास बाद 'रोकसदि' या कन्या श्वशुरालय जाती है। इन लोगोंमें जब तक रोकसोधि नहीं होती तब तक विवाह सिद्ध नहीं समझा जाता है। विधवा विवाहकी प्रथा भी इनमें प्रचलित है।

ये गोमेषादि पालन तथा दधिदुग्धादि विक्रय कर जीविका निर्वाह करते हैं। किसी किसी स्थानमें कुछ गोप खेती भी करते हैं।

(पु०) २ ग्रामाधिकारी, गाँवका मालिक। ३ भूपाल, राजा। ४ गोष्ठाध्यक्ष, गोशालाका प्रबन्ध करनेवाला। (त्रि०) ५ गोरक्षक, गौकी रक्षा करनेवाला। गोपायति गुप-अच्। ६ रक्षक, रक्षा करनेवाला। ७ उपकारक, भलाई करनेवाला। ८ बोर, चारजल, मुर या बोल नाम की औषध। ९ गन्धर्वविशेष, एक गन्धर्वका नाम।

गोपक (सं० त्रि०) गोप स्वार्थे कन् गुप्-ण्वुल् वा। १ गोप, ग्वाला। २ बहुतसे ग्रामोंके एक अधिपति। ३ रक्षक, रक्षा करनेवाला। ४ वर्तमान गोआका प्राचीन नाम। गोआ देखो।

(पु०) ४ वणिक् द्रव्यभेद। ५ रतवाले। ६ शारिवा, अनन्तमूल। ७ नौसादर।

गोपकन्या (सं० स्त्री०) गोपस्य कन्येव प्रियतरा। १ औषध विशेष। गोपस्य कन्या, ६-तत्०। गोपजातीय कन्या, ग्वालाकी लड़की।

गोपकपुरि—गोआ देखो।

गोपकर्कटिका (सं० स्त्री०) गोपप्रिया कर्कटिका, मध्य पदलो०। गोपालकर्कटी, गोपाल काकड़ी या कुन्दरू।

गोपचेल—प्रभास खण्ड वर्णित एक पुण्य स्थान।

गोपघोण्टा (सं० स्त्री०) गोपप्रिया, घोण्टा, मध्यपदलो०। १ वृक्षविशेष, काई पेड़। निविड़ वनमें इस जातिका वृक्ष देखा जाता है। इसका फल तथा गाछ बैरके जैसे होते हैं। २ हस्तिकोलिवृक्ष। ३ विकङ्कतवृक्ष। ४ कर्कोटी, करेलो। ५ पूगभेद, एक प्रकारकी सुपारी।

गोपता (सं० स्त्री०) गोपस्य भावः गोप तल् टाप्। गोप-का धर्म।

गोपति (सं० पु०) गोः पतिः ६ तत्। १ शिव, महादेव। २ वृष, साँढ़, बैल। ३ विष्णु। ४ भूमिपति, राजा। ५ किरणपति, सूर्य। ६ स्वर्गपति, इन्द्र। ७ ऋषभ नामकी औषध। ८ भोजवंशीय एक राजा। कृष्णने द्वारावती नगर में इसे निहत किया। ९ गन्धर्वविशेष। १० नौ नन्दोंमें-से एक। ११ गोपाल, ग्वाला। १२ वाचाल, मुखर।

गोपतिचाप (सं० पु०) इन्द्रधनुष।

गोपत्य (सं० क्लो०) गोपति-यत्। गोपतिका धर्म, ग्वालाका भाव।

गोपथ (सं० पु०) अथर्ववेदका एक ब्राह्मण। ब्राह्मण देखो।

गोपद (सं० क्लो०) गोः पदं पदस्थानं योग्यस्थानं। १ गौओंके रहनेकी जगह। २ पृथ्वी पर चिह्नित गौका खुर।

गोपदल (सं० क्लो०) गोपदं गोचरणन्यासयोग्यं स्थानं तदाकारं वा लाति-ला क। गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

गोपदी (सं० त्रि०) गायके खुरके समान अत्यन्त छोटा।

गोपन (सं० क्लो०) गुप भावे ल्युट्। १ अपह्नव, छिपाव, दुराव। २ रक्षण, रक्षा। ३ कुत्सा, घृणा, तिरस्कार। ४ व्याकुलता। ५ दीप्ति। ६ तेजपत्र तेजपत्ता। ७ अग्नि-पर्ण।

गोपना (सं० स्त्री०) गुप दीप्तौ भावे युच्। दीप्ति, कान्ति।

गोपनाथ—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। ये १६१२ ई०में विद्यमान थे।

गोपनीय (सं० त्रि०) गुप कर्मणि अनीयर्। १ अप्रकाश्य, जिसका प्रकाश करना उचित नहीं, छिपाने योग्य, गोप्य, २ रक्षणीय।

गोपवधू (सं० स्त्री०) गोपस्य वधुरिव प्रियत्वात्। १ शारिवा, अनन्तमूल। गोपस्य वधूः ६-तत्। २ गोपपत्नी, ग्वालेकी स्त्री।

गोपवधूटी (सं० स्त्री०) वधू अल्पार्थे टी गोपस्य वधूटी, ६ तत्। युवती गोपाङ्गना, युवती ग्वालिन्।

गोपभट्ट—गोभट्ट देखो।

तथापि इनमें मौलिकता कुछ भी न थी। इन्होंने किसी नवीन विषयका आविष्कार नहीं किया और न किसी पुरातन विषयमें नवीन शिक्षा ही दी है। इनमें विश्लेषण और आश्लेषणकी क्षमता न थी। भाषाके विषयमें इन्होंने किसी प्रकारकी वैज्ञानिक उन्नति नहीं की—सिर्फ दूसरोंके लिए उपादान संग्रह किया है। प्राच्य-साहित्यके विषयमें इन्होंने जितनी पुस्तकें लिखी हैं उनके पढ़नेसे मनोरञ्जनके साथ साथ अनेक विषयोंमें शिक्षा भी मिलती है; किन्तु उनमें उनकी वर्णनाक्षमता और चिन्ताशक्तिकी मौलिकताका परिचय नहीं मिलता। इन्होंने विद्याविषयक जैसी उन्नति की थी, उससे ये अवश्य ही एक मान्य और गौरवके पात्र थे। इन्होंने अनेक विषयोंको सीखनेके लिए जैसा प्रयत्न और परिश्रम किया था, थोड़ा विषय सीखनेके लिए यदि वैसा करते, तो उनके ज्ञान और विद्याकी अधिकतर स्फूर्ति होती, सम्भव था कि उससे ये एक अद्वितीय पुरुष हो जाते।

जोन्सका चरित्र हमेशा सम्मान पाता रहेगा।

जोन्स किसी विषयको सीखनेके लिए हरएक तरहका परिश्रम उठानेको तयार रहते थे। पिता माता पर इनकी प्रगाढ़ भक्ति थी। इनके बन्धुगण सब समय इनका विश्वास कर निश्चिन्त रहते थे। विचारकालमें इनकी न्यायपरतासे सभी सन्तुष्ट होते थे।

पूर्वोल्लिखित पुस्तकोंके सिवा जोन्सने निम्न-लिखित पुस्तकें भी भाषान्तरित की थीं—(१) दो महम्मदीय आइन, (२) उत्तराधिकारके विषयमें तथा दानकर पत्र बिना मरे हुए व्यक्तियोंके उत्तराधिकारत्वको आइन, (३) निजामीकृत गल्प पुस्तक, (४) प्रकृतिके लिये दो स्तोत्र, (५) वेदका उद्धृतांश।

सर विलियम जोन्सकी कब्रके ऊपर निम्नलिखित भावार्थकी एक कविता लिखी है—

"एक मानवका देहांश इस स्थान पर निहित है, वे ईश्वरसे डरते थे—मृत्युको नहीं। इन्होंने अपनी स्वाधीनताकी रक्षा की थी। ये अर्थ अन्वेषण नहीं करते थे। ये अधार्मिक और कुक्रियासक्त व्यक्तियोंके सिवा न तो किसीको अपनेसे नीच ही समझते थे और न ज्ञानी और धार्मिकके सिवा किसीको अपनेसे उच्च ही मानते थे।"

जोबट—१ मध्यभारतके भोपावर एजेन्सीके अन्तर्गत एक क्षुद्र राज्य। यह अक्षा० २२° २१´ से २२° ३०´ उ० और देशा० ७४° १८´ से ७४° ५०´ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १४० वर्गमील है। इसके उत्तरमें झाबुआ राज्य। दक्षिण और पश्चिममें अलीराजपुर तथा पूर्वमें ग्वालियर है। यहां भूमि पर्वतमय है और अधिकांश अधिवासी भील हैं। मालवमें महाराष्ट्रोंके उपद्रवके समय यह प्रदेश शान्त था। उत्तर सीमाकी विन्ध्यपर्वतश्रेणीकी कई एक शाखा पर्वत इस राज्यमें प्रविष्ट हुए हैं इन्दोरसे धार और राजपुरसे (अलीराजपुर) गुजरात तक एक सड़क इस राज्यके उत्तर-पूर्व होकर गई है। जोबटके राना राठोरवंशके राजपूत हैं।

यहांकी लोकसंख्या लगभग ८४४३ है। यहांके भील खेती करके अपनी जीविका निर्वाह करते है। यहां विशेष कर उड़द, बाजरा और ज्वार उत्पन्न होती है।

यह राज्य पांच थानामें विभक्त है, यथा—जोबट, गुड़, हीरापुर, थयली और जुआरी। यहांकी वार्षिक आय २१०००) रु०; जङ्गल विभागसे और ४००० रु० है। कहते हैं, कि ई० १५ वीं शताब्दीमें यह राज्य केसरदेवके हाथ लगा। (अलीपुरके स्थापयिता आनन्ददेवके पौत्रके पुत्र) अङ्गरेजोंका आधिपत्य होनेके समय जोबटमें राना सबलसिंह राजत्व करते थे। इनके बाद राना रञ्जितसिंह राजगद्दी पर बैठे। और १८७४ ई०में इनका देहान्त हुआ। इन्होंने १८६४ ई०में अङ्गरेजोंको रेलवेके लिये काफी जमीन देनेको कही। इसके बाद स्वरूपसिंह राजगद्दीपर बैठे और १८९७ ई०में इनका देहान्त हुआ। बाद इन्द्रजितसिंह राजगद्दी पर बैठे। नरेशका उपाधि राणा है।

२ मध्य भारतके भोपावर एजेन्सीके अन्तर्गत जोवट राज्यका प्रधान शहर। यह अक्षा० २२° २७´ उ० और देशा० ७४° ३७´ पू०में पड़ता है। इस नगरके नामानुसार राज्यका नाम जोबट होने पर भी यह राजधानी

महाभारतका मत है कि तृष्णार्त्त गोको जलपान करते समय जो व्यक्ति बाधा देता उसे ब्रह्मघातक कहते हैं। जो शीत तथा वायुरोधक गोगृह निर्माण करता है, उसके सात कुल उद्धार होते हैं।

गृहस्थके अपने घरमें कुलक्षणा गायकी उत्पन्न होने पर उसे परित्याग करना नहीं चाहिये। शीतकालमें अनाथ मवेशियोंका घर निर्माण कर देना उचित है।

(ब्रह्मपुराण)

गायके प्रसव कालसे दो मास पर्यन्त उसे दुहना नहीं चाहिये। तृतीयमासमें सिर्फ दो स्तन दुहनेका विधान है और शेष दो स्तन बछाके लिए छोड़ देवे। चतुर्थ मासमें तीन स्तन दुहना चाहिये, किन्तु दुहते समय यदि गाय किसी तरह कष्ट अनुभव करे, तो उसे अच्छी तरह न दुहे। आषाढी, आश्विनी और पौष पूर्णिमाको गोदोहन करना निषेध है। युगादि, युगान्त, षड़शीति, विषुवत् संक्रान्ति, उत्तरायण एवं दक्षिणायण प्रवृत्तिके दिनमें चन्द्र या सूर्य ग्रहणमें एवं पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी, द्वादशी और अष्टमी तिथिमें गोपूजा करनी चाहिए तथा ४ पल लवण, ८ पल घृत, १६ पल अपर दुग्ध और ३२ पल शीतल जल गोको खाने देना उचित है। किन्तु रुचि और दुग्धके परिमाणानुसार आहारीय परिमाण वृद्धि या ह्रास करना पडता है। प्रातःकाल लवण और इसके बाद जल तथा तृण खानेके लिये देना चाहिए। रात्रिको गोगृहमें दीप, तन्त्रीवाद्य और पौराणिक कथाका प्रसङ्ग करे। मनुष्य मात्रको ही गौओको तृण जलादि द्वारा प्रतिपालन, पूजा और प्राणके साथ भक्ति करना उचित है। तथा उठते, बैठते, खाते, पीते, सोते समय सर्वदा अपने मनमें निम्नलिखित मन्त्र पाठ करना चाहिये।

मन्त्र यथा—

"दृष्योदग्राये पु गवेषु मसा क्षीइन्तु गाव. नअपा सवत्सा।
घोर मघुवत् मुख स्व-न्तु शीतातपश्चाधिमर्घ विंशुक्ता॥"

इस प्रकार गोपरिचर्या करनेसे ऐहिक सुखभोग और परकालमें स्वर्ग लाभ होता है। (ब्रह्मपुराण)

सर्वदा सन्तोषके साथ गोको घास खानेके लिये देना चाहिए। ताडन, आक्रोश या खेद स्वप्नमें भी न करें। गोमय या गोमूत्रको कभी भी घृणा दृष्टिसे न देखें। शुष्क क्षार द्वारा हमेशा गोगृह परिष्कार कर डालें। ग्रीष्मकालमें शीतल वृक्षकी छायामें और शीतकालमें गर्म तथा कर्दमविहीन गृहमें तथा वर्षा और शिशिरकालको अल्पोष्ण और वायुविहीन घरमें गोको रखना चाहिए। उच्छिष्ट, मूत्र, विष्ठा, कफ, अश्रु तथा दूसरे किसी तरहका मल गोगृहमें परित्याग न करें। रजस्वला, कुलटा या नीच जातिको गोशालामें प्रवेश होने न दें। कभी भी गोवत्सका लङ्घन न करें। गोशालाके निकट क्रीडा करना निषिद्ध है। जूता पहन कर अथवा हाथी, घोडा या गाडी पालकी प्रभृति पर आरोहण कर गोके मध्य गमन न करना चाहिए। पिता तथा माताकी नाईं श्रद्धा सहित गौओंका प्रतिपालन करें। महा कोलाहल, घोर दुर्दिन और देशमें विप्लव उपस्थित होने पर मवेशियोंको तृण और शीतल जल खानेके लिये देना चाहिए।

(ब्रह्मपुराण)

विष्णुधर्मोत्तरमें लिखा है कि राजाओंके लिये गौ प्रतिपालन करना उचित है। गोमय और गोमूत्र द्वारा अलक्ष्मीका विनाश होता है। इन्हें कभी भी घृणा दृष्टिसे न देखें। उतनी ही संख्यामें गौ रखें जितनी संख्याका प्रतिपालन अच्छी तरह कर सकें। कभी भी क्षुधार्त्त हो गौ कष्ट न पा सके, उसके प्रति विशेष लक्ष्य रखना चाहिए। जिसके घरमें गाय क्षुधासे कातर हो रोदन करती है, वह व्यक्ति नरकको प्राप्त होता है। दूसरेकी गौको ग्रास दान करनेसे अधिक पुण्य होता है। समस्त शीतकालमें दूसरेकी गौको ग्रासदान एवं आठ वर्ष पर्यन्त अग्रभक्त प्रदान करने पर भी स्वर्गको प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति मवेशियोंके गृहमें शीत निवारणका उपाय और जलपात्रको जलसे परिपूर्ण कर देता वह वरुण लोकको जा अप्सराओंके साथ नृत्य-गीत कर सकता है।

सिंह, व्याघ्र, भयत्रस्त एवं पङ्क या जलमग्न गायको उद्धार करने पर एक कल्प पर्यन्त स्वर्गभोग होता है। घरमें एक गाय मात्रके रहने पर रजस्वला स्त्रीका कभी भी गर्भदोष नहीं होता, तथा उस घरकी मिट्टी किसी तरह दूषित रहने पर भी अच्छी हो जाती है। गौके निःश्वास-वायुसे वह घर सर्वदाके लिये शान्तियुक्त हो जाता

डाकघर, सराय, बङ्गला और पुलिस ष्टेशन है।

जोरावर मल—हिन्दीके एक कवि। ये नागपुरके रहने वाले और जातिके कायस्थ थे। १७३५ ई०में इनका जन्म हुआ था।

जोरावरसिंह—१ बीकानेरके एक राजा। सुजानसिंहको मृत्युके उपरान्त १७३७ ई में ये बीकानेरके सिंहासन पर बैठे थे। इनके शासनकालमें कुछ विशेष घटनाएँ हुई थीं। इन्होंने कुल १० वर्ष तक राजत्व किया था। किसी किसीका कहना है कि इन्होंने (सं० १७९२से १८०८के भीतर) 'रसिकप्रिया टीका' नामक एक ग्रन्थ रचना किया था।

२ काश्मीरके राजा गुलाबसिंहके एक सेनापति। इन्होंने लदाक् नामक स्थान काश्मीर राज्यमें लिया था। गुलाबसिंह देखो।

३ जयशलमेरके प्रधान सामन्त। आपके पिताका नाम अनूपसिंह था, जिन्होंने राजकुमार रामसिंहसे मिल कर जयशलमेरके राजा रावल मूलराजको बन्दी कराया था। बादमें जोरावरसिंहने माताकी आदेशानुसार रावल मूलराजको कारागारसे मुक्त कर दिया। इस पर रावल मूलराजके मन्त्री सालिमसिंहने षड़यन्त्र रच कर इन्हें राज्यसे निकलवा दिया।

कुछ दिन बाद सालिमसिंहको रास्तेमें सामन्तोंने घेर लिया। उपायान्तर न देख, दुष्टहृदय सालिमने जोरावरसिंहके पैरों पर पगड़ी रख दी। वीरहृदय जोरावरने उसे क्षमा कर दिया। परन्तु पीछे उस दुष्ट-मन्त्रीने अपने प्राणरक्षक जोरावरसिंहको जहर दे कर मार डाला।

जोरावरी (फा० स्त्री०) १ जोरावर होनेका भाव। २ जबरदस्ती, धींगा धींगी।

जोरू (हिं० स्त्री०) स्त्री, भार्या, घरवाली।

जोलाहा (हिं० पु०) जुलाहा देखो।

जोवाई—१ आसामके खासी और जयन्ती पहाड़ जिलेका सब डिविजन। यह अक्षा० २४° ५८' एवं २६° ३' उ० और देशा० ९१° ५८' तथा ९° ५१' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २०८६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ६७९२१ है। यह पहले जयन्तीराजके अधिकारमें था। १८३५ ई०को वृटिश गवर्नमेण्टने उनसे जोवाई ले लिया। अधिकांश अधिवासी सिनतेङ्ग हैं। इसमें ६४० गांव बसे हैं।

२ आसामके अन्तर्गत खासी और जयन्ती पहाड़ उपविभागका सदर ग्राम। यह अक्षा० २५°२६' उ० और देशा० ९२°१२' पू०में समुद्रपृष्ठसे ४४' २२' फुट ऊंचे पर अवस्थित है। यहांसे कपास, रबर आदिकी रफतनी होती है और दूसरे दूसरे देशोंसे चावल, सूखी मछली और सूती कपड़ेकी आमदनी होती है। यहां वर्षा अधिक होती है। १८८१ ई० तक पहले पांच वर्षोंमें ३६२०६३ इञ्च वर्षा होती थी। १८६२में जो जातीय विद्रोह हुआ था, जोवाई उसका केन्द्रस्थल रहा।

जोवारी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चमकीली मैना। यह कई तरहकी मीठी मीठी बोलियां बोलती है। भिन्न भिन्न ऋतुओंमें यह भिन्न भिन्न देशोंमें जा कर रहती है। यह फूलों और अनाजोंको हानिकारक है।

इसके अंडे बिना चित्तीके और नीले रङ्गके होते हैं। इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होता है।

जोश (फा० पु०) १ उफान, उबाल। २ मनोवेग, आवेश।

जोशन (फा० पु०) १ एक प्रकारका चांदी या सोनेका गहना जो भुजाओं पर पहना जाता है। इसमें छः या आठ पहलवाले लंबोतरे पोले दानोंकी पांच या छः जोड़ियां होती हैं। दोनों रेशम या सूत आदिके डोरेमें गुथे रहते हैं। दोनों बाहों पर दो जोशन पहने जाते हैं। २ कवच, जिरह बकतर।

जोशांदा (फा० पु०) वह जड़ या पत्तियां जो दवाके लिये पानीमें उबाली जाती हैं, क्वाथ, काढ़ा।

जोशी (हिं० पु०) जोषी देखो।

जोष (सं० पु०) जुष घञ्। १ प्रीति, प्रेम। २ सेवन, सेवा। (क्ली०) सुख, आराम।

जोष—एक कवि। इनका कविता-सम्बन्धीय नाम अहमद हसन खाँ था। ये लखनऊके रहनेवाले थे और १८५३ ई०में विद्यमान रहे। इन्होंने 'उर्दूदीवान' नामक ग्रन्थ रचा है। इनके पिताका नाम नवाब मुकीमखाँ था, जो नवाब मुहब्बत खाँके लड़के थे।

पसन्द न आया। इसीसे देवदत्त यशोधाराका विरशत्रु हो गये एवं २१ वर्ष तक उसका प्राणनाश करनेकी चेष्टा करते रहे। एक समय देवदत्तने यशोधाराको पुष्करिणी में निक्षेप किया। ऐसा करने पर भी यशोधारा मरी नहीं एवं पुष्करिणीस्थित सर्पराज कर्तृक सुरक्षित हो कर पितृसदन लाई गई। उक्त पुष्करिणी यशोधाराके दूसरे नाम 'गोपातीर्थ' से बहुत समय तक प्रसिद्ध थी।

गोपादित्य (सं० पु०) १ काश्मीरके एक राजाका नाम। ई०के ४०० वर्ष पहले ये काश्मीरके सिंहासन पर आरोहण हुए थे। ये अतिसुशृङ्खलासे राज्यशासन एवं ब्राह्मणोंको बहुत भूमिदान किया करते थे। २ सुभाषितावली धृत एक प्राचीन कवि।

गोपाध्यक्ष (सं० पु०) गोपानामाधाच्तः, ६-तत्। गोपालकोंके कर्ता, गोपति, श्रीकृष्ण। (महाभारत ८।३५ अ०)

गोपानसी (सं० स्त्री०) गां जलं पाति निवारयति गोपानं छादं सेधति प्राप्नोति गोपान-सिध्-ड-ङीप्। १ वड़भी, घरको छतका निम्नस्थ वक्र काष्ठ। २ कर्णिका, विष्कम्भि काष्ठ। ३ वक्रीभूत धारणकाष्ठ, घरमें लगानेकी टेढ़ी धरन।

गोपानीय (सं० क्ली०) गोमूत्र, गायका मूत।

गोपायक (सं० त्रि०) गोपायति गुप्-आय ण्वुल्। रक्षक, बचानेवाला।

गोपायन (सं० क्ली०) गुप्-आय भावे ल्युट्। १ गोपन, छिपाव। २ रक्षक।

गोपायित (सं० त्रि०) गुप्-आय कर्मणि क्त। १ रक्षित। (क्ली०) गुप्-आय भावे क्त। २ गोपन, छिपाव।

गोपायितृ (सं० त्रि०) गुप्-आय-तृच। रक्षक।

गोपाल (सं० पु०) गां भूमिं पशुविशेषं पालयति पालि-अण्, उपस०। १ राजा। २ गोरक्षक, गोपालक, ग्वाला। ३ संकीर्ण जातिविशेष। पराशरके मतानुसार क्षत्रियके औरस और शूद्रकन्याके गर्भसे गोपालकी उत्पत्ति है। ब्राह्मणोंके लिए इसका अन्न भोज्य कहा गया है।*

दाक्षिणात्यके मन्द्राज और बेलगांव ज़िलेमें गोपाल जातिके बहुतसे मनुष्य वास करते हैं। कहीं कहीं ये 'गोल' नामसे परिचित है।

ये देखनेमें कृष्णकाय, आकृति मध्यम, मुख लम्बा, गाल चिपटा तथा गला छोटा और लम्बा है। सबके माथेमें चोटी, अल्प दाढ़ी और मूंछ रहती हैं। साधारणतः ये दाल और रोटी खाते और मत्स्य, छाग, भेड़ा, खरगोस, मुरगाका शिकार कर उनका मांस भी खाते हैं। मादकताके लिए ये ताड़ी, गाँजा और तम्बाकू सेवन करते। ये धातु एवं नाना प्रकारके वृक्षोंसे औषध प्रस्तुत करना जानते है। स्त्रियां तथा छोटे छोटे लड़के घरमें रह एक तरहकी चटाई तैयार करते और बाजार जा विक्रय किया करते है।

ये ब्राह्मणोंके प्रति विशेष श्रद्धा भक्ति रखते एवं विवाहादि कर्ममें उन्हें पौरोहित्यमें नियुक्त करते हैं। सिर्फ विवाहमें ही ये जातिभोज देते है। ये हिन्दू देव-देवोंकी पूजा करते, इसके अलावा मारुती, व्यङ्कोवा, नर्शोवा और यल्लमादेवीको मूर्ति अपने अपने घरमें रख पूजते है। पुत्र प्रसूत होने पर ये पचिव देवीकी पूजा, एवं नवम दिनको पुत्रका नामकरण करते हैं। ये शवको गाड़ते और ५ सप्ताह काल अशौच मानते हैं। लिङ्गायत पुरोहित आ शङ्ख बजाकर इनका अशौच दूर करते हैं।

४ विष्णुका अवतारविशेष नन्दनन्दन श्रीकृष्ण पद्मपुराणमें लिखा है कि ये सर्वदा बालकमूर्त्ति धारण करते हैं। इनके शरीरका वर्ण नवीन जलधरके जैसा है। गोपकन्या और गोपबालक सर्वदा इन्हें वेष्टन किया रहते है। ये गोपवेश परिधान करते। इनका मुख हमेशा मृदु मधुर हास्ययुक्त दीख पड़ता है। ये वृन्दावनके कदम्बमूलमें रहना बहुत पसन्द करते है। शैवशाक्तकी नाईं बहुतसे इन बालगोपालकी उपासना करते हैं। जगदीश तर्कालङ्कार और गदाधर भट्टाचार्य प्रभृति नैयायिक ग्रन्थकारने ग्रन्थारम्भमें इष्टदेव बालगोपालको नमस्कार किया है। तन्त्रसारमें इनकी उपासनाप्रणाली लिखी हुई है।

गोपालका ध्यान—

"अव्याद व्याकोष नीलाम्बुजरुचिरवषाम्भोजनेत्राम्बुजस्थो।
बालो जङ्घाकट'रस्थलकलितरणत किङ्किणीको मुकुन्दः॥"

---

* "क्षत्रियात् शूद्रकन्यायां समुत्पन्नस्तु यः सुतः।
स गोपाल इति ज्ञेयो भोज्यो विप्रैर्न संशयः॥" (पराशर)

रह नहीं सकती, इसलिये वे जोषीमठमें आकर रह जाते हैं। जोषीमठके वासुदेव, गरुड़ और भगवतीके मन्दिर भी उल्लेखयोग्य है। जोषीमठका दूसरा नाम ज्योतिर्धाम (ज्योतिर्लिङ्गका वसतिस्थल) है।

जोषीष—एक मुसलमान कवि। इनका कविता सम्बन्धीय नाम मुहम्मद हसन वा मुहम्मद रोशन था। वे पटनाके रहनेवाले थे और सम्राट् शाहआलमके समयमें विद्यमान थे।

जोष्टृ (सं० त्रि०) जुष-तृच्। सेवक।

जोष्य—जुष्य देखो।

जोहड़ (हिं० पु०) कच्चा तालाव।

जोहार (हिं० पु०) अभिवादन, वन्दन, प्रणाम।

जोहिया—शतद्रु नदीके तटपर रहनेवाली राजपूत कुलोद्भव एक जाति। जोहिया, टहिया और मङ्गलिया आदि जातियां बहुत दिनोंसे इस्लाम धर्मको मानने लगी है। इनकी संख्या कम है। किसी किसीके मतसे जोहिया लोग भारतवर्षीय ३६वें राजवंशके एकतम वंशोद्भव है, और कोई कोई यह कहते है कि ये यदुभाट्टवंशीय हैं। कर्नल टाड साहबका कहना है—ये जाट जातिके अन्तर्भुक्त हैं। यदुका उङ्ग पर्वत पर इनका वास था। मोरीवंशीय चितोराधिपतिकी सहायतार्थ राजपूतोंके समावेश कालमें येजङ्गलदेशाधिपति कहकर उल्लिखित हुए हैं। हरियाना, भाटनेर और नागर ये तीन प्रदेश जङ्गलदेश कहलाते थे; किन्तु अब उन प्रदेशोंमें यह जाति बहुत थोडी है। गोदरोंने बीकानेरके स्थापनकर्ता राठोरवंशीय पराक्रमी बीकाको सहायतासे जोहियाओंको पराजित और विताड़ित कर उनके ११०० ग्राम अधिकार किये थे। ईसाकी १५ वीं शताब्दीमें यह घटना हुई थी, किन्तु इस समय तक ये पूरी तरहसे भगाये न गये थे। अकबरके राजत्वकालमें भी वे घिर्सा प्रदेशमें जमींदारी करते थे। कुछ भी हो, इस घटनाके बहुत पहलेसे ही ये नीचेके दुआबमें रहते थे। बहुतोंका अनुमान है कि बाबरद्वारा उल्लिखित जिञ्जूटा और यह जोहिया ये दोनों एकही जाति है।

जोही—बम्बई प्रान्तके लाड़काना जिलेका तालुक। यह अक्षा० २६° ७´ तथा २७° उ० और देशा० ६७° ११´ एवं ६७° ४७´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ७६´ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ५२२१८ है। इसमें ८७ गांव हैं। जोही सदर है। मालगुजारी और सेस कोई १ लाख ४० हजार रुपया है। पश्चिम अञ्चलमें कीरथर पर्वत है।

जौंकना (हिं० क्रि०) क्रुद्ध हो कर ऊंचे स्वरसे कुछ कहना।

जौंची (हिं० स्त्री०) गेहूं या जौकी फसलमें होनेवाला एक प्रकारका रोग। इससे बाल काले हो जाते हैं और दाने निकलने नहीं पाते।

जौंराभौंरा (हिं० पु०) १ किले या महलोंके भीतरका वह गहरा तहखाना जिसमें गुप्त खजाना आदि रहता है। २ दो बालकोंका जोड़ा।

जौ (हिं० पु०) १ एक प्रसिद्ध अनाज और उसका पौधा। जिसका दूसरा नाम यव है। यव देखो।

२ पञ्जाबमें होनेवाला एक पौधा जिसकी लचीली टहनियोंसे वहां झाड़ू, टोकरे बगैरह बनाये जाते हैं। मध्य एशियाके प्राचीन ध्वंसावशेषोंमें इसकी टहनियां मिली हैं, जो सम्भवतः परदोंके रूपमें व्यवहृत होती थीं। ३ एक तौलका नाम। यह ६ राईके बराबर होती है।

(क्रि० वि०) ४ जब। (अव्यय) ५ यदि, अगर।

जौकेराई (हिं० स्त्री०) मटरमिश्रित जौ, जौका ढेर, जिसमें मटर मिला हुआ हो।

जौख (हिं० पु०) झुण्ड, जत्था, फौज।

जौगड़—मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिलेका टूटा फूटा जिला। यह अक्षा० १९° २३ उ० और देशा० ८४° ५०´ पू०में ऋषिकुल्या नदीके उत्तर तट पर अवस्थित है। पहले यहां प्राचीरवेष्टित विशाल नगर था। दुर्गके मध्य भागमें प्रस्तरफलक पर बौद्ध सम्राट् अशोकके १३ अनुशासन खोदित हैं। ऐसे अनुशासन मन्द्राज प्रान्तमें दूसरे स्थान पर देख नहीं पड़ते। किलेके दीवारोंके भीतर मट्टीके पुराने वर्तन और खपरे बहुत हैं। ई० १म शताब्दीकी बहुतसी मुद्राएं मिली हैं। मट्टीके नीचे दबा हुआ एक प्राचीन मन्दिर भी आवि-

चम्पू, वीरराघवस्तव, श्वेताद्रिराघवाष्टक, सौभाग्य-लहरी प्रभृति प्रणयन किये हैं।

२ रसेन्द्रसारसंग्रह नामक वैद्यक ग्रन्थकार।

गोपालकृष्णगोखले — ये दक्षिण प्रान्तस्थ महाराष्ट्र ब्राह्मण। जातिमें कोकनस्थ ब्राह्मणके अन्तर्गत थे। इनका जन्म १८६६ ई०में कोल्हापुरमें हुआ था मातापिताकी अवस्था शोचनीय होने पर भी इन्हें कालेज की शिक्षा मिली थी इन्होंने दक्खिन कालिज Deccan College और एलफिन्ष्टन कालेजमें (Elphinston College) पढ़ा था और वहींसे १८८४ ई०में बी०ए पास किया था। सज्जन पण्डितों के समाजमें भी ये एक प्रसिद्ध पण्डित गिने जाते थे। इसके बाद दक्षिण एजुकेसनल सोसाइटीमें बीस वर्षके लिये ७५ रुपये मासिक पर पढ़ानेके लिये प्रतिज्ञावद्ध हुए देशहित, देशसेवा और परोपकारी काय करनेका इनको इतना अधिक प्रेम था कि कालेजकी छुट्टीके दिनोंमें देशसेवाका चंदा एकत्र करनेके लिये इन्हें पाँव पाँव घर घर घूमने और अनेक तरहके कष्ट सहने पड़ते थे। स्वर्गवासी रानाडे अपने पीछे अपने शिष्य मिष्टर गोखलेको ही देशसेवाके लिये अपना उत्तराधिकारी कर गये थे। कुछ दिन तक ये पूना सार्वजनिक सभाके पत्र (Quarterly Journal) क्वार्टर्ली जर्नलके सम्पादक हुए। बाद इन्होंने चार वर्ष तक ऐङ्गलो मरहाठी भाषाके सुधारक नामक पत्रका सम्पादन किया और ये चार वर्ष तक (Bombay Provincial Council) बम्बई प्राविन्सियल कौंसिलके मन्त्रीके पद पर भी कार्य करते रहे। १८९५ ई०को जब पूनामें (Indian National Congress) जातीय महासभाका अधिवेशन हुआ तब उसके मन्त्री पद पर ये ही निर्वाचित हुए थे। १८९७ ई०में अन्य प्रसिद्ध सार्वजनिक पुरुषोंके साथ ये भी भारतीय व्ययसम्बन्धी (Welby Commission) वेल्बी कमीशनके सम्मुख अपनी सम्मति देनेके लिये इङ्गलैंड भेजे गये। वहाँ इनकी कौशलसे सबके सब दंग रह गये। सदस्योंने इन्हें नीचा दिखानेका बहुत कुछ प्रयत्न किया, परन्तु इनकी विद्वत्ता और अभिज्ञताके सामने उनकी एक न चली विलायतमें रहते समय उनके पास पूनेसे थोड़े पत्र गये थे जिनमें गवर्नमेंटकी प्लेगसम्बन्धी नीतिके विरुद्ध शिकायतें थीं और गोरे सिपाहियोंके अत्याचारोंका वर्णन था। पत्र पढ़कर देशवासियोंके दुःखसे इनका हृदय पिघल गया और तुरंत ही उन पत्रोंका आशय इंगलैंडके समाचारपत्रोंमें छपा दिया। इस पर इंगलैंडमें बड़ी हलचल मची।

१९०० १ ई०में इन्होंने प्रान्तीय व्यवस्थापक कौंसिलके निर्वाचित सदस्यकी हैसियतसे बहुत कुछ उपयोगी काम किया। १९०२ ई०में ये वाइसरायकी व्यवस्थापक कौंसिलके सदस्य चुने गये। बजटके सम्बन्धमें इनकी प्रथम वक्तृताने लोगों पर बड़ा भारी प्रभाव डाला। इनकी योग्यताको देख कर इनके विपक्ष मुक्तकण्ठसे इनकी प्रशंसा करते थे। यहां तक कि लार्ड कर्जन जैसे निरंकुश शासकने भी इनकी खूब तारीफ की थी और इसके उपलक्ष्यमें इन्हें सी, आई, ई, की उपाधि भी मिली थी।

१९०५ ई०में गोखलेने भारतमें अपने ढंगकी निराली और अत्यन्त उपयोगी संस्था-भारतसेवक समिति संगठित की क्योंकि इनका विश्वास था कि भारतको इस समय ऐसे सेवकोंकी आवश्यकता है जो मातृभूमिकी सेवामें अपना जीवन अर्पित कर दें। इस वर्ष इन्हें पुनः देशकी भलाईके लिये विलायत जाना पड़ा। इस समय वहां लाला लाजपतराय भी उपस्थित थे। दोनोंने मिल कर असाधारण परिश्रम किया तथा भारतवासियोंके भलेके लिये और लार्ड कर्जनके कुशासनके विरुद्ध खूब आन्दोलन मचाया। जब ये बम्बई और पूनेको लौटे तो वहां इनका यथेष्ट स्वागत हुआ। स्वागतकर्त्ताओंमें श्रीयुत लोकमान्य पण्डित बालगङ्गाधर तिलक भी सम्मिलित थे। १९१४ ई०में श्रीयुत गोखलेके ऊपर सचमुच बड़ा कार्यभार पड़ा। इनके अस्वीकार करने तथा स्वास्थ्य खराब होने पर भी इन्हें काशीमें कांग्रेसका सभापति होना ही पड़ा। इस समय प्रतिकूल अवस्था होने पर भी इन्होंने इस कठिन कार्यको बड़ी योग्यतासे निबाहा अपनी वक्तृताके आरम्भ हीमें इन्होंने लार्ड कर्जनको औरंगजेबसे तुलना की और फिर बंगालियोंके द्वारा विदेशी वस्तुओंके बहिष्कार किये जानेका समर्थन किया।

एक खण्ड प्रतापगढ़ जिलेमें पड़ता है और फिर इसी खण्डके बराबर प्रतापगढ़का एक अंश जौनपुरके मछली-शहर और इसीलकी सीमामें आवद्ध हैं। जौनपुर शहर ही इस जिलेका सदर है।

इस जिलेकी जमीन गङ्गातीरवर्ती अन्यान्य जिलोंकी नाईं दलदल हैं, बहुतसी नदियोंके प्रवाहित होनेसे ऊंची नीची भी है। कहीं कहीं उपवनसे सुशोभित ऊंची भूमि नजर आती है। उस ऊंची भूमि पर बहुतसी प्राचीन जातियोंके नगर, मन्दिर और प्रतिमूर्त्ति आदिका ध्वंसावशेष है और जगह जगह राजपूत राजाओंके दुर्गादिका भग्नावशेष देखा जाता है। इस जिलेकी भूमि उत्तर पश्चिमसे ले कर दक्षिण-पूर्व तक ढालू है, किन्तु यह उतार बहुत कम है। कमसे कम एक माइलमें ६ इंचसे अधिक नहीं है। इस जिलेकी मट्टी प्रायः सभी जगह उर्वरा है, किन्तु कहीं कहीं ऊषर भूमि भी देखी जाती है। इस ऊषर भूमिके सिवा और सब जगह अच्छी फसल लगती है। उत्तर और मध्य भागमें आमके बहुतसे बगीचे हैं। इसके अलावा महुवा और इमलीके दरख्त भी देखे जाते हैं।

गोमती नदी इस जिलेके बीच ८० मील बह कर इसको असमान खण्डमें विभक्त करती है। जौनपुर नगर इसी गोमतीके किनारे अवस्थित है। जिलेके मध्य इस नदीको कभी पैदल पार नहीं कर सकते हैं। जौनपुर नगरके निकट इसके ऊपर मुसलमानोंका बनाया हुआ १६ गुंबजदार एक पुल है। उस पुलकी लम्बाई ७१२ फुट है। मुनिम खाँने १५६८-७३ ई०में उसे निर्माण किया था। इस पुलसे दो मील गोमती नदीके ऊपर वर्त्तमान रेलवेका पुल है। इसमें भी १६ गुम्बज लगे हुए हैं, किन्तु इसकी लम्बाई प्राचीन पुलसे प्रायः दूनी है। गोमती नदी बहुत गहरी है और इसके किनारे बहुतसे छोटे छोटे कंकड़ पत्थर भरे हैं; इसीसे इसका सोता परिवर्त्तित नहीं होता है। इस नदीमें कई बार अकस्मात् बाढ़ आ जाती है। नदीका जल प्रायः १५ फुटसे अधिक ऊपर नहीं उठता है। अन्यान्य नदियोंमेंसे, वरणापिली और बांसीही प्रधान हैं। ह्रद (झील) की संख्या बहुत है। विशेष कर उत्तर और दक्षिण भागमें ज्यादा है, मध्य स्थानमें कुछ कम है। बड़ीसे बड़ी झीलकी लम्बाई प्रायः ८ मील होगी।

पहले जिलेमें जगह जगह जंगल थे, किन्तु क्रमशः कृषिकार्यकी विस्तृति और प्रजाकी वृद्धि हो जानेसे सब जङ्गल काट डाले गये। अभी कड़ाकट तहसीलमें ६००० बीघेका एक धाव जङ्गल ही सबसे बड़ा है। पूर्वोक्त ऊषर भूमि छोड़ कर और दूसरी जगह कहीं परती जमीन नहीं है। ऊंची भूमिमें गोलाकार पत्थरके टुकड़े पाये जाते हैं जो सड़क बांधनेके काममें आते तथा उन्हें जला कर चूना भी तैयार किया जाता है।

जङ्गलके नहीं रहने तथा अधिवासियोंकी संख्या अधिक हो जानेसे जंगली जन्तु प्रायः नहीं देखे जाते। झील और दलदलमें बहुतसे जलचर पक्षी रहते हैं। शिकारी केवल उन्हींका शिकार करने जाते हैं। यहां विषैला गोखुरा सर्प बहुत पाया जाता है और कभी कभी गोमती और सै-तीरवर्त्ती गुफामें झुण्डका झुण्ड लकड़बग्घा देखा जाता है।

इतिहास—अत्यन्त प्राचीन कालमें जौनपुरमें भड़ (भर) सोइरियों नामक एक आदिम जातिका वास-स्थान था, किन्तु अभी उन लोगोंके दीर्घवासका अधिक परिचय नहीं पाया जाता है। वरणा प्रभृतिके किनारे बड़े बड़े नगरोंका ध्वंसावशेष देखा जाता है। बहुतोंका अनुमान है कि ८वीं शताब्दीकी हिन्दूधर्मके अभ्यु-दयमें उत्तर भारतसे बौद्ध धर्मका लोप होनेके समय ये सब नगर शायद अग्निसे जला दिये गये होंगे। गोमती-के किनारे बहुतसे अत्यन्त प्राचीन मन्दिरादि विद्य-मान थे।

हिन्दूकीर्त्तिलोपी और देवद्वेषी मुसलमान शासन-कर्त्ताने अधिकांश मन्दिर तोड़ फोड़ दिये और वहांके उपकरण ले कर मसजिद, दुर्ग आदि निर्माण किये हैं।

इसी तरह बहुतसे हिन्दू और बौद्ध-मन्दिरोंके उप-करण ले कर १३६० ई०में फिरोजगढ़ बनाया गया। पत्थरोंका भास्करकार्य देखनेसे ही मालूम पड़ता है कि यह मुसलमानोंका नहीं है। अनुमान किया जाता है कि बहुत पहले जौनपुर अयोध्या राज्यके अन्तर्गत था। फिर बहुत समयके बाद यह काशीश्वर जयचन्दके हाथ

गोपालदारक (सं० पु०) जैनियोंके एक आचार्यका नाम।

गोपालदास—१ पारिजातहरण नामक संस्कृत नाटकके रचयिता एवं छन्दोमञ्जरीकर्ता गङ्गादासके पिता। २ वैद्य सारसंग्रह नामक संस्कृत चिकित्साग्रन्थ-प्रणेता। ३ कारटिकौतुक नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। इनके पिता का नाम बलभद्र था। ४ भक्तिरत्नाकर नामक वैष्णव ग्रन्थकार। इन्होंने इस ग्रन्थको १५६० ई०में रचा था। ५ वज्रभाख्यान नामक प्राकृत ग्रन्थकार। ६ एक प्रसिद्ध वैद्यक ग्रन्थकार। ये सिद्धेश्वरके पुत्र और रामरामके पौत्र थे। इन्होंने १७७१ ई०को योगामृत नामक संस्कृत चिकित्सा ग्रन्थ और सुबोधिनी नामक उसको टीका रची है। ७ एक स्मार्त पण्डित। इनको उपाधि सिद्धान्त वागीश भट्टाचार्य थी। इनका बनाया हुआ व्यवहारालोक नामका स्मृतिसंग्रह पाया जाता है। ८ व्रजके एक हिन्दी कवि। ये ई० सतरहवीं शताब्दीमें विद्यमान थे इनकी प्रायः सभी कवितायें खड़ी बोलीमें हैं, जिनमें एक नीचे दी जाती है—

"मेरे महरवा मोरी डालिया फन्दाय।
त्रिकुटी चढ़कर देखन लागी केतीक दूर मोर पिया र गाँव॥
इस डोलियामें दस दरवजवा चार कहार मिल घर ले जाय।
कहत गोपालदास कहरवा चरण कमलको मैं बलि बलि जाय।"

गोपालदास वरैया न्यायवाचस्पति—दिगम्बर जैन सम्प्रदायके एक प्रसिद्ध विद्वान् और ग्रन्थकार। इनके पिताका नाम लक्ष्मणदास और माताका नाम लक्ष्मीमती था। वि० सं० १९२३में आगरेमें इनका जन्म हुआ था। जैसवाल जाति और वरैया इनका गोत्र था। सातवर्षकी उम्रमें (सं० १९३० में) इनके पिताका देहान्त हो गया। माताने बहुत कष्टसे इनको मैट्रिकुलेशन तक पढ़ाया। गणितमें ये बहुत ही निपुण थे। २० वर्षकी उम्रमें हाईस्कूल छोड़ दिया। इनका १४ वर्षकी उम्रमें विवाह हो गया था। अजमेरमें इन्होंने पण्डित मोहनलालके पास रहकर दो वर्ष तक गोम्मटसार सरीखे महान् ग्रन्थका अध्ययन किया।

इसके उपरान्त ये ग्वालियरके अन्तर्गत मुरेना नामक स्थानमें रहने लगे। यहां रहकर इन्होंने "जैनसिद्धान्त विद्यालय" नामका एक जैन विश्वविद्यालय स्थापन किया। इनकी विद्वत्तासे मुग्ध हो कर कलकत्तेके पण्डित-समाजने इन्हें 'न्यायवाचस्पति' उपाधि दी थी। इसके सिवा अन्य सभाओंसे इनको 'स्याद्वादवारिधि' और 'वादिगजकेशरी' इत्यादि कई एक उपाधियां प्राप्त हुई थीं। इनके स्वार्थत्यागके लिये समस्त जैन-समाज अब भी उनका स्मरण करता रहता है। आपके द्वारा जैन-समाजमें न्याय और कर्मसिद्धान्तके जाननेवाले पचासों विद्वान् तयार हुए हैं। इस समय जो "जैनमित्र" नामक साप्ताहिकपत्र निकल रहा है, उसको सबसे पहले इन्होंने निकाला था। इन्होंने सुशीला उपन्यास, जैनसिद्धान्तदर्पण, जैनसिद्धान्तप्रवेशिका आदि कई एक हिंदी ग्रन्थ लिखे हैं। पिछली पुस्तकका जैनसमाजमें खूब प्रचार है।

इनका स्थापित गोपालजैनसिद्धान्तविद्यालय आजकल भी जीवित और सुचारु रूपसे कार्य कर रहा है। इसमें ये अवैतनिक अध्यापन करते थे।

१९१७ ई०में ग्वालियरके अन्तर्गत मोरेना नामक स्थानमें इनकी मृत्यु हुई।

गोपालदेव—१ राष्ट्रकूटवंशीय राजा भुवनपालके एक पुत्रका नाम। २ भोजप्रबन्धवर्णित कुण्डिन नगरका एक कवि। ३ एक प्रसिद्ध वैयाकरण। इनका दूसरा नाम मन्युदेव था, य प्रभुदेवके पुत्र और कृष्णदेवके कनिष्ठ भ्राता थे। इन्होंने परिभाषेन्दुशेखर, वैयाकरणभूषण, लघु वैयाकरणसिद्धान्तभूषण और लघुशब्देन्दुशेखरकी टीका रचना की है।

गोपालदेशिकाचार्य—एक विख्यात संस्कृतवित् पण्डित। इन्होंने संस्कृत भाषामें निक्षेपचिन्तामणि और सारस्वादिनी नामक वेदान्त, रामनवमीनिर्णय और आह्निकपद्धति प्रणयन किये हैं।

गोपालधानी (सं० स्त्री०) गोपालो धीयतेऽत्र धा-आधारे ल्युट् ङाप्। गोष्ठ, गौ रहनेका स्थान।

गोपालनगर—बङ्गमें नदिया जिलेके अन्तर्गत एक वाणिज्यप्रधान नगर यह अक्षा० २३° २ ५०´ उ० और देशा० ८८° ४८ ४०´ पू० पर अवस्थित है।

गोपालनन्द वाणीविलास—भगीरथ मिश्रके पुत्र। इन्होंने सारावली नामक कुमारसम्भवकी एक उत्कृष्ट टीका लिखी है।

जौनपुरमें कोई विशेष घटना न हुई। १८५७ ई०के ५ जून को जौनपुरके सिपाहियोंने बनारसमें विद्रोहका सम्वाद पाया और वे जो इण्ट मजिष्ट्रेटके साथ साथ कर्तृपक्षको विनाशकर लखनऊकी ओर चल पड़े। इसके बाद यहां घोर अराजकता फैलने लगी। पीछे ८ सेपटेम्बरको आजमगढ़से गोरखा सैन्यने आकर विद्रोह दमन किया। नवम्बर महीनेमें मेहदी हुसेन नामक विद्रोही-दलपतिकी कार्यदक्षतासे फिर कई स्थान अङ्गरेजोंके हाथसे जाते रहे। १८५८ ई०में विद्रोहीगण युक्त प्रदेशमें पराजित और छिन्न भिन्न हुए। अन्तमें विद्रोही भरीसिंहके पराजयके बाद विद्रोह एकदम शान्त हो गया। इसके बाद दो एक डकैतोंके उपद्रवके सिवा और किसी प्रकारकी गड़बड़ी न हुई।

जौनपुरके नगरके नामानुसार इस जिलेका नाम पड़ा है। जौनपुर जिलेके कृषिकार्यको विस्तृति चरम सीमा तक पहुंच गई है।

जौनपुर बहुत समय तक मुसलमान राज्यभुक्त तथा मुसलमान शासनकर्त्ताकी आवासभूमि होने पर भी यहां हिन्दू धर्म ही प्रबल है।

मुसलमान अधिवासियोंकी संख्या हिन्दुओंकी दशांश मात्र है। ब्राह्मण, राजपूत, कायस्थ, बनिया, अहीर, चमार, कुर्मी आदि यहांके प्रधान अधिवासी हैं। मुसलमानोंमें सुन्नीकी अपेक्षा शिया सम्प्रदायकी संख्या अधिक है; क्योंकि सीटोवंशीय शियाराजगण बहुत समय तक यहां रहे थे। इसके अलावा ईसाई, युरोपीय आदि भी यहां रहते हैं। अधिवासियोंमें सैकड़े लगभग ७६ कृषिजीवी हैं। इस जिलेमें ७ जिला और ३१५२ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या कोई १२०२६२० होगी। यह पांच तहसीलमें बँटा है, यथा—जौनपुर, मरियाहू, मछली शहर, खुटाहन और किराकट।

जौनपुर जिलेके जौनपुर मछली, शहर, बादशाहपुर और शाहगञ्ज इन चार नगरोंकी जन संख्या ५ हजारसे अधिक होगी। ये अधिकांश शस्यक्षेत्रवेष्टित छोटे छोटे ग्रामोंमें रहते हैं।

वणिक् और धनी कृषकोंकी अवस्था अन्यान्य स्थानोंसे कम नहीं है। सामान्य कृषक, मजदूर और श्रमजीवियोंकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। ये अधिकांश कदर्य भोजन करते और फटे पुराने वस्त्रसे जीवन बिताते हैं। कुर्मी और काछी गृहस्थोंकी अवस्था कुछ कुछ अच्छी है। ये पोसता, तमाकू और अन्यान्य तरह तरहकी साक सब्जी तथा फल-मूलादि उपजाते हैं। प्रायः अन्यान्य कृषकोंकी अपेक्षा ये अधिकतर परिश्रमी और अध्यवसायी होते हैं तथा ये मालगुजारी भी अधिक देते हैं। इसीसे जमीन्दार कुर्मी और काछी प्रजाको बहुत प्यार करते है।

जौनपुर जिलेकी मट्टी कीचड़ और बालुकामय है। परित्यक्त नदीगर्भ और शुष्क जलाशयके गड्ढेमें कृष्णवर्ण पङ्कमय अत्यन्त उर्वरा मट्टी दीख पड़ती है। जिलेके समस्त स्थानमें अच्छी फसल होती है। यहां धान, बाजरा, जुन्हार, ज्वार, कपास, गेहूं, जौ, मटर, उर्द, सरसों आदि तरह तरहके अनाज उपजते हैं। खेती करनेका तरीका भी सहज है। पहले गृहस्थ खेतको हलसे जोत कर उसमें बीज बो देते हैं, बाद चौकी दे कर मट्टी चौरस की जाती है। जमीन सम्पूर्ण वर्ष परती नहीं रहती है, लेकिन जिस जमीनमें ईख रोपी जाती है, वह जमीन ६ मास या एक वर्ष तक जोत कर छोड़ दी जाती है। नगरके निकटवर्ती जमीनमें आमन और रब्बी ये ही दोनों होती है। ईखकी खेती सबसे लाभजनक है; किन्तु उसमें बहुत खादकी आवश्यकता पड़ती है। अंगरेज अधिकारमें आनेके बादसे यहां नीलकी खेती होती है। गवर्मेंटके निरीक्षणमें कुर्मी पोसताकी खेती करते हैं। इसकी ढोंढ़ीसे जो अफीम निकलती है, उसे कृषकगण सरकारी कर्मचारीको देनेके लिये बाध्य हैं और वे प्रति सेर अफीमके पांच रुपये पाते हैं। कुर्मी और काछी पोस्ता, तमाकू, साक, सब्जी आदि उपजाते हैं, इसीसे उनकी अवस्था अन्यान्य कृषकोंसे अच्छी है।

समस्त जिलेका भूपरिमाण १५५१ वर्गमील है, जिसमेंसे १५१९ वर्गमील गवर्मेंटके तौजीभुक्त है। इसमेंसे ८६२ वर्गमीलमें खेती होती है और १०२ वर्गमील खेतीके योग्य है। शेष २५१ वर्गमील ऊसर है।

दैव-विडम्बना—इस जिलेकी गोमती नदीमें समय

गोपालभट्ट—इस नामके कई एक ग्रन्थकार हैं।

१ गोपाल रत्नाकर नामक संस्कृत धर्मशास्त्रकार। २ गोपालपद्धति नामका संस्कृत ज्योतिर्ग्रन्थके रचयिता। ३ चैतन्यभक्त एक वैष्णवग्रन्थकार। इनका बनाया हुआ भगवद्भक्तिविलास नामक संस्कृत ग्रन्थ है। जो वङ्गीय वैष्णव समाजमें विशेष समादृत है। ४ मिताक्षराके न्याय-सुधा नामकी टीकाकार। ५ मीमांसातत्त्वचन्द्रिका नामका संस्कृतग्रन्थकार। ६ संस्कृत भाषामें सानन्दगोविन्द नामक नाटककार। ७ सुभगार्चनचन्द्रिका नामका संस्कृत ग्रन्थकार। ८ महिम्नस्तवका स्तुतिचन्द्रिका नामक उत्कृष्ट टीकाकार। ९ गीतगोविन्दका अर्थरत्नावली नामका टीकाकार। इनके पिताका नाम दुर्गादास और पीतामहका नाम ज्ञान था। १६७६ ई०की इन्होंने उक्त टीका प्रणयन की थी। १० एक दार्शनिक जो मेदिनाथ भट्टके पुत्र और कृष्णभट्टके पौत्र थे। इन्होंने मीमांसाविधि-भूषण नामक संस्कृत ग्रन्थकी रचना की है।

११ एक विख्यात तान्त्रिक। ये आगमवागीशके पौत्र और हरिनाथके पुत्र थे। ये तत्त्वदीपिका नामक एक तान्त्रिक ग्रन्थ लिख गये हैं।

१२ एक द्राविडीय पण्डित, हरिवंश द्राविडके पुत्र। आपने कई एक संस्कृत ग्रन्थ रचे हैं, जिनमेंसे प्रसिद्ध ये हैं,—कालकौमुदी नामक स्मृतिसंग्रह, कृष्णकर्णामृतकी कृष्णवल्लभा, शृङ्गारतिलककी रसतरङ्गिणी एवं रसमञ्जरीकी रसिकरञ्जिनी नाम्नी टीका। १३ पद्यावली-धृत एक प्राचीन कवि।

गोपालपुत्रिका (सं० स्त्री०) चिर्भिटा, ककडी।

गोपालभट्टगुरु—गणेशसहस्र नाम व्याख्याके रचयिता।

गोपालभाँड—नवद्वीपाधिपती महाराज कृष्णचन्द्ररायके एक विख्यात सभासद्। रायगुणाकर भारतचन्द्रने अन्नदा-मङ्गलके प्रारम्भमें कृष्णचन्द्रके सभावर्णन उपलक्षमें राज-परिवार, अमात्य, पण्डित, भृत्य, प्रभृति सभीका उल्लेख किया है। किन्तु गोपालभाँडका नाम उसमें लिखा नहीं है, इसमें कोई कोई अनुमान करता है कि गोपालभाँड भारतचन्द्रके समकालीन नहीं भी हो सकते हैं अथवा जिस समय अन्नदामङ्गल रचा गया था उस समय गोपाल कृष्णचन्द्रको सभामें स्थान न पाया हो। किम्वा कृष्णचन्द्र भारतचन्द्रकी अपेक्षा गोपाल भाँडको अधिक चाहते थे जिस कारण ईर्षावशतः रायगुणाकरने गोपाल भाँडका नामोल्लेख न किया हो। जो कुछ हो, गोपाल-भाँड किस तरह भारतचन्द्रको मानते और भक्ति श्रद्धा करते थे उसका एक सामान्य उपाख्यान इस तरह प्रचलित है।

गोपाल जानते थे कि भारतचन्द्रके ऊपर पण्डित वाणेश्वर विद्यालङ्कार और जगन्नाथ तर्कपञ्चानन प्रभृतिके ईर्षा बनी है। एकदिन भारतचन्द्र अन्नदामङ्गलका ग्रन्थ वाणेश्वरको पढने दिया। वाणेश्वरको अश्रद्धाभावसे उक्त ग्रन्थ लेते और विपर्यस्त भावसे इधर उधर ग्रन्थको उल-टाते देख गोपाल उनके निकट जा वारवद्ध हो उच्चस्वरसे कहने लगे, 'महाशय, यह क्या कर रहे हैं? यह शुष्क न्याय शास्त्र नहीं वरन् रसपूर्ण काव्य है, सावधानसे पकडिये नहीं तो समस्त रस गिर जायगा।" गोपालके ऐसे रसपूर्ण वचनसे विद्यालङ्कार कुण्ठित हो आदरपूर्वक ग्रन्थ देखने लगे।

वङ्गला चितौरवंशावलीके मतानुसार गोपालभाँड़ जातिके नापित थे और शान्तिपुरमें इनका वासस्थान था। किन्तु गुप्तिपाडा और शान्तिपुरके बहुत मनुष्योंसे ऐसा सुना जाता है कि गोपाल कायस्थ जातिके थे और गुप्तिपाडामें इन्होंने जन्म ग्रहण किया था।

गोपालमिश्र—गोपालपूजापद्धतिके रचयिता।

गोपालयज्वन्—गार्ग्य गोपाल देखो।

गोपालयोगी—कठवल्लीभाष्यविवरणका प्रणेता।

गोपालराय—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इन्होंने बहुतसी अच्छी अच्छी कवितायें रची हैं।

गोपाललाल—हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि। ये लगभग १७६५ ई०में विद्यमान थे। इन्होंने शान्तिरसकी बहुतसी कवितायें रची है जिनमेंसे कुछ इस तरह हैं—

"मैं तो सांवरे सङ्ग खेलन आइ हूं घर बैठें कहा को जीव तरसैं हूं।
मत कोई मुझे हट कीरो सावो आज वसाको सो मैं बिष खैं हूं॥
और रङ्ग सब फीके लागे पियरे पटसों हियरा हुलसें हूं।
प्यारे गोपाल सोहात यही मन मोहन मिल हिए लपटें हूं॥
खेलन आई रङ्गरासो होरी बाल।
सांवल गोरी लैं लैं होरी भर भर मुठी गुलाल॥
इतने आई नवल राधिका उसते आर नन्द लाल।

वीरचन्द्रने जिस स्थान पर मन्दिर बनाया, वहां ही वर्त्तमान दुर्ग खड़ा है। १३५९ ई०को फीरोजशाह तुगलकने इसको नींव डाली। फिर वहां सूबेदार रहने लगे। ख्वाजा जहान् नामक शासकने स्वाधीनताकी घोषणा करके विहारसे सम्भल और कोयल (अलीगढ़) तक राज्य बढाया था। किन्तु अकबरने जब इलाहाबादको राजधानी बनाया तो जौनपुरने अपना राजनैतिक महत्त्व गंवाया। जौनपुर इल्मके लिहाजसे उस समय हिन्दुस्तानका मुकुट कहलाता था।

जौनपुर एक प्राचीन नगर है। यह १३९४ से १४९३ ई० अर्थात् १०० सौ वर्ष तक बदाऊँ और इटावासे विहार पर्यन्त एक विस्तीर्ण सुसमृद्ध स्वाधीन मुसलमान राज्यकी राजधानी था। असंख्य प्राचीन मन्दिर, अट्टालिकायें, मसजिदें और उनके भग्नावशेष अभी भी विद्यमान रहनेसे स्थपतिविद्याका यथेष्ट परिचय देते हैं। ये सब मन्दिर जौनपुरके स्वाधीन पठान शर्क्की राजाओंके समयमें बनाये गये हैं। इन्होंने जिस तरह बहुतसी मसजिदें स्थापित की हैं उसी तरह इधर उधर प्राचीन हिन्दू और बौद्धोंके असंख्य मन्दिर भी नष्ट किये हैं। यह स्पष्ट है, कि उन सब हिन्दु और बौद्ध मन्दिरोंका भग्नावशेष लेकर ही उन्हींके ऊपर मसजिद आदि बनाई गई है।

इस नगरका प्राचीन नाम क्या है इसका पूरा पूरा पता नहीं चलता। जौनपुरवासी ब्राह्मणोंका कहना है, कि इसका प्रकृत नाम जमदग्निपुर है। अभी भी वहांके सभी हिन्दू इसे जौनपुर न कह कर जमनपुर ही कहते है। मुसलमानोंका कहना है, कि जब कि फिरोज साह इस स्थानको देखने आये थे, तब इन्होंने अपने ज्ञातिभ्राता जुनान (महम्मद तुगलक) के सम्मानार्थ उन्हींके नाम पर इस स्थानका नाम जौनपुर रक्खा है। इस पर हिन्दू लोग कहते कि, इसका नाम जमनपुर था, बाद फिरोजको खुस करनेके लिए, इसी नामको परिवर्तन कर जौनपुर रक्खा गया। फिर किसी दूसरे सुचतुर व्यक्तिने कहा है कि शहर जौनपुर शब्दमें ७७२ संख्या मालूम पड़ती है। ठीक उसी संख्यक हिजरा शकमें (१३७० ई०में) फिरोज शाह जौनपुर आये हुए थे। जौनपुरका नाम भले ही जो कुछ हो परन्तु यह फिरोजशाहके बहुत पहलेसे विद्यमान था। फिरिस्तामें लिखा है, कि जौनपुर (जवनपुर) दिल्लीसे बङ्गाल जानेके रास्ते पर अवस्थित है। जुमा मसजिदके दक्षिण द्वार पर सातवीं शताब्दीके शिलालेखमें मौखरि वंशके ईश्वरवर्माका नाम लिखा है, उससे प्रमाणित होता है, कि मुसलमानोंके बहुत पहले यहां एक सुसमृद्ध नगर था।

नदीतरस्थ दुर्गके विषयमें प्रवाद है, कि यहां करार नामक एक राक्षस रहता था। श्रीरामचन्द्रजीने उसका वध किया। अभी भी वहांके लोग इस दुर्गको करारका कहते और करार वीरकी पूजा करते हैं। दुर्गके उत्तरमें करार वीरका एक मन्दिर है।

जौनपुरनगरमें शर्क्की राजाओंसे निर्मित बहुतसी मसजिदें विद्यमान हैं। इनमेंसे हुसेन प्रतिष्ठित जुमा मसजिद सबसे बड़ी और मनोहर है। इसकी दीवार अन्यान्य मसजिदोंकी अपेक्षा बहुत ऊँची है। मसजिदोंका पत्थर देखनेसे मालूम पड़ता है कि यह किसी हिन्दु मन्दिरका अंश था। दूसरी दूसरी मसजिदोंमेंसे अटला मसजिद इब्राहीम शाहसे प्रतिष्ठित है। ९ शिलालेखों द्वारा मालूम हुआ है, कि फिरोजशाहने १३७६ ई०में अटला देवीके मन्दिरके ऊपर इस मसजिदका बनाना आरम्भ किया और १४०८ ई०में इब्राहीमने इसे पूरा किया था।

इब्राहीम-नायब बारबककी मसजिद—यह वर्त्तमान सब मसजिदोंसे पुरानी है। शिलालेखसे जाना जाता है कि यह १३७७ ई०में फिरोजशाहके भाई इब्राहीम-नायब बारबकसे बनाई गई है। इसकी गठन प्रणाली प्राचीन बङ्गीय स्थापत्यके समान है।

मसजिद-खालिस मुखलिस—उसे दरीबा और चरंगुली भी कहते हैं। यह विजयचन्द्र और जयचन्द्रके मन्दिर के ऊपर बनाई गई है।

नगरसे उत्तर-पश्चिम कुछ दूर बेगमगञ्ज नामक स्थानमें बीबी राजोकी मसजिद या लाल दरवाजा-मसजिद है। महमूद शाहकी बीबी राजोने इसकी प्रतिष्ठा की है।

नगरसे कुछ दूर चाचकपुर नामक स्थानमें इब्रा-

गोपिलपुरम्—मन्द्राजमें वृद्धाचल तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह वृद्धाचलसे ५ मील पूर्व दक्षिणमें अवस्थित है। यहांके पुरातन शिवमन्दिरमें अनेक शिलालिपि उत्कीर्ण है।

गोपिष्ठ (स ० त्रि०) अतिशयेन गोपी इष्ठन् टिलोपः। गोप्तृतम।

गोपी (सं० स्त्री०) गोपस्य स्त्री गोप-ङीष्। गोपपत्नी, ग्वालिनी। पूर्व समयमें ये समस्त कृष्णकी सेवा करती थीं। वृन्दावनकी गोपी कृष्णके प्रेममें मतवाली हो कर अपने पतिपुत्रको छोड कृष्णके साथ रहा करती थी। साधारण मनुष्य उन्हें मानुषी समझते एवं कृष्णके साथ रहनेके कारण उनके चरित्रमें कलङ्क ठहराते थे, किन्तु प्राचीन हिन्दुशास्त्रके प्रति लक्ष्य करनेसे जाना जाता है कि गोपीगण सामान्य मानवी नहीं, पार्थिव-सुखके लिए वे कृष्णकी वन्दना नहीं करती और वे कृष्णको नन्दगोपके नन्दन कह कर भी नहीं समझती, वरन् उनको विराट, अव्यय, सच्चिदानन्द और जगत्पति मानती थीं, इस लिए सांसारिक सुख परित्याग कर मान, लज्जा और लोभभयको जलाञ्जली दे कर उन्होंने कृष्णमें आत्मसमर्पण की थी।

पद्मपुराणके पातालखण्डमें लिखा है कि गोपीगण मानवीं थीं। श्रुति, देवकन्या और मुनिकन्यागण ही गोपीरूपसे वृन्दावनमें वास करती रहीं। इनमेंसे राधा, चन्द्रावली, विशाखा और ललिता प्रभृति कई गोपियां प्रधान थीं।

गोपायति रक्षति गुप्-अच गौरादित्वात् ङीप्। २ शारिवा, अनन्तमूल। ३ रक्षिका, रक्षा करनेवाली।

गोपीक—सूक्तिकर्णामृतधृत एक प्राचीन कवि।

गोपीकान्त—वेणीदत्तके पुत्र, न्यायप्रदीप नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

गोपीकामोदी (स० स्त्री०) कामोद और केदारी योगसे उत्पन्न रागिणीविशेष।

गोपीगीता (सं० स्त्री०) भागवतके दशम स्कन्धान्तर्गत गोपीगण कृत कृष्णकी स्तुति।

गोपीचन्द—ये हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि थे। इन्होंने कई एक कवितायें रची हैं जिनमें एक नीचे देते हैं—

"दान कर्ण समान भुजपति आन विक्रम जीन दीप माधर हुव विनान।
गोपीचन्दको दीनो ए राजा राम रावण मार सीता गहे हाथो चतुर सुजान"

गोपीचन्दन (पु०) एक प्रकारकी पीली मट्टी। वैष्णवगण इस मट्टीका तिलक लगाते और समस्त अङ्ग पर हरिनामका छाप देते हैं।

द्वारकाका गोपीचन्दन ही सर्व श्रेष्ठ हैं। बहुतोंका विश्वास है कि जब कृष्ण लीलासम्बरण कर स्वर्ग चले गये तब विरहकातरा गोपीगणने एक पोखरमें डूब कर अपना प्राण त्याग किया था। उसी पोखर (तालाव) की मट्टी गोपीचन्दनसे प्रसिद्ध है।

गोपीचन्द्र—१ रङ्गपुरके एक राजाका नाम। इनका गान अब तक भी रङ्गपुर अञ्चलमें प्रचलित है। कोचविहार और कामरूप देखो।

२ सूक्तिकर्णामृतधृत एक प्राचीन कवि।

गोपीजनवल्लभ (सं० पु०) गोप्य व जनस्तस्य वल्लभः। श्रीकृष्ण।

गोपीत (सं० पु० स्त्री०) गो गोरचनेव पीतः। एक प्रकारका खञ्जनपक्षी जिसका देखना अशुभ समझा जाता है।

गोपीथ (सं० क्ली०) गां पशून् पाति गो-पा-थक् निपातने साधु। १ तीर्थस्थान। २ सोमपान। ३ रक्षण, रक्षा। ४ राजा। ५ गौके जल पीनेका सरोवर।

गोपीथ्य (स० क्ली०) गोः पृथिव्याः पीथं पालनं गोपीथमेव गोपीथ-स्वार्थे यत्। पृथ्वीपालन।

गोपीनाथ (सं० पु०) गोपियोंके स्वामी, श्रीकृष्ण।

गोपीनाथ—१ अग्रद्वीपके प्रसिद्ध विष्णुविग्रह, चैतन्यदेव कर्तृक अभिषिक्त और गोविन्दघोष ठाकुर कर्तृक प्रतिष्ठित। अग्रद्वीप और गोविन्दघोषठाकुर देखो। २ अग्न्याधानप्रयोग नामक संस्कृत ग्रन्थकार। ३ अनुमानवाद नामक न्यायग्रन्थकार। ४ एक विख्यात स्मार्त पण्डित। इन्होंने आह्निकचन्द्रिका, तुलापुरुषमहादानपद्धति, प्रेतदीपिका, मासिकश्राद्धपद्धति, संस्काररत्नमाला, सापिण्ड्यविषय प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ रचे हैं। ५ त्रिविक्रमशतश्लोकी नामक ज्योतिर्ग्रन्थका और दुर्गामाहात्म्यका टीकाकार। ६ न्यायविलासके रचयिता। ७ पदवाक्यरत्नाकरके प्रणेता। ८ ज्ञानपतिके पुत्र। इन्होंने शब्दालोकरहस्यकी रचना की है। ९ जातिविवेक रचयिता। ये व्यासराजके पुत्र

भी बदन पर भय वा अनिच्छाके लक्षण प्रगट नहीं हुए। चिताके धुएँ से गगनमण्डल ढक गया। उत्तप्त शोणित-स्रोतसे भूतल प्लावित हो गई। इसके साथ बहुमूल्य रत्नादि विलुप्त हो गये। वीरगण इस हृदयविदारक दृश्यको चुपचाप देखते रहे, उन्हें जीवन भार मालूम पड़ने लगा। पीछे स्नान करके पवित्र देहसे ईश्वरोपासनापूर्वक तुलसी और शालग्रामको कण्ठमें धारण कर और परस्पर आलिङ्गनपूर्वक क्रोधसे आरक्त हो ३८०० वीर पुरुष जीवनकी आशा पर जलाञ्जलि दे कर युद्धकी प्रतीक्षामें खड़े हुए। राजपूतानेके इतिहासमें ऐसी घटनाएँ विरल नहीं हैं। बहुत बार एक साथ एक एक जातिका लोप हुआ है, मेवाड़के इतिवृत्तमें इसके प्रमाण मिलते हैं।

विजेताके हाथ बन्दी होनेकी आशङ्का ही राजपूतोंकी ऐसी प्रवृत्तिका कारण है। उनकी रमणियां विजेताके हाथ लगेंगी, इस घृणाकर दुरपनेय कलङ्ककी अपेक्षा वे मृत्युको शतगुण सुखकर समझती थीं। इसीलिए नगरकी पराजय होते ही राजपूत रमणियां मरनेके लिए तयार हो जाती थीं। उस समयकी प्रचलित प्रथाके अनुसार युद्धमें विजयलब्ध रमणियाँ विजेताकी न्यायसङ्गत सम्पत्ति होती थीं। विजेता उनके प्रति यथेच्छ व्यवहार कर सकते थे। उनका धर्माधर्म सब कुछ विजेताकी इच्छाधीन था। बन्दिनी रमणियोंके प्रति सौजन्य प्रकट न करनेसे कोई दूषणीय नहीं होती थी। अतएव विजित महाभिमानी राजपूत अपरिहार्य और निश्चित अपमानके भीषण आतङ्कसे इस प्रकारके उत्कट अध्यवसायमें प्रवृत्त हों, इसमें आश्चर्य नहीं। अपनी कुलबालाओंके सतीत्वकी रक्षाके लिए एतादृश यत्नपर और चिन्तान्वित होने पर भी सुसभ्य वीरप्रकृति उदारचेता राजपूत विजित शत्रु-महिलाओंके सम्मान और धर्मरक्षार्थ तादृश यत्नवान् नहीं थे। ऐसा नहीं था कि, जब यवन लोग नगर अधिकार करते थे, तभी जौहर प्रथा कायम की जाती हो, किन्तु राजपूतगण अन्तर्विद्रोहके कारण राजपूतों द्वारा पराजित होने पर भी जौहर कायम करते थे।

अल्लाउद्दीन आदि बहुतसे मुसलमान विजेताओंने चित्तौर प्रभृति नगरों पर जय प्राप्त कर केवल भस्मावशेष जनशून्य स्थान मात्र पाया था। चीनवासी तातार और किसी किसी स्थानमें मुसलमान लोग भी इस भीषण प्रथाका अवलम्बन लेते हैं। १८३८ ई०में खिलात आक्रमणके समय शाहवासी नूरमहम्मद, शत्रुओं द्वारा नगर जीते जाने पर अपनी बेगमों तथा परिवारकी अन्यान्य स्त्रियोंको मार कर युद्धको निकले थे।

जौहर—बादशाह हुमायूंके एक पार्श्वचर। ये भृङ्गाके द्वारा बादशाह हुमायूंके हाथ धुलानेके लिए पानीका इन्तजाम करते थे। सर्वदा हुमायूंके पास रह कर ये हुमायूंकी प्रत्येक कार्यावलीके विवरणों सहित एक जीवनी लिख गये हैं। परन्तु उसमें हुमायूंके गभीर राजनैतिक विषयोंका उल्लेख नहीं है।

जौहरी (फा० पु०) १ रत्न-व्यवसायी, जवाहरात बेचनेवाला। २ रत्न परखनेवाला, वह जो जवाहिरातकी पहचान रखता हो। ३ वह जो किसी वस्तुके गुणदोषकी पहचान करता हो। ४ गुणग्राहक, वह जो गुणका आदर करता हो, कदरदान।

जौहरीलाल शाह—सम्मेदशिखिरपूजा और पद्मनन्दिपञ्चविंशतिका वचनिका नामक जैन ग्रन्थोंके रचयिता। रचनाकाल वि० संवत् १९१५ है।

जौहार—बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक राज्य। यह अक्षा० १९° ४० एवं २०° ४' उ० और देशा० ७२° २ तथा ७३° २३' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३१० वर्गमील है। बम्बई बरोदा और सेण्ट्रल इण्डिया रेलवे पश्चिम सीमासे लगी है। पहाड़ और जङ्गलकी कमी नहीं। १२० इञ्च तक वृष्टि होती है। जलवायु अच्छा नहीं।

१२९४ ई० तक वारली वंशका राज्य रहा। पहले कोली राजा जयबने चरसे भर जमीन मांगी और फिर वे उसी सूत्रसे कितने ही देशों पर अधिकार कर बैठे। १३४३ ई०की जयबके उत्तराधिकारी नीम शाहको दिल्लीसे "राजा" उपाधि मिलने पर जो संवत् चला, उसे आज भी सरकारी कागजोंमें लिखते हैं। जौहारके राजाने मुगल सेनापतियोंसे मिल करके पोर्तगीजोंको लूटा था। पीछेसे मराठोंमें आक्रमण करके इसे करद

किया। गोपीनाथने अधिक अर्थ और महाराष्ट्र सैन्यके मध्य उच्च पद लाभ किया। शिवाजी देखो।

गोपीनाथपुर—उड़ीसाके कटक जिलेके अन्तर्गत गण्डग्राम यह कटक नगरसे प्रायः ५ कोस उत्तर पूर्वमें अवस्थित है। यहां सुवृहत् गोपनाथजीके मन्दिरका ध्वंसावशेष पड़ा है। गोपीनाथका मूल और गर्भगृहका कुछ भी चिन्ह नहीं है। भग्न नाटमन्दिरके मध्यस्थलमें एक नूतन गृह निर्मित हुआ है जिसमें दधिवामन मूर्ति विराजित है। भग्नावशेष नाटमन्दिरके चारों ओर उत्कृष्ट शिल्प-नैपुण्ययुक्त स्तूपाकार प्रस्तर पड़ा हुआ है। नाटमन्दिर जानेकी सीढ़ीकी वामपार्श्वको ओर प्राचीरगात्रमें प्राचीन उत्कलाक्षरसे उत्कीर्ण शिलाफलकमें प्रशस्ति वर्णित है। उसके पढ़नेसे जाना जाता है कि उड़ीसेमें कपिलेन्द्र नामक एक सूर्यवंशीय राजा थे। इन्होंने बाहुबलसे दिल्लीके राजाओंको पराजय एवं गौड़ और मालव राज्यको जय किया था। इनके लक्ष्मण नामक एक पुरोहित और मन्त्री रहता रहा। लक्ष्मणके नारायण नामक एक पुत्र था और उनके अनुजका नाम गोपीनाथ था। इन्होंने अपने नाम पर गोपीनाथका उक्त देवमन्दिर निर्माण कर जगन्नाथ, बलराम और सुभद्राकी मूर्त्ति स्थापन की थी।

इस ग्राममें ब्राह्मणशासन है। यहांके एक घर ब्राह्मण अपनेको गोपीनाथ महापात्रके वंशधरके जैसे परिचय देते हैं। इन्हींके मुखसे ऐसा सुना गया है कि गोपीनाथने सिर्फ दो घण्टेके लिए कपिलेन्द्रका मन्त्रित्व पाया था, इन दो घण्टोंके मध्य उक्त गोपीनाथका मन्दिर निर्माण किया गया था। किन्तु दो घंटेमें इस तरहका मन्दिर निर्मित होना नितान्त असम्भव है।

गोपीनाथ बन्दीजन—बनारसके रहनेवाले एक बन्दी। इनके पिताका नाम गोकुलनाथ था। बनारसके राजा उदितनारायणके आदेशसे इन्होंने तथा इनके शिष्य मनिदेवने सम्पूर्ण महाभारतका अनुवाद हिन्दीमें किया था। ये १८२० ई०में विद्यमान थे।

गोपीनाथभट्ट—१ हिरण्यकेशिसूत्रके 'ज्योत्स्ना' नामकटीकाकार। २ निर्णयरत्नाकर नामक धर्मशास्त्रकार।

गोपीनाथमिश्र—१ क्रियाकौमुदी नामक संस्कृत ग्रंथप्रणेता। २ तत्त्वचिन्तामणिसार नामक न्याय ग्रन्थकार।

गोपीनाथमौलिक—एक विख्यात नैयायिक और वाचेरीके राजा जयसिंहके सभापति। इन्होंने राजा जयसिंहके अनुरोधसे सिद्धान्ततत्त्वसार नामक पदार्थविवेककी टीका और न्यायकुसुमाञ्जलिविकाश प्रणयन किये हैं।

गोपीनाथ शर्मन्—१ शब्दमाला नामका संस्कृत अभिधानकार।

गोपीनाथशैव—माधवशैवके पुत्र और स्नानसूत्र दीपिकाके प्रणेता।

गोपीनारायण—एक विख्यात स्मार्त्त। इन्होंने राजा सूर्यसेनके आदेशसे निर्णयामृत नामक धर्मशास्त्र रचे हैं।

गोपीन्द्रतिप्पभूपाल—वामनके काव्यालङ्कारवृत्तिका काव्यालङ्कारकामधेनु नामक टीकाकार।

गोपीरमण—आनन्दलहरीके एक टीकाकार।

गोपीयन्त्र-एक तार वाद्ययन्त्रविशेष एक प्रकारका बाजा, जिसमें केवल एक ही तार लगा रहता है। आध हाथका गाँठदार एक पतले बांसके डण्डेका ऊपरके ग्रंथियुक्त भागका छह या सात उङ्गली छोड़ कर शेष अंशको बराबर चार भागोंमें विभक्त करते हैं। उन चार भागोंके परस्पर विपरीत दो भागोंको फेंक कर शेष दो भागोंके सिरे पर कद्दूका गोल खोखला अंश बांध देते हैं और उसमें केवल एक तार लगा दिया जाता है। यह तार बाँसके दो खण्डोंके मध्य रहना चाहिये और तारका एक सिरा अखण्डित बांसके डंडेमें कीलके साथ और दूसरा सिरा कद्दूके खोखलेमें आवद्ध रहता है। इसीको गोपीयन्त्र कहते हैं। कुछ जातिके लोग इसे बजाकर दरवाजे दरवाजे भीख मांगते हैं।

गोपीलाल—हिन्दीके एक जैन कवि। इन्होंने नागकुमार चरित्र, जम्बूद्वीपपूजा और तीसचौबीसी पूजा ये तीन पद्यग्रंथ बनाये हैं।

गोपुच्छ (सं० पु०) गोः पुच्छ-इव पुच्छो यस्य, बहुव्री०। एक तरहका बन्दर जिसकी पूंछ गायकी सी होती है। (क्ली०) गोः पुच्छः, ६-तत्। २ गौकी पूंछ, गायकी दुम। (पु०) ३ एक तरहका गावदुमा हार। ४ प्राचीन कालका एक बाजा।

गोपुर (सं० पु०) क्षुद्रमुस्ता, छोटा मोथा।

गोपुटा (सं० स्त्री०) गोरिव पुटमस्याः बहुव्री०। बड़ी इलायची।

ज्ञातव्य (सं० त्रि०) ज्ञायते यत् तत्, ज्ञा-तव्य। ज्ञेय, वेद्य, अवगन्तव्य, बोधगम्य। जो जाना जा सके, जिसे जानना हो वा जिसको जानना उचित है, वही ज्ञातव्य है। श्रुति आदि सम्पूर्ण शास्त्रोंमें विहित है कि—आत्मा ही एकमात्र ज्ञातव्य है। "आत्मा वा अरे ज्ञातव्यः ज्ञानविषयीकर्तव्यः" अरे आत्रेयि! आत्माको ज्ञानका विषय करो, जिससे आत्मा ही एकमात्र लक्ष्य हो। आत्माको जान लेनेसे समस्त पदार्थोंका ज्ञान हो जायगा, क्योंकि जगत् आत्ममय है। एक वस्तुके जाननेसे जब समस्त वस्तुओंका ज्ञान होता है, तब उस एक वस्तुको छोड़ कर पृथक् पृथक् वस्तुओंको जाननेकी क्या आवश्यकता है? वह एक वस्तु ही आत्मा है। अतएव आत्माके सिवा और कुछ भी ज्ञातव्य नहीं है।

ज्ञातसिद्धान्त (सं० पु०) ज्ञातः विदितः सिद्धान्तो येन, बहुव्री०। शास्त्रतत्त्वज्ञ, वह जो शास्त्र अच्छी तरह जानता हो।

ज्ञातसार (सं० पु०) ज्ञातः सारः सारांशो येन, बहुव्री०। १ सारज्ञ, वह जो किसी विषयका तत्त्व (सार) जानता हो। २ ज्ञानगोचर, जानकारी।

ज्ञाता (सं० त्रि०) जाननेवाला, जानकार।

ज्ञातृधर्मकथा (सं० स्त्री०) जैनियोंके प्रधान अङ्गोंमेंसे एक। जैनधर्म देखो।

ज्ञाति (सं० पु०) जानाति छिद्रं दोषं कुलस्थितिञ्च ज्ञा-क्तिच्। पितृवंशीय, एक ही गोत्र या वंशका मनुष्य। भाई बन्धु, बान्धव, गोती, सपिण्डक, समानोदक आदि। इसके पर्याय—सगोत्र, बान्धव, बन्धु, स्व, स्वजन, अंशक, गन्ध, दायाद, सकुल्य और समानोदक है। ज्ञातिके चार भेद हैं—सपिण्ड, सकुल्य, समानोदक और सगोत्रज। सात पुरुष तक सपिण्ड, सातसे दश पुरुष तक सकुल्य, दशसे चौदह पुरुष तक समानोदक माना गया है। किसी किसीके मतसे पूर्वपुरुषके जन्मनामस्मरण तक भी समानोदक है। इसके बाद सगोत्रज है।

ज्ञातिहिंसा अत्यन्त पापजनक है।

"यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च।
ज्ञातिद्रोहस्य पापस्य कलां नार्हन्ति षोडशीं॥" (ब्रह्मवैवर्त)

ज्ञातिहिंसा करनेसे जो पाप होता है, ब्रह्महत्या, सुरापान प्रभृति महापाप भी उसके १६ भागोंमेंसे एक भाग भी नहीं है। इसीलिये शास्त्रमें ज्ञातिहिंसा विशेष रूपसे निषिद्ध माना गया है। जन्म और मरणमें ज्ञातिका अशौच ग्रहण करना पड़ता है। अशौच देखो। ज्ञातिके मध्य चचेरे भाई सहजग्रत् माने गये हैं। ज्ञायते विद्यतेऽस्मात् आपादाने ज्ञा-क्तिन्। २ पिता, बाप।

ज्ञातिकार्य (सं० पु०) ज्ञातीनां कार्यं, ६-तत्। ज्ञातियोंके कर्त्तव्य कर्म।

ज्ञातित्व (सं० क्ली०) ज्ञाति भावे त्व। ज्ञातिके धर्म कर्म वा व्यवहार, बन्धुबान्धवोंको अनिष्ट चेष्टा।

ज्ञातिपुत्र (सं० पु०) ज्ञातीनां पुत्रः, ६-तत्। १ ज्ञातिका पुत्र, गोत्रजका लड़का। २ जैनतीर्थङ्कर महावीर स्वामीका नाम।

ज्ञातिभव (सं० पु०) सम्बन्ध, रिश्ता।

ज्ञातिभेद (सं० पु०) ज्ञातीनां भेदः ६ तत्। ज्ञातिविच्छेद, आपसकी फूट।

ज्ञातिमुख (सं० त्रि०) ज्ञातिः एव मुखं प्रधानं यस्य, बहुव्री०। १ ज्ञाति प्रधान। २ ज्ञातिके जैसा मुख या स्वभाव।

ज्ञातिविद् (सं० त्रि०) ज्ञातिं वेत्ति, ज्ञाति-विद्-क्विप्। ज्ञातिमन्त, जो नाता या रिश्ता जोड़ता है।

ज्ञातृ (सं० त्रि०) ज्ञा तृच्। १ ज्ञानशील, जानकार। २ ज्ञानी, वेत्ता।

ज्ञातृत्व (सं० पु०) अभिज्ञाता, जानकारी।

ज्ञातेय (सं० क्ली०) ज्ञातेर्भावः, कर्मधा० ज्ञाति-ठक्। कपिज्ञात्योर्ढक्। पा ५।१।१२७। ज्ञातित्व, बांधवके धर्म, कर्म या व्यवहार।

ज्ञात्र (सं० क्ली०) ज्ञातेर्भावः ज्ञातृ अण्। ज्ञातृत्व, अभिज्ञाता, जानकारी।

ज्ञान (सं० क्ली०) ज्ञा-भावे ल्युट्। १ बोध, प्रतीति, जानकारी। २ विशेष और सामान्य द्वारा अवरोध, जानना। ३ बुद्धिमात्र। वैशेषिक और न्यायदर्शनमें ज्ञानका विषय इस प्रकार लिखा है। बुद्धि शब्दसे ज्ञानका बोध होता है। ज्ञान दो प्रकारका है,—प्रमा और अप्रमा (भ्रम) जिसमें जो जो गुण और दोष हैं,

गोप्रवेश (सं० पु०) गोः प्रवेश, ६-तत्। १ गौओंका वनसे घर प्रत्यागमन। २ गोप्रवेशकाल, जिस समयमें गौ चर कर घर लौटतीं है, संध्या, गोधूली।

गोफ (सं० पु०) १ दास, सेवक। २ दासीपुत्र। ३ गोपियोंका झुंड। ४ दृष्टबंधक, एक तरहका रेहन जिसमें रेहन रखी हुई चीज पर महाजनको कोई अधिकार न रहे वरन् वह सिर्फ सूद लेनेका अधिकारी हो।

गोफणा (सं० स्त्री०) फोड़े और जखम आदि बांधनेका एक प्रकारका बन्धन जिसका व्यवहार चिबुक, नासिका, ओष्ठ, स्कन्ध आदिको बांधनेके लिये होता है।

गोफा (हिं० पु०) नया निकला हुवा पत्ता, गाभा।

गोबध (सं० क्लो०) गौका मारना।

गोबर (हिं० पु०) गोमय, गायकी विष्ठा, गौका मल।

गोबरगणेश (हिं० वि०) १ भद्दा, जो देखनेमें अच्छा न मालुम हो। २ मूर्ख, बेवकूफ।

गोबरहारा (हिं० पु०) गोबर उठाने या पाथनेवाला नौकर।

गोबरिया (हिं० पु०) हिमालय तथा नेपालमें होनेवाला एक तरहका पौधा। इसकी जड़ विष है।

गोबरी (हिं० स्त्री०) १ कंडा, उपला, गोहरा। २ गोबरका लेपन।

गोबरैला (हिं० पु०) गोबरमें रहनेवाला एक तरहका कोड़ा।

गोबरौरा (हिं०) गोबरैला देखो।

गोबल्य (सं० पु०) श्वेत यावनाल, सफेद ज्वार।

गोवाल (सं० क्लो०) गौका बाल, गायका रोआँ।

गोवालधी (सं० स्त्री०) चमरीमृग।

गोवाली (सं० स्त्री०) गोवाला वालोऽस्याः बहुव्रो० ङीप्। औषध विशेष, एक दवा।

गोबिया (देश०) आसामको पहाड़ियोंमें पाया जानेवाला एक तरहका छोटा वास। यह देखनेमें सुन्दर होता और इसमें लम्बी लम्बी घनी पत्तियां रहनेके कारण इसकी छाया सघन होती है। इसके पत्ते पशुओंके चारेके काम आते और लकड़ीसे तीर कमान, टोकरे बनाये जाते हैं। दुर्भिक्षके समय दीन मनुष्य इस बीजोंका भात भी बना कर खाते हैं।

गोबी (हिं०) गोभी देखो।

गोभ (हिं० पु०) पौधोंका एक रोग।

गोभण्डीर (सं० पु०-स्त्री०) गवि जले भण्डीरः अग्निवाचालः। जलकुक्कुभपक्षी।

गोभानु (सं० पु०) तुर्वसु राजाके पौत्र और वह्निके पुत्र।

गोभिरामा (सं० स्त्री०) रामतरुणी। (हरिवंश ३२ अध्याय)

गोभिल (सं० पु०) एक गृह्यप्रणेता ऋषि। इन्होंने सामवेदीय गृह्यसूत्र प्रणयन किया है।

गोभिलपुत्र—गोभिलके पुत्र, एक स्मृतिकार।

गोभी (हिं० स्त्री०) १ गोजिह्वा, गायकी जीभ।

२ एक तरहकी तरकारी। यह प्रायः समस्त देशोंमें उपजायी जाती है। यह तीन प्रकारकी होती है—फूल गोभी, गाँठ गोभी और पातगोभी। फूलगोभीको डण्टी लगभग एक बलिश्तकी होती और जमीनमें गड़ी रहती है। इसके ऊपर चारों तरफ चौड़े, मोटे और बड़े पत्ते रहते हैं और इनके मध्यमें फूलका गुथा हुआ समूह होता ये ही तरकारीके काम आते हैं। गोभी कार्तिक मासके अन्त तक तैयार हो जाती और जाड़ा पर्यन्त रहती है। दूसरी ऋतुओंमें खानेके लिये गोभी शुष्क कर रखी जाती है।

३ पौधोंका गोभ नामक रोग।

गोभुज (सं० पु०) गां पृथिवीं भुनक्ति गो-भुज्-क्विप्। भूपाल, राजा।

गोभृत् (सं० पु०) गां भूमिं बिभर्ति भृ-क्विप्, तुगागमश्च। पर्वत, पहाड़।

गोम (देश०) १ घोड़ोंकी नाभी और छातीके मध्यको भवरी। ऐसा घोड़ा बुरा माना जाता है। २ पृथिवी।

गोमक्षिका (सं० स्त्री०) गोः क्लेशदायिका मक्षिका। एक तरहकी मक्खी।

गोमघ (सं० त्रि०) गा मह्वति दानार्थं मलङ्करोति गो मह्वि-क, निपातनात्वकारलोपः। गोदाता, जो गौ दान करता है।

गोमण्डल (सं० क्लो०) गवां मण्डलं, ६-तत्। १ गोसमूह, गायका झुण्ड। गोमण्डलं, ६-तत्। २ भूमण्डल। ३ किरणसमूह।

गोमत् (सं० त्रि०) गौरस्त्यस्य गो-मतुप्। १ गोस्वामी।

व्यक्ति यह जानता है कि स्रक्‌चन्दनादि मेरे लिए सुख-जनक हैं और औषधपान मेरे दुःखका नाशक है, उसीको उन विषयोंमें इच्छा होती है और जिसको ऐसा ज्ञान नहीं है उसको उन विषयोंमें कभी भी इच्छा नहीं होती। इष्ट साधनता ज्ञानकी भाँति चिकीर्षाके और भी दो कारण हैं। जैसे—कृतिसाध्यताज्ञान और बलवद-निष्ट-साधनताज्ञानका अभाव। इस विषयको मैं कर सकता हूं, इस प्रकारके ज्ञानका नाम है कृतिसाध्यता-ज्ञान और इस विषयको करनेसे मेरा बड़ा अनिष्ट होगा, इस प्रकारके ज्ञानके अभावको बलवदनिष्टसाध-नता-ज्ञानका अभाव कहते हैं। देखो, योगाभ्यास करना हमारे लिए कृतिसाध्य नहीं है, इस प्रकारका जिनको स्थिरनिश्चय हो चुका है वे कभी भी योगाभ्यासमें प्रवृत्त नहीं हो सकते। किन्तु योगाभ्यास सहजहीमें हो सकता है, योगियोंको ऐसा विश्वास होने पर ही वे योगसा-धनमें रत हुआ करते हैं। जो व्यक्ति यह जानता है कि, यह फल सुमधुर अवश्य है, किन्तु सर्पदष्ट होनेसे महा विषाक्त हो गया है, इसलिए अब इसके खानेसे प्राण हानि होगी इसमें सन्देह नहीं' उस व्यक्तिको कभी भी उस फलके खानेमें प्रवृत्ति नहीं होती। परन्तु जिसको ऐसा ज्ञान नहीं है, उसको उसी समय उस फलके खानेसे प्रवृत्ति होती है। (न्यायदर्शन)

ज्ञायते अनेन, ज्ञा-करणे. ल्युट्। ३ वेद। ४ शास्त्रादि वह जिसके द्वारा जाना जा सके।

विशेष—आत्माका मनके साथ मनका इन्द्रियके साथ और इन्द्रियका विषयके साथ सम्बन्ध होने पर ज्ञान होता है। समझ लो कि, एक घट रक्खा है दर्शनेन्द्रियने घटको विषय किया अर्थात् देखा, देख कर मनसे कहा, मनने फिर आत्माको जतलाया। तब आत्माको ज्ञान हुआ, आत्माने स्थिर किया कि यह एक घट है।

ज्ञान सामान्यको त्वङ्मानसयोग ही एक मात्र कारण है; विषयके साथ इन्द्रियका, इन्द्रियके साथ मनका, मनके साथ आत्माका सम्बन्ध इतना जल्दी होता है कि, उसको कह कर खतम नहीं किया जा सकता। एक आघातसे सौ पत्तोंमें छिद्र करनेसे, जैसे प्रत्येक पत्तेका छिद्र सिलसिले वार हो जाते हैं, किन्तु सम-यकी सूक्ष्मताके कारण उसका अनुभव नहीं होता, उसी प्रकार विषय, इन्द्रिय, मन और आत्माका सम्बन्ध क्रमसे होने पर भी उसका निर्णय नहीं किया जा सकता। मन अत्यन्त सूक्ष्म है इसलिए उसमें दो विषयोंका धारण करनेकी शक्ति नहीं है। (मुक्तावली)

मनु + अणु अर्थात् अति सूक्ष्म है, इसलिए ज्ञानका अयौगपद्य है, अर्थात् युगपद् कोई ज्ञान नहीं होता, चक्षुःसंयोग होते ही ज्ञान होता हो ऐसा नहीं। कल्पना करो कि, मन एक विषयकी चिन्ता कर रहा है, किन्तु दर्शनेन्द्रिय (चक्षु)-ने एक विषय देखा, देखते ही क्या उसका ज्ञान होगा? नहीं, ऐसा नहीं होगा। क्योंकि दर्शनेन्द्रियमें ऐसी कोई शक्ति नहीं कि, जिससे वह ज्ञान उत्पन्न कर सके। हां दर्शनेन्द्रिय जा कर मनको संवाद दे सकती है। मन फिर आत्मासे युक्त होता है, पीछे ज्ञान होता है। (भाषाप०)

इसके विषयमें एक लौकिक दृष्टान्त देना ही यथेष्ट है। कल्पना करो कि, एक आदमी दूसरे एक आद-मीसे मिलने गया है, किन्तु उसके घर जा कर देखता है तो द्वार पर द्वारपाल निरन्तर द्वार-रक्षा कर रहे हैं, वह द्वार पर बैठ गया और द्वारपालके जरिये उसने भीतर अपने आनेका संवाद भिजवाया, द्वारपालने जा कर दीवानसे कहा, दीवानने खुद जा कर मालिकसे कहा, मालिकको तब मालूम हुआ कि फलाना आदमी मुझसे मिलने आया है, इसी तरह चक्षुने जा कर मनको और मनने आत्माको संवाद दिया, तब कहीं आत्माको ज्ञान हुआ। प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शब्द इन चार प्रकारके प्रमाणोंसे सब तरहका ज्ञान होता है। (भाषाप०)

चक्षु आदि इन्द्रियों द्वारा यथार्थ रूपसे वस्तुओंका जो ज्ञान होता है, उसको प्रत्यक्ष ज्ञान कहते हैं। यह प्रत्यक्ष ज्ञान ६ प्रकारका है—घ्राणज, रासन, चाक्षुष, त्वाच, श्रावण और मानस। घ्राण, रसना, चक्षुः, त्वक्, श्रोत्र और मन—इन छह ज्ञानेन्द्रियों द्वारा यथाक्रमसे उपरोक्त छह प्रकारका प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। गन्ध और तद्गत सुरभित्वादि और असुरभित्वादि जातिका

वेग बढ जाता है। पार्वतीय त्रिपुरा राज्यमें इस नदीके उत्तरकूल पर कामोगञ्ज, पियरागञ्ज, और मैलाक चेरल नामक तीन शाखाएं हैं। नदीके कूल पर कुमिल्ला, जाफरगञ्ज और पाँचपुखुरिया ये तीन प्रधान नगर हैं। कुमिल्ला, कम्पनीगञ्ज और नुरपुरमें नदी पार होनेके लिए नौकादि हैं।

६ गोरोचना।

गोमतीशिला (सं० स्त्री०) हिमालयकी वह चट्टान जिस पर पहुंच कर अर्जुनका शरीर गल गया था।

गोमत्स्य (सं० पु०) गौरिव स्थूलो मत्स्यः। सुश्रुतके अनुसार एक तरहकी मछली।

गोमन्त (सं० पु०) एक पर्वतका नाम। इसके ऊपर एक पीठस्थान है जिसको अधिष्ठात्री देवीका नाम गोमती है।

गोमती, गोआ, जरासन्ध और कृष्ण देखो।

गोमन्द (सं० पु०) पर्वतविशेष। यह क्रौञ्चद्वीपमें अवस्थित है, कमललोचन सर्वदा इसी पर्वत पर वास करते हैं। (भारत भीष्म० १२ अ०)

गोमय (सं० पु०-क्ली०) गोः पुरीषं गो-मयट्। १ गोकी विष्ठा, गोबर। इसका गुण गो शब्दमें देखो। स्मृतिका मत है कि वन्ध्या, रोगपीड़िता और नवप्रसूता एवं वृद्धा,गौका गोमय ग्रहण करना उचित नहीं है। पुराणमें लिखा है कि एक समय समस्त गौने मिल कर आपसमें इस बातका परामर्श किया कि उन सबकी उन्नतिका क्या उपाय है। अनेक वादानुवादके बाद स्थिर हुवा कि जो मनुष्य उनके गोबर तथा मूत्रसे स्नान करेगा उसीका शरीर पवित्र होगा ऐसा होनेसे ही उनकी उन्नति होगी अन्यथा नहीं। इसके लिये समस्त गौने एक शत वर्ष कठोर तपस्या की। प्रजापतिने तपस्यासे संतुष्ट हो कर वही वर दिया जो उनका अभीष्ट था। उसी समयसे गौका गोमय और मूत्र पवित्र माना जाता है। गोमय द्वारा देवदेवियोंके अभिषेक करनेका विधान है। महाभारतके दानधर्ममें लिखा है कि एक समय गौने लक्ष्मीजीसे कहा कि "हम सब आपका सम्मान करेंगे और आप हमारे गोमय और मूत्रमें वास कीजिए।" लक्ष्मी उनकी प्रार्थनाको अङ्गिकार कर तभीसे गोमूत्र और गोमयमें वास करने लगी। कोई कोई इन्हें साक्षात् यमुना कह कर वर्णन करते हैं। (काशीखण्ड)। ऐसा प्रवाद है कि गोमयसे वृश्चिक होता है। (त्रि०) २ गोस्वरूप।

गोमयच्छत्र (सं० क्ली०) गोमयजातं छत्रमिव। करक, कुम्भी, कुकुरमुत्ता।

गोमयच्छत्रिका (सं० स्त्री०) गोमये गोमयप्रचुरस्थाने जाता छत्रिकेव। गोमयच्छत्र, छातेके आकारका एक छोटा गाछ जो प्रायः गोमयकी ढेर पर निकला करता।

गोमयतैल (सं० क्ली०) नेत्ररोगका तैल।

गोमयप्रिय (सं० क्ली०) गोमयं प्रियमस्य उत्पादकत्वात्। १ भूतृण, एक तरहकी सुगन्धि घास। २ बालक, सुगन्ध बाला।

गोमयाद्यघृत (सं० क्ली०) नेत्ररोगका घृत, आँखकी बामारीका घी। इसकी प्रस्तुत प्रणाली इस तरह है—छागघृत ४ शराव, गोमयरस ४ शरावमें काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, गुलञ्च, कर्कटशृङ्गी, वंशलोचन, पद्मकाष्ठ, पुण्डरिया, ऋद्धि, वृद्धि, किशमिश, जीवन्ती और यष्टिमधु इन सबके १ शराव चूर्ण मिलाते हैं। इसके बाद उसमें १६ शराव जल डाल दिया जाता है।

गोमयोत्था (सं० स्त्री०) गोमयादुत्तिष्ठति उद्-स्था-क टाप्। १ गोमयजात कीटविशेष, एक तरहका कीड़ा जो गोबरसे उत्पन्न होता है, गोबरीला, पर्दभी।

गोमयोद्भव (सं० त्रि०) गोमयं उद्भव उत्पत्तिस्थानं यस्य बहुव्री०। १ गोमयजात, जो गोबरसे उत्पन्न हो। (पु०) २ आरग्वध, अमलतास।

गोमर्द (सं० पु०) सारस पक्षी।

गोमर (हिं० पु०) बूचर कसाई।

गोमरी (सं० स्त्री०) वार्त्ताकुविशेष, रामबैंगन।

गोमल (सं० पु०) १ गोमय, गोबर। २ पंजाबके पश्चिम सुलेमान पहाड़से निःसृत एक नदी। ऋग्वेदमें यही नदी गोमती नामसे वर्णित है। इस नदीके निकट ही गोमल नामका गिरिसङ्कट पंजाबसे अफगानिस्तान तक गया है।

गोमहिषदा (सं० स्त्री०) गाः महिषांश्च ददाति भक्तेभ्यः गो-महिष-दा-क-टाप्। कार्त्तिकेयकी अनुगामिनी मातृकाविशेष।

ज्ञान विभिन्न नहीं है। जब जिसकी अन्तःकरण-वृत्तिके द्वारा विषयका आवरणस्वरूप अज्ञान नष्ट होकर ज्ञानके द्वारा विषय प्रकाशमान होता है तब ही उसमें ज्ञान कहा जा सकता है, और जब ऐसा नहीं होता है, तब वह ज्ञान भी नहीं कहलाता। अतएव ज्ञान एक होने पर भी तुम्हारा ज्ञान 'मेरा ज्ञान' इत्यादि भेद व्यवहारमें बाधक क्या है? बल्कि ज्ञानके ऐक्यसाधक प्रमाण ही अधिक मिलते हैं। एक प्रमाण दिया जाता है। देखो, जिस वस्तुके साथ जिस वस्तुका वास्तविक भेद होता है, उसमें उपाधिके छूट जाने पर भी भेद-व्यवहार हुआ करता है। जैसे घट और पटमें वास्तविक भेद रहनेके कारण घट और पटकी उपाधि छूट जाने पर भी भेद-व्यवहारका बोध नहीं होता। अतएव यदि घटज्ञान और पटज्ञानमें पारस्परिक भेद होता, तो उस ज्ञानमें निःसन्देह यथा क्रमसे घट और पटरूप दोनों उपाधियोंके छूट जाने पर भी भेदव्यवहार होता। परन्तु जब घटज्ञान और पटज्ञानको घटपटरूप उपाधियोंको छोड़ कर "ज्ञान ज्ञान से भिन्न है।" इस प्रकारके भेदव्यवहारको कोई भी नहीं मानता, तब उस प्रकारके ज्ञानके वास्तविक भेद कैसे हो सकते हैं? वरन उन उन ज्ञानोंकी घटपटरूप उपाधियोंसे ही सिद्ध होता है, जब कि ज्ञानका विषय घट है और पटज्ञानका विषय पट, तब घटज्ञानसे पट-ज्ञान भिन्न है, इस प्रकारका भेदज्ञान होता है, इसलिये वैसे ज्ञानका उपाधिक भेदमात्र है, यही सिद्ध होता है। यह भिन्नज्ञानका वास्तविक परस्पर भेदसाधक कोई प्रमाण वा युक्ति नहीं है। वरन ऐक्यप्रतिपादक की श्रुति और स्मृतिमें अनेक प्रमाण मिलते हैं और भी देखा जाता है कि, जब घटज्ञान भी ज्ञान है और पट ज्ञान भी ज्ञान है, तब फिर ज्ञानमें विभिन्नताका होना किसी तरह भी सम्भव नहीं हो सकता। अतएव स्थिर हुआ कि, सर्वविषयक, सर्व व्यक्तियोंका ज्ञान एक है, भिन्न नहीं। इस ज्ञानके नामान्तर चैतन्य और आत्मा हैं। (वेदान्त)

सांख्यमतके अनुसार बुद्धि जब अर्थाकारमें (अर्थात् वस्तुस्वरूपमें) परिणत हो कर आत्मामें प्रतिविम्बित होती है, तब ज्ञान होता है। एक पदार्थ पर चक्षुका संयोग हुआ, पीछे दर्शनेन्द्रिय (चक्षुः) ने आलोचना करके उसे मनको दिया, मनने सङ्कल्प करके अहङ्कारको दिया, अहङ्कारने अभिमान करके बुद्धिको दिया, बुद्धि अध्यवसाय करके (अर्थात् तदाकारमें परिणत हो कर) प्रतिविम्बरूपमें आत्माके पास उपस्थित हुई फिर कहीं आत्माकी प्रतिविम्बरूपमें ज्ञान हुआ।

इन्द्रियका आलोचन मनका सङ्कल्प, अहङ्कारका अभिमान, बुद्धिका अध्यवसाय ये चारों युगपत् वा एक साथ होते हैं। (तत्त्वकौमुदी० ३०)

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञके स्वरूपको जाननेको वास्तवमें ज्ञान कहा जा सकता है। इस ज्ञानके होने पर मनुष्य समस्त दुःखोंसे उत्तीर्ण हो जाता है। (सांख्यदर्शन)

गीतामें ज्ञानका विषय इस प्रकार लिखा है—अमानिता, अदम्भता, अहिंसा, क्षमा, सरलता, आचार्योपासना, शौच, स्थैर्य, इन्द्रियनिग्रह, मनोनिग्रह, भोग-वैराग्य, अनहङ्कार, इस संसारके जन्म, मृत्यु ज्वर, व्याधि, दुःखादि दोषोंको देखना, पुत्र दारा, गृहादि विषयोंमें अनासक्ति, अनभिष्वङ्ग, इष्ट वा अनिष्ट घटनाके होने पर उसमें सर्वदा समज्ञान, जीवात्माको अभिन्न-भावसे देख कर आत्मामें (ईश्वरमें) अटल भक्ति, निर्जन देशसेवा, जनतामें विरक्ति, नित्य अध्यात्मज्ञान सेवा, नित्यानित्य वस्तुविवेक, जीवात्मा-परमात्मामें अभेद ज्ञान—ये सब ही ज्ञान हैं, और जो इससे विपरीत है उसका नाम अज्ञान है। (गीता १३ अ० ६ १३)

यह ज्ञान तीन प्रकारका है—सात्विक, राजसिक और तामसिक।

जिस ज्ञानके द्वारा विभिन्नाकार प्रतीयमान निखिल जगत्की केवलमात्र एक अद्वितीय अविभक्त और परिवर्त-नीय सत्ता वा चित्स्वरूप आत्मा ही परिदृश्य होती है, और कोई पदार्थ देखनेमें नहीं आता, वह ज्ञान ही सात्विक ज्ञान है। इस ज्ञानके होते ही मुक्ति होती है। (गीता १८।२०)

जिस ज्ञानके द्वारा प्रत्येक देहमें विभिन्न गुण और विभिन्नधर्मविशिष्ट पृथक् पृथक् आत्मा देखनेमें आती है। उस ज्ञानको राजस ज्ञान कहा जा सकता है। (गीता १८।२१)

१७ अगस्ति — विश्वामित्र, अरग्थ, वार्धल।
१८ शाण्डिल्य
१९ कात्यायन — भार्गव, च्यवन, और्व, जमदग्नि, वत्स।

गोमिथुन (सं० क्ली०) गवां मिथुनं, ६-तत्०। वृष और गाभी, गाय और बैल।

गोमिन् (सं० त्रि०) गावो विद्यन्तेऽस्य गो-मिनि। १ गोमान्, गोवाला, जिसको गो है। २ उपासक। (पु०) ३ शृगाल, गीदड़। ४ बुद्धके एक शिष्यका नाम। ५ पृथ्वी।

गोमीन (सं० पु०-स्त्री०) गौरिव स्थूलो मीनः। मत्स्य विशेष, एक तरहकी मछली।

गोमुख (सं० पु०) गोर्मुखमिव मुखं यस्य, बहुव्री०। १ नक्र, कुम्भीर, मकर, ग्राह। २ वृक्षविशेष। ३ मातलीके पुत्र। (भारत उद्यो० ९८ अ०) ४ कुटिलाकारवाद्ययन्त्र, शृङ्गादि नरसिंहा नामका बाजा। (क्ली०) ५ लेपनविशेष, घरकी भीतमें गोमुखाकारका चित्र बनाना। ६ गोमुखाकृति सन्धिविशेष, गौके मुखके आकारका एक तरहका सेंध। ७ माला रख कर जपनेकी थैली जिसका आकार गोमुखके सदृश होता। शाक्त, सौर, वैष्णव प्रभृति गोमुखमें हाथ रख कर माला द्वारा इष्टमन्त्र जप किया करते हैं। गोमुख छब्बीस अङ्गुल या एक हाथका बना रहना चाहिए, जिसमें आठ अङ्गुल परिमाणका मुख और अठारह अङ्गुल परिमाणकी ग्रीवा रहे ८ आसनविशेष। पृष्ठके वाम पार्श्वमें दक्षिण गुल्फ (ठेहुन) और दक्षिण पार्श्वमें वामगुल्फके योग करनेसे गोमुखाकृति गोमुखासन बनता है। (हठदीपिका) ९ वत्सराज मन्त्रीके पुत्र। (कथासरित्सा० २३।५७)

१० नरवाहनदत्तके प्रतिहारी। (कथासरित्सा० देखो।)

११ गोका मुख। १२ गौके मुंहके आकारका एक तरहका शङ्ख। १३ टेढ़ा मेढ़ा घर। १४ ऐपन

गोमुखव्याघ्र (सं० पु०) एक तरहका व्याघ्र, जिसका मुख गौके मुखके जैसा हो।

गोमुखी (सं० स्त्री०) गोमुखमिव आकृतिरस्याः, बहुव्री०। ङीप्। १ हिमालयसे गङ्गाके पतन स्थान पर अवस्थित एक गुहा या कन्दरा। २ राढ़देशस्थ एक नदी।

गोमुती—भारतीय द्वीपपुञ्जजात वृक्षविशेष। (Arenga saccharifera)। यह देखनेमें नारियल या ताड़के वृक्ष जैसा होता है। इसके स्कन्धके ऊपर घोड़ेकी दुमके बाल जैसा रोआं रहता है। जिसको मलयवासीगण गोमुती कहते हैं। इसकी भी छिलकासे मजबूत रस्से आदि बनते हैं जो नारियलके रस्सेकी अपेक्षा दृढ़ और बहुकाल स्थायी होते हैं।

गोमुद्री (सं० स्त्री०) प्राचीनकालका एक बाजा, जिस पर चमड़ा मढ़ा रहता है।

गोमूढ़ (सं० त्रि०) बैलके सदृश निर्बोध।

गोमूत्र (सं० क्ली०) गोर्मूत्रं, ६ तत्०। गौका प्रस्राव या पेशाब इसका संस्कृत पर्याय-गोजल, गोअम्भ, गोनिष्यन्द और गोद्रव है। कृच्छसान्तपनव्रतमें गोमूत्र भक्षण करनेका विधान है।

गोमूत्रबीजक—(सं० पु०) रक्तबीजासन वृक्ष।

गोमूत्राभ (सं० पु०) मन्दविष वृश्चिकविशेष।

गोमूत्रिका (सं० स्त्री०) गोमूत्रस्येव वक्रसरलाकृतिरस्याः गोमूत्र-ठन् टाप्। १ तृणविशेष, एक प्रकारकी घास जिसके बीज सुगन्धित होते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—रक्तटणा, चेत्रजा, कृष्णभूमिजा हैं। इसका गुण-मधुर-वृष्य एवं गायके दुग्धवृद्धिकारक है। गोमूत्रिका तृण देखनेमें ताम्रवर्ण है।

गोमूत्रस्येव गतिरस्यत गोमूत्र ठन्-टाप्। २ चित्र काव्यविशेष। इस काव्यके पढ़नेकी तरकीब है कि पहली पंक्तिके एक वर्णको दूसरी पंक्तिके दूसरे वर्णसे मिलाकर फिर पहलीके तीसरेको दूसरीके चौथेसे फिर पहलीके पांचवेको दूसरीके छठेसे और फिर आगे इसी प्रकार पढ़ते चलते हैं। जिस श्लोकके अर्धद्वयका एकान्तर वर्ण समान होते अर्थात् प्रथमार्द्धके द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश, चतुर्दश और षोडश अक्षर एवं द्वितीयार्द्धके द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश, चतुर्दश और षोडश अक्षर एक ही हों। उसीको गोमूत्रिकाबन्ध कहते हैं।

उदाहरण—

मदनो विकसद्दानसाधनो ध्वि शादिभिः।
वदनो विकसद्दानवधसाध्वि षापिभिः॥

कोई कोई कहते हैं, कि स्नायुके बहिरांशका अच्छी तरह उत्तेजित न होना हो इसका कारण हैं। और किसी किसोका यह कहना है कि, आत्माके चेतनांशमें जो नहीं जाता वह ज्ञानही अपरिस्फुट रहता है। किसी विषयमें जो हमको इन्द्रियबोध होता है, वह अपरिस्फुटभावसे हमारे मनमें कुछ दिनोंतक विद्यमान रहता है। ऐसा न होता तो अन्य इन्द्रियज्ञानके साथ उसकी तुलना कैसे कर सकते हैं ?

ज्ञानलाभका प्रधान उपाय मनोनिवेश वा उपयोग है। कोई भी विषय क्यों न हो, जबतक हमारा मन संयत न होगा, तबतक हम किसी तरह भी उस विषयमें ज्ञान लाभ नहीं कर सकते। क्योंकि मनोयोगके बिना हमारी इन्द्रियोंकी प्रक्रियाएं आश्लिष्ट वा विश्लिष्ट नहीं हो सकतीं तथा आश्लेषण और विश्लेषणके बिना ज्ञान लाभ नहीं होता। मनोयोगके बिना शारीरिक वा मानसिक क्रियाओंका स्थायित्व नहीं होता, अतः उनकी धारणा न होनेके कारण हम उनकी प्रकृतिको नहीं जान सकते। एक ज्ञानमयी महाशक्ति निखिल ब्रह्माण्डमें परिव्याप्त है। स्नायविक उत्तेजना और कम्पनके कारण जो अस्फुट इन्द्रियबोध होता है, उसके मानसिक संस्कारको साधारणतः मनोयोग कहते हैं। यह उत्तेजना वाह्य वस्तुके संश्रव वा मानसिक अनुध्यान दोनोंसे हो उत्पन्न हो सकती है। मनोनिवेशके द्वारा इन्द्रियगम्भीरताको वृद्धि होती है; उन सबकी आलोचना करके हम विषय विशेषमें ज्ञानलाभ कर सकते हैं। हमारा ज्ञान परिणतशील है, हम क्रम क्रमसे कठिनसे कठिन विषयमें ज्ञानलाभ करते हैं। यह तीन प्रक्रिया ओंके द्वारा संशोधित होता है—१ स्वाभाविक ऐन्द्रिक-संस्कार, २ मानसिक चित्र और ३ चिन्ता।

१। विविध इन्द्रिय प्रक्रियाओंके आश्लिष्ट और विश्लिष्ट होने पर मनमें एक प्रकारका भाव उत्पन्न होता है। वह ही प्रथम प्रक्रिया है। जिस लड़केने कभी दूध नहीं देखा, वह अकस्मात् दूधको देखकर पहचान नहीं सकता। जब वह उसका आस्वादन स्पर्शन और दर्शन करता है, तब उसके भिन्न भिन्न प्रक्रियाएं उत्पन्न होती हैं। इनमें सामञ्जस्य होनेपर वह दूधको जाननेमें समर्थ हो सकता है। यथार्थमें देखा जाय तो यही वास्तविक ज्ञानलाभकी प्रथमावस्था है।

२। इन्द्रिय बोधके परिस्फुट होनेसे हम मनमें जो इन्द्रिय गोचरीभूत विषयकी प्रतिमूर्ति कल्पना करते हैं, उसको मानसिक चित्र कहते हैं। मनोनिवेशके द्वारा जब विविध इन्द्रिय-प्रक्रियाएं मनमें दृढ़तासे अङ्कित हो जाती हैं, तब मानसिक चित्र गठित हो सकता है, मानसिक चित्र और इन्द्रियज्ञान ये दोनों भिन्न भिन्न पदार्थ हैं। मानसिक चित्रगठनमें स्मृतिशक्तिकी कार्यकारिता देखी जाती है। जिस लड़केने पहिले घंटेकी आवाज सुनी है, वह पीछे भी घंटाका शब्द सुन कर उसका अनुमान कर सकता है कि, यह घंटेका शब्द है।

३। चिन्ता। चिन्ताके द्वारा ही हम यथार्थ युक्तिसङ्गत ज्ञान लाभ करते हैं। हमारे विविध प्रकारके मानसिक चित्रोंकी तुलना करके हम इस अवस्थामें उपस्थित हो सकते हैं, इस जगह भी मनोनिवेशकी क्रिया अत्यन्त प्रबल है। विशेष मनोयोगके बिना हम एक चित्रके साथ दूसरे चित्रकी यथार्थ तुलना नहीं कर सकते और इसलिए यथार्थ ज्ञानलाभ भी नहीं कर सकते। केवलमात्र कुछ भिन्न भिन्न मानसिक चित्रोंकी कल्पना करनेसे ही ज्ञानलाभ नहीं होता।

अतएव देखा जाता है कि, इन्द्रिय परिचालनाके कारण जो मानसिक भावान्तर उपस्थित होता है, वह ज्ञान नहीं है। इस भावान्तरोंका आश्लेषण और विश्लेषण होनेसे कुछ ज्ञान प्राप्त होता है; कारण यह है कि, तब कोई वस्तु व्यक्ति वा भाव, यथार्थमें इन्द्रियके गोचरीभूत होते हैं। इन्द्रियकी उत्तेजना वा परिचालनाके कारण हमारे मनमें जो भावान्तर होता है अथवा मनमें हम जिन गुणों या भावोंका अनुमान करते हैं, उसी समय हम उन गुणों वा भावोंके अस्तित्वको भी अन्य वस्तुमें कल्पना कर लेते हैं। हम किसी घंटेकी आवाज सुन कर मनमें उस शब्दका अनुमान करते हैं और यह समझते हैं कि, उसी समय वह शब्द घंटेसे उत्पन्न हो रहा है। इसी तरह हम उस शब्दको गोचरीभूत करते हैं। कोई कोई कहते हैं कि, वस्तुके साथ इन्द्रियबोध संबद्ध होने पर भी शीघ्र ज्ञान नहीं होता। यह बहु-

है। आहवनीय अग्निको दक्षिण ओर एक स्थण्डिल प्रस्तुत करे, यजमान उस स्थण्डिलमें उपवेशन कर धारोष्ण दुग्ध द्वारा अभिषिक्त होवें। जो गोसवयज्ञका अनुष्ठान करते, उन्हें सब कोई स्थपति कह कर पुकारते हैं। वैश्यस्तोम दक्षिणाका जो सब लिङ्ग वा चिन्ह विहित है इसमें भी उसी तरहकी रीति प्रचलित है। सहोदरगण या मित्रगण परस्पर मिल कर इस यज्ञका अनुष्ठान कर सकते हैं। इसका और एक नाम गणयज्ञ है।

(कात्यायनश्रौतसूत्र २२।११।६।१२)

गोऽम्भस् (सं० क्ली०) गवामम्भः, ६ तत्। गोमूत्र, गायका मूत।

गोय (फा० पु०) गेंद।

गोयज्ञ (सं० पु०) गवाकृती यज्ञः, मध्यपदलो०। १ गोसवयज्ञ, गौके द्वारा जो यज्ञ किया जाता है।

गोभिलगृह्यसूत्रके मतसे पुष्टिकामनाके लिये गोयज्ञ किया जाता है इस यज्ञमें अग्नि, पू इन्द्र और ईश्वर ये चारो देवतायें अर्चनीय हैं। वृषभकी पूजा ही गोयज्ञका प्रधान अङ्ग है। यज्ञ देखो। (गोभिलगृह्य ३।६।१०-१२)

२ वृन्दावनवासी गोपगणके लिए कृष्ण कार्त्तिक अनुष्ठित महोत्सव। हरिवंशमें लिखा है कि वर्षाकालके अवसान पर वृन्दावनके समस्त गोपगण शक्रोत्सव किया करते थे। एक समय जब वर्षाकाल समाप्त हो गया तब सकल ग्वाले हर्ष और उत्साहसे शक्रोत्सवके आयोजन कर रहे थे, उसी समय गोपीजनवल्लभ श्रीकृष्णचन्द्रने उन्हें रोक कर कहा कि "हम लोग ग्वाले हैं, जिससे गौकी उन्नति हो वही हम सबोंका एकान्त कर्त्तव्य है। इस लिए मैं समझता हूं कि गिरिपूजा कर गोयज्ञ करना चाहिये, क्योंकि पर्वत ही वृन्दावनके समस्त गौओंको पालन करता और अगर उन्हें पर्वत परकी घास नहीं मिलती तो वृन्दावनमें आज तक एक भी गो बचो न रहती।" श्रीकृष्णचन्द्रके ऐसे वचनको सुन कर समस्त ग्वाले गिरिपूजा ही करनेको वाध्य हुए, एवं महाधूमधामसे गिरियज्ञ और गोयज्ञका अनुष्ठान किया।

(हरिवंश ७४ अ०)

गोया (फा० क्रि० वि०) मानो, जैसे। गोका देखो।

गोयीचन्द्र (सं० पु०) संक्षिप्तसारके एक टीकाकार। इनकी टीका अत्यन्त सरल भाषामें लिखी है। इन्होंने अपनी टीका प्रमाणित करनेके लिए कई जगह कलापटोका उद्धृत कर उसकी मीमांसा की है।

गोयुक्त (सं० त्रि०) गवा युक्तः, ३-तत्। गोविशिष्ट, जो गाय या बैलसे खींचा जाता हो।

गोयुग (सं० क्ली०) गवाँ युगं, ६-तत्। गोयुगल, एक जोड़ा गौ।

गोयुत (सं० त्रि०) गवा युतः, ३-तत्। गोयुक्त।

गोयुति (सं० स्त्री०) गोर्युति गमनं, ६-तत्। गौका गमन, गायका जाना।

गोर (फा० स्त्री०) मृत शरीर गाड़नेका गड्ढा। कब्र।

गोर (अ० पु०) फारसदेशके एक प्रान्तका नाम।

गोर (हिं० वि०) १ गोरा। २ श्वेतवर्णका, जिसका रंग सफेद हो।

गोरक (सं० पु०) विषधरसर्प, एक तरहका जहरीला साँप।

गोरका (देश०) दक्षिणी भारतमें पाये जानेवाला अरण्ड नामका वृक्ष।

गोरक्ष् (सं० त्रि०) गा रक्षति गो-रक्ष-क्विप्। गोरक्षक, गौकी रक्षा करनेवाला।

गोरक्ष (सं० पु०) गां रक्षति गो रक्ष अण् उपस०। १ लताविशेष। २ नागरङ्ग, नारङ्गी। ३ ऋषभ नामक औषध। (त्रि०) ४ गोपालक, गौकी रक्षा करनेवाला। रक्ष भावे घञ्। ५ गोरक्षण, गोप्रतिपालन। ६ गोमाञ्चलमें स्थापित एक प्राचीन तीर्थ।(सह्याद्रि० ३।१।२९)

गोरक्षक (सं० त्रि०) गां रक्षति रक्ष-ण्वुल्, ६-तत्। गोपालक, ग्वाला।

गोरक्षकर्कटी (सं० स्त्री०) गोरक्षा चासौ कर्कटी चेति कर्मधा०। चिभंटा, भुकुर। इन्द्रवारुणी।

गोरक्षवालुक्य, गोरक्षतण्डुला देखो।

गोरक्षजम्बू (सं० स्त्री०) गोरक्षा चासौ जम्बू चेति कर्मधा०। १ गोधूम, गेहूं। २ गोरक्षतण्डुला, कोई वृक्ष। ३ घोण्टावृक्ष, एक तरहका पेड़। ४ बला, बाला।

गोरक्षतण्डुला (सं० स्त्री०) गोरक्षतण्डुलो बीजं यस्याः, बहुव्री० टाप्। वृक्षविशेष। (Hedysarum lagopodioides)। इसका संस्कृत पर्याय—गाङ्गेरुकी, नागबला, ह्रस्वगवेधुका, खरयष्टिका और विश्वदेवा है। इसके

यथार्थ प्रकृतिका संस्रव भो वैसा नहीं है। यदि हम प्रमातृभावका सङ्कुचित करके अस्फुट रक्खें, तो वस्तुकी स्थिति, और कालादिके विषयका ज्ञान सब कुछ दूर हो जाता है, हमारे मनके निरपेक्षभावोंमें किसी तरहका दृश्य नहीं रह सकता। कैसे भो धर्माक्रान्त पदार्थ क्यों न हो इन्द्रियविषयीभूत न होने पर हम सभी पदार्थोंसे अपरिचित रहते हैं। अतएव वाह्य वस्तु और और कुछ नहीं-हमारे ऐन्द्रियज्ञानसम्भूत मानसिक चित्र विशेष है हमारे ऐन्द्रियज्ञानके उत्पन्न होनेसे मानसिक सज्ञानता उपस्थित होती है, सज्ञानता वा चैतन्य ही ज्ञानका सब प्रकार मिश्रण वा एकीकरण है। इस चैतन्यके कारण हो हम पदार्थोंके चित्रकी कल्पना करने-समर्थ होते हैं। हम ऐन्द्रियज्ञानके कारण मनमें जो भिन्न भिन्न भावोंका अनुभव करते है उनमें अपने आप सामञ्जस्य नहीं होता, हमारी बुद्धि या चिन्ताशक्तिकी सहायतासे उनका ऐक्य साधित होता है।

सेलिंग (Schelling) कहते है— हमारे मानसिक चित्र और वाह्य पदार्थ इनमें परस्पर अतिनिकट सम्बन्ध है, एक दूसरेको सूचना देते हैं। एकके कहनेसे दूसरेकी सत्ता उदित होती है। सब तरहका ज्ञान मानसिक चित्रके साथ वाह्य वस्तुके ऐक्यके कारण उत्पन्न होता है।

स्पिनोजाके मतसे इन्द्रियोंके द्वारा जबतक प्रत्यक्षसिद्ध नहीं होता, तब तक मन अपनेको नहीं जान सकता। यह प्रत्यक्षज्ञान प्रथमतः अस्फुट रहता है, मनको आभ्यन्तरिक क्रियाके द्वारा वह स्पष्टीकृत होता है। किन्तु मनको कार्य करनेकी कोई स्वाधीनता नहीं है। पूर्ववर्ती कारणके द्वारा वह नियमित रूपसे होता रहता है। किसी एक नित्य नियमके जरिये सम्पूर्ण वस्तुओंका विकाश और परिणमन होता है।

स्पिनोजा कहते हैं कि, प्रथमतः इन्द्रिय द्वारा प्रत्यक्ष सिद्ध होती है। उसके बाद हमारे प्रत्यक्षका धारण वा स्मरणशक्तिके द्वारा श्रेणी विभाग होता है, पीछे कल्पनाशक्तिके प्रभावसे वाक्य द्वारा उन श्रेणियोंका नामकरण होता है; फिर चिन्ता वा युक्ति द्वारा वे विचारित होते हैं। अन्तमें सहजज्ञानके द्वारा हमें वाह्यघटनाका स्वरूपज्ञान प्राप्त होता है। ज्ञानके प्रथम उपाय वा प्रत्यक्षकी अस्पष्ट वा असम्पूर्णभावसे हमको भ्रम वा विपर्यय होता है। द्वितीय और तृतीय उपायसे जो ज्ञान उत्पन्न होता है, वही यथार्थ ज्ञान है।

सुप्रसिद्ध फरासीसी पण्डित कोमतके मतसे—सब विषयोंके ज्ञानके उन्नतिमार्गमें क्रमसे तीन सोपान हैं। पहला सोपान पौराणिक, आध्यात्मिक वा इच्छामूलक है, दूसरा दार्शनिक, काल्पनिक वा शक्तिमूलक है और तीसरा वैज्ञानिक, प्रामाणिक तथा नियममूलक है।

लोग वाह्य वस्तुको देख कर उसका एक सचेतन इच्छाविशिष्ट कर्ता अनुमान करते हैं। इसका कारण भी देखा जाता है। हमारे सभी कार्य सचेतन इच्छाविशिष्ट आत्मासे उत्पन्न होते हैं; इसीलिए किसी कार्यको देखते हो हम उसमें एक सचेतन इच्छाविशिष्ट कर्ताको कल्पना करते हैं। धीरे धीरे ज्ञान जितना स्फूर्ति पाता है, उतनी हो लोगोंको धारणा होती जाती है कि पहले जिसको सचेतन समझते थे, वास्तवमें उसमें चैतन्यका कोई लक्षण नहीं है। चैतन्यके बदले इसमें कोई अदृश्य कार्यसाधक शक्ति है। प्रथमावस्थामें लोग समझते हैं कि अग्नि इच्छापूर्वक वस्तुको दग्ध करती है, पीछे निश्चित होता है कि, अग्निमें किसी तरहकी निज इच्छा नहीं है, इसकी दाहिका शक्तिके प्रभावसे वस्तु दग्ध होती है। इस द्वितीय अवस्थाको दार्शनिक काल्पनिक वा शक्तिमूलक ज्ञान कहते हैं। पीछे हम बहुत कुछ देख भाल कर अभिज्ञताके फलसे जान सकते हैं कि, सब कार्योंका एक न एक नियम है, अर्थात् निर्दिष्ट पूर्वोत्तरत्व और सादृश्य सम्बन्ध है। हम लोगोंमें नियमातिरिक्त और कुछ भी जाननेकी क्षमता नहीं है ऐसा समझ कर जब हम सब कार्योंके नियम खोजते हैं, तब हम उस विषयके वैज्ञानिक सोपान पर उपस्थित होते हैं।

हम सब विषयमें ज्ञानके वैज्ञानिक सोपानका लाभ नहीं कर सकते। किसी विषयमें हमारा ज्ञान प्रथम सोपान तक ही रह गया है और किसी किसी विषयमें हम द्वितीय तृतीय सोपान तक चढ गये हैं। कोमत् कहते हैं—जिसका विषय जितना सरल है, वह उतना ही शीघ्र वैज्ञानिक-सोपान पर उपस्थित होता है। विषय

शीतल और दाह, वमन, पित्त, अतिसार और ज्वरनाशक है। यह कल्पवृक्ष नामसे भी विख्यात है।

गोरख-ककड़ी (हिं० स्त्री०) एक तरहकी ककड़ी।

गोरख डिब्बी (हिं० स्त्री०) गर्म जलका कुण्ड या स्रोत।

गोरखधधा (हिं० पु०) १ कई तारों कड़ियों या लकड़ीके टुकड़ोंका समूह। २ झगड़ा या उलझनका काय। ३ झगड़ा, उलझन पेच।

गोरखनाथ—गोरक्षनाथ देखो।

गोरखपंथी (हिं० वि०) गोरखनाथका अनुगामी, गोरखनाथके उपदेशका माननेवाला।

गोरखपुर—१ युक्त प्रदेशके उत्तर पूर्वका एक विभाग। यह अक्षा० २५° २८' से २७° ३०' उ० और देशा० ८२° १२' से ८४° २६' पू०में अवस्थित है यह विभाग नेपालकी तराईसे लेकर घर्घराके उत्तर तक फैला है। इसका उत्तरीय भाग बहुत आर्द्र है तथा चारों ओर जङ्गलसे घिरा है। भूपरिमाण ८५३४ वर्गमील और जनसंख्या लगभग ६३३३०१२ है। इसमें गोरखपुर, बस्ति और आजमगढ नामक तीन जिला लगते हैं। गोरखपुर और बस्ति घर्घरा नदी पर तथा आजमगढ उससे कुछ दक्षिणमें अवस्थित है। इस विभागमें कुल १८१३५ ग्राम पडते हैं यहांके प्रधान वाणिज्य स्थान गोरखपुर, आजमगढ़, बरहज बरहलगञ्ज, उसका, पदरौना और गोला है।

२ युक्त प्रदेशका एक पूर्वीय जिला। यह अक्षा० २६° ५' तथा २७° २८' उ० और देशा० ८३° ४' एवं ८४° २६' पू०में अवस्थित है। यह जिला वाराणसी विभागके अन्तर्गत है। इसके उत्तरमें नेपालराज्य, पूर्वमें सारण और चम्पारण जिला, दक्षिणमें घर्घरा नदी तथा पश्चिममें बस्ति और फैजाबाद जिला है। भूपरिमाण प्रायः ४५३५ वर्गमील होगा। लोकसंख्या प्रायः २९५७०७४ है।

हिमालय पर्वतने बहुतसे वेगवान् जलस्रोत पहाड़के बालुकणाको साथ लिये निकले हैं। वह बालू क्रमशः जमकर जिलेके बालुकामय क्षेत्रमें परिणत हो गया है। इस जिलेमें एक भी बड़ा पर्वत नहीं है। यहां बहुतसी नदियां और जलस्रोत प्रवाहित हैं। स्थान स्थान पर जलाभूमि और गहरी झील देखी जाती हैं। अधिक पानी रहनेके कारण समूचा जिला उर्वरा तथा वृक्षादिसे परिपूर्ण है। जिलेके उत्तर और मध्यांशमें विस्तीर्ण शालवन है

पर्वत श्रेणीके निम्नभागमें तराई है। घने जंगल हो कर अनेक जलस्रोत प्रवाहित हैं। यहांके पहाड़ी अधिवासी देखनेमें ठीक गोर्खा या नेपालीके जैसे होते हैं। उनमेंसे थारू जातिकी ही संख्या अधिक है। सिर्फ थारू जातिके मनुष्य वर्षाऋतुमें तराई भूमिमें रह सकते दूसरी कोई जाति रह नहीं सकती है, क्योंकि इस समय भयानक महामारी फैला करती है। जिलेके दक्षिणकी ओर जितना ही अग्रसर होते जांय उतनाही सुशोभित क्षेत्रकी कतार दृष्टिगत होती है।

अधिक वर्षा होनेसे अमि उपत्यकाका जल पूर्व ओरकी झीलमें मिल कर एक समुद्रका आकार धारण करता है। इस जिलेकी प्रधान नदियोंके नाम ये हैं—राप्ती, घर्घरा, बड़ी गण्डक, कुआना, रोहिणी, अमि और गुड़घी। इसके अलावा रामगड, नन्दौर, नवर, भींड़ि, चिल्लुरा, और अमियरताल प्रभृति कई एक झील हैं।

घर्घरा नदीके उत्तर तथा अयोध्या और बिहारके मध्य जो सब स्थान वर्तमान समयमें गोरखपुर और बस्ति जिलेमें बंटे हैं, वे प्राचीन कोशल राज्यके अन्तर्गत थे और अयोध्या नगरी उक्त राज्यकी राजधानी थी। गौतम बुद्ध इस जिलेके निकट कपिलवास्तु नगरमें पैदा हुये थे। वर्तमान तराईके 'भूइला' नामक स्थानमें उनकी मृत्यु हुई थी। आजतक भी उनके समाधिस्थानके ऊपर एक खोदी हुई बड़ी मूर्त्ति विद्यमान है।

ऐसा प्रवाद है कि अयोध्याके सूर्यवंशीय किसी राजाने इस जिलेमें काशीधामके सदृश गौरवविशिष्ट एक बड़ी नगरी स्थापन करनेकी चेष्टा की थी। जब वे उक्त नगरको सम्पूर्ण रूपसे निर्माण कर चुके, तब उस समय थारू और भरजातिने आ उन्हें परास्त किया तथा नगरको बरबाद कर डाला। बहुत समयसे यह जाति अयोध्या और गङ्गाके उत्तर पूर्व स्थान पर राज्य करती रही बौद्ध धर्मके उत्थानके साथ साथ फिर भी इनकी अनेक घटनाएं

प्राचीन ग्रीसीय विद्वान्‌गण कहा करते थे कि, जो ज्ञान इन्द्रिय द्वारा प्राप्त किया जाता है, वह ज्ञान विश्वासके योग्य नहीं; उनके मतसे—तत्त्वजिज्ञासु व्यक्तियोंको चाहिये कि सम्पूर्ण इन्द्रियद्वारोंको रोक कर केवल मन ही मन वस्तुकी प्रकृतिको चिन्ता करें। इस प्रकारकी चिन्तासे जो ज्ञान होता है, वही यथार्थ ज्ञान है।

'राम' कहनेसे एक विशेष वस्तुका बोध होता है, किन्तु 'मनुष्य' यह शब्द कहनेसे साधारण एक वस्तुका बोध होता है। यह ज्ञान किस तरह उत्पन्न होता है? प्लेटोका कहना है कि, जगत्‌में सारी वस्तुएं साधारण वस्तु है। विशेष विशेष वस्तुएं साधारण वस्तुको छायामात्र हैं। अन्तत: उनको जो कुछ सारवत्ता है वह उनका आदर्श और साधारण गुणसे उत्पन्न है। वे कहते हैं-इहलोकमें जन्मग्रहण करनेसे पहले आत्मा उन वस्तुओंसे परिचित थी, किन्तु उस देहसे संलग्न होते ही पूर्वस्मृति भूल गई। साधारण वस्तुका प्रकृतिको जाननेके लिए हमको पूर्वस्मृति जगानी पड़ती है और उन वस्तुओंके जितने उत्कृष्ट विशेष दृष्टान्त मिलते हैं उनका पर्यवेक्षण करना ही उसका प्रधान उपाय है।

मायावाद (Idealism)के समर्थकोंका कहना है कि, भौतिक जगत् नामक भावपरम्परा हमारे मनमें उदित होती है, इन्द्रियातीत अज्ञासे प्रकृति अज्ञान जड पदार्थ ही इसका कारण है। यह ही जड़वादी दार्शनिकोंका मत है और नास्तिक मायावादी यह कहते हैं कि, कारण कहनेसे यदि नियतपूर्ववर्ती घटनाका बोध हो, तो यह भावपरम्परा परस्परका कारण है और यदि इन्द्रियातीत किसी वस्तुका बोध हो, तो उसके अस्तित्व निरूपण करनेका कोई उपाय नहीं है। आस्तिक मायावादी कहते हैं कि, कारण अव्यय प्रकृति हैं, अज्ञान जड़पदार्थ नहीं हो सकता. केवल ज्ञानमय आत्मामें कारणत्वका होना सम्भव है। इस भावपरम्पराका आदि कारण स्वयं परमात्मा है, वे ही सर्वदा हमारे पास रह कर हमारे मनमें यह भावपरम्परा उत्पन्न करते हैं। इनके मतसे जड़में किसी प्रकारके स्वतन्त्र ज्ञाननिरपेक्षका अस्तित्व नहीं है। मानवात्माके लिए जड़पदार्थका आविर्भाव और तिरोभाव अनित्य है। संक्षेपतः, इन्द्रियग्राह्य विषयसमूह हमारे ज्ञानसे निरपेक्ष है, मनवहिर्भूत वाह्य वस्तु नहीं, हमारे मानसोत्पन्न अवस्था परम्परामात्र है।

कोई कोई कहते हैं—ज्ञानसे शक्ति भिन्न नहीं है। हम कहते हैं, यह कहनेसे ज्ञान द्वारा होता है, ऐसा समझा जाता है। हमारे परोक्षमें जो कार्य होता है वह कभी हमारा कार्य नहीं हो सकता, अतएव ज्ञानसे शक्ति अभिन्न है। जडजगत्‌में शक्ति है, यह कहनेसे जडजगत्‌में ज्ञान है, ऐसा कहना होता है। कोई कोई मनोविज्ञानवित् कहते हैं कि, शरीरसञ्चालनके समय हमारी मांसपेशियोंमें जो इन्द्रियबोध होता है, उसीसे शक्तिमें ज्ञान उत्पन्न होता है। परन्तु इन्द्रियबोध (Sensation) और शक्तिबोध (Idea of Power) ये दोनों संपूर्ण भिन्न हैं।

मनुष्यका मन प्रथमत: किसी विषयमें ज्ञान प्राप्त करता है, पीछे उस ज्ञानके कारण एक भाव वा आवेग उत्पन्न होता है। उस भाव वा आवेग द्वारा परिचालित होकर मनुष्यको तद्‌भावानुयायी कार्य करनेकी इच्छा होती है। मानसिक शक्तिके तारतम्यानुसार विषयविशेषके ज्ञानसे उत्पन्न भाव वा आवेगका न्यूनाधिक्य हुआ करता है, तथा भावकी प्रकृतिगत गतिके अनुसार इच्छा ही मनुष्यको किसी न किसी कार्यमें परिचालित करके जीवनकी गति अवधारित करती है।

किसी किसीका कहना है कि क्या शरीर और क्या आत्मा दोनोंमें सर्वत्र ही कुछ स्वाभाविक लक्षण हैं, जिनको स्वतःसंस्कार (Instinct) कहते हैं। जैसे-मातृगर्भसे निकलते ही बालक मातृस्तन्य पीता है। कारणका निर्णय नहीं कर सकते, पर सुन्दर पदार्थ हमको अत्यन्त प्रिय लगता है। यह सहज ज्ञानका कार्य है। ज्ञानका बीज मानवात्मामें निहित है।

मि० बक्‌ल अपने "इङ्गलैण्डीय सभ्यताका इतिहास" नामक ग्रन्थमें लिखते हैं—ज्ञानकी उन्नतिसे ही सभ्यताको वास्तविक उन्नति है। जब सभ्यता क्रमशः परिवर्तित और उन्नत हो रही है, तब उसका कारण ऐसा कुछ नहीं हो सकता कि जो परिवर्तनशील वा उन्नतिशील नहीं हो।

गवर्मेंटके अधीन आ रहा है। यहां एक एक राजाके अधीन बहुतसे परगने हैं।

यहां ज्वार, बाजरा, जौ, गेहूं, उर्द और मूंग बहुत उपजते हैं। जंगलमें शहद यथेष्ट पाया जाता है। यहांका बडाज नामक स्थान वाणिज्यके लिये प्रधान है। फैजाबाद, अकबरपुर, जमानिया प्रभृति स्थानमें अनेक तरहके कारबार है।

इस जिलेको जलवायु स्वास्थ्यकर है। पर्वतके निकट होनेके कारण गरमी और जाडा अधिक नहीं पडता। परन्तु तराई ओर जङ्गल अंशमें मलेरिया ज्वरका यथेष्ट प्रादुर्भाव है। गोरखपुर, रुद्रपुर, कशिया और बडलगञ्जमें दातव्य औषधालय है। यहाँ ब्राह्मण, राजपूत, कायस्थ, कुर्मी, शेख, सैयद, मोगल और पठान रहते हैं। हिन्दू अधिवासियोंमें ब्राह्मण और कर्मी जाति तथा मुसलमानोंमें शेखोंकी सख्या अधिक है।

यहां चीनी परिष्कार करनेका प्रधान व्यवसाय है तथा नोलका भी कारबार यहा अधिक होता है। यहांसे चावल, जौ, गेहूं और चीनीकी रफ्तनी दूर दूर देशोंमें होती है और दूसरे देशसे नमक, धातु, मट्टीका तेल इत्यादि आते हैं। घर्घरा नदी तथा B N R द्वारा व्यापार किया जाता है। यहांकी सडक अच्छी नहीं होनेके कारण व्यापारमें कुछ बाधा पहुंचती है। गोरखपुर शहरसे गाजीपुर और फयजाबाद तथा बरहजसे पटरौना तक जो सडक गई है वही कुछ कुछ अच्छी है। और सब जगहकी सडक वर्षाके दिनोंमें कोचड़से भर जाती है। यहां कई बार भयानक दुर्भिक्ष पडा है। औरङ्गजेबके समय तथा १८वीं शताब्दीमें ऐसा अकाल हुआ था कि जंगली हिंसकपशु मनुष्योंको पकड पकड खानेको ले जाते थे। अब गवर्मेंटने दुर्भिक्षसे बचनेके लिये अच्छी व्यवस्था कर दी है।

पदरौना तहसील एक स्वतन्त्र उपविभाग हो गया है और यह इण्डियन-सिविल-सर्विसके मेम्बरोंके अधीन है। तथा हाता तहसील डेपुटी कमिश्नरको देख भालमें है। इसके अलावा यहाँ तीन जिला मुन्सिफ और एक सबजज हैं। इन्हींके हाथमें समस्त गोरखपुर तथा बास्तके राज्य कार्यका प्रबन्ध है। पहले यहां राजस्वविभागका प्रबन्ध अच्छा नहीं था, किन्तु अब उपजके अनुसार मालगुजारी ली जाती और प्रजा चैनसे रहती है। यहांको राजस्व आय २५ लाख रुपये की है।

यह जिला शिक्षामें बहुत पीछे पड़ा हुआ है। अब गवर्मेंटने विद्योन्नतिके लिए अधिक रुपये खर्च करके बहुत से स्कूल खोले। आजकल यहां ८० स्कूल ऐसे हैं जिनमें गवर्मेंट कुछ आर्थिक सहायता देती है और थोडेको सरकार स्वयं चलाती है। स्कूलके अतिरिक्त यहां अब कालेज भी संगठित हुए हैं। स्कूल विभागमें लगभग ८४००० रुपये खर्च होते हैं।

यहा १२ चिकित्सालय है, बहुतोंमें रोगी भी रखे जाते हैं।

३ उक्त जिलेको एक प्रधान तहसील। यह अक्षा० २६° २८' से २७° उ० और ८३° १२' से ८३° ३८' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ६५ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग ४८६०११ है। इसमें १०८० ग्राम और दो शहर लगते है। यह तहसील राप्ती आमी और रोहिणी नदियोंसे बंट गई है।

४ उक्त जिले और तहसीलका नगर और शहर। यह अक्षा० २६° ४५' और देशा० ८३° २२' पू०में बङ्गाल और उत्तर पश्चिम रेलवे किनारे राप्ती नदी पर पड़ता है। यह लगभग कलकत्तेसे रेलद्वारा ५०६ मील और बम्बईसे १०५६ मीलको दूरी पर अवस्थित है। कहा जाता है कि यह शहर १४०० ई०में सतासी परिवारको किसी श्रेणीसे स्थापित किया गया है। अकबरके समयमें यह अवध सूबाके सरकारका सदर था। १६१० ई०में हिन्दुओंने मुसलमानको भगा कर अपना अधिकार इस पर १६८० तक जमाया। अठारवीं शताब्दीमें यह अवधमें मिला दिया गया। यहां जिलेका सदर अदालत, विचारालय, कारागार, दातव्य औषधालय और म्युनिसपालटी है।

गोरखमुंडी (हिं० स्त्री०) एक तरहको घास जिसको पत्तियां लगभग एक अङ्गुल लम्बी होती है। इसमें गुलाबी रंगके पुष्प लगते जो रक्तशोधनके लिये बहुत उपकारी हैं।

गोरखर (फा० पु०) पश्चिमी भारत और मध्य ऐसियामें पाये

चक्षुर्यस्य, बहुव्री०। १ वेदादि शास्त्रज्ञानरूप नयन। २ पण्डित, विद्वान्। समस्त वस्तुका जो अवलोकन ज्ञान चक्षु द्वारा करना चाहिए।

ज्ञानचन्द्र—एक जैन-ग्रन्थकार।

ज्ञानतः (अव्य०) ज्ञान-तस्। ज्ञानपूर्वक, जान बूझ कर।

ज्ञानतिलकगणि—एक जैन ग्रन्थकार और पद्मरागगणिके शिष्य। इन्होंने १६६० सम्वत्को गौतमकुलकवृत्ति नामक ग्रन्थ प्रणयन किया है।

ज्ञानतीर्थ—बौद्धोंका एक तीर्थस्थान। यह तीर्थ केशवती और पापनाशिनी नामक दो नदियोंके संयोगस्थलमें अवस्थित है। बौद्धोंके मतसे यहांके श्वेतशुभ्रनाग सप तीर्थयात्रियोंको सुख देते हैं।

ज्ञानद (सं० त्रि०) ज्ञानं ददाति ज्ञान-दा-क। ज्ञान दायक, ज्ञान देनेवाला।

ज्ञानदग्धदेह (सं० पु०) ज्ञानेनैव दग्धः भस्मीभूतः देहो यस्य, बहुव्री०। चतुर्थाश्रम वा भिक्षु, वह जिसने संन्यासआश्रम अवलम्बन किया है। चतुर्थाश्रमवासी भिक्षु ज्ञानके द्वारा जीवितावस्थामें देहको दग्ध करते रहते हैं, अर्थात् जिन्होंने देहादिके सुख-दुःख आदि धर्मको दग्ध कर दिया है जो सुख-दुःखादिके अतीत हो गये हैं और जो अपने इच्छानुसार इस देहको छोड़ सकते हैं, उनको ज्ञानदग्धदेह कहते हैं। इसी लिए इनके मृत शरीरको दग्ध नहीं करते और पिण्डोदकक्रिया आदिको भी कोई जरूरत नहीं होती। (शौनक)

चतुर्थाश्रमवासी भिक्षुके शरीरको, गड्ढा खोद कर प्रणव मन्त्र उच्चारण करते हुए निक्षेप करो। इनकी मृत्यु नहीं होती। इच्छापूर्वक देहका परित्याग नहीं करनेसे देहावसान नहीं होता। ये चाहें तो युग-युगान्तर पर्यन्त देहको रक्षा कर सकते हैं।

ज्ञानदर्पण (सं० पु०) ज्ञानं दर्पण इव यस्य, बहुव्री०। पूर्वजिन, मञ्जुघोष।

ज्ञानदातृ (सं० त्रि०) ज्ञानस्य दाता, ६ तत्। ज्ञानदाता गुरु। ज्ञानदाता गुरु सबसे अधिक पूज्य है।

"पितुर्दश गुणा माता गौरवेणेति निश्चितम्।
मातुः शतगुणः पूज्यो ज्ञानदाता गुरुः प्रभुः॥" (तन्त्र०)

पितासे दश गुनी माता, मातासे सौ गुना गुरु पूजनीय है। स्त्रियां ङीप्।

ज्ञानदास—१ एक बंगाली वैष्णव कवि। ये विद्यापति और चण्डिदासकी पदावलीके छन्द और भाषाका अनुकरण कर बहुतसी पदावलियोंकी रचना कर गये हैं; इनकी कविताएं बड़ी मनोहर और प्रसादगुणभूषित है। बंगालके अन्तर्गत वीरभूम जिलेके कांदड़ा नामक ग्राममें इनका जन्म हुआ था। इनको साधारण लोग गोस्वामी कहते थे।

२ एक कवि। इन्होंने शान्तिरस और शृङ्गाररसकी बहुतसी कविताएं बनाई हैं, जिनमेंसे एक नीचे दी जाती है—

"मोहन मेरी मटकी फोरी सुनो यशोदा माई हो।
ऐसो लडको दधिको फढचो मागत दूध मलाई हो॥
मटकी झटक पटक फेर सटको अब नहिं देत धराई हो।
ले कर लठिया यशोदा उठीकत तैंने धूम मचाई हो॥
भोरही मोंको देत उलहना सब ग्वालन घर आई हो।
सुनरी माई बाबा दुहाई बाकी दधि नही खाई हो॥
सब ग्वालिनी नट खट हो हमकों घर पकर ले आई हो॥
तनक मुरलिया टेर दईरे सबकी मत बौराई हो।
ज्ञानदास बलिहारी छबिकी मोहनकी चतुराई हो॥"

ज्ञानदीप (सं० पु०) बुद्धिका समूह, बुद्धि, अक्ल।

ज्ञानदुर्बल (सं० त्रि०) जिसे ज्ञान काम हो, ज्ञानहीन, मूर्ख।

ज्ञानदेव—१ दाक्षिणात्यके एक प्रसिद्ध शास्त्रवेत्ता और साधु। ये विट्ठलपन्थ नामक एक यजुर्वेदी ब्राह्मणके पुत्र थे। विट्ठलपन्थ भी एक महापुरुष थे। इन्होंने युवावस्थामें संन्यासआश्रम ग्रहण किया था; पर स्त्रीको अनुमतिके बिना इस आश्रमको ग्रहण किया था, इसलिए इनको पुनः गृहस्थाश्रम ग्रहण करना पड़ा था। संन्यासीके लिए पुनः गृहस्थी होना शास्त्रविरुद्ध है। इस कारण आलन्दीके ब्राह्मणोंने विट्ठलपन्थको समाजसे च्युत कर दिया। १२७२ ई०में विट्ठलपन्थके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रका नाम निवृत्ति रक्खा गया। इसके बाद १२७५ ई०में उनके और एक पुत्र पैदा हुआ। ये ज्ञानदेवके नामसे प्रसिद्ध हुए। तदनन्तर इनके एक पुत्र और फिर एक कन्या उत्पन्न हुई। पुत्रका नाम सोपान और कन्याका नाम मुक्ता रक्खा गया। वयोवृद्धिके अनुसार

रक्तके स्रोतमें गोराचन्द बहने लगे। इन्होंने सुन्दलको पान ला कर क्षतस्थानको बांध देनेके लिए कहा, किन्तु पान कहीं भी पाया न गया। तब गोराचन्द पानके अन्वेषणमें बालान्दा परगनेको गये। वहां वे घोड़ेसे गिर मृतवत् हो गये। इस समय गोराचन्दने सुन्दलको माताके पास जा कर यह संवाद देनेके लिए कहा। इस स्थान में कालुघोषको कपिला नामकी एक गाय थी, वह गाय गुप्तभावसे जङ्गलमें आ गोराचन्दको दूध दे जाती थी। वही दूध पीकर गोराचन्द जीवन धारण करते थे। ग्वाला कालुघोषने देखा कि कपिला गाय अब उसे दूध नहीं देती, इसका क्या कारण है? अन्तमें धीरे धीरे उसने कपिलाके इस रहस्यको जान लिया। कालु कपिलाको मारनेके लिए दौड़ा। यह देख गोराचन्द कालुको शाप देनेके लिये उद्यत हुए। तब कालुने उनका पैर पकड़ कहा "प्रभो। आज्ञा कीजिए, मैं और मेरे भाई मिल आपका सत्कार करें।" अन्तमें गोराचन्द कह गए थे "देखो। इस बालादामें कोई भी पानकी खेती न करे, जो पान उपजायगा, वह सवंश नाश होगा।" यह कहते हुए वे परलोकको सिधारे। कालुघोष और उसके भाईने गोराचन्दको गाड़ दिया तथा उनको कब्रके ऊपर वे प्रतिदिन प्रकाश दिया करते थे। थोड़े दिनके बाद उस स्थान पर एक मस्जिद निर्मित हुई।

बालान्दाके अन्तर्गत हाढोया नामक ग्राममें प्रतिवर्ष फाल्गुन मासको गोराचन्दके सम्मानार्थ एक बड़ा मेला लगा करता है, इसमें हजारों मनुष्य जुटते हैं। कालुघोषके वंशधर आज भी गोराचन्दकी कब्रके ऊपर फल और दूध उत्सर्ग करते हैं। तभीसे बालान्दामें कोई मनुष्य पानकी खेती नहीं करते हैं।*

गोराज (सं॰ पु॰) गवा राजा, ६ तत्, समानान्त टच्। श्रेष्ठवृष, साँढ़।

गोराटिका (सं॰ स्त्री॰) गां वाचं रटति रट ण्वुल्। शारिका पक्षी, मैना।

गोराटी (सं॰ स्त्री॰) गां वाचं रटति रट अण् ङीष्। शारिका पक्षी मैना।

* Ralph Smyth s Statistical and Geographical Report of the 24 Pergunnahs p. 83-84

गोराडू (देश॰) बालू मिश्रित मट्टी जिसमें कोदो बहुत उत्पन्न होता है। यह मट्टी गुजरातमें बहुत होती है।

गोरामूंग (हिं॰ पु॰) एक प्रकारको जङ्गली मूंग जो दुर्भिक्षके समय दीन मनुष्य खाते हैं।

गोरिका (सं॰ स्त्री॰) गोराटिका पृषोदरादित्वात् साधु। शारिका।

गोरिल्ला (अं॰ पु॰) अफ्रिकामें पाया जानेवाला एक तरहका वनमानुष। यह काले वर्णका होता एवं इसके कान छोटे और हाथ बहुत बड़े होते हैं। यह बहुत बलिष्ठ पशु है, इसको ऊंचाई प्रायः साढ़े पांच फुटकी होती है। यह वृक्ष पर झोपड़े बना कर रहता है। इसका प्रधान भोजन फल है। इसके शरीरकी बनावट मनुष्यसे बहुत कुछ मिलती जुलती है।

गोरिबिन्दूर—महिसुरमें कोलार जिलेके अन्तर्गत एक तालुक। इसका भूपरिमाण १५३ वर्गमील है। यहांकी जमीन उर्वरा होनेके कारण धान, हरिद्रा (हल्दी), नारियल, सुपारी और ईख यथेष्ट होती है।

२ उक्त तालुकका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ १३° २७ उ॰ और देशा॰ ७७° ३२ ५०´´ पू॰में पिनाकिनी नदीके बाएं तीर पर अवस्थित है। यह नगर बहुत प्राचीन है।

गोरी (हिं॰ स्त्री॰) सुन्दर और गौर वर्णकी स्त्री, रूपवती स्त्री।

गोरोसर (सं॰ पु॰) सालसा, उश्बा।

गोरुकल्लु—मन्द्राजमें कर्णूल जिलेका एक विध्वस्त प्राचीन नगर। यह नन्द्यालसे सात मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। यहां केशव तथा वीरभद्रके ध्वंसावशिष्ट अति प्राचीन मन्दिर हैं।

गोरुची (सं॰ स्त्री॰) गोरोचना देखो।

गोरुत (सं॰ क्ली॰) गवा रुतं, ६-तत। १ गोरव, गौका शब्द। गोरुतं श्रुतिगोचरत्वेनास्त्यस्य गोरुत अर्शादित्वादच्। २ दो कोस

गोरू (हिं॰ पु॰) १ सींगवाला पशु, गाय, बैल, भैंस प्रभृति मवेशी। २ दो कोसका मान।

गोरूप (सं॰ क्ली॰) गवां रूपं, ६-तत्। १ गौका रूप, गौकी आकृति। (पु॰) २ शिव, महादेव। (भारत १३।१७)

आया। वे श्राद्धका आयोजन करने लगे। उन्होंने पांच ब्राह्मणोंको निमन्त्रण दिया। कृष्णाजी समाज-च्युत हुए थे, इसलिए ब्राह्मणोंने उनका निमन्त्रण ग्रहण नहीं किया। इस पर कृष्णाजी अत्यन्त दुःखित हो कर श्राद्धका आयोजन बन्द करनेको उद्यत हुए। इस बातको जान कर ज्ञानदेवने उनको समझाया कि, "इस कार्यको स्थगित करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। मैं खुद पुरोहित का कार्य करूंगा और जिससे पाँच ब्राह्मण भोजन करें, इसकी व्यवस्था करूंगा।" ज्ञानदेवकी उम्र कम होने परभी कृष्णाजी उनको ज्ञानी और विवेचक समझते थे। उनके कहनेके मुआफिक कार्य जारी रहा। ज्ञानदेवने मन्त्रादिका पाठ किया। जिन पाँच ब्राह्मणोंने निमन्त्रण ग्रहण नहीं किया था, ज्ञानदेवने योगबलसे उनके पर-लोकगत पितृदेवोंको आह्वान किया। वे शरीर धारण पूर्वक उपस्थित हो कर अपने अपने आसन पर बैठ गये और मन्त्रोच्चारण करके भोजन करनेमें प्रवृत्त हुए। कृष्णाजीपन्थके पड़ोसियोंको यह मालूम होते ही कि, उनके घर ब्राह्मणभोजन हो रहा है उनमेंसे एक वास्त-विक बातका पता लगानेके लिए भीतर चला गया। उक्त ब्राह्मणोंको देख कर उसके छक्के छूट गये, उसने उनके पुत्रोंको बुला कर दिखाया। इतनेमें परलोकगत व्यक्तिगण अन्तर्धान हो गये। इस घटनासे सभी विस्मयान्वित हुए। ज्ञानदेवकी असाधारण क्षमताका परिचय चारों ओर व्याप्त हो गया और सब उनको नारायणके अवतार समझने लगे।

किसी समय कुम्भयोगके उपलक्षमें गोदावरीतीरस्थ पैठनमें अनेक लोगोंका समागम हुआ था। इस समय विट्ठल भी परिवार सहित वहां उपस्थित हुए। बहुतसे ब्राह्मण वहां इकट्ठे हुए थे। उन्होंने इनका परिचय पूछा। ज्ञानदेवका योगबल चारों ओर व्याप्त हो जाने-से ब्राह्मणगण उनसे सदालाप करने लगे। इतनेमें कोई व्यक्ति एक महिष ले कर वहां उपस्थित हुआ। महिषका नाम था "ज्ञाना"। उसने महिषको कहा कि "चल ज्ञाना" इस पर एक ब्राह्मण बोल उठे—विट्ठलके सज्जन पुत्रका नाम ज्ञान है, और इस महिषका नाम भी ज्ञान है। परन्तु दोनोंमें कितना अन्तर है। यह सुन कर ज्ञानदेवने कहा—"मुझमें और महिषमें कुछ भी अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनोंहीमें ब्रह्म विद्यमान है।" इस बातको सुन कर एक ब्राह्मण बोल उठे—"आप और यह महिष दोनों समान हैं? महिषको मारनेसे क्या आपको चोट पहुंचती है?" ज्ञानदेवने उत्तर दिया—"अवश्य हो उसको मारनेसे मुझे लगती है।" इस पर वह ब्राह्मण महिषको बड़े जोरसे बेंत मारने लगा, इधर ज्ञानदेवके शरीर पर बेंतके दाग दिखाई दिये और कहीं कहींसे खून निकलने लगा। यह देख कर उस ब्राह्मण-ने महिषको मारना बंद कर दिया, यात्रियोंको बड़ा आश्चर्य हुआ। परन्तु उनमेंसे एक आदमी बोल उठा—यह ज्ञानदेवका जादू है, योगका प्रभाव नहीं। यह सुन कर ज्ञानदेवने महिषको सम्बोधन करके कहा—"ज्ञाना तुम और हम सब समान हैं, इसलिए तुम इन ब्राह्मणोंको वेदवाक्य सुनाओ।" ज्ञानदेवके योगबलसे महिषदेहमें ज्ञानका प्रभाव सञ्चारित हुआ। महिष उसी समय वेद वाक्य उच्चारण करने लगा। इस घटनासे सब अवाक् हो गये। इसके बाद विट्ठलपन्थ अपने मामाके घर लौट आये, पैठनके ब्राह्मणोंको ज्ञानदेवकी अद्भुत शक्तिका परिचय मिल चुका था। उन्होंने एक बातमें विट्ठलको शुद्धि-पत्र दे दिया और अपने समाजमें मिला लिया। विट्ठलके आनन्दकी सीमा न रही। वे अपने तीनों पुत्रोंका उपनयन करानेके लिये आयोजन करने लगे। यह देख कर ज्ञानदेवने कहा—"संन्यासीके पुत्रोंको यज्ञोपवीत धारण करना उचित नहीं।" इस पर विट्ठलने आयोजन स्थगित कर दिया। कुछ दिन बाद वे परिवार सहित आलन्दी पहुंच गये। इसी समय विट्ठलके गुरुदेव रामानन्द-स्वामी तीर्थदर्शनके लिए काशीधामसे निकल कर आलन्दीमें उपस्थित हुए। स्वामीजीके दर्शन पाकर विट्ठल-पन्थको बड़ा आनन्द हुआ। पीछे वे गुरुदेवके आदेशा-नुसार सस्त्रीक बदरिकाश्रम चले गये। रामानन्दस्वामी ज्ञानदेवको सञ्जीवनीमन्त्रसे दीक्षित कर स्थानान्तरको चल दिये। निवृत्ति आदि कुछ दिन आलन्दीमें रह कर तीर्थदर्शनके लिए निकल पड़े। ये लोग पहले नेवास नामक स्थानमें पहुंचे और वहां कुछ दिन रहे। यहां ज्ञानदेवने दो अद्भुत कार्य सम्पन्न किये और भगवद्गीता-

दूसरे वर्ष सर डेविड अक्तरलोनोने हटिश गौरवको बचानेके लिये प्रवल प्रतापसे गोर्खों पर आक्रमण किया, किन्तु वे भी कुछ विशेष हानि पहुंचा न सके। १८१६ ई०में हटिश गवर्मेण्ट और नेपाल राजामें सन्धि हो गई, जिससे हटिश गवर्मेण्टने कौशलक्रमसे गोर्खोंके कई एक स्थान ले लिये।

सन्धिके अनुसार नेपालको राजधानी काठमाण्डूमें एक हटिश रेसिडेण्ट रहने लगा। १८४०-४१ ई०में सिख युद्धके समय नेपालके गोर्खा भी अंगरजके विरुद्ध अस्त्रधारण करनेके लिये प्रस्तुत थे, किन्तु हटिश रेसिडेण्ट सुविज्ञ ब्रायण हजसन साहबके कौशलसे कोई घटना न होने पायी थी। १८३३ ई०में हजसन् साहबने गोर्खा सैन्यके युद्धनिपुणताका परिचय देते हुए हटिश गवर्नमेण्टको एक पत्र लिखा तथा नेपालसे गोर्खा-सैन्य संग्रह कर हटिश सैन्यमें नियुक्त करनेका अनुरोध किया था। हटिश गवर्मेण्टने आदरपूर्वक इनके प्रस्तावको समर्थन किया। गोर्खा भारतवासियोंको "मधेशिया" समझ कर घृणा करते हैं। पहले वे हटिशके अधीन नौकरी करना नहीं चाहते थे, परन्तु जो गोर्खा सैन्य नेपालराज-सरकारमें नियुक्त नहीं थे, वे ही हजसन साहबके बहकानेसे हटिश राज्य आनेमें स्वीकृत हुए थे। धीरे धीरे इसी तरह प्रायः तीस हजार सैन्य हटिश सेनामें भर्त्ती हुए। उस समय चतुर नेपाल राजाने छेड़ छाड़ की थी कि हटिश गवर्मेण्ट नेपालसे किसीको भी ले जा नहीं सकती क्योंकि ऐसा होने पर नेपालराजका बल ह्रास होनेको सम्भावना है। तभीसे हटिश सरकार नेपालसे यथार्थ गोर्खा सेना संग्रह नहीं कर सकी, हटिश अधिकारभुक्त नेपालकी तराईमें जो गोर्खा वास करते हैं, उन्हींमेंसे उपयुक्त मनुष्य ले कर हटिश गवर्नमेण्टके गोर्खासैन्य-दल संगठित हुआ है। गोर्खा सैन्य अत्यन्त प्रभुभक्त, सत्यवादी और साहसी हैं। हटिश सरकार गोर्खा सेनासे जितना उपकार पाती वह अकथनीय है। जङ्ग बहादुरने गोर्खा सैन्यकी सहायतासे सिपाही विद्रोहके समय हटिश राजत्वको रक्षा की थी। नेपाल राजाके अधीन भी प्रायः लाखसे अधिक गोर्खा सैन्य हैं।

गोर्छा—जातिविशेष। यह युक्तप्रदेशके खेरी जिलेमें रहते हैं। संख्या ८६३ से अधिक नहीं। कहते हैं, पहले वह कल्हण क्षत्रिय थे, गोरखपुरसे खेरीमें जा करके रहने पर गोरखिया कहलाये। फिर गोरखिया शब्द बिगड़ करके गोर्छा बन गया। यह अपनेको चित्तोरसे आया हुआ बतलाते हैं। पहले छह भाई थे। जब किसी शत्रुने उन पर आक्रमण किया, सिर्फ दो भाई जा करके लड़े—चार भयभीत हो छिप करके बैठ रहे। विजयी होने पर दोनों वीर भाइयोंने अपने चार भीरु भ्राताओंको निकाल बाहर किया और उनसे अपना सब सम्बन्ध तोड़ लिया। इनकी वंशावली भी थी परन्तु जङ्गल गोर्छाकी संरक्षतामें आगसे जल करके भस्मीभूत हुई।

इनमें गोत्रको बहुत कम बतला सकते हैं। विधवायें प्रायः अपने पतिके किसी सम्बन्धीको ले करके रहती है। यह आस्तिक हिन्दू हैं। किसी अपने लोगोंके दूसरोंके हाथकी कच्ची या पक्की रसोई नहीं खाते। कहते हैं, कभी वह जमींन्दार थे। आजकल गोर्छा किसानी और मजदूरी करते हैं।

गोर्द (क्लो०) गुर ददन् नियातने साधु। शब्द॰ग्र॰। उप ३।९८। १ मस्तिष्क, मग्ज, मस्तिकस्थ घृत, मग्जका घी।

गोलंबर (हिं० पु०) १ गुंबद, गुंबज। २ गोलाई। ३ उद्यानमें बना हुआ गोल चबूतरा। ४ कालिब।

गोल (सं० पु०) गुड अच् डस्य लः। १ वर्त्तुलाकार पदार्थ, जिसका घेरा हत्ताकार हो, चक्रके आकारका हो। २ मदनहत्त, मैन फलका पेड़। ३ विधवाका जारज पुत्र। ४ मुर नामकी औषध। ५ भास्कराचार्यका बना हुआ गोलाध्याय नामक ग्रन्थ। ६ हत्त, चेत्रविशेष। (क्लो०) ७ मण्डल, गोलाकार पिंड, वटक। ८ ग्रहयोग विशेष। प्रश्नकौमुदीके मतसे एक राशिमें छह ग्रहके रहनेसे गोलयोग हुआ करता है। ऐसे योगमें देवराज इन्द्र भी नाश हो सकते। मनुष्यगण राक्षस प्रकृतिके हो जाते, माता पुत्रके प्रति दया माया परित्याग करती, समस्त राजाओंका विनाश होता, वसुधामण्डल भीषण अनलमें ज्वलित हो जाता और नद नदी तड़ाग जलाशय सबके सब शुष्क पड़ जाते हैं। मयूरचित्रकके मतसे सात ग्रहोंके एक राशिमें आ जानेसे गोलयोग होता है। ऐसी

वहां विमलानन्दस्वामी नामके एक संन्यासी रहते थे। साधारण लोग उनकी भक्ति करते थे, किन्तु ज्ञान देवकी असाधारण प्रतिभाने उनको हीनप्रभ कर दिया। उनसे यह सहा नहीं गया, वे ज्ञानदेव जिससे लोगोंकी दृष्टिमें हेय समझे जांय, ऐसा प्रयत्न करने लगे। उन्होंने ज्ञानदेवको निन्दा करनी शुरू कर दी, पर उसका कुछ भी असर न पड़ा ; ज्ञानदेवने लोगोंके हृदयमें वह स्थान पाया था, जो कभी छूट नहीं सकता। एकदिन किसी व्यक्तिने ज्ञानदेवको निन्दा सुन कर कहा—"स्वामीजी! ज्ञानदेव देवतुल्य व्यक्ति हैं, उनको निन्दा करना आपको उचित नहीं। ज्ञानदेव जैसे धार्मिक हैं, वैसे हो विद्वान् हैं। उनकी शास्त्रव्याख्या सुन सकते हैं।" यह सुन कर विमलानन्दस्वामी ज्ञानदेवके निकट गये। उस समय ज्ञानदेव भगवद्गीताकी व्याख्या कर रहे थे और असंख्य लोग उनके चारों तरफ बैठ कर उसे सुन रहे थे। स्वामीजी व्याख्याको सुन कर पुलकित हुए। ज्ञान देवके प्रति उनका जो विद्वेषभाव था, वह दूर हो गया। व्याख्या समाप्त होने पर स्वामीजीने ज्ञानदेवसे साक्षात् किया और कुछ देर तक सदालाप करके फिर उससे विदा ग्रहण की।

कुछ दिन बाद ज्ञानदेव अपने दोनों भाई और बहन मुक्ताबाईके साथ तीर्थदर्शनके लिए निकले। इन लोगोंकी इच्छा थी कि, एक परमभक्त और सुगायकको साथ लेते चलें। नामदेव एक उत्तम अभङ्गरचयिता और सङ्गीतविद्यामें पारदर्शी थे। ज्ञानदेवके कहनेसे उन्हें ही साथ ले चलनेका निश्चय हुआ। नामदेव पण्ढरपुरमें रह कर विठोवादेवके* मन्दिरमें भजन और कीर्तन किया करते थे। ज्ञानदेव आदिने पण्ढरपुर जा कर नामदेवसे साक्षात् किया और उनसे अपना अभिप्राय प्रकट किया। नामदेवने पहले इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं किया था, किन्तु पीछे विठोवादेवका आदेश पा कर उन्होंने इन पर अपनी सम्मति दी थी, ऐसा कहा जाता है। इन लोगोंने तीन दिन पण्ढरपुर रह कर चौथे दिन नामदेवके साथ यात्रा की। ये नाना स्थानोंको अतिक्रम करते हुए प्रयाग और काशीधाममें उपस्थित हुए। यहाँ रामनन्दस्वामी और साधु कवीरसे इन लोगोंने विशेष सम्मान पाया। यहांसे ये गया दर्शन करनेको गये और वहांसे फिर काशी लौटे। यहाँ भजन और कीर्तनमें तथा संन्यासी और पण्डितोंके साथ सदालाप करनेसे कुछ दिन परम आनन्दसे बीत गये। काशीका प्रत्येक मनुष्य इसको पा कर यत्परोनास्ति आनन्दित हुआ था। काशीसे चल कर इन्होंने अयोध्या, गोकुल, वृन्दावन, द्वारका और जूनागढ़के दर्शन किये। उसके उपरान्त तैलङ्ग प्रदेशके नाना स्थान दर्शन कर ये पण्ढरपुर लौटे। यहां भी कुछ दिन रहे। भजन और कीर्तनमें इनका समय बीतने लगा। इनके भक्तिभावको देख कर बहुतसे लोग भगवद्भक्त हो गये।

पीछे ज्ञानदेव आदि आलन्दी आये। ज्ञानदेवने तीर्थदर्शनके उपलक्षमें बहुतोंका उपकार किया था। ये और इनके साथी जहां कहीं रहते थे, वहीं भजन, कीर्तन और उपदेश दे कर लोगोंको सत्पथमें लाते थे। कहीं कहीं इन लोगोंने बहुतसी अद्भुत घटनाएं भी कर डाली थीं। भाषा सीखना ज्ञानदेवका एक विशेष कार्य था। ये जिस प्रदेशमें ज्यादा दिन रहते, उसी प्रदेशकी भाषा सीख लिया करते थे। इस प्रकारसे इन्होंने बहुतसी भाषाएं सीख ली थीं, जिसमें तेलगू, कनाड़ी और हिन्दी भाषामें इनकी विलक्षण व्युत्पत्ति थी। इन तीन भाषाओंमें इन्होंने तीर्थ-दर्शन-सम्बन्धी बहुतसे अभङ्ग बनाये थे।

अनेक तीर्थोंकी यात्रा करके ज्ञानदेवने यथेष्ट अभिज्ञता प्राप्त की थी। स्वाभाविक सौन्दर्यको देख कर इनका मन ईश्वरकी ओर दौड़ता था। भिन्न भिन्न प्रदेशीय लोगोंके आचार-व्यवहारको देख कर इनका अन्तःकरण उदार भावोंसे भर गया था। ईश्वरका गुणकीर्तन और लोगोंका हित करनाही जीवनका वास्तविक उद्देश्य है, इस बातको ये भली भांति समझते थे। इस उद्देश्य साधनके लिए ये दृढ़व्रती हुए। दिनमें ये साधारणको उपदेश देते और रात्रिको भजन और कीर्तन करते थे। ज्ञानदेवके ग्रन्थोंको पढ़ कर तथा उनकी शास्त्रव्याख्या

* दाक्षिणात्यमें श्रीकृष्णको विठोवा देव कहते हैं।

विषुवत् वृत्तके दक्षिण भाग आधारवृत्तमें बाध दें। इन्हें तुलान्त वृश्चिकान्त और धनुरन्त वृत्त कहते हैं। इसी नियमसे मकर, कुम्भ, और मीन राशिकी ओर तीन कक्षा बना कर तुला, वृश्चिक और धनुरन्त वृत्तके विपरीत भावसे बद्ध करना चाहिए।

अश्विनी प्रभृति सत्ताइस नक्षत्रबिम्बके सत्ताइस कक्षा बना कर गणितशास्त्रमें दक्षिण और उत्तर गोलके जिन जिन स्थानोंमें जिस जिस नक्षत्रका अवस्थान निर्णीत है, उसी नक्षत्रबिम्बकी कक्षा उसी स्थानमें आधारवृत्तसे बद्ध करें। इसके अलावे अभिजित्, सप्तर्षि, अगस्त्य, ब्रह्म, लुब्धक और अपांवत्सादि नक्षत्रबिम्बकी कक्षा भी नियत स्थान पर खींचो हुई रहे। विषुवत् कक्षाको सब कक्षाके सदृश मध्यमें रख दूसरा वृत्त या कक्षा बनाना होता है

विषुवद्वृत्त ऊर्ध्व और अधस्तन आधार वृत्तमें दो जगह संलग्न होता है। उन दोनों सम्पातोंके ऊर्ध्व-सम्पातसे दक्षिणको ओर चौबीस अंशोंको दूरी पर आधार वृत्तके जिस स्थान पर मकरादिका अहोरात्रवृत्त लग्न होता है, उसे उत्तरायण सन्धिस्थान तथा अधस्तन सम्पातसे उत्तर चौबीस अंशकी दूरी पर आधार वृत्तके जिस स्थान पर कर्कटादि अहोरात्रवृत्त लग्न होता, उसे दक्षिणायन सन्धिस्थान कहा करते हैं। इस प्रकार अयन और विषुवत्वृत्त स्थिर कर उसके बीचमें मेषादि स्थान स्थिर करें। ऐसा हो जानेसे एक तरहका गोलयन्त्र तैयार हो जाता है

वृक्ष रहित बड़े मैदानमें खड़ा रह कर चारों ओर देखनेसे ऐसा मालूम पड़ता है कि आकाश एक बड़ा कटाह (कड़ाई) के जैसा पृथ्वीकी चारों ओर समान भावमें संलग्न हो कर हमलोगोंको दृष्टिका परिच्छेद कर रहा हो। जिस स्थानमें आकाश संलग्न हुआ है उस स्थान पर गोलाकार एक वृत्त कल्पना करनेसे वह क्षितिजवृत्त कहलायगा। (भूगोल देखो।) भूगोलका क्षितिज वृत्तके जैसा दृष्टान्त गोलमें भी एक स्थिर वृत्त बनाना पड़ता है, उसे दृष्टान्त गोलका क्षितिवृत्त कहते हैं। इसी तरह गोलयन्त्र बना कर उसको स्वयवह अर्थात् मनुष्यको सहायताके बिना नाक्षत्रिक साठ दण्डमें इस पश्चिमको ओरसे जिसमें एक बार घूम जाय, इसी तरह रखना चाहिए।

गोलका समस्त अवयवको वस्त्रसे ढाक उस वस्त्रके ऊपर पूर्वप्रदर्शितवृत्त अङ्कित करे, किन्तु पहले जिस क्षितिजवृत्तकी बात लिखी गई है, उसको बाहरमें रखे, उसको वस्त्रसे ढाक न दे। गोलके ऊपर क्षितिजवृत्तको इस तरह रखे कि वह सर्वदा स्थिर रहे। इसीका दूसरा नाम लोकालोक है।

प्राचीन आर्यशास्त्रकारोंका विश्वास था कि सब विषय पुस्तकोंमें लिखे रहनेसे गुरुका गौरव जाता रहेगा। क्योंकि सब कोई ग्रन्थ देख अभ्यास कर लेंगे, कोई भी गुरुके उपदेश ग्रहण करनेकी चेष्टा न करेगा। इसीलिये उन्होंने कठिन विषयोंको ग्रन्थमें नहीं लिखा है, वे इन्हें छिपा गये हैं। सूर्यसिद्धान्तमें किस तरह गोलक स्वयंवह किया जाता, उसके अस्पष्ट विवरणके बाद लिखा है—

"गोप्यमेतत् प्रकाशोक्तं सर्वगम्यं भवेदिह।
तस्माद् गुरूपदेशेन रचयेद् गोलमुत्तमम्॥"

(सूर्यसि॰ ज्योतिषो॰ १० श्लोक)

गोलको किस तरह स्वयंवह किया जाता है यह विषय गोपनीय है, इसी कारण यहां पर साफ साफ लिखा नहीं गया। स्पष्ट रूपसे लिख देने पर सब कोई जान जावेंगे और इसका गौरव नहीं रहेगा। इसलिये किस तरह गोल स्वयंवह किया जाता है, यह गुरुमुखसे सुनकर गोल प्रस्तुत कर लेवें।

भारतवासी प्राचीन आर्योंके ऐसे संस्कारसे ही भारतका शास्त्रगौरव धीरे-धीरे लुप्त हो गया है। उन्नतिकी चरम सीमा गणित शास्त्रके फललाभसे भारत-सन्तान वञ्चित हो गई है। यथार्थमें जिसका कारणसे हो गोल किस तरह स्वयंवह किया जा सकता, उसका स्पष्ट उपाय किसी प्राचीन शास्त्रमें साफ तौरसे लिखा नहीं है। सूर्यसिद्धान्तके अस्पष्ट वचनोंको ले टीकाकार रङ्गनाथने जिस तरह स्थिर किया है, वही इस स्थान पर लिखा हुआ है।

स्वयंवह करनेका उपाय—गोलयन्त्रको वस्त्राच्छन्न कर उसके आधारदण्डके दोनों प्रान्त दक्षिण और उत्तर-

राम" "तुकाराम ज्ञानोबा" ये शब्द मन्त्रको भाँति उच्चरण करते हैं। तुकाराम देखो।

२ गायत्र्यर्थरहस्यके रचयिता। ३ वैद्यजीवन-टोकाके कर्त्ता, इनका दूसरा नाम दामोदर था।

४ शूद्र जातीय एक धार्मिक वणिक्। ये शूद्र हो कर वेदका पाठ करते थे इसलिए ग्रामके ब्राह्मणोंने रुष्ट हो कर इनको छेक दिया था। इस पर इन्होंने धर्मशास्त्रके शास्त्रार्थमें उनको परास्त कर दिया था।

ज्ञाननिष्ठ (सं० त्रि०) ज्ञाने निष्ठा यस्य, बहुव्री०। ज्ञानसाधनयुक्त, तत्त्व जाननेवाला।

ज्ञानपति (सं० पु०) ज्ञानस्य पतिः, ६-तत्। १ ज्ञानोपदेशकगुरु। २ परमेश्वर।

ज्ञानपावन (सं० क्ली०) ज्ञानवत् पावनं, उपमित-कर्मधा०। तीर्थभेद। ज्ञानपावनतीर्थ अत्यन्त पुण्यजनक है। इस ज्ञानपावनतीर्थमें स्नानदानादि करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है।

"ततो गच्छेत राजेन्द्र! ज्ञानपावनमुत्तमम्।
अग्निष्टोममवाप्नोति मुनिलोकञ्च गच्छति।" (भा० वन०४८अ०)

ज्ञानप्रभ—एक बौद्ध तथागत। विशिषचैली नामक राजाने इनसे कामसंवर अर्थात् शरीरसंयमन-विद्याको शिक्षा पाई थी।

ज्ञानभास्कर (सं० पु०) ज्ञानमेव भास्करः, रूपक-कर्मधा०। १ ज्ञानरूपसूर्य। २ भास्कराचार्य-प्रणीत ज्योतिषग्रन्थ। ३ षड्वर्गफल नामक ज्योतिषग्रन्थके प्रणेता।

ज्ञानभूषण—एक दिगम्बर जैनग्रन्थकार। इनकी भट्टारक उपाधि थी। ये वि० सं० १५७५में विद्यमान थे। इन्होंने तत्त्वज्ञानतरङ्गिणी, पञ्चास्तिकाय-टीका, नेमिनिर्वाणकाव्य-पञ्जिकाटीका, दशलक्षणोद्यापन, परमार्थोपदेश, भक्तामरोद्यापन आदि ग्रन्थोंकी रचना की है।

ज्ञानमद (सं० पु०) ज्ञानका अभिमान, ज्ञानी होनेका घमण्ड।

ज्ञानमय (सं० पु०) ज्ञानस्वरूपः ज्ञान-मयट्। परमेश्वर।
"निर्व्वाणमय एवायमात्मा ज्ञानमयोऽमलः।" (सा०द० भाष्य)

ज्ञानमुद्रा (सं० स्त्री०) ज्ञानं नाम मुद्रा। तन्त्रसारोक्त रामपूजाङ्ग मुद्राभेद, तंत्रसारके अनुसार रामकी पूजाकी एक मुद्रा। इसमें दाहिने हाथकी तर्जनी और अंगूठेको मिला कर पहले हृदयमें रखते हैं, पीछे बायें हाथको अँगलियोंको कमल सम्पुटके आकारकी करके उसे सिरसे ले कर बाएँ जंघे तक रखा करते हैं, इसीको ज्ञानमुद्रा कहते हैं। यह ज्ञानमुद्रा रामको अत्यन्त प्रिय है। "तर्ज्जन्यंगुष्ठकौ सक्तावग्रतो विन्यसेत् हृदि।
वामहस्ताम्बुजं वामजानुमूर्द्धनि विन्यसेत्॥
ज्ञानमुद्रा भवेदेषा रामचन्द्रस्य प्रेयसी।" (तन्त्रसा०)

ज्ञानयज्ञ (सं० पु०) ज्ञानं यज्ञ इव यस्य, बहुव्री०। तत्त्वज्ञ, ब्रह्मज्ञान। कर्मयोगोमें अग्निसे यज्ञ किया करते हैं, किन्तु ज्ञानयोगी ब्रह्मरूप अग्निमें अपनी आत्माको ही यज्ञ करते हैं, अर्थात् ब्रह्मको अभेद जान कर तत्स्वरूप अवलोकन करते हैं। "सोऽहं ब्रह्म" मैं ही ब्रह्म हूं, सर्वदा यही देखते हैं। "ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति।" कर्मयोगी इसका अनुष्ठान भी नहीं करते हैं वरं इसको घृणादृष्टिसे देखा करते हैं।
"महापापवतां नृणां ज्ञानयज्ञो न रोचते।" (शब्दार्थचि०)

ज्ञानयोग (सं० पु०) युज्यते ब्रह्मणानेन युज-कर्मणि घञ्, ज्ञानमेव योगः, रूपक-कर्मधा०। ब्रह्मप्राप्तिके लिए ज्ञानरूप निष्ठाविशेष, ब्रह्मप्राप्तिका उपाय। ज्ञानयोग ही एकमात्र भगवत्प्राप्तिका द्वार है। जीव प्रतिनियत अज्ञानताके कारण प्रकृतिको मायाके वशीभूत हो कर निरन्तर दुःखमें डूबे रहते हैं। जीव दुःखाभिभूत हो कर जब दुःखनिवृत्तिका उपाय जाननेको इच्छुक होंगे, तब पहले वस्तुतत्त्व जाननेके साथ साथ कौन कौनसी वस्तुएं दुःखमय हैं, यह सहजमें ही समझ लेंगे। फिर सुख-दुःख आदि जिसके धर्म हैं, उससे मिलनेकी इच्छा न होगी; अपने आप यथार्थ तत्त्वोंका ज्ञान हो जायगा। पीछे ज्ञानयोगके द्वारा अभीष्ट वस्तु आसानीसे प्राप्त कर सकेंगे।

संसारमें भगवत्प्राप्तिके दो उपाय हैं—एक ज्ञानयोग और दूसरा कर्मयोग। सांख्यमतावलम्बिगण ज्ञानयोग अवलम्बन कर मुक्ति पाते हैं और दूसरे कर्मयोग द्वारा मुक्त होते हैं। परन्तु कर्मयोगके विना ज्ञानयोग हो नहीं सकता। कर्म करते करते चित्तकी शुद्धि होती है, बादमें निर्मलचित्तमें विशुद्ध ज्ञान उत्पन्न होता है। विशुद्ध ज्ञान उत्पन्न होने पर ज्ञानयोगके द्वारा अनायास मुक्ति हो सकती है। योग देखो।

नाड़ी-वृत्तके बराबर एक दूसरा वृत्त खींच कर उसमें मेषादि द्वादश राशि अङ्कित करें अर्थात् बराबर बराबर बारह भागोंमें विभक्त करके चिह्नित करें। इसके नाम क्रान्तिवृत्त है। सूर्य इसी वृत्तमें भ्रमण करते हैं। रविसे आधी छायाके अन्तर पर पृथ्वीकी छाया है। इस वृत्तमें क्रान्तिपात मेषादिका विलोम क्रमसे घूमता है। ग्रहोंका विक्षेप पात भी इसीमें भ्रमण करता है इस वृत्तमें क्रान्तिपातादि स्थान अङ्कित करना चाहिए।

इस वृत्तमें एक क्रान्तिपात चिह्न कर उससे ६ नक्षत्र-की दूरी पर एक दूसरा चिह्न करें। यह चिह्न दो नाड़ी-वृत्तके साथ योग कर पातचिह्नके आगे तीन नक्षत्रके अन्तर पर नाड़ीवृत्तसे २४ अंश उत्तरमें तथा दूसरे विभागमें तीन नक्षत्रके अन्तर पर २४ अंश दूर रहे। इसी तरह बांधना चाहिए। क्रान्तिवृत्तके जैसा एक दूसरा वृत्त खींच कर उसमें राशि अङ्क और मेषादिका क्षेपपातस्थान चिह्नित करें, इसका नाम विमण्डल है। क्रान्तिवृत्त और विमण्डलके दोनों क्षेपपातमें सम्पात कर उससे ६ नक्षत्रकी दूरी पर एक सम्पात करें। क्षेपपातके आगेसे तीन नक्षत्रके अन्तर पर क्रान्तिवृत्तके उत्तरस्फुट क्षेपभाग जितना होगा, उतनी ही दूरी पर तथा उसके पश्चाद् भागसे तीन नक्षत्रके अन्तर पर क्रान्तिका उतना ही भाग दक्षिणमें स्थिर कर विमण्डलको स्थापन करना चाहिये। इसी तरह चन्द्रादि ग्रहोंके छह विमण्डल करने होते हैं। चन्द्रप्रभृति ग्रहगण विमण्डलमें भ्रमण करते हैं।

क्रान्तिवृत्तके स्फुटग्रहस्थानके नाड़ीवृत्तसे वक्र-रूपमें जितना अन्तर होता है, उसीको क्रान्ति कहते हैं। विमण्डलके ग्रहस्थानसे क्रान्तिवृत्तसे तिर्यक् रूपमें जितना अन्तर होगा, उसे विक्षेप और विमण्डलके ग्रह-स्थानसे नाड़ीवृत्तके तिर्यक् अन्तरको स्फुटक्रान्ति कहते हैं।

विषुवद्वृत्त और क्रान्तिवृत्तके सम्पातको क्रान्तिपात कहते हैं। यह क्रान्तिपात एक स्थानमें स्थिर नहीं रहता, धीरे धीरे पीछेकी ओर हट जाता है, अर्थात् मेषादिके पृष्ठभागमें विषुवद्वृत्त और क्रान्तिवृत्त आपसमें मिल जाता है उसीका नाम क्रान्तिपात है।

इस क्रान्तिको स्थिर कर ग्रहका स्फुट करना होता है। क्रान्तिवृत्त और विमण्डलके सम्पातको क्षेपपात कहते हैं। ग्रहसाधन करनेमें इसकी भी आवश्यकता होती है।

भूगोलके मध्य ग्रहगोल बांधना पड़ता है। पूर्व नियमके अनुसार ग्रहगोलमें भी विषुवद्वृत्त और क्रान्ति-वृत्त बांध दें। क्रान्तिवृत्तको कक्षामण्डल मान कर छेद्यकोक्त विधिके अनुसार प्रतिमण्डल बांधना होता है। प्रतिमण्डलमें गणितके अनुसार मेषादिका पातस्थान करें। एक दूसरा राशि अङ्क और क्रान्तिपातचिह्न अङ्कित करना चाहिए। इसको विमण्डल कहा जा सकता है। प्रतिमण्डल और विमण्डलके पातचिह्नमें एक सम्पात कर उसके आधेके अन्तर पर एक दूसरा सम्पात करें। पातके अगले और पिछले भागसे तीन नक्षत्र अन्तर पर प्रतिम-ण्डलके दक्षिण और उत्तरमें जितना अंश विक्षेप होगा, उतने अंशकी दूरी पर विमण्डल स्थापन करें। इस मण्डलमें मन्दस्फुट गतिके ग्रह भ्रमण करते हैं। मेषादि-के अनुलोमसे मन्दस्फुट चिह्न करना पड़ता है। प्रति-मण्डलसे जितने दूर पर मन्दस्फुट हो, उस स्थान पर उतना ही विक्षेप हुआ करता है। ग्रह वृत्तके सम्पातस्थ होने पर विक्षेपका अभाव होता तथा तीन नक्षत्र दूरमें रहनेसे सर्वाधिक विक्षेप होता है। मध्यस्थित कालमें अनुपात अनुसार विक्षेप स्थिर करना चाहिए।

नाड़ीवृत्तके उत्तर और दक्षिणमें इष्ट क्रान्ति जितनी होगी, उतनी ही दूरमें अहोरात्रवृत्त बन्धन करना है। इसको साठ बराबर बराबर भागोंमें विभक्त करें। इस मण्डलमें सूर्यकी दैनिक गति हुआ करती है।

भूगोलके जैसा ग्रहगोल भी ध्रुवदण्डसे बांधना पड़ता है, भूगोलके अधमण्डलके नीचे सूत बांधकर ग्रहकक्षाको उससे निबद्ध करें; इस प्रकार भूगोलको दण्डमें मजबूतीसे बांध कर दण्डकी दोनों ओर बंधी हुई दोनों नलियोंमें खगोल और ग्रहगोल रख भूगोलका भ्रमण अवलोकन करें। विशेष विवरण खगोल और भूगोल शब्दमें लिखा गया है।

गोल—दाक्षिणात्यमें विजापुर जिलेके रहनेवाले ग्वालोंकी जाति। कहीं कहीं इन्हें गोल्ल या गोल्लेर कहा करते हैं। इनमें आडवि, हनम्, कृष्णा, पाकनाक और शास्त्र प्रभृति

देवने प्रसन्न हो कर उस रुद्ररूपी ईशानसे कहा- 'हे सुव्रत ईशान ! तुम्हारे इस कार्यसे हमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई है, तुमसे पहले ऐसा उत्तम कार्य और किसीने भी न किया था। अब तुम वर मांगो, आज तुम्हारे लिए कुछ भी अदेय नहीं है।" ईशानने कहा—"भगवन्! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हो हुए हैं, तो यह वर दीजिये कि, जिससे यह अनुपम तीर्थ आपके नामसे प्रसिद्ध हो" यह सुन कर भगवान् विश्वेश्वरने कहा—"त्रिभुवनमें जितने भी तीर्थ हैं, उन सबमें यह ही परम शिवतीर्थ होगा। जो शिव शब्दके अर्थ पर विचार करते हैं, वे ही शिव शब्दका अर्थ ज्ञान बतलाते हैं। वह ज्ञान ही मेरी महिमासे इस स्थान पर जलरूपमें द्रवीभूत हुआ है, इसलिए मेरा यह तीर्थ ज्ञानवापीके नामसे प्रसिद्ध होगा। इसको स्पर्श करनेसे ही सम्पूर्ण पाप दूर हो जाते हैं। ज्ञानोदकतीर्थके स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है और इसके जलमें आचमन करनेसे अश्वमेध तथा राजसूय यज्ञका फल होता है। फल्गुतीर्थमें स्नान करके पितृलोकका तर्पण करनेसे जो फल होता है, इस ज्ञानतीर्थमें श्राद्ध करनेसे भी वही फल होता है। वृहस्पतिवारको पुष्यानक्षत्रयुक्त शुक्लाष्टमीमें यदि व्यतिपात योग हो तो उस दिन इस तीर्थमें श्राद्ध करनेसे उसका गयाश्राद्धकी अपेक्षा कोटिगुना फल होता है। पुष्कर तीर्थमें पितृपुरुषोंका तर्पण करके जो पुण्य प्राप्त होता है, इस तीर्थमें तिलतर्पण करने पर उससे करोड़ गुने अधिक फलको प्राप्ति होती है। काशी देखो।

ज्ञानविजय यति—मह्नमलयाचरित्र नामक ग्रन्थके प्रणेता।

ज्ञानविमलगणि—भानुमरुके शिष्यका नाम। इन्होंने १६५४ संवत्‌में शब्दप्रभेदप्रकाशटीकाकी रचना की है।

ज्ञानवृद्ध (सं० त्रि०) ज्ञानमें श्रेष्ठ, जिसकी जानकारी अधिक हो।

ज्ञानशास्त्र (सं० क्ली०) ज्ञानप्रदायकं शास्त्रं, कर्मधा०। मुक्तिशास्त्र।

ज्ञानसागर—१ श्वेतांबर-जैनसम्प्रदाय तपागच्छ भुक्त देवसुन्दरके पांच शिष्योंमेंसे एक। इन्होंने आवश्यक, अवनियुक्ति, श्रीमुनिसुव्रतस्तव, घनौघनवखण्डपार्श्वनाथस्तव आदि पुस्तकोंको अवचूर्णि लिखी है।

२ रत्नसिंहके शिष्य और लब्धिसागरके गुरु।

३ परमहंसपद्धतिके रचयिता।

ज्ञानसागर ब्रह्मचारी—षोडशकारणोद्यापन और त्रैलोक्यसागरपूजाके रचयिता एक जैन-ब्रह्मचारी।

ज्ञानसाधन (सं० क्ली०) ज्ञानस्य साधनं, ६ तत्। १ इन्द्रिय। २ तत्त्वज्ञानसाधन, श्रवण, मनन, निदिध्यासन आदि श्रवण मननादि ज्ञान द्वारा साधित होते हैं, इसीको ज्ञानसाधन कहते हैं।

ज्ञानसिन्धुयोगीन्द्र—विष्णुसहस्रनामभाष्यटीकाके प्रणेता।

ज्ञानहत (सं० त्रि०) ज्ञानं हतं यस्य, बहुव्री०। अज्ञान-जिसका ज्ञान भ्रष्ट हो गया हो।

ज्ञानाकर (सं० पु०) ज्ञानस्य आकरः, ६ तत्। ज्ञानका आकर, बुद्ध।

ज्ञानानन्द (सं० पु०) ज्ञानमेव आनन्दः, रूपककर्मधा०। ज्ञानरूप आनन्द। मुक्तपुरुष सर्वदा ही ज्ञानानन्द भोगते हैं। वे सर्वदा ज्ञानरूपमें स्थित रहते हैं।

ज्ञानानन्द—१ शिवगीताटीकाके प्रणेता और अप्याजो भट्टके गुरु। २ सिद्धान्तमुक्तावलीके रचयिता और प्रकाशानन्दके गुरु।

३ एक श्वेताम्बर जैन साधु। संवत् ११६६में ये विद्यमान थे। इन्होंने ज्ञानविलास, और समयतरङ्ग नामक दो हिन्दी पद्य-ग्रन्थ रचे थे। कहते हैं—ये अपने आपमें लीन रहते थे और लोगोंसे बहुत कम संबन्ध रखते थे।

४ ईशावास्योपनिषट्टीका, कौलार्णव, छान्दोग्योपनिषच्चन्द्रिका, जाबालोपनिषट्टीका, तत्त्वचन्द्रटीका, तत्त्वार्णवटीका, योगसूत्रटीका, रुद्रविधानपद्धति, वाक्यसुधाटीका, सिद्धान्तसुन्दर, सौभाग्योपनिषट्टीका इत्यादि ग्रन्थोंके रचयिता।

ज्ञानानन्द कलाधरसेन—अमरुशतकटीकाके प्रणेता।

ज्ञानानन्दनाथ—राजमातङ्गीपद्धतिके प्रणेता।

ज्ञानानन्द ब्रह्मचारी—एक त्यागी पुरुष और जैन-कवि। इनका जन्म मेरठ जिलेके अन्तर्गत सलावा ग्राममें सं० १९४४ के वैशाख मासमें हुआ था। इनके गुरुका नाम था गोपालदास वरैया और पिताका देवीसहाय। १४ वर्ष

दाक्षिणात्यके उच्च श्रेणीके ब्राह्मण इन्हें शूद्र समझते हैं। इनका आहार, व्यवहार और साजसज्जा देशस्थ ब्राह्मण ब्राह्मणोंके जैसा है। देशस्थ ब्राह्मण देखो।

दूसरे ब्राह्मणोंके जैसे ये भी उपनयनादि संस्कारके अधिकारी हैं, किन्तु किसी स्थानमें ब्राह्मण इन्हें वेदपाठ करने नहीं देते।

गोलकमल (हिं० पु०) चाँदीके पत्तर परकी नक्काशी ठीक करनेको एक तरहकी छेनी।

गोलकली (हिं० स्त्री०) दक्षिण और मध्यभारतमें होनेवाला एक तरहका अंगूर।

गोलकुण्डा—(गोलगोण्डा) मन्द्राजमें विशाखपत्तन जिलेके अन्तर्गत गवर्मेण्टका एक खास तालुक। यह अक्षा० १७° २२´ तथा १८° ४ उ० और देशा० ८२° एवं ८२° ५०´ पू०के मध्य अवस्थित है। इस तालुकमें ५१७ ग्राम लगते और १५७४२६ मनुष्योंके वास हैं। क्षेत्रफल प्रायः १२६२ वर्गमील है। यह तालुक पर्वतसे घिरा है और लगभग ७३८० वर्गमील गवर्मेण्टका वनविभाग है। पहले यह जयपुर राजाके करद राज्यकी भूसम्पत्ति थी। १८३५ ई०में रानीके हत्याकाण्डके बाद गवर्मेण्टने इसे दखल किया था और जमीन्दार भी कारागार भेजे गये थे। दूसरे वर्ष गवर्मेण्टने नीलाम पर इसे खरीद किया। १८४५ ई०में स्थानीय सर्दार विद्रोही हो तीन वर्ष तक गोलकुण्डाको अपने अधिकारमें रखा था। फिर भी १८५७५८ ई०में उनके विरुद्ध सेना भेजी गई और जमींदारी गवर्मेण्टके तालुकभुक्त हुई। नर्सीपत्तनमें इसकी सदर अदालत और पुलिस है। इस तालुकके एक दूसरे प्रधान नगरका नाम गोलकुण्डा है। यह अक्षा० १७° ४० ४०´ उ० और देशा० ८२° ३०´५०´ पू०में अवस्थित है।

गोलकुण्डा—निजाम राज्यके अन्तर्गत एक ध्वंसावशिष्ट नगर और दुर्ग। यह अक्षा० १७°२३´ उ० और देशा० ७८° २४ पू०में हैदराबाद नगरसे ७ मील पश्चिममें अवस्थित है। यह दुर्ग वरङ्गलके राजासे निर्माण किया गया था। राजाने १३६४ ई०में इसे गुलवर्गके मुहम्मद शाह बाहमनी पर सौंप दिया। कुछ काल तक यह मुहम्मद नगर नामसे प्रसिद्ध था। १५१२ ई०में यह बाहमनी राजासे कुतबशाहीके हाथ चला गया। कई वर्षों तक उनकी राजधानी यहीं रही। बाहमणी वंशके अधःपतनके बाद गोलकुण्डा दक्षिणमें एक वृहत् समृद्धिशाली राज्यमें परिणत हुआ था। १६८६ ई०में औरङ्गजेबने इसे अधिकार कर अपने राज्यमें मिला लिया था। ग्रेणाइट पर्वतके शिखर पर गोलकुण्डा दुर्ग स्थापित है। यह शत्रुसे दुर्भेद्य और पूर्ण संस्कृत है। इस दुर्गसे ६०० गजकी दूरी पर प्राचीन राजाओंको बनाई हुई बहुतसी ऊंची ऊंची मस्जिद हैं। समय पाकर इनके बहुत अंश टूट फूट गये हैं। दुर्ग चारों ओर कंगुरेदार पत्थरकी दीवारोंसे घिरा है। इसमें आठ दरवाजे लगते हैं जिनमें आजकल केवल चारही काममें लाये जाते हैं। इसके चारों ओर पानीसे भरा हुआ खंदक है। दुर्गसे आध मील दक्षिणमें कुतब शाही राजाओंके समाधि-मन्दिर हैं। इनके बनानेमें बहुत रुपये खर्च हुए थे और उस समयकी चमक दमक अपूर्व थी। किन्तु औरङ्गजेबकी चढ़ाईके समय उनका अधिकांश तहस नहस हो गया। दुर्गके दक्षिणमें मुसी नामकी नदी प्रवाहित है। यहां आजकल तोपखाना है और रक्षाके लिये अरबी सेना रखी गई है। यह दुर्ग अभी निजाम राजके कोषागार और राजकारागार रूपमें व्यवहृत है।

गोलक्षण (सं० क्ली०) गोर्लक्षणं, ६-तत्। गौका शुभाशुभ सूचक चिन्ह विशेष। गो देखो।

गोलगप्पा (हिं० पु०) एक तरहका खानेका पदार्थ जिसे खटाईके रसमें डुबा कर खाते हैं।

गोलत्तिका (सं० स्त्री०) गवि भूमौ लत्तिकेव। वनचर स्त्रीजातीय पशुविशेष, एक तरहका जंगली मादिन पशु।

गोलदार (फा० पु०) दुकानदार, क्रय और विक्रय करनेवाला।

गोलदारी (फा० पु०) गोलादारका कार्य्य।

गोलन्दाज (फा० पु०) तोपमें गोला रख कर चलानेवाला।

गोलन्दाजी (फा० पु०) गोला चलानेका काम या विद्या।

गोलपंजा (हिं० पु०) मूंडा जूता।

गोलपत्ता (हिं० पु०) सुंदरवनमें पाये जानेवाला गुल्ला नामक ताड़।

गोलफल (सं० पु०) मदनवृक्ष, मैनाका पेड़।

ही भगदुपासनामें प्रवृत्त रहते हैं। भगवान्ने कहा है—चार तरहके आदमी मेरी आराधना करते हैं। पीड़ित, तत्त्वज्ञानेच्छु, दरिद्र और ज्ञानी इनमेंसे ज्ञानी ही सबसे श्रेष्ठ और मेरा प्रिय है। (गीता ७ अ०) शुक, नारद आदि ज्ञानी हैं, इनको किसी विषयकी कामना नहीं है फिर भी रात दिन हरिगुणानुकीर्तन किया करते हैं। ज्ञानी व्यक्तिको भी कर्मचर्यार्थ वर्णाश्रमधर्मोचित कार्य करना चाहिये। ज्ञानवान् व्यक्ति बहुत जन्मोंके उपरान्त भगवान्को पाते हैं। २ जिसे ज्ञात हो, बोधयुक्तमात्र, अर्थात् सामान्य ज्ञानमात्रका बोध होनेसे ही ज्ञानी होता है।

ज्ञानीराम—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने स्फुट कविता नामक ग्रन्थकी रचना की है।

ज्ञानेन्द्र सरस्वती—वामनेन्द्र सरस्वतीके शिष्य और तत्त्वबोधिनी, सिद्धान्तकौमुदी टीका तथा प्रश्नोपनिषद् भाष्यके प्रणेता।

ज्ञानेन्द्रस्वामी—ब्रह्मसूत्रार्थप्रकाशिकाके प्रणेता।

ज्ञानोत्तम—गौड़ेश्वराचार्यकी एक उपाधि।

ज्ञानोत्तममिश्र—नैगम्यसिद्धिचन्द्रिका ग्रन्थके प्रणेता।

ज्ञानोपदेश—शङ्कराचार्य प्रणीत उपदेशग्रन्थ।

ज्ञानेन्द्रिय (सं० क्ली०) ज्ञायते बुध्यतेऽनेनेति ज्ञा-करणे ल्युट् वा ज्ञानप्रकाशकं ज्ञानसाधनं वा इन्द्रियं। ज्ञानसाधन इन्द्रिय, वे इन्द्रियां जिनसे जीवोंके विषयोंका ज्ञान होता है। ज्ञानेन्द्रियां पांच हैं-श्रोत्रेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय, दर्शनेन्द्रिय, रसना और घ्राणेन्द्रिय।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, और गन्ध ये पांच ज्ञानेन्द्रियके विषय हैं। श्रोत्रका विषय शब्द, त्वक्‌का स्पर्श, चक्षुका रूप, जिह्वाका रस और नासिकाका विषय गन्ध है। इन पांच ज्ञानेन्द्रियोंके पांच अधिष्ठाता देवता हैं, यथा—श्रोत्रके दिक्, त्वक्‌के वायु, चक्षुके सूर्य, जिह्वाके वरुण, नासिकाके अश्विनीकुमारद्वय। भागवत आदिमें मनको भी ज्ञानेन्द्रिय कहा है, किन्तु मन केवल ज्ञानेन्द्रिय नहीं है। इसको ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय उभयात्मक इन्द्रिय मानना ही सङ्गत है। दार्शनिकोंने "उभयात्मकं मनः" इत्यादि सूत्र द्वारा मनको उभयेन्द्रिय ही प्रमाणित किया है। इन्द्रिय देखो।

ज्ञानोत्पत्ति (सं० स्त्री०) ज्ञानस्य उत्पत्तिः, ६-तत्। ज्ञानका उदय, अक्लका होना।

ज्ञानोदतीर्थ (सं० क्ली०) ज्ञानोद इति नाम्ना विख्यातं तीर्थं, कर्मधा०। वाराणसीके अन्तर्गत एक तीर्थका नाम। यह तीर्थ ज्ञानवापी नामसे प्रसिद्ध है। ज्ञानवापी और काशी देखो।

ज्ञानोदय (सं० पु०) ज्ञानस्य उदयः, ६ तत्। ज्ञानकी उत्पत्ति, अक्लकी पैदाइश।

ज्ञानोल्का (सं० स्त्री०) समाधि भेद।

ज्ञापक (सं० त्रि०) ज्ञाणिच्-ण्वुल्। बोधक, जनानेवाला, जिससे किसी बातका पता चले।

ज्ञापन (सं० क्ली०) ज्ञा-णिच्-ल्युट्-आवेदन, जताने वा बतानेका कार्य।

ज्ञापनीय (सं० त्रि०) ज्ञा-णिच अनीयर्। निवेदनीय, जो जताने या बतानेके योग्य हो।

ज्ञापयितृ (सं० त्रि०) ज्ञा-निच् तृच्। ज्ञापक; सूचित करनेवाला।

ज्ञापिकदेव—स्मृतिसारके प्रणेता।

ज्ञापित (सं० त्रि०) ज्ञा-णिच् क्त। सूचित, जताया हुआ, बताया हुआ।

ज्ञाप्ति (सं० स्त्री०) ज्ञा णिच् भावे क्तिन्। ज्ञापन, सूचित करनेका कार्य।

ज्ञाप्य (सं० त्रि०) ज्ञापनयोग्य, जानने योग्य।

ज्ञास (सं० पु०) ज्ञा-अवबोधने ज्ञा-असुन्। ज्ञाति, गोती, भाई बन्धु।

"ज्ञास उतवा सजातान्" (ऋक् १।१०९।११)

'ज्ञासः ज्ञातयोः' (सायण)

ज्ञीप्सा (सं० स्त्री०) ज्ञातुमिच्छा, ज्ञप-सन्-अ ततष्टाप्। जाननेकी इच्छा।

ज्ञीप्समान (सं० त्रि०) ज्ञप-सन् कर्मनि सानच्। जाननेका इच्छुक, जिसे कोई बात जाननेकी अभिलाषा हो।

ज्ञु (वै०) जानु, घुटना।

ज्ञुबाध (सं० त्रि०) घुटने टेक कर।

ज्ञेय (सं० त्रि०) ज्ञायते इति ज्ञा-कर्मनि यत्। ज्ञानयोग्य,

जब क्षत्रियोंको नाश करनेको तैयार हुए तो भागते भागते किसी एक शिवमन्दिरमें जा छिपे। ये कई दिनोंसे भूखे प्यासे थे, अतः पार्वतीको इन पर बहुत दया आई और शिवजीके कहने पर पार्वती दधिपूर्ण बहुतसे मट्टीके पात्र या गोर लाई। इन्हें ऐसी भूख लगी थी कि दधि पात्रको देखते ही ये सबके सब उन पर टूट पड़े और जितने दधिपात्र थे सब टुकड़े टुकड़े हो गये। पृथ्वी पर दधिके गिर जाने पर भी जहां तक हो सका वहां तक इन्होंने चाट डाला। क्षुधा शान्त नहीं होने पर इन्होंने शिवजीसे पुनः प्रार्थना की। शिवजीने आश्रितोंकी रक्षाके लिये अपने चक्रको चक्कीमें, तीरको मूसलमें, धूपदानको उखलमें, मालाको सूपमें और ढालके पंखामें परिवर्तन किया। ऐसा हो जाने पर उन्होंने अपने आश्रितोंके लिये रसोई जानेको उन्हें आज्ञा दी। इसी कहानीसे दधिपात्र मट्टीका बरतन या गोर शब्दसे गोल निकला है। इनकी उत्पत्तिके विषयमें भिन्न भिन्न मत है। कोई कहते हैं कि वे राजपूत जिन्होंने किसी दूसरी अर्थात् अपनेसे किसी छोटी जातिकी स्त्रीको अपने घरमें रख लिया और उससे जो सन्तान पैदा हुई वह गोला कहलाई। एक दूसरे विद्वान्‌का कथन है कि यथार्थमें ये लोग ठाकुर हैं, परन्तु जमींदारीके न होनेसे गरीबीके कारण परदाकी रीति कम होने तथा उच्च कुलोंमें संसर्ग न होनेके कारण वे दोनों स्त्री और पुरुष उच्च राज घरानोंमें पैतृक चाकरी करनेके कारण गोला गोली कहलाने लगे। फिर तीसरेका मत है कि पहले स्त्री और पुरुष गुलाम बनानेके लिये मोल लिये जाते थे अतएव वे गुलामी करनेवाले गोला कहलाए। फिर कोई कहते हैं कि उन गुलामकी हुई स्त्री और पुरुष द्वारा जो सन्तान पैदा हुई वह गोला या दरोगा कहलाई। फिर किसी दूसरेका ऐसा मत है कि गोला कोई जाति नहीं है वरन एक पद है, अतएव जिस ठाकुरको या अन्य किसीको यह पद मिल गया वही गोला कहलाने लगे है। किन्तु कई एक प्रमाणोंसे सिद्ध किया जाता है कि ये असलमें राजपूत जातिके हैं। ये केवल किसी श्राद्धकर्ममें ही यज्ञोपवीत धारण करते हैं, दूसरे समय नहीं। एक श्रेणी या गोत्रमें ये विवाह इत्यादि नहीं करते है। विधवा विवाहकी प्रथा इनमें प्रचलित है। कभी कभी विधवा स्त्री अपने देवरसे ही शादी कर लेती है। ये शवको जलाते हैं और दशदिन तक अशौच मानते हैं। ग्यारहवें और बारहवें दिन कायतिया ब्राह्मणोंसे श्राद्ध कर्म कराते हैं। ये आपसका लड़ाई झगड़ा गाँवके प्रधान तथा और दूसरे पाँच सरदारोंसे निबटारा कर लेते हैं। ये अदालत कभी नहीं जाते वरन सब विषय पञ्चायतसे ही तय हो जाते हैं। इनमेंसे बहुत थोड़े अपने लड़केको पढ़ाते लिखाते हैं।

गोलाई (हिं० स्त्री०) गोलका भाव, गोलापन।

गोलाकार (सं० त्रि०) जिसका आकार गोल हो, गोल आकृतिवाला।

गोलाच (सं० पु०) ऋषिविशेष।

गोला गोकर्णनाथ—खेड़ा जिलासे २४ मील उत्तर पश्चिममें मुहम्मदी तहसीलके हैदराबाद परगनाका एक गण्डग्राम और हिन्दुओंका एक पवित्र तीर्थ स्थान। इसकी एक ओर अर्द्धचन्द्राकृति पहाड़ है। यहा चार हिन्दू देवालय, चार मस्जिद और पर्वतके ऊंचे पृष्ठ पर मुसलमानोंके बहुतसे समाधिस्तम्भ देखे जाते हैं।

यहांके गोकर्णनाथका मन्दिर अत्यन्त पवित्र स्थान है। तीर्थयात्री झुण्डके झुण्ड देवपूजाकी इच्छासे यहाँ आया करते हैं। वर्तमान मन्दिर बहुत प्राचीन नहीं होगा, हो सकता है कि यह औरङ्गजेबके राज्य समयमें बनाया गया हो। किन्तु मन्दिरका गर्भगृह और मूलस्थान देखनेसे सहजमें ही अनुमान किया जा सकता है कि किसी पुरातन बौद्धस्तूप तोड़ कर उसके ऊपर यह मन्दिर स्थापित हुआ है। प्रवाद है कि सम्राट् आलमगीरने इस मन्दिरकी महादेवमूर्त्तिको जमीनसे उखाड़ लेनेकी चेष्टा की थी किन्तु लोहेके जंजीरमें बंधे हुए हाथीके खींचने पर भी मूर्ति पृथ्वीसे तनिक भी न डिगी। इसके बाद सम्राट्‌ने मूलस्थानकी चारो ओर खोद कर मूर्ति निकालनेका आदेश किया, किन्तु ऐसा किये जाने पर भी जब कोई कार्य न हुआ, तब सम्राट् स्वयं ही इस स्थानको देखने आये थे। मूर्ति नीचेसे अग्नि शिखा जिह्वा फैला कर सम्राट्‌को निगलनेके लिये ज्योंही उद्यत हुई त्योंही सम्राट् प्राण लेकर

जाता है। ज्यामिति नाना भागोंमें विभक्त है, यथा—समतल और घन ज्यामिति, व्यवच्छेदक वा बैजिक ज्यामिति, चित्रज्यामिति (Descriptive Geometry) और उच्चतर ज्यामिति। समतल और घन ज्यामितिमें सरल रेखा, समतल क्षेत्र एवं उसीका घन परिमाण और वृत्तका विषय वर्णित है। उच्चतर ज्यामितिमें सूचीच्छेद, वक्ररेखा और उसीकी क्षेत्रावलीका विषय आलोचित है और चित्रज्यामितिमें परिलेखादिका नियम दिखलाया गया है। दो समतल क्षेत्रके ऊपर किसी घन क्षेत्रके तत्त्वादिका अनुशीलन करना ही ज्यामितिके एक विभागका उद्देश्य है। चित्रज्यामिति द्वारा अनेक कार्य बहुत आसानीसे सम्पन्न होता है। इसकी कार्यकारिता भी अनेक है। जब कोई समतलक्षेत्र किसी दूसरे क्षेत्रमें प्रविष्ट हो, तब दोनोंके परस्पर समतलसे द्विरावृत्त वक्ररेखा उत्पन्न होती है। गुम्बज बनानेके समय चित्रज्यामितिसे अधिक सहायता मिलती है। इसके द्वारा गुम्बजकी उपयोगी बना कर पत्थर आदि काटा जा सकता है।

बैजिक ज्यामिति डेकार्ट (Descarts)-से उद्भावित हुई है। बैजिक-ज्यामिति द्वारा ज्यामितिक क्षेत्रमें बीज गणित और सूक्ष्ममान गणितके नियमादि प्रयोग किये जाते हैं। बैजिक-ज्यामिति कभी कभी व्यवच्छेदक-ज्यामिति नामसे भी पुकारी जाती है। इसके द्वारा समतल और वक्रक्षेत्रका हाल मालूम हो जाता है।

ज्यामितिका युक्तिके साथ अत्यन्त निकट सम्बन्ध है। पहले केवल ज्यामिति-शिक्षासे प्रकृतरूपमें चिन्ता और युक्तिका अनुशीलन होता था।

ज्यामितिकी उत्पत्तिका निर्णय करना अत्यन्त दुःसाध्य है। जो कुछ हो, इस सम्बन्धमें हम लोग निम्नलिखित बातें जानते हैं।

हिरोडोटस (Herodotus) कहते हैं, कि १४१६ १३५७ खृ० पू०में सिसोसत्रिस (Sesostris)के शासनकालकी मिश्र देशमें इस विद्याकी प्रथम उत्पत्ति हुई। मिश्रकी प्रजाके ऊपर कर लगानेके लिये सभीके अधिकृत भूपरिमाणका निश्चय करना आवश्यक जान पड़ा। उन लोगोंकी जमीन नापनेके लिये ज्यामितिका प्रथम सूत्रपात हुआ; किन्तु इजिप्ट या काल्दीयवासियोंका इस सम्बन्धमें कोई लिखित वृत्तान्त नहीं है।

कोई कोई कहते हैं, नील नदीकी बाढ़से प्रति वर्ष इजिप्टवासियोंकी जमीनका सीमा-निदर्शन विलुप्त हो जाता था। उनकी अधिकृत जमीनकी सीमा अन्ततः जिससे उन्हें सदा याद रहे, उसके लिये भूमिकी सीमा-निर्णायक किसी विद्याके आविष्कार करनेमें वे बाध्य हुए थे। यही विद्या क्रमशः परिशोधित और परिस्फुट हो कर वर्त्तमान ज्यामितिमें परिणत हुई है।

दूसरे उपाख्यानसे हम लोगोंको पता लगता है कि भूमि निर्द्धारण करनेके लिये देवताओंने मनुष्योंको इस विद्याकी शिक्षा दी है।

प्रोक्लस (Proclus) इउक्लिडकी टीकामें लिखा है, कि प्रसिद्ध ज्यामितिविद् थेल्स (Thales) ने मिश्रसे सीख कर ग्रीसमें इस विद्याका प्रचार किया। शीघ्रही ग्रीसमें इस विद्याका यथेष्ट आदर होने लगा। ग्रीकगण एकान्त आग्रहके साथ इसके अनुशीलनमें प्रवृत्त हुए। थेल्सके अनेक शिष्य हो गये थे। पिथागोरस (Pythagoras)ने सबसे अधिक उन्नति साधन की है। ये ही सबसे पहले ज्यामितिको युक्तिमूलक वैज्ञानिक सोपानमें लाये। पिथागोरसने ज्यामितिकी बहुतसी प्रतिज्ञा आविष्कार की है। इउक्लिडके प्रथम अध्यायकी ४७वीं प्रतिज्ञा इनके अनुशीलनका फल है। पिथागोरसके बाद बहुतसे पण्डितोंने इस कार्यमें हस्तक्षेप किया था, उनमेंसे क्लाजोमेनिके आनक्षगोरस (Anaxagoras of Clazomenea) ब्रिसो (Briso), आण्टिफो (Antipho), चियसके हिपोक्रेटिस (Hippocrates of Chios); जेनोडोरस (Zenodorus), डिमोक्रिटस (Democritus), साइरिनके थियोडोरस (Theodorus of Cyrene) तथा इनोपिडिस (Enopidis) प्रधान हैं। प्लेटो (Plato) कहते थे, कि ज्यामिति सब विज्ञानका प्रधान और उच्चतर विज्ञानमें प्रवेशका सोपानस्वरूप है। आथेन्स (Athens) नगरमें उनके विद्यालयके प्रवेश-द्वार पर निम्नलिखित उत्कीर्ण शिलालेख देदीप्यमान था—"ज्यामिति-अनभिज्ञ कोई व्यक्ति इसके अभ्यन्तर प्रवेश न करे"। ये ज्यामितिकी विश्लेषण प्रणाली, ज्यामितिक अवस्थिति और सूचीच्छेदके आविष्कर्त्ता हैं। इस समय इसो सूचोच्छेदक

को जलाते हैं। जब कोई नदी समीपमें नहीं रहती है तो ये किसी दूसरी जगह मुर्देको जलाते और उसको थोड़ी हड्डी गङ्गाजीमें फेंकनेके लिए रख लेते हैं। ये दश दिन तक अशौच मानते और ग्यारहवें और बारहवें शास्त्रानुसार श्राद्ध करते हैं। सन्तानके जन्म लेने पर भी ये दश दिन तक अपनेको अपवित्र समझते हैं।

ये ग्रामदेवता चामुण्डादेवी तथा पथवारीदेवीकी पूजा करते हैं। इसके सिवा ये कार्त्तिक मासमें गोवर्द्धनके दिन गाय और भैंसकी तथा आश्विनमें घोड़ेकी पूजा करते हैं। ग्रह या नक्षत्रमें इनका पूरा विश्वास है जिसके लिए ये ग्रहविप्रको समय समय पर कुछ दान भी दिया करते हैं।

गोलापूर्व वैष्णव होते हैं। ये लहसुन, प्याज और गाजर इत्यादि नहीं खाते हैं। उच्च श्रेणीके ब्राह्मणोंकी नाईं ये भङ्गी, धोबी तथा चमार इत्यादि नीच जातियोंसे स्पर्श नहीं करते हैं। ये राजा, गुरु, पिता, बड़े भाई, ज्येष्ठ पुत्र तथा श्वसुरका नाम लेना दोष समझते हैं। विना पण्डितोंसे शुभ-दिन बताए ये प्रथम बार खेत नहीं जोतते हैं। श्रावण मासकी कृष्ण सप्तमीमें वृष्टि होनेको ये शुभ और ज्येष्ठ मासकी शुक्ल सप्तमीमें बिजली दिखाई देनेको अशुभ समझते हैं। ये गाँजाको व्यवहारमें नहीं लाते हैं, किन्तु भांग और अफीम प्रायः खाया करते हैं।

गोलापूर्व खेती करके अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। ये परिश्रमी, सहनशील और अध्यवसायी होते हैं।

गोलापूर्व जैन—बुन्देलखण्ड प्रदेशमें रहनेवाली एक वैश्य जाति। ये दिगम्बर जैनधर्मके पालक और घी कपड़े आदिका व्यापार करते हैं।

गोलारायपुर—युक्तप्रदेशमें शाहजहानपुर जिलेके पवायन तहसीलके अन्तर्गत एक अति प्राचीन ग्राम। ग्रामकी अवस्था देखनेसे ही मालूम पड़ता है कि एक समय यहां समृद्धिशाली नगर था। यहां खेरा या स्तूपके भीतरमें बड़ी बड़ी ईंट, नील और सबुजके पत्रादि तथा बौद्धराजाओंके समयकी अति प्राचीन मुद्रा पाये गये हैं। किसीके मतसे चीन परिव्राजक फाहियनका वर्णित छि-ली नामक स्थान यहीं पर था एवं बुद्धके कपालकी एक खंड अस्थि यहींके दागोवमें रखी हुई थी। तवारीख फिरोजशाही और आइन-ई-अकबरी पढ़नेसे जाना जाता है कि तेरहवीं शताब्दीसे सोलहवीं शताब्दी तक उस गोलामें कान्त गोलाकी सदर अदालत थी।

गोलास (सं॰ पु॰) गां भूमिं लासयति प्रकाशयति गो-लस णिच अण् उपपदसमास। शिलोन्ध्र, छत्रा, गोबर छत्ता।

गोलि—कृष्णा जिलेके पालनाडा तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम जो तुम्मिकोटसे ४ मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित है ग्रामके दक्षिण-पश्चिम भागमें एक पुरातन दुर्ग और चारों तरफ कई एक भग्न प्राचीन मन्दिर हैं। इसी स्थान पर विश्वामित्रने यज्ञ किया था, आज भी उसका होमकुण्ड विद्यमान है। यहांके मल्लेश्वर और हनुमानस्वामीके मन्दिरमें शिलालिपि उत्कीर्ण है। इस ग्राममें प्राचीन असभ्य वासियोंके समाधिप्रस्तर देखे जाते हैं।

गोलिका (सं॰ स्त्री॰) घोण्टा एक जंगली वृक्ष।

गोलियाना (हिं॰ क्रि॰) किसी चीजको गोल बनाना।

गोलिह (सं॰ पु॰) गोभि र्लिह्यते लिह घञर्थे कः। १ छत्रिका, छाता। २ कालमुष्ककवृक्ष मोखा।

गोलिहल्लि—बेलगाम् जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह विद्दिनगरसे एक मील दक्षिणमें अवस्थित है। यहां कल्मेश्वर, रामलिङ्ग, और सिद्धलिङ्गके तीन विख्यात मन्दिर हैं। कल्मेश्वर मन्दिरके निकट ३य चालुक्यराज सोमेश्वर या भूलोकमल्लके राजत्व समयमें (११२६-११३८ ई॰में) कदम्बवंशके किसी अधीन राजाकी दी हुई एक प्रशस्ति है। ग्रामके बाहर वासव-मन्दिरके सामने एक खोदा हुआ शिलाफलक देखा जाता है। उस शिलाफलकके मध्य भागमें शालुकसे ढकी हुई एक लिङ्गमूर्ति है। इसकी बाईं ओर वासव और सूर्य तथा दाहिनी ओर वत्स युक्त गौ और चन्द्रकी मूर्ति खोदी हुई है। उस फलकमें गोआके कदम्बराज पर्माडीके राजत्वकालमें (११४७-७५) प्रदत्त शासनादिका उल्लेख है। उक्त गोपक (गोआ)के राजा सौ जनपदविशिष्ट कोङ्कण और २२ हजार ग्रामयुक्त पलसिग या हलसीके ऊपर आधिपत्य करते थे। वे किरुसम्प गाड़ी जिलेके हेसेश्वरकी सेवाके लिए बहुत धन और जमीन दान कर गए हैं।

बाहुल्य दोष भी देखा जाता है। प्रथम अध्यायकी छठी प्रतिज्ञा उस स्थान पर नहीं लिखने पर भी काम चल सकता था। यही प्रतिज्ञा फिर परोक्षभावमें १८ प्रतिज्ञा रूपमें प्रमाण की गई है। इउक्लिडने कोणकी जैसी संज्ञा और जिस तरह उसका व्यवहार किया है, उसमें तीसरे अध्यायकी २१ प्रतिज्ञा असम्पूर्ण रह गई हैं। किन्तु उनके निर्देशानुसार चलनेसे २१वीं प्रतिज्ञा २२ वींकी सहायताके बिना प्रमाण नहीं की जा सकती। जो कुछ हो, इस पुस्तकमें शुद्धताका उच्च आदर्श दिखलाया गया है। यथार्थ एवं प्रयोजन-कल्पना सम्बन्धमें निश्चित एवं अल्प वर्णता, शृङ्खलाका स्वाभाविक नियम, भ्रान्तसिद्धान्तका पूर्ण अभाव तथा प्रथम शिक्षार्थियोंके उपयोगी युक्तिबद्ध प्रमाणादिके लिये यह पुस्तक सभीके निकट अत्यन्त आदरणीय हो गई है।

इउक्लिडने इस पुस्तकके १३ अध्याय लिपिबद्ध किये थे ; शेष दो अध्याय अलेकजेन्द्रियाके हिपसिक्लिस (Hypsicles of Alexandria)ने संयोजित किये हैं। कोई कोई हिपसिक्लिसको २री शताब्दीमें और कोई ६ठी शताब्दीमें विद्यमान बतलाते हैं।

प्रथम अध्यायमें समतलक्षेत्रसम्बन्धीय ज्यामितिकी आवश्यक संज्ञा और स्वीकार्य विषय दिये गये हैं। अन्यान्य अध्यायमें भी बहुतसी संज्ञा है। जिस सरलरेखा और त्रिभुजके साथ वृत्त अथवा अनुपातका कोई संस्रव नहीं है, उसका विषय इस अध्यायमें लिखा है। पिथागोरसकी विख्यात प्रतिज्ञा इस अध्यायमें सन्निविष्ट है। इसके सिवा असीम सरलरेखा और निर्दिष्ट केन्द्रविशिष्ट और निर्दिष्ट स्थानव्यापक वृत्तके विषय लिखे हैं। इस अध्यायमें देखा जाता है कि, कम्पास और रूल (ruler) ज्यामितिका आनुषङ्गिक पदार्थ है।

इउक्लिडने दूसरे अध्यायमें विभक्त सरलरेखाके ऊपर अङ्कित समचतुर्भुज और आयतक्षेत्रका विषय वर्णन किया है। पाटीगणित और ज्यामितिका प्रयोग इस अध्यायमें दिखलाया गया है। असमकोण त्रिभुजके पक्षमें पिथागोरसकी प्रतिज्ञा किस तरह परिवर्त्तन होती है, वह भी इस अध्यायमें देखा जाता है। इस अध्यायसे वीजगणितके अनेक नियम सीखे जा सकते हैं।

३रे अध्यायमें पहले अध्यायके द्वारा अनुमेय त्रिभुजकी गुणावली वर्णन की गई है।

४र्थ अध्यायमें केवल वृत्तकी सहायतासे अङ्कित समस्त नियमित (समबाहु और समकोणविशिष्ट) पञ्चभुज, षड़्भुज, पन्द्रह भुजविशिष्ट क्षेत्रका विषय वर्णित है।

५वें अध्यायमें आयतनका अनुपात लिखा है।

६ठे अध्यायमें इउक्लिडने ज्यामितिक क्षेत्रमें अनुपातका प्रयोग और सदृशक्षेत्रका विषय वर्णन किया है।

७वें अध्यायमें पाटीगणितकी संख्या आलोचित है तथा दो राशिका महत्तम समापवर्त्तक और लघुतम समापवर्त्य निकालनेकी प्रणाली और मूलराशिका तत्त्व प्रमाणित हुआ है।

८वें अध्यायमें ग्रन्थकारने दो अखण्ड राशियोंमें २ पूर्ण मध्य अनुपात स्थापनकी सम्भावना दिखला कर क्रमिक और मध्य अनुपातकी आलोचना की है।

९वें अध्यायमें वर्ग और घनसंख्या (plane and solid numbers) और दो या तीन पूरिताङ्कविशिष्ट संख्याका विषय वर्णित है। इस अध्यायमें क्रमिक, अनुपात और मूल राशिका उल्लेख देखा जाता है। इसमें मूल राशिकी असंख्यता और पूर्णसंख्या निकालनेकी प्रणाली दिखलाई गई है।

दशवें अध्यायमें ११७ प्रतिज्ञा देखी जाती हैं। इस अध्यायमें कई एक असम गुणनीयककी आलोचना की गई हैं। इसमें इउक्लिडने दिखलाया है, कि वीजगणित छोड़ कर ज्यामिति द्वारा भी अनेक कार्य हो सकते हैं। किन्तु वीजगणितमें व्युत्पन्न व्यक्तिके सिवा दूसरा कोई भी पढ़नेका अधिकारी नहीं है। यह अध्याय गणितके इतिहास रूपमें पढ़ने योग्य है।

११वें अध्यायमें उन्होंने घन (Solid) ज्यामिति अर्थात् भिन्न भिन्न सरलरैखिक और घनक्षेत्रविशिष्ट (Plane and solid figures) ज्यामितिकी संज्ञा निर्देश की है। इस अध्यायमें सरलरैखिक क्षेत्रके छेद और कुछ सामन्तरालिक क्षेत्रवेष्टित घनक्षेत्रका विषय आलोचित हुआ है।

१२वें अध्यायके छेदित घनक्षेत्र, क्षेपणी, नलाकृति और मोचाकृति क्षेत्रका विषय जाना जा सकता है।

कृष्ण भेषमें बहुतसे गोपबालक खेला करते हैं। इसके कुछ दूरके बाद ही सिंदूर रंगके पत्थरसे बना हुआ राजपथ है, जिसके दोनों बगल रत्नमय घरोंकी पंक्ति है। घरकी दीवारें इन्द्रनील, पद्मराग तथा अनेक प्रकारके पत्थरोंसे बनी हैं। ये घर पुष्पमालाओंसे परिशोभित विलासभवन हैं। गोपिया नाना प्रकारके रत्नोंसे अलङ्कृत हो सर्वदा इन्हीं घरोंमें क्रीड़ा किया करती हैं। इसके बाद समस्त गोपियोंकी प्रधाना रासेश्वरी राधिकाका मनोहर भवन है इसमें सोलह मनोहर द्वार हैं। इस भवनमें एक सौ मन्दिर या कुटी हैं। इसके चारो ओर विशाल प्रासाद और सैकडो पुष्पोद्यान हैं। राधिकाभवनके बाहरमें शृङ्ग पर्वत और उसके बाद विरजा नदी है। कृष्णकी स्तुति करनेके लिये समस्त देवता यहा आ पहुंचते हैं। गोलोकके सदृश आश्चर्य काण्ड और दूसरी जगह कहीं नहीं देखा जाता है। (ब्रह्मवैवर्त्तपुराण कृष्णज० ख० ४ अ०)

तन्त्रके मतसे गोलोक वैकुण्ठके दक्षिण ओर अवस्थित है। शिवजी बोलते हैं कि गोलोकके जैसा दूसरा कोई स्थान नहीं है। द्विभुज मुरलीधर कृष्ण राधिकाके साथ इस स्थानमें रह समस्त ब्रह्माण्डका प्रतिपालन करते हैं। गोलोककी अवस्था वाक्य और मनसे अगोचर है। इस स्थानका माहात्म्य शास्त्रके बिना वर्णन नहीं किया जा सकता है। इसके ठीक बीचमें विष्णुका वासभवन है। इस स्थानमें आनेसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। गङ्गा प्रभृति समस्त नदियां और इन्द्रादि देवतायें इसी स्थानमें उपस्थित रहते हैं। यहां सर्वदा छह ऋतु वर्तमान रहती है। कृष्ण नाना प्रकारके स्वरोंसे मुरली बजा कर सभीके मनः प्राण आनन्दित करते हैं। भक्तवत्सला राधिका भी भक्तोंके अनुग्रहके लिये उनके बायीं ओर उपस्थित रहा करती हैं। २ स्वर्ग। ३ व्रजभूमि।

गोलोकन्यायरत्न—बङ्गदेशके एक विख्यात नैयायिक। इनके न्यायरत्नमाथुरीकोडटीका नव्यन्यायका एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है। पश्चिम प्रदेशमें इस ग्रन्थका बहुत आदर होता है। अभी इसके अन्तर्गत अनुमितिअसिद्धपूर्वपक्ष, असिद्धसिद्धान्त, उपाधिपूर्वपक्ष, कूटघटितलक्षण, केवलान्वयि तृतीयप्रगल्भलक्षण, द्वितीय मिश्रलक्षण, पक्षतापूर्वपक्ष, पक्षलक्षणी, परामर्श पूर्वपक्ष, परामर्शसिद्धान्त, पुचललक्षण, प्रतिज्ञालक्षण, प्रथम मिश्रलक्षण, बाधपूर्वपक्ष, बाधसिद्धान्त, सामान्यनिरुक्ति, सामान्यलक्षण और हेतुलक्षण-विवेचन प्रभृति बहुतसे अंश पाये जाते हैं।

गोलकेश (सं० पु०) श्रीकृष्णचन्द्रजी।

गोलोचन (हिं० पु०) गोरोचन देखो।

गोलोमिका (सं० स्त्री०) गोलोमेव लोमास्ति अस्य गोलोम-ठन्-टाप्। क्षुपविशेष, एक तरहकी लता पाथरी; इसका पर्याय गोधूमी, गोजा, क्रोष्टुकपुच्छिका, गोसम्भवा और प्रस्तरिणी है। इसका गुण—कटु, तिक्त, त्रिदोषघ्न, शीतल, शूलरोग और रक्तदोषनाशक, ग्राही एवं दीपन है।

गोलोमी (सं० स्त्री०) गोलोमेव लोम लोमसदृशं दलादिकमस्या बहुव्री० ततो ङीप्। १ श्वेतदुर्वा, सफेद घास। २ वचा, एक तरहका जलका पौधा। गवा वाचा लोमयति अनुकूलयति गोलोमि अच् गौरादित्वात् ङीप्। ३ वेश्या, रण्डी। ४ गोलोमिका वृक्ष। ५ भूतकेशी। ६ नीलदुर्वा। ७ जटामांसी। अकर्कर।

गोल्ड (अं० पु०) स्वर्ण, सोना।

गोल्डन (अं० वि०) १ सोनाका। २ सुनहरा।

गोल्डष्टुकर (Theodore Goldstucker) एक विख्यात संस्कृतज्ञ जर्मन पण्डित इनका जन्म जर्मणिके कनिगस्वर्ग नगरमें हिब्रीय वंशमें हुआ था। ये बननगरके विश्वविद्यालयमें प्रसिद्ध वेष्टरगार्डके साथ साथ पढ़ते थे। कुछ कालके बाद ये वार्णों नगरमें आ अध्यापकके पद पर नियुक्त हुए। वहींसे ये फ्रान्सकी राजधानी पेरिस आये, यहां महापण्डित इउजिन बरनूफके साथ इनकी मित्रता हुई।

१८३९ ई०में गोल्डष्टुकरने लासेनकी पत्रिकामें अमरकोषकी समालोचना प्रकाश की, यही उनकी संस्कृत शिक्षाका प्रथम फल था। १८४२ ई०में इन्होंने प्रबोधचन्द्रोदय नाटकका अनुवाद किया था जिसे देख सबने उनके संस्कृत अनुरागकी यथेष्ट प्रशंसा की थी। इस समय ये जर्मन भाषामें महाभारतके अनुवादमें प्रवृत्त हुए। किन्तु यह उनके लिये दुःखका विषय था कि उनका इस अनुवादका एक अंशभी मुद्रित नहीं हुआ।

किसो ईसाई संन्यासोने इउक्लिड को उपक्रमणिकाका पहले लैटिन भाषामें अनुवाद किया था। ग्रीकभाषामें इस उपक्रमणिकाको अनेक हस्तलिपि हैं।

सिमसन, प्लेफेयर आदि पण्डितोंने प्रथम ६अध्याय और ग्यारह तथा बारह अध्यायका अनुवाद किया है।

प्राचीन कालमें इउक्लिडके जितने अनुवाद हुए थे, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है।

१। समस्त इउक्लिडका संस्करण।

यह १५०५ई०में भिनिस नगरमें बारथलमिउ ज्यामवार्टिसे लैटिन भाषामें अनुवादित हुआ था। १७०३ ई०में डेभिड ग्रिगोरिने ओक्सफोर्ड यन्त्रमें जो पुस्तकें मुद्रित कीं वही सबसे उत्कृष्ट हैं।

२। ग्रीक संस्करण। (क) प्रोक्लसके टोका सहित १५३३ ई०में, (ख) पारिस संस्करण (ग) बार्लिन संस्करण।

३। लैटिन संस्करण। (१. कम्पनासका संस्करण १४८२ ई०में। (२) द्वितीय संस्करण १४९१। ३) अरबो भाषासे अनुवाद, कम्पनास और ज्यामवार्टिका अनुवाद और टीका सहित। (४) लुकाशका संस्करण (भिनिश)। ४. यूरोपीय प्रचलित भाषाका अनुवाद।

(क) अंगरेजो संस्करण। १५७० ई० लण्डन नगर, पुनः १६६१ ई०। (ख) फ्रान्सीसो-पारिस १५६५, पुनः संस्करण १६२३। (ग) जर्मन १५६२।१५५५ ई०में ७से ८ अध्याय अनूदित हुआ था।

(घ) इतालीय-१५४३। (ङ) ओलन्दाज-१६०६ किंवा १६०८। (च) सुइस १७५३। (छ) स्पेनीय १६७३ ई०।

साधारणतः इउक्लिडका प्रथम छह अध्याय और ग्यारह अध्याय पढ़ाये जाते हैं। बहुत दिनोंसे यह नियम चला आ रहा है। शेष अंशका अध्ययन करना हो, तो विलियमसनका अंग्रेजी अनुवाद और हर्सिलका लैटिन अनुवाद पढ़ना उचित है। बहुतोंने इउक्लिडका संस्करण निकाला है। पर यहां सभोका नाम लिखना अनावश्यक है।

आर्किमिडिस, अपलोनियस, थियन प्रभृति पण्डितोंने ज्यामितिका उन्नतिसाधन किया है। आलेकजेन्द्रिया नगरमें ही इस विद्याकी उत्पत्ति हुई है और इसी स्थानमें इसकी उन्नति भी है। ६४० ई०में जब सारासनों ने (Saracens) उक्त नगर अधिकार किया, उस समय तक भी वह नगर ज्यामितिके गौरवसे गौरवान्वित था। गोलमिति अर्थात् ज्यामितिका जो अंश ज्योतिर्विद्याके साथ संसृष्ट है, उसने हिपरकस (Hipparchus), मिनेलस (Menelaus), थियोडोसियस (Theodosius) तथा टलेमि (Ptolemy) पण्डितोंसे उत्कर्ष लाभ किया है।

नीचे ग्रीसके ज्यामितिकारोंके नाम और उनके जीवन के मध्यभागके समय दिये जाते हैं।

थेलस—६०० ई०से पहले अमिरिस्तास, पिथागोरस ५५०, अनाक्सोगोरस, इनोपाइडिस, हिपोक्रेतिस ४५०, थियोडोरस, आर्कितस लिवडेमस थिटेटस, अरिसटियस ३५०, पार्सियस प्लेटो ३१०, मिनेकमस, दिनोसत्रस, इउडकसस, नियोक्लाइडिस, लियन, अमिक्लास थियूडियस, सिजिपिनस, हारमोटिमस, फिलिपस, इउक्लिड २८५, आर्किमिडस २४०, अपलोनियस २४०, इराटोसथनिस २४०, निकोमोडस १५०, हिपारकस १५०, हिपासिक्लिस १३०, गेमिनस १००, थियाडोसियस १००, मिनेयस ई०, टलेमि १२५, पपास २८० क्लिरिसन ३८० डाइयोक्लिस, प्रोक्लस, ४४०, मेरिनस, हेसिडोरस, इउटोसियस ५४०।

सरल रेखा, वृत्त और सूचीच्छेदके पहले और दूसरे पर्यायमें बीजगणितका नियम प्रयुक्त हो सकता है तथा इस नियमसे सरलरेखा आदि विषयका तत्त्व बहुत आसानीसे आविष्कार किया जा सकता है। थोड़े समय तक उक्त नियमसे ही कार्यकलाप निर्वाहित होता था, किन्तु सब समय ज्यामितिकी कठिन युक्तिके प्रति वैसा लक्ष्यन हीं किया जाता था। पीछे मञ्ज (Monge,)ने चित्र ज्यामितिका आविष्कार किया। परिप्रेक्षित विद्या और ज्यामितिके किसो किसी विषयमें बीजगणित निरपेक्ष भावसे रेखा, कोण और क्षेत्रफल निर्णय करनेकी आवश्यकता हुई थो। चित्रज्यामितिने इस अभावको बहुत कुछ दूर कर दिया है। चित्रज्यामितिकी सहायतासे ऊपरके भागका चित्र और उच्चताके परिमाण द्वारा अट्टालिकाकी आकृति तथा परिसर स्थिर किया जा सकता है। समकोणविशिष्ट दो समतल क्षेत्रके ऊपर किसी विन्दुका परिलेख रहनेसे, उस विन्दुकी अवस्थिति भी जानी

गोवर्धन (सं० क्ली०) गवां वर्द्धनं, ६-तत्। १ गोकी वृद्धि, गायकी बढ़ती। वृध करणे ल्युट् ६ तत्०। गिरि-यज्ञविशेष। गोवर्धन देखो। गां वर्द्धयति गो-वृध-णिच् ल्यु। ३ वृन्दावनस्थ एक पर्वत। श्रीकृष्णचन्द्रजीने भयानक शिलावृष्टिसे वृन्दावनवासी गोपोंको बचानेके लिये उक्त पर्वतको अपने हाथके कनिष्ठ अङ्गुल पर उठाया था। यह पर्वत अनादि एवं श्रीकृष्णका अतिशय प्रिय है। हरिभक्तिविलासमें लिखा है कि कार्त्तिक मासको शुक्ल-प्रतिपद् तिथिमें पूर्वाह्णको इसकी पूजा करना वैष्णवोंका मुख्य कर्त्तव्य है। (१६।३०)

इस प्रतिपद्के साथ अमावस्याका समान आदर है। जिस दिन प्रतिपद्के साथ अमावस्याका योग रहता है उसी दिन गवोत्सव करना उचित है। परविद्ध तिथिमें करने पर भी स्त्री, पुत्र और धनकी हानि होती है।

निर्णयामृतधृत "या कुहूः प्रतिपन्मिश्रा तत्र गाः पूजयेन्नृप" इत्यादि पौराणिक वचनमें भी अमावस्यायुक्त प्रतिपद्में ही गोवर्धनपूजाका विधान देखा जाता है। पद्मपुराणका मत है कि उस दिवसमें वृन्दावनवासी वैष्णवगणको गोवर्द्धनपूजा करना उचित है। दूसरे स्थानके वैष्णवोंको गोमय द्वारा गोवर्द्धन पर्वतका निर्माण कर उसकी पूजा करना चाहिये। भक्ति पूर्वक गोवर्द्धनकी पूजा और प्रदक्षिण करनेसे गोलोकमें हरिके निकट रह बहुत तरहके सुख लाभ होते हैं। पूजाका मन्त्र—

"गोवर्द्धन धराधार गोकुलत्राणकारक।
विष्णुबाहुकृतोच्छ्राय गवां कोटिप्रदो भव॥" (हरिभक्तिविलास)

गोवर्द्धन—मथुरा जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर और पवित्र तीर्थस्थान। यह मथुरा जिलेके पश्चिम प्रान्तमें पहाड़के ऊपर अक्षा० २७° ३०' उ० अ र देशा० ७७° २८' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६७३८ है। यहां यथेष्ट प्राचीन हिन्दुकीर्ति देखी जाती है। जिनमेंसे हरिदेवका मन्दिर प्रसिद्ध है। अकबरके राजत्व कालमें अम्बराधिप राजा भगवानदासने उक्त मन्दिरका निर्माण किया था। भरतपुराधिप रणधीरसिंह और बलदेवसिंहके समाधिमन्दिर भी देखने लायक हैं। यहांके मानसी नामक सरोवरमें स्नान करनेके लिये दूर दूर देशके यात्री आते हैं।

यह शहर मानसीगङ्गा नामक एक सुन्दर तालाबके चारों ओर पड़ता है। दिवालीके उपलक्षमें यहां भारी उत्सव मनाया जाता है। प्रवाद है कि यहां श्रीकृष्ण-चन्द्र जी वास करते थे और उन्हींके नाम पर शहरका नाम गोवर्द्धन पड़ा है। यहां राजा यशोवन्तसिंहका एक समाधिभवन है। शहरके उत्तर कुसुम सरोवर नामक एक सुन्दर कृत्रिम झीलके किनारे सूरजमलके बहुतसे समाधिभवन हैं जो उनके लड़के जवाहिरसिंह द्वारा निर्माण किये गये हैं। शहरकी आय लगभग २२०० रु है। यहां किसी प्रकारका व्यापार नहीं होता है। यहां केवल एक प्राइमरी स्कूल है।

गोवर्द्धन—१ ताजिक पद्मकोष नामक ज्योतिर्ग्रन्थकार। २ नामावली नामका संस्कृत अभिधान रचयिता। ३ श्रीपतिपद्धति नामक ज्योतिःशास्त्रकार। ४ एक प्राचीन अलङ्कार शास्त्रके रचयिता।

५ तत्त्वचिन्तामणिदीधितिके टीकाकार। ६ एक तैलङ्ग पण्डित, घनश्यामभट्टके पुत्र। इन्होंने वेदान्तचिन्तामणि, रुक्मिणीचम्पू और १८६६ ई०को घटकर्परटीका रचना की है। ७ वैशेषिकसूत्रका सम्बन्धोपदेश नामक ग्रन्थके टीकाकार। ८ एक जैन शास्त्रकार। (वृहत् हरिवंश) ९ मेदिनीकर उद्धृत एक प्राचीन कोषकार।

१० एक हिन्दी कवि। इनकी बनाई हुई बहुतसी कवितायें पाई जाती हैं।

गोवर्द्धनआचार्य—एक विख्यात प्राचीन कवि, नीलाम्बरके पुत्र, बलभद्रके भ्राता और उदयनके गुरु। इन्होंने आर्यासप्तशती नामक एक सुन्दर संस्कृत काव्य रचा है।

गोवर्द्धन उपाध्याय-१ उद्वाहचन्द्रिका नामक संस्कृत ग्रन्थकार। २ गोवर्द्धनकविमण्डन नामक संस्कृत ग्रन्थकार।

गोवर्द्धनगिरि—१ वृन्दावनके निकट एक प्रसिद्ध पर्वत। ऐसा प्रवाद है कि श्रीकृष्णचन्द्रजीने इस पर्वतको उंगली पर धारण किया था। गोवर्द्धन देखो।

२ महिसुर राज्यके सागर तालुकके अन्तर्गत सिमोगा जिलेका एक पहाड़। यह अक्षा० १४° १०' उ० और देशा० ७४° ४०' पू० पर स्थित है। इसका दूसरा नाम कमलाचल है। इसके ऊपर महिसुर राजाओंसे

मालूम रहनेसे त्रिभुजका क्षेत्रफल निकालनेका नियम पहले ग्रन्थमें पाया जाता है। परिधि और व्यासके सूक्ष्म अनुपातसे (३·१४१६:१) भास्कराचार्य जानकार थे। ब्रह्मगुप्तने ३·१६:१ अनुपातका कल्पना की थी। यूरोपमें प्रथमोक्त सूक्ष्म अनुपात बारहवीं शताब्दीके परवर्त्ति कालमें प्रचलित हुआ था। यह अनुपात मुसलमानोंने हिन्दुओंसे सीखा था। बाद यूरोपीयगण इस विषयसे अवगत हुए। फलतः भारतीय ग्रन्थोंमें बहुतसी मौलिकता देखी जाती है। यद्यपि भारतमें ज्यामितिके प्रथम अनुशीलनका निश्चित समय पता नहीं चलता है, तोभी वीजगणित और पाटीगणितका दशमिक अंश जैसा भारतवर्षमें आविष्कृत हुआ है, वैसाही भारतवासियोंने ज्यामिति भी आविष्कार की है। वैदिक शुल्वसूत्र पढ़नेसे एक तरहका निश्चय किया जाता है, कि भारतमें ही पाश्चात्य ज्यामितिका एक प्रकारका सूत्रपात हुआ था।

कोई कोई कहते हैं, कि सबसे पहले बाबिलन देश तथा इजिप्तमें ज्यामितिकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु इस कल्पनाका कोई विश्वासयोग्य प्रमाण नहीं मिलता है। यहूदियोंके ग्रन्थमें भी ज्यामितिका कोई उल्लेख नहीं है। ग्रीकगणने इजिप्त, भारतवर्ष अथवा दूसरे देशसे ज्यामितिका ज्ञान प्राप्त किया था, यह निश्चितरूपसे कहा नहीं जाता। भास्कराचार्य-प्रणीत 'रेखागणित' हिन्दुओंका एक ज्यामिति ग्रन्थ है। ज्यामितिका (quadrature of the circle) विषय चीनगण ईसवी कालके बहुत पहलेसे जानते थे। यूरोपवासियोंमेंसे आर्किमिडिस सबसे पहले इस विषयकी आलोचनामें प्रवृत्त हुए थे।

ज्यायस् (सं० त्रि०) अयमनयोरतिशयेन प्रशस्यः वृद्धो वा इति प्रशस्य-वृद्ध-वा ईयसुन् ज्यादेशश्च। ज्यायादीयसः। पा ६।४।१२०। १ वृद्धतम, बुढ़ापा। इसके पर्याय—वर्षीयान्, दशमी, प्रशस्य, अतिवृद्ध और दशमीस्थ है। २ जीर्ण, पुराना। ३ प्रशस्त, बढ़िया, उमदा।

ज्यायिष्ठ (सं० त्रि०) ज्येष्ठ, बड़ा।

ज्यावाज (सं० पु०) बलवान् धनु, मजबूत धनुष।

ज्येष्ठ (सं० त्रि०) अयमेषामतिशयेन वृद्धः प्रशस्यो वा वृद्ध-वा प्रशस्य इष्ठन् ततो ज्यादेशः। १ अतिवृद्ध, बड़ा बूढ़ा। २ प्रशस्त, उत्तम, बढ़िया। ३ अग्रज भ्राता, बड़ा जेठा। (पु०) ४ ज्येष्ठ मास, जेठका महीना। ५ परमेश्वर। "ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः।" (विष्णुसं०) ६ प्राण। ७ ज्येष्ठा नक्षत्रयुक्त वर्ष, वह वर्ष जिसमें वृहस्पतिका उदय ज्येष्ठा नक्षत्रमें हो। यह वर्ष कंगनी और सावाँके अतिरिक्त दूसरे अन्नोंके लिये हानिकारक माना गया है। इसमें राजा पुण्यात्मा होता है। (वृहत्स०) ८ सामगानका एक भेद।

ज्येष्ठतम (सं० त्रि०) अतिशयेन ज्येष्ठः ज्येष्ठतमः। अत्यन्त ज्येष्ठ इन्द्र। "सता ज्येष्ठतमा" (ऋक् २।१६।१) 'ज्येष्ठतमाय अतिशयेन ज्येष्ठाय इन्द्राय' (सायण)

ज्येष्ठता (सं० स्त्री०) ज्येष्ठ भावे तल्। १ ज्येष्ठत्व, श्रेष्ठता। २ ज्येष्ठ होनेका भाव, बड़ाई। गर्भमें यमज सन्तान होने पर जो पहले प्रसूत होगा, वही बड़ा कहलायगा। स्त्रियोंमें ज्येष्ठता नहीं है। "ज्येष्ठता नास्ति हि स्त्रियाः" (मनु० ९।१२४)

ज्येष्ठतात (सं० पु०) तातस्य ज्येष्ठः, ६-तत्, राजदन्तादित्वात् पूर्वनिपातः। पिताके ज्येष्ठ भ्राता, बापके बड़े भाई।

ज्येष्ठताति (सं० त्रि०) ज्येष्ठ, बड़ा।

ज्येष्ठतोयाम्ल (सं० क्ली०) काञ्जिक, काँजी।

ज्येष्ठत्व (सं० क्ली०) ज्येष्ठ भावे त्व। ज्येष्ठता, जेठ होनेका भाव, बड़ाई।

ज्येष्ठपाल (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा।

(राजतरंगिणी ८।१४४९)

ज्येष्ठपुष्कर (सं० क्ली०) ज्येष्ठं प्रशस्यं पुष्करं, कर्मधा०। पुष्करतीर्थ। "पुष्करं ज्येष्ठमागम्य विश्वामित्रं ददर्श ह।" (रामा० १।६२।२)

पुष्कर देखो।

ज्येष्ठबला (सं० स्त्री०) ज्येष्ठाख्या बला, मध्यपदलोपि-कर्मधा०। सहदेवी लता।

ज्येष्ठराज—अत्यन्त श्रेष्ठ, सबसे उत्तम।

ज्येष्ठवर्ण (सं० पु०) वर्णानां ज्येष्ठः वर्णेषु ज्येष्ठो वा ६।७-तत्, राजदन्तादित्वात् पूर्वनिपातः। ब्राह्मण। सब वर्णोंमें ब्राह्मण ही एकमात्र श्रेष्ठ हैं।

मङ्गोलीय भाषामें "गोबि" शब्दसे मरुका बोध होता है, उसीसे इस विस्तृत भूभागका नाम पड़ा है। यह अक्षा० ३०°से ५०° उ०, तथा देशा० ७५° से ११८° पू०में तिब्बत, शाम और मङ्गोलीय पर्यन्त विस्तृत है। चीनदेशमें कभी कभी वालूकी वृष्टि हुआ करती है। लोगोंका विश्वास है कि वही वालू यहां आ जम जाता है।

गोविकर्त्त (सं० पु०) गां विकृन्तति वि कृ-अण् उपस०। १ गोघातक, बूचर, कसाय। २ कर्षक, हलचलानेवाला।

गोविकर्त्त (सं० पु०) गां विकृन्तति वि-कृत तृच्, ६ तत्। गोहिंसक, गौका मारनेवाला।

गोविट् (सं० स्त्री०) गोमय, गोबर।

गोवितत (सं० पु०) गावो वितता अत्र बहुव्री०। गोभूयिष्ठ अश्वमेध यज्ञ। (भारत १।०१ अ०)

गोविदांपति (सं० पु०) गा वेदवाणीं विदन्ति गोविदो वेदज्ञास्तेषा पतिः, अलुक् समास। परमेश्वर।

गोविनत (सं० पु०, गावो विनता अत्र, बहुव्री०। अश्वमेध। (शतपथब्राह्मण १३।५।४।१८)

गोविन्द (सं० पु०) गा वेदमयीं वाणीं गां भूमिं स्वर्गं धेनुं वा विन्दति गो-विद्-श। १ श्रीकृष्ण। हरिवंश प्रभृतिमें गोविन्द शब्दकी अनेक तरहको व्युत्पत्ति देखो जाती है। हरिवंशमें लिखा है कि श्रीकृष्ण वृन्दावनमें रह कर बहुतसे गौओंका प्रतिपालन करते थे, इसी कारण "गवामिन्द्र" इस तरहकी व्युत्पत्तिके अनुसार इन्द्रने उनका नाम गोविन्द रखा। विष्णुतिलकका मत—

"गोभिर्यामोभिवेदान्त वाक्यं र्विदन्तेऽसौ पुरुषः।
विदन्ति वा यं पुरुषं तत्त्वज्ञाः॥"

ब्रह्मवैवर्त पुराणका मत—

"गां प्रलयसमये प्रणष्टां वेदवाणीं विन्दति लभते इति गोविन्दः।"

विन्दतीति विन्दः पालकः स्वामी वा; गवां विन्दः पालकः ६-तत्। १ गवाध्यक्ष, गौओंका अध्यक्ष। ३ बृहस्पति। ४ परब्रह्म। आस्तिक हिन्दुगण द्विभुजमुरलीधर गोविन्द मूर्त्तिको पूजा करते हैं। इनका ध्यान यों है—

"फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियं।
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्॥
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसङ्घावृतं।
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥"

पूजाका मन्त्र—"क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।"

५ वेदान्तवेत्ता, तत्त्वज्ञ। ६ गोमेदमणि।

गोविन्द—१ राष्ट्रकूट वंशीय एक राजा। २ निकुम्भवंशीय एक राजा। ३ शङ्कराचार्यके गुरु और गौड़पादके शिष्य।

४ षड्गुरुशिष्यके एक गुरु। ५ भोजप्रबन्धवर्णित एक कवि। ६ आत्मतत्त्वविवेकके एक टीकाकार। ७ गणेशगीताके एक टीकाकार।

८ एक विख्यात आलङ्कारिक और टीकाकार। इन्होंने नलोदयटीका, शिशुपालवधटीका, सभ्याभरणटीका, कुमारदेवके शालिवाहन सप्त सतीकी टीका एवं छन्दोदर्पण नामक संस्कृत ग्रन्थ रचे हैं। ९ एक प्रसिद्ध कवि। (शोकगद्धव० २५।७७)

१० जन्मदीपक और तिथिनिर्णय नामक संस्कृत ग्रन्थकार।

११ नाडीप्रकाश नामक संस्कृत वैद्यक ग्रन्थकार।

१२ तालदश प्राणदीपिका नामक संगीतशास्त्रकार।

१३ परमार्थविवेक नामक वैदान्तिक ग्रन्थप्रणेता।

१४ एक विख्यात ज्योतिर्विद्। इन्होंने संस्कृत भाषामें वालवुद्धिप्रकाशिनी, विवाहप्रकरण और सस्कारप्रकरण नामको ज्योतिर्ग्रन्थ रचना किये हैं।

१५ पूजाप्रदीप नामक भक्ति शास्त्रकार।

१६ बृहस्पति सव प्रयोग और आश्वलायनीय प्रायश्चित्तप्रयोग-रचयिता।

१७ मानसोल्लास नामक संस्कृत ग्रन्थप्रणेता।

१८ एक प्रसिद्ध वैद्यक ग्रन्थकार। इन्होंने रससार, रसहृदय और सन्निपातमञ्जरी नामके संस्कृत चिकित्सा ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

१९ लतादिनिर्णय नामका ज्योतिर्ग्रन्थकार।

२० हलायुध और मधुसूदन प्रभृतिके शिष्य, शाङ्खायनश्रौतसूत्रीय महाव्रतका एक टीकाकार।

२१ कह्न कवीश्वरके पुत्र, सम्वित्प्रकाश नामक ज्योतिःशास्त्रकार।

२२ जुन्नरनिवासी गदाधरके पुत्र। इन्होंने १६९२ ई०की कुण्डमार्त्तण्ड नामक संस्कृत ग्रन्थ प्रणयन किये हैं।

२३ भट्ट रत्नाचार्यके एक पुत्र, संस्कृत भाषामें गोपाललीलार्णव नामका भाण रचयिता।

तरोई, केला और तुम्बी खाता हो, तुम उसीके घरमें वास करो और उसे सदा दुःख पहुंचाती रहो। इस तरह तुम कलियुगकी वल्लभा हो कर सुखसे विचरण करो। इतना कह कर देवगण उन्हें विदा कर पुनः समुद्र मथने लगे। (पद्मपुराण उत्तरखंड)

लिङ्गपुराणमें लिखा है कि समुद्र मथनेके समय लक्ष्मीके पहले इनकी उत्पत्ति हुई, किन्तु जब देवासुरोंमेंसे किसीने इन्हें ग्रहण न किया तब दुःसह नामक किसी तेजस्वी ब्राह्मणने इनको अपनी पत्नी बना लिया। ये भी अलक्ष्मी पर अनुरक्त थे।

दीपान्विता लक्ष्मीपूजाके दिन इनकी पूजा करनी पड़ती है। अलक्ष्मी देखो। ७ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

ज्येष्ठामलक (सं० पु०) निम्बवृक्ष, नीमका पेड़।

ज्येष्ठाम्बु (सं० क्लो०) ज्येष्ठं सर्वरोगनाशित्वात् श्रेष्ठं अम्बु, कर्मधा०। चावलका धोया हुआ पानी इसकी प्रस्तुत-प्रणाली वैद्यक शास्त्रमें इस प्रकार लिखी है—एक पल चावलको चूर कर उसमें आठ गुना अधिक जल छोड़ दें, पीछे कुछ भावना दे कर उसे ग्रहण करना चाहिये, यह जल सब कार्योंमें ग्रहणीय तथा विशेष उपकारी है।

ज्येष्ठामूलीय (सं० पु०) ज्येष्ठां मूलां वा नक्षत्रमर्हति पौर्णमास्यां इति छ। ज्येष्ठ मास, जेठका महीना।

ज्येष्ठाश्रम (सं० पु०) ज्येष्ठ आश्रमो यस्य, बहुव्री०। गार्हस्थ्याश्रमी, द्वितीयाश्रमी, उत्तमाश्रम, गृहस्थ। गृहस्थाश्रम सब आश्रमोंसे श्रेष्ठ है, इसीलिये इस आश्रमके अवलम्बी सभीसे उत्तम माने गये हैं।

ज्येष्ठाश्रमी (सं० पु०) आश्रमोऽस्त्यस्य आश्रम-इनि, ज्येष्ठः श्रेष्ठः आश्रमी, कर्मधा०। गृही, गृहस्थ।

"यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो ज्ञानेनान्नेन चान्वहं।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्मात् ज्येष्ठाश्रमो गृही॥" (मनु ३।७८)

ब्रह्मचारी, गृहस्थ वानप्रस्थ और भिक्षु ये ही चार आश्रम गार्हस्थ्यमूलक हैं। जिस तरह वायुका अवलंबन कर सब जीव जन्तु प्राण धारण करते हैं, उसी तरह इस गार्हस्थ्याश्रमका अवलंबन करके अन्य सभी आश्रमोंका पालन किया जा सकता है।

ज्येष्ठी (सं० स्त्री०) ज्येष्ठ गौरादित्वात् ङीप्। पल्लीगृह-गोधा, छिपकली। इसके संस्कृत पर्याय—मुशली, मुषली, कुड्यमत्स्या, गृहगोधिका, मुली, टिकटिकी, शकुनज्ञा और गृहालिका है। (शब्दरत्नावली) अङ्गविशेषमें इसका पतन फल ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है—ज्येष्ठी यदि मनुष्योंके दक्षिणाङ्ग पर गिरे, तो स्वजनों और धनका वियोग तथा वामभाग पर गिरनेसे लाभ होता है। वक्षस्थल मस्तक, पृष्ठ और कण्ठदेश पर गिरनेसे राज्यलाभ तथा पद वा हृदय पर गिरनेसे सम्पूर्ण सुखोंकी प्राप्ति होती है। (ज्योतिष)

गमन करते समय यह यदि ऊर्द्ध्वसे शब्द करे तो वित्तलाभ, पूर्वदिशासे करे तो कार्यसिद्धि, अग्निकोणसे भय, दक्षिणसे अग्निभय, नैऋतकोणसे श्रेष्ठवस्त्र और गन्धसलिल, उत्तरसे दिव्याङ्गना तथा ईशान कोणसे शब्द करे तो मरणका भय होता है। (तिथितत्त्व)

ज्येष्ठ (सं० पु०) ज्येष्ठा नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी ज्येष्ठ-अण्-ङीप् च, सा अस्मिन् मासे इति पुनरण्। मासविशेष; वह महीना जिसमें ज्येष्ठा नक्षत्रमें पूर्णिमाका चन्द्रमा उदय हो। इस मासमें यदि सूर्य वृषराशिमें रहे तो उसे सौरज्येष्ठ कहते हैं। सूर्यके वृषराशिमें रहनेसे प्रतिपदसे ले कर अमावस्या तक चान्द्रज्येष्ठ माना गया है। इसके पर्याय—शुक्र और ज्येष्ठ है।

"विदेशवृत्तिः पुरुषः सुतीव्रः क्षमान्वितः स्यात् खलु दीर्घसूत्रः।
विचित्रबुद्धिर्विदुषा वरिष्ठो ज्येष्ठाभिधाने जननं हि यस्य॥"
(कोष्ठीप्रदीप)

इस मासमें मानवका जन्म होनेसे वह विदेशवासी, तीक्ष्णबुद्धिसम्पन्न, क्षमायुक्त, दीर्घसूत्री और श्रेष्ठ होता है। "ज्येष्ठे मासि क्षितिसुतदिने जाह्नवी मर्त्यलोके।"
(तिथितत्त्व)

ज्येष्ठ मासके मङ्गलवारको जाह्नवी मर्त्यलोक पर आती हैं।

ज्येष्ठसाम (सं० पु०) ज्येष्ठं साम अधीते यः स इत्यण्। १ सामभेद। २ सामाध्येता, सामवेदका पढ़नेवाला।

ज्येष्ठिनेय (सं० पु० स्त्री०) ज्येष्ठायाः स्त्रियाः अपत्यं ढक्, इनङ् च। ज्येष्ठा स्त्रीका अपत्य, बड़ी स्त्रीको सन्तान।

घोषउपाधिके वङ्गमें कायस्थ रहते हैं। फिर कोई बोलते हैं कि घोषठाकुर उत्तरराढ़ी कायस्थ थे। क्योंकि मरनेके बाद कोई सन्तान नहीं रहनेके कारण वे उदास हो गङ्गातीर पर अग्रद्वीपके निकट आ वास करते थे। एक दिन चैतन्यदेव भक्तमंडलीके साथ जाह्नवी तीर पर पहुंचे, इस समय गोविन्द उनसे जा मिले। नवीन सन्यासीको तेजोमय अपूर्व मुखश्री देख गोविन्दका चित्त विचल गया। वे महाप्रभुके चरणों पर गिर रो रो कर कहने लगे 'प्रभो!—मैं संसार नहीं चाहता। धन मान तथा ऐश्वर्य कुछ नहीं चाहता, सिर्फ आपके चरण-कमलोंकी सेवा करना चाहता हूं।" तब गौराङ्गदेव उन्हें संसारके अनेक प्रलोभन दिखाने लगे। गोविन्द तनिक भी विचलित न हो बोले, "धन, मान, ऐश्वर्य, दूर रहे, मुझे अब इनसे कुछ भी प्रयोजन नहीं है। दया करके आप अपने चरणमें स्थान दीजिए।" ऐसा कहते हुए उन्होंने चैतन्य महाप्रभुका पैर जोरसे पकड़ा। गोविन्दको प्रकृत भक्त समझ महाप्रभुने उनसे आलिङ्गन किया और कहा, "यदि निष्काम व्रत पालन करनेमें समर्थ हो तब मेरे साथ रह सकते हो।" गोविन्दने बहुत उल्लाससे उनका उपदेश ग्रहण किया और निष्काम व्रतपालनमें सहमत हुए।

चैतन्यदेव वहांसे पैदल ही अग्रद्वीप आये। यहां वे भोजनादिके बाद मुखशुद्धि न पाकर भक्तगणसे बोले, "आज मालूम पड़ता है कि मुखशुद्धि नहीं हुई है।" इस पर शिष्योंने कुछ भी उत्तर न दिया, तब गोविन्दने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की, 'प्रभो! मेरे पास एक हरीतकी है यदि आज्ञा हो तो सेवामें अर्पण करूं।"

चैतन्यदेव हंस कर बोले, "गोविन्द! तुम्हारी भक्ति को मैंने अत्यन्त आह्लादसे ग्रहण किया, किन्तु आजसे ही तुम मेरा साथ छोड़ दो।"

गोविन्दको हठात् वज्रसामा आघात मालूम पड़ा और वे रो रो कर कहने लगे, "देव! इस दासने कौनसा अपराध किया जिससे ऐसा कठोर आदेश दिया गया है?"

चैतन्यदेवने स्नेह पूर्वक उत्तर दिया, "गोविन्द! तुम यथार्थ भक्त और हरिपूजाके अधिकारी हो, किन्तु निष्काम व्रत पालनका अधिकारी नहीं हो, अभी तक भी तुम्हारी विषयवासना दूर नहीं हुई है। अब भी तुम्हें सञ्चय स्पृहा मौजूद है। इसी लिये कहता हूं कि घर लौट जाओ, हरिकी आराधना करो, उसीसे तुम्हारी मुक्ति होगी।"

दीर्घनिश्वास लेते हुए गोविन्द सजल नयन हो बोले, "मैं कुछ नहीं चाहता, सर्वस्व तिलाञ्जलि दी है, संसार लौट कर नहीं जा सकता हूं।"

चैतन्यदेवने भक्तको आलिङ्गन करते हुए कहा, "तुमने सर्वस्व परित्याग किया है सही, किन्तु अब भी तुम्हें विषम कण्टक रह गया है। आज तुमने हरीतकी सञ्चय की है, कल्ह, फिर एक नवीन प्राप्ति करनेकी इच्छा होगी इसी कामनाको बाधक जानो। तुम घर लौट जाओ, इसीमें कुशल है। जिस दिन तुम्हारे जीवनमें अलौकिक घटना घटेगी, उसी दिन मुझसे भेंट पाओगे। यदि कोई अनूठी चीज पाओ तो उसे यत्नपूर्वक रक्खो उसीसे तुम्हारी आशा पूर्ण होगी।"

इस तरह गोविन्दको शोकसागरमें डुबाते हुए आप अग्रद्वीप छोड़ चल बसे। एक दिन भक्त गोविंद गङ्गा-जलसे शुद्ध हो ध्यानमें मग्न थे। उसी अवस्थामें किसी चीजने उनकी पीठ पर तीनवार धक्का दिया। अन्तमें उन्हें मालूम पड़ा कि वह सिर्फ स्रोतवाहक एक छोटा काठ है। किन्तु उसे उठानेके समय जान पड़ा कि वह सामान्य काष्ठ स्वाभाविक गुरुत्वकी अपेक्षा सौ गुना भारी है ऐसा क्यों होता है। विस्मयसे गोविन्दके मनमें एक अपूर्व भाव उत्पन्न हो आया। वे कुटी पर लौट आये, परन्तु मनका संदेह दूर नहीं हुआ। रात्रिकालमें गोविन्दने स्वप्न देखा कि, शङ्खचक्रगदाधर मानों उनसे कह रहे हैं, "गोविंद! मत भूलो! मत भूलो! उस काष्ठको उठा लाओ। महाप्रभु आ रहे हैं, आने पर उन्हींको दे देना।" गोविंदकी निद्रा टूट गई, उन्होंने देखा कि चारों ओर घोर अन्धकार छाया हुआ है। वे उसी समय अन्धकारमें गङ्गाके किनारे पहुंचे. यहां आ कर उन्होंने देखा कि वह लकड़ी उसी स्थान पर पड़ी है। बहुत यत्नसे उस काष्ठको कन्धे पर रख धीरे धीरे अपनी कुटीको आये। उस रात गोविंदको तनिक

कालाग्निसदृश ज्योतिर्लिङ्गको उत्पत्ति हुई। यह मूर्त्ति सहस्रों अग्निज्वालाओंसे व्याप्त है। इनका चय, वृद्धि, आदि, मध्य और अन्त नहीं है, यह अनौपम्य और अव्यक्त है। इस लिङ्गने नानास्थानोंमें उत्पन्न हो कर विविध आख्याएं प्राप्त को हैं। (शिवपु०)

वैद्यनाथ-माहात्म्यमें ज्योतिर्लिङ्गोंके जो नाम हैं, नीचे उनको सूचो दी जाती है।

१ सौराष्ट्रमें सोमनाथ। २ श्रीशैल पर मल्लिकार्जुन। ३ उज्जयिनीमें महाकाल। ४ नर्मदातीरमें (अमरेश्वरमें) ओङ्कार। ५ हिमालयमें केदार। ६ डाकिनीमें भीमशङ्कर ७ बनारसमें विश्वेश्वर। ८ गोमतीतीरमें त्र्यम्बक। ९ चिताभूमिमें वैद्यनाथ। १० द्वारकामें नागेश। ११ सेतुबन्धमें रामेश। १२ शिवालयमें घृष्णेश्वर।

शेषोक्त लिङ्ग सम्भवतः इलोराके शिवलिङ्ग होंगे।

ज्योतिर्लोक (सं० पु०) ज्योतिषां लोकः, ६ तत्। १ कालचक्रप्रवर्तक ध्रुवलोक। २ उस लोकके अधिपति परमेश्वर वा विष्णु। ज्योतिर्लोककी स्थिति आदिके विषयमें भागवतमें इस प्रकार लिखा है—सप्तर्षिमण्डलसे तेरह लाख योजन दूरवर्ती जो स्थान है, उसीको भगवान् श्रीविष्णुका परमपद वा ज्योतिर्लोक कहा जा सकता है। उत्तानपादके पुत्र ध्रुव कल्पान्त जीवियोंके उपजीव्य हो कर अब तक इस स्थानमें वास कर रहे हैं। अग्नि, इन्द्र, प्रजापति, काश्यप और धर्म, उन्हें सम्मानपूर्वक दक्षिण-में रख कर उनको प्रदक्षिणा दे रहे हैं। भगवान् काल निमिष-शून्य अस्फुटवेगसे जिन ग्रहनक्षत्र आदि ज्योतिर्गणको भ्रमण करा रहे हैं; ध्रुव, परमेश्वरके द्वारा उनके स्तम्भस्वरूपमें नियोजित हो कर निरन्तर प्रकाशमान हो रहे हैं। जिस तरह बैल आदि पशु कोल्हमें जुत कर सवेरेसे शाम तक भ्रमण करते हैं, उसी तरह ज्योतिर्गण स्थानके अनु-सार ध्रुवके चारों ओर (मण्डलाकार) भ्रमण करते हैं। इसी तरह नक्षत्र, ग्रह और कालचक्रके अनन्तर और वहिर्भागमें संलग्न हो, ध्रुवका ही अवलम्बन कर वायु द्वारा सञ्चालित हो कल्पान्त तक भ्रमण करते हैं। ज्योतिर्गणकी गति कार्य-विनिर्मित है, जैसे कर्मसहाय मेघ और श्येनादि पक्षी वायुके वशीभूत हो नभोमण्डल-में भ्रमण करते हैं। (गिरते नहीं), उसी प्रकार ज्योति-र्गण भी इस लोकमें परमपुरुषके अनुग्रहसे आकाश-मण्डलमें विचरण करते हैं—भूमि पर भ्रष्ट नहीं होते। भगवान् वासुदेवने योगधारणाके द्वारा इस लोकमें जिन ज्योतिर्गणोंको धारण किया है, कोई कोई उनका, शिशुमारके आकारमें कल्पना कर वैसा ही वर्णन करते हैं। वह शिशुमार कुण्डलीभूत और अधःशिराके आकारमें अवस्थिति करते हैं। उनके पुच्छाग्रमें ध्रुव, लाङ्गूलमें प्रजापति, इन्द्र और धर्म, लाङ्गूलके मूलमें धाता और विधाता तथा कटिदेशमें सप्तर्षि विराजित हैं। शिशुमारका शरीर दक्षिणावर्तमें कुण्डलीभूत हुआ है। उस शरीरके दक्षिण पार्श्वमें अभिजित्से ले कर पुनर्वसु पर्यन्त चौदह तथा वामपार्श्वमें पुष्यासे उत्तराषाढ़ा तक चौदह नक्षत्र सन्निवेशित हैं; उन्हींके द्वारा कुण्डलाकार-में विस्तृत शिशुमारके दोनों पार्श्वको अवयवसंख्या समान हुई हैं। उसके पृष्ठदेशमें अजवीथी तथा उदरमें आकाशगङ्गा प्रवाहित है।

पुनर्वसु और पुष्या यथाक्रमसे शिशुमारके दक्षिण और वाम नितम्ब पर आर्द्रा और अश्लेषा दक्षिण और वाम पादमें अभिजित् और उत्तराषाढ़ा दक्षिण और वाम नेत्रमें तथा धनिष्ठा और मूला, दक्षिण और वामकर्णमें यथाक्रमसे सन्निविष्ट हैं। मघासे ले कर अनुराधा पर्यन्त दक्षिणायण-सम्बन्धी आठ नक्षत्र उसके वामपार्श्वको अस्थिमें तथा मृगशिरा आदि पूर्वभाद्रपद पर्यन्त उत्तरा-यण सम्बन्धी अष्टनक्षत्र उसके दक्षिण पार्श्वको अस्थिमें संयुक्त हैं। शतभिषा और ज्येष्ठा यथाक्रमसे दक्षिण और वाम स्कन्ध पर स्थापित हैं, उसके उत्तर हनू पर अगस्त्य, अधर हनु पर यम, मुखमें मङ्गल, उपस्थमें शनि, पृष्ठदेश पर वृहस्पति, वक्षःस्थल पर आदित्य, हृदयमें नारायण, मनमें चन्द्र, नाभिस्थलमें शुक्र, स्तनोंमें दोनों अश्विनीकुमार, प्राण और अपानमें बुध, गलेमें राहु, सर्वाङ्गमें केतु तथा रोमोंमें तारागण सन्निवेशित हुए हैं। यही भगवान् श्रीविष्णुका सर्वदेवमयरूप है। प्रतिदिन सन्ध्याके समय इस ज्योतिर्लोकका दर्शन कर संयतचित्त हो उपासना करनो चाहिए। मन्त्र यह है—

"नमो ज्योतिर्लोकाय कालायनाय अनिमिषा पतये महापुरुषाय अविधीमहीति।"

एक विख्यात वैष्णव कवि। ये चैतन्यदेवके परिकर चिरञ्जीवसेनके कनिष्ठ पुत्र थे। ये जातिके वैद्य रहे। इनका जन्मस्थान काटोयाके अन्तर्गत श्रीखण्डमें था। भक्तमाल, भक्तिरत्नाकर और नरोत्तमविलास नामके प्राचीन बङ्गला ग्रन्थोंमें गोविन्ददासका परिचय मिलता है।

भक्तमालाके मतसे गोविन्दके छोटे भाईका नाम राम चन्द्र कविराज था। परन्तु भक्तिरत्नाकरमें रामचन्द्र गोविन्ददाससे बड़े बतलाए गये हैं। पहले चिरञ्जीव कुमारनगरमें रहते थे, इसके बाद श्रीखण्डके दामोदर-सेनको कन्या सुनन्दासे विवाह कर श्रीखण्डमें रहने लगे। सुनन्दाके ही गर्भसे रामचन्द्र और गोविन्ददास पैदा हुए थे।

रामचन्द्र नैयायिक पण्डित थे, वे अपने छोटे भाईके पहले श्रीनिवासाचार्यके निकट राधाकृष्ण-मन्त्रसे दीक्षित हुए थे। वैष्णव गोविन्ददास प्रथमावस्थामें शक्तिके उपासक थे। एक समय वे संग्रहणी रोगसे अत्यन्त कातर हो गए थे। इस पीड़ित अवस्थामें उनके हृदयमें हरिप्रेमका अङ्कुर उदय हो आया। उनने उसी पीड़ित अवस्थामें रामचन्द्रको लिखा, "भाई! मैं अत्यन्त दुःखित अवस्थामें पड़ा हूं, आप आचार्य-प्रभुको लाकर मेरा उद्धार करें।"

महाभागवत रामचन्द्रने छोटे भाईकी कथा आचार्य-प्रभुको कह सुनाई। उस समय गोविन्ददास बुधरी ग्राममें थे। आचार्य-प्रभु रामचन्द्रके कथनानुसार जाजिग्रामसे बुधरी आए और उन्होंने गोविन्ददासको राधाकृष्ण मन्त्रसे दीक्षित किया। उसी दिनसे गोविन्ददास वैष्णव भक्तमें गिना गया हुए।

गदाधरदास प्रभृतिका तिरोधान सम्वाद पा कर श्रीनिवास आचार्यके मनमें अचानक वैराग्यका उदय हुआ और उन्होंने शीघ्र ही वृन्दावनको प्रस्थान किया। श्रीखण्डके रघुनाथ ठाकुरकी आज्ञासे रामचन्द्र आचार्य-प्रभुको लानेके लिए वृन्दावन चल दिए। रामचन्द्र जाते समय गोविन्दको कुमारनगरसे तेलियाबुधरी ग्राम जानेके लिए कह गए।

श्रीनिवासाचार्य लौट कर कुछ दिन तक गोविन्दके घरमें टिके थे, यहां उनने गोविन्दके मुखसे पदावली श्रवण की। उन्हींके अनुरोधसे गोविन्ददासने गीतामृत रचना की थी। गीतामृतके सुमधुर रचनासे सन्तुष्ट हो श्रीनिवासने उन्हें 'कविराज' उपाधि दी। भक्तिरत्नाकरमें लिखा है कि जीवगोस्वामी प्रभृति पण्डित उस गीतामृतको देखनेके लिए सर्वदा आग्रह प्रकाश किया करते थे।

रामचन्द्र और आचार्य-प्रभुके वृन्दावनसे लौट आनेके बाद गोविन्ददासको भी एक बार उक्त तीर्थ देखनेको इच्छा हुई थी। वे नित्यानन्दपत्नी जाह्नवीदेवीके साथ वृन्दावन गए। उस समय गोपालभट्ट, जीवगोस्वामी आदि वैष्णव पण्डित वृन्दावनमें वास करते थे। उन्होंने गोविन्ददासका यथोचित सम्मान किया और उनके कवित्वकी परीक्षा ले कर "कविराज" उपाधि प्रदान की।

वृन्दावनसे घर लौट आने पर भक्तोंने गोविन्ददासके साथ महोत्सव किया था।

वृन्दावनसे आनेके बाद नरोत्तम ठाकुरके पितृव्य-पुत्र राजा सन्तोषदत्तके अनुरोधसे उन्होंने सङ्गीतमाधव नाटक रचना की थी।

गोविन्ददासको दिव्यसिंह नामक एक पुत्र था। नरोत्तमविलासमें लिखा है कि दिव्यसिंह भी पिताके सदृश एक बड़े भक्त थे।

अभी पदावलीमें गोविन्ददासकी बहुतसी भणिता देखी जाती है, किन्तु वे समस्त चिरञ्जीवके पुत्र गोविन्द कविराजकी बनाई हुई नहीं मालुम पड़ती है। चैतन्य-चरितामृत प्रभृति ग्रन्थोंमें एक आध जगह गोविन्ददास-का नामोल्लेख है। मिथिला अञ्चलमें भी गोविन्ददास नामक एक कवि थे, उन्होंने भी बहुतसी कवितायें रचना की थीं।

५ व्रजवासी एक हिन्दी कवि। ये विट्ठलनाथके शिष्य थे। ये १५६७ ई०में विद्यमान थे। हिंदी भाषामें इन्होंने अच्छी अच्छी कवितायें बनाई थीं। इनकी एक कविता इस तरह है—

"कुटिल कुन्तल कुण्डल काकिनी कान्ति कुवलय भासरे।
कि वे कुञ्चिताधर कुसुद कौमुदी कुन्द कैरव दामरे।
कान्ह कालिन्दीकुल कानन कुञ्जे कुञ्जर राजरे।
किंव कामिनी कुच कुमकुमाङ्कित कामकी विराजरे॥

धनुराशि तक सूर्यकी स्थितिकाल दक्षिणायन और दक्षिणायनसे मिथुनराशि तक सूर्यका स्थिति काल उत्तरायण कहलाता है। सूर्य इस उत्तरायणसे पहले मकरराशिमें, फिर कुम्भ और मीनराशिमें जाता है। इन तीन राशियोंमें स्थितिपूर्वक अहोरात्र समान कर विषुवगति अवलम्बन करता है। उस समय क्रमशः रात्रि क्षय और दिन वर्द्धित हुआ करता है। उसके बाद मिथुनराशि भोग कर उत्तरायणकी शेष सीमामें उपस्थित होता है। पीछे कर्कट राशिमें गमन करने पर दक्षिणायन प्रारम्भ होता है। कुलालचक्रका प्रान्तवर्ती जन्तु जिस तरह तेजीसे चलता है, उसी तरह सूर्य भी दक्षिणायनमें तेजीसे चलता है। वायुके वेगसे अति द्रुत गमन करनेके कारण थोड़े ही समयमें एक स्थानसे दूसरे प्रकृष्टस्थानमें उपस्थित होता है। दक्षिणायनमें सूर्य दिनमें शीघ्रगामी हो कर बारह मुहूर्तमें ज्योतिश्चक्रके पूर्वार्धको और रात्रिमें मृदुगामी हो कर अठारह मुहूर्तमें उत्तरार्द्धको अतिक्रम कर जाता है। इसीलिये दक्षिणायनमें दिन छोटा और रात बड़ी होती है।

कुलालचक्रका मध्यस्थ जन्तु जैसे मन्द मन्द चलता है, उसी तरह सूर्य उत्तरायणमें दिनको मन्दगामी और रातको द्रुतगामी होता है। इस तरह बहुत समयमें थोड़ा स्थान और थोड़े समयमें बहुत स्थान अतिक्रम करनेके कारण दिन बड़ा और रात्रि छोटी हो जाती है। उत्तरायणके शेषभागमें ज्योतिश्चक्रके अर्द्धवृत्तको अतिक्रम करनेके लिए मन्दगामी सूर्यके जो अठारह मुहूर्त व्यतीत होते हैं, उससे दिन बड़ा होता है। सूर्य दिनमें जिस प्रकार अर्द्धवृत्त अर्थात् सार्द्धत्रयोदश नक्षत्र गमन करता है, उसी प्रकार रातको भी सार्द्ध त्रयोदश (साढ़े तेरह) नक्षत्र गमन करता है। परन्तु यह गमन उत्तरायणमें रातको बारह मुहूर्तमें और दिनमें अठारह मुहूर्तमें हुआ करता है। दक्षिणायनमें इससे उलटा अर्थात् दिनमें बारह मुहूर्त और रातको अठारह मुहूर्तमें गमन करता है। ध्रुवमण्डल कुलालचक्रके मृत्पिण्डको भांति एक स्थानमें रहते हुए ही परिभ्रमण करता है। इस प्रकार उत्तर और दक्षिण दिशामें मण्डल-समूहके भ्रमण करते रहनेसे समयानुसार सूर्यको दिन और रातमें शीघ्र और मन्दगति होती है। परन्तु दिन-और रातमें समान पथ भ्रमण करके एक अहोरात्रमें वह सम्पूर्ण राशियोंको भोगता है। रातको छह राशियोंको और दिनमें अन्य छह राशियोंको भोगता है। इस तरह द्वादश राशिमय पथमेंसे आधा दिनको और आधा रातको अतिक्रम करनेके कारण दोनोंका गन्तव्य पथ समान हो गया। दिन और रात्रिकी जो ह्रासवृद्धि होती है, यह राशियोंके प्रमाणानुसार ही हुआ करती है। क्योंकि राशिके भोगसे ही दिवारात्रिकी ह्रासवृद्धि होती है।

उत्तरायणमें रातको सूर्यकी गति शीघ्र और दिनको मन्द गति होती है। दक्षिणायनमें उससे विपरीत अर्थात् दिवसमें शीघ्र गति और रात्रिको मन्द गति होती है, क्योंकि उत्तरायणमें रात्रिभोग्य राशिका परिमाण थोड़ा और दिवसभोग्य राशिका परिमाण अधिक होता है; दक्षिणायनमें इससे उलटा है।

भागवतकार कहते हैं, कि सूर्य स्वर्गमण्डल और भूमण्डलके मध्यवर्ती आकाशमें अवस्थान कर स्वर्ग, मर्त्य और पातालमें किरण फैलाता है। सूर्य अपने उत्तरायण, दक्षिणायन और विषुवसंज्ञक मन्द, शीघ्र और समान गति-द्वारा यथासमय आरोहण, अवरोहण और समान स्थानमें आरोहणादि प्राप्त हो मकरादि राशिमें अहोरात्रको छोटा, बड़ा और समान करता है, अर्थात् रात और दिन द्रुतगतिसे छोटे, मन्दगतिसे बड़े और समान गतिसे समान होते हैं। जब सूर्य मेष और तुलाराशिमें जाता है, तब अहोरात्र अत्यन्त वैषम्यभावसे प्रायः समान होते हैं। जब वृषादि पांच राशियोंमें भ्रमण करता है, तब दिन बढ़ता है और मासमें एक एक घण्टा रात छोटी होती जाती है। और जब वृश्चिक आदि पांच राशियोंमें गमन करता है, तब अहोरात्रका विपर्यय होता है अर्थात् दिन छोटा और रात बड़ी होती है। वास्तवमें जब तक दक्षिणायन रहता है, तब तक दिन बड़ा होता है और उत्तरायण तक रात्रि बड़ी होती है।

विष्णुपुराणके मतसे—शरत् और वसन्त ऋतुमें सूर्यके तुला वा मेषराशिमें गमन करने पर यथाक्रमसे तुला और मेष नामक विषुव होते हैं, जो समरात्रिन्दिव

जहाँ नहीं कुंजनता अरु कोकिल मंद सुगंध न वायु बहाय ॥
नहीं जहाँ सुनीयत श्रवणन वंशीधुन कृष्ण न पुरत अधर लगाय।
सारस हंस मोर नहीं बोलत तहाँकी बरनौं कौनको सोहाय ॥
नहीं वहाँ हम बृन्दावन वीथन गोपीन दन यशोदा माय।
गोविंद प्रभु गोपीचरणनकी ब्रजरज तजिवहाँ जाय बलाय ॥"

गोविन्दभट्ट—१ आत्मार्कबोध नामक वेदान्त ग्रंथके रचयिता।

२ तिथिनिर्णय नामका स्मृतिसंग्रहकार।

३ पराशरसंहिताके एक भाष्यकार।

४ मीमांसा-सङ्कल्पकौमुदी नामक स्मृतिसंग्रहकार।

५ राजचन्द्रयशःप्रबन्ध नामक संस्कृत काव्यरचयिता।

६ वृत्तरत्नाकरके एक टीकाकार।

७ एक विख्यात अलङ्कारशास्त्रवित्, केशवके पुत्र और रुचिकरके वैमात्रेय भ्राता। इन्होंने काव्यप्रदीप नामका काव्यप्रकाशको टीका रचना की है। काव्यप्रदीप पहले पहल श्रीहर्षने लिखना आरम्भ किया था। किन्तु उनके मृत्यु होने पर उनके अनुज गोविंदने इसे पूर्ण किया। ८ वेदांतसूत्रके एक वैष्णवीय भाष्यकार।

गोविन्दभट्ट—एक जैन ग्रन्थकार। ये जातिके कायस्थ थे। इनका बनाया हुआ एक ग्रन्थ "पुरुषार्थानुशासन" प्राप्त है। इनके श्रीकुमार कवि, सत्यवाक्, देवरवल्लभ, उद्यतभूषण, हस्तिमल्ल कवि और वर्द्धमान कवि ये छह पुत्र थे और सभी उद्भट विद्वान् थे। इनमें से मैथिलीपरिणय आदि नाटकोंके कर्त्ता हस्तिमल्ल प्रसिद्ध हैं।

गोविन्दभट्टाचार्य चक्रवर्त्ती—वङ्गदेशीय एक विख्यात पंडित, इन्होंने संस्कृत भाषामें समासवाद और पदार्थखण्डन-टीका लिखी है।

गोविन्द महामहोपाध्याय—एक विख्यात पण्डित। इन्हें 'बुधबालावधूत' नामकी एक और उपाधि है। उन्होंने अधिकरणमाला नामका एक उत्कृष्ट संस्कृत दर्शनग्रन्थ प्रणयन किया है।

गोविन्दमिश्र—१ पद्यावलीधृत एक प्राचीन कवि।

२ आनंदतीर्थ-रचित द्वादशस्तोत्रके एक टीकाकार।

गोविन्दराय—कल्याणपुरके चालुक्यवंशीय एक राजा, वीरसत्याश्रयके पिता। चालुक्य देखो।

गोविन्दराज—१ एक विख्यात पण्डित, माधवभट्टके पुत्र। इन्होंने मानवधर्मशास्त्रको टीका और मञ्जरी नामकी याज्ञवल्क्यस्मृतिकी टीका रचना की है।

२ सुभाषितावलीधृत एक प्राचीन कवि।

३ तैत्तिरीयोपनिषद्का एक भाष्यकार।

४ रामायणचंपू और राजवंश नामक संस्कृत काव्यकार।

५ सप्तश्लोकीव्याख्या और शृङ्गारतिलकका 'भूषण' नामक टीकाकार।

गोविन्दराम—१ गोविन्दविलास नामक वेदान्त ग्रंथके रचयिता।

२ कुमारसम्भवके धीररञ्जनिका नामक एक टीकाकार।

३ देवीमाहात्म्य और गङ्गासहस्र नामक एक टीकाकार।

४ रामदेवके पुत्र, महिम्नस्तवप्रकाशिकाके रचयिता।

५ राजस्थानके एक विख्यात कवि, इन्होंने सुन्दर हिंदी कवितामें "हारावती" नामक हरवंशीय राजपूत राजगणोंका इतिहासको रचना की है।

गोविंदराम शिरोमणि—एक वङ्गदेशीय पण्डित। इन्होंने शब्ददीपिका नामक मुग्धबोधकी टीका रची है।

गोविंदरामसेन-नाडीज्ञान नामक संस्कृत वैद्यक ग्रंथकार।

गोविंदवत्स—अद्वैतादित्य नामक वेदान्त ग्रंथ रचयिता।

गोविंद विद्याविनोदभट्ट—एक विख्यात संस्कृत ग्रंथकार। इन्होंने भागवतसार, क्रमदीपिकातत्त्वकी टीका और त्रिपुरासारसमुच्चयका पदार्थ-प्रकाश नामकी टीका रची है।

गोविंदशर्मन्-वेदान्त कथारत्न नामक वैदान्तिक ग्रंथकार।

गोविंदशास्त्री—१ आथर्वणरहस्य नामक संस्कृत ग्रंथकार। २ अच्युततीर्थका नामांतर। १२४९ ई०को इनका देहांत हुआ था।

गोविंदशेष—काशीवासी शेष यज्ञेश्वरके पुत्र। एक विख्यात वेदवित्। इन्होंने बौधायनीय दर्शपूर्णमासप्रयोग, बौधायनीय अग्निष्टोमप्रयोग, सोमप्रयोग और विनतानंदप्रयोग नामके कई एक वैदिक ग्रंथोंकी रचना की है।

१ वह विद्या वा शास्त्र जिससे आकाशमें स्थित ग्रह, नक्षत्र आदिकी गति, परिमाण, दूरी आदिका निश्चय किया जाता है। नभोमण्डलमें स्थित ज्योतिः-सम्बन्धी विविध विषयक विद्याको ज्योतिर्विद्या कहते हैं। और जिस शास्त्रमें उसका उपदेश वा वर्णन रहता है वह ज्योतिषशास्त्र कहलाता है। अन्यान्य शास्त्रोंको तरह ज्योतिषशास्त्र भी मनुष्य जातिकी आदिम अवस्थामें अङ्कुरित और ज्ञानोन्नतिके साथ क्रमशः परिशोधित और परिवर्द्धित हो कर वर्तमान अवस्थाको प्राप्त हुआ है। सूर्य चन्द्र तथा अन्यान्य ज्योतिर्षोंको प्रकृति ऐसी अद्भुत और विस्मयजनक है कि, उसकी ओर सचेतन प्राणी मात्रका मन आकर्षित होता है। मनुष्यको आदिम अवस्थामें इसकी ओर सभी जातियोंको दृष्टि गई थी और अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार सभी जातियोंको इस शास्त्रका थोड़ा बहुत ज्ञान भी था। अतएव इसमें आश्चर्य नहीं कि हिन्दू, कालदीय, मिस्र, चीन, गौल, पेरुवीय, ग्रीक आदि सभी जातियां अपनेको ज्योतिषशास्त्रका प्रवर्तक समझती हैं।

भारतवर्षमें वैदिक ऋषि, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, वराह मिहिर मुञ्जाल, भट्टोत्पल, श्वेतोत्पल, शतानन्द, भोज राज, भास्कर, कल्याणचन्द्र आदि, ग्रीसदेशमें थेलस, ऐनैक्सिगोरस, मिटियन, प्लेटो, रोवक, आरिष्टटल, सिथिउस आदि; मैसिडनमें आरिष्टिलस, इउक्लिड, आर्किमेडिस, हिपार्कस, टलेमी आदि; अरबमें अलबटेगल, ईरनजूनियस, उलुकवेग आदि तथा फिलहाल तमाम यूरोपमें पर्वाच्, केपलर, गालिलियो, हुक्स, कासिली, न्यूटन, ब्राडली, सिविली, लोली, हार्सेल, डिलाम्बर, डेनेम्बर्ट, इउलार, लाग्रेञ्ज, लाप्लास, इयं, टौण्डल आदि प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्‌गण इस शास्त्रकी महत् उन्नति कर गये हैं।

ज्योतिषशास्त्रको तोन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—१ गणितज्योतिष—इसके द्वारा ग्रह, नक्षत्र आदिके आकार और संस्थापनादि सम्बन्धी यथार्थ तत्त्वोंका गणितासरको सहायतासे, विशिष्टरूपसे निर्णय किया जा सकता है। २ प्राकृतिक ज्योतिष—इसके द्वारा ग्रह, नक्षत्रादिको प्रकृति अर्थात् उनकी गति, वेग तथा अन्यान्य ग्रहोंसे उनका परस्पर सम्बन्ध निर्णीत हो सकता है। ३ ध्रुव ज्योतिष—इसके द्वारा ध्रुव अर्थात् गतिहीन नक्षत्रादिका विवरण मालूम होता है। इसके अतिरिक्त व्यवहारज्योतिषके नामसे और भी एक विभाग किया जा सकता है, जिसके जरिये ज्योतिषशास्त्र सम्बन्धी नानाप्रकार यन्त्र, ज्योतिषिक नियम और गणना की प्रक्रिया मालूम हो सकती है। प्राकृतिक ज्योतिष बिना जाने ही इन नियमादिसे परिचित हो ज्योतिर्विद्‌की तरह कार्य किया जा सकता है।

भारतवर्षीय प्राचीन विद्वानोंने ज्योतिषको साधारणतः दो भागोंमें विभक्त किया है—कि एक फलित-ज्योतिष और दूसरा सिद्धान्त। जिसके द्वारा ग्रहनक्षत्रादिका सञ्चारादि देख कर पृथिवीके प्राणियोंको भावी अवस्था और मङ्गलामङ्गलका निर्णय किया जाता है, उसका नाम है फलितज्योतिष तथा जिसके द्वारा स्पष्ट एवं अभ्रान्तरूपसे गणना करके ग्रहनक्षत्रादिको गति और संस्थानादिके नियम, उनको प्रकृति और तज्जन्य फलाफलोंका दृढ़रूपसे निरूपण किया जाता है, वह सिद्धान्त ज्योतिष कहलाता है। मालूम होता है, कि इसी तरह अंग्रेजोंका Astrology और Astronomy यथाक्रमसे फलित और सिद्धान्तज्योतिष है। सिद्धान्तज्योतिषको भारतीय आर्यगण गणितज्योतिष भी कहते थे। सिद्धान्तशिरोमणिके गोलाध्यायमें लिखा है—"द्विविधगणितमुक्तं व्यक्तमव्यक्तरूपम्" अर्थात् गणित वा सिद्धान्त-ज्योतिष दो प्रकारका है, व्यक्त और अव्यक्त। जिसमें गणितको सहायतासे ग्रहनक्षत्रादिका आकार, संस्थान सञ्चार, वेग, ग्रहान्तरके साथ परस्पर सम्बन्ध और तज्जन्य फलाफल विशेषरूपसे व्यक्त होता है उसे व्यक्त और तदन्यतरको अव्यक्त कहते हैं।

सिद्धान्त-ज्योतिर्विदोंने फलित-ज्योतिषकी निन्दा को है। सिद्धान्तशिरोमणिका मत है कि गणितशास्त्रका एकदेशमात्र जातकसंहिता है; सम्पूर्ण जान कर भी जो व्यक्ति अनन्तयुक्तियुक्त सिद्धान्त ज्योतिष नहीं जानते हैं, वे चित्रमय राजा अथवा काष्ठमय सिंहके समान हैं। गणेशका मत है कि जन्मकालीन ग्रहनक्षत्रादिके अवस्थानको देख कर यह जानना कि अमुक समयमें

धारण करना पड़ता है। एक मास पर्यन्त उक्त नियमके अनुष्ठानको गोव्रत कहते हैं। गोइत्या शब्दमें विशेष विवरण देखो।

गोव्रतिन् (सं त्रि०) गोव्रतमस्यास्ति अनुष्ठेयतया गोव्रत-इनि। गोव्रत आचरण करनेवाला।

गोहा—यशोर जिलाके सुन्दरवन विभागके अन्तर्गत एक ग्राम। यह कपोताक्ष नदी कूल पर अवस्थित है पूर्व समयमें यह बहुजनाकीर्ण रहा, ध्वंसावशिष्ट वृहत् वासभवनादि आज भी उसका परिचय देते हैं। इस ग्रामकी रक्षाके लिये कपोताक्ष नदी पर एक पुल है।

गोश (फा० पु०) १ सुननेकी इन्द्रिय, कान। (स्त्री०) २ पर्दानशीन, जो स्त्री सदा घरमें ही रहती, किसी दूसरे पुरुषके समक्ष बाहर नहीं होती हो।

गोशकृत् (सं० क्ली०) गोः शकृत् ६-तत्०। गोमय, गोबर।

गोशत (स० पु०) १०० गौओंका दाना।

गोसपेच (फा० पु०) कानमें पहनेका जेवर।

गोशफ (सं० पु-क्ली०) गोः शफः, ६-तत्०। गोका खुर।

गोशमायल (फा० पु०) कानके पास लटका रहता हुआ मोतियोंकी लडीका गुच्छा जो पगड़ीमें एक ओर लगा रहता है।

गोशमाली (फा० स्त्री०) १ कान उमेठना। २ ताड़ना, कड़ी चेतावनी।

गोशर्य (सं० पु०) शर्या शीर्षा गोर्यन, बहुव्री०, विशेषणस्य परनिपातश्छान्दसः। वृहत् सर्प, अजगर।

गोशवारा (फा० पु०) १ खञ्जक नामका पेड़। २ कुण्डल, कानका बाला। ३ सीपका बड़ा मोती। ४ पगड़ीका किनारा जो कलाबतुसे बुना रहता है। ५ तुर्रा, कलगी, सिरपेच। ६ जोड़, मिजान।

गोशा (फा० पु०) १ कोण, कोना। २ एकान्तस्थान, जहाँ कोई न हो। ३ तरफ़, दिशा, ओर। ४ धनुषकोटि, कमानकी दोनों नोकें।

गोशाड्वल (सं० पु०) ग्रन्थिपर्णी।

गोशाल (सं० क्ली०) गवां शाला, ६-तत्। विकल्पे क्लीवत्वञ्च। गोशाला, गौके रहनेका घर।

गोशाला (सं० स्त्री०) गोःशाला, ६-तत्। गोगृह, गोष्ठ, गौओंके रहनेका स्थान।

गोशिशरा—कौशाम्बी नगरका उपनगर। कौशाम्बी देखो।

गोशीर्ष (सं० पु०) गोः शीर्षमिव शीर्षं यस्य, बहुव्री०। १ एक पर्वतका नाम जो देखनेमें ठीक गोशृङ्गाकृति की है। २ चन्दनविशेष, जो उक्त पर्वत पर उत्पन्न होता है। ३ एक प्रकारका अस्त्र। (क्ली०) गोशीर्ष, ६ तत्। गोमुण्ड, गौका मस्तक।

गोशीर्षक (सं० पु०) गोः शीर्षमिव कायति कै-क। १ द्रोणपुष्पीवृक्ष। गोशीर्ष स्वार्थे कन्। २ श्वेतचंदन।

गोशृङ्ग (सं० पु०) गोः शीर्षमिव शृङ्गं शीर्षभागो यस्य, बहुव्री०। १ ऋषिविशेष। (स्कन्दपु० प्रभासखण्ड) २ एक पर्वत। रामायणमें लिखा है कि इस पर्वत पर मंदेह नामके बहुतसे राक्षस रहा करते थे। ये क्षुद्राकृति अथवा एक हाथ परिमाणके ऊंचे थे। रात्रिके समय वे टहलने बाहर निकलते और सांसारिक कार्य किया करते थे, किन्तु रात्रिके अवसान होने पर पुनः जलमें छिप जाते और सूर्यास्त होने पर बाहर निकल आते थे। ये बड़े दुष्ट और दुराचारी रहे, इनके शापसे इस अवस्थाको प्राप्त हुवे थे। यह पर्वत बौद्धोंके धर्म-ग्रन्थमें एक पुण्य शैल कह कर वर्णित है। स्वयम्भूपुराणमें लिखा है कि सत्ययुगमें इस पर्वतका नाम पद्मगिरि, त्रेतायुगमें वज्रकूट, द्वापरमें गोशृङ्ग और वर्तमान कलियुगमें गोपुच्छ पडा है। (स्वयम्भूपुराण १ अ०)

महाभारतमें भी इस पर्वतका उल्लेख है। चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्गने "किउ-शि-लिं-किया" नामसे इस पर्वतका उल्लेख किया है। (क्ली०) गोशृङ्ग, ६ तत्। गौका शृङ्ग, गौका सिंघ। (पु०) गोशृङ्गं तदाकारोऽस्त्यस्य गोशृङ्ग-अच्। ४ बब्बूर वृक्ष, बबूलका पेड़। ५ हिंदुओंके एक तरहका सामरिक यन्त्र।

गोश्त (फा० पु०) मांस, आमिष।

गोश्रुति (पु०) वैयाघ्रपद्य गोत्रोत्पन्न एक ऋषि।

गोश्व (सं० पु०) गोश्चाश्वश्च इतरेतरद्वन्द्व। गौ और अश्व, बैल और घोड़ा।

गोषखि (सं० पु०) गोः सखा यस्य, बहुव्री०, छांदसत्वात् सत्वं। १ दुग्धसे मिश्रित वस्तु। २ वह मनुष्य जिसका गौ ही सखा हो।

गोषड्गव (सं० क्ली०) गवां षट्कं गो-षड्गवच। गोषट्क, गौकी छह संख्या छह, गाय।

ध्रुचक्रके कुछ ऊपर सर्वदा स्थिर देखते हैं, वही ध्रुव-नक्षत्र है। दक्षिण केन्द्रको तरफ भी ऐसे ध्रुवनक्षत्र विद्यमान है।

जिस प्रकार पृथिवीके उत्तर-दक्षिणविन्दुको केन्द्र बना कर पृथिवीके समस्त स्थानोंका मानचित्र बनाया जाता है, उसी प्रकार उक्त दोनों केन्द्रोंको सौरजगत्का केन्द्र बना कर सम्पूर्ण सौरजगत् और आकाशका मानचित्र बनाया जा सकता है।
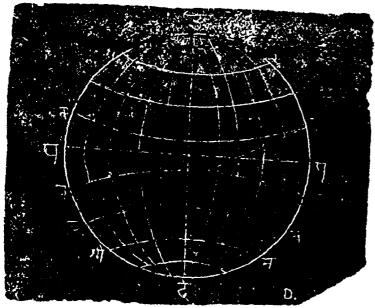
यह मानचित्र आकाशका है। इसके बीचमें पृथिवी है। पृथिवीको उत्तरदिशा और इसकी उत्तरदिशा एक ही है; इसका चिह्न है 'उ'। इसी तरह पूर्वदिशाका 'पू' दक्षिणका 'द' और पश्चिमका 'प' चिह्न है। 'उ' और 'द' इसके दो केन्द्र हैं। इन दो केन्द्रोंसे समान दूरवर्ती जो आकाशके तले वृत्त है, उसे विषुवद्वृत्त और जिस कल्पित रेखाके द्वारा वह वृत्त होता है, उसे विषुवद्रेखा वा विषुवरेखा कहते हैं। सूर्यके इस स्थानसे गमन करने पर वह आकाशके ठीक बीचमें अवस्थित रहता है। सुतरां उस समय पृथिवीके सर्वत्र ही दिन और रात्रि समान होती है। पृथिवीको वार्षिक गतिके कारण वह रेखा सूर्यके वर्षमें दो बार (अंग्रेजी तारीख २० मार्च और २२ सेप्टेम्बरको) ऊपर चढ़ती है।

खगोलस्थ जितनी भी कल्पित रेखाएं वा विषुवरेखा समान्तराल है, उन्हें अपम, सम वा अपमचक्र कहते हैं और जिस मण्डलाकार पथसे सूर्य परिभ्रमण करता है, उसे क्रान्तिकक्ष।

क्रान्तिकक्ष और विषुवरेखाके मिलनेसे जो कोण होता है वह २३½ अंश परिमित है। यहांसे सूर्य उत्तरायण-पथसे ६६½ अंश तक दूर चला जाता है। इसी तरह दक्षिणायन पथमें भी ६६ अंश तक गमन करता है। अतएव खगोलस्थ उत्तरकेन्द्रसे सूर्यको गति ११३½ अंश दूर तक हुआ करती है।

२१ जूनको सूर्य उत्तरायणके सुदूर स्थानमें गमन करता है और फिर कर्कट राशिमें सममण्डलस्थ (Vertical) होता है। २१ दिसम्बरको जब सूर्य दक्षिणायनके सुदूर मार्गमें पहुंचता है, तब Capricorn सममण्डल होता है और जब विषुवरेखाके ऊपर आता है, तब विषुवरेखाके सममण्डलस्थ होती है।

क्रान्तिकक्षाके उत्तरांशमें जिस जगह जून मासमें सूर्योदय होता है, उससे कुछ दक्षिणमें एक उज्ज्वल नक्षत्र उदित होता है जिसे 'कपिल' कहते हैं। यह कपिल नक्षत्र बृहत् भल्लूकके पश्चिमांशमें, उत्तरकेन्द्रसे बहुत दूरी पर अवस्थित रहता है।

विषुवरेखासे आकाशस्थ नक्षत्रादिका दक्षिण वा उत्तर दिशामें जो दूरत्व है, उसे अपम कहा जा सकता है। उस समय सूर्य २१ जूनको २३½ अंश उत्तरपथ पर अवस्थित रहता है। अतएव आकाशमण्डलका अपम पृथिवीके अक्षांशके समान है।

जिन वृत्तोंको कल्पना खगोलस्थ दोनों केन्द्रोंके मध्य की गई है, उनको होराचक्र (celestial meredian) कहते हैं। सममण्डल अर्थात् प्रथम होराचक्रसे ज्यतिमण्डलके पूर्वभागके दूरत्वको विक्षेप (Right Acension) कहा जा सकता है; विशेष भूगोलके दीर्घांश (Longitude)-के समान है। किन्तु पृथिवीको द्राघिमा जैसे पूर्व पश्चिम दोनों दिशाओंसे गिनी जाती है, विक्षेपपातका निर्णय उस तरह नहीं होता। इसकी गणना पूर्वदिशासे शुरू कर पुनः शून्य स्थानके निकटवर्ती ३६० अंशमें समाप्त होती है। जिस स्थल पर सूर्य (२० मार्चको) विषुवरेखामें गमन करता है, जो स्थल मेषराशिका प्रथम गृह समझा जाता है और जिस स्थल पर सूर्यके आगमनसे (वसन्त ऋतुमें) दिनरात्रिका परिमाण समान होता है, उस स्थानसे जो होराचक्र जाता है, उसे प्रथम होराचक्र कहा जा सकता है। पूर्वप्रदर्शित मानचित्रमें 'प'

व्यारका स्वामी, घरका मालिक । २ सभापति या समाजपति ।

राढी ब्राह्मणोंकी कुलाचार्यकारिकामें लिखा है—

"कुलीनां. श्रोत्रिया सर्वे यस्यान्न भुञ्जते हृष्ट.।
कुलीनाय सुतां दत्ता स गोष्ठीपतिरुच्यते ॥"

कुलीन और श्रोत्रियगण जिसका अन्न भोजन करते, जो अपनी कन्याको कुलीनको दान करते, उन्हें गोष्ठीपति कहते हैं।

गोष्ठीपतिका लक्षण—नानाशास्त्रविशारद, रसिक, काव्यानुरागी, निर्दोष, कुलभूषण, कुलज्ञ और भागवतकथा श्रवणपरायण ।

वङ्गीय कुलाचार्योंके ग्रन्थोंमें लिखा है कि गांगुली वंशमें लक्ष्मीकांत मजुमदार मुखटीवंशमें मदनभट्टाचार्य, इसके बाद उसी वंशमें गन्धर्व राय, वन्द्यवंशमें शुभराज खान तथा चट्टवंशमें अनंत भट्टाचार्य, ये पाँच मनुष्य प्राचीन गोष्ठीपति थे। अभी राढ़ी ब्राह्मणोंमें बहुतसे गोष्ठीपति देखे जाते हैं।

पाश्चात्य वैदिकोंमें हरिहरकी सन्तान कोई गोष्ठी-का पद मिला करता था।

दक्षिणराढ़ीय कायस्थोंकी कुलाचार्यकारिकाके मतसे कायस्थ-गोष्ठीपतिका लक्षण—नीतिज्ञ, कुलकर्मठ, मान्य, गण्य, धार्मिक, कुलीनप्रतिपालक, कुलमर्यादाकारी, दाता, सद्वंशीय और सन्मौलिक।

कायस्थकुलीनके कुलाचार्य ग्रंथमें इन समस्त गोष्ठीपतियोंके नाम यों हैं—

प्रथम १२वीं पर्यायमें सुबुद्धि खाँके पुत्र श्रीमंत राय, १३वीं पर्यायमें पुरंदर खाँ, १४वीं पर्यायमें उनके पुत्र केशव खाँ, १५वीं पर्यायमें केशवके पुत्र श्रीकृष्ण विश्वासखास, १६वीं पर्यायमें दयाराम पाल, १७वीं पर्यायमें उनके पुत्र रामभद्रपाल, १८वीं पर्यायमें उन्हींके पुत्र, १९वीं पर्यायमें पालवंशीय कन्यासे विवाह कर किङ्करसेन, २०वीं पर्यायमें किङ्करसेनको वंशीय कन्यासे विवाह कर गोपीकांतसिंह चतुर्धुरी, २१वीं पर्यायमें गोपीकांत वंशके रामकांतसिंह, २२वीं पर्यायमें रामकांतवंशकी कन्यासे अपने दत्तकपुत्र गोपीमोहनका विवाह देते हुए राजा नवकृष्ण, २३वीं पर्यायमें राजा गोपीमोहन, २४वीं पर्यायमें उनके पुत्र परम पण्डित राज राधाकान्त देव गोष्ठीपति हुए थे।

गौडवंशावली पढनेसे जाना जाता है कि—

वङ्गज कायस्थोंमें चन्द्रद्वीपके सिर्फ वसुवंशीय राजा बराबर समाजपति या गोष्ठीपति होते थे। उसके बाद वसुवंशके अन्तिम राजा प्रेमनारायणके कोई पुत्र न रहनेसे उनके भांजा उदयनारायणमित्र और उसी वंशके चन्द्रद्वीपके राजा वङ्गज कायस्थोंके गोष्ठीपति होते आ रहे हैं।

उत्तरराढीय कायस्थोंमें राजा वल्लालसेनके समसामयिक व्याससिंह वंशके राजा लक्ष्मीधर पहले "कायस्थ गुरु" या सभापति हुए थे। इसी वंशमें दीवान गङ्गा गोविन्दसिंह पैदा हुए थे। गङ्गागोविन्दसिंह देखो। राजा लक्ष्मीधर वंशके प्रधान मनुष्य ही सभापति या गोष्ठीपति हुआ करते थे। किन्तु बहुत स्थानोंमें उत्तर राढीय वंशके राजा अपनेको उक्त समाजोंके सभापति या गोष्ठीपतिके जैसा परिचय देते हैं।

वैद्य भरतमल्लिककी कुलपञ्जिकाका मत है कि विनायक सेन ही पहले पहल गोष्ठीपति हुए थे। इसी वंशके राजा बराबर गोष्ठीपति हुआ करते थे, अन्तमें ढाकाके नवाब राजवल्लभ और उसी वंशके प्रधान व्यक्ति गोष्ठीपति हुए। कुलीनशब्द देखो।

गोष्ठीश्वर (सं० पु०) उद्गज्वर।

गोष्ठेक्ष्वेडिन् (सं० पु०) गोष्ठे क्ष्वेडते क्ष्विड़-णिनि पात्रे समितादित्वात् अलुकसमा०। प्रगल्भ, आत्मश्लाघी, वह मनुष्य जो अपनी झूठीबडाई करता हो।

गोष्ठेगल्भ (सं० पु०) गोष्ठे गल्भते गर्वं करोति गल्भ-अच्। प्रगल्भ।

गोष्ठेपटु (सं० त्रि०) पात्रे समितादित्वादलुक् समा०। प्रगल्भ, वह जो सिर्फ घरहीमें शूर हो।

गोष्ठेपण्डित (सं० त्रि०) पूर्ववद् अलुक्समा०। प्रगल्भ, जिसका पाण्डित्य घरहीमें चले बाहरमें किसीसे आदर न पाता हो।

गोष्ठेप्रगल्भ (सं० त्रि०) पूर्ववत् अलुक्स०। प्रगल्भ, जो सभास्थलमें अपनी प्रगल्भता प्रकाश करता हो।

गोष्ठेशय (सं० त्रि०) गोष्ठे गोस्थाने शेते शी-अच् अलुक्-

भते हैं। कारण परवर्ती "सिद्धान्तों"की भांति ज्योतिष-शास्त्रको शिक्षा देना ज्योतिष-वेदाङ्गका उद्देश्य न था।

ज्योतिष-वेदाङ्ग अत्यन्त संक्षिप्त ग्रन्थ है। ऋग्वेदीय ज्योतिष-वेदाङ्गके कुल तीन ही श्लोक हैं और यजुर्वेदीय ज्योतिष-वेदाङ्गके सिर्फ ४३ श्लोक मिले हैं। इन दोनोंके कुछ श्लोक साधारण हैं और कुछ पृथक्। दोनोंको मिलाने पर हमें सिर्फ ४८ पृथक श्लोक मिलते हैं। ये श्लोक अत्यन्त संक्षिप्त हैं और विषयानुक्रमसे संयोजित भी नहीं है। अधिकांश हो अनुष्टुप छन्दमें रचे गये हैं।

पाश्चात्य विद्वानोंमें सबसे पहले जोन्स (Collected Works, Vol. I) कोलब्रुक (Essays, vols II &III) बेण्टली (Hindu Astronomy, part I, sections I and II और डेभिस्ने (Asiatic Researches, vol.II) वेदाङ्ग-ज्योतिष अध्ययन किया था। किन्तु इनमेंसे समग्र वेदाङ्ग-ज्योतिषका अर्थ कोई भी न समझ सके थे। प्रायः अर्द्ध शताब्दीके बाद मैक्समूलर (Rigveda sambita, vol.4 Preface), ओयेबर (Veberden vedakalendar, Namen, Jyotisham) और ह्विटनिने (The Lunar zodiac, Indian Antiquary, vol. 24,p. 365, etc.) इस विषयमें ध्यान दिया। ओयेबर साहबने (१८६२ ई०में) बहुतसी पाण्डुलिपि देख कर नाना प्रकार पाठान्तरोंके साथ दोनों शाखाओंके मूल श्लोक, जर्मन भाषाका अनुवाद, यजुर्वेदीय वेदाङ्ग-ज्योतिषकी (सोमकरको) टीका और उस टीकाके आधार पर (उनको) टिप्पणी सहित ज्योतिष-वेदाङ्गका एक संस्करण प्रकाशित किया था। यद्यपि श्लोकोंका अर्थ वे सम्यक्‌रूपसे ग्रहण नहीं कर सके हैं, तथापि नाना प्रकार पाठान्तरोंके साथ ज्योतिष-वेदाङ्गके इस संस्करणके निकालनेसे भारतवासी उनके कृतज्ञ हैं। ओयेबरके बाद डा० थिबो (J.A.S.B. 1877), शङ्कर बालकृष्ण दीक्षित, लाला छोटेलाल, पं० सुधाकर द्विवेदी आदिने इस विषयकी आलोचना की है।

बेण्टलि साहबने हिन्दुओंके ज्योतिषको आधुनिक प्रमाणित करना चाहा था, किन्तु अन्तमें उन्होंने अपने शेष-ग्रन्थमें स्पष्ट स्वीकार किया है कि प्रायः ३३०० वर्ष पहले भी हिन्दुओंने चन्द्रके सप्तविंशति नक्षत्रभोगका निरूपण किया था। अरबियोंको पहले पहल भारतियोंसे ज्योतिषशास्त्र मिले थे। अरबी भाषामें, न्यूनाधिक ६५० वर्ष पहले "आयन्-उल अम्बा फितल कालुल अत्वा" नामक ग्रन्थ रचा गया था। इसमें लिखा है, कि भारतवर्षीय विद्वानोंने अरबके अन्तःपाती बोगदादको राजसभामें जा कर ज्योतिष और चिकित्सादि शास्त्रोंकी शिक्षा दी थी। कर्क नामक एक पण्डित ६८४।८५ शकमें बादशाह अल मनसूरके दरबारमें गये थे। चिकित्सारसायन और ज्योतिविद्यामें इनकी अच्छी गति थी। इनके पास बहुतसी भारतीय पुस्तकें भी थीं, जिनमें एकका नाम "सिद्धत् सिन हिन्द' लिखा गया था। यह वराहमिहिरकृत बृहत् संहिताका होना निश्चयत असम्भव नहीं।

अब ऋक् और यजुर्वेदके आधारसे यह दिखाया जाता है कि वैदिकयुगमें हिन्दुओंका ज्योतिषविषयक ज्ञान कैसा था।

"प्रपद्येते श्रविष्ठादौ सूर्याचन्द्रमसावुदक्।
सर्पार्धे दक्षिणाऽर्कस्तु माघश्रावणयोः सदा ॥" ६।२।७

अर्थात् सूर्य और चन्द्रके अविष्ठा नक्षत्रके आदि विन्दुमें आने पर उत्तरायणका तथा सर्प (अश्लेषा) नक्षत्रके 'मध्यविन्दुमें' आने पर उनके दक्षिणायनका प्रारंभ होता है। सूर्य यथाक्रमसे माघ एवं श्रावण मासमें इन दो विन्दुओंमें आते हैं अर्थात् सूर्यका उत्तरायण और दक्षिणायण सर्वदा माघ और श्रावणमें ही होता है।

"घर्मवृद्धिरपांप्रस्थः क्षपाह्रास उदग्गतौ।
दक्षिणे तौ विपर्यासः षण्मुहूर्त्ययनेन तु ॥" ७।२।८

उत्तरायणसे प्रतिदिन, जलके एक प्रस्थके बराबर, दिनको वृद्धि और रात्रिका ह्रास हुआ करता है। एक अयनमें छ मुहूर्त मात्र।

"भंशाः स्युरष्टकाः कार्याः पक्षा द्वादशकोद्गताः।
एकादशगुणश्चेन्दोः शुक्लेऽर्धे चैन्दवा यदि ॥" २, १०।२५।

अर्थात् (युगके प्रारंभसे) पक्षसंख्या निर्णय करें। द्वादशपक्षमें ८ नक्षत्रांशका उद्गम होता है। कृष्णपक्षान्त होने पर प्रति पक्षमें चन्द्रके ११ नक्षत्रांशका उद्गम होता है, और चन्द्रपक्ष शुक्ल होने पर इसके साथ और भी अर्द्ध नक्षत्र योग करना पड़ता है।

दान। मत्स्यपुराणमें लिखा है कि, पुण्यतिथि, युगादि या मन्वन्तरमें यह दान किया जाता है। तुलापुरुषदानके जैसा सबसे पहले लोकपालोंको आवाहन करना चाहिए और उसी नियमके अनुसार पुण्याहवाचन और होम करें। अलिक, मण्डपसज्जा, भूषण, आच्छादन प्रभृति और लक्षणयुक्त एक वृषको वेदीके मध्य लाना चाहिए। वेदीके बाहर एक हजार गोको वस्त्र तथा मूल्यद्वारा भूषित कर रखें। गौओंके शृङ्ग सुवर्णमय और खुर रौप्यमय होना चाहिए। इसके बाद इन गौओंमेंसे दश गौओंको मण्डपमें ले जाकर वस्त्र तथा मालासे सुशोभित करे। सुवर्णका छोटा घण्टा, काँसेका दोहनपात्र, सुवर्णतिलक, हेमपट्ट रेशमी कपड़ा, माल्य, गन्ध, हेमरत्नमय शृङ्ग, चामर, पादुका, जूता, छत्र और आसन ये समस्त द्रव्य गोके साथ देने होते हैं। दश गौओंके मध्य एक काञ्चनमय नन्दिकेश्वरको मूर्त्ति भी रहे। उसे भी रेशमी वस्त्रादिसे सुशोभित करें। इस तरह वृष और गौओंको भूषित कर मण्डपमें रखे जानेके बाद पुण्यकाल आने पर सर्वौषधि जलसे स्नान और कुसुमाञ्जली ग्रहण कर निम्नलिखित मन्त्र पाठ करना चाहिए। मन्त्र यथा—

"नमोऽस्तु विश्वमूर्त्तिभ्यो विश्वमातृभ्य एव च।
लोकाधिवासिनीभ्यश्च रोहिणीभ्यो नमो नमः॥
गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनान्येकविंशतिः।
ब्रह्मादयस्तथा देवा रोहिण्यः पान्तु मातरः॥
गावो मे अग्रतः सन्तु गावः पृष्ठत एव च।
गावः शिरसि मे नित्यं गवां मध्ये वसाम्यहं॥
यस्मात्त्वं वृषरूपेण धर्म एव सनातनः।
अष्टमूर्त्तेरधिष्ठानमतः पाहि सनातन॥"

यह मन्त्र पढ़ कर नन्दिकेश्वर गुरुको दान दें। इसके साथ साथ एक गाय और अनेक तरहके उपकरण भी देने पड़ते हैं। उन दश गौओंसे एक एक गौ यज्ञ करानेवालेको दान करना चाहिए और याजक तथा गुरुकी अनुमति ले कर दूसरे दूसरे ब्राह्मणोंको एक एक गो दान करे। एक मनुष्यको दो गो कदापि दान न दें। इस दानके पहले तीन दिन और अशक्तपक्षमें एक दिन सिर्फ दूध खा कर रहना पड़ता है। दूसरे दूसरे दानके जैसे इसके पहले भी वृद्धिश्राद्ध, शिवादिपूजा और याजकोंका वरण करना होता है। इस तरह गोसहस्र दान करनेसे समस्त पाप नष्ट होते हैं। जो उपरोक्त रीतिसे गोसहस्र दान करते, वे किङ्किणीजाल-परिवृत सूर्यवर्ण रथपर चढ़ देवलोक जा कर सुखसे कालक्षेपण कर सकते हैं। एक मन्वन्तर पर्यन्त वहां पुत्र-पौत्रादियोंके साथ रह कर शिवपुर जाते हैं। उनके पितृकुलके एकसौसे अधिक तथा मातामह कुलके भी उतने ही पुरुष पापसे मुक्ति लाभ करते हैं। वे एक सौ कल्प तक शिवलोकमें वास कर भूमण्डलमें राजचक्रवर्ती हो जन्मग्रहण कर सकते तथा इस जन्ममें शिवभक्त होते हैं। एकसौ अश्वमेध और वैष्णवयोग अवलम्बन कर संसार बन्धनसे छुटकारा पाते हैं। जो गोसहस्र दान करते हैं, समस्त पितृलोक उन पर संतुष्ट रहते हैं। पितृलोकके रहनेवाले पितृगण गोसहस्रदाताकी प्रशंसाके लिये सर्वदा निम्न दो श्लोक पाठ किया करते हैं—

"अपि स्यात् स कुलेऽस्माकं पुत्रो दौहित्र एव च।
गोसहस्रप्रदो भूत्वा नरकादुद्धरिष्यति॥
तस्य कर्म करो वा स्यादपि द्रष्टा तथैव च।
संसारसागरादस्मात् योऽस्मान् सन्तारयिष्यति॥"

इस श्लोकसे जाना जाता है कि जो मनुष्य गोसहस्र दाताके भृत्य हैं और जो भक्तिपूर्वक आद्योपान्त गोसहस्र दान देखते हैं उनके पितृकुल तथा मातृकुलका भी उद्धार हो जाता है। (मत्स्यपु० २८८ अ० और हेमाद्रिदानखण्ड)

आथर्वण गोपथब्राह्मणमें, गोसहस्रकी विधि इस तरह लिखी हुई है—गोशालेमें, जलके समीप एक स्थान परिष्कार कर बहुतसा पुराना जलानेका काष्ठ उस जगह रखें। बाद विधिके अनुसार अग्निस्थापन कर होम करें। पहले "चा गाव" सूक्त द्वारा और उसके बाद "महान्तं कोशमुदच" इत्यादि मन्त्र द्वारा होम करना चाहिये। अग्निके पश्चिम भागमें तीर्थोदक परिपूर्ण एक कलसी रख 'यदि मत्तो गोष्ठे न" इत्यादि मन्त्र पाठ करके दश गौओंको स्नान करावें। इसके बाद सहस्र गौओंका भी अभ्युक्षण कर उस गोके स्नान-जलसे 'इमनिन्द्र वर्द्धय क्षत्रियं म" इत्यादि मन्त्र पाठपूर्वक राजाको अभिषिक्त करना होता है। तत्पश्चात् "इमा आप" मन्त्रसे अञ्जन, अभ्यञ्जन और अनुलेपन कर सहस्र गौओंके आगेकी गायको अलङ्कित करें, और "गावो मामुपतिष्ठत प्रजापतो सुखवासान्" इत्यादि मन्त्र पाठपूर्वक गौको

उत्पन्न है, ऐसा अनुमान किया जा सकता है। Orion शब्द प्राचीनकालमें नववर्षारम्भ ऐसा अर्थ प्रकट करता था। ग्रीकोंके Orion, Canis & Ursa शब्दके साथ वेदोक्त अग्रयण, श्वन् और ऋच शब्दका सादृश्य पाया जाता है।

६। ऋग्वेदमें स्पष्ट लिखा है कि, सूर्य मृगशिरामें संक्रमित होने पर उत्तरायण प्रारम्भ होता है।

(क) "वर्ष शेष होने पर कुक्कुर सूर्यकिरण जागरित करेगा" (ऋग्वेद १।१६१।१२) इसका सरल अर्थ यह है कि, प्रथम सूर्य निरक्षवृत्तके दक्षिणांशमें रहनेसे देवोंको रात्रि होती है। सूर्य निरक्षवृत्तके उत्तरांशमें आने से श्वन् उसको प्रबोधित करेगा; अर्थात् वासन्त विषुवद्दिनमें मृगशिरा वर्षको सूचना देता है।

(ख) ऋग्वेदमें (१०।८६।४—५) इन्द्र सूर्यको कहते हैं—हे क्षमताशील वृषाकपि! जब ऊर्द्धमें उदित हो कर तुम हमारे आलयमें आओगे, तब मृग कहां रहेगा? अर्थात् सूर्य मृगशिरामें संक्रमित होने पर उक्त नक्षत्रपुञ्ज अदृश्य हो जाता है और सूर्य जब इन्द्रालयमें प्रवेश करता है (अर्थात् जब निरक्षवृत्तके उत्तरांशमें गमन करता है) तब ऐसी घटना होती है।

इसी प्रकार और भी बहुतसे वर्णन देखनेमें आते हैं; बाहुल्यके डरसे यहां उद्धृत नहीं करते।

ऊपर जो लिखा गया है, उसके द्वारा हो प्रमाणित किया जा सकता है कि ऋग्वेदकी रचनाकालमें अयन फाल्गुनकी पूर्णिमासे प्रारम्भ होता था तथा वासन्त विषुवद्दिन मृगशिरापुञ्जमें संक्रमित था।

कोई कोई ऐसा समझते हैं कि, ई०से ४००० वर्ष पहले मृगशिरापुञ्ज और विषुवद्दिनकी पूर्वोक्त अवस्था थी।

वैदिकग्रन्थमें कृत्तिका और मघा, मृगशिरा और फाल्गुन तथा पुनर्वसु और चैत्रको यथाक्रमसे विषुवद्वृत्त और अयन सम्बन्धीय वर्षसूचक कहा गया है।

१। पुनर्वसुपुञ्जके अधिष्ठाता-देवता अदितिकी अर्चना कर यज्ञादि आरम्भ करना चाहिए। (तैत्ति० स०)

२। सत्रके विषुवद्दिनसे चार दिन पहले अभिजित् दिन उपस्थित होता है। इससे यदि सूर्यका अभिजित् पुञ्जमें 'प्रवेश' इस अर्थका बोध हो, तो वासन्त विषुवद्दिन अवश्य हो पुनर्वसुमें संक्रमित होता है, यह अनुमान किया जा सकता है।

३। प्राचीनकालमें जब नक्षत्रादिका विषय आलोचित हुआ था, तब बृहस्पतिपुञ्ज निर्दिष्ट कुछ नक्षत्रोंके सम्बन्धमें प्रयुक्त होता था।

उपर्युक्त तीन विषय और तैत्तिरीयसंहितामें वर्णित विषयावलीका अनुशीलन करनेसे मालूम होता है कि, वासन्त विषुवद्दिनके मृगशिरामें संक्रमित होनेसे बहुत पहले हिन्दूगण ज्योतिषिक आलोचना करते थे। इन्होंने प्रथमतः वासन्त विषुवद्दिनसे और पीछे शीतायनसे नववर्षारम्भ माना है।

भारतीय साहित्यको आलोचना करनेसे मालूम होता है कि, हिन्दू अति प्राचीनकालसे बराबर अयन-चलन लिखते आये हैं। पुनर्वसुसे मृगशिरा (ऋग्वेद), मृगशिरासे रोहिणी (ऐतब्रा०), रोहिणीसे कृत्तिका (तैत्तिस०), कृत्तिकासे भरणी (वेदांगज्योतिष) तथा भरणीसे अश्विनी है। (सूर्यसिद्धान्त इत्यादि)

ज्योतिषिक नियमानुसार मामूली तौरसे गणना करनेसे मालूम होता है कि, ई०से ६००० वर्ष पहले हिन्दुओंने ज्योतिषिक पञ्जिका लिखी थी। उस समय वा उससे कुछ समय बाद कृत्तिका पुनर्वसुमें संक्रमित थी। ईसासे ४००१ वर्ष पहले यह मृगशिरामें संक्रमित हुआ था।

प्रोफेसर जैकोबी (Jacobi) का कहना है कि ऋग्वेदमें हमें पहले हो वर्षाकालका उल्लेख देखते हैं। ऋग्वेद जहांसे (पञ्जाब) प्रकाशित हुआ था, वहांको ऋतु पर दृष्टि डालनेसे यह सहजमें हो समझ सकते हैं कि, उक्त वर्षारम्भ ग्रीष्मायनमें संघटित होता था।

भाद्रपदकी पूर्णिमा फाल्गुनीके ग्रीष्मायन-संयुक्त है। इसलिए भाद्रपद हो वर्षाकालका प्रथम मास है, कारण पहले ही कहा जा चुका है कि, ग्रीष्मायन वर्षाकालके साथ प्रारम्भ होता था। गृह्यसूत्रके पढ़नेसे भी इसका आभास पाया जाता है।

गोभिलसूत्रसे प्रोष्ठपदको पूर्णिमामें उपाकरण स्थिरीकृत हुआ है, किन्तु श्रावणकी पूर्णिमासे विधा-

बोधिनो नामके टोकाकार। २ माधवभट्टाचार्यके प्रसिद्ध गादाधरो नामक सुवृहत् न्यायग्रन्थके टिप्पणीकार। ३ नारायणचरित्रमाला, भक्तिरसामृत और भागवतके टोकाकार। ४ तिथिवल्लि नामके ज्योतिर्ग्रन्थकार।

गोस्वामिस्थान (सं० क्लो०) गोस्वामिना यतीना वास योग्यं स्थानं, ६-तत्। हिमालयके एक विख्यात शृङ्ग जिस पर बैठ यति आराधना किया करते थे।

गोह (सं० पु०) गुह्यतेऽत्र गुह आधारे घञ् बाहुलकात् उत्वाभावः। गृह, घर।

गोह (हिं० स्त्री०) सरीसृपविशेष, छिपकलीकी जातिका एक जङ्गली जन्तु। इसका संस्कृत पर्याय—गोधा, गोधि, निहिका गोधिका और दारुसृख्याह्वा है। अंगरेजीमें इसे इगुआना (Iguana) कहते हैं। गोह तीन प्रकारकी होती है—Varanus flavescene, V. dracaena, V nebulosus। दो तरहकी आगरा अञ्चलमें और शेष पूर्व द्वीपपुञ्जमें पायी जाती है। प्रथम दो तरहकी गोह दो फुट लम्बी होती और रात्रिकालमें छिपकर घर-में प्रवेश करती तथा घरके पालित पक्षियोंको खाई कर भाग जाती है। इसका चमडा बहुत मोटा और मज वूत होता है। यह देखनेमें ठीक नेवले जैसी होती है। इसके फुफकारमें विष रहता है। इसके दंशन करने पर पहले शरीरका मांस गलने लगता और तब समस्त अङ्गमें विषका प्रवेश हो जानेसे मनुष्य पञ्चतत्वको प्राप्त होता है। इसका चमडा मजबूत और मोटा रहने के कारण पूर्व समयमें लडाईके समय उंगलियोंकी रक्षा करनेके लिये इसके दस्ताने बनते थे। कोई कोई मुसल-मान तथा जङ्गली जातियां गोहका मास खाती है। अमे-रिकाके वेष्ट इण्डोज द्वीपवासी इसका मांस लवणाक्त कर भिन्न भिन्न देशोंमें रफतनी करते हैं। भारतवर्षमें इसका मास सुखा घृत मिश्रण कर एक प्रकारका लेह्यद्रव्य प्रस्तुत किया जाता जो क्षयकाश रोगीके लिये एक वलकार महौषध है। इस जंतुसे एक तरहका तेल भी निकलता है। सिंहलवासी तामिल जातियोंका विश्वास है कि जीवन्त गोहकी जिह्वा काट कर यदि खाई जाय तो क्षय-काशरोग आरोग्य हो जाता है।

वैद्यशास्त्रके मतसे इसके मांसका गुण—वात, श्वास और काशनाशकारी है। इसका मास पाक करने पर मधुर, कषाय, कटुरसयुक्त, पित्तनाशक, रक्त और शुक्र-वृद्धिकर एव वलकारक होता है।

गोहत्या (सं० स्त्री०) गोर्हननं गो-हन-क्यप्-तकारश्चान्ता-देश। (हनस्त च पा।३।१।१०८) लोकव्यवहारात् स्त्री-त्वं ततश्च टाप्। गोवध, गायका कत्ल करना। अग्निपुराणमें लिखा है कि राग, द्वेष और अनवधानतासे अपने या दूसरे द्वारा प्राणियोंके संहारके लिए जो काम किया जाता है उसीको कत्ल या वध कहते हैं।

"प्राणावियोगफलकव्यापारो हननं कृतम्।
रागाद्द्वेषात् प्रमादाद्वा स्वतः परत एव वा॥" (अ० पु०)

शास्त्रकार और संग्रहकारोंने ज्ञानकृत या अज्ञानकृत दो तरहकी गोहत्या निरूपण की है। 'इस गौको मैं संहार करूंगा' ऐसी इच्छासे जो गोहत्या की जाती है उसको ज्ञानकृत गोवध कहते हैं। "यह गौ है" ऐसा ज्ञान रहने पर भी यदि गोवध करनेकी इच्छा न रहे तो भी अभिष्ट सिद्धिके लिये जो गोहत्या की जाती है उसको अज्ञानकृत गोवध कहते हैं। फिर भी गोहत्याके दो भेद हैं, एक साक्षात् दूसरा परम्पराकृत या असाक्षात्। पत्थर, लाठी, शस्त्र या किसी दूसरे हथियारसे यदि वल-पूर्वक गौ वध किया जाय तो उसे साक्षात् गोहत्या कहते हैं और रस्सीमें बंधी रहनेसे यदि गायकी मृत्यु हो जाय तो उस जगह असाक्षात् गोहत्या कही जा सकती है। गोहत्याके लिये जो सब प्रायश्चित्त निरूपित हैं, साक्षात् गोवधमें हत्याकारियोंको वे समस्त प्रायश्चित्त करने पड़ते हैं। असाक्षात् गोवधमें हत्याकारीके लिये एक चतुर्थांश प्रायश्चित्त निश्चित है। शास्त्रकारोंने जिस तरहके गोपा-लनका विधान निरूपण किया है उस तरहसे पालन कर-ने पर भी यदि गाय मर जाय तो उसे अपालन निमित्त गोवध कहते हैं। (प्रायश्चित्ततत्त्व)

गो हत्याका प्रायश्चित्त, प्रायश्चित्त और गोव्रत शब्द देखो।

प्राचीन हिन्दूशास्त्रमें अनेक तरहके कार्य भी गो-हत्या नामसे कई एक भेद उल्लेख किया गया है जो पारि-भाषिक गोवध कहलाते। "विप्रहत्या च गोहत्यां किं विधामोति-देशिकीम्।" (ब्रह्मवैवर्त्त० प्रकृति०, ३०।१४६) ब्रह्मवैवर्त्तके मतसे वे समस्त कार्य आतिदेशिकी गोहत्या कह कर निरू-

बिलकुल बेजड़ है। पुराणोंमें बहुत जगह प्रसिद्ध शिल्पी 'मय'का उल्लेख पाया जाता है एवं रामायण और महाभारतके शताधिक स्थानोंमें "मायावो" 'मय'का उल्लेख आया है। इस जगह 'मायावो' शब्दसे एक प्रसिद्ध ज्योतिषोका ही बोध होता है। रामायण और तत्परवर्ती महाभारतके रचनाकालमें टलेमिका आविर्भाव भी नहीं हुआ था। इन युक्तियोंको छोड़ कर यदि तर्कके लिहाजसे यह भी मान लें कि 'हिन्दुओंका, 'मय' ग्रीकोंके टलेमिका संस्कृत अनुवाद है, तो भी हिन्दू ज्योतिषके ऋण स्वीकार वा आभार माननेका कोई कारण नहीं दीखता। सूर्यसिद्धान्तमें किसी भी जगह ज्योतिषके आचार्य रूपमें मयका वर्णन नहीं किया गया है, उन्होंने सिर्फ सूर्यसे उपदेशके बहाने ज्योतिषकी शिक्षा ली है। और यह बात तो प्रसिद्ध ही है कि सूर्य हिन्दुओंके देवता है। फलतः वेबर साहबकी बात यदि मान भी ली जाय, तो भी हम बिल्कुल विपरीत सिद्धान्तमें उपनीत होते हैं। सिवा इसके फिलहाल के (Kaye) साहबने एक निबन्ध लिखा है—(East and West, July 1919) सम्भवतः 'मय' शब्द पारसियोंके 'अहुर मज्दाका अपभ्रंश रूप है। इस विषयमें पूर्वोक्त युक्तिके सिवा यह भी कहा जा सकता है कि 'मय' और 'अहुरमजदा' इन दो शब्दमें धातुगत जरा भी मेल नहीं है। जिन्होंने फारसका ज्योतिष देखा है, वे इस बातको,अवश्य ही मानेंगे कि, वह सूर्यसिद्धान्तके ज्योतिषभागको तुलनामें बिलकुल हो ग्रहणयोग्य नहीं। वस्तुतः ऐसी धारणामें विषम भ्रान्तिमूलक मालूम पड़ती है।

हिन्दुओंके ज्योतिषिक सिद्धान्तोंमें ब्रह्म, सौर, सोम और बृहस्पति ये चार हो समधिक आदृत होते थे। अलावा इसके और भी दो सिद्धान्त रचे गये थे, जो रोमक और पौलिशके नामसे परिचित हैं। बहुतोंकी धारणा है कि ये दोनों ग्रीकोंके ज्योतिषशास्त्रका अनुवाद हैं और हिन्दू ज्योतिष पर उनकी छाप लग गई है। परन्तु यह तो रोमक सिद्धान्तके नामसे ही मालूम हो जाता है कि वह किसी ग्रीक वा रोमीय ज्योतिषका अनुवाद है। डा० भाऊदाजीने एक रोमकसिद्धान्तको हस्तलिपि संग्रह की थी। उसमें स्पष्ट दीख पड़ता है कि रोमक सिद्धान्तकी विचार प्रक्रियाके साथ हिन्दुओंके सिद्धान्तोंकी विचार पद्धतिका कुछ भी सामञ्जस्य नहीं है; इसमें समय और दिन गणनाके लिये Alexandria को मध्याह्न ग्रहण किया है। संभवतः यह टलेमीके किसी ग्रन्थका सङ्कलन है और सम्पूर्ण रूपसे विदेशियोंसे ग्रहण किया गया है। हिन्दू-ज्योतिषमें इसकी विचार पद्धतिका व्यवहार होना तो दूर रहा, हिन्दुओंके सिद्धान्तोंमें उसका उल्लेख तक नहीं है। Dr Kern का कहना है, कि सम्भवतः षोड़श शताब्दीमें रोमक-सिद्धान्त रचा गया था, क्योंकि बीच बीचमें इसमें बराबर बादशाहका नामोल्लेख है। इसलिए हम निःसन्दिग्धरूपसे यह धारणा कर सकते हैं, कि रोमक सिद्धान्तका हिन्दू ज्योतिषको उन्नतिसे कुछ सम्बन्ध नहीं है। किन्तु पौलिश सिद्धान्तके विषयमें यह बात नहीं कही जा सकती। इसकी विचार-प्रक्रियाके साथ हिन्दुओंके प्रचलित ज्योतिष-सिद्धान्तका बहुत कुछ सामञ्जस्य है। परन्तु उसकी सौर और चन्द्रग्रहणगणना सूर्यसिद्धान्त वा भास्करके सिद्धान्त-शिरोमणिकी ग्रहण-गणनाकी तरह उतनी विशुद्ध और अभ्रान्त नहीं है। यूरोपीय विद्वानोंकी धारणा है कि पौलिश-सिद्धान्त ग्रीक ज्योतिषी पलाश अलेक्जेन्ड्रिनसके ग्रन्थसे सङ्कलित किया गया है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि प्राचीन कालमें पुलिश नामके एक ज्योतिर्विद् ऋषि भारतवर्षमें विद्यमान थे। नामकी एकताके आधार पर एक साधारण सिद्धान्त कर लेना भी बड़ी भारी भूल है। डा० कार्नने बृहत्संहिताकी भूमिकामें लिखा है—"पलाश अलेक्जेन्ड्रिनियस और पौलिश एकही व्यक्ति थे, यह अनुमान करनेका हमें कोई भी अधिकार नहीं है। जब कि नाम दोनों स्थलोंमें एक है, तब नामका ऐक्य किसी तरह भी युक्तिमें नहीं सम्हाला जा सकता।" अध्यापक योगेशचन्द्र रायने अपनी "भारतका ज्योतिष और ज्योतिषी" नामक पुस्तकमें लिखा है—"पौलिश सिद्धान्त गणित-ज्योतिषका ग्रन्थ है, किन्तु (Paulus Alexandrinus के ग्रन्थने फलित ज्योतिषके विषयमें समधिक आलोचना की है; इसलिये अब इस बातको प्रमाणित करनेके लिए प्रमाणकी जरूरत नहीं कि पौलिश ग्रन्थ भारतका निजस्व है,

वर्तमान समयमें गोमांसप्रिय अहिन्दू शास्त्र-मीमांसा-का गूढार्थ न जान कर अथवा अपना मत प्रचलित रखने-के लिये कहा करते हैं कि, गोहत्या हिन्दूशास्त्रानुमोदित है। इस लिये हिन्दुओंका गोमांस खानेमें किसी तरह-की आपत्ति नहीं है क्योंकि मधुपर्कमें गोहत्या करनेका विधान प्रायः सभी शास्त्रोंमें देखा जाता है। 'महोक्षं वा महाजं वा श्रोत्रियायोपकल्पयेत्।" (याज्ञ० १।१०६) अर्थात् श्रोत्रिय अतिथि होने पर उसे बड़ा बैल या बड़ा छाग खानेके लिये दिया जाता था।

प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ पढ़नेसे भी जाना जाता है कि पूर्व समय श्रोत्रिय अतिथिगण मधुपर्कमें दिये हुए मवेशी-को खाते थे। सूर्यकुलपुरोहित वशिष्ठजी जब महर्षि वाल्मीकिके आश्रम गये थे तो उन्हें मधुपर्कमें एक बछड़ा दिया गया। वशिष्ठने बहुत आदरसे उसका मांस खाया था। इसके सिवा जिस तरह यज्ञविशेषमें छागादि मारने-का विधान है उसी तरह गोमेधयज्ञमें गौ मारनेका भी विधान देखा जाता है।

फिर भी वैदिक सूत्रकारोंका मत है कि अन्त्येष्टि कालमें एक गोवध करना चाहिए। लेकिन यदि कोई विघ्न हो जाय तो गायके सम्मुखका बायां पैर तोड़ कर उसके ऊपर मिट्टीका प्रलेप देवें और तीन बार चिता प्रदक्षिण करा कर उसे छोड़ देना चाहिए। आश्वलायन-श्रौतसूत्रके मतसे निहत गौकी चर्बी "अग्नि" इत्यादि मन्त्र पाठ कर मृत-मनुष्यके मस्तक और चक्षु पर रखी जाती है। "अति" इत्यादि मन्त्र पढ़ कर उस गायका वृक्कद्वयके दोनों हाथों पर और उसके मांसादि मृतके दूसरे अङ्ग पर रखना चाहिए। लेकिन यदि गौ न रहे तो गौ-के मांसादिके बदले यव और धान्यचूर्ण तथा चर्बीकी जगह पिष्टक देने होते हैं।*

तैत्तिरीय आरण्यकका मत है कि गौ न ला कर उस-के बदले मृतदेहके साथ एक छाग बांध कर लाना चाहिए। इन्हीं प्रमाणोंसे बहुत मनुष्य गोहत्याका पक्ष समर्थन किया करते हैं।

यथार्थमें यदि शास्त्रीय मीमांसा करनी हो तो किस समय और किस मनुष्यके प्रति किस उद्देश्यसे शास्त्रकारों-ने कैसा विधान किया है, उसके प्रति विशेष लक्ष्य रखना चाहिए। प्राचीन धर्मशास्त्रमें जितने भी विधान देखे जाते वे खास कर एक मनुष्य या एक कालके लिये नहीं हैं। सत्ययुगमें मानवोंके सात्विकभाव और प्रताप अधिक थे, उसी समयके लिये एक तरहका विधान था, दिनों-दिन मानवप्रकृतिकी सात्विकताकी न्यूनता और शक्ति ह्रासके साथ साथ व्यवस्था तथा विधानका भी तारतम्य होता आ रहा है। सत्ययुगसे द्वापरके शेष काल तक मधु-पर्कमें पशुवध और गोमेधयज्ञमें गोहिंसा प्रभृतिकी प्रथा प्रचलित थी एवं उस हिंसाको वैधहिंसा कहा जाता था। किन्तु उस समय भी अवैध गोहिंसाका कठिन प्रायश्चित्त और ज्ञान पूर्वक गोहत्या करनेसे हिंसाकारियोंको सामा-जिक नियमसे दण्ड मिला करता था। द्वापरके शेषकाल-में धर्मशास्त्रवित् परिणामदर्शी ऋषियोंने मिल कर कलि-कालके लिये जो नियम बनाये हैं, मधुपर्कमें पशुवध और गोमेधयज्ञ निषिद्ध है।* अतएव हिन्दूधर्मशास्त्रके मत-से कलियुगमें किसी तरहकी गोहिंसा विधेय नहीं है। अज्ञानसे गोहत्या करने पर यथाविहित प्रायश्चित्त कर लेनेसे पाप नाश होता एवं हिंसाकारी समाजमें व्यव-हार्य हो सकता है किन्तु ज्ञान पूर्वक गोहत्याकारियोंका कोई निस्तार नहीं है।

निर्णयसिन्धुप्रणेता कमलाकर कहते हैं कि धर्म-शास्त्रमें लिखा है कि — "अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्ममप्याचरेन्नतु" अर्थात् शास्त्रविहित होने पर भी जो कार्य अत्यन्त दुःखजनक या स्वर्गप्रतिकूल है तथा जो कार्य अधिकांश मनुष्योंकी समझमें अनभिमत है, उसका आचरण कदापि न करना चाहिए। अतएव धर्मशास्त्रके मतसे

* Journal of the Asiatic Society of Bengal, (1870) Vol XXXIX Pt I p 246-255.

* "प्रायश्चित्तविधानञ्च विप्राणां मरणान्तकम्।
संसर्गदोषः पापेषु मधुपर्के पशोर्वधः ॥
दत्तौरसेतरेषान्तु पुत्रत्वेन परिग्रहः ॥
एतानि लोकगुप्त्यर्थं कलेरादौ महात्मभिः।
निवर्त्तितानि कर्माणि व्यवस्थापूर्वकं बुधैः ॥
समयश्चापि साधूनां प्रमाणं वेदवद्भवेत् ॥"

(हेमाद्रिधृत आदित्यपुराण)

"देवरेण सुतोत्पत्तिर्मधुपर्के पशोर्वधः।
इमान् धर्मान् कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः ॥" (बृहन्नारदीय)

अत्यन्त क्षुद्र है; इसलिए पृथिवीका जितना अंश उसके दृष्टिगोचर होता है, वह सम्पूर्ण समतल मालूम होने लगता है।

वराहमिहिर ब्रह्मगुप्तके समसामयिक थे—ईसाको ६ठी शताब्दीमें विद्यमान थे। इन्होंने मौलिक गवेषणा करके प्रतिपत्ति प्राप्त नहीं की थो, बल्कि पञ्चसिद्धान्तिका, बृहत्संहिता आदि सङ्कलन ग्रन्थोंने ही उनके नामको चिरस्मरणीय बना रक्खा है। उक्त बृहत्संहिताके एक श्लोकका उल्लेख करते हुए Kaye आदि पाश्चात्य लेखकोंने स्थिर किया है, कि वराह भी इस बातको मानते थे कि हिन्दुओंने ग्रीकोंसे अनेक विषयोंमें ऋण किया था। Kaye साहबने उक्त श्लोकका इस तरह अनुवाद किया है—"ग्रीक लोग सचमुच ही विदेशी, किन्तु ज्योतिषशास्त्रमें विशेष व्युत्पन्न हैं, इसीलिये उनकी ऋषिके समान पूजा होती है।" वस्तुतः वराह-लिखित श्लोक इस प्रकार है—

"म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम्।
ऋषिवत् तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद्द्विजः॥"

यह श्लोक बृहत्संहिताके फलितज्योतिष विभागमें है और उसका "दैवज्ञ" अर्थात् फलितज्योतिर्वेत्ता इस शब्दके साथ विशेष सम्पर्क है—इस बात पर पाश्चात्य विद्वानोंका बिलकुल ध्यान ही नहीं गया है। पण्डित सुधाकर द्विवेदी द्वारा सङ्कलित बृहत्संहिताको देखनेसे मालूम होता है, कि तमाम ग्रन्थमें सोलह बार यवन (ग्रीक) का नाम लिखा गया है, एवं सर्वत्र ही लग्नशुद्धि और वारशुद्धि गणनाकी परिपोषकस्वरूप हैं; कहीं भी गणित-ज्योतिषको परिपोषक रूपमें उनका वर्णन नहीं है। इन सब बातोंसे मालूम होता है कि तत्कालीन विदेशियोंका गणित ज्योतिष-विषयमें ज्ञान अल्प ही था, जिसका हिन्दू ज्योतिर्विदोंमें आदर न था।

हिन्दू ज्योतिषको और एक विशिष्टता यह है कि नीचोच्चवृत्तकी सहायतासे ग्रहणको गति स्थिर करता है। Kaye आदि कुछ विद्वानोंकी धारणा है कि यह भी हिन्दुओंने ग्रीकोंसे लिया है। वस्तुतः सूर्यसिद्धान्तके प्रथम अध्यायमें ग्रह-गतिके सम्बन्धमें विशेष विवरण पाया जाता है; एवं प्राचीन ज्योतिर्विदोंको रचनामें उसका उल्लेख रहनेके कारण यह अनुमान किया जाता है कि यह गतिका निर्देश सूर्य-सिद्धान्तके प्रथम संस्करणमें सन्निविष्ट था। साथ हो यह भी निश्चय किया जाता है कि उसकी रचना शुल्व-सूत्रसे पहले ही हुई है, बादमें नहीं। उन श्लोकोंको हम यहाँ उद्धृत करते हैं—

"पश्चाद् व्रजन्तोऽति जवान्नक्षत्रैः सतत ग्रहाः।
जीयमानास्तु लम्बन्ते तुल्यमेव स्वमार्गगाः॥
प्राग्गतित्वमतस्तेषा भगणैः प्रत्यहं गति।
परिणाहवशाद् भिन्ना तद्वशाद् तानि भुञ्जते॥
शीघ्रगन्तान्यथाल्पेन कालेन महताल्पगः।
तेषा तु परिवर्त्तेन पौष्णान्ते भगणः स्मृतः॥" (१।२५ २७)

अर्थात् ग्रहगण प्रवह-वायु द्वारा परिचालित हो कर, अपने अपने कक्षके ऊपर नक्षत्रोंके साथ पूर्वको ओर निरन्तर समान वेगसे गमन करते समय गतिमें नक्षत्रोंसे पराजित हुआ करते हैं। तात्पर्य यह कि नक्षत्रोंको पश्चिम वाहिनी गति ग्रह-गतिको अपेक्षा तेज है। इसोलिए ग्रहोंको पूर्वको ओर हटते देखा जाता है। कक्षोंको न्यूनाधिकताके कारण ग्रहोंको प्रात्यहिक गति समान नहीं होती। भगण द्वारा त्रैराशिक करनेसे उक्त गतिको न्यूनाधिकता मालूम हो सकती है। शीघ्रगामी ग्रह अल्प समयमें और अल्पगामी ग्रह अधिक समयमें अपनी कक्षामें एक बार भ्रमण करते हैं। इस तरह ग्रह असमान गतिमें ही राशिओंका भोग किया करते हैं। ग्रहोंके उस परिक्रमणका नाम है भगण; अर्थात् एक नक्षत्रके शेषसे ले कर पुनः उस नक्षत्रके शेष पर्यन्त एक बार भ्रमण करनेसे एक भगण होता है।

हिन्दू और ग्रीक दोनों सम्प्रदायके ज्योतिर्विदोंने ग्रहगतिको नीचोच्चवृत्त द्वारा समझानेकी कोशिश की है। आर्यभटने स्थिर किया था, कि नीचोच्चवृत्तका आकार प्रायः वृत्ताभासके समान है। ग्रीकदेशमें पहले पहल Apollonius ने इस तत्त्वकी उद्भावना की थी। उन्होंने समझ लिया कि पृथिवीके केन्द्रको केन्द्र बना कर एक वृत्त अङ्कित किया जाता है। ग्रह उस वृत्तको परिधि पर स्थित एक विन्दुको केन्द्र बना कर परिभ्रमण करते समय और एक वृत्त अङ्कित करता है। परन्तु हिन्दुओंमें

गोहरौर (हिं० पु०) पथे हुवे कंडोका ढेर।

गोहला (सं० स्त्री०) गोधापदी देखो।

गोहलोत (हिं० पु०) राजपूतोंको एक शाखा। गहलौत देखो।

गोहस्र (सं० क्ली०) गोमय, गोबर।

गोहसम (देश०) एक प्रकारका वृक्ष।

गोहान—१ पञ्जाब प्रदेशके रोहतक जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २८° ५७' तथा २९° १७' उ० और देशा० ७९° २६' एवं ५२' पू० मध्य अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या प्राय: १४७२८५ और भूपरिमाण ३३६ वर्गमील है। इसमें गोहाना, बडौदा और बुटाना नामके तीन शहर तथा ७८ ग्राम लगते हैं। यहांकी आय दो लाखसे अधिक रुपयेकी है।

२ पंजाबमें रोहतक जिलेके अन्तर्गत गोहान तहसीलका सदर। यह अक्षा० २९° ८' उ० और देशा० ७६° ४२' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ६५६७ है। यहां सुप्रसिद्ध मुहम्मद घोरके सङ्गी शाह-जिया-उद्दीन मुहम्मद नामक एक मुसलमान साधुकी कब्र है। उन्हींके उपलक्षमें प्रतिवर्ष मेला लगता है। यहां पार्श्वनाथ देवका मन्दिर, सदर कचहरी, थाना, डाकघर और विद्यालय है।

गोहार (हिं० स्त्री०) १ पुकार, दुहाई। २ हल्ला गुल्ला, शोर, चिल्लाहट।

गोहारी (हिं० स्त्री०) १ गोहार। २ वह धन जो कोई हानि पूरी करनेके लिये हो।

गोहालिका (सं० स्त्री०) लताविशेष।

गोहिंसा (सं० स्त्री०) गोहिंसा, ६-तत्। गोहत्या, गोवध, गोका मारना।

गोहित (सं० पु०) गोषु हित:, ६-तत्। १ विल्व, बेलका पेड। २ घोषा नामकी लता। ३ विष्णु। (त्रि०) ४ गोहितकारक, गौकी भलाई करनेवाला।

गोहिर (सं० क्ली०) गुह बाहुलकात् इरच्। १ पादमूल, एंडी। (पु०) २ अधम जातिका घोड़ा।

गोही (हिं० स्त्री०) १ दुराव, छिपाव। २ गुप्तवार्त्ता, छिपी हुई बात। ३ महुवेका बीज। ४ फलोंका बीज, गुठली।

गोहुवन (हिं० पु०) एक तरहका विषधर सर्प।

गोहेरा (हिं० पु०) बिसखोपरा नामक विषैला जन्तु।

गोहेलवाड—बम्बई प्रदेशकी काठियावाडका करद राज्य। गोहेल राजपूतोंके नाम पर इस स्थानका नामकरण हुआ है। इसकी राजधानी भवनगर है, राजधानीके नामसे यह भवनगर कह कर प्रसिद्ध है। यहांके राजगण गोहेल राजपूतवंशीय है। लोकसंख्या प्राय: ५८१०७९ और भूपरिमाण ४२१० वर्गमील है। यहांकी आय ५५२७७८७) रुपयेकी है।

गोह्य (सं० त्रि०) गुह-वा ण्यत्। १ गुह्य, गोपनीय, छिपाने लायक। २ अप्रकाश्य, जिसका प्रकाश करना उचित नहीं। ३ संवरणीय।

गौं (हिं० स्त्री०) १ सुयोग, मौका, घात, दाँव। २ प्रयोजन, मतलब, गरज।

गौंच (हिं०) कौंच देखो।

गौंट (देश०) उत्तर और पश्चिम भारतमें होनेवाला एक तरहका छोटा वृक्ष। इसकी लकड़ी पीलापन लिये बहुत कड़ी होती है।

गौंटा (हिं० पु०) प्रजाकी भलाईके लिये या परोपकार धर्म आदिके विचारसे जमीन्दार कर्त्तृक खर्च। २ छोटा गाँव, छोटी बस्ती।

गौ (सं० स्त्री०) गाय, गैया। गो देखो।

गौकक्ष (सं० त्रि०) गौकक्षस्य छात्र: गौकक्ष्य अण्, यलोप:। गौकक्षका छात्र, गौकक्ष्यका विद्यार्थी।

गौकक्ष्य (सं० पु०-स्त्री०) गौकक्षस्य ऋषेर्गोत्रापत्यं गौकक्ष गर्गादित्वाद् यञ्। गौकक्ष नामक गोत्रापत्य, गौकक्षका वंशज।

गौकक्ष्यायणि (सं० पु० स्त्री०) गौकक्षस्य अपत्यं गौकक्ष्य तिकादित्वात् फिञ्। गौकक्ष्यका अपत्य।

गौकाक्ष (सं०) गोकाक्ष देखो।

गौख (हिं० स्त्री०) १ खिडकी, झरोखा। २ दालान या बरामदा।

गौखा (हिं० पु०) झरोखा, गौख।

गौखी (हिं० स्त्री०) जूता।

गौगा (अ० पु०) १ शोर, गुल, हल्ला। २ जनश्रुति, अफवाह।

गौग्गुलव (सं० त्रि०) गुग्गुले भव:। गुग्गुलु-अण्। गुग्गुलसे उत्पन्न, जो गुग्गुलसे पैदा हुआ हो।

ष्यको अयनगति मालूम थी और विज्ञानसम्मत रूपमें ही उनके अयनांशोंको मीमांसा की गई थी। सूर्यका गतिमार्ग वृत्ताकार है और व्योममण्डलमें उसके तल-भागने निर्दिष्ट स्थान अधिकार कर लिया है, इसलिए व्योमके केन्द्रको भेद कर रविकक्षाके ऊपर जो लम्ब (Perpendicular) स्थित है, वह निश्चल है। पृथिवी-का अक्ष (axis) इस लम्ब-रेखाके चारों ओर आवर्त्तित होता है और २६००० वर्षमें एक आवर्तन पूरा होता है। इस दोलनको गणनाको अयनांश गणना कहते हैं। इस प्रकारका ध्रुवकक्ष (Polar axis) नभोमण्डल भेद कर जिस विन्दुमें जाता है, वह विन्दु क्रमशः व्योममें एक क्षुद्र वृत्त बना लेता है और उस वृत्त द्वारा चिह्नित पथमें जो जो तारे रहते हैं वे क्रमशः ध्रुव तारा नाम पाते हैं। जिस समय यह क्रिया होती है, उस समय निरक्षवृत्त और क्रान्तिवृत्तको छेदक रेखा जो विषुवविन्दुमें अवस्थान करते समय सूर्यके केन्द्रको भेद कर जाती है, भिन्न भिन्न समयमें भिन्न भिन्न नक्षत्रों-को सूचना देती है। इसे ही यदि कुछ सरलतासे कहा जाय तो यह कहना पड़ेगा, कि भिन्न भिन्न आवर्तनमें सूर्य विषुव-विन्दुमें विभिन्न नक्षत्रोंको सूचना करता है। सूर्य-सिद्धान्तके तृतीय अध्यायमें इसकी आलोचना की गई है, यथा—

"त्रिंशत् कृत्यो युगे भानां चक्रं प्राक् परिलम्बते।
तद्गुणाद् भूदिनैर्भक्तात् द्युगणाद् यदवाप्यते॥
तद्दोस्त्रिघ्नादशाप्तांशाः विज्ञेया अयनाभिधाः।
तत्संस्कृताद् ग्रहात् क्रान्तिच्छायाचरदलादिकम्॥
स्फुटं दृक्तुल्यतां गच्छेद् अयने विषुवद्वये।
प्राक्चक्रं चलितं हीने छायार्कात् करणे गते॥
अन्तरांशैरथावृत्य पश्चाच्छेषैस्तथाधिके।"

अर्थात् जिस समय सूर्य दोनों विषुवविन्दुओं और अयनविन्दुमें रहता है, उस समय यदि सूर्यका निरीक्षण किया जाय तो इस नक्षत्रपुञ्जके अयनांशको गति दृष्टिगोचर हो सकती है। गणना द्वारा प्राप्त सूर्यका स्पष्ट स्थान छायागत अर्कस्थानसे जितने अंशोंमें न्यून होगा, नक्षत्रपुञ्ज उतना ही पूर्वकी ओर होगा तथा जितने अंशोंमें अधिक होगा उतना ही पश्चिमकी ओर होगा।

हिन्दू ज्योतिषकी और एक उल्लेखयोग्य विशिष्टता है—उसकी लम्बन-गणना (Calculation of parallax) Kaye आदि कुछ पाश्चात्य लेखकोंकी धारणा है, कि हिन्दू ज्योतिषियोंने ग्रीकोंसे उसकी शिक्षा पाई है। परन्तु यह तो मालूम ही है कि अति प्राचीनकालमें भी हिन्दुओंको ग्रहण-गणनाके सभी तथ्य ज्ञात थे तथा उन्होंने चन्द्र और सौरग्रहणका आरम्भ, मध्य एवं समाप्तिका समय निर्णीत करनेके लिए विविध उपाय आविष्कृत किये थे। अवश्य ही उनको इतनी विशुद्धिके लिए अक्षांश और भुजांशको लम्बन गणनाकी आवश्यकता होती थी। वस्तुतः इस बातका विश्वास होना स्वाभाविक है, कि वैदिक युगमें भी यागयज्ञके अनुष्ठानके लिए ग्रह गणनामें हिन्दू लोग सूर्यका लम्बन निर्धारण करते थे। भास्कराचार्यने अपने 'सिद्धान्तशिरोमणि' ग्रन्थमें लम्बन-गणनाके विषयमें प्राचीन ज्योतिर्विदोंकी रचनामेंसे कुछ श्लोक उद्धृत किये हैं; यथा—

"पर्वान्तेऽर्के नतमुडुपतिच्छन्नमेव प्रपश्येत्
भूमध्यस्थेन तु वसुमतीपृष्ठनिष्ठस्तदानीम्।
तादृक् सूत्राद्धिमरुचिरधोलम्बितोऽर्के ग्रहे ऽतः।
कक्षाभेदादिह खलु नतिर्लम्बनं चोपपन्नम्॥
समफलकाले भूभा लगन्ति मृगाङ्के यतस्तथा।
म्लानं सर्वे पश्यन्ति समं समकक्षत्वान्नलम्बनावती॥"
(सिद्धान्तशिरो० ८।२-३)

सूर्य और चन्द्र दोनोंके ही वृत्ताकार अवयव हैं। सूर्यका आकार चन्द्रको अपेक्षा बहुत बड़ा है। इसलिए जब सूर्य चन्द्रके अन्तरालमें आता है तब अतिदूरवर्ती पृथिवीके केन्द्रस्थित दर्शकोंकी दृष्टिमें सूर्यग्रहण होने पर भी, पार्श्ववर्ती स्थानके दर्शकोंको ग्रहणका कुछ भी उद्देश नहीं मालूम पड़ता। इसका कारण यह है कि उस स्थानके दर्शकोंकी दृष्टिरेखा सूर्य और चन्द्रके केन्द्र-को भेद कर नहीं जाती और इसीलिये सूर्यग्रहणमें अक्षांश और भुजांशके लम्बन गणनाकी आवश्यकता होती है। जब सूर्य और चन्द्र षड्भ्यन्तरमें रहता है, तब पृथिवी-की छाया चन्द्रको सम्पूर्णतया आवृत कर डालती और चन्द्रग्रहण पृथिवीके सभी स्थानोंसे समान दीख पड़ता है। इसी कारण चन्द्रग्रहणमें लम्बनगणनाकी आवश्यकता नहीं रहती।

मैथिल और उत्कल नामसे प्रसिद्ध हुए ।*

उक्त पञ्चगौड़ोंमें मिथिला और बङ्गदेशके बीचके गौड़राज्यको सब ही जानते हैं। इतिहासमें भी यही गौड़राज्य प्रसिद्ध है, दूसरे गौड़राज्योंका उल्लेख नहीं है। पहिले इस गौड़राज्यका आयतन कितना बड़ा था, यह नहीं कहा जा सकता।

बाणभट्टके श्रीहर्षचरितमें लिखा है कि,—राज्यवर्द्धन और हर्षवर्द्धनके समयमें गौड़में नरेन्द्रगुप्त नामके एक राजा थे। चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्गने बौद्धद्वेषी शशाङ्क नामसे उस राजाका उल्लेख किया है। कर्णसुवर्णमें शशाङ्ककी राजधानी थी।

उक्त चीनपरिव्राजकने पौण्ड्रवर्द्धन और कर्णसुवर्ण इन दोनोंको भिन्न भिन्न राज्य बतलाया है। (कर्णसुवर्ण देखो।)

बाणभट्टने हर्षचरितमें कर्णसुवर्णके राजाको ही गौड़राज कहा है। इसी गौड़राज नरेन्द्रगुप्तने हर्षके भाई राज्यवर्द्धनको मार डाला था। ईस्वीकी छठी शताब्दीके अन्तमें यह घटना हुई थी, अर्थात् सातवीं शताब्दीके अन्तमें नरेन्द्रदेव मारे गये।

राजतरङ्गिणीके पढ़नेसे मालूम होता है कि, सातवीं शताब्दीके अन्तमें काश्मीरराज ललितादित्यने गौड़राज्य जय किया था और गौड़राज काश्मीर चले गये थे। उसके बाद आठवीं शताब्दीमें काश्मीरराज जयादित्य गौड़राज्यमें आये थे, उस समय गौड़के राजा जयन्त थे और उनकी राजधानी पौण्ड्रवर्द्धनमें थी। राजतरङ्गिणी और युएनचुयाङ्गके भ्रमणवृत्तान्तके पढ़नेसे जाना जाता है कि, ईस्वीकी ७वीं शताब्दीमें यह गौड़राज्य भी कई भागोंमें विभक्त था। परन्तु आठवीं शताब्दीमें पौण्ड्रवर्द्धनके राजा जयन्त दामादकी सहायतासे सारे गौड़के अधीश्वर हुए थे और उन्होंने एकछत्र राजा होकर आदिशूर उपाधि ग्रहण की थी।

प्राचीन कुलाचार्य हरिमिश्रकी राढ़ीय कारिकामें लिखा है—आदिशूरके वंशधरोंने बहुत दिनों तक गौड़में राज्य किया था। ये सब ही ब्राह्मण्यधर्मावलम्बी थे। इनके बाद पालवंशीय देवपाल राजा हुए थे। पालवंशीय राजाओंकी ताम्र और शिलालिपियोंसे ज्ञात होता है कि, देवपालके ताऊ धर्मपालने इन्द्रराजको पराजय किया था। सम्भव है कि, इन्होंने ८४० या ८४१ ई०में गौड़राज्य अधिकार किया हो और इसी लिए आदिशूर वंशका अधःपतन हुआ हो। पालवंशीय राजाओंकी राजधानी भी पौंड्रवर्द्धनमें थी।

इससे पहिले लिख आये हैं कि, आदिशूर पञ्चगौड़के अधीश्वर हुए थे, उनके समयमें बङ्ग और राढ़ भी गौड़राज्यके अन्तर्गत था। परन्तु पालवंशीय राजाओंके शेष समयमें बङ्ग और राढ़ गौड़ या पौंड्रवर्द्धन राज्यके अन्तर्गत नहीं था। तिरुमलयगिरिके शिलालेखमें मालूम होता है कि दिग्विजयी राजेन्द्रचोलके समयमें (ई० १०वीं शताब्दीमें) उत्तरराढ़, दक्षिणराढ़, बङ्ग और पुंड्रभुक्ति ये सब पृथक् पृथक् स्वतन्त्र राज्य थे। उस समय उत्तरराढ़के राजा महीपाल, दक्षिणराढ़के रणशूर *, बङ्गदेशके गोविन्दचन्द्र और पुंड्रभुक्ति † या पौंड्रवर्द्धनके धर्मपाल राजा थे। महाराज राजेन्द्रचोलने उक्त राजाओंको परास्त किया था (१)।

* शब्दकल्पद्रुममें स्कन्दपुराणीय वचन कह कर "सारस्वताः कान्यकुब्जा गौडमैथिलिकोत्कलाः। पञ्चगौडा इति ख्याता विन्ध्यस्योत्तरवासिनः।" इतना उद्धृत किया गया है। परन्तु "विन्ध्यस्योत्तरवासिनः" यह पाठ असङ्गत जान पड़ता है, क्योंकि इससे तो चेदि, मालव और बरारके सीमान्तवर्ती उत्कल और गोण्डवानाके बीचका प्राचीन गौड़देश पञ्चगौड़ देशसे भिन्न हो जाता है। ऐसी दशामें सह्याद्रिखण्डका पाठ ही सङ्गत मालूम पड़ता है।

* ये रणशूर सम्भवतः आदिशूरके वंशके कोई राजा होंगे। गोपालजीके पास मुलूका परगनामें एक प्राचीन कायस्थराजवंश है, उनका कहना है कि, आदिशूर वंशीय कोई राजा चन्द्रनाथके दर्शनको लिये गये थे, उसी मौके पर पालवंशीयोंने गौड़राज्य दखल कर लिया था। आदिशूरवंशीय राजाने मार्गमें यह खबर सुनी और बङ्गके दक्षिणांशमें उन्होंने आश्रय लिया। भुलूआके ये कायस्थ उन्होंके वंशधर हैं। यदि यह बात सच हो तो ईस्वीकी १०वीं शताब्दीके अन्तमें और ११वीं शताब्दीके प्रारम्भमें आदिशूरवंशीय रणशूर दक्षिणराढ़का राज्य करते थे, यह भी असम्भव नहीं है।

† सुप्रसिद्ध प्राचीनलिपिवित् हुलट्स साहबने "दण्डभुक्ति" पढ़ा है, परन्तु संभवतः "दण्ड" न हो कर "पुण्ड्र" होगा।

(१) हुलट्स साहबने उक्त तिरुमलयके शिलालेखकी प्रतिलिपि प्रकाशित की है। (E Hultzsch's South Indian Inscriptions, Vol. I. p 98) उक्त प्रतिलिपिकी भूमिकामें हुलट्स साहबने लिखा है—"Takkana Ladam and Uttira Ladam are Northern and Southern Lata (Gujrat), the former was taken from a certain Rannasur" (p. 97.)

द्वारा प्रणीत नियमावलीका अनुसरण कर ज्योतिष्कोंके उदयास्त और ग्रहणादिको गणना करते थे। ग्रीकोंके वाबिलन नगर अधिकार करने पर आरिष्टटल अलेकजन्दरके आदेशानुसार वहांसे १९०३ वर्षको प्रत्यक्षीकृत ग्रहणोंकी एक तालिका ग्रीसको भेजी थी। किन्तु इस वर्णनाको बहुतसे लोग अत्युक्ति बताते हैं। टलेमीने इससे ६ ग्रहणोंका विषय लिया है। सबसे प्राचीन ई०से ७२० वर्ष पहलेका है। इन ग्रन्थोंमें ग्रहण समयके घण्टामात्र निर्दिष्ट हैं और सूर्यादिके ग्रस्तांश के पाद पर्यन्त स्थूलरूपसे उल्लिखित हैं। इन ग्रहणोंको देख कर हेलिने चन्द्रकी गतिको शीघ्रता प्रतिपादन की अर्थात् यह प्रमाणित किया कि, चन्द्र पहले जिस वेगसे पृथिवीके चारों तरफ आवर्तित होता था अब उससे और भी शीघ्रतासे भ्रमण करता है। काल्दीयोंके सूक्ष्म पर्यवेक्षणका और एक प्रमाण मिलता है। ये ६४८५३ दिनका एक कालावर्त मानते थे। उस समय २२३ चान्द्रमास हुए तथा ग्रहणकी संख्या और ग्रस्तांशके परिमाणादि प्रायः अनुरूप हुए थे। ये जल घड़ीके द्वारा समय, शङ्कुच्छाया द्वारा क्रान्तिवृत्त तथा अर्द्धचन्द्राकृति सूर्य घड़ीके द्वारा गगनमण्डलमें सूर्यके अवस्थानका निर्णय करते थे। बहुतसे यूरोपीय विद्वानोंका विश्वास है कि, कालदीयोंने ही सबसे पहले राशिचक्रका आविष्कार और दिनको बारह समान भागोंमें विभक्त किया है।

प्रवाद है कि, ग्रीकोंने मिश्रीयोंसे ज्योतिर्विद्या सीखी थी। किन्तु प्राचीन मिश्रीय ज्योतिष उच्च-कोटिका था, ऐसा प्रमाणित नहीं होता। कहा जाता है कि बुध और शुक्र-ग्रह सूर्यके चारों तरफ घूमते हैं, इस बातको ये जानते थे। किन्तु उक्त वर्णनका कोई विश्वासयोग्य प्रमाण नहीं है।

इनके कई एक पिरामिड ऐसे सूक्ष्मभावसे उत्तर दक्षिणकी तरफ बने हुए हैं, जिनसे बहुतोंको अनुमान होता है कि, वे ज्योतिष्कमण्डलके पर्यवेक्षणके लिए ही बनाये गये थे। कुछ भी हो, किस तरह छाया माप कर पिरामिडकी उच्चताका निर्णय किया जाता है यह थेलसने पहले इनको सिखाया था। मिश्रीयगण इनको कहते हैं कि, सूर्य दो बार पश्चिमकी तरफ उदित हुआ था। इससे प्रमाणित होता है कि, मिश्रीय ज्योतिष अति अकर्मण्य और हीनावस्थ था।

वास्तवमें ग्रीक ही पाश्चात्य ज्योतिर्विद्याका आविष्कर्ता है। ईसाके ६४० वर्ष पहले थेलस (Thales)ने ग्रीकोंमें ज्योतिर्विद्याका प्रचार किया था। इन्होंने ग्रीकोंमें सबसे पहले पृथिवीका गोलत्व प्रतिपादन किया था और ग्रीकनाविकोंको ध्रुवताराके निकटवर्ती क्षुद्र भल्लुक (Ursa Minor) नक्षत्रपुञ्ज देखा कर उत्तर दिशाका निर्णय करनेको शिक्षा दी थी। किन्तु थेलसके बहुतसे मत भ्रमपूर्ण हैं, उनमेंसे एक यह है कि, इन्होंने पृथिवीको जगत्‌का केन्द्र और नक्षत्रोंको प्रज्वलित अग्नि बतलाया है।

थेलसके परवर्ती ज्योतिर्विदोंके कई एक मतोंका आधुनिक मतसे सादृश्य पाया जाता है।

अनेक्सिमण्डिस (Anaximandis) अपने मेरुदण्डके ऊपर पृथिवीके आह्निक आवर्तनसे परिचित थे। चन्द्र सूर्यालोकसे दीप्त है, यह भी उन्हें मालूम था। बहुतोंका कहना है कि, ये विराट् ब्रह्माण्डमें सैकड़ों पृथिवीका अस्तित्व मानते थे और उन्हें चन्द्रमण्डलमें नदी-पर्वत-गह्वरादि है, ऐसा विश्वास था। इनके परवर्ती ग्रीक ज्योतिर्विदोंमेंसे पिथागोरास प्रधान थे। इन्होंने प्रमाणित किया था कि, सूर्यमण्डल सौरजगत्‌के केन्द्रमें अवस्थित है और पृथिवी तथा अन्यान्य ग्रहगण इसके चारों ओर परिभ्रमण करते हैं। इन्होंने सबसे पहले सबको यह समझाया था कि, सान्ध्यतारा और शुक्रतारा यथार्थमें एक ही ग्रह हैं। किन्तु परवर्ती ज्योतिर्विदोंने इनके मतको नहीं माना था। आखिर कोपार्निकास (Coparnicus)-ने उक्त मतका विशदरूपसे समर्थन किया था।

पिथागोरासके प्राय दो शताब्दी बाद अलेकजन्दरके समकालवर्ती ज्योतिर्विदोंने जन्मग्रहण किया। इस समयमें जितने ज्योतिर्विद् प्रादुर्भूत हुए थे, उनमेंसे मिटन (Meton)ने (ईसासे ४३२ वर्ष पहले) स्वनामख्यात कालावर्त्तका प्रचार, इउडोक्सस्ने ग्रीसमें ३६५ दिनमें वर्ष-गणना प्रचलित तथा सिराकिउज-निवासी निकेटास (Nicetas)ने मेरुदण्ड पर पृथिवीके आह्निक आवर्त्तन स्थिर किया था।

था। कुल भूपरिमाण १३ वर्गमील था। उपनगरी सहित यदि माप रखा जाय तो करीब २० से ३० वर्ग-मील तक विस्तृत था। यहां ६-७ लाख आदमियोंका वास था। मिन्हाजकी तबकत ए-नासिरीके मतसे (११९८ ई०में) बख्तियार पुत्रने यहाँ शासनदण्ड स्थापन किया था। १२०५ ई०में उनके हत्याकाण्डके बाद दिल्ली के अधीनतामें मुसलमान नवाबोंने १२८६ ई० तक यहाँ रह कर मुसलमानअधिकृत गौडराज्यका शासन किया था। सम्राट् बलवनकी मृत्युके बाद नासीरउद्दीन् बगरा खाँने यहांका स्वाधीन राज्य अधिकार किया था। कुतब् उद्दीन् आइवेकको मृत्युके बाद हसाम्-उद्दीनने अपना गियास-उद्दीन नाम रख कर स्वाधीनतासे यहाँका राज्य किया था। उन्होंने यहांकी फुलवाडीसे एक कोसकी दूरी पर दक्षिणकी ओर एक मजबूत किला बनवाया था और देवकोटसे कांकजोल तक ऊंचा बाँध बना कर रास्ता बनवाई थी। यह सडक करीब २७ कोस तक गई है।

१३२६ ई०में दिल्लीश्वर मुहम्मद तुगलकने लक्ष्मणावती पर आक्रमण किया था। उस समय वहाँके सुलतान बहादुरशाहको पुनः दिल्लीकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी। इसी समयमें सुवर्णग्राममें और भी एक स्वाधीन राजधानी स्थापित हुई थी।

१३३८ ई०में हाजी इलियास स्वाधीन बन गये थे। दिल्लीके बादशाह फिरोजशाहने इनके राज्य पर दो बार हमला किया था, पर कुछ कर न सके थे। फिरोजशाहके आक्रमण करनेके समय हाजी इलियास पाण्डुआमें रहते थे। उनके पुत्र सिकन्दरने गौड़को छोड कर पाण्डुआमें राजधानी की थी। इससे गौडमें लोकसंख्या कुछ घट गई थी।

१४४२ ई०में प्रथम मामूद पुनः आ कर गौडमें राजधानी स्थापित की थी। इसके बाद शेरशाहके आक्रमणकाल तक बङ्गालके मुसलमान राजा यहीं रहते थे। शेरशाहके समयमें गौडका दूसरा नाम जिन्नताबाद भी था। फिर हुमायुनने इसका नाम बख्ताबाद रखा था। इस समयमें टेंड्रा नामक स्थानमें फिर राजधानी स्थानान्तरित हुई थी।

बङ्गदेशीय नवाबोंमें आपसमें युद्ध होनेके कारण धीरे धीरे गौडदेश श्रीहीन हो गया था और वहांकी प्रजा भी घट गई थी। इस पर भी आफगानवंशीय बंगालके शेष स्वाधीन राजा दाउद खाँने गौडराजधानीको न छोड सके थे। १५७५ ई०में दाउद खाँके पूर्ण रूपसे पराजित होने पर अकबरके सेनापति मुनिम् खाँने गौड अधिकार किया था। यहीं वंगदेशके शासनदण्डका मुख्य सदर बनानेकी भी बात-चीत चली थी। मोगलोंके राजप्रतिनिधि हमेशा गौड नगरमें आ कर रहा करते थे। बादमें १६३९ ई०में शाहसुजाने जब राजमहलमें राजधानी स्थापित की, तब लोग धीरे धीरे गौडको छोड कर अन्यत्र जाने लगे। इस प्रकारसे बहुत दिनोंका पुराना गौड महानगर क्रमशः जनहीन हो कर अब जंगली जानवरोंका रहनेका जङ्गल हो गया है।

गङ्गाके स्रोतसे इस नगरका पश्चिमका भाग बिल्कुल धुल गया है और दूसरे हिस्सेमें कदम-रसूल, कोतवाली दरवाजा, दाखिल-दरवाजा, फिरोजमोनार, गुणमन्त, लत्तन, ताँतीपाडा और सोना नामकी बडी बडी मसजिदें तथा बडी बडी अट्टालिकाओंका भग्नावशेष पडा है, जो मुसलमानोंकी समृद्धिका और वंगदेशके शिल्पनैपुण्यकी पराकाष्ठा दिखला रहा है।

गौडका प्रसिद्ध दुर्ग बुडी गंगाके किनारेके फुलवाड़ी किला और कोतवाली दरवाजेके बीचमें अवस्थित है। इसको चारों तरफ चहार दीवारी और उसके बाद गहरी खाई है। यह प्राचीर ३० फुट ऊंची और तलेमें १९० फुट चौड़ी है। खाई भर जाने पर २०० फुट विस्तृत होती है। प्राचीर पर अब बडे बडे जंगली पेड उत्पन्न हो गये हैं। खाईमें काफी सरकण्डे और बडे बड़े मगर देखनेमें आते हैं।

किसी किसीका अनुमान है कि, १म मामूदने और उनके उत्तराधिकारियोंने यह दुर्ग बनवाया था। इस किलेके दो प्रधान द्वार हैं उनमेंसे उत्तरके प्रवेशद्वारका नाम दाखिल या सलामी दरवाजा है। यद्यपि इसका अधिकांश नष्ट हो गया है, पर तोभी जितना है उससे उस ईंटसे बने हुए किलेकी कारीगरीका काफी परिचय मिलता है।

तक जितने वैदेशिक ज्योतिर्विद् हुए हैं, उनमें सर्व-प्रधान ज्योतिष्क पर्यवेचक अल्बाटानी ही थे।

इवन-युनिस (१००० ई०) नामक एक मिसरीय अङ्कशास्त्रविद् विद्वान् भी ज्योतिर्विद्के नामसे प्रसिद्ध थे। इन्होंने वृहस्पति और शनि ग्रहको वक्रता और उत्केन्द्रत्वका निरूपण किया था। इन्होंने दिग्वलयसे किसी ताराकी उच्चताके परिमाण द्वारा ग्रहणके स्पर्श और मोक्षकालका निरूपण किया था। इसके सिवा इनकी अनेक गणना आदि भी है। उनको देखनेसे मालूम होता है कि, उनके समयमें त्रिकोणमिति अङ्कशास्त्र उन्नत अवस्थामें था।

पारस्यके उत्तर भागमें जङ्गिसखाँके उत्तराधिकारियोंने एक मान-मन्दिर बनवाया था। वहां नसीरउद् दीनने कुछ नक्षत्रोंको सूची बना गयी थी। समरकंदमें तैमूरके एक पोत्रने १४३३ ई०में ताराओंकी एक तालिका बनाई थी, जो उस समयकी समस्त तालिकाओंकी अपेक्षा विशुद्ध थी।

इसके बाद प्राच्यदेशमें ज्योतिर्विद्याकी अवनति और पश्चिम यूरोपमें इसकी आलोचना बढ़ने लगी। १२३० ई०में जर्मनके २य फ्रेडरिकके आदेशसे आलमेगेष्ट नामक अरबी ग्रन्थका अनुवाद हुआ। १२५२ ई०में काष्टाइलके १०म अलसोने अरबियों और यहूदियोंकी सहायतासे यूरोपीय भाषामें सबसे पहले ज्योतिष्क-सम्बन्धी तालिका बना कर ज्योतिर्विद्याकी आलोचनामें लोगोंका उत्साह बढ़ाया। उक्त तालिका टलेमीकी तालिकासे मिलती जुलती है।

१२२० ई०में मि० होलि-उड (Holywood) ने टलेमिके मतको संक्षेप कर ओन् दी स्फियार्स (On the spheres) नामक एक पुस्तक लिखी। यह पुस्तक उस समय बहुत प्रशंसित हुई। इसके बाद जिन व्यक्तियोंने ज्योतिर्विद्याकी आलोचना की थी, उनमेंसे किसीने भी उक्त विद्याकी विशेष कोई उन्नति नहीं की। हां, त्रिकोणमिति आदि गणितशास्त्रकी उन्नति जरूर हुई थी।

इसके उपरान्त प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् कोपार्निकास आविर्भूत हुए (जन्म सं० १४७३, मृत्यु सं० १५४३ ई०)। इन्होंने प्रचलित टलेमीके मतका खण्डन कर, अप्रमपूर्ण होने पर भी एक विशुद्ध मतका उद्भावन किया। इस प्रकार प्रचलित मतका खण्डन करना बड़ा विपज्जनक है, इससे जनता विरोधी हो जाती है। कोपार्निकसने उसकी उपेक्षा कर अपना मत प्रचार किया। इनका मत कुछ अंशोंमें पिथागोरस द्वारा कथित मतके सदृश था। इनके मतसे सूर्यमण्डल ब्रह्माण्डके केन्द्रस्थलमें अचलभावसे अवस्थित है इसके चारों ओर ग्रहगण भिन्न भिन्न दूरत्व और अपनी अपनी कक्षामें परिभ्रमण करते हैं। तत्कालपरिचित सूर्यसे लगा कर यथाक्रमसे दूरवर्ती ग्रहोंके नाम इस प्रकार हैं—बुध, शुक्र पृथिवी मङ्गल, वृहस्पति और शनि। इस सौरजगत्से कल्पनातीत दूरत्वमें नक्षत्रमण्डल अवस्थित है। चन्द्र एक चान्द्रमा में पृथिवीके चारों तरफ घूमता है। वास्तवमें तारोंकी गति पूर्वसे पश्चिमकी नहीं है; कक्षाके ऊपर कुछ झुके हुए अपने मेरुदण्ड पर पृथिवीके आह्निक आवर्त्तनके कारण वैसा होता है। प्रवाद है कि, कोपर्निकसको इस मतके प्रकट करनेका साहस न हुआ था, इसलिए उन्होंने उसको कल्पित कहा था। किन्तु हमबोल्ट (Humboldt) का कहना है कि, कोपर्निकासने अपनी तेजस्विनी भाषामें प्राचीन भ्रान्तमतका खण्डन कर अपने मतका प्रचार और स्वरचित On the revolution of the heavenly bodies नामक पुस्तककी छपी हुई देख कर बहुत दिन बाद प्राणत्याग किया था साधारणका विश्वास है कि, छपी पुस्तक देखनेके कुछ देर पीछे उनकी मृत्यु हुई थी।

कोपर्निकसके परवर्ती रेकार्ड (Recorde) ने अंग्रेजी भाषामें पहले पहल ज्योतिर्विद्या और गोलकतत्त्व सम्बन्धी पुस्तकें लिखी थीं।

अरबियोंके समयसे ईसाकी १६वीं शताब्दीके अन्त तक जितने ज्योतिर्विद् हुए हैं उनमें टाइको ब्राहि (Tycho Brahe) सबसे अधिक परिश्रमी, अध्यवसायी और व्यवहारकुशल ज्योतिर्विद् थे। इन्होंने १५४६ ई०में जन्मग्रहण किया था और १६०१ ई०में इनकी मृत्यु हुई थी।

टाइको ब्राहिको कोपर्निकसके मतका खण्डन करनेके

देहली अञ्चलमें गौड़ ब्राह्मण और गौड़तगाके मध्य आदान प्रदान प्रचलित है, लेकिन दूसरे स्थानोंमें ऐसा नहीं है। मेरठ और मुरादाबाद अञ्चलमें बहुतसे इसलाम धर्मावलम्बी गौड़तगा देखे जाते हैं।

गौड़नट—गौड़ और नटके योगसे बना हुआ एक राग। (सङ्गीतरत्नाकर)

गौड़पाद (सं० पु०) एक प्रसिद्ध वैदान्तिक, शङ्कराचार्यके गुरुके गुरु और गोविन्दनाथके गुरु। इन्होंने माण्डुक्योपनिषद्कारिका, अनुगीताभाष्य, उत्तरगीताभाष्य, सांख्यकारिकाभाष्य, नृसिंहतापिनीभाष्य और देवीमाहात्म्यके चिदानन्दविलास नामकी टीका रचना की हैं। कुमारिल शब्द देखो।

गौड़पार्श्व—बौद्धमत नामक संस्कृत ग्रन्थप्रणेता।

गौड़पुर—एक शहरका नाम। गौड़ देखो।

गौड़भृत्यपुर (सं० क्ली०) एक प्राचीन नगर।

गौड़मल्लार (सं० पु०) गौड़ और मल्लारके योगसे उत्पन्न एक राग जो वर्षाऋतुमें रातके दूसरे पहरमें गाया जाता है। इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—ऋ ग म प ध नि स। (सङ्गीतरत्नाकर)

गौड़राजपूत—राजपूतोंके छत्तीस कुलोंमेंसे एक। प्रसिद्ध ऐतिहासिक टाड साहबके मतसे वङ्गके स्वाधीन हिन्दू राजा इसी गौड़राजपूतवंशके थे। युक्तप्रदेशमें सब जगह गौड़राजपूतोंका वास है, इनमेंसे बहुत जमींदार भी हो गये हैं। पूर्व समयमें ये स्वाधीन थे। बुर्हान् उल्मुल्क, सादत खाँ प्रभृतिके समय गौड़राजपूत मुसलमानोंके ऊपर बहुत अत्याचार किया करते थे, अन्तमें वे पूर्ण रूपसे पराजित हुए। टाड साहबके मतसे गौड़राजपूतोंमें पांच शाखा हैं, लेकिन युक्तप्रदेशके गौड़राजपूत भाट-गौड़, बामन गौड़ और चमार गौड़ सिर्फ ये ही तीन शाखा मानते हैं। कठरिया नामकी एक चौथी श्रेणी भी देखी जाती है। चमारगौड़का कथन है कि किसी समय जब ये लोग विपद्में पड़े थे, उस समय उनकी एक गर्भवती स्त्रीने किसी एक चमारके घर जा आश्रय लिया था। चमारने उसे सहायता दी थी इस कारण नवजात शिशुका नाम भी चमारगौड़ पड़ा। भाट और बामनगौड़ भी इसी तरह आश्रय पा कर भी कृतज्ञता प्रकाश न की थी, इसी लिये वे चमारगौड़की अपेक्षा कुलमर्यादामें नीचे गिने जाते हैं। चमारगौड़ अपनेको चौहाँर या चिमनगौड़ भी कहा करते हैं। इनका कहना है कि, इस जातिमें चौहाँर नामके एक राजा और चिमन नामके एक मुनि थे, उन्हींके नाम पर ये अपना परिचय देते हैं। चमारगौड़में फिर राजा और राय नामके दो भेद हैं। इन दोनोंमें आदान प्रदान चलता है। हिमालयस्थ कण्वार, सुखेत, मन्दी, केओन्थल प्रभृति स्थानोंके राजा अपनेको गौड़राजपूतके जैसा परिचय देते हैं। वे कहते हैं कि उनके पूर्वपुरुष वङ्गदेशसे जा वहां वास करते हैं।

गौड़वास्तूक (सं० पु०-क्ली०) गौड़जातः वास्तूक मध्यपदलो०। चिल्लीशाक।

गौड़ब्राह्मण—दश तरहके ब्राह्मणोंमेंसे एक। गौड़ और ब्राह्मण देखो। युक्तप्रदेश और विहारमें इस श्रेणीके ब्राह्मण रहते हैं।

गौड़ब्राह्मणोंका कथन है कि, वे गौड़ राज्यसे उत्तर-पश्चिममें जा बसे हैं। गौड़तगा देखो। दिल्लीमें भी इनकी संख्या अधिक है। कनोजिया प्रभृति श्रेणियोंकी अपेक्षा ये अनेकांशमें मूर्ख हैं। हिन्दीजातिमालामें इनकी छह शाखायें हैं—गौड़, परीक, वहीनू, खण्डेलवाल, सारस्वत और सन्दवेल। किन्तु कोई कोई गौड़ ब्राह्मण उक्त शाखायें स्वीकार नहीं करते हैं, उनके मतसे गौड़ ब्राह्मणोंमें ४२ विभाग हैं जिनमेंसे आध, जुगद, कैथल, गूजर, धरम और सिद्धगौड़ प्रधान गिने जाते हैं।

गौड़सारङ्ग—गौड़ और सारङ्गके योगसे बना हुआ एक राग। यह ग्रीष्मऋतुमें दो पहरसे पहले गाया जाता है।

गौड़सीधु (सं० पु०) गुड़कृत तीक्ष्णमद्य, गुड़का बना हुआ एक तरहकी तेज शराब।

गौड़ाचार्य—वर्त्तमान युगके एक प्रधान आचार्य।

गौड़ाभिनन्द—एक कविका नाम।

गौड़ारस (सं० पु०) शूलरोगका औषध। रससिन्दूर ५ भाग, मृतलौह ५ भाग, शतावरी, आमलकी एवं गुड़ूचीक्वाथमें तीन दिन भावना देनी चाहिये। चार रत्ती परिमाणकी मात्राका प्रतिदिन घृत और मधुके साथ सेवन करनेसे शूलरोग नाश होता है।

आविष्कार किया था। इसी तरह और भी अनेकानेक ज्योतिर्विदोंके अध्यवसाय गुणसे और यन्त्रादिकी सहायतासे अठारहवीं शताब्दीमें ज्योतिर्विद्याकी बहुत ज्यादा उन्नति हुई थी।

१९वीं शताब्दीके प्रारम्भमें ही ४ क्षुद्र ग्रहोंका आविष्कार हुआ था। क्रमशः १८९५ ई० तक प्रायः शताधिक क्षुद्र ग्रहोंका आविष्कार हुआ है। नेपचुन (Neptune) ग्रहका आविष्कार १९वीं शताब्दीकी घटना है।

यूरेनस ग्रहको गतिकी विशृङ्खलता देख कर बहुतोंका अनुमान है कि, यह वृहस्पति और शनिके सिवा अन्य किसी अनिर्दिष्ट ग्रहके आकर्षणसे होता है। लेवारियर (Leverrier) नामक एक नवीन फरासीसी ज्योतिर्विद्ने इसको देख कर १८४६ ई०को ग्रीष्मऋतुमें चुपचाप उक्त ग्रहके आकार, परिमाण और आकाशमें अवस्थान तकका निश्चय कर एक निबन्ध प्रकाशित किया। यह महीना बीतने भी न पाया था कि, बार्लिन नगरमें मि० गेल (M. Galle)ने नेपचुन ग्रहका आविष्कार कर डाला। इससे प्राय १ वर्ष पहले केम्ब्रिज नगरमें मि० एडाम्स (M. Adams)ने और भी सूक्ष्मतर गणना द्वारा नेपचुनके अस्तित्व और अवस्थानका निश्चय कर चालिस (M. Challis) को कहा। इन्होंने दो बार उस ग्रहको पहिचाना था, पर सुविधानुसार उसको प्रकट न कर सके।

१८५९ ई०में एयरी (Airy)ने शून्यमार्गमें सौरजगत्की गतिका निरूपण किया था।

इस समय यूरोप और अमेरिकामें प्रत्येक प्रधान प्रधान नगरों और उपनिवेशोंमें मान-मन्दिर बन गये हैं। राजकीय सहायतासे उनमें पर्यवेक्षणादिका कार्य चल रहा है। प्रायः सभी सुसभ्य देशोंमें ज्योतिर्विद्याकी आलोचनाके लिए ज्योतिर्विदोंको समितियां गठित हुई हैं। उन समितियोंसे प्रति वर्ष बहुत वैज्ञानिकतत्त्व निकलते और ज्योतिर्विद्या विषयक अनेक पत्रिकाओंमें मुद्रित हो सञ्चित होते हैं। इसके सिवा भिन्न भिन्न ज्योतिर्विदोंकी पुस्तकें प्रकाशित हुआ करती हैं; आकाशमण्डलमें ग्रह, उपग्रह, धूमकेतु, नक्षत्र आदिके प्रात्यहिक अवस्थानको सूक्ष्मरूपसे निर्देश कर उन गणनाओंको प्रकाशित किया जाता है। इससे बहुत वर्षोंको घटनाओंको वर्त्तमानको भांति प्रत्यक्ष देख कर ज्योतिर्विद्गण अनेक तथ्य निकालते हैं। गगनमण्डलके सुन्दर चित्र बने हैं और उसमें भिन्न भिन्न कालमें ज्योतिष्कोंका अवस्थान, चन्द्र, सूर्य, ग्रहादिका दृश्यमान गतिपथ आदि अति विशदरूपसे दिखाये गये हैं। चन्द्र, सूर्य और तारा आदिके हूबहू चित्र बनानेके लिए फोटोग्राफ व्यवहृत हुआ करता है। कहना व्यर्थ है कि, इस समय यूरोपीय भाषामें ज्योतिःशास्त्रको इतनी ज्यादा पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं कि, हर एक आदमी उन्हें पढ़ कर ज्ञान लाभ कर सकता है। उन्नतिके साथ यह विद्या सुशृङ्खल और सहजबोध्य हुई है।

ज्योतिषिक (सं० पु०) ज्योतिः ज्योतिःशास्त्रं अधीते उक्थादित्वात् ठक्। १ ज्योतिःशास्त्राध्ययनकारी, ज्योतिषशास्त्रका पढ़नेवाला। (त्रि०) २ ज्योतिष सम्बन्धी।

ज्योतिषिन् (सं० त्रि०) ज्योतिषं ज्ञेयत्वेन अस्त्यस्य इनि। ज्योतिःशास्त्राभिज्ञ, जो ज्योतिष जानता हो, गणक।

ज्योतिषी (सं० स्त्री०) ज्योतिरस्त्यस्याः इति-अच्-ङीप्। तारा।

ज्योतिष्क (सं० पु०) ज्योतिरिव कायति कै-क। १ मेथिका बीज, मेथी। २ चित्रकवृक्ष, चीता। इसके बीजके तेलमें दूधके साथ सज्जीमट्टी और हींग घोट कर, मलनेके बाद यदि उसका सेवन किया जाय तो उदररोग जाता रहता है। (सुश्रुत चिकि० २४ अ०) ३ गणिकारिका वृक्ष, गनियारीका पेड़। ४ मेरुका शृङ्गभेद, मेरु पर्वतके एक शृङ्गका नाम। यह शृङ्ग शिवजीका अत्यन्त प्रिय है।

"तदीशभागे तस्याद्रेः शृंगमादित्यसन्निभम्।
यत्तत् ज्योतिष्कमित्याहुः सदा पशुपतेः प्रियं॥"

५ ग्रह तारा नक्षत्र प्रभृति, ग्रह, तारा, नक्षत्र आदिका समूह।

६ जैनमतानुसार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक इन चार प्रकार (जाति)-के देवोंमेंसे एक। इनके पांच भेद हैं; यथा—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और

आरोपित किया जाता है। लवण देखो। २ लोणिकाशाक। ३ मनःशिला। (त्रि०) ४ अप्रधान, साधारण, जो मुख्य न मानी जाय।

गौण्य (स० क्ली०) गौणस्य भावः गौण-यत्। १ गुणता, गुणत्व, गुणका धर्म। (पु०) २ कशेरुक, कसेरूघास।

गौण्डलपाडेमृ—नेल्लूर जिलेके मध्य समुद्रके उपकूलवर्त्ती एक ग्राम। यह नेल्लूर नगरसे प्रायः १७ मील उत्तरपूर्वमें अवस्थित है। यहांके रहनेवाले इस स्थानको रामतीर्थ कह कर मानते है। यहां एक प्राचीन और भग्न शिव-मन्दिर है जिसके प्रवेशद्वारके ऊपर अस्पष्ट अक्षरमें एक शिलाफलक उत्कीर्ण है। वह अक्षर किस भाषाका है इसका निरूपण नहीं किया जा सकता है। मन्दिरसे एक मील दूर गांवके बीच हो कर वकिंहम-खाल प्रवाहित है।

गौतम (सं० पु०) गोतमस्य ऋषिरपत्यं गोतम-अण्। १ गोतम ऋषिके वंशज। २ भरद्वाज मुनि। ३ सप्तर्षि मण्डलके ताराओंमेंसे एक। ४ अहल्याका पुत्र शतानन्द। ५ कृपाचार्य। कृपाचार्य देखो। गौतम्याः पालित अपत्यं गौतमी बाहुलकात् अण्। ६ गौतमीसे प्रतिपालित शाक्य मुनि। इसका पर्याय—शाक्यमुनि, शाक्यसिंह, सर्वार्थ-सिद्ध, शौद्धोदनि, अर्कबन्धु, मायादेवीसुत, स्वजित, श्वेत-केतु, धर्मकेतु, महामुनि, पद्मज्ञान, सर्वदर्शी, महाबोधि, महाबल, बहुत्तम, त्रिमूर्ति, सिद्धार्थ और शक है। ७ रामायण, महाभारत और पुराणों आदिके अनुसार एक ऋषि जिन्होंने अपनी स्त्री अहल्याको इन्द्रके साथ अनुचित सम्बन्ध करनेके कारण शाप देकर पत्थर बना दिया था। बाद अहल्याने भगवान् रामचन्द्रजीके चरण स्पर्शसे ही उद्धार पाया था। ८ एक स्मृति शास्त्रकार। कुलमणि, मस्करी, हरदत्त प्रभृति पण्डितगणने गौतमस्मृतिकी टीका लिखी है। गौतमका बनाया हुवा पितृमेधसूत्र प्रभृति वैदिक ग्रन्थ पाये जाते। ९ दानचन्द्रिकाके रचयिता। १० एक न्यायशास्त्रकार। ११ बुद्धदेवका एक नाम। १२ नासिकके निकटका एक पर्वतका नाम जहांसे गोदावरी नदी निकली है। १३ क्षत्रियोंका एक भेद। गौतम राजपूत देखो। १४ भूमिहारोंका एक भेद। १५ दिगंबर जैनियोंके चौबीसवें तीर्थङ्कर महावीर स्वामीके गणधर। १६ स्थावर विषभेद। एक जैन गृहस्थ। इन्होंने प्रति-क्रमण टीका (श्लो० ३०००) और सम्बोधपञ्चासिका नामके दो ग्रन्थ रचे हैं।

गौतमगणधर—दिगम्बर जैन मतानुसार आजसे करीब २४५० वर्ष पहले जब कि भगवान महावीर स्वामीको केवलज्ञानकी प्राप्ति हुई थी, उस समय इन्द्र समस्त देवों सहित मध्यलोकमें आया और उनके समवसरणकी रचना कराई। इसके बाद भगवान्‌की दिव्यध्वनि खिरने लगी, परन्तु बिना गणधरके उसका अर्थ कौन समझावे। तब इन्द्रने अवधिज्ञानसे जाना कि, इन्द्रभूति नामक एक ब्राह्मण पण्डित जो कि गौतम नामसे प्रसिद्ध है, वह जिन-धर्मसे विरुद्ध चार वेद, अठारह पुराणादिक समस्त शास्त्रोंका ज्ञाता है। उसको किसी प्रकारसे बहका कर यहाँ लाऊं तो भगवान्‌का दर्शन करते ही वह जैनधर्म धारण करके भगवान्‌का गणधर बन जायगा। इस पर इन्द्रने एक कठिन श्लोक बना कर वृद्धब्राह्मणका स्वरूप धारण किया और जहाँ गौतम अपने ५०० शिष्योंको पढ़ा रहा था, वहां पर गया और बोला—"मैं वर्द्धमान स्वामीका शिष्य हूं, वे एक श्लोक बता कर तत्काल ही ध्यानमें बैठ गये, मुझे इस श्लोकका अर्थ तक नहीं बताया, लाचार आपका नाम सुन कर आया हूं, कृपा कर आप इसका अर्थ बता दीजिये।" गौतमने कहा कि "हम तुम्हारे श्लोकका अर्थ तो बता देंगे, पर तुम्हें हमारा शिष्य बनना पड़ेगा।" इन्द्रने ऐसा मञ्जूर कर लिया। इसी समय एक शिष्य बोल उठा कि—"यदि हमारे एक श्लोकका तुम्हारे गुरु अर्थ बता देंगे तो हम ५०० शिष्य उनके शिष्य बन जांयगे।" इसके बाद गौतमने इन्द्रसे श्लोक पूछा। इन्द्र इस प्रकार बोला—

> "त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं सकलगतिगणा सत्पदार्थो नवैव।
> विश्वं पंचास्तिकायव्रतसमितिविदः सप्ततत्त्वानि धर्मः॥
> सिद्ध मार्गस्वरूपं विधिजनितफलं जीवषट्कायलेश्याः।
> एतान्यः श्रद्दधाति जिनवचनरतो मुक्तिगामी सभव्यः॥ १"

इस श्लोकको सुन कर इन्द्रभूति (गौतम) बड़े विचार-में पड़ गया। तीन काल कौनसे, छह द्रव्य और नौ पदार्थ कौनसे? ये सब किस ग्रन्थमें है? इत्यादि शङ्काओंका कुछ निर्णय न कर सके। बहुत सोच, विचारके बाद

ज्योतीरथ (सं० पु०) ज्योतिरिव रथोऽस्य, ज्योतिषः रथ इव वा। १ ध्रुवनक्षत्र. इसके आश्रित ज्योतिश्चक्र है इसलिए इसका नाम ज्योतीरथ पड़ा। २ निर्विष जातीय सर्प, एक तरहका सांप जिसके विष नहीं होता है।

ज्योतीरस (सं० पु०) ज्योतिश्च रसश्च, द्वन्द्व। एक प्रकारका रत्न। इसका उल्लेख वाल्मीकीय रामायण और वृहत्संहितामें किया गया है।

ज्योतीरूपस्वयम्भू (सं० पु०) ज्योतिः रूपं यस्य तादृशः यः स्वयम्भूः। ब्रह्मा, ब्रह्माका रूप ज्योतिर्मय है, इसी लिये इनका नाम ज्योतीरूपस्वयम्भू हुआ है।

ज्योत्स्ना (सं० स्त्री) ज्योतिरस्त्यस्यां निपातनात् नप्रत्ययः उपधालोपश्च। ज्योत्स्नातमिस्रेति। पा ५।२।११४। १ कौमुदी चन्द्रमाका प्रकाश, चांदनी। इसके पर्याय—चन्द्रिका, चान्द्री, कामवल्लभा, चन्द्रातप, चन्द्रकान्ता, शीता और अमृत तरङ्गिणी। २ ज्योत्स्नायुक्त रात्रि, चांदनी रात। ३ पटोलिका, सफेद फूलकी तोरई। इसके गुण—त्रिदोषनाशक, कषाय, मधुर, दाह और रक्तपित्तनाशक है। ४ दुर्गा। "ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपायै सुखायै सततं नमः।" (चण्डी ५ अ०) ५ प्रभातकाल, सुबह। "ज्योत्स्ना समभवत् सापि प्राक् सन्ध्याऽभिधीयते।" (विष्णुपु० १।५।३६) ६ सौंफ। ७ रेणुक वीज। ८ कोषातकी, कड़ुई तरोई। ९ पटोलिका, सफेद फूलकी तरोई।

ज्योत्स्नाकाली (सं० स्त्री०) सोमकी कन्या। ये वरुणके पुत्र पुष्करकी पत्नी थीं।

"रूपवान् दर्शनीयश्च सोमपुत्र्यास्तु नः पतिः।
ज्योत्स्नाकालीति यामाहुर्द्वितीया रूपतः श्रियं॥"
(भारत ५।९७ अ०)

ज्योत्स्नादि (सं० पु०) ज्योत्स्ना, तमिस्रा, कुण्डल, कुतुप, विसर्प और विपादिका ये कई एक ज्योत्स्नादिगण हैं।

ज्योत्स्नाप्रिय (सं० पु०) ज्योत्स्नाप्रिया यस्य, बहुव्री०। चकोर, चकवा।

ज्योत्स्नावत् (सं० त्रि०) ज्योत्स्ना अस्त्यस्य ज्योत्स्ना-मतुप्। ज्योत्स्नायुक्त, जिसमें प्रकाश हो।

ज्योत्स्नावृक्ष (सं० पु०) ज्योत्स्नायाः वृक्षः इव, ६-तत्। दीपाधार, दीवट, फतीलसोज़।

ज्योत्स्निका (सं० स्त्री०) १ चाँदनी रात। २ पटोलिका सफेद फूलकी तोरई।

ज्योत्स्नी (सं० स्त्री०) ज्योत्स्ना अस्त्यस्या इत्यण्, ङीप च। संज्ञा पूर्वकस्य विधेरनित्यत्वात् न वृद्धिः। १ चन्द्रिकायुक्त रात्रि, चाँदनी रात। २ पटोल, तरोई। ३ रेणुका नामक गन्धद्रव्य।

ज्योत्स्नेश (सं० पु०) ज्योत्स्नाया ईशः, ६-तत्। ज्योत्स्नाके अधिपति सूर्य।

ज्योनार (हिं० स्त्री०) १ भोज, दावत। २ रसोई, पका हुआ भोजन।

ज्योरा (हिं० पु०) फसल तैयार होने पर गाँवके नाई, धोबी चमार आदि काम करनेवालोंको दिया जानेवाला अनाज।

ज्यों (हिं० अव्य०) यदि, जो। यह शब्द प्रायः कवितामेंही व्यवहृत होता है।

ज्यौतिष (सं० क्ली०) ज्योतिष इदं अण्। ज्योतिष-सम्बन्धी।

ज्यौतिषिक (सं० पु०) ज्योतिषं अधीते वेद या उक्थादि० ठक्। ज्योतिर्विद्, वह जो ज्योतिषशास्त्र जानता हो।

ज्यौत्स्न (सं० त्रि०) ज्योत्स्नाया अन्वितः इत्यण्। दीप्त, जगमगाता हुआ।

ज्यौत्स्निका (सं० स्त्री०) ज्योत्स्ना अस्ति यस्याः इति ठक्, पूर्ववृद्धिष्टाप् च। ज्योत्स्नायुक्त रात्रि, चाँदनी रात।

ज्यौर—बम्बई प्रान्तके अहमदनगर जिले और तालुकका शहर। यह अक्षा० १९° १८' उ० और देशा० ७४° ४८' पू०में टोका सड़क पर पड़ता है। जनसंख्या प्रायः ५००५ है। नगरकी चारों ओर एक टूटा फूटा प्राचीर है। फाटक मजबूत लगा है। दरवाजे पर फर्शबन्द है। पास ही एक ऊंचे पहाड़ पर २ मन्दिर हैं। एक मन्दिरमें १७८१ ई०की शिलालिपि अङ्कित है।

ज्वर (सं० पु०) ज्वरति जीर्णोभवत्यनेन ज्वर-करणे घञ्। ज्वरण, स्वनामप्रसिद्ध रोगभेद, ताप, बुखार। संस्कृत पर्याय—जूर्ति, ज्वरि, आतङ्क, रोगपृष्ठ, महागद, तापक और सन्ताप।

प्राणियोंके प्रति दृष्टिपात करनेसे मालूम होता है

समय सारा बुन्देलखण्ड हो उनके अधिकारमें था।

जौनपुर और उसके पूर्वाञ्चलके गौतमराजपूत सोम वंशी, बचगोती, बन्धलगोती, राजवार और राजकुमार आदि अन्यान्य श्रेणियोंके साथ विवाहका सम्बन्ध रखते हैं। और दोआबके गौतमराजपूत भादौरिया, कच्छवाह, राठोर, गहलोत, चौहान, तूआर आदि भिन्न भिन्न श्रेणियोंमें कन्या दान करते हैं।

आजिमगढ़के गौतमराजपूतोंने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया है।

गौतमसम्भवा (सं० स्त्री०) गौतमाय तदघनाशाय सम्भवति सं-भू-अच्। गोदावरी नदी। गोदावरी देखो।

गौतमस्वामी—गौतमगणधर देखो।

गौतमी (सं० स्त्री०) गौतमस्य इयं गौतम-अण् ङीप्। १ दुर्गा। २ गौतम ऋषिकी स्त्री, अहल्या। ३ राक्षसी-विशेष। ४ गोदावरी नदी। ५ गोरोचन। गौतमस्यापत्यं स्त्री गौतम-अण्-ङीप्। ६ कृपी, गौतमवंशीय शरद्वान्‌की कन्या। (भागवत ९।२१।३६) ७ गायत्रीस्वरूपा महादेवी। (देवी भा० १२।४।४०) ८ गौतम प्रणीत न्याय-विद्या।

गौतमीपुत्र—१ अन्ध्रवंशीय एक राजा, शिवस्वामीके पुत्र। वायुपुराणके मतसे इन्होंने २१ वर्ष एवं ब्रह्माण्डपुराणके मतसे ३४ वर्ष तक राज्य किया। नासिकमें गौतमपुत्रके समयका शिल्पमय अति सुन्दर एक कन्दरा है। २ वाकाटक वंशीय एक पराक्रान्त राजा, वाकाटक महाराज रुद्रसेनके पिता। इन्होंने भारशिवके महाराज भवनागरकी कन्यासे विवाह किया था। वाकाटक देखो।

गौतमीय (सं० त्रि०) गौतमस्येदं गौतम-छ। गौतम-सम्बन्धीय।

गौतमेश्वर (सं० पु०) गौतम ईश्वरः प्रभुर्यत्र, बहुव्री०। तीर्थविशेष। (मत्स्यपुराण)

गौत्त—भारतके दक्षिणपश्चिमका एक प्राचीन राजवंश। ई०को १२वीं और १३वीं शताब्दीमें ये लोग अपनेको महामण्डलेश्वर कह कर अपना परिचय दिया करते थे। फ्लीट साहबका अनुमान है कि, यह गौत्तवंश मौर्यवंशीय राजाओंकी कोई अन्यतम शाखा है। ये लोग पश्चिमके चालुक्यराजके कर देनेवाले राजा थे; और सम्भवतः धारवार जिलेमें तथा महिसूर राज्यमें इनका वास था। क्योंकि, धारवार जिलेके चौद्दामपुर ग्रामको चारो तरफ और महिसूरके हालविद नगरमें, चालुक्यके राजा छठे विक्रमादित्यके समयमें (१) १०७५से ११२६ ई०के भीतरके शिलालेखोंमें और उनके बादके राजाओंके समय-में (२) ११७६ से ८० तक, (३) ११८१-८२, (४) ११८७-८८, (५) ११९१-९२, (६) १२१३-१४, (७) १२३७-३८, (८) १२६२ से ६३ ई० तकके सब मिलाकर करीब आठ शिलालेखोंमें इन गौत्तसामन्त राजाओंका परिचय मिलता है।

गौत्तम (सं० पु०) गच्छतीति गं गातमुत्तायति उद्-तम अच् स्वार्थे-अण्। स्थावरविषभेद।

गौदन्तेय (सं० त्रि०) गोदन्तस्येदं गोदन्त-ढक्। गोदन्त चन्दनसम्बन्धीय।

गौदानिक (सं० त्रि०) गोदानं कर्मास्य गोदान-ठक्। १ गोदानाख्य ब्रह्मचर्य। गोदाने उक्तं ठक्। गोदानोक्त कर्म, गौदान करनेका काम।

गौदुमा (हिं० वि०) गोवदुम, गायकी पूंछके आकारका।

गौधार (सं० पु०) गोधाया अपत्यं गोधा-आरक्। गोधा पुत्र, गोह जन्तुकी सन्तान।

गौधूम (सं० त्रि०) गोधूमस्य विकारः गोधूम-अण्। गोधूम-का विकार, गेहूंसे तैयार किया हुआ, रोटी इत्यादि।

गौधूमी (सं० क्ली०) गोधूमस्य क्षेत्रं गोधूम-खञ्। गोधूम उत्पन्न होनेका उत्तम खेत, गेहूं उपजनेकी अच्छी जमीन।

गौधेय (सं० पु०) गोधाया अपत्यं गोधा-ठक्। गोधिका त्मज। गोहकी सन्तान।

गौधेर (सं० पु०) गोधाया अपत्यं गोधा-ढ्रक्। गोधि-कात्मज, गोह नामक जन्तुका बच्चा।

गौधेरक (सं० पु०) गौधेर एव गौधेरे स्वार्थे कन्। गौधेय देखो।

गौधेरकायणि (सं० पु०) गौधेरस्य अपत्यं गौधेर-फिञ् कुक् च। गौधेर देखो।

गौन (हिं० पु०) गमन देखो।

गौनई (हिं० स्त्री०) गायन, गान, गीत।

गौनर्द (सं० त्रि०) गोनर्द देशे भवः गोनर्द-अण्। १ गोनर्द देशवासी, गोनर्द देशके रहनेवाले। (पु०) २ पतञ्जलि मुनि।

समझ लिया कि उनके शरीरमें ज्वरावेश हुआ है, तब उन्होंने ज्वरके विनाशके लिए दूसरे एक ज्वरकी सृष्टि की। उस नवसृष्ट वैष्णव ज्वरने श्रीकृष्णका आदेश पाते ही उनके शरीरमें प्रवेश किया और अपने बलसे पूर्वप्रविष्ट ज्वरको पकड़ कर कृष्णके हाथ पर रख दिया। कृष्णने उसको ग्रहण कर मारना चाहा तो वह जोरसे चिल्ला कर उनके पैरों पड़ गया। उस समय ज्वरकी रक्षार्थ श्रीकृष्णके लिए एक आकाशवाणी हुई। श्रीकृष्णने ज्वरको छोड़ दिया।

ज्वरने कृष्णसे जीवन पा कर एक वर मांगा। ज्वरने कहा—"हे कृष्ण! हे देवेश! आप प्रसन्न हो कर मुझे यह वर प्रदान करें कि, जगत्में मेरे सिवा दूसरा कोई ज्वर न हो।"

कृष्णने उत्तर दिया—"वरप्रार्थियोंको वर देना मेरा कर्तव्य है, विशेषतः तुम शरणागत हो। तुम जैसी प्रार्थना करते हो, वैसा ही होगा। पहलेकी भांति तुम ही एकमात्र ज्वर रहोगे, द्वितीय ज्वर जो मेरे द्वारा सृष्ट हुआ है, वह मेरे शरीरमें लीन होवे।" श्रीकृष्णने ज्वरसे यह भी कहा कि, "इस जगत्में स्थावर, जङ्गम और सर्वजातियोंमें तुम किस तरह विचरण करोगे, वह कहते है सो सुनो। तुम अपनी आत्माको तीन भागोंमें विभक्त करके एक भागसे चतुष्पटप्राणी, दूसरे भागसे स्थावर और तीसरे भागसे मानवजातिकी भजना करना। तुम्हारे तृतीय भागका चतुर्थांश पक्षि-कुलमें और अवशिष्टांश मनुष्योंमें ऐकाहिक, त्योरक और चतुर्थक नामसे विचरण करेगा। वृक्षश्रेणीमें कीट, पत्तोंमें सङ्कोच अथवा पाण्डु, फलोंमें आतुर्य, पद्मिनीमें हिम, पृथिवीमें ऊषर, जलमें नीलिका, मयूरोंमें शिखो-द्भेद, पर्वतमें गैरिक, गौमें अपस्मार और खोरक नामसे प्रसिद्ध हो कर विचरण करोगे। तुमको देखने वा छूनेसे प्राणीमात्र निधनको प्राप्त होंगे; देवता और मनुष्यके सिवा दूसरा कोई तुम्हारे प्रभावको सह न सकेगा।"

ज्वरकी उत्पत्तिके विषयमें और भी एक उपाख्यान है। पहले त्रेतायुगमें जब महादेवने एक हजार वर्षका अक्रोध व्रत अवलम्बन किया था, तब असुरोंने उपद्रव करना शुरू किया। उस समय महादेवने महात्मा महर्षि-योंके तपमें विघ्न होते देख कर भी तथा उसके प्रती-कारमें समर्थ होते हुए भी उपेक्षा धारण की; क्योंकि क्रोध प्रकट करनेसे उनका व्रत भङ्ग हो जाता। इसके बाद दक्ष प्रजापतिने देवों द्वारा पुनः पुनः अनुरोध किये जाने पर भी महादेवके प्राप्य यज्ञभागकी कल्पना न कर यज्ञके सिद्धिकारक वेदोक्त पाशुपत मन्त्र और शैव्य आहु-तिका परित्याग करके यज्ञ समाप्त कर दिया था। तद-नन्तर आत्मवित् प्रभु महादेवका व्रत समाप्त होने पर पूर्वोक्त प्रकारसे दक्ष द्वारा अपने अपमानकी बात मालूम पड़ गई, उन्होंने रौद्रभाव अवलम्बन पूर्वक ललाट पर नयन सृष्टि कर यज्ञविघ्नकारी उपर्युक्त असुरोंको दग्ध किया और क्रोधाग्नि सन्दीपित शत्रुनाशन एक बाण छोड़ा, जिससे दक्ष प्रजापतिका यज्ञ ध्वंस हो गया तथा देव और भूत सन्तप्त हो कर इतस्ततः भ्रमण करने लगे।

इसके उपरान्त देवोंने सप्तर्षियोंके साथ मिल कर नाना प्रकारसे महादेवका स्तव करना शुरू किया। महादेवने देवोंके स्तवसे सन्तुष्ट हो कर ज्योंही शैवभाव धारण किया त्यों ही सर्वत्र मङ्गल होने लगा। जब उस क्रोधानलने महादेवको जीवोंके मङ्गलसाधनमें तत्पर पाया, तब वह हाथ जोड़ कर सामने आया और कहने लगा—"भगवन्! अब मैं आपका आदेश पालन करूंगा, आज्ञा दीजिये।" महादेवने उत्तर दिया—"तुम जीवोंके जन्म, मृत्यु और जीवित समयमें ज्वर स्वरूप होवोगे।"* इस तरह ज्वरकी सृष्टि हुई।

सन्ताप, अरुचि, तृष्णा, अङ्गपीड़ा और हृदयमें वेदना ये ज्वरकी स्वाभाविक शक्तियाँ हैं।

समनस्क एकमात्र शरीर ही ज्वरका अधिष्ठान है। शारीरिक और मानसिक सन्ताप प्रत्येक ज्वरका प्रधान

---

* रुद्रके क्रोधसम्भूत निःश्वाससे उत्पन्न होनेके कारण ज्वर स्वभावतः पित्तात्मक है, क्योंकि क्रोधसे पित्त उत्पन्न होता है। अतएव सर्व प्रकारके ज्वरमें पित्तविनाशक क्रियाका प्रयोग करना उचित है। वाग्भटने भी कहा है कि, पित्तके विना उष्म्य नहीं होता और उष्म्यके बिना ज्वर नहीं होता। इसलिए सब तरह के ज्वरमें पित्तके लिए जो चीजें अहितकर हैं, उनका परित्याग करना ही उचित है।

दिकाके एक राजा, जगन्नाथनारायणदेवके पुत्र।

गौरजीरक (सं० पु०) गौरश्चासौ जीरकश्चेति। श्वेतजीरक सफेद जीरा। इसका संस्कृत पर्याय अजाजी, श्वेतजीरक, कणाह्वा, कणजीर, कणा, सितदोप्य, दीर्घकणा, सिताजाजी और गौराजाजी है। इसका गुण—शीतल, रुचिकर, कटु, मधुर, दीपन, कृमि, विष और आध्माननाशक एवं चक्षुका हितकर है। जीरक देखो।

गौरता (सं० स्त्री०) १ गोराई, गोरापन। २ सफेदी।

गौरतित्तिरि (सं० पु०-स्त्री०) श्वेतवर्ण तित्तिरिपक्षी, सफेद रङ्गकी तीतर चिड़िया।

गौरत्वच् (सं० पु०) गौरीत्वक् यस्य, बहुव्री०। इङ्गुदीवृक्ष, एक तरहका पेड़।

गौरद्रु (सं० पु०) हरिद्रावृक्ष, हल्दीका पेड़।

गौरधान्य (सं० क्ली०) शालिधान्यविशेष, एक प्रकारका धान।

गौरपाषाण (सं० क्ली०) श्वेतखटिका, खड़िया मिट्टी।

गौरपृष्ठ (सं० पु०) गौरं पृष्ठं यस्य, बहुव्री०। यमराजके सभासद् एक राजा (भारत सभा०)

गौरबाजार—वीरभूमके अन्तर्गत एक गण्डग्राम। देशावली नामक संस्कृत भूवृत्तान्तमें यह गौराङ्गवीथि नामसे वर्णित है।

गौरमाल्य (सं० पु०) गिरिज मधुकवृक्ष, पर्वत पर उत्पन्न महुवेका पेड़।

गौरमुख (सं० पु०) गौरं विशुद्धं मुखं यस्य, बहुव्री०। १ महर्षि शमीकका एक शिष्य। (त्रि०) गौरं मुख्यं यस्य, बहुव्री०। २ श्वेतवर्ण मुखविशिष्ट, जिसका चेहरा सफेद हो।

गौरमृग (सं० पु०-स्त्री०) नित्यकर्मधा०। गौरवर्ण मृग विशेष, उजले रङ्गका मृग (हरिण)।

गौररम्भा (सं० स्त्री०) सुवर्णकदलीवृक्ष, एक तरहका केलेका पेड़।

गौरव (सं० क्ली०) गुरोर्भावः गुरु-अण्। १ महत्त्व, बड़प्पन। २ गुरुता, भारीपन। ३ सम्मान, आदर, इज्जत। ४ उत्कर्ष। ५ अभ्युत्थान। ६ गुरुका काम। ७ कफज रोग। (त्रि०) गुरोरिदं गुरु-अण्। ८ गुरु सम्बन्धीय।

गौरवर्णवती (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हल्दी।

गौरवल्ली (सं० स्त्री०) प्रियङ्गुलता।

गौरववत् (सं० त्रि०) गौरवमस्त्यस्य गौरव-मतुप् मस्य व, गौरवविशिष्ट, जिसको गौरव हो।

गौरवा (सं० पु०) चटकपक्षी।

गौरवासन (सं० क्ली०) गौरवेण दत्तमासनं मध्यपदलो०। उत्कर्षसूचक आसन।

गौरवाहन (सं० पु०) गौरं गौरवर्णं वाहनं यस्य, बहुव्री०। एक राजाका नाम। इनका दूसरा नाम श्वेतवाहन था।

गौरवित (सं० त्रि०) गौरवं सञ्जातमस्य गौरव तारकादित्वादितच्। पूज्य, आदरणीय, सम्मान करनेके लायक।

गौरव्रीहि (सं० पु०) गौरशालि, सफेद धान।

गौरशाक (सं० पु०) गौरः शाकोऽस्य, बहुव्री०। मधुकवृक्ष, एक प्रकारका महुवेका पेड़।

गौरशाखी (सं० पु०) जलमधुक, एक तरहका जलमहुवा।

गौरशालि (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। शालिधान्यविशेष, एक तरहका सुगन्धित धान।

गौरशिरस् (सं० त्रि०) गौरं शिरोऽस्य, बहुव्री०। १ शुक्लवर्ण केशयुक्त, जिसके मस्तकका बाल उजला हो गया हो। (पु०) २ राजनीतिशास्त्रके प्रणेता एक मुनि। इनका बनाया हुआ नीतिशास्त्र वर्तमान समयमें दुष्प्राप्य है। महाभारतमें नीतिशास्त्र-प्रणेतृगणके मध्य इनका नाम भी उल्लेख है।

गौरषष्टिक (सं० पु०) षष्टिकशालिधान्यभेद, सफेद साठीधान। इसका गुण—रूक्ष, शीतल, दोषघ्न, वल्य, पथ्य, दीपन तथा वीर्यवृद्धिकर है।

गौरसर्षप (सं० पु०) गौरश्चासौ सर्षपश्चेति कर्मधा०। १ श्वेतसर्षप, सफेद सरसों। इसका पर्याय—अनव्य, सिद्धार्थ, भूतनाशन, कटुस्नेह, ग्रहघ्न, कण्डूघ्न, राजिकाफल, तीक्ष्णक, दुराधर्ष, रक्षोघ्न, कुष्ठनाशन, सिद्धप्रयोजन, सिद्धसाधन और सितसर्षप है। इसका गुण—कटु, तिक्त, उष्ण, वात, रक्त, ग्रह, लक्, दोष, विष और व्रणनाशक एवं रक्तपित्त और अग्निवृद्धिकर है। (भावप्रकाश) मनुके अनुसार इसके द्वारा सीमशुद्धि करनेका विधान है। २ परिमाणविशेष। मनुके मतसे ८ त्रसरेणुको १ लिक्षा, ३ लिक्षाका १ राज तथा ३ राजसर्षपका १ गौरसर्षप माना गया है।

की चलाचल वेदना, पैरोंमें झनझनाहट, पिण्डिकोद्वेष्टन (अर्थात् मांस इंठ रहा है, ऐसा मालूम पड़ना), जानु और सन्धिस्थानका विश्लेषण, ऊरुमें अवसन्नता, कमर, बगल, पीठ, स्कन्ध, बाहु, अंस और वक्षस्थलमें क्रमसे भग्नवत्, रुग्नवत्, मृदित, मन्थनवत्, चटित, अवपीड़ित और अवतुन्नवत् वेदना होती है। हनुस्तम्भ और कानमें सनसनाहट, मस्तकमें निस्तोदनवत् पीड़ा, मुख कषायता और रसास्वादनमें अक्षम, मुख, तालू, और कण्ठशोष, पिपासा, हृदयमें वेदना, शुष्कछर्दि, शुष्ककास, छींक, उद्गारनिरोध, अम्लरसयुक्त निष्ठीवन, अरुचि, अपाक, मनकी विकलता, उबासी, विनाम (एक प्रकारकी वेदना), कम्प, बिना परिश्रम किये परिश्रम मालूम पड़ना, भ्रम (सब चीजें घूमती हुई दीखें),प्रलाप, अनिद्रा, द्रा, लोमहर्ष, दन्तहर्ष, उष्णवस्ति अभिलाषा, निदानोक्त वस्तु द्वारा अनुपशय और उससे विपरीत वस्तु द्वारा उपशय आदि वातज्वरके लक्षण है ।

जो मनुष्य उष्ण, अम्ल, लवण, क्षार, कटु और गरिष्ठ पदार्थ तथा अत्यन्त तीक्ष्णरससंयुक्त पदार्थोंको अधिक खाते हैं, तथा जो अत्यन्त अग्निसन्तापसेवनकारी, परिश्रमी और क्रोधशील हैं, उनको साधारणतः पैत्तिक ज्वर होता है। उक्त प्रकारके व्यक्तियोंका शरीरस्थ पित्त जब प्रकुपित होता है, तब वह आमाशयसे उष्माको ग्रहण, रसधातुका आश्रय ले रस तथा स्वेदवहस्रोतसमूहका आच्छादन कर पित्तके द्रवत्वके कारण जठराग्निको मन्द और पक्वाशयसे अग्निको बाहर विक्षिप्त करता है। इस प्रकारकी शारीरिक प्रक्रिया होने पर पित्तज्वरका आविर्भाव हुआ करता है। पित्तज्वर होनेसे एक समयमें ही ज्वरका आगमन और अभिवृद्धि होती है।

आहारके परिपाक समयमें, दोपहरको, आधीरातको तथा प्रायः शरत्‌ऋतुमें यह ज्वर होता है । इस ज्वरमें मुखका स्वाद कटु रसयुक्त तथा नासिका, मुख, कण्ठ और तालूमें पक्वता मालूम पड़ती है; तृष्णा, भ्रम, मोह, मूर्छा, पित्तवमन, अतीसार, भोजनमें अप्रवृत्ति, पसीना, प्रलाप और शरीरमें एक प्रकारके कोठरोगकी उत्पत्ति होती है। नाखून, आँखें, चेहरा, मूत्र, पुरीष और शरीरका चमड़ा पीला हो जाता है। शरीरमें अत्यन्त उष्णता और दाह होता है। पित्त-ज्वराक्रान्त व्यक्ति शीतल स्थानमें रहने पर भी शीतल पदार्थ खानेकी अत्यन्त इच्छा प्रकट करता है। निदानोक्त पदार्थों द्वारा इसको अनुपशय और उससे विपरीत वस्तु द्वारा उपशय मालूम होता है।

जो स्निग्ध, मधुर, गुरु, शीतल, पिच्छिल, अम्ल और लवण आदि पदार्थ अधिक खाते हैं तथा जो दिवानिद्रा, हर्ष और व्यायाम आदि विषयमें अत्यन्त आसक्त होते हैं, उनका श्लेष्मा प्रकुपित हुआ करता है। ऐसा आदमी साधारणतः श्लैष्मिक अर्थात् कफज्वरसे पीड़ित होते देखे जाते हैं। इनका यह प्रकुपित श्लेष्मा आमाशयमें प्रवेश कर उष्माके साथ मिलता और खाये हुए पदार्थके परिपाकके लिए रसधातुको प्राप्त होता है। पीछे रस और स्वेदसमूहको आच्छादनपूर्वक पक्वाशयसे उष्माको बाहर निकाल कर समस्त शरीरमें व्याप्त हो जाता है। इस प्रकारकी प्रक्रियाके कारण कफ-ज्वरका आविर्भाव हुआ करता है।

एक ही समयमें कफ-ज्वरका आगमन और प्रकोप होता है। भोजनमात्रसे, दिनके प्रथम भागमें, प्रथम रात्रिमें और प्रायशः वसन्तऋतुमें इस ज्वरका आविर्भाव होता है।

विशेषरीत्या शरीरमें भारीपन आहारमें अप्रवृत्ति, मुख और नासिकासे कफस्राव, मुखमें मधुरता, उपस्थित वमन हृदयस्थानमें उपलेपबोध शरीरमें स्तिमितभाव (भीगे कपड़ेसे शरीर ढका है ऐसा मालूम पड़ना), छर्दि, अग्निकी मृदुता, निद्राका आधिक्य हस्तपदादिकी स्तब्धता, तन्द्रा, श्वास कास नख, नयन, चेहरा, मूत्र, पुरीष और चर्ममें अत्यन्त शीतलताका अनुभव तथा शरीरमें शीतलस्पर्श पीड़का (फुन्सी)का उद्गम होता है। कफज्वराक्रान्त व्यक्तिको प्रायः उष्णताकी अभिलाषा होती है। निदानोक्त वस्तु द्वारा अनुपशयता और उससे विपरीत गुणयुक्त पदार्थोंसे उपशयता मालूम पड़ती है।

विषमाशन (अभ्याससे अधिक वा थोड़ा अथवा असमयमें भोजन करना), अनशन, ऋतुपरिवर्तन, ऋतु व्यापत्ति (ग्रीष्म, वर्षा, शीत आदि ऋतुओंमें ऋतुके अनुसार ग्रीष्मशीतादिका अभाव), असहनीय गन्धादिका आघ्राण,

गौरावस्कन्दिन (सं० पु०) गुरोरिदं गौरवं गुरुपत्नीरूपं कलत्रं तदास्कन्दति गौरव आ-स्कन्द-णिनि पृषोदरादित्वात् वर्णविकारे साधु। अहल्याजार, इन्द्र।

गौराश्व (सं० पु०) गौरोऽश्वोऽस्य, बहुव्री०। १ एक राजाका नाम जो यमकी सभाके सभासद हैं। २ अर्जुन। (त्रि०) ३ जिसके गौरवर्णका घोड़ा हो।

गौरास्य (सं० पु० स्त्री०) गौरमास्यं यस्य, बहुव्री०। नील वानर, एक तरहका बन्दर, जिसका मुख लाल तथा शेष अङ्ग कृष्णवर्णका होता है।

गौराहिक (सं० पु०-स्त्री०) गौरश्चासौ अहिश्चेति कर्मधा० संज्ञायां कन्। विषशून्य एक तरहका सर्प, विषहीन सांप।

गौरि (सं० पु०) गौरस्यापत्यः गौर-इञ्। आङ्गिरस ऋषि।

गौरिक (सं० त्रि०) गौरो वर्णोऽस्त्यस्य गौर-ठन्। १ श्वेतवर्ण युक्त, जिसका शरीर श्वेतवर्णका हो। (पु०) २ श्वेतसर्षप, सफेद सरसो।

गौरिका (सं० स्त्री०) १ जलमधुक, जलज महुवा। २ शारिका पक्षी। ३ अष्टवर्षीयकन्या, आठ वर्षकी लड़की।

गौरिकी (सं० स्त्री०) गौर्यं त गौरी स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च। अष्टवर्षीया कन्या, आठ वर्षकी लड़की।

गौरिणी (सं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक तरहकी झाड़।

गौरिमत् (सं० त्रि०) गौरीं मन्यते मन क्विप्, ६-तत्। ह्रस्व। गौरीतीर्थ।

गौरिमती (सं० स्त्री०) गौरीमत्-ङीप्। गौरीतीर्थस्थ एक नदी, गौरीतीर्थमें बहनेवाली एक नदीका नाम।

गौरिया (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका जलपक्षी जिसका शिर भूरा और गर्दन सफ़ेद होती है। ऋतुके परिवर्तनके साथ साथ इसकी चोंचका रंग भी बदला करता है। २ मट्टीका बना हुवा एक छोटा हुका। ३ एक प्रकारका मोटा वस्त्र।

गौरिल (सं० पु०) गौरो वर्णोऽस्त्यस्य गौर बाहुलकात् इलच। १ श्वेतसर्षप, उजला सरसों। २ लोहचूर्ण।

गौरिवीत (सं० क्ली०) गौरीवीतिना दृष्टं गौर-वीति-अण्। सामविशेष।

गौरिवीति (सं० पु०) गौर्यां वेटवाचि वीतिर्विशेष, गतिरस्यास्य, बहुव्री०। ऋषिविशेष, शक्ति मुनिके पुत्र।
(शतपथ० १२।८।१७)

गौरी (सं० स्त्री०) गौर ङीष्। १ गौरवर्णा, गोरी स्त्री। २ पार्वती, हिमालयकी कन्या। ३ अष्टवर्षीया कन्या, आठ वर्षकी लड़की। ४ हरिद्रा, हल्दी। ५ दारुहरिद्रा, दारुहल्दी। ६ गोरोचना, गोरोचन। ७ वरुणपत्नी। ८ प्रियङ्गु वृक्ष। ९ पृथिवी। १० नदीविशेष। ११ सूर्यवंशीय प्रसेनजित् राजाकी स्त्री जो स्वामीके शापसे नदी हो गई थी। उस नदीका नाम बाहुदा रखा गया है। (हरिवंश) १२ बुद्धशक्तिविशेष, बुद्धकी एक शक्तिका नाम। १३ मञ्जीष्ठा, मजीठ। १४ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। १५ मल्लिका पुष्पक्षुप। १६ तुलसी। १७ सुवर्ण कदली, सुनहले रंगका केला। १८ आकाशमांसी। १९ सफेद रंगकी गाय। २० गुड़से बनी हुई शराब, गौड़ी। २१ चमेली। २२ रागिणीविशेष। हनुमानके मतसे यह मालव रागकी पत्नी, भरतके मतसे मालकोषकी और ब्रह्माके मतसे श्रीरागकी पत्नी है। यह आशावरी और जयन्तीके योगसे उत्पन्न हुई है। इसके आरम्भ और समापिका स्वर षड्ज है। इस रागिणीकी मूर्ति—कुमारी, मुख चन्द्रमासा सुन्दर, क्लीवकी नाईं मुखमें दाड़िमका बीज धारण किये हुए उपवनमें वास करती है।
(सङ्गीतदामोदर)

उदाहरण—

स० ग म० ध नि स।
नि ध प म ग ऋ स। (कल्लीनाथ)
नि स ऋ० म प०। (रा० वि)
स० ग म० ध नि। (सं० स्वा)
स ऋ ग म० ध नि।—(स० ना)

२३ माध्यमिक वाक्। २४ दीप्तिमती स्त्री। २५ गङ्गा। २६ शरीरकी एक नाड़ी।

गौरीकल्प (सं० पु०) कल्पभेद, ब्रह्ममासकी कृष्णा त्रयोदशी।

गौरीकान्त (सं० पु०) गौर्याःकान्तः ६-तत्। महादेव, शिवजी।

अनिच्छा, आँखोंका डबडबाना और लाल होना निद्राधिक्य अरति, जँभाई, विनाम, कम्प, श्रम, भ्रम, प्रलाप, जागरण, रोमाञ्च, दन्तहर्ष, शब्द, शीत, वात और आतप आदिमें कभी अभिलाष, कभी अनभिलाष, अरुचि, अपरिपाक, शरीरमें दुर्बलता, अङ्गमर्द, अङ्गोंमें अवसन्नताका आना, अल्पप्राणता (शारीरिक बलकी अल्पता), दीर्घसूत्रता, आलस्य, उपस्थित कार्यकी हानि, अपने कार्यकी प्रतिकूलता, गुरुजनोंके वाक्यमें अभ्यसूया, ब्राह्मणके प्रति विद्वेष प्रकाश, अपने धर्ममें चिन्ताराहित्य, माल्यधारण, चन्दनादि लेपन, भोजन, क्लेशन, मधुर भक्ष्य पदार्थसे द्वेष करना तथा अम्ल, लवण और कटु द्रव्यके भक्षण करनेमें अत्यन्त आसक्ति। ज्वरकी प्रथम अवस्थामें सन्ताप, पीछे धीरे धीरे उक्त लक्षण प्रकट होते हैं।

अनति-उष्ण वा अनतिशीतल शरीर, अल्पसंज्ञा, भ्रान्तदृष्टि, स्वरभङ्ग; जिह्वा खरखरी, कण्ठ शुष्क, पुरीष, मूत्र और स्वेदका राहित्य, हृदय सरक्त (रक्तनिष्ठीवन) और निस्तेज (मानो छाती टूटी जा रही है), अन्नसे अरुचि, शरीर प्रभाहीन तथा श्वास और प्रलाप ये लक्षण अभिन्यास अथवा हतौजा नामक सान्निपातिक ज्वरमें * प्रकट होते हैं।

सान्निपातिक रोग अत्यन्त कष्टसाध्य और असाध्य है। अभिन्यास रोगमें निद्रा, क्षीणता, ओजोहानि और शरीर निष्पन्द होने पर संन्यास नामक सान्निपातिक रोग उत्पन्न होता है। पित्त और वायु-वृद्धिके लिए ओजः धातुका क्षय होने पर गात्रस्तम्भ और शीतके कारण रोगी अचेतन होता है, जाग्रत होने पर भी तन्द्रा और प्रलापविशिष्ट अङ्ग रोमाञ्चित, शिथिल अल्पताप और वेदनायुक्त होता है। यह ओजः धातुके रुक जानेसे होता है, इस दशामें सातवें, दशवें अथवा बारहवें दिनमें रोग बढ़ जाता है। इस दशामें या तो रोगीको शीघ्र आराम हो जाता है या उसकी मृत्यु हो जाती है।

दो दोषोंकी वृद्धि होने पर ज्वर होता है, उसको द्वन्द्वज कहते हैं। द्वन्द्वज ज्वर तीन प्रकारका है—वातपित्त, वातश्लेष्मा और पित्तश्लेष्मा। जंभाई, पेट फूलना, मत्तता, कम्पन, सन्धिस्थानोंमें वेदना, शरीरमें कृशता और अभिताप, तृष्णा और प्रलाप ये वातपैत्तिक ज्वरके लक्षण हैं।

शूल, काश, कफ, वमन, शीत, कम्पन, पीनस, देहका भारीपन, अरुचि और विष्टम्भ—ये वातश्लेष्मा ज्वरके लक्षण हैं।

शीत, दाह, अरुचि, स्तम्भ, स्वेद, मोह, मत्तता, भ्रम, काश, अङ्गोंमें अवसन्नता, वमनेच्छा, ये पित्तश्लेष्मा ज्वरके लक्षण हैं।

ज्वरमुक्त, कृश, मिथ्या आहारविहारी व्यक्तिके अल्प अवशिष्ट दोषोंके वायु द्वारा वृद्धि होने पर पाँच कफ-स्थानोंके दोषानुसार पाँच प्रकारका ज्वर उत्पन्न होता है। ये पांच प्रकारके ज्वर सर्वदा अन्येद्युष्क, तृतीयक, चातुर्थक और प्रलेपक नामसे प्रसिद्ध हैं। †

* चरकके मतसे सान्निपातिक ज्वर १३ प्रकारका है। एक दोषके आधिक्यसे तीन प्रकारका होता है, जैसे-वातोल्वण, पित्तोल्वण और कफोल्वण। दो दोषोंके आधिक्यसे भी तीन प्रकारका होता है, जैसे—वातपित्तोल्वण, वातश्लेष्मोल्वण और पित्तश्लेष्मोल्वण। तीन दोषोंमें हीनता, मध्यता और अधिकताके भेदसे छह प्रकारका होता है, यथा—अधिकवात, मध्यपित्त, हीनकफ, अधिकवात हीनपित्त और मध्यकफ, इस तरह छह प्रकारका तथा तीन दोषोंके ही समभावमेंसे उल्वण एक भेद है। तेरह प्रकारके सान्निपातिक ज्वरोंके नाम ये हैं—विस्फारक, आशुकारी, कम्पन, बभ्र, शीघ्रकारी, भल्लु, कूटपाकल, संमोहक, पाकल, याम्य, क्रकच, कर्कटक और वैदारक। सान्निपातिक देखो।

† आमाशय, हृदय, कण्ठ, नसें और सन्धियें ये पांच कफके स्थान हैं। दिवाभाग और रात्रिकाल ये दो ज्वरके प्रकोपके समय हैं। इनमेंसे एक प्रकोपके समयमें दोष हृदयमें लीन हो कर अन्य प्रकोपकालमें ज्वर प्रकट होता है। इसको अन्येद्युष्क ज्वर कहते हैं। यह ज्वर प्रत्येक दिन, दिनमें प्रकट हो कर अथवा रात्रिमें उत्पन्न हो कर दिनमें मग्न होता है; फिर उस समय हृदयमें दोष लीन होते हैं। दोष हृदयस्थित होनेसे तीसरे दिन वह आमाशयको आच्छन्न कर ज्वर उत्पन्न करता है। इसको तृतीयक ज्वर कहते हैं। यह ज्वर एक दिन अन्तर आता है, इसको इकतरा भी कहते हैं। दोष शिरस्थित होनेसे वह दूसरे दिन कंठ, तीसरे दिन हृदय तथा चौथे दिन आमाशयको दूषित कर ज्वर उत्पन्न करता है। यह ज्वर दो दिन अन्तरसे आता है। इसको चातुर्थक ज्वर कहते हैं।

मन्त्री। सामान्य अवस्थासे मनुष्य कहां तक अपनी उन्नति कर सकता है, इस घोर कलिकालमें भी मनुष्य आत्मोन्नतिके गुणसे प्राचीन आर्य ऋषियोंके समान उन्नत हृदय बन सकता है, इस पाश्चात्य सभ्यताके प्रबल स्रोतमें बहते हुए भी मनुष्य किस तरह अपने प्राचीन जातीय भावकी रक्षा कर सकता है, ये सब बातें गौरीशङ्कर उदयशङ्करको जीवनीसे जानी जा सकती हैं। जिस समय भावनगरके राजा बहुत कर्जदार हो गये थे, जूनागढके नवाबके साथ उनका कुछ झगडा चल रहा था, ब्रिटिश गवर्मेण्टकी भी भावनगर राज्य पर कडी दृष्टि थी, ऐसे सङ्कटमय समयमें युवक गौरीशङ्कर भावनगर राज्यके मन्त्री हुए थे। उनकी विद्या, बुद्धि और अपूर्व शासननीतिके गुणसे थोडे ही दिनोंमें उक्त राज्यकी समस्त विपत्तियोंका लोप हो गया। देश विदेशके सब ही राजपुरुष उनकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करने लगे। बम्बईके गवर्नर एलफिन्ष्टोनसे लगा कर लार्ड रिये (Lord Reay) तक जितने गवर्नर हुए हैं, वे सब ही इनका आदर करते थे। ब्रिटिश गवर्मेण्टने उनकी कार्य-कुशलता पर प्रसन्न हो कर उन्हें कमाण्डर आफ् दी ष्टार आफ् इण्डीया (C S I.) की उपाधि दी थी।

सिर्फ इतना ही नहीं, वल्कि बम्बईके गवर्नर लार्ड रिये (Lord Reay) ने उनके साथ मुलाकात करके यह भी कहा था कि,—

"यह प्रसिद्ध पुरुष मानो सरलताकी प्रतिमूर्ति ही है। इनके अकपट, निर्मल और पवित्र हृदयके उच्च भावोंसे तथा विशुद्ध प्रतिभासे मैं विमुग्ध हो गया हूं। राज्यके सुशृङ्खलताकी रक्षाके लिए इन्होंने गांवोंमें सिपाहियोंका और विचारका अच्छा बन्दोवस्त किया है और दुष्ट जमीन्दारोंके उत्पीड़नसे प्रजाको बचाया है। एक व्यक्तिसे सवमाधारणका जितना उपकार हो सकता है, इन गौरीशङ्करने उतना कर दिखलाया है।"

करीब पचास वर्ष तक राजकीय कार्योंमें लगे रहने बाद १८७८ ईस्वीमें जनवरीकी १३ तारीखमें इन्होंने मन्त्रित्व छोड दिया था। उस समय इनकी उमर ७४ वर्षकी थी। इससे थोड़े ही दिन पहिले ये अपने इष्टमित्रोंसे यह कहा करते थे कि,—"गृहस्थमें रह कर जो कुछ करना चाहिये था; सो सब ही कर लिया। अब मुझे कुछ भी आकाङ्क्षा नहीं, मैंने गृहस्थका सारा सम्बन्ध छोड देनेका संकल्प कर लिया है। इतने दिनों तक मैं दूसरोंके कार्योंमें फंसा हुआ था, मैंने अपना काम कुछ भी न कर पाया। अब मैं अपना ही काम करूंगा। हमारे पूर्वजोंने आखिरी जीवनमें जो पथ अवलम्बन किया था, मैं भी उसी वेदान्त और उपनिषत् प्रदर्शित मार्गका अनुसरण कर आत्मोन्नतिके लिए प्रयत्न करूंगा। मैं इस आखिरी जीवनको निर्जन स्थानमें रह कर संन्यास व्रत ग्रहणपूर्वक विताऊंगा।"

मन्त्रित्व छोड कर वे वेदान्त और उपनिषद्की आलोचनामें प्रवृत्त हुए। सब टा ही वे इनमें लीन रहते थे। इस प्रकार १८८७ ई०में उन्होंने संसारसे सर्वदाके लिए विदा होनेके लिए अपने इष्टमित्रोंको आह्वान किया। उस दिन उनके इष्टमित्रोंके सिवा बहुतसे अंग्रेज भी वहां आये थे। वृद्ध गौरीशङ्करने सबको यथायोग्य आशीर्वाद देते हुए कहा—"चतुर्थ आश्रममें प्रवेश करूंगा मैं संन्यासी होऊंगा। जिससे भविष्यत्में फिर मुझे इस असार संसारमें न आना पड़े, जिससे भगवान् मुझे सर्वदाके लिए निर्वाणमुक्ति दें ऐसा प्रयत्न करूंगा।"

उनके मित्रोंने उनसे सैकड़ो वार अनुरोध किया कि आप गृहस्थाश्रम न छोडे, मोह बढ़े, ऐसे दृश्य भी बहुतसे दिखलाये, कितने प्रलोभन दिखलाये, परन्तु उनका उत्साहित उज्ज्वल हृदय विचलित न हुआ। उन्होंने स्त्री, पुत्र, इष्टमित्र, धनधान्यादिका मोह छोड़ वानप्रस्थका अवलम्बन किया।* १८९१ ई०में १ली दिसम्बरमें उन्होंने निर्वाण लाभ किया था।

गौरीशिखर (सं० क्लो०) गौरीप्रियं शिखरं, मध्यपदलो०। एक तीर्थस्थान। पार्वती पर्वतके जिस शिखर पर बैठ कर तपस्या करी थीं वही गौरीशिखरतीर्थ नामसे प्रसिद्ध है। इसका दूसरा नाम गौरीशङ्कर है।

"प्रशस्तु पयात् प्रथित' तदाख्यया अर्वाम गौरीशिखर' शिखण्डिमन्।"

(कुमार)

* Gaurisankar Udaysankar C. S. I by J. U Yajnik, Bombay. 1889. इस ग्रन्थमें गौरीशङ्करकी विस्तृत जीवनी लिखी है।

जो ज्वर पहले शरीरमें होता है, उसको शारीर और जो ज्वर पहले मनमें उत्पन्न होता है, उसको मानसज्वर कहते हैं। चित्तकी विह्वलता, अरति और ग्लानिका होना मानसिक सन्तापका लक्षण है और इन्द्रियोंकी विकृति दैहिक सन्तापका लक्षण है।

वातपित्तात्मक ज्वरमें रोगीको शीतल, वातकफात्मक ज्वरमें उष्ण और उभयलक्षणाक्रान्त ज्वरमें शीत और उष्ण दोनों प्रकारकी इच्छा होती है।

अत्यन्त अन्तर्दाह, अधिक पिपासा, प्रलाप, श्वास, भ्रम, सन्धिस्थान और हड्डियोंमें दर्द, पसीनेका रुकना तथा श्वास और मल निग्रह, ये सब अन्तर्वेग ज्वरके लक्षण है।

अत्यन्त वाह्यसन्ताप, तृष्णा, प्रलाप, श्वास, भ्रम, सन्धि और अस्थिमें वेदना तथा मलनिग्रह आदिको अल्पता ये वहिर्वेग ज्वरके लक्षण हैं।

आमाशयसे हो ज्वरकी उत्पत्ति होती है। अतएव ज्वरके पूर्वलक्षणों अथवा लक्षणोंको देख कर शरीरके लिए हितकारक लघु आहारीय द्रव्य अथवा अपतर्पण द्वारा शरीरमें लघुता लानी चाहिये। तदनन्तर कषाय पान, अभ्यङ्ग, स्वेद, प्रदेह परिषेक, अनुलेपन, वमन, विरेचन, आस्थापन, अनुवासन, उपशमन, नस्यकर्म, धूम्रपान, अञ्जन और क्षीरभोजन आदि ज्वरके प्रकार भेदसे यथायोग्य विधेय है।

ज्वरके रसस्थ होने पर शरीरमें गुरुता, दीनभाव, उद्वेग, अङ्गावसाद, वमन, अरुचि, शरीरके वहिर्भागमें उत्ताप, अङ्गवेदना और जँभाई आती है।

रक्तस्थ ज्वरमें रक्तजनित पिड़का, तृष्णा, पुनः पुनः खूनसहित थूक, दाह, शरीरमें रक्तिमा, भ्रम, मत्तता और प्रलाप उपस्थित होता है।

मांसस्थ ज्वरमें अत्यन्त अन्तर्दाह तृष्णा, मोह, ग्लानि, अतीसार, शरीरमें दुर्गन्ध और अङ्गविक्षेप होता है।

ज्वर मेदस्थ होनेसे अत्यन्त पसेव, पिपासा, प्रलाप, अरति, मुखमें दुर्गन्ध असहिष्णुता, ग्लानि और अरुचि होती है।

ज्वर अस्थिगत होने पर वमन, विरेचन, अस्थिभेद, कण्ठकूजन, अङ्गविक्षेप और श्वास उपस्थित होता है।

ज्वर मज्जागत होनेसे हिचकी, श्वास, काश, अन्धकार दर्शन, मर्मोच्छेद, शरीरके वहिर्भागमें शैत्य और अन्तर्दाह होता है।

शुक्रस्थ ज्वरमें आत्मा शुक्रक्षरण और प्राणवायुका विनाश कर अग्नि और सोमधातुके साथ गमन करती है।

ज्वर रस और रक्ताश्रित होनेसे साध्य है ; मांस, मेद और अस्थिगत होने पर कृच्छ्रसाध्य तथा शुक्रगत होनेसे असाध्य हो जाता है।

दोष चाहे संसृष्ट हों चाहे सान्निपातिक, कुपित और रसके अनुगत हो कर स्वस्थानसे कोष्ठस्थ अग्निका निरास पूर्वक अग्निकी उष्माके द्वारा देहका बल बढ़ा कर स्रोतोको रोक देते हैं ; पीछे तमाम देहमें व्याप्त और प्रबल हो कर अत्यन्त सन्ताप उत्पन्न करते हैं। उस समय मनुष्यका सारा शरीर गरम हो जाता है।

नूतन ज्वरमें प्रायः अग्नि अपने स्थानसे स्थानान्तरित हो जाती है और उससे स्रोत बन्द हो जाते हैं। इसी लिए रोगीके शरीरसे पसीना नहीं निकलता।

अरुचि, अविपाक, उदरको गुरुता हृदयको अविशुद्धि, तन्द्रा, आलस्य, अविच्छेद भावसे सर्वदा कठिन ज्वरका भोग, दोषोंकी अप्रवृत्ति, लालास्राव हृल्लास (जी मतलाना), क्षुधानाश, मुखमें विस्वाद, शरीरमें स्तब्धता, सुप्तता, गुरुता, मूत्राधिक्य, मलमें अपरिपक्वता तथा शरीरमें अक्षीणता—ये सब आमज्वरके लक्षण हैं। क्षुधा, शरीरस्थ द्रव धातुओंकी शुष्कता, शरीरमें लघुता, ज्वरकी मृदुता, दोषप्रवृत्ति (मलमूत्रादिका उत्सर्ग) तथा अष्टाह भोग—ये निरामज्वरके लक्षण है।

नवज्वरमें दिवानिद्रा, स्नान, अभ्यङ्ग, गुरु और अधिक भोजन, मैथुन, क्रोध, प्रबल वायु वा पूर्व दिशाको वायुका सेवन, व्यायाम और कषाययुक्त पदार्थका सेवन करना छोड़ देना चाहिये।

क्षय, निरामवायु, भय, क्रोध, काम, शोक और परिश्रम—इनके सिवा अन्य किसी कारणसे ज्वर हो तो पहले उपवास करना चाहिये। उपवास फलदायक होने पर भी, जिससे शरीर अधिक दुर्वल न हो, ऐसा उपवास करना चाहिये , क्योंकि शरीरमें बल न होनेसे चिकित्सा से किसी प्रकारका सुफल नहीं मिल सकता।

गौशकटिक (सं० त्रि०) गोशकट सम्बन्धीय, जिसे बैलकी गाड़ी हो।

गौशतिक (सं० त्रि०) गोशतमस्यास्ति गोशत-ठञ्। जिसके एक सौ गौ हो।

गौशृङ्ग (सं० त्रि०) सामभेद, एक प्रकारका सामगान।

गौश्र (सं० पु०-स्त्री०) शुश्रिके वंशज।

गौषूक्त (सं० क्ली०) सामभेद।

गौषूक्ति (सं० पु०) एक मुनिका नाम।

गौष्ठ (सं० त्रि०) गोष्ठ्या भवः गोष्ठी फकादिं अण्। जो गोशालासे उत्पन्न हो।

गौष्ठीन (सं० क्ली०) पूर्वं भूतं गोष्ठं गोष्ठ-खञ्। पहले जिस स्थान पर गुहाल था, पुराना और त्यक्त गोशाला।

गौसम (हिं० पु०) कोसम नामका पेड़।

गौसहस्रिक (सं० त्रि०) गोसहस्रमस्यास्ति गोसहस्र-ठञ्। जिसके एक हजार गौ हो।

गौह (सं० त्रि०) गुहस्येदं गुह-अण्। १ गुहसम्बन्धीय। २ जो गुह द्वारा निर्वृत्त हो।

गौहर (फा० पु०) मोती, मुक्ता।

गौहलव्य (सं० पु०) गुहलोरृषेर्गोत्रापत्यं गुहलु गोर्यादिं यञ्। गुहलु नामक ऋषिके वंशज।

गौहलव्यायनी (स० स्त्री०) गौहलव्य-ङीष् लोहितादित्वात् ष्फ। गुहलु नामक ऋषिकी वंशोत्पन्ना स्त्री।

गौहाटी—पूर्वीय बङ्गाल और आसामके कामरूप जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २६° ११´ उ० और देशा० ९१° ४५´ पू० पर ब्रह्मपुत्र नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। आसाममें यह सब नगरोंसे बड़ा है। पहले यही नगर प्राग्‌ज्योतिषपुर नामसे प्रसिद्ध था। उस प्राचीन नगरके पूर्व कीर्तिका ध्वंसावशेष ब्रह्मपुत्र नदीके दोनों कूल पर विद्यमान है। हिन्दू राजाओंके समयसे लेकर हटिश गवमेंटके १८७४ ई० तक यहीं आसाम राज्यका प्रधान सदर था। उक्त वर्षमें यह सदर उठ कर खासी पहाड़के सिलङ्ग नगरमें गया। दक्षिणो गौहाटीसे शिलङ्ग तक एक पक्की सड़क गई है। उत्तर और दक्षिण गौहाटीकी लोकसंख्या प्रायः १४२४४ है। सोलहवीं शताब्दीसे पहलेका कोई इतिहास इस शहरका नहीं पाया जाता है। सोलहवीं शताब्दीमें यह कोचराज्यके अन्तर्गत था। सतरहवीं शताब्दीमें मुसलमान और अहोमने इस पर आक्रमण किया और लगभग पचास वर्ष तक शहर उन्हीं-के अधिकारमें रहा। १७८१ ई०में मुसलमान कामरूपसे भगाये गये और तभीसे गौहाटी निम्न आसामके अहोम शासकका वासस्थान हो गया। १७८६ ई०में जब मोआमरियाने रङ्गपुर दखल किया तब उन्होंने अपनी राजधानी गौहाटीमें स्थापन की। १८२६ ई०में जब आसाम हटिस गवर्मेंटके अधिकारमें आया तब गौहाटी आसाम राज्यका प्रधान सदर था। यह अब भी आसामकी तराई जिलेके कमिश्नर और जजका प्रधान सदर है। यहां एक चिकित्सालय, विश्वविद्यालय और कारागार है जिसमें केवल ३५२ कैदी रखे जाते हैं।

यहांसे सदर उठ जाने पर भी गौहाटी आसाममें प्रधान वाणिज्यस्थानमें गण्य है। यहांसे कुछ दूर प्रसिद्ध कामाख्या और उमानन्द तीर्थ हैं। कामरूप और कामाख्या देखो।

ग्धि (सं० स्त्री०) अद-क्तिन् वेदे घसादेशः उपधालोपश्च। भक्षण, भोजन।

ग्ना (सं० स्त्री०) गम् बाहुलकात् ना डिच्च। १ स्त्री, औरत। २ देवपत्नी, देवताओंकी स्त्री। ३ वाक्य। ४ वेद।

ग्नावत् (सं० त्रि०) ग्ना अस्त्यस्य ग्ना-मतुप् मस्य वः। १ स्त्रीयुक्त, सपत्नीक, जो स्त्रीको कहीं साथ ले जाता हो। २ स्तुतिवाक्यविशिष्ट।

ग्नास्पति (सं० पु०) ग्नायाः पतिः, ६-तत्। निपातनात् सुट्। १ देवपत्नीका पति। २ छन्दका पति।

ग्नास्पत्नी (सं० स्त्री०) स्त्रियोंकी पालयित्रीदेवी। स्त्रियों-की रक्षा करनेवाली देवी।

ग्मन्—ग्रुथ्मन् देखो।

ग्मा (सं० स्त्री०) पृथिवी, दुनियां।

ग्यांविर (देश०) कीकरकी जातिका एक पेड़। इस पेड़-के पत्तों और लकड़ियोंसे पपड़िया खैर बनाया जाता है।

ग्यान (हिं० पु०) ज्ञान देखो।

ग्यारस (हिं० स्त्री०) एकादशी तिथि।

ग्यारह (हिं० वि०) दश और एक।

ग्रथन (सं० क्ली०) ग्रन्थ बाहुलकात् क्यु न लोप। १ ग्रन्थन, जोड़ना, गूंथना। २ तन्त्रशास्त्रप्रसिद्ध साध्य

(गरम गरम पानी) दोषकर, कफविश्लेषक और वात पित्तके लिए अनुलोमकर है। कफवात-जन्य ज्वरमें उष्णोदक हितकर और पिपासाके लिए शान्तिकर है। इससे दोष और स्रोतपथ सरल होते हैं। इस ज्वरमें ठण्डा पानी पीनेसे शैत्यके कारण ज्वर बढ़ जाता है। पित्त, मद्य वा विषजन्य ज्वर हो, तो गाङ्गेय, नागर, उशीर, पर्पट और उदीच्य इनको रक्तचन्दनके साथ पानीमें उबाल कर ठण्डा हो जाने पर पीना चाहिये। आहारके समय पाचक द्रव्यके साथ पेया बना कर* पीना चाहिये। वायुजन्य ज्वरमें पञ्चमूलीका काढ़ा, पित्तजन्य ज्वरमें मोथा, कटकी और इन्द्रयवका काढ़ा तथा कफजन्य ज्वरमें पिप्पल्यादिका काढ़ा दोषों का परिपाक करता है। द्वि दोष जन्य ज्वरमें द्वि दोष निवारक पाचन मिला कर पीलाना चाहिये। ज्वर मृदु, देह लघु और मल सरल होने पर दोषोंका परिपाक हुआ समझें, तथा इस अवस्थामें दोषके अनुसार ज्वरघ्न औषधका प्रयोग करें। ज्वरमें कोई ७ दिन पीछे और कोई १० दिन बाद औषध प्रयोग करना उचित बतलाते हैं। पित्तजन्य ज्वरमें थोड़े दिनोंमें औषधका प्रयोग किया जा सकता है तथा दोषके परिपाक होने पर भी कुछ दिन औषध दी जा सकती है। अपक्वदोषमें औषध प्रयोग करनेसे पुनः ज्वर प्रकट होता है, इस अवस्थामें शोधन और शमनीय प्रयोग करनेसे विषमज्वर हो सकता है। ज्वर-रोगीका मल निकलता रहे तो रोकना नहीं चाहिये; हां, ज्यादा निकलने पर अतिसारकी तरह प्रतीकार कराना चाहिये। स्रोतपथका रुका हुआ मल परिपाक हो कर कोष्ठस्थानमें आ जाने पर ज्वर थोड़े दिनका होने पर भी विरेचन (दस्त) कराना उचित है। रोगी बलवान् हो तो श्लेष्मा ज्वरमें क्रम क्रमसे वमन कराना चाहिये। पित्ताधिक्य ज्वरमें मलाशय शिथिल हो तो विरेचन, वायुजन्य यन्त्रणायुक्त और उदावर्तरोगयुक्त ज्वरमें निरूहवस्ति, तथा कटि और पृष्ठदेशमें वेदना होने पर दीप्ताग्निविशिष्ट रोगीके लिए अनुवासन विधेय है। कफाभिभूत होनेसे शिरोविरेचन कराना चाहिये, इससे मस्तकका भार और वेदना दूर होती है तथा इन्द्रियां प्रतिबोधित होती हैं। दुर्बल रोगीके उदरमें आध्मान हो कर यन्त्रणा होने पर देवदारु, वच, कुष्ठ, शोलुफा, हिङ्गु और सैन्धवका प्रलेप दें तथा वायु ऊर्द्ध्वगति होने पर उन पदार्थोंको अम्लरसमें पीस कर ईषदुष्ण प्रयोग करें। ऊर्द्ध और अधोदेश संशोधित होने पर भी यदि ज्वर शान्त न हो और शरीर रूखा हो तो वह अवशिष्ट दोष घृत द्वारा समताको प्राप्त होता है, शरीर कृश होने पर अल्प-दोषशमनो प्रयोग करना चाहिये, इससे साम्य लाभ होता है। जो रोगी ज्वरसे क्षीण हो गया हो उसको वमन वा विरेचन न कर यथेष्ट दूध पिलाना अथवा निरूह द्वारा मल निःसरण कराना चाहिये। दोषोंके परिपाक हो जानेके बाद निरूह प्रयोग करनेसे शीघ्र बल और अग्निकी वृद्धि, ज्वरनाश, हर्ष तथा रुचि उत्पन्न होती है। उपवास वा श्रमजन्य वाताधिक्य ज्वर होनेसे दीप्ताग्नि व्यक्तिके लिए मांसरस और अन्न विधेय है। कफजन्य ज्वरमें मूंगकी दालका पानी (जूस) और अन्न तथा पित्त-जन्य ज्वरमें ठण्डा मूंगकी दालका जूस और अन्न शर्करा-के साथ खाना चाहिये। वातपैत्तिक ज्वरमें दाडिम वा आँवलेके साथ मूंगकी दालका जूस, वातश्लेष्मा ज्वरमें ह्रस्व-मूलकका जूस तथा पित्तश्लेष्माज्वरमें पटोल और निम्बजूस अन्नके साथ खिलाना चाहिये। कफजन्य अरुचि होने पर त्रिकटुके साथ मठा पीना विधेय है। कृश, अल्पदोषविशिष्ट, क्षीण और जीर्णज्वरपीड़ित रोगीके लिए तथा वातपित्तज्वरमें दोषोंके बद्ध रहनेसे वा देह रूक्ष होनेसे तथा प्यास वा दाह होनेसे दूध पीना स्वास्थ्यकर है। तरुणज्वरमें दूध पीना बिल्कुल मना है, किन्तु क्षीण शरीरवालेको वातपित्तजन्य ज्वरमें तथा अग्नि तेज होने पर दूध दिया जा सकता है।

पुराने ज्वरमें कफपित्तकी क्षीणता होनेसे, जिसका मल रूक्ष और बद्ध हो तथा अग्नि तेज हो, उसको अनु-वासन दिया जाता है। जीर्णज्वर होने पर मस्तकमें भारीपन, शूल तथा इन्द्रियस्रोत बंद होने पर शिरोविरे-चनसे अरुचि और शान्ति होनेकी सम्भावना है। जिस समुदाय जीर्णज्वरमें चर्ममात्र अवशिष्ट है तथा आगन्तुक कारण अनुबन्ध होता है, धूप और अञ्जन प्रयोग करने-

* जिसका पेया बनाया जाता है, उसको चौदह गुने जलमें पाक करना चाहिये। अधिक द्रव अवस्थामें पाक ठीक होता है।

पक जाता है, वैसा ही इसमें पक जाता है। चीरा देनेसे दूषित रक्त निकल जाता है।

कफज ग्रन्थिका लक्षण—श्लैष्मिक ग्रन्थि ठण्डी, स्वाभाविकवर्णवाली, पत्थर जैसी कठोर, सामान्य वेदना और भीतरमें खुजलाहटवाली होती है। यह गाँठ देरसे बढ़ती है। फूटने पर इसमेंसे गाढ़ा सफेद रंगका पीव निकला करता है।

मेदोज ग्रन्थिका लक्षण—यह ग्रन्थि चिकनी, बड़ी, खुजली और वेदनायुक्त होती है। शरीरके साथ साथ इसकी घट-बढ़ होती है। फूटने पर इसमेंसे घी जैसा मेद गिरता है।

शिराज ग्रन्थिका लक्षण—बलवानोंके साथ युद्ध वा हठसे ज्यादा कसरत करनेवाले दुर्बल मनुष्यकी नसें तन जाती हैं। इससे नसोंका समूह सङ्कुचित, शोषित और संहत हो कर जो गोलाईको लिए ऊंची ग्रन्थि उत्पन्न हो जाती है, उसे शिराज ग्रन्थि कहते हैं। यह गाँठ अगर वेदनायुक्त होगी, तो कष्टसाध्य समझना चाहिये। यदि वेदना न हो और बड़ी हो, तो उसे असाध्य समझना चाहिये। मर्मस्थानमें उत्पन्न हुई हो, तो वह भी असाध्य है। (भावप्रकाश मध्य खं०)

सुश्रुतके मतानुसार—वायु आदि दूषित हो कर रक्त, मांस और कफयुक्त मेदको दूषित करते हैं। इससे शरीरमें अपने आप ऊंचा और गोल शोथ उत्पन्न होता है, इसीको ग्रन्थि कहते हैं। वायुग्रन्थिरोगमें शरीर चिड़ चिड़ाता और दुखता है, वेदना होती है और ऐसा मालूम होता है कि, मानो शरीर फटा जा रहा हो। यह गाँठ काले रंगकी, कठिन, और विस्तृत होती है। फूटने पर निर्मल खून निकलता है। पित्तज ग्रन्थि लाल या पीले रङ्गकी होती है, इससे शरीरमें बराबर दाह और जलन पैदा होती रहती है। बार बार पक कर शरीरको गरम कर देती है। फूट जानेके बाद इससे अत्यंत गरम खून निकलता है। कफज ग्रन्थिरोगमें शरीर ठण्डा और फीका रंगका हो जाता है। थोड़ी पीर और खुजली ज्यादा उत्पन्न हो जाती है। गाँठ पत्थर जैसी कठोर और बहुत दिनोंमें बढ़ती है। फुटने पर घना और सफेद वर्णका पीव निकलता है। मेदोज ग्रंथिरोगसे शरीर क्षीण हो जाता है और शरीर वृद्धिमें बाधा पहुंचती है। यह चिकनी, बड़ी और थोड़ी यातना देनेवाली होती है। इसमें खुजली खूब होती है। ज्यादा चीरने पर इससे घी जैसा मेद (चर्वी) निकलता है।

(सुश्रुत निदान० ११ अ०)

भावप्रकाशके मतानुसार ग्रंथिचिकित्सा—स्वर्जिकाक्षार (सज्जीमिट्टी), मूलीका क्षार और शङ्खचूर्ण, इन तीनों चीजोंको समानतासे मिला कर गाँठ पर प्रलेप देना चाहिये। इससे भी अगर आराम न हो तो उसे योग्य चिकित्सकके द्वारा चिरवा देना चाहिये। फिर जात्यादि घृत और व्रणनाशक औषधियोंसे इलाज करना चाहिये। जात्यादि देखो। किसी किसीका कहना है कि, शिराज ग्रन्थि चिरवाना नहीं चाहिये। (भावप्रकाश मध्य ख० १)

सुश्रुतके मतानुसार—शोथकी भाँति ग्रन्थिरोगकी भी अपक्व अवस्थामें प्रतीकार करना योग्य है। शरीरमें जब तक बल रहेगा तब तक रोग प्रबल नहीं होगा, इस लिए शरीरको दुर्बल न होने देना चाहिये। शरीरकी पुष्टिके लिए विशेष ध्यान रखना चाहिये। तैल या घृत, अथवा दोनों पीना चाहिये, या घीके साथ तरवृद (त्रिवृत्) सेवन करना चाहिये।

वायुजन्य ग्रन्थिरोगमें दशमूलका क्वाथ और चतुःस्नेह तथा श्वेत गुञ्जाका मूल, आंवला, हर्रे, भार्गी, शोनाकाल, बिल्व, अगुरु, शोभाञ्जन, गोजिह्वा, तालमूली, इत्यादिका प्रलेप तथा उपनाह स्वेद और वायुका नाशक अन्यान्य प्रलेपोंका सेवन करना चाहिये। अथवा चिरवा कर पीव निकलवा देना चाहिये और बिल्व, अर्क और राजवृक्षके क्वाथमें धो कर सैन्धवसंयुक्त पञ्चांगुलका पत्ता और तिल लेपन करना चाहिये। साफ हो जाने पर सफेद त्रिवृत् (निशोत)-के साथ तैल बना कर व्रणको भरना चाहिये।

पित्तजन्य ग्रन्थिरोगमें विडङ्ग, यष्टिमधु और गुलञ्चका क्वाथ, इनको दूधके साथ सेवन करना योग्य है। जोंक लगवा कर वहांका दूषित रक्त निकलवा कर, क्षीरोदक सींचना और काकोल्यादिवर्गका ठण्डा क्वाथ शक्करके साथ खिलाना चाहिये। द्राक्षारस या इक्षुरसके साथ हर्रेका चूर्ण पान करना चाहिये और यष्टिमधु, जंबु, अर्जुन

श्वास, शिरःशूल और पार्श्वशूल जाता रहता है। पञ्चमूलके द्वारा दुग्ध उबाल कर पीनेसे ज्वर उपशमित होता है।

मलद्वारमें परिकर्तिका (कतरने जैसी पीड़ा) हो तो ज्वर-रोगीको दुग्धके साथ एरण्डमूलका काढ़ा अथवा दूधके साथ बेलगरी उबाल कर उस दुग्धको पीना चाहिए। इससे परिकर्तिका ज्वरसे छुटकारा मिल सकता है। गोखरू, पिठवन, कण्टकारी, गुड़ और सोंठ इनको दुग्धके साथ उबाल कर पीनेसे मलमूत्रका विबन्ध, शोथ और ज्वर नष्ट होता है। सोंठ, किसमिस और पिण्डखजूरको दूधमें उबाल कर घी, मधु और चीनीके साथ पीनेसे पिपासा और ज्वर जाता रहता है।

वायुजन्य ज्वरमें पीपल, श्यामालता, द्राक्षा, शतपुष्पा (सोंय) और हरेणु, इनका क्वाथ गुड़के साथ पीना चाहिये; अथवा गुलञ्चका क्वाथ ठण्डा होने पर पीना चाहिये। बला, कुश और गोखरूका क्वाथ चौथाई रह जाने पर चीनी और घीके साथ पीना चाहिये। शतपुष्पा, वच, कुड़, देवदारु हरेणु, धान्य, उशीर (खस खस) मोथा, इनका क्वाथ मधु और चीनीके साथ पीना चाहिये। द्राक्षा, गुलञ्च, गाम्भारी, त्रायमाणा और श्यामा लता, इनका क्वाथ गुड़के साथ सेवनीय है। गुलञ्च और शतमूलीका रस गुड़के साथ सेवन करनेसे विशेष लाभ होता है। अवस्थाविशेषमें घृतमर्दन, स्वेद और आलेपन प्रयोग किया जाता है। ज्वरको आमावस्थाका परिपाक होने पर यदि वायुजन्य उपद्रव हो और अन्य किसी दोषका संस्रव न हो, सिर्फ वातजन्य ज्वर हो यदि जीर्णज्वर वायुजन्य हो अर्थात् ज्वर सुबहसे शुरू हो कर दोपहरको मग्न हो, तो घृतमर्दन विधेय है। यदि शामसे शुरू हो कर दो प्रहरके भीतर मग्न हो, तो गायका घी पिलाना चाहिये।

पित्तजन्य ज्वरमें श्रीपर्णी (गाम्भारी), रक्तचन्दन, खसकी जड़, फालसा और मौलश्री इनका काढ़ा चीनीसे मीठा करके पीना चाहिये। अनन्तमूलका क्वाथ चीनी डाल कर पीनेसे विशेष लाभ होता है। यष्टिमधु, रक्तोत्पल, पद्मकाष्ठ और पद्म, इनका शीतल क्वाथ चीनीसे पीने योग्य है। गुलञ्च, पद्मकाष्ठ, लोध्र, श्यामालता और उत्पल, इनका ठण्डा काढ़ा चीनी मिला कर पीवें। द्राक्षा, अमलतास और गाम्भारी, इनका काढ़ा चीनीके साथ पीवें। मधुर और तिक्त शीतल क्वाथ शर्कराके साथ पीनेसे प्रबल दाह और तृष्णा शान्त होती है। शीतल जल मधुके साथ भर पेट पी कर वमन करनेसे तृष्णा शान्त होती है। यवक्षड, कपूर और चन्दनको दूधके साथ पकावें, इस क्वाथको ठण्डा करके पीनेसे अन्तर्दाह शान्त होता है। जिह्वा, तालू, गलदेश और क्लोम शुष्क होने पर पद्मकाष्ठ, यष्टिमधु, द्राक्षा, उत्पल, रक्तोत्पल, भृष्टयव, उशीर, मञ्जिष्ठा और गाम्भारफल इनके कल्कका मस्तक पर लेप देना चाहिये। मुखमें विरसता होनेसे बिजौरा नीबूको केशरको मधु और सैन्धव लवणके साथ अथवा चीनीके साथ दाड़िमका कल्क वा द्राक्षा और खजूरका कल्क अथवा इनका क्वाथ वा रसका गण्डूष मुखमें धारण करना पड़ता है।

कफजन्य ज्वरमें कुटक, गुलञ्च, निम्ब, स्फूर्जक इनका क्वाथ मधुके साथ अथवा त्रिकटु, नागकेशर, हलदी, कटकी, और इन्द्रयवका काढ़े अथवा हलदी, चित्रक, निम्ब उशीर अतिविषा, वच, कुष्ठ, इन्द्रयव, मोथा और पटोलका क्वाथ मधु और मिर्चके साथ सेवन करना चाहिये। श्यामालता, अतिविषा, कुष्ठ, पुरा, दुरालभा, मोथा इनका काढ़ा अथवा मोथा, इन्द्रयव, त्रिफला इनका क्वाथ सेवनीय है।

वातश्लेष्मज्वरमें राजवृक्षादिवर्गका क्वाथ मधुके साथ उपयुक्त समय पर सेवन करना चाहिये; अथवा सोंठ, धान्यक, वरङ्गी, हड़, देवदारु, वच, शिग्रुबीज, मोथा, चिरायता और कटफलका क्वाथ मधु और हिङ्गुके साथ उपयुक्त समय पर सेवन करनेसे ज्वर शीघ्र आरोग्य होता है। श्वास, काश, श्लेष्मानिर्गम, गलग्रह, हिक्का, कण्ठशोथ, हृदिशूल और पार्श्वशूल ये सब उपद्रव उक्त क्वाथके पीनेसे जाते रहते हैं।

पित्तश्लेष्मज्वरमें इलायची, परवल, त्रिफला, यष्टि-मधु, वृष और वासक, इनका क्वाथ मधुके साथ अथवा कटकी, विजया, द्राक्षा, मोथा और क्षेत्रपर्पटी, इनका क्वाथ अथवा कांजिका वच, पर्पटी, धनिया, हिङ्गु, हड़, मोथा, द्राक्षा और नागरमोथा, इनका काढ़ा मधुके

कफ, वात, विष, श्वास, कण्डू और रोगन्ध्रनाशक है। इसके लेपन करनेसे शरीरकी रूक्षता, अलक्ष्मी, राक्षस और ज्वर नाश हो जाते हैं। (राजवल्लभ) इस जातिका वृक्ष नेपाल अञ्चलमें उत्पन्न होता है। इसका वर्तुलाकार ग्रंथियुक्त अंश बनियेकी दूकान पर बेचा जाता जो गठियाला कहलाता है। इस वृक्षसे नीलवर्ण शुकाकार केशरका गुच्छा निकलता जो देखनेमें बहुत सुन्दर लगता है। इसका पुष्प कुकशिमा पुष्पके जैसा होता और पत्ते शुकपक्षीके डैनेके सदृश होते हैं। इस वृक्षके नीलरंगके पुष्प फट कर छत्राकारमें रूईकी तरह इधर उधर हवामें उड़ जाते हैं।

(पु०) २ चोरक नामक गन्धद्रव्य।

ग्रन्थिपर्णक (सं० पु०) ग्रंथिपर्ण संज्ञार्थे कन्। श्रीवास।

ग्रन्थिपर्णा (सं० स्त्री०) ग्रंथिपर्ण-टाप्। जतुका लता।

ग्रन्थिपर्णी (सं० स्त्री०) ग्रंथिपर्णा गौरादित्वात् ङीष्। गण्डदूर्वा, गाँडर दूब।

ग्रन्थिफल (सं० पु०) ग्रंथियुक्तं फलमस्य, बहुव्री०। कपित्थवृक्ष, कैथका पेड़। २ मदनवृक्ष, मैनफलका पेड़। ३ साकुरुण्ड वृक्ष।

ग्रन्थिबन्धन (सं० क्ली०) ग्रंथेर्बन्धनं, ६-तत्। विवाहके समय वर और कन्याके वस्त्रोंके परस्पर गांठ देकर बांधनेकी क्रिया, गांठबन्धन। २ जन्मतिथिमें गोरोचनायुक्त सूत्र बन्धन।

ग्रन्थिबर्हिन् (सं० पु०) ग्रंथिं बर्हति बर्ह-स्तुतौ ग्रंथि बर्ह-णिनि। ग्रंथिपर्णवृक्ष, गठिवनका पेड़।

ग्रन्थिभा (सं० स्त्री०) अस्थिसंहारवृक्ष, हड जोड़ाका पेड़।

ग्रन्थिभेद (सं० पु०) ग्रंथिं वस्त्रादि ग्रंथिं भिनत्ति ग्रंथि-भिद्-अण् उपपदस०। चोरविशेष, गंठकटा, गिरहकट। मनुका मत है कि गंठकटा चोरका प्रथम बार अङ्गुलि छेदन, द्वितीयबार हस्त और पद छेदन तथा तृतीयबार चोरी करनेसे वध करना उचित है। (मनु० ९।२७७)

ग्रन्थिमत् (सं० त्रि०) ग्रन्थिरस्त्यत्र ग्रन्थि-मतुप्। १ ग्रन्थियुक्त, गांठदार। (पु०) २ अस्थिसंहारिवृक्ष। इसका संस्कृत पर्याय—अस्थिसंहारी, वज्राङ्गी और अस्थिशृङ्खला है। इसका गुण वात, श्लेष्मा, क्रमि और दुर्गन्धनाशक, अस्थियोगकारी, उष्ण, सारक, अस्त्ररोग और पित्तवर्द्धक, रूक्ष, स्वादु, लघु, वृष्य और पाचन है। (भावप्रकाश)

ग्रन्थिमत्फल (सं० पु०) ग्रंथिमत्फलं यस्य, बहुव्री०। मान्दारका पेड़।

ग्रन्थिमान् (सं० पु०) अस्थिसंहारवृक्ष।

ग्रन्थिमूल (सं० क्ली०) ग्रन्थि-गुणवत् मूलमस्य, बहुव्री०। १ गृञ्जन, सलगम, गाजर, मूली आदि मूल जो गाँठोंके रूपमें पृथ्वीके भीतर होते हैं। २ लहसुन। ३ तालमुली, मूसल।

ग्रन्थिमूला (सं० स्त्री०) ग्रंथिबहुलं मूलं अस्याः, बहुव्री०, टाप्। मालादुर्वा, मालादूब।

ग्रन्थिल (सं० त्रि०) ग्रन्थिर्विद्यतेऽस्य ग्रन्थि-लच्। १ ग्रन्थियुक्त, गांठदार, गंठीला। (क्ली०) २ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। ३ आर्द्रक, अदरक। (पु०) ४ कंटाय नामका कण्टीला वृक्ष। पूर्व समयमें इसकी लकड़ीसे यज्ञपात्र बनते थे। ५ करीरका वृक्ष। ६ विल्ववृक्ष, बेलका पेड़। ७ चोरक नामका गन्धद्रव्य। ८ चौराइका साग। ९ विकङ्कटवृक्ष, बैंचोका गाछ। १० आलू।

ग्रन्थिला (सं० स्त्री०) ग्रन्थिल-टाप्। १ भद्रमुस्ता, भद्रमोथा। २ माला दूर्वा, माला दूब। ३ गाडर दूब।

ग्रन्थिवर्हि (सं० पु०) ग्रन्थिपर्णवृक्ष, गठिवनका पेड़।

ग्रन्थिविसर्प (सं० पु०) विसर्परोगभेद, गेंठियाकी बीमारी।

ग्रन्थिसंवृता (सं० स्त्री०) एक तरहकी लता।

ग्रन्थिहर (सं० पु०) ग्रंथिं हरति हृ-अच्। अमात्य, मन्त्री।

ग्रन्थीक (सं० क्ली०) ग्रंथिक पृषोदरादित्वात् साधु। पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

ग्रप्स—प्सस देखो।

ग्रभ (सं० पु०) ग्रभः (वैदिकधातु) अप्। ग्रहण, पकड़।

ग्रभण (सं० क्ली०) ग्रभ-ल्युट्। ग्रहण, पकड़।

ग्रभणवत् (सं० त्रि०) ग्रभणं विद्यतेऽस्य ग्रभण-मतुप्, मस्य वः। ग्रहणविशिष्ट।

ग्रभीत् (सं० त्रि०) ग्रभ-तृच्। ग्रहीता, ग्रहण करने योग्य, पकड़ने लायक।

है। अतएव जीर्णज्वरमें औषधके साथ उबाला हुआ दूध पीना चाहिये।*

गुलञ्च, त्रिफला, वासक, त्रायमाणा और यवास इनका क्वाथ तथा द्राक्षा, पीपल, मोथा, सोंठ, कुड और चन्दन इनका कल्क घीमें पाक करके सेवन करनेसे जीर्णज्वर जाता रहता है। कचूरो, बृहती, द्राक्षा, त्रायन्ती, नीम, गोखरू, बला, पर्पटी, मोथा, शालपर्णी और यवास इनके क्वाथमें तथा दूने दूधमें शठी, भू आंवला, कञ्जिका, मेद (अभावमें अश्वगन्धा) और कुड इनके कल्कमें घृत पाक करके सेवन करनेसे जीर्णज्वर आराम हो जाता है। जीर्णज्वर शरीरको रसादि धातुका—दौर्बल्यवशतः शीघ्र निवृत्त न हो कर क्रमशः भोग करता रहता है। अतएव ज्वररोगीकी बलकारक बृंहण द्वारा चिकित्सा करनी चाहिये। विषमज्वरमें ज्वररोगीके पीनेके लिए सुरा और सुरामण्ड तथा खानेके लिए कुक्कुट, तित्तर और मयूरका मांस दिया जाता है। छह पल घी, हर्र, त्रिफलाका क्वाथ अथवा गुलञ्चका रस सेवन करनेसे विषमज्वर उपशान्त हो सकता है।

विडङ्ग, त्रिफला, मोथा, मञ्जिष्ठा, दाड़िम, उत्पल, प्रियङ्गु, इलायची, एलवालुक, रक्तचन्दन, देवदारु, वर्हिष्ट, कुष्ठ, हरिद्रा, पर्णिनी, श्यामालता, अनन्तमूल, हरेणु, निसोथ, दन्ती, वच, तालीश, नागकेशर और मालतीपुष्प इनका क्वाथ और घीसे दूना दूध इनके साथ घृत पाक करें। इसका नाम कल्याणघृत है। कल्याणघृत खानेसे विषमज्वर नष्ट होता है। विषमज्वर आनेके समय युक्तिपूर्वक स्नेह और स्वेद प्रदान करके नीलवृक्षा, निसोथ और कटकी इनका काढ़ा पीना चाहिए।

विषमज्वरमें खूब ज्यादा घी पी कर वमन करें तथा बुखार चढ़ते समय अन्नके साथ प्रचुर मद्य पी कर शयन, आस्थापन वा वमन करें। इस बुखारमें बिल्लीकी विष्ठा दूधके साथ पीवें अथवा वृषके गोमय दधिका मण्ड वा सुराके साथ सैन्धव लवण पीवें। इस बुखारमें पीपल, त्रिफला, दही, मठा, घी† और पञ्चगव्यका प्रयोग करना विधेय है। व्याघ्रको वसा और हिङ्गु, दोनोंको बराबर बराबर ले कर सैन्धवके साथ मिला कर उससे अथवा सिंहकी वसाको पुराने घीके साथ मिला कर सैन्धवके साथ नस्य ग्रहण करनेसे विषमज्वरमें फायदा पहुंचता है। सैन्धव, पीपलके दाने और मनसिलको तेलमें घोंट कर उसका अञ्जन आंखोंमें लगानेसे विषमज्वर शीघ्र नष्ट हो जाता है। गुग्गुल, नीमके पत्ते, वच, कुड़, हर्र, सफेद सरसों, यव और घी इन सबकी धूप देनेसे विषमज्वर जाता रहता है। विषमज्वरमें भोजनसे पहले तिलके तेलके साथ लहसुनके कल्कका सेवन और साफ उष्णवीर्य मांस भक्षण करते हैं।

भूतविद्या और वन्ध्यावेश तथा ताड़ना द्वारा भूताभिषङ्ग ज्वर, विज्ञानादिके द्वारा मानसिक ज्वर तथा घृतमर्दन और रसौदन भोजन द्वारा श्रम और क्षीणताजन्य ज्वर शान्त होता है। अभिशाप वा अभिचारजन्य ज्वर होमादिके द्वारा तथा उत्पातिक वा ग्रहपीड़ाजन्य ज्वर दान, स्वस्त्ययन और आतिथ्यक्रिया द्वारा निवृत्त होता है।

चरकसंहितामें लिखा है कि, अभिशाप अभिचार और भूताभिषङ्गजनित ज्वरमें दैवव्यपाश्रय (बलि मङ्गलादि) और युक्तिव्यपाश्रय (कषायादि) सब तरह की औषधोंका प्रयोग किया जाता है।

अभिघातजन्य ज्वरमें उष्णक्रिया विधेय नहीं है। मधुर, स्निग्ध, कषाय अथवा दोषानुसार अन्य प्रकारकी औषधोंका प्रयोग करना ही उचित है।

घृतपान, घृताभ्यङ्ग, रक्तमोक्षण मद्यपान और सात्म्य मांसके साथ अन्नभोजनके द्वारा अभिघातजन्य ज्वर उपशम होता है।

किसी प्रकारकी औषधकी गन्धसे वा विषजन्य ज्वर

---

* बला, गोखरू, व्याकुड, अमलतास, कण्टकारी, शालपर्णी, नीम-छाल, क्षेत्रपर्पटी (क्षेतपापड़ा), मोथा, बलालता और दुरालभा, इनका काढ़ा तथा भूआंवला, शठी, किसमिस, कुड, मेद और आंवला इनका कल्क और दूध इनके द्वारा घृत पाक करके सेवन करनेसे जीर्णज्वरकी शान्ति होती है।

† पंचगव्य बराबर बराबर मिला कर उसमें त्रिफला, चित्रक, मोथा, हल्दी, दारुहल्दी, नकुल, वच, बायविडंग, त्रिकटु, चव्य और देवदारु डालना चाहिये। इसके सेवन करनेसे विषमज्वर नष्ट हो जाता है। बला अथवा गुलञ्चके साथ पंचगव्यका पाक करके सेवन करनेसे जीर्णज्वर शान्त होता है।

(सूर्य), Planet * (ग्रह), Satellite † (उपग्रह), (पारिपार्श्विक वा चन्द्र) Fixed planet ‡ (नक्षत्र या अचला तारा), Comet (धूमकेतु), Meteor (उल्का), Nebula (निहारिका) इन श्रेणियोंमें विभक्त हैं। जिस सूर्यके उज्ज्वल आलोकके प्रकाश और अप्रकाशसे दिन और रातका भेद मालूम पड़ता है, वह गतिशून्य है और अपने स्थानमें अचल भावसे अवस्थित है। उस सूर्यको पृथिवी और पृथिवीवत् और भो बहुतसे तारा सदैव प्रदक्षिण किया करते हैं। इनमें पहिले § बुध (Mercury) उसके बाद क्रमसे शुक्र (Venus), पृथिवी (Tellus) वा (Earth), मङ्गल (Mars), फिर बहुसंख्यक क्षुद्र तारे और उसके बाद वृहस्पति (Jupiter), शनि (Saturn) इउरानस् (Uranus) (१) और नेपचुन् (Neptune) (२) है। इन तारोंको (Planet) (ग्रह) कहते हैं। उक्त मङ्गल और वृहस्पतिके मध्यमें जो २२१ क्षुद्र तारे आविष्कृत हुए हैं, उन्हें क्षुद्र ग्रह वा कनिष्ठ ग्रह (Asteroids, planetoids या Minor planets) कहते है। जिस तरह पृथिवीको एक चन्द्र प्रदक्षिण करता है उसी प्रकार शनिको आठ, इउरानस् और वृहस्पतिको चार चार तथा नेपचुनको एक चन्द्र प्रदक्षिण करता है। इन चन्द्रमाओंके दूसरे नाम उपग्रह या पारिपार्श्विक ग्रह (Satelites) है। ये अपने अपने ग्रहोंको प्रदक्षिणा देते समय उन ग्रहोंके साथ मानो रज्जुबद्ध हो कर सूर्यको प्रदक्षिण देते हैं। इसी प्रकार आठ मुख्य और २२१ कनिष्ठ या छोटे ग्रह हैं, अर्थात् २२९ ग्रह है और १८ उपग्रह या चन्द्र है। सब समेत २४७ ग्रहोपग्रह सूर्यको प्रदक्षिण करते है। इन घूमने वालोंको सूर्यका ग्रहदल वा परिवार कहते है। इसी प्रकार अनन्ताकाशमें अनन्त सूर्य है और उनमें प्रत्येकका एक एक ग्रहदल वा परिवार है। यह शेषोक्त ग्रहदल यद्यपि आज तक भली भांति दृष्टिगोचर नहीं हुआ परंतु तब भी उनका रहना सम्भव जान पड़ता है। कालान्तरमें दुरवीक्षणयन्त्रकी दृष्टिसीकय शक्ति वृद्धि होने पर उसका आविष्कार हो सकता है। उक्त सूर्यपुञ्ज अचलतारा वा नक्षत्र (Fixed Star) के नामसे प्रसिद्ध है और ये ही असंख्य ज्योतिष्करूपसे आकाशमें खचित है। हमारे इस सूर्यके ग्रहदलकी सम्बन्ध निबद्ध और सूर्यके साथ उसका संस्रव नियमबद्ध इसकी जो एक प्रणाली है, उसे Planetary system (ग्रहक्रम या ग्रहपद्धति) कहते है। सूर्य, ग्रहदल और धूमकेतु सर्वसमष्टिको सौरजगत् (Solar system) कहते है। सौर जगत देखो।

बुध, शुक्र, मङ्गल, वृहस्पति, शनि इत्यादिको पुरातन ग्रह कहते है, क्यों कि, ये प्राय: सब ही प्राचीन सभ्यजातिके विज्ञात है। सर्वमुख्य ग्रहोंको क्रान्तिग्रह (Zodiacal planets) कहते हैं, कारण ये क्रान्ति रेखाके उर्द्धाध ८० अंश व्यास स्थानमें सञ्चालित होते हैं। शिरिज (Ceres), पैलैस् (Pallas), जूनो (Juno), भेष्टा (Vesta), आष्ट्रीया (Astraea) आदि कनिष्ठ ग्रहोको अतिक्रान्त ग्रह (Ultra Zodiacal planets) कहते है, क्यो कि ये क्रान्तिकी उक्त सोमाके वहिर्भूत है। पृथिवी और सूर्यके बीचके बुध और शुक्रको अपरग्रह (Inferior) तथा पृथ्वीके बाद अर्थात् पृथिवीकी अपेक्षा सूर्यसे दूरस्थ मङ्गल, वृहस्पति, शनि इउरानस् और नेपचूनको परग्रह (Superior planets) कहते है और वृहस्पति आदि ग्रहोंको Major planets कहते है। पृथिवी तथा उसको भांतिके बुध और शुक्र ये तीन ग्रह, सूर्य और कनिष्ठग्रहोंमें अवस्थित है। इनको पार्थिवग्रह (Terrestrial planets) को संज्ञा दी गई है।

सूर्य एक महा अद्भुत विशाल गोलपिण्डाकार पदार्थ

---

* ग्रीकभाषामें प्लेनेटका अर्थ भ्रमण करना होता है। इसी प्रकारका ग्रह या भ्रमणशील तारा।

† लैटिन भाषामें सैटिलिटका अर्थ सङ्गीत अर्थात् पारिपार्श्विक है।

‡ सूर्य ऐसे Fixed Star में एक है, पर वास्तवमें सूर्य और नक्षत्र स्थिर पदार्थ नहीं है। रोज जो उसका और अन्य नक्षत्रोंका उदयास्त तथा वर्ष वर्ष में उसकी जो गति प्रकाशित होती है वह भी भ्रान्तिमूलक है। वह पृथिवीके बारसे आवर्त्तन है और वर्ष वर्ष में सूर्य प्रदक्षिणजनित होता है। युग युगमें सूर्यको और नक्षत्रोंकी गति प्रगट होती है।

§ बुध और सूर्यमें कोई कोई ज्योतिर्विद (Vulcan) भलकैन् नामके एक ग्रहका आविष्कार करते हैं, परन्तु इसका स्थिर सिद्धान्त नहीं हुआ।

(१) दूसरा नाम (Herschel) हर्शेल है क्योंकि हर्शेलने उसका पहिले आविष्कार किया था और तीसरा नाम Georgium sidus, अर्थात् इङ्गलैण्डके तृतीय जार्जनामक अधिपतिके समयमें आविष्कृत।

(२) माध्याकर्षणके नियमसे नेपचूनके बाद दो ग्रहोंका रहना सम्भव है। बहुतोंका ख्याल है कि, पीछे भी आविष्कार हुआ होगा।

जेठीमधुके साथ मदनफल और गरम पानी पिला कर वमन कराना चाहिये। मधु और जल वा इक्षुरस अथवा लवणोदक किम्वा मद्य वा तर्पण द्वारा वमन कराना प्रशस्त है। किसमिस और आँवलेके रस द्वारा अथवा सिर्फ आँवलेका रस घीमें सन्तलन करके वमनके लिए पिलाया जा सकता है।

परवलकी पत्ती, नीमकी पत्ती, उशीरमूल, अमलतास, गुलशकरी, गन्धतृण, कटकी, गोखरू, मैनफल, शालपर्णी और विजवन्द इनको आधे दूध और आधे पानीमें उबाल कर दूधके बराबर रह जाने पर उसे उतार लें, फिर उसमें घी, शहद, मदनफल, मोथा, पीपल, यष्टिमधु और इन्द्रयव इन सबका कल्क मिला कर वस्ति प्रदान करनेसे ज्वर नष्ट हो जाता है। अमलतास, खसकी जड़, मैनफल, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, माषपर्णी और मुद्गपर्णी इनका क्वाथ बना कर उसमें प्रियङ्गु, मैनफल, मोथा, सोंया (शतपुष्पा) और यष्टिमधु इनका कल्क तथा घी, गुड़ और मधु मिश्रित वस्ति अत्यन्त ज्वरघ्न है। रक्तचन्दन, अगुरुकाष्ठ, गाम्भारी, परवलकी पत्ती, यष्टिमधु और नीलोत्पल इनके द्वारा उबाला हुआ स्नेह बना कर उससे स्नेहवस्ति प्रदान करें। यह अत्यन्त ज्वरघ्न है।

वायुजन्य ज्वरमें वातघ्न मधुर पदार्थके साथ निरूह-वस्ति अथवा दोष और बलके अनुसार अनुवासन प्रयोज्य है। पित्तजन्य ज्वरमें उत्पलादिगण चन्दन और उशीर मूल प्रचुर शीत क्वाथ और शर्कराके साथ मधुर करके वस्ति प्रयोग करना विधेय है। यातना हो, तो आम्रादिका त्वक्, शङ्ख, चन्दन, उत्पल गैरिक, अञ्जन, मञ्जिष्ठा, मृणाल और पद्म इनको भली भांति पीस कर दूध, शक्कर और मधुके साथ वस्ति प्रयोग करना उचित है। कफजन्य ज्वरमें आरग्वधादिका क्वाथ, पिप्पल्यादिगण और मधुके साथ वस्ति प्रयोग करना चाहिये। द्विदोषजन्य और सन्निपातज्वरमें दोषोंके अनुसार द्रव्य मिला कर वस्ति प्रयोग करें। पित्तजन्य ज्वरमें मधुर और तिक्त द्रव्य मिला कर वस्ति प्रयोग करें। श्लेष्मजन्य ज्वरमें कटु और तिक्त द्रव्यके साथ घृत पाक कर वस्ति कार्यमें प्रयोग किया जाता है। मस्तक कफपूर्ण मालूम पड़ने पर शिरोविरेचन प्रयोग करें।

जीवन्ती, यष्टिमधु, मेद, पीपल, मरिच, वच, ऋद्धि, रास्ना, गंगेरन, सोंठ, सोंया और शतमूली, इनका कल्क दुग्ध और जलके द्वारा तेल तथा घृतपाक करके अनुवासिक स्नेह प्रस्तुत करें। यह स्नेह अत्यन्त ज्वरघ्न है। परवलकी पत्ती, नीम छाल, गुलञ्च, जेठीमधु और मैनफल द्वारा उबाला हुआ स्नेह अत्यन्त उत्कृष्ट अनुवासन है।

लाक्षा, सोंठ, हल्दी, चूरनहार, मंजीठ, सज्जी और ह्रर्रे इनके छह गुने क्वाथके साथ तैल पाक करें। इस तैलके सेवनसे ज्वर आरोग्य होता है।

गूलर, जीवकद्रुम नीम, जम्बू, सप्तच्छद, अर्जुन, शिरीष, खदिरकाष्ठ, मल्लिका, गुलञ्च, वासक, कटकी, पित्तपर्पटी, खसकी जड़, वच, गजपिप्पली और मोथा इनके क्वाथमें तैलपाक करें, इससे ज्वर नष्ट होता है।

ज्वररोगीका मल बद्ध हो, तो पीपल और आँवलेसे यवकी पेया बना कर उसको पिलाना चाहिये। गोखरू, बला, कण्टकारी, गुड़ और सोंठ इनको दूधके साथ उबाल कर पीनेसे मलमूत्रका विवन्ध और ज्वर नष्ट होता है।

वातज, श्रमज और पुरातन क्षतज ज्वरमें लङ्घन हितकर नहीं है। संशमन औषध द्वारा इन ज्वरोंकी चिकित्सा करनी चाहिये।

आठवें दिन ज्वर निराम कहलाता है। जिस व्यक्तिके सब दोष उदीर्ण होते हैं वह प्रायः अल्पाग्नि हो जाया करता है। उस हालतमें विशेषरूपसे गुरुतर भोजन करनेसे या तो रोगी मर जाता है या बहुत दिनों तक कष्ट पाता रहता है। इसलिए वातिक ज्वरमें सहसा अत्यन्त गुरु वा अतिशय स्निग्ध भोजन करना उचित नहीं। परन्तु जिस वातिक ज्वरमें पित्त वा कफका अनुवन्ध न हो, उस वातिक ज्वरमें ज्वरोक्त चिकित्सा के क्रमकी अपेक्षा न कर अभ्यङ्ग (मालिस) आदि चिकित्सा और कषाय पान करा कर मांसरसयुक्त अन्न-भोजन कराना विधेय है।

जिनके शरीरमें वायुका भाग थोड़ा, श्लेष्माका भाग अधिक और उष्मा कम अथवा मृदु उष्मा है, उनको यदि कफप्रधान ज्वर हो, तो एक सप्ताहमें भी दोषोंका परि-

छोटे छोटे ग्रहोंके सम्बन्धमें उनकी क्षुद्रता प्रयुक्त अनेक तत्त्व तो अब तक प्रकाशित नहीं हुए, परंतु उनमें वृहत्तम २०० और क्षुद्रतम २० मीलसे ज्यादा न होंगे। बहुतसे लोग अनुमान करते हैं कि, उनमें कोई कोई तो युगके ग्रहके परस्परके आघातसे टूट कर खण्ड खण्ड हो गये हैं। परंतु यह अनुमानमात्र ही हैं। ज्योतिर्विदोने खास खास यन्त्रों और गणनाओंकी सहायतासे सूर्य आदि अनेक ग्रहोपग्रह तथा किस किसी नक्षत्र निर्मेय पदार्थके और उनके भार सम्बन्धी परिचय दिये हैं।

सूर्य आदि शब्दोंमें विशेष देखो।

२ बालकके अनिष्टकारक स्कन्द आदि रोग। कुमार शब्द देखो। ग्रह भावे अप्। ३ ग्रहण, आदान। ४ अनुग्रह। ५ निर्बन्ध। "भवत्य भवो भवग्रहग्रहः।" (नैषध०)

६ रणोद्यम। ७ मलबन्ध। ८ चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण। "एकरात्रं परित्यज्य कुर्यात् पार्थिवग्रह ग्रहे।" (ज्योतिस्तत्त्व) ९ नव संख्या, नौकी संख्या।

ग्रहक (सं० पु०) ग्रह कर्त्तरि अच् स्वार्थे कन्। ग्राहक, ग्रहण करनेवाला।

ग्रहकक्षा (सं० स्त्री०) वह वृत्ताकार पथ जिस पर ग्रह भ्रमण करता है (Orbit)।

ग्रहकल्लोल (सं० पु०) ग्रहेषु-कल्लोल इव। राहु नामक ग्रह।

ग्रहकुष्माण्ड (सं० पु०) पुराणानुसार एक प्रकारकी देव योनि।

ग्रहगणित (सं० क्ली०) ग्रहाणां तद्गत्यादीनां गणितं यत्र बहुव्री०। ज्योतिषशास्त्रका वह स्कन्ध जिसमें ग्रहोंका विवरण उल्लेख है।

ग्रहगति (सं० स्त्री०) ग्रहाणां गतिः, ६-तत्। ग्रहगणका गमन, ग्रहोंका अपनी कक्षा पर घूमना।

ग्रहगन्ध (सं० पु०) ग्रहस्य गन्ध, ६-तत्। गन्धक देखो

ग्रहगोचर (सं० पु०) ग्रहस्य गोचरः ६-तत्। जन्म प्रभृति राशिमें ग्रहगणोंकी गतिविशेष। गोचर देखो।

ग्रहचिन्तक (सं० पु०) ग्रहान् चिन्तयति चिन्ति-ण्वुल्, ६-तत्। दैवज्ञ, ज्योतिषी।

ग्रहण (सं० क्ली०) ग्रह भावे ल्युट्। १ स्वीकार, मञ्जूरी २ ज्ञान, समझ। ३ आदर, इज्जत। ग्रह्यतेऽनेन, ग्रह करणे ल्युट्। ४ हस्त, हाथ। ५ इन्द्रिय। ग्रह्यतेऽसौ, ग्रह कर्मणि ल्युट्। ६ शब्द, आवाज। ७ इन्द्रिय। ८ उपराग।

राहु द्वारा चन्द्र वा सूर्यके आच्छादन या ग्रासको ग्रहण कहते हैं। भारतमें बहुतसे लोगोंको विश्वास है कि सिंहिका नामकी कोई राक्षसी रही। राहु उसीका पुत्र है। पहले इसके हस्तपदादि सभी अवयव थे। समुद्र मथनेके पीछे कौशलसे इन्होंने अमृत पी लिया। उसीसे विष्णुने चक्रसे इसका मस्तक काटा था। अमृतके गुणसे वही कटा हुआ मत्था चिरदिनको अविकृत रहा। चन्द्र और सूर्यकी बात पर विष्णुने राहुका शिर काटा था। राहुका खण्डितमस्तक पूर्व अपकारको भूल न सका, मुंह फाड करके उन्हें निगल डालनेको आगे बढ़ा। अन्तको कोई उपाय न देख करके ब्रह्माने विधान किया कि अमावस्याविशेषमें सूर्य और पूर्णिमा विशेषमें चंद्रको वह एक बार खा सकेगा, दूसरे किसी भी समय नहीं। खण्डित राहुमस्तकको यही करना पड़ा। इसीसे उपयुक्त दिनमें वह चन्द्र और सूर्यको ग्रास करता है। इसीका नाम ग्रहण है। राहु देखो।

भारतवासी ग्रहणके समय शङ्ख घण्टा बजाते हैं। लोग समझते हैं कि शङ्ख घण्टा बजानेसे राहु डर करके शीघ्र उन्हें छोड़ जावेगा।

गणितवित् पण्डित इसमें कोई बात नहीं मानते। वृहत्संहितामें लिखा है कि आकाशचारी राहु शरीरधारी, मस्तकाकृति वा मण्डलमय होनेसे भगणार्ध पर या ६ राशि दूर रहते ग्रहण पड नहीं सकता। राहुकी गतिकी स्थिरता न रहनेसे गणना द्वारा किस प्रकार उस की उपलब्धि होगी। राहुकी मुख पुच्छ आदि आकारविशिष्ट माननेसे अमावस्या पूर्णिमा भिन्न अन्य समय भी ग्रहण लग सकता है। वह यदि सर्पाकार रहता, तो कभी मुख और कभी पुच्छ प्रभृति दूसरे किसी अवयव द्वारा ग्रहण पडता। अतएव राहु किसी प्रकार आकारविशिष्ट अथवा अनियतगामी नहीं होता। वह अन्धकारमय छाया विशेष है। (वृहत्संहिता ५ अ०)

भास्कराचार्यके मतमें सूर्यप्रभृति सभी ग्रहोंकी एक एक कक्षा होती है। ग्रह नियत गतिसे अपनी अपनी कक्षामें अनवरत भ्रमण करते हैं। सूर्यकी कक्षाके

पाचन, अन्तिम अवस्थामें ज्वरघ्न औषध तथा ज्वरमुक्त होने पर विरेचनका प्रयोग करना चाहिये। सब तरहके बुखारमें प्यास लगने पर भी पानी न पिलाना अनुचित है। तृष्णार्त्त होने पर प्राणधारणके लिए थोड़ा थोड़ा पानी पिलाते रहना चाहिए। किन्तु अवस्थाविशेषमें पिपासाको सह्य करके वायुसेवन करना चाहिए, कभी कभी धूप भी खेयी जा सकती है। नवज्वराक्रान्त व्यक्तिको शीतल जल पिलाना उचित नहीं। वातश्लैष्मिक तथा कफज्वरमें गरम पानी हितकर, तृप्तिजनक, अग्निदीपक, वायु और पित्तके लिए अनुलोमकारक तथा दोष और स्रोतःसमूहको मृदुताको बढ़ानेवाला है।

पण्डितगण ज्वरको प्रारम्भसे ले कर सप्तरात्रिपर्यन्त तरुण ज्वरमें, द्वादशरात्रि तक मध्यज्वर, द्वादशरात्रिके उपरान्त जीर्णज्वर कहते हैं।

वातजनित ज्वरमें सातवें दिन, पित्तज ज्वरमें दशवें दिन तथा श्लैष्मिकज्वरमें बारहवें दिन औषध प्रयोग करने की विधि भावप्रकाशमें लिखी है।

समतावस्थापन्न रोगीको सात दिनमें औषध देवें, सात दिनके भीतर भी यदि निरामके लक्षण दीखें, तो शमन औषधके द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए। शार्ङ्गधरका कहना है कि, वातज्वरमें गुलञ्च, पिप्पलीमूल और सोंठ उबाल कर बनाया हुआ पाचन अथवा इन्द्रयवक्षत पाचनका सात दिनमें प्रयोग करें। पाचन और औषध सेवनके समयके विषयमें सबका एक मत नहीं है।

रोगीको उम्र, बल अग्निदोष, देश और कालके अनुसार विवेचना करके चिकित्सकको रोगीको चिकित्सा करनी चाहिये।

आमज्वरमें दोषापहारक औषध नहीं देनी चाहिए। उपद्रवहीन आमज्वरमें पाचन देना विधेय है। सोंठ, देवदारु, रोहिष (न हो तो खसकी जड़), बृहती और कण्टकारी द्वारा क्वाथ बना कर साधारणतः सब ज्वरोंमें उसका प्रयोग किया जा सकता है। श्वेतपुनर्णवा, रक्त पुनर्णवा, बेलसूलकी छाल, दूध और जल एकत्र पाक करके दुग्धावशिष्ट रह जाने पर उतार कर उसका सेवन करनेसे सब तरहका ज्वर आरोग्य हो जाता है। शेषोक्त औषधको संशमनीय कषाय कहते हैं।

कृश और अल्प दोषसम्पन्न व्यक्तिको शमन औषध द्वारा चिकित्सा करें। आरग्वधादि पाचन वातज, पित्तज और कफज तीनों प्रकारके ज्वरके लिये हितकर है।

जिस व्यक्तिने जलपान वा आहार किया है, उसके लिये तथा क्षीण शरीर, उपोषित अजीर्ण रोगाक्रान्त और पिपासातुरके लिए संशोधन और संशमन औषध अप्रशस्त है। निम्बादिचूर्ण, हरितक्यादिगुटी, लाक्षादि और महालाक्षादि तैल ये सब तरहके ज्वरको नष्ट करते हैं।

उदकमञ्जरीरस सेवन करनेसे अति उग्रतर सद्योज्वर भी एक दिनमें आरोग्य होता है। पित्ताधिक्य ज्वरसे पीड़ित व्यक्तिको यह औषध दो जाय तो उसके मस्तक पर जल देते रहना चाहिये। अदरकके रसमें तीन दिन ज्वरधूमकेतु सेवन करनेसे नवज्वर; तथा दो रत्ती बराबर महाज्वरांकुश बिजौरानीबूके बीज और अदरकके रसमें सेवन करनेसे सब तरहका ज्वर नष्ट हो जाता है। ज्वरघ्नीवटिका, नवज्वरहरवटी आदि औषधियां नवज्वरनाशक हैं। श्वासकुठाररस सर्वप्रकार ज्वरघ्न है। हुताशनरस और रविसुन्दररसके सेवन करनेसे सब तरहका बुखार जाता रहता है। विशेष विवेचनापूर्वक रसपर्पटीका प्रयोग किया जा सके तो बहुत कुछ फायदा पहुंच सकता है।

चरकसंहितामें लिखा है कि, रसदोष और मलका पाक हो कर क्षुधा उद्रिक्त होने पर रोगीको अन्न देना चाहिये।

रोगीको लघु आहार देना चाहिये। भूना हुआ जीरा सैन्धवके साथ पीस कर उससे जीभ, दांत और मुंहका बीचका हिस्सा माज कर कवल ग्रहण करनेसे रोगीके मुखका मल, दुर्गन्ध और विरसता नष्ट होती तथा मनमें प्रसन्नता और आहारमें रुचि होती है।

कल्पतरुरस और त्रिपुरभैरवरसका अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे वात और कफजन्य ज्वर नष्ट हो

और भयशील ऐसे व्यक्तियोंके उपवास नहीं कराना चाहिये। इनको साम‌ज्वरमें पाचन और निराम‌ज्वरमें शमन औषध देनी चाहिये तथा अन्नमण्डादिका पथ्य देना चाहिये।

है। चन्द्रग्रहणमें छादक (पृथिवीच्छाया) और छाद्य (चन्द्र) एक राशिको एक ही कलामें रहनेसे लम्बन वा नति नहीं होती। इसीसे सभी स्थानोंके लोग समान भावमें चन्द्रग्रहण देख सकते हैं। (गोलाध्याय ग्रहणवासना, भाषाभाष्य) ग्रहणके समय अर्धग्रस्त चन्द्रका विषाण वा कोटिद्वयकी कुण्ठता और अपेक्षाकृत बहुतसे समय चन्द्रग्रहणकी स्थिति होनेसे सूर्यच्छादकसे चंद्रका छादक बृहत् होता है। सूर्यग्रहणमें अर्धग्रस्त सूर्यका विषाण वा कोटिद्वयकी तीक्ष्णता और ग्रहण स्थिति अल्प काल होनेसे सूर्यच्छादक अपेक्षाकृत छोटा पड़ता है। (गोलाध्याय, ग्रहणवासना)

वराहमिहिरके मतसे चंद्रग्रहणमें चंद्र पृथिवीच्छाया और सूर्यग्रहणमें सूर्यमण्डलमें प्रवेश करता है। इसी कारण पश्चिम दिक्से चंद्रग्रहण और पूर्व दिक्से सूर्यग्रहण नहीं लगता। जिस प्रकार वृक्षकी छाया सूर्यके आलोकमें क्रमसे एक ओरको बढ़ती, वैसे ही सूर्यके आवरणसे पृथिवी छाया भी दिन दिन दीर्घ पड़ती है। जब सूर्यके सप्तम राशिमें चंद्र अवस्थान करता और सूर्यसे उत्तर वा दक्षिणको अधिक नहीं चलता, तब वह पूर्वाभिमुख जा कर पृथिवीकी छायामें घुसता है। सूर्यग्रहणके समय सूर्यसे अधःस्थित चंद्र पश्चिमदिक्से आ कर मेघकी भांति उसको ढांक लेता है। इसीसे सूर्यग्रहण सब देशोंमें बराबर नहीं पड़ता। यह शास्त्रका सद्भावमात्र लगता कि राहु चंद्र वा सूर्यको ग्रास करता है। (बृहत्संहिता ५।८०)

अब बात यह है कि ज्योतिषकोंका वह मत अर्थात् राहु नामक असुरका चन्द्र वा सूर्यको ग्रास न करना माननेसे प्राचीन शास्त्रोंके साथ विरोध होता है। वेद तथा पुराण प्रभृति सभी शास्त्रोंमें लिखा है कि राहु, सूर्य और चन्द्रको ग्रास करता है—

"स्वर्भानुर्ह वा आसुरः सूर्यं तमसा विव्याध।" (माध्यन्दिनी श्रुति)
'सर्वं गङ्गासमं तोयं सर्वे ब्रह्मसमा द्विजाः।
सर्वं भूमिसमं दानं राहुग्रस्ते दिवाकरे॥' (पुराण)

यहां विरोध मिटानेके लिये शङ्कराचार्य लिखते हैं कि चन्द्रग्रहणके समय राहु पृथिवीकी छायामें घुसके चन्द्रको और सूर्यग्रहणके समय चन्द्रमण्डलमें प्रवेश करके सूर्यको आच्छादन करता है। ब्रह्माके वरसे तमोमय राहु ऐसे ही सूर्य और चन्द्रको ढांप लेता है। (गोलाध्याय) प्राचीन ज्योतिर्विद् श्रीपतिने भी इसी मतको माना है। (श्रीपति) बृहत्संहिताके मतमें राहु नामक किसी असुरको ब्रह्माने वर दिया है कि ग्रहणके समय लोग जो होम करेंगे, उसके अंशसे तुम सन्तुष्ट होगे। इसी कारण ग्रहणके समय राहुका सान्निध्य होनेसे यह कल्पना की जाती है कि वह चन्द्र वा सूर्यको ग्रास करता है। (बृहत्संहिता ५।८०) वास्तविक पक्षमें यह किसी प्राचीन वैज्ञानिक मतसे सिद्ध नहीं होता, किसी जीव वा खंडित मस्तकके चन्द्र वा सूर्यको खा जानेका नाम ग्रहण है। राहु देखो। सूर्य और चन्द्रमण्डलका व्यास, पृथिवीकी छायाका परिमाण तथा इनकी गति प्रभृति अच्छी तरह न समझनेसे ग्रहणका कारण और सम्बन्ध तथा स्थिति, मोक्ष एवं स्पर्श क्यों कर मालूम पड़ेगा। सूर्यसिद्धान्तमें ऐसा लिखित हुआ है—

जो सूर्यमण्डल हमको देख पड़ता उसका व्यास परिमाण ६५०० योजन और चन्द्रका व्यास ४८० योजन है। सूर्य और चन्द्रके व्यासको उनकी स्पष्ट गतिसे गुण करके मध्यगति द्वारा भाग करनेसे जो निकलेगा, वही यथाक्रम सूर्य तथा चन्द्रका स्पष्ट व्यास ठहरेगा। (सूर्यसिद्धान्त४) हमें आकाशमण्डलमें चन्द्रको छोड़ करके जो ग्रहबिम्ब देख पड़ते, अतिशय दूरस्थ होनेसे प्रकृत कक्षामें कोई नहीं मिलते। सभी ग्रह अधःस्तन चन्द्रकी कक्षामें दृष्ट होते हैं। इसीसे चन्द्रकी कक्षामें सूर्यका व्यासपरिमाण स्थिर किया जाता है। वास्तविक पक्ष पर अपनी कक्षामें केवल चन्द्र ही घूमता है। सूर्य वा दूसरे ग्रहका चन्द्रकक्षाके साथ योग नहीं होता। (सूर्यसिद्धान्त४।२-३ श्लो० रङ्गनाथ) पूर्वप्रदर्शित सूर्यमण्डलके स्पष्ट व्यासको सूर्यभगण द्वारा गुण करके चन्द्रभगणसे बांटने पर जो लब्ध होता, चन्द्रकी कक्षामें सूर्यका व्यासपरिमाण ठहरता है। चन्द्रके व्यास (४८० योजन) और चंद्र कक्षास्थ सूर्य व्यासको १५से बांटने पर जो लब्ध होता, वही चंद्र सूर्यके बिम्बव्यासकी परिमाण कला है। (सूर्य सिद्धांत ४।२)

भूगोलके परिमाणसे सूर्यमण्डलका परिमाण अधिक है। इसी कारण सूर्यकी विपरीत दिक्को सूचीकी

तादिचूर्ण आदिके सेवन करनेसे दुष्टजलजन्य (नाना देशोंके जलसे उत्पन्न) ज्वर प्रशान्त होता है।

जिस ज्वरमें रोगी सबल हो, दोषोंकी अल्पता हो और न अन्य किसी तरहका उपद्रव हो, वह ज्वर साध्य है।

ज्वरके उपद्रव १० हैं—श्वास, मूर्च्छा, अरुचि, वमन, पिपासा, अतीसार, मलरुद्धता, हिचकी, काश और दाह।

व्याधि प्रशमित होने पर उपद्रव स्वतः ही विलुप्त हो जाते हैं; किन्तु उपद्रवोंमेंसे कोई अगर ऐसा मालूम पड़े कि जिससे शीघ्र ही जीवन नष्ट होनेकी सम्भावना हो, तो सबसे पहले उसीकी चिकित्सा करनी चाहिये।

वृहती, कण्टकारी, दुरालभा, ज्योत्स्नी, काकड़ासींगी, पद्मकाष्ठ, पुष्करमूल, कटकी, शटीका शाक और शैलमल्ली-की बीज इनके क्वाथके सेवन करनेसे श्वास नष्ट होता है।

काञ्जिका, नीम, मोथा, हर्रं, गुलञ्च, चिरायता, वासक, अतिविषा, वला, उदुम्बर, कटकी, वच, त्रिकटु, शोणाकी छाल, कुटज-छाल, रास्ना, दुरालभा, परवलकी पत्ती, शठी, गोजिह्वा (पाथरी) ग्वाल ककड़ी, निसोथ, ब्राह्मीशाक, पुष्करमूल, कण्टकारी, हलदी, दारुहल्दी, आंवला, बहेड़ा और देवदारु इनका काढ़ा सेवन करनेसे श्वास, काश, हिचकी आदि रोग जाते रहते हैं।

पीपल, जायफल और काकड़ासींगी, इनका चूर्ण मधुके साथ चाटनेसे अति उग्रतर श्वासरोगसे छुटकारा होता है। एक कटारीको कण्डोंकी आगमें गरम कर पञ्जरदेश दग्ध करनेसे श्वास निश्चयसे विलुप्त होता है।

अदरकके रसके द्वारा नस्य लेनेसे और लघु सैन्धव, मनसिल और मिर्च एकत्र पीस कर अञ्जन प्रयोग करनेसे मूर्च्छा निवृत्त होती है। आँखों पर ठण्ढ पानीके छींटे डालनेसे, सुगन्धित धूप देने और सुगन्धित पुष्पोंके सूंघनेसे कोमल ताड़पत्रसे वायुसेवन करने तथा कोमल कदली-पत्र छुआनेसे भी मूर्च्छा प्रशमित होती है।

अदरकका रस, अम्लरस और सैन्धव इनको एकत्र करके कवल करनेसे अरुचि नष्ट होती है। गुलञ्चका क्वाथ ठण्ढा करके मधु डाल कर पीनेसे अथवा काला नमक और स्वर्णमाक्षिक, रक्तचन्दन अथवा चीनीके साथ चाटनेसे वमन निश्चयसे प्रशान्त होता है।

जम्बीरी नीबू, बिजौरा नीबू, दाड़िम, बेर और पालङ्क इन सब चीजोंको मिला कर मुख पर लेपन करनेसे पिपासा और मुंहके भीतरके छाले नष्ट हो जाते हैं। मधुसंयुक्त शीतल दुग्ध कण्ठ तक पी कर उसी समय वमन करनेसे अथवा मधु-वटकी बरोह और खीलें मिला कर मुंहमें रखनेसे प्यास मिट जाती है।

बलवान् व्यक्तियोंको अतीसार होने पर उपवास कराना चाहिये। गुलञ्च, कूटज छाल, मोथा, चिरायता नीम, अतिविषा और सोंठ इनके सेवनसे अतीसार नष्ट होता है। सोंठ, गुलेचीन, कूटज और मोथा इनका क्वाथ बना कर सेवन करनेसे फायदा पहुंचता है। अकवन, गुलेचीन, क्षेत्रपर्पटी, मोथा, सोंठ, चिरायता और इन्द्रजव इनका क्वाथ सब तरहके अतीसारका नाशक है। हर्रं, अमलतास, कटकी, निसोथ और आवलेका काढ़ा पीनेसे मल-रुद्धताका नाश होता है।

सेंदा नमकको बहुत बारीक पीस कर जलके साथ नस्य लेनेसे हिचकी नष्ट होती है। पिसी हुई सोंठमें चीनी मिला कर नस्य लेनेसे अथवा हिङ्गुकी धूप देनेसे भी हिचकी जाती रहती है।

पीपल, पीपलमूल, बहेड़ा, क्षेत्रपर्पटी और सोंठ इनका चूर्ण मधुके साथ चाटनेसे अथवा वासक-पत्रका रस मधुके साथ सेवन करनेसे काश निवारित होता है। पुष्करमूल (नहीं हो तो कुड़), त्रिकटु, काकड़ासींगी, कायफल, दुरालभा और काला जीरा इनका चूर्ण बना कर मधुके साथ चाटनेसे काश प्रशान्त होता है।

दाहनिवारक प्रक्रिया पहिले ही लिखी जा चुकी है।

वहिर्वेगज्वर तथा प्राकृतज्वर (अर्थात् वर्षा शरत् और वसन्त ऋतुमें यथाक्रमसे वातज, पित्तज और कफ-ज्वर होनेसे) सुखसाध्य है। प्राकृतज्वर विपरीत होने पर उसको वैकृत ज्वर कहते हैं।

वैकृत ज्वर कष्टसाध्य है। वातज्वर प्राकृत होने पर भी कष्टसाध्य होता है। अन्तर्वेगज्वर भी कष्टसाध्य है।

क्षीण और शोथाक्रान्त व्यक्तिका ज्वर तथा गम्भीर और दैर्घरात्रिक ज्वर असाध्य है। जिस बलवान् ज्वरके

करनेके पीछे कलाके साथ मिलानेसे आनेवाला अङ्क ४१से गुण करके गुणफलको दो स्थानोंमें रखना चाहिए। फिर उसके एक स्थानीय अङ्कको १६से बांटते हैं। इससे लब्ध होनेवाले अङ्कको द्वितीय स्थानके अङ्कसे घटाने पर जो बचता, उसको एक स्थान पर रखना पडता है। तत्-सामयिक रविगति कलादिको १२४से गुण करने पर जो फल मिलता उसका पूर्व अङ्कके साथ योग लगता है। इस युक्ताङ्कसे १८६५ कम करने पर जो अवशिष्ट आवेगा वही अङ्क उस कालकी चन्द्रगति द्वारा बाँटा जावेगा। इसमें जो बचता, उसको ४३।२०से घटाने पर निकलनेवाला अङ्क ग्रास ठहरता है। लब्धाङ्क ४३।२०से अधिक होने पर ग्रहण नहीं पडता। इस ग्रासाङ्कको दो स्थानोंमें रखना चाहिये। फिर उनमें एकको १२से गुण करते और दूसरेमें १० जोड देते हैं। इसके बाद १२ और गुणित अङ्कको दश युक्त अङ्कद्वारा भाग करने पर जो लब्ध होता वही इस दिनको चंद्रग्रहणकी स्थितिका दण्डादि ठहरता है। (ज्योति०)

प्रकारान्तरसे चंद्रग्रहणकी स्थितिके दण्डादिका जाननेका उपाय—पूर्णिमाके अन्तिम समयमें स्फुटपात तथा रविस्फुटका अन्तर जितने अंश हो, उसकी कला बना करके दो स्थानोंमें रख देना चाहिये। फिर उनमें एकको ८से भाग करने पर जो लब्ध आता, वह भी दो स्थानों पर रखा जाता है। इसमें एकको क तथा दूसरेको ख चिह्नित करते है। क चिह्नित अङ्कको ५५से बांटने पर जो निकलेगा, उसमें ख चिह्नित अङ्क मिलाना पड़ेगा। इस युक्ताङ्कको पूर्वस्थापित कलासे घटाना चाहिये। जो अवशिष्ट रहेगा, उसके साथ इस समयको रविगतिको ३से गुण करके जोड़ना पडेगा। इस युक्ताङ्कसे ४० घटाने पर जो बचता, उसको तत्कालको चंद्रगतिसे हीन करने पर शेष रहनेवाला अङ्क ६से गुण करना पड़ता है। इसका जो फल आवेगा, वही ग्रास कहलावेगा। ग्रासको दो स्थानों पर रख करके ग और घ चिह्न लगाया जाता है। ग चिह्नित अङ्कको १२से गुण घ चिह्नित अङ्कमें १८२ योग करना चाहिये। योग फल द्वारा गुणफलको बांटने पर जो लब्ध होगा, उस दिनके चंद्रग्रहणका स्थितिदण्डादि ठहरेगा। (ज्योति०)

पूर्णिमाके अन्तिम समयके राश्यादि चंद्रस्फुटसे राश्यादि स्फुटपातको हीन करने पर जो राश्यादि आवेगा उसमें २ मिलाया जावेगा। यदि युक्ताङ्क ६से अधिक होता, तो ६ छोड करके अवशिष्ट अङ्क लिया जाता है। फिर देखना चाहिये, वह अङ्क ३से अधिक है या नहीं। यदि ३से अधिक हो, तो उससे ३ निकाल करके अवशिष्टको कला बना डालना चाहिये। फिर उक्त अङ्क ३से न्यून रहने पर उसको ३से घटा करके बचनेवाले अङ्कको ही कलाएं बनायी जाती है। इसके बाद उक्त कलाओंके ७से गुण करते है। इसमें आनेवाले अङ्कको ८०से भाग करने पर जो लब्ध आता, वही शर कहलाता है।

चन्द्रको साधित गतिको १७से गुण करके ४२० द्वारा बांटने पर जो लब्ध होता, उसीका नाम चन्द्रमान है। चन्द्रमानको १०से गुण करके ३से बांटने पर जो लब्ध आता, एक स्थान पर रखा जाता है। रविको गतिको ६०से गुण करने पर जो मिलता, उससे ८७३ निकालना पड़ता है। फिर अवशिष्टको १११से भाग करने पर जो फल आता, वह पूर्वस्थापित अङ्कसे घटाया जाता है। इसके अवशिष्ट रहनेवालेका नाम राहुमान है।

लब्धाङ्कसे शरका अङ्क अधिक आनेसे ग्रहण नहीं पडता। ग्रासाङ्कको जो संख्या होगी, उसीके अनुसार स्थित्यर्धखण्डा और शुद्धिपल ले करके एक स्थानमें रखना चाहिये। फिर तत्कालके चंद्रको गतिको ८६०से घटा करके जो अवशिष्ट आता, शुद्धिपल द्वारा गुण किया जाता है। इस गुणफलको १६०से बांटने पर जो लब्ध होगा, उसको स्थित्यर्धखण्डाके अङ्कमें मिलानेसे शुद्ध स्थित्यर्धदण्डादि मिलेगा।

पूर्णिमाके स्थिति दण्डको दो स्थानोंमें रख करके उसमें एकसे शुद्धस्थित्यर्धदण्डादि घटाने पर आनेवाला अङ्क ही चंद्रग्रहणका स्पर्श दण्डादि होता है। दूसरेमें शुद्धस्थित्यर्धदण्डादि मिलानेसे चंद्रग्रहणका मोक्ष दण्डादि निकलता है।

चंद्रस्फुट पातस्फुटमें घटानेसे यदि हीनाङ्क राशिसे न्यून आता, तो ईशान कोणमें स्पर्श तथा वायुकोणमें मोक्ष देखा जाता है। हीनाङ्क ६ राशियोंसे अधिक पड़ने पर अग्निकोणमें स्पर्श तथा नैऋत कोणमें मोक्ष होता

उपरिभागसे पूर्णतया वाष्पोद्गम भी रोके, तो उससे मलेरिया उत्पन्न होता है।

३। डा० स्मिथ (Dr Smith) कहते हैं कि मिट्टी जितनी आर्द्र होगी तथा आर्द्रता जितनी ऊपरको चढ़ेगी मलेरिया-विषका उतना ही आधिक्य होगा।

४। डा० ओल्डहम (Oldham)-का कहना है कि, शीतलताका सहसा आविर्भाव ही मलेरियाका प्रधान कारण है। जिस जगह सहसा उत्तापका ह्रास होगा, वहां निश्चयसे मलेरिया उत्पन्न होगा।

५। डा० मूर (Dr. Moor) ने स्थिर किया है कि, उद्भिद्विगलित जल पीनेसे मलेरिया जनित पीड़ा उत्पन्न होती है।

"मलेरिया" एक इटलीका शब्द है, जिसका अर्थ है दूषित वायु। निम्नलिखित उपायोंका अवलम्बन करनेसे इस विषके हाथसे कुछ छुटकारा मिल सकता है।

(क) रहनेके मकानके चारों तरफको मोरिया साफ रखना और जिससे तालाबका पानी पत्तों आदिके सडते रहनेसे बिगड़ न जाय, उसका खयाल रखना चाहिये।

(ख) अग्नि और धुंएँके जरिये मलेरियाका जहर नष्ट होता है।

(ग) मकानके चारों ओर पेड़ रहनेसे उससे दूषित वायु परिशुद्ध होती है।

(घ) दिनकी अपेक्षा रातको मलेरियाका विष वायुके साथ ज्यादा मिलता है इस कारण रातको जहां तक बने कपड़ेसे नाक बन्द करके घरसे बाहर जाना चाहिये। शरदृऋतुमें तीक्ष्ण धूप और हेमन्तके दुष्ट शिशिर ज्वररोगीके लिए सर्वतोभावसे परित्यज्य है।

(ङ) सुबह कहीं जाना हो तो मुंह धोनेके उपरान्त कुछ खा कर जाना चाहिये।

(च) हमारे देशमें विशेषतः बङ्गालमें वर्षाके बादसे ले कर आधे अगहन तक इस रोगका अत्यन्त अधिक प्रादुर्भाव होता है। उक्त समयमें सबको सावधानीसे रहना चाहिये तथा चेत्रपर्पटी, गुलञ्च आदि तिक्त पदार्थोंकी औषधको भांति व्यवहार करना उचित है। छिलमोचिका, परवलको पत्ती आदि तरकारीके साथ खानेसे विशेष उपकार होता है।

मलेरियासे उत्पन्न ज्वर साधारणतः दो भागोंमें विभक्त है—१ सविराम ज्वर (Intermittent fever) और २ स्वल्पविराम ज्वर (Remittent fever)

सविराम ज्वर—इसको पर्याय-ज्वर कहा जा सकता है। यह ज्वर सम्पूर्णतः विरत होता है; ज्वरकी विरामावस्थामें रोगी अपनेको सुस्थ समझता है। इस ज्वरका कारण दो प्रकारका है—एक पूर्ववर्ती और दूसरा उद्दीपक।

(क) अतिरिक्त परिश्रम, रात्रिजागरण, अधिक सुरापान, अत्यन्त स्त्रीसंसर्ग इत्यादि, (ख) रक्तकी अविशुद्धावस्था, (ग) अस्वाभाविकरूपसे शारीरिक उत्तापका ह्रास। ये ही इस पीड़ाके पूर्ववर्ती कारण हैं।

दुर्भिक्ष, अधिक अङ्गार (Carbon) वा अण्डलाल (Albumen) मिश्रित खाद्यादि भक्षण उद्भिज्जादि विगलित जलका पीना, उत्तर पूर्व दिशाकी वायुका सेवन आदि इस ज्वरके उद्दीपक कारण हैं।

लक्षण—इस ज्वरकी तीन अवस्थाएं होती हैं, जैसे—शैत्यावस्था, उत्तापावस्था और घर्मावस्था। प्रथमतः पुनः पुनः जँभाई आ कर जाड़ा मालूम पड़ता है, पीछे लक्षण आकुञ्चित हो कर कम्प उपस्थित होता है। इस समय मस्तकमें वेदना, विवमिषा वा वमन होता रहता है तथा धमनीके आकुञ्चनके कारण नाड़ी वेगवती और सूत्रवत् क्षीण हो जाती है। यह अवस्था आध घण्टेसे तीन घण्टे तक रह कर द्वितीयावस्थामें उपनीत होती है। उस समय शारीरिक शीतलता विदूरित हो कर शरीरका चमड़ा उत्तप्त, शुष्क और उष्ण मालूम पड़ने लगता है। नाड़ी स्थूल और पूर्ण वेगवती हो जाती है। मस्तककी पीड़ा बढ़ कर आँखोंको लाल कर देती है और अत्यन्त पिपासा लगती तथा पेशाब थोड़ा होता है। तृतीयावस्थाके प्रारम्भ होनेसे पहले ज्वर मग्न हो जाता है, चक्षुपदादि उष्ण और उन स्थानोंमें ज्वाला उत्पन्न होती है तथा श्वास-प्रश्वास शीघ्र शीघ्र होने लगता है। इस तरह क्रमशः रोगीका शरीर स्वाभाविक अवस्थाको प्राप्त होता है। रोगी यदि पहलेसे ही दुर्बल हो अथवा प्राचीन हो, तो कभी कभी ज्वरके समय बेहोश हो जाता है। प्रलाप, उदरस्फीति आदि अवसादके लक्षण

योगफलका नाम मध्योदय वा दशमोदय है।

मध्योदयके अङ्कमें १५ मिलाना चाहिये। युक्तांक ३० से अधिक होने पर ६०में घटाया जाता है। फिर यदि यह युक्ताङ्क ६० से अधिक हो, तो उसमें ६० निकाल करके शेष अङ्क ग्रहण करना चाहिये। यदि युक्ताङ्क ३० से अधिक न आवे तो उसकी प्रथम अङ्क संख्या क्रान्ति-खण्डा और अनुखण्डा ले करके उभयको अन्तर करते हैं इसीका नाम भोग्य है। भोग्यद्वारा मध्योदयकी द्वितीय और तृतीय संख्याका अङ्कपूरण करके एक जातीय बनाने पर आनेवाले अङ्कको ६० से भाग देकरके खण्डामें मिलाने पर जो आता, क्रान्ति कहलाता है। इसी क्रान्ति-को अक्षाङ्क ७८८।३२से अन्तर करते है। उससे जो निकलता, १००से एकवार मात्र बाटना पडता है। इससे लब्ध आता, उसी संख्याकी हारखण्डा और अनुखण्डा को ले करके परस्पर घटा दिया जाता है। इससे होने-वाले भोग्य द्वारा जिसकी हारखण्डा अनुखण्डाकी लेते, गुण कर देते हैं। फिर १००से यथारीति भाग देने पर हार निकलता है।

अयनांशयुक्त रविस्फुटके राश्यादिको अंशादि बना करके ६से भाग देते हैं। इसमें जो लब्ध आता, पूर्व-साधित मध्योदयके साथ घटाने पर स्फुटनत कहलाता है। स्फुटनत जो होगा, वह यदि ३०से अधिक हो तो ६०से निकाल डालना चाहिये और यदि १५से अधिक पड़े, तो ३०से घटाने पर जो आवेगा, उसकी प्रथमाङ्क संख्या ज्याखण्डा तथा अनुखण्डा परस्पर अन्तर करने पर जो होगा, उससे स्फुटनतके शेषाङ्कको गुण करके ६०से भाग दे लब्धाङ्क ज्याखण्डमें मिलने पर जो आवेगा, उसीका नाम ज्या है। इसी ज्याके अङ्कको हाराङ्क द्वारा भाग करने पर जो लब्ध आता, स्थिरलम्बन कहलाता है।

लम्बन और स्थिर लम्बन दोनोंके अन्तरको एक स्थानमें रखना चाहिये। पश्चान्नतकालको यदि पूर्व लम्ब-नसे स्थिर लम्बन न्यून आता, तो मध्योदयमें स्थापित अङ्कमें घटाया और अधिक होनेसे मिलाया जाता है। प्राङ्नतकालको पूर्व लम्बनसे स्थिर लम्बन न्यून होनेपर मध्योदयमें योग और अधिक रहनेसे हीन करते हैं। इसी प्रक्रियासे निकलनेवाले अङ्कका नाम स्फुटदशमोदय है।

तात्कालिक दशमोदयमें १५ मिलाने पर यदि ३०से अधिक आता, तो वह ६०से घटाया जाता है। अवशिष्ट प्रथम अङ्क संख्यासे क्रान्तिखण्डा और उसकी अनुखण्डा ले करके परस्पर अन्तर करने पर जो भोग्य आता, तद्द्वारा उसके द्वितीय तथा तृतीय अङ्कको पूरण करके एक जातीय बनाया जाता है। इस अङ्कको ६०से भाग दे खण्डामें मिलाने पर जो अङ्क निकलता, उसके साथ १५००.योग करके ७७८।३२ अक्षाङ्कको वियोग करते हैं। अवशिष्टको एक बार मात्र १००से बांटना चाहिये। भागफल संख्याको नतखण्डा और अनुखण्डा, परस्पर घटानेसे भोग्य निकलता है। इसी भोग्य द्वारा अतङ्गत शेषाङ्कको गुण करके १००से भाग देना चाहिये। फिर यही भागफल नतखण्डामें मिलाने पर नत बनता है।

स्थिरलम्बको प्राङ्नत समय अमावस्याके स्थिति-दण्डमें घटाने और पश्चान्नत समय मिलाने पर स्फुट दर्श-दण्ड आता है। (ज्योति०)

तत्कालकी चंद्रगतिको स्थिर लम्बन द्वारा गुण करके ६०से बांटने पर भागफल कलादि होगा। इसी कलादिको तात्कालिक रविस्फुटमें हीन पश्चान्नतकालमें योग करनेसे लो अर्थात् स्फुटदर्शदण्डका चंद्रस्फुट निकलता है।

स्फुटदर्शदण्ड समयके चंद्रस्फुटसे ३ राशि निकाल डालने पर यदि ३ राशिसे न्यून आता तो इसी चंद्र-स्फुटके राशिमें १२ मिला ३ राशि घटानेसे जो होता, उससे इसी दिवसके स्फुटपातको वियोग किया जाता है। यदि यही अङ्क ६ राशिसे अधिक निकले, तो उसे १२ राशिसे हीन करे। इससे आनेवाले राश्यादिको कला बना ८से गुण करना चाहिये। गुणिताङ्कसे १५३८० घटाने पर जो शेष रहता, उसको १०३से बांटना पड़ता है। इसी भागफलका नाम शर है।

शरको पूर्वसाधित गतिके साथ अन्तर करने पर जो अवशिष्ट आता, स्फुटशर कहलाता है।

तात्कालिक रविस्फुटगतिको ५७से गुण करके १०४ से बांटने पर रविमान निकलता है।

चंद्रमान और रविमानके योगार्धसे स्फुटशर घटाने पर ग्रास आता है। भागफलसे स्फुटशर अधिक होने पर ग्रहण नहीं पड़ता। ग्रासाङ्क संख्यासे सूर्यग्रहणकी

अवसन्न और बेहोश हो कर क्रमशः मुमुर्षु हो सकता है, ऐसी दशामें रोगीके दोनों बगल गरम पानीसे भरी हुई दो बोतलें रख कर हाथ पैरों और वक्षःस्थलमें स्वेद देनेकी व्यवस्था करनी चाहिये। पैरोंकी पिण्डलोमें और हाथों पर दो दो राई सरसोंका पलस्ता देवें तथा निम्नलिखित मिश्र (मिक्श्चर) सेवन करावें।

टिंचर मस्क	...	१५ बूंद।
टिंचर सिनकोना कम	..	३० "
भा० गालिसाइ	...	३० "
स्पिरिट क्लोरोफर्म	...	१५ "

कपूरका पानी मिला कर सब समेत १ औन्सकी खुराक होनी चाहिये।

रोगीकी अवस्थाकी उन्नतिके अनुसार प्रत्येक खुराक १ घण्टेसे २ घण्टे अन्तर देनी चाहिए। यदि रोगीके हाथ पैरोंमें पटकन पड़े तो उक्त स्थान पर अच्छी तरह सोंठके चूर्णसे मालिस करावें और निम्नलिखित औषध मर्दनार्थ देवें।

क्लोरोफर्म	...	...	३ ड्राम।
लि० सेप् निस्	...	...	४ "

मर्दनके लिए एकत्र मिला लेनी चाहिए। बुखार आने पर कोई कोई रोगी बेहोश हो जाते हैं तथा उसको बड़ी अस्थिरता हो जाती है। उस समय रोगीके मुंह और आंखों पर ठण्डा पानी सींचना चाहिये तथा मस्तक पर ठण्डे पानीकी पट्टी रखते रहना चाहिए। रोगीको होश आने पर और निगलनेकी शक्ति पुनः होने पर निम्नलिखित मिश्र (मिक्श्चर) दो घण्टे अन्तर पिलाना चाहिये।

पटाश ब्रोमाइड	...	१० ग्रेन।
टिं बेलेडोना	...	५ बूंद।

एकोया एनिसि मिला कर ४ ड्रामकी खुराक देनी चाहिये।

बालकोंके लिए—

टिंचर बेलेडोना	...	...	३ बूंद।
पटाश ब्रोमाइड	...	...	१ ग्रेन।
सक्स कोनाइ	...	...	२ बूंद।
सौंफका पानी	...	...	१ ड्राम।

एकत्र मिला कर एक मात्रा देनी चाहिये। उमरके अनुसार खुराक देनी चाहिये। कँपकंपी शुरू होने पर रोगीको १५।२० बूंद लडेनम (टिं ओपियाई) पिलानेसे कँपकँपी दूर हो जाती है तथा ज्वर ह्रास और कष्ट निवारित हो जाता है। बच्चोंके लिए निम्नलिखित दवा मेरुदण्ड पर मलनेसे उसी समय कंपकंपी और बुखार घट जाती है।

लि० सेपनिस	...	४ ड्राम।
टिंचर ओपियाई	...	" "

मर्दनार्थ एकत्र मिश्रित किया जाता है।

२य—उत्तापावस्था। ऐसी अवस्था अधिक समय तक रहनेसे यदि रोगीको अत्यन्त कष्ट हो, अथवा किसी यन्त्रमें रक्त जम जानेकी सम्भावना हो तो औषधका प्रयोग करना आवश्यक है, अन्यथा नहीं। पिपासा होने पर स्निग्ध पानीय देना चाहिये। लेमनेड भी पियाया जा सकता है*। यदि अत्यन्त गात्रदाह उपस्थित हो अथवा शरीर अत्यन्त उष्ण रहे, तो ईषदुष्ण जलमें जरासा सिनिगर (सिर्का) मिला लें तथा उसमें अंगोछा भिगो कर रोगीकी देह अच्छी तरह पोंछ कर गरम कपड़ेसे शरीर ढक दें। किन्तु दुर्बल व्यक्तिके लिए यह विधेय नहीं है।

यदि रोगी मस्तककी वेदनासे अत्यन्त कातर हो और आंखें उसकी लाल हों, तो मस्तक पर शीतल जलकी पट्टी रखनी चाहिये। इससे यदि उक्त लक्षणद्वय निवारित न हों, तो पूर्वकथित पटास् ब्रोमाइड और बेले-

---

* निम्नलिखित रीतिसे लेमनेड बनाना चाहिये—

कच्चे नारियलका पानी अथवा गुलाबजल			२ औन्स।
क्रिष्टाल सुगर	...	...	२ ड्राम।
सोडा बाईकार्ब	..	...	२ स्क्रु।
अयेल लेमनिस	...	...	१ बूंद।

इन चीजोंको एक पथरी वा मिट्टीके बर्तनमें घोल लेना चाहिये।

इसी तरह एक दूसरे पात्रमें २० ग्रेन टार्टारिक एसिड घोल लें, यदि न हो तो पाती या कागजी नीबूका रस थोड़ा ले लें। पीछे दोनों पात्रोंको रोगीके सामने ला कर दोनों पात्रोंकी दवा मिला कर रोगीको पिलानी चाहिये।

० राशि पधा०	१ राशि पधा०	२ राशि पधा०	३ राशि पधा०
०।४४	० ४२	०।३८	० ३८
१ २८	१।१३	१।१४	१।१४
२।१८	२।२०	१।४७	१।४७
२।२८	२।२८	२।१७	२।१८
३।५	२।५३	२।४३	२ ४६
३।२५	३।१३	३।५	३।७
३।३६	३।२६	३।२०	३।२४
३।४८	३।४१	३।३६	३।३५
३।५५	३ ५०	३।४७	३।४१
३ ५६	३ ५६	३।५३	३।४२
४।०	३।५६	३।५५	३।४१
३।५६	३।५६	३।५४	३ ३६
३।५६	३।५७	३।५०	३।३०
३।५१	३।५३	३।४४	३।२१
३।४४	३।४६	३।३६	३।११
३।३६	३।३७	३।२५	३।०
३।२७	३।२७	३।१५	२।४८
१७	१७	१७	१७

३ रा० पा०	२ रा० प०	१ रा० प०	० रा० प०
०।४३	०।४५	०।४०	०।३०
१।२२	१।२४	१।१३	०।५५
१।५७	१।५६	१।३६	१।१६
२।२६	२।१८	१।५६	१।३४
२।४६	२।३४	२।१०	१।४८
३।५	२।४६	२ २०	२।०
३।१५	२ ५३	२।२८	२।११
३ २०	२।५६	२।३४	२ २१
३।२२	२ ५७	२।३८	२।२६
३।२०	२।५१	२।४०	२ ३७
३।१७	२।५४	२।४१	२।४४
३।१०	२।५०	२।४२	२।४६
३।४	२।४६	२।४२	२।५३
२।५५	२।४०	२।४१	२।५६
२।४६	२।३५	२।३६	२।५७
२।३७	२।२८	२।३७	२।५६
२।३७	२।२३	२।३३	२।५४
१७	१७	१७	१७

८ रा० प्रा०	९ रा० प्रा०	१० रा० प्रा०	११ रा० प्रा०
०।२३	०।२२	०।२८	०।३८
०।४३	०।४३	०।५७	१।१८
१।८	१।५	१।२७	१।५७
१।२१	१।२७	२।०	२।३३
१।३६	१।५२	२।३३	३।२
१।५६	२।१७	३।०	३।२५
२।१०	२।३१	३।२२	३ ४०
२।२५	२।५६	३।३३	३।५१
२।४०	३।१७	३।४८	३ ५६
२।४५	३।३०	३।५१	३।५६
३।५	३।३८	३।५५	३।५६
३।१३	३।४२	३।५३	३।५६
३।१६	३।४०	३।४८	३।५२
३।२२	३।०८	३।४३	३।४६
३।२२	३।३४	३।३४	३।३८
३ १८	३।२६	३।२५	३।२८
३।१२	३।१६	३।१५	३।१६
१७	१७	१७	१७

उक्त खण्डाको लम्बनखण्डा कहते हैं। प्रक्रियाकालको जहां लम्बन खण्डा लिखा गया है, वहां उक्त खण्डाका अङ्क ले करके कार्य किया जाता है।

लङ्कोदयखण्डा और भोग्य।

खण्डा	भोग्य
४।३८	४ ५८
८।३७	५।२३
१५।०	५।२३
२०।२३	४।५६
२५।२२	४।३८
३०।०	४।३८
३४।३८	४।५६
३९।३७	५।२३
४५।०	५।२३
५०।२३	५।५६
५५।२२	४।३८
६०।०	४।३८
१२	१२

इसका नाम लङ्कोदयखण्डा है। प्रक्रियास्थलमें लङ्कोदयखण्डा और भोग्य जैसा जहां उल्लेख है, वहां यहो-निर्दिष्ट अङ्क ले करके गणना करना चाहिये।

दिन सेवन किया जा सकता है। डा० मागनियरी कहते हैं—देशीय नीबूका क्वाथ (Decoction of Lemon) कुनैनकी भाँति ज्वरघ्न है। यदि ज्वर आनेका ४ घंटे पहलेसेही इसका सेवन कराया जाय, तो ज्वर नहीं आ सकता। जिस मलेरियाग्रस्त रोगीको कुनैनके खानेसे कुछ फायदा नहीं पहुंचा, उसको इसके सेवन करनेसे लाभ हुआ है। बुखार आनेके एक या आध घंटे पहले १५।२० अथवा ३० ग्रेन रिजर्सिन (Resorcin) खानेसे फिर ज्वर नहीं आ सकता। सविरामज्वरमें साधारणतः कुनैनकी व्यवस्था की जाती है। कुनैनकी गोलीका सेवन करना हो तो उसके साथ साइट्रिक एसिड, एक्सट्राक्ट कालम्बा, चिरायता, टरेकसिकम कनफेकसन् आफ रोज और अरबी गोंद इनमेंसे किसी भी एक औषधका २।१ ग्रेन मिला लेनेसे काम चल सकता है।

ज्वरकी विकृतावस्थामें चिकित्सा—ज्वर-विच्छेदमें रोगीका अङ्ग ठण्डा होने लगे, तो धर्मनिवारणार्थ जो ब्राण्डी और मृगनाभि मिश्रित औषध व्यवहृत होती है, उसके साथ ५।७ ग्रेन कुनैन डाइलिउट और सालफिउरिक एसिड मिला कर सेवन करावें। इस अवस्थामें पुनः ज्वर चढने पर रोगीके जीनेकी आशा नहीं की जा सकती। ऐसी दशामें पथ्यके लिए मांसका क्वाथ, दूध, बेदाना, सावू, बार्ली इत्यादि व्यवस्थेय है। यदि ज्वरविच्छेदमें पाकाशयकी उत्तेजनासे कुनैन वा भुक्त सामग्रीका वमन हो जाय, तो उस उत्तेजनाको प्रशमित करनेके लिए लेमनेड, कच्चे नारियलका पानी, बरफ इत्यादिकी व्यवस्था करें। इससे भी यदि वमन निवारित न हो, तो नाभिके ऊपर वक्षस्थलसे नीचे एक राईका पलस्ता देवें और नीचेके मिक्श्चरका सेवन करावें।

विसमथ साइट्रास	...	७ ग्रेन।
एसिड हाइड्रोसियनिक डिल	...	२ बूंद।
स्पीट क्लोरोफर्म	...	१० ,,
सीराप लेमन	...	१ ड्राम।
गुलाब जल	...	१ ”

टपकाया हुआ (Distilled) पानी मिला कर सब समेत ४ ड्रामकी एक खुराक बनावें। इस प्रकार एक एक खुराक वमनके आतिशय्यानुसार १, २ या ३ घंटे अन्तर देनी चाहिये। इसके बाद साइट्रिक एसिडमें दो ग्रेन कुनैन मिला कर गोलियाँ बनावें और वह रोगीको सेवन करावे। यदि इससे भी औषध उठे, तो मलद्वारसे कुनैनको श्वेतसारमें मिला कर पिचकारी देनी चाहिये। अथवा त्वक् भेद कर 'हाइपोडार्मिक सिरिञ्ज' द्वारा निउटाल कुनैन शरीरके भीतर प्रविष्ट कराना चाहिये।

ज्वररोगीके मस्तिष्कविषयक दो प्रकारके लक्षण देखनेमें आते हैं। बहुत समय देखा जाता है कि, रोगी मृदु प्रलाप बक रहा है, उसकी आँखें मुदी जा रही हैं, नाड़ी द्रुतगामिनी तथा हाथ और जीभ स्पन्दित हो रही है। ऐसी हालतमें समझना चाहिये कि, रोगीका स्नायुमण्डल दुर्बल हो गया है। मस्तिष्कावरणमें प्रदाह होने पर रोगी ऊँचे स्वरसे प्रलाप बकता है, उसकी आँखें घोर लाल तथा नाड़ी भरी हुई और वेगवती है, तथा हाथ और जीभ उग्रकार्य करनेका भाव धारण करती है। मस्तिष्कावरणके प्रदाहसे कभी कभी ऐसा भी होता है कि, स्वाभाविक दुर्बल रोगीको भी ३।४ आदमी नहीं थाम सकते हैं। मस्तिष्कावरणमें रक्ताधिक्य होनेसे ही द्वितीय प्रकारके लक्षण प्रकट होते हैं।

प्रथम प्रकारके लक्षणोंके प्रकाशित होने पर चैतन्यसम्पादनके लिए पहले जिस गालिसाइ और कुनैनका मिक्श्चरकी व्यवस्था की गई है, उसीका सेवन करावें तथा दूध, मांसका क्वाथ इत्यादि पथ्यकी व्यवस्था करें। पहले जिस ब्रोमाइड पटास संयुक्त औषधका विषय लिखा गया है, द्वितीय प्रकारका लक्षण प्रकट होने पर उसका सेवन कराना चाहिये, मस्तक मुण्डन करके शीतल जलकी पट्टी और लघु पथ्यकी व्यवस्था करनी चाहिये। इससे यदि विशेष फल न हो तो मस्तक पर राई (सरसों)-का पलस्तर देवें।

सविराम ज्वरमें, शैत्यावस्थामें रक्तसञ्चयके कारण प्लीहा और यकृत्की विवृद्धि और परिवर्तन होता है। मलेरिया ही यकृत्-विवृद्धिका मूल कारण है। प्लीहा और यकृत्से पीड़ित रोगी अत्यन्त कष्ट पाता और शीर्ण होता रहता है। प्लीहा और यकृत् शब्द देखो। सविराम ज्वरमें बहुत समय यकृत्की विशृङ्खलाके कारण पाण्डु, कामला (Jaundice) रोग उत्पन्न होता है। यकृत्के उपादानका ध्वंस

राहु जब जिह्वाकी भांति चंद्रमण्डलको लेहन करता, लेह ग्रहण लगता है। फल—पृथिवीस्थ प्राणिमण्डलको आह्लाद और धरातल पर प्रभूत वारिवर्षण है।

चंद्र वा सूर्यमण्डलके एक पाद, अर्ध वा त्रिपादग्रस्त होनेका नाम ग्रसन है। इससे गर्वित राजाओंका धन-नाश और गर्वित देशोंको पीड़ा होती है।

चंद्र वा सूर्यमण्डलको शेष सीमा पर्यंत ग्रास करके राहु मध्यस्थलमें पिण्डीकृत जैसा रहनेसे निरोध कहलाता है। इससे सभी प्राणी आह्लादित होते हैं।

राहुके चंद्र वा सूर्यको सम्पूर्ण ग्रास करके अधिक काल अवस्थिति करनेको अवमर्दन कहते हैं। इससे राजाओंका विनाश, बड़े बड़े देशोंका ध्वंस और अन्धकारका भय होता है।

राहु वर्तुलाकार ग्रहमण्डलको आवरण करके तत्क्षणात् पुनर्वार दृष्ट होनेसे आरोह कहा जाता है। इससे राजाओंका परस्पर विरोध और भय होता है।

वाष्पयुक्त निश्वास-वायुसे दर्पणके मध्यभागकी भांति राहुग्रस्त ग्रहमण्डलका एकदेश मलिन होनेसे आघ्रात कहलाता है। फल सुवृष्टि और सकल विषयोंकी वृद्धि है।

चन्द्रमण्डलका मध्यभाग राहुग्रस्त और चारो ओर वितमस्क अर्थात् परिष्कार रहनेसे मध्यतमः कहते हैं। इससे मध्यदेश बिगड़ता और उदरामय रोग बढ़ता है।

ग्रहणके समय चंद्रमण्डलकी शेष सीमा अतिशय अन्धकारमय और मध्यभाग अपेक्षाकृत परिष्कृत होनेसे तमोन्त्य नाम पड़ता है। फल—मूषिक, शलभ प्रभृति ईति और भयानक चोरोंका उत्पात है।

पहले ग्रासभेदसे जैसे दश प्रकार ग्रहणका उल्लेख किया गया है, वैसे ही मोक्ष भी दश प्रकारका है—१ दक्षिणहनुभेद, २ वामहनुभेद, ३ दक्षिणकुक्षिभेद, ४ वामकुक्षिभेद, ५ दक्षिणवायुभेद, ६ वामवायुभेद, ७ संच्छर्दन, ८ जरण, ९ मध्यविदारण और १० अन्तविदारण।

चंद्रग्रहणका अग्निकोणमें मोक्ष होना दक्षिणहनुभेद मोक्ष कहलाता है। इससे शस्यनाश, मुखरोग, राजपीड़ा और सुवृष्टि होती है। पूर्वोत्तर कोणमें मोक्ष होनेका नाम वामहनुभेद है। फल—राजा तथा राजपुत्रका भय, मुखरोग और सुभिक्ष है। दक्षिण पार्श्वमें मोक्ष होनेको दक्षिण-कुक्षिभेद कहते हैं। फल—राजपुत्रकी पीड़ा और दक्षिण देशस्थ शत्रुओंका अभियोग है। राहु उत्तर पथमें रहनेसे वामकुक्षिभेद नामक मोक्ष होता है। फल—स्त्रियोंकी गर्भविपत्ति और मध्यमरूप शस्य है। नैर्ऋत कोणका मोक्ष दक्षिणवायुभेद और वायुकोणका मोक्ष वामवायुभेद कहलाता है। इस द्विविध मुक्तिमें सामान्यरूप गुह्यपीड़ा और सुवृष्टि होती है। किन्तु वामपायुभेदमें विशेषत राजमहिषो पर विपद् पड़ती है। राहु चन्द्र वा सूर्यमण्डलका पूर्वभाग ग्रास करना आरम्भ करके यदि पूर्वदिक्को चला जाता, संच्छर्दन मोक्ष कहलाता है। इससे जगत्का मङ्गल और शस्यकी श्रीवृद्धि होती है। पूर्वदिक्में ग्रहण लग करके पश्चिममें मोक्ष होनेसे जरण नामक मोक्ष कहा जाता है। इससे मानव क्षुधासे कातर और शस्त्रभयसे उद्विग्न हो जाते तथा कहीं भी आश्रय नहीं पाते। मध्यस्थल प्रथम प्रकाशित होनेसे मध्यविदारण नामक मोक्ष कहते हैं। इससे प्राणियोंका मानसिक कोप, सुचारुवृष्टि और सुभिक्ष होता है। अन्तविदारण नामक मोक्षमें चन्द्रमण्डलकी शेष सीमा पर निर्मलता और मध्यभाग पर अतिशय अन्धकार रहता है। इससे मध्यभागका विनाश और शारदीय शस्यका क्षय होता है। चंद्रग्रहणमें जिस दश प्रकारके मोक्षकी बात कही है, सूर्यग्रहणमें भी वही होता है। किन्तु चंद्रके जिस स्थलमें पूर्वदिक्का उल्लेख है, सूर्य विषयमें उसी स्थल पर पश्चिम दिक्की कल्पना करनी पड़ती है।

ग्रहणके मुक्तिकाल पीछे सप्ताह मध्य पांशुपात होनेसे दुर्भिक्ष, नीहारपात होनेसे रोगभय, भूमिकम्प होनेसे श्रेष्ठ नरपतिका विनाश, उल्कापात होनेसे मन्त्रिनाश और ग्रहणके पीछे सात दिनके बीच नाना वर्णका मेघ देख पड़नेसे भय, मेघका भयानक गर्जन होनेसे गर्भनाश, बिजली चमकनेसे राजा तथा दंष्ट्री जीवकी पीड़ा, परिवेश होनेसे रोगभय, दिग्दाहसे राजभय तथा अग्निभय, प्रबल रूक्ष वायु चलनेसे चोरभय, निर्घात, इंद्रधनु, वा दण्डदर्शनसे क्षुद्भय और शत्रुचक्रमें अमङ्गल एवं ग्रहयुद्ध वा केतुदर्शनसे राजसंग्राम लगता है। परन्तु ग्रहणके

कारण बतलाया जाता है, किन्तु समय समय पर शारीरिक और मानसिक दुर्वलताके कारण इस ज्वरको उत्पत्ति हुआ करती है। शरत्कालमें ही इस ज्वरका प्रादुर्भाव देखनेमें आता है। ग्रीष्म और वसन्तऋतुमे यह ज्वर बहुत कम होता है।

लक्षण—इस ज्वरमें जितने लक्षण प्रकाशित होते हैं, उनका वर्णन सविराम ज्वरके प्रकरणमें किया गया है। संक्षेपमें—इस ज्वरमें कभी भी सम्पूर्ण विराम (Remission) नहीं होता, अति अल्पमात्रसे कभी कभी इसका विराम होता है। साधारणतः स्वल्पविराम ज्वरका रेमिशन (विराम) प्रातःकालमें हो कर अर्द्ध संख्या ४।५ घण्टा तक स्थायी होता है। इसके बाद फिर ज्वर प्रकट होता है। इस ज्वरके भोगकालको कोई स्थिरता नहीं, कभी कभी यह ज्वर २१।२२ दिन तक मौजूद रहता है। इस ज्वरमें जो समस्त लक्षण प्रकाशित होते हैं, उनमें प्रबल शिरःपीड़ा, रक्तिम मुखमण्डल, सामयिक प्रलाप, पाकाशय और यकृत्में वेदना, विवमिषा, कोष्ठ काठिन्य, स्वल्प प्रस्राव, अपरिष्कार जिह्वा, वेगवती नाड़ी, शुष्क और उष्ण चर्म, नानाविध यान्त्रिक प्रदाह और रक्तसञ्चय इत्यादि ही प्रधान है। यह पीड़ा गुरुतर होने पर इसका विरामकाल स्पष्ट नहीं समझा जा सकता, यत्सामान्य विराम हो कर थोड़ी देर तक स्थायी रहता है। यह ज्वर अतिशयप्रबल होने पर चर्म उष्ण, जिह्वा शुष्कनो और अपरिष्कृत, मल दुर्गन्धयुक्त, बलका ह्रास, नाड़ी क्षीण, दाँतोंमें मैल, निद्रितावस्थामें स्वप्नदर्शन, तन्द्रा, ज्ञान-वैलक्षण्य और अन्तमें अचैतन्यका लक्षण उपस्थित होता है।

उपसर्ग और आनुषंगिक रोग—इस ज्वरमें नाना प्रकारके उपसर्ग और आनुषङ्गिक रोग लक्षित होते हैं। उनमेंसे जो प्रधान है, उनका वर्णन किया जाता है—

१। मस्तिष्कका उपसर्ग। यह दो तरहसे होता है—

(क) रक्ताधिक्य (Congestion of blood)—रक्तसञ्चालनकी अत्यधिक उत्तेजनाके कारण मस्तिष्काभ्यन्तरमें रक्त सञ्चित होता है। इसमें प्रबल प्रलाप होता है और रोगी ऊँचे स्वरसे बकता रहता है। इस अवस्थामें शिरःपीड़ा, रक्तिमचक्षु, सङ्कुचित कनीनिका, रक्तिम मुखमण्डल, द्रुतगामी नाड़ी, ग्रीवा और शङ्खदेशकी धमनियोंमें प्रबल स्पन्दन तथा चित्तभ्रम आदि उपसर्ग देखनेमें आते हैं।

(ख) रक्तमोक्षण (Depletion of blood) होनेसे स्नायविक दौर्बल्यके कारण रोगी अस्पष्ट और मृदु प्रलाप बकता है। इस समयमें नाड़ी क्षीण, जिह्वा कम्पित और शुष्क, तन्द्रा, अचैतन्य आदि लक्षण प्रकट होते हैं।

२। मस्तिष्कावरणप्रदाह (Meningitis)—इस प्रदाहके उत्पन्न होनेसे रोगी पागलकी तरह शय्यासे उठ कर अन्य स्थानको जानेकी कोशिश करता है तथा हाथ पैरोंकी पेशियोंमें आक्षेप उपस्थित होता है। कभी कभी तन्द्रा और चित्तभ्रम भी होता है।

३। (क) वायुनली-प्रदाह।

(ख) फेफड़ेमें रक्तसञ्चय वा प्रदाह—इसमें वक्षस्थलमें वेदना, श्वासप्रश्वासमें कष्ट, काश आदि उपसर्ग होते हैं।

४। पाकस्थलीमें उत्तेजना—इसमें वमन, विवमिषा और हिचकी होती है।

५। यकृत्में रक्ताधिक्य वा पाण्डु।

६। प्लीहा विवृद्धि।

७। कर्णमूल प्रदाह—इसमें पारोटिड अर्थात् कर्णमूलके प्रदाहके कारण पूयोत्पत्ति होती है।

८। यकृत्, प्लीहा और पाकाशयमें रक्ताधिक्यके कारण कभी कभी एक प्रकारका उत्काश उपस्थित होता है।

९। वृक्क (Kidney) में रक्ताधिक्यके कारण आलवुमिनिउरिया होता है।

१०। स्त्रियोंकी जरायु और जननेन्द्रियमें पर्यायक्रमसे प्रदाह उपस्थित होता है।

११। रक्तकी अविशुद्धताके कारण कभी कभी वातरोग, मांसपेशीमें वाताश्रय और एक प्रकारकी स्नायवीय वेदना होती है।

१२। पाकाशय और यकृत्में रक्ताधिक्यके कारण उनके ऊपर वेदना होती है और गासट्रेलजिया (Gastralgia) उत्काश आदिके लक्षण प्रकट हो कर मुंहसे बहुत खून निकलता और दस्त होते हैं।

त्याग अर्थवाले 'लिपो' धातुजात 'इक्लिपसिस' शब्दसे निकला है। इसका अर्थ अभाव, कलङ्क इत्यादि है। सूर्य, चन्द्र, ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र किसी भी ज्योतिष्कका आलोक अन्य ज्योतिष्क द्वारा रुकने वा निष्प्रभ होनेका घटनाव्यञ्जक व्यापार ज्योतिषशास्त्रमें 'इक्लिप्स' शब्दसे व्यवहृत होता है। सूर्यग्रहण, चंद्रग्रहण, ग्रहग्रहण, उपग्रहग्रहण, नक्षत्रग्रहण नानाविध ग्रहण सम्बन्धमें भिन्न भिन्न तत्त्वनिर्णायक और गणनानिर्देशक प्रबन्ध हैं। इन विविध ग्रहणोंमें भविष्यत् घटनाके काल और अन्यान्य विषय गणनार्थ तथा ज्योतिर्गण सम्बन्धी विशेष विशेष घटनाओंके निर्णयार्थ सौरसारणी, चंद्रसारणी, तारकासारणी प्रभृति अनेक सारणियां प्रति वत्सर नाविक-पञ्जिकामें (Nautical almanac) इङ्गलेण्डके ग्रीनविच वेधालयका (Greenwich Observatory) अध्यक्ष कर्तृक प्रचारित होती हैं।

कोई कोई ग्रहण सुयन्त्रद्वारा उपयुक्त प्रदेशमें सुदक्ष यन्त्रवेधकारी ज्योतिषी कर्तृक दृष्ट होनेसे तन्निबन्धनके जो विषय आविष्कृत होते, उससे ज्योतिषशास्त्र, अनेक प्राकृततत्त्व और लौकिक तथा राजकार्यका विशेष उन्नति-साधन होता है। इसीसे अनेक युरोपीय राजाधिप विपुल अर्थव्यय करके ऐसे सुदक्ष लोगोंको नियुक्त किया करते हैं।

सूर्य और पृथिवी सम्बन्धमें जैसे अवस्थानादि पड़ते, तदनुसार अमावस्यासे पूर्णिमा पर्यंत चन्द्रकी कला क्षीण रेखासे पूर्ण चक्राकार एवं फिर उक्त वृद्धिके क्रमानुसार क्षय होते होते नवशशी होता है। इसी परिवर्तनसे चन्द्र और सूर्यग्रहण सबका प्रत्यावर्तन पड़ता है। सूर्यग्रहण केवल अमावस्याको लग सकता है। क्योंकि उस समय सूर्य और पृथिवीके बीच चंद्र जा करके सूर्यालोकको अवरोध करता है। चंद्रग्रहण केवल पूर्णिमाको लग सकता है। क्योंकि उस समय सूर्य और चंद्रके मध्य पृथिवी जा करके स्वीय छायासे चंद्रको आवृत करती है। पृथिवी और चंद्र दोनोंमें अपना ज्योति नहीं होता, सूर्यलोकसे ही मिलता है। उनका आकार भी प्रायः गोलपिण्ड है। सुतरां सूर्यग्रहण कालको चन्द्रका जो पृष्ठ सूर्याभिमुख रहता, उसके विपरीत पृष्ठादिमें कोई सूच्याकार छाया पड़ती है। इसी छायामें जब पृथिवी डूब जाती, चंद्रलोक वा अन्य ग्रहलोकके दर्शकोंको भूग्रहण दिखलायी देता है और हमलोग सूर्यग्रहण दर्शन करते हैं अर्थात् हमें चंद्रबिम्बका कृष्णपृष्ठ सूर्यबिम्बके ऊपरसे सञ्चालित दृष्टिगोचर होता है।

बुध शुक्रादि ग्रहोंसे चंद्रवत् जो सूर्यग्रहण होता, बुधसङ्क्रम शुक्रसङ्क्रम (Transit of Mercury, Transit of Venus)-इत्यादि कहलाता है। राशिचक्रके जिस भागमें चन्द्रकी गति रहती उसी भागके मध्य अनेक ग्रह सञ्चालन और कितने ही नक्षत्र अवस्थान करते हैं। इनमें बहुतोंको चंद्र प्रतिनियत एक प्रकार ग्रस्त करता है। ऐसे ही ग्रहणका नाम *तारासङ्क्रम* (Occulation of stars) है। चंद्र यद्यपि सूर्य अपेक्षा अत्यन्त क्षुद्र है और पृथिवीके इतने सन्निकटस्थ है कि उसके और सूर्यके बिम्बव्यास (Apparent diameter) दोनोंका अति यत्सामान्य भेद दृष्ट होता है, परन्तु तदुभय व्यासोंकी इतनी परिवृत्ति (Variation) है, कभी कभी चंद्रका यह बिम्बव्यास सूर्यके इसी बिम्बव्यासकी अपेक्षा बृहत् और कभी छोटा पड़ता है। किसी दर्शकको चक्षु चंद्र और सूर्यसे समसूत्रस्थित होने पर सूर्य ग्रस्त देख पड़ता है। उस समय चंद्रका यह बिंबव्यास सूर्यसे बड़ा दीखने पर सूर्यका पूर्णग्रास दिखलायी देगा। फिर यही व्यास न्यून देख पड़नेसे सूर्यबिंबमें चित्रित चंद्रके कृष्णवर्ण बिंबकी चारों ओर कोई आलोक वलयवत् लग जावेगा। इसीको वलयाकार-ग्रहण (annular eclipse) कहते हैं। जब दर्शकका चक्षु चंद्र और सूर्यसे समसूत्रस्थ नहीं होते, चंद्र सूर्यका कियदंश मात्र आच्छादन करता है। इसका नाम खण्डग्रहण (partial eclipse) है। अतएव अमावस्याको भूकेंद्रसे चंद्र सूर्यकी दूरी और चंद्रपात स्थानसे चंद्रकी दूरीके कारण सूर्यग्रहणके कई भेद पड़ा करते हैं।

सूर्यग्रहण निम्न प्रतिकृति द्वारा स्पष्ट समझमें आ जावेगा।

पृथिवी दो स्थानोंमें अङ्कित हुई है। पृथिवी जब चन्द्रके निकट समसूत्रमें रहती चन्द्रच्छायाका प्रान्त या तो उसको बराबर छू लेता या उसको पृष्ठदेशको अतिक्रम

पल्भ इपिकाक	...	॥ ग्रेन।
विसमथ नाइट्रास	...	५ "
मर्फिया	...	≠) "

एकत्र मिला कर एक माला ।

रक्तामाशय होनेसे निम्नलिखित औषधकी व्यवस्था करनी चाहिये—

विसमथ नाइट्रास	...	५ ग्रेन।
कुनैन	...	२ "
पल्भ इपिकाक	...	। "
——ओपियाइ	...	।≠) "

एकत्र एक पुड़िया, दिनमें २।३ देनी चाहिये।

ज्वरको ह्रासावस्थामें रोगी क्रमशः दुर्बल हो कर यदि अवसन्न अवस्थाको प्राप्त हुआ हो, तो बलकारक औषधकी व्यवस्था करें। किन्तु रोगीके अङ्ग क्रमशः शीतल और बड़ी दुर्बल होवे, तो निम्नलिखित उत्तेजक मिश्रकी व्यवस्था करें ।

स्पोट आमोनिएओमाटिकस्	...	१५ बूंद।
——नाइट्रिक ईथार	...	१५ "
भाइनम् गालिसाइ	...	२ "
टिंचर मस्क	...	१५ "

कपूरके जलके साथ मिला कर एक औन्सकी खुराक। रोगीकी अवस्था विचार कर ½ या १ वा २ घण्टा अन्तर सेवन करावें। प्लीहा बढ़ने पर उस पर गरम जलका स्वेद दे कर अथवा टिंचर वा लिनिमेण्ट आइओडाइन-का प्रलेप दे कर निम्नलिखित मिश्र (ज्वरके समय) सेवन करावें—

एमन् मिउरियस	...	५ ग्रेन।
पटास ब्रोमाइड	...	५ "
पटास क्लोरास	...	७ "
डि० सिनकोना	...	१ औन्स।

एक खुराक। दिनमें ३।४ खुराक खानी चाहिए। ज्वरका वेग मन्दीभूत होने पर निम्नलिखित मिश्र प्रतिदिन तीन बार पिलाना चाहिए—

कुनैन	...	२ ग्रेन।
डा० सलफिउरिक एसिड	...	१० बूंद।
फेरी सल्फ	...	२ ग्रेन।
म्यागनेसिया सलफास्	...	२ ग्रेन।
टिञ्चर सिनामन कम	..	½ ड्राम।
टपकाया हुआ पानी	...	१ औन्स।

एकत्र एक मात्रा। उदरामय हो तो इस मिश्रमेंसे म्यागनेसिया सलफास् निकाल देनी चाहिए। Syrup of lactate of Iron, Phosphate of Iron अथवा Ferri iodide का सेवन करानेसे बहुत समय प्लीहा घट जाती है और शरीरमें रक्तका अंश बढ़ता है।

यकृत्की विवृद्धि होनेसे उस पर गरम पानीका स्वेद देना चाहिए; उससे फायदा न हो तो सरसोंका पलस्ता दें तथा निम्नलिखित मिश्र ३ बार पिलावें—

एमन मिउरियस्	...	५ ग्रेन।
ला० टारेकसिकम	...	२० बूंद।
डा० नाइट्रिक हाइड्रोक्लोरिक एसिड		१० "
इन० चिरायता	..	१ औन्स।

एकत्र एक मात्रा। इस ज्वरमें कासका प्रकोप हो तो भाइनाम् इपिकाककी ५।१० बूंद और टिञ्चार क्याम्फर कम्पाउण्ड ½ ड्राम, कुनैन मिला कर अथवा ज्वरघ्नमिश्रके साथ एकत्र कर सेवन करावें।

पूर्वलिखित औषधादि सेवन करके ज्वरमुक्त होनेके बाद भी कुछ दिनों तक बलकारक औषध सेवन करना चाहिए । क्योंकि सविरामज्वरमें रक्ताधिक्यके कारण आभ्यन्तरिक यन्त्रादि विकृत हो जाते हैं। ज्वर उपशमित होनेके साथ ही यन्त्रादि स्वाभाविक अवस्थाको प्राप्त नहीं होते। इस अवस्थामें औषधादि सेवनसे विरत रहनेसे, पुनः ज्वरकी उत्पत्ति हो सकती है। दूसरी बात यह है कि आरोग्यलाभके बाद कुछ दिनके लिए स्थान-परिवर्तन करना आवश्यक है, नहीं तो शरीर भलीभांति सबल नहीं होता। तीसरे कुनैन सेवन करनेसे ज्वर २।४ दिनके भीतर सम्पूर्णरूपसे दूर नहीं होता। ज्वरको पूर्णतया नष्ट करनेके लिए कुछ दिन बलकारक औषध-का सेवन करना उचित है, अन्यथा कुनैन द्वारा बद्ध ज्वरके पुनः प्रकट होनेकी सम्भावना रहती है। ज्वर बन्द होनेके बाद प्रतिदिन नियमानुसार एटकिन्स् सीराप सेवन करना चाहिये। निम्नलिखित मिश्रके (प्रतिदिन तीन बार) सेवन करनेसे भी रोगी शीघ्र हो

विपरीत भागसे स्पर्श करती है, पृथिवीको अपर दिक्में फैल पड़ती हैं। इन्ही दोनों विस्तृत रेखाओंके मध्य पृथिवीच्छाया दो भाग हो जाती है। सूच्याकार एक भाग प्रकृत छाया और अपर भाग खण्डच्छाया कहलाता है। खण्डच्छाया सम्पूर्ण अन्धकारमय नहीं होती। उसके बीचमें सूर्यके किसी किसी भागका किरण पतित होता। प्रकृत छायामें किसी भागका किरण सीधा नहीं पड़ता। सुतरां वह अपेक्षाकृत अन्धकारमय रहता है। उसीसे चंद्र इस खण्डच्छायामें घुसते घुसते क्रमशः दीप्ति हीन होते जाता, शेषको प्रकृत छायामें प्रवेश करने पर ही एककालमें पूर्णग्रास होता है।

हमारे चंद्र अर्थात् पार्थिव उपग्रहका जैसा ग्रहण देख पड़ता, वृहस्पति प्रभृति उपग्रहवाले ग्रहवाले ग्रहों का भी ग्रहण लगा करता है। वार्हस्पत्य चंद्रोंकी ग्रहण गणनाका बड़ा प्रयोजन है और वह यन्त्रवेध द्वारा दृष्ट होता है।

चन्द्रपात अर्थात् राहु वा केतुके पास किसी भी समयको सूर्य जैसी अवस्थिति करता और फिर वैसा ही होनेमें जो समय लगता, उसको पातसम्बन्धीय सूर्यावर्तनकाल (Duration of the revolution of the sun with regard to the node of the lunar orbit) कहना पड़ता है। उसी समयको और भी घटती बढ़ती होती है। इसको (गड़) माध्यमिक काल (Nean duration) कहा जाता है। इसी माधामिककाल और चान्द्रमास (Duration of the synodic revolution of the moon) का संबन्ध २२३ और १८ होता है। इन्हीं दोनो अङ्कोंके सम्बन्धके समान जैसा २२३ चन्द्र मासका अन्तर चन्द्र और सूर्य चंद्रपात (Mode)से एक वार जितनी दूर रहता, वार वार उतनी ही दूर पड़ता है। सुतरां ग्रहण इसी पर्याय क्रममें पुनः पुनः हो सकते है। किन्तु सूर्य चंद्रके गति व्यतिक्रमसे ठीक उक्त समयको वैसे ही वार वार अवस्थिति नहीं आती।

उक्त २२३ और १८ दोनों अङ्कोंके अनुपातानुसार गिननेका कारण यह है कि २२३ माधामिक चान्द्रमासमें ६५८५-३२ दिन रहते और १८ वार पातगतिमें ६५८५-७८ दिन पर्याप्त होते है। अतएव २२३ चान्द्रमासके प्रथम और शेषको पातकी मध्यमावस्थितिकी विशेष विभिन्नता नहीं पड़ती। अतएव २२३ माधामिक चान्द्रमास अर्थात् १८ वत्सर १० दिन ग्रहणगणनार्थ विशेष प्रयोजन होता है। अति प्राचीन सभ्य लोग (कालडियान आदि) इसको जानते और सारोस (Saros) कहते थे। ग्रहणका प्रकृत कारण समझनेके बहुकाल पूर्व ऐसे ही पुराने लोग ग्रहण गणना करते रहे।

ग्रह कभी कभी एक दूसरेको ग्रास वा आच्छादन करते हैं। शुक्रद्वारा बुध, मङ्गलसे वृहस्पति और हमारे चंद्र द्वारा शनिका आच्छादन दीर्घ कालान्तरको दर्शित होता आया है। ऐसे दीर्घकालान्तरमें होनेका कारण यह है कि सब ग्रहोंकी बात छोड़ दीजिये, उनमें कितने ही एक बार सूर्यके साथ समसूत्रस्थ अर्थात् नभोमण्डलके एकदेशमें एक ही समय अति विरल दृष्ट होते है। ईस्वी सनसे २५०० वत्सराधिक काल पूर्व बुध, शुक्र, मङ्गल, वृहस्पति और शनिको समसूत्रता रही थी। ११८६ ई० १५ सितम्बरको कन्या और तुला राशिके मध्य उक्त प्रकारकी समसूत्रता पड़ी और १८०१ ई०को चंद्र, वृहस्पति, शनि तथा शुक्र सिंह राशिके मध्य एकत्र हुए थे। ह्यालैण्ड नामक प्रसिद्ध ज्योतिर्विदने यह देखानेको गिना था, उस प्रकारकी समसूत्रता कैसी विरल घटना है। १७ शङ्क वत्सर अन्तर बुध, शुक्र, मङ्गल, वृहस्पति, शनि और युरानस् छहों ग्रहोंका युगपत् मिलन (Conjuction) होता है।

ग्रहणसम्बन्धीय कई छोटो मोटी बातें ज्योतिर्विद् बतलाया करते हैं। यथा—

१ प्रतिवत्सर न्यूनकल्पमें २ चंद्रग्रहण पड़ते हैं।

२ किसी वर्ष एक भी सूर्यग्रहण नहीं हो सकता।

३ सर्वग्रास और केंद्रीय एक भी चंद्रग्रहण पड़नेसे उससे पिछली और अगली अमावस्याको एक सूर्यग्रहण हो सकता है। यह घटना राहुकी भांति केतुमें भी घटित हो सकती है। ऐसा होने पर किसी वर्ष छह ग्रहण लग सकते है।

४ किसी वत्सर जनवरी महीनेके आरम्भमें पहले एक ग्रहण पड़नेसे इसी वत्सरके शेष भागमें फिर कोई सूर्यग्रहण हो सकता है।

इसका आक्रमण भयावह है। इस ज्वरसे आक्रान्त होने पर रोगीको दो तीन दिनमें ही खाट पर पड़ना पड़ता है। इसमें ७वें दिनसे लगा कर १४वें दिनके भीतर शरीरमें कुछ उद्भेद प्रकट होते हैं। ये प्रथमतः वक्षःस्थल वा स्कन्धदेश पर, मणिबन्धके पीछे वा उदरके ऊपरि भागमें दीख पड़ते हैं, पीछे क्रमशः हाथ पैरोंमें फैलता है। उद्भेदोंको दाबनेसे अदृश्य हो जाते हैं, तथा एक बार अदृश्य होने पर फिर प्रकट नहीं होते। ये साधारणतः १५वें दिनसे ८वें दिन तक अधिक प्रस्फुट होते हैं। इनकी संख्याके अनुसार पीड़ाका गुरुत्व मालूम हो सकता है।

ये पहले लाल और पीछे क्रमशः काले हो जाते हैं। २।३ दिनके भीतर पिङ्गलवर्ण हो कर चमड़ेके साथ मिल जाते हैं। इसमें रोगीकी देह काली दीखती है और भयावह लक्षण प्रकट होते रहते हैं। नाड़ीकी द्रुतगति, दुर्बलता, प्रलाप, अचैतन्य, हाथपैरोंका कांपना, शय्यान्वेषण, पाटलवर्ण जिह्वा, पेटका फूलना. काश, हिचकी आदि लक्षण सम्पूर्ण उपस्थित होने पर रोगीकी मृत्यु निकटवर्ती समझनी चाहिये, किन्तु उक्त लक्षण यदि क्रमशः घटते रहें, तो रोगीके जीनेकी आशा की जा सकती है। मस्तिष्क ज्वर आन्त्रिक ज्वरकी तरह अधिक दिन तक नहीं ठहरता। साधारणतः रोगी १४ दिनसे लगा कर २१ दिनके भीतर भीतर आरोग्यलाभ करता है या मर जाता है।

मस्तिष्क-ज्वर मसूरिका और आरक्त ज्वर (Scarlet fever) की तरह विषाक्त पदार्थविशेषके द्वारा उत्पन्न और सञ्चारित होता है। किसी भी कारणसे इसकी उत्पत्ति क्यों न हो, इस रोगके प्रकट होते ही गृहस्थोंको स्वास्थ्योपयोगी नियमोंके प्रति विशेषदृष्टि रखनी चाहिये। जिससे रोगीके घरमें विशुद्ध वायु आ सके, शय्या परिष्कार रहे और घरमें लोगोंका जमाव न हो. इस विषयमें विशेष सतर्कता रखनी चाहिये। रोगीके घरमें किसी तरहकी दुर्गन्ध या अपरिष्कृत सामग्री न रखनी चाहिये। दुर्गन्ध दूर करनेके लिए, हरितन (Chlorine), अथवा अन्य किसी तरहके संक्रामापह पदार्थका व्यवहार करें। रोगीके पास किसीका भी बैठना ठीक नहीं। रोगीकी शुश्रूषाके लिए विशेष नियमोंका पालन करते हुए औषध आदि सेवन करावें। रोगीके पथ्य पर विशेष दृष्टि रखना आवश्यक है। हलका और बलकारक पथ्य ही उत्तम है। अरारोट, मांस (अभावमें मत्स्यका क्वाथ) और दूध व्यवस्थेय है। उदरामय होने पर दूध न देना चाहिये। रोगी अत्यन्त दुर्बल होनेसे साबूदाना, अरारोट वा क्वाथके साथ थोड़ी १ नं० Exshaw brandy मिला पिलाना चाहिये। एक साथ ज्यादा खिलाना अच्छा नहीं; थोड़ा थोड़ा करके पुनः पुनः पथ्य देना उचित है। किसी तरहका कठिन पदार्थ न खिलाना चाहिये, क्योंकि उससे अन्त्र फट जानेकी सम्भावना है। इस रोगीके बलकी रक्षा करते रहनेसे उसके जीवनकी भी आशा की जा सकती है, इसलिए रोगीको विशेषरूपसे पथ्य देना चाहिये। रोगी निद्रित होने पर भी उसको जगा कर पथ्य देवें।

मस्तिष्क ज्वर बालकोंके लिए उतना सङ्कटजनक नहीं है। डा० अलीसन् (Dr. Alison)-ने इस रोगमें मृत्यु-संख्याकी तालिका निम्नलिखित रूप दी है—

उम्र	आक्रमण	मृत्यु
१५ वर्षसे कम	८७	२
१५—३०	१४९	११
३०—५०	९७	१७
५०से ऊपर	१७	७

उम्रकी अधिकताके अनुसार इस ज्वरका आक्रमण भी भीषणतर होता है। स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषोंके लिए इस रोगका आक्रमण अधिकतर साङ्घातिक है; किन्तु गर्भवती स्त्रियोंके इस रोगसे आक्रान्त होने पर प्रायः उनका गर्भस्राव हो जाया करता है।

मानसिक रोगाक्रान्त व्यक्ति इस रोगसे पीड़ित होने पर सहजमें मुक्त नहीं हो सकते। जो लोग सर्वदा प्रफुल्ल रहते, तमाकू पीते हैं, उनको प्रायः यह ज्वर नहीं होता। क्षयकाश रोगवालोंको भी इस बुखारसे पीड़ित नहीं होना पड़ता। जिसको एक बार यह रोग हुआ है, उसको फिर कभी नहीं होता।

मस्तिष्कज्वरकी विशेष सतर्कताके साथ चिकित्सा करनी चाहिये। औषध प्रयोगसे इस ज्वरका उतना उप-

इस्वी सन्	सूर्य ग्रहण	चंद्र ग्रहण
५०	६ मे	२५ अप्रे, १८ अक्टू
५१	२३ से	१४ अप्रे, ८ अक्टू
५२	१८ मा	——
५३	६ मा	२१ फर, १८ अग
५४	२३ जुला, २६ फर	११ फर, ७ अग
५५	१२ जुला	३१ जन, २७ जुला
५६	१ जुला, २५ दि	१० दि
५७	——	५ जू, २८ न
५८	११ मे	२६ मे, १९ न
५९	३० अप्रे. २५ अक्टू	——
६०	१३ अक्टू	४ अप्रे, १८ से
६१	१० मा, ३ अक्टू	२४ मा, १८ से
६२	२८ फ	१३ मा, ७ से
६३	१७ फ	——
६४	१ अग	२२ ज, १७ जुला
६५	१६ दि	११ज, ६ जुला
६६	—	३१दि २६जू
६६	—	२६ जू
६७	३१ मे	१७ मे, ६ न
६८	१९मे	६ मे, २९ अक्टू
६९	४ अक्टो	२५ अप्रे, १८ अक्टू
७०	२३से	—
७१	२० मा	४० मा, २९ अग
७२	२ अग	२२ फ, १७ अग
७३	२३ जुला	१२ फ, ६ अग
७४	१२ जुला	२२ दि
७५	५ ज,	२६ दि, १७ ज, ११दि
७६	२१मे	५ जू, २६ न
७७	——	——
७८	३० अप्रे २४ अक्टू	१६ अप्रे ६ अक्टू
७९	१३ अक्टू	५ अप्रे, २९ से
८०	१०मा	२४ मा, १७ से
८१	२७ फ, २३ अग	——
८२	१२ अग	२ फ, २८ जुला
८३	२ अग, २७ दि	२२ ज, २७ जुला
८४	१६ दि	११ ज, ६ जुला
८५	१० जू	२७ मे, २० न
८६	३१ मे	६ न १७ मे
८७	१५ अक्टू,	६ मे, ३० अक्टू
८८	१० अप्रे, २ अक्टू	——
८९	३० मा	१५ मा, ८से
९०	२० मा	४ मा, २८ अग
९१	३ अग	२२ फ, १७ अग
९२	२७ ज,	२७ जुला——
९३	——	१ ज, २१ दि
९४	५ ज, १ जू	१७ जू, १० दि
९५	२२ मे	६ जू
९६	१० मे, ३नं	२६ अप्रे, २० अक्ट
९७	१ अप्रे	१५ अप्रे, ९ अक्टू
९८	२१ मा	४ अप्रे, २९ से
९९	३ से	——
१००	२३ अग	१३ फ, ७ अग
१०१	१७ ज, १२ अग	१ फ, २८ जुला
१०२	२७ दि	२२ ज, १७ जुला
१०३	२२ जू	१ दि
१०४	१० जू	२७ मे, १९ न
१०५	२५ अक्टू	१६ मे. ६ न
१०६	२१ अप्रे	——
१०७	११ अप्रे	२६ मा, २० से
१०८	३० मा, २४ अग	१५ मा, ८ से
१०९	१४ अग	४ मा, २८ अग
११०	३ अग	——
१११	२७ ज,	१३ ज, ८ जुला
११२	१२ जू	१ ज २७ जू
११३	१ जू, २६ न	१६ ज
११४	२२ मे, १५ न	३१ अक्टू
११५	४ न,	२६ अप्रे, २१ अक्टू
११६	३१ मा,	१४ अप्रे, ९ अक्टू
१११	२१ मा	——
११८	३ से	२३ फ, १८ अग

रोगीके अवसन्न हो जाने पर आमोनिया (Ammonia) और मद्यकी व्यवस्था करें। इस रोगमें विशेष विशेष उपसर्गके निवारणार्थ योग्य औषधोंका प्रयोग करना उचित है।

इस ज्वरके आक्रमणसे पहिले निम्नलिखित उपायोंका अवलम्बन करनेसे कभी कभी इसके हाथसे छुटकारा मिल सकता है। पहले रोगीको धारा स्नान करावें, फिर उसकी देह अच्छी तरह रगड देवें, अथवा उसको वमन कारक वा अल्प विरेचक औषध सेवन वा गरम पानीमें स्नान करावें किंवा यथाक्रमसे उक्त सभी उपायोंका अवलम्बन करें। कभी कभी स्वेदजनक औषधके सेवन करनेसे भी फायदा होता है। ज्वरकी प्रथमावस्थामें कुछ कुछ गरम तरल पदार्थका प्रयोग किया जा सकता है। ज्यादा गरम पदार्थ हितकर नहीं है। वमनका उद्वेग हो तो किसी तरहकी भी गरम चीज काममें न लानी चाहिये। इस अवस्थामें किसी प्रकारकी यन्त्रणा हो तो वमनकारक औषधका प्रयोग करें। ज्वरकी प्रथमावस्थामें रोगी दुर्बल न हो तो किञ्चित् रक्तमोचणकी व्यवस्था की जा सकती है। कोई आभ्यन्तरिक यन्त्र प्रपीडित हो, तो जोंक लगा कर उस स्थानका रक्तमोचण करें। परन्तु १० दिन बीत जाने पर वा इस ज्वरके फ्क्कुपिस मस्तिष्कज्वरके लक्षणोंका समावेश होने पर रक्तमोचण अपकार हो सकता है। वमनकारक और विरेचक औषधके प्रयोगसे उपकार होनेकी सम्भावना है। अष्टाहसे पहले कालमेल वा कबाबचीनी मिश्रित कालमेल व्यवस्थेय है। अवस्थाको विचार कर इसलीका प्रयोग किया जाय, तो फायदा हो सकता है। सहसा जिससे किसी प्रकारका परिवर्तन वा कोष्ठकाठिन्य न हो, उस विषयमें विशेष सावधानी रखनी चाहिए। कपूरके साथ थोडो शरीरके लिए उष्णतानिवारक औषध व्यवस्थेय है। निम्नलिखित औषध भी विशेष उपकारी है—

आमोनिया ऐसिटेटिस	...	२ औन्स।
आमनाइम सिउरियाटिम	...	४ ग्रेन।
सीराप लिमनिस	...	१ औन्स।

स्नायुमण्डलके प्रपीड़ित होने पर शारीरिक उत्तेजना बढ़ती है तथा त्वक् और अन्त्रकी क्रिया विशृङ्खल हो जाती है। इस अवस्थामें पलस्ता व्यवस्थेय है, किन्तु इससे पहले पलस्ता व्यवहार नहीं करें। ग्रीवाके पश्चाद्भागमें, दोनों कानोंके निम्नभागमें वा पैरको पिण्डलो पर पलस्ता लगावें।

इस समय कर्पूर मिश्रित औषध विशेष फलप्रद है। २४ घण्टेके भीतर १२से २४ ग्रेन तक सेवन करावें। इसको Arnica अथवा Angelica root के साथ मिला लेवें। उच्छ्वास होनेसे Hydrargyrum Cumcreta और कबाबचीनी (Rhubarb) अथवा सामान्य लवणाक्त द्रव्यके साथ शेषोक्त औषध सेवन करावें। ८।१० दिन बीत जाने पर भी यदि कोई आशङ्काजनक उपसर्ग विद्यमान न रहे, तो लि० अमोनिया एसिटेटिसके साथ कर्पूरके मिश्रकी व्यवस्था की जा सकती है। Alkaline carbonates और citric acid कर्पूरमिश्रके साथ एकत्र सेवन करनेसे भी सुफल होता है। नाड़ीकी अवस्था विचार कर उत्तेजक और बलकारक औषधका प्रयोग करें। आमोनिया एसिटेट वा साइट्रिक एसिड और कार्बनेटका काथ वा सिनकोनाके मिश्रका व्यवहार किया जा सकता है।

हृत्पिण्डकी अवस्थाका निर्णय करनेके लिए यन्त्रकी सहायतासे वक्षःस्थलकी परीक्षा करनी चाहिए। यदि श्वासकृच्छ्र वा प्रदाहजनित अन्य कोई उपसर्ग अथवा आभ्यन्तरिक यन्त्रकी अपक्रिया जान पड़े तो, रक्तमोचण करनेसे फायदा पहुंच सकता है। वायुनलीके रक्तस्राव के कारण उपसर्ग उत्पन्न हो तो Mistura ammoniaci अथवा Decoctum polygalæ, कपूर, आमोनिया वा टिंचर काम्फरके साथ प्रयोग करना चाहिए। बलका ह्रास होनेसे लघु पथ्यके साथ मद्य व्यवस्थेय है। रोगीका शरीर फ्लानेलसे ढके रखना चाहिए। अवस्थाका विचार कर Ipecacuanha, कालमेल वा कपूरके साथ तथा अफोम या पोस्तका रस व्यवहार्य है। शरीर शीतल और पाण्डु, नाड़ी दुर्बल तथा आकृतिका संकोच होने पर Blygala, ammonia, camphor, stimulating tonics तथा मद्य व्यवस्थेय है। यदि उदर स्पर्शासहिष्णु और वायुगर्भ हो, तो हींग वा extract of

ग्रहण

ई० सन्	सूर्य०	च० ग्रहण
१८७	१७ दि	८ जू, ३ दि
१८८	१४ से	२८ मे, २१ न
१८९	३ मे, २७ अक्टू	१७ मे
१९०	२२ अप्रे	८ अप्रे
१९१	६ अक्टू	२८ मा, २० से
१९२	१ मा	१६ मा, ६ से
१९३	१६ फ	——
१९४	४ अग	२४ ज, २० जुला
१९५	२४ जुला, १८ दि	१३ ज, १० जुला
१९६	७ दि	३ ज, २८ जू
१९७	३ जू	१२ न
१९८	२२ मे	८ मे, १ न
१९९	७ अक्टू	२८ अप्रे, २१ अक्टू
२००	१ अप्रे	——
२०१	२२ मा,	७ मा, ३१ अग
२०२	११ मा	२४ फ, २० अग
२०३	२५ जुला	१३ फ, १० अग
२०४	१४ जुला	२४ दि
२०५	२८ दि	१८ जू, १३ दि
२०६	२५ मे	८ जू, ३ दि
२०७	१४ मे	२८ मे
२०८	२ मे	१८ अप्रे
२०९	१६ अक्टू	७ अप्रे, १ अक्ट
२१०	१३ मा	२८ मा, २० से
२११	२ मा, २५ अग	——
२१२	१ अग	४ फ, ३१ जुला
२१३	३ अग	२४ ज, ३० जुला
२१४	——	१३ ज, ६ जुला
२१५	१४ जू	——
२१६	२ जू	१८ मे, १२ न
२१७	१८ अक्ट	८ मे, १ न
२१८	१२ अप्रे; ७ अक्ट	२८ अप्र, २१ अक्टू
२१९	२ अप्रे	१८ मा, ११ से
२२०	२२ मे	६ मा, ३१ अग
२२१	५ अग	२४ फ, २० अग
२२२	३० ज, २५ जुला	——

ई० सन्	सूर्य०	च० ग्र०
२२३	१८ ज	४ ज, ३० जू, २५ दि
२२४	८ ज, ४ जू	१८ जू, १३ दि
२२५	२४ मे, १७ न	८ जू
२२६	७ न	——
२२७	——	१८ अप्रे, १२ अक्टू
२२८	२३ मा	७ अप्र, १ अक्टू
२२९	१३ मा	——
२३०	२५ अग	१४ फ
२३१	१५ अग	४ फ, ११ अग
२३२	१० ज, २६ दि	२५ ज, १६ जुला
२३३	२५ जू	——
२३४	१४ जू	३० मे, २३ न
२३५	३ जू, २८ अक्टू	२० मे, १२ जून
२३६	२७ अप्रे, १७ अक्टू	८ मे, ३१ अक्टू
२३७	——	१२ से
२३८	२ अप्रे,	१८ मा, ११ से
२३९	१६ अग	७ मा, १ से
२४०	५ अग	१० फ
२४१	२६ ज	१५ ज, १० जुला
२४२	१५ जू	४ ज, २६ जुला, २४ दि
२४३	५ जू	१६ जू
२४४	२४ मे	——
२४५	७ न	२८ अप्रे, २२ अक्टू
२४६	३ अप्रे	१८ अप्रे, १२ अक्ट
२४७	२४ मा	२ अक्टू
२४८	४ से	२६ फ, २१ अग
२४९	२५ अग	१४ फ, १० अग
२५०	२० ज	४ फ, ३० जुला
२५१	६ ज, ६ जुला	——
२५२	२४ ज	८ जू, ३ दि
२५३	१३ जू	३० म, २२ न
२५४	४ मे, २६ अक्ट	१८ म, १२ न
२५५	२३ अप्रे	२ अक्टू
२५६	१२ अप्रे	२८ मा

स्थामें phosphorus फायदेमन्द है। मस्तकमें उत्ते-जना होनेसे पलस्त्रा तथा camphor और arnica का व्यवहार किया जा सकता है। किसी प्रकारका क्षत होने पर, जिससे पूयोत्पत्ति हो, वैसी पुल्टिश देवें, तथा किसी तरहका सड़ा क्षत हो तो chloride, kreosote, powdered bark, turpentine आदिका प्रयोग करना उचित है। मस्तकप्रदाह और प्रलापकालमें belladona का व्यवहार करनेसे उपकार होता है।

आन्त्रिक ज्वरकी प्रथमावस्थामें रोगीके घरकी वायु जिससे विशुद्ध और नातिशीतोष्ण होवे, ऐसा प्रयत्न करना चाहिये। बार्लि, साबू वा भातके मांडका पथ्य देना चाहिये। भुजनलीमें प्रदाह हो तो ईषत् घर्मोद्दी-पक पानीय प्रदान करें। किन्तु घर्म उत्पन्न करनेके लिए उष्ण वस्त्र द्वारा शरीर ढक देना उचित नहीं। स्नाय-विक अवस्थामें घरके भीतर ठण्डी हवा न आने देवे; बिस्तरको गरम रखें, किन्तु जिससे वायु दूषित न होने पावे तथा घरमें अधिक आदमियोंका जमाव न होना चाहिये। रोगीका शरीर और बिस्तर विशेष परि-ष्कार तथा उसकी जिह्वा और मुखको अच्छी तरह धो देवें। कुछ कुछ गरम जल तथा अरारोट अथवा सूप आदि खाद्य मिला कर देवें। किसी प्रकारका फल खानेको न देना चाहिये। मस्तिष्क-ज्वरमें जिससे रोगीको शारीरिक और मानसिक शक्ति पूर्वावस्थाको प्राप्त हो ऐसी औषध देवें और कथोपकथन करें।

आन्त्रिक, मस्तिष्क और स्वल्पविराम ज्वरके लक्षणोंका निर्णय करनेके लिए नीचे एक तालिका दी जाती है—

आन्त्रिक-ज्वर—१, उद्भिज्ज और जान्तव वस्तुएं सड कर वायुको दूषित करती हैं, उस दूषित वायुके सेवनसे ये रोग उत्पन्न होते हैं। प्रश्वास वायु अथवा गात्र-चर्मसे इस पीड़ाका विष संक्रमण द्वारा अन्य व्यक्तिके शरीरमें प्रविष्ट हो कर पीड़ा उत्पन्न नहीं करता।

२, मुखमण्डल उज्ज्वल, गण्डस्थल आरक्त, कनीनिका प्रसारित और प्रलाप वृद्धि होता है। पीड़ा दिनकी अपेक्षा रातको प्रबल होती है।

३, पीड़ाके प्रारम्भसे ले कर अन्त तक नाकसे खून गिरता है।

४, पीड़ाके प्रारम्भसे उदरामय उपस्थित हो कर आधे उबाले गये चावलोंकी तरह मल निकलता है। मलमें दुर्गन्ध नहीं होती, किन्तु इसके साथ साथ प्रायः रक्त निकला करता है। पीड़ित व्यक्तिके शरीर और श्वास प्रश्वासमें दुर्गन्ध नहीं पायी जाती।

५, इसके उद्भेद गोलाकार वा अण्डाकार हो कर चमड़ेसे कुछ ऊँचे उभर आते हैं। ये पहले थोडे और बादमें बहुत उदित तथा वक्षस्थलमें प्रकाशित होते हैं। परन्तु हाथ पैरोंमें कभी नहीं होते।

६, उदराध्मान इसका एक विशेष लक्षण है। रोगीके पेटमें गुड-गुड़ शब्द होता है।

७, स्थितिकालकी निश्चयता नहीं है।

८, इन रोगसे प्रायः युवकगण ही नहीं आक्रान्त होते।

मस्तिष्क ज्वर—१, अधिक लोगोंका एकत्र वास वा अवस्थिति तथा अपरिच्छन्नताके कारण इस ज्वरकी उत्पत्ति होती है। रोगीके श्वास-प्रश्वास और पसेवसे इस रोगका संक्रामक विष अन्य व्यक्तिके शरीरमें प्रवेश कर पीड़ा उत्पन्न करता है।

२, मुखमण्डल गम्भीर होने पर भी विवेचनाशून्य, कनीनिका सङ्कुचित और प्रलाप अविरत, किन्तु मृदु लक्षित होता है।

३, पीड़ाके प्रारम्भमें नाकसे खून नहीं गिरता।

४, साधारणतः कोष्ठबद्धता, कृष्णवर्ण और दुर्गन्ध-युक्त मल निकलता तथा रोगीके शरीरसे दुर्गन्ध छूटती है। मलके निकलते समय रक्तस्राव नहीं होता।

५, उद्भेदोंका रंग कालेपनको लिए लाल होता है। इनका कोई विशेष आकार नहीं होता और न ये चम-ड़ेसे ऊँचे हो होते हैं। मुखमण्डल, पृष्ठदेश तथा हस्तपदादिमें ये बहुत होते हैं।

६, उदराध्मान वा पेटमें गुड़ गुड़ शब्द नहीं होता।

७, स्थितिकाल तीन सप्ताह है।

स्वल्पविराम-ज्वर—१, मलेरियाके कारण यह व्याधि उत्पन्न होती है; पर यह संक्रामक नहीं होती।

२, पाण्डु होने पर रोगीका शरीर पीताभ दीखता है। विवमिषा और वमन इसका प्रधान लक्षण है।

पावे इसके लिए कुनैन खिलावें। मस्तक गरम होने पर शीतल जलकी पट्टी रखनी चाहिये। मूत्रयन्त्र विशृङ्खल होनेसे लाइम जूस सेवन करावें। दौर्बल्य इस रोगका साधारण धर्म है, अतएव पहलेसे ही सुरा और बलकारक पथ्यको व्यवस्था करते रहना चाहिये। रोगोके आरोग्य लाभ करने पर कुछ दिन तक लौह और कुनैन घटित बलकारक औषधका सेवन करावें।

वातिकज्वर (Ardent fever) यह किसी तरहके विषसे उत्पन्न नहीं होता, इसलिए यह कभी भी एक शरीरसे दूसरे शरीरमें संक्रमित नहीं होता। इस ज्वरकी उत्पत्ति इन इन कारणोंसे होती है—प्रखर धूपका सेवन, अनियमित वा अपरिमित भोजन और पान, अतिरिक्त परिश्रम, अतिरिक्त पथ भ्रमण इत्यादि। दो तोन दिन रोगो लगातार ज्वरभोग करके आरोग्य लाभ करता है। शरीरके अधिक उत्तप्त होने पर, प्रलाप वा तन्द्रा होनेसे, सन्ध्याके समय ज्वरकी वृद्धि और सुबह कुछ ह्रास होनेसे, रोग बढ़ गया है ऐसा समझना चाहिए। साधारणत: इस ज्वरमें अग्निमान्द्य मस्तक और देहमें दर्द तथा कभी कभी कँपकँपी आ कर शरीरका चमड़ा सूख कर गरम हो जाता है। वातिक ज्वरमें डरनेका कोई कारण नहीं है।

चिकित्सा—रोगोको श्रमसे प्रतिनिवृत्त और मृदु विरेचक औषध देनो चाहिये। शिर:पोड़ा होने पर मस्तकमें शीतल जलका प्रयोग करनेसे तथा रोगोको खूब नींद आनेसे इस ज्वरको शान्ति होतो है। ज्वर छूटनेके बाद शरीर दुर्बल हो जाय तो ब्राण्डी और पुष्टिकर आहार देना चाहिये।

नासाज्वर (Nasal polypus)—नाकके भीतर दूषित रक्त सञ्चित हो कर इस ज्वरको उत्पन्न करता है। इस ज्वरमें समस्त अङ्गोंमें विशेषत: पीठ कमर और गर्दनमें अत्यन्त वेदना होतो है। यह वेदना इतनो तीक्ष्ण होती है कि, सामनेको शरीर तक नहीं झुकाया जाता। नासाज्वरमें अन्यान्य लक्षण भो प्रकट होते हैं।

नासिकाके भीतर जो रक्तवर्ण शोथ रहता है, उसको सुईके जरिये छेद कर दूषित रक्त निकाल देनेसे यह ज्वर जाता रहता है रक्तस्रावके बाद लवणसंयुक्त सर्षपतैल वा तुलसीपत्रके रसका नास लेनेसे फायदा पहुंचता है। दो एक दिन आहार और स्नान बन्द रखना चाहिये। जो लोग इस रोगसे पुन: पुन: पीड़ित होते हैं, वे यदि प्रतिदिन मुंह धोते समय मसूढ़ोंसे कुछ रक्त निकाल दें और नस्य लिया करें, तो इस पोड़ासे बारम्बार आक्रान्त होनेकी आशङ्का नहीं रहती।

औद्भेदिकज्वर (Eruptive fever)—शारीरिक रक्त विषाक्त होने तथा आभ्यन्तरिक यन्त्रमें किसी तरहका परिवर्तन होने पर यह रोग होता है। यह रोग अत्यन्त संक्रामक है। यह साधारणतः दो प्रकारका होता है—१ रोमान्ती (Measles) और २ मसूरिका। रोमान्ती और मसूरिका शब्द देखो।

पीतज्वर (Yellow fever)—अमेरिकाके पूर्व और पश्चिम उपकूलमें, अफरीकाके अनेकांशमें तथा स्पेनके दक्षिण उपकूलमें इस ज्वरका प्रकोप पाया जाता है। इस ज्वरसे बहुतसे लोग मर जाते हैं; विशेषत: सेना पर इसका आक्रमण अत्यन्त भयङ्कर है। इस ज्वरमें विविध लक्षण दिखाई देते हैं। डा० गिलक्रेष्ट (Dr. Gillkrest)का कहना है, "इस ज्वरमें शरीर आंशिक अथवा साधारणभावसे पीतवर्ण हो जाता है तथा अन्तमें रोगो कृष्णवर्ण तरल पदार्थ वमन करके प्राण त्याग देता है।" अन्यान्य ज्वरमें जो लक्षण प्रकट होते हैं, इस ज्वरमें भो उनका अधिकांश प्रकाशित होता है।

बहुतोंका अनुमान है कि, १७९३ ई०में सबसे पहले ग्रानाडा द्वोपमें यह रोग प्रकट हो कर सर्वत्र फैल गया है। किन्तु उक्त समयसे पहले ग्रानाडा द्वोपमें जो महामारो रोग फैलता था, वह भो पीतज्वरका ही प्रकारभेद है, इसमें सन्देह नहीं।

इस ज्वरके प्रकट होनेसे दो तीन दिन पहले मन नितान्त निस्तेज हो जाता है और कार्यसे अत्यन्त अरुचि हो जाती है। समय समय पर वमनका उद्वेग, साथ ही शीत और मेरुदण्ड, पीठ, हाथ, पैर और मस्तकमें वेदना होती है। चक्षु आच्छन्न, घोर और जलभाराक्रान्त तथा दृष्टि अस्पष्ट और कभी दो प्रकारकी होती है। मानसिक विशृङ्खला, तन्द्रा, अस्थिरता, क्षुधामान्द्य, अरुचि आदि लक्षण दिखाई देते हैं। शरीर सर्वदा

रक्तमोक्षण किया जाता है। इसके सिवा विरेचक, वमनकारक और शीतल औषधादिका प्रयोग करें। इस ज्वरमें स्वल्पविराम ज्वरके लक्षण दिखाई दें तो कुनैनकी व्यवस्था करें। यदि औषध निगली जा सके तो Saline medicine का प्रयोग करना चाहिये, इससे फायदा हो सकता है।

बहुतोंका कहना है कि जैविक और औद्भिदिक पदार्थोंके सड़नेसे जो विषाक्त वाष्प उत्पन्न होती है, वह मनुष्य शरीरमें प्रविष्ट हो पीतज्वर उत्पन्न करती है। यह ज्वर संक्रामक होता है। रोगीके शरीरसे विषाक्त वाष्प अन्य शरीरमें प्रविष्ट हो उसको पीड़ित करती है।

लोहित वा आरक्त ज्वर (Scarlet fever)—यह रोग चर्मपुष्पिका रोगके अन्तर्गत है। गलक्षत इस रोगका एक प्रधान लक्षण है। ज्वर प्रकट होनेके दूसरे दिन रोगीके शरीरमें लाल, पित्ती उछरती है, ६ठे वा ७वें दिन वाह्यत्वक् पृथक् हो जाता है। अधिकांश चिकित्सकोंने इस रोगको ३ श्रेणियोंमें विभक्त किया है, जैसे—१ सरल (S. simple) २ गलक्षत (S. anginasa) और ३साङ्घातिक (S. maligna)।

प्रथम प्रकारके ज्वरमें पित्त लक्षित होता है, किन्तु प्राय: गलक्षत नहीं होता ; द्वितीय प्रकारके ज्वरमें पित्त और गलक्षत दोनों ही विद्यमान रहते हैं तथा तीसरे प्रकारके ज्वरके आक्रमणसे समस्त यन्त्र अवसन्न हो जाते हैं, रोगीकी जीवनी शक्तिका ह्रास और दुर्बलता बढ़ जाती है। ज्वरके पूर्वक्षणमें कंपकंपी, आलस्य, सिर दर्द, नाड़ीकी गति तेज, मुंह लाल, तृष्णा, क्षुधाकी हानि और जिह्वालेप लक्षित होता है। ज्वर प्रकट होते ही रोगी गलेमें प्रदाह अनुभव करता है तथा वह स्थान लाल और कुछ फूल जाता है। क्रमशः मुखका मध्यभाग और जिह्वा लाल हो जाती है। छोटी छोटी लाल पित्ती उछरने लगती है, शीघ्र ही उनकी संख्या इतनी बढ़ जाती है, कि तमाम शरीर लाल दीखने लगता है। धीरे धीरे यह पित्ती तमाम देहमें फैल जाती है। यह बहुत चिकनी होती है, इसको दाबनेसे कुछ देरके लिये इसकी ललाई जाती रहती है। इस प्रकारकी पित्तीके चारों ओर मरहोरी (घमौरी) दीख पड़ती हैं। यह तीन चार दिन तक समान भावसे रह कर बादमें धीरे धीरे अदृश्य हो जाती है। ७ दिनके बाद एक भी नहीं दीखती। फिर वाह्यत्वक् केंचुलीकी तरह पृथक् हो जाता है ज्वर प्रकट होनेके बाद प्राय: दो सप्ताहके भीतर चर्मस्खलन कार्य समाप्त हो जाता है। पित्ती उछरनेके बाद ही ज्वरका ह्रास नहीं होता। संध्याके समय रोगको वृद्धि होती है। इस समय रोगी प्रायः प्रलाप बकता रहता है, कभी कभी तन्द्राके लक्षण भी दिखाई देते हैं। चर्मस्खलनके बाद पेशाबमें अण्डलालांश दीख पड़ते हैं।

साङ्घातिक लोहित-ज्वरमें उद्भेद कुछ ज्यादा दिनोंमें दीखते हैं, कभी कभी तो बिल्कुल ही दिखाई नहीं देते। कभी कभी उद्भेद हो कर सहसा शरीरमें विलीन अथवा नीलाभ चिह्नके साथ मिल जाते हैं। नाड़ी दुर्बल, शरीर शीतल, बल क्षीण इत्यादि लक्षण प्रकट होते हैं। इस प्रकारके लोहित-ज्वरमें बहुत थोड़े समयमें ही रोगीका प्राणनाश होता है। अन्य प्रकारका लोहित-ज्वर शीघ्र ही मस्तिष्क ज्वरका रूप धारण करता है। नाड़ी द्रुत और दुर्बल, जिह्वा शुष्क, पिङ्गलवर्ण और कम्पान्वित, निश्वास लेनेमें कष्ट, गलदेशमें नीलाभ, स्फोत और सड़ा क्षत होता है। नलीद्वारमें सञ्चित श्लेष्माके कारण रोगीको निःश्वास-प्रश्वासमें अत्यन्त कष्ट होता है। इस प्रकारका ज्वर औषध सेवनसे बहुत कम हो आरोग्य होता है।

द्वितीय प्रकारका लोहित-ज्वर भी (S. anginasa) आशङ्काजनक है। प्रदाह अथवा मस्तकमें रसप्रवेश वा गलक्षतके कारण यह रोग सांघातिक हो जाता है। आसन्न प्रसवाओंके लिए इस रोगका मृदु आक्रमण भी विशेष सङ्कटजनक है। जब ऐसा मालूम पड़े कि, रोग एक प्रकारसे आरोग्य हो गया है, तब भी रोगीको विपरीत फल हो सकता है। जो बालक एक बार आरक्तज्वरसे आक्रान्त होते हैं, उनका स्वास्थ्य हमेशाके लिए भग्न हो जाता है। उसको व्रण, गण्डमाला सम्बन्धी क्षत, शिरस्त्वक्‌रोग, कर्णक्षत, चक्षु-प्रदाह आदि कोई न कोई रोग होता ही रहता है। आरक्त-ज्वर-मुक्त रोगीको कभी उदररोग (Anasarca) होता है। आश्चर्यका

ई०सन	सूर्यग्रहण	चंद्रग्रहण
६०६	११ जु	२७ मै, २० न
६०७	३१मे, २६ अक्टू	१७ मै ६न
६०८	——	५ मै २६ अक्टू
६०९	१० अप्रे	——
६१०	३० मा	१५ मा, ८ से
६११	२० मा	४ मा, २८ अग
६१२	२ अग	२२ फ, ११ अग
६१३	२७ जुला	——
६१४	——	? ज, २७ ज, २२ दि
६१५	५ ज, २ जू	१६ जू ११ दि
६१६	२१ मै, १५ न	५ जू
६१७	१ मै, ४ न	२६ अप्रे, २० अक्टू
६१८	१ अप्रे, २४ अक्टू	१५ अप्रे ९ अक्टू
६१९	२१ मा	४ अप्रे, २९ से
६२०	१० मा, २ से	——
६२१	२२ अग	१२ फ, ८ अग
६२२	१७ ज, १२ अग	१ फ, २८ अग
६२३	२७ दि	२२ ज, १७ जुला
६२४	२१ जू	६ जू, ३० न
६२५	१० जू	२७ मे, २० न
६२६	२६ अक्टू	१७ मे, ६ न
६२७	२१ अप्रे, ५ अक्टू	——
६२८	१० अप्रे	२५ मा, १९ से
६२९	३० मा, २४ अग	१५ मा, ८ से
६३०	१३ अग	४ मा, २८ अक्टू
६३१	३ अग	——
६३२	२७ ज	१३ ज ७ जुला
६३३	१२ जू	१ ज २७ ज, २१ दि
६३४	१ जू	१६ जू
६३५	१५ न	७ मे, ३१ अक्टू
६३६	११ अप्रे, ३ न	६ अप्रे २० अक्टू
६३७	१ अप्रे	१५ अप्रे, ९ अक्टू
६३८	२१ मा	——
६३९	३ से	२३ फ, १९ अग
६४०	——	१३ फ, ७ अग
६४१	१७ ज	१ फ, २७ जुला
६४२	२ जुला	१२ दि
६४३	२१ जू	७ जू, १ दि
६४४	५ न	२७ मे, १६ न
६४५	१ मे, २५ अक्टू	——

ईस्वी सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
६४६	२१ अप्रे	५ अप्रे, ३० से
६४७	४ से	२६ मा, १९ से
६४८	२४ अग	१४ मा, ७ से
६४९	१७ फ, १३ अग	——
६५०	६ फ	२३ ज, १८ जुला
६५१	२७ ज, २३ जू	१२ ज, ८ जुला
६५२	११ जू	१ ज, २७ जू
६५३	१ जू, २६ न	१८ मे, १० न
६५४	——	७ मे, ३१ अक्टू
६५५	१२ अप्रे	२६ अप्रे. २१ अक्टू
६५६	३१ मा, २३ से	——
६५७	१३ से	५ मा, २? अग
६५८	८ फ, ३ से	२३ फ, १८ अग
६५९	२८ ज	१३ फ, ८ अग
६६०	१८ ज, १३ जुला	२२ दि
६६१	२ जुला	१८ जू ११ दि
६६२	——	७ जू १ दि
६६३	——	——
६६४	१ मे	१६ अप्रे, १० अक्टू
६६५	२१ अप्रे	५ अप्रे, ३० से
६६६	४ से	२६ मा, १९ से
६६७	२८ फ, २५ अग	——
६६८	१७ फ	३ फ, २९ जुला
६६९	६ फ	२३ ज, १८ जुला
६७०	२३ जू, १८ दि	१२ ज, ८ जुला
६७१	१२ जू, ७ दि	२२ न
६७२	२५ न	१७ मे, १० न
६७३	२२ अप्रे	६ मे, ३१ अक्टू
६७४	१२ अप्रे ५ अक्टू	——
६७५	२५ से	१७ मा, ९ से
६७६	१३ से	५ मा, २९ अग
६७७	——	२३ फ, १८ अग
६७८	२३ ज, २४ जुला	——
६७९	१३ जुला	२ ज, २८ जू, २३ दि
६८०	२७ न	१७ जू, ११ दि
६८१	३३ मे, १६ न	७ जू
६८२	१२ से	२७ अप्रे, २२ अक्ट
६८३	२ मे	१६ अप्रे, ११ अक्ट
६८४	१४ से	५ अप्रे, २९ से
६८५	४ से	——
६८६	२८ फ	१४ फ, ९ अग

शीत और पीछे उष्णताका अनुभव करता है। गात्रचर्म पहले शुष्क और फिर घर्मसिक्त हो जाता है। सायंकालीन उपसर्ग, सुबह नहीं दीखते। प्रथमावस्थामें रोगीका कोष्ठबद्ध हो जाता है और उदरामय भी दिखाई देता है। मूत्र कभी पाण्डु, कभी अत्यन्तरञ्जित और कभी कभी मूत्रके नीचे चूर्णवत् पदार्थ दिखाई देता है। रोग जितना बढ़ता जाता है, गर्दन उतना ही लाल दीखने लगती है। नली और गलदेश लोहित, शुष्क और प्रदाहयुक्त, जिह्वा परिष्कार रक्तवर्ण, मसृण और कण्टकशून्य, अन्तको ओष्ठ और नलीदेशके क्षतसे रस-निर्यास, चक्षु कोटरगत, किन्तु उज्ज्वल, समस्त अवयव क्षीण और क्षय, ललाट संकुचित इत्यादि लक्षण प्रकट होते हैं। धीरे धीरे रोगीके बाल उड़ जाते हैं, गुल्फ और पैरोंमें सूजन होती है तथा नींद भी अच्छी तरह नहीं आती। रोगीका शरीर सर्वदा अवसन्न रहता है, पर उत्तेजनाका ह्रास नहीं होता। अन्तमें उदरामय प्रबल हो जाता है। रोगी जल्दी जल्दी सांस लेता रहता है और वह इतना दुर्बल हो जाता है कि, बैठने या बात करनेका प्रयत्न करते ही उसकी मृत्यु हो जाती है। यह रोगी शेष अवस्थामें कभी कभी प्रलाप बकने लगता है। श्वासयन्त्रकी विकृतिके कारण क्षयज्वर उत्पन्न होता है, इसमें श्वासकृच्छ्र, निष्ठीवन, कास आदि उपसर्ग विद्यमान रहते हैं।

बहुतसे वैद्योंने क्षयज्वरकी तीन अवस्थाओंका वर्णन किया है,—१ इस अवस्थामें क्षुधा और बल सम्पूर्ण रूपसे नष्ट नहीं होता तथा ज्वरका विरामकाल मालूम हो सकता है। २, इस अवस्थामें नाड़ी द्रुत, ज्वरवृद्धिके समय अत्यन्त द्रुत, रोगीके हाथ पैरोंके तलवे अत्यन्त उष्ण और अवसाद-उत्पादक घर्मोद्गम लक्षित होता है, रोगी बहुत जल्दी कृश हो जाता है। ३, इस समय उदरामय, शरीरके निम्नांशमें शोथ, अत्यन्त कृशता और बलकी हीनता होती है।

क्षयज्वर नाना भागोंमें विभक्त है—पाकस्थलीगत, २ वक्षःस्थलीगत, ३ जननेन्द्रियगत, ४ रक्तगत, ५ त्वक्सम्बन्धीय इत्यादि।

१, पाकस्थलीगत (Gastri-hectic) क्षयज्वरमें पिपासा, मुख शुष्कता, अग्निमान्द्य, उद्गार, क्वातीमें जलन, आदि विद्यमान रहते हैं। धीरे धीरे रोगी अत्यन्त कृश हो जाता है, उसके शरीरका रंग पाण्डु और निःश्वासमें दुर्गन्ध आने लगती है। अन्तमें क्षयज्वरके समस्त लक्षण प्रकाशित होते हैं। बालकगण इस ज्वरसे पीड़ित होने पर उनको नकफुटन, श्लैष्मिक भेद और कृमिनिर्गम आदि रोग हो जाते हैं।

२, कण्ठनलीगत, कण्ठनली वा उपजिह्वामें प्रदाह, विभिन्न प्रकारका वायुनलीप्रदाह, फेंफड़ेमें किसी तरहकी विकृति अथवा वक्षावरणके परिवर्तनके कारण वक्षःस्थलगत (pectoral) क्षयज्वर उत्पन्न होता है।

३, अतिरिक्त मैथुन वा हस्तमैथुन और मूत्रयन्त्रकी उत्तेजनाके कारण जननेन्द्रियगत (genital) क्षयज्वर उत्पन्न होता है। जननेन्द्रियकी उत्तेजना वा फेंफड़ेकी पीड़ाके कारण जो ज्वर उत्पन्न होता है, उसमें हस्तमैथुनकी बलवती इच्छा होती है और इसी कारण यह ज्वर अत्यन्त दुःसाध्य है।

४, फेंफड़ा अथवा परिपाचक श्लैष्मिक झिल्लीसे रक्त निकलते रहनेसे रक्तस्रावयुक्त (hæmorrhagic) क्षयज्वर प्रकाशित होता है।

५, जिन कारणोंसे पाकस्थलीगत ज्वर उत्पन्न होता है, उसके साथ यदि शरीरमें उद्भेद हों, तो चिकित्सकगण उसको त्वक्गत (Cutaneous) क्षयज्वर कहते हैं।

इनके सिवा और भी एक प्रकारका क्षयज्वर साधारणतः देखा जाता है, जो मानसिक चिन्ताके कारण हुआ करता है। किसी प्रधान अभिलषित वस्तुके लिए सर्वदा चिन्ता करनेसे दुःखके कारण सर्वदा चिन्तामें मग्न रहने अथवा प्रिय वस्तुके अभावके कारण सर्वदा दुःख प्रकट करते रहनेसे जीवनी-शक्ति क्रमशः क्षय होती रहती है। दुर्बल व्यक्तिके उक्त अवस्थाको प्राप्त होने पर उसको यकृत् और फेंफड़ा आदि यन्त्र विकृत हो कर कठिन क्षयज्वर उत्पन्न करते हैं। शारीरिक मलिनता और कृशता, ज्वरकी विवृद्धि, अनिद्रा, दौर्बल्य, द्रुत निःश्वास, श्वासकृच्छ्र, कास, सुबह पसीना आना, फेंफड़े

ई॰सन्	सूर्यग्रहण	चंद्रग्रहण
७६७	३ अप्रे	१८ अप्रे, १२ अक्टू
७७८	२३ मा	——
७६९	५ मे	२५ फ, २२ अग
७७०	२५ अग	१४ फ, ११ अग
७७१	—	४ फ, ३१ जुला
७७२	५ जुला	१५ दि
७७३	२४ ज	९ जू, ४ दि
७७४	—	३० मे २३ न
७७५	४ मे, २९ अक्टू	१९ मे
७७६	---	८ अप्रे, २ अक्टू
७७७	१२ अप्रे	२८ मा, २१ से
७७८	२६ अग	१७ मा, ११ से
७७९	२१ फ, १६ अग	—
७८०	१० फ	२६ ज, २१ जुला
७८१	२९ ज, २६ जू	१५ ज, १० जुला
७८२	१५ जू	४ ज, २९ जू
७८३	२९ न	- --
७८४	१७ न	९ मे, २ न
७८५	१३ अप्रे	२९ अप्रे, २२ अक्टू
७८६	३ अप्रे, २७ से	१२ अक्टू
७८७	१६ से	८ मा, २ से
७८८	----	२६ फ, २१ अग
७८९	३१ ज	१४ फ, १० अग
७९०	२० ज	२६ दि
७९१	६ जुला	२० जू, १५ दि
७९२	२४ जू, १९ न	९ ज, ३ दि
७९३	८ न	३० मई
७९४	४ मई ?	१३ अक्टो
७९५	२३ अप्रे	९ अप्रे, ३ अक्टू
७९६	६ से	२८ मा, २१ से
७९७	३ मा	---
७९८	२० फ	५ फ, १ अग
७९९	९ फ, ७ जुला	२६ ज, २१ जुला
८००	२६ जू	१५ ज, १० जुला
८०१	१५ जू, ९ दि	-—
८०२	२९ न	२१ मे, १३ न
८०३	२५ अप्रे	१० मे, २ न
८०४	१३ अप्रे	२२ अक्टू
८०५	३ अप्रे, २६ से	१९ मा, १२ से
८०६	१६ से	८ मा, १ से
८०७	११ फ	२६ फ, २१ अग
८०८	३१ ज, २७ जुला	———
८०९	१६ जुला	५ ज, १ जुला, २५ दि
८१०	५ जुला, ३० न	२० ज, १४ दि
८११	———	१० जू
८१२	१४ मे	२३ अक्टो
८१३	४ मे	१९ अप्रे, १३ अक्ट
८१४	१७ से	८ अप्रे, ३ अक्टू
८१५	७ से	२८ मा
८१६	३ मा	१७ फ, ११ अग
८१७	१९ फ	५ फ, ३१ जुला
८१८	७ जुला	२६ ज, २१ जुला
८१९	२६ जू	——
८२०	९ दि	३१ मे, २३ न
८२१	५ मे	२० मे, १३ न
८२२	२५ अप्रे	९ मे, २ न
८२३	८ अक्टू	२४ से
८२४	२६ से	१८ मा, १२ से
८२५	———	८ मा, १ से
८२६	७ अग	—
८२७	२७ जुला	१७ ज, १२ जुला
८२८	१५ जुला	६ ज, १ जू, २५ दि
८२९	३० न	२० जू
८३०	२५ मे	४ न
८३१	१५ मे	३० अप्रे, २४ अक्टू
८३२	———	१८ अप्रे, १३ अक्टू
८३३	२५ मे, १७ से	८ अप्रे
८३४	१४ मा, ७ से	२७ फ
८३५	३ मा	१७ फ, १२ अग
८३६	१७ जुला	६ फ, ३१ जुला
८३७	१० ज, १६ जुला, ३१ दि	———
८३८	————	११ जू, ५ दि
८३९	१६ मे	१ जू, २४ न
८४०	५ मे, २९ अक्टू	२० मे, १३ न
८४१	२५ अप्र, १८ अक्टू	—--
८४२	———	३० मा, २३ सि
८४३	५ मा	१९ मा, १२ से
८४४	२२ फ	———
८४५	७ अग	२७ ज, २२ जुला
८४६	२७ जुला, २२ दि	१६ ज, १२ जुला

वमन, योनिदेशसे लगा कर उदरान्तमें वेदनाका अनुभव होता है। धीरे धीरे नाड़ीका स्पन्दन उग्र, जिह्वा मैली तथा थोड़ा थोड़ा पेशाब होता है।

यह ज्वर १०।११ दिन तक रहता है, कभी कभी रोगी पहले ही दिन मर जाता है।

आन्त्रिक सूतिकाज्वर (Typhoid puerperal fever)—यह रोग अत्यन्त सांघातिक और विभिन्न प्रकारसे प्रकट होता है। इस ज्वरका सामान्य आन्त्रिक ज्वरसे सम्बन्ध है और आन्त्रिक ज्वरमें जो लक्षण प्रकट होते हैं, इसमें भी वे ही दिखाई देते हैं।

इस रोगमें औषध प्रयोगसे विशेष फल नहीं होता। रोगी कुछ घंटोंमें, तथा कभी कभी दो चार दिनके अन्दर प्राण त्याग देता है। सूतिकाज्वर देखो।

स्वेदज्वर (Sweating or miliary fever)—शारीरिक अवसादके बाद अतिरिक्त पसीना निकल कर यह ज्वर सहसा प्रकट होता है। इस ज्वरमें शरीरमें प्रियङ्गुवत् उद्भेद होते हैं। स्वेदज्वर देशव्यापक और संक्रामक है। इस ज्वरका प्रभाव सब पर एकसा नहीं पड़ता, ज्वरका आक्रमण मृदु होने पर रोगी अवसाद, क्षुधाहानि, चक्षुमें वेदना और अत्यन्त दाहका अनुभव करता है। मुंह सुपकना तथा जीभ कांटेदार और मैली हो जाती है। कोष्ठबद्धता, मूत्रकी अल्पता, श्वासकष्ट, शिरःपीड़ा, नाड़ी चञ्चल और अत्यन्त द्रुत उद्भेदोंका निकलना आदि उपसर्ग होते हैं। धीरे धीरे रोगीको पीठसे लगा कर तमाम देहमें उद्भेद निकलते हैं। सर्वदा पसीनेसे शरीर भीगा रहता है और उसमेंसे सड़ी घास जैसी बदबू निकलती है। उपसर्ग १४।१५ दिनसे ज्यादा नहीं ठहरते, साधारणतः ८।९ दिनमें ही विलीन हो जाते हैं। ज्वरका आक्रमण प्रबल होने पर ज्वर आनेके कई घंटे पहलेसे रोगी अत्यन्त अवसाद और क्षुधाहानिका अनुभव करता है। शीत, रोमाञ्च, मस्तकघूर्णन, अत्यन्त मस्तकपीड़ा, विवमिषा, श्वासकृच्छ्र, मेरुदण्ड, प्रत्यङ्ग और उदरके उपरिभागमें वेदना, अत्यधिक पसेव आदि लक्षण प्रकट होते हैं। तन्द्रा, प्रलाप और आक्षेप उपस्थित होने पर रोगी मर जाता है। श्वास यन्त्रमें प्रदाह पेटमें रक्तरोध-जनित वेदना, छाती पर भार मालूम पड़ना, अत्यन्त चिन्ता, अन्त्र-प्रदाह कोष्ठबद्धता, गहरे रंगका पेशाब, पेशाबके समय यन्त्रणा इत्यादि लक्षण दिखलाई देते हैं। स्वेदज्वरका आक्रमण अत्यन्त प्रबल होने पर २४ घंटेसे लगा कर ४८ घंटे तक अथवा ३।४ दिनके अन्दर रोगी मर जाता है। ज्वर २।३ सप्ताह तक ठहरने पर रोगीके जीनेकी आशा की जा सकती है।

४३° से ६०° उत्तर अक्षांशके भीतर स्वेदज्वरका प्रताप देखा जाता है। आर्द्र और छायायुक्त स्थान, अत्यन्त उष्णता, अतिरिक्त तडिन्मिश्रित वायु आदिसे इस रोगकी उत्पत्ति होती है।

चिकित्सा—भिन्न स्थानमें अवस्थान, सामयिक स्थान-परिवर्त्तन, स्वेदज्वराक्रान्त व्यक्तिका संस्रव परित्याग आदि उपायोंका अवलम्बन करना उचित है। इस ज्वरके मृदु आक्रमणमें औषध प्रयोग करनेकी कोई जरूरत नहीं। आक्रमण प्रबल हो, तो जिससे आभ्यन्तरिक यन्त्र आदि विकृत हो कर नुकसान न पहुंचाने पावे—ऐसी औषध देनी चाहिये। रक्तमोक्षण करनेसे ज्वरका ह्रास हो सकता है। पलस्त्रा, सर्षपलेप, विरेचक औषध आदिका प्रयोग करना चाहिये। उद्भेद निकलनेके बाद रक्तमोक्षण करना विधेय नहीं। कोई कोई कहते हैं कि, प्रथमावस्थामें शीतल जलसिञ्चनसे लाभ हो सकता है। आर्द्रकारक पुल्टिश देनेसे तथा उपयुक्त किसी औषधकी पिचकारीसे उदरमें प्रविष्ट करानेसे उदरवेदना और मूत्रकृच्छ्र निवारित होता है। फेंफड़ेमें रक्ताधिक्य होने पर कोई कोई अधिक रक्तमोक्षण और वाह्यप्रलेप देनेकी व्यवस्था देते हैं। किन्तु एक बारगी अधिक रक्त मोक्षण करानेसे रोगीका अंग संकुचित हो जाता है। अवस्थाविशेषमें camphor, ammonia, serpentaria आदि देना चाहिये।

पथ्य—प्रथम ४।५ दिन तक रोगीको किसी प्रकारका बलकारक खाद्य न देवें; ईषदुष्ण जल और सामान्य तरल पदार्थकी व्यवस्था करें। ६ठे, ७वें वा ८वें दिन थोड़ासा सेमने वा कुक्कुटका जूस दिया जा सकता है। क्रमशः भोजनकी तौल बढाते रहना चाहिये। अन्यान्य संक्रामक रोगोंकी तरह स्वेदज्वरमें भी पथ्यके प्रति विशेष दृष्टि रखनी चाहिये।

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
९२९	१२ फ	२७ ज, २४ जुला
९३०	२९ जू	१७ ज, १३ जुला
९३१	१८ ज, १२ दि	७ ज,
९३२	३० न	२२ मा, १६ न
९३३	२७ अप्रे	१२ मे, ५ न
९३४	१६ अप्रे, ११ अक्ट	२ मे, २५ अक्टू
९३५	६ अप्रे, ३० से	——
९३६	१८ से	११मा, ४ से
९३७	१३फ	२८फ, २४ अग
९३८	३फ	१७ फ,
९३९	१९ जुला	८ ज, ४ जुला, २९ दि
९४०	८ जुला	२२ जू, १७ दि
९४१	२१ न	१२ जू
९४२	१७ मे, ११ न	——
९४३	७ मे	२३ अप्रे, १६ अक्टू
९४४	२५ अप्रे, २० से	११ अप्रे, ४ अक्टू
९४५	१६ मा, ८ से	२४ से
९४६	६ मा, २९ अग	——
९४७	—	८ फ, ४ अग
९४८	९ जुला	२८ ज, २३ जुला
९४९	२८ जू, २२ दि	१७ ज
९५०	१२ दि	३ जू, २७ न
९५१	८ मे	२३ मे, १६ न
९५२	२६ अप्रे	१२ मे, ४ न
९५३	१६ अप्रे	——
९५४	—	२२ मा, १५ से
९५५	—	११ मा, ४ से
९५६	१४ फ, ८ अग	२८ फ
९५७	२९ जुला	१८ ज
९५८	१९ जुला, १३ दि	८ ज, ३ जुला, २८ दि
९५९	२ दि	२३ जू
९६०	२८ मे	——
९६१	१७ मे	३ मे, २६ अक्टू
९६२	१ अक्टू	२२ अप्रे, १६ अक्टू
९६३	२० से	११ अप्रे, ५ अक्टू
९६४	१६ मा	—
९६५	६ मा	१८ फ, १५ अग
९६६	२० जुला	८ फ ४ अग
९६७	१० जुला	२८ ज
९६८	२[illegible] दि	१३ जू, ७ दि
९६९	१९ मे	३ जू, २६ न
९७०	८ मे	२३ मे, १५ न
९७१	२७ अप्रे, २२ अक्टू	—
९७२	१० अक्टू	१ अप्रे, २५ से
९७३	७ मा	२१ मा, १५ से
९७४	२५ फ, २० अग	११ मा ४ से
९७५	१० अग	—
९७६	२९ जुला	१९ ज, १४ जुला
९७७	१३ दि	८ ज, ३ जुला, २८ दि
९७८	८ जू	—
९७९	२८ मे	१४ मे, ६ न
९८०	१७ मे	३ मे, २६ अक्टू
९८१	३० से	२२ अप्रे, १६ अक्टू
९८२	२८ मा, २० से	—
९८३	१७ मा	१ मा, २६ अग
९८४	३० जुला	१९ फ, १४ अग
९८५	२० जुला	८ फ, ३ अग
९८६	१३ ज	२४ जू, १९ दि
९८७	—	१४ ज, ८ दि
९८८	१८ मे	२ जू, २६ न
९८९	८ मे, १ न	—
९९०	२१ अक्टू	१२ अप्रे, ७ अक्टू
९९१	१८ मा, १० अक्टू	१ अप्रे, २६ से
९९२	७ मा.	२१ मा, १४ से
९९३	२४ फ, २० अग	—
९९४	९ अग	३० जन, २५ जुला
९९५	४ ज	१९ जन, १४ जुला
९९६	—	८ जन
९९७	७ जून	२४ मे, १७ न
९९८	२८ मे, २३ अक्टू	१४ मे, ६ न
९९९	१२ अक्टो	३ मे, २७ अक्टू
१०००	७ अप्रे, ३० से	—
१००१	—	१२ मा, ५ से
१००२	११ अग	१ मा, २५ अग
१००३	३१ जुला	१९ फ, १४ अग
१००४	२[illegible] ज, २० जुला	४ जुला, २९ दि
१००५	१३ ज,	२४ जू, १८ दि
१००६	२९ मे	७ दि
१००७	१९ मे	—
१००८	—	२३ अप्रे, १७ अक्टू

विराम होता है, किन्तु शामको उपसर्ग बढ़ने लगते हैं। ७वें और ८वें दिन तक रोगको अत्यन्त वृद्धि होती है इस समय रोगी बहुत कष्ट पाता है। कभी कभी तन्द्रा प्रलाप और नाड़ीके स्पन्दनमें हीनता हो जाती है। इस अवस्थामें रोगी कभी कभी मर भी जाता है।

पहलेसे ही चिकित्सा करते रहनेसे यह ज्वर ७ दिनमें ही उपशान्त हो सकता है, किन्तु प्रथमावस्थामें उदासीनता करनेसे इस रोगसे प्रायः रोगीको ८ दिनमें मृत्यु हो जाती है। यह रोग कभी यकृत् स्फोटक पीड़ा और कभी स्वल्पविराम ज्वर वा सविराम ज्वरमें परिणत हो जाता है।

चिकित्सा—ज्वर प्रकट होनेसे पहले वमनकारक औषध, गरम स्वेद, विरेचक औषध, citrate of potash, nitrate of potash और muriate of ammonia व्यवहार करनेसे विशेष फल हो सकता है। प्रदाहिक और स्वल्पविराम ज्वरमें जो औषधें व्यवस्थेय हैं, पैत्तिकज्वरमें भी प्रायः उन औषधोंका प्रयोग किया जाता है।

श्लैष्मिकज्वर (Mucus fever)—इस ज्वरमें शीत, श्लेष्माका निकलना, पीठ और प्रत्यङ्गोंमें वेदना तथा समय समय पर कुछ विराम मालूम पड़ता है। अतिरिक्त परिश्रम, अवसाद, शारीरिक दुर्बलता, अत्यधिक रात्रिजागरण, निम्न और आर्द्र स्थानमें वास, धूप और आलोकका अभाव, अपरिच्छन्नता, खाद्यका अपचार, अपरिमित विरेचकादि सेवन, अल्पाहार आदि कारणोंसे इस ज्वरकी उत्पत्ति होती है। शीत और शरत्कालमें इसका प्रकोप देखा जाता है।

शरीरकी गुरुता और विषमता, क्षुधाहानि, वेदना, सुनिद्राका अभाव, अम्ल उद्गार, शीत आदि उपसर्ग ज्वर प्रकाशके पहले उत्पन्न होते हैं। धीरे धीरे अरुचि, कुछ पिपासा, वमन, उदरमें भारबोध, उदराध्मान, अन्त्रकी शिथिलता, जिह्वा श्लेष्मावृत, मुख विरस, निःश्वास दुर्गन्धयुक्त, इत्यादि लक्षण प्रकट होते हैं। कभी श्लैष्मिक उदरामय, कभी कोष्ठबद्धता और कभी कभी कृमि निकलते देखा जाता है। सन्ध्याकालमें ज्वरके वेगकी वृद्धि और उसी समय शरीर अत्यन्त उष्ण हो जाता है। क्रमशः शिरःपीड़ा, मानसिक विशृङ्खला, निद्राकर्षण, पर सोनेकी असमर्थता, विषाद, चाञ्चल्य सर्वाङ्गमें वेदना, कास कानमें शब्द, बधिरता आदि उपसर्ग उपस्थित होते हैं।

यह ज्वर दो दिनसे एक सप्ताह तक ठहरता है। शरीर और नाड़ीकी परीक्षा करनेसे समय समय पर ईषत् विरामकी उपलब्धि होती है। किन्तु विराम जितना स्पष्ट होता है, रोग भी उतना ही ज्यादा दिन तक ठहरता है। आरोग्यकालमें पुनः आक्रान्त होनेकी आशङ्का रहती है। इस समय पथ्य पर विशेष दृष्टि रखनी चाहिये, रोगीको आर्द्र और शीतल स्थानमें तथा बाहर हवामें जाने देना उचित नहीं। श्लैष्मिक ज्वर पुनः प्रकट होने पर सविराम वा स्वल्पविराम ज्वरमें परिणत हो सकता है।

चिकित्सा—कोई कोई कहते हैं कि, पहले वमनकारक औषध, फिर अफीम और नाइटार, उसके बाद कर्पूर और हाइड्रागिराम (Hydrargyrum cumcreta), तथा अन्तमें मृदु विरेचक, बलकारक औषध और खाद्यकी व्यवस्था करनी चाहिये। जब विराम हो तब सलफेट आफ् कुनैन सेवन करावें।

कालाज्वर (Black fever)—साधारणतः मलेरियासे इस ज्वरकी उत्पत्ति है। इस ज्वरमें समस्त शरीरका रङ्ग प्रायः काला हो जाता है। आसाममें इस ज्वरका प्रादुर्भाव अधिक होता है। इस ज्वरमें अधिकांश रोगी मर जाते हैं।

डेङ्गूज्वर (Dengue fever) अर्थात् लाल बुखार—करीब पचास वर्ष हुए होंगे, यह ज्वर भारतमें प्रचारित हुआ था। यह अमेरिकासे आया था। इस ज्वरमें समस्त शरीरमें अत्यन्त वेदना, साथ ही खांसी और सर्दी होती है। यह ज्वर ५।६ दिन तक ठहरता है, इसके बाद या तो रोगी आरोग्यलाभ करता है या मर जाता है।

इनफ्लुएञ्जा (Influenza)—यह भी यूरोपीय ज्वर है। उष्णप्रधान देशोंमें इसका उतना प्रकोप नहीं देखनेमें आता, जितना कि शीतप्रधान देशमें देखा जाता है। पहले हिन्दुस्तानमें यह ज्वर बिलकुल ही न था।

स्फोति, आंखोंके चारों ओर स्फोति, खाते हो कै हो कर निकल जाना, सामान्य चिन्ता वा परिश्रमसे मुखका रक्तवर्ण हो जाना, शारीरिक बलकी अत्यन्त हानि, पैरोंमें सूजन।

जेल-सिमियम—पहले शीत, फिर घर्म, दाह, स्नायविक चाञ्चल्य और मानसिक चिन्ता, भ्रमि, प्रकाश और शब्द असह्य।

इगनेसिया—सिर्फ शीतके समय पिपासा, बाह्य उत्ताप किन्तु अन्तरमें कँपकँपी बुखारके वख्त शरीर पर पीतपर्णिका।

इपिकाक—अत्यन्त शैत्य, अल्प उत्ताप वा अत्यन्त उत्ताप, अल्प शैत्य, उबासी आ कर ज्वरवृद्धि, मुंहमें ज्यादा लार जमना, विवमिषा और वमनप्राबल्य। ज्वरमें विस्फोटके समय पाकस्थलीगत परिवर्तन।

लाइकोपोडियम—दुपहरको ४ बजे ज्वरका ह्रास, पाकस्थली और उदरगह्वरमें सर्वदा भार मालूम पड़ना, कोष्ठबद्धता, मूत्र रक्तवर्ण।

नक्सभमिका—रातको या सुबह ज्वरकी वृद्धि, अधिक समय तक शीत, मुख शीतल और नीलाभ, हाथके नाखून नील, अत्यन्त उष्णता पित्तगत उपसर्ग, मेरुदण्डके नीचेकी हड्डीमें वेदना, ज्वरके समय शिरमें दर्द, भ्रमि, मुख रक्तवर्ण, वक्षस्थलमें वेदना और वमन।

ओपियम—तन्द्रा वा अतिरिक्त निन्द्रा, नासिकाध्वनि, मुंह फाड़ कर श्वासप्रश्वास लेना, निःश्वासप्रश्वासके समय नाकका बोलना, मस्तकमें रक्ताधिक्य, मुख रक्तवर्ण और स्फीत।

पलसाटिला—दुपहर और शामको ज्वरका अधिक आक्रमण, एक साथ शीत और दाह, श्लेष्मा वा पित्तवमन, जिह्वा मलावृत, प्रातःकालमें मुखकी विरसता, पेटमें जरासी पीड़ा होने पर ज्वरका पुनः आक्रमण, आँखोंमें आँसू, अग्निमान्द्य।

कुनैन-सल्फ—एक दिन बाद एक दिन शीत, तृष्णा, कंपकंपी और ओष्ठ, नाखून नीलाभ, मुख पाण्डु, अत्यन्त दाह, पिपासा।

रसटक्स—दिनके शेषांशमें ज्वरवृद्धि, प्रत्यङ्गादिमें आक्षेप, जंभाई, शरीरका कोई अंश शीतल और कोई उष्ण, दाहके समय पीतपर्णिकाका उद्भेद, अस्थिरता, अत्यन्त कास।

सेम्बुकस—अत्यन्त स्वेद, शीतके कारण शरीरमें गुलगुलो होना, शुष्ककास, हाथ पैर बरफ जैसे ठण्डे, मुख अत्यन्त गरम।

सिपिया—शीत, चक्षु और ललाटमें भार मालूम पड़ना, हाथ पैरोंमें शून्यता, भ्रमि पिपासाका अभाव, मूत्र पांशुवर्ण और दुर्गन्धयुक्त।

सल्फर शामको या रातको पहले पिपासा और अवसाद, फिर ज्वरका आक्रमण शैत्य, पिपासा और हाथ पैरोंमें दाह मालूम होना, तालूमें अत्यन्त दाह, दुर्बलता, प्रातःकालमें उदरामय।

भेराट अल्ब—अत्यन्त शैत्य किन्तु अन्तरमें दाह, घर्मावस्थामें अत्यन्त पिपासा, अत्यन्त बलकी हानि, वमन, उदरामय।

एक कम्बलको गरम पानीमें भिगो कर निचोड लें, फिर शैत्यावस्थामें रोगीको घुटनों तक उससे ढक दे और उसे गरम पानी पिलाते रहें।

दाहकालमें रोगीके शरीरमें गरम पानी सुखाते रहनेसे लाभ होता है। रातको रोगीके शरीरमें वायु प्रवेश न कर सके, इस बातका ध्यान रखना चाहिये।

२। स्वल्प-विरामज्वर।

एकोनाइट—शीत, अत्यन्त ज्वर, तृष्णा, मुख लाल, द्रुत निश्वास, जलके सिवा सब चीजोंसे अरुचि, पित्त वमन कुछ ललाईके लिये पेशाब यकृत्प्रदेशमें आक्षेप, चिन्ता और चञ्चलता।

ब्राओनिया—मस्तकमें चक्कर आना, दुर्बलता, वमन, कपालमें भारबोध, सिरमें दर्द, ओष्ठ शुष्क, जिह्वा श्वेत अथवा पीतमलावृत, खाद्य और पानीयमें तिक्त आस्वाद, मलबद्धता, मल शुष्क और कठिन, प्रदाहसूचक भाव।

कामोमिला—रोगी अत्यन्त क्रोधी, जिह्वा सफेद वा पीले मैलेसे आवृत, अरुचि, वमन, उदरस्फोति, मल सब्ज और पनीला, कामन्द रोगीको भाँति मुखकी आकृति।

चायना—शीत, तुरन्त ही शोष, शरीरका चर्म शीतल और नीलवर्ण, कानोंमें शब्द, भ्रमि, यकृत् और प्लीहादेशमें वेदना, आकृति म्लान, पाण्डु।

ई० सन	सूर्यग्रहण	चंद्रग्रहण
१२५३	१ मा, २५ अग	——
१२५४	१४ अग	४ फ, ३१ जुला
१२५५	१० ज, २० दि	२४ ज, २० जुला
१२५६	१८ दि	१३ ज, ८ जुला
१२५७	१३ ज	२३ न
१२५८	३ जू	१८ मे, १२ न
१२५९	—	८ मे, १ न
१२६०	१२ अप्रे, ६ अक्टू	——
१२६१	१ अप्रे	१८ मा, १० से
१२६२	—	७ मा, ३१ अग
१२६३	५ अग	२४ फ, २० अग
१२६४	३० ज	——
१२६५	१९ ज	{ ३ ज, ३० जू, २४ दि
१२६६	८ ज, ४ जू	१९ जू, १३ दि
१२६७	२५ मे	८ जू
१२६८	१३ मे, ६ न	२८ अप्रे, २२ अक्टू
१२६९	——	१८ अप्रे, ११ अक्टू
१२७०	२७ मा	७ अप्रे, ३० से
१२७१	१२ मा, ६ से	——
१२७२	२५ अग	१५ फ, १० अग
१२७३	२० ज, १४ अग	३ फ, ३१ जुला
१२७४	——	२३ ज, २० जुला
१२७५	२५ जू	४ दि
१२७६	१३ जू	२९ मे, २३ न
१२७७	२८ अक्टू	१८ मे, १२ न
१२७८	२३ अप्रे	८ मे
१२७९	१२ अप्रे	२९ मा, २१ से
१२८०	१ अप्रे	१८ मा, १० से
१२८१	१५ अग	७ मा ३१ अग
१२८२	५ अग	——
१२८३	३० ज	१४ ज, ११ जुला
१२८४	१९ ज. १५ जू	} ४ ज, २९ जू, २४ दि
१२८५	४ जू, २८ न	१८ ज
१२८६	१७ न	८ मे, २ न

ईसी सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
१२८७	७ न	२९ अप्रे, २२ अक्टू
१२८८	२ अप्रे	१८ अप्रे, ११ अक्टू
१२८९	२२ मा, १६ से	——
१२९०	५ से	२५ फ, २२ अग
१२९१	२५ अग	१४ फ, ११ अग
१२९२	२१ ज	४ फ, ३० जुला
१२९३	९ ज, ५ जुला	१५ दि
१२९४	२५ जू	६ जू, ४ दि
१२९५	८ न	३० मे, २३ न
१२९६	२८ अक्टू	१८ मे
१२९७	२३ अप्रे	९ अप्रे, २ अक्टू
१२९८	१२ अप्रे	२९ मा, २१ से
१२९९	२७ अग	१८ मा, ११ से
१३००	२१ फ, १५ अग	——
१३०१	९ फ	२५ ज, २१ जुला
१३०२	२६ जू	१४ ज, १० जुला
१३०३	१५ जू, ९ दि	४ ज, २९ जू,
१३०४	४ जू, २८ न	२० मे, १३ न
१३०५	१७ न	९ मे, २ न
१३०६	१३ अप्रे	२९ अप्रे २२ अक्टू
१३०७	३ अप्रे	——
१३०८	१५ से	८ मा, १ से
१३०९	११ फ	२५ फ, २१ अग
१३१०	३१ ज	१४ फ, ११ अग
१३११	२० ज, १६ जुला	२६ दि
१३१२	५ जुला	१९ जू, १४ दि
१३१३	—	९ जू, ३ दि
१३१४	१५ मे, ८ न	३० मे
१३१५	४ मे	२० अप्रे, १३ अक्टू
१३१६	२२ अप्रे	८ अप्रे, २ अक्टू
१३१७	६ से	२८ मा, २१ से
१३१८	३ मा	——
१३१९	२१ फ	५ फ, १ अग
१३२०	१० फ, ६ जुला	२६ ज, २० जुला
१३२१	२६ जू	१४ ज, १० जुला
१३२२	१५ जू, ९ दि	२४ न

आर्सेनिक—मुख पाण्डु और मृतदेहवत् शीर्ण, कपाल पर शीतल घर्म, सर्वदा ओष्ठ चूसना, ओठोंका फटना और सूख जाना, जिह्वा शुष्क नीलाभ वा कृष्ण तथा उसके बढ़ानेका असामर्थ्य। अत्यन्त पिपासा, प्राय: सर्वदा थोड़ा थोड़ा पानी पीना, तन्द्रा, प्रलाप और प्रत्यङ्गका कांपना, अत्यन्त अवसाद और यन्त्रणा, मृत्युभय और चाञ्चल्य।

एपिसमेल—अज्ञानावस्था, प्रलाप, जिह्वा निकलनेकी असमर्थता, जिह्वाक्षत, मुख और जिह्वामें शुष्कता, खोलनेमें कष्ट, पेटमें वेदना, कोष्ठकाठिन्य अथवा सर्वदा दुर्गन्ध युक्त, सरक्त श्लैष्मिक मल, वक्ष और उदरमें प्रियङ्गुवत् उद्भेद, अत्यन्त दुर्बलता।

आर्निका—उदासीनता, जिह्वा शुष्क और मध्यस्थलमें पांशु-चिह्न, मानसिक विशृङ्खला, सर्वाङ्गमें वेदना और उसके लिए पुन: पुन: करवट लेना, शय्या कठिन मालूम पड़ना, अनिच्छासे प्रस्राव।

लाइकोपोडियम—मुखश्री पीत और मृत्तिकावत्, जिह्वा शुष्क, कृष्ण और श्लेष्मावृत; प्रलाप, तन्द्रा, मुंह फाड़ कर प्रश्वास त्याग, अवसाद, गालोंका बैठ जाना; कपोलमें वर्त्तुलाकार रक्तवर्ण, मानसिक विशृङ्खला, उदरमें गुड़ गुड़ शब्द और भारबोध, इकले रहना होगा ऐसा भय, मूत्रमें रक्तवर्ण बालुकावत् पदार्थ, बांये करवटसे सोनेकी अनिच्छा, सो कर उठनेके बाद अत्यन्त प्रदाह, शामको ४ बजेसे ८ बजे तक अवस्था मन्द।

मारकिउरियस—अत्यन्त दुर्बलता, दाँतोंमें विकृत आस्वाद, मसूढ़ोंमें सूजन और क्षत, उदर और यकृत्में वेदना, घर्म, मल सफ और पीताभ; वर्षाकालमें तथा रातको उपसर्गोंकी वृद्धि।

फस एसिड—अत्यन्त उदासीनता, बोलनेकी अनिच्छा, प्रलाप, पेटमें गुड़ गुड़ शब्द, जलवत् उदरामय, नाड़ी दुर्बल और समय समय पर स्पन्दनहीनता।

क्याल्क कार्ब—छातीमें भड़कन, नाड़ीमें कम्पन, चिन्ता और चाञ्चल्य नैराश्य, निद्रित होने पर कुचिन्ता-के कारण जागरण, शुष्क कास, तीव्र उदरामय और मानसिक कष्ट।

कार्बो भेजिटेबलिस—मुख पाण्डु और सङ्कुचित; चक्षु कोटरगत, ज्योतिर्हीन और दर्शनशक्तिका ह्रास; जिह्वा शुष्क, कृष्णवर्ण और समय समय पर कम्प, जीवनी शक्तिका सङ्कोच उदरामय, अवसाद, दाह, शरीरका शेषभाग शीतल और घर्माक्त।

ओपियम्—मुख स्फीत, तन्द्रा, प्रलाप, चक्षु उन्मीलित, नाड़ी दुर्बल, अथवा शीघ्रगतिसम्पन्न, मूत्रहीन मलत्याग।

फसफरस—तन्द्रा, ओष्ठ तथा मुख शुष्क और कृष्णवर्ण, मानसिक वृत्तिका हीनभाव, अल्प प्रलाप, शीतल वस्तुकी अभिलाषा, पीत द्रव्य वमन, दुर्बलता, पेट खाली मालूम पड़ना।

ककिउलास—स्नायविक दुर्बलता, मानसिक विशृङ्खला, अस्पष्ट कथन, भ्रमि, विवमिषा, मस्तक और मुख गरम।

कलचिकम्—मुख सङ्कुचित, उदरमें वेदना, उदरामय, जिह्वा नीलवर्ण, शीतल निःश्वास।

जेलसिमियम—स्नायविक उपसर्ग, मस्तकमें अत्यन्त भारबोध, जिह्वा पीताभ, श्वेत वा पांशु, स्नायविक शैत्य, दांतोंमें दर्द, पिपासाका अभाव।

हमसेलिस—अत्यन्त रक्तस्राव, उदरगह्वर और ऊरुदेशमें वेदना, रक्तस्राव।

हाइओसियामस—मुख स्फीत और रक्ताभ, ओष्ठ जलेसे, अत्यन्त प्रलाप, वाक्शक्ति और ज्ञानका नाश, अत्यन्त चाञ्चल्य, शय्यासे कूदना और अन्यत्र जानेकी चेष्टा चक्षु रक्तवर्ण और कनीनिका घूर्णायमान, अङ्ग आक्षेप।

लाकेसिस—जिह्वा शुष्क, रक्तवर्ण अथवा अग्रभाग कृष्णवर्ण, ओठ फटे और रक्ताभायुक्त अचैतन्य, प्रलाप, स्पर्शासहिष्णुता, निद्राके बाद उपसर्गका आधिक्य। रोगी समझता है कि—मैं मर गया हूं और अन्त्येष्टिक्रियाका उद्योग हो रहा है।

ष्ट्रामोनियम—ज्ञानहानि, अनवरत कथन, सर्वदा उपाधानसे मस्तक उठाना, प्रलाप और अतिरिक्त जलपान, शय्यासे अन्यत्र जानेकी इच्छा, दन्तशर्करा ओष्ठमें क्षत, जलपानमें अनिच्छा, उदरामय, कृष्णवर्ण मल, दर्शन, श्रवण और वाक्शक्तिका ह्रास, बिना इच्छाके मूत्रत्याग।

पलसाटिला—पाकस्थलीगत विशृङ्खला, उष्णता और

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
१३९१	५ अप्रै	२० मा
१३९२	२४ मा	६ मा, २ से
१३९३	८ अग	२७ फ, २२ अग
१३९४	२८ जुला	—
१३९५	—	६ ज, २ जुला, २६ दि
१३९६	११ ज, ६ जू	२१ जू, १५ दि
१३९७	२८ मे	११ जू, ४ दि
१३९८	१६ मे, ९ न	२६ अक्टू
१३९९	२८ अक्टू	२० अप्रै, १५ अक्टू
१४००	२६ मा	९ अप्रै, ३ अक्टू
१४०१	१५ मा, ८ से	३० मा
१४०२	४ मा	१३ अग
१४०३	१८ अग	७ फ, २ अग
१४०४	—	२७ ज, २२ जुला
१४०५	१ ज, २६ जू	६ दि
१४०६	१६ जू	२ जू, २५ न
१४०७	३१ अक्टू	२२ मे, १५ न
१४०८	२६ अप्रै, १८ अक्टू	१० मे
१४०९	१५ अप्रै, ९ अक्टू	३१ मा
१४१०	४ अप्रै	२१ मा, १३ से
१४११	१६ अग	१० मा, २ से
१४१२	१२ फ, ७ अग	२२ अग
१४१३	१ फ	१७ ज, १३ जुला
१४१४	१७ जू	६ ज, ३ जुला २६ दि
१४१५	७ जू	२२ जू, १६ दि
१४१६	२७ मे, १९ न	५ न
१४१७	———	१ मे, २५ अक्टू
१४१८	६ अप्रै	२० अप्रै, १४ अक्टू
१४१९	२६ मा	१० अप्रै,
१४२०	१४ मा, ८ से	२९ फ, २३ अग
१४२१	२८ अग	१७ फ, १३ अग
१४२२	२३ ज	६ फ, २ अग
१४२३	८ जुला	१७ दि

ईस्वी सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
१४२४	२६ जू	१२ जू, ६ दि
१४२५	१० न	१ जू, २५ न
१४२६	७ मे	२१ मे
१४२७	२० अक्टू	११ अप्रै
१४२८	१४ अप्रै	३१ मा, २३ से
१४२९	३० अग	२० मा, १३ से
१४३०	१९ अग,	२ से
१४३१	१२ फ, ८ अग	२४ जुला
१४३२	२ फ, २७ जू	१० ज, १३ जुला
१४३३	१७ ज	६ ज, २ जुला २६ दि
१४३४	७ जू, ३० न	१६ न
१४३५	२० न	१२ मे, ६ न
१४३६	१६ अप्रै	३० अप्रै, २५ अक्टू
१४३७	५ अप्रै, ३० से	२० अप्रै, १४ अक्टू
१४३८	१९ से	११ मा, ३ से
१४३९	८ से	१ मा, २४ अग
१४४०	३ फ,	१८ फ, ११ अग
१४४१	२३ ज, १८ जुला	२७ दि
१४४२	७ जुला	२३ जू, १७ दि
१४४३	२७ जू	१२ जू, ७ दि
१४४४	१० न	३१ मे
१४४५	७ मे	—
१४४६	२६ अप्रै	११ अप्रै, ५ अक्टू
१४४७	१० से	१ अप्रै, २४ से
१४४८	५ मा, २९ अग	१२ से
१४४९	१८ अग	४ अग
१४५०	१२ फ,	२८ फ, २४ जुला
१४५१	२८ जू	१७ ज, १३ जुला
१४५२	१७ जू, ११ दि	७ ज, २७ न
१४५३	३० न	२२ मे, १६ न
१४५४	२७ अप्रै	१२ मे, ५ न
१४५५	१७ अप्रै, ११ अग	१ मे, २५ अग
१४५६	५ अप्रै	२२ मा
१४५७	१८ से	११ मा, ३ से

५ । सूतिका ज्वर ।

एकोनाइट्—गर्भाशयमें अत्यन्त वेदना, अत्यन्त पिपासा, स्पर्शज्ञानका आधिक्य, प्रश्वास क्लेश, मृत्युभय।

आर्सेनिक—अत्यन्त यंत्रणा, चाञ्चल्य और मृत्युभय, शीतल पानीयकी अभिलाषा, द्विप्रहर रात्रिके बाद ज्वर वृद्धि।

बेलेडोना—आकस्मिक वेदना; उदर-गह्वरमें अत्यन्त उष्णता, कराहना, सोते समय कूदना, मस्तकमें रक्ताधिक्य, प्रलाप, आलोक और शब्दसे अरुचि।

ब्राइओनिया—विवमिषा, अचैतन्य, कोष्ठकाठिन्य।

कामोमिला—जरायुमें प्रसववेदनावत् यंत्रणा, अस्थिरता, मूत्र अतिरिक्त तथा ईषत् रञ्जित, मस्तकमें उष्ण घर्म।

हायोसियामस्—प्रत्यङ्ग, मुख और नेत्रच्छद, चिड़चिड़ापन, बड़बड़ाना और बिछौने नोंचना उघाड़े रहनेकी इच्छा, सम्पूर्ण उदासीनता अथवा अतिरिक्त क्रोधन भाव।

इपिकाक—वामपार्श्वसे दक्षिणपार्श्वमें वेदनाका चलना फिरना, विवमिषा और वमन, जरायुसे गाढ़ा खून निकलना, सफ्ज और सजल मल।

क्रियोसोट—पेड़ूमें दाह, कराहना, गर्भाशयको विकृत अवस्था, जरायुसे रक्त (पीव) का निकलना, उदरगह्वरमें शीत।

लाकेसिस—जरायुमें स्पर्शासहिष्णुता, निद्राके बाद उसकी वृद्धि, गात्रचर्म कभी शीतल कभी उष्ण।

मारकिउरियस—पाकस्थली और उदरगह्वरमें स्पर्शासहिष्णुता, जिह्वा आर्द्र, अतिशय पिपासा और अतिरिक्त घर्म।

नक्सभोमिका—कोष्ठकाठिन्य, कानमें झनझनाहट शरीरमें भारीपन।

रस्टक्स—अस्थिरता, प्रत्यङ्गोंमें बलशून्यता, जिह्वा शुष्क और अग्रभाग लाल।

भेराट्र अल्ब—वमन, उदरामय, शरीरका प्रान्तभाग शीतल, मुख मृतवत् पाण्डु, घर्मसिक्त, प्रलाप, अत्यन्त अवसाद।

रोगिणीको तोशकके ऊपर सुलाना चाहिये। यंत्रणाके स्थानमें पतली पुल्टिश अथवा उष्ण स्वेद प्रयोग करें। प्रतिदिन २।३ बार गर्भाशय और योनिप्रदेशको कार्बोलिक एसिडसे धोना चाहिये। उसको निस्तब्ध रखें और उसके घरको विशुद्ध वायुसे परिपूर्ण रखें। प्राथमिक अवस्थामें लघु मण्ड और बार्लि, फिर जूस, दूध, डिम्ब, फल इत्यादिकी व्यवस्था दें।

६ । लोहित ज्वर।

एकोनाइट्—गात्र उष्ण, नाड़ी द्रुत अतिशय तृष्णा, अत्यन्त भय और मानसिक चिन्ता, विवमिषा और वमन।

अलानथस्—अत्यन्त मस्तकवेदना, प्रियंगुवत् उद्भेद, अतिरिक्त वमन, तन्द्रा और अस्थिरता।

एपिसमेल्—तीक्ष्ण पित्त, जिह्वा अतिशय लाल और क्षतयुक्त नासिकासे दुर्गन्धित श्लेष्मा निर्गम, गलक्षत, उदरगह्वरमें स्पर्शासहिष्णुता।

आर्सेनिक—अत्यन्त अवसाद, अत्यन्त यन्त्रणा, चाञ्चल्य और मृत्युभय, अत्यधिक पिपासा, निःश्वासकालमें घर घर शब्द, दुर्गन्धित उदरामय।

बाप्टिसिया—लाल रक्तवर्ण, रोमान्तीवत् उद्भेद, निःश्वास दुर्गन्धयुक्त, जिह्वा फटी और क्षतयुक्त, ईषत् प्रलाप, दांत और ओठोंमें शर्करा।

बेलेडोना—उद्भेद मसृण और गाढ़ रक्तवर्ण, जिह्वा श्वेतवर्ण और कण्टकयुक्त, मस्तिष्कमें रक्ताधिक्य और प्रलाप, निद्राकालमें चमकित भाव और कूदना।

कालकेरिया कार्ब—गलदेश स्फोत और कठिन, मुख पाण्डु और शोथयुक्त।

काम्फर—हताशकालमें गलेमें घर घर शब्द और गरम निःश्वास, ललाटमें उष्ण घर्म, उद्भेदोंका आकस्मिक विलीनभाव।

इपिकाक—विवमिषा, पित्तवमन, पेटमें अत्यन्त पीड़ा, गात्रकण्डूयन अनिद्रा, नैराश्य।

लाइकोपोडियम—तालूमें क्षत, मूत्रमें रक्तवर्ण पदार्थ, नासारोध, गलामें घर घर शब्द।

मिउरियटिक एसिड—बिस्तरे पर लोटना पोटना, नासिकासे पीव निकलना, शरीर पांशु और मुख रक्तवर्ण।

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चंद्रग्रहण
१५२६	१३ ज	२४ जू, १८ दि
१५२७	३० मे	१४ जू, ७ दि
१५२८	१८ मे, १२ न	——
१५२९	१ न	२३ अप्रे, १७ अक्टू
१५३०	२१ मा	१२ अप्रे, ६ अक्टू
१५३१	—	१ अप्रे, २६ से
१५३२	३० अग	——
१५३३	१० अग	६ फ, ४ अग
१५३४	१४ ज	३० ज, २५ जुला
१५३५	२ ज, ३० जू	——
१५३६	१८ जू	४ जू, २७ न
१५३७	७ जु	२४ मे, १७ न
१५३८	२३ अक्टू	१४ मे, ६ न
१५३९	१८ अप्रे, १२ अक्टू	—
१५४०	७ अप्रे	२२ मा, १६ से
१५४१	२१ अग	१२ मा, ५ से
१५४२	११ अग	१ मा, २५ अग
१५४३	३ फ	१६ जुला
१५४४	२४ ज	१० ज, ४ जुला, २९ दि
१५४५	९ जू	२४ जू, १८ दि
१५४६	२९ मे, २३ न	——
१५४७	१२ न	४ मे; २८ अक्टू
१५४८	८ अप्रे	२२ अप्रे, १७ अक्टू
१५४९	२९ मा	१२ अप्रे, ६ अक्टू
१५५०	१८ मा	——
१५५१	३१ अग	२० फ, १६ अग
१५५२	—	१० फ, ४ अग
१५५३	१४ ज	२५ जुला
१५५४	२८ जू	१५ जू, ९ दि
१५५५	१९ जू, १४ न	५ जू, २८ न
१५५६	२ न	२४ मे, १७ न
१५५७	२८ अप्रे, २२ अक्टू	——
१५५८	१८ अप्रे	२ अप्रे, २७ से
१५५९	—	२७ मा, १६ से
१५६०	२१ अग	१२ मा, ४ से
१५६१	१४ फ, ११ अग	२६ जुला
१५६२	—	२० जू, १६ जुला
१५६३	२० जू	९ ज, ५ जुला, २९ दि
१५६४	८ जू	—
१५६५	——	१५ मे, ८ न
१५६६	१९ अप्रे	४ मे, २८ अक्टू
१५६७	९ अप्रे	२३ अप्रे, १८ अक्टू
१५६८	२८ मा, २१ से	——
१५६९	——	३ मा, २६ अग
१५७०	५ फ	२० फ, १५ अग
१५७१	२५ ज, २२ जुला	१० फ, ५ अग
१५७२	१५ ज, १० जुला	२५ जू, १९ दि
१५७३	२९ जू, २४ न	१५ जू, ८ दि
१५७४	१३ न	४ जू, २८ न
१५७५	१० मे	——
१५७६	२८ अप्रे	१३ अप्रे, ७ अक्टू
१५७७	१२ से	२ अप्रे, २७ से
१५७८	——	२३ मा, १६ से
१५७९	२५ फ, २२ अग	——
१५८०	१५ फ	३१ ज, २६ जुला
१५८१	३० जू	१९ ज, १६ जुला
१५८२	२० जू, २५ दि	८ ज
१५८३	१४ दि	५ जू, २९ न
१५८४	१० मे	२४ मे, १८ न
१५८५	२९ अप्रे	१३ मे, ७ न
१५८६	१९ अप्रे, १२ अक्टू	——
१५८७	२ अक्टू	२४ मा, १६ से
१५८८	२६ फ,	१३ मा, ५ से
१५८९	१५ फ, ११ अक्टू	२ मा, २५ अग
१५९०	४ फ, २१ जुला	१७ जुला
१५९१	२० जुला, १५ दि	९ ज, ६ जुला, ३० दि
१५९२	३ दि	२४ जू, १८ दि

एकोनाइट्—शैत्य, चाञ्चल्य, पिपासा, स्कन्धमें अत्यन्त वेदना, मृत्युभय।

आर्निका—प्रत्यङ्गमें दर्द (Soreness), शरीर पर काले दाग, ग्रीवाकी पेशीमें अत्यन्त दुर्बलता।

बेलेडोना—अत्यन्त मस्तक वेदना, प्रलाप, भयङ्कर पदार्थ दर्शन, कनीनिका प्रसारित, दृष्टिभ्रम।

चायना सल्फर—अवसादके कारण चक्षु निमीलन, अत्यन्त अवसाद, मेरुदण्डमें वेदना।

सिमिसिफिउगा—मस्तकमें अत्यन्त वेदना, तालू कट कर गिरा जा रहा है ऐसा मालूम पड़ना, जिह्वा स्फीत, क्षणिक सङ्कोचन।

क्रोटलास—प्रबल शिर:पीड़ा, मुख रक्तवर्ण, प्रलाप, शरीर पर सर्वत्र लाल दाग, हृदयकी द्रुत गति, आँखोंका थोड़ा खुलना।

जेलसिमियम—मस्तककी पीछेको ओर वेदना, मत्तता मालूम होना, अक्षिपुटका सङ्कोचन, पेशिशक्तिका पूर्ण ह्रास, नाड़ी दुर्बल, श्वासकष्ट, विवमिषा, वमन।

लाइकोपोडियम—बेहोशी, प्रलाप, चैतन्यनाशक शिर:पीड़ा, नासारन्ध्रकी बीजनकी भाँति गति, नीचेके गाल सङ्कुचित, प्रत्यङ्ग अथवा सर्व शरीरमें खींचन।

ओपियम—चैतन्य विलोप, मृदु नि:श्वास, मस्तकमें रक्ताधिक्य, करोटिकाके पश्चाद्भागमें अत्यन्त भारबोध, नाड़ी अति द्रुत वा अति धीर, लोटना पीटना, अङ्गसङ्कोच, घर्मकालमें अवस्था मन्दतर।

इस ज्वरकी प्रथमावस्थामें घर्मोद्रेक कराने पर लाभ हो सकता है। रोगीको जलमें सुरासार मिला कर (जब तक रोगीको पसीना न आवे तब तक) आध घण्टा अन्तर थोड़ा थोड़ा सेवन कराना चाहिये। कोई कोई उष्ण जलसे धारास्नान और कम्बलसे शरीरको ढक कर घर्मोद्रेक करानेकी व्यवस्था देते हैं। Hypodermic injections of Pilocrapine (चौथाई ग्रेन) अथवा Fl Extra Tabarandi (१०से २० बूंद तक) का प्रयोग करने पर भी घर्मोद्रेक हो सकता है।

पथ्य—प्रथमावस्थामें लघु और बलकारक द्रव्य व्यवस्थेय है। पीछे धीरे धीरे जूस, दूध, डिम्ब आदिकी व्यवस्था करें।

८। वातरोगयुक्त ज्वर।

एकोनाइट्—एकज्वर, हृत्कम्प, वेदना, मानसिक चिन्ता।

आर्णिका—प्रत्यङ्गमें अत्यन्त वेदना, दूसरेसे मार खानेका भय, शरीरका पीड़ित अंश रक्तवर्ण, स्फीत और कठिन।

आर्सेनिक—दाह, तीव्रयन्त्रणा, घर्म, शैत्य, पिपासा।

बेलेडोना—अस्थिवेदना, सन्धिस्थानमें भड़कन और दर्द, तन्द्रा, अस्थिरता, चमकित भाव।

ब्राइओनिया—अरुचि, मुख शुष्क, पिपासा, कोष्ठ कठिन और पांशु।

कान्लोफ्राइलाम—कब्जी और अङ्गुलिग्रन्थिमें वातिक वेदना, अत्यन्त ज्वर, स्नायविक चाञ्चल्य।

कामोमिला—यन्त्रणाके कारण अत्यन्त उत्तेजित और क्रोधभाव, गण्डस्थलके एक तरफ लाल और दूसरे तरफ पाण्डु, अविरत यन्त्रणा, रात्रिको उपसर्गका प्रभाव।

केलिडोनियम्—शरीर स्फीत और प्रस्तरवत् कठिन, कोष्ठ मेषपुरीषवत्।

कलचिकम्—अग्निके पास भी शीत भाव, मूत्र अल्प और कृष्णवर्ण, घर्म दुर्गन्ध।

मारकिउरियस—अतिरिक्त घर्म, सञ्ज, उदरामय, पीड़ित अंश पांशुवर्ण।

सिगेलिया—ईषत् सञ्चालनके कारण श्वासकष्ट, हृत्कम्प, अत्यन्त चिन्ता।

सलफर तीव्र यन्त्रणा, तालुदेश अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त अवसाद।

वातज्वरयुक्त व्यक्तिके शरीर पर फ्लानेल व्यवहार करना चाहिये। ऐसा काम न करने देना चाहिये जिससे अधिक परिश्रम और सहसा घर्मरोध हो।

ज्वरकालमें रोगीको नरम शय्या और कम्बल पर सुलाना चाहिये, रुईसे शरीर ढक रखनेसे लाभ होता है। रोगीके घरमें जिससे अच्छी तरह वायु सञ्चालित हो सके, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये।

पथ्य—अनाजका श्वेतसार, साबू, उत्तम सुपक्व फल आदि लघुपाक द्रव्य। विशुद्ध जल, लेमनेड आदि पीनेको देना चाहिये। मादकद्रव्य निषिद्ध है।

ग्रहण :

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चन्द्रग्रहण
१६६१	३० मा	४ अप्रे, ८ अक्टू
१६६२	२० मा, १२ से	—
१६६३	—	२२ फ, १८ अग
१६६४	२८ ज, २१ अग	११ फ, ६ अग
१६६५	१६ ज	३१ ज, २६ जुला
१६६६	५ ज, २ जुला	६ जू, ११ दि
१६६७	२१ जू	६ ज, ३० न
१६६८	४ न	१६ मे, १८ न
१६६९	३० अप्रे	—
१६७०	१९ अप्रे	५ अप्रे, २९ से
१६७१	३ से	२५ मा, १८ से
१६७२	२२ अग	१३ मा, ७ से
१६७३	१२ अग	—
१६७४	—	२२ ज, १७ जुला
१६७५	२३ जू	११ ज ७ जुला
१६७६	११ जू, ५ दि	१ ज, २१ जू
१६७७	२४ न	१७ मे, ९ न
१६७८	२१ अप्रे, १४ न	६ मे, २९ अक्टू
१६७९	११ अप्रे	२५ अप्रे, २९ अक्टू
१६८०	३० मा	—
१६८१	१२ से	४ मा, २८ अग
१६८२	१ से	२१ फ, १८ अग
१६८३	२७ ज, २४ जुला	११ फ, ७ अग
१६८४	१२ जुला	२७ जू, २१ दि
१६८५	१ जू	१६ जू, १० दि
१६८६	—	६ जू, २९ न
१६८७	११ मे, ५ न	—
१६८८	३० अप्रे	१५ अप्रे, ९ अक्टू
१६८९	१३ से	४ अप्रे, २९ से
१६९०	३ से	२४ मा, १८ से
१६९१	२८ फ	—
१६९२	१७ फ	२ फ, २८ जुला
१६९३	३ जुला	२२ ज, १७ जुला
१६९४	२२ जू, १६ दि	११ ज, ७ जुला
१६९५	६ दि	२८ मे, २० न
१६९६	—	१६ मे, ९ न
१६९७	२१ अप्रे	६ मे, २८ अक्टू
१६९८	४ अक्टू	—
१६९९	२३ से	१५ मा, ९ से
१७००	१८ फ	५ मा, २९ अग
१७०१	७ फ, ४ अग	२२ फ, १८ अग
१७०२	२४ जुला	—
१७०३	१४ जुला, ८ दि	३ ज, २९ जू, २३ दि
१७०४	२७ दि	१७ जू, ११ दि
१७०५	—	—
१७०६	१२ मे	२८ अप्रे, २१ अक्टू
१७०७	२ मे	१७ अप्रे, ११ अक्टू
१७०८	१४ से	५ अप्रे, २९ से
१७०९	११ मा, ४ से	—
१७१०	२८ फ	१३ फ, ९ अग
१७११	१५ जुला	३ फ, २९ जुला
१७१२	३ जुला, २८ दि	२३ ज, १८ जुला
१७१३	१७ दि	८ जू, २ दि
१७१४	७ दि	२९ मे, २१ न
१७१५	३ मे	१८ मे, ११ न
१७१६	२२ अप्रे, १५ अक्टू	—
१७१७	—	२७ मा, २० से
१७१८	२ मा. २४ से	१६ मा, ९ से
१७१९	१८ फ	६ मा, २८ अग
१७२०	८ फ, ४ अग	—
१७२१	२४ जुला, १९ दि	१३ ज, ८ जुला
१७२२	८ दि	२ ज, २९ जू, १९ दि
१७२३	३ जू	—
१७२४	२२ मे	८ मे, १ न
१७२५	१२ मे, ६ अक्टू	२७ अप्रे, २१ अक्टू
१७२६	२५ से	१६ अप्रे, ११ अक्टू
१७२७	१५ से	—
१७२८	—	२५ फ, १९ अग

ज्वरकेशरी (सं० पु०) ज्वरस्य केशरी, ६-तत्। ज्वरनाशक औषधविशेष। इसकी प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—पारद, विष, सोंठ, पीपल, मरिच, गन्धक, हरीतकी, आँवला, बहेड़ा और जायफल, इन सबको समान परिमाणमें ले कर भृङ्गराजके रसमें मर्दन करें। पीछे १ गुञ्जा प्रमाण वटिका बनावें। बालकोंके लिए सरसोंके बराबर गोली बनानी चाहिये। अनुपान—पित्तज्वरमें चीनी, सन्निपात-ज्वरमें पीपल और जीरा।

ज्वरघ्न (सं० पु०) ज्वरं हन्ति हन-टक्। १ गुडुची, गुड़ुच। २ वास्तूक, बथुआ। ३ मञ्जिष्ठा, मजीठ। (त्रि०) ४ ज्वरनाशक।

ज्वरधूमकेतुरस (सं० पु०) ज्वरस्य धूमकेतुरिव यः रस। ज्वरनाशक औषधविशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारद, समुद्रफेन, हिङ्गुल और गन्धक, इन चीजोंको समान भागसे अदरकके रसमें तीन दिन घोंट कर २ रत्तीकी गोलियां बनावें। (भैषज्यर०)

ज्वरनागमयूरचूर्ण (सं० क्ली०) ज्वर एवः नाग तस्य मयूर इव यत् चूर्ण। ज्वरनाशक औषधविशेष। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली—लौह, अभ्र, सुहागा, ताम्र, हरताल, रांग, पारद, गन्धक, सहिंजनके बीज, हर्रे, आँवला, बहेड़ा, रक्तचन्दन, अतिविषा, वच, पाठा, हलदी, दारुहल्दी, उशीर, चीताकी जड़, देवदारु, पटोलपत्र, जीवक, ऋषभक, कालाजीरा, तालीशपत्र, वंशलोचन, कण्टकारिका फल और मूल, शठी, तेजपत्र, सोंठ, पीपल, मरिच, गुलञ्च, धन्या, कटकी, चित्रपर्पटी, मोथा, बला, बेलगरी और यष्टिमधु प्रत्येकका १ भाग, कृष्णजीरा चूर्ण ४ भाग, तालजटाक्षार ४ भाग, चिरायतेका चूर्ण ४ भाग, भाँगका चूर्ण ४ भाग, इन सब चूर्णोंको एकत्र कर लेना चाहिये। इसको १ मासासे लगा कर २ मासा तक सेवन करना चाहिये। इसके सेवनसे नाना प्रकार-का विषमज्वर, दाहज्वर, शीतज्वर, कामला, पाण्डु, प्लीहा, शोथ, भ्रम, तृष्णा, काश, शूल, यकृत् आदि रोग प्रशमित होते हैं। इसको १ मासा वा २ मासा शीतल जलके साथ सेवन करनेसे असाध्य सन्ततादि ज्वर, त्वयज ज्वर, धातुस्थज्वर, कामज और शोकजज्वर, भूताविशज्वर अतिचारजज्वर दाहज्वर, शीतज्वर, चातुर्थिकज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर, प्लीहाज्वर, उदरी, कामला, पाण्डु, शोथ, भ्रम, तृष्णा, काश, शूल, चय, यकृत्, गुल्मशूल, आमवात और पृष्ठ, कटी, जानु और पार्श्वस्थ वेदना का विनाश होता है। (भैषज्यर०)

ज्वरनाशन (सं० पु०) पर्पटक, खेतपापड़ा।

ज्वरभैरवचूर्ण (सं० क्ली०) ज्वरस्य भैरव-इव नाशकत्वात् चूर्ण। ज्वरनाशक औषधविशेष। इसको प्रस्तुत प्रणाली—सोंठ, बला, उदुम्बर, नीमछाल, दुरालभा, हर्रे, मोथा, वच, देवदारु, कण्टकारी, काकड़ासींगी, शतमूली, चित्रपर्पटी, पीपलमूल, ग्वालककड़ीकी जड़, कुड़, शठी, मूर्वामूल, पीपल, हलदी, दारुहल्दी, लोध, रक्त चन्दन, घण्टापारुलि, इन्द्रजव, कुटजछाल, यष्टिमधु, चीतामूल, सहिंजनके बीज, बला, अतिविषा, कटकी, ताम्रमूली, पद्मकाष्ठ, अजमायन, शालपर्णी, मरिच, गुलञ्च, बेलगरी, बाला, पञ्चपर्पटी, तेजपत्र, गुड़त्वक्, आवला, पिठवन, पटोलपत्र, शोधित गन्धक पारद, लौह, अभ्र और मनःशिला इन सबका चूर्ण समभाग, उसमें समुदाय चूर्णको समष्टिसे आधा चिरायतेका चूर्ण भलीभांति मिश्रित करना चाहिये। दोषके बलाबलका विचार कर १ मासासे ४ मासा तक सेवन किया जा सकता है। यह चूर्ण सब तरहके यकृत्, प्लीहा, अन्त्रवृद्धि, अग्नि-मान्द्य, अरोचक, रक्तपित्त आदि रोगोंमें शीघ्र आराम पहुंता है। यह विषमज्वरको अति उत्कृष्ट औषध तथा पाण्डु आदि विविध रोगनाशक है। (भैषज्यर०)

ज्वरभैरवरस (सं० पु०) ज्वर भैरव हर यः रसः। ज्वर-नाशक एक औषध। इसको प्रस्तुत प्रणाली—त्रिकटु, त्रिफला, सुहागेका फूल, विष, गन्धक, पारद और जाय-फल इन सबको बराबर बराबर ले कर गूमेके रसमें एक दिन घोंट कर १ रत्तीकी गोलियाँ बनावें। अनुपान—पानका रस। पथ्य—मूंगको दाल और द्राक्षा। इससे सान्निपातिकज्वर आदि रोग निवारित होते हैं।

(भैषज्यर०)

ज्वरमातङ्गकेशरिरस (सं० पु०) ज्वर एव मातङ्गः तत्र केशरोव। ज्वरको आराम करनेवाली एक दवा। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली—पारद, गन्धक, हरिताल, स्वर्ण-माक्षिक, सोंठ, पीपल, मरिच, हर्रे, यवक्षार, सज्जो, सेंधा

ग्रहण

ई० सन्	सूर्यग्रहण	चंद्रग्रहण
१७९७	२४ ज०	८ ज०, ४ दि
१७९८	८ न	२८ मे, २३ न
१७९९	—	—
१८००	२४ अप्रे	१ अप्रे, २ अक्ट०
१८०१	१३ अप्रे, ८ से	३० मा, २२ से
१८०२	२८ अग	१९ मा, २१ से
१८०३	१७ अग	—
१८०४	११ फ	२६ ज. २२ जुला
१८०५	२६ जू	१५ ज, ११ जुला
१८०६	१६ जू १० दि	५ ज, ३० जू
१८०७	६ ज०, २९ न	२१ मे, ५ न
१८०८	१८ न	१० मे, ३ न
१८०९	—	३० अप्रे २३ अक्ट०
१८१०	४ अप्र	—
१८११	—	१० मा, २ से
१८१२	—	२७ फ, २२ अग
१८१३	१ फ,	१५ फ, २२ अग
१८१४	२१ ज, १७ जुला	२६ दि
१८१५	७ जुला	२१ ज०, १६ दि
१८१६	१९ न	१० अप्रे, ४ दि
१८१७	१६ मे, १ न	३० मे
१८१८	५ मे,	२१ अप्रे, १४ अक्ट०
१८१९	२६ अप्रे, १९ से	१० अप्रे, ३ अक्ट०
१८२०	७ से	२९ मा, २२ से
१८२१	४ मा	—
१८२२	—	६ फ, ३ अग
१८२३	११ फ, ८ जुला	२६ ज, २३ जुला
१८२४	२६ ज०, २० दि	१६ ज, ११ जुला
१८२५	१६ ज०	१ ज०, २५ न
१८२६	२९ न	२१ मे, १४ न
१८२७	२६ अप्रे	११ मे, ३ न
१८२८	१४ अप्रे, ९ अक्ट०	—
१८२९	२८ से	२० मा १३ से
१८३०	२३ फ	९ मा, २ से
१८३१	—	२६ फ, २३ अग
१८३२	२७ जुला	—
१८३३	१७ जुला	६ ज, २ जुला, २६ दि
१८३४	—	२१ ज०, १६ दि
१८३५	२७ मे, २० न	१० ज०
१८३६	१५ मे	१ मे, २४ अक्ट०
१८३७	४ मे	२० अप्रे, १३ अक्ट०
१८३८	—	१० अप्रे. ३ अक्टू
१८३९	१५ मा, ७ से	—
१८४०	४ मा	१७ फ, १३ अग
१८४१	२१फ, १८ जुला	६ फ, २ अग
१८४२	८ जुला	२६ ज, २२ जुला
१८४३	२१ दि	१२ ज०, ७ दि
१८४४	—	३१ मे, २५ न
१८४५	६ मे	२१ मे, १४ न
१८४६	२५ अप्रे, २० अक्टू	—
१८४७	३ अक्ट०	३१ मा, २४ से
१८४८	२७ से	१९ मा, १३ से
१८४९	२३ फ.	९ मा, २ से
१८५०	१२ फ, ७ अग	—
१८५१	२८ जुला	१७ ज, १३ जुला
१८५२	११ दि	७ ज, १ जुला, २६ दि
१८५३	—	२१ ज०
१८५४	—	१२ मे, ४ न
१८५५	१६ मे	२ मे, २५ अकट०
१८५६	२९ से	२० अप्रे, १३ अक
१८५७	१८ से	—
१८५८	१५ मा	२७ फ, २४ अग
१८५९	२९ जुला	१७ फ, १३ अग
१८६०	१८ जुला	७ फ, १ अग
१८६१	११ ज, ८ जुला, 31 दि	१७ दि
१८६२	२९ दि	१२ ज०, ६ दि
१८६३	१७ मे	२ ज०, २५ न
१८६४	१९ अक्ट०, ६ मे	—

ज्वराग्नि (सं० पु०) ज्वरं अग्निरिव। ज्वररूप अग्नि। इस का पर्याय—आधिमन्थु।

ज्वराङ्कुश (सं० पु०) कुशकी जातिकी एक घास जिसमें सुगन्ध होती है। यह घास उत्तर-भारतके कुमायूं गढ़वालसे ले कर पेशावर तक उत्पन्न होती है। यह चारेके काममें उतनी नहीं आती। इसको जड़में नीबू जैसी सुगन्ध पाई जाती है। ज्वराङ्कुशकी जड़ और डंठल द्वारा एक प्रकारका सुगन्धित तैल बनता है। इसका तैल शरबत आदिमें पड़ता है। ज्वराङ्कुशरस देखो।

ज्वराङ्कुशरस (सं० पु०) ज्वरस्य अङ्कुश इव यः रसः। ज्वर-नाशक एक औषध। प्रस्तुतप्रणाली—पारा, गन्धक और विष, प्रत्येकका २ मासे, धतूरेके बीज ६ मासे, त्रिकटु-चूर्ण २४ मासे, इन सबको एकत्र घोंट कर २।२ रत्तिकी गोलियां बनावें। अनुपान—नीबूके बीजोंकी गरी और अदरकका रस। इससे सब तरहका ज्वर नष्ट होता है।

२य प्रकार—रस १ भाग, गन्धक २ भाग, सुहागेका फूला २ भाग विष १ भाग, दन्तीबीज ५ भाग इनको एकत्र चूर्ण करें। अनुपान—१ मासा चीनी। औषध सेवन करने के बाद कुछ पानी पीना चाहिये। यह भेदिज्वराङ्कुश नामसे प्रसिद्ध है। यह ज्वराङ्कुश विशेष ज्वरनाशक है।

३य प्रकार—ताम्र १ भाग और हरिताल २ भाग इनको एकत्र वन करेलाके रसमें घोंट कर भूधरयन्त्रमें पाक करें। फिर सिजके गांदमें घोंट कर भूधरयन्त्रमें पाक करके उसको २।२ रत्तीकी गोलियां बना लें। अनुपान—अदरकका रस। इस औषधका सेवन करनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थक और शीतसंयुक्त विषमज्वर शीघ्र प्रशमित होता है।

४र्थ प्रकार—पारद २ तोला, गन्धक २ तोला, सोंठ, सुहागा, हरिताल और विष ११। तोला, इनको एक साथ घोंट कर भृङ्गराजके रसमें तीन दिन तक भावना दें, चौथे दिन १।१ रत्तीकी गोलियां बनावें। अनुपान—पीपलका चूर्ण और मधु। यह विषमज्वरका नाशक है।

५म प्रकार—मरिच, सुहागा, पारद, गन्धक और विष, इनको एकत्र घोंट कर १।१ रत्तीकी गोलियां बनावें। अनुपान—पानका रस। इससे आठो प्रकारका ज्वर नष्ट होता है।

६ष्ठ प्रकार—गन्धक, रोहितमत्स्य पित्त और विष प्रत्येकका ११। तोला; त्रिगुण हरितालके द्वारा जारित ताम्र २ तोला; इन चीजोंको एकत्र घोंटें और बिजौरा नीबूमें २१ बार भावना दे कर उसको १।१ रत्तीकी गोलियां बना लें। अनुपान—चीनी इससे भी आठ प्रकारका ज्वर नष्ट होता है। (भैषज्यर०)

ज्वराङ्गी (सं० स्त्री०) ज्वरं अङ्गति अङ्ग-अच् गौरादि-त्वात् ङीष्। भद्रदन्तिका, अंडीकी जातिका एक पेड़।

ज्वरातङ्क (सं० पु०) ज्वररोग।

ज्वरातीसार (सं० पु०) ज्वरयुक्तो अतीसारः। ज्वरयुक्त एक प्रकारका अतीसार रोग। यदि पैत्तिक ज्वरमें पित्त जन्य अतीसार अथवा अतीसाररोगमें ज्वर उपस्थित हो, तो दोष और दूष्यके साम्यभावके कारण उन मिलित रोगद्वयको ज्वरातीसार कहा जा सकता है। शुद्ध ज्वर और शुद्ध अतीसारके लिए जो औषधियां बतलाई गई हैं ज्वरातीसारमें उनकी व्यवस्था न देनी चाहिये, क्योंकि परस्परवर्द्धक हैं। ज्वरघ्न ओषधियोंमेंसे प्रायः सभी भेदक हैं, अतीसारकी औषधियां धारक है, इस-लिए ज्वरघ्न औषधके सेवनसे अतीसारकी वृद्धि और अतीसारकी औषधके सेवनसे ज्वरकी वृद्धि होती है। ज्वरातीसारीके लिए पहले लङ्घन और पाचक औषधि व्यवस्थेय है, क्योंकि विना रसके सम्बन्धके ज्वर वा अतीसारकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। लङ्घन और पाचन द्वारा रसका परिपाक हो कर रोगके बलका ह्रास हो जाता है।

(भैषज्यरत्नावली ज्वरातीसार) ज्वर देखो।

ज्वरान्तक (सं० पु०) ज्वरस्य अन्तक इव, ६ तत्। १ नेपालनिम्ब, चिरायता। २ आरग्वध, अमलतास।

ज्वरान्तकरस (सं० पु०) ज्वरस्य अन्तक इव यः रसः। ज्वरनाशक औषधविशेष। प्रस्तुत-प्रणाली—ताम्र, गन्धक, पारद, सौराष्ट्रमृत्तिका, स्वर्णमाक्षिक, लौह, हिंगुल, अभ्र, रसाञ्जन और स्वर्ण, इन सबको बराबर बराबर ले कर चूर्ण करें; फिर भूनिम्बादिके क्वाथमें ३ दिन भावना दे कर २।२ रत्तीकी गोलियां बना लें। अनुपान—मधु। इससे नाना प्रकारका ज्वर नष्ट होता है। (भैषज्यर०)

ज्वरापह (सं० स्त्री०) ज्वरं अपहन्ति नाशयति अप-

ई॰ सन्	सूर्यग्रहण	चं॰ ग्रहण
१८३३	२४ फ, २१ अग	—
१८३४	१४, फ, १० अग	३० ज, २६ जुला
१८३५	—	१९ ज, १६ जुला
१८३६	१६ जू	८ ज, ४ जुला
१८३७	२ दि	१८ न
१८३८	२२ न	१४ मे, ७ न
१८३९	१६ अप्रे	३ मे, २८ अकटू
१८४०	१ अकटू	२२ अप्रे
१८४१	२१ से	१३ मा, ५ से
१८४२	१० से	२ मा, २६ अग
१८४३	४ फ	२० फ, १५ अग
१८४४	२५ ज, २० जुला	२६ दि
१८४५	१४ ज, ६ जुला	२५ जू, १९ दि
१८४६	२९ जू	१४ जू, ८ दि
१८४७	२० मे	३ ज
१८४८	६ मे, १ न	२३ अप्रे, ८ अकटू
१८४९	२८ अप्रे	१३ अप्रे, ७ अकटू
१८५०	१२ से	२ अप्रे, २६ से
१८५१	१ से	—
१८५२	२५ फ, २० अग	१० फ, ५ अग
१८५३	१४ फ, ११ जुला	२६ ज, २६ जुला
१८५४	३० जू, २५ दि	१६ ज, १६ जुला
१८५५	२० जू १४ दि	२६ न
१८५६	२ दि	२४ मे, १८ न
१८५७	२३ अकटू	१३ मे, ७ न
१८५८	१६ अप्रे	३ मे
१८५९	२ अकटू	२४ मा, १७ से
१८६०	२० से	१३ मा, ५ से
१८६१	११ अग	२ मा, २६ अग
१८६२	४ फ, ३१ जुला	—
१८६३	२५ ज	६ ज, ६ जुला, ३० दि
१८६४	६ जुला, ४ दि	२५ जू, १६ दि
१८६५	२३ न	१४ जू
१८६६	२० मे, २२ न	४ मे, २९ अकटू
१८६७	६ मे	२४ अप्रे, १८ अकटू
१८६८	—	१३ अप्रे, २२ से, ६ अकटू
१८६९	१८ मा	—
१८७०	७ मा	२१ फ, १७ अग
१८७१	२५ फ, २२ जुला	१० फ ६ अग
१८७२	——	३० ज, २६ जुला
१८७३	४ ज, ३० जू, २४ दि	१० दि
१८७४	१३ दि	४ जू, २९ न
१८७५	११ मे	२५ मे, १८ न
१८७६	२६ अप्रे, २६ अक्टू	१३ मे
१८७७	१८ अप्रे	४ अप्रे, २७ से
१८७८	२ अक्टू	२४ मा, १६ से
१८७९	२६ फ	१३ मा, ६ से
१८८०	१६ फ	—
१८८१	३१ जुला	१७ जुला
१८८२	२० जुला, १५ दि	९ ज, ६ जुला, ३० से
१८८३	११ जू, ४ दि	२५ ज
१८८४	३० मे	—
१८८५	१२ न	४ मे, २८ अक्टू
१८८६	—	२४ अप्रे, १७ अक्टू
१८८७	२६ मा, २३ से	————
१८८८	१८ मे, ११ से	२७ अग
१८८९	—	२० फ, १७ अग
१८९०	२२ जुला	९ फ, ६ अग
१८९१	——	३० ज, ३१ दि
१८९२	२४ दि	१५ जू, ८ दि
१८९३	२१ मे	४ जू, २१ न
१८९४	१० मे, ३ न	२५ मे
१८९५	२८ अप्रे, २४ अक्टू	१५ अप्र
१८९६	१२ अक्टू	३ अप्रे, २७ से
१८९७	९ मा	१६ से
१८९८	२६ फ, २२ अग	—

डालियां और पत्ते डाल दिये। इसके बाद बहुत दूर चलने पर उन्हें जलागम नामकी एक नदी दिखाई दी। उन्होंने राजा सुरेश्वरप्रभसे २० हाथी मांगे और उनके जरिये नदीसे पानी ला कर सरोवरमें डाला तथा मछलियोंको खाद्य प्रदान किया। पीछे उन्होंने घुटने भर पानीमें खड़े हो कर परमेश्वरकी यथा-विहित अर्चना की और ऐसा वर मांगा—"मृत्युके समय जो आपका नाम सुनें, वह त्रयस्त्रिंश स्वर्गमें जन्म ले।" नमस्तस्मै भगवते रत्नशिखिने इत्यादि मन्त्र पढ़नेके बाद उन्होंने मछलियोंको बौद्धधर्मके कुछ गूढ़मतोंकी शिक्षा दी।

मछलियां उसी रातको मर कर पूर्वोक्त स्वर्गमें चली गईं। जलनान्तप्रमुख देवपुत्रगण सबसे पहले दश स,स्र मत्स्यरूपमें उक्त सरोवरमें वास कर रहे थे।

ज्वलनाश्मन् (सं० पु०) ज्वलनः अश्मा, नित्य-कर्मधा०। सूर्यकान्तमणि।

ज्वलन्त (सं० त्रि०) १ देदीप्यमान, दीप्त, प्रकाशमान, जलता हुआ। २ अत्यन्त स्पष्ट। जैसे—ज्वलन्त दृष्टान्त आदि।

ज्वलित (सं० त्रि०) ज्वल-क्त। १ दग्ध, जला हुआ। २ उज्ज्वल, दीप्तियुक्त, चमकता हुआ।

ज्वलिनी (सं० स्त्री०) ज्वल इनि-ङीप्। मूर्वालता, मुर्रा, मरोड़फली।

ज्वार (हिं० स्त्री०) भारत, चीन, अरब, अफ्रीका, अमेरिका आदिमें उपजाई जानेवाली एक प्रकारकी घांस। इसके बालके दाने मोटे अनाजोंमें गिने जाते हैं। सूखी जगह पर इसकी उपज अधिक है। (जुन्हरी देखो।)

ज्वारभाटा—प्रतिदिन समुद्रके जलकी उच्चता दो बार बढ़ती और घटती रहती है, इस प्रकारके चढ़ाव उतारको ज्वारभाटा कहते हैं। संस्कृत भाषामें ज्वारको वेला कहते हैं। समुद्रके तीरवर्ती अधिवासी प्रतिदिन इसको प्रत्यक्ष देखते हैं। बहुत प्राचीनकालसे हिन्दूगण समुद्र-जलकी ह्रासवृद्धिका पर्यवेक्षण करते आये हैं, उन्होंने इसका कारण चन्द्रको ही बतलाया है और तिथिविशेषमें जलकी न्यूनाधिकता भी देखी है। बहुतसे संस्कृतग्रन्थोंमें ज्वारका उल्लेख है और चन्द्रको ही उसकी उत्पत्तिका कारण कहा है। कालिदासने अपने रघुवंशमें लिखा है—

"महोदधेः पूर इवेन्दु दर्शनात् गुरुप्रहर्षः प्रबभूव नात्मनि।"

अर्थात्—चन्द्रके देखनेसे जिस तरह समुद्रका जल अपनी मर्यादा छोड़नेकी चेष्टा करता है, उसी प्रकार पुत्रके मुखको देख कर दिलीपका आनन्द भरी रूपी मर्यादामें न समाया।

पञ्चतन्त्रमें लिखा है—"पूर्णिमादिने समुद्रवेला चटति।"

और भी रामायणमें है—

"निवृत्तवेलासमये प्रसन्न इव सागरः।"

कुछ भी हो, स्थूल विषयमें और साधारण व्यवहारमें प्रयोजनीय विषयके लिए प्राचीन हिन्दुओंका यह ज्ञान पर्याप्त होने पर भी ज्वारकी उत्पत्ति गति और क्रिया आदिका सूक्ष्म तत्त्वविषय प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें सम्यक् रूपसे आलोचित नहीं हुआ है।

पाश्चात्य विद्वानोंके मतसे भी चन्द्र ही ज्वारभाटाका प्रधान कारण है। चन्द्रके आकर्षणसे पृथिवीस्थ समुद्रका जल उफनता है और उसीसे ज्वारकी उत्पत्ति होती है। परन्तु किस तरह चन्द्रका आकर्षण कार्यकारी होता है, इस विषयमें अभी मतभेद है।

ज्वारके विषयमें सम्यक् पर्यालोचना करनेके लिए कल्पना कीजिए कि पृथिवी गोलाकार और समग्रभाग एकस्तर जल द्वारा आच्छादित है। अब चन्द्र इसके किसी भी स्थानके ऊपरी भाग पर विद्यमान क्यों न हो, चन्द्रमण्डल पृथिवीपिण्ड और उसके जलभागको युगपत् आकर्षित करेगा। परन्तु चन्द्रका आकर्षण दूरत्वके वर्गानुसार ह्रास होता है। इसलिए पृथिवीका जो अंश चन्द्रकी तरफ परिवर्तित है, उस अंशका जलभाग-कठिन पृथिवीपिण्डकी अपेक्षा चन्द्रमण्डलके अधिकतर निकटवर्ती होनेके कारण पृथिवीपिण्डकी अपेक्षा अधिक बलसे चन्द्रकी तरफ आकर्षित होगा। चन्द्रके आकर्षणसे जब उस स्थानका जल ऊँचा होता है, तब पार्श्ववर्ती स्थानका जल उस स्थानकी ओर धावित होगा। फिर उस स्थानके विपरीत भागका पानी यदि पृथिवीपिण्डकी अपेक्षा दूरवर्ती हो, तो कठिन पिण्ड चन्द्रकी तरफ हट आवेगा और पानी पीछेकी तरफ गिर जायगा। इस कारण एक ही समयमें एकही आकर्षणसे पृथिवीके परस्पर दो विपरीत भागोंमें ज्वार होती है। किन्तु इन दोनों ज्वारोंकी उच्चता

गुटिका, कल्याणगुड, महाकल्याणगुड और कुष्माण्ड-कल्याणगुण आदि औषधिया भी प्रयोजनीय हैं। यदि ज्वर न रहे, तो रोज पानी और थोड़ा लवण मिला कर मठा पीना चाहिये। इनसे खूब फायदा पहुंचता है। बिना कुछ खाये हुए खाली पेटमें, कच्चे बेलको भूंज कर मिश्रीके साथ खाना चाहिये, इससे खूब फायदा होता है। इसमें रात्रि जागरण, मैथुन, स्नान, मलमूत्र-के वेगको रोकना, नस्य, तमाकू, परिश्रम, गेहूं, यव, कुम्हडा, लौकी, मधु या शहद, पान, ईख आम सुपारी लहसुन, दूध, गुड, काञ्जीवढक आदि नहीं खाना चाहिये, क्यों कि ये पदार्थ इस रोगके लिए बहुत हानिकारक होते है। ष्तांसार देखो।

ग्रहणीकपर्दपोट्टली—एक औषध। कौडीको भस्म, पारा, गन्धक, लोहेको चूर और सुहागा, इन सबको समान भागसे ले कर सिज्रिमें एक दिन तक (खल्हड़में) पीस कर गोलियाँ बनानी चाहिये। इसीका नाम 'ग्रहणी कपर्दपोट्टली' है। यह वातज ग्रहणीरोगमें सेवनीय है। (रसेन्द्रसार०)

ग्रहणीकपाट—१ एक प्रकारकी दवा। समान पारा और गन्धककी बुकनी बना कर अदरखके रसमें भिगो दीजिये। फिर उसमें दुगुणी कुटजकी छालकी राख मिला कर ४ रत्तीके तौलकी गोलियाँ बना लें। इसीका नाम 'ग्रहणीकपाट' है। यह बकरीके दूध, कुटजके काढे या दहीके साथ दो रत्तीसे लगा कर १० रत्ती तक खाई जाती है और १० रत्तीसे फिर क्रमश: घटाई जाती है। इसके सेवन करनेसे ग्रहणीरोग शान्त हो जाता है। (रसेन्द्रसार०)

२ लोहा, पारा, हरताल, स्वर्णमाक्षिक, सुहागा प्रत्येक १२ तोला, कौडीकी भस्म ४० तोला, गन्धक १६ तोला, इनको जंबीर नीबूके रसमें घोट कर पुटपाक बनता है। इसके सेवन करनेसे ग्रहणी, गुल्म, क्षय, कुष्ठ और प्रमेह ये रोग अच्छे हो जाते है।

३ पारा एक भाग, अभ्र (अभ्रक) दो भाग, गन्धक तीन भाग, इनको काकजङ्घाके रसमें तीन दिन रख कर जयन्ती, भृङ्गराज और जंबीर नीबूके रसमें एक दिन घोटना चाहिये, फिर गन्धकके बराबर यवक्षार और सुहागा दे कर अण्डीके तेलके साथ पुटपाक करना चाहिये। बादमें गिलोय, सेमल और भाङ्गके रसमें पुन: घोट कर आधे तोलेकी गोलियाँ बनानी चाहिये। इसीका नाम ग्रहणीकपाट है। यह मरिचचूर्ण और मधुके साथ सेवनीय है। इससे ग्रहणी रोगका प्रतीकार होता है।

४ चाँदी, मोती, सुवर्ण और लौह प्रत्येकका एक भाग गन्धक दो भाग और पारा तीन भाग, इनको कैथ-के पत्तेके रसमें घोंटना चाहिये; फिर गाढ़ा होने पर मृगशृङ्गभस्मके साथ सभारी पुटपाक करना चाहिये। बादमें वद्यालिका (बरियारा)-के रसमें सातवार, लट-जीराके रसमें तीनबार, लोध, अतिविषा मुस्तक, धावई-के फूल और इन्द्रयवके काढेमें तीन तीन बार भावना दे कर एक मासेकी गोलियां बनानी चाहिए। यह भी एक प्रकारका ग्रहणीकपाट है। यह अग्निवर्द्धक होता है। गोलमिचके साथ या शहदके साथ सेवन करनेसे सब तरहका अतीसार और ग्रहणीरोग दूर हो जाता है। (रसेन्द्रसार०)

ग्रहणीकपाटरस—एक प्रकारका औषध। पारा, गन्धक, जायफल, लवङ्ग प्रत्येकका अर्धतोला एकत्र चूर्णकर सूर्यावर्त्त, बेल, पानीफलके पत्तेके रससे भावना दे कर सूर्योत्तापमें सुखा ले और तब दो रत्ती परिमित हरएक गोली प्रस्तुत करें। यह बिल्वपत्र रसके साथ सेवन कर-नेसे ग्रहणी, अतिसार, शोथ और ज्वर इत्यादि रोग नाश हो जाते है।

ग्रहणीगजेन्द्रवटिका—एक तरहका औषध। पारा, गन्धक, लोह, सोहागा, शङ्ख, हिङ्गु, शटी, तालिशपत्र, मोथा, धान्यक (धनिया), जीरा सैन्धवलवण, धातकी, प्रति-विषा, शुण्ठी, गृहधूम (झोल) हरीतकी, रक्तचन्दन, तेजपत्र, जायफल, लवङ्ग, दालचीनी, इलायची, वाला (वालक), बिल्वशलाटु, मेथी और भाङ्ग समान भाग ले कर छागदुग्धमें मर्दन कर दो मासा परिमाणकी प्रत्येक गोली बनावें। इसका सेवन करनेसे नाना प्रकारकी ग्रहणी, ज्वर, अतिसार, शूल, गुल्म, अम्लपित्त, कामला, हलीमक, कण्डु, कुष्ठ, विसर्प, गुदभ्रंश और क्रिमि प्रभृति रोग नाश होते है। यह बलकर, अग्निवर्धक और रसायन है।

आकार धारण करती है। इसका एक शीर्ष सर्वदा चन्द्रकी तरफ और दूसरा उससे ठीक विपरीत दिशामें रहता है। इस अंडेका गुरुव्यास लघुव्यासकी अपेक्षा प्रायः ५८ इंच अधिक है, इसलिए सूर्य शक्तिके द्वारा उत्पन्न अण्डाकारका गुरुव्यास लघुव्यासकी अपेक्षा प्राय: २५.७ इंच वृहत्तर होगा।

अमावस्या और पूर्णिमाके दिन उनका प्रायः योगफल द्वारा और अष्टमीके दिन वियोगफल द्वारा वास्तविक ज्वार उत्पन्न होती है, अर्थात् पूर्णिमा और अमावस्याकी ज्वार केवल चन्द्रशक्ति द्वारा उत्पन्न ज्वारसे ७/५ गुनी तथा अष्टमीकी ज्वार चन्द्रद्वारा उत्पन्न ज्वारसे ३/५ गुनी होती है। इसलिए पूर्णिमा-ज्वार और अष्टमी ज्वारका अनुपात प्राय: १२:५ अर्थात् ढाई गुनेसे भी अधिक हुआ।

ऊपर लिखे हुए प्रमाणों द्वारा मेरुप्रदेशद्वयमें ज्वार असम्भव है, क्योंकि मेरुसे लगातार जलराशि विषुवमण्डल पर ज्वारके स्थानमें धावित हो रही है और के बिन्दुमें ख बिन्दुकी अपेक्षा चन्द्रका आकर्षण अधिक कार्यकारी होनेके कारण आह्निक-ज्वार उलटी-ज्वारकी अपेक्षा प्रबल होगी। किन्तु नाना कारणोंसे वैसा देखनेमें नहीं आता। इसके कारण क्रमशः लिखे जाते हैं।

पूर्वोक्त द्वीप यदि विषुवरेखाके दोनों प्रान्तोंमें बहुत दूर तक विस्तृत हो, तो ज्वार-तरङ्ग द्वीपकूलमें प्रतिहत हो कर उत्तर और दक्षिण दिशामें मेरु-प्रदेशकी तरफ अग्रसर होती है तथा द्वीपके दोनों प्रान्तोंको घेर कर दूसरी तरफ यथाक्रमसे दक्षिण और उत्तरकी ओर विषुवरेखाकी तरफ समान गतिसे अग्रसर होती है। इस तरह विषुवरेखासे बहुदूरवर्ती सागर उपसागरादिमें भी महासागरकी ज्वार-तरङ्गें व्याप्त हो जाती हैं।

अमावस्या और पूर्णिमाके दिन चन्द्र और सूर्य मिल कर ज्वारकी उत्पत्तिमें सहायता देते हैं, इसलिए ज्वार अत्यन्त प्रबल होती है। किन्तु अष्टमीके दिन उनके परस्पर प्रतिकूल कार्य करनेसे ज्वार उतनी प्रबल नहीं होती। क्रमशः अमावस्या और पूर्णिमा जितनी निकटवर्ती होती जाती हैं, उतनाही ज्वारका परिमाण बढ़ता जाता है। और भी देखा जाता है कि, पृथिवी और चन्द्रका भ्रमणपथ सम्पूर्ण वृत्ताकार न होनेसे पृथिवीसे चन्द्र और सूर्यका दूरत्व सर्वदा समान नहीं रहता। चन्द्र और सूर्यके नीचे अर्थात् पृथिवीके निकटस्थ स्थानमें रहते समय अमावस्या वा पूर्णिमाकी जो ज्वार होती है, उसकी उच्चता औरोंसे अधिक होती है। परन्तु चन्द्र सूर्यके दूरतम स्थानमें रहनेसे ज्वार अल्प उच्च होती है।

विषुवरेखासे चन्द्र आदिका दूरत्व तथा चन्द्र-सूर्यकी अवनति होती है अर्थात् विषुवमण्डलसे दूरत्वके कारण भी ज्वारभाटामें कमी-बेशी हुआ करती है। ज्वार-तरङ्गद्वयके दो शीर्षस्थान परस्पर विपरीत दिशाओंमें रहते हैं। अब यदि किसी स्थानके अक्षान्तर और विषुवरेखासे चन्द्रका कौणिकदूरत्व समान और दोनों विषुवरेखाके एक पार्श्वस्थ हों, तो चन्द्रके किसी भी समय उस स्थानके मस्तकके ऊपर आनेसे उस स्थानमें ज्वार तरङ्गका एक शीर्ष होगा। यह पृथिवीकी आह्निकगतिके द्वारा उस स्थानमें प्राय: १२ घण्टे बाद चन्द्र जिस देशान्तरमें अवस्थित हो, उससे ठीक विपरीत देशान्तरमें उपस्थित होगा। किन्तु उस समय ज्वारतरङ्गका अन्य शीर्ष अन्य गोलार्द्धमें पूर्वोक्त स्थानसे उसके अक्षान्तरसे दूनी दूरी पर अवस्थित होगा। इसके लिए उलटी ज्वारकी ऊँचाई उस जगह बहुत कम होगी। इस तरह चन्द्र और वह स्थान जब विषुवरेखाके दोनों पार्श्वमें आ जायगा, तब आह्निकज्वार बहुत कम और उलटी ज्वार बहुत ऊँची होगी। विषुवरेखाके किसी स्थानमें १२ घंटा १४ मिनट अन्तर प्रायः समानभावसे ज्वार होती है।

यूरोपीय विद्वान् अनेक तरहकी परीक्षाओं द्वारा भारत महासागर और आटलाण्टिक महासागरकी ज्वारसे भलीभांति परिचित हो गये हैं। इन दो महासागरोंमें भिन्न भिन्न समयमें भिन्न भिन्न स्थानों पर सर्वोच्च ज्वारका काल पर्यवेक्षण द्वारा स्थिर होता है, ज्वार-तरङ्ग अष्ट्रेलिया-द्वीपके दक्षिणस्थ महासागरमें उत्पन्न हो कर क्रमसे पश्चिमकी बङ्गोपसागर और पारस्य उपसागरकी तरफ धावित होती हैं। दाक्षिणात्यके मलबार और करमण्डल दोनों उपकूलोंमें ज्वार समानतासे अग्रसर होती रहती है। इस प्रकारकी ज्वार-तरङ्ग उत्पन्न होनेके प्रायः २०।३० घंटे बाद वह गङ्गा वा सिन्धु नदीके मुहानेमें

(क) ग्रहदृष्टिचक्र।

स्थान	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	वृहस्पति	शुक्र	शनि	राहु
१म	०	०	०	०	०	०	०	०
२य	०	०	०	०	०	०	०	४५
३य	१५	१५	१५	१५	१५	१५	६०	३०
४र्थ	४५	४५	६०	४५	४५	४५	४५	३०
५म	३०	३०	३०	३०	६०	३०	३०	६०
६ठा	०	०	०	०	०	०	०	३०
७म	६०	६०	६०	६०	६०	६०	६०	६०
८म	४५	४५	६०	४५	४५	४५	४५	३०
९म	३०	३०	३०	३०	६०	३०	३०	६०
१०	१५	१५	१५	१५	१५	१५	६०	४५
११श	०	०	०	०	०	०	०	०
१२श	०	०	०	०	०	०	०	६०

(ख) ग्रहदृष्टिचक्र।

ग्रहर्क स्थान	रवि	चंद्र	मङ्गल	बुध	वृहस्पति	शुक्र	शनि
१म	६०	६०	६०	६०	६०	६०	६०
२य	०	०	०	०	०	०	०
३य	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०
४थ	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
५म	४५	४५	४५	४५	४५	४५	४५
६म	०	०	०	०	०	०	०
७म	६०	६०	६०	६०	६०	६०	६०
८म	०	०	०	०	०	०	०
९म	४५	४५	४५	४५	४५	४५	४५
१०म	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
११श	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
१२श	०	०	०	०	०	०	०

नीलकण्ठताजकमें वर्षप्रवेशकालमें ग्रहोंको दृष्टिका उल्लेख दूसरी तरहसे है। उसके अनुसार (ख) चिह्नित ग्रहदृष्टि-चक्र दिया गया है। इसके दूसरे नियम (क) चिह्नित ग्रहदृष्टिचक्रके समान ही हैं। वर्षप्रवेशमें (ख) चिह्नित चक्रके अनुसार ग्रहोंको दृष्टिसे फलाफल निरूपण किया जाता है।

इसरे विवरण वर्षप्रवेश और कोष्ठी आदि ग्रन्थोंमें देखना चाहिये।

नीलकण्ठताजकके मतसे वर्षप्रवेशकालमें सात ग्रहों-की दृष्टिका तारतम्य देखनेमें आता है। इस लिए (ख) चिह्नवाले चक्रमें सात ग्रहोंका उल्लेख किया गया है।

ग्रहदेवता (स० स्त्री०) ग्रहाणा देवता, ६-तत्। ग्रहगण-का अधिष्ठात्री देवता रुद्र प्रभृति। ग्रहयज्ञ देखो।

ग्रहद्रुम (स० पु०) ग्रहनाशको द्रुमः, मध्यपदलो०। शाक-वृक्ष, काकड़ासींगी।

ग्रहधूप (सं० पु०) ग्रहाणां धूपः, ६-तत्। ग्रहोंके उद्देशसे प्रदेय धूपविशेष, ग्रहोंको देनेलायक धूप। ग्रहयज्ञ देखो।

ग्रहनायक (सं० पु०) ग्रहाणा नायकः, ६-तत्। १ सूर्य। २ शनिश्चर। ३ अर्कवृक्ष, मन्दारका पेड़।

ग्रहनाश (सं० पु०) ग्रहं मलवन्धं नाशयति नश-णिच् अण्, उपम०। शाकवृक्ष, सतिवन नामका पेड़।

ग्रहनेमि (सं० पु०) ग्रहाणां ग्रहकक्षाणां नेमिरिव। १ मूल और मृगशिरा नक्षत्रोंके मध्यका चन्द्रमाका मार्ग। २ चन्द्रमा। ३ आकाश।

ग्रहपति (सं० पु०) ग्रहस्य पतिः, ६-तत्। १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष। ३ शनि। ४ गृहस्वामी, घरका मालिक। ५ चन्द्र। (भारत १३।१६७।२१)

ग्रहपीडा (सं० स्त्री०) ग्रहजन्या पीडा, मध्यपदलो०। अशुभ ग्रह शारीरिक या मानसिक यातना देता है। इस लिये इसका नाम ग्रहपीड़ा पड़ा है।

ग्रहपीडन (सं० क्ली०) ग्रहस्य पीडनं, ६-तत्। ग्रह-पीडा।

ग्रहपुष (सं० पु०) ग्रहान् चन्द्रादीन् पुष्णाति स्वतेजसा ग्रहपुष-क। सूर्य।

ग्रहपूजा (सं० स्त्री०) ग्रहस्य पूजा, ६-तत्। ग्रहोंकी अर्चना, ग्रहोंकी पूजा।

ग्रहप्रत्यधिदैवत (सं० क्ली०) ग्रहाणां प्रत्यधिदैवतं, ६-तत्। ग्रहोंका अधिपति देवता।

१२।१५ फुट ऊँची हो कर बड़ी तेजीसे धावित होती है। इस समय नदीके किनारे नौका आदिके रहने पर टूट जाती हैं, इसलिए मल्लाह उन्हें बीचमें ले जाते हैं।

नदी वा खाड़ी आदिका मुहाना पूर्व दिशामें न हो कर यदि पश्चिम वा अन्य किसी दिशामें हो, तो भी उसमें समान ज्वार उत्पन्न नहीं होती। कहना फिजूल है कि, इस प्रकारकी पश्चिमवाहिनी समुद्रमें मिलनेवाली नदियोंमें ज्वारके समय पश्चिमसे पूर्व अर्थात् ठीक विपरीत दिशामें ज्वार हो कर प्रवाहित होती है।

किसी स्थानमें ज्वारप्रवाह चलते चलते पानी थम जाता है और उसके बाद ही फिर भाटासे स्रोतका पानी घटता रहता है। क्रमसे पानी फिरसे थम जाता है और फिर वहां ज्वार होने लगती है। ये दो स्रोतहीन समय ही यथाक्रमसे उस स्थानके ज्वारभाटाकी चरम उन्नति और अवनति है। समुद्रतटके बन्दरोंके लिए यह बात सत्य होने पर भी नदीके मुहानेके लिए प्रयुज्य नहीं है। इस स्थानमें जलराशिकी चरम उन्नतिके बाद भी बहुत देर तक पानी नदीके मुंहमें प्रवेश करता है।

उपकूलसे दूरवर्ती समुद्रमें ज्वार होने पर उसकी जांच नहीं होती। भूमध्यसागरमें सबसे ऊंची ज्वारके समय भी पानी २ इंच मात्र ऊंचा होता है। इसका कारण ज्वार समझानेके लिए पृथिवीकी जो अण्डाकृति कल्पना की गई है भूमध्यसागर उसका एक क्षुद्रांशमात्र है। सुतरां समपरिमाण एक सम्पूर्ण वर्तुलके अंशसे अधिक भिन्न नहीं है।

समुद्रकी गभीरता और आकारके ऊपर तथा द्वीप, महाद्वीपादिके व्यवधानके कारण ज्वारमें बहुत कुछ वैषम्य देखनेमें आता है।

इंगलैण्डकी नाविकपञ्जिकामें यूरोपके प्रायः सब बन्दरोंके ज्वारभाटाका समय और उच्चताका विषय लिखा हुआ है। नाविकोंके लिए इसका जानना बहुत जरूरी है। पोताश्रय (जेटी) आदि बनानेवालोंको भी जलकी चरम उन्नति और चरम अवनति जानना जरूरी है। बहुतसी नदियोंके मुहानेमें रेतके टापू रहते हैं, ज्वारके समयको छोड़ कर अन्य समयमें वहांसे जहाज आदि नहीं जा सकते हैं। इसलिए ऐसी नदियोंमें जानेके लिए ज्वारका ज्ञान होना आवश्यक है। नदीके स्रोतकी तरफ और प्रतिकूलमें जानेके लिए ज्वार बहुत सहायता पहुंचाती है। चन्द्र और सूर्यके आकर्षणके सिवा और भी अनेक कारण ज्वारके साथ संसृष्ट हैं। प्रत्यक्षमें जो ज्वार उत्पन्न होती हैं, वह प्रधानतः निम्नलिखित कारण-समूहके संघातसे हुआ करती है—

१। चन्द्र और सूर्यकी आह्निक ज्वार-तरङ्ग (Diurnal tide)

२। चन्द्र और सूर्यकी उलटी ज्वार-तरङ्ग (Semi diurnal tide)

३। चन्द्रके पाक्षिक और सूर्यके षाण्मासिक अयन परिवर्तनजन्य ज्वार तरङ्ग (Semi-menstrual and semi annual)

इनके साथ और भी कुछ प्राकृतिक परिवर्तनके कारण ज्वारमें कमी बेशी होती है। यथा—

४। वायुराशिकी दाबमें समय समय कमीबेशी होनेके कारण सागरजलकी स्फीति और अवनति।

५। वायुकी गतिका सहसा परिवर्तन।

ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे ज्वारके विषयमें थोड़ा बहुत ज्ञान हो सकता है। यह ज्वार प्रवाह एक समयमें पृथिवीमें बहुत दूर तक व्याप्त होता है। इसके प्रभावसे गभीर समुद्र भी ऊपरसे नीचे तक आलोड़ित होता है। किन्तु बहुत जोर आंधीके समय भी समुद्रका जल प्रचण्ड तरङ्गोंसे भरा हुआ और छिन्नविच्छिन्न होने पर भी कुछ फुट नीचे स्थिर रहता है।

चन्द्र ही ज्वारका प्रधान कारण है, यह पहले ही कहा जा चुका है। चन्द्र और पृथिवी दोनों परस्परके दृढ़ आकर्षणसे बद्ध हो कर एक साधारण भारकेन्द्रके चारों तरफ फिरते हुए सूर्यकी प्रदक्षिणा देते हैं। समुद्रका पानी सर्वदा चन्द्रमाके नीचे और उसके ठीक विपरीत भागमें ऊंचा होता रहता है। इस प्रकार दो ज्वार-तरङ्गें सर्वदा चन्द्रके साथ समसूत्रपातसे स्थित हैं। पृथिवी आह्निक गतिके द्वारा उन ज्वारतरङ्गोंको भेद कर भ्रमण करती है। इस अविश्रान्त घर्षणके द्वारा पृथिवीकी घूर्णनशक्ति कुछ कुछ खर्च होती रहती है और उससे ताप उत्पन्न होती है। इस घर्षणके द्वारा प्रतिहित

गुड़, शराब, कोषागार, अग्निहोत्री, धातुकी खान, चोर, शठ, दीर्घवैर और बहुभोजी, इन सबका अधिपति मङ्गल है।

बुधकी भक्ति—लौहित्य और सिन्धुनद, सरयू गम्भीरिका, रथाह्वा, गङ्गा और कौशिकी आदि नदी, काम्बोज, वैदेह, मथुराका पूर्वार्द्ध, हिमालय, गोमन्त और चित्रकूटके तमाम राज्य, सौराष्ट्र, सेतु, जलमार्ग, पण्य, गुफा और पर्वतके जीवजन्तु, कूप, यन्त्र, गायन, लिखनेकी चीज, मणि, अङ्गराग, गन्धयुक्तिवित् पण्डित, चित्रकार, शाब्दिक गणितज्ञ, प्रसाधक आयुष्कार, शिल्पशास्त्राभिज्ञ, चर, मायावी, शिशु, कवि, शठ, सूचक, अभिचाररत, दूत, नपुंसक, हास्यज्ञ, भूततन्त्र, इन्द्रजालज्ञ, रक्षक, नट, नर्त्तक, घृत तैल, स्नेहकी बीज, तिक्त, व्रतचारी, रसायनकुशल और अश्वतर इन सबका अधिपति बुध है।

बृहस्पतिकी भक्ति—सिन्धु नदीका पूर्वभाग, मथुराका पश्चार्द्ध, भरत, सौवीर, स्रुघ्नकी उत्तरदिशा, विपाशा और शतद्रु नदी, रामठ, माल्व, त्रैगर्त्त, पौरव, अम्बष्ठ, पारत, वाटधान यौधेय, सारस्वत आर्जुनायन तथा मत्स्यदेशके अर्द्ध भागके ग्राम और सारे राज्य, हस्ती, घोड़ा, पुरोहित, राजा, मन्त्री, माङ्गल्य और पौष्टिक कार्यमें आसक्त व्यक्ति, कारुण्य, सत्य, शौच, व्रत, विद्या दान और धर्ममें आचरण करनेवाला व्यक्ति, पौर, धनशाली, शाब्दिक, वैदिक, अभिचार और नीतिज्ञ, छत्र, ध्वजा और चामर आदि उपकरण, शैलज, मांसी, तगर, कुड, पारद सैन्धव, लतासे उत्पन्न हुई चीज, मधुररस, मोम तथा चोरक नामका गन्धद्रव्य, ये सब बृहस्पतिके भोग्य है।

शुक्रकी भक्ति—तक्षशिल, मार्त्तिकावत, बहुगिरि, गान्धार, पुष्कलावत, प्रस्थल, मालव, कैकय, दशार्ण, उशीनर और शिविदेश, वितस्ता, ईरावती और चन्द्रभागा नदीका पानी पीनेवाले मनुष्य, रथ, कुञ्जर, रजताकर, माहुत, धनुर्धारी, सुरभीकुसुम, अनुलेपन, मणिवज्रादि विभूषण, पद्म, शय्या, नवीन युवती, सुपक्व अन्न और मधुर रसवाले भोजनको खानेवाले प्राणी, उद्यान, जल, कामी, यश, सुख, औदार्य और रूपवान्, विद्वान्, मन्त्री, वणिक्, कुम्हार, चित्राण्डज, हर्रे, बहेड़ा, रेशमी कपड़ा, सनका कपड़ा, कम्बल, पत्ता, औणिक, लोध्रपत्र, चोरक, जायफल, अगुरु, वच, पीपल और चन्दन, इन सबका अधिपति शुक्र है।

शनिकी भक्ति—आनर्त्त, अर्बुद पुष्कर, सौराष्ट्र, अभीर, शूद्र, रैवतक, जिस देशमें सरस्वती नदी न हो वह देश, पश्चिमके देश, कुरुक्षेत्र, प्रभास, विदिशा, वेदस्मृतिके पासकी चीज, खल्हड, मलिन, नीच, तैली, विहीनसत्त्व, उपहतपुंस्त्व, बन्धनकारी, व्याध, अशुचि, कैवट (धीवर), विरूप, वृद्ध, शौकरिक, गणपूज्य, स्खलितव्रत भील, पुलिन्द, दरिद्र, कटु, तिक्त, रसायन, विधवा-स्त्री, सर्प, चोर, रानी, खर, करभ (हाथीका बच्चा), चना, पागल और निष्पाप द्रव्य, इन सबका शनि अधिपति है।

राहुकी भक्ति—पर्वतकी चोटी, गुफा, गुहाके निवासी, म्लेच्छ, शूद्र, गोमायुभक्ष्य, शूलिक, वोक्काण, अश्वमुख, विकलाङ्ग, कुलाङ्गार, हिंस्र, कृतघ्न, चोर, सत्य, शौच और दानसे वर्जित खरचर, मल्लयुद्धकारी, तीव्ररोषयुक्त, नीच, उपहत, दाम्भिक, राक्षस, निद्रालु, धर्महीन, मूंग और तिल इन सबका अधिपति राहु है।

केतुग्रहकी भक्ति—गिरिदुर्ग, पह्लव, श्वेतहूण, चोल, अवगान, मरु, चीन प्रत्यन्तदेश, धनी, उदारस्वभाव, रुजगारी, पराक्रमी, परदाररत (लम्पट), झगड़ेलू, मदगर्वित, मूर्ख और अधार्मिक विजयाभिलाषी, इनका अधिपति केतुग्रह है।

जो ग्रह प्रकृतिस्थ स्निग्धांशु तथा निर्घात उल्का रजः वा ग्रह मर्दन द्वारा हत नहीं होता, स्वभवनगत स्वोच्च स्थित है और शुभग्रहसे देखे जाने पर उदित होता है, उस ग्रहको जिनका अधिपति कहा गया है, उनका मङ्गल होता है। इसके विपरीत लक्षण हो तो अमङ्गल होता है। (बृहत्संहिता १६ अ०)

ग्रहभीतिजित् (सं० पु०) ग्रहभीतिं जयति जि-क्विप्। चीडा नामका गन्धद्रव्य।

ग्रहभोजन (सं० क्ली०) ग्रहाणां भोजनं, ६ तत्। ग्रहके लिये देने लायक गुड़ ओदन प्रभृति। ग्रहयज्ञ देखो।

ग्रहमण्डल (सं० क्ली०) ग्रहाणां मण्डलं, ६-तत्। १ ग्रहसमूह, ग्रहोंका झुण्ड। २ ग्रहपूजाके लिये अष्टदल पद्माकार स्थानभेद। ग्रहयज्ञ देखो।

ग्रहमैत्र (सं० क्ली) ग्रहयोर्दम्पति राश्यधिपयोर्मैत्रं,

पर्वतके एक स्थानसे पत्थर छेद कर सोता और एक प्रकारकी दाह्य वाष्प हमेशा निकलती रहती है। दीपके संयोगसे वाष्प जलने लगती है। इस स्थानको देवीका ज्वलन्तमुख कहते हैं; इसी कारण इस स्थानका नाम ज्वालामुखी पड़ा है। सोतेके ऊपर एक मन्दिर बनाया गया है। मन्दिरका विस्तार २० हाथ है और इसके बीचमें एक हौजसे जल और कुछ कुछ गरम वाष्प निकलती है। मन्दिरके याजकगण छतके संयोगसे वाष्पको अधिक देर तक प्रज्वलित रखते हैं। रणजित् सिंहने मन्दिरका अभ्यन्तर भाग सोनेसे जड़ दिया है। प्रतिदिन बहुतसे यात्री इस तीर्थमें आते हैं। आश्विन मासमें यहां पर्व होता है, जिसके उपलक्षमें बहुतसे यात्रियोंका समागम होता है।

प्रवाद है, कि पूर्व समयमें एकदिन देवीने दक्षिण-देशके एक ब्राह्मणकुमारको स्वप्नमें दर्शन दिया और उत्तर देशमें आ कर इस स्थानको बाहर निकालनेका आदेश किया। उन्हींके कथनानुसार ब्राह्मणकुमारने इस स्थानको बाहर कर वहां भगवतीकी पूजा की और एक मन्दिर निर्माण किया। वर्त्तमान मन्दिर पर्वतसे निकले हुए प्रस्रवणके ऊपर निर्मित है। इसकी चूड़ा और गुम्बज स्वर्णमण्डित है। खड्गसिंहसे प्रदत्त चाँदीके किवाड़ मन्दिरमें सबसे शिल्पनैपुण्यके परिचायक हैं। लार्ड हार्डिञ्ज इस किवाड़को देख कर इतना प्रसन्न हुए थे, कि उन्होंने इसका एक आदर्श बनवाया था। मन्दिरमें एकभी देवमूर्त्ति नहीं है।

मन्दिरका अभ्यन्तर छोड़ कर और भी कई स्थानोंमें जल और कुछ कुछ गरम वाष्प निकलती है। किसी किसीके मतसे वह अग्नि जलन्धर नामक दैत्यके मुखसे निकलती है। कहते हैं, कि महादेवने उस दुर्दान्त दैत्यको परास्त कर उसे एक पर्वतसे दबा रखा था। उस दैत्यके मुखसे आज भी अग्नि बाहर निकलती है। जालन्धर देखो। जो कुछ हो, वर्त्तमान मन्दिर भगवती और इसका मध्यस्थ कुण्ड देवीका उल्कामयी मुख कह कर सर्वत्र विख्यात है।

देवीके मन्दिरके चारों ओर बहुतसे छोटे देवालय, धर्मशाला, पान्थनिवास और प्रतियालाराज-निर्मित एक सराय है। दरिद्र तीर्थयात्री उक्त स्थानसे भोजनादि पाते हैं। यहां बहुतसे ब्राह्मण, संन्यासी, अतिथि, तीर्थयात्री और गाय आदि वास करते हैं। नगरको अवस्था उतना परिच्छन्न नहीं है, किन्तु इसका बाजार बहुत बड़ा है। वहां अनेक देवमूर्त्ति, जपमाला आदि उपासनाकी सामग्री देखी जाती है।

हिमालय पर्वत तथा इसके आसपासके समतल क्षेत्रोंका उत्पन्न द्रव्य इस नगरके उत्पन्न द्रव्यसे बदला जाता है। कुलु नामक स्थानसे अफीमकी रफतनी अधिक होती है। नगरमें कह जगह कह गरम सोते बहते हैं। इनके जलमें लवण और पटासियम आइओडाइड मिश्रित है, इसी कारण यहांका जल पीनेसे अनेक तरहके रोग जाते रहते हैं। इस नगरमें एक थाना, डाकघर और विद्यालय है। लोकसंख्या प्रायः १०२१ है।

ज्वालामुखीका प्रस्रवण और उष्णवाष्प कबसे निकली है, इसका निर्णय करना कठिन है। सम्भवतः ये दोनों ईसवी शताब्दीके बहुत पहले भी विद्यमान थे। चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्गने भारतवर्षमें आ कर पञ्जाब प्रदेशके एक ही पर्वतके शीतल और उष्ण प्रस्रवणको कथा उल्लेख की है। शायद वही उष्णप्रस्रवण ज्वालामुखीका अग्निकुण्ड होगा। हिन्दुओंमें प्रवाद है, कि दिल्लीश्वर फिरोजशाह तुगलकने ज्वालामुखी देवीका दर्शन और उनकी पूजा कर काङ्गड़ा देश जीता था। पर मुसलमान लोग इसे स्वीकार नहीं करते हैं। मालूम पड़ता है, कि फिरोजशाह बहुत कौतूहलवश ज्वालामुखीके इस आश्चर्य व्यापारको देखने आये थे।

ज्वालावक्त्र (सं० पु०) ज्वालेव वक्त्रमस्य, बहुव्री० शिव, महादेव।

ज्वालाहलदी (हिं० स्त्री०) रंगनेकी एक हल्दी।

ज्वालिन् (सं० पु०) ज्वाल-णिनि। १ शिव, महादेव। २ दीप्ति, तेज, चमक। (त्रि०) ३ शिखायुक्त, लपट, आँच।

ज्वालेश्वर (सं० पु०) मत्स्यपुराणोक्त तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम जिसका उल्लेख मत्स्यपुराणमें किया गया है।

ग्रहोंके अधिदेवता—सूर्यका ईश्वर, चन्द्रमाको उमा, मङ्गलका स्कन्द, बुधका हरि, वृहस्पतिका ब्रह्मा, शुक्रका इन्द्र, शनिका यम, राहुका काल और केतुका चित्रगुप्त।

ग्रहोंके प्रत्यधिदेवता—सूर्यका अग्नि, चन्द्रका जल, मङ्गलका चिति, बुधका विष्णु, वृहस्पतिका इन्द्र, शुक्रको शची या इन्द्राणी, शनिका प्रजापति, राहुका सर्प और केतुका ब्रह्मा। (मत्स्यपु० ९३ अ०)

ग्रहध्यान—मत्स्यपुराण और ग्रहयागतत्त्वके मतानुसार—

सूर्यध्यान—

"क्षत्रियं काश्यपं रक्तं कालिङ्गं द्वादशाङ्गुलम्।
पद्महस्तद्वयं पूर्वाननं सप्ताश्ववाहनम्।
शिवाधिदैवतं सूर्यं वह्निप्रत्यधिदैवतम्॥"

चंद्रका ध्यान—

"सामुद्रं वैश्यमात्रेयं हस्तमानं सिताम्बरम्।
श्वेतं द्विबाहुं वरदं दक्षिणं सगदेतरम्॥
दशाश्वं श्वेतपद्मस्थं विचिन्त्योमाधिदैवतम्।
जलप्रत्यधिदैवञ्च सूर्यास्यमाह्वयेत् तथा॥"

मङ्गलका ध्यान—

"आवन्त्यं क्षत्रियं रक्तं मेषस्थं चतुरङ्गुलम्।
आरक्तमाल्यवसनं भारद्वाजं चतुर्भुजम्॥
दक्षिणोर्द्ध्वक्रमाच्छक्तिवराभयगदाकरम्।
आदित्याभिमुखं देवं तद्वदेव समाह्वयेत्॥
स्कन्दाधिदैवतं ध्यायेत् क्षितिप्रत्यधिदैवतम्॥"

बुधका ध्यान—

"मागधं चाङ्गुलं वैश्यं पीतं चतुर्भुजम्।
वामोर्द्ध्वक्रमतश्चर्मगदाखड्गवरान्वितम्॥
सूर्यास्यं सिंहगं सौम्यं पीतवस्त्रं तथाह्वयेत्।
नारायणाधिदैवञ्च विष्णुप्रत्यधिदैवतम्॥"

वृहस्पतिका ध्यान—

"द्विजमाङ्गिरसं पीतं सैन्धवञ्च षडङ्गुलम्।
ध्यात्वा पीताम्बरं जीवं सुपद्मस्थं चतुर्भुजम्॥
दक्षोर्द्ध्वादक्षवरदकरकादण्डमाह्वयेत्।
ब्रह्माधिदैवं सूर्यास्यमिन्द्रप्रत्यधिदैवतम्॥"

शुक्रका ध्यान—

"शुक्रं भोजकटं विप्रं भार्गवञ्च नवाङ्गुलम्।
पद्मस्थमाह्वयेत् सूर्यमुखं श्वेतं चतुर्भुजम्॥
गदावरं रक्षादण्डहस्तं सिताम्बरम्।
शक्राधिदैवतं ध्यायेत् शचीप्रत्याधिदैवतम्॥"

शनिका ध्यान—

"सौराष्ट्रं काश्यपं शूद्रं सूर्यास्यं चतुरङ्गुलम्।
कृष्णं कृष्णाम्बरं गृध्रगतं सौरिं चतुर्भुजम्॥
सदक्षाधुवरशूलधनुर्धरं समाह्वयेत्।
यमाधिदैवतं प्रजापतिप्रत्यधिदैवतम्॥"

राहुका ध्यान—

"राहुं मलयजं शूद्रं पैठीनं द्वादशाङ्गुलम्।
कृष्णं कृष्णाम्बरं सिंहासनं ध्यात्वा तथाह्वयेत्॥
चतुर्बाहुं खड्गवरशूलचर्मकरं तथा।
कालाधिदैवं सूर्यास्यं सर्पप्रत्यधिदैवतम्॥"

केतुका ध्यान

"कौशद्वीपं केतुगणं जैमिनीयं षडङ्गुलम्।
धूम्रं गृध्रगतं शूद्रं माह्वयेद्विकृताननम्॥
सूर्यास्यं धूम्रवसनं वरदं गदिनं तथा।
चित्रगुप्ताधिदैवञ्च ब्रह्मप्रत्यधिदैवतम्॥"

विष्णुधर्मोत्तरमें ग्रहोंके अधिदेवता और प्रत्यधिदेवताके ध्यान लिखे है। जानना हो. तो उस ग्रन्थको देखना चाहिये।

ग्रहोंकी दक्षिणा—सूर्यको दक्षिणा कपिलाधेनु है। दानमन्त्र इस प्रकार है—

"कपिले सर्वभूतानां पूजनीयासि रोहिणी।
सर्वदेवमयी यस्मादतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

चन्द्रकी दक्षिणा शङ्ख है। दानमन्त्र इस प्रकार है—

"पुण्यस्त्वं शङ्ख ! पुण्यानां मङ्गलानाञ्च मङ्गलम्।
विष्णुना विधृतश्चासि तस्मात् शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

मङ्गलकी दक्षिणा है—भार ढोनेवाला लालरंगका बैल। दानमन्त्र—

"धर्मस्त्वं वृषरूपेण जगदानन्दकारक।
अष्टमूर्तेरधिष्ठानमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

बुधकी दक्षिणा है—स्वर्ण। दानमन्त्र—

"हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

वृहस्पतिकी दक्षिणा—पीतवस्त्र। दानमन्त्र—

"पीतवस्त्रयुगं यस्मात् वासुदेवस्य वल्लभम्।
प्रदानात्तस्य मे विष्णो अतः शान्ति प्रयच्छ मे॥

शुक्रकी दक्षिणा—अश्व। दानमन्त्र—

"विष्णुस्त्वमश्वरूपेण यस्मादमृतसम्भवः।
चंद्रार्कवाहनो नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥"

झंझरा (हिं॰ पु॰) १ मिट्टीका जालीदार ढकना जो गरम दूधके बरतन पर रक्खा जाता है। (वि॰) २ झोना, जिसमें बहुतसे छोटे छोटे छेद हों।

झंझरी (हिं॰ स्त्री॰) १ जाली, वह जिसमें बहुतसे छोटे छोटे छेद हों। २ जालीदार खिड़की जो दीवारोंमें बनी हुई रहती है। ३ दम चूल्हेकी जाली या झरना जिसके छेदोंमेंसे जले हुए कोयलेकी राख नीचे गिरती है। ४ खिड़कियों या बरामदोंमें लगानेकी लोहे आदिकी कोई जालीदार चादर। ५ वह छलनी जिससे आटा छाना जाता है। ६ आग उठानेका झरना। ७ दुपट्टे या धोती आदिके किनारेमें बनाया हुआ छोटा जाल जो सिर्फ सुन्दरता या शोभा बढ़ानेके लिये दिया जाता है।

झंझरीदार (हिं॰ वि॰) जालीदार, जिसमें जाली हो।

झंझार (हिं॰ पु॰) अग्निशिखा, आगकी लपट।

झंझो (हिं॰ स्त्री॰) १ फूटो कौड़ी। २ दलालीका धन।

झंझोड़ना (हिं॰ क्रि॰) १ झकझोरना, किसी चीजको तोड़ने या नष्ट करनेकी इच्छासे हिलाना। २ किसी जानवरका अपनेसे छोटे जानवरको मार डालनेके लिये दाँतोंसे पकड़ कर खूब झटका देना।

झंडा (हिं॰ पु॰) १ कपड़ेका टुकड़ा जो तिकोने या चौकोरमें काटा रहता है। इसका सिरा लकड़ी आदिके डंडेमें लगा कर फहराया जाता है। इसका व्यवहार चिह्न प्रगट, संकेत करने, उत्सव आदि सूचित करने या किसी दूसरे उपलक्षमें किया जाता है। कपड़ेका रंग भिन्न भिन्न तरहका होता है। इस पर अनेक प्रकारकी रेखाएं, चिह्न आदि अंकित होते हैं।

विशेष ध्वज शब्दमें देखो।

झंडी (हिं॰ स्त्री॰) संकेत आदि करनेके लिये छोटा झण्डा।

झण्डोदार (हिं॰ वि॰) झण्डीवाला, जिसमें झण्डी लगी हो।

झँडूला (हिं॰ वि॰) १ जिसका मुण्डन-संस्कार न हुआ हो, जिसके सिर पर गर्भके बाल हों। २ मुण्डन-संस्कारसे पहलेका। ३ सघन, जिसमें बहुतसी पत्तियां हों। (पु॰) ४ वह लड़का जिसका मुण्डन-संस्कार न हुआ हो। ५ मुण्डन-संस्कारके पहलेका बाल। ६ सघन वृक्ष, घनी पत्तियोंवाला वृक्ष।

झंपना (हिं॰ क्रि॰) १ ढाँकना, छिपना। २ कूदना, उछलना। ३ आक्रमण करना, टूट पड़ना। ४ लज्जित होना, झेंपना।

झँपड़िया (हिं॰ स्त्री॰) वह कपड़ा जिससे पालकी ढाँकी जाती है, ओहार।

झँपान (हिं॰ पु॰) दो लम्बे बांस बंधे हुए एक प्रकारकी खटोली। इन्हीं बांसोंको चार आदमी अपने कन्धे पर रख कर सवारी ले चलते हैं, झप्पान।

झंपोला (हिं॰ पु॰) छाबड़ा छोटा झाँपा।

झंवराना (हिं॰ क्रि॰) १ कुछ काला पड़ना। २ कुम्हलाना, फीका पड़ना।

झंवाना (हिं॰ क्रि॰) १ कुछ काला पड़ जाना। २ अग्निका मन्द हो जाना। ३ न्यून होना, घट जाना। ४ कुम्हलाना, मुरझाना। ५ झाँवेसे रगड़ा जाना।

झक (हिं॰ स्त्री॰) १ धुन, सनक, लहर, मौज। २ सनक, काम करनेकी धुन। ३ (वि॰) चमकीला, साफ।

झकझक (हिं॰ स्त्री॰) व्यर्थकी बकवाद, फजूल झगड़ा, किचकिच।

झकझका (हिं॰ वि॰) चमकीला, चमकदार।

झकझकाहट (हिं॰ स्त्री॰) चमक, तेजी, जगमगाहट।

झकझेलना (हिं॰ क्रि॰) झकझोरना।

झकझोर (हिं॰ पु॰) १ झटका, झोंका। (वि॰) २ तेज, जिसमें खूब झोंका हो।

झकझोरना (हिं॰ क्रि॰) झोंका देना, झटका देना।

झकझोरा (हिं॰ पु॰) धक्का, झोंका।

झकनौद—मध्यभारतमें भोपावर एजेन्सीके अन्तर्गत झाबूआ राज्यका एक नगर। यह सर्दारपुरसे १५ मीलकी दूरी पर, झाबूआ नगरसे २४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहां एक ठाकुर रहते हैं।

झकाझक (हिं॰ वि॰) उज्ज्वल, चमकीला।

झकार (सं॰ पु॰) झ-कार। झमात्र वर्ण।

"झकार परमेशानि!" (कामधेनुतन्त्र)

झकोरना (हिं॰ क्रि॰) हवाका झोंका मारना।

झकोरा (हिं॰ पु॰) वायुका वेग, हवाका झोंका।

झक्क (हिं॰ वि॰) चमकीला, जगमगता हुआ।

झक्कड़ (हिं॰ पु॰) तीव्र वायु, अन्धड़।

नाम	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	शुक्र	वृहस्पति	शनि	राहु	केतु
रत्न	माणिक्य	मोती	सूंगा	पन्ना	पुखराज	हीरा	नीलक	लोहितमणि	वैदुर्य
वलि	गुडौदन	घृतपायस	यावक	क्षीरयष्टिक	दध्योदन	घृतौदन	कृसर	अजमास	चित्रान्न
समिध्	अकवन	पलाश	कत्थका पेड	लटजोरा	पीपल	उदुम्बर	शमी	दुर्वात्रय	कुशत्रय
दक्षिणा	कपिलाधेनु	शङ्ख	लाल बैल	स्वर्ण	पीतवस्त्र	श्वेताश्व	कृष्णाधेनु	खड्ग	छाग
जपसंख्या	६०००	१००००	७०००	१७०००	१६०००	२००००	१९०००	१८०००	७०००
अधिदेवता	शिव	उमा	स्कन्द	नारायण	ब्रह्मा	इन्द्र	यम	काल	
प्रत्यधिदेवता	अग्नि	जल	क्षिति	विष्णु	इन्द्र	इन्द्राणी	प्रजापति	सर्प	ब्रह्मा

यजमान अर्थात् जिसके लिए ग्रहयज्ञका अनुष्ठान किया जाता है, उसको वेदके अनुसार वैदिक मन्त्र द्वारा ग्रह, अधिदेवता और प्रत्यधिदेवताका होम करना पड़ता है। भिन्न भिन्न वेदमन्त्रके आदिके कुछ शब्द और किस वेदमें किस जगह वह मन्त्र लिखा है उसके चिह्न नीचे लिखे जाते हैं—

सूर्यके होममन्त्र। ऋक्—"आकृष्णेण रजसा।" १।३५।२; यजुः—"आकृष्णेण रजसा।" (वा०) ९।४०; साम—"उदुत्यं जातवेदसं" १।१।१।३।११, अथर्व—"विषासहिं सहमानं" १७।१।१।

चन्द्रके होममन्त्र। ऋक्—"आप्यायस्व समेतुते" १।९१।१६, यजु—"इमं देवा असपत्न" (वा०) ९।४०; साम—"सन्ते पयांसि" (वा०) १२।११३; अथर्व—"शक्वधूमं नक्षत्राणि" ६।१२८।१।

मङ्गलके होममन्त्र। ऋक्—"अग्निमूर्द्धा दिवः" ८।४४।१६; यजुः—"अग्निमूर्द्धा दिवः" (वा०) १८।२०; साम—"अग्निमूर्द्धारिवः" १।१।१।३।७; अथर्व—"त्वया मन्यो सरथम्" ४।३१।१।

बुधके मन्त्र। ऋक्—"अग्ने विवस्वत्" १।४४।१, यजुः—"उद्बुध्यस्वाग्ने" (वा०) १५।५४, साम—"अग्ने विवस्वत्" १।१।१।४।६, अथर्व—"यद्राजानोविभजन्तः" ३।२९।१।

वृहस्पतिके मन्त्र। ऋक्—"वृहस्पते परिदीया" १०।१०३।४, यजु—"वृहस्पते अतियदर्य्यः" (वा०) २६।३; साम—"वृहस्पते परिदीया" २।९।३।२।१, अथर्व—"वृहस्पतिर्नः परिपातु" ७।५१।१।

शुक्रके मन्त्र। ऋक्—"शुक्रं ते अन्यत्" ६।५८।१ यजु—"अन्नात् परिस्नुत" (वा०) १९।७५; साम—"शुक्रं तेऽन्यत्" १।१।१।३।३, अथर्व—"हिरण्यवर्णाः शुचयः" १।३३।१।

शनिके मन्त्र। ऋक्—"शन्नोदेवीरभीष्टये" १०।९।४ यजुः—"शन्नोदेवीरभीष्टये" (वा०) ३६।१२; साम "शन्नो . ." १।१।१।३।१३; अथर्व—"सहस्र वाहुः पुरुषः" १९।६।१।

राहुके मन्त्र। ऋक्—"कयानश्चित्रः" ४।३१।१; साम—वैसा ही; यजुः—"काण्डात् काण्डात्" (वा०) १३।१०; अथर्व—"दिव्यं चित्र ऋतुधाः"।

केतुके मन्त्र। ऋक्—"केतुं कृण्वन्नकेतवे" १।६।३; ऐसा ही यजुःमें है—(वा०) २९।२७, साममें ऐसाही—२।६।३।१२।३, अथर्व—"यस्ते पृथुः स्तनयित्नुः" ७।११।१।

ग्रहाधिदेवताके होमके मन्त्र। १ ईश्वरके मन्त्र। ऋक्—"गौरीर्मिमाय" १।१६४।४१; यजुः—"श्रीश्चते लक्ष्मीश्च" (वा०) ३१।२२; साम—"आपोहिष्ठा" २।९।२।१०।१; अथर्वमें ऐसा ही है—१।५।१।

२ उमाके मन्त्र। ऋक्—"आवो राजानम्" ४।३।१; यजुः—"त्र्यम्बकं यजामहे" (वा०) ३।६०; साम—१।१।२।२७, अथर्व—"मनोविदन् विव्याधिनः" १।१९।१।

३ स्कन्दके मन्त्र। ऋक्—"कुमारं माता" ५।२।१; यजुः—"यदक्रन्दः प्रथमम्" (वा०) २९।११; साम—"स्योना पृथिवी" (वा०) ३५।२१; अथर्व—"अग्निरिव मन्योत्विषितः" ४।३१।२।

४ हरिके मन्त्र। ऋक्—"इदं विष्णुर्विचक्रमे" १।२२।१७। साममें भी ऐसाही है—१।३।१।३।६; यजुः—"विष्णोरराटमसि" (वा०) ५।२१; अथर्व—"प्र तद्विष्णुः स्तवते" ७।२६।२।

५ ब्रह्माके मन्त्र। ऋक्—"त्वमित् सप्रथाः" ८।६०।५; यजुः—"आ ब्रह्मन् ब्राह्मणः" (वा०) २२।२२; साम—"त्वमित्सप्रथा" १।१।१।४।८; अथर्व—"ब्रह्मज ज्ञानम्" ४।१।१।

यही स्थान पुराणोक्त शाकल, बौद्धग्रन्थवर्णित सागल और ग्रीक ऐतिहासिकोंका सङ्गल है। यह पहाड़ गुजरानवालाकी सीमा पर अवस्थित है और उसके दोनों ओर दलदल भूमि है। पहले इस दलदलभूमिमें गहरी झील थी। महाभारतमें शाकल मद्रराजको राजधानी कह कर वर्णित है। आज भी इस प्रदेशको मद्रदेश कहते हैं। बौद्धोंका उपाख्यान पढ़नेसे जाना जाता है, कि सागल कुशराजकी राजधानी था। रानी प्रभावतीको अपहरण करनेके लिए सात राजाओंने आक्रमण किया था। महाराज कुशने हाथीकी पीठ पर चढ़ नगरके बाहरमें शत्रुओंका मुकाबिला किया था, और वहां उन्होंने ऐसी उत्कट हुङ्कारध्वनि की थी, कि स्वर्ग मर्त्य प्रतिध्वनित हो गया और आक्रमणकारी भय खा कर भाग चले। ग्रीक ऐतिहासिकोंका कथन है, कि अलेकसन्दरने सङ्गलराजाके आक्रमणसे तङ्ग हो कर गङ्गाकुलवर्ती प्रदेशको जय करना न चाहा और उसी स्थान पर आक्रमण किया। उस समय सङ्गल अत्यन्त दुराक्रम्य था, इसके दो ओर गहरी झील और नगर ईंटेकी चहारदीवारीसे घिरा था। ग्रीकोंने बहुत कष्टसे इसका प्राचीर छिन्न भिन्न कर नगरको अधिकार किया। चीन-परिव्राजक युएनचुयाङ्ग ६३० ई०में शाकल आये थे, उस समय उसका भग्न प्राचीर वर्तमान था और प्राचीन नगरके स्तूपाकृति ध्वंसावशेष-समूहके मध्य एक छोटा शहर था। युएनचुयाङ्गका विवरण पढ़ कर ही कनिंहम साहब शाकलका अवस्थान निर्द्धारण करनेमें समर्थ हुए। अब भी यहाँ एक बौद्धमठमें प्रायः एक सौ बौद्ध संन्यासी रहते हैं। यहां दो स्तूप भी हैं जिनमेंसे एक महाराज अशोकका बनाया हुआ है। चन्द्रभागाका निम्न अववाहिकास्थित शेरकोट अलेकसन्दरसे अधिकृत मल्ली नगरसा अनुमान किया जाता है। बाद युएनचुयाङ्गने इस स्थानको एक प्रदेशकी राजधानी कह कर वर्णन किया है।

इस जिलेका आधुनिक इतिहास शियाल-राजवंशके विवरणमें संश्लिष्ट है। ये शियालराजगण मुलतान और शाहपुरके मध्यवर्ती एक विस्तीर्ण प्रदेश पर राज्य करते थे। ये दिल्लीके सम्राट्की अधीनता कुछ कुछ स्वीकार करते थे। अन्तमें रणजित्सिंहने इन्हें पूर्ण रूपसे परास्त किया। भङ्गके शियालगण राजपूत कुलोद्भव हैं, लेकिन मुसलमान धर्मका अवलम्बन करते हैं। इन लोगोंके आदिपुरुष रायशङ्कर हैं। ये ईसाकी तेरहवीं शताब्दीके प्रारम्भको जौनपुरमें रहते थे। इनके पुत्र शियाल उस नगरको छोड़ कर मुगल-प्रपीड़ित पञ्जाब देशको आये। एकदिन वे नगरस्थापनका उपयुक्त स्थान ढूंढ़ते ढूंढ़ते पाकपत्तनके विख्यात फकीर बाबा फरीदउद्-दीन शाकरगञ्जके सामने अकस्मात् आ गिरे। फकीरको वाक्पटुतासे मुग्ध हो कर शियाल मुसलमान धर्ममें दीक्षित हुए। ये कुछ काल तक शियालकोटमें रह कर अन्तमें शाहपुर जिलेके साहिवालमें चले गये और वहां विवाह कर रहने लगे। शियालके निम्न छठे पुरुष माणकने १३८० ई०में मानखेड़ नगर स्थापन किया और उनके प्रपौत्र मालखाँने १४६२ ई०में चन्द्रभागाके किनारे भङ्गशियाल निर्माण किया। इससे चार वर्षके बाद मालखाँ सम्राट्के आदेशानुसार लाहोर पहुंचे और उन्होंने सम्राट्को वार्षिक निर्दिष्ट कर दे कर भङ्ग प्रदेशको प्राप्त किया। उसी समयसे उनके वंशधर भङ्गमें राज्य करने लगे।

उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें सिखगण पराक्रान्त हो उठे। भङ्ग प्रदेशके करमसिंह दुलुने भङ्ग जिलेके चिनियोत दुर्ग पर अधिकार किया। १८०३ ई०में रणजित्सिंहने उस दुर्ग पर आक्रमण कर अपना अधिकार जमाया। इसके बाद रणजित्सिंह जब भङ्ग पर आक्रमण करनेका उद्योग करने लगे, तब शियाल-वंशके अन्तिम राजा अहमदखाँने वार्षिक ७० हजार रुपये और एक घोड़ी देनेकी प्रतिज्ञा कर छुटकारा पाया।

इससे तीन वर्ष बाद महाराज रणजित्सिंहने पुनः भङ्ग पर आक्रमण किया। अहमदखाँने भाग कर मुलतानमें आश्रय लिया। रणजित्सिंह सर्दार फतेहसिंहको भङ्गका सर्दार बना कर आप स्वस्थानको लौट गए। उनके जाने पर अहमदखाँ पुनः कर दे कर उनके राज्यका कई अंश दखल करने लगे। १८१० ई०में रणजित्सिंहने मुलतान अधिकार किया और उनके शत्रु मुजफ्फरखाँको अहमदखाँने सहायता दी थी, इसी अपराधमें रणजित्सिंहने उन्हें कैद कर लिया। लाहोरमें आ कर रण-

हो, तो समझना चाहिये कि थोड़े हो दिनोंमें उन दोनोंका संयोग हो जायगा। दोनों ग्रहोंको स्वाभाविक गति पूर्वकी तरफ हो, तब ऐसा होता है। वक्रगतिवाले दो ग्रहोंमेंसे शीघ्रगामी ग्रहका स्फुट मन्दगामी ग्रहसे अधिक हो, तो दोनोंका योग भविष्यमें होता है और शीघ्रगामी ग्रहसे मन्दगामी ग्रहका थोड़ा हो तो योग हो चुका है—ऐसा निर्णय करना चाहिये। दो ग्रहोंमेंसे एककी गति वक्र और एककी सीधी होनेसे वक्रगतिवालेसे पूर्वगामी ग्रहका स्फुट अधिक होनेसे योग हो गया और पूर्वगामीसे वक्रगामी ग्रहका स्फुट अधिक हो तो योग होगा—ऐसा निश्चय करना चाहिये।

ग्रहयुतिके समय निर्णय करनेका तरीका—गणितवेत्ता अपनी इच्छानुसार जब चाहें तब गणना द्वारा पूर्ववर्त्ती और परवर्त्ती ग्रहयोगका समय निर्णय कर सकते हैं। जिस समय ग्रहयोगोंकी गणना करनी हो, उस समय अभीष्ट ग्रहद्वयका तात्कालिक स्फुट निर्णय करके दोनोंके अन्तरकी कला करनी चाहिये। बादमें उसके दोनों ग्रहोंकी गतिको कलासे पृथक् पृथक गुणा करनेसे जो दो राशि उपलब्ध होगी, उनमेंसे जिस ग्रहको गतिकी कलासे गुणा करें, जो राशि उपलब्ध हुई हो, उस राशिको उस ग्रहके आदिके अक्षरसे चिह्नित कर अलग रखना चाहिये। फिर दोनो ग्रहोंकी वक्रगति होने पर उनका वियोग और एकके पूर्वगामी व दूसरेके वक्र होनेसे दोनोंके योगफलसे चिह्नित दोनों राशिका भाग करना चाहिये। उपलब्ध दोनों फलोंको भी यथाक्रमसे ग्रहके आदिके अक्षरसे चिह्नित करना चाहिये। स्वाभाविक गतिवाले ग्रहोंका योग भावी हो, तो दोनों ग्रहके स्फुटमें खोय खोय आद्याक्षर चिह्नित दोनों फलोंका जोड़ देना पड़ता है और अतीत होनेसे बाकी निकालनी पड़ती है। इस प्रकार वक्रगतिवाले दोनों ग्रहोंके भावी योगमें लब्धद्वयका वियोग और भूत योगमें जोड़ लगाया जाता है। दो ग्रहोंमेंसे एककी वक्रगति और दूसरेका सरलगति हो तो पहलेकी प्रक्रियाके अनुसार लब्धको अतीत योगमें स्वाभाविक गतिवाले ग्रहमेंसे घटाना चाहिये। फिर वक्रगतिवाले ग्रहमें जोड़ तथा भावी योगमें वक्रगतिवाले ग्रहमेंसे घटाना और स्वाभाविकगतिवाले ग्रहमें जोड़ना चाहिये। इस प्रकारसे प्रक्रिया करनेसे जो दो राशि उपलब्ध होंगो, उनको दोनों ग्रहोंका समकालात्मक फल कहते हैं। पूर्व प्रक्रियानुसार ग्रहके आदिके अक्षरसे चिह्नित दोनों राशिओंको भाग करनेसे जो फल उपलब्ध होगा, उनको दिन आदि समझना चाहिये। भूत योगका निर्णय करना हो तो गणनाके समयसे लब्ध दिनादि बाद दे कर जो समय हो, उस समयमें उक्त दोनों ग्रहोंका योग हुआ था—ऐसा समझना चाहिये और भावी योगका निर्णय करना हो तो गणनाके समयके साथ लब्ध दिनादि जोड कर जो समय हो, उस समयमें ग्रहोंका योग होगा—ऐसा समझे। (सूर्यसिद्धान्त ७।१-६)

दृक्कर्म देखो।

ग्रहयुद्ध (सं० क्लो०) ग्रहस्य युद्धं, ६-तत्। मङ्गल आदि पाँच तारा ग्रहोंमेंसे कोई दो तारे तरऊपर स्थित होनेसे, उनकी किरण आपसमें स्पर्श करतो है, इसोका नाम ग्रहयुद्ध है। स्थितिके अनुसार ग्रहयुद्धके चार भेद हैं— उल्लेख, भेद, अंशुविमर्द और अपसव्य।

तारकास्पर्श अर्थात् सिर्फ छाया मात्रसे दोनों ग्रहोंका स्पर्श हो जाना सो उल्लेख है। फल—मन्त्रीको पोड़ा।

दोनों ग्रहोंका परिमाण यदि योगफलके आधेसे ग्रहद्वयका अन्तर ज्यादा हो; तो उस युद्धको भेद कहते हैं। फल—धनक्षय।

दो ग्रहोंकी किरणका संघट्ट या योग होना; सो अंशुविमर्द है। फल—भयङ्कर संग्राम।

दो ग्रहोंके अन्तरका अंश अर्थात् साठ कलासे न्यून होनेसे उसको अपसव्य कहते हैं। यह युद्ध दो प्रकारका होता है-१ व्यक्त और २रा अव्यक्त। दोनो ग्रहोंके बीचमें एक अणु हो तो उसका अपसव्य युद्ध मनुष्योंके दृष्टिगोचर होता है, इस लिए इसका नाम व्यक्त है और इससे विपरीत अर्थात् अणुके न रहने पर जो अपसव्य युद्ध होता है वह मनुष्योंके दृष्टिमें नहीं आता, इस लिए उसका नाम अव्यक्त अपसव्य युद्ध है।

(सूर्यसि० ७।१८-१९)

बृहत्संहिताके मतानुसार तरऊपर अपनी अपनी कक्षामें अवस्थित ग्रहोंमें अति दूरत्वनिवन्धन देखनेके

करनेकी सुविधाके लिये यह जिला ३ तहसील और २५ थानोंमें विभक्त है। भङ्ग, मघियाना, चिनियोत, शेरकोट और अहमदपुरमें म्युनिसपालिटी है।

इस जिलेकी जलवायु बहुत स्वास्थ्यकर है। व्याधिमें ज्वर और वसन्त प्रधान है। भङ्ग, मघियाना, चिनियोत, शेरकोट, अहमदपुर और कोट इसाशाहनगरमें गवर्मेण्टके दातव्य औषधालय है।

२ पञ्जाब प्रदेशके पूर्वोक्त भङ्ग जिलेकी मध्यस्थ तहसील। यह अक्षा० ३१° ०´ से ३१° ४७´ उ० और देशा० ७१° ५८´ से ७२° ४१´ पू०में अवस्थित है। यहांका भूपरिमाण १४२१ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः १८४४५४ है। इसमें भङ्ग मघियाना नामक शहर और ४४८ ग्राम लगते हैं। यहांका राजस्व प्राय: २५६०००) रु० है। इसमें जिलेकी अदालत और पांच थाने हैं।

३ पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत भङ्ग जिलेका प्रधान नगर और म्युनिसपालिटी। यह अक्षा० ३१° १८´ उ० और देशा० ७२° २०´ पू० पर भङ्गसे दो मील दक्षिण जेच द्वोआब पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: २४३८२ है जिसमेंसे १२१८८ हिन्दू और ११६४८ मुसलमान हैं। भङ्ग और मघियाना म्युनिसपालिटीके अन्तर्गत है और दोनों एक नगरमें गिने जा सकते हैं। चन्द्रभागा नदीके वर्त्तमान गर्भसे ३ मील पूर्व और वितस्ताके साथ उसके सङ्गम-स्थानसे १० और १३ मील उत्तर-पश्चिममें ये दोनों नगर अवस्थित हैं। भङ्ग नगर निम्न भूमि है और वाणिज्यस्थानसे कुछ दूरमें पडता है। सरकारी कार्यालय आदि जबसे मघियानेसे उठा लिये गये हैं, तबसे भङ्गको अवनति हो गई है। शहरमें केवल एक बड़ी सड़क है। जिसके दोनों बगल ईंटोंके बने हुए पथ हैं। वे पथ ईंटोंके छोटे छोटे टुकड़ोंसे बंधे हैं और पानीके निकासका अच्छा प्रबन्ध भी है। नगरके बाहर विद्यालय, भरना, औषधालय और थाना है। शियालवंशके मालखाँने १४६२ ई०में पुराना भङ्ग नगर निर्माण किया था। वह नगर बहुत समय तक भङ्गके मुसलमान राजाओंकी राजधानी था, बाद बहुत समय हुआ कि वह चन्द्रभागाके सोतेसे बह गया है। वर्त्तमान नगर १६वीं शताब्दीके प्रारम्भको औरङ्गजेब सम्राट्के शासनकालमें भङ्गके वर्त्तमान नाथसाहबके पूर्वपुरुष लालनाथसे स्थापित हुआ है। दूरसे नगरका एक पार्श्व देखने पर केवल उच्च अप्रीतिकर बालुकास्तूपके सिवा और कुछ देखनेमें नहीं आता है। किन्तु दूसरी ओरसे देखने पर सुन्दर उद्यान, सरोवर, कुञ्जवन, अट्टालिका आदि मनोरम दृश्य देखनेमें आता है। यहांके अधिकांश अधिवासी शियाल और क्षत्रिय हैं। यहां मोटे कपड़ेका व्यवसाय अधिक होता है। काबुली सौदागर उसे खरीद कर अपने देशको ले जाते हैं। वजीराबाद और मियनवालिसे अनाजकी आमदनी होती है।

भज्झर (हिं० पु०) एक प्रकारका पानीका बरतन। इसका मुंह चौड़ा होता है और यह पानी रखनेके काममें आता है। इसकी उपरी तह पर पानीको ठण्ढा करनेके लिये थोडासा बालू लगा दिया जाता है, और सुन्दरताके लिये तरह तरहकी नकाशियाँ भी की जाती है। इसका व्यवहार प्राय: गरमीके दिनोंमें होता है क्योंकि उस समय मनुष्योंको ठण्ढा पानी पीनेकी चाह रहती है।

भज्झर—पञ्जाब प्रदेशस्थ रोहतक जिलेकी दक्षिणकी तहसील, यह अक्षा० २८° २१´ से २८° ४१´ उ० और देशा० ७६° २०´ से ७६° ५६´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४६६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२३२२७ है। इस तहसीलका अधिकांश बालुकामय है। नजाफगढ़ नामक झीलके निकटस्थ स्थान जलमय है। यहांका प्रधान उत्पन्न द्रव्य बाजरा, ज्वार, जौ, चना, गेहूं आदि है। एक सहकारी कमिश्नर, एक तहसीलदार और एक अनररी मजिष्ट्रेट विचार-कार्य सम्पादन करते हैं। इस तहसीलमें २ दीवानी, ३ फौजदारी और २ थाने हैं। रिवारी-फिरोजपुर रेलपथ इस तहसीलके प्रान्त हो कर गया है। इसमें भज्झर नामका एक शहर और १८८ ग्राम लगते हैं।

२ पञ्जाब प्रदेशस्थ रोहतक जिलेकी भज्झर तहसीलका प्रधान नगर और सदर। यह अक्षा० २८° ३६´ उ० और देशा० ७६° ४०´ पू० पर रोहतक जिलेसे २१

राजा और गो समूहका क्षय होता है। बुधद्वारा बृहस्पति पराजित हो तो म्लेच्छ, सत्य और शस्त्राजीवी तथा मध्यदेशका विनाश होता है। शनिद्वारा बृहस्पतिके पराजित होनेका फल—आर्जुनायन, वसाति, यौधेय, शिवि और ब्राह्मणोंका अमङ्गल है। बृहस्पति अगर शुक्रको पराजित करे, तो श्रेष्ठ यायीका विनाश, ब्राह्मण और क्षत्रियमें विरोध, अनावृष्टि, कोशल, कलिङ्ग, बङ्ग, वत्स, मत्स्य, मध्यदेशके लोग, शूरसेनगण और नपुंसकोंको घोर पीड़ा होती है। मङ्गलद्वारा शुक्रकी पराजय हो तो वीरोंकी मृत्यु और राजाओंमें युद्ध होता है। बुधद्वारा शुक्रकी पराजय हो तो पार्वतीय देशोंमें पीड़ा, दूधकी हानि और थोड़ी वर्षा होती है। शनि द्वारा शुक्रपराजयका फल गणश्रेष्ठ, शस्त्राजीवी, क्षत्रिय और जलजीवी पीड़ा होती है। शुक्रद्वारा शनिके पराजित होनेका फल महंगी होती है तथा सर्प, पक्षी और मानियोंका कष्ट होता है। बुधद्वारा शनिके पराजयका फल—टङ्कण, अंध, उड्र, काशी और वाह्लीक देशके रहनेवालोंको कष्ट होता है। बुधद्वारा शनिके पराजित होनेका फल—अङ्गदेश, वणिक्, विहङ्ग, पशु और सर्पोंको सन्ताप होता है। (बृहत्संहिता १७ अध्याय) मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि, इनके परस्परके पराजयका फल लिखा गया है। नक्षत्र आदिके साथ ग्रहके युद्धमें ग्रहभुक्तिके समान ही फल होता है। ग्रहभुक्ति देखो।

ग्रहयुद्धभ (सं० क्ली०) ग्रहयोर्युद्धं यत्र, बहुव्री० तादृशं भं कर्मधा०। जिस नक्षत्रमें रह कर दो ग्रहोंका युद्ध हो जाता है। विवाह देखो।

ग्रहयोग (सं० पु०) ग्रहयुति देखो।

ग्रहराज (सं० पु०) ग्रहाणां राजा, ६-तत्। ततः टच्। १ सूर्य। २ चन्द्र। ३ बृहस्पति।

ग्रहवर्मन्—मौखरीवंशके कान्यकुब्ज देशका एक राजा, अवन्तिवर्माका पुत्र और प्रभाकरवर्द्धनका जामाता। इन्होंने हर्षदेवकी सहोदरा (बहन) राज्यश्रीसे विवाह किया था। प्रभाकरवर्द्धनके मृत्युके बाद मालवराजने ग्रहवर्माको विनाश कर राज्यश्रीको कान्यकुब्जके कारागारमें आवद्ध किया था। हर्षदेव देखो।

ग्रहवर्षादिफल (सं० क्ली०) ग्रहस्य वर्षादिः तस्य फलं, ६-तत्। १ फलित ज्योतिष शास्त्रके अनुसार ग्रहगण अवस्थानुसार क्रमशः वर्ष, मास और दिनके अधिपति हुआ करते हैं। अधिपतिके भेदसे जो प्राणीगणका शुभाशुभ फल हुआ करता है, उसीका नाम ग्रहवर्षादिफल है। ग्रहवर्षादि फलं यत्र, बहुव्री०। २ वह शास्त्र जिसमें ग्रहवर्षादिका फल लिखा हो, बृहत्संहिताके उन्नीसवां अध्याय।

ग्रहवह्नि (सं० पु०) ग्रहस्य वह्निः ६-तत्। ग्रहके लिये स्थापित वह्नि, ग्रहके निमित्त रखी हुई आग। ग्रहयज्ञ देखो।

ग्रहविप्र (सं० पु०) ग्रहाचार्य, गणक या ज्योतिषी। गणक और दैवज्ञ शब्दमें इस देशके ग्रहविप्रोंका विवरण देखो।

दाक्षिणात्यके ग्रहविप्र कानियार-पणिक्करके नामसे प्रसिद्ध हैं, ये लोग पतित हैं। इनकी उत्पत्तिके विषयमें दाक्षिणात्यमें ऐसा प्रवाद है कि, 'पालूरभत्तरी" नामके एक ज्योतिषशास्त्रके पारदर्शी ब्राह्मण पैदल नदीको पार कर रहे थे, दैवयोगसे वे उसीमें बह गये। बादमें बड़ी मुश्किलसे किनारे लग कर किसी थियारजातिके "पायाल" पर (चबूतरे पर) सो गये। घरका मालिक अपनी स्त्रीके साथ लड़ कर चला गया था। थियारकी स्त्रीने अपने पतिका आगमन जान दरवाजा खोला और उस ब्राह्मणको पति समझ कर घरमें ले गई। ब्राह्मण बेचारे सोता नींदोमें थे, इस लिए थियारकी स्त्रीको अभीष्ट सिद्धिमें कुछ भी बाधा न आई। जब ब्राह्मण होशमें आये तब उन्होंने अपनेको किसी स्त्रीके साथ सोते पाया। इससे उनने अपनेको पतित समझा और घर नहीं लौटे। वहीं रह कर उस स्त्रीके साथ सहवास करने लगे। इससे थोड़े दिनोंमें उस स्त्रीके एक पुत्र पैदा हुआ। ब्राह्मणने उसे संपूर्ण ज्योतिषशास्त्र पढ़ाया, जिससे वह बालक ज्योतिषशास्त्रमें पूर्ण दक्ष हो गया। यह "गणकान्" नामसे प्रसिद्ध हो गया, पीछे यह शब्द अपभ्रंश होते होते "कनिकान्" "कनियान्" और "कनियार" हो गया। कनियार लोग ग्रहाचार्यका काम करते हैं। जन्मपत्री बनाने और शुभाशुभ गणना करनेसे इनकी जीविका चलती है। खेती बारी आदि सब कामोंके प्रारम्भमें इनको आज्ञा ली जाती है।

नामसे प्रसिद्ध है। लोकसंख्या प्रायः ५६३२८ है। दरभङ्गाके महाराजको सन्तानोंने यहां जन्मग्रहण किया, इसोसे झञ्झारपुर विशेष प्रख्यात है। कहा जाता है, कि पहले दरभङ्गाके महाराजगण सभो निःसन्तान अवस्थामें प्राणत्याग करते थे। महाराज प्रतापसिंहने इससे अत्यन्त भयभीत हो कर निकटवर्त्ती सुरनम् ग्रामवासी शिव रतनगिरि नामक किसी एक साधुकी शरण ली। साधु झञ्झारपुरमें आ अपने सिरसे एक बाल गिरा कर बोले कि जो मनुष्य झञ्झारपुरमें वास करेगा उसके पुत्र अवश्य होगा। प्रतापने उसी समय उस स्थान पर एक घरकी नीवं डाली, किन्तु घर तैयार हो जानेके पहले ही उनकी मृत्यु हो गई। उनके भाई मधुसिंह मकान बनवा चुकने पर कुछ दिन वहीं रहे थे। दरभङ्गाकी महारानी गर्भवती होनेसे ही इस स्थानपर भेजी जाती हैं। पहले इस स्थान पर किसी राजपूत-वंशीयका अधिकार था, पीछे महाराज छतरसिंहने उनसे यह ग्राम खरीदा था।

इस स्थानको रत्नमालादेवीका मन्दिर विख्यात है। देवीकी अर्चना करनेके लिये बहुत दूरसे मनुष्य आते हैं। पीतलकी चीज प्रस्तुत होनेके कारण भी यह स्थान मशहूर है। इस स्थानके पनबट्टे और गङ्गाजली अत्यन्त सुन्दर होती हैं। बाजारमें अनाजके बड़े बड़े कारखाने हैं। झञ्झारपुरसे हियाघाट मधुबनी, नराया आदि स्थानोंमें सड़कें हो जानेसे व्यवसाय दिनों दिन बढ़ रहा है। बाजारके पाससे दरभङ्गासे पुर्णियां तक एक बड़ी सड़क चली गई है।

इस ग्राममें हिन्दू और मुसलमान दोनोंका वास है। किन्तु हिन्दूकी संख्या कुछ अधिक है।

झञ्झावायु (सं० पु०) झञ्झाध्वनियुक्तो वायुः, मध्यपदलो०। १ झञ्झावात, वह आँधी जिसके साथ पानी भी बरसे। २ वेगवान् वायु, प्रचंड वायु।

झट (हिं० क्रि वि०) तत्क्षण, उसी समय, तुरंत।

झटक (सं० पु०-स्त्री०) अन्त्यज वर्ण विशेष।

"उपासरणे झटकस्य कूपे द्रोणा जलं कोशविनिर्गतश्च।" (अत्रि)

झटकना (हिं० क्रि०) १ झटका देना, हलका धक्का देना। २ झटका देना, झोंका देना। ३ बलपूर्वक किसीकी चीज लेना, ऐंठना।

झटका (हिं० पु०) झटकनेकी क्रिया, झोंका। २ झटकनेका भाव। ३ पशु वधका एक प्रकार। इसमें वह अस्त्रके एकही आघातसे काट डाला जाता है। ४ आपत्ति। ५ कुश्तीका एक पेंच।

झटकारना (हिं० क्रि०) झटकना, किसी चीजके गिराने या नष्ट करनेकी इच्छासे हिलाना।

झटपट (हिं० अव्य०) अतिशीघ्र, फौरन, जल्दी।

झटा (सं० स्त्री०) झट-अच्-टाप्। १ शीघ्र। २ भूम्यामलकी, भू आँवला।

झटाका (हिं० वि०) झड़का देखो।

झटि (सं० पु०) झटति परस्परं संलग्नं भवतीति झट-औणादिक इन्। १ क्षुद्र वृक्ष, छोटा पेड़।

झटिति (अव्य०) झट् क्षिप् झट-इन क्तिन्। १ द्रुत, तेज। २ शीघ्र, जल्दी। इसके पर्याय—स्राक्, अञ्जसा, आह्नाय, सपदि, द्राक्, मंक्षु, सद्यः और तत्क्षण है।

"त्यक्त्वा गेहं झटिति यमुना मञ्जुकुञ्जा जगाम।"

(पदाङ्कदूत)

झड़ (हिं० स्त्री०) १ तालेके भीतरका खटका जो तालीको चोटोंसे हटता बढ़ता है। २ झड़ी देखो।

झड़न (हिं० स्त्री०) १ झड़ी हुई चीज, जो कुछ झड़ कर गिरे। २ झड़नेकी क्रिया या भाव।

झड़ना (हिं० क्रि०) १ कण या बूंदके रूपमें गिरना। २ अधिक संख्यामें गिरना। ३ वीर्यका पतन होना। ४ परिष्कार करना, झाड़ा जाना।

झड़प (हिं० स्त्री०) १ लड़ाई, टंटा। २ क्रोध, गुस्सा। ३ आवेश, जोश। ४ अग्निशिखा, लौ, लपट। ५ झड़ाका देखो।

झड़पना (हिं० क्रि०) १ आक्रमण करना, हमला करना। २ छोप लेना। ३ लड़ना, झगड़ना। ४ बलपूर्वक किसीकी कोई चीज छीन लेना।

झड़पा झड़पी (हिं० स्त्री०) गुत्थमगुत्था, हाथा-पाई।

झड़बेरी (हिं० स्त्री०) १ जङ्गली बेर। २ जङ्गली बेरका पौधा।

झड़वाना (हिं० क्रि०) झाड़नेका काम किसी दूसरेसे कराना।

झड़सातल—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत बल्लभगढ़ जागीरका

ग्रामकुमार (सं० पु०) ग्रामेषु मध्ये कुमारः सुन्दरः। ग्रामसुन्दर, वह जिसका सौन्दर्य ग्रामके सब लोगोंसे अधिक हो। खूबसूरत लड़का।

ग्रामकुमारक (सं० क्ली०) ग्रामकुमारस्य भावः कर्म वा ग्रामकुमार वुञ्। १ ग्रामकुमारका धर्म, सौन्दर्यातिशय। २ ग्रामकुमारका कर्म।

ग्रामकुलाल (सं० पु०) ग्रामे कुलालः, ७-तत्। ग्राम्य-कुलाल, कुम्भकार, कुम्हार।

ग्रामकुलालक (सं० क्ली०) ग्रामकुलालस्य भाव कर्म वा ग्रामकुलाल-वुञ्। १ कुम्हारका धर्म। २ कुम्हारका काम।

ग्रामकूट (सं० पु०-स्त्री०) ग्रामस्य कूट इव वञ्चना प्रधान-त्वात्। शूद्र।

ग्रामकोल (सं० पु०) घरान्न् शूकर।

ग्रामक्रोड़ (सं० पु०-स्त्री०) ग्रामे क्रोडः, ७ तत्। ग्राम्य-शूकर, पालतू सूअर।

ग्रामगह्य (सं० त्रि०) गह वाह्यार्थे क्यप्, ग्रामात् गह्यं, ५-तत्। ग्रामवाह्य, ग्रामसे वहिर्गत, गाँवका बाहर।

ग्रामगह्या (सं० स्त्री०) ग्राम-गह्य-टाप्। ग्रामके बाहर अवस्थित सेना, गाँवके बाहर ठहरी हुई सेना।

ग्रामगेय (सं० क्ली०) एक प्रकारका साम।

ग्रामगोदुह् (सं० पु०) ग्रामे गोधुक्, ७-तत्। ग्राम्य गोप, गाँवका ग्वाला।

ग्रामघात (सं० पु०) ग्रामस्य घातः, ६ तत्। १ ग्राम्य द्रव्यका लूटना, वस्तोके धनका लूटना। २ ग्रामवासीका अमङ्गल।

ग्रामघातिन् (सं० त्रि०) ग्रामार्थं ग्रामवासिना भक्षणार्थं हन्तिपशून् हन् णिनि। १ बहुत मनुष्योंके खानेके लिये पशुहिंसाकारी। २ ग्रामको लूटनेवाला।

ग्रामघोषिन् (सं० पु०) ग्रामे कृषके घोषोऽस्यस्य ग्राम-घोष इनि। १ इन्द्र, देवराज। किसान वर्षाके लिये इन्द्रकी आराधना करते हैं। इस लिए उनका नाम ग्राम-घोषिन् पड़ा है। २ मनुष्य तथा सेनाके मध्य उत्पन्न शब्द।

ग्रामचर्या (सं० स्त्री०) ग्रामस्य चर्या, ६-तत्। ग्राम्यधर्म, स्त्रीका सम्भोग।

ग्रामचैत्य (सं० पु०) ग्रामस्थ पवित्र वृक्ष, गाँवका पवित्र वृक्ष। यथा, पीपल, वट, तुलसी प्रभृतिका गाछ।

ग्रामज (सं० त्रि०) ग्रामे जायते ग्राम-जन ड। ग्राम्य, जो गाँवमें पैदा होता हो।

ग्रामजनिष्पावी (सं० स्त्री०) ग्रामजा चासौ निष्पावी चेति कर्मधा०, पूर्वस्य पुंवद्भावश्च। नखनिष्पावी, एक तरहका धान। धान्य देखो।

ग्रामजा (सं० स्त्री०) खर्जूरवृक्ष, खजूरका पेड़।

ग्रामजात (सं० त्रि०) ग्रामे जातः, ७ तत्। ग्रामोत्पन्न, जो गाँवमें पैदा हुआ हो।

ग्रामजाल (सं० क्ली०) ग्रामस्य जालं, ६-तत्। ग्राम-समूह, बहुतसी बस्तियाँ, जिला।

ग्रामजालिन् (सं० पु०) किसी देशका शासक।

ग्रामजित् (सं० त्रि०) ग्रामं संहतं जयति, जि-क्विप्। १ संहत पदार्थका विश्लेषकारी, सूकत्रित चीजको छितर बितर करनेवाला। २ ग्रामका लूटनेवाला। ३ सेनाको जीतनेवाला।

ग्रामण (सं० त्रि०) ग्रामण्य इदं ग्रामणी-अण्। ग्रामणी सम्बन्धीय, मालिकके लगावका।

ग्रामणी (सं० त्रि०) ग्रामं समूहं नयति प्रेरयति स्व स्व कार्येषु ग्रामणी-क्विप् णत्वं। १ प्रधान, अगुआ। २ ग्रामका अधिपति, गाँवका मालिक। ग्रामं ग्रामधर्मं नयति प्रापयति ग्राम नी-क्विप्। ३ भोगिक, वह जो सदा आमोद प्रमोदमें लीन हो। (पु०) ४ नापित, नौआ। ५ सेनाका मालिक। ६ विष्णु। ७ यक्ष। (स्त्री०) ग्रामेण मैथुनव्यापारेण नयति कालं। ८ वेश्या, रंडी। ९ नीलिका, नीलकी गोटी।

ग्रामणीथ्य (सं० क्ली०) ग्रामण्यः भावः ग्रामणी-त्व छान्दसत्वात् त्वस्य थ्यादेशः। आधिपत्य, स्वामित्व, प्रभुत्व, अधिकार।

ग्रामणीपुत्र (सं० पु०) वेश्याका पुत्र, जारज, हरामीका जना।

ग्रामणीय (सं० त्रि०) ग्रामणीरिवाचरति ग्रामणी क्यच् कर्त्तरि अच्। ग्रामणीके सदृश, मालिकके मानिंद।

ग्रामणीसव (सं० पु०) एकाहयागविशेष, एक प्रकारका याग जो एक दिनमें होता है।

दिन तक दोनोंमें युद्ध चलता रहा, पर जयपराजयका निश्चय नहीं हुआ। आखिरकार एक दिन दैववश सर्दार चहतुसिंहको बन्दूक फट गई, जिससे वे निहत हुए। इसके अनन्तर एक दिन कन्हिया पराजित होने ही वाले थे, किन्तु झण्डासिंहके एक अनुचरने उन्हें धोखा दिया, वे उसको बन्दूककी चोटसे युद्ध करते करते मारे गये। वह दुष्ट जयसिंहसे घूस ले कर ऐसे काममें प्रवृत्त हुआ था। झण्डासिंहकी मृत्युके बाद कन्हियागण सहजहीमें विजयी हो गये। गण्डासिंह ज्येष्ठ भाईके पद पर अभिषिक्त हुए।

झन (हिं० स्त्री०) किसी धातु-खंड आदिका आघातसे उत्पन्न शब्द।

झनक (हिं० स्त्री०) धातु आदिके परस्पर टकरानेका शब्द।

झनकना (हिं० क्रि०) १ झनकारका शब्द करना। २ गुस्सेमें हाथ पैर पटकना। ३ चिड़चिड़ाना। ४ झीखना देखो।

झनकमनक (हिं० स्त्री०) आभूषणों आदिका शब्द।

झनकवात (हिं० स्त्री०) घोड़ोंका एक रोग। इसमें वे अपने पैरको कुछ झटका देते रहते हैं।

झनकार (हिं० स्त्री०) झंकार देखो।

झनझन (हिं० स्त्री०) झनझन शब्द, झनकार।

झनझना (हिं० पु०) १ तमाकूकी नसोंमें छेद करनेवाला एक प्रकारका कीड़ा। (वि०) २ जिसमेंसे झनझनका शब्द निकलता हो।

झनझना—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत मुजफ्फरनगर जिलेकी शामाली तहसीलका एक कृषिप्रधान शहर। यह शहर अक्षा० २९° ३०' ५५" उ० और देशा० ७७° १५' ४५" पू०में, मुजफ्फरनगरसे ३० मील पश्चिमकी ओर यमुना और नहरके मध्यवर्ती प्रदेशमें अवस्थित है। यहां पहले एक ईंटका बना हुआ किला है, जिसमें एक मसजिद तथा शाह अबदल रजाक और उनके चार पुत्रोंकी कब्र है। मसजिद और कब्रें सम्राट् जहांगीरके समयमें बनी थीं। इनकी गुम्बजोंमें नीले रंगके बहुतसे पुष्पादि बने हुए हैं, जो शिल्प-चातुर्यका परिचय दे रहे हैं। यहांकी दरगाह इमाम साहब नामकी अट्टालिका सबसे प्राचीन है। शहरके बगलमें एक नहर है, जिसके कारण बरसातमें बहुत दूर तक डूब जाता है। ज्वर, चेचक और हैजा ये यहांके साधारण रोग हैं। यहां एक थाना और एक डाकघर है।

झनझनाना (हिं० क्रि०) झनझन आवाज होना।

झनझनाहट (हिं० स्त्री०) १ झंकार, झनझन शब्द होनेका भाव। २ झुनझुनी।

झनझोरा (हिं० पु०) एक पेड़का नाम।

झननन (हिं० पु०) झंकार, झनझन शब्द।

झनम (हिं० पु०) चमड़ेसे मढ़ा हुआ एक प्रकारका प्राचीन कालका बाजा।

झनाझन (हिं० स्त्री०) झंकार, झनझन शब्द।

झन्दिपुर—युक्तप्रदेशके आगरा जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २७° २२' उ० और देशा० ७७° ४९' पू० पर आगरासे मथुरा जानेके रास्ते पर प्रायः २६ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है।

झनाहट (हिं० स्त्री०) झनकारका शब्द।

झन्निवाल—अकबरके समयके एक ज्ञानी फकीर। आइन-ए-अकबरीमें इनकी २य श्रेणीमें अर्थात् अन्तर्दर्शी पण्डितोंमें गणना की गई है। इनका यथार्थ नाम दाउद था, लाहोरके निकटस्थ झन्निसे झन्निवाल नाम प्राप्त हुआ था। इनके पूर्वपुरुषगण अरबदेशसे आ कर मुलतानके अन्तर्गत सीतापुरमें रहने लगे थे, वहीं इनका जन्म हुआ था। ९८२ ई०में इनकी मृत्यु हुई थी।

झप (हिं० क्रि० वि०) शीघ्रतासे, तुरंत, झट।

झपक (हिं० स्त्री०) १ बहुत थोड़ा समय। २ पलकोंका परस्पर मिलना, पलकका गिरना। ३ हलकी नींद, झपकी। ४ लज्जा, शर्म।

झपकना (हिं० क्रि०) १ भय खाना, डरना, सहम जाना। २ ढकेलना। ३ पलक गिराना। ४ तेजीसे आगे बढ़ना। ५ लज्जित होना, शरमिंदा होना। ६ ऊंघना, झपकी लेना।

झपका (हिं० पु०) वायुकी तेजी हवाका झोंका।

झपकाना (हिं० क्रि०) पलकोंको सदा बंद करना।

झपकी (हिं० स्त्री०) १ थोड़ी निद्रा, हलकी नींद। २ अनाज ओसानेका कपड़ा। ३ आंख झपकनेकी क्रिया।

झपट (हिं० स्त्री०) झपटनेकी क्रिया या भाव।

ग्रामवासिन् (सं॰ त्रि॰) ग्रामे वसति वस-णिनि। ग्रामका रहनेवाला, जो गाँवमें वास करता हो।

ग्रामवास्तव्य (सं॰ पु॰) ग्रामे वास्तव्यः, ७-तत्। ग्रामवासी, गाँवका वाशिन्दा।

ग्रामशत (सं॰ क्ली॰) एक सौ ग्राम, देश, मुल्क।

ग्रामशतेश (सं॰ पु॰) देशका शासक, मुल्कका हुकुमत करनेवाला।

ग्रामषण्ड (सं॰ पु॰) ग्रामे ग्राम्यधर्मे षण्डः। ग्राम्यधर्मरहित क्लीव, गावका धर्महीन नपुंसक।

ग्रामषण्डक (सं॰ क्ली॰) ग्रामषण्डस्य भावः ग्रामषण्ड मनोज्ञादिं वुञ्। नपुंसकका धर्म वा कर्त्तव्य।

ग्रामसङ्कर (सं॰ पु॰) ग्रामको साधारण प्रणाली, जलनिर्गम नली।

ग्रामसिंह (सं॰ पु॰) कुकुर, कुत्ता।

ग्रामसुख (सं॰ क्ली॰) ग्राम्यसुख देखो।

ग्रामस्थ (सं॰ त्रि॰) ग्रामे तिष्ठति स्था-क। ग्रामवासी, देहाती।

ग्रामहासक (सं॰ पु॰) ग्रामं हासयति हस् णिच् ण्वुल्। भगिनोपति, बहनोय, बहनका स्वामी।

ग्रामाचार (सं॰ पु॰) ग्रामस्य आचारः, ६ तत्। ग्राम्य व्यवहार, गाँवको रहन सहन।

ग्रामाधान (सं॰ क्ली॰) ग्रामस्य ग्रामपोषनार्थं आधीयते आ-धा-ल्युट्। मृगया, शिकार, आखेट।

ग्रामाधिकृत (सं॰ पु॰) ग्रामका मालिक, मुखिया।

ग्रामान्त (सं॰ क्ली॰) ग्रामस्यान्तं, ६-तत्। ग्रामका समीप, गाँवका निकट।

ग्रामान्तर (सं॰ क्ली॰) नित्यकर्म॰। अन्यग्राम, दूसरा गाँव।

ग्रामान्तीय (सं॰ त्रि॰) ग्रामान्ते भवः। ग्रामान्त-छ। ग्रामसमोपमें उत्पन्न, वह जो ग्रामके नजदोकमें अवस्थित हो।

ग्रामिक (सं॰ पु॰) ग्रामे तद्रक्षणे नियुक्तः ग्राम ठञ्। १ वह मनुष्य जिसे ग्रामवाले अपनी रक्षाके लिये अपना प्रधान चुने। २ ग्रामसम्बन्धोय, गावका।

ग्रामिक्य (सं॰ क्ली॰) ग्रामिकस्य भावः ग्रामिक पुरोहितादि॰ यक। ग्रामिकोंका धर्म वा कर्त्तव्य, ग्रामाध्यक्षता।

ग्रामिणी (सं॰ स्त्री॰) ग्रामिन् ङोष्। १ नीलीवृक्ष, नीलका गाछ।

ग्रामिन् (सं॰ त्रि॰) ग्रामः स्वामित्वेन आधारत्वेन वास्यस्य ग्राम-इनि। १ ग्रामस्वामी, गावका मुखिया। २ ग्रामवासी, गाँवका रहनेवाला, देहाती। ३ ग्राम्यधर्मयुक्त, जो गाँवके समस्त धर्मोंको जानता हो।

ग्रामीण (सं॰ पु॰-स्त्री॰) ग्रामे भवः ग्राम-खञ्। १ ग्राम्य कुकुर, कुत्ता। २ मुरगा। ३ कौवा। ४ सूअर। (त्रि॰) ५ ग्रामोत्पन्न, देहातो, गंवार।

ग्रामीणा (सं॰ स्त्री॰) ग्रामीण स्त्रियां टाप्। १ पालङ्गशाक, पालकी नामका साग। २ नीलका पेड़। इसका पर्याय—नीली, नीलिनी, तूली, कालदोला, नीलिका, रजनी, श्रीफली, तुच्छा, मधुपर्णिका, क्लीतका, कालकेशी और नीलपुष्प है।

ग्रामीय (सं॰ त्रि॰) ग्राम छ। ग्रामसम्बन्धीय, गाँवका।

ग्रामीयक (सं॰ पु॰) ग्रामीय स्वार्थे कन्। ग्रामवासी, वह मनुष्य जो गाँवमें रहता हो।

ग्रामेय (सं॰ त्रि॰) ग्रामे भवः ग्राम-ठक्। ग्रामोत्पन्न, देहाती, गंवार।

ग्रामेयक (सं॰ त्रि॰) ग्रामे भवः ग्राम ढकञ्। ग्राम्य।

ग्रामेयी (सं॰ स्त्री॰) ग्रामेय-ङीष्। वेश्या, कसबी, रण्डी।

ग्रामेवास (सं॰ पु॰) ग्रामे वासः, अलुक्स॰। ग्रामवास, गांवमें रहना।

ग्रामेवासिन् (सं॰ त्रि॰) ग्रामे वसति वस-णिनि, अलुक्स॰। ग्रामवासी, जो गाँवमें रहता हो।

ग्रामोफोन (अं॰ पु॰) एक तरहका बाजा जिसमें गोत आदि भरे और इच्छानुसार समय समय पर सुने जा सकते हैं। फोनोग्राफ देखो।

ग्राम्य (सं॰ त्रि॰) ग्रामे भवः ग्राम-य। १ ग्रामोत्पन्न, ग्रामवासी, ग्रामोण। २ मूढ़, बेवकूफ। ३ प्राकृत, असली। (पु॰) ४ मैथुन, स्त्री-प्रसंग। ५ स्तीकार। ६ एक प्रकारका रतिबन्ध। ७ अश्लील शब्द या वाक्य। ८ काव्यका एक दोष। वह काव्य जिसमें गंवारू शब्दोंको अधिकता हो अथवा जिसमें गंवारू विषयोंका वर्णन हो, इस दोषसे दूषित समझा जाता है। ९ मिथुन

झमकड़ा (हिं० पु०) झमक देखो।

झमकना (हिं० क्रि०) १ गहनोंका शब्द करते हुए नाचना। २ लड़ाईमें अस्त्रोंका चमकना। ३ प्रज्वलित होना, प्रकाश करना। ४ तेजी दिखाना। ५ झपकना, छाना। ६ झमझम शब्द करना।

झमका—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाड़का एक छोटा देशीय राज्य। लोकसंख्या लगभग ४००० है। जमींदारीकी आय ४०००) रु० हैं जिनमेंसे १८५) रु० बरोदाके महाराजको कर देने पड़ते हैं।

झमकाना (हिं० क्रि०) १ युद्धमें अस्त्रों आदिका चमकाना। २ चलते समय गहनोंका बजाना और चमकाना।

झमकारा (हिं० वि०) जो झमाझम बरसता हो।

झमझम (हिं० स्त्री०) १ घुंघुरूओं आदिके बजनेका शब्द, छमछम। २ वर्षा होनेका शब्द। ३ चमक दमक। (वि०) ४ प्रकाशयुक्त, जिसमेंसे खूब आभा निकले, जगमगाता हुआ।

झमझमाना (हिं० क्रि०) १ झमझम शब्द होना। २ चमचमाना, जगमगाना।

झमझमाहट (हिं० स्त्री०) १ झमझम शब्द होनेकी क्रिया। २ चमकने या जगमगानेका भाव।

झमना (हिं० क्रि०) नम्र होना, झुकना, दबना।

झमाका (हिं० पु०) १ पानी बरसने या आभूषणों आदिके बजनेका शब्द। २ नखरा, ठसक, मटक।

झमाझम (हिं० स्त्री०) १ घुंघुरूओं आदिके बजनेका शब्द। (क्रि० वि०) २ जिसमें उज्ज्वल कान्ति हो। ३ झमझम शब्द सहित।

झमाट (हिं० पु०) एकहीमें मिले हुए बहुतसे झाड़, झुरमुट।

झमाना (हिं० क्रि०) झपकना, छाना, घेरना।

झमूरा (हिं० पु०) १ वह पशु जिसके घने बाल हों। २ बाजीगरके साथ रहनेवाला लड़का जो बाजीगरको बहुतसे खेलोंमें मदद देता है। ३ ढीले वस्त्र पहना हुआ लड़का। ४ कोई प्यारा बच्चा।

झमेल (हिं० स्त्री०) झमेला देखो।

झमेला (हिं० पु०) १ झगड़ा, बखेड़ा, झंझट। २ मनुष्यका समूह, भीड़ भाड़।

झमेलिया (हिं० पु०) टंटा करनेवाला, झगड़ालू।

झमैया—बनियोंकी एक जाति। ये लोग अपनेको विश्नोईकी एक श्रेणी बतलाते हैं। झाम्बोना ऋषिसे इनका नामकरण हुआ है। बहुत पहलेकी बात है कि ये लोग मुर्देको जमीनमें गाड़ा करते थे, किन्तु अब वह प्रथा सदाके लिये जाती रही।

झम्प (सं० पु०) पृषोदरादित्वात् प्रयोगोयं साध्यः। १ लम्फ, उछाल, फलांग, कुदान, । २ स्वेच्छासे सम्पात, पतन।

झम्प (हिं० पु०) एक प्रकारका भूषण जो घोड़ोंके गलेमें पहनाया जाता है।

झम्पाक (सं० पु०) झम्पेन आकायति गच्छतीति झम्प-आ-कै-क अथवा झम्पेन अकीत गच्छतीति झम्प-अक्-अण्। कपि, बन्दर।

झम्पारु (सं० पु०) झम्पं लम्फं आराति ददातीति झम्प-आ-रा-डु अथवा झम्पेन आच्छर्ति गच्छतीति झम्प-आ-ऋ-उ। वानर, कपि।

झम्पाशी (सं० पु०) झम्पेन स्वेच्छया पतनेन अश्नाति भक्षयति इति झम्प-अश-णिनि। १ मत्स्यरङ्ग पक्षी। २ जलकाक, बगलेकी जातिका एक पक्षी।

झम्पी (सं० पु०) झम्पः अस्त्यस्य इति इनि। १ बन्दर। २ कपि, पूँछहीन बन्दर।

झम्पर—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाडके झालावाड विभागकी एक छोटी जमींदारी। यह बधान नगरसे ८ मील उत्तर-पूर्व बम्बई-बरोदा तथा मध्यभारतीय रेलपथके लखतर ष्टेशनसे ३ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७१७ है। यहांके जमींदार झाला राजपूत हैं और बधानके जमींदारोंके सम्बन्धी है। जमींदारीकी आय ४०१०) रु० की है जिनमेंसे ४६४) रु० करस्वरूप ब्रटिश गवर्मेण्टको देने पड़ते है।

झर (सं० पु०) झृ-अच्। १ निर्झर, पानी गिरनेका स्थान। २ पर्वतावतीर्ण जलप्रवाह, पहाड़से निकलता हुआ जलप्रवाह, झरना, सोता। ३ समूह, झुंड। ४ वेग, तेजी। ५ अविरल वृष्टि, लगातार झड़ी। ६ किसी वस्तुकी लगातार वर्षा। ७ अग्निशिखा, ज्वाला, लपट, लौ। ८ तालेकी भीतरकी कल।

ग्रावहस्त (सं० पु०) ग्रावा अभिषवसाधनं पाषाणो हस्ते ऽस्य बहुव्री० । यज्ञमें एक ऋत्विक् जिसके हाथमें अभिषवका पत्थर रहता है ।

ग्रावायण (सं० पु०) एक प्रवरका नाम ।

ग्रावारी (सं० पु०) एक प्रकारका पत्थर ।

ग्रास (सं० पु०) ग्रस्यते ग्रस कर्मणि घञ् । १ कौर निवाला, एकबार मुखमें जितना भोजन डाला जाय । २ पकड़नेकी क्रिया, पकड़, गिरफ्त । ३ सूर्य या चन्द्रमाका ग्रहण लगना । ४ तृण, घास ।

ग्रासक (सं० त्रि०) १ पकड़नेवाला । २ निगलनेवाला । ३ छिपाने या दबानेवाला ।

ग्रासकट (अ० पु०) घास काटनेवाला, घसियारा ।

ग्रासना (हिं० क्रि०) १ पकड़ना, धरना, निगलना । २ कष्ट देना, सताना ।

ग्रासशल्य (सं० क्लो०) ग्रासे शल्यं, ७-तत् । ग्रासस्थित मत्स्यादिका काँटा, कौरमें मछलीका काँटा, जो निगलनेके समय गलेमें अटक जाता है ।

ग्रासीकृत (सं० त्रि०) अग्रासो ग्रासः कृतः ग्रास-च्वि कृ-क्त । जो निगला गया हो ।

ग्राह (सं० पु०) १ ग्रहण, पकड़ । २ जलचर जन्तुविशेष, मगर, घड़ियाल । ३ ग्रहण, उपराग । ४ ज्ञान, ज्ञान । ५ आग्रह, अनुरोध, हठ, जिद । ६ स्वीकार । (त्रि०) ग्रह-ण । ७ ग्रहीता, ग्रहण करनेवाला । ८ शिशुमार ।

ग्राहक (सं० पु०) ग्रह-ण्वुल् । १ श्येनपक्षी, बाज चिड़िया । २ विषवैद्य, शरीरमें प्रविष्ट विषको चिकित्सक द्वारा दूर करनेवाला वैद्य । ३ चौपतिया नामका साग । ४ एक तरहका औषध जिसके सेवन करनेसे पतला दस्त बन्द हो जाता एवं बधा देखाना होने लगता है । (त्रि०) ५ ग्रहीता, ग्रहण करनेवाला । ६ मोल लेनेवाला, खरीददार । ग्रह-णिच् । ७ ज्ञापक, चाहनेवाला ।

ग्राहलोमशा (सं० स्त्री०) वच ।

ग्राहवत् (सं० त्रि०) ग्राहो ऽस्त्यत्र ग्राह-मतुप्, मस्य वः । ग्राहविशिष्ट, मगरके सदृश ।

ग्राहि (सं० स्त्री०) गृह्णाति व्याधिनं पुरुषं ग्रह बाहुलकात् इञ् । ग्रहणशीला, ग्रहस्वरूपा देवता ।

ग्राहिका (सं० स्त्री०) त्रिवलीका तीसरावल ।

ग्राहिन् (सं० पु०) ग्रह-णिनि । १ कपित्थ, कैथ । (त्रि०) २ मलवन्धकारक, मल रोकनेवाला । ३ ग्राहक, ग्रहण करनेवाला । ४ प्रतिकूल, उलटा ।

ग्राहिणी (सं० स्त्री०) ग्राहिन्-ङीप् । १ क्षुद्र दुरालभा, छोटी जवासा, धमासा, हिंगुवा । २ ताम्रमूला वृक्ष, चीरिणी, खिरनी । ३ श्वेत लज्जावती ।

ग्राहिफल (सं० पु०) ग्राहि मलवन्धकं फलं यस्य, बहुव्री० । कपित्थवृक्ष, कैथका पेड़ ।

ग्राहुक (सं० त्रि०) ग्राह बाहुलकात् उकञ् । ग्रहणशाली, पकड़ने योग्य ।

ग्राह्य (सं० त्रि०) ग्रह-ण्यत् । १ जिसका ग्रहण करना उचित हो, लेने लायक । २ स्वीकार्य स्वीकार करने लायक, अङ्गीकार करने योग्य । ३ उपादेय । ४ ज्ञेय, जानने योग्य । ५ अम्लवेतस ।

ग्रीक (अं० वि०) १ यूनान देशसंबन्धी, यूनान देशका । (स्त्री०) २ यूनान देशकी भाषा । (पु०) ३ यूनान देशका निवासी । *ग्रीस देखो ।*

ग्रीनलैण्ड—अमेरिका महाद्वीप और आइसलैण्ड नामक द्वीपके बीचमें अवस्थित एक बड़ा द्वीप । इसकी सर्व दक्षिण सीमामें फेयरओयेल अन्तरीप अक्षा० ५९° ४९' उ० और देशा० ४३° ५४' प०में अवस्थित है । इसका उत्तरांश हमेशा बरफसे ढका रहता है । इस द्वीपके उत्तर पूर्व कूलमें अक्षा० ७८° में एडामरहर्ल नामक स्थान और पश्चिममें मार्चिसन-साउण्ड तक आविष्कृत हो गया है । प्रायः समस्त पश्चिमकूल वृटिश, ओलन्दाज और दिनेमारके नाविकों द्वारा पुङ्खानुपुङ्खरूपसे आलोड़ित हुआ है । परन्तु इसका पूर्व उपकूल अनाविष्कृत है ।

समस्त द्वीपोंको जलशायी वा वृहत् पर्वतखण्ड भी कहा जा सकता है । इस प्रस्तरस्तूपकी समुद्रउपकूलवर्ती सीमा ऊंची असमान और अनुर्वर है । जलके किनारेसे उक्त प्रस्तरराशि ऊंचे पर्वतके आकारमें तथा तुङ्गशृङ्गादिमें परिणत हो गई है । ये शिखरें प्रायः ६० मील दूरसे समुद्रमें दीखती है । इसकी पश्चिम सीमा समभावसे उत्तर पश्चिम और दक्षिण-पूर्वकी ओर गई है । दक्षिण और पूर्व उपकूलके कुछ अंशोंमे जगह जगह स्रोतप्रवाही समुद्रकी खाड़ी देखनेमें आती हैं । उन खाड़-

झर्झरक (सं० पु०) झर्झर संज्ञायां कन्। कलियुग।

झर्झरा (सं० स्त्री०) झर्झति निन्दति इति झर्झ भर्त्स-से झर्झ-अर् स्त्रियां टाप्। १ वेश्या, रण्डी। २ जल-शब्दविशेष, पानीको आवाज। ३ तारादेवी।

झर्झरावती (सं० स्त्री०) झर्झरा अस्त्यर्थे मतुप्। मस्य वः स्त्रियां ङीप्। १ गङ्गा। २ भण्टी, कटसरैया।

झर्झरिका (सं० स्त्री०) १ तारिणी, तारादेवी। २ धूमसी, पापड़।

झर्झरिन् (सं० पु०) झर्झर अस्त्यर्थे इनि। शिव, महादेव। "त्वं गदी त्वं शरी चापी खट्वांगी झर्झरी तथा"
(भारत शा० २८६ अ०)

झर्झरी (सं० स्त्री०) झर्झर गौरादित्वात् ङीष्। झर्झर वाद्यविशेष, झांझ नामक बाजा।

"गोमुखाडम्बराणाञ्च भेरीनां मुरजैः सह।
झर्झरी डिण्डिमानाञ्च व्यश्रूयन्त महस्वनाः॥" (हरिवंश)

झर्झरीक (सं० पु०) झर्झर-ईकन्। १ शरीर, देह। २ देश। ३ चित्र।

झर्रा (हिं० पु०) १ बया पक्षी। २ एक प्रकारकी छोटी चिड़िया।

झर्रैया (हिं० पु०) बया नामकी चिड़िया।

झल (हिं० पु०) १ दाह, जलन। २ उग्रकामना, किसी विषयकी उत्कट इच्छा। ३ सम्भोगकी कामना, कामकी इच्छा। ४ क्रोध, गुस्सा। ५ झुण्ड समूह।

झलक (हिं० स्त्री०) १ द्युति, आभा, चमक, दमक। २ प्रतिबिम्ब, आकृतिका आभास।

झलकदार (हिं० वि०) जिसमें चमक दमक हो, चमकीला।

झलकना (हिं० क्रि०) १ चमकना, दमकना। २ कुछ कुछ प्रकट होना।

झलका (हिं० पु०) शरीरका वह छाला जो चलने या रगड़ लगनेसे हो गया हो।

झलकाना (हिं० क्रि०) १ चमकाना, दमकाना। २ आभास देना, दिखलाना, दरसाना।

झलकी (हिं० स्त्री०) झलक देखो।

झलज्झला (सं० स्त्री०) झलज्झल इत्यव्यक्तशब्दः अस्त्यस्य इति झलज्झल-अच्। हस्तिकर्णास्फालनजात शब्दविशेष, वह आवाज जो हाथीके कानोंके फड़फड़ानेसे निकलती है।

झलझल (हिं० स्त्री०) चमक, दमक।

झलझलाना (हिं० क्रि०) चमकना, चमचमाना।

झलझलाहट (हिं० स्त्री०) चमक, दमक।

झलना (हिं० क्रि०) १ किसी दूसरी चीजसे हवा लगना। २ हवा वा व्यार करनेके लिए कोई चीज हिलाना।

झलमल (हिं० पु०) थोड़ा प्रकाश, हलकी रोशनी।

झलमला (हिं० वि०) चमकीला, चमकता हुआ।

झलमलाना (हिं० क्रि०) १ चमचमाना। २ निकलते हुए प्रकाशका हिलना डोलना, अस्थिर ज्योति निकलना।

झलरी (सं० स्त्री०) झल-रा-ड। १ हुडुक नामका बाजा। २ झर्झर वाद्यविशेष, बजानेकी झाँझ।

झलवां—बलूचिस्तानकी कलात रियासतका एक विभाग। यह अक्षा० २५° २८' से २८° २१' उ० और देशा० ६५° ११' से ६७° २७' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २११२८ वर्गमील है। इसके उत्तरमें सरवां देश, दक्षिणमें लसबेला राज्य, पूर्वमें काछी और सिन्धु तथा पश्चिममें खारां और मकरां है। सिन्धु और झलवांकी सीमा १८५३-४ ई०में निर्द्धारित हुई और १८६१-२ ई०में बांधी गई। दूसरी जगह अब भी विना निर्द्धारित सीमा है। इस प्रदेशका दक्षिणी भाग ढालू तथा बड़े बड़े पहाड़से घिरा है। इसकी पश्चिममें गर्र पहाड़, दक्षिणमें मध्य ब्राहुई पहाड़ तथा मध्यमें कई एक छोटे छोटे पहाड़ हैं जिनमेंसे दीवानजिल, हुश्तिर, शाशन और ज्राखेल प्रधान हैं। यहां सबसे बड़ी नदी हिंगोल तथा इसकी सहायक नदियां मुश्कई, अर, मूल और हब प्रवाहित हैं।

१७वीं शताब्दीमें यह प्रदेश सिन्धुके रायवंशके हाथसे अरबोंके हाथ लगा। उस समय इसका नाम तुरां था और इसकी राजधानी खुजदारमें थी। फिर गजनवियों और गोरियोंने उसे अधिकार किया। इसके पीछे मुगलोंका राज्य हुआ। चङ्गेजखाँकी चट्टान उसका स्मारक है। सिन्धुमें सूमर तथा सुम्म-वंशके अभ्युत्थानके समय जाटने इस प्रदेश पर अपना अधिकार जमाया, किन्तु १५वीं शताब्दीके मध्य वे मिरवारीसे मार भगाये गये। इस-

गार्नेट और दानेदार कांच-पत्थर मिलता है। मि० मर्चिसनसे लिखा है कि, १८५३ ई०में कप्तान इङ्गलफिल्डने अक्षा० ७७´ उ०में वैसा पत्थर देखा है।

९७० ई०में गुनबिओरन नामक आइसलैण्डवासी किसी व्यक्तिने पहले ग्रीनलैण्डके उपकूल देखा। एरिक रौड़ा नामके एक व्यक्ति जो कि आइसलैण्डके राजा अथलिङ्ग द्वारा कुछ दिनोंके लिए राज्यसे निकाला गया था, गुनबिओन-आविष्कृत उक्त देशमें रहने लगा। गुनबिओनने इसका ग्रोनलैण्ड नाम रख कर इसके विषयमें बहुतसी बातोंका प्रचार किया। इसके बाद फिर ९८६ ई०में एरिकने अपने देशके कुछ आदमियोंको लेकर यहां उपनिवेश स्थापन किया। तदनन्तर और भी कुछ लोग ग्रीनलैण्डके दक्षिणांशमें जा बसे।

ग्रीनलैण्डके लोग ईसा-धर्ममें दीक्षित हैं। ११२१ ई०में मि० आर्नल्ड पहले पहल बिशप् हो गये थे। १४०६ ई०में ग्रीनलैण्ड दक्षिण और पश्चिमांशमें १९० ग्रामोंमें विभक्त हो गया। १५८५ ई०में डेभिस साहबने ग्रीनलैण्डका पुनः आविष्कार किया। १६०५ ई०में दिनेमारके राजा ४र्थ खृष्टीयननेन ग्रोनलैण्ड जय करनेके लिए नौ-सेनापति गोडस्कि लिनडेनोको तीन युद्ध-जहाज दे कर रवाना किया। १८२९ ई०में दिनेमारके राजा ६ठे फ्रेडारिकके आदेशसे कप्तान ग्रे ग्रीनलैण्डका पर्यवेक्षण कर आये। ग्रे साहबने उक्त द्वीपके दक्षिण पूर्वमें ६५° १८´ उ० अक्षांश तक आविष्कार किया। इसके बाद किसी जातिको वास करते नहीं देखा गया।

दिनेमारके उपनिवेशके बाद यह द्वीप उपारनाविक ओमेनाक, याकोवसाभम्, खृष्टीयनशायर इगेडिस मिण्डे, गडाभन, हलष्टिनवर्ग, सुकारटोपन, गउथायव, फिस्कारनेसेट, फ्रेडारिकाशायर और जुलियानशायर आदि कई एक जिलोंमें विभक्त हो गया है।

ग्रीनलैण्डके लोग ताम्रवर्ण, परन्तु इनके सिरके बाल खूब स्याह हैं। शरीर ठिंगना, नाक चपटी और ओठ मोटे होते हैं। ये विश्वासघातक होते हैं। किसीसे दुश्मनी होने पर उसका प्रतीकार किये बिना इनसे निश्चिन्त नहीं रहा जाता। ये विलक्षण बलशाली और चौर्यवृत्तिमें अत्यन्त पटु हैं। शीतऋतुमें ये समुद्रतीरस्थ पर्वतकी गुहाओंमें जा कर रहते हैं। उस समय गुहाएं एक एक ग्रामरूपमें परिणत हो जाती हैं। कहीं कहीं मगरमच्छके चमडेके तम्बुओंमें भी रहते हैं। तिमि-मच्छको हड्डीमें शिशुकाकी खाल मढ़ कर ये उसके दरवाजे बनाते हैं। देशमें उत्पन्न कोमल शैवालदाम इनकी शय्या है। इनमें सन्तानका स्नेह अत्यन्त प्रबल होता है।

ग्रीनलैण्ड इस समय दिनेमारके अधीन है। इसके दक्षिण और पश्चिम भागमें प्रायः दो सौ दिनेमार रहते हैं। ये शिशुकाका चिमडा, सिन्धुघोटक और जल गैंड़ाके दांतोंको यूरोपके नाना देशोंमें बेचा करते हैं।

ग्रीवा (सं० स्त्री०) गीर्यते ऽनया गृ-वन् निपातने साधु। १ कन्धरा, गर्दन। इसका संस्कृत पर्याय—शिरोधि, कन्धि, शिरोधरा और कन्धरा है। २ मन्या, गर्दनकी नस।

ग्रीवाच (सं० पु०) ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

ग्रीवाघण्टा (सं० स्त्री०) ग्रीवाया घण्टा, ७-तत्। ग्रीवा-स्थित घण्टा, घोडेकी गर्दनमें लटकता हुआ घंटा।

ग्रीवारोग (सं० पु०) ग्रीवाजातरोग, गलेका रोग।

ग्रीवाबिल (सं० क्ली०) ग्रीवायां बिलम्, ६-तत्। ग्रीवाके अन्तर्गत गर्त्त, गर्दनके भीतरका गड्ढा।

ग्रीवास्थि (सं० क्ली०) गर्दनकी हड्डी।

ग्रीविन् (सं० पु० स्त्री०) प्रशस्ता ग्रीवा अस्त्यस्य ग्रीवा-इनि। १ उष्ट्र, ऊंट। (त्रि०) २ दीर्घ ग्रीवायुक्त, जिसके गर्दन लंबी हो।

ग्रीष्म (सं० पु०) ग्रसते रसान् ग्रस-मक्। १ गरमीकी ऋतु, गरमीका समय। इसका पर्याय—उष्णक, निदाघ, उष्णोपगम, उष्ण, उष्मागम, तप, घर्म, तापन, उष्णागम और उष्णकाल है। प्राचीन पण्डितोंके मतसे ज्येष्ठ और आषाढ ये दो मास गरमी ऋतु माना गया है, किन्तु आधुनिक ऋतुनिर्णायकगणके अनुसार वैशाख और जेठ ही ग्रीष्म ऋतु है। ऋतु देखो। २ उष्ण, गरम।

ग्रीष्मकर्कटी (सं० स्त्री०) ग्रीष्मजकर्कटी, ग्रीष्मऋतुमें होने वाली ककड़ी या ककुई।

ग्रीष्मका (सं० स्त्री०) पुष्पविशेष, मल्लिका, नेवारीका फूल।

झलाबोर (हिं० पु०) १ साड़ी आदिका चौड़ा अंचल जो कलाबतूनका बुना हुआ होता है। २ कारचोबी। ३ आतिशबाजीका एक भेद। ४ चमक, दमक। (वि०) ५ चमकीला, ओपदार।

झलि (सं० स्त्री०) क्रमुक, सुपारी।

झलिदा (झालदा)—१ छोटानागपुर विभागके अन्तर्गत मानभूमजिलेका एक परगना। इसका चेत्रफल १२८०३८ वर्गमील है।

२ छोटानागपुर विभागके अन्तर्गत मानभूम जिले-के झलिदा परगनेका प्रधान नगर। यह अचा० २३° २२´ उ० और देशा० ८५°५८ पू०में अवस्थित है। पहले यहां बन्दूक तथा उत्कृष्ट अस्त्रादि प्रस्तुत होते थे। अभी शस्त्र-आइन हो जानेसे इसका पूर्व गौरव जाता रहा। यहां एक पत्थरकी गोमूर्ति है। प्रवाद है कि पहले एक कपिला गायने पञ्चकोट-राजवंशके आदिपुरुषको अरण्य-में पालन किया था, बाद वह उसी स्थानमें पत्थर हो गई। यहां लाह तथा छूरी चक्कू बनानेका व्यवसाय अधिक होता है। यहांकी लोकसंख्या प्राय: ४८७७ है।

झलु—युक्तप्रदेशके बिजनौर तहसीलका एक शहर। यह अचा० २९° २०´१०´´ उ० और देशा० ७८°१५´३´´ पू० पर बिजनौर नगरसे ६ मील पूर्व में अवस्थित है। यह शहर कृषिजात द्रव्योंके वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध है।

झलौनी—युक्तप्रदेशके ललितपुर जिलेकी ललितपुर तह-सीलका एक ग्राम। यह चन्देरीसे प्राय: १६ मील उत्तर-में अवस्थित है। इसके निकट ग्वालियरके पथ पर एक पहाड़ है, जिसके ऊपर प्राय: १८ फुट लम्बे एक खण्ड चीर अर्थात् शिला-फलकमें १३५१ सम्वत् (१२९४)-का लिखा हुआ देवनागरी अक्षरमें एक शिलालेख है।

झल्ल (सं० पु०-स्त्री०) झर्च्छ क्विप्, तं लाति ला-क। १ व्रात्यक्षत्रियसे उत्पन्न वर्णसंकर जाति। झाला देखो।

"झल्लो मल्लश्च राजन्यात् व्रात्यात् निच्छिविरेव च।" (मनु)

मनुने इनकी शस्त्रवृत्ति निर्देश किया है।

"झल्ला मल्ला नटाश्चैव पुरुषा: शस्त्रवृत्तय:।
द्यूतपानप्रसक्तारच जघन्या राजसी गति: ॥"

२ विदूषक वा भाँड़। ३ ज्वाला, लपट। ४ हुडुक वा पटह नामका बाजा। (स्त्री०) ५ झल्ला होनेका भाव।

झल्लक (सं० क्ली०) झर्च्छ क्विप् तं लाति ला-क अथवा झल्ल स्वार्थे कन्। कांस्यनिर्मित करताल वाद्यविशेष, कांसेका बना करताल।

"शिवागारे झल्लकञ्च सूर्यागारे च शंखकम्।
दुर्गागारे वंशिवाद्यं मधुरीञ्च न वादयेत्॥" (तिथितत्त्व

झल्लकण्ठ (सं० पु०-स्त्री०) झल्लो लक्षणया तत्स्वर इव कण्ठ: यस्य, बहुव्री०। पारावत, परेवा।

झल्लरा (सं० स्त्री०) झर्च्छ अरन् पृषोदरादि०। १ झाँझर वाद्यविशेष, बजानेकी झाँझ। २ हुडुक, हुडुक नामका बाजा। ३ बालककेश, छोटे छोटे लड़कोंके बाल। ४ शुद्ध। ५ क्लेद, स्वेद, पसीना। ६ बालचक्र।

झल्लरी (सं० स्त्री०) झल्लर देखो।

झल्ला (हिं० पु०) १ बड़ा टोकरा, खाँचा। २ वृष्टि, वर्षा। ३ बौछार। ४ पके हुए तमाखूके पत्तों पर पड़े हुए दाने। (वि०) ५ जो गाढ़ा न हो, जिसमें पानी बहुत मिला हो।

झल्लाना (हिं० क्रि०) बहुत चिढ़ना, खिजलाना।

झल्लिका (सं० स्त्री०) झल्ली-कै-क पृषो०। १ उद्वर्त्तनवट बदन पोंछनेका कपड़ा, अंगोछा, तौलिया। २ टोप्ति, प्रकाश। ३ द्योत, धूप। ४ उद्वर्त्तनमल, शरीरकी वह मैलसे जो किसी चीजसे मलने या पोंछनेसे निकले। ५ सूर्य रश्मिका तेज, सूर्यको किरणोंका तेज।

झल्ली (सं० स्त्री०) झल्ल-ङीष्। झाँझर वाद्य, झाँझ।

झल्लीषक (सं० क्ली०) नृत्यभेद, एक प्रकारका नाच।

'झल्लीषकन्तु स्वयमेव कृष्ण: सुवंशघोषं नरदेव पार्थ।'
(हरिवंश १४८ अ०)

झल्लेलि (सं० पु०) तर्कुलासक, टेकुएकी कील।

झल्लोल (सं० पु०) झर्च्छ क्विप्, तथा भूत: मन् लोल: पृषोदरा०। झल्लेलि देखो।

झष (सं० क्ली०) झष ग्रहे अच्। १ हुडका। २ वन। (पु०-स्त्री०) झष कर्मणि घ। ३ मत्स्य, मीन, मछली। "बंशीकलेन वडिशेन झषीरिवास्मान्।" (आनन्द-वृन्दा०) ४ मकर, मगर। "झषाणां मकरश्चास्मि।" (गीता ५ मीनराशि। ६ ताप, गरमी। ७ ग्रीष्म। ८ जलचरभेद, एक प्रकारका जलचर।

पुरातत्त्व—कहते हैं कि मिसर राज्यकी उन्नतिके साथ ही खृष्टजन्मसे प्रायः १८०० वत्सर पहले ग्रीस राज्यका इतिहास आरम्भ हुआ है। किन्तु ई० ८८४ से पहलेका समुदाय काण्ड गल्प जैसा समझ पडता है।

यूनानी काव्यमें लिखा है कि पहले उक्त राज्यके पर्वत गुहादिमें पेलासगी नामक असभ्य लोग रहते थे। वह कपड़ोंके बदले जङ्गली जन्तुओंके चमड़ेसे अपना अङ्ग आच्छादन करते थे। यूरेनेस नामक मिसरके राज पुत्रने ग्रीस देशमें जा टिटान नामक राक्षसके घर अपना विवाह किया। फिर इन्हीं टिटानोंने विद्रोही हो उनको राज्यच्युत बनाया। यूरेनेसके पुत्र सिटारनने राज्यभार लिया और बापकी भांति दुरदृष्टमें पडनेके भयसे अपने लडकोंको मार डालनेका आदेश दिया था। किन्तु उनकी पत्नीने तत्पुत्र जुपिटरको चुपकेसे ले जा क्रीट द्वीपमें लालन पालन किया। वयःप्राप्त होने पर जुपिटरने पिताको राज्यसे हटाया और विद्रोही टिटानोंको दबाया तथा राज्यसे निकाला था।

जुपिटरने अपना राज्य भाई नेपचुन और प्लुटोको बांट दिया। वह बडे विलक्षण भावसे राजाके शासन कार्यकी देख भाल करते थे। थेसेलीके निकटवर्ती ओलिम्पास पर्वत पर उनका विचार-भवन रहा। ग्रीककाव्यमें सिटारन आदि देवता जैसे वर्णित हुए और ओलिम्पास पर्वतके शिखर देश देवताओंके वासभवन जैसे ठहराये गये है। दर्शनशास्त्र चर्चाके बहुकाल पीछे भी सिटारन, जुपिटर प्रभृति जातीय देवता जैसे पूजे जाते रहे हैं।

इसके बहुत पीछे किसी समयको एशियाखण्डसे हेलेनिस लोग जा करके ग्रीसमें बसे थे। पेलासगी लोगोंके मेलमें रहनेसे किसी समय समस्त ग्रीसवासी हेलेनिस नामसे अभिहित हुए।

पाश्चात्य भूतत्त्ववित् कहा करते हैं कि वही हेलेनिस नामक यूनानी प्राचीन आर्यशाखा-सम्भूत हैं। जिस प्रकार भारतके आर्योंने सप्तसिन्धुके उत्पत्तिस्थानसे क्रमशः दक्षिणाभिमुख भारत आ उपनिवेश स्थापन किया। यूनानियोंने भी मध्य एशियास्थ आदि वासस्थान छोड करके सुदूर पश्चिम समुद्रतीर यूनान देशमें पहुंच करके वास लिया है। बहुत पुराने समयको मध्यएशियामें आर्योंके साथ ग्रीक लोगोंके पूर्वतन आदि पुरुष रह करते थे। उस समय आर्य और ग्रीक दोनों एक ही माकी गोदमें लालित पालित होते और एक ही भाषा बोलते थे। बहुतसी शताब्दियाँ बीत चुकी, वह परस्पर सम्बन्धसूत्र विच्छिन्न करके अपने अपने निर्दिष्ट पथमें जा पडे हैं। देशभेद, आचारभेद और विभिन्न लोगोंके संस्रवसे उनको पुरानी अवस्था और भाषा बदल गयी है। इतना परिवर्तन रहते भी उनकी पुरानी भाषामें ऐसे बहुतसे शब्द मिले हैं, कि पाश्चात्य विद्वान् दोनोंको एक आर्य-जाति संभूत जैसा माननेसे कुण्ठित नहीं होते। (भाषा देखो।) बात यह है कि ग्रीक और आर्य एकवंश सम्भूत हों या न हों सिन्धुतीरवासी प्राचीन आर्योंके प्रथम अवस्थामें भारतके आदिम अधिवासी दस्यु, असुर प्रभृति असभ्य लोगोंके साथ सर्वदा युद्ध विग्रहमें लिप्त रहनेकी तरह पुराने युनानियोंने भी ग्रीस देशमें पेलासगी नामक लोगोंको दमन करके नाना स्थानोंमें आधिपत्य फैलाया था।

हेलेनिस लोग अपने रहनेके स्थानको 'हेलास' कहते थे। ग्रीसका अधिकांश पर्वतमय, बन्धुर और नदीहीन है। इसमे नदीमातृक थेसेली नामक जनपद ही कुछ उपजाऊ था। सुतरां यहाके लोग थोडा बहुत सुख पाते, दूसरे स्थानोंके लोग उपयुक्त आहारादिके अभावसे कष्ट उठाते थे। इसीसे वह अपने सुखवर्धनार्थ धीरे धीरे नाना स्थानोंको जाने लगे।

इनमें दूसरे भी कई एक श्रेणी विभाग रहे। उसमें डोरीय, इओलीय और आइयोनीय प्रधान थे। इनकी कथित भाषाका कुछ अंश मिलते भी परस्पर अनैक्य रहा, सुतरां वह स्वतन्त्र भाषा जैसी समझी जाती थी।

ई०से १८५६ वर्ष पहले इनाकास नामक कोई फिनिकीय परिव्राजक स्वजातिके साथ ग्रीस देखने पहुंचे और पिलोपनिसासके नेपोली उपसागर-कूलमें आर्गस नामक एक नगरी स्थापन की। उक्त घटनाके ३०० वर्ष पीछे ई०से १५५६ वर्ष पहले मिसरवासी सिक्रपलने जा करके आटिका प्रदेशमें उपनिवेश और आथेन्समें महानगरी बसायी थी उन्होंने असभ्य आटिका वासियोंको बहुतसी विद्याएं पढायीं और अपनेको उनका राजा जैसा बतलाया। उन्होंने अपने पार्वतीय आवासकी रक्षाके लिये

बड़ा सुन्दर लगता है तथा सरोवरके किनारे और बगीचोंमें शोभार्थ लगाया जाता है। और भी एक प्रकारका झाऊ होता है, जिसके पत्ते ईषत् आरक्तिम, अति क्षुद्र और गुच्छवद्ध होते हैं। इस तरहके झाऊको लाल झाऊ कहते हैं।

एक प्रकारके झाऊके कच्चे पत्ते ईषत् लवणाक्त होते हैं। मुलतानके आसपासके दरिद्रगण नमकके बदले इसके पत्तोंके पानीसे रोटी बनाते हैं।

बहुतसे झाऊ-वृक्षोंकी डालियोंमें एक प्रकारके कीड़े रह कर फलकी तरह गुटिका उत्पन्न करते हैं। ये गुटिकायें माजूफलके समान और तिक्तगुणसम्पन्न होती हैं। इस वृक्षकी छाल भी दोनों ही चीजें वस्त्रादि रंगने और चमड़ा साफ करनेके काममें आती हैं। सङ्कोचक और बलकारक औषधरूपमें इनका व्यवहार होता है। स्थानीय क्षतादि धोनेके लिए इसका पानी कभी कभी अत्यन्त लाभकारी होता है। समय समय पर इस कार्यके लिए पत्ते भी व्यवहृत होते हैं।

इसका गोंद किसी काममें नहीं आता। अरब देशके सिनाई पर्वत पर एक प्रकारका झाऊ होता है, जिस पर कभी कभी सफेद छत्ते लगते हैं। ये छत्ते वृक्षस्थ शर्करासे उत्पन्न होते हैं। सिन्धु आदि अनेक प्रदेशोंमें झाऊ वृक्षके एक पदार्थसे एक प्रकारका मिष्टरस बना करता है।

झाँई (हिं० स्त्री०) १ प्रतिबिम्ब, छाया, परछाईं। २ छल, धोखा। ३ अंधेरा, अन्धकार। ४ प्रतिशब्द, लौटी हुई आवाज। ५ रक्तविकारसे मनुष्योंके मुख पर होनेवाले एक प्रकारके हलके काले धब्बे।

झाँई माँई (हिं० स्त्री०) छोटे छोटे लड़कोंका एक खेल।

झाँक (हिं० स्त्री०) ताकनेकी क्रिया या भाव।

झाँकना (हिं० क्रि०) १ आड़मेंसे मुंह निकाल कर देखना। २ इधर उधर झुक कर देखना।

झाँकर (हिं० पु०) झंखाड़ देखो।

झाँका (हिं० पु०) १ जालीदार खाँचा। २ झरोखा।

झाँकी (हिं० स्त्री०) १ अवलोकन, दर्शन। २ दृश्य, वह जो देखा जाय। ३ झरोखा, खिड़की।

झाँख (हिं० पु०) एक प्रकारका बड़ा जंगली हिरन।

झाँखना (हिं० क्रि०) झींखना देखो।

झाँखर (हिं० पु०) १ झंखाड़। २ अरहर फसल काटनेके बाद खेतमें लगी हुई खूंटी।

झाँगला (हिं० वि०) ढीलाढाला।

झाँजन (हिं० स्त्री०) झांझन देखो।

झाँजी—आसामकी एक नदी। यह नागा पर्वतके मोकोकचुङ्ग स्थानके निकट निकल शिवसागर जिलेके उत्तरमें बहती हुई ब्रह्मपुत्रमें जा गिरती है। इसकी पूरी लम्बाई ७१ मील है। शिवसागर और जोरहाट विभागोंकी झाँजी सीमा जैसी है। ग्रीष्म ऋतुमें यह सूख जाती है। उतारेके ४ घाट हैं। इस पर आसाम-बङ्गाल-रेलवेका पुल बंधा है।

झाँझ (हिं० स्त्री०) १ काँसेके ढले हुए दो गोलाकार टुकड़ोंका जोड़ा। यह टुकड़ा मजीरेकी तरहका होता है किन्तु आकारमें उससे बहुत बड़ा होता है। टुकड़ोंके बीचमें उभार होता है और इसी उभारमें डोरी पिरोनेके लिये एक छेद रहता है। यह पूजन आदिके समय घड़ियालों और शंखोंके साथ बजाया जाता है। २ क्रोध, गुस्सा। ३ पाजीपन, शरारत। ४ किसी दुष्ट मनोविकारका आवेग। ५ शुष्क सरोवर, सूखा तालाब। ६ विषयकी कामना, भोगकी इच्छा।

झाँझन (हिं० स्त्री०) स्त्रियों और बच्चोंका एक गहना। यह कड़ेकी तरह पैरोंमें पहना जाता है। यह खोखला होता है और झनझन आवाज हो, इस लिये इसमें ककड़ियां भरी रहती हैं। कभी कभी लोग घोड़ों और बैलों आदिकी भी शोभा और झन्झन् शब्द होनेके लिये पीतल या ताँबेकी झाँझन पहनाते हैं, पैंजनी, पायल।

झाँझर (हिं० वि०) १ जर्जर, पुराना, छिन्न भिन्न, फटा टूटा। २ छिद्रयुक्त, छेदवाला।

झाँझरी (हिं० स्त्री०) १ झाँझ नामका बाजा, झाल। २ झाँझन नामक पैरका गहना।

झाँझा (हिं० पु०) १ एक प्रकारका कीड़ा। यह बढ़ी हुई फसलके पत्तोंको बीच बीचमेंसे खा कर फसलको बरबाद कर देता है। इसके कई भेद हैं। इस तरहका कीड़ा सदा तमाकू या मूकलीके पत्तों पर देखा जाता है। २ भांगकी फंकी जो घी और चीनीके साथ भूनी हो। ३ झंझट, बखेड़ा।

आर्गेस और क्रेसफण्टिस मेसिनोयाके राजा हुए। अरिष्ट-डिमासने युद्धमें प्राणत्याग किया था। उनके पुत्र यूरिस्थिनिस और प्रोक्लिसने स्पार्टा राज्य बांट लिया।

ई०से १०७० वर्ष पहले पिलपनिसीयोंने आटिका आक्रमण किया था। उस समय आथेन्सराज क्रोड्रसने अपना जीवन उत्सर्ग करके राज्यकी रक्षा की।

इसीके कुछ समय पीछे क्रोड्रसके बेटोंमें राज्य पर गृहविवादका सूत्रपात हुआ। उससे आथेन्सवासियोंने एककाल राजपद उठा करके क्रोड्रसके बड़े लड़के मिदनको प्रजा साधारणके प्रधान व्यक्ति जैसा चुना था। क्रोड्रसके दूसरे दो लड़कोंने कई आथेन्सवासियोंके साथ एशिया-माइनर पहुंच करके उपनिवेश स्थापन किया। यहां पहले उन्होंने १२ नगर बनाये और प्रदेशका नाम आइयोनिया रख दिया। इसी आइयोन शब्दसे फारसीका यूनान और संस्कृतका यवन शब्द निकला है। आइयोनियाके ग्रीक भी पूर्वकालको भारतवासियोंके निकट यवन कहलाते थे। यवन देखो। उस समय ग्रीक लोग एशिया और युरोपके नाना स्थानोंमें जा करके उपनिवेश लगा रहे थे।

पाश्चात्य पुराविदोंके मतमें उसके बाद समग्र ग्रीस साम्राज्य तीन भागोंमें विभक्त हुआ। प्रथम उत्तर ग्रीस, द्वितीय पिलपनिसास और तृतीय द्वीपपुञ्ज था। साइक्लेडिस, स्पोराडिस और यूबिया आदि द्वीप भी उसमें लगते थे। उत्तर ग्रीसके दक्षिण करिन्थ उपसागर, उत्तर तुर्कस्थान, पूर्व इजीय सागर और पश्चिमको आइयोनीय समुद्र है। इसी राज्यके अन्तर्भुक्त एकार्मानिया और इटोलिया राज्य पश्चिम ग्रीस, डोरिस, फोसिश बिओटिया, आटिका, मेगारिस, लोकरी तथा पानतियाइयोका राज्य एवं स्पार्कियाकी उपत्यका पूर्व ग्रीस कहलाती है।

उत्तर ग्रीसका अधिकांश स्थान पहाड़ी है। उसमें इटा नामक पर्वत ही प्रधान है। वह पूर्व उपकूल यूरिया प्रणालीके तटसे क्रमान्वयमें पश्चिमाभिमुखको इटोलियाको टिमफ्रेसटास पर्वत श्रेणीमें जा मिला है। बीचमें एसप्रोपोटामस उपत्यका, इटा पर्वत, करनानिया और एपिरास पर्वतके साथ उसका मिलान हो न सका। इटा पर्वतको दक्षिणगामी शाखा फोसिसके पारनासिस और करिन्थ उपसागरके उत्तरकूलमें अवस्थित पहाड़में मिल गयी है। ग्रीस विभागके दक्षिण पूर्व दिक्‌को हेलिकोन, सिथिरोन और पारनिश पर्वत है। शेषोक्त पर्वतने आटिकासे बिओटिकाको अलग कर रखा है।

ग्रीसके अपर विभागका नाम पिलपनिसास या मोरिया टापू है। इसके मध्य आकिया, आर्केडिया, आर्गोलिस, करिन्थ, एलिश, लाकोनिक प्रभृति कई क्षुद्र राज्य है। इस विभागकी मध्यभूमि अधित्यकामय है। असंख्य पर्वतोंसे आच्छादित होनेके कारण बीच बीच उसमें विस्तीर्ण अववाहिका, जलमय भूमि और छोटे छोटे ह्रद देख पड़ते है। मोरिया उपद्वीपका उत्तरस्थित टेगेटास और दक्षिणका सिलोनी पहाड़ समुद्रपृष्ठसे प्रायः ५००० फुट ऊंचा है। एलिस, इनाकास और आर्गस नामक स्थानमें विस्तीर्ण समतल क्षेत्र है। अलफियास, यूरोटास, पमिसास और पेनियास नदीमें वत्सरके सभी समयको जल रहता है।

यूबिया व्यतीत ग्रीस राज्यको द्वीपावलीमें साइक्लेडिस और स्पोराडिस द्वीपपुञ्जके बीच जो द्वीप जनमानव परिपूर्ण है, वह निम्नलिखित रूपसे विभक्त हुए है—

१ पश्चिम स्पोरोडिस—हाइड्रो, स्पेजिया, इजिना, पोरस, सालामिस, अङ्गिस्त्रा।

२ उत्तर स्पोराडिस—स्कोपेलस, खिलिड्रोमो, स्क्रियाथोस, स्काइरस।

३ उत्तर साइक्लेडिस—एण्ड्रोस, जिया, थारमिया, टिनो, सिकोनी, साइरा।

४ मध्य साइक्लोडिस—नाक्सस, परोस, आण्टिपरोस, सिफाण्टो, सेरिफोस, मीलो, किमोलोस, पोलिकाण्ड्रो, सिकिनो निओ, अमर्गो।

५ दक्षिण साइक्लोडिस—माण्टोरिन, आनाफी, एष्टीपालिया कार्पिया वा क्रीट, कियस, सामस, लेसबस। एतद्‌व्यतीत एशिया माइनरके तीरवर्ती बहुतसे द्वीप उस समयको ग्रीसके अधीन रहे।

ग्रीस राज्यके मध्य किसी नदीमें नावसे व्यवसाय वाणिज्य करनेको सुविधा नहीं पड़ती। नदियोंको सामान्य पार्वतीय जलस्रोत भी कह सकते है। जो कुछ कुछ विस्तीर्ण है, ग्रीष्मके प्रादुर्भावसे वह भी सूख

चुनाई है। इन सरोवरोंमेंसे अधिकांश ६०० वर्ष पहले महोबाके चन्देल राजाओंके शासनकालमें और कुछ १७वीं या १८वींमें बुन्देला राजाओं द्वारा बने हैं। झाँसीसे प्राय: १२ मील पूर्व अजर सरोवर और उससेभी ८ मील पूर्व कचनेया सरोवर है।

झाँसीके उत्तर भागकी भूमि समतल और कृष्णवर्ण है। यह भूमि मार नामसे मशहूर है और उसमें कपास अच्छी उपजती है। पाहुज, बेतवा (वेत्रवती) और धसान नामको तीन नदियां झाँसीको प्रायः घेरी हुई हैं। वर्षाके समय उन नदियोंमें बाढ़ आ जानेसे झाँसीके अन्यान्य स्थानोंमें आना जाना बन्द हो जाता है। गवर्मेण्टसे रक्षित जङ्गलका परिमाण ७०००० बीघा है। झाँसी परगनेके दक्षिण भागमें वेत्रवती नदीके किनारे घने जङ्गलमें बीमबरगीके योग्य बड़े बड़े वृक्ष हैं, इसके सिवा खैर, पलाश आदिके वृक्षभी पाये जाते हैं। बीम बरगेके अतिरिक्त घास बेच कर भी गवर्मेण्टको यथेष्ट आमदनी होती है। जङ्गलमें बाघ, चीता, लकड़बग्घा, भिन्न भिन्न जातिके हिरन, जङ्गली कुत्ते आदि रहते हैं।

इतिहास—बहुतोंका अनुमान है कि परिहार राजपूतोंने ही सबसे पहले झाँसीमें राज्यस्थापन किया। उसके पहले यह आदिम असभ्य जातिका वासस्थान था। आज भी परिहारगण झाँसीके २४ ग्राम दखल किये हुए हैं। किन्तु उनका स्पष्ट विवरण कुछ भी मालूम नहीं है। चन्देलवंशीय राजाओंके राजत्वकालसे झाँसीका विवरण कुछ कुछ स्पष्ट है। चन्द्रात्रेय देखो। इनके राजत्वकालमें ही झाँसीके पर्वत पर वर्तमान बड़े सरोवर खोदे गये थे। चन्देलराजवंशके बाद उनके अधीनस्थ खाङ्गड़ोंने राज्य अधिकार किया। इन्होंने ही करारदुर्ग बनाया था। १४वीं शताब्दीमें बुन्देला नामक निम्नश्रेणीस्थ राजपूत जातिके एक दलने इस प्रदेश पर अधिकार कर माउनगरमें अपनी राजधानी स्थापित की। उन्होंने करार अधिकार कर अपने नाम पर अभिहित वर्तमान समग्र बुन्देलखण्डमें राज्य फैलाया। क्रमश: बुन्देलावीर रुद्रप्रतापने ओरछा नगर स्थापन कर वहां राजधानी कायम की। वर्तमान अधिकांश सम्भ्रान्त बुन्देला अपनेको रुद्रप्रतापके वंशधर बतलाते हैं। रुद्रप्रताप के परवर्त्ती राजगण समय समय पर दिल्ली सरकारको कर देने पर भी एक तरह स्वाधीनभावसे राज्य करते थे।

१७वीं शताब्दीके आरम्भमें ओरछाके राजा वीरसिंहने झाँसीका दुर्ग निर्माण किया। इन्होंने सलीमकी प्ररोचनासे सम्राट् अकबरके विश्वस्त मन्त्री और प्रसिद्ध ऐतिहासिक अबुलफजलका प्राणनाश किया, इसीसे वे अकबरके कोपानलमें आ पड़े।

१६०२ ई०में वीरसिंहको दमन करनेके लिये एकदल सैन्य भेजी गई। सैनिकोंने उस प्रदेशको तहस नहस कर डाला, वीरसिंह प्राण ले कर भाग चले। इसके बाद उनके प्रभु युवराज सलीम जहाँगीरका नाम धारण कर सिंहासन पर बैठे। उन्होंने पुनः अपना राज्य प्राप्त किया। १६२७ ई०में शाहजहाँके सम्राट् होने पर वीरसिंह विद्रोही हुए, किन्तु वे कृतकार्य न हो सके। सम्राट्ने वीरसिंहको क्षमा कर, उन्हें फिर पूर्व पद पर स्थायी कर तो दिया, पर उनको पहलेकी तरह क्षमता और स्वाधीनता न दी। इसके बाद वहां भयानक विशृङ्खला उपस्थित हुई। ओरछा राज्य कभी तो मुसलमानोंके हाथ, कभी बुन्देला-सर्दार चम्पतरावके और कभी उसके पुत्र छत्रशालके हाथ लगता था। अन्तमें १७०७ ई०को बुन्देला महावीर छत्रशालको सम्राट् बहादुरशाहसे वर्तमान झाँसी तथा निजाधिकृत समस्त भूभाग दखल करनेकी अनुमति मिल गई। किन्तु तिस पर भी मुसलमान सुबादारोंने बुन्देलखण्ड पर आक्रमण करना न छोड़ा। आक्रमणसे बार बार तंग हो जाने पर छत्रशालने १७३२ ई०में पेशवा बाजीरावसे चालित महाराष्ट्रोंको सहायता प्रार्थना की। इस समय महाराष्ट्रीयगण मध्यप्रदेश पर आक्रमण कर रहे थे। छत्रशालका प्रस्ताव सुन कर उसी समय उन्होंने बुन्देलखण्डकी यात्रा की। युद्धके समाप्त होने पर छत्रशालने पुरस्कार स्वरूप अपने राज्यका एक तृतीयांश महाराष्ट्रोंको प्रदान किया। १७४२ ई०में महाराष्ट्रोंने एक प्रपञ्च रचा, जिससे ओरछा राज्य पर आक्रमण कर उन्होंने अन्यान्य प्रदेशोंके साथ उसे भी अपने राज्यमें मिला लिया। उनके सेनापतिने झाँसी नगर स्थापन किया और ओरछासे अधिवासियोंको ला वहां बसा दिया।

भार गृहस्वामी पिताके हाथमें न्यस्त है। पुत्रों के साथ परामर्श न करके वह स्वेच्छानुसार उनका विवाह और किसी व्यवसाय वा कर्मादिमें उन्हें नियुक्त कर सकता था। प्राचीन समयकी यवानियोंके बीच एक ही बात पर पुत्रके अदृष्टका फलाफल पिताकी इच्छाधीन था। यहां तक कि कभी कभी निकट कुटुम्बको एकत्र करके पारिवारिक सभामें लड़केके कर्मफल पर जीवनरक्षा वा जीवननाशका विचार होता था। वह निर्विघ्न तथा परस्पर रक्षित हो ग्रामादिमें रहते थे। प्रति वर्ष गृहस्वामी किसी धर्ममन्दिरमें एकत्र हो प्रति ग्रामके एक जन और नगरके तीन लोगोंको म्युनिसिपाल मजिष्ट्रेट मनोनीत करते थे। यह पद प्रायः धनी व्यक्ति या गांवके जमीन्दारको मिलता था। वह लोग दण्डनायक और धनाध्यक्षका काम करते थे। स्थानीय करनिर्धारण और संग्रह करनेकी सभामें उक्त म्युनिसिपाल मजिष्ट्रेट तथा अपरापर बड़े लोगोंका मत ले करके कार्य चलता था। इसी सभासे सहकारी वा दण्डनायक निर्वाचित हो हरेक जिलाके प्रधान नगरमें रखे जाते थे।

प्रकृत इतिहास—प्राचीन इतिहास-कालकी कुज्झटिकामें अपसृत हुआ है। जिन देवदेवियों और वीर पुरुषोंकी इतिहासगत आश्चर्य घटना सम्बलित कथा सुनी जाती, उस पर केवल दूसरे लोगोंका ही विश्वास जम सकता है। पूर्वको जो पुराणकथा लिखित हुई है और सिक्रप, क्याडमास, दनायुस, खेसियास, हिराक्लिस प्रभृतिका जो उपाख्यान तथा आर्गोनटिक युद्धयात्रा, ट्रययुद्ध एवं कालिडोनिय सूअर-शिकार आदिका जो इतिवृत्त कहा है, उसके सम्बन्धमें प्रकृत तथ्य उद्धार करनेकी ऐतिहासिक विन्दुमात्र भी आशा नहीं रखते कि वह कहां तक ठीक है। ग्रीसमें अद्भुत पराक्रमशाली वीरोंने जन्म ग्रहणका समय (Heroic age) १४०० से १२०० खृष्ट पूर्वाब्दके मध्य निरूपित हुआ है।

(प्रायः ८८० खृष्ट पूर्वाब्दको) स्पार्टा राजवंशमें लाइकारगासने जन्म लिया था। मिसर, भारत प्रभृति नाना स्थान पर्यटन और नानास्थानोंकी रीतिनीति दर्शन करके उनके मनमें धारणा हुई कि चिरस्थायी जातीय शक्ति और एकता सूत्रमें बद्ध करनेके सिवा कोई जाति जगत्में प्राधान्य नहीं पा सकती, सुतरां सर्वसाधारणको पहले ही दैहिक उन्नति आवश्यक थी। लाइकारगासने इस पक्षमें नये नियम प्रवर्तन किये थे कि स्पार्टाका प्रत्येक अधिवासी साहसी तथा बलशाली होता और स्पार्टाको सभी रमणियां बलवान् पुत्र प्रसव करतीं। उक्त नियम यह है—

१ सन्तानको विकलाङ्ग होने पर पर्वतकी गुहामें डाल दिया जावे।

२ जो कोई सतरह वर्षका होने पर बापका घर छोड़ निराले शिक्षागारमें अपरापर युवकोंके साथ लालित पालित और शिक्षित होगा, पितामाताके साथ कोई संस्रव न रखेगा।

३ देशके अक्षर-परिचयको छोड़ करके कोई साहित्य विज्ञानादि पढ़ न सकेगा, क्योंकि उससे साहस तथा युद्धोत्साह घट सकता है।

४ सन्तानको बड़ा होने पर डियाना (रणदेवी)-के उत्सवमें दैहिक बलपरीक्षाके समय कशाघात (कोड़े-की मार) सहना पड़ेगा।

५ स्त्रियोंको बीस वर्ष तक पुरुषोंकी भांति कठोर शिक्षा दी जावेगी। वीरप्रसविनी और वीरसङ्गिनी होनेके लिये उनको ऐसी शिक्षाका प्रयोजन है।

६ पुरुष ३० वर्ष और स्त्री २० वर्षसे पहले विवाह कर न सकेगी।

७ विवाहके पीछे भी साठ वर्ष तक समाजकी मङ्गलकामनासे कोई अधिक स्त्री सहवास कर न सकेगा, करने पर भी ऐसे करना पड़ेगा जिसमें कोई समझ न सके।

८ कोई अपरिचित अतिथिको घरमें रख न सकेगा।

९ कोई मद्यपान वा यथेच्छा व्यवहार कर न सकेगा। इस बारेमें घृणा उत्पन्न करानेके लिये नीचको सराब पिला करके उस पर अत्यन्त निष्ठुर व्यवहार करना चाहिये।

उक्त नियमोंके आधार पर ही पुरुषने अपनी स्त्रीको उसकी अपेक्षा बलवान पुरुषके साथ सहवास करनेका उपदेश दिया और जननीने हृष्टचित्तसे अपने क्षीणकाय तथा दुर्बल सन्तानको परित्याग किया है।

दैव दुर्घटनाके सिवा और किसी प्रकारका विप्लव नहीं हुआ है।

झाँसीमें दैवी और मानुषी आपदका समान उपद्रव है। कभी दीर्घकालव्यापी अनावृष्टि, कभी मुषलधारकी वृष्टि देशको उत्सन्न कर रही है। इसे भी बढ़ कर इसके पूर्ववर्ती महाराष्ट्र और अन्यान्य राजगण ऐसी निष्ठुरताके साथ प्रजासे कर वसूल करते थे कि वे बहुत मुश्किलसे जीविका निर्वाह कर सकती थी और पुनः राष्ट्रविप्लवसे देश तहसनहस हो जाता था। १८५३ ई०में जब यह जिला अंगरेजके अधीन आया, तब यहाँके अधिकांश अधिवासी अत्यन्त दरिद्र और दुर्दशाग्रस्त थे। सभी गृहस्थ महाजनोंके ऋणजालमें फँसे हुए थे। हिन्दुराजाओंके नियमानुसार पिताका ऋण पुत्रको देना पड़ता था, किन्तु ऋण अदा नहीं होने पर महाजन ऋणीकी भूसम्पत्ति नहीं ले सकते थे। अङ्गरेज शासनके साथ जमीन नीलामको प्रथा प्रवर्तित होनेसे अधिवासियोंकी दुर्दशा और भी अधिक बढ़ गई। फिर उसके बाद ही १८५७-५८ ई०की विद्रोहमें दुर्दशा अन्तिम सीमा तक पहुंच गई थी। दुर्भिक्ष और बाढ़की घटना भी न्यारी ही थी। अन्तमें गवर्मेण्टने झाँसी जिलेकी इस तरह नितान्त दरिद्र देख कर प्रजाके हितार्थ १८८२ ई०में वहाँ एक नया कानून पचलित किया। ऋणग्रस्त प्रजाको सर्वस्वान्तसे रक्षा करनाही इस कानूनका उद्देश्य था। अधिकांश गृहस्थ ऋण परिशोधमें असमर्थ हो गये थे। ऐसे समयमें उन लोगोंसे केवल मूलधनही ले लिया जाता अथवा सूद कमा दिया जाता अथवा विना कुछ लिये ही उन्हें मुक्त कर देते थे। इस कामके लिये एक पृथक् जज नियुक्त हुए। इसके सिवा असहाय दिवालिया प्रजाको गवमेंण्ट कम सूदमें रुपया कर्ज देने लगी। किन्तु जब पुनः ऋण शोधका कोई उपाय नहीं देखा जाता तब गवर्मेण्ट उस प्रजाकी सम्पत्ति खरीदने लगी। इस नियमसे प्रजाका बहुत उपकार होने लगा। इसके अतिरिक्त यहाँ गवर्मेण्टका प्राप्य राजस्व और दूसरे स्थानोंसे बहुत कम है।

सिर्फ ललितपुरको छोड़ कर इस झाँसी जिलेके समान अल्प अधिवासीयुक्त जिला युक्तप्रदेशमें दूसरा नहीं है। अङ्गरेज शासनके आरम्भसे यहांकी जनसंख्या बढ़ रही थी, किन्तु कई एक दुर्भिक्षसे उनमेंसे अनेक परलोकको चल बसे। १८६५ ई०से ले कर १८७२ ई० तक इन आठ वर्षोंमें प्रायः ३८६१६ मनुष्य कम गये अर्थात् लोकसंख्या ३५७४४२ से ३१७८२६ हो गई। इसके बादसे लोकसंख्या क्रमशः बढ़ रही है। आजकल लोकसंख्या प्रायः ६१६७५८ है। पूर्व राजाओंके अधिक करके बोझसे, १८५७-५८ ई०के विद्रोही सिपाहियोंके उत्पीड़नसे तथा बाढ़ दुर्भिक्ष, देशव्यापी महामारी आदि विपदसे अधिकांश लोग प्राणत्याग करने लगे और जो कुछ बचे वे देश छोड़ने लगे थे। १८३२ ई०में झाँसीका क्षेत्रफल प्रायः २९२२ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग २८६००० थी। १८८१ ई०में इसका क्षेत्रफल अधिक कम अर्थात् १५६७ वर्गमील होने पर भी लोकसंख्या पहलेसे बढ़ रही है। झाँसीके प्रायः सभी अधिवासी हिन्दू हैं। सैकड़े पीछे चार मुसलमान है। पशुहत्या अधिवासियोंके लिये बहुत ही विरक्तिकर है। जैन और सिक्खोंकी संख्या सबसे कम है। इसके सिवा पारसी और आर्यसमाजी दो चार वास करते हैं। समय समय पर बहुतसी ईसाई सैन्य तथा कर्मचारी आदि यहाँ आ कर रहते हैं। अधिवासी हिन्दुओंमें ब्राह्मणोंकी संख्या चमार छोड़ कर और सब जातियोंसे अधिक है। इसके सिवा राजपूत कायस्थ बनिया, काछी, कुर्मी, अहीर, कोइरी, लोधी आदि जातियोंकी संख्या भी कम नहीं है। आदिम असभ्य जाति भी यहां रहती है। १०७ ग्रामोंमें अहीर, १०२में ब्राह्मण, ६६में राजपूत, ६८में लोधी, ४४में कुर्मी और ७ ग्राममें काछी रहते हैं। राजपूतोंमेंसे अधिकांश बुन्देला जातिके हैं। अनेक नीच और असभ्य जाति निम्न श्रेणीके शूद्र कहलाते हैं। झाँसी जिलेके माऊ, रानीपुर, गुड़सराय, बड़वासागर और भाण्डेर प्रभृति पांच नगरोंमें पांच हजारसे अधिक वास है। झाँसी, नौआबाद नगरमें जिलेकी अदालत, सेनाकी छावनी और म्युनिसपालिटी रहने पर भी यहाँकी लोकसंख्या ३०००से अधिक नहीं है।

कृषि—झाँसीकी भूमि स्वभावतः अनुर्वर है। वृष्टिके अभाव तथा खाड़ी द्वारा कृत्रिम उपायसे जल सींचनेकी असुविधा होनेसे यहाँ अच्छी फसल नहीं लगती है। जब कभी जलका अच्छा प्रबन्ध रहता है तभी

उस समयसे पहले यूनानियोंने जो अद्भुत भास्कर कार्य-युक्त सुन्दर सुन्दर अट्टालिकाएं बनायीं थीं, उसका ध्वंसावशेष देखनेसे आज भी मानवका मन विस्मयरस और आनन्दमें नाचने लगता है।

४०१ खृ० पू०की आर्टाजरकसेसको राज्यच्युत करनेके लिये छोटे काइरासने युद्धयात्रा की थी। किन्तु वह उसी वर्ष कुनाकसाकी लड़ाईमें पराजित और निहत हुए। इस युद्धके लिये काइरासने यूनानी फौज जोड़ी थी। किन्तु ४०१-४०० खृ० पू०को ग्रीक नायक जेनोफन सगर्व प्रत्यावृत्त हुए। ३९९ खृ० पू०को जेनोफन और प्लेटोके अध्यापक विख्यात दार्शनिक सक्रोटिस मर गये।

पिलोपनिसीयों कर्तृक आथेनीय पराजित होने पर स्पार्टावाले धीरे धीरे बलशाली बने थे। प्रथम एलिय (३९९—३९८), द्वितीय कारिन्थीय (३९५-३८७), ३य ओलिन्थिय (३८०-३७९) और चतुर्थ थेबिय (३७८—३६२) युद्धमें उनका वीरत्व सम्यक् प्रकाशित हुआ। इस युद्धविग्रहके समय अद्वितीय योद्धा एजिसिलास स्पार्टाके सेनानायक थे। उसी समय (३६४) कारोनिया तथा करिन्थ, (३७५) अरकोमिनास (३७१) ल्यूकट्रा और (३६२) मानटिनियाकी लड़ाई हुई। इसमें थिवीय वीर इपामिनान्तास मारे गये। ३५९ खृ० पू०को फिलिप मकदूनियाके सिंहासन पर बैठे थे। कुछ काल पीछे वह ग्रीसके सब कामोंमें हाथ डालने लगे। इसीसे आथेन्सके दूसरे मित्र राजाओंने उनका वैसा एकाधिपत्य माना न था। क्रमशः विद्रोहसूत्र पर ग्रीस राज्यमें (३५७-३५५ खृ०पू०) सामाजिक युद्ध उपस्थित हुआ। उस लड़ाईमें आथेन्सराज अपने अधिकृत अनेक राज्य खो बैठे। इसके पीछे (३५५-३४६ खृ० पू०) कई वर्षों तक धर्म युद्ध होता रहा। उस लड़ाईमें मकदूनियाके अधिपति फिलिप सहयोगी थे। इस समयकी (३५२ खृ० पू०) डिमसथेनिसने फिलिपके विरुद्ध सुदीर्घ वक्तृता की उसको 'फिलिपिक्स' कहते हैं। ३३८ खृ० पू०को किरोनियाकी लड़ाईमें आथेनीय और थिबीय लोग फिलिप कर्तृक पराजित हुए। ३३७ खृ० पू०को फिलिप करिन्थकी महासभामें ईरानके विरुद्ध युद्धोन्मुख ग्रीक सैन्यके अधिनायक चुने गये। किन्तु उसी वर्ष मकदूनियाकी विवाहसभामें किसी दस्युने उनका गला काट डाला।

फिलिपके मरने पर बहुतसे लोग उनके पुत्र अलेकसन्दर (सिकन्दर)के विपक्षमें विद्रोही हुए। पीछे यूनानियोंने बाध्य हो उन्हीं वीर युवकको ईरान जानेवाले अपने सैन्यका अधिनायक बना दिया। अलेकसन्दर देखो।

मकदूनियाराजकी श्रीवृद्धिके साथ ही समस्त ग्रीस राज्य सौभाग्यशाली बना था पीछे जब रोमकोंने जा करके मकदूनिया अधिकार किया, ग्रीक लोग स्वाधीनता खो अनेक कष्ट उठाने लगे। इन्होंने अपनी स्वाधीनता बचानेको पिलपनिसासके सभी नगरवासियोंको 'एकियान लीग' नामसे दलबद्ध करके रोमकोंके विरुद्ध युद्ध किया था। परन्तु अपने दुर्भाग्यक्रमसे यह स्वदेशकी रक्षा कर न सके।

१४६ खृ० पू०को रोमक सेनापति कानसाल लुमियासने करिन्थ अधिकार करके समस्त ग्रीस देशको रोमसाम्राज्यभुक्त बनाया था। रोम देखो।

करिन्थ अधिकारके पीछे ग्रीसका इतिहास रोमक इतिहासमें मिलित हुआ है। अन्तिओकास तथा मिथ्रिडाटइडिसके साथ रोमकी, एण्टनी एवं अकटेवियानासके साथ सिजा, पम्पी, ब्रूटास तथा कैसास और अकटेडियानासका युद्ध प्रभृति घटनावली ग्रीसके रङ्गमञ्च पर अभिनीत हुई। उस समय अभागे यूनानियोंको बहुतसा कष्ट उठाना पड़ा था। आगाष्टासके राज्यारोहणकी दो शताब्दियों बाद ग्रीसमें शान्तिराज्य स्थापित हुआ। उस समय ईसाई धर्मने धीरे धीरे अधिवासियोंमें प्रवेश लाभ किया था। जगह जगह गिर्जा बने और बहुतसे यूनानी ईसाकी उक्तियां फैलानेको अपना जीवन उत्सर्ग करके नाना देशोंको चल गए।

इसके अनतिकाल पीछे ही शीतप्रधान उत्तर दिक्से स्लाभोनीय, अलबानीय आदि असभ्य लोग दलके दल आ करके ग्रीसमें लूट मार मचाने लगे।

कनष्टानटाइनके अपना साम्राज्य बांटते समय ग्रीस उनका पूर्व विभाग ठहरा था। परन्तु १२०४ ई०को जब भिनिसीयोंने सिजाके दुर्बल वंशधरोंका राज्य अधिकार किया, ग्रीस भी उन्हींके हाथ लग गया।

पालिटी लगती हैं, एक मऊ-रानीपुरमें और दूसरी झाँसी-नयाबाद नगरमें।

जिलेका सदर झाँसीनयाबाद है जो प्राचीन झाँसी नगरके बहुत समीपमें अवस्थित है। यह प्राचीन नगर ग्वालियर राज्यके अन्तर्गत है और झाँसीनयाबादसे प्रायः ११ गुना बड़ा है। इसी कारण नये नगरकी बहुत असुविधा हुआ करती है। झाँसी जिलेके छिन्न विच्छिन्न तथा भिन्न भिन्न शासनाधिकृत प्रदेशोंको अदल बदल कर जिलेके अन्तर्गत एक दाबमें लानेकी अनेक बार कल्पना हो चुकी है। किन्तु आज तक उसका कोई परिणाम नहीं निकला है।

अनावृष्टि, वृक्षलताशून्य पर्वत और मरु प्रदेशका ताप विकीरणके लिए झाँसी जिलेकी वायु साधारणतः उष्ण और शुष्क है। किन्तु इसकी अबहवा जहाँ तक स्वास्थ्यकर ही मालूम पड़ती है। वर्षका तापांश फारेनहीटका ८०.८° है।

१८८१ ई० तक गत २० वर्षका वार्षिक वृष्टिपात ३५.२४ इंच है। दूसरे वर्ष ५०.८५ इंच वृष्टिपात हुआ है। अधिवासीगण अन्नके अभावसे दुर्बल हैं, सुतरां सामान्य पीड़ा होनेसे ही कातर हो जाते और प्राणत्याग कर देते हैं। मऊ-रानीपुर और झाँसी-नयाबादमें दो दातव्य चिकित्सालय हैं।

२ युक्तप्रदेशान्तर्गत झाँसी जिलेके पश्चिम भागकी एक तहसील। यह अक्षा० २५.८ से २५.३७ उ० और देशा० ७८° १८' से ७८° ५३' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४९८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १४५३७१ है। इसमें २१० ग्राम और झाँसी जिले और तहसीलका सदर तथा बरवा सागर नामके तीन शहर लगते हैं। इसके पर्वतमय भूभाग पर कहीं कहीं पार्श्ववर्ती राजाओंकी ग्रामावली विच्छिन्न और विशृङ्खला भावसे विराजित है। प्रायः १८६ वर्गमील भूमिमें शस्यादि उपजते हैं। इस तहसीलमें १ दीवानी अदालत और ११ थाने हैं।

झाँसीकी रानी (लक्ष्मीबाई)—मध्यप्रदेशके अन्तर्गत झाँसी राज्यके परलोकगत गङ्गाधररावकी रानी। झाँसीकी रानी लक्ष्मीबाईके विषयमें अंग्रेज ऐतिहासिकगण भी खूब प्रशंसा कर गये हैं। मि० मालिसनने अपने सिपाही विद्रोहके इतिहासमें झाँसीकी रानीको "Soul of the conspirators" वा विद्रोहियोंकी प्रधान नायिका बतलाया है। सुतरां झाँसीकी रानीका इतिहास एक तरहसे सिपाही-विद्रोहका इतिहास है।

झाँसीकी रानी लक्ष्मीबाईका जन्म १९ नवेम्बर सन् १८३५को बनारसमें (मोरोपन्त ताम्बेके घर) हुआ था। ये बचपनमें अपने पिताके घर मनूबाईके नामसे परिचित थीं। उस समय मनूकी उमर ३।४ वर्षकी होगी, जब उनकी माता भागीरथीबाईका देहान्त हुआ। इसके बाद मनूके पिता विठूरमें जा कर रहने लगे। मनूने अपनी बाल्यावस्था पुरुषोंके साथ ही बिताई थी। यह बालिका पेशवाके दत्तकपुत्र नानासाहब और रावसाहबके साथ सर्वदा खेला करती थी। बालिका पर बाजीरावका बड़ा स्नेह था। बाजीराव उनकी सम्पूर्ण इच्छाओंकी पूर्ति करते थे। नानासाहब जब घोड़े पर सवार हो कर घूमा करते थे, उस समय मनू भी उनकी अनुसरण करती थी। नानासाहब जब तलवार फिराते थे, तब मनू भी उनकी देखा-देखी तलवार चलाना सीखने लगती थी। इसके सिवा पढ़ने-लिखनेमें भी ये खूब तेज थीं। कहा जाता है, कि भ्रातृ-द्वितीयाके दिन ये नानासाहबका टीका करती थीं। नियतिके अपरिवर्तनीय विधानके अनुसार संसार-क्षेत्रमें इन दोनोंका परिणाम प्रायः एकसा हुआ था।

१८४२ ई०के वैशाख मासमें झाँसीके महाराज गङ्गाधररावके साथ आठ वर्षकी लड़की मनूका विवाह हुआ। महाराजकी पहली स्त्रीका देहान्त हो गया था, इसलिए उनका यह दूसरा विवाह था। नववधूके राजप्रासादमें प्रवेश करने पर महाराष्ट्रीय रीतिके अनुसार ससुरालमें वधूका नया नाम रक्खा गया—"लक्ष्मीबाई"।

कुछ दिन बाद लक्ष्मीबाईके एक पुत्र हुआ, पर तीन मास पूरे भी न हो पाये कि उसका देहान्त हो गया। इस पुत्रवियोगसे गङ्गाधरराव बड़े दुःखित हुए और अन्तमें वे मर गये। उनकी मृत्युके बाद झाँसी राज्य पर ब्रिटिश कम्पनीका अधिकार हो गया। इस विषयमें हम अंग्रेजी ऐतिहासिक मालिसनके विवरणका अनुवाद

इसका अनुष्ठानादि अति निगूढ़ और गभीर रजनीको गुप्त भावसे होता था। इयत्ता नहीं थी, उसमें कितना कुकाण्ड किया जाता। देवके पर्वादिमें नानाप्रकार पूजा, नृत्यगीत, कविकी लड़ाई, मल्ल तथा युद्धक्रीडा होती थी। फिर उपयुक्त लोगोंको पुरस्कार दिया जाता था। ग्रीसके रोमकोंकी अधीनता स्वीकार करने पर उन्होंने भी इनकी देवदेवियोंको ग्रहण किया। वर्तमान पाश्चात्य पौराणिकोंने निम्नलिखित ग्रीक, रोमक और भारतीय देवदेवियोंका सौसादृश्य स्वीकार किया है—

अश्विनी कुमारद्वय	Castor, Pollux	कृष्ण	Apollo
		दुर्गा	Juno
अरुण	Aurora	नारद	Mercury
इन्द्र	Jupiter	पृथिवी	Cybele
अन्नपूर्णा	Annaperenna	राम	Dionysius
काली	Proserpine	लक्ष्मी श्री)	Ceres
काम	Cupid, Eros	वरुण	Neptune
कुमार (कार्तिक)	Mars	वायु	Æolus
कुवेर	Plutus	विश्वकर्मा	Vulcan
यम	Pluto.	स्वाहा	Vesta
यमका कुक्कुर	Cerberus.	हनुमान्	Pan.
सूर्य	Sol		

पाश्चात्य लोग इसी प्रकार अनेक देवदेवियोंकी कथा लिख गये है। उनके मतानुसार यूनानी ज्यूस ((Zeus) "द्यौस्" और एरिनिस् (Erinys) "सरण्यु" जैसा वेदमें वर्णित है।

किन्तु हमारी विवेचनामें हिन्दू और यूनानी देवादिकी उक्त आख्यायिका पढ़नेसे परस्पर विशेषरूप सन्देह निर्णय करनेको विलक्षण सन्देह उठता है। देवतत्त्व देखो।

एशियाके साथ ग्रीसका सम्बन्ध—भारतवर्षकी कथा ग्रीसमें बहुकालसे प्रचलित है। ग्रीसके प्राचीन ऐतिहासिकोंके मध्य ह्वीकोटियास और मिलिटासके ग्रन्थमें इस देशकी बात स्पष्ट रूपसे कही गयी है। यह दोनों ग्रन्थकार ५४६ से ४८६ खृ० पू०के लोग थे। उनके पीछे हिरोडोटासने भारतवर्षके सिन्धुतीर पर्यन्त स्थानका विशेष संवाद ग्रहण किया। हिरोडोटासके समय ४५० खृ० पू० को उनके पर चिकित्सक टिसियासने (४०१ खृ० पू०) अपने वासस्थान पारस्य देशसे भारतके रङ्ग, कपड़े, वानर, शुकपक्षी प्रभृति विषयोंका विवरण संग्रह किया था। सिन्धुके परवर्ती स्थानका संवाद अलेकसन्दरके सहयात्री ऐतिहासिकों और विद्वज्जनों कर्तृक (३२७ खृ० पू०) युरोपमें प्रथम प्रचारित हुआ। इनका सङ्कलित विवरण नष्ट तो हो गया है, परन्तु उसका सारभाग ष्ट्राबो, प्लिनि, एरियान आदि ग्रन्थोंमें मिलता है। मगधराज चन्द्रगुप्तके सभास्थ ग्रीकदूत मेगास्थिनिसने (३०६-२९९ खृ० पू०) युरोपमें भारततत्त्व विशेष रूपसे प्रचारित किया था। उन्हींको अनुसन्धित्साके फलसे ग्रीक और रोमकोंने भारतवर्षीय सर्वविषयके ज्ञानज्योतिकी कथा सुनी। अलेकसन्दर और मेगास्थिनिस देखो।

अलेकसन्दरके पूर्वको ग्रीक देशीय विद्वान् एशियाके विषयसे परिचित थे। मुसलमान ऐतिहासिकोंके ग्रन्थादिमें निम्नलिखित ग्रीक रोमक विद्वानोंके नाम मिलते है—

हिरोडोटास	४५०	खृ० पू०
टिसियस	४००	"
ओनिसिक्रिटास	३२५	"
मेगास्थिनिस	३००	"
ष्ट्राबो	२०	"
पम्पोनियास मेला	२०	"
प्लिनि	७७	"
पेरिप्लास मरि	८०	"
एरिथ्रु ई	८०	"
डायोनिसियास	८६	"
पेरिजिटिस	८६	"
टलेमि	१३०	"
एरियान	१५०	"
क्लेमेसस आलेक	२००	"
सान्द्रिनास	२००	"
यु सिवियास	३२०	"
फेसटास एवियेनास	३८०	"
मार्सियान	४२०	"
कसमास इण्डिकोप्लुष्टे स	५२५	"
ष्टिफेन (वाइजानटियामवासी)	५६०	"

कमिश्नर साहबने ३री जूनको निःसन्दिग्ध-चित्तसे सिपाहियोंकी प्रभुभक्तिका विषय प्रकट किया था। इसके एक या दो दिन बाद दिनदहाड़े दो सेनानिवास जल गये। ५ तारीखको दुर्गकी तरफ बन्दूकोंकी आवाज होने लगी। अधिकारीवर्ग किसी तरफ भी दृष्टिपात न कर आत्मरक्षा और सम्पत्तिरक्षाके लिए उद्यत हुआ। युद्धमें असमर्थ यूरोपीयगण अपनी अपनी सम्पत्ति और परिवारवर्गको ले कर नगरके दुर्गमें जा छिपे। पीछे एक दिन सवेरे समग्र सैनिक दल गवर्मेण्टके विरुद्ध खड़े हुए और अपने अफसरों पर गोली चलाने लगे। प्रायः सभी यूरोपीय मारे गये। सिर्फ एक सेनापतिने किसी तरह भारी चोट खा कर भी अपनी जान बचा ली और घोड़े पर चढ़ दुर्गमें पहुंच गये। उत्तेजित सेनाने सेना-निवासमें खूनकी नदी बहा दी। इसके बाद उन लोगोंने जेलके कैदियोंको छुटकारा दे दिया और कचहरीमें आग लगा दी। अन्तमें उत्तेजित सैनिकों, कारामुक्त कैदियों और विश्वासघातक सिपाहियोंने मिल कर दुर्गको घेर लिया।

७वीं जूनको प्रातःकाल ही कप्तान स्कीनने, दुर्गसे बिना बाधाके अन्यत्र चले जानेका बन्दोबस्त करनेके लिए लक्ष्मीबाईके पास कुछ कर्मचारी भेजे। कहा जाता है, कि उन कर्मचारियोंको मार्गमें ही रोक कर रानीके पास पहुंचाया गया था। रानीने उनको उत्तेजित सैनिकोंके हाथ सौंप दिया। सैनिकोंके अस्त्राघातसे सब मारे गये। यह अंग्रेजोंका विवरण है, किन्तु दत्तात्रेय बलवन्त पारसनवीसके लिखे हुए लक्ष्मीबाईके जीवन-चरित्रमें इसका उल्लेख नहीं है। झाँसीके प्रधान सदर अमीन रानीके नौकरोंके हाथ मारे गये। स्कीन और गर्डन साहबने उस दिन बार बार पत्र लिखे थे। ८वीं जूनको अवरुद्ध अंग्रेजोंको बाध्य हो कर सन्धिसूचक श्वेत पताका फहरानी पड़ी।

श्वेत पताका उड़ती देख सिपाहियोंके अध्यक्षगण दुर्गद्वार पर उपस्थित हुए और कप्तान स्कीनको गम्भीर भावसे शपथ करते देख, शालेमहम्मद नामक एक डाक्टरके द्वारा कहलवाया कि 'यदि अंग्रेज लोग अस्त्र परित्याग पूर्वक दुर्ग समर्पण करें, तो उनका केशाग्र भी स्पर्श नहीं किया जायगा'। यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। दुर्ग-वासियोंने अस्त्र छोड़ दिये। दुर्गसे यात्रा करनेका आयोजन होने लगा। पर अभागोंके लिए छुटकारा न बदा था। दुर्गद्वारसे निकलने भी न पाये थे कि इतनेमें सशस्त्र सैनिकोंने आ कर उन्हें बन्दी कर लिया। अब बाधा पहुंचाने वा आत्मरक्षा करनेका भी कोई उपाय न रहा। वे निरीह भेड़ोंकी तरह चुपचाप खड़े रहे। इसी समय कुछ सवारोंने आ कर कहा—"रेशलदारका हुक्म है कि कैदियोंको मार डालो।" फिर क्या था, स्त्री-पुरुष, बालक-बालिका सबको, मार डाला गया। इनकी लासें तीन दिन तक रास्तेमें ही पड़ी रहीं। पीछे मामूली तौरसे एक तरफ पुरुषोंकी और दूसरी तरफ स्त्रियोंकी समाधि की गई। इस तरह ५०।६० ईसाइयोंके शोणितसे झाँसीके माथे पर कलङ्कका टीका लगाया गया।

उत्तेजित सिपाहियोंने अंग्रेजोंकी हत्या की। छावनी लूट ली। झाँसीके दुर्गमें—झाँसीके सेनानिवासमें उनका प्राधान्य हो गया। इसके बाद उनका राजप्रासाद पर लक्ष्य गया, प्रासाद घेर लिया। उनके दलपतिने रानीसे कहा—"हम लोग दिल्ली जा रहे हैं; इस समय हमें एक लाख रुपये न मिले तो राजप्रासाद तोपसे उड़ा दिया जायगा।" रानी बड़ी प्रत्युत्पन्नमति थीं। उन्होंने, इस विपत्तिसे न घबड़ा कर कहला भेजा कि "मेरा राज्य, मेरी सम्पत्ति सब कुछ परहस्तगत हो गई है। इस समय मैं दारिद्र्यसे पीड़ित हूं—दूसरोंकी मुंहताज हूं—अनाथा हूं। मुझ जैसी अनाथा पर अत्याचार करना आपके देशीय सिपाहियोंके लिए उचित नहीं है।" परन्तु सिपाहियोंने इस बात पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। इधर रानीके पिता सिपाहियोंको शान्त करनेके लिए उनके सर्दारके पास गये। किन्तु सिपाहियोंने उन्हें बांध लिया और कहा—'कुछ रुपये न मिलने पर हम लोग रानीके दामाद सदाशिवराव नारायणको राज-गद्दी पर बैठा सकते हैं। रानीको कुछ उपाय सूझा।' उन्होंने पिताको छोड़ देनेके लिए कहा और अपनी सम्पत्तिमेंसे एक लाख रुपयेके अलङ्कारादि दे कर सिपाहियोंको शान्त किया। सिपाही लोग अर्थलोभसे उत्फुल्ल हो कर "मुल्क खुदाका! मुल्क झाँसीकी रानी लक्ष्मी-

अभिहित किया है। इनके मतमें वह फारसके प्राचीन राजवंशोद्भूत थे। इन्होंने राज्यलाभ करके प्रजासे कर न लेने जैसी प्रतिज्ञा की और छोटे छोटे राजाओं पर आधिपत्य जमाया। पारस्य इतिहासकी मुल्क-उत् तोक गणना इसी समयमें प्रवर्तित हुई।

२य—पार्थिया (पारद)-राजगण।

१ आर्सकिस	१म	२५५	(खृ० पू०)
२ तिरिडोटिस	१म	२५३	„
३ आर्टाविनास	१म	२१६	„
४ फ्रापेटियास		१९६	„
५ फ्राहटिस	१म	१८१	„
६ मिथ्रिडोटिस	१म	१७३	„
७ फाहटिस	२य	१३६	„
८ आर्टाविनास	२य	१२६	„
९ मिथ्रिडोटिस	२य	१२३	„
१० सिनात्रिकेस		८७	„
११ सिनाट्रोकेस		७७	„
१२ फ्राहटिस	३य	७०	„
१३ मिथ्रिडोटिस	३य	६०	„
१४ ओरोडिस	१म	५४	„
१५ फ्राहटिस	४र्थ		
१६ तिरिडेटिस	२य	३७	„
१७ फ्राहटिस	४र्थ		
१८ ओरोडिस	२य	सन् ५ ई०	
१९ भोनोनेस	१म	५	„
२० आर्टाविनास	३य	१३	„
२१ तिरिडेटिस	३य	„	„
२२ सिनामास		„	„
२३ आर्टाविनास	३य	„	„
२४ वरडानेस		४२	„
२५ गोटार्जेस		४५	„
२६ मेहेरडोटिस		५०	„
२७ भोनोनेस २य		५१	„
२८ भोलोजेसिस १म		५१	„
२९ आर्टाविनास ४र्थ		६२	„
३० पाकोरास		७७	„
३१ चोसरोज १म		१०८ ई०	
३२ पार्थामासपटिस		११५	„
३३ चोसरोज २य		११६	„
३४ भोलोजेसिस		१२१	„
३५ „	३य	१४८	„
३६ „	४र्थ	१९२	„
३७ „	५म	२०९	„
३८ आर्टाविनास	५म	२०९	„
३९ आर्टाजिरकसेस १म (शासनवंशीय राजा)		२२५	„

३य—वाकट्रिया (वाह्लिक) राजगण।

वाकट्रियाके इतिहासमें बड़ी गड़बड़ी है। वह कभी स्वाधीन, कभी सीरियाके अधीन रहा। इसका प्राचीन इतिहास अधिक नहीं मिलता। सम्प्रति उन राजाओंकी बहुसंख्यक मुद्राएं प्रकाशित होनेसे इस वंशकी छोटी मोटी तालिका पायी जाती है। अध्यापक विलसनने १म थियोडोटाससे एक संक्षिप्त तालिका लगायी है। इस वंशके राजा लोग सकल स्थानोंके अधिकारी न रहे। प्रत्नतत्त्ववित् कनिङ्हामने इस प्रकार तालिका दी है—

२५६ खृ० पू० डिओडोटास १म, २४३ „ „ २य — वाकट्रियाना (सोगडियाना, वाकट्रिया और मार्जियानासह)

२४७ आगाथोक्लिस, २२७ पाण्टलोन — परोपमिसिडि और नाइसा

२२० यूथिडिमास—वाकट्रियाना, आरियाना, (आरिया, ड्रङ्गिया, आर्कोसिया, परोपमिसिडि) नाइसा, गान्धारिटिस, प्यू केलाओटिस, और तक्षशिला।

१९६ डिमिट्रियास—यह सकल स्थान और राजत्वकालके शेषको पात्तालिन, सुराष्ट्रियाना, लेरिस।

१९० हेलिओक्लिस—वाकट्रियाना और परोपमिसिडि।

आक्रमण करनेके अभिप्रायसे सेना इकट्ठी करने लगे। रानीने उनके विरुद्ध और एक सेना भेजी। अबकी बार सदाशिव बन्दी हुए और झाँसी लाये गये। इसके बाद रानीकी शासनदक्षताको देख कर दुर्द्धर्ष ठाकुर और बुंदेलोंने भी शान्तभाव धारण किया।

रानीने एक शत्रुको पराजित कर बन्दी कर लिया। इसके बाद दूसरे एक शत्रुने उनका सामना किया। झाँसीसे डेढ़ मीलकी दूरी पर ओरछा राज्य है। इस राज्यके दीवान नथेखाँ झाँसी आक्रमण करनेके लिए बीस हजार सेनाके साथ वेत्रवती नदीके किनारे पहुंचे। यह नदी झाँसीसे नजदीक ही है। इस समय रानीके पास अधिक सेना न थी। अंग्रेज गवर्मेण्टने झाँसी अधिकार कर सेनाकी संख्या घटा दी थी, तोप और बारूद आदि भी नष्ट कर दी थी। परन्तु रानी इससे भीत वा कर्तव्यविमुख न हुईं। उन्होंने नई सेना इकट्ठी कर युद्ध करना शुरू कर दिया। उनके आमन्त्रणसे झाँसीके सर्दार लोग सशस्त्र अनुचरोंको ले कर उपस्थित हुए। रानीने अपने बाहुबलसे झाँसीकी रक्षा की थी। पार्श्ववर्ती दतिया और टेहरी राज्यके कर्णधारोंने मौका देख, उक्त राज्य पर आक्रमण किया था, पर वे कृतकार्य न हो सके। दतिया और टेहरी दोनों राज्य ब्रिटिश गवर्मेण्टके अनुग्रहके पात्र हुए।

झाँसीराज्य जब अंग्रेजोंके हाथसे निकल गया था, तब लक्ष्मीबाईने नियमितरूपसे उसका दश मास तक शासनकार्य चलाया था। उनके समयमें सैनिकशृङ्खला, विचारकार्य, शान्तिस्थापन आदि प्रत्येक विषयमें असामान्य कर्मदक्षताके साथ काम लिया जाता था। जो युद्धकुशल साहसी सेनापति उनके विरुद्ध खड़े हुए थे, वे भी रानीकी क्षमता पर मुग्ध हो कर लिख गये हैं कि "रानीके वंशगौरव, सैनिक और अनुचरों पर उनकी असीम उदारता और सर्वप्रकार विघ्न विपत्तियोंमें उनकी दृढ़ताने हमें उनका प्रभूत क्षमतापन्न और भयावह प्रतिद्वन्द्वी कर दिया था।"*

रानी प्रतिदिन दिनके तीन बजे, कभी पुरुषके भेषमें, और कभी स्त्रीके भेषमें दरबारमें उपस्थित होती थी। दीवानी और फौजदारी मामलोंके सिवा राज्यरक्षण और बाहरके शत्रुओंके आक्रमण निवारणके लिए अन्यान्य विषयोंमें भी उनकी विशेष लक्ष्य रहता था। उन्होंने इंग्लैण्डमें भी दूत भेजा था, क्योंकि उनकी ऐसी धारणा थी कि राजपुरुषोंको उनका अभिप्राय जान कर सन्तोष होगा। परन्तु उनकी धारणा फलवती न हुई। राजपुरुषोंको रानी पर सन्देह था, उस सन्देहने अब शत्रुताका रूप धारण कर लिया। अंग्रेज-सेनापति सर हिउरोज रानीके विरुद्ध झाँसीकी ओर चल पड़े।

अंग्रेजी सेनाके झाँसीके विरुद्ध अग्रसर होने पर दरबारमें गड़बड़ी फैल गई थी। झाँसीके ब्रिटिश गवर्मेण्टके अधिकारमें आ जानेसे बहुतसे पुराने कर्मचारियोंकी जीविका नष्ट हो गई थी। रानीने जब अपने अद्भुत साहसके बल पर अंग्रेजोंसे युद्ध करनेका निश्चय कर लिया, तब वहांकी वीर रमणियाँ भी युद्धके आयोजनमें उनकी सहायता करने लगी।

गवर्नर जनरल लार्ड कैनिङ् और बम्बईके गवर्नर लार्ड एल्फिन्ष्टोनने झाँसी अधिकार करना परम आवश्यकीय समझा था। २३ मार्चको अंग्रेजोंने झाँसीके विरुद्ध युद्ध करना शुरू किया था। पीछे ताँतिया टोपी बहुतसी सेना ले कर झाँसीकी सहायता करने आये थे। रणपारदर्शिनी रानी स्वयं दुर्गप्राकार पर खड़ी रह कर सेनाको उत्साहित और उत्तेजित कर रही थीं। परन्तु अंग्रेजोंने अपनी अधिकतर क्षमता और रण-नैपुण्यके कारण विजय प्राप्त की। अंग्रेजी सेनाके नगरमें प्रवेश करने पर लक्ष्मीबाई दुर्गके भीतर चली गई। पहले अंग्रेजोंकी रसद वगैरह करीब करीब निबट चुकी थी, किन्तु ताँतिया टोपीके पराजित होने और उनकी रसद आदि पर अंग्रेजोंका अधिकार हो जानेसे अंग्रेजी सेना क्षमतापन्न हो उठी। और इसीलिए अंग्रेजोंके आक्रमणका प्रतीकार करना रानीके लिए असाध्य हो गया।

दूसरा कोई उपाय न देख, रानीने छिप कर भाग जानेका निश्चय किया। तदनुसार वे ४ अप्रलकी रातको अपने अनुचरोंके साथ दुर्गके उत्तर द्वारसे निकल पड़ीं।

* Sir Hugh Rose's Despatch, April 30th, 1858.

स्थानोंमें मकदूनियावालोंने जा करके उपनिवेश स्थापन किया। सम्राट अशोकके खोदित अनुशासनमें पाच ग्रीक राजकुमारोंका उल्लेख है। यथा—अन्तियोक (Antiochus of Syria), तुरमय (Ptolemy Philadelphos of Egypt), अन्तिगोन (Antigonos वा Gonatas of Macedon), मग (Magas of Kyrene), अलसन्द (Alexander of Epirus)

डिओडोरास और जष्टिनके ग्रन्थपाठसे समझ पड़ता, अलेकसन्दर य डिमस और तक्षशिलाको पञ्जावके किसी किसी स्थानका शासनका भार दे गये थे। किन्तु उनके मरने पर युडिमासने पुरुराज (Porus)-को निहत करके स्वाधीन बननेकी चेष्टा की। इस हत्याकाण्डमें मगधराज चन्द्रगुप्त भी लिप्त थे। उन्होंने ग्रीक सेनापति सिल्यूकासकी कन्यासे विवाह किया था। परन्तु ग्रीक-वीर यूडिमसकी आशा सफल न हुई। पुरुराजके अधःपतनसे चन्द्रगुप्त सिन्धु नदी तीर पर्यन्त अधिकार करके राजचक्रवर्ती बने थे।

पञ्जावके नानास्थानोंसे आपलोडोटास और मिलिन्द (Menander) नामक ग्रीक राजाओंको अनेक मुद्राएं आविष्कृत हुई हैं। यह मुद्राएं एक ओर यूनानी और दूसरी ओर शासनीय वा असंलग्न संस्कृत भाषामें लिपि है। सौराष्ट्रमें शाह राजाओंकी जो स्वर्ण और रोप्य मुद्राएं मिली हैं, वह भी एक दिक् पर यूनानी और अपर दिक् पर संस्कृत वर्णमालामें खोदित हैं। ग्रीक राजा अपनी अपनी मुद्राओंमें भारतवासियोंके अनुकरणसे स्वस्तिक व्यवहार करते थे। आजकल भी ताजक और थोड़े बहुत उजबक लोग मुसलमान होते हुए भी अपनेको सिकन्दर रूमीके वंशधर जैसा बतलाते है। बदख्शांके ताजक सिकन्दरको एक पैगम्बर जैसा समझते हैं। (यवन, हिन्दु धर्म प्रति शब्दोंमें यूनानियोंका दर्शनादि सम्बन्धीय विवरण देखो।)

ग्रुप (अं० पु०) झुण्ड, समूह, गरोह।

ग्रेटप्राइमर (अं० पु०) छापाखानेका एक तरहका बड़ा अक्षर।

ग्रेटब्रिटेन (अं० पु०) इंगलैंड और स्काटलैंड देश।

ग्रेन (अं० पु०) एक जवके बराबर अंगरेजी तौल।

ग्रेनाइट (अं पु०) एक तरहका कठिन आग्नेय प्रस्तर। इसका वर्ण पोले और कुछ कुछ भूरे रंगका होता है। अच्छे तरहके ग्रेनाइट संगमरमरकी नाईं उजले होते हैं। पुलको कोठियां अथवा जहाँ मजबूतीकी आवश्यकता हो वहीं पर ग्रेनाइट काममें लाया जाता है। गरमी लगनेसे ही यह पत्थर बहुत जल्द चटक जाता है। यह कड़े और खुरदरे होनेके कारण इसकी मूर्त्तियां बन नहीं सकतीं और खुदाईका सूक्ष्म कार्य भी इस पर नहीं हो सकता।

ग्रेजुएट (अं० पु०) अंग्रेजी विद्यामें बी० ए० की डिग्री प्राप्त विद्वान।

ग्रेन (अं० पु०) एक अंग्रेजी तौल जो १५ रत्तिसे कुछ ज्यादा होती है।

ग्रैव (सं० लि०) ग्रीवाया भवः ग्रीवा-अण्। १ जो गर्दन पर उत्पन्न हो। (क्ली०) २ एक तरहका आभूषण जो गलेमें पहना जाता है।

ग्रैवाच (सं० पु०) एक ऋषिका नाम।

ग्रैवेय (सं० त्रि०) ग्रीवाया भवः ग्रीवा-ठञ्। ग्रैव देखो।

ग्रैवेयक (सं० क्ली०) ग्रीवायां बद्धः अलङ्कारः, ग्रीवा-ठकञ्। १ ग्रीवाभूषण, गलेमें पहननेका गहना। यथा—हार, माला, हेकल, हँसली प्रभृति। २ हाथीको हैकल। ३ जैन मतानुसार—सोलह स्वर्गोंके ऊपरके नौ विमान। इनमें अहमिंद्र देव रहते हैं। जिस प्रकार अन्य स्वर्गोंमें इंद्र, सामानिक आदि देवोंके भेद हैं और विभूति आदिसे हीनाधिक है उस प्रकार इन विमानोंके देव नहीं होते। सबको समान ऋद्धि और इंद्रियजनित सुख होता है। ये विमान तीन तीनकी पंक्तिसे तिमंजले हैं। उनमें मंदकषायी जीव ही पैदा होते हैं। (तत्वार्थ सूत्रटीका)

ग्रैव्य (सं० त्रि०) ग्रीवाया उत्पन्नः ग्रीवा-ष्यञ्। ग्रैव देखो।

ग्रैष्म (सं० त्रि०) ग्रीष्मे भवः। १ जो ग्रीष्म ऋतुमें उत्पन्न होता हो। २ उष्म संबन्धीय, गरमीका।

ग्रैष्मक (सं० त्रि०) ग्रीष्मे ऋतौ भवः ग्रीष्म-वुञ्। जो गरमियोंमें उत्पन्न होता हो।

ग्रैष्मायण (सं० पु०-स्त्री०) ग्रीष्मस्य ऋषेः गोत्रापत्यं ग्रीष्म अश्वादि' फञ्। ग्रीष्म नामक ऋषिके वंशज।

ग्रैष्मिक (सं० त्रि०) ग्रीष्म ग्रीष्मधर्मं वेत्ति तत्प्रतिपादकं

दुर्गको अधिकार किया और इसका अनेक अंश तोड़ फोड़ डाला। यहांके मार्ग, घाट और बाजार परिष्कार-परिच्छन्न है। प्राचीन झाँसीके पूर्व पार्वत्य प्रदेशमें झाँसी-नयाबाद अवस्थित है। ग्रीष्मकालमें यहाँ अधिक गरमी पड़ती है, उस समय अपराह्न तक छायामें भी तापमान-यन्त्रसे १०८ं ताप रहता है। वर्षाकालमें वेत्रवती नदीमें बाढ़ आ जानेसे चारों ओरका रास्ता बन्द हो जाता है। यहाँ जिलेकी प्रधान अदालत, तहसील, थाना, विद्यालय, औषधालय और डाकघर हैं। लोकसंख्या लगभग ५५७२४ है।

झाँसू (हिं० पु०) धोखेबाज, छल करनेवाला।

झाग (हिं० पु०) जल इत्यादिका फेन, गाज।

झागना (हिं० क्रि०) फेन उत्पन्न होना।

झाङ्कृत (सं० क्लो०) झामित्यव्यक्तशब्दस्य कृतं करणं यत्र, बहुव्री०। १ चरणका अलंकारविशेष, पैरोंमें पहननेका एक प्रकारका गहना, पैंजनी। २ झन झन शब्द।

झाजर—युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° १६´ उ० और देशा० ७७° ४२´ १५´´ पू० पर बुलन्दशहरसे १५ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। हुमायूंके सहयात्री महम्मद खाँ नामक किसी बेलूचीने यह नगर स्थापन किया। बाद यह पलायित और समाजच्युत बदमासका आश्रयस्थान हो गया। सिपाही विद्रोहके समय इस नगरने बहुतसे बेलूची अश्वारोहियोंको देकर अङ्गरेजोंकी सहायता की थी। अभी यह नगर अत्यन्त दरिद्र और हीनावस्थामें पड़ा है। यहां एक डाकघर, थाना और विद्यालय है। नगरके प्रत्येक घरके ऊपर स्थापित करसे चौकीदार पहरू आदिका खर्च चलता है।

झाट (सं० पु०) झट-घञ्। १ निकुञ्ज, लतागृह, ऐसा स्थान जो घने वृक्षों और घनी लताओंसे घिरा हो। २ कान्तार, दुर्गमवन, दुर्भेद्य और घना जंगल। ३ क्षतस्थान प्रभृति परिष्कारकरण, धाव इत्यादिके साफ करनेकी क्रिया।

झाटकपट (हिं० पु०) राजपूतानेके राज-दरबारोंमें अधिक प्रतिष्ठित सरदारोंको मिलनेवाली एक प्रकारकी ताजीम।

झाटल (सं० पु०) झाटं लाति ला-क। घण्टापाटल वृक्ष, मोखा नामका पेड़। यह सफेद और काला होनेके कारण दो प्रकारका होता है। आकको तरह इस वृक्षमेंसे भी दूध निकलता है। इसमें बड़े बड़े पत्ते लगते हैं और फल घंटियोंकी तरह लटके रहते हैं।

झाटा (सं० स्त्री०) झट-णिच् अच् ततष्टाप्। १ भूम्यामलकी, भुइँ आँवला। २ यूथिका, जूही।

झाटामला (सं० स्त्री०) झाट-घञ्। आमला, आँवला।

झाटिका (सं० स्त्री०) झाट् स्वार्थे कन्, टाप् अत इत्वं। १ भूम्यामलकी, भुइँ आँवला। २ जातीपुष्प, जायपत्रीका पेड़।

झाड़ (हिं० पु०) १ पेड़ी रहित छोटा पेड़। इसकी डालियाँ जड़ या जमीनके बहुत पाससे निकल कर चारों ओर खूब फैली रहती हैं। २ रोशनी करनेका एक प्रकारका सामान। यह झाड़के आकारका होता है जो छतमें लटकाया या जमीन पर बैठकीकी तरह रखा जाता है। इसमें कई एक शीशेके गिलास लगे रहते हैं जिनमें मोमबत्ती, गैस या बिजली आदिका प्रकाश होता है। ३ झाड़के आकारमें दीख पड़नेवाली एक प्रकारकी आतिशबाजी। ४ एक प्रकारकी घास जो समुद्रमें उत्पन्न होती है। इसका दूसरा नाम जरस या जार भी है। ५ गुच्छा, लच्छा। (स्त्री०) ६ झाड़नेकी क्रिया। ७ डाँटडपट कर कही हुई बात। ८ मन्त्रसे झाड़नेकी क्रिया।

झाड़खंड (हिं० पु०) जङ्गल, वन।

झाड़ झंखाड़ (हिं० पु०) १ वे झाड़ियाँ जिसमें बहुत काँटे हों। २ अप्रयोजनीय वस्तुओंका समूह, व्यर्थकी निकम्मी चीजोंका ढेर।

झाड़दार (हिं० वि०) १ सघन, घना। २ कँटीला, काँटेदार (पु०) ३ बड़े बड़े बेल बूटे बने हुए एक प्रकारका कसीदा। ४ बड़े बड़े बेल बूटे बने हुए एक प्रकारका गलीचा।

झाड़न (हिं० स्त्री०) १ झाड़ू देने पर निकली हुई वस्तु। २ गर्द इत्यादि दूर करनेका कपड़ा।

झाड़ना (हिं० क्रि०) १ धूल इत्यादिको साफ करना, झटकारना, फटकारना। २ किसी चीज पर पड़ी हुई मैलको दूसरी चीजसे हटा देना। ३ झाड़ू इत्यादिसे

डौ। १ चन्द्र, चाँद। २ कर्पूर, कपूर। ग्लायन्ति ग्लै-डौ। ३ हृदयकी नाड़ी।

ग्लौचुकायनक (सं० त्रि०) ग्लुचुकायनि भक्तिः सेव्यो ऽस्य ग्लुचुकायनि वुञ्। ग्लुचुकायनिका सेवक।

ग्वाड़ा (हिं० पु०) १ गुच्छ, घेरा, वृत्त। २ घरके चारो ओरका बाड़ा।

ग्वार (हिं० स्त्री०) गोराणी, एक तरहका पौधा। इसके फलको तरकारी और बीजको दाल होती है। चौपाए इसके पत्ते बहुत रुचिसे खाते हैं। यह वर्षाके आरम्भमें बोई जाती और जाड़ेके मध्यमें तैयार हो जाती है। इसके फलका गुण—बादी, मधुर, भारी, दस्तावर, पित्त नाशक, दीपक और कफनाशक है। इसको सेवन करनेसे रतौंधी दूर होती है। कौरो, खुरथो।

ग्वारनट (अं० स्त्री०) एक तरहका सुन्दर रंगीन रेशमी वस्त्र।

ग्वारपाठा (हिं० पु०) घृतकुमारी, घीकुआँर।

ग्वारिन (हिं० स्त्री०) गोपकी स्त्री, ग्वालिन्।

ग्वारो (हिं० स्त्री०) ग्वार देखो।

ग्वाल (हिं० पु०) अहीर, गोप।

ग्वाल—एक पुराने हिन्दी कवि। १६५८ ई०को उनका जन्म हुआ।

ग्वालककड़ी (हिं० स्त्री०) एक तरहका जंगली चिचड़ा। इसके बीज, जड़ और पत्ते औषधके काम आते हैं। लाल रंगके इसमें एक तरहके छोटे फल भी लगते हैं।

ग्वालककरी (हिं०) ग्वालककड़ी देखो।

ग्वालकवि—युक्तप्रदेशके मथुरा-नगरवासी एक भाट। १८१५ ई०को उनका दौर दौरा था। साहित्यमें वह बड़ प्रवीण थे। उनके प्रधान ग्रन्थ यह है—१ साहित्यभूषण, २ साहित्यदर्पण, ३ भक्तिभाव, ४ शृङ्गारदोहा, ५ शृङ्गार-कवित्त। उन्होंने नखशिख, गोपीपचीसी, यमुनालहरी (१८२२ ई०) आदि हिन्दीकी छोटो मोटी किताबें भी लिखी हैं। यह देवदत्त और पद्माकरके समसामयिक थे।

ग्वालदाड़िम (हिं० पु०) एक तरहका क्षुप या पेड़। यह मालकांगनीको गीतला होता और अफगानिस्तान, पंजाब तथा उत्तर भारतवर्षमें होता है।

ग्वालपाड़ा—१ आसाम प्रदेशके पश्चिममें एक जिला। यह अक्षा० २५° २८ तथा २६° ५४´ उ० और देशा० ८९° ४२´ एवं ९१° ६´ पू०के मध्य ब्रह्मपुत्र नदीके दोनों कूल पर अवस्थित है। इसके उत्तर भूटान राज्यस्थ पर्वतमाला तथा दक्षिणमें पार्वतीय गारो जिला, पूर्वमें कामरूप और पश्चिममें रङ्गपुर जिला, जलपाइगुडी जिला तथा कोच-विहार राज्य है। भूपरिमाण लगभग ३९६१ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ४६२०५२ है। ब्रह्मपुत्र नदीके बायें तट पर ग्वालपाड़ा नगर है। यहां जिलाके विचार-विभाग और सदर अदालत है।

जिस स्थान पर ब्रह्मपुत्र नद वक्रगतिसे क्रमशः दक्षिणाभिमुख हुई है, ब्रह्मपुत्रकी उसी छोटी उपत्यका पर बहुतसे मनुष्योंके वासस्थान हैं। नदीके बायें कूल पर आठ मीलसे अधिक विस्तृत समतलभूमि देखी नहीं जाती। नदीके उत्तरतीरवर्ती भूमिसमूहमें खेती होती है। ग्रामकी चारो ओर धान्यक्षेत्रके मध्य बहुतसे फलशाली वृक्ष देखे जाते हैं। जिलाकी उत्तरी सीमामें जंगलमय गिरिमाला है, जिसके ऊपर दूरस्थ बर्फसे ढकी हुई हिमालयकी चोटी है। ये सब दृश्य ऐसे सुंदर हैं कि देखनेसे ही नयन और मन तृप्त होते हैं। पहाड़के ऊंची भूमि पर गेरूमट्टी, ग्रेनाइट और बालूके पत्थर देखनेमें आते हैं।

इस जिलाके उत्तर भूटान पर्वतश्रेणीसे मानस, गदाधर और अङ्कोश नामकी नदियां पूर्वद्वारके मध्य प्रवाहित हो ग्वालपाड़ा जिलामें ब्रह्मपुत्र नदीसे मिली हैं। इन नदियोंमें सब ऋतुमें वाणिज्य द्रव्य ले जानेके लिये बड़ी बड़ी नाव आती जाती है। खरस्रोता ब्रह्मपुत्र नदीने अपने प्रबलवेगसे बहुत स्थानको काट जलप्लावित कर दिया है तथा कहीं बालू जमा हो कर नदीके बीच छोटे छोटे टापूसे बन जाता है। इस नदीमें प्रतिवर्ष भयानक बाढ़ आती जिस कारण बहुतसे ग्राम भस जाते और लाखोंकी क्षति होती है।

पूर्वद्वारमें गवर्मेण्टके अधिकृत वन समूहका भूपरि-माण लगभग ७८७ वर्गमील है। ग्वालपाड़ा जिलामें बाघ, गैंडा और महिषादि नाना प्रकारके जङ्गली जन्तु देखे जाते हैं। प्रायः तीस वर्ष पहले राजस्वविभागसे

यह राज्य इसी वंशको जमानत पर दे दिया गया। इस समय राजा गोपालसिंहकी उमर यद्यपि सत्तरह वर्षकी थी, तो भी सिपाही विद्रोहमें इन्होंने गवर्मेण्टकी ओरसे जैसी वीरता दिखलाई थी, वह प्रशंसनीय है। इस क्षतज्ञतामें गवर्मेण्टने उन्हें १२५००) रु०की खिलअत दी। इनके दत्तकपुत्र उदयसिंह वर्तमान सरदार १८८४ ई०में राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए थे। ये भी 'राजा' की उपाधिसे भूषित हैं। ११ तोपोंको सलामी है।

पहले झाबुआ एक विस्तृत राज्य था। अभी यह बहुत सङ्कीर्ण हो गया है, राज्यका अधिकांशही पर्वताकीर्ण है। ये सब पहाड़ १से ६ मील दूर तक उत्तर-पश्चिमकी ओर विस्तृत है। उपत्यका प्रदेशमें मही, अनस और नर्मदा नदीकी उपनदियां प्रवाहित हैं। यहांकी जमीन बहुत कुछ उत्कृष्ट है। सब पर्वत जंगलसे घिरे है और उनमें लोहे इत्यादिकी खान हैं, किन्तु उपयुक्त परिश्रमके अभावसे वे किसी काममें लाये नहीं जाते हैं। अनाजकी फसल भी यहां अच्छी होती है। जुन्हरी, तण्डुल, मूंग, उर्द, बादली और सामली वर्षाकालमें उपजती है। गेहूं और चना रब्बीमें प्रधान है। कपास और अफीम भी कुछ कुछ उत्पन्न होती है। चना और गेहूंकी रफतनी विदेशको होती है। पिटलावर तथा अन्यान्य समतल प्रदेशमें ईख उपजती है। यहाँके बगीचेमें अदरक, लहसुन, प्याज तथा सब प्रकारकी साग सब्जी पैदा होती है। प्रस्थचेत्र कहीं कहीं नदीके किनारे और अन्यान्य उर्वर स्थानमें विच्छिन्न है। हर एक प्रजा कितनी जमीन आबाद करती है, उसका निर्द्धारण करना कठिन है। इसीसे जमीनका परिमाण न ले कर केवल गृहस्थके बैलके ही अनुसार मालगुजारी नियत की जाती हैं। भील पटेल अर्थात् मण्डलगण वंशपरम्पराक्रमसे राजस्व वसूल करते आ रहे हैं।

झाबुआ राज्यके अधिकांश अधिवासी भील और भीलाल जातिके हैं। ये बहुत परिश्रमी और कृषिनिपुण होते हैं। लोकसंख्या प्रायः ८०८८९ है।

झाबुआ राज्यमें झाबुआ, रानापुर, थाण्डला और रम्भापुर नामके चार नगर लगते हैं। इन नगरोंमें विद्यालय है। जो कुछ हो यहां विद्याकी उतनी उन्नति नहीं है। यहांके राजा ५० अश्वारोही और २०० पदातिक सैन्य रखते हैं। इस राज्यमें तीन सड़कें गई हैं। आमदनी प्रायः १२००००) है।

शासन-कार्य यहांके राजा और दीवानसे चलाया जाता है। राजाके हाथमें केवल न्यायविचारकी क्षमता है। जब कभी भीलोंमें खून खराब होता है, तो राजा पोलिटिकल एजेण्टको सूचना देते हैं। खूनो मामला कभी कभी पञ्चायतसे भी तै हो जाता है। फौजदारी और दीवानी मामला राजा तथा दीवानके हाथ है।

२ मध्यभारतके भोपावर एजेन्सीके शासनाधीन झाबुआ राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२°४५´उ० और देशा० ७४° ३८´पू० पर झालोदसे माउ नगरके रास्ते पर अवस्थित है। नगरके चारों ओर मट्टीका बना हुआ एक प्राचीर है। इस नगरके पूर्व प्रान्तमें एक पर्वत और चारों ओर सरोवर हैं। सरोवरके उत्तर प्रान्तमें ऊँचा राजप्रासाद और उसके पश्चिममें नगर है। प्रासादके ऊपर वृक्षोंसे सुशोभित छोटे छोटे पहाड़ हैं। झाबुआ नगरकी सड़क कच्छपकी पीठकी नाईं भासमान है। सरोवरके किनारे विद्युताहत झाबुआके राजाका एक स्मृतिचिह्न विद्यमान है। इस नगरको जलवायु अच्छी नहीं है। यहां विद्यालय, डाकघर और दातव्यचिकित्सालय है। लोकसंख्या प्रायः २३५४ है।

झामक (सं० क्ली०) झाम-स्वुल्। अत्यन्त पक्व इष्टक, जली हुई ईंट, झाँवाँ।

झामका—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत गुजरातके काठियावाड़को एक छोटी जमीन्दारी। यह कुन्धावाड़ नामक स्टेशनसे १० मील दक्षिण भवनगर-गोण्डल रेलपथके धोराजी शाखा-रेलपथ पर अवस्थित है।

झामती (झाँपती)—सिन्धुप्रदेशके मीरोंका राजकीय जहाज। ये सब जहाज बृहत् और प्रशस्त है। कोई कोई जहाज १२० फुट लम्बा और १८½ फुट चौड़ा होता है। इसमें ४ मस्तूल लगे रहते हैं। हर एक झामतीमें कमसे कम दो चौड़ी कोठरियाँ रहती है। यह केवल २½ फुट जलको चीरता हुआ जाता है। तीस माँझी ६ डांड खे कर झाँपतीको ले जाते हैं। कराची और मुगालभिनमें यह बनाया जाता है।

है। यहांके ग्वालपाडा, धुवडी, योगीगोफा, बिजनी, गोरोपुर तथा सिङ्गिमारी नगर ही प्रधान वाणिज्यस्थान है।

सुचारु रूपसे विचारकार्य चलानेके लिये यह जिला दो उपविभागमें विभक्त हुआ है। यहां सब मिलाकर ८ थाना है।

२ उक्त जिलेका एक विभाग। यह आसाम प्रदेशस्थ गारो पर्वत और ब्रह्मपुत्र नदके मध्य अक्षा० २५° ५२´ तथा २६° ३०´ उ० और देशा० ९०° ६ एवं ९१° ६´ पू०में अवस्थित है। इसका दक्षिण-पूर्वांश उक्त नदीके ऊपर कूल तक विस्तृत है तथा कहीं कहीं छोटी छोटी पहाड़ियोंसे सुशोभित है। ग्वालपाडेकी अधिकांश जमीन नीची और जलाशयोंसे परिपूर्ण है। यहांके कामारकाटा और तामराङ्गा नामके दो बड़े जलाशय ग्रीष्मकालमें भी जलसे भरे रहते हैं। आसाम प्रदेशके अन्यान्य स्थानोंकी तरह ग्वालपाडा भी विशेषरूपसे प्रसिद्ध कालाज्वर द्वारा आक्रान्त होता है। इसी लिए १८८१से १८९१ तक दश वर्षोंमें लोकसंख्या फीसदी १८ घट जाती है।

नदीके किनारे धान और सरसोंकी फसल बहुत होती है, परन्तु १८९७ ई०के भीषण भूमिकम्पके बादसे बाढके कारण यहांकी फसल बिगड जाती है। ग्वालपाडा विभागकी जनसंख्या ९२४७ है। इसका शासन एक भारतीय शासनकर्त्ताके द्वारा परिचालित होता है। शासनकर्त्ताके सुभीतेके लिए यह ग्वालपाड़ा, दुधनिया, लक्ष्मीपुर और उत्तर सालमारा इन ६ थानोंमें विभक्त कर दिया गया है। इसमें ३८५ ग्राम लगते है।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह ब्रह्मपुत्र नदके दक्षिण तट पर अक्षा० २६° १० उ० और देशा० ९०° ३८´ पू०में अवस्थित है। आसामके साथ संयुक्त होनेसे पहले ग्वालपाडा इष्ट-इण्डियन कम्पनीके अधिकृत सीमांत स्थान समूहमें प्रधान नगर था और यहांके रहनेवाले अंग्रेज वगालमें वाणिज्यका पूर्णाधिकार प्राप्त कर देशीय बणिकोंके साथ लाभमूलक व्यवसायसे एक प्रकार बन गये तथा देशीय व्यापारियोंने भी आसाममें व्यवसाय सम्बन्धी कर्तृत्व लाभ कर बहुत अर्थ उपार्जन करने लगे थे। अंग्रेज गवर्मेण्टने सबसे पहले १७८८ ई०में आसाम गवर्मेण्टके वैषयिक व्यापारमें हस्तक्षेप करनेका प्रयत्न किया था। इसी वर्षमें राउश नामक किसो एक लवण व्यवसायोने विद्रोहको दबानेके लिए ग्वालपाडाके राजाको ७०० सिपाहीकी सहायता दी, किन्तु दुर्भाग्यवश उनमेंसे कोई भी जीता नहीं लौटा। राउशके दो शिशु सन्तानोकी स्मृति स्वरूप एक कुटीरका खण्डहर नदीके किनारे अभी तक पडा है।

उस स्थानसे दक्षिणकी ओर ब्रह्मपुत्रकी अधित्यकामें वनवृक्षशोभित क्षुद्र पर्वतमाला और उत्तरमें बरफसे ढके हुए हिमालयकी शोभा दीख पडती है। १८७९ ई०से जिलेका प्रधान कार्यालय ग्वालपाडासे धुवड़ीको चला गया और तभीसे यह एक उपविभागमें गिना जाता है।

ग्वाला (हिं०) गोप देखो।

ग्वालिन (हिं० स्त्री०) १ ग्वालाको स्त्री। २ ग्वार, खुरथी, कौरी।

ग्वालियर—१ मध्यभारत एजेन्सीका मुल्की हुकुमत। (Residency) इसमें मध्यभारतके पश्चिमीय विभागका उत्तरी हिस्सा सामिल है। यह उत्तरमें चम्बलसे दक्षिण भिसला तक और पूर्वमें बुन्देलखण्ड तथा युक्तप्रदेशसे पश्चिममें राजपूताना एजेन्सी तक फैला हुआ है। या अक्षा० २३° २१´ तथा २६° ५२´ उ० और देशा० ७६° २८ एवं ७९° ८´ पू०में पड़ता है। इसका भूपरिमाण १७८२५ वर्गमील है।

यहां लगभग २१८७६१२ मनुष्य बसते हैं, जिनमेंसे १८८३०३८ हिन्दू और शेषमें मुसलमान तथा जैन हैं।

२ भारत गवर्मेण्ट तथा मध्यभारत एजेन्सीके राजनैतिक संस्रवमें आवद्ध देशी राजाके अधीन एक विस्तृत राज्य। प्रसिद्ध महाराष्ट्र-सर्दार सेन्धियाके वंशधर यहां राज्य करते थे। कई एक विभिन्न जिला ले कर यह राज्य संगठित है। इसके पूर्वमें युक्तप्रदेशका जालौन और झांसी जिला तथा मध्यप्रदेशका सागर जिला, दक्षिणमें भूपाल, खिलचीपुर और राजगढ़, पश्चिममें झालावार और कोटाराज्य है, तथा उत्तर, उत्तर-पूर्व और उत्तर-पश्चिममें चम्बल नदीने राजपुतानाके ढोलपुर और करौली नामक स्थानोंको विभक्त किया है। इसी चम्बल नदीने आगरा और इटावाको विभक्त कर दिया है। १८६० ई०के पहले नर्मदा नदीके दक्षिणस्थ प्रदेश सेन्धियाके अधिकारमें

वरकी ओर छोड़ कर नगरकी शेष तीन दिशाओंमें ऊँची दीवार और खाई है। नगरके दक्षिण ४००।५०० सौ गज दूरमें चन्द्रभागा नदी पश्चिमकी ओर प्रवाहित है। नगरसे प्रायः १५० ऊपर गिरिशृङ्ग पर एक छोटा दुर्ग है।

प्राचीन झालरापाटन वर्तमान नगरसे कुछ दक्षिणमें चन्द्रभागाके किनारे अवस्थित था। इसको नामकी उत्पत्तिके विषयमें बहुतोंका मतभेद है। टाड कहते हैं, कि यहां पहले बहुत देवालय थे, जिनमें बड़े बड़े घण्टे बजाये जाते थे। घण्टेके शब्दसेही इसका नाम झालरा पाटन अर्थात् घण्टानगरी रखा गया था। इसी स्थानमें असंख्य देवमन्दिर और सौधमालासे सुशोभित प्राचीन चन्द्रावती नगरी अवस्थित थी। कहते हैं, कि प्राचीन शहर और इसके मन्दिर औरङ्गजेबके समयमें तहस नहस कर डाले गये थे। उनके सामान अब भी चन्द्रभागा नदीके उत्तरीय किनारे पर एकत्रित हैं। उक्त मन्दिरोंमेंसे शीतलेश्वर महादेवका लिङ्गम् नामका मन्दिर सबसे प्राचीन और प्रसिद्ध था, जिसके विषयमें फरगुसन साहब यों कह गये हैं, "भारतवर्षमें जितने मन्दिर मैंने देखे हैं, सभीसे यह मन्दिर सुन्दर तथा कारुकार्यविशिष्ट है।' जनरल कनिंहम साहब भी इस मन्दिरकी खूब प्रशंसा कर गये हैं। उन लोगोंके मतानुसार मन्दिरका निर्माण ६०० ई०में हुआ है। इस चन्द्रावती नगरीका एक मन्दिर "सातसहेली" अर्थात् सात कन्या नूतन झालरापाटनके निकट आज भी विद्यमान है।

चन्द्रावती देखो।

फिर कोई अनुमान करते हैं, कि झाला राजपूतोंसेही झालरापाटन नाम रखा गया होगा। अर्णाटन कहते हैं, झालराका अर्थ प्रस्रवण, पाटनका अर्थ नगर अर्थात् निकटवर्ती पर्वतके जलसे इसका नामकरण हुआ है।

१७९६ ई०में जालिमसिंहने झालरा-पाटन तथा इससे ४ मील उत्तरमें छावनी नामके दोनों नगर स्थापित किये। जालिमसिंहने जयपुर नगरके आदर्शमें इसका निर्माण किया था। झालरा-पाटनके मध्यस्थलमें एकखण्ड शिलालेख पर उन्होंने यह आदेश खुदवा दिया था, कि जो कोई इस नगरमें आ कर वास करेगा, उसे किसी प्रकारका शुल्क नहीं देना पड़ेगा और किसी अपराधमें अभियुक्त होने पर भी उसे १।) सवा रुपयेसे अधिक अर्थदण्ड नहीं देना होगा। १८५० ई०में राजाका उक्त आदेश बन्द कर दिया गया। दोनों नगर पक्की सड़कसे संयोजित हैं। झालरापाटनमें प्रधान प्रधान वणिक् और अर्थसचिवोंका वास है। यहां राजकीय टकशाल और अन्यान्य कर्मस्थान हैं।

झालरापाटन छावनी—राजपूतानेके अन्तर्गत झालावाड़ राज्यका प्रधान शहर और राजकीय राजधानी। यह अक्षा० २४°३६´ उ० और देशा० ७६° १०´ पू० पर समुद्र पृष्ठसे १८०० फुट ऊपरमें अवस्थित है। यह १७९१ ई०में कोटाके अधिपति जालिमसिंहसे स्थापित हुआ है। पहले यहां उनकी एक साधारण छावनी थी। पीछे धीरे धीरे मनुष्योंका वास अधिक हो जानेसे यह छावनी एक बड़े नगरमें परिवर्त्तित हो गई। यहांकी लोकसंख्या प्रायः १४३१५ है, जिनमें फी-सदी ६६ हिन्दू, ४१ मुसलमान और थोड़े दूसरी दूसरी जाति है। यहांसे एक मील दक्षिण पश्चिममें एक जलाशय है जिसके किनारे तरह तरहके फूलोंसे सुशोभित बहुतसे उद्यान लगे हैं। महाराज राणाका प्रासाद और राजकीय अदालत इत्यादि इसी नगरमें अवस्थित है। झालरापाटन और छावनी एक पक्की सड़कसे संयुक्त है। झालरापाटन नगर अपने परगनेका सदर और छावनी नगर समस्त राज्यका सदर है। छावनीका मध्यस्थ राजभवन एक चतुरस्र दृढ़ दुर्गके मध्य अवस्थित है। यहांका दुर्ग एक ऊँची पार्वत्यभूमि पर अवस्थित है तथा कोटा राज्यके गग्राउन दुर्गसे २३ मील दूर पड़ता है।

झाला—गुजरात प्रदेशकी एक राजपूत जाति। ये लोग हलवुड़के अधिपतिको अपना नेता मानते हैं। टाड साहबका अनुमान है कि, ये लोग अनहिलवाड़-राजाओंके वंशधर होंगे। उक्त वंशीय राजाओंके ध्वंसके बाद झालाओंने विस्तीर्ण प्रदेश अधिकार कर लिया था। झालासुखवाहन नामकी एक सौराष्ट्रवासी शाखा अपनेको राजपूत बतलाती है। किन्तु वे सूर्य, चन्द्र वा अग्निकुल किसी भी वंशके नहीं हैं। हिन्दुस्तान वा राजपूतानेमें इस जातिके लोग वास करते हैं। मेवाड़-राजवंशकेतु महामानी महावीर राणा प्रतापसिंहने झालाओंको राज-

सेनका दूसरा नाम सुहनपाल दिया। खङ्गराय और फजल अलिके मतमे सुहनपालसे ले ८४वीं पोढीमें तेजकर्णने जन्म लिया था, उन्हींके समयमें ग्वालियर दूसरेके हाथ आ गया था। खङ्गराय, वदलीदास प्रभृतिका मत है कि तेजकर्ण राजा रणमलकी कन्यासे विवाह करनेके लिये देवास गये थे। जानेके समय अपने भानजे परमालदेवके ऊपर राज्यभार सौंप गये थे। रणमलकी कोई पुत्र न होनेसे जामाता तेजकर्णको ही अपना राज्य अर्पण किया था। इधर परमालने मामाको मधुर वचनमें लिख भेजा कि ग्वालियरका राज्य उसे ही प्रदान करें। तेजकर्णने इसे अङ्गीकार न किया। इस पर परमालने विद्रोही हो मामाको कहला भेजा कि वे अब ग्वालियरके दुर्गका अधिकार पा नहीं सकते। इस तरह ग्वालियर परिहार-वंशीय परमाल या परमर्द्दिदेवके हाथ आया था। खङ्गराय प्रभृतिके मतानुसार परमाल ११२६ ई०में राजसिंहासन पर बैठे थे। टाड साहबने लिखा है कि "ग्वालियरके अन्तिम कच्छवाह राजा ढोलारायने १०२३ सम्वत्‌को राज्य छोड़ दिया था।" खङ्गरायने लिखा है कि दुल्हाराय ग्वालियरमें सिर्फ एक वर्ष राजत्व कर विवाह करनेके लिये चले गये थे और विवाहके एक वर्ष बाद इन्होंने श्वशुर-का राज्य पाया था। इसके बाद ही परमाल विद्रोही हो गया था। सुतरां परमालने जब ११८६ सम्वत्‌में राजारोहण किया है तब दुल्हाराय या तेजकर्णने १०२३, १०६३ या ११६७में राज्य छोड़ा यथार्थ्यतः ठीक नहीं जचतो। खङ्गरायने दुल्हाराय और उनके पूर्ववर्ती कच्छ-वाह राजाओंके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है उसका अधिकांश काल्पनिक मालूम पड़ता है, क्योंकि ग्वालियरसे आविष्कृत शिलालिपि द्वारा जाना जाता है कि ९वीं शताब्दीमें ग्वालियर महाराज रामदेव और उनके पुत्र महाराज भोजदेवके अधीन था। भोजदेव ८६२ से लगभग ८८२ ई० तक विद्यमान थे। प्रत्न-तत्त्वविद् कनिंहमका मत है कि पहलेसे ही बराबर स्वाधीनभावसे न हो करद रूपसे भी कच्छवाहवंश ग्वालियरमें राजत्व करते थे। उक्त भोजदेवके कनिष्ठ पौत्र विनायकपालके बाद कच्छवाहवंशीय वज्रदामा ग्वालियरको अधिकार कर नवराजवंशके प्रतिष्ठाता हुये थे। यहांके जैनदेवमूर्त्तिके पवित्र अङ्गमें उत्कीर्ण वज्रदामाकी शिलालिपि पढ़नेसे जाना जाता है कि ये लक्ष्मणके पुत्र थे और इन्होंने ही पहले गोपगिरिदुर्गमें जयढंका बजाया था। सासबहुके मन्दिरसे ११५० और ११६० सम्वत्‌को उत्कीर्ण उस वंशके राजा महिपालकी दो शिलालिपिसे जाना जाता है कि वज्रदामाके पुत्र मङ्गल, मङ्गलके पुत्र कीर्तिपाल, कीर्तिपालके पुत्र भुवनपाल, भुवनपालके पुत्र देवपाल, देवपालके पुत्र पद्मपाल, पद्म-पालके पुत्र सूर्यपाल तथा सूर्यपालके पुत्र महाराज महो-पाल थे। वे सबके सब ग्वालियरमें राजत्व करते थे। इसके बाद एक वृहत् मर्मर प्रस्तरमें ११६१ सम्वत्‌को उत्कीर्ण शिलालिपिमें भुवनपालके पुत्र कच्छवाहवंशीय मधुसूदन नामक एक राजाका नाम पाया जाता है। मधुसूदनके बाद उनके वंशके और किसी दूसरे राजाके नाम शिला-लिपिमें नहीं पाये जाते। सम्भवतः मधुसूदनके राजत्वा-वसानमें कच्छवाह-वंशियोंके हाथसे ग्वालियर राज्य अप-हृत हुआ था। इसके अनन्तर १२०७ सम्वत्‌में उत्कीर्ण परिहारवंशीय रामदेव और गोविन्दचन्द्रके नाम पाये जाते हैं। खङ्गराय और वदलीदासके ग्रन्थमें लिखा है कि परमालदेव (परमर्द्दिदेव)-के पुत्र रामदेव थे। पर-माल ही ग्वालियरके परिहारवंशीय प्रथम राजा थे। ये ११८६ सम्वत् (११२८ ई०)में और इनके पुत्र रामदेव १२०५ सम्वत् (११४८ ई०)-में सिंहासन पर बैठे थे। रामदेवके बाद क्रमानुसार १२१२ सम्वत्‌में इनके पुत्र हम्मीरदेव, १२२५ सं०में हम्मीरदेवके पुत्र कुवेरदेव, १२३६ संवत्‌में इनके पुत्र रत्नदेव, १२५१ संवत्‌में इनके पुत्र लोहङ्गदेव तथा इनके बाद १२६८ सं०में इनके पुत्र सारङ्ग-देवने राजत्व प्राप्त किया था। विख्यात मुसलमान ऐति-हासिक फेरिस्ताने लिखा है कि "कुतुबउद्दीन तुघोलने प्रायः एक वर्ष ग्वालियर अवरोध किया था। इस समय इन्होंने पर्वतकी चारों ओर बहुतसे छोटे छोटे दुर्ग निर्माण किये थे। ग्वालियरके राजाने राज्यरक्षामें असमर्थ हो अन्तमें गुप्तरूपसे कुतबुद्दीन आइवेगको बुलाया। तदनुसार आइवेगने सैन्य भेज कर ग्वालियरको अधिकारमें कर लिया।" इनके पुत्र आरामने थोड़े दिन तक यहां राजत्व किया था। इसके बाद १२१० ई०को

आ कर मिल गई है। मनोहरथाना और भाचूर्णीके निकट पारवान नदीमें तथा भूरिलियाके निकट नेवाज नदीमें पार होनेको घाट है। कालोसिन्धु नदी इस राज्यके किनारे और भीतरसे करीब २० मील तक पत्थर आदिके ऊपरसे चली गई है। खेरासी और भौंड़ासाके पास इस नदीमें एक पार उतारनेका घाट है। आऊ नदी इस राज्यके दक्षिण-पश्चिमभागमें प्रवेश कर ग्वालियर, टङ्क और कोटा राज्यकी सीमाप्रदेश होती हुई ६० मील तक जा कर अन्तमें कालीसिन्धु नदीमें गिरी है। इस नदीका गर्भ और तीर कालीसिन्धुकी तरह ऊँचा-नीचा नहीं है। कहीं कहीं तीरस्थ हलराशिको शाखा बढ़ कर नदीको स्पर्श करती है। सुकेत और भीलवारी नामक स्थानमें आऊ नदी पार होनेको घाट हैं। छोटी काली नामकी एक दूसरी नदी इस राज्यके कई अंशमें प्रवाहित है।

इतिहास—झालावाड़का राजवंश झाला नामक राजपूत वंशोद्भव है। इसी वंशके आदिपुरुषगण काठियावाड़के अन्तर्गत झालावाड़ प्रदेशमें हलवुड़ नामक स्थानके सर्दार थे। १७०८ ई०में भावसिंह नामक सर्दारके मध्यमपुत्र एक झालावीरने बहुतसे अनुचरको साथ ले स्वदेश परित्याग कर अपने भाग्यकी परीक्षार्थ दिल्लीको यात्रा की। राहमें कोटा महाराजके निकट वे अपने पुत्र मधुसिंहको छोड़ गये। इसके बाद भावसिंहका और कोई विवरण मालूम नहीं हैं। मधुसिंह राजाके अत्यन्त प्रिय हो गये। महाराजने मधुसिंहको बहिनके साथ अपने बड़े लड़केका विवाह करा दिया और मधुसिंहको नातना ग्राम दान दे कर फौजदारके पद पर प्रतिष्ठित किया। मधुसिंहके बाद उनके पुत्र मदनसिंह फौजदार हुए। यह पद क्रमशः उनका वंशानुक्रमिक हो गया। मदनसिंहके बाद हिम्मतसिंह तथा उनके बाद उनके भतीजे प्रसिद्ध आठारह वर्षके जालिमसिंह फौजदार हुए। तीन वर्षके बाद जालिमसिंहने कोटा सैन्य ले कर जयपुरके सैन्यदलको पराजित किया। किन्तु शीघ्रही रमणीप्रेम ले कर राजाके साथ जालिमका मनोविवाद आरम्भ हुआ। उन्होंने पदच्युत हो कर उदयपुरको प्रस्थान किया और वहां अनेक महत्कार्य द्वारा शीघ्रही प्रतिपत्ति लाभ की और महाराणासे राजराणाकी उपाधि मिली। मृत्युकालमें कोटाके राजाने पुनः जालिमको बुला कर अपने पुत्र उम्मेदसिंह तथा कोटा राज्यकी रक्षाका भार उन पर सौंपा। तभीसे जालिमसिंह ही एक प्रकार कोटाके अधिपति हुए। इनके सुशासनके गुणसे कोटा राज्यकी सुखसमृद्धि आशातीत बढ़ने लगी तथा क्या मुसलमान, क्या महाराष्ट्र, क्या राजपूत सभीसे इन्होंने ख्याति प्राप्त की। उन्हींके समयमें ब्रुटिश गवर्मेण्टके साथ सन्धि स्थापन की गई। १८१७ ई०में सन्धिके अनुसार कोटाकी रक्षाके लिये वहां सेना रखी गई तथा १८१८ ई०में उसमें कुछ भाग और मिला दिये गये। राज-राणा जालिमसिंहके हाथ राज्यशासनका कुल भार सौंपा गया। जालिमकी मृत्यु १८२४ ई०में हुई। बाद उनके लड़के माधोसिंह राजकार्य चलाने लगे। यह अयोग्य शासक थे। प्रजा इनके कामोंसे प्रसन्न नहीं रहती थी। १८३४ ई०में इनके लड़के मदनसिंह इनके उत्तराधिकारी हुए। १८३८ ई०में कोटा-राजकी सम्मतिके अनुसार जालिमसिंहके वंशधरोंके लिये झालावाड़ नामक राज्यका एकांश ले कर एक पृथक् राज्य स्थापनका बन्दोबस्त किया गया। उसीके अनुसार १८३८ ई०में वार्षिक १२ लाख रुपये आयका अर्थात् समग्र राज्यका ⅓ अंश ले कर एक झालावाड़ राज्य संगठित हुआ। इन्होंने कोटा-राजके ऋणका ⅓ अंश भी ग्रहण किया। बाद सन्धिके अनुसार ये अंगरेजोंके आश्रित राजाओंमें गिने जाने लगे। अंगरेज गवर्मेण्टको वार्षिक ८० हजार रुपये राजस्व तथा प्रयोजनके समय साध्यमत सैन्य द्वारा सहायता पहुँचानेके लिये भी ये दायी रहे। मदनसिंहको महाराजाराणाकी उपाधि दी गई और १५ मान्य तोप दे कर अन्यान्य राजपूत राजाओंके समान मर्यादापन्न किये गये। मदनसिंहके बाद पृथ्वीसिंह झालावाड़के राजा हुए। १८५७-५८ ई०में सिपाही विद्रोहके समय ये बहुतसे यूरोपीय कर्मचारीको आश्रय दे कर तथा निरापदसे रक्षा करके गवर्मेण्टके विश्वस्त हुए। १८७६ ई०में उनके दत्तक पुत्र भक्तसिंह राजा हुए। ये नाबालिग अवस्थामें अजमीरके मेओ-कालेजमें पढ़ते थे। उतने दिनों तक किसी अंगरेज कर्मचारीसे राजकार्य चलता था। पीछे भक्त-

शिल्पकार्य किया गया था वह बहुत प्रशंसनीय है। उनके समयमें १५२५ और १५३० सम्वत्‌की लिखी हुई शिलालिपि पाई गई है। उस समयके मालव, जौनपुर और दिल्लीके इतिहाससे भी ग्वालियरके राजाका पूरा पूरा हाल जाना जाता है। ये मुसलमान इतिहासमें "किरण-राय" नामसे मशहूर हैं। दिल्लीश्वर बहलोल लोदीके साथ जौनपुरके महमुद सरकीके भीषण युद्धकालमें किरण और उनके भाई पृथ्वीराय भी सम्मिलित थे। उस युद्धमें फतेखाँ हार्बिसे पृथ्वीरायके मारे जाने पर किरणने इसका बदला लेनेके लिये उसी समय फतेखाँका मुण्ड दो खंड कर दिल्लीश्वरके निकट भिजवा दिया था। तभीसे जौनपुरके मुसलमान ग्वालियर राजासे उसका बदला लेनेका मौका ढूंढ रहे थे। फिरिस्ताने लिखा है कि, "८७० हिजरी या १४६५ ई०में जौनपुरके हुसेन सरकीने ग्वालियरके दुर्ग पर आक्रमण करनेके लिये एक बड़ी भारी सेना भेजी थी। घोरतर युद्धके बाद ग्वालियरके राजाने सन्धि कर ली और कर देनेके लिये राजी हुए।" इस समयसे ग्वालियरके राजाने दिल्लीके विरुद्ध जौनपुरका पक्ष अवलम्बन किया था। जौनपुराधिपति हुसेनकी माता बीबी राजीकी मृत्यु होने पर किरणरायने १४७३ ई०में सरकी राजाको सान्त्वना देनेके लिये अपने लड़के कल्याणको भेजा था। इसके बाद १४७८ ई०में हुसेन सरकी दिल्लीश्वर बहलोलसे पराजित हो ग्वालियर भाग आये थे। यहाँ आने पर किरणराय लाखों रुपये और तम्बू आदि नाना द्रव्य भेंट दे काल्पिको पहुंचा आये थे। दूसरे वर्ष कीर्तिसिंह या किरण रायकी मृत्यु हुई। इनके बाद इनके पुत्र कल्याणमलने ७ वर्ष निर्विवाद राज्य शासन किया। १४८६ ई०में इनके पुत्र मानसिंहने पितृपद प्राप्त किया। इसी वर्ष बहलोल लोदीने उन पर चढ़ाई की थी। इन्होंने दिल्लीश्वरको ८० लाख रु० दे कर अपना छुटकारा पाया। १४८८ ई०में बहलोलके पुत्र सिकंदरलोदीने मानसिंहको एक सुंदर पोशाक और घोड़ा भेंट स्वरूप भेजा। मानसिंहने सहस्र अश्वारोहियोंके साथ अपने भतीजेको बयाना नामक स्थानमें भेज कर सिकंदरको सम्मान रक्षा की थी। इसके बाद १५०० ई० तक ग्वालियरमें कोई विशेष घटना नहीं हुई। १५०१ ई०में राजा मानसिंहने दिल्लीश्वरके निकट निहाल नामके एक दूतको भेजा था। दूतको अनुपयुक्त कथासे दिल्लीश्वर क्रोधित हो उठे तथा थोड़े समयके बाद ही ससैन्य ग्वालियर राजाके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये चल पड़े। इस समय राजा मानसिंहने सैयद खाँ, बाबर खाँ और राय गणेश नामके तीन भागे हुए मनुष्योंको पकड़ दिल्लीश्वरके निकट भेज दिया और बहुत भेंट देकर अपने पुत्र विक्रमादित्यको भेज कर सन्धिस्थापन कर ली। १५०५ ई०में सिकंदरने फिर भी एक सेना भेजी थी, किन्तु इस बार ग्वालियर वासियोंने अदम्य उत्साहसे विपक्षकी गति रोक दी थी। इस लड़ाईमें दिल्लीपति विशेष क्षतिग्रस्त हो रणक्षेत्रसे भागनेके लिये बाध्य हुए थे। इस समय मानसिंह यथार्थमें स्वाधीन राजा हुए। १५१७ ई०में सिकन्दरने ग्वालियरके राजाको पराजित करनेके लिये दूर दूरके अमीर उमरावोंको आगरामें बुलाया था। किन्तु थोड़े ही समयके बाद उनकी मृत्यु हो जानेसे अभीष्ट सिद्ध नहीं हुआ। इसके बाद सुलतान इब्राहिमलोदी अपने पिताके पद पर आरूढ़ हुए। मानसिंहने इब्राहिमके भाई जलालखाँको ग्वालियरके दुर्गमें आश्रय दिया था। इसीसे इब्राहिमने प्रतिहिंसा और उच्च आशामें उन्मत्त हो ग्वालियर जीतनेके लिये अजीम हुमायूंके अधीन तीसहजार अश्वारोही, तीन सौ गजारोही तथा अनेक तरहके यन्त्रादि भेजे थे। उनने सात सर्दारोंको भी हुमायूंकी मदद देनेकी अनुमति दी थी। उस समय महावीर और तीक्ष्णबुद्धि मानसिंह दोनों कालग्रासमें फंस गये। इन्हीं तोमर राजाओंके समयमें ग्वालियरकी विशेष उन्नति हुई थी, उन्होंने कृषिकार्यकी सुविधाके लिये अनेक स्थानोंमें झीलें खुदवाई थीं। वे शिल्पशास्त्रके एक प्रगाढ़ अनुरागी थे। ग्वालियरके दुर्गमें उन्होंने जो मानमन्दिर नामक सुन्दर पत्थरका प्रासाद निर्माण किया था, मोगल-सम्राट् बाबर, राजमन्त्री अबुल फजल प्रभृति मुक्तकण्ठसे उस प्रासादके शिल्पनैपुण्यको बहुत प्रशंसा कर गये हैं। उनमेंसे एक सङ्गीतानुरागी और दूसरे सुगायक थे, जिनकी रची हुई कविता आजलों भी प्रचलित है। मुसलमान ऐतिहासिक नियामत उल्लाने मान-

लेकिन १८९८ ई०में १२२) मदनगाही रुपये अङ्गरेजी १००) रुपयेमें बदले जाने लगे। अतः राजराणाने १९०१ ई०की पहली मार्चसे निजका सिक्का उठा कर अङ्गरेजी सिक्का कायम रक्खा।

पूर्व समयमें खेतकी उपज ही मालगुजारीमें दी जाती थी। लेकिन १८०५ ई०में जालिमसिंहने जमीन-के अनुसार मालगुजारी स्थिर कर रुपये पैसेमें चुकाने-की प्रथा जारी की। राजकोषसे ५ दातव्य चिकित्सालय-का बन्दोबस्त किया गया है।

अधिवासियोंमें सैकड़े पीछे ८६ हिन्दू और शेष मुस-लमान हैं। यहां मिन्धिया (मन्ध्या) नामकी एक जाति रहती है। झालावाड़में इसकी संख्या प्रायः २२ हजार है। इस राज्यमें लगभग ९०१७५ लोग बसते हैं। ये न अत्यन्त गोरे हैं और न विशेष काले। सन्ध्यासमयके वर्ण-सा इनका वर्ण है। इन लोगोंका कहना है कि ये एक जातिके राजपूत तथा मार्टलवदन नामक किसी राजाके वंशधर हैं। ये आलसी, व्यभिचारी तथा इनमें-से अधिकांश चोर होते हैं। इनकी स्त्रियां अश्वारोहणमें निपुण होती हैं।

राज्यमें ६४½ मील तक पक्की सड़क गई है और बारहों मास उस पर बैलगाड़ी आदि आती जाती है। ८९½ मील तककी सड़क वर्षा भिन्न दूसरे समयके लिये सुगम नहीं है। झालरापाटनसे नीमच, आगरा, उज्जयिनी तथा कोटा तक सड़क गई है। दक्षिण और दक्षिण-पूर्वस्थ सड़क द्वारा इन्दोरसे बम्बई नगरमें अफीम और विलायती कपड़ेका अदला बदला होता है। भूपाल और हरवतीसे शस्य तथा आगरासे वस्त्रादिकी आमदनी होती है।

झालावाड़के सोने और चाँदीके बरतन, पीतलके बरतन तथा पालिशयुक्त असबाब प्रसिद्ध है।

जलवायु—झालावाड़का जलवायु मध्यभारतके जल-वायुसी कुछ कुछ स्वास्थ्यकर है।

राजपूतानेके उत्तर भागकी नाईं यहां निदारुण ग्रीष्म नहीं पड़ता। ग्रीष्मकालमें दिनके समय छायामें तापका अंश फा० ८५° से ९८° तक होता है। वर्षा-कालमें वायु स्निग्ध और मनोरम रहती और शीतकालमें प्रायः ओस पड़ती रहती है।

इस राज्यमें झालरापाटन, शाहाबाद, कैलवार, छिपाबुरोद दुकारिसुकेत, मन्दाहार, थाना, पांच पहाड़, डाग और गाङ्गवार प्रधान प्रधान नगर लगते हैं।

२ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत गुजरातके काठियावाड़का एक प्रान्त अर्थात् भूभाग। झाला नामक एक राजपूत जातिसे यह नाम पड़ा है। झालागण ही यहांके प्रधान अधिवासी हैं। यह विभाग गुजरात उप-द्वीपके उत्तर-पूर्व रन नामक लवणाक्त अनुपदेशके दक्षिणमें अवस्थित है। ध्रांध्रा, वांकैनेर, लिंबड़ी, बधवान तथा और कई एक छोटे छोटे राज्य इस विभागके अन्तर्गत हैं। ध्रांध्राके राजा ही झाला-समाजके नेता कह कर आहृत होते हैं। इसका भूपरिमाण ३९७८ वर्गमील है। इसमें ९ नगर और ७०२ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः ३०५१३८ है।

झालि (सं० स्त्री०) व्यञ्जनभेद, एक प्रकारकी कांजी। यह कच्चे आमको पीस कर उसमें राई, नमक और भूनी हींग मिला कर बनाई जाती है। इसका गुण जिह्वा-गत, कण्ठ्नाशक और कण्ठशोधक है।

"आमममामफल पिष्टं राजिका लवणान्वितम्।
भृष्टं हिंगुयुतं पूतं घोलितं झालिरुच्यते॥" (भावप्रकाश)

झालु—युक्तप्रदेशके बिजनौर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° २०′ उ० और देशा० ७८° १४′ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६४४४ है। अकबरके समय यह एक महाल या परगनेका सदर था। १८५६ ई०की २०वीं धाराके अनुसार इसका प्रबन्ध होता है।

झालोतार-आजगांई—अयोध्याके अन्तर्गत उनाव जिलेकी मोहान तहसीलका एक परगना। यह मोहान औरास-से दक्षिण तथा हड़ाके उत्तरमें अवस्थित है। इसका भूपरिमाण ९८ वर्गमील है, जिसमें ५५ मील खेती करनेके लायक है। अवध-रोहिलखण्ड रेलवे इसी परगनेसे गयी है। उसीका कुसुम्भि नामक एक ष्टेशन यहां है। यहां पांच हाट लगती हैं।

झालोद—१ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत पाँचमहाल जिलेके दोहद तालूकका एक छोटा अंश। यह अक्षा० २२° २५′ ५०″ से २३° २५′ उ० और देशा० ७४° ६′ से

मल्लको जीत हुई। इसके बाद बाहुबलके साथ सामान्य युद्धके बाद ग्वालियरका दुर्ग अकबरके अधिकारमें आया। रामशाहने मेवाड़ जा आश्रय ग्रहण किया। वहां उनके पुत्र शालिवाहनके साथ शिशोदियाराजकुमारीका विवाह हुआ। रोहितासके प्राप्त एक शिलालिपि पढ़नेसे जाना जाता है कि शालिवाहनके पुत्र श्यामशाह और मित्रसेनने अकबरका आनुगत्य स्वीकार किया था। श्यामके दो पुत्र थे। संग्रामशाह और नारायणदास। संग्राम १६७० ई०में नाममात्र ग्वालियरके राजा हुए। इनके पुत्रका नाम राजा कृष्णसिंह था। १७१० ई०में कृष्णकी मृत्यु हुई। उनके पुत्र विजयसिंह और हरिसिंहने उदयपुर जा आश्रय लिया। हरिसिंहके वंशधर आज भी उदयपुरमें वास करते हैं।

मोगल राजाओंके अधःपतन-कालमें गोहदके जाट सर्दारने ग्वालियर अधिकार किया था, किन्तु थोड़े समयके बाद हो यह महाराष्ट्रोंके हाथ आया।

भारतके इतिहासमें अभी जो ग्वालियरका राजवंश प्रसिद्ध है महाराष्ट्रवीर रणजी सिन्धिया ही उस वंशके आदिपुरुष हैं। ये बालाजी पेशवाके पादुकावाहक तथा इनके पिता दाक्षिणात्यके किसी ग्राममें पटवारी थे। पेशवाके घरमें रणजीकी श्री और सौभाग्यकी वृद्धि दिन दूनी और रात चौगुनी होने लगी। क्रमशः ये पेशवाके रक्षिदलके प्रधान व्यक्ति हो गये। मालवके मध्य हो कर हिन्दुस्थानमें महाराष्ट्रीय सैन्य ले जा कर बहुत बार युद्ध करके मृत्युके कुछ पहले वर्तमान ग्वालियर राज्यके अधिकारी हुए थे। उनकी मृत्युके बाद उनके द्वितीय पुत्र माधाजी सिन्धिया राजसिंहासन पर बैठे। राजनैतिक सम्बन्ध और युद्धविद्यामें ये अद्वितीय थे। १७६१ ई०में पानीपथकी लड़ाईमें माधाजीने अपने वीरत्व और युद्धकौशलका अच्छी तरह परिचय दिया था। ये नाममात्र पेशवाके अधीन थे, किन्तु सब समय स्वाधीन भावसे राज्यशासन करते थे। दिल्लीके सम्राट्ने भी उनसे क्षमा प्रार्थना की थी तथा राजपूत-सर्दार प्रसिद्ध अश्वारोही योद्धा भी थोड़ी देर तक भी उनके सैन्य सम्मुखमें ठहर नहीं सकते थे। १७६३ ई०में पेशवाके साथ सलबाई नगरमें जो युद्ध हुआ था, उसमें ये ही नायक थे। १७९४ ई०में अपने भाईके पौत्र दौलतराय सिन्धियाको राज्यभार सौंप आप परलोकको सिधारे। मधुरावनारायण पेशवाकी मृत्युके बाद (प्रजाविद्रोहके समय) दौलतरायने अपने प्रभुत्व फैलानेकी चेष्टा की थी। इन्होंने बाजीरावको अपने अधीन कर लिया और होलकरके अधिकृत राज्यके बहुतसे अंश पर दखल जमाया। इसके बाद इन्होंने दाक्षिणात्यमें अहमदाबादके दुर्गको जय कर पेशवा और निजाम राज्य हो कर जानेका रास्ता साफ कर दिया। दौलतरायकी सेना फरासीसी सैनिक द्वारा परिचालित होती देख अंगरेज लोग डरने लगे थे। बेसिनकी सन्धिके अनुसार अंगरेजोंने भारतके छोटे छोटे राजाओंके ऊपर अपने ही खर्चसे सेना रखनेकी जो व्यवस्था की थी, पूना नगरमें इसी तरह सैन्य-दल रखते देख दौलतरायने बरारके राजा राघोजी भोंसलेके साथ मिल कर उक्त व्यवस्थाको खण्डन करनेकी चेष्टा की थी। १८०३ ई०में दोनोंने निजाम राज्य पर आक्रमण किया। इसी वर्ष २३वीं सितम्बरको सर आर्थर वेल्सिलीने असाई नगरमें महाराष्ट्रों पर चढ़ाई की। बहुत दिन घोर युद्धके बाद महाराष्ट्रसेनाकी हार हुई। फिर भी उक्त वर्षके २८वीं नवम्बरको वेल्सिलीने अरगाँव नगरमें महाराष्ट्रोंको शक्ति पूर्ण रूपसे चूर कर डाली। उक्त वर्षमें दिल्लीको दूसरे पार फरासीसी नायक बुर्कोंसे परिचालित सिन्धियाकी सेना लौर्ड लेकसे अच्छी तरह परास्त हुई थी। इसके बाद लस्वारीकी लड़ाईमें जेनेरल लेकने सिन्धियाकी अवशिष्ट सेनाका नाश किया। इस तरहका क्षमता ह्रास होने पर दौलतरायोंने सर्जि-अंजि गांवकी संधिके अनुसार अपने अधिकृत हिन्दुस्थानके प्रदेश समूह और अजन्टा पर्वतके दक्षिणस्थ भूभाग छोड़ दिये। इस सन्धिसे सिन्धियाके गोहद और ग्वालियर हस्तच्युत होने पर ये बहुत क्षुब्ध हुए थे तथा होलकरके साथ मिल कर फिर भी अंगरेजोंके ऊपर आक्रमण करनेकी चेष्टा करने लगे। थोड़े समयके बाद ही इन्होंने रेसिडेण्टका तबू जला कर उन्हें बन्दी कर लिया। लार्ड कौर्नवालिसने गोहद और ग्वालियर दखल कर रखना नितान्त अन्याय समझ कर उक्त सन्धिपत्रको फाड़ दिया और १८०५ ई०के नवम्बर महीनेमें एक दूसरी

मध्यवर्ती समप्रदेश पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५०८४ है। यहां पहले एक दुर्ग था। अभी भी इस दुर्गके मध्य एक मस्जिद तथा शाह अवदुल रजाक और उनके चार पुत्रोंकी कब्र विद्यमान हैं। ये सब कब्र और मस्जिद सम्राट् जहांगीरके समयमें बनाई गई थी। उनके गुम्बजमें नील वर्णके बहुशिल्प-कार्ययुक्त पुष्प चमक रहे हैं। दरगा इमाम साहब नामकी अट्टालिका सबसे प्राचीन है। शहरके निकट खाडीके रहनेसे वर्षाकालमें बहुत दूर तक जलमग्न हो जाता है। ज्वर, वसन्त आदि यहांका साधारण रोग है। यहाँ एक थाना और डाकघर है।

झिञ्झिम (सं० पु०) झिम् इत्यव्यक्त शब्दं कृत्वा भमति अत्ति वृक्षादीन् दहतीत्यर्थः भम-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। दावानल, वनकी आग।

झिञ्झिरा (सं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक प्रकारकी भाड़ी।

झिञ्झिरिष्ट (सं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक प्रकारका क्षुप। इसके संस्कृत पर्याय—फला, पीतपुष्पा, झिञ्झिरा, रोमाश्यफला और वृत्ता है। इसके गुण कटु शीत, कषाय, रक्तातीसारनाशक, हृद्य, सन्तर्पणत्व, वल्य और महिषो-क्षीरवर्द्धक है।

झिञ्झी (सं० स्त्री०) कीटविशेष, झिल्ली, झींगुर।

झिञ्झुवाड़ा—१ गुजरातके काठियावाड़के अन्तर्गत झालावाड़ उपविभागका एक छोटा राज्य। इसका भूपरिमाण १६५ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ११७३२ है। इसमें कुल १८ ग्राम लगते हैं यहांके अधिपति अंग्रेज गवर्मेण्टको ११०७३) रु० राजस्व देते हैं। यहांके अधिकांश अधिवासी कोलि जातिके हैं। पहले इस राज्यमें नमकके तीन कारखाने थे। गवर्मेण्टने तालुकदारोंको क्षतिपूर्तिस्वरूप कुछ दे कर कारखानेको उठा दिया है। राज्यके अनेक स्थानोंमें सोरा उत्पन्न होता है। निकटवर्ती रणका अधिकांश कई एक द्वीपके साथ इस राज्यके अन्तर्भुक्त है। झिलानन्द नामक बड़ा द्वीप प्रायः १० वर्गमील चौड़ा है। इस द्वीपमें बहुतसे तालाब और भोटवा नामक एक उष्णस्रोत है। प्रवाद है, कि आनन्द नामक किसी नरपतिने इस कुण्डमें स्नान कर दुरारोग्य कुष्ठव्याधिसे मुक्ति पाई थी।

२ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत गुजरातके काठियावाड़में झालावाड उपविभागके उक्त झिञ्झुवाडा राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २३° २१´ उ० और देशा० ७१° ४२´ पू०में अवस्थित है। यह नगर बहुत प्राचीन है। अब भी यहां एक दुर्ग, पर्वत पर खुदा हुआ एक तालाब तथा प्राचीन भास्कर और स्थपतिनैपुण्यके परिचायक बहुतसे शिलालेख, भग्न वहिर्द्वार आदि विद्यमान हैं। यहां बहुतसे पत्थरोंमें 'महान् ओ उदाल' नाम खुदा हुआ है। प्रवाद है—कि उदाल अनहिल्लवाड़-पत्तनके अधिपति सिद्धराज जयसिंहके मन्त्री थे। इन्होंने अपनी जन्मभूमि झिञ्झुवाड़ामें उक्त दुर्ग और सरोवर निर्माण किया। अहमदाबादके सुलतानने झिञ्झुवाडा अधिकार कर अपने दुर्गमें मिला लिया, पीछे अकबरने इसे जीत कर यहां मुगल साम्राज्यका एक थाना स्थापन किया। मुगलसाम्राज्यके अधःपतनके समय वर्तमान तालुकदारोंके पूर्वपुरुष काम्भोजोंने इस दुर्गको अधिकार किया। यहांके तालुकदार द्वांद्रा सम्प्रदायभुक्त झालावंशके हैं, किन्तु कोलियोंके साथ विवाह-सूत्रमें आवद्ध हो जानेसे पतित हो गये हैं। कहा जाता है, कि झुञ्जो नामक किसी रवारीने झिञ्झुवाड़ा स्थापन किया। यह नगर बम्बई-बरोदा और मध्यभारतीय रेलपथकी परिशाखाके खाड़ाघोड़ा ष्टेशनसे १६ मील उत्तरमें अवस्थित है। यहां डाकघर और विद्यालय है।

झिड़कना (हिं० क्रि०) १ तिरस्कार वा अवज्ञा-पूर्वक बिगड़ कर कोई बात करना। २ झटकना, अलग फेंक देना।

झिड़की (हिं० स्त्री०) झिड़क कर कही हुई बात, डाँट, फटकार।

झिड़झिड़ाना (हिं० क्रि०) कटुवचन कहना, चिड़चिड़ाना, भला बुरा कहना।

झिड़झिड़ाहट (हिं० स्त्री०) झिड़झिड़ानेकी क्रिया या भाव।

झिरिटका (सं० स्त्री०) झिरटी, कठसरैया, पियाबासा।

झिरटी (सं० स्त्री०) झिमिति कृता रटतीति रट-अच् ङीष् ततो पृषोदरादित्वात् साधुः। १ सकण्टक क्षुद्र पुष्प-

अपने राज्यमें २१ और वृटिश राज्यमें १९ तोपोंसे सम्मानित होते थे। किन्तु महाराज जयाजीराव (बाजीराव)-को सम्मानसूचक २१ तोपध्वनि मिलतीं थी। १८८६ ई०में जयाजीरावका स्वर्गवास हो गया। १० वर्षकी उम्रमें वर्तमान महाराज माधवराव सिन्धिया सिंहासन पर बैठे। नाबालिगी अवस्था होनेके कारण १८९४ ई० तक राजकार्य अंग्रेज रेसिडेंट द्वारा परिचालित हुआ। राजकीय विभागोंके परिचालन विषयमें इनका विशेष लक्ष्य रहनेसे इन्होंने विशेष उन्नति की है। १९०० ई०में युद्धके समय महाराज चीनदेशको गये थे और घायलोंकी सेवाके लिए इन्होंने एक बड़ा जहाज भेजा था। ये महाराज और हिज हाइनेस उपाधिसे विभूषित है। इनके सम्मानार्थ २१ तोपें दागी जाती है। वर्तमान महाराज भारतसम्राट्के G C.V O, G C S I., A. D. C और अंग्रेजी सेनाके सेनापतियोंमें अन्यतम (Honorary Colonel) है। इन्हें केशर-ए-हिन्द नामक स्वर्णपदक तथा केम्ब्रिज विश्वविद्यालयसे सम्मानसूचक L L D की उपाधि मिली है।

यह राज्य विचारके सुभीतेके लिये दो विभागोंमें विभक्त किया गया है—एक उत्तर ग्वालियर और एक मालवप्रान्त। उत्तर ग्वालियरमें सात जिले हैं—ग्वालियर गिर्द, भिण्ड, श्योपुर, तनवारगढ, ईसागढ़, भेलसा और नरवर। मालव प्रान्तमें चार जिले हैं—उज्जैन, मन्दसोर, साजापुर और अमभेरा। महाराज खुद सदर बोर्डकी सहायतासे न्यायकार्य सम्पादन करते हैं। उक्त बोर्ड सात सदस्योंसे संगठित हुआ है। महाराज स्वयं उसके सभासद हैं, अन्य सदस्यों पर राजस्व आदि विभिन्न कार्योंका भार सौंपा गया है। इनके कोई मन्त्री नहीं है, किन्तु सेक्रेटरी बहुत हैं और उनके कार्यको देखरेख करनेके लिए एक प्रधान सेक्रेटरी भी है। सेक्रेटरियोंका काम यह है कि, वे महाराजकी अन्तिम आज्ञा लेनेके लिए कागजात तयार कर रखते हैं। छोटो दीवानी अदालतमें ५००) तककी नालिशें होती हैं, जिनका फैसला कमासदार करते हैं और ३०००) रुपये तककी नालिशोंका फैसला सदर अमीन द्वारा तथा पचास हजार रुपये तकको नालिशोंका फैसला प्रान्तीय जज करते हैं। इससे ज्यादेकी नालिशें सदर अदालत अर्थात् हाईकोर्टमें होती है। फौजदारी-अदालतमें कामसदार २य या ३य मजिष्ट्रेटका अधिकार पाते है। सदर अमीन प्रथम मजिष्ट्रेटका अधिकार पाते है। राज्यकी आमदनी डेढ सौ लाखकी है।

२ ग्वालियर राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २६° १३' उ० और देशा० ७८° १२' पू० पर आगरा नगरसे ६५ मोल दक्षिणमें अवस्थित है। सिन्धिया महाराजका यहां एक दुर्ग है, जो एक डेढ मील ऊंचे पहाड पर अवस्थित है। यह उत्तरांशमें ग्वालियर नगरसे ३०० फोट ऊंचा है, परन्तु इसके प्रधान दुर्गद्वारकी ऊंचाई २७४ फोट है। इस दुर्गके नीचे उत्तरांशमें प्राचीन ग्वालियर नगर तथा दक्षिणांशमें प्रायः एक मीलकी दूरी पर नया ग्वालियर या लस्कर नगर अवस्थित है। दुर्गके दक्षिण जहां दौलतराव सिन्धियाने स्कन्धावार स्थापन किया था, वही स्थान लस्कर या स्कन्धावार नामसे मशहूर है। सिन्धियाने यहीं पर प्रधान नगर स्थापन किया है। दिनो दिन इसकी उन्नतिके साथ प्राचीन ग्वालियरकी समृद्धि क्षाम होती गई है। जो कुछ हो, इन दोनों नगरोंको एकत्र रखनेसे भारतके मध्य एक बहुत जनाकीर्ण प्रधान नगर जैसा समझ पड़ता है। यहा सब मिला कर दो लाख मनुष्य रहते और लगभग पैंतीस हजार घर लगते है।

यहां देखनेकी बहुतसी चीजे है। हिन्दू और जैन शिल्पनैपुण्यके लिये बहुत दिनसे यह स्थान प्रसिद्ध है। दुर्ग प्रवेश करनेमें छह बृहत् तोरण (वहिर्द्वार) पार होने पड़ते है। इन दरवाजोंके नाम अलमगिरिपुर, बादलगढ या हिन्दोलापुर, भैरो या बाँसोरपुर, गणेशपुर, लक्ष्मणपुर और हतियापुर है।

दुर्गके सबसे नीचे फाटकका नाम आलमगिरि है। १६६० ई०में औरङ्गजेबके नाम पर मोतामिदखाँने यह द्वार प्रस्तुत किया था।

राजा कल्यानमलके भाई बादलसिंहके नाम पर बादलगढ़ स्थापित हुआ। इसके बाद यहा बहुतसे हिन्दोल पक्षी देखे गये थे इसी कारण इसका दूसरा नाम हिन्दोलपुर हुआ है।

खड्गरायके मतसे पूर्वकालमें भैरवपाल नामके एक

के सिंहासन पर बैठे थे। शेरसिंहकी मृत्युके उपरान्त पञ्चवर्षीय बालक दलीपसिंह सिंहासन पर अधिष्ठित हुए और महाराणी भिन्दन उनकी अभिभावक बन कर राजकार्य चलाने लगीं। ध्यानसिंहके पुत्र हीरासिंह उस समय वजीरके पद पर नियुक्त हुए।

महाराणी भिन्दनका चरित्र बड़ा ही विचित्र है। इनमें पुरुषोचित अटलता, सहिष्णुता, निर्भीकता आदि अनेक गुण विद्यमान थे, ये अत्यन्त तेजस्विनी थीं। सोत्साह शक्तिसञ्चालन, सेनाका उत्साहवर्द्धन और अद्भुत मनस्वितामें बहुतसे लोग इनको इङ्गलैण्डकी रानी एलिजाबेथके समान बतलाते हैं। परन्तु केवल एक दोषने इनको साम्राज्यदण्ड परिचालनके लिए अनुपयुक्त कर दिया था। ये अपने चरित्रको निष्कलङ्क न रख सकी थीं। कुछ भी हो, भिन्दन प्रतिदिन दरबारमें जा कर सरदार और पञ्चायत अर्थात् खालसा-सेनाके अधिनायकोंके साथ मन्त्रणा करके अत्यन्त दक्षताके साथ राजकार्यकी पर्यालोचना करने लगीं। किन्तु वीरहृदय खालसा-सैन्योंको राणीके चरित्रमें सन्देह होने लगा। राजा लालसिंह उस सन्देहके पात्र थे। महाराणीने लालसिंह पर निरतिशय अनुग्रह प्रकट कर अपने प्रासादमें उनको स्थान दिया था। इस विषयको ले कर एक दिन तेजस्वी हीरासिंहके उपदेष्टा और सहायक जल्लाने प्रकाश्य दरबारमें राणीका तिरष्कार किया। राणीके कोपसे उन्हें शीघ्र ही लाहोर छोड़ कर भागना पड़ा, किन्तु भागते समय खालसा-सेना द्वारा वे मारे गये। इसी तरह राणी अपने दोषसे वीरवर हीरासिंहका विनाश कर सिख-राज्यका अधःपतन करने लगीं।

इस समय महाराणीके भाई जवाहिरसिंहकी और उनके अनुग्रहके पात्र लालसिंहकी राज्यके समुच्च पद प्राप्त हुए। ये दोनोंही व्यक्ति विलासप्रिय, कायर और खालसा-सैन्योंकी सुशासनसे रखनेमें सम्पूर्ण अयोग्य थे। पेशैरासिंहकी छिपी तौरसे हत्या करने पर खालसा-सैन्यने भिन्दन और दलीपके सामनेही जवाहिरसिंहको मार डाला। महाराणी भाईके शोकमें अत्यन्त अधीर हो कर बहुत दिनों तक विलाप करती रहीं। पीछे जवाहिरसिंहके निधनके प्रधान प्रधान उद्योगियोंके पदच्युत और निर्वासित होने पर रानी पुनः राजकार्य चलाने लगीं। तेजसिंह सेनापतिके पद पर नियुक्त हुए। प्रथम सिख-युद्धके बाद लालसिंह पञ्जाबके प्रधान सचिव नियुक्त हुए। इसके बाद महाराणी अंग्रेजोंके पराक्रमसे ईर्षान्वित हो कर षड़यन्त्रमें लिप्त हुईं। भइरवालकी सन्धिके अनुसार दलीपकी वयःप्राप्ति पर्यन्त पञ्जाबके राज्यशासनका भार अंग्रेज-गवर्मेण्टने अपने हाथ ले लिया। महारानीको वार्षिक डेढ़ लाख रुपयेकी वृत्ति दे राजकार्यसे हटा दिया गया। इससे पहले अंग्रेजोंके विरुद्ध षड़यन्त्रमें शामिल रहनेके अपराधसे लालसिंहको मासिक सिर्फ दो हजारकी वृत्ति दे कर बनारसमें रक्खा गया। कुछ भी हो, महाराणी राजकार्यसे वञ्चित हो कर अत्यन्त क्षुब्ध हुईं और छिपी तौरसे सर्दारोंसे सलाह करने लगीं। राज्यके सभी अशान्त व्यक्ति उनके पास आश्रय पाने लगे। रेसिडेण्टने यह सब हाल गवर्नर जनरलको लिखा, उन्होंने बालक महाराजको रानीसे अलग कर देनेका आदेश दिया। इसके अनुसार रेसिडेण्टने सर्दारोंको सम्मति ले कर महाराणीको शेखोपुरके किलेमें भिजवा दिया। उनको अलङ्कारादि सब ले कर जानेकी अनुमति दी गई थी। जिस समय यह निदारुण सम्बाद दिया गया था, उस समय भी इस तेजस्विनी रमणीने प्रियतम पुत्रसे विच्छिन्न होना पड़ेगा--यह सोच कर जरा भी कातरता नहीं दिखाई थीं।

शेखोपुरमें रहते समय महाराणीको वृत्ति घटा कर मासिक ४०००) रुपये निर्द्धारित हुए। शेखोपुरमें ये प्रायः बन्दिनीकी तरह रहती थीं। ये अपनी एकमात्र परिचारिकाके सिवा अन्य किसीसे भी साक्षात् नहीं कर पाती थीं। धीरे धीरे उन्हें यह अवस्था अत्यन्त कठोर मालूम पड़ने लगीं। उन्होंने अपने वकीलके द्वारा अपनी दुरवस्थाका हाल गवर्मेण्टको लिखा, पर गवर्नर-जनरलने उनकी बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। इसके बाद मुलतानमें कुछ सैनिकोंने महाराणीके नामसे विद्रोह उपस्थित किया। परन्तु थोड़े आयाससेही विद्रोहियोंके नेता पकड़े गये और उन्हें दण्ड दिया गया। रेसीडेण्टको यद्यपि यह मानना पड़ा था कि, इस विद्रोहमें महाराणी शामिल नहीं थीं, किन्तु तो भी उन्हें शेखो-

ग्वालियर मालव सूबाके एक सर्दारका प्रधान शहर था।

प्राचीन ग्वालियर शहर अभी उजाडसा दीख पडता है। यहाकी मसजिद, मन्दिर तथा बडे बडे घर भग्न अवस्थामें पडे हैं। यहा एक बहुत लम्बी चौडी सड़क है जिसके किनारे बहुतसे अच्छे अच्छे भवन बने हैं; जिनमेंसे जुमा मसजिद प्रसिद्ध है। इसके अलावा खान् दौलतखाँ और उनके लडके नजोरी खाँ, पूर्वमें मुहम्मद गौस और तानसेनके समाधिभवन देखने योग है।

ग्वालियर दुर्गसे २ मील दक्षिणमें लस्कर शहर पडता है। यह एक बडा और सौन्दर्यशाली शहर है। यहांकी जनसंख्या प्रायः ८९१५४ है। सिपाहीविद्रोहके समय यहांके सिन्धिया तांतिया तोपी और झांसीकी रानीसे आगरेको भगाये गये। बाद सर ह्यु रोज (Sir Hugh Rose)-ने जब विद्रोहियों पर आक्रमण कर उन्हें परास्त किया तब सिन्धिया पुनः लौट कर लस्करको आये।

ई०की षष्ठ शताब्दीमें यह शहर हूनके राजा तोरमान और उनके लडके मिहिरकुलके अधीन था। इस वंशका शिलालेख दुर्गमें पाया जाता है। अष्टम शताब्दीमें यह कन्नौजके राजा भोजके अधिकारमें आया। कहा जाता है कि दशवीं शताब्दीके मध्य यह कच्छवाह राजपूतके हाथमें था। जिन्होंने ११२८ ई० तक राज्य किया। बाद वे परिहारसे परास्त किये गये। इनके अधिकारमें यह ११९६ ई० तक रहा। कुछ काल तक मुहम्मद गजनोने इस पर अपना अधिकार जमाया। १२१० ई०में कुतबुद्दीनके लडकेके शासनकालमें यह फिर परिहारके हाथमें आया और १२३२ ई० तक उन्हींके अधीन रहा। १२३२ ई०में अलतमासने इस पर चढ़ाई की और इसे अधिकार कर लिया। ग्वालियर शहर १३९८ ई० तक मुसलमानोंके दखलमें रहा बाद तोमर राजपूतने इस पर अपना आधिपत्य जमाया और १५१८ ई० तक इसी अवस्थामें रहा। तोमरके समय यह शहर उन्नतिशिखर पर पहुंच गया था। १५४२ ई०में यह शेरशाह सुरीके अधिकारमें आया। १५५८ ई०में अकवरने सभी छोटे छोटे राजाओंका परास्त कर ग्वालियर शहर अपने कब्जेमें कर लिया और अठारहवीं शताब्दी तक यह मुगल वंशके अधिकारमें रहा। १९ जून १८५८ ई०में सर-ह्यु रोजकी सेनाने लेफटेनान्ट वालर और रोजके अधीन ग्वालियर पर चढाई कर उसे अपने हाथ कर लिया और १८८६ ई० तक यह उन्हींके दखलमें रहा बाद उन्होंने सिन्धियासे झांसी ले कर यह शहर उन्हें सौंप दिया।

ग्वैंठना (हिं० क्रि०) मरोड़ना, ऐंठना।

ग्वैंठा (हिं० पु०) गोंइठा देखो।

ग्वैंडा (हिं० पु०) ग्रामके आसपासकी जमीन।

ग्वैंड़े (हिं० क्रि० वि०) निकट, पास, करीब, समीप।

ग्वैंयां (हिं० स्त्री०) गोइंयां देखो।

दलीपसिंहको शीघ्र ही बिलायत लौट जानेको आज्ञा मिली। महाराणी झिन्दन तथा बहुतसे अनुचर और अनुचरियाँ भी दलीपके साथ बिलायत गईं। लन्दनमें लङ्केष्टार-गेटके पास एक बड़े भारी मकानमें इन लोगोंको ठहराया गया। वहां एक दिन ये देशीय परिच्छदके ऊपर पाश्चात्य रमणियोंकी पोशाक पहन कर दलीपकी शिक्षयित्रीसे मिलने गई थीं।

इससे पहले महाराज दलीपसिंह ईसाई धर्ममें दीक्षित हुए थे, अब झिन्दनके प्रभावसे उनके धर्मभावोंको शिथिल होते देख अंग्रेजोंने दलीपको झिन्दिन से पृथक् रखना ही युक्तियुक्त समझा। महाराणीके लिए लन्दनमें एक दूसरा मकान किराये पर लिया गया।

१८६७ ई०के अगस्त मासमें महाराणी झिन्दनकी लन्दन नगरमें ही मृत्यु हुई। जब तक उनका मृतशरीर, सत्कारार्थ भारतवर्षमें नहीं आया था, तब तक वह केनशालके समाधिक्षेत्रमें रक्षित था। बहुतसे संभ्रान्त अंगरेजोंने समाधिके समय उपस्थित हो कर महाराणीके प्रति सम्मान दिखलाया था। १८६४ ई०में महाराज दलीपसिंह अपनी माताकी देह ले कर बंबई उपस्थित हुए और नर्मदाके किनारे सत्कार समाप्त कर उन्होंने पवित्र नर्मदाके जलमें भस्म निक्षिप्त की। इस प्रकारसे पञ्जाबकी असामान्य सौन्दर्य-प्रतिमा वीरकेशरी रणजितमहिषीने सौभाग्यकी उच्चतम अवस्थासे भाग्यचक्रकी सभी अवस्थाओंमें पतित हो कर आखिरकी विदेशमें इस संसारसे सदाके लिये विदा ग्रहण की।

झिपना (हिं० क्रि०) झेंपना देखो।

झिपाना (हिं० क्रि०) लज्जित होना, शरमिन्दा होना।

झिम—बङ्गालके त्रिहुत जिलेकी एक नदी। इसमें हठात् बाढ़ आ जाती है, इसीसे नौकायात्रा निरापद नहीं है। वर्षामें केवल ५० मन बोझ लाद कर नाव सोमवर्षा तक जाती है।

झिर (हिं० स्त्री०) झिरी देखो।

झिरक—१ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत सिन्धुप्रदेशके कराची जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २४°४' से २५° २६' उ० और देशा० ६७°६'१५" से ६८°२२'३०" पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें सेहवान, कोहिस्थानके कई अंश और वरणा नदी, पूर्व और दक्षिणमें सिन्धु नद और उसकी शाखा तथा पश्चिममें समुद्र और कराची तालुक है। भूपरिमाण २८८७ वर्गमील है। यह उपविभाग ठट्टा, मीरपुरसक्रो और घोड़ाबाड़ी इन तीन तालुकोंमें विभक्त है और फिर ये तालुक भी २० तप्पोंमें बंटा है। इसमें ४ नगर और १४२ ग्राम लगते हैं।

इस उपविभागका उत्तरांश पर्वतमय और अनुर्वर मरुभूमि है, बीचबीचमें धंड़ नामक छोटी छोटी झील हैं। पूर्वमें सिन्धुतीरवर्ती भूभाग भी पर्वतमय और अनुर्वर है। इसी भागमें एक पहाड़के ऊपर झिरक नामका एक शहर बसा है। दक्षिणांशकी भूमि पल्वलमय और समतल है, बीच बीचमें खाड़ी और सिन्धुनदकी शाखा प्रवाहित हैं। इनकी छह प्रधान शाखाओंके नाम—पिति, जुना, रिशल, हजामरो, ककेवारि और खेदेवाड़ी है। घाड़ोबाड़ी भी इसी उपविभागमें अवस्थित है। १८४५ ई०में हजामरो बहुत छोटी नदी थी, बाद धीरे धीरे बढ़ कर अभी वह सिन्धु नदके बड़े मुहानेमें गिनी जाती है। इस मुहानेके पूर्वीय किनारे मल्लाहोंकी सुविधाके लिये ८५ फुट ऊँचा एक आलोकस्तम्भ है। यह स्तम्भ प्रायः २५ मील दूरसे दिखाई पड़ता है। यहां गवर्मेण्टकी ४८ खाड़ी हैं, जिनकी लम्बाई प्रायः ३६० मील होगी। इसके सिवा जमींदारोंकी छोटी छोटी प्रायः १३२१ खाड़ी है। बाघड़, कलरी और सियान ये ही तीनों सबसे बड़ी है। इनमें बाढ़ आ जानेसे बहुतसे मवेशी, बकरे आदि नष्ट हो जाया करते हैं। कोटरीसे कराची तकका रेलपथ इस बाढ़से कई जगह कट जाता है। उपविभागके भिन्न भिन्न स्थानोंका जलवायु भिन्न भिन्न प्रकारका है। झिरक और उसका निकटवर्ती स्थान स्वास्थ्यकर है, किन्तु ठट्टा और उसके चारों ओरके स्थानोंमें ज्वर, उदरामय आदि रोगोंका प्रकोप अधिक है। वसन्त रोगभी प्रायः हुआ करता है। आजकल टीका देनेसे वसन्त रोगका प्रकोप कुछ शान्त हुआ है। वार्षिक वृष्टिपात ७३ इञ्च है। समुद्रजात कुहेरा उपकूल भागमें बहुत दूर तक फैल जाता है, इसीसे यहाँ गेहूं नहीं उपजता।

यहांकी भूमिकी प्रकृति, जीव और उद्भिद् प्रायः

घट (सं० पु०) घटते घट-अच्। मिट्टीका पात्र, घड़ा, जलपात्र, कलसा। २ प्राणायामविशेष, कुम्भक। इस प्राणायाममें घड़ाकी नाईं स्थिर होना पड़ता है इस लिये वह घट नामसे उल्लेख किया गया है। कुम्भ और प्राणायाम देखो। ३ हस्तिकुम्भ, हाथीका शरीर। ४ कुम्भराशि। ५ परिमाणविशेष, ६४ सेरका माप, एक द्रोण। ६ कुम्भपरिमाण, वीस द्रोण। ७ पिण्ड, शरीर। ८ मन, हृदय।

घटक (सं० पु०) घटयति परस्परसम्बन्धादिकं, घट णिच्। १ कुलाचार्य, पञ्जियार। घटक छह प्रकारका है—धावक, भावक, अंशक, योजक, दूषक और स्रावक।

"धावको भावकश्चैव योजकश्चांशकस्तथा।
दूषकस्रावकश्चैव षडेते घटकाः स्मृताः॥" (कुलदी०)

महिषमर्दिनीतन्त्रके मतसे ब्राह्मण घटक होने पर उसे स्पर्श नहीं करना चाहिए।

बङ्गालके कुलाचार्य ग्रन्थमें लिखा है—

"अंश वंश तथा दोष ये जानन्ति महाजनाः।
त एव घटका ज्ञेया न नाम ग्रहणात् पुनः॥"

अर्थात् जो मनुष्य अंश, वंश और कुलका दोषादोष निर्णय कर सकते हों उन्हें ही घटक कहते हैं। सिर्फ नाम जान लेने पर वे घटक कहला नहीं सकते।

(त्रि०) २ योजक, जो एक दूसरेको मिलता हो। ३ न्यायप्रसिद्ध पारिभाषिक पदार्थविशेष। जिसके ज्ञानके बिना जिस किसीका ज्ञान हो नहीं सकता, वह उसका घटक कहलाता है। जिस तरह "वह्निमान् पर्वतः" ऐसा ज्ञान वह्नि और पर्वतके ज्ञानके बिना नहीं हो सकता, इस लिए "वह्निमान् पर्वतः" इसके घटक वह्नि और पर्वत हैं। (पु०) ४ वनस्पति, बिना फूल लगे ही जिस वृक्षमें फल पैदा होते हों, उदुम्बर आदि। ५ बरेखिया, विवाहसंबंध तय करानेवाला। ६ चतुर मनुष्य। ७ घड़ा। ८ कालिकापुराणवर्णित कामरूपकी किरात जातियोंके एक सभ्य प्राचीन राजा।

घटकर्कट (सं० पु०) एक तरहका ताल।

घटकर्पर (सं० पु०) १ महाराज विक्रमादित्यको सभाके एक कवि। इन्होंने नीतिसार नामक एक कविताग्रन्थ रचना किया है।

घटस्य कर्परः, ६-तत्। घड़ाका टूटा फूटा भाग, ठिकरा।

घटका (हिं० पु०) मृत्यु, कालकी वह अवस्था जिसमें साँस लेनेके समय घर घरका शब्द आता हो, कफ रोकनेकी अवस्था।

घटकार (सं० त्रि०) घटं करोति घट-कृ-अण्, उपपद-स०। कुम्भकार, मिट्टीके पात्र बनानेवाला, कुम्हार।

घटकारक (सं० त्रि०) घटस्य कारकः, ६-तत्। घड़ा बनानेवाला, कुम्हार।

घटकी (सं० स्त्री०) घटककी स्त्री, कुम्हारिन। २ वह स्त्री जो कुम्हारका काम कर सकती हो।

घटकृत् (सं० त्रि०) घटं करोति घट-कृ-क्विप्। कुम्भकार, कुम्हार।

घटग्रह (सं० त्रि०) घटं गृह्णाति घट-ग्रह-अच्। कुम्भग्राहक, जो जलपात्र लेता हो, जो जल ढोता हो।

घटज (सं० पु०) घटात् जायते जन-ड। कुम्भसम्भव, अगस्त्य मुनि।

घटती (हिं० स्त्री०) कमी, कसर, न्यूनता।

घटदासी (सं० स्त्री०) घटयति नायकौ परस्परं योजयति घटि अच्-टाप्, घटा चासौ दासी चेति, कर्मधा० कुत्सार्थ। कुटनी, व्यभिचारिणी, रंडीकी दासी, जो नायक और नायिकाको मिला देती है। इसका पर्याय—कुट्टिनी, कुम्भा, रतताली और गणिका।

घटन (सं० क्ली०) घट-ल्युट्। योजना, संमेलन, उपस्थित होना।

घटना (सं० स्त्री०) घट-णिच्-युच्-टाप्। १ संहतकरण, उपस्थित होना। २ हस्ती समूह, हाथीका झुण्ड। 'करिणां घटना घटाः।' (अमर) ३ योजना, लगना, ठीकसे बैठना, आरोप होना। ४ मेलन, मेलमें होना, मेल मिल जाना। ५ कोई बात जो अकस्मात् हो जाय, वाकआ, वारदात। ६ दैवगति, विधिनिर्वन्ध, ब्रह्माका लिखा हुआ।

घटनानुभावकता—जो वृत्ति द्वारा घटनाका अनुभव किया नहीं जा सकता।

घटनीय (सं० त्रि०) घट-अनीयर्। घटना होनेके योग्य, वक्र होने लायक। (त्रि०) २ जो घड़ेमें उत्पन्न हो।

२५ं २´६″ उ० और देशा० ६८ं १७´४४″ पू०के मध्य सिन्धु किनारे नदीगर्भसे १५० फुट ऊंची एक खण्ड भूमि पर अवस्थित है। यह शहर सिन्धुनदके प्रहरीकी नाईं दण्डायमान है। यहांकी आवहवा स्वास्थ्यकर है। अवस्थान भी इतना सुविधाजनक है, कि सर चार्लस नेपियरको जब मालूम था कि अंगरेजी सैन्यनिवास झिरकमें न हो कर हैदराबादमें हुआ है तब वे बहुत दुःखित हुए थे। झिरकसे उत्तर २४ मील पर कोटरी, दक्षिण पश्चिममें ३२ मील पर ठट्टा और १३ मील पर मोटिं स्टेशन तक पक्की सड़क गई है।

यहां पहले बहुत वाणिज्य होता था। पहाड़ी जाति भेड़ोंके बदले तण्डुल, शस्य खरीदती थी। अभी कोटरी-से कराची तक रेलके हो जानेसे यहाका वाणिज्य बहुत कुछ ह्रास हो गया है। वर्त्तमान शिल्पकार्यमें ऊँटकी पीठके लिये एक तरहका सुन्दर पलान और सुसिन नामक एक प्रकारका मजबूत डोरिया कपड़ा बनता है। यहां झिरकके डेपुटी कलेक्टर रहते हैं। नदीसे ३५० फुट ऊँचे एक पहाड़ पर उनका वासस्थान है। वहांसे झिरक नगर सिन्धुनद और चारों ओर बहुत दूर तक भूभाग दिखाई पड़ता है। झिरकके उद्यान भी बहुत मनोहर और हरे भरे हैं। चारों ओर शस्यक्षेत्रमें धान, बाजरा, सन, तमाकू और ईख उपजती हैं। यहां तीन धर्मशालाएं, एक गवर्मेण्ट विद्यालय, एक अधीनस्थ कारागार, एक बाजार और दातव्यचिकित्सालय है।

झिरझिर (हिं० क्रि०-वि०) १ मंद मंद, धीरे धीरे। २ झिरझिर शब्दके साथ।

झिरझिरा (हिं० वि०) बहुत पतला, झंझरा, झीना।

झिरना (हिं० क्रि०) १ झरना देखो। (पु०) २ छिद्र, छेद, सुराख।

झिरि (सं० स्त्री०) झिरित्यव्यक्त शब्दो ऽस्त्यस्याः इन्। झिल्ली, झींगुर।

झिरिका (सं० स्त्री०) झिरीति अव्यक्तशब्देन कायति शब्दायते, कै-क-टाप्। झिल्ली, झींगुर।

झिरी (सं० स्त्री०) झिर इत्यव्यक्तशब्दो ऽस्त्यस्याः अच् ङीष्। झिल्ली, झींगुर।

झिरी (हिं० स्त्री०) १ छोटा छेद, दरज शिगाफ। २ वह गड्ढा जिसमें पानी धीरे धीरे जमा होता हो। ३ वह छोटा सोता जो कुएंके बगलमेंसे निकला हो।

झिरी—१ आसामको एक नदी। यह बरादल पहाड़से निकल कर दक्षिणकी ओर कछाड़ जिला और मणिपुर राज्य होती हुई बराक नदीमें जा गिरि है। दोनों ओर दुर्भेद्य गिरिमालाकी मध्यवर्ती सङ्कीर्ण उपत्यका हो कर यह नदी प्रवाहित है।

२-सिन्धिया राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २५ं ३३´ उ० और देशा० ७७´२८´ पू०के मध्य कोटासे कालपी जानेके पथ पर अवस्थित है।

झिरीं (हिं० स्त्री०) नाली आदिमें पानी रोकनेके लिये खोदा हुआ छोटा गड्ढा।

झिलँगा (हिं० पु०) १ टूटी हुई खाटका बाध। २ वह खाट जिसकी बुनावट ढीली पड़ गई हो।

झिलना (हिं० क्रि०) १ बलपूर्वक प्रवेश करना, जबर-दस्ती घुसना। २ तृप्त होना, अघा जाना। ३ मग्न होना, लगा रहना। ४ सहन होना, झेला जाना।

झिलम (हिं० स्त्री०) १ लड़ाईके समय मुख और सिर पर पहना जानेवाला लोहेका पहनावा। यह झंझरीदार होता था। २ पंजाबका एक नदी। झेलम् देखो।

झिलमटोप—झिलम देखो।

झिलमा (हिं० पु०) संयुक्तप्रान्तमें होनेवाला एक प्रकार-का धान।

झिलमिल (हिं० स्त्री०) १ झलमलाता हुआ प्रकाश, कांपती हुई रोशनी। २ प्रकाशको चंचलता, ठहर ठहर कर प्रकाशके घटने बढ़नेकी क्रिया। ३ एक प्रकारका सुन्दर बारीक और मुलायम कपड़ा। यह मल मल या तनजेबकी तरह होता है। (वि०) ४ जो ठहर ठहर कर चमकता हो, झलमलाता हुआ।

झिलमिला (हिं० वि०) १ जो गाढ़ा न हो। २ छिद्रयुक्त, जिसमें बहुतसे छोटे छोटे छेद हों। ३ ठहर ठहर कर हिलता हुआ प्रकाश देनेवाला। ४ चमकता हुआ, झल-झलाता हुआ। ५ जो बहुत स्पष्ट न हो।

झिलमिलाना (हिं० क्रि०) १ ठहर ठहर कर चमकना, जुगजुगाना। २ प्रकाशका हिलना, रोशनीका काँपना।

झिलमिलाहट (हिं० स्त्री०) झिलमिलानेकी क्रिया।

घटस्थापन (सं० क्लो०) घटस्य स्थापनं, ६-तत्। मन्त्रपूर्वक घड़ेकी स्थापना, मन्त्र पढ़ कर घड़ेका रखना।

पूजा शब्द देखो।

घटहा (हिं० पु०) १ घाटका ठेकेदार, वह मनुष्य जो घाटका ठेका लेता हो। २ वह नाव जो इस पारसे उस पार जाती हो।

घटा (सं० स्त्री०) घट अङ्-टाप्। १ समूह, झुण्ड, ढेर। २ घटना, कोई बात जो अचानक हो जाय, वाकआ हादसा। ३ गोष्ठी, परिवार ४ बहुतसे लोगोंका समूह, सभा। ५ युद्धस्थलमें हाथियोंका झुण्ड। ६ धूमधाम, समारोह, उत्सव। ७ मेघोंका घना समूह, उमड़े हुए बादलोंका समूह, मेघमाला। ८ मीठा नीबू।

घटाई (हिं० स्त्री०) हीनता, अप्रतिष्ठा, बेइज्जती।

घटाकाश (सं० पु०) आकाशका उतना भाग जितना एक घड़ेके भीतर आ जाय, घड़ेके भीतरकी खाली जगह।

घटाग्र (सं० पु०) वास्तु स्तम्भका अष्टम भाग, वास्तुविद्यामें खंभेके नो विभागोंमेंसे आठवाँ भाग।

घटाटोप (सं० पु०) घटया आटोपः, ३-तत्। १ आडम्बर, पाखण्ड, तड़क भड़क, गरूर। २ गाड़ी या पालकीको ढक लेनेवाला ओहार, किसी वस्तुको पूर्णत: ढक लेनेवाला कपड़ा। ३ चारों तरफसे घिरी हुई बादलोंकी घटा। ४ बादलोंकी तरह चारों ओरसे घेर लेनेवाला दल या समूह।

घटाना (हिं० क्रि०) १ न्यून करना, कम करना। २ बाकी निकालना, काटना। ३ अप्रतिष्ठा करना, बेइज्जती करना।

घटाभ (सं० पु०) हिरण्यकशिपुका सेनापति असुरविशेष, एक दैत्यका नाम जो हिरण्यकशिपुका सेनानायक था।

घटाभिधा (सं० स्त्री०) सफेद कुम्हड़ा, गोल लौकी।

घटाल (सं० त्रि०) घटा निन्दिता घटना अस्त्यस्य। घटा लच्। कुत्सित घटनायुक्त, वह जो खराब तौरसे हुई हो।

घटालाबु (सं० स्त्री०) घट इवा लाबु। कुम्भतुम्बी, गोल कद्दू, गोल घीया, तितलौकी।

घटालिका (सं० स्त्री०) मीठा नीबू, शाम नीबू।

घटाव (हिं० पु०) १ कम होनेका भाव, न्यूनता, कमी। २ अवनति, तनज्जुली।

घटिक (सं० त्रि०) घटेन तरति घट-ठन्। १ जो घड़ा द्वारा नदी पार होता हो। (पु०) घटिं कायति वादयति घटिवादनेन समयं ज्ञापयतीति यावत् कै-क पूर्व ह्रस्वः। २ घण्टा बजानेवाला सिपाही। (क्ली०) ३ नितंब, कमरके नीचेका भाग, चूतड़।

घटिका (सं० स्त्री०) १ कालका परिमाणविशेष, एक दंड या २४ मिनिटका समय। घटयति विहितकार्यकरणाय घट-णिच् ण्वुल्-टाप्। मुहूर्त, दो दण्ड। अल्पोघटः घट-ङीप् स्वार्थे कन्। ३ छोटा घड़ा गगरी। ४ पाश्चात्य मतसे २½ दण्डकी एक घटिका होती है। ५ घड़ी, टाइमपीस।

घटिकाचल—मन्द्राज नगरके पूर्व चितोर नगरके पासका एक पर्वत। यहां एक नृसिंह मन्दिर है। घटिकाचल-माहात्म्यमें इसका विशेष विवरण लिखा है।

घटिकायन्त्र (सं० क्ली०) समयनिर्णायक यन्त्रविशेष, समय बतलानेवाली घड़ी।

घटिकालवण (सं० क्ली०) विड़लवण, विट नमक।

घटिघट (सं० पु०) घट्या घटते घट-अच् संज्ञात्वात् ह्रस्वः। महादेव, शिव।

"नमो घटाय घट्याय नमो घटिघटाय च।" (हरिवं० २९८ अ०)

घटित (सं० त्रि०) घट-णिच्-क्त। १ योजित, बना हुआ। २ रचित, रचा हुआ। ३ संक्रान्त, निर्मित। ४ न्याय-प्रसिद्ध पारिभाषिक पदार्थ। जिसका ज्ञान हो जानेसे दूसरेका ज्ञान होना जरूरी है उसको दूसरेका घटित कहते हैं। जैसे "वह्निमान् पर्वत" इसका ज्ञान करनेमें अवश्य ही वह्नि और पर्वतका ज्ञान हुआ करता है। इस लिये "वह्निमान् पर्वत" यह वह्नि और पर्वत दोनोंसे घटित है।

घटितव्य (सं० त्रि०) जो घटेगा, जिसके होनेकी सम्भावना हो।

घटिन् (सं० पु०) घटस्तदाकारो ऽस्त्यस्य घट-इनि। १ कुम्भराशि। (त्रि०) २ कुम्भयुक्त, जिसके पास घड़ा हो।

घटिन्धम (सं० त्रि०) घटीं धमति घटी-ध्मा-खश् मुम् ह्रस्वश्च। जो मुखसे घड़ी बजाता हो।

घटिन्धय (सं० त्रि०) घटीं धयति घटी धेट् खश् मुम् ह्रस्वश्च। जो छोटा घड़ासे पीता हो।

पृथक् पृथक् खण्ड ले कर संगठित हुआ है। समस्त राज्यका परिमाणफल १३३२ वर्गमील है। यह राज्य फुलकियान राज्यके अन्तर्गत है। पतियाला देखो। १७६३ ई०में सिखोंने मुसलमानोंसे सरहिन्द प्रान्त जीत करके इसकी नींव डाली थी और १७६८ ई०में यह दिल्लीके सम्राट् द्वारा अनुमोदित हुआ है। झींदके राजा हमेशाके लिए अङ्गरेजोंके शुभचिन्तक थे महाराष्ट्रोंके अधःपतनके बाद झींदके राजा बाघसिंहने अङ्गरेजोंकी यथेष्ट सहायता की थी। जब लार्ड लेक (Lord Lake) ने विपाशाके किनारे होलकरका पीछा किया, तब बाघसिंहसे उन्हें बहुत सहायता मिली थी। इस उपकारके प्रत्युपकार स्वरूप लार्ड लेकने राजाको सम्पत्ति दिल्लीके सम्राट् और सिन्धियासे प्राप्त भूमिका अधिकार दृढ़ कर दिया। फुलकिया राजाओंके पतियाला-राजाके बादही झींदके राजाका संभ्रम है। फुलकिया वंशके अधिष्ठाता चौधरीफुलके बड़े लड़के तिलकने झींद राज्य स्थापन किया। तिलकके पौत्र गजपतिसिंहने १७६३ ई०में सरहिन्दके अफगान-शासनकर्त्ता जैनखाँको परास्त कर मार डाला। बाद उन्होंने पानीपथसे कर्नाल तक विस्तृत झींद और सफिदान प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया। दिल्लीके सम्राट्को राजस्व प्रदान तथा उनकी अधीनता स्वीकार कर वे वहां राज्य करने लगे। एक समय राजस्व अदा नहीं होनेके कारण सम्राट्के वजीर नाजिरखाँ गजपतिसिंहको कैदी बना कर दिल्ली ले गये। सम्राट्ने वहां उन्हें तीन वर्ष तक कैद कर रक्खा। बादमें गजपति अपने पुत्र मेहरसिंहको जामिन रख कर, अपनी राजधानीको लौट आये। पीछे उन्होंने सम्राट्को ३१ लाख रुपये दे कर १७७२ ई०में अपने पुत्रको मुक्त और राजोपाधि प्राप्त की। इन्होंने स्वाधीनभावसे राज्य-शासन तथा अपने नामका सिक्का चलाया था। १७७४ ई०में नाभाके राजाके साथ लड़ाई हो जानेके कारण इन्होंने अमलोह, भादसन और सङ्गरूर पर चढ़ाई कर दी। ये सब जनपद नाभाके ही अन्तर्भुक्त थे। अन्तमें पतियालाके राजासे तङ्ग किये जाने पर इन्होंने और सब देश तो लौटा दिये, मगर सङ्गरूरको अपने ही दखलमें रखा। तभीसे यह देश झींदका एक भाग समझा जाता है। दूसरे वर्ष दिल्ली गवमेंण्टने झींद पर अधिकार करनेकी कोशिश की, किन्तु फुलकियान सरदारोंने उनके आक्रमणको रोक दिया। १७७५ ई०में गजपतिसिंहने यहां एक दुर्ग बनवाया। १७८० ई०में मीरट-आक्रमणके समय ये लोग मुसलमान जनरलसे परास्त हुए, गजपतिसिंह कैद कर लिये गये। पीछे अच्छी रकम दे कर उन्होंने छुटकारा पाया। १७८९ ई०में दो लड़के छोड़ कर आप इस लोकसे चल बसे। बड़े भागसिंह राजा कहलाये। इनके अधिकारमें झींद और सफिदन और छोटे भूपसिंहके अधिकारमें बदरूखाँ रहा।

राजा भागसिंह वृटिश गवमेंण्टके बड़े खैरख्वाह थे। जसवन्तराव होलकरको खदेरनेमें इन्होंने लार्ड लेकको अच्छी सहायता पहुंचाई थी। इस कृतज्ञतामें इन्हें वृटिश गवमेंण्टकी ओरसे बवाना परगना मिला था। रणजित्सिंहसे भी राजा भागसिंहको कुछ प्रदेश मिले थे जो अभी लुधियाना जिलेके अन्तर्गत है। छत्तीस वर्ष राज्य करनेके बाद १८१९ ई०में इनका शरीरान्त हुआ। बाद इनके लड़के फतहसिंह उत्तराधिकारी हुए। १८२२ ई०में इनके स्वर्गवास होने पर इनके लड़के सङ्गतसिंहने झींदका सिंहासन सुशोभित किया। इस समय ये चारों ओर आपदोंसे घिरे थे, तनिक भी चैन न थी। १८३४ ई०में निःसन्तान अवस्थामें आपने मानवलीला समाप्त की। अब उत्तराधिकारीके लिये प्रश्न उठा। बाद सभीकी सलाहसे सङ्गतसिंहके चचेरे भाई स्वरूपसिंह जो बाजीदपुरमें रहते थे, राजा बनाये गये।

१८४५-४६ ई०के सिखयुद्धके समय अंगरेज कर्मचारीने गजपतिसिंहके निम्न छठे पुरुष झींदके तात्कालिक राजा स्वरूपसिंहसे सरहिन्द विभागके लिए १५० ऊँट मांगे थे। इस पर राजा सहमत न हुए। बाद मेजर ब्रडफुटने राजा पर १० हजार रुपये जुरमाना किया। राजा इस अपवादको दूर करनेके लिये इस तरह आग्रह और अविचलित भावसे अंगरेजोंके उपकार साधनमें प्रवृत्त हुए कि शीघ्र ही उनका पूर्व अपराध माफ कर दिया गया और वे अंगरेजोंसे आदृत

लगा है। वर्तमान समयमें पाश्चात्य कालसूचक यन्त्र ही विशेष प्रचलित है। किसी किसी जगह वर्तमान समयमें इस घटीयन्त्रका व्यवहार देखा जाता है।

विशेष विवरण यन्त्र शब्दमें देखो।

२ कूएँसे जल निकालनेका यन्त्र, रहँट। ३ संग्रहणी रोगका एक भेद जो असाध्य माना जाता है। सुपुप्ति, पार्श्वशूल और पेटके भीतर जलपूर्ण लोटेकी नाईं शब्द होनेको ही घटीयन्त्रग्रहणी रोग कहते हैं।

घटोत्कच (सं० पु०) भीम और हिडिंबाके संभोगसे उत्पन्न एक राक्षस। महाभारतमें लिखा है—लाक्ष घरके जलनेके बाद पाण्डव गुप्तराह हो कर जंगलको भागे थे। वे हिड़िंबा नामकी एक राक्षसके राज्यको पहुंचे। राक्षसने उन्हें संहार करनेकी इच्छासे अपनी बहन हिडिम्बाको भेजा। हिडिम्बाने बलशाली भीमके रूपसे मुग्ध हो उनसे विवाह कर लिया। उसके गर्भसे घटोत्कचकी उत्पत्ति हुई। जन्मकालमें ही घटोत्कच राक्षस रूपमें एक भयानक वीर हो उठा। किसी दिन बालकके मातापिताके पास आने पर हिडिम्बा "घटो ह्यस्योत्कचः" यह शब्द बोली, इसीसे उस बालकका नाम घटोत्कच रहा। इनकी दोनों आंखें विवर्ण, मुख बहुत बड़ा, कान दोनों खूंटेकी नाईं, ओष्ठ ताम्रवर्ण और शरीर कुछ कुछ वलिष्ठ था। कुरुक्षेत्रकी लड़ाईमें कर्णके हाथसे इनकी मृत्यु हुई। भीम और कर्ण देखो।

घटोत्कचान्तक (सं० पु०) घटोत्कचस्यान्तकः, ६-तत्। कर्ण। घटोत्कचारि शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होता है।

घटोदर (सं० पु०) घट इव उदरमस्य, बहुव्री०। एक असुरका नाम, हिरण्यकशिपुका एक सेनापति।

घटोद्भव (सं० पु०) घटउद्भव उत्पत्तिस्थानं यस्य, बहुव्री०। अगस्त्य मुनि।

घटोर (हिं० पु०) मेष, मेंढा, भेड़ा।

घट्ट (सं० पु०) घट्टते ऽस्मिन् घट्ट-घञ्। १ जिस स्थानसे पुष्करिणी प्रभृति जलाशयमें उतरा जा सकता है, घाट। २ घाटका महसूल लेनेका स्थान। घट भावे घञ्। ३ संचालन, चलाना।

घट्टकुटीप्रभात (सं० क्लो०) घट्टस्या कुटी तत्र प्रभातमिव। न्यायका एक भेद। न्याय देखो।

घट्टगा (सं० स्त्री०) दाक्षिणात्यकी एक नदी।

घट्टजीविन् (सं० पु०) घट्टेन घट्टे देयतरपण्येन शुल्कादिना जीवति जीव-णिनि। वर्णसंकर जातिविशेष, घटवार। विवादार्णवसेतुके मतानुसार वैश्या और रजकके संभोगसे इस जातिकी उत्पत्ति है। पाटनी देखो।

घट्टन (सं० क्लो०) घट्ट-ल्युट्। संचालन, चलाना।

घट्टना (सं० स्त्री०) घट्ट-युच-टाप्। १ संचालन। २ वृत्ति, जीविका, पेशा।

घट्टानन्द (सं० पु०) छन्दका एक भेद।

घट्टिका (सं० स्त्री०) घटिका देखो।

घट्टित (सं० त्रि०) घट्ट कर्मणि क्त। १ निर्मित, बनाया हुआ। २ चालित, चलाया हुआ। ३ कल्पित दिया हुआ। ४ नृत्यमें पैर चलानेका एक प्रकार जिसमें एड़ीको जमीन पर दबा कर पंजा नीचे ऊपर हिलाते हैं।

घट्टोद्ट (सं० त्रि०) घट्ट-तृच्। चालक, चलानेवाला।

घट्टी (सं० स्त्री०) घट्ट अल्पार्थे-ङीप्। क्षुद्र घाट, छोटा घाट। घट्ट देखो।

घट्ठा (हिं० पु०) शरीर पर उभड़ा हुआ चिह्न जो किसी वस्तुकी रगड़ लगते लगते पड़ जाता है।

घड़घड़ (हिं० पु०) बादल गरजने या गाड़ी चलनेकी आवाज।

घड़घड़ाना (हिं क्रि०) गड़गड़का शब्द करना।

घड़घड़ाहट (हिं० स्त्री०) १ घड़घड़ आवाज होनेकी क्रिया। २ बादल गरजने या गाड़ी चलनेका शब्द।

घड़त (हिं० स्त्री०) गढ़त देखो।

घड़नैल (हिं० पु०) छोटी छोटी नदिया पार होनेके लिए बाँसमें घड़े बाँध कर बनाया हुआ ढाँचा, घरनई।

घड़ा (हिं० पु०) घट, मिट्टीका बनाहुआ गगरा, जलपात्र, बड़ी गगरी, कलसा, घैला, कुम्भ।

घड़ाई (हिं० स्त्री०) गढ़ाई देखो।

घड़िया (हिं० स्त्री०) १ सोनारका एक बरतन जिसमें रख कर वह सोना चाँदी गलाता है। २ मिट्टीका छोटा प्याला। ३ शहदका छत्ता। ४ बच्चादान, गर्भाशय। ५ लोहारके लोहे गलानेका मिट्टीका पात्र।

घड़ियाल (हिं० पु०) १ पूजाके समयमें बजाय जानेवाला घण्टा। २ एक बड़ा और हिंसक जलजन्तु, ग्राह।

कुम्भीर देखो।

११ मान्यसूचक तोपें मिलीं। १८७७ ई०के दिल्ली राजकीय दरबारमें ये भारतेश्वरीके सचिव नियुक्त हुए।

इस राज्यमें ४३९ ग्राम और ७ शहर लगते हैं। लोकसंख्या लगभग २८२००३ है। यह दो निजामतमें विभक्त है, एक सङ्गरूर और दूसरा झींद। यहां जितने शहर हैं उनमें सङ्गरूर ही प्रधान है। जिसकी पुरानी राजधानी झींद थीं।

झींदकी चैती फसल ही प्रधान है। इस समय गेहूं, जौ, चना और सरसों उपजती है। रूई और ईख माघ फागुनकी फसल है। झींद तहसीलमें कहीं तो नकद से और कहीं उपजसे मालगुजारी चुकाई जाती है। नकदकी दर प्रति बीघे एकसे लेकर तीन रुपये तक है। यहांके जङ्गलका रकबा २६२३ एकर है और आमदनी २०००) रु०से कमकी नहीं है।

राज्यमें एक भी खान नहीं है। कहीं कहीं पत्थर, कंकड़ और शोरेकी खान नजर आती है। यहां सोने, चाँदीके अच्छे अच्छे गहने बनते हैं। इसके सिवा चमड़े, काठ और सूती कपड़ा बुननेका भी कारबार है। यहाँसे रूई, घी और तेलहनकी रफ्तनी तथा दूसरे दूसरे देशोंसे परिष्कृत चीनी और सूती कपड़ेकी आमदनी होती है। इस राज्यमें लुधियाना-धूरी जाखल-रेलवे गई है। यहां ४२ मील तक पक्की सड़क और १८१ मील तक कच्ची सड़क गई है। पतियालाके जैसा यहां भी डाक और टेलिग्राफका प्रबन्ध है।

१७८३, १८०३, १८१२, १८२४ और १८३३ ई०में राज्यको घोर दुर्भिक्षका सामना करना पड़ा था। शासनकार्य चार भागोंमें विभक्त है। पहला जन विभाग, इसके कर्मचारीकी देखरेखमें शिक्षा-विभागका भी प्रबन्ध है। दूसरा दीवान इसके अधीन राजस्व और आबकारीका इन्तजाम है; तीसरा जङ्गी लाठके अधीन बखशीखाँ इसके अधीन पुलिश तथा फौजकी देखभाल है और दीवानी तथा फौजदारी मामलाके लिये चौथा भाग अदालत है। उक्त विभागोंके प्रधान जब एक साथ बैठते हैं, तो उसे स्टेट कौउन्सिल या सदरआला कहते हैं। यह काउन्सिल राजाके अधीन रहती है। राजकार्यकी सुविधाके लिए यह राज्य दो निजामत और तीन तहसीलमें विभक्त है। राज्यकी कुल आमदनी १६ लाखें रुपयेसे अधिक है।

राजाके अधीन २२० अश्वारोही, ५६० पदातिक, ८० गोलन्दाज और १६ तोपें हैं।

२ पञ्जाबके अन्तर्गत झींन्द राज्यको निजामत। यह अक्षा० २८° २४´ से २९°२८´ उ० और देशा० ७५°५५´ से ७६° ४८´ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १०८० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २१७३२२ है। इसमें झींन्द सदर, सफीदन, दादरी, कलियाना और झींद ये शहर तथा ३४४ ग्राम लगते हैं।

३ पञ्जाबके अन्तर्गत झींद राज्य और निजामतकी तहसील। यह अक्षा० ७९°२´ से ७९°२८´ उ० और देशा० ७६° १५´ से ७६° ४८´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४८९ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः १२४९५४ है। इस तहसीलका आकार त्रिभुजका है। इसके चारों ओर करनाल, दिल्ली, रोहतक और हिस्सार नामके वृटिश जिले हैं। इसके उत्तरमें पतियालेकी नरवान तहसील है। इस तहसीलमें झींद और सफीदन नामके दो शहर तथा १६३ ग्राम लगते हैं। यहांकी वार्षिक आय प्रायः २'३ लाख रुपयेकी है।

४ पञ्जाबके अन्तर्गत झींद राज्यकी झींद निजामत और तहसीलका सदर। यह अक्षा० २९°२०´ उ० और देशा० ७६°१९´ पू० पर रोहतकसे २५ मील उत्तर-पश्चिम और संरूरसे ६० मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८०४७ है। पहले यह झींद राज्यको राजधानी था, इसीसे इसका नाम झींद पड़ा है। यह अब भी झींदके राजाओंका वासस्थान है। यह शहर पवित्र कुरुक्षेत्रके भूभाग पर अवस्थित है। कहा जाता है, कि पाण्डवने यहां जयन्त देवीका एक मन्दिर बनाया और धीरे धीरे जयन्तपुरी नामकी नगरी बस गई। इसी जयन्तपुरीका अपभ्रंश झींद है। मुसलमानी राज्यके समय १७५५ ई०में झींदके प्रथम राजा गजपतिसिंहने इस पर आक्रमण किया। १७७५ ई०में दिल्ली सरकारने रहिमदादखाँको उसे दमन करनेके लिये भेजा, किन्तु वहाँ पर वह पराजित हुआ और मारा गया। सफीदनमें उसका स्मारक अब भी विद्यमान है। यहां

व्यवस्था की जा सकती है। इस तरहकी जेब-घड़ियोंका नाम रिपिटर (Repeater) है। घड़ी और टाइमपीसमें घण्टा बजनेके अलावा एक ऐसा भी निर्घोष-यन्त्र लगाया जा सकता है कि, जिसके द्वारा अपने कोई एक आवश्यक समय पर उस घण्टीको बजा लिया जा सके। इससे सोते हुए अन्यमनस्क और आलसी आदमियोंको बड़ी सुविधा होती है। इस यन्त्रके सहारे वे आवश्यकतानुसार समय पर यन्त्रको द्रुत और कर्कश शब्द सुन कर कार्यमें प्रवृत्त हो सकते हैं। इस यन्त्रका नाम "चैतन्योत्पादक" (Alarm) है। (५) हाथ घड़ी (Wrist Watch) यह जेब घड़ीके सदृश पर उससे कुछ छोटी होती है। हाथकी कलाईमें चमड़े, कपड़े या सोने चाँदीकी बैण्डसे बाँधी जाती है। इसके नाना आकार हैं, गोल चौखूंटी, छहकोनी आदि।

सबसे पहिले किसने इस यंत्रकी स्थापना की, इसका निर्णय करना कठिन है। पहिले यूरोपके नाना स्थानोंमें क्लाक वा टाइमपीस शब्दके बदले घड़ी समझानेके लिए 'होरोलजियम्' (Horologium) शब्द काममें लाया जाता था। क्यों कि समयविभाजकशास्त्रको उक्त देशोंमें 'होरोलजी' (Horolgy) कहते हैं। घण्टा बजानेवाली घड़ियों का व्यवहार प्राचीन समयमें यूरोपके जिन जिन देशोंमें होता था, उनमेंसे इटाली देशके इतिहासमें सबसे ज्यादा प्राचीनकालका विवरण पाया जाता है। वहां तेरहवीं शताब्दीके मध्यके समयमें घड़ीका प्रचार था, ऐसा जाना जाता है। इङ्गलैण्डके इतिहाससे जाना जाता है कि, १२८८ ई०में 'किंगस्‌बेंच' (King's Bench) नामक अदालतके प्रधान विचारकको जो अर्थदण्ड हुआ था, उसमें वेष्टमिनिष्टर हॉल नामक प्रासादके पास जो सुविख्यात घड़ि-घर (Clock house) है, उसकी सबसे पहिले घड़ी बनी थी। इङ्गलैण्डके राजा छट्ठे हेनरी सेण्टष्टिफेन्स गिर्जाके प्रधान याजक विलियम ओयार्विको इस घड़ीके लिए प्रतिदिन ६ पेन्स खर्च दिया करते थे। बोलग्नाकी पहिली घड़ी १३५६ ई०में स्थापित हुई थी। हेनरीडी-वाइक नामका एक जर्मन शिल्पीने फ्रांसके राजा पञ्चम चार्लसके प्रासाद-में १३६४ ई०से एक घड़ी स्थापित की थी। इससे पहिले जो सब घड़ियां अर्थात् जिस नियमसे घड़ियां बनती थीं, इन्होंने उससे बहुत ज्यादा उन्नति की। राइमार नामक कविके "फिडेरा" नामके काव्यमें ऐसा है कि,—३य एडवर्ड तीन तीन घटिशास्त्रवित् ओलन्दाजोंको प्रतिपालन करते थे। ये लोग 'डेफ्ट्' (Delft)-से १३६८ ई०में इङ्गलैण्ड आये थे। १३७० की सालमें ष्ट्रासवर्ग नगरमें एक घड़ी बनी थी कनरेडास डासिपोडियास इस घड़ीका विशेष विवरण लिख गये हैं। फ्राइसार्टके मतसे इसी समयमें कूर्ट्रैकी भी एक घड़ी थी और उस घड़ीको १३८२ ई०में डिउक औफ बारगण्डि छीन लाये थे। १३९५ ई०में स्पायारसें एक घड़ी थी, लेमानने इसका विवरण लिखा है।

नूरणवर्गमें १४६२ ई०में, अकजियारमें १४८३ ई०में और भिनिसमें १४९७ ई०में एक एक घड़ी थी—ऐसा ज्ञात हुआ है। आमब्रोसियास कामाल डुलेन्सिसने फ्लोरेन्स नगरमें निकोलासके जो पत्र लिखा था, उस पत्रमें (Lib xv epis 4) जाना जाता है कि, १५वीं शताब्दीके पीछले समयमें यूरोपके प्रायः समस्त देशोंमें बहुतोंके घर-में घड़ीका व्यवहार प्रचलित हुआ था। इससे जो अनुमान किया जा सकता है कि, हेनरी डी-ओयाइककी घड़ीके बाद और भी डेढ़ सौ दो सौ वर्षके बीचके समयमें यूरोप-में कोई भी घड़ीको दुर्लभ व आश्चर्यजनक पदार्थ नहीं समझते थे, साधारण स्थितिके लोगोंके घर भी घड़ीका व्यवहार जारी था। हेनरी डी-ओयाइकके बाद घड़ीको जो इतनी उन्नति हुई है, वह किसी एकके जरिये नहीं; बल्कि एकके बाद दूसरेके बहु उद्योगसे और तरकीबोंसे इतनी उन्नति हो पाई है। ओयाइके समयमें जहां पर घड़ी स्थापन करनेकी आवश्यकता होती थी, वहीं वह बनाई भी जाती थी। क्यों कि बनाई हुई घड़ी एक जगहसे दूसरी जगहसे ले जाने लायक नहीं होती थी। फिर जब वह १५वीं शताब्दीके शेषभागमें सर्वसाधारणके काम-में आने लगी, मालूम होता है तब वह ऐसी बनाई जाने लगी, स्थानांतरित की जा सके। इस अनुमानसे यह भी मालूम होता है कि, हेनरी-डी-ओयाइकको घड़ी उससे पहिलेके घड़ी बनानेवालोंकी समवेत चेष्टा-का और अटूट परिश्रमका फल है।

भुठाना (हिं॰ क्रि॰) भूठा साबित करना, भुठलाना।

भुठामूठी (हिं॰ क्रि॰) झूठमूठ देखो।

भुठालना (हिं॰ क्रि॰) झुठलाना देखो।

भुण्ट (सं॰ पु॰) लुण्ट-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ काण्डहीन वृक्ष, वह पेड़ जिसमें तना न हो, भाड़ी। २ स्तम्ब, खंभा। ३ गुल्म।

भुण्डिया—गौड़ ब्राह्मणोंका एक कुलनाम। इसे कहीं तो वङ्ग और कहीं अङ्ग कहते हैं।

भुन (हिं॰ स्त्री॰) १ एक चिड़िया। २ झुनझुनी देखो।

भुनक (हिं॰ पु॰) नूपुरका शब्द।

भुनकना (हिं॰ क्रि॰) भुनभुन शब्द करना, भुनभुन बजना।

भुनभुन (हिं॰ पु॰) नूपुर आदिके बजनेका भुनभुन शब्द।

भुनभुना (हिं॰ पु॰) छोटे छोटे लड़कोंके खेलनेका एक खिलौना। यह धातु, काठ, ताड़के पत्तों या कागजका बना होता है। इसमें पकड़नेके लिये एक डंडी भी लगी रहती है। डंडीके एक या दोनों सिरों पर पोला गोल लट्टू होता है। किसी किसी भुनभुनेमें आवाज होनेके लिये कंकड़ या किसी चीजके छोटे दाने दिये रहते हैं।

भुनभुनाना (हिं॰ क्रि॰) घुंघुरूके समान आवाज करना।

भुनभुनियाँ (हिं॰ स्त्री॰) १ सनईका पौधा। २ एक प्रकारका गहना जो पैरोंमें पहना जाता है और जिससे भुनभुनका शब्द होता है। ३ बेड़ी, निगड़।

भुनभुनी (हिं॰ स्त्री॰) शरीरके किसी अंगमें उत्पन्न एक प्रकारकी सनसनाहट। यह हाथ या पैरके बहुत देर तक एक स्थितिमें मुड़े रहनेके कारण होती है।

भुनभुनु—राजपूतानेके अन्तर्गत जयपुरराज्यकी शेखावती जिलेका एक परगना और नगर। यह अक्षा॰ २८° ८' उ॰ और देशा॰ ७५° २३' पू॰ पर दिल्लीसे १२० मील दक्षिण-पश्चिम तथा बिकानेरसे १३० मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १२२७८ है। एक पर्वतके पूर्व पाददेश पर यह नगर अवस्थित है। यह पर्वत बहुत दूरसे दीख पड़ता है। शेखावतीके राजाओंके शासनकालमें यहां पांच सर्दारोंका अलग अलग दुर्ग था। यहां काठके ऊपर अच्छे अच्छे चित्र खोदे जाते हैं।

भुपभुपी (हिं॰ पु॰) १ झुबझुबी देखो।

भुप्पा (हिं॰ पु॰) १ झब्बा देखो। २ झुब्बा देखो।

भुबभुबी (हिं॰ स्त्री॰) कानमें पहननेका एक प्रकारका गहना। इस तरहका गहना सिर्फ देहाती स्त्रियां व्यवहार करती हैं।

भुमका (हिं॰ पु॰) १ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है। यह छोटी गोल कटोरीके आकारका होता है। कटोरीकी पेंदीमें एक कुंदा लगा रहता और इसका मुंह नीचेकी ओर गिरा रहता है। कुंदेके सहारेसे कटोरी कानसे नीचेकी ओर लटकती रहती है। इसके किनारे पर सोनेके तारमें गुथे हुए मोतियोंकी भालर लगी होती है। यह अकेला भी कानमें पहना जाता है। कोई कोई इसे कर्णफूलके नीचे लटका कर भी पहनती है। २ भुमकेके आकारमें फूल लगानेवाले एक प्रकारका पौधा। ३ इस पौधेका फूल।

भुमरा (हिं॰ पु॰) लुहारोंका एक बड़ा हथौड़ा। यह खानमेंसे लोहा निकालनेके काममें आता है।

भुमरि (सं॰ स्त्री॰) रागिणीविशेष, यह प्रायः शृङ्गार रसमें प्रयोज्य है।

भुमरी (हिं॰ स्त्री॰) १ काठकी मुंगरी। २ एक प्रकारका यन्त्र जिससे गच पीटा जाता है।

भुमाऊ (हिं॰ वि॰) भुमनेवाला, जो भूमता हो।

भुमाना (हिं॰ क्रि॰) किसीको भूमनेमें लगाना।

भुमिया—मघ जातिकी एक शाखा। ये अपना आदिम वास पहाड़ी प्रदेशमें बतलाते हैं। ये लोग विशेष कर भूम नामक अनाज उपजाते हैं, इसीसे इनका नाम भुमिया पड़ा है।

भुमुर—वीरभूम, छोटा नागपुर और उसके आस पासके प्रदेशोंमें प्रचलित नीचजातियोंका एक प्रकार नृत्य-गीत। साधारणतः दो या उससे ज्यादा स्त्रियां ढोलके बाजेके साथ नानारूप अङ्गभङ्गी करती और गाती हुई नाचा करती है। भुमुर-नाच अनेकांशमें अश्लील होने पर भी इसके कुछ गीत अत्यन्त भावपूर्ण है।

भुर—राजपूतानेके अन्तर्गत योधपुर राज्यका एक नगर। यह अक्षा॰ २६° २२' उ॰ और देशा॰ ७३° १३' पू॰ पर योधपुरसे १८ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।

भुरकुट (हिं॰ वि॰) १ कुम्हलाया हुआ, सूखा हुआ। २ कृश, पतला, दुबला।

निवासो क्लेमेण्ट नामक शिल्पीने "एंकर एस्केपमेण्ट" चक्रका आविष्कार किया, इसके जरिये पेण्डुलमके बदले पतला इस्पातका स्प्रिंगका व्यवहार चालू हुआ। सेकेण्ड निरूपणका पेण्डुलम ऐसे स्प्रिंगके साथ संयुक्त होने पर उसका नाम हुआ,—'रयाल पेण्डुलम'। उसके बाद १७१५ ई०में जार्ज ग्रेहाम द्वारा पेण्डुलमका एक बडा दोष संशोधित हुआ। उन्होंने देखा कि, शीत उष्णताके परिवर्तनके साथ साथ पेण्डुलमके धातुके आकुंचन और प्रसारणसे उसकी गतिमें तारतम्य पाई जाती है, अतएव समय निरूपण विशुद्ध भावसे नहीं होता। उनने बहुत अनुसंधान करके इस दोषको निकाल बाहर किया। फिर हैरिसन नामक दूसरे एक शिल्पीने उसकी और भी अधिक उन्नति की। इसके बाद ग्रेहामने अपने आविष्कृत किये हुए शब्दहीन एस्केपमेंट चक्र (Deadbeat escapement) व्यवहार किया। इस ही जगहसे घडीकी उन्नतिका तृतीय युग समझना चाहिये।

उसके बाद इस एक सौ वर्षके भीतर भीतर घडीके कल-पुर्जोंको इतनी उन्नति हुई है कि, उसमें सेकेण्डसे भी सूक्ष्म काल विभागका निर्णय किया जा सकता है। इसके अलावा एक वर्षके भीतर घडीसे ऋतु, मास, पक्ष, दिन, घंटा, मिनिट, तिथि, वार, मासकी तारीख तक जाननेकी व्यवस्था की गई है। जहाजमें, रेलगाडीमें, हिमालयके शिखर पर वा विषुवरेखाकी उपरिस्थित मरुभूमिमें ले जाने पर भी आज कलकी घडीमें समयमें तारतम्यता नहीं होती। गिर्जा और प्रासादके स्तम्भ आदि पर व्यवहारके लिए एक तरहकी बडी घड़ी बनी है, उसका नाम है,—'टारेट क्लक'। यह क्लक-घडियोंके यंत्रोंसे स्वतंत्र प्रणालीसे बनती है। टेलिग्राफ विभागमें अथवा ज्योतिर्विदोंके व्यवहार करने योग्य एक तरहकी घड़ी बनी है। वह बिजलीके जरिये चलती है। इसको बिजलीको घडी कहते हैं। बिजलीकी सहायतासे दिनके किसी एक समय विशेषके निरूपणके लिए 'टायम बल' या समय-गोलककी सृष्टि हुई है।

रातमें गिर्जा या खंभे पर स्थापित घडीयोंका टायम देखनेके लिए उसमें स्वच्छ डायेल काममें ला कर आलोक पहुंचानेकी भी व्यवस्था की गई है। यह वत्ती इस तरीकेसे संयोग की जाती है कि, जिससे घड़ीके यंत्रोंकी छाया डायेल पर न पड़ने पावे। इसके सिवाय घड़ीके साथ तरह तरहके दृश्य भी लगाये जाते हैं। किसी किसी घडीमें घंटा बजते समय घडीके एक स्थानमें छोटेसे छेदका ढक्कन खुल कर उसमेंसे एक घुग्घु चिडिया निकल पड़ती है और जितनी दफे घंटा बजेगा उतनी दफे वह 'घू' 'घू' शब्द करती है। किसी घडीमें प्रति घण्टाके आधे घण्टामें एक बन्दर या मनुष्यकी मूर्ति निकल कर एक लम्बे घटे पर हतौडीसे मार कर बजाता है और किसीमें प्रति घंटामें गीत बजता रहता है। किसीमें बरात या ठाकुरविसर्जन और किसीमें वाद्य भाण्डसहित मनुष्य मूर्ति निकलती है। किसी घड़ीमें एक फाटकदार काठका घर बना हुआ रहता है, उसके सामने एक द्वारवानकी मूर्ति बनी हुई रहती है, प्रति सेकेण्डकी गतिके साथ साथ वह एक तरफसे दूसरी तरफ आता जाता रहता है और फाटक एक बार पूरा बंद हो कर फिर पूरा खुल जाता है। इस प्रकारकी तरह तरहके दृश्यवाली घडी देखनेमें आती है।

यूरोपमें जिन जिन देशोंमें घड़ी बनती है, उनमेंसे लण्डनकी घड़ी ही सबसे अच्छी और मूल्यवान् समझी जाती है। परन्तु सुइजर्लण्ड और जर्मनमें सबसे ज्यादा घड़ी बनती है। आजकल घडीका व्यवहार इतना चालू है कि, सुइजर्लैण्डके किसी एक कारखानेमें सालभरमें २ लाख जेब घड़ी बना करती है।

कलकत्तेमें कई एक प्रसिद्ध मसजिद, अट्टालिका और गिर्जाओंके शिखर पर बडी बडी घड़ी लगी हुई हैं। उनसे राह्गीरोंका बड़ा लाभ है। अमेरिकामें स्त्रियां और बालक बालिकायें साधारणतः घडीका तरह तरहके काम करतीं हैं। भारतमें यद्यपि सब गावोंमें घडीका व्यवहार अभी तक नहीं हुआ है तब भी इतना जरूर है, कि, कमसे कम बंगालके कोई भी गावमें पुराने हिसाबसे दण्ड पलादि न कह कर घंटा मिनिटके हिसाबसे दिनका परिमाण बतलाने पर समझ जाते हैं।

२ एक दण्ड। ३ पाश्चात्य मतसे ढाई दण्ड।

इस समय जयपुर राज्यमें अराजकता चारों ओर फैल गई और मनमाने कार्य होने लगे। प्रजाके दुःखोंका पारावार न रहा। प्रवाद है, कि झूनारामके ही षड यन्त्रसे जयसिंहको अकाल मृत्यु हुई थी। रानीके मरने पर ये राजमन्त्रीके पदसे च्युत कर चुनारके किलेमें आजीवन कैद कर लिये गये थे।

झूम (हिं० स्त्री०) १ झूमनेकी क्रिया। २ झपकी, ऊँघ।

झूमक (हिं० पु०) १ होलीके दिनोंमें गाये जानेका एक गीत। इसे देहातकी स्त्रियां झूम झूम कर एक घेरेमें नाचती हुई गाती हैं, झूमर। २ झूमर गीतके साथ होनेवाला नाच। ३ विवाहादि मङ्गल अवसरों पर गाये जानेका एक प्रकारका पूरबी गीत। ४ गुच्छा। ५ साड़ी या ओढ़नी आदिमें लगी हुई झूमकों या मोतियों आदिके गुच्छोंकी कतार।

झूमक साड़ी (हिं० स्त्री०) झूमके या सोने मोती आदिके गुच्छे लगी हुए एक प्रकारकी साड़ी। ये गुच्छे साड़ीके उस भागमें लगे रहते हैं जो मस्तकके ठीक ऊपर पड़ता है।

झूमका (हिं० पु०) १ झुमका देखो। २ झूमक देखो।

झूमड़ (हिं० पु०) झूमरख देखो।

झूमड झामड़ (हिं० पु०) निरर्थक विषय, झूठा प्रपंच।

झूमड़ा (हिं० पु०) झूमरा देखो।

झूमना (हिं० क्रि०) १ आधार पर स्थित किसी वस्तुका इधर उधर हिलना, बार बार झोंके खाना। जैसे—डालोंका झूमना। २ आधार पर स्थित किसी जीवका अपने सिर और धड़को बार बार आगे पीछे नीचे ऊपर हिलाना, लहराना। जैसे-हाथीका झूमना। विशेष कर मस्ती, अधिक प्रसन्नता, नींद या नशे आदिमें इस क्रिया-का प्रयोग होता है। ३ बैलोंका एक ऐब। इसमें वे खूंटे पर बँधे हुए चारों ओर सिर हिलाया करते हैं।

झूमर (हिं० पु०) १ एक प्रकारका गहना जो सिरमें पहना जाता है। इसमें भीतरसे पोली सोधी एक पटरी रहती है। पटरीकी चौड़ाई एक या डेढ़ अंगुल और लम्बाई चार पाँच अंगुलकी होती है। यह गहना प्रायः सोनेका ही होता है। इसमें घुंघरू या झब्बे लटकते रहते हैं जो छोटी जंजीरोंसे बंधे होते हैं। इसके पीछले भागके कुंडेमें चाँपके आकारकी एक गोल टुकडेमें दूसरी जंजीर या डोरी लगी होती है। इसके दूसरे सिरेका कुंडा सिरकी चोटी या माँगके सामनेके बालों या मस्तकके ऊपरी भाग पर लटकता रहता है। संयुक्त प्रदेशमें सिर्फ सिर पर दाहिनी ओरमें एक ही झूमर पहना जाता है किन्तु पंजाबकी स्त्रियां झूमरोंकी जोड़ी पहनती है। २ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है। कोई कोई इसे झुमका भी कहते हैं। ३ होलीमें गाये जानेका एक प्रकारका गीत। ४ इस गीतके साथ होनेवाला नाच। ५ विहारप्रान्तमें सब ऋतुओंमें गाये जानेका एक गीत। ६ एकही तरहके बहुतसी चीजोंका गोल घेरा, जमघट। ७ बहुतसी स्त्रियों या पुरुषोंका गोलाकारमें हो कर घूम घूम कर नाचना। ८ गाड़ीवानोंकी मोंगरी। ९ एक प्रकारका ताल जिसे झूमरा भी कहते हैं। १० छोटे छोटे लड़कोंके खेलनेका एक प्रकारका काठका खिलौना। इसमें एक गोल टुकड़ेमें चारों ओर छोटी छोटी गोलियां लटकती रहती हैं।

झूमरा (हिं० पु०) चौदह मात्राओंका एक प्रकारका ताल। इसमें तीन आघात और एक विराम होता है। धिं धिं तिरकिट, धिं धिं धा धा, तित्ता तिरकिट धिं धिं धा धा।

झूमरी (हिं० स्त्री०) मालव रागके पाँच भेदोंमेंसे एक।

झूर (हिं० स्त्री०) १ जलन, दाह। २ परिताप, दुःख।

झूरा (हिं० पु०) १ शुष्कस्थान, सूखी जगह। २ अवर्षण, पानीका अभाव, सूखा। ३ न्यूनता, कमी।

झूरि (हिं० स्त्री०) झूर देखो।

झूल (हिं० स्त्री०) १ चौपायोंकी पीठ पर डाले जानेका एक चौकोर कपड़ा। इस देशमें हाथियों और घोड़ों आदिकी पीठ पर शोभाके लिये अधिक दामोंकी झूल डाली जाती है। यहां तक कि बड़े बड़े राजाओंके हाथियोंकी झूलोंमें मोतियोंकी झालरें लगी रहती है। आजकल कुत्तोंकी पीठ पर भी झूल डाली जाने लगी है। २ वह कपड़ा जो पहना जाने पर भद्दा जान पड़े।

झूलडंड (सं० पु०) झूलदंड देखो।

झूलदंड (हिं० पु०) एक प्रकारकी कसरत। इसमें कसरत करनेवाले एक एक करके बैठक और तब झूलते हुए दंड करते हैं।

होमें यहां जो गिर्जा घरमें बड़े घण्टे टंगे रहते हैं, उनको 'कैम्पेनाइल' कहते हैं।

फ्रांसमें ५५० ई०में घंटाका बजना चालू हुआ था। उइयारमथका आबट बेनेडिक्ट ६८० ई०में इटालीसे एक घंटा अपने गिर्जाके लिए लाये थे। पोप साबिनियानने (६०० ई०में) यह नियम कर दिया था कि, घण्टा घण्टामें गिर्जासे बड़ा घण्टा बजना चाहिये, जिससे सर्वसाधारण उपासनाका वक्त जान सकें। ये सब बड़े बड़े घण्टे दक्षिण यूरोपमें ही देखनेमें आते थे। यूरोपके पूर्वांशमें ८वीं शताब्दीमें और सुइजर्लेण्ड और जर्मनीमें ११वीं शताब्दीमें घण्टा प्रचलित हुआ था। आयलैंण्ड, स्कोटलैण्ड, तथा उयेल्स्में कुछ पुराने घण्टे सुरक्षित रखे हुए हैं, सुनते हैं, वे सब ६वीं शताब्दीके बने हुए हैं। लोहेकी चद्दरको टेढी करके चौमुखी (अर्थात् बीचमें गड्ढासा और चारो कोन उठे हुए) करके रिभेटसे जोड कर ये सब घण्टा बनाये गये हैं, इनके ऊपर पीतलकी कलई की जाती है। इनमेंसे एकका नाम 'सेण्ट पैट्रिकका' घण्टा, और यह ६ इञ्च ऊंचा, ५ इञ्च चौड़ा तथा ४ इञ्च गहरा है। यह एक पीतलके डिब्बेमें सुरक्षित रखा हुआ है। यह डिब्बा रत्न अंकित है और उस पर चाँदीका काम किया हुआ है। आइरिस शुजर् (Irish-Shens)-के एक शिलालेखसे जाना जाता है कि, यह घण्टा १०९१से ११०५ ई०के भीतर भीतर बना है। "The Annals of Ulster" नामक पुस्तकमें ऐसा भी उल्लेख पाया जाता है कि, यह घण्टा ५५२ ई०में भी था। सेण्टमल नामके एक आइरिस मिशनरीके पास (६४६ ई०में) एक चापला घण्टा था। यह घण्टा अब भी सुइजर्लेण्ड नगरमें (मठमें) मौजूद है और सर्वसाधारणको दिखलाया जाता है।

आरलिन्स नगरके गिर्जाके लिए किसी राजाने एक घण्टा दान स्वरूप दिया था। खृष्टीय ग्यारहवीं शताब्दीमें इस घण्टाने बहुत प्रसिद्धि पाई थी। इसका वजन २६०० पौण्ड अर्थात् १३०० सेरके करीब था। १३वीं शताब्दीमें इससे भी बडे बडे घण्टे बनने लगे। १४०० ई०में पारी नगरमें "जैकेलिन्" नामका एक घण्टा साचेमें ढाला गया था, जो कि वजनमें १५००० पौण्ड अर्थात् १८१॥ मन था। पारी नगरमें और भी एक १४७२ ई०मे ढाला गया था, वह भी वजनमें २५००० पौण्ड अर्थात् ३१२॥ मन था। रुंया नगरका जो प्रसिद्ध घंटा है, वह १५०१ ई०में ढाला गया था। उसका वजन था ३६३६४ पौण्ड अर्थात् करीब ४५४॥ मन १ सेर।

रुसियाके मस्काउ नगरमे जो बड़ा भारी घण्टा है, उससे बड़ा या उसके समान दूसरा घण्टा यूरोपमें इससे पहिले नहीं था। यह घण्टा पहिले पहल कब बना था, उसका निश्चय नहीं। पर १५वीं शताब्दीमें ही बना है, यह ठीक है। इसका नाम था, 'जार कोलोकोल' अर्थात् 'घण्टाराज'। ऐसा सुननेमें आता है कि, मस्काउ नगरमें किसी समयमें १७०६ घण्टे थे। इनमेंसे एक घण्टा इतना बडा था कि, उसके भीतरका लटकन हिला कर बजानेमें २४ आदमियोंकी जरूरत होती थी। इसका वजन २८८००० पौण्ड अर्थात् ३६०० मन था। यह एक दफे टूट गया था और फिर १६५४ ई०में बना था। इसके बाद फिर भी एक दफे गिर पडा था, उस समय उसको तोड़ ताड़ कर और भी धातु मिला कर फिरसे (१७३४ ई०में) इससे बड़े साचेमें ढाला गया था। तबहीसे इसका नाम "जार कोलोकोल" पड़ा था। यह घण्टाराज' १८ फुट ३ इञ्च लम्बा, ६० फुट ८ इञ्च घेर और २ फुट मोटा था। इस घंटेमें ६७००० पौण्ड अर्थात् (१०) दश रुपयेका अगर एक पौण्ड माना जाय) ६७००००) रु० खर्च पड़ा था। १९८ टन अर्थात् १०३६ मनके करीब इसका वजन था। बहुत दिन तक ऐसा भ्रम था कि, यही घण्टा किसी वक्त व्यवहृत होता था, फिर १७३७ ई०में यह अग्निकाण्डमें गिर कर जमीनमें प्रायः धुस गया था। पर पीछे यह भ्रम दूर हो गया। बहुतसे सूक्ष्मदर्शी और धीरबुद्धियोंकी विवेचनासे यह निश्चय हुआ है कि, वह कभी भी लटकाया नहीं गया और न कभी साँचेमेंसे निकाला ही गया था। ऐसा ही ८० टन वजनवाला और भी एक घण्टा मस्काउ नगरमें मौजूद है। इसके अलावा यूरोपके नाना देशोंके गिर्जाओंमें १८से लेकर ५ टन तकका घण्टा पाया जाता है।

झूसी—युक्तप्रदेशमें इलाहाबाद जिलेकी झूलपुर तहसील का एक शहर। यह अक्षा० २५° २६´ उ० और देशा० ८१° ५४´ पू०के मध्य गङ्गाके दूसरे किनारे अवस्थित है। लोक संख्या प्रायः ३३४२ है। इलाहाबादके उपकण्ठस्थित दारागञ्ज और झूसीके बीचमें पार होनेका घाट है। ग्रीष्म कालमें नदीके सङ्कीर्ण हो जानेसे वहां नौसेतु प्रस्तुत होता है। यह नगर अत्यन्त प्राचीन है। हिन्दू पुराणादिवर्णित केशिनगर या प्रतिष्ठान इसी स्थान पर था। अकबरके समयमें इलाहाबाद, झूसी और जलालाबाद ये तीन नगर इलाहाबाद सूबाके सदर थे। इस शहरमें सरकारी त्रिकोणमितिक जरीपका एक अड्डा तथा प्रथम श्रेणीका थाना और डाकघर है।

झेंपना (हिं० क्रि०) लज्जित होना, शरमाना, लजाना।

झेरा (हिं० पु०) प्रपंच, झंझट, बखेड़ा।

झेल (हिं० स्त्री०) १ वह क्रिया जो पानीमें तैरते समय पानी हटानेके लिये हाथ पैरसे की जाती है। २ हलका धक्का, हिलोरा। ३ झेलनेकी क्रिया या भाव।

झेलना (हिं० क्रि०) १ ऊपर लेना बरदाश्त करना। २ पानीको हाथ पैरसे हिलाना। ३ हेलना, तैरना। ४ पचाना, हजम कराना। ५ अग्रसर करना, आगे बढ़ाना, ठेलना, ढकेलना।

झेलनी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी जंजीर। यह कानके आभूषणका भार संभालनेके लिये बालोंमें अटकाई जाती है।

झेलम्—१ पञ्जाबके रावलपिण्डी विभागका एक जिला। यह अक्षा० ३२° २७´से ३३° १५´ उ० और देशा० ७२° ३२´से ७३° ४८´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २८१३ वर्गमील है। यह जिला पश्चिमसे पूर्व तक ७५ मील लम्बा और ५५ मील चौड़ा है, पञ्जाबके ३२ जिलेके मध्य यह जिला परिमाणफलानुसार ८वें और अधिवासीके संख्यानुसार १८वें स्थानमें है। पञ्जाब प्रदेशके सैकड़े प्रायः ३.६७ अंश भूभाग और ३.१८ अंश अधिवासी इस जिलेके अन्तर्गत है। इसके उत्तरमें रावलपिण्डी जिला; पूर्वमें वितस्ता (झेलम) नदी, दक्षिणमें वितस्ता नदी और शाहपुर जिला तथा पश्चिममें बन्नू और शाहपुर जिला अवस्थित है। झेलम् नगर शासनकार्य और वाणिज्यादिका सदर है।

झेलम्की भूमि रावलपिण्डीकी नाईं पहाड़ी नहीं होने पर भी समतल नहीं है। लवणपर्वत हिमालयकी एक शाखा है जो इसी प्रदेशमें अवस्थित है। यह शाखा दो भागोंमें विभक्त हो कर परस्पर समान्तर भावसे पूर्वसे पश्चिमकी ओर जिलेके मेरुदण्डकी नाईं विस्तृत है। पर्वतके नीचे वितस्तातीरवर्ती समतल भूमि अत्यन्त उर्वरा और अगण्य वर्द्धिष्णु ग्राम द्वारा सुशोभित है। गैरिकवर्ण लवणगिरि इस स्थान पर दुरारोह है, तथा जगह जगह धूसरवर्ण गह्वरादि द्वारा परिव्याप्त है। इस पर्वत पर लवणका भाग अधिक पाया जाता है, इसीसे उसका नाम लवणपर्वत हुआ है। खिउरामें गवर्मेण्टके निरीक्षणमें इस पहाड़से लवण निकाला जाता है। श्यामल गुल्मोंसे आच्छादित घाटी हो कर बहते हुए सोतोंका जल पहले बहुत विशुद्ध रहता है, किन्तु लवणाक्त भूमिके ऊपर आते आते खारा हो जाता है। तब वह जल सींचनेका काममें नहीं आता। उपरोक्त दो पर्वतश्रेणियोंमें एक सुन्दर मालभूमिके ऊपर चारों ओर अनुच्च पर्वतसे घिरा हुआ कलारकहार ह्रद अवस्थित है। इस ह्रद (झील)के दोनों प्रान्त सम्पूर्ण विपरीत भावापन्न है। एक ओरका दृश्य बहुत कुछ मरुसागरकी नाईं लवणमय कूल तृणगुल्म वा जलप्राणीविवर्जित है और दूसरा प्रान्त श्यामल सुन्दर उद्यानोंसे परिवेष्टित है। जहां हंस आदि तरह तरहके जलपक्षी मधुर स्वरोंसे चहचहाते हैं। लवणपर्वतके उत्तरस्थ प्रदेशमें उच्च बन्धुर मालभूमि है तथा जगह जगह नदी पर्वतादि द्वारा व्यवच्छिन्न हो कर अन्तमें यह प्रदेश अगण्य पर्वतसमाकीर्ण रावलपिण्डीके निकट जा कर मिल गया है। लवणपर्वतके साथ समकोण कर इस जिलेको उत्तर-दक्षिणमें बांटनेसे उसके पश्चिम भागका जल सिन्धुमें और पूर्व भागका जल वितस्तामें आ गिरेगा। यह वितस्ता नदी जिलेके पूर्व और दक्षिणभागमें प्रायः १०० मील तक सीमारूपमें अवस्थित है। इस नदीमें नाव आदि झेलम् नगरसे कुछ दूर तक आ जा सकती है।

लवण-पर्वत अनेक तरहके मूल्यवान् खनिज पदार्थोंसे परिपूर्ण है। अच्छे अच्छे मर्मर और अट्टालिका-बनाने योग्य पत्थरके सिवा यहाँ भिन्न भिन्न प्रकारके चूर्ण पत्थर

संस्कारसे (Reformation) पहिले यह प्रथा सब गिर्जोंमें थी। पर यह प्रोटेष्टाण्ट गिर्जासे बन्द हो गई थी, परन्तु इससे यह न समझना चाहिये कि, 'मृत्यु घण्टा' एक ही समयमें उठ गया था।

११वीं शताब्दीकी शुरू आतमें इङ्गलैण्डके 'कार्फिउ बेल" नामका एक प्रकारका घंटा बजाना प्रचलित हुआ था। इससे धार्मिक कोई सम्बन्ध नहीं था। रातके आठ बजे सबको बत्तियां बुझा देनी होंगी ऐसा प्रथम विलियमने हुक्म दिया था, इसी आदेशके अनुसार सर्वसाधारणको होशियार हो जानेके लिए शहरोंमें यथासमय घंटे बजाये जाते थे। विलियम रूफासके समय तक वह नियम जारी रहा, फिर उठ गया था। अब भी इङ्गलैंड में और स्कोटलैण्डमें बहुत जगह रातके आठ बजे घण्टा बजते है परन्तु उसके साथ साथ अधिवासियोंकी बत्तिया नहीं बुझानी पड़तीं।

आखिरमें घण्टासे संगीतकी ध्वनि उत्पन्न करनेको तरकीब निकाली गई। यह आविष्कार सबसे पहिले नेदारलैण्डके लोगोंने निकाला था। उस देशके बहुतसे गिर्जाओंमें हमेशह मृदु सुस्वरसे घण्टा बजते है और घंटा घंटामें घड़ीकी भांति घंटे भरमें आधे घंटेमें पाव घंटेमें बजते रहते हैं। इनमें कई एक बैरेल लगे हुए अर्गैन नामक यंत्रकी तरह बजते है और कुछ ऐसे भी है, जिनको चाबीकी सहायतासे वादक आ कर बजाते है। फरासी लोग इस प्रकारके बाजेको "कैरिलोन्स" कहते है। इङ्गलैण्डमें भी ऐसे घंटे है, पर वह एक नहीं, ५६ घंटे सुर मिला कर ऐसे कौशलसे रखे जाते है कि, बजते समय उन घण्टोंसे तरह तरहके सुर उत्पन्न हो कर बहुत ही मनोमोहिनी ध्वनि उत्पादन करते है। अङ्गरेज लोक ऐसे ही घण्टोंको "कैरलोन्स" कहते है। बार्गेस् नगरके 'लि हौले' नामक प्रासादके शिखर पर ऐसा "कैरिलोन्स" नामका घण्टा है। ऐसा सर्वांग सुन्दर और सुस्वर वाद्यवाला घंटा सारे यूरोपमें और दूसरा नहीं है। लण्डनमें और बहुतसे घण्टोंमें कैरिलोन्स घण्टाकी भांति ५।६ घण्टोंका सुर मिलाया गया है, परन्तु उसकी तुलना नहीं कर सकता टिंग् टाग् ढंग् टंग् टांग् ढंग् ऐसा बजता रहता है। इसका सुर मीठा और दूरसे सुननेमें आता है। इस बाजेको यहां तक तरक्की हुई है कि, १२ घण्टा मिला देनेसे ४७९,००१,६०० प्रकारके भिन्न भिन्न सुस्वर बजते रहते हैं। 'चिपसाइड' नामक स्थानके 'सेण्टमेरि-लि-बो' नामके गिर्जामें इसी तरहका घण्टा इतना प्रसिद्ध है कि, उसके विषयमें इङ्गलैण्डमें एक कहावत हो गई है कि, किसीको अगर लण्डनमें जन्म स्थान है – ऐसा परिचय देना होता था; तो वह कहता था—"Born within the sound of bowbells।" ये सब घण्टे कोई एक निर्दिष्ट समय-पर बजानेके लिए प्रति दिन लोग अर्थदान करते थे। पूर्वोक्त (Bowbells) प्रति दिन सुबह गम्भीर आवाजसे बजता है। लण्डनवासी एक व्यक्ति इस वाद्यके लिए यथेष्ट धन दे गये हैं। उनका यह उद्देश्य था कि, इससे लण्डनको शिक्षित सम्प्रदाय इसके नादको सुन कर जगेंगे और अपने अपने कार्यमें तत्पर होंयगे।

यूरोपमें रोमकोंने घोड़े आदि पशुओंके गलेमें छोटे छोटे घण्टा बांधनेका नियम चलाया था। घोड़ेकी गर्दनमें सामकी घण्टी लटका देनेसे अंधेरेमें रास्तागीरोंको घोड़ेके आगमनका ज्ञान हो जाता था। गाय, बकरी, भेड आदि पशुओंके गलेमें घण्टी रहनेसे पहाड़ व जंगलोंमें उनके खो जानेसे ढूंढनेमें सुविधा होती है।

साहबोंके मकान पर किसीके आगमन होनेपर उसको सूचनाके लिए जो घंटा बजता है, वह इंगलैण्डकी राज्ञी ऐनिके राजत्वकालमें नहीं था, उसके बाद प्रचलित हुआ है। अंगरेज लोग नौकरको बुलानेके लिए हिन्दुस्तानियोंकी तरह हल्ला नहीं करते, एक तरहकी घण्टी बजाते हैं। इस घण्टेको 'आह्वान-घण्टा' (Calling-bell) वा 'गृहघंटा' (Room-bell) या 'टेबिल-घंटा' (Table-bell) कहते हैं। साहब लोग होटलोंमें, रहनेके घरमें इत्यादि स्थानोंमें प्रत्येक कमरेमें संवादादि देनेके लिए एक तरहकी तारसे बंधी हुई घंटी काममें लाते है। इन तारोंका एक मुंह तो नौकरोंके घरमें और एक मुंह दरवाजेके पास रहता है। इन तारोंमेंसे किसी एक तारके खींचनेसे अभीप्सित घरमें घंटी बज जाती है।

एशियाके दक्षिणपूर्वांशमें बड़े घंटोंका अधिक प्रचार है। ब्रह्मदेशमें बहुतसे घंटोंमें बजानेके लिए

मनुष्य रहते हैं। इनमें झेलम् और पिण्डदादन प्रधान वाणिज्यस्थान है।

छोटे छोटे गाँवके घर मट्टी अथवा कच्ची ईंटोंके बने हैं। कभी कभी बड़े बड़े पत्थर दीवारमें मट्टीके साथ दे दिये जाते हैं। अभी धनवान मनुष्य कटे हुए चौरस पत्थरसे घर और मस्जिद बनाते हैं। सम्भ्रान्तोंके द्वार तरह तरहके चित्रोंसे चित्रित हैं तथा घरका भीतरी भाग सुसज्जित भी है। यहाँ सभी अपने घरको अत्यन्त परिष्कार रखते हैं।

गेहूं और बाजरा यहाँके अधिवासियोंका खाद्य है। जुन्हरी, तण्डुल और जौ भी कभी कभी काममें लाया जाता है। यहाँके प्रायः सभी लोग मांस खाते हैं।

इस जिलेकी २८१३ वर्गमील जमीनमेंसे प्रायः ११७४ वर्गमीलमें खेती होती और १७८ वर्गमील खेतीके उपयुक्त है। अधिकांश खेतमें गेहूं या बाजरा उपजाया जाता है। शेष जमीनमें उपयोगितानुसार धान इत्यादि रोपा जाता है।

अमेरिकन युद्धके समय यहाँ कपास बहुत उपजायी जाती थी; किन्तु इसके बाद उसका मूल्य कम हो जानेके कारण कृषकोंने पूर्व-कृषि अवलम्बन की है। तोभी यहाँसे कपासकी उपज बिलकुल नहीं गई है। भारतवर्षके तरह तरहके फल और साक-सब्जी अधिक उत्पन्न होती है।

शस्यक्षेत्रमें जल सींचनेका कोई विस्तृत उपाय नहीं है। कृषकगण नदीके किनारे अथवा उपत्यकामें कुआँ खोद कर उसीसे अपनी अपनी जमीन सींचते हैं। एक कुएंके जलसे बहुत कम जमीन सींची जाती है। किन्तु खेतमें कृषक इतनी खाद देते और इतने यत्नसे जोतते हैं, कि वर्षभरमें कोई न कोई फसल अवश्य हो ही जाती है। उत्तर भागकी मालभूमिमें बहुतसे छोटे छोटे तड़ागको बंधा कर उनमें जल जमा किया जाता और उसीसे खेत सींचा जाता है। किन्तु ऐसा करनेमें बहुत खर्च पड़ता है। सुतरां सामान्य गृहस्थके लिये बहुत कठिन हो जाता है। बहुतसे अङ्गरेजी राज्यमें अपनी सम्पत्ति निरापद जान कर बांध तैयार करते हैं। इस कारण यहां खेतीकी खूब सुविधा है। यहाँके कृषकोंकी अवस्था मन्द नहीं है, बहुतसे ऋणसे रक्षित है। एक विषय कई अंशोंमें बँट जानेसेही अनेक दरिद्र हो गये हैं। बहुतसे संभ्रान्त व्यक्तियोंने सम्प्रति अपने अपने विषयको अखण्ड रखनेके लिये एक उपाय सोच निकाला है। परस्पर लड़ाई करके अन्त तक जो उत्तराधिकारी जीतेगा, वही सब सम्पत्तिका अधिकारी होगा।

झेलम्का एक एक ग्राम अन्यान्य स्थानोंके ग्रामसे बहुत बड़ा है। बड़ासे बड़ा १००।१५० वर्गमील तक विस्तृत है। इन ग्रामोंके अधिपतिगण दूसरे दूसरे स्थानोंके अधिपतियोंसे अधिक क्षमतापन्न हैं। अधिकांश स्थानमें ही उत्पन्न फसलसे मालगुजारी दी जाती है। मालगुजारीको शरह स्थानभेदसे उत्पन्न शस्यके ¼ से ⅙ अंश तक है। ग्राममें मजदूर, नाई, धोबी, बढ़ई, कुम्हार आदिको तनखाह अनाजसे ही चुकाई जाती है। प्रति वर्ष अनाज काटनेके समय काश्मीरसे बहुत मजदूर यहाँ आ कर काम करते हैं और काम समाप्त होने पर पुनः वे स्वदेशको लौट जाते हैं।

वाणिज्य।—झेलम् और पिण्डदादन नगर इसी जिलेके वाणिज्यके दो प्रधान केन्द्र हैं। दक्षिण प्रदेशका नमक मुलतान, सिन्धु और रावलपिण्डीमें गेहूं आदि अनाज, उत्तर और पश्चिमके पार्वत्य प्रदेशमें रेशम और सूतीका कपड़ा तथा इसके आसपासके चारों तरफमें पीतल और तांबेके बरतन भेजे जाते हैं। नदीके मुहानेसे मुलतान तक पत्थर लाया जाता है। पञ्जाब-नर्दार्ण ष्टेट-रेलवे कम्पनीने तरकावालाकी पत्थरकी खान खरीद की है। इन्हीं पत्थरोंसे लाहोरका प्रधान गिरजा बनाया गया है। पहाड़के बड़े बड़े शीशमकी नाव, रेल और बैलगाड़ी द्वारा दूसरे स्थानोंमें भेजे जाते हैं। पैकार जिलेके भीतर घूम घूम कर चमड़ा संग्रह करते हैं। बढ़िया चमड़ा विदेशके लिये कलकत्तेमें और घटिया अमृतसरमें भेजा जाता है। आमदनीमें विलायती कपड़ा, अमृतसर और मुलतानसे धातु, काश्मीरसे पशमी कपड़ा और पेशावरसे मध्य एशियाका द्रव्यजात प्रधान है। काश्मीरके साथ और भी अनेक तरहकी चीज खरीदी और बेची जाती है।

जिलेकी मध्यस्थ पर्वतश्रेणीकी नमककी खान

सकेगा। पर इससे कालिदासकी अभीष्ट सिद्धि न हुई। घण्टाकर्ण महादेवमें भक्ति तो रखते ही थे, सिर्फ मानसिक कष्टसे उन्होंने ऐसी प्रतिज्ञा ली थी। अतएव उनने नामशून्य स्तव पढ़ना शुरू किया। जैसे—

'किं वाचो महिमा महाजलनिधेर्यं वेन्दुरत्नाहति-
स्तो भूमदमन्नदस्नु निवहे कौनिरपोसाकृतिः।
मैनाको इसितमीरनीरविलसत् पाठोनपृष्ठांसमत्
यो चालांकुरकोटिकोटरकुटीकुल्य करे निर्दन्तः॥
तावत् सप्तसमुद्रमुद्रितमही भूमुग्रिरय कचे,
तावद्धि परिवारिता पृथुपृथु द्वीपा समन्तादियम्।
यस्य स्फारफणामणौ विलुलिते धत्ते कलङ्काकृतिं
शेषः द्वीपसमस्तदन्तदपरं तस्मै चिदस्मै नमः॥"

इस स्तवको सुन कर संपूर्ण सभा उनकी प्रशंसा करने लगी। महाराज भी सन्तुष्ट हुए। कालिदासने विना विचारके ही अपनी पराजय स्वीकार की। घण्टाकर्ण शापमुक्त हुए। महादेवने इनकी अचला भक्ति देख कर इनको अपना प्रिय पार्श्वद बनाया।

२ घण्टकक्षुप।

घण्टागार (सं० पु०) घण्टाया आगारः, ६-तत्। जिस घरमें घण्टा रखा जाता है।

घण्टाताड (सं० पु०) घण्टां कालज्ञापकघण्टां ताडयति घण्टा-ताडि-अण्, उपपदस०। कालसूचक घण्टा बजानेवाला, वर्णसंकर जातिविशेष। जो लड़ाईमें घंटा बजाता हो उसीको घंटाताड कहते हैं।

घण्टाताडन (सं० क्ली०) घण्टा बजानेकी क्रिया या भाव।

घण्टानाद (सं० पु०) घण्टाया नादः, ६-तत्। १ घण्टाका शब्द, घडीकी आवाज। घण्टा या नाद इव नादोऽस्य, बहुव्री०। २ कुवेरके एक मंत्रीका नाम।

घण्टापथ (सं० पु०) घण्टाना घण्टादिवाद्यानां घण्टायुक्तहस्त्यादीनां वा पन्थाः, ६-तत्। समा' अच्। बड़ा राजपथ, हाथी जाने लायक ग्राममार्ग, गाँवकी वह राह जिस पर हाथी जा आ सकता हो।

घण्टापाटलि (सं० क्ली०) घण्टा चासौ पाटलिश्चेति कर्मधा०। वृक्षविशेष, मोखा नामका एक पेड़। (Bignonia Suaveolens) इसका संस्कृत पर्याय—गोलीढ़, झाटल, मोच, मुष्कक, गोलिह, चारहु, कालमुष्कक, पाटलि, घण्टाक, झाट, तीक्ष्ण, घण्टक, मोचक, काष्ठपाटली, कालस्थाली और काचस्थली है। (भावप्र०)

घण्टाभ (सं० त्रि०) घण्टाया इव आभा यस्य, बहुव्री०। एक दैत्यका नाम। घटाभ देखो।

घण्टारवा (सं० स्त्री०) घण्टारववत् रवः पक्कफलेषु यस्य, बहुव्री० टाप्। वनशणवृक्ष, झनझनियाका पेड़। इसका पर्याय—शणपुष्पिका और शणपुष्पी है।

घण्टारवी (सं० स्त्री०) घण्टारव बाहुलकात् ङीप्। घण्टारवा देखो।

घण्टाल (सं० पु०) मदनवृक्ष।

घण्टालिका (सं० स्त्री०) घण्टाली स्वार्थे कन् टाप् पूर्वह्रस्वश्च। घण्टाली देखो।

घण्टाली (सं० स्त्री०) घण्टां तच्छब्दं अलति अल-अण् ङीप्। कोषातकी, एक तरहका पौधा, सौंफ। घण्टानां आली, ६-तत्। २ घण्टाश्रेणी।

घण्टावत् (सं० त्रि०) घण्टा मतुप् मस्य वः। घण्टायुक्त, जिसको घण्टा हो।

घण्टावाद्य (सं० क्ली०) घंटाका शब्द, घड़ीकी आवाज।

घण्टाबीज (सं० पु०) घण्टेव बीजं यस्य, बहुव्री०। १ जैपालवृक्ष, जायफलका पेड़। २ जायफलकी गुठली।

घण्टाशब्द (सं० पु०) घण्टायाः शब्दः, ६-तत्। १ घण्टारव, घण्टाकी आवाज। घण्टायाः शब्द इव शब्दो यस्य, बहुव्री०। २ कांस्य, कांसा धातु।

घण्टाशीता (सं० स्त्री०) अतिबला।

घण्टाशीला (सं० स्त्री०) महाशण वृक्ष।

घण्टिक (सं० पु०) जलजन्तुविशेष, घड़ियाल, ग्राह। कुम्भीर देखो।

घण्टिका (सं० स्त्री०) घण्टा अल्पार्थे ङीप् ततः स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च। १ बहुत छोटा घण्टा। २ तालुस्थ जिह्वा, वह छोटी जिह्वा जो तालुमें लगी रहती है, काग। ३ घूंघुरू। ४ गलरोगविशेष, गलेका एक तरहका रोग। ५ शणपुष्प, झनझनियाके फूल। ६ मरिच, मरचाइ।

घण्टिन् (सं० त्रि०) घण्टाऽस्यास्ति घण्टा-इनि। १ घंटायुक्त, जो घण्टासे सुसज्जित हो, जिसको घण्टा हो।

घण्टिनीबीज (सं० क्ली०) घण्टिन्या बीजं, ६-तत्। जैपाल, जायफल।

इस नगरका श्रीवृद्धि दिनों दिन हो रही है। अभी रेल-पथके होजानेसे नमकका व्यवसाय और अधिक बढ़ गया है। इसी कारण यहांके वाणिज्यमें किसी प्रकारकी हानि नहीं पहुंचती।

झेलम्‌में बड़े बड़े मकान नहीं हैं। अधिकांश मकान मट्टीके बने हुए हैं। नदीके किनारे कई एक सुन्दर अट्टालिकायें हैं। सड़क तथा नालेका भी अच्छा प्रबन्ध है। यहां परिष्कार जल पाया जाता है। नौका निर्माणमें यह नगर प्रसिद्ध है।

शहरसे प्रायः १ मील उत्तर-पूर्वमें सरकारी अदालत और सैन्यनिवास अवस्थित है। यहां सरकारी उद्यान, क्रीड़ास्थान, सैनिकोंका गिरजा, कारागार, दातव्य चिकित्सालय, म्युनिसपालिटी घर और टौ सराय हैं। नगरसे प्रायः १ मील दक्षिण पश्चिम एक प्रस्तरमय तृण आदि रहित कठिन प्रान्तरमें सैन्यनिवास अवस्थित है।

४ पञ्जाबकी पाँच नदियोंमेंसे एक। वितस्ता देखो।

झेलम्—पञ्जाबकी नहर। यह नहर झेलम्‌के बाँईं किनारेसे निकल कर झेलम् तथा चनावके मध्यवर्ती समस्त देशोंमें जलसिञ्चनका काम करती है। इसकी कई एक शाखायें हैं, जिनमेंसे प्रधान शाखाकी लम्बाई प्रायः १६७ मील हैं। गुजरात जिलेके मोंग रसूल ग्रामके निकट इसका विस्तार बहुत अधिक है।

यह नहर १९०१ ई०के ३० अक्टूबरको प्रस्तुत हुई है। इसके बनानेमें लगभग १७·५ लाख रुपये खर्च हुए हैं। इस नहरके हो जानेसे कृषकोंका बहुत उपकार हो गया है।

झेलम्—पञ्जाबको झेलम् नदीका शाहपुर जिलास्थ उपनिवेश। इसका क्षेत्रफल ७५० वर्गमील है। औपनिवेशिकोंको अच्छे घोडे पैदा करनेके लिये एक घोडी रखनी पडती है। सरकारी घोडों और खच्चरोंके लिए भी बहुतसी जगह छोडी गयी है। रेलें, सडकें, कूएँ और बाजार बन रहे हैं।

झेली (हिं० स्त्री०) बच्चा जनते समय स्त्रीको विशेष प्रकारसे हिलाने डुलानेकी क्रिया।

झोंक (हिं० स्त्री०) १ प्रवृत्ति, झुकाव। २ तराजूके किसी पलड़ेका किसी ओर अधिक नीचा हो जाना। ३ बोझ, भार। ४ प्रचण्ड गति, वेग, तेजी। ५ कार्य्यकी गति, किसी कामको धूमधामसे शुरू करनेकी क्रिया। ६ सजावट, ठाट, चाल। ७ पानीका हिलोरा। ८ बैल गाडीकी मजबूतीके लिये दोनों ओर लगे हुए टो लट्ठे।

झोंकना (हिं० क्रि०) १ जल्दीसे सामनेकी ओर डालना। २ बलपूर्वक आगेकी ओर बढ़ाना। ३ बहुत अधिक व्यय करना बिना सोचे विचारे खर्च करना। ४ किसी आपत्तिमें डालना। ५ कायेका बहुत अधिक भार सौंपना, बहुत ज्यादा काम ऊपर डालना। ६ दोष आदि लगाना।

झोंकवा (हिं० पु०) वह मनुष्य जो भट्ठे या भाड़में भड पताई आदि फेंकता है।

झोंकवाई (हिं० स्त्री०) १ झोंकनेकी क्रिया। २ झोंकवानेकी क्रिया।

झोंकवाना (हिं० क्रि०) १ झोंकनेका काम किसी दूसरेसे कराना। २ किसीको आगेकी ओर जोरसे डालना।

झोंका (हिं० पु०) १ आघात, प्रतिघात, धक्का, रेला, झपट्टा। २ वेगसे चलनेवाली वायुका आघात। ३ वायुका प्रवाह, झकोरा। ४ पानीका हिलोरा। ५ बगलसे लगनेवाला ऐसा धक्का जिसके कारण कोई वस्तु गिर पड़े। ६ सजावट, ठाट, चाल। ७ कुश्तीका एक पेंच।

झोंकाई (हिं० स्त्री०) १ झोंकनेकी क्रिया या भाव। २ झोंकनेकी मजदूरी।

झोंकिया (हिं० पु०) वह मनुष्य जो भाड़में पताई आदि झोंकता हो।

झोंकी (हिं० स्त्री०) १ जवाबदेही, बोझ, भार। २ जोखिम, जोखों।

झोंझल (हिं० पु०) क्रोध, गुस्सा।

झोंट (हिं० पु०) १ झुप, झाड़ी। २ आड, झुरमुट। ३ समूह, जूरी।

झोंटा (हिं० पु०) १ बड़े बड़े बालोंका समूह। २ एक बार हाथमें आ जानेवाला पतली लम्बी वस्तुओंका समूह। ३ झूलेको इधर उधर हिलानेके लिये दिये जानेका धक्का, झोंका, पेंग। ४ भैंसका बच्चा, पड़वा। ५ महिष, भैंसा।

झोंपड़ा (हिं० पु०) पर्णशाला, कुटी।

झोंपड़ी (हिं० स्त्री०) पर्णशाला, कुटिया।

फल हुआ, इसको पहिली पंक्तिके नीचे एक स्थान छोड़ कर रखो और आदि २के वर्ग ४को अन्त्य ७×३से गुणा करने पर ८४ फल हुआ, इसको द्वितीय पंक्तिके नीचे एक स्थान छोड कर रखो। फिर आदिके घन ८को एक स्थान छोड कर रखो, फिर उसका जोड देनेसे १८६८३ फल होगा। इस लिए २७ की घन राशि १८६८३ हुई। दो राशिको घन प्रक्रिया चार पंक्तियोंमें होती है। उसकी प्रणाली निम्न प्रकार समझनी चाहिये—

२७³ =१९६८३।

३४३
२९४
८४
८

१९६८३

प्रक्रिया—पहिली प्रक्रियाके अनुसार ५ अन्त्य और दो आदि कल्पना करके प्रक्रिया करनेसे २५, घन होगा १५६२५। फिर २५को अन्त्य और २१को आदि कल्पना करके प्रक्रिया करनी चाहिये। अन्त्य २५के वर्ग १५६२५ को एक पंक्तिमें रखो। अन्त्यके वर्ग ६२५को आदि १×३ द्वारा गुणा करनेसे फल १८७५ होता है; इसको पहिली पंक्तिके दो स्थान छोड कर रख दो। आदिके वर्ग १को २५×३ द्वारा गुणा करने पर फल ७५ होगा, इसको दूसरी पंक्तिके नीचे दो स्थान छोड़ कर रखो, फिर १के १को तीसरी पंक्तिके नीचे दो स्थान छोड़ कर रखो और जोड लगाओ। इसका फल १९५३१२५ होगा। अतः १२५का घन १९५३१२५ हुआ। पंक्ति रखनेकी प्रणाली इस प्रकार है—

१२५³=१९५३१२५।

१५६२५
१८७५
७५
१

१९५३१२५

इस नियमसे आदि अङ्कसे प्रक्रिया शुरू करनेसे भी काम चल सकता है।

२रा नियम—जिस राशिका घन करना होगा, इच्छानुसार उसके दो टुकडे कर दोनों खण्डके घातको उस ही राशिसे पूरण करने पर जो कुछ होगा, उसको ३ द्वारा गुणा करके रखो, पृथक् रूपसे दोनों खण्डोंका घन करके उसके योगफलको पूर्वस्थापित राशिके साथ योग करनेसे जो होगा, वह ही उक्त राशिका घन है। ऐसी जगह राशिको जिन दो खण्डोंमें विभक्त करनेसे प्रक्रिया सहजमें हुई, उसी तरह खण्डमें विभक्त करना चाहिये।

उदाहरण—९ और २७ इन दो राशिका घन निश्चय करो।

१ प्रक्रिया—९ को ५ और ४ ऐसे दो खण्डोंमें विभक्त करो। दोनोंके घात २०से ९को पूरण करो; फिर उसको ३से गुणा करनेसे फल ५४० होगा। दोनों खण्डोंका घन ६४ और १२५का योगफल १८९को पूर्वस्थापित ५४०के साथ जोड देनेसे फल ७२९ हुआ। इस प्रकार २य नियमके अनुसार ९का घन ७२९ हुआ।

२ प्रक्रिया—२७को २० और ७ इन दो खण्डोंमें विभक्त करो। दोनोंका घात १४० हुआ; इससे २७को पूरण करो; फिर उसे ३से गुणा करनेसे ११३४० उपलब्ध होंगे। दोनोका घन ८००० और ३४३का जोड हुआ — ८३४३। इसको पहली रखी हुई राशिके साथ जोड़ देनेसे १९६८७ होगा। इस तरह २७का घन १९६८७ होता है।

३य नियम—जिस राशिका घन करना होगा वह राशि अगर वर्गराशि हो तो वर्गमूलकी प्रक्रियाके अनुसार उसका मूल निकालना होगा। उस मूलका घन, उसके वर्गहीको वर्गराशिका घन समझना चाहिये।

उदाहरण—४ और १६का घन कितना होता है?

प्रक्रिया—४का वर्गमूल २ है, २का घन ८ और ८ का वर्ग ६४ होता है। इस लिए तीसरे नियमके अनुसार ४का घन ६४ हुआ। १६का वर्गमूल ४ है, ४का घन ६४ है; और ६४का वर्ग ४०९६ है। अतः तीसरे नियमके अनुसार १६का घन ४०९६ होता है।

घनकफ (सं॰ पु॰) घनस्य मेघस्य कफ इव, ६-तत्। करका, ओला, वर्षाका पत्थर।

जाता है। ७ भारोसे भारो चोजोंको ऊपर उठानेका रस्सियोंका एक फँदा। ८ राख, भस्म।

भौंभट (हिं॰ पु॰) झंझट देखो।

भौंद (हिं॰ पु॰) उदर, पेट।

भौंर (हिं॰ पु॰) १ समूह, झुंड। २ कुंज, झाड़ियोंका समूह। ३ मोतियों या चाँदो मोनेके दानोंके गुच्छे लटके हुए एक प्रकारका गहना।

भौंरना (हिं॰ क्रि॰) गूंजना, गुंजारना।

भौंरा (हिं॰ पु॰) झोर देखो।

भौंराना (हिं॰ क्रि॰) १ काला पड जाना, बदरंग हो जाना। २ कुम्हलाना, मुरझाना।

भौंसना (हिं॰ क्रि॰) झुलसना देखो।

भौर (हिं॰ पु॰) १ प्रपंच, झंझट, बखेड़ा। २ डाँट, फटकार, ऊँचा नीचा।

भौरना (हिं॰ क्रि॰) लपक कर पकड़ना, छोप लेना।

भौरा (हिं॰ पु॰) प्रपंच, झंझट, बखेड़ा, तकरार।

भौरे (हिं॰ क्रि॰) १ समीप, निकट, पास। २ सङ्गत, संग, साथ।

भौहाना (हिं॰ क्रि॰) १ गुर्राना। २ जोरसे चिड़चिड़ाना, कुढ़ना।

ञ

ञ—संस्कृत और हिन्दी व्यञ्जनवर्णका दशम अक्षर, द्वितीय वर्गका पञ्चम अक्षर। इसका उच्चारण-स्थान तालु और अनुनासिक है। इसका उत्पत्तिस्थान नासिकानुगत तालु है। यह अक्षर अर्द्धमात्रा कालद्वारा उच्चारित होता है। इसके उच्चारणमें आभ्यन्तरीण प्रयत्न जिह्वाके अग्रभाग द्वारा तालुके मध्यभागका स्पर्श है तथा वाह्यप्रयत्न है घोष, संवार और नाद। यह अल्पप्राण वर्णोंमें परिगणित है।

मातृकान्यासमें वामहस्तकी अङ्गुलिके अग्रभागमें न्यास किया जाता है। वर्णमालामें इसकी लिखनप्रणाली इस प्रकार है—"ञ"। इस अक्षरमें सूर्य, इन्दु और वरुण सर्वदा निवास करते हैं। तन्त्रके मतसे इसके पर्याय वा वाचक शब्द—ञकार, बोधनी, विश्वा, कुण्डली, मघद, वियत्, कौमारी, नागविज्ञानी, सव्याङ्गुलनख, वक्र, सर्वेश, धूमिता, बुद्धि, स्वर्गात्मा, घर्घरध्वनि, धर्मकपाट, सुमुख, विरजा, चन्द्रनेश्वरी, गायन, पुष्पधन्वा, रागात्मा और वराह्विणी। इसका ध्यान करनेसे साधक शीघ्रही अभीष्ट लाभ कर सकता है। ध्यानका मन्त्र—"चतुर्भुजां धूम्रवर्णां कृष्णाम्बरविभूषिताम्।
नानालंकारसंयुक्तां जटामुकुटराजिताम्॥
ईषद्धास्यमुखीं नित्यां वरदां भक्तवत्सलाम्।
एवं ध्यात्वा ब्रह्मरूपां तन्मन्त्रं दशधा जपेत्॥"
(वर्णोद्धारतन्त्र)

ब्रह्मरूपका इस प्रकारसे ध्यान करके उनका मन्त्र दश बार जपना चाहिये।

कामधेनुतन्त्रके अनुसार ञकारका स्वरूप—सदा ईश्वरसंयुक्त, रक्तविद्युल्लताकार, परमकुण्डली, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणात्मक, त्रिशक्तिसमन्वित और त्रिबिन्दुयुक्त है।

कार्यके प्रारम्भमें इस अक्षरका विन्यास करनेसे भय और मृत्यु होती है।

"भयमरणकरौ ञञौ।" (वृत्तर॰ टी॰)

ञ (सं॰ पु॰) १ गायन, गायक, गानेवाला। २ घर्घरध्वनि, घर घरका शब्द। ३ बलीवर्द, बैल। ४ धर्मच्युत, अधर्मी। ५ शुक्र। "ञकारो बोधनी विश्वा।" (वर्णाभिधान)

ञकार (सं॰ पु॰) ञ स्वरूपे कारः। ञ स्वरूपवर्ण।

ञि (सं॰ पु॰) १ प्रत्यय विशेष; यह प्रत्यय प्रेरणार्थमें लगता और इसका इकार रहता है। २ धातुका अनुबन्धविशेष, यह अनुबंध वर्तमान क्त प्रत्ययबोधक है।

ञ्यन्त (सं॰ पु॰) ञि प्रत्ययविशेषो अन्ते यस्य, बहुव्री॰। ञि प्रत्ययान्त, यह प्रत्यय धातु और शब्दके उत्तरमें लगता है।

अष्टम भाग सम्पूर्ण।